श्रीः।

राजस्थान इतिहास।

दूसरा भाग.

जिसमें

जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, जयपुर, शेखावाटी, कोटा, बूंदी का और ग्रंथकारके भ्रमणका वृत्तान्त है.

जिसको

अनेक ग्रंथोंके निर्माता तथा टीकाकार हिन्दीहितैषी जगद्विख्यात मुरादाबादनिवासी स्वर्गीय पण्डित बलदेवप्रसाद मिश्रने कर्नल जेम्स टॉड प्रणीत अंग्रेजी ग्रन्थ राजपूत जातिके इतिहाससे हिन्दीभाषामें अनुवाद किया

और

विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्रने शुद्ध किया

तथा

राय मुन्शी देवीप्रसादजी जोधपुरनिवासीने भी टिप्पणी देकर शुद्ध किया

और

लोकोपकारार्थ

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बम्बई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालयमें

मुद्रित कर प्रसिद्ध किया।

संवत् १९८२, शके १८४७.

श्रीः।

श्रीमन्महाराजाधिराज श्री १०८ लेफटिनेण्ट कर्नल महाराजा राजराजेश्वर नरेन्द्रशिरोमणि बीकानेरनरेश श्री महाराजाधिराज श्री सर गंगासिंहजी बहादुर जी. सी. आई. ई. के. सी. एस्. आई. एडीकांग टु हिज़ रायल हाइनेस श्रीमान् प्रिन्स आफ वेल्स बहादुर की सेवामें

समर्पण ।

मैं यह प्रकाशित करना अत्यंत आवश्यक समझता हूँ कि, मैं श्रीमानकी सनातन प्र · हूँ । बीकानेर राज्यान्तर्गत चूरू-शहर मेरे पूर्वजोंका वासस्थान और मेरी जन्मभूमि है

अन्नजलवशात् मनुष्य कहीं और किसी भी अवस्थामें क्यों न रहे, किन्तु जनः जन्मभूमिका स्वाभाविक स्नेह और राजा प्रजाका परस्पर संबंध ऐसा दृढ़ और अकाट्य होता है कि उनसे कोई आजन्म उऋण एवं विमुख नहीं हो सकता । राजा प्रजाके सर्वस्वका स्वामी और संरक्षक है और प्रजाका सर्वस्व स्वामीकी सेवामें सदा ही स्वयं समर्पित है ।

तथापि यह ग्रंथरत्न तो खासकर श्रीमानके ही पूर्वपुरुषोंका एक जंगम कीर्तिस्तंभस्वरूप है । इसको देखते ही सर्व साधारणके हृदयमें उन भूत घटनाओंका मानचित्र अंकित होना संभव है जिनके हेतु श्रीमान्के पूर्व महानुभाव महाराजाओंका यश इस भारतभूमिपर अनंत काल पर्यंत अटल रहेगा तथा भावी राजसंतान अपने उन पूर्व पुरुषोंके धीरता, वीरता, नीतिनैपुण्य आदि राज्योचित गुणोंका अध्ययन कर उनके अनुकरण करनेकी चेष्टाएं करेंगी । अस्तु, इसका भावी फल क्या होगा सो स्पष्ट करनेकी आवश्यकता नहीं है क्योंकि श्रीमान् स्वयं सर्वज्ञ, गुणग्राही, दूरदर्शी और नीतिनिपुण नरेश हैं ।

अतएव मैं यह "राजस्थानइतिहास-द्वितीय भाग" श्रीमान्की सेवामें समर्पण करता हूँ और आशा करता हूँ कि श्रीमान् मुझे निज प्रजा जान मेरी इस तुच्छ भेंटको सप्रेम स्वीकार करनेका अनुग्रह कर मेरे उत्साहको इस प्रकारसे उत्तेजित करते रहेंगे कि मैं इसी प्रकार सदैव नितनव अमूल्य उपहार श्रीमान्की सेवामें समर्पण करनेके लिये सन्नद्ध रहूँ ।

बंबई ता. ३-१२-०९. | विनीत- खेमराज श्रीकृष्णदास,

इस पुस्तको खेमराज श्रीकृष्णदासने बम्बई खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटा लेन, निज "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें अपने लिये छाप कर यहीं प्रकाशित किया ।

बीकानेर।
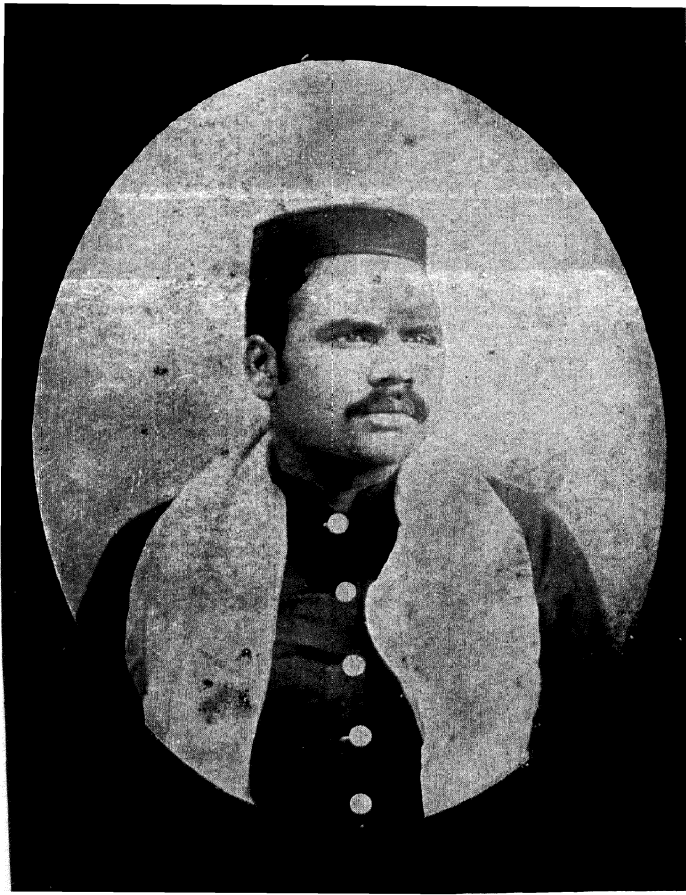
अनुवादक-स्वर्गवासी पं० बलदेवप्रसाद मिश्र-मुरादाबाद.

THE

ANNALS AND ANTIQUITIES

OF

RAJASTHAN

OR THE

Central and Western Rajput States

OF

INDIA

VOL 11.

PANDIT BALDEO PRASAD MISHRA

OF

MORADABAD

PRINTED BY

KHEMRAJ SHRI KRISHNA DASS

SHRI VENKATESHWAR PRESS

BOMBAY.

1925

॥ श्रीः ॥
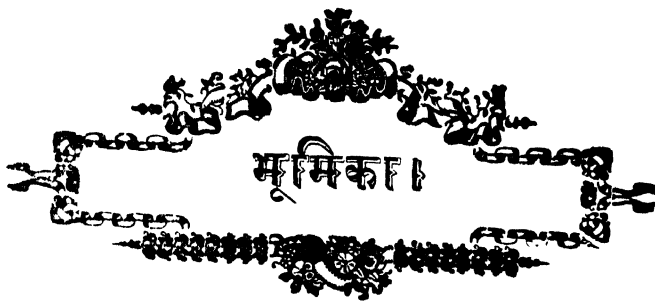
यद्यपि इस ग्रन्थके प्रथम भागमें भूमिकारूप एक बृहत् लेख प्रकाशित कर चुके हैं, परन्तु इस ग्रन्थके गौरवसे इस दूसरे भागकी भूमिकामें भी कुछ कहना है भारतके प्राचीन इतिहासकी खोज अभीतक पूरी नहीं हुई है, इतिहासका अभाव, इतिहासका अभाव चारोंओरसे यह ध्वनि गूंज रही है पर ईश्वरकी कृपासे इस अभावकी पूर्ति शीघ्र ही होनेवाली है इतिहासका सूर्य शनैः शनैः ऊपरको उठ रहा है दूसरे देशवासियोंके लिखे हुए पक्षपातपूर्ण इतिहासोंसे हमारे देश तथा धर्म कर्मका गौरव कब रह सकता है, इसीसे विदेशीजनोंके निर्मित इतिहास पढकर ही हमारे नवयुवक अपने पुरुषाओंको तुच्छ समझते हुए धर्म कर्मसे हाथ धो बैठते हैं। समयकी कैसी विचित्र महिमा है कि जिन भारतवासी पुरुषाओंसे हम अपना गौरव समझते थे, आज उन्हींके नाम और चरित्रसे हम खीझते हैं, उनको तुच्छ दृष्टिसे देखते हैं उनके आचार विचारपर श्रद्धा नहीं करते बल्कि स्वच्छन्द वृत्ति होना ही इतिहासका मर्म प्राप्त होना मानते हैं, पूर्व इतिहासोंमें यदि किसी व्यक्तिके बल विक्रमका विशेष परिचय पाया जाय तो झट उसे कल्पित मानते हैं, पर आज बलके विषयमें तो प्रोफेसर राममूर्तिने बलकी असम्भवताको सम्भव कर दिखाया है कि आप चलती हुई बडी मोटर-कारको हाथसे पकड कर थाम लेते हैं, छातीपर हाथीपैर रखकर चला जाता है, पर इस महापुरुषको कुछ पीडा नहीं होती। इसी प्रकार यदि दूसरे विचारोंमें उन्नति की जाय तो क्या पुरानी सामग्री हमको असम्भव प्रतीत होगी? कभी नहीं, इस राज-स्थानके इतिहासके साथ रजवाडेके सिवाय भारतके अन्य प्रान्तोंका भी तथ्य वर्णन आ जाता है, इन्द्रप्रस्थकी पुरानी बातोंका बहुत कुछ पता लग सकता है। जोधपुर, बीका-नेर, जैसलमेर, जैपुर, कोटा, बूंदी इन कई एक पुरातन राज्योंका इसमें बडी खोजके साथ आदिसे वर्णन किया गया है मैं समझता हूँ कि मेवाड और मारवाड राज्यका तो आदर्श मानो सज्जनोंके सन्मुख तथ्यरूपसे उपस्थित हो गया है इस दूसरे भागमें इन राज्योंके चरित्र किस प्रकारसे संघटित हैं, किस २ भाँतिकी विपत्तियोंका सामना इस देशके नरपतियोंको आया है, अथवा कभी २ नरपतिकी अयोग्यतासे प्रजाको

कितना कष्ट उठाना पडा है, राजपूत महिलाओंने किस प्रकार अपने धर्मकी रक्षा की है, यवनोंने किस प्रकार छल प्रपंचोंसे भारतपर आक्रमण किया है इस ग्रन्थके पाठमात्रसे इन सब बातोंका भेद खुल सकता है। इतिहास ही हमको इस बातकी साक्षी दे सकता है कि आदिपुरुष किस रहन सहनके थे, उनका कर्तव्य क्या था किस प्रकारके आचार विचार थे, किन कार्योंके करनेसे वे अपने देशको उन्नतिके शिखरपर पहुँचा सके थे. अहा ! उन दिनोंमें यह देश कैसा फूलके समान खिल रहा था । इसकी सुगंधिसे यही देश नही किन्तु बाहरी देश भी सुगंधित हो रहे थे । पर वह बात अब कहां है अब तो अधर्मने ऐसा दबाया है कि समस्त ही कर्तव्यपरायण लोग अपने कर्तव्यका त्याग किये बैठे हैं । आलस्य, अकृतज्ञता, अकर्मण्यता, मद्य, आखेट, द्यूत, अहिफेन, ईर्षा,द्वेषका एक प्रकारसे चक्रसा वर्त रहा है फिर किस प्रकारसे देशमें जागृति हो, हमारी समझमें जो देश जिन बातोंसे उन्नत था विना उन बातोंके ग्रहण किये कभी जागृति न होगी । इनमें मूलकारण हमारा सनातनधर्ममें ढीलापन है । " सनातन-धर्मकी उपेक्षा ही हमारी अधोगतिका कारण हुई है । इसीकी उपेक्षासे भारत अभक्ष्य भक्षणमें प्रवृत्त हुआ है,इसीकी उपेक्षासे अपनी रहन सहन बदल बैठा है,इसीकी उपेक्षासे बडे बूढोंको भूल बैठा है,इसीकी उपेक्षासे महापुरुषोंके वचनोंमें अविश्वास कर बैठा है, इसीकी उपेक्षासे वर्णाश्रमकी मर्यादा बिगाड बैठा है, इसीकी उपेक्षासे स्वराज्यसे तिरस्कृत हो गया है, इसीकी उपेक्षासे ईश्वरज्ञानसे रहित होगया है । यही सब प्रकारकी उन्नतिका मूल है इसीकी उपेक्षासे द्विजोंमें विधवाविवाह, इसीकी उपेक्षासे यवनादिका हिंदू बनना तथा इसीकी उपेक्षासे संकरताका बीज शनैः शनैः अंकुरित होकर वृक्षका आकार धारण करेगा,सज्जनों ! सावधान ! इतिहासका आदर करो तुम्हारे इतिहास पुराणोंमें ऐतिहासिक रत्न बहुतसे भरे पडे हैं परिश्रम कर उनको निकालो देशमें उनका चमत्कार दिखाओ हम अकेले कहांतक इस कार्यमें सफलमनोरथ हो सकते हैं । सबको ही थोडा २ परिश्रम करना चाहिये श्रीमहाभारत और अष्टादशपुराणरूप रत्नाकरमेंसे मनोनीत इतिहास-रूपी रत्नोंकी माला गूँथो, अपने देशका मुख उज्ज्वल करो । दूसरे देशनिवासी विद्वान् इन्हीं ग्रन्थोंसे रत्न निकाल २ कर यहींके इतिहास लिखकर अपनी समाजमें गौरव लाभ कर रहे हैं, पर आप किस नींदमें सो रहे है । इतिहासकी खोजकर भारतवर्षका एक बृहत् अभाव दूर करना भारतवासीमात्रका काम है । समय जा रहा है । ऐसा न हो किसी प्रकारसे आप लोग पीछे रह जायँ ।

इस समय जिस इतिहासका गौरव राजस्थानमें विशेषरूपसे पाया जाता है और जिसमें पक्षपात बहुत ही न्यून है, हमने उसी जेम्स टाडमहोदय लिखित राजस्थान ग्रन्थका अनुवाद टिप्पणीसहित करके हिन्दीप्रेमियोंको भेंट करना उचित जाना और कुछ दिन हुए कि उसका पहला भाग मेवाडका इतिहास हम पाठकोंकी भेंट कर चुके हैं जिन २ महानुभावोंने वह पहला भाग देखा होगा वे उसके गौरवकी लेखप्रणालीसे समझ गये होंगे कि इतिहाससे देशको कितना लाभ है और इतिहास हमको क्या शिक्षा

देता है तथा हमारे पूर्व पुरुष किस प्रकारकी रहन सहनवाले थे। अब यह दूसरे भागका भी विशद शुद्ध हिन्दी अनुवाद पाठकोंकी भेंट है, पहले बृहत् भागमें दो खण्ड थे, एकमें पुरातन नरपतियोंका आरम्भिक वृत्तान्त और दूसरे खण्डमें बाप्पारावलसे आरम्भ करके शिशोदिया वंशका समस्त वर्णन किया गया है इस दूसरे भागमें मारवाड,जोधपुर, बीका- नेर,जैसलमेर,जैपुर,शेखावाटी,कोटा,बून्दी और टाडसाहबके भ्रमणका पूरा वृत्तान्त है। यह ग्रन्थ जैसा विशद है वैसा ही इसका विषय है हमने इस ग्रन्थके अनुवादको सर्वांग सुन्दर बनानेमें कोई बात उठा नहीं रक्खी है, ग्रन्थकारसे जो इसमें कहीं भूल हुई है हमने टिप्पणी लिखकर उसका परिहार किया है तथा जितना महात्मा टाडसाहबका लिखा यह ग्रन्थ है हमने उसके आगेका भी बहुतसा वृत्तान्त इसमें सन्निविष्ट कर दिया है, इतना ही नहीं जो सन्धिपत्र मूलग्रन्थमें ग्रन्थकारने किसी कारणसे नहीं उतारे थे, हमने दूसरे अंग्रेजी ग्रन्थोंसे उनकी नकलें लेकर उनका अनुवाद करके इस ग्रन्थमें सन्निविष्ट कर दिये हैं तथा कहीं उनपर निजकी तौरसे समालोचना की है, कि जिनको पाठ करनेसे पाठकोंके हृदयपर इसका बडा प्रभाव होगा, कालचक्रकी कैसा विचित्र महिमा है राजनीतिका कैसा प्रभाव है "समयके फेरसे सुमेरु होत माटीको" फूट और परस्पर विद्वेषका कैसा भयंकर परिणाम होता है, स्वार्थ मनुष्यको कैसा पक्षपाती बना देता है, न्यायकारिता कैसी सन्तोषकी नौका है इत्यादि सहस्रों बातोंसे जानकारी और शिक्षा इसके अवलोकनसे प्राप्त होगी। यद्यपि यह ग्रन्थ अंग्रेजीकी बडी गम्भीर भाषामें लिखा गया है तथापि हमने इसके अनुवादमें बडी सावधानी रक्खी है कि जिससे सब कोई इसकी भाषा सरलतासे समझ सकें इस बातका पूरा ध्यान इसमें रक्खा गया है और जिससे अपने देश तथा जातिका गौरव विशेष रूपसे बना रहे, कोई बात न रह जाय, सब वृत्तान्त ग्रन्थकारके आशयके अनुसार विशदरूपसे प्रकाशित किया गया है, इन राज्योंके मूल,इन जातियोंकी उत्पत्ति जो अब कुछसे कुछ नामवाली हो गई है,इन नामोंके कारण क्षत्रियोंके भेद, उनके उच्चकुल, उन २ राजाओंकी वंशावली ये सब बातें इस ग्रन्थमें बडे विस्तारसे प्रमाण सहित लिखी गयी है सत्य तो यह है कि इस ग्रन्थके अनुशीलनसे पाठकोंके हृदयके कपाट खुल जांयगे और आगेके लिये इतिहासका मार्ग स्वच्छ हो जायगा, हम इसकी विशेष प्रशंसा क्या करें! पाठक स्वयं इसको पढ- कर जान सकेंगे।

इस ग्रन्थके अनुवादका कार्य मेरे मध्यम भ्राता पण्डित बलदेवप्रसाद मिश्रने अपने हाथमें लिया था, वह जैसी हिन्दी लिखते थे, वह जैसी रोचक ओजस्विनी: सर्वजनप्रिय होती थी, यह बात किसी महानुभाव हिन्दीसाहित्य प्रेमीसे छिपी नहीं है, इस ग्रन्थको उन्होंने बडे चावसे लिखा था और इस दूसरे भागको आधेके लगभग तैयार कर चुके थे कि अचानक विकराल कालने उनको आ घेरा और इस कार्यको अधूरा छोड अपने कुटुम्बी तथा स्नेही जनोंको सदाके लिये शोकसागरमें निमग्न कर वे इस असार संसारसे यात्रा कर जगदीश्वरके चरणोंमें सदाके लिये चले गये, पाठक जानते हैं कि ऐसे पुरुषके उठ

जानेपर शोकित हृदयसे उस कामके पूरा करनेमें कैसी अडचन पडती है, उनके इष्ट मित्रोंके अनुरोधसे तथा भाई साहबकी कीर्तिरूपी पताका चिरकालके लिये फहराती रहे, सज्जनमंडली इस इतिहाससे वंचित न रहे, उनकी आत्माको परलोकमें स्वकार्यकी पूर्तिसे संतोष हो, इत्यादि कई कारणोंसे मुझे इस ग्रन्थकी पूर्तिका भार स्वयं उठाना पडा और उस सर्वनियन्ता परमात्माकी असीम कृपा कटाक्षसे यह देशोपकारी ग्रन्थ सब प्रकारसे पूर्ण होगया, हिन्दीभाषाकी शैली यथासाध्य भाईसाहब जैसी पूरी रखनेकी चेष्टा की गयी है, पर यदि कहीं त्रुटि रह गई हो तो पाठकगण अपनी उदारतासे उसको क्षमा करेंगे । क्या अच्छा होता जो यह ग्रन्थ उनके सामने प्रकाशित होता पर हरिइच्छामें किसीको कुछ कहनेकी सामर्थ्य नहीं है । परन्तु उनकी आत्माको संतोष हो, मुझे यही अभीष्ट है ।

इस ग्रंथके निर्माणमें जगत्प्रसिद्ध हिन्दीहितैषी, परोपकारानिरत, 'श्रीवेंकटेश्वर' यंत्रालयाधिपति सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजी महोदयका बहुत ही धन्यवाद है कि आपने इसके अनुवादकी सहायतामें किसी प्रकारकी कमी नहीं की, सब प्रकारसे इसके प्रकाशका प्रबन्ध अपनी ओरसे करके यह अनुपम ग्रन्थ पाठकोंके लाभार्थ तथा हिन्दी-भंडार भरनेके अर्थ प्रकाशित किया है । परमात्मासे प्रार्थना है कि वे इसी प्रकारसे हिन्दी तथा संस्कृतकी उन्नतिमें दत्तचित्त रहकर देशका कल्याण करते हुए यशके भागी बनें, धन सन्तानकी वृद्धिके सहित मनोऽभिलषित कार्योंकी प्राप्ति करें ।

अब मैं इस भूमिकाको यहीं पूर्ण करता हुआ परमात्माको प्रणामपूर्वक यही चाहता हूं कि इस ग्रन्थका प्रचार समस्त भारतवर्षमें हो और इसका पाठकर पाठक अपने पूर्वजोंके आचार विचारपर श्रद्धा करते हुए सुखभागी हों ।

पण्डित बलदेवप्रसाद मिश्र { सज्जनोंका अनुगृहीत ज्वालाप्रसाद
मिश्र दीनदारपुरा मुरादाबाद.
संवत् १९६६, आषाढपूर्णिमा

॥ श्रीः ॥

सूचीपत्र ।

राजस्थान दूसराभाग ।

मारवाड जोधपुर.

बीकानेरका इतिहास.

जैसलमेरका इतिहास.

जयपुरका इतिहास.

शेखावाटीका इतिहास।

बून्दीराजका इतिहास ।

कोटाराज्यका इतिहास ।

अध्याय.	विषय.	पृष्ठ,
२	महाराव गुमानसिंह जालिमसिंहका जन्म, और वंशविवरण उनका फौजदार पद पाना, जालिमसिंहका कोटेको छोडना, फिर कोटेमें आगमन महारावका मरते समय जालिमसिंहको अपने पुत्रोंको सौंपना, उमेदसिंहको राजातिलक, जालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा, उनका उद्धार ...	८७८
३	जालिमसिंहकी शासननीति उनके गुप्त उद्देश्य, जालिमसिंहके अत्याचार, नई सेनाकी तैयारी, पटैलोंका शासन पुरानी रीतिको तोडना ...	८९२
४	जालिमसिंहकी कृषिप्रणाली, खलिहानमें धान्यरक्षा अफीमका व्यवसाय, सन्यासियोंपर कर स्थापन...	९००
५	जालिमसिंहकी राजनैतिक प्रणाली, रजवाडेमें उनकी प्रधानता बृटिश गवर्नमेण्टसे उनका सम्बन्ध, जालिमसिंहका विदेशीय राजाओंकी सभामें दूत नियुक्त करना, उमेदसिंहका चरित्र कालरापाटनकी स्थापना	९०९
६	कोटा राज्यकी नवीन स्थिति, बृटिश सरकारसे उनकी संधि, महाराव राजा उमेदसिंह, किशोरसिंह, विशनसिंह, पृथिवीसिंहका चरित्र जालिमसिंहके दो पुत्र, माधोसिंह और गोवर्धनदास, उमेदसिंहकी मृत्यु भयंकर विभ्राट्, करनल टाडका आगमन, किशोरसिंहका अभिषेक ...	९१८
७	कर्नल टाडका राजनैतिक व्यवहार, गोवर्द्धनदासका निर्वासन, महाराव किशोरसिंहका दुर्ग त्यागकर बृन्दावनमें आना, जालिमसिंहका आचरण महारावपर बृटिश सेनासहित जालिमसिंहकी सेनाका आक्रमण फिर संधि टाड साहबकी व्यवस्था	९३९
८	माधोसिंहको कोटेकी क्षमताकी प्राप्ति, किशोरसिंहकी मृत्यु, मदनसिंहका अभिषेक, बृटिश गवर्नमेण्टका कोटेसे १७ परगने छीनकर नवीन झालावाड राजस्थापन करना १८५७ के विद्रोहमें राजसेनाका समरोद्योग रामसिंहकी मृत्यु, महाराव छत्रसालका अभिषेक, सरकारका कोटेके शासनका भार ग्रहण	९७४
९	कोटेकी वर्तमान शासनरीति आयव्ययकी व्यवस्था, विचारादि विभागोंका वृत्तान्त वंशवृक्ष	९८२

कर्नलटाडका भ्रमणवृत्तान्त।

अध्याय.	विषय.	पृष्ठ,
१	उदयपुरसे यात्रा, खरौदा वहांके जैनमंदिर संग्रामसिंहकी वीरता हिन्ता दूदियाकी उत्पत्ति मांधाताका अश्वमेध राजसिंहकी वीरता	९९५
२	हिन्ताके सामंत, शक्तावत् मानसिंह, नथारांके लालजी मेवाडके राणा जगत्सिंह, चंद्रभानु, राजासिंह सरदारसिंहका वृत्तान्त	१००७

मरुभूमिका वर्णन ।

ग्रन्थकी पूर्ति ।

१ अंग्रेजी पुस्तकमे अमरकोटका वर्णन दूसरे अध्यायमें है और इन्दुवतीसे नागरगुरु तकका वर्णन प्रथम अध्यायमें है। लेखप्रमादसे यह परिवर्तन हो गया है ।

इति

राजस्थान द्वितीयभाग विषयानुक्रमणिका

समाप्त ।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

जोधपुर, या मारवाड़का इतिहास.

H. H. Raj Rajeshwar Maharajadhiraj Sahib Bahadur
Jodhpur (Marwar) Rajputana.

जोधपुर या मारवाड.

(१) राव सिवाजी, १२६१
(२) से ११, दस सरदार.
(१२) राव गिरमल, १४२७
(१३) जोधाजी १४५३
(१४) सूजा १४९१
(१५) उदयसिंह (राज नहीं किया)
(१६) गंगा, १५१५
(१७) मलदेव, १५३१
(१८) उदयसिंह (मोटा राजा) १५८३
(१९) राजा सूरसिंह, १५९४
(२०) गजसिंह १६२०,
(२१) महाराजा जसवंतसिंह, पहला १६३५,
(२२) अजीतसिंह १६७८
(२३) अभीसिंह, १७२५
(२४) रामसिंह, १७५०
(२५) बखतसिंह, १७५१
(२६) विजयसिंह, १७५३
(२७) भीमसिंह, १७९४
(२८) मानसिंह, १८०४
(२९) तखतसिंह, १८४३
(३०) जसवंतसिंह, जी.सी.एस. आई–१८७३
(३१) सरदारसिंह, गद्दीपर बैठे १८९५ (चित्र नहीं है)

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

राजस्थानका इतिहास ।

दूसराभाग २.

दोहा–सिद्धिसदन आनंदघन, गिरिजासुवन गणेश ।
उमा सहित सुमिरहुँ सदा, जगसुखदान महेश ॥ १ ॥
वीणा पुस्तकधारिणी, देवी गिरा मनाय ।
मारवाड इतिहासकी, भाषा लिखत बनाय ॥ २ ॥
वसत रामगंगा निकट, नगर मुरादाबाद ।
इंगलिशसे भाषा कियो, द्विज बलदेवप्रसाद ॥ ३ ॥
बुध ज्वालापरसाद यह, शोध्यो ग्रंथ महान ।
भूल चूक पुनि होय जो, क्षमिहहिं सन्त सुजान ॥ ४ ॥
वेंकटेश्वर यन्त्रपति, खेमराज जगजान ।
जगहित छाप्यो ग्रंथ यह, सकल सुमंगल खान ॥ ५ ॥

मारवाडका इतिहास ।

अध्याय १.

मारवाडके भिन्न २ नाम, प्राचीन इतिहासके प्रमाण–पतिकी वंशावली;–मारवाड निवासी राठौर जातिकी पारलीपुरके यवन राजाओंसे उत्पत्ति, द्वितीयवंशावली। नयनपाल और उसकी तिथि–कन्नौज विजय,-राजपूत वंशावलियोंका काम--कवि करणीदान रचित सूर्य्य प्रकाश,--राजरूपक इतिहास, ख्यात अजीतसिंहकी बाल्यावस्था और उसके राज्यका इतिहास--विजय विलास अर्थात्, जीवनचरित्र । दूसरी प्रमाणिक वस्तुएँ । यवनाश्व अर्थात् इन्डोसिदिक (Indo scythic) जाति, कामध्वज नामधारी तेरह राजपूतोंका वंश--कन्नौजाधिपति राजा जयचंद मुसल्मानोंके भारतविजयसे पूर्व इस राज्यकी सीमा और चमत्कार,--सेवा प्रबन्ध, मांडलिक पदवी--राजाको ईश्वरीय--पदवी । जयचंदका राज--स्वयंवर यज्ञ । स्वयंवरका पूर्ण रहना और उसका परिणाम--भारतकी दशा,--हिन्दुओंकी चार बडी राजधानी--दिल्ली, कन्नौज, मेवाड अनहलवाडा, उस समय भारतकी क्या दशा थी--गोरके बादशाह शहाबुद्दीनका भारतपर आक्रमण–दिल्लीके चौहान राजाओंपर उसकी विजय । कन्नौजपर आक्रमण, सात शताब्दीके पश्चात् कन्नौजका नाश । जयचंदकी मृत्यु और उसकी मृत्युतिथि ।

मारवाडशब्द मारूवारका अपभ्रंश है।यथार्थमें इसका नाम मरुस्थल वा मरुदेश है, जिसका अर्थ होता है मरे हुए मनुष्योंका देश।इसको मरुदेश भी कहते हैं,प्राचीन मुसल्मान व इतिहासवेत्ताओंने नासमझीसे मारदेश भी लिखा है। कवियोंने प्रायः इस देशको मुरधर भी कहा है,जिसका अर्थ भी मरुदेश है और कभी२छन्द ठीक करनेके लिये केवल मरु ही लिख दिया है। यद्यपि आजकल यह नाम इतने देशका है जो राठौर वंशके राज्यमें है,परन्तु प्राचीन समयसे असलमें यह नाम उस भू भागका है जो समुद्रसे लेकर सतलज नदीतक फैलाहुआ है । और रेतीसे परिपूर्ण है ।

मारवाडदेशाधिपति राठौरवंशका पूर्णवंश-चरित्र प्रथमखण्डके अ० ६ पृष्ठ ३८ में दिया जाचुका है, इसलिये इसका उस समयतकका वृत्तान्त, जहाँतक कि, यह वंशावली अपनी जड पुष्ट न करले संक्षेपसे लिखेंगे। अर्थात् वहाँतक जब कि, यह वीर राठौर इस रेतीले स्थानमें आ बसे है, और अपने वंशको सूर्यवंशकी शाखा बतलाते है, उचित समझा गया है कि,उनके वंशोंका यथार्थ वृत्तान्त उनके ही ग्रन्थोंसे दिखलाया जावे, इस लिये हम उनके ही इतिहासोंका उल्लेख करेंगे । जैसा कि,हमने मेवाडके वृत्तान्तमें सब इतिहासोंको एकमें ही मिला दिया है,ऐसा हम यहां नही करेंगे पाठकोंके चित्तविनोदार्थ हम राठौर ग्रंथोंके रहस्योंका सरल अनुवाद भी करेंगे।

सबसे प्रथम हम ग्रन्थकर्ताओंके प्रमाणोका उल्लेख करते हैं । प्रथम नाडलाई जैनमंदिरके पूजारी यतीकी बनाई हुई वंशावली है । यह वंशावली५० फुट लम्बी है सबसे पहिले इसमें राठौरवंशकी उत्पत्ति इन्द्रके मेरुदंडसे बतलाई है पारलीपुरके राजा यवनाश्वको कल्पित पिता लिखा है । पारलीपुरके वृत्तान्तके विषयमे राठौरी इतनाही जानते है कि यह स्थान कहीं, उत्तरमें है, परन्तु इस वंशके पूर्वजोंके अश्व वा असिजातिके यवन राजाके सिदियन जातिसे उत्पन्न होनेके विषयमें हमारे पास प्रमाण है ।

यह इतिहास कान्यकुब्ज वा कन्नौज और कमध्वजवंशकी प्रारम्भ स्थितिसे प्रारम्भ होता है और राठौरोंकी १३ महाशाखाओं, उनके गोत्राचार्य गौतम गोत्र माध्यंदिनीशाखा शुक्राचार्य गुरुगणपति अग्नि पंखनी देवी आदिका वृत्तान्त लिखकर समाप्त किया गया है ।

दूसरा वंशवृक्ष भी उसी प्राचीन समयका है,जिस समयकी विना चरित्रोकी वंशावली है । उसकी प्रतिष्ठा उसी प्रकार की है, जिस प्रकारसे उनकी जाति उसको देखें, नयनपालसे पहलेका वृत्तान्त अब हम यहा छोडते हैं, इस राजा नयनपालने सवत् ५२६ (सन् ईसवी ४७०) में कन्नौजको विजय किया, और वहांके राजा अजयपालको मारा। उस समयसे इस वंशका नाम कन्नौजिया राठौर हुआ । अब यह इतिहास कन्नौजके अंतिम राजा जयचन्दका वृत्तान्त वर्णन करता है, जिसमें उसके भतीजे सियाजीका देशनिकाला (और कन्नौजके राज्यसे भयभीत हुए) बहुतसे भाइयोंका मरुदेशमें बसना, राजा जसवन्तसिंहकी (सम्वत् १७३५ सन् १६७९) मृत्यु और उनकी प्रत्येक शाखाका वर्णन किया है । वास्तवमें पाठकोंको बडा ही आनन्द होगा कि, जिस समय वे यह देखेंगे कि, यह वंशवृक्ष फल फूलकर अपनी शाखाओंको वढावैगा ।

यद्यपि इतिहासवेत्ताओंको यह वृत्तान्त बहुत ही शुष्क और नीरस प्रतीत होगा, परन्तु तत्त्वज्ञानियोंके लिये मनुष्य जातिका इससे अच्छा रुचिकर इतिहास संसारभरमें न होगा। सन ११९३ में हम जयचन्दकी गद्दी लौटी हुई देखते हैं, उसके भाई भतीजे और सम्बन्धी भारतीय मरुस्थलके छोटे २ सरदारोंकी सेवामें प्रविष्ट होते हैं। चार शताब्दि पहलेसे ही हम इन गंगाके किनारे रहनेवालोंको सारे रेतीले स्थानमें बसता हुआ देखते हैं। जहाँपर इन्होंने तीन राजधानी बनाई बडे बडे राजभवन बनाये; और एक ही बापकी सन्तानने जो अब ५०००० वीर हैं रणक्षेत्रमें दिल्लीके बादशाहका मुकाबला किया। कन्नौज विजयी मुसलमान बादशाहोंके मनमें जिनकी पांच पुस्तकें राठौरोंके पराक्रमसे अनभिज्ञ रहीं, क्या ही विचित्र विचार इस राठौरवंशकी महोन्नति देखकर हुए होंगे। जब कि, उत्साही शेर शाहने सियाजीकी राठौर सन्तानसे रणक्षेत्रमें भिडते समय कहा था कि, हम एक मुट्ठी जौके बदलेमें भारतका राज खोनेको थे, अर्थात् हम इस देशको गरीब समझकर इसका ध्यान नहीं करते थे।

यह देखकर हृदयमें बडा आनन्द उत्पन्न होता है कि, यह जातीय विचार इस महासेनाके प्रत्येक योधामें वर्तमान है। यहाँतक कि, प्रत्येक पुरुष अपना सम्बन्ध उस वंशवृक्षकी शाखासे रखकर समझाता है कि, हम उस वंशसे बहुत दूर नहीं हैं, और उस वृक्षकी शाखाओंको अर्थात अपने पुरुषाओंको भूले नहीं हैं। ऐसी सदाचार-युक्त सहानुभूतिका जो कुछ प्रभाव पडा करता है वह सर्व साधारण जानते ही हैं, इस लिये उसका लिखना उचित नहीं है। इतिहासवेत्ता केवल बहुतसे नामोंका लिखना व्यर्थ कागज रंगना समझते हैं, जो केवल सियाजीकी संतानके ही रहस्यका विषय है।

ऊपर कहीहुई दोनों कुल-तालिकाओंके अतिरिक्त जो और भी कई एक भट्ट-ग्रन्थ मारवाडके इतिहासके विषयमें पाये जाते हैं, उनमेंसे "सूर्य्यप्रकाश" "राजरूपाख्यात" और "विजयविलास" ये तीन प्रधान हैं; अस्तु हम इस समय इन्हीं तीनों भट्टग्रन्थोंका वर्णन लिखते हैं।

मारवाडके एक दूसरे राठौर राजा अभयसिंहके राजत्वकालमें उसकी आज्ञानुसार * कर्णीदान नामक भट्टकविने सूर्य्यप्रकाश ग्रन्थ बनाया। इसमें ७५०० छन्द हैं सन् १८२० में राजा मानने इसकी नकल मेरे पास भेजी थी। यद्यपि कर्णीदान कविने मनुष्योंकी उत्पत्तिकालसे आरम्भ कर महाराज सुमित्र तक राजवंश वर्णन किया है तो भी उसके उपरान्त नयनपाल तक और किसी राजा वा राजवंशका विवरण नहीं देखा जाता। उक्त ग्रन्थमें लिखा हुआ है कि, महाराज नयनपालने कन्नौजराज्यको जीत उसपर अधिकार कर कमध्वजकी उपाधि धारण की थी कवि कर्णीदानने राजकीय वृत्तान्तोंसे ही अपना ग्रन्थ रचा है। किन्तु नाडोलके देवमंदिरमें जो कुलतालिका पाई गई थी, उसमें लिखे हुए वृत्तान्तके साथ सूर्य्यप्रकाशकी विशेष समानता देखी जाती है। परन्तु यह घटनावली भी संक्षिप्त ही है। कन्नौजकी रंगभूमिमें राठौरकुलकी वीरता, बडाई वा

* कर्णीदान भट्ट नहीं था चारण था।

दूसरे किसी कार्य्यका अभिनय हुआ था कि नहीं, आश्चर्य्यका विषय है कि, सूर्यप्रकाश ग्रन्थमें उसका विशेष वर्णन नहीं है; यहांतक कि, कविने कन्नौजके राजा जयचन्दके हारने और उसके मारे जानेके वृत्तान्तको भी छोड दिया है। उसने शीघ्रताके वशीभूत हो बहुत जल्दी मारवाड़की रंगभूमिमें उपस्थित हो, महाराज सियाजीके वंशधरोंका संक्षेप वर्णन करके उस कुल-तालिकाको पूर्ण कर दिया है।

"राजरूपकाख्यात" ग्रन्थमें सबसे पहिले सूर्य्यवंशके कई एक वृत्तान्त लिखे हुए हैं इसमें उस समयका संक्षेप वर्णन देखा जाता है जिस समय महाराज इक्ष्वाकुके वंशधर अपनी पुरानी राजधानी अयोध्यानगरीके सिंहासनपर सुशोभित थे, उन सब वृत्तान्तोंके उपरान्त ग्रन्थकर्ताने सियाजीके देश छोडने आदि घटनाओंका वर्णन किया है। जिस दिन राठौर वीर सियाजीने कुछेक अनुचरोंको साथ ले राजस्थानकी विशाल मरुभूमिमें राठौर वंशका वृक्ष स्थापित किया था, जिस दिन उनके अत्यन्त साहसके प्रभावसे उस दग्ध मरुभूमिमें राजमहल सुशोभित हुए थे, उस दिनसे और महाराज यशवंत सिंहकी मृत्युतक राठौर कुलका भाग्य तरंग किस किस ओरको बहा है, इसका सब संक्षेप वर्णन इस ग्रन्थमें लिखा हुआ है। परन्तु इसके उपरांतकी घटनाओंका वर्णन भली प्रकारसे विस्तारपूर्वक लिखा गया है। महाराज यशवन्तसिंहके अन्यायसे मारे-* जानेके उपरान्त उनके बालक कुमार अजितसिंहने किस २ प्रकारकी घटनाओंमें गिरकर राजसिंहासन पर अधिकार किया और किस प्रकारकी राजनीतिसे राज्य किया। इन सब बातोंका ही वृत्तान्त "राजरूपकाख्यात" ग्रन्थमें क्रमानुसार वर्णन किया गया है। ग्रन्थकारने यहीं तकका वर्णन कर लेखनी नहीं छोडी, बरन उसने राठौर बीर अजितसिंहके और उसके पुत्र अभयसिंहके राजत्वकालसे लेकर गुजरातके सूबेदार सर बुलंदखाँके साथ युद्धके अन्तिम समयतककी घटनाओंका वर्णन इस ग्रन्थमें किया है। 'राजरूपक' के प्रथम संक्षेप वृत्तान्तके उपरान्त यह इतिहास उस समयकी घटनाओंका है जो सम्वत् १७३५ (१६९६ ई०) से सम्वत् १७८७ (१७३१ ई०) तक हुआ था।

इसके अतिरिक्त "विजयविलास" और "ख्यात" नामक और भी दो भट्टग्रन्थोंमें कुछ २ मारवाडका वर्णन पाया जाता है। विजयविलासमें एक लाख छंद हैं। इसमें बख्तसिंहके पुत्र विजयसिंहके राजकालतकका समस्त वर्णन लिखा हुआ है। तथा विजयसिंह उसके भतीजे रामसिंह और अभयसिंहके पुत्रके युद्धका वृत्तान्त है, पीछे मरहठोंके प्रथम मारवाडमें प्रवेश करनेका वृत्तान्त है "ख्यात" भी एक ऐतिहासिक ग्रन्थ है। परन्तु टाड × साहबको यह पूरा २ ग्रन्थ नहीं मिला। जिस अंशमें बादशाह अकबरके मित्र राठौर राजा उदयसिंह, उसके पुत्र गजसिंह और पौत्र यशवंतसिंहका वर्णन लिखा हुआ है वही अंश उनको मिला था। जो हो इन सब छिन्न भिन्न इतिहासोंको एकात्रित

---

* महाराज यशवन्तसिंह अन्यायसे नहीं मारे गये मृत्युसे मरे। × यह पाठ असल टाड राजस्थानमें नहीं पाया जाता।

कर जगद्बन्धु टाडसाहबने मारवाडके इतिहासकी रचना की है, इस समय दूसरे ऐतिहासिक वृत्तान्तोंसमेत उनके अनुवादको लिखते हैं ।

राठौरोंकी उत्पत्तिका वृत्तान्त राजस्थानके प्रथम खण्डमें लिखा हुआ है । * इस समय हम उनके इतिहासको लिखते हैं । उत्तरकी ओर बसे हुए पारालि × पुरसे उखड कर राठौर वंश-वृक्ष किस प्रकार गंगाके दक्षिण मरुभूमिमें फिर स्थापित हुआ, उसका वृत्तान्त भलीप्रकारसे किसी इतिहासग्रन्थमें नहीं देखा जाता। जान पडता है कि; राठौरोंने उस समय राजनीतिमें विशेष विज्ञता प्राप्त नहीं की थी ।

इनके सिवाय जोधपुरके दरबारने एक बुद्धिमान् राजकर्म्मचारीसे कुछ यादगारी लिखवाई थी,जिसमें सन्१६२९में राजा अजितसिंहकी मृत्युसे लेकर सन्१८१८में अंग्रेजोंके संधिपत्रतकका वृत्तान्त है । इस लेखकके पुरुषा जोधपुर दरबारमें बडे पदाधिकारी थे, और यह मनुष्य भूत तथा वर्तमान ऐतिहासिक वृत्तान्तोंकी मूर्ति था ।

इस प्रकार पुस्तकोंके वृत्तान्तोंसे और राजा महाराजा और दरबारियों राजदूतों और प्रजासे बातचीत करके यह इतिहास संग्रह किया है जिनकी बाह्य अवस्था नीरस जान पडती है परन्तु अन्तमें यही चित्ताकर्षक इतिहास प्रतीत होंगे ।

राठौरोंके वंशका सूचीवृक्ष और उनकी शाखासहित सूची इस पुस्तकमें दिखलाई गई है, जिनकी सन्तान आजकल आपसमें शत्रुता या वैर रखती है । जिसके देखनेसे ही प्रत्येक वंशके अधिकार ज्ञात हो जायँगे,और उनके परस्परके लडाई झगडोंसे जो दीन दशा उनकी हो गई है, मेरे लेखसे ऐसे समयमें भी महाराजाधिराजको आवश्यकताके समय न्यायदृष्टिसे देखनेपर इनके अधिकार स्थिर करनेमें बडी सुगमता होगी ।

राठौर सूर्य्यवंशी है या नहीं इस तर्कके समाधानका उद्योग हम नहीं करना चाहते हैं,प्रथम राठौरकी उत्पत्ति इन्द्रके मेरुदण्डसे हुई या नहीं इसपर भी हम वाद विवाद नहीं करना चाहते,और उनके नाममात्र पिताकी राजधानीका पता भी हम उत्तरमें नहीं लगाना चाहते हैं परन्तु हम तो केवल इसी पर संतोष करते हैं कि, राजा पारलीपुरके वंशमें यह दैविक हस्ताक्षेप किसी गुप्त अपयशके ढकनेके लिये निर्माण किया गया था ।

यवनाश्वका नाम जो यवन और अश्वकी संधिसे प्रगट होता है कि; इण्डोसिदिक (Indo Scythic) जंगली जाति सिन्धुनदीके दूरदेशी तटोंपर निवास करती थी; चन्द्रवंशियोंकी बंशावलीमें जिनकी उत्पत्ति बुध देवता और पृथ्वीसे हुई है (देखो चित्र १ खण्ड १)लिखा है कि विजयाश्वके पांचोंपुत्र सिन्धुनदीके तटस्थ देशोंमें निवास करते थे, और बादशाह सिकन्दरके आक्रमणके संक्षिप्त इतिहासोंमें भी आसासेनी और आसाकानी (Asasenae and Asacani) जातियोंका वृत्तान्त आया है,जो इन देशों में वर्त्तमान समयमें भी वास करती हैं ।

---

* राजस्थान प्रथमखण्ड अ० ६ और ३८ पृष्ठ देखो । × उर्दू तर्जुमेमें प्रलयपुर लिखा है ।

इस समयमें इस हिन्दुद्वीपकें स्थायी वंशोंमें बहुतसे उलटफेर हुए जिनमेंसे कुछ जातियां हन्स, पारथियन और जेट इत्यादिने अपनी पृथक् २ राजधानियां भारत खण्ड-के उत्तरीय और पश्चिमीय सीमाओंपर बनाई ।

संवत् (५२६सन्४७०)में नयनपालने कन्नौजको हस्तगत किया और उस समयसे राठौरोंको कमध्वजकी पदवी प्राप्त हुई उसके पुत्र पदारत और उसके पुत्र पुंजासे उन तेरह महा वंशोंकी उत्पत्ति हुई थी जिनमेंसे प्रत्यक (भरत) की कमध्वजकी पदवी थी।

यती संन्यासीकी दी हुई वंशपत्रिकामें इसका नाम भरत लिखा हुआ है परन्तु पुराने वृत्तान्तोंमें यह केवल पदारतके ही नामसे प्रसिद्ध है ।

उन तेरह राजवंश और उन सबकी वंशावलीके नाम नीचे लिखे हुए हैं ।

प्रथम । धर्म्मबिम्ब । इसके वंशवाले दानेश्वर । कमध्वजके नामसे प्रसिद्ध हुए ।

२ । मान । इसने कांगडानामक स्थानमें अफगानोंके साथ युद्ध किया था । अभयपुर भी इस कमध्वजके द्वारा प्रतिष्ठित है; इस ही कारण इसके वंशवाले अभयपुरी कहे जाते हैं ।

३ । वीरचन्द्र । इसने अनहलपुर पत्तनके अधिपति हीरा चौहानकी बेटीसे विवाह किया था । वीरचन्द्रके चौदह पुत्र हुए वे अपना देश छोड दक्षिणमें जा बसे । वीरचन्द्रके वंशवाले कपालिया कमध्वजके नामसे विख्यात हुए ।

४ । अमरविजय । इसने गंगाके किनारे बसे हुए गौरागढके पमार अधिपति की पुत्रीसे विवाह किया । और राज्यके लालचसे अपने श्वशुरके गोत्रवाले सोलह सहस्र पमारोंको मारकर गौरागढपर अधिकार किया था, इसीसे गोरा कमध्वज उत्पन्न हुए ।

५ । सुजन विनोद । इसके वंशवाले जल खोडिया कमध्वजके नामसे प्रसिद्ध हैं ।

६ । पद्म, यदुवंशी राजा तेजोमानके हाथसे इसने बुगलानाको जीता । उडीसा भी इसीके प्राक्रमसे जीता गया था ।

७ । ऐहर । यदुवंशियोंसे इसने बंगालेको जीता था । इससे ही ऐहर कमध्वज उत्पन्न हुए हैं ।

८ । वासुदेव । इसके बडे भाईने इसको बनारस और ४८ गांव जागीरके तौरपर दिये थे। किन्तु उसने अपनी कीर्ति फैलानेके निमित्त पारकपुर * नामक एक नगर बसाया, वरदेव या वासुदेवके वंशवाले परकरा कमध्वजके नामसे अपना परि-चय देते हैं ।

९ । उग्रप्रभाव । कहते हैं कि उग्रप्रभावने हिंगलाज चंदेल नामक स्थानमें × देवताके मंदिरमें जाकर कठोर व्रत तप किया था ।

इससे देवताने उसपर अत्यन्त प्रसन्न हो उसे एक तलवार दी । कहते हैं कि देवताकी आज्ञासे वह तलवार मंदिरके सामनेवाले एक कुण्डसे निकली थी । देवताकी

---

* पारकपुरको सिंधुके सम्मुख बसा हुआ टाडसाहबने लिखा है । × यह मकरानाके उपकूलमें बसा हुआ है ।

दी हुई उस तलवारकी सहायतासे उग्रप्रभुने समुद्रके तटस्थ समस्त दाक्षिणप्रदेशको जीत लिया था। इसीसे चँदेला कमध्वजोंका वंश चला।

१०। मुक्तमान वा मुकुटमणि। तम्वरवंशी भानुराजाके हाथसे इसने उत्तर भागके कुछेक देशोंको जीता था। इसके वंशवाले वारिपुरा कमध्वजके नामसे प्रसिद्ध हुए।

११। भरत। इसने ६१ वर्षकी अवस्थामें वीर गूजरवंशी रुद्रसेन नामक किसी राजाको परास्त कर उत्तरदेशमें पहाडोंके नीचे वसे हुए कनकसर नामक एक नगर पर अधिकार किया। इसके वंशवाले वरियावर कमध्वजके नामसे विख्यात हैं।

(रायल एशियाटिक सोसाइटीके पुस्तकालयकी एक पुस्तकमें जो कोटासे प्राप्त हुई थी इस कन्नौजवंशकी शाखाका कुछ वृत्तान्त लिखा है)

१२ अनलकुलने खैरोदा नामक एक नगर बसाया। अनलकुल एस वीर पुरुष था। अटकमें मुसल्मानोंके साथ इसका एक युद्ध हुआ था। इसके वंशवाले खैरोदिया कमध्वजके नामसे प्रसिद्ध हैं।

१३। चंद। इसको उत्तर प्रदेशमें तारापुर नामक एक नगर प्राप्त हुअ था। प्रसिद्ध ताहिरो नामक नगरके चौहान अधिपतिकी पुत्रीके साथ चन्द्रका विवाह हुआ। चन्दने उस स्त्रीके समेत काशीमें आकर बास किया।

"सूर्य्यवंश इस प्रकारसे बढ़ा और पुष्ट हुआ था।" सन् ४७० ई० स जिस दिन राठौर वीर नैनपालने कन्नौज जीता, और उसके कुछ दिन उपरांत जिस दिन उनके तेरा पौत्रोंने भारतके चारों ओर नानादेशोंमें फैलकर राठौरवंशकी विजयपताका स्थापित की, उस दिनसे क्रमानुसार सात शताब्दी तक(सन्११९३)राठौर वीरोंके किसी प्रशंसनीय कार्यका वर्णन नहीं देखा जाता राठौरोंका इतिहास उस समयसे चलता है जब कि उनका अधिकार गंगाजीके किनारे पर जम गया था। इस दीर्घ समयके उपरान्त जयचंद कन्नौजके सिंहासनपर बैठा। इन सात शताब्दियोंमें केवल इक्कीस राजाओंका नाम देखा जाता है। जिस ग्रन्थमें इन इक्कीस राजाओंका नाम लिखा है उसके देखनेसे पाया जाता है कि, "राजा" की उपाधिवाले कुछेक राजाओंके पहिले "राव" की उपाधिवाले इक्कीस राजाओंने राठौरवंशका राज्य किया था, किन्तु किस राजाने सबसे पहिले उक्त उपाधि धारण की, और कितने "राजा" के नामसे परिचित हुए थे, उसका कोई वृत्तान्त अबतक नही देखा जाता। केवल यही बात सही नहीं है इससे

---

१ तारापुर विजय करनेसे इसकी सन्तानका नाम जयवन्त कमध्वज हुआ। प्रे० टी०। २ ताहिराका वर्णन तवारीख फिरिस्तामें अनेकवार देखा गया है। ३ सूर्यप्रकाश। ४ भम्बू वा धर्मभम्बू कन्नौजाधिपतिका एक पुत्र अजयचन्द था ११ पीढीतक इस वंशकी राव पदवी रही इसके पीछे राजा की पदवी हुई। ५ इन कई एक राजाओंने "राजा" की उपाधि धारण की थी; उदयचन्द, नृपति, कनकसेन, सहस्रपाल, मेघसेन, वीरभद्र, देवसेन, विमलसेन, दानसेन, मुकुन्द, मोदू, राजसेन, त्रिपाल, श्रीपुंज, (विजयचन्द) और उसका पुत्र जयचन्द, इसकी पदवी दलपंगल हुई।

पहिले संन्यासी की दी हुई वंशावलीमें जो कथा लिखी है, उससे ऐसे अनेक नाम पाये जाते हैं जो सूर्य्यप्रकाश ग्रन्थमें नहीं हैं। संन्यासीकी दी हुई सूचीमें जो कई एक नाम अधिक देखे जाते हैं, उनमेंसे एक राजाका नाम अंगदध्वज भी है । लिखा है कि अंगदध्वजने दिल्लीके प्रसिद्ध तोमर राजा यशोराजको एक युद्धमें परास्त किया था। यशोराजके राजत्वकालका भलीप्रकारसे निश्चय हुआ है । परन्तु दुःखका विषय है कि पहले कही हुई संन्यासीकी दी हुई तालिकामें अंगदध्वज और उसके पहिले व पिछले राजाओंके नाम ऐसे जटिलभावसे (शिकस्ताः) लिखे हुए हैं कि, सूर्य्यप्रकाशमें लिखी हुई नामावलीके साथ उसका कुछ भी सम्बन्ध नहीं हो सकता। कन्नौजकी रंगभूमिमें महाराज नयनपालके वंशवाले अर्थात् जयचंदके पूर्व पुरुषोंके किसी प्रशंसनीय कार्यका वर्णन भली प्रकारसे नहीं देखा जाता; किंतु जो अधूरा और साधारण वृत्तान्त पाया जाता है,उसकी समालोचना करनेसे हम कह सकते हैं कि, वे राठौरपदके योग्य और राठौर वीर नयनपालके योग्य संतान थे । क्योंकि वे सब क्षत्रियोंके उत्तम गुणोंसे विभूषित हो अपने २ सन्मान मर्यादाको भली प्रकारसे स्थित रखनेमें समर्थ थे । एक समय उनके गौरवसे भारतभूमि प्रतिष्ठित हो गई थी; एक समय भट्टकवि और चारण लोग अभिमानपूर्वक उच्चस्वरसे उनका यश गाते हुए भारतके नगरों २ में घूमते थे । किंतु भारतके अभाग्यसे वह सब प्रकाशित गौरव आज मनुष्यमात्रके नेत्रोंसे दूर हो कालसागरमें विलीन हो रहा है । इस ही कारण आज नयनपालके वंशवालोंकी क्रियाएँ पौराणिक लीलाके स्थानमें प्राप्त हुई हैं ।

जैसे बुझनेके समय दीपक एकबारगी प्रज्वलित हो उठता है, वैसे ही मिटतीके समय कन्नौजराज्यका गौरव पहिलेसे दूना हो उठा था । इस अत्युन्नतिका सविस्तार वर्णन मुसल्मानोंके इतिहास और महाकवि चंदवरदाईके अमृतमय ग्रन्थमें भली प्रकारसे देखा जाता है । और जब हम देखते हैं कि राठौरोंके प्रचंड शत्रु चौहानोंने भी निश्चल भावसे उनकी उस अत्युन्नतिका वर्णन किया है, तब कन्नौजकी दशाको विचार कर विना आंसू बहाये नहीं रहा जाता। हाय !

जो राठौर वीर नयनपालने अपनी विजयपताकाको जिस कन्नौजमें स्थापित किया था, एक समय उसका विस्तार पंद्रह कोश (३० मील) में था। एक समय उस राठौर वंशकी बिशाल सेना "दलपिङ्गल" के नामसे प्रसिद्ध थी, इसका तात्पर्य्य यह है कि इस पराक्रमी सेनाको अधिक संख्याके कारण कूच करनेमें पडाव करना पडता था; जिसके विषयमें चंदकवि लिखता है कि, कूचमें जब सेनाकी हरावल रण–क्षेत्रमें पहुँच जाती थी तब उस समय चंदावल सेना अपने स्थानसे चलती थी ।

वह बलवान और असंख्य राठौर सेना संसारकी किसी जातिकी बलिष्ठ सेनाके साथ हर प्रकारसे लडने योग्य थी । सूर्य्यप्रकाश ग्रन्थमें उस विशाल सेनाका परिमाण इस प्रकारसे लिखा हुआ है।अस्सी हजार कवच--धारी वीर, तीस हजार सवार पाखरवाले

१ यती । २ घोडे या हाथीके बख्तरको पाखर कहते हैं (जिरह बख्तर)

तीन लाख पैदल, और दो लाख धनुष और फरशाधारी (सफरमैना) सिपाही थे इसके अतिरिक्त काले बादलोंके समान मतवाले हाथियोंका भी एक झुण्ड युद्धक्षेत्रमें जाता था।

इस बलवान् विशाल सेनाको लेकर एक समय राठौर वीर सिन्धुनदीके सुदूर-स्थित यवनराजका प्रचंड बल रोकनेके निमित्त भयानक समरभूमिमें गये थे। जिस दिन सिन्धुनदीको पार कर गोर और ईरानके बादशाह भारतवर्षमें आये, उसी दिन समरकुशल जयसिंह उनकी प्रचंड गति रोकनेके निमित्त उनके सन्मुख हुआ। दोनों दलोंमें बहुत समयतक घोर युद्ध हुआ। उस युद्धमें दोनों ओरकी असंख्य सेना मारी गई। रक्त बहकर सिन्धुनदीका नीला जल लाल हो उठा। किंतु हबशी राजा और उसके फरंग * वीर कन्नौजपतिकी सेनासे हार गये। उसी दिनसे सिन्धुनदीका सुर्खाब[2] नाम हुआ।

जो चौहान कि, राठौरोंके पुराने शत्रु थे, उनका भट्टकवि चन्द भी महाराज नयनपालके वंशवालोंके गौरवको बखान किये विना नहीं रहा। वह उनको माण्डलीककी उपाधि देकर वर्णन करता है कि, उन्होंने उत्तरदेशके[3] माण्डलिक यवन शहाबुद्दीन गोरीको परास्त कर उसके वशवर्त्ती आठ बादशाहोंको कैद कर लिया। केवल यही नहीं; अनेक वीर पराक्रमी हिन्दू राजा भी इनके प्रकाशित पराक्रमरूपी आगके सामने अपने सन्मान और गौरवकी आहुति देते थे।

अनहलवाड़ा यानी पत्तनके अधिपति सोलंकी राजा सिद्धराज भी इनके अमित भुजबलसे दो बार पराजित हुआ था। इससे राठौर राज्यकी प्रभुता नर्मदाके दक्षिण किनारे तक फैल गई थी। गर्वित राठौर राजा जयचंद केवल मनुष्योचित सन्मान पाकर सन्तुष्ट न हुआ। यहाँतक कि, उसने बडे भारी राजसूय यज्ञका अनुष्ठान कर देवताओंकेसे सन्मान पानेकी चेष्टा की थी। पौराणिक हिन्दू–राज समाजमें वह भारी यज्ञ जिस प्रकारकी धूमधामसे होता है. उसका विचार करनेसे किस भारतवासीका हृदय आनन्दसे खिल न उठैगा?

१। इस महायज्ञके सब काम, यहाँतक कि, अतिसाधारण द्वारपाल आदिके कामोंको भी राजालोग करते हैं। महाराज युधिष्ठिरके उपरान्तसे अबतक कोई हिन्दू राजा इस यज्ञको नहीं कर सका था। यहांतक कि, शकाब्द राजा विक्रमादित्यको भी यह असीम देव–सन्मान नहीं प्राप्त हुआ। भारतके समस्त राजाओंको निमंत्रण पत्र भेजा गया। उसके यज्ञकी धूमधाम और तैयारीकी बात सुनकर समस्त भारतवासी चमत्कृत हुए। सभी लोग जयचन्दको धन्यवाद देने लगे। निमंत्रणपत्रोंमें यह भी

---

१ बरदाई ग्रन्थमे देखा जाता है, कि फरंग गण शहाबुद्दीनके दलमें नियुक्त थे किन्तु किस प्रकारसे हबशीराज्यके दलमे आये, इसका भली प्रकारसे निश्चय करना कठिन है, जान पडता है कि, यह जेरुसलमसे भगे हुए किसी क्रूजेट सेनाके होंगे। २ रक्तजल। ग्रे० टी०। ३ उत्तर देशके राजाओंसे अभिप्राय सिंधुनदके पश्चिम यवन राजाओंसे है।

लिखा गया कि, राजकुमारी संयोगिताके स्वयंवरके साथ ही इस महायज्ञका समारोह होगा। अर्थात् यज्ञमें आये हुए राजा महाराजाओंमेंसे संयोगिता × अपने लिये इच्छित वर ढूँढ लेगी।

देखते २ यज्ञका दिन आ उपस्थित हुआ। निमंत्रित राजालोग अपनी अपनी सेनासमेत आकर उस यज्ञमें सम्मिलित हुए। उन सबके आनेसे कन्नौज नगरने एक अपूर्व शोभा धारण की। कविवर चंदभट्टने इस अपूर्व शोभाका भली प्रकारसे वर्णन किया है। भारतके सभी हिन्दूराजा आये परन्तु चौहानराज पृथ्वीराज और गहलोत राजा समरसिंह * जयचन्दके उस सन्मानको अयोग्य विचार यज्ञके निमंत्रणमें न आये इस कारण जयचन्दने उन दोनोंकी सोनेकी प्रतिमाएँ बनवा उन्हें अति नीच और साधारण टहलके स्थानपर नियत किया। पृथ्वीराजको अत्यन्त तिरस्कृत करनेकी इच्छासे जैचन्दने उसकी मूर्त्तिको द्वारपालकी जगहमें खडी करवाया। इन सब समाचारोंको पृथ्वीराजने भी सुना तब क्रोधके कारण उसका वीर हृदय उमड पडा। वह प्रेम और बदला लेनेमें प्रसिद्ध था। उसने अपनी सारी अवस्था धनुर्विद्यामें बिताई थी। अस्तु उसने प्रतिज्ञा की कि-"दुष्ट जयचन्दके यज्ञको विध्वंस करूंगा और उसीके सामने उसकी पुत्रीको हरलाऊंगा।" चौहान वीर पृथ्वीराज इस कठोर प्रतिज्ञाके पालन करनेमें सब प्रकारसे शक्तिसम्पन्न और समर्थ था। किन्तु इससे राठौर और चौहानोंमें जो विवाद उत्पन्न हुआ, वह थोडेमें ही शान्त न हो सका। उसके शान्त करनेमें दिल्ली और कन्नौजके जीवनस्वरूप अगणित राजपूत समरक्षेत्रमें मारे गये। इस महाचरित्र वर्णनको चन्दकविने विस्तारसे ६९ खण्डोंमें समाप्त किया है। उसने कहा है कि, पृथ्वीराजके संयोगिताका हरण कर लेनेपर क्रमशः पाँच दिनतक घोर युद्ध हुआ था। यह भयानक गृहविग्रह ही भारतका कालस्वरूप हुआ। क्योंकि इस व्यर्थ विग्रहमें दोनों ओरका सेनाबल नष्ट हो जानेसे चतुर गोरी सुलतानने हिन्दोस्थान पर हमला किया। उसके उस हमलेके रोकनेके निमित्त दृषद्वतीके तटपर जो युद्ध हुआ; उसीसे हिन्दोस्थानकी स्वतंत्रताका सर्व नाश हुआ।

इस समयमें और इसके बहुत शताब्दी पहलेसे यहाँतक कि, महमूदके आनेके पहिले भारतवर्ष नीचे लिखे हुए चार राज्योंमें बटा हुआ था।

प्रथम। दिल्ली, तँवर और चौहानोंके अधीन।
दूसरे। कन्नौज,-राठौरोंके अधीन।
तीसरे। मेवाड़,-गहलोतोंके अधीन।
चौथे। अनहलवाडा:-चावडा और सोलंकियोंके अधीन।

इन प्रत्येक बडे बडे राज्योंकी अधीनतामें छोटे छोटे असंख्य राजा निवास करते थे। वे सब वशवर्ती राजालोग उस समयकी राजनीतिके अनुसार अपने २ स्वामियोंकी

× संयोगिता * पृथ्वीराज रासोंमे समरसिंहजीकी स्वर्ण प्रतिमा बनाये जानेका वर्णन नहीं है।

आज्ञा पालन करते थे, और युद्धकालमें उनके झंडेके नीचे खडे हो जानेपर खेलकर युद्ध करते थे।

दिल्ली और कन्नौज दोनों स्वतंत्र राज्य होकर परस्पर बहुत ही निकट बसे हुए थे। दोनोंके बीचमें केवल कालीनदी बहती थी, जिसको यूनानी भूगोलवेत्ताओंने कालिन्दी लिखा है। दोनों राज्योंके वशवर्ती राजा प्रायः समान ही थे। कालीनदीसे सिन्धुनदीके पश्चिम किनारे तक और हिमालय पहाडके नीचेसे मारवाड और अर्वली पर्वतोंतक दिल्लीका विशाल राज्य फैला हुआ था। इनमें उत्तराधिकारी चौहानोंके १०८ सूबे थे। जिनमें बहुतसे अधीन राजा थे; इस बडे विशाल राज्यका राजा अनंगपाल तोमर था। चौहान पृथ्वीराजने इस राज्यको प्राप्त करके * एक समय एक सौ आठ प्रधान सामन्त राजाओंपर शासन किया था।

गर्वोन्नति और कन्नौजकी प्रभुता उत्तरमें हिमालय पर्वत, पूर्वमें काशी, और चम्बल नदीसे पार हो "बुन्देलखण्ड तक फैली थी। दक्षिणमें यह मेवाडकी उत्तरी सीमासे रुकीहुई थी। मेवाडकी सीमा उत्तरमें अर्वली पर्वत और दक्षिणमें मुरधर (वशवर्ती कन्नौज) और पश्चिममें अनहलवाडेसे थी, और अनहलवाड़ा दक्षिणमें समुद्र तक व पश्चिममें सिंध व अटकतक फैला था। इसकी उत्तरी सीमामें जंगल था।

भट्टग्रन्थोंमें कहा है कि, यह सब राजा प्रायः एक दूसरेके विरुद्ध तलवार लेकर एक दूसरेके हृदयका रक्त गिराते थे। इन कई एक राज्योंका राजनैतिक जीवन जबसे आरम्भ हुआ है तबसे देखा जाता है कि, गहलोतों और चौहानोंमें प्रायः मित्रता और राठौरोंमें प्रायः प्रचंड शत्रुता रही है। राठौरों और तोमरोंकी शत्रुता ही भारतवर्षके सर्वनाशका प्रधान कारण हुई है परस्पर विवाहोंके संबधसे नित्यशः के क्लेशशान्त हो गये पर आंतरिकवैमनस्य न गया इस कारण फिर उभर खडे हुए। यह बात प्राचीन इतिहासोंसे ही पाई जाती है।

महमूद गज़नवीके पश्चात् यदि कोई यात्री योरुपके दरबारोंमें घूमताहुआ और बादशाह तैमूरके मार्गपर वेजिनटियम यानी गज़नी (जो हिन्दुओंकी लूटसे भरा हुआ था) होता हुआ दिल्ली कन्नौज व अनहलवाड़ाकी सैर करता तो उसको राजपूतोंकी सभ्यता व शिल्प-विद्या सबसे बढ़ चढ़ कर विदित होती। जो शस्त्रविद्यामें भी किसीसे कम नहीं थे।

पश्चिमके नियमानुसार उस समय भारतवर्षमें प्रत्येक राजधानीका अधिकार इस प्रकार था कि, युद्धके समय प्रजामेंसे सेनाका चुनाव होता था सौभाग्यवश योरुपमें जम्भूरीराज्य + नियमका प्रवेश हो गया था जिससे वहाँके प्रबन्धमें जान पड गई परन्तु भारतवर्षकी वा एशियाकी तृतीय राजधानी राज्यके सर्वाधिकारसे पृथक् रही, जो स्थायीरूपसे सहायता हो गई थी हिन्दुस्थानमें उस समय शस्त्रविद्यासे उत्तम कोई काम

---

* राजा पृथ्वीराज अनंगपालकी लडकीका लडका था इसलिये अनंगपाल उसको अपना उत्तराधिकारी बनाकर आप बद्रिकाश्रमको तप करने चला गया था। + प्रजाधीन राज्यको फारसीमे जम्भूरी-सल्तनत कहते हैं।

नहीं गिना जाता था। इस कारणसे बारम्बारके युद्धोंसे राजपूत जाति उत्तरीय बादशाहोंसे लड़कर परास्त हुई। शहाबुद्दीन गोरीने इन झगड़ोंसे लाभ उठाकर भारत पर आक्रमण किया। उसने सबसे प्रथम दिल्लीके चौहान राजा पृथ्वीराजको परास्त किया, जो उस समय भारतवर्षका सबसे बड़ा राजा था।

जिस दुर्दिनसे दृषद्वतीके रक्ताक्तजलमें भारतके गौरवका सूर्य्य डूबा उसी दिनसे विजयी शहाबुद्दीनने पाण्डव वीर राजा युधिष्ठिरकी राजधानी पर अधिकार कर जयचंद पर आक्रमण किया। इसके पहले ही जयचंद पृथ्वीराजके साथ युद्ध करके अपने सेना-बलको खो चुका था इस समय इस आईहुई घोर बिपदको देख यथाशक्ति सेना इकट्ठी करके वह शहाबुद्दीनके सन्मुख हुआ। किन्तु उसके सब यत्न व्यर्थ हुए। इस बिजयी आक्रमणकर्त्ताके प्रचंड बलको वह न रोक सका। अन्तमें जैचंदने गंगापार भाग जानेकी इच्छा की, किन्तु यह भी न हो सका गंगाके अथाह जलमें नौका डूब जानेसे जय-चंद जीवित ही जलनिमग्न हुआ यह शोचनीय घटना संवत् १२४९ (११९३ ई०) में हुई। वे छत्तीसराजा जो हिमालयसे विन्ध्याचल तक अधिकार रखते थे और जो इतने दिनों तक राठौर सेनाकी विजयपताकाके नीचे खड़े होते थे, उसी दिनसे वे अपने २ राज्योंको चले गये उसी दिन कन्नौजके विशाल राज्यक्षेत्रसे महाराज नयनपालका लगाया हुआ वंशवृक्ष सदैवको उखड़ गया किंतु तौ भी वह एकबार ही नाश न हो गया। भविष्य भावीको यह स्वीकार था राज्यके वंशज अभी पीढियोंतक स्थित रहें; और इसी वंशकी इकतीसवी पीढ़ीमें इसी राज्यवंशकी सन्तान राजराजेश्वर राजा मान बड़े प्रताप-शाली तेजस्वी और राजा जयचंदके समान मरुदेशके रत्न हो, जिनको दैवी सन्मान मिलै उनके प्राचीन पुरुषा नयनपाल १४ वी शताब्दीके पूर्व हुए उसी समय उसने कन्नौजमें राज्य स्थापित किया, इस प्रकार १३६० वर्षोंकी वंशावलीका पता लगाकर जो कुछ अभिमान करै उचित है, और इतने ही इतिहासपर संतोष कर नयनपालके पश्चा-त्का वृत्तान्त कवियोंके छन्दों वा पुराणोंकी गाथाओंमें छोड देवे। भाग्यवश कुछेक राठौर वीरोंने उस उखडे हुए वंशवृक्षको भारतके रेगिस्तानमें फिर लगाया। वह फिर लगाया हुआ राठौरोंका वंशवृक्ष मरुभूमिकी परम बालूके ऊपर थोडे ही समयमें सजीव हो उठा और उसकी बड़ी बड़ी शाखाओंने चारो ओर फैलकर राठौरोंके गौरवको पुनः प्रकाशित कर दिया।

द्वितीय अध्याय २.

जयचन्दके पोते सियाजी और सेतरामका देश छोडना; पश्चिमी जंगलमे उनका प्रवेश; सिंधुतक फैले हुए मरुभूमिके अधिवासी जनोंका वृत्तान्त; कोलूमढके राजाके निकट सियाजीको पद प्राप्त होना. फूलराके प्रसिद्ध डाकू लाखाफूलाणीके साथ उसका युद्ध; सेतरामका मारा जाना; सोलकी राजकुमारीके साथ सियाजीका विवाह; द्वारकाकी ओर उसका जाना; लाखा फूलाणीके साथ घोर युद्ध महवेकी डाबी जाति और खेडधरकी गोहिल जातिका मारा जाना; खेडदेशमे सियाजीका वास पालीके ब्राह्मणोंसे उसका पृथ्वी मांगना; सियाजीका पहाडी जातियोंके विरुद्ध पालीके ब्राह्मणोंकी सहायता करना; ब्राह्मणोंका उसको पृथ्वी देना; उसका स्वीकार, पुत्रजन्म, ब्राह्मणोंको मारकर सियाजीका उनके ग्राम छीनना, तीन बेटोंको छोडकर सियाजीकी मृत्यु; उसकी विश्वासघातकता; सियाजीके जेठ पुत्र आसमानका राज्याभिषेक, सोनग और अज आसथानकी मृत्यु; दहडका उसके सिंहासन पर बैठना, दहडकी कन्नोज पर चढाई और पुनरधिकारकी चेष्टा; उसका मारा जाना, रायपालका अभिषेक, उसकी प्रति हिंसा; उसके तेरह पुत्रोंका वर्णन; कन्नरावका सिंहासनपर बैठना, राव जालनसी राव छाडो लीजे और दूसरे जातिवालोंके साथ इनका विवाद, भीनथालकी जय; राव सलका, राव वीरभद्रो राव चूडा, और उसका मडोराधिकार, उसकी अन्यान्य जीतोंका वर्णन मडोरके परिहारराजकी दुहिताके साथ उसका विवाह. गहलोत कुलके साथ उसका सम्बन्ध सम्बन्धका फलाफल; अडमल और साधूका विवाह, चूडाका मारा जाना, राव रिडमल्लका सिंहासनपर बैठना उसका चित्तौरमे निवास करना. उससे अजमेरका जीता जाना; उसका मारवाडको विभाग करना, राव रिडमल्लका मारा जाना; उसके चौबीस पुत्रोंका वर्णन; और सामन्तोंकी फहरिस्त।

जिस दिन यवनवीर शहाबुद्दीनके प्रचंड बाहुबलसे कन्नौजका राज्य चूर्ण हुआ, जिस दिन स्वदेशद्रोही जयचन्दने गंगाजीके पवित्र जलमें गिरकर अपने किये हुए पापोंका प्रायश्चित्त किया, उसी दिनसे अठारह वर्षके पीछे संवत् १२६८ (१२१२ ई.) में उसके पौत्र सियाजी और सेतराम अपनी जन्मभूमिको छोडकर दो सो साथियोंके साथ मरुभूमिकी ओर गये। वे किस कारणवश अपनी मातृभूमिसे चले गये, इस विषयमें भिन्न २ भट्टग्रन्थोंसे भिन्न २ मत पाये जाते हैं। कोई कहता है कि उनका प्रधान अभिप्राय पुण्यतीर्थ द्वारिकाको जानेका था। किसी ग्रन्थमें देखा जाता है कि, उद्यम और व्यापारकी सहायतासे नवीन स्थानमें जाकर भाग्यकी परीक्षा करें और वहां सुख व स्वाधीनतासे दिन बितावें, इसी इच्छासे उन्होंने अपने देशको छोड दिया था। इन दोनों मतोंमें कौन मत सत्य है, वह सियाजीके भविष्य चरित्रोंके देखनेसे सहजमें ही स्थिर किया जा सकता है। सियाजी अभिमानी राठौरकुलका योग्य वंशधर था। पितृ पुरुषोंके बीते हुए गौरवकी स्मृतिको अपने हाथसे त्याग कर और नाश हुए गौरवका उद्धार न करके यथार्थ राजपूत कभी भी मुनिवृत्तिका अवलंबन नहीं कर सकता अस्तु श्योसियाजी ऐसा नहीं कर सका; यदि वह ऐसा करता तो हिन्दोस्तानके नकशेमें मारवाड देश स्थान पाता या नहीं इसमें भी सन्देह है।

राठौर कुलका भविष्य भाग्यरूपी प्रकाश जो धीरे २ प्रकाशित हो रहा था उसको सियाजी न जान सका। और वह उसे मुट्ठीभर सेनाबलको लेकर मरुभूमिके गरम बालुका--राशिके ऊपर भ्रमण करने लगा। कहां जाऊं ? किस उपायसे सौभाग्यलक्ष्मीकी कृपाकटाक्ष प्राप्त कर सकूं? वह इसका कुछ भी निश्चय न कर सका; किन्तु कठोर उत्तम और कामकी सहायतासे मूलमंत्रके साधन करनेमें दृढप्रतिज्ञ हो उसने भीषण कार्य क्षेत्रमें प्रवेश किया। इसी मंत्रके साधनके प्रभावसे उसने कुछ ही समयमें जिस विस्तारवाले भूभागपर आधिपत्य स्थापित किया था। वह यमुना, सिंधु और गारानदी तथा अर्वलीकी ऊंची चोटियोंसे चारों ओरसे घिरा हुआ है। इन चारों सीमाओंसे घिरे हुए विशाल देशमें जो भिन्न २ जातियें निवास करती हैं उनका संक्षिप्त वृत्तान्त कहा गया है। कछवाहोंने भी उस समय तक संसारमें राजनैतिक प्रतिष्ठा न प्राप्त की थी। इनके स्वर्गीय राजा पजोनीमें बीते हुए मुसल्मानी हमलोंमें कन्नौजके युद्धमें प्राणत्याग किये थे। इस समय उसीका पुत्र मलीसी × कछवाह कुलके सिंहासनपर बैठा अजमेर अमेर साँभर और दूसरे चौहानराज्य मुसल्मान राजाओंके हस्तगत हो गये थे, किन्तु अवलीके अनेक किले इस समय भी राजपूतोंके वशमें रहे। विशेषकर नाडोल नगर मुसल्मानोंके घोर आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ हुआ था। उस समय बीसलदेवका एक वंशधर उस नगरका अधिपति था। इन सबोंमेंसे मरुभूमिका गौरवस्वरूप मडोर नगर, प्राचीन परिहार कुलके गौरवकी ध्वजाको अपने विकट दुर्गके शिरमें धारण किये हुए दुर्गसहित खडा है। उस समय परिहार कुलकी दूसरी शाखाएं ईदां गोत्रमें उत्पन्न हुए राणा मानसिंहके हाथसे मुंदोरके अधीन शासित होती थीं। मानसिंह अपने राज्यके चारों ओरवाले सामन्तोंसे पूजित और सन्मानित हो मरुभूमिमें श्रेष्ठ राजा गिना जाता था। उत्तरमें नागोर कोटके निकट माहिलगण निवास करते थे। यद्यपि कालके कठोर हाथोंके घोर प्रहारसे आज हिन्दोस्थानके नकशेमें इसका चिह्नतक नहीं पाया जाता, किंतु उस समय यह अत्यन्त प्रतिष्ठित नगर था, इसका विवरण बहुतसे भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है। उस समय इस मोहित कुलके अधिपतिने ओडिट नामक नगरमें अपनी राजधानी स्थापित कर १४४० गावोंके ऊपर अपने राज्यको फैलाया था। जिस स्थानमें आजकल बीकानेर राज्य स्थित है उस स्थानसे भटनेरतक समस्त प्रदेश उस समय जाट जातियोंमें बहुत ही छोटे२ स्वाधीन हिस्सोंमें बटा हुआ था। इन सब हिस्सोंके पूर्वसे गारानदीकी रेतीली पृथ्वीतक समस्त पृथ्वीका भाग जो पाया, दया और लंगा *आदि कई एक असभ्य जातियोंके अधीन था। जैसलमेरमें भाटी उसके दक्षिणमें सोन और सिन्धु व कच्छ प्रदेशमें जाडेचा जाति बसती थी। इनके और आबू व चंदावतीके पंवारोंके मध्यस्थलों-

---

× पृथ्वीराज रासामे इसका नाम मलैसी लिखा है। * उस समय इस प्रदेशमें दूसरी जातियाँ निवास करती थीं; किन्तु आजकल उनका पतातक नहीं लगता, उनमेंसे बहुतसी तो शत्रुओंके हाथमे मारी गई और शेषने मुसल्मान धर्मको स्वीकार कर अपने प्राचीन नामको तिलाञ्जलि दे दी।

सोलंकी रहते थे। इसके अतिरिक्त ईडर और मेवाडके दैवीगण, खेडधरके गोहिलगण, साचोरके देवडागण, झालोरके सोनगरा ओडिनके मोहिलगण, और सिनलिके सालागण आदि अनेक प्राचीन जातिएँ समस्त प्रदेशके बीचमें इधर उधर बहुत ही टूटी फूटी अवस्थामें बास करती थीं। इनमेंसे बहुतोंने तो राठौरोंके जलते हुए विक्रमाग्निमें अपने कुलकी मर्यादा और निवासभूमिकी आहुति दे दी थी। शेष अब उनके स्वाधीन रहकर सामन्त रूपसे निवास कर किसी प्रकार सुख दुःखसे जीवनको विता रहे हैं।

राठौर वीर सियाजीने अपने बाल्यावस्थाके लीलाक्षेत्र कन्नौज नगरको छोड दिया जिस राज्यमें उसके पितृपुरुषोंने बडे गौरवसहित राज्यकार्यको निबाहा था, आज उसको अत्यन्त ही दीन हीन भावसे वहांसे भागना पडा। कदाचित् आज समस्त जीवनके निमित्त उससे उस भूमिका सम्बन्ध टूट गया। अब वह उस " स्वर्गादपि गरीयसी "जन्मभूमिको न देखने पावेगा, अब उस गंगाजीके किनारे बसे हुए कन्नौजके ऊँचे महलोंकी अट्टालिकाओंपर बैठकर लहराती हुई गंगाजीके अनन्त शब्दको न सुन सकेगा। वह राजपुत्र गौरवान्वित राठौर वंशका एक योग्य वंशधर है। कहाँ तो वह सिंहासनपर बैठता, कहाँ आज निर्वासित और निराश्रयकी भाँति देश देशमें भटकता फिरता है। सियाजीके हृदयमें इस प्रकारकी नाना चिंताओंका उदय होने लगा। परंतु वह क्षणभरको भी न घबडाया। वह जानता था कि आपत्तिका सहन करना ही राजपूतोंका प्रधान कर्तव्य है; क्योंकि आपत्ति ही मनुष्यको सुखकी सूचना देनेवाली है। उसने उन मुट्ठीभर साथियोंको साथ लेकर अपने बाल्यकालके शांतिनिकेतन, आशाकी बिलासभूमि पिताके राज्यसे बाहर हो भारतके विशाल रेतीले मैदानमें प्रवेश किया। चारोंओरसे अनंत रेतका सागर सूर्य्यकी किरणोंसे झुलकर उसके जले हुए हृदयके समान धुधकार रहा है; सामनेसे अगणित रेतके कण उड उड कर उसके निष्फल आशा भरोसेके समान उसको अत्यंत विरूप कर रहे हैं। तो भी सियाजी क्षणभरके निमित्त निराश न हुआ। तरंगसे चलायमान काठके टुकडेके समान भाग्यके प्रबल बहावमें बहते २ अंतमें वह कोलूमढनामक स्थानमें पहुँचा। आजकल जिस स्थानमें बीकानेर नगर वसा हुआ है, कोलूमढ वहांसे दश कोश यानी २० मील पश्चिमकी ओर है। उस समय वहां एक सोलंकी राजा राज्य करता था। वह सियाजीसे बहुत आदर संमान शिष्टाचारके साथ मिला।

सोलंकी राजाके आदर करने और उदार व्यवहारसे सियाजी अत्यंत ही प्रसन्न हुआ और उसके किये हुए उपकारका बदला चुकानेकी इच्छा करने लगा। उस समय लाखा फूलाणी नामक एक वीर राजपूत उस देशके निवासियोंको अत्यंत दुःख दे रहा था। लाखा फूलाणी प्रसिद्ध जाडेचा कुलमें उत्पन्न हुआ था; उसका फूलरा दुर्ग मरुभूमिकी अनन्त वालुका राशिके ऊपर स्थित हो शत्रुओंके पक्षमें सब प्रकारसे दुर्गम और अटूट भावसे खडा था। लाखा स्वयं ऐसा दुर्द्धर्ष था कि सतलजसे लेकर समुद्रके किनारे तकके सब

देश उसका नाम सुनते ही काँप उठते थे ।*सोलंकी राजाकी आज्ञासे राठौर वीर सियाजीने आज उस वीर लाखाके विरुद्ध तलवार धारण करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की । धीरे २ युद्धकी तैयारी हुई। सोलंकी राजाने सियाजीको सेनापति बनाकर समस्त सेनाका भार उसीके हाथमें दे दिया । उसका भाई सतराम और राठौर वीर भी उसकी सहायताके निमित्त युद्धक्षेत्रमें आये । धीरे २ दोनों दलोंमें लडाई आरम्भ हुई । सियाजी अपने घोर शत्रु लाखाको जीत लिया । परन्तु वह जीत सहजमें न प्राप्त हुई । उसके बदलेमें उसके जीवनका संगी भाई सेतराम और दूसरे राठौर वीरोंके हृदयका रुधिर भी बहा इस युद्धमें जय पानेसे आनन्दित हो कोलूमढका राजा राठौर राजकुमारसे बडे आनन्दसे गद्गद हो कर मिला, और अपनी बहिनका व्याह उसके साथ कर उसे अपने साथ एक दृढ सम्बन्धसूत्रमें बांधा । तदनन्तर जय पानेके पुरस्कारको साथ ले सियाजी द्वारकाकी ओर बढा । कुछ दिनोंके उपरान्त अनहलबाडा पट्टन उसको दिखाई दिया । श्रम दूर करनेके अभिप्रायसे वह उस नगरमें उपस्थित हुआ । वहाँके राजाने उसका यथायोग्य सत्कार किया । अनहलवाडामें ही सियाजी था कि, उसी समय एक दिन समाचार आया कि दुष्ट लाखा फूलाणीने उस नगरपर आक्रमण किया है । लाखाके आक्रमण करनेसे पत्तनका राजा अत्यन्त भयभीत हो गया था; किन्तु सियाजी उसके भयको दूर कर स्वयं ही उस दुर्द्धर्ष जाडेचा वीरके साथ द्वंद्वयुद्धमें प्रवृत्त हुआ।पहले लाखा उसके प्राणप्यारे भाई सेतरामको मारकर स्वयं निर्विघ्नतासे युद्धक्षेत्रसे भाग गया था। आज उस भाईके मारनेवालेके हृदयके रुधिरसे सियाजी दारुण भ्रातृशोकाग्निको शान्त करना चाहते थे। घोर बदला लेनेके प्यास और यशकी इच्छासे उत्तेजित हो राठौरवीरने लाखाके साथ भीषण युद्ध आरम्भ किया। दोनों ओरकी सेना दूर रहकर चित्रलिखेके समान खडी हो इन दोनों राजपूतवीरोंके अद्भुत रण-कौशलको देखने लगी । उनके घोर असियुद्धसे रणभूमि बारम्बार कांपने लगी आपसमें तलवार लडनेके झनझन शब्द और उन दोनों वीरोंके ललकारके अतिरिक्त उस समय और कुछ भी न सुनाई देता था। किन्तु लाखा आज बुरी सायतमें अनहलवाडा पट्टनमें आया था। बुरी साइतमें वह सियाजीके साथ द्वंद्वयुद्धमें प्रवृत्त हुआ था। भाईके शोकसे दुःखित बदला लेनेकी इच्छावाले राठौरवीरके हाथसे वह आत्मरक्षा न कर सका। सियाजीकी प्रचण्ड तलवारके आघातसे उसका शिर दो टुकडे हो पृथ्वीपर गिर पडा । यह देखते ही पट्टनराजकी सेनाके जय २ कार शब्दसे आकाश गूंज उठा।

---

* यद्यपि लाखा फूलाणी अत्यन्त दुर्द्धर्ष था परतु उसने कभी निराश्रयों और निर्बलोंको नहीं सताया इसके अतिरिक्त उसने दान ध्यान और अनेक अच्छे काम भी किये थे इस सम्बन्धमें लोनी नदीसे सिन्धु नदीके सागर संगम देशोंतक उसके प्रशंसा सूचक गीत सुने जाते है। राजस्थानके ६ प्राचीन नगर इसके वशमें थे । उन नगरोंके नाम नीचे लिखे पद्यसे भली भांति जाने जाते है ।

"कशपगढा सूरजपुरा, वशकगढा ताको । अंवानीगढ जगरूपुरा, ये फुलगढइ लारको ।"

अर्थात् कश्यपगढ, सूर्यपुर ,वशकगढ, अन्धानीगढ, जगरूपुर और फूलगढी, लाखाके वशमे थे ।

यह जयशब्द अनन्त आकाशमें पहुँच वायुके वेगसे चारों ओर फैल गया । जो लोग लाखाके अत्याचारसे पीड़ित हो रहे थे, उन सबोंने उस जयशब्दको आनन्दित हृदयसे सुना। और सतलजसे लगाकर समुद्र किनारे तकके समस्त देशवासियोंने दोनों हाथ उठा २ कर राठौर वीरको अशीर्वाद दिया।

दुर्धर्ष लाखाके रुधिरसे भाईकी दारुण शोकाग्निको शांतकर सियाजीका हृदय आनन्दसे फूल उठा । अब उसको तीर्थयात्रा करनी शेष रही । वास्तवमें उसने इस इच्छाको पूर्ण किया या नहीं इसका कोई वृत्तान्त अबतक नहीं पाया जाता । भट्ट ग्रंथोंमें लिखा है कि, उस समय वह: राजपूतोंके प्रधान मंत्रसे चलायमान हो अटल प्रतिष्ठा प्राप्त करनेमें तत्पर हुआ था पट्टनसे बिदा होकर सियाजीने लूनी नदीके किनारे कुछ दिनों वास किया । वहां महवा नामक एक नगर था वहां छत्तीस राजकुलके मँके-डावी (* दावी) क्षत्री वास करते थे। सियाजीने उन सबको मारकर उस नगरपर अपना अधिकार किया। राज्यका लोभ धीरे २ उसके हृदयमें दूना बढ़ गया । तब उसने निकट ही बसे हुए खेरधरके गोहिलोंको मारकर उनके देशमें अपनी विजयपताका फहरानेका संकल्प किया और उसका यह संकल्प थोडे ही दिनोंमें पूर्ण हो गया। गोहिलोंके राजा महेशदासने उसके हाथसे मरकर उसके सौभाग्यका मार्ग भलीप्रकारसे साफ कर दिया । अभागे गोहिल प्राण लेकर भाग गये । तब विजयी सियाजीने लूनी नदीके किनारे प्राचीन 'खेडनाथ' की लीलाभूमिमें राठौर कुलकी विजयपताका गाड़ी।

सौभाग्य-लक्ष्मीके प्राप्त होते ही मनुष्यके इच्छित कार्य्य शीघ्रतासे पूर्ण होने लगते हैं। खेड़धरमें निवास करनेके कुछ ही काल उपरान्त सियाजीको अपनी श्री बढ़ानेका एक और सुअवसर शीघ्र ही हाथ लगा। उसी समयमें उस प्रदेशके निकट पाली नामक नगरके प्रान्तमें कुछ ब्राह्मण निवास करके अतुल भूमि सम्पत्तिका भोग करते थे, किन्तु पर्वत निवासी मेर और मीना जातिवाले अकसर उनपर आक्रमण कर उन्हें अनेक प्रकारसे दुःख देते थे । शांतिकी इच्छा रखनेवाले ब्राह्मण उन दुष्टोंसे अपनी रक्षा होनेके किसी उपायको अबतक स्थिर न कर सके थे। इस समयके पराक्रमको सुन उन्होंने उसकी शरण और सहायता लेनेकी इच्छा की। तदनन्तर उन सबोंने मिलकर उसके निकट जा अपने समस्त वृत्तान्तको आदिसे अन्ततक कह सुनाया । सियाजीने उनसे सहायता करनेकी प्रतिज्ञा और थोडे ही दिनोंके उपरान्त अपनी प्रतिज्ञाका पालन कर उन शांतिप्रिय ब्राह्मणोंसे आशीर्वाद और धन्यवादको प्राप्त किया । किन्तु ब्राह्मण इससे भी निश्चिन्त न रह सके उन्होंने देखा कि, सियाजीके पाली नगरके निकटसे चले जानेपर दुष्ट पहाडी लोग फिर भी उनके ऊपर आक्रमण कर पहिलेके समान अत्याचार करेंगे ।

---

*दावी जाति ३६ जातियोंमेंसे है, उनके स्वतंत्र राज्यका यह अन्तिम वृत्तान्त है, मै इन देशोंकी यात्रामें काम्बेकी खाडीमें भावनगरके गोहिलोंसे मिला और उनके इतिहासकी अशुद्धि प्रगट की कि, उनका आना खेरधरसे लिखा है परंतु यह नहीं लिखा कि, खेरधर कहां है ।

यह विचार उन्होंने सियाजीको अपने ही निकट रखनेकी इच्छा कर उसको कुछेक पृथ्वी दी। सियाजी उस पृथ्वीको आदरसहित ग्रहण कर उन्हींके निकट वास करने लगा। सियाजीने जिस कोलूमढकी सोलंकिनीके साथ विवाह किया था, आज उसने यहाँ एक पुत्र उत्पन्न किया। सियाजीने कुलगुरुके कहनेके अनुसार नवकुमारका नाम आसथान रक्खा।

यद्यपि सियाजी इस प्रकारसे उन शान्तिप्रिय ब्राह्मणोंके बीचमें निवास तो करने-लगा किन्तु उसकी दुराकांक्षाकी कुछ भी तृप्ति न हुई। उसकी यही इच्छा थी कि * पालीनगरी और उसमें मिली हुई समस्त पृथ्वी मेरे वशमें हो जाय किन्तु किस प्रकारसे उसकी इच्छा पूरी हो, इसका वह कुछ भी उपाय निश्चय न कर सका। यद्यपि ब्राह्मणों-को मारकर उसकी इच्छा पूरी हो सकती है, किन्तु ब्रह्महत्या महापाप है। साधारण भूमिके निमित्त क्या सियाजी इस महापापमें लिप्त होगा? किन्तु नहीं, दुःखकी बात है कि, राठौर वीरके हृदयमें यह दुराकांक्षा इतनी बलवती हो उठी कि, उसने एक बार भी इस बातको न विचार जिन ब्राह्मणोंसे उसके सौभाग्यका मार्ग खुला था,आज उसने छातीमें पत्थर बांधकर कृतज्ञताके पवित्र मस्तकमें लात मार उन्हींके मारनेका संकल्प किया। सुना जाता है कि,उसकी उस सोलंकिनी स्त्रीने ही उसे इस पैशाचिक संकल्पके पूर्ण करनेको उभारा था। जो हो, सियाजी इस अनर्थ करनेवाली दुराकांक्षाके पूर्ण करनेका सुअवसर देखने लगा। एक दो दिन कर अंतमें होलीका त्योहार आ पड़ा। इस त्योहारके उत्सवकालमें सभी हिन्दू सब प्रकारकी चिन्ताओंको छोड़ श्रीकृष्णजीकी लीला के अनुरागसे फाग खेलकर समय बिताते रहते हैं। सियाजीने इस सुअवसरमें पालीके ब्रह्मणोंके अधिपतिको मार उनकी समस्त भूमि और सम्पत्तिपर अधिकार कर लिया। इससे सियाजीके नाममें सदैवको कलंककी कालिमा लग गई। किन्तु इस दुष्कर्मके उप-रान्त उसकी आयु भी शीघ्र ही क्षीण हो गई। ब्रह्महत्या और विश्वासघातकताके पाप-रूपी कीचमें हाथोंको फैलाकर उसने जिस सम्पत्तिपर अधिकार किया उसका एक वर्षसे भी अधिक भोग न कर सका। ब्रह्माके लेखको पूरा करके उसने इस लो-कसे बिदा ली।

सियाजीके तीन पुत्र हुए थे। उनमेंसे बड़ा आसथान मझला सियाजीसोनग और छोटा अज्ज था। राज्याधिकार पानेके नियमोंके अनुसार जेठा आसथान ही पिताकी

* पाली राजपूतानाके पश्चिम ओर एक बडी और प्रसिद्ध वाणिज्यकी मंडी है। यह प्रायः भीलवा-डेके समान है। यह चारों ओर ऊंची २ दीवारोंसे घिरी हुई है मरहठे शत्रुओंके घोर अत्याचारसे इसकी रक्षा करनेके निमित्त वह दीवारें बनी थीं। वह दीवारें (शहरपनाह) प्रायः आजकल टूटी फूटी पडी हैं। इसके भीतर दश हजार से भी अधिक घर देखे जाते हैं। पाली अत्यन्त प्राचीन कालसे प्रसिद्ध है, पाली जिस प्रकारसे बसा हुआ है उससे जाना जाता है कि यह किसी समयमें उत्तर हिन्दो-स्थान और समुद्रके तटस्थ देशोंकी एक बडी मण्डी थी। तिब्बत और उत्तर हिन्दोस्थानसे बहुतसी सामग्रियाँ यहीं आकर इकट्ठी होतीं और फिर यहींसे देशदेशान्तर अरब, यूरोप अफ्रीका आदि देशोंको जाती थीं। पहले प्रतिवर्ष पालीमें ७५००० रुपया चुंगीकी आमदनी थी।

गद्दीका अधिकारी हुआ। एक भट्टग्रन्थमें देखा जाता है कि, आसथानने गोहिलोंके हाथसे खेडधरको छीन लिया था। पिताके दोष गुणके अनुसार पुत्रमें भी बहुतसी दगाबाज़ी भरी थी। सियाजीने जिस प्रकार विश्वासघातकता और अधर्माचरणसे पालीपर अधिकार किया था, आज उसके जेठे पुत्रने भी उसी प्रकारके आचरणोंसे ईडरको जीत अपने छोटे भाई सोनगको वहांका अधिकार दिया।

ईडर नगर गुजरातकी सीमाके अन्तिम किनारेपर बसा हुआ है. उस समय यह डाबीवंशीय किसी राजाके अधिकारमें था। आसथानने चतुरता और विश्वासघातकतासे उस नगरके प्रथम राजाके मरनेपर वहांपर अपना अधिकार कर लिया। शोकसे विह्वल नगर निवासी राठौरवीरके ऐसे अन्यायाचरणको न रोक सके, सोनग वंशवाले हातौदिया राठौरके नामसे प्रसिद्ध हुए। तीसरे भाई अज्जलने भी दोनों बडे भाइयोंके समान घोर हिंसावृत्तिके द्वारा उभडकर सौराष्ट्रके दूसरे प्रान्त तक अपनी प्रचंड तलवार चलाई थी। सौराष्ट्रके पश्चिमओर ऊखामण्डल नामक एक नगर था प्राचीन सौरवंशी भीखमशाह नामक एक राजा उस समय वहां राज्य करता था। हिंसक अज्जने उसका वध कर उसके राज्यपर अधिकार कर लिया। ऐसा कार्य करनेके कारण ही उसके पुत्र पौत्र बाढेलाके नामसे प्रसिद्ध हुए।

इस विचित्र नामसे परिचित हो राठौरवीर अज्जके वंशवाले आज भी द्वारका और उसके निकटके देशोंमें वास करते हैं।

आसथान आठ पुत्रों* को छोडकर परलोक गया, इनमेंसे जेठा पुत्र दूँहड पिताके राज्य सिंहासनपर बैठा। उस अप्रसिद्ध और थोडे राज्यसे उसका हृदय तृप्त न हुआ। उसके हृदयमें एक इच्छा और भी बहुत दिनोंसे धीरे २ बढ रही थी। दूँहड लडकपनसे ही अपने पूर्व पुरुषोंके प्राचीन लीलाक्षेत्र कन्नौजके राज्यके उद्धार करनेकी इच्छाको मनमें पोषण करता आ रहा था। इस समय पिताके राज्यपर बैठ उस इच्छाके पूर्ण करनेका उसने दृढ संकल्प किया। परन्तु उसका वह संकल्प पूरा न हुआ। कन्नौजके उद्धार करनेमें निष्फल हो दूँहडने पडिहारोंके हाथसे मंडोर छीननेकी चेष्टा की। किंतु उस चेष्टाका पूर्ण होना तो दूर रहा, उससे उसके प्राण भी जाते रहे। उसने पडिहार राजके रक्त बहानेको जा स्वयं ही उसके देशको अपने रक्तसे सींचा।

---

* दूहड, जोयमाव, खीयमी, भूगस्, धाडल, जैतमल, बांदर और उहड यह आठ पुत्र थे। यह आठों भाई अपने २ नामसे एक २ गिरोहके स्वामी हुए थे। उन गिरोहोंमेंसे धूहड, धांधल, जैत मल और उहर गिरोह, इनकी सन्तानका पता चलता है शेष नाश हो गये।

---

१ इन नामोंमें बहुत गलती है दूहड जोपसाव धांदल ये तीन नाम तो मारवाडके इतिहासमें मि[illegible] है और ऊहड आसथानका पोता और जोपसावका बेटा था। बाकी तीन नाम अशुद्ध भी है पर इतिहासमे लिखे भी नहीं हैं इनकी जगह हरडके पेथड भैलग और चाचक नाम है। और किसी २ बहीमें बेगड सोगण और नापा नाम भी आसथानके बेटोंके लिखे है (प्रे. टी.)

दूँहडके सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। उनमेंसे जेठा रायपाल पिताके मरनेके उपरान्त राठौर कुलके सिंहासनपर बैठा। सिंहासनपर बैठते ही वह पडिहारके राजाके हृदयके रक्तको बहा पितृशोकको दूर करनेका यत्न करने लगा। थोडे ही दिनोंमें उसका यत्न पूरा हुआ। बदला लेनेकी इच्छा रखनेवाले रायपालने एक सेनादल ले मंडोर दुर्गपर आक्रमण किया। पडिहार राजा उसके उस प्रचंड आक्रमणको न रोक सका, इस कारण वह युद्धखेतमें मारा गया। उसके मरते ही विजयी रायपालने मंडोर दुर्गपर अधिकार किया। राठौर कुलकी विजयपताका मंडोर दुर्गके शिखरोंमें फहराने लगी; किंतु यह सब विजय थोडे ही दिनके निमित्त थी। हारे हुए पडिहारोंने शीघ्र ही फिर अपने पूर्वबलको इकट्ठा कर रायपालको मंडोरसे मार भगाया।

रायपालके तेरह पुत्र थे। उनमेंसे जेठा कन्न रायपालके उपरान्त गद्दीपर बैठा। बाकी सब उसके देशके सब स्थानोंमें फैल गये थे। कन्नका पुत्र जाल्हन, जाल्हनका पुत्र छाडा और छाडाका पुत्र टीडा एक दूसरेके उपरान्त गद्दीपर बैठे। इन राठौर कुमारोंके राजत्वकालका कोई विशेष वर्णन नहीं देखा जाता। केवल इतना ही विदित होता है कि, हिंसक वृत्तिका अवलम्बन कर वे अपने निकट निवासियोंसे सदैव युद्ध करते रहे। कभी किसीसे हारे और कभी किसीको मारकर उसकी भूमि सम्पत्तिपर अधिकार किया। जैसलमेरके भट्टग्रन्थोंमें पाया जाता है कि इनमेंसे छाडा और टीडा ही बडे दुर्द्धर्ष थे। ये प्रायः भारी लोगोंको बहुत ही दुःख देते। इसी कारण वे इनसे युद्ध करनेके निमित्त सेना लाए खैडराज्यमें आकर इनके साथ युद्ध करते थे। राव टीडाने राज्यको बढा लिया था। उसने सोनगरा सरदारसे भी नमालनगर और देवडा तथा बोलिचाओंके राज्यके कुछ २ अंशको जीत लिया था। टीडोंके मरनेपर सलखा[२] उसकी गद्दीपर बैठा। भट्टग्रन्थोंमें केवल इसका नाम ही लिखा हुआ है। इसके उपरान्त वीरमदेव[३] * और वीरमदेवके उपरान्त चूंडा राठौर कुलकी गद्दीपर बैठे। वीरमदेवने उत्तर निवासिनी जोया जातिपर हमला कर रणभूमिमें प्राण छोडे थे। किन्तु इसके वीर पुत्र चूंडासे राठौरकुलकी श्रीवृद्धि हुई चूंडा जैसा वीर था वैसा ही एक राजनीतिका जाननेवाला भी था। यह नाम राठौरोंके इतिहासमें बहुत प्रसिद्ध है, केवल इसके ही विक्रमके प्रभावसे वीर सियाजीका वंश उन्नत हो उठा। धीरे २ ग्यारह पीढियोंमें यह राठौरवंश राजस्थानके प्रायः समस्त देशोंमें फैल गया था। वीर(चूंडा)ने सोचा कि, मैं निश्चय करता हूं कि, अपने वंशकी भी वृद्धिको ऊँची सीढीपर स्थापित कर सकता हूं;

१ * रायपाल, कीरतपाल, बिहार, पिटल, जुगल, दालू और बिगर यह सात पुत्र थे। २ इसके वंशधर सलखावत नामसे प्रसिद्ध हैं, महेवा और रारधडोंमें यह अब भी भूमियोंके समान वास करते हैं। ३ इसके वंशधर वीरमोतके नामसे प्रसिद्ध हैं वीरमदेवके विजानामक एक पुत्र था, उसी विज्जाके वंशधर वीजावतके नामसे प्रसिद्ध हो सेतरावा सिवाना देछूनामक तीन स्थानोंमें वास करते हैं।

१ जोधपुर राज्यकी वंशावलीमे राव दूहडके बेटे रायपाल, चंद्रपाल, शिवपाल, जीवराज, भीमराज, मनोहरदास, मेघराज, सावतसिंह, सूरसिंह लिखे हैं।

राठौरोंकी वीरताको जगत्में प्रकाशित कर सकता हूं । किंतु इतने दिनोंतक किसीने इस कार्य्यके करनेका साहस नहीं किया । यद्यपि इससे पहिले उनके जयार्ज्जनके अनेक उदाहरण देखे गये हैं किन्तु उन सबमें उनके उद्यम शीलता आदिका विशेष प्रमाण नहीं पाया गया। जो उद्योगी और उद्यमी नहीं हैं; भाग्य स्रोतके विरुद्ध तलवार पकड जो आत्मोन्नतिका साधन कर आगे नहीं बढ सकते,उनको जगत्में कुछ भी उन्नति प्राप्त नहीं होती सियाजीका विपुल वंश अबतक कुछ नहीं कर सका, अतएव राठौर कुलकी श्रीकी वृद्धि भी न हो सकी।वीरवर चूंडाने यह सब बिचारा।समझ बूझकर राठौर कुलके हृदयमें उसने एक विकट ताडित (बिजली) बलका प्रयोग किया उस ताडित बलके स्पर्श होते ही राठौरकुल मानो फिर नये सिरेसे जीवित हो गया । उस समय उसने समस्त राठौरोंको इकट्टा कर बडे भयानक कार्य्यके करनेका विचार किया । उस कार्य्यकी प्रथम तरंग तो मंडोरका आक्रमण था। मंडोरकी१ पडिहारराजा चूंडाके उस भीषण आक्रमणको न सम्हाल सका । उसके हृदयके रक्तसे समरभूमि सिंच गई।राजाका मरण देखते ही समस्त सेना विना राजाके होकर इधर उधर भाग गई । जयलक्ष्मी राठौर वीर चूंडाकी गोदमें सुशोभित हुई। शीघ्र ही राठौरकुलकी प्रचंड पताका मरुभूमिके प्राचीन दुर्गकी ऊंची शिखरपर सगर्व फहराने लगी।

उद्यम, अध्यवसाय और सहनशीलता ही राजपूतोंके पराक्रमको उत्पन्न करनेवाले हैं। इन तीनों श्रेष्ठ गुणोंसे सुशोभित हुए बिना राजपूत कभी भी उन्नति नहीं प्राप्त कर सकता। वीरवर (चूंडा) इन तीनों श्रेष्ठ गुणोंसे विभूषित था, इस कारण असंख्य विघ्न और संकटोंसे पार होकर उसने अन्तमें मण्डोरके सिंहासनको प्राप्त किया।नहीं तो इस विजय पानेके कुछ दिनोंके पहिले वह इस दीन अवस्थामें गिरा था । उसको देखकर कौन बिचार सकता था कि, यही चूंडा मंडोरके सिंहासनको प्राप्त कर सकेगा ।पहले वह अपने पूर्वपुरुषोंकी प्राप्त की हुई भूमिसम्पत्तिसे बंचित (बेदखल)हो गया था, यहाँतक कि,प्राण बचानेके लिये उसको छिपकर दिन काटने पडे थे ।उस दीन हीन अवस्थामें वह राठौरवीर चूंडा अपनी रक्षाके निमित्त कालाऊ नगरमें गया। वहां उसने एक चारणके घरमें शरण ली। कुछ दिन उस चारणके घरमें छिपे हुए वेषमें समय बिताया था परंतु अवसर पाकर उसने अपनी उन्नतिके मार्गको अपने हाथसे स्वच्छ कर लिया । कहा जाता है कि, चूंडाके मंडोरमें राजा होनेपर वही कालाऊ नगरका चारण कवि उससे मिलने आया था।किन्तु चूंडाने उसको न पहिचानकर अपने पास न आने दिया।तब वह चारण अत्यन्त दु:खित हो एक कविता * बना राजसभाके समीप गया । वह कविता

---

* राठौरोंके इतिहाससे यह बात सिद्ध नहीं होती है कि चूडाने पड़िहारोंसे मंडोवर लिया था, किन्तु ईंदा जातिके पड़िहारोंने तुर्कोंसे मंडोवर लेकर दहेजमें दिया था जिसकी साक्षीका यह सोरठा मारवाडमे मशहूर है ।

चूंडा चँवरी चार, दी मंडोवर दायजे । ईंदा तणू उपकार, कमधज कहै न वीसरे ॥ १ ॥ (प्रे. टी.)

सोरठा-चून्डा नहिं आवे चीन, चाकर कालाऊ तना । बैठभयो भयभीत, मंडोवर रैमालिये ॥

मूल ग्रन्थमें यह कथा यहाँ नहीं लिखी है पहले भागके पृष्ठ ५३७ में लिखी है।

आज भी मारवाडके भाटोंके मुखसे सुनी जाती है। उस चारणका वह मर्मभेदी सुन्दर गीत आज भी चूंडाके पूर्व आचरणोंका स्मरण कराता है।

मंडोर नगरमें अपनी प्रभुताको दृढ करके चूंडाने नागौरमें रहनेवाली बादशाही सेनापर हमला करनेकी इच्छा की उसकी वह इच्छा भी पूर्ण हुई अर्थात् वह नागौरमें विजयी हुआ। तदनन्तर वह अपनी विजयिनी सेना लेकर धीरे २ दक्षिणकी ओर मुडा और बडी धूमधामसे गोडवाड राजधानी नाडोल नगरमें पहुँचा। वह अपनी सेनाको रख अपने नगरमें जा राज्य करने लगा। वह जैसा वीर था, उसही प्रकार उसने सदैव वीरोंके समान समय बिता वीरोचित कार्योंमें ही अपने जीवनको समर्पण किया। उसकी मृत्युके उपरान्त उसके वीरत्वका विवरण और भी प्रकाशित हुआ। चूंडाके चौथे लडके अडकमलके चरित्रोंका उसके साथ ऐसा घनिष्ठ सम्बन्ध है कि पहले उसका वर्णन न कर यदि पीछे किया जाय तो वह वर्णन अत्यन्त ही अप्रासंगिक और नीरस हो जायगा। इससे हम विवश हो पहले अडकमलके वीरताका ही वर्णन करते हैं।

जैसलमेरके भाटीराजाके अधीन पूँगलनामक एक नगर है उस समय उस पूंगलमें राणांगदेव नामक एक भाटीसर्दार राज्य करता था। राणांगदेवके सादूल नामक एक बडा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुआ। लाखा फूलाणीके समान सादूल भी अपने भुजबलके ऊपर निर्भर होकर जीवन बिताता था। नागोरसे लेकर नदीके किनारे तकके सब ही प्रदेशों पर समय २ पर अक्रमण करके उसने बहुतसा धन लूटा। मरुभूमिके समस्त मनुष्य सादूलसे यमकी भांति भय करते थे। एक समय वह किसी नगरसे कुछेक ऊंटों और घोडोंको जीतकर मोहिलोंकी राजधानी ऊडिटके समीपसे होकर अपने नगरको जाता था कि, उसी समय उस नगरके स्वामी माणिकराजने आदरसहित उसका निमंत्रण किया। सादूल उसके निमन्त्रणको स्वीकार कर यथा--समय उसके घर पहुँचा। शीघ्र ही खाने पीनेकी सामग्री होने लगी। इधर माणिकराज मोहिलवीर सादूलके निकट बैठ उसकी वीरत्वसूचक अनेक बातें सुनने लगा। उन सब वीरताकी बातोंको सुनकर मोहिलराज कुछ विस्मित और प्रसन्नचित्त हुआ। वह समस्त वीरत्वकी कहानी एक जनके कानोंमें बारंबार अमृतकी धारा बरसा रही थी। वह एकाग्रचित्तसे उस पाहुने भाटीवीरके समस्त वचनामृतका पान कर रही थी। उसका नाम कोडमदे था, वह मोहिलराज माणिकराजकी पुत्री थी। माता पिताकी जीवनस्वरूपिणी कोडमदे जन्मसे ही सुखकी गोदमें पली थी। मरुभूमिके बीचमें वह एक परम सुन्दरी स्त्री थी। मंडोराधिपति चूंडारावके चौथे बेटे अडकमलसे उसके विवाहका सम्बन्ध स्थिर हो गया था। विवाह भी शीघ्र ही होनेवाला था,--इस कारण ब्याहकी दोनों ओरसे तैयारियाँ हो रही थीं। परन्तु वह सम्बन्ध कोडमदेको अबतक न भाया था। उसने सादूलकी अत्यन्त वीरताका वर्णन सुना था, सुननेके पहिलेसे ही उसको मनहीमनमें अपना पति स्थिर कर लिया था। आज उस इच्छित पतिको सामने देखकर और अपने कानोंसे उसकी वीरताको सुनकर वह अपने हृदयके भावको प्रकाश किये विना न रह सकी। उसकी सहेलियोंने उसे बहुत

समझाया परन्तु वह कुछ भी न समझी। उसे जिसने जितना ही रोकनेकी इच्छा की उससे वह उतना ही कहने लगी "तुच्छ राजसिंहासनको लेकर क्या होगा, ऊंचे राठौर कुलकी पुत्रवधू होकर क्या करूंगी ?—मैंने जिसको प्राण मन समर्पण किया है, उसकी दासी होकर रहूंगी दूसरेकी स्त्री न हूंगी।" कोडमदेकी इस कठोर प्रतिज्ञाको उसके माता पिताने भी सुना। उनका हृदय सहसा भय और दुःखसे व्याकुल हो गया। राठौर कुलके साथ अपनी पुत्रीका सम्बन्ध स्थिर कर माणिकराजने ऊँच कुलके गौरवके प्राप्ति की आशाको हृदयमें पोषण किया था,—किन्तु अभाग्यवश उसकी वह आशा पूर्ण न हुई। यदि कोडमदे राठौर राजकुमारसे विवाह करनेपर राजी न होगी तो मोहिल कुलके विरुद्ध राठौरबीर चूंडाकी रोषाग्नि निश्चय ही प्रदीप्त होगी, निश्चय ही वह ओडिट नगरपर आक्रमण कर मोहिल वंशको समूल नाश कर देगा। इन सब चिन्ताओंने माणिक राजके हृदयमें प्रवेशकर उसको बिचलित कर डाला। वह कुछ भी स्थिर न कर सका कि, मैं क्या करूं। अन्तमें पुत्रीका ही स्नेह बलवान होनेके कारण वह पुत्रीकी सम्मति स्वीकार करनेको विवश हुआ।

खान पान समाप्त हुआ, मोहिलराज माणिकराजने सादूलसे समस्त वृत्तान्त प्रगट किया और राठौर राजकुमारके साथ सम्बंध भंग करनेसे विपदकी संभावना है, यह भी प्रकाश किया। तेजस्वी सादूल इससे कुछ भी भयभीत न हुआ। उसने कहा " यदि पूंगलसे रीत्यनुसार नारियल भेजा जाय तो मैं आपकी पुत्रीके साथ विवाह कर सकता हूँ। इन सब बातोंके होनेके उपरान्त सादूल अपने नगरको चला आया। शीघ्र ही उसके यहां विवाह सम्बन्धी नारियल गया और थोडे ही दिनोंके उपरान्त ओडिट नगरमें व्याहकार्य्य समाप्त हो गया। राजा माणिकराजने इस विवाहमें बहुतसा दहेज दिया। बहुमूल्य मणि रत्नादि नानाप्रकारके सोने चांदीके वर्तन, एक सुवर्णकी बैलकी मूर्ति और तेरह राजपूत स्त्रियाँ माणिकराजने वर कन्याको दीं।

इस विवाहका संवाद ब्राह्मणद्वारा शीघ्र ही अर्टकमलने सुना। वह अत्यन्त क्रोध और वैमनस्यसे उन्मत्तसा हो उठा, अस्तु सादूलको दंड देनेकी इच्छासे वह चार हजार राठौर सेनाके साथ उसके मार्गको रोककर खडा हो गया। इससे पहिले सादूलने साँकला मेहराज * नामक एक मनुष्यको मार डाला था। इस समय उस पुत्रके शोकसे व्याकुल वृद्ध पुरुषने भी पुत्रका बदला लेनेकी आशासे राठौर राजकुमारका साथ दिया। माणिकराजने यह सब समाचार पाकर सादूलसे कहा। वीरपुरुष सादूल माणिक राजकी शंकाकुल बातोंसे कुछ भी न डरा यहांतक कि मोहिल राजने चार सहस्र सेना उसे अपने साथ ले जानेको कहा, परन्तु उसने सेना ले जाना भी अस्वीकार किया। अपनी भुजाओंके बल और अपने साथकी सातसौ शंभुरतन भाटी सेनाके ऊपर उसका भलीप्रकारसे विश्वास था। परन्तु तो भी माणिक राजने अत्यन्त विपत्तिकी आशंका देखकर अपने साले मेघराज और उसके अधीन पचास सैनिकोंको उसके साथ कर दिया।

---

* यह विख्यात वीर हडबू सांकलाका पिता था। सादूलके साथ इसने अनेक वार युद्ध किया था।

इन साढे सात सौ सैनिकोंके साथ भाटीवीर सादूल चंदननामक स्थानमें पहुंच कर थकावट दूर करने लगा। रोषोन्मत्त राठौर वीर सेनासमेत उस स्थानमें जा पहुंचा। यद्यपि उसका सैन्यबल सादूलकी अपेक्षा तिगुना था, परन्तु तो भी उसने अपने शत्रुके साथ केवल द्वंद्वयुद्ध करनेकी इच्छा प्रगट की। दोनो ओरके दल कुछ देर विश्राम कर रणभूमिमें आये। सबसे पहिले भाटीकी ओरका पाहू गोत्रवाला जयतुंग और राठौरकी ओरका जोधा चौहान ये दोनो परस्पर सामने हुए। दोनोंने अपने २ घोडोंको एक दूसरेके विरुद्ध बडे वेगसे दौडाया। दोनो अपने २ हाथमें तीक्ष्ण दुधारी तलवारें लिये थे। थोडी ही देरमें वे भीषण तलवारें एक दूसरेके ऊपर चलने लगी। तलवारोंके एक दूसरेको लगनेसे अग्निकी चिनगारियां उडने लगी और वह दोनो तलवारें सूर्यकी किरणोंसे बिजलीसी चमकने लगीं। अडकमल और सादूल दोनों अपनी २ सेनाके आगे खडे होकर आनन्दसहित उस भीषण द्वंद्वयुद्धको देखने लगे। देखते ही देखते युद्ध भयानक हो उठा। यकायक जयतुंग एक घोर शब्द कर छलांग मार घोडे समेत योधाके ऊपर जा टूटा। योधा उस विकट वेगको न सह सका अतएव घोडेसमेत पृथ्वीपर जा गिरा। योधा फिर न उठा, शत्रुके प्रचंड आघातसे उसका प्राणवायु चल बसा। विजयसे उन्मत्त हुआ जयतुंग उस समय उस तीक्ष्ण तलवारको उठाय शत्रु सेनाकी ओर दौडा, और जिसको अपने बराबरका शत्रु समझा उसीके ऊपर आक्रमण करने लगा किन्तु उसका यथार्थ द्वंद्वयुद्ध न हुआ। वह एकके साथ युद्धमें प्रवृत्त हो शेष न होते२ दूसरेपर आक्रमण करने लगा। इससे एक घोर विच्छिन्नता फैल गई और तत्काल ही द्वंद्वयुद्ध बंद होकर दलयुद्धका आरम्भ हुआ। दोनो दलके योधा भयानक सिंहकीसी गर्जना कर कर एक दूसरेपर प्रचंड वेगसे आक्रमण करने लगे।

अडकमल और सादूल दोनोंकी इच्छा परस्पर द्वंद्वयुद्ध करनेकी थी। अतएव सेनाका व्यर्थ नाश होना विचार दोनोंने द्वंद्वयुद्धमें प्रवृत्त होनेकी इच्छा की। युद्ध स्थलसे दूर रथपर बैठी हुई सुन्दरी कोडमदे रणरङ्ग देख रही थी। सादूल इस समय अंतिम बिदा लेनेके लिये उसके निकट गया। वीर नारी कोडमदेने शांत और गंभीर स्वरसे कहा-"जाओ युद्ध करो मैं इसी स्थानपर रहकर आपका युद्धकौशल देखूंगी और यदि आप समरभूमिमें मारे गये तो आपके ही साथ मैं भी परलोकको जाऊंगी।" कोडमदेकी वीरतासे भरीहुई बातें सुन सादूलका दिल दुगना उभर उठा और वह प्रचंड वेगसे शत्रुदलके ऊपर जा टूटा। उसके हाथमें लिए हुए तीक्ष्ण शूलके प्रहार से कितने ही राठौर सैनिकोंने प्राण गवाँये। इस प्रकार उन्मत्तके समान भ्रमण करता २ वह राठौर राजकुमार अडकमलके सामने आया। राठौर राजकुमार स्वयं सादूलके हृदयके रक्तसे अपने घोर अपमानके धोने और हृदयकी अग्निको बुझानेके निमित्त इस समय तक गरदन उठाये उसकी राह ही देख रहा था सादूलको वह इस समय तक चीह न सका था इस ही कारण क्रोधसे उन्मत्त और अधीर होकर भी उसके आनेकी राह देखता हुआ भीतर अग्नि भरे हुए पहाडके समान अचल खडा था। इस समय अपने २ समीप खडे हुए

शत्रुको भली प्रकारसे पहिचाना और अपने पंचकल्याण नामक घोडेको प्रचंड वेगसे उसकी ओर चलाया।एक जन दूसरेके सन्मुख खडा हुआ रीत्यनुसार क्षणभर तो सदाचारसे व्यतीत हुआ । परन्तु थोडी ही देरमें सादूलने अपने शत्रुके मस्तकको ताककर तीक्ष्ण तलवारका प्रहार किया । किंतु चतुर अडकमलने अत्यन्त शीघ्रतासे उसको रोक कर सादूलके मस्तकके ऊपर तलवार चलाई । उस समय दोनों ही वीर वज्रसे टूटे हुए दो मेरुके शिखरोंके समान पृथ्वीपर गिर पडे । राठौरवीर मूर्च्छित हो गया था अतएव फिर उठ खडा हुआ;किन्तु भाटी वीर सादूल फिर न उठा। गिरते ही गिरते उसके प्राण निकल गये । युद्ध रुक गया । दोनो ओरके वीर वज्रसे मारे हुएके समान क्षणभर खडे रहे । फिर युद्धको रोककर रणभूमिसे कुछ २ दूर हट गये ।

पतिव्रता कोडमदेका आशा भरोसा टूट गया । उसने विचारा था कि, स्वामीके साथ रहकर बहुत समयतक सुखसे दिन बिताऊंगी; किन्तु उस अभागिनीके सुख सम्बन्धका बन्धन होते न होते वह सदैवके लिये उसे छोड गया । कहां है वह उसकी लावण्यमयी सुन्दर मूर्ति कि, जिस हास्यमयी मूर्तिसे उसने भाटीवीर सादूलके मनको हरण किया था; राठौर वीर अडकमलने जिस मूर्तिको अति यत्नसे हृदय मंदिरमें प्रतिष्ठित किया था, वह सुन्दर हास्यमयी सरला सुकुमारी मूर्ति कहाँ है ?-वह सुन्दर कान्तिमान् मूर्ति वरमालाके साथ नवीन लाजके नये रंगसे अभी पूरी २ छूटी भी नहीं थी कि, विधवापनके विषमजालने उसको अपने अधिकारमें कर लिया । कमलकली एक दिनमें ही उत्पन्न और विकसित हो कीडेके काटनेसे गुच्छेसे गिर पडी किन्तु कोडमदे वीरनारी थी । उसने अपने प्राणप्यारेको युद्धमें उत्साहित किया था आज वह धर्मयुद्धकी रणभूमिमें प्राणोंको न्योछावर करती है; उसके स्वर्गका मार्ग स्वच्छ हुआ; स्वर्गकी विद्याधरियें पारिजातकी माला हाथमें लिये उसके सत्कारके निमित्त स्वर्गके द्वारपर आखडी हुई । कोडमदेने मानस नेत्रोंसे यह सब कुछ देखा । उसके हृदयमें विषादकी लहरें उमडने लगीं;हृदय स्वर्गकी इच्छासे उत्साहित हो उठा और वह पतिके साथ जानेकी तैयारी करने लगी । शीघ्र ही उस रणभूमिमें एक बडी भारी चिता बनाई गई । मोहिल कुमारीने एक तीक्ष्ण तलवार उठाई और एक हाथसे उसको पकड प्रसन्नतापूर्वक उसने अपने दूसरे हाथको काट डाला । उसकी सखियां और सैनिक चुपचाप खडेहुए इस भयानक और शोचनीय कार्यको देखते रहे।कोडमदेने वह कटी हुई भुजा अपने श्वशुरके देनेके निमित्त एक सैनिकको दे,धीर और गम्भीर स्वरसे कहा-"कहना कि,तुम्हारी पुत्रवधू इस प्रकारकी थी ।" तदनन्तर उसने अपने दूसरे हाथको फैलाकर निकट खडे हुए एक सैनिकसे कहा-"मेरे इस हाथको भी काटडाल ।"कोडमदेके मुख मंडलने एक अपूर्व तेजोमयी मूर्ति धारण की थी, उसके दोंनो विशाल नेत्रोंसे एक प्रकारकी अद्भुत ज्योति प्रज्वलित हो रही थी; इसी कारण उस सैनिकने तुरंत महारानीकी आज्ञाका पालन किया एक ही चोटसे ही बाँह कट गई। दर्शक गण शोक और विस्मयके मारे हृदयभेदी शब्द करने लगे । उनके रोनेसे आकाश गूंज गया।परन्तु कोडमदेके उस अपूर्व कान्ति-

मान मुखमंडलपर उदासी या मलिनताके चिह्नतक न दिखाई दिये। उसने धीर और अकम्पित स्वरसे उस दूसरी कटी हुई भुजाको गोहिल कुलके भाटकविको देनेकी आज्ञा दी और प्राणपतिके मृतक शरीरको ले वह चितापर चढ गई। आज्ञाके अनुसार रानी कोडमदेकी दोनों भुजाएँ जहां तहां भेज दी गईं। पूँगलके बूडे राव राणंगदेवने उस भुजाको भस्म करके उस स्थानमें एक पुष्करणीकी प्रतिष्ठा की वह पुष्करणी आज तक भी कोडमदे सरके नामसे पुकारी जाकर उस वीरनारीके नामको अमर कर रही है।

यह अनर्थकारी अपूर्व संग्राम सन् १४०७ में हुआ था। इस घोर युद्धमें राठौरोंके सांकला गणोंने अत्यन्त वीरता प्रगट की थी। उनके ३०० सैनिकोंमेंसे केवल पचास सेनापति मेहराजके साथ युद्धभूमिसे लौटे थे। मेहराज भी अत्यन्त घायल हुआ था। अडकमल और उसके चार भाइयोंको भी घायल होना पडा था। वह घाव जो उसके शरीरमें हुए थे छः महीनेमें ऐसे विषम हो उठे कि, उनसे ही उस संतप्त राठौर राजकुमारके प्राण निकल गये।

किन्तु इससे भी वह भयानक विवाद शांत न हुआ। रक्तके बदले रक्त बहने पर भी दोनों ओरसे संतोष न हुआ। दोनों ओरका एक एक राजकुमार भी मरा। अस्तु इस समय पिताओंने तलवार धारण की। वीर साँकला मेहराजके प्रचण्ड प्रभावसे ही सादूलकी सेनाका बल नष्ट हुआ था। इस कारण पुत्रके शोकसे दुःखित राव राणंगदेवने मेहराजको दंड देनेके अभिप्रायसे दल समेत उसके नगर पर आक्रमण किया। सांकलागण साधारण प्रतापशाली नहीं थे, मरुनिवासी कोइ वीर भी उनको इस समय तक कभी परास्त नहीं कर सके थे। विशेष कर मेहराज एक सुप्रसिद्ध वीर केसरी हडबू सांकलाका पिता था। उसके प्रचंड विक्रमको अबतक कोइ नहीं रोक सका। तो फिर क्या पूँगलका राव राणंगदेव आज उसको हरा सकेगा ? पूंगलपतिने विशाल सेनादल लेकर सांकलके राज्यपर आक्रमण किया। सांकला उस समयमें असावधान था अथवा वह राणंगदेवके प्रचंड बलको न रोक सका था, इसका अबतक कोई विशेष वृत्तान्त नहीं पाया जाता किन्तु वह हार गया। उसकी तीन सौ सेनाके गरम लोहूसे लूनी नदीके किनारेकी बालू भीग गई। विजयी राणंगदेव हारे हुए सांकला राजाका सर्वस्व लूट कर सगर्व अपने नगरको लौट आया। राणंगदेवके मरनेका समाचार शीघ्र ही उसके शेष दोनों पुत्र तनु और मेरूके निकट पहुँचा। दारुण हिंसासे उनका मस्तक जल उठा। किन्तु वे निरुपाय थे। उनको ऐसा बल नहीं था कि, जो वे मंडोरके राजाके साथ युद्ध कर सकते। अतएव उस दारुण क्रोधके वेगको रोक कर वे इसका उपाय विचारने लगे। उस समय मुलतानमें खिजरखाँ मुसलमान बादशाह था। रोषोन्मत तनु और मेरूने इस समय उसीकी शरण ली और सनातन हिन्दुधर्मको छोड मुसलमानी धर्म्मको ग्रहण कर वे स्वामीको प्रसन्न करनेका यत्न करने लगे। खिजरखाँ ने उनपर प्रसन्न हो उनको एक सेनादल दिया। उस

सेनादलको लेकर तनु और मेरू राठौरराजके विरुद्ध युद्ध करनेकी तैयारी करने लगे। उसी समयमें जैसलमेरके राजा रावल केहरके तीसरे पुत्र केलणने उनके साथ मुलाकात की। उसने उनके बलाबलकी परीक्षा कर उनको एक गूढ़ उपाय करनेकी सम्मति दी, और कहा कि, यदि इस उपायका अवलम्बन करो तभी अपने बदला लेनेकी प्यासकी शांति कर सकोगे।

तदनन्तर भाटी राजकुमार केलणने उसी गूढ उपायकी सहायतासे राठौरराज (चूंडा) को कौशल जालमें फंसानेकी इच्छा की, इसी कारण उसने अपनी एक पुत्री चूंडाको देनेका प्रस्ताव किया परन्तु चूंडाने विश्वास न करके उसके प्रस्तावको अस्वीकार किया, इस कारण केलणने कहला भेजा "यदि आप इसमें किसी प्रकारका संदेह करते हैं तो आपकी आज्ञा होनेसे मैं अपनी कन्याको नागौर भेज सकता हूँ।" चूंडाने इस बातको अच्छा समझा और इसीको स्वीकार भी किया।

विवाहका दिन स्थिर हुआ। कुछ दिन हुए कि, चूंडाने नागौरनगरको जीत लिया था। इस समय वहाँ विवाहकी तैयारी होने लगी। चूंडा भी उस नगरमें आय विवाहके दिनकी राह देखने लगा। धीरे २ वह दिन आ पहुँचा। उस दिन उसके किसी गुप्त ग्रहने उसकी भाग्यकी डोरको पकड लिया था उसको वह न जान सका इधर जैसलमेरके तोरणद्वारको लांघकर पचास ढके हुए शकट बाहर निकले। उन शकटोंके पीछे २ कुछेक घुडसवार और सात सौ ऊंटोंके रक्षक चले। किन्तु यह विवाहकी यात्रा नहीं थी;—असलमें युद्धकी यात्रा थी। क्योंकि वह सभी घुडसवार और ऊंटोंके रक्षक छिपे हुए वेशके राजपूत सैनिक थे और पहिले पचास ढके हुए फाटकोंके भीतर स्त्रियोंके बदले पूँगलके साहसी वीरगण बैठे हुए थे। इसके अतिरिक्त सबके पीछे राजाकी प्रायः एक[1] सहस्र घुडसवार सेना अतिसावधानीसे आ रही थी। जो ऊंट इसके साथ आते थे, उनकी पीठमें सैनिकोंके खानेकी सामग्री और अस्त्र शस्त्रादि भरे हुए थे। राठौरराज चूंडा यह कुछ भी न जान सका। वह विवाहके योग्य साजसे सजकर उस छद्म भाटी सेनाकी ओर चला। नगरके सिंहद्वारसे कुछ दूर निकलते ही उसने उन शकटोंको देखा। उसको विश्वास उत्पन्न हुआ कि, भाटीराजने उससे दगा नहीं किया। वह इस विश्वासके ऊपर निर्भर हो निःसन्देह उन शकटोंके निकट चला गया। परन्तु एकायक उसके मनमें विषम सन्देह उत्पन्न हो आया। इस लिये वह शीघ्र ही नागौरकी ओर लौटा। परन्तु नगरके द्वारके समीप पहुंचते ही पहुंचते उस पर शत्रुओंने आक्रमण किया। विश्वासघातक भाटी अपना स्वरूप धारण कर एकायक उसके ऊपर आ टूटे। अकेले ही कई एक सिपाहियोंको संग लिये हुए चूंडा उन सहस्रों प्रचंड भाटीवीरोंकी गतिको कैसे रोक सकता? इस भयानक आपत्तिके समयमें उसके मनमें आया कि, वह यदि नगरके तोरणद्वारमें पहुँच सके तो वह अपनी रक्षा भली प्रकार कर सकता है; किन्तु हाय? उसके मनकी इच्छा मनमें ही रह गई। प्रचण्ड शत्रुओंके

---

[1] मूल ग्रन्थमें यह एक सहस्र घुडसवार खिजरखांके लिखे हैं।

साथ युद्ध करते २ (चूंडा) सिंह द्वारकी ओर चला । उसका सब शरीर रुधिरसे भीग-गया; उसके शरीर रक्षक सिपाहियोंमेंसे अनेकोंने ही उसकी रक्षाके निमित्त प्राण त्याग दिये। बराबर रक्तके निकलने और अस्त्रोंके प्रहारसे चूंडाका अंग प्रत्यंग शिथिल हो आया। राठौर कुल तिलक वीरवर चूंडा उस नगरके द्वारपर गिर पडा । पाखंडी भाटी अधर्मकी जीतसे प्रसन्न हो विकट सिंहनाद कर उठे, और नगर लूटनेके अभिप्रायसे प्रचंड पहाडी नदीके समान उन्मत्तभावसे उसके भीतर पैठ पडे । राजराजेश्वर चूंडाका पवित्र देह उनके पैरोंसे पिसने लगा, उसकी ओर किसीने एक बार देखा भी नहीं ।

इस प्रकार राठौर कुलका एक जलता हुआ दीपक सदैवको बुझ गया। चूंडाके और भी कुछ दिन जीवित रहनेसे राठौरकुलकी और भी द्विगुणित वृद्धि हो जाती। अपने अमानुषिक वीरके प्रभावसे वह वीरवर सियाजीके वंशमें जो तडित बलका प्रयोग कर गया उसीके कारण पतित राठौरकुल फिर गर्वसहित मस्तकको उठा सका । चूंडाके चौदह पुत्र और एक कन्या हुई थी । उसकी कन्याका नाम हंसा था । हंसा मेवाडके राजा राणा लाखाके साथ व्याही गई थी । इसके ही गर्भसे कूंभा उत्पन्न हुआ था। इस अयोग्य व्याहसे मेवाड और मारवाड राज्यमें जो विषम अनर्थ उत्पन्न हुआ था, उसका वर्णन मेवाडके इतिहासमें हो चुका है ।

महावीर चूंडाकी मृत्युके उपरान्त उसका जेठा पुत्र रिडमल्ल मंडोरके सिंहासनपर बैठा । इसकी माता गोहिल वंशकी थी । रिडमल्लका शरीर अत्यन्त दीर्घ और बलवान था; यहांतक कि वह अपने कुलमें सबसे अधिक बलिष्ठ गिना जाता था । चूंडाकी मृत्युके उपरान्त नागौर राठौर कुलके हाथसे निकल गया । राणा लाखाके साथ उसकी अत्यन्त प्रीति उत्पन्न हो गई । लाखा उसको अपने सामन्तोंमें सबसे श्रेष्ठ जानता था । इसके अतिरिक्त उसको चालीस गावों समेत धनला नगर और भी दिया । लाखाके जीवित समयमें रिडमल्लने मेवाडका एक बडाभारी उपकार किया था अजमेरके सूबेदारके निकट एक लडके ले जानेके बहाने वह उस पुराने चौहान किलेके भीतर प्रवेश कर गया। और किलेके पहरेदारों तथा उसमें रहती हुई सेनाको मारकर उस किलेपर अपना कब्जा कर उसको राणाके सिपुर्द कर दिया। खीमसी पंचोली नामक एक मनुष्यने रिडमल्लको यह

---

१ चूंडा संवत् १४३८ में गद्दीपर बैठा और सन् १४६५ में मरा। चूंडाके गद्दी पर बैठनेका संवत् १४३८ मारवाडके इतिहाससे अशुद्ध है १४५१ उसके मंडोर लेनेका संवत् है और वही उसके गद्दीपर बैठनेका भी है। इससे पहले वह कहीं गद्दीपर नहीं बैठा था किन्तु अपने बापके बडे भाई रावल मल्लीनाथकी तरफसे मंडोरसे ९ कोशपर गांव सालोडीमें थानेदारके तौरपर रहता था। २ इसके चौदह पुत्रोंके नाम रिडमल्ल, सत्तारणधीर, अडकमल्ल, पुंज, भीम, कान्हा, अज्जा, रामदेव, बीजा, सहेशमल्ल, बोधा, लेंबा, शिवराज इनमेंसे रिडमल्ल, सत्ता, अडकमल्ल और कान्हाका वंश आज भी वर्तमान है। ३ कूंभा उत्पन्न नहीं हुआ मोकल उत्पन्न हुआ था और कुंभा मोकलका बेटा था। ४ राजस्थान प्रथम खण्ड । ५ कायस्थको कहते हैं ।

यत्न बताया था। इस कारण राणाने इसके इनाममें उसे केटोनामक नगरका अधिकार दिया जो पहले खानियोंसे छीना गया था। रिडमल तीर्थयात्राके निमित्त गयाजीको गया और वहांके यात्रियोंपर जो कुछ कर लगता था वह सब उसने स्वयं ही दिया।

रिडमल्ल राजकार्यमें अत्यन्त चतुर था उसने ऐसे अनेक प्रबंध किये थे जिनसे राज-नियमानुसार शासित होवै यद्यपि वीर रसके चाहनेवाले भाटकवि इसका बहुत ही थोडा वर्णन करते हैं; परंतु ऐसा समझना मूर्खताहै कि, मरुदेशके राजपूतोंके यहां कानूनी मिसलें विद्यमान न हों और इस बातमें कविकी सम्मति भी यही है। वह राव रिडमल्लका बडा काम यह बतलाता है कि, इसने अपने राज्यभरमें बांट और माप एकसे कर दिये। और वह अबतक प्रचलित हैं। राव रिडमल्लका अन्तिम कार्य यह था कि उसने धोखेसे मेवाडके बालक राजाकी गद्दी छीननी चाही थी, परन्तु चंद (चूंडा) ने उसको प्राण-दंड दिया जिसका वृत्तान्त उस राज्यके इतिहासमें लिखा है। इस झगडेसे दोनों राज्यों-की सीमा पृथक् २ हो गई; और वह उस समयतक ही कि जिस समयतक मेवाडकी सीमा अर्वलीतक पहुँच गई थी। किन्तु हम राठौर कुलके भाटोंके वर्णित किये हुए वृत्तान्तसे जानते हैं कि रिडमल्लने अपने राज्यके सब स्थानोंमें भूमि और करका निर्णय समानरूपसे किया था। रिडमल्लका शोचनीय अन्तिम वर्णन मेवाडके इतिहासमें भलीप्रकारसे वर्णित हो चुका है; इस कारण विस्तार होनेके भयसे हम फिर दुबारा उसका वर्णन नहीं करते। रिडमल्लके सब मिलाकर चौवीस पुत्र थे; विशेषकर इसके ज्येष्ठ पुत्र जोधाकी सन्तान मारवाडकी प्रजा है; उनके पुत्र प्रपौत्रोंने विशाल मरुभूमिके चारों ओर फैलकर अपनी उन्नति की थी। आवश्यकताके कारण उनके नाम, धाम, भूमि, संपत्तिकी सूची नीचे लिखी जाती है।

नाम	जातियें जो उनके नामसे प्रसिद्ध हुईं	भूसम्पत्ति
१ जोधाजी. [सिंहासनपर बैठे]	जोधा	
२ कांधलजी.	कांधलोत इन्होंने बीकानेरकी भूमि जीती	बीकानेर
३ चाम्पाजी.	चांपावत	
४ अखैराज. इनके सात पुत्र थे जेठा कूंपा	कूम्पावत=	आहुवाकेटो पलरी हरसौला वशेहट, जावला सथलाना सिनगा, असोय कंपालिया, चद्रावल, सिरयारी, खारलो, हरसौर, वनू विजौरिया, इयोपुरा, देवरिया,
५ मडलाजी.	मांडलोत	सरौदा

१ जोधा ज्येष्ठ पुत्र नहीं था कई भाइयोंसे छोटा था सब भाइयोंमें बडा अखैराज था उसने बापकी इच्छासे जोधाको राजतिलक अपने हाथसे दिया था उसी प्रथासे अबतक भी गॉव बगडीके ठाकुर जो अखैराजके उत्तराधिकारी है जोधपुरके राजाको तिलक देते हैं।

२ कूंपा अखैराजका बडा बेटा नहीं था बडा बेटा पचाण था जिसके बेटे जैताकी औलादमें बगडीके ठाकुर हैं कूंपा महाराजका बेटा और महाराज पचाणका भाई था।

नाम	खांपवशाखा	भूसम्पत्ति
६ पाताजी	पात्तावत	कूर्मचरी, नखा बारोह तथा नखेदश*
७ लाखाजी	लाखावत	
८ बालोजी	बालावत	धुनार
९ जैतमालजी	जैतमालोत	पालासनी
१० करनजी	करनौत	लूनावांसे
११ रूपाजी	रूपावत	चौतला
१२ नाथाजी	नाथावत	बीकानेर
१३ डूंगरजी	डूंगरोट	इनकी भूमिसम्पत्तिका कहीं वर्णन नहीं पाया जाता यह सभी अपने बडे वंशधरोंके आधीन हो गये ।
१४ सांडाजी	सांडावत	
१५ मांडनजी	मांडनोत	
१६ वीराजी	वीरोवत	
१७ जगमालजी	जगमालोत	
१८ हांपाजी	हांपावत	
१९ शक्ताजी	शक्तावत	
२० कर्मचन्द्रजी	कर्मचन्दोत	
२१ अडवालजी	अडवालोत	
२२ खेतसीजी	खेतसिओत	
२३ शत्रुशालजी	शत्रुशालोत	
२४ तेजमालजी	तेजमालोत	

तीसरा अध्याय. ३.

जोधाजीका सिंहासनर बैठना, जोधपुरका बसाया जाना राठौरोंका मंडोरसे जोधपुरको जाना; राजधानीका बदलना, राजधानीके बदलनेका कारण सातलमेर, मेडता और बीकानेरकी नई प्रतिष्ठा, जोधाजीका परलोक गमन, उनके चरित्रोंका वर्णन, राठौर वंशकी उन्नति; सूजाजी रावका गद्दीपर बैठना; मुसलमान बादशाहकी सेनासे राठौरोंका प्रथम युद्ध; पठानोंद्वारा पीपाड नगरसे राठौर कुमारियोंका हरण, सूजाजीकी वीरता और मृत्यु; उसके सिंहासनपर उसके पौत्र राव गांगाका बैठना; सिंहासनके निमित्त गांगा और उसके चचा सेखाका युद्ध; गृहयुद्ध; सेखाकी मृत्यु; बाब-

---

* यहांके सिपाही बडे साहसी और रणनिपुण होते हैं यह जलते रेते पर भी सहज में ही घूमा करते है यह साधारण बातपर अस्त्र ग्रहण नहीं करते परंतु जब अत्यन्त आपत्ति आती है तब यह लडाईमे बुलाये जाते हैं ।

रका हिन्दोस्तानपर आक्रमण करना; सब राजपूतोंकी सम्मतिसे महारथी राणा सांगाका सेनापतिहो बाबरसे युद्ध करना; राव गांगाकी मृत्यु; राव मालदेका गद्दीपर बैठना; मालदेका गौरव; उसके द्वारा नागौर, अजमेर, जालोर और शिवानेका उद्धार;-उनका परस्परका विवाद; उसकी प्रतिष्ठा; गद्दीसे हटाये हुए हुमायूं पर उसका अनुचित व्यवहार; शेरशाहका मारवाडपर आक्रमण करना; यवनसेनाको आपत्ति;बुद्धिमानीसे शेरशाहका छुटकारा पाना;राठौर सेनाका पीछे हटना;दो प्रधान सामन्त सम्प्रदायका आत्मत्याग; अकबरका मारवाडपर हमला करना; मेडना और नागौरको जीत बीकानेरके रायसिंहको देना; मालदेका अपने दूसरे पुत्रको अकबरकी सभामें भेजना। सम्राटके साथ उसका असद्भाव; जोधपुरका फरमान अकबरद्वारा रायसिंहको देना; अकबरद्वारा जोधपुरका घेरा जाना मालदेका जोधपुरकी रक्षा करनेका उद्यम; उदयसिंहको अकबरके निकट भेजना; उदयसिंहका सत्कार; चन्द्रसेन; उसके द्वारा राठौर कुलकी स्वाधीनताकी रक्षा; उसका वीरत्व; मालदेका वीरत्व; मालदेका मरना; और उसके बारह पुत्र थे।

संवत् १४८४ के वैशाख मासमें राठौरवीर जोधाने मेवाडके अंतर्गत धनला नामक नगरमें जन्म लिया। इनके पिता राव रिडमल्ल थे जोधाजी जिस प्रकार आपत्ति में फँसे थे और उस आपत्तिसे छूटनेके निमित्त जैसा उनको कष्ट सहना पडा था, उसका समस्त वर्णन मेवाडके इतिहासमें किया जा चुका है। अब इस समय हम केवल उसके जीवन चरित्रका वर्णन करते हैं इस कारण उसके सम्बन्धमें और कुछ नहीं कह सकते।

गहलौत राजकुमार वीरवर चूंडाने* नये जीते हुए मुंडोर नगरपर-अधिकार किया और उसके बाद रिडमल्ल वहां का राजा हुआ, तब उस रिडमल्लका जेठा पुत्र पराक्रमी जोधाजी अरवलीके घनघोर वनमें छिपे हुए वेषसे जा छुपा। उस दीन हीन अवस्थामें समय व्यतीत करते हुए राठौरवीर जोधाने क्षणभरको भी न जाना कि, दैवकी कृपासे उसके भाग्य – गगनका मार्ग शीघ्र ही स्वच्छ होगा और फिर भी वह मंडोर नगरको पाकर अपने अनन्त कीर्ति के स्तम्भ जोधपुरको प्रतिष्ठित करेगा। उसकी सहायताका बल अत्यन्त ही हीन हो गया। अन्तमें धीरे २ उसका बल और भी निर्बल होता गया। परन्तु तो भी जोधा क्षणभरके लिये भी निरुत्साह न हुआ। आशा ही मनुष्यका जीवनस्वरूप है, और दीन, दरिद्र और अभागे मनुष्योंको अत्यन्त ही शांतिकारक है। विपुल राज्यका उत्तराधिकारी होकर भी जोधा आज दीन हीन अवस्थामें गिरा है। वह उस विराट अरवलीके भीतरी भांडक–पिराओ नामक गम्भीर वनके निर्जन प्रदेशमें कुछ एक संगियोंके साथ छिपा हुआ उचित अवसर पानेकी बाट देखता हुआ समय बिताने लगा। थोडे ही दिनोंमें उसकी इच्छा पूर्ण हुई; भगवती आशापूर्णा अपने वर देनेवाले रूपसे उसके सामने आ खडी हुई। उस दीन हीन अवस्थामें राठौर वीर जोधा कुछ समय व्यतीत कर एक दिन अपने साथियोंके साथ मंडोर जीतनेकी सलाह करता था। सजे सजाये सबके ही सामने तीक्ष्ण भाले रक्खे हुए थे कि, इतनेमें ही एक शुभ–शंसी पक्षी जोधाजीके भालेके ऊपर बैठ बारम्बार शब्द करने लगा, उस समय एक चारणने जोधाजीके सामने आकर कहा " महाराज !

---

* इसी चूंडाने राठौरवीर रिडमल्लको मारा था।

आज आपके ग्रह शुभ हैं, आपकी जन्मरात्रिमें जो नक्षत्र उदय हुआ था, आज फिर भी उसका उदय हुआ है,अतएव इस शुभ नक्षत्रके अस्त न होते२ आप यदि मंडोरके उद्धार करनेका प्रयत्न करें तो आपकी इच्छा अवश्य ही पूर्ण होगी। यह देखो; शुभ--शंसी पक्षी आपके भाले के डंडें पर बैठकर आपको अपना काम करने को कह रहा है।" इन उत्साह बढानेवाली बातोंको सुनकर राठौरवीरजोधा अत्यन्त उत्साहित हो उठा और हडबू सांकला तथा प्रभुराय आदि प्रसिद्ध वीरोंको साथ लेकर उसने युद्धकी तैयारी की सौभाग्य वश उसके समस्त उद्यम शीघ्र ही सफल हुए। और उससे बहुत जल्दी मंडोर नगरका उद्धार कर उसपर अपना अधिकार जा जमाया।

यद्यपि जोधाजीको मंडोर दुर्ग फिर प्राप्त हुआ किन्तु उसमें वह अधिक दिन न रहा। उसने शीघ्र ही अपने नामका नगर बसाकर अमरत्व प्राप्त करनेकी इच्छा की। किन्तु वह राजपूत थे राजपूत सदैव ही संस्कारके वशीभूत रहते हैं। उनका एक यही प्रधान धर्म हैकि, वह सहसा किसी रदबदल करनेको अच्छा नहीं समझते,जिस मंडोर दुर्गको जोधाजीके पूजनीय पितामहने अपनी भुजाओंके बलसे जीता था,जहाँ आजतक उसकी तीन पीढियोंने राज्य किया,जो आजतक मारवाडकी प्रसिद्ध राजधानीके नामसे विख्यात रहा उस ही मंडोर नगरको उसने एकसाथ छोड दिया। उसका विशेष कारण है। वह कारण दैवकी आज्ञा वा शकुनका बताया हुआ ज्ञान अथवा दूसरी कोई दैव घटना न थी,वह केवल एक सिद्ध* योगीपुरुषकी आज्ञा थी। वह योगी मंडोरसे दो कोस दक्षिणकी ओर स्थित भाखर

*केल्ट (Celt) के डिरुड (Druid) के अनुसार वानप्रस्थ योगी ऐसे मनुष्योंको उपदेश किया करते हैं, जो सौभाग्यवश उनके निकट निर्जन वन वा पर्वतकी गुफामें पहुँच जाया करते हैं। इस लिये यह कोई आश्चर्य्यजनक वार्ता नहीं है कि ऐसे तपस्वी महात्माकी आज्ञाको यह विश्वासी राजपूत शिरोधार्य न समझते हों॥ साधुओंसे हमारा प्रयोजन उन दरिद्री भिक्षुकोंसे नहीं है जो भारतवर्षमें दर बदर मारे फिरते हैं, और जिनके देखनेमात्रसे नेत्रोंको घृणा मालूम होती है, परन्तु हमारा प्रयोजन उन तपस्वी योगियोंसे है जो इन्द्रियोंको दमन करते हैं और जिनकी प्राकृतिक इच्छा केवल इतनी ही होती हैं कि, जिससे शरीरमे प्राण बने रहैं। जिन्होंने दर्शन शास्त्रोंका विचार करते हुए वेदान्तका अभ्यास किया है और जिनका अन्तःकरण मायाकी छायासे अशुद्ध हो गया है, या जिन्होंने अपने आश्रयके नियमानुसार घोर तपस्या और एकान्तवास किया है। ऐसी कठिन तपस्या की है जिसको देखकर हमारी बुद्धि चकरा गई ऐसे महात्माओंसे भारतके राजा महाराजा उपदेश लेनेके लिये जाया करते थे। हमने स्वयं एक ऐसे महात्माको देखा है जिन्होंने ४० वर्षतक भूमिपर शयनके त्यागका व्रत किया था इन महात्माके व्रतमें केवल तीन ३ वर्ष शेष रह गये। उन्होंने बहुत देशाटन किया था और बडे विद्वान् और ज्ञानवान् थे इस कठिन व्रतके शेष रहजानेसे कुछ दुःख प्रतीत नहीं होता था परंतु उनकी आकृति बडी हँसमुख, तेजभरी सरल और चित्त आकर्षक थी। वह अपनी तपस्याका वृत्तान्त कुछ गर्वसे नहीं कहते थे और न उनको अपने व्रतकी समाप्तिका कुछ हर्ष ही था। एक वृक्षपर झूला पडा था और उस झूलेपर यह महात्मा शयन करते थे। आरम्भमें कई वर्षतक इस नियम पालनमे कष्ट रहा, अर्थात् शरीरपर सूजन आगई थी परंतु कुछ दिनों पीछे यह कष्ट जाता रहा, इस व्रतमे भी एक प्रकारका अभिमान है और स्थिर करना बहुत ही उत्तम है कि, ऐसी कठिन तपस्यासे मनुष्यका गौरव ईश्वरीय दृष्टिमें प्राप्य होता है।

चिडिया (विहंगकूट) नामक पर्वत श्रेणीके एक एकान्त गुफामें निवास करता था। उसका चित्त सदैव ही राठौर कुलकी मंगलकामनामें लगा रहता था। एक दिन जोधाजीके साथ उसका मिलाप हुआ, उसने राठौर राजासे कहा " महाराज ! मंडोरमें आपके राज्यकी दृढता भलीप्रकारसे खटकेसे रहित न होगी इस कारण मेरी इच्छा है कि, आप बकरचीराकी सीमामें अपने नामका एक नगर बसाओ। "राठौरवीर जोधाने योगिराजकी इच्छानुसार ही किया। शीघ्र ही उस " विहंगकूट" की ऊंची चोटियोंमें नये नगरके प्रतिष्ठित होनेकी तैयारी होने लगी । जिस सुन्दर पर्वत श्रेणीके ऊपर मंडोर नगर स्थापित था, भाखरचिडिया केवल उसीका एक अंश है। यह पर्वत श्रेणी ऐसी है कि इसपर कोई चढ नहीं सकता और इसका लम्बाव भी अधिक है। इसके चारों ओर बडे २ घने जंगल वृक्षोंसे ढके हुए हैं, पहाडकी ऊंची चोटियोंसे प्रायः छोटे २ बादल मिले रहते हैं। इसकी बडी २ ऊंची चोटियोंपर खडे होकर वीरवर जोधाजीके वंशवाले अपने विशाल राज्यके चारोंओरको सरलतासे देख सकते हैं वर्षा होकर जब दिशाएं स्वच्छ हो जाती हैं तब अपने विश्राम भवनके खुलेहुए झरोखोंके समीप खडे होकर राठौरकुलके राज्यकी सीमाको देखते रहते; उस समय उनके हृदयमें नाना प्रकारके सुखकी चिन्ताएं उत्पन्न होतीं और वे सदैव ही ऐसी क्रीडा करते रहते हैं। जोधपुरके नीचेकी ऊंची पहाडियें दक्षिणमें जाय अवेलीकी पर्वत श्रेणियोंसे मिल अनन्त आकाश सागरमें असंख्य अचल लहरोंके समान विराजमान हैं। और शेष तीन ओरसे विशाल मरुसागर अत्यन्त बालूको उत्पन्न कर तीव्र सूर्यकी किरणोंसे धुधुकार २ दूर जाती हुई दृष्टिके मार्गको रोकता है. स्वच्छ जल कि, जो जीवनकी रक्षाका एक प्रधान उपाय है, उसका उस समय जोधाजीने विचार न किया। यद्यपि भाखरचिडिया सब विषयों व सामग्रियोंसे परिपूर्ण है तो भी उनमें एक इस ही बडे विषयका अभाव देखा जाता है; इसमें स्वच्छ जल पानेका कोई उपाय न था इस बातकी चिन्ता किला बनानेके समय जोधाजीके मनमें उत्पन्न न हुई। अतएव जोधपुरमें जो यह बडाभारी अभाव रह-गया वह सहजमेंही समझा जा सकता है परन्तु पीछे अपरिणामदर्शी होनेके कारण महाराज जोधाजीकी निन्दा न की जाय इस भयसे मारवाडके भाट लोगोंने चतुरताके साथ समस्त दोष उसी तपस्वीके ऊपर डार दिया। वह कहते हैं कि, मिस्त्रियोंने जोधपुरकी चारों सीमाओंको नापकर देखनेके समय उन योगिराजके एकान्त आश्रमको भी सीमाके भीतर लेलिया था। अपने साधन स्थानको दूसरेके हाथमें जाता हुआ देखकर सिद्ध पुरुषने बहुतसी विनय किया, परन्तु किसीने एक न सुनी। उसकी प्राचीन कुटी खण्ड २ होकर जोधपुरमें मिला ली गई तब उसने अत्यन्त क्रोध करके शाप दिया। मेरे आश्रमको छीन लेनेसे जोधपुरका समस्त जल सदा ही कसैला होकर दूषित रहैगा उसका शाप पूर्ण हुआ, राजाने शुद्ध जल पानेका दूसरा उपाय न देखकर एक सरोवरसे जो कि, किलेके नीचे था, कलकी सहायतासे जलका मँगवाना आरम्भ किया। महाराज जोधाजीके आगे जो राठौर राजा हुए उन्होंने बारूदकी सहायतासे

गिरिशृंगको उडाकर शुद्ध जलके पानेकी बहुतसी चेष्टा की। परन्तु उनका समस्त परिश्रम वृथा गया। यदि इन सब बातोंको छोडकर विचार किया जाय तो यही ज्ञात होगा कि,जोधपुरके बसानेके समय महाराज जोधा जीने नगरवासियोंके सुबीते असुबीते पर कुछ भी ध्यान नहीं किया था। जिस योगीका वर्णन ऊपर कर आये हैं जोधपुरके रहनेवाले आजतक भी उसके आश्रमको दिखाकर उसे भक्तिके साथ प्रणाम करते हैं।

संवत् १५१५ के ज्येष्ठ मासमें राठौर वीर जोधाजीने अपने नगरकी प्रतिष्ठा की।यह मंडोरसे चार मील है। इसके उपरान्त वह और तीस वर्ष जीवित रहकर संवत् १५४५ में इकसठ वर्षकी अवस्थामें इस लोकसे बिदा हो गये। उनके देहकी पवित्र भस्म उनके पितृपुरुषोंकी भस्मके साथ मंडोरके महलमें रक्षित हुई। मारवाडके विशाल क्षेत्रमें जोधाजी ही राठौर कुलका द्वितीय प्रतिष्ठानकर्त्ता था। उसके प्रतिष्ठित किए हुए जोधपुरने राठौरके इतिहासमें तीसरे युगका अवतारण किया था। जीवनकी प्रथम अवस्थामें वह जिनअसंख्य संकटोंमें पतित हुए थे;सुखका विषय है उन्होंने उसकी होनहार उन्नतिके मार्गको साफ कर दिया था। वह उन सब आपत्तियोंसे क्षणभरके निमित्त न घबडाये बरन इससे महत् चरित्र और भी विकसित हो गये उन्होंने उन विषम आपत्तियोंमें छुटकारा पानेके निमित्त जिन उपायोंको निकाला और अवलम्बन किया वह सभी उनकी होनहार उन्नति की सीढीस्वरूप हुए। जिन समस्त सामन्तोंके बाहुबलके प्रभावसे प्राचीन राठौरोंने अनेक महामहा कार्योंका अनुष्ठान और अनेक बडी२ कीर्तियां स्थापित की थी। इतने दिन उन्होंने जोधाजीके पितृ पितामहोंसे परित्यक्त हो अत्यन्त दीन और गुप्तभावसे मरुस्थलके दुर्गम प्रदेशोंमें समय बिताया था। किन्तु उसने मंडोरसे दूर हुए उन समस्त त्यागे हुए स्वार्थ वंचित प्राचीन सामन्त कुलके वंशधरोंको ढूंढ ढूढ कर फिर उनके पदपर प्रतिष्ठित किया। पितृपुरुषोंके पूर्वपदको फिर प्राप्त होनेसे वे सामन्त अत्यन्त आह्लादित हुए। उनका हृदय उत्साहसे परिपूर्ण हो उठा। अपने स्वामीके निमित्त उन्होंने जीवनतकको न्यौछावरकर देनेकी प्रतिज्ञा की और प्रतिज्ञाके अनुसार वे गहलौतोंके हाथोंसे राजधानीके उद्धार करनेमें सबप्रकारसे समर्थ हुए।इन समस्त वीरोंसे जोधारावका असीम उपकार हुआ था, उनको वह समस्त जीवन न भूल सका। उस हरबूसांकला, उस पाबूजी[1] और उस रामदेव[2] राठौर की मूर्ति पत्थरमें कटवाकर वीरवर जोधाजीने प्राचीन मंडोरके सम्मुख भागमें स्थापित की थी। आज भी उस मरुदेशके रहनेवाले उन समस्त वीरोंकी घोडोंपर चढी हुई प्रचंडमूर्ति उस स्थानमें जीवि-

---

१ पाबूजी अपने प्रसिद्ध तुरंगनी कालवीके ऊपर बैठा हुआ है। हरवा सांकलाके समान यह भी वीरत्व राजपूत कवि और देखनेवालोंके आदरका धन है, उसके समस्त कार्योंकी एक एक तसवीर खींचकर प्रतिवर्ष मारवाडके निवासियोंको दिखाई जाती हैं। २ रामदेवको राठौर गलत लिखा है राठौर तो पाबूजी थे और रामदेव तंवर था। प्रे० टी०। ३ वीर रामदेव राठौरका नाम मरुदेशमें यहां तक विख्यात है कि प्रायः सभी राजस्थानमें सुना जाताहै।राजस्थानके प्रायः सभी गावोंमें इसके नामसे एक वेदिका बनी हुई है।

तके समान विराजमान देखते हैं* उन स्वदेशप्रेमी वीरोंका पवित्र नाम कोई भी राठौर नहीं भूल सकता। आज भी वे प्रातःकाल सोतेसे उठनेके समय उनके पवित्र नामोंकी मालाका जप करते हैं; आज भी वे प्रतिवर्ष उन पत्थरकी मूर्तियोंकी भक्तिसहित परिक्रमा कर उनके गुणोंका कथन करते २ अत्यन्त आनन्दित और आह्लादित होते हैं। राठौरवीर सियाजीने जिस दिनसे अपने पितृ पुरुषोंके प्राचीन लीलाक्षेत्र कन्नौज राज्यको छोडकर मरुभूमिकी अनन्त वालुकाराशिके ऊपर राठौरकुलकी विजयपताका स्थापित की, उस दिनसे इस समय तक कुछ कम तीनसौ वर्ष बीत गये। इन तीन शताब्दियोंमें उनके वंशधर इतने विस्तृत और बहुतगोष्ठी (सम्प्रदाय) वाले हो गये कि, चालीस सहस्र वर्गकोश भूभाग भी इनके निमित्त थोडा स्थान जान पडने लगा। यद्यपि विधाताकी इच्छासे उसी वीरकेसरी राठौर सियाजीके वर्तमान वंशधर अत्यन्त दीन भावसे समय बिताते हैं, परन्तु इनके पूर्वपुरुषोंके प्रचंड बाहुबलके प्रभावसे पराहत होकर जो प्राचीन राजपूतवीर स्वाधीनतासे अनन्तकालके निमित्त राज्यच्युत हुए थे; एक बार उनके विषयोंपर विचार करनेसे किसी प्रकार भी दारुण विस्मय और शोकके वेगको नहीं रोका जा सकता। पडिहार सांकला, ईदा, चौहान, गोहिल, सोनगरा, कान्तिजित् और हुल्ल आदि जिन प्राचीन राजपूतोंके अतिमानुष अनुष्ठानसे समस्त भारतभूमि एकसमय गौरवान्वित हुई थी, आज उन्हींके कुछेक मनुष्य राठौरोंके वशमें सामन्त राजाओंके रूपसे विराजमान हैं शेष सबका अस्तित्व तो ऐसा है कि उनका नामतक

---

* यह सब मूर्तियां एक २ पत्थरके चट्टानमें काटकर बनाई गई है। यह सभी घोडाओंपर चढी हुई और सम्पूर्ण योद्धाओंके वेशमें हैं। वे दहिने हाथमे बर्छेको उठाये, बांए हाथमें घोडेकी लगाम पकडे; पीठमे ढाल लटकाये बडा भारी धनुष और तरकस बांधे; कमरमें तलवारें और कमरबन्दमे छुरी खुसी हुई है। वह भी उन्हीं मूर्तियोंके समान सजे हुए हैं। देखनेसे यह मूर्तियां जीवित समझ पडती है। मानो सब ही अहंकार सहित टेढी भौंहें करके देख रही हैं। कालके प्रभावसे भारतकी स्वाधीनताके साथ ही साथ समस्त शिल्पविद्याका भी लोप हो गया है। हमारे पुराणोंमें जो हिन्दोस्थानके प्राचीन शिल्पका वृत्तान्त देखा जाता है, आजकलकी अवस्था देखनेसे वह सभी कल्पित जान पडता है। परन्तु उस शिल्पने भारतमे एक समय बडी उन्नति प्राप्त की थी, वर्तमान समयमे भी उसका अधिक प्रमाण पाया जाता है। यह सब मूर्तियां एक बडे मैदानमे ऊपरकी ओर क्रमशः स्थापित हैं। पहिले पाबूजी तदनन्तर रामदेव राठौर और उसके उपरान्त राठौर वीर हडबूसांकालकी मूर्ति है, अन्तमें चौहान वंशीय प्रसिद्ध वीर गांगाकी मूर्ति हे कि जिसने महमूदका आक्रमण रोकनेको सतलजके किनारे अपने सैंतालीस लडकों समेत जीवनको न्योछावर किया था। इन सबके पीछे गहलौत कुलमें उत्पन्न हुए मिवेशतिमगोलियाकी मूर्ति है, इसने भी राठौरराज जोधाजीकी सहायता की थी। इन कई एक बीरोंकी मूर्ति देखनेसे मनमें अत्यन्त उत्साह हो उठता है। अपने देशकी रक्षाके निमित्त इन्होंने अपने प्राणतक देने स्वीकार किये थे। दुःखका विषय है कि, इनका यथार्थ वर्णन कहीं नहीं देखा जाता।

---

१ हडबूसांकला राठौर नहीं था, सांकला था जो पवारकी एक शाखा हैं।

राजस्थानके नक्शेसे लुप्त हो गया है, आज भाटोंके काव्यग्रंथ और मनुष्योंके स्मृति-पद (याददास्त) के अतिरिक्त उनका कुछ भी चिह्न दिखाई नहीं देता। उनके वंशका वृक्ष अनन्त कालसागरमें डूब गया है, परन्तु उस अनन्त मरुभूमिमें उनके पैरोंके चिह्न अब भी जीवित भावसे विराजमान हैं। उन समस्त महापुरुषोंके पवित्र पद चिह्नोंको देखकर कौन उनका अनुसरण करके उनके महत् चरित्रोंके अनुकरण करनेमें अग्रसर न होता ? कौन राजपूत भाट कवियों समेत ऐसे समस्वरसे नहीं कह उठता कि " सब ही अनित्य है, जीवन दीपकमें जलनेवाले पतंगेके समान है। सब ऐश्वर्यकी सामग्रीका नाश हो जायगा, केवल महापुरुषोंका नाम ही अनन्तकालतक अमर रहैगा। "

जोधारावके चौदह पुत्र * उत्पन्न हुए थे। उनमेंसे जेठे सांतलजीने पिताके राज्य को छोड राजस्थानके उत्तर पश्चिम भाटियाके राज्यमें सातलमेर नामक एक किला बनवाया। यह क़िला आजकल पोकर्णसे तीन कोशकी दूरीपर स्थित है। मरुभूमिके एक प्रान्तमें सराई नामक यवनजाति वास करती थी। उसके अधिपतिके साथ सांतलका घोर विवाद उपस्थित हुआ। उसी विवादमें उसने उस यवन राजा (खान) सराईको मार डाला था; परन्तु आप भी अपनी रक्षा न कर सका सगोनामक स्थानमें इसका शव जलाया गया। सांतलकी सात स्त्रियां भी उसके साथ सती हो गई।

जोधा रावके चौथे पुत्र दूदाने मैरताके बिशाल क्षेत्रमें अपने वंशतरुको स्थापित किया। इसके ही वंशधर मैडतियां राठौरके नामसे प्रसिद्ध हैं। एक समय यह मरुदेशमें बड़े श्रेष्ठ वीरके नामसे प्रसिद्ध था। जिस वीरकेसरी जयमलने दिल्लीश्वर अकबरकी प्रचंड सेनाके विरुद्ध चित्तौडगढकी रक्षा की थी, जिसकी पत्थरकी मूर्ति आज भी

* नाम.	गोष्ठी.	भूसम्पत्ति.	कैफियत.
१ सांतलजी	+	सातलमेर	पोकर्णसे तीनकोश
२ सूजाजी	+	+	जोधपुरका उत्तराधिकारी
३ जोगाजी	+	+	निर्वंश
४ दूदाजी	मेरतिया	मैरता	इसने चौहानोंके हाथसे सांभरको छीन लिया था इसके वरिन नामक एक पुत्र हुआ वरिनके दो पुत्र जयमल और जगमाल हुएइनसे जयमलोत औरजगमलोतदोगोष्ठी उत्पन्नहुई
५ वरसिंहजी	वरसिंहोत	नैती	
६ बीकाजी	बीकावत्	बीकानेर	
७ भारमल्लजी	भारमल्लोत	बीलारा	
८ शिवराजजी	शिवराजोत	दूनारा	
९ कर्मसीजी	कर्मसोत	क्योनसर	रवीमसर
१० रायपालजी	रायपालोत		
११ सांवतसीजी	सांवतसीगोत	द्वारो	
१२ बीदाजी	बीदावत	बीदावाटी	जि० नागौर
१३ वनवीरजी			
१४ नीवाजी			

दिल्लीके सिंहद्वारमें विराजमान है, राठौर राजकुमार दूदा उसीका पितामह था। दूदाके एक सर्वगुण सम्पन्न और परमविदुषी पुत्री हुई थी। उसका नाम मीराबाई था। उसी मीराबाईके साथ राणा कूंभाका विवाह हुआ था। मीराबाईके गुणोंकी प्रशंसा आजतक मेवाडमें गाई जाती है।

छठवें पुत्र बीकोंने अपने चचा कांधलकी चालचलन व रीति भाँतिको स्वीकार किया और अन्तमें उसके ही साथ मिल गया। तदनन्तर जाटोंके अधिकृत कईएक गाँव और नगरोंको छीनकर उसने प्रसिद्ध नगर बीकानेरकी प्रतिष्ठा की, बीकाजीका सविस्तर वृत्तान्त बीकानेरके इतिहासमें प्रगट होगा।

राठौरकुलचूडामणि जोधाके मरनेके उपरान्त उसका दूसरा पुत्र सूजा मारवाडकी गद्दीपर बैठा। जो नियम कि राजगद्दीपर बैठनेका सदासे चला आता था उसमें यह विरुद्धता क्यों हुई, इसका कोई कारण नहीं देखा जाता, ग्रन्थकर्ता भाट-कवियोंने भी इस विषयमें कुछ नहीं कहा। जो हो सूजा सब प्रकारसे अपने पिताका योग्य पुत्र था। उसके अधिकारमें मारवाडका राज्य सत्ताईस बर्ष रहा, उसने बडी सावधानी और चतुरतासे राज्यकार्य किया।

दिल्लीके सिंहासनके लिये जिस समय लोदीवंशीय राजाओंमें अत्यन्त विग्रह उपस्थित हुआ, उस समय मारवाडका सिंहासन यवनोंकी दुष्ट दृष्टिसे बचा हुआ था। घरके ही युद्धमें लिप्त होकर लोदियोंको देश जीतनेका अवसर प्राप्त न हुआ। किन्तु, यवन हिन्दुओंके परम शत्रु हैं। हिन्दुओंको भलीप्रकार शांतिसे सुख भोगते देख उनको अत्यन्त असंतुष्टता उत्पन्न होती है। मुसलमान राजाओंको हिंदुओंके शांति भंग न करनेकी चेष्टा करनेपर भी उनके यहांके स्वार्थी और हिन्दुओंके द्वेषी सेनापति समय २ पर हिन्दुओंके ऊपर आक्रमण कर उनपर अनेकों प्रकारके अत्याचार करते थे। संवत् १५७२ (सन् १५१६ ई.) के श्रावण मासके शुक्लपक्षकी पार्वती तृतीयाको पीपौ

---

१ यह बात गलत है मीराबाई दूदाकी बेटी थी और कूंभाको विवाही गई थी क्योंकि वास्तवमें मीराबाई दूदाजीके दूसरे बेटे रत्नसिंहकी बेटी थी और महाराना कूंभाके पोते महाराना सांगाजीके कुँवर भोजराजको विवाही थी। २ जोधाके पीछे सातल गद्दीपर बैठा था और उसके पीछे संवत् १५४८ में उसका भाई सूजा उसका उत्तराधिकारी हुआ। ३ राजस्थान द्वितीय खण्डके अ० २३पृ० ६२८ में पार्वतीतृतीयाका वर्णन देखो। ४ पीपार यह एक साधारण छोटासा शहर जोधपुरसे १५ कोश है। इसमें कुछ अधिक १५०० घर हैं। इस शहरमें बहुतसे बनिये रहते हैं। कहा जाता है कि, ईसाके जन्मके पहिले उज्जैनमें जो एक गन्धर्वसेन नामक पंवार राजा था, उसने ही इस पीपार नगरको बसाया था। महात्मा टाडसाहबको यहां एक पत्थरका लेख मिला था उससे विजयसिंह और दैलूनजी राजाका नाम पाया जाता है। यह दोनों ही गहलौत कुलमें उत्पन्न हुए थे और रावलकी उपाधिद्वारा प्रसिद्ध थे। इससे जाना जाता है कि गहलौतोंने पंवार राजाओंसे उस नगरको जीता था। इधर मेवाडके एक प्राचीन इतिहासमें भी देखा जाता है कि, गहलौत कुलमें जो चौबीस शाखाओंमें बंटा हुआ है, उन चौबीस शाखाओंसे अतिरिक्त दूसरे "पिपाडा गहलौत भी" हैं।

नामक नगरमें एक महोत्सव हो रहा था, उस महोत्सवमें मारवाडकी अनेक दिशाओंसे असंख्य * राजपूत स्त्रियें भगवती गौरीकी पूजा करने आई थीं । उसी समय उस "तीज"के दिन एक पठानोंकी सेनाने आकर उस मेलेपर आक्रमण किया, और वे १४० कुमारियोंको हर ले गये । कोई भी उनको न रोक सका । इस शोचनीय समाचारको राजा सूजाने सुना । क्रोध और हिंसासे उसका मस्तक जलने और चकराने लगा दुष्टोंको दंड देकर कुमारियोंकी रक्षाके निमित्त वह अत्यन्त ही कातर हो उठा । अधिक सेनाके सजानेमें बिलम्ब होनेके भयसे वह अपने ही साथवाले पहरेदार सिपाहियों समेत पाखण्डी पठानोंका पीछा करनेको बाहर निकला सूजाने अत्यन्त वेगसे धावा करके उनका पीछा किया, पीछा करते २ अन्तमें उसने मुसलमान सेनाको देख पाया । वह क्रोध और हिंसासे दुगुना उत्तेजित हो उठा । सिंह जैसे अपने बच्चोंको हरा हुआ देख अति प्रचंड वेगसे हरनेवालेपर आक्रमण करता है।आज मारवाडके अधिपति राव सूजाने उस ही प्रकार कुमारियोंके हरनेवाले पठानोंके ऊपर अत्यन्त प्रचण्ड पराक्रमसे आक्रमण किया, शीघ्र ही दोनों दलोंमें घोर युद्ध होने लगा । थोडे ही देर युद्धके उपरान्त सूजाने यवनोंको मार कुमारियोंको छुडा लिया । सूजा विजयी हुआ । यद्यपि उसने यवनोंको मारकर कुमारियोंका उद्धार कर लिया, परन्तु शत्रुओंके घोर आघातोंसे वह इतना घायल हुआ था कि उन्हीं आघातोंसे वह अधिक क्षण जीवित न रह सका । राजपूत कुमारियोंके छुडानेके कुछ ही देर उपरान्त वह भी रणभूमिमें गिर पडा । किन्तु वह मृत्यु उसकी आनन्दकी मृत्यु हुई । वे एक सौ चालीस कुमारियां जब उसको घेरकर उसकी वीरताके गीत गाने लगीं, तब उसके आनन्दकी सीमा न रही । उस असीम आनन्दका भोग करते २ वीर सूजाकी आत्मा अनन्त:सुखमय अमरधामको चली गई । राव सूजाकी इस असीम वीरताका वर्णन आज भी राजस्थानके भाटोंके मुखसे सुना जाता है; आज भी उसी पार्वतीतृतीयाके मेलेमें उस मारवाडके राजाकी असीम वीरता और महत्त्वता तथा पीपाड नगरकी कुमारियोंके हरण किये जानेका वर्णन उत्साह सहित गाया × जाता है।

---

* असंख्य राजपूत स्त्रियाका आना गलत है क्योंकि न तो असंख्य राजपूत स्त्रियाँ पीपाडमें आई थीं और न मेलेमें राजपूत स्त्रियोंके आनेका कहीं नियम है। और फिर इस तरह बिना रक्षाके राजपूत स्त्रियां आती जाती नहीं हैं कि, जिनसे एकदम १४० को मुसलमान पकडकर ले जावें और एक भी तलवार उस जगह न चले संभव है कि साधारण प्रजाकी बहू बेटियां हैं (प्रे० टी०) × यह घटना राव सूजाजीके समयमें श्रावणी शुक्ल ३ सं० १५७२ को नहीं हुई थी, किन्तु राव सातलके समयमें चैत्र सुदी ३ सं १५४८ में हुई थी उस समय राव सातलजीसे और अजमेरके सूबेदार मल्लूखाँसे पीपालके पास लडाई हो रही थी । तीजके दिन गाँव कोसानके तालाब पर से जो पीपाडके नजदीक है मल्लूखाँका एक सरदार तीज पूजनेवाली सात वीसी लडकियोंको पकड ले गया सातलजी मल्लूखांके लश्कर पर रातको धावा करके उन लडकियोंको छुडा लाया और आप भी बहुत जखमी होनेसे उसी रातको गांव कोसानेमें आकर मर गया । सूजाजी गद्दीपर बैठे ।

सूजाके पांच पुत्र थे। उनमेंसे जेठेने तो अकालमें ही देह छोड दी थी, इस कारण उसका पुत्र गांगा पितामहके सिंहासनपर बैठा। सूरजमलके चार पुत्रोंमेंसे दूसरे पुत्र ऊदाके वीर्यसे ग्यारह पुत्र उत्पन्न हुए इनका वंश उदावतके नामसे प्रसिद्ध हुआ। इनको मारवाड और मेवाडमें बहुतसी भूमिसम्पत्ति प्राप्त हुई। उनमेंसे तीमाज, जेतारन, गूदोज, बराठिया और रायपुर आदि कुछेक नगर प्रसिद्ध हैं; तीसरे सांगाको एक स्वतंत्र नगर प्राप्त हुआ था, उसका नाम बरोहमें था। इस सांगाके वंशधर सागावतके नामसे प्रसिद्ध हैं। चौथे प्रयागसे प्रागदास गोत्र उत्पन्न हुआ। पांचवां वीरमदेव, इसके नरा नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। मारवाड निवासी नराको देवताके समान पूजा करते हैं। सोजत नामक स्थानमें इसकी एक मूर्ति स्थापित है तिसकी आजकल भी पूजा होती है नराके वंशधर नरावत जोधाके नामसे प्रसिद्ध हैं। इसकी एक शाखा हाडोतीके अन्तर्गत पंच पहाड नामक स्थानमें देखी जाती है।

राठोर वीर सूजाके संवत् १५७२ (सन् १५१६ ई०) के भाद्रपद मासमें परलोक गमन करनेपर उसका पौत्र गांगा मारवाडके सिंहासन पर बैठा, उससे गांगाका दूसरा चचा सेरवाजी उसका घोर शत्रु हो गया। सेरवा अपनेको पिताका योग्य उत्तराधिकारी कहकर प्रचारित करने और गांगाको गद्दीसे उतारनेके निमित्त एक योग्य सहायताकी खोज करने लगा। लोदीवंशीय दौलतखां नामक जिस विश्वासघातक यवनने दिल्लीश्वर इब्राहीम लोदीका सर्वनाश करनेके निमित्त वीरकेसरी बाबरको भारतवर्षमें बुलाया था, वही इस समय राठौरोंके हाथसे नागोरको छीनकर सुख भोगता था। अपने स्वार्थसे अंधे हुए मनुष्यको अपने हिताहितका ज्ञान एकसाथ भूल जाता; यहां तक कि, वह यथार्थ पशुके समान हो जाता है। आज स्वार्थान्ध सेरवाजी भी ठीक ऐसा ही हो गया। जिस दौलतखांने उसके पितृपुरुषोंके जीते हुए प्राचीन नागौरको बलपूर्वक छीन लिया था। आज सेरवाजी स्वार्थ पूर्ण करनेके निमित्त राठौर कुलके उसी शत्रुके निकट सहायताकी प्रार्थना करने गया। अपनी ही जातिकी शत्रुतासे ऐसे ही कायरोंद्वारा भारतका सर्वनाश हो गया है। जो हो, स्वदेशवैरी स्वार्थान्ध सेरवाजीकी दुष्टतासे मारवाडमें एक बड़ा भारी झगडा उपस्थित हुआ। इस घरके उपद्रवमें नित्य लिप्त हो आज महाराज जोधाजीके पुत्र प्रपौत्र परस्पर एक दूसरेके हृदय रक्त पीनेको उन्मत्त हो उठे। मारवाडके वीरगण आज दो दलोंमें बटकर दोनों राठौर राजकुमारोंके पताकाके नीचे खडे हुए दौलतखांने इनका बिचोही होकर झगडा दूर करनेकी चेष्टा की

---

१ वीरमदेव सूजाका बेटा नहीं सूजाके बेटे बाणाजीका बेटा था। जो कि कुंवरपनमें मर गया था। २ नाराजी बीरमका बेटा नहीं था, सूजाजीका बेटा था और बाणाजीसे बडा था। ३ यह दौलतखां न तो लोदी वंशी था और न इसने राठौरोंसे नागौर छीना था यह तो नागौरका स्वतंत्र रईस नव्वाब कई पीढियोंसे था। और टाक जातिका मुसलमान राजपूत गुजरातके बादशाहोंकी शाखामेंसे था। और खानजादा कहलाता था। गुजरातके बादशाहोंकी सहायतासे इसको नागौरका अधिकार मिला था।

और मारवाड़के राज्यको शत्रुओंके बीचमें बांट देना चाहा। किन्तु तेजस्वी गांगाने अहङ्कारपूर्वक उस प्रस्तावको अस्वीकार किया और तब दोनों तलवारकी ही सहायतासे अपने २ भाग्यकी परीक्षा करनेमें तत्पर हुए। सौभाग्यवश उसको मरुस्थलीके श्रेष्ठ वीरोंकी सहायता प्राप्त हुई। इस कारण उस गृहयुद्धमें उसीने सब प्रकारसे जय प्राप्त की। उसका घोर शत्रु सांगा युद्धस्थलमें मारा गया और दौलतखां लोदी अत्यन्त घायल और तिरस्कृत होकर युद्ध क्षेत्रसे भाग निकला।

राज्यको पाकर गांगाने बारह वर्षतक निष्कंटक राज्य किया। इसी समय वीरवर बाबरकी प्रचण्ड रणदुन्दुभीके शब्दसे समस्त हिन्दोस्थान कांप उठा। उस भयानक कम्पके साथ ही साथ दिल्लीके बादशाह इब्राहीम लोदीका भी सिंहासन कांप उठा उसका राजमुकुट पतित होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। अकस्मात् इस विप्लवके हो जानेसे हिन्दूराजसमाजमें एक घोर भय उपस्थित हो गया। सभी राज्यके नाश होनेके भयसे अत्यन्त भयभीत हो इस नये आये हुए प्रचण्ड शत्रुके पराजित करनेका यत्न करने लगे और सबने महारथी राणा संग्रामसिंहकी पताकाके नीचे इकट्ठे हो उस भयानक भारत-शत्रुके विरुद्ध युद्धको यात्रा की। मारवाड़पति राव गांगा भी अपने देशकी स्वाधीनताकी रक्षाके निमित्त उस महायुद्धमें सांगाके साथ हुआ। इस भयानक संग्राममें राजपूतोंने जो आश्चर्यजनक वीरता दिखाई मेवाड़के इतिहासमें उसका भलीप्रकारसे वर्णन हुआ है। यदि राजपूतकलंक तँमर सलहदी विश्वासघातकता कर बाबरकी ओर न हो जाता तो राजपूत अवश्य ही मुसलमानोंके पंजेसे भारतको छुड़ा लेते। अन्यान्य राजपूतोंके समान राठौरोंने भी इस युद्धमें असीम वीरता दिखाई थी। कहते हैं कि, इस युद्धमें सब सेनाके सामने इसी सेनाने स्थान पाया। उस राठौर सेनाका सेनापति राव गांगाका पोता वीर बालक रायमल[1] हुआ था। रायमलने मैरातिया सरदार-खांतो और रवरत्ननामक दो राठौर वीरों समेत बाबरकी तोपोंके सामने हो अतुल वीरताका प्रकाश कर अन्तमें रणभूमिमें प्राण त्याग दिये थे।

इस दारुण पौत्रशोकसे गांगा अधिक दिन जीवित न रह सका उस[3] भयानक युद्धके चार वर्षके उपरान्त ही उसने देहको त्याग इस शोकके[2] बोझसे छुटकारा पाया।

---

१ यह रायमल गांगाजीका पोता नहीं था। दूधाजी मेड़तीयका बेटा था और गांगाजीका पोता रायमल तो इस लड़ाईके कई वर्ष पीछे पैदा हुआ था। सबमें बड़ा पोता राव गांगाजीका राव राम था। वह भी इस लड़ाईसे दो वर्ष बाद संवत् ११८५ में पैदा हुआ था रायमल मेड़तिया अपने भाई मेड़तेके राव वीरमदेकी तरफसे अपने भाई रत्नसिंह सहित जो मीराबाईका बाप था राजा सांगाकी मददके लिये गया उस लड़ाईमें यह दोनों भाई काम आ गये थे। २ पतिकी दी हुई कुलतालिकामें लिखा हुआ है कि गांगाको विष दिया गया था। परन्तु यह विश्वासके योग्य नहीं क्योंकि इसका वर्णन और किसी ग्रन्थमें नहीं पाया जाता। ३ इस शोक सन्तापकी कथा भी नयी गढन्त जैसी मालूम होती है जोधपुर राज्यके मूल इतिहासमें इसका कहीं पता नहीं लगता।

गांगाके मरनेपर मालदेव संवत् १५८८ (सन् १५३२ ई०) में उसके सिंहासनपर बैठा। मारवाडके बडे २ राजाओंके समान मालदेव भी मारवाडके इतिहासमें एक महत् चरित्रको स्थापित कर गया है। उसके राज्यकालमें मारवाडकी जैसी उन्नति हुई थी, यदि उसमें कुछ भी चेष्टा की जाती तो वह देश रजवाडेमें सब देशोंका सिरमौर गिना जाता। परन्तु राव मालदेवने अपने यत्नमें न्यूनता न की। यद्यपि वह अपने राज्यमें बाबरके आक्रमण करनेकी आशंका करता था, परन्तु उस आशंकासे उसकी कुछ हानि न हुई क्योंकि बाबरकी तीक्ष्ण दृष्टि उस समयतक मारवाडकी ओर नहीं गई । अन्न उपजानेवाली गंगा किनारेकी भूमि छोडकर शाक उपजानेवाले महावीर मारवाडकी प्रचंड बालुकाराशिकी ओर जानेकी उसने इच्छा भी न की। इससे मालदेवको अपने राज्यके बढानेका एक अच्छा अवसर हाथ लगा। जिस स्थानसे दिल्ली और मारवाडकी सीमा विभक्त है उस स्थानपर कईएक किले बने थे, वे किले दिल्लीके राजाओंके अधीन थे। इस समय अवसर पाकर मालदेवने उन सब किलोंको अपने वशमें कर लिया और दूर बसे हुए ढूढाडमें राठौरकुलकी विजयपताका स्थापित की। उसका गौरव दिन२ बढने लगा। उसके गौरववृद्धिके मार्गमें उस समय एक भी कांटा वर्तमान न था। वीरकेसरी राणा सांगाके मरनेपर मेवाड राज्यमें जो घोर उलटपलट और विग्रह उपस्थित हुआ । उसमें सभी मुगल, पठान आदि शक्तिमान् मुसलमान लिप्त थे उस समयमें मारवाडकी ओर किसीकी भी दृष्टि न पडी। अतएव राजा मालदेवने अप्रतिहत प्रभावसे अपनी असीम प्रभुताको प्रगट किया था। उसने ऐसे सुअवसरको पाय अपने राज्यके बढानेकी दृढ प्रतिज्ञा की, इस कारण जो शत्रु मित्र उसकी उन्नतिके मार्गमें कंटकस्वरूप खडे हुए थे, उन्हींको अपनी तलवारसे काट उनके राज्यपर अपना अधिकार किया। ऐसे ही धीरे २ वह मारवाडका अति श्रेष्ठ राजा हो गया। इतिहासलेखक फारिस्ताने इसकी अपेक्षा और भी उच्च सन्मान दिया है। वह कहता है कि "मालदेव ही उस समयमें हिन्दोस्थानके प्रसिद्ध राजाओंमें गिना जाता था।"

मारवाडपति राव मालदेव जो यथार्थमें ही इस सुनामके योग्य था; उसके महत् चरित्रोंपर विचार करके भलीप्रकार प्रगट हो जायगा कि उसके चरित्र वा प्रभाव बहुत बडे थे। राजपदपर अधिष्ठित होकर उसने मुसलमानोंके ग्राससे पितृपुरुषोंके प्राप्त किये दो प्रधान नगर नागौर और अजमेरका उद्धार किया। इसके आठ वर्षके उपरान्त संवत् १५९६ में सिंधिलोंके अधिकारसे उसने जालोर, सिवाना और भाद्राजून नामक तीन* नगर छीन लिये, और बीकाके वंशधरोंको बीकानेरके अधिकारसे च्युत कर दिया। लूनी नदीके किनारेवाले जिन नगरोंमें राठौरवीर सियाजीने एक समय अपनी विजयपताका स्थापित की थी, उन सब स्थानोंके अधिपतियोंने इससे पहिले राठौर कुलकी अधीनताको दूर बहाकर स्वाधीनता प्राप्त की, परन्तु इस समय मालदेवने

* राव मालदेवने ये तीन नगर स्यन्दल राठौरोंसे नहीं छीने थे। जालोर तो सं० १५९५ में बिहारी पठानोंसे छीना गया था और सिवाना जैतमालोत राठौर जातिके राना डूंगरसी राठौरसे लिया था।

उन सबको पराजित करके उन्हें फिर अधीनताके वशमें,बंधनमें बांधा। उसका प्रचण्ड प्रताप अत्यन्त प्रकाशित हो उठा। उसके असीम प्रतापके सामने विशाल मरुस्थलीके सभी राजाओंने शिर झुका लिया। जो प्राचीन "भूमियांगण" एक समय मरुस्थलीके बीचमें अत्यन्त दुर्धर्ष गिने जाते थे,वे भी राठौरराजके प्रबल प्रतापसे पराजित हुए और उन्होंने उसको समस्त मारवाडका अधिपति कहकर स्वीकार किया और वे अपने रुधिरका दान कर २ उसकी सेवा करने लगे।

जब प्राचीन भूमियांगण उसके अधीन हुए, तब वह राठौरराज मालदेव अपनी विजयिनी सेनाको लेकर धीरे २ उत्तरकी ओर बढने लगा और प्रचंड प्रतापी भाटियोंके साथ घोरयुद्धमें प्रवृत्त हो अपनी उन्नतिके मार्गको और भी स्वच्छ करनेकी इच्छा की। वह युद्ध धीरे २ बढता हुआ बहुत दिनों चला। इधर उसने दो एक नगरोंको जीत अपने अधिकारमें किया। विक्रमपुर * ने उसकी अधीनता स्वीकार की। उसने आमेरकी राजधानीसे दश कोश दूर बसे हुए चाटसू नगरपर अधिकार कर उसके आसपास शहर पनाह बनवाई। इससे पहले देवतोंने शिरोहीको जीत लिया था, किंतु राठौरराजने इस समय उसको जीतकर फिर उन्हींके अधिकारमें कर दिया। उसने गौरवकी इच्छा और हिंसाके वशवर्त्ती हो इन सब ग्राम और नगरोंको जीता था;केवल यही नहीं, बरन किस प्रकारसे जीते हुए स्थान रक्षित रह सकें इसका भी उसने विशेष प्रबंध किया। इसी अवसरमें मारवाडके चारों ओर किले और बडे २ महल इत्यादि बनने लगे। जोधपुरके चारों ओर एक बडी दृढ दीवार बनाई गई। वीरकेसरी जोधाने अपने बसाये नगरकी शोभा और रक्षाके योग्य जिन महलों और सुन्दर अट्टालिकाओंको स्थापित किया था, मालदेवने उनकी भी कुछ मरम्मत करवाई। सांतलमेरको तुडवाकर उसने उसकी सब सामग्रियोंसे नये जीते हुए पोकर्ण× को दृढ किया और उस नगरके प्राचीन निवासियोंको वहांसे निकाल मारवाडी प्रजाद्वारा उसको सज्जित करने लगा। सिवाना नगरमें

---

* यहांपर इसके पितृपुरुषोंके गोत्रकी एक शाखा वास करती थी वह गोत्र इस समय जैसलमेरके साथ मिल गया है। वह इस समय मालदोतके नामसे प्रसिद्ध है। मालदोत मारवाडमें बडे साहसी दस्यु कहे जाते हैं। × पोकर्ण झालामंड और जोधपुरके ठीक बीचोबीचमें स्थित है। यह दुर्ग अत्यन्त दृढ और सुरक्षित है। सन् १८१९ ई० के २ नवम्बरके दिन मिस्टर टाडसाहब जिस समय झालामंडसे जोधपुरको आ रहे थे उस समय मार्गमें पोकर्णके सरदारने उनका बडा आदर सत्कार किया था। उस समयके पोकर्ण सामन्त राजाका नाम सालमसिंह था। सालमसिंह मारवाडके सामन्तोंमें धन और प्रतापमें श्रेष्ठ था। यह चम्पावतके नामसे प्रसिद्ध हैं यद्यपि चम्पावत मारवाड राजाके आधीन हैं किन्तु राठौरराजा इनके भयसे कांपते ही रहे। इनके प्रचण्ड पराक्रमसे राठौरोंके सिंहासनपर कई बार आपत्ति आई। सालमसिंहका परदादा देवसिंह ऐसा तेजस्वी और बलवान् था कि, वह किसी राजासे कुछ भी भय न करता था। वह प्रायः यही कहा करता, "मारवाडका सिंहासन तो मेरी तलवारके मियानके भीतर है।"

कुंडलकोट और इसके समीप ही पीपलोद दो शैलकूटकी कोठीपर भद्राजूनहै; उसके निकट जूँडोजरिया, पीपाड और दूनाडा नगरमें एक२ दृढ दुर्ग बनवाया। प्राचीन गढ बीटली (अजमेर) कि जिसका बुर्ज आजतक "कोटबुर्ज" के नामसे प्रसिद्ध है वह मालदेवने ही बनवाया था। एक कलके द्वारा उसने किलेके ऊपर पानीको चढ़ाकर अपनी अतुल बुद्धिका परिचय दिया था।इन सब महत् कार्योंमें उसका अतुल धन व्यय हुआ था। केवल मेरता* नगरके किलेकी मरम्मतमें २४००० रुपया व्यय हुआ था अपने राज्यकी दृढ़ताके योग्य बहुतसे कार्य्य करके मालदेवने उन कार्योंमें जो रुपया व्यय किया था, उसका विचार करते ही हृदय आनन्दसे परिपूर्ण हो जाता है। भाट कवि कहते हैं कि, रत्न उपजानेवाली सांभरके अनंत रत्नोंकी सहायतासे ही उसने अत्यन्त धन व्यय कर अपने कार्योंको पूरा किया था। इससे भलीप्रकार प्रगट होता है कि, इस समय सांभरझीलमें बहुतासा लवण उत्पन्न होता था कि, जिसकी आयसे बहुत धन राठौर राजके कोशमें आता था। इसी लवणसे प्राप्त हुए धनद्वारा मालदेव अपने राज्यकी वृद्धि कर सका था ×।

शांतिके फूलोंकी शैयापर सोकर राठौरवीर मालदेवने क्रमशः दशवर्ष तक निष्कंटक राज्यका भोग किया। परन्तु इस विमल शांति सुखका भोग भोगना उसके भाग्यमें और अधिक दिन न रहा। इतने दिन वह केवल अपने ही राज्यके बढानेमें लगा रहा था। किन्तु इस समय उसको अपने प्राण बचानेमें संकट आ उपस्थित हुआ। वीरकेसरी बाबरने इसी समयमें देह छोड़ी और उसका पुत्र हुमायूँ प्रचंडवीर शेरशाह द्वारा पिताके

---

* यह नगर मंडोरके राजा राव दूदाका बसाया हुआ था। मालदेवने इसमें एक दुर्ग बनवाकर अपने नामपर उसका नाम मालकोट रक्खा। मालकोटके दुर्गका व्यास प्रायः एक कोशका होगा।

× इसका राज्य कितनी दूरतक फैल गया था, भट्टग्रन्थोंमें इसका विवरण भली प्रकारसे देखा जाता है। यहांपर प्रयोजन समझकर उसका वर्णन किया जाता है। जो नगर और गांव मालदेवके अधिकारमें थे उन सबका ही नाम यहाँ लिखा जाता है। सोजत, सांभर, मेरता, खाटू.बिदनौर, लाडनू, रायपुर, भाद्राजून, नागौर, सिवाना, लोहागढ, झागलगढ, बीकानेर, भीनमाल,पोकर्ण, बाडमेर, कसोली, रैवासो, जोजावर, जालोर, बंवली, मलार, नाडोल, फिलोदी, सांचौर, डीडवाना, चाटस, लुहान, मलारना, देवरा, फतहपुर, अमृतसर, फाबर, मीनापुर, टोंक, टोडा, अजमेर, जिहाजपुर, और प्रेमरका, उदयपुर, (शेखावाटीके अन्तर्गत)इन अडतीस जिलोंमें बहुतसे तो जालोर,अजमेर, टोंक, टोडा और बिदनौरके अन्तर्गत हैं। मालदेव जैसा विशेष प्रतापी राजा था और जैसा उसका राज्य राजस्थानमे बडी दूरतक फैला था, वह ऊपरके नामोंके पढनेसे ही भलीप्रकार ज्ञात हो जायगा। किन्तु इन सब जिलोंमें मालदेवने कुछ ही दिनों राज्य कर पाया। चाटसू,लवान,टोंक, टोडा और जिहाजपुर तो शीघ्र ही उसके हाथसे निकल गये। बिदनौरकी भी यही गति हुई। यद्यपि बिदनौर और उसके अन्तर्गत तीनसौ साठ गांवोंमें राठौर राजा बास करते थे, किन्तु वे सब ही मेरता. गोत्रसे उत्पन्न हुए थे। वीरकेसरी जयमलने ही इस मेरता कुलको उज्ज्वल किया था। इसी कारण उस समयसे बिदनौर मेवाडकी भूमिसम्पत्ति गिना जाने लगा।

राज्यसे भगाया जाकर अपने प्राण बचानेके निमित्त दूरदेशको भागा। कहां तो वह दिल्लीके सिंहासनपर बैठकर निष्कंटक राजसुखको भोगता सो ऐसा न होकर वह अपने पिताके सिंहासनसे बंचित हो भाग्यके विपरीत स्रोतमें तृणके समान तैरने लगा। उस भयानक आपत्तिकालमें उसको जो दुःसह दुःख भोगना पड़ा उसका वर्णन मेवाड़के इतिहासमें भलीप्रकारसे किया गया है। उस आपत्तिकालमें उस निस्सहाय हूमायूँनेशत्रुद्वारा भगाये जाकर राठौर राजामालदेवके निकट शरण पानेकी प्रार्थनाकी थी, किन्तु मालदेवने एक बेर उसके मुँहकी ओर भी न देखा। इसमें संदेह नहीं कि मालदेवने इसमें अत्यन्त निष्ठुरता प्रकाश की थी; किन्तु जिस कारण वश हो वह इस निष्ठुरताके करनेको विवश था उसका हमने वर्णन नहीं किया। मालदेवने जो हुमायूँके साथ असद्व्यवहार किया उसका विशेष कारण है। बीते हुए बयानांके भीषण युद्धम मालदेवके*पुत्र रायमलको बाबरने मार डाला था। इस दारुण पुत्रशोकको वह राठौरराज समस्त जीवन भी न भूल सका। इस कठोर शोकानलके शांत करनेके निमित्त उसने बाबरके हृदयके रुधिरको बहानेकी इच्छा की थी, किंतु उसकी वह इच्छा इस समयतक न फली। जबस युद्धमें उसका पुत्र मारा गया तबसे वह बाबरको सहस्रोंही गालियां दिया करताथा। हुमायूं बाबरका पुत्र है। इस कारण वह चाहे दुःखी हो चाहे सुखी ही हो उसके साथ सहानुभूति प्रकाश करनेको मालदेवकी इच्छा न हुई। हुमायूं उसकी शरण लेनेकी इच्छासे वहां आया, परन्तु उसके हृदयकी अग्नि कि, जिसमें धुंआ सुलग रहा था अतिप्रचंडवेगसे जल उठी। तमोगुणने प्रचंड प्रबल हो उसके हृदयके सतोगुणको नाश करडाला, अत एव उसने क्षणमात्रको भी विचार कर न देखा कि निःसहाय हुमायूं शरण लेनेकी इच्छासे उसके निकट आया है। अतिथिसत्कारके ऐसे असद्व्यवहारके कारण मालदेवने जो पाप संचय किया था फिर वह उसका प्रायश्चित्त न कर सका। अपने बलके अहंकारसे मत्त हो उसने क्षणभरको भी न विचार देखा कि, वही हुमायूं बिपात्तिसे छूटकर समस्त भारतके सिंहासनपर फिर बैठेगा और उसका जेठा पुत्र अकबर थोडे ही दिनोंमें उस असद्व्यहारका योग्य फल देगा। अकबर × हुमायूँकी उस घोर रात्रिका केवल एक ध्रुवनक्षत्र, उसके छिन्न भिन्न हृदयका केवल एक सांत्वनाका पदार्थ था। वह उस समयमें मरुस्थलकी बालुकाराशिके ऊपर शुक्लपक्षकी शशिकलाके समान दिन२ बढ रहा था। धनके भोग विलासमें सोकर मालदेवने उस समय एक बेर भी स्वप्नमें न देख पाया कि, इसी अकबरके हाथमें राठौरकुलका भाग्यचक्र एक दिन अर्पित होगा; उसीके महत्त्व और उदारताके गुणसे एक दिन उस मालदेवके वंशधर "राजराजेश्वर" की उपाधि धारण करेंगे। शरण चाहनेवाले हुमायूंपर इस प्रकारका असत् आचरण कर मालदेव किसी भी उपकारको न प्राप्त हुआ, बरन् इससे उसको एक बड़ी आपात्तिमें प्रसित

* यह रायमल मालदेवका पुत्र नहीं था। जिसके शोकका यह व्यर्थ वृतान्त गढा गया है। इस विषयमें पहले टिप्पणी हो चुकी है (प्रे० टी०)। × अकबर तो इस समय उत्पन्न भी नहीं हुआ था।

होना पडा। हुमायूंके प्रचंड शत्रु शेरशाहने मालदेवके इस सम्पूर्ण वृत्तान्तको जान उसको अपने वशमें करनेकी इच्छा की। सब प्रकारसे इसका यही कारण जाना जा सकता है कि शेरशाह मालदेवके प्रतापको देखकर शंकित हो गया था। यवनराजने जब राठौरराजके पराक्रम और प्रतापका वर्णन सुना तब उसके मनमें एकाएक यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि, दिल्लीके समीप ऐसे प्रचण्ड प्रतापी राजाके रहते हुए उसका प्राप्त किया हुआ वह राज्य कभी भी निष्कंटक नहीं हो सकता। इस विषमयी चिन्ताके दंशनसे अत्यन्त पीडित हो शेरशाह मालदेवके परास्त करनेको आतुर हो उठा, और इसी अभिप्रायको पूर्ण करनेके निमित्त अस्सी सहस्र सेनाके संग मारवाडके राज्यपर आक्रमण किया। मालदेवने इस वृत्तान्तको जान पाया। वह पहिले तो कुछ न बोला और न उसने उसके रोकनेका कोई प्रबंध किया, यवनसेनाने बे रोकटोक अतिवेगसे मारवाडके भीतर प्रवेश किया। उस समय राठौरराजने उसका आक्रमण रोकनेके निमित्त पचास हजार राजपूत सेनाको इकट्ठा किया। आज पचास हजार राठौर वीरोंकी तलवारें एकत्रित हो देशके बैरी मुसलमानोंके विरुद्ध उठीं। किन्तु रणविशारद मालदेव शीघ्रताके वशवर्ती न हुआ, बरन् अत्यन्त सावधानी और बुद्धिमानीसे सेनादलको चलाने लगा। उसके युद्धकी तैयारीका उत्तम यत्न देख शेरशाह अत्यन्त भयभीत हुआ। युद्ध विषयमें निपुण होकर भी उसके हृदयमें ऐसे भयका संचार हुआ कि, वह अपने ठहर-नेके प्रत्येक स्थानपर पहुँचकर अपने डेरेपर बैठ अनेकों प्रकारकी चिन्तायें करने लगा उसने बिचारा कि, यदि राजपूतोंके हाथसे पराजित हुआ तो फिर युद्धस्थलसे लौट-जानेका कोई उपाय न रहैगा। और इससे निश्चय ही युद्धभूमिमें प्राण देने पडैंगे। राज-पूत जिस प्रकार दिन २ बल और विक्रमको बढाये भयानक मूर्ति धारण करते थे, इसी कारण उसके हृदयमें इस प्रकारकी चिन्ता उत्पन्न हुई। शेरशाह अपनी शीघ्रताके विषयको बिचार अत्यन्त ही कातर हुआ। ऐसे २ सोच विचारोंमें जितने ही जितने दिन बीतने लगे, उतना ही यवनराजके दुःखकी वृद्धि होने लगी। धीरे २ एक महीना बीत गया। राजपूत और यवनोंने परस्पर एक दूसरेके सामने सेना डालकर बिना युद्ध ही एक महीना बिताया। धीरे२ शेरशाहका दुःख अधिक बढने लगा। किन्तु वह इससे अज्ञान न हुआ, बरन् उससे छूटनेके उपाय खोजने लगा। अनेक चिन्ता और विचारोंके उपरान्त अन्तमें उसने अपने कार्यसिद्धिके लिये एक गूढ उपाय स्थिर किया। शेरशाह राजपूतोंको भलीप्रकारसे जानता और पहिचानता था कि, उनका हृदय थोडे ही आघातसे आहत होता और थोडी ही चेष्टासे दूसरी ओरको नम जाता है। इसी निश्चयके अनुसार उसने राठौर सेनामें अविश्वास और फूट उत्पन्न करा देनेकी प्रतिज्ञा की। और एक पत्र लिखकर यत्नपूर्वक मालदेवके डेरेमें फेंकवा देनेकी इच्छा की। यह उसका यत्न बहुत सहजमें ही पूर्ण हो गया। पत्र इस प्रकारके भावसे लिखा गया कि, जिससे उसके पढते ही राठौर सरदारोंपर मालदेवका दारुण अविश्वास उत्पन्न हो जाय। पत्र लिख जानेपर यवनराज बिचारने लगा कि, इसको किस प्रकारसे मालदेवके सम्मुख

पहुँचा सकूँ परन्तु थोडी ही देरमें इसका भी उपाय स्थिर हो गया। युद्धको और भी कुछ दिन रोक रखनेका अनुरोध कर शेरशाहने राठौरराजके निकट एक दूत भेजा । दूतने यत्नपूर्वक उस पत्रको मालदेवके डेरेके समीप डाल दिया और अपने कामको पूरा कर अपने स्थानको लौट आया।इसके कुछ ही देरके उपरान्त वह जाली पत्र मालदेवके सम्मुख पडा। उसने विस्मितचित्त हो तत्काल ही उस पत्रको आदिसे अन्ततक पढा । उसका मस्तक घूमने लगा,क्रोधसे हृदय कांप उठा । उसने चारों ओर अंधकार देखा, जिन सरदारोंके ऊपर विश्वास कर उसने कठोर कार्यके पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञा की है, क्या वे बिश्वासघातक हैं? क्या वे उसका सर्व नाश करनेके निमित्त देशबैरी यवनोंके साथ मेल रखते हैं ?-यह क्या सत्य है ? मालदेव अत्यन्त बिस्मित हुआ । सभी सरदार उसको बिश्वासघातक जान पडने लगे। उनके समस्त उत्साह और उद्यमको उसने केवल छलही छल जाना ।

दो एक दिन करके देखते२ युद्धका वह नियत दिन भी आ उपस्थित हुआ, मालदेवका विषादसे गम्भीर मुंह,जड और स्थिर प्रकृति तथा उदास चेहरेको देख राठौरवीर अत्यन्त ही चिन्तित हुए।कहां तो उसने उस दिन जलते हुए उत्साहित वाक्योंसे उन सबको उन्मादित किया था, और अब कहाँ स्वयं ही निर्जीवके समान चुपचाप अपनी शय्यापर पडे हुए हैं।इसका कारण क्या है?सरदार लोग इसको कुछ भी न समझ सके।युद्धका नियत समय आ जानेपर उन्होंने राजाकी आज्ञा चाही,परंतु राजाने आज्ञा न दी ।दारुण विस्मय और संदेहसे राठौर सरदारोंका हृदय घूमने लगा।शत्रुलोग घरके द्वारपर आकर ललकारते हैं;क्या इससे भी वह निश्चिन्त रह सकते हैं?उनके जीवित रहते हुए राठौर कुलका सम्मान गौरव क्या यवनोंके पैरोंसे दलित होगा ? मालदेव क्या राठौर नहीं है ? क्या उसने वीरकेसरी जोधारावके कुलमें जन्म नहीं लिया ? तब देहमें प्राण रहते, भुजाओंमें बल रहते हुए वह शत्रुओंकी गर्जना क्यों सहन करते हैं?इसका कारण क्या है ? आनन्दकी बात है कि, पराक्रमी राठौर सरदारोंने राजाकी इस उदासीनताका यथार्थ कारण जान लिया, और निश्चय समझ लिया कि, इस समय हम बातोंसे उनके सन्देहको दूर नहीं कर सकेंगे। तब उन्होंने कार्यद्वारा उस संदेहके दूर करनेकी प्रतिज्ञा की, इस कारण उन्होंने तत्काल ही अपने २ सेनादलको ले यवनोंकी सेनाके ऊपर आक्रमण किया । बारह सहस्र राजपूत वीरोंने देशबैरी यवनोंके पंजेसे राठौर कुलकी मान मर्यादाके छुडानेके निमित्त अत्यन्त उत्साहसमेत शेरशाहकी धुस्स बंधी हुई सेनापर धावा किया । साधारण धुस्स उनकी प्रचण्ड गतिको न रोक सका । उनके दलके दल यवन सेनाके ऊपर पडकर उनको दलित और त्रासित करने लगे। इस प्रकार शेरशाहकी अनेक सेना राठौरोंकी तीक्ष्ण तलवारद्वारा कटकर गिर गई । किन्तु जैसे एक २ गिरने लगा वैसे ही उसके स्थानपर दूसरा दल आकर भीषण उत्साहके साथ युद्ध करने लगा । इससे यवन सेनाका कुछ भी नाश होता न जान पडा । इधर प्रधान २ राठौर वीर भी उस भयानक युद्धमें गिरने लगे । धीरे २ राठौरोंका बल न्यून हो गया, राठौर सेना धीरे २ नाश

होनेपर आगई। राठौर सरदारोंको इस असीम वीरतासे मरते देख मालदेवके ज्ञान--नेत्र खुल गये। उन्होंने अब समझा कि, मैं छला गया। किंतु वह असमय था; १असमयमें कुम्भकर्णकी मोह निद्रा भंग हुई, आज उसकी: नीच दशाको कोई नहीं रोक सकता। राठौरसेना प्राय: नाश हो गई,उस समय भी यवनसेना मानो अक्षत देहसे युद्ध करती थी। राठौरोंके जीतनेकी अब कुछ भी सम्भावना नहीं रही है। देखते २ हिन्दू मुसलमानोंका युद्ध भयानक हो उठा। उस विशाल राठौर सेनाके बचे हुए कुछेक सैनिकोंने विस्मयकर वीरता प्रकाशित कर युद्धमें प्राण छोड दिये। मालदेव हार गया। उसने निश्चय ही जान लिया कि, मेरी ही मूर्खतासे मुझको यह घोर पराजय स्वीकार करनी पडी। सरदारोंका तिरस्कार और संतापकी ज्वालासे उसका हृदय जलने लगा। यदि वह सरदारोंका इस प्रकारका अविश्वास न करता, यदि वह अपनी वीरतासे उनके उत्साहकी अग्निको प्रज्वलित किये रहता तो पठानसिंह शेरशाहकी उस मरुभूमिमें निश्चय समाधि होती। राठौरोंने इस भयानक समरमें जो असीम वीरता दिखाई उसको शेरशाह स्वयं ही स्वीकार करता है। इस आपत्तिसे छुटकारा पाकर उसने कहा कि "मुट्ठीभर जौके निमित्त भारतराज्यको मैंने अपने हाथसे निकाल देनेका यत्न किया था।"

इस शोचनीय और घोरतर पराजयसे राठौरराज मालदेवको जो विषम मनोवेदना प्राप्त हुई थी, उससे वह शीघ्र ही छुटकारा न पा सका। उस दारुण अपमानके उपरान्त भी वह बहुत दिनों जीवित रहा। अपने जीवित कालमें उसने दिल्लीके सिंहासनमें दो स्वतंत्र राजवंशोंको बैठते हुए देखा। पहिले तो लोदीवंशके अध:पतनके साथ मुगलवंशका गद्दीपर बैठना फिर उस वंशसे राज्यको छीन शेरशाहके वंशका सिंहासन पर बैठना। इन दो राजवंशोंके तख्तपर बैठने और उतरनेसे हिन्दोस्थानके राज्यमें दो प्रचण्ड उत्पात हुए थे।शेरशाह भी बहुत दिनों तक भारतराज्यके सुखको न भोग सका, उसकी मृत्युके कुछेक वर्षके उपरांत ही हुमायूँने अपने राज्यका उद्धार कर लिया यदि हुमायूं कुछ दिनों तक और जीवित रहता तो राठौर अपनी श्रीकी वृद्धि कर सकते क्योंकि हुमायूं जिस प्रकार शांतस्वभाव और अहिंसा परायण था, उससे राजपूत बेखटके अपने राजकी श्रीको बढा सकते थे। किंतु उनके दुर्भाग्यसे राज्य पानेके कुछ ही दिनोंके उपरांत हुमायूंने इस असार संसारको छोड दिया + उसकी मृत्युके उपरान्त ही वीरबालक अकबरकी रोषाग्निने बज्रानलके तेजसे मारवाडके ऊपर पतित हो मालदेवकी आशालताका नाश कर दिया।

संवत् १६१७ (सन् १५६१ ई०) में वीरबालक अकबरने एक विशाल सेना ले (१५ वर्षकी अवस्थामें माताके द्वारा अमरकोटके कष्ट स्मरण करानेसे

---

१ इसके द्वारा मारवाडकी उपजका कम होना और दरिद्रता प्रगट होती है। (२) शेरशाहके मरनेके उपरान्त दो मुसलमान राजा दिल्लीके सिंहासनपर बैठे थे, पहिला तो सलीमशाहशूर, दूसरा मुहम्मद आदिलशाह। + हुमायूँकी एक जीवनी एडिनबराके मेजरभुलके पुस्तकागारमें देखी गई है। जिस समय हुमायूंने पारसके राज्यमें छिपे हुए वेशसे कुछ दिनों वास किया था उस समय उसके एक साथीने उसकी जीवनी लिखा था।

मारवाडके अन्तर्गत मालकोट * दुर्गको घेर लिया। उसने मनमें विचारा था कि, थोडे श्रमसे ही दुर्गको अपने वशमें कर सकूंगा। किन्तु जब उसने दुर्गनिवासियोंके पराक्रम और रणकी निपुणताको देखा, तब उसके वह मनका विचार दूर हो गया। अत्यन्त घोर युद्ध हुआ, दोनों ओरके सैनिकोंका रुधिर बहा, अन्तमें दुर्ग अकबरके हस्तगत हो गया। मरनेसे शेष रही हुई राठौर सेनाने जब देखा कि, मुगलोंके आक्रमणसे अब दुर्गरक्षाका कोई उपाय नहीं है, तब वे शत्रुसेनासे निकलकर राजाके समीप चले गये। मेडताके अधीन होनेपर विजयी अकबरने अपनी प्रचण्ड सेनाको नागौरकी ओर चलाया। वह नगर भी उसके अधीन हो गया। तब उसने जीते हुए इन दोनों नगरों और उनकी समस्त भूमिमण्डलको बीकानेरके राजा रायसिंहको दे दिया।

अकबरका प्रताप दिन२बढने लगा। उसके उस बढते हुए प्रतापके सामने राजपूतचूडामणि वीरकेशरी प्रतापके अतिरिक्त प्रायः सभी राजपूतोंके मस्तक नीचे हो गये। अनेकों तो षोडशोपचारसे उसकी पूजा करने लगे और प्रायः राजपूत राज–समाजमें यह रीति फैल गई। दुःखका विषय है कि, राठौर राजा मालदेव भी इसी रीतिमें आ फँसा। किंतु उसने इच्छापूर्वक कभी अकबरके निकट मस्तक नहीं झुकाया। घटनास्रोतके घोर भँवरमें पडकर उसको यह तिरस्कार सहन करना पडा था। इसी कारण सं० १६२५ + (१५६९ ई०) में मालदेवने अनेकों भेंटें दे अपने दूसरे पुत्र चंद्रसेनको अकबरके निकट भेजा। अकबर उस समय अजमेरमें रहता था। मालदेव जो स्वयं उससे आकर न मिला इससे वह उसपर अत्यन्त असंतुष्ट हुआ; उसके मनमें यह दृढ निश्चय हुआ कि, गर्वित मालदेव मेरा अपमान करनेके निमित्त ही स्वयं मुझसे मिलनेको न आया। अतएव इस अभिमान और अपमानका कुछ बदला लेनेके निमित्त रायसिंहको केवल बीकानेरका ही स्वाधीन अधिकार देकर वह शांत न रहा यहांतक कि, जोधपुरका फरमान और समस्त राठौरकुलके ऊपरका आधिपत्य उसे अर्पण किया गया।

चन्द्रसेन गार्वित राठौरकुलका योग्य राजपुत्र था। यद्यपि पिताकी आज्ञानुसार वह अकबरके डेरेमें गया परन्तु उसकी अकबरके दरबारमें जानेकी बिलकुल इच्छा न थी।

---

* मेडतेके पास मालदेवका बनाया हुआ एक गढ है। + संवत् १६२५ तक राव मालदेवका जिन्दा रहना और चन्द्रसेनको अकबरके पास अजमेर भेजना गलत है। राव मालदेव तो १६१९ में मर चुके थे। चन्द्रसेन जोधपुरकी गद्दीपर बैठे थे। पर अकबरने फौज भेजी थी। संवत् १६२२ में जिसमें जोधपुर फतह कर लिया और चन्द्रसेन सिवानेके किलेमें चले गये। संवत् १६२७ में अकबर बादशाह अजमेर होकर नागौरमें आये उस वक्त राव चन्द्रसेन भाद्राजूनमे थे। बादशाहके बुलानेसे नागौरमें आकर उनके भाई रायमल सोजनसे उदयसिंह फलौदीसे भी वहाँ आगये थे। बीकानेरके राव थे। कल्याणमलके कुँवर रायसिंह भी बीकानेरसे आये थे--राव चन्द्रसेनके कुँवर रायसिंह भी उनके साथ राव चन्द्रसेन तो बादशाहसे मिलकर भाद्राजूनको लौट गये उनके कुँवर रायसेन भाई उदयसिंह और बीकानेरके कुँवर रायसिंह तीन बादशाहके नौकर हुए। रायमल सोजनको चले गये (यह वही रायमल हैं कि जिनकी बाबरकी लडाईमें मारा जाना टाडने गलतीसे लिख दिया है जैसे कि मालदेवका संवत् १६२७ तक जिन्दा रहना लिखा है।)

जन्मभूमिकी स्वाधीनता और राठौर कुलकी मानमर्यादाको वह प्राणोंसे भी अधिक मूल्यवान् जानता था और अपने जीवनके बदलमें उसने चेष्टा की थी[१]। उसके बडे भाई उदयसिंहने अपनी मर्यादाको तिलांजली दे स्वाधीनताकी सुवर्णप्रतिमाको अपने हाथसे विसर्जन कर अकबरके चरणोंमें शिर नवाया। तेजस्वी चन्द्रसेनने उसको अपना बडा भाई कहकर स्वीकार नहीं किया। यहांतक कि, उसके राजगद्दीपर बैठनेसे राठौरकुलका ऊंचा मस्तक नीचा हो गया। अपने यत्नभर उसको मारवाडकी गद्दीपर न बैठने दियां। अनेक तेजस्वी और पराक्रमी राठौरोंने उसका साथ दिया। उन समस्त विश्वासी और स्वाधीनचित्त राठौर सरदारोंके साथ उसने अपने स्वत्व और स्वाधीनताके दृढ रखनेकी प्रतिज्ञा की। राजधानी जोधपुरसे जानेके उपरान्त उसने उन सब विश्वस्त सरदारोंके साथ मारवाडके पश्चिम प्रान्तमें बसे हुए सिवाना नामक स्थानमें गमन किया और वहां वह कठोर उद्यम व परिश्रमकी सहायतासे अपनी स्वाधीनताकी रक्षा करने लगा।

यद्यपि राठौरवीर चन्द्रसेन राजसे चला तो गया, परन्तु उसने अपनी मान मर्यादाको न छोडा। उसके मनमें दृढ निश्चय था कि यदि राजसिंहासनको प्राप्त कर सकूं तो मैं यवनोंके विरुद्ध अपने देशकी स्वाधीनताको अटल रख सकता हूं। जीवनको पोषण करनेवाली आशाको मोहिनी मूर्तिसे मोहित होकर उसने क्षणभरके निमित्त अपने इस निश्चयको न छोडा। इसी निश्चयके कारण उसने अपने पिताके सिंहासनपर स्वयं बैठनेकी प्रतिज्ञा की। उसको सहायता और सहारा थोडा और सेनाबल मुट्ठीभर था, किन्तु उदयसिंहके बडे सहायक और बडी भारी सेना थी विशेषकर स्वयं राजा मालदेव ही उसका पोषक थां। बरन तो भी तेजस्वी चन्द्रसेन आशाको न छोड सका, उस दूर बसे हुए सिवाना नगरमें कुछेक साथियोंको संग लिये हुए वह सत्रह बरस बराबर जेठे भाई उदयसिंहसे शत्रुता करता रहा। सुखका विषय है कि उसने अपने कार्यको अधिकतर पूरा कर लिया। उसके असीम गुणोंसे मोहित हो अनेक राठौरोंने उसको राजाओंके योग्य सन्मान दिया। धीरे २ समस्त राठौर दो भागोंमें बँट चले। परन्तु हा! चन्द्रसेन अपने अभाग्यवश उस सन्मानको अधिक दिनतक न भोग सका। सत्रहवें वर्षके बीतते बीतते उसने यवनोंके प्रचण्ड आक्रमणसे राठौरोंकी स्वाधीनताकी रक्षा करनेके निमित्त

---

१ यह बात भी गलत है कि, चन्द्रसेनने उदयसिंहको गद्दीपर न बैठने दिया हो, उदयसिंह चन्द्रसेनसे तीन चार वर्ष बडे थे और उसके सगे भाई थे। परंतु बडे दुःस्वभाव थे, इससे इनकी माताने राव मालदेवजीसे कहकर इनको राजगद्दीसे वंचित रक्खा और चन्द्रसेनको युवराज करा दिया। जिससे वे पिताके पीछे उत्तराधिकारी हुए थे। और उदयसिंहको फलौदीका परगना मिल गया था तो भी वे राव चन्द्रसेनसे वैमनस्य रखते थे। २ जिस समय मुगलोंने सिवाना नगरपर आक्रमण किया उस समय उसकी रक्षा करनेमें मारा गया।

तलवार धारण की और युद्धभूमिमें अपने जीवनको न्योछावर कर स्वदेशप्रेमी वीरोंके समान अमरत्वको प्राप्त किया । उस समय उसके तीन पुत्र उग्रसेन, आसकर्ण और रायसिंह जीवित थे। रायसिंह सिरोहीके प्रसिद्धवीर राव सुरतानके साथ द्वन्द्वयुद्धमें प्रवृत्त हुआ था, परन्तु उस युद्ध में वह जयको प्राप्त न कर सका । राव सुरतानने उसको और उसके २४ सरदारोंको दत्तानी नामक स्थानमें मार डाला था ।[1]

राठौर राजा मालदेवका अंतिम जीवन इसी प्रकारकी आपत्तियोंसे पीडित रहा था, इससे वह छुटकारा न पा सका फिर भी इसके ऊपर उसको अपने नगरकी रक्षाके निमित्त तलवार पकडनी पडी । बीकानेरके रायसिंहके हाथमें मारवाडके राज्यका फरमान देकर मुगल बादशाह अकबर निश्चिन्त न रहा । अन्तमें जोधपुरपर आक्रमण किया । मालदेव कायर नहीं था कि जो मुगलसम्राटकी भौंहसे ही भयभीत हो विना झगडा किये उसके हाथमें आत्मसमर्पण कर देता । मुगलसेनाने आकर उसके नगरको घेर लिया, तब उसने अपने उपायभर अपनी रक्षा करनेके निमित्त चेष्टा की और अत्यन्त पराक्रम और साहसके साथ वह युद्ध करने लगा । किन्तु उसके यत्न निष्फल हुए । मुगलोंकी अपार सेनाके सामने वह अपनी आत्मरक्षा न कर सका । उसकी आशा तथा भरोसा सभी मिट्टीमें मिलगये। उसने बिचार लिया था कि, अपने जीवनभर गर्वित राठौर कुलके उन्नत मस्तकको यवनके चरणोंमें न झुकाऊंगा । किन्तु उसकी वह आशा फलवती न हुई । जो राठौरकुल बराबर तीन चारसौ वर्षसे स्वाधीनतापूर्वक असीम प्रभावसे राज्य कर रहा था; आज उसका ऊंचा मस्तक नीचा हो गया, आज यवनोंके चरणोंमें वह गर्वोन्नत मस्तक झुक गया । मारवाडमें राठौरोंकी प्रभुताको स्थिर रखनेके निमित्त दूसरा उपाय न देख, मालदेवने अकबरकी अधीनताको स्वीकार किया और अपने जेठे पुत्र उदयसिंहको मुगलबादशाहके समीप भेज दिया । विजयी अकबरने पूजोपचारसे संतुष्ट हो उसको एक सहस्र सेनाका सेनापति किया ।

जिस दिन गर्वित राठौरोंका उन्नतमस्तक यवनोंकीसेवामें इस प्रकारसे झुका उसी दिनसे तेजस्वी मालदेवके हृदयमें जो विषम आघात उत्पन्न हुआ उससे वह फिर छुटकारा न पा सका।वह उसी अपमान की वेदनासे पीडित हो शीघ्र ही इस लोकको छोड गया ।

---

(१) यह भी सही नहीं है कि राव चन्द्रसेन युद्धमे काम आये थे । (२) दोनों ही ओरसे कुछ २ वीर एकत्रित हो युद्ध भूमिमे आये थे इन दोनों ओर दो वीरवंश थे । इधर तो राठौर और दूसरी ओर चौहानकुलकी एक दूसरी शाखा देवडा थी । (३) यह अप्रासंगिक कथा फिर यहांसे मालदेवका पुनर्जीवन करके चलायी गई है,सो मालदेव तो संवत् १६१९ में ही मर गये थे । दत्तानीका झगडा संवत् १६४० में हुआ था, उसके पीछे फिर मालदेव कैसे जीवित होकर अकबरसे लडे और उदयसिंहको अकबरकी सेवामें भेजा । यह अनुवाद पूर्वापर स्वयं विरुद्ध है ।

(४) उनसे सिवाना संवत् १६३२ मे अकबरकी फौजने तीन वर्ष तक लडकर ले लिया था । और वह परगना सोजनमें आ रहे थे और बादशाही थानोंपर जो मारवाडमें जगह जगह बैठे थे । धावे किया करते थे निदान सं० १६३७ में उनको एक राठौर सरदारने जहर देकर मार डाला । प्रे० टी०।

इससे उसने एक घोर अपमानसे छुटकारा पाया। उसके मरनेके कुछ ही दिनों उपरान्त उदयसिंह मुगल सम्राट् अकबर द्वारा मारवाड़की गद्दीपर बैठाया गया। और गद्दीपर बैठनेके कुछ ही दिनोंके उपरान्त उसने अपनी बहिनको अकबरसे ब्याह कर स्वामीकी कृपा प्राप्त की। राजपूत होकर देशवैरी और धर्मवैरीके हाथमें कन्या या बहिनका अर्पण करना घोर अपमानका सूचक है।विशेष कर शुद्ध राठौरकुलमें जन्म ले उदयसिंहने जो ऐसा घृणित और अपमानित कार्य किया,उसको किसी राजपूतने स्वप्नमें भी न विचारा था।

मालदेवका यह अनेक पुण्योंका बल था कि,जो उसको यह घोर अपमान न सहना पड़ा। उसका हृदय ऐसा ऊंचा और महन् था कि, वह अपने जीवनभर ऐसे दुष्ट व अपमानित कार्यको न स्वीकार करता। जीवनके गौरवमय मध्याह्नकालमें उसने राजस्थानके चारों ओर जो असीम जय गौरव प्राप्त किया था, उसकी प्रकाशित ज्योतिके साथ समानता करनेसे उसका अन्तिम जीवन विषादमयी घोर अंधेरी रात्रिके समान प्रतीत होता है।यद्यपि विधाताके कठोर बिधानानुसार गर्वोन्नत राठौरकुल नीचा हो पडा; किन्तु इससे मालदेवके महत् चरित्र अणुमात्र भी कलंकित न हुए।मालदेव अपने समयके राजपूतोंमेंसे एक साहसी और प्रचण्ड पराक्रमी राजा था। यदि वह कुछ दिन और भी जीवित रहकर यौवनके प्रचण्ड पराक्रमको स्थिर रख सकता तो वह बीरचूडामणि महाराणा प्रतापसिंहके साथ उदय होते हुए मुगल पराक्रमके विरोधसे राजपूत जातिकी स्वाधीनता और गौरवगरिमाको अटल देख सकता था। किन्तु मारवाड़का अत्यन्त ही दुर्भाग्य था, इसीसे वीरकुलतिलक राणा प्रतापसे मित्रता होनेके पहिले ही वह राठौरबीर मालदेव इस असार संसारसे चल बसा।

महाराज मालदेव बारह पुत्रोंको छोड़ संवत्[२] १६७१ सन् १६१५ ई० में इस लोकसे बिदा हो गये। उन बारह पुत्रोंका नाम और वृत्तान्त नीचे लिखा जाता है

१। रामसिंह, पितासे निकाले जाकर मेवाडपति राणाके निकट जाय उसके शरणागत हुए। उसके सात पुत्र हुए थे; उनमेंसे पांचवें केशवदासका कुछेक वृत्तान्त पाया जाता है। केशवदासने चोली महेश्वर नामक स्थानपर अपना निवासस्थान नियत किया था।

२। रायमल[३], बियानाके युद्धमें मारा गया था।

३। उदयसिंह, मारवाडका अधिपति।

४। चन्द्रसेन, (झालावंशीय स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था) इसका वृत्तान्त

---

१ यह आक्षेप व्यर्थ और अनावश्यक है यदि यह न हो तो कोई हर्ज भी नहीं है। २ यह घोर अशुद्धि है कि मालदेव की मृत्युका शुद्ध संवत् जो १६१९ है उसको १६७१ लिख दिया और इसीको फिर सं० १६२७ भी लिख दिया है। ३ बियानाके युद्धमे नहीं मारा गया। इसके बेटे कल्लारायमललोनने १६४५ संवत्मे सिवानेके किलेपर उदयसिंह और मुगलोंकी फौजसे घोर युद्ध किया था। इसकी औलादमें केसरी सिंहोत जोधा लाडनू वगैरह ठिकानोंके मालिक है।

पहिले हो चुका है। चन्द्रसेनके तीन पुत्र हुए थे।उनमेंसे जेठे उग्रसेनको भिनाय नामक स्थानका अधिकार प्राप्त हुआ। उग्रसेनके भी तीन पुत्र कर्ण, कानजी और काहन हुए।

५। आसकर्ण, इसका वंश आज भी जूनियानामक स्थानमें वर्त्तमान है।

६। गोपालदास, ईडर नगरमें मारा गया।

७। पृथ्वीराज, इसके वंशधर अबतक जालौरमें जीवित हैं।

८। रतनसिंह, इसके वंशधर भाद्राजूनमें हैं।

९। भोजराज, इसके वंशधर अहारीमें हैं।

१०। विक्रमायत।

११। भान। } इनका कुछ वृत्तान्त अबतक नहीं जाना गया।
१२। }

चतुर्थ अध्याय ४.

मारवाडके राजाओंकी अवस्थाका परिवर्तन, राजा उदयसिंहका राजतिलक, चन्द्रसेनकी मृत्यु से पहिले राजपूतानेके बडे २ नरेशोंको उसका आधिपत्य स्वीकार न करना, इतिहासका पुनः प्रचार, बादशाहके अधीन होनेके समयतक राजपूतानेके तीन बडे २ वृत्तान्त, राज्याधिकार प्रणालीका परिवर्तन, मेवाड आमेर और मारवाडमें राजधानियोंका बदला किन शाखाओंतक इस अधिकारका नाम सीमान्त हुआ, ऐसी भूलोंका अन्देशा, उदाहरण, जोधाजीका जागिरों को नियमबद्ध करना, मारवाडके आठ बडे २ राजकीय मनुष्य, इस प्रबंधका मालदेवका कायम रखना और द्वितीय श्रेणीकी जागीरोंका मौरूसी होना, जोधाके बेटे और भाई, जागीरोंके भिन्न २ वृत्तान्त, राजपूतोंकी जागीरदारीका नियम, बादशाह अकबरका इस प्रबन्धको यूरुपवालोंके अनुसार कायम रखना, राजपूत नरेशोंके वंश महत्वका मिथ्या न होना, छोटे से छोटे राजपूतोंका भी अपना वंशसम्बन्ध राजासे लगाना उदयसिंहका नाम राजपूतोंके लिये कष्टदायक,उदयसिंहका अपनी बहिन जोधाबाईको अकबरको देना राठौरोंको इस विवाहसे लाभ, उदयसिंहकी बहुत सन्तान, गोविन्दगढ और पीसागढमें जागीरों का कायम होना, किशनगढ और रतलाम, राजा उदयसिंहकी बिचित्र मृत्युका इतिहास, उदयसिंहके सन्तानका वंशवृक्ष।

जिस दिन राठौरबीर मालदेवने इस लोकसे बिदा ली, उसी दिनसे राठौर कुलकी भाग्यतरंग दूसरी ओरको बहने लगी, उस दिन मारवाड़के इतिहासमें एक नये युगका प्रकाश हुआ। उसके साथ ही साथ राठौर सामन्तोंकी भी अवस्था

---

१ उग्रसेन जेठा नहीं था। जेठा तो रायसिंह था। उससे छोटा उग्रसेन और उससे छोटा आसकर्ण था। इसके बेटे कर्मसेनको अकबर बादशाहने अजमेरके जिलेमें नायका परगना दिया था।

२ ये तीनों बेटे उग्रसेनके नहीं थे उग्रसेनका तो एक बेटा कर्मसेन जिसको बिक्रमसेन भी कहते थे।

३ आसकर्णका नाम मालदेवके बेटोंमें नहीं आता है और न उसकी औलाद जूनियामें है जूनियांमें तो उदयसिंहके बेटे माधोसिंहकी औलाद है।

बहुतसी बदल गई। इतने दिन जो उनकी इच्छा सिवाजीके वंशधरोंकी इच्छाके ऊपर सब प्रकारसे निर्भर थी, अथवा उन्हींकी इच्छाद्वारा भलीप्रकारसे परिचालित होते थे; इतने दिनतक जिनको समस्त मारवाडका अधिपति कहकर गर्व करते थे, आज कर्मदोषसे उस राजाके ऊपर और एकजन राजा मानना पडा। राठौरकुलकी जो "पचरंगी" पताका इतने दिनोंतक सियाजीके वीर बंशधरोंके ऊंचे मस्तकके ऊपर फहराकर अमरकोटके अनन्त रेतीले मैदानसे लवण सरोवर साँभरतक और गाराके निकटवर्ती मरुस्थलसे अर्वलीकी श्रेणियोंतक राठौरकुलके विजयवार्ताकी घोषणा करती थी, आज उसको नीचा करके उसके मस्तकके ऊपर मुगलोंकी अर्द्धचन्द्रशोभित विजयबैजयन्ती पताका गर्वसहित फहराने लगी। अब उस फहराती हुई पचरंगी पताकाकी वह शोभा, वह तेज, वह प्रकाशित ज्योति नहीं है, सभी मानो तेजरहित हो गये, मानो सभीका लोप हो गया; मानो यह राठौरकुल उस महापुरुष सियाजीका वंश नहीं है, मानो उस वीरकेसरी जोधाके बिकट शरसाधनाका अमृतमय फल नहीं है, नहीं तो उन्होंने तलवारकी सहायतासे जिस मारवाडका अधिकार प्राप्त किया था, आज दूसरेकी आज्ञा लेकर उसी मारवाडके सिंहासनपर उन्हें क्यों बैठना पडता ? नहीं तो उनको दूसरेके प्रसाद पानेके निमित्त जीवन और सर्वस्व स्वाधीनता क्यों बेंचनी पड़ती ? इसीसे कहते हैं कि, मारवाड़के इतिहासमें आज एक दूसरे नये युगका प्रकाश हुआ। राठौर कुलकी भाग्यतरङ्ग दूसरी ओरको प्रवाहित हुई। एक समयके स्वाधीन राठौर आज मुसलमानोंकी आज्ञामें बँधे हुए दास हैं; एक समयका उन्नत मारवाड़ आज गिरी हुई अवस्थामें है, आज वह उन्नत और स्वतन्त्र राठौरकुल पृथ्वीपर दीनके वेशसे लोट रहा है। इसी कहे हुए वर्त्तमान कालसे राठौरकुलका भाग्यचक्र मुगलोंकी भौंहके साथ चलने लगा, उसके भावी उत्तराधिकारी गण राठौरसेनाको ले जेताकी आज्ञानुसार अपनी ही जातिका रक्त बहाने लगे। इसी समयसे सम्राटकी इच्छानुसार उनका भाग्यचक्र परिचालित होने लगा, उनके कार्योंकी उत्तमताको देख आनन्दित हो सम्राट् उनको राजसन्मान देने लगे। जो हो, यदि नीच और हिंसक कार्य ही पदोन्नतिके प्रधान सीढ़ीस्वरूप होते, यदि मोल लिये हुए दासके समान स्वामीके पैर चाटनेसे ही उन्नतिका मार्ग खुलता तो राठौर राजागण राजसरकारसे उच्चपदको कभी भी न प्राप्त कर सकते और उदयसिंह सबसे पहिले जिस "मनसब" पदको प्राप्त हुआ था, उससे उसके वंशधर गण और उन्नतिको न प्राप्त कर सकते। राजपूत स्वभावसे ही तेजस्वी होते हैं, विशेषकर राठौरोंकी तेजस्विता और पराक्रम अत्यन्त प्रबल होता है। यद्यपि भाग्यकी कठोर आज्ञासे उनकी स्वाधीनता तो छिन गई किन्तु उन्होंने अपनी तेजस्विताका परित्याग न किया। इस श्रेष्ठ गुणके प्रभावसे ही उन्होंने बादशाहके दरबारमें दाहिनी ओर बैठकके गौरवका अधिकार प्राप्त किया। और इसीसे मारवाडकी सुविस्तृत मरुभूमिको रत्नोंके अलंकारोंसे सुशो-

---

(१) राठौरोंकी पचरंगी पताका नहीं है कछवाहोंकी है।

भित कर दिया। किन्तु इससे राठौरराजकुमार कभी क्षणभरके निमित्त भी हृदयमें शांतिको न प्राप्त कर सके। सम्राट्के ७६ सामन्तोंके ऊपर उच्च सन्मानको पाकर भी गोलकुंडा और विजयपुरके अनंत रत्नभंडारसे मरुमय जोधपुरको अमरनगरसे बदल करके भी वे एक दिनके निमित्त भी सुखी न हो सके। क्योंकि उन्होंने जान लिया था कि, वह सम्राट्के अधीन हैं और अमूल्य रत्न स्वाधीनताके बदलेमें उस समस्त तुच्छ धनको प्राप्त कर सकते हैं। जब यह दृढ निश्चय और भी दृढ होता, तब वे एकसाथ उन्मत्त हो उठते सम्राटके दिये हुए सन्मान मर्यादाको विषके समान जान अपने आपको सैकडों बारधिक्कारते थे। उस समय स्वयं सम्राट् उनके सामने उपस्थित होकर भी उनके उस प्रचंडमानासिक वेगको न रोक सकते थे। राठौर राजा मालदेवका संवत् १६२५ में परलोकवास हुआ। उसने अपने जेठे पुत्र उदयसिंहको अपना उत्तराधिकारी मान लिया था। किन्तु भाटग्रन्थोंमें देखा जाता है, कि तेजस्वी चन्द्रसेन जबतक जीवित रहा था, तबतक उदयसिंहको राजगद्दी न प्राप्त हुई। उदयसिंहने जो कायरोंके योग्य उपायका अवलम्बन कर दिल्लीश्वरके हाथमें अपनी बहनको अर्पण किया इससे राज्यके प्रधान २ सामन्तोंने उसपर अत्यन्त विरक्त हो चन्द्रसेनके पक्षका अवलम्बन किया था। अब हम उदयसिंहके राजत्वकी समालोचना करनेके पहिले एक बार मारवाडकी बीती हुई घटनापर विचार करते हैं। जिस समय राठौर वीर सियाजीने पितृपुरुषोंके लीलाक्षेत्र कन्नौज राज्यको छोडा, उस समयसे ही आरम्भ करके उदयसिंहके राजत्वकालतक मारवाडके इतिहासको हम तीन प्रधान युगोंमें विभक्त देखते हैं वह तीनों युग नीचे लिखे हुए क्रमसे विभक्त हुए हैं।

प्रथम–खेड़राज्यमें सियाजीका आगमन १२१२ खृष्टाब्दसे चण्डद्वारा मन्दोर जय ([3]१३८१ ई.) तक द्वितीय–मंदोरके जयसे जोधपुरके स्थापन ([4]१४५४ ई०) तक; और तृतीय–जोधपुरके बसनेसे उदयसिंहके गद्दीपर बैठनेके समयतक। सन् १५८४तक इन कुछ कम चारसौ वर्षोंके बीचमें राठौर कुलका भाग्यतरङ्ग किस२ दिशाको प्रवाहित हुआ है, हम इस समय उसीकी आलोचनामें प्रवृत्त होते हैं। देखा जाता है कि प्राचीन भूमियाओंके निकटसे मरुभूमिका पश्चिमभाग जीतनेमें पहिले दो युग बीत गये हैं। उस समय उनको उस छोटे प्रदेशको ही लेकर संतुष्ट होना पडा था। अन्तमें चौहानोंके अधःपतनसे चूडाद्वारा जिस समय मण्डोर नगर जीता गया, उस

---

(१) इस ग्रन्थमें राव मालदेवकी मृत्युका वर्णन, कहीं सं० १६२७ और कहीं १६२५ और कहीं दत्तानी युद्धके पीछे लिखा है जो सं० १६४० में हुआ था। और १६२५ यहां लिखा है सो यह बडी भूल है यथार्थ वर्णन मारवाडके इतिहासोंके अनुसार स० १६१९है। (२) यह भी गलत है, क्योंकि राव मालदेवने उदयसिंहको नहीं, चन्द्रसेनको अपना उत्तराधिकारी मानकर युवराज पदपर नियत किया था। (३) यह सन् सही नहीं मालूम होता क्योंकि मारवाडके इतिहासमे १४५१ मे सन् १३९४मे चूडाजीका मंडोर प्राप्त करना लिखा है। (४) यह सन् भी गलत है क्योंकि जोधपुर सं० १५१५ सन् १४६८ में बसा था।

समयमें लूनी नदीके दोनों किनारोंकी सब उपजाऊ भूमि रणमल और जोधाके पुत्रोंके अधिकारमें आई। इसके उपरान्त जोधपुर बसा। इस कारण पुराना नगर छूटकर राठौर राज्यकी राजधानी नये बसाये हुए जोधपुरमें स्थापित हुई। राजपूत स्वभावसे ही स्थितिशीलताके अनुरागी होते हैं, विशेषकर इनको अपनी पुरानी राजधानीके छोडनेकी इच्छा नहीं होती। राजपूत समाजका यह एक सदैवसे ही नियम है कि, राजधानी बदलनेके साथ ही साथ राजपूत राजाओंकी शासनविधि और कौलिक उपाधिका प्रायः परिवर्तन होता-रहता है। मारवाडके इतिहासमें इस नियमका कोई दोष नहीं देखा जाता। जोधाने अपने नामसे जोधपुरको बसाया। मारवाडके इतिहासमें एक दूसरे नवीन युगका प्रकाश हुआ, राठौर कुलकी भीतरी शासन बिधिका भी अदलबदल हुआ। जोधाके तेईस भाई थे। योग्य उत्तराधिकारीके अभावसे सिंहासन किसी दूसरे निकटवर्ती राज्य पानेके सम्बन्धीके हाथमें दिया जा सकता है; किन्तु जोधाने नियम कर लिया था कि उसके वंशधरके अतिरिक्त और कोई जोधपुरके सिंहासनको प्राप्त नहीं हो सकेगा। बिशेष कर जो राठौर कि मारवाडके सामन्त गिने जाते हैं वे तो कभी राठौर कुलकी राजगद्दीपर न बैठ सकेंगे। राजपूत शासननीतिका एक विचित्र भाव है। इसका बिस्तारसे वर्णन अजमेरके इतिहासमें होगा।

जोधाराव जानता था कि राठौरवीर सियाजीके वंशधरोंमें वही प्रधान प्रतिष्ठावान् नरपति है। अपने ऊंचेपनको विचार कर वह मनही मनमें गर्वित भी हो गया था। कुछ गर्व और कुछ आभिप्रायके वशवर्ती हो उसने अपने राज्यकी सामन्त प्रथाको नवीन आकारसे बनानेकी इच्छा की और उपसामन्तोंकी भूमिवृत्तिको एक नियमित सीमामें बिभक्त करनेके निमित्त एक योग्य नियमावली (कानून) भी बनाई। उसके पिता रणमलके चौबीस और अपने चौदह पुत्रोंके विषयमें विचार करते २ उसके मनमें सहसा यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि;-"इनके पुत्र प्रपौत्र बहुत सम्प्रदायोंके हो जाँयगे; और फिर उनमेंसे भी बहुतसे उपसामन्त होंगे; ऐसी अवस्थामें भूमि सम्पत्तिके पीछे बिबाद होनेकी सम्भावना है; अतएव जिससे किसी प्रकार उनमें बिबाद न होवै उसीको ही प्रबंध करना कर्तव्य कर्म है।" मनमें इस प्रकारका विचार कर जोधाने प्रत्येक उपसामन्तोंकी भूमिवृत्तिकी संख्या और सीमाको नियमित कर दिया था। उसके बडे भाई कांधलने हिंसकवृत्ति द्वारा प्रेरित हो बीकानेरका स्वाधीन राज्य स्थापित किया। वह उसके वंशधर कांधलोतके नामसे प्रसिद्ध हो स्वाधीनतापूर्वक राज्य करने लगे। जोधाका तीसरा भाई चाम्पाजी, कूंभाजी[1] दोनों पुत्र दूदो और करमसिंह तथा दूसरा पौत्र ऊदो अपने२ नामानुसार चांपावत, कूंपावत, मैरातिय (दूदोंके वंशधर) करमसोत और ऊदावत नामक छह गोत्रोंके अधिपति हो मारवाड राज्यके खम्भ स्वरूप राज करने लगे * मरुदेशके प्रथम चांपा सामन्तमें गिना गया। इसके वंशधर इस

---

१ कूंभाजीपर पहले नोट कर चुके हैं उसको देखो।

* आठ बडी २ भूमिसम्पत्तियां इनके हाथमें अर्पित हुईं। वह आठ भूमिसम्पत्तियां आठ ठकुरायतोंके नामसे प्रसिद्ध हैं। उनमेंसे प्रत्येककी वार्षिक आय ५० हजार रुपया है। इसके अतिरिक्त उनको और भी उपसामन्तोंसे द्रव्य प्राप्त होता था।

उच्च सन्मानको सदैवसे भोगते आते हैं। इनके प्रचण्ड विक्रमसे राठौर राजाओंके सिंहासन अनेकों बार तितर बितर होनेपर आ गये। इसके अतिरिक्त जोधारावने अपने भाई पुत्र और पौत्रोंको भी सामान्य २ भूमिसम्पत्ति दी थी। यह भी भूमिसम्पत्ति मौरूसी मुस्तहकुम (जो छीनी न जाय) दी गई। राजा जैसे अपने सिंहासनको पवित्र जानता है वैसे ही भूमिके अधिकारी भी अपनी भूमिवृत्तिको पवित्र जानते हैं। राजाके साथ अति निकटका रुधिरसम्बन्ध होनेसे वे अपनेको उसका वृत्तिभोगी कहकर स्वीकार करनेमें कुण्ठित नहीं होते, बरन् वह इससे स्वयं गर्वित हो इस प्रकार राजाके सम्बन्धमें कहा करते हैं "जबतक हम सेवा करते हैं तबतक वह हमारा स्वमी है और जब सेवाकी आवश्यकता नहीं होती तो हम उसके भाई और कुटुम्बी हैं और पितृराजमें समान हकदार भी हैं।"

राव मालदेवने जोधाजीके इस बिभागको स्वीकार किया। यद्यपि उसने छोटे दरजेकी जागीरें बटाई और जो कि, मारवाड देशकी सीमा उसके समयमें पूरी हो गई थी इस कारण इन जागीरोंकी संख्या नियत कर देना परम आवश्यक समझा गया। इस लिये जोधाजीसे लेकर मालदेवकी सन्तानोंतक यह जागीरें मौरूसी (स्थायी) रहीं; परन्तु पहली दी हुई और पिछली दी हुई जागीरोंमें इतना भेद रखा गया कि, जो जागीरें शस्त्रबलसे विजय की गई थीं, वे इस प्रकार मौरूसी रक्खी गई कि यदि जागीरदारके पुत्र न हो तो गोद लिया हुआ बेटा भी उसका अधिकारी हो सकता था, परन्तु पिछली जागीरें कुछ दिनोंके पश्चात् मुख्य राज्यमें मिला ली जाती थीं। राजपूतोंकी मालगुजार अर्थात् कर देनेवाली थीं। जागीरें किसी जिमीदारको केवल उसके जीवनतकके लिये ही उसके इतिहासके अनुसार दी जाती थीं।

यद्यपि यह उत्तम नियम उनके प्राचीन इतिहासोंमें देखा जाता है; परन्तु जब तब प्रबन्ध न होनेके कारण इस नियमका खण्डन भी देखा गया है। इन उदाहरणोंसे मालगुजार और बिना करकी जागीरोंमें दो प्रकारका भेद पाया जाता है। सियाजीसे लेकर जोधाजी तक बहुतसी वंशशाखाओंने जो उस राज्यके उत्तरीय और पश्चिमीय खण्डोंमें निवास करते थे अपनी आर्थिक अवस्था अल्प होनेके कारण वा बहुतोंने अपने पूर्व पुरुषोंके अभिमानके कारण उन जागीरोंको स्वतन्त्ररूपसे भोगा है। तो भी यह जागीदार मारवाड नरेशको अपना राजा मानते हैं और जब कभी उनके राजापर संकट आता है, तो वे सहायता करते हैं। यह वंशशाखा कोई 'कर' वा दण्ड नहीं देती हैं, और इसलिये उनकी जागीरें बिना करवाली कहलाई जा सकती हैं, उन जागीरोंकी संख्यामें हम बाढमेर कोटडासे और फलसूंदकी गणना करते हैं। दूसरे जागीरदार यद्यपि पूरे स्वतन्त्र नहीं हैं तो भी वह छोटे माफीदार कहलाये जा सकते हैं जो आवश्यक समयपर सहायता देते हैं और बडे २ उत्सवोंपर स्वयं राजाकी भेंटको उपस्थित होते हैं। महेवा और सनदरी भी इन माफीदारोंमेंसे हैं। प्राचीन वंशज जो राजपूताना भूमिमें फैले हुए हैं; और जो वर्तमान राजाके यहां भी नौकर हैं, वह अपने बडे बूढोंकी उपाधिसे पहचाने जाते हैं। यद्यपि बहुतसे मनुष्य दूहडिया, मांगलिया,

ऊहड और धांदलके नाम सुने जाते हैं, परन्तु यह कोई नहीं जानता कि यह राठौर हैं। विवाहके समय कवि वा भाटकी छन्दबद्ध पुस्तक देखी जाती है, जिससे कि, समधियोंकी वंशपरम्परामें हानि न हो, जिनका पालन बडी दृढतासे होता है और उसमें उनके और दूसरे वंशोंके इतिहास विद्यमान होते हैं, जो दूसरी दशामें नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं।

इस जोधा जातिके लिये किसी उपाधिसे क्यों न पुकारा जावै, हमने समझनेके सुभीतेके लिये जागीरदारके नामसे याद किया है और आगे भी जागीरदार नामसे ही स्मरण करैंगे। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि, यह परम्परा जागीरदारीकी उपाधि राठौरजातिमें प्राचीनकालसे अर्थात् उनके पुरुषा सियाजीके समयसे प्रचलित है, जो कन्नौजकी राजधानीसे लाये थे, अन्तिम राजा जयचंद और चौहानोंके युद्धसे बढकर कोई मनोहर दृश्य इस सहायक सेनाकी धूमाधाम और सजावटका इतिहासमें विद्यमान नहीं है। राजपूतानेके प्रत्येक रजवाडेकी प्रणाली उनके इतिहासोंके अनुसार योरुपकी परंपरासे मिलती चली आती है और विशेषत: मेवाडकी जहां १३०० वर्ष पूर्व सारे जागीरदार राज्यके अपने महाराजाको नजर भेंट नहीं करते थे और जबतब बदला लेनेकी धमकी भी देते थे तौ भी अपने नरेशका नमक खानेके कारणसे उन्होंने एक वर्षतक कुछ शत्रुता नहीं की और एक वर्षकी अवधि समाप्त होनेपर उसको गद्दीसे उतार दिया (देखो खण्ड १ सूची)। बादशाह अकबर जो हिन्दूधर्मका पक्ष करता था, उसने बहुतसे नियम अपने राज्यके इनको देखकर बनाये।

पश्चिमीय राजनीति और भारतीय राजनीतिका मुकाबला करते हुए पाठकोंको एक बातका ध्यान रखना उचित है, अर्थात् यह कि जागीरदारका नियम सब देशोंमें जैसे कि, राजपूतोंमें पाया जाता है और राजपूतोंमें सब जागीरदार कुटुम्बी होते हैं (सिवाय बाहरके जागीरदारोंके) और जिस प्रकार योरुपमें राजाके प्रभुत्वको मानते हैं, उसी प्रकार राजपूतानेके ठाकुर भी मानते हैं। इस प्रकार चांपाके पुत्रसे लेकर जो बडा राजा था एक गरीब पेट पालनेवाले तक सब राजाके साथ वंश-सम्बन्ध रखते हैं। यह जानना बडा कठिन है; कि इस प्रणालीसे हानि है वा लाभ, क्योंकि मानुषिक इतिहासोंमें अच्छे और बुरे दोनों प्रकारके उदाहरण मिलते हैं। जोधाकी ५००००० सन्तानोंमेंसे १२०००० हजार राजपूतोंके राजा मालदेवके लिये युद्धमें प्राण दे देना उनकी अचल राजभक्तिको प्रगट करता है। जिसकी आजतक प्रशंसा होती है।

जोधारावके प्रसंगमें हमने उसकी प्रतिष्ठित की हुई सामन्तप्रथाका वर्णन किया। मारवाडकी समस्त प्रथाका यथास्थान वर्णन किया जायगा। अब इस समय फिर उदयसिंहका वृत्तान्त लिखनेमें प्रवृत्त होते हैं।

पहले ही कह आये हैं कि उदयसिंहके राजगद्दीपर बैठनेके सम्बन्धमें पृथक् २ भाटग्रन्थोंमें पृथक् २ मतभेद देखे जाते हैं। कोई कहता है कि वह राजा

मालदेवके मरनेके थोडे ही काल उपरान्त संवत् १६२७, सन् १५६९ ई० में मारवाडके सिंहासनपर बैठा। इन दोनों मतोंमें कौन सत्य है उसका हम भली प्रकारसे निर्णय नहीं कर सकते। परन्तु भलीप्रकार विचार कर देखनेसे अन्तिम बात ही मानने योग्य हो सकती है क्योंकि चन्द्रसेन जैसा तेजस्वी था वैसे ही उसने अपने यत्नभर उदयसिंहको मारवाडकी गद्दीपर न बैठने दिया होगा। जो हो, हम अन्तिम मतको स्वीकार कर उदयसिंहको सन् १५८४ ई० में ही मारवाडके सिंहासनपर बैठा हुआ मानते हैं।

राजस्थानके "उदय" नाममें एक महा अनर्थकारी शक्ति देखी जाती है। आश्चर्यका विषय है कि जो कोई उदय नाम धारण कर जिस किसी सिंहासनपर बैठा, उसके ही द्वारा उस राज्यका सर्वनाश हुआ।

उदाहरण स्वरूपमें शिशोदिया उदयसिंहकी कायरता मेवाडके इतिहासमें वर्णित हुई है, इस समय अभिप्रायवश राठौर कुलका अयोग्य राजा और तेजस्वी जोधारावका अयोग्य वंशधर था। यद्यपि वह भाग्यकी कठोर आज्ञासे पितृपुरुषोंकी स्वाधीनतासे विच्युत हुआ था, किन्तु उसने क्षणभरके भी निमित्त उस स्वर्गीय रत्नके पानेकी फिरसे चेष्टा न की, बरन् उसने पराधीनताकी जंजीर अपने हाथसे दृढ बांध ली थी, वह स्वभावसे ही विलासप्रिय और सुखका चाहनेवाला था। सहिष्णुता और तेजस्विता यही राजपूतोंके दो प्रधान गुण हैं। इन दोनों श्रेष्ठ गुणोंकी सहायतासे ही राजपूत अति भयानक अत्याचारियोंके प्रचण्ड अत्याचारको सहन करके भी बदला लेनेके निमित्त योग्य अवसरकी राह देखते रहते हैं। किन्तु दुःखका विषय है कि इन दोनों गुणोंमेंसे उदयसिंहमें एक भी न था। यद्यपि अकबर उसको अधीन राजाके समान नहीं देखता था, और उसने उसको लोहेकी जंजीरमें बांधनेके बदले फूलोंके हारोंसे बांध रक्खा था, किन्तु ऐसा होनेपर भी क्या वह फूलोंका हार दासत्वकी जंजीर नहीं है? स्वामी, सेवकका चाहे जितना आदर क्यों न करै चाहे जितने मणि मुक्ता देकर उसको सोनेकी जंजीरसे क्यों न सजा दे, परन्तु जो दास है वह तो सदा दास ही रहैगा। वह आदर और वह स्नेहानुराग मानो केवल अभागे दासत्वका पुरस्कार है। वीरचूडामणि प्रतापसिंह अकबरके उस आनन्द और स्नेहानुरागके कर्मको जानता था; इसी कारण उसने विजातीय घृणाके साथ मुग़लसम्राट्के सैकड़ों हजारों लोगोंका तिरस्कार किया था और राजधनसे वंचित होकर भी वह कठोर वनवासव्रतका अवलम्बन कर गहलौतकुलकी स्वाधीनता और गौरव गरिमाको स्थिर रखनेमें शक्तिमान हुआ था। यदि उदयसिंह चाहता और उसकी ओर जाकर मिल जाता तो वह अपने देशकी स्वाधीनताका उद्धार कर सकता था, किन्तु क्या कहा जाय वह तो स्वाधीनताके मर्मको ही नहीं जानता था। नहीं तो वह अपने देशकी माया ममताको भूल अपनी जातिवालोंके मुखकी ओर न देखकर टुकडे खानेवालोंके समान मुग़लसम्राट्का कृपापात्र बननेके निमित्त इतना आतुर क्यों होता? मुग़ल साम्राज्यके आश्रयकी छायाके नीचे सुख प्राप्त कर वह जिस समय अपनी स्वाधीनताके मार्गमें अपने हाथसे कांटे बिखेर रहा था, वीरकेसरी

प्रतापसिंह उसी समयमें असह्य वनमें बसनेके क्लेशोंका सहन करता हुआ कठोर अत्याचार से पीडित हो अपने देश और अपनी जातिकी स्वाधीनताके मार्गको स्वच्छ कर रहा था। इसी कारण उस शिशोदिया महापुरुषकी पवित्र प्रतिमूर्ति आज भी, प्रत्येक राजपूतोंके हृदयमंदिरमें प्रतिष्ठित हो रही है। इसी कारण प्रत्येक राजपूत प्रातःकाल सोकर उठनेके समय उनके पवित्र नामका स्मरण करता है।

मुगल सम्राट्के कृपापात्र होनेके निमित्त उदयसिंहने किसी कार्य्यके करनेमें कमी न रक्खी। यहांतक कि अपने जातीय गौरवको भी जलाञ्जली दे अपनी बहिनें जोधाबाईको अकबरके साथ व्याह दिया था। इससे अकबरने उसपर संतुष्ट हो केवल अजमेरके अतिरिक्त मुगलोंके अधीन मारवाडके समस्त नगर परगने और गांव उसको लौटा दिये। इसके अतिरिक्त मालवेके बहुतसे बडे २ नगरोंको भी उदयसिंहने अपने अधिकारमें कर लिया था। राजमुकुटधारी माननीय मुगलबहनोईका सेनाबल पाकर उदयसिंहने गर्वितसामन्तोंकी शक्तिको नीचाकर दिया। प्रधान २सरदारोंके बलको व्यर्थ कर दिया और प्राचीन भूम्यधिकारी तथा उपसामन्तोंकी भूमिसम्पातिको छीन लिया इस प्रकार उदयसिंहके राज्यकी आमदनी पहिलेसे दूनी हो गई। ऐसा वर्णन है कि नया बंदोबस्त करके उसने ऐसे ही एकसाथ चौदह सौ गांव सर्कारी खजानेमें लगा लिये थे। दूदाकी संतानवालोंसे उसने प्रायः समस्त जमीन छीन ली थी। और ऊदावत लोगोंसे जैतास तथा चांपा और कूंपाके खानदान वालोंसे भी कितने एक साधारण नगर छीन लिये थे।

बादशाह अकबरने जो सलूक उदयसिंहके साथ किया उसका हमेशा उदयसिंह कृतज्ञ बना रहा, क्योंकि इसीके कारणसे वीर राठौरोंने बादशाहके बडे २ काम किये थे। राजा स्वयं युद्धमें नहीं जाता था। इस अाली राजा (बादशाह अकबरने उसको यही उपाधि दी थी) के ३४ लडके लडकियाँ थीं, जिनसे नवीन वंश और जागीरदारियां मरुदेशमें कायम हो गईं, जिनमेंसे बडी जागीरें गोविन्दगढ और पीसागढकी हैं, और कुछ जागीरें राजसीमासे बाहर आबाद की गई जो स्वतन्त्र हो गई और उनका नाम उनके स्थापकोंके अनुसार रक्खा गया इनमेंसे किशनगढ और रतलाम मालवेमें हैं।

उदयसिंहका शरीर उसी योग्य था कि जैसी उसके हृदयकी वृत्ति थी। राजपूत लोग उसे "मोटा राजा" कहकर पुकारते थे। उसका शरीर यहांतक मोटा हो गया था कि फिर वह घोडेपर नहीं चढ सकता था, चढे भी तो वैसी सामर्थ्य किसी घोडेमें नहीं थी कि जो उसे उठाकर ले चलता सिंहासनपर बैठकर उसने तेरह वर्ष राज्य किया था। उसकी मृत्युका एक अद्भुत वर्णन पाया जाता है, इस वर्णनसे उदयसिंहके चरित्रकी और राजपूत संस्कारकी एक प्रकाशमान छवि नेत्रोंके आगे दिखाई दे जाती है। प्रयोजन समझकर उसका यहां वर्णन करते हैं। मारवाडके प्रायः समस्त भाटग्रंथोंमें देखा

१ वीरचूडामणि प्रतापसिंहका जीवनचरित्र टाड राजस्थानके प्रथमखण्ड पृ०२७५ में देखो।

जाता है कि राठौर कुलके राजकुमारोंकी नीतिशिक्षा उत्तम रीतिसे हुआ करती थी और वे अपने २ चरित्रकी नैतिक उत्कर्षताको प्राप्त कर लेते थे-उनकी नीति-शिक्षाका भार विश्वासी और बुद्धिमान सरदारोंको सौंपा जाता था । सबसे पहले वे सरदार लोग उनको इंद्रिय दमन करना सिखलाते थे । राजकुमारलोग इस शिक्षामें अत्यन्त निपुण हो जाते थे, बालकपनसे ही वे इंद्रियोंका दमन करना सीखते थे । और बीस वर्षसे पहिले कभी स्त्रीका मुँह नहीं देखते थे । परन्तु स्थूलशरीर उदयसिंहको यह शिक्षा प्राप्त हुई थी या नहीं सो हमको ज्ञात नहीं । यदि यह शिक्षा उसने पायी भी हो तो इस परिणित अवस्थामें वह उसको भूल गया था । यद्यपि उसकी सत्ताईस रानियां थीं, तथापि उसने बुढापेमें इंद्रियोंके वश हो, एक पवित्र हृदयवाली ब्राह्मण कुमारीकी ओर कामपूर्ण नेत्रोंसे देखा था यह कुमारी ही उदय-सिंहके नाशका कारण हुई ।

" ख्यात् " नामक एक भाटग्रंथमें देखा जाता है कि एक दिन उदयसिंह बाद-शाहके दरबारसे अपने राज्यको लौट रहा था, इसी समय मार्गमें उसने बीलाडा नामक गांवके बीच एक परमसुंदरी स्त्री देखी उस बालाके अद्भुत सौन्दर्यको देखकर पंचशरने राजाके हृदयमें सुमनबाण मारे । राजाने उस मनमोहनीका नाम धाम पूँछा । उस स्त्री के उत्तर देनेसे ज्ञात हुआ कि वह आईपंथीसम्प्रदायके किसी उत्तम ब्राह्मणकी लडकी है। आईपंथी ब्राह्मणलोग कालिकाकी अपरामूर्ति आई माताके उपासक हैं । वे घोर तान्त्रिक होनेके कारण मद्य मांसके द्वारा अपने उपास्य देवताकी पूजा किया करते थे। जिस लावण्यवतीके रूपपर राजा उदयसिंह मोहित हुए थे, उसका पिता उग्र सम्प्र-दायका अग्रणी होनेपर शुद्ध और निर्मल चरित्रवाला था । उस काममोहित राठौर राजा ने एकबार भी अपनी अवस्था और पदमर्यादाका विचार न किया, राजपूत होकर भी उसने क्षणभरके लिये भी ब्राह्मणोंके मुखकी ओर नहीं देखा । जिन ब्राह्मणोंको उसके दादा परदादा देवताओंके समान पूजते आये थे, जिनके साधारण भ्रुकुटी कटाक्ष को वे वज्रपातके समान समझते थे; आज उदयसिंहने उसी पवित्र और निर्मल राठौर कुलमें जन्म लेकर और विशाल राज्यका अधीश्वर होकर एक विमल-चरित्रवाली ब्राह्मणकन्याको बलपूर्वक हरण करनेका विचार किया । ब्राह्मणोंने दुष्ट राजाके अभि-प्रायको शीघ्र ही जान लिया, ब्राह्मणने विचारा कि आज तो रक्षक ही भक्षक हो गया है, जिसके ऊपर दुर्बल प्रजाका मान और प्रतिष्ठा निर्भर है, आज वही अपने हाथसे उसका नाश किये डालता है । क्या मेरे जीवित रहते ही एक राजपूत इस कन्याको बलपूर्वक हरण करके ले जायगा । और मेरे पवित्र कुलमें सदाके लिये कलंक लगावेगा । चारों ओर बदनामी होगी और कोई ब्राह्मण मुझसे हेलमेल भी न करेगा मैं जातिसे निकाला जाऊंगा । इस प्रकारकी चिन्ता वारम्वार उसके हृदयमें उदित होने लगी। वह एक साथ ही उन्मत्त होकर राजाके

१ पहिले कहे हुए बीलाडा गांवमें इनका एक मंदिर था ।

नामपर सैकड़ों धिक्कारें देने लगा। अनंतर यह विचार कर कि अपने वंशका कलंक अब किसी उपायसे नहीं छूट सकता, वह स्वयं ही अपनी पुत्रीके संहार करनेका विचार करने लगा। जिस कन्याको अपने रुधिरसे पालन पोषण किया, जिसका मुंह देखनेसे उसके प्राण प्रसन्न होते थे, संसारमें केवल जिसको ही वह अपना समझता था, आज उसी प्राणप्यारी कन्याका संहार करनेके लिये ब्राह्मणका हाथ उठा। सबसे पहिले उसने एक बड़ा होमकुंड खोदा पीछे पुत्रीका बध करके उसकी सुकुमार देहके टुकडे २ किये और अपने हृदयका भी कुछ थोड़ासा मांस काटकर कन्याके अंगोंमें मिला दिया। शीघ्र ही प्रचण्ड होमकुण्ड जलने लगा, लकड़ियोंके साथ बहुतसा घी भी उस होमकुण्डमें डाला गया, शोकसे उन्मत्त हुआ ब्राह्मण इस प्रकार अपने देवताकी पूजा करनेको बीभत्स होम करने लगा। दुर्गन्धिमय बिकट धूमराशि उसके घर आंगनमें भर गई, अगणित लहरें निकलकर आकाशको चूमने लगीं, उस समय अचानक ब्राह्मणने खड़े होकर गंभीर वाणीसे राजाको शाप दिया "तुझको अब कभी शान्ति न प्राप्त होगी। आजसे तीनवर्ष, तीन दिन, तीन प्रहरके मध्यमें प्रतिहिंसा अवश्य पूर्ण होगी। आईमाता साक्षी हैं, मैं जाता हूं। देवी बावड़ी ही मेरा होनहार स्थान होगा।" इस भयंकर शापके शेष होते ही वह तांत्रिक ब्राह्मण जलते हुए अग्निकुण्डमें कूद पड़ा। अग्निकी अगणित लपटोंने शीघ्र ही उसको भस्म कर दिया।

यह भयानक और बीभत्स समाचार राजा उदयसिंहने भी सुना। अपने घोर अपराधको विचार उसका हृदय कम्पित होने और शरीर लडखडाने लगा। उसी दिनसे वह क्षणभरके भी निमित्त शांति न पा सका। वह सोनेके समय स्वप्नमें सदैव उस ब्राह्मणकी बिकटमूर्तिको मानासिक नेत्रोंसे देखने लगा, सदैव उसका भीषण शाप उसके कर्णछिद्रोंमें गूँजने लगा। उसका वह अत्यन्त मोटा शरीर बहुत कुछ सूख गया। अन्तमें वह अभागा राठौर उस ब्राह्मणके दिये हुए शापके नियत समयमें ही इस लोकको छोड गया।

बहुत दिन बीत गये, परन्तु उस बीलाडावासी आईपंथी ब्राह्मणके बिकट प्रतिहिंसाका चित्र अबतक भी कोई मारवाडी नहीं भूल सका। उसके इस भयानक होमका वृत्तान्त व्यभिचारी राजाओंके पक्षमें एक कठोर आज्ञाके समान विराजमान हो रहा है। जो कोई राजा अपनी मर्यादाको भूलकर इस प्रकारके पापपंकमें फँसनेकी

---

१ यह कहानी सही नहीं मालूम होती। बीलाडेमें आईजीका मंदिर तो है पर आईपन्थी कोई ब्राह्मण नहीं पाया जाता। सीरवी जातिके किसान विशेषकर आईपन्थी हैं, जिस ब्रह्मराक्षसका उल्लेख किया है, उसका एक पडिहार राजाके मंडोरमें ऐसे ही अत्याचारसे ब्रह्मराक्षस होना सुना जाता है। मोटा राजा उदयसिंहका देहान्त लाहौरमें बीमारीसे हुआ था। उसके मरनेकी ऐसी कथा शायद चारणोंने गढी है क्योंकि उन्होंने इन लोगोंके कई शासन गाँव एक कुसूरपर छीन लिये थे जिससे नाराज होकर बहुतसे चारणोंने गाँव आवें तो वहांके जागीरदार चंपावत गोपालदासकी सहायतासे चारी अर्थात् आत्महत्या की थी।

इच्छा करता है, तो वही प्रेतात्मा ब्राह्मण उसी समय उसके सामने प्रगट हो उसको पापके मार्गसे हटा देता है ।

बहम भी कभी २ सदाचारी बना देता है । बीलाडाके आईपन्थी ब्राह्मणके ब्रह्मराक्षस होनेका भय बहुत समयतक मनुष्योंपर छाया रहा; और जिस समय और किसी प्रकारसे राजकुमारोंके चरित्रोंका सुधार नहीं हुआ, उस सयम यही ब्रह्म-राक्षसका भय राजकुमारोंका सदाचारी बनाता था । उदयसिंहके प्रपौत्र प्रसिद्ध जसवन्तसिंहका अपने एक कर्म्मचारीकी कन्यासे प्रेम हो गया और उसको वह बावडी देवीमें ले गया, परन्तु इस बदला लेनेवाले ब्रह्मराक्षसके भयने उसकी कामनाओंमें बाधा डाली, इस समय संकल्प विकल्पोंका उसके मनमें महायुद्ध हुआ; जिससे जसवन्त पागल हो गया, परन्तु किसी उद्योगसे भी उसके मनसे प्रेमभाव नहीं हटा । ब्रह्मराक्ष-सकी चिन्ता भी मनमें बनी रही । सर्व साधारण रीति पर यह विचार था कि, इसके ऊपर किसीका आवेश है, क्योंकि जिस समय उसको खेलाया जाता था तो वह यह कहता था कि यदि जसवन्तसिंहके बराबर कक्षाका कोई सरदार इसके बदलेमें अपनी जान दे दे तो मैं जसवन्तपरसे उतर जाऊंगा । कूंपावत् जातिका अधिपति नाहरखाँ जो इसके निमित्त सदा युद्धमें सेनापतिका कार्य्य करता था, स्वामीके बदलेमें अपना शिर देनेको राजी हुआ और जिस समय कि उसने अपनी यह इच्छा प्रकट की, स्यानेन जो इसको खेलाता था भूतको पानीके कटोरेमें उतारा और तीनवार जलको उसके शिरके चारों ओर घुमाकर वह जल नाहरखाँको पीनेके लिये दे दिया । जसवन्त उसी समय अच्छा हो गया । आश्चर्य्ययुक्त बदला इस भूतका राजस्थानके राज-कुमारोंपर पूरा विश्वास रखता है और इसी कारणसे नाहरखांका नाम ईमानदारका ईमानदार रहा । नाहरखांने मरनेसे पहिले अपने पुत्रको बुलवाया और सौगंध दिलाई कि अब ऐसे राज्यकी प्रधानताको छोड देना जिसके कारणसे यह प्राण समर्पण हुआ है, उस दिनसे आसोपके कूपावतोंके स्थानमें आहवाके वे चांपावत अधिकारी हुए, जिन्होंने अपने राजकुमारके दायें स्थानको गद्दीकी बाईं तरफ बैठना स्वीकार किया ।

तेजस्वी मालदेवके अयोग्य पुत्र उदयसिंहके सम्बन्धमें अब अधिक कहनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है, पहिले ही कह आये हैं कि वह बीरपूज्य जोधारावका अयोग्य वंशधर था, गर्वोन्नत राठौरकुलका अयोग्य राजा था । उसीसे सियाजीका बिपुल वंश नीचेको गिरने लगा । मारवाड़का गौरवसूर्य विषादसागरमें डूबनेके निमित्त मध्य आकाशको परित्याग कर धीरे २ नीचेको उतरने लगा ।

हम एक राजावली पुस्तकसे उल्लेख कर २ उदयसिंहका वृत्तान्त उसके सन्तानोंकी सूची देकर समाप्त करेंगे । ऐसे पाठकोंको जिनको इन वंशोंसे प्रयोजन है उनके लिये यह इतिहास बहुत ही रुचिकर होगा और विशेषकर ऐसे पाठकोंको जिनको इनके जातीय अधिकारमें हस्तक्षेप करनेकी आवश्यकता पड़ती है । यहाँपर उस महापितृवृक्षकी शाखायें एक ही शताब्दीमें सब देशोंमें फैली विदित होती हैं और जिनमेंसे किशनगढ़, रूपनगढ

और रतलामके स्वतन्त्र शासक और गोविन्दगढ खरवा पीसागढके ताल्लुकेदार जो सब उदयसिंहकी सन्तान हैं रक्षादृष्टिसे देखते हैं।

१ सूरसिंह, सिंहासनपर बैठा।

२ अखैराज.

३ भगवानदास-इसके बल्लू, गोपालदास और गोविन्ददास नामक तीन पुत्र थे। इसने गोविन्दगढ स्थापन किया।

४ नरहरदास.
५ शक्तसिंह.
६ भूपनसिंह.
} इनके कोई सन्तान नहीं हुई।

७ दलपत,-इसके चार पुत्र हुए थे, उनमेंसे जेठे महेशदासके रतननामक पुत्रने रतलाम नामक एक गढ बसाया था और २ यशवंतसिंह, ३ प्रतापसिंह, ४ कुनीरैन हुए।

८ जयतके चार पुत्र हरसिंह अमर, कन्हीराम और प्रेमराज हुए, इनकी संतानोंको बलूंता और खरवाकी पृथ्वी प्राप्त हुई थी।

९ किशनसिंहने संवत् १६६९-सन् १६१३ ई० में किशनगढ स्थापित किया। इसके सहसमल, जगमाल, भारमल नामक तीन पुत्र हुए। भारमलका पुत्र हरिसिंह और हरिसिंहका पुत्र रूपसिंह हुआ। रूपसिंहने रूपनगर बसाया था।

१० यशवन्तसिंह-इसके पुत्र मानने मानपुर बसाया। मानकी औलाद मनरूप जोधाके नामसे प्रसिद्ध हुई।

११ यशवन्त, केशो, इसने पीसानगढको बसाया था।

१२ रामदास.
१३ पूरनमल.
१४ माधोदास.
१५ मोहनदास.
१६ कीरतसिंह.
१७ — — —
} इनके नामोंके अतिरिक्त कुछ वृत्तान्त नहीं पाया जाता।

इनके अतिरिक्त उदयसिंहके सत्रह पुत्रियां भी हुई थीं; परन्तु उनका कोई वर्णन भाटग्रन्थोंमें नहीं देखा जाता।

---

१ यह गलत लिखा है क्योंकि शक्तसिंहकी औलादमें खरवा इलाका अजमेरके इस्तमुरारदार है।

२ रतलाम, किशनगढ और रूपनगढ तीन स्वाधीन परगने हैं। और तीनों स्वतन्त्रतापूर्वक सुखसे समय बिताते है।

पंचम अध्याय ५.

राजा शूरसिंहका अभिषेक; उसके द्वारा सिरोहीके राव सुरतानका पराभव; गुजरातके राजाके विरुद्ध उसकी युद्धयात्रा; धुंधकाके युद्धमें शूरसिंहका जय पाना; उसको धन और सन्मानकी प्राप्ति; उसका भाटोंको धन देना; अमर वलेचाके विरुद्ध उसकी युद्धयात्रा; नर्मदाके तटपर युद्ध; अमरकी हार और उसका मारा जाना; नवीन २ सन्मानोंकी प्राप्ति; अपने पुत्र गजसिंहके साथ राजा शूरसिंहका सम्राट्की सभामें जाना; मारवाडके होनहार उत्तराधिकारीको सम्राट्का अपने हाथसे सजाना; जालोरके किलेको लांघना; राणा अमरसिंह; मेवाडके विरुद्ध खुर्रम शाहजादेके साथ गजसिंहकी युद्धयात्रा; राजा शूरसिंहकी मृत्यु; नर्मदाके किनारे उसके द्वारा तलाक देनेपर मीनारका बनाना; राठौरपतिका बहुत समयतक जन्मभूमिसे बाहर रहनेके कारण मन न लगाना; जोधपुरकी शोभाकी वृद्धि; राजा शूरके पुत्र प्रपौत्र; गजसिंहका सिंहासनपर बैठना; बुरहानपुरके राजत्वमें और दक्षिणावर्तके प्रतिनिधित्वमें अभिषेक, उसकी परम्परा; दलथम्भनकी उपाधि मिलना; राजपूत कुमारियोंका वर्णन; राज्याधिकारके लिये बेगमोंकी चालाकी; सुलतान परवेज और खुर्रम; परवेजके विरुद्ध खुर्रमका षडयंत्र रचना; राजा गजसिंहसे उसकी सहायता मांगना; प्रार्थनाकी निष्फलता; राजमन्त्री गोविन्ददासकी गुप्तहत्या; गजसिंहका पदत्याग; खुर्रम द्वारा परवेजका मारा जाना; जहाँगीरको तख्तसे उतारनेका यत्न करना; जहाँगीरका राजपूतोंसे सहायता मांगना; बनारसका युद्ध; गजसिंहके आचरण; विद्रोहियोंकी पराजय, सुलतान खुर्रमका भाग जाना; गुजरातकी सीमापर राजा गजसिंहकी मृत्यु; उसके दूसरे पुत्र यशवंतसिंहका अभिषेक; सदैवके उत्तराधिकारित्वके नियमोंका अदलबदल; अकबरकी सन्तानसे राजपूतोंका पृथक् होना, उसका देशसे निकाला जाना; मुगल सम्राट्के निकट अमरका आश्रय लेना; उसकी प्रतिष्ठा होना; उसकी शोचनीय मृत्यु।

उदयसिंहके मरनेके उपरान्त उसका जेठो पुत्र शूरसिंह[1] संवत् १६५१ सन् १५९५ में मारवाडके गौरवहीन सिंहासनपर बैठा। जिस समय पिताके मरनेका समाचार उसके निकट पहुँचा, उस समय वह बादशाहकी फौजको लिये हुए लाहौर नगरमें भारतकी सीमावाले देशोंकी रक्षा करता था। जिस समय सन् १६४८ में सिंधु जिता गया, उस समयसे वह वहीं था। शूरसिंह एक पराक्रमी और रणकुशल राजा था। पिताके जीवित समयमें उसने इतनी रणकुशलता और वीरता दिखाई कि जिससे बादशाहने उसपर प्रसन्न हो उसको एक ऊँचा पद और 'सवाईराजा' की उपाधि दी थी।

मुगल बादशाह अकबरने राठौरवीर शूरसिंहके बल विक्रमका भलीभाँतिसे परिचय पाया था; इस समय उन्होंने उसको एक कठोर कार्यके पूरा करनेपर नियत किया। सिरोहीका अधिपति राव सुरतान अपने पर्वतमय प्रदेशोंके स्वाभाविक किलोंके ऊपर निवास करता हुआ अत्यन्त गर्वित हो गया था। उसने सोच रक्खा था कि मुगल बादशाहकी कोपाग्नि उसके अभेद्य पर्वतोंको भेदकर उसको न जला सकेगी। इसी कारण वह अकबरके अधीन न हुआ था। शूरसिंहने उस गर्वित राजपूतके विरुद्ध लडाई की। इसके पहिले सिरोहीराजके साथ उसका घोर विवाद हुआ था। शूरसिंहको इस सुअवसरमें

---

१ शूरसिंह जेठा पुत्र नहीं था, कई भाइयोंसे छोटा था।

उस पुराने झगडेके बदला लेनेका अच्छा मौका मिल गया। भाटगण उसके सम्बन्धमें ऐसा कहते हैं कि शूरसिंहने उस पुराने विवादका बदला सिरोहीराजसे भलीप्रकार लिया और उसका सिरोही नगर लूट लिया। यहांतक कि राव सुरतानके पास चारपाई व बिछौनातक न रहा, उसकी स्त्रियोंको पृथ्वीपर सोना पडा था, इससे जाना जाता है कि शूरसिंहके पराक्रमसे सिरोहीपतिका घमंड और आत्माभिमान चूर्ण होगया था और उसका ऊँचा मस्तक नीचा हो गया था। एक समय वह संसारमें किसीको भी श्रेष्ठ न जानता था। उसकी शेखी और गर्वकी अधिकता क्या कहैं "सूर्यभगवान् साहस करके उसके ऊपर किरणोंका विस्तार कर रहे थे, इससे उसने एक समय उनको बाणसे वेधनेकी इच्छा की थी।" आज राठौरराजा शूरसिंहके प्रबल पराक्रमसे उसका समस्त गर्व दूर हो गया।आज उसको मुगल बादशाहकी अधीनता स्वीकार करनी पडी।सामन्तों की प्रथा के अनुसार सुरतानरावने सम्राटके भेजे हुए फरमानको स्वीकार किया और अपने सेनादलको लेकर वह दिल्लीश्वरकी सेवा करनेको प्रस्तुत हुआ। इसी समय बादशाहकी आज्ञानुसार राजा शूरसिंहने गुजरातके शाह मुजफ्फरके विरुद्ध युद्धकी यात्रा की। हारा हुआ सिरोहीपति भी उसकी सहायताको सेनासमेत गया। धुंधुकानामक स्थानमें दोनों दल एक दुसरके सामने खडे हुए। राठौरवीर शूरसिंह समस्त देवर और राठौर सेनाका सेनापति हो युद्धखेतमें गया। दोनों ओरसे बहुत देरतक घोर युद्ध होता रहा। इस भयानक युद्धमें बहुतसे राठौर मारे गये; किन्तु अन्तमें शूरसिंह ही जीता और मुजफ्फर अपमानित और पराजित होकर राजपदसे विच्युत हुआ। उसके सत्रह सहस्र नगर विजयी राठौरोंके अधिकारमें आये। उन नगरोंका धन रत्न लूटकर शूरसिंहने दिल्लीको भेजा; उसने उस धनमेंसे केवल कुछ थोडासा अपने यहां भी रख छोडा था। इस जीतसे अकबरने उसपर अत्यन्त प्रसन्न हो उसके पदको बढ़ा दिया और उसको एक तलवार बहुतसा इनाम और नई भूमिसम्पत्ति पुरस्कारमें दी।

गुजरातकी जीत में राजा शूरसिंहको जो अतुल धन प्राप्त हुआ था उससे उसने जोधपुर नगर और दुर्गोंके कुछ भागोंकी वृद्धि की, और नगरको नवीन शोभासे सजाया शेष धन उसने मारवाडके छः भाट कवियोंको बांट दिया। वह भी साधारण नहीं था प्रत्येकको एक २ लाख रुपया मिला था।

जिस दिन राठौरवीर शूरसिंहने अपने पराक्रमसे दुष्ट मुजफ्फरका विषदंत तोडडाला उसी दिनसे उसका यशराजस्थानके चारोंओर फैल गया। मारवाडके भाटगण आनंदमे

१ मुजफ्फरकी लडाई तो शूरसिंहके राजा होनेसे वर्ष छः महीने पहले ही खानखानान जीतकर गुजरात फतह कर ली थी। इस लडाईमें शूरसिंहके बाप उदयसिंह भी शामिल थे और यही कारण विशेष करके उनको जोधपुर मिलनेका हुआ था। शूरसिंहने अकबरके मरे पीछे जहाँगीरके बादशाह होनेके समय मुजफ्फरके बेटेको हराया था, उसीके वृत्तान्तको गडबड करके भाटों तथा टाडने ऊपर लिखी कथा यहाँ गढ़ ली है जो इतिहाससे मेल नहीं खाती।

पुलकित हो पंचम तानसे उसकी वीरत्व कहानी नगर २ में घूम २ कर गाने लगे। बादशाहने उसका और भी यश बढानेके निमित्त उसे और एक कठोर कार्यके करनेको प्रेरित किया। नर्मदाके किनारे अमरबलेचा[1] नामक एक तेजस्वी राजपूत वास करता था। उसने अबतक बादशाहकी अधीनता स्वीकार नहीं की थी। अकबरकी आज्ञानुसार शूरसिंहने उस राजपूत राजाको अधीन करनेके निमित्त उसपर चढाई की। तेरह हजार घुड़सवार, दस बडी २ तोपैं और बीस बडे २ मदमत्त हाथी, इतनी सेना लेकर राठौरराज शूरसिंहने नर्मदाके किनारे चौहान बीर अमरके ऊपर हमला किया। अमर पांच हजार घुडसवार लेकर उसके प्रचंड आक्रमणके रोकने के निमित्त आगेको बढा। दिल्लीश्वरकी अपार सेनाके सामने अमरकी पाँच हजार सेना बहुत ही थोडी थी; परन्तु तो भी अपने राज्यकी स्वाधीनताकी रक्षाके निमित्त वह बडे उत्साहके साथ राठौर राजके सन्मुख हुआ। दोनों ओरसे लगातार तीन महायुद्ध हुए। पहिले दो युद्ध हुए पहिले दो युद्धोंमें किसीकी हार जीतका निश्चय न हुआ परन्तु तीसरे युद्धमें अमरबलेचाने राठौरवीरोंके हाथसे युद्धमें प्राण त्याग किये। उसका समस्त राज्य विजयी शूरसिंहके हाथमें आया। इस जयका समाचार शीघ्र ही दिल्लीश्वरके निकट पहुँचा। बादशाहने शूरसिंह पर अत्यन्त प्रसन्न हो उसको नौवत भेजी तथा धार और उसमें मिला हुआ समस्त राज्य उसके अर्पण किया[2]।

शूरसिंहके अमित पराक्रमसे मुगलबादशाह नये २ राज्यको जीत रहा था, कि उसी समयमें कराल कालने उसपर आक्रमण किया। वह अपने पुत्र जहांगीरके हाथमें विशाल मुगलराज्यकी सलतनत दे आप इस लोकसे बिदा हुआ। नवीन बादशाहके सिंहासनपर बैठते ही शूरसिंह अपने जेठे पुत्र और होनहार उत्तराधिकारी गजसिंहके साथ उसको प्रीति और राजभक्तिकी भेंट देनेके निमित्त सभामें आया। तरुण वीर गजसिंहको देखकर जहांगीर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। राठौरराजकुमार गजसिंहका शूरसिंह योग्य पुत्र था। उसने बालकपनसे ही युद्धविद्या सीखी थी, इससे पहिले जहांगीरने जालौर क्षेत्रमें उसकी वीरताका विशेष परिचय पाया था। इस समय उसी वीरताकी बात मनमें आते ही बादशाहका आनन्द दूना हो उठा। उसने उसी सभामें उसको अपने हाथसे तलवारकी मूठ पकड़ाई और जालौर युद्धके विषयमें कह कहकर वह बारंवार उसकी प्रशंसा करने लगा।

---

१ बलेचो, चौहान कुलकी एक शाखा है।

२ इस युद्धका अकबर तथा मारवाडके गये इतिहासोंमें कुछ पता नहीं लगता। वालीसा चौहानकी एक खाँप है जिसको नालौचा भी कहते हैं। वे गोंडवाडाके पहाडोंमें मारवाड और मेवाडकी सीमापर रहते हैं। उनमें ऐसा कोई पराक्रमी नहीं हुआ जो नर्म्मदातक राज्य करके अकबरसे लडनेके योग्य हो। उस समय तो अम्बरचम्पू नाम विजन मंत्री दक्षिण अहमदनगरके बादशाहका इतना प्रबल था कि वह सम्राट् अकबरकी फौजोंसे लडा करता था। उनके किसी युद्धसे इस कथाका सम्बन्ध हो तो कुछ आश्चर्य्य नहीं है। भाट लोगोंने बेसमझीसे इसी अम्बरचम्पूको अमराबालेसा समझ लिया होगा। महात्मा टाडने भी विना सोचे विचारे वह कथा अपनी तवारीखमें नकल कर दी है।

गजसिंहको जालौरके रणक्षेत्रमें अपनी वीरता दिखानेका पहला ही अवसर था। उसी साधन भूमिसे उसकी होनहार उन्नतिका मार्ग क्रमशः स्वच्छ होता रहा। उसने जालौरको गुजरातके बादशाहके अधिकारसे छीनकर मुगल सम्राट्के अधिकारमें कर दिया। वीररसके चाहनेवाले भाट कवियोंने उसकी वीरताका भलीभांतिसे वर्णन किया है। दुष्ट पठानोंके विरुद्ध युद्धयात्रा करनेके निमित्त गजसिंहको आज्ञा हुई। उसके युद्धके बाजे बजने लगे, अर्बुदागिरिने वह शब्द सुना, उसका सर्वांग कांप उठा। जो काम अलाउद्दीनने कई एक वर्षोंमें किया था, गजसिंहने उसको तीन ही महीनेमें पूरा किया। अपनी तलवार उठाकर वह जालन्धरके ऊपर कि जिसका नाम जालौर है चढ गया। उस युद्धमें अनेक राठौरवीर मारे गये, किंतु उसने सात हजार पठान सेनाको मारकर वहांके असबाबको लूट लिया और उसे बादशाहकी सेवामें भेज दिया।

भाट ग्रन्थोंके पढनेसे जाना जाता है कि जबसे गुजरात विजय हुआ और मुजफ्फरखांकी औलादका नाश हुआ तबसे शूरसिंह केवल राजधानीमें ही रहने लगा। इधर उसका जेठा पुत्र गजसिंह अपने साथकी फौजको लेकर बादशाहकी आज्ञाके पालन करनेमें प्रवृत्त हुआ। जालौर जीतनेके कुछ ही समयके उपरांत गजसिंहने मेवाडके अधिपति राणा अमरसिंहके विरुद्ध अपनी विजयिनी सेनाको चलाया। उस समय गहलोत कुलके स्वाधीनताका सूर्य्य धीरे २ छिप रहा था उसी समयमें अर्वलीके दूसरे द्वारस्वरूपे प्रसिद्ध क्षेमतर क्षेत्रमें उस वीरपूज्य गहलोत कुलकी बुझती हुई पराक्रमाग्नि जैसे प्रचंड तेजसे जल रही थी उसका विस्तारित वृत्तांत मेवाडके इतिहासमें लिखा हुआ है किन्तु दुःखका विषय है कि मारवाडके भाट कवियोंने इसके विषयमें कुछ विशेष नहीं लिखा, उनके ग्रन्थोंमें केवल इतना ही देखा जाता है कि खुर्रमशाह शाहकी आज्ञामें बद्ध होकर कर्णने बादशाहकी सेवा करना स्वीकार किया और गजसिंह तारागढमें लौट गया। बादशाहने गजसिंह और उसके पिता दोनोंको ही मंसब बढा दिया।

राजस्थानके भाट कवियोंको अपने देशके राजाके गौरव और वीरताका वर्णन करना अच्छा लगता है। किंतु जो समस्त मनुष्य उनके उस गौरवके प्रधान द्वारस्वरूप हैं--उस वीरताकी प्रधान सामग्री हैं; जिनकी सहायता न पानेसे वह कभी भी प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त कर सकते, दुःखका विषय है कि उन्होंने उन मनुष्योंके नामतक नहीं प्रकाशित किये। जिनको इतिहासमें भलीप्रकारसे जानकारी नहीं

---

१ जालौर एक पृथक् राज्य विहारी पठानोंका था जिनकी सन्तानमें अब पालनपुरके नव्वाब हैं।

२ राजस्थान प्रथम खण्ड-अ० ११ पृ० ३१५

३ अजमेरका दुर्ग तारागढके नामसे प्रसिद्ध है; किन्तु यह अजमेरके बदले लिखा गया है। जहांगीरके जीवन चरित्रमें देखा जाता है कि उसने अजमेरमें दौलतबागके नामसे एक सुन्दर बाग बनवाया था उस दौलतबागमें ही वह रहता था।

४ गद्य इतिहासोंमें इस प्रकारके सब नाम हिन्दू मुसलमान और राजपूतोंके लिखे मिलते हैं, परन्तु टाडको वे ग्रन्थ प्राप्त नहीं हुए जिससे ऐसे २ आक्षेप किये गये है।

है, उक्त एकदेशदर्शी ऐतिहासिकोंके सूक्ष्म वर्णनका पाठ करनेसे उनको सहसा यह निश्चय होगा कि राठौर राजाओंने ही उस समयकी बडी घटनाओंका अभिनय किया है। उदाहरणके स्वरूपमें एक युद्धके वृत्तांतका वर्णन किया जाता है गहलोतवीर राणा अमरसिंहने अपने देशकी रक्षाके निमित्त प्राणप्रणसे चेष्टा की, परन्तु विधाताकी विडंबनासे उसके सब श्रम निष्फल हो गये;उसका सब बल और आश्रय छिन्न भिन्न हो गया, वह अपनी थोडीसी मुट्ठीभर सेना लेकर मुगल सेनाके अनंत बलके रोकनेको गया,परंतु पराजित हुआ।विवश हो राणाने बादशाहकी अधनिता स्वीकार की। उस प्रचंड मुगल अक्षौहिणीमें राजकुमार गजसिंह जो दूसरा सेनानायक था उसका वर्णन उस समयके इतिहासोंमें भलीप्रकारसे वर्णित हुआ है;किंतु जो उन समस्त वृत्तांतोंको न पढकर केवल मारवाडके ही भाटग्रन्थोंका अनुशीलन करते हैं उनके मनमें यही निश्चय होगा कि गजसिंहसे ही मेवाडका पराक्रम हीन होकर जगन्मान्य गहलोतकुल स्वाधीनतासे च्युत हो गया था। राठौर कवियोंके इस प्रकार पक्षपातयुक्त इतिहासका एक साधारण कलंक नहीं है। उन्होंने अपनेदेशके राजाको एक बडा ऊँचा आसन दिया है, किन्तु दुखःकी बात है कि जहांगीरने अपने रोज़नामचेतकमें उसका नाम नहीं[1] लिखा; बरन् उसने कोटा और दतियाके राजाओंको शाहजादे खुर्रमके साथ भेजनेका हाल लिखा है, परन्तु तौ भी उस युद्धमें राठौर राजकुमारके नामकी गंध भी नहीं देखी जाती। इससे विलक्षण विवाद उत्पन्न होता है कि जिस प्रचंड मुगल सेनाने उस समय मेवाडराज्यपर आक्रमण किया था। अन्यान्य राजपूतोंके समान राठौर राजकुमार गजसिंहने भी उसकी पुष्टि साधन की थी।

संवत् १६७६--सन् १६२० ई० में राठौर राजा शूरसिंहने दक्षिणमें प्राण त्याग किये। वह गर्व्वोन्नत राठौरकुलका एक योग्य राजा था। उदयसिंहकी कायरताके कारण राठौरकुलका जो बहुतसा गौरव प्रभारहित हो गया था, शूरसिंहकी वीरतासे वह फिर महातेजसे उज्ज्वल हो उठा। किन्तु जो तेज वीरवर जोधारावके रोमकूपोंसे निकला था, जिसके प्रभावसे एक समय समस्त भारतभूमि प्रकाशित हो उठी थी, वह तेज इसमें नहीं था। परंतु तौ भी यह दाहिका और उज्ज्वलकारी शक्ति है। राजा शूरसिंहका शौर्य्य वीर्य्य क्या स्वदेशीय क्या विदेशीय अनेक वीरोंको आदरणीय हुआ था। उसके वीरोचित गुणोंसे मोहित होकर अनेक विदेशी यहां तक कि स्वयं बादशाह भी उसका भक्तिसहित सन्मान करते थे। उसके भयसे दक्षिणके निवासी सदैव कांपते रहते थे। उसके अंतिम जीवनमें एक विचित्र प्रतिष्ठाका विवरण देखा जाता है। कहा जाता है कि उसने अन्तिम कालमें नर्मदाके किनारे एक खंभ (मीनार) बनानेकी आज्ञा दी और उसमें एक तलाक लिखदेनेको कहा कि जो कोई उसका वंशधर नर्मदाके दक्षिण ओर जाय तो उसको उस शापका भागी होना पडेगा। इस मीनारके बनानेका कोई विशेप कारण नहीं दिखाई देता। कोई कहते हैं

१ क्यों नहीं। लिखा है।

कि वह बहुधा नर्मदाके दक्षिण ओर ही लड़ता रहा था, व्यर्थ युद्धोंमें लगे रहकर वहाँ उसने बहुतसे मनुष्योंका रक्त बहाकर दक्षिणके निवासियोंका सर्वनाश किया था। अपनी की हुई असंख्य नरहत्या और असीम अपकारके विषयपर ध्यान देकर अन्तिम जीवनमें उसके हृदयमें विषम शोच और आत्मद्रोहका उदय हुआ था; इसी कारण उसने अपने वंशधरोंको उस नृशंस कार्यसे निवारण करनेके निमित्त उस तलाकको लिखवाया था। और किसी भाटग्रन्थमें देखा जाता है कि समस्त जीवनभर वह कार्य्यवश हो दक्षिणमें ही फँसा रहा था। इस कारण उसको एक बार भी अपनी जन्मभूमिके देखनेका अवसर न मिला[1]। सुविधा और सुयोग पाकर जब वह अपने देशको लौटनेका उद्योग करता तभी कोई एक अकस्मात् घटना आकर उसको उस नर्मदाकी दक्षिण किनारेमें ही फंसा रखती। इच्छा होते हुए भी कार्य्य करनेके अनुरोधसे वह नदीके सीमाको पार न कर सका। क्रोधमें आकर उसने नर्मदाको अनेकों शाप दिये थे, वह दक्षिण तटसे छुटकारा पानेके निमित्त सदैव ही देवताओंसे प्रार्थना किया करता था। किन्तु उस समयमें उसकी कोई भी प्रार्थना स्वीकार न हुई। वह अपने जीवनमें कभी भी मनभर जन्मभूमिकी ठंडी छायाके नीचे रहकर शान्ति सुख प्राप्त न कर सका। बादशाहके प्रसन्न रखनेके[2] निमित्त वह जन्मभर विदेशमें ही रहा। उसने बचपनसे ही अपने पिताके साथ समय बिताया था। उसका पिता जिस देशमें अपनी सेना ले गया, मरुभूमिके युद्धक्षेत्रोंमें भीषण मैदान व पहाड़ोंमें जहां उसने युद्ध किया; बालक शूरसिंहने क्षणभरके लिये भी उसका साथ न छोड़ा। बालकपनसे ही प्रतिपद उसने पिताका अनुसरण किया, जवानीमें राठौर सेना लेकर बादशाहकी आज्ञा पालनेके निमित्त दूर २ देशोंमें गया; उसने कितने समयमें कितना दुःख पाया, उसकी सीमा नहीं है। उसके पिताने प्राण त्याग किया, उस अन्तिम कालमें शूरसिंहने एक बार भी पिताके चरणोंको न देखपाया, एक बार ही जन्मभरको विदा ली; शूरसिंहके भाग्यमें उसके देखनेका अवसर भी न बदा था। क्योंकि उस समय वह पंजाबमें निवास कर रहा था। पिताकी मृत्युके उपरान्त वह पिताकी राजगद्दीपर बैठा, उसने विचारा था कि राज्यमें रहकर मातृभूमिकी श्रीवृद्धि करूंगा; परन्तु दुःखका विषय है कि वह आशा भी आकाशके फूलोंमें बदल गई। राज्यशासन और प्रजापालन तो केवल नाममात्रको था बादशाहकी आज्ञा पालना ही उसको अपना कर्त्तव्य कर्म मानना पड़ा।

---

१ ये बातें बहुधा गद्य इतिहासोंके विरुद्ध हैं। शूरसिंह कई दफे जोधपुरमें आये और उन्होंने कई अच्छे २ महल, मकान, बाग, तालाब, कुंड आदि बनाये, जो अबतक विद्यमान हैं। तलाक मीमारकी बात भी कहानी जैसी मालूम होती है, क्योंकि उनके पीछे उनके बेटे गजसिंह यशवन्तसिंह आदि दक्षिणकी बादशाही नौकरियोंपर जाते रहे हैं, जिनसे मारवाड़को द्रव्यका विशेष लाभ होता रहा है।

२ बादशाहको प्रसन्न रखना नहीं, अपनी नौकरीपर जाना था; मसल मशहूर है कि नौकरी कि भाई बन्दी।

बादशाहकी आज्ञा पालनमें ही उसका समस्त जीवन बीत गया। अपने देशको छोड दक्षिण देशमें ही उसका समस्त काल कटा। अंतमें उस दूर देशमें ही उसका देह छूटा। कहां वह आशाका विलासक्षेत्र, जीवनका आश्रयकेन्द्र, शांतिकी लीलानिकेतन जन्मभूमि, और कहां उसकी मृत्युशय्या, उस अन्तिम सेजपर लेटे हुए वह उस "स्वर्गादपि गरीयसी" जन्मभूमिकी वार्ता विचारने लगा था। उसके पूजनीय पूर्वपुरुषोंने जिस मारावाड राज्यके निमित्त प्रसन्नमनसे आत्मत्याग किया था; और बुद्धिमानीसे वे राजनीतिका परिपालन कर गये, किन्तु उस मारवाड राज्यके निमित्त उसने क्या किया? अधीन कर्म्मचारियोंके हाथमें राज्यका भार देकर समस्त जीवन दूसरेकी सेवामें ही बिताया, अन्तमें दूर देशमें देह त्याग करनी पडी; अन्तिम समयमें एकबार भी मातृभूमिका मुख न देख पाया। यह सब चिन्ताएँ जब प्रबल वायुके समान उसके छिन्न हृदयमें टकराने लगीं तब उसे चारों ओर अन्धकार देख पडने लगा। वह अपनी प्रतिष्ठा और राजसन्मानको सैकडों धिक्कार देने लगा। अन्तमें उस तलाकनामेंके मीनारके बनानेकी आज्ञा देकर वह सदाके लिये संसारके दुःखोंसे छूट गया।

राजा शूरसिंहने दिल्लीश्वरके निमित्त जो असीम आत्मत्याग स्वीकार किया था, यथार्थमें बादशाह उसको कभी न भूल सका। बादशाहने यथार्थ ही उसको बडे२ पुरस्कार दिये थे, उसने राठौर राजको सोलह बडी २ जागीरें देदी थीं, उसको 'सवाई' की उपाधिसे विभूषित कर समस्त सभासद राजाओंके ऊपर बैठनेका उच्च आसन दिया था; परन्तु उसने जिस मातृभूमिसे वंचित हो समस्त जीवन दूरदेशमें ही बिताया, अपने राजकार्य्यको नौकरोंके ही हाथमें दे दिल्लीके कल्याणके निमित्त बहुतसे राठौरोंके रक्तको बहाया, उसके बदलेमें क्या उसको योग्य दान मिला था? बादशाहके दिये हुए कई एक सन्मानोंसे क्या उन समस्त कार्योंका योग्य बदला हो सकता है? उसके साथ ही साथ उसके सामन्तगण भी इसी प्रकारसे परदेशके अनंत क्लेशोंसे पीडित हो गये थे; स्त्री पुत्र कुटुम्बियों और अपनी २ सम्पत्तिको छोडकर उनको भी

---

१ शूरसिंह उनके पास लाहौरमें थे और अकबर बादशाहने वहीं उनको राजतिलक दिया था।

२ इन सोलहोंमेंसे नौ तो उनके पितृराज्य मारवाडके अन्तर्गत थीं। जैसा कि मारवाड प्रायः (नौकोटी) मारवाडके नामसे भी प्रसिद्ध है। शेष सात भागोंमेंसे पांच गुजरातमें, एक मालवेमें और एक दक्षिणमें थीं। यह सात विभाग अवश्य मारवाडके अन्तर्गत नहीं थे, यही बादशाहने दिये थे, किन्तु उस नौ हिस्सोंमें बटे हुए मारवाडमें यह सात जागीरें क्यों मिलाई गईं? इसका विचार करते ही मारवाडका शोचनीय वृत्तान्त स्मरण हो आता है और हृदय व्याकुल हो उठाता है। भाग्यकी कठोर आज्ञासे जिस दिन राठौरराजा मालदेवने मुसल्मानोंके हाथमें आत्मसमर्पण किया, उसी दिन उसके पितृपुरुषोंका स्वाधीन राज्य पराधीन हो गया। उसी दिनसे मारवाडका राज्य मुगल साम्राज्यकी एक प्रधान जागीरमें गिना गया। उसी समयसे राठौरराजा सामंतप्रथाके अनुसार उसको जागीरके समान भोगने लगे। और प्रत्येक नवीन अभिषेकमें बादशाहके निकटसे उनको नये २ फर्मान लेने पडे।

राजाके साथ उसी प्रकार देश२में घूमना पडा था, इससे उनका भी हृदय सदैव व्यथित रहता था। यद्यपि राजाकी सन्मानवृद्धिके साथ ही साथ उनका भी सन्मान और पद बढता था। किन्तु उनको जब जन्मभूमिकी बात याद आती तब वे सम्राटके दिये हुए उन समस्त सन्मानोंको तुच्छ जानकर उनसे घृणा करने लगते थे। जन्मभूमिकी गोदमें रहकर यदि उनको समस्त जीवन अनन्त दुःख भोगना पडता तो भी वे उससे ऐसे दुःखी न होते जैसे कि बादशाहकी कृपासे सब भोग विलास पाकर पेटभर रोटी खाकर और कोमल सेजपर सोकर एक दिन भी सुखसे न बिता सके। इसलिये बादशाहकी दी हुई वह सम्पत्ति–वह राजभोग और वह सुन्दर सुकोमल शय्या उनके पक्षमें दुर्गन्धिमय नरक और दारुण कण्डकशय्या जान पडती थीं। बादशाहके आश्रयकी छायाके नीचे बैठकर विलासभोग और भोजनकी सामग्रीका सेवन करते २ जब उनको मरुक्षेत्रकी सूखी जुँवार और रावडी या गेहूँकी रोटीकी याद आती तो वे भोजनके पात्र दूर फेंककर अधखाई हुई अवस्थामें ही आसनसे उठकर चल देते थे।

राजा शूरसिंह जैसा वीर था वैसा ही प्रतिष्ठित भी था। उसके द्वारा जोधपुरकी शोभा व सुन्दरता अधिक बढ गई थी। उसने अपने नामके बहुतसे कुएँ, बावडी और मंदिर तालाब आदि बनवाये थे, उनमें अबतक भी बहुतसे देखे जाते हैं। उसके बनवाये हुए सरोवरोंमें से केवल एक "शूरसागर" ही प्रसिद्ध है। जो इस मरुभूमिमें कुछ कम लाभकी वस्तु नहीं है। इसके पानीसे इसके किनारेके बाग आदि सींचे जाते हैं।

महाराज शूरसिंहने ६ पुत्र और सात कन्यायें छोडकर परलोक वास किया। उसके मरनेके उपरान्त उसका जेठा पुत्र राजसिंह सन् १६२० ई० में पिताके सिंहासन पर बैठा। गजसिंहने लाहौरमें जन्म लिया था पिताकी मृत्युसमयमें वह बुरहानपुरमें था उसी समय दाराबखां बादशाहका प्रतिनिधि होकर उसके डेरेमें पहुँचा और उसके मस्तकपर मुकुट ललाटमें राजतिलक और कमरमें तलवार सजाई। पितृराज्य नौकोट मारवाडके अतिरिक्त उसको राजगद्दीपर बैठनेके दिनसे गुजरातके "सप्तविभाग" ढूंढाडके अन्तर्गत मिलाय और अजमेरके निकटका मसूदानगर भी जागीरमें दिये गये। इन सब पुरस्कारोंके अतिरिक्त उसे एक और भी बडा सन्मान प्राप्त हुआ, वह यह कि बादशाहने उसको दक्षिणकी सूबेदारी दी, और उसी समयसे यह नियम कर दिया कि

---

(१) गजसिंह (सबसे जेठा) सबलसिंह, वीरमदेव, विजयसिंह, प्रतापसिंह और यशवन्त यह छः पुत्र थे। उनकी सात पुत्रियोंके सम्बन्धमें कोई वृत्तान्त नहीं पाया जाता।

(२) आमेरका आदि और प्राचीन नाम ढूंढाडर है। आमेर या जयपुर केवल इसकी राजधानी है। पश्चिमी ऐतिहासिकोंमेंसे अनेकोंने ही अपनी इच्छाके बशसे राज्यके नामका लोप कर उसको अपनी राजधानीके नामसे प्रसिद्ध किया हैं। इसी कारण आज हम प्राचीन मेवाड और मारवाडके बदले उदयपुर और जोधपुरका उल्लेख पाते हैं। किन्तु इसके द्वारा जो इतिहासका अपमान हुआ है उसको उन्होंने एक बार भी विचार कर नहीं देखा। महात्मा टाड साहबने इसके विषयमें जो श्रेष्ठ मार्ग दिखाया है, उसका उनको अवलम्बन करना उचित है।

अबसे इसके सरदारोंके घोडे न दागे जावें। इस नियमसे मुगलबादशाहने राठौर साम-न्तोंकी एक घोर अपमानसे रक्षा की थी।

बालकपनसे ही पिताके साथ देशदेशान्तरोंमें भ्रमण करके गजसिंह उसके सुन्दर गुणों और रणदक्षताका अनुकरण करनेमें समर्थ हुआ था। वह दक्षिणकी सूबेदारीपर नियत हो उन समस्त श्रेष्ठ गुणोंका परिचय देने लगा। उसकी तीक्ष्ण तलवारके मुखमें अनेक नगर और ग्राम पतित हुए। खिडकीगढ, गोलकुण्डा; कोलिया; परनाला, कंचनगढ, आसेर और सितारा। थोडे ही दिनोंमें राठौरराज द्वारा विजय हो मुगलराज्यमें मिला लिये गये इन सब स्थानोंमें उसने जो असीम वीरता और रणदक्षता दिखाकर विपुल जय प्राप्त की, इससे बादशाहने प्रसन्न होकर उनको 'दलथंभन' की उपाधि दी थी। इन सब युद्धोंमें गजसिंहके ज्येष्ठ पुत्र अमरसिंहने भी उसके साथ रहकर बिस्मयकर वीरता और रणदक्षता दिखाई थी।

बहुतसा विवाह करना राजसमाजमें महा अनिष्टका मूल है। जो राजा विलास अथवा पितृपुरुषोंकी प्राचीन प्रथाके वशवर्ती हो बहुतसी स्त्रियोंसे विवाह करते हैं, तो पुत्रवती होनेपर वे सब स्त्रियां प्रायः राजमाता होनेकी इच्छा करती हैं। पुत्रकी आयु बढनेके साथ ही साथ उनकी इच्छा भी बलवती होती जाती है। उस बलवती प्रवृत्तिकी अनु-वर्तिनी होकर वे एक बार ही ज्ञान रहित हो जाती हैं, वे राज्यके होनहार मंगल अमंलका विचार नहीं कर सकतीं। स्वार्थ साधनके निमित्त व एक साथ ही इतनी उन्मत्त हो जाती हैं कि स्वयं राजा भी यदि उनके स्वार्थके विरुद्ध खडा हो तो समय पाकर उसे भी विष देकर या किसी दूसरे प्रयोगसे नाश कर डालती है। पिताके दिखाये हुए मार्गका अव-लम्बन कर जहांगीर बादशाहने भी कछवाह कुलकी दो स्त्रियोंसे पाणिग्रहण किया था। राजपूतोंके इस सम्बन्धके कारण शाही सलतनतमें हस्तक्षेप करनेका अवसर मिलता था। उनमेंसे राठौरवंशीयास्त्रीके गर्भसे उसके परवेज[2] नामके[3] एक पुत्र उत्पन्न हुआ। वही जेठा[4] और सदैव प्राचीन प्रथाके अनुसार सिंहासन पानेका योग्य पात्र था। किन्तु आमेरराज-कुमारीके गर्भसे बादशाहके वीर्यसे खुर्रम नामक जो पुत्र हुआ था वह सिंहासन पानेके निमित्त परवेजका घोर शत्रु हो खडा हुआ। और अपने स्वार्थसाधनके निमित्त योग्य अव-सर ढूंढने लगा। यद्यपि खुर्रम छोटा था किन्तु परवेजकी अपेक्षा वह गुण और बुद्धिमें बडा

---

(१) इस प्रकारकी प्रथासे राजपूत अपनेको बहुत अपमानित समझते थे। वीराचरणके प्रधान सहायक प्रिय घोडोंकी पीठमें जब वे उस कलंकको देख पाते तब उनके मनमें दासत्वका कलंकित चिन्ह मूर्तिमान होकर दर्शन दे जाता था।

(२) परवेज नहीं खुर्रम उत्पन्न हुआ था।

(३) यह जेठा नहीं था, खुसरोसे छोटा था।

(४) खुर्रम नहीं; खुशरो हुआ था. परन्तु खुसरो बापके प्रतिकूल हो गया था, जिससे कैद कर लिया गया था। और परवेज उसका प्रतिनिधि हुआ था।

था। वह एक निपुण और साहसी योद्धा था, विशेषकर अनेक मोहित करनेवाले गुणोंसे अलंकृत था। इसी कारण वह बहुतसे मनुष्योंका प्रीति भाजन हो गया था। भाग्यवश उसको योग्य मित्रों और सलाह देनेवालोंकी सहायता भी प्राप्त हो गई थी। शिशोदीय वीर तेजस्वी भीमसिंह और विख्यात सेनापति महावतखाँने उसके असीम गुणोंपर मोहित होकर उसके पक्षका अवलम्बन किया, और उन्होंने उसके कार्यके पूरा करनेमें सहायता देनेकी भी प्रतिज्ञा की। उनके उत्साह और पाशमर्शसे उत्साहित हो खुर्रम अपनी अभीष्ट-सिद्धिके बाधक परवेजके मारनेका व्यस्त हो उठा।

राजकीय सेनाको लेकर खुर्रम जिस समय दक्षिणदेशमें उपस्थित हुआ, उसी समयसे उसका भाग्यमंडल धीरे २ स्वच्छ होने लगा और उसके कार्यसिद्धिके कंटक एक २ करके दूर होने लगे। अबतक वह केवल कल्पनाकी ही गोदमें सो रहा था किन्तु इस समयसे यथार्थ कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ। मारवाडके राजा गजसिंहका मर्तबा बादशाहजादोंके सिवाय शाही दर्बारमें बढा हुआ था, वह दक्षिणमें खुर्रमके ही साथ था। सुलतान खुर्रमने उससे अपने मनके भावको प्रकाशित किया और अपने कार्यके पूरे होनेके निमित्त उससे सहायता चाही। गजसिंह स्वभावसे ही परवेजको चाहता था। अपने प्रियपात्रके होनहार भाग्यको अथवा बादशाहके किये हुए असीम उपकारोंको विचार कर किसी कारणवश उसने खुर्रमकी प्रार्थनाको न सुना। उसकी असम्मति और उदासीनता देखकर खुर्रम निराश हुआ बरन् जिस प्रकार कार्यकी सिद्धि हो उसी प्रकारके यत्नकी खोज करने लगा। गोविंददासनामक एक भाटी राजपूत मारवाडके विदेशीय सामन्तोंमें था। गजसिंह उसका विशेष विश्वास और आदर करते और सब विषयोंमें उसका सम्मति लेते थे। खुर्रमने इस समय उसकी सहायता चाही और उसके मनको गजसिंहसे फिरानेका बहुत यत्न किया। किन्तु भाटीसरदारके सामने उसकी कुछ भी न चली, उसने उसकी एक भी बात न मानी। इससे खुर्रम उसपर भी अत्यन्त क्रोधित हुआ। साधारण उपसामन्त होकर गोविन्ददासने बादशाहजादेकी बात न मानी, इससे क्या खुर्रमका अपमान न हुआ? खुर्रम उसी

---

(१) महात्मा टाडसाहब कहते हैं कि महावतखाँ शिशोदिया कुलांगार पापिष्ठ सगरजीका पुत्र वह था, अपने धर्म्मको त्यागकर महावतखांके नामको प्राप्त हुआ था (राजस्थान प्रथमखण्ड, अ० ११) किन्तु जहांगीरके जीवनचरित्रमें देखा गया कि वह काबुलका रहनेवाला गफूरबेग नामक एक मुसलमानका पुत्र था। इसका असली नाम जमानाबेग था। टाडने इसको मिथ्या सगरका पुत्र बनाकर सगरपर व्यर्थ आक्षेप किया।

(२) यहांपर पढनेसे भलीप्रकार जाना जाता है कि महावतखाँ पहिलेसे ही खुर्रमका शत्रु था किन्तु वास्तवमें यह बात नहीं है। सन् १६२४ ई० में जब खुर्रम पहले विद्रोही हुआ तब बादशाहकी आज्ञासे महावतखाँने परवेजके साथ उसके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी। उसी समयसे महावत खुर्रमके विरुद्ध नानाप्रकारकी शत्रुता करने लगा। अन्तको सन् १६२६ ई० में जहांगीरके मरनेके एक वर्ष पहिले वह खुर्रमके साथ मिला।

(३) गोविन्ददास इस समयसे बहुत पहले सूरसिंहजीके जीतेजी मारा जा चुका था खुर्रमकी वह राजचेष्टा करनेके समय जीवित नहीं था।

(४) विदेशी नहीं, देशी था।

दिनसे उस अपमानका बदला लेनेके निमित व्यग्र हो उठा और उसके मारनेके निमत्त उसने किशनसिंहनामक एक राजपूतको नियत किया। किशनसिंहने अपने हत्यारे अभिप्रायको थोडे ही दिनोंमें पूरा कर दिया। इससे गजसिंहको अत्यन्त दुःख हुआ। खुर्रमके आचारणको देखकर उसपर उसकी अत्यन्त विषम घृणा उत्पन्न हो गई। बादशाहके कार्योंमें लगे रहनेकी फिर उसकी इच्छा न रही। विकट घृणा और रोषसे उसका हृदय टकराने लगा और वह इस दुःख से दक्षिणमें ही सेनाको छोडकर अपने राज्यको लौट आया।

इस घटनाके कुछ ही दिनोंके उपरान्त अभागा परवेज, खुर्रमकी हिंसाग्निसे पतंगके समान जल गया। तो भी उसके कार्य पूर्ण होनेका केवल एक कंटक रह ही गया; वह कण्टक उसका जन्मदाता बादशाह जहांगीर था। उसके गद्दीसे उतारने पर ही उसके सब बाधा विघ्न दूर हो सकते थे। आश्चर्यका विषय है कि खुर्रमने उस बुरे कर्मके करनेका भी सङ्कल्प कर लिया और एक बलवान सेना इकट्ठी करके वह अपने कार्यसिद्धिका सुअवसर देखने लगा। उसका यह जघन्य अभिप्राय बादशाहको मालूम होगया। अपने पुत्रके ऐसे बुरे अभिप्रायको जान जहांगीर अत्यन्त ही दुःखित हुआ। उसने स्वप्नमें भी यह न विचारा था कि खुर्रम ऐसी पितृभक्तिका परिचय देगा। जो हो इस समय उसको विषम सङ्कट उपस्थित हुआ। एक और उसका जीवन और सन्मान दूसरी ओर हिन्दुस्थानके सुख और शान्तिमें बाधा, उस संकटसे छुटकारा पानेके निमित्त उसने राजपूत राजाओंसे सहायता चाही। शीघ्र ही उनके पास पर्वाने भेजे गये। उन पर्वानोंके पहुँचते ही मारवाड़, आमेर, कोटा और बूंदीके राजा लोग अपनी अपनी सेना लेकर सम्राट्की सहायताके निमित्त आ उपस्थित हुए।

इस भयानक घरेलू झगडेके शांत करनेके निमित्त राठौर राजा गजसिंहने सबसे अधिक उत्साह प्रकाश किया। विद्रोही दलको निकट आता देखकर बादशाह अत्यन्त भयभीत हुआ था, किन्तु आज गजसिंहके उत्साह और धैर्य्यप्रद बचनोंसे उसका हृदय बहुत कुछ शांत हुआ। वह राठौरराज इतना सन्तुष्ट हुआ कि

---

(१) किशनसिंह*द्वारा किशनगढ स्थापित हुआ। गोविन्ददासको मारकर किशनसिंहने राजाके अनुग्रहसे अपने बसाये हुए नगरमें स्वाधीन राज स्थापित किया था। इसके वर्तमान वंशधर अब भी ब्रिटिशगवर्नमेंटके साथ मैत्रीके सूत्रमें बंधे हुए हैं।

(२) जहाँगीरके इतिहासमें परवेजका दक्षिणमें मौतसे मरना लिखा है। खुर्रम तो उस समय भागा २ सिन्धमें फिरता था। परवेजकामरना सुनकर वहांसे दक्षिणमें काठियावाड होकर लौट गया था।

---

* किशनसिंहने खुर्रमके कहनेसे गोविन्ददासको नहीं मारा था, गोविन्ददासने सरवनसिंहके भतीजे गोपालदासको अजमेरमें महाराज शूरसिंहके डेरेपर जाकर रात्रिके समय जेठ सुदी ८ सं० १६७१ को मारा था। जिसके बदलेमें तडके ही कुँवर गजसिंहने बापके हुक्मसे पीछा करके अपने काका किशनसिंहको किशनगढ जाते हुए रास्तमें मार डाला।

उससे केवल हाथ ही नहीं मिलाया बरन् उसके हाथको चूमा भी। विद्रोही पुत्रके दमन करनेके निमित्त बादशाहने उन समस्त राजपूत राजाओंसे उसके विरुद्ध युद्धयात्रा करनेको कहा। तदनन्तर सभी अपनी २ सेनासहित विद्रोहके दमन करनेको आगे बढे। बनारसके निकट जाकर उन्होंने खुर्रमके दलको देखा, तब बादशाहने[1] समस्त फौजको श्रेणिबद्ध करके सजानेकी आज्ञा दी और उस समस्त विशाल बाहिनी सेनाका आधिपत्य आमेराधिपति मिर्जाराजाको दिया[2]। गजसिंहके रहते हुए भी जहांगीरने उसको छोड आमेरराजको क्यों सान्मानित किया इसका गूढ़ कारण नहीं समझ पडता। कोई कहते हैं कि खुर्रमने कछवाह कुलमें उत्पन्न हुई एक स्त्रीके गर्भसे जन्म ग्रहण किया था, मिर्जाराजा भी कछवाह था; सजातीय होनेके कारण खुर्रमपर उसका अधिक अनुराग होनेकी सम्भावना थी, इससे उसको सन्मानित न करनेपर फिर वह पीछेसे विद्रोहीके ही पक्षका अवलम्बन करे इस भयसे बादशाहने पहिलेसे ही उसके मुखको बन्द कर दिया। किन्तु मारवाडके भाटग्रन्थमें देखा जाता है कि आमेरराज सबकी अपेक्षा अधिक सेना ले गया था। इसी कारण बादशाहने उसको सबका सेनापति नियत किया। जो हो, इसके भीतर जो कोई कारण छिपा हुआ हो उसकी दलील करना इस समय निष्प्रयोजन है; यहांपर केवल इतना ही कहा जाता है कि बादशाहके ऐसा कहनेपर एक विषमय फल फला। तेजस्वी गजसिंहने इस बातसे अपना अपमान होना विचारा और अपनी ध्वजाको नीचा कर राजकीय सेनाको छोड उसने दूर डेरा जा डाला। उसने विचारा था कि चुपचाप उदासीनभावसे दूरसे ही युद्धके फलाफलको देखता रहूंगा, किन्तु ऐसा न हुआ; शिशोदिया वीर तेजस्वी भीमसिंहके तीव्र वाक्यबाणोंसे अत्यन्त मर्माहत हो अन्तमें उसने बादशाहके ही पक्षका अवलम्बन किया। यदि भीम राठौरराजको इस प्रकारसे उत्तेजित न करता, यदि गजसिंह उस दिन उसी प्रकार चुपचाप युद्ध देखा करता तो खुर्रम ही उस दिन भारतके राजमुकुटको प्राप्त करता, किन्तु विधाताने अदृश्यमें रहकर वृद्ध बादशाहकी इस दारुण अपमानसे रक्षा की। भीमसिंहने एक पत्र द्वारा गजसिंहसे कहला भेजा था कि या तो खुर्रमके ही पक्षका अवलम्बन करो, नहीं तो उसके विरुद्ध तलवार धारण कर अपने पराक्रमका परिचय देनेमें प्रवृत्त होओ। इस पत्रका एक२ अक्षर एक२ विषसे बुझे हुए तीक्ष्ण शरके समान राठौरराजके हृदय में विंध गया। इससे उसको इतना कष्ट जान पडा कि वह उससे शत्रुके अत्याचारको भी साधारण जानने लगा। यहां तक कि बादशाहके उस निरादरसे जो उसे कष्ट हुआ था उसको भी उस समय वह भूल गया, और अपनी पताकाको फिर खडा कर उसने बडे उत्साहके साथ विद्रोहियोंके ऊपर आक्रमण किया। उसके प्रचण्ड उत्साह और वरितासे उत्साहित हो राठौर

(१) उस युद्धमें बादशाह था ही नहीं, परवेज था।

(२) समस्त सेनाका सेनापति उस युद्धमें शाहजादा परवेज था। या उसका गार्डियन महाबतखाँ था। जिसने हिरावल अर्थात् अगली फौजका सेनानी जयसिंहको किया था। इसीपर गजसिंहने बुरा माना था; क्योंकि राठौर उस सेनाके अग्रगामी रहा करते थे।

और उसकी सेना अपने प्राणपणसे युद्ध करने लगी। तेजस्वी भीम मारा गया, गोविन्द-दासकी हत्याकी प्रतिहिंसाका भागी हुआ, प्रचण्ड विद्रोहानल शांत हुआ, अभागे खुर्रम-का मान मथा गया और वह पराजित होकर दूर भाग गया।

इस वीर कार्यके उपरान्त राजा गजसिंहका सन्मान और गौरव अधिकतर बढ गया, किन्तु दुःखका विषय है कि वह इस सम्मानको अधिक दिनतक न भोग सका। संवत् १६९४—१६३८ ई० में वह गुजरातके एक युद्धमें मारा गया। बादशाहकी आज्ञा पालनेके निमित्त अथवा अपने राज्यके दक्षिण प्रान्तवाले डांकुओंका नाश करनेके निमित्त ही उसने जो तलवार धारण की थी इसका कोई वर्णन किसी भाटग्रन्थमें नहीं देखा जाता। गजसिंह राठौरकुलका एक योग्य राजा था। अपने देशके प्रसिद्ध २ राजा-ओंके बीच वही अपना नाम अटल कर सका था। उसने अमर और यशवन्तनामक दो पुत्रोंको छोड परलोक गमन किया। उसके अचलनामक और भी एक पुत्र उत्पन्न हुआ था किन्तु वह बचपनमें ही मर गया।

राजपूत स्वभावसे ही प्राचीन संस्कारोंके वशीभूत होते हैं। वे कभी २ पितृपुरु-षोंके आचारों और व्यवहारोंके विरुद्ध भी करते हैं। और उनकी समाजमें कभी २ उत्तराधिकारप्रथाका भी रद्दबदल देखा जाता है। राठौर कुलका इतिहास देखते २ हमने दो उदाहरण पाये हैं, इस समय और भी एक उदाहरण पाया जाता है। पहिले ही कह आये हैं, इस समय और भी एक उदाहरण पाया जाता है। पहिले ही कह आये हैं; कि गजसिंहके जेठे पुत्रका नाम अमर था। इस कारण उत्तराधिकारत्वकी प्राचीन प्रथाके अनुसार अमर ही राजसिंहासनका योग्य पात्र था, किन्तु गजसिंहने उसे वंचित कर अपने दूसरे पुत्र यशवन्तसिंहको राजगद्दीपर बिठाया। जेठेके वर्त्तमान रहते हुए छोटेको क्यों राजसिंहासन मिला, इसकामिला, इसका विशेष कारण यह है कि अमरसिंह प्रचण्ड; उद्धत और उत्कट स्वभावकामनुष्य था। इस कारण राज्यके प्रायः सब ही मनुष्य उसे चाहते न थे। विशेष कर उसमें राज्योचित कोई भी गुण न था कि जिसकी सहा-यतासे वह पचास हजार राठौरोंके ऊपर राज्य कर सकता। किन्तु ऐसा होनेपर भी वह असाहसी और पराक्रमरहित न था। उसकी तेजस्विता और पराक्रमके सामने उसके शत्रु तृणके समान जल जाते थे। गजसिंह दक्षिणदेशके जिनयुद्धोंमें लगा रहता था अमर ने उन सबमें अपनी विशेष बहादुरी दिखाई थी, बरन् वहां सब युद्धोंमें सबके आगे तलवार पकडकर शत्रुओंके सामने हुआ था। अमर झगडोंमें अगुआ युद्धमें निडर और रणचतुर पुरुष था। इन सब गुणोंके साथ ही जिसके मनकी वृत्तियोंकी समानता होती थी उन सबने हीं उसके साथ योगदान किया था। उन सब प्रचण्ड स्वभाववाले मनुष्योंके साथ मिलकर अमरसिंह विना कारण ही इधर उधर बलवा करने लगा, जिस तिसको अपमानित करने लगा। उसके अत्याचारोंसे देशके सब मनुष्य दुःखित होकर गजसिंहके निकट फरियाद लाय। प्रजाहितैषी राजाने अपनी प्रजा सुखके निमित्त अन्तमें उद्धतस्वभाव अमरसिंहको सिंहासनसे वंचित कर दिया।

(१) यह भी गलत है महाराज गजसिंहजी तो आगरेमें जेष्ठ सुदी १३ संवत् १६९४ को बीमार होकर मरे थे।

संवत् १६९०-१६३४ ई० के वैशाखमासमें एक दिन गजसिंहने मारवाड़के समस्त सांमत और मित्रोंके साथ सभामें बैठकर जेठे पुत्र अमरसिंहको अपने उत्तराधिकार पदसे रहित किया।

इस प्रकारकी शोचनीय घटना राजपूतोंद्वारा कभी ही होती हैं। अन्त्येष्टि विधानकी प्राय: समस्त ही प्रक्रियाँ इसमें देखी जाती हैं। जिस दिन ऐसी शोचनीय बात होती है। वह दिन राजपूतों द्वारा शोकका दिन मनाया जाता है। गजसिंह ऊँचे सिंहासनपर बैठा है, दोनो पार्श्वोंमें राज्यके सामंतगण अपने २ पदमर्यादाके अनुसार बैठे हैं, सामने कुछेक दाहिनीओर अमरसिंह खड़ा है। सभामें बैठे हुए सब सभासद् चुपचाप हैं। सभी विस्मययुक्त नेत्रोंसे राजाके गम्भीर और तेजोमय मुखकी ओर देख रहे हैं। सभी उनकी आज्ञा जाननेके निमित्त उत्सुक हो रहे हैं। उसी समय उस गंभीर निस्तब्धताको भंगकर उसके मुहँसे यह आज्ञा उचारित हुई कि "अमरसिंह उत्तराधिकारित्वके पदसे प्रथक किया गया। वह अब भविष्यमें राजा न हो सकेगा। मारवाड़का होनहार उत्तराधिकार उसके छोटे भाईको अर्पित हुआ है। अमरसिंह निकाला गया, वह इसी समय देश छोडकर चला जाय।" इस कठोर आज्ञाके होते ही उसके निकाले जानेके वस्त्र आभूषण आदि आये। अमर उन सब वस्त्र आभूषणोंसे सज्जित हुआ। सभी वस्त्र काले रंगके थे। काला पायजामा, काला अँगरखा, माथेके ऊपर काले रंगकी टोपी और काली ही ढाल तलवार थी। अमरने उन सब काले रंगके कपड़ोंको पहिना एक काले रंगका घोड़ा उसके पास आया वह उसपर चढ़कर तत्काल ही वहांसे बाहर चला गया। उसने एक बार भी किसीकी ओर न देखा; और न किसीके साथ चलनेका भी अनुरोध किया।

यद्यपि तेजस्वी अमरने किसीकी भी सहायताकी अपेक्षा न की, किन्तु उसको देशसे अकेला न जाना पड़ा। जो सामंत और परिवारगण उसको भावी राजा जानकर उसका सन्मान करते थे वे सब एक साथ ही राजसभासे बिदा लेकर उसके पीछे हो लिये अमर उन सब विश्वासी सरदारोंके साथ मारवाड़से बाहर हो बादशाहकी सभामें पहुँचा। यद्यपि बादशाहने भी उसके निकाले जानेको स्वीकार किया था तो भी निराश्रय राजकुमारको आश्रयमें आया देख उसने उसपर दया प्रगट की, और उसको एक सेनापतिके पदपर नियत किया। अमर पराक्रमी और रणदक्ष पुरुष था। कुछ ही दिनके भीतर बादशाह उसपर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसको तीन सहस्रके मनसब पदपर आरूढ़ कर 'राव' की उपाधि दे[2] नागौरको जिला उसके अधीन कर दिया। इन सब

---

(१) अमरसिंहके इस तरह देशनिकालेकी कथा इतिहाससे सिद्ध नहीं है। महाराज गजसिंहने जसवन्तसिंहकी माके कहनेसे अमरसिंहको राजसे अलग रखनेके वास्ते बादशाही नौकर पहले ही करा दिया था। और मरनेसे कुछ पहले लाहोरमें बुलाकर अलग रखा था। उनकी मा, स्त्रियों और सन्तानोंको भी जोधपुरके किलेसे उनकी बादशाहकी दी हुई जागीरमें भिजवा दिया था।

(२) गजसिंहके मरनेपर अमरसिंहको रावकी पदवी और तीन हजारी मनसब मिला था। पहले मनसब कम था।

सन्मानोंको प्राप्त हो राठौर अमरसिंह अत्यंत उग्र स्वभावका हो गया और उसका वह उग्र और प्रचंड स्वभाव ही उसका काल हुआ। जिस उग्रता और प्रचण्डताके कारण वह उत्तराधिकारसे वंचित हुआ था अंतमें उसीसे उसकी अकाल मृत्यु भी हुई। पदोन्नतिको प्राप्त होकर वह अपने कार्यमें अत्यन्त ही असावधान हो उठा। यहांतक कि एक समय व्याघ्र शूकर आदिके शिकारमें प्रवृत्त रहकर राजसभासे एक पक्षतक गैरहाजिर रहा। इस गैरहाजरीके कारण बादशाह शाहजहाँने उसको धमकी दी और जुर्मानेका भय दिखाया। परन्तु तेजस्वी अमर इससे कुछ भी भयभीत न हुआ; वरन् बादशाहके सामने ही धीर और अकंपित कंठसे उसने उत्तर दिया "मैं शिकार करनेको बाहर चला गया था, इसी कारण सभामें न आ सका।" तदनन्तर अपनी तलवार छूकर उसने उसी स्वरसे कहा "आप मुझपर जुर्माना करना चाहते हैं;--करिये, केवल यह तलवार ही मेरा धन है।"

अमरकी इस प्रचण्ड और दुर्विनीत बातोंको सुनकर बादशाह अत्यन्त क्षुभित हुआ और जुर्माना वसूल करनेके निमित्त बखशी सलावतखांको उसके निकट भेजा खजानची नियत समयमें अमरके घरपर गया और उसने कटु वचनोंसे उससे जुर्माना मांगा। उसके ऐसे अयोग्य व्यवहारसे अमर अत्यन्त क्रोधित हुआ और उसको अपने सामनेसे दूर चले जानेको कहा, और जुर्माना देनेसे साफ इनकार किया। कर्मचारीके अपमान होनेसे बादशाहने स्वयं अपना अपमान समझा और उसने तत्काल ही अमरको बुलवा भेजा। अमर उसी समय आमखासमें जा पहुँचा और उसने दूरसे बादशाहके लाल नेत्र और गंभीर मुखमंडलको देखा और उसने देखा कि सलावतखां भी उसके सामने हाथ जोडे खडा है इससे अमरका हृदय क्रोधके आवेगसे थरथराने लगा, उसकी नसर में गर्म खूनके पनाले बहने लगे, उसके रोम रोमसे मानो जलती हुई अग्निशिखाएँ निक-

---

(१) सलावतखां बखशी कहलाता था। बखशीका काम केवल वेतन बांटनेका ही नहीं था परन्तु देखभाल व जांच पडतालका काम भी उसके हाथमें रहता था। हमारे विचारमें बखशीका पद हाजरी लेने और वेतन बांटनेका, बहुत सम्मानित था, और विशेषकर ऐसा जैसा कि उमराका पद था जिसके अधिकृत सिपाहि ऐसे उग्र थे कि यदि उनके सेनाध्यक्षकी मूंछका बाल भी हवासे हिल जाय तो वह बदला लेनेको तैयार थे। इतिहासमें लिखा है कि अमरा अर्थात् अमरसिंह * और सलावतखांमें द्वेष रहता था जिसका प्रयोजन शायद, यही होगा कि सलावतखां अपने कर्तव्यको बादशाहके विश्वासके अनुसार करता था।

(२) यह बात आमखासमें नहीं हुई मारवाडके इतिहास और शाहजहाँकी तवारीखके अनुसार शाहजादे दाराशिकोहकी वेलीमे सावन सुदी ३ संवत् १७०१ को हुई। जहाँ बादशाह कुछ दिन पहले कारणविशेषसे जा रहे थे।

---

* अमरसिंहने बखशीसे परबाहरा बादशाहका मुजरा कर लिया था. जिसपर बखशीने नाराज होकर गिला किया और गंवार कहा--जिससे रोषमें आकर अमरसिंहने बखशीको कटारीसे मारडाला। मूलबात यही थी बाकी कवियोंकी गढन्त है।

लने लगीं। उसने सोचा बादशाहने ही मेरा तिरस्कार किया है, गाली दी है, निकाले जानेका दंड किया है, अतएव बादशाह ही इन सब उपद्रवोंकी जड है। इस भावनाके मनमें निश्चित होते ही वह पञ्चहजारी सप्तहजारी मनसबदारसरदार उमरावोंके बीचमेंसे निकलकर शीघ्रतापूर्वक एक बार ही सम्राट्के पास पहुंच गया; माना कुछ कहैगा। परंतु उसने छलांग मारकर सलावतके ऊपर आक्रमण किया और उसकी छातीमें छुरी मार दी। तदनन्तर तलवार खींचकर उसने बादशाहपर आक्रमण किया परन्तु सौभाग्यवश वह तीव्र तलवार तख्तके पायेपर लगाकर पृथ्वीपर गिर पडी। बादशाह भयसे सिंहासन छोड कर महलके भीतर भाग गया। राजसभामें महा हाहाकार मच-गया। अमरकी संहारमूर्ति देखकर सब भयसे चारों ओरको भागने लगे। उसकी प्रचंड तलवार बिजलीकी समान चारों और चमचमाने लगीं। उसको भले बुरेका विचार न रहा। उसने जिसीको सामने पाया उसीपर आक्रमण किया। इस प्रकारसे उसने पांच उच्चपदाधिकारी मुगल सेनापतियोंको मार डाला। रक्तकी धाराओंसे तमाम सभामें कीच ही कीच हो गई। तो भी उस प्रचंड राठौरेन कल न ली। उसके रोकनेका उपाय न देखे अन्तमें उसके साले अर्जुनगौडने उसको प्रसन्न करनेके बहानेसे उसपर एक शस्त्र प्रहार किया। यद्यपि उस प्रहारसे अमर पृथ्वीपर गिर पडा किन्तु जबतक उसके शरीरमें स्वासा रहा तबतक वह तलवार चलाता रहा, अन्तमें वह उसी लोहूकी शय्यामें अनन्तकालके लिये सो गया।

अमरकी उस शोचनीय और लोहमहर्षण मृत्युका बदला लेनेके निमित्त उसके सरदारोंने अपने जीवन न्यौछावर करनेकी प्रतिज्ञा की, और उन्होंने पीले वस्त्र पहिनकर मुगलों के ऊपर प्रचंड वेगसे आक्रमण किया। चांपावतगोत्रीय वल्लू और कूंपावतगोत्रिय भाऊ नामक दो तेजस्वी राजपूत उस सेनाके सेनापति हुए। देखते २ उन कुछेक राजपूतोंकी प्रचण्ड वीरतासे लालकिले भीतर और एक बीभत्सकाण्डके अभिनयका आरम्भ हुआ। दलके दल युद्धविशारद असंख्य यवनसैनिक आ आकर उस मुट्ठीभर राजपूत सेनाके ऊपर आक्रमण करने लगे। अस्त्रोंकी झनकार और वीरोंके सिंहानादसे सारा आगरा गूंज उठा। देखते २ थोडी देरमें सभी थम गया। असीम मुगलसेनाके निकटसे कुछेक राजपूत सरदारोंने पराजित होकर प्राण त्याग दिये। तदनन्तर अमरकी व्याहता स्त्री बूंदीकी राजकुमारी उस भीषण रंगस्थलमें उपस्थित हो प्राणपतिके मृतक देहको उठा लेगई और एक चिता बनाकर स्वामीके मृतक देहको गोदमें धर उसके साथ सती हो गई।

अमरसिंहके कुछेक विश्वस्त सेवकों और सरदारोंको प्राण छोडे बहुत दिन हो गये, "किन्तु उनकी अप्रतिम राजभक्ति, आत्मोत्सर्ग और वीरताका प्रकाशित चित्र आज भी आगरेके खम्भोंमें वर्त्तमानहै। कालके विशाल ग्रन्थसे उसके महत् चरित्रोंका जीवित

(१) अमरसिंहके सरदारोंने[1] अपने डेरेसे अर्जुन गौडके डेरेपर बदलालेनेको जाना चाहा था। उनके रोकनेको बादशाहकी फौज आई थी, उससे उनकी लडाई हुई।

चित्र कोई भी न हटा सका।" वह बुखारानामक जिस सिंहाद्वारसे लालकिलेके भीतर गये थे वह ईटोंसे बंद कर दिया गया और वह उसी दिनसे "अमरसिंह-फाटक" के नामसे प्रसिद्ध हुआ। उस दिनसे वह द्वार बहुत दिनोंतक बन्द रहा था। अन्तमें जार्जि स्टील नामक एक अंग्रेजने सन् १८०९ में उसे खोला।

---

(१) ऐसे चरित्रोंका लिखना, पश्चिमीय राजनीतिसे मिलान करनेके लिये बहुत उपयोगी होगा। और इसलिये भी कि जब कभी कोई अधिकृत राजा भारतकी वर्तमान महाशान्ति बृटिश गवर्नमेण्टके साथ करें, उनको किसप्रकार उसके साथ सलूक करना चाहिये, जैसी कि अमराने अपने प्रभुकी आज्ञाका उल्लंघन किया।इस स्वतंत्र आज्ञा उलंघनेवालोंको राजपूत जातिसे एक उपदेश मिलता है, क्योंकि राजपूत किसी शासकके द्वेषको चिरस्थाई नहीं रखते थे, और एक कडोके बिगड जानेसे कुल जंजीरको नहीं बिगाडते थे, अर्थात् यदि वंशमें किसी एक मनुष्यसे द्वेष ही जाय तो सारे वंशसे द्वेष नहीं रखते थे। शाहजहाने उसके पुत्रसे उसका बदला नहीं लिया, परन्तु उसके पुत्रको नागौरकी गद्दीपर बिठलाया। इसका नाम रायसिंह था, और फिर यह जागीर उसके वंशपरम्परामें बहुत समयतक रही, अर्थात् हठी * सिंह, उसका बेटा अनूपसिंह उसका बेटा इन्द्रसिंह, उसका बेटा महकमसिंह इनके पास रही। इसकी पीढीमें अर्थात् जब इन्द्रसिंहको निकालकर राठोरोंने नागौरराज्यको राठौर राज्यमें मिला लिया तब निकली। परन्तु हम अभी इन मुगल और राजपूतोंके समान व्यवहार करनेको तैयार नहीं हैं, क्योंकि जबतक अपनी प्रजाके स्नेह और प्रेम पर हमारा पूर्ण विश्वास न हो, हम दयाभाव नहीं रख सकते, इसलिये हमारा बदला तो इन्द्रवज्रके समान शत्रुके कलेजेको विगलित करता है। देखिये बहुतसे सरदार अपनी रियासतोंसे खारिज किये गये, रुहेलोंकी गुप्त चालोंके समयसे भरतपुरके विध्वंसके समयतक हमने पंच बनकर ऐतिहासिक संसारमें सिंहके समान कार्य किये। अब वर्तमान समयमें हमारा राजप्रताप भलीभांति छा गया है। हम दयाभाव दिखा सकते हैं और यदि दुर्भाग्यवश राजपूतानमें इसकी अवश्यकता हो तो हम यह भाव प्रगट कर सकते हैं, क्योंकि वहांपर इसका प्रभाव बहुत पडता है, और आकाशकी ओसके समान वह प्रभाव हमपर फिर लौटेगा; परन्तु यदि हम आगामी खटकेकी चिन्तासे अपने प्रबंधको ठीक नहीं रक्खेंगे तो एक दिन हमको भी उसी अवस्थामें फंसना पडेगा। हमारा प्रबन्ध हमारी प्रजाको प्रिय नहीं है, जहां कि अल्प समय रहनेवाले पोलिटिकल एजेण्टों (रजवाडोंपर जो अंग्रेजोंकी तरफसे निरीक्षक रहते हैं उनको पोलिटिकल एजेण्ट कहते हैं) की उद्दण्डता एक ऐसे विवाद और क्लेशको उत्पादक हो सकती है। जो सैकडों वर्षोंकी जमी हुई रियासतको एकदम उखाड दे।

२ इसके विषयमें कप्तान स्टील साहबने टाड महोदयसे कहा था कि जब वह अमरसिंहनामक फाटक खुलवाते थे तब नगरवालोंने उनको रोककर कहा " आप इसको न खुलवाइये, इसमें एक बडा भारी अजगर इसका रक्षक बनकर रहता है। फाटक खोलनेसे निश्चय ही आपको विपदमें पडना होगा।" कप्तान साहबने इसको उन सब मनुष्यकी भूल समझकर उस बातपर ध्यान न दिया। फाटक तुडवाते२ थोडासा रहगया कि उसी समय एक बडा भारी सर्प उसके भीतरसे बाहरको निकला और उसने स्टील साहबपर आक्रमण किया। साहब बडी मुश्किलसे उसके काटनेसे छुटकारा पाकर भागे और दूर जा खडे हुए।

---

* हठीसिंह और अनूपसिंह तो रायसिंहके भाई थे और इन्द्रसिंह रायसिंहका बेटा था।

छठा अध्याय ६.

राजा यशवन्तका राज्याभिषेक; उसके द्वारा सब प्रकारके शास्त्रोंकी उन्नतिविधान; उसकी माता मेवाडकी राजकुमारी; गोडवाँनामें उसकी प्रथम राजसेवा; शाहजहांसे औरंगज़ेबका विद्रोह; उसके दमनार्थ सेनाका सजाना और राजा यशवन्तको समस्त सेनाका सेनापति करना; फ़तेहाबादका युद्ध; यशवन्तका पीछेको लौटना; रावरत्नकी वीरता; आगराकी ओर औरंगज़ेबका आना; आजवका युद्ध; राजपूतोंका हारना; शाहजहांका तख़्तसे उतारा जाना; औरंगजेबका बादशाह होना; यशवन्तको क्षमाकर पास बुलाना; शूजाका प्रतिपक्ष अवलम्बन करनेके निमित्त उसको आज्ञा देना; खजवाका युद्ध; यशवन्तका आचरण; औरंगज़ेबको विपत्तिमें डालकर उसका डेरा लूटना; दाराके साथ मित्रता; दाराकी ख़राबी; औरंगजेबका मारवाडपर चढाई करना; दाराके निकटसे यशवन्तका अलाहिदा करना; राठौरराजको गुज़रातका प्रतिनिधि करना; उसका दक्षिणकी ओर जाना; शिवाजीके साथ यशवन्तका परामर्श; बादशाहके लफटेन्ट शाइस्ताखांका मारा जाना; उसके पदपर यशवन्तका मुकर्रर होना; उसके पदपर आमेर राजका अभिषेक; दक्षिणदेशमें यशवन्तका पुनः अभिषेक; राजकुमार मुअज़्ज़मका विद्रोह; दिलेरखांका युद्ध; उसपर आपत्तिका आना; यशवन्तका दक्षिणसे गुजरातको लौटना, सम्राट्की आज्ञासे काबुलके अफ़गानियोंकी युद्धयात्रा; जोधपुरमें पृथ्वीसिंहकी अवस्थिति; उसपर औरंगज़ेबका क्रोध; उसे दरबारमें बुलाकर विषमिला वस्त्र पहिननेको देना; पृथ्वीसिंहकी आकस्मिक मृत्यु; यशवन्तको पुत्रके मारे जानेका समाचार मिलना; पुत्रशोकसे उसकी मृत्यु; राजपूतोंकी प्रकृतिके इतिहास; यशवन्तके चरित्रोंका वर्णन; नाहरखां उसका सिंह और सिरोहीके सुलतानसे युद्ध।

अमरसिंहके निकाले जानेपर यशवंतसिंह मारवाड़की राजगद्दीपर बैठा। उसने एक शिशोदिया राजकुमारीके गर्भसे जन्म ग्रहण किया था। पवित्र शिशोदिया कुलमें ब्याह कर पाने पर राजपूत राजा अपनेको पवित्र और कृतार्थ समझते थे। इस ब्याहसे यदि पुत्र उत्पन्न हो तो वह पुत्र छोटा होनेपर भी बडेके सिवाय राजसिंहासन प्राप्त करता था और यदि कन्या उत्पन्न होती तो वह प्राणोंके चले जानेपर भी उसको मुगलोंके हाथमें न देते थे। इस नियममें कुछ भी हेरफेर नहीं होता था, और यदि होता तो हेरफेर करनेवाला उसके विषमय फलको भोगता। गहलोतवंशीय--राजकुमारीके गर्भसे जन्म लेनेके कारण जो छोटा भाई यशवंत जेठे भाईके हकके राजसिंहासनपर बैठा, इसका कोई भी वर्णन भाटग्रन्थोंमें नहीं देखा जाता। इससे जाना जाता है कि अमरसिंहकी प्रचंड और ढीठ प्रकृति ही उसके देश निकालेका एकमात्र प्रधान कारण है।

भाटकवि कहते हैं कि "यशवंत अपने समयवाले राजाओंमें अद्वितीय था। उसके जगमगाते हुए ऐश्वर्यसे देशकी मूर्खता और अज्ञानता दूर हो गई थी। जहाँपर उसने राज्य किया था वहां हिन्दूशास्त्रकी बहुत बढती हो गई थी। उसीके अनुग्रहसे बहुतसे ग्रन्थ बनाये गये थे।"

जो दक्षिण देश शूरसिंह और गजसिंहका प्रधान रणस्थल था, आज यशवंतने उसको ही अपनी कार्य्यसिद्धि होनेका स्थान समझा। बालकपनसे ही उसके हृदयके भीतर अपनी जातिकी गौरवेच्छा अदृश्य भावसे धीरे २ बढ रही थी। योग्य सहायताके पानेसे ही वह बलवती इच्छा सफल होकर भारतसन्तानकी उन्नतिके मार्गको स्वच्छ कर सकती है। किन्तु वह सहायता सम्राट्की इच्छापर निर्भर है। बादशाह यदि यशवंतके हृदयका यथार्थ भाव समझता और समझकर यदि उसके कहे अनुसार उसे सहायता देता तो फिर मारवाडका इतिहास दूसरी मूर्ति धारण करता। किन्तु वह उस समय स्त्रीका अंचल पकडकर केवल अन्त:पुरमें ही वास करता था और उसके पुत्र प्रतिनिधि हो २ मुगल साम्राज्यके अन्य २ विभागोंमें निवास करते थे। इस कारण शाहजहांने राठौर वीर यशवंतके महाचारित्रोंको विचार कर एकबार भी न देखा। बादशाहने सबसे पहिले उसको गोंडवानेमें भेजा। यह गोंडवाना ही यशवंतकी प्रथम साधनभूमि था। इस स्थानमें और इसके समान और भी दूसरे स्थानोंमें वह औरंगजेबके अधीनस्थ विशाल सेनाके एक अंशका सेनापति हो युद्धकार्यमें लगा रहा था। इस सेनाका बडा अंश बाईस भिन्न २ सामन्त सेनासे युक्त था। यद्यपि वह इन सब युद्धोंमें अपनी स्वाधीनतापूर्वक युद्धकार्य न कर सकता था तो भी जो सब सामंत राजा मुगल बादशाहकी सहायताके निमित्त युद्धभूमिमें आये थे उनमेंसे राठौर राजा और उसकी वशवर्ती सेनाने ही सबसे अधिक वीरता दिखाई थी। इस प्रकारसे राठौर वीर यशवन्तसिंहका शौर्य, वीर्य धीरे २ प्रकाशित होता रहा, इस प्रकार उसने बहुत दिनोंतक नीचकर्मचारीके समान अपने भाग्यकी परीक्षा की। ऐसे ही धीरे २ बहुत दिन कट गये। धीरे २ बादशाहके बढते हुए रोगके साथ ही यशवन्तका भाग्य बढने-लगा। सन् १६५८ई०में जब शाहजहां सांघातिक रोगमें आक्रान्त हुआ तब उसने अपने पुत्र दाराको प्रतिनिधि किया। दाराने राजा यशवन्तसिंहकी बहादुरीका परिचय पाय उसको "पंचहजारी" का खिताब दिया और उसको मालवाप्रदेशका अपना प्रतिनिधि बनाया।

जिस दिनसे बादशाहकी पीडा अत्यन्त सांघातिक कहकर प्रचारित हुई उसी दिनसे उसके पुत्र नानाप्रकारके कूट उपायोंका अवलम्बन कर राजसिंहासनके पानेकी चेष्टा करने लगे। किसीने खुल्लमखुल्ला विद्रोह किया, किसीने अपनी इच्छाको छिपाकर शीघ्रतापूर्वक राजधानीकी ओर पैर बढाया। सिद्धान्त यह कि उस समय राज्यमें एक भयानक झगडा उपस्थित हो गया। इस भयानक झगडेके शांति करनेकी आशा वृद्ध और पीडित बादशाहको केवल राजपूत वीरोंके ही ऊपर निर्भर थी। बीमारीकी सेजपर लेटा हुआ बादशाह जिस ओरको देखता, उसी ओर मानों उसके दुष्ट पुत्रोंकी विकट भौंहें उसको सैकडों विभीषिकायें दिखाने लगीं। जो उसके वीर्यसे उत्पन्न हुए पुत्र उसके बुढापेका

---

(१) लफटिनेण्ट करनल त्रिगकी अनुवाद की हुई तारीख फ़रिस्तामें पाठक इस युद्धके विषयमें यवन इतिहासवेत्ताओंकी सम्मतियोंका वृत्तान्त जान सकते हैं।

अवलम्ब है, जिनके मुखकी ओर देखनेसे वह सैकडों दुःखोंको भूल जाता था, जिनके ऊपर विश्वास कर इसने विचारा था कि हिन्दुस्तानका राज्य सर्वथा निर्विघ्नतासे भोगूंगा, अन्तिम समयमें अत्यन्त आनन्दपूर्वक परलोक यात्रा करूंगा; आज क्या, वही उसकी उस शोचनीय अवस्थामें उसको गद्दीसे उतारनेकी चेष्टा करते हैं ? जिसके अन्नसे वह इतने दिनोंतक प्रतिपालित हुए, जिसके गौरवसे गौरवान्वित हो इतने दिनतक प्रजाकी भक्ति भेंटमें पाई, आज वही पाशवीबुद्धिका अवलम्बन कर परम गुरु पिताका तिरस्कार करनेपर उद्यत हुए हैं ? यद्यपि बादशाहके पुत्रोंने उसके विरुद्ध तलवार उठाई, किन्तु इस बादशाहने जिनकी सहायता चाही थी वह परम विश्वस्त राजपूत उसके दिये हुए विश्वासका निरादर न कर सके । विपद् पडनेपर उसने उन राजपूतोंको बुलाया और उनकी सहायता चाही, इससे क्या वह निश्चिन्त रह सकते हैं ? शीघ्र ही समस्त राजपूत समाजने बादशाहकी रक्षाके निमित्त अपनी २फौज लेकर शाहजादोंके विरुद्ध यात्रा की । उन सब राजपूतोंमेंसे आमेरके राजा जयसिंह शूजाके[१] विरुद्ध और यशवंतसिंह औरंगजेबके[२] विरुद्ध आगेको बढे ।

औरंगजेबके दमन करनेके निमित्त राठौर राज यशवंतसिंह तीस सहस्र राजपूत और मुगलकी सेनाका सेनापति हो आगरेसे बाहर हुआ। उसकी विशाल सेनाके भारसे पृथ्वी हिलने लगी और शेषनाग थरथराने लगे । वह इस बृहत् सेनाके भीषण पराक्रमसहित नर्मदाकी ओर बढा। उज्जैनके लगभग आठ कोस दक्षिणकी ओर वह पहुँचा कि उसी समय समाचार आया कि औरंगजेब भी उसके निकट ही आ पहुँचा है । तब यशवंतने भी आगेको न बढकर वहीं पर ठहर अपने डेरे जमाये। देखते २ विद्रोही दल नर्मदाको पार कर यशवंतके अति निकट आ पहुँचा, किंतु सहसा उससे सामना करनेका साहस न किया । यदि राठौरराज चाहता तो वहींपर उस सेनाको भगा देता; किंतु वह उस समय चुपचाप स्थिर रहा। इससे औरंगजेबकी फौजको मौका मिल गया। इसी मौकेमें उसने अपने भाई मुरादसे मिलकर अपने बलको और भी दृढ कर लिया । इस वृत्तांतको जान बूझकर भी यशवंतने कुछ न कहा, एक बार भी उसके रोकनेका यत्न न किया। अपने बलके मदसे मत्त होकर उसने विचार लिया था कि एक साथ ही विद्रोही भाइयोंके बलको नाश करूंगा, इस कारण उसने उन दोनोंको एक हो जाने दिया किंतु उसका वह अभिप्राय पूर्ण न हुआ।काम पूर्ण होना तो दूर रहा वरन् उससे जो विषमय फल उत्पन्न हुआ उससे उसका सन्मान व गौरव बहुत कुछ घट गया।

---

१ शूजा उस समय बंगालेका सूबेदार था । पिताका अत्यन्त बीमार हुआ सुनकर राजसिंहासनके पानेकी आशासे वह बंगालेसे आ रहा था, कि उसी समय बनारसके निकट दाराके पुत्र सुलेमान शिकोहने उससे युद्ध कर उसको परास्त किया। राजा जयसिंहने सुलेमान शिकोहको वहांपर सहायता दी थी।

(२) औरंगज़ेब उस समय दक्षिणका सूबेदार था वह अत्यन्त कपटी था । अपनी इस दुरभिसंधिको उसने बहुत दिनोंसे अपने कपटी हृदयमें छिपा रक्खा था।

चतुर औरंगजेब भाईके साथ मिलकर चुपचाप ही न रहा, वरन् यशवंतके साथवाली मुगल सेनाके साथ भी यह षड्यंत्र करने लगा। उस चक्रांतका फल शीघ्र ही प्रकाशित हुआ। क्योंकि राठौरराजने जैसे ही विद्रोहियोंके साथ युद्ध आरम्भ करनेकी आज्ञा दी,वैसे ही उसके अधीन मुगल घुडसवार उसको छोडकर औरंगजेबकी ओर चले गये। दुष्टोंकी ऐसी विश्वासघातकतासे तेजस्वी यशवंतसिंह क्षणभरके लिये भी निरुत्साह न हुआ, वरन् उसका उत्साह पहिलेकी अपेक्षा और भी अधिक उभर उठा। यवनगण जब उसको छोडकर चले गये तब केवल ३० सहस्र राजपूत ही उसकी फहराती हुई पताकाके नीचे खडे रह गये। उसको इन समस्त राजपूत वीरोंपर दृढ विश्वास था कि शत्रुसेना चाहैं जितनी बडी क्यों न हो, उसको इन वीरोंके सामने हारना ही पडेगा। उसकी सब सेना आज्ञा पाते ही सिंहके समान गरज उठी, और प्रचंड पहाडी नदीके समान शत्रुसेनाकी ओर बढने लगी। "राजा यशवंतने भयानक शूल हाथमें ले अपने रणतुरंग महबूबके ऊपर चढ बादशाहके दोनों पुत्रोंपर आक्रमण किया। उस भयानक युद्धमें दश हज़ार मुसलमान मारे गये। इन यवनोंके संहार करनेमें सत्रहसौ राठौर इसके अतिरिक्त गहलोत, हाडा, गोड और सामंतोंके कुछेक वीर मारे गये। औरंगजेब और मुराद[1] अति कष्टसे प्राण लेकर भगे, क्योंकि उनकी मृत्यु निकट थी। महबूब और यशवंतसिंह खूनसे भीग गये थे; यशवंतसिंह भूँखसे कातर हुए सिंहके समान देख पडता था; और अपने भागे हुए शिकारको देखता था।

इस भयानक युद्धके सम्बन्धमें[2] जो भाटोंने वर्णन किया है, मुसलमान ऐतिहासिक और वार्नियर द्वारा वर्णन किये हुए वृत्तांतके साथ उसकी बहुत समानता देखी जाती है। यहांतक कि इन्होंने उन्हींके वृत्तांतका समर्थन किया है। वर्नियर स्वयं उस समय युद्धस्थलमें उपस्थित था। वह कहता है कि, यद्यपि दोनों शाहज़ादोंने बहुत सेना और फ़रासीसी गोलन्दाजोंको साथ लेकर बहुतसे घुडसवारों और तोपोंके साथ राजपूतोंके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी, किंतु रात्रिके आते ही उसके समस्त उद्यमोंका अन्त हो गया। उस दिन दोनों ही पक्षवालोंने वह रात्रि युद्धभूमिमें बिताई। यद्यपि तारीख फ़रिस्ताके पहले अनुवादकके लेखसे जो लिखता है कि रातको यशवन्त रणक्षेत्रमें रथपर सवार होकर घूमता रहा हमको कुछ जानकारी नहीं है तो भी यह निश्चय है कि बुद्धिमान् औरंगजेबने दूसरे दिन युद्ध नहीं किया और उसकी जन्मभूमिकी ओर जाती हुई सेनासे छेड़छाड़ भी न की। इस फतेहाबादके युद्धमें राजपूतोंकी ही वीरता अधिक प्रकाशित हुई; इस स्थानपर उनकी पराक्रमाग्नि जिस प्रचंड तेजसे जल उठी थी, उससे विद्रोही औरंगजेब निश्चय ही अत्यन्त भयभीत हुआ था यद्यपि केवल अनुप्रासके

---

(१) कोटा इतिहाससे प्रगट होता है कि राजा कोटा और उसके पांचों भाई इस युद्धमें काम आये।

(२) बर्नियर और खाफ़ीखाँ दोनो ही कहते हैं कि कासिमखां नामका जो मनुष्य यशवंतके अधीन मुगलसेनाका सेनापति होकर गया था,उसकी ही विश्वासघातकतासे यशवंत पराजित हुआ था।

(३) यह युद्ध सन् १६५८ ई० के आखीर मार्चमें हुआ था।

अनुरोधसे भाटकवियोंनें मेवाड और शिवपुरके दो वीरवंश गहलौत और गौड क्षत्रियोंका बारम्बार उल्लेख किया है तो भी निश्चय ही जाना जाता है कि उस भयानक युद्धभूमिमें राजस्थानके प्रांयः समस्त ही वीरवंश वृद्ध शाहजहांके सन्मानकी रक्षाके निमित्त आये थे। इसमें प्रत्येक राजपूतवंशकी एक २ वीरनारीके मांगका सिन्दूर सदैवके लिये उठ गया,-प्रत्येक वीरवंशने स्तम्भस्वरूप एक२ वीरको सदैवके निमित्त खो दिया था। यहांतक कि मुगल इतिहासवेत्ताओंने वर्णन किया है कि कुछ कम पन्द्रह हजार वीरोंने उस दिन रणभूमिमें प्राण छोडे थे। यह युद्ध राजपूतोंकी वीरता और विश्वस्तताका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है। राजपूत विश्वासघातक नहीं हैं, जो उनके विश्वासके ऊपर निर्भर रहता है वे उसको अपने मरणकालतक विपदमें नहीं गिरा सकते। वे अपने ऊपर विश्वास करनेवालेका कभी निरादर नहीं करते। भग्नहृदय वृद्ध शाहजहांने विपदमें पडकर उनके ऊपर विश्वास स्थापन किया,यहांतक कि वह केवल उन्हींके मुखकी ओर देखता रहा। अस्तु वीरहृदय राजपूतोंने मरण कालतक उस सरस विश्वासका अपमान न किया। दुष्ट औरंगजेबने उनकोअपने वशमें करनेके निमित्त कितने लोभ दिखा लाये होनहार आशाके मोहनीयमान चित्र उनके नेत्रोंके सामने दिखाये गये किन्तु वह क्षणभरके निमित्त भी उससे मोहित न हुए, क्षणभरके निमित्त भी उनके हृदयने औरंगजेबके मंगलकी इच्छा न का। उन्होंने अपनी२ प्रतिज्ञा अपनी शक्तिभर पालन की थी। किन्तु विश्वासघातक यवनोंके विषयको विचारते ही मनमें विजातीय घृणा उत्पन्न होती है।वे बादशाहके अन्नसे पले थे, उसी अन्नदाता पिताके समान बादशाहकी आज्ञाको माथेपर चढाय आगरेसे बाहर हुए थे; किन्तु कहते घृणा होती है कि उन्होंने उस आज्ञाका किस प्रकारसे पालन किया?जिस आज्ञाका सब प्रकारसे पालन करेंगे यह कह तलवारको छूकर सौंगध की थी, इस आज्ञाका पालन करना तो दूर रहा वरन् विश्वासघातकताका अवलम्बन करके वे उसके विरुद्ध आचरण करनेमें प्रवृत्त हुए। क्या यही राजभक्ति है? क्या यही पवित्र स्वामि धर्म है कि जिसका पालन करनेके निमित्त राजपूतोंनें अपनी स्वच्छन्दताको भूल अपने जीवनको प्रसन्नतापूर्वक न्योछावर किया? इस फतहाबादके युद्धक्षेत्रमें राजपूतोंने स्वामिधर्मके पालनका जो प्रत्यक्ष चित्र स्थापित किया है,उन्होंने विश्वासका जो योग्य फल दिया है;विजातीय राजाके निमित्त संसारकी और कौन पराधीन जाति इस प्रकार कर सकती है? इसमें एक २ वंश एक बार ही प्रायः नष्ट हो गया था।यहांतक कि एक प्रसिद्ध राजवंशके छः जनोंने तलवार धारण की, उनमेंसे केवल एक जनको छोड पांचने रणभूमिमें प्राण छोडे थे।

---

(१) यह छहों जन बून्दीके राजपुत्र थे। इनमेंसे जिसने अधिक वीरता प्रकाशित की थी उसका नाम छत्रशाल था।राजा छत्रशालने जैसी अद्भुत वीरता प्रकाशित की थी उसका वृत्तान्त बून्दीके इतिहासमें लिखा है। खाफीखाँ और बर्नियर दोनोंका कथन टाडसाहबके कथनसे मिलता है, किन्तु मिस्टर एलोफिने कहा है कि उस वीरवरका नाम रामसिंह था। हम ठीक नहीं कह सकते कि एलीफिनेस्टन साहबका बयान कहांतक भ्रमोत्पादक है। क्योंकि हम देखते हैं कि रामसिंहनामक कोई राजा राजपूत सेनाका सेनापति हो युद्धभूमिमें नहीं गया। रामसिंहनामक एक राजा इस घटनाके प्रायः ५० वर्ष उपरान्त कोटाकी राजगद्दीपर बैठा था। वह जाजवकी लडाईमें औरंगज़ेबके लडके मुअज्ज़मके हाथसे मारा गया था। इसका वृत्तान्त कोटाके इतिहासमें लिखा जायगा।

इस भयानक युद्धमें जिन समस्त राजपूतोंने अतुल वीरता और रणदक्षता दिखाई थी, उनमेंसे रतलामका रतनसिंह ही प्रधान था। उसकी अप्रमेय वीरतापर मोहित होकर सबने ही मुक्त कण्ठसे वारंवार उसकी प्रशंसा की है। उसका वीरत्व वीररसके चाहनेवाले भाटकवियोंके विशेष आदरकी वस्तु है, उन्होंने उसकी अक्षय कीर्तिको "रासारावरत्न" नामक ग्रंथमें लिखा है। वीररत्नने राठौर कुलमें जन्म ग्रहण किया था। वह उदयसिंहका प्रपौत्र था। स्वाधीनताके साथ राठौर कुलकी वीरता रत्नसिंहके द्वारा ही भलीभांतिसे प्रमाणित हुई थी। उसने अपनी असीम वीरता और पराक्रमसे शत्रुसेनाको तहसनहस किया था।

यद्यपि राठौर राजा यशवंतसिंहने युद्धक्षेत्रको परित्याग कर दिया, किन्तु इससे उसका कुछ अपयश न हुआ क्योंकि एक दिनके घोर युद्धके उपरान्त दोनों ही सेनाओंने रणस्थलको छोडा था। यद्यपि दोनों ओरकी हारजीतका कोई लक्षण नहीं देखा जाता तो भी भलीप्रकारसे विचारकर देखनेपर जान पडेगा कि औरंगजेब ही जीता था। यद्यपि उनके दमन करनेको राजपूतोंने बहुतसे यत्न किये थे किन्तु विद्रोही शाहजादोंकी विशाल सेनाके निकट उनकी वीरता विशेष फलदायक न हुई, क्योंकि उनमेंसे बहुत वीर युद्धभूमिमें मारे गये थे। जो बच रहे थे उन्हें लेकर यशवन्तने फिर औरंगजेबपर आक्रमण करना न चाहा। चतुर औरंगजेब भी प्रसन्न हो चुपचाप रहकर आगेको न बढा। जो हो दोनों ही ओरके वीर फिर और कुछ झगडा न कर युद्धभूमिसे चले गये। पहिले ही कह आये हैं कि राजा यशवंत अपनी राजधानीकी ओर लौटा किन्तु वह सहजसे ही जोधपुरमें प्रवेश न कर सका, उसके जानेके मार्गमें एक जनद्वारा एक प्रचंड बाधा उपस्थित हुई थी। वह जन उसकी प्यारी स्त्री ही थी।

राजा यशवंतने शिशोदियाकुलकी एक स्त्रीसे विवाह किया था। उसकी स्त्री जैसे ऊंचे कुलमें उत्पन्न हुई थी, उसी प्रकार ऊंचे गुणों और अलंकारोंसे विभूषित थी। जब उसने फतेहाबादके युद्धका वृत्तान्त सुना कि उसके पतिकी प्रायः समस्त सेना नष्ट हो गई है और वह शत्रुका पराजय न कर रणभूमिसे चला आया है, तब उसके हृदयमें विषम क्रोध और घृणा उत्पन्न हुई। कहां उसे रणमें थके हुए राजाको सांत्वनाके वाक्योंसे धीरज देना चाहिये, परन्तु यह न करके उसने उसी समय किलेके द्वार बंद कर देनेकी आज्ञा दी। इस विचित्र आज्ञाको सुनते ही उसकी सब सहेलियें विस्मित हो गई। उसके लाल नेत्र और गंभीर मुखमंडलको देखकर सभीके हृदयमें विषम भयका संचार हुआ। अत्यन्त क्रोधसे कांपती हुई मनके विकारको न रोककर वह सर्पिणीके समान फुफकार कर कहने लगी "राजपूतकुलमें जन्म ग्रहण करके वीरपूज्य शिशोदिया कुलमें विवाह करके जो मनुष्य प्राण रहते हुए शत्रुको पीठ दिखाता है वह क्या वीर पुरुष है ? नहीं, कभी नहीं, वह कायर है, कायरसे भी अधम है। उस अधम मनुष्यको मैं कभी इस किलेमें प्रवेश न करने दूंगी। उससे कहना कि

मैं ऐसे मनुष्यको अपना स्वामी स्वीकार नहीं कर सकती । क्योंकि शिशोदीय राजाके दामादका मन कभी इस प्रकारका नीच नहीं हो सकता । उसको इस बातका विचार करना चाहिये था, कि ऐसे ऊंचे वंशमें विवाह करनेपर इस वंशके असीम गुणोंका अनुकरण करना होगा । या तो वह युद्धमें जीतता ही, नहीं तो शत्रुके हाथसे प्राणत्याग कर रणस्थल ही में मर जाता; परन्तु उसको हार मानकर प्राण बचा कभी घरको न आना था । " कहते २ रानीके मुखमंडलने और ही मूर्ति धारण की, दोनों आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी; वह पागलनीकी तरह रोने लगी । रोते २ उसने एक बड़ीभारी चिताके बनानेकी आज्ञा दी । अब वह जीवनको धारण न करैगी । अपमानित और कलंकित होकर अपने स्वामीको भी जीवित न रहने देगी, अवश्य ही राजाको मरना पड़ेगा, वह उसका अनुगमन करैगा, उसके साथ मिलकर उस चितानलमें जीवन त्याग करेगी । क्षणभरके भीतर वह शोकसे उन्मादिनी हुई मूर्ति भी बदल गई । उसके स्थानमें और भी भयानक मूर्ति दिखाई दी । वह स्वामीको सैकडों धिक्कार देने लगी । इसी प्रकार ऐसी अवस्थामें उसने आठ नौ दिन बिताये । अन्तमें उसकी माताने उसके पास आकर उसे नानाप्रकारसे समझाया और कहा कि राजा थकावट दूर करके ही फिर युद्धभूमिमें जायँगे और औरंगजेबको हराकर फिर नष्ट हुए गौरवको प्राप्त करेंगे।

यह वृत्तान्त सब सत्य है, इसको फरिश्ता और बर्नियर दोनोंने ही मुक्तकंठसे स्वीकार किया है । बर्नियर स्वयं उस समयमें उपस्थित था । उसने देख और सुनकर जो वर्णन किया है उसीका मर्म ऊपर लिखा गया है । जो हो स्त्रीकी कोपाग्निके शान्त होनेपर राजा यशवन्तसिंह रणकी थकावट दूर कर अपने राज्यकार्यमें लगा, इधर औरंगजेबने मालवेके मांडूनगरमें पहुँचकर कईएक दिन आमोद प्रमोदसे बिताये; तदनन्तर जय पानेकी इच्छासे उत्सुक हो शीघ्रतापूर्वक वह राजधानीकी ओर बढ़ा । उसको आगे बढ़ता देखकर वृद्ध शाहजहांका हृदय अत्यन्त थरथरा उठा, उसका राजमुकुट स्खलित हो सहसा पृथ्वीपर गिर पड़ा । उसने फिर परम विश्वस्त राजपूतोंको बुलाया । उसके बुलावेका कोई भी तिरस्कार न कर सका । राजपूतोंके रणतुरंग फिर छलांग मार बड़े जोरसे हिनाहिनाने लगे, राजपूत वीरोंने और एकबार वृद्ध शाहजहांकी सन्मानरक्षाके निमित्त उसके विद्रोही पुत्र औरंगजेबके विरुद्ध तलवार उठाई । आगरेसे पन्द्रह कोस दक्षिणकी ओर बसे हुए जाजव नामक गांवमें राजपूतोंका औरंगजेबसे सामना हुआ ।

---

(१) बर्नियरसाहब कहते हैं कि "इसप्रकारके वृतान्तसे भलीभांति जाना जाता है कि राजस्थानकी स्त्रियां अत्यन्त साहसी और ऊंचे हृदयवाली हैं । " महात्मा टाड साहबने भी बर्नियरके इतिहाससे संकलन कर जो अपने बनाये हुए ग्रन्थमें लिखा है, उसीका अनुवाद दिया है । Bernier's History of the late revolution of the Empire of the mogul. P. 13, ad. 1684.

(२) मूल फरिश्तामें तो अकबरके पीछे मुगल बादशाहोंका इतिहास ही नहीं है और न फरिश्ताका लिखनेवाला जो अकबरका समकालीन था औरंगजेबके समयतक जीता रह सकता था ।

(३) कोई २ इसको सामगढ भी कहते हैं ।

शीघ्र ही उस युद्धका आरम्भ हुआ कि जिससे बुढ़ापेसे दुःखित बादशाहकी कठोर होनहारका निश्चय हुआ; भारतका राजमुकुट उसके मस्तकसे छिन गया, वह तख्त ताऊससे उतारी जाकर दीन हीन शोचनीय अवस्थासे अंधे कारागारमें डाला गया।

वृद्ध शाहजहांके साथ ही साथ उसके प्रियपुत्र दाराका भी अधःपतन हुआ। वह मुगलसाम्राज्यके प्रतिनिधित्व (नायावत) से दूर हो भाग निकला। अनन्तर पितृद्रोही औरंगजेबने पिता भाई और आत्मीय स्वजनोंके आंसुओंकी बूंदोंके साथ सिंहासनपर अधिकार कर अपने हाथसे अपनी उन्नतिके मार्गको साफ करनेकी प्रतिज्ञा की। उसकी दृढ़ प्रतिज्ञा थी कि जो कोई उसके उन्नतिके मार्गमें प्रतिरोधस्वरूप खडा होगा, पिता, भाई यहांतक कि पुत्र होनेपर भी वह उसके हाथसे निकाला जावेगा। सिंहासनपर बैठते ही उसने अपने भाई शुजाको दमन करनेके निमित्त एक बडी भारी सेना सजाई और आमेरके राजकुमार द्वारा क्षमा प्रगट कर राठौरराज यशवन्तको बुला भेजा "आपके सब कसूर माफ किये जावेंगे, अगर आप जल्दीसे आकर शुजाके खिलाफ तलवार उठाओगे।" शाहजादा शुजा उस समय अपना स्वत्व दृढ़ करनेके निमित्त आगरेकी ओर बढ़ रहा था यशवन्तने यह जान पाया। इस उपद्रवको अपनी कार्य-सिद्धिका योग्य अवसर और बदला लेनेका अच्छा समय विचारकर वह औरंगजेबकी आज्ञा पालन करनेमें सम्मत हुआ। और शुजासे अपनी समस्त इच्छा प्रगट की।

शीघ्र ही युद्धकी तैयारी हुई। (प्रयाग) इलाहाबादके १५ कोस उत्तरकी ओर बसे हुए खजुवानामक स्थानमें दोनों एक दूसरेके शत्रु शाहज़ादे अपनी २ सेनाको ले एक दूसरेके सन्मुख हुए। राजा यशवंत अपने राठौर घुडसवारों समेत थोड़ी देर इधर उधर घूमकर सहसा राजकीय सेनाके पीछेकी ओर दौडा, देखा कि शाहजादा उस स्थानकी रक्षा कर रहा है। राठौरराजने अकस्मात् उसकी रक्षित सेनाके ऊपर आक्रमण किया। उसके भीषण प्रहारसे शाहजादेकी वह विशाल सेना छिन्नभिन्न हो गई। तब यशवंत तीव्र वेगसे बादशाहके डेरेके सन्मुख दौडा और उसकी सब सामग्री लूटकर अच्छी २ सामग्रियें बांध २ उसने अपने नगरको भेज दी। परस्पर-के शत्रु दोनों भाइयोंके युद्धसे जो भयानक अग्नि उत्पन्न हुई थी, उससे दोनों ही पतंगोंके समान जल जायं यही यशवंतकी भीतरी इच्छा थी। उस इच्छासिद्धिका विचार करते २ वह एक साथ ही आगरे नगरमें उपस्थित हुआ। उसके आगरा पहुँचने-के बहुत पहले वहां यह अफवाह उडी थी कि औरंगजेब हार गया है। इस अफवाहके सुनते ही औरंगजेबकी सेनाके मनमें विषम भयका संचार हो गया था। इस समय यशवन्तको दलसमेत निकट आया देख उनका यह भय और भी दृढ हो गया और वे सैनिक इतने व्याकुल हो गये कि यदि यशवंत वहां पहुँचते ही उनको आत्म-समर्पण करनेकी आज्ञा देता तो उसकी वह आज्ञा तत्काल ही पाली जाती; और फिर वह शाहजहांको कारागारसे निकालकर औरंगजेबकी उन्नतिके मार्गमें ऐसी बाधा स्थापित कर सकता कि कभी कोई उस बाधाको दूर न कर सकता।

किन्तु वृद्ध शाहजहांके अभाग्यसे उस समय राठौरराजकी ऐसी मति न हुई;इस कारण उसने आगरामें पहुँचते ही तत्काल उसको छोड दिया।

राजा यशवंत जो आगरेमें पहुँचते ही तत्काल उसको छोडकर बाहर निकल पडा उसका भी विशेष कारण है। उसने देखा कि यदि औरंगजेब जीत गया और जीतके गौरवके साथ नगरमें आकर उसने मुझको देखा, तो फिर बडी विपद् आनेकी सम्भावना है। इस कारण नगरके बीचमें बंद रहना किसी प्रकारसे भी उचित नहीं। इसके अतिरिक्त उसका और भी एक गूढ आशय था। राजाने इसके पहिले दाराके साथ परामर्श किया था। दारा ही सिंहासनका योग्य उत्तराधिकारी था, अतएव उसको सिंहासनपर बैठानेके अभिप्रायसे यशवन्तने उसको युद्धभूमिमें आनेकी सलाह दी थी। साधारण यही दोनों विषय माने जा सकते हैं। राजधानीसे बाहर होकर वह औरंगजेबके पीछेकी ओर घूमने लगा। पहिली सम्मतिके अनुसार उसी स्थानपर दाराके आनेकी बात स्थिर हुई थी। वह उत्कंठितचित्तसे बारम्बार दाराके आनेका मार्ग देखने लगा, किन्तु दारा न आया। वह उस समय मारवाडके दक्षिण ओर घूमता हुआ आशावितरणीकी लहरोंकी गिनती कर रहा था। किन्तु उसकी सब आशाएं निष्फल हुई और यशवन्तके समस्त यत्न वृथा हुए। उसने लूटका माल और शाही डेरे इत्यादि सब जोधाके किलेमें बंद कर दिये। दाराने लाचारीसे मेरता आकर मेल किया; क्योंकि शुजाको पराजित कर चतुर औरंगजेब दलसमेत उसके निकट आ उपस्थित हुआ था। अनिश्चयात्मक असिबलकी अपेक्षा वह कौशल और कूट नीतिका अधिक आदर करता था; क्योंकि उसका दृढ निश्चय था कि कार्य प्रायः कौशलसेही सिद्ध होते रहते हैं।इसी निश्चयके कारण उसने यकायक तलवारकी सहायता न लेकर कौशलका ही अवलम्बन किया। मेरता नगरमें पहुंचते ही उसने यशवंतको दूतद्वारा बुला भेजा कि यदि राठौरराज दाराके निकटसे सब सेनाको लौटाकर इस युद्धसे हाथ खींचकर चुपचाप हो जाय तो केवल उसके दोषोंको ही क्षमा न करूंगा वरन् उसको गुजरातका प्रतिनिधि भी बनाऊंगा। औरंगजेबके इस प्रस्तावको यशवंतसिंहने स्वकिार किया और वह राजकुमार मुअज्जमके अधीन अपनी सेनाको ले जाकर महाराष्ट्रसिंह शिवाजीके विरुद्ध युद्धभूमिमें आया।

यद्यपि लोभके वशवर्ती हो अनेक राजपूतोंने योग्य उत्तराधिकारी दाराको छोड औरंगजेबका पक्ष अवलम्बन किया था किन्तु ऐसा होनेसे क्या यशवंत उन नीच मनवाले राजपूतोंके अन्तर्गत है?क्या वह भी चतुर औरंगजेबके लोभोंमें भूलकर दाराको छोडकर चला गया? यद्यपि पाठकोंके मनमें सहसा यह प्रश्न उठ सकता है किन्तु इसके उत्तरमें हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि ऐसे लोभोंसे राजा यशवन्त क्षणभरको भी मोहित न हुआ। तो फिर उसने क्यों दाराका संग छोड दिया, उसका कारण दाराकी अयोग्यता ही है। दारा शाहजहांका योग्य उत्तराधिकारी था, उसका हृदय अतिमहत् और उच्च था; विशेषकर वह भीतरसे राजपूतोंकी भक्ति और

श्रद्धा करता था। उसके उन समस्त महद्गुणोंसे मोहित हो यशवन्त और दूसरे प्रधान राजपूतोंने उसके पक्षका समर्थन किया था। राजा यशवन्त अन्तःकरणसे उसके मंगलकी कामना करता था और अपनी शक्तिभर उसने उसके हितकार्य करनेमें भी कमी न की थी। इसी कारण उसने अनेक समयोंमें अपने आत्मत्यागको भी स्वीकार किया था, यहांतक कि वह सदैवके निमित्त औरंगजेबकी आंखोंका शूल हो गया था। किन्तु उसके समस्त उद्यम और त्याग स्वीकार निष्फल हुए। उसने देखा कि आलसी दारा चतुर और शीघ्रकर्म्मा औरंगजेबके विरुद्ध कभी न जीत सकेगा, इस कारण जान बूझकर उसने विवश हो उसको छोडा। नहीं तो यदि दारा चतुर और कार्यदक्ष होता तो फिर समस्त भारतवर्ष चाहे एक ओर हो जाता परन्तु यशवन्तको उसके पक्षसे कोई पृथक् न कर सकता।

दक्षिणमें पहुंचते ही यशवन्तसिंह महाराष्ट्रवीर शिवाजीके साथ मिलकर कपटजाल रचने लगा। उस कपटजालका फल थोडे ही समयके भीतर फला। थोडे ही दिनोंके बीचमें औरंगजेबका सेनापति शाइस्ताखां शिवाजीके हाथसे मारा गया इसके मारे जाते ही यशवन्त उसके पदपर नियत हो प्रधान सेनापतिके कार्यको करने लगा। इन सब समाचारोंको औरंगजेबने अत्यन्त ही शीघ्र सुना, यशवन्तने जो शिवाजीके साथ मिलकर शाइस्ताखांको मरवाया था उसका भी सत्य समाचार एक विश्वासी दूतसे उसको मिला इससे उसके हृदयके भीतर छिपी हुई विद्वेषकी अग्नि एक बार ही धधक उठी। किन्तु वह देश काल पात्रका विचार कर काम करना जानता था। यशवन्तको इस समय उभारनेसे बहुतसे अनिष्टोंके होनेकी सम्भावना थी, अतएव उसने मनकी आग मनमें ही रखकर राठौरराजसे कुछ न कहा, यहांतक कि उसके नवीन पदोन्नतिके विषयमें लिखकर उसपर अपनी विशेष प्रसन्नता प्रकाश कर भेजी। किन्तु औरंगजेब उस प्रचंड विद्वेषाग्निको अधिक दिनतक न छिपा सका। दो ही वर्षके न बीतते २ उसको उस पदसे हटा उसकी जगहपर अम्बरराज जयसिंहको नियत किया। दक्षिणमें पहुंचते ही थोडे दिनोंके बीचमें राजा जयसिंहने महाराष्ट्रवीर शिवाजीको कौशलजालमें फँसाकर बंदीभावसे राजधानीमें भेजा। जयसिंहने शिवाजीको अभयदान देकर धीरज बँधाया था कि बादशाह भी उसके प्राणोंको कुछ भी बाधा न दे सकेगा। किन्तु शिवाजीके कैद होते ही औरंगजेबके आचरण देख उसके मनमें विषम सन्देह उत्पन्न हो गया। उसने देखा कि निष्ठुर मुगल महाराष्ट्रवीरके प्राणघातकी चेष्टा करता है। तब उस समय राजा जयसिंह अपनी प्रतिज्ञाके पालनेमें तत्पर हुआ। सुखका विषय है कि शिवाजी उसी समयमें स्वयं भागनेका उद्योग कर रहा था। राजा जयसिंह यह जानकर भी अनजान हो गये। वरन् उसके भागनेमें और भी सहायता की। दुष्ट मुगलराजकी इच्छा व्यर्थ हुई; उसने जिस शठताका अवलम्बन कर शिवाजीके मारनेकी चेष्टा की थी, चतुर महाराष्ट्र उस शठताका योग्य प्रतिफल दे उसकी आंखोंमें धूल डाल आप बेखटके वहांसे भाग खडा हुआ। औरंगजेब जान गया कि जयसिंहने जानकर

भी उसको बाधा न दी । इससे वह अमेरराजके ऊपर अत्यन्त विरक्त हुआ और एक बार ही उसने यशवन्तको अपना प्रतिनिधि किया । सुयोग पाकर राजा यशवन्तसिंह अपने कार्यसाधनमें तत्पर हुए और बादशाहके विपरीत मुअज्ज़मके साथ नानाप्रकारके कपटजाल करने लगे । उसकी कार्रवाई देखकर चतुर औरंगजेबके मनमें अनेकों प्रकारके संदेह उत्पन्न हुए। उन सब संदेहोंसे चलायमान होकर उसने राठौरराजको भी पदच्युत कर दिया ।

अनंतर दिलेरखाँ प्रधान सेनापतिके पदपर नियत हो बादशाहकी आज्ञा पालनमें तत्पर हुआ । उच्चपदके लोभसे गर्वित हो उसने औरंगाबादमें प्रवेश किया । जिस दिन वह उस नये बसे हुए नगरमें पहुँचा उसी दिन उसको ऐसे घोर संकटमें फंसना पडा कि यदि गुप्त दूतद्वारा अपनी विपदकी वार्ता सुनते ही वह पीछे न लौट आता तो निश्चय ही उसको वहांपर अपना प्राण देना पडता । किन्तु उस नगरको छोड भागनेपर भी वह संकटसे न छूट सका।राजा यशवंत और मुअज्जम भी प्रचंड दावानलके समान उसके पीछे २ चले । वह प्राणोंके भयसे नर्मदाकी ओर भगा । मुअज्जम और यशवन्त भी शीघ्रतापूर्वक चलकर वहीं पहुँचे । अपने सेनापतिको इस विषम संकटसे बचानेका उपाय न देख औरंगजेबने राठौरराजको उस स्थानसे हटाया और उसको गुजरातका सूबेदार नियत कर शीघ्र ही वहां जानेका फर्मान भेजा। यशवंतसिंह उसकी आज्ञाको न टाल सका;परन्तु अहमदाबादमें पहुँचते ही उसने देखा कि शठ औरंगजेबने उसके साथ शठता कर उसे धोखा दिया है । यशवन्तने समझ लिया कि मैंने अपने ही दोषसे धोखा खाया । यदि सोच समझकर काम करता तो कभी न धोखा खाता । जो हो अपने ठगे जानेके विषयपर विचार करते २ वह संवत् १७२६ सन् १६७० ई० में अपने नगरकी ओर रवाना हुआ और नियत समयमें वहां पहुँचकर अपने बदला लेनेके उपाय ढूँढने लगा ।

दुष्ट निष्ठुर औरंगजेबने पहिले कहे हुए विषयोंमें राठौरराजको धोखा देनेकी चेष्टा की थी और यदि भाटोंकी बातपर विश्वास किया जाय तो भलीभाँतिसे जान पडेगा कि इन सब चेष्टाओंके पूरा करनेमें उसने अति नीच और हिंसक उपायोंका अवलम्बन किया था । उसके विद्वेषका पात्र हो यशवन्तने अनेक समयमें अनेक विपदोंमें पडकर भी अपने विश्वासी और भक्त सामन्तोंकी सहायतासे उन विपदोंसे छुटकारा पाया था और उस दुष्टके कौशलजालको छिन्नभिन्न कर डालता था । किन्तु अन्तमें वह जिस चतुरताके जालमें जडित हुआ उससे फिर छुटकारा न पा सका । अन्तमें "औरंगजेबने विश्वासघातसे अपने अभिप्रायको न पूरा कर सकनेके कारण उसने उसके गलेमें कल्पित बंधुवा संबंधकी फाँस डाल उसको अटकके पास मरनेको भेज दिया ।"

औरंगजेब जान गया था कि राजा यशवन्त उसका परम शत्रु है।जानबूझकर उसकी शत्रुताका बदला देनेके निमित्त उसने नानाप्रकारके घातक उपायोंके करनेमें कसर न की; किन्तु वह सब उपाय इस समय व्यर्थ हो गये । इसलिये इस समय उसने

उसको ऐसे स्थानपर भेजनेकी इच्छा की कि जहांसे यशवन्त सैकडों चेष्टा करने पर भी उसका अनिष्ट न कर सके। मन ही मनमें इस प्रकार स्थिर कर औरंगजेब अवसर ढूँढने लगा। सौभाग्यवश वह अवसर भी आप ही आप आ उपस्थित हुआ । उसी समय दुष्ट अफगानोंने विद्रोही हो काबुल राज्यमें घोर उत्पात उत्पन्न कर दिया। औरंगजेबने इस उत्पातके होनेसे अत्यन्त प्रसन्न हो राजा यशवन्तको बडे मान सन्मानसे उस उत्पातके दबानेको काबुलकी सीमापर भेजा। राजा यशवंत उसके मान सन्मान और बडाईकी बातोंमें ऐसा आ गया कि उसको बीती बातोंपर विचार न हुआ। अतएव वह दुष्ट अफगानोंको दमन करनेके निमित्त दूर देश जानेको सम्मत हुआ। थोडे ही दिनोंके बीचमें जानेकी सब तैयारी पूरी हुई। उस समय यशवंतने अपने जेठे पुत्र पृथ्वीसिंहके हाथमें राजकार्यका भार दे दी और कुटुम्बियों तथा मारवाडके बडे २ वीरोंको साथ लेकर वह काबुलकी ओर चला। हाय! उस ही महायात्रासे फिर वह अपने देशको न लौट सका।

मारवाडके भाटग्रन्थमें लिखा है कि औरंगजेबने यशवन्तसिंहके उत्तराधिकारीके राजसभामें आनेका फर्मान भेजा। पृथ्वीसिंह उसकी आज्ञाको न टाल सका। उसके सभामें पहुँचनेपर बादशाहने उसको बडे आदर सन्मानसे लिया। नियमित रीतिके अनुसार पृथ्वीसिंह बादशाहके निकट ही आसन ग्रहण करता था। एक दिन वह सभामें पहुँचकर बादशाहको सलाम कर अपने आसनपर बैठने जाता था कि उसी समय औरंगजेबने कुछ हँसकर उसको बुलाया। राठौर राजकुमार उसके समीप जाय हाथ जोड खडा हो गया, तब बादशाहने दृढतापूर्वक उसके हाथ पकड धीरे २ कहा, "राठौर! सुना है कि इन भुजोंमें तुम अपने पिताके समान बल रखते हो, अच्छा इस समय तुम क्या कर सकते हो?" पृथ्वीसिंहने उचित अभिमानके साथ उत्तर दिया "ईश्वर दिल्लीश्वर[1]का कल्याण करे, बादशाह! जब साधारण राजा प्रजाके ऊपर आपका आश्रयरूपी हाथ फैलाते हैं तब उनकी इच्छाएँ पूरी होती हैं, किंतु आज मेरे सौभाग्यवश जब आपने ही स्वयं अपने हाथोंसे इस सेवकके हाथ पकडे हैं तब मुझे ऐसा जान पडता है कि मैं समस्त पृथ्वीको जीत सकूंगा।" बात कहनेके साथ ही साथ प्रचण्ड वीरतासे मानो उसमें नया बल हो आया। उस समय बादशाह कह उठा कि, "देखते हो यह जवान दूसरा कुट्टन[2] है।" इस बातमें जो भीतर कुटिलभाव भरा था उसको पृथ्वीसिंह अबतक न जान सका, अतएव रीतिके अनुसार वह बादशाहके सामने ही उस खिलतको पहिन सलाम कर उस सभासे विदा हुआ।

हाय! वही दिन उसके उस उल्लासमय जीवनका अन्तिम दिन हुआ। राजसभासे बाहर होते ही अपने डेरेमें पहुँचते २ राजकुमार पृथ्वीसिंह अत्यंत व्यथित हो उठा। उसके हृदयमें अत्यंत ऐंठन होने लगी। इस दुःखसे पीडित होकर वह क्षणभर भी स्थिर न रह सका। उसका सम्पूर्ण मस्तक कांपने लगा और वह हाथ पैर फटफटाने लगा

(१) कवियोंने मुसल्मान बादशाहोंको अश्वपतीके नामसे भी पुकारा है।

(२) यशवन्तको औरंगजेब इसी नामसे पुकारता था।

धीरे २.ˈउसके सब अंग निस्तब्ध और निस्तेज हो गये। और वह सुंदर स्वर्ण वर्ण मुख-मण्डल सुन्दर चम्पेकीसी मूर्ति मलीन हो गई। यशवंतके हृदयका आनन्द, राठौर कुलकी होनहार आशा भरोसाका लक्ष राज--कुमार पृथ्वीसिंह विश्वासघाती पाखण्डी औरंगजेबकी हिंसकतासे अकालमें ही इस लोकसे चल बसा।

---

(१) मारवाडके इतिहासोंमें पृथ्वीसिंहका इस तरहसे मरना नहीं पाया जाता।

(२) इस प्रकारके उपायोंसे जो शत्रुका नाश किया जाता है, राजपूत उसका बिलक्षण विश्वास करते हैं। राजपूत जातिके इतिहासमें ऐसे अनेकों उदाहरण पाये जाते हैं। उन सबमेंसे गन्नौरकी रानीका वृत्तान्त जो अत्यन्त मनोहर है यहांपर लिखा जाता है। जब गन्नौरका राजा मुसल्मानोंसे हार गया, तब वहांकी रानीने बहुत दिनोंतक मुसल्मानोंके हमलोंको रोका किन्तु उसका सेनाबल धीरे २ नाश होता गया इस कारण गन्नौरका एक २ किला शत्रुओंके हाथमें पडने लगा। परन्तु तौ भी राजपूत कुलकमल वीरनारीने मुसल्मानोंको आत्मसमर्पण न किया। धीरे २ उसके सब किले छिन गये; अन्तमें अपनी आत्मरक्षाका कोई उपाय न देख वह अंतिम आश्रयस्वरूप नर्मदाके किनारे बने हुए एक दूसरे किलेमें भाग गई; किन्तु दुष्ट मुसलमानोंने वहां भी उसका पीछा किया। वह वीरांगना नावसे उतरकर नर्मदाके किनारे आ रही थी कि उसी समय मुसल्मानोंकी सेनाने आकर उसपर आक्रमण किया। वह किसी प्रकारसे किलेमें तो प्रवेश कर पाई किन्तु किलेके द्वारके बंद होने २ शत्रुसेना भी किलेके भीतर घुस गई और बचे बचाये राजपूतोंको मार डाला। गन्नौरकी रानी जैसी वीर थी वैसी ही स्वरूपवान् भी थी। उस समय दक्षिण देशमें उसके समान स्वरूपवान् कोई भी स्त्री न थी। किन्तु यह असाधारण सुन्दरता ही उसका काल हुई। इसी रूपके लालचसे खिंचकर उसको अपना लेनेके अभिप्रायसे यवनराजने उसके राज्यपर हमला किया था। गन्नौरराज्यको जीतकर यवनराजने दूतद्वारा वीरनारीको कहला भेजा कि "प्यारी! तुम्हारा राज्य तुम्हींको लौटा दूंगा, तुम मेरे हृदयराज्यकी मालकिनी हो, मुझसे अपना विवाह करो। मैं तुम्हारा दास होकर रहूंगा।" इस पत्रके पढते ही वीरनारीका समस्त शरीर क्रोधाग्निसे जल उठा; किन्तु वह क्या करे! यवनराज उस समय महलके नीचे उत्तर पानेकी आशासे बैठा हुआ था। दूसरा उपाय न देखकर वीरनारीने कामविमोहित यवनराजके प्रस्तावको स्वीकार किया और कहला भेजा कि "मुझको दो घण्टेका समय देना होगा, मै विवाहयोग्य सब वस्त्र आभूषण तैयार कर लूं, तब फिर तुम्हारे पास प्रस्तुत हो सकती हूं।"

दो घंटा बीत गये। गन्नौरकी रानी विवाहके योग्य सुन्दर सामग्रियोंसे सुसज्जित हो अपने गोल महलमें जा बैठी। उसने यवनराजके पास भी व्याहके वस्त्र भेजे अस्तु वह यवन सरदार उन्हीं वस्त्रोंसे सुसज्जित होकर मनमोहिनी रानीके सामने जा पहुंचा। वीरनारीको देखते ही उसे ऐसा भ्रम हुआ कि मानो वह विद्याधरी है। दोनोंमें नानाप्रकारकी बातें होने लगीं। यवनराज मोहित हो उस चित्तविनोदिनीके वचनामृतका पान करने लगा। उसके हृदयमें सुखकी अनेकों चिन्ताएं उठने लगीं किन्तु उसके हृदयमें अकस्मात् दारुण यंत्रणा भी उत्पन्न हुई उसका माथा घूमने लगा और चारों ओर अंधकार दिखाई देने लगा। वह उन्मत्तसा होकर अपने शरीरके वस्त्र फेंकने लगा। "सब शरीर जला जाता है" यह कहकर वह चिल्लाने लगा। तब उस वीरनारीने सम्बोधन करके कहा, "यवनराज! जान लो कि अब तुम्हारा अन्तिम काल आ पहुंचा, आज मेरा विवाह और काल एक साथ ही होगा,—

कुमार पृथ्वीसिंह यशवंतकी आंखोंकी पुतली और बुढ़ापेकी लकडी था। वह राठौर कुलका योग्य राजपुत्र, वीरकेशरी योधारावका योग्य वंशधर था। बूढे यशवंतने विचारा था कि अन्तसमयमें उसके हाथमें राठौरकुलका राज्यकार्य दे संसारसे बिदा लूंगा, किंतु अभाग्यके कारण उसकी वह इच्छा पूरी न हुई। पृथ्वीसिंह जवान होते ही दुष्ट औरंगजेबके रोषाग्निमें पतंगेके समान जल गया।

यशवंतका आशा भरोसा नष्ट हो गया। अत्याचारीके प्रचंड अत्याचारोंको सहन करके भी जो हृदय इतने दिनोंतक अटूट था, आज वह इस पुत्रशोकरूप दारुण शैलके प्रहारसे सौ टुकडे हो गया। उसके मनमें यह विचार कभी भी न हुआ था कि पाखण्डी औरंगजेब उससे ऐसा बदला लेगा। तौ भी मनुष्यके अत्याचारोंको सहकर वह जो कुछ दिनों जीवित रह सकता, सो निठुर यमने उसके बचे हुए दोनों पुत्र जगत्सिंह और दलथम्भनको[1] हरण कर उसको उन कई दिन भी न बचने दिया शोक; दुःख दारुण मनोवेदनासे भग्नहृदय राठौरराजने उस सुदूर हिन्दूकुशकी[2] तराईमें संवत् १७३७--१६८१ ई० में परलोकको गमन किया। उसके मरनेके पहिले ही उसकी आशाका दीपक बुझ गया था। उस महा प्रस्थानमें यात्रा करनेके समय वह ऐसे किसी उत्तराधिकारीको न रख गया कि जो उसकी उस शोचनीय मृत्युका बदला लेता और औरंगजेबके प्रायश्चित्तका विधान कर सकता।

जिस वर्ष राजा यशवंतने इस लोकसे गमन किया। महाराष्ट्रीय वीर शिवाजीका भी उसी वर्षमें कई महीनोंके उपरांत परलोकवास हुआ। अतएव औरंगजेबने दोनों भयानक शत्रुओंसे छुटकारा पाया। इन दोनों महावीरोंसे वह साक्षात् यमके समान भय मानता था। इसका विशेष प्रमाण उसके रोजनामचेके देखनेसे पाया जाता है। मेवाडाधिपति वीरवर राणा राजसिंहके जीवनचारित्र लिखनेवालेने राठौरवीरके संबन्धमें

—तेरे अपवित्र ग्राससे स्त्रीके साररत्न सतीत्व धनकी रक्षा करनेका और दूसरा उपाय न देख मैंने तुझे विषके वस्त्र पहननेको दिये हैं।" यह कहते २ वह राजपूतसती दुमंजिले मकानसे फांदकर नीचे खाईके गंभीर जलमें कूद पडी। कामपीडित दुष्ट यवनने भी शीघ्र ही प्राण त्यागन किये।

शत्रुके मारनेकी ऐसी गुप्त रीति यूरोपमें भी बहुत पुराने समयसे प्रचलित थी, हरक्यूलसके लेखमें इसका वर्णन पाया जाता है। वह कि जिसने डिजेनीटाको जहर वा विषसे लिपटी हुई कमीजपर लपेटकर अग्निपर रख दिया। वास्तवमें इस विषका प्रभाव मसामोंमें होता होगा और गरमीकी ऋतुमें जब कि एक पतला कुरता पहना जाता है अधिक हानि होती होगी। यद्यपि यह समझना कठिन है कि इस प्रकार मृत्यु क्यों होती है, परन्तु प्राचीन समयका विश्वास है इससे हमको भी विश्वास करना चाहिये।

(१) यह दलथंभन तो महाराज यशवन्तसिंहके मरे पीछे पैदा हुआ था उनके जीतेजी वह कैसे मर गया।

(२) हिन्दुकुशपहाड तो काबुल और बदखशांके आगे बलखके पास है और महाराज यशवन्तका देहान्त खेबरके घाटेके नीचे जमरोद नाम स्थानमें हुआ था।

कहा है " यशवंत जबतक जीवित रहा, तबतक औरंगजेबका दीर्घ निश्वास एक दिनके लिये भी न थमा।"

राजा यशवंतसिंहने सब समेत ४२ वर्ष राज्य किया था। वीरस्थान राजपूतानामें जिन समस्त स्वदेशप्रेमी महापुरुषोंने जन्म लिया था, जिनके जीवनचरित्र जीवित अक्षरोंमें आज भी प्रत्येक राजपूतके हृदयपटमें लिखे हैं, जिनकी अतिमानुष कीर्त्ति-कलाप आज भी राजस्थानके द्वार२पर भाटोंद्वारा गायी जा रही है, राठौरराज यशवंत-सिंह उन सबके मध्यमें एक ऊंचे आसनको प्राप्त हो सकते हैं। यद्यपि यशवंतकी कार्यकुशलता ऊंची श्रेणीकी थी, किन्तु यदि वह उसके अमित भुजबल साहस और प्रतिष्ठाके समान होती तो वह दुष्ट औरंगजेबके प्रचंड शत्रुओंकी सहायतासे भारत वर्षसे निश्चय ही मुगलराज्यको उखाड देता। उसका जीवन अपूर्व घटनाओंसे परिपूर्ण था। नर्मदाके किनारे जिस दिन वह वृद्ध शाहजहांको रक्षाके निमित्त अपने राठौरवीरोंको ले पितृद्रोही औरंगजेबके विरुद्ध अवतीर्ण हुआ, उसी दिनसे उसके जीवनके अंतिम कालतक घटनाके ऊपर घटनास्रोतने पतित हो उसको दूर दूरान्तरमें विक्षिप्त किया उन स्रोतसमूहोंको कभी वह अपने अमानुषिक शक्तिके प्रभावसे वशमें करता और कभी उनके भीषण बलसे थकित हो तृणके समान तैरने लगता। किन्तु वह क्षण-भरके लिये भी व्याकुल नहीं हुआ। सहस्रों बाधा और विपत्तियें उठकर भी उसको उसकी इच्छासे न हटा सकीं। वह जहांपर जिस प्रकारकी अवस्थामें गिरता वहीं पर ही अपने प्रधान अभिप्रायके साधन करनेकी चेष्टा करता। यद्यपि वह शाहजहाँके सब पुत्रोंमेंसे दाराको अधिक चाहता था; किन्तु ऐसा होनेसे क्या हुआ ?—वह समस्त मुसलमान जातिको हृदयसे घृणा करता था। जो मुसलमान हिन्दूधर्म और हिंन्दू स्वाधी-नताके प्रचण्ड शत्रु थे यशवंत उन्हें भलीप्रकारसे जानता था, इस कारण वह उनसे जन्मभर घृणा करता रहा और उसने अपनी शक्तिभर औरंगजेबके सर्वनाश करनेकी चेष्टा की, किन्तु अभाग्यवश इसकी वह चेष्टा फलवती न हुई। औरंगजेबके नर्मदा युद्धसे लेकर काकेशश पर्वतपर कर्कश पठानोंके युद्धतक उसने बडे २ काम किये।

मुगल सिंहासनके लिये जब जब शाहजहांके पुत्रोंमें झगडा हुआ तब २ चतुर यशवंतने उनमेंसे किसी न किसी एक जनके पक्षका अवलम्बन किया उसके मनमें यह दृढ निश्चय था कि इस प्रकारके घरेलू झगडोंके होनेसे अन्तमें उन सभीका नाश हो जायगा। नर्मदाके युद्धमें यदि वह बलके मदसे मतवाला हो वृथा समय न बिताता तो निश्चय उसका बहुत कुछ श्रम फलीभूत होता। किन्तु इससे भी यश-वन्त निरुत्साह न हुआ। उसके हृदयके पर्त पर्तमें जो प्रवृत्ति मिली थी नर्मदाके किनारे व्यर्थ न होनेपर भी उसका नाश न हुआ, बरन् वही पराजय स्वीकार कर और भी प्रचण्ड हो उठी थी उसकी तीव्रता मानो, और भी दूनी हो उठी थी। उस प्रचंड प्रवृत्तिकी साध पूर्ण करनेके निमित्त वह योग्य अवसर ढूंढने लगा। जब खजवेमें परस्पर-

(१) नर्मदा नहीं, सपरा।

के शत्रु दोनों शाहजादोंने भाग्यकी परीक्षा करनेको एक दूसरेके विरुद्ध तलवार धारण की तभी उस घटनाको राठौरराजने अपने कार्यसिद्धिका योग्य अवसर कहकर आदरपूर्वक उसका सन्मान किया; किन्तु दाराके आलस्यने उसको उस सुयोग्य अवसरसे भी वंचित किया उसका सब कौशलजाल छिन्न भिन्न हो गया। विजयी औरंगजेबने यह सब जान लिया किन्तु वह कुछ न बोला। चतुर औरंगजेबके ऐसे आचरणोंसे वह उसपर संतुष्ट न हुआ, वरन् उसकी घृणा और विद्वेष और भी बढ गया, बदला लेनेकी प्यास अत्यन्त बढ गई। उस बदला लेनेकी प्यासको शान्त करनेके निमित्त वह कोई सुयोग अवसर ढूँढने लगा। औरंगजेबने जिस पदपर उसको अभिषिक्त किया, यशवन्त उस पदको ग्रहण कर अपनी कार्य सिद्धिके यत्नमें तत्पर हुआ। और प्रत्येक कार्यमें अपने स्वतन्त्र विचारकी गन्ध उठाई। क्रमशः उसके सब कार्योंकी आलोचना करनेपर उसके हृदयकी प्रचण्ड प्रवृत्तिका भलीप्रकारसे परिचय पाया जाता है। जिसके साथ लडनेको भेजा गया था उसी शिवाजीसे उसने भेंट की। शिवाजीके साथ मिलकर कपटजाल किया, कारण कि शिवाजी भी मुगलराजका परम शत्रु था, शाइस्ताखांका[1] मारा जाना, दिलेरखांपर आक्रमण और पिताके विरुद्ध मुअज्जमका उभडना, यह एक २ कार्य उसके उस बिकट बदला लेनेकी प्यासका प्रकाश्य उदाहरण हैं।

यशवन्तकी उस गूढ और प्रचण्ड प्रवृत्तिका विषय बादशाह औरंगजेबको भली प्रकार विदित था; उसने जान लिया था कि कठिन बदला लेनेकी प्यास और विद्वेषद्वारा चलायमान हो राजा यशवन्तने उसके साथ समस्त जीवन बुरे आचरण किये हैं। किंतु वह क्या करे ? यह जान बूझकर कि वह केवल अपने अभिप्रायके पूरे होनेके निमित्त उन सबको सहन करता जाता था। उसने सदैव यशवन्तकी विद्वेषाग्निसे दूर रहनेकी चेष्टा की और सावधानीके साथ उसके सब कपटजालको छिन्न भिन्न कर वह प्रकाशमें उसके साथ सदाचरण करता रहा। वह जो यशवन्तका भीतर ही भीतर भय करता था इसीसे उसके सब कार्य्योंमें बिलक्षण रीतिसे रद्दबदल होते रहे। औरंगजेबने उसको ऊंचे२ पदोंमें अभिषिक्त किया. गुजरात, दक्षिण, मालवा, अजमेर और काबुल इन एक एक प्रदेशमें क्रमशः बादशाहने उसको सूबेदार नियत किया, यह पद उसको कहीं स्वतन्त्ररूपसे कहीं सेनाध्यक्ष और कहीं किसी शाहजादेके नीचे दिये गये थे। बादशाहकी यह सब कृपाएँ दूसरेके पक्षमें माननीय हो सकती थीं, किन्तु तेजस्वी राठौर राजाने उन सबको अपने अभिप्राय सिद्धिका प्रधान साधनस्वरूप ग्रहण किया था। उसके इस प्रकारके आचरणोंपर विचार करनेसे सहसा यही मालूम होता है कि वह एक विश्वासघातक जन था। परन्तु यदि उस बादशाहके चरित्रोंपर ध्यान दिया जाय तो साफ मालूम हो जाय कि यशवंत विश्वासघाती नहीं था, जिसने धर्मरक्षामें आत्मसमर्पण कर दिया उसको हम विश्वासघाती कभी नहीं कह सकते। यद्यपि यह बात

---

(१) शाइस्ताखां नहीं मारा गया उसका बेटा मारा गया था। शाइस्ताखां तो इस घटनाके बहुत वर्षों पीछेतक बंगालेमें सूबदार रहा था।

सत्य है कि वह बादशाहके अधीन होकर उसीके विरुद्ध आचरण करता रहा, पग २ में उसने उसके अनिष्टकी चेष्टा की, किन्तु ऐसा होनेपर भी वह विश्वासघातक नहीं हो सकता। बादशाहके चरित्रोंके देखनेसे इस बातकी सत्यता प्राप्त हो सकती है। बादशाह हिन्दूधर्म्मका परम शत्रु और हिन्दूजातिका परम विरोधी था, उसके अपवित्र ग्राससे अपने जातिके गौरव पितृपुरुषोंके सनातनधर्मकी रक्षा करनेके निमित्त ही राजा यशवन्तने इन सब उपायोंका अवलम्बन किया था, यह क्या विश्वास घातकता है? विश्वास घातकता करना किसे कहते हैं? औरंगजेबने विश्वास करके यशवंतको किसी बडे काममें नहीं नियुक्त किया, यद्यपि उसने राठौरराजको बडे २ पदोंपर नियत किया था, और उसको बडे २ सूबोंका सूबेदार किया था; किन्तु यह सब उसने विश्वास करके नहीं किया था। क्रमशः उसके आचरणोंके देखनेसे भलीभांति प्रतीत होता है कि उसने एक दिनके भी निमित्त यशवन्तका विश्वास नहीं किया। वह यशवन्तको भली प्रकार पहिचानता था, और यह भी जानता था कि राठौरराज अवसर पाते ही बिना मेरा अनिष्ट किये न मानेगा; फिर जो उसने उसको ऊंचे २ पदोंपर नियत किया था जो केवल उसको अपने अधीन रखनेके निमित्त; उसके मनमें यही गुप्त इच्छा थी कि समय पाते ही उसको कमलके समान तोड मरोड डालूंगा। इसी इच्छाके पूरी होनेके निमित्त उसने बराबर चेष्टा की; किन्तु यशवन्तकी सावधानीके कारण उसकी वह समस्त चेष्टायें निष्फल हो गई। यह सब सावधानियां विश्वास-घातकता नहीं हैं यह केवल शठके साथ शठताका आचरण करना है।

यशवन्तसिंहका जीवनचरित्र एक असाधारण प्रकारका है और उनकी पूरी जीवनीसे पूरे २ वृत्तान्त प्रगट हो सकते हैं। जिससे उस समयके रहस्यजनक रहन सहन और प्रत्येक प्रणालीका चरित्र चित्रित हो सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि कभी २ यशवन्तसिंह बादशाहके उन सलूकोंसे जो वह उसके पुरुषार्थ देखनेके निमित्त करता था आश्चर्यमें आ जाता था और जब कभी उसके साथी राजकुमार बादशाहके कृपा-पात्र बनना चाहते थे, तो उस समय राजपूतानेके राजकुमारोंमें यशवन्त अग्रणी समझा जाता था। इसी प्रकार इन विवादोंमें दोनोंका इतना समय व्यतीत हो गया जो मनुष्य-जीवनके लिये पूरा होता है। औरंगजेबका भी यह काम कुछ कम प्रशंसाके योग्य नहीं है कि इतने दीर्घ समयतक उसने यशवन्तसिंहके घृणास्पद विचारोंको काममें नहीं लाने दिया, परन्तु इसका प्रयोजन उसका अभिमान था, और एक कारण यह था कि बादशाहके महाबलको वह अपनी राजधानीमें काममें लाये थे और बादशाहने इन राजकुमारोंको सूबेदार बनाकर गुलाम व अधीन कर लिया था, नहीं तो उसके सह-योगी आमेर नरेश जयसिंह, मारवाड़नरेश राना राजसिंह और शिवाजी यह सब मिलकर अपने जातिशत्रु औरंगजेबको तहसनहस कर देते। यदि यशवन्तसिंह उतने दिली सदमोंपर संतोष करता जो उसने दुष्ट औरंगजेबके दिलपर पहुँचाये थे, तो उसको सफलता होती, क्योंकि बेगमानके महलोंमें भी औरंगजेबके आखोंके सामने

यशवन्तकी मूर्ति विराजमान रहती थी; परन्तु उसके पुत्रका प्राणघात और उसके निर-पराध वंशके साथ पशुव्यवहार करनसे प्रगट है कि बादशाहको कितना भय यशवंतसे रहता था। राठौरवीर यशवंतसिंहके मरनेके उपरान्त उसके शोकार्त कुटुम्बियोंको औरंगजेबने जिस प्रकार घोररूपसे दुःखित किया उसका वृत्तान्त और उसके साथकी घटनाओंका वर्णन करनेके पहिले हम परमविश्वस्त राठौरसरदारोंके दो एक वर्णन लिखते हैं। जो सामन्त औरंगजेबके विरुद्ध राजा यशवंतके निमित्त प्रसन्नतापूर्वक सहायता देनेमें तत्पर हुए थे उनमेंसे केवल नाहररावकी[1] जीवनी उन सबके उदाहरण-स्वरूप गृहीत हो सकती है नाहरराव प्रसिद्ध कूम्पावत सम्प्रदायका शिरोमणि था। वही सब राठौर सर्दारोंके बीचमें श्रेष्ठ था। आशोष उसकी आदि भूमिसम्पत्ति थी, उसका आदि नाम मुकुन्ददास था।

नाहरखां नाम तो केवल बादशाहका दिया हुआ था। इसकी योग्यता वीरता और बहादुरीसे यशवन्तके प्राणघातके उपाय निरर्थक हो जाते थे। किस प्रकार उसको यह नाम प्राप्त हुआ था उसका वर्णन नीचे लिखा जाता है। इसके पास एक शाही अहदीकी मारफत बादशाहने एक पैगाम भेजा; इसने उसका उत्तर बडी वीरतासे अपमानजनक शब्दोंमें दिया इस कारण वह निष्ठुर बादशाह उससे अप्रसन्न हुआ और उसके दंड-स्वरूपमें उसको एक प्रचंड व्याघ्रके पिंजरेमें नंगे बदन और विना हथियार लेकर जानेकी आज्ञा दी। इस कठोर आज्ञाके सुनते ही तेजस्वी मुकुन्ददास कुछ भी भयभीत न हुआ बरन हँसते २ उस भीषण बाघके समीप जा पहुँचा; उसने देखा कि वह भयानक बाघ गर्व सहित इधर उधर पैर बदलता हुआ पिंजरेके भीतर फिर रहा है। उसके सामेन पहुँचते ही राठौर सरदारने गर्वसहित उससे सम्बोधन करके कहा, " रे यवनके बाघ ! आ, यशवंतके बाघके सामने हो " मुकुन्ददासके दोनों नेत्रोंसे आगकी लपटें निकल रही थीं। उसकी ऐसी भारी ललकार सुनकर बाघ चौकन्ना हुआ और पूँछ फुलाकर विकराल गर्जन करता हुआ शत्रुकी ओर देखने लगा। अग्निसे जाज्वल्यमान चारो नेत्र परस्पर मिले; थोडे ही देरके उपरान्त बाघ मुख फिराकर मुकुन्ददासके सामनेसे चला गया। व्याघ्रको भागता हुआ देख पराक्रमी राठौरसरदार ऊंच स्वरसे कह उठा " यह देखो, बाघ साहस करके भी मेरे साथ युद्ध न कर सका, रणसे भागे हुए शत्रुपर आक्रमण करना राजपूत धर्म्मके विरुद्ध है। " ऐसी अनोखी घटना देखकर सब देखनेवाले वज्रसे मारे हुए क समान खडे रहे। यहांतक कि औरंगजेबका पाषाणहृदय भी विस्मय रससे पिघल गया। उसी समयसे उसने उसका नाम नाह-रखाँ, (बाघपति) रखकर उसे बहुतसा इनाम दिया और अत्यन्त प्रसन्न होकर पूछा " राठौर ! इस असीम बाहुबलके अधिकारी होनेके निमित्त तुम्हारे कितने पुत्र उत्पन्न हुए ? " नाहरने कुछेक हँसकर उत्तर दिया " बादशाह ! जब आपने मुझको मेरी स्त्री परिवारसे जुदा कर अटकके पार पश्चिमओर भेज दिया, तब मेरे किस प्रकार पुत्र हो सकते हैं ? " तेजस्वी मुकुन्ददासके इस निर्भय वाक्यको

(१) सही नाम नाहरखान है यह कूँपावत सरदार था।

सुनकर सभी चमत्कृत हो गये। बादशाह भी मनमें कुछ क्षुभित हुआ, किंतु उससे कुछ कह न सका। इस प्रकार राठौरवीर मुकुन्ददासको नाहरखाँकी उपाधि प्राप्त हुई थी।

नाहरखाँके इसी प्रकारके निर्भय और तेजोव्यंजक वाक्योंद्वारा एक बार शाहज़ादा उससे अप्रसन्न भी हो गया था। एक समय राजकुमारने तमाशा देखनेके निमित्त नाहरखाँसे कहा "राठौरवीर! मैंने आपकी रणदक्षताका विशेष परिचय पाया है, किन्तु आपकी एक और क्रीडाके देखनेकी मेरी अत्यन्त इच्छा है। आप क्या घोडेको सरपट दौडाते हुए उस दौडते हुए घोडेकी पीठसे एक लम्बी पेडकी डालीको पकड उसमें झूल सकते हो?" ऐसी क्रीडामें बल और फुर्ती दोनों की ही आवश्यकता है। किन्तु ऐसी क्रीडामें बहुतसे अकृतकार्य हो गिरते रहते हैं। अनेक राजपूतोंकी ऐसी क्रीडामें विशेष आसक्ति देखी जाती है। जो हो राजकुमारकी बातके सुनते ही तेजस्वी नाहरने घमंडसहित उत्तर दिया "मैं बन्दर नहीं हूँ, राजपूत हूँ;–राजपूतोंकी जो कुछ क्रीडाएं हैं सब तलवारकी सहायतासे होती हैं; योग्य शत्रु पानेपर उसके साथ तलवारका खेल दिखा सकता हूं" शाहजादेने जो इच्छा की थी वह पूरी न हुई। इससे वह अत्यन्त क्रोधित हुआ किन्तु प्रकाशमें कुछ कह न सका वह मन ही मनमें मुकुन्ददासके सर्वनाशकी इच्छा कर उसको सिरोहीके देवडा राजा सुरतानके[1] विरुद्ध भेजा। वीर नाहरखाँ इससे कुछ भी भयभीत न हुआ वरन् दूने उत्साहके साथ शाहजादेकी आज्ञा पालनमें यत्नवान् हुआ। इस युद्धमें वह राठौरराजकी समस्त सेनाको ले गया था।

मुकुन्दके युद्धकी तैयारी सुनकर सुरतानने युद्धकी आशाको छोड अपने दुर्गम गिरिशिखरमें आश्रय ग्रहण किया। उसने विचारा था कि शत्रु इस दुर्गम स्थलमें प्रवेश कर उसपर आक्रमण नहीं कर सकते। इस आशासे धैर्यवान् हो वह निश्चिन्त मनसे वहां आराम करने लगा। किन्तु राठौरवीर मुकुन्ददासकी प्रचंड विद्वेषाग्निके तेजने उसके रक्षित घरमें भी प्रवेश कर उसको शीघ्र जला डाला। एक दिन रात्रिके समय सुरतान अपने दुर्गमें निश्चिन्त होकर सो रहा था, समस्त किलेमें सन्नाटा छाया हुआ था केवल एक ओर एक पहरेदार दीवारपर खडा हुआ थोडी २ देरमें चिल्ला रहा था। बीच २ में दो चार सियारों और हिंसक प्राणियोंका शब्द सुन पडता था, कहीं झीनी २ हवासे पेडोंके हिलते हुए पत्तोंकी खडखडाहट सुनाई देती थी। मुकुन्दने अपनी सेना लेकर सावधानीके साथ दीवारके ऊपर चढ उस अकेले जागते हुए पहरेदारको मारा और तदनन्तर सुरतानके घरमें जाय उसकी फैली हुई पगडीसे शय्यासमेत उसे बांधकर अपनी सेनाके हाथमें अर्पण किया। जब राठौरसेना सुरतानको बंदी करके ले चली तब मुकुन्दने बडा भारी शब्द किया। उसकी मेघके समान गर्जनासे सब किला गूँज उठा और क्षणभरमें ही समस्त

---

(१) यह बडी असंगत कथा है क्योंकि देवड़ा सुरतान बहुत पहले मरचुका था। नाहरखांके समयमें तो उसका पोता देवड़ा अखैराज, सिरोहीका राव था।

देवडा सेना जाग उठी। जागते ही वह अपने स्वामीपर विपत्ति आई जान सब इकट्ठे हो उसको छुडानेकी चेष्टा करने लगे। किन्तु वीर मुकुन्ददासने बडी भारी गर्जना करके कहा "देवडा सैनिको! शांत हो, शांत हो. वृथा उद्यम कर अपने और अपने प्रभुके जीवनको न खोओ। यदि तुम मेरी बात मानोगे तो सुरतानके अंगमें काँटातक न लगेगा; मैं एक बार केवल राजाके निकटतक ले जाऊँगा और यदि मोहवश मेरे विरुद्ध कार्य करोगे तो इसी क्षण तुम्हारे स्वामीका शिर काट डालूंगा, निश्चय जानना कि इनका जीना मरना मेरी इच्छाके ऊपर निर्भर है। इस समय मैं इनको कैसे निर्विघ्न बंदी करके ले चला हूं यह दिखानेके निमित्त ही मैंने तुम्हें जगाया।" इन तेजोव्यञ्जक बातोंके सुनते ही देवडासैन्यगण मन्त्र और औषधिसे रुके हुए पराक्रमी साँपके समान स्थिर-भावसे खडे रह गये, किसीको भी एक पग आगे बढनेका साहस न हुआ। राठौरवीर मुकुन्द बंदी सुरतानको ले प्रचंडपराक्रमसहित किलेसे बाहर निकला और राजा यशवंतके निकट पहुँच सुरतानको उसके हाथमें अर्पण किया।

राजा यशवन्तने सिरोही राजको बादशाहके यहां ले जानेकी इच्छा प्रकाशकर उसको यह कहकर धीरज दिया कि "आपके गौरव व सन्मानमें कुछ भी फर्क न आने पावेगा। आप केवल एकबार बादशाहसे मुलाकात करें"। देवडाराज इसपर राजी हुआ। इसी अनुसार वह योग्य कर्म्मचारीके साथ राजमहलमें पहुँचा। राजाको राजमहलमें ले जानेके पहिले कर्मचारियोंने उससे कहा "देखो बादशाहको सलाम करना न भूल जाना बिना उन्हें सलाम किये कोई नहीं जा सकता"। यह बात तेजस्वी सुरतानके हृदयमें वज्रके समान लगी। उसने निर्भय मनसे उत्तर दिया "मेरा जीवन बादशाहके हाथ में है किन्तु मेरा सन्मान मेरे ही निकट है; भाग्यमें जो होगा वही होगा, मैं कभी मनुष्यको मस्तक न झुकाऊंगा इस जीवनमें यह कभी नहीं हो सकता"। राजा यशवन्तने प्रतिज्ञा की थी कि वह सुरतानको अपमानित न होने देगा, इस कारण वह कर्म्मचारी उसका सन्मान न नष्ट कर सके। किन्तु यह विचारकर कि बादशाहके निकट माथा झुकाना ही पडेगा, उन्होंने अपने अभिप्रायको यत्नपूर्वक पूरा किया। जिस मार्गसे प्रत्येक आदमी बादशाहसे मिलने जाता था उस मार्गसे न लेजाकर उसे एक अति छोटी खिडकीसे ले गये। वह खिडकी पृथ्वीसे जानूकी बराबर ऊंची थी। कर्मचारियोंके इस गूढ अभिप्रायको न समझकर देवडाराजने उसी खिडकीसे सभामें प्रवेश किया। इससे उसको आगे पैर बढाय फिर मस्तकको निकाल उसमें प्रवेश करना पडा यही उसका यथार्थ अभिवादन कहकर स्वीकार हुआ। उसकी तेजस्विनी आकृतिको देख. तथा वीरोचित व्यवहार, स्वाधीनताकी रक्षाका कठोर उद्यम और यशवन्तकी प्रतिज्ञाका वृत्तान्त स्मरण कर बादशाहने उसको केवल क्षमा ही नहीं किया वरन् उसकी इच्छानुसार जागीर देनेको भी वह सम्मत हुआ। यद्यपि बादशाहने उसपर उदारता प्रकाश की किन्तु उस उदारताके भीतर जो एक गुप्त रहस्य छिपा था उसको देवडाराजने उसी समय जान लिया। वह भलीभांति जान गया कि बादशाहने

उसको अपने अधीन सामन्तराजाओंमें शामिल करनेकी इच्छा की है, इस अभिप्राय के समझते ही तेजस्वी सुरतानने निर्भय होकर कहा " बादशाह ! मेरे अचल गढके समान और क्या भूमि वा रत्न दान कर सकते हो ?-मैं और कुछ नहीं चाहता केवल यही कि आप मेरा राज्य मुझे दे दें। और मैं वहां चला जाऊं ।

तेजस्वी देवडाराजकी इस बातसे बादशाह कुछ भी क्षुभित वा असंतुष्ट न हुआ बरन् उसने प्रसन्नतापूर्वक उसकी बातको स्वीकार किया। उसे आबूके किलेको जानेकी आज्ञा दी। सुरतान अपने अचल गढको लौट आया। उस दिन उस सभामें बैठे हुए उस समस्त राजाओंके सामने उसे जो सन्मान प्राप्त हुआ, उससे वह वंचित न हुआ। उसकी उस तेजस्विता, उस निर्भयता; उस स्वाधीनप्रियताके अमृतमय फलको उसके वंशधर गण आज भी निर्विघ्नतासे भोग करते हैं और अपनेको स्वाधीन समझते हैं।

राठौरवीर नाहरखाँको तेजस्वी सामन्तोंके बीचमें उदाहरणकी भांति ग्रहण किया जा सकता है। यह लोग स्वभावसे ही निर्भय और तेजस्वी होते हैं। राजभक्ति इनके रोम २ में जडी रहती है। स्वदेशके उपकारके निमित्त राठौरकुलकी गौरवगरिमाकी रक्षा करनेके निमित्त यह प्रसन्नतासे अपने प्राणोंको दे सकते हैं। इनके प्राण बलि देने और जाति प्रियताका एक प्रदीप्त उदाहरण आगेके अध्यायमें दिखलावेंगे।

---

(१) आबू और शिरोहीके राजाओंके प्रसिद्ध किलेका नाम अचलगढ है ।

(२) यह कथा निरी गप्पाष्टक है इसका कोई अंश इतिहाससे सिद्ध नहीं है, जिसने इसको गढा है वह इतिहास कुछ नहीं जानता था । सुरतान महाराज यशवन्तसिंहके समयमें क्या उनके बापके समयमें भी जिन्दा नहीं था। फिर नाहरखां उसको कहांसे पकड लाया और बादशाही दर्बार किसीका घर नहीं था कि जिसके दरवाजेमेंसे सुलतान टांग आगे करके निकलता, वहां तो जयपुर जोध. पुरके राजाओंके भी शिर झुका करते थे, सुरतान किस गिनतीमें था जो वहां बुलाया जाता और ऐसे यमदण्डसे जाता। सिरोहीवाले तो हमेशा जयपुर जोधपुरके अधीन रहे हैं। टाडसाहबको ऐसी गप्प-सप्प कथाएं मूर्ख चारण भाटोंकी गढीहुई बहुत पसन्द थीं इसीसे उन्होंने उनको खूब घुमाघुमाकर अपनी किताबमें बडे आनन्दपूर्वक लिखा है और सच झूठका कुछ निर्णय नहीं किया । ऐसी निर्मूल कथाओंका गढन प्रारम्भ पृथ्वीराज रासेसे हुआ है जो आजतक चली आती है । चारण भाटोंकी इन बातोंसे भोलेभाले राजपूत सरकारोंकी खूब बन आई है ।

सप्तम अध्याय ७.

यशवंतकी मृत्युसे उसकी पटरानीके सती होनेका उद्योग करना और सर्दारोंका उसे निवारण करना; राजाके साथ अन्यान्य रानियोंका सती होना; चन्द्रावतीका मंडोरमें सती होना; यशवंत की मृत्युसे सबको खेद; अजितका जन्मग्रहण; यशवंतके परिवार और सामन्तोंका काबुलसे मारवाड़को लौटना; औरंगज़ेबद्वारा उनका मार्गमें रोका जाना; अजितसिंहकृत औरंगजेबकी प्रार्थना; साथवाली स्त्रियों-को मारकर सरदारोंकी आत्मरक्षा; बालक राजपुत्रकी जीवन रक्षा; ईंदागण द्वारा मंडोराधिकार; उनको दूर करना; औरंगजेबका मारवाड़पर आक्रमण करना और लूटकरना; बडे२नगरोंका नाश करना; हिन्दुओंके मंदिर आदिको तोडकर राठौरोंको धर्म छोडनेकी आज्ञा देना; उसके इस प्रस्तावकी अयोक्तिता; जिजियाकर स्थापन; औरंगजबके विरुद्ध राठौर और शिशोदियोंका एक होकर कपटजाल करना; युद्धके उपरान्त मेंडतिया सम्प्रदायकी वीरता; नाडोलमें राजपूतोंका युद्ध; माराजाना; राजपूतोंके विरुद्ध युद्धमें अकबरका अनुमोदन; संधिबंधन; अकबरको बादशाह कहकर राजपूतोंका जाहिर करना; तैव्वरखांकी विश्वासघातकता और मृत्यु; अकबरका भागकर राजपूतोंकी शरणमें जाना; अकबरकी रक्षा करते २ दुर्गादासका दक्षिणमे जाना; सोनगका राठौर सेनाको चलाना; जोधपुरमें युद्ध; सोजतमें युद्ध; विषूचिका और महामारीका होना; औरंगजबको संधिकी प्रार्थना करना; सोनगकी सधिमें अनुमोदन; सोनगकी मृत्यु; औरंगजेबका संधिसंधान; युद्धनिर्वाहका भार आजमको अर्पण करना; मारवाडमें सर्वत्र मुसल्मान सेनाका फैलना; अर्वली पर्वतमे राठौर का नित्रास; स्थान २ पर असंख्य युद्धविग्रह और अगणित प्राणियोंका नाश; राठौरोंके साथ भाटोंका मिलाप; मेडतिया सरदारोंका अन्यायसे मारा जाना; सिवानेका अवरोध; मुसल्मान सेनाका नाश; नूरअली-द्वारा रसानीजातिकी स्त्रियोंका हरण और उसका मारा जाना; सांभरमें यवनसेनाका संहार राजपूतो द्वारा जालौरका रोका जाना।

पुत्रशोककी शोकाग्निमें आत्मजीवनकी आहुति दे, जिस दिन महाराज यशवतसिंह इस लोकसे बिदाली; जिस दिन पापी औरंगजेबका एक कांटा उखड गया, उसी दिनसे भारतका एक उज्ज्वल नक्षत्र अनन्तकाल सागरमें डूब गया। भारतका भाग्य गगनकालके मघजालमें आवृत हो गया और समस्त हिन्दू समाज घोर विषादमें व्याकुल हो गई। यशवन्तकी पटरानी प्राणपतिके शोकसे व्याकुल हो उसके साथ सती होनेको तैयार हुई। शीघ्र ही प्रशस्त चिता सजाई गई। शोकातुर रानीने स्वामीके मृतक देहको ले चितापर बैठनेका उद्योग किया। वह उस समय सात महीनेकी गर्भवती थी,—मारवाडका होनहार उत्तराधिकारी अजित उस समय सीपके भीतर रहे हुए मोतीके समान उसके पवित्र गर्भमें था। उस समय उसका सती होना अयोग्य और पाप विचार कर कूपावत् गोत्रीय ऊदाने उसे सती होनेसे रोकनेकी चेष्टा की। किन्तु सतीने उसके निवेदनको स्वीकार न किया। उसकी दृढ प्रतिज्ञा देख

(१) पटरानी उनके साथमें नहीं थी, दूसरी दो छोटी रानियां जादमजी और नरूकीजी साथमें थीं और दोनों ही गर्भवती थीं।

राठौर सर्दार अत्यन्त शोकातुर हुए। उन्होंने सोचा कि विपुल राठौरकुल आज निर्मूल हुआ चाहता है;अब महाराज यशवंतके वंशकी रक्षा कौन करेगा ? उसके जा कई एक पुत्र हुए थे वे सब अकालमृत्युके मुखमें पतित हो गये; उसका रानीके गर्भमें रहे हुए बालकपर आशा भरोसा रखकर राठौरसर्दार उसके मृत्यु शोकको बहुत कुछ भुला- सके थे; किन्तु इस समय रानी भी उस आशाके निर्मूल करनेको तैयार ह। तब फिर कौन यशवंतके सन्मान व गौरवकी रक्षा करेगा ? कौन राठौरकुलका राज्यकार्य कर दुष्ट औरंगजेबके पापाचरणोंका याेग्य प्रायश्चित्तविधान करेगा ?-यह सब चिन्ताएं शीघ्रता- पूर्वक ऊदा कूंपावत् सर्दारके मनमें उदित हुई। और जब उसने अपने विनयको व्यर्थ देखा तब अन्तमें उसने बलपूर्वक उसको सती हानेसे निवृत किया।

यद्यपि यशवंतकी पटरानी सती न हो सकी किन्तु राजाकी अन्यान्य स्त्रियाँ उसकी मृतदेहके साथ सती हो गईं। इस समयमें उसकी दूसरी रानी चन्द्रावती मंडोर नगरमें रहती थी। प्राणपतिके मरनेका समाचार पाते ही उसने भी राजाकी एक पगडी ले जलती हुई चितामें प्रवेश करके शरीर त्याग किया। जो यशवन्त इतने दिनोंतक अपनी शक्तिभर सनातन हिन्दूधर्म्मकी रक्षा करता आया था, उसको आज मरा हुआ देख समस्त हिन्दूसमाज अत्यन्त शोकसे व्याकुल हो गया। राज्यके छोटे बडे स्त्री पुरुष सभीने हँसी दिल्लगी और भोगविलास छोड शोक करना आरम्भ किया। आज मारवाड गम्भीर शोकान्धकारसे ढका हुआ है। आज यहां सब स्थानोंपर गम्भीर शून्यता और स्थिरता तथा उदासीनता छाई हुई है। यहांके मन्दिरोंमें अब घंटा नहीं बजता, सूर्य्योदय और सन्ध्याकालमें अब घर २ शंख नहा सुनाई दे। मानो समस्त मारवाडमें एक युगान्तर उपस्थित है, राज्यके सब मनुष्य भयभीत और निराश हैं। कोई २ तो भयसे व्याकुल हो आत्मरक्षाके निमित्त मुसल्मान धर्म्मका अवलम्बन करने लगे; किसी २ ब्राह्मणने भी सनातन धर्मको छोडकर मुसल्मानोंके धर्म व नीतिके सीखनेमें चित्त लगाया।

यशवन्तकी विधवा रानीसे यथासमय एक पुत्र उत्पन्न हुआ। सबकी सम्मतिके अनुसार उस नये उत्पन्न हुए पुत्रका नाम अजित रक्खा गया। प्रसवका दुःख जब दूर हुआ और रानीने अपनेको चलने फिरनेमें शक्तिमती समझा, तब राठौर सर्दार उसको, राठौर राजपुत्रको, राजकुमारियोंको तथा राजपरिवारके अन्तर्गतके अन्यान्य मनुष्योंको साथ ले अपने देशकी ओर चले; किन्तु हिंसक औरंगजेबने उनको सुखसे घर न आने दिया, यशवन्तके जीवितकालमें भी बदला ले वह पापी उसकी मृत देहमें खड्गघात करनेपर उद्यत हुआ। उसके एकमात्र वंशधर राजकुमार अजितके छीन लेनेका उसने उद्योग किया जिस समय राठौरसर्दार परिवार समेत दिल्लीमें आये कि उसी समयमें निर्दयी मुगल बादशाहने आज्ञा दी कि राजकुमारको मेरे हवाले कर दो, उसने सामंतोंको नाना प्रकारके लोभ दिखाये,उसने उनसे कहा कि "यदि तुम राजपुत्रका मुझे दे दोगे तो मैं समस्त मारवाड तुमको बांट दूंगा।" औरंगजेबने यह न जाना कि इस प्रकारके लाखों मारवाड

यहांतक कि इन्द्रकी अमरावतीके समान एक२ इन्द्रपुरी भी उनको देनेपर वह प्राण जानेतक अपने राजपुत्रको शत्रुके हाथमें न देंगे। उसकी इस पापकथाके सुनते ही वे सरदार अत्यन्त क्रोध और हिंसासे एकबारगी उन्मत्त हो उठे और अहंकारसहित मेघके समान गंभीर स्वरसे उन्होंने उत्तर दिया "हमारी मातृभूमि हमारी अस्थिमज्जाके साथ मिली हुई और नस २ में जडित है; आज वही अस्थि, मज्जा और नसें उस जन्मभूमि और हमारे राजाकी रक्षा करेंगी।"

रोषसे उन्मत्त हुए सरदार "आमखास" को छोडकर शीघ्रतापूर्वक अपने डेरोंमें आये। उन डेरोंको शीघ्र ही यवनसेनाने घेर लिया, पाखण्डी औरंगजेबकी ऐसी विश्वासघातकतासे राठौरवीर अत्यन्त क्रोधित हुए। किन्तु ऐसे आपत्तिकालमें क्रोधसे अधीर होनेपर सब ही नष्ट होगा; ऐसा विचार कर उन्होंने धैर्य धारण किया और राजपुत्रके जीवनकी रक्षाके निमित्त वे कोई सदुपाय ढूँढने लगे। उन्होंने अपनी तीक्ष्ण बुद्धिसे शीघ्र ही उपाय भी सोच लिया। सर्दारगण राजधानीमें आनेवाले हिन्दुओंको मिष्टान्न भेंटमें देनेके बहानेसे अनेक संदेश और अनेक प्रकारके पकवान चारों ओरको भेजने लगे वह सब पकवान जिस टोकरेमें जाने लगे उनमेंसे एकम राजकुमार अजितको भी गुप्त कर दिया। इस बार राठौरवीर अपनी जातिके सन्मान रक्षाके निमित्त दृढप्रतिज्ञ हुए। नियमित पूजा आदिकी क्रिया समाप्त कर सबोंने दूनी २ अफीम खाई और अपने २ रणतुरङ्गोंपर बैठकर अपनी शक्तिभर राठौर कुलकी गौरवगरिमाकी रक्षा करनेमें वे उद्यत हुए। एक ही समयमें पांच प्रचंड वीर रणछोड गोविन्ददास, रघुपुत्र दारावत, चन्द्रभान, निर्भीक, उदावत भारमल और सुजावत् रघुनाथ दारुण रोष और हिंसासे उन्मत्त हो गम्भीर स्वरसे कह उठे "आओ, वीरो! आओ, हम समरसागरसे पार होवें आओ इस असुर कुलको नाश करो: इसमें यदि प्राण जाते रहें तो हानि नहीं है, क्योंकि मरनेपर हम अप्सराओंके साथ स्वर्गलोकमें सुख भोगेंगे।" उनके इस गंभीर बातके कहते ही भाट कवि सूजा गंभीर स्वरसे उत्साहके साथ उठा "राठौर वीरो! आज आपलोगोंका राजानुग्रह भोग करना सार्थक होगा। आजके समान दिनमें अपने राजा और स्वदेशके गौरव रक्षाके निमित्त तलवार धारण किये हुए देह त्यागकर दलसहित स्वर्गमें जानेके निमित्त आपलोग इतने दिनोंसे जागीरोंको भोग करते आते हैं। आओ, आगे बढो, मैं भी आप लोगोंके साथ चलता हूं, मैंने महाराजकी बन्धुता और प्रभुताके अनुग्रहका भोग किया है; आज उसकी सार्थकताको पूर्ण करूंगा आज मैं पिताके नाम और गौरवकी रक्षा करूंगा और मृत्युको शिरपर बुलाकर निर्भय हो युद्धभूमिमें विचरण करूंगा। आगे होनेवाले कविलोग अमृतमय तानसे हमारे यशका गान करेंगे।" तदनन्तर आशाका पुत्र वीर दुर्गादास क्रोधसे ज्वलित होकर कह उठा "हिन्दुओंके अस्थि मांसका चर्वण कर राक्षस यवनोंकी डाढें अत्यन्त तीक्ष्ण हो गयी हैं, किन्तु यह सब थोड दिनोंके निमित्त हैं। आज हम सब उनको इसका दण्ड देंगे; आज हमारी तीक्ष्ण तलवारसे जो जलती हुई बिजलीकीसी चिनगाँरिया निकलेंगी, उनसे समस्त दिल्ली जल जावेगी;

आज दिल्ली स्थिर होकर हमारी वीरता देखैगी, आज राजपूतोंकी रोषाग्निसे मुसलमानोंकी सेना भस्म हो जावेगी।"

राजपुत्रके जीवनकी रक्षा कर राठौरवीर इस बार अपनी सहगामिनी स्त्रियोंके सन्मान और गौरवकी रक्षा करनेके निमित्त तत्पर हुए। किस प्रकार उनका पवित्र कुलगौरव रक्षा पावैगा, किस प्रकार उनकी प्राणप्यारी स्त्रियां मुसलमानोंके अपवित्र स्पर्शसे रक्षा कर सकेंगी; इसका उपाय ढूँढने लगे। यवनसेना उनके चारों ओर अस्त्र लिये खडी हुई है। उनके बीचसे स्त्रियोंको बेखटके ले जानेका कोई उपाय नहीं है। तब फिर इस समय राठौर स्त्रियोंकी मानरक्षाका केवल एक उपाय, उनके प्राणोंके नाश करनेका है। इस समय भयानक हिंसाके अतिरिक्त राजपूत नारियोंकी पवित्रताकी रक्षाका और कोई उपाय नहीं है। राठौर सर्दार आज उसी भयानक कार्यके करनेमें प्रवृत्त हुए। घरके भीतर एक कमरेमें बहुतसी बारूद और काठ कबाड इकट्ठा किया गया। वीरनारी राजपूत स्त्रियोंने इष्टदेवका नाम लेते २ उस भयानक घरमें प्रवेश किया; घरका द्वार बंद कर दिया गया और घरके एक झरोखेसे बारूदमें अग्नि दे दी गई। सैकडों वज्रके समान शब्द कर बारूदका ढेर जल उठा और क्षणमात्रमें उन कमलके समान स्त्रियोंको भस्म कर दिया। रूप यौवन लावण्य सब ही क्षणभरमें अग्निसे भस्म हो गये।

राठौरवीर एक बार निश्चिन्त हुए; जिनके निमित्त प्राण रो रहे थे; जो आदरकी सामग्री थीं; जिनके सन्मानमें कुछ भी फर्क पडनेसे राजपूतोंके हृदयमें सैकडों वज्रकी सी चोटें लगती थीं, आज उन्हीं सुन्दर ललनाओंने जलती आगमें शरीर भस्म कर दिया। राठौर वंशका एकमात्र उत्तराधिकारी, महाराज यशवंतका वंशधर शिशु अजित भी रक्षा पा गया है तो फिर अब इस समय रणक्षेत्रमें मरनेसे राजपूत वीरोंको क्या चिन्ता है? इस समय सब हा निश्चिन्त होकर मुसलमानोंक सन्मुख भयानक युद्धमें तत्पर हुए। इस प्रकारके लोमहर्षण युद्धका वृत्तान्त जैसा भाटग्रन्थोंमें लिखा हुआ है उसका ही अनुवाद नीचे लिखा जाता है। " यमके समान राठौरगण हाथ में शूल उठाकर शत्रुदलके विरुद्ध दौडे। उसी समय तलवारोंकी झनझनाहट आर ढालोंका चट्चट् शब्द होने लगा। युद्धभूमिमें रुधिरकी धारासे कीच ही कीच हो गयी। दिल्लीके राजमार्गमें दूहडके वंशधरोंने जो युद्ध किया, मुण्डधारी शंकरने स्वयं उस युद्धभूमिमें विचरण कर अपने भयानक मुण्डमालको पूर्ण किया। नौहजार शत्रुसेनाके साथ रत्न

(१) रनवास बारूदसे नहीं उड़ाया गया तलवारसे काटा गया था।

(२) राव दूहड़ मारवाड़का एक प्राचीन अधिपति था। यहांपर वह राठौरकुलके एक प्रधान पुरुषके रूपसे वर्णित हुआ है। अनुप्रास अथवा शब्दलालित्यके अनुरोधसे भाट कवि प्रायः इसी प्रकार अनेक प्रसिद्ध पुरुषोंके नामकी विनाश होनेसे रक्षा करते रहते हैं।

(३) मारवाड़के भाट कवि कहते हैं कि महादेवजीकी नरमुंडमाला अबतक असम्पूर्ण थी, किन्तु इस युद्धमें शत्रुके शिरोंसे गूँथकर उन्होंने उसको पूर्ण कर लिया था।

युद्ध करने लगा; किन्तु उसकी तलवार जय न प्राप्त कर सकी अतएव वह रणभूमिमें मारा गया। रणभूमिमें गिरते ही रम्भा उसको लेकर चली गई। दारावत्वीर दल्लूने आत्म-जीवन उत्सर्ग किया; आज उसने स्वामीके नमकको रणके लोहूसे मिला दिया। चन्द्र-भान अप्सराओंसे घिरकर चन्द्रलोकको गया। भट्टीवीर सौ टुकडे हो सुरतानके पुत्रके निकट शस्त्र शय्यापर अनंत निद्रामें सो रहा, प्रभुपरायण उदावत् वीर कमलके समान लाल रंगका हो यशवंतसे मिलनेके निमित्त स्वर्गमें गया। कविवर शन्द दोनों हाथोंसे दो तलवारें चलाता हुआ सेनाके सामन युद्ध करने लगा, अन्तमें वह भी देह छोडकर चन्द्रलोकमें जा वसा। राजवंश और गोत्रके प्रत्येक वीरोंने तलवार चला २ कर अपने कर्तव्यको पूरा किया, अंन्तमें वीर दुर्गादास दुष्ट वैरियोंका गर्व चूर्ण कर अपने सन्मान और गौरवकी रक्षा करनेमें समर्थ हुआ"।

राठौर कुलकी सन्मान रक्षाके निमित्त यह प्रचण्ड उद्यममय युद्ध संवत् १७३६ के श्रावण कृष्ण ७ को हुआ। वीररसके प्रेमी भाट कवि इस भीषण युद्धको स्पष्ट शब्दोंमें वर्णन कर राठौरवीर सियाजीके पवित्र वंशका असीम गुण गाते हैं। वह दिन राठौर कुलके इतिहासम एक पवित्र दिन कहा गया है। उस पवित्र दिनमें अत्याचारी यवनराजके पैशाचिक अत्याचारोंका बदला लेनेके निमित्त राठौरोंने जो एक प्रचंड उद्यम किया था; उस उद्यमके सफल होनेसे दुष्ट औरंगजेबका सिंहासन चूर्ण हो जाता, तथा भारतका इतिहास नई मूर्ति धारण करता इसमें कुछ भी सन्देह नहीं; परन्तु भारतवासी सदैवसे ही राजभक्त हैं; राजभक्ति इनकी अस्थि मज्जामें, नस नसमें प्रत्येक रक्तके बूँदमें मिली हुई है। विद्रोहिता किसे कहते हैं, उसे यह नहीं जानते न कभी जानना चाहते हैं। किन्तु ऐसा होने पर भी इनका हृदय पत्थरसे नहीं बना है इसी कारण ये अत्याचार सहन नहीं कर सकते। इसी कारण जिसकी यह देवताके समान पूजा और सन्मान करते हैं, उसको हिंसक और

---

(१) भाट कवियोंद्वारा वर्णित संक्षिप्त और सारगर्भित युद्ध विवरणका अनुवाद ही यहां पर प्रकाशित हुआ है। स्वदेश, स्वधर्म अथवा स्वदेशीय राजाओंके सन्मान रक्षाके निमित्त रणक्षेत्रमें जीवन विसर्जन करनेसे वीरगण जो परम पुण्यका संचय और श्रेष्ठ पदकी प्राप्ति करते रहते हैं, उसका स्पष्ट वर्णन इस युद्ध वर्णनकी प्रत्येक पंक्तिमें देखा जाता है। किन्तु यह नई नीति नहीं है। इन भाटग्रन्थोंके रचे जानेके बहुत शताब्दी पहिलेसे आये शास्त्रकारोंने कुहकिनी वर्णनकी सहायता से युद्धमें गिरे हुए वीरोंके जिस पुरस्कारके विषयका उल्लेख किया हैं उसके पाठ करते ही अति निर्जीव मनुष्य भी अपने देशके निमित्त रणक्षेत्रमें प्राण छोडनेको उत्साहित हो उठता हैं।

"जितेन लभ्यते लक्ष्मीर्मृतेनापि सुरांगना। क्षणविध्वंसिनि काये का चिन्ता मरणे रणे?"

इस प्रकारके प्रचंड उत्साहसे जो श्लोक लिखे हुए हैं उनका पाठ करनेसे स्वदेश, स्वधर्म और स्वजातिकी गौरवगरिमाकी रक्षाके निमित्त कौन नहीं प्रसन्नतापूर्वक रणस्थलमें प्राण छोड सकता? क्षणभंगुर मानवदेह धारण कर कौन अनन्त और अक्षय स्वर्गसुखका तिरस्कार कर सकता है। चाहे जो कर सके परंतु वीररसके चाहनेवाले राजपूत कभी ऐसा नहीं कर सकते। यह सब उत्साह बढाने-वाले लोग ही राजपूतोंके रणविलासिताके एक प्रधान उद्बोधक हैं।

निष्ठुर मूर्ति धारण करते देख इनके हृदयमें सहस्र वज्रानल प्रज्वलित हो जाती है, वह उनकी अग्नि उस दुष्ट राजाके हृदयकी ही अग्निसे शान्त होती है। राजपूतोंका धर्म-शास्त्र यही बातें स्पष्ट शब्दोंमें अनुमोदन करता है। किन्तु ऐसा होनेसे क्या इसको विद्रोहिता कहा जा सकता है। जिसकी देवताके समान पूजा की जाय, जिसको रक्षक जानकर जीवन और जीवनकी अपेक्षा प्यारी स्वाधीनता और सन्मानको अर्पण किया जाय, वह यदि पत्थरका हृदय करके पिशाच और पाखण्डकी मूर्ति धारण कर अपने स्वार्थमें तत्पर हो उस आश्रित मनुष्यके उस श्रेष्ठ प्राण मनुष्यके उस अनुग्रह चाहनेवाले-के सर्वनाश करनेकी चेष्टा करे तो उस चेष्टाके रोकनेका उद्यम क्या विद्रोह कहा जा-सकता है,? भासुरक सिंहके पंजेसे निर्बल खरहोंकी रक्षाकी गई थी तो क्या वह विद्रोह था? उन निर्बल खरहोंके साथ श्रेष्ठ प्राणवाले राजभक्त राजपूतोंकी तुलना करनेसे इन दोनोंमें अत्यन्त समानता पाई जाती है। राजपूतोंने समस्त जीवनके निमित्त सुखकी आशाको छोड सगे सम्बन्धी और जन्मभूमिको त्याग औरंगजेबके ऊपर समस्त आशा भरोसेका भार रख उसीके कल्याणके कारण प्राणोंको न्यौछावर करके उन्होंने दूरदेश काबुलको पयान किया था। उनके मनमें दृढ विश्वास था कि मुगल बादशाह उनके असीम आत्मत्यागका उचित पुरस्कार देगा, उनके मंगलकी ओर दृष्टि रक्खैगा। ऐसा ही विश्वास कर उन्होंने दुष्ट मुसलमानोंके बीचमें निर्भयरूपसे प्रवेश किया था और अपने राजपूत रक्तको व्यय करके वे बादशाहके बडे २ कार्य करने लगे थे किन्तु बादशाहने उनके किये हुए उपकारका उन्हें क्या पुरस्कार दिया? उसने इन महोपकारी विश्वस्त राजपूतोंको जो पुरस्कार दिया, उसका विचार करनेसे हृदय सहम उठता है और औरंगजेबको एक हिंसक कहा जा सकता है। औरंगजेबने उनके जेठे राजकुमारको कायरके समान मारकर बूढे यशवन्तके हृदय में तीक्ष्ण शूलका प्रहार किया; उसके विषम आघात्से दूरदेशमें राजाका प्राण भी जाता रहा। परन्तु इससे भी औरंगजेबकी छाती ठंढी न हुई, अन्तमें महात्मा यशवन्तके प्रेतात्माको साधारण जलगंडूष (कुल्ले) से वंचित करनेके निमित्त उसके एक मात्र उत्तराधिकारी बच्चे अजितको भी उसने मारना चाहा। क्या यही राजाका धर्म है? इस प्रकारका नरराक्षस क्या राजा कहलाया जा सकता है? जिस राजाने प्रजाके मुखकी ओर न देखा; जाति वर्ण और धर्म भेदसे जिसने भिन्न दृष्टि रखकर शासन किया वह क्या राजाके नामके योग्य है? हिन्दुस्थान इस प्रकारका राजा कभी नहीं चाहता, भारतवासी ऐसे अयोग्य राजाको अत्याचारी प्रजापीडक जान उसके पापी मस्तकमें भीम वज्रका प्रहार करते हैं और वे इसको विद्रोह नहीं समझते।

राजपुत्र अजितने राक्षस औरंगजेबके हाथसे छुटकारा पाया। सरदारोंने उसको लड्डुओंसे भरे हुए टोकरेके भीतर छुपायकर एक विश्वासी मुसलमानके हाथमें अर्पण किया। वह सत्यपरायण मुसल्मान बडे यत्नपूर्वक राजकुमारको नियत स्थानपर ले गया। इसकी सत्यपरायणता और विश्वासका विचार करनेसे इसके पक्षमें बडी

भाक्ति उत्पन्न होती है । उन्हीं हिन्दू मुसलमानोंके प्रचण्ड युद्धकालमें जब कि हिन्दू-विद्वेषी उस निठुर राजाके राज्यमें थे तब उस समयमें स्वयं मुसलमान हो जिस मनुष्यने एक हिन्दू राजकुमारके जीवनकी रक्षा की, उस मनुष्यका यह काम साधारण नहीं कहा जा सकता । निश्चय ही उसका हृदय बडे २ महत् गुणोंसे भूषित था । दुखःका विषय है कि भाट कवियोंने ऐसे उपकारी बन्धुके नामको प्रकाशिन नहीं किया । जो हो जिस समय वह राजकुमारको लेकर नियत स्थानमें पहुँचा उसके थोडी ही देरके उपरांत वीरवर दुर्गादास भी बचे हुए सरदारोंको साथ ले वहां जा पहुंचा । पराक्रमी दुर्गादास अपने अमित भुजबलसे अकेले असंख्य यवनोंके बीचसे बाहर निकल सका था । उसकी प्रचंड तलवारके भीषण प्रहारसे अनेक यवन सैनिक पृथ्वीपर गिरे थे, बहुतोंने उसकी दूरसे ही कालमूर्त्ति देख भयसे मार्ग छोड दिये थे । दुर्गादासका सब शरीर क्षत विक्षत और रुधिरसे भरा हुआ था । तौ भी वह क्षणभरके निमित्त श्रमित और क्लान्त नहीं हुआ, क्षण भरके निमित्त भी वह इस बडे कार्यके करनेमें विचलित न हुआ । विधाताने उसके इस असीम आत्मत्यागका योग्य फल भी भोगने दिया अर्थात् जिस राजकुमारकी वह विवश अवस्थामें इतने श्रमसे रक्षा कर सका था उसे वह मारवाडकी गद्दीपर भी बिठला सका था । राजकुमार आजित उसके किए हुए उन असीम उपकारोंको जन्मभरतक न भूल सका और यह बडे हर्षका विषय था कि एक ओर तो औरंगजेबने इतना कष्ट दिया, और उसी जातिके एक निर्धनी मुसल्मानसे उसका सम्बन्ध बराबर बना रहा, वह अजितका रक्षक,उसकी युवा अवस्था और उसके परम्पराप्राप्त अधिकारको भोगनेतक जीता रहा । उसने यह जान लिया था कि राजालोग उपकार भूलनेवाले नहीं होते इस कारण वह दरबारमें प्रतिष्ठित हुआ, और काका शब्दके सिवाय अजितने उसको दूसरे शब्दसे नहीं पुकारा और उसका मान बढानेके लिये जो जागीर उसको दी गई वह अबतक उसके वंशधरोंके अधिकारमें है ।

राजकुमारको लेकर वीरवर दुर्गादास कुछेक विश्वासी सरदारोंके साथ अर्बुद पहाडकी तराईमें चला गया और वहां एक एकान्त मंदिरमें आश्रय ले उस राजकुमारका बडे यत्नके साथ लालन पालन करने लगा । उसके उस असीम यत्नसे लालित हो पिताहीन राजकुमार शुक्लपक्षके चन्द्रमाके समान दिन २ परिपुष्ट होन लगा । उसको पाखण्डी औरंगजेबकी विद्वेषा ग्निसे बेखटके रखनेके निमित्त दुर्गादास गुप्त वेषसे वास करने लगा । इस प्रकारसे कुछ समय बीत गया । किन्तु अग्निकी चिनगारी वस्त्रके दामन् में कबतक ढकी रह सकती है । कुछ ही दिनोंके बीचमें राजपूतोंमें यह अफवाह उडी कि यशवंतका एक पुत्र जीवित है और वीरवर दुर्गादास तथा कुछेक राजपूत सर्दार उसकी रक्षा करते हैं । तीव्र दावानलके समान यह अफवाह बहुत शीघ्र राजपूतोंमें फैल गई, इस अफवाहके फैलते ही दलके दल राठौरगण राजकुमारके ढूंढनेको बाहर निकले, सबसे पहिले वह दुर्गादासको ढूंढने लगे और इधर उधर घूमते २ अन्तमें वे आबू पहाडकी

सराईमें जा पहुँचे। दूनाडाका सरदार उस समय गुप्तवेशी राजकुमारको धनी कहकर पुकारा करता था; अतएव उसको पहिचान लेनेमें राठौरोंको कुछ भी दिक्कत न हुई। इस प्रकारसे राठौर अपने राजकुमारको पाकर अत्यन्त आनन्दित हुए और उसको मारवाडकी गद्दीपर बैठानेके निमित्त दृढ एकताके सूत्रमें बँधकर जातीय बल इकट्ठा करने लगे।

वह शान्तिमय आश्रम शीघ्र ही वीरोंकी निवासभूमि हो गया। उस शून्य गुफामें और वृक्षोंकी छायाके नीचे वीर-रसराते राठौरगण भाट और चारण कवियोंद्वारा गाये जाते हुए जातीय गानको सुनकर अत्यन्त उत्साहसे उत्साहित हो राठौर राजकुमारका स्वत्व दृढ रखनेका यत्न करने लगे। इस समय उनको एक प्रचण्ड जातिका आक्रमण रोकनेके निमित्त युद्धखेतमें जाना पडा। अति प्राचीन कालमें ईदा नामक एक प्राचीन राजपूतवंश मरुभूमिमें राज्य करता था। ईदा प्रसिद्ध पडिहार कुलकी एक शाखा है राठौर वीरोंके मारवाडमें जानेके समयसे वे अपने पुराने राज्यसे दूर हो गये थे क्योंकि राठौरवीर चूंडाने मारवाडके बालुकामय क्षेत्रसे इनके वंशवृक्षको जडसे उखाड दिया था। राज्यहीन पडिहारगण उसी समयसे हारे हुए सामन्तोंके समान दीनभावसे समय बिताने लगे थे। किन्तु वे क्षणभरके निमित्त भी राज्यके उद्धार करनेकी आशाको न छोड सके थे इस समय अवसर पाकर वे उस आशाके सफल करनेमें कृतकार्य हुए। ईदा वीरोंकी इच्छा शीघ्र ही पूर्ण हुई। अर्थात् थोडे ही समयके बीचमें प्राचीन मंडोरमें पडिहार कुलकी राज्यध्वजा फहराने लगी।

पडिहार कुलवाले इस विजयसे अत्यन्त उत्साहित हुए, इस विजयके पाते ही रत्नेनामक एक राठौरने जोधपुरके जीतनेकी इच्छा की। जो राठौरवंशी अमरसिंह अपनी चंचलता और प्रचण्ड प्रकृतिके कारण राजसिंहासनसे वंचित हो पिताद्वारा निकाला गया था, और जो बादशाह शाहजहांके मारनेको जाकर स्वयं ही उस सभामें मारा गया था, ऊपर कहा हुआ रत्नै उसीका पुत्र था कहा जाता है कि औरंगजेबने ही

(१) राजस्थान प्रथमखण्ड प्रथमभाग अ० ६ पृ ३८ देखो।

(२) रत्न नाम गलत लिखा है, सही नाम रायसिंह है जो रव अमरसिंहका बेटा और महाराज यसवन्तसिंहका भतीजा था।

(३) उदारहृदय शाहजहाँने अमरसिंहकी ढीठताको क्षमा करके उसके पुत्र रत्नको नागोरका राज्य दे दिया था। यह राज्य उसके कुलमें चार पीढीतक रहा, फिर इन्द्रसिंह राठौर राजाने इसके खान्दानवालोंको वहांसे निकाला। अमरके वंशको नागोरमें फिर बसाकर प्रजावत्सल मुगलसम्राट्ने जिस माहात्म्यका परिचय दिया था, हिन्दुस्तानमे और किसी विजातीय राजासे वैसी उदारता और सुव्यवहार हुआ है या नहीं। टाडसाहबने इस बातको पूर्ण रीतिसे मान लिया है कि यदि भारतवर्षमें वृटिश राज्यको अचल रखनेकी इच्छा हो तो इसी प्रकारकी उदारता और महत्ताका परिचय देना आवश्यक है। इस विषयमे उन्होंने जो कुछ अपने ग्रन्थमें लिखा है उसका यथार्थ अनुवाद यहां दिया जाता है। मुगल क्या वरन महाराष्ट्रलोग भी जिन दृष्टान्तोंको रख गये है-

रत्नको जोधपुर जीतनेके लिये उत्साहित किया था, जो हो रत्नकी चेष्टा फलीभूत न हुई। विश्वासी राठौरसरदार बालक अजितके स्वत्वकी रक्षा करनेके निमित्त उसके साथ युद्धमें प्रवृत्त हुए। उस युद्धमें रत्नकी हार हुई। उसने भागकर नागौरके किलेमें अपने प्राणोंकी रक्षा की। तदनन्तर सरदारोंने ईदा वंशवालोंपर आक्रमण कर उन्हें मंडोरसे दूर भगा दिया। औरंजेबने जिस अभिप्रायसे रत्नको जोधपुरके जीतनेमें उत्साहित किया था वह सफल न हुआ। इसके पहिले उसने गुप्त वेषसे अपने दुरभिप्रायके साधन करनेकी चेष्टा की थी, किन्तु उन सब चेष्टाओंका निष्फल होता हुआ देख इस बार वह स्वयं कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ। एक विशाल सेनाको लेकर उसने

--हमने अबतक उनके अनुकरण करनेका साहस नहीं किया; इसी कारणसे हमारा प्रतिशोध भयंकर वज्रके समान दौडकर शत्रुका हृदय फाड डालता है। रुहेले लोगोंके विरुद्ध जिस दिन घृणित मैत्री की गई। उस दिनसे लेकर तबतक कि जबतक हम लोगोंने भरतपुरके बीच पिछले संहार कार्य्यकी मध्यस्थता करके कहानीमें कहे हुए शेरकी तरह व्यवहार किया था, वहांतक देख जाओ तो ज्ञात होगा कि कितने सरदार अपने २ पितृपुरुषोंकी सम्पत्तिसे वंचित हो गये हैं। हमारी वर्तमान अवस्था ऐसी प्रभुता शालिनी हो गई है कि इस समय हम लोग क्षमा शीलताका परिचय दे सकते हैं। ईश्वर न करे यदि राजपूतानेमें हमको इस सद्वृत्तिकी कार्य्यकारितामें आवश्यकता पडे तो यह बहुतायतसे दी जायगी; कारण कि वहाँ इसके मंगलमय प्रभावका विशेष आदर देखा जाता है, और ऐसा होनेपर यह ओसके बिन्दुके समान फिर हमारे शिरपर आकर पडेगी। परन्तु यदि हम लो ग दिन रात केवल विपत्तिकी शंका करके प्रजाका विश्वास विना किये राजनीतिको चलावेंगे तो एक स- मय यह भयंकर प्रतिशोधस्वरूप हमारे मस्तकपर गिरेगा। हमारी आधुनिक शासनरीति विजित लोगोंके अमंगलसे यदि पूर्ण हो गई है, ऐसी अवस्थामें यदि किसी क्षणकाल स्थाई पुलिटकल एजंटका मिजाज गरम हो जाय, तो उसके द्वारा कदाचित् ऐसा विवाद उत्पन्न हो सकता है कि जिससे एक बहुत दिनोंके राज्यके बिगड जानेकी सम्पूर्ण सम्भावना है। *

---

* इन नोटोंमें इतनी बातें अशुद्ध हैं।

(१) एक तो अमरसिंहके बेटेका नाम रत्न नहीं था। रायसिंह था मारवाडके इतिहास और औरंगजेबके इतिहासमें रत्न नहीं लिखा है।

(२) रायसिंहके कुलमें यह राज चार पीढी नहीं रहा दो ही पीढी मुशकिलसे रहा।

(३) इन्द्रसिंह रायसिंहका बेटा था। इसने किसके खानदानवालोंको निकाला यह कुछ समझमें नहीं आता। असली बात यह है कि महाराज अजितसिंहने इन्द्रसिंह और उसके बेटोंको परा- स्त कर दिया था।

(४) रायसिंहको जोधपुरका राज्य औरंगजेबने उज्जैनकी लडाईके पीछे यशवन्तसिंहसे नाराज होकर दिया था मगर फिर दाराशिकोहके गुजरातमें आकर यशवन्तसिंहसे मेल कर लेनेसे और रायसिंहको तो मौकूफ रक्खा और यशवन्तसिंहको मना लिया। रायसिंह यशवन्तसिंहसे पहले मर गया था, इस- लिये अब औरंगजेबने जोधपुरके राज्यका फरमान इन्द्रसिंहको लिख दिया था, मगर राठौरोंने उसको लडाईमें हरा दिया जिससे औरंगजेब भी नाराज हो गया और इन्द्रसिंहका जोधपुरमें अमल न रह सका। रत्नका नाम रायसिंह या इन्द्रसिंहकी जगह इस पुस्तकमें गलत लिखा है।

मारवाड राज्यपर चढाई की। शीघ्र ही जोधपुर घिर गया,-कोई भी उस आक्रमणको न रोक सका और कोई भी उसके कराल ग्राससे राजधानीका उद्धार न कर सका। जोधपुर औरंगजेबके अधिकारमें आ गया, जोधपुरकी शोभा सौन्दर्य्य आज नाश हो यवनोंके पैरोंसे दलित हुई। आज यमके समान यवन सैनिकोंने नगरके भीतर घुसकर राठौरकुलके समस्त धनरत्नको हर लिया। शीघ्र ही बडे २ तीन नगर मेरता, डीडवाना और रोहत भी जोधपुरकी दशाको प्राप्त हुए।

मारवाडको अपने अधिकारमें करके मुसलमानोंने उसकी दुर्दशाकी सीमा न रक्खी। नगर, गाँव और कसबोंको तोड फोडकर जला डाला। देवमंदिर, स्तंभ आदि गिरा दिये गये, और देवमूर्तियाँ टूट २ कर पाखण्डी यवनोंके पैरोंसे कुचली जाने लगा। किसीने उस ओरको देखातक भी नहीं; और न कोई उन पवित्र मूर्तियोंके उद्धार करनेमें अग्रसर हुआ। जो कई जन हिम्मत कर उस कार्यके करनेमें साहसी हुए, उनमेंसे अधिकोंने मुसलमानोंके हाथोंसे प्राण गँवाए, जो जीवित रहे, दुष्ट यवनोंने उनको जाति भ्रष्ट कर बलपूर्वक मुसलमान बना लिया। मारवाडदेशके घरघरमें अराजकता, प्रजाहत्या और महामारी भीषण मूर्ति धारण कर भ्रमण करन लगी। आज समस्त मारवाड मानो वीभत्स महाश्मशानमें बदल गया;नगरपर नगर, शहरपर शहर,गांव पर गांव जलाये जाने लगे। कोई भस्म हो गया; और कोई पृथ्वीमें मिल गया।कहीं तो धुवाँ और जलती हुई अग्निकी लपटैंमकानोंसेबाहरनिकलनेलगीं,कहीं दोचार मन्दिर टूटे फूटे पडे हैं,और वहींपर उनके ऊपर मसजिदें बनरही हैं,मदमत्त मुसलमान पृथ्वीमें गिरीहुई देवप्रतिमाओंके मस्तकोंपर पिशाचोंके समान पदाघात कर रहेहैं,कहींपर पृथ्वीमें गिरेहुए राजपूत हृदयबिदारक स्वरसे आर्तनाद कर रहे हैं। औरंगजेब अपने इस पाशवी अत्याचारके किये हुए बीभत्स चरित्रको देखते २ प्रसन्नतापूर्वक अपने नगरको लौट आया। उसका हृदय क्षणमात्रको भी न कम्पित हुआ। निश्चय ही उसका हृदय पत्थरके समान कठोर हो गया था, नहीं तो क्या वह इस बीभत्स दृश्यको देखकर क्षणभरको भी कातर न होता? कातर होना तो दूर रहा बरन उसने उस अत्याचारके दुगुने बढानेका संकल्प कर लिया और समस्त हिन्दूप्रजाके ऊपर कठोर जिजिया कर स्थापन कर उसने अपने पैशाचिक संकल्पको पूर्ण किया। इसी दुःखदायी अत्याचारके समयमें वीरकेसरी राणा राजसिंह शिशोदिया राठौरोंका मिलाय अत्याचारियोंके विरुद्ध युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ था; उसी समयमें उसकी कलमसे ऐसे तेजयुक्त असाधारण पत्र लिखे गये थे, कि जिनका अनुवाद इस ग्रन्थके प्रथम खण्डमें लिखा हुआ है[1]।

[2]राजपूतोंके नाश करनेकी आज्ञा पाय सत्तर हजार सेनाके साथ तहव्वरखाँ युद्धक्षेत्रमें आया। इसके उपरान्त औरंगजेब स्वयं अजमेर गया मेरातिया सामन्त दलसमेत

(१) राजस्थान प्रथमखण्ड, अ० २२ पृ० ६०९ देखो।

(२) इस स्थानसे अजितके राज्य प्राप्तिपर्यंत समस्त वृत्तान्त टाडसाहबने भाटग्रन्थसे संग्रह कर उसका अनुवाद लिखा है। यहांपर वह उनका अनुवाद ज्योंका त्यों लिखा गया है।इस प्रकारके अनुवादमें जो मूल ग्रन्थकी सुन्दरता विनष्ट हुई है उसका विदित करना चतुर पाठकोंके लिये व्यर्थ है।

इकट्ठे हो उसका आक्रमण रोकनेके निमित्त पुष्करके सामने अग्रसर हुए । भगवान वराहके पवित्र मंदिरके सामने युद्धका आरम्भ हुआ । वहां वीराग्रगण्य चिरंजीव मेरतीयगणके कराल कृपाणने सहजसेही असुरोंके मस्तक काटे । इसी युद्धस्थलमें संवत् १७३६ के भाद्रमासकी एकादशीको मेरतिया गणोंने प्राण त्याग किये ।

तहव्वरखां धीरे २ आगे बढने लगा। मुरधरके निवासी प्राणोंके भयसे पहाडोंकी ओर भागने लगे। यवन सेनापतिकी गति रोकनेके निमित्त रूपा और कूँपानामक दोनों भाई अपनी फौजको ले गुडानामक स्थानमें आये । किन्तु उनकी इच्छा पूर्ण न हुई पच्चीस जन भाइयोंके साथ वह रणभूमिमें मारे गये । कालमेघ जिस प्रकार जगत्में जल बरषाते हैं, औरंगजेबने उसी प्रकार अपनी म्लेच्छ सेनाको देशके ऊपर चलाया । वह अजय दुर्गमें केवल पांच दिन रहा इसके अनन्तर उसने चित्तौडकी ओर कूँच किया । उसके चित्तौडमें पहुँचते ही चित्तौडकी अत्यन्त शोचनीय अवस्था हो गई, जान पडा कि मानो आकाश टूटकर माथेके ऊपर गिरा है । शिशु राजकुमार अजित राणाद्वारा रक्षित हुआ, और राठौरगण शिशोदिया सेनाको आगे चलाकर युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। मुसल्मानोंके बलको अधिक देखकर उन्होंने राजकुमारको एक गुप्तस्थानमें छिपा रक्खा । दिल्लीपति देहवाडीके समीप आया; इधर कुंभा उग्रसेन और ऊदो आदि राठौरवीर गणोंने उस गिरि मार्गमें खडे हो उसकी प्रचण्ड गतिको रोका । उस गिरिमार्गमें होकर औरंगजेबने जब उदयपुरपर आक्रमण किया, तब आज़म चित्तौडमें था, इसी समय समाचार आया कि दुर्गादासने जालोर राज्यपर आक्रमण किया है । इस समाचारके सुनते ही औरंगजेब अजमेरकी ओर लौटा । जाते समय मुकर्रमखांको यह आज्ञा दे गया कि वह जालोर युद्धमें बिहारी की सहायता करे । किन्तु दुर्गादास युद्धका कर इकट्ठा करते २ जोधपुरमें आया । गर्वसे औरंगजेबके मस्तकने आकाशको स्पर्श किया । उसने प्रण कर लिया कि देशमें केवल एक ही धर्म्म रक्खूंगा, और वह धर्म मुसल्मानधर्म है इस पाशवी प्रतिज्ञाको वह बहुत कुछ पालन कर सका था । राजकुमार अकबर तहव्वरखाँके निकट भेजा गया । लूटना, मारना, जलाना आदि देशमें सर्वत्र फैल गया । देश शून्य महा-श्मशानके समान हो गया, सभी स्थानोंमें एक घोर विभीषिका विजयके अहंकारसे भ्रमण करने लगी । किन्तु क्या होगा ? देवेच्छासे आज भारत सन्तानोंको वह दुःख भोगना पडा है । ईदागणोंने जोधपुरमें अधिकार कर लिया । किन्तु कूंपावत् वीरोंने नंगी तलवार ले खत्तापुरमें उनके सामने हो उनका नाश किया । मुरधरदेशाधिपति और

–महात्मा टाडसाहब कहते हैं, "भाटकवियोंने यह सब वर्णन जिस प्रकारके मनोहर शब्दोंमें नियमानुसार किया है उस नियमके विरुद्धाचरण करनेसे ही मूलग्रन्थकी सौन्दर्य्यता और सारवत्ताके भलीप्रकारसे नष्ट होनेकी सम्भावना है । अतएव यहांपर उस ही नियमका अनुसरण करना उचित है । " इस ही कारण यहांपर भी उस ही नियमका अनुसरण हुआ है ।

(१) इस स्थान देहवारी जहां वे वध हुए थे वहां अबतक वह स्मरणीय लक्ष्य उन योधाओंके दाहिनी ओर द्वारमें प्रवेश करनेके समय दिखाई देता है ।

भी एक बार रावकी पदवीसे वंचित हुआ। यद्यपि बादशाहकी इच्छा थी कि परिहार-गण मारवाडके अधिकारी हों परन्तु उसकी यह इच्छा संवत् १७३६ के ज्येष्ठ मासकी त्रयोदशीको विफल हुई।

अर्वलीपहाडने राठौरोंको आश्रय दिया। इस दुर्गम और निर्जन प्रदेशसे समय २ में बाहर हो वे मुसल्मानोंको धानके समान काटते और उनकी लाशोंके ढेरके ढेर कर रखते, तथा उनका अन्न धन हर लेते थे। औरंगजेबको कुछ भी शान्ति प्राप्त न हुई, और राठौरोंका स्वामिधर्म्म दिन २ बढने लगा; वे दिन २ स्वदेशके निमित्त विपुल त्याग स्वीकार करने लगे। उन्होंने दुष्ट औरंगज़ेबके तहस नहस करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की। एक दलने जालौर पर आक्रमण किया। दूसरा दल सिवानाके आक्रमण पर तत्पर हुआ। उस समय औरंगज़ेबने राणासे युद्ध करना छोड समस्त सेना मारवाडको भेजी। वीरकेसरी राणा राजसिंहने अजितको आश्रय दे बादशाहकी क्रोधाग्नि भडकाई थी। इस समय उसने अपने पुत्र भीमके हाथमें शिशोदियासेनाका भार अर्पण कर उसे राठौरोंकी सहायताको भी भेजा। उस समय इन्द्रभान और दुर्गादास राठौर सेनाको लिये गोडवाडामें निवास कर रहे थे। शिशोदियावीर भीमसिंह दलसहित वहां पहुँच कर उनके साथ मिल गया। राजकुमार अक़बर और सेनापति तहव्वरखां मुग़लसेनाको लेकर उनके सन्मुख हुए; शीघ्र ही नाडोलनगरमें युद्ध आरम्भ हुआ। शिशोदियागण राजपूतसेनाके दक्षिण ओर हुए। बहुत देरतक युद्ध होता रहा, इसमें बहुतसे सैनिक मारे गये, राजकुमार भीम भी युद्धक्षेत्रमें मारा गया, राणा भीमकी सेना राठौरोंकी प्रचंड दुर्गस्वरूप थी। वीर इन्द्रभान अत्यन्त विस्मयकर वीरता प्रकाश कर ऊदावत जैताके साथ रणस्थलमें पतित हुआ। सोनग और दुर्गादासने भी उस दिन आश्चर्य कर वीरता दिखाई!

वह दिन राजपूतोंकी वीरता दिखानेका एक प्रसिद्ध दिन था। उस दिनके बीतते ही राठौरकुलकी गौरवगरिमा भी लोप हो गई; एक बार ही गौरवोन्नत मारवाड आज हीनदशामें पतित हो गया; तौ भी राठौरगण उस दिनकी घटना नहीं भूल सके और यह भी जान पडता है कि न कभी भूल सकेंगे। जिस दिन वह भूलेंगे, उसी दिन राठौरोंका नाम जगत्से लोप हो जायगा। उस पवित्र दिनमें राजपूत वीरोंने स्वदेशस्वाधीनता और स्वजातीय राजाकी गौरवरक्षाके निमित्त जो अतुल आत्मत्याग जो विपुल वीरता प्रकाश की, उसको देखकर राजकुमार अक़बर भी मोहित हो गया था, उसका भी पत्थरसा हृदय पिघल गया था। अपने बलके मदसे मत्त हो दुराकांक्षाकी परितृप्तिके निमित्त उसने राजपूतोंको नानाप्रकारसे उत्पीडित किया था, इस समय अपने किये हुए उन समस्त अत्याचारोंको विचार २ वह मन ही मन सन्ताप करने लगा। उसके पिताने इस वीरजातिके ऊपर क्यों ऐसा अत्याचार किया उसको वह न समझ सका। वास्तवमें

(१ मेवाड़के भाट कवि कहते हैं कि राठौरोंके साथ इस समय मुसल्मानोंका और भी एक युद्ध हुआ था; उस युद्धमें राजपूतोंने बडी बहादुरी और बुद्धिमानीसे जय पाई थी। [राजस्थान प्रथमखण्ड अ० १२ पृ० ३४९ देखो]।

पराक्रमी राजपूतोंकी वीरता देखकर उसके हृदयमें क्षोभ उत्पन्न हुआ होगा; और क्षोभके स्निग्ध रससे उसके हृदयकी कठोरवृत्तियें भी पिघल गई। उसने सेनापति तहव्वरखांसे अपने हृदयका भाव प्रगट कर दिया, और पिताकी निठुरताका वर्णन कर दुःखसहित कहा " ऐसे साहसी और विश्वासी सामन्तोंको मुगलोंके स्नेहबन्धनसे अलग कर बादशाहने अच्छा काम नहीं किया "। उसके दुःखसे तहव्वरखांका भी हृदय पिघल गया; उसने उसके साथ अपनी भी सहानुभूति प्रगट की। तदनन्तर राजकुमार अकबरने दुर्गादासके पास एक दूत भेजकर कहला भेजा कि " राज्यमें शान्तिस्थापन होना चाहिये, अतएव एकवार राजपूतोंका मेरे साथ मिलना आवश्यक है।

राठौरवीर दुर्गादासने राठौर सरदारोंको इकट्ठा कर सबके सामने अकबरके इस प्रस्तावको प्रगट किया। किन्तु उस प्रास्तावमें प्रायः सबने ही असम्मति प्रकाश की। किसी २ ने कहा, ' कपटी यवन विश्वासघातकता कर राठौरकुलका सर्वनाश करेंगे, किसी २ ने विचारा कि दुर्गादासका ही उससे कुछ अभिप्राय है, नहीं तो वह सन्धिके निमित्त इतना आग्रह क्यों करता ? इन सबको इस प्रकारके अनेकों सन्देह करते देख तेजस्वी दुर्गादास बोल उठा, " सरदारो ! क्यों तुम वृथा भयभीत होकर नानाप्रकारके सन्देह करते हो ? मनमें भय और सन्देह करना क्या वीरोंका काम है ? क्या राठौरोंका भुजबल लोप हो गया है ? शत्रुपक्षके जब सन्धिस्थापन करनेको कहकर स्वयं ही मिलना चाहते हैं तब उनके साथ न मिलनेसे वे हमको डरपोक कहेंगे। हृदयमें बल रहते हुए क्यों हम इस प्रकारके कलंकके भागी होवें ? आओ, हम सब इकट्ठे हो मुसल्मानोंके डेरोंपर चलें; यदि मुसल्मानोंके मनमें छल होगा, तो हम सब क्या उनका संहार नहीं कर सकते। क्या कभी सुना है कि मनुष्योंने मेघमालाको रोक रक्खा है ? " वीरवर दुर्गादासके तेजोमय और गम्भीर वाक्योंने सरदारोंके हृदयका सब अन्धकार दूर कर दिया। उन्होंने राजकुमार अकबरसे मुलाकात की। एक दूसरेके हृययका भाव एक दूसरेपर प्रकाशित हो गया युक्ति प्रगट करके कर्तव्य स्थिर किया गया। शीघ्र ही सन्धि बन्धनका भी शेष हो गया तत्काल ही दोनो ओरकी सम्मतिसे अकबरके मस्तकके ऊपर राजछत्र शोभित हुआ, उसी दिनके निमित्त सभा भंग हुई। इसके अनन्तर अकबरने अपने नामका सिक्का चलाया तथा राज्यकी सर्वत्र सीमा नियत की। आज अकबर हिंदोस्तानका बादशाह हुआ, मुगल साम्राज्यके श्रेष्ठ सामन्तोंने उसको "भारतेश्वर" की उपाधि दी। बन्दीजन उसकी कीर्तिका गान करने लगे। इस संवादने अजमेरमें औरंगजेबके कर्णमें वज्रके समान प्रवेश कर उसके हृदयमें दारुण आघात किया। उसका हृदय व्यथित हुआ। उसको कहीं भी शांति न प्राप्त हुई; जिधर उसने देखा उधरसे ही मानो नाना विभीषिकाएँ आकर उसे भय दिखाने लगीं। इसके ऊपर यह भी समाचार आया कि राठौरवीर दुर्गादास अकबरके साथ मिल गया है। औरंगज़ेबकी सब आशाएँ निर्मूल हो गई दारुण क्रोध, विषाद और मनो-वेदनासे वह अपनी मूछोंके बाल और होंठ काटने लगा। यह सब संवाद थोडे ही दिनोंमें समस्त देशमें फैल गया। देशके जिस स्थानपर जितने राठौर थे सब अकबरकी स्वार्थरक्षाके निमित्त

उसकी पताकाके नीचे आ खडे हुए। भारतका राज्य आज दो हिस्सोंमें बँटकर दो राजाओंका राज्य कहा जाने लगा। अब भगवान्की कृपासे मृतप्राय सनातनधर्म पाखण्डी औरंगजेबके लोहबंधनसे छूटकर पुनः जीवित हो उठा।

आज औरंगजेब बडी विषम विपद्में पडा है। आज इकट्ठे हुए राजपूतोंके क्रोधसे उसका सिंहासन वारंवार कांपने लगा; उसके राजमुकुटने पृथ्वीपर गिरनेकी तैयारी की। उसको भय हुआ कि निश्चय ही मैं सिंहासनसे उतारा जाऊंगा। क्योंकि वह जिधर देखता उधर ही राजपूतोंकी क्रोधाग्नि प्रचण्ड तेजसे प्रज्वलित हो उसको जलाती हुई देख पडती थी। उसे उससे बचनेका कोई भी उपाय न दिखाई दिया; समीपी बन्धु, बांधव सहायक आदि किसीका भी आसरा न रहा। अतएव उसने समझ लिया कि शीघ्र ही मुझको गद्दीसे उतरना होगा। किन्तु तौ भी औरंगजेब निरुत्साह न हुआ। उसको बन्धु, बान्धव, सहायक, संबल सबने ही छोड दिया; किन्तु आशा उसको छोडकर भी न छोड सकी; उसके हृदयसे उत्साह दूर न हुआ। उस आशा और उत्साहसे उत्साहित हो औरंगजेबने विपदसे छुटकारा पानेके निमित्त शठताका अवलम्बन किया और कपट तो उसके जीवनका साथी था; उसको जब संकट पडा, तभी उसने शठता और कपटकी सहायतासे उस विपत्तिसे छुटकारा प्राप्त किया;--उसी समय में उसके दोनों संगियोंने दो बिशाल सेनाके समान उसकी सहायता की। आज चतुर मुगलबादशाह इन्हीं दोनोंकी सहायताद्वारा इस विपत्तिसे छुटकारा पा गया। यह सब वृत्तान्त मुगलोंके इतिहासमें और मेवाड तथा मारवाडके भाटग्रन्थोंमें विस्तारपूर्वक वर्णित है। किन्तु उन सबमें भली प्रकारसे एकता नहीं पाई जाती; इस कारण हमने भाटग्रन्थोंसे ही उक्त वृत्तान्तका अनुवाद किया है।

" अगणित राजपूतोंके साथ अकबर अजमेरकी ओर बढा। औरंगजेबने समझा कि अब शीघ्र ही पिता पुत्रमें घोर युद्ध होगा; इस कारण वह भी सावधान हो रहा; किंतु अकबर तहव्वरखांके हाथमें समस्त भार अर्पण कर आप स्त्रियोंसे परिवेष्टित हो नृत्य, गानके आनन्दमें समय बिताने लगा। हम भाग्यके सेवक हैं; हम भाग्यके खिलौने हैं; भाग्य डोरेमें बांधकर जैसा हमको नचाता है हम नाचते हैं। अस्तु तहव्वरखां विश्वास-घातकताकी कल्पना करने लगा। उसके निकट गुप्त समाचार आया कि यदि वह अकबरको बादशाहके हाथमें अर्पण कर सके तो वह बहुत पुरस्कार पावेगा। इस समाचारके ऊपर विश्वास कर उसने रात्रिको गुप्तभावसे बादशाहसे मुलाकात की और उसी स्थानसे राठौरोंको लिख भेजा कि; 'आप लोगोंके साथ जो अकबरकी संधि हुई थी उसमें मैं ग्रन्थिस्वरूप था, किन्तु जिस बाँधने जलका भाग कर रक्खा था, वह टूट गया है;--पिता पुत्र फिर मिलकर एक हो गये हैं। हमने परस्परमें जो प्रतिज्ञा की थी उसका पूर्ण होना कठिन है; अतएव मैं जानता हूं कि आप अपने देशको लौट आओगे'। पत्र लिखकर शेष हुआ, विश्वासघातक तहव्वरने उसके ऊपर अपनी मुहरकी और एक विश्वासी दूतद्वारा उसे राठौरोंके निकट भेजकर स्वयं पुरस्कारकी आशासे औरंगजेबके

निकट आया। किन्तु दुष्टको पाशवी विश्वासघातकताका योग्य फल मिला। बादशाहके सामने वह बात भी न करने पाया कि बादशाहने स्वयं अपने हाथसे उसकी गर्दन काट डाली, उसकी पापात्माने नरकका आश्रय ग्रहण किया। इधर अर्द्धरात्रिके समय दूतने राठौरोंके डेरेमें जाकर वह पत्र दिया और कहा कि तहव्वर मारा गया। डेरोंमें बडी हाहाकार पड गई, त्रसित राठौर शीघ्र ही अपने २ घोडोंपर चढ राजकुमार अकबरके डेरेसे एक कोश दूर जाकर ठहरे। राजकुमारकी सेनामें भी इस बातका समाचार फैल गया। वह भी हवासे गिरे हुए सूखे ईखके पत्तेकी तरह चारों ओरको भागने लगे, किन्तु उस समय भी अकबरकी मोहनिद्रा न टूटी, उस समय भी वह नचैयों गवैयोंसे घिरकर आमोद प्रमोदमें लगा रहा"।

भाट कवि लिखित उपरोक्त वर्णनके पाठ करनेसे राजपूतोंकी अनसमझी भली प्रकारसे विदित होती है। राजपूत घटनास्रोतके पक्षमें केवल सामान्य तृण हैं वे आगा पीछा न विचारकर प्रायः प्रत्येक काममें ही प्रवृत्त हो जाते हैं। दूतसे समाचार पाते ही उनको दृढ विश्वास हो गया था। यद्यपि अकबर उनके समीप ही ठहरा हुआ था तथापि इस बातके जाननेकी उन्होंने एक बार भी चेष्टा न की कि यह समाचार सत्य है या मिथ्या। उन्होंने जो सुना उसपर बिना विचारे ही विश्वास कर लिया और उसी ख्याली विचारके वशीभूत हो वे क्षणमात्रमें वहांसे दूसरे स्थानको कूंच कर गये। यहांतक कि जबतक दश कोश न निकल गये तबतक घोडेकी बाग न ढीली की। किन्तु इस प्रकारके चरित्र राजपूतोंके स्वाभाविक चरित्र नहीं हैं। विश्वासघाती मुसल्मानोंसे बारंबार ठगे जानेपर मुसल्मानोंका विश्वास करना ही छोड दिया। विशेषकर झगडा होनेके समय तो वे ऐसे मूढ हो जाते हैं कि किसका विश्वास करना होगा, यह भी नहीं जानते। यद्यपि वह अकबरको चाहते थे और उसके स्वार्थरक्षाके निमित्त उन्होंने तलवार भी उठाई थी, तथापि अकबर मुसल्मान था इस कारण उन्हें यह भी विश्वास था कि वह भी विश्वासघातक हो सकता है। वे इसी विश्वासके वशीभूत हो अकबरके डेरेको छोड रातोंरात वहांसे चले गये।

अब राजकुमार अकबरकी मोहनिद्रा भंग हुई जब राठौरसेना उसका डेरा छोडकर चली गई, वह अपनी सेनाको भी भागी हुई जानकर समझ गया कि मैं केवल अपने ही दोषसे विपद्ग्रस्त हुआ हूं। विश्वासघातक तहव्वरको जो योग्य फल मिला इससे वह संतुष्ट हुआ और उसके प्रेतात्माको सैकडों शाप देता हुआ भागी हुई सेनाके खोजमें अग्रसर हुआ। उस समय उसके साथ एक सहस्र मनुष्य भी न थे। बडी देरतक घूमनेके उपरान्त राजकुमार भागी हुई सेनाके निकट पहुँचा; तत्पश्चात् वह उसको ले अपने मित्र राजपूतोंकी खोज करने लगा। उसने उनको पाकर अपने और अपने

---

(१) औरंगजेबने खुद तहव्वरखांको नहीं मारा, विश्वास देकर बुलाया था पर जब वह हथियार बाँधेहुए दर्बारमें जाने लगा तो उसको रोका गया इसपर वह पीछे लौटा और डेरेकी रस्सियोंसे बाहर निकलते ही ड्योढीदारोंके हाथसे मारा गया।

परिवारको उनके समर्पण करके कहा-? कि यदि आप चाहेंगे तो मुझे मार सकते हैं और रख भी सकते हैं। राजपूत यह बात सुनकर उसको न त्याग सके और फिर उसके साथ हो गये।

राठौरोंने जिस प्रकार शरणमें आये हुए राजकुमार अकबरको रक्खा था कवि कर्णीदानने उसका श्रेणीबद्ध वर्णन किया है। जब अकबरने आश्रयकी प्रार्थना की तब राठौर इस बातका विचार करने लगे कि राजकुमारका सन्मान किस प्रकार करना चाहिये। चांपावत और कूँपावत, पातावत, लाखावत, कर्णोत, डूंगरोत, मेरातिया वरसिंहोत तथा ऊदावत और वीदावत आदि सामंतगण अपने २ पदानुसार मंत्रागारमें बैठे। समय पाकर भाट्ट कवि एक २ करके उन सामन्तोंके पितृपुरुषोंका गुणानुवाद वर्णन करने लगे। जिस समय राठौर सरदारगण यथायोग्य आसनपर बैठ गये, उस समय अकबरके सत्कारके विषयमें अनेकों तर्क वितर्क होने लगे। प्रत्येक सरदारने सारगर्भित और तेजस्विनी वक्तृताद्वारा मुसल्मानोंके आचार व्यवहार और अपने २ मन्तव्यको प्रकाशित किया। बहुतसा तर्कवितर्क होनेके उपरान्त सभा भंग हुई। अन्तमें सबकी यही सम्मति हुई कि शरणमें आये हुए अकबरकी प्राण रहते हुए रक्षा की जायगी। चांपावत सम्प्रदायके सरदारका छोटा भाई जैत अकबरके कुटुम्बका रक्षक नियत हुआ इस प्रकारसे उस दिन राठौरकुलके जीवन नाटयका एक बृहत् अंक आरम्भ हुआ। वीरवर दुर्गादास उस अंकका अगुआ हुआ। उसके महत् चरित्र कविके ओजमय वर्णनके प्रभावसे यथार्थ हृदयग्राही हुए हैं। कविने दुर्गादासकी महिमाका इस प्रकारसे वर्णन किया है कि:—

"जननी सुत ऐसा जनें, जैसा दुर्गादास। बांध मुडासो राखियो, बिनखम्भा आकाश।"

वीरवर दुर्गदास राजपूतचरित्रका एक अनुपम नमूना था; वह जैसा वीर था वैसा ही चतुर भी था। उसकी असीम बुद्धि और विक्रमके प्रभावसे मारवाडकी भूमिकी ध्वंस होनेसे रक्षा हुई, उसने ही आत्मत्याग स्वीकार कर राजकुमारकी प्राण रक्षा की थी और अंतमें भीषण समरसागरको पार कर असंख्य विषम संकटसे उसका उद्धार किया था। औरंगजेब इस राठौर वीरसे बहुत डरता था, इसके सम्बन्धकी कई एक बातें सुनी जाती हैं। वे बातें बडी मनोहर हैं। उन बातोंमेसे एक बात यह भी लिखी जाती है। औरंगजेबने अपने भीषण शत्रु शिवाजी और दुर्गादासका चित्र लानेकी आज्ञा दी। चित्रकार उन दोनोंके चित्र लेकर उसके निकट आया। दोनो चित्र पूर्ण अंगोंसे युक्त थे। शिवाजी एक आसन पर बैठा हुआ था और दुर्गादास अपने भालेकी नोकमें एक रोटी छेदकर उसे आँचपर सेंक रहा है। उन दोनो प्रचंड शत्रुओंका चित्र देखते ही औरंगजेब चिल्लाकर कह उठा "मैं इस पहाडी चूहेको (शिवाजीको) जालमें बांध सकता हूं, परन्तु यह कुत्ता मेरा कालस्वरूप होकर उत्पन्न हुआ है"।

राजकुमार अकबरसे मिलकर वीरवर दुर्गादास उस समेत अपनी सेनाको लेकर औरंगजेबके पीछे पडा। वह मन ही मनं विचारता था कि लूनी नदीके

किनारेपर बादशाहपर आक्रमण करूंगा । परन्तु चतुर औरंगजेबने अपना अभिप्राय पूर्ण करनेके निमित्त दूसरा ही यत्न किया अर्थात् वह दुर्गादासको लोभ दिखलाकर उसे वशीभूत करनेकी चेष्टा करने लगा । उसने सबसे प्रथम उसको आठ हजार मुहरें (भाटग्रन्थमें ४० हजार लिखा है) भेज दी । चतुर राजपूत वीरने तत्काल ही उन्हें लेकर अकबरको दे दिया । दुर्गादासका यह कर्म देखकर यवन राजकुमार उससे अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ और उसने उस पाये हुए धनका कुछ अंश उसके सरदारों और सेनापतियोंको बांट दिया । औरंगजेबकी इच्छा पूरी न हुई । जब उसने देखा कि, राजपूत वीर लोभके वशीभूत न होगा तब उसने अपने विद्रोही पुत्रको लानेके लिये एक सेना भेजी । अकबर अत्यन्त ही भयभीत हुआ । वह समझ गया कि पिताके हाथमें जानेसे अनुग्रह प्राप्त होनेकी आशा नहीं है । मुझको अपमानित होना पडेगा और मेरी होनहार उन्नतिका मार्ग सदैवके लिये रुक जायगा । मनमें इस प्रकारका निश्चय होते ही उसने पिताकी रोषाग्निसे दूर रहनेका विचार किया उसको भयभीत देखकर दुर्गादासने कहा--"आपके जीवन मरणका मै उत्तरदाता हूं बिना मुझको मारे बादशाह आपका वध नहीं कर सकता" । राजपूत वीरने केवल प्रतिज्ञा ही न की वरन जिस प्रकार वह प्रतिज्ञा पूरी हो वही यत्न करनेमें तत्पर हुआ । जेठे भाई सोनगदेवके हाथमें शिशु राजकुमारका रक्षणभार अर्पण कर आप एक सेनाके साथ दक्षिणकी ओर चला । जो प्रसिद्ध राजपूत वीर राजकुमार अकबरके शरीररक्षक होकर युद्धके निमित्त गये थे कवि कर्णीदानने उनका नाम लिखकर उनकी असीम कीर्तिका वर्णन किया है। इन सब राजपूतोंमें चाँपावतोंकी ही संख्या अधिक थी । इसके अतिरिक्त जोधा और मेरतिया आदि देशी तथा यदु; चौहान, भाटी, देवडा,सोनगरा और मांगालिया आदि विदेशीय सरदार दुर्गादासके साथ गये थे।

बादशाहने उनका पीछा किया । उसकी सेनाने राठौरोंको चारों ओरसे घेर लिया, किन्तु दुर्गादासने एक सहस्र सैनिकोंके साथ उसके पीछे २ आकर उत्तर दिशाको त्याग किया, और पक्षीके समान शीघ्रता पूर्वक उसके डेरेको छोड गया । औरंगजेब उसका पीछा करते २ झालोरमें आया, उस नगरमें आते ही वह समझ गया कि इतने दिनतक मुझे भ्रम हुआ है, दुर्गादास झालोरकी ओर नहीं गया, बरन् गुजरातकी दक्षिण ओर और चम्बलकी बाईं ओर राजकुमारसमेत नर्मदा तीर पर जा-पहुँचा है । उसके क्रोधकी सीमा न रही, वह दारुण क्रोधसे अधीर होकर धर्म कर्म सब भूल गया यहाँतक कि उसने कुरानतक उठा कर फेंक दिया । अनन्तर उसने आजमको आज्ञा दी कि " उदयपुरके जीतने व अन्य किसी अभिप्रायसेमैं वहाँ रहूंगा, तुम सबसे पहिले राठौरको निर्मूल कर अपने दुराचारी भाईको बंदी करो ।" वायु जैसे प्रकाशके रोकनेवाले मेघोंको छिन्न भिन्न कर देता है उसी प्रकार कमध्वज

---

(१) किसका जेठा भाई ? नाम नहीं लिखा । यदि दुगादासका जेठा भाई समझा जाय तो सोनग दुर्गादासका जेठा भाई नहीं था क्योंकि सोनग चाँपावत था और दुर्गादास करणोत ।

(जो पदवी राठौरकी थी) वीरानुष्ठानने मेवाडके समस्त क्लेश दूर कर दिये। बादशाह अजमेर पहुँचनेके दस दिन उपरान्त ही जोधपुर और अजमेरमें सेना रख स्वयं आगेको बढा। दुर्गा नामकी महिमाके प्रभावसे सैकडों शत्रु खेत छोड गये। दुर्गा स्वयं बासुकि और अकबर मंदरगिरि था, इन दोनोंने एक दूसरेकी सहायतासे औरंगजेबरूपी सागरको मथन कर उससे १४ रत्न निकाले। इन १४ रत्नोंमें हम लक्ष्मी और धन्वन्तरिरूप धर्मको प्राप्त हुए।

खीची वंशिय शिवसिंह और मुकुन्दकी अपेक्षा और कौन अधिक विश्वासी होगा? जबतक शिशु राजकुमार अजित आबू पहाडकी कन्दराओंमें छिपा हुआ था तबतक उन्होंने एक क्षणके निमित्त भी उसका संग न छोडा। दुर्गादासने केवल इन दोनो जनोंकी और विश्वस्त सोनगरा सरदारेक छिपे रहनेकी बात कही थी। मारवाडके समस्त सामन्त जानते थे कि वह कहीं छिपे हुए थे परन्तु कहां और किसके आश्रयमें थे यह किसीको भी ज्ञात न था। किसीने विचारा था कि वह जैसलमेरमें हैं किसीने सोचा था कि, वह विक्रमपुरमें हैं और किसीने निश्चय किया था कि वह सिरोहीमें छिपे हैं। राठौर सामन्त अत्यन्त ही प्रशंसाके पात्र हैं क्योंकि यथार्थ वीरोंके समान ही उन्होंने बनवास व्रत लिया था। उनकी नाडियोंने मारवाडके गौरवकी रक्षा की थी। उनकी वीरतासे मोहित होकर राजा, राव और राना आदिने मुक्तकंठसे उनकी प्रशंसा की थी। उस प्रचण्ड आक्रमणमें मुसल्मानोंके पैशाचिक अत्याचारसे सभी ध्वस्त हो गया था, मारवाडके नौ सहस्र और मेवाडके दश सहस्र नगरोंमें मनुष्य न रहे थे। सभी शून्य वीभत्स श्मशानके समान हो गये थे, उसी वीभत्स श्मशानके ऊपर विचरण कर इनायतखाँने दश सहस्र सेनाके साथ जोधपुरमें प्रवेश किया. और वह उसकी रक्षा करनेके निमित्त वहीं रहने लगा। परन्तु चांपावत सरदार मरुभूमिमें मेरुके समान अटल और दुर्गादासका भाई सोनगरा निर्भय और दृढप्रातिज्ञ रहा। यवनग्राससे जोधपुरका उद्धार करनेके निमित्त आज राजपूत वीर भयानक कार्य क्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। कर्णोत क्षेमकर्ण, जोधावंशीय सबल, महेचा विजयमल, सूजावत जैतमाल, कर्णोत केशरी और जोधावंशीय शिवदान तथा भीम नामक दोनों भाईयोंने अपनी २ सेनाएँ एकत्रित कीं, और जब इन्होंने सुना कि यवनराज अजमेर चार कोस दूरपर आ उपस्थित हुआ है, उसी समय जोधपुरमें इनायतखांको रोक रक्खा। किन्तु शीघ्र ही बीस सहस्र मुगल सैनिक उसके उद्धारके निमित्त वहां आये। जोधपुरके द्वारपर और एक भयानक युद्ध हुआ। उसमें यदुवंशी केसरी और अनेक राजपूत सरदार मारे गये। युद्धमें मारे जानेसे पहिले उन्होंने सैकडों शत्रुओंको मारा था।

यह भयानक युद्ध विक्रम संवत् १७३७ आषाढ बदी ७के दिन हुआ था। शूरवीर सोनगने अपनी प्रचण्ड तलवार और आग्नेयास्त्र चारों ओर चलाये औरंगजेब आगेको भी न बढ सका और न पीछे हट सका; परन्तु एक स्थानमें

(१) सोनग दुर्गादासका भाई नहीं था।

खडा रहा। छछूंदर पर आक्रमण करके सांप जिस प्रकार विषके भयसे न तो उसको निगल सकता है,और न अन्धे होनेके डरसे उसको त्याग सकता है, उसी प्रकार औरंगजेबकी अवस्था राठौरोंपर आक्रमण करके हुई हरनाथ और कान्हसिंह (कान्हा शंकर) सोजतकी ओर अग्रसर हुए और गवादि पशुओंको लेकर दूर कर आये। अनन्तर एक भयानक युद्ध आरम्भ हुआ, इस युद्धमें मुसल्मानोंका सेनापति मारा गया, किन्तु हरनाथ और कर्ण तथा उनके अनेक जातीय कुटुम्बवालोंने अपने २ हृदयका रुधिर देकर समरभूमिको गीला किया। इस युद्धका अंत संवत् १७३८ के प्रारम्भमें हुआ था। इस भयानक विप्लवकालमें तलवार और महामारीने[1] एकत्रित हो राज्यको शून्य कर दिया था।

वीर सोनग इस भयानक समरक्षेत्रमें भीमाकार रुद्रके समान विचरण करने लगा, उसके वीरानुष्ठानसे दिल्ली और आगरा वारंवार कम्पित होने लगे, वह घोर औरंगजेबको दुर्बल शशाके समान देखता था। यवनराजने उसके निकट दूत भेजा। उसके दूत भेजनेका अभिप्राय संधिप्रार्थना और शांतिकामना थी। उसने राजकुमार अजितको सातहजारी पदकी पदवी दी और उसके सजातीय भाइयोंको अजमेर देकर सोनगको वहांका अधिकारी नियुक्त किया। उसने संधिपत्रमें यह भी लिख दिया था कि--" मैं ईश्वरको साक्षी करके इस संधिपत्र पर मुहर करता हूँ कि इसके विरुद्ध कदापि न होगा" उस संधिपत्रको लेकर दीवान असदखाँ मध्यस्थ होकर वहां आया। उसने वहांपर शपथ करके कहा कि इस संधिपत्रके अक्षर २ का प्रतिपालन होगा। संधिबंधन शेष हो गया; किन्तु औरंगजेब एक क्षणके निमित्त भी न भूल सका; अकबरकी चिन्ता सैकडों बिषैले सर्पोंके समान उसके हृदयको डसने लगी। अन्तमें उसने दक्षिणकी ओरको यात्रा की। असदखाँ अजमेरमें और सोनग मेरता नगरमें निवास करने लगे; किन्तु सोनग औरंगजेबका कंटक था। उसने उस कंटकको दूर करनेके लिये ब्राह्मणको धन प्रदान किया। ब्राह्मण मारण मंत्रसे दीक्षित हो सोनगको सूर्यमंडल भेजनेके लिये होमकुंडमें औषधियें और काली मिरच डालने लगा। होमका अन्त हुआ, संधिबंधनके कुछ ही दिनोंके उपरान्त मारण मंत्रके प्रभावसे सोनगकी (प्रसिद्धिमें यह मृत्यु जादूसे बतलाते हैं पर अनुमान है कि उसे विष दिया गया) प्राणवायु शरीरसे बाहर हो गई। (६ वीं आश्विन १७३८)।

असदखांने औरंगजेबके निकट इस समाचारको भेजा। उसका कंटक दूर हुआ। आज वह निश्चिन्त हुआ, वह निश्चित हृदयसे संधिपत्रके विरुद्ध हो गया और प्रसन्नतापूर्वक दक्षिणकी ओर बढने लगा। सोनगकी मृत्युसे देशमें अन्धकार छा गया। मेरतिया

---

(१) भीषण विशूचिकाके आक्रमणसे इस महामारीका प्रादुर्भाव हुआ था इससे प्रथम मेवाडके इतिहासमें हमने वर्णन किया है कि राणा राजसिंहके राजत्वकालमें सन् १६६१ ई० में मेवाडभूमि इस प्रकारके भयानक महामारीके आक्रमणसे उजाड हो गई थी। इस समय मारवाड के इतिहासमें जो महामारीका वर्णन किया गया है इससे २० वर्ष पहले भी मेवाडमें उक्त सर्वनाश हुआ था।

कल्याणका पुत्र मुकन्दसिंह अपनी उपाधि (पदवी) को त्याग कर मातृभूमिके कल्याणसाधनमें दृढ प्रतिज्ञा हुआ। मेरताके निकट असदखाँकी सेनासे एक घोर युद्ध हुआ। विट्ठलदासका पुत्र अजैबसिंह[1] सेनाके अग्रभागमें युद्ध करते २ अनेक वीरोंके साथ रणभूमिमें मारा गया। इससे मुसलमान अत्यन्त प्रसन्न हुए; किन्तु प्रभुभक्त राजपूतोंको दुःख की सीमा न रही।

यह घनघोर संग्राम संवत् १७३८ कार्तिक शुक्ल २ को हुआ था। राजकुमार आजम असदखाँके साथ रहा; इनायत जोधपुरमें रहने लगा और उसकी सेना देशके चारों ओर फैलगई; आज भी उनकी कबरें इधर उधर दिखाई दे रही हैं। चंडावलका स्वामी कूँपावत शम्भु, बखशी उदयसिंह और दुर्गादासके पुत्र तेजसिंह (जिसे महादेव की भुजा कहते थे) के साथ राठौर सेना ले रणस्थलमें पहुँचा। इसी समयमें फतहसिंह और रामसिंह यवन राजकुमार अकबरको दक्षिणमें रख आप स्वयं कूँपावतकी सहाताको आये। इनके अतिरिक्त और भी बहुतसे निर्भय राजपूत वीर उनके झंडेके नीचे आ इकट्ठे हुए। यह देशके चारों ओर, यहाँ तक कि मेवाडतक फैल गये और उन्होंने पुर मांडल[2] नगरको ध्वंस कर वहाँके हाकिम कासिमखाँको मार डाला।

इन भीषण और वारंवारके युद्धोंसे निर्भय राठौरोंकी पराक्रमाग्नि अत्यन्त प्रचण्डतासे क्षुभित हो उठी और यवन सेना अधिकतर क्षीण हो गई थी। किन्तु मारवाडके वीरकुल प्रायः निर्मूल होनेपर आ गये थे। उस समय राठौरोंको पुनर्वार पहाडोंका आश्रय लेना पडा। उन दुर्गम पहाडियोंकी कन्दराओंके भीतर रहकर वे सुअवसर देख रहे थे, और समय २ पर शत्रुओंके ऊपर आक्रमण करके उन्हें छिन्न भिन्न कर देते थे। इसी प्रकारसे कई एक महीने बीत गये तब उन्होंने जेतारनमें स्थित सेनाके ऊपर आक्रमण करके उन्हें दलित, वित्रासित और ताडित कर दिया और फिर तत्काल ही उन्हीं कन्दराओंमें जा छिपे। इसी प्रकारसे संवत् १७३९ विक्रमीमें राठौरोंने फिर जोर पकडा। इसी समयमें सोजतका दुर्ग चांपावतवंशीय विजयसिंह द्वारा विध्वंस हुआ और ठीक इसी समयमें योधावतोंकी सेना लेकर रामसिंह उत्तर प्रदेशके युद्धमें लिप्त रहा। इस समय मिर्जानूर अलीनामक एक मुसलमान चेराईका हाकिम था, राठौर

(१) यह अजबसिंह सोनगका भाई था और सोनगके पीछे राठौरोंने इसको अपनी सेनाका सेनापति बनाया था।

(२) पुर मांडल, दो भिन्न२ स्थान हैं। इन दोनोंका नाम पुर और मांडल है। यह दोनों ही मेवाडके अन्तर्गत हैं। पुर मेवाडका एक प्राचीन नगर है कहा जाता है कि यह विक्रमादित्यके प्रथमसे ही प्रतिष्ठित है। वे दोनों नगर देखनेमें अत्यन्त सुन्दर हैं और इन दोनों ही स्थानोंमें जहां तहां चांदीकी सामग्री गडी हुई पाई जाती है। पुर नगरकी अपेक्षा मांडल देखनेमें अत्यन्त ही रमणीय है। मांडल मेवाडके अन्तर्गत एक छोटा सा द्वीप है। यह चारों ओर बडे २ बांधोंसे घिरा हुआ है; उसके ऊपर नानाप्रकारके फल फूल हैं। निठुर मरहठोंके अत्याचारसे मांडलद्वीपकी शोभा बहुत ही न्यून हो गई है। मांडलमें एक प्राचीन जयस्तंभ देखा जाता है। अजमेराधिपतिने महाराज विशाल देवको जीतकर यह जयस्तम्भ बनवाया था।

वीरोंने उदयभान योधावतको सेनासमेत लेकर आक्रमण किया। तीन घंटे तक बडा ही घनघोर संग्राम हुआ; रणभूमिमें हजारों मुसल्मानोंकी लाशोंका ढेर लग गया।

जिस जेतारण युद्धमें चांपावत उदयसिंह और मेरतिया मुहकमसिंहने राठौर सेनाको रणस्थलमें भेजा था, उसके लौटते ही दोनों वीर गुजरातकी ओर रवाना हुए। खैराल नगरमें पहुँचते ही गुजरातके हाकिम सैयदमुहम्मदने उनको रत्नपुरकी पहाडियोंमें घेर लिया। वह सारी रात अस्त्र शस्त्र लिये खडे रहे। प्रातःकाल होते ही दोनों ओरसे युद्ध आरम्भ हुआ। कर्णकेसरी और भाटी गोकुलदास दीवानी विभागके समस्त कर्म्मचारियों समेत युद्धभूमिमें मारे गये। और रामसिंहने भी उसी दिन यहाँपर प्राण त्यागे; किन्तु अगणित सेना और सामन्तोंके मारे जानेपर भी अन्तमें मुसल्मानोंकी पराजय हुई। इसी साल भादोंके महीनेमें पाली नगरपर मुसल्मानोंने आक्रमण किया। तब नूरअलीके साथ युद्ध आरम्भ हुआ। तीन सौ राठौरोंने पांचसौ मुसलमानोंसे युद्ध करके उनको पराजित किया; उनका सेनापति अफजलखाँ घनघोर संग्रामके उपरान्त रणक्षेत्रमें मारा गया। जिस राठौर वीरने इस युद्धमें मुसल्मानोंको पराजित किया था उसका नाम वल्लू था, इसके उपरान्त उदयसिंहने सोजतपर आक्रमण किया। जेतारण फिर नवीन बलसे बलवान् हुआ। वैशाखमें मेडतिया मोकमसिंहने मेरतामें रही हुई मुसल्मान सेनापर आक्रमण किया और सैयदअलीको मारकर मुसल्मानोंको दूर भगा दिया।

इस प्रकारके अविश्रांत युद्ध और नरहत्याके साथ संवत् १७३९ भी अनन्त कालसागरमें लीन हो गया। कालचक्रका एक चक्र पूरा हुआ; किन्तु इसके साथ राठौरोंका अदृष्ट चक्र अनेक बार अनेकों ओरको परिवर्त्तित हुआ। इस दीर्घकालव्यापी युद्धमें राजपूत और यवनोंका बहुतसा रुधिर व्यय हुआ; अनेक राठौर वीरोंने स्वदेशरक्षाके निमित्त युद्धभूमिमें प्रसन्नतापूर्वक प्राण न्यौछावर कर दिये। किन्तु वह यथाशक्ति चेष्टा करनेपर भी मुसल्मानोंको निर्मूल न कर सके। राठौरोंके अमित भुजविक्रमसे सैकडों मुसलमान मरने लगे, परन्तु फिर उनके रक्तबिन्दुसे मानों हजारों मुसल्मान उत्पन्न हो हो मुगलसेनाको दृढ करने लगे किंतु राजपूतोंकी ओर जिन वीरोंने प्राण त्याग किया, उनकी पूर्ति फिर किसी प्रकारसे भी न हो सकी; उनके अभावसे राठौर वंशकी जो हानि हुई उस हानिको कोई भी पूरा न कर सका। हिन्दू मुसल्मानोंके इस भयानक संग्राममें राजस्थानके प्रायः सभी राजपूत राठौरोंके साथ मिल गये थे; परन्तु जो इतने दिनोंतक उनके साथ न मिले थे व भी धीरे २ मिलने लगे। संवत् १७३९ के अन्तमें जैसलमेरके भाटियोंने राठौरोंका साथ दे उनका सन्मान व गौरव स्थित रखनेके निमित्त प्रसन्नतापूर्वक अपने हृदयके रुधिरसे रणभूमिको गीला किया था।

---

(१) जिन कुछ एक राजपूत वीरोंने वीरवर दुर्गादासके साथ जाकर राजकुमार अकबरको औरंगजेबकी रोषाग्निसे बचाया था। रामसिंह उनमेंका एक दूसरा सरदार है।

देखते २ नवीन वर्ष संवत् १७४० का आगमन हुआ, उसके साथ ही साथ मुसल्मानोंका उत्साह नवीन हो उठा। वे नये २ जय प्राप्त होनेके यत्न करने लगे। आजम और असदखाँ दक्षिणमें औरंगजेबसे जा मिले और इनायतखाँ अजमेरका हाकिम नियत होकर वहीं रहा। उस समय उसको यह आज्ञा दी गई थी कि राठौरोंके साथ बराबर युद्ध होता रहे यहाँतक कि वर्षाकाल आनेपर भी युद्ध बंद न हो। इसी आज्ञानुसार इनायतखाँ युद्धमें तत्पर हुआ। मारवाड़के समस्त नगर और ग्राम मुसल्मानोंके अधिकारमें थे यवनोंके भारसे मारवाड़ थरथर काँपता था, जिस ओर देखो उसी ओर अनगिन्त यवनोंकी भीषण भृकुटी मानों अनेकों विभीषिकाएँ दिखाती थीं। इस विपुल यवन बलके विरुद्ध तलवार लेकर कुछ एक राजपूत वीर किस प्रकारसे समरभूमिमें जा सकते हैं? अतएव देख सुनकर भी वे मेरवाडाको एक रक्षित स्थान जान उसीमें आश्रय ग्रहण करने लगे। देखते २ राठौर गण अपने २ कुटुम्बियों समेत उस मेरवाडाकी दुर्गम पहाडियोंके भीतर एकत्रित हुए। इस निविड पर्वतश्रेणीके बीचमें छिपे रहकर वे सुविधा पाते ही यवनोंके ऊपर आक्रमण करते और नगर व गाँवोंको लूटकर पुनर्वार उसीमें प्रवेश कर जाते। वे मुसल्मानोंके असीम अत्याचारका बदला लेनेके लिये किसी भी सुअवसरको हाथसे न जाने देते थे। इस प्रकारसे पाली, सोजत और गोडवार आदि कई एक नगर और गाँव राठौरोंसे दलित हुए। प्राचीन मंडोर नगर ख्वाजह शालहनामक एक मुसल्मान सेनापतिके अधिकारमें था; परन्तु भाटियोंने उसपर आक्रमण करके उसे वहाँसे निकाल दिया। वैशाख महीनेमें वगडी नामक स्थानमें एक घोर युद्ध हुआ। उस युद्धमें रामसिंह और सामंतसिंह नामक दो भाटी सरदारोंने हजार मुसल्मानोंको मारकर दो सौ सैनिकोंके साथ समर भूमिमें प्राण त्याग किये। इधर अनूपसिंहनामक एक सरदार कमरसोत और कूंपावतोंको ले लूनीके किनारेवाल मुसल्मानोंका संहार करने लगा। उसके असीम पराक्रमसे उस्तरां और गांगाणी नामक दो दुर्गोंसे मुसल्मान भाग गये मोकमसिंह अपनी मेडतिया सेनाके साथ अपनी प्राचीन पितृभूमिमें आकर मुसल्मानोंपर आक्रमण कर २ उनकों दलित और त्रसित करने लगा। उसके आक्रमणोंसे दुःखित होकर यवनसेनापति मुहम्मद अलीने दलसहित उसपर आक्रमण किया। तेजस्वी राठौर गण उस आक्रमणसे कुछ भी भयभीत न हो उससे युद्ध करनेपर कटिबद्ध हुए। उनके अमित पराक्रम और साहसको देखकर यवनसेनापतिने भयभीत हो युद्ध रोक रखनेका अनुरोध किया। सरल हृदय राजपूत उसके अनुरोधको अस्वीकार न कर सके। किन्तु वह कुछ न समझ कर कपटीके कपटजालमें जडित हुए। संधिबन्धन दोनों ही ओरसे एक समान हुआ तत्पश्चात् दुष्ट यवनोंने मेडतियां सम्प्रदायके सेनापतिको विश्वासघातकता करके गुप्तभावसे मार डाला।

यवनोंकी विश्वासघातकतासे राठौरोंकी क्रोधाग्नि द्विगुणित प्रज्ज्वलित हो उठी; वे अपना बदला लेनेके लिये मुसल्मानोंपर जहां तहां आक्रमण करने लगे। हिन्दू मुस-

ल्मानोंका विग्रह धीरे २ और भी बढ उठा। संवत् १७४१ के प्रारम्भमें युद्ध विग्रह और विभीषिकाकी कुछ भी शांति न हुई। सुजानसिंह राठौर सेनाको ले दक्षिणकी ओर गया, इधर लाखा चांपावत और केशर कूँपावत भाटी और चौहानसेनाकी सहायतासे जोधपुरमें रही हुई मुसल्मानसेनाको निरंतर भय दिखाने लगे। सुजानसिंहके मारे जाने पर भाट कविने सेनापति संग्रामके निकट जाकर विनीतभावसे निवेदन किया कि आप अपने जातिवाले भ्रातृदलमें संयुक्त होकर यवनोंको पराजित करो।

संग्राम[1] उस समय मंसब पदपर अभिषिक्त हो कुछ एक भूमिसम्पत्तिका भोग करता था। वह कविकी प्रार्थनाको अस्वीकार न कर सका, शीघ्र ही राठौरसेना उसके झंडेके नीचे आ पहुँची। उसने शिवाणची पर आक्रमण कर वह नगर और बालतरा तथा पचभद्राको लूट लिया। इधर नगरमें मुसल्मानसेना रुकी हुई थी इस कारण वह राठौरोंके सामने न आ सकी। सूर्य अस्त होनेके एक घंटा पहिले मरुस्थलीके समस्त द्वार बन्द हो गये थे। यद्यपि दुर्ग असुरोंके ही हाथमें रहे परन्तु आबादियोंमें अजितका ही जयनाद हुआ। वीर उदयभान अपनी योधावत् सेनाके साथ भाद्राजूनके सामने आ पहुँचा और उसने शत्रुपर आक्रमण कर उनके धन दौलत वा रसद आदिकी सामग्री लूट ली जोधपुरमें रहे हुए मुसल्मान सैनिकोंने अपने उस धन आदि पर अधिकार करनेके लिये पुनर्वार चेष्टा की तथापि जोधावतोंको जयके ऊपर जय प्राप्त हुई।

पुरदिलखांने सिवाना[2] और नाहरखांने मेवात तथा कुनारी पर अधिकार कर लिया था। उनपर आक्रमण करनेके लिये चांपावत दल मुकुलसरनामक स्थानमें इकट्ठा हुए। उसी समय समाचार आया कि नूरअली खानदान अशानीकी दो स्त्रियोंको बलपूर्वक हर ले गया है। इस समाचारके सुनते ही राठौरोंको और भी क्रोध हो आया। शीघ्र ही रत्नसिंह राठौर सेनाको लेकर युद्धक्षेत्रमें पहुंचा। उसने कुनारीपर पहुंचकर पुरदिलखांपर आक्रमण किया। अभागा मुसल्मान सेनापति उसके आक्रमणको न रोक सका और ६०० सैनिकोंके साथ रणभूमिमें मारा गया। उस दिन चैत्रमासकी नवमीको राठौरोंके केवल १०० मनुष्य मारे गये। यह हारनेकी बात सुनकर मिरजा, आशानीकी दोनों स्त्रियोंको ले अति भयभीत हो तोदादा गांवकी ओर गया। तदनन्तर उसने कुकोचालमें पहुँचकर डेरा डाला। यह समाचार आसकर्णके पुत्र सबलसिंहके

(१) संग्रामसिंह किस खानदानमें पैदा हुआ था और कैसे उच्चपदमें अभिषिक्त हुआ था, हम इसको प्रमाणित करनेमें असमर्थ हैं। तथापि इनके हृदयकी उदारतासे जाना जाता है कि इसने किसी बडे वंशको उज्ज्वल किया था। *

(२) सिवाना इसका प्राधान नगर है।

* संग्रामसिंह जुझारसिंहका बेटा था। और बादशाही नौकर था। मगर नौकरी छोड़कर राठौरोंके दुःखमे शामिल हो गया था। (प्रे० टी)

कानमें पहुँचा। वैसे ही वह अफीम खाकर यवनसेनापतिके विरुद्ध दौडा। यद्यपि मिरज़ाके यहां बडे२ वीरथे तथापि सबलसिंहकी तीक्ष्ण तलवारने उसके हृदयशोणितको पान कर लिया। किन्तु भाटी सरदार खण्ड खण्ड हो उसी स्थानपर मारा गया। रुधिरके कीचसे मार्ग निकलना कठिन हो गया; और मुसल्मानोंके एक २ थाने उनके हाथसे निकल गये।

देखते २ संवत् १७४१ भी बीत गया तौ भी हिन्दू मुसल्मानोंके घोर संग्रामका अन्त न आया। इसके उपरान्त संवत् १७४२ के आरम्भमें लाक्षावतों और आशावतोंने सांभरमें आकर मुसल्मानोंके विरुद्ध युद्ध करनेकी तैयारी की। इधर दूसरे सामंत भी गोडवारसे बाहर हो अजमेरके सिंहद्वारतक मुसल्मानोंपर आक्रमण करते चले आये। इन सब साधारण युद्धोंसे राठौर वीरोंकी क्रोधाग्नि शांत न हुई। अन्तमें उन्होंने मेरताक्षेत्रमें इकट्ठे होकर यवनसेनापर आक्रमण किया। किन्तु उस युद्धमें मुसल्मानोंने विजयी होकर राठौरसेनाको छिन्न भिन्न कर दिया। इस पराजयसे संग्राम सिंहकी क्रोधाग्नि और भी भडक उठी। वह उनसे अपना बदला लेनेके लिये अत्यन्त आतुर हुआ। उसने सेनासमेत जोधपुरके आसपासके गांवोंमें जाकर उनको जला दिया। तदनन्तर दूवाडानामक नगरमें पहुँच कर उसने अपनी सेना इकट्ठी की। उसके बिकट उत्साहसे राठौरसेना उत्साहित हो गगनभेदी शब्द करने लगी। उसने शीघ्र ही जालौरपर आक्रमण किया। उस समय वहाँके हाकिमको विवश होकर वह नगर छोडना पडता; परन्तु उस अवस्थामें उसपर किसीने भी अधर्म्माचरण नहीं किया। इस प्रकार १७४२ सवंत् भी अनन्त कालसागरमें लीन हो गया।

---

(१) कर्नल टाडसाहबका विचार है कि जब एक जन भाटीवीरने अपने इस कठोर अपमानका बदला लिया था। तब जान पड़ता है कि आशानी भटी खान्दानकी एक शाखा होगी।

आठवां अध्याय ८.
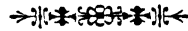
शिशुराजकुमार अजितके देखनेके लिये सरदारोंकी प्रार्थना; राठौरोंके साथ कोटाके दुर्जनशाल का मेल; आबूकी ओर उनका बढना; सरदारोंसे अजितकी मुलाकात; सरदारों के साथ अजितका स्थान प्रतिस्थानमे घूमना; औरंगजेबका भयभीत होना; उसकी सहायताके लिये और भी कईएक राजाओंका आना; एकत्र हुए राठौरों और हाडाओंके प्रभावसे मारवाडसे मुगलोंकी सेनाको दूर करना; पुरमांडलमें विप्लव; हाडा राजाका मारा जाना; दक्षिणावर्त्तसे दुर्गादासका आना; उसके हाथसे सफीखांकी हार; सफीखांका अजितको धोखा देनेकी चेष्टा करना; उसकी अकृतकार्यता और अपमान; मेवाडके राजकुमार अमरसिंहका विद्रोह; राठौर पर रानाकी अनुकूलता; अकबरकी दुहिताके लिये औरंगजेबकी संधिप्रार्थना; पहाडोंमे अजितका पुनर्वार आश्रय ग्रहण करना; विजयपुरका कांड; राठौरोंकी विजय; अपनी पौत्रीके लिये औरंगजेबकी आशंका; रानाके चाचीकी लडकीके साथ अजितका व्याह; युद्ध रोकनेके लिये पुनर्वार उद्योग; राजकुमारीका प्रत्यर्पण; राठौरोंका जोधपुरमें पुनर्वार अधिकार करना; दुर्गादासकी महानुभावकता; अजितका राज्याधिकार; उसकी पुनर्वार दुर्गति, हिन्दुजातिकी दुर्दशा; अजितका पुत्रलाभ; दूनाडेकी लडाई; औरंगजेबकी मृत्युसे हिन्दुओंको आनन्द; अजितका जोधपुरमें फिर अधिकार करना; मुसल्मानोंकी दुर्गति; बाहदुरशाहके नामसे आजमका दिल्लीकी गद्दी पर बैठना; आगरा युद्ध; सम्राट्का मारवाड पर आक्रमण करनेका उद्योग; अजमेरमे उसका आगमन; वैविलारुमें आना; अजितके निकट दूतका भेजना; मुसल्मानोंकी विश्वासघातकता; एकाएक जोधपुर पर आक्रमण करना; बादशाहके साथ अजितका जाना; राजाओंका असंतोष, उनका उदयपुर जाना; राजाओंका मेल; अजितका पुनर्वार जोधपुरमें अधिकार; अजमेरके सिंहासनपर जयसिंहको फिर गद्दीपर बिठानेके लिये अजितका उद्यम; साँभरका युद्ध; अजितकी विजय; जयसिंहके साथमें आमेरार्पण; अजितका बीकानेर पर आक्रमण; नागौरोंका उद्धार; राजाओंके ऊपर बादशाहका क्रोध; फिर मेल; अजमेरमें आगमन; बादशाहके समीप राजाओंका जाना; और फर्मानका प्राप्त करना; कुरुक्षेत्रमें अजितकी तीर्थयात्रा; तीस वर्षके युद्धोंकी समालोचना; दुर्गादासका गुणकीर्तन, अभयसिंहकी जन्म पत्रिका।

जिस समय प्रभुभक्त राठौर वीर पूर्वोक्त प्रकारसे मुसलमानोंके साथ युद्ध कर रहे थे, उस समय राठौरकुलका आशा भरोसा राजकुमार अजित उस घने वनमें धीरे २ बढ रहा था। उस दीर्घकालव्यापी युद्धमें जिसके लिये वीरोंने प्रसन्नतापूर्वक अपना रुधिर बहाया था, अबतक उन्होंने उसको नहीं देखा। सदैव युद्धभूमिमें रहनेके कारण उनको इतना भी अवसर न मिला कि, व राजकुमारका एक बार भी दर्शन करते इसीसे वे अबतक अपनी इच्छाको रोके हुए थे, किन्तु अब वह न रोक सके। संवत् १७४३ के प्रारंभकालमें ही चंपावत, कूंपावत, ऊदावत, मेडतिया, जोधा, करमसोत और मरुभूमिके दूसरे सरदार गण अपने राजाको देखनेके लिये अधीर हो उठे। उन्होंने खीची वंशीय मुकुन्दके यहाँ दूत भेजकर उसको बुला भेजा और कहा कि-"हम एक बार अपने

राजाको देखेंगे, किन्तु मुकुंदने उत्तर दिया कि जिसने विश्वास करके राजाको मेरे हाथमें समर्पण किया है वह इस समय भी दक्षिणमें है। सरदार कुछ भी शांत न रह-सके। खींचीवीरका उत्तर सुनते ही उन्होंने एक स्वरसे कहा कि जबतक हम एक बार अपने स्वामीको नहीं देखेंगे तबतक भोजन पानमें हमारी रुचि नहीं होगी। उनका ऐसा आग्रह देखकर मुकुंदने उनकी इच्छा पूर्णकी तदनुसार वे सब एकत्रित हो आबू पहाडके आश्रमकी ओरको चले। कोटाराज्यके हाडा राजा दुर्जनशालने दो हजार घुडसवारों समेत उनका साथ दिया इस समय वह भी राजाके देखनेको बाहर निकला संवत् १७४३ चैत्रमासकी अंतिम तिथिको सरदारोंने राजाका दर्शन कर अपने नेत्र सार्थक किये थे। जिस प्रकार सूर्यकी किरणोंसे कमल खिल उठता है, उसी प्रकार शिशुराज-कुमारको देखते ही राठौरोंका मानसकमल विकसित हो उठा, और जिस प्रकार भौंरा कमलरसको पान करता है उसी प्रकार वे सब राजकुमारके रूपसुधाका पान करने लगे। उस सभामें उदयसिंह, संग्रामसिंह, विजयपाल, तेजसिंह, मुकुंदसिंह और नाहर आदि चंपावत, राजसिंह, जगतसिंह और सामंतसिंह आदि ऊदावत और रामसिंह, फतहसिंह और केसरी आदि कूंपावत सरदार गण उपस्थित थे। इन सरदारोंके अतिरिक्त पुरोहित खीचीमुकुंद, पड़िहार और जैनश्रावक यती ज्ञानविजय उस राजमंडलीकी शोभाको बढा रहे थे। शुभलक्षणमें अजित सबके सामने प्रगट हुआ। पहले हाडारावने नए राजाको अभिवादन किया। अनंतर मारवाडके समस्त सामंतोंने उसे स्वर्ण मणि, मुक्ता और अश्वादि भेंटमें दिये।

इनायतखां द्वारा यह सब समाचार औरंगजेबको विदित हुए, राजसभामें उपस्थित होकर मुसलमान सेनापतिने ऊँचेश्वरसे कहा "महाराज! अधिपतिके न रहते हुए भी जिन्होंने आपसे बहुत समयतक युद्ध किया है, वे अब अपने राजाको पाकर इतने उत्साहित हो गये हैं कि जिसको आप स्वयं ही विचार सकते हैं अब बिना अधिक सेनाके उनका सामना नहीं हो सकता"।

आनन्दसे प्रसन्न हो जय २ कार करते हुए राठार सरदार शिशुराजाको आहोरमें ले गये, आहोरके अधिपतिने मौक्तिकके साथ "बाधू" विधान कर बहुतसे घोडे भेंटमें दिये। उस राठौर सामंतशिरोमणिके दुर्गमें अजितसिंहका बडा भारी संस्कार किया गया; और उसी स्थानपर टीकादोड़की रीति पूरी की गई। उसने आहोरके दुर्गसे बिदा ली। मार्गमें रायपुर, बीडा और बारोद उसके अधिकारमें आये, वहाँके सरदार गणोंने उनके निकट उपस्थित हो पूजा भेंट आदि की। अनन्तर वह आसोप दुर्गमें पहुँचा, वहाँ कूंपावत सरदारने उसका बडा भारी सत्कार किया। आसोपसे भाटी सरदारकी जागीर लवेरा लवेरसे मैरतियोंकी निवास-भूमि, रियाँ और रियाँसे करमसोतोंके खीमसरमें पहुँच कर वह वहाँके सरदारोंकी पूजाको प्राप्त हुआ। अजित इस प्रकारसे जिस स्थानको गया, उसी स्थानपर सरदार उसका सत्कार कर २ उसके झंडेके नीचे इकट्ठे होने लगे, वह खीमसरसे पाबूराव धांधलके

(१) राठौर वीर पाबूराव शूलकी युद्धविद्यामें प्रसिद्ध वीर था।

निवासस्थान कोल्हू नगरमें पहुंचा। उस समय पाबूरावने अपनी सेना लेकर उसका साथ दिया। अंतमें संवत् १७४४ भाद्रमासकी दशमीको राजकुमार पोकरणमें पहुँचा, वहाँ दुर्गादासने दक्षिणसे लौटकर उसके दलको पुष्ट किया।

वधावना और[1] टीकाडोरसे अजितकी होनहारता प्रगट हुई। इन दो मांगलिक अनुष्ठानोंसे राठौरोंका उत्साह और साहस दूना बढ गया। पराक्रमी दुर्जनशाल आदि[2] वीरोंने जब उस जलते हुए उत्साह और साहसकी अग्नि में ईंधन दिया तब राठौरोंका पराक्रम अत्यन्त ही बढ गया, इसको पाठक सहजमें ही समझ सकते हैं।

इनायतखाँ अत्यन्त ही भयभीत हुआ। राजपूतोंके इस नवीन सेना बलको दमन करनेके अभिप्रायसे उसने एक नवीन सेना सजाई, परन्तु मृत्युने उसपर आक्रमण कर उसकी समस्त आशाको तोड़ दिया, इससे औरंगजेब अत्यन्त ही दुःखित हुआ। उस समय उसने एक और भी यत्न किया, मुहम्मद[3]शाहनामक एक मनुष्यको राजा यशवंतका पुत्र कह कर उसे मारवाडके आधिपत्यमें नियुक्त किया; और अजितको पंचहजारी पदपर प्रतिष्ठित कर उसकी स्वाधीनता स्वीकार करनेको कहा। परन्तु अभागा मुहम्मदशाह उस राजसन्मानको न भोग सका। जोधपुरकी ओर आते २ उसने मार्गमें प्राणत्याग किये अनंतर इनायतखाँके बदलेमें सुजावतखाँ मारवाडका सेनापति नियुक्त हुआ। तत्पश्चात् राठौर और हाडा एकताके सूत्रमें बँधकर मारवाडका शत्रुओंके हाथसे उद्धार करनेके लिये मुसल्मानों पर आक्रमण करने लगे, मालपुरा और पुरमांडलमें जो मुसलमान सेना थी वह सब राजपूतोंकी तीक्ष्ण तलवारसे छिन्न भिन्न हो गई। इस पुरमांडलके किलेको घेरनेके समय हाडाराजाने एक गोलेसे प्राणत्याग किया; विजयी राजपूत इस स्थानमें ८ सहस्र मुहर सेना व्ययके लिये लेकर मारवाडको लौटे। इधर पुरोहित और दीवान गण अजितके राज्यमें धन इकट्ठा कर उसकी सहायता करने लगे। इस प्रकार संवत् १७४४ भी बीत गया।

संवत् १७४५ के प्रारम्भकालसे ही सुजाअतखाँने मारवाडपर कर बाँधनेका प्रस्ताव किया। प्रस्तावके समयमें उसने प्रतिज्ञा कर ली थी कि अगर राठौर विदेशी वाणिज्यका

---

(१) इस अनुष्ठानमें एक मनुष्य मोतियोंसे भरा हुआ एक पीतलका वर्तन नवीन राजाके मस्तकपर रख उसकी परिक्रमा करता है।

(२) इस समयमें वीर दुर्जनशाल चम्पावत सरदार मुजानसिंहकी लडकीसे व्याह करनेके निमित्त आया था। यद्यपि वह विवाह करनेको आया था परन्तु उसने युद्धमें साथ देनेके लिये कुछ भी टालाटूली न की; उस समय किसीने भी उसके हृदयको उत्तेजित न किया था। वह स्वयं ही साहस और स्वदेशानुरागसे उत्तेजित और उत्साहित हो उठा था।

(३) जब दिल्लीमे महाराज यसवन्तसिंहके कबीलोकी रक्षाके वास्ते राठौर औरंगजेबकी सेनासे घोर युद्ध करके मारवाडको चले आये थे तब दिल्लीके कोतवालने एक बालकको ले जाकर बादशाहको दिखाया था कि यह यसवन्तसिंहका लडका है। बादशाहने उसको मुहम्मदीराज नाम रखकर पाला था। वह संवत् १७४५ में प्लेगसे मर गया।

आदर करैंगे तो जो कुछ वाणिज्यपर कर आवैगा उसका एक चतुर्थांश मिलैगा, इसी बातमें वह सम्मत हुआ। अनंतर इनायतका लडका जोधपुर छोडकर दिल्लीकी ओर बढा। उसके रैनवल नामक स्थानमें पहुँचते ही जोधा हरनाथने उसपर आक्रमण कर उसकी धन दौलत और उसके साथकी स्त्रियोंको छीन लिया। खाँसाहब भयभीत हो शरण पानेके अभिप्रायसे कछवाहोंके निकट गये। उसे संकटसे उद्धार करनेके लिये सुजाअतबेग अजमेरसे निकला, किन्तु उसे भी दुर्दशाग्रस्त होना पडा। चांपावत मुकुन्ददासने उसपर आक्रमण कर उसका सर्वस्व छीन लिया।

संवत् १७४७ में सफीखाँ अजमेरका सूबेदार नियत हुआ। दुर्गादासने उसपर आक्रमण करनेकी इच्छा की। सफीखाँ एक पहाडी मैदानमें सेनासमेत खडा हुआ। दुर्गादासने उसी स्थानमें उसपर आक्रमण कर उसे अजमेरकी ओर भगा दिया। यह सब समाचार औरंगजेबको भी ज्ञात हुआ। उसने सफीखाँको लिख भेजा कि "अगर तुम दुर्गादासको परास्त कर सकोगे तो राज्यमें तुम्हारा सबसे बडा दर्जा किया जायगा और अगर तुम्हीं परास्त होगे तो तुमको बोला[1] भेजकर पदच्युत किया जायगा; और तुम्हारे स्थानपर सुजाअत नियत किया जायगा।" सफीखाँ, बडी विपतमें पडा उसने अपना कार्य सिद्ध होनेका उपाय न देखकर अजितको छलकर अपनी प्रतिष्ठा स्थिर रखनेका यत्न किया, और शीघ्र ही राठौर राजकुमारको इस आशयका एक पत्र लिखा कि–"आपका पितृराज्य आपको देनेके लिये मुझे सनद मिली है, अतएव राजाके प्रतिनिधिस्वरूप आप यहाँ आकर उसे ले जावें।" इस पत्रके पाते ही अजित बीस सहस्र राठौर सेनाके साथ अजमेरकी ओरको बढा "परन्तु शत्रुकी कुछ बदनियत है या नहीं" यह जाननेके लिये उसने मुकुंद चांपावतको आगेसे भेज दिया। पर्वतश्रेणीके दूर स्थित संकीर्ण मार्गके सामने ही आकर मुकुंदने शत्रुकी दुरभिसंधिको जान लिया; उसने लौटकर समस्त व्योरा अजितको कह सुनाया परन्तु राजकुमार कुछ भी भयभीत न हो अपने सरदारोंसे कहने लगा कि–"सरदारो! जब हम इतने निकट आ पहुँचे हैं तब आओ एक बार अजय दुर्गको भली प्रकारसे देखकर खाँसाहबका सन्मान ग्रहण करैं; यह कहकर अजित दलसमेत नगरकी ओर बढा। उस समय अजितकी वश्यता स्वीकार करनेके अतिरिक्त दुष्ट सफीखाँसे और कुछ न बन पडा, उसको तडफानेके लिये एक जनने कहा कि--"आओ! हम नगरको जला डालैं; नगर और आत्मरक्षाकी चिन्तासे व्याकुल हो सफीखाँ काँपने लगा, और अजितको संतुष्ट करनेके लिये उसने धनरत्न और अश्वादि भेंटमें दिये।

संवत् १७४८ के साथ ही साथ मेवाडमें नाना प्रकारका विप्लव उत्पन्न हुआ, राजकुमार अमरने अपने पिता राना जयसिंहके विरुद्ध तलवार उठाई। मेवाडराज्यके समस्त सरदार उसके साथ एकत्रित हुए। राना भयसे गोडवाड राज्यमें भाग गया; और घाणेरावमें सेना इकट्ठी करने लगा; अमर उसपर आक्रमण करनेमें तत्पर हुआ,

---

(१) एक घृणा दिखानेवाली वस्तु।

तब राना जयसिंहने राठोरोंसे सहायताकी प्रार्थना की, शीघ्र ही भेडतिया गण उसकी सहायताको आये, थोडे ही समयमें अजितने दुर्गादास और भगवान्को भी भेजा, वे दोनों जोधावंशी रिडमल और मारवाडके आठ सामन्त सम्प्रदायोंको एकत्रित कर राणाकी सहायताके निमित्त मारवाडसे बाहर हुए किन्तु उनकी सेनाकी हानि न हुई । चूडावत् और शक्तावत तथा झाला और चौहानोंने विदेशियोंकी सहायता ग्रहण न करनेसे पहिले ही पिता पुत्रके विवादको दूर कर दिया । इस प्रकार सिंहासनरक्षाके निमित्त राना मारवाडके निकट कृतज्ञताके पाशमें बंध गया था ।

राठौरोंका साहस और बल देखकर औरंगजेबके मनमें अनेक प्रकारकी शंकाएं उठ रही थीं; इस समय और भी एक नवीन शंकाने उसपर आक्रमण किया । ' राज-कुमार' अकबरकी एक पुत्री दुर्गादासके आश्रयमें थी, अजितको युवा अवस्थामें देख औरंगजेब उस समय उस लडकीकी इज्जतके लिये शंकित हुआ, इसलिये उसने राठौरोंके साथ संधि कर लेनेकी इच्छा की । नारायणदास कुलबी मध्यस्थ हुआ, इस संधिबंधनकी कथा वार्ता जबतक हुई तबतक सफीखाँ भी शत्रुभावको छोडे रहा । इस प्रकारकी बातोंसे संवत् १७४९ भी बीत गया ।

किन्तु मुसलमान चुपचाप न रहे । १७५० में जोधपुर जालौर और सिवानाके मुसलमान हाकिमोंने अपनी २ सेनाको एकत्रित कर अजितपर आक्रमण किया । अजित पुनर्वार पहाडोंमें आश्रय लेनेको विवश हुआ, वह वल्लभवंशी अश्वोंके साथ यवनोंके सन्मुख हुआ, परन्तु प्रतिमास उसको पराजित होना पडा । इसी समयमें मुसलमानोंने एक बडे भारी पवित्र सांडको मार डाला, इससे चांपावत् वीर मुकुंददासने उनपर आक्रमण किया । मोकलसर नामक स्थानमें दोनों दल परस्पर सन्मुख होकर खडे हुए मुकुन्ददासने जय प्राप्त कर चांकके हाकिम और उसकी सेना व सामन्तोंको बंदी कर लिया ।

इस पराजयको मुसलमानोंके कुग्रहका अग्रदूत कहना चाहिये । क्योंकि इसके थोडे ही दिन उपरान्त अर्थात् संवत् १७५१ में वह ऐसे संकटमें पतित हुए कि अनेक जनपद और नगरोंके निवासियोंने राठौरोंकी अधीनता स्वीकार की, उसमेंसे किसीने चौथ और किसीने कर दिया, और बहुत तो इस युद्धसे दुःखित हो तथा खाने पीनेकी सामग्री इकट्ठी न कर सकनेके कारण राठौरोंके दलमें संयुक्त होने लगे । इस साल कासिमखाँ और लश्करखाँने अजितके विरुद्ध युद्धकी यात्रा की, अजित उस समय विजय-पुरमें था; उनका आक्रमण रोकनेके लिये दुर्गादासका पुत्र सेनासमेत उनके सन्मुख हुआ । शीघ्र ही युद्धका आरंभ हुआ, अंतमें सफीखाँको पराजित होना पडा । वर्षके उपरान्त वर्षके बीतनेसे जैसे २ अजितकी अवस्था बढने लगी वैसे ही वैसे राठौरोंका उत्साह भी बढने लगा, इधर औरंगजेब अपनी पौत्रीकी वयोवृद्धिके साथ ही साथ दुःखी होने लगा, अकबरकी पुत्रीके लिये वह क्षणभरको भी कभी निश्चिन्त न रह सका । उसने क्षणभरके लिये भी उसके छुटानेकी चेष्टा न छोडी । उसने जोधपुरके हाकिम

सुजाअतखाँको लिखा जिस किसी उपायसे हो और जितना व्यय करनेसे हो, मेरे सन्मानको रक्खो।

इसी वर्ष राणाने अपने छोटे भाई गजसिंहकी लडकीके साथ आजितका सम्बन्ध स्थिर कर मुक्ताजटित नारियल और रत्नजटित अम्बाडियोंसे सुसज्जित दो हाथी और दश घोडे भेजे, यह सब भेंट आदरपूर्वक ग्रहण की गई; और ज्येष्ठ मासमें राठौर राजकुमारने उदयपुर जाकर शिशोदिया कुमारीसे पाणिग्रहण किया, और आषाढमासमें अजितने एक और व्याह[1] देवलियामें किया।

बादशाह औरंगजेब अपनी पौत्रीका ध्यान क्षणभर भी न भूल सका, वह सुलतानीके छुटानेके लिये रात दिन व्याकुल रहता, समय २ पर अजितको भी पत्र लिख भेजता, और समय पर दूतद्वारा उसके छोड देनेकी भी प्रतिज्ञा करता। संवत् १७५३ में दुर्गादाससे उसका पत्रव्यवहार होने लगा; अंतमें सुलतानीको लौटा कर आजित अपने पितृसिंहासनको प्राप्त हुआ। सम्राट्ने दुर्गादासको पंचहजारीपदपर प्रतिष्ठित करना चाहा परन्तु दुर्गादासने उसे स्वीकार न करके कहा कि "आप इस पदके बदले मुझे जालौर सिवानची सांचोर और थिरादको दे दो"। दुर्गादासने सुलतानी की जिस यत्न और सन्मानसे रक्षा की थी उसे जानकर औरंगजेबने उसकी बडी प्रशंसा की।

संवत् १७५७ के[3] पौषमासमें आजित पुनर्वार अपने पितृसिंहासनको प्राप्त हुआ। जोधपुरमें पहुँचकर उसने उस नगरके पाँचों द्वारोंके मध्यमें एक २ भैंसा बलि दिया था। सुजाअतखाँके मरजानेसे शाहजादा सुलतान उसके आगे २ मार्ग दिखलाता हुआ चला था।

---

(१) प्रतापगढ देवलिया यह छोटी रियासत मेवाडकी है, इसे मलने बसाया था; इसकी उत्पत्ति और प्रतिष्ठाका वर्णन राजस्थान प्रथमखण्डमें देखो।

(२) अजितने सुलतानीको न लौटाई और न उसके पलटेमें पितृसिंहासन प्राप्त किया। दुर्गादासने लौटाई थी और उसीको मनसबमें ऊपर लिखे परगने मिले थे, और यही कारण अजितसिंहके दुर्गादाससे नाराज होनेका हुआ था। उर्दू अनुवादमें भी अजितसिंहका सुलतानीको लौटाना नहीं लिखा।

(३) यहांपर एकबार ही चार वर्षका वृत्तान्त छूट गया है, हम नहीं कह सकते कि, यह चार वर्ष क्योंकर रह गये, और पता नहीं लगा। टाडसाहबने लिखा है कि कवि कर्णीदानके मूलग्रंथमें इन चार वर्षोंका कोई विवरण नहीं है, अथवा कोई लिखने योग्य बात न होनेसे अनावश्यक समझ कर छोड दिया है, इस समय यह बात ध्यानमें नहीं आती कि क्यों ऐसा हुआ, विदित होता है कि मुसल्मान उस समयमें दक्षिणकी लडाइयोंमें लग रहे थे, इससे राजपूत जातिके लिये शांति हुई थी। और यही कारण है कि उस समय मारवाडमें कोई वर्णनीय बात नहीं हुई।

(४) निश्चय राजकुमार अजितको यहां शाहजादेके नामसे लिखा गया है, उस समय वही गुजरातका प्रतिनिधि सरदार था।

संवत् १७५९ में आजमशाहने पुनर्वार जोधपुरपर आक्रमण किया और अजित जालौरमें वास करनेको विवश हुआ, उसके कोई २ सरदार शत्रुओंकी सेवा करने लगे। और किसी २ ने राठौरोंका आश्रय ग्रहण किया। राना भी इस समय विवश व निरुपाय था; उस समय केवल एकलिंग भगवान्‌के अतिरिक्त और किसीपर उसका आशा भरोसा न था। इधर आमेरेश्वर दक्षिणमें यवनराजकी सेवामें तत्पर था। मुसल्मानोंके पापभारसे चारों पाद पूर्ण हो उठे; वह यहाँ वहाँ, यहाँतक कि, मथुरा, प्रयाग और ओकामंडलमें भी गोहत्या करने लगे; दारुण अत्याचारसे पीडित होकर योगी और वैरागी देवताओंके आश्रयकी प्रार्थना करने लगे; परन्तु उससे कुछ भी फल न हुआ; हिन्दुओंका प्रताप जितना ही जितना क्षीण पडता जाता था मुसल्मानोंका अत्याचार उतना ही उतना बढता जाता था, इसी वर्ष अर्थात् संवत् १७५९ माघमासमें मिथुन लग्नमें अजितकी प्रधान महिषी (रानाके भाईकी पुत्री) ने एक पुत्र उत्पन्न किया। अजित पुत्रका मुख देखकर आनन्दके सागरमें मग्न हुआ और उसका नाम अभयसिंह रक्खा।

इसके पीछे कविश्रेष्ठ कर्णीदानने लिखा है कि " यूसुफखाँ इतने दिनोंतक जोधपुरके हाकिम अर्थात् प्रधान शासनकर्त्ता पदपर नियत था। इन्होंने जोधपुरमें आते ही बादशाहकी दी हुई मेरतादेशकी शासनसनद अजितके हाथमें देकर उक्त: देशके शासनका अधिकार भी अजितके करकमलमें अर्पण किया। मेरतिया सरदार कुशलसिंह एवं धांधल गोविन्ददासने भारको ग्रहण करनेकी आज्ञा दी, इन्द्रसिंहके पुत्र मोहकर्मसिंह जो अजितकी बाल्यावस्थासे ही उसकी रक्षा करते थे वह अजितकी यह अवस्था सुनकर महादुःखी हुए। जब उनको यह भार न मिला तब विचारने लगे कि अजितने हमें उचित पुरस्कार नहीं दिया है। अस्तु उन्होंने बादशाहको इस मर्मका पत्र लिखा कि यदि आप मुझे मारवाडके सेनापतिका पद दें तो मैं वहाँ हिन्दू मुसल्मान दोनों जातियोंके लिये संतोषप्रद शासन कर सकता हूँ "।

" संवत् १७६१ में राठौर जातिके चिरशत्रु यवनोंके सौभाग्यका सूर्य मानों अस्त हो गया। दुरात्मा औरंगजेबने समस्त भारतवर्षमें हिन्दुओंके ऊपर जो लोमहर्षण

(१) अभयसिंहका जन्म शिशोदिया रानीसे नहीं हुआ था किन्तु चौहान रानीसे हुआ था, जो महाराज अजितसिंहकी पटरानी, गांव होटल परगना सांचौरके चौहान चतुर्भुजदयाल दासोत् की बेटी थी। उर्दू तर्जुमेंमें भी अभयसिंहका जन्म चौहानरानीसे होना लिखा है। शिशोदिया रानीके पुत्रका नाम तो सुरतानसिंह था।

(२) उर्दू अनुवादसे इस सनदका मुर्शिदकुलीखांके हाथसे दिया जाना लिखा है जो यूसुफकी जगह पर जोधपुरमें आया था।

(३) उर्दू अनुवादमें यों लिखा है कि, कुशलसिंह मेडतिया और धांधल गोविन्ददासको मेडतेमें जाकर कब्जा करनेका हुक्म हुआ।

(४) यहां भी कुछ भूल मालूम होती है क्योंकि इन्द्रसिंह और मोहकमसिंह तो ठेठसे ही अजितसिंहसे शत्रुता रखते थे।

अत्याचार, उत्पीडन और निग्रह करके कालान्तकके समान अकबरके सिंहासनको कलंकित किया था तथा चारों ओर अपने प्रबल प्रतापका विस्तार कर पाशविक बलके कठिन स्वभावका परिचय दिया था, इस समय मानो उनका वह पैशाचिक बल विक्रम क्रमशः क्षीण हो चला। हिन्दूजातिके हिन्दूधर्मके सौभाग्य द्वारके मानो फिर खुलनेके पूर्व लक्षण दृष्टि आने लगे, जो मुगल शासनकर्ता मुराशिदकुलीखां प्रबल पराक्रमके साथ मारवाडको शासन करता था, इस वर्षमें माफरखाँ उसी पद-पर नियुक्त होकर जोधपुरके राठौर राजके यहां आया। मोहकमासिंहने अजितके आचरणसे क्रोधित हो सम्राट्के पास गुप्तभावसे जो पत्र लिखा था इस समय वह अजितके हाथमें आया। मोहकमासिंह अजितसे अत्यन्त भयभीत हो अपने सेवकोंके साथ राठौरोंके डेरोंको[1] छोडकर मुगल बादशाहकी सेनाके साथ जा मिले। अजितने बडी शीघ्रतासे यवनोंकी सेनाके विरुद्धमें युद्धकी यात्रा कर दूनाडा नामक स्थानमें महायुद्ध प्रज्ज्वलित कर दिया, उस भयंकर युद्धमें बादशाहकी सेनाके एक बार ही परास्त होनेसे और ईदावत[2] सम्प्रदायके उक्त मोहकमसिंहसे निहत होकर अपनी राजद्रोहिताके उपयुक्त फलको पा लिया। "संवत् १७६२ में यह संग्राम हुआ था।"

"संवत् १७६३ में बादशाहके लाहौरमें स्थित प्रतिनिधि इब्राहीमखां[3] लाहौरसे गुजरातमें जाकर कुमार आजिमके हाथसे वहांके शासनका भार ग्रहण करनेके लिये मारवाडसे[4] चले गये। चैत्रमासके कृष्णपक्षकी[5] द्वितीयाको राठौरोंने आनन्ददायक समाचार पाया कि औरंगजेबकी मृत्यु हो गई। इसको सुनते ही भारतके प्रत्येक हिन्दूके समान राठौर अत्यन्त आनन्दके समुद्रमें मग्न हो गये, औरंगज़ेबकी मृत्युसे हिन्दूजातिने मानो कृतान्तके कराल ग्राससे उद्धार पाया। अजित स्वजातिके प्रधान शत्रुकी मृत्युका समाचार पाते ही सेना सजाकर चैतमासकी पंचमीको घोडेपर सवार हो जोधपुरकी ओरको चले गये। और राजधानीके तोरणद्वारपर जाते ही उन्होंने जातिकी रीतिके अनुसार

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें राठौरोंके डेरोंको नहीं बरन् शाहजादेसे अलग होकर बादशाही फौजमें शामिल होना लिखा है।

(२) ऐसा जाना जाता है कि ईदावत सम्प्रदायका विशेषण मोहकमसिंहके साथ कहा गया है क्योंकि मारवाडी महावरेसे वा बोलचालसे मोहकमसिंह इन्द्रावत यानी इन्द्रसिंहका बेटा था। बादशाही सेना मोहकमसिंहसे नहीं निहत हुई, उर्दू तर्जुमेसे स्वयं मोहकमसिंहका निहत होना पाया जाता है। पर मोहकमसिंह उस लडाईमें निहत नहीं हुआ था, भागा था। यह बात मारवाडके गद्य इतिहासोंसे सिद्ध होती है।

(३) इब्राहीमखां बादशाहका साला था।

(४) उर्दू अनुवादमें यों लिखा है कि सं० १७६३ में लाहौरका बादशाही सूबेदार इब्राहीमखां जो बादशाहका समधी था। गुजरातकी सूबेदारीका चार्ज अजीमसे लेनेके लिये रास्ते चलता हुआ मारवाडसे निकाला।

(५) शुक्लपक्ष द्वितीया चाहिये, क्योंकि औरंजेबका देहान्त चैत्र कृष्ण अमावास्याको हुआ था।

तुरन्त ही भैंसोंका बलिदान किया, असुरगण (यवन) अजितको सेनासहित आता हुआ देखकर अत्यन्त भयभीत होकर अपने प्राणोंकी रक्षाके लिये महाव्याकुल हो गये। उनमेंसे बहुतसे तो प्राणोंके भयसे भागने लगे और बहुतसे मारे भयके गुप्तभावसे छिपने लगे अजितको आता हुआ देखकर यवन शासनकर्ता मारे डरके योधगिरीसे नीचे उतर आये और अजितने अपने पिताकी राजधानी जोधपुरके महलमें प्रवेश किया। छत्तीस वर्षतक दारुण कष्टको भोगकर जो राठौर जाति यवनोंके प्रति अत्यन्त क्रोधित हुई थी, उनके हाथमें पडकर उन्हें यवनोंपर किंचित्‌मात्र भी दया न आई। यवन निरास हो प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगे। उन्होंने मारवाडमें जो घोर अत्याचार करके अतुल धन संग्रह किया था वह समस्त धन आज फिर राठौर जातिके हस्तगत हो गया। राठौर गण अपना बदला लेनेके लिये उन भागे हुए बर्बर यवनोंको बन्दी करने लगे। यद्यपि बहुतसे यवनोंने इस घोर विपत्तिसे अपनी रक्षा भी की। परन्तु अन्तमें वह सभी छिन्नभिन्न देह होकर भाग गये, अनेक तो राठौर सामन्तोंके निकट तथा हिन्दुओंके देवमंदिरोंकी शरणमें गये। राजपूतोंका यह स्वभाव ही था कि वे निराश्रयको अवश्य ही अपने यहां आश्रय देते थे, इस कारण वे शरणागत यवन सरलतासे आश्रम पाने लगे। यवनोंकी सेनाके प्रधाननेताने स्वयं कूंपावतोंके अवतारितद्वार देवालयोंकी शरणमें जाकर अपने प्राणोंकी रक्षा की। इस समय राठौर गणोंने सब प्रकारसे जय प्राप्त की। समस्त राठौरोंने उन भागे हुए यवनोंके ऊपर आक्रमण करके अपना बदला ले लिया, उस समय यवनोंने अपने प्राणों की रक्षाके लिये भागनेके अतिरिक्त और कोई उपाय न देखा। यवनोंने हिंदूभिखारियोंका भेष धारण कर "सीताराम हरगोविन्द" देवताओंके नाम उच्चारण करते हुए भिक्षा मांगकर प्राण बचाए और रात्रिके समय एक २ करके एक ग्रामसे दूसरे ग्रामको भागने लगे। मुल्लाओंकी स्फटिक माला इस समय राम नाम जपने लगी, यवनोंने विचारा कि डाढी देख कर हमारी पहचान हो जायगी तब हम अवश्य ही पकडे जायँगे इस भयसे गुप्तभावसे रुपये दे देकर उन्होंने दाढी मुडवा ली मुरधरके प्रत्येक प्रांतमें केवल म्लेच्छोंका आर्तनाद सुनाई देने लगा, जिधर देखो उधर यवन भाग रहे हैं यही दृष्टि आता था। यवनगण मेरताको छोडकर भाग गये, और जो घायल हुए थे। वे नागौरको चले गये, सोजत और पाली दोनों प्रदेश फिर अजितके हस्तगत हो गये, म्लेच्छ यवनोंके जोधगढमें बहुत समयतक रहनेसे वह अपवित्र हो गया था इससे वह गंगाजल और तुलसीदलसे पवित्र कर लिया गया और अजितने राजतिलक धारण किया।

"औरंगजेबके पापी जीवनके पंचभूतमें लीन होते ही उसके पुत्र पिताके सिंहासनपर अधिकार पानेके लिये राजधानीकी ओर चले। कवि लिख गये हैं " कि दक्षिणसे आजिम और उत्तरसे मुअज्जमने भारतके सिंहासनको हस्तगत करनेके

---

(१) महामान्य टाड महोदय लिखते हैं कि औरंगजेबके शासन समयमें यवनोंकी डाढी मूँछोंको देखकर हिन्दू और राठौरोंने यवनोंके चिह्नस्वरूप डाढी मूंछतकको नहीं रक्खा था।

लिये सेनासहित दर्शन दिये। आगरेमें जाकर दोनो असुरदलोंमें भयंकर युद्ध उपस्थित हुआ। औरंगजेबके बडे पुत्र शाहआलम इस युद्धमें जय प्राप्त करके पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए। नवीन बादशाहने शीघ्र ही यह समाचार पाया कि अजितने मारवाडमें सभी यवनोंको विध्वंस करके छिन्न भिन्न कर दिया है और उनके समस्त धन रत्न छीन कर वह अपने पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए हैं।

" संवत् १७६४ में वर्षाऋतुके बीतते ही नवीन मुगल बादशाह शीघ्र ही अपनी प्रबल सेना साथ लेकर अजमेरमें आ गया। इस समय भगवानके पुत्र हरिदास ऊहड और मांगलीयके दोनो सामन्त, ऊदावतोंके नेता रत्नसिंहने अपनी सम्प्रदायके आठसौ योधाओंके साथ जोधपुरमें जाकर अजितके नामसे शपथ करके कहा कि हमने जीवनदान करके आपकी राजधानीकी, पापी यवनोंके हाथसे रक्षा करनेकी प्रतिज्ञा की है, बादशाहकी सेनाने शीघ्र ही भाभी वीलाडानामक स्थानमें डेरे डाल दिये। महाराज अजित भी बादशाहकी सेनाके आक्रमणको निवारण करनेके लिये शीघ्र ही तैयार हो गये। धूर्त्त औरंगजेबने जिस प्रकार समयके परिवर्तनमें सबसे पहले चातुरीजालसे अपने उद्देशको सिद्ध कर लिया, उसके पुत्र नवीन बादशाहने भी इस समय उसी प्रकारसे पिताके मार्गका अनुसरण किया। उसने अपनी चातुरी जालका विस्तार कर मारवाडेश्वर अजितको अपने हस्तगत करनेके लिये उनके निकट सन्धिका प्रस्ताव भेज दिया। अजितने बादशाहके दूतके आते ही अपने दूतको उस बादशाहके दूतके साथ बादशाहके यहाँ भेजकर संधिके प्रस्तावमें अपनी सम्मति प्रगट की। सम्राट्ने फिर उसी दूतके हाथ अजितके पास मारवाडकी सनद देनेके लिये भेजी; परन्तु अजितने उस राजसनदको लेनेके पहिले ही एक बार बादशाहसे साक्षात् करनेकी अभिलाषा की। एक मतसे फाल्गुन मासकी पहली तारीखको अजित सेनासहित योधगिरि छोडकर वीसलपुरकी ओर चले। खानखाना (प्रधान अमात्य)के पुत्र सुजाअतखांने कितने ही अमीर और भदावरके राजा तथा बूँदीके राव बुधसिंहके साथ बादशाहकी ओरसे पीपाड नामक स्थानमें इनका बडा आदर सत्कार किया। किस प्रकार से संधि होगी, रात्रिमें केवल इसी प्रस्तावकी मीमांसा हुई, दूसरे दिन प्रातःकाल ही अजित मरुक्षेत्रकी समस्त सेनाके साथ आगे बढे। और आनन्दपुर नामक स्थानमें म्लेच्छोंके अधीश्वरके साथ उनका साक्षात् हुआ। बादशाहने इनको "तेगबहादुर" की उपाधिसे विभूषित किया। परन्तु बादशाहने जिस समय अजितको उपाधि देकर उसका सन्मान बढाया था उस समय उनकी चतुरता सफल हो गई। अजितके वीसलपुरमें सेना सहित आते ही बादशाहने अच्छा मौका पाकर गुप्तभावसे महरावखाँको सेनासहित जोधपुर पर अधिकार करनेके लिये भेज दिया था। विश्वासघाती मोहकम भी उसके

(१) यही बहादुरशाह नामसे सिंहासनपर बैठा।

(२) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखा है कि फागुनकी १ तिथिको उसने (अजितसिंहने) जोधाके पहाडसे कूच किया और रवाना होकर बीसलपुर पहुँचा, वहाँ उसके पास खानखाना सुजाअतकी मारफत संदेशा आया, उसके साथ भदोरिया राजा और रावबुधसिंह बूंदीके थे। पीपाडमें मुलाकात ठहरी।

साथ गया था। इस कारण उन्होंने अजितके न होनेपर बडी सरलतासे जोधपुरपर अधिकार कर लिया। अंतमें अजितने जब बादशाहकी इस चालाकीको जाना तब वह अत्यन्त क्रोधित हो मतवाले हाथीके समान उन्मत्त हो गया। परन्तु बुद्धिमान् बादशाहने उस समय भी अजितको इस प्रकारसे अपने हस्तगत कर लिया था कि, वह उस क्रोधको अपने हृदयके भीतर ही रखकर बादशाहके साथ कुमार कामबख्शके अधीन करनेको दक्षिणको चले गये। आमेरके महाराज मिरजा राजा जयसिंह भी इस समय इस स्थानपर बादशाहके साथ थे; वह भी मारवाडके महाराजके समान प्रतारित होकर अत्यन्त रुष्ट हो गये। बादशाह शाहआलमने गुप्तभावसे आमेरमें एक दल यवनोंकी सेनाका भेजकर उसपर अपना अधिकार कर जयसिंहके छोटे भ्राता विजय सिंहके शिरपर आमेरराजकी पताका शोभायमान कर दी थी, उस समय जयसिंह भी अजितके समान बादशाहके साथ दक्षिणको गये थे। अनंत जलसे पूर्ण नदी जिस प्रकारसे अपनी तरंगोंके वेगसे किनारोंको तोडती हुई महागर्जना करके अपने अंगका विस्तार करती है उसी प्रकारसे बादशाहकी सेनाने राजपूतोंकी सेनाके साथ मिलकर शीघ्र ही यात्रा प्रारंभ की। यवन बादशाहके शीघ्र ही उस नदीके पार होते ही दोनों राजपूत राजाओंने निर्द्धारित कल्पनाकार्यके सफल करनेमें किंचित् भी विलम्ब न किया। वे बादशाहसे कुछ न कहकर सेना और सामन्तोंकी मंडलीके साथ सीधे रजवाडेकी ओरको चल पडे। वे सबसे पहले उदयपुर पहुंचे, महाराणा अमरसिंह आगे बढकर बडे आदर सन्मानके साथ उनको अपनी राजधानीमें ले आये। तीनो राजा एक साथ बैठे तीनो राजाओंके मस्तकपर राजछत्र शोभायमान होने लगा, वे लोग मानो त्रिमूर्तिसे ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वररूपसे अनुपम सुखमा प्रकाश करने लगे- इन तीनों महाबली राजाओंके संमिलन तथा मित्रतासे असुरोंके भाग्यका पतन होना प्रारम्भ हुआ, और अपने धर्मकी महिमाका विस्तार हुआ।

उदयपुरसे महाराज अजित और महाराज जयसिंह भी मारवाडमें आये थे। दोनों राजाओंके आहोयामें आते ही चांपावत् सम्प्रदायके नेता उदयभानुके पुत्र संग्राम सिंहने अपने मस्तकपरसे पगडी उतारकर बिछा दी। दोनों महाराज उसके ऊपर चलकर सामन्तके यहाँ गये।

"१७६५ संवत्के श्रावण मासमें प्रतीत हुआ कि असुरोंका आशा भरोसा एक बार ही लुप्त हो गया। अजित अपनी जन्मभूमिमें आ गये हैं यह समाचार पाते ही महरावखाँ अत्यन्त भयभीत हुआ। सात तारीखको तीस हजार राठौरोंकी सेनाने जोधपुर राजधानीको जा घेरा और १२ वीं तारीखको महरावखाँने आत्मसमर्पण किया। आसकर्णके पुत्रने उस समय उसके जीवनकी रक्षाकी थी, इसीसे उसने उसको

(१) मिरजा राजा तो मर चुके थे, इस समय सवाई जयसिंह थे। (२) अर्थात् नर्मदा।

(३) यवन इतिहासवेत्ता लिखते हैं कि यह सम्राट् इस समय लाहोरकी ओर गये थे।

(४) हमारे पाठकोंने प्रथम कांडमें इन तीनों राजपूत राजाओंके संमिलनसूत्रसे विवाहिक सम्बन्ध बंधनके विषयमें पढा होगा। ज्ञात होता है कि उसका उल्लेख करना भूल गये थे।

धन्यवाद दिया। महराबखाँ बडे आदरभावके साथ सेनासहित उसकी रक्षामें लग गया। अजित अत्यन्त ही आनन्दित हो मरुक्षेत्रकी राजधानीमें आ गये।"

इसके पीछे राठौरोंके कविने लिखा है कि "महाराज जयसिंह सूरसागरके किनारे रहने लगे, वे राज्यसे भ्रष्ट थे, इस कारण अत्यन्त विषादित हृदयसे असंतोषकी अवस्थामें अपने भाग्यकी परीक्षा करने लगे। परन्तु वर्षाऋतुके बीतते ही कछवाहोंके प्रधान सामन्त अजयमल्लने जयसिंहको फिर सिंहासन पर बैठालनेका प्रस्ताव किया। अजित शीघ्र ही जयसिंहके साथ सेनासहित मेरतानामक स्थानमें आ पहुँचे, उनके भयसे आगरा और दिल्ली कंपायमान होने लगा; दानों राजाओंके अजमेरमें आते ही वहाँका यवन शासनकर्त्ता प्राणोंके भयसे अत्यन्त भयभीत हुआ, उसने ख्वाजा कुतबनामक महम्मदी साधूकी मसजिदका आश्रय लिया, और अजितसे अपने प्रति दया करनेके लिये कहला भेजा। शासनकर्त्ताने अजितके प्रस्तावके मतसे बहुतसा रुपया भी दंडमें दिया। इसके पीछे अजित बाज पक्षीके समान आमेर देशपर जा टूटे। इस स्थानपर आमेर राजके प्रत्येक श्रेणीके सामन्त सेनासहित आकर उनके अधीश्वर जयसिंहके साथ जा मिले। आमेरकी यवनसेनाके नायक सैयदहुसेनने बारह हजार यवनसेनाके साथ उस सांभर झीलके तीर भूमिपर अग्रसर हो अजितसिंहके साथ संग्रामानल प्रज्ज्वलित कर दी। सबसे पहिले कूंपावत सामन्तोंने यवनोंपर आक्रमण किया, घोर युद्ध होने लगा। हुसेनने ६ हजार यवनोंकी सेनाके साथ रणभूमिमें सर्वदाके लिये शयन किया। और बची बचाई सेना अपने प्राणोंके भयसे जिधर तिधर भाग गई। सैयदहुसेनके सहकारी पडिहार जातिके नेता इस समरभूमिमें अजितकी तलवारसे आहत होकर हताश हो गये। अजित उस परिहार पतिका प्राण नाश करके मन्दोर राज्यको चले जायंगे—यह विचार करने लगे। इस युद्धमें पराजयका समाचार पाते ही असुर गण सांभर छोड़कर चारों ओरको भाग गये। सांभरमें एक सेना रखकर अजितने माघमासमें जयसिंहको आमेरका राज्य दे दिया। अजित बीकानेरपर आक्रमण करनेके लिये पहलेसे ही तैयार हो गये थे, इस कारण विश्वासी रघुनाथ भंडारीको दीवानकी उपाधि देकर उसके हाथमें सांभरके शासनका भार अर्पण कर आप बीकानेरकी ओरको चले गये।"

"संवत् १७६६ भादोंके महीनेमें सम्राट् औरंगजेबने कामबख्सका प्राण नाश

---

(१) दुर्गादासने महराबखांके आत्मसमर्पणके प्रस्तावको ग्रहण करके उसके प्राणोंकी रक्षा की थी।

(२) उर्दू तर्जुमेसे जाना जाता है कि कछवाहोंने अजमल अर्थात् अजितसिंहको आमेरमें फिरसे बिठलाना चाहा।

(३) उर्दू तर्जुमेमें यहां आमेरका छोडना लिखा है।

(४) यहां औरंगजेबका नाम भूलसे लिखा गया है, मुअज्जम अर्थात् शाहआलम बादशाहका नाम चाहिये।

किया। जयसिंहने इस समय फिर यवन बादशाहके साथ संधि करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। मारवाडके महाराज अजितने इस समय सेनासहित नागौर पर अधिकार कर लिया था। नागौरपति इन्द्रसिंह[2] अपनेको अत्यन्त दुर्बल और असमर्थ जानकर अग्रसर हो अजितके चरणोंमें आत्मसमर्पण करनेकी प्रार्थना करने लगे। अजितने अपने आत्मीय भ्राताको शरण आया हुआ देख उसके ऊपर दया प्रकाश कर नागौरके बदलेमें लाडनूको उसके वंशानुक्रमसे शासन करनेके लिये दे दिया। परन्तु इन्द्रसिंह इससे संतुष्ट न हुए; कारण कि वह सम्पूर्ण नागौरके अधीश्वर होकर एक सामान्य देशको लेकर किस प्रकारसे संतुष्ट हो सकते थे?--इन्द्रसिंहने बडी शीघ्रतासे अजितके इस आचरणसे रुष्ट हो दिल्लीके बादशाहके यहाँ जाकर इस समाचारको कहा। मुगल बादशाह अजितके उस समाचारको सुनकर अत्यंत क्रोधित हुआ, राजपूतजातिने भी बादशाहके क्रोधका समाचार सुना; और फिर सबने एकत्र संमिलनसे अपने २ स्वार्थकी रक्षा करना अवश्य कर्तव्य समझा। समस्त राजपूत राजा बडी शीघ्रतासे डीडवाना नगरके पास कोलियानामक स्थानपर इकट्ठे हुए, और यवन बादशाह भी बडी शीघ्रतासे अजमेरसे आते हुए दिखाई दिये। यवनसम्राट्ने अजमेरसे मित्रभावके चिह्नस्वरूप अर्थात् हाथके चिह्नकी लगी हुई सनद राजाओंके पास भेजी। सम्राट्का प्रधान अनुचर नाहरखां उस सनदको लाया। आषाढमासकी पहली तारीखको मारवाड और आमेर राज वह सनद लेकर बादशाहसे साक्षात् करनेके लिये अजमेरको गये। बादशाहने सबके सन्मुख बडे आदर भावसे दोनों महाराजाओंसे साक्षात् की। उन्होंने अजितको नौदुर्गयुक्त मरुभूमि और जयसिंहको आमेरके शासनकी सनद देकर बडे सन्मानके साथ बिदा किया। दोनों राजा बादशाहसे बिदा होकर पूर्वकी ओर पवित्र पुष्कर तीर्थमें स्नान करनेके लिये गये तीर्थकर्मके समाप्त हो जानेपर दोनो राजा परस्पर मित्रभावसे बिदा होकर अपने अपने राज्योंकी ओर चले गये। अजित संवत् १७६७ के श्रावणमासमें जोधपुरकी राजधानीमें आकर अपने पिताके सिंहासन पर बैठकर राज्य करने लगे। इस वर्ष अजितने गौडसम्प्रदायकी राजकुमारीके साथ पाणिग्रहण किया। अर्ज्जुनसिंहने दिल्लीके आमखास नामक दरबारमें अमरसिंहकी हत्या करके राठौर जातिके साथ जातीय शत्रुताका बीज बो दिया था, अजितने

---

(१) कामबखस औरंगजेबका पुत्र था, एक राजपूत राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था। कामबखस औरंगजेबकी वृद्धावस्थाका पुत्र था, इसीसे यह उसको बहुत प्यारा था औरंगजेबने मृत्युकी शय्यापर पडकर इसको जो स्नेहपूर्ण पत्र लिखा था हमारे पाठकोंने प्रथम कांडमें उसे पढा होगा।

(२) इन्द्रसिंह यशवन्तसिंहके बडे भ्राता महातेजस्वी अमरसिंहके पुत्र और अजितके विश्वासहन्ता मोहकमसिंहके पिता थे। मोहकमसिंहने अजितसे मेरताके शासनका भार न लिया था। इसी कारण वह उनके विरुद्ध बादशाहके साथ जा मिले थे।

उस शत्रुताको भी उन्मूल कर दिया। अजित इसके पीछे महाभारतमें लिखे हुए कुरु पांडवोंके महा युद्धस्थान कुरुक्षेत्रको चले गये; और भीमकुण्डपर जाकर पुण्यको संचय करने लगे। इस प्रकारसे १७६७ संवत् व्यतीत हो गया"।

(१) राजपूतोंका यह और एक विचित्र निदर्शन हैं। और वे राजाके घोर शत्रु होनेपर भी जातीय स्वत्वकी रक्षाके लिये उसीका पक्ष लेते हैं। हमारे पाठकोंने पहले ही पढा होगा कि महाराज यशवन्तसिंहके बडे भ्राता अमरसिंह एक मात्र उद्धत स्वभावके कारण अपने पितासे छोड दिये गये थे, और जातिके समस्त अधिकारसे रहित करके अंतमें मारवाडसे निकाल भी दिये गये थे; तब दिल्लीके सम्राट्की सभामें प्रशंनीय वीराभिनय करके उक्त अर्जुनके द्वारा मारे गये। अमरसिंहके पुत्र इन्द्रसिंहने और पौत्र मोहकमसिंहने जो यशवन्तसिंहके बडे भ्राताके वंशधर थे, जोधपुरका सिंहासन पाने के लिये जन्मभरतक विशेष चेष्टा की, और अजितके स्वार्थ नाश करनेमे कुछ भी कसर बाकी न रक्खी, परन्तु कैसा विचित्र जातिका स्वभाव है कि जब समस्त राठौरजाति स्वजातिके स्वार्थकी रक्षाके लिये यवनोंके विरुद्ध खडी हुई, तब अजितके शत्रु इन अमरसिंहके वंशधरोंने बडी शीघ्रतासे अजितका पक्ष लिया। यद्यपि यह बादशाहके यहांसे स्वतंत्र शासनकी सनद पाकर नागौर को शासन करते थे तथापि इन्होंने अजितका साथ * दिया। राठौरोंका जातीय विधान कैसा हृदयहारी है!

(२) कर्नल टाडसाहबने इस स्थानपर लिखा है। "कि भारतवर्षके इस प्राचीन महा युद्धके समय इस कुंडके सम्बन्धमें जो एक प्रवाद वचन प्रचलित है, उसको पढकर वीरव्रतावलम्बी राजपूत जाति किस प्रकारसे संस्कारयुक्त थी, यह सरलतासे जाना जा सकता है। भारतके प्राचीन महावीरोंके अभिनय क्षेत्रस्वरूप इस संग्रामस्थलको देखनेके लिये सम्राट् बहादुरशाह संभवतः अपनी राजपूत रानी और राजपूत जननीकी प्रेरणासे वहां गये। कुरुओंके प्रधान नेता भीष्म कुंडपर कि जिसको एक बडा भारी वृक्ष ढके हुए था, बहादुरशाहने चारों ओर कनातें रोक कर अपनी रानीको बिठाला था। कि इसी अवसरमें एक गृद्ध हड्डीका टुकडा चोंचमें दबाये हुए उस वृक्षकी शाखा पर आ बैठा, और थोडे ही समयमें वह अस्थि भीष्मकुंडमें गिर गयी, तब वह ऊँचे स्वरसे हँसने लगा। चारों ओरसे घेरे हुए स्थानमें अचानक मनुष्यके हँसनेका शब्द सुनकर सम्राट बहादुरशाह अत्यन्त विस्मित हुए। और ऊपरको देखकर उस पक्षीको मनुष्यके समान बोलता हुआ सुनकर और भी विस्मित हुए। पक्षीने बादशाहको बुलाकर मनुष्यकी बोलीमें यों कहना प्रारंभ किया, "पूर्व जन्ममें मैं योगिनी था। मैंने इस कुरुक्षेत्रके महायुद्धमेंसे एक महाबली वीरकी कटी हुई भुजा उठा ली। और वृक्षके ऊपर आकर बैठ गया। उस बाहुमें एक बड़ा कीमती स्फटिक मणिका अलंकार था। मेरे हाथमेंसे कुछ ही समयके पीछे वह मणियोंसे जडा हुआ अलंकार इस कुंडमें गिर गया। और आज भी इसी प्रकारसे इस कुंडमें हड्डी गिरी है, इस समय मुझे वही पहली बात स्मरण हो आई, इसी लिये मैं ऊँचे स्वरसे हँसने लगा"। यह हम अवश्य ही अनुमान कर सकते हैं; कि गृद्ध संस्कृत वा देशी भाषामें जो यह बातें कह रहा था। रानीने उसका यथार्थ अर्थ करके बादशाहको समझा दिया। बादशाहने शीघ्र ही उस अलंकारको लानेके लिये गोतेखोरोंको कुंडमें घुसनेकी आज्ञा दी। गोतेखोर तुरन्त ही बादशाहकी आज्ञासे उसके भीतर घुसे और बडी शीघ्रतासे उस महायुद्धका चिह्नस्वरूप स्फटिक मणियोंसे जटित अलं—

* इन्द्रसिंह मोहकमसिंहने कभी अजितसिंहका साथ नहीं दिया। हमेशा शत्रुता करते रहे साथ देनेकी बात गलत और इतिहास विरुद्ध है। (प्रे० टी०)

हिन्दुओंके आशा भरोसा मध्याह्नमार्त्तंड यशवन्तसिंहके काबुलमें अकालमृत्युसे स्वर्गवासी होनेपर अजितके पिताके सिंहासनपर अभिषेकके समयतकका इतिहास हमने राठौर कवियोंके इतिहाससे अविकल अनुवाद कर दिया है। इस तीस वर्ष व्यापी महा-युद्धका वृत्तान्त हमारे पाठकोंको सरलतासे ज्ञात हो जायगा, तब वह अवश्य जान जायँगे कि राठौर जाति इस दीर्घकालमें किस प्रकारसे अपने जातीय स्वत्वकी रक्षाके लिये कैसी राजभक्ति दिखाती थी । तथा किस प्रकारका बल विक्रम प्रकाश कर गई है।वर्तमान अध्यायकी समाप्तिके पहले हम इस स्थानपर महात्मा टाडसाहबकी शेष उक्तिको अविकल प्रकाश करनेकी अभिलाषा करते हैं । अतीत तीस वर्षकी घटनावलीकी समालोचनासे कर्नल टाडसाहबने जो कुछ लिख दिया है--हम उसके अतिरिक्त कुछ नहीं कह सकते । महात्मा टाडसाहब लिख गये हैं, कि--" दीर्घकाल स्थायी समरके समयमें राठौर गणोंने जिस प्रकारकी अटल राजभक्ति दिखाकर अपने

—कारको निकाल लाये । उसकी बडी २ मणियोंको देखकर बादशाहने कहा । इसको गलीचेके ऊपर रक्खो, इससे सब कार्य सरलतासे पूरे हो जायगे । बादशाहके साथ उस स्थानपर जो समस्त हिन्दू राजा थे, उनमें राजा अजित और जयसिंह सम्राट्की इस आज्ञासे अत्यत दुःखित हुए, उन दोनोंने बादशाहसे एक एक स्मरणीय रत्न मांगा । मिरजा राजा सवाईसिंहको दो मणियें दी गईं, वे दोनों मणि इस समय जयपुरमें हैं एक तो वहां सिलादेवीके मंदिरमें है । और दूसरी गोविन्दजीके मंदिरमें रक्खी गयी है। अजितने जो एक रत्न पाया था । वह भी आजतक जोधपुरमें गिरिधारीजीके मंदिरमे रक्खा है, और वहां उसकी पूजा होती है । हमारे प्राचीन शिक्षक और मित्र यतिज्ञानचंन्द्र-ने जो इस प्रवादके श्लोकको पढकर व्याख्या की है । मैंने उसका अनुवाद कर लिया, उन्होंने इन तीनों मणियोंको देखा था, और इन तीनोंकी प्रति प्रीति भक्ति दिखाकर उनकी पूजा की थी। उन्होंने अनुमान किया था; कि कोटा बूंदीमें इस प्रकारका और भी एक रत्न है, राणाने किस उपायसे उक्त रत्नोंमेंसे और एकको सग्रह कर लिया, सो विदित नहीं । इन पवित्र सफेद मणियोंमेसे एक २ मणि वजनमें आध सेर होगी । कुरुक्षेत्रके युद्धके समयमें अवश्य ही विराट् शरीरवाले मनुष्य थे । नहीं तो इस प्रकारके वजनवाली तेरह मणियोंका हाथमें पहरना कुछ साधारण बात नहीं थी । यही कहा जायगा कि कविश्रेष्ठ होमरके * वीर कुरु वीरोंके निकट वामनस्वरूप थे । "तब यह संदेह हो सकता है कि कुरुओंकी भुजाओंके अलकारोंको वह तोल सकते थे अथवा नहीं । हमारे पूजनीय शिक्षक यद्यपि उदार मतावलम्वी थे; परन्तु उन्होंने पूर्वकालके विराट्काय मनुष्योंके सम्बन्धमें साधारण मतके विपरीत मत दान नहीं किया । उन्होंने कहा कि मनुष्योंकी आकृति क्रमानुसार युग २ में छोटी हो गई है । इसमें कुछ भी सदेह नहीं ।"

---

* होमर नामका कवि यूनानमें हो गया है,वह सिकन्दरसे कई सौ वर्ष पहले हुआ था । परन्तु उसकी वीररसपूर्ण परम ओजमय काव्यका समस्त यूरपमें अब भी बडा आदर होता है । होम काव्यकी एक प्रति औडसीका अंग्रेजी गद्यानुवाद मैंने देखा है। उससे मुझे वह कथा कविकल्पना मालूम होती है । इतिहासमें नहीं है ।

जातीय चरित्रके महत्वको प्रकाश किया था, संसारके अन्य किसी जातिके इतिहासमें हमने ऐसी राजभक्ति दूसरी जगह नहीं देखी। राठौरोंके कविने लिखा है कि, इस दीर्घस्थायी युद्धक समयमें एक सामन्तने भी स्वाभाविक मृत्युशय्यापर शयन नहीं किया" (अर्थात् रोगी होकर कोई सामन्त नहीं मरा) जो मनुष्य बिचारते हैं कि हिन्दू बीरोंके हृदयमें स्वदेश हितैषिता नहीं थी वह इस वर्षके अलंकृत इतिहासको पढैं; और वह जगत्के अन्य किसी जातिके इतिहासके साथ इसकी तुलना करके देखें, और राजपूत जातिके असीम साहसके लिये धन्यवाद दें। यह उद्धृत इतिहास अत्यन्त सरलस्वभावसे रचा गया है और इसकी सत्यताका विशेष समर्थन करना है। इस समरक समयमें अत्याचारी यवन सम्राट् साम्राज्यके ऊँचे पदपर नियोगका लोभ दिखाकर राजपूत जातिकी मूलनीतिको नष्ट करनेके लिये उद्यत हुए थे; जिससे वे स्वजाति, स्वधर्म, स्वदेश और अपने अधीश्वरोंके विरुद्ध सम्राट्की सहायता करें; बादशाहने एक२ समयमें एक२मनुष्यको इतना लोभ दिखाया कि वह लोभ अपरिहार्य हो गया। परन्तु ऐसी घटना अत्यन्त सामान्य हुई कि जिससे राजपूत जातिने उस लोभके प्रति घृणा न दिखाई हो। राजपूत जातिके गौरवकी गरिमा स्वरूप महावीर दुर्द्धर्ष साहसी दुर्गादासके आचरण कैसे उज्ज्वल दृष्टान्तके स्थान हैं। बल, विक्रम, राजभक्ति और विश्वास आदि गुण उनकी गाढ बुद्धिके साथ मिलकर महा विपत्तिमें भी उनकी महोच्चताका चूडान्त प्रमाण दिखा गये हैं; और वही सद्गुणावली आजतक राठौर जातिके स्मृति मार्गमें पडकर उनकी कीर्तिको बढा रही है। यवन सम्राट्ने उनको जो लोभ दिखाया था, वह सब प्रकारसे अपरिहार्य है-बादशाहकी केवल सुवर्णकी मुद्रा ही नहीं बरन् उन्होंने स्वजातिकी दृष्टिसे सहस्रों मुद्राओंको घृणाकी दृष्टिसे फेंक दिया था, वे उसी मुहूर्त्तमें मरुक्षेत्रके अधीन सामन्तपदसे एक बार ही देशीय राजाओंके समान पद, मर्यादा और सामर्थ्यको प्राप्त करते थे पर उन्होंने उस लोभके प्रति भी आग्रह न किया, राठौर कविने यथार्थ ही कहा है कि वह अमूल्य और अतुलनीय थे। राजपूत जातिके आजीवन पालनीय एक मात्र प्रतिहिंसाके लिये उन्होंने उस महोच्च सन्मानको ग्रहण न किया था। उन्होंने शत्रुओंके षडयंत्रसे उनके साहसी अग्रज सोनगके प्राण हननका बदला लेनेके लिए इतनी दया प्रकाश की थी, कि वह जिस युद्धमें जाते उसीमें अपनी भ्रातृहत्याकी उचित प्रतिहिंसा सफल कर लेते थे। कुमार अकबर जिस समय अपने महा क्रोधित पिताके कराल कवलसे पतनोन्मुख हुए थे, उस समय उन्होंने जिस प्रकार असीम साहस और महान् वीरतासे उनका उद्धार करके अनिवार्य मृत्युके मुखसे उनकी रक्षा कर जिस प्रकार प्रबल विक्रमका परिचय दिया, उसी प्रकारसे अकबरके परिवारकी रक्षाका भार उनके हाथमें सौंपा गया; वह इनके ऊपर जिस

---

(१) इसका अर्थ यह है कि इस युद्धमे मारवाडके जितने सामन्तोंने प्राण त्याग किये सभीने रणभूमिमें स्वजातिके लिये जीवनका बलिदान किया था।

प्रकारसे दया और स्नेह करते थे वह भी उनके अतुलनीय गुणग्रामोंके पूर्ण परिचायक थे; वे विपरीत धर्मावलम्बी भिन्न जातिके शत्रुको इस प्रकार प्रतिज्ञा पालनमें और उसकी विश्वासकी रक्षामें कैसे दक्ष थे उनके साथ यदि इसकी तुलना की जाय तो क्यों नहीं दुर्गादासकी हृदयके अनलसे ऊँची प्रशंसा की जायगी ? दुनाडाके देवालयमें औरंगजेबकी पुत्रीके सतीत्वको जिस भावसे निर्विघ्नतासे रख आये थे, यहां यह संदेह है, कि आगरके तीन प्रकार वेष्टित अन्तःपुरमें भी उसे उस भावसे रक्खा था या नहीं। बालक अजितको पहले छःवर्षतक सबसे छिपाकर स्वजातीय भ्राताकी अपेक्षा तीक्ष्ण शक्ति और विज्ञताका कैसा चमत्कार दिखा गये हैं। राठौर कवियोंने दुर्गादासकी जो प्रशंसाकी गाथा रचना की थी। हम यहां पर उसका अवलम्बन कर उपसंहार करनेकी अभिलाषा करते हैं। राठौर कवियोंका कहना है कि अगणित शुभ अनुष्ठानोंसे दुर्गादासने अक्षय यश प्राप्त किया था। उनकी स्मृतिको सभीने बडे आदरभावके साथ हृदयमें स्थान दिया था। उनकी उस बलविक्रम और साहसकी प्रतिमासे पूर्ण कार्यावलीकी ऊँची प्रशंसा प्रत्येक प्रान्तमें सुनाई देती है। वह वीरोंकी मूर्तियोंमें श्वेत अश्वपर चढे हुए हैं उनकी वह वृद्ध महावीर मूर्ति राजपूत जातिके परम प्रिय रूपसे विराजमान हो रही है।"

महाराज अजितके ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंहकी जन्मपत्रिकामें ४ थ, ७ म, ८ म, १० म, ११ श, एवं १२ श, अंकवाला अर्थात् धन, सन्तान, शत्रु, मृत्यु, भाग्य और राजभवनके ग्रह उनके भाग्यका निश्चय करते हैं। सातमें अर्थात् पंचम सन्तान स्थानमें चंद्रमा और शुक्रने अधिकार किया है; आठमें अर्थात् शत्रुस्थानमें सूर्य और बुध विराजमान हो रहे हैं; दशममें केतु हैं, इस कारण ४ थ और १० दशम अंकमें राहु केतु दोनों ही अमंगलमूलक हैं। सौभाग्यके गृहमें मंगल और राजभवनमें शनि और बृहस्पति बैठे हुए हैं। अभयसिंहकी इस जन्मपत्रीसे जाना जाता है, कि उनका भाग्य शुभाशुभ दोनो लक्षणोंसे घिरा हुआ था।

---

(१) दुर्गादास लूनी नदीके किनारे दूनाड़ाके सामन्त थे। उनकी पत्थरकी मूर्ति वहाँ स्थापित है।
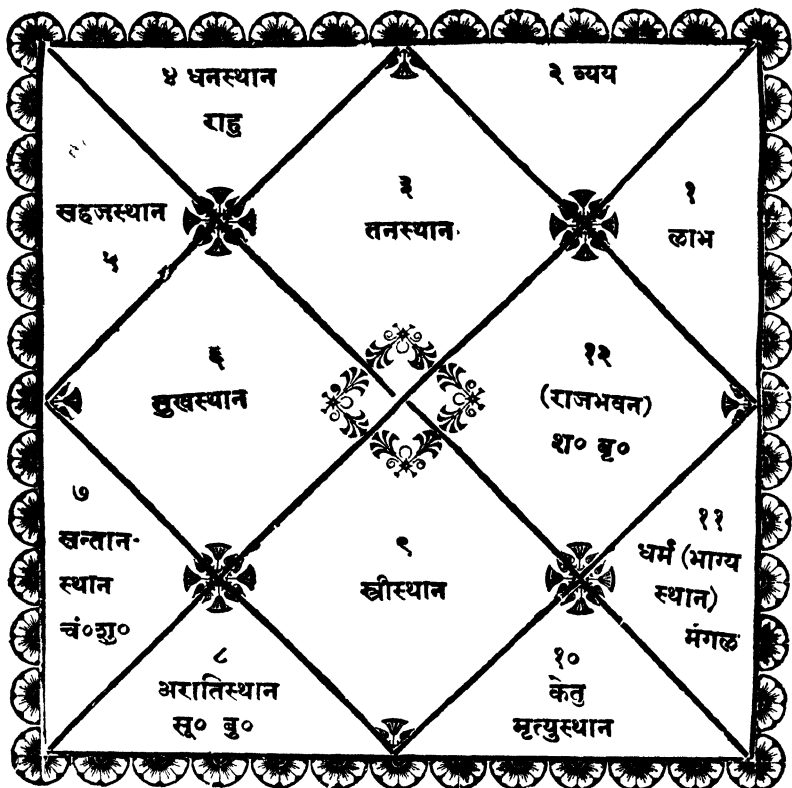
राजा अभयसिंहकी जन्मपत्रिका ।

महात्मा टाडसाहबने इस स्थान २ पर लिखा है कि " ज्योतिषी यदि अभय-सिंहकी जन्मपत्री देखकर यह बता देता कि अभयसिंह पिताकी हत्या करनेवाले होंगे तो उसकी गणना शक्तिकी प्रशंसा हो सकती थी ।" कर्नल टाडसाहबने जन्मपत्रीकी गणनाका विश्वास नहीं किया; कारण कि उन्होंने पीछे लिखा है कि " जो मनुष्य इस निर्बुद्धिताके परिचायक गणनाके सम्बन्धमें दृष्टि रखते हैं व देखेंगे कि यूरोपके ज्योतिषियोंने हिंदुओंके यहांसे इस रीतिको ग्रहण किया है, मैंने उसका प्रमाण दिखानेके लिये विलायतमें जिस प्रकारके हितकारी विषय लिये हैं, उसी प्रकारसे भ्रान्त विषयोंको भी ग्रहण किया है, यही दिखानेके लिये इस स्थानपर उसे प्रकाशित किया है " पर हमें ऐसा बोध होता है कि कर्नल टाडसाहबको हिन्दुओंके ज्योतिष शास्त्रकी प्रकृति परीक्षा करनेका सुअवसर नहीं मिला था ।

नवम अध्याय ९.

नाहन और सवालक पर्वतके विद्रोही सामन्तोंके दमन करनेके लिये सम्राट्का अजितको भेजना; अजितकी जयप्राप्ति; अजितका गंगास्नानार्थ जाना; दिल्लीके बादशाह बहादुर-शाहकी मृत्यु; सम्राट्कुमारोंका आत्मविग्रह; अजीमुस्सानका हत्या करना; मुइजुद्दीनका सम्राट्के पदपर अभिषेक; सम्राट्का अजितको गुजरातके राजप्रतिनिधि पदपर नियोजित करना; फर्रुखसियरको सम्राट् पदकी प्राप्ति; अजितका अपने पुत्र अभयसिंहको सम्राट्के यहाँ भेजना; नागोरके सामन्त मुकुन्द-की * असीम साहससे हत्या करना; सैयदके दोनों भ्राताओंका महा क्रोध; सम्राट्की सेनाका मारवाड़ पर आक्रमण; संधिबंधन; अभयसिंहका सम्राट्की सभामे जाना; अजितका दिल्लीमे जाना; सम्राट्के दोनो सैयद मंत्रियोंके साथ अजितका गुप्त संधिबंधन; फर्रुखसियरके साथ अजित की कन्याका विवाह; जोधपुरका प्रत्यावर्तन; जिजियाकरका रहित करना; राजप्रतिनिधिरूपसे अजितका गुजरातमें जाना; वहाँकी शासन व्यवस्था और शांति स्थापन; अजितका द्वारका तीर्थमें जाना; जोधपुरकी राजधानीमे आना; दोनो सैयदोंकी आज्ञासे दिल्लीकी यात्रा; दोनो सैयदोंके साथ अजितका गुप्त षड्यंत्र; अजितके साथ साक्षात् करनेके लिये सम्राट्का जाना; भावी कुलक्षण; दक्षिणसे हुसेनअलीका आगमन; सैयद और अजितके शत्रुओंका भयभीत होना; राठौरोंकी सेनाके द्वारा अजितका दिल्लीमे प्रासाद वेष्टन; सम्राट् फर्रुखसियरकी हत्या साधन; परवर्ती सम्राट् मुहम्मदशाह; आमेरराजके विरुद्ध मुहम्मदशाहकी युद्धयात्रा; अजितके निकट आमेरके महाराजका आश्रय ग्रहण करना; अजितका मुहम्मदशाहसे देश प्राप्त करना; जोधपुरमें फिर जाना; अजितकी कन्या सूर्यकुमारीके साथ आमेरपतिका विवाह; दोनों सैयदोंका निधन; अजितका अजमेर पर आक्रमण; वहाँके शासनकर्त्ताका प्राणनाश; वहाँकी मसजिदोंको विध्वस्त करना; हिन्दूधर्मकी पुनः प्रतिष्ठा; अजितका यवन सम्राट्की अधीनता स्वीकार करके सम्पूर्णतः स्वाधीन रूपसे आत्मघोषणा, अपने नामसे मुद्रा चलाना; तुलादंड परिमाण निर्द्धारण और विचारालयकी प्रतिष्ठा; राठौरोंके सामन्तोंमें श्रेणी विभाग करना; सम्राट्की सेनाका मारवाड़पर आक्रमण, तीस हजार राठौरोंकी सेनाके साथ अभयसिंहका सम्राट्की सेनाके आक्रमण निवारण करनेके लिये जाना; सम्राट्का युद्ध करनेके लिये निषेधका विज्ञापन देना; राठौरोंकी सेनासे सम्राट्की शस्यसम्पन्न देशावलीका विध्वंस होना; अभयसिंहका धोंकलकी उपाधि ग्रहण करना; जोधपुरको लौट जाना; साँभरके युद्धमें बदला देनेके लिये सम्राट्का समस्त सेनाके साथ अजितके विरुद्ध युद्धयात्रा करना; अजमेरका घेरना; अजितकी आत्मरक्षा; सम्राट्के करमें अजमेरको समर्पण करनेमें अजितकी सम्मति; सम्राट्के डेरोंमे अभयसिंहका जाना, उनकी सन्मानपूर्वक अगौनी; उसका उद्धत आचरण; पुत्रके हाथसे अजितका प्राणनाश; राठौर कविकी कर्तव्यपालनमे विमुखता; ऐतिहासिक विवरण; अजितकी अन्त्येष्टि क्रिया; छः रानी और ५८ उपनायकाओंका अजितके संग चितापर आरोहण; नाजिर, कवि और पुरोहितोंद्वारा पटरानियोंको समझाया जाना और चितापर चढनेको निषेध करना; रानियोंकी दृढ प्रतिज्ञा; चितापर चढना; अजितकी जीवनी और उनके शासन विवरणकी समालोचना।

* सही नाम मोहकमसिंह चाहिये।

मारवाडके स्वामी महाराज अजितके जन्मसे सिंहासन पाने तकके समयका जो इतिहास हमको राठौर कवियोंके ग्रंथोंसे मिला वह पहले अध्यायमें प्रकाशित होचुका है, वर्तमान अध्यायमें भी हम उस जातिके इतिहासके अवलम्बसे राजा अजितके समयकी प्रशंशनीय लीलाओंका दृश्य और अन्त समयका शोचनीय वियोगान्त दृश्य पाठकोंको दिखाना चाहते हैं। राठौर कविकुल चूडामणिने लिखा है, "संवत् १७६८ में बादशाह बहादुरशाहने अजितको नाहन प्रदेश पर अधिकार और महावर्षवाले कैलास पर्वतके राजद्रोही सामन्तोंको दमन कर अपना अधीनताको साँकलमें बाँधनेके लिये भेजा। वीर शिरोमणि अजितने बादशाहकी आज्ञा पालनेके लिये शीघ्र ही वहाँ सेना लेजाकर बडी वीरतासे शत्रुओंको पराजित किया। विजय लक्ष्मीको प्राप्त कर महा आनन्दसे महाराज अजित पीछे पवित्र जलवाली गंगाजीमें स्नान करनेके लिये सेना सहित चल, गंगास्नान और दान पुण्य करके राजा वसंत ऋतुमें अपनी राजधानी जोधपुरको लौट आये"। कविने इस वर्षकी और कोई विशेष घटना नहीं लिखी।

महाराज अजितने भारतके आगे होनेवाले दृश्यका जो अभिनय किया है इस अगाडीके सालमें वही काम आरंभ हुआ। कविने लिखा है, "संवत् १७६९ में दिल्लीश्वर शाहआलम स्वर्ग सिधारे। बादशाहके पुत्रोंमें अहंताके कारण द्वेषाग्नि प्रज्वलित हुई। अजीमुस्सान शोचनीय रूपसे मारे गये, और भारतका राजछत्र मुईजुद्दीनके मस्तक पर शोभित हुआ। मारवाडके राजा अजितने नए बादशाहके पास शीघ्र ही भंडारी खीमसीको उपहारी द्रव्योंके साथ भेजा। नए बादशाहने प्रसन्न होकर उसी भंडारीके साथ अजितको गुजरातके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त कर सनद भेज दी। संवत् १७६९के माघ महीनेमें अजितने सत्रह हजार नगर पूर्ण अहमदाबादके अधिकारके लिये बडी सेना बनाई, किन्तु इस समय दिल्लीके सिंहासन पर फिर गोलयोग हुआ। दोनों सैयद भाइयोंने बादशाह मुइजुद्दीनको मारकर फरुखसियरको उनके सिंहासनपर बैठा दिया। जुलफकारखाँ भी उसी समय मारे गय, इस कारण उस समय मुगलोंकी प्रभुता एक साथ ही जाती रही। इस ओर दोनों सैय्यद भाई राजसिंहासनको अपना जान स्वामीभावसे शासन, शक्तिको अपने हाथमें ले फिर अपना प्रताप प्रकाशित करने लगे। दोनों सैय्यदोंकी सलाहसे नये बादशाह फर्रुखसियरने अजितसिंहसे यह कहला भेजा कि तुम अपने पुत्र अभयसिंहको शीघ्र ही राठौर सेनाके साथ दिल्ली भेज दो। अभयसिंहकी इस समय सत्रह वर्षकी अवस्था थी। परन्तु अजितसिंहको इस समय यह समाचार मिला कि विश्वासघाती नागौरपति मुकुन्द[1] दिल्लीके बादशाह की सभामें रहता है, और बादशाहके यहां उसका अधिक सन्मान भी है। इस लिये अजितसिंहने उस विश्वासहन्ताके जीवनविनाशके लिये शीघ्र ही कितने ही

(१) कर्नल टाडसाहबने एक स्थान पर मुकुन्द और एक स्थान पर मोकम लिखा है। परन्तु सही नाम मोकम या मोहकमसिंह ही है।

विश्वासी सेवकोंको दिल्लीमें भेज दिया । गुप्त अनुचरने अजितसिंहकी आज्ञासे उस दिल्ली नगरमें जाकर असीम साहसके साथ मुकुन्दके जीवनका नाश कर डाला। अजितसिंहकी आज्ञासे उनके सेवक उस असीम साहससे निर्भय हो नागौरपतिके जीवनका नाश होनेसे महा क्रोधित शीघ्र ही सेना सहित मारवाड पर आक्रमण करनेके लिये आ गये । महा प्रतापशाली दोनों सैयदोंको सेना सहित आता हुआ देख कर अजितने पहलेसे ही अपनी धनवान् प्रजाको बैयानोतमें और अपने पुत्र अभयसिंहको कुटुम्ब सहित राडधडानामक मरुस्थान पर भेज दिया । बादशाहके सेनादलने शीघ्र ही राजधानी जोधपुरको जा घेरा, बादशाहकी ओरसे शीघ्र ही अजितके पास यह हुक्म आया कि उनको भविष्य सचरित्रताके प्रतिभूस्वरूप अभयसिंहको बादशाहके घर रख-कर उनको भी सम्राट्की सभामें जाना होगा परन्तु महाराज अजितसिंहने इन दोनों प्रस्तावोंमेंसे किसीको भी नहीं माना । परन्तु दीवानसाहबकी सम्मतिसे विशेष करके कविश्रेष्ठ केसरके उपदेशसे अन्तमें इस प्रस्तावमें अपनी सम्मति प्रकाशित की, कविने कहा कि दौलतखाँने जिस समय मारवाड पर आक्रमण किया था, उस समय मारवाड-पति राव गांगाने अपने पुत्र मालदेवको इस भांति नियुक्त करके भेजा था। राजा अजितसिंहने पहले प्रमाण पाकर फिर कोई आपत्ति न की । अभयसिंहको राडधडासे बुलाया, तब यह " संवत् १७७० क आषाढ महीनेके अन्तमें हुसेनअलीके साथ दिल्लीमें भेजे गये । मरुक्षेत्रके युवराजको बादशाहके यहाँसे पांच हजार सेनाके नायक पदकी पदवी प्राप्त हुई।"

"अजित शीघ्र ही अपने पुत्रके पीछे २ दिल्लीकी सभामें गए। अजितकी शैशव अवस्थामें जिन सम्पूर्ण राठौर सामन्तोंने दुष्ट औरंगजेबके कराल कवलसे रक्षा करनेके लिये दिल्लीमें युद्धकर प्रबल विक्रम प्रकाश करके जीवन त्याग किया था, उसी दिल्लीमें उन महाबली राजभक्त वीरोंके समान समाधि चिह्न देखकर अजितके हृदयमें निद्रित प्रतिहिंसा मानों प्रबल वेगसे फिर प्रज्ज्वलित हो गई, उन्होंने उसी समय तैमूर--सम्राट् वंशको लोपकर प्रतिहिंसा सफल करनेकी मनही मनमें दृढ प्रतिज्ञा की, महाराज अजितसिंहने हिन्दू जातिके प्रतिनिधि स्वरूपसे इस समय चार विषयोंपर यवन सम्राट्के विरुद्ध प्रबल अनुयोग उपस्थित किया,—

१ म—नौरोजा ।

---

(१) उर्दू तर्जुमेंमे खिवानेके किलेमें भेजना लिखा है ।

(२) राडधडा लूनी नदीके पश्चिम तीरपर स्थित एक देश है ।

(३) नौरोजा नवां दिन प्रति महीनेके नवेदिन एक मेला होता था। जिसमें राजमहलके और२ भी बडे बडे अमीर उमराओंके घरके लोग अपनी दस्तकारीके सामान लाते थे, और परस्पर क्रय वि-क्रय होता था । इसी नौरोजेका सालभरमें एक ऐसा मेला होता था; जिसमें केवल स्त्रियां इकट्ठी होती थीं; बडे छोटे सबघरोंकी स्त्रियोंके सिवाय कोई पुरुष वहां न जा सकता था । परन्तु बेगम साहबाके साथ बादशाह वेष बदलकर जाया करता था, इस मेलेमें प्रायः बहुत सीअनरीतें भी हुआ करती थीं। इस मेलेको अकबरने जारी किया था ।

२ य--बादशाहके साथ कन्या और भगिनियोंका परिणय दान करनेके लिये देशीय राजाओंको बलपूर्वक राजी करना।

३ य--गोहत्या।

४ थे--जिजियाकर।"

स्वजातीय राजाओंके गौरवकी रक्षाके लिये हो या राठौर वंशके कलंककी प्रच्छन्न-भावसे रक्षा करनेके अभिलाषी होनेसे हो, राठौर कवि इस स्थानपर एक विषयका भी उल्लेख करनेके लिये आगे नहीं बढे। सैयदके मारवाड पर आक्रमण करनेके पीछे अजितके निकट जो कई एक प्रस्ताव उपस्थित किये गये थे, उनमेंसे अजितकी एक कन्याके साथ बादशाह फर्रुखसियरके विवाहका प्रस्ताव भी एक था। इस विवाहके कारण जो राजनैतिक घटना हुई थी, हमारे पाठकोंने उसे प्रथम कांडमें पढा होगा। अजितकी किंचित्‌मात्र भी इच्छा न थी, कि वह पापी यवनके करकमलमें कन्या देकर अपने वंशको कलंकित करे। केवल सम्राट्की ओरका प्रबल बल देखकर और राज्यकी रक्षाका अन्य उपाय न देख वह फर्रुखसियरको कन्या देनेके लिये राजी हुए थे। यवन बादशाहने बलपूर्वक उनको इस कन्यादानके लिये राजी करके सम्राट वंशके विनाशका साधन अपने आप कर लिया। अजित शीघ्र ही अपने स्वर्गीय पिताके समान राठौर तेजके साथ स्वाधीनता प्रभुत्व और यवन सम्राट्के प्रबल प्रतापरूपी सूर्यको अस्त करनेके लिये दोनों भाई सैयदोंके साथ जा मिले। अजितने दोनों सैयदोंके साथ मिलकर उन्हें चिरकालतक हस्तगत रखनेकी इच्छासे शीघ्र ही नौरोज उत्सवमें राजपूत राजकुमारियोंके आगमनका निवारण, देशीय राजाओंको सम्राट्के करमें कन्यादानकी रीतिको रहित करना, गोहत्या निवारण तथा जिजियाकरको एक बार ही दूर कर देनेके प्रस्ताव किये थे। सब बातें स्वीकृत हुईं और इसके अतिरिक्त अजितके द्वारा बादशाहने यह भी स्वीकार किया कि "राजपूत गण दिल्लीकी राजधानीके जिस प्रान्तमें निवास करते थे, उस प्रान्तके देवमंदिरोंमें नियमसहित शंखध्वनि होती रहै। बादशाहकी ओरसे इसमें कोई बाधा नहीं होगी। और हिन्दुओंके देवमंदिरोंको यवन किसी समय भी अपवित्र नहीं कर सकेंगे। महाराज अजितसिंहने उसके साथ ही साथ अपने पिताके राज्यकी सीमाको भी बढ़ा लिया"।

कालकी कैसी विचित्र गति है! कठिन औरंगजेबने जिस अजितके जीवननाशका तथा राठौर राजवंशके एक बार ही विनाशका यत्न किया, जो बाल्यावस्थामें बडे यत्नसे पाले गये थे। और युवावस्थातक प्राणोंके भयसे दूरदेशके जंगल पहाडोंमें मारे मारे फिरते रहे थे। उन्हीं अजितने इस समय दिल्लीके बादशाहकी सभामें प्रबल अधिकार प्राप्त करके हिन्दुओं के अभिलषित प्रत्येक अनुष्ठान सिद्ध कर लिये। राठौर कविने इसके पीछे लिखा है कि "समस्त आशाओंके सफल होनेपर अजित संवत् १७७२ के ज्येष्ठ मासमें

---

(१) राजस्थानके प्रथम कांडके तेईसवें अध्यायके ६१८ पृष्ठमें इनके विवाहका वृत्तान्त वर्णन किया गया है।

गुजरात राज्यके प्रतिनिधि पदपर नियुक्त होनेके पीछे नई सनद पाकर दिल्लीको छोडकर जोधपुरको चले गये । मंत्री खीमसीकी सहायतासे शीघ्र ही जिजियाकर सब स्थानोंसे उठा दिया गया । हिन्दूकुलतिलक महाराज, यशवन्तसिंहके उपयुक्त कुमार अजितके द्वारा उसे घृणित करके रहित होनेसे सर्वत्र हिन्दूमात्रने महा आनंदित हो अन्तःकरणसे अजितकी जय ध्वनिसे भारतवर्षको प्रतिध्वनित कर दिया। यद्यपि अजित अपनी अनिच्छासे फर्रुखसियरके करकमलमें कन्या देनेसे मन ही मन महा दुःखित हुए थे, परन्तु उसके पलटेमें इस समय समान धर्मावलम्बी स्वजातिके प्रार्थनीय अनेक विषयोंमें सफलता प्राप्त करनेसे उनका शोक अवश्य ही विशेष कर घट गया था ।"

"अजितसिंहने संवत् १७७२ में अपने पिताके राज्यके प्रधान २ देशोंमें स्वयं जाकर सुशासनकी व्यवस्था की। दक्ष होनेकी इच्छासे कुमार अभयसिंहको अपने साथ लेकर चले । सबसे पहले वह जालोरमें गये । इस समय वर्षाऋतुका प्रबल वेग देखकर महाराज अजितसिंहने वह समय जीलोरमें ही व्यतीत किया । शरद्ऋतुके आते ही प्रकृति देवीने प्रसन्न मूर्ति धारण की । तब मारवाडपतिने शीघ्र ही अपनी सजी हुई सेना साथ लेकर सबसे पहले मेवासा देशके आबू और सिरोहीकी देवडा जाति पर आक्रमण किया । अजितके नीमाजपर अधिकार करते ही समस्त देवडाओंने उनकी अधीनता स्वीकार की, और उन्होंने कर देनेमें भी किंचित् विलम्ब न किया । इस समय पालनपुरसे फीरोजखाँने आगे जाकर अजितके साथ साक्षात् करके उसका यथोचित सन्मान किया । थिराद देशके राणा अजितको एक लाख रुपया करमें दिया करते थे, और कलवी जातिके नेता क्षेमकर्ण सब प्रकारसे अधीनताकी जंजीरमें बँध गये । शक्ता, चांपावत और विजयभण्डारी गत वर्षमें पाटन देशमें सुशासनकी व्यवस्थाके लिये भेजे गये थे, वे भी इस समय पाटनसे आकर महाराज अजितसिंहके साथ मिले ।"

"संवत् १७७३में महाराज अजितने हलवदके झालाको परास्त किया । और उनको अधीनताके जालमें जडित करके नवानगरके जाम लोगोंपर आक्रमण किया । नवा नगरके जाम एक महाबली और पराक्रमी अजितके द्वारा आक्रान्त होकर अपने राज्य और प्राणोंकी रक्षाके लिये इसकी शरणमें गये, और करस्वरूपमें तीन लाख रुपया और पचीस श्रेष्ठ घोडी देकर उन्होंने प्रबल विपत्तिसे उद्धार पाया । अजितसिंह अपने राज्यके समस्त भागोंमें सुरीति स्थापन करनेके पीछे अपनी सेनासहित द्वारका तीर्थको चले गये । गोमतीमें स्नान कर तथा तीर्थक्षेत्रमें पुण्य संचय करनेके पीछे वह अपनी राजधानी जोधपुरको लौट आये, आते ही उन्होंने सुना कि इंद्रसिंहने हमारे पीछे नागौर पर अधिकार किया है । इस समाचारसे क्रोधित हुए सिंहके समान शीघ्र ही सेनासहित नगरमें जाकर उन्होंने इन्द्रसिंहको फिर सिंहासनसे उतार दिया" ।

---

(१) आबू शिखरके दुर्गम पर्वत दुर्गको मेवासा नामसे कहा है । यहांके आदि भूमियां कोल मीना माहीर आदि थे और समय २ पर राजपूत गण भी इस दुर्गसे प्रदेशमे भागकर अपनी रक्षा करते थे ।

अगले वर्ष अर्थात् संवत् १७७४ में, महाराज अजितसिंह भारतके क्षेत्रमें चिरस्मरणीय अभिनय करनेमें प्रवृत्त हुए। फर्रुखसियरके शासनके समयमें दिल्लीके बादशाहकी सभामें मंत्रियोंमें परस्पर झगडा मचा। एक ओर मुगल अमीर उमराव, और दूसरी ओर दोनो भाई सैयद खडे हुए। उन्होंने जिस प्रकारका शोचनीय काण्ड उपस्थित किया, वह इतिहास--पाठकोंसे छिपा नहीं है। उस मुगल और सैयदोंके आत्म-विग्रहके समयमें महाराज अजितसिंह एक प्रधान अंशोंका अभिनय करनेके लिये शीघ्र ही रंगभूमिमें बुलाये गये। हुसेनअली इस समय दक्षिणमें था, और अबदुल्ला बादशाहके विरुद्धमें गुप्तभावसे षड्यंत्रका विस्तार कर रहा था। दोनो सैयद इस समय महाराज अजितको एक प्रबल बलशाली देखकर सबसे पहले उन्हींको हस्तगत करनेके लिये चेष्टा करने लगे। उन्होंने अजितको राजधानीमें सेनासहित आनेके लिये उनके पास क्रमानुसार पत्रके ऊपर पत्र भेजे। अजित अपना बदला लेनेका सुअवसर जानकर विक्रमवाहिनी सेनाके साथ नागर, मेरता, पुसकर, मारोट और सांभरसे होकर दिल्लीमें आ पहुँचे। सांभरके किलेमें बहुतसी राठौरसेनाको रख आये। आनेके समय अजितसिंहने अपने पुत्र अभयसिंहको मारोटसे जोधपुर राजधानीकी रक्षाके लिये वहाँ भेज दिया। अजित अपनी प्रबल सेना साथ लेकर आये हैं, यह सुनते ही सैयद उनको बडे सन्मानके साथ लेनेके लिये दिल्लीसे चले अजितके अलीबूर्दीखाँकी सरायमें उतरते ही सैयद वहाँ जा पहुँचा; और उनका भलीभाँतिसे आदर सत्कार किया। सैयदने अजितसिंहके साथ मिलकर शीघ्र ही अपने गुप्त अभिप्रायको उनसे कह दिया। इस समय जयसिंह और मुगल अमीर बादशाहकी ओर थे, उन्होंने सैयदके दोनों भ्राताओंको एक बार ही सामर्थ्यसे रहित करके बादशाहको निष्कंटक करनेकी चेष्टा की थी। उन्हीं जयसिंहने मुगलोंके नाश करनेके लिये शीघ्र ही अजितके निकट यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि अपना मनोरथ इसीसे पूर्ण होगा, इनसे बदला लेनेके लिये विशेष सुअवसर जानकर अजितने सैयदके साथ उस गुप्त संधिके करनेमें किंचित् भी विलम्ब न किया। राठौर कविका वचन है। "विषधारी सर्प जिस प्रकार पिटारीमें बंद होता है सम्राट् फर्रुखसियर उसी भावसे इस समय रहने लगा, दोनों सैयदोंने अपने प्रधान प्रतिद्वन्द्वी शत्रुओंके नेता जुल्फकारखाँको सबसे पहले इस संसारसे बिदा करके अजितके प्रथम कार्यको स्थिर कर लिया"।

जिस कठिन औरंगजेबने महा प्रताप और विपुल विक्रमके अकथनीय अत्याचारोंसे तथा भारतवर्षमें पाशविक बलकी पूर्ण सहायतासे मुगलोंकी शासन शक्तिको अक्षय रखनेकी विशेष चेष्टा की थी। जिसके उस पैशाचिक शासनसे भारतवर्षमें हिन्दू जातिके हिन्दूधर्मके और हिंदू समाजकी दुर्गतिका एक शेष होगया था। जिस शासन शक्तिने भारतवर्षके प्रत्येक राजाको कंपायमान कर दिया था। कालचक्रकी गतिसे इस समय मुगलोंकी वही शासन शक्ति विपरीत अवस्थामें पड गई। जिस

औरंगजेबने अजितको बाल्यावस्थामें ही हत्या करके अपनी पाप प्रतिहिंसाको सफल करनेके लिये विशेष यत्न किये थे, जिस अजितने अपने प्राणोंके भयसे बडी दूर जाकर पर्वतोंके शिखरपर निवास किया था, वही अजित आज दिल्लीमें आये हैं, और दिल्लीके सिंहासनपर विराजमान बादशाह फर्रुखसियर उन अजितके साथ मिलनेके लिये अधीर हो गया । अजित राजधानीमें आये हैं, यह सुनकर बादशाहने शीघ्र ही कोटा राज्यके हाडाराव भीम और खान दौरानखाँको अजितके पास, जिससे अजित बादशाहके साथ शीघ्र साक्षात् करे ऐसा प्रस्ताव करके, भेजा । राजनीतिमें चतुर अजितने अपनी इच्छासे ही फर्रुखसियरको जामातृ पद पर वरण नहीं किया था, वह जिस अनिवार्य कारणसे अपनी असम्मतिसे कन्या देनेके लिये राजी हुए थे, पाठकोंको वह पहले ही विदित हो गया है । जामाता बताकर भी बादशाहके ऊपर जिस स्नेहके बदले उसे राठौर वंशीके कुलमें कलंककी निशानी चिह्न समझते थे, और इसीसे वे मनमें बादशाहसे अत्यन्त रुष्ट थे । वह जो कुछ भी हो उन्होंने अपने अभिप्रायकी सिद्धिके लिये मनकी बात मनहीमें रखकर बादशाहके प्रस्तावसे उसके साथ साक्षात् करनेकी सम्मति प्रगट की। मोतीबाग नामक रमणीय बगीचेके महलके ऊपर बादशाहके साथ अजितका साक्षात् स्थान नियुक्त हुआ । अजित इकले न जाकर अपने अधीनमें स्थित समस्त माननीय सामन्त और वीरोंको साथ ले महासमारोहके साथ चले। राठौरोंकी सामन्त मण्डलीके अतिरिक्त उनके साथ जयसलमेरके राव विष्णुसिंह देरावलके पद्मसिंह, मेवाडके फतेहसिंह, सीतामऊके राठौर नेता मानसिंह, रामपुराके चन्द्रावत् गोपाल, खंडेलाके उदयसिंह, मनोहरपुरके शक्तसिंह, खिलचीपुरके कृष्णसिंह तथा और भी बहुतसे बुद्धिमान् मनुष्य अजितके साथ २ चले । अजितके केवल मारवाडपति होनेसे ही नहीं, वरन् इस समय गुजरातके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त होनेसे समस्त राजपूत सामन्त उनको नेता जानकर उनके अधीनमें रहनेके लिये तैयार हुए, अजित उस समय कितने बलवान् हो गये थे, शत्रु उनको किस प्रकारसे भयमय नेत्रोंसे देखते थे, उसका अनुमान सरलतासे हो सकता है, बादशाह फर्रुखसियरने महाराज अजितको बडे सन्मानके साथ लिया । उनसे मिलकर बादशाहने उन्हें "सप्तहजारी मनसब" अर्थात् सात हजार सेनाके नायक नियत कर उनके राज्यकी सीमा बढाई, साथ ही इसके और भी एक करोड रुपयेकी जागीर उन्हें दी ।

इसके अतिरिक्त माहीमरातब नामक सन्मान चिह्न, हाथी, घोडे, मूल्यवान् हीरे, सुवर्णके म्यानसे ढकी हुई तलवार, किरीच, हीरोंके सिरपेंच और दो मूल्यवान् मोतियोंकी माला उपहारमें दी । इस प्रकारसे महाराज अजित बादशाहसे सन्मानित होकर शीघ्र ही सैयद अबदुल्लाखां के साथ साक्षात् करनेके लिये चले । अजितके आनेकी वार्ता सुनकर अबदुल्लाखांने आगे बढकर उन्हें बडे आदरभावके साथ लिया । अजित और उनके सेवकोंकी सामन्त मण्डली परस्पर मिली । राठौर कविके मतसे वह अत्यन्त ऊँचा सन्मान था। सैयदके साथ इस साक्षात् स्थानमें दोनोंमें यह धारणा हो गई कि उपस्थित राजनैतिक

अभिनयसे या तो जय ही होगी नहीं तो दोनों ही अपने जीवनको त्याग देंगे, अजितके साथ सैयद अबदुल्लाके इस गुप्त साक्षात् और परामर्शकी वार्ता सुनकर मुगल अमीर भयभीत चित्तसे अनेक अनिष्टोंकी शंका करने लगे, तथा अजितके जीवनरूपी दीपकको निर्वाण करनेके लिये मुगल गण गुप्तभावसे अस्त्र हाथमें लेनेका समय ढूँढने लगे।

राठौर कवि इस बातको लिख गये हैं "संवत् १७७५ पूस मासके शुक्लपक्षकी दूजके दिन बादशाह फर्रुखसियरने अजितके यहां जाकर साक्षात् किया। अजितने बादशाहके योग्य सन्मान करनेमें कोई कसर न की। उन्होंने एक लाख रुपयेको एक जगह रख उसके ऊपर बादशाहका आसन बिछाया, और उसके ऊपर बडे आदरभावके साथ उसे बैठाला। इसके अतिरिक्त हाथी, घोड, मूल्यवान् हीरे और रत्नोंके जडे हुए अलंकार भी उपहारमें दिये। बादशाह फर्रुखसियर अजितके सन्मानसे अत्यंत संतुष्ट हो विदा होकर अपने स्थानको चले आये। दिल्लीकी राजधानीमें इस समय एक मात्र अजित ही सबसे अधिक सन्मानित और सामर्थ्यवान् गिने जाकर सबसे पूजित होने लगे। फागुनके महीनेमें अजित और सैयदोंने बादशाहके साथ साक्षात् करनेके पीछे आपसमें एक गुप्त सलाह करके एक पत्रमें अपने एक षडयंत्रके प्रत्येक विषय लिखकर दक्षिणमें हुसेनअलीके पास भेज दिया। और उसको यथाशक्ति शीघ्रतासे आकर मिलनेके लिये अनुरोध किया।" कविने इस स्थान पर लिखा है कि "इस समय आकाश मंडलमें भावी कुलक्षण दिखाई देने लगे। चारों ओर मानो घोर लोहित दावानल प्रज्ज्वलित हो गई। गधोंका असमयमें चिल्लाना--तथा कुत्तोंके भयंकर चीत्कार चारों ओर सुनाई देने लगे। विना मेघोंके ही वज्रध्वानिने पृथ्वीको कंपायमान कर दिया। जिस बादशाहकी सभामें एक समय बराबर उत्सव होते रहते थे, जिस सभामें कुसुम कोमल लावण्यमयी युवतियोंके नाचनेसे नूपुरकी झनकार सुनाई देती थी, किन्नरियोंके कंठसे निकली हुई संगीतध्वनि सभीके नेत्र और मनको तृप्त करती थी, उस उज्वल सम्राट्की सभामें आज घोर सूनसान, होकर धकार छा रहा है। माना आनेवाली विपत्तिके पूर्ण लक्षण दिखाई दे रहे हैं। बीस दिनमें हुसेन संहारमूर्ति हो दिल्लीमें आ पहुँचा। महलके पास आते ही जयका डंका बजा; मानों वह पाशविक बलके पतनके पहल ही घोषणा करने लगा। हुसनेके साथ जो अगणित अश्वारोही आये थ उनके खुरोंकी उडी हुई धूरिसे दिल्ली मानो घोर अंधकारसे पूर्ण हो गई। अपनी सेना दिल्ली नगरके उत्तरकी ओर डेरे डाल कर हुसेनअली शीघ्र ही अपने भ्राता अबदुल्ला और अजितसे साक्षात् करनेके लिये गया। हुसेनअलीके सेनासहित आनेकी वार्ता सुनकर फर्रुखसियर पहलेसे अधिक भयभीत हो गया, तब उसने शीघ्र ही हुसेनअलीके पास उपहार द्रव्य भेज दिये। इस समय राजधानीके मुगलनेता अपने २ स्थानोंमें मौनभावसे रहने लगे थ। आकाशमें बाज पक्षीको उडता हुआ देखकर चिडिया जिस प्रकार क्षत्रमें नव दूर्वादलके साथ मिलकर प्राणोंके भयसे अत्यन्त संकुचित भावसे रहती है, हुसेनके दिल्लीमें आते ही अमीर उमराव भी उसी

भाव भयभीत होकर रहने लगे। आमेरके अधीश्वर मिरजा राजा सवाई जयसिंह इस समय तेलहीन दीपककी समान प्रभाहीन हो गये थे। दूसरे दिन सैयद इत्यादि सभी यमुनाके किनारे अजितके डेरामें आकर मिले, और उन्होंने अपने गुप्तकार्यको सिद्ध करनेके लिये सलाह की। सलाह होनेके पीछे यथार्थ कार्यका आरंभ होना स्थिर हुआ। अजितसिंह अपनी रण तुरंगिनीकी पीठपर चढे, और शीघ्र ही विपुल पराक्रमी राठौरोंकी सेनाके साथ उन्होंने उन डेरोंमेंसे दिल्लीके महलमें जाकर महलके प्रत्येक द्वारपर अपनी राठौर सेनाके पहरे बिठाकर सब प्रकारसे महल पर अपना अधिकार कर लिया"। हाय! इतिहासने किस प्रकारका फिर अभिनय किया। जिस औरंगजेबने मारवाडके महाराज यशवंतसिंहको काबुलमें विष देकर उनकी हत्या करनेके पीछे योधागिरिके महल पर अधिकार करके अजितको एक बार ही राज्य हीन कर दिया था, उसी अजितने आज उस मुगल बादशाहके दुर्जय महल पर अपना अधिकार कर लिया। इस बातको कौन विचारता था कि सर्वस्वान्त प्राणभयसे भयभीत हुआ बालक अजित एक समय इस प्रकारके असीम साहससे उत्साहित होकर प्रशंशनीय कार्य करैगा, क्या कोई भूलसे भी ऐसा अनुमान न कर सकता था? कि वह दुर्बल अजित इस प्रकारसे प्रबल स्वजाति शत्रु मुगलबादशाहके वंशको विध्वंश करनेके लिये संहारमूर्तिसे दिल्लीके महलको अपने हस्तगत कर लेगा? राठौर कवि पीछे लिखते हैं कि "अजितने मानों महाप्रलयके प्रचंड सूर्यकी समान दर्शन दिया। प्रदीप्त दिन मणिरूपी सिंहके आगमनसे जिस भांति अंधकार रूप हाथियोंके यूथ दूर भाग जाते हैं, तेलके अभावसे दीपककी शिखा जिस प्रकार बुझ जाती है, उसी प्रकारसे राजा आजितके विचारमय और प्रजाके मंगल उद्देशके लिये राज्यशासन रूपी उज्ज्वल प्रकाशसे अराजकताका अंधकार एक बार ही दूर हो जाता, परन्तु उस तेलरूपी न्याय विचारके अभावसे ही उनके शासनका दीपक सरलतासे निर्वाण हो गया। दिल्लीका राजछत्र इस समय जिस महा अघातसे कंपित और चंचल हो गया था, भारतवर्ष भी शीघ्र ही उसी संघात ध्वनिसे शब्दायमान होगया। दिल्लीका खजाना सब लूट लिया गया, मुगल अमीर उमराओंमेंसे कोई भी साहस करके बादशाह फर्रुखसियरकी रक्षा करनेके लिये आग न बढ सके और आमेरके माहाराज जयसिंह इस महा विपत्तिको आता हुआ देखकर शीघ्र ही नररक्त प्लावित दिल्लीको छोडकर अपने राज्यको चले गये। फर्रुखसियरके प्राणनाशके पीछे शीघ्र ही एक मनुष्य दिल्लीके राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त किया गया, परंतु चार महीनेमें ही उसने पागलपनेकी दशामें प्राण त्याग किये। इसके पीछे दौलाके शिरपर भारतका राजमुकुट शोभा पाने लगा। परन्तु दिल्लीके मुगल अमीर गणोंने इकट्ठे होकर इस समय

(१) सम्राट् फर्रुखसियरको हत्याका वृतान्त प्रथम कांडमें यथास्थान वर्णन किया गया है।
(२) सम्राट् रफिउल दाराजात।
(३) सम्राट् रफिउद्दौला।

आगरा नगरके नेकोशाहको भारतके सम्राट् पदपर अभिषिक्त किया । अजित और अबदुल्लाको सम्राट् रफिउद्दौलाके निकट रखकर हुसेनअलीने उन मुगलोंपर सेना सहित आगरेको पयान किया ।"

"संवत् १७७६ में, अजित और सैयदने दिल्लीसे यात्रा की, परन्तु इस समय जिन मुगलोंने नेकोशाहको सम्राटरूपसे अभिषिक्त करके सलीमगढकी रक्षा कीथी, वही उसे इस समय अजितको लौटा देनेके लिये राजी हो गये । इस समय सम्राट् रफिउद्दौलाके प्राण त्याग करनेपर अजित और सैयदके दोनों भ्राताओंने फिर एक नवीन बादशाह मोहम्मदशाहको दिल्लीके विश्व विदित सिंहासनपर बैठा दिया। जिस समय मारवाड पति अजितने दोनों सैयदोंके साथ मिलकर समस्त भारतमें, एकमात्र सबमें प्रधान सामर्थ्यवान् वीरस्वरूपसे दिल्लीके सिंहासनपर अपनी इच्छानुसार मनुष्यको अभिषिक्त किया था उस समयमें प्रबल आत्मविग्रहसे यवनराज्योंके अनेक समृद्धिवान नगर विध्वस्त और दूसरे पक्षमें अनेक नगर स्वाधिनभावसे मस्तक उठा सके थे। बादशाह फर्रुखसियरके स्वर्गारोहणके साथ ही साथ जयपुरके महाराज जयसिंहकी आशा भरोसा एक बार ही लीन हो गयी । दोनों भ्राता सैयद इस समय विशेष सुभीता पाकर अपने शत्रुपक्षके उन महाराज जयसिंहको उचित दंड देनेको शीघ्र ही सुसज्जित हो गये । आमेरपति जयसिंह कमलपत्र पर स्थित जलकी समान चंचल हो गये। जब नवीन सम्राट् मोहम्मदशाह और दोनों सैयद अजितके साथ सेना सहित जयपुर पर आक्रमण करनेके लिये आगे बढकर सीकरीनामक स्थानमें पहुँचे, तब जयपुरके सम्पूर्ण सामन्तोंने अपने प्राणोंके भयसे अजितके पास जाकर उनकी शरण ली। उन्होंने अजितको बुलाकर कहा, यदि आप जयपुरके महाराजकी सैयदोंके हाथसे रक्षा न कर सके तो जयपुर राज्यके साथ हमारा सर्वनाश हो जायगा । द्वापरमें श्रीकृष्णने जिस प्रकार अर्जुनको अभय देकर उनकी रक्षा की थी, अजितने भी उसी, प्रकारसे जयसिंहको अभय दान देकर उन्हें बुला भेजा । उन्होंने चांपावत् सम्प्रदायके नेता और अपने मंत्रीको जयसिंहके निकट भेज कर कहला भेजा कि महाराज अब कुछ भय नहीं है । अभय पाकर जयपुरपति जयसिंह उस चांपावत् नेता और अजितके मंत्रीके साथ तुरन्त ही उनके पास चले आये । जयपुरके महाराजने मानों प्रलयके मुखसे उद्धार पाया । अजितने जिस प्रकार अपने बाहुबलसे मोहम्मदशाहको दिल्लीके सिंहासनपर बैठाया था, उसी प्रकारसे राजा जयसिंहको महा विपत्तिसे उद्धार कर दिया। बादशाह मोहम्मदशाहने इस समय अजित पर अत्यन्त संतुष्ट हो उनको अहमदाबाद देशकी एक कालीनदानकी सनद देकर उन्हें अपने राज्यमें जानेकी आज्ञा दी। अजित आमेरके जयसिंह और बूंदीके बुधसिंह हाडाके साथ महा आनंदित हो

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखा है कि संवत् १७७६ में अजित और अबदुल्लाखां भी दिल्लीसे रवाना हुये, पर मुगलोंने नीकोशाहको सौंप दिया और वह सलीमगढमे कैद किया गया ।

अपनी राजधानी जोधपुरकी ओरको चले गये। और जाते समय रास्तेमें मनोहरपुरके सेखावत नेताकी एक परम सुन्दरी कन्याके साथ विवाह कर लिया। सुखदाई शरद्-ऋतुके पहले आश्विन मासमें महाराज अजित जोधगिरिमें गए, वहाँ आमेर पतिने सूरसागरके किनारे और हाडा रावने नगरके उत्तरकी ओर डेरे डाल दिये।"

राठौरोंके कवि कर्णीदानने इससे पीछे लिखा है "ऋतुराज वसन्तके आते ही शरद्ऋतु विदा होगई। नवीन आम्रमुकुलके अमृतमय सौरभसे भौंरे मतवाले हो गए। पादपराजि नवीन रसके आनेसे नवीन पत्तोंके आभूषणोंसे अपने सर्वांग शरीरको भूषित करके कमनीय दृश्य दिखाने लगी। भौंरोंने गूँ गूँ शब्द करते २ ऋतुपति माधवके जयका कीर्तन प्रारंभ कर दिया। चारोंओर आनन्द ध्वनि होने लगी, देवता तथा स्त्री पुरुष सभी आनन्दके समुद्रमें मग्न हो गये। ऐसे सुख समयमें आमेरपतिने लालरंगके वस्त्र धारण किये, रमणीय अजितकी कन्या सूर्यकुमारीके साथ पाणिग्रहण किया। चिर प्रचलित रीतिके अनुसार महाराज अजितने स कन्यादान करनेके पहिले इसके सम्बन्धमें चांपावत् सम्प्रदायके आदिप्रधान अर्थात् प्रधानमंत्री कूँपावत् संप्रदाय भंडारी दीवान और अपने गुरुदेवकी अनुमति ले ली। यदि हम इस विवाह सम्बन्धके संपूर्ण वृत्तान्तको वर्णन करें तो एक बडा भारी ग्रंथ बन जायगा, इस कारण इसके सम्बन्धमें कुछ थोडा सा ही लिखते हैं"।

अगले वर्ष, अर्थात् सवंत् १७७७ महाराज अजितके जीवनके पक्षमें एक चिर-स्मरणीय वर्ष हुआ था। महावीर मालदेवके पुत्र उदयसिंहने बादशाह अकबरकी अनुकूलता स्वीकार करनेके पहले "राजा" की उपाधि धारण करनेसे अकबरके चरणोंमें जिस जातीय स्वाधीनताको बेच दिया था। अजितने इस वर्षमें उसी जातीय स्वाधीनताको पुनः संचय करके भारतवर्षमें अपनी कीर्त्तिको अक्षय रखनेका उद्योग किया। सूर्यप्रकाशनामक ग्रंथसे जाना जाता है कि संवत् १७७७ में वर्षाऋतुके आने पर आमेरके महाराज जयसिंह और बूंदीके राव बुधसिंह इस वर्षाकाल तक अजितके ही पास रहे. इसी समयमें यह समाचार आया कि मुगलोंने बलवान होकर बादशाह मुहम्मदशाहकी सहायतासे दोनों भ्राता सैय्यदोंकी[1] हत्या की है, और महाराज अजितका सर्वनाश करनेके लिए वह उद्योग कर रहे हैं। वीर श्रेष्ठ अजितने यह समाचार पाते ही क्रोधित हुए सिंहकी समान रुद्रमूर्तिसे तलवार उठाकर शपथ की चाहे जिस रीतिसे हो मैं अजमेर पर अवश्य ही अपना अधिकार कर लूँगा नरेश्वर अजितने शीघ्र ही आमेरके महाराज जयसिंहको बिदा दी। बारह दिनके बीचमें ही मारवाडपति अपनी बलवान् सेनाके साथ मेरतामें आ पहुँचे। और अत्यन्त शीघ्रतासे उन्होंने सेनादलके साथ मुसल्मानोंको अजमेरसे भगाकर अजमेरके किलेके ऊपर राठौरराजका पताकाको लगा दिया। अजमेरमें स्थित सम्राट्की ओरके प्रधान

(१) दोनों सैयदोंकी हत्याका वृतान्त प्रथम कांडमें प्रकाशित हो चुका है, इसी कारणसे हमने यहांपर उसको दुबारा नहीं लिखा है।

शासनकर्ताका प्राण नाश करके अभेद्य किले तारागढ पर अधिकार कर लिया। हिन्दुओंके देवमंदिरोंमें आज फिर शंख और घण्टेका शब्द सुनाई देने लगा, और मुसल्मानोंकी मसजिदोंमें (बांगदेना उपासनाके अर्थ बुलानेका स्वर) एक बार ही बंद होगया, जिस अजमेरमें केवल कुरानोंका पाठ ही सुनाई देता था, इस समय उसी अजमेरमें पुरणोंके पाठ आरम्भ हुए। और मसजिदोंके स्थलमें मंदिरावलीने अधिकार कर लिया, समस्त काजी भाग गये, और ब्राह्मणोंने इस समय फिर अपनी पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त कर ली। जिस अजमेरमें केवल गोहत्या हुआ करती थी; उसी अजमेरमें इस समय पवित्र होमकुण्ड स्थापित होने लगे। विजयी अजितने सांभरके लवण ह्रद, डीडवाना देश और अन्यान्य बहुतसे देशोंको एक २ करके अपने अधिकारमें कर लिया। मारवाडपति अजित चारों ओर अपने जयभेदी शब्दसे विजयकी पताका उडाकर अपने पिताके सिंहासन पर सम्पूर्ण स्वाधीनरूपसे विराजमान हुए। उनके मस्तक पर स्वाधीन राजक्षत्र शोभायमान होने लगा। अपने ही नामका सिक्का चलाया, और स्वतंत्र तुलादण्डको नियुक्त किया, और अपना स्वतन्त्र परिमापक गज चलाया, स्वतंत्र ही सेर इत्यादिके बांटखाराकी सृष्टि की, और सर्वत्र स्वतंत्र विचारालयके स्थापन करनेमें किंचिन्मात्रका भी विलम्ब न किया। अपने अधीनके सामन्तोंकी पद मर्यादा भी नियुक्त कर दी। और उन सामन्तोंके सन्मानके लिये, सोटा नौवत पताका आदि नियत करके अपनी स्वाधीन अवस्थाका समस्त अनुष्ठान कर लिया। दिल्लीके अश्वपतिके समान अजित अजमेरमें पूर्ण स्वाधीन भावसे रहने लगे। शीघ्र ही यह समाचार समस्त भारतवर्षमें अधिक क्या मक्के और ईरानमें भी फैल गया सम्पूर्ण मुसलमानोंने जान लिया कि अजितने अपने जातीय धर्मकी उन्नति फिर कर ली, और समस्त मरुक्षेत्रसे मुसलमान धर्म एक बार ही दूर हो गया।''

सूर्यप्रकाशकारने आगे लिखा है संवत् १७७८से मुगल सम्राटने अजमेर देशपर फिर अपना अधिकार करनेका विचार किया। मुजफरखाँ सम्राट्के द्वारा सेनापति पद पर नियत होकर वर्षाऋतुमें ही सेना लेकर अजमेरकी ओर चला। मुगल सम्राट्की आधीनताकी शृंखलाको छेदन करनेवाले वीर श्रेष्ठ अजितने सम्राट्की सेनाका समाचार पाकर अपने असीम साहसी पुत्र अभयसिंहको शत्रुओंका नाश करनेके लिये भेज दिया। कुमार अभयसिंहके साथ मारवाडके आठ वीर सामन्त और तीस हजार अश्वारोही चले। वाहिनीके दक्षिणमें चंपावत गण बाईं और कूंपावत गण तथा करमसोत मेरतिया जोधा इंदा भाटी सोमगरा देवडा खीची धांन्धल

(१) अजितने दिल्लीके मुगल सभाके आदर्शमे यह समस्त ध्वजा, दंड, नौवत, आशा सोंटा आदि इन सबको सामन्तोंकी श्रेणीमें विभाजित कर दिए थे, जोधपुरमें आज तक वह रीति विराजमान है। राजपूत गण सर्व साधारणके पहले दिल्लीके प्रबल प्रतापान्वित बादशाहको अश्वपति कहकर उल्लेख करते थे। उनके मतसे अश्वपति दूसरी श्रेणीका सन्मान सूचक है। और गजपति प्रथम श्रेणीका सन्मान सूचक है।

और गोगावत् इत्यादि सम्प्रदायकी सेनाके प्रधान, वाहिनी रूपसे कुमार अभयसिंहके अधीनमें जय २ कारके स्वरसे पृथ्वीको कंपित करते हुए यवनोंका संहार करनेके लिये चले। आमेरमें राठौर और सम्राट्की सेनाका परस्पर मुकाबला हुआ। परन्तु मुजफ्फरने राठौर सेनाकी संहारमूर्ति देखकर बिना समय ही भयके मारे भाग कर अपने नामको कलंक लगा दिया। महावीर अभयसिंह बादशाहके सेनापति और सेनाको भीरु कापुरुषोंकी समान आचरण करता हुआ देख कर उत्तेजित हो बादशाहको दमन करनेके लिये उस प्रबल सेनाके साथ आगे बढे, अभयसिंहने एकादि क्रमसे शाहजहानपुर पर अधिकार कर नारनोलको लूटा और पटना अर्थात् तंवराघाटी और रिवाडीसे बहुतसा धन संग्रह कर लिया। यह जानेके समय प्रत्येक ग्राम २ नगर २ में अग्नि लगाकर जाने लगे। अलीवरदीकी सराय तक वह अग्नि जल उठी। अभयसिंहके उस महा पराक्रमसे सारी दिल्ली और आगरा मारे भयके कंपायमान होने लगे। अभयसिंहके इस असीम साहसको देखकर असुर गण पादुका छोडकर प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगे। और अभयको यवन वंशका विध्वंस करते हुए देख कर उनको 'धॉंकल' अर्थात् वंशविलोपक उपाधि दी, कुमार अभयने इस प्रकारसे चारों ओर अपने वीर विक्रमको प्रकाशकर सांभर और लूधानासे जाकर नेरूकापतिकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया।

कवि इसके पीछे लिख गये हैं, संवत् १७७९ में विजयीकुमार अभयसिंहने सांभरमें जानेके समय वहांकी सेनाकी संख्याको बढाकर किलेको अभेद्य कर लिया। इस वर्षमें महाराज अजित अजमेरसे आकर अपने पुत्र अभयसिंहके साथ मिले। कश्यपके साथ जिस प्रकार सूर्यका साक्षात् हुआ था। उसी प्रकार अजितके साथ उनके पुत्र अभयसिंहका साक्षात् हुआ। अभयसिंहने प्रचण्ड सूर्यके समान ध्वान्तस्वरूप मुजफ्फरको परास्त करके हिन्दूजातिके सुखकिरणको प्रभाषित कर दिया था, मुगलसम्राट मोहम्मदशाह फिर पिता पुत्रका मिलन देखकर महा भयभीत हो गये। उन्होंने अजितके उद्धत आचरणको निवारणकर अजितके साथ फिर मित्रताके होनेकी आशासे चार हजार सेनाके साथ नाहरखाँको अजितके निकट सांभरमें भेज दिया। परन्तु नाहरखाँ दौत्यकार्यमें अनुपयुक्त था। विशेष करके वह मनुष्य अत्यन्त उत्कट भाषोंका प्रयोग करके शीघ्र ही चार हजार यवनसेनाके साथ उस सांभरके रणक्षेत्रमें निहत

(१) धान्धल और गोगा सम्प्रदाय मरुक्षेत्रके अत्यन्त प्राचीन अनवीन सामन्त हैं। धांधल * गण राव गोगाके वंशधर और गोगावत् गण प्रसिद्ध चौहान गोगाके वंशमें उत्पन्न हुए। सतलजके किनारे जबतक पहले पहल यवनोंने आगमन नहीं किया था, उस समय तक इस वीर श्रेष्ठ गोगाने महा वीरता प्रकाश करके सतलजकी रक्षा की थी। गोगाका नाम राजस्थानमें सर्वत्र प्रसिद्ध है।

(२) नरूका सम्प्रदाय जयपुर राज्यमें एक प्रधान सामन्त वंशीय था, इनका विवरण यथा समय प्रकाश किया जायगा।

* धांधल तो राठौर हैं गोगाके वंशके नहीं हैं। राव आसथानके बेटे धांधलके वंशज हैं।

हो गया। इस समय चूडामणि जाटके पुत्रने आकर अजितकी शरण ली। बादशाह मोहम्मदशाहने इस समय राज्यके चारोंओर असंतोषकी अग्नि प्रज्ज्वलित देख कर तथा हिंदू जातिकी पुनर्वार उन्नति और अपने बलको अत्यन्त क्षीण होता हुआ देखकर भारतका राजमुकुट छोडकर मक्के तीर्थमें जाकर वहाँ रहनेका विचार किया। परन्तु मारवाडपति स्वाधीन नरश्रेष्ठ अजितने जो नाहरखाँकी हत्या की थी, इससे बादशाह महाक्रोधित होकर एक बार ही इनसे बदला लेनेके लिये उत्तेजित हो गया। जितनी सेना भारतराज्यके बाईस राजप्रतिनिधियोंके अधीनमें थी, मोहम्मदशाहने अजितको दमन करनेके लिये उस सब सेनाको इकट्ठा किया। उस प्रबल वाहिनीके अधिनायक पदपर आमेरके महाराज जयसिंह, हैदरकुली, इरादतखाँ बङ्गश इत्यादि प्रधान २ वीर नेताओंको नियुक्त करके अजितके विरुद्ध अजमेरको भेज दिया। श्रावणके महीनेमें उस सेनाने अजमेरके तारागढको जाकर घेर लिया। अभयसिंह उस किलेकी रक्षाका भार अमरसिंहके हाथमें सौंप सेना लेकर चले। यवनोंकी सेना चार महीने तक इस किलेको घेरे रही। परन्तु तो भी अपना अधिकार न कर सकी। सम्पूर्ण भारतके साम्राज्यकी सेना तो एक ओर, और मारवाडपति अजित अकेला एक ओर था। उन चार महीनोंमें अजित असीम साहस करके राठौरोंके बाहुबलको प्रकाश करनेसे शान्त न हुआ। अंतमें आमेरपति जयसिंहके प्रस्तावसे महाराज अजितने बादशाहके साथ संधि करनेकी सम्मति प्रकाश की। बादशाहकी ओरके यवन और अमीरोंने कुरान हाथमें लेकर संधिके नियमोंके पालन होनेके लिये शपथ की, अजित बादशाहको अजमेर देनेके लिये राजी हो गये। इसके पीछे अभयसिंह जयसिंहके साथ तुरन्त बादशाहके डेरेमें गये, डेरेमें यह प्रस्ताव हुआ कि अभयसिंह जो बादशाहकी अधीनता स्वीकार करेंगे तो इसके प्रमाणमें उनको बादशाहकी सभामें जाना होगा। आमेरपति जयसिंहने कहा कि अभयसिंहकी ओरसे कोई आपत्ति नहीं होगी, और वही इसके साक्षी भी बन गये, परन्तु अभीत हृदय अभयसिंहने तलवार हाथमें लेकर कहा कि यह तलवार ही हमारे जीवनकी साक्षी है"!

इस स्थान पर कर्नल टाडसाहब लिखते हैं कि मारवाडके युवराज बादशाहकी सभामें आशातीत ऊंचे सन्मानके साथ ग्रहण किये गये थे। अभयसिंहने विचारा कि उनके पिता ही एक मात्र बादशाहकी दाहिनी ओर प्रधान आसन पानेके अधिकारी हैं, इस कारण जब कि मैं उनके प्रतिनिधि स्वरूपसे आया हूं, तब मैं भी उसी प्रकारसे उस सन्मानसूचक आसनका अधिकारी हूं। समस्त भारतवर्षमें दिल्लीके बादशाहकी सभाका नियम और वहांकी रीति सबसे कठिन है, परन्तु अभयसिंहने इस पर तनिक भी ध्यान न दिया, और गर्वित हो सभामें पैठ समस्त महामान्य प्रधान २ अमीर और उमरावको पीछे छोडकर वे आगे बढे, अधिक क्या कहैं सिंहासन की एक सीढी पर पैर रखते ही एक अमीरने देख लिया तब उसने इनको रोका;

(१) भरतपुर राज्यके प्रतिष्ठाता।

इससे अभयसिंहने अत्यन्त क्रोधित हो तलवार अपने हाथम ले ली । सम्राट् मोहम्मद्शाहने इस समय भयंकर विपत्ति देख कर अपनी बुद्धिबलसे उसी समय अपने गलमस हीरोंका हार उतार कर अभयसिंहके गलेमें डाल दिया, इसीसे वह शोचनीय कांड दूर हो गया । मोहम्मदशाह यदि इस समय ऐसा व्यवहार न करते तो जिस प्रकार अमरसिंहने अपनी तलवारक बलसे सभामें रुधिर बहा दिया था, उसी प्रकारसे अभयसिंह भी करते ।

हम यहां तक जिन अजितके प्रशंशनीय वीर लीलाओंका अभिनय वर्णन करते आये हैं, यहाँ पर उन्हीं राठौर राजकुलके मध्याह्न मार्त्तंड अजितके उस पूर्ण प्रकाशमय जीवनावसानको वर्णबद्ध करनेके लिये विवश होते हैं । हमने जिन राठौर कविके इतिहासकी सहायतासे अजितकी जीवनी--अजितका बल विक्रम--अजितकी यवनपराधीनताके छेदनसे स्वाधीनताके अमृतमय सौरभकी सुगंधि--अजितके द्वारा स्वजाति और अपने धर्मका जीवन साधनसे प्राणपणकी समान महा शक्तिकी आराधनाको वर्णन किया, अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह कवि मारवाडपति राठौर अजितके जीवन नाटकके उस वियोगान्त अभिनयको वर्णन करके एक बार ही मौन हो गये ! ऐसा बोध होता है कि उस वियोगान्त कथाको वर्णन करके, राठौर राजवंशकी कलंक कालिमाको प्रकाशित करनेके अत्यंत ही अभिलाषी होकर कवि अपने कर्त्तव्य पालनसे विमुख हो गये । महामान्य टाड साहब लिखते हैं कुमार अभयसिंह अपने पिता अजितकी असम्मतिसे दिल्लीके बादशाहकी सभामें गये । अभयसिंह इस बातको भली भाँतिसे जान गये थे, उनके कलुषित हृदयमें जो गंभीर पापकल्पना विराजमान हो रही है वह शीघ्र ही सफल हो जायगी; इसी लिये वह अपने जन्मदाता पिताकी आज्ञाको न मानकर दिल्लीको चले गये । अभयसिंह महावीर महायोधा असीम साहसी और प्रबल पराक्रमी थे । परन्तु राठौर राजकुलाङ्गार भी थे । यद्यपि यह महामान्य टाड साहबने नहीं कहा है; तथापि हम मुक्तकण्ठसे कह सकते हैं कि अभयसिंहने जिस घृणित कार्यको करके पिताकी प्राण हत्याके द्वारा राठौर राजवंशमें जिस प्रकारका कलंक लगा दिया था पाठकोंने उसे प्रथम कांडमें पढा होगा, इसी कारण यहांपर उसके दुबारा उल्लेख करनेका प्रयोजन नहीं है । यद्यपि अभयसिंहने स्वयं अपने हाथसे अपने पिताका प्राण नाश नहीं किया परन्तु उनके प्राणनाशके मूलकारण वही थे- वही पितृहत्याके पापके महापातकी थे अभयसिंहने राज्यप्राप्तिकी आशासे अपने भाई बख्तसिंहको लोभमें डालकर पिता अजितको अकालमें ही इस लोकसे चिरकालके लिये विदा किया था,

हमने जिन राठौर कवियोंके लिखे हुए काव्यके इतिहासके अवलम्बनसे इन अजितकी जीवनीको वर्णन किया, वह दोनों इतिहास ही उन अजितके प्राणहंता अभयसिंहकी आज्ञासे और उनकी अध्यक्षतामें लिखे गये थे ! सूर्यप्रकाश ग्रंथमें अजितके इस अकालमृत्युके विषयमें केवल इतना ही वर्णन लिखा है

(१) प्रथम कांड २९ अध्यायके ७८२ पृष्ठमें देखो ।

कि " अजित इस समय स्वर्गको चले गये " परन्तु किसने उनको वैजयन्त धाममें भेजा, यह नहीं लिखा है। परन्तु राजरूपक ग्रन्थकारने एक बार ही मौन न रह कर अजितके उस शोचनीय निधनसे प्रबल शोकके वेगको अपने मन ही मनमें रख कर सत्यकी उज्ज्वल प्रभाको गुप्त रख कर लिख दिया है कि " दूसरे अजित स्वरूप अभयसिंहका अश्वपतिके निकट परिचय हुआ। अजित इस समाचारको पाकर महा आनंदित हुए। परन्तु इस संसारमें स्वल्पस्वरूप सभी वस्तु असार है। पहले हो अथवा पीछे हो समय आने पर करालकालके ग्रासमें एक दिन सभीको जाना होगा। अखण्ड प्रतापशाली बादशाह वा अमित बलशाली महाराज क्या मृत्युके मुखसे अपनी रक्षा कर सके थे? इस संसारमें हमारे रहनेका समय पहले ही नियत हो गया है, हम कभी भी अपनी इच्छानुसार नियत किये हुए समयके अतिरिक्त एक मिनटको भी जीवित नहीं रह सकते। हमारे इस पृथ्वी पर जन्म लेनेके समय विधाताने हमारे मस्तक पर भाग्यकी लिपि--परमायु नियत करदी है। उस नियमके घटाने बढानेकी किसीको भी सामर्थ्य नहीं है, भाग्यमें जो लिखा है वह अवश्य ही होगा। गोविंदकी आज्ञासे इन्द्रके अवतार स्वरूप अजित इस समय मृत्युलोकमें अपने प्रबल यशको फैला कर अपने नामको अक्षय कर सुरलोकको चले गये। सारांश यह है कि शत्रुओंके कुलकंटक स्वरूप महाराज अजित भगवान् की उस आज्ञासे इस संसारसे विदा होकर परलोकको चले गये। इन्होंने मुसलमानोंको उचित दंड देकर अपने जातीय धर्मके गौरवके सूर्यको भलीभाँति से उदित कर दिया था। मरुक्षेत्रके महाराज वैकुंठधामको चले गये, राजधानी जोधपुर गाढशोकसे परिपूर्ण हो गई, चारों ओर हाहाकारका शब्द सुनाई देने लगा। प्रत्येक प्रजाने भयभीत हृदयसे नेत्रोंमें जल भरकर परस्पर रुदन किया "हमारा सूर्य अस्ताचलको चला गया है" यमराजके अधिकारका समय उपस्थित होते ही कौन उसको रोकनेकी सामर्थ्य रखता है?--क्या पाँचो पांडवोंने हिमालयके प्रबल हिमानीमंडित देशमें प्राण त्याग नहीं किये? दाताकुल चूडामणि महाराज हरिश्चंद्र भी अपने भाग्यकी लिपिका खंडन नहीं कर सके। इस संसारमें कौन ऋषि, मुनि, साधु कौन मनुष्य कौन पशु, पक्षी, कीट, पतंग ऐसा है, जो मृत्युके हाथसे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ हो, अधिक क्या महाराज विक्रम और कर्णको भी यमका दंड स्वीकार करना पडा अस्तु महाराज अजित् किस प्रकारसे उस कालके गालके जालसे उद्धार पानेकी आशा कर सकते थे "।

राठौर कुल धुरन्धर अजितकी जीवनीकी समालोचनाके पहले हम यहाँ पर राठौर कविका अनुसरण करना ही उचित समझते हैं। कविश्रेष्ठने लिखा है, संवत् १७८० के आषाढ महीनेके कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको मरुक्षेत्रके "आठ ठाकुरौत" अर्थात प्रधान अष्ट सामन्तोंके अधीनमें स्थित सत्रहसौ राठौरवंशी वीर नंगा सिर किये नंगे पैरों नेत्रोंमें जल भरे शोक संतापित हृदयसे अपने स्वर्गको गये हुए महाराज अजितसिंहके शवके निकट अंतसमयमें इकट्ठे हुए। उन्होंने मृतक महाराजके

शवको एक नौकाकृति[1] रथीमें रखकर चिर प्रचलित रीतिके अनुसार बडी धूमधामके साथ राजश्मशान भूमिमें लाकर रक्खा। चन्दन काष्ठ अनेक प्रकारके सुगंधित द्रव्य, भारी भारी तुला, बहुतसे घी और कपूरसे शीघ्र ही महाराजकी चिताको सजा दिया। कविकी लेखनी किस प्रकारके हृदयसे इस हृदयभेदी शोककी घटनाका वर्णन करै? नाजरेन (रावलै[3]) महलमें जाकर "रावसिधारे" कहा। यह सुनते ही चौहानी रानी सोलह दासियोंके साथ आकर राजपूत रानियोंके कहने योग्य वचन बोलीं, आज हमारे बडे सौभाग्यका दिन है कि जिस वंशमें हमने जन्म लिया है वह वंश आज उज्ज्वल होगा। जिनके साथ चिरकालतक एक संग जीवन बिताया था आज किस प्रकारसे उनको परित्याग[4] करूँ?"

जैसलमेरकी शाखामें उत्पन्न हुई रावलभीमकी कन्या महा ऊँचे वंशकी भट्टियानी रानीने चक्रधारी श्रीकृष्णके चरण कमलोंमें प्रार्थना करके कहा, "मैं आनंदित होकर अपने प्राणपतिके साथ जाती हूं, हे प्रभो! मैंने तुम्हारे चरणोंकी शरण ली, मेरे सतीत्वकी रक्षा करो। देरावरकी[5] राजनंदिनी रानी मृगावती, निष्कलंक वंशीय तवर[6] रानी चावडा[7] रानी और सेखावत रानी, ये सभी भट्टियानी रानीके समान पतिके साथ जानेके लिये हरिका नाम कीर्तन करने लगीं। इन छहों रानियोंके हृदयमें मृत्युका भय तथा प्रज्वलित चिताकी अग्निमें दग्ध होनेका भय किञ्चित् भी नहीं हुआ। यही महाराज अजितकी प्रधान रानियां थीं, इन्हींके समान महाराजकी ५८पट प्रणयिनी उपस्त्रियोंने भी इसी भाँतिसे चिताकी अग्निमें भस्म होनेका विचार किया वे बोलीं "ऐसा सुभवसर ऐसा सुदिन अब कब आवैगा, यदि हम जीवित रहैं तो रोग आकर हमें आक्रमण करैगा, हम कमरेमें शय्याके ऊपर शयन करके अपने प्राणोंको खोदेंगी। जैसे कि समस्त जीवोंको यमराज ग्रास कर लेते हैं, । जब कि एक समय हमें भी उसी यमके करालग्रासमें पतित होना होगा; तब फिर क्यों हम इस समय अपने स्वामीका साथ छोडकर अपयशकी भागी बनैं? इस घोर कलिकालमें हमै विदा लेनी ही उचित है।" गंगाजीकी रेणुकाको मस्तक पर लगाकर गलेमें तुलसीकी माला पहरते समय भट्टियानी रानीने कहा "हमारे

---

(१) वैतरणी नदीके पार होनेके लिये राजपूतलोग राजाके शवको तरीकी समान आकृतिवाली रथीमे रक्खा करते है।

(२) रायलएशियाटीक सोसाइटीकी पुस्तकके प्रथम बाल्यूमके १५२ पृष्ठमें इस रीतिका वर्णन हुआ है।

(३) अन्तः पुर अर्थात् जनाने महल।

(४) अजितने अप्राप्त व्यवहार अवस्थामे ही इस रानीके साथ विवाह किया था। यही पितृहन्ता अभयकी माता थी।

(५)भाटी जातिकी प्राचीन राजधानीका नाम देरावर है। यह रानी उसी राजवंशमे उत्पन्न थी।

(६) इनके पिता दिल्लीके प्राचीन स्वाधीन हिन्दू राजवंशीय थे।

(७) अनहलवाडा पत्तनके प्रथम राजवंशधर इन्हींके पिता थे।

प्राणपतिके अतिरिक्त हमारा जीवन ही मरणस्वरूप है" इसी प्रकारसे प्रत्येक रानीने ही पतिके साथ जानेकी इच्छा प्रकाश की, नाजिरने उनको बुलाकर कहा, "इस समय तुम्हारा संग जाना सुखदाई नहीं है। आप जानती हैं कि चन्दनकाष्ठ अति शीतल है, परंतु प्रज्ज्वलित अग्निका संयोग होते ही उसकी वह शीतलता दूर हो जायगी, तब क्या आप इस इच्छाको अव्याहत रख सकैंगी? जिस समय वह भयंकर अग्निकी शिखा आपके कोमल शरीरको दग्ध करेगी, तब या तो आप उस दारुण पीडासे अधीर होकर चितासे भागने का उद्योग करैंगी और या आप उस दारुण पीडाको सहन न करके उठकर चल देंगी, तब आपके पतिके वंशको कलंक लग जायगा। आप सब विषयोंको भली भांतिसे विचार करके देख लीजिये और मेरे कहनेसे आप जिस महलमें रहती हैं उसीमें निवास करिये। आपके चिरजीवनने इन्द्राणीके समान सुख भोग करके विविध भांतिकी सुगंधित वस्तुओंका शरीरमें लेप कर, फूले हुए फूलोंकी सुगन्धिको सूँघा है तब अग्निकी किरणको आपका कोमल शरीर सहन न कर सकैगा? चिताकी प्रज्ज्वलित अग्निकी बात तो फिर कौन कहै।" अन्तःपुरके रक्षकको विशेष आग्रहके साथ निवारण करते हुए देखकर रानीने कहा "हम समस्त संसारको छोड सकती हैं, पर अपने प्राणपतिको नहीं छोड सकतीं।" इसके उपरान्त समस्त रानियोंने स्नान करके सुन्दर वस्त्राभूषण धारण किये और महाराज अजितके चरणकमलोंमें इस जन्मका अन्तिम प्रणाम किया। मंत्री श्रेष्ठ, कविवृन्द, तथा पुरोहित यह सभी प्रत्येक रानीको चितापर चढनेसे निषेध करने लगे। पटरानीने चौहानराजनंदिनीको बुलाकर कहा--कि आप स्वामीके साथ न चलिये, कारण कि आपके दोनों पुत्र अभय और बख्तको कौन स्नेह सहित पालन करेगा? आप उनके लिये जीवित अनाथोंको अन्नदान दरिद्रियोंको धनदान और साधुओंको धन देकर धर्मकर्म करती हुई पवित्र भावसे अपने जीवनको व्यतीत कीजिये। रानीने उत्तर दिया "यद्यपि यह बात सत्य है परन्तु महाराज पांडुकी रानी कुन्ती अपने पतिके साथ नहीं गई उन्होंने जीवन धारण करके अपने पांचों पुत्रोंके सुख और ऐश्वर्यको देखना चाहा था, परन्तु इससे क्या उनके जीवनकी लालसा पूर्ण हुई? यह जीवन असार है, छायावत् है, यह देहमंदिर केवल दुःखमय है। हमैं अब आप न रोकिये, प्राणपतिके साथ प्रज्ज्वलित अग्निमें इस दुःखमय देहके समर्पित होते ही हमारे शोकका अंत हो जायगा।"

इसके पीछे कविने उनके सहगमनके सम्बन्धमें लिखा है; कि "शीघ्र ही बाजा बजने लगा; महाराज अजितके शवके साथ श्मशानभूमिमें जानेवाली हजार २ सेना सहस्र २ प्रजा एक स्वरसे हरिका नाम लेती हुई जाने लगी। वर्षाऋतुमें जिस प्रकार

---

(१) जोधपुर राजदरबारमें समस्त कर्मचारियोंका दिल्लीके सम्राट् महलके समान बावनी नाम रक्खा गया था। इसी लिये अन्तःपुरके रक्षक एक राठौरके होने पर भी उसका नाम नाजिर होता था।

जलकी धारा वर्षा करती है, उसी प्रकारसे जानेके समय रास्तेमें दीन दुःखियोंको धन लुटाया जाने लगा। रानियोंके मुखमण्डल पर प्रभातकालके सूर्यके समान सतीत्वकी पवित्र ज्योति प्रकाशमान होने लगी। स्वर्गसे, उमाने उन अजितकी रानियोंकी ओर देखकर उनको आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे उस जन्ममें भी अजित तुमको पतिस्वरूपसे मिलें। अजितकी चितासे धुएंके निकलते ही सहस्रों मनुष्य खमां खमां (शाबास २) कहकर धन्यवाद देने लगे। आग्नेय पर्वतके समान चिताकी अग्निके भयंकर मूर्तिसे प्रज्ज्वलित होते ही देवकन्याओंने जिस प्रकार मानसरोवरमें स्नान किया था, सती रानियोंने भी उसी प्रकारसे प्रज्ज्वलित चिताकी अग्निमें अपने शरीरको डाल दिया। उन्होंने अपने पतिके साथ जाकर जिस जिस वंशमें जन्म लिया था, अपने उसी २ वंशको पवित्र किया।" अजित तुम धन्य हो! धन्य हो! तुमने अपने गौरवकी गरिमाको बढाकर असुरोंका नाश किया था। सावित्री, गौरी, सरस्वती, गंगा और गोमती इन सबने एक साथ मिलकर उन पतिकी अनुगामिनी सती रानियोंको बडे आदरभावके साथ वरण किया। महाराज अजितसिंह पैंतालिस वर्ष तीन महीने और बाईस दिन तक मृत्युलोकमें रहकर पीछे स्वर्गधामको चले गये।

मरुक्षेत्रके सिंहासनपर यहांतक जितने राजा बैठे थे, उनमें जन्मभूमिकी कृतज्ञ संतान स्वजातिके परम हितैषी स्वधर्मके अभ्युदयसाधक अजित ही सबसे अधिक प्रसिद्ध और सबमें श्रेष्ठ हुए। पाठकोंने उनकी जीवनीको पढकर भली भांतिसे जान लिया होगा कि अजितके जन्मसे लेकर मृत्युतक समस्त जीवनमें अनेक प्रकारकी विचित्र घटनाएँ हुई हैं। घोर तुषार मंडित पर्वतमय काबुलसे जिस समय अजित इस जगत्में आये, उसके पहले ही इनके पिता हिन्दूकुलचूडामणि महाराज यशवन्तने कालयवनके दिये कालकूट सेवनसे अकालमें ही मायामय शरीरको त्याग दिया था, इसी कारणसे अजितने अनाथ अवस्थामें ही उन दूरके देशोंमें जन्म लिया। उनके जन्म होनेका समाचार पाते ही नवराक्षसस्वरूप औरंगजेब उनके उस सुकुमारजीवनके नाश करनेका अभिलाषी हुआ। जन्मसे ही उस ज्ञानहीन बालक अजितके भाग्यमें मानो मरणकी भयंकर मूर्ति आकर दिखाई दी। केवल एक मात्र चिर राजभक्त राठौर सामन्तोंकी वीरतासे तथा राजभक्तिके बलसे शिशु अजितने उस कालके कराल ग्राससे रक्षा पाई। उसके जीवनकी रक्षाके लिये स्वजातीय राजवंशकी रक्षाके लिये राठौरोंकी सामन्त मण्डलीने सम्मुख संग्राममें महा वीरता दिखाकर अपने २ प्राणोंको त्याग कर दिया। अजितके ही द्वारा भविष्यत्में भारतकी रंगभूमिमें चिरस्मरणीय वीरलीलाका अभिनय होगा, इसीसे हिन्दू जाति, हिन्दूधर्म, हिन्दू समाजकी शोचनीय दुर्गति उनके द्वारा दूर हो जायगी, इसी कारणसे बालक अजितने अत्यन्त विचित्र उपायसे नरपिशाच औरंगजेबके हाथसे छुटकारा पाया था। यद्यपि उद्धार पा लिया था, परन्तु उसके प्राणोंका भय दूर नहीं हुआ था।

समस्त रजवाडेके न्यायमतके अधीश्वर होनेपर भी महान् राजद्रोही महा अपराधीके समान उस सुकुमार अजितको आबूके पर्वतपर अत्यन्त गुप्तभावसे निवास करना पडा, अर्वलीकी दुर्गम चोटीपर यवनोंने छद्म वेषसे उसके ढूंढनेमें कसर न की। समस्त मारवाडके महाराजका यह शैशव भाग्य कैसा हृदयभेदी था। बालक अजितसिंह विक्रमी यशवन्तसिंहका पुत्र था, इसी कारण ज्ञान प्राप्त होते ही उस सुकुमार बालक अवस्थामें ही उसने वीर नेताके समान अपने साहसी अनुरक्त और महा विक्रमी सामन्तोंके साथ पिताके राज्यका उद्धार करने तथा पिताका सिंहासन पानेके लिये बाहर जानेमें एक मुहूर्त मात्रका भी विलम्ब न किया। "महात्मा टाड साहब लिखते हैं"--कि अजितके जन्मसे लेकर जबतक उसके भाग्यने पलटा खाया तथा वह जब जन्मभूमिका उद्धार करनेको समर्थ हुए थे उस दीर्घसमयतक राठौर सामन्त मण्डलीने तथा राठौर जातिने उनके ऊपर जिस प्रकारकी राजभक्ति दिखाई थी; समस्त जगत् और समस्त मनुष्य समाजके इतिहासोंमें इस प्रकारकी राजभक्तिका उज्ज्वल चित्र और दूसरा दिखाई नहीं देता। जो सामन्त शासनकी रीति शुभ फलकी अपेक्षा अधिक अशुभ फलदायक है, उसी सामन्त शासनरीतिके तमोमय चित्रके ऊपर इस प्रकारकी घटनाने ही उज्ज्वल रमणीय किरणें फैला दी। वास्तवमें राजपूत गण एक वंशजाति और सामन्त शासनरीतिके अन्यान्य अनेक प्रकारके सम्बन्धोंसे बँधे हुए थे, बाहरी दृश्य मानो एक बडे परिवारके समान था। महाराज अजितके सत्रह वर्षकी अवस्थामें पहुँचनेके पहले ही जब राजपूत वीर सामन्तोंने अजितको एक बार भी आँखोंसे न देखा था और बराबर उसके लिये लडते मरते रहे तब उनकी राजभक्ति वा देशभक्ति कहांतक तारीफ की जावे। वे इतिहासमें अपने गौरवका एक अद्वितीय नमूना छोड गये हैं। उनका यह कथन है कि "हम अपने स्वामीके दर्शन पाये बिना अन्नजलमें किंचित भी रुचि नहीं रखते–हमको सभी पदार्थ स्वादहीन हैं" विशेष भक्तिभाव सूचक है। राठौर कवि भी अपनी अमृतमयी कवितामें उन सामन्तोंके मनके भावोंको कैसे चमत्कारतासे वर्णन कर गये हैं--तरुण अरुणोदय जिस भाँति फूल कुलरानी पद्मिनीके नेत्रोंको उन्मीलन करता है, उसी भाँति उन बालक अधीश्वर अजितके दर्शनमात्रसे ही प्रत्येक राठौरका हृदयरूपी कमल अत्यन्त प्रफुल्लित होता था। जिस भाँति पपीहा सुखदाई शरद् ऋतुमें चम्पेका अमृत मन भरकर पीता है। उनके नेत्र भी उसी भाँतिसे अजितके रूपामृतको पान करने लगे।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने पुनर्वार लिखा है कि राठौर जातिकी प्रत्येक सम्प्रदायने छब्बीस वर्षतक निरन्तर चलनेवाले भूपालके युद्धमें किस प्रकार अधिकतासे अपना रुधिर बहाया था, राठौरोंके इतिहासमें उसके कितने ही वृत्तान्त विदित होनेकी संभावना है, और स्वधर्म तथा नरपतिकी स्वाधीनता संचय करनेके लिये उन वीरोंने जिन्होंने अपना जीवनतक दे दिया था, उनके स्मरणके लिये मंदिर स्थापित किये और चिह्न समूहोंके स्थानोंपर उज्ज्वल

भाषामें जो स्मारक लिपि लिखी गई है, वह सभी भलीभाँतिसे उनकी खीर्तिका परिचय दे रही है। यदि अन्य किसी प्रमाणकी आवश्यकता हो तो उन राठौरोंके निवासी मेवाड आमेर इत्यादि राजाओंके कवियोंके इतिहासोंमें तथा उन राठौरोंके जन्मके शत्रु यवनोंके इतिहासोंमें भी भलीभाँतिसे प्रकाशमान हैं। दूसरी ओर राठौर कवियोंके कुलकी काव्यावली तथा प्रवाद वचनके समान वंशानुक्रमसे राजस्थानमें सर्वत्र जो गीत आजतक गाये जाते हैं, उनसे भी उन राठौर जातिके पूर्व पुरुषोंके बलविक्रम तथा उनके गौरवकी गरिमा अक्षय हो रही है। कर्नल टाड साहबकी इस सत्यतापूर्ण उक्तिके साथ हम और अधिक कुछ लिखनेकी आवश्यकता नहीं समझते। राठौर सामन्तोंने जन्मभूमिके लिये; अपने धर्मके लिये, किस प्रकार प्रफुल्लित मुखसे जीवन देकर अपना जन्म सार्थक किया था, वे किस प्रकार स्वाधीनताको संग्रह करनेके लिये निर्भय हो पाशविक बलके विरुद्ध न्यायकी महाशक्तिकी सहायतासे खडे हुए थे। यह राठौर सामन्त गण जो जीवन्तका निदर्शन दिखा गये हैं, आर्यरुधिर धारण करनेवाले उसको चिरकालतक स्मरण करें। यही हमारा अन्तमें कहना है।

महात्मा टाड साहबने इस स्थान पर आजितके सम्बन्धमें लिखा है कि "अजित जिस प्रकारके दृढप्रतिज्ञ राजा थे, वैसे असीम साहसी वीर भी थे, उनके शरीरका गठन भी उसी प्रकार वीरपुरुषोंके समान बलवान् था। उन्होंने अपने पिताके ही समान दुर्द्धर्ष साहस करके अपने पिताके गुणोंको प्राप्त किया था। ग्यारह वर्षकी अवस्थामें जिस समय वह अपने पिताकी राजधानीमें शत्रुओंके सन्मुख आये थे, उसी समयसे इस साहसके प्रतिभारका पूर्ण परिचय दिया। और उनके उस समयके विनय और नम्रता युक्त आचरणके यथार्थ अभिप्रायके जाननेमें केवल राजपूत ही समर्थ हुए थे। तीस वर्षतक बराबर जिस खंडमें प्रत्येक वर्षमें युद्ध होता था, उसमें कई युद्धोंमें आजितने स्वयं समस्त राठौर सामन्तोंके साथ अपने बल विक्रमका परिचय दिया था। संवत् १७६५ में आमेरमें दोनों सैयद भ्राताओंके साथ जो संग्रामकी अग्नि प्रज्वलित हुई थी, जिस संग्रामसे दोनों सैयदोंके साथ अजितका गुप्त संधिबन्धन हो गया था, उस युद्धमें भी आजित स्वयं उपस्थित थे। आजितके जीवनका शेष अंश केवल बादशाहकी सभामें ही व्यतीत हुआ था, परन्तु अजित जैसे बलवान् और प्रबल साहसी थे, यदि वह इस प्रकारसे गुप्त षडयन्त्र विद्याको सीख लेते तो निश्चय ही सबमें प्रधान नेता रूपसे दोनो सैयदोंको दमन करके अपने प्रबल प्रतापको विस्तार करनेमें समर्थ होते। उन दोनो सैयदोंके साथ संधिबंधनसे उनको मृत्युतकके षडयंत्र ही अजितकी सहायताके विशेष प्रार्थनीय हैं, और प्रयोजन होने पर फर्रुखसियरसे लेकर मुहम्मदशाहतक तैमूरके सिंहासनपर जितने बादशाह अभिषिक्त हुए, मारवाडपति आजित ही उन सबके अभिषेकके दूसरे नेता थे।" उनके पिता जिस भांति मुसलमानोंको अपने जन्मका शत्रु मानते थे, उसी भांति यह भी मुसलमानोंको घृणाकी दृष्टिसे देखते तथा

सम्पूर्ण विपरीत धर्म कर्म आचार व्यवहार युक्तयवनोंके नाश करनेका सुअवसर पाकर सरलतासे उस सुयोगको न छोड़ते थे। जिन प्रकाशित कारणोंसे अजित मुसलमानोंके नाम-तकसे क्रोधित होते थे, यदि उन्हीं कारणोंकी ओर हम देखते हैं तो जो बादशाह फर्रुख-सियरके निकट उस अजितका पारिवारिक सम्बन्ध बंधनसे अधीनताके सूत्रमें बँधे थे; उसने उसी सम्बधके प्रति उपेक्षा दिखाकर उस फर्रुखसियरके विरुद्धमें दोनो सैयदोंके साथ मिलकर फर्रुखसियरके ऊपर ही कठोर आचरण किये। हम कठिन समालोचनाके मुखमें अजितके उन व्यवहारोंको नहीं डाल सकते।"

कर्नल टाड साहबने निम्नलिखित उक्तिसे अजितकी जीवनीका उपसंहार किया है, "परन्तु अजितके जीवनमें एक कलंककी रेखा प्रकाशमान है। यद्यपि राठौर कवियोंके काव्यमें उस कलंकका कोई भी उल्लेख दृष्टि नहीं आया। परन्तु वह इस प्रकारसे प्रमाणित होता है कि उनकी जीवनीकी समालोचनाके समय वह घटना--जो घटना राजपूत जातिके तथा समयके पूर्ण चित्रको प्रकाशित कर देती है, तथा जिस घटनासे राजपूत सामन्तोंके शासनके अपूर्ण भारका परिचय मिलता है, उस घटनाका उल्लेख करनेमें भूलना उचित नहीं। महावीर दुर्गादास जो अजितके बाल जीवनके रक्षक थे-तथा अजितके बाल्यजीवनके शिक्षादाता थे-अजितके यौवन जीवनके उपदेष्टा थे, वही चिरप्रचलित प्रवाद वाक्य "राजाके ऊपर कदापि विश्वास करना ठीक नहीं है" इसी उक्तिको समर्थन करनेके लिये मानों जीवित थे। दुर्गादासने एक बार नहीं, दो बार नहीं, अनेक बार बहुतसे स्थानोंपर प्रशंशनीय रूपसे स्वार्थ त्याग किया था, बहुत बार धनका लोभ तथा ऊँचे सम्मानको भी त्याग दिया था। उस धन और सम्मानसे-उस निर्लोभतासे वह मोहित हो गये। वह मारवाडके सामान्य अधीन सामान्तपदसे अपने अधीश्वर प्रभु अजितके समान पद पर स्थित और सामर्थ्यवान् हो सकते थे। जिस दुर्गादासने अपने बाहुबल, पराक्रम, तथा बुद्धिबलसे यवनोंके ग्राससे मारवाड राज्यका उद्धार कर दिया था, वही दुर्गादास इस मारवाडसे निकाल दिये गये थे। अजितने किस समय और किस कारणसे इस कलंकके भारको धारण किया था; यह नहीं जाना जा सकता। बहादुरशाहके डेरोंसे जो मूलपत्र भेजे गये थे, उन सबका अनुसंधान करनेके समय घटनाके क्रमसे ये विषय प्रकाशित हुए,-"उस मूलपत्रावलीमें एक खंडके ऊपर इस प्रकारका लिखा हुआ देखा कि--'दुर्गादासने अपने कुटुम्बके सेवकोंके साथ उदयपुरमें पिछोला नदीके किनारे निवास किया था; और अपने पालनेके लिये उन्हें राणाके पाससे प्रतिदिन पाँचसौ रुपये मिला करते थे। सम्राट् बहादुरशाहने उनको समर्पण करने-की आज्ञा दी; परन्तु राणाने एक बार ही उससे असम्मति प्रकाश की।' ऐसा जाना जाता है कि अजितने किसी भारी कारणसे यह शोचनीय व्यवहार किया

(१) कर्नल टाड साहबको उदयपुरके महाराणाके महलमें उक्त पत्र खोज करनेके समयमें मिले थे।

था। लेखकने यह अनुमान करके मारवाड राज्यके इतिहासको विशेष रूपसे जाननेवाले एक यतिसे यह बात पूछी। यति इस विषयको भली भाँतिसे जानता था, उसने इस बातको नीचे लिखी हुई कवितामें कहा था " दुर्गा दशां काढ़ियां गोला गांगानी " अर्थात् दुर्गादासको निकाल कर गांगानी गांव गोलोंको दिया गया था।"

" यह गांगानी लूनी नदीके उत्तरकी ओर स्थापित था। और यह कर्मसोत सम्प्रदायका प्रधान नगर था; दुर्गादास उस सम्प्रदायके नेता थे ! यह गांव इस समय मारवाडके महाराजके खास अधिकारमें हो गया है; परन्तु दुर्गादासके समयमें यह राजाके ही अधिकारमें था, फिर पीछे किसका हुआ यह हमें विदित नहीं है, करणोत सम्प्रदायने उन महावीर दुर्गादासके स्मरणके निमित्त उस गांगाणीमें एक मंदिर बनाया गया उस मंदिरमें आज तक वीर पूजा किया करते हैं "।

इतिहासवेत्ता टाड साहब सत्यके सन्मानकी रक्षाके लिये वीर श्रेष्ठ दुर्गादासके निकालनेकी कथाका उल्लेख कर गये हैं, यह अवश्य ही मानना होगा, कि दुर्गादास जो निकाले गये थे इसको भी प्रमाणित कर दिया है परन्तु किस लिये और किस समय दुर्गादास निकाले गये थे, उस सम्बन्धमें उन्होंने कुछ भी नहीं लिखा। इस कारण संदेहके स्थानोंपर अजितके चरित्रोंमें दोष लगानेके लिये हम आगे नहीं बढते। जिस विधर्मी यवनने अजितको दिल्लीसे झाडीमें ले जाकर उसकी रक्षा की थी। जब कि अजितने जीवन पर्यन्त उस मुसलमानको काका कहकर उसका सन्मान बढाया था; तब राजपूतोंके जीवनकी अपेक्षा श्रेष्ठ स्वाधीनता और स्वदेश जो दुर्गादासकी सहायतासे अजितको मिले थे, उन्हीं दुर्गादासको इन्होंने एक सामान्य कारणसे बिना अपराधके निकाल दिया हो, राजपूतोंके चरित्र जाननेवाले इसका कभी अनुमान नहीं कर सकते। हम कह सकते हैं जब किसी ओरके अपराधीको उस सन्देहभाजनका कोई उपाय नहीं मिला, तब किसी पक्षके ऊपर भी कलंकका भार अर्पण करनेकी हमारी इच्छा नहीं है। मारवाडपति अजितकी जीवनीके सम्बन्धमें हमारा अन्तिम कहना यही है कि केवल राजपूत जातिमें ही नहीं, वरन् आर्यवंशधरमात्रके पक्षमें अजितकी जीवनी चिरकालतक स्मरण करनेके योग्य है।

---

(१) कर्नल टाड साहब।

(२) अर्थात् गुलाम।

(३) कर्नल टाड साहबने पूर्वाध्यायमें लिखा है, कि दुर्गादास दुनाराके सामन्त थे। *

---

* दुर्गादास कर्मसोत जातिके राठौरोंके नेता नहीं थे, करणोत जातिके थे। खीमसर गाँव अब भी बसता है। वह प्रधान नगर न कर्मसोतोंका था न कर्णोतोंका खालसेका एक गाँव था उसको महाराजा अजितसिंहजीने संवत् १७६५ मे खीचों मुकुंददासके बेटे गोकुलदासको जागीरमे दे दिया था। खीची मुकुन्ददासने महाराजकी बहुत अच्छी सेवा की थी, दुर्गादासके किसी पक्षपाती चारणने जलनसे गोकुलको गोला (गुलाम) कह दिया है।

दशम अध्याय १०.

पितृहत्यारूप महापापके कलक स्वरूप मारवाडकी शोचनीय अवस्था; यवन सम्राट्का अपने हाथसे पितृहन्ता अभयसिंहका अभिषेक करना; दिल्लीके बादशाहकी सभासे राजा अभयसिंहका जोधपुरको जाना; प्रजाका उनके प्रति सन्मान दिखाना; पुरोहित और कवियोंको अभयसिंहका धनादि देना; मारवाडके कवि इतिहास वेत्ता कर्णीदान; अभयसिंहका नागौरपर अधिकार; अनुज वख्तसिंहको पुरस्कार स्वरूपमे नागौरराज्य देना; उद्धत स्वभाव भूमियादिकोंका दमन; बादशाहका अभयसिंहको दिल्लीमे बुलाना; दिल्लीमे जानेके समय अभयसिंहका अपने राज्यको देखना; अभयसिंहको विषफोटक रोग; दिल्लीमे जाना; गुजरातमें स्थित राजप्रतिनिधि और दक्षिणमें कुमार जंगलीके साथ विद्रोह; इस समयके मुगल सम्राटकी सभाका चित्र; शत्रुओंके दमनके लिये बीडेका उपस्थित करना; उपस्थित अमीरगणों तथा सामन्तोंका बीडा उठानेमें असामर्थ्यता दिखाना; राठौरराज अभयसिंहका बीडा ग्रहण करना; अभयसिंहका अजमेरमे जाना; और वहाँ सेना स्थापित करना, आमेरके महाराजसे पुष्करतीर्थमें अभयसिंहका साक्षात् करना, भारतमें यवन राज्यके बिनाशके लिये गुप्त परामर्श करना; मेरतानामक स्थानपर अभयसिंहके साथ उनके अनुज वख्तसिंहका मिलन; जोधपुरमें जाना; राठौर सामन्तोंका सेना सहित इकट्ठे होना; अन्नपूजा; मीना गणोंका अभयसिंहकी सेनाके पशुओंका हरण करना; फिर लौट जाना; रणक्षेत्रमे यात्रा; अभयसिंहका मीनाओंके नेता सिरोहीके सामन्तोंके किलेपर अधिकार; सिरोहीपतिकी वश्यता स्वीकार और संधिबंधनके लिये अभयसिंहके साथ अपने भाईकी पुत्रीका परिणय होना; अभयसिंहके साथ सिरोहीकी सेनादलका योगदान; अहमदाबादकी ओरको जाना; राजप्रतिनिधिको आत्मसमर्पण करनेके लिये आज्ञा देना; राजपूतोंके युद्धकी सभा; वख्तसिंहका वीर सामन्तोंके देहपर कुंकुम जल बर्साना; सरबुलन्दखाँका अपनी रक्षाके लिये तैयारी करना; यूरोपियनोंका उसकी तोपोंपर अधिकारी होना सरबुलन्दके यूरुपीय बंदूकधारी शरीर रक्षक गण; युद्ध; राजपूतोंकी विजय; सरबुलन्दका आत्मसमर्पण, अभयसिंहका उसको बंदी करके बादशाहकी सभामें भेजना; अभयसिंहका गुजरातपर शासन; अभयसिंहका जोधपुरमे जाना।

साधनसे ही सिद्धि है। कार्यकुल तिलक अजित एकमात्र महाशक्ति साधनाके बलसे ही उस अनाथ अवस्थामें मनुष्यजीवनकी शेष प्रार्थनीय अवस्था तथा सम्पूर्ण स्वाधीनताका अमृतमय फल प्राप्त करके अपने दुर्भाग्य वशसे कुलाङ्गार दोनो कुमारोंके पापरूपी कामनाके मुखमें अपने जीवनका बलिदान करनम सन्नद्ध हुए। जो अजित एक मात्र अपने बाहुबलके पराक्रमसे दृढप्रतिज्ञता और अपने तेजके बलसे उस अनाथ अवस्थामें शेष यवनसम्राटकी स्वाधीनताका नाश करनेमें सम्पूर्ण रूपसे स्वाधीन हो गये थे; जिन्होंने राठौर राजवंशके मारवाडके आर्यजातिके सन्मानको भली भांतिसे बढाया था, वही मुगल सिंहासनके तथा मुगल सम्राट् पदके अभिषेककर्त्ता होकर चिरस्मरणीय अभिनय कर गये हैं, हमारी यह क्षुद्र लेखनी उन महावीरोंकी जीवनी प्रकाश करनेके पीछे, इस समय मारवाडके राजा उन अजितके वंशधरोंकी शासनके विपरीत हृदयवाले

शोचनीय वृत्तान्तसे परिपूर्ण, इतिहासको वर्णन करनेके लिये आगे बढी है । मरुमय क्षेत्रमें आदि राठौरके अभिनेता सियाजीने जिस स्वाधीनताका बीज बोया था, उदयसिंहके समयमें उस अमृतमय फलसे पूर्ण नन्दनमन्दारको अकबरके चरणकमलोंमें उपहार देकर जगत्में पहले ही राठौरने क्रीतदासकी उपाधि ली । समयके आते ही महावीर अजितने उस घृणित एवं जघन्य उपाधिको छोडकर उस अमृतमय पादपका यवनोंके हाथसे उद्धार कर लिया था । परन्तु उन्हीं अजितके वंशधर फिर उसी क्रीत-दास पदपर नियुक्त हो विचित्र अभिनय करनेमें प्रवृत हुए ।

राजाके दोषसे ही राज्य नष्ट हो जाता है । राजाके पापसे ही राज्य विध्वंस हो जाता है । कलुषित जीवनवाले अभयसिंह और वख्तसिंह पितृहत्याके पापसे पापी और महापातकी हो गये थे । पवित्र राठौर राजवंशमें पवित्र मारवाड राज्यमें उन दोनो भ्राता-ओंने जिस महापापका सर्वनाशकारी बीज बोया था; समय आते ही उस पापपादपकी विकट जडने समस्त मारवाडमें फैलकर सारे देशको आकर्षण करके कंपायमान कर दिया उसी महा पापके विषमय फलने उन महापातकी दोनोंके अधीन बहुतसे मनुष्योंको जर्जर कर दिया । उन दोनों महापापियोंमेंसे एक नरश्रेठ इकले ही महाराष्ट्रोंको दमन करनेमें समर्थ होकर भी एकमात्र उसी पितृहत्याके पापके फलसे मनुष्यजीवनके प्रार्थनीय धनको प्राप्त नहीं कर सका ।

यद्यपि अभयसिंह पिताकी हत्या करके महापातकी हो गया था परन्तु हम सत्य और सन्मानकी रक्षाके लिये अवश्य ही इस बातको स्वीकार करते हैं कि वह एक अत्यन्त बलवान और प्रबल पराक्रमी तथा अत्यन्त प्रभावशाली वीर पुरुष था । अजितकी जीवित अवस्थामें ही अभयसिंहने कई बार यवनोंके साथ प्रबल संग्राम करके अत्यन्त बल विक्रम प्रकाश कर अपने गौरवको बढा लिया । परन्तु वह एक महावीर भी था । तथा राठौर जातिके स्वभाव सुलभ समस्त गुणोंसे विभूषित था, तथापि उसके एक ही दोषने इसके उस बलविक्रमको उज्ज्वल नहीं करने दिया । वह दोष केवल पिताकी हत्याका ही नहीं है, वह दोष एक और प्रकारका है । जिस दोषसे उदयसिंहने पिताकी आज्ञाको उल्लंघन कर अकबरके चरणोंमें अपनी स्वाधीन-ताको बेच दिया था । उस दोषसे ही अभयसिंह केवल पितृहत्यारे नहीं हैं, बरन् उसने स्वजातिके गलेमें फिर अधीनताकी जंजीर डाल दी । असमयमें अन्याय, प्रभुभक्ति चलानेकी इच्छा यही एक प्रधान दोष है । उदयसिंह मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त होनेके लिये ही पिताकी अनिच्छासे अकबरके चरणोंमें प्रणत हुए थे, अब एक अभयसिंह भी उसी पापकी आशाके वशवर्ती हो पितृहत्याके महा पापमें लिप्तहुए । अभयसिंहके चरित्रोंके सम्बन्धमें विना कुछ कहे हुए पहले हम उसके शासनवृत्तान्तको प्रकाश करना चाहते हैं ।

राठौर कवि कर्णीदानने लिखा है, "संवत् १७८१ में मारवाडके महाराज अजित जब स्वर्गधामको चले गये । तब दिल्लीके बादशाह मुहम्मदशाहने अपने

हाथसे अभयसिंहके मस्तकपर राजतिलक किया, कमरमें कनककोषबद्ध तलवार बांधी, मस्तकपर राजमुकट बँधाया और हीरे और मणिमुक्तोंसे जडे हुए रत्नजडित किरचको देकर उनको मारवाडके अधीश्वर पदपर अभिषिक्त कर दिया। छत्र, चमर, नौबत और नगाडे आदि बाजे तथा अनेक प्रकारके मूल्यवान् द्रव्य उपहारमें देकर बादशाहने अजितपुत्रका पदयोग्य सम्मान बढाया। अधिक क्या कहूँ जो नागौर देश अमरसिंहको दिया गया था, सम्राट् मुहम्मदशाहने उस देशकी शासन सनदतक अभयसिंहको दे दी। मारवाडके नवीन महाराज अभयसिंह बादशाहसे यह ऊँचा सम्मान पाकर वहांसे बिदा हो अपने पिताकी राजधानी जोधपुरको लौट आये।" जिन महावीर अजितने अपने बाहुबलसे यवनोंकी पराधीनताको छिन्न भिन्न कर सम्पूर्ण स्वाधीनताका संग्रह किया था; और उसी स्वाधीनभावसे इस संसारको छोड गये थे; उन्हीं अजितके पुत्र अभयसिंहने आज फिर अपने गलेमें पराधीनताकी जंजीरको धारण किया। अजितके शेष जीवनमें मारवाडमें जो शान्तिका चन्द्रमा प्रकाशमान हुआ था तथा स्वधीनतारूप अनन्त तारागणोंसे जो विभूषित हुआ था, आज फिर वही मारवाड घोर अन्धकारसे ढक गया।

राठौर जातिकी कैसी अखण्ड राज्यभक्ति है। राजाके महापापी और अपराधी होनेपर भी एक मात्र राजभक्तिने राठौर जातिको किस विचित्र रूपसे अन्धा कर दिया। यद्यपि बख्तसिंहने अपने हाथसे जन्मदाता पिताके पवित्र वक्षस्थलमें तीक्ष्ण तलवार मारी थी और इस हत्याके समयमें अभयसिंह विदेशमें बादशाहकी सभामें था, परन्तु एकमात्र अभयसिंहके लोभ दिखानेके उपदेशसे तथा इसकी आज्ञासे अथवा इसकी ताडनासे ही जो बख्तसिंहने नरकके कीडोंके समान अपने पिताके जीवनरूपी कमलको काट लिया, यह वृत्तान्त मारवाड निवासियोंसे कुछ छिपा नहीं था। किन्तु तौ भी राठौर जातिके हृदयमें राजभक्ति इतनी प्रबल थी कि अभयसिंहके मारवाडमें आते ही राठौर जातिके प्रत्येक सम्प्रदायके बाल वृद्ध सभीने मानों एक मनुष्यके समान खडे होकर नवीन राजाको बडे आदर सन्मानके साथ लिया। सभी उस पितृहत्याके महापापको भूल गये। राठौर कविने अभयसिंहको अभ्यर्थनाके सम्बन्धमें लिखा है, "ग्रामके दूसरे ग्रामोंको उलंघन करके राजा अभयसिंह राजधानीकी ओरको आगे बढे, वैसे ही प्रत्येक स्थानकी कुलवधुएं जलसे भरे हुए कलशोंको शिरपर रखकर गीत गाय गायकर उनका सत्कार करने लगीं। इन्होंने जोधपुरमें जाकर समस्त राठौर सामन्तोंको उपहारमें अनेकों द्रव्य दिये, तथा कवि और चारणोंको धन देकर पुरोहितको पृथ्वी दान की।"

महामान्य टाड साहबने नवीन मारवाडेश्वर अभयसिंहके शासनवृत्तान्तको वर्णन करनेके पहले इस स्थानपर कवि कर्णादानके सम्बन्धमें कई एक कथाओंको लिखा है, इस कारण हम भी उनका अनुसरण करते हैं। कवि कर्णादान कान्यकुब्ज देशके

---

(१) कर्णादान कवि जातिका चारण था। न तो उसके वंशज स्वयं उसे कन्नौजके राजकविसे उत्पन्न हुआ बतलाते हैं और न और कहीं ऐसा प्रमाण देखा गया है। चारण जातिके लोग कभी कन्नौजमें न थे और न अब हैं।

शेष हिन्दू सम्राट् जयचन्दकी सभामें स्थित प्रधान कविके वंशसे उत्पन्न अपनी लेखनीसे उसे प्रकाशित कर गये हैं। कर्नल टाड साहबने कहा है कि " कर्णीदान जिस प्रकार पहली श्रेणीके कवि थे, उसी प्रकार राजनीतिमें भी चतुर, योधा और गाढ पण्डित थे, और प्रत्येक विषयमें ही वह अपनी चतुरताका चूडान्त प्रमाण दिखाया करते थे। मारवाडके आत्मविग्रहके समय प्रत्येक राजनैतिक घटनाका उन्होंने प्रशंसनीयरूपसे अभिनय किया। दूसरे उनके बलविक्रमके सम्बन्धमें हमें केवल इतना ही कहना है कि राजपूत जातिके अतुलनीय प्रबल युद्धमें लिप्त हुए वीरोंमें जो कईजने अपने जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए थे,कवि कर्णीदान भी उन्हींमेंसे एक थे। तीसरे सात हजार पांचसौ कवित्तोंसे पूर्ण "सूर्यप्रकाश" ग्रंथ उनके पांडित्य और कवित्वका अक्षय परिचय दे रहा है। वही सूर्यप्रकाश केवल उनका पैतृक गुण है। हृदयहारी कवितामाला तथा ग्रन्थ-शक्तिका प्रज्ज्वलित प्रमाण दिखा रहा है, यही नहीं कि उन्होंने अपनी गौरवगरिमाको बढानेके लिये ही इस श्रेष्ठ नीतिका अवलम्बन किया था, इसके भी बहुतसे उपदेश मूलक प्रमाण विद्यमान हैं। राठौर राजकवि कर्णीदान विक्रमाजीतकी सभामें कालिदासके समान अथवा महामान्य भारतेश्वरीकी सभामें वर्त्तमान लार्ड हेनिसके समान केवल वीणाध्वनिसे प्रकृतिको प्रसन्न ही नहीं कर सके किन्तु वह अपनी अमृत निःस्यन्दनी लेखनीके समान जन्मभूमिके लिये तलवार भी चला सकते थे। कर्नल टाडने इसीको प्रकाशित किया है"। इस बातको हम कह सकते हैं कि कर्णीदानने केवल अपनी लेखनीके बलसे अथवा तलवारके बलसे या नीतिज्ञताके बलसे अपने यशकी किरणोंको नहीं फैलाया था, बरन् उनके द्वारा आर्यजातिका एक कलंक दूर हो गया है। विलायतके निवासी शिक्षित गणों और उन पश्चिमी शिक्षाके उपासक देशी गणोंको दृढ विश्वास था-कि भारतमें इतिहास रचनाकी प्रणाली किसी समय भी प्रचलित नहीं थी। परन्तु कवि कर्णीदानका बनाया हुआ इतिवृत्तमय सूर्यप्रकाश उस भ्रांतिकी जडमें अवश्य ही एक दारुण आघात करता है। कवि कर्णीदान राजपूत जातिके लिये ही गौरवस्वरूप नहीं थे, बरन् यह सम्पूर्ण भारतके अलंकारस्वरूप थे, इतिहास अनन्तकाल तक इस बातका प्रचार करता रहेगा। इसमें कुछ भी संदेह नहीं।

इस स्थानपर मारवाडपति अभयसिंहका ही अनुसरण करना होगा, कर्नल टाड साहब लिख गये हैं कि नरपतिके अभिषेकका उत्सव थोडे दिनोंमें ही समाप्त हो गया। अभयसिंहने नागौर पर अधिकार करनेके लिये तैयारी कर दी। जिस समय वीरश्रेष्ठ अजितके साथ मुगलबादशाह मुहम्मदशाहका झगडा होनेसे युद्ध हो रहा था। उस समय बादशाहकी ओरसे राव अमरसिंहका उत्तराधिकारी इन्द्रसिंह उक्त नागौरराजके पदपर फिर प्रतिष्ठित किया गया था।

कवि कर्णीदानने इसके सम्बन्धमें लिखा है कि,जिस समय यवन सम्राट्के अधीनमें

(१) ऐसा बोध होता है कि टाड साहब कविके लिखे काव्यसे अनुवाद करनेके समय भ्रमसे इन्द्रके बदलेमें इन्दु लिख गये हैं।

स्थित भारत साम्राज्यके बाईस जनोंने राजप्रतिनिधिकी सेनाको लेकर अजितके विरुद्ध अजमेरको घेर लिया। उस काल समय पाकर जिजिया करके ग्राहक इरादतखाँ बंगसने राव इन्द्रको नागदुर्ग[1]के सिंहासनपर अभिषिक्त किया, परन्तु होली उत्सवके समाप्त होते ही ज्वालामुखी[2]की बडी धूमधामसे पूजा करके और श्रीभगवतीके निमित्त बकरोंका बलिदान करनेके पीछे उन सबके शरीरोंको घृत, रुधिर और लाल चंदनसे शोभायमाज कर दिया।"अभयसिंहकी चतुरंगिनी सेना शीघ्र ही नवीन महाराजके अधीनमें नागौरपर अधिकार करनेके लिये चली। अभयसिंहके आनेका समाचार सुनकर राव इन्द्रने उसके सन्मुख सम्राट्के हस्ताक्षर सहित नागौरकी शासनसनद्को उपस्थित करके कहा कि बादशाहने हमें नागौर दे दिया है, दूसरा कोई भी नागौरपर अधिकार नहीं कर सकता। इसके साक्षी आमेरके महाराज हैं, इस कारण न्यायके अनुसार हमहीं नागौरके यथार्थ अधिकारी हैं। अभयसिंहने इनके वचनपर किंचित् भी ध्यान नहीं दिया, और नागौरको जाकर शीघ्रतासे घेर लिया। प्रबल पराक्रमी अभयसिंहके विरुद्ध युद्ध करना असंभव है, तथा उनके ग्राससे नागौरकी रक्षा करना भी असंभव जानकर राव इन्द्रसिंहने शीघ्र ही आदरभावके साथ नागौरके किलेको छोड दिया। अभयसिंहने थोडे समयमें ही नागौरपर अधिकार करके अपने अनुज बख्तसिंहको वहांका अधिकार अर्पण कर दिया।" इस नागौरराज्यके लोभसे ही पापात्मा बख्तसिंहने अपने पिताके जीवनको नष्ट किया था। पाठक यथास्थान उसको पढ चुके होंगे। अभयसिंहने उस पितृहत्याके पुरस्कार स्वरूपमें बख्तसिंहको नागौर देकर प्रतिज्ञाके ऋणसे मुक्ति प्राप्त की। राठौर कविने लिखा है, कि अभयसिंहके नागौरपर अधिकार करते ही, मेवाड जयसलमेर, बीकानेर और आमेरके तीनों अधीश्वरोंने उनको बडे आदरभावके साथ बुला[3] भेजा। विजयकी इच्छासे उत्साहित हुई सेनाके साथ अभयसिंह अपनी राजधानीको लौट आये, सारी प्रजा महा आनंद प्रकाश करने लगी। संवत १७८१ में इस प्रकारसे नागौरको विजय किया था।

दूसरे वर्ष अर्थात् संवत् १७८२ में अभयसिंह अपने राज्यके दक्षिण सीमाके अनुवर्ती देशोंमें उद्धत स्वभाव भूमियादिकोंको दमन करनेके लिये चले। अभयसिंहके प्रबल प्रतापसे सिन्धलदेवडा, बाला बोडा, बालिसा और सोढा--जाति समूहने एक २ करके मस्तक झुकाकर उनकी अधीनता स्वीकार की।

कविने लिखा है,—" १७८३ में बादशाहका आज्ञापत्र राजा अभयसिंहके निकट आया। अभयसिंहने उन अनुमति पत्रोंको अपने शिरके ऊपर रखकर शीघ्र ही अपने अधीन समस्त सामन्तोंको सेनासहित बुला भेजा। सामन्त भी तुरन्त ही अपनी २

---

(१) नागौरका प्रकृत नाम नागदुर्ग है।

(२) यह अग्निपूजन ज्वालामाईका पूजन है, यह कालीका उपनाम है।

(३) उर्दू तर्जुमेमें बधाई भेजना लिखा है।

सेना साथ लेकर आ पहुँचे । अभयसिंह दिल्ली जानेके पहले एक बार अपने राज्यके संपूर्ण प्रधान २ स्थानोंको देखनेके लिये गये और इन्होंने प्रत्येक देशमें तथा दुर्ग और सेनाकी शिक्षामें शासनकी उत्तम व्यवस्था करके प्रजाके समान उसकी प्रार्थनाको पूर्ण किया । पर्वतसरनामक स्थानमें जाते ही राजा अभयसिंहको चेचक रोग हो गया । जगतरानीने मानों उनकी समस्त आपत्तियोंके दूर करनेके लिये वसन्तद्वारा उनके शरीरको आवृत कर दिया । ''

"संवत् १७८४ में अभयसिंह दिल्लीमें आये । अभयसिंहको आदरभावके साथ राजधानीमें बुलालेनेके लिये बादशाहने भारत साम्राज्यके सबमें प्राधान अमीरखान दौराखांको अपने प्रतिनिधिरूपसे भेज दिया । जब अभयसिंह महामान्य बादशाहके सम्मुख आये तब बादशाहने इनको बडे सम्मानके साथ अपने पास बैठाकर कहा । "खुशबख्त महाराज राजेश्वर ! आज बहुत दिनोंके पीछे आपके साथ भेंट हुई है । आज मैं अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ हूं । आज इस आम और खास सभाका सुख दूना बढ गया । " इस प्रकारसे अभयसिंहने शिष्टाचार पाकर बादशाहसे बिदा ली । उनके निवासस्थान अभयपुरमें उनके सम्मानके लिये बादशाहने शीघ्र ही उत्तर देशमें होनेवाले अनेक भांतिके स्वादिष्ट फल सुगंधित तेल और गुलाबजल आदि उपहारमें भेज दिये ।

बादशाह अकबरने उदयसिंहका जिस प्रकार सम्मान किया था, अभयसिंहके प्रति बादशाह मुहम्मदशाहका इससे भी अधिक सम्मान हुआ । यद्यपि महात्मा टाड साहब और राठौर कविने इस ऊँचे सम्मानका कारण प्रकाश नहीं किया, परन्तु विचारवान् पाठक इसको सरलतासे समझ गये होंगे कि दिल्लीके बादशाहका वह प्रबलप्रताप बलविक्रम इस समय अधिक घट गया था, इसी कारणसे उसने महाबली अभयसिंहको अपने हस्तगत करनेके लिये इस प्रकारके आशातीत सम्मानसे विभूषित किया था । कर्नल टाड साहबने लिखा है कि बादशाहने इस समय अभयसिंहको समस्त अमीर और सामन्तोंमें सबसे प्रधान नेतापदपर वरण किया । संवत् १७८४ के अन्तमें गुजरातका राजप्रतिनिधि सरबुलन्दखाँ बादशाहका विद्रोही हो गया । इस कारण उसी सूत्रसे राठौर जातिका बाहुबल और संग्राममें निपुणता प्रकाश करनेका एक सुअवसर उपस्थित हुआ और राठौर कविकी काव्यरचना भी उपयुक्त उपकारणसे संग्रह की गई । राठौर कवि उसके सम्बन्धमें नीचे लिखे हुए अनुसार वृत्तान्तको काव्यरचनामें वर्णन कर गये हैं ।

दक्षिणमें बडी भारी हलचल पड गई । शाहजादा जंगलीने विद्रोही होकर

---

(१) राजपूत शीतला देवीको जगतरानी कहा करते थे ।

(२) महाराष्ट्रोंकी * प्रथम उन्नतिके समय यह यवन राजकुमार उनके नेतास्वरूपसे था । इस समयके किसी मुसल्मान इतिहासवेताने उसे नहीं लिखा ।

---

* जंगली शाहजादा, कर्णीदानने शायद बाजीराव पेशवाको लिखा है । जिसकी फौजने मालवेका सूबा मुगलोंसे फतह किया था ।

छः हजार सेना साथ ले; मालवा, सूरत और अहमदपुरके शासनकर्ताओंपर आक्रमण किया तथा गिरिधरबहादुर, इब्राहीमकुली, रुस्तमअली और मुगल सुजाअत बादशाह्के इन कई एक प्रतिनिधियोंकी हत्या कर डाली।

बादशाहने इस विद्रोह समाचारको पाते ही इसको शांत करनेके लिये तुरन्त ही सरबुलन्दखाँको प्रधान सेनापतिरूपसे भेज दिया। सरबुलन्दखाँ पच्चीस हजार सेना और उसके भोजनके लिये एक करोड रुपया लेकर विद्रोही दलको दमन करनेके लिये चला। परन्तु इसके अधीनकी आगे जानेवाली दश हजार सेना शत्रुओंके साथ युद्धमें परास्त हो गई, तब इसने शत्रुओंके साथ संधि करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। संधिपत्रके मतसे सरबुलन्दखाँके अधिकारी देशोंको विद्रोही दलके नेताके साथ भाग कर लेनेकी सम्मति प्रगट की और शीघ्र ही सरबुलन्दखाँने शत्रुओंके साथ मिलकर संधिपत्रके प्रस्तावके कार्योंको परिणत कर लिया।

महात्मा टाड साहब लिख गये हैं कि, इस समय मारवाडके महाराज अभयसिंहने अपने पिताके राज्यमें जानेके लिये बादशाहसे आज्ञा माँगी। सरबुलन्दखाँकी विद्रोहिताके उपलक्षमें कवि कर्णीदान इस समयके बादशाहकी सभाके जिस चित्रको अंकित कर गये हैं, हम यहाँपर उसीको आदर सहित वर्णन करनेकी अभिलाषा करते हैं। कविने लिखा है, "कि सम्राट् मुहम्मदशाह दिल्लीके जगद्विख्यात सिंहासनपर, और सभाके यथास्थान पर साम्राज्यके दो सौ उच्च कक्षाके सामन्त उमराव बैठे हुए थे, इसी समयमें समाचार आया कि सरबुलन्दखां विद्रोही हो गया है। सभा स्थानपर प्रधान राजमन्त्री कमरुद्दीनखां, ऐत्तमादुद्दौला, खांनदौरान, मीरबखशी समसामउद्दौला अमीरउलउमरा मनसूरअली, रोशनउद्दौला तुर्रावाजखाँ, रुस्तमजंग, अफगानखाँ, ख्वाजासैयदउद्दीन (गोलन्दाजदलके सेनापति) सआदतखाँ (खासदरोगा) बुरहानउलमुल्क, अबदुलसम्मदखाँ, दलीलखाँ, जफ़रयाबरखाँ, (लाहौरके शासनकर्ता) दलेलखां मरिहमला, खानखाना जफ़रजंग, इरादतखाँ, मुरशिदकुलीखाँ, जाफरखाँ, आलीवर्दीखाँ और अजमेरके शासनकर्ता मुजफ्फरखाँ इत्यादि बहुतसे अमीर उमराव उस स्थानपर विराजमान थे।"

उस सभामें सबके सन्मुख ऊँचे स्वरसे यह पढा गया कि सरबुलन्दखाँने सब प्रकारसे गुजरातपर अपना अधिकार करके अपनेको उन देशोंका स्वाधीन अधीश्वर प्रख्यात किया है, और मंडला झाला, चौरासमां बघेला और गोरिल जातिको एक ही बारमें परास्त करके बाला जातिको सहसा विध्वंस कर दिया है, और हाला जातिने उसको कर देनेकी सम्मति प्रकाश की है -सरबुलन्दने इस प्रकारसे बलविक्रम प्रकाश किया है, कि भूमियां गण अपने २ किले छोड कर उसकी शरण हुए हैं, और उसको

(१) उर्दू तर्जुमेमें साठ हजार लिखा है।

(२) यही पीछेसे अवधका वजीर हुआ।

(३) शेषमें यही बंगालेका नब्बाब हुआ।

" सत्रह हजार देशका " अधिकार देकर मान्य दिखाया था; और सरबुलन्द अपनेको अहमदाबादका अधीश्वर बताकर दक्षिणके महाराष्ट्रोंके साथ जा मिला।

इससे पीछे कविने लिखा है, कि " बादशाह मुहम्मदशाहने विचारा कि, यदि विद्रोही सरबुलन्दखांको दमन न किया जायगा तो इसके आदर्शमें भारतके अन्यान्य देशके राजप्रतिनिधि भी अधीनता छोडकर स्वाधीन हो अधीश्वर रूपसे मस्तक उठावेंगे। इतिहासमें उत्तर देशके जकरियाखाँ, पूर्वाचलमें सआदखाँ, और दक्षिणमें निजाम-उलमुल्कने अपने पापकी इच्छासे मुगल बादशाहकी अधीनता छोडकर स्वाधीनरूपसे राज्यशासन करनेके पूर्वलक्षण प्रकाशित किये थे। मुगल सम्राट्का प्रबल प्रताप इस समय एक बार ही अत्यन्त क्षीण हो गया था। इस कारण मुहम्मदशाहने शासनशक्ति-को दृढ करनेके लिये विशेष अभिलाषा की। निर्वाणोन्मुख दीपककी शिखा जिस भांतिसे अंतमें एक वार प्रबल मूर्ति धारण करके कुछ ही समयमें बुझ जाती है; उसी प्रकारसे भारत साम्राज्यके मुगलशासनकी शक्ति औरंगजेबके शासनसे एक बार ही भयंकर मूर्ति धारण कर उस औरंगजेबकी मृत्युके साथ ही साथ प्रभाहीन हो गई। यद्यपि परिवर्ती बादशाह उस जगत्विख्यात दिल्लीके सिंहासनपर बैठकर तथा जगत् विदित भारतसम्राट्की उपाधि धारण करके शासनशक्तिको चलाते आये थे, परन्तु इससे उनके उस प्रताप, प्रभुत्व, विक्रम, वीरत्व और गौरवगरिमा प्रभात कालके चंद्रमाके समान घडी २ में हीन तेज होती जाती थी।

हम जिस समयके इतिहासका वर्णन करते हैं, उस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें क्या यवनराजके प्रतिनिधि शासनकर्ता, क्या देशी राजा सभीने मुगलराज्यकी अधी-नताकी जंजीरको छेदन करके स्वाधीनभावसे छोटे २ राज्योंकी प्रतिष्ठा करनेकी कल्पना की थी और सरबुलन्द ही सबमें प्रथम दूसरे राजप्रतिनिधियोंके उदाहरण स्वरूप हुआ।

सरबुलन्दखाँने विद्रोही दलके साथ मिलकर स्वयं स्वाधीन अधीश्वररूपसे अपने नामका प्रचार कर दिया। इससे बादशाहका हृदय अत्यन्त भयभीत हुआ; सर-बुलन्दको दमन करनेके लिये तुरन्त ही उसने तैयारी कर ली। सभामें सरबुलन्दखांके राजविद्रोहिताके समाचारका प्रचार होते ही बादशाहकी आज्ञासे मीर तुजक एक सोनेके पात्रमें बीडा अर्थात् ताम्बूल रखकर हाथ फैलाये, उन बैठे हुए अमित बल-शाली अमीर, उमराव और देशी राजाओंके बीचमें होकर धीरे २ जाने लगा। पर-न्तु हाय ! उसका वह कार्य निष्फल हो गया !--कोई भी साहस करके उस ताम्बूलको ग्रहण न कर सका !--किसी २ अमीरने तो शिर झुका लिया, किसी २ का

(१) आर्य्य शासनके समय यह देश सत्रह हजार ग्राम और नगरोंसे पूर्ण था। इसीसे सर्वसाधा-रणमें सत्रह हजार नामसे विदित था।

(२) दिल्लीके बादशाह हिन्दुओंका सर्व नाश करनेवाले थे तो भी बादशाहको सभी ईश्वरके समान माना करते थे।

शरीर मारे डरके थर २ काँपने लगा । किसीको भी उस बीडेकी ओर देखनेका साहस न हुआ।

राठौर कविने लिखा है, "कि परमेश्वर, बादशाह जो एक मात्र भिखारीको इच्छा करते ही बारह हजार सेनाके नेता और अमीर कर सकते थे तथा अमीरको भिखारी कर सकते थे, वही अतुल शक्तिमान् सम्राट् आज एक उपयुक्त साहसी वीर शून्य हैं । अमीर गणोंमेंसे एक जनने कहा,- 'जिसको दारुण वज्राघातके सहन करनेकी सामर्थ्य है, वही सरबुलन्दके विरुद्ध आगे बढनेका साहस करेगा' फिर और एक अमीरने कहा,-' जो प्रबल नावको पकड कर उस नावके साथ समुद्रमें जाय वही सरबुलन्दके साथ युद्ध करनेमें समर्थ होगा ।' तीसरे अमीरने कहा,-'कालकूटधारी सर्पका मुख पकडनेकी जिसमें सामर्थ्य है वही सरबुलन्दको दमन करनेके लिये तैयार होगा ।' अमीरोंके इस भांतिके वचन सुनकर सरबुलन्दके विरुद्ध युद्धके लिये जानेमें सभीको असमर्थ देखकर बादशाह मुहम्मदशाहने अत्यन्त दुःखित हो मीरतुजकको इशारेसे बुला उसको लौटजानेके लिये कहा ।

राठौर कवि इसी समयके बादशाहकी सभाका यथार्थ चित्र अंकित कर गये हैं । सरबुलन्दखाँ जैसा एक अमित तेजस्वी और दुर्द्धर्ष साहसी वीर था, दूसरी ओर दिल्लीके उमराव भी इस समय विलासिताके इतने वशीभूत हो गये थे, कि उनका बल, विक्रम और शूर वीरता एक बार ही दूर हो गई थी । जिस बादशाहकी सभामें एक समय अमीरोंने शत्रुओंके साथ युद्ध करनेके लिये बादशाहकी आज्ञा मिलनेकी इच्छासे सेनापति पदपर नियुक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की थी, और सहयोगी अमीरोंके साथ प्रतियोगिता दिखाई थी; कालवश उसी बादशाहकी सभाके वह अमीरगण इस समय प्राणोंके भयसे अत्यन्त भयभीत हो रहे हैं ।

कर्नल टाडने लिखा है । कि, राठौर राज अभयसिंह बादशाहकी यह दुखदाई अवस्था देखकर मन ही मनमें अत्यन्त दुःखी हुए; और जब बादशाह आमखास नामक सभास्थानको छोडनेके लिये उद्यत हुए, तब उसी समय वीरश्रेष्ठ अभयसिंहने गर्वित हो साहसमें भर कर उस बीडेको उठानेके लिये हाथ फैला दिया । बीडा ले मस्तकके ऊपर रखकर बादशाहको सम्बोधन देकर अभयसिंह बोले "जगत्के सम्राट् ! आप दुःखित न हूजिये, आपकी कृपासे मैं इस विद्रोही सरबुलन्दको अवश्य ही परास्त कर दूंगा; निश्चय ही उसके स्वाधीन होनेकी आशाकी जडमें दारुण कुठारका आघात करूंगा, और उसके मस्तकको आपके जगत् विख्यात सिंहासनके नीचे उपहारमें दूँगा ।"

अभयसिंहने जिस समय अपने हाथसे बीडा उठाया उस समय पका हुआ

---

(१) जो साहसी वीर ताम्बूल ग्रहण करते हैं वह शत्रु दमन करनेको सेनापतिके पदपर नियुक्त होते हैं ।

अनार जिस भाँति खील २ हो जाता है, उसी प्रकारसे सभामें बैठे हुए समस्त अमीरोंका हृदय हिंसाके प्रबल वगेसे मानों विदीर्ण हो गया। कुछ ही समयके उपरान्त बादशाह मुहम्मदशाहने अभयसिंहको गुजरातके शासनकी सनद दी, तब तो अमीरोंका द्वेष और भी प्रबल हो गया। परन्तु मुहम्मदशाहने उपस्थित अमीर और देशी राजाओंके बीचमें एकमात्र राठौरपति अभयसिंहको विद्रोही सरबुलन्दके विरुद्धमें युद्ध करनेका अभिलाषी देख अत्यन्त प्रसन्न चित्तसे अभयसिंहको बुलाकर कहा,--"दिल्लीके सिंहासनकी रक्षाके लिये आपके पूर्वपुरुष भी इसी प्रकार वीरोंके समान आचरण कर गये हैं, बादशाह जहाँगीरके राज्यमें आपके पूर्वपुरुषोंकी सहायतासे कुमार खुर्रम और भीमकी विद्रोहिता दूर हो गई थी। और दक्षिणके उपद्रव भी शान्त हो गये थे; तथा मैं विश्वास करता हूँ कि, इसी प्रकारसे आपके द्वारा मुहम्मदशाहके सिंहासन और उनके सन्मानकी रक्षा होगी।" अभयसिंहके लिये यह सन्मान अवश्य ही ऊँचा कहना होगा। जिस सभामें बादशाहके अधीनमें स्थित प्रत्येक वीर अमीर इकट्ठे थे। जिन अमीरोंकी मर्यादा बादशाहकी सभामें महासन्मानवाली गिनी जाती थी, जो अपनेको महावीर कहकर अभिमान करते थे। अभयसिंहने उनको लज्जित करके इस बीडेको उठाकर केवल राठौर जातिका गौरव बढाकर अपने असीम साहसका चूडान्त प्रमाण ही नहीं दिखाया था, वरन् उन्होंने केवल यही दिखाया था कि विजयी यवनोंकी अपेक्षा विजित जाति ही अधिक राजभक्तिके वशीभूत है।

राठौरोंके इतिहाससे जाना जाता है कि "सम्राट् मुहम्मदशाहने शीघ्र ही प्रसन्न चित्तसे राठौरपति अभयसिंहको बहुतसे द्रव्य और महामूल्यवान् सात हीरोंके अलंकार उद्धारमें दिये। राजखजानेको खोलकर सेनाके खर्चके लिये इकतीस लाख रुपया अभयसिंहको दिया। तोपगोदामसे बन्दूक और बहुतसे युद्धके अस्त्र सेनाने आनंदित होकर ग्रहण किये। संवत् १७८६ के आषाढ मासमें अभयसिंहने बादशाह मुहम्मदशाहके द्वारा अहमदाबाद और अजमेरके राजप्रातीनिधि पदपर नियुक्त हो शासन सनदको ले बिदा ली"।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिख गये हैं, "कि मुग़लबादशाहके साथ मारवाडका राजनैतिक विनाश इसी समयसे आरम्भ हुआ; कारण कि सरबुलन्दकी विद्रोहितासे ही यवनराजको खण्ड २ में विभक्त होनेके पहले सूचित हो गया था। सन् १७३० इसवीके जून मासमें मारवाडके अधीश्वर महाराज अभयसिंहने बादशाहसे बिदा मागी। अभयसिंह जिस अजमेरके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त हुए, सबसे पहले उसी अजमेरमें जानेके उनके दो अभिप्राय थे, पहला यह था—कि मारवाडमें जानेके मार्गका अभेद्य दुर्गस्वरूप (केवल मारवाडमें ही नहीं वरन् राजपूतानेके प्रत्येक राज्यका पथस्वरूप) अजमेर पर अधिकार तथा दूसरा उस सन्देहजनक राजनैतिक अवस्थाके सम्बन्धमें आमेरके महाराजके साथ परामर्श। आमेरके महाराज जयसिंह किस अभिप्रायसे

इस समय अजमेरमें आये थे, राठौरोंके इतिहासमें उसका कोई उल्लेख दिखाई नहीं देता; परन्तु अन्यत्र इनके सम्बन्धमें जो कारण निर्दिष्ट हुआ है उससे अनुमान किया जा सकता है कि पुष्कर तीर्थमें अपने पितरोंके लिये श्राद्ध तर्पणका करना ही उनके आनेका कारण था। राठौर कवि इन दोनों राजाओंके साक्षात् संबन्धको भली भांतिसे वर्णन कर गये हैं। उन्होंने लिखा है कि हिन्दुओंके दोनों राजाओंने एक दूसरेके निमित्त अपनी २ पगडी फैलादी, उसीके ऊपर होकर आये, तथा दोनों जनोंने एक ही साथ भोजन कर विश्राम किया। और वे यवनराज्यको विध्वंस करनेके लिये गुप्त सलाह करने लगे, इससे हम अनुमान कर सकते हैं कि कवि कर्णीदानको इस गुप्त राजनैतिक परामर्शके विषयमें भली भांतिसे जानकारी थी।

बादशाहकी सभामें महासम्मानित हो मारवाडपति अभयसिंह अजमेरमें जा अपने कर्मचारियोंको यथायोग्य पदपर नियतकर मेरताको चले गये। अनुज बख्तसिंहने मेरतामें पहले जाकर अपने बडे भाई अभयसिंहको भक्तिपूर्वक अधिक सम्मानके साथ ग्रहण कियाँ। इस समय बख्तसिंहको नागौर राज्यके शासनकी पूर्ण सनद मिल गई। दोनों भ्राता शीघ्र ही मेरताको छोडकर सेना और सामन्त मण्डलीके साथ जोधपुरकी ओरको जाने लगे। रास्तेमें महाराज अभयसिंहने समस्त सामन्तोंको सेनासहित विदा देकर कह दिया, कि विद्रोही सरबुलन्दके साथ शीघ्र ही युद्ध करनेको जाना होगा, इस कारण आप विलम्ब न करिये, और शीघ्रतासे अपनी अपनी सेना साथ लेकर जोधपुरमें इकट्ठे हूजिये। राठौर गण फिर इस समय अपने बाहुबलको प्रगट करनेका सुअवसर पाकर आनंदित हो अपने २ देशोंको चले गये। नरश्रेष्ठ अभयसिंह और नागौरपति बख्तसिंह जोधपुरमें जाकर सरबुलन्दके साथ युद्धकी तैयारी करने लगे। इस ओर ठीक समय पर मारवाडके प्रत्येक प्रान्तके राठौर सामन्त अपनी २ सेना सजाकर जोधपुर नगरमें आने लगे। राठौर कवि, सामन्तोंके सेनासहित आगमन और युद्धकी तैयारीके विषयको भली भाँतिसे वर्णन कर गये हैं। समस्त सेनाके इकट्ठी होते ही शास्त्रके अनुसार "वडवानल" "मगरमुखन" जमराजदंष्ट्र इत्यादि तोपोंकी पूजा प्रारंभ हुई। राठौर वीरोंने उन तोपोंकी श्रेणी तथा अस्त्रोंके सम्मुख अपने हाथसे बकरोंका बलिदान कर उन बलिदान किये हुए बकरोंके रुधिरसे तथा लाल चंदन और घृतसे तोपोंको शोभायमान कर दिया।

युद्धकी समस्त तैयारी हो गई, अभयसिंहका प्रधान उद्देश यह था कि वह सरबुलन्दखाँको दमन करनेके पहले और भी एक अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये उद्यत हों। अभयसिंह अजमेरके राजप्रतिनिधि थे, इस कारण उनके अधीनकी जितनी सेना इकट्ठी हुई वह उस सेनाके साथ प्रतिवासी सिरोहीपतिको दमन करने और उसको प्रतिफल देनेके लिये व्यग्र हो गये। सिरोहीका अधीश्वर जिस भाँति उग्र स्वभावका था, उसी प्रकारसे अमित तेजस्वी और स्वाधीन वीर था। वह किसी समय भी किसीकी अधीनताके जालमें न फँसा था, तथा सब प्रकारसे इस

समय स्वाधीनताका अमृतमय फल भोग करता था। सिरोही देश दुर्गम पहाडोंके ऊपर स्थापित है, उसके तीनों ओर पहाडी आदमी रहते थे; इस कारण सिरोहीराज उस असीम साहसी पहाडी निवासियोंकी मित्रतासे और उनकी सहायतासे सब प्रकारसे स्वाधीनताकी रक्षा करता था। सिरोही राज्यका जो अंश मारवाडकी ओर था, केवल उसी अंशकी रक्षा करके वह विशेष वीरता दिखाया करता था।

सिरोही राज्यके तीनों ओर जो पार्वती जाति निवास करती थी वह मीना नामसे विदित थी। वही मीना गण इस समय अभयसिंहके भयंकर कोपमें पतित हुए। अभयसिंह जिस समय सेनासहित दिल्लीसे जोधपुरमें आकर सामन्तोंको बिदाकर अफीमका सेवन करके उन्मत्त होगये, उस समय शुभ सुअवसर पाकर उक्त मीना गण अभयसिंहके पशुओंको चुराकर अपने अधिकारी पहाडी देशको ले गये। मीनोंके द्वारा पशुओंके हरण होनेका समाचार अभयसिंह तक पहुँचा, तब उन्होंने हँसते २ कहा, "अच्छा हमारे पशुओंको ले जाओ, उन्होंने यह जाना होगा, कि धान्य और घासके न मिलनेसे हमारे पशुओंको अत्यन्त कष्ट हो रहा है इस कारण वह उन पशुओंको अपने देशमें भोजन देनेके लिये ले गये हैं, तुम कुछ न कहना।" महामान्य टाड साहबने लिखा है कि बडे आश्चर्यका विषय है कि महाराज अभयसिंहके युद्धका उद्योग करते ही मीनागणोंने वह चुराये हुए पशु उसी समय ला दिये। अभयसिंहने! मीनागणोंके इस आचरणसे कहा, कि "यह हमने पहले ही कह दिया था कि यह मीनागण हमारी अनुगत विश्वासी प्रजा हैं।"

तुरन्त ही रणभेरी बजने लगी; चतुरंगिनी सेनाका दल वीरगर्वसे गर्वित हो पृथ्वीको कंपायमान करता हुआ भारतक्षेत्रके चिरस्मरणीय वीरोंका अभिनय करनेके लिये संहारमूर्तिसे आगे बढा। राठौर कविने इस स्थान पर इकट्ठी हुई सेनादलका विशेष वृत्तान्त वर्णन किया है। सेनादलमें केवल मारवाडके राठौरोंका सेनादल ही नहीं वरन् रजवाडेके अन्य कितने ही देशोंकी राजपूतसेना और दो यवनसेनापतियोंके अधीनमें यवनसेना भी इकट्ठी हुई थी। कविने लिखा है, कि "कोटा और बूंदीके हाडा-सैन्यदल, गगरौनका खीचीं सैन्य, शिवपुरकी गौडसेना, आमेरकी कछवाही सेना और मरुक्षेत्रकी सोढासैन्य अपने २ अधीश्वरोंके अधीनमें इकट्ठी हुई। मारवाडके अधीश्वर उस सम्मिलितवाहिनीके प्रधान सेनापतिरूपसे उनको चलाकर ले गये, मारवाडके सम्मिलित राठौर, सेनादलके, बांई ओर वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहके अधीनमें चले।"

राठौर कविने लिखा है, "संवत् १७८६ चैत्रमासकी दशमी तारीखको जोधपुरको छोडकर भाद्राजून, मालगढ, सिवाना और जालौरमें होकर अभयसिंह सेना सहित आगे बढे। वह सबसे पहले रिवाडापर आक्रमण कर अस्त्रोंकी वर्षा करने लगे। महा संग्राम होनेके पीछे चांपावतके नेता अपने जविनको त्याग कर शवराशीके ऊपर जा गिरे। देवडागण परास्त होकर प्राणोंके भयसे पर्वतको छोडकर भागने लगे। वहांका एक दल सेनाकी रक्षाके पीछे अभयसिंहके साथ पूसालियाको चला गया। पीछे

आबूशिखर उस विजयी वाहिनीके आगमनसे कंपायमान हो गया। सिरोहीपतिने जब यह सुना कि रिवाडा और पोसालिया: यह दोनों देश अभयसिंहकी सेनाने विध्वंस कर दिये हैं, तब वह एक बार ही निराशाके समुद्रमें मग्न हो गये। सिरोहीपति चौहानराव नारायणदासने अन्य उपाय न देखकर वीरश्रेष्ठ अभयसिंहके हाथमें अपनी भ्रातृपुत्रीको देकर राज्यकी रक्षा करनेका विचार किया "।

चावडा जातीय राजपूत सामन्त मायारामकी मध्यस्थतामें सिरोहीपति राव नारायणदासने अभयसिंहके निकट संधिका प्रस्ताव भेज दिया। और उसके साथ ही अपने भाई मानसिंहकी कन्या उन्हें देनेकी अभिलाषा भी प्रकट की। उस भयानक रणभूमिमें शीघ्र ही राजपूत जातिके विवाहके पूर्वोपहारस्वरूपमें एक नारियल, आठ श्रेष्ठ तुरंगनी और चार हाथियोंका मूल्य राव नारायणदासने अभयसिंहके पास भेज दिया। अभयसिंहने उसको बड़े आदरके साथ ग्रहण करके विवाह करनेमें तुरन्त ही अपनी सम्मति प्रगट की। कुछ ही समयमें युद्धका बाजा बंद होकर विवाहके आनंद-का कोलाहल होने लगा। शुभ मुहूर्त्तमें महाराज अभयसिंहने मानसिंहकी कन्याका पाणिग्रहण किया। इस विवाहके फलस्वरूपमें अभयसिंहके औरससे इस रानीके गर्भसे दश महीने पीछे जोधपुरमें रामसिंहने जन्म लिया। राठौर कविने लिखा है कि राव नारायणदासने इस परम सुन्दरी भाईकी पुत्रीको अभयसिंहके करकमलमें अर्पण करनेके अतिरिक्त कर देकर संधिबंधन समाप्त कर लिया।

देवडा जातीय सामन्त मंडली अपनी २ अधीनकी सेनाके साथ मारवाड़के महाराज अभयसिंहके अधीनमें स्थित प्रबल वाहिनीके संग जा मिले, मारवाडपतिने विद्रोही—सरबुलन्दखाँको दमन करनेके लिये सरस्वती नदीके निकटवर्ती पालनपुर और सिद्धपुर होकर सेनासहित यात्रा करनेमें क्षणमात्रका भी विलम्ब न किया। वीरश्रेष्ठ अभयसिंहने विद्रोही नेता सरबुलन्दके निकट जाकर वहाँ अपने डेरे डाल दिये, और उसके पास एक दूत भेज दिया। सरबुलन्दने दिल्लीके बादशाहके अधि-कारी जिन समस्त सामरिक और अन्यान्य द्रव्यों तथा तोपोंपर अधिकार कर रक्खा था, उन सबको लौटा दे, अधिकारी राज्यकी आमदनी तथा उसके खर्चेका हिसाब और समस्त राजस्व दे दे, और अहमदाबाद और उस देशके अन्यान्य किलोंमें जो सब विद्रोही सेना ठहर रही थी, उसको निमंत्रण कर बिदा देनेके लिये प्रधान सेनापति अभयसिंहने उस दूतके हाथ सरबुलन्दके निकट यह आज्ञा कहला भेजी। सरबुलन्द अभयसिंहकी उस आज्ञाके विरुद्ध गर्वित हो अहंकारसे पूर्ण उत्तर देनेमें कुछ भी भयभीत नहीं हुआ। उसने कहला भेजा कि "मैं अहमदाबादका राजा हूँ जबतक मेरे शरीरमें प्राण रहेंगे तबतक किसी प्रकार भी अहमदाबादको नहीं दे सकता।"

विद्रोही नेता सरबुलन्दखाँका उत्तर सुनकर महाराज अभयसिंहने तुरन्त ही एक महती सभा की। समस्त राठौर सामन्त सभास्थलमें इकट्ठे हो गये, सरबुलन्दके

पास जो प्रस्ताव भेजा गया था, उसका उसने जो उत्तर दिया था तथा इसके सम्बन्धमें जिस भावसे तर्कवाद और वक्तृता हुई, तथा सबसे पीछे जिस नीतिका अवलम्बन किया गया राठौर कविने उसका विशेष वर्णन किया है। उसने मरुक्षेत्रके सबमें प्रधान आठ राठौरोंके सामन्तोंकी वक्तृताका संक्षिप्त मर्म भली भाँतिसे प्रकाशित किया है।

राठौर कविकी लेखनीसे जाना जाता है, कि " चांपाके वंशधर अहवाके हरनाथके पुत्र सामन्त कुशलसिंह जो मारवाडके महाराजके दहिनीओर आसनपर बैठनेके अधिकारी थे। सबसे पहले उन्हींने अपने मनके भावको प्रकाशित कर दिया।" इसके पीछे कूंपावत सम्प्रदायके नेता आसोपके सामन्त कन्हीराम, जो मरुक्षेत्रपतिके बाँई ओरके आसनपर बैठनेके अधिकारी थे उन्होंने कहा, "आओ किलकिला[1]के समान हम समररूपी समुद्रमें कूद पडें। इसके पीछे मेरताके सामन्त केसरीसिंहने अपने मन्तव्यको प्रकाशित किया, ऊदावत सम्प्रदायके वृद्ध असीम साहसी और बहुतसे युद्धोंमें महावीरता प्रकाशक नेताओंने " इस समय क्या करना उचित है " अपने २ मनके भावको इस विषयमें प्रकाशित कर दिया इसके पीछे योधा सम्प्रदायके प्रधान नेता खैरवाके सामन्तने कहा " मैं सबसे पहले रणभूमिमें अपना जीवन देकर अप्सराओंकी वरमालाको ग्रहण करनेकी अभिलाषा करता हूं। आओ मेरे शरीरको लाल रंगके वस्त्रोंसे शोभायमान करो, पीछे शत्रुओंके रुधिरसे तलवार और भालोंको रँगकर सरबुलन्दका मस्तक लेकर क्रीडा करूंगा। जेतावत फतेसिंह और कर्णोत अभयमल[2]ने योधा नेताकी इस युक्तिको भली भांतिसे समर्थन किया, समस्त वीर एक स्वरसे युद्ध! युद्ध! कहकर चिल्ला उठे। कोई २ वीर लाल वस्त्रोंको धारण करके मानों सूर्यलोकके जीतनेको तैयार हुए। ऊँचे स्वरसे चाँपावत कर्णसिंहने कहा, "अप्सरा गण अमृतके पूर्ण पात्र हाथमें लिये सूर्यलोकमें हमारे साथ आदरसहित सम्भाषण करेंगी।[3] प्रत्येक राजपूत सामन्त और समस्त कवियोंने एक स्वरसे कहा—'युद्ध! युद्ध!'।

---

(१) किलकिला एक छोटे पक्षीका नाम है। यह खंजनके बराबर होता है, और प्रायः रूपरंगमें भी उससे मिलता जुलता होता है। यह अकसर नदी या तालमें पानीसे दो चार हाथ ऊपर मडराया करता है, और ज्योंही देखता है कि उसके भक्ष योग्य कोई छोटी मछली बूंद लेनेको उठ रही है त्योंहीं वह तीरकी तरह पानीमें गोता मारकर इस मछलीको पकड लेता है। वह प्रायः किलकिल शब्द करता है इसीसे उसे किलकिला कहते हैं।

(२) सही नाम अभयकर्ण है। यह दुर्गादासका बेटा था। इसीकी मिलावटसे, कि उस रातको यह चौकीपर था, जब बखतसिंहने जनानेमें जाकर अपने बापको मारा था।

(३) महात्मा टाड साहबने यहीं पर टीकेमे लिखा है, "कि हमारे प्राचीन शिक्षक जिस समय सरबुलन्दके साथ इस युद्धका वृत्तान्त पढ रहे थे, और मैं उसका अनुवाद करता जाता था, उस समय मेवाडके सबमें प्रधान माननीय सलूमरके २२ वर्षके एक युवक सामन्त मेरे पास बैठे हुए मन लगाकर इसको सुनते जाते थे। इन्हीं सलूमरके सामन्तवंशी किसी विशेष कारणसे (वह कारण हम इस—

इसके पीछे बख्तसिंहने उठ कर अपने भाई अभयसिंह और सामन्तोंको बुलाकर कहा, "कि आपलोग सभी इस स्थान पर विश्राम करिये, मैं अकेला ही सबसे पहले सेनाको चलाकर सरबुलन्दके अहंकारको चूर्ण करता हूं। आप इन्हीं डेरोंमें विश्राम कीजिये" तुरन्त ही एक बडे पात्रमें लाल जल लाया गया, वह पात्र मारवाडके महाराजके सन्मुख रक्खा गया। अभयसिंहने उस पात्रमेंसे जल लेकर उन बैठे हुए वीरोंके ऊपर उसे छिडकते हुए कहा, "इस युद्धमें प्राण त्याग करनेसे अवश्य ही अमरपुरमें जाना होगा"।

इस स्थानपर कविने इकट्ठी हुई अश्वारोही सेनाके अश्वोंकी प्रशसा की है। दक्खिनकी भीमरथालीनामक अश्वश्रेणी सबसे अग्रणीय थी, इसके पीछे मारवाडके अन्तर्गत घाट और राडधडा और सौराष्ट्रके अन्तर्गत काठियावाडके अश्वोंकी प्रशंसा की थी। सरबुलन्दखाँने अपनी रक्षाके लिये सम्मिलित राजपूत वाहिनीके करालग्राससे नवजीतराज्यकी रक्षाके लिये जिन सब उपायोंका अवलम्बन किया, राठौर कविने उसका भी वर्णन किया है। उसने नगरके जानेके प्रत्येक मार्गपर दो२हजार सेना और पाँच पांच तोपें रख दीं। इन तोपोंको यूरूपवाले चलाते थे। एक दल यूरूपीय बंदूकधारी सेना शरीररक्षकरूपसे उसके पास रहती थी। अभयसिंहने युद्धकी सभामें नियत किये हुए मतसे सरबुलन्दपर आक्रमण करना विचार कर शीघ्र ही समरानल प्रज्वलित कर दी। पहले दोनों ओरसे तोपोंके भयंकर गोलोंकी वर्षा प्रारंभ हुई, क्रमानुसार तीन दिन तक इस प्रकारसे गोलोंकी वर्षा होनेके पीछे सरबुलन्दका पुत्र मारा गया। महावीर बख्तसिंहने सबसे पहले संहार मूर्तिसे राठौरोंकी सेनादलके साथ शत्रुपक्षपर भयंकर वेगसे आक्रमण किया; राजपूतोंकी सेनाका दल उस प्रथम आक्रमणसे ही अपना प्रशंसनीय बलविक्रम दिखाने लगा, प्रत्येक

—समय भूल गये हैं) किसी भांति भी अफीम सेवन नहीं करते थे। विशेष शपथ करके सलूमरके सामन्तोंने अफीम सेवनसे घृणा की थी। इस सामन्तके पितामह यहांतक अफीम सेवनसे घृणा करते थे कि, एक समय प्रकाश्यप्रीतिकी सभामें उनके शरीरके किसी स्थानपर अफीम मिले हुए पानीकी एक बूंद गिर पडी थी। उन्होंने तुरन्त ही अपनी तलवारसे शरीरके उस स्थानको काट डाला। मुझे यह पहले ही ज्ञात था, तब मैंने उस युवक सामन्तको बुलाकर कहा, "अच्छा रावतजी आप अप्सराओंके हाथसे अमृतपूर्ण प्यालेके ग्रहण करनेकी अभिलाषा करोगे या अपने कुलकी प्रतिज्ञाको रखनेके लिये निषेध करोगे? उसी समय युवक सामन्तने उत्तर दिया, मैं अवश्य ही अप्सराओंके हाथसे अमृतमयपात्रका ग्रहण करनेकी इच्छा करता हूँ, पर वह इस अफीम पूर्णपात्रसे अवश्य ही भिन्न है। मैंने कहा "तब क्या आप विश्वास करते हैं कि जो रणभूमिमें जीवनदान करते हैं? अप्सरा गण उनकी आत्माको आदरसहित सूर्यमंडलमें ले जाती हैं?" उत्तर मिला "इस बातको न माननेमें किसको साहस है। जब हमारा समय आवैगा तब हम अवश्य ही अप्सराओंके हाथसे उस पात्रको आदरसहित ग्रहण करेंगे।" वीरके लिये कैसा उज्ज्वल विश्वास है। इस युवक सामन्तने दीर्घकालतक हमारे प्राचीन

राजपूत सामन्त ही इस समय नंगी तलवारें और भाले हाथमें लेकर शत्रुओंके संहार करनेमें उन्मत्त हो गये थे। चांपावत सम्प्रदायके नेता कुशलसिंह रणक्षेत्रमें अपना जीवन देकर सूर्यलोकको चले गये। अहमदाबादके इस भयंकर युद्धमें राजपूतानेके जिन महावीरोंने अपना जीवन दिया था; महात्मा टाड साहबने इस स्थान पर कविके ग्रंथसे उसको उद्धृत करनेकी अभिलाषा नहीं की, इसी लिये हम भी उन्हींके पीछे चलते हैं। प्रत्येक राठौर वीर ही, अधिक क्या अभयसिंह और बख्तसिंह दोनों भ्राता भी शत्रुपक्षके एकसे अधिक नेताके प्राण नाश करनेको समर्थ न हुए! अमरा, जिसने बहुत बार अजमेरकी रक्षा करके महावीरता प्रकाशित की थी, उसने ऊँचे पदपर स्थित पांच नेताओंके जीवनको निर्वाण कर दिया और दो या तीन हजार सवार मार डाले।

कवि लिख गये हैं, "जिस समय आठ घडी दिन बाकी रहा उसी समय सरबुलन्दखाँ भाग गया। परन्तु उसकी अग्रवर्ती सेनादलका नेता अलियार तब भी महाविक्रम और असीम साहसके साथ बराबर युद्ध करता रहा। अन्तमें वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहकी तलवारने उस अलियारके मस्तकके दो खंड कर दिये। तुरन्त ही राजपूतोंकी सेनादलमें जयका डंका बजने लगा। अहमदाबादका स्वतःसृष्ट नरपति सरबुलन्दखां पहलेसे ही घायल हो गया था, वह जिस सवारीपर चढा हुआ जा रहा था, वह सवारी मानो हरिनीकी समान शीघ्रतासे चली। इस युद्धमें शत्रुओंकी ओरके ४४९३ जने घायल हुए, इनमेंसे एक सौ तो पालकीनशीन थे तथा आठ हाथीनशीन और तीन सौ ऐसे थे कि जो दीवान आमनामक सभाके कमरेमें जानेके समय ताजीमी सन्मानके अधिकारी थे।"

"एक सौ बीस ऊँची श्रेणीके राठौर सेनानायक और पांच सौ अश्वारोही सैनिक अभयसिंहकी ओरके मारे गये और सात सौ सिपाही घायल हुए।"

उपरोक्त विवरणसे प्रकाशित होता है कि, अहमदाबादका यह युद्ध अत्यन्त प्रबलरूपसे प्रज्वलित हो गया था। और इस युद्ध क्षेत्रमें विद्रोही यवनसेना दलकी अपेक्षा राठौरोंकी सेनाने अधिक वीरता दिखाई थी। इसके पीछे कविने लिखा है "कि दूसरे दिन प्रभात होते ही अन्य उपाय न देखकर सरबुलंदखांने अभयसिंहके कर-कमलमें आत्म समर्पण कर दिया। उसके अनुचर तथा सहयोगी भी उसीके साथ बंदी हो गये। विजयी अभयसिंहने अपनी प्रतिज्ञाको पूरण करनेके लिये विद्रोहियोंके नेता सरबुलंदको बंदीभावसे आगरेमें भेज दिया। सरबुलंदके सहयोगी जितने मुगल

—शिक्षक और मित्रोंके पास बैठकर समस्त कविता सुनी थी।"

(१) इनको नरयानमें चढनेका अधिकार बादशाहसे प्राप्त हुआ था।

(२) उन्होंने बादशाहसे ही हाथी पर चढनेका अधिकार पाया था।

(३) कविश्रेष्ठने इस स्थान पर घायल हुए प्रधान २ बहुतसे सेनापतियोंके नाम लिखे हैं, उन सबकी आवश्यकता न जानकर कर्नेल टाडने उनको प्रकाशित नहीं किया। उन घायल हुओंमें 'बुलाक' नामक एक अंगरेज भी था।

घायल हो गये थे, बंदीभावसे जाते समय उनमेंसे बहुतसे ऐसे थे, कि जिन्होंने मार्गमें ही अपने प्राण छोड दिये। इस भयंकर युद्धमें राठौर सैनाके अनेक सामन्त तथा कुटुम्बियोंके जीवन नाशसे वीरश्रेष्ठ अभयसिंह अत्यन्त ही शंकित हुए। अभयमल्लने सत्रह हजार नगरोंसे पूर्ण गुजरात, और नौ हजार ग्राम नगरसे पूर्ण मारवाड, और एक हजार ग्राम नगरोंसे पूर्ण अन्य और एक देशपर राज्य किया। ईडर, भुज, वागड, सिन्ध, सिरोही, फतेपुरके चालुक झुंझनू, जैसलमेर, नागौर, डूंगरपुर, बासवाडा, लूनावाडा, हलवध इत्यादि देशके अधीश्वर प्रतिदिन प्रातःकाल ही महाराज अभयसिंहके चरणोंमें अपना मस्तक नवाया करते थे"।

"इसी प्रकारसे महाराज रामचन्द्रने जिस विजयादशमीके दिन लंकाको जय किया था; संवत् १७८७ सन १७३१ ईसवीमें उसी विजया तिथिको बारह सहस्र सेनावाले सरबुलन्दखांके साथ युद्ध करके विजय प्राप्त की थी।"

विजयी अभयसिंहने गुजरातकी राजधानीपर अधिकार करके शान्तिरक्षाके लिये सत्रह हजार सेना रखकर गुजरातके समस्त धन रत्नोंको लूट लिया और महा आनंदित हो अपनी राजधानी जोधपुरमें उन सबको लेकर चले आये, ऐसा जाना जाता है कि अभयसिंह गुजरातको जीतकर ही नगद चार करोड रुपये, नानाजातीय अनेक प्रकारके एक हजार चारसौ तोपैं तथा अगणित सामरिक द्रव्य गुजरातसे लाये। मुगलराज्यकी शासनशक्ति इस समय अत्यन्त ही हीन हो गई थी। इस कारण अभयसिंह उन समस्त तोपों और सामरिक द्रव्योंसे मारवाडके किलेको भली भांतिसे दृढ करके अपने स्वार्थ साधनके साथ ही साथ मुगलशासनशक्तिके लोप होनेकी राह देखने लगे।

रणविजयी वीर अभयसिंहने सरबुलन्दखांको परास्त करके उसे बंदीभावसे आगरेमें भेज दिया था, यद्यपि महात्मा टाड साहबने इस प्रकारसे लिखा तो है परन्तु अभयसिंह गुजरातको जीतनेके पीछे बादशाहकी सभामें गये थे या नहीं; उन्होंने

---

(१) मारवाडकी राठौर सामन्तमंडली तथा अन्य समस्त राजपूत अधिनायकोंके अधीनमें स्थित सामन्त और वीरगणोंने मारवाड़पति अभयसिंहके अधीनमे होकर महावीरता प्रकाश करके जीवन दान किया, राठौर कविने उनके बल विक्रमकी अत्यन्त ऊँची प्रशंसा करते उनके नामोंका भी उल्लेख किया है। इस सग्राममे सम्पूर्ण सम्प्रदायोंके कई नेता मारे गये। उक्त सम्प्रदायके पालीके सामन्त करनसिंह सनदरीके किसनसिंह, जालोरके गोर्धन तथा कल्याणने भी अपने प्राण त्याग किये थे। कूंपावत सम्प्रदायके नरसिंह, सुरतानसिंह और दुर्गनके पुत्र पद्म इत्यादि भी घायल हुए। योधा सम्प्रदायके तीन नेता थे; हठीसिंह गुमान और योगीदास तथा प्रसिद्ध असीम साहसी मेडतिया वीरवृन्दोंमेंसे तीन जने, भूमसिंह, कुशलसिंह और हाथीके पुत्र गुलाबने अपने प्राण त्याग किये। जादों, सोनगरा धांधल और खीची इत्यादि अनधीन सामन्तोंमे भी अनेक महाबली वीर सूर्यलोकको चले गये। इनके सिवाय कवि और पुरोहित भी मारे गये। कविने छन्दके अनुरोधसे एक २ स्थानपर अभयसिंहके बदलेमे अभयमल्ल कहकर उल्लेख किया है।

उसका कोई उल्लेख नहीं किया; हमें ऐसा बोध होता है कि मारवाडपति अभयसिंहने इस समय दिल्लीश्वरको अत्यन्त हीनबल देखकर गुजरातको फतह करके जो समस्त धन रत्न और द्रव्य अपने अधिकारमें किये थे, उन सबको बडे यत्नसे रक्खा और स्वजातिकी स्वाधीनता बढानेके लिये वह विशेष यत्न करने लगे । वास्तवमें मुहम्मद-शाहकी शासनशक्ति इस समय अत्यन्त हीन हो गई थी । केवल मारवाडपति ही नहीं वरन् दिल्लीके अधीनके सभी यवन राजप्रतिनिधि और देशीयराजा कई सौ वर्षतक अधीनता स्वीकार करनेके पीछे भी फिर स्वाधीन रूपसे मस्तक उठाकर नवीन २ राज्योंके स्वतंत्र अधिकारी बन गए ।

ग्यारहवां अध्याय ११.

राठौरराजके दोनों भ्राताओंके मनमें मलीनता; बखतसिंहके बाहुबल और वीरताको देखकर अभयसिंहको महाभय; बखतसिंहकी अवलम्बित नवीन राजनीति; राठौर कवि कर्णका जोधपुर छोड़कर नागौरमें जाना, और बखतसिंहके साथ मिलकर षड्यन्त्र करना; अभयसिंहका बीकानेरपर आक्रमण; अभयसिंहके अधीनस्थसामन्तोंके विचित्र आचरण; शत्रुपक्षकी सहायता करना; अमेरके महाराजके साथ अपने भाई अभयसिंहका विवाद उपस्थित करनेके लिये बखतसिंहका षड्यन्त्र; अभयसिंहके न होनेपर आमेरपति जयसिंहका जोधपुर पर आक्रमण रोकना; आमेरपति जयसिंह; आमेरकीसामन्त मण्डलीका अभयसिंहके प्रस्ताव विचारको बदलदेना; बखतसिंहके भेजे हुए दूतका आमेरके महाराजके साथ साक्षात् होना; दूतके उद्देशको पूर्ण करना; जयसिंहका अभयसिंहके निकट अपमानकारक पत्र भेजना; अभयसिंहका क्रोधपूर्ण उत्तर देना; जयसिंहका सेना सहित सामन्तमण्डलीको बुलाना; जयसिंहका बेदेशी राजाओंसे सहायता पाना; आमेरनगरमें एक लाख सेनाका इकट्ठा होना; मारवाड़की सीमाके अन्तमें सेनादलका जाना; अभयसिंहका बीकानेरके अवरोधको छोड देना; बखतसिंहका विचित्र आचरण; नागौरके समस्त सामन्तोंका प्रतिज्ञामें बँधना; अमेरकी प्रबल सेनाके साथ युद्धके लिये बखतसिंहका केवल सामान्य संख्यक अनुचरोंके साथ यात्रा; गगवाणामें युद्ध; साठ जनोंकी सेनाके साथ बखतसिंहकाआमेरपतिके ऊपर आक्रमण; आमेरपतिका उद्देश पूरण;आमेरके कवियोंको बखतसिंहकी वीरताकी प्रशंसा करना;अनुचरोंकी सेनाके विनाशसे बखतसिंहका अनुताप;मेवाडेश्वर राणाके द्वारा विवाद करनेवाले राजाओंमें मित्रता स्थापन;अभयसिंहका परलोक गमन; उनकी जीवनीकी समालोचना ।

महाराज अभयसिंहके सरबुलन्दको पराजय और गुजरातपर अधिकार करते ही उनके यशका गौरव चारों ओर संपूर्ण रूपसे फैल गया--राठौर जातिकी गौरव गरिमा दूनी बढ गई, इसका अनुमान हमारे पाठक सरलतासे कर लेंगे । विजयी वीर

---

* इनको भक्तसिंह नामसे भी लिखा है

अभयसिंह गुजरातको जय करके वहांसे बहुतसा धन और तोपें आदि पाकर अपने राज्यमें स्थित किलोंको दृढ करके आनन्दपूर्वक शांति सुख भोगने लगे । परन्तु इस शांतिके आलिंगनमें वह बहुत दिनतक न रह सके । अभयसिंह अवस्था वृद्धिके साथ ही साथ अफीम सेवनके अधिकाधिक वशवर्ती हो गये । दूसरी ओर वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहका असीम साहस, महावीरता सामरिक प्रतिभा अधिक बढ गई, और इसीसे अभयसिंहके हृदयमें महाभय उपस्थित हो गया । एक ओर अभयसिंह जिस प्रकार अपने भाईके बल और गौरवके विषय विद्वेषके वशीभूत हो गये, दूसरी ओर अपने भाईको पूर्ण स्वाधीनता असीम सामर्थ्य और शांतिको संभोग करते हुए देखकर बख्तसिंहके हृदयमें भी विद्वेषकी अग्नि धीरे २ प्रज्ज्वलित हो गई । दोनों राठौर राजभ्राताओंके मनोमालिन्य होनेमें कुछ भी बाकी न रहा । दोनों भाइयोंके हृदयमें विद्वेषकी अग्निका वृक्ष धीरे २ बढने लगा, यद्यपि बख्तसिंह नागौरके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित हो गये थे, परंतु वह जैसे महावीर, प्रतिभाशाली तथा ऊँची आशाओंके वशवर्ती थे, इससे उस सामान्य राज्यखंडके शासनमें उनकी तृप्ति होना कहां संभव थी ? परंतु इस बातको बख्तसिंह भली भांतिसे समझ गये थे, कि असीम साहसिक आचरण या कठिन स्वभाव तथा वीरताके बलसे उन्होंने राठौर जातिके सर्वसाधारणके ऊपर अपना प्रबल अधिकार स्थापित किया है, इनको सभी विद्वेषपूर्णनेत्रोंसे देखते थे, उद्धतस्वभाववाली राठौर जाति इनका किंचित् भी विश्वास नहीं करती थी । इस कारण विशेष सावधानी के बिना यह तीन सौ साठ खंड नगरोंसे पूर्ण नागौर राज्यकी निर्विघ्नतासे रक्षाकर अपने गौरवको पूर्णतासे अचल न रख सकते थे ।

बख्तसिंह केवल असीम साहसी वीर ही नहीं थे, वरन् यह एक चतुर और नीतिज्ञ पुरुष भी थे । विदेशीय मित्र राजगणोंकी सहायतासे अथवा मारवाडमें आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्ज्वलित करके इन्होंने अपनी सामर्थ्य बढानेकी इच्छा नहीं की थी । वह इस बातको जानते थे कि इससे स्वजाति और अपने ही अनिष्ट होनेकी सम्भावना है, परन्तु बख्तसिंहने इस समय विख्यात राठौर कवि कर्णीदानके प्रस्ताव वा उपदेशके अनुसार एक विचित्र राजनीतिका अनुसरण करना प्रारम्भ किया । वह राजनैतिक अनुष्ठान राजपूत चरित्रोंके नवीन लक्षण और विचित्रताको प्रकाशित करता है । कवि श्रेष्ठ कर्णीदान सरबुलन्दके साथ अभयसिंहके युद्धका वृत्तान्त ऐतिहासिक काव्यमें वर्णन करनेके पीछे जोधपुरको छोडकर नागौरमें जाकर बख्तसिंहके साथ मिल गया । यह तो हम पहले ही कह आये है कि कवि कर्णीदान एक ऊँची श्रेणीका राजनीतिज्ञ मनुष्य थां । राठौर जातिके अन्यान्य वर्णोंके समान यह कविश्रेष्ठ भी षड्यन्त्र विद्यामें विशेप पारदर्शी था, इस कारण इसने ऊँची अभिलाषापूर्ण हृदयको बख्तसिंहके साथ मिलाकर अभयसिंहके विरुद्ध षड्यन्त्र जालके विस्तार करनेकी पूर्व सूचना कर दी । वह कवि एक महामान्य मनुष्य था । इस कारण वह अत्यन्त सरलतापूर्वक गुप्तभावसे षड्यन्त्र जालका विस्तार करने

लगा। कवि कर्णीदानने बख्तसिंहके साथ मिलकर बहुतसी सलाह करनेके पीछे यह निश्चय किया कि मारवाडेश्वर अभयसिंहके साथ आमेरके अधीश्वरका विवाद उपस्थित होनेसे सहजमें ही आशा पूर्ण हो जायगी, और इससे सरलतासे बख्तसिंहका उद्देश सफल हो जायगा। कविके इस प्रस्तावके कार्यको पूर्ण करनेका अवसर भी शीघ्रतासे आ पहुंचा।

महावीर सियाजीने मरुक्षेत्रमें जिस राठौर वंशका बीज बोया था; उस वंशरूपी वृक्षकी एक शाखासे बीकानेरका राजवंश उत्पन्न हुआ। बीकानेरके राठौर राजा इस समय सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्य करते थे। मारवाडपति अभयसिंह बीकानेरपतिके नाममात्रके प्रभु थे। बीकानेरराज्य किसी विषयपर इस समय अभयसिंहके साथ अप्रीतिकारक आचरण करता था। अभयसिंह इसको बदला देनेके लिये तैयार हुए। दिल्लीके अधीश्वर सम्पूर्ण देशीय राजाओंके प्रभु थे। परन्तु उन दिल्लीपतिके इस समय प्रबल प्रताप और प्रभुत्वकी विक्रमशक्ति एक बार ही हीन हो गई थी, अतः अभयसिंहने निर्भय होकर सेनासहित बाहर जा बीकानेरको घेर लिया। मारवाडके राठौरोंकी सेनाने प्रबल रूपसे बीकानेरको घेरा तथापि बीकानेरकी सेनाने सरलतासे राठौरोंको जय प्राप्त करने नहीं दी; वे बडी वीरताके साथ शत्रुपक्षके कराल ग्राससे बीकानेरकी रक्षा करने लगे। महाराज अभयसिंह सेनासहित कई सप्ताहतक इस प्रकार बीकानेरको घेरे रहे, बख्तसिंहने विचारा कि इस सुअवसरमें बीकानेरको आक्रमणसे उद्धार कर सकेंगे तो सरलतासे मनकी कामना पूर्ण हो जायगी। वास्तवमें उनके लिये यह सुअवसर विशेष सुखकारी विचारा गया।

अभयसिंहने मारवाडके समस्त सामन्तोंके अधीनमें स्थित समस्त राठौर सेनाके साथ बीकानेरको घेर लिया था। परन्तु वह घेरना ही था अभयसिंहके साथी उन लोगोंसे सहानुभूति रखते थे, और यथासमय उन्हें सहायता भी देते थे। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि अवरोधकारी राठौर यदि बीकानेरको सेनाको अफीम, लवण और लडाईका समान न देते तो अवश्य ही वह आत्मसमर्पण कर देते। मारवाडके राठौर गणोंने किस कारणसे बीकानेरके निवासियोंके ऊपर यह करनेके अयोग्य नीति विरुद्ध आचरण किया था, हमारे विचारवान् पाठक इसको सरलतासे समझ गये होंगे—यह तो हम पहले ही कह चुके हैं, कि बीकानेरके निवासी मारवाडकी राठौर जातिके समान समरक्तवाही और एक ही वंशमें उत्पन्न थे। इस कारण अभयसिंह बीकानेरपतिको अधीनताकी जंजीरमें बांधनेके लिये उद्यत हुए तो भी राठौर गणोंने छुपके २ अपने जातिवाले बीकानेर निवासियोंको जातीयप्रेमके वशसे सहायता दी। इसी लिये अभयसिंहके अधीनकी प्रबलवाहिनीने एकत्रित होनेपर भी बीकानेरकी संख्याबद्ध सेनाको सरलतासे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ होने दिया।

कवि कर्णीदानके प्रस्तावके मतसे कार्य करनेका सुअवसर पाकर अर्थात् मारवाडपति अभयसिंहको बीकानेरके आक्रमणमें प्रवृत्त देखकर नागौरपति बख्तसिंह शीघ्र ही

आग्रहके साथ कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। कवि कर्णीदानने बख्तसिंहसे कहा, "कि आप आमेरके महाराजको इस भावका पत्र लिखिये कि अभयसिंहने बीकानेरके आक्रमणसे आमेरके महाराजका अपमान किया है। आमेरके महाराज ही बीकानेरपतिके रक्षक स्वरूप हैं,इस कारण बीकानेरके आक्रमणसे अभयसिंहने प्रकाशमें आमेरके महाराजकी शक्तिको अस्वीकार किया है । अभयसिंहने इस समय बीकानेरको घेर लिया है, इस कारण इस सुअवसरमें आमेरपति सरलतासे जोधपुरपर आक्रमण कर सकते हैं।"

कविकी आज्ञासे बख्तसिंहने शीघ्र ही जयसिंहके नाम एक पत्र भेजा। और उसी समयमें आमेरपतिकी सभाका जो श्रेष्ठ दूत रहता था उसको भी पत्रके द्वारा यह लिख भेजा कि इस समय क्या करना उचित है।

आमेरपति जयसिंह बुढापेमें अत्यन्त ही अफीमके भक्त हो गये थे; और इससे राजकार्यमें भी अनेक विघ्न होनेकी संभावना थी, इस बातको वह भी भली भांतिसे जान गये थे इसीसे उन्होंने अपने राज्यमें इस आज्ञाका प्रचार किया, कि जिस समय हम अफीम सेवन करके उसके नशेमें संज्ञाहीन हों, उस समय राजनैतिक अथवा राज्यकार्यका कोई विषय भी हमारे सन्मुख उपस्थित न किया जाय । इस आज्ञाके प्रचारका कारण यह था कि वह अफीमके नशेमें उन्मत्त होकर कहीं कोई अन्याय न कर बैठें।नागौरपति बख्तसिंहका पत्र आमेरराजकी सभामें आया,आमेरके समस्त सामन्तोंने एकत्रित होकर उस पत्रको पढकर तर्कवितर्क करनेके पीछे प्रकाश्यरूपसे यह निश्चय कर दिया,कि मारवाडपति अभयसिंह और बीकानेरपति दोनों ही स्वजाति और अपने हैं, इस कारण इस विषयमें आमेरके महाराज किसी ओर भी हस्ताक्षेप करनेकी अभिलाषा नहीं करते । सामंतोंके ऐसा निश्चय करनेसे बख्तसिंहकी आशालता एक बार ही मुरझा गई।परन्तु बीकानेरके जो दूत आमेरके महाराजकी सभामें थे, वह जैसे चतुर थे उसी भांति नीतिज्ञ भी थे। आमेरराजके शासनविभागके प्रधानमंत्री विद्याधर(१) उक्त दूतकी मित्रताकी जंजीरमें भलीभाँतिसे बँध गये थे,उसी मित्रताकी सहायतासे दूतश्रेष्ठने आमेरके महाराजके साथ साक्षात् करके कई एक बातें जबानी निवेदन करनेकी आज्ञा प्राप्त की । शीघ्र ही आमेरपतिके सन्मुख दूत आया, उसने हाथ जोड कर नम्रतापूर्वक कहा, "महाराज ! इस समय बीकानेरके ऊपर महाविपत्ति उपस्थित है; हमारे प्रभु मारवाडपतिको अधीश्वर कहकर स्वीकार नहीं करते, वह अपनेको ही अधीश्वर जानते हैं।" उस दूतके इन कई वचनोंने आमेरके महाराजके हृदयमें अधिक गर्वका संचार कर दिया। दूसरे अफीमकी प्रबल शक्ति भी इस समय उनकी कुछ विशेष सहायता न कर सकी । आमेरके महाराजने दूतके निवेदनको

(१) महात्मा टाड साहबने टीकेमे लिखा है; कि यह विद्याधर एक बंगाली ब्राह्मण थे। वह जिस भाँति अनेक शास्त्रोंके पंडित थे उसी प्रकार ज्योतिष--शास्त्रमे भी विशेष विद्वान् थे। वर्तमान जयपुर नगरकी आकृति उन्हींके द्वारा निश्चय हुई थी, अर्थात् उन्हीकी सम्मतिसे जयसिंह नगर बनाया गया था ।

सुनकर कलम हाथमें ले मारवाडपतिको लिखा "हम सभी एक प्रबल परिवारके अधिकारी हैं; बीकानेरपतिको क्षमा करके बीकानेरके आक्रमणको रहित कीजिये"। जयसिंहने इन कई एक पंक्तियोंको लिखकर, एक पात्र पूर्ण अफीमका सेवन कर पत्रको बंद करके दूतके हाथमें दे दिया; चतुर दूतने विनय करके कहा, महाराज ! दो बातें और लिख दीजिये "नहीं तो मेरा नाम जयसिंह है यह स्मरण रखिये"। अफीमसेवी जयसिंहने विना ही कुछ कहे हुए दूतकी प्रार्थनाको पूरण कर दिया।

इधर तो आशातीत सफलताकी प्राप्तिसे अत्यन्त प्रसन्न हो उक्त राजदूतने वहांसे विदा होकर एक शीघ्रगामी ऊँटपर वह पत्र बाहकद्वारा अभयसिंहके डेरोंमें भेज दिया। इधर बीकानेरके दूतके बिदा होते ही कुछ ही समयके पीछे आमेरके अन्यतर प्रधान सामन्त आमेरराजाके सामने आ पहुँच। जयसिंहने उसी समय उन लोगोंसे उस पत्रका सम्पूर्ण विषय वर्णन कर दिया। सामन्तोंने अत्यन्त दुःखित होकर कहा, "यह पत्र आपके सगाओंमें विलक्षण विरक्तिका कारण होगा। यदि कछवाह वंशके रक्षा करनेकी इच्छा है, यदि प्रबल पराक्रमी अभयसिंहके क्रोधसे आमेरराज्यको रखना चाहते हो तो इसी समय उस पत्र ले जानेवालेको लौटाये जानेकी आज्ञा दीजिये।" जयसिंहने सामन्तके वचन सुन चैतन्य हो पत्र बाहकको मार्गमेंसे ही लौटानेके लिये दूतके ऊपर दूत भेजे। परन्तु पत्रबाहक अपने कार्यसाधनमें विशेष चतुर था। इस कारण जयसिंहके भेजे हुए दूत उस पत्रवाहकको न पकड सके।

मध्याह्नकाल ही भोजनके समय समस्त सामन्त रसोवडा अर्थात् भोजनगृहमें इकट्ठे हुए, वृद्ध सामन्त दीपसिंहने अन्यान्य सामन्तोंके प्रतिनिधिस्वरूप जयसिंहसे कहा कि,--" आपने अत्यन्त ही अन्याय और अविचारका कार्य किया है; आपके इस अविचारसे हम सभीको कष्ट भोगना होगा।"

जिस प्रकारसे एक शीघ्रगामी ऊँटपर चढाकर जयसिंहका पत्र अभयसिंहके डेरोंमें भेजा गया था, उसी प्रकार यथासंभव शीघ्र समयमें उन डेरोंमेंसे अभयसिंहका भेजा हुआ गर्वपूर्ण उत्तर भी आया। जयसिंहने पत्रको खोलकर सामन्तोंके सामने पढा। अभयसिंहने महाक्रोधित होकर पत्रमें लिखा था "हमें आज्ञा देनेका तथा हमारे सेवकके साथ हमारे विवादमें हस्ताक्षेप करनेका आपको क्या अधिकार है ?--यदि आपका नाम जयसिंह है, तो याद रखिये कि मेरा नाम भी अभयसिंह है।

पत्रको पढ चुकते ही वृद्ध सामन्त दीपसिंहने कहा "महाराज ! जो होना था वह मैंने आपके श्रीचरणोंमें पहले ही निवेदन कर दिया था। जो होना था वह हो गया है, परन्तु इस समय अब और कोई उपाय नहीं है; शीघ्र ही अपने मित्रोंको इकट्ठा होनेकी आज्ञा दीजिये"। प्रधान सामन्तोंके यह वचन सुनते ही अन्यान्य सामन्तोंने एक स्वरसे आमेरराजके सन्मानकी रक्षाके लिये अभयसिंहको तलवारसे

(१) वैवाहिक सम्बन्ध बन्धनका नाम सगाा है। यही सगाई कहाती है।

प्रत्युत्तर देनेके लिये अपनी सम्मति प्रगट की। शीघ्र ही आमेरराजके द्वारा अनेक स्थानोंमें सामन्तोंके पास सेनासहित आनेके लिये दूत भेजे गये--प्रत्येक कछवाहोंको असि, भाले हाथमें लेनेके लिये आज्ञा दी गई, तथा प्रतिवासी राजाओंकी सहायता प्राप्ति की आशासे दूत भी भेजे गये। तुरन्त ही राजधानीके बाहर पंचरंग जयपुरकी राजपताकाके उडते ही चीटियोंकी श्रेणीके समान समस्त कछवाहोंका दल आकर उसके नीचे इकट्ठा होने लगा। बूंदीराजके हाडा सैन्यगण, करौलीके यादों, शाहपुराके सिसोदियागण, खीचीगण तथा जाटगण आकर आमेरपतिके साथ मिले। बहुत थोडे समयमें ही उस राजधानीके बाहर एक लाख सेना इकट्ठी हो गई। यवन शासन-शक्तिके लोप होनेके समयमें उन पितृहन्ता बख्तसिंहकी पापकल्पनाके दोषसे इस प्रबल आत्मविग्रहानलके प्रज्वलित होनेके पूर्ण लक्षण प्रकाशित होने लगे। आमेरके महाराज जयसिंह भी अपनी प्रभुताका विस्तार कर अभयसिंहको बदला देकर बीकानेरपतिका उद्धार करनेके लिये तुरन्त ही अपनी सेनाके साथ मारवाडकी ओर चले। नगारे भेरी आदि बाजोंके शब्दसे पृथ्वीको कंपायमान करती हुई वह सम्पूर्ण सेना शीघ्र ही मारवाडकी सीमामें स्थित गगवाना नामक ग्राममें आ पहुंची, और अपने डेरे डाल कर निर्भय हो अभयसिंहके आनेकी बाट देखने लगी।

महाराज जयसिंहको उस प्रबल वाहिनी सेनाके साथमें बहुत दिनों तक बाट न देखनी पडी। आमेरके महाराज सेनासहित युद्ध करनेको आये हैं, यह सुनते ही अभयसिंह क्रोधित हुए सिंहके समान उन्मत्त हो गये। जयसिंहने अन्यायके आचरणसे इस युद्धकी तैयारी की है, इससे अभयसिंहका क्रोध और भी दूना हो गया। वह इस समय कई दिनकी अपेक्षा करके सरलतासे बीकानेर-पर अधिकार कर सकते हैं, परन्तु जयसिंहकी युद्धयात्राका समाचार पाकर वह अत्यन्त ही व्यथित हृदयसे बीकानेरके अवरोधको छोडकर संहारमूर्तिसे जयसिंहका आक्रमण रोकने और अपने "अभय" नामको प्रमाणित करनेके निमित्त शीघ्रतासे कछवाह सेनाकी ओरको चले।

जो नागौर पति बख्तसिंह इस महा अनिष्टका कारण था, जो निज अवलम्बित नीति और पापके षड्यन्त्रसे इस विषमय फलको उत्पन्न करनेके लिये उद्यत था, वही बख्त-सिंह इस समय इस महा असंभव व्यापारको देखकर अत्यन्त भयभीत हो गया। उसके षड्यन्त्रसे इस प्रकारका भयंकर कांड उपस्थित होगा, उसकी मातृभूमि और स्वजातिके भाग्यमें जो इस प्रकारका कालरात्रि उपस्थित करेगा--इस बातका विचार उसने स्वप्नमें भी नहीं किया था। केवल उसने अपने भाई अभयसिंहके साथ विदेशी राजाओंकी विषम अनबन उपस्थित करनेकी अभिलाषा की थी, परन्तु इस प्रकारके महा आत्म-विग्रहानल तथा जातीय महासमर उपस्थित होनेकी उसे किंचित् भी आशा नहीं थी। वह जिस षड्यंत्रसे मारवाडके भाग्यमें इस कालरात्रिकी भयंकर भ्रुकुटी देखने लगे कि यदि यह षड्यंत्रसे प्रकाशित हो जायगा तो कैसा होगा, इस भयसे भी वह इतना

भयभीत नहीं हुआ था, पर जब उसने सोचा कि आमेरपतिकी प्रबल सेना इकले अभयसिंहपर आक्रमण करके मारवाडको विध्वंस कर देगी, तब उसकी जन्मभूमि और स्वजातिके भाग्यमें घोर कलंकका टीका लगेगा, इस भय और दुःखसे अनुतापित हो वह अत्यन्त ही अधीर हो गया; बख्तसिंह समझ गया था कि उपस्थित जातीय विषम युद्धमें उसका उद्देश पूर्ण होना तो दूर रहा वरन् विशेष अनिष्ट होनेकी संभावना है। इसलिये वह शीघ्र ही नागौरसे अपने अग्रज और अपने अधीश्वर प्रभु अभयसिंहके निकट जाकर विनयपूर्वक यह वचन बोला, "आपने बीकानेरको जिस भावसे घेर लिया है उसी भावसे घेरे रहिये, सेनाके वहांस लानेकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है, मैं अकेला ही नागौरके सामन्तोंके साथ रणक्षेत्रमें जाकर भगतियाको पराजय कर भगवान्के अनुग्रहसे उनको उचित शिक्षा दूंगा।" अनुज बख्तसिंहने पापकी आशाके वशीभूत होकर जिस षड्यंत्रजालके विस्तारसे इस जातीय युद्धका सूत्रपात किया था उसने उसी अपराधसे उचित दंड पाया। अभयसिंहके हृदयमें इस भावका विशेष उदय हुआ, इस कारण वे बख्तसिंहको आमेरके महाराजके साथ युद्धकी आज्ञा देकर आन्तरिक घृणाके साथ उस गुप्त षड्यन्त्रके लिये विशेष भर्त्सना करके भी वह शान्त न हुए।

राठौरोंके इतिहाससे जाना जाता है कि "नागौरके वीर सामन्तोंके इकट्ठा होते ही शीघ्रतासे नगाडे बजने लगे। नागौरपति बख्तसिंह नागौरसे दिल्लीको जानेवाले तोरण द्वारपर खडे हो गये। अफीम, शरबत और कुंकुम जलसे पूर्ण दो बडे पीतलके पात्र एक ओर रखकर सामन्तोंकी सेनाके आनेकी बाट देखने लगे। एक एक सामन्त जिस प्रकारसे प्रवेश करने लगे, बख्तसिंह वैसे ही उन्हें एक पात्रमें अफीमका शरबत देने लगे और दहिने हाथसे कुंकुमका जल लेकर उनके वक्षस्थलपर छिडकने लगे। बख्तसिंहने इस प्रकारसे आठ हजार राजपूतोंकी सेना अपने अधिकारमें कर ली। वह सभी उनके साथ यह प्रतिज्ञा करके आये थे कि या तो युद्धमें प्राण देंगे या विजय ही हो जायगी। उनमें जो असीम साहसी वीर थे उनको निकाल लेनेका विचार किया गया। समस्त इकट्ठी हुई राजपूत सेनाको नागौरके बाहर एक बडे भारी बाजरेके खेतके निकट ले जाकर वहां सबको कुछ कालके लिये खडे होनेकी आज्ञा देकर बख्तसिंहने ऊँचे स्वरसे कहा "आप सब लोगोंमेंसे हमारे साथ जय पराजयके अंशभागी होनेमें जो लोग तैयार हों केवल वही हमारे साथ चलें, यदि आपमेंसे कोई भी वहांसे लौटनेकी इच्छा करता हो तो हम ईश्वरका नाम लेकर आज्ञा देते हैं कि वह इस स्थानसे चला जाय। कुछ ही समयमें वीर श्रेष्ठ बख्तसिंहने उस बाजरेके खेतमें घोडा चलाया। खेतमें होकर जानेका यह अभिप्राय था, कि जो चले जानेकी इच्छा करते हैं वे बिना किसीके देखे भाले खेतके बीचमें होकर चुपचाप जा सकते हैं बख्तसिंहने खेतमें जाकर देखा

(१) साधू संन्यासीको भगतिया कहते हैं। जयसिंह अत्यन्त धार्मिक और साधु थे। इसीसे बख्तसिंहने उनको भगतिया कहा।

कि आठ हजार सेनामेंसे पाँच हजारसे अधिक सेना उनके साथ चलनेको तैयार है और शेष सब भाग गई है।"

हाय! राठौरजातिका कैसा अतुलनीय साहस है कि समस्त जगत्‌के प्रत्येक जातिके प्रत्येक इतिहासके एक २ पत्रेको देखनेसे जीवन मरण, तथा रणमें भयहीन बख्तसिंहके समान असीम साहसी वीर एक भी देखनेमें नहीं आया। अंग्रेजोंके लिखे हुए बंगालेके भारतके प्रत्येक इतिहासको हमने देखा है। संख्यावद्ध अंग्रेजोंकी सेनाने असीम साहसमें भरकर दशगुणा अधिक शत्रुओंकी सेनाको परास्त किया है। हम देखते हैं, कि पलासीके उस चिरस्मरणीय युद्धक्षेत्रमें कर्नल क्लाइवने प्रायः एक हजार गोरे और २१०० सिपाही सेनाके साथ अभागे नवाबकी ३५००० पैदल और १५००० अश्वारोही सेनाको परास्त करके भारतवर्षमें लोहमय बृटिश शासनदंड प्रचलित किया था। अन्तमें आत्महत्याकारी बंगविजेता क्लाइव समस्त जगत्‌में अतुल वीर तथा असीम साहसी पूजित हुए, परन्तु जो सत्यके सन्मानके रखनेकी अभिलाषा करते हैं, जो न्यायकी पूजा करनेमें आगे बढे हैं वे लोग अवश्य ही जान जांयगे कि क्लाइवका वह साहस, विक्रम, वह वीरत्व किस प्रकारकी प्रवंचना, प्रतारणा तथा शठता और धर्मनीतिके साथ संश्रवशून्य, राजनीतिके ऊपर निर्भर था। मनुष्य, पशुराज सिंहके चित्रको अंकित करते हैं, इस कारण सिंह जगत्‌में सबकी अपेक्षा महाबली जीव होकर भी उस चित्रमें मनुष्यके निकट परास्तरूपसे चित्रित हुआ है। किन्तु उस पशुराजको यदि वह चित्र अंकित करने दिया जाय तो न्याय तथा सत्यके सम्मानकी रक्षा हो सकती है। बंगालके भारतके अग्रज इतिहास लेखकगण उस सिंहके चित्रको अंकित करनेवाले मनुष्यके समान आलेख्यको चित्रित कर गये हैं। सत्य और न्यायकी तुलना बाइबिलके साथ टैम्स नदीके बीचमें डालकर उन्होंने भारतमें आकर केवल असत्य और अन्यायके मलीन अंगारोंसे उस इतिहासके चित्रको अंकित किया है। इस स्थानके समान और कहां सत्यकी प्रज्ज्वलित हुई दीपकशिखा दिखाई देती है कि राठौरवीर बख्तसिंह कुछ एक पाँचहजार सेनाके साथ उस आमेरपतिके अधीनमें स्थित एकलाख सेनाके संग युद्ध करनेके लिये चले। क्या बख्तसिंह भी क्लाइवके समान प्रवंचना, शठता;धर्मनीति शून्य राजनीतिकी सहायतासे रणक्षेत्रमें आगे बढे थे? नहीं कभी नहीं! वह केवल एक मात्र आर्यरक्तके प्रबल तेजबलसे, जातीय गर्व दर्प वीरता और विक्रमके बलसे, स्वजातीय स्वभाव सुलभ अतुलनीय साहसके बलसे मुट्ठीभर सेनाके साथ उस एक लाखसे भी अधिक शत्रु सेनाके संहारमें तत्पर हुए थे। आजकल अंग्रेजोंकी कृपासे अंग्रेजी भाषाके प्रसादसे देशीय कृतविद्य युवकगण म्याटसिनि, ग्यारिवाल्डी, क्रमवेल, नेपोलियन, वलिंटन इत्यादि विलायतके महारथियोंके नाम सुनकर मिसर, ग्रीस, रोम, कार्थेज, ट्रॅय, फ्रान्स, इंगलेण्ड, स्पेन, डेनमार्क, जर्म्मनी अष्ट्रिया और आजकलके अमरीका इत्यादि पाश्चात्य और नवीन जगत्‌के इतिहासमें महावीरोंकी असीम वीरता पढकर विचार कर लेते हैं कि उनके समान वीर संसारमें

दूसरा उत्पन्न नहीं हुआ, उनका और भी विचार है कि भारतके रावण, राम, भीम, दुर्योधन, कर्ण, भीष्म इत्यादि कविकल्पित वीर हैं; परन्तु हम उनसे कह सकते हैं कि अठारहवीं शताब्दीके सामान्य मारवाड राज्यके इन बख्तसिंहके समान असीम साहसी वीर विलायत और नवीन जगत्में कहीं भी दिखाई नहीं देते ? एक लाख शत्रुओंकी सेनाके मुखमें थोडी पांचहजार सेना लेकर कौन विलायतका वीर साहसमें भरकर पतित हुआ था ? वह एक लाख सेनाके विरुद्ध पांचहजार सेनाके साथ प्राणोंके भयसे अपनी रक्षा कर सकता है, परन्तु आक्रमण करनेका साहस उसको नहीं हो सकता। चाहे बख्तसिंह पितृघातक हों। चाहे भाईके विरुद्ध षडयन्त्रकारी हों। परन्तु जगत्के वीर इतिहासमें वह एक अतुल साहसी सराहनीय वीर थे।

राठौर इतिहास लेखकोंने पीछे लिखा है कि आमेरेश्वर जयसिंह गगवाना नामक स्थानपर उस प्रबल सेनाके साथ शत्रुओंके आनेकी बाट देख रहे थे। बख्तसिंहको आता हुआ देखकर आमेरकी सेना आगे बढी। कुछ ही समयमें बख्तसिंहने शत्रुदलपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी, तुरन्त ही मानों घनघोर मेघके समान वह विक्रमी राठौरोंकी सेना तलवार भाले हाथमें लेकर आमेर महाराजकी अगणित सेनाके ऊपर छूटे और वे शत्रुओंपर आक्रमण करते २ प्रत्येक सेनाका संहार करते हुए अपने भयंकर गर्जनसे रणभूमिको कम्पायमान करते हुए रुधिरकी नदीसे संग्रामस्थलको प्लावित करते व्यूहको भेदन करने लगे। बख्तसिंहने उस संहारमूर्तिसे शत्रुओंकी सेनाका नाश करते हुए व्यूहके प्रत्येक प्रान्तको छिन्नभिन्न करके एकबार ही पीछा फिरकर देखा कि उस पांच हजारसे अधिक सेनामें केवल अब साठ जने ही जीवित रहे हैं। शेष सभी उस युद्धक्षेत्रमें जीवन देकर वीर नामका परिचय दे गये हैं। इसी समय नागौरके समस्त सामन्तोंमें सबसे श्रेष्ठ सामन्त गजसिंह पुरापतिने बख्तसिंहसे कहा, महाराज ! पिछले भागमें गहनवन हो रहा है, चलिये वहांका आश्रय लीजिये। असीम साहसी बख्तसिंहने कहा, क्यों ?--सम्मुख यह कौनसा मार्ग है ? हम जिस मार्गसे आये हैं, उस मार्ग होकर नहीं जांयगे ? दूरसे ही सामने आमेरपतिकी पचरंगी राजपताकाको उडती हुई देखकर बख्तसिंह जान गये कि आमेरपति स्वयं ही इस स्थानपर विराजमान हैं, उन्होंने उसी समय उस बची हुई साठ जनोंकी सेनाके साथ उन आमेरराजके डेरोंपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी और आपने भी रुधिरसे भीगे हुए शरीरसे अपने घोडेको कालान्त कालमूर्तिसे उसी ओरको चला दिया। बख्तसिंहको आता हुआ देखकर कुन्तानी सम्प्रदायके बासवो सामंत दीपसिंहने महा विपत्ति देखकर उसी मुहूर्तमें आमेरपतिको रणक्षेत्र छोडनेकी सम्मति दी। आमेरराज जयसिंह भी बख्तसिंहको आता हुआ देखकर कुछ देरतक इधर उधर करके अन्तमें सामंतोंके मतसे बख्तसिंहके आक्रमणको रोकनेके लिये रणभूमिको छोडकर अपने मस्तकपर कलंकका टीका लगाकर भाग गये। पीठ दिखाते ही युद्धमें सब प्रकारसे पराजय और कलंक लगा विचारकर उन्होंने कुछ ही समयमें वाम

और उत्तरकी ओर कुण्डला नामक ग्राममें आकर आश्रय लिया। भागनेके समय जयसिंहने कहा 'सत्रह युद्ध किये थे। परन्तु आजके युद्धके समान किसी युद्धमें भी तलवारके बलसे किसी पक्षको जय प्राप्त करते हुए नहीं देखा।' महाराज जयसिंहने समस्त जीवनमें अतुल गौरव और असीम यशका संग्रह किया था। जो परम ज्ञानी, गाढपंडित तथा भारतमें एक प्रबल प्रतापान्वित राजा थे, उन्हीं महाराज जयसिंहने आज साठ राठौरोंकी सेनाके भयसे रणक्षेत्रको छोडकर अपने नामको कलंकित किया। 'एक राठौर दस कछवाहोंके समान है' वह इस प्रवादवाक्यका प्रत्यक्ष प्रमाण दिखा गये।

राठौर कविकी लेखनीने इन सब सत्यवृत्तान्तोंको वर्णन किया है सो हमारे पाठकोंको भलीभाँतिसे विदित होगा। वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहने इस युद्धमें किस प्रकारका अतुल वीराभिनय किया और राठौरजातिके बाहुबल तथा विक्रम और साहसका कैसा अद्वितीय प्रत्यक्ष प्रमाण दिखाया। बख्तसिंहके समान असीम साहसी वीरनेता संसारमें किसी जातिमें भी उत्पन्न नहीं हुआ? बख्त और अभयसिंहको उत्पन्न करके भारतभूमिने जिस प्रकारसे यथार्थ जननीनामको सार्थक किया है और किसी भूमिको इस प्रकारकी वीरजननी नामको सार्थक करते हुए नहीं देखा? कोई २ यह विचार सकते है कि बख्तसिंहके बल विक्रमको हमने अत्युक्तिसे अनुरंजित किया है; परन्तु उनकी उस भ्रान्तिको दूर करनेके लिये हम उन बख्तसिंहके विपक्षी आमेरपतिके सहकारी कछवाहे कविकी लेखनीको, जो इस युद्धमें बख्तसिंहके बल विक्रमकी ऊँची प्रशंसा कर गई है, यहां उद्धृत कर देते हैं।

बख्तसिंहका वह प्रशंसनीय वीरत्व, वह दुर्द्धर्ष साहस, वह संहारमूर्ति, वह भयंकर जयशब्द, वह कालान्तक कालके समान सेनाका संहार और वह निर्भयता देखकर आमेरके महाराज जयसिंहके कवि एक बार ही मोहित होकर सत्यके सन्मानकी रक्षाके लिये शत्रुपक्षके नेता बख्तसिंहकी वीरताका कवितामें कीर्तन कर गये हैं, "यह क्या कालीके उस श्रवणभैरव युद्धका स्वर है? नहीं यह तो वीरश्रेष्ठ हनूमानजीके युद्धका चीत्कार है? या यह अनन्तकी अनन्तमुखसे निकली हुई ध्वनि है? नहीं यह तो कपिलेश्वरके रुद्रका स्वर है?" बख्तसिंहकी उस संहारमूर्तिको देखकर कविने लिखा है, "यह वीर क्या नृसिंहका अवतार है? नहीं यह प्रचंड सूर्यकी विदग्धकारी किरण है?—नहीं डाकिनीकी वह क्रोधदृष्टि है? नहीं यह तो त्रिनेत्रके मध्यनयनसे निकली हुई अग्निकी राशि है? प्रलयकालकी भयंकर अग्निके समान बख्तसिंहकी तलवारसे जो अग्निकी राशि निकली थी, ऐसी किसमें सामर्थ्य थी कि जो उसको सहन कर सकता?" शत्रुओंके ओरके कविकी लेखनीसे निकले हुए प्रमाणको पढकर पाठक अवश्य ही इस बातको स्वीकार कर सकते है कि वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहका यह वीरताका वृत्तांत अन्य प्रकारसे नहीं लिखा है, अर्थात् वह यथार्थमें ऐसे ही वीर थे और साथमें यह भी मानना होगा कि बख्तसिंहने उस कलाइत्रके समान जय

प्राप्त नहीं की थी इन्होंने प्रतारणा, प्रवंचना, शठता और षड्यंत्र जालका विस्तारकर धर्म-नीतिके साथ संस्कारशून्य राजनीतिकी सहायतासे जय प्राप्त नहीं की, एकमात्र अपने बाहुबलसे तथा असीम साहससे जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त किया था। अंग्रेज इतिहास वेत्तागण जिस प्रकार पलासीके युद्धमें क्लाइवकी उस जयप्राप्तिकी ऊँची प्रशंसा करके आकाशको विदीर्ण कर गये हैं राठौरकवि वा शत्रुपक्षके कविने उस भावसे बख्तसिंहकी जयप्राप्तिको कीर्तन नहीं किया, पाठक इसको अवश्य ही स्वीकार करेंगे ।

इस समय वीरनेताओंका ही अनुसरण करना होगा । बख्तसिंहने डरकर भागी हुई शत्रुओंकी सेनाके ऊपर तीसरी बार, वार करनेका उद्योग किया, पर राठौरकवि कर्णीदानने उनको मना कर दिया । जो दृढप्रतिज्ञ महाविक्रमी सेना बख्तसिंहके साथ उस महायुद्धमें लिप्त हुई थी, कवि कर्णीदान भी उसमेंसे एक थे, उन कविकी तलवारने भी शत्रुपक्षकी अनेक सेनाका प्राणनाश किया था । कवि कर्णीदानके निषेध करते ही उनकी शीघ्र ही अनिच्छा हो गई । जयपुरपति जयसिंह अपनी सेनाके साथ चले गये। बख्तसिंह उस समय जान गये कि हमारी राजपूत सेनामेंसे कितनी सेनाने अपने प्राण दिये हैं । इस स्थानपर महात्मा टाड साहब लिख गये हैं, "इसके कुछ समय पीछे कैसा विचित्र दृश्य दृष्टि आने लगा। जो मनुष्य कई मुहूर्त्तोंके पहले रणभूमिके प्रत्येक प्रान्तमें मृत्युकी भयंकर मूर्ति देखकर भी भयभीत नहीं हुआ था, वह इस समय केवल अपने सेवकोंके मारे जानेसे बालकके समान रुदन करने लगा । उन कुटुम्बी जनोंके तथा सामन्त वीरोंके वियोग होनेसे उसके हृदयपर भयंकर आघात लगा उस भावने मनके दुःखसे जैसी कातरता दिखाई थी, इसका विचार बख्तसिंहको स्वप्नमें भी नहीं था। इस भयंकर युद्धमें भाई अभयसिंह उनकी सहायता करनेमें एक बार ही असम्मत हो गये थे । बख्तसिंहने विचारा कि मारवाडके विध्वंस होनेका उपाय हो रहा है, इस कारण वह इस दुःखसे उस महावीरत्वको प्रकाश कर, अगणित शत्रुओंकी सेनाका नाश कर तथा विजय पानेके पीछे उन लाशोंसे परिपूर्ण युद्धभूमिमें बैठकर शोक करने लगे" । कुछ ही समयके उपरान्त भाई अभयसिंहने सेना सहित इनके पास आकर प्रीतिपूर्ण वचनोंसे भाई बख्तसिंहको संतुष्ट किया । 'आजके इस महा-युद्धमें तुमने अकेलेने ही विजय प्राप्त की है, इस समय आपकी सहायता करनेके लिये मैं न आ सका । ' वीरनेता बख्तसिंहने भाईके वचनोंसे प्रसन्न हो उसी समय यह प्रतिज्ञा करी कि 'भागे हुए जयपुरके महाराजको मैं आमेरके किलेमेंसे बाल पकड-कर ले आऊंगा ।' बख्तसिंह कैसे तेजस्वी और साहसी वीर थे, उनकी यह शोकोक्ति भी वीरताका विलक्षण प्रमाण दिखाती है ।

आमेरपति जयसिंहने अफीमके उस विषमय फलसे उत्पन्न हुए मत्तताके वश होकर अभयसिंहको जो पत्र लिखा था, यद्यपि उसी पत्रके फलस्वरूपमें युद्धभूमिमें उन्होंने घोर कलंक संचय कर लिया था, परन्तु उनका एक उद्देश्य यह भी था कि वह बीका-नेरके महाराजका उस महाविपत्तिसे उद्धार कर लें । ऐसा करनेसे वह अभिप्राय

इस समय पूर्ण होजायगा पर मेवाडके महाराणाने मध्यस्थ होकर जयपुरके महाराजके साथ मारवाडपतिकी मित्रता करा दी । अभयसिंहने बख्तसिंहके बाहुबलसे अपने अभिप्रायको पूर्णकर लिया। और जयसिंहने युद्धमें परास्त होकर बीकानेरके महाराजका उद्धार किया । बीचमें मेवाडके महाराजने आकर उन विवाद करनेवाले स्वजातिके दोनों राजाओंको मित्रताकी शृङ्खलामें बांध दिया ।

हमारे पाठकोंने इस विस्तृत इतिहासके अनेक स्थानोंमें पढा होगा कि राजपूत जिस समय युद्ध करनेके लिये बाहर जाते थे, उस समय केवल सेना ही नहीं वरन् गुरु, पुरोहित, कवि, भाट, चारण और कुलदेवताको भी अपने साथ ले जाते थे । उस विग्रहके समय मूर्तिका दर्शन करके राजपूतवीर निर्भय हो युद्ध करते थे । इस युद्धमें बख्तसिंह भी इसी भाँति अपनी कुलदेवीकी मूर्ति साथ ले गये थे । ऐसा विदित होता है कि युद्धके समय जयसिंहने बख्तसिंहकी कुलदेवीकी मूर्ति भी अपने हस्तगत कर ली । जयसिंह उस कलंककारी युद्धमें एकमात्र जयके चिह्नस्वरूप उस देवीकी मूर्तिको बडी धूमधामके साथ जैपुरमें ले आये पीछे एक देवताकी मूर्तिके साथ उस देवीकी मूर्तिका बडी धूमधामसे विवाह करके उन दोनों मूर्तियोंको फिर बख्तसिंहके पास भेज दिया । हा ! राजपूत वीरोंके हृदयका कैसा हृदयहारी व्यवहार है, कैसी प्रीतिदायक सौजन्यता है, इस युद्धके पीछे मेवाड, मारवाड और आमेरके तीनों राजाओंमें मित्रतामूलक संधिबंधनके समाप्त हो जानेके पीछे उस मित्रताको स्थाई करनेके लिये मेवाड राजकुटुम्बके साथ मारवाड और आमेरराजके परिवारमें वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हो गया । उस विवाहकी सभामें उन मेवाडपतिके महलमें फिर जयसिंह अभयसिंह और बख्तसिंहने एक साथ मिल कर मनुहारका प्याला हाथमें लेकर उस शत्रुताको विस्मृतिके जलमें डाल दिया और जातीय ममतामें भरकर वे फिर परस्पर आलिंगन करके एकताका साधन करने लगे । ओहो ! 'यह दृश्य कैसा कमनीय है; कि स्वर्गीयभावसे पूर्ण सभीकी नाडी २ में आर्यरक्त प्रवाहित हुआ है; सभी समानधर्मके अवलम्बन करनेवाले हैं; सभी महावीर हैं, इस कारण सभीने एक हृदय होकर वैरके विस्मरणमें इस एकताकी पूजा की; इससे आर्यसन्तानका कैसा गौरव बढा' हा ! भारतवासी गण ! तुम कब इस प्रकार हृदयसे हृदय मिलाकर इस अनन्त स्मशानमें इस प्रकारसे एकताकी पूजा करनी सीखोगे ?

राठौरोंके इतिहाससे जाना जाता है कि उपरोक्त युद्ध ही मारवाडपतिके शेष जीवनमें स्मरण करने योग्य घटना हुई । मेवाड, आमेर और मारवाड इन तीनो राज्योंमें मित्रता हो जानेके पीछे अभयसिंहने फिर कोई युद्ध नहीं किया । संवत् १८०६ १७५० ईसवी में, अभयसिंहने जोधपुरमें प्राण त्याग किये । महात्मा टाड साहब लिख गये हैं कि, "अभयसिंह उग्र तेजस्वी थे; यद्यपि ऐसा कहा जा सकता है, परन्तु अधिक आलस्यके वशीभूत हो जानेसे उनकी संपूर्ण उग्रता एक भांतिसे क्षीण हो गई थी अभयसिंहके स्वभावके सम्बन्धमें अनेक प्रकारके प्रवाद प्रचलित हैं । राठौरोंके

इतिहाससे जाना जाता है कि जब मारवाडपति अजितसिंह चौहानीका विवाह करनेके लिये गये थे उस समय उन्होंने रास्तेमें एक सिंहको तो सोता हुआ और एकको जागते हुए देखा। वह देखकर ज्योतिषीने कहा कि इन चौहानी रानीके गर्भसे महाराजके औरससे दो पुत्र उत्पन्न होंगे, उनमेंसे एक तो आलसी और एक महावीर होगा। यदि ज्योतिषी महाराज यह भी कह देते कि दोनों पुत्र पिताके रुधिरसे हाथोंको कलंकित करेंगे तो वह अवश्य ही मारवाडका उद्धार कर सकते, उन अजितकी हत्यासे ही मारवाडका विध्वंस होना प्रारम्भ हुआ था।"

महात्मा टाड साहबकी इस युक्तिको समर्थन करके इतना तो हम अवश्य ही कहेंगे कि कर्नल टाड साहबकी उक्तिके मतसे अभयसिंह सर्वथा आलसी नहीं थे। युवा अवस्थाके आते ही अभयसिंहने अपने पिताके समान बराबर युद्धोंमें जैसा बल विक्रम दिखाया था, इससे उनके आलसी होनेका कोई लक्षण नहीं पाया जाता। अभयसिंहकी तेजस्विता, वीरता, विक्रम और इनके साहसका पूर्ण परिचय बराबर कई युद्धोंमें प्रकाश पा चुका है। उनके उस साहसका और भी एक प्रत्यक्ष प्रमाण कर्नल टाड साहबने दिया है। टाड साहबने पीछे लिखा है, कि "कछवाहे अर्थात् जयपुरके राजपूतोंकी जातिकी वीरता कहना तो दूर रहा वरन् राठौर भी इनको साहसहीन और दुर्बल बताकर इनसे घृणा करतेथे और अभयसिंह भी जयपुरके महाराज जयसिंहको घृणित दृष्टिसे देखते थे। दोनोंमें विवाहिक सम्बन्ध होनेसे एक दूसरेकी श्रेष्ठताकी रक्षासे परस्पर एक दूसरेके विशेष अभिलाषी थे। अभयसिंहने बादशाहके सामने भी जयसिंहको बाणीके छलसे कहा था, कि आपका कुश्य नाम धरा गया है, कुशका आघात जैसा तीक्ष्ण और गंभीर है आपकी तलवारका आघात भी उसी प्रकारका है। यह सुनकर आमेरके महाराज अत्यन्त क्रोधित हुए; परन्तु यथार्थ उत्तर देनेमें असमर्थ हो उन्होंने अभयसिंहसे बदला लेनेके लिये षड्यंत्र फैलाया। जिस भांति जयसिंह विलायतके विज्ञानियोंके साथ भारतीय विज्ञानियोंके मिलन साधनसे भारतके अद्वितीयविज्ञानी राजा माने गये थे, अन्य पक्षमें अभयसिंह भी उसी प्रकारसे रजवाडेमें सबमें प्रधान असिचालक वीरवर गिने गये थे। जयसिंहने दिल्लीपतिके कोशाध्यक्ष कृपारामको अपने हस्तगत करलिया था। कृपाराम दावक्रीडामें विशेष चतुर थे, इसीसे बादशाहके विशेष प्रियपात्र थे। कृपाराम जिस समय बादशाहके पास बैठकर क्रीडा करते उस समय देशीय राजा और अमीर भी खडे हो जाते थे। जयसिंहने उन्हीं कृपारामके साथ पहले सब बातोंको स्थिर कर रक्खा था कि एक समय जिस बादशाहने कृपारामके साथ क्रीडा की थी और अभयसिंह इत्यादि राजा खडे हुए थे, उस समय कृपाराम जयपुरपतिके पूर्व उपदेशके मतसे अभयसिंहके बाहुबलकी ऊंची प्रशंसाको कीर्तन करने लगे। एक समय अभयसिंहने अपने बाहुबलसे तलवारके द्वारा एक अत्यन्त बलवान् उग्र भैंसेका शिर काटडाला था। उसका उल्लेख करके उन्होंने और भी प्रसंसा की थी। बादशाहने कहा-'मैंने सुना है कि आप तलवार चलानेमें विशेष चतुर है।' राजा अभयसिंहने उनको उसी समय उत्तर दिया; 'हाँ

हजूर! मैं एक दिन आपको तलवारका बल दिखाऊंगा ।' अभयसिंहकी प्रतिज्ञाके अनुसार एक बडा तेजस्वी बलवान् भैंसा रंगभूमिमें लाया गया । अभयसिंह तलवारके बलसे उस महाक्रोधी भैंसेका वध कर दिखावेंगे, इस समाचारके प्रकाशित होते ही रंगभूमिमें बहुतसे दर्शक आ आकर इकट्ठे होने लगे । अन्तमें रंगभूमिमें जब वह बडा भारी भैंसा आया तब उसी समय अभयसिंहने बादशाहसे कुछकालके लिये विश्रामगृहमें जानेकी आज्ञा मांगी, बादशाहकी आज्ञा पाते ही मारवाडके महाराजने उस विश्रामगृहमें जाकर दो गिलास भरकर अफीमजलका सेवन किया । अभयसिंह भलीभांतिसे समझ गये थे कि जयसिंह ही मुझे विपत्तिके चक्रमें डालनेके लिये इस जालको फैला रहे हैं, इस कारण वह मारे क्रोधके उन्मत्त हो लाल २ नेत्र करके रंगभूमिमें आते हुए दिखाई दिये । अभयसिंहने कुछ ही कालके पीछे महाक्रोधान्ध अवस्थामें उस बलवान् भैंसेके दोनों सींगोंको भलीभांतिसे पकड लिया और जिस ओर महाराज जयसिंह बैठे थे; उसी ओरको बडे वेगसे उसे खैंचते हुए ले जाने लगे, सम्मुख ही विपत्तिको आताहुआ देखकर जयसिंह महाभयभीत हुए । अभयसिंहको बादशाहने जयसिंहके पास जानेके लिये मना किया तथापि इन्होंने क्रोधोन्मत्त भैंसेको जयसिंहके पास लेजाकर दोनों हाथोंमें खड्ग धारण कर एक आघातसे ही भैंसेका शिर काट डाला । जिस समय भैंसेका शिर कटकर अभयसिंहकी गोदमें गिरा उसी समय उसका महाकाय शरीर महाराजके ऊपर गिरा । सबने इस बातको सराहा, पर लिखनेवाला कहता है कि बादशाहने फिर कभी अभयसिंहसे दूसरे भैंसेको मारनेको नहीं कहा ।

जिस स्थानपर उग्रता, तेजस्विता, साहस और विक्रम विराजमान रहते हैं उस स्थानपर आलस्यका होना सर्वथा असंभव है। ऐसा विदित होता है कि महात्मा टाड साहबने अभयसिंहकी वृद्धावस्थामें विशेषकर अफीमके सेवनसे बिलासिताके वशीभूत होता हुआ देखकर उनके चरित्रोंमें आलस्यका समावेश दर्शन किया था ।

अभयसिंहके मारवाडपर शासन करनेके समयमें, विख्यात नादिरशाहने भारतपर आक्रमण किया। तब तैमूरके उस चंचल सिंहासनकी रक्षाके लिये बादशाह मुहम्मदशाहने राजपूत राजाओंका सेनासहित नादिरके साथ संग्राम करनेको बुलाया पर अन्यान्य राजपूत राजाओंके समान अभयसिंह बादशाहकी सहायता करनेके लिये नहीं गये । करनालके युद्धमें जिस प्रकार एक भी राजपूत राजा नहीं आया था, उसी प्रकारसे नादिरशाहने दिल्लीको घेर लिया, तथा उसपर अपना अधिकार कर मुहम्मदशाहको सिंहासनसे उतार दिल्लीमें अत्यन्त शोचनीय हत्याकाण्ड किया । और समस्त धन रत्नोंको हरण कर लेनेसे भी किसी राजपूत राजाने इनके लिये शोकका एक श्वास भी त्याग नहीं किया । मारवाडपति अभयसिंहके शासनके आरंभके पहले इन्होंने दिल्लीपति मुहम्मदशाहकी अधीनतामें बँधकर जिस भांति स्वजातीयताके मस्तकपर कलंकका टीका दिया था, जीवनकी अन्तिम दशामें इन्होंने उसी प्रकारसे यवनसम्राट्की अधीनताको

अस्वीकार कर महाराज अजितसिंहके समान प्रशंसनीय राजनैतिक अभिनय कर महाबल विक्रम प्रकाश करनेके पीछे यवनकी अधीनताको जडसे काट डाला था।

सियाजीसे लेकर जो समस्त राठौरवंशके राजा मरुक्षेत्रमें राजनैतिक वीराभिनय कर गये हैं, अभयसिंह भी उनमेंसे अवश्य ही एक योग्य वीरपुरुष थे। इस बातको हम मुक्तकण्ठसे कह सकते हैं कि अभयसिंहने अपने पिताको मारकर जो अपने नामको कलंक लगाया था, यही नहीं, वरन् राठौर राजवंशके तथा मरुक्षेत्रके और आर्यजातिके नामको भी उन्होंने घोर कलंकित किया था और एकमात्र उसी महापापके लिये मारवाडके भाग्यमें कालरात्रि उपस्थित हुई थी। अभयसिंहने जिस प्रकार एक पक्षमें दिल्लीके बादशाहकी अधीनताको छेदन कर स्वजातिके स्वाधीन नामका परिचय देकर अपने अधिकारको संग्रह किया, दूसरे पक्षमें उसी प्रकारसे उनके उस महापापकी फलरूप उस स्वाधीन अवस्थामें भी मारवाडके चारों ओर भयंकर आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित हो गई, इसीने राठौरजातिका सर्वनाश किया। हमारे पाठक परवर्ती इतिहासको पढकर जान सकेंगे कि पितृहत्याके पापके विषमय फलने शीघ्र ही उत्पन्न होकर हृदयभेदन करनेवाले दृश्यको नेत्रोंके सम्मुख उपस्थित किया था।

बारहवाँ अध्याय १२.

रामसिंहका मारवाडके सिंहासनपर बैठना; उनका क्रूर स्वभाव; रामसिंहके अभिषेकके समयमे उनके चचा बख्तसिंहका न होना; बख्तसिंहका धात्रीको प्रतिनिधिस्वरूपसे अभिषेकके समय भेजना; उससे रामसिंहका अपमान जानना; उनका क्रोध प्रकाश तथा जालौर देशको लौटानेकी आज्ञा देना; चांपावतके नेता कुशलसिंह; रामसिंहके द्वारा कुशलसिंहका अपमान; कुशलसिंहका जोधपुर छोड़ना; जोधपुरके प्रधान राजकविके साथ कुशलसिंहका साक्षात्; बख्तसिंहके साथ कुशलसिंहका मिलना; आत्मविग्रह; मैरतामे युद्ध; रामसिंहकी पराजय; बख्तसिंहका जोधपुरके सिंहासन पर अधिकार बगडीके सामन्तका मारवाड़के नवीन महाराज बख्तसिंहकी कमरमे तलवार बांधना; पदसे रहित मारवाड़पति रामसिंहके साथ राजपुरोहित जगूका योगदान; महाराष्ट्रोंकी सहायताकी आशासे उनका दक्षिणमें जाना; राजा बख्तसिंहका पुरोहितके निकट कविता भेजना; पुरोहितका उत्तर देना; बख्तसिंहकी अभिज्ञता; विज्ञता; शिक्षा और शारीरिक बल; महाराष्ट्रोंका मारवाड़पर आक्रमण करनेका उद्योग; समस्त राठौर सामन्तोंका बख्तसिंहके अधीनमे इकट्ठा होना; महाराष्ट्रोंके साथ युद्धके लिये बख्तसिंहका जाना; बख्तके साथ युद्ध करनेमें महाराष्ट्रोंकी अनिच्छा; बख्तसिंहका अजमेरके मार्गमें रहना; आमेरकी रानीका बख्तसिंहको विषमय वेष देना; उस वेषधारणसे बख्तसिंहका जीवन त्याग; बख्तसिंहके; चरित्रोंकी समालोचना।

अभयसिंहका स्वर्गवास होते ही उसके पुत्र रामसिंह युवा अवस्थामें अपने पिताके सिंहासनके अधिकारी रूपसे राजनैतिक रंगभूमिमें आये। जिस समय अभयसिंहने प्राण-त्याग किये, उसके ठीक बीस वर्ष पहले सिरोहीके मानसिंहकी कन्याने अभयसिंहके औरससे रामसिंहको उत्पन्न कर अपने पतिके वंशकी रक्षा की। सिरोहीके देवडा सम्प्रदाय चौहान जातिकी एक शाखाविशेष है। चौहान जाति अग्निकुलसे उत्पन्न है। उस चौहान नंदनीके गर्भसे राठौरवंशके औरससे जन्म लेकर आपने यौवनकालमें रामसिंह महा तेजस्वी और उग्रस्वभावके हुए। रामसिंह अपने पिताके समान केवल महाक्रोधी ही नहीं थे वरन् उनकी उस बीस वर्षकी अवस्थाके समयमें, उस नवीन यौवनके आगमनके समयमें उनके चरित्रोंके प्रति दृष्टि डालनेसे ज्ञात होता है कि उनके चरित्र सब प्रकारसे भयंकर हो गये थे। रामसिंहने पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर अपने उस उग्र स्वभावका भयंकर परिचय देना आरंभ किया। रामसिंहके अभिषेकके समयमें मरुक्षेत्रके प्रत्येक प्रान्तमें प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक सामन्त, तथा प्रत्येक जातिके आत्मीय जनोंने राजधानी जोधपुरमें आकर, उनके प्रति सम्मान दिखाकर अनुगत्यता स्वीकार की। 'परन्तु नागौरपति महावीर बख्तसिंह किस कारणसे अपने भतीजेके अभिषेकके समय नहीं आये, राठौर कविने उसका कोई कारण नहीं दिखाया'। बख्तसिंह समस्त राठौरगणोंमें सबसे अधिक निकट आत्मीय तथा सबसे अधिक ऊँचे पदपर स्थित थे, इस कारण उनके लिये उस सभामें आकर नवीन मारवाडपति महाराज रामसिंहके मस्तकपर राजतिलक देना कर्तव्य था, परन्तु बख्तसिंह स्वयं न गये, और न किसी चतुर सामन्तको अपने प्रतिनिधि स्वरूपसे भेजा; पर अपनी धात्रीको प्रतिनिधि स्वरूपसे जोधपुरमें भेज दिया। रजवाडेकी धात्री माताके समान पूजनीय होती हैं। महातेजस्वी वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहने अपने भतीजेको बालक जानकर ही धात्रीको भेजा था या नहीं, राठौरकविने इसका कोई लेख नहीं लिखा। परन्तु उस पूजनीय धात्रीके प्रति रामसिंहने उचित सन्मानके बदलेमें अत्यन्त निन्दनीय आचरण करके उसे अपनी उग्रताका विशेष परिचय दिया। वृद्धा धात्रीको देखकर रामसिंहने अत्यंत क्रोधित होकर कहा, "चचासाहबने मुझे बानर जाना है? इसी कारण उन्होंने मुझे राजतिलक देनेके लिये इस डाकिनी-को भेज दिया है।" नवीन महाराज रामसिंहने तुरंत ही महाक्रोधित हो जालौर देश लौटा देनेके लिये अपने चचाके पास एक दूत भेज दिया। अभिषेकके कुछ ही कालके उपरान्त चचा भतीजोंमें यह विद्वेषाग्नि प्रज्ज्वलित हो गई।

नवीन महाराज रामसिंहने महाक्रोधमें भरकर एक पत्र लिखकर भी दूतके हाथ भेजा था और क्रोधानलके शीतल होनेके पहले ही सेना सजाकर डेरे डालनेकी आज्ञा देकर अपने चचाको उचित शिक्षा दे अपने पद और मर्यादाकी रक्षा करनेके लिये वे तैयार हुए। रामसिंहने इस समय अपने राज्यके प्रधान २ नीति जाननेमें चतुर परम

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें सिरोहीके देवडेकी जगह कोटेके चौहानका उल्लेख है परन्तु गद्य इतिहासके अनुसार रामसिंहका जन्म लदानेके ठाकुर नरुका केसरीसिंहकी बेटीसे हुआ था।

हितैषी सामंत और मंत्रियोंकी बातको भी न सुना, और अपने राज्यके अत्यंत नीची श्रेणीके कर्मचारीके साथ सलाह करके कार्य करना प्रारंभ किया । इस मनुष्यका नाम अमियां था। इसके पूर्व पुरुष जोधपुरमें प्रधान तोरण द्वारपर नगाडे बजानेमें नियत थे । यह मनुष्य भी अपने पिताके पदपर नियत होकर नवीन महाराजका अत्यंत प्रियपात्र और प्रधान सलाह देनेवाला हो गया । रामसिंहके समान इसका भी अत्यंत क्रोधी स्वभाव था; इस कारण दोनोंकी खूब पटती थी । रामसिंह अमियांके परामर्शसे अपने चचाके विरुद्ध लडनेको खडे हो गये। नवीन अधीश्वर रामसिंहने ज्ञानहीन उन्मादीके समान अपने चचाके पास क्रोधपूर्ण पत्र भेजकर युद्धकी तैयारी की, मारवाडके प्रधान सामंत चांपावत सम्प्रदायके नेता आहुवापति कुशलसिंहने यह समाचार पाकर महाविपत्ति देख शीघ्र ही महलमें जा रामसिंहको समझानेकी चेष्टा की । परंतु उनके निर्दिष्ट आसनपर न बैठते २ राजारामसिंहने क्रोधित भावसे कहा, "आपके इस विकट कुत्सित मुखको जितना न देखे उतना ही अच्छा है" नवीन महाराजकी इस उक्तिसे महाक्रोधित हो आहुवाके सामंतने अपनी पीठपरसे ढाल लेकर शय्याके ऊपर विपरीत भावसे रखकर कहा,-"युवकराज! इस ढालको आप जिस भांति विपरीतभावसे गिरा हुआ देखते हैं, राठौर वख्तसिंह भी समस्त मारवाडको इसी प्रकार विपरीत भावसे निक्षेप करनेमें सामर्थ्यवान् हैं, आपने उन्हीं महावीर वख्तसिंहका अपराध किया है आप शीघ्र ही इसका फल भोगेंगे" लाल २ नेत्र करके यह वचन कहते हुए उठकर कुशलसिंह सभास्थानको छोडकर शीघ्र ही अपने अधीनमें स्थित समस्त सेनाको साथ ले जोधपुरके प्रधान राजकविके निवासस्थान मूंधियाडको चला गया। कन्नौजसे सियाजीके साथ जो कवि सबसे पहले मरुक्षेत्रमें आया था, उसीके वंशधर उसमें रहते थे । यह राजकवि मरुक्षेत्रमें किस प्रकारसे सम्मानित था, उसके प्रमाणमें हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि उसके अधिकारी ग्रामोंमें वार्षिक आमदनी मरुक्षेत्रके प्रधान सामन्तोंकी आमदनीके समान एक लाख रुपयेसे भी अधिक थी । सामन्त मण्डलीके समान इन कविका सम्मान पदमर्यादा और सामर्थ्य थी, कुशलसिंह सबसे पहले उसी कविके पास गये ।

कर्नल टाड साहबने लिखा है, "कि राजनीतिज्ञ वख्तसिंहने जब सुना कि मरुक्षेत्रके सबमें प्रधान सामन्त कुशलसिंह जोधपुरको छोडकर हमारे राज्य नागौरकी सीमाके अंतमें आये हैं, तब वह तुरंत ही उन माननीय सामंतको आदरसहित ग्रहण करनेके लिये आगे बढे; बख्तसिंह बिना विश्राम किये ही गंभीर रात्रिमें आकर जहां कुशलसिंह सोनेके लिये जा रहे थे वहीं जा पहुँचे और निद्रित सामंतको न जगाकर

(१) यह गलत लिखा है कि मूंधवाड़का बारहठ कन्नौजसे आये हुए कविकी सन्तानसे था । कन्नौजसे कोई कवि नहीं आया था सियाजीकी चौथी पीढीमें चांदा नाम एक भाटीको पकड़कर जबरदस्ती अपना पोलपात बारहट बना लिया था, और उसका विवाह चारणोंमें करा दिया था उसकी औलादमें मूंधियाड़के बारहट जोधपुरके पोलपात हैं ।

थके थकाये बख्तसिंह उसी सामन्तकी शय्याके ऊपर एक ओरको लेट रहे। प्रभात होते ही कुशलसिंहने नेत्र मलते हुए सेवकोंको हुक्का लानेकी आज्ञा दी, सेवकोंने अँगुलीका इशारा किया कि शय्याके ऊपर बख्तसिंह सो रहे हैं। कुशलसिंह तुरन्त ही चौकन्ने होकर उठ बैठे। उसी समय बख्तसिंहकी भी निद्रा जाती रही। आहवाके सामन्तने बख्तसिंहका भलीभाँतिसे आदर सत्कार किया, अंतमें वार्तालाप होनेके उपरान्त सामन्तने कहा, आजसे हमारा मस्तक आपकी इच्छाके अधीन हुआ, आजसे आपकी आज्ञाका पालन ही हमने जीवनमें प्रधान व्रतरूपसे स्वीकार किया। जब यह बातचीत हो रही थी, उसी समय जोधपुरके प्रधान कवि भी वहीं थे। वह भी दोनोंके मिलनेमें विशेष पोषकता करने लगे। बख्तसिंहने कविश्रेष्ठको आहवामें जाकर सामन्तके पुत्र और कुटुम्बको लानेके लिये आज्ञा दी, कविने प्रफुल्लित हो उसी समय उस कार्यसाधनमें तैयार होकर कहा, 'आजसे मैंने भी जोधपुरसे सर्वदाके लिये विदा ली।' तुरन्त ही बख्तसिंहने कहा। जोधपुर और नागौरमें आप किंचित् भी भेद न समझिये जबतक एक टुकडा बाजरेकी रोटीका भी मिलैगा तबतक हम उसको बाँटकर खांयगे, राजनीतिमें चतुर बख्तसिंहने इस प्रकार मारवाडके प्रधान सामन्तको अपने हस्तगतकर अपनी भविष्य उन्नतिका द्वार खोल लिया"

युवक अधिपति रामसिंह अपने चचाको सेना संग्रह करनेका भी अवकाश न देकर अपनी प्रबलवाहिनीके साथ उनपर आक्रमण करनेके लिये चले। सबसे पहले खेरली नामक स्थानमें दोनो पक्षमें एक महायुद्ध हुआ। इसके पीछे बराबर छः स्थानोंपर मेरताके समतलक्षेत्रमें लूनावास नामक स्थानमें भयंकर संग्रामानल प्रज्वलित हो गई; इस भयंकर युद्धका विशेष वृत्तान्त यथास्थान पाठकोंने पढा होगा[२]। इस युद्धमें उद्धतस्वभाव रामसिंह अपनी निर्बुद्धि और अज्ञानताका फल पाकर परास्त हो प्राणोंकी रक्षाके लिये भाग गये। वीरश्रेष्ठ बख्तसिंह जैसे ही उस भयंकर युद्धमें विजय प्राप्त कर जोधपुरकी ओरको चले; वैसे ही राठौरोंने सब नगरोंके तोरणद्वार खोल दिये। वीरश्रेष्ठ बख्तसिंह जोधपुरमें अधिकार करके शीघ्र ही सिंहासन पर विराजमान हुए। बगडीके जेतावत् सामन्त, जिसके पूर्वपुरुषगण प्रत्येक अभिषेकके समय नवीन राजाके मस्तक पर राजतिलक देते थे, उसने ही बख्तसिंहके मस्तकपर राजतिलक दिया। बगडी सामन्तवंशको राजटीका देनेका अधिकारी कहकर, "मारवाडका मारकिवाड" की उपाधिसे भूषित किया।

---

(१) महात्मा टाड साहबने मारवाड़में जानेके विवरणमें प्रथमकाण्डके २९ अध्यायमें लिखा है कि चांपावत और आसोप दोनों देशोंके दोनों सामन्त रामसिंहसे विरक्त होकर नागौरमें चले गये। और बख्तसिंह तथा रामसिंहके साथ उनके मिलन होनेकी चेष्टासे उसमें दोनों सामन्तोंके सम्मत न होनेपर भी शेषमें बख्तसिंहने उनको अपने दलमें मिला लिया, ऐसा जाना जाता है कि उन्होंने भूलसे यहाँपर आसोपके सामन्तोंके नाम नहीं लिखे।

(२) कर्नल टाड साहबने मारवाड़में इस युद्धका विवरण प्रथमकाण्डके २९ अध्यायमें किया है।

महावीर बख्तसिंह एकमात्र राजनीतिज्ञता और तलवारके बलसे चिरप्रार्थनीय राजसिंहासनपर स्थित हो अपने जीवनको सार्थक मानने लगे। मरुक्षेत्रके बहुतसे सामन्तों का उनके साथ योगदान होनेसे बख्तसिंहने यह सरलतासे स्थिर कर लिया कि भ्रातृपुत्र रामसिंह कभी भी जोधपुरपर अधिकार करनेमें समर्थ नहीं हो सकते। यद्यपि बख्तसिंहने तलवारके बलसे सिंहासनपर अधिकार कर लिया और उनके स्वजातीय वीर राठौरगण भी उनके पक्षपाती थे। वे उस सिंहासनकी दृढभावसे रक्षा कर सकते थे, पर तो भी निश्चय जानते थे, कि उस सामन्त मण्डलीके अतिरिक्त अन्यान्य सामर्थ्यवान् मनुष्योंको हस्तगत करना हमारा मुख्य कर्त्तव्य है।

रजवाडेके राजदरबारके मंत्री; पुरोहित, कवि इत्यादि पदोंको पुरुषानुक्रमसे भोगते हैं। मंत्रीके पदपर मन्त्रीका पुत्र, पुरोहितके पदपर पुरोहितका पुत्र, इस प्रकारसे पिताके पदपर पुत्र ही नियत होते हैं। पिताके पदपर नियत होना होगा इसीसे पुत्रोंको बालकपनसे ही उचित शिक्षा दी जाती है, इन समस्त पिताके पदके अधिकारियोंको अपने हस्तगत करना नवीन महाराजका सबसे पहला कर्त्तव्य था; अधिक क्या कहैं बख्तसिंहने स्वयं अपनी तलवारके बलसे ही अपने भतीजे रामसिंहको सिंहासनसे उतारकर स्वयं मारवाडका राजछत्र धारण किया। समस्त वीरसामन्तोंने जिसभांति उनके पक्षका अवलंबन किया उसी प्रकार सामरिक प्रधानमंत्री; शासनविभागके प्रधानमंत्री और प्रधान कविने भी उनके पक्षका अवलम्बन किया। परन्तु राजदर्बारमें एकमात्र प्रधान कुल पुरोहित जगूने रामसिंहको अत्यन्त उद्धतस्वभाव और राजपदके अनुपयुक्त और बहुतसे दोषोंसे युक्तको देखकर भी राजभक्तिको अपना कर्तव्य विचार कभीउसने बख्तसिंहके पक्षका अवलम्बन न करके सिंहासनसे भ्रष्टहुए रामसिंहके पक्षका ही अवलम्बन किया। रामसिंह ने सिंहासनसे भ्रष्ट होकर जयपुरके महाराजका आश्रय लिया, पुरोहित जगू अपने प्रभुको राज्यपर फिर अधिकृत करनेके लिये महाराष्ट्रोंकी सहायताकी आशासे दक्षिणको चला गया।

नीतिचतुर बख्तसिंहने देखा कि जगू पुरोहित होकर मारवाडके विध्वंसकी सूचना करनेके लिये उद्यत हुआ है, विदेशाय महाराष्ट्रोंको मारवाडमें लाना चाहता है जिससे मारवाडका सर्वनाश हो जाय। अस्तु पुरोहितको ही अपने हस्तगत करना एकान्त कर्तव्य विचारकर उन्होंने शीघ्र ही अपने हाथसे एक कविता पूर्ण पत्र लिखकर उसके पास भेज दिया। बख्तसिंह केवल नीतिज्ञ साहसी और वीर ही नहीं थे, वरन् वह विशेष विद्वान भी थे। उन्होंने पुरोहितके पास अपने हाथसे कवितामें जो पत्र लिख भेजा था उसका सारांश यों है:--

"हे मधुकर! जिस फूलके सौरभपर आप मोहित हो रहे हैं वह उस फूलका पेड प्रबल आंधीके आनेसे छिन्नभिन्न हो गया है. उस गुलाबके वृक्षपर अब एक पत्ता भी नहीं रहा, फिर क्यों वृथा काँटोंमें बंध रहे हो ?"

(१) इसी आशयके ये दो दोहे विहारी सतसईमें लिखे हैं।

दोहा--जिन दिन देखे वे सुमन, गई सु बीत बहार। अब अलि रही गुलाबमे, निपट कटीली डार॥

यही आश अटक्यौ रहै, अलि गुलाबके मूल। हुइ है फेर वसन्त ऋतु, इन डारन वे फूल॥

पुरोहितने उत्तर दिया कि "सूखे हुए गुलाबके वृक्षके ऊपर भौंरा केवल इसी आशासे बैठा है कि नवीन वसंतऋतुके आगमनसे नवीन खिले हुए फूलोंकी सुगंधिसे पुनः मनको प्रसन्न करूंगा ?"

पुरोहितको यथार्थ विश्वासपालक देखकर महाराज बख्तसिंहने प्रसन्न हो उसका यथोचित सम्मान किया। यद्यपि पुरोहित बख्तसिंहके पक्षका अवलम्बी नहीं था तो भी बख्तसिंह उसके इस आचरणसे किंचित् भी दुःखी न हुए।

महात्मा टाड साहबने लिखा है; "कि बख्तसिंह जैसे सदानंदचेता थे, उसी प्रकार उनके स्वभावसे असीम साहसिकता और असीम वदान्यताके मिलनेसे उनको राजपूत जातिने आदर्शस्वरूप कर दिया था। इन श्रेष्ठ गुणावलीके समान उनकी मूर्ति जैसी शान्त थी और शरीर बलिष्ठ था उसी भाँतिसे देशकी समस्त विद्याओंमें भी वह पंडित थे; विशेष करके उनमें कविता रचनाकी शक्ति भी सामान्य नहीं थी। यदि वह एकमात्र पिताकी हत्या न करते तो रजवाडेमें यहांतक जितने राजाओंने जन्म लिया है उनमें एकमात्र यही सबसे श्रेष्ठ और चिरकालतक सम्मानित होते और इनका नाम भी अक्षय हो सकता। बख्तसिंहने अपने श्रेष्ठ गुणोंसे स्वजातीय राठौरोंको अपने अनुगत कर लिया था। इन्होंने केवल समरक्तवाही वीरोंको प्रीतिके सूत्रमें बांध लिया था, यही नहीं, वरन् समस्त रजवाडेकी सब जातियां इनके गुणोंपर मोहित हो गई थीं, बख्तसिंहने सभीके हृदयपर अधिकार कर लिया था। जिस समय सिंहासनसे भ्रष्ट हुए रामसिंहका दूत महाराष्ट्र लुटेरोंके नेता सेंधियाको अपने हस्तगत कर उसकी सेनाकी सहायतासे रामसिंहको फिर जोधपुरके सिंहासनपर बैठा लेनेके लिये तैयार हुआ; उस समय महाराज बख्तसिंहने एकमात्र अपने प्रीतिमय आचरणसे और संतोषदायक व्यवहारसे तथा अपने बल विक्रमके बलसे इस भांति अगणित सेनाका संग्रह किया कि महाराष्ट्रोंका दल, उस सेनाश्रेणीमें समस्त रजवाडेके श्रेष्ठतम वीर सम्प्रदायको इकट्ठा हुआ देखकर अत्यन्त भयभीत हो गया। महाराष्ट्रोंके दलको इस प्रकारसे उपस्थित देख और इनके द्वारा जन्मभूमिके सर्वनाशकी संभावना देखकर, सियाजीके वंशधर प्रत्येक शाखाके राठौर सामन्त एक मनुष्यके समान खडे होकर वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहके अधीनमें उस रुद्रमूर्ति महाराष्ट्रनेता माधोजीके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये चले। महाराष्ट्रोंका दस्युदल केवल अपने बाहुबलको प्रकाश करके विजय तथा गौरव उपार्जन करनेके लिये नहीं आया था, वरन् वह लोग केवल मारवाडको लूटकर तथा उसको विध्वंस करनेकी इच्छासे ही रामसिंहको ले आये थे, परन्तु महावीर बख्तसिंहको उस प्रबल सेनाके साथ आता हुआ देखकर वे समझ गये कि जिस भांति युद्धमें विजय करना असंभव है, उसी भाँति मारवाडको लूटना भी असंभव है, इस कारण महाराष्ट्रगण राजपूत वीरोंको साथ ले सांग[1] और सिरोहिके साथ अपने बरछोंके बलकी परीक्षा दिखानेकी इच्छा करने लगे।

(१) यह दशफुट लम्बी होती है सिरोही देशमें सांग एक प्रकारका भाला है, इसीसे उसका-

कर्नल टाड साहबने इससे पीछे वर्णन किया है, " तलवारके बलसे जो उद्देश्य साधन नहीं हुआ कालकूट विषने उस उद्देश्यको पूर्ण कर दिया; अजमेरके निकट जिस मार्गसे मारवाडके राज्यमें सरलतासे प्रवेश किया जा सकता है, शत्रुओंको उसी मार्गसे किसीभाँति भी न जाने देनेकी इच्छासे वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहने सेनाके साथ वहां अपने डेरे डाल दिये और शत्रुओंके आगमनकी प्रतीक्षासे वह वहां रहने लगे । आमेरपति माधोसिंहकी राठौरजातीया रानीने वहां जाकर बख्तसिंहके साथ साक्षात्कर भ्रातृपुत्र रामसिंहके स्वार्थसाधन करनेके लिये बख्तसिंहके जीवनरूपी दीपकको अपनी चतुरतासे बुझा दिया । किस उपायसे आमेरकी रानीने अपने उद्देश्यको पूर्ण किया था ? उन वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहकी अन्तिम दशाका वृत्तान्त पहले ही वर्णित हो चुका है । बख्तसिंहने संवत् १८०९ सं० १७५३ ईसवीमें इस मायामय शरीरको त्याग किया । उनकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र विजयसिंहके साथ रामसिंहका महा-युद्ध होनेसे मारवाडके चारों ओर आत्माविग्रहानलके प्रज्वलित होनेसे मारवाडदेश विध्वंस हो गया ।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने बख्तसिंहकी जीवनीके उपसंहारमें लिखा है, " कि वीरश्रेष्ठ बख्तसिंह जब तीनवर्षतक मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त रहे, उस थोडे समयमें ही उन्होंने मारवाडके दुर्ग समूहोंको दृढ और सुसज्जित करनेका अवकाश तथा उपाय प्राप्त किये थे, उन्होंने राजधानीमें बडे २ किले बना दिये, तथा अहमदा-

---

—सिरोही * नाम हुआ । इसकी धार अत्यन्त तीक्ष्ण होती है कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें जोधपुरके कई एक प्राचीन विशाल भाले रक्खे गये थे, ऐसा विदित होता है कि, उनको पाठकोंने अवश्य ही देखा होगा ।

(१) महात्मा टाड साहबको इस स्थानपर भ्रम हो गया है । हमने उनकी उक्तिके मतसे " कर्नल टाडके मारवाड़में जानेका वृत्तान्त" २९ अध्याय पृ० ७८२ में लिखा है, कि जयपुरके महाराज ईश्वरीसिंहकी स्त्रीने महाराज बख्तसिंहको कालकूट विषमय वस्त्र दिये थे, बख्तसिंहने उसी वेशको धारण कर प्राण त्याग किये । परन्तु महात्मा टाड साहबने यहां कहा है कि माधोसिंहकी स्त्रीनेवे कालकूटमय वस्त्र दान किये थे । इसकी सत्यताका निर्णय करना अत्यन्त कठिन + है ।

(२) प्रथमखंडमें कर्नल टाडके मारवाड़से आनेका वृत्तान्त २९ अध्यायके ७८२पृष्ठमें देखो ।

---

* सिरोही एक किस्मकी फौलादी तलवार होती है । यह काट करनेमें बडी तीक्ष्ण होती है पर साथ ही यह बात भी है कि चलानेवाला कुशल नहीं है तो टूट भी जाती है इसीसे कहावत है (कि सर नहीं कि सिरोही नहीं) ।यह तलवार राजपूतानेके सिरोहीनामक स्थानमें बनती है इसीसे इसका नाम सिरोही पड़ा ।

+'गयख्यातमें' माधवसिंहका गांव सोनेली परगने मालपुरा इलाके मारवाड़में बख्तसिंहसे मिलनेको आना लिखा है सो उस समय माधोसिंह ही जयपुरके राजा थे । उसी ग्राममें भादों बदी १३ सं० १८०९ को महाराज बख्तसिंहका देहान्त हुआ था ।

बादको जीतकर जो समस्त उपकरण लाये थे बख्तसिंहने उन सब उपकरणोंसे जोधपुरके महलोंको अत्यन्त सुन्दरतासे सजाया था। कठिन यवनोंने हिन्दुओंके प्रति और विशेष करके मारवाडनिवासी राठौरोंके प्रति एक समयमें जो अकथनीय निग्रह, दारुण अत्याचारको किये थे, महावीर बख्तसिंहने उन सब अत्याचारोंका उन्हें उचित फल दिया। उन्होंने अपने मुख्य अधिकारी नागौरराज्यकी यवन मसजिदोंको तोडफोड कर उन स्थानोंपर पूर्वकालके आदि मंदिरोंको बना दिया। एकमात्र उन असीम साहसी बख्तसिंहने समस्त मारवाडमें ऐसी आज्ञा दी कि जो कोई मुसल्मान ऊँचे स्वरसे खुदाको पुकारेगा उसको प्राणदंड दिया जायगा। बख्तसिंहकी उसी आज्ञाके अनुसार ही समस्त मारवाडमें तथा सारी मसजिदोंमें वह चीत्कार शब्द एकबार ही बंद हो गया, और आजतक उस प्रबल नियमका पालन होता है। उस समय भारतवर्षमें जिस भाँतिका राजनैतिक विप्लव हो रहा था दिल्लीके प्रबल प्रतापशाली यवन सम्राट्की वह जगत् विख्यात गौरवगरिमा लुप्त हो गई थी, तथा इनके शासनकी शक्ति भी एकबार ही हीनप्रभा हो गई थी। कृष्णाके किनारे कृषिजीवी महाराष्ट्रदलने मस्तक उठाकर सबमें प्रधान शासन शक्तिका संचय किया था, यदि वीरश्रेष्ठ बख्तसिंह कुछ कालतक और जीवित रहते तो अवश्य ही राजपूतजाति प्राचीनकालके समान समस्त भारतमें उस शासनशक्तिको प्राप्त कर पहलेके समान स्वाधीनभावसे स्वजातिके गौरवरूपी सूर्यको फिर उदित करनेमें समर्थ होती। जिस यवनराजकी शासनशक्तिने भारतके देशीय राजाओंकी स्वाधीनताको नष्ट कर दिया तथा उनको एक बार ही मोल लिये हुए दासकी भाँति पदपर स्थित कर दिया था, उसी यवनसम्राट्के वंशको विनाश करनेके लिये सभी राजपूत राजा एक साथ मिल सकते थे, परन्तु उन देशीय राजाओंने अनेक प्रकारके राजनैतिक पापोंके कारण उस अभिलाषित सुअवसरको पाकर भी खो दिया और वे अपने मनोरथको सिद्ध न कर सके"।

सत्यप्रिय टाड साहब स्पष्ट अक्षरोंमें लिख गये हैं कि पाठकगण इस स्थानपर बख्तसिंहके पिताका प्राणनाश और आमेरकी रानीके द्वारा उस पितृहन्ताके जीवनका विनाश देखकर यह न विचारें कि राजपूतजाति इसी प्रकारसे जीवनको नाश कर अपने वंशको कलंकित करनेका अभ्यास रखती है। इस प्रकारका हत्याकाण्ड यही एकमात्र दिखाई दिया है। कर्नल टाड साहबने इसके पीछे लिखा है, "पाठकगण एक बार पाश्चात्य इतिहासकी ओर दृष्टि उठाकर देखें। ग्यारवीं शताब्दीमें जिस समय प्रबल प्रतापशाली जयचंद यवनोंके द्वारा सिंहासनसे भ्रष्ट हुए थे, जिस समय सियाजीने मरुक्षेत्रमें राठौरोंके शासनकी प्रतिष्ठा की उस समय विलायतवासी असभ्यता और अंधकारसे मुक्ति प्राप्त कर रहे थे। जिस समय आर्यराजवंशका प्रताप, प्रभुत्व, स्वाधीनता एक बार ही विजातियोंके आक्रमणसे हीन हो गई थी, उसी समय विलायतनिवासियोंने नवीन सभ्यता और शिक्षाके बलसे मस्तक उठाया था, विलायत-निवासी नाइट अर्थात् वीर कुलीन उपाधिवाले मनुष्य जिन गुणोंसे विभूषित हो

जिस भाँतिसे अपने साहस और बल विक्रममें प्रशंसनीय हुए थे, राजपूत वीर भी उन सभी गुणोंसे विभूषित थे, वरन् विलायत वासियोंकी अपेक्षा राजपूत वीरनेता मानसिक उत्कर्षतासाधनमें अधिकतर शिक्षित थे। ऐसा कोई समय भी नहीं हुआ कि जिस समय राजपूत राजा अपने नामके हस्ताक्षर न कर सकते हों, वरन् वह सभी अपनी सुशिक्षाके बलसे अपने हाथसे राजनैतिक पत्र तथा मन्तव्य लिखा करते थे, और आवश्यकता होनेपर वह कविता भी बना लेते थे। तब रजवाडेके हत्याकाण्डका उल्लेख करके युरोपके मध्यसमयके हृदयभेदी अगणित हत्याकाण्ड क्या शोचनीय नहीं हो सकते ?"

उदार स्वभाव टाड साहब इस स्थानपर सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये स्वदेशके नाइटकी उपाधि धारण करनेवाले वीरोंकी अपेक्षा राजपूतवीर नेताओंके प्रति ऊँचा संमान दिखा गये हैं। महात्मा टाड साहबने पीछे कहा है, कि बख्तसिंहने जो अपने पिताको मारा था राजपूत कवियोंने उस महापापकारी हत्याकाण्डके प्रति किसी प्रकारका भी मन्तव्य प्रकाशित नहीं किया। पाठक इस प्रकारका सिद्धान्त न करें। रजवाडेके राजाओंसे लेकर दीन दरिद्री किसानतक भी कविकी लेखनीसे निकले हुए "विषपद्योंको"[२] आजतक पढा करते हैं,इससे भलीभाँति प्रमाणित होता है कि राठौरके कविने निर्भयहृदय हो स्वाधीनभावसे सत्यके सम्मानकी रक्षा करनेमें किसी भाँतिकी भी त्रुटि नहीं की। बख्तसिंहने जो अपने पिताको मार डाला था, इस विषयमें आजतक एक प्रवाद प्रचलित है। एक समय महाराज अभयसिंह आमेरपति महाराज जयसिंहके साथ पवित्र पुष्करतीर्थको जा रहे थे। तीसरे पहरके समय दोनों महाराज अपने अपने परिषदोंके साथ बैठे हुए आनन्द भोग रहे थे,इसी समयमें दोनों राजाओंने प्रधान कवि कर्णीदानको नवीन कविता बनाकर सुनानेकी आज्ञा दी।कविश्रेष्ठने तुरन्त ही दोनों राजाओंकी आज्ञासे निर्भय हो यह कविता पढी।

जोधपुरा आमेरिया; दोनों थाप उथाप।
कूरम मार्‌यो डीकरो, कमध्वज मार्‌यो बाप॥

कविताका यह अर्थ था कि जोधपुर और आमेरके महाराज यह दोनों ही साखा

---

(१) यूरोपके मध्यसमयके नाइट (Knight) अत्यन्त ही मूर्ख थे। वे अपना नामतक नहीं लिख सकते थे।

(२) मालूम होता है कि यहाँ अनुवादकर्ताकी मुराद विसरसे है। मारवाड़में कविताके दो भेद हैं सर और विसर, सर प्रशंसामयी कविताको संज्ञा है और विसर निन्दापूरित कविताकी, इसी सर शब्दसे विष पद्य गढा गया होगा।

ठीक नहीं हैं दोनों ही सिंहासनसे भ्रष्ट हुए और दोनों ही फिर अभिषिक्त हुए। कूर्माने[1] अपने पुत्र शिवासिंहकी हत्याकी थी, और कमध्वजने[2] अपने पिताका विनाश किया।

असीम साहसमें भरी इस नवीन कविताके सुनते ही सभी आश्चर्यमें हो गये। उसी समयसे रजवाडेके प्रत्येक मनुष्योंके मुखसे यह कविता सुनाई देने लगी।

उपसंहारमें हमारा कर्त्तव्य यही है कि यदि महाराज बख्तसिंह अपने भाई अभयसिंहकी आज्ञासे तथा उनकी ताडना, उपदेश और लालचमें आकर अपने पिताके प्राण नाश न करते तो कर्नल टाड साहबके समान हम भी उनको राठौरवीरोंमें अग्रणीय कहकर महान उच्च सम्मान दिखा सकते थे।

तेरहवाँ अध्याय १३.

विजयसिंहका राज्याभिषेक; मेरता नामक स्थानमें नवीन महाराजके प्रति राठौर सामन्तोंका सम्मान दिखाना; जोधपुरकी राजधानीमें विजयसिंहका जाना; सिंहासनसे भ्रष्ट रामसिंहका जयपुरपतिके साथ मिलकर महाराष्ट्रोंके साथ संधिबन्धन; आक्रमणकारी सेनाका संमिलन; आक्रमणकारियोंके विरुद्धमें युद्धके लिये मारोठनामक स्थानमें विजयसिंहका सेना इकट्ठा करना; रामसिंहका सिंहासन देनेके लिये विजयसिंहके पास आज्ञा भेजना; विजयसिंहका उत्तर देना; युद्ध; विजयसिंहकी पराजय; राठोरोंकी अश्वारोही सेनाके साथ सामन्तोंका भागना; रणक्षेत्रमें विजयसिंहका इकला रहना; उनका भागना; रामसिंहका किलेशर अधिकार करना; महाराष्ट्रोंके सेनानायकके जीवनका नाश; उस हत्याकी हानिको पूर्ण करना; अजमेरमें जाना; महाराष्ट्रोंका चौथ संस्थापन; महाराष्ट्रोंका रामसिंहके पक्षको छोड़ना; कविलिखित पद्य; रामसिंह की मृत्यु; उनके चरित्र; मारवाड़मे अराजकता; राठौरराजाके प्रति पोकर्णके सामन्तोंका दुर्व्यवहार; सामन्तोंकी शासनशक्तिको घटानेके लिये मारवाड़पतिकी कल्पना; सामन्तोंकी समिति; गोवर्द्धनखीची; राजाके प्रति उनका उपदेश; सामन्तोंके साथ राठौरपतिका असम्भ्रममूलक संधि बंधन; वेतनभोगी बिदेशीय सेनाको विदा देना; राजगुरुकी मृत्यु; गुरुकी भविष्यवाणी; प्रधान २ सामन्तोंका प्राणनाश; सुबलसिंहका अपने पितृहन्ताके प्रति बदला लेनेका उद्योग करना; सुबलसिंहकी मृत्यु; सामन्तोंकी शासन शक्तिका रोकना; सिन्धुदेशसे अमरकोटको छीन लेना; मेवाडसे गोडवार राज्यका ग्रहण करना; महाराष्ट्रोंके विरुद्ध मारवाड और जयपुरके दोनों राजाओंका मिलन; तुंगानामक स्थानमें पराजय; राठोरोंका अजमेरपर फिर अधिकार करना; पाटन और मेरतामें युद्ध; अजमेरमें जाना; अजमेरके शासनकर्ताकी आत्महत्या; विजयसिंहकी उपस्त्रीका मानसिंहको गोद लेना; उनके असदाचरणसे सामन्तोंका क्रोधित होना; उनकी हत्या करना; विजयसिंहकी मृत्यु।

---

(१) जयपुरेश्वर, यहां पर कुश्यसे कूर्मा हुआ है।

(२) कामध्वज कान्यकुब्ज पतिकी प्राचीन उपाधि है। मारवाडके राठोरोंको यह उपाधि मिला करती थी।

जब वीरश्रेष्ठ बख्तसिंहने अपने पिताकी हत्याके फल रूपमें अपने राज्यकी सीमाके बाहर कालकूट विषमय वेशको पहरकर एक शोचनीय दशामें प्राण त्याग किया, तब उनके पुत्र विजयसिंह बीस वर्षकी अवस्थामें मारवाडके राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त हुए। यद्यपि दिल्लीके बादशाह इस समय नाममात्रके बादशाह थे, इस समय उनके शासनकी शक्ति एक बार ही लुप्त हो गई थी, देशीय राजा और यवन शासनकर्ता गणोंने पहलेके समान उनकी अधीनताको स्वीकार कर महाराजकी आज्ञा पालन नहीं की थी, और बख्तसिंहके समयसे ही मारवाडमें दिल्लीश्वरका प्रभुत्व लुप्त हो गया था, तथापि नवीन मारवाडपति विजयसिंहने प्रचीन रीतिके अनुसार दिल्लीके बादशाहके निकट अपने अभिषेकका समाचार भेज दिया। दिल्लीश्वरने उसी समय उस अभिषेकमें पूर्ण सम्मति प्रकाशित कर भेजी। केवल दिलीश्वर ने ही नहीं वरन् रजवाडेके अन्यान्य राजाओंने भी नविन मरुक्षेत्रपति विजयसिंहके अभिषेकमें आनन्द प्रकाशके साथ अभिनन्दनपत्र भेजे। मारवाडकी सीमामें स्थित मारोठ नामक स्थानमें विजयसिंहका अभिषेक किया गया। नवीन महाराज विजयसिंहने मारोठसे मेरतामें जाकर वहां अशौचकालतक समय व्यतीत किया। उस समय बीकानेर कृष्णगढ और रूपनगरके स्वाधीन राजा भी अपने २ अधीनकी सेनाको लेकर वहां आये और सबने विजयसिंहका उचित सम्मान किया, तथा सम्पूर्ण सामन्तोंने भी वहाँ जाकर विजयसिंहके सन्मान बढानेमें त्रुटि न की। नवीन नागौरेश्वरने इस प्रकारसे सबका सम्मान बढाया। और राजधानी जोधपुरमें जाकर बडी धूमधामके साथ अपने स्वर्गीय पिताका श्राद्ध किया। इस श्राद्धकार्यमें उसने बहुतसा धन खर्च करके कवि, भाट, चारण, ब्राह्मण और अनाथोंको अधिक धन देकर विशेप यश प्राप्त किया।

बीस वर्पकी अवस्थामें विजयसिंह जिस समय पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए, उस समयको अवश्य ही विपदमय कहना होगा। यद्यपि प्रतिवासी राजगण और सामन्तमंडलीने उनके पक्षका अवलम्बन किया, परन्तु अभयसिंहका पुत्र रामसिंह मारवाडके राज्यसिंहासनका प्रधान दावादार राजनैतिक बंगाल भूमिमें आ पहुँचे। बख्तसिंह अपने एकमात्र असीम साहस, अतुल सामर्थ्य, प्रवल पराक्रम और कूट राजनीतिके बलसे ही रामसिंहको भगाकर स्वयं सिंहासनपर विराजमान हुए थे। परन्तु इस समय विजयसिंहकी अवस्था केवल बीस वर्पकी थी, उनके लिये राजनैतिक रंगभूमि और संग्रामभूमिमें पिताके समान सामर्थ्य दिखाना असम्भव व्यापार था। जो हो विजयसिंहने पिताके सिंहासनपर बैठकर रामसिंहकी आशाको व्यर्थ कर दिया।

बख्तसिंहके द्वारा मारवाडसे निकाले जाकर रामसिंह जैपुरमें रहने लगे। यदि बख्तसिंह जीवित रहते तो उनके मनकी आशा कभी पूर्ण न होती, यह उन्होंने भली भाँतिसे समझ लिया था। इस समय उन्हीं सिंहविक्रमी बख्तसिंहकी मृत्युसे रामसिंहने

महासन्तुष्ट हो । फिर पिताके राज्यका उद्धार करनेकी विशेष चेष्टा की । रामसिंह और जयपुरके महाराज भी भलीभाँतिसे जान गये थे, कि विजयसिंहकी बीस वर्षकी अवस्था होते ही जब कि राठौर जातिने इनको अधीश्वररूपसे स्वीकार कर लिया है; जब कि प्रतिवासी राजाओंने इनके अभिषेकमें अपनी सम्मति प्रकाश की है, तब एकमात्र जयपुरकी सेनाकी सहायतासे विजयसिंहको सिंहासनसे भ्रष्ट करना असंभव है । इस कारण रामसिंहने अन्य उपायसे अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेकी चेष्टा की । इस समय महाराष्ट्रोंके दलने भी प्रबल होकर भारतभूमिमें विशेष शक्ति स्थापित कर ली थी । रामसिंह उन्हीं महाराष्ट्रोंके दलकी सहायतासे अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये आगे बढे । रामसिंहके पुरोहितने यद्यपि एक बार ही महाराष्ट्रोंकी सहायताको संग्रह किया था, यद्यपि महाराष्ट्रोंके दल मारवाडके विध्वंस करनेको दस्युमूर्तिसे अग्रसर हुए थे, परन्तु उस समय पुरुषसिंह बख्तसिंहकी अमित बलशालिनी सेनाको देखते ही उन्होंने मनकी कामना पूर्ण होना असंभव विचार शीघ्रतासे पीठ दिखा दी थी किन्तु इस समय बख्तसिंहके न होनेसे अपने पापके उद्देश्य पूर्ण होनेमें किसी प्रकारके उपद्रव न होनेकी संभावना विचारकर महाराष्ट्र दलके नेताने सरलतासे रामसिंहके प्रस्तावमें अपनी सम्मति प्रकाश की । रामसिंहकी ओर महाराष्ट्रदलके नेताके साथ शीघ्र ही सन्धिबन्धन हो गया, दोनो ओरके नेताओंने उस संधिकी सम्पूर्ण धाराओंके पालन करनेमें सौगंध की । महाराष्ट्रोंकी सेना शीघ्र ही कोटासे होती हुई जयपुरमें आ पहुंची । उस समय रामसिंह जयपुरमें ही रहते थे । सहायकारी महाराष्ट्रोंके आते ही रामसिंह शीघ्र ही जयपुरकी सेनाके सहित महाराष्ट्रोंके साथ मिलकर विजयसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये आगे बढे ।

" महाराष्ट्रोंका तस्करदल मारवाडमें जाते ही देशका सर्वनाश कर देंगे, यहांका सर्वस्व लूटकर सारी धनसम्पत्ति लेजायँगे" । महाराज विजयसिंहकी राठौर सामन्त मण्डली और सर्वसाधारण प्रजाने इस बातको भलीभांतिसे जान लिया था । इस कारण मरुक्षेत्रके प्रत्येक राठौर नवीन महाराजकी आज्ञासे शीघ्र ही महाराष्ट्रोंके दस्युदलको भगाने तथा रामसिंहकी आशाको व्यर्थ करनेके लिये दलके दल आकर मेरताके समतल क्षेत्रमें इकट्ठे होने लगे । समस्त राठौर जातिको उस रणभूमिमें इकट्ठा हुआ देखकर राठौर कवियोंने उनकी बडी प्रशंसा की है । विशेष करके इस समय अनधीन पातावतगण तक कठिन महाराष्ट्र--दस्युदलके हाथसे स्वदेशकी रक्षाके लिये उपस्थित हुए । कवियोंने उनके यशको भलीभांतिसे गाया है ।

रामसिंहने महाराष्ट्री सेनाके साथ पुष्करतीर्थमें जाकर विजयसिंहके पास यह कहला भेजा, "कि तुम इसी समय मरुक्षेत्रके सिंहासनको छोड दो नहीं तो निस्तारा

---

(१) यह संधि "हलदी वा बलपत्र" (पक्काकागज) नामसे विदित है । महाराष्ट्र दलके समस्त प्रधान नेताओंने उसपर हस्ताक्षर कर दिये थे । उनका नाम इस प्रकार है--जनकोजी सेंधिया, मालजी तांतिया, चित्तेजी रघुपागिया, घोषालिया, जादोन, मुल्ला यारअली और फीरोजखां ।

नहीं है। " महाराज विजयसिंहने उन समस्त सामन्तोंके सामने रामसिंहके उस आज्ञापत्रको पढा, जिसे सुनते ही समस्त राठौर अत्यन्त क्रोधित हो गये। और "युद्ध होगा! युद्ध होगा!!" यह कहकर महावीरता प्रकाश करते हुए बोले, "यह कौन आप्पा है जो हमें भय दिखाता है? हजार वज्रपात होनेपर भी हम अपनी रक्षा करेंगे।" उत्तेजित राठौरोंने इस प्रकार एकस्वर और एकमतसे युद्धपक्षका समर्थन किया। महाराज विजयसिंहने उसी समय रामसिंहके निकट यथोचित उत्तर भेज दिया। महात्मा टाड साहब लिखते हैं कि, शत्रु सेनाकी संख्या राठौरोंकी सेनाकी संख्यासे अधिक थी। राठौरगण कछवाहोंकी सेनासे तो कुछ भी भयभीत न हुए, कारण कि वह जानते थे कि हम कछवाहोंको सरलतासे परास्त कर सकेंगे; परन्तु महाराष्ट्रोंके साथ जय प्राप्त करनेके विषयमें उनको कितनी ही बातोंकी चिन्ता करनी पडी। जो हो राठौरोंकी सेना महाराष्ट्रोंके साथ प्रबल विक्रम प्रकाश करके अपने बाहुबल और पराक्रमका चूडान्त प्रमाण दिखानेमें असमर्थ न हुई।

राठौरोंके कवियोंने, जो जो सम्प्रदाय इस युद्धमें नियुक्त थीं, उन सबकी यथायोग्य प्रशंसा की है।

इस प्रबल युद्धके समयमें राठौरोंमें दो आकस्मिक घटनाएं उपस्थित हुईं। यदि यह दोनों घटनाएं न होतीं तो इस भयंकर युद्धमें विजयसिंह ही विजयलक्ष्मीका आलिंगन कर सकते। एक दल राठौरोंकी अश्वारोही सेना शत्रुपक्षके व्यूहको भेदन कर लौटी जा रही थी। इसी समयमें उसको शत्रुओंकी सेना जानकर राठौरोंने उसके ऊपर बाण और गोलोंकी वर्षा करके उसे विध्वंस कर दिया। इस दुर्घटनाका वर्णन यथास्थान किया गया है, यदि विजयसिंहका भाग्य मंद न होता तो ऐसी दुर्घटना क्यों होती?--दूसरी दुर्घना भी इसी प्रकारकी थी। सेंधिया इस समय रणक्षेत्रको छोडकर भागनेके लिये तैयार हो गया था, यदि राठौर गण कुसंस्कारके वशीभूत होकर छिन्नभिन्न न हो जाते तो इन्हींके विजयकी पताका उडती।

कृष्णगढ और रूपनगर इन दोनों राज्योंके राजा भी मारवाड राजवंशसे उत्पन्न हैं। परन्तु दोनों ही स्वाधीनभावसे राज्यशासन कर दिल्लीके बादशाहसे सम्बन्ध रखते थे। कृष्णगढके महाराजने अपने कुटुम्बी रूपनगरके महाराजको सिंहासनसे उतारकर उक्त राज्यको अपने अधिकारमें कर लिया था। 'रूपनगरके महाराज सामन्तसिंह वृद्धावस्थाके कारणसे हो अथवा वैराग्यधर्मसे हो' जब कृष्णगढपतिने उनके राज्यको अपने अधिकारमें कर लिया तब वह यमुनाके किनारे श्रीवृन्दावनधाममें जाकर

(१) महाराष्ट्रनेता जय आप्पाजी सेंधिया।

(२) राजस्थानके प्रथमकांडमें कर्नल टाड साहबके मारवाडसे आनेका वृत्तान्त २९ अध्यायमें देखो।

(३) उर्दू तर्जुमेमे यों लिखा है कि सिन्धियेकी बखतरी (पाखरवाली) फौज राजपूतोंपर हमला करके पीछे आती थी उसपर दुश्मनोंकी फौजका भ्रम हुआ और वह प्रापसे* उडा दी गई।

* तोपोंका छर्रा।

आनंदसाहित हरिनामका कीर्तन करते हुए जीवनके शेष दिनोंको व्यतीत करने लगे। राज्यकी चिन्तासे छुटकारा पाकर श्रीभगवान्‌के चरणकमलोंमें कृतज्ञता प्रकाश करके उन्होंने अपने मनको पुण्यपुंजके संचयमें लगाया, परन्तु रूपनगरके महाराज सामन्तसिंहके पुत्रने पिताके उस वैराग्यभावसे दुःखित हो, कृष्णगढपतिके हाथसे अपने राज्यका उद्धार करनेके लिये पिताको बारम्बार उत्तेजित किया। सामन्तसिंह उस समय यहांतक संसारसे वासनाहीन हो गये थे कि उन्होंने पुत्रकी बात किंचित्‌मात्र भी न सुनी, वरन् 'विषयवासना अनेक प्रकारके पापोंकी जड है, इस कारण उसका चित्र अंकित करके पुत्रको राज्य प्राप्तिकी आशाके छोडनेकी सलाह दी। पुत्रने पिताके वचन सुन अत्यन्त दुःखित होकर कहा, "हे पिता! आप सम्पूर्ण विषय वासनाओंसे तृप्त होकर इस समय शान्त हो गये हो, इसीसे मुझे ऐसा उपदेश देते हो परन्तु मेरेलिये तो राज्यका शासन सब प्रकारसे अनुकूल है।" पिताके पाससे निराश हो रूपनगरके महाराज सामन्तसिंहके पुत्र पिताके राज्यका पुनर्वार उद्धार करनेके लिये सुसमयकी बाट देखने लगे। इसी समय विजयसिंहके साथ रामसिंहकी विवादानल प्रज्वलित हो गई। युवकने इस सुअवसरमें रामसिंहके साथ मिलकर उनके दूतके साथ महाराष्ट्रोंकी सहायताके लिये दक्षिणको गमन किया। महाराष्ट्रनेताने जिस प्रकारसे रामसिंहके स्वार्थ साधनको सुना था, इसी प्रकार रूपनगरपतिके युवक पुत्रकी कामनाको पूर्ण करनेमें भी सम्मति प्रकाशित की।

जिस समय मेरताके युद्धक्षेत्रमें विजयसिंहकी सेनाने महाराष्ट्रोंकी सेनाको छिन्नभिन्न करदिया; जिस समय महाराष्ट्रोंकी सेनाने अपने प्राण बचाकर भागनेका उपाय किया था, उस समय उस महाराष्ट्रनेता जय आप्पाने उक्त युवकको बुलाकर कहा; "रामसिंहके भाग्यके साथ आपका भी भाग्य जडित है। परन्तु रामसिंहका भाग्य अत्यन्त मंद देखता हूं। इस कारण अब हम यहांसे भागनेके पहले आपका और क्या उपकार कर सकते हैं?" युवक महाराष्ट्रनेताके यह वचन सुनकर एकबार ही आशाहीन हो गया। यद्यपि वह राजनीतिमें और युद्धविद्यामें अज्ञान था तथापि वह इस बातको भलीभाँतिसे जानता था कि स्वजातिका स्वभाव किस प्रकारका है, इस कारण जिस समय महाराष्ट्रनेता युद्धको भंग करनेके लिये उद्योग कर रहे थे, उस समय उसने एक विचित्र उपायसे अपने मनोरथको पूर्ण करनेका सुअवसर प्राप्त किया। युवकने देखा कि यदि प्रबल राठौरोंकी सेनाको किसी उपायसे भी रणसे शान्त नहीं कर सकेंगे तो किसी प्रकार सुभीता नहीं है, इस कारण उसने एक स्वजातीय अश्वारोहीको शत्रुओंके डेरोंमें अन्य मार्गसे भेज दिया।

जिस स्थानपर राठौरोंकी सेना प्रबल पराक्रमके साथ युद्ध कर रही थी वहां माईनोत सम्प्रदायके नेता सेनापति पदपर थे। उक्त अश्वारोहीने वहां बडी तीक्ष्णतासे जाकर सामन्तको बुलाकर कहा "अब क्यों वृथा युद्ध करते हो, विजयसिंह शत्रुओंकी गोलोंसे रणभूमिके अन्य पार्श्वमें हत हो गये हैं।" सामन्तने उस अश्वारोहीको

अपने पक्षका जानकर उसके कहनेपर विश्वासकर बिना खोजकिये रणको भंग कर दिया । दावानलकी समान विजयसिंहकी मृत्युका समाचार चारोंओर फैल गया राजपूत जातिके इतिहासमें ऐसी घटनाके हजारों प्रमाण होनेपर भी वह किसी प्रकारसे किसी समय भी उसका निर्णय नहीं कर सके । उस अश्वारोहीका वचन सत्य है अथवा मिथ्या, इस बातका किसीको भी कोई प्रमाण नहीं मिला और न किसीने जांच परताल करनेकी चेष्टा की, सभी प्राणोंके भयसे चारोंओरको भागने लगे । इस समय विजयसिंहने महावीरता प्रकाश करके इस प्रकारका युद्ध किया था कि कई मुहूर्तमें ही उनकी विजय होनेकी संभावना थी,–परन्तु उन्होंने सहसा देखा कि उनके अधीनमें स्थित समस्त सामन्त संग्रामभूमिको छोडकर चारोंओरको भाग रहे हैं। मारवाडके महाराज विजयसिंह जो एकलाख सेनाके साथ युद्ध कर रहे थे, वह इस समय समस्त सेनासे त्यागेजाकर महाविपत्तिमें पड गये। महाराष्ट्रोंने सरलतासे जय-लक्ष्मीका आलिंगन किया ! मारवाडपति विजयसिंहने जिस भावसे असहाय अवस्थामें रणक्षेत्रसे भागकर एक कृषककी सहायतासे अपने जीवनकी रक्षा की थी, उसे पाठक पहले ही पढचुके हैं ।

यदि सिंहासनसे पतित रूपनगरके महाराजके युवकपुत्र इस प्रकारसे अपनी चतुरता जालका विस्तार करके राठौरोंकी सेनाको वृथा भ्रममें न डालते तो महाराष्ट्रनेताओंको अवश्य ही रणक्षेत्र छोड देना पडता, और रामसिंहके भाग्यमें वह युद्ध ही निर्धारित हो जाता । अधिक क्या कहें, यद्यपि इस युद्धमें महाराष्ट्रगणोंने अधिक चतुरता करके जय प्राप्त की, परन्तु राठौर सामन्तोंने भागनेके पहले जिस भावसे वीरता प्रकाश की थी कविने उसकी अत्यन्त प्रशंसा[2] की है ।

महाराष्ट्रोंने धोखेबाजीसे ही युद्धमें जय प्राप्त की और राठौरोंकी सेना छिन्न भिन्न होकर चारों ओरको भाग गई; रामसिंहके भाग्यका सूर्य मेघसे मुक्त हो गया। एक २ करके अनेकों किलोंके ऊपर रामसिंहकी विजयपताका फहराने लगी। इसी समय महाराष्ट्रोंके तस्कर दलने पगपालकी समान मरुक्षेत्रमें आकर लूटमार करनी प्रारंभ कर दी । परन्तु महाराष्ट्रदलके प्रधान नेता जयआप्पा सहसा शोचनीय रूपसे मारे गये; अंतमें विपरीत काण्ड उपस्थित हो गया[3] महाराष्ट्रगण रामसिंहकी सहायता

---

(१) प्रथमकांडके २९ अध्यायमे यह वृत्तान्त वर्णन किया गया है,विजयविलास नामक ग्रन्थमें प्रकाशित हुआ है कि जिस जाट किसानने महाविपत्तिमें आश्रय देकर उनकी सहायता की थी विजयसिंहने उसको ५०० बीघे भूमि उसके वंशतकको भोगनेके लिये दे दी, आजतक उस किसानके वंशधर उस भूमिको भोगते हैं ।

(२) इस युद्धमें मारेहुए वीरोंमे चांपावत सम्प्रदायके नेता वीरसिंह, सशावतके नेतालालसिंह, और कूम्पावत सम्प्रदायके नेताने सबसे अधिक बल प्रकाश करके अपने जीवनका बलिदान किया ।

(३) प्रथमकांड २९ अध्याय ८०८ पृष्ठमें इस हत्याकांडका वर्णन किया गया है। विजय विलास ग्रन्थसे जाना जाता है कि जिस समय जयआप्पाने राठौरोंके किलेको घेर लिया था, उसी युद्धमें–

करनेके लिये आये थे। केवल धन प्राप्ति और मारवाडका लूटना ही उनका प्रधान उद्देश था, परन्तु इस समय जयआप्पाके मारेजानेसे महाराष्ट्रोंने संहारमूर्ति धारणकर उस हत्याकाण्डके बदला लेनेका पूरा विचार कर लिया। वे लोग रामसिंहके स्वार्थको छोडकर इस समय अपने स्वार्थसाधनके कार्य करने लगे। प्रबल युद्ध और वादानुवादके पीछे जयआप्पाके प्राणनाशके दंडस्वरूपमें विजयसिंहने अजमेरको एक बार ही महाराष्ट्रोंके करकमलमें समर्पण कर दिया, और मारवाडकी खास भूमि और सामन्तोंकी अधिकारी भूमिके ऊपर त्रैवार्षिक कर देनेके लिये वह राजी हुए। महाराष्ट्रगण उस हानिको पूर्ण करनेके लिये रामसिंहका पक्ष छोडकर अजमेरमें अपनी अतुलशक्तिको बढाने लगे।

अजमेरदेश मारवाडके राजमुकुटका उज्वल मणिस्वरूप था, महाराष्ट्रोंने जिस दिन उस मुकुटसे मणिको छीन लिया उसी दिनसे मारवाडकी स्वाधीनता चंचल हो गई। महातेजस्वी अजितकी प्राणहत्याके फलस्वरूप मारवाडने प्रायः एक शताब्दीतक इस प्रकारसे आत्मविग्रह, विजातीय आक्रमण, तथा अनेक प्रकारके अत्याचार और पीडाओंसे अत्यन्त कष्ट भोगा। जिस समय रूपनगरपतिकी चतुरतासे राठौरोंकी सेना रणको छोड करके भाग गई, उस समय राठौरकविने मनके दुःखसे दुःखी होकर उसका उल्लेख किया था।

याद घनेदिन आवसी, आपाबाला हल।
भागा तीनोभूपती, माल खजाना मेल॥

इसका अर्थ यह है कि समस्त धन रत्न और युद्धके अस्त्रोंको छोडकर तीनोंजने भूपति (विजयसिंह, बीकानेरपति और कृष्णगढपति) जयआप्पाके भयसे भयभीत होकर भाग गये, यह बात चिरकालतक हमको याद आती रहेगी।

सत्य कहना होगा, अवश्य ही स्वीकार करना होगा, रूपनगरपतिके युवक पुत्रकी चतुरतासे जिस युद्धमें महाराष्ट्रोंने सरलतासे जय प्राप्त की थी, राठौरोंकी सेनाद्वारा रणभंग होनेसे रूपनगरपतिके युवकपुत्र आनंदित हो गर्वमें भरकर जयआप्पाके निकट जाकर बोले, "आपने देखा कि मैंने इस स्थानपर खडे होकर अपने हाथपर सरसोंके बीजको बोए थे।" सरसोंका बीज जैसे थोडे समयसे वृक्ष हो जाता है वैसे ही अल्प समयमें यह चातुरी चल गई। जब युवकने रूपकसे यह बात

—वह मनुष्य महासकटमें पडा था, वहां वह रोगी हो गया। जयआपाको आरोग्य करनेके लिये महाराज विजयसिंहने अपने प्रधान वैद्य सूर्यमल्लको उसके डेरोंमें भेजकर उनको आरोग्य करनेके लिये कहा, राजवैद्यने कहा महाराज यदि आप कहो कि तुम जयआप्पाको जाकर विष दो तो हम यह आपकी आज्ञा नहीं मानेंगे, इसपर विजयसिंह बोले मैं वह आज्ञा नहीं दूंगा। आप यथाशक्ति उनकी चिकित्सा करके उनको आरोग्य कर दीजिये। चार दिनमें आराम होना हो तो दो दिनमें आराम करो, चिकित्सक जयआपाके पास गये, यद्यपि वह शत्रुपक्षके वैद्य थे तथापि जयआप्पाने इनसे चिकित्सा करानेमें कुछ आपत्ति न की। और वैद्यकी दवासे वह आरोग्य भी हुए।

कही तुरन्त ही जयआपाने कृष्णगढपतिके हाथसे रूपनगरका उद्धार करके उस सिंहासनपर उक्त युवकको बैठालनेके लिये इच्छा की तब युवकने कहा "यह करनेका प्रयोजन नहीं है, पहले हमारे प्रभु रामसिंहका स्वार्थ साधनकर उनको जोधपुरके सिंहासनपर बैठालिये तो हमारी आशा सरलतासे पूर्ण हो जायगी।" परन्तु कई दिनोंके पीछे जिस समय जयआप्पा मारे गये, उस समय महाराष्ट्रोंके डेरोंमें रामसिंहके अधीन जितने राजपूत थे सभीके ऊपर महाराष्ट्रोंको महासंदेह उपस्थित हुआ। और उक्त युवकके प्रति भी महाराष्ट्रोंने संदेह प्रकाश करनेमें त्रुटि न की। जयआप्पाकी मृत्यु होते ही डेरोंमें समस्त राजपूतोंको षड्यंत्रकारी कहकर महाराष्ट्रोंने सबके ऊपर आक्रमण किया। बिशेषकरके मेवाडके महाराणाके दूत रावत् कुंवरसिंह जो विजयसिंह के साथ संधिबंधन करानेके लिये महाराष्ट्रोंके डेरोंमें गये थे, वह भी इसी कारणसे मारे गये। ताऊसरमें जयआप्पाकी भस्मराशिके ऊपर एक स्मृति मंदिर बनाया गया। महात्मा टाड साहबने कहा है कि महाराष्ट्र और राठौर दोनों उस स्मृति मंदिरके प्रति अधिक सन्मान दिखाते हैं।

जो हो महाराष्ट्रोंके दलने राठौरोंके साथ सन्धिबंधन करके रामसिंहके पक्षको छोड दिया। रामसिंहके भाग्यमें फिर दुर्दिन आ गये। रामसिंहने पिताका सिंहासन पानेके लिये बाईस वर्षतक युद्ध किया था, परन्तु महाराष्ट्रोंके छोडते ही वह शीघ्र ही असहाय अवस्थामें विजयसिंहकी दयादृष्टिके अभिलाषी हुए। विजयसिंहने सांभरका जो अंश मारवाड राज्यके अधीनमें था वह अंश उनको दे दिया, जयपुरके महाराजने भी दया करके सांभरके जो अंश अपने अधिकारमें थे उन सबको तुरन्त ही रामसिंहको दे दिया। रामसिंह उस सांभरके अधिकार को पाकर अत्यन्त दीनभावसे रहने लगे। वह युवा अवस्थामें जैसे ऊधमी, क्रोधी और तेजस्वी थे भाग्यपतनके साथ ही साथ वह उसी भाँतिसे विनयशील और नम्र हो गये, उन्होंने संवत् १७७३ में जयपुरमें प्राण त्याग किये। कर्नल टाड साहबने कहा है, कि रामसिंहका शरीर वीरोंके समान बलवान था, तथा इनकी मूर्ति सौम्य थी। वह अपराधियोंके ऊपर अत्यन्त दया प्रकाश करते थे। उनकी बुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण थी। और उनकी मानसिक उत्कर्षता तो विशेषरूपसे दृष्टि आती थी। परन्तु एकमात्र अत्यन्त उग्रतेज और कठिन स्वभावके लिये ही यह मरुक्षेत्रके सामन्तोंके अत्यन्त अप्रियपात्र हो गये थे। और इसी लिये वह सिंहासनसे भ्रष्ट होकर, निकाले जाकर जन्मभरतक अनेक प्रकारके कष्ट भोगते रहे। राठौरकविने विजयसिंहकी अपेक्षा रामसिंहको अत्यन्त साहसी और वीर कीर्तन किया है। कविने कहा है कि विजयसिंह हजारों सेना साथ लेकर भी युद्धमें विजय न पासके थे। परन्तु रामसिंहने बहुत थोडी सेना लेकर भी युद्धमें विजय प्राप्त की थी। कविने एक एक विषयपर रामसिंहको अजितके समान वर्णन किया है। रामसिंहके उग्र और तेजस्वी होनेसे

(१) ताऊसर एक साधारण गाँव नागौर परगनेमें है।

समस्त मारवाडके सामन्त इनसे भयभीत रहते थे। जिन सामन्तोंने मारवाडके महाराजसे कभी भय नहीं किया था, वे लोग भी रामसिंहके अभिषेकके पीछे अति शंकित रहे। यह अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि रामसिंहके अभिषेकके समयसे मारवाडके भाग्यमें घोर कालरात्रि दिखाई दी। रामसिंहने ही कठिन महाराष्ट्रोंके दलको मरुक्षेत्रमें लाकर मारवाडके विध्वंसका जो बीज बोया था, इसका कहना बाहुल्यमात्र है।

समस्त आशा भरोसेसे हीन होकर रामसिंहने निर्वासित अवस्थामें जयपुरमें प्राण त्याग किये। तब मारवाडके महाराज विजयसिंह एकबार ही निश्चिन्त होकर सुखसहित राज्यशासन करने लगे। पाठक ऐसा विचार न करें कि रामसिंहकी मृत्युसे मरुक्षेत्रकी हानि लाभ कुछ भी नहीं हुई। रामसिंहकी अपेक्षा अत्यन्त प्रबल शत्रु इस समय मारवाडको विध्वंसकर चारों ओर भयंकर अग्नि प्रज्वलित करके अजितके प्राणनाशका फल प्रकाश करने लगे। महाराष्ट्रगण अजमेरपर अधिकार करके, मारवाडसे चौथका संग्रह करके और रजवाडेके प्रत्येक प्रान्तमें प्रबल प्रभुताका विस्तार करके एक २ देशको लूटकर धनका संग्रह करते २ मतवाले हो गये। उन्होंने राजपूतोंमें विवादानल प्रज्वलित कर दी। किसी न किसी पक्षका अवलम्बन करके उन्होंने अपनी आशाको सफल कर लिया। इस विजातीय अत्याचारसे मारवाडके चारों ओर घोर अशान्ति छा गई। उस अराजकता और स्वेच्छाचारसे प्रजा कृषिक्षेत्रके कर्षणकार्यमें नियुक्त न रहकर प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगी। मरुक्षेत्रके प्रत्येक सामन्त इस समय महाराज विजयसिंहको अत्यन्त हीनबल और साहसहीन देखकर अपने २ अधिकारी देशोंमें असीम शक्तिका विस्तार कर अपनी इच्छासे अत्याचारकी अग्निको प्रज्वलित करने लगे। उनकी इच्छासे ही अनेक स्थानोंमें वाणिज्य द्रव्यके ऊपर दूना महसूल हो गया और वे स्थान २ पर समस्त वाणिज्य द्रव्योंको लूटने लगे। राज्यमें वाणिज्य एकबार ही बंद होगया। अपने दुर्भाग्यसे ही विजयसिंह इस समय इतने हीनबल होगये, कि सामन्त उनसे कुछ भी भय नहीं खाते थे। यहांतक कि अपने महलमें भी विजयसिंहका प्रभुत्व मानों एकबार ही प्रभाहीन हो गया।

मारवाडके चारोंओर राजपूत राज्यमें अन्य सामन्तोंकी अपेक्षा मारवाडके सामन्त स्वाधीनभावसे अधिक प्रभुत्व, शक्ति और सामर्थ्यको चलाते आये हैं। उनको इस सामर्थ्यके अधिकारका प्रधान कारण यह है कि उनके पूर्वपुरुषा इसी मरुक्षेत्रमें अपने २ बाहुबलसे देशोंपर अधिकार कर गये हैं। एकमात्र महाराजकी कृपासे ही वृत्तिस्वरूपमें देशोंको न पाकर, उन राजवंशवालोंने अनेक विस्तारित और मरुक्षेत्रके अनेक स्थानोंमें वहांके निवासियोंको परास्त कर और भगाकर अपनी २ शासनशक्तिको स्थापित किया, इस कारण मारवाडमें जयपुरकी अपेक्षा इनकी स्वाधीनता अधिक है। महाराज अजित जिस समय अज्ञान अवस्थामें थे उस समय सामन्तोंने सब प्रकारसे स्वाधीनभावसे रहकर अजितके दृढपक्षको अवलम्बन किया था। मारवाडके सामन्त प्रबल सामर्थ्यवान थे, इसीसे विजयसिंहके शासनके आरम्भ

समयमें वह अपनी इच्छानुसार कार्य करते थे । इस समय और भी एक कारणसे सामन्तोंके साथ विजयसिंहका झगडा हो गया। समयके गुणसे ही यह कारण उपस्थित हुआ था;इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है।

पोकरणके असीम साहसी चांपावत् सम्प्रदायकी मुख्य भूमि थी। पोकरणके सामन्त पुत्रहीन अवस्थामें मर गये, वह मृत्युके पहले महाराज अजितके दूसरे पुत्र देवीसिंहको गोदलेनेके लिये अपनी स्त्रीसे कह गये थे। किस प्रकारकी रीतिसे रजवाडेमें दत्तक पुत्र लिया जाता है,इसको हमारे पाठक भलीभांतिसे जानते हैं पोकरणके सामन्त मृत्युके समय अजितके पुत्र देवीसिंहको क्यों दत्तकरूपसे गोद लेनेके लिये कह गये,उसके सम्बन्धमें महात्मा टाड साहबने अनुमान किया है कि अजितके अनेक पुत्र थे इस कारण उनमेंसे एकको गोद लेनेमें राजवंशका ही सुभीता होगा, जब वह राजकुमार एक देशका सामन्त हो जायगा, तब सभी आनन्दसहित रह सकेंगे, यही विचारकर उन्होंने यह आज्ञा दी थी । रजवाडेकी चिरप्रचलित रीतिके अनुसार जिस समय पुत्रके गोद लेनेपर मृतक सामन्तकी पगडी उसके शिरपर रक्खी जाती है उसी समयसे वह अपने जन्मदाता पिताको भूल जाता है । जिस सामन्तके आसनपर स्थित होता है उसीको अपना पिता मानता है। इस कारण अजितनन्दन देवीसिंह जिस दिन पोकरणके सामन्तके यहां दत्तक हुए, उसी दिनसे राजपुत्रके समस्त अधिकारोंसे रहित होनेपर उनके हृदयमें एक विचित्र वासना उत्पन्न होने लगी। यदि देवीसिंहको पोकरणके सामन्त गोद न लेते तो वह किसी समय भी मारवाडके सिंहासनपर बैठनेके लिये एक मुहूर्तको भी आशा वा चिन्ता नहीं कर सकते थे, परन्तु जब उन्होंने मरुक्षेत्रके एक प्रबल सामर्थ्यशाली सामन्तके पदको पाकर अपने पितृहन्ता दोनों भ्राता और उनके उत्तराधिकारियोंको पिताका सिंहासन लेनेके लिये निरन्तर युद्ध करते हुए देखा कि वह पिताके सिंहासनकी ओर कातर दृष्टिसे देख रहे हैं, तब उन्होंने भी राजदरबारमें अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार करके महाराज विजयसिंहको हस्तगत करनेकी चेष्टा की। महात्मा टाडसाहबने इस स्थानपर एक विचित्र मत प्रकाश किया है, उन्होंने कहा है, "यदि मारवाडके अधीश्वरने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये हों तो स्वाधीन ईडरराज्यके

(१) यह बात झूठी है देवीसिंह न महाराज अजितसिंहका बेटा था और न पोकरणमें दत्तक हुआ। वह पोकरणके ठाकुरका बेटा था।

(२) ईडर राज्य सियाजीके भ्राताके द्वारा अधिकृत किया गया था। पाठकोंको यह स्मरण होगा। ईडर राज मारवाडके राजके अत्यन्त निकट जातिवाले होकर मारवाडपतिके सिंहासनपर बैठनेके अधिकारी * हैं।

* यह नोट भूलसे लिखा गया है क्योंकि न तो ईडर सियाजीके भाई द्वारा प्राप्त किया गया और न सियाजीके सम्बन्धसे ईडरवाले मारवाडपतिके सिंहासनपर बैठनेके अधिकारी हैं। सही बात यह है कि पहले ईडरको सियाजीके दूसरे बेटे सोनगने जीता था,परन्तु उसकी औलादसे ईडर छूट गया था, वह महाराज अभयसिंहने बादशाहसे लेकर अपने भाई आनन्दसिंहको दे दिया था, इसी निकटस्थ सम्बन्धसे आनन्दसिंहके वंशज जोधपुरका राज्य पानेके अधिकारी थे।

अधीश्वरका पुत्र मारवाडके सिंहासनपर बैठनेका अधिकारी है । ईडरके महाराजके यदि एक भी पुत्र उत्पन्न हो जाय तो वह एक पुत्र ही मारवाडके साथ ईडरराज्यमें मिलकर मारवाडका राज्य करेगा और यदि मारवाडके महाराजका कोई पुत्र किसी प्रकारके अपराधसे भी अपराधी न हो पर वह अन्य सामन्तके द्वारा दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया जायगा तो उसका सिंहासनके ऊपर कोई अधिकार नहीं होगा । यह नियम विचित्र है ।'' इस बातको हम कह सकते हैं कि कर्नल टाड साहबके मतके अनुसार दत्तकपुत्र यदि फिर जन्मदाता पिताके स्वत्वका अधिकारी हो जाय तो हमारे शास्त्रीय विधानके मतसे दत्तक ग्रहणकी रीति अव्याहत नहीं हो सकती ।

चांपावत्के नेता देवीसिंह, मारवाड राज्यमें मारवाडपतिके ऊपर अधिकारकी रक्षा करनेके अभिलाषी हो गये । 'जिससे मरुक्षेत्रके अन्य किसी सम्प्रदायके नेता उनके साथ प्रतियोगिता दिखाकर वा उनपर न्यायकी सामर्थ्य न चला सकें' । चतुर देवीसिंह इस लिये आहवाके सामन्त और चांपावत् सम्प्रदायकी अन्यान्य शाखाओंको एकत्रित करके राज्यमें अतुल सामर्थ्य उपार्जन करने लगे । राजदरबारमें प्रभुत्वके कारण देवीसिंहने अपनी सम्प्रदायमेंसे एक प्रबल बलशाली सेनाकी सृष्टि करके मारवाडपति विजयसिंहके शरीरकी रक्षाके लिये आधी सेनाको किलेमें रक्खा और आधीको नगरमें रख दिया । इसी समयमें मारवाडके चारों ओर अराजकता और पर्वतियोंके द्वारा प्रजाके ऊपर अत्याचार, तथा राठौरके सामन्तोंको स्वेच्छाचारी देखकर विजयसिंहने अत्यन्त व्यथित हृदयसे शोक प्रकाशित किया, पोकरणपति देवीसिंहने कहा,-"हे महाराज ! मारवाडके लिये आप इतनी चिन्ता क्यों करते हैं, आप यह निश्चय जानिये कि मेरी तलवारके म्यानके भीतर ही मारवाडका सिंहासन है'' ।

सामन्तोंको तथा विशेष करके देवीसिंहको प्रबल सामर्थ्य चलाते, तथा मारवाडके चारोंओर अशान्तिका विस्तार होतेहुए देखकर राजा विजयसिंह अपने मन ही मनमें महा दुःखित होने लगे । उद्धतस्वभाव सामन्तोंका दमन और अपनी प्रबल शक्तिका विस्तार यह उनको एकमात्र कर्त्तव्य हो गया; परन्तु उन्होंने ऐसा कोई उपाय न देखा कि जिससे वह मनोरथको सिद्ध कर सकते । पाठकोंको अवश्य ही विदित होगा, कि रजवाडेके राजकुमारोंकी धात्रियोंको देशमें अधिक सम्मान और पृथ्वी तथा बहुतसा धन दिया जाता था । राजकुमार भी उस धात्रीका माताके समान सम्मान करते थे । उस धात्रीके गर्भसे उत्पन्नहुए पुत्र राजकुमारोंके भ्राता अर्थात् धाभाई नामसे विख्यात होते थे । इन धाभाइयोंने अवस्थाके आते ही राज्यमें ऊँचे पदपर अधिकार कर लिया । महाराज बिजयसिंहकी धात्रीका एक पुत्र था उसका नाम जग्गू था । इसने विजयसिंहका धाभाई होकर राज्यमें अधिक सम्मान पाया । यह जग्गू विशेष सावधान और दूरदर्शी मनुष्य था, उसने

(१) ऐसा नियम मारवाडमें नहीं है और न कभी हुआ ।

विजयसिंहको भी अपने उपदेश और सलाहोंसे सावधान और दूरदर्शी कर दिया। विजयसिंह जग्गूमें जिस भाँतिकी श्रद्धा करते थे, उसी प्रकारसे उसको एकमात्र अपना हितैषी जान संकटके समयमें उसीकी आज्ञाके अनुसार कार्य्य करते थे। विजयसिंहने जग्गूसे धीरे २ अपनी शोचनीय अवस्थाका समस्त वृत्तान्त कह दिया, यह सुनकर जग्गूने उनको भलीभाँतिसे धीरज बँधाया। चतुर जग्गूने प्रबल सामन्तमंडलीके साथ प्रगटमें मिलकर उनको अवलम्बित नीति और कार्यमें दृढ समर्थन करके उन्हें धोखा दिया, कोई भी किसी प्रकारसे न जान सका कि जग्गूने उनकी शक्तिको घटानेके लिये भीतर ही भीतर कैसा कांड उपस्थित किया है। बुद्धिमान् जग्गू महाराज विजयसिंहके प्रताप, प्रभुत्वका विस्तार तथा उसके साथ ही साथ सामन्तोंकी सामर्थ्यको लोप करनेके लिये एक नवीन अनुष्ठान करने लगा। रजवाडेमें जो रीति किसी समयमें भी प्रचलित नहीं थी, जिसका अनुष्ठान सामन्त शासन रीतिके सम्पूर्ण विपरीत था, जग्गूने उसीके अनुष्ठानसे अपने उद्देशको पूर्ण करनेका उद्योग किया।

विना किसी प्रबळ युद्धके हुए अन्य समयमें अफीमका सेवन करके राजपूतलोग केवल आलस्यके वश होकर समय व्यतीत करते थे। विशेष करके राजपूतोंकी जातीयशक्ति इस समय एक बार ही विपरीत हो गई थी। जग्गूने स्वजातिको अत्यन्त आलसी देखकर सामन्तोंके निकट यह प्रस्ताव किया, कि "राजधानी की रक्षाके लिये एक वेतनभोगी सेना रक्खी जाय, वही सब आज्ञाओंका पालन करै, आप इच्छानुसार रह सकते हैं, तथा आपकी सेनाको वृथा कार्य करना नहीं होगा।" आलसी सामन्त इस बातको न समझे कि चतुर जग्गू हमारी ही सामर्थ्य की जडमें कुल्हाडी मारनेके लिये नवीन सेनाके तैयार करनेको उद्यत हुआ है। सामन्तोंने सरलस्वभावसे जग्गूके इस प्रस्तावमें अपनी सम्मति दे दी। विशेष करके प्रकाशमें जग्गूको इस प्रकारकी रीतिसे कार्य करते हुए देखकर सामन्तोंने विचारा कि यह हमारे हितका करनेवाला है, इसीसे नविन सेनाको तैयार करनेके लिये कहता है। जग्गूने सामन्तोंको यहांतक अपने हस्तगत कर लिया था कि उसने नवीन सेनाके वेतनको भी इन्हींसे लेना स्वीकार कराया। इस प्रकारसे जग्गूने अपनी क्रूर राजनीतिके जालका विस्तार कर सिन्धुदेशके कईसौ मनुष्योंको अपनी उस नविन सेनामें रख-लिया। मरुक्षेत्रमें राठौर शासनमें मासिक वेतनभोगी विजातीय सेनाकी यही प्रथम सृष्टि हुई थी। हम यह नहीं कहेंगे कि राजपूत राजा अपने अधीनमें स्थित सामन्तोंको सेनाके अतिरिक्त विदेशीय और किसी सेनाको नहीं रखते थे; रजवाडेके सभी राज्योंमें विदेशीय राजपूत ही सेनारूपसे नियत होते आये थे, परन्तु इनको किसी समय भी मासिक वेतन नहीं देनी पडी थी, वेतनके बदलेमें उनको भूवृत्ति दी जाती थी। जग्गूने जिस नवीन सिंधी सेनाकी सृष्टि की यह सभी पैदल थी। यह पश्चिमी युद्धकी रीतिके अनुसार बहुतसी शिक्षा पाई हुई थी। महात्मा टाड साहबने कहा है कि जिस कारणसे मारवाडमें

इस वेतनभोगी सेनाकी सृष्टि हुई थी, उदयपुर और जयपुरके दोनो अधीश्वरोंने भी उसी कारणसे इस प्रकारकी वेतनभोगी सेनाकी सृष्टि की। इस वेतनभोगी सेनाकी सृष्टि होनेसे समस्त राजस्थानसे सामन्त शासनकी मूल नीति एकबार ही छोड दी गई।

जग्गूने जिस नवीन सेनाकी सृष्टि की, उनमें राजपूत, सिन्धी अरब और रुहेले गणोंके दलके दल नियत हुए। वह सेना सामन्तोंके अधीनमें न रहकर मारवाडके महाराजकी आज्ञामें रहने लगी। मारवाडके महाराज उन शासनसंक्रान्त राजपुरुषोंकी आज्ञा पालनके लिये नियुक्त करके उन राजपुरुषोंके द्वारा उस नवीन सेनादलके ऊपर आज्ञा चलानेमें प्रवृत्त हुए। थोडे ही समयमें उस नवीन सेनाका बल ऐसा प्रबल हो गया कि सामन्त मण्डली उनकी उपस्थितिमें अपनी सामर्थ्य और शक्तिका लोप होता-हुआ देखकर महा असंतुष्ट हो अपना अमंगल विचारने लगी। इसी कारण उनका उस नवीन सेनादलके साथ नित्य झगडा होने लगा। महात्मा टाड साहब लिखते हैं कि, "जिस उद्देश्यके वश होकर विजयसिंहके शासन समयमें मारवाडमें वेतनभोगी सेना रक्खी गई थी; उसी उद्देश्यके साधनसे अर्थात् प्रबल प्रतापशाली सामन्तोंको दमन करने और आवश्यकता पडनेपर स्थान २ पर सामन्तोंकी सामर्थ्यको एकबार ही लुप्त करनेके लिये मेवाड जैपुर और कोटा इत्यादि राज्योंमें भी इसी भांति वेतनभोगी सेना रक्खी गई थी, परन्तु एकमात्र कोटेके अतिरिक्त अन्य किसी राजपूत राज्यमें इस वेतनभोगी सेनाके द्वारा कोई उद्देश्य सिद्ध नहीं हुआ। एकमात्र कोटेके महाराजने ही इस वेतनभोगी शिक्षित सेनाको रखकर अपने उद्देश्यको पूर्ण कर लिया।"

राजा विजसिंहके धाभाईने सातसौ विदेशी सैनिकोंको रख लिया; और सामन्तोंसे ही उनका वेतन संग्रह कर पहले उस सेनाको शासनकर्ताके अधीनमें नियुक्त रखकर शेषमें क्रम २ से वह उसको किलेकी रक्षामें रखने लगा। उस समय भी सामन्त यह न जानसके कि जग्गूने किस उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिये इस नवीन सेनाकी सृष्टि की है। मारवाडके महाराज विजयसिंह इस सेनाकी सहायतासे पुष्ट होकर अपने धाभाई और दिवान फतेचन्दके साथ सलाह करके मरुक्षेत्रके चारोंओर फैलीहुई भयंकर अराजकता और अत्याचारको दूर करके राज्यमें शान्तिकी स्थापना करनेके लिये तैयार हुए। परन्तु महाराजका खजाना इस समय इतना खाली हो गया था कि उससे शान्ति स्थापन और पहाडियोंको दमन करनेके लिये आवश्यकता होनेपर खर्चका चलना कठिन हो गया। तथापि विजयसिंहके मंगलसाधनके लिये धाभाई जग्गूने इतना यत्न किया था कि वह उस दुःसमयमें भी किसी उपायसे उस प्रयोजनीय धनको संग्रह करनेमें शान्त न हो सके। जग्गूकी माता विजयसिंहकी धात्री थी, इसी कारण उसको बख्तसिंहके पाससे पाँचहजार रुपये मिला करते थे। जग्गूने विजयसिंहके लिये अपनी मातासे उस धनको मांगा और साथमें यह भी कह दिया कि यदि तू रुपये न देगी तो मैं आत्मघात करके मर जाऊंगा। इस प्रकारका भय दिखानेपर माताने तुरन्त ही पुत्रके प्राणकी रक्षाके लिये पचासहजार

रुपये दे दिये । जग्गूने उस धनको पाकर राज्यमें शान्ति स्थापन और पहाडियोंको दमन करनेके लिये सम्पूर्ण तैयारी करदी । दुर्भाग्यका विषय है कि इस समय मारवाडमें घोडोंका यहांतक लाप हुआ कि जग्गूकी नवीन सेनाके लिये बहुतसे घोडोंकी आवश्यकता थी परन्तु घोडोंका मिलना कठिन हो गया तब यह सातसौ सैनिकोंको गाडियोंपर चडाकर नागौर राज्यमें ले आया । अश्वारोही सेनादलको शकटों पर चढकर जाना अत्यन्त अप्रीतिकारक था । परन्तु नीतिज्ञ जग्गूकी आज्ञासे उन्होंने घोडोंके न मिलनेसे नागौरतक उसी सवारीपर चढकर जानेमें कुछ उजुर न किया । जग्गू जिस समय वेतनभोगी सेनाको नागौरमें ले गया उस समय सामन्तोंने इसका कारण पूछा, इसने उसी समय उत्तर दिया कि पहाडियोंको दमन करनेके लिये इस सेनाको लियेजाते हैं जग्गूके ऊपर सामन्तोंका उस समय भी पूर्ण विश्वास था, इस कारण वह इसके वचनको सत्य मानकर मौन हो गये । इधर जग्गूने उस सेनाको नागौरमें लाकर वहांके किलेके ऊपर जो कईसौ तोपें रक्खी हुई थीं उनको उतारकर शीघ्रतासे पहाडियोंको दमन करनेके लिये गमन किया । अत्याचारी पर्वती इस सेनादलसे शीघ्र ही परास्त हो गये । उनको उचित दंड देकर विजयसे गर्वित हुए जग्गूने सेनासहित आ थलनगरी नामक स्थानके किलेपर धावा किया । उस किलेपर आक्रमण करते ही सामन्त समझ गये कि जग्गूने इतने दिनोंतक किस प्रकारकी चातुरी जालका विस्तार करके हमारे नेत्रोंमें धूल डालकर हमारा ही सर्वनाश करनेके लिये इस नवीन सेनाकी सृष्टि की है । उस किलेपर अधिकार करते ही मरुक्षेत्रके समस्त सामन्त अपनी भावी विपत्तिके लक्षण देखकर भयभीत हो अपने स्वार्थ, सामर्थ्य और शक्तिको पहलेकी समान अक्षतभावसे रखनेके लिये, जोधपुर राजधानीसे दशकोस पूर्वको, बीसलपुरनामक स्थानमें इकट्ठे हुए और विजयसिंहके विरुद्ध सम्मति करने लगे ।

सामन्त मण्डलीको एकत्रित होते देखकर विजयसिंह अत्यन्त भयभीत हुए । धाभाई जग्गूने जिस नीतिका अवलम्बन किया है, इससे हमारा मनोरथ पूर्ण न होगा, वरन् इसके विपरीत फल होनेके लक्षण दिखाई दे रहे हैं, यह विचारकर वह अत्यन्त ही व्याकुल हो गये, और सामन्तोंके क्रोधको शांत करनेका विचार करने लगे। खीची जातीय गोधर्ननामक एक विदेशीय राजपूतवीर अपने बाहुबल तथा वीरता और नीतिज्ञतासे मृतक महाराज बख्तसिंहका परम प्रियपात्र हो गया था। बख्तसिंहका वह अत्यन्त विश्वासी था। अनुगत और प्रबल बलशाली वीरको देखकर बख्तसिंह मृत्युके समय उसको विजयसिंहके अधीनमें रहनेके लिये अंतिम आज्ञा दे गये थ, उस बुद्धिमान गोर्धनको बुलाकर महाराज विजयसिंहने पूछा कि इस महाविपत्तिके समय अब क्या करना उचित है? गोर्धन सामन्तोंके चरित्र और उनके मनके अभिप्रायको भलीभाँतिसे जानता था, अतःवह यथार्थ राजपूतोंके समान विजयसिंहसे बोला " कि सामन्तोंके हृदयमें क्रोधानलका प्रज्ज्वलित

---

(१) इसको विदेशीय गलत लिखा है यह मारवाडका रहनेवाला था ।

करना किसी प्रकार भी उचित नहीं है, उनका पदोचित सन्मान करके और न्यायमतसे सामर्थ्य देकर उनके साथ सद्भावसे रहना तथा राज्यशासन करना यही यथार्थ राजनीति है, नहीं तो राज्यकी भुजा स्वरूप उन सामन्तोंको असन्तुष्ट कर उनका न्यायसामर्थ्यके लोप करनेसे घोर अनिष्टकी संभावना है। आप सेनाको साथ न लेकर उन सामन्तोंके समितिस्थानमें जाकर उनको मधुर वचनोंसे संतुष्ट करनेकी चेष्टा कीजिये। जब यह आपके अनुगत रहेंगे तब राज्यका कोई अमंगल न हो सकेगा। गोर्धन विजयसिंहको यह सलाह देकर महाराजको साथ ले शीघ्र ही उन क्रोधित सामन्तोंके डेरोंमें गये।

तरुण अरुणोदयके साथ ही साथ वीरश्रेष्ठ गोर्धन उन सामन्तोंके डेरोंमें जा पहुँचा। इसने शीघ्र ही उस सामन्त समितिमें जाकर कहा "आपके महाराज प्रभु विजयसिंह आपकी राजभक्तिके ऊपर पूर्ण विश्वास स्थापित कर आपसे मिलनेके लिये आये हैं; इस कारण आप भी आगे बढकर महाराजका यथोचित सन्मान कर उनको अभिनन्दन करनेके लिये चलिये। गोर्धनके इस प्रकार विनीतिभावसे बारम्बार अनुरोध करनेपर भी कोई फल दिखाई न दिया। सामन्त विजयसिंहसे अधिक रुष्ट हो गये थे; इस कारण उनके स्वार्थ साधनके लिये स्वभावसिद्ध राजभक्तिको प्रकाश करनेके लिये वे एक पग भी आगे न बढे गोर्धनने कार्यमें सफलता न देखी तब अपने डेरोंमें आकर सुना कि महाराज विजयसिंह उसकी सलाहसे इकले आरहे हैं, इस कारण वह तुरन्त ही उन सामन्तोंसे तिरस्कार किये हुए महाराज विजयसिंहको मरुक्षेत्रके सबमें प्रधान सामन्त आहवापतिके डेरोंमें ले गया तुरन्त ही और भी सब सामन्त इसके डेरोंमें आये। सबके इकट्ठा होते ही महाराज विजयसिंहने सबसे पहले यह प्रश्न किया, "सामन्तोंने किस कारणसे हमें छोड दिया है?"

चांपावत् सम्प्रदायके नेताने तुरन्त ही उत्तर दिया कि "महाराज! हमलोग अनेक सम्प्रदायोंमें हैं पर भिन्न २ देहधारी होकर भी हमारा मस्तक एक ही है; यदि हमारा कोई दूसरा मस्तक होता तो उसको आपके अधीनमें अर्पण करते।" इस उत्तरके पीछे बराबर तर्कवितर्क होता रहा। इस बातसे विजयसिंहका अभिप्राय पूर्ण होना कठिन हो गया। अन्तमें दीर्घ तर्कवाद और आन्दोलनके पीछे व्याकुल होकर महाराज विजयसिंहने कहा, किस प्रकारकी व्यवस्था करनेसे सामन्तमंडली पहलेके समान हमारी अनुगतता स्वीकार कर राज्यमें सुशासन और शांति स्थापन करनेमें सम्मत हो सकेगी, मैं इसके जाननेकी इच्छा करता हूं। राजाके इस प्रश्नपर सामन्तोंने उसी समय तीन प्रस्ताव उपस्थित किये,-

१--धाभाईके अधीनमें जो वेतनभोगी सेना है उसके अस्त्र छीन लिये जांय, तथा उसे सर्वदाके लिये बिदा देनी होगी।

२-राजाको पट्टा बही हमारे हाथमें देनी होगी।

३--किलेके बदले नगरमें राजकार्य किये जाँयगे।

महाराज विजयसिंहने सामन्तोंके इन तीनों प्रस्तावोंको सुनकर विचारा कि सामन्त

जिस भावसे उत्तेजित हुए हैं और सबने एक सम्मतिमें बँधकर जिस भावसे भावी अनिष्ट साधनके पूर्व आभासको प्रकाश किया है, इससे इन तीनों प्रस्तावोंमें यदि अपनी सम्मति प्रगट नहीं करता हूं तो अवश्य ही राज्यमें आत्मविग्रह उपस्थित हो जायगा, मारवाड विध्वंस हो जायगा, सिंहासन चंचल हो उठेगा, अशान्तिका स्रोत प्रबल वेगसे बहने लगेगा। विशेष विचार करनेके पीछे महाराज विजयसिंहने सबसे पहले प्रस्तावके कार्यको पूरण कर दिया। धाभाईके अधीनकी सेना जो प्रबल हो गई थी इसीसे सामन्त अधिक क्रोधित हुए थे, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही सेनाको बिदा देनेकी आज्ञा दी; सामन्तोंके पहले और तीसरे प्रस्तावमें महाराजको कुछ भी आश्चर्य न हुआ और न वह कुछ असंतुष्ट हुए; परन्तु दूसरे प्रस्तावसे राज्यशक्तिको घटता हुआ देखकर वह अत्यन्त ही खेदित हुए। भूवृत्तिका देना अथवा भूस्वामीके ऊपर अधिकारका चलाना राजाकी प्रधान शक्ति है, सामन्तोंने उसी शक्तिकी जडमें कुठाराघात किया है इससे विजयसिंह अत्यन्त ही व्यथित हुए। परन्तु क्रोधित सामन्तोंको संतुष्ट करनेके लिये अन्य उपाय न देखकर उसमें भी उन्होंने अपनी सम्मति दी। इस प्रकारसे सामन्त मण्डलीके नेता अपने स्वार्थकी रक्षा कर अपनी पूर्व सामर्थ्यको पाकर संतुष्ट चित्तसे अपने २ निवासस्थानको चले गये, परन्तु चांपावत् सम्प्रदायके नेता अपनी सेना लेकर पहलेके समान विजयसिंह और स्वदेशके ऊपर पूर्ण सामर्थ्य चलानेके लिये अधीश्वरोंके साथ राजधानी जोधपुरमें आये।

गोवर्धनकी सलाहसे इस भाँति क्रोधित हुए सामन्त उद्धत भावको छोडकर पहलेके समान चुपचाप हुए। इसके कुछ दिन पीछे महाराज विजयसिंहके गुरू आत्मारामको संघातिकपीडा उपस्थित हो गई। विजयसिंह अत्यन्त गुप्तभावसे मृत्युके मुखमें पतित गुरुदेवके निकट गये, गुरुदेवने मृत्युके समय विजयसिंहको अभय देकर कहा "महाराज! कुछ चिन्ता न कीजिये, मेरे प्राणत्यागनेके साथ ही साथ आपके सम्पूर्ण शत्रुओंका जीवन नष्ट हो जायगा"। गुरुदेवके प्राणत्याग करते ही धाभाई जग्गूने विजयसिंहके निकट गुरुकी उस उक्तिके अर्थकी व्याख्या कर दी। धाभाईकी इस व्याख्याको एकमात्र विजयसिंहने ही जाना, और किसीने किञ्चित् भी न पाया। इन पारत्रिक मंगल विधाता गुरुदेवके स्वर्ग चल जानेसे महाराज विजयसिंह प्रकाशमें विषम शोक प्रकाश करने लगे, और गुरुके प्रति अचल भक्ति दिखानेके लिये समस्त सामन्तोंमें यह प्रचार कर दिया कि, राजधानीके किलेमें गुरुदेवकी प्रेत क्रिया होगी। इस आज्ञाके प्रचारित होते ही राजधानी और राजाके अन्तःपुरकी अन्यान्य स्त्रियें गुरुदेवके प्रति भक्ति प्रकाश करनेका बहाना करके बहुतसी सेना और सहचरोंसे युक्त हो उस किले में आती हुई दिखाई दीं। वह सेनादल और सहचरगण मानो उन राजबालाओंके शरीरकी रक्षा करनेके लिये आये। पहले ही विजयसिंहकी आज्ञासे सामन्तोंके निकट आदमी भेजे गये थे। इस कारण वह भी राजगुरू आत्मारामकी मृतक आत्माके प्रति सम्मान दिखानेके लिये किलेमें आने लगे। वह उस समय भूलसे भी यह नहीं जान सके थे कि

गुरुदेव मृत्युके समय क्या आज्ञा दे गये हैं; धाभाई जग्गूने उस आज्ञाकी क्या व्याख्या का है और महाराज विजयसिंहने किस अभिप्रायसे किलके भीतर गुरुके क्रिया कर्म होनेकी आज्ञा दी है, इस कारण वह लोग निर्भय होकर आने लगे। इस शोकके समयमें नरेश्वर किसी प्रकारके चातुरी जाल तथा षड्यन्त्रका विस्तार करके सामन्तोंका कोई अनिष्ट करेंगे इस सम्बन्धमें कोई भी सन्देह न कर सका; और यदि किसीके मनम यह सन्देह उपस्थित भी हुआ हो तो उसे कहनेका साहस न हुआ।

यह तो हमारे पाठकोंको विदित ही है कि जोधपुरका किला पर्वतोंके ऊपर स्थापित था। उन पहाडोंको खोदकर किलेपर जानेके लिये सीढियां बनाई गई थीं। सामन्तोंमें अग्रणीय देवीसिंह अन्यान्य सामन्तोंके साथ जैसे ही उन सीढियोंपर चढे कि वैसे ही सहसा उनके हृदयमें अमंगलकी चिन्ता उदय हुई। इन्होंने कहा,—"आज मैं सुलक्षण नहीं देखता हूं!" पासके सभी सामन्त धीरज बँधातेहुए बोले—"आप मरुक्षेत्रके स्तंभस्वरूप हैं, ऐसा किसमें साहस है जो आपकी ओरको आंख उठाकर देख सके?" सामन्तमण्डलीने धीरे धीरे किलेमें प्रवेश किया। परन्तु प्रवेश करते ही उन्होंने देखा कि पीछेके नक्कारेका द्वार बंद हो गया, तुरन्त ही सभी एक स्वरसे भयभीत हो कह उठे,—"यह विश्वासघातकता!" कुछ कालमें आहवाके सामन्तने अपनी कमरसे तलवार निकालकर राजसेनाका संहार करना प्रारंभ कर दिया। परन्तु राजाकी ओर की अधिक सेना थी, विशेष करके सभी सामन्त निशंक चित्तसे अपनी २ सेनासहित नहीं आये थ, इस युद्धमें कई एक सामन्त मारे गये, और सब धाभाईकी सेनाके द्वारा बंदी हो गये। बंदी होत ही वीर सामन्त सरलतासे समझ गये कि, हमारे भाग्यमें क्या होगा। इस षड्यंत्रका विस्तार करनेवाले धाभाईने विजयके गौरवसे अहंकारके वश हो उन बंदी सामन्तोंसे कहा कि, "आप लोग जीवनका बलिदान देनेके लिये तैयार हो जाओ।" असीम साहसी राजपूतसामन्त मृत्युसे भय करना बचपनसे ही नहीं सीखे इस कारण वे धाभाईके वचनसे कुछ भी विचलित नहीं हुए। उन्होंने केवल यही कहा कि "हम राजपूत हैं, राजाकी समान समरक्तवाही राठौर हैं इस कारण हमारा अंतिम कहना यही है, कि हमारा जीवन इस वेतनभोगी सेनाके बन्दूककी गोलियोंसे नष्ट न किया जाय. तलवारके द्वारा हमारा मस्तक काटकर वीरोंकी समान हमारी आत्माको छुटकारा देना चाहिय।" वास्तवमें बन्दी सामन्तोंकी अभिलाषा पूर्ण की गई था या नहीं, विजय विलास ग्रंथमें इसका कोई उल्लेख दृष्टि नहीं आता, धाभाईकी आज्ञानुसार शीघ्र ही चांपावत् सम्प्रदायके तीन प्रधान नेता, आहवाके जगतसिंह(१); पोकरणके देवीसिंह; हरसोलावके सामन्त; कूंपावतके नेता चन्द्रसिंह; चन्द्रायणके केशरीसिंह; निमाजके सामन्तकुमार; रासके सामन्त और ऊदावत् गणोंके प्रधान २ नेताओंका जीवन नष्ट किया गया(२)। परन्तु

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें अजीतसिंह लिखा है।

(२) गद्य इतिहासमें इनमेंसे किसी भी सरदारका मारा जाना नहीं लिखा है। उसके अनुसार पोकरणका देवीसिंह महासिंहोत, आसोपके कूंपावत् चरणसिंह, रासके केसरीसिंह उदावत् और–

देवीसिंहकी अंतिम अवस्थाका वृत्तान्त जैसा हृदयभेदी है उसी प्रकार राजपूत वीरोचित गर्वका प्रकाशक भी है। देवीसिंह महाराज अजितसिंहके औरसजातपुत्र थे, इस कारण उस राजरक्तधारीको गोली अथवा तलवारसे मारनेमें किसीको भी साहस न हुआ। अंतमें एक बडेपात्रमें विष मिला हुआ अफीमका पानी उनके पास भेज दिया गया और उन्हें यह आज्ञा मिली कि तुमको यह सब पानी पीकर प्राण त्यागने होंगे, परन्तु देवीसिंह इस आज्ञाको सुनते ही क्रोधसे उन्मत्त हुए सिंहके समान उस बंदी दशामें ही हुंकार करके बोले; "क्या देवीसिंह इस मट्टीके पात्रमें अफीम सेवन करेंगे? मेरा सुवर्णका पात्र ला दो मैं इसी समय इस सब अफीमको सेवन करके राजाकी आज्ञाका पालन करूंगा"। परन्तु बंदी देवीसिंहकी वह प्रार्थना पूर्ण न की गई; उन्होंने तुरन्त ही अफीमके पात्रको दूर फेंक दिया; और पत्थरकी दीवालपर अपने शिरको देपटका, मस्तकके चूर्ण २ होते ही उनके प्राण पयान कर गये। महात्मा टाड साहब लिखते हैं कि इस प्रकारसे आत्महत्या करनेके पहले देवीसिंहसे एक मनुष्यने पूछा "आपकी जिस तलवारमें मारवाडका सिंहासन स्थित है वह तलवार इस समय कहाँ है?" इसपर उस वीरने तुरन्त ही उत्तर दिया "इस समय वह तलवार पोकरणमें मेरे पुत्र सबलसिंहकी कमरमें बँधी हुई है।"

महाराज विजयसिंह उद्धतस्वभाव सामन्तोंमें सबमें प्रधान नेताओंको इस प्रकारसे संहार करके निर्विघ्नतासे अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर राज्यमें शान्तिस्थापनका उद्योग करने लगे। परन्तु धामाई जग्गूके उपदेश और परामर्शसे ही इन सामन्तोंके प्राण नाश हुए थे--जो सामन्तवंश चिरकालसे मरुक्षेत्रके लिये युद्धमें जीवनदान करके राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाते आये हैं, उन्हीं सामन्तवंशके प्रति इस प्रकारका हृदयभेदी आचरण करके, इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि, उन्होंने अपने दुर्बल हृदयका परिचय दिया। यदि वह अपने पिताके समान प्रभावशाली साहसी—नीतिज्ञ और पराक्रान्त होते तो उद्धत सामन्तोंको इस भावसे न मारते, और किसी उपायसे उनको दमन करके अपनी अभिलाषाको पूर्ण कर सकते थे, अन्य पक्षमें हम यह भी कह सकते हैं कि सामन्तमंडली यदि विजयसिंहको हीनबल देखकर अपने राज्यमें अतुल शक्तिके विस्तारसे राजाकी सामर्थ्यको घटाकर तथा चारों ओर इच्छानुसार अत्याचार न करती, तो कभी भी उनके भाग्यमें इस प्रकारकी शोचनीय अवस्था नहीं हो सकती और न उनको इस बन्दीभावसे प्राण त्याग करने पडते। यद्यपि इस स्थानपर विजयसिंहका धामाई जग्गू ही इस मरुक्षेत्रके स्तंभस्वरूप प्रधान २ सामन्तोंके प्राणनाशका कारण स्वरूप कहकर निन्दित

—नीमाजके दौलतसिंह ये चार सरदार कैद किये गए थे। इनमेंसे २४ दिन पीछे देवीसिंह एक महीने पीछे छत्रसिंह और तीन वर्ष पीछे केसरीसिंह कैदमें ही मरे और दौलतसिंहको महाराजने छोड दिया था, क्योंकि वह इन तीनोंके बराबर कसूरवार नहीं था।

(१) देवीसिंह अजीतसिंहका पुत्र नहीं था पोकरणके ठाकुर महासिंहका बेटा था।

हो सकता है, परन्तु यदि हम विशेष विचार करके देखते हैं तो अवश्य ही हमें यह मानना होगा कि धाभाईने केवल निःस्वार्थभावसे एक उद्देश साधन करनेके लिये वह संहारमूर्ति धारण की थी कि, जिससे विजयसिंहकी शक्ति और सामर्थ्यका विस्तार हो जाय। उद्धत सामन्तोंके अत्याचार जिससे दूर हो जायँ, राज्यमें जिससे फिर शान्ति स्थापित हो जाय, जग्गूने केवल उसी लिये इस चातुरीजालका विस्तार कर विजयसिंहके राज्यके कण्टकस्वरूप सामन्तोंका जीवन समाप्त कर दिया। यदि सामन्तमण्डली विजयसिंहकी राजसामर्थ्यको लुप्त करनेमें अग्रसर न होती, यदि राज्यमें अन्यायके अतिरिक्त आधिपत्यके विस्तारमें यत्न न करते तो जग्गूके द्वारा यह शोचनीय अनुष्ठान अवश्य ही तीक्ष्ण समालोचनाके योग्य हो जाता। धाभाई जग्गूने इस स्थानपर अन्य उपायके अभावसे ही एकमात्र निःस्वार्थभावसे जब कि इस कार्यका अनुष्ठान किया, तब उसको पूर्ण अपराधी मानना ठीक नहीं है। इस प्रकारसे राजनैतिक उद्देशको साधन करनेके लिये विलायत वासियोंमें केवल सामन्तोंका ही क्यों वरन् राजाओंके जीवनका भी नाश हो जाता था। यह इतिहास कुछ पाठकोंसे छिपा नहीं है। परन्तु हम यह भी अवश्य कह सकते हैं कि विजयसिंह यदि अपने पिताके समान सभी गुणोंसे विभूषित होते तो कभी भी इनको इस प्रकारके उपायसे उद्देश पूर्ण नहीं करना पडता। विजयसिंह युवा अवस्थामें अत्यन्त हीनबल होगये थे, इसी कारण देवीसिंह इत्यादि सामन्तगण इस प्रकारसे मस्तक उठानेमें समर्थ हुए।

देवीसिंहने इस शोचनीय रूपसे प्राण त्याग किये। बडी शीघ्रतासे यह समाचार पोकरणमें उसके पुत्र सबलसिंहके कानमें पहुँचा। सबलसिंह अपने पिताके समान महातेजस्वी और वीर थे। विजयसिंहने इनके पिताको चातुरीजालमें बाँधकर उनके प्राण लिये हैं, यह सुनते ही मानो उसके शरीरसे आगकी चिनगारियां निकलने लगीं। वह किंचित् भी विलम्ब न करके पोकरणके सम्पूर्ण वीरोंको अपने साथ ले अपने पितृहन्ता विजयसिंहको उचित फल देनेके लिये रुद्रमूर्त्तिसे चला। सबलसिंहने सबसे पहले रजवाडेके अन्यतर वाणिज्यप्रधान पालीनगरको लूटकर उसको अग्निद्वारा भस्म करदिया[1]। परन्तु इससे उनका वह मनोरथ पूर्ण न हुआ। वह तुरन्त ही क्रोधित हुए केसरीके समान लूनी नदीके निकट प्रसिद्ध समृद्धिशाली वाणिज्यस्थल बीलाडापर भी आक्रमण करनेके लिये आगे बढे परन्तु इस स्थानपर भी उनकी वह कामना पूर्ण न हुई; वरन् उनको इसका विपरीत फल मिला। बीलाडा नगरके प्राकारको उलंघन करनेकी चेष्टा करते ही प्रज्ज्वलित गोलोंके आघातसे उसने इस संसारको त्याग किया। दूसरे दिन इसकी देह उस लूनी नदीके किनारे भस्म की गई।

विजयविलास ग्रंथसे जानाजाता है कि, उन सामन्तोंके प्राणत्याग करनेके पीछे मारवाडके भाग्यका चक्र मानो फिर बदल गया। सामन्तोंके अन्यायके अतिरिक्त शक्ति चलानेकी इच्छाके दूर होते ही सरलतासे अराजकता निवृत्ति हो, फिर वाणिज्यस्रोतकी

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें लिखा है कि पाली लूटनेका इरादा किया था, परन्तु पूरा नहीं हुआ।

वृद्धि प्रजा साधारणकी दैन्य अवस्था धीरे २ बदलने लगी। राठौरकविने लिखा है कि "प्रजाके निर्भय शांति संभोग करनेसे शेर बकरी एक घाटपर जल पीने लगे।" कविकी इस उक्तिसे भलीभाँति जाना जाता है कि, सब सामन्तोंने उद्धत आचारणस उनकी राजशक्तिकी तीक्ष्णताका साधन किया था, उनके अविद्यामान रहनेपर वह स्वच्छन्दता पूर्वक फिर राज्यमें शांतिस्थापन करनेके लिये समर्थ हुए। यद्यपि राजाविजयसिंह उद्धत सामन्तोंके प्राण संहार करके साधारण सामन्तश्रेणीके विरागभाजन हुए थे, परन्तु उन्होंने फिर अपनी सामर्थ्य पाकर तथा बराबर २ कईएक प्रयोजनीय युद्धोंमें उन सामन्तोंको रखकर अत्यन्त ही अल्प समयमें उनके हृदयमें स्वभावसिद्ध राजभक्ति को प्रबल कर दिया।राजा पहलेके समान उनके प्रियपात्र हो गये;विजयसिंहकी अवस्था अत्यन्त अल्प थी, इसीसे असीम साहसी महावीर सामन्तोंने उनकी सामर्थ्यको घटाकर अपने प्रभुत्वको बढानेका यत्न किया था। परन्तु अवस्थाकी वृद्धिके साथ ही साथ विजयसिंहके चरित्र भी बदलने लगे। उन्होने अपने पिताके समान फिर राजनैतिक क्षेत्रमें प्रशंसनीय अभिनय आरम्भ कर दिया। उनके बल विक्रमकी पूर्ण मूर्तिने तीक्ष्ण किरणजालका विस्तार करना आरम्भ किया। विजयसिंहने निष्कंटक होकर सामन्त और सेनाके साथ शीघ्र ही मरुक्षेत्रके अत्याचारी दस्युस्वरूप खोसा और सराई जातिके विरुद्ध युद्धके लिये पयान किया। इन दोनों जातियोंके दमनसे सिन्धुदेशके नाममात्र अधीश्वरोंके साथ भी उनका महासंग्राम हुआ। परन्तु विजयसिंहने उस युद्धमें सम्पूर्ण जय प्राप्त करके सिन्धुदेशके द्वारस्वरूप विख्यात् अमरकोटके किलेपर अधिकार कर लिया। यह अमरकोट मारवाडराज्यकी शेष सीमारूपसे परिणत हुआ।

मारवाडपति विजयसिंहका भाग्य इस समय अत्यन्त प्रसन्न हो गया। उनके बल विक्रमकी ऊँची प्रशंसा इस समय चारोंओर गुंजारने लगी। उन्होंने विजयदर्पित हृदयसे उस विजयी सेनादलके साथ शीघ्र ही मारवाडकी सीमाका जो अंश जैसलमेर राज्यमें था, उस अंशको बाहुबलसे मारवाडके अधिकारमें कर लिया। विजयसिंह केवल यही करके शान्त न हुए उन्होंने समृद्धिशाली गोडवाडराज्य मेवाडेश्वर राणाके हाथसे छीनकर अपने अधिकारमें कर गौरवको अधिक बढा लिया; मरुक्षेत्रके अधीनमें यह मुख्य भूमि है, कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि यह गोडवाडदेश सब मारवाडके समान मूल्य युक्त था। राठौर जातिके मरुक्षेत्रमें प्रादुर्भावके पहले मेवाडके अधीश्वरने मंडोरमें प्राचीन अधिपतिके हाथसे इस देशको छीन लिया था। इसी समयसे पाँच शताब्दीतक यह गोडवाड मेवाडके अधीनमें शासित होता आया था, परन्तु मेवाडपति राणा आत्माविग्रहके समय इस गोडवाड देशको विजयसिंहके देनेके लिये बाध्य हो गये और उनको यह देश दे दिया। तभीसे यह देश मारवाडपतिके अधिकारमें हुआ है; इसके ऊपर मेवाडेश्वरका और कोई अधिकार नहीं है"।

विजयसिंह अपने पिताके स्वर्गवासी होनेके पीछे जिस भाँति रामसिंहके साथ युद्धमें लिप्त और परास्त होकर महाराष्ट्रोंको अजमेर देश तथा चौथ कर देनेमें समस्त

हुए, इसीसे वह एकबार ही हतवीर्य और लुप्त तेज हो गये थे, उसी प्रकार देवीसिंह इत्यादि उद्धतस्वभाव सामन्तोंके इच्छानुसार उत्पीडनसे वह अपनी राजशासन शक्तिके चलानेमें एकबार ही असमर्थ हो गये; परन्तु उन देवीसिंह इत्यादिको चतुरतासे बंदी करने और मारडालनेके पीछे विजयसिंहने पुनर्वार अपने सामन्तोंकी सहायता पाकर कई एक युद्धोंमें जयलक्ष्मीका आलिंगन पाकर अपने लुप्ततेजको पुनरुद्धार करके विशेष शूरवीरता प्रकाश कर कई वर्षोंतक मारवाडका सुख शान्ति रूपी सौरभ प्रकाश कर दिया। मारवाडके दुर्दिन मानो एकवार ही दूर हो गये, परन्तु विजयसिंहको शीघ्र ही फिर राजनैतिक रंगभूमिमें प्रबल युद्धक्षेत्र अवतीर्ण हो गया। यद्यपि विजयसिंहने अपने राज्यमें शान्तिस्थापन कर अपने गौरवको बढाया था, परन्तु इस समय महाराष्ट्रोंके कवलसे अजमेरराज्यको पुनर्वार अपने अधिकारमें करने तथा उनके करसे अपनेको छुडानेमें वे समर्थ न हुए।

महाराष्ट्रलोग इस समय अत्यन्त बलवान् होकर भारतके प्रत्येक प्रान्तमें घोर अत्याचार, उत्पीडन और लूट मार करके आर्यक्षेत्रको एकबार ही विध्वंस करके उसे रमण करनेके लिये उद्यत हुए। वह इस समय इतने शक्तिशाली थे कि भारतके प्रत्येक राजा प्रजाके भयके कारण स्वरूप हो गये। प्रत्येक जन उनके भयसे धन प्राणकी रक्षाके लिये अत्यन्त व्याकुल हो गये थे। भारतके प्रत्येक प्रान्त पर अधिकार करके नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा वा प्रबल प्रतापशाली सम्राट् स्वरूपसे प्रत्येक राजाको अधीनताकी जंजीरमें बाँध कर समस्त शासन शक्तिसे हीन मुगल बादशाहके आसनपर बैठने की उनको कुछ भी इच्छा नहीं थी। केवल तस्करदलका संहार मूर्तिसे प्रत्येक देशको विध्वंस कर समस्त धनरत्नोंको लूटनेका ही उनका अभिप्राय था। मनुष्योंका सर्वनाश कर दस्युवृत्तिको चरितार्थ करनेमें वह पहलेसे भी आग्रहके साथ अग्रसर हुए इसीसे उन्होंने सब प्रकारका सुभीता पाकर भी दिल्लीके नाममात्रके बादशाहके आसनपर अधिकार नहीं किया। वह यदि अन्य जातिके समान अधिकारका विस्तार करके सुशासनका आश्रय लेते, तो निश्चय ही उस समय भारतमें महाशक्तिका संग्रह कर अपने अधिकारका विस्तार कर सकते थे। दिल्लीके बादशाह उस प्रबल प्रतापशाली औरंगजेबके आसन पर विराजमान होकर भी इस समय कुछ भी सामर्थ्य वा शक्तिमान् नहीं थे। वह नाममात्रके बादशाह थे; दूसरी ओर भारतके प्रबल प्रतापशाली देशीय राजा भी इस समय बहुकालव्यापी आत्मविग्रहसे जातीय युद्धोंमें लिप्त होकर विजातीय यवन सम्राट्की स्वेच्छाचारिताके मुखमें विदलित हो समस्त जातीय श्रेष्ठ गुणोंसे रहित हो गये थे। इस समय महाराष्ट्रोंमें किसी शिक्षित और वीर नेताने भी जन्म नहीं लिया, नहीं तो वह सरलतासे भारतका राजमुकुट अपने मस्तक पर धारण कर सकते थे। विशेष करके महाराष्ट्रोंके दलमें फिर भिन्न २ सम्प्रदायों की सृष्टि होनेके कारण एकताके अभावसे उनको उस महान् शक्तिका अभिलाषित फल प्राप्त न हुआ। महाराष्ट्रोंने इस समय प्रबलरूपसे मस्तक उठाकर, रजवाडेमें फिर

घोर अत्याचार करना प्रारंभ कर दिया, तब समस्त राजपूत राजा इनको दमन करनेके निमित्त मिलकर सम्मति करने लगे। यवन बादशाहके हाथसे जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये इन राजाओंके पूर्व पुरुष जिस प्रकार एक २ समय एक साथ मिलकर महायुद्धमें लिप्त हुए थे, इस समय आर्यरक्तधारी, आर्य-धर्मावलम्बी इस दस्युसम्प्रदायके विरुद्ध भी उसी प्रकारसे इकट्ठे हो कर वे अपने राजनैतिक स्वत्वकी रक्षाके लिये विशेष यत्न करने लगे।

इस समय जयपुरके राजसिंहासन पर महाराज प्रतापसिंह विराजमान थे। प्रतापसिंह जैसे तेजस्वी वीर थे, वैसे ही असीम साहसी, प्रतिभाशाली और उद्यमशील भी थे। उन्होंने महाराष्ट्रोंको प्रबलतासे रजवाडेके प्रत्येक राज्यका सर्वनाश करनेमें उद्यत देखकर संवत् १८४३ सन् १७८७ ई० में मारवाडपति विजयसिंहके पास यह प्रस्ताव एक दूतके हाथसे भेजा कि " महाराष्ट्रगण जिस प्रकारसे सर्वसाधारणके ऊपर घोर अत्याचार कर रहे हैं इससे उनको एकबार ही दमन करना हमारा परम कर्त्तव्य है; और इन शत्रुओंको दमन करनेके लिये सभी राजपूत राजाओंको एक साथ मिलकर महाराष्ट्रोंको परास्त करके निश्चिन्त होना उचित है। मैंने स्वयं युद्धभूमिमें जाकर महाराष्ट्रोंको उचित फल देनेकी इच्छा की है, इस कारण यदि आप इस समय राठौरोंकी सेनाको सहायताके लिये भेज देंगे तो सरलतासे हम अपने जातीय शत्रुओंका गर्व दूरकर एकबार ही रजवाडेको निष्कंटक कर देंगे।" महाराज विजयसिंह अत्यन्त संकट और असहाय अवस्थामें पडकर महाराष्ट्रनेताके साथ संधि करके मारवाडके राजमुकुट उज्ज्वल मणिस्वरूप अजमेरको महाराष्ट्रनेताको समर्पण कर चौथ देनेके लिये राजी हो गये थे। इस समय उन्हीं महाराष्ट्रोंको उचित फल देनेके साथ अजमेर पर पुनः अधिकार और चौथसे छुटकार पानेकी आशा देखकर प्रसन्न हो उन्होंने वीर विक्रमी राठौरोंकी सेनाको प्रतापसिंहकी सहायता करनेके लिये तुरन्त ही भेज दिया। एक समय जयपुरके महाराज ईश्वरीसिंहकी स्त्रीने यद्यपि विजयसिंहके पिताका प्राणनाश किया था, यद्यपि वही ईश्वरीसिंह एक समय उन विजयसिंहको बन्दी करके उनका जीवन नष्ट करनेको सन्नद्ध हुए थे। परन्तु विजयसिंह उन सब बातोंको भूलकर जातीय शत्रुओंका नाश करनेके लिये सेना भेजकर भी निश्चिन्त न हुए। वियारके महावीर सामन्त जवानदास राठौरोंकी सेनाके नेतास्वरूपसे तुरन्त ही जयपुरकी सेनाके साथ आ मिले, इनके आते ही तुंगानामक स्थानमें महाराष्ट्रोंकी सेनाके साथ राजपूतोंकी सेनाका भयंकर युद्ध होने लगा। इस युद्धभूमिमें जयपुरकी सेनाकी अपेक्षा राठौरोंकी सेना अधिक बलशाली थी, महाराष्ट्रोंकी सेना फरासीसी सेनापति डिवाइनके द्वारा शिक्षा पाई हुई थी। तथापि वह किसी प्रकारसे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ न हुई। विख्यात वीर जवानदासने उस

(१) प्रथमकांड २९ अध्याय, ८०७ पृष्ठ देखो।

(२) प्रथम कांड, २९ अध्यायका ८०७ पृष्ठ देखो।

उत्तेजित राठौरोंकी सेनाको महाराष्ट्रीय गोलन्दाज–दलके ऊपर चलाकर उसी मुहूर्त्तमें उनको विध्वंस कर दिया। महाराष्ट्रनेता सिन्धिया सम्मिलित राठौरोंकी सेनाके निकट एकबार ही परास्त हो गये; और युद्धके समस्त द्रव्योंको रणभूमिमें छोडकर प्राणोंके भयसे भाग गये। कठिन अत्याचारी सिन्धियाकी सेना सम्मिलित राजपूत सेनाके निकट परास्त होकर प्राणोंके भयसे भाग गई; उसी समय विजयी राठौर दलके नेता रियांके सामन्त जवानदासने शीघ्र ही महाराष्ट्रोंके कराल कवलसे अजमेरपर फिर अपना अधिकार करके वहां मारवाडके महाराज विजयसिंहकी विजयपताका स्थापित कर दी।

मारवाड राजमुकुटका उज्ज्वल माणिक्यरूप अजमेरराज्य फिर मारवाडपतिके हस्तगत हो गया; महाराष्ट्र नेताके साथ विजयसिंहका जो संधिबंधन हो गया था, अथवा उन्होंने जो कर देना स्वीकार किया था उन्होंने उस संधिपत्रको रहित कर दिया, तथा वह कर भी बन्द कर दिया। महाराज विजयसिंह फिर सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्य करने लगे। महाराष्ट्रोंके दलको एकबार ही परास्त कर उनकी सम्पूर्ण शक्तियोंको खंड२ कर दिया, राठौरोंकी सेनाने भारतवर्षमें ऊंची प्रशंसाको संग्रह कर मारवाडमें फिर शांति स्थापित कर दी।

तुंगाके युद्धमें महाराष्ट्रनेता माधोजी सिन्धियाने एकबार ही परास्त होकर उस बचीहुई सेनाके साथ भागकर अपने भाग्यमें घोर कलंकका टीका लगाया था, परन्तु उनका हृदय बदला लेनेके लिये भयंकर रूपसे प्रबल हो गया। कूटबुद्धि माधोजीने एकबार ही अधीर न होकर अपने अधीन फरासीसी सेनापति डिवाइनकी सम्मतिसे फिर एक नई सेना तैयार करके उनको पश्चिमी युद्ध विद्याकी शिक्षा देनी प्रारंभ की। माधोजी भलीभाँतिसे जानता था कि राजपूतोंकी सेनाका दल एकसाथ मिलकर भलीभाँतिसे युद्ध प्रारंभ करेगा, तब महाराष्ट्रोंकी सेना किसी प्रकारसे भी जय प्राप्त नहीं कर सकेगी। इस कारण माधोजी चिर--वीर--व्रतावलम्बी असीम साहसी राजपूत अश्वारोहीकी समान सुशिक्षित अश्वारोही सेनाकी ओर भलीभाँतिसे ध्यान देने लगा। क्रमानुसार चार वर्षतक उस सेनाको भलीभाँतिसे शिक्षा दी। अंतमें तुंगाके युद्धके उस महाकलंकको दूर करनेके लिये राठौरोंसे बदला लेनेके लिये तथा रजवाडेको विध्वंस करनेके लिये माधोजी सिन्धिया और डिवाइन प्रावृट संगममें उत्ताल तरंग मालामय जलधिके समान भयंकर गर्जन करती हुई, चारोंओरको विध्वंस करती हुई सेनाके साथ आगे बढे। माधोजी इस प्रकार अधिक सेना साथ लेकर आते हुए दिखाई दिये कि रजवाडेमें बहुत दिन पीछे इस प्रकारकी अगणित सेना रणभूमिमें कभी नहीं आई थी। माधोजीके आगमनका समाचार सुनते ही महाराज विजयसिंहने फिर जयपुरके महाराजके यहां एक दूत भेजा, और कहला भेजा कि पहलेके समान इस समय भी हमारी सहायताके लिये अपनी सेना भेज दो। जयपुरके महाराजने विचारा कि उनके कहनेसे विजयसिंहने जब तुंगाके युद्धमें राठौरोंकी सेनाको भेज दिया था, तब इस समय

(१) इस युद्धका वृत्तान्त प्रथम कांडके ३० अध्यायके ८१३ पृष्ठमें वर्णन किया गया है।

वर्तमान युद्धमें जयपुरकी सेनाका भेजना अवश्य ही संगत है। विशेष करके महाराष्ट्र यदि पहलेके समान फिर प्रबल हो गये तो जयपुरके भी अधिक अनिष्ट होनेकी संभावना है; इस कारण इस युद्धमें महाराष्ट्रोंको पहलेके समान किसी प्रकारसे व्यर्थ मनोरथ करना उचित ही है। यह विचार जयपुरके महाराजने शीघ्र ही बहुतसी सेना भेज दी। सम्मिलित राजपूतोंकी सेना पहलेके समान एकताके सूत्रमें शोभायमान होकर जय शब्दोंसे रजवाडेको प्रतिध्वनित करती हुई शत्रुओंका संहार करनेके लिये आगे बढी। परन्तु इस समय रजवाडेका भाग्य अत्यन्त ही मंद हो गया था, इस कारण युद्धके पहले अति सामान्य कारणसे राठौर और जयपुरकी सेनामें कुछ झगडा हो गया। पाटन नामक स्थानके युद्धमें केवल राठौरोंकी सेना महावीरता प्रकाश करके महाराष्ट्रोंकी अधिक सेनाके होनेसे अंतमें परास्त हो गई। महाराज विजयसिंह राजधानीके ही भीतर थे। जब उन्होंने परास्त हुई सेनाके मुखसे जयपुरकी सेनाकी विश्वासघातकताका समाचार सुना तब वह जयपुरकी सेनाके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए। अंतमें बहुतसे तर्कवितर्क करनेके पीछे महाराष्ट्रोंको फिर रणभूमिमें बुलाकर उन्होंने अपने पराक्रमके दिखानेका निश्चय कर लिया। संवत् १८४३ में सन् १७९१ ईसवीमें मेरतामें फिर एक भयंकर युद्ध हुआ। यद्यपि राठौरोंकी सेनाने इस संग्रामभूमिमें पहलेके समान अकथनीय वीरता प्रकाश की तथापि वह इस समय जयलक्ष्मीका आलिंगन न कर सकी। विजयी महाराष्ट्रनेताने बदला लेनेके लिये साठ लाख रुपये दंडमें महाराज विजयसिंहको देनेके लिये आज्ञा दी। परास्त हुए विजयसिंहने कुछ उपाय न देख कर शीघ्र ही रुपया देना स्वीकार कर लिया। मारवाडका खजाना इस समय एकबार ही खाली हो गया था। साठ लाख रुपया इकट्ठा एक ही साथ देना इस समय असंभव हो गया, परन्तु दुराचारी महाराष्ट्रोंने कुछ भी रुपया कम न किया। अंतमें सारी प्रजाकी धनसम्पत्ति लूट ली। जब इससे भी धनकी पूर्ति न हुई तब उन्होंने प्रधान २ सामन्तों और प्रजाको बंदी करके उनके घरकी वस्तुओंका बेचना प्रारंभ किया। विजयी माधोजीने मानो कालान्तक कालके समान मारवाडमें जाकर अपने सेवकोंको मारवाडके विध्वंस करनेकी आज्ञा दी। मारवाडके घर २ में हाहाकार मच गया--चारोंओर भयंकर रोनेका शब्द सुनाई देने लगा। सती स्त्रियोंका हृदयभेदी चीत्कार, बालकोंके अन्तिम रोनेकी ध्वनि--प्रजाकी कातरताने मानो मारवाडको नरकका कुंड कर दिया। परन्तु दुष्ट माधोजीका हृदय कुछ भी विचलित न हुआ। उसके सेवकोंने मारवाडकी समस्त धनसम्पत्ति लूट ली।

माधोजी सिन्धियाने मारवाडमें जानेके पहले ही अजमेर राज्यपर फिर अपना अधिकार कर लिया था, जिस समय फरासीसी सेनापति डिवाइनने अजमेरमें

---

(१) प्रथम कांडके ३० अध्यायके ८१५ पृष्ठको देखो।

(२) प्रथम कांडके, ३० अध्यायके ८१६ पृष्ठको देखो।

प्रवेश किया था, उस समय अजमेरके शासनकर्ता दुमराजने विजातीय सेनाके हाथमें अजमेरको लौटादेनेमें कलंक संचयकी अपेक्षा आत्महत्या करना ठीक जान, उसने अफीम खाकर प्राण त्याग दिये। इसी समयसे अजमेर चिरकालके लिये मारवाडसे अलग हो गया। समय आते ही महाराष्ट्रोंके हाथसे अंग्रेजी सेनाने इस अजमेर पर अधिकार कर लिया, और आजतक इस अजमेरके किलेपर अंग्रेजोंकी पताका उड रही है।

मेरताके रणक्षेत्रमें महाराष्ट्रोंके तस्करदलके द्वारा विजयसिंहकी पराजयके पीछे मारवाडके सौभाग्यके सूर्यने मानो चिरकालके लिये अस्ताचलका आश्रय लिया--घोर कालरात्रिने आकर शीघ्र ही मारवाड पर अधिकार कर लिया। मारवाड मानो स्मशानके समान हो गई। नष्ट गौरव, हतवीर्य, विजयसिंह मानो निर्वाणोन्मुख दीपशिखाके समान स्तम्भित तेजसे मरुक्षेत्रका शासन करने लगे। परन्तु अवस्थावृद्धिके साथ ही साथ उन्होंने और एक विचित्र अभिनय आरंभ कर दिया। इसीसे मारवाडके भावी सर्वनाशका बीज बोया गया। विजयसिंहके जीवनकी शेष दशाका बल विक्रम--राजपूतस्वभाव सुलभ साहस, शूरता मानो विस्मृतिके जलमें डालकर कन्दर्पके प्रिय उपासक हो गये। ओसवाल जातिकी एक सुन्दरी युवतीके प्रेममें वह अत्यन्त मोहित हो गये थे; वह एकबार ही हतज्ञान होकर अपने हाथसे अपने पैतृक राज्यके नाशका कारण संचय करने लगे। विजयसिंह युवतीके प्रेममें इतने मोहित हो गये थे कि जो पटरानी ऊँचे सम्मानकी अधिकारिणी थी उन्होंने उस विलासनीको उस सम्मानका भागी किया। प्रकाशमें इस चतुरा ललनाने विजयसिंहको अपने रूपयौवनके बलसे मानो मोल लिये हुए दासके समान अपना अनुगत कर लिया था। कर्नल टाड साहब लिखते हैं " कि, इस युवतीने विजयसिंह पर इतना अधिकार कर लिया था -कि, वह उसके प्रेममें इतने व्याकुल थे कि वह युवती मारवाडपति विजयसिंहको बारम्बार पादुकासे प्रहार करती थी और महाराज फिर उसकी शरण लेते थे। विजयसिंह उस कामिनीके कालकूटमय प्रेममें मोहित होकर चेतनाहीन हो गये; और उस पादुकाके प्रहारसे वह कुछ भी अपना अपमान नहीं जानते थे, वरन् वह उस चंद्रमुखीकी प्रत्येक आज्ञाके पालन करनेमें अपनेको विशेष चरितार्थ मानते थे। विजयसिंहकी इस कन्दर्पसेवा और विलासिताके कारण मारवाडके चारों ओर फिर घोर अराजकताने आकर दर्शन दिया।

उस युवतीने विजयसिंहको अपना दास बनाकर राज्यमें अपनी प्रबल सामर्थ्यका चलाना प्रारंभ कर दिया। यद्यपि यह स्त्री विजातीय थी तथापि विजयसिंहके निकट उसने यह प्रस्ताव किया कि आपके पुत्रको कभी राजसिंहासन नहीं मिल सकेगा, मैं एक पुत्र गोद लूंगी और वही पुत्र आपके भविष्य उत्तराधिकारी

---

(१) जाटजातिकी थी।

(२) परंतु ऐसा तो कभी सुननेमें नहीं आया, बल्कि लोग उसकी धर्म निष्ठा और उदारताकी अब तक तारीफ करते हैं। उसने मारवाड़में वैष्णवधर्मको बहुत पुष्ट किया था। उसके बनाये हुए अच्छे २ मन्दिर महल बाग हाट और तालाब जोधपुरमें विद्यमान हैं। इसका नाम गुलाबराय था।

रूपसे राज्यमें रहेगा । विजयसिंहने युवतीके इस प्रस्तावमें कुछ भी आपत्ति न की । मारवाडमें भावी अनिष्टका बीज बोनेके लिये उसी समय उसमें अपनी सम्मति प्रकाश की । जो चिरप्रचलित रीतिके अनुसार मारवाडके सिंहासनपर उत्तराधिकारी नियुक्त होते आये थे, विजयसिंहने इस युवतीके मतसे उस रीतिकी जडमें भयंकर कुठाराघात किया । पाठक गणोंको इस होनेवाली घटनाके पहले उस समयके मारवाडराजवंशकी कारिका पाठ करना उचित जानकर हम उसे यहां लिखते हैं ।
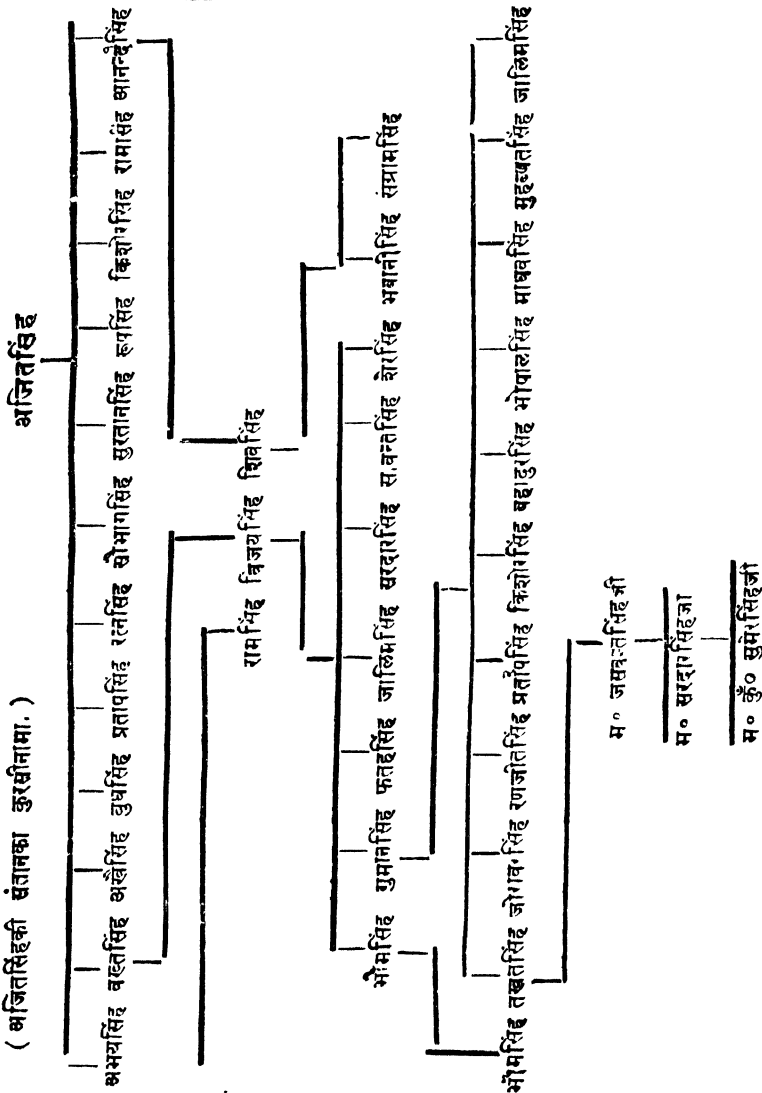
पशुप्रवृत्तिक क्रीतदास विजयसिंहने उस पासवानी स्त्रीकी इच्छा पूर्ण करनेके लिये जिस पौत्र मानसिंह (गुमानसिंहके पुत्र) को दत्तक स्वरूपसे ग्रहण किया था, उसी मानसिंहको उन्होंने उक्तकामिनीकी गोदमें डालकर उसको युवतीका दत्तक पुत्र तथा अपना भविष्य उत्तराधिकारी कहकर घोषणा कर दी, मरुक्षेत्रके समस्त सामन्तोंको बुलाकर और उक्त मानसिंहको उनका भविष्य प्रभु कहकर उन्हें नजर देनेके लिये आज्ञा दी। सामन्तोंने राजाकी इस आज्ञासे अत्यन्त ही क्रोधित होकर कहा, कि हम दासीके पुत्रको अपना भविष्य प्रभु कदापि नहीं मान सकते। अज्ञानी विजयसिंहने कुछ उपाय न देखकर शीघ्र ही मानसिंहको शास्त्रकी रीतिके अनुसार दत्तक पुत्ररूपसे ग्रहण कर अपने औरसजात पुत्रको सिंहासनके अधिकारसे एक बार ही वञ्चित कर दिया। युवतीने अपनी कामनाको पूर्ण हुआ देखकर प्रसन्नचित्त हो दत्तककुमार मानसिंहको जालौरके किलेमें विद्या पढनेके लिये भेज दिया, किन्तु इसके पीछे शेरसिंह (जिन्होंने पहले मानसिंहको दत्तक-स्वरूपसे ग्रहण किया था) की प्रभुताके अधीनमें मानसिंह उन्हींके अनुगत हुए, परन्तु उक्त युवतीने मानसिंहको फिर अपने यहां [illegible]कर अपने सेवकोंके हाथमें उनकी रक्षाका भार अर्पण किया। मारवाडके भविष्य अधीश्वर मानसिंहका इस प्रकारसे पालन होने लगा। परन्तु हतज्ञान विजयसिंह इस समय युवतीके हाथमें कठपुतलीके समान रहते थे, युवतीने राज्यमें अपने इच्छानुसार व्यवहार करनेकी अभिलाषा की, इसीसे मरुक्षेत्रके समस्त सामन्त फिर राजा पर अत्यन्त रुष्ट हो गये, और सभी अपने स्वार्थ-की रक्षाके लिये मालकोसनी नामक स्थानमें इकट्ठे हुए।

सामन्तोंने देखा कि विजयसिंहने एक साधारण स्त्रीके प्रेममें फँसकर जैसा कार्य करना प्रारंभ किया है, उससे पवित्र मारवाडका सिंहासन कलंकित होता है; विना इनको सिंहासनसे उतारे हुए किसी भांति भी राज्यका मंगल नहीं हो सकता। तब सब राठौर सामन्तोंने मिलकर यह निश्चय किया कि विजयसिंहके पञ्चम पुत्र भीमसिंहके युवक पुत्र भीमसिंहको मारवाडके सिंहासनपर बैठाना उचित है। असंतुष्ट हुए सामन्तोंने चुपके २ इस प्रकारका सिद्धान्त करके इस प्रस्तावके अनुसार काय करनेका उद्योग भी किया। जब विजयसिंहने देखा कि इस समय समस्त सामन्त रुष्ट होकर एकत्रित हो रहे हैं तो पहले जिस भाँति सामन्तोंके डेरोंमें स्वयं जाकर इन्होंने उनको अपने हस्तगत कर लिया था, इस बार भी उसी प्रकारसे सामन्तोंको अपने हस्तगत करनेके लिये वे शीघ्र ही उनके डेरोंमें गये। महाराज विजयसिंहने सामन्तोंके डेरोंमें जाकर उनको जिस समय संतुष्ट कर अनेक प्रकारके वचनोंसे धीरज दिया, उसी समय सामन्तोंने गुप्तभावसे एक पत्र लिखकर रासके सामन्तके पास भेज दिया। उस समय वह सामन्त जोधपुरके महाराजकी रक्षामें नियत थे। सामन्तने तुरन्त उस युवतीसे जाकर कहा कि, महाराज विजयसिंह सामन्तोंके डेरोंमें आये हैं। उन्होंने आपको भी वहाँ शीघ्र ही बुलाया है। शरीर रक्षक सेना तैयार है आप शीघ्रतासे चलिये। युवती उस सामन्तके वचनों पर

विश्वास कर जैसे ही इकली महलसे निकल कर सवारी पर चढी कि वैसे ही पीछेसे एक मनुष्यके इशारा करते ही, एक मनुष्यने उसके शिरके दो टुकडे कर दिये। सामन्त उसी समय मारवाडके उस सर्वनाशकी कारणस्वरूपा उस नारीकी सम्पूर्ण धन सम्पत्तिको लेकर, विजयसिंहके पंचम पुत्र भीमसिंहके युवक पुत्र भीमसिंहको लेकर सेनासहित नागौरके मार्गमें: अपने डेरोंमें जा पहुँचे। यदि रासके सामन्त भीमसिंहको उक्त डेरोंमें न लेजाकर बराबर इकट्ठे हुए सामन्तोंके डेरोंमें ले जाते तो सरलतासे सामन्त गण पहले विचारसे उस स्थानपर विजयसिंहको सिंहासनसे रहित कर भीमसिंहको मारवाडके सिंहासन पर बैठाल सकते थे। जिस दिन सब सामन्तोंने यह समाचार पाया कि वारबधूका प्राण नाश करके रासके सामन्त भीमसिंहको ले आये हैं,उसी दिन विजयसिंहको भी यह समाचार मिला और वे तुरन्त ही बडी शीघ्रतासे भीमसिंहके निकट आये।

विजयसिंह सामन्तोंके डेरोंको छोडकर भीमसिंहके डेरेमें गये,इनके वहां जाते ही सामन्तोंके षड्यन्त्रका जाल एकबार ही छिन्नभिन्न हो गया। उन्होंने भीमसिंहको वशीभूत करनेके लिये सोजत और सिवाना एकबार ही देकर भलीभाँतिसे धीरज दे उसी समय उनको सिवानेके किलेमें भेज दिया। भीमसिंहको यद्यपि मारवाडका सिंहासन नहीं मिला परन्तु उन दोनों देशोंके मिलनेसे प्रसन्न हो उन्होंने वहां जानेमें कुछ आपत्ति न की। चतुर विजयसिंहने इस प्रकारसे भीमसिंहको संतुष्ट कर उनको पीछे भेज दिया और अपने पुत्र जालिमसिंहको निकट बुलाया। जालिमसिंह ही मारवाड सिंहासनके यथार्थ उत्तराधिकारी थे। विजयसिंहने मानसिंहको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था, और उनको उस अधिकारसे वंचित किया था, जालिमसिंह उससे महा असंतुष्ट हुए थे। विजयसिंहने उनको हस्तगत करनेके लिये उसी समय उन्हें समृद्धि-शाली गोडवाड देशका पूर्ण अधिकार दे दिया,और उनको वहाँ भेज दिया। तथा बिदा करनेके समय चुपके से यह भी कह दिया, कि तुम शीघ्र ही भीमसिंहपर आक्रमण करके उनको मारवाडसे निकाल दो।

जालिमसिंह गोडवाड राज्य पाकर महासंतुष्ट हो शीघ्र ही वहाँ चले गये, और पिताकी आज्ञा पालन करनेके लिये उन्होंने अपने भ्रातृपुत्र भीमसिंहपर सेना सहित आक्रमण किया। भीमसिंह पहलेसे ही विजयसिंहकी गुप्त आज्ञाके विषयको जान गये थे, कि वह युद्धके लिये तैयार हो गये थे, इस कारण जालिमसिंहके आक्रमण करते ही उन्होंने महायुद्धकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। जालिमसिंहकी सेना प्रबल थी। भीमसिंहने अंतमें परास्त होकर प्राणोंके भयसे पोकरणके सामन्तका आश्रय लिया। परन्तु उस स्थानपर निर्विघ्नतासे रहना असंभव जानकर वह जैसलमेरको भाग गये।

जिस समय जालिमसिंहके साथ भीमसिंहका युद्ध हो रहा था; जिस समय मरुक्षेत्रके समस्त सामन्तोंने विद्रोही होकर अराजकता उपस्थित की थी; जिस समय पुत्र पौत्र गणोंने आत्मविग्रहमें लिप्त होकर राठौरोंके राजवंशको कलंक लगाया

था उसी समय ३१ वर्ष मारवाडका राज्यकरके महाराज विजयसिंहने अपनी प्राणप्यारी उक्त पासवान युवतीके शोकमें संवत् १८५० में आषाढके महीनेमें शरीर त्याग दियो।

विजयसिंहकी जीवनीके सम्बन्धमें हमें केवल इतना ही कहना है कि उन्होंने युवा अवस्थामें जिस भांति बल विक्रम दिखाया था उनका शेष जीवन उसी भांति घोर कलंकसे पूर्ण था। वह यदि अपने पाटन तथा मेरताके युद्धक्षेत्रमें जाकर महाराष्ट्रोंके साथ युद्ध करते तो कभी भी उस क्षेत्रमें राठौरोंकी उस भांति पराजय न हो सकती थी, और न जयपुरकी सेना इस प्रकार कृतघ्नता दिखा सकती थी। राजाके आलस्य और भोगविलासिताके वश होनेसे जातिके भाग्यमे क्या फल होता है, विजयसिंह वृद्धावस्थामें एक कुलटा स्त्रीके प्रेममें मोहित हो उसका चूडान्त प्रमाण दिखा गये हैं। सारांश यह है कि मारवाडके सौभाग्यका सूर्य विजयसिंहके शासन समयसे एकबार ही अस्त हो गया।

---

(१) इकतीस वर्ष नहीं, महाराज विजयसिंहने इकतालीस वर्ष राज्य किया; क्योंकि उनका जन्म संवत् १७८८ में हुआ था और जिस वक्त वे राज्य सिंहानपर बैठे उस समय उनकी अवस्था २० वर्षकी थी।

(२) इस अध्यायका यह पिछला अंश बहुत गड़बड़ लिखा गया है और महाराज विजयसिंह पर कई ऐसे कलंक लगाये हैं जो सर्वथा झूंठे हैं। महाराज विजयसिंहका टीक इतिहास ग्रन्थ कर्त्ताओंको ज्ञात न होनेसे उन्हे बहुत सी कल्पनाएं करनी पडी हैं। ऐसे ही महाराज अजितसिंहका इतिहास भी उनको मालूम नहीं था इसी लिये उन्होंने पोकरणके ठाकुर देवीसिंहको उक्त महाराज का बेटा माना है, महाराज विजयसिंहके बेटोंके नाम भी यथार्थरूपसे नहीं लिखे। बड़ा बेटा उनका युवराज भीमसिंह ही था। वह जब मर गया तो उसके बेटे भीमसिंहको महाराज विजयसिंहने युवराज बनाया। जालिमसिंहका कोई हक्क युवराज बननेका नहीं था। उसकी मा उदयपुरकी जरूर थी मगर उदयपुरवाले जयपुर और जोधपुरके राजाओंसे जो यह शर्त कराया करते थे कि उनका दोहिता या भानजा ही गद्दीका मालिक हो सो कभी वह पूरी नहीं हुई। यह एक नाममात्रकी शर्त राणाजीको राजी रखनेके लिये थी और इसीसे कर्नल टाडने जालिमसिंहको गद्दीका मालिक मानकर तर्कवितर्क किए हैं। पर जालिमसिंह, भीमसिंह गुमानसिंह और फतहसिंह तीनोंसे छोटा था, इस लिये महाराज विजयसिंहने इन तीन बेटोंके होते हुए उसको कभी युवराज नहीं किया था। भीमसिंहको युवराज करनेके पीछे उसका क्रूर स्वभाव और भाई बन्धुओंसे द्वेष देखकर महाराजने अपने दूसरे कुँवरके बेटे मानसिंहको, जो बापके मरजानेसे अनाथ अवस्थामें था, पासवान गुलाबरायको सौंपकर उसे गुप्तरूपसे जालोरमें भेज दिया था। क्योंकि वह जानते थे कि भीमसिंह राजा होकर सपिंडियोंको जीता नहीं छोडेगा। भीमसिंह गुलाबरायका भी द्वेषी था और पोकरणके ठाकुर सवाईसिंहके कहने पर चलता था जो अपने बाप दादोंके हरामखोरीसे मारेजानेसे महाराज विजयसिंहका द्वेषी था और जैसे उसके दादा देवीसिंहने उपद्रव उठाया था वह भी वैसे ही किया चाहता था। उसीने मारवाडके कई सरदारोंको बहकाकर भीमसिंहके सानुकूल और महाराजके प्रतिकूल कर दिया था। उसी बखेडेमें पासवान गुलाबराय भी मारी गई थीं और अन्तमें भीमसिंह भी जोधपुरसे निकाला गया। यह सब वृत्तान्त महाराज विजयसिंहके गद्यइतिहासमें यथा समय लिखे गये हैं।

चौदहवाँ अध्याय १४.

भीमसिंहका मारवाडके सिंहासन पर अधिकार; उनके प्रतियोगी जालिमसिंहका हताश होना; भीमसिंहका मानसिंहके अतिरिक्त मारवाड सिंहासनके प्रार्थी अन्यसबके जीवनका नाशकरना; जालौर पर आक्रमण; भोजन संग्रह करनेके लिये बन्द किलेमेंसे सेनाका बाहर जाना; कुमार मानसिंहका उस सेनापर नेतृत्व; मानसिंहके बन्दीदशामें पतन होनेकी संभावना; आहोरके सामन्तों का मानसिंहका उद्धार साधन; राजा भीमसिंहके आचरणसे सामन्तोंको असन्तोष; सामन्तोंका मारबाड़को छोडना; नीमाजपर आक्रमण; जालौर देशमें आत्म समर्पणकी पूर्व सूचना; राजा भीमसिंहकी अकस्मात् मृत्यु; मानसिंहका सिंहासन पर अधिकार; पोकरणके सवाईसिंहकी विद्रोहिता; चोपासनी नामक स्थानमें षडयन्त्र; राजा भीमकी रानीके गर्भसमाचारका प्रचार; राजा मानसिंहके साथ व्यवस्था करना; भीमसिंहकी कन्याका जन्म नवजात राजकुमारका गुप्तभावसे पोकरणमें भेजना और उनके जन्मसम्बादको गुप्त रखना; नवीन राजकुमारका धौंकलसिंह नाम रखना; पूर्व नियत किये हुए व्यवस्थाके मतसे कार्य करनेके लिये राणा मानसिंहके निकट सामन्तोंका प्रस्ताव; भीमसिंहकी रानीका धौंकलसिंहको अपने अधीश्वर अभयसिंहके पास भेजना; सवाईसिंहका फिर गुप्तभावसे षड़यन्त्रका विस्तार करना; सवाईसिंहका आमेर और मेवाडके दोनों अधीश्वरोंके साथ मानसिंहका विवादानल प्रज्ज्वलित करना; उनका धौंकलसिंहको लेकर जयपुरमें जाना; उसको मारवाडका अधीश्वर कहकर घोषणा करना; धौंकलसिंहके पक्षमें अधिकतर राठौरके सामन्तोंका मिलना; बीकानेरके अधिपतिका धौंकलसिंहका पक्ष समर्थन; रणक्षेत्रमें सेनाका बुलाना; हुलकरकी नीचता; उनके द्वारा राजा मानसिंहके पक्षका छोडना; युद्ध प्रारंभ; सामन्तोंका मानसिंहके पक्षको छोडना; मानसिंहकी आत्महत्याका उद्योग; राजा मानसिंहका भाग जाना; मानसिंहका जोधपुरमें जाना; अपनी रक्षाकी तैयारी; समस्त कुटुम्बियोंके ऊपर मानसिंहका सन्देह; उनको किलेकी रक्षामें नियत करनेके लिये असम्मति देना; शत्रुओंके साथ उनका सम्मिलन और जोधपुरका घेरना; जोधपुर नगर लूटकर उसपर अपना अधिकार करना; अवरोधकारियोंको कष्ट; मीरखांके आचरणसे आक्रमण करनेवालोंमें अनैक्यता; उनका मारवाडसे भागना; जयपुरके सेनापतिका उनका अनुसरण; युद्ध; जयपुरकी सेनाको विध्वंस करके नगरका घेरना; जयपुरके महाराजका विपत्ति देखकर महाभयभीत्ति होना; जोधपुरका अवरोध छोडना; जयपुरमें निर्विघ्नितासे जानेके लिये २०००००० रुपये देनेमें बाध्य होना; जयपुरकी सेनाने जोधपुरके जो द्रव्य लूट लिये थे राठौरगणोंका उनपर फिर अधिकार करना; मीरखांका राजा मानसिंहके अधीनमें नियुक्त होना, तथा चार राठौर सामन्तोंके साथ जोधपुर जाना ।

जिस समय महाराज विजयसिंहकी मृत्यु हो गई, उस समय उनके पौत्र भीमसिंह जो राज्यसे निकाले जाकर जैसलमेरमें रहते थे । वह विजयसिंहकी मृत्युका समाचार पाते ही तुरन्त ही अपने सेवकोंके साथ बाईस घंटेके भीतर शीघ्रतासे जोधपुरमें आ गये, और उन्होंने सिंहासनपर अपना अधिकार कर लिया। विजयसिंहके मध्यम पुत्र जालिमसिंह जो शास्त्रके मतसे मारवाडके सिंहासनके उत्तराधिकारी थे वह भी

पिताकी मृत्युका समाचार पाते ही राजधानीमें आनेके लिये चले। उन्होंने मेरता नामक स्थानमें आकर शुभ दिन और शुभ मुहूर्त्तमें प्रवेश करनेका विचार किया था, यह उन्हें स्वप्नमें भी ध्यान नहीं था कि चतुर भीमसिंह इतनी जलदी जैसलमेरसे आजाँयगे; इस कारण जैसे ही वह शुभ मुहूर्त्तमें राजधानीकी ओरको बढे कि वैसे ही तोरणद्वारके नक्कारेके शब्दसे तथा प्रजाके मुखसे सुना, कि भीमसिंहने अपने शिरपर मारवाडका राजमुकुट धारण किया है। जालिमसिंहकी सम्पूर्ण आशा मानो एकबार ही विलीन हो गई, पिताके सिंहासन पर अब अधिकार करनेकी उनको कुछ भी आशा न रही। जालिमसिंह सिंहासन प्राप्तिके लिये आये हैं, यह सुनते ही महाराज भीमसिंहने तुरन्त ही एक प्रबल सेना भेजकर उनको पकड लानेकी आज्ञा दी। सिंहासन पाना तो दूर रहा, अपने प्राणोंका बचना कठिन जानकर जालिमसिंह शीघ्र ही नगर द्वारसे प्राणोंके भयसे भागने लगे। मारवाडके सामन्त यदि उनकी सहायता करते, यदि प्रजा उनको मरुक्षेत्रका उत्तराधिकारी कहकर उनपर राजभक्ति दिखाती तो कभी भी वह इस भावसे पीठ नहीं दिखाते, अवश्य ही पिताके सिंहासनपर अधिकार करनेके लिये रणक्षेत्रमें अन्तिम बल प्रकाश करते। जालिमसिंह जोधपुरको छोडकर बीलाडा तक बराबर भागे, भीमसिंहकी सेनाने वहीं जाकर उनपर आक्रमण कर उन्हें एकबार ही परास्त कर दिया। परास्त हुए जालिमसिंह अपने प्राणोंके भयसे उक्तस्थानसे उदयपुरमें आकर राणाकी शरणमें गये। मेवाडके महाराणा भी इस समय हीनबल हो गये थे; मेवाडके चारोंओर अशान्तिका पूर्ण अधिकार हो गया था। इसी कारण उन्होंने अपने भानजे जालिमसिंहको न्यायपूर्वक स्वार्थ पूर्ण करनेके लिये ससोदिया सेनाको मारवाडमें नहीं भेजा। उन्होंने जालिमसिंहको आजीविकाके लिये अपने राज्यके एक बडे देशका अधिकार दे दिया। जालिमसिंह एक बडे विद्वान् और पण्डित पुरुष थे, नीतिके जाननेवाले कवि और इतिहासवेत्ता भी थे। वह उस अधिकारको पाकर काव्यशास्त्रकी आलोचनामें समय व्यतीत करने लगे। परन्तु वह बहुत दिनतक जीवित न रहे, उन्होंने अपने हाथसे एक नस काट डाली थी तथा एक रक्त वाहिका नाडीको काट डाला था, इसी कारण अधिक रुधिरके निकलनेसे युवा अवस्थामें ही वह इस संसारको छोड गये।

महाराज भीमसिंह जैसे ही मारवाडके सिंहासनपर बठे वैसे ही दुष्टाचारी औरंगजेबके समान संहारमूर्ति धारण करके, राठौर राजवंशमें जो शोचनीय कांड कभी नहीं हुआ था इन्होंने उसी प्रकारके निन्दनीय कार्य करने प्रारंभ किये। ऐसा विदित होता है कि मानो औरंगजेबकी प्रेत आत्माने आकर भीमसिंहके शरीरका आश्रय लिया था। इनका जैसा भीम नाम था, उसी प्रकारसे इन्होंने कार्योंमें भी भीम

---

(१) जालिमसिंहका वृत्तान्त पाठकोंने प्रथम कांडमें यथास्थान पढा होगा। पाठकोंको यह स्मरण हो सकता है, कि महात्मा टाड साहबके गुरू यति ज्ञानचन्द्र इन जालिमसिंहके विद्यार्थी थे। ज्ञानचन्द्रने इनसे ही रजवाडेके समस्त जानने योग्य विषयोंकी शिक्षा पाई थी।

अभिनय प्रारंभ कर दिया। जिस भांति औरंगजेबने भारतवर्षमें निष्कंटक राज्य भोगनेके लिये अपने जन्मदाता पिताको बन्दी कर अपने सगे भाईयोंकी हत्या की थी, उसी प्रकारसे भीमसिंहने भी निर्विघ्नतासे मारवाडका राज्य भोगनेके लिये उन म्लेच्छ यवनोंके अनुकरणसे पवित्र राठौर वंशके नामको कलंकित करनेमें किंचितूमात्र भी विलम्ब न किया। मारवाडके सिंहासनके यथार्थ उत्तराधिकारी जालिमसिंहको भगाकर उन्होंने विचारा कि चचा गणोंके जीवित रहते हुए निष्कण्टक होनेका उपाय नहीं है, इस कारण वह हृदयभेदी उपायसे स्वार्थसाधन करनेके लिये अग्रसर हुए। विजयसिंहने जिस समय प्राण त्याग किये उस समय उनके सात पुत्रोंमें केवल जालिमसिंह सरदारसिंह ही जीवित थे; फतेसिंह, सामन्तसिंह, भीमसिंहके पिता भोमसिंह और गुमानसिंह, इनकी मृत्यु पहले ही हो गई थी। भीमसिंहने जालिमसिंहको भगाकर देखा कि सरदारसिंह और शेरसिंह जिन्होंने इनको दत्तकरूपसे ग्रहण किया था, यही दोनों जने सिंहासनके कंटकस्वरूप हैं इस कारण भीमसिंहने सबसे पहले अपने चाचा सरदारसिंहके प्राणोंका नाश करके अपनी पिशाच प्रकृतिका परिचय दिया। पीछे शेरसिंहको मारा जिसने भीमसिंहको दकत्तरूपसे ग्रहण किया था। भीमसिंहने समस्त माया ममता और वाध्यवाधकताके सम्बन्धको छोडकर नरराक्षस औरंगजेबके समान उन शेरसिंहके दोनो नेत्र निकलवा लिए। शेरसिंहने अत्यन्त दुःखित हो अपने दत्तकपुत्रके द्वारा ऐसा भयंकर दंड पाकर दीवारमें अपना शिर देमारा; इसीके आघातसे उनके प्राण पयान कर गये। पिशाचप्रकृति भीमसिंहने इस प्रकारसे अपने तीन तातोंको मारकर अंतमें विचारा कि सामन्तसिंहके पुत्र सूरसिंह और गुमानसिंहके पुत्र मानसिंह, जिन्हें पासवान युवतीने गोद लिया था, और विजयसिंहने जिनको मरुक्षेत्रका भावी अधीश्वर नियुक्त किया था; ये दोनों अभी जीवित हैं। सूरसिंह अपने गुणोंसे सभीके प्रियपात्र हो गये थे, और यह भीमसिंहके बडे भाईके भी पुत्र थे इस कारण राजसिंहासन पर सबसे पहले इन्हींका अधिकार हो सकता था यह विचारकर पापात्मा भीमसिंहने उनका संहार करनेमें भी क्षणमात्रका विलम्ब न किया।

राठौर राजकुल कलंक भीमसिंहने पापकलुषित आत्मा औरंगजेबके समान इस प्रकारसे लोमहर्षण हत्याकांड करनेके पीछे देखा कि उनके संकटस्वरूप एकमात्र मानसिंह जीवित हैं। युवक मानसिंह उस समय जालौरके अभेद्य किलेमें थे, इस कारण पापात्मा भीमसिंहने उनके प्राणनाशका सरल उपाय न देखकर शीघ्र ही सेना साथ ले उस किलेको जा घेरा। मारवाडमें जालौरका किला जैसा मजबूत था उसी भाँति अभेद्य भी था। शत्रुओंका उस किलेपर सरलतासे अधिकार नहीं हो सकता था; भीमसिंहने यद्यपि उस किलेको जाकर घेर लिया परंतु उनका मनोरथ पूर्ण न हो सका, वह शीघ्र ही जान गये कि मरुक्षेत्रकी अधिकसंख्यक राठौर सामंतोंकी अधीन सेना और वेतनभोगी सेना जालौरको घेर कर कई महीनेतक अनेक

उपाय करके भी अपने मनोरथको सफल न कर सकी थीं। भीमसिंह जानगये कि इस किलेपर अधिकार करना कुछ सरल बात नहीं है, तब सेना नायकको इस किलेके घेरनेका भार सौंपकर आप अपने नगरको लौट आये। वह सेनानायक दीर्घकालतक किलेको घेरे हुए पडा रहा, भीमसिंहकी सेना नियमित रूपसे किलेको चारों ओरसे घेरकर छिन्नभिन्न भावसे रहने लगी। युवक मानसिंहके अधीनमें इतनी अधिक सेना नहीं थी, न इतने अधिक सामन्त ही थे कि उनकी सहायतोंसे वह किलेसे बाहर होकर भीमसिंहकी सेनाके साथ युद्ध करके सिंहासनपर अधिकार कर लेते, इसी कारण अपनी रक्षा कर लेना ही उन्होंने अपना कर्तव्य समझा। इस प्रकारसे धीरे २ कई महीने व्यतीत हो गये, किलेमें भलीभांति से बँधकर रहना असम्भव था, अधिकतर भोजनकी सामग्रीके विना बहुत कालतक रहनेकी किसीमें भी सामर्थ्य न थी। भोजन की आवश्यक सामग्री भलीभांतिसे किलेमें नहीं मिलसकती थी। भीमसिंहने जब देखा कि अधिक सेनाके होनेसे भी इस अभेद्य जालौरके किलेपर अधिकार करना सर्वथा असंभव है तब उन्होंने दीर्घकाल तक किलेको घेरकर मानसिंहको सेनासहित भूखोंमारकर नष्ट करनका विचार किया था परन्तु पहले ही कह चुके है कि अवरोधकारी सेनादल दीर्घकाल तक अवरोधताके मूत्रसे अपने कार्यसाधनमें हतउद्योग हो गया था, युवक मानसिंह यह सुभीता पाकर कितनी ही सेना साथ ले मारवाडकी खास भूमिमें जाकर प्रजाकी समस्त धन सम्पत्तिको लूटने तथा प्रयोजनीयखाद्य पदार्थोंका संग्रह करके लाने लगे, भीमसिंहकी सेना इनपर कुछ भी हस्ताक्षेप न करसकी। एक बार नहीं, दो बार नहीं, जभी खाद्यद्रव्योंके संग्रह करनेका प्रयोजन होता था मानसिंह उसी समय सुभीता पाकर गुप्तभावसे अपने अनुचरोंके साथ बाहर जाकर अपना कार्य साधन करके फिर किलेमें आकर रहने लगते थे। परन्तु बारम्बार इस प्रकारसे कार्य करनेके कारण एक बार मानसिंहका जीवन महा संकटमें पड गया, मानसिंह पहलेबारके समान अपने सेवकोंके साथ पालीनामक वाणिज्य-प्रधान नगरको लूटनेके लिये बाहर गये; कार्यसाधन करके जैसे ही लौटे, कि वैसे ही भीमसिंहकी सेनाने इनके ऊपर आकर आक्रमण किया। मानसिंह बालकपनसे ही किलेमें रहते थे, इस कारण राजपूत जातिके समान उनमें पूर्ण साहस तथा बलविक्रम होनेपर भी उन्हें युद्धकी रीति नीति और विरक्तिके समयमें क्या करना कर्त्तव्य है वह कुछ भी मालूम न था केवल विद्याकी शिक्षासे ही उनकी मानसिक उन्नति हुई थी। जिस समय भीमसिंहकी सेनाने मानसिंह पर आक्रमण किया, उस समय मानसिंह घोडेपर सवार नहीं थे, इस कारण शत्रुओंकी सेना उनको पकडनेके लिये तैयार हो गई। मानसिंहको शत्रुओंके हाथमें पडा हुआ देखकर जो सामन्त मानसिंहके साथमें थे, उन्होंने अपनी बुद्धिबलसे उसी समय मानसिंहका हाथ पकडकर उनको अपने घोडेपर चढा लिया, और शीघ्रतासे भगाकर अपने और उनके प्राणोंकी रक्षा की। आहोरके सामन्त इस प्रकार निर्विघ्नतासे जालौरके किलेमें आ गये, तब भीमसिंहकी सेनाकी आशा व्यर्थ हो गई।

राजस्थानके राज्यसिंहासनको लेनेके लिये जब कभी दो राजकुमारोंमें बडा

झगडा मचता था तभी अपना प्रताप तथा प्रभुता विस्तार करनेके लिए सामन्तश्रेणी भी भिन्न भिन्न पक्ष अवलम्बन करके दल बद्ध हो जाती थी। भीमसिंह और मानसिंहने इस समय मारवाडके सिंहासनकी प्राप्तिके लिये विशेष चेष्टा की थी, इसीसे मरुक्षेत्रके सामन्तोंने भी उसी प्रकारसे दोनों ओरका साथ दिया था। परन्तु भीमसिंहको अधिक प्रबल साहसी और वीर देखकर बहुतसे सामन्त इनके पक्षको छोडकर मानसिंहके पक्षमें जा मिले। परन्तु जिन सब सामन्तोंने भीमसिंहका साथ दिया था, वह राजसिंहासन लेनेके लिये दोनोंमें झगडा होता हुआ देखकर शुभ और सुअवसर जान अपनी अधिक सामर्थ्यको संचय कर तथा राजाके ऊपर प्रभुत्व करनेवाले हो गये। सारांश यह है कि "भीमसिंह जिससे हमारी सम्मतिके अनुसार कार्य करें, जिससे उनकी सहायता इस समय विशेष उचित जानकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण करनेमें आग्रहके साथ नियुक्त रहें," सामन्तोंकी एकमात्र यही इच्छा हो गई परन्तु राजाभीमसिंहने सामन्तोंके अधिकार बढानेमें कुछ सहायता न करके स्वयं पग २ पर उनको अपने पैरोंके नीचे मोल लिये हुए दासके समान रखनेकी विशेष चेष्टा की, इससे सामन्त इनके ऊपर अधिक अप्रसन्न होने लगे। रामसिंह जैसे उद्धत स्वभावके मनुष्य थे, तथा सामन्तोंके ऊपर जैसा अप्रीतिकारक व्यवहार करते थ, भीमसिंह भी उसी प्रकारसे उद्धत आचरण करने लगे। इन्होंने जिन सामन्तोंको जालौरमें अधिकार करनेके लिये नियुक्तकर रक्खा था उनको हतउद्योग देखकर (वर्षके ऊपर वर्ष बीत गया, तथापि मानसिंहको वह लोग बंदी न कर सके, तब) महा-क्रोधित होकर आज्ञा दी। "कि जो सामन्त जालौर पर अधिकार करनेके लिये नियुक्त हैं, वह कदापि वीर नहीं हो सकते, वे लोग घोडोंपर चढने योग्य नहीं हैं, इसलिये घोडोंके बदलेमें उनके चढनेके लिये बैल दिये जायँ ?।" भीमसिंहसे इस प्रकार अपमानित हो, सामन्तोंका शरीर क्रोधानलसे प्रज्ज्वलित होने लगा। महात्मा टाड साहब कहत हैं कि "राजा भीमसिंहके साथ यदि सामन्तोंका इस प्रकार झगडा न होता तो इस भावसे दीर्घकाल तक जालौरके किलेकी रक्षा करना मानसिंहके पक्षमें अवश्य ही असंभव हो जाता और उन्हें भी अन्यान्य कुटुम्बियोंके समान भीमसिंहकी क्रोधाग्निमें भस्मीभूत होना पडता। राजा भीमसिंहने सामन्तोंको उस भावसे घोडोंके बदलेमें बैल देनेकी आज्ञा देकर उनको अपमानित किया था। इससे सामन्त उसी समय रणभूमिको छोडकर सकुटुम्ब गोडवाडके प्रधान देश घाणेरावको चले गये। भीमसिंह और मानसिंह इन दोनोंके ही ऊपर सामन्त अत्यन्त अप्रसन्न हुए, इसीसे अपनी जन्मभूमिको छोडकर पासके ग्राममें जाकर रहने लगे। इधर भीमसिंह सामन्तोंके इस आचरणसे अत्यन्त ही क्रोधित हो गये और उनकी बहुत सी जमीन अपने अधिकारमें कर ली। और मरुक्षेत्रके अन्य प्रधान वीर नेता उदावत् सम्प्रदायके सामन्तोंके अधिकारी नीमाज पर आक्रमण और अधिकार करनेके लिये आज्ञा दी। परन्तु उदावत् सम्प्रदाय क्रमानुसार एक वर्ष तक अतुल बलविक्रम प्रकाश करके भीमसिंहकी सेनाके हाथसे नीमाज दुर्गकी रक्षाके

पहले ही पराजय स्वीकार करचुकी थी । नीमाज दुर्गपर अधिकार करते ही भीमसिंहने उसे तुडवाकर एकसा मैदान कर दिया । नीमाजके किलेपर अधिकार करनेके लिये वेतनभोगी विजातीय बहुत सी सेना नियुक्त थी, भीमसिंहने उसको वहांसे जालौरपर अधिकार करनेके लिये भेज दिया ।

विजयी वेतनभोगी सेनाने दुगने उत्साहके साथ जालौर और वहांके किलेपर अधिकार करनेके लिये बडी शीघ्रतासे चली और थोडे दिनोंमें ही उसने जालौर नगर पर अधिकार कर लिया । मानसिंहका आशा भरोसा इस समय मानो एकबार ही लुप्त होगया । उस संख्यावद्ध सेनाके साथ किलेमें आवद्ध रहकर वे उसी समय अपने भाग्यपतनके तथा संसारको छोडनेके पूर्व लक्षण देखने लगे ! मरुक्षेत्रकी जो सामन्त मंडली तथा प्रजावर्ग मानसिंहके अनुकूल पक्षकी थी, राजा भीमसिंहने इस समय उसको मरुक्षेत्रसे निकाल दिया था, इस कारण किलेके बाहरी भागसे किसीसे भी सहायता मिलनेकी आशा न रही । किलेके भीतर जो सेना बराबर कई वर्ष तक घिरी हुई थी, जिसने मानसिंहके साथमें अनेक प्रकारके कष्ट भोग किये थे, उसने न जाने किस भांति आधे पेट भोजनके मिलनेसे प्राण धारण करके उनके जीवन की रक्षामें सहायता की थी; इस समय समस्त भोजनकी सामग्री समाप्त हो गई, तथा भीमसिंहकी सेनाने प्रबल रूपसे किलेको घेर लिया, अब पहलेके समान बाहर जाकर भोजनका संग्रह करना भी एकबार ही असम्भव हो गया । क्या तो भोजनके न मिलनेसे इस समय प्राणत्याग करने होंगे, और क्या शत्रुओंके हाथमें आत्मसमर्पण करना होगा, यह विचार करने लगे; विषादित हृदयसे मानसिंह उस संख्यावद्ध सेनाके साथ घोर दुर्दिनमें चारोंओर निराशकी भयंकर मूर्ति देख रहे थे, इसी समयमें अवरोधकारी सेनादलके प्रधान नेताने एक दूतको किलेमें भेजकर उसके द्वारा कहला भेजा, "महाराज ! आप किलेको छोडकर डेरोंमें आजाइये, आप ही इस समय हमारे प्रभु हैं; आपकी आज्ञा पालन करना ही हमारा कर्त्तव्य कर्म है ।" इष्ट मित्र और बन्धु बांधवोंको छोडकर निःसहाय सम्पत्तिहीन मानसिंह क्रमानुसार ग्यारह वर्षतक जालोरके किलेके भीतर महा कष्ट भोगते हुए रहे, पीछे उसी संवत् में कार्तिक मासके आठवें दिन (सन् १८०४ ईसवीके दिसम्बर महीनेमें) यह समाचार मिला, कि राजा भीमसिंहकी मृत्यु होगई हैं । इस शुभ समाचारको सुनकर मानसिंहको पहले तो किसी भांति विश्वास न हुआ । यद्यपि यह अवरोधकारी सेनादलके प्रधान नायकका दूत था, इसने राजमन्त्री इन्द्राजके हस्ताक्षर सहित पत्रको लाकर मानसिंहके हाथमें दिया; तथापि मानसिंहके हृदयमें विषम सन्देह उपस्थित होने लगा । उन्होंने विचारा कि भीमसिंहने अपनी चातुरीजालका विस्तारकर उनको बन्दी करनेके लिये ही इस प्रकारका उपाय किया है । अन्तमें राजगुरु देवनाथको राजाभीमसिंहकी मृत्युके समाचारके सत्यासत्यकी जांच करनेके लिये, शत्रुओंके डेरोंमें भेज दिया, उनके लौट आनेपर मानसिंह सत्य ही अपनी भाग्य—लक्ष्मीको प्रसन्न जानकर आनन्दके मारे व्याकुल हो किलेसे

बाहर हुए। जो राठौरोंकी सेना उनको बन्दी करनेके लिये ग्यारहं वर्षतक नियुक्त थी, वह इस समय, मानसिंहको देखकर महा आनन्दित हुई, और उसने खडे होकर इनका सम्मान बढाया।

संवत् १८६० में माघमासके पांचवें दिन, शुभदिन और शुभ मुहूर्त्तमें मानसिंहके मस्तकपर राजतिलक किया गया। यद्यपि मानसिंह मरुक्षेत्रके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए, परन्तु उनके ही शासन समयसे मारवाडके इतिहासका शोचनीय अध्याय आरम्भ हुआ है; उनकी विचित्र लीला और गुणोंसे मारवाड एकबार ही विध्वंस होगया था; उन्हींके शासनसे राठौर जातिका चिरप्रसिद्ध बलविक्रम शूरवीरता मानो चिरकालके लिये अस्त हो गई; और उन्हींके शासनसमयसे राठौर जातिकी स्वाधीनताका सूर्य एकबार ही अस्त होकर गिरिगुफामें जा छिपा। राजा मानसिंहके शिरपर राजछत्र शोभायमान होनेके कुछ ही दिन पीछे भविष्यके लिये महा अनिष्टकारी मारवाडके विध्वंसका बीज बोया गया। आशा है कि पोकरणके महा तेजस्वी सामन्त देवीसिंहका नाम पाठकोंको भलीभांतिसे स्मरण होगा। मानसिंहके पितामह विजयसिंहने किस प्रकारके उपायसे देवीसिंहको बन्दीकरके उनके जीवनका विनाश किया था; और उन्हीं देवीसिंहके प्राणनाशके कारण उनके पुत्र सबलसिंह उनसे बदला लेनेके लिये किसप्रकार रुद्रमूर्तिसे रंगभूमिमें गये थे, तथा अन्तमें जीवन त्याग किया था, उसका वर्णन पहले ही करचुके हैं। पोकरणके सामन्त—वंश मारवाडकी दूसरी श्रेणीके सामन्तरूपसे चुनेगये हैं, और इन्होंने अपनी अतुल सामर्थ्य चलाई, इसका फिर उल्लेख करना निष्प्रयोजन है, मानसिंह जिस समय सिंहासन पर विराजमान हुए उस समय उन निहत देवीसिंहके पौत्र सबलसिंहके पुत्र सवाई-सिंह पोकरणके सामन्त पदपर चांपावतोंकी सहायतासे प्रबलपराक्रमके साथ रहते थे। देवीसिंहने जिस प्रकार गर्वपूर्ण वचनसे कहा कि "मारवाडका सिंहासन मेरी तलवारमें है" और मृत्युके समय कह गये कि "पोकरणमें मेरे पुत्र सबलकी तलवारमें मरुक्षेत्रका सिंहासन रहेगा" इस प्रकारसे सवाईसिंहने अपने पितामह देवीसिंह और पिता सबलसिंहका बदला लेनेके लिये मानसिंहके अभिषेकके पीछे सबसे पहले मारवाडके विध्वंसका बीज बोदिया। पितृपुरुषोंके प्रतिहिंसावृत्तिको चरितार्थ करना यदि इस संसारमें धर्म कहा गया है तब तो इस विषयमें सवाईसिंह अत्यन्त धार्मिक होसकते हैं। मानसिंहके अभिषेकसे उनकी मृत्युके समय तक सवाईसिंहने मानसिंहके शिरपर तीक्ष्ण तलवार रक्खी थी। मानसिंहके सिंहासनपर बैठनेके कुछ ही कालपीछे शान्तिसुखन भोगकर सवाईसिंह असंतुष्ट होराजसभाको छोडकरअपना मनोरथ पूर्ण करनेकी चिन्तामें उन्मत्त होगये। इन्होंने सबसे पहले जोधपुरकी राजधानीसे ढाईकोस दूर चोपासनी नामक स्थानमें अपनी सब सम्प्रदायोंको बुलाकर षडयन्त्र जालका फैलाना आरम्भ कर दिया। उपस्थित सामन्तोंको बुलाकर कहा, "मृतमहाराज भीमसिंहकी रानी गर्भवती हैं, इस कारण आप सभी एकमत होकर यह प्रतिज्ञा कीजिये कि यदि रानीके पुत्र उत्पन्न होगा तो मानसिंहको सिंहासनसे उतार कर उसीको

राजतिलक दिया जायगा ।" सवाईसिंह रणकुशल योधा थे, तथा महावीर और नीतिके जाननेवाले भी थे, इस कारण उनके उद्देश, उपदेश और उत्तेजनासे सभी सामन्तोंने एकमत होकर अपनी सम्मति प्रकाशित की, कि हम सभी लोग आपके प्रस्तावमें सम्मत हैं, अंतमें सम्मतिपत्र पर अपने २ नामके हस्ताक्षर भी कर दिये। सवाईसिंहने इस प्रकार सबसे पहले सफलता प्राप्त करके शीघ्र ही उस सामन्त मंडलीके साथ किलेमें से भीमसिंहकी गर्भवती रानीको लाकर नगरमें बडी सावधानीसे एक महलमें रख दिया । अंतमें उस सामन्त मंडलीने एक सम्मतिमें राजा मानसिंहके सामने उन भीमसिंहकी रानीके गर्भका समाचार कहा, यदि रानीके पुत्र होगा तो उनको मारवाडके सिंहासनका भावी उत्तराधिकारी रूपसे स्वीकार करना होगा । चतुर मानसिंह इस बातको भालीभाँतिसे जान गये थे कि यदि इस विषयमें मैंने अपनी असम्मति प्रकाश की तो सभी सामन्त मुझसे विरुद्ध हो जाँयगे; इस कारण उन्होंने उसी समय कहा, कि "यदि रानीके पुत्र होगा तो वही मरुक्षेत्रका उत्तराधिकारी होगा, और कुमारके जन्म लेनेसे उनकी पद मर्यादा बढानेके लिये नागौर और सिवाना ये दोनों उनको दिये जाँयगे, और यदि रानीके कन्या हुई तो ढुंढारके राजकुमारके साथ उसका विवाह कर दिया जायगा ।" राजा मानसिंहकी इस प्रतिज्ञासे सामन्तोंने किसी प्रकारकी आपत्ति करनेका प्रयोजन न समझा, और पोकरणके सामन्तने भी उस समय अपनी प्रतिहिंसावृत्तिको चरितार्थ करनेका कोई उपाय न देखा । रानीने यदि पुत्र उत्पन्न किया तो उनकी आशाके पूर्ण होनेमें विशेष सुभीता मिल जायगा, इसी आशासे धीरज धरकर वे समयकी बाट देखने लगे ।

राजाके परलोकवासी होनेके पीछे विधवा रानियोंके औरसजात सन्तान उत्पन्न करते ही राजपूत राज्यमें बडी हलचल मच जाती थी, उन नवप्रसूत राजकुमारके स्वार्थ साधनके लिये सामन्त मण्डलीकी प्राय: एक २ सम्प्रदाय उनके पक्षमें जाकर आत्मविग्रह और अंतमें जातीय युद्धतक उपस्थित कर देती थी। ऐसी अवस्थामें गर्भवती रानियाँ प्राय:पुत्र ही उत्पन्न करती हैं, "और जो रानीके कन्या उत्पन्न हुई तो उसी समय किसी औरके गर्भजात पुत्रको लाकर, रानीके यह पुत्र उत्पन्न हुआ है, ऐसा प्रचार करते थे या नहीं," यद्यपि महात्मा टाड साहबने इसका वर्णन नहीं किया है, परन्तु उनकी कथाके भावसे यही समझा जाता है । वह जो कुछ हो, ठीक समयमें भीमसिंहकी रानीके पुत्र उत्पन्न हुआ । राजा मानसिंह नवीन कुमारके कोमल जीवनकमलको नष्ट कर देंगे, इस भयसे राजमहिषीने कुमारको एक टोकरीमें रखकर अत्यन्त विश्वासी सेवकके द्वारा उसे पोकरणमें सवाईसिंहके पास भेज दिया । पोकर्णके सामन्त उस नवीन कुमारको पाकर अत्यन्त प्रसन्न चित्त हुए, और बडी सावधानीसे उनका लालन पालन करने लगे परन्तु प्रकाशमें उन्होंने दो वर्षतक राजकुमारके जन्मका वृत्तान्त गुप्त रक्खा । कर्नल टाड साहब लिखेत हैं, "कि यदि महाराज मानसिंह अतीत घटनाको भूलकर सबके ऊपर न्याय करते, और सामन्तोंसे विद्वेषभाव प्रकाश कर भीमसिंहके शासन समयमें जिन

सामन्तोंने उनका साथ न देकर भीमसिंहके पक्षका अवलम्बन किया था, उनके साथ असद्व्यवहार न करते तो इन नवीन कुमार धौंकलसिंहके जन्मका वृत्तान्त चिर दिन तक गुप्त रक्खा जा सकता । राजा मानसिंहने राज्यमें अपनी शासन शक्तिको भलीभांतिसे दृढ करके, जिन सामन्तोंने इनके साथ जालौरके किलेमें बंदीभावसे रहकर इनकी विशेष सहायता की थी, केवल उन्हीं सब सामन्तोंको ऊँचापद सम्मान और मर्यादा दी थी तथा जो सामन्त भीमसिंहकी आज्ञाके अनुसार उनके विपक्षमें खडे हुए थे, उन्होंने सरलतासे उनके ऊपर विराग दिखाना प्रारंभ कर दिया । राजा मानसिंहका साथ केवल उनके स्वजातीय दो प्रधान सामन्तोंने दिया था । उनके पक्षका अवलम्बन करनेवालोंमें भाटी जातीय राजपूत सेना तथा महन्त कायमदासके अधीनमें स्थित विष्णुस्वामी नामक सेनादल भी था ।

राजा मानसिंहने अपने अनुगत सामन्तोंके प्रति विशेष कृपा प्रकाश की, और अन्य सामन्तोंके ऊपर वे अधिक रुष्ट रहने लगे, इस व्यवहारसे पोकरणके सामन्त सवाईसिंहके हृदयमें वह भस्माच्छन्न प्रतिहिंसाकी अग्नि फिर प्रबल हो गई । वह इतने दिनोंतक मानसिंहको किसी भाँति भी सामन्त मंडलीका अप्रियपात्र होता हुआ न देख कर मौन थे, परन्तु दो वर्षके पीछे मानसिंहको पक्षपातमूलक आचरण करते हुए देखकर तथा अन्यान्य सामन्तोंको उनसे महा असंतुष्ट देखकर सवाईसिंहने शीघ्र ही अपनी सम्प्रदायके प्रधान २ नेताओंके निकट धौंकलसिंहके जन्मका वृत्तान्त, और "दो वर्षतक मैंने उनका पालन किया है" यह समाचार कहला भेजा, और उसके साथ ही साथ सबको यह भी याद दिलाई कि राजा मानसिंहने राजकुमारको जो नागौर और सिवाना देनेके लिये कहा है वह इस समय अपनी उस प्रतिज्ञाको भी पूर्ण करें । अत्यन्त अल्प समयमें ही सामन्तगण सवाईसिंहके द्वारा भेजे हुए समाचारको पाकर एक साथ मिलगये । सवाईसिंहने उनके साथ महलमें जाकर धौकल-सिंहके जन्मका समाचार राजा मानसिंहको सुना दिया. "महाराज! आपने कुमारको नागौर और सिवाना देनेके लिये कहा था, इस समय आप अपनी प्रतिज्ञाको पालन कीजिये।" भीमसिंहकी रानीके पुत्र उत्पन्न हुआ है; दो वर्ष तक मानसिंहको यह समाचार विदित नहीं हुआ था; परन्तु इस समय धौंकलसिंहके जन्मका समाचार सुनकर वह चैतन्य हो गये । मानसिंह और कोई उपाय न देखकर बोले, "धौंकलसिंह यदि वास्तवमें ही राजा भीमसिंहके औरसजात पुत्र हुए हैं तो भलीभाँति खोज करलेने पर मैं अवश्य ही अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करूँगा ।" भीमसिंहकी विधवा रानी पुत्रको पोकरणमें भेजकर आप जोधपुरके महलमें रहती थीं । राजा मानसिंह यथार्थ बातके जाननेके लिये उद्यत हुए हैं, यह सुनते ही रानी महाभयके समुद्रमें निमग्न हो गई । उन्होंने विचारा कि

(१) यह सेना दल विष्णुका भक्त था । महन्तके स्वार्थकी रक्षाके लिये इसने प्राणपणसे युद्ध किया था; आवश्यकता होनेपर महन्तकी आज्ञासे दूसरोंका साथ भी देते थे । यद्यपि धर्मार्जन ही इनके जीवनका प्रधान उद्देश्य था पर वे युद्धकार्यसे भी कदापि विमुख न होते थे ।

यदि मैं इस बातको स्वीकार करती हूँ कि, धौंकलसिंह मेरे गर्भजात पुत्र हैं तो राजा मानसिंह अवश्य ही इनको अपना शत्रु जानकर मार डालेंगे । यह विचार कर रानीने धौंकलसिंहके जीवनकी रक्षाके लिये सबके सामने कहा, कि धौंकलसिंह मेरे गर्भजात पुत्र नहीं हैं । रानीके इस प्रकार कहते ही राजा मानसिंहकी समस्त आपत्तियें मानो दूर हो गई, तथा पोकरणके सामन्त सवाईसिंहकी ऊँची आशालता भी मानो उसके साथ ही साथ एकबार ही भस्म हो गई । भीमसिंहकी रानी निश्चय ही गर्भवती थीं । पहले उन्होंने इसका कोई प्रमाण नहीं लिया था, इस कारण सामन्तगण रानीके इस वचनको सत्य जान कर,राजाके सम्मुख तैयार हो गये, और पोकरणके सामन्त भी चारोंओर अंधकार देखने लगे ।

प्रतिहिंसा दानार्थी सवाईसिंह यद्यपि भीमसिंहकी रानीकी शक्तिसे व्यर्थ मनोरथ हो गये; यद्यपि उन्होंने प्रकाशमें राजा मानसिंहके समीप कोई प्रार्थना नहीं की, यद्यपि उनको उसी समय अपने सहयोगी सामन्तोंके साथ मिलकर मानसिंहके विरुद्धमें तलवार धारण करनेका सुअवसर नहीं मिला, परन्तु वह शीघ्र ही अन्य उपाय न देखकर अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये सावधान हो गये । पितृहिंसाको चरितार्थ करनेके लिये सवाईसिंह इस समय कूट राजनीतिका अवलम्बन कर जिस प्रकारके विषोक्त षड्यंत्र जालकी सृष्टि करने लगे, उस षड्यंत्र सूत्रसे क्या विष उत्पन्न होगा, उसको वह स्थिर न कर सके ।उसी षड्यंत्रसे केवल मारवाडको विध्वंस कर दिया, यही नहीं, उसीसे सवाईसिंहने अपने धन और प्राणको भी खो दिया । विश्व-विदित राठौर जातिकी स्वाधीनता रूप अमृतराशि विजातीय विधर्मी और अत्याचारियोंके द्वारा अपहृत हुई, और राठौर जातिका वह अंतिम क्षीण गौरव भी एक बार ही चिरकालके लिये लुप्त हो गया । सवाईसिंहने एकमात्र प्रतिहिंसा वृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये विध्वंसकारी नीतिके अवलम्बनसे सबसे पहले अपनी भविष्य उन्नतिके आशा भरोसा और प्रताप प्रभुत्वको सञ्चय करनेके लिये एकमात्र उपायस्वरूप धौंकलसिंहकी निर्विघ्नतासे रक्षा करना एकान्तकर्त्तव्य जान लिया था । पोकरणका किला यद्यपि भलीभांतिसे मजबूत था तथापि वहाँ इनको दीर्घकालतक रखना असम्भव जानकर उन्होंने धौंकलसिंहको शेखावाटीमें खेतडी ले जाकर छत्रसिंहभाटीके प्रतिभू अभयसिंहके[1] पास भेज दिया । धौंकलसिंह अभयसिंहके पास निर्विघ्नतासे रह सकेंगे, यह जानकर सवाईसिंहने अपनी गुप्त अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये चातुरी जालका विस्तार प्रारम्भ कर दिया, सवाईसिंह जैसे असीम साहसी वीर थे, उसी प्रकारसे षड्यन्त्रके कौशलका फल भी शीघ्र ही प्रकाशित हुआ ।

सवाईसिंहने इतने दिनोंतक मानसिंहके विरुद्ध खडे होकर उनको यह विदित कर दिया कि येही उनके राज्यके कण्टक स्वरूप हैं और इन्हींके द्वारा विघ्नकी विशेष संभावना है, अब परम नीतिज्ञ चतुर सवाईसिंह अपने स्वार्थ साधन करनेके

---

(१) यह सेखावत् सम्प्रदायके एक अत्यन्त बलशाली प्रधान नेता थे ।

लिये इस समय उस शत्रुताको छोडकर प्रकाशितरूपसे मानसिंहके अत्यन्त अनुगत होकर उनके मनको प्रसन्न करनेमें प्रवृत्त हुए। जिससे एक शुभ सुअवसर इस समय उपस्थित हुआ। सवाईसिंह उस सुयोगका अवलम्बन करके अपनी समस्त अभिलाषाओंको पूर्ण करनेकी विशेष संभावना जानकर मानसिंहके निकट मित्रता और अनुगत्यता प्रकाश कर छिपे २ उनके सर्वनाश करनेका उपाय करने लगे। मानसिंहने विचारा "ऐसा बोध होता है, कि पोकरणके उद्धत सामन्तोंने इतने दिनोंमें अनन्य उपाय होकर सब प्रकारसे अनुकूलता स्वीकार करनी उचित जानी है, इस कारण उन्होंने सवाईसिंहके प्रति अत्यन्त प्रीतिमूलक व्यवहार करना प्रारंभ किया। बुद्धिमान् सवाईसिंहने जिस घटनाको लक्ष्य करके अपने षड्यंत्रजालकी सृष्टि गुप्तभावसे की थी, इस समय वही घटना प्रबल हो गई। मारवाडके मृत महाराज भीमसिंहने मेवाडके महाराणाकी अत्यन्त रूपलावण्यमयी कृष्णाकुमारीके विवाहके लिये महाराणाके निकट प्रस्ताव भेजा था; परन्तु विवाहका प्रस्ताव भलीभांतिसे स्थिर भी न होचुका था कि इसके पहले ही मारवाडपति भीमसिंहने शरीर त्याग दिया। सवाईसिंहने अपने विध्वंसकारी नीतिकार्यको सिद्ध करनेके लिये गुप्तभावसे जयपुरके अधीश्वर महाराज जगत्सिंहके पास यह प्रस्ताव भेजा कि राणा भीमसिंहकी कन्या अत्यन्त सुंदरी है, इस कारण आप उससे विवाह करनेके लिये राणाके निकट प्रस्ताव भेज दीजिये। जयपुरपति जगत्सिंहने कृष्णाकुमारीके रूपलावण्यका समाचार सुनकर उस रमणी रत्नकी प्राप्तिकी इच्छासे शीघ्र ही महामूल्यवान् उपहारके द्रव्य और चार हजार सेना उदयपुरकी ओरको भेज दी। जगत्सिंहको इस प्रकारसे द्रव्य संभार भेजनेमें उद्यत देख कर सवाईसिंहने उसी समय मारवाडपति मानसिंहसे कहा कि "महाराज! मेवाडपति राणाकी रूपवती कन्या कृष्णाकुमारीके साथ मृत महाराज भीमसिंहके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, इस समय जयपुरपति जगत्सिंहने उसके साथ विवाह करनेके लिये उपहारके द्रव्य भेजे हैं। यदि जगत्सिंहको कृष्णाकुमारी मिल जायगी तो इस संसारमें अपने माथेपर कलंकका टीका लगैगा। मारवाडके अधीश्वर रूपसे ही भीमसिंहके साथ कृष्णाकुमारीके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, आप भी उसी मारवाडके सिंहासनपर विराजमान हैं; इस कारण आपके बदलेमें जगत्सिंह यदि कृष्णाकुमारीका पाणिग्रहण करैंगे तो मारवाडके सिंहासनको घोर कलंक लगेगा?" पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने किस गुप्त उद्देशसे यह बात कही थी, मानसिंहकी वह कुछ भी समझमें न आई। उन्होंने विचारा कि मारवाडके सिंहासनकी रक्षाके लिये सवाईसिंह इस प्रकारसे उत्तेजना प्रकाश करते हैं, इस कारण सवाईसिंहकी उक्तिने उनको भलीभांतिसे जयपुरके महाराज जगत्सिंहके विरुद्धमें उत्तेजित कर दिया।

मानसिंहने शीघ्र ही सामन्तोको सेनासहित इकट्ठा होनेकी आज्ञा दी। राजा मानसिंहने तीनहजार राठौरोंकी अश्वारोही सेनाके साथ चलकर मेवाडकी सीमामें

स्थित हीरासिंहके अधीनमें धनलोलुप सेनाके साथ मिलकर जयपुरके महाराजके भेजे हुए उपहार द्रव्योंको लूट लिया, तथा जयपुरकी सेनाको परास्त करके भगा दिया। महाराज जगत्सिंह मानसिंहके इस आचरणसे अत्यन्त ही क्रोधित हो गये; और शीघ्र ही उन्होंने इनके साथ युद्ध करनेकी तयारी करदी।

चतुर सवाईसिंहकी अभिलाषा पूर्ण हो गई। जयपुर और मेवाड इन दोनों देशोंके राजाओंके साथ मानसिंहके द्वारा विवादानल प्रज्ज्वलित कराके उन दोनों राजाओंके द्वारा मानसिंहको सिंहासनसे उतार धौंकलसिंहको मरुक्षेत्रके सिंहासन पर अभिषिक्त कर अपना बदला लेनेके लिये सवाईने यह कार्य किया था। इस समय मानसिंहके साथ जगतसिंहके युद्धका समाचार सुनते ही सवाईसिंह मानसिंहके प्रति मौखिक मित्रता दिखाकर शीघ्र ही खेतडीको चले गये। धौंकलसिंह खेतडीमें अभयसिंहके आश्रयमें रहते थे; सवाईसिंह शीघ्र ही धौंकलसिंहको लेकर एकबार ही जयपुरमें आकर राजा जगतसिंहसे मिले। चतुर सवाईसिंहने मानसिंहको उत्तेजित करके, जगत्सिंहने जो उपहारके द्रव्य भेजे थे उन सबको लुटवा लिया। जयपुरके महाराजको यह समाचार नहीं मिला था; वरन् मानसिंहके विरुद्धमें युद्ध करनेका समाचार सुनते ही सवाईसिंह धौंकलसिंहको लेकर उनकी सहायताके लिये आये हैं, इन्होंने सवाईसिंहको अपना मित्र जानकर बडे आदरमानके साथ ग्रहण किया। मानसिंहके आचरणसे जगत्सिंह अत्यन्त क्रोधित हो गये थे, अधिक क्या कहें सवाईसिंहने मानसिंहको सिंहासनसे उतारकर धौंकलसिंहको उस सिंहासनपर बैठालनेका प्रस्ताव किया; तथा इससे ही अपनी प्रतिहिंसा वृत्तिको सफल हुआ जाना, जगत्सिंहने शीघ्र ही उसमें अपनी सम्मति प्रकाश की और, साथमें ही यह भी स्थिर कर लिया कि इससे राठौरोंके सामन्त मानसिंहका पक्ष छोडकर धौंकलसिंहके पक्षके लेनेसे मानसिंहके परास्त करनेमें वह विशेष सहायता करेंगे। धौंकलसिंह मृतमहाराज भीमसिंहके औरस जात पुत्र थे, तथा यही शास्त्रके अनुसार मारवाडके सिंहासनके अधिकारी हैं, इसको प्रमाणित करनेके लिये सवाईसिंहके प्रस्तावसे जगत्सिंहकी भगिनीके साथ भीमसिंहका विवाह किया था, उस विधवा रानीकी गोदमें धौंकलसिंहको बैठाल दिया, और राजपूत रीतिक अनुसार धौंकलसिंहके साथ जगत्सिंहने एक थालमें भोजन करके इनको अपना भानजा और मरुक्षेत्रका अधिकारी कहकर विख्यात् किया। मानसिंहके आचरणसे समस्त सामन्त असन्तुष्ट हो गये थे, जिन्होंने धौंकलसिंहको मारवाडके सिंहानपर बैठालनेके लिये पहले सम्मति पत्रपर हस्ताक्षर किये थे। जगत्सिंहकी इस आज्ञाके प्रचारित होते ही वह सभी सामन्तमडण्ली शीघ्रतासे आकर जयपुरमें सजी-हुई सेनाके साथ आ मिली।

---

(१) प्रथम कांडके १६ वें अध्यायमें मारवाड राजके साथ जयपुरके महाराजके युद्धका वृत्तान्त तथा कृष्णा कुमारीकी शोचनीय मृत्युका वृत्तान्त वर्णन किया गया है।

(२) उर्दू तर्जुमेमें फूफी लिखा है।

धौंकलसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये मानसिंहके विरुद्ध जगत्सिंहकी सेनाके साथ जो समस्त राठौर नेता जा मिले थे, उनमें राठौर वंशमें उत्पन्न हुए, बीकानेरके स्वाधीन राजा सबमें अग्रणीय थे। बीकानेरके महाराजको मानसिंहके विरुद्ध खडा हुआ देखकर मरुक्षेत्रके अन्यान्य सामन्तोंने भी एक २ करके जगत्सिंहका साथ दिया। राजा मानसिंह इकले ही उस महा विपत्तिके जालमें फँस गये। पोकर्णके सामन्तोंकी प्रतिहिंसावृत्तिके चरितार्थ होनेके पूर्व लक्षण भलीभाँतिसे प्रकाशित होने लगे। यद्यपि मानसिंहको सम्पूर्ण सामन्तोंने छोड दिया था, यद्यपि वह चारोंओर केवल निराशाकी विभीषिकामयी मूर्त्तिको देखने लगे थे, परन्तु उन्होंने स्वजातिके स्वभाववश साहसके साथ धीरज धर कर अपनी रक्षा करने और जगत्सिंहने भी उनकी सहयोगी राठौर सेनाके साथ युद्धके लिये तैयार होनेमें किञ्चित्मात्रका विलम्ब नहीं किया। जगत्सिंह सम्मिलित सेनाके साथ मारवाडमें जाकर उपस्थित हुए, मानसिंह इससे पहले ही अपने अधीनकी सेनाके साथ बलाविक्रम प्रकाश करके सीमाके अन्तमें आ पहुँचे। इधर जयपुरपति जगत्सिंहने अपनी सेनाके अतिरिक्त मरुक्षेत्रके प्रायः सभी राठौर सामन्तोंकी सहायता पाकर लाखसे भी अधिक सेनाको युद्धके लिये तैयार कर लिया। मारवाड विध्वंसके पूर्व लक्षण प्रकाशित होने लगे। जगत्सिंह जिस प्रकार अनुपम रूपवती कृष्णा कुमारीको पानेके लिये तथा मारवाडपतिको प्रतिहिंसा देनेके लिये बलविक्रम प्रकाश करते हुए आगे बढे; उसी प्रकारसे धौंकलसिंहके अनुगत सामन्त भी मानसिंहको सिंहासनसे उतार कर धौंकलसिंहको मरुक्षेत्रके राज्य गद्दीपर बैठानेके लिये, आग्रहके साथ आ मिले। इसी कारणसे मानसिंहका प्रतिद्वन्द्वी-पक्ष अत्यन्त प्रबल हो गया। अधिक क्या कहैं, जयपुरके महाराजने इकले ही अपनी सेनाके साथ मारवाडपर आक्रमण करनेका उद्योग किया, मानसिंह इससे कुछ भी भयभीत न हुए, परन्तु उनके स्वजातीय महावीर राठौर सामन्तोंने जो जयपुरके महाराजका साथ दिया, इससे मानसिंहका हृदय अत्यन्त भयभीत हुआ। महाराज अजितके जीवन विनाशका फलस्वरूप क्या मारवाड एकबार ही विध्वंस हो जायगा, इसी लिये राठौर सेनाके सामन्त अपने स्वभावसे राजभक्तिकी जडमें दारुण कुठाराघात करके अपने राजाके विरुद्ध खडे हो गये हैं? मारवाड और जयपुरके दोनों राजाओंमें इस महा युद्धकी तैयारी होते ही रजवाडे और भारतके अन्यान्य प्रान्तोंसे अनेक सम्प्रदायोंने आ आकर किसी न किसी पक्षका साथ दिया। जिन महाराष्ट्रोंने इस समय भारतमें केवल दस्युवृत्ति राज्यको लूटना और राजपूत राजाओंमें विवाद प्रज्वलित कर दिया था; वे अंतमें किसी न किसीके पक्षके योगसे दोनों ओरके निकटसे अधिक धनके संग्रह करनेमें नियुक्त होते थे, वही इस समय इन दोनों राजपूत राजाओंके विवादसे महा प्रसन्न हो स्वार्थ साधन करनेके लिये दलके दल आकर दोनों पक्षोंका साथ देने लगे। कई वर्षके पहले माधोजी सिन्धिया मारवाडमें सर्वस्व लूटनेके लिये गये थे; इस कारण मारवाडके खजानेकी अवस्था इस समय अत्यन्त शोचनीय हो रही थी, अन्य पक्षमें जयपुरपतिके अर्थ बल प्रबल होनेसे

अधिकांश महाराष्ट्र उनके साथ मिल गये। जिस समय अंग्रेजी सेनाके नायक लार्ड लेक दूसरे महाराष्ट्रनेता हुलकरके विरुद्ध धावमान हुए थे, उस समय हुलकर मारवाडपतिका आश्रय लेकर अपने कुटुम्बको मारवाडमें निर्विघ्नतासे रख, आप अटकके किनारेको चले गये। मानसिंहने उस समय हुलकरकी अधिक सहायता की थी, इसीसे इस समय उन्होंने महा विपत्तिमें हुलकरसे सहायता मांगी, तुरन्त ही महा विपत्तिमें आश्रय दाता मानसिंहकी सहायताके लिये हुलकर अपनी सेनाके साथ आ गये। हुलकरने मानसिंहके डेरोंसे नौ कोस दूरपर अपने डेरे डाले और कहला भेजा कि कल प्रभात होते ही आपके साथ साक्षात् किया जायगा, परन्तु बुद्धिमान् सवाईसिंहने मानसिंहकी वह आशा भी व्यर्थ कर दी। सवाईसिंहने जब देखा कि प्रबल पराक्रमशाली हुलकरने मानसिंहका साथ दिया है, इस कारण इनको युद्धमें जीतना असंभव हो जायगा, तब इसने सबसे पहले हुलकरको ही अपने हस्तगत करना उचित जाना। शीघ्र ही हुलकरके साथ उसने स्थिर किया; वह मानसिंहकी सहायताके लिये किंचित् भी सेना न भेजें और तुरन्त ही कोटेकी ओरको चले जाँय। वहां जाते ही इनको भेंटमें १००००० रुपये प्राप्त होंगे। धनका लोभी हुलकर मानसिंहके उन उपकारोंको एकबार ही भूल गया, और बिना ही युद्धके १००००० रुपया मिलता जानकर तुरन्त ही सवाईसिंहकी हस्ताक्षर सहित हुण्डी लेकर कोटेकी ओरको चला गया। महा दुःखके समय घोर विपत्तिके समयमें महाराज मानसिंहने जो हुलकरको आश्रय दिया था, हुलकर उसको एकबार ही भूल गया। हुलकरके इस आचरणको देखकर महाराज मानसिंह अत्यंत ही निराश हो गये। परंतु उस समय भी उनके पक्षमें मरुक्षेत्रके सबमें प्रधान वीर मेरतिया सम्प्रदाय तथा अन्यान्य राठौरोंकी सम्प्रदाय भी नियुक्त थी, वह सभी साहसमें भरकर युद्धकी अग्नि प्रज्ज्वलित करनेके लिये आगे बढे।

हुलकरके भागते ही जगत्सिंह और धौंकलसिंह उस लाखसे भी अधिक सेनाके साथ मानसिंहकी संख्यावद्ध सेनाको एकबार ही विध्वंस करनेके लिये महा बल विक्रमके साथ आगे बढे। मानसिंह इस समय अपनी सेनादलके साथ गागोलीनामक स्थानमें थे; दोनो ओरकी सेनाके सन्मुख होते ही जो सब राठौर सामन्त उस समयतक राजा मानसिंहके पक्षमें नियुक्त थे उन्होंने घोडोंपर सवार हो भलीभांतिसे सन्मान कर प्रणाम करके बिदा ली, राजा मानसिंहने विचारा कि ऐसा बोध होता है कि सामंत अपने २ अधीनकी सेनाके साथ युद्धमें जानेके लिये बिदा लेते हैं; परंतु तुरंत ही उनका वह भ्रम जाता रहा, जगत्सिंहकी सेनाने जिस समय गोले वर्षाने प्रारंभ किये उसी समय समस्त सामंत सवाईसिंहके साथ पूर्व निर्द्धारित सम्मतिसे मानसिंहका पक्ष छोडकर शत्रुपक्षके साथ जा मिले। अधिक क्या कहें, जो मेडतिया मरुक्षेत्रमें राजभक्तिमें सबसे अधिक प्रसिद्ध थे, कोई भी सिंहासनपर बैठे,

कितना ही अत्याचारी क्यों न हो पर तथापि वे उसका साथ नहीं छोडते थे। मेड-तियाके दलके ईहाईधूया तथा सरदार चांपावत जयतावत गण, जो शूरवीरतामें वि-ख्यात् गिने जाते हैं-तथा अन्यान्य नीची श्रेणीके सामन्तोंके साथ मानसिंहका पक्ष छोडकर धौंकलसिंहके स्वार्थ साधन करनेके लिये उनके आधीनमें स्थित अन्य स्वजातीय राठौर सेनाके साथ जा मिले। इस युद्धके प्रारम्भमें ही भयंकर विपत्तिके मुखमें पडे हुए मानसिंह अपने आधीनके समस्त सामन्तोंसे त्यागे जाकर चारोंओर अन्धकार देखने लगे। क्रोध अनुताप तथा विषाद और भयके मारे मानसिंह मानो उन्मत्त हो गये, और इस समय क्या करैं ! इसका कुछ भी स्थिर न कर सके। मरुक्षेत्रके सम्पूर्ण सामंतोंमें केवल कुचामन, आहुवा, जालौर[1] और नीमाज इन्हीं चारों सामन्तोंने राजा मानसिंहको इस महाविपत्तिके समयमें नहीं छोडा था, वह लोग विपत् सम्पत्के अंशके भागी होनेके लिये उनके साथ ही रहे थे। मानसिंह उन चारों सामंतोंके आधीनकी सेनाके साथ, और अपने संगवाली बूंदीकी संख्याबद्ध सेनाको साथ लेकर शत्रुओंकी अगणित सेनाके विरुद्ध अंतिम साहसके साथ युद्ध करनेके लिये आगे चले। परंतु उन विश्वासी चारों सामंतोंने देखा कि शत्रुओंकी अगणित सेनासे युद्धमें जय पाना तो एक ओर रहा वरन् प्राणोंकी रक्षा भी कठिन होगी; इस कारण उन्होंने मानसिंहको इस असीम साहसके कार्यमें हाथ डालनेसे निषेध किया। तब मानसिंह मारदुःखके आत्मघात करनेको तैयार हुए; परन्तु कुचामनके शिवनाथसिंहने आगे जाकर महाराज मानसिंहको हाथीपर से उतार लिया और तुरन्त ही उन्हें एक वेगगामी घोडेपर बिठाकर रणखेतसे चले जानेका अनुरोध किया। राजा मानसिंहने देखा कि इस समय यहांसे भागनेके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है, तब वह शीघ्र ही विषाद, क्रोध, लज्जा, घृणा और अनुतापसे विदग्ध हृदय हो घोडेपर चढकर वहांस चले गये। उन्होंने जानेके समय नेत्रोंमें जलभर कर कहा, " हाय ! राठौर राजवंशमें एक मैंने ही कछवाहोंके सम्मुख युद्धमें पीठ दिखाकर राठौर राजकुलमें कलंक लगाया।" वास्तवमें राठौर जाति मरुक्षेत्रमें अपनी प्रभुताके विस्तारके समय अन्यान्य राजपूत जातियोंको अपनी उपेक्षा बलविक्रममें अत्यन्त हीन जानकर उनके प्रति अपेक्षा दिखाती थी, इस कारण मानसिंहके हृदयमें इस समय ऐसा पश्चात्ताप होनेमें आश्चर्य ही क्या है ?

राजा मानसिंहने अपना पक्ष अत्यन्त दुर्बल जानकर पहलेसे ही सावधान होकर पर्वतसर मार्गसे आधे कोश आगे जाकर अपने डेरे डाल दिये। सरलतासे भागने और शत्रुपक्षके आक्रमणको निवारण करनेके लिये यह स्थान बडे सुभीतका था। इस कारण वह अंतमें अत्यन्त निरुपाय होकर उसी मार्गसे पर्वतसरमें आ गये। राजा मानसिंहने जब उनियाराक रावके साथ पीठ दिखाई तब उनके पक्षके बूंदीके गोलन्दाजों तथा हिंदालखाँ नामके मनुष्यने धनके लोभके वशीभूत होकर इनका साथ दिया था।

(१) जालौर तो खालसेका गांव है वहां कोई सामन्त नहीं है और न पहले था।

उसके आधीनकी गोलन्दाज सेना बराबर भयंकर वेगसे गोलोंकी वर्षा कर शत्रुओंके पक्षके आक्रमणको निवारण करने लगी। जिस समय दोनो ओरसे गोलोंकी वर्षा होने लगी, उस समय मानसिंह निर्विघ्नतासे मेरतामें आ पहुँचे। राजा मानसिंहको इस प्रकारसे शत्रुओंके करालग्राससे उद्धार करके उनको औरका उक्त गोलन्दाजदल भी धीरे २ चलकर राजा मानसिंहके निकट आ पहुँचा। मानसिंहने मेरतामें आकर देखा कि एक लाखसे भी अधिक सेनाके हाथसे अपनी रक्षा हो गई, पर मेरताकी अपेक्षा किसी अभेद्य किलेमें रहना ठीक है, इस कारण वह शीघ्र ही मेरतासे पीपाड होकर राजधानी जोधपुरमें आ पहुँचे। वे चार सामन्त, जिनके पास बहुत थोडी सेना थी, और जो उनके साथ सुख दुःख सबमें अंशके भागी होनेके लिये मिले थे, उस समय भी उनको न छोडकर साथ ही साथ जोधपुर राजधानीमें चले गये। मानसिंहके युद्धक्षेत्रसे भागते ही जगत्‌सिंह और धौंकलसिंहके साथ महाराष्ट्र नेता सेंधियाके अन्यतर सेनापति बालारावने मानसिंहके डेरोंको लूटकर अठारह तोपें अपने अधिकारमें कर लीं, और अमीरखां नामक अन्य एक पठान सेनापतिने, जो शत्रुओंके यहां नियुक्त था, मानसिंहके डेरोंमें से बहुत सा द्रव्य लूट लिया। विजयी सेनाने मानसिंहके भागनेसे पर्वतसर और उसके निकटवर्ती ग्रामोंको लूट लिया। मारवाडके बिध्वंसका यह प्रथम ही कारण प्रारम्भ हुआ।

पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने मानसिंहके भाग्यमें यह कालरात्रि उपस्थित कर दी। जिसने अपने पैतृक प्रतिहिंसावृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये इस भयंकर समरानलको प्रज्वलित किया था, प्रथम युद्धमें ही मानसिंहके भाग जानेसे उसकी वह आशा पूर्ण हो गई और जयपुरके महाराज जगत्‌सिंहकी प्रतिहिंसावृत्ति सफल हुई। मानसिंहके भागते ही जगतसिंहने सवाईसिंहको बडे आदर सम्मानके साथ बुलाकर कहा,—" आपका मनोरथ सिद्ध हो गया, मानसिंह जिस भावसे परास्त होकर भाग गये हैं, इससे अब धौंकलसिंहको सिंहासनकी प्राप्तिमें वह कुछ भी बाधा नहीं दे सकेंगे। आप सेनाके साथ राजधानी जोधपुरपर अधिकार कर धौंकलसिंहके शिरपर मारवाडका राजमुकुट धारण कीजिये, मैं भी राणाकी कन्याके साथ पाणिग्रहण करनेके लिये मेवाडको चलता हूं।" बुद्धिमान् सवाईसिंह जगत्‌सिंहकी अपेक्षा अधिक नीतिज्ञ और बिचारवान् थे। जगत्‌सिंहका स्वार्थ पूर्ण करना उनका मुख्य अभिप्राय न था। केवल जिससे जगत्‌सिंहकी सहायतासे धौंकलसिंहका स्वार्थसिद्ध हो जाय इसीलिये उन्होंने उस अभेद्य षड्यंत्र जालके विस्तारसे जगत्‌सिंह को विजडित कर दिया था। उन्होंने जगत्‌सिंहको उत्तर दिया कि "मानसिंह इस समय भी परास्त नहीं हुए हैं, अभी उनको उचित फल नहीं मिला है, वह इस समय भी हतवीर्य नहीं हुए हैं। मानसिंहको सब प्रकारसे परास्त करके मेवाडमें जाकर कृष्णाकुमारीके साथ विवाह करना आपको उचित है।" सवाईसिंहके इस बचनसे जगत्‌सिंहने उसीसमय मेवाडमें जाकर उनकी संमतिके अनुसारकार्य करना प्रारंभ किया। सवाईसिंह जगत्‌सिंहके उपदेशसे विजयी सेनाके

साथ शीघ्र ही राजधानी जोधपुरमें न जाकर मेरता नामक स्थानमें तीन दिन तक अपेक्षा करने लगे। बुद्धिमान् सवाईसिंहने विचारा था कि मानसिंहके स्वधीनमें जितनी अल्प संख्यक सेना है, उससे वह राजधानी जोधपुरकी रक्षा कभी नहीं कर सकते, अवश्य ही जोधपुरको छोडकर जालौरके अभेद्य किलेका आश्रय लेंगे, इस कारण उनके जालौरमें जाते ही जोधपुरपर अधिकार करेंगे। वास्तवमें सवाईसिंहका यह अनुमान अवश्य ही सत्य था। राजा मानसिंह सेनाके साथ भागकर सबसे पहले जालौरका आश्रय लेनेके लिये बीसलपुरमें आ पहुंचे। चैनमल सिंघवी नामक एक राजकर्मचारीने मानसिंहको जालौरमेंआश्रयलेनेके लिये उद्यत देखकर कहा, "महाराज! यहांसे दाहिनीओर नौ कोसकी दूरीपर राजधानी जोधपुर और सोलह कोस दूरपर जालौरका किला स्थित है, जालौरकी अपेक्षा जोधपुरमें बडी सरलतासे पहुँचा जा सकता है। आप यदि अपने बाहुबलसे राजधानीकी रक्षा करनेमें समर्थ न होंगे तो अन्यत्र स्थानमें रहकर सिंहासनके अधिकारकी आशा कहाँ है? आप जबतक राजधानीमें रहकर सिंहासनकी रक्षाके लिये चेष्टा करते रहेंगे, तबतक सम्पूर्ण सर्वसाधारण प्रजा अवश्य ही आपके पक्षका अवलम्बन करैगी, नहीं तो जालौरका आश्रय करैगी, आपको कभी उनसे सहायता नहीं मिलेगी" राजा मानसिंहने इस कर्मचारीके उपदेशको न्यायसंगत जानकर, कई घंटोंके बीचमें जोधपुरमें आकर, शत्रुओंके करालग्राससे सिंहासनकी रक्षाके लिये दृढ किलेके भीतर रहनेका उद्योग किया। इस प्रकारसे मानसिंह जालौरमें न जाकर राजधानीमें लौट आये, इससे सवाईसिंहकी कल्पना व्यर्थ हो गई, इस कारण जगत्सिंह उस समय मेवाडमें जानेकी आशा छोडकर शीघ्र ही राजा मानसिंहको एकबार ही सिंहासनसे रहित कर धौंकलसिंहको अभिषिक्त करनेके लिये सम्मिलित सेनाके साथ राजधानी जोधपुरपर अधिकार करनेके लिये चले। वास्तवमें मानसिंह यदि पहले विचारके मतसे जोधपुरमें न आकर जालौरमें चले जाते तो धौंकलसिंहको राज्याभिषेक करनेमें कोई उपद्रव नहीं होता। राजा मानसिंहके युद्धमें परास्त होकर भागते ही अत्यन्त पीडा उपस्थित हुई थी, इस समय उनका राजपूत वीर स्वभाव तथा बलविक्रम मानो एकबार ही लुप्त हो गया था, अपने अधीनके सामन्तोंको अपने ही विरुद्ध खडा हुआ देखकर वह हतोत्साह और ज्ञान हीन हो गये थे; परन्तु उनके राजधानीमें आते ही; वह विध्वंस हृदय, वह जातीय गर्व दर्प फिर शीघ्रतासे आता हुआ दिखाई दिया, उस समय इन्होंने अपने दुगुने उत्साहके साथ सिंहासनकी रक्षामें प्राणपणसे चेष्टा की।

मरुक्षेत्रके जो सब सामन्तशत्रुओंकीसेनाके साथ मिले थे इससे महाराज मानसिंह उनके ऊपर अत्यन्त रुष्ट हुए। राठौर सामन्तोंके ऊपर अब उनको किञ्चित्मात्र भी विश्वास नहीं रहा, अधिक क्या, जो चार सामन्त इस समय तक उनके अनुगत भावसे रहते थे; यह भी किसी समय हमारा साथ छोड कर शत्रुओंमें जा मिलेंगे, वह यह

(१) बीसलपुरसे जालौर ४० कोसके करीब होगा, न कि सोलह कोस।

विचारने लगे। यद्यपि वे चार सामन्त इनके जातिके थे, तथापि उन्होंने शत्रुओंके कराल कवलसे, जोधपुरके किलेकी रक्षाका भार भी उनके हाथमें नहीं दिया। सबसे पहले इन्होंने विजातीय वेतनभोगी हिन्दालखांके अधीनमें स्थित सेनाके तीन हजार साहसी वीरोंको नियुक्त करके, उनके साथ नेता कायमदासके अधीनका विष्णुस्वामीनामक धर्मयोधादल तथा चौहान, भाटी और मंडारके आदिमें राजवंशीय ईदाजातीय एक हजार सेनाका संग्रह कर उसके हाथमें किलेकी रक्षाका भार सौंप दिया; इस प्रकार सब समेत पांच हजार सेना संग्रह करके मानसिंहने विचारा कि जोधपुरके किलेकी रक्षाके लिये इससे अधिक सेनाका प्रयोजन नहीं होगा, इस कारण उन्होंने शत्रुओंके हाथसे राज्यके अन्यान्य अभेद्य किलोंकी रक्षाके लिये चेष्टा की। सबसे पहले जालौरका किला तथा राज्यकी सीमावर्ती अमरकोटके किलेकी रक्षाके लिये कितनी ही सेना भेज दी। जिससे सिन्धी सेनादल राजा मानसिंहको महा विपत्तिमें देखकर अमरकोटपर अधिकार न कर ले, इसी लिये उन्होंने पहले ही सावधान होकर वहां सेनाको भेज दिया।

मानसिंह इस प्रकारसे जोधपुरके किलेको दृढबद्ध तथा जालौर और अमरकोटमें सेनाको भेजकर साहस पूर्वक शत्रुओंके आनेकी राह देखने लगे। परन्तु जो चार सामंत इनकी महा विपत्तिके समयमें भी सुख दुःखके साथी हुए थे; वे विजातियोंके हाथमें जोधपुरके किलेकी रक्षाका भार अर्पण हुआ देखकर अत्यन्त ही दुःखित हुए और उन्होंने अनेक भाँतिसे विनय करके मानसिंहके निकट प्रार्थना की, कि हमारे हाथमें किलेकी रक्षाका भार अर्पण किया जाय; मानसिंहने किसी भाँतिसे भी उनकी प्रार्थनाको पूर्ण न किया, अर्थात् किलेकी रक्षाका भार उनको नहीं दिया। परंतु जब चारों सामन्तोंने अनेक बार प्रार्थना करी तब अंतमें इन्होंने कहा, "यदि आपकी इच्छा हो तो जोधपुर नगरकी रक्षाके कार्यमें नियुक्त होजाइये।" महाराजको वृथा सन्देहित देखकर अंतमें वह चारों सामन्त अत्यन्त दुःखित होकर राजधानीको छोड शीघ्र ही शत्रुओंके साथ जा मिले। इस प्रकारसे महाराज मानसिंह सब सामन्तोंसे छोडे जाकर केवल वेतनभोगी सेनाको लेकर सिंहासनकी रक्षाके लिये चेष्टा करने लगे। इन्होंने विचारा कि यद्यपि शत्रुपक्षकी सेनाकी संख्या एक लाखसे भी अधिक है, यद्यपि समस्त राठौर सामन्त तथा विजातीय महाराष्ट्र और पठान उस सेनामें मिले हैं तथापि वह किसी भाँतिसे भी अति अल्प समयमें सरलतासे सिंहासन पर अधिकार नहीं कर सकते। मानसिंह इस अनिश्चित आशापर विश्वास करके रहने लगे। जातिगत पतन हो गया चारों ओरसे सब हृदय भेदी लक्षण स्वतः ही प्रकाशित हो गये, यह सब कांड अभिनय अनिवार्य हो गये-मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमें-राठौर जातिमें वह सब लक्षण--वह सकल कांड--वह सकल अभिनय-अविश्रान्त गतिसे इस समय नत्रोंके सम्मुख दृष्टि आने लगे। जातिगत पतन जातिके द्वारा ही होता है, जातीय स्वाधीनता विलुप्त, जातीय समस्त अधिकारसे रहित, जातीय गौरवके सूर्य अस्त करनेको यदि जाति स्वयं अग्रसर न हो तो, कभी अन्य जातिके द्वारा यह

कार्य सिद्ध नहीं होता, जो महाशक्ति जातिकी प्राणप्रतिष्ठा कर देती है, जातिकी नस २ में अपना अन्वर्थ तेजभर देती है, जातिने जिस दिनसे उस महाशक्तिका अपमान किया, तथा आलस्य विलासिताके वशीभूत होकर जातीय भ्रातृभावकी जडमें कुठार मारेनके लिये उद्यत हुई कि उसी दिनसे अविश्रांत गतिसे जातिका पतन साधित हुआ । उस समय जातिने ही एकता, वीरता, विक्रम और साहसके विनाश साधनमें नियुक्त होकर हृदय-विदारक दृश्य उपस्थित कर दियेथे।मारवाडके भाग्यमें भी इस समय वही दशा आकर उपस्थित हो गई । एकमात्र मानसिंहको लक्ष्य करके, चिरवीर-व्रतधारी राठौर सामंत जन्मभूमिका विध्वंस करके जातिके समस्त अधिकारको लोपकर अपना स्वार्थ नाश करनेके लिये उद्यत हुए । उन्होंने भूलसे भी इसका विचार न किया-उस उद्योगनेता सवाईसिंहने एकबार चिन्ता करके भी न देखा कि यह विध्वंस करनेवाली नीति किस प्रकारसे सर्वनाश उपस्थित कर देगी ।

पोकरणके जो सामन्त एकमात्र अपने पितामह और पिताकी प्रतिहिंसाको चरितार्थ करनेके लिये इस जातिका सर्वनाश करनेको उद्यत हुए, एकमात्र अपने नीति कौशल तथा षड्यंत्रकी चतुरतासे इन हजारों मनुष्योंका सर्वनाश होनेपर भी मानसिंहको जोधपुरके किलम आश्रय ग्रहण करते हुए देखकर उसने जयपुरके महाराज जगतसिंहको पुनः मरुक्षेत्रकी राजधानीपर आक्रमण करनेके लिये उत्तेजित किया । पहले युद्धमें ही मानसिंहको भागाहुआ देखकर, जगतसिंहने विचारा कि इनको उचित फल मिल गया । तब आप उसी समय उदयपुरकी ओर जाकर कृष्णा कुमारीके साथ विवाह करनेके अभिलाषी हुए थे, परन्तु इस समय मानसिंहको प्रबलभावसे किलेमें रहता हुआ देखकर और सवाईसिंहके मोहनी मंत्रमें मोहितहो जयपुरनरेशने एक लाखसे भी अधिक सेनाके साथ भयंकर मेघगर्जनके समान उत्तालतरंगमालाका विस्तार करते हुए मरुक्षेत्रकी राजधानीपर आक्रमण किया । मानसिंहने मारवाडकी राजधानी जोधपुरमें सेना नहीं रक्खी थी, इस कारण आक्रमण कारियोंने सरलतासे नगरको जीत लिया । जो महाराष्ट्र और पठानोंकी सेना जयपुर तथा राठौरोंकी सेनाके साथ आई थी, वह नगरपर अधिकार करके जयपुरकी सेनाके साथ उस मनोहर राजधानीको लूटकर अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगी, चारोंओर अत्याचार भयंकर रूपसे प्रबल हो गये, जो राठौर सामन्त शत्रुपक्षमें थे वे भी स्वजातिका सर्वनाश होता हुआ देखकर उसके दूर करनेमें किंचित्मात्र भी उद्योगी न हुए । उनकी प्रत्येक नसमें राठौरोंका रुधिर प्रवाहित हुआ था, तथापि वे उस समय एकबार ही हत ज्ञान हो रहे थे, वे स्वजाति वात्सल्य और ममतासे रहित होकर उन अत्याचारियोंके साथ जा मिले, और अपने अंतःसार शून्यताका परिचय देनेमें मतवाले हो गये । फलोदी नामक स्थानके अतिरिक्त राजधानी तथा अन्य समस्त नगर और देशोंको बहुत थोडे समयमें ही आक्रमण कारियोंने विध्वंस कर दिया । केवल फलोदीके निवासियोंने तीन महीने तक विशेष वीरता

प्रकाश करके अपनी रक्षा कर अन्तमें उस प्रबल शत्रुदलके हाथमें आत्मसमर्पण कर दिया। बीकानेरके अधीश्वरने स्वयं आकर प्रथमसे ही शत्रुपक्षके साथ मिल, सहायता करनेसे उनके पुरस्कार स्वरूप उस फलोदी देशको अपने अधिकारमें कर लिया। सवाईसिंहने इस प्रकारसे राजधानी और मरुक्षेत्रके अन्यान्य नगरोंपर अधिकार कर धौंकलसिंहको मारवाडके अधीश्वर रूपसे स्वीकारकर उनका साथ देनेके लिये मरुक्षेत्रमें सर्वत्र घोषणा पत्रका प्रचार कर दिया। राजा मानसिंह इस समय किलेमें दृढभावसे रहनेके अतिरिक्त बाहर होकर शत्रुओंके साथ युद्ध करने अथवा किसी प्रकारकी बाधा देनेके लिये आगे नहीं बढे। परन्तु, शत्रुगण शीघ्र ही किलेपर अधिकार कर लेंगे, यह विचार कर वह अत्यन्त भयभीत हो गये, महाराष्ट्रों और पठानों इत्यादिकी जो सब विजातीय सेना लूटनेके कार्यमें प्रवृत्त थी उसने शीघ्र ही धौंकलसिंहको मारवाडका अधीश्वर कहकर प्रचार करनेके लिये दूने उत्साहके साथ तैयार हो किलेपर अधिकार करनेके लिये गोलोंकी, वर्षा करनी प्रारम्भ कर दी। विपत्तिके जालमें पडे हुए मानसिंहने उस संख्याबद्ध सेनाके साथ किलेमें रह कर अपने जीवन देनेका संकल्प किया; और असीम साहससे किलेकी रक्षा करनेम किसी भांतिकी भी कसर न की, परंतु उनकी किलेके रक्षाकी आशा दिन २ क्षीण होने लगी। वह इसी मुहूर्त्तमें शत्रुओंके द्वारा किलेपर अधिकार करनेकी सम्भावना विचारने लगे। परंतु मानसिंह ग्यारह वर्षतक जालोरके किलेमें घिरे रहे; फिर जिस प्रकारसे भाग्यलक्ष्मीकी प्रसन्न दृष्टिसे, उस विपत्तिरूपी समुद्रसे पार होकर अपने शिरपर राजमुकुट धारण करनेमें समर्थ हुए थ, उसी प्रकार इस भयंकर विपत्तिके जालके मध्यसे हठात् मानो आशाकी ज्योतिर्मयी मूर्ति उनके नेत्रोंके सम्मुख दृष्टि आने लगी। शत्रुओंका दल इस समय आत्मविच्छेद तथा स्वतः सृष्ट विपत्तिके जालसे जडित हो गया था, महाराज मानसिंह सरलतासे उसी कारण अपने उद्धारका पूर्ण विश्वास करने लगे। विजयी जगत्सिंह धौंकलसिंह और सवाईसिंह आदिके भावी विपत्तिके पूर्ण लक्षण तथा उनके विनाशसाधनके पूर्वानुष्ठान भी सूचित होने लगे।

जयपुरपति जगत्सिंह उस प्रबल सेना श्रेणीके द्वारा जोधपुरके किलेको बराबर पांच महीने तक घेरे रहे। परन्तु उस दीर्घ समयमें जोधपुर राजधानीके पार्श्ववर्ती अन्य नगर और ग्रामोंपर अपना अधिकारकर वहांकी धन सम्पति लूटकर तथा उनको विध्वंस करनेके अतिरिक्त वह अवरुद्ध मानसिंहका और कुछ भी अनिष्ट न कर सके। मानसिंह इस संख्याबद्ध सेनाको लेकर महावीरता प्रकाशकर असीमसाहसके साथ उस अभेद्य किलेकी रक्षा करने लगे। यद्यपि जगत्सिंह उन विक्रमी राठौरोंकी सहायतासे उन राठौरोंकी राजधानीके किलेके उत्तर पूर्व प्रान्तमें निरन्तर गोलोंकी वर्षाके द्वारा उस अंशको भग्न करनेमें समर्थ हुए, परन्तु भग्न स्थानके सम्मुख ८० फुट ऊँची पत्थर की दीवारको न लांघ सके, उस भग्न स्थानमें प्रवेश करना असंभव जानकर आक्रमणकारी हताश हो गये। राजा मानसिंह निर्भय होकर उस भग्नस्थानकी दृढभावसे रक्षा

करने लगे। इसी समय आक्रमण करनेवालोंके डेरोंमें इस प्रकारकी एक घटना उपस्थित हुई कि उस घटनाने मानसिंहको शत्रु पक्षके कराल कवलसे उद्धारका भावीसूत्र पात कर दिया। जगत्‌सिंह और धौंकलसिंहके अधीनमें जयपुर और राठौरोंकी सेनाके अतिरिक्त पठान इत्यादिकी अन्यान्य बहुतसी धनलोभी सेना भी नियुक्त थी। क्रमानुसार पांच महीनेतक निरन्तर उस रणक्षेत्रमें उपस्थित रहने तथा रीतिके अनुसार वेतनके न मिलनेसे वह सभी सेना महा असन्तुष्ट होकर उद्धत हो गई, विशेष करके घोडोंकी घास भी इस समय समाप्त हो गई थी। शत्रु पक्षके इतने घोडे आ गये थे कि पाच महीनेमें उनके उस नगर और पार्श्ववर्ती ग्रामोंके सम्पूर्ण तृण चुक गये थे, इस कारण घोडोंको दक्षिणपर्वतमें दूर २ जाकर घास खिलाया करते थे। सवाईसिंहकी उत्तेजनासे अमीरखां नामक एक कठिन नरपिशाच पठान धौंकलसिंहकी सदा सहायता करनेके लिये अपनी पठान सेनाके साथ जोधपुरके किलेके घेरनेमें नियुक्त था। अमीरखां महाराष्ट्रोंके समान व्यवसाई और उन्हींकी तरह पक्का लुटेरा था। उसने घोडोंको दूर घास चुगानेका बहाना करके समस्त सेनाको अवरोधकारियोंकी सेनासे अलग कर अपनी विकट मूर्ति धारण करनेमें एक मुहूर्त्तमात्रका भी विलम्ब न किया। अमीरखाँके अधीनमें सामान्य पठान सेना नहीं थी। वह जैसा लुटेरा था वैसा ही निष्ठुर प्रकृति भी था, इस कारण नेता अमीरखाँने सबसे पहले मारवाडकी खास भूमि और वाणिज्यके प्रधान स्थानोंको लूटकर तथा उन सब देशोंसे अधिक धन संग्रह करनेके लिये अमित अत्याचार करना आरम्भ किया। वह सबसे पहले राजा मानसिंहकी खास भूमिसे अधिक धन संग्रह करके शेषमें पाली पीपाड, बीलाडा और अन्यान्य नगरोंको लूटने लगा। जिन सामन्तोंने मानसिंहका पक्ष छोडकर धौंकलसिंहका पक्ष अवलम्बन कर उस जोधपुरके किलेको घेर लिया था इस धनके लोभी अमीरखाँने उन्हीं सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें भी जाकर प्रजाका सर्वनाश करना प्रारंभ कर दिया। अमीरखाँके इन अत्याचारोंसे महा असंतुष्ट हो सामन्तवर्ग अवरोधकारी दलके प्रधान नेताके निकट उनके इस आचरणके विरुद्धमें अनुयोग उपस्थित करने लगे। दीर्घकाल तक जोधपुरके किलेको घेरे रहने, तथा महाराष्ट्री, पठान इत्यादिकोंको अपने पक्षमें मिलानेके कारण जयपुरके महाराजका खजाना इस समय एकबार ही खाली हो गया, इस कारण मारवाड विध्वंसके प्रधान नेताने पोकरणके सामन्त सवाईसिंहको शीघ्र ही अपने यहाँसे प्रयोजनीय धन लानेके लिये कहा, सवाईसिंहने तुरन्त ही बिना कुछ कहे सुने अपना समस्त संचित किया धन तथा अपनी सम्प्रदायके अन्यान्य सामन्तोंके यहाँसे लाकर इनके सम्मुख रख दिया। परन्तु थोडे दिनोंमें हीं वह सब धन समाप्त हो गया, जिन चार राठौर सामन्तोंके ऊपर मानसिंहको सन्देह था, जो अत्यन्त दुःखी होकर इनका पक्ष छोडकर शत्रुओंके साथ जा मिले

(१) इस नरपिशाच अमीरखांका विस्तृत वृत्तान्त पाठकोंने प्रथम कांडमें यथास्थान पढा होगा।

थे, सवाईसिंहने उनसे धन माँगा । परन्तु यह चारों सामन्त वास्तवमें मानसिंहके विरुद्ध तलवार धारण करनेके अभिलाषी नहीं थे, जब मानसिंहने इनको अपने यहाँ आश्रय नहीं दिया, तब यह इच्छा न होनेपर भी अपनी रक्षा करनेके लिये धौंकलसिंहके साथ जा मिले थे। परन्तु इस समय जब उनसे धन मांगा गया तब वे धनके देनेमें राजी न हुए; और असंतुष्ट हो उसी समय धौंकलसिंहका पक्ष छोडकर अमीरखाँके साथ जा मिले । उन चारों राठौर सामन्तोंने विचारा कि वर्तमान अवस्थामें किसी प्रकार भी मानसिंहका उपकार कर सकें तो राजाने जो हमारे ऊपर संदेह करके अविश्वास किया है, वह दूर हो जायगा। यह चारों जने एकमत हो अमीरखाँके द्वारा अपनी उस आशाके पूर्ण होनेकी विशेष संभावना जानकर सबसे पहले उसको हस्तगत करनेका उपाय करने लगे । अमीरखाँ केवल धनके लालचसे ही इस युद्धभूमिमें आया था, इस कारण उस मनुष्यने उक्त चारों राठौर सामन्तोंके प्रस्तावसे सरलतासे मानसिंहका पक्ष स्वीकार करनेकी सम्मति दी । सामन्तोंने प्रस्ताव किया कि, जयपुरके महाराज जगत्सिंह अपनी सम्पूर्ण सेनाके साथ इस समय जोधपुरमें हैं, इस कारण इस सुअवसरमें अरक्षित जयपुर राज्यपर सरलतासे ही आक्रमण किया जा सकता है, निर्विघ्नतासे बिना युद्ध किये बहुतसा धन मिल सकता है। अमीरखां इस बातको भलीभांतिसे जान गया था कि, पीपाड, पाली और बीलाडा आदिको लूटनेसे जयपुरके महाराज मेरे ऊपर अत्यन्त रुष्ट हो गये हैं । इस कारण वह मनुष्य राठौरके चारों सामन्तोंकी सम्मतिसे उसी समय जयपुरपर आक्रमण करनेके लिये सेना लेकर चला। वे चारों सामन्त भी उसके साथ चले ।

अमीरखांके अत्याचारोंका वृत्तान्त राठौरके सामन्तोंने जयपुरके महाराजसे पहले ही कह दिया था; जयपुरके महाराजने अमीरखांको दमन करनेके लिये अपने प्रधान सेनापति शिवलालको कई हजार सेनाके साथ भेजा। जिस समय अमीरखां उन चारों राठौर सामन्तोंके साथ सलाह करके जयपुरपर आक्रमण करनेके लिये जा रहा था, उसी समयमें शिवलालने अपनी प्रबल सेनाके साथ आकर इसपर आक्रमण किया । शिवलालके पास अधिक सेना थी । अमीरखां चारों सामन्तोंके साथ शीघ्रतासे लूनी नदीके किनारे२भागने लगा।शिवलालने लूनी नदीके पास आते ही इसको उसके परलीपार कर दिया । अमीरखां और चारों सामन्त गोविन्दगढमें चले आये, शिवलालके उस स्थानमें आक्रमण करते ही अमीरखां हरसोर नामक स्थानमें चला गया । वह चारों सामन्त भी इसके साथ २ गये । अमीरखां एकबार भी युद्धमें सम्मुख न होकर न जाने किधरको भाग गया, विजयी सेनापति शिवलाल इसका कुछ भी अनुभव न कर सका। इसने अमीरखांको सेनासहित बंदी करनेकी इच्छासे रात्रिके समय हरसोर नामक स्थानपर फिर आक्रमण किया। अमीरखां चारों सामन्तोंके साथ जयपुर राज्यकी शेष सीमाके अन्तवाले फागी नामक स्थानमें भाग गया । शिवलालको भ्रमसे भी यह विचार नहीं हुआ था कि प्रबल पराक्रमकारी पठानपति अमीरखांको

इतनी जल्दी २ प्रत्येक स्थानसे भगा देंगे। अमीरखां किस गुप्त अभिप्रायके वशीभूत होकर इस प्रकार अपनी इच्छासे ही शिवलालको मारवाडसे क्रमानुसार जयपुरकी सीमामें लाया; उसको उस समय इसका अनुमान भी नहीं हुआ था। अमीरखां समस्त भारतवर्षमें इस समय एक प्रबल अत्याचारी और पिशाच—प्रकृतिका मनुष्य विख्यात था। शिवलालने उसको क्रमानुसार इस प्रकारसे मारवाडसे भगा दिया, इसका विचार करके वह मनही मनमें अत्यन्त गर्वित हो गया। अन्तमें अमीरखां चारों राठौर सामन्तोंके साथ फागी नामक स्थानको भाग गया, विजयी शिवलालने विचारा कि जयपुरके महाराज जगत्सिंहकी आज्ञासे अमीरखांको जब कि मारवाडकी सीमासे भगा कर उनकी आज्ञाका पालन किया है, तब अब उसका पीछा करनेकी आवश्यकता नहीं है। वह अपने मन ही मनमें इस प्रकारका सिद्धान्त कर विजयी सेनादलको उसी स्थानमें डेरोंके भीतर रख स्वयं अकेला ही उस उत्सवमें संमिलित होनेके लिये जयपुरमें चला गया। इस ओर अमीरखां राठार सामन्तोंके साथ टोंकके निकटवर्ती पीपळूनामक स्थानमें आया, और इसने सुना कि शिवलाल अपनी सेनाको सीमाके अन्तमें रखकर जयपुरको चला गया है। इस सुअवसरमें वह अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये उद्योग करने लगा। अमीरखां इसे भली भांतिसे जानता था कि इन राठौर सामन्तोंके अधीनमें जो सामन्य संख्यक सेना है उसके द्वारा सरलतासे कार्य सिद्ध नहीं हो सकता; इस कारण उसने विचारा कि इस समय अन्य सहायकारियोंकी सहायता लेना अवश्य कर्त्तव्य है। इस समय मुहम्मदसाहखाँ और राजा बहादुर दोनों जने प्रबल सेनादलके साथ ईसरदा नामक स्थानको घेरे हुए थे, अमीरखांने उनको हस्तगत करके हैदराबादी रिसालानामक सेनादल जो इस समय भारतवर्षमें लूटके कार्यमें विशेष विख्यात हो गया था, उसको भी अपने हस्तगत किया और शिवलालके न होने पर प्रबल पराक्रमके साथ जयपुरकी उस सेनापर आक्रमण किया। जयपुरकी सेना उस समय प्रधान सेनापतिसे हीन होकर अत्यन्त ही दीन अवस्थामें पडी हुई थी, तथापि उसने अतुल बल विक्रम प्रकाश किया। हीरासिंहकी सेनाने इस समय इतने साहसके साथ युद्ध किया कि युद्धके अंतमें उन सभीने रणभूमिमें अपने प्राण दे दिये। भयंकर युद्ध होनेके पीछे जयपुरकी सेना एक बार ही परास्त होकर विध्वंस हो गई, और विजयी अमीरखांने उनके डेरोंमें जाकर समस्त युद्धके द्रव्योंको अपने अधिकारमें कर लिया। राठौरके चारों सामन्तोंकी सम्मतिके अनुसार कार्य करके अमीरखांने इस प्रकारसे जय प्राप्त की। अमीरखांका प्रधान उद्देश यही था-वह सेनाको साथ लेकर जैसे ही जयपुरको लूटनेके लिये आगे बढा वैसे ही जयपुरके निवासी महाभयके समुद्रमें निमग्न हो गये। तब बुद्धिमान् चारों सामन्तोंने इस प्रकारसे अमीरखांको प्रधान सेनापतिके पदपर वरण किया, इसीसे राजा मानसिंहकी मुक्तिका द्वार खुल गया, सम्मिलित राजपूतोंकी सेनादलमें बडी हलचल पड गई। चक्रभंग और मारवाड-विध्वंसके प्रधान कारणस्वरूप प्रधान नेता सवाईसिंहके भाग्यमें घोर कालरात्रि उपस्थित हो गई।

छः महीने तक जोधपुरके किलेको घेरे रहनेके पीछे सवाईसिंह और धौंकलसिंहके षड्यंत्रजालके छिन्नभिन्न होनेके पूर्व लक्षण भलीभांतिसे प्रकाशित होने लगे। वेतनके न मिलनेसे सेनामें असंतोष वृद्धिके साथ ही साथ अवरोधकारियोंके प्रधान२नेताओंमें भी झगडा होना प्रारंभ हो गया। बीकानेर और शाहपुरके राजा यह दोनों ही झगडा होनेके कारण अवरोधकारियोंके पक्षको छोडकर अपने २ राज्यको चले गये। सवाईसिंह और जगत्सिंह इससे किंचितमात्र भी निराश न हुए, राठौरोंकी सेनादलकी सहायतासे जगत्सिंह मारवाडको विध्वंस और जोधपुरको घेरनेमें समर्थ होनेसे अपनेको महा गौरववान् जानते थे। परन्तु अमीरखां और संख्यावद्ध राठौरोंकी सेनासे अपनी सेनाका विध्वंस होना और राजधानीको घेरनेका समाचार मानो वज्रघातके समान उनके गर्वोन्नत शिरपर पतित हुआ। जयपुरकी सेनाके इस पराजयका समाचार सवाई-सिंहको पहले ही विदित हो गया था, परन्तु जयपुरके दीवान रायचन्दको घूस देकर उसने अपने वशीभूत कर लिया था, इसीसे जगत्सिंहको यह समाचार विदित न हुआ, कारण कि जगत्सिंह इस समाचारके पाते ही शीघ्र ही अवरोधको छोडकर चले जाते, सारांश यह है कि उनका मूल उद्देश पूर्ण न हुआ। रायचंदने सवाईसिंहके इस कथनको गुप्त रक्खा। परन्तु जगत्सिंहकी माताने इस समय कई एक गुप्त सेवकों द्वारा उनके पास यह समाचार भेज दिया; वह सवाईसिंहके ऊपर अत्यन्त ही क्रोधित हुए, और अब क्या करें, इसका कुछ भी उपाय स्थिर नहीं कर सके। उन्होंने जिस समय माताके भेजे हुए दूतके मुखसे यह समाचार सुना उसी समय वह किलेको छोडकर चले गये। जिन जगत्सिंहने कुछ समयके पहले अपनेको महा गौरवान्वित माना था। जयपुरका कोई भी महाराज जिस कार्यके करनेको समर्थ न हुआ, यह उसी मारवाडको विजय करने तथा जोधपुरके किलेको घेरनेमें समर्थ हुए; इसीसे महान् गर्व प्रकाश किया था। वही जगत्सिंह इस समय चारोंओर विभीषिकाकी भयंकर मूर्ति देखने लगे, किस प्रकारसे वह निर्विघ्नतापूर्वक मारवाडसे अपनी राजधानीमें चले जाँय; किस प्रकारसे विजयी अमीरखाँ और राठौरोंके आक्रमणसे अपनी रक्षा कर सकें, यह चिन्ता उनके हृदयमें प्रबल हो गई। जगत्सिंहने जोधपुरकी राजधानीको लूट कर जो बीस तोपें और अन्यान्य बहुतसे अमूल्य द्रव्योंको संग्रह किया था, सबसे पहले उन सबको अपने सामन्तोंके पास भेजकर महाराष्ट्रोंके नेताओंको बुला भेजा। जगत्सिंहने

---

(१) सन् १८०६ ईसवीमें जिस समय जगत्सिंहने महाराष्ट्र नेता सेन्धियाके समीप सहायता मांगनेके एक लिये दूत भेजा; उस समय कर्नल टाड साहब सेंधियाके डेरोंमें थे। बापू सेंधिया बालाराव तथा जानवेपटिष्ट इस समय अपनी अपनी सेनाके साथ सेंधियाके अधीनमें नियुक्त थे। जगतसिंहको प्रार्थनानुसार जिस समय महाराष्ट्रोंकी सेना उनकी सहायता करनेके लिये जा रही थी उस समय महात्मा टाड साहबने वहां जाकर उस सेनाको स्वयं देखा था। और १८०७ ईसवीमें रजवाडेके भौगोलिक तत्त्वकी खोज करनेके लिये कर्नल टाड साहब जिस समय जयपुरमें गये, उस समय जयपुरकी उस सेनाके विनाश होनेके अगणित चिह्न भी देखे थे।—

विचारा कि जोधपुरसे चलते ही शत्रुओंसे परास्त होनेकी पूरी संभावना है, अधिक क्या--ऐसा होनेसे प्राणतक भी नष्ट हो सकते हैं, इसी कारण महाराष्ट्र नेता गण उनके बुलाते ही आ गये। उन्होंने उन्हींके सामने यह प्रस्ताव किया "कि यदि आप हमें निर्विघ्नतासे जयपुरमें पहुँचा देंगे तो हम आपको इसके पुरस्कारमें १२००००० रुपये देंगे।" धनके लोभी महाराष्ट्र नेताने तुरन्त ही इस बातको स्वीकार कर लिया। यद्यपि महाराष्ट्र नेता सारी सेनासहित इनको निर्विघ्नतासे जयपुरमें पहुँचानेके लिये तैयार हो गये थे, परन्तु पठान नेता अमीरखाँ उस समय मार्गमें ही ठहरा हुआ था, इस कारण जगत्सिंह किसी भांतिसे भी निर्भय हो आगे न बढ सके। जगत्सिंहकी सम्मतिसे उनके इस हठात् भाग्य पतनका कारणस्वरूप अमीरखाँ ९०००००‌ लेनेके लिये राजी हो गया, "वह जगत्सिंहके जयपुरमें जानेके समयमें कुछ भी विघ्न नहीं करेगा" जयपुरके महाराजने इस प्रकारसे बहुतसा रुपया खर्च करके अपनी रक्षाका उपाय स्थिर किया, और जोधपुरकी राजधानीको छोडकर वह अपनी राजधानीको चल दिये। जगत्सिंहने जिस प्रकारसे महा गर्वमें भरकर जोधपुरको घेरा था उसी प्रकारसे घोर कलंकका टीका अपने यशरूपी मस्तक पर लगा हुआ देखकर अत्यन्त क्रोधित हो दुःख, अपमान और लज्जासे उन्होंने अपने डेरोंमें आग लगा दी और अंतमें स्वयं अपने हाथसे अपने प्राणप्रिय हाथीके प्राण नाश कर दिये। हाथी उनको शीघ्रतासे ले जानेमें समर्थ न हुआ इसीसे जयपुरके महाराजने अत्यन्त क्रोधित हो उस अज्ञान पशुके जीवनका विनाश किया।

यद्यपि महाराष्ट्र नेताने जगत्सिंहको निर्विघ्नतासे जयपुरमें पहुँचा देनेका वादा किया था, और यह उनके साथ भी गये थे, और अमीरखाँने धन लेकर यह बचन भी दे दिया था कि अब किसी प्रकारका अत्याचार तुम्हारे साथमें न किया जायगा, तथापि महाराज जगत्सिंह निर्विघ्नतासे अपने राज्यमें न पहुँच सके। जोधपुरके घेरनेवालोंने उसी प्रकार इनके भागते ही महा अपमान और कलंकके अतिरिक्त इनको और भी घोर कलंकित किया था। जिन राठौर सामन्तोंने अमीरखाँके साथ मिलकर राजा मानसिंहकी मुक्तिका द्वार खोल दिया था। इस समय उन्हीं सबने मिलकर यह निश्चय किया, कि किसी प्रकारसे भी हो जयपुरके महाराजको विजयमें पाये हुए तथा लूटे हुए द्रव्योंको लेकर हम लोग नहीं भागने देंगे। यह विचार कर समस्त सामन्तोंने मेरतासे दस कोस पूर्वकी ओर जाकर जगत्सिंहके आनेके मार्गमें उपस्थित हो अपनी सम्प्रदायके सम्पूर्ण राठौरोंको इकट्ठा कर इन्दराज सींघीको अपने सेनापति पदपर वरण किया। इन्दराज सींघी राजा

—जो सेना जगत्सिंहके साथ जोधपुरपर अधिकार करनेके लिये आई थी, उसने अन्तमें जयपुरके बाहर ठहर कर अपने वेतनके न मिलनेसे मारे भूखोंके प्राण त्याग कर दिये। महात्मा टाड साहबने नगरके बाहर हजारों घोडोंके ढांचेके ढेरके ढेर तथा सेनाके मनुष्योंकी हड्डियोंके ढेर स्वयं अपनीआँखोंसे देखे थे। प्रथम कांडमें यथास्थान इसका वर्णन हो चुका है।

मानसिंहके पहले दो राजाओंके शासनसमयमें मारवाडमें दीवान पदपर नियुक्त थे। उन चारों सामन्तोंको केवल वृथा संदेह करके ही मानसिंहने छोड दिया था, इसी कारणसे वह भी दीवानके पदसे रहित हुए थे। इन्द्रराज तथा समस्त सामन्तोंने सेनासहित इकट्ठे होकर यह प्रस्ताव किया कि राजा मानसिंहने जो हमको शत्रुओंके साथ मिला हुआ जानकर अन्याय किया है, तथा उनको जो हमारे ऊपर संदेह हुआ है, उस संदेहका दूर करना हमको अवश्य कर्तव्य है। राजा मानसिंहके शत्रुपक्षके रुधिरसे उस संदेहकी कालिमाको धोकर, जगत्‌सिंह मारवाडको लूटकर जो स्मृति चिह्न तथा बहुतसे मूल्यवान् द्रव्योंको लिये जा रहे हैं उन सबको छीनकर राजा मानसिंहके चरणकमलोंमें उनका उपहार देते ही महाराज अवश्य ही हमारे ऊपर प्रसन्न होकर पहलेके ही समान विश्वास कर लेंगे। यह विचार करके समस्त सामन्त अतुल बलशाली राठौरोंकी सेनादलको साथ लिये हुए जगत्‌सिंहके आनेकी बाट देखने लगे।जगत्‌सिंहके सेनासहित आगे बढते ही बदला लेनेवाले राठौरोंने संहारमूर्तिसे उनके ऊपर भयंकर वेगसे आक्रमण किया। दोनों ओरसे युद्धकी आग भडक उठी। जगत्‌सिंहने केवल राठौर सामन्तोंकी सहायता से ही जोधपुरको घेरा था, इस समय सवाईसिंह और राठौर सेनादलके न होनेसे केवल जयपुरकी सेना-सहित जगत्‌सिंहको देखकर वीरव्रतावलम्बी राठौरोंकी सेनाने सरलतासे अत्यन्त अल्प समयमें ही उन्हें परास्त कर दिया।जयपुरकी सेना पहलेसे ही हतवीर्य और हीन साहस थी, इस कारण दोनों राज्योंकी सीमामें स्थित होकर उस युद्धमें केवल यही नहीं हुआ कि,महाराज जगत्‌सिंह ही परास्त हुए हों, वह जिन द्रव्योंको लूटकर लिये जा रहे थे, विजयी राठौरोंने अपनी पहली प्रतिज्ञाके अनुसार उन सब द्रव्योंपर फिर अपना अधिकार कर लिया। जयपुरकी सेना चारों ओर छिन्नभिन्न होकर भाग गई। विचारे जगत्‌सिंह मारेभयके प्राण लेकर अपने राज्यमें भाग गये। जगत्‌सिंह जोधपुरसे जो चवालीस तोपें लाये थे, राठौर गण उन सब तोपोंको ले गये। उन राठौरोंने इस प्रकारसे महाराज जगत्‌सिंहका अत्यन्त अपमान कर उन्हें मारवाडसे भगा दिया। जयकी आशासे फिर मानसिंहकी सहायताके लिये एक और उपाय किया। जगत्‌सिंहके जय-पुरको भागनेसे पहले ही धौंकलसिंह और सवाईसिंह जोधपुरको छोडकर दूसरे राठौर सामंतोंके साथ मिल कर नागौरमें चले गये थे।इससे राठौरगण धौंकलसिंह और सवाई-सिंहको सहसा हतवीर्य न कर सके। इसी कारणसे महाराज मानसिंहका कल्याण न विचारकर धौंकलसिंहके पक्षमें प्रायः समस्त राठौर सामंत तथा जितनी अधिक सेना थी उसको देखकर वे चारों सामंत फिर अमीरखांको अपने हस्तगत कर उसीके द्वारा अपने कार्य सिद्ध होनेका उपाय करने लगे। जब इन्होंने देखा कि विना बहुतसा धन दिये अमीरखांसे सहायता नहीं मिल सकती तब उन्होंने सबसे पहले धनके संग्रह करनेका यत्न किया। यद्यपि कृष्णगढके राजा एक राठौर थे। परंतु उन्होंने इस जातीय युद्धमें किसीकी भी सहायता न की, वह निरपेक्ष भावसे रहे। अमीर-खांसे सहायता लेनेके लिये विजयी सामंतोंने कृष्णगढके महाराजसे दो लाख

रुपये मांगे महाराजने तुरंत ही इनको दे दिये । अमीरखां उन दो लाख रुपयोंको लेकर यह प्रतिज्ञा की, "कि मैं राजा मानसिंहकी तन मनसे सहायता करूँगा ।" विजयी सामंत शीघ्र ही अमीरखांको साथ लेकर जोधपुरमें आ पहुँचे, महाराज मानसिंहने इनको विश्वासी और राजभक्त जानकर बडे संमानके साथ अपने यहां रक्खा, और इनके अधिकारके जिन २ देशोंको पहले अपने अधिकारमें कर लिया था, इस समय इनके वह सभी देश दे दिये, और इंद्राजको बक्सी अर्थात् प्रधान सेनापतिके पदपर नियत किया । राजा मानसिंहका इस समय भाग्योदय हुआ ।

पंद्रहवां अध्याय १५.

जोधपुरमें अमीरखाँकी अभ्यर्थना; सवाईसिंहके दलको भग करनेके लिये अमीरखाँकी प्रतिज्ञा; अमीरखाँका नागोरमें जाना; सवाईसिंहके साथ उनका साक्षात् होना; धौंकलसिंहकी ओरसे सहायता करनेके लिये अमीरखाँका सौगन्ध खाना; राजपूत सामन्तोंका हत्याकांड; धौंकलसिंहका भागना; अमीरखाँके द्वारा नागोरका लूटा जाना; पुरुषकारमें राजा मानसिंहके पाससे अमीरखाँको दश लाख रुपया मिलना तथा कुछ जमीनकी भी प्राप्ति होना;अमीरखाँकी सेनाका जयपुरके भिन्न २ देशोंको लूटना; बीकानेरपर आक्रमण; मारवाड़में अमीरखाँके प्रभुत्वका विस्तार होना; तथा उसके अत्याचारोंका प्रारंभ; नागोरके किलेपर अमीरखाँका पठान सेनाको रखना; अमीरखाँका मेरताके भागको अपने अधीन नेताओंको देना; अमीरखाँका नावांके किलेपर सेना रखना तथा वहां और सांभरके लवण हृदपर अधिकार करना, इन्द्रराज और राजगुरुका देवनाथकी हत्या करना; राजा मानसिंहके चित्तकी विकृति; उनका एकान्त निवास; अपने पुत्र छत्रसिंहको राज्य देना; छत्रसिंहके दुश्चरित्र; राजा मानसिंहकी उन्मत्तताका बढना, उसका कारण; राजा मनासिंहकी सलाहसे इन्दराज हत हो गये हैं सर्व साधारणका इस प्रकारसे सन्देह करना; पोकरणके मृतक सामन्त सवाईसिंहके पुत्र सालिमसिंहका राज्यमें अधिकार पाना; बृटिश गर्नमेण्टके साथ मारवाड़के महाराजका संधि करनेका प्रस्ताव करना; छत्रसिंहका प्राणत्याग;राजा मानसिंहके हाथमें फिर राज्यका भार पहुँचते ही अपने अनिष्टकी विशेष संभावना जानकर सामर्थ्यवान् सामन्तोंका मारवाडके सिंहासनपर ईडरके राजकुमारको अभिषिक्त करनेका प्रस्ताव करना; उस प्रस्तावका परिहार; उसका कारण; राजा मानसिंहको फिर राज्य ग्रहण करनेके लिये अनुरोध करना; राजा मानसिंहका फिर राज्य ग्रहण करना; संधिकी कई एक धाराओंपर मानसिंहका असन्तोष प्रकाश और उनमे आपत्ति; एक अंग्रेज प्रतिनिधिका जोधपुरमें जाना; अखैचन्दका मारवाड़के प्रधान राजस्वभागपर मन्त्रित्व करना; प्रधानमंत्री पोकरणके सालिमसिंह; फतेराजका उपद्रव करना;राजा मानसिंहकी सहायताके लिये बृटिश सेनाको उनके हाथमें अर्पण करनेका प्रस्ताव उठाना; उस प्रस्तावको स्वीकार न करना; उसका कारण; अंग्रेजी एजण्टका अजमेरका लौट जाना; जोधपुरके महाराजकी सभामें स्थाई गवर्नमेण्ट एजण्टका नियोग; जोधपुरमें आना, राजधानीकी अवस्था; मानसिंहके साथ साक्षात्; एजण्टका जोधपुर छोड़ना; सामन्तोंकी भूवृत्तिपर अपना अधिकार करना; राजा मानसिंहका प्रकाशमें फिर पहिलेके समान राज्यशासनमे उदासीनता दिखाना;मानसिंहकी प्रबल धोखेबाजी; राजाका

सामन्तोंकी धन सम्पत्तिको हरण करना; उनके कलंकसे मृत्यु; राजा मानसिंहके मारनेमें बुद्धिका लगाना; सामन्तोंके विपत्तिजालमें लगी हुई चेष्टाका व्यर्थ होना; नीमाजके सामन्तपर आक्रमण; उक्त सामन्तोंका साहसके साथ अपनी रक्षा करना; उनका वधसाधन होना; पोकरणके सामंतका भागना; फतेराजको प्रधान मंत्रित्व पदकी प्राप्ति; फतेराजको राजामानसिंहका उपदेश; नीमाज पर आक्रमण; नीमाजका लूटा जाना; राजा मानसिंहका अपनी प्रतिज्ञाको भंग करना; वेतनभोगी सेनाके नेताका प्रशंसनीय आचरण; मारवाड़के समस्त सामन्तोंका इच्छानुसार विदेशमें जाना; प्रतिवासी राजाओंका सामन्तोंको आदरसहित स्थान देना; औनाड़सिंहके प्रति मानसिंहकी अत्यन्त अकृतज्ञताका प्रकाश करना; वृटिश गवर्नमेण्टके निकट निकाले हुए राठौर सामन्तोंकी मध्यस्थताकी प्रार्थना करना; वृटिश गवर्नमेंटका मध्यस्थता करनेमें असम्मति प्रकाश करना; अतीत घटनाकी समालोचना ।

जिस पठान नेता अमीरखाँकी सहायतासे महाराज मानसिंहने उस जातीय विपत्तिके समुद्रसे कुछ एक उद्धार पाया था, जिस चातुरी जालसे अवरोधकारी जगत्-सिंह अन्तमें प्राणोंके भयसे भागकर कलंकित हो अपनी राजधानीमें लौट गये थे; जिसके उस बल विक्रमसे मारवाड विध्वंस हुआ था, और सवाईसिंह धौंकलसिंहको लेकर जोधपुरको छोड आये थे—उस पठान सेनापति अमीरखाँको मानसिंहके अत्यन्त विश्वासी चारों राठौर सामन्त ही अपने हस्तगत कर जोधपुरमें लाये। महाराज मानसिंहने उसका बडा आदर मान किया। यद्यपि उस समय जगत्सिंह अपनी सेना-सहित जा रहे थे, यद्यपि शत्रुपक्षका बल अत्यन्त हीन हो गया था तथापि सवाईसिंह उस समयतक मरुक्षेत्रके सिंहासनकी आशासे धौंकलसिंहको लिये हुए अन्यान्य राठौर सामन्तों और सेनाके साथ पहलेके समान मानसिंहके विरुद्ध खडे रहे; उस समय मानसिंह एकबार ही उस विपत्तिके समुद्रसे पार न हो सके थे, विपत्तिकी तरंगोंमें फसे हुए मानसिंह बारम्बार हिलोरें लेते थे। इस कारण मानसिंहने शत्रुकुलको निर्मूल तथा अपनी शासनशक्तिको प्रबल करनेके लिये उस महा दुःसमयमें स्वजन मित्र बांधव और प्रजासे त्यागे जाकर शीघ्र ही उस विजातीय विधर्मी तथा कठिन तस्कर--अर्थ और क्षमता लोलुप पठान सेनापति अमीरखाँकी सहायता स्वीकार करनेका विचार किया। यद्यपि अमीरखाँ अत्यन्त सामान्य वंशका पठान था, यद्यपि वह मनुष्य पवित्र आर्य रक्तधारी राठौरोंकी राजसभामें आसन पानेका अधिकारी नहीं था, परन्तु महाराज मानसिंहने अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये उस पतित और शोचनीय अवस्थामें उस अमीरखाँको केवल आदरके साथ नहीं ग्रहण किया वरन् उसके भाग्यमें कभी भी जो सन्मान प्राप्त नहीं हुआ था आज मानसिंहने उसे वही सम्मान दिया। जिन राठौर सामन्तोंने सियाजीके समयमें एकताकी जीवन्त मूर्तिकी पूजा करके संसारमें अपनी अक्षय कीर्तिको सञ्चय किया था, इस समय अपने भाग्यके दोषसे--तथा राठौरजातिके भाग्य--दोषसे उनके वंशधरोंके परस्पर उस एकताकी छातीमें लात मारनेसे अपने देश और स्वजातिको अवनतिके समुद्रमें डालनेके लिये अत्यन्त उन्मत्त होकर महाराज

मानसिंहने शीघ्र ही विजातीय विधर्मीको ऊँची पदवी देकर अपने राज्यमें शान्ति स्थापन की।

महाराज मानसिंहने अमीरखाँको आदरसहित ग्रहण करके उसके रहनेके लिये योधगिरिके किलेमें एक मकान दे दिया; और बहुतसे मूल्यवान् द्रव्य उसे उपहारमें दिये। अन्तमें दोनोंमें यह निश्चय हुआ कि अमीरखाँ अपनी सेनाके द्वारा सवाईसिंह और धौंकलसिंह दोनों शत्रुओंकी सेनाको भगाकर उन्हें विध्वंस कर दें, यदि ऐसा हुआ तो महाराज मानसिंह उस कार्यके पुरस्कारमें उसे यथोचित धन और भूवृत्ति देंगे। अमीरखाँने शीघ्र ही महाराज मानसिंहके प्रस्तावके मतसे अपनी भविष्य उन्नति तथा सामर्थ्य प्राप्तिकी विलक्षण सम्भावना जान कर; शपथ करके यह प्रतिज्ञाकी, कि "मैं निश्चय ही सवाईसिंहके चक्रजालको भेदकर शत्रुपक्षको निर्मूल कर दूँगा।" महाराजने केवल प्रतिज्ञा ही नहीं की वरन् चिरप्रचालित राजपूत रीतिके अनुसार उस विधर्मी पठानके साथ पगडी बदलकर प्रतिज्ञा दृढ की, और उसी समय उसको इस कार्यके व्यय स्वरूपसे तीन लाख रुपये दे दिये। हाय! कालकी कैसी विचित्र गति है! जिस मरुक्षेत्रके स्वाधीन राठौर राजगण मुगल पठानोंको स्वजाति तथा स्वदेश और स्वधर्मके प्रबल शत्रु जानकर हृदयसे घृणा करते थे, उसी मरुक्षेत्रके राजवंशधर उस राठौर राजसिंहासनपर विराजमान हुए मानसिंह विजातीय पठानोंके साथ पगडी बदलनेमें कुछ भी लज्जित न हुए! आज जातिका पतन हो गया, केवल, एकमात्र प्रजा ही नहीं वरन् स्वयं महाराजतकने कहांतक हीनता स्वीकार की। इस स्थानपर उसका विलक्षण परिचय दिया गया है।

एकमात्र पिताका बदला लेनेके लिये पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने अपनी जन्मभूमिके चारों ओर इस हृदयभेदी दृश्यको उपस्थित कर दिया था, जिससे मारवाड यथार्थमें मरुक्षेत्रके समान हो गया, अपने प्रधान सहायक जयपुरपति जगत्सिंहके भागते ही सवाईसिंहने शीघ्र ही धौंकलसिंह और समस्त राठौर सामन्तोंके साथ जोधपुरको छोडकर नागौरदेशको यात्रा की। जिस समय सवाईसिंह नागौर देशमें आकर फिर षड्यन्त्रका विस्तार कर जोधपुरपर फिर अधिकार करनेके निमित्त उपाय कर रहा था उसी समय चतुर पठान सेनापति अमीरखांने अपने भविष्य कर्त्तव्यका निश्चय कर लिया; और अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये वह आगे बढा।

साक्षात् नरपिशाचस्वरूप पठान सेनापति अमीरखाँ अपनी प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये अग्रसर होनेके पहले ही इस बातको जान गया था कि धौंकलसिंह और सवाई सिंहको युद्धमें परास्त करना सब प्रकारसे असम्भव है, कारण कि अत्यन्त बलशाली राठौरोंकी सेनाके साथ युद्धमें संमुख होकर जय प्राप्त करना कोई साधारण बात नहीं है। और फिर विशेष कर धौंकलसिंहकी ओरसे इस समय मरुक्षेत्रके समस्त राठौर सामंत सेनासहित नागौरमें ठहरे हुए हैं, इस समय मेरे अधीन बहुत थोडी सेना है,

तिसपर अधिक बलशाली भी नहीं है, इस कारण जयलक्ष्मीका प्राप्त होना अत्यन्त कठिन देख पडता है; बुद्धिमान् अमीरखांने अत्यन्त घृणित और निन्दनीय उपायसे अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेका उपाय स्थिर किया । अमीरखां अपनी सेनाको साथ लेकर नागौरसे दस कोस दूरीपर मूँधियाड स्थानमें डेरे डालकर अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये उपाय करने लगा । अमीरखांने मूँधियाडमें आकर यह विख्यात कर दिया कि महाराज मानसिंहने इस समय मेरे प्रति अत्यन्त अप्रिय आचारण किये हैं । अमीरखांने राजा मानसिंहको जिस प्रकारसे महा विपत्तिके समय सहायता की थी; उसके बदलेमें उन्होंने उसे उचित पुरस्कार न देकर उसके साथ अत्यन्त निन्दनीय आचारण किया है । सवाईसिंह और धौंकलसिंहको इस समाचारपर विश्वास हो गया और वे मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न होने लगे । इस प्रकारसे अमीरखां पहले अनुष्ठानके पीछे सवाईसिंहके साथ साक्षात् करनेके लिये चेष्टा करने लगा । बहुत कुछ सोच विचार कर अमीरखांने एक दूतको सवाईसिंहके निकट भेजकर उनसे यह कहला भेजा कि, "नागौरमें पीर तारकीन नामक पीरकी एक मसजिद है, यदि आप आज्ञा दें तो मैं उस मसजिदमें जाकर अपना नित्य—नियम कर आया करूं ।" जिस समय मारवाडसे दिल्लीके बादशाहका प्रताप और उनकी प्रभुताई लुप्त हो गई थी, उस समयसे मरुक्षेत्रमें मुसलमानोंकी जितनी मसजिदें और दरगाहें थीं वे सब एकबार ही विध्वंस कर दी गई थीं, विशेष करके महाराज बख्तसिंहने मारवाडसे यवनोंके समस्त चिह्नोंको एकबार ही लुप्त कर दिया था । केवल एकमात्र पीरतारकीनकी मसजिदको किसी विशेष कारणसे विध्वंस नहीं किया था । उस कारणको महात्मा टाड साहबने इस स्थानपर प्रकाश नहीं किया, परन्तु हमें ऐसा अनुमान होता है कि यवनराज्यमें बहुतसे हिन्दू अनेक पीरोंकी मसजिदोंपर अनेक प्रकारके कारणोंसे भक्ति प्रकाश करते थे । बहुतसे पीरोंको हिन्दू जागृत देवता कहते थे और उन पर विश्वास करते थे--यहांतक कि इस समय भी वह विश्वास उसी भावसे प्रबल है । अनेक हिन्दू अब भी ऐसे हैं जो इन पीरोंकी भक्तिभावसे पूजा करते हैं । ऐसा बोध होता है कि उन पीरोंकी उसी प्रकारसे राजपूतोंमें जागृत देवतारूपसे पूजा होती थी, इसी कारणसे अपनी जन्मभूमिसे यवनोंके समस्त चिह्नोंको लोप करनेकी अभिलाषासे बख्तसिंहने प्रजाकी इच्छानुसार उस मसजिदको विध्वंस नहीं किया । जिस समय सवाईसिंहने जगत्सिंहके साथ मिलकर जोधपुरको घेरा था, अमीरखांने उस समय उनके पक्षको छोडकर मारवाडको विध्वंस करनेका विचार किया । सवाईसिंह तथा अन्यान्य सामन्तमण्डली उसके ऊपर अत्यन्त कुपित हुई थी, और उसको दमन करनेके लिये जयपुरके सेनापति शिवलाल गये थे; हमारे पाठकोंसे यह बात छिपी नहीं है कि अमीरखांकी ऐसी अवस्थामें मानसिंहका पक्ष लेनेसे सवाईसिंह उसको शत्रु जानते थे । परन्तु अमीरखां अपनी पाप अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये बकध्यानीके समान इस समय धोरे २ आया, सवाईसिंहने इसके प्रति पूर्वभावको प्रकाशित न करके बिना संदेह किये हुए उसकी उस प्रार्थनाको स्वीकार कर-

लिया। सवाईसिंहने विचारा कि निश्चय ही महाराज मानसिंहने अमीरखांका तिरस्कार किया है, इसी लिये वह राजधानी छोडकर धर्मकार्य साधन करनेके लिये पीरकी मसजिदमें आनेके लिये कहता है। इसका उन्हें भूलसे भी अनुमान न हुआ कि, पिशाचबुद्धि अमीरखां किस गुप्त और भयंकर अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये धर्मका बहाना कर घोर अधर्मको संचय करनेके निमित्त तैयार हुआ है।

पिशाचबुद्धि अमीरखां तुरन्त ही सवाईसिंहकी आज्ञा पाकर प्रसन्न हो उसी समय कुछ अश्वारोहियोंके साथ मूंधियाडसे उस पीरकी मसजिदमें गया। पीरकी मसजिदमें उपासना और बन्दना करनेसे उसका कुछ भी प्रयोजन न था उसके हृदयमें उस समय और एक भयंकर कामना विराजमान थी। इस कारण उसने उस मसजिदमें जाकर दिखानेके लिये नाममात्रकी उपासना करके, जानेके समय विना बुलाये ही सवाईसिंहके डेरोंमें जाकर उनसे साक्षात् की। सवाईसिंहने अमीरखांका बडा आदर सन्मान किया; कारण कि उस समय अमीरखांको अपने दलमें भरती करनेके लिये उनकी विशेष इच्छा थी। आमीरखांने साक्षात् होनेके पीछे बिदा माँगी और कहा कि;--"मैंने महाराज मानसिंहके जितने उपकार किये हैं महाराजने उसके शतांशमें के एक अंशका भी पुरस्कार नहीं दिया, यदि मैं इस प्रकारसे दूसरेकी इतनी सहायता करता तो अवश्य ही मुझे बहुतसा पुरस्कार मिलता।" अमीरखांके यह वचन सुनकर सवाईसिंहने प्रसन्नचित्त हो उसी समय यह प्रस्ताव किया; कि "यदि आप धौंकलसिंहका पक्ष लेकर राजा मानसिंहको सिंहासनसे उतार दें तो मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि धौंकलसिंह जिस दिन मारवाडके राजसिंहासनपर शोभायमान होंगे उसी दिन मैं आपको भलीभांतिसे पुरस्कार देकर संतुष्ट करूँगा। यह कहिये कि आप कितने रुपये लेंगे" अमीरखाँने कहा,--"मुझे२०००००० बीस लाखकी आवश्यकता है।" सवाईसिंहने कहा,-"मैं फिर शपथ करके कहता हूं कि जिस दिन धौंकलसिंहके शिरपर मारवाडका राजछत्र शोभायमान होगा उसी दिन आपको २०००००० रुपये दूँगा।" शीघ्र ही यह संधिपत्र लिखकर तैयार किया गया, अमीरखांने कुरानको स्पर्श करके उस प्रतिज्ञाको पालन करनेके लिये शपथ करी और उसी समय सवाईसिंहने प्रचलित राजपूत रीतिके अनुसार अमीरखांके साथ पगडी बदल ली। इस प्रकारसे सवाईसिंहने प्रबल पराक्रमशाली अमीरखांको अपने हस्तगत कर धौंकलसिंहके साथ भी उसका परिचय करा दिया। अमीरखांने धौंकलसिंहके समीप शपथ करके फिर प्रतिज्ञा की कि "मैंने आपके स्वार्थसाधनमें इस जीवनतकको उत्सर्ग किया। आपको जोधपुरके सिंहासनपर बैठालनेके लिये मैं प्राणपणसे चेष्टा करूंगा।" अमीरखांकी इस प्रतिज्ञा पर विश्वास कर उसी समय उसे बहुतसे मूल्यवान् द्रव्य उपहारमें दिये

(१) महाराजा मानसिंहके इतिहाससे धौंकलसिंहका इस युद्धमें मौजूद होना कहीं नहीं पाया जाता। और वह आ भी कैसे सकता था, क्योंकि वह अभी २ वर्षका बच्चा था। सवाईसिंहने उसके नामसे यह सब प्रपंच रचा था।

गये। इस प्रकारसे अमीरखाँ अपने गुप्त अभिप्रायके सिद्ध करनेकी पूर्व सूचना करके धौंकलसिंह और सवाईसिंहसे बिदा हो मूंधियाडको लौट आया। धौंकलसिंह और सवाईसिंहके प्रति मित्रता प्रकाश करनेके लिये उन दोनोंके यहां जो राठौर सामन्त सेनासहित उनके अधीनमें नियुक्त थे, उनको भी अमीरखाँने अपने यहां बुला भेजा। सवाईसिंहने इस आमंत्रणके ग्रहण करनेमें कुछ भी आपत्ति न की, बरन् अत्यन्त प्रसन्न हो समस्त राठौर सामन्तोंको अपने साथ लेकर आप स्वयं अमीरखाँके डेरेपर गये।

सवाईसिंहके इस निमंत्रणके स्वीकार करते ही नरपिशाच अमीरखाँने अपना दुष्ट अभिप्राय साधन करनेके लिये किंचित् भी विलम्ब नहीं किया। मारवाडपति मानसिंहके निकट अमीरखाँ साहबने जो प्रतिज्ञा की थी उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये वह भयंकर मूर्तिसे रुधिरप्रवाही अभिनय करनेकी बाट देखने लगा। संवत् १८६४ के चैत्रमासमें उस चिरस्मरणीय उन्नीसवें दिन सवाईसिंह नागौरसे समस्त राठौर सामन्तोंके साथ पाँचसौ अनुचरोंको लेकर अमीरखाँके उत्सवमें शामिल होनेके लिये तथा उससे परस्पर मित्रता बढानेके लिये उसके डेरेपर आये। बुद्धिमान् अमीरखाँने निमंत्रित सवाईसिंह और अन्य समस्त सामन्तोंको बडे आदर सन्मानके साथ सभामें बैठाला। तुरन्त ही परस्पर पगडी बदली गई। सवाईसिंहके हृदयमें मानो आनंदकी तरंगें उठने लगीं; वह अपने मन ही मनमें विचारने लगा कि अब अवश्य ही अमीरखाँकी सहायतासे मानसिंहको सिंहासनसे रहित कर धौंकलसिंहको राजगद्दी पर बैठाल स्वयं राज्यमें अपनी प्रबल सामर्थ्य चलाऊंगा, वह मन ही मन इस प्रकारकी कल्पना करके प्रसन्न होने लगा। सभामें शीघ्र ही नृत्यगीत प्रारंभ हो गया। अत्यन्त रूपलावण्यमयी नर्तकी गण कोयलके समान वाणीसे गानद्वारा राजपूतोंके नेत्र और मनको प्रसन्न करने लगीं। सभी अपार आनन्दरूप जलमें मग्न हो गये, मानो सभी दर्शक उस महोत्सवमें मतवाले हो गये। किसीको अपने शरीरका कुछ भी ध्यान न रहा। उसी समय अमीरखाँ किसी कार्यका बहाना करके अचानक सभासे चला गया। नाच, गान पहलेके समान होता रहा। आये हुए सभी सामंत प्रसन्न चित्त हो उस उत्सवको देखने लगे। उनको यह स्वप्नमें भी ध्यान न था, कि उनपर किस प्रकारकी विपत्ति आनेवाली है? उनके भाग्य में किस प्रकारसे भयंकर कालरात्रि उपस्थित होनेवाली है। उनको इसका जरा भी संदेह न हुआ कि, वह मित्र अमीरखाँ, किस प्रकार कालांतक मूर्तिसे किस प्रकारके छल कपटसे और किस प्रकारकी चातुरी जालसे उनको अपने हस्तगत कर कैसा वियोगान्त अभिनय करनेके लिये तैयार हुआ है। सहसा उस सभाका बाजा ऊँचे स्वरसे चीत्कार कर उठा; उसी समय सब नर्त्तकी सावधान होकर न जाने किधरको भाग गये, और तुरन्त अचानक सैकडों पठान अपने भयंकर स्वरसे डेरोंको कंपायमान करते हुए नंगी तलवार हाथमें लिये हुए डेरोंमें आ पहुंचे, और उन्होंने उस मारवाड विध्वंसके मूल कारण सवाईसिंह और बयालिस राठौर सामन्तों-

पर आक्रमण किया, सवाईसिंह और समस्त सामन्तोंने पठानोंको अचानक आक्रमण करते हुए देखकर समझ लिया कि नरपिशाच अमीरखांने मित्रताका बहाना करके कुरानको स्पर्श कर जगदीश्वरका नाम ले शपथ करके प्रतिज्ञा की थी; वह सब कपट था। उसने मित्रताकी चिह्नस्वरूप पगडीको बदलकर कैसा भयंकर लोमहर्षण अभिनय किया है! आक्रमणकारी पठानोंकी संख्या अधिक थी। बहुत थोडे समयमें ही उन आये हुए सामन्तोंके शरीर खंडर हो गये--ऊँची अभिलाषा तथा बदला लेनेकी इच्छावाले सवाई-सिंहका शिर भी काटा गया। अमीरखाँने तुरन्त ही उस पापीके शिरको तथा सामन्तोंमें ऊँची श्रेणीके सामन्तोंके शिरको महाराज मानसिंहके समीप उपहारमें भेज दिया। सवाईसिंह और सामन्तोंके साथ जो पांचसौ सिपाही आये थे वे अकस्मात् इस भयंकर घटनाको देखकर आश्चर्यान्वित हो भागनेके लिये तैयार हुए, परन्तु पठानोंने उनको भी विध्वंस कर दिया, और जो सेना भाग गई थी वह तोपोंके गोलोंके आघातसे एक बार ही भस्म हो गई। नरराक्षस अमीरखाँ इस प्रकारसे सवाईसिंह और समस्त राठौर सामन्तोंका संहार करके अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण-कर उसी समय नागौरपर अधिकार करनेके लिये आगे बढा। अपने भाग्यसे ही धौंकलसिंह इस पाखण्डीके डेरोंमें नहीं आये थे, वह नागौरमें ही थे। परन्तु अमीरखांके इस हृदयभेदी राक्षसी आचरणके समाचारको पाकर, प्राणोंके भयसे वे भी उसी समय वहांसे चल दिये, और जो अन्यान्य राठौर सामन्त तथा सेना नागौरमें थी वह भी तुरंत ही छिन्न भिन्न होकर चारों ओरको भाग गई। अमीरखां इस प्रकारसे सामन्तोंके प्राणनाश करके सेनाके साथ नागौरमें आया, और उसने धौंकलसिंह तथा अन्यान्य समस्त सामंतोंके धन और अनेक प्रकारकी वस्तुओंको लूट लिया। मारवाडके महाराज बख्तसिंहने नागौरके किलेमें जिन बहुतसे युद्धके द्रव्योंको संग्रह कर रक्खा था, उन सबको अमीरखांने बडी सरलतासे लूट लिया। अमीरखांने इससे पहले जिन कईएक किलोंको अपने अधिकारमें कर लिया था, उसने नागौरके किलेमेंसे तीनसौ तोपैं लेकर उनको उन किलोंमें भेज दिया। इस प्रकारसे नरपिशाच अमीरखां महाराज मानसिंहके शत्रुओंको एक साथ ही निर्मूल कर राजधानी जोधपुरमें गया, महाराज मानसिंहने इस समय उसका पहलेसे भी अधिक सम्मान किया, और इस चिरस्मरणीय पैशाचिक अभिनयके पुरस्कारमें शीघ्र ही उसे दश लाख रुपये दिये तथा मूँडवा और कुचेरा नामक तीस हजार रुपये वार्षिक आमदनीवाले दो बडे २ गांव दिये। इसके अतिरिक्त अमीरखांको महाराजके यहांसे प्रतिदिन खर्च करनेके लिये सौ रुपया मिलने लगा।

मानसिंह पूर्वजन्मके पुण्यबलसे जिस प्रकार महाराज भीमसिंहके प्राससे ग्यारह वर्षतक अपनी रक्षा करके अंतमें ईश्वरकी कृपासे सहसा मारवाडके सिंहासन-पर विराजमान हुए थे, उसी प्रकारसे उस जगदीश्वरकी कृपासे फिर भी इन्होंने इस भयंकर विपत्तिसे उद्धार पाया। इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है

कि, सवाईसिंहने किस भावसे मानसिंहके विरुद्ध प्रबल षड्यन्त्र जालका विस्तार कियाँ था, समस्त राठौर सामन्तोंको अपने हस्तगत करके किस भावसे मानसिंहका अनिष्ट करनेके लिये वह उद्यत हुए थे । यदि क्रूरकर्मचारी अमीरखाँ राजधर्मके विरुद्ध, नीतिके विरुद्ध तथा युद्धकी रीतिके विरुद्ध उस हृदयभेदी उपायसे सवाईसिंहका तथा अन्यान्य सामन्तोंका प्राण नाश करके अपनी आत्माको कलंकित न करता तो किसी प्रकारसे भी महाराज मानसिंह अधिक दिनतक किलेमें बंद रहकर अपनी रक्षा न कर सकते । अधिक क्या कहैं सवाई-सिंहने अपने पितामह और पिताकी प्रतिहिंसावृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये अपनी जन्मभूमि और स्वजातिको जिस प्रकार दुर्गतिमें डाला उसका प्रतिफल भी उन्हें मिला; उनकी इस भाँति शोचनीय मृत्युने राठौर जातिको दिखा दिया कि अपने स्वार्थसाधनके लिये स्वाजातिकी दुर्गति करनेके लिये उद्यत होनेसे किस प्रकारका दंड भोगना पडता है। यद्यपि मानसिंहने अपने भाग्यबलसे ही छुटकारा पाया, परन्तु जिस प्रकारके घृणित और हृदयभेदी उपायसे विजाती और विधर्मी पठान अमीरखाँकी सहायतासे उन्होंने स्वजातीय राठौर कुलके सामन्तोंका प्राण नाश किया, और आप निष्कण्टक होकर रहे, इसी कारणसे उस महापातकके फलस्वरूपमें उन्हें भी अपार क्लेश भोगना पडा; तथा मारवाडके गौरवका सूर्य भी एकबार ही अस्त हो गया। यद्यपि मानसिंहने एक ही कण्टककी सहायतासे बहुतसे कण्टकोंको उखाड डाला था--परन्तु उनके आश्रयस्वरूप उस कंटकने उनका भी विशेष अनिष्ट करनेमें कुछ कसर न की ।

महाराज मानसिंहने अमीरखाँकी सहायतासे सवाईसिंह तथा अन्यान्य सामन्त मंडलीको इस प्रकारसे मारकर फिर प्रबल प्रतापसे मारवाडमें अपनी शासन शक्तिका विस्तार किया। प्रतिद्वन्द्वी धौंकलसिंह निराशाके अगाध जलमें पडकर प्राणोंके भयसे नागौरसे चले गये, परन्तु जो सामन्त तथा राजा धौंकलसिंहका पक्ष लेकर जीवित थे; मान-सिंहने इस समय ठीक सुअवसर जानकर उनको भी उचित फल देनेमें किंचित् भी विलम्ब न किया। जयपुरके महाराजके ऊपर महाराज मानसिंह अत्यन्त अप्रसन्न हो गये थे; अधिक क्या कहैं, मानसिंहने इस समय उनके साथ युद्धका विचार न करके अमीरखाँके अधीनकी पठान सेनाके द्वारा, जयपुरराजके बहुतसे देशोंको विध्वंस कर दिया, मानसिंहके दूसरे शत्रु बीकानेरके महाराज इससे पीछे उनके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए। यद्यपि बीकानेरके महाराज शेष अवस्थामें धौंकलसिंहके पक्षको छोडकर केवल फिलोदीको पाकर अपने राज्यको लौट आये थे, परन्तु उन्होंने पहली अवस्थासे सेना सहित जयपुरके महाराजके साथ मिलकर धौंकलसिंहको मारवाडके सिंहासनपर बैठानेके लिये जोधपुरको घेरा था, इसीसे उस समयकी सहायताके पुरस्कारमें फलोदीको बीकानेरके राज्यमें मिला लिया था, इसी कारणसे महाराज मानसिंहने उनको भी विशेष दंड देना निश्चय किया। शीघ्र ही महाराज मानसिंह अपनी बारह हजार सेनाके साथ प्रधान सेनापति इन्द्रराज तथा अमीरखां और हिन्दालखां अपनी २

सेनाके साथ पैंतीस तोपें लेकर बीकानेरके स्वाधीन राजापर आक्रमण करनेके लिये चले । बीकानेरके महाराज पास आई हुई विपत्तिको देखकर शीघ्र ही यथाशक्ति सेना इकट्ठी करके अपनी रक्षा करने लगे । उनके अधीनकी जितनी सेना इकट्ठी हुई, वह मानसिंहकी सेनाके बराबर ही होगी । वापरी नामक स्थानमें दोनों सेनाओंका युद्ध हुआ । बीकानेरके महाराज इस युद्धमें परास्त होकर अपनी रक्षा करनेके लिये राजधानीको चले आये । उस पहले युद्धमें बीकानेरके महाराजके दोसौ योद्धा नष्ट हो गये थे । बीकानेरके महाराजके भागते ही महाराज मानसिंहके प्रधान सेनापति इन्द्रराज, अमीरखां और हिंदालखां उनका पीछा कर गजनेर नामक स्थानमें आ पहुँचे । बीकानेरके महाराजने देखा कि यद्यपि उनकी सेनाकी संख्या शत्रुओंकी अपेक्षा कुछ कम नहीं है परन्तु पठानोंकी सेनाके साथ समभावसे वीरता प्रकाश करके अपनी रक्षा करना असंभव है, इस कारण उन्होंने उस अवस्थामें युद्धके बदले संधि करनेमें अपना विशेष कल्याण देखा तब उन्होंने सन्धिका प्रस्ताव उठाया । बीकानेरके महाराजने युद्धके व्ययके बदलेमें दो लाख रुपये देना स्वीकार किया और जिस फलोदीको अपने अधिकारमें कर लिया था, इस समय उसे भी लौटा दिया, मारवाड़के महाराज मानसिंह उस प्रस्तावमें सम्मत हो गये, और दोनोंमें उसी समयसे मित्रता हो गई ।

जिस पठान सेनापति अमीरखांने जगत्‌सिंहके साथ मिलकर सामान्य नेता स्वरूपसे मारवाड़के अवरोधमें नियुक्त हो अंतमें भयंकर कार्य करके इस समयके इतिहासमें भयानक एक राजनैतिकरीति अभिनय किया था, उसी अमीरखांने अपने सौभाग्यबलसे कूट राजनीतिके बलसे अपने षड्यंत्रके बलसे तथा महापातकके बलसे मारवाड़में धीरे२ अपनी सामर्थ्यका विस्तार करके अंतमें वह मरुक्षेत्रका एक हर्त्ता कर्त्ता विधाता हो गया, और सर्वत्र ही उसके अधिकारका विस्तार हो गया। राजाके यहां अपनी सामर्थ्यके विस्तार करनेमें तथा राठौर सामन्तोंके ऊपर अपने प्रभुत्वका विस्तार करनेमें उस मनुष्यने कुछ भी कसर न की। महाराज मानसिंहके महा विपत्तिमें पड़नेके समय अमीरखांने अनेक उपकार किये थे, उसीकी सहायतासे वह राज्यकी रक्षा कर सके थे इसी कारणसे महाराजने इस समय अमीरखांके घोर अन्याय करनेपर भी उससे अपनी सामर्थ्यके विस्तार करनेके समय कुछ भी कहनेका साहस न किया । सारांश यह है कि अमीरखांका भाग्य सर्वथा प्रसन्न हो गया अमीरखांको वृत्तिस्वरूपमें मानसिंहके यहांसे अच्छी आमदनीवाले दो देश मिले थे, इसके अतिरिक्त क्रम २ से मारवाड़के अनेक देशोंको भी उसने अपने अधिकारमें कर लिया। उसने अपने अधीनके सेनापति गाफूरखांको एक सेनाके साथ नागौरके किलेमें रखकर समृद्धिशाली मेरता देशको विभक्त करके अपने अधीनके नेताओंको दे दिया । वह इतना करके भी शान्त न हुआ, उसने नावाके किलेमें अपनी सेनाको रखकर नावा और सांभरके लवणक्षेत्र भी अपने अधिकारमें कर लिये । सारांश यह है कि अमीरखाँ इस समय वास्तवमें मरुक्षेत्रके राजाओंके

समान अपनी इच्छानुसार व्यवहार करके राठौर सामन्तोंके ऊपर घोर अत्याचार करने लगा। मानसिंह अपनी शासनशक्तिकी पुनर्वार प्रतिष्ठा करके केवल प्रधान सेनापति इन्द्राज और अपने गुरु देवनाथकी सम्मतिसे सम्पूर्ण कार्य करने लगे। अन्यान्य राठौर सामन्तोंने पूर्व पुरुषोंके समान राजसभामें कुछ भी बोलनेका अवसर न पाया, वरन् पग पग पर विजातीय अमीरखांके द्वारा उनका घोर तिरस्कार होने लगा। क्रमशः वह अत्याचार अत्यन्त प्रबल और असहनीय हो गये. तब सब सामन्तोंने मिलकर यह प्रस्ताव किया कि महाराज मानसिंह केवल इन्द्राज और राजगुरु देवनाथकी सम्मतिसे ही कार्य करते हैं, इस कारण अमीरखांने जो घोर अत्याचार करने प्रारंभ किये हैं उन सबके कारण इन्द्राज और देवनाथ ही हैं, उन्हींकी सम्मतिके अनुसार अमीरखाँने निर्भय हो इस प्रकारके भयंकर अत्याचार करने प्रारंभ किये हैं। अनेक भांतिसे विचार करनेके पीछे शेषमें सभोंने मिलकर यह निश्चय किया कि इन्द्राज और देवनाथको मारे. बिना किसी भांतिसे अपना मंगल नहीं हो सकता, परन्तु उन्होंने अपनी सामर्थ्यको हीन अवस्थामें देख राजद्रोही होकर इन्द्राज और देवनाथको नाश करनेका साहस न किया, अंतमें यह निश्चय किया, कि जब महापापी अमीरखांको सब सामर्थ्य है, अर्थात् वह सभी कुछ कर सकता है और वह धन लेकर सभी काम करनेके लिये तैयार हो जाता है तब उसीकी सहायतासे इन्द्राज और देवनाथका प्राणनाश करना उचित है। सामंतोंके नेताने शीघ्र ही यह अपना प्रस्ताव अमीरखांसे कहा; इनके यह वचन सुनकर अमीरखांने कहा,--"कि इसके पुरस्कारमें आप हमें सात लाख रुपये दीजिये। मैं-आपके शत्रु इन्द्राज और देवनाथका इसी समय नाश कर सकता हूँ।" सामन्तोंने सात लाख रुपये देने स्वीकार कर लिये तब अमीरखाँने शीघ्र ही एक षड्यंत्र विस्तार करना प्रारंभ किया। इन्द्राजकी पठान सेनाने अपने बाकी वेतनके लिये जो झगड़ा किया। उसीमें उसका और राजगुरु देवनाथका सर्वनाश हुआ।

यद्यपि राजगुरु देवनाथने राज्यमें अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार किया था, परन्तु महाराज मानसिंहको उसके द्वारा अनेक विषयोंमें भलीभाँतिसे सहायता मिली थी इसलिये वह गुरुदेवकी उस सामर्थ्यके चलानेसे किंचित् भी दुःखित न हुए, वरन् वे गुरुदेवके उपकारोंके परम कृतज्ञ थे। मानसिंहने विचारा था, कि अपने समस्त कुटुम्बी और सामन्तोंके बीचमें एकमात्र गुरुदेव देवनाथ ही हमारे प्रधान हितैषी मित्र हैं। गुरुदेवके [illegible] उनकी जैसी भक्ति थी, फिर क्यों गुरुदेवने उसी प्रकारसे अपने स्वार्थको सिद्ध करनेके लिये कोई कार्य न किया। उन्हीं गुरुदेवको जैसे ही दुराचारी अमीरखाँने मारा कि वैसे ही मानो मानसिंहके हृदयपर सहस्रों वज्र टूट पडे। महाराज मानसिंह गुरुशोकसे इतने कातर हुए कि सर्वसाधारण भी उनके चित्तकी विकृतिको जान गये; गुरुदेवकी मृत्युके पीछे महाराज मानसिंहने राज दरबारमें जाना छोड दिया और एक निर्जन स्थानमें अकेले रहने लगे। धीरे २

समस्त राजकार्य छोडकर तथा समस्त धर्म कर्मोंको भी त्याग करके वह उन्मत्तकी भाँति रहने लगे। क्या आत्मीय क्या कुटुम्बी, क्या मंत्री क्या परिवार उन्होंने सभीके साथ बातचीत करनी छोड दी। महाराजके इस दारुण शोकको देखकर समस्त मंत्री तथा सामन्त राज्यमें शांतिकी रक्षाके लिये चिन्ताके समुद्रमें मग्न हो गये। महाराजकी राजकार्यमें उदासीनता देखकर सभीने एकमत होकर उनके एकमात्र पुत्र छत्रसिंहको सिंहासनपर बैठाकर राज्यमें शान्ति करनेका विचार स्थिर किया। राजा मानसिंहने सामन्तोंके उस प्रस्तावमें सम्मत होकर अपने हाथसे कुमार छत्रसिंहके मस्तकपर राजतिलक देकर उनको मरुक्षेत्रके सिंहासनपर बैठाला।

कुमार छत्रसिंह युवा अवस्थामें सिंहासनपर विराजमान होकर अत्यन्त निन्दनीय कार्य करने लगे, इन्होंने राज्यशासनकी ओर किंचित् भी ध्यान न दिया, और भोग विलासमें रत होनेसे यह शीघ्र ही सर्व साधारणके अप्रियपात्र हो गये; और इसी कारण से वह अधिक दिनतक सिंहासनपर न बैठ सके। ऐसे ऊधमी छत्रसिंहने पशुओंके समान आचरण करनेके कारण उस युवा अवस्थामें ही ज्वरसे पीडित हो इस संसारको छोडकर परलोकका रास्ता लिया। ऐसा भी जाना गया है कि, कुमार छत्रसिंहने एक महीने तक एक सुन्दरी युवतीके कमनीय रूपसे मोहित हो उसके सतीत्वको नाश करनेकी चेष्टा की थी, इसीसे वह मारे गये; और यह भी कहा जाता है कि वह विषम ज्वररोगसे मृत्यको प्राप्त हुए, अब यह नहीं कह सकते कि कौनसी बात सत्य है इस बातको महत्मा टाड साहबने भली भाँतिसे प्रकाशित नहीं किया, परन्तु हमें ऐसा बोध होता है कि छत्रसिंहको इस अवस्थाके पहले ही उनको विषमज्वरने इस संसारसे बिदा कर दिया।

महान् शोकग्रस्त महाराज मानसिंह अपने एकमात्र पुत्रकी अकालमें ही मृत्यु होनेसे और भी उन्मत्त हो गये। उन्होंने विचारा कि उसके जीवन--नाशके लिये सभीने षड्यंत्रका विस्तार किया है। इसलिये सभीके ऊपर महाराजका अविश्वास हो गया अधिक क्या कहें, अपनी अर्द्धांगिनी रानीतकको भी वह अपना शत्रु जानने लगे। विचारा कि रानीने मेरे भी प्राणनाशमें बहुतसे उपाय किये होंगे। महाराज मानसिंह इस प्रकारसे अपने प्राणनाशके लिये सबको उद्यत हुआ जानकर अत्यन्त चिन्तित हुए और उनके हाथका भोजनतक करना छोड़ दिया। केवल एक अत्यन्त विश्वासी सेवक जो कुछ खानेके लिये लाता था केवल उसीको खाकर जीवन निर्वाह करने लगे। उस इकले कमरेमें वह उन्मत्तके समान रहकर दिन रात केवल चिन्ताकी अग्निमें भस्मीभूत होने लगे, इससे उनकी उन्मत्तता और भी दूनी बढ़ने लगी। उन्होंने स्नान करना तथा हजामत बनवाना भी छोड दिया। इससे उनकी मूर्ति भी अत्यन्त भयंकर हो गई। धीरे २ सबसे बातचीत करना भी छोड़ दिया। इस समय मंत्रियोंने उन्हींके नामसे राज्यकार्य किया। जब कोई विशेष प्रयोजनीय कार्य होता

तो महाराजके समीप जाकर निवेदन करते परन्तु महाराज मौनभावसे सुन लेनेके अतिरिक्त उनको कुछ भी सम्मति नहीं देते थे। महात्मा टाडसाहब लिखते हैं कि मरुक्षेत्रके अनेक सामन्तों और प्रजाका ऐसा दृढ विश्वास था कि, महाराज मानसिंहके जीवनको नष्ट करनेके लिये शत्रुओंके असंतुष्ट हुए सामन्तोंने षड़यंत्रका विस्तार किया है–परन्तु इन्होंने प्राणरक्षाके लिये केवल प्रकाशमें उन्मत्तताका बहना किया है। वास्तवमें इनको उन्माद नहीं हुआ था, और किसी किसीको ऐसा भी विश्वास है कि, महाराजने स्वयं इन्द्रराजके प्राणनाशमें गुप्तभावसे अपनी सम्मति दी थी, इसीसे उन इन्द्रराजके प्राणनाशसे गुरुदेव देवनाथके प्राण भी गये; तब उन्होंने अनुतापकी अग्निसे दग्ध होकर इस प्रकारसे उन्मत्तता प्रकाश की थी। महात्मा टाड साहबका स्वयं यह मत है, कि महाराज मानसिंहने नृशंसहृदय नरराक्षस अमीरखांके साथ मिलकर जो शोचनीय वियोगान्त अभिनय किया था और जिसमें कि सैकडों प्राणियोंका जीवन नष्ट हुआ था इसीसे इन्द्रराजके प्राणनाशमें भी सर्वसाधारणको इनके ऊपर संदेह हुआ था। छत्रसिंहके परलोक जानेके पीछे मानसिंहकी उन्मत्तता और भी बढ गई, तब मारवाडके विध्वंसके कारणस्वरूप पोकरणके निहत सामन्त सवाईसिंहके पुत्र सालिमसिंह नेतास्वरूपसे सामन्तोंके साथ मिलकर मारवाडको शासन करने लगे। यद्यपि सवाईसिंह मानसिंहके प्रधान शत्रु थे पर उनके पुत्र सालिमसिंहको फिर राज्यमें शासन शक्तिको चलाताहुआ देखकर हमारे पाठक विस्मित हो सकते हैं, परन्तु राजपूत रीतिके अनुसार पिताका अपराध पुत्रपर न लगाया गया, इसीसे सालिमसिंहने राज्यमें फिर अपनी प्रभुता विस्तार की, इसके पीछे महाराज मानसिंह भी इस भावसे अधिक दिनतक न रह सके।

"इस क्षीणप्राण दुर्बलहृदय हिंदूजातिके प्रस्तावसे, हिंदूजातिके बुलानेसे, हिंदूजातिके उपदेशसे एवं उनकी मंत्रणा और सहायतासे कर्नेल क्लाइव और वाट्सनने एक मुट्ठी अंग्रेजी सेनाके साथ सन् १७५७ ईसवीमें पलासीके युद्धमें जिस शासनशक्तिको जन्म दिया, जिस शासनशक्तिने क्रम २ से प्रबल होकर कूट राजनीतिजालका विस्तारकर साम, दान, दंड और भेद–मय राजनीतिके द्वारा देशीय राजाओंमें भेद डालकर अपना प्रभुत्व स्थापन किया था, इस समय १८२७ ईसवीमें दिल्लीके अखण्ड प्रतापशाली यवन सम्राट्को दमन कर वह बृटिश शासनशक्ति वीरभूमि रजवाडोंमें अपने अधिकारको विस्तार करनेकी इच्छासे उस कूटराजनीति बलसे आगे बढी। जो शासनशक्ति सम्पूर्ण भारतकी पच्चीस[1] करोड प्रजापर शासन करती थी; जिस शासनशक्तिने न्याय, विचार और अपक्षपातकी भेरीका शब्द करके स्वेच्छाचारकी पराकाष्ठा दिखा दी थी, जिस शासनशक्तिने स्वजातिके स्वार्थ साधनके लिये भारतीय प्रजाका अनिष्ट करनेमें मुहूर्त्तमात्रका भी विलम्ब नहीं किया, जो शासनशक्ति एकमात्र ईश्वरकी कृपासे तथा शुभग्रहोंके बलसे सत्तासी

(१) क्लाइवके समयमें भारतकी मनुष्यगणना पच्चीस करोड नहीं थी। मुश्किलसे दश बारह करोड़ होगी।

हजार अंग्रेजी सेनाको लेकर पचीस करोड प्रजासे पूर्ण संसारमें सबसे प्राचीन वीर वंशधरोंकी जननी आर्यभूमिका शासन करती थी, उसी शासनशक्तिने यवनराज्यके लोप हो जानेके पीछे राजस्थानके वीरव्रतावलम्बी राजपूत राजाओंके ऊपर प्रभुत्व स्थापन करनेके लिये मरुभूमिकी ओर पदार्पण किया। मारवाडके महाराज उदयसिंहने जिस प्रकार सबसे पहले बादशाह अकबरके सम्मुख जातीय स्वाधीनताको बेचकर मरुक्षेत्र की राजनैतिक अवस्थाको बदल दिया था, उसी प्रकार महाराज मानसिंहके राज्यसमयमें मारवाडने अंग्रेजोंकी अधीनता स्वीकार की। यवनराज्यके लोप होनेके समयसे यद्यपि मारवाडके महाराज फिर भी स्वाधीन हो गये थे, परन्तु जगदीश्वरकी महिमा अत्यन्त विचित्र है! कुछ ही वर्षोंके बीतनेपर उस राठौर जातिने भी भारतवर्षके अन्यान्य आर्यसंतानोंके समान बृटिशशक्तिकी अधीनताको स्वीकार किया। महाराज मानसिंहने उदयसिंहके समान सबसे पहले उस शृंखलाको धारण किया, और उसी कारणसे मरुक्षेत्रकी राजनैतिक अवस्था फिर बदल गई। यद्यपि बख्तसिंहके परलोक चले जानेके पीछे मारवाड आत्मविग्रहके षड्यंत्र तथा जातीय युद्धोंसे विध्वंस हो गया था, यद्यपि महाराष्ट्रोंने राठौरोंके उन बुरे दिनोंमें तथा महाविपत्तिके समयमें उनके ऊपर अत्याचार करनेकी पराकाष्ठा दिखाई थी, यद्यपि राठौरोंका पहला प्रताप और उनका प्रभुत्व उस समय एक बार ही लोप हो गया था, यद्यपि धनका लोभी सेंधिया उस समय राठौर राजके यहांसे बहुतसा धन संग्रह कर रहा था, परन्तु सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो हम अवश्य ही कहेंगे कि, उस समय भी राठौर गण "स्वाधीन" नामका परिचय देनेमें सब प्रकारसे अधिकारी थे। बृटिशगवर्नमेण्टके साथ उस स्वाधीन राठौर जातिके संधिबंधनसे उस जातिकी वह उपाधि बदल गई थी, या नहीं, इसको हमारे बुद्धिमान् पाठक अवश्य ही जानते होंगे, इस कारण उस विषयके सम्बन्धमें यहांपर हम अधिक कहनेकी अभिलाषा नहीं करते।"

इस समय महात्मा टाड साहबकी ही बातको ठीक मानना होगा। टाड साहब लिखते हैं, कि "१८१७ईसवी में जिस समय लुटेरे महाराष्ट्रोंके साथके समस्त सम्बंध बंधनोंको छेदन कर भारतवर्षमें शान्ति स्थापन करनेके लिये हम राजपूतोंको अपने साथ मिलनेके लिये बुलाते हैं, उस समय महाराज मानसिंहने अपने कुमार छत्रसिंह वा उनके मंत्रीगणोंने हमारे उस प्रस्तावके मतसे दिल्लीमें अपने दूतको भेजा। परंतु वह संधिबंधन भलीभांतिसे ठीक भी न हो सका था कि इसके पहले ही कुमार छत्रसिंह परलोकवासी हो गये। महात्मा टाडसाहबकी युक्तिके विरुद्ध कौन बोल सकता है? किसी प्रकारसे भी झगडा करते हुए हमारा हृदय अत्यंत दुःखित होता है, परंतु सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये उस झगडेको बिना कहे हुऐ भी नहीं रह सकते। इसको हम मानते हैं कि बृटिश—शक्ति समस्त भारतवर्षमें शांति स्थापन करनेके लिये महाराष्ट्रोंके अत्याचारोंको रोककर उनकी शासनशक्तिको हीनबल करनेके लिये राजपूतोंको बुलाती है, परंतु हम पूँछते हैं कि उनके बुलानेका क्या यही मुख्य

उद्देश है ? राजपूतोंके साथ संधि हो जानेमें क्या और कोई उद्देश गौरांगशक्तिके हृदयमें नहीं छिपा था ? सम्पूर्ण देशीय शासनशक्तिको लोप करके अपनी शासनशक्तिकी प्रबलता बढाकर देशीय राजाओंको उस संधिके मोहमय पाशमें फाँस कर प्रकाशमें उनको स्वाधीनताकी उपाधि दे भीतर ही भीतर क्या उनके प्रधान प्रार्थनीय स्वत्व--अधिकार और सामर्थ्यको लोप करनेका उनका आशय नहीं था ? इस प्रश्नके उत्तरका अब प्रयोजन नहीं है। जिस समय स्वयं कर्नल टाडसाहब उक्त शान्तिस्थापनके उद्देशके विषयको वर्णन कर गये हैं; उसके पीछे भी बहुत वर्ष बीत गये हैं। उन प्रत्येक वर्ष, प्रत्येक मास, प्रत्येक दिन तथा प्रत्येक मुहूर्त्तमें इस समय देखा जाता है कि वह स्वाधीन राजपूत राजा इस समय किस प्रकारकी अवस्थामें विद्यमान हैं।''

कर्नल टाडसाहब इससे पीछे लिखते हैं कि ''छत्रसिंहके प्राणत्याग करते ही पोकरणके उस समयके सामन्त सालिमसिंहने जिन अन्य सामन्तोंके साथ मिलकर मारवाडमें अपनी शासनशक्तिका प्रयोग किया था, वे अत्यन्त ही भयभीत हो गये। उन्होंने विचारा कि, यदि महाराज मानसिंहके करकमलमें फिर मारवाडके शासनका भार दिया जायगा तो उनकी निजकी समस्त शक्तियोंका फिर लोप हो जायगा, और मानसिंह पुनर्वार अपनी पूर्व मूर्तिसे शोचनीय अभिनय आरंभ करेंगे। इस कारण नेता सालिमसिंहके अधीनकी सामन्त मंडलीने एकमत होकर यह निश्चय कर लिया कि, मानसिंहके बदलेमें ईडरके महाराजके एक कुमारको मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त करना सब प्रकारसे कर्त्तव्य है''। सामन्तोंने शीघ्र ही ईडरके महाराजके पास यह समाचर भेजा। महाराजने यह उत्तर भेजा, कि ''हमारे एकमात्र पुत्र है; यदि मारवाडके प्रत्येक सामन्त ही एकमत होकर उस कुमारको मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त करनेकी अभिलाषा करते हैं तो उनके इस प्रस्तावमें मैं सम्मत हूँ, नहीं तो दो चार सामन्तोंके कहनेसे उस एकमात्र कुमारके देनेकी मेरी इच्छा नहीं होती।'' ईडरके महाराजका यह उत्तर पाकर सब सामन्तोंने एकमत होकर फिर महाराज मानसिंहको ही शासनशक्तिके चलानेके लिये इच्छा प्रगट की, और वह प्रस्ताव मंडित हो गया। सामन्तमंडलीने हताश होकर महाराज मानसिंहके करकमलमें राज्यका भार अर्पण होनेके अतिरिक्त दूसरा उपाय न देखा। महाराज मानसिंह इस समय अत्यन्त उन्मत्तभावसे रहते थे; संसारके सभी सुखोंको उन्होंने एकबार ही छोड दिया था। राज्यमें अराजकता, विशेष करके अंग्रेजोंकी जो ईस्टइण्डिया कंपनीके साथ नवीन संधिबंधनमें बँधकर मारवाडके भाग्यमें फिर नवीन व्यापार हो सकता था, यही विचार कर सामन्त गण महाराज मानसिंहके उस इकले कमरेमें जाकर मारवाडकी अत्यन्त शोचनीय अवस्था उनको समझाने लगे। यद्यपि महाराज मौनभावसे सब सुनते जाते थे परन्तु किसीका कुछ उत्तर नहीं देते थे। अंतमें ईस्टइण्डिया कंपनीके साथ जो संधि हो गई थी, उसमें उनकी सम्मतिकी आवश्यकता थी 'यह भी कह दिया गया' इस विषयमें सभी उनसे कहने

लगे कि "हे महाराज ! इस समय यदि आप राज्यभार ग्रहण न करेंगे तो अवश्य ही मारवाड देश विध्वंस हो जायगा।" महाराज मानसिंहने उनके उन वचनोंपर कुछ भी ध्यान न दिया; और वे सिंहासनपर बैठनेके लिये भी राजी न हुए। परन्तु सामन्त-मंडलीने दूसरा उपाय न देखकर हताश हो महाराज मान-सिंहको सिंहासनपर बैठनेके लिये बारम्बार कहा। यद्यपि मानसिंह अपने राज्यकी राजनैतिक नवीन शोचनीय अवस्थाको भलीभांतिसे जान गये थे और उसी कारणसे वह एकान्तमें रहने लगे थे। इस समय फिर उनको स्वाधीनभावसे राज्यशासनका सुअवसर मिला; परन्तु अपनी दृढ प्रतिज्ञाके बलसे फिर भी वह ऐसा भाव प्रकाशित करने लगे कि उनके चित्तकी विकृतिका कोई भी लक्षण दूर नहीं हुआ, जब महाराजने देखा कि अब राजनैतिक परिवर्तनका पुनर्भाव हो गया है, और सामन्त राज्यके भारको मेरे हाथमें देनेके लिये विशेष आग्रह करते हैं, तब आप राज्यभारको ग्रहण करनेमें राजी हो गये, उस समय उनका गवर्नमेण्टके साथ कुमार छत्रसिंहके शासन समयमें जो संधिबंधन हो गया था, उस सन्धिपत्रको देखकर यह कुछ सन्तुष्ट न हुए, वरन् उन्होंने सन्धिपत्रकी किसी २ धारापर विशेष असंतोष प्रकाश किया। विशेष करके सन्धिपत्रकी जिस धारामें यह लिखा हुआ था कि उनके अधीनके सामन्तोंकी सेनाको आवश्यकता होनेपर ईस्टइण्डिया कम्पनी अपने अधीनमें कर लेगी, उसी धाराके ऊपर विशेष असम्मति प्रकाश की। वह इस बातको भलीभांतिसे जान गये थे कि इस धारासे अंतमें अधिक असंतोषदायक अग्निके प्रज्वलित होनेकी संभावना है।

महात्मा टाड साहबने जिस भावसे अपना मन्तव्य प्रकाशित किया है उसमें मारवाडके महाराज मानसिंहकी उन्मत्तताके सम्बन्धमें वे सन्देह प्रगट करते हैं, परन्तु महाराज मानसिंह जो एक सामान्य कारणसे इस भांति उन्मत्तके समान रहते थे, उन्होंने परम धार्मिक हिन्दू होकर भी अपने सभी धर्म—कर्मोंको त्याग दिया था, इस बातको हम ठीक नहीं मान सकते। कर्नल टाडसाहबका दूसरा मत यह कि असंतुष्ट सामन्त लोग महाराजके प्राणनाश करनेमें लग रहे थे, इसी कारणसे महाराजने उन्मत्तताका बहाना करके अपने प्राणोंकी रक्षा की थी। इस मन्तव्यको पुष्ट करनेके लिये भी हम आगे नहीं बढ सकते। जब कि मानसिंहको अपनी भार्याके ऊपर भी संदेह हुआ, जब कि उन्होंने केवल एकमात्र अपने एक विश्वास-पात्र सेवकके अतिरिक्त दूसरेके हाथका भोजन तक करना छोड दिया; तब उनका केवल सामन्तोंके भयसे ही उन्मत्तताका बहाना करना किस प्रकारसे सिद्ध हो सकता है ? हमारा ऐसा अनुमान है कि इस समय मारवाडके चारों ओर प्रत्येक सामर्थ्यवान् मनुष्योंने जिस प्रकार षड्यंत्रका विस्तार किया था और पापी अमीरखाँने उस षड्यंत्रजालमें लिप्त होकर जिस प्रकारसे पैशाचिक कार्य किये थे उसने जिस भाँति धनके लालचसे अनेक मनुष्योंके प्राणनाश किये थे, उससे लुप्तप्रताप सामर्थ्यहीन महाराज मानसिंहका चित्त विकृत होनेमें आश्चर्य ही क्या है ? गुरु देवनाथ मानसिंहके

एक प्रधान सहायक और परम हितैषी मित्र थे । उनकी इस शोचनीय मृत्युसे ही महाराजका स्वभाव एकबार ही बदल गया, और इसके पीछे अपने इकलौते पुत्र छत्रसिंहके परलोक जानेपर उनका शोक और भी प्रबल हो गया । दारुण भय और शोकसे महाराज मानसिंहकी जैसी अवस्था हो गई थी उसका वर्णन कहाँतक किया जाय, परन्तु वास्तवमें उनको उन्माद नहीं हुआ था, यह बात भी सर्वथा सत्य है । देशकी दुर्दशा, जातिकी पतित दशा, सामन्तोंके व्यवहार और अपने कियेहुए दुष्कर्मोंको स्मरण करके उन्होंने सभी विषयोंमें उदासीनता प्रकाश की थी । किन्तु अनेक साध्यसाधना, अनेक उपरोध अनुरोध, अनेक व्याख्याओंके पीछे उन्होंने राज्यभार को ग्रहण किया । और बृटिशसिंहको धीरे २ समस्त भारतवर्षपर आक्रमण करते हुए देखकर उन्होंने उस समय फिर पहलेके समान उदासीनता प्रकाशित नहीं की ।

सन् १८१७ ईसवीमें, जिस समय कुमार छत्रसिंह पिताके प्रतिनिधिस्वरूपसे सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय सामन्तोंने अपने पूर्ण सामर्थ्यका विस्तार किया था, जिस समय मारवाडके चारोंओर अराजकता विराजमान हो गई थी, जिस समय अमीरखाँने प्रजापर घोर प्रभुत्व जमाकर अपने अत्याचारोंकी पराकाष्ठा दिखा दी थी, उस समय ईस्टइण्डिया कम्पनीने महाराष्ट्रोंको दमन करनेका बहाना करके महाराष्ट्र और पठानोंसे पददलित रजवाडेके हतवीर्य्य राजाओंको संधि करनेके लिये दिल्लीमें बुलाया । इससे पहले ईस्टइण्डिया कंपनीके साथ रजवाडोंके अन्यान्य राजाओंके समान मारवाडके महाराजका कोई सम्बन्ध नहीं था। बृटिशसिंहने विचित्र राजनीतिकी चतुरतासे अत्यन्त सामान्य अंग्रेजी सेना तथा अपनी ही बराबर देशी सेनाकी सहायतासे धीरे २ देशीय राजाओंका प्रताप लोप करके उनको अपने अधीनताकी जंजीरमें बाँधना आरंभ किया । राजपूतोंके महाराज यह देखकर शीघ्र ही ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ मित्रता करके संधि करनेके लिये अग्रसर हुए । विशेष करके महाराष्ट्रोंके अत्याचार अत्यन्त ही असहनीय हो गये थे और अंग्रेजोंकी ईस्टइण्डिया कम्पनीने उन महाराष्ट्रोंको एक बार ही परास्त करके उन्हें उचित दंड दिया, यह देखकर देशी राजा और भी आग्रहके साथ कम्पनीसे संधि करनेके लिये राजी हो गये, परन्तु ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ संधि करनेसे अंतमें क्या फल होगा इस बातपर उन्होंने किंचित् भी ध्यान नहीं दिया । एकमात्र भारतवर्षमें शान्तिस्थापन तथा महाराष्ट्रोंको दमन करना ही इस संधिका प्रधान कारण तथा मूल उद्देश था । इसके जो और उद्देश थे, उनको कोई भी न जान सके । विशेष करके इस समय राजपूतानेमें जितने राजा थे उन सबकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय हो गई थी, सभी हीनबल और लुप्तप्रताप हो गये थे । यदि ऐसा न होता तो विना युद्धके तथा बिना कारणके एक विजातीय कम्पनीके साथ संधि क्यों कर लेते ? जब राजपूत राजाओंकी लाख २ सेनाका नाश हो जाता था और फिर भी वे अतुल बल प्रकाश करके यवनबादशाहके साथ संधि करनेपर राजी न होते थे, आज वही

राजपूत इस प्रकार बिना किसी दबावके भी क्यों सन्धि करनेके लिये तैयार हुए? उनके अंग्रेजकम्पनीके साथ संधि करनेसे भलीभांति जाना जाता है कि इस समय राजपूत राजाओंकी अवस्था कैसी शोचनीय थी। मारवाडके महाराज मानसिंहके प्रतिनिधि स्वरूपसे उनके पुत्र छत्रसिंहके दूत बनकर व्यास विष्णुराम नामक एक ब्राह्मणने सन् १८१७ ई० में दिल्लीमें आकर ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ निम्न लिखित संधिपत्र तैयार किया।

सन्धिपत्र।

माननीय अंग्रेजी ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ जोधपुरके राजा महाराज मानसिंह बहादुरके प्रतिनिधिस्वरूप राजकुमार युवराज महाराज कुमार छत्रसिंह बहादुरका सन्धि-पत्र भारतवर्षके गवर्नर जनरल अर्थात् प्रधान शासनकर्त्ता महामाननीय मार्किस आफ हेष्टिन्स के० जी० द्वारा सामर्थ्य प्राप्त चार्लस थियोफिलास--मेटकाफ माननीय कम्पनीके पक्षमें तथा ऊपर लिखे हुए महाराज कुमारक द्वारा पूर्ण सामर्थ्य पाकर व्यास विष्णुराम और व्यास अभयराम, महाराज मानसिंह बहादुरके पक्षमें नियत हुए।

पहली धारा--माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनी और महाराज मानसिंह तथा उनके उत्तराधिकारी और इनके स्थानपर जो अभिषिक्त हों, उनमें चिरकालके लिये मित्रता संधिबंधन और परस्पर स्वार्थकी एकता विराजमान की जाय, तथा किसी ओरके जो मित्र और शत्रु होंगे वह दोनों ओरके मित्र तथा शत्रुरूपसे गिने जाँयगे।

दूसरी धारा--बृटिश गवर्नमेण्टने जोधपुरके साम्राज्य तथा अन्य अधिकारी देशोंको शत्रुओंके हाथसे रक्षा करनेका भार ग्रहण किया।

तीसरी धारा--महाराज मानसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा उनके स्थानपर जो अभिषिक्त हों वह गवर्नमेण्टके अधीनमें रहैं और उस गवर्नमेंटकी प्रभुताको स्वीकार करैं, तथा अन्य किसी राजा वा किसी देशके साथ वह किसी प्रकारका संबन्ध नहीं कर सकते।

चौथी धारा--महाराज और उनके उत्तराधिकारी जो इनके स्थानपर अभिषिक्त हों वह गवर्नमेंटकी आज्ञाके बिना अन्य किसी महाराज अथवा साम्राज्यके साथ किसी प्रकारका भी संधिबंधन नहीं कर सकेंगे। परन्तु अपनी जाति तथा मित्र राजाओं-के साथ प्रचलित रीतिके अनुसार पत्रव्यौहार कर सकैंगे।

पाँचवी धारा--महाराज या उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त अन्य किसी-के ऊपर अत्याचार अथवा विवाद न कर सकेंगे। यदि अचानक किसीके साथ कुछ झगडा हो जाय तो उस झगडेमें मध्यस्थ होने तथा दंड देनेका भार गवर्नमेंटके हाथमें दिया जायगा।

छठी धारा--जोधपुरराज्य, जो कर सेंधियाको देता आया है, जिन्होंने एक स्वतंत्र तालिका उसके साथमें लगाकर दी है, वह कर सर्वदाके लिये बृटिश गवर्नमेंटको देना होगा और जोधपुर राज्यके साथ सेंधियाके करके सम्बन्धमें जो संधिबंधन हो गया है वह तोड दिया जायगा।

सातवीं धारा–महाराज इस बातको स्वीकार करते हैं कि जोधपुरराज्यसे जो कर सेंधियाको दिया जाता है उसके अतिरिक्त और किसी राजाको किसी प्रकारका कर नहीं दिया जाता था; और वह उपरोक्त करको बृटिश गवर्नमेन्टको देनेके लिये सम्मत हुए हैं, यद्यपि सेंधिया तथा अन्य कोई राजा महाराजके समीपसे कर मांगेगा तो बृटिश गवर्नमेन्ट उस करके मागनेवालेको उत्तर देगी।

आठवीं धारा–आवश्यकता होनेपर जोधपुरके महाराज पांचसौ अश्वारोही सेना देंगे और जबतक आवश्यकता होगी तबतक जोधपुर राज्यके आभ्यन्तरिक शासनकार्य-की सुविधा और शान्तिकी रक्षाके लिये प्रयोजनीय संख्यक सेनाके अतिरिक्त राज्यकी अन्य समस्त सेना अंग्रेजी सेनाके साथ मिलानी होगी।

नौमी धारा। महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त उनके शासित देशोंमें पूर्ण सामर्थ्य होकर स्वाधीन शासनकर्तास्वरूपसे रहेंगे और जोधपुर राज्यमें बृटिश गवर्नमेन्टके शासनकी सीमा वा उसकी सामर्थ्य प्रचलित नहीं हो सकेगी।

दशवीं धारा। यह दश धाराओंसे युक्त संधिपत्र दिल्लीमें तैयार हुआ तथा एम. चार्लस मेटकाफ और व्यास विष्णुराम तथा व्यास अभयरामके हस्ताक्षरों सहित तथा मोहर लगा हुआ आजसे छः सप्ताहके बीचमें महामाननीय गवर्नर--जनरल और राज--राजेश्वर महाराज मानसिंह बहादुर और युवराज महाराज--कुमार छत्रसिंह बहादुरके द्वारा स्वीकार किया जाय।

दिल्ली, आजकी तारीख ६ जनवरी सन् १८९७ ईसवी।
(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ,
रेजिडेण्ट।
व्यास विष्णुराम।
व्यास अभयराम।

"उपरोक्त संधिपत्रको पढकर हमारे हृदयमें किस भावका उदय हुआ? इसे क्या हम विश्वास कर सकते हैं कि सियाजीके वंशधरोंने उस स्वाधीनताकी अत्यन्त ऊँची अवस्थामें रहकर बृटिश गवर्नमेन्टके साथ संधि की थी? जिस वीरव्रतका अवलम्बन करनेवाली राजपूत राठौर जातिने औरंगजेबको भी तंग कर दिया था; जिस राठौर जातिने सैकडों शत्रुओंका बिना ही संहार किये अकबरकी स्वाधीनताको स्वीकार नहीं किया था, जिस राठौर जातिने अपने बलविक्रमके प्रकाशसे भारतवर्षको प्रतिध्वनित कर दिया था, जिस राठौर जातिने उस यवन सम्राट्की अधीनताकी अवस्थामें भी सुअवसर पाकर स्वाधीनतारूपी रत्नके लेनेकी चेष्टा करनेमें कसर नहीं की थी, वही राठौर जाति बिना कारण गवर्नमेन्टके साथ संधि करनेके लिये राजी होकर बृटिश गवर्नमेन्टकी अधीनताको स्वीकार कर, बृटिश गवर्नमेन्टके सेवकभावसे रहनेके लिये तैयार होकर, गवर्नमेन्टको कर देनेके लिये राजा हो गई है, इससे हमारे विचारवान् पाठक

क्या समझे होंगे ? सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये क्या हम इस बातको नहीं कह सकते हैं कि राठौर जातिके भाग्यके अत्यन्त ही दुर्दिन उपस्थित हुए थे,—राठौर जातिके स्वाभाविक समस्त गुणोंका लोप होकर राठौर जातिका विध्वंस होनेपर राठौरोंके राज-सिंहासनपर एक अयोग्य महाराज विराजमान थे, इसीसे बुद्धिमान् कम्पनीने सरलतासे बिना झगडेके मारवाडमें अपनी प्रधानता विस्तार करके यवनोंकी अधीनतासे मुक्त हुई राठौर जातिके गलेमें फिर अधीनताकी माला डाल दी ? सियाजीसे बख्तसिंहतक जिन राजाओंने मारवाडके सिंहासनपर विराजमान होकर अपने प्रबलप्रतापसे जातीय स्वाधीनताकी प्रदीप्त प्रकृतिको उज्ज्वल कर लिया था, अपने भाग्यके दोषसे अन्तिम अवस्थामें यवनोंकी अधीनताको स्वीकार करके भी शूरसिंह, यशवन्तसिंह, अजितसिंह, अभयसिंह और बख्तसिंह इत्यादि महारथी जिस भावसे वीरताका अभिनय कर गये हैं; यदि उनमेंसे एक भी आज इस मारवाडके सिंहासनपर विराजमान होता तो माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ इस प्रकारसे संधि नहीं हो सकती थी । हम इस बातको मुक्तकंठसे स्वीकार करते हैं कि बृटिश शक्तिके साथ संधि करके राठौर जातिका उस समय एक बडा उपकार हुआ । राठौर जातिकी उस समय जैसी शोचनीय अवस्था हो गई थी । आत्मविग्रह; स्वजाति विद्वेष, विजातीय अत्याचार—उत्पीडनोंने उस समय राठौर जातिको जिस भावसे हतवीर्य और बलहीन कर दिया था; महाराष्ट्र और पठानोंने जिस भावसे मारवाडको विध्वंस कर उसका सर्वस्व लूट लिया था उससे उस समय राठौर जातिको एक प्रबल सामर्थ्यवान् शक्तिकी सहायतासे प्रार्थनीय होना आवश्यक था परन्तु पूर्वोक्त सन्धिबधनके कारणसे मरुक्षेत्रके चिरवीरव्रतावलम्बी स्वाधीन राजाओंके वंशधर उस समयसे कैसी अवस्थामें पडे उसका स्मरण करनेसे ही हृदयपर वज्राघात होता है ।

इस समय कर्नल टाडसाहबकी ही बातको ठीक मानना होगा । १८१७ ईसवीके दिसम्बर महीनेमें ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ जोधपुर राज्यका संधिबंधन होनेके एक वर्ष पीछे अर्थात् १८१८ ईसवीके दिसम्बर मासमें बृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि स्वरूप अजमेरके सुपरिन्टेंडेण्ट मि० विलडर (Mr. Wilder) जोधपुर राज्यमें गये । राज्यकी यथार्थ अवस्था कैसी थी, किस भावसे राज्यशासन होता था, महाराज किस प्रकारसे शासनकार्य करते थे, सामन्तमंडली कैसे आचरण करती थी, तथा राठौर जातिकी शक्ति कैसी थी इसीको जाननेका उनका प्रधान उद्देश था । कर्नल टाड साहब लिखते हैं, "यद्यपि इस समय पूर्व वर्णित कारणोंसे स्वजाति-द्वेष और आत्मविग्रहसे मारवाडका शासनविभाग बहुत ही गडबड अवस्थामें था तथापि मारवाड राज्यसभाकी उज्ज्वलता, ऐश्वर्यका आडम्बर और राजसी रीति नीतिमें कुछ भी अदल बदल नहीं हुई थी । अर्थात् राजासिंहासनके सम्मान और प्रतापके ऊपर राठौर जातिका सम्मान निर्भर था । इस कारण वे लोग उस राजसिंहासनपर, सुशोभित अप्रिय अविश्वासी तथा घृणित मनुष्यका भी सर्वसाधारणके सामने उचित

आदर और आडम्बर करनेके लिये पहिलेसे ही सुशिक्षित थे।" महात्मा टाड साहबकी इस युक्तिसे जाना जाता है; कि राठौर जाति अपने राजाओंके ऊपर विराग और अभक्ति होते हुए भी विदेशी दूतके निकट विदेशी राजाके प्रतिनिधिके सम्मुख ऐसे दुर्दिनोंमें भी राजसभामें उज्ज्वलप्रभा, महिमा और महत्त्वको प्रकाशकरके शांत नहीं हुई। इतिहासवेत्ता पीछे लिख गये हैं कि "इस समय मारवाडराज्यके दीवानपदपर अखैचन्द और सामन्त मंडलीके प्रतिनिधि स्वरूप पोकरणके अधीश्वर सालिमसिंहने भांजगडकी उपाधि धारण करके प्रधान सामरिक नेतास्वरूपसे नियुक्त हो प्रबल प्रतापकेसाथ अपनी शासनशक्तिको चलाया। महाराज मानसिंहके अधिवासी सामन्तोंने इस समय अखैचंद और सालिमसिंहको नेता पदपर वरण करके राज्यके समस्त किलोंमें अपनी अधिकारी सेनाको स्थापित कर राजकीय प्रधान २ पदपर अपनी इच्छानुसार कर्मचारियोंको नियुक्त किया; और अपने स्वार्थसाधनमें विशेष चेष्टा थी, परस्परमें मतान्तर, आत्मनिग्रह, विवाद विसम्बाद इस समय प्रबल रूपसे प्रज्वलित हो गये थे। सामंतोंने अपनी इच्छानुसार शक्तिको संचय करनेके लिये अत्याचारोंके करनेमें किंचित् भी कसर नहीं की थी, परंतु उन सामर्थ्यवान् सामंतोंके विरुद्धमें हतमंत्री इंद्रराजके बेटे फतहराजने खडे होकर अनेक विषयोंमें भयंकर उत्पात किये थे। फतहराज जोधपुरकी राजधानीमें अध्यक्ष पदपर नियुक्त थे। उन्होंने अपने निहत पिताका बदला लेनेके लिये सामंतोंकी प्रत्येक कामनाको व्यर्थ करनेकी चेष्टा की थी। उद्धत हुए सामन्तोंके उन अप्रीतिमूलक स्वाधीन आचरणोंसे महाराज मानसिंहकी शासनशक्ति एकबार ही दुर्बल हो गई थी, माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके उक्त दूत मि० वेलडरने राजधानीमें जाकर राज्यकी उस अवस्थाको देख उक्त कंपनीकी आज्ञानुसार तीन दिनके पीछे वे गुप्त भावसे महाराज मानसिंहसे जा मिले और उनसे कहा कि, सामन्तोंके उस अन्याय और स्वेच्छाचारको निवारण करनेके लिये ईस्टइण्डिया कम्पनी उनको सहायता स्वरूपसे बृटिश सेना देनेके लिये तैयार है।" कर्नल टाड साहब पीछे लिख गये हैं, कि "महाराज मानसिंह कितने सावधान थे, उन्होंने इस प्रस्तावके सम्बन्धमें जो व्यवहार किया वह तो सभीको विदित है। वह भली भाँतिसे जानते थे कि असंतुष्ट और उद्धत सामन्तोंको एकबार ही विध्वंस करनेके लिये बडे भारी मुद्गरोंको उठाना पडेगा; पर उन्होंने यह भी स्थिर कर लिया था कि इन मुद्गरोंको प्रयोग करनेके बदले केवल इन्हें पास रखनेसे ही सब उद्देशोंको पूर्ण कर सकूंगा। सामन्तगण इन मुद्गरोंको देखकर ही इनके भयंकर बलका अनुभव कर उद्धत आचरण छोड देंगे, उन्होंने और भी विचारा कि इस विराटकाय यंत्रके चलानेसे अकस्मात् प्राप्त हुई विपत्तिके भोगनेके बदलेमें यदि इस यंत्रके अस्तित्वसे ही सम्पूर्ण सुविधा और सुयोगको प्राप्त होकर अपनी इच्छानुसार फल पा सकें तो और भी अच्छा है।" कर्नल टाड साहबकी उपरोक्त उक्तिसे भलीभांति जाना जाता है कि महाराज मानसिंहने माननीय ईस्टइण्डिया कंपनीके प्रस्तावके अनुसार अंग्रेजी सेनाकी सहायतासे उद्धत हुए सामन्तोंको दमन करना न विचारा पर उसी समय नहीं आवश्यकता होनेपर विश्वविजयी अंग्रेजी

सेनाकी सहायता लूंगा यह बात कहकर उन्होंने अंग्रेजी दूतको धन्यवाद दिया और सामन्तोंको केवल भय दिखाकर अपने उद्देशको पूर्ण कर लिया। उन्होंने अंग्रेजी दूतको धन्यवाद देकर कहा कि अब इस समय इस उद्देशको साधन करनेके लिये अंग्रेजी सनाकी सहायताकी कुछ आवश्यकता नहीं है, मैं स्वयं ही राज्यके प्रार्थनीय संस्कारोंका साधन कर असंतुष्ट हुए सामंतोंको दमन करनेकी सामर्थ्य रखता हूं। सामंतोंने भी महाराजके उस व्यवहारसे भयभीत होकर आगेको घोर अनिष्टकी संभावना विचार स्वयं नम्रता स्वीकार कर ली। महाराज मानसिंह-ने बालकपनसे ही राजनीति विद्यामें विशेष शिक्षा प्राप्त की थी। उन्होंने कई वर्षतक राज्यशासनमें वैराग्य प्रकाशित किया था, और उन्मत्तकी तरह निर्जन स्थानमें रहनेके पीछे वह फिर सिंहासनपर विराजमान हुए, पर उन्होंने बडी चतुरताके साथ धीरे २ अपनी शासन शक्तिको पूर्ववत् संचय कर लिया। वह समस्त सामंतोंके सम्मुख उनके अत्यन्त अप्रिय कार्योंको मानो भूलकर प्रगटमें उनके प्रति उदारता तथा दयाभाव दिखाने लगे। सामन्तोंकी दो श्रेणी हो गई थीं, एक श्रेणी तो इनके विपक्षमें खडी हुई और दूसरी श्रेणी इनके अनुकूलमें इनके ऊपर भक्ति दिखाती थी। महाराज मानसिंहने सबसे पहले उन दोनों श्रेणियोंमेंसे प्रयोजनीय मनुष्योंको निकाल कर राज्यके भिन्न २ भागोंमें नियुक्त कर दिया। उसीसे दोनों श्रेणी उनके ऊपर प्रसन्न हो गई। विशेष करके महराज इस समय दोनों श्रेणियोंके ऊपर तथा जिसने उनका विशेष अनिष्ट करनेमें कसर नहीं की थी उसके ऊपर भी उन्होंने ऐसी दया और कृपा प्रकाशित की कि जिससे अत्यन्त संदिग्ध सामन्तोंको भी किञ्चित्मात्र सन्देह करनेका अवसर न मिला, कर्नेल टाड साहब लिख गये हैं कि अंग्रेजी दूतने इस समय महाराजको बारम्बार अनुरोध किया, "कि बृटिश गवर्नमेण्टकी सेनाकी सहायता लेनेके बिना आप किसी प्रकार भी राज्यमें शान्तिस्थापन और अपनी शासन शक्तिको प्रबल न कर सकेंगे, परंतु महाराजने उस प्रस्तावका बारम्बार निषेध कर दिया कि, गवर्नमेण्टकी सेनाकी सहायताके बिना ही मैं स्वयं अपनी सामर्थ्य बलसे शांति स्थापन कर सकता हूं। जब दूतने देखा कि महाराज किसी प्रकारसे भी अंग्रेजी सेनाकी सहायता लेनेमें राजी नहीं होते तब वह शीघ्र ही मारवाडको छोडकर अपने स्थानको चला गया।" यह हम दावेके साथ कह सकते हैं कि महाराज मानसिंह इस बातको भली भांतिसे जान गये थे कि अंग्रेजी सेनाको मारवाडमें बुलानेसे अंतमें विपरीत राजनैतिक काण्ड उपस्थित होनेकी संभावना है। भारतवर्षके बृटिश शासनके इतिहासको हमारे पाठकोंने भलीभांतिसे पढा होगा कि जिस जिस राज्यमें इस शक्तिने शान्ति स्थापनका बहाना करके प्रवेश किया है उसी २ राज्यके अंतमें कैसे २ परिणाम हुए हैं। मि० वेलडर किसी भांति भी महाराज मानसिंहको कम्पनीके कूट राजनीति जालमें न फाँस सके, और वहांसे चले जानेके पीछे १८१९ ईसवीमें महात्मा टाड साहब भारतवर्षके गवर्नर जनरलके द्वारा उदयपुर कोटा बूँदी और शिरोही देशके समान इस

मारवाड राज्यमें भी बृटिश पक्षकी ओरसे राजनैतिक एजेण्टके पदपर नियुक्त हुए; परन्तु कई विशेष कारणोंसे महात्मा टाड साहबने कई महीने तक मारवाडमें चरण रखनेका अवसर न पाया। टाड साहब नवम्बरके महीनेमें मारवाडमें आये। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि मि० वलडर मारवाडमें जाकर राज्यकी जैसी शोचनीय अवस्था तथा चारों ओरको अशान्ति और सामन्तोंकी सम्प्रदायके अन्यायके अतिरिक्त प्रभुत्व देख गये थे उन्होंने भी इसी भांतिसे जोधपुरमें जाकर वह सभी अप्रीतिकारक कार्य देखे। वह वर्णन कर गये हैं, वह " उद्धत सामर्थ्यवान् सामन्तोंकी सम्प्रदाय राजाके ऊपर उसी प्रकारसे अपने प्रभुत्व और शक्तिको चलाती थी, तथा राज्यके सभी कर्मचारियोंको उसी भांतिसे अपने सेवक भावसे आज्ञा पालनमें नियतकर रक्खा था; महाराज मानसिंहने केवल साक्षी गोपालस्वरूपसे सिंहासनपर स्थित होकर उन सामन्तोंके प्रत्येक कार्यमें सन्तोष प्रकाशित किया था; उन्होंने किसी विषयमें भी स्वाधीन भावसे हस्तक्षेप करनेका साहस न किया। महाराजके अधीनमें जो धनके लोभी तथा वेतनभोगी सिन्धु देशकी सेना तथा पठानसेना नियुक्त थी वह इस समय अत्यन्त शोचनीयरूपसे दारुण कष्ट भोगती थी, विशेष करके अगले तीन वर्षोंका वेतन जो उनको नहीं मिला था उसी वेतनके लिये आर्त्तनाद करके भयंकर असन्तोष प्रकाश करती थी, उसकी अवस्था इतनी हृदयभेदी हो गई थी, कि उस समय वह जोधपुरकी राजधानीमें प्रत्येक मनुष्यके दरवाजे पर जाकर भिक्षा मांग अतिकष्टसे अपने दिन व्यतीत करती थी; और बहुतसी सेना अनाहार रहकर प्राणोंके भयसे बडे कष्टसे धान्योंका संग्रह कर उनको खाकर जीवन निर्वाह करती थी, बृटिश गवर्नमेण्टके एजेण्ट कर्नल टाड साहबने जोधपुरकी राजधानीमें जाकर महान उद्योगकर उस कष्टमें पडी हुई वेतनभोगी सेनाके पिछले वेतनका हिसाब करके उस सेनासे कह दिया कि तुमारे पिछले वेतनमें सैकडा पीछे ३० रुपया मिलेगा और इसके अतिरिक्त कुछ नहीं मिल सकता; सेनाने उसमें अपनी सम्मति दी, परन्तु एजेण्ट तीन सप्ताहके पीछे जोधपुर छोडकर चले गये, इसलिये उस सेनाकी वह आशा भी निष्फल हो गई।" कर्नल टाड साहबके उक्त वर्णनसे भलीभाँति जाना जाता है कि यद्यपि महाराज मानसिंह फिर सिंहासनपर विराजमान हुए थे परन्तु वह स्वयं किसी सामर्थ्यको न चलाकर उन सामर्थ्यवान् सामन्तोंके द्वारा ही सम्पूर्ण कार्य करते थे। इस बातको हम कह सकते हैं कि मानसिंहके इस प्रकारके आचरण करनेका एक गूढ कारण था वह कारण समय पर स्वयं प्रकाशित हो जायगा।

इतिहासवेत्ता टाड साहब पीछे लिख गये हैं, कि " इस समय जिसको विचार कहा है जोधपुरके निवासी उसको एकबार ही भूल गये। यदि कोई इस समय किसी मनुष्यको जानसे मारडालता तो उसको विचार करके दंड देना तो दूर रहा वरन्

(१) कर्नल टाड साहबके मारवाडमें जानेका वृत्तान्त महाराज मानसिंहका उनका अभ्यर्थना करना इत्यादि प्रथम काण्डके २८ अध्यायमें भलीभाँतिसे वर्णन किया गया है।

कोई उस हत्या करनेवालेके विरुद्धमें कुछ बाततक भी नहीं कह सकता था। उस समय अन्नके न मिलनेसे सेना प्राणत्याग करने लगी—तथा राजपूत धर्मकी विधिको त्यागकर भक्ष्य अभक्ष्यका विचार न कर सब प्रकारके मांस खाकर अपने प्राण धारण करने लगी, सारांश यह है कि जब सामन्तोंकी सम्प्रदायने अपनी इच्छानुसार कार्य करने आरम्भ किये और महाराज मानसिंह सब प्रकारसे उनके हस्तगत होकर बिन्दुमात्र भी स्वाधीनभावसे कुछ कार्य न कर सके, तभी वह समस्त गार्हित उपायोंके अवलम्बनमें नियुक्त हुए थे। एजेण्ट तीन सप्ताह तक जोधपुरमें रहे इस बीचमें उन्होंने कईबार महाराज मानसिंहके साथ गुप्तभावसे साक्षात् किया। उस साक्षात्को देखकर महाराज मानसिंहने अपनी अवस्था तथा जिस कारणसे उनकी यह अवस्था हुई थी उसके सम्बन्धमें बातचीत होकर दोनोंमें अत्यन्त ही मित्रता उत्पन्न हुई। उनकी उस वार्ताके समय मारवाड राज्यके प्राचीन ऐतिहासिक विवरण और महाराजके उस समयकी अवस्थाकी आलोचना हुई। एजेण्ट साहबने निम्न लिखित उक्तिसे बिदा ग्रहण की,—"आपने जिन समस्त विपत्तियोंसे उद्धार पाया था वह मुझे भलीभांतिसे विदित है, आप किस प्रकारसे उन भयंकर विपत्तियोंके उद्धार करनेमें समर्थ हुए थे, वह कुछ हमसे छिपा नहीं था। आपकी सुमातिसे ही आपके बाहरी शत्रुओंका नाश हुआ है; आप इस समय बृटिश गवर्नमेण्टके मित्र हुए हैं, आप उसीप्रकार साहसके साथ उस बृटिश गवर्नमेण्टके ऊपर निर्भर रहिये तथा बहुत थोडे दिनोंमें ही आपके सभी मनोरथ पूर्ण हो जांयगे।"

कर्नल टाड् साहब इससे पीछे लिखते हैं कि "राजा मानसिंहने बडे आग्रहके साथ इन सब बातोंको सुना; पर उन्होंने उस सौन्दर्य सौम्यमूर्तिसे: अपने हृदयके भावका कोई भाव भी प्रकाशित नहीं किया, उन्होंने उसी मूर्तिसे आनन्द प्रकाश करके कहा, कि मित्रभावसे आप हमारे राज्यमें जिन संस्कारोंकी इच्छा करते हैं, आप देखेंगे कि वह इसी वर्षके बीचमें ही पूर्ण हो जांयगे।" इसके उत्तरमें एजेण्टने कहा, "यदि आप इच्छा करेंगे तो इसके आधे समयमें ही प्रार्थनीय संस्कार पूर्ण हो सकते हैं।"सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो हम अवश्य कह सकते हैं कि राजपूत बांधव महात्मा टाड् साहबने मि० वेलडरके समान महाराज मानसिंहको एकमात्र बृटिश सेनाकी सहायतासे मारवाडमें शांति स्थापन करनेके लिये विशेष अनुरोध किया। राजा मानसिंहके उस अनुरोधको पालन न करनेसे कर्नल टाड साहब अपने दौत्यकार्यको सफल न होता हुआ देखकर अत्यन्त दु:खित हुए थे। हमारे पाठक इसका अनुमान बडी सरलतासे कर सकते हैं कि यदि १८१९ ईसवीके बदले वर्त्तमान समयमें ऐसा अनुरोध न माना जाय तो और ही प्रकारका फल उपस्थित हो सकता है।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं कि इस समय निम्न लिखित कई विषयोंपर महाराज मानसिंहको अधिक ध्यान देनेकी आवश्यकता थी।

१ उचित शासन रीतिका प्रचार।

२ राज्यकी आमदनीपर विशेष दृष्टि।

३ खास भूमिकी व्यवस्थाका संस्कार।

४ सामन्तोंके अधिकारी देशोंपर जो अन्याय करके अपना अधिकार कर लिया है यह असन्तोषकी भयंकर अग्नि उसीसे प्रज्ज्वालित हुई है उसके सम्बन्धमें सन्तोषदायक व्यवस्था करना उचित है।

५ महाराज मानसिंहने जो विदेशी वेतनभोगी सेनाको अपने यहां भरती करके प्रधानतः उसके द्वारा शासनशक्तिको चलाया है उस सेनाका संस्कार करके उसकी फिर व्यवस्था करनी उचित है।

६ मारवाडके दक्षिण देशके मेर गण, उत्तरके लरखारी गण, मरुक्षेत्रके सराई गण और पश्चिमकी खोसा जातिने जिन ग्रामोंको लूटकर चारों ओर उपद्रव मचा रखा है उनके उपद्रव निवारण तथा शान्तिरक्षाके लिये विशेष पहरेवाले रक्खे जाँय।

७ वाणिज्यपर महसूल बहुत लिया जाता है इसीसे वाणिज्यका काम प्रायः बन्द हो गया है और जो व्यापारकी वस्तु प्रायः इस अवस्थामें भी लाई जाती हैं चोर उनको लूट लेते हैं, अस्तु इन सब बातोंके भी उचित प्रबंधकी व्यवस्था करना।

महात्मा टाड साहब उपरोक्त सात विषयोंका उल्लेख कर गये हैं; इससे भली-भांति जानाजाता है कि उस समय मारवाडमें अराजकता इतनी प्रबल हो गई थी और वहां वेही सब लक्षण भलीभांतिसे विद्यमान थे जो कि एक स्वाधीन जातिकी पतन अवस्थामें होते हैं। विलासिता, अनैक्यता, स्वजातिमें वैरभाव आदि कारणोंसे इस समय राजपूतोंका वल विक्रम मानो एक बार ही मोहकी निद्रासे ढक गया था। इस महा दुःसमयमें भी जो राठौर-सामन्त-नेता जीवित थे, वे केवल विध्वंस करनेवाली नीतिके अवलम्बनसे राजशक्तिको घटानेके साथ आत्मस्वार्थको पूर्ण कर जन्मभूमिका सर्वनाश करनेके लिये अग्रसर हुए थे। महात्मा टाड साहब पीछे लिख गये हैं कि उनके जोधपुरको छोडते ही सामर्थ्यवान् सामन्तोंने पहलेके समान पुनः पैशाचिक मूर्ति धारण कर राज्यमें फिर अशान्ति और उपद्रव आरम्भ कर दिये। या तो धनपानेकी इच्छासे ऐसा किया हो, अथवा प्रतिहिंसाको सफल करनेके लिये, जो हो, पर प्रधान मंत्री और उनके अनुगत सामन्तोंने इस समय राज्यके चारोंओर घोर अत्याचार और इच्छानुसार उत्पीडनकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। जातीय ममता मानो एकबार ही उनके हृदयरूपी आकाशसे न जाने कहां चली गई। जातिमें विद्वेषके वशीभूत होकर वे स्वेच्छाचारी मंत्री और सामन्त तथा अन्यान्य अनुगत सामन्त महा निग्रह भोग करानेके लिये विभीषण साजसे सजने लगे। मानसिंहने कर्नल टाड साहबके निकट यद्यपि वह प्रतिज्ञा की थी कि एक वर्षमें ही आवश्यक सुधार कर लूंगा, परन्तु एक पक्षके बीतते न बीतते मंत्री श्रेष्ठके संहारमूर्ति धारण करने तथा अन्यान्य सामन्तोंके यथेच्छ व्यवहार करनेपर भी उनको कुछ कहनेका साहस न हुआ प्रधान मंत्रीने सबसे पहले गोडवाड देशके प्रधान स्थान घाणेरावको अपने

अधीनमें कर लिया, उस अशान्ति पूर्ण अवस्थामें गोडवाडकी असल जागीर घाणेरावको कुडक कर लिया, और एक सालकी मालगुजारीसे अधिक लेकर उसको पीछेसे मुक्त किया, यह क्या थोडा अत्याचार है। घाणेराव ठाकुरने जिस भांतिसे दंड भोग किया था उसी प्रकारसे उनके अधीनके नीची श्रेणीके सामन्तोंने भी सरदारोंको दंड दिया। विशेष करके अत्याचारी दीवानके एक भ्राताने उस समृद्धिशाली गोडवाड देशके सामन्तोंके ऊपर करका भार ऐसा लगाया कि उनके कष्टकी सीमा न रही। गोडवाड राज्यके चाणोद मुकामको भी अपनाकर दीवान और प्रधान मंत्री अखैचंदने इस प्रकारसे स्वेच्छा--चारका एक विशेष प्रदर्शन दिखाकर सामन्तोंपर घोर अत्याचार कर सफल मनोरथ हो साहसमें भर अंतमें मरुक्षेत्रक सबमें प्रधान सामन्त आहवापतिके प्रति भी हस्ताक्षेप किया। परन्तु महावीर चांपाक वंशधरोंने गर्वित होकर यह उत्तर दिया, "कि हमारे अधिकारी देश कुछ आजके नहीं हैं और न आप भय दिखाकर अपना स्वार्थ पूर्ण कर सक्ते हैं।"

दीवान अथवा प्रधान मंत्री अखैचंदने इस प्रकारस मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमें घोर अत्याचार तथा हृदयभेदी उपद्रवोंको प्रारंभ करके जिन सामन्तोंको अपने दलमें भरती नहीं किया था, इस समय वही घोर विपत्तिके आनेकी आशंका करने लगे। उन्होंने देखा कि अखैचंद कुछ थोडेसे सेवक सामन्तोंको अपने साथ लेकर मानो प्रबल शासनशक्तिकी सहायतासे मारवाडको विध्वंस करनेके लिये तैयार हुआ है। विशेष करके जब टाड साहब चले गये, तब महाराज मानसिंह पहलेके समान निर्जन स्थानमें रहकर उदासीनता प्रकाश करने लगे, इसीसे सामन्तोंकी आशालता मानों एकबार ही सूख गई। कर्नेल टाड साहबने कहा है कि महाराज मानसिंहके इस समय राज्यके किसी विषयकी ओर भी ध्यान न देनेसे अखैचंद और फतहराजमें परस्पर घोर वैमनस्व हो गया। यद्यपि फतहराज मानसिंहके समीप मित्रभावसे रहता था, और वह मानसिंहका प्रियपात्र था; यद्यपि मानसिंहकी प्यारी रानी फतहराजपर विशेष प्रसन्न रहती थीं यद्यपि बहुतसे सामन्त उसकी सहायतामें नियुक्त थे, परन्तु चतुर अखैचंदने समस्त सेनाको अपने हस्तगत करके राज्यके समस्त किले अधिक क्या जोधपुरके किले तकको भी अपने हस्तगत कर लिया; और अपना प्रबल प्रताप प्रकाशित किया। फतहराजको किसी प्रकारसे भी अपने शत्रु तथा स्वदेशमें अरातिस्वरूप अखैचन्दके उस अत्याचारको निवारण करने तथा उसके प्रतापको लोप करनेका साहस न हुआ—अखैचन्द अपने बलको प्रबल जानकर फतहराजका तिरस्कार कर पहलेके समान निर्भय हो घोर अत्याचार करने लगा। तब फतहराजने उसको मारनेके लिये षडयन्त्र जालका विस्तार किया। यह बात जानकर वह राजधानी छोडकर किलेमें चला आया।

देखते २ इस प्रकारसे छः महीने बीत गये। सारे मारवाडमें अखैचन्दका दोर्दंड-प्रताप क्रमशः बढ गया। अखैचन्दकी आज्ञाके उलंघन करनेमें किसीको

भी साहस न हुआ। महाराज मानसिंहको मानो इस समय अखैचन्द काठकी पुतलीके समान नचाने लगा। टाड साहब लिखते हैं, कि जिस समय अखैचन्दने उस शासन शक्तिके अपव्यय, अत्याचार और उत्पीडनसे समस्त सामन्त और सारी प्रजाका नाश करके केवल अपने सेवकोंको धनसे परिपूर्ण कर दिया था, उस समय सहसा राज्यमें इस बातका प्रचार हुआ कि अखैचन्दका पतन हो गया है। महाराज मानसिंह जो इतने दिनोंतक उन्मत्तके समान रहे थे, उनका इस प्रकारसे रहना केवल अखैचंदसे बदला लेनेके लिये ही था। हम पहले ही कह आये हैं कि महाराजने जब पहले ही अखैचंद तथा अत्याचार करनेवाले सामन्तोंके ऊपर किंचित् भी ध्यान न दिया था, उसका एक गूढ कारण था, उस गूढ कारणको क्या हमारे पाठक नहीं जानते है ? परन्तु नीतिज्ञ मानसिंह केवल सुअवसरकी ही बाट देख रहे थे, वह समय आते ही महाराजने अखैचन्दको उसके साथियों सहित अपनी राजधानीमे बुलाया और सबको बंदी करके कहा गया कि, तुमने जितना धन राज्य और प्रजाका लूटा है वह सब बताओ नहीं तो तुमको प्राणदण्ड होगा; तब उन्होंने राजा और प्रजाका माल बताना आरंभ किया। दीवान और उसके साथियोंने एक सूची चालीस लाखकी तैयार की, महाराजने वह सब धन हस्तगत करके बडे २ कष्ट देकर उनका इस संसारसे बिदा किया। नगजी किलेदार जो छत्रसिंहको बिगाडनेवाला था, मूलजी धांधलके सहित (जो जागीरदार था) विषका प्याला पिलाकर संसारसे बिदा किया गया; और फतहपोल द्वारपर उनके शरीर फेंक दिये गये। धांधलके भाई जविराजका विहारीदास खीची और एक दरजीके सहित शिरकाट कर मोरीसे नीचे फेंक दिया गया। वेदपाठी व्यास शिवदास भी श्रीकृष्ण ज्योतिषीके सहित उस सूचीमें उसी दंडके भागी हुए, नगजी किलेदार और मूलजी जो पहले राजाके मरनेसे अपने स्थानोंको चले गये थे और पूर्व राजासे जो धन उन्होंने ठगा था उससे उन्होंने वहां किले आदि बनाये। जब महाराजा मानसिंह गद्दीपर बैठे और अपराध क्षमाका विज्ञापन निकाला तो वे अपने कामोंपर आये, उनपर महाराजकी कृपा हुई उनको यह ध्यान न रहा कि हम कभी विद्रोही हुए थे, मानसिंहने उनको भी इस समय बंदी करके अपने पूर्वके जवाहरात उनसे मांगे। अपने पुत्रका धन उनसे लेकर उनको किलेके उन्हीं बुर्जोंसे नीचे फेंक दिया गया। जिनकी वह रक्षा करते थे, उस समय दीवानके इलाकेके उसके मित्र भी बंदी किये गये और उनमेंसे जिन्होंने राज्यका रुपया बता दिया था अकसर छोड दिये गये। कहा जाता है कि महाराज मानसिंहने अत्याचारियोंसे एक करोड रुपया संग्रह किया था पर टाड साहब कहते हैं कि इससे आधा भी मिला हो तो अच्छा।

टाड साहब कहते हैं, यदि महाराज मानसिंह केवल अत्याचारी अखैचंदको ही प्राण दंड देते और जिन कर्मचारियोंने उनके साथ विश्वासघातकता की थी उनके अपराधों के अनुसार उनको दंड देते और जो सामन्त उद्धत होकर शान्ति स्थापनमें बाधा देते थे केवल उन्हींके अधिकारके देशोंको अपने हस्तगत करके सन्तुष्ट रहते तो बडी सरलतासे

दूसरे सामन्तोंके हृदयपर अधिकार करके उनकी सहायतासे प्रशंसा पासकते थे। परन्तु उन्होंने पहले ही अखैचन्द इत्यादिको दंड देकर अपना मनोरथ पूर्ण कर लिया, इसी कारणसे अन्यान्य संदिग्ध मनुष्योंसे भी बदला लेनेकी आग भडक उठी। वह धीरे २ बडी सावधानीके साथ छलकपटके जालका विस्तार करने लगे। जिन ऊँची श्रेणीके सामन्तोंने कई दिन पहले राजसभामें महा ऊँचा सम्मान पाया था तथा जिन्हें पुरस्कारमें बहुतसे देश मिले थे उनके प्राणनाश करनेका भी महाराजने अपने मनमें निश्चयकर लिया था। केवल एक अचानक घटनासे ही वह अखैचन्दके साथ न मारे गये; कारण कि वे वहांसे भाग गये थे। पोकरणके सामन्त सालिमसिंह निमाजके सामन्त सुरतानसिंह, आहोरके सामन्त ओनाडसिंह तथा उनकी सम्प्रदायके अन्य नीची श्रेणीके कितने ही सामन्त अखैचंदके साथ मिलकर राज्यके शासनकार्यमें नियुक्त थे। वह प्रतिदिन राजसभामें जाकर राज्यशासनमें अपनी सुसम्मति देकर दिवान अखैचंदकी विशेष सहायता करते थे। महाराज मानसिंहके अखैचंदको बंदी करते ही वे समस्त सामन्त अत्यन्त ही भयभीत हो गये; उनके उस भयको दूर करनेके लिये महाराज मानसिंहने उनके समीप एक दूतके हाथ कहला भेजा कि उनके ऊपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप न होगा, एकमात्र अत्याचारी तथा दुश्चरित्र अखैचंदको उचित दंड देकर महाराजकी अभिलाषा पूर्ण हो गई है। परन्तु महाराजने जिस छलकपटके जालका विस्तार करके उनका सर्वनाश करनेके लिये अनुष्ठान किया था, सामन्त इससे पहले ही इस बातको भली भाँतिसे जान गये थे। महाराज मानसिंहने पोकरणके सामन्त सालिमसिंहके वंशको एकवार ही लुप्त करनेके लिये यथार्थमें उद्योग किया था। ओनाडसिंह मानसिंहके अत्यन्त प्यारे मित्र थे। उन ओनाडसिंहके एक विश्वासी सेवकको महाराज मानसिंहने स्वयं आज्ञा दी कि तुम समस्त सामन्तोंको अपने साथ लेकर राजसभामें आओ परन्तु सामन्त सावधान थे उनके बुलानेपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। उसी रात्रिमें मानसिंहकी प्रतिहिंसारूप अग्नि भयंकर वेगसे प्रज्ज्वलित हो गई, उसी रात्रिमें जोधपुरकी राजधानी भयंकर मूर्ति धारणकर हृदयभेदी विभीषण वियोगान्तका अभिनय दिखाने लगी।

नीमाजके सामन्त सुरतानसिंह राजधानीमें अपनी सेना सहित एक घरमें रहते थे। इन सुरतानसिंहने यद्यपि महाराज मानसिंहपर घोर विपत्ति पडनेके समय उनके विशेष उपकार किये थे परन्तु महाराज मानसिंह उन सभी उपकारोंको भूल गये और उनसे भी बदला लेनेके लिये उन्होंने इच्छा की। उस राजधानीमें आठ हजार वेतनभोगी सेना तोपें और बहुतसे गोलोंको अपने साथमें लेकर सुरतानसिंह नगरके जिस स्थानमें रहते थे उसी स्थान पर आक्रमण किया। वीरश्रेष्ठ सुरतानसिंहने केवल एकसौ अस्सी अनुचरोंके साथ अपनी रक्षा की; और जब तोपोंके मुखसे गोले निकल २ कर पृथ्वीपर गिरने लगे तब यह नंगी तलवारें हाथमें

---

(१) प्रथम कांड अध्याय २७ पृष्ठ ७५८ में देखो।

ले बाहर निकल समरभूमिमें आ डटे। और महावीर पुरुषके समान उस सत्यवीरने सैकडों मनुष्योंका प्राणनाश करके अन्तमें युद्धक्षेत्रमें अपने प्राण त्याग दिये। जो कई सेवक जीवित थे वे सुरतानके शिशु पुत्रके जीवन और स्वार्थकी रक्षाके लिये रणक्षेत्रको छोडकर नीमाजकी ओरको भाग गये। नीमाजके सामन्तोंके समान सालिमसिंहकी भी इस प्रकारसे हत्या करनेका महाराज मानसिंहका विशेष अभिप्राय था; परन्तु पहले आक्रमणसे ही सुरताने विशेष वीरता प्रकाश करके उस युद्धमें बहुतसे नगर निवासियोंके प्राण नष्ट कर दिये, इससे महाराज सालिमसिंह पर आक्रमण न कर सके। सालिमसिंह रातभर विशेष सावधानीके साथ रणशय्यापर रहकर शेषमें सुभीता पाय मारवाडकी ओरको चले गये। यदि पोकरणके सामन्त पकडे जाते अथवा मारे जाते तो इन सामन्तवंशके चार पुरुष, देवीसिंह, सुबलसिंह, सवाईसिंह और सालिमसिंह जो मारवाडके सिंहासनको नष्ट करनेके लिये तथा अपनी सामर्थ्य विस्तार करनेके लिये निरंतरभावसे जिस निन्दनीय कार्यको करते आये थे, इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि उस अभिनयकी यवनिका गिर जाती।

जिस रात्रिमें जोधपुरकी राजधानीमें वह शोचनीय--अभिनय हुआ उस समय फतहराजको बुलाकर उनको राज्यके दीवान अर्थात् प्रधान मंत्री पदपर अभिषिक्त कर दिया। फतहराज और मारे हुए प्रधान सेनापति इन्द्रराजके पुत्र वह इस समयतक महाराजके अत्यन्त प्रियपात्र होकर रहते थे। महाराजने फतहराजको प्रधान मंत्रीपद पर अभिषिक्त करके कहा, कि "आप इस समय अवश्य ही जान गये हैं कि मैं आपको इतने दिनोंतक क्यों अभिषिक्त नहीं कर सका था।" महाराजके इन वचनोंका यथार्थ अर्थ हमारे पाठक सरलतासे जान गये होंगे, महाराज मानसिंहने अखैचंद और उसके सहायकोंको प्राणदंड देकर नीमाजके सामंतोंका जीवनका नाश तथा पोकरणके सामन्तोंको भगाकर नवीन संग्रह किये हुए धनसे 'जो वेतनभोगी सिंधी सेना अपने बाकी वेतनके लिये अबतक भयंकर चीत्कार शब्दके साथ अत्यंत असंतोष प्रकाश करके दारुण कष्ट भोग रही थी' उसको तुरंत ही वेतन देकर संतुष्ट किया, और जो सामंत पहलेसे ही महाराज मानसिंहके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हो गये थे, विशेष करके जो अखैचंदके प्राणनाशसे अधिक असंतुष्ट हुए थे, महाराज मानसिंहकी चतुरनीतिके बलसे उनको महाभयके जालमें विजडित कर लिया गया। शीघ्र ही राज्यमें इस बातका प्रचार हो गया कि महाराज मानसिंहने इस समय अपने राज्यमें शांति स्थापन करनेके लिये बृटिश सेनाकी सहायता मांगी है। इस समाचारके प्रचार होनेका फल लग गया, नहीं तो समस्त सामन्त उस अवस्थामें महाराज मानसिंहको सिंहासनसे रहित कर सकते थे परंतु वह बृटिश सेनाके आनेका समाचार पाते ही अपने प्राणोंकी रक्षाके लिये महा भयभीत हो गये।

नीमाजके सामंत सुरतानसिंहके जोधपुरकी राजधानीमें मारे जाते ही उनके चिरकालके विश्वासी सेवक उनके बालक पुत्रके प्राणोंके रक्षाके लिये तथा स्वार्थरक्षाके

लिये नीमाजमें चले गये थे । महाराज मानसिंहने शीघ्र ही नीमाजपर आक्रमण करनेके लिये सेनाको भेज दिया; नीमाजके निवासी सब प्रकारसे अपनी रक्षामें सावधान हुए अंतमें महाराजके नामकी मुहरका लगा हुआ पत्र सुरतानके बालक पुत्रको सुनाया गया कि महाराजने उनको क्षमा करके नीमाज देशको उनके हाथमें देना स्वीकार कर लिया है। "महाराजकी वह प्रतिज्ञा सत्य है या नहीं वास्तवमें वह प्रतिज्ञा पालन की जायगी या नहीं" सुरतानके पुत्रके मनमें जब यह संदेह हुआ तब जो वेतनभोगी सेना नीमाजपर आक्रमण करनेमें नियुक्त थी उस सेनाके नेताने प्रतिज्ञा की कि इस प्रतिज्ञाको मैं अवश्य ही पालन करूंगा । परन्तु अत्यन्त लज्जा और राजपूतोंके लिये अत्यन्त कलंकका विषय है कि सुरतानका पुत्र सब प्रकारसे विश्वास करके किलेसे होकर जैसे ही वह राजाके डेरोंमें पहुँचा कि वैसे ही महाराजकी वह प्रतिज्ञा भंग हो गई । बालक सामन्तके राजाके वचनोंपर विश्वास करके डेरोंमें आते ही एक राजपुरुषने महाराजके हस्ताक्षर सहित अनुज्ञापत्र उसके हाथमें अर्पण करके कहा कि महाराजने आपको बंदी करके राजदरबारमें लानेकी आज्ञा दी है । महाराज मानसिंहके यह आचरण जैसे असंतोषदायक थे, धनके लोभी वेतनभोगी सेनाके प्रधान सेनापतिके आचरण भी उसी भांति अत्यन्त प्रशंसनीय थे। प्रधान सेनापति नहीं जानता था कि महाराज मानसिंह अत्यन्त कलंकदायक आचरण करके इस बालक सामन्तका सर्वनाश करेंगे, इस कारण उस कर्मचारीने ऊपर लिखी हुई राजाकी आज्ञाको पढकर सुनाया और क्रोधित होकर कहा; " ना, यह कभी नहीं हो सकता, मेरे कहने पर सब प्रकारसे विश्वास करके इस बालक सामन्तने हमारे हाथमें आत्मसमर्पण किया है, यद्यपि महाराजने अपनी प्रतिज्ञाको भंग करनेकी इच्छा की है, परन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञाको अवश्य ही पालन करूंगा और इनको किसी निर्विघ्न स्थानमें रखकर आऊंगा ।" प्रधान सेनापतिने जो कुछ कहा था उसीको किया । उसने महाराजकी उस आज्ञाको उल्लंघन करके अभागे बालक सामन्तको साथ ले उसे अर्वली पर्वतके पार कर आया । वह बालक सामन्त वहांसे मेवाडराज्यको चला गया ।

जो महाराज मानसिंह इतने दिनोंतक वैराग्यभावसे उन्मत्तके समान एक कमरेमें रहकर उद्धत सामन्तोंके अत्याचार स्वेच्छाचार–उत्पीडन और धनकी लूटको चुपचाप देख रहे थे, जो महाराज मानसिंह अंग्रेज गवर्नमेण्टके द्वारा बारम्बार अनुरुद्ध होकर भी बृटिश सेनाकी सहायता ग्रहण करके राज्यमें शांति स्थापन करनेके लिये राजी नहीं हुए थे वही महाराज मानसिंह इस समय यथार्थ राजपूत वीरमूर्तिसे रंगभूमिमें आ विराजमान हुए । यद्यपि महाराज मानसिंहने अत्यन्त कठोर नीतिका अवलम्बन कर लोहेके शासनदंडको धारण करके एक वियोगांत अभिनय किया था, एक पक्षमें यद्यपि यह अत्यंत निंदनीय कार्य था, तथापि हम सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो अवश्य कहेंगे कि उस समय मारवाडके चारों ओर जैसी अराजकता फैल रही थी सामंतोंने उसी भावसे अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये गर्हित उपायोंके अवलम्बन करनेमें भी कसर नहीं की, इसीसे महाराज

मानसिंहकी कठोर नीति न्याययुक्त थी। इस प्रकारकी कठोर नीतिका अवलम्बन किये विना उस अवस्थामें महाराज मानसिंह कभी भी राज्यमें सरलतासे शांति स्थापन करनेको समर्थ नहीं होते। जब महाराज मानसिंह एकवार ही शासनसामर्थ्यसे हीन हो गये थे, तब उस शासनशक्तिको संग्रह करनेसे उदारनीतिका अवलम्बन कर कभी कार्य नहीं कर सकते थे।

"कर्नल टाड साहब पीछे लिख गये हैं, कि महाराज मानसिंहने अखैचन्द इत्यादिको प्राणदण्ड देकर नीमाज इत्यादिके देशोंपर अधिकार करनेके समान क्रमानुसार, छल, कपट और अत्याचारोंसे एक २ करके सभी सामन्तोंको हतवीर्य कर दिया। सभी सामन्त इस समय स्वतन्त्र भावसे रहते थे, इस कारण उन्होंने महाराज मानसिंहके अधीनकी दश हजार वेतनभोगी सेनाके विरुद्धमें इकले खडे होकर अपने स्वार्थकी रक्षा करनेमें किसी प्रकारका भी साहस न किया। अन्य पक्षमें उस अवस्थामें एकसाथ मिलकर भी वह खडे न हो सके, कारण कि उन्होंने विचारा कि सब मिलकर भी महाराज मानसिंहके विरुद्ध खडे न हो सकैंगे। क्यों कि ऐसा करनेसे महाराज मानसिंह अंग्रेजी सेनाकी सहायता ले करके हमको एकबार ही विध्वंस कर डालैंगे। इस प्रकारसे कई महीनोंमें मारवाडके समस्त सामन्त महाराज मानसिंहके निष्ठुर आचरणसे पीडित हो अन्तमें अपने अधिकारी देशों अर्थात् अपनी जन्मभूमिको छोडकर आसपासके राज्योंमें भाग गये। महाराज मानसिंहने बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि कर ली थी, इसी उपायसे उन्होंने अपनी अवलम्बित नीतिको सफल कर लिया, नहीं तो वह किसी प्रकारसे भी अपना अभीष्ट सिद्ध नहीं कर सकते। राजा मानसिंहने गवर्नमेण्टके साथ संधिबन्धन करके सब कार्य सिद्ध कर लिये तथा मारवाडके सभी सामन्तोंको इच्छानुसार निकाल दिया, मारवाडके पूर्ववर्ती प्रबल प्रतापशाली असीम साहसी किसी राजाने भी इस प्रकारके कार्य करनेका साहस नहा किया था।"

इतिहासवेत्ता टाड साहब निम्न लिखित उक्तिसे मारवाडके इतिहासको समाप्त कर गये हैं, "उन साहसी वीर सामन्तोंने वहांसे निकलते ही कोटा, मेवाड, बीकानेर और जयपुरमें आकर निवास किये। अधिक क्या कहैं उस चिरविश्वासी ओनाडसिंहके प्रति भी किसी प्रकारकी कृतज्ञता प्रकाश करके उसकी विश्वासताका पुरस्कार न दिया गया, वह ओनाडसिंह भी वहाँसे निकलकर दूसरे राज्यमें चले गये। मानसिंह जिस समय भीमसिंहसे परास्त होकर जालौरके किलेमें रहते थे, उस समय यह ओनाडसिंह ही मानसिंहके प्रधान सहायकरूपसे रहते थे। और इन्हीं ओनाडसिंहने अपनी स्त्रीके सम्पूर्ण अलंकार अधिक क्या नाकमेंकी नथ भी जो किसी प्रकारसे भी नहीं उतारी जाती और जिसका उतारना महा अशुभ जाना जाता है उस नाककी नथतकको भी लेकर बेच डाला, और उस समस्त धनको मानसिंहके आत्मपालन तथा शत्रुओंके ग्राससे अपनी रक्षा करनेके लिये दे दिया था। जिस समय मानसिंह पाली नामक वाणिज्यके प्रधान स्थानमें बिना घोडेके गये थे और उस सुअवरमें शत्रुओंने

उनको बन्दी करनेका उपाय किया था, उस समय एकमात्र ओनाडसिंहने ही मानसिंहका उद्धार किया था। धौंकलसिंहके साथ युद्धके समय जिस समय मारवाडमें समस्त सामन्तोंने मानसिंहका पक्ष छोडकर धौंकलसिंहका पक्ष लिया था उस समय जो चार सामन्त मानसिंहके पक्षमें थे यह ओनाडसिंह भी उन्हींमेंके एक हैं जिस समय जयपुरके महाराज जोधपुरको लूटकर जे पदार्थ अपने राज्यमें लिये जाते थे, उस समय इन्हीं चारों सामन्तोंने महावीरता प्रकाश करके उनके सभी द्रव्योंको छीन लिया था। जब छत्रसिंहकी मृत्यु हो गई तब मानसिंहके हाथमें राज्यशासनका भार देनेके लिये इन्हींमेंसे एकने प्रधान उद्योग किया था। इस प्रकारसे १८२१ ईसवीमें मारवाडके अधिकांश प्रधान २ सामन्तोंने निकाले जाकर अत्यन्त कष्टमें पडकर अन्तमें गवर्नमेण्टकी शरणमें प्रार्थना पत्र भेजकर उसे मध्यस्थ होनेका प्रस्ताव उपस्थित किया; परन्तु और एक वर्ष व्यतीत हो गया, तथापि गवर्नमेण्टने उनकी उस शोचनीय अवस्थापर कुछ ध्यान न दिया। उन्होंने बडा भारी साहस करके बृटिश गवर्नमेण्टके कर्मचारीके द्वारा जो पत्र भेजा था उसे हमारे पाठक भलीभांति पढ चुके हैं। उन्होंने कर्नल टाड साहबको भी अपनी बात सुनानेमें कुछ अनाकानी न की, वहांसे उत्तर मिला कि यदि यथा समयमें मध्यस्थता स्वीकार न की जाय तो अन्तमें वह अपनी हानि मानसिंहसे पूर्ण कर लें।"

"१८२३ ईसवीतक मारवाडकी राजनैतिक अवस्था इस प्रकार थी। यदि वह राजा मानसिंहको पैशाचिक हिंसावृत्तिसे मोहित न करते तो महाराज स्थाई शांतिस्थापनका बीज बो सकते थे; और अपने मंगल तथा राज्यके मंगलके लिये जो संस्कार अवश्य प्रयोजनीय हो गये थे उन संस्कारोंको भी पूर्णरीतिसे कर सकते थे, प्रयोजन होनेपर शासनरीतिका संस्कार तथा सामन्तोंको बिना विध्वंस किये उनका दमन और उस समय राज्यकी जैसी अवस्था हो गई थी उस अवस्थाके लिये उपयोगी समस्त व्यवस्थाको ठीक करनेकी भी उनको सामर्थ्य थी, पर उन्होंने अपने राज्यमें शासन नीतिके समयके उपयोगी नवीन भावके गठनसे यश और गौरवके उपार्जनके बदले एकमात्र गवर्नमेण्टके साथ संधि करके बाहरी शत्रुओंसे निर्भय हो स्वदेशकी सामन्त श्रेणीका एक साथ ही नाश किया और उसी कारणसे उन्होंने उस राजशक्तिके प्रति सर्वसाधारणकी अनुरक्तिको बिना प्रकाशित किये घृणा दिखाई थी।"

साधु टाड साहबने मारवाड--इतिहासके उपसंहारमें निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशित किये हैं, "राजपूत जातिकी एक प्रधान शाखाके अत्यन्त प्राचीन साम्राज्य, कान्यकुब्ज वंशकी छः शताब्दियोंके पहले मारवाडके नवीन उपनिवेश स्थापनसे वर्तमान समयके इतिहासको संक्षेपसे वर्णन करके, बृटिश गवर्नमेण्टके साथ उस राजके संधिबंधनसे इस समय जो अस्थिर नीति विद्यमान है, तथा राज्यकी जैसी शोचनीय अवस्थाका वर्णन हुआ है उसकी बिना आलोचना किये इतिहासका

(१) प्रथम कांड, परिशिष्ट पृ० ९४२ देखो।

उपसंहार करना असंभव है। राजपूतोंके साथ हमारी जो संधि हो गई हैं, उन समस्त संधियोंकी मूलनीति किस प्रकारकी अस्थिर और अपूर्ण थी, मारवाडकी उक्त अवस्था उसको प्रकाशित कर रही है। यदि शीघ्र ही इस रोगकी औषधि न की जायगी और राजपूतोंकी दशा शीघ्र ही न बदलेगी तो असंभावी महाकष्ट उत्पन्न होंगे कि जिनका वर्णन न हो सकेगा, और हमारे लिये भी घोर विपत्ति आनेकी आशंका होगी। इन राजपूतोंने जिस साहससे अपनी भूमिके अधिकारको अविनाशी कहकर प्रचार किया था; उसी प्रकार वे स्वत्वरक्षा--प्राचीन चिरप्रचलित पैतृक स्वत्वाधिकार और सामर्थ्यको भली भाँतिसे रक्षा करनेमें समर्थ थे। उस स्वत्वाधिकारकी रक्षाके लिये समय २ पर हजार २ राठौर, एक २ पुरुषकी मृत्यु होनेसे घोर अत्याचार और उपद्रवोंसे अपने अधिकारकी रक्षा करते आये थे। वह अत्याचारी और पीडा देनेवाले इस समय कहाँ हैं? गजनी और गिलजई, लोधी, पठान, तैमूर तथा कठिन महाराष्ट्रोंके वंशधर इस समय कहां हैं? देशीय राजपूत उस समस्त राठौरोंके विप्लवमें भी अपने स्वार्थकी रक्षा करते आये थे, उन्होंने अत्याचार करनेवालोंका पतन भी देखा था। यदि उन राजपूतोंमें स्वजातिकी विद्वेष-रूपी अग्नि प्रज्वलित न होती तो जिन अत्याचारियोंके सहवाससे राजपूतोंने आत्म-निग्रहकी शिक्षा ली थी उस आत्मनिग्रहकी अग्निको प्रज्वलित न करते तो राजपूत गण अवश्य ही अत्याचार करनेवालोंके साथ ही साथ अपने नवीन बलसे बलवान हो भारतवर्षमें वीरमूर्तिसे मस्तक उठा सकते थे। राजपूतोंके आत्मविच्छेद तथा अनैक्यतासे ही लूटनेवालोंका दल रजवाडोंमें गया; तस्कर महाराष्ट्रोंका दल, पिशाचबुद्धि पठान गण; पंगपालके समान रजवाडेके प्रत्येक प्रान्तमें गये, और राजपूतोंकी निर्बुद्धिताकी सहायतासे उन्होंने प्रबल बलशाली होकर शुभ फल संचय कर लिया; परन्तु इन राज-पूतोंने अंग्रेजोंके साथ मित्रता कर ली थी, न्याय विचार, क्षमा और सत्यता अंग्रेज जातिकी महाशक्तिकी मूलभित्ति है। परन्तु अंग्रेज जातिने उन राजपूतोंसे किसी प्रकारकी भी आशा नहीं की थी, केवल उन्हीं राजपूतोंकी आत्मरक्षाकी सहायता तथा शांतिस्थापन करनेके लिये जिस विधिका प्रयोजन था, उसी अनुरागकी आशा की थी, उस अंग्रेज जातिकी सहयोगितासे राजपूत जातिका वह अभाव दूर हो सकता था। "हमने मारवाडकी जिस शोचनीय अवस्थाको अंकित किया है, रक्षा करनेवाली बृटिश गवर्नमेण्टने कई वर्ष तक उस शोचनीय अवस्थाका परिवर्तन करनेके लिये किसी प्रकारके उपायका अवलम्बन न करके अपनी प्रतिज्ञाका कैसा पालन किया? इसका हमारे पाठक भलीभाँतिसे विचार कर सकते हैं। यदि कम्पनी कहे कि हमने राजपूत राजाओंके साथ जो संधि की है उसमें यह व्यवस्था है कि हम उस राज्यके भीतरी विषयमें हस्ताक्षेप न करेंगे, वे भीतरी शासनकार्य अपनी इच्छाके अनुसार कर सकते हैं इस कारण हमको इस विषयमें हस्ताक्षेप करनेका अधिकार नहीं है, तो हम कह सकते हैं कि यदि राजाके समान राजपूत सामन्त गणोंपर राजपूत राजा अत्याचार करें, उनका स्वत्वाधिकार तोड दें, तो ऐसे समयमें गवर्नमेण्ट उनकी सहायता

नहीं करना चाहती तो राजपूतोंकी शासनप्रणालीमें जो हम परामर्श देते हैं उस परामर्शसे भी रुक जाना हमारा कर्तव्य है तभी राजपूत राजगण यथार्थमें स्वाधीनतापूर्वक भीतरी शासन करनेमें समर्थ होंगे। और किसी बातमें हस्ताक्षेप किया जाय और किसी बातमें उदासीनता दिखाई जाय तो इसमे न्यायमें बाधा आती है। इस प्रकार अपनेको न्यायी जाननेके निमित्त हमको निःस्वार्थभावसे दोनों पक्षोंपर ध्यान रखना चाहिये राजपूतोंकी राजनैतिक अवस्था बदलनेके लिये और भी विज्ञतामूलक दयामूलक उदार-नीतिका अवलम्बन करना उचित है जिससे राजपूतोंकी भीतरी उन्नति और मंगलकी वृद्धि हो, इस विषयकी हमें सदा चिन्ता रखनी चाहिये। ऐसा करनेसे हमारे राज्यमे भी शान्ति और श्रीवृद्धि होगी बहुतसे राठौर सामन्तोंने इस नीतिपक्षका समर्थन किया। इस अवसरके आते ही अभयसिंहके वंशधर राजाओंने मारवाडके भाग्यमे मानो इस अविश्रान्त निग्रहको बुला दिया है, उसी वंशको सिंहासनसे उतारकर ईडरराजके कुटुम्बसे मृत महाराज जोधाके एक वंशधरको मारवाडके सिंहासनपर बैठा देना हमारा पहला कार्य है। यदि हम राठौर सामन्तोंकी समाजमें अपनी राजतंत्रकी रीति, वा स्वेच्छाचारकी नीतिका प्रयोग करें और उनके अत्याचारोंके निवारणमें हस्ताक्षेप न करें, तो हम इन असीम साहसी सामन्तोंको एकबार ही निराश और क्रोधोन्मत्त कर सकते हैं, हमने इन राठौर सामन्तोंके किये हुए जिन भयंकर कार्योंका वर्णन किया है उसका फल क्या हुआ है यह सामन्त किस कार्यको नहीं कर सके. इसका विचार करना हमें उचित है, धावा मारनेवाले पिंडारों और लूटनेवाले मरहठोंने जो शोचनीय कार्य किये है, निगृहीत राठौर सामन्त उनकी अपेक्षा अवश्य ही लोमहर्षण कार्य करनेको उद्यत हो जाते तो कैसा हृदयभेदी काण्ड उपस्थित होता! कैसी अराजकता और कैसे अत्याचार दिखाई देते! ऐसी किम्बदन्ती है कि निगृहीत राठौर सामन्त--मण्डलीने उस असह्य अकथनीय कष्ट अविचार और स्वेच्छाचारको सहनेमें असमर्थ होकर गवर्नमेण्ट कम्पनीसे इस विषयमें सहायता चाही थी, सरकारके मध्यस्थ न होनेपर उद्दीप्तहृदय हो उन्होंने अपनी आशाको उत्कटरूपसे सफल कर लिया तथा राजा मानसिंहके हृदयमें छुरी घुसेड दी। यदि यह कहावत सत्य है तो ऐसी प्रतिहिंसा उचित दंडरूपसे मानी जायगी, यह आशा की गई थी कि इस प्रकारके उद्योगके बिना निगृहीत सामन्त कभी अपने कार्यको पूरा नहीं कर सकते वह सत्य निकली; यह भी जाना गया है कि जोधपुरके सिंहासनपर इस समय भीमसिंहके पुत्र विराजमान है। यह बात भी विचारके योग्य है। पहले जिस सम्प्रदायने धौंकलसिंहका पक्ष लिया था, इस

---

(१) टाड साहबने अपने देश जानेके समय जो यह कहावत लिखी है यह सब अंशोंमें सत्य नहीं जान पडती। हमने जिस पिछले इतिहासका संग्रह किया है पाठक उसे पढकर उस आशयको समझ लेंगे।

समय वही उनके साथी होंगे, पोकरणके सामन्तने भी उनका मन्त्री होना स्वीकार किया है, पर न्यायके अनुसार प्रधान मंत्रीपदपर चांपावत सम्प्रदायके नेता आहवाके सामन्तके बैठनेका अधिकार है और इस वंशकी चिर प्रचलित रीति भी ऐसी ही है, ऐसा न होनेसे ही विवाद विसंवाद रक्तपात षड्यन्त्र चारोंओर दिखाई दे रहा है, यदि कोई ईडरका राजकुमार मारवाडके सिंहासनपर आरूढ होता तो यह सब बखेडे दूर हो जाते, यदि समस्त राठौरोंकी एक जातीय सभा होकर इस प्रश्नकी मीमांसा की जाय तो निश्चय है कि दश संख्यामें नौजनोंकी सम्मति ईडरके किसी राजकुमारको मारवाड-के सिंहासनपर बैठानेकी होगी, ऐसा करनेसे बृटिश सरकार भी निर्भय ही भीतरी विषयोंमें हस्ताक्षेपकी सब विपत्तियोंसे छुटकारा पालेगी, सहस्रों राठौरोंको शान्ति प्राप्त होगी और हमारी चिन्ता भी मिट जायगी ।

सोलहवाँ अध्याय १६.

मारवाडके आधुनिक इतिहासकी सूचना; मानसिंहके साथ बृटिश गवर्नमेण्टके उबसे पहले सधिपत्रका उल्लेख; संधिपत्र; उस संधिपत्रमे मानसिंहकी असम्मति; मानसिंहका गवर्नमेण्टके विरुद्ध आचरण; निकली हुई राठौर मंडलीका गवर्नमेण्टसे विचारके निमित्त सहायता मागना; गवर्नमेण्टका इसमें असम्मति प्रकाश करना; एजेण्ट की मध्यस्थतामे सामन्तोंके साथ महाराजका सम्मिलन; संधिपत्र; महाराजका सामन्तोंपर क्षमा प्रकाश करना; मेरवाडके सम्बन्धमे गवर्नमेण्टके साथ महाराजका सधिपत्र; राठौर सामन्तोंका पुनरुत्थान; धौंकलसिंहका मारवाड़के सिंहासनकी फिर इच्छा करना; जयपुरके महाराजका मारवाडपर आक्रमणके लिये उद्योग; मानसिंहका बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता मांगना; सहायतामे असम्मति; गवर्नमेण्टका मानसिंहकी भर्त्सना करना; गवर्नमेण्टका मत परिवर्तन; धौंकलसिंहका पलायन; गवर्नमेण्टका जयपुरके महाराजकी भर्त्सना करना; मानसिंहका उद्धार पाना; संधिपत्रके मतसे मानसिंहका सहायताके लिये गवर्नमेण्टको पन्द्रह सौ सेनाका देना; उस सेनाकी चतुरताके सम्बन्धमें सरकारका दोषारोपण; उसकी एवजमें मानसिंहका एक लाख पन्द्रह हजार रुपया वार्षिक देना स्वीकृति करना; संधिबन्धन, मेरवाडेके सम्बन्धमें दूसरी बार व्यवस्था; बुढापेमें मानसिंहका धर्मराजकोंके ऊपर भक्ति प्रकाश करना; उनके उपदेशसे राज्यमें असंतोषकारी रीतिका अवलम्बन; राठौर सामन्तोंका शेष उत्पात; मारवाडमें राजनैतिक उपद्रव; बृटिश सेनाका मारवाडमें प्रवेश; गवर्नमेण्टके साथ महाराजका संधिबन्धन; संधिपत्र; राज्य संस्कार; मेरवाडेके सम्बन्धमें शेष व्यवस्था; महाराजमानसिंहकी मृत्यु ।

राजपूतबन्धु महात्मा टाड साहबने रजवाडोंके जिस समयतकके इतिहासको वर्णन किया है हमको उस विस्तारित वर्णनके सिवाय उस समयसे इस समयतकका

---

(१) सन् १८२३ ई० में कर्नेल टाड साहब जिस समय भारतको छोडकर चिरकालके लिये अपने देशको चले गये थ उस समय आहवाके सामन्त निकाले जाकर मेवाडमे रहते थे।

इतिहास भी पाठकोंके सम्मुख रखना उचित है और पहले भी हमारी इच्छा शेष इतिहासके संग्रह करनेकी थी । हमने उस प्रतिज्ञा—पालनकी अपनी सामर्थ्यभर चेष्टा की, हम नहीं कह सकते कि हमारे पाठक उसको पढकर प्रसन्न हुए थे या नहीं, महात्मा टाड साहबने रजवाडेके पोलिटिकल एजेण्ट स्वरूपसे राजपूतोंमें दीर्घकालतक निवास कर राजस्थानके प्रत्येक राजा, प्रत्येक प्रधान प्रधान कवियों, प्रत्येक नीतिज्ञ, प्रत्येक प्रधान २ भाट और चारणोंकी सहायतासे स्वयं रजवाडेके प्रत्येक प्रान्तोंमें घूमकर राजपूत कवियोंकी लिखी हुई ग्रन्थावलीको संग्रह करके उन्होंने इस विस्तृत इतिहासको सम्पदान किया, परन्तु हमारे लिये इतना सुभीता कहाँ है? इस कारण हमने यथाशक्ति परिश्रम और चेष्टा करके जहाँतक इतिहासका संग्रह किया है वह अपनी प्रतिज्ञा की रक्षाके लिये पूर्वमें भी पाठकोंके आगे रक्खा है और इस समय भी रखते हैं, पर हमारा यह कार्य ऐसा है कि जिस प्रकार सबसे श्रेष्ठ सुवर्णमंडित पर्वतराज हिमालयकी उँचाईकी बराबरी करनेके लिये सामान्य दूर्वा उपस्थित हो । इस बातको हम स्वीकार करते हैं । महात्मा टाड साहबकी शिक्षा, ज्ञान, दूरदर्शिता और राजपूतोंके चरित्रोंकी अभिज्ञताके साथ साथ उनकी सामर्थ्य बहुत बढी हुई थी इस कारण हमारे पाठक इस अनुवादकके लिखे हुए परिशिष्टको पढकर किसी प्रकार भी टाड साहबके लिखे हुए इतिहासके समान सन्तोष लाभ नहीं कर सकेंगे, यह तो हमको विदित ही है; हम अपनी प्रतिज्ञा पूर्तिके लिये दृढ विश्वासमे इस संक्षिप्त और अपूर्ण इतिहासको वर्णन करनेमें अग्रसर होते हैं ।

इतिहास वेत्ता महात्मा टाड साहब जबतक इन भारतीय रजवाडोंमें रहे; उसी समय तकके इतिहासको उन्होंने वर्णन किया है पीछे अपने देशमें जाकर वह इस विस्तारित इतिहासको छपाकर इसके प्रचार करनेके निमित्त जीवनके शेषभागको विश्राम देकर केवल राजपूत जातिके मंगलकी चिन्तामें लगे रहे । उनको पिछले इतिहासके संग्रह करनेमें इतना यत्न नहीं था, अथवा उनके इतिहासके प्रकाशित होनेसे परवर्ती घटनावलीको उसके साथ संग्रह करनेका अवसर नहीं मिला । मानसिंह जिस समय मारवाडके सिंहासनपर विराजमान थे उस समय उदारहृदय टाड साहब रजवाडेको छोडकर इंगलेण्डको चले गये, इस कारण मानसिंहके शेष इतिहासको उन्होंने प्रकाशित नहीं किया ।

महाराज मानसिंहके शासनके इतिहासको संपूर्ण करनेके पहले हमारी यहां एक और विषयके उल्लेख करनेकी अभिलाषा है । महात्मा टाड साहबने उन विषयोंका उल्लेख या तो भूलसे न किया होगा, या उसका प्रयोजन न समझा होगा परन्तु इतिहासके सम्मानकी रक्षाके लिये हम उन विषयोंका उल्लेख करना अत्यन्त कर्त्तव्य जानते हैं । सन् १८१८ ईसवीमें महाराज मानसिंहके साथ महामान्य अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनीका जो संधिबन्धन हुआ था, महात्मा टाड साहबने केवल उसीका उल्लेख किया है, परन्तु इसके पहले १८०३ ईसवीमें मारवाडके महाराज मानसिंहके साथ कंपनीका जो संधिबंधन हुआ था उस विषयका उन्होंने कोई उल्लेख

नहीं किया । महाराज मानसिंह ग्यारह वर्षतक जालौरके किलेमें रहकर, अंतमें महाराज भीमसिंहके परलोक चलेजानेपर जिस समय मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए, उस समय अर्थात् १८०३ ईसवीमें ईस्टइण्डिया कम्पनीने भारतक कठिन महाराष्ट्र तस्करदलके दो प्रधान नेता सेंधिया और हुलकरकी शासनशक्तिको एकबार ही लोप करनेके लिये महा समराग्नि प्रज्ज्वलित की । प्रबल पराक्रमशाली अंग्रेजी सेना उस युद्धमें सेंधियाको एकबार ही परास्त करके भागे हुए हुलकरके पीछे शीघ्रतासे गई । रजवाडेके राजाओंने उस समय तस्करोंके दोनों नेताओंको अपने यहां आश्रय न दिया । ईस्टइण्डिया कम्पनीने इस प्रकारके उपायकी खोजमें प्रवृत्त हो मारवाडके नवीन महाराजके साथ संधि करनेका निश्चय कर लिया । कम्पनीने विचारा कि यदि इस समय मारवाडपतिके साथ संधि कर ली जायगी तो बृटिश शासनशक्तिके विरुद्धमें खडे होनेसे सेंधिया और हुलकरकी शासनशक्ति बडी सरलतासे लुप्त हो जायगी और रजवाडेके राजाओंके साथ भी चिरस्थाई सम्बन्ध हो जायगा ।

महा माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके नेता जनरल लेक जो सेंधियाको परास्त करके हुलकरको पकडनेके लिये सेना सहित गये थे उन्होंने भारतवर्षके उस समयके गवर्नर जनरल लार्ड वेलसलीकी सम्मतिसे महाराज मानसिंहके निकट संधिका प्रस्ताव भेजा । महाराज मानसिंहने उस समय ऐसी कोई आपत्ति न करके संधिपत्रपर हस्ताक्षर करनेकी सम्मति दी । इस प्रकारसे अकबराबाद सूबेके अधीन मराहिन्द नामक स्थानमें संवत् १८६० की ६ तारीखको पूसके महीनेम यह संधिपत्र तैयार किया गया ।

संधिपत्र ।

महा माननीय ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ महाराजाधिराज राजराजेश्वर मानसिंह बहादुरकी मित्रता तथा संधिके सम्बन्धका पत्र माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनीके पक्षमें महामहिमवर रिचार्ड मार्किस वेलेसली, सेण्टपाटिक नामक महोच्च कौलीन्य उपाधिके नाइट, ग्रेटबृटिनके महामान्य अधीश्वरके माननीय प्रिविकाउन्सर भारतवर्षके अंग्रेजोंके अधिकारी समस्त देशोंके सेनादलके कप्तान जनरल और प्रधान सेनापति और सूबा बंगालेके अंतःपाती फोर्ट विलिइम किलके सकाडेन्सल गवर्नर जनरलके द्वारा सामर्थ्य प्राप्त होकर भारतवर्षके बृटिश सेनादलके प्रधान सेनापति महा मान्यवर जनरल-जिवर्ड लेक द्वारा और स्वयं महाराजाधिराज राजराजेश्वर मानसिंह बहादुर द्वारा निर्धारित सन्धिपत्र ।

प्रथम धारा-माननीय अंग्रेज ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ महाराजाधिराज मानसिंह बहादुर और उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्त गणोंमें दृढ और चिरस्थायी मित्रता तथा सन्धि सम्बन्ध स्थापित हुआ ।

दूसरी धारा-जिस कारणसे दोनों राज्योंमें मित्रता स्थापित हुई है तब दोनों पक्षके शत्रु और मित्र दोनों पक्षके शत्रु और मित्ररूपसे मान जांयगे । इस नियत की हुई व्यवस्थाका मान्य चिरकालतक दोनों राज्य करेंगे ।

तीसरी धारा—माननीय कम्पनी महाराजाधिराजके अधिकारी देशोंके शासनके सम्बन्धमें किसी प्रकारका हस्ताक्षेप न करेगी और उनसे कर भी नहीं मांगेगी।

चौथी धारा—कम्पनीने हिन्दुस्थानके जितने देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया है, यदि माननीय कम्पनीका कोई शत्रु उन देशोंपर फिर अधिकार करनेके लिये तैयार हो तो महाराजाधिराजको कम्पनीकी सहायताके लिये अपने अधीनकी समस्त सेना भेजनी होगी और शत्रुका भगानेके लिये यथाशक्ति चेष्टा करनी होगी, मित्रता और कृतज्ञता प्रकाश करनेमें कोई सुअवसर न छोडा जायगा।

पांचवीं धारा—जिस कारण वर्तमान सन्धिपत्रकी दूसरी धाराके मतसे दोनों राज्योंमें मित्रता स्थापित हुई है, जिससे कोई विदेशीय शत्रु महाराजाधिराजके शासित देशपर आक्रमण न कर सके, कम्पनी इसी कारण महाराजके समीप दायी रहेगी, इसमें महाराजाधिराजने अपनी सम्मति प्रकाशित की है कि यदि किसी समय किसी कारणसे किसी भिन्नराज्यके अधीश्वरके साथ किसी विषयपर उनका मत भेद वा विवाद उपस्थित हो जाय तो पहले महाराजाधिराज उस विवादके कारणको कम्पनी गवर्नमेण्टके निकट उपस्थित करें। गवर्नमेण्ट उस विवादकी सरलतासे मित्रभावसे मीमांसा करनेकी चेष्टा करेगी. परन्तु यदि शत्रुपक्षके दोषसे उस भावसे मीमांसा करनेका सुभीता न मिले तो महाराजाधिराज उस मीमांसाके लिये कम्पनी गवर्नमेण्टके निकट सहायताकी प्रार्थना करें। उपरोक्त घटनाके होनेसे वह प्रार्थना ग्रहण की जायगी और उस सहायता देनेमें जितना खर्च होगा, हिन्दुस्थानके अन्यान्य राजाओंके साथ जो हारे उसीको व्यय देनेकी व्यवस्था हुई है, वही यहां रहेगी। महाराजाधिराजने उस हारेहुएको व्यय देनेमें अपनी सम्मति प्रकाश की है

छठीं धारा—महाराजाधिराजने इसमें जो सम्मति प्रकाश की है यद्यपि वास्तवमें वह अपनी सेनाके प्रभु हैं, परन्तु जिस समय युद्ध होगा, अथवा युद्धकी पूर्व सूचना होगी उस समय अंग्रेज सेनाके साथ उनकी सेना नियुक्त रहेगी, उस अंग्रेजी सेनादलके प्रधान सेनापतिकी आज्ञा और उसकी सम्मतिके अनुसार कार्य किया जायगा।

सातवी धारा—कम्पनी गवर्नमेण्टकी आज्ञाके अतिरिक्त किसी अंग्रेज वा फरासीसी प्रजाको अथवा यूरूपखंडके किसी जातीय निवासीको महाराज अपने अधीनमें कर्मचारी स्वरूपसे नियुक्त नहीं कर सकेंगे, अथवा अपने राज्यमें किसी कारणसे भी उनका प्रवेश नहीं होने देंगे।

उपरोक्त सात धाराओंसे युक्त यह संधिपत्र, महामान्यवर जनरल जिरार्ड लेकका अकबराबादसूबेके अधीन मरहिन्द नामक स्थानमें १८०३ ईसवीके दिसम्बर मासकी बाईसवीं तारीख हिजिरी सन् १२१८ सालके १ रमजानमें संवत् १८६० के पूस मासकी नौमी तारीखको हस्ताक्षर सहित और महाराजाधिराज मानसिंह बहादुरकी

१८०३ ईसवीकी २२ दिशम्बरको मोहर लगा हुआ, हस्ताक्षरकी रीतिके अनुसार नियत होकर स्वीकार किया गया।

जिस समय उक्त सात धाराओंसे युक्त संधिपत्र महामहिमवर सकान्सेल गवर्नेर जनरलके हस्ताक्षर सहित मोहर लगा हुआ महाराजाधिराजके हाथमें दिया गया उस समय माननीय जनरल जिराई लेकने इस संधिपत्रको उन्हींको लौटा दिया।

कम्पनीकी मोहर।

(हस्ताक्षर) वेलसली सकाउन्सेल गवर्नर जनरलका

१८०४ ईसवीमें १५ जनवरीको यह संधिपत्र तैयार हो गया।

(हस्ताक्षर) जी. एन. वार्लो।

(ऐ) जि. डडानि *।

यद्यपि महाराज पहले संधिपत्रपर अपनी सम्मति देकर उसपर हस्ताक्षर करते थे, परन्तु भारतवर्षके अंग्रेज गवर्नर जनरलने संधिपत्रपर हस्ताक्षर करके उनके पास भेज दिया। उन्होंने संधिपत्रकी कई धाराओंपर विशेष आपत्ति प्रकाश की। वरन् उस सन्धिपत्रको खारिज करके और एक नवीन संधिपत्रको तैयार करनेकी इच्छा प्रकाश की। ईस्टइण्डिया कम्पनी महाराजके प्रस्तावके अनुसार बृटिश गवर्नमेण्टके प्रार्थनीय और एक कार्यके करनेमें लगी। मारवाडके महाराज जिससे हुलकरको किसी प्रकार भी सहायता न दें इस लिये गवर्नमेण्ट मानसिंहके साथ वह सन्धि करनेको तैयार हुई थी, परन्तु महाराज मानसिंहने १८०४ ईसवीमें अंग्रेजोंके द्वारा निकाले हुए हुलकरको अपने राज्यमें आश्रय दिया, उसकी सहायता करनेसे गवर्नमेण्ट महा क्रोधित हुई और महाराज बृटिश गवर्नमेण्टके विरुद्धमें खडे हुये, १८०४ ईसवीके जिस महीनेमें यह सन्धिपत्र खारिज किया था, ईस्टइण्डिया कम्पनीको उस समय मारवाडके महाराजके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध करनेकी इच्छा नहीं थी। इतना तो हम अवश्य ही कह सकते हैं कि जब महाराज मानसिंहने केवल जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये--अपने प्रताप और प्रभुत्वको प्रबल रखनेके निमित्त ही पहले सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर नही किये थे परन्तु १८१८ ईसवीके जनवरी महीनेमें दिल्लीमें जब दूसरा सन्धिपत्र तैयार हो गया यदि उसके साथ इसका मिलान किया जाय, तो यह पहला सन्धिपत्र महाराजके लिये अनेक बातोंमें हितकारी था। यद्यपि इस पहले सन्धिपत्रमें मानसिंह ईस्टइण्डिया कम्पनीके निकट वश्यता स्वीकार करनको राजी हो जाते, परन्तु दूसरे सन्धिपत्रके मतसे उनको जो कर देनेकी व्यवस्था हुई उस संधिपत्रमें उसका कोई उल्लेख नही था। यदि मानसिंह इस संधिपत्रपर हस्ताक्षर करके ईस्टइण्डिया कम्पनीके साथ मित्रता कर लेते तो अमीरखाँके द्वारा मारवाडराज्य क्षार खार न होता, सवाईसिंहके षड्यन्त्रसे धौंकलसिंह और जयपुरके महाराज भी मारवाडको विध्वंस नही कर

* Aitchison's Treaties Vol. IV Page 45. सि. इड.
अचिसनकी बनाई भारतवर्षकी संधिपत्रावली पुस्तकके ४५ पृष्ठमे देखो।

सकते थे और न सेंधिया ही मारवाडको जीतकर चौथके ग्रहण करनेमें समर्थ हो सकता था। विधाताको यही करना था कि मारवाडके महाराजको अंग्रेजोंके करद रूपसे रहना होगा, इसी लिये मानसिंहने पहिले संधिपत्रको अपनी निर्बुद्धिके वशसे स्वीकार नहीं किया था।

इतिहासवेत्ता टाड साहब १८२३ ईसवीतक मारवाडराज्यके इतिहासके चित्रको अंकित कर गये हैं। १८२४ ईसवीसे हमने इस इतिहासको प्रारंभ किया। महात्मा टाड साहबने मारवाडके चारोंओर प्रबल अशान्ति, अत्याचार, अविचार और स्वेच्छाचारकी अग्निकी प्रबल शाखाको प्रज्वलित कर सामन्तोंको निकाल प्रजाको अत्यन्त दीन हीन अवस्थामें डाल महाराज मानसिंहको उग्र मूर्तिमे दूसरी बार राज्य करते हुए देखा। पिछले वर्षमें मारवाडकी आभ्यन्तरिक अवस्था भी उसी प्रकार थी। परन्तु महाराज मानसिंहको इस समयसे क्रीत दासत्वता स्वीकार करनेके पीछेसे राज्यमें शान्ति स्थापन करनेकी विशेष अभिलाषा हो गई। वह इस लोक और परलोकके उद्धारकर्त्ता गुरु देवनाथकी मृत्युके पीछे दीर्घकालतक उन्माद अवस्थासे एकान्तमें रहे थे; तथा जिस समय इनके इकलौते पुत्र छत्रसिंह मारवाडके सिंहासनपर पिताके प्रतिनिधि स्वरूपसे विराजमान होकर राज्यशासन करते थे; उस दीर्घ समयमें जिन सामन्त नेता राजपुरुषोंने सुअवसर पाकर भी राज्यका सर्वनाश कर खजानेको लूटकर सामन्तोंके ऊपर घोर अत्याचार किये थे, महाराज मानसिंहने दूसरी बार शासनभारको ग्रहण करके उन सभी अत्याचार करनेवालोंके ऊपर किस प्रकारका आचरण किया, महात्मा टाड साहब उसे स्वयं ही वर्णन कर गये है। मेवाड, कोटा, बीकानेर और जयपुर इत्यादि राज्योंमें भागकर उन सामन्तोंने इससे पहले महाराज मानसिंहके विरुद्धमें बृटिश गवर्नरके दूत कर्नल टाडके पास एक अनुयोग पत्र भेजा। बृटिश गवर्नमेण्ट[१] जिससे मध्यस्थ होकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण कर उनके पैतृक अधिकारको फिर उन्हींको देदे, जिससे महाराज मानसिंह उनके ऊपर फिर किसी प्रकारके अत्याचार न कर सकें, इस लिये प्रार्थना की परन्तु गवर्नमेण्टने उस समयकी प्रचलित रीतिके अनुसार मारवाडके आभ्यर्थतन्त्रिक किसी विषयपर भी हस्ताक्षेप नहीं किया, संधिपत्र जैसी प्रतिज्ञासे बंधा हुआ था, उसके अनुसार महा विपत्तिमें पडे हुए उन सामन्तोंकी उस प्रार्थनापर कुछ भी ध्यान न दिया। परन्तु १८२४ ईसवीमें उन सामन्तोंने फिर गवर्नमेण्टसे सहायता माँगी, अबकी बार गवर्नमेण्ट मौन न रह सकी।

मि० एफ विलडर इस समय साधु कर्नल टाड साहबके पदपर राजपूतानेके पोलिटिकल एजेंटरूपसे नियुक्त थे। जब स्वत: निकाले हुए सामन्तोंने इस भाँतिसे बारम्बार प्रार्थना की तब वह भारतवर्षके गवर्नर जनरलकी सम्मतिके मतसे महाराज

(१) गवर्नमेण्टसे मुराद ईस्टइण्डिया कम्पनीसे है।

मानसिंहके साथ उन सामन्तोंके उपद्रवोंका विचार करने लगे । मि० वेलडरने बृटिश गवर्नमेण्टके पक्षसे महाराज मानसिंहके निकट यह प्रस्ताव किया "कि इन सामंतोंके ऊपर दया करके तथा इनके अपराधोंको क्षमा कर इनके जो देश छीन लिये हैं इस समय वह इनको दे दिये जायँ ।" इन सामंतोंके ऊपर मानसिंहका अत्यंत क्रोध था, विशेष करके इन सामंतोंने पहलेसे ही उनकी शक्तिको लोप करनेकी चेष्टा की थी, इसीसे महाराजने निश्चय कर लिया था कि इनके ऊपर किसी समय भी दया नहीं की जायगी, यदि ऐसा हो गया तो यह फिर भी मारवाड़में आकर हमारी शासनशक्तिके विरुद्ध पहलेके समान षड्यन्त्र जालका विस्तार कर हमारे सर्व नाशके लिये चेष्टा करेंगे । इसी कारणसे उनके अधिकारी देशोंको अपने अधिकारमें कर उनको चिरकालके लिये निकाल देनेका विचार किया था । परंतु मि० वेलडरने बृटिश गवर्नमेंटके प्रतिनिधिस्वरूपसे बारम्बार महाराज मानसिंहको दया प्रकाश करनेका अनुरोध किया; महाराज मानसिंहने शीघ्र ही कहा कि यदि स्वतः निकाले हुए सामंत अपने पहले अपराधोंको स्वीकार करके प्रतिज्ञामें बँधे हैं अथवा वह अब कभी हमारी शासनशक्तिके विरुद्ध षड्यंत्रका विस्तार कर पहलेके समान कोई अपराध नहीं करेंगे, और बृटिश गवर्नमेण्ट यदि उन सामंतोंके सच्चरित्रताके विषयमें साक्षीस्वरूपसे रहेगी तो मैं उनको क्षमाकर उनके देशोंको दे सकता हूं और सबके अंतमें महाराजने यह भी कह दिया कि यदि यह सामंत फिर किसी प्रकारका असंतोषदायक व्यवहार करेंगे तो उनको अपनी इच्छानुसार दण्ड दूँगा । बृटिश गवर्नमेंट इसपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप न कर सकेगी, गवर्नमेण्टको इस प्रकारका एक स्वीकार पत्र लिखना होगा। मि० वेलडरने महाराज मानसिंहका यह उत्तर पाकर भारतवर्षके गवर्नर जनरल बहादुरके निकट इसको प्रकाशित कर दिया । अन्य पक्षमें जिन सामंतोंने बृटिश गवर्नमेण्टसे सहायता मांगी थी उनको भी सुना दिया; गवर्नर जनरल बहादुरने महाराज मानसिंहके प्रत्येक प्रस्तावमें ही अपनी संमति प्रकाश की । और एक और सामंतोंमें आहवा, आसोप, नीमाज तथा रियां इत्यादि समस्त सामंत ही मि० वेलडरके प्रस्तावके मतसे समस्त कार्य करनेके लिये समंत हो गये । केवल बूडस् और चंडावलके ठाकुर अर्थात् ये दोनों सामंत उस महा निग्रहको भोग करके भी मि० वेलडरके प्रस्तावके मतसे महाराज मानसिंहकी वश्यता स्वीकार कर प्रतिज्ञा पत्रपर हस्ताक्षर करनेके लिये सम्मत न हुए, मि० वेलडरने उनके कल्याण साधनके लिये महाराज मानसिंहको अनुरोध किया । उक्त सामन्तोंने बृटिश गवर्नमेंटके एक मतसे महाराज मानसिंहके प्रस्तावमें सम्मत हो अन्तमें नीचे लिखा हुआ सन्धिपत्र तैयार किया । महाराज, मानसिंहके प्रधान मन्त्री फतहराजने निम्न लिखित सन्धिपत्रपर महाराजकी ओरसे हस्ताक्षर कर दिये,—

स्वतः निकले हुए ठाकुरोंके प्रति दया प्रकाशके सम्बन्धमें महाराज मानसिंहका संधिपत्र ।

बूडस् और चण्डावलके दोनों ठाकुरोंकी राजअनुग्रह और क्षमा प्राप्तिके लिये

बृटिश गवर्नमेंटके द्वारा अनुरोध करानेकी इच्छा नहीं थी और आहवा, आसोप, नीमाज तथा रासके सामन्त यद्यपि किसी प्रकारसे क्षमाके योग्य नहीं थे परन्तु बृटिश गवर्नमेण्टके संतोष साधनके लिये महाराज वख्तसिंहके शासन समयमें वह जिन २ भागोंके अधिकारी थे, आजकी तारीखसे छः महीनेमें उनके वह देश लौटा दिये जाँयगे, परन्तु महाराजके सन्तोषके लिये गवर्नर जनरल बहादुरको निम्नलिखित उद्देशमूलक एक खलीता लिख देना होगा--यदि ठाकुर अपनी प्रतिज्ञा पालनमें असमर्थ हुए अथवा इन्होंने कोई अपराध किया तो महाराज अपनी इच्छानुसार कार्य कर सकेंगे ।

वर्तमान समयमें केवल एकमात्र बृटिश गवर्नमेंटके अनुरोध और अनुग्रहसे क्षमा दिखाई गई. यदि इनके पीछे ये ठाकुर वशमें रहैंगे, अथवा महाराजकी आज्ञानुसार स्वदेशके कार्यमें नियुक्त होनेकी इच्छा करैंगे, तो उनको और भी पुरस्कार दिया जायगा और जो नीची श्रेणीके ठाकुर स्वतः निकाले गये हैं वे जिस समय महाराजसे संतोषदायक व्यवहार करेंगे उसी समय उनको फिर पूर्व अधिकार दे दिया जायगा, परन्तु गवर्नमेंट उनकी ओरसे किसी प्रकारका अनुरोध नहीं कर सकेगी ।

(हस्ताक्षर) फतहराज दीवान ।

मारवाडके प्रधान राजमंत्री फतहराजने महाराज मानसिंहकी ओरसे उक्त संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये और महाराजके पूर्व प्रस्तावके मतसे पोलिटिकल एजेण्ट मि० वेलडरने निम्नलिखित प्रतिज्ञापत्र लिख दिया ।

महाराज मानसिंहने बृटिश गवर्नमेण्टके अभिप्रायके अनुसार जिन ठाकुरोंको पहले अपराधके लिये निकाल दिया था उनको उनके पैतृक अधिकार देनेमें राजी हुए । मैं इस कार्यको साधन करनेके लिये गवर्नमेंटकी ओरसे भेजा हुआ आया हूं, यदि इससे पीछे इनमेंसे कोई मनुष्य भी किसी प्रकारका अपराध करैगा या महाराजकी इच्छाके विरुद्ध कोई कार्य करैगा तो संधिपत्रमें प्रकाश किया गया है कि उस समय महाराज अपनी पूर्ण शक्तिका प्रयोग करैंगे, इस कारण बृटिश गवर्नमेंट उन सामन्तोंकी ओरसे किसी प्रकारसे हस्ताक्षेप न कर सकेगी । फिर महाराजको और भी संतोषके कारण गवर्नर जनरलकी ओरसे इस प्रतिज्ञाका एक पत्र देना होगा ।

२५ फर्वरी, १८२४ईसवी ।
(हस्ताक्षर) एफ, वेलडर ।
पोलिटिकल एजेण्ट ।

यद्यपि उपरोक्त संधिपत्रके अनुसार कार्य करनेको महाराज मानसिंह राजी हो गये थे यद्यपि अत्यंत अनिच्छासे एकमात्र बृटिश गवर्नमेंटके सन्तोषके निमित्त निकाले हुए सामन्तोंमेंसे केवल उपरोक्त लिखे हुए सामन्तोंमेसे कितनों ही पर कृपा प्रकाश की, परन्तु नीचे श्रेणीके अन्यान्य समस्त ठाकुर जो स्वतः निकाल दिये गये थे, उनके ऊपर दया न की । यद्यपि नीमाज इत्यादिके सामन्तोंने फिर बृटिश

गवर्नमेण्टकी कृपासे पैतृक अधिकारको प्राप्त किया था, परन्तु महाराज मानसिंह उनके ऊपर अत्यन्त ही विरक्त हो गये थे इस कारण उन्होंने उनके ऊपर दया प्रकाश न की।

१८२४ ईसवीमें और भी एक प्रधान घटना वर्णन करनेके योग्य थी । १८१८ ईसवीमें बृटिश गवर्नमेण्टके साथ मारवाडपति महाराज मानसिंहकी जो संधि हुई थी, उसके अनुसार बृटिश गवर्नमेण्टने मारवाडके आभ्यन्तारिक किसी उपद्रव पर भी हस्ताक्षेप न किया, महाराज मानसिंहने अपनी इच्छानुसार अपने देशको शासन किया। परन्तु उन सामन्तोंके पक्षसे बृटिश गवर्नमेण्टका अनुरोध करना स्पष्ट ही दिखाता है कि गवर्नमेण्टने संधिकी धाराको भंग करके आभ्यन्तारिक शासनपर हस्ताक्षेप किया। इसी लिये महाराज मानसिंहने सामन्तोंके ऊपर अनुग्रह प्रकाश करके संधिपत्रमें कह दिया था कि बृटिश गवर्नमेण्ट और ऐसे विषयोंपर किसी प्रकारका अनुरोध नहीं करेगी। भारतवर्षके गवर्नर जनरलको इस प्रकारके पत्रपर हस्ताक्षर करने होंगे। मि० वेल्डरने जिस प्रतिज्ञापत्रपर लिख दिया था उसमें भी उस तारीखका उल्लेख है, परन्तु गवर्नर जनरल बहादुरने उस प्रकारके खलीतापत्रको दिया था या नहीं, उसका कोई संधान नहीं पाया जाता, राज्यके मंगलसाधनके अभिप्रायके वशसे बृटिश गवर्नमेण्टने जब अनुरोध किया था तब प्रतिज्ञाभंगका दोष प्रबल नहीं हो सकता, परन्तु एक वर्षमें बृटिश गवर्नमेण्टने और एक विषय पर प्रकारान्तरसे प्रतिज्ञाको भंगकर भीतरी शासन पर हस्ताक्षेप किया।

१८१८ ईसवीके संधिपत्रके अनुसार यद्यपि महाराज मानसिंह बृटिश गवर्नमेण्टकी अनुगत्यता स्वीकार करके वार्षिक १०८००० रुपया देनेके लिये राजी हो गये, परन्तु १८२४ ईसवी तक बृटिशसिंहको मारवाडकी सूचीमुखपरिमाण पृथ्वीपर पैररखनेका भी अधिकार प्राप्त नहीं हुआ। या तो मारवाडमें प्रवेश करनेके लिये ऐसा किया हो, अथवा किसी राजनैतिक उद्देशको सफल करनेके लिये ऐसा किया हो (उस उद्देशके विषयको इस स्थानपर वर्णन करनेकी हमारी इच्छा नहीं है) १८२४ ईसवीमें गवर्नमेण्टने मेवाडेश्वर महाराणाके समान मारवाडके महाराज मानसिंहके निकट भी प्रस्ताव किया कि मेरवाडके पर्वती मीना और मेरगण अत्यन्त उद्धत और ऊधमी हैं; वे लोग जोधपुर राज्यकी सीमामें जाकर लूटमार कर अनेक प्रकारके उपद्रव करते हैं, इस कारण गवर्नमेण्टको उनके दमन करनेकी अभिलाषा हुई है। अंग्रेजोंकी एक सेना भी वहाँ जानेके लिये तैयार है । यह समाचार सुनते ही महाराज मानसिंहने अनुगतके समान गवर्नमेण्टकी इच्छानुसार कई एक सामन्तोंको सेना लेकर बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायताके लिये भेज दिया। अंग्रेजी सेनाके द्वारा उक्त पर्वतियोंका दमनकार्य समाप्त हो गया। गवर्नमेण्टने फिर प्रस्ताव किया कि पर्वती मीना और मेरोंको दमन करनेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टने एक स्वतंत्र सेनाकी सृष्टि करनेकी अभिलाषा की है और उस सेनाके खर्चको पूरा करनेके लिये महाराजको वार्षिक पंद्रह

हजार रुपये देने होंगे। ऊपरके मेरवाडेमें महाराज मानसिंहके अधिकारी चाङ्ग और कोटकिराना नामक दो परगनोंमें जो इक्कीस ग्राम हैं, उनको भी बृटिश गवर्नमेण्टके हाथमें आठ वर्षके लिये देना होगा। गवर्नमेण्ट स्वयं वहाँ शासनशक्तिको चलाकर उक्त वार्षिक पाँच हजार रुपयेके अतिरिक्त बाकी समस्त कर महाराजको दिया करेगी। हतवीर्य लुप्तप्रताप मानसिंह बिना कुछ कहे सुने शीघ्र ही बृटिश गवर्नमेण्टके प्रस्तावमें सम्मत हुए। उसीके अनुसार निम्नलिखित संधिपत्र दोनोंकी ओरसे तैयार हो गया।

मेरवाडाके मारवाडके राजोंके अधिकारी अंशके सम्बन्धमें जोधपुर राज्यका संधिपत्र।

यह राजदरबार सम्पूर्ण संतोषजनक रूपसे विदित है कि मेरवाडेके सब अंशोंमें उपयोगी प्रहरी एवं रक्षक सेनाका नियोग अथवा वहाँके सब प्रकारके उपद्रवोंके निवारण करनेकी सामर्थ्य रक्खे, परन्तु बृटिश गवर्नमेण्टको संतुष्ट रखनेकी इस रजवाडेकी एकान्त इच्छा है और गवर्नमेण्टकी इस समय उन देशोंपर अपनी श्रेष्ठ रीतिके चलानेकी इच्छा है उसमें शान्ति स्थापनके लिये जो नई सेना तैयार होगी, मि० वलडरके प्रस्तावसे उस सेनाके व्यय निर्वाहके लिये आठ वर्षके लिये वार्षिक पंद्रह हजार रुपये देने होंगे। इस प्रकारसे मारवाडके अधिकारी चांग, चितार और अन्यान्य खालसा ग्राम जिन ग्रामोंके निवासियोंके दमन करनेके लिये अंग्रेजी सेना भेजी जायगी, इस दरबारके ठाकुरोंने जिस बृटिश सेनाकी सहायतासे उनको दमन करके समस्त ग्रामोंपर अपना अधिकार कर लिया है, वह सभी ग्राम उक्त आठ वर्षके लिये गवर्नमेण्टको देने होंगे-परन्तु जो कर अदा किया जायगा उसका हिसाब देखने और परीक्षाके लिये इस दरबारकी ओरसे एक प्रतिनिधि वहाँ रहनेके लिये भेजा जायगा, उनमेंसे उक्त रुपया छोडकर बाकी हिसाब करके इस दरबारमें लाना होगा। जो परिमित समयके लिये ग्राम दे दिये हैं उस समयके बीतते ही उक्त वार्षिक पाँच हजार रुपया और नहीं देना होगा, तथा उन ग्रामोंको फिर लौटा देना होगा।

४ था रज्जब, १२३९ हिजरी।

(हस्ताक्षर) व्यास सूरतराम।

वकील।

महाराज मानसिंहकी ओरसे वकील व्यास सूरतरामने उक्त संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये, बृटिश गवर्नमेण्टके पोलिटिकल एजेण्ट मि० एफ वेलडरने निम्नलिखित संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये।

बृटिश गवर्नमेण्टको विश्वासके साथ मारवाड मेरवाडेके जो ग्राम दिये थे, उनमेंसे जितना रुपया करस्वरूपसे संग्रह होगा, उक्त पंद्रह हजार रुपयेके अतिरिक्त सभी लौटा देना होगा, तथा आठ वर्षके पीछे उक्त ग्राम फिर जोधपुरके महाराजको दे देने होंगे और वह पंद्रह हजार रुपया ग्रहण नहीं किया जायगा।

उपरोक्त तारीख ५ मार्च सन् १८२४ ईसवीके, पोलिटिकल एजण्ट मिस्टर एफ्. वेलडर साहबके हस्ताक्षर युक्त संधिपत्रसे भली भाँति जाना जाता है कि महाराज मानसिंहने पार्वत्य मीना और मेरोंके दमन करनेमें समर्थ होकर भी यहाँ स्वयं शांति स्थापनेमें समर्थ होकर भी केवल गवर्नमेण्टके संतोषके लिये उन ग्रामोंको गवर्नमेण्टके करकमलमें समर्पण किया। गवर्नमेण्टने मेरवाडेपर अधिकार करके अंतमें किस प्रकारसे स्वार्थसाधन किया था। उसका वर्णन आगे किया जायगा।

जिस भाँति महाराज उदयसिंहने सबसे पहले बादशाह अकबरकी अधीनता स्वीकार करके राठौर जातिको यवनोंकी दासश्रेणीमें गिनाया था, उसी भांति महाराज मानसिंह भी सबसे पहले अंग्रेजोंकी शरण हुए, परन्तु उदयसिंह ही यवनोंके साथ सन्धिबंधन करके अपने राज्यकी उन्नति करनेमें समर्थ हुए थे। अब मानसिंहने बृटिश गवर्नमेण्टके साथ सन्धि करके केवल स्वदेश, स्वजाति और अपने भाग्यमें घोर रात्रिको बुलाया। अपनी बुद्धिके दोषसे तथा उच्च अंगकी राजनीतिज्ञताके अभावसे महाराज मानसिंह बालकपनसे ही विपत्तिके समुद्रमें मग्नहुए थे। उन्होंने मानों विपत्तिको अपना साथी मित्र बनाकर इस संसारमें जन्म लिया था। स्वजातिका विध्वंस, स्वराज्यका नाश और जातिके गौरवकी सीमाको एकबार ही लोप करनेका भार लेकर ही मानो वह राजसिंहासनपर विराजमान हुए थे रजवाडेके अन्यान्य राजाओंके समान सामन्तोंके साथ राजाकी अनैक्यता आत्मनिग्रह विलासिता और स्वजातिमें विद्वेष यही मारवाडके पतनकी जड थी। कुछ समयके पीछे महाराज मानसिंहने अपनी शासनशक्तिको प्रबल करनेके लिये पहलेसे ही सामन्तोंके ऊपर कठोर व्यवहार करना प्रारंभ किया था। १८२४ इसवीमें, यद्यपि महाराज मानसिंहने गवर्नमेण्टके कहनेसे स्वत: निकाले हुए सामन्तोंमेंसे कितने ही पर क्षमा प्रकाश की थी; परन्तु उनके साथमें व्यवहार अच्छा नहीं किया, और नीची श्रेणीके सामन्तोंको भी क्षमा न किया–इसीसे महाराज मानसिंहके विरुद्धमें फिर षड्यंत्र जालका विस्तार होने लगा, मानसिंहने बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि कर भी ली थी, परन्तु अब गवर्नमेण्टने सुना कि मारवाडके बाहरी देशोंमें पडी हुई सामन्त मंडली १८२७ ईसवीमें फिर महाराज मानसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये दल बाँध रही है।

पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने धौंकलसिंहको अवलम्बन कर जयपुरके महाराजकी सहायतासे जिस प्रकार मारवाडको विध्वंस कर दिया था; असंतुष्ट सामन्तमंडलीने फिर भी उसी प्रकारसे धौंकलसिंहका पक्ष अवलम्बन करके जयपुरके अधीश्वरकी सहायतासे फिर मारवाडपर आक्रमण कर मानसिंहको सिंहासनसे उतार धौंकलसिंहको महाराज योधाके आसनपर बैठालनेकी तनमनधनसे चेष्टा की है। प्रत्येक सामन्त अपनी सेनाके दलके दल लेकर जयपुरकी राजधानीमें इकट्ठे होने लगे हैं। हत उद्योग धौंकलसिंह फिर मारवाडके सिंहासनपर विराजमान होंगे, इससे उन सामन्तोंके साथ मिलनेमें उन्होंने एक मुहूर्तका ही विलम्ब न किया,

और जयपुरपति महाराज सवाई जयसिंहने भारतवर्षके किसी देशीय राज्यपर आक्रमण नहीं किया था, बृटिश गवर्नमेण्टके साथ इस प्रकारसे संधि करके भी साहसमें भर धौंकलसिंहकी सहायतासे वह मारवाड पर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए हैं।

इस समय प्रबल प्रतापशाली अंग्रेजी सरकार लाल २ नेत्र कर संहारमूर्तिसे भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तकी ओर देखती, और महा सिंहनाद करके गर्जती थी, राठौर सामन्त, धौंकलसिंह तथा जयपुरके महाराज इससे कुछ भी भयभीत न हुए। इसी समयमें रणभेरी बजने लगी; फिर राठौर सामन्त स्वजातिकी उस शोचनीय दशा-पतन अवस्थामें जातिके शेष अस्तित्वके लोपके निमित्त तथा स्वदेशका नाम भारतवर्षसे लोप करनेके निमित्त फिर नंगी तलवार हाथमें लेकर सजने लगे। मारवाडका राजनैतिक आकाश देखते २ काले २ बादलोंसे ढक गया, महाराज मानसिंहको चारोंओर अंधकार दृष्टि आने लगा, उस घोर अंधकारमें शत्रुके ओरकी भयंकर भृकुटीरूप चपला चमकने लगी, परन्तु इन दुर्दिनोंमें इस भयंकर तरंगमालासे युक्त विपत्तिके समुद्रमें उनका आशा भरोसा, सहाय, बल केवल अंग्रेज ही थे। उन्होंने विचारा कि अंग्रेजोंकी वश्यताका भार शिरपर धारण किया है, दस्तखत कर दिये हैं, प्रत्येक वर्षमें कर देते हैं, गवर्नमेण्ट संधिकी धाराको भंग करके भी जब जो कुछ कहती है वही करते हैं। इस कारण १८१८ ईसवीमें संधिपत्रकी दूसरी धाराके मतसे उन्होंने गवर्नमेण्टसे सहायता माँगनेका विचार किया, और सोचा कि गवर्नमेण्ट अवश्य हमारा इस उठती हुई तरंगमालामय विपद्जालके भयंकर आक्रमणसे उद्धार करैगी। मानसिंहने इसी आशासे हृदयको धीरज दे बृटिश गवर्नमेण्टसे सहायता मांगनेके लिये समाचार भेजा परन्तु बृटिश राजनीतिका चक्र किस अभिप्रायसे किस मूर्तिसे किस समय घूमा करता है, इसको मानसिंह कुछ भी नहीं जानते थे। उन्होंने करदमित्र राजरूपसे सहायता माँगी, परन्तु गवर्नमेण्टने उनकी आशाके विपरीत उत्तर दिया, कि मारवाडके आभ्यन्तरिक किसी उपद्रवपर गवर्नमेण्ट हस्ताक्षेप वा किसी प्रकारकी सहायता न करैगी। मानसिंहको निष्कंटक कर मारवाडके सिंहासनपर बैठालनेमें तथा उनके शत्रुओंके दमन करनेके लिये गवर्नमेण्ट तैयार नहीं है। पाठक! क्या आपने इतिहास नहीं पढा है, अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ संधि हो जानेके पीछे अंग्रेजोंकी कम्पनीके दूत मि० वेलडरने मारवाडमें जाकर इन महाराज मानसिंहसे बारम्बार कहा था, कि मारवाडमें शान्ति स्थापन करनेके लिये, तथा ऊधमी सामन्तोंको दमन करनेके लिये अंग्रेजोंका सहायता लीजिये। परन्तु जब फिर विचित्र राजनैतिक लीलाका दृश्य दृष्टि आया, और महाराज मानसिंहने स्वयं उनसे सहायता माँगी? तब यह क्या उत्तर पाया? बृटिश राजनीतिके चक्रका मर्म कुछ भी समझमें नहीं आता।

माननीय गवर्नमेण्टका उत्तर पाकर मानसिंह चैतन्य हो गये और वह इस बातको

जान गये कि उनके पूर्ववर्ती कई पुरुष दिल्लीके यवन बादशाहके साथ संधि करके जिस भावसे राज्यशासन कर गये हैं इनके भाग्यमें यह बात असम्भव है। उन्होंने कहला भेजा कि "इस समय संधिपत्रकी दूसरी धाराके अनुसार कार्य करनेका समय उपस्थित है। आभ्यन्तरिक उपद्रवोंको निवारण वा शान्ति स्थापनके लिये गवर्नमेंटसे सहायता नहीं माँगी गई है। जो सामन्त असंतुष्ट हैं और वह उन्हींके अधिकारी देशमें रहते हैं; तथा वह उन्हींके विपरीत षड्यन्त्रका विस्तार करके उपद्रव उपस्थित कर उनको सिंहासनसे उतारनेकी चेष्टा करते हैं। मारवाडराज्यके बाहरी भिन्नराज्य-जयपुरराज्यसे, जयपुरराज्यकी सहायतासे शत्रुओंका दल उनको आक्रमण करनेकी अभिलाषा करता है। इस कारण जब कि विना कारणके ही जयपुरके महाराज हमारे राज्यपर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए हैं, तब क्या बृटिश गवर्नमेण्ट इसको बाहरी शत्रुके द्वारा आक्रमण मानकर स्वीकार नहीं करेगी? संधिपत्रकी दूसरी धाराके अनुसार हमारे राज्यकी रक्षारूपसे प्रतिज्ञा पालन करना क्या अपना कर्त्तव्य नहीं मानेगी?" मानसिंहने विचारा कि अब गवर्नमेंट सहायता देनेमें कुछ आपत्ति न कर सकेगी, परन्तु! विस्तारित बृटिश राजनीतिके चक्रका कौन स्थान किस प्रकारकी ग्रंथियोंसे पूर्ण है महाराज मानसिंह उस समय भी इस बातको न जान सके, जाननेका तो बडा सुभीता प्राप्त नहीं हुआ था, इसी लिये उस समय भी उनका वह चिन्ता और भयसे जडा हुआ हृदय आशाके अस्फुट प्रकाशको मानो ऊषाके खेलके समान देखने लगा।

बृटिश गवर्नमेंटने महाराज मानसिंहको क्या उत्तर दिया था? अंग्रेजोंने भयंकर मूर्तिसे भृकुटिको चढाकर गर्जकर कह दिया कि "यदि सर्वसाधारणमें इसी भांतिमे राजविद्रोह फैल उठा है तो ऐसा समझ पडता है कि सामन्तमण्डली और प्रजा राजाको सिंहासनसे उतारनेकी इच्छा करती है यदि ऐसा है तो जोधपुरके राजा अपने दोषसे सब प्रकारसे प्रजाकी सहायता और अनुरागसे हीन हो गये हैं इस जोधपुरके सिंहासनपर विराजमान होकर यदि कोई अन्यायके साथ प्रजाके ऊपर भयंकर विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित करै तो हम उस विद्रोहके विरुद्धमें तथा उस अप्रिय राजाको बलपूर्वक सिंहासनपर बैठालेनेका कोई कारण नहीं देखते हैं। जिन देशीय राजाओंने राज्यकी रक्षा करनेमें हमसे प्रतिज्ञा कर ली है वह सभी राजा अपनी रक्षाके लिये हमसे सहायताकी प्रार्थना कर सकते हैं और जो राजाके अविचार, अयोग्यता, तथा कुशासनसे ही प्रजा असंतुष्ट हुई है, तथा राजाके दोषसे ही प्रजामें विद्रोह फैला है उसको निवारण करनेके लिये हमारी सहायता नहीं मिल सकेगी। देशीय राजा आपनी प्रजाके ऊपर शासनशक्तिको चलावेंगे, ऐसी आशा की जाती है, परन्तु यदि उन्होंने अपने आचरणोंसे ही प्रजामें विद्रोह फैला दिया, तो राजाको उसका फल स्वयं भोगना होगा। यह* राजनीतिसे पूर्ण कैसा विचित्र उत्तर है। मानसिंहको क्या ऐसे उत्तरकी आशा थी? रक्षण और पीडनकी संधिमें बँधकर कौन

* Malleson's Native Staies of India Part1 Chap. 111 Page 56

राजा इस प्रकारका उत्तर दे सकता है ? सन् १८१८ ईसवीमें जो संधि दोनोंके बीच हो गई थी, कौन साहससे कह सकते हैं कि यह उत्तर उसी संधिपत्रके मतसे दिया गया है ? "आभ्यन्तरिक शासनपर हस्ताक्षेप नहीं करेंगे" इस बातका क्या यही अर्थ है कि जब सामन्त अपने स्वार्थसाधनके लिये तुमको सिंहासनसे उतारकर महा विपत्तिमें डालें तो हम तुम्हारी सहायता नहीं करेंगे ? मि० वेल्डर और कर्नल टाड साहबको जिस समय बृटिशसेनाकी सहायता लेनेमें अत्यन्त इच्छा हुई थी, उस समय असंतुष्ट हुए सामन्तोंने जो काण्ड उपस्थित किया था, इस समय भी वह उसी मतसे काण्ड उपस्थित करेंगे। इस प्रकार बृटिश गवर्नमेंटने किस प्रकारसे राजनीतिकी मित्रताकी यह नवीन व्याख्याकी ? यद्यपि महाराज मानसिंह प्रजाके अप्रियपात्र हो गये थे तथापि गवर्नमेण्टको उनकी सहायता करनी उचित थी। ऐसी अवस्थामें क्या उनके ऊपर भयंकर गर्जन करना न्यायसंगत था ? इस समय यदि साधु टाड साहब पोलिटिकल एजेण्टके पदपर नियुक्त होते तो वह ऐसा उत्तर कभी नहीं दे सकते थे। मानसिंह उक्त उत्तरको सुनकर इस बातको भलीभांतिसे जान गये कि सन्धिपत्रका मूल्य कितना है।

सौभाग्यसे शीघ्र ही बृटिश गवर्नमेंट इस बातको भली भांतिसे जान गई कि इस समय जयपुरके महाराज और धौंकलसिंह असंतुष्ट हुए राठौर सामन्तोंको साथमें लेकर मारवाडपर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए हैं तब इनको अवश्य ही बाहरी शत्रुका आक्रमण मानना होगा। कम्पनी सरकारने मानसिंहसे कुछ न कहा; केवल राजनैतिक सम्बन्ध विस्तार कर उपस्थित उपद्रवोंका विचार करनेमें लगी। जयपुरके महाराजके साथ बृटिश सरकारकी जो संधि पहले ही हो गई थी जिससे कि वह भारतवर्षके किसी देशीय राज्यपर अक्रमण वा किसी देशीय राजाके साथ युद्ध नहीं कर सकते थे। जयपुरके महाराज उस सन्धिको भङ्ग करके मारवाडपर आक्रमण करनेके लिये उद्यत हुए इसीसे बृटिश गवर्नमेंटने विशेष असन्तोष प्रकाश कर उनके पास एक पत्र भेजा तथा जिससे वह सेनाको बिदा देकर मारवाडपर आक्रमण न करें, ऐसी आज्ञा भी लिख भेजी। बृटिशसिंहके उस भयङ्कर गर्जनसे भयभीत हो जयपुरके महाराज शीघ्र ही मारवाडके आक्रमणसे विमुख हो गये। जयपुरके महाराजके समान धौंकलसिंहको भी गवर्नमेण्टने भय दिखाकर अन्यत्र जानेकी आज्ञा दी, वह भी भयभीत होकर झज्जूर नामक स्थानमें चले गये। जातीय शक्तिके शेष आस्तित्वको लोप करने लिये मारवाडको समभूमि करनेके लिये जो असंतुष्ट सामन्त श्रेणी वीर साजसे सजी थी, इस समय जयपुरके महाराज और धौंकलसिंहको बृटिश गवर्नमेण्टकी ताडनासे पीठ दिखाते हुए देखकर शीघ्र ही गम्भीर निराशाके जलमें मग्न हो गई। कोई २ सामन्त फिर मारवाडमें जाकर मानसिंहकी वश्यता स्वीकार कर पहलेके समान निग्रह भोग करने लगे। और मानसिंह पहलेकी विपत्तियोंके समान इस बार भी अनेक विपत्तियोंसे उद्धार पाकर मन ही मन अपने भाग्यकी प्रशंसा करके निर्भय हो राज्यशासन करने लगे।

यद्यपि बृटिश गवर्नमेण्टने इस समय रजवाडेके प्रत्येक प्रान्तमें अपने पूर्ण प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार कर लिया था, यद्यपि भारतके सर्व प्राचीन राजरक्तधारी राजपूत एकबार ही कंपनीके वशीभूत हो चुके थे, यद्यपि अंग्रेजोंके भयंकर गर्जनसे भारतवर्ष कंपायमान हो गया था, तथापि स्वाभाविक तस्करदल इस समय सुबीता पाकर भी अपनी जातीय वृत्तिको सफल न कर सका। १८३२ ईसवीमें एक अधिक बलवान् तस्करदलने नागौरकी सीमामें भयंकर अत्याचार करने प्रारंभ कर दिये। उसके अत्याचारोंसे चारों ओर हाहाकार मच गया। बृटिश गवर्नमेण्टने उन लूटनेवाले तस्करोंको दमन करना अपना कर्त्तव्य विचारा। १८१८ ईसवीमें मारवाडपति मानसिंहके साथ जो बृटिश गवर्नमेण्टकी संधि हुई थी उसकी आठवीं धारामें यह बात लिखी गई थी कि गवर्नमेण्टकी आज्ञा पाते ही महाराज पंद्रहसौ अश्वारोही सेना उनकी सहायताके लिये भेजेंगे। उस तस्करदलको दमन करनेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टने संधिपत्रकी उसी धाराके मतसे महाराज मानसिंहको शीघ्र ही पंद्रहसौ अश्वारोही सेना भेजनेके लिये आज्ञा दी। संधिबंधन हो जानेके समयसे ही मानसिंह गवर्नमेण्टकी आज्ञा पालनमें नियुक्त थे, इस कारण उन्होंने विना कुछ कहे सुने शीघ्र ही डेढ हजार अश्वारोही सेना उन लूटनेवालोंको दमन करनेके लिये बृटिश गवर्नमेंटके पास भेज दी। राठौर अश्वारोही दलने अंग्रेजोंकी सेनाके साथ मिलकर शत्रुदलको शीघ्र ही दमन कर दिया, परन्तु इस समय गवर्नमेंटने भारतके प्रत्येक प्रान्तमें अपनी राजनीतिको विस्तारकर जिस भावसे अपनी शासनशक्तिको प्रबल करके, देशकी दुर्बल शासनशक्तिको एकबार ही अवनत कर दिया था, उसी राजनीतिके गुप्त उद्देशको साधन करनेके लिये इस समय फिर विचित्र राजनीतिका अभिनय करने लगी। यह तो हमारे पाठक टाड साहबकी उक्तिसे पहले ही जान गये होंगे कि भारतमें राठौर अश्वारोही बल विक्रम और रणकी चतुरतामें अद्वितीय थे, परन्तु इस समय बृटिश गवर्नमेंटने महाराज मानसिंहको विदित किया कि तुमने जो सेना भेजी थी, वह युद्धविद्यामें सब प्रकारसे अशिक्षित, किसी कामकी नहीं है। उसके बदलेमें बृटिश गवर्नमेंटने जोधपुरके नामसे एक स्वतंत्र सेनाके तैयार करनेकी अभिलाषा की है और उस सेनाका सम्पूर्ण खर्चा महाराजको देना होगा !! पाठक ! इस प्रस्तावका अर्थ कुछ समझें, इस राजनैतिक रहस्यके मर्मको कुछ हृदयङ्गम किया या नहीं ?-१८१८ ईसवीके संधिपत्रकी आठवीं धाराके मतसे मारवाडके महाराजको आवश्यकता होनेपर १५०० अश्वारोही सेना देनी होगी, यह बात लिख रही थी, परन्तु वह सेना महाराजके अधीनमें रहेगी। इस समय बृटिश गवर्नमेंट उस सेनाको अपने अधीनमें चिरकालतक रखनेके लिये उस धाराको बदलनेके लिये तैयार हुई। भारतवर्षके अंग्रेज गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट मि० एच० डबल्यू० ट्रिवेलियनने बृटिश गवर्नमेंटकी ओरसे महाराज मानसिंहके समीप उस प्रस्तावको उपस्थित करके कहा कि आप जो पंद्रहसौ अश्वारोही सेना देनेके लिये राजी हो गये हैं, गवर्नमेंट उससे आपको मुक्ति देनेके लिये तैयार है, परन्तु जो नई सेना तैयार होगी उसके लिये आपको वार्षिक एक लाख पन्द्रह

हजार रुपया देना होगा। इस स्थानपर उसका उल्लेख करना केवल बाहुल्यमात्र है. पोलिटिकल एजेंटने अवश्य ही महाराज मानसिंहको भलीभांतिसे समझा दिया था कि बृटिश गवर्नमेंट केवल महाराज मानसिंहकी मंगलकामनाके लिये, जोधपुरमें शांतिकी रक्षाके लिये एक नई सेनाको जोधपुरके नामसे तैयार करनेकी इच्छा करती है। क्या तो महाराज मानसिंह बृटिश राजनीतिके उस मधुर अर्थसे मोहित हुए होंगे या और कोई गति देखकर मौन हुए हों, उन्होंने तुरन्त ही उस प्रस्तावमें अपनी सम्मति दी। इस प्रकारसे १८३५ ईसवीमें निम्नलिखित उपायोंसे १८१८ ईसवीके संधिपत्रकी आठवीं धाराका बदला हो गया।

"जिस कारण जोधपुरके महाराज मानसिंह बहादुरने बृटिश गवर्नमेंटके साथ १८१८ ईसवीके जनवरी महीनेकी छठवीं तारीखको दिल्लीमें जो संधि की थी उस संधिपत्रके ही मतसे वह आवश्यकता होनेपर पंद्रहसौ अश्वारोही सेना देनेके लिये राजी हुए थे, अब इस समय उस डेढ हजार सेनाके बदलेमें संवत् १८९२ में पूस सुदी पूर्णमासीसे वार्षिक एक लाख पन्द्रह हजार रुपये देनेके लिये राजी हुए हैं; इस कारण बृटिश गवर्नमेंटकी ओरसे इस स्वीकार पत्रके द्वारा उपरोक्त संधिपत्रकी आठवीं धारामें लिखा हुआ " जोधपुरराज्यको जब आवश्वकता होगी तभी डेढ हजार अश्वारोही सेना देनी होगी " इस धाराको बदल कर उस स्थान पर यह लिख दिया कि उपरोक्त कारणसे उक्त सेनाके वेतनके हिसाबसे जोधपुर राज्य अजमेरको नगद " वार्षिक एक लाख डेढ हजार रुपया" देगा संवन् १८९३ के पूस मासकी पहली तारीखको यह एक लाख डेढ हजार रुपया देना होगा, और भविष्यन्में प्रत्येक वर्षमें उक्त तारीखको उतना ही रुपया देना पडा करैगा।

जोधपुर २ पूस वदी संवत १८९२- } (हस्ताक्षर) एच-डबल्यू० ट्रिवेलियन।
अंग्रेजी १ दिसम्बर १८२५ ईसवी। } गवर्नर जनरलकी ओरके असिस्टेंट एजेंट।

सकाउन्सेल गवर्नर जनरलका १८३६ ईसवीकी ८ फरवरीको स्वीकार किया।

इस प्रकारसे बृटिश गवर्नमेंट महाराज मानसिंहके पाससे एक लाख पन्द्रह हजार रुपया वार्षिक पानेकी व्यवस्था करके एक स्वतंत्र सेनाको निर्माण कर अजमेरको अपने अधीनमें रखने लगी।

उपरोक्त संधिपत्र तैयार होनेके एक महीने पहिले महाराज मानसिंह गवर्नमेंटकी एक और आज्ञाके पालन करनेमें सम्मत हुए। महाराजके अधिकारी मेरवाडेके मीनों और मेरोंको दमन करनेके लिये बृटिश गवर्नमेंट १८२४ ईसवीमें वहांके २१ ग्रामोंको आठ वर्षके लिये अपने अधीनमें ग्रहण करके शांतिस्थापन करनेके लिये पन्द्रह हजार रुपये लेते थे, परन्तु १८३५ ईसवीमें वह आठ वर्ष बीत गये। बृटिश गवर्नमेंटने १८२४ ईसवीमें संधिपत्रके अनुसार उन ग्रामोंको नहीं लौटाया। असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंट एच० डबल्यू० ट्रिवेलियनने फिर महाराज मानसिंहके निकट यह प्रस्ताव किया कि बृटिश गवर्नमेंट फिर मेरवाडेके उन ग्रामोंको ९ वर्षके लिये अपने अधीनमें रखनेकी अभिलाषा करती है, मीना और

मेरोंको दमन करनके लिये जो सेना तैयार हुई है, और महाराज जिसको वेतनके हिसाबसे गत आठ वर्षतक वार्षिक पन्द्रह हजार रुपया देते आये हैं उसी प्रकारसे धन भी उनको नौ वर्षतक देना होगा, और जो सुभीता मिला तो उन ग्रामोंके अतिरिक्त उसीके समपिवाले और भी सात ग्राम उक्त नियमके अनुसार दिये जांयगे। महाराज मानसिंहने बृटिश कम्पनीको सर्वदा सन्तुष्ट रखनेके लिये व्रत किया था, इसी कारणसे उन्होंने बिना कुछ कहे सुने उक्त असिस्टेन्ट पोलिटिकल एजेंटके प्रत्येक प्रस्तावमें अपनी सम्मति दी। १८३६ ईसवीकी २३ वीं अक्टूबरको फिर उक्त प्रदेशके सम्बन्धमें पूर्वमतसे नवीन सन्धिपत्र तैयार हो गया। महाराजकी ओरके वकील व्यास सवाईराम और गवर्नमेण्टकी ओरके मि० एच० डबल्यू० ट्रिवेलियनने परस्पर हस्ताक्षर कर दिये।

जिस देशमें राजतन्त्रकी शासनरीति प्रचलित है, उस देशमें नरपति यदि अपनी नीतिके बलसे बलवान हो, सर्व साधारण प्रजाकी अभिमतिके प्रति सम्पूर्णतः आदर दिखाकर राज्यशासन करता रहे तो उस देशमेंसे शांति कभी नहीं जा सकती, और उस राजाको भी शासनके विरुद्धमें किसी प्रकारकी विपत्ति नहीं हो सकती, परन्तु जिस राजतन्त्र शासनप्रणाली युक्त देशमें राजा अपनी इच्छानुसार पूर्ण अभिनय करते हैं पाशविक बलकी सहायतासे प्रजाकी साधारणमतिपर पदाघात करके शासनदंडको चलानेकी अभिलाषा करते हैं उस देशकी शांति शीघ्र ही लुप्त हो जाती है; तथा उस यथेच्छाचारकी शासनशक्ति, उस पाशविक बलके विरुद्धमें साधारण प्रजाकी नैतिकरूप महाशक्ति अत्यन्त प्रबल होकर समयपर अवश्य ही उस पाशविक बलको दमन कर लेती है, संसारके प्रत्येक इतिहासकी ओर देखनेसे जाना जा सकता है कि पाहिले पाहिल पाशविक बल विशेष प्रबलता विस्तार करनेमें समर्थ था, परन्तु इस समय वह एक बार ही विध्वंस हो गया। जातिकी पतनदशामें, अंतिम शोचनीय दशामें, पाशविक बल तथा प्रभुत्व प्रकाश करनेमें पहले तो विघ्न नहीं होता परन्तु वह पतितजाति उस पाशविक बलसे विदलित जाति अनन्त निग्रहको भोग करते २ अन्तमें ज्ञानशून्य होकर प्रतिक्रियाके बलसे उस पाशविक बलको इस प्रकारके भावसे आक्रमण करती है कि उसी समय पाशविक बलका पतन अनिवार्य हो जाता है। औरंगजेबके प्रचंड पाशविक बलका प्रयोग करना ही भारतसे यवनशासनके लोपका कारण था। प्रथम ही पाशविक बलके प्रयोगसे महाराष्ट्र जाति कई वर्षोंमें एक बार ही क्षीणप्राण हो गई। महाराज मानसिंह सामन्तोंमेंसे बहुतोंके ऊपर पाशविक बलका प्रयोग करके निरन्तर विपत्तिके अगाध जलमें मग्न हो गये थे; उनके उस पाशविक बलने ही उनके शासनके लोप होनेका सबसे पहिला अनुष्ठान रच दिया उसके जब पूर्वलक्षण दिखाई दिये तो सर्वसाधारण प्रजाके ऊपर वह पाशविक बल प्रयोग न करके उन्होंने बडे कष्टसे बहुतसे रक्तपातोंसे उद्धार पाया था, परन्तु इस समय उनकी वार्द्धक्यदशा उपस्थित हुई है, कुसंस्कार युक्त धर्मयाजकोंके मोहमन्त्रके वश होकर उन सामन्तोंके ऊपर फिर इस प्रकारके

अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये, फिर इस प्रकारका पाशविक बल प्रयोग करने लगे। उसी कारणसे शीघ्र ही मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमें फिर असन्तोषकी अग्नि प्रज्ज्वलित हो गयी, विद्रोहके बढते ही शांतिके दूर होनेसे अराजकता उपस्थित हो गयी। धर्मयाजक वृन्दोंकी आज्ञाने तथा उनकी मंत्रणा और परामर्शके उपदेशने मानसिंहके वक्षस्थलपर पदाघात कर उनकी वृद्धा अवस्थामें राज्यमें फिर इस प्रकारका विप्लव उपस्थित कर दिया कि जिससे राठौर जातिके वंशसहित नाश होनेके पूर्वलक्षण दृष्टि आने लगे।

इस पुण्यमय भारतक्षेत्रमें क्या राजा, क्या धनी, क्या सामन्त, क्या निर्धन-क्या प्रजा सभी वृद्धा अवस्थामें पारलौकिक पुण्यको संचय करनेके लिये झुक जाते हैं, वृद्धा अवस्थामें हमारे महाराज मानसिंहने भी वही किया, महाराजकी भक्ति धर्मकी ओर अधिक थी, सो यह कुछ विचित्र बात नहीं है। परन्तु भारतकी पतन दशामें धर्मयाजक गण शास्त्रज्ञानसे हीन होकर केवल धनको सग्रह कर अपना प्रभुत्व प्रकाश करनेमें सावधान रहते थे। प्राचीन आर्य ऋषि मुनियोंके समान उनका ज्ञान, विद्या, विचार, अभिज्ञता और उनके चरित्रोंमें उस प्रकारकी निर्मलता नहीं थी, परन्तु तौ भी वह एकमात्र धन और प्रभुत्वके प्रयासी होकर प्रबल प्रतापशाली राजासे लेकर सामान्य कृषकतक सभीके ऊपर एकभावसे प्रभुत्वका विस्तार करते थे। राज्य और समाजकी ओर उनका किंचिन्मात्र भी ध्यान न था, वह कवल अपने ही स्वार्थको पूर्ण करनेमें प्रमत्त हो जाते थे। महाराज मानसिंह इस वृद्धा अवस्थामें धर्मयाजक श्रेणीके मोहमंत्रसे मोहित हो गये। उस राजनीति--शिक्षाहीन धर्मयाजकोंके परामर्शसे शासन दंडके चलाते ही मारवाडमें वह विद्रोहानाल प्रबल हो गयी।

बृटिश राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है, ?, १८२४ ईसवीमें जयपुरके महाराज धौंकलसिंह और अन्यान्य राठौर सामन्तोंका अपने साथ लेकर मारवाड पर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुए, कम्पनीने भयंकर हुंकारके साथ भ्रुकुटी चढाकर मानसिंहको कैसा भर्त्सनापूर्ण पत्र लिखा था कि समस्त प्रजा उनके विरुद्ध हो गई है इससे गवर्नमेण्ट उनकी सहायता नहीं करेगी, इस समय वह बृटिश गवर्नमेंट अपनी उस उद्गीरित उक्तिको फिर उदरस्थ कर नवीन राजनैतिक अभिनय करने लगी। यद्यपि महाराज मानसिंहने बृटिश गवर्नमेंटको कर देनेमें राजी होकर सन्धि कर ली थी, परन्तु यहांतक एक भी अंग्रेजी सेनाको मारवाडमें जाकर बृटिशसिंहको संहारमूर्ति दिखानेका सुअवसर नहीं मिला। बृटिश कम्पनी इस समय राठौर जातिको वह संहारमूर्ति दिखानेके लिये महाराज मानसिंहको अपना क्रीडनक रूपसे परिणत कर बृटिश कर्मचारीके द्वारा मारवाडको शासन कर अपनी सामर्थ्यको प्रबल करनेके लिये तथा मानसिंहको यथार्थ वशीभूत बनानेके लिये सुसज्जित हुई।

१८३९ ईसवीमें वर्षाऋतुके शेषमें—तथा शरदऋतुके प्रारंभमें कर्नल सदरलेण्डने विश्वविजयी बृटिश वाहिनीके साथ दर्पसे मारवाडमें प्रवेश किया। यद्यपि मारवाडमें विद्रोह निवारण करके शांतिस्थापन करनेके लिये तथा सुशासनकी व्यवस्था करके असंतुष्ट सामन्तोंको पैतृक अधिकार दिलानेके लिये गवर्नमेंटने सरदलैंडको भेजा था,

यदि प्रसन्न हृदयसे यह महात्मा उस महान् उद्देशको पूर्ण करते तो हम उस उद्देशकी ऊँची प्रशंसा करते, परन्तु हम देखते हैं कि सन् १८३९ ईसवीसे भारतके अन्यान्य देशीय राज्योंके समान यह मारवाड भी अंग्रेजी एजेण्ट द्वारा जिस प्रकारसे सामर्थ्यहीन किया गया, उसका वर्णन नहीं हो सकता । उसे एकमात्र देशी राजा ही कह सकते हैं । इस एजेण्टने उनको किस प्रकारसे अपने हस्तगत कर लिया । चिर वीरव्रतावलम्बी, स्वाधीनताकी प्रिय उपासक जिस राठौर जातिने अपने घोर दुर्दिनोंमें तथा महा विपत्तिमें पडकर भी दिल्लीके बादशाहकी सेनाको भी कुछ न गिना था, आज वही राठौर जाति अंग्रेजी सेनाके जोधपुरमें आते ही क्षीणप्राण दुर्बलहृदयके समान रहने लगी । महाराज मानसिंहने महा भयभीत होकर उस अंग्रेजी सेनाको बडे आदरभावसे ग्रहण किया ! हा ! कालकी कैसी विचित्र गति है !--जातिकी पतनदशामें जातिके चरित्रोंका कैसा हृदयभेदी चित्र होता है। अंग्रेजी सेनाने जोधपुरके किलेपर अधिकार कर लिया, महाराज मानसिंह भी मस्तक झुकाकर कर्नल सदरलैण्डकी आज्ञा पालन करने लगे । महाराज मानसिंहके साथ बृटिश कम्पनीका फिर निम्नलिखित नवीन संधिपत्र तैयार हुआ;-

बृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराज मानसिंहका संधिपत्र ।

माननीय बृटिश गवर्नमेण्टके साथ जोधपुर राज्यकी अत्यन्त प्राचीन कालसे मित्रता है सन् १८१८ ईसवीके संधिबंधनके मतसे वह मित्रता दृढतापूर्वक स्थापित हुई है; इस प्रकारसे दोनों राज्योंमें परस्पर मित्रभाव वर्तमान समयतक विराजमान है और भविष्यत्में भी इसी प्रकारसे दोनोंमें मित्रभाव रहेगा ।

. वर्तमान समयमें बृटिश गवर्नमेण्ट और जोधपुरके महाराज मानसिंहमें कर्नल जान सदरलैण्डके द्वारा नीचे लिखी हुई कई धाराओंसे युक्त एक संधिपत्र तैयार हुआ ।

प्रथम--इस समय राज्यमें सुशासन स्थापन करनेके लिये परस्पर सहयोगिता ग्रहण करनेमें स्वीकृत होकर महाराज कर्नल सदरलैण्ड तथा सरदार और अहलकार एवं शासन विभागके खवास पासवान गण एक साथ सम्मिलित हों और राज्यके सुशासनके लिये नियमसहित रीतिको नियुक्त करें; उसी नियमकी रीतिके मतसे इस समय और भविष्यत्में शासनकार्य किया जायगा । उन्होंने और भी कितने ही सामन्तों-के, राज्यके, राजकर्मचारियोंके तथा उनके अधीनमें स्थित मनुष्योंके स्वत्वाधिकार और सामर्थ्यको प्राचीन रीतिके अनुसार निर्द्धारित, प्रकाशित एवं स्थापित कर दिया ।

दूसरी धारा--बृटिश पोलिटिकल एजेण्ट तथा जोधपुरराज्यके अहलकार परस्पर पहले एक साथ मंत्रणा करके महाराजके साथ परामर्श कर उस नियत किये हुए नियमके मतसे राजकार्य करें ।

तीसरी धारा--उक्त पंचायती लोग चिरप्रचलित प्राचीन रीतिके मतसे राज्यके समस्त कार्योंको करें ।

चतुर्थ धारा–कर्नल साहब कहते हैं कि जोधपुरके किलेमें अंग्रेजी सेना रखनी होगी तथा उसमें महाराज सम्मत होते हैं। राजस्थानके अन्यान्य राज्योंके जिन २ स्थानोंमें पोलिटिकल एजेण्ट रहते हैं, वह नगरके बाहर रहैं। यहाँके किलेमें केवल वस्ती और घर हैं, तथा स्थान बहुत संकीर्ण है। इस कारण इस विषयमें कुछ व्याघात हुआ है, बृटिश गवर्नमेण्टको संतुष्ट रखनेके लिये जब अंग्रेजी सेनाको रखनेके लिये सम्मति दी है, और उस सेनाके रखनेके लिये उचित स्थान नियत कर दिया गया है, तब सेना वहाँ रहैगी; जोधपुरके महाराजको तथा गवर्नमेण्टको इस विषयमें किसी प्रकारके भयका कारण नहीं है।

पाँचवीं धारा–श्रीजीका मंदिरस्वरूप विग्रह तथा योगेश्वरके (विग्रह) एवं देशीय अथवा विदेशीय धर्मयाजक गण, अनुचर और उमराव, कका गण, मुसद्दी (कुशलराज फौजराज इत्यादि) एवं पासवान गण (राजकर्मचारी) अन्यान्य सभी इस समय जिस प्रकार पदमर्यादा स्वत्व अधिकार और क्षमता संभोग करते हैं, इसमें कुछ भी घटती बढती न होगी।

छठीं धारा–जो नियम लिखे गये है, राजकर्मचारी उन्हीं नियमोंके अनुसार अपने २ कर्त्तव्योंको पालन करते रहैंगे, यदि उनमेंसे कोई किसी समयमें उस कर्त्तव्यके पालनमें असमर्थ हुए तो महाराजके साथ परामर्श करके उनके पदपर दूसरे मनुष्यको नियत किया जायगा।

सातवीं धारा–जिनकी जागीर और स्वत्वाधिकारका राजाने अपने आधिकारमें कर लिया है; न्याय विचारकी मूलनीतिसे उनको फिर वह अधिकार प्राप्त होगा, और उस स्वत्वाधिकारीको राजाके यहाँ आनुगत्यभावसे कार्य करना होगा।

आठवीं धारा–मारवाडकी राजशासनशक्तिको चिरस्थायी करना और मारवाडका स्वार्थ रक्षण तथा महाराजका सन्मान और उनके यशकी रक्षा करना कम्पनीका मुख्य उद्देश है इस कारण गवर्नमेण्टने महाराजके मान वा उनकी शासनशक्तिको न घटाया; इसी लिये गवर्नमेण्ट साक्षी होकर रहैगी।

नवीं धारा--बृटिश गवर्नमेण्ट और मारवाडके अहलकार आपसमें एकसाथ परामर्श करके महाराजकी आज्ञासे तथा जिन नियमोंकी रीति नियत हुई है उन्हीं नियमोंकी रीतिसे बृटिश गवर्नमेण्टका जो कर मिलता है; उस करको नियमित रूपसे देनेके लिये तथा सेनाका खरच (जोधपुरके नामसे जो सेना बृटिश गवर्नमेण्टने तैयार की है) जो इस समय मिलता है वह देना होगा; और आगेको नियमित रूपसे देनेकी व्यवस्था की जायगी। जिनको अधिक हानि हुई है, उन्होंने जिनके द्वारा हानिको उठाया है, यदि उसका प्रमाण मिल गया, तो उन हानि पहुँचानेवालोंसे उस हानिको भर लिया जायगा, अन्यथा मारवाड राज्यको अन्यान्य राज्योंके निकट जो दावी किया, यदि उस दावीको रीतिके मतसे प्रमाणितकर दिया तो उस राज्यसे आदाय करके देना होगा।

दसवीं धारा—जिस प्रकारसे महाराजने सरदारोंके अधिक अपराधोंको क्षमा कर उनको अनुगत बना फिर उनको जागीरोंकी सनदें दी थीं, उसी भाँतिसे बृटिश गवर्नमेण्ट भी स्वरूप एवं योगेश्वरके मन्दिरमें जो सब धर्मयाजक गण, उमराव और अहलकारोंके चरित्रोंसे असंतुष्ट हुई थी उनको भी क्षमा करती है।

ग्यारहवीं धारा--राजधानीमें एक अंग्रेजी एजेण्ट नियुक्त रहेगा। किसी मनुष्यके प्रति कोई किसी प्रकारका भी अत्याचार नहीं कर सकेगा। जो छः धर्म सम्प्रदाय हैं; उनके किसी विषय पर भी हस्ताक्षेप नहीं किया जायगा, और जो पशु पक्षी मारवाडमें पवित्र गिने जाते हैं उनका जीवन नाश नहीं किया जायगा।

बारहवीं धारा-यदि छः महीने, वा एक वर्ष अथवा अठारह महीनेमें महाराजके शासनविभागकी सुव्यवस्था हो जायगी तब पोलिटिकल एजेण्ट और समस्त अंग्रेजी सेना जोधपुरके किलेको छोडकर चली जायगी, यदि उक्त कार्य उसकी अपेक्षा थोडे समयमें ही शेष हो गया तो गवर्नमेंट अत्यन्त प्रसन्न होगी; कारण कि उस कार्यसे बृटिश गवर्नमेंटकी प्रतिपत्तिकी वृद्धि होगी।

तेरहवीं धारा--उपरोक्त वर्णन किया हुआ यह संधिपत्र सन् १८३९ ईसवीके सितम्बर मासकी २४ वीं तारीखको जोधपुरमें तैयार हुआ था, इसको लेफ्टिनेंट कर्नल सदरलैंड द्वारा महामहिमवर भारतवर्षके गवर्नर जनरलके पास स्वीकृत और संशोधित होनेके लिये भेजा जायगा--और उक्त संधिपत्रके मर्मसे युक्त एक खलीता उक्त महामान्य गवर्नर जनरलके पाससे महाराजको मिलेगा।

भारतवर्षके गवर्नर जनरल महामहिमवर जार्ज लार्ड आकल्यांड जि. सि. वि.के द्वारा सामर्थ्य प्राप्त होकर, यह संधिपत्र कर्नल सदरलैंडका नियत किया हुआ।

"ऋद्धमल वकीलके हस्ताक्षर। फौजमलके हस्ताक्षर।"

उपरोक्त संधिपत्रके नियत होते ही कर्नल सदरलैंड राज संस्कारमें प्रवृत्त हुए। जिन दो मनुष्योंने राजपुरुषोंकी सम्मतिसे महाराज मानसिंहके राज्यमें यह असन्तोषकारी कांड उपस्थित किया था, कर्नल सदरलैंडने उनको पदसे उतार दिया। श्रीजी स्वरूप जी योगेश्वरजी इत्यादिक जो जो प्रधान २ धर्मयाजक अशान्तिके कारण स्वरूप हो गये थे, कर्नल सदरलैंडने उनपर भी हस्ताक्षेप किया, परन्तु महाराज मानसिंहने किसी प्रकारसे भी उसमें अपनी सम्मति न दी। विशेष करके उन्होंने कर्नल सदरलैंडके प्रस्तावके मतसे अपने चिरशत्रु सामन्तोंको भी क्षमा कराया, कर्नल सदरलैंडने भी उसके आदर्शमें धर्मयाजकोंको भी क्षमा कर दिया। कर्नल सदरलैंडने प्रस्ताव किया था कि धर्मयाजक गण जिससे राजदरबारमें किसी राजनैतिक वा शासनविषय पर हस्ताक्षेप न कर सकैं; संधिपत्रमें ऐसी एक धारा नियत करनी अवश्य कर्त्तव्य है, परन्तु मानसिंहने उसमें आपत्ति करके कहा, कि जब धर्मयाजकोंको राजपुरुष वा राजकर्मचारी नहीं गिना जाता है, तब उस धाराके शामिल करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। जिससे कर्नल सदरलैंड मारवाडकी देवोत्तर भूमिके ऊपर अथवा मारवाडमें प्रचलित छः धर्मसम्प्रदायोंके ऊपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप न कर सकें; इस कारण

महाराजने पहले ही उन छः सम्प्रदायोंके आग्रहसे संधिपत्र तैयार किया था, इस कारण विषयमें कर्नल सदरलैंड कुछ भी न कह सके । मारवाडकी अशान्तिके मूल स्वरूप सामन्तोंके असंतोष निवारण करनेके लिये शीघ्र ही महाराजने उनके अधिकारको दे दिया। इतने दिनोंके पीछे सामन्तोंने भी अपने २ अधिकारको पाकर महाराजकी आनुगत्यता स्वीकार की। इसके पीछे कर्नल सदरलैंडने सन्धिपत्रके मतसे राज्यके प्रधान २ कर्मचारी मन्त्री और सामन्तोंको शीघ्र ही सभामें बुलाकर मारवाडमें सुशान स्थापन करनेके लिये चिर प्रचलित रीतिके मतसे नियमोंकी रीति नियत कर दी, और एक २ करके अपने सभी अभिलषित मनोरथ पूर्ण कर लिये । मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमें आज फिर शांति देवी विराजमान हो गई । पाँच महीने तक अंग्रेजी सेना जोधपुरमें रहकर फिर अपने स्थानको चली गई; महाराज मानसिंह निर्विघ्न हो शांति संभोग करने लगे । परन्तु उनकी स्वेच्छाचारकी शासनशक्ति घट गई तथा पाशविक बलकी सामर्थ्य भी एकबार ही दूर हो गई । बृटिश पोलिटिकल एजेंट मरवाडके हर्ता कर्ता विधाता होकर राज्यके सब भागोंमें अपनी सामर्थ्य चलाने लगे । इनके द्वारा यद्यपि विध्वंस मारवाडमें फिर शांतिने आकर दर्शन दिया, परन्तु मानसिंहके समयसे राठौर राज्यकी शक्ति जो एकबार ही दूर हो गई थी उसका स्मरण करनेसे ऐसा कौन है कि जिसके हृदयमें वेदना उपस्थित न हुई हो ? चिर वीरव्रतावलम्बी राठौर राजवंशका स्वाधीन शासन इन मानसिंहके ही समयमें समाप्त हो गया, यद्यपि उक्त सन्धिकी प्रत्येक धारा केवल मानसिंहके शासन समयमें ही पाली जायगी, इसके पीछे नहीं । यह मत निश्चय हो गया, परन्तु आजतक बृटिश एजेंटने मारवाडमें जाकर राठौर राजकी शासनशक्तिको किस प्रकारसे सीमाबद्ध कर रक्खा है उसका स्मरण करनेसे किसका हृदय प्रसन्न होगा ।

बृटिश एजेंटने सन् १८३५ ईसवीमें महाराज मानसिंहके अधिकारी मेरवाडेमें जो अट्ठाईस ग्राम थे उनको दूसरीबार अपने अधीनमें नौ वर्षके लिये रक्खा था । १८४३ ईसवीमें वह अवधि बीत गई । यह हम पहले ही कह आये हैं कि बृटिश गवर्नमेंटने किस कारणसे इन कई एक ग्रामोंको अपने अधीनमें करके उन ग्रामोंकी आमदनीमेंसे वार्षिक पन्द्रह हजार रुपये लिये थे, महाराज मानसिंह इस बातको न जान सके । १८४३ ईसवीमें महाराज बृटिश गवर्नमेंटके आशयको भलीभाँति जान गये थे । उन्होंने दूसरी बार जो सात ग्राम दिये थे इस बार भी उन सातों ग्रामोंको लेकर बाकी कई एक ग्रामोंको इस आशयसे दिया कि गवर्नमेंटकी जबतक इच्छा हो तबतक इनको अपने अधीनमें रक्खे । इसके सम्बन्धमें कोई नवीन संधिपत्र नहीं तैयार हुआ । बृटिश गवर्नमेंटने तबसे यहांतक उन ग्रामों पर अपना अधिकार किया था कि उक्त कई ग्रामोंके अतिरिक्त महाराजके मालानीनामक देशको भी ले लिया, जो जोधपुरके पोलिटिकल एजेंटके अधीनमें शासित होता आया था । यद्यपि मालानी देशके अधिनायकने जोधपुरपतिकी आनुगत्यता स्वीकार की परन्तु वह पोलिटिकल एजेंटकी आज्ञा पालनमें नियुक्त थे । एजेंटने केवल उक्त देशोंसे वार्षिक ६८८२ रुपया संग्रह कर जोधपुरके महाराजको दिया था ।

महाराज मानसिंह और अधिक दिनतक इस संसारमें न रह सके। उन्होंने १८४३ ईसवीमें सितम्बर मासकी ५ तारीखको पुत्रहीन अवस्थामें इस मायामय शरीरको त्याग दिया। महाराज मानसिंहके चरित्रोंकी समालोचना करनेका हम कुछ प्रयोजन नहीं देखते, कारण कि महामान्य टाड साहबने १८२३ ईसवीतक मानसिंहके शासनको वर्णन किया है, पाठक उसको पढकर उनके चरित्रोंके सम्बन्धमें स्वयं न्यायसंगत मंतव्य गठन कर सकते हैं।

सत्रहवां अध्याय १७.

मारवाडके सिंहासनके अधिकारीको चुननेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टका मानसिंहकी रानी और राठौर सामन्तोंको अनुरोध करना; मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त होनेके लिये धौंकलसिंहकी प्रार्थना; उनकी प्रार्थनाका अस्वीकार होना; अत्यन्त कुटुम्बी अहमदनगरके महाराज तख्तसिंहके अभिषिक्त करनेके लिये रानी और सामन्तोंका प्रस्ताव, तख्तसिंहका परिचय; ईडर और अहमदनगरका संक्षिप्त विवरण; कर्नल टाड साहबकी पूर्वकामनाका सफल होना; बृटिश गवर्नमेंटका सम्मति देना; महाराज तख्तसिंहका अभिषेक; महाराज तख्तसिंहका अहमदनगरको अपने अधीन करनेके लिये कामना करना; उसके सम्बन्धमें ईडरपतिकी आपत्ति; महाराज तख्तसिंहका अहमदनगरका स्वत्वाधिकार छोडना; कुमार यशवन्तसिंहका मारवाडसे लौटना; ईडरराज्यके साथ अहमदनगरका मिलना; महाराज तख्तसिंहके शासनमें सामन्तोंका असंतोष प्रकाश; बृटिश गवर्नमेण्टका अमरकोटके किलेपर अधिकार करना; मारवाडपतिका उस किलेके पानेकी प्रार्थना करना; सुनकर भी महाराजको उस किलेके देनेमें गवर्नमेण्टका असम्मति प्रकाश करना; किलेके बदलेमें हानि पूर्ण करनेका प्रस्ताव करना; दुर्ग सम्बन्धी शेष मीमांसा; उसके सम्बन्धका स्वीकारपत्र, सन् १८५७ के सिपाही विद्रोहके समय महाराज तख्तसिंहका बृटिश गवर्नमेंटको सहायता देना; उस सहायताका पुरस्कार स्वरूप अंग्रेज राजप्रतिनिधिका मारवाड राजवंशको दत्तक पुत्रके ग्रहण करनेकी सनद देना; सनदपत्र; तख्तसिंका घाणेरावपर अधिकार करना; सामन्तोंकी आपत्ति, असंतोष, फिर विद्रोहके लक्षण प्रकाश; उसके सम्बन्धके उपद्रवोंका निवारण; अजमेरके दरबारमें महाराज तख्तसिंहका अशिष्टाचरण, कलंकसंचय, दंड, महाराज तख्तसिंहकी मृत्यु।

महाराज मानसिंहकी मृत्यु होते ही मारवाडका राजसिंहासन सूना हो गया। महाराजके एकमात्र प्राणप्यारे पुत्र छत्रसिंह पहले ही परलोक सिधार गये थे, तथा महाराजने किसीको भी अपने उत्तराधिकारी स्वरूपसे दत्तक नहीं लिया था। इस कारण सबसे पहले तो यह प्रश्न उठा कि उनके पीछे कौन सिंहासन पर बैठेगा। बृटिश गवर्नमेण्टने इस प्रश्नकी मीमांसा करनेके लिये, मानसिंहकी रानी, सामन्त और राजकर्मचारियोंके निकट यह प्रस्ताव किया कि चिरप्रचलित जातियरीतिके मतसे किसको मारवाडका राजातिलक देना उचित है, इसका आप ही विचार कर लीजिये।

जिस समय यह प्रश्न मारवाडके चारोंओर उठ रहा था उस समय अभागे धौंकल-सिंहने फिर मारवाडके सिंहासन पर अभिषिक्त होनेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टके समीप एक प्रार्थनापत्र भेजा। गवर्नमेण्टने देखा कि सर्व साधारण ही इनसे अप्रसन्न हैं, इस कारण धौंकलसिंहकी प्रार्थना स्वीकार न की गई। इसी समयसे धौंकलसिंहकी आशा चिरकालके लिये एक बार ही लुप्त हो गई। राजधानी और सामन्तोंने चिरप्रचलित रीतिके अनुसार बम्बई प्रेसिडेन्सीके अन्तर्गत अहमदनगरपति महाराज तख्तसिंहको मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त करनेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टके निकट प्रस्ताव उपस्थित किया।

महाराज तख्तसिंह कौन हैं और क्यों वह निर्धारित हुए हैं? पाठकोंके कौतूहल निवारण करनेके लिये हम इस स्थानपर उनके सम्बन्धके कई ज्ञातव्य विषयोंके वर्णन करनेकी अभिलाषा करते हैं। मारवाडपति महाराज अजितसिंहके तीसरे पुत्र आनंदसिंहको ईडरके महाराजने, तथा चौथे पुत्र रायसिंहको मालवेके अन्तर्गत जांवरेके महाराजने दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था। महात्मा टाड साहबने अजितकी वंशावलीमें अपना यह मत प्रकाशित किया है, तथा टाड साहब भ्रमसे रायसिंहके नामको इस प्रकारसे लिख गये हैं। परन्तु कर्नेल म्यालिसन और अचिसन इत्यादिकी पुस्तकोंसे जाना जाता है कि महाराज अजितके दो पुत्र १७२९ ईसवीमें अपनी सेना साथ ले ईडर और अहमदनगरमें जा उन दोनों देशोंपर अपना अधिकार कर स्वाधीनभावसे राज्य करने लगे थे। तख्तसिंह उक्त अहमदनगरपति रायसिंहके प्रपौत्र थे। अहमदनगरपति पृथ्वीसिंहने तख्तसिंहके पुत्र यशवन्तसिंहको दत्तक पुत्रस्वरूपसे ग्रहण किया था। पृथ्वीसिंहके प्राण त्याग करते ही महाराज तख्तसिंह यसवन्तसिंहके नामसे राज्यशासन करते थे; मारवाडकी राजरानी और सामन्तोंने देखा कि महाराज अजितके वंशमें यह तख्तसिंह ही सिंहासन प्राप्तिके अधिकारी हैं, निकट आत्मीय और योग्य पात्र हैं, इस कारण उनको मारवाड राज्यका भार देनेके लिये सभीने एकमत होकर बृटिश गवर्नमेण्टके निकट यह प्रस्ताव किया। महात्मा टाड साहब मारवाडके इतिहासके अंतमें कह गये हैं कि पितृहन्ता अभयसिंह और बख्तसिंहके महापापोंके फलस्वरूप उनके उत्तराधिकारी मारवाडको छार-खार करते हैं, इस कारण मानसिंहको सिंहासनसे रहित कर अजितके अपर पुत्रोंसे उत्पन्न ईडरके राजाके किसी एक पुत्रको मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त करना उचित है। साधु टाड साहब १८२३ ईसवीमें इस प्रकारसे वर्णन कर गये हैं, १८४३ ईसवीमें वह कार्य पूरा हो गया, बृटिश गवर्नमेण्टने महारानी और सामन्तोंके उक्त मतमें शीघ्र ही सम्मति दी; महाराज तख्तसिंह मारवाडके सिंहासनपर विराजमान हुए। इनके अभिषेकका कार्य बडी धूमधामसे हो गया।

---

(१) यह बात गलत है।

(२) रायसिंहके प्रपौत्र नहीं थे, अनन्तसिंहके प्रपौत्र थे।

महाराज तख्तसिंह मारवाडके सिंहासनपर विराजमान हुए, परन्तु अहमद्-नगर राज्यको भी अपने अधीनमें रखनेके लिये इन्होंने अपने पुत्र यशवन्त सिंहको शीघ्र ही वहां भेज दिया। परन्तु इस समय ईडरके महाराजने इसके सम्बन्धमें एक भयंकर कांड उपस्थित किया। उन्होंने कहा कि महाराज तख्तसिंह जब कि मारवाडके सिंहासन पर विराजमान हुए हैं, तब अहमदनगर राज्यपर उनका कुछ भी अधिकार नहीं है; अहमदनगर ईडरमें शामिल है, इस कारण उक्त देश इस समय ईडरके अधिकारमें हो जायगा। महाराज तख्तसिंहने कहला भेजा कि मैं स्वयं अहमदनगरका अधीश्वर नहीं हूं मेरे पुत्र यशवन्तसिंहको अहमदनगरके भूतपूर्व अधीश्वर पृथ्वीसिंहने दत्तकपुत्र और उत्तराधिकारीरूपसे ग्रहण किया था, इस कारण वह अहमदनगरका अधिकारी ह। मैंने केवल यशवन्तसिंहके नामसे अहमदनगरको शासित किया था, इस कारण मेरे मारवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त होनेसे भी यशवन्त सिंहका अधिकार नष्ट नहीं हुआ। ईडरपतिने इसका उत्तर भेजा कि यद्यपि यशवन्त-सिंह दत्तकपुत्र रूपसे ग्रहण किये गये थे, परन्तु आपने जब गत वर्षतक अहमदनगरके अधीश्वर नामसे परिचय देकर अधीश्वररूपसे समस्त शासनकार्य किये थे तब यशवन्त सिंहका अधिकार पहले ही लुप्त हो गया। इस कारण आपके मारवाडके सिंहासन ग्रहण करनेके साथ चिर प्रचलित रीतिके मतसे अहमदनगर पर जो आपका अधिकार था वह लुप्त हो गया है, कई वर्षतक इस प्रकारसे आन्दोलन होता रहा; बृटिश गवर्नमेंटने ईडरके महाराजकी उक्तिको न्यायसंगत तथा चिर प्रचलित रीतिसंगत कहकर स्वीकार किया, महाराज तख्तसिंहने शीघ्र ही अहमदनगरको छोड दिया, कुमार यशवन्तसिंह छः वर्षके पीछे अहमदनगरको शासन करके मारवाडको लौट आये। अहमदनगर १८४८ ईसवीमें ईडरराज्यके अधिकारमें हो गया।

महाराज मानसिंहके दीर्घ शासनसे मारवाड एकबार ही क्षार–खार हो गया था इस कारण नवीन मारवाडेश्वर तख्तसिंहके शासनके आरंभसे सम्पूर्ण राठौर जाति आशा करने लगी कि महाराज अपने न्यायशासनसे शांतिकी जलवर्षाकर जातिका कल्याण करेंगे; परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि महाराज तख्तसिंहने सर्वसाधारण प्रजाकी वह आशा फलवती न की। वह राजकार्यके प्रत्येक भागकी ओर स्वयं दृष्टि न रखकर केवल मन्त्रियोंके ऊपर समस्त भार अर्पण कर निश्चिन्त हो बैठे। मंत्रीगण यह सुअवसर पाकर फिर अपनी इच्छानुसार शासन प्रारम्भ कर केवल महाराजके मनको सन्तुष्ट रखनेमें नियुक्त हुए। इसी कारणसे समस्त मारवाडमें फिर असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित हो गई। पर जैसे महाराज मानसिंहने विश्रृंखल शासनसे चारों ओर जिस प्रकारसे पीडन अत्याचार, उपद्रव और अंतमें विद्रोहतकको दिखा दिया था, सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये इतना तो हम अवश्य कहेंगे कि महाराज तख्तसिंहके शासनमें वह दृश्य आकर उपस्थित नहीं हुआ। इतना अवश्य कहा जायगा कि, प्रजाने जितनी आशा अपने कल्याणकी की थी, महाराज तख्तसिंहके शासनके प्रारंभमें उतनी शांति प्रजाको न मिल सकी।

विख्यात अमरकोटका किला और उसके अधीनके देश सन् १७८० ईसवीमें मारवाडके अधीश्वरके अधिकारी तथा मारवाडके राज्यमें मिल गये थे, परन्तु मारवाड अत्यन्त दुर्दिनोंमें सिन्धदेशके अन्तर्गत तालपुरके अमीरने सन् १८२३ में उक्त किले और देशको जीत लिया । पीछे बृटिश गवर्नमेंटने सिंधदेशको जीतनेके समय उस किलेपर भी अपना अधिकार कर लिया । प्रचलित संधिपत्रके मतसे गवर्नमेण्टने उस किलेको मारवाडपतिको देनेका विचार किया, परन्तु बृटिश राजनीतिकी चतुरता-को कौन समझ सकता है । यद्यपि गवर्नमेंटने प्रतिज्ञा की, और शेष समयके उपस्थित होते ही महाराज तख्तसिंहने उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करानेका उद्योग किया, तब गवर्नमेण्टने यह न चाहा, स्वार्थ साधन करनेके लिये निश्चय कर लिया कि अमरकोट-का किला और उसके अधीनके देश जो उसके स्थानपर स्थापित हैं, और दुर्ग जैसे अभेद्य है, इससे उसको महाराजको न देकर अपने अधीनमें रखना कर्त्तव्य है । गवर्नमेंटने इसकी कुछ भी परवाह न कर महाराज तख्तसिंहसे कहला भेजा कि अमरकोटकी सीमाके दुर्ग हमारे अनेक काममें आवेंगे, और दूसरे आपको इस देशसे किसी भांति भी शांति नहीं मिल सकेगी, इस कारण किला हमारे ही अधिकारमें रहेगा, इसमें जो आपकी हानि होगी उतना रुपया देनेके लिये हम तैयार हैं । यद्यपि महाराज तख्तसिंह कम्पनीको प्रथम प्रतिज्ञा बद्ध और शेषमें प्रतिज्ञाको भंग करनेके लिये उद्यत हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुए परन्तु उनकी क्या सामर्थ्य थी कि जो वह इसमें विचार करनेके लिये कहते? वह मस्तक झुकाकर फिर गवर्नमेण्टके उस प्रस्तावको ग्रहण करनेके लिये सम्मत हुए । १८४७ ईसवीकी ६ मार्चको ग्रटहेड साहबने महाराज तख्तसिंहकी ओरके वकीलसे प्रस्ताव करके भेजा कि महाराज तख्तसिंह पहिले संधिपत्रके मतसे सेनाके वेतनके हिसाबसे जो वार्षिक एक लाख पंद्रह हजार रुपया देते हैं उसमेंसे वार्षिक दश हजार रुपया छोड दिया जायगा । अर्थात् सेनाके वेतनके हिसाबसे महाराजको वार्षिक एक लाख पांच हजार रुपया देना होगा । वकीलने महाराज तख्तसिंहके निकट उस प्रस्तावको उपस्थित किया, कि महाराजको प्रकारान्तरमें उस क्षतिको पूर्ण करनेसे अमरकोटका स्वत्वाधिकार चिरकालके लिये गवर्नमेंटको देना होगा । बृटिश गवर्नमेंटने इसके सम्बन्धमें स्वतंत्र किसी संधिपत्र पर हस्ताक्षर न करके उक्त वकीलके निम्नलिखित पत्रमें सम्मति देकर इसको स्वीकार कर लिया ।

१८४७ ईसवी १९ मईका जोधपुरराज्यके वकीलका पोलिटिकल एजेंटके निकट भेजाहुआ पत्र ।

"आपने विगत मार्च मासकी छठी तारीखको जो पत्र लिखकर उसमें अमरकोटके किलेको गवर्नमेण्टको लौटा देना, और उसकी हानिके पूर्णस्वरूपमें वार्षिक जो ११५००० रुपया सेनाके खर्चके लिये महाराज देते हैं, उसमेंसे वार्षिक १०००० रुपया छोडनेका जो प्रस्ताव किया है, मैं महाराजको उस पत्रका मर्म सुनाता हूँ ।

महिमवर महाराज कहते हैं, "कि अमरकोटका किला हमारा है, और इसमें जो हमारे सम्पूर्ण अधिकार हैं, वह सब प्रकारसे प्रकाशित हैं; साहब बहादुर (बृटिश गवर्नमेंट) को वह भली भाँतिसे विदित है। यह अमरकोटका किला जितने दिनोंतक गवर्नमेंटके अधिकारमें रहेगा उतने दिनतक वह इसको अपना ही कहकर अनुभव कर सकेंगे; परन्तु किसी समयमें गवर्नमेंट इसको और किसीको देनेकी इच्छा करे तो वह हमको दे और किसीको न दे, कारण कि अमरकोट हमारा है, इस कारण हमको देना होगा। हम राजस्थानकी भूमिके स्वत्वाधिकारको सबसे श्रेष्ठ मानते हैं, इस कारण जिस दिन अमरकोटा हमारे हाथमें आ जायगा वह दिन हमारी बडी प्रसन्नताका होगा।"

"इस समय १०८००० रुपये बृटिश गवर्नमेंटको जो कर दिये जाते हैं उसमेंसे वार्षिक १०००० रुपया छोड देना होगा। कारण कि भूमिके बदलेमें यह दश हजार रुपया छोडा है, और भूमिके ऊपरका कर ग्रहण करनेके योग्य है, इस कारण उस करसे यह रुपया छोड देना उचित है।"

(यथार्थ अनुवाद)

(हस्ताक्षर) एच. एच. ग्रेट हेड,

पोलिटिकल एजेंट।

सन् १८४७ ईसवीकी १७ जूनको सकाउन्सेल गवर्नर जनरलको स्वीकृत और धार्य हुआ *।"

सन् १८५७ ईसवीमें समस्त भारतवर्षमें प्रबल सिपाही विद्रोहाग्नि प्रज्वलित हो गई जिस समय नाना साहब कानपुर और इलाहाबादमें सौ २ अंग्रेज तथा सैकडों अंग्रेज महिलाओं और सैकडों छोटे २ बालकोंका प्राण नाशकर अपनी महापापकी प्रतिहिंसावृत्तिको सफल करने लगे; जिस समय मेरठ, दिल्ली, एवं लखनऊ इत्यादि देशोंपर सिपाहियोंकी सेना संहारमूर्ति धारण कर अंग्रेज राजपुरुष और अंग्रेजी सेनाको बंदीकर उनके सम्मुख उनकी स्त्रियोंका सतीत्व नाश करके उनके बालकोंको नंगी तलवारोंके अग्रभागसे भेदन कर अन्तमें सबका संहार करने लगी; जिस समय प्रत्येक अंग्रेज अपने २ प्राणोंके भयसे जहां तहां भागने लगे, जिस समय दिल्लीके नाममात्रके बादशाहने भारतमें यवनराज्यका विस्तार करनेके लिये उस विद्रोहके उपलक्षमें मस्तक उठाया, जिस समय भारतमें प्रत्येक अंग्रेजके मुखसे हाहाकारकी ध्वनि उठने लगी, जिस समय सिपाहियोंकी सेनाने नगर २ और ग्राम २ पर अपना अधिकार करना प्रारंभ कर दिया, जिस समय भारतसे बृटिश शासनशक्ति प्राय: लोप होती चली उसी समयमें बृटिश गवर्नमेंटने भारतके अन्यान्य राजाओंके समान मारवाडके महाराज तख्तसिंहके निकटसे भी सहायता मांगी। महाराज तख्तसिंहने तुरन्त ही १८१८ ईसवीके संधिपत्रके अनुसार गवर्नमेंटकी उस महाविपत्तिमें सहायता करनेके लिये

* Artchison's Treaties.

अपनी सेना भेज दी। १८३५ ईसवीमें बृटिश गवर्नमेंटने जोधपुरमें शान्तिकी रक्षाके लिये महाराजके नामसे जो नवीन सेना तैयार की गई थी वह अजमेरमें रक्खी गयी थी, जोधपुरके महाराजके यहाँसे उस सेनाके वेतनके हिसाबसे एक लाख पन्द्रह हजार रुपया लिया जाता था, भारतके इस विद्रोहके समयम वह सेना भी विद्रोही हो गई। महाराज तख्तसिंहने उस विद्रोही सेनाको दमन करके अपनी राजधानीमें अंग्रेजोंको आश्रय दिया, विद्रोहके शान्त हो जानेपर बृटिश गवर्नमेंटने इसके पुरस्कारमें अन्यान्य देशीय राजाओंके समान महाराज तख्तसिंहको निम्नलिखित सनद दी।

"महारानी विक्टोरियाकी अभिलाषा है कि, भारतवर्षके जो राजा इस समय अपने २ राज्यको शासन कर रहे हैं उन सबका राज्य उनके वंशधरोंके द्वारा शासित हो; और उनके वंशक पदसम्मानको अक्षतभावसे रखना होगा, उस अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त मैं आपको इस पत्रके द्वारा प्रगट करती हूं, कि आप और आपके भावी स्थलाभिषिक्तोंके पुत्र न होनेपर आप अथवा आपके राज्यके भावी उत्तराधिकारी हिन्दूविधान और अपने वंशकी रीतिके अनुसार दत्तकपुत्र ग्रहण कर सकैंगे, गवर्नमेंट उसमें अपनी सम्मति देगी।

जबतक आपका वंश राजभक्तरूपसे स्थित रहेगा, और जो संधिके द्वारा बृटिश गवर्नमेंटके साथ बाध्यता हुई है उस सन्धि इत्यादि पर जबतक विश्वास रक्खा जायगा तबतक किसी कारणसे भी इस अंगीकारको भंग नहीं किया जायगा।

(हस्ताक्षर) केनिंग*।

राठौरोंकी सामन्त मंडलीमें जो सम्प्रदाय राजाके यहां प्रतिपत्ति प्राप्त कर एवं शासनकी सामर्थ्य चलानेमें समर्थ न होकर महाराज तख्तसिंहके ऊपर विरक्त हुई थी, १८६७ ईसवीमें उन्होंने मारवाडमें फिर एक शोचनीय कांड उपस्थित करनेका सुअवसर पाया, इसी संवत्‌में घाणेरावके सामन्तने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये, उनके भ्राताने सामन्त पदको ग्रहण किया। परन्तु महाराज तख्तसिंहने उसे चिरप्रचलित रीतिके विरुद्ध जानकर घाणेराव देशपर अधिकार करनेके लिये एक सेना भेज दी। शीघ्र ही राजसेनाके दलने घाणेरावपर अधिकार कर लिया, समस्त असंतुष्ट सामन्त दल बांधकर फिर राज्यमें विद्रोह उपस्थित करनेके पूर्वलक्षण प्रकाश करने लगे। तब महाराज तख्तसिंहके जो अनेक पुत्र उत्पन्न हुए थे, उन्होंने उनमेंसे एकको घाणेरावके देनेकी इच्छा प्रकाश की, बस यही कांड उपस्थित हुआ, परन्तु सामन्तोंने इसको अत्यन्त अन्याय जानकर बृटिश गवर्नमेंटके निकट प्रबल अनुयोग उपस्थित किया। "उनका प्रधान अनुयोग यह था कि महाराजने जो अन्याय करके घाणेरावपर अधिकार किया है, उन्होंने सामन्तोंको राजसभामें नहीं बुलाया है, तथा अपनी इच्छानुसार सभीको पीडित किया है"। इसीसे अप्रसन्न सामन्त राज्यमें विद्रोह फैलानेके लिये सब प्रकारसे उद्योगी हुए थे, परन्तु एकमात्र बृटिश गवर्नमेंटके भयसे उनकी वह कामना मनकी मनमें ही

---

* Artchison's Treaties

रह गई। और दूसरी ओर राज्यमें शांति स्थापन तथा सामन्तोंके असंतोष निवारण करनेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टने महाराज तख्तसिंहको अनुरोध किया। गवर्नमेण्टने उसी अनुरोधके मतसे महाराज तख्तसिंहके समस्त उपद्रवोंके निवारणके साथ ही साथ अपना भी प्रयोजन सिद्ध कर लिया।

सन् १८७० ईसवीमें महाराज तख्तसिंहने अभिमानके वश हो अपनी दुर्बुद्धिसे एक अत्यन्त ही निन्दनीय कार्य करके अपनेको कलंकित और अपमानित किया। इसी सनमें भारतवर्षके भूतपूर्व मृत अंग्रेज राजप्रतिनिधि तथा गवर्नर जनरल अर्ले मेओने राजपूतानेमें भ्रमण करनेके समय अजमेरमें जाकर एक दरबार किया। राजस्थानके सभी देशीय राजाओंको उस दरबारमें बुलाया गया। उनके आमंत्रणसे राजस्थानके अन्यान्य राजाओंके समान महाराज तख्तसिंह भी अपने पुत्र यशवन्तसिंहके साथ अजमेरमें आये। दरबार अनुष्ठानके पहले ही चिरप्रचलित रीतिके अनुसार यह प्रस्ताव हुआ कि जिस २ राजकीय दरबारके समय सब राजा इकट्ठे होंगे, उस समय उदयपुरके महाराणा, जोधपुरपति सबसे आगे आसन पावेंगे। यह समाचार सुनते ही महाराज तख्तसिंहने अत्यन्त अप्रसन्न होकर कहा कि जो उदयपुरके महाराणाके आगे मुझे आसन नहीं दिया जायगा तो मैं दरबारमें नहीं जाऊँगा। महाराज तख्तसिंहकी इस आपत्तिपर गवर्नमेण्टकी ओरसे उनको यह समाचार भेजा गया; कि इस आसनके सम्बन्धमें बहुत कालके पहले विचार होकर जो निश्चय हो गया है उसका विचार अब दूसरी बार किसी प्रकारसे भी नहीं हो सकता परन्तु महाराज तख्तसिंहने इस बातको कुछ भी न सुना। इन्होंने अपनी प्रतिज्ञाको ही प्रबल रखनेका यत्न किया। पोलिटिकल एजेण्ट और कुमार यशवंतसिंह तख्तसिंहको बारम्बार समझाने लगे कि, आप इसमें कुछ आपत्ति न कीजिये। गवर्नमेण्टने जो निश्चय कर दिया है उसी प्रकारसे उदयपुरके राणाके परवर्ती आसनको ग्रहण कर उनके मानकी रक्षा कीजिये। तथापि महाराज तख्तसिंह किसी प्रकार भी सम्मत न हुए।

ठीक समयमें सभास्थलमें एक २ करके सभी राजा आकर अपने २ आसनपर बैठ गये। क्रमानुसार दरबारका समय उपस्थित हो गया, महाराज तख्तसिंहके आनेकी बाटमें सभी बैठे रहे परन्तु तो भी महाराजने दर्शन न दिया। महामान्य अंग्रेज राजप्रतिनिधि अर्ले मेओ बहादुर दरबारके प्रारंभ होनेका समय बीत जानेपर महाराज तख्तसिंहके आनेकी ओर एक घंटेतक राह देखने लगे, दृढप्रतिज्ञ महाराज तख्तसिंह तथापि न आये, यह देखकर अंतमें राजप्रतिनिधि अर्ले मेओने शीघ्र ही महाराज तख्तसिंहके आसनको सूना रखकर दरबारका कार्य प्रारंभ कर दिया दरबार समाप्त हो जानेके पीछे अंग्रेज राजपुरुष—गणोंने यह व्यवस्था की कि मारवाड़पति महाराज तख्तसिंहने महामान्य राजप्रतिनिधि अर्ले मेओके निमंत्रणका तिरस्कार कर उनके ऊँचे पदका अपमान किया है। अस्तु महाराज तख्तसिंहके साथ भी उसी प्रकारका व्यवहार करना कर्त्तव्य है, तुरन्त ही राजप्रतिनिधिके डेरोंमेंसे महाराज तख्तसिंहके निकट इस मर्मका एक आज्ञापत्र भेजा गया, "महाराज! कल प्रभात

होते ही अपने अनुचरोंको साथ ले अजमेरको छोडकर अपने राज्यको चले जाँय; प्रचलित नियम यही है। इस प्रकारसे दरबारके समयमें देशीय राजा आये थे चलते समय उन सभीने बिदा लेकर राजप्रतिनिधिके डेरोंमें जा सम्मान ग्रहण किया, और राजप्रतिनिधिने भी राजाओंके यहाँ जाकर साक्षात् किया; परन्तु यहाँ यह निश्चय हुआ कि महाराज तख्तसिंहके प्रति वह सम्मान नहीं दिखाया जायगा। वह जिस समय अजमेरसे जाने लगे उस समय प्रचलित नियमके साथ बिदा होनेके समय तोपोंकी ध्वनि भी नहीं की गई। महाराज तख्तसिंहके सम्मानमें जितनी तोपोंकी संख्या नियत की गई थी इस समय उसमेंसे दो तोपें घटा दी गई। महाराज तख्तसिंह इस प्रकारसे अपमानित, कलंकित, और दंडित होकर दूसरे दिन प्रातः काल ही अपने राज्यको चले गये। परन्तु यहाँपर इतना हम अवश्य कहेंगे कि यद्यपि महाराज तख्तसिंहने अत्यन्त अशिष्टाचरण करके कलंकको संचय किया, परन्तु उनके पुत्र कुमार यशवंतसिंहने पाहिलेसे ही पिताको राजप्रतिनिधिकी आज्ञा पालन करनेके लिये विशेष अनुरोध किया था। पिताको मंदबुद्धि देखकर कुमार यशवंतसिंहने दरबार भंग हो जानेके पीछे राजप्रतिनिधिके डेरोंमें जाकर उनके साथ साक्षात् कर अनेक भाँतिसे विनय कर उनका सन्मान किया, इससे राजप्रतिनिधि इनसे परम संतुष्ट हुए।"

इस प्रकारसे महाराज तख्तसिंह बहादुर जीवनकी शेष दशामें वृथा कलंकित होकर थोडे ही दिनोंमें अर्थात् १८७३ ईसवीमें इस मायामय शरीरको छोडकर चल बसे।

अठारहवां अध्याय १८.

महाराज यशवन्तसिंहका अभिषेक; शासनविभाग संस्कार; महाराजका कलकत्तेमें आना; भारतके भावी सम्राट्के साथ साक्षात्; महाराजको प्रथम श्रेणीके भारतनक्षत्रकी उपाधि प्राप्ति; दिल्लीकी राजसूय समितिमें महाराजका जाना; स्मारक पताका और पदककी प्राप्ति; सम्मान सूचक तोपसंख्यावृद्धि; मारवाडके इतिहासका उपसंहार।

महाराज तख्तसिंह बहादुरका स्वर्गवास होनेपर उनके ज्येष्ठ कुमार यसवन्तसिंह १८७३ ईसवीमें पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए, और इस समय बडी सावधानीसे

---

(१) महाराज तख्तसिंहको दरबारमें महाराणा उदयपुरके नीचे बैठना मंजूर नहीं था, इस लिये दरबारमें नहीं गये। इसमें कोई बात कलंककी नहीं थी। दो तोपें जो उस समय सलामीकी घटा दी थी तो उनकी उन्होंने कुछ परवाह नहीं की थी। बल्कि उन्होंने लाट साहबकी इस तजवीज-की शिकायत पार्लियामेंटतक की थी और यह दलील की थी कि जब हम उनके बुलानेसे अजमेरमें चले गये थे तो फिर हमारी बैटक क्यों ऐसी तजवीज की कि, जिससे हमारा अपमान हुआ। हमारा और राणाजीका दरजा आपसके वर्तावमें बराबर है। इसका कुछ खयाल नहीं किया गया।

निर्विघ्न हो मारवाडका शासन करने लगे। वर्तमान महाराज "यसवन्तसिंह बहादुरने सच्चरित्रता, नीतिज्ञता, विज्ञता तथा शासन विषयमें विशेष अभिज्ञता अपने पिताके शासनसमयमें ही भलीभांतिसे प्रकाश की। भारतवर्षकी गवर्नमेंट इनके आचरणोंसे पहलेसे ही सन्तुष्ट हो गयी थी; इस कारण इनके राजपदपर अभिषिक्त होते ही राजप्रतिनिधि बहादुरने विशेष आनन्दप्रकाशक पत्रद्वारा भारतेश्वरीके नामसे महाराजको आभिनन्दन करनेमें भी त्रुटि न की। बडी धूमधामके साथ अभिषेककार्य हो जानेके पीछे महाराज यसवन्तसिंह बहादुरने अपने राज्यके उत्कर्ष साधनमें भलीभांतिसे मन लगाकर सभीके मनोरथ पूर्ण किये। सामन्तोंका विद्वेष निवारण और राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें शांति स्थापन करनेके लिये यथायोग्य पहरेवालोंको नियत करना, राजस्वकी वृद्धिके लिये श्रेष्ठ उपाय करना इत्यादि विषयोंसे महाराजने थोडे दिनोंमें ही सफलता प्राप्त की।

भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफ वेल्स बहादुरके १८७५ इसवीमें भारतमें आनेके समय भारतवर्षकी गवर्नमेंटने इनके सम्मानको बढानेके लिये भारतवर्षके प्रधान २ राजाओंको कलकत्तेमें बुलाया। राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकके बुलानेसे महाराज यसवन्तसिंह अनुचरोंको साथ ले कलकत्तेमें आये। १८७५ ईसवीकी २३ वीं दिसम्बरको प्रिन्स आफ वेल्स बहादुरके कलकत्तेमें आते ही, मारवाडपतिने अन्यान्य राजाओंके साथ भारतके भावी सम्राट्को बडे आदरभावके साथ ग्रहण किया। इसके पीछे कलकत्तेके गवर्नमेंटके यहां जाकर भावीसम्राट्के साथ साक्षात् कर फिर सन्मान दिखाया; भावी साम्राट्ने भी महाराजके यहां जाकर साक्षात् किया। १८७६ ईसवीकी १ जनवरीको कलकत्तेके किलेमें भावी सम्राट्ने एक बडा भारी दरबार किया। उस दरबारमें महाराज यसवन्तसिंह बहादुरको बडे आदरभावके साथ ग्रहण किया। इस दरबारमें भारतके प्रथम श्रेणीके कितने ही देशी राजाओंको भारतके भावी सम्राट्ने अपने हाथसे महा सन्मानसूचक उपाधियां दी थीं। इन्हींमें महाराज यसवन्तसिंह भी थे। मरुक्षेत्र विजयी सियाजीने केवल अत्यन्त सामान्य "राव" की उपाधि धारण कर संसारमें अक्षय कीर्तिको प्राप्त किया था, इसके पीछे उन्हीं सियाजीके वंशधर उदयसिंहको बादशाह अकबरसे "राजा" की उपाधि मिली; इससे पीछे दिल्लीके यवनसम्राट्ने इन मारवाड पतिको "महाराजाधिराज राजराजेश्वर" कहकर संभाषण किया, परन्तु महाराज यसवन्तसिंह इस दरबारमें सबसे पहले विजातीय उपाधिके भूषणसे भूषित हुए। देशीय राजा, अथवा राजकर्मचारि और सम्भ्रान्त प्रजाका सन्मान बढानेके लिये भारतेश्वरी विक्टोरियाने, "भारतनक्षत्र" नामकी एक श्रेणीकी नूतन उपाधिकी सृष्टि की थी। वह तीन श्रेणीमें विभक्त हुई महाराज यसवन्तसिंह बहादुरको वह प्रथम श्रेणीकी उपाधि मिली। भारतके भावी सम्राट्ने अपने हाथसे महाराजके गलेमें वह उपाधिका पदक पहिना दिया। विदेशी सेक्रेटरीने सभास्थानमें ऊंचे स्वरसे कहा—"महाराज सर यसवन्तसिंह बहादुर, नाइट ग्रांड कमाण्डर स्टार आफ इण्डिया।" मारवाडपति इस प्रकारसे महासन्मानित हो अत्यन्त प्रसन्न हो अपने राज्यको चले आये।

बृटिशराज्ञी महारानी विक्टोरियाके सन् १८७७ इसवीमें भारतेश्वरी उपाधि धारणके उपलक्षमें दिल्लीमें जो राजसूय समिति हुई थी, महाराज सर यसवन्तसिंह बहादुर भी उस राजसूयमें अपने पारिषद आत्मीय जन और सेनाके साथ आमन्त्रित होकर गये थे । १८७६ ईसवीमें २८ दिसम्बरको महाराज सर यसवन्तसिंह बहादुर महिमवर राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन बहादुरसे साक्षात् करनेके लिये उनके स्थानपर गये. इनके सम्मानके लिये सत्रह तोपें छूटी. स्थानके सम्मुख खडे होकर अंग्रेजी सेनाने युद्धकी रीतिके अनुसार महाराजकी सलामी ली, भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके वैदेशिक सेक्रेटरीने आगे बढकर महाराजको सन्मानके साथ ग्रहण किया, और बडे आदरभावके साथ वह उन्हें अपने यहां ले गये। राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन बहादुरने सिंहासनसे कुछ दूर आगे बढकर महाराजको बडे आदरके साथ उनका हाथ पकडकर अपनी दाहिनी ओर सिंहासनपर बैठाला; इसके पीछे कुशल प्रश्न पूँछने लगे । मारवाड राजवंशने भारतमें बृटिश शासनमे जो सहायता की थी उसका वृत्तान्त सुनकर अत्यन्त सन्तोष प्रकाश किया, दो अंग्रेजी सैनिकोंने एक सुवर्णके दण्डेपर लगी हुई अत्यन्त रमणीय पताकाको[2] लाकर सम्मुख खडा किया । राज प्रतिनिधि शीघ्र ही सिंहासन छोडकर उस पताकाकी ओर गये. और बडे संतोषके साथ निम्नलिखित उक्तिसे उन्होंने महाराजके हाथमें वह पताका दी ।

"महाराज ! आपके वंशके राजचिह्नोंसे अंकित यह पताका महामान्या राज्ञीकी स्वकीय उपहारस्वरूप है—वह भारतेश्वरीकी उपाधि धारणके चिह्नस्वरूप महिमवरको उपहारमें देती है" ।

"इंगलैण्डके सिंहासन और आपके राजवंशके साथ जो दृढ सम्बन्ध विराजमान है तथा प्रधान शासनकी सामर्थ्य (अंग्रेज गवर्नमेंट) आपके वंशकी प्रबलता सुख स्वच्छन्दता और अविनाशिताके दर्शनकी अभिलाषी है । आप जबतक इस पताकाको उडावेंगे, तबतक वह आपके स्मृतिमार्गमें उदित होगी महामान्याका ऐसा विश्वास है।"

महाराज सर यसवन्तसिंह बहादुरने बडे आदरमानके साथ उस पताकाको ग्रहण किया; फिर लार्ड लिटन बहादुरने भारतेश्वरीकी मूर्तिसे अंकित एक सुवर्णका पदक महाराजके गलेमें डालकर कहा;—

"महाराज ! राज्ञी एवं भारतेश्वरीकी आज्ञानुसार मैंने इसके द्वारा आपको विभूषित किया, मैं ऐसी आशा करता हूँ कि आप इसको दीर्घकालतक धारण करेंगे:

---

(१) देहली दरबार ।

(२) सुवर्णके डंडेके शिरोभागपर सुवर्णका राजमुकुट, उसके नीचे सुवर्णरजित दो मुखका वरसा समान्तरालभावसे स्थित था. उसके नीचेके भागमें ताम्बूलके आकारकी झालरयुक्त पताका लटक रही थी । पताकाके एक ओर जोधपुरराजका चिह्न अंकित था, और दूसरी ओर कैसर हिन्द लिखा हुआ था । सन् १८७७ ई० के देहली दरबारमें इसी प्रकारके निसान सब स्वतन्त्र राजाओंको दिये गये थे ।

और जो तारीख इसमें अंकित हुई है उसके स्मरण करनेके लिये आपके वंशधर उत्तराधिकारी इसको दीर्घकाल तक पदकरूपसे रखनेमें समर्थ होंगे "।

मारवाडके महाराजने इस स्मारक--पदकको बडे आदरके साथ अपने गलेमें पहिन लिया, राजप्रतिनिधिने फिर हँसते २ कहा, कि आज आपकी तोपोंकी सलामीकी संख्या बढा दी गई; अर्थात् जितनी तोपोंकी सलामी हुआ करती थी उनसे भी अधिक बढाई गई। महाराज इस दिनसे पहिले बृटिश अधिकारी किसी देशमें जाते तो इनके सन्मानके लिये सत्रह तोपें छुटा करती थीं, परन्तु इस समय यह नियत हो गया कि महाराज जबतक जीवित रहेंगे तबतक इनके सन्मानके लिये उन्नीस तोपें छूटा करेंगी। इस प्रकारसे महाराज जसवन्तसिंह सन्मान पाकर अपने स्थानको चले गये।

दूसरे दिन २७ दिसम्बरको अंग्रेज राजप्रतिनिधि बहादुरने मारवाडपति महाराज सर यसवन्तसिंह बहादुरके यहां जाकर साक्षात् किया, महाराजने बडे आदरभावके साथ इनको ग्रहण किया। इसके पीछे दो जनवरीको महाराज राजसूय समितिमें जा अपने कर्त्तव्य पालनके पीछे स्वयं अपनी राजधानीको लौट आये; महाराजके वर्तमान दीवान, अर्थात् मारवाडके प्रधान मंत्री मेहता विजयसिंहने अपनी दक्षता, विज्ञता और शासनकार्यकी कुशलतासे उस १८७७ईसवीकी पहली जनवरीको राजसूय समितिमें सन्मानसूचक "रायबहादुर" की उपाधि प्राप्त की पंडित शिवनारायण इस समय महाराजके गुप्तमन्त्रीका कार्य करते थे।

मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमें इस समय शांतिमती देवी विराजमान हो रही थी, सुशासनके गुणसे राजा और प्रजामें कुछ भी झगडा नहीं था। आत्मविग्रह नहीं, स्वजातिमें विद्वेष नहीं; सामन्तोंमें षड्यंत्र नहीं, पहाडियोंके अत्याचार भी नहीं हैं। इस समय चारों ओरसे यही शब्द उठ रहा है शांति! शांति! शांति! वाणिज्यकार्य अटलभावसे चल रहा है, किसान लोग निर्विघ्नतासे धान्य उत्पादन कर रहे हैं, प्रत्येक कार्य न्यायके अनुसार होता है। राजकीय करके संग्रहमें कोई बाधा नहीं होती। राजधानीमें विद्यालय स्थापित हो रहे हैं, उन विद्यालयोंमें अंग्रेजी भाषातककी शिक्षा दी जाती है, राज्यके भिन्न २ प्रान्तोंमें शिक्षालय स्थापित हुए हैं, राजधानीमें अंग्रेजी चिकित्सालयोंका अभाव नहीं है राज्यकी श्रीवृद्धिके लिये पूर्त्तकार्य विभाग भी स्थापित हुआ है। इन सब बातोंको देखकर और सुनकर जैसा महान् सुख होता है वैसे ही स्मरण होता है कि जिस राठौर जातिने शूरवीरता और बलविक्रम,प्रताप, प्रभुत्व, एकता, उद्दीपना, प्रतिभा, नीतिज्ञता एवं साहस और दृढ प्रतिज्ञताके बलसे चिर—वीर—व्रतका अवलम्बन कर राठौर राज्यके प्रतिष्ठाता सियाजीके समयसे स्वाधीन अवस्था तथा यवनोंकी पराधीनतामें भी भारतक्षेत्रमें चिरस्मरणीय अभिनय करके अनन्त यश और कीर्त्तिको संचित किया था, उन राठौरोंके वर्तमान वंशधरोंमें वह समस्त सद्गुण इस समय कहां हैं? गवर्नमेण्टकी छत्रछायाके सहारे राठौर जातिको वह अपने सम्पूर्ण गुण संग्रह करने चाहिये।

उन्नीसवाँ अध्याय १९.

मारवाडका विस्तार और जनसंख्या; भिन्नजातीय अधिवासी, जाट राजपूत; ब्राह्मण वैश्य और दासजाति; मृत्तिकाके गुणागुण; फलमूल; खानिज पदार्थ; लवणह्रद; मर्मर पत्थर और चूनेकी खान; टीन सीसा और लोहेकी खानें;फटकडी;शिल्पकौशल;वाणिज्यस्थली; वाणिज्यके द्रव्योंकी आमदरफ्त; पश्चिम भारतके वाणिज्य प्रधानस्थान;पाली; वणिकजाति; खैरतरा और ओसवाल; कूता; वाणिज्य द्रव्यवाही वणिकदल; आमदरफ्तीका परिमाण; वाणिज्य द्रव्यरक्षक चारण गण; वाणिज्यकी अवनति; उसका कारण; अफीमके वाणिज्यकी एक चेटिया, मूँड़वा और बालोतरा; भिलोतका मेला; विचार विभाग; दंड देनेकी रीति; साधारण व्यय; प्रतिपालित कैदियोंके ऊपर महाराजकी दया प्रकाश; सूर्य और चन्द्रग्रहण, राजकुमारका जन्म और राजाके अभिषेकके समय कैदियोंका छोडा जाना; सोगन अर्थात् अग्नि जल और तत्ते तेलसे अपराधियोंकी परीक्षा; पंचायत; राजस्व और उसकी रीति; बटाई वा धान्यका कर; सहना और कनवारिया; साधारण कर; अंगकर; घासका कर; किवारी अर्थात् द्वारकर; द्वारकरकी सृष्टिका मूल; भिन्न प्रकारका कर, उसका परिमाण; घनी वा करसंग्राहक; लवणह्रदका राजस्व; मारवाड़का मोट; राजस्व; सेनाकी संख्या वेतनभोगी सेनाका दल; सामन्तोंके अधीनकी सेना; सामन्तोंकी तालिका; आधुनिक विवरण।

महात्मा टाड साहबने मारवाडके इतिहासको वर्णन करके अन्यान्य ज्ञातव्य विषयोंसे पूर्ण एक और अध्याय लिखा है। यद्यपि वह अध्याय उस समयकी अवस्थाका पूर्ण चित्र है, यद्यपि वर्तमान समयमें प्रायः उन सबकी गति बदल गई है, तथापि इस स्थानपर उसका वर्णन करना हमारा कर्त्तव्य है। हमारे पाठकोंको इसके पढनेसे उस समयके सभी विषय भलीभांतिसे ज्ञात हो जायँगे। हमारे पाठक आजकलकी अवस्थाके साथ उसका मिलान करके तृप्त हो जायँगे;--इस दीर्घ समयमें मारवाडकी आभ्यन्तरिक अवस्था श्रेष्ठ हुई है या नहीं; राजाका राजस्व, साधारण वाणिज्य और विचार विभागकी किस प्रकार उन्नति हुई है, यह भी उन्हें सरलतासे ज्ञात हो जायगा। इस समय हमने इसके सम्बन्धमें किसी प्रकारसे भी मतामतको प्रकाश न करके केवल टाड साहबकी उक्तिका अविकल अनुवाद कर दिया है।

कर्नल टाड साहबने मारवाड राज्यका इस प्रकार विस्तार लिखा है, "मारवाडकी राजधानी जोधपुर समान्तरालभावसे पश्चिममें गिराप और पूर्वकी ओर आर्वलीके शिखरपर स्थित श्यामगढतकके देशके बीचमें स्थित है। इस समान्तराल रेखाका परिमाण अँग्रेजी २७० मील है। मारवाडका और कोई अंश इतना विस्तारवाला नहीं है। सिरोहीकी सीमासे मारवाडकी उत्तर सीमातकके देश सभी दीर्घ विस्तारवाले हैं। इनका परिमाण दोसौ बीस मील है। डीडवाना और जालौरके उत्तर पूर्व कोनसे सांचोरकी सीमाके अन्तमें दक्षिण पश्चिम कोनतक पृथ्वीका परिमाण

---

१ टाड साहबके ग्रन्थमें यह १६ वां अध्याय है, दो अध्याय बीचमें अनुवादकके संगृहीत हैं।

साढे तीनसौ मील है। मारवाडकी चार सीमाएं इस प्रकारसे असरल हैं एवं एक२अंश इस भावसे भिन्न २ राज्यके भीतर गया है कि त्रिकोण मितिकी सहायताके अतिरिक्त मारवाडके विस्तारका ठीक निश्चय और पृथ्वीके परिमाण और उसकी सीमाका निर्णय करना असंभव है, इस समय उसका प्रयोजन नहीं है।"

"केवल लूनी नदीने ही प्रधानतः मरुक्षेत्रकी आकृतिके स्थान २ में विभिन्न देश परिणित कर दिये हैं। यह लूनी नदी मारवाडकी पूर्वसीमाके अंत पुष्करसे निकलकर पश्चिमकी ओरको जाकर राज्यको दो भागोंमें विभक्त कर उर्वर और अनुर्वर देशकी सीमारूपसे गई है। यद्यपि इस तरंगिनीसे दक्षिण किनारेसे अर्वलीके शिखरतकके विस्तारित भूखण्ड मारवाडमें अधिक समृद्धिशाली हैं, परन्तु वाहिनीके उत्तर प्रान्तके भूखंड क्या अनुर्वर हैं? यह नहीं कहा जा सकता। पाठक और पाठिका गण! नागौर देशको बीचमें छोड जोधपुर होकर बालोतरा देशतक एक कल्पित रेखा खैंचे तो यह भलीभांतिसे समझ जायँगे कि कौन देश उर्वर है और कौन देश अनुर्वर है। उस रेखाके दक्षिणमें डीडवाणा, नागौर, मेरता, जोधपुर, पाली, सोजत, गोडवाड, सिवाना जालौर, भीनमाल और साञ्चोर पडते हैं। इन देशोंमेंसे बहुतसे उर्वर हैं उनमें बस्ती घनी है, हमें यह निश्चय है, कि इन सब देशोंके प्रति वर्ग–माईलमें ८० मनुष्य वास करते हैं। उस कल्पित रेखाके उत्तर प्रान्तवर्ती देश इससे भिन्न हैं, उसको भी उप-विभागमें विभक्त करनेका प्रयोजन है, कारण कि उत्तर पूर्व अंशमें नागौरके कितने ही अंश फलोदी और पोकरण इत्यादि प्रधान २ नगर हैं, इनकी संख्या ३० दरजे है, परन्तु दक्षिण पश्चिमकी सीमाके अन्तमें गोगादेवका थल या गोगाश्यो० बाडमेर, कोटडा और यह दश दरजेसे कम हैं और चोहटन मारवाडकी सब मिलाकर जनसंख्याका अनुमान बीस लाख है।"

कर्नल टाड साहब इसके सम्बन्धमें लिख गये हैं कि मारवाडमें कौन २ जाति और कौन २ वर्णके निवासियोंकी संख्या कितनी है, "जाट जातिकी संख्या आठ अंशोंमेंसे पांच अंश है, राजपूतोंकी संख्या दो अंश है और बाकी सब ब्राह्मण हैं; वाणिज्य व्यवसायी दास हैं। यदि यह अनुमानिक प्रमाण सत्य है तो राजपूत स्त्री पुरुष और बालकोंकी संख्या पांच लाख होगी, इनमें पचास हजार राजपूत अस्त्र धारणकी सामर्थ्य रखते हैं।"

राठौर जातिके चरित्रोंके सम्बन्धमें इतिहासवेत्ता टाड साहबने लिखा है, कि "हमने राठौर जातिके द्वारा अनुष्ठित प्रदर्शक और संसाधित जिन जातियोंके चरित्र जानकर जिस घटनाका वर्णन किया है, राठौर जातिके चरित्रोंके सम्बन्धमें उसके अतिरिक्त और कुछ कहना केवल बाहुल्यमात्र है। भारतवर्षकी छत्तीस जातियोंमें केवल इस राठौर जातिने ऊँचा आसन पाया है। यद्यपि इस समय इस राठौर जातिने अफीमका सेवन करके अपनी जातीयशक्तिकी अवनति की है तथापि प्रबल

(१) सांचोर देशमें केवल ब्राह्मण ही निवास करते हैं, उनका सांचोरा ब्राह्मण नाम विख्यात है।

प्रतापशाली यवन शासनके समयमें यह राठौर जाति अपने उसी ऊँचे सन्मानकी अवस्थामें थी; उस यवनशासन शक्तिने जिस प्रकार पग २ पर इसका आग्रह किया था इस समय उसी प्रकार किसी एक उद्दीपक घटनाके उपस्थित होते ही उसी भावसे यह राठौर जाति फिर उद्दीपानलसे उद्दीप्त होकर अपने उसी भावसे जातीयताका तीक्ष्ण तेज दिखा सकती है। सम्राट् औरंगजेबने घोर अत्याचार करके राठौर जातिकी अवनति कर उनकी जातीय शक्तिको घटा दिया था। वर्तमान महाराज मानसिंहके द्वारा वह जातीय शक्ति उससे भी अधिक विध्वंस हो गई थी। जब मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमें शान्तिसती अचलभावसे दीर्घकाल तक नृत्य करेगी, तब क्षयको प्राप्त हुई राठौरोंकी जनसंख्या फिर भी बढ जायगी. परन्तु अश्रुतपूर्व प्रतारणा, शठता, षड्यंत्र, स्वेच्छाचार, और प्रत्येक राठौरके परिवारके ऊपर अविश्वास प्रकाश करनेसे राठौरोंके जातीय चरित्र एकबार ही दूर हो गये. तथा जातिका नैतिक बल एकसाथ लोप हो गया; राठौरोंका वही नैतिक बल, वही जातीय महत्व और वही जातीय पवित्रता बहुत थोडे दिनों पूर्वतक रजवाडेके अन्यान्य जातिकी अपेक्षा भलीभाँतिसे विदित थी। कई वर्ष पहिले इस मरुक्षेत्रके प्रजारंजन सर्वप्रिय राजा अत्यन्त सरलतासे प्रबल वीरतेजा बाहिनीके संगठन–" एक बापका बेटा पचास हजार तलवार राठौरान " अर्थात् एक पिताका वंश सम्भूत पचाश हजार राठौरोंकी सेनाके संग्रह करनेमें समर्थ है। इनमेंसे पांच हजार अश्वारोही हैं। इस समय मानो वह वाक्य चरितार्थ हो गया है। उस इकट्टी हुई आधे लाख राठौर सेनाके अतिरिक्त मारवाडेश्वर अपनी सेना और खास भूमिकी वृत्तिभोगी सेना तथा वेतनभोगी विदेशी सेनाको भी एकत्र कर सकते थे। भारतवर्षमें एक मात्र राठौर अश्वारोही सेना सबसे श्रेष्ठ साहसी और वीर विदित थी। मरुक्षेत्रके कई स्थानोंपर विशेष करके बालोतरा और पुष्करमें जो घोडोंका मेला होता है, उसमें कच्छ, काठियावाड, जंगल और मुलतानसे बहुतसे उत्तम २ घोडे आते हैं। मारवाडके पश्चिम सीमाके अन्तमें लूनी नदीके किनारेके कई देशोंमें मूल्यवान् अत्यन्त श्रेष्ठ घोडे उत्पन्न होते हैं, इनमें राडधडाके अश्व प्रथम श्रेणीके गिने जाते हैं परन्तु गत बीस वर्षसे राजनैतिक शोचनीय घटनाओंके कारण उन घोडोंके संग्रह करनेके प्रत्येक मार्ग बन्द हो गये हैं। राडधडा कच्छ और जंगलके अश्व संग्रह करके जो अश्व उत्पन्न कराये जाते थे, वह एक साथ ही बंद हो गये। सिन्धु नदीके पश्चिमसे जो घोडे लाये जाते थे, सिक्खोंके द्वारा उनमें भी व्याघात हुआ है पहिले मरुक्षेत्रमें जिस समय लूटनेकी वृत्ति भयंकर रूपसे प्रचलित थी उस समय अधिकतासे घोडोंका प्रयोजन होता था। इस कारण बहुतसे मनुष्य उन घोडोंके लानेकी अनेक चेष्टाएं करते थे, और अब वह लूटनेकी रीति एकबार ही दूर हो गई है, इस कारण घोडोंका भी प्रयोजन नहीं होता; अंग्रेजोंके द्वारा जो शांति हुई है यह उसीका फल है।"

"जिस समय राज्यमें आत्मविग्रह उपस्थित होनेसे अथवा शत्रुओंके कराल ग्राससे मारवाडकी रक्षा करनी कठिन हो गई थी; हमने सुना है, कि उस समयमें केवल राठौरोंकी सम्प्रदायने ही युद्धभूमिमें चार हजार अश्वारोही सेनाको इकट्ठा किया

था। चांपाके वंशधर यद्यपि उस प्रकारसे बहुतसी सेना इकट्ठी कर सकते थे परन्तु जन्मभूमिकी विशेप विपत्तिके समयके अतिरिक्त अन्य समयमें उस भावसे इकट्ठे नहीं हो सकते थे। चांपावत नेताने युद्धभूमिमें इस प्रकारसे बहुतसी अश्वारोही सेनाके साथ जाकर राजभक्ति नहीं दिखाई। राठौर सामन्त जितनी आमदनीवाली पृथ्वीको उपभोग करते थे, उसकी आमदनी प्रतिवर्ष पांचसौ रुपया थी उन्होंने एक अश्वोंकी सेना और दो पैदल सेना युद्धके समय भेज दी थी। उच्चश्रेणीके सामन्तोंकी एक तालिका यथास्थान दी गई है"।

मृत्तिकाके गुणागुण—कृषिकार्य और कृषिजात द्रव्योंके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहब लिख गये हैं: "कि मारवाडमें निम्नलिखित चार श्रेणीकी मृत्तिका है;—वेकल, चिकनी; पीली और सफेद प्रथमोक्त मृत्तिका देशके अधिकांश स्थानोंमें पाई जाती है। इसमें मिट्टीका असर बहुत थोडा है, देखनेमें छोटे २ अणु और रेतीली है, इसमें केवल बाजरा, मूँग, मटर, तिल और ज्वार आदि धान्य उत्पन्न होते हैं खरबूजा भी होता है। चिकनी मिट्टीका वर्ण काला है;यह मिट्टी डीडवाना, मेरता,पाली और गोडवाडेके सामन्त शासित देशोंमें पाई जाती है। इसमें गेहूं और दूसरे प्रकारके भी धान्य उत्पन्न होते हैं, पीलीमिट्टी हलदीके रंगके समान है। इसमें बालू मिला हुआ है, यह विशेषकर बनसर, जोधपुर, जालौर, बालोतरा और दूसरे देशोंके किसी किसी स्थानमें पाई जाती है। इसमें जौ नये गेहूँ (कोकनागेहूँ) तम्माखू प्याज और दूसरे शाक भी उत्पन्न होते हैं, सफेद रंगकी मिट्टीमें खेती नहीं होती हां घोर वर्षाके पीछे उस भूमिमें कुछ अन्न होता है, तिजारतके लायक यहां बाजरा कम होता है"।

"लूनी नदीके दक्षिण किनारे पाली सोजत और गोडवाड इत्यादि स्थानोंकी मिट्टी पर्वतके शिखरसे निकली हुई छोटी २ नदियोंके प्रवाहसे उर्वर हो जाती है। उस मिट्टीमें बाजरेके सिवाय और सब प्रकारके नाज अधिकतासे उत्पन्न होते हैं। नागौर और मेरताके देशमें कुएँके जलसे खेती होती है और उसमें बहुतसे कीमती धान्य उत्पन्न होते हैं। पश्चिमाचलमें पांचसौ दश ग्राम हैं।जालौर, सांचोर और भीनमालके विस्तारित देश, खालसा अर्थात् मरुक्षेत्रके अधीश्वरोंकी स्वयं अधिकारकी खास भूमि है। उस भूमिकी मिट्टी अत्यन्त श्रेष्ठ है, विशेष करके आबू शिखरसे निकली हुई छोटी २ स्रोतस्वती उस भूमिके ऊपर होकर जाती है, और दक्षिणकी विस्तारित नदियोंने इसकी उर्वरताको अधिकतासे बढा दिया है; परन्तु यह भूमि जितना धान्य उत्पन्न करनेमें पहिले समर्थ थी; राजा मानसिंहके अराजकतामय शासनमें उससे एक तिहाई अंश भी उत्पन्न नही होती थी। और सोहराई तथा सिंधु देशके दस्युओंका दल इस खालिसाकी भूमिमें आकर किसानोंके यहांसे अधिक धन और धान्य लूटकर ले जाते थे। इस देशकी श्रेष्ठ भूमिमें गेहूं, जौ, धान्य, ज्वार, मूंग और तिल यह अधिकतासे उत्पन्न होते हैं। और रेतीली जमीनमें केवल बाजरा, मूँग और तिल ही उत्पन्न होते हैं। इसी उत्तरदेशके पिशाचोंने जो भयंकर मुख फैलाकर हजारों जीवोंका प्राणनाश किया था, यदि मारवाडके सिंहासनपर कोई योग्य राजा विराजमान होते, यदि चारों ओर सुशासनका प्रचार होता तो

मारवाडके इस प्रकार धान्य संग्रह करनेके बहुतसे उपाय थे। जिससे बडी सरलतासे दुर्भिक्ष निवारण हो सकता था यद्यपि दक्षिणाचलके कुओंमें अधिकतासे जल भरा हुआ है, परन्तु मेवाडमें जितने कुएँ हैं, यहां उस भांति नहीं हैं। पांचसौ छः नगर और ग्राम नागौरप्रदेशमें हैं, जो मारवाडके बडे राजकुमारके अधिकृत सम्पात्तिरूपसे निर्द्धारित हैं। उस देशकी यथार्थ अवस्था सुविधाजनक थी परन्तु अत्यन्त प्राचीनकालसे वहां खेतीके सुभीतेके लिये कुएँ अधिकतासे खुदवाये गये तथा मारवाडके अन्यान्य देशोंकी अपेक्षा वहांके किसान भी अधिकतासे जलकी सहायता पाते थे।"

"खनिजपदार्थ—यद्यपि मारवाडकी भूमि उर्वरतारहित है, परन्तु यहां एक बहुमूल्यवान् खानि विराजमान है। उसके लिये भारतके अन्यान्य प्रान्तवर्ती तथा उर्वर देशके निवासी भी उस खानिज पदार्थको विशेष प्रयोजनीय कहकर उसे ग्रहण करते हैं। पंचभद्रा, डीडवाणा और सांभरका लवणह्रद धनके आगमनका प्रधान द्वार है; इसीमेंसे लवण भारतवर्षके सम्पूर्ण स्थानोंमें जाता है। अन्य पक्षमें मारवाडकी पूर्व सीमामें स्थित मकरा नामक स्थानमें मर्मर पत्थर खानसे निकलता है। इस पत्थरके द्वारा ही यवनशासनके समयमें भारतके प्रधान २ नगरोंमें बडे २ ऊँचे महल बनाये गये थे। दिल्ली और आगरेके सारे मकान, मसजिदें, शिवालय और समाधिमन्दिर इत्यादि जो कुछ भी बनाया जाता उस सबके लिये मारवाडसे पत्थर लाया जाता था। मारवाडके महाराजने बहुत थोडे ही समयमें इस समस्त पत्थरकी खानसे यथेष्ट राजस्व संग्रह कर लिया। परन्तु समयके हेर फेरसे यवन शासनके समान इस समय लाखों रुपये खर्च करके बडे२ मकान और महल बनवानेका समय जाता रहा, इसी कारणसे पहलेके समान राजस्वके प्राप्त होनेकी इस समय संभवना नहीं है। जोधपुर और नागौरके निकट श्वेत पत्थरके टुकडे और कितनी हीं खानें हैं, महल बनानेके कार्यमें विशेष प्रयोजनीय कंकर मारवाडके अनेक देशोंमें अधिकतासे पाया जाता है। सोजत नामक स्थानमें टीन और सीसा उत्पन्न होते हैं। पाली नामक स्थानमें फिटकरी, और भीनमाल तथा गुजरातके पासके देशोंमें लोहा पाया जाता है"।

"शिल्पकौशल-वाणिज्यदृष्टिसे देखनेसे मालूम होता है कि मारवाडमें शिल्प कौशल (दस्तकारी) श्रेष्ठ नहीं है। सूतके मोटे वस्त्र और कम्बल बनाये जाते हैं, यद्यपि इसी देशके सूत और रेशमसे बहुतसा कपडा तैयार होता है, परन्तु वह परदेशको नही भेजा जाता। अपने देशमें ही खर्च हो जाता है। बंदूक, तलवार तथा और भी युद्धके अनेक शस्त्र राजधानीमें और पालीमें बनते हैं और पालीसे ही एक प्रकारके लोहेके संदूक और यूरूपके टीनके बक्सोंके समान बक्स बनते हैं। रंधन० कार्यके लिये लोहेका बनाहुआ कडाह और कडाही इत्यादि यहांतक उत्तम बनते हैं कि इनके बनानेवाले किसी समय भी निश्चिन्त नहीं रहते"।

वाणिज्यका प्रधान स्थान—"समस्त राजपूत राज्यमें ही एक एक वाणिज्यके प्रधान स्थान हैं। मेवाडमें भीलवाडा बीकानेरमें चुरू और जयपुरमें मालपुरा जिस भाँति वाणिज्यके प्रधान स्थानहैं उसी भांति मारवाडमें पाली भी वाणिज्यका प्रधान स्थान है।

यह केवल रजवाडेके उक्त वाणिज्यप्रधान स्थानोंका प्रतिद्वन्द्वी नहीं है, यह समस्त रजवाडेमें प्रधान वाणिज्यका स्थान विख्यात है । वास्तवमें हम इस बातको अधिकतासे सत्य मानते हैं, कारण कि भारतवर्षके महाजन तथा वणिक व्यवसाइयोंमेंसे दश अंशोंमेंसे नौ अंश इस मरुक्षेत्रमें जैनधर्मका अवलम्बन करते थे। खेतरा नामक वणिक् सम्प्रदायके हजारों मनुष्य वाणिज्यके लिये भारतके अनेक प्रान्तोंमें जाते हैं, और ओसिया नामक स्थानमें जो सम्प्रदाय ओसवाल नामसे विख्यात है उन ओसवाल वणिक् और महाजनोंके परिवारकी संख्या प्राय: एक लाख होगी । यह सभी राजपूत रक्तधारी हैं, परन्तु जिन अँग्रेजोंने हिन्दुओंके चरित्र और हिन्दूजातिके सम्बन्धमें खोज की है उनको यह बात विदित नहीं है । शतद्रुसे भारतके महासागरतक विस्तारित देशोंमेंसे यह मारवाडके वणिक् जो धन लाया करते हैं वह सभी उनके देशसे आता है। जैन समाजमें यह रीति प्रचलित है कि पिताका पैदा किया हुआ धन केवल बडे पुत्रको ही नहीं मिलता; अर्थात् पिताके पास जितना धन हो उसमेंसे बराबर २ सब पुत्रोंको बाँट दिया जायगा। तब केवल मध्य एशियामें जिस जाति और केल्टरकी जूट जातिके समान सबसे छोटे पुत्रको दूना हिस्सा दिया जाता है । यदि पिताके जीवित रहते ही धन बाँट दिया जाय तो सबसे छोटे पुत्रको इस प्रकार मिलेगा, अर्थात् पिता सब धनका भाग करके सब पुत्रोंको समभावसे बाँट दे और अपने जीवन निर्वाहके लिये एक अंश अपने पास रख ले, पिताकी मृत्युके पीछे पिताका वह हिस्सा भी छोटे ही पुत्रको मिलेगा। यह नहीं कहा जा सकता कि, इस भाँतिसे धनका विभाग समस्त चराचरमें है या नहीं । परन्तु एक समय जो इस प्रकारकी रीति बाहुल्यतासे प्रचलित थी उसका प्रत्यक्ष प्रमाण विराजमान है । मारवाडमें कितनी जातियां वाणिज्य व्यवसाय करती हैं, उनके नामकी एक बडी तालिका दी जाय तो एक बडा अध्याय हो जायगा, एक जैनियोंके पुरोहित जो कई वर्षोसे विशेष परिश्रम करके असियाँ तालिकाको बना रहे थे, उन्होंने अठारहसौ वाणिज्य व्यवसायी वर्णोंके नामोंको संग्रह कर पीछे बडे २ दूरके देशोंसे और भी डेढसौ वाणिज्य व्यवसायी वर्णोंके नाम प्राप्त कर शेषमें तालिकाको समाप्त करनेमें सन्तोष न प्राप्त कर इस कार्यको अधूरा ही छोड दिया'' ।

इस स्थानपर कर्नल टाड साहब मारवाडके वाणिज्यप्रधान पाली नगरके संबन्धमें वर्णन कर गये हैं, ''कि पाली पूर्व और पश्चिमके देशोंमें सर्वप्रधान वाणिज्यका स्थान था; यहां भारतवर्ष, कश्मीर और चीनसे वाणिज्यके द्रव्य आते थे, और उन सबके पलटेमें यूरूप,अफरीका,फारिश और अन्यान्य देशोंको वाणिज्यद्रव्य ले जाते थे । कच्छ और गुजरातसे हाथीदाँत, ताँबा, खर्जूर, गोंद, सुहागा, नारियल, बनात, रेशमी और पशमीनेके वस्त्र, चन्दनकाष्ठ, कपूर, रंग, औषध, काफी, मसाला, गन्धक, इत्यादि बहुतसे पदार्थ छकडोंमें भरकर यहां लाये जाते थे, और उन सबके बदलेमें यहांसे छींटके वस्त्र, सूखे फल, जीरा, मुल्तानी हींग, चीनी, सोडा और मासवेकी अफीम, पसमीनेके वस्त्र, श्रेष्ठ वस्त्र, क्षार, साल, रंगे हुए कम्बल, वस्त्र और इस देशका नमक दूसरे देशोंको जाता था'' ।

" मुंदवाह सांचौर भीनमाल और जालौर होता हुआ वाणिज्यद्रव्य छकडोंमें भरकर पालीमें आता था, राजपूत जातिमें जिन कवियोंको परमपूजनीय माना है, वही सैकडों वाणिज्यके छकडोंके साथ रक्षक होकर जाते थे। इन कवियोंके ऊपर सर्वसाधारणकी जैसी भक्ति थी, जैसा इनका मान और इनसे भय माना जाता था इतना और किसीका नहीं था, इनके छकडोंके साथमें होनेसे दस्युदल भी वाणिज्य द्रव्योंके लूटनेका साहस न कर सकते थे। यद्यपि यह चारणगण तलवार तथा ढाल लेकर अपने बाहुबलसे वाणिज्यके द्रव्योंकी रक्षाकरनेमें असमर्थ थे, परन्तु यह अपने शरीरके आघातसे तस्करोंको इस भांति नरकका भय और परलोकका भय दिखाते कि जिससे कुसंकारके भयसे लुटेरे आक्रमण नहीं कर सकते थे। यदि कोई तस्कर वाणिज्यके छकडेपर आक्रमण करता तो यह कवि ब्राह्मण भाटोंके समान उसी तस्करके सम्मुख सबसे पहले अपनी देहके एक स्थानपर छुरी मार लेते यदि तस्कर इससे भी शान्त न होते तब अंतमें अपनी हत्या करते। पीछे स्त्री पुत्र परिवार सभी अपने प्राण त्यागनेका तस्करोंको महा भय दिखाते थे--और कह देते कि इस नरहत्याके पापका भयंकर फल तस्करोंको अवश्य भोगना होगा। हमारा यह शाप किसी समय मिथ्या नहीं होगा। इसी कारणसे वाणिज्यके शंकटोंके साथ कवि जाया करते थे, इसीसे तस्कर उन छकडोंपर आक्रमण वा लूट नहीं कर सकते थे। " इतिहासलेखक टाड साहब पीछे लिख गये हैं " कि गत बीस वर्षसे यह विस्तारित वाणिज्यकार्य एकबार ही लोप हो गया था। यद्यपि इस समय भारतवर्षके चारों ओर शांति विराजमान है परन्तु उस समय समस्त भारतमें लूटनेकी रीति भयंकरतासे प्रचलित थी पर उस समय वर्तमान समयकी अपेक्षा यह वाणिज्यका स्रोत दशगुणा अधिक बह रहा था। बहुतसे मनुष्य यद्यपि इस बातको असत्य मानेंगे परन्तु यह बात सर्वथा सत्य है वर्तमान समयमें एक चोटिया वाणिज्यसे मारवाडमें जैसी हानि पहुँची है, पर्वती सराई और दुर्दान्त बर्वेटियोंके तथा दस्युओंके आक्रमणसे भी वैसी हानि नहीं पहुँची थी, यह ठीक है कि दस्युओंके भाले और तलवारोंसे चारणगण द्रव्यवाही शंकटोंकी रक्षा करके अपना रक्तपात करते थे, परन्तु वर्तमान समयमें इस प्रकारका रक्तपात न करके उस रक्तको सुखा दिया है, ईस्ट इण्डिया कम्पनीने उस समय अफीम और लवणके वाणिज्यका एक चेटिया करके भारतका लवण और अफीम जिससे भारतसे अन्यत्र पूर्णरूपसे न जा सके और विदेशको चालान न हो इस कारण उसपर विशेष महसूल लगा दिया था इसी कारणसे मारवाडकी अफीम और लवणके व्यापारमें बहुत विघ्न उत्पन्न हुआ, और यह दोनों वाणिज्य धीरे धीरे बहुत न्यून हो गये। ईस्ट इण्डिया कम्पनीने अपने प्रयोजन सिद्ध करनेको राजाओंके राजस्वका यह अनिष्ट किया, उदारनीति टाडसाहबने इस कार्यका भलीभाँतिसे खण्डन किया है।

मेलेके सम्बन्धमें साधु टाड साहब लिखते हैं; इस देशमें प्रत्येक वर्षमें दो मेले हुआ करते हैं, एक तो मूँडवा नामक स्थानमें और दूसरा बालोतरामें। पहले मेलेमें तो साधारण हाथी, घोडे, गौ आदि पशु बेचे जाते थे। इसके अतिरिक्त भारतके और भी

अनेक देशोंसे वणिक् और व्यवसायी वहांके योग्य बहुत प्रकारके पदार्थ लाते हैं, और पासके राज्योंमें वह वणिक् उन सबको बेच जाते हैं। यह मेला प्रथम माघके महीनेसे प्रारंभ होकर छः सप्ताहतक रहता है। दूसरे मेलेमें उक्त विधिसे सब प्रकारके पशु लाये जाते हैं और भी अनेक प्रकारके वाणिज्य द्रव्योंके आनेसे पाली नगरका वाणिज्यकार्य बडी श्रेष्ठतासे होता है। इस मेलेमें भारतके अनेक स्थानोंसे बहुतसे मनुष्य आते हैं परन्तु इस समय उस श्रेष्ठताका चिह्न एकबार ही लुप्त हो गया है।

मारवाडके उस समयके विचार विभागके सम्बन्धमें महात्मा टाड् साहब लिखते हैं, "कि इस राठौर समाजमें विचारकार्य बडा ही शिथिल देखा जाता है। यदि कोई मनुष्य राजद्रोह तथा राजनैतिक अपराध करता तो उसीको दंड दिया जाता था। और राजनैतिक अपराधके अतिरिक्त अन्य किसी अपराधमें प्राणदंड नहीं किया जाता था। इस सामन्त शासनप्रणाली प्रचलित समाजमें वह राजनैतिक अपराध करनेवाला मनुष्य अपराधीरूपसे गिना जाता था, और महाराज अपनी राजशक्तिसे उस अपराधीको दंड देते थे। परन्तु कोई मनुष्य यदि किसी सामन्तके विरुद्ध अथवा किसी मनुष्यके विरुद्ध उस प्रकारका अपराध करता तो उसको सहसा क्षमा न करते बरन् धीरे धीरे दयाप्रकाश करते थे। अधिक क्या कहैं, यदि कोई मनुष्य किसी मनुष्यको जानसे मारदेता तो उसके बदलेमें शारीरिक दंड दिया जाता, कारागार दंड अथवा उसकी समस्त धनसम्पत्तिको महाराज अपने हस्तगत कर लेते, या उसको देशसे निकाल देते। चोर इत्यादि सामान्य अपराधीको अर्थ दंड और कारागारमें जानेका दंड दिया जाता और उसके भोजन वसनका खर्च उसी चोरकी संपत्तिसे वसूल किया जाता था। यदि चोर उस हानिके पूर्ण करनेमें असमर्थ होता तो उसको शारीरिक दंड दिया जाता, तथा उस समयमें मारवाडके खजानेकी अवस्था यन्त शोचनीय थी और उसी कारणवश ऐसा होता था। राजा विजयसिंहकी मृत्युक पीछे विचारासन शून्य हो गया था; यद्यपि महाराज विजयसिंह अपराधियोंपर विशेष दया करते थे, परन्तु प्रजा उनके सुविचारकी आजतक मुक्तकंठसे प्रशंसा कर रही है। उन्होंने किसी समय भी किसी मनुष्यको प्राणदण्ड देनेकी आज्ञा वा उसमें अपनी संमति नहीं दी। वह कैदियोंके ऊपर इतने दयालु थे कि आजतक यह बात प्रसिद्ध है और बहुतसे मनुष्य कहते हैं कि "हमें घरमें राबडी भी खानेको नहीं मिलती, परन्तु कारागारमें लड्डू खानेको मिलते हैं" जयपुरके समान इस जोधपुरके कारागारवासी अपराधी नगरवासी दानियोंकी सहायतासे पाले जाते थे। यह बात सभीको विदित है, शेषोक्त स्थानमें वणिक् श्रेणी विशेष करके जैनधर्मका अवलम्बन करनेवाले यदि दया करके कैदियोंको भोजन न देते तो वे बंधुए अनाहारसे मर जाँय, धनवान् व्यापारी साधारण कैदियोंको भोजन देते हैं इस कारण स्वयं महाराज उनके भोजनके लिये अपना धन खर्च नहीं करते, यदि दें तो काराध्यक्ष कैदियोंके लिये राजाके यहांसे धन लेकर अपने पास रख लेंगे। एकबार किसीको कारागारमें भेजकर फिर उसकी कोई खबर नहीं लेता। इसी कारण कैदियोंके कष्टकी सीमा नहीं रहती थी। परन्तु इस महाकष्टको पाकर कैदियोंकी मुक्ति-

की दूसरी प्रकारसे आशा है। प्रत्येक सूर्यग्रहण, चंद्रग्रहण, नवीन राजकुमारोंका जन्म और राजाओंके अभिषेकके समयमें चिरप्रचलित रीतिके अनुसार कैदियोंको छोडा जाता है। कैदी लोग इसी आशासे इस शुभ समयके आनेकी बाट देखते रहते हैं"।

माहात्मा टाड साहब इस स्थानपर "सोगन" नामक एक प्रकारकी विचार-रीतिका उल्लेख कर गये हैं, "इस सोगन विचारका यथार्थ अर्थ निरपराधियोंके प्रमाणके लिये परीक्षा देना है। यह रीति राजपूतानेके अन्यान्य राजाओंके समान आजतक मारवाडमें भी प्रचलित है, यद्यपि यह रीति इस समय अधिकतासे अचल हो गई है, परन्तु यहांके निवासियोंका भगवान्के प्रति इस समय भी विश्वास नहीं हो ऐसा नहीं पर समाजकी अवस्था और नगरवासियोंके मनका भाव बदल जानेसे सभी इस भाँति परीक्षा देनेमें अग्रसर नहीं होते। एकमात्र कोटाक जालिमसिंह ही इस समयकी रीतिके अनुसार अपराधिओंकी परीक्षा लेते हैं, परन्तु वह भी हाडोतीकी डायनोंके प्रति इस समय उदासीन हो गये हैं। डायनोंकी परीक्षा केवल जलसे ही ली जाती है। इस प्रकार परीक्षाकी रीति, इस प्रकारसे अपराधियोंके अपराधको निर्णय करनेकी प्रथा चिरकालसे भारतर्षमें प्रचलित थी। रावण सीताजीको हरकर ले गया था, इस कारण महारानी सीताजी अपने सतीत्वकी रक्षा कर सकी है अथवा नहीं इसका निर्णय करनेको भगवान् रामचंद्रजीने उनकी अग्निसे परीक्षा ली थी। जल और अग्निके द्वारा परीक्षाके समान और भी एक प्रकारका उपाय है अर्थात् अपराधी मनुष्यके हाथपर गरम तेल डालकर परीक्षा ली जाती थी परन्तु यहां इस बातका उल्लेख करना सब प्रकारसे कर्त्तव्य है—कि यह नहीं था, किसी भी मुकदमेमें वादी और प्रतिवादी इसी भाँतिकी परीक्षा देनेकी इच्छा प्रगट करते हों बरन् जब पंचायतसे विचार नहीं हो सका तथा अन्य किसी प्रकारसे भी विचार करनेका सुभीता नहीं मिलता तब सबके अंतमें यह उपाय किया जाता था। यदि अपराधीको न्याय विचार न प्राप्त होता अथवा उसे घूंस देकर गुरुदंडसे छुटकारा पानेमें समर्थ न होता तो सबके पीछे इस सोगन परीक्षाके देनेकी इच्छा करता था"।

पंचायतकी रीतिके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "दीवानीके सभी मुकद्दमोंका विचार पंचायतके द्वारा होता है। यदि कोई उस पंचायतके विचारसे संतुष्ट न होकर राजाके समीप फिर उसका विचार होनेकी प्रार्थना कर सकता है, परन्तु इस प्रकारके विचारकी प्रार्थना करनेसे समस्त पंचायतकी सम्मति लेनी होती है और राजाके समीप विचार होनेके पहले उसके निमित्त नियमित रुपया देनेकी व्यस्था है, राज्यमें ऐसे मुकद्दमोंकी संख्या सरलतासे नहीं बढ सकती। इस पंचायतके नियोग-की रीति अत्यन्त सरल है। वादीको सबसे पहले जिलेके हाकिम अर्थात् वह जिस ग्राममें निवास करता है उस ग्रामके पटेलके समीप अभियोग उपस्थित करना होगा। इसके पीछे वादी और प्रतिवादी अपनी अपनी इच्छानुसार एक २ दो२ ग्रामोंका नाम उल्लेख करदें, तब उसी ग्राममें पंचायत की जायगी। जिस ग्रामका उल्लेख किया गया है, उसी ग्रामके पटेलके समीप समाचार भेजा जायगा; पटेल अपने२ पटवारियोंको लेकर अथाई अर्थात् ग्राम विचारागारमें इकट्ठे होते हैं। पीछे साक्षियोंको बुलाकर उनसे शपथ

कराकर साक्षी लेते हैं। साक्षीगण "गादीकी आन" अर्थात् राजाके नामसे शपथ करते हैं। हिरोडाटस इस बातको लिख गया है कि प्राचीन सीदियन भी इसी प्रकारसे शपथ करते थे। परन्तु केवल राजपूत ही राजाका नाम लेकर शपथ करनेके अधिकारी हैं अन्यान्य जातिके पक्षमें अपराधियोंके शपथकी व्यवस्था उनके धर्मानुसार है। विचार कार्य हो जानेके पीछे पंचायतकी राय देनेसे हाकिम उसपर अपनी मुहर लगा देते हैं, और उसी सम्मतिक अनुसार कार्य करते हैं, अथवा वादी या प्रतिवादीके विरुद्धमें राजाके यहां फिर विचार होनेकी प्रार्थना की जाती है तो उसीके योग्य कार्य करते हैं। यह प्रमाणित हो गया है कि राजपूतानेमें प्राचीन सुखशांतिके समयमें प्रत्येक मुकद्मा इसी प्रकारकी सरल रीतिसे निबट जाता था, उसके विरुद्धमें फिर कोई भी कुछ न बोल सकता था।"

राजस्वकी रीतिके सम्बन्धमें साधु टाड साहब वर्णन करते हैं कि "मारवाडमें राजस्व अनेक उपायोंसे संग्रह होता है, उनमेंसे यह चार प्रधान हैं।

१-खालसा वा राजाकी स्वयं अधिकारी भूमिका कर।

२-लवण ह्रद।

३-आमदरफ्ती वाणिज्य शुल्क।

४-हासिल नामक नानाविधिका कर।

यद्यपि अर्द्ध शताब्दीके पहले राजा विजयसिंहके शासन समयमें मारवाडके राजस्वका सोलह लाख रुपया संग्रह होता था और उसका अर्द्धांश एकमात्र लवणह्रदसे प्राप्त हो जाता था, परन्तु वर्तमान समयमें मारवाडपतिका समस्त राजस्व दश लाख रुपयेसे अधिक नहीं है। सामन्तोंके अधिकारी देशोंको मिलाकर वार्षिक राजस्व पचास लाख रुपयेका अनुमान होता है। परन्तु इतना संदेह है कि वर्तमान समयमें उससे आधा रुपया संग्रह होता है या नहीं। सामन्तोंकी जो सेना है उसमें पैदलके अतिरिक्त अश्वारोही सेनाकी संख्या पांच हजार है। जिन सामन्तोंकी जितने रुपयेकी आमदनी है उनमेंसे प्रत्येक वर्षमें हजार रुपयेपर एकजन अश्वारोही और दो पैदलोंकी सेना रखनी पडती है" सामन्त शासनकी रीतिका नियम ही इस प्रकार है, यदि किसी सामन्तकी प्रत्येक वर्षमें दश हजार रुपयेकी आमदनी है तो दश अश्वारोही और बीस पैदलोंकी सेना उस आमदनीसे रख सकता है। युद्धके समयमें वा अन्य किसी समयमें राजाकी आज्ञानुसार उनको उस सेनादलके साथ राजाकी आज्ञा पालन करनी होती है।

"मारवाडपतिकी जो ठीक आमदनी दश लाख रुपया निश्चय हुई है, यह वह है जो खजानेमें रक्खी जाती है। राजदरबारके कर्मचारीगण राजाकी खास भूमिके जिस २ अंशको वृत्तिस्वरूपसे भोग करते हैं, उस भूमिका राजस्व इसके साथ नहीं लिया जा सकता।" वह दश लाख रुपयेमें सम्मिलित नहीं है।

१ मारवाडमें यह दस्तूर है कि जागीरदार लोग एक हजारकी जागीरपर एक घोडा पाँच सौकी जागीरपर एक पैदल और सात सौकी जागीरपर एक ऊंट राजसेवामें देते हैं।

"प्रजाके पाससे भिन्न प्रकारका राजस्व लिया जाता है। सस्यका कर जो भारतवर्षमें चिरकालसे प्रचलित है उसका नाम बटाई अर्थात् विभागकर है। समान अंशका आधा धान्य महाराजको दिया जाता है और शेष आधा भाग किसानोंको मिल जाता है। प्राचीन कालसे राजा चार अंशोंमेंसे एक अंश वा छः अंशोंमेंका एक अंश धान्य लेते थे, इस समय उसके बदलेमें समान अंश ग्रहण किया जाता है। जितना धान्य किसानोंके क्षेत्रमें उत्पन्न होता है इस प्रकारसे उसका अर्द्धांश राजाको बिना दिये राजाकी ओरके सब पहरेवाले उस खेतकी रखवाली करते हैं, और जो धान्यका विभाग करते हैं उनका खर्च भी यही देते हैं। दश मन धान्यपर दो रुपया लिया जाता है। उस रुपयेमें पहरीका वेतन और कोतवारी अर्थात् सस्य विभागकारीका वेतन देकर बाकी जो कुछ बचता है, ग्रामके पटेल और पटवारी उसका भाग कर लेते हैं। महाराजके घोडे और गौ आदि पशुओंके भोजनके निमित्त प्रत्येक किसानसे एक २ गाडी चरी वा ज्वार ग्रहण करते हैं। परन्तु इस समय उसके बदलेमें इस हिसाबसे प्रत्येक किसानसे एक २ रुपया लिया जाता, है। जिस समय काल पडनेकी संभावना होती है, उस समय रुपया नहीं लिया जाता है, करवी (चरी) ली जाती है। पटवारी और पटेल इत्यादिको अन्यान्य कर्मचारियोंके समान व्यय निवाहके लिये किसान और राजा दोनाके अंशोंमेंसे धान्य दिया जाता है। प्रति मनभर धान्यमें-से एक पावसेर अथवा जितना धान्य उत्पन्न हो उसके अस्सी अंशोंमेंका एक अंश मिलता है। पटवारी अथवा सामन्तोंके अधीनके किसान खालसा अर्थात् राजाकी निज अधिकारभुक्त भूमिके किसानोंकी अपेक्षा बहुत सुभीतेसे हैं, कारण कि उनके यहां जितना धान्य उत्पन्न होता है उसके पाँचवें अंशमेंसे केवल दो अंश ग्रहण करते हैं और इसके अतिरिक्त किसान जितनी पृथ्वीमें खेती करते हैं, उसमें प्रति एक सौ बीघा भूमिके ऊपर वह सामन्तगण वार्षिक बारह रुपया करस्वरूपसे ग्रहण करते हैं। किसान लोग बडी सरलतासे इस सामान्य करको आनंदित होकर दे देते हैं।

किसानोंसे जो धान्यका कर लिया जाता है उसके अतिरिक्त मारवाडके प्रचलित अन्यान्य कर आदिके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहब लिखते हैं, "कि सम्पूर्ण मारवाडमें जितनी अवस्थाके स्त्री पुरुष निवास करते हैं उनमेंसे सभीसे एक २ रुपया कर लिया जाता है" यह "अंगकर" नामसे विदित है।

"घासमारी नामक पशुके प्रति भी प्रचलित एक प्रकारका कर है। प्रत्येक बकरी और भैंसके ऊपर -) आना, प्रत्येक भैंसके ऊपर ।।) आना और प्रत्येक ऊंटके ऊपर तीन रुपया कर लिया जाता है।"

"किवाडी नामक कर सबकी अपेक्षा उत्पीडक है। किवाड शब्दका अर्थ द्वार है। महाराज विजयसिंहने सबसे पहले इस करको चलाया था। उनके शासनकी शेष अवस्थामें मारवाडके सभी सामन्त विद्रोही होकर पालीमें इकट्ठे हुए, और उन्होंने महाराजको सिंहासनसे रहित करनेके लिये षडयंत्रका विस्तार किया, इस समय महाराज विजयसिंह उनको धीरज देकर हस्तगत करनेके लिये वहां गये। परन्तु सामन्तों

ने किसी प्रकारसे भी उनकी अनुगत्यता स्वीकार न की। उन्होंने वहांसे लौटकर जोधपुरके नगर द्वारपर आकर देखा कि नगरमें जानेका कोई उपाय नहीं है, भीमसिंहने सिंहासनपर अभिषिक्त होकर नगरका द्वार बंद कर दिया है। तब उन्होंने घोर विपत्तिमें पड़कर सेना संग्रह करनेके निमित्त प्रजासे धनकी सहायता मांगी। प्रजाने प्रत्येक घरसे तीन ३ रुपया देनेका प्रस्ताव किया और शीघ्र ही वह सब रुपया इकट्ठा भी कर दिया। परन्तु जिस प्रजाने भीमसिंहका पक्ष लिया था उसको दंडित करनेके लिये अथवा राजस्वको बढ़ानेकी इच्छासे ऐसा किया हो, महाराजने उस समय एक बार तो इस भाँतिसे सहायता लेकर फिर उसको चिरस्थाई करस्वरूपसे प्रचलित कर दिया। प्रजा उसी दिनसे बराबर कर देती आती थी, परन्तु जिस समय महाराज मानसिंहके विरुद्ध षड्यंत्र फैला और पठानोंने महाराजकी खास भूमिपर अधिकार कर लिया, उस समय महाराज मानसिंहने उस तीन रुपयेके स्थानमें दश रुपया कर नियत कर लिया। परन्तु यह कर समभावसे सबसे नहीं लिया जाता। सबसे पहले प्रत्येक नगर और ग्राममें जितने घर होते हैं, उनकी गिनती की जाती है इसके पीछे घरके अध्यक्षोंकी जिसकी जैसी अवस्था है उसीके अनुसार उससे कर ग्रहण किया जाता है, दरिद्री दो रुपया कर दे तो धनीको बीस रुपये देने होंगे। महाराज कृपा करके मुक्तिदान न करेंगे तो सामन्तोंके अधिकारके भी किसी देशको कर देनेसे छुटकारा नहीं मिलेगा"।

वाणिज्य शुल्कके सम्बन्धमें महात्मा टाड साहब अतीव वर्षोंकी सूचीको उद्धृत करके वर्णन कर गये हैं, "मारवाड़में वाणिज्य करका कितना रुपया दिया जाता है, उसकी अनुमान की हुई सूचीको नीचे लिखते हैं, इससे हमारे पाठक अवश्य ही समझ लेंगे कि इतना धन पूर्वकालमें शुल्कस्वरूपसे संग्रह होता था और इस समय नहीं हो सकता इससे परिणाम निकल सकता है कि, सभी देशोंमें वाणिज्यकी व्यवस्थाके अनुसार यह शुल्क घटता बढ़ता रहता है, परन्तु जिन देशोंमें लूट, अत्याचार, पीड़न, विजातियोंका आक्रमण और दुर्भिक्ष हो उस समयमें उसकी कैसी अवस्था हो सकती है, इसको विचार बड़ी सरलतासे हो सकता है। प्राचीन राजकीय पुस्तकके हिसाबसे यह तालिका उद्धृत की गई है। मारवाड़की उन्नतिकी अवस्थामें इतना वाणिज्य शुल्क संग्रह होता था, इसके सम्बन्धमें सन्देह करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है।

निम्न लिखित स्थानोंसे नीचे लिखा हुआ वाणिज्य शुल्क अदा किया जाता था:—

जोधपुर	७६००० रुपया।
नागौर	७५००० "
डीडवाणा	१०००० "
परवतसर	४४००० "
मेरता	११००० "
कोलिया	५००० "
जालौर	२५००० "

पाली	७५००० रुपया।
जेसोल और बालोतराका मेला	४१००० ”
भीनमाल	२१००० ”
सांचोर	६००० ”
फलोदी	४१००० ”
	जोड—४३०००० रुपया।

ढाणी अथवा जिलाकलेक्टर प्रधान २ नगरोंमें जाकर अपनी नियत की हुई वेतनको पाते हैं। और उनके अधीनके नीची श्रेणीके कर्मचारी जितना महसूल मिलाकर देते हैं उनमेंसे सौ रुपये पर कुछ पाते हैं। यह वाणिज्य महसूल धान्यके ऊपर भी प्रचलित है; परदेशसे जितनी आमदनी होती है उसके ऊपर भी कर है। मारवाडके एक जिलेसे दूसरे जिलेमें जो धान्यकी आमदरफ्त होती है उसके ऊपर भी महसूल लिया जाता है। ”

लवणके करके सम्बन्धमें इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं “ वाणिज्य शुल्क और भूमिका राजस्व जिस प्रकार घट गया है। लवण ह्रदकी आमदनी भी उसी प्रकार पहिलेसे बहुत कम हो गई है तथापि इसकी एक बँधी हुई आमदनी है। इससे पहले कितना धन आता था उसकी सूची नीचे प्रकाश करते हैं:—

पचभद्रा	२००००० रुपया।
फलोदी	१००००० ”
डीडवाणा	११५००० ”
सांभर	२००००० ”
नांवा	१००००० ”
	जोड—७१५००० रुपया।”

“ इस आमदनीके विभागमें आजतक हजारों श्रमजीवी तथा लाखों गौ आदि पशुओंका पालन होता है। वंजारा नामकी एक श्रेणीके ऊपर इस लवणके कार्यका भार सौंपा गया है। इनमेंसे एक २ जनके अधीनमें इस लवणको ले जानेके लिये ४०००० बैल नियुक्त रहते हैं। सिन्धके किनारेसे लगाकर गंगाजीके किनारे तक भारतवर्षके सभी स्थानोंमें यह लवण जाता है और यह सर्वसाधारणमें “सांभर-लवण” नामसे विदित है। यद्यपि भिन्न ह्रदका लवण भिन्न प्रकार है परन्तु लूनी नदीके बाहर देशके पचभद्राका लवण सबसे श्रेष्ठ है, ह्रदके भीतरी भागसे यह लवण स्वभाविक भीतरसे उठता है।

उस भूमिमें क्यारिये बनाते हैं; उसपर नकुलकी घास डाल देते हैं जिसके कारणसे लवण और भी शीघ्रतासे ऊपरको उठता है और फिर इसके द्वारा ह्रदकी स्वाभाविक तरंगमालाके उठनेसे यह घास सरलतासे दूर हो जाती है। ह्रदके बीचसे इस भांति लवणके उठते ही समस्त लवणको तौलकर एक स्थानपर ढेर लगा दिया जाता है। और क्षार विशिष्ट, पत्ते तिनके और सज्जी इत्यादि उसके ऊपर रखकर उसमें

अग्नि लगा दीजाती है। इस प्रकारसे उस खारके तापसे लवण ऐसा जम जाता है कि जल और वायुके द्वारा उसका कोई अनिष्ट नहीं हो सकता"।

इतिहास वेत्ता टाड साहबने इससे पीछे मारवाडके अत्यन्त प्राचीन कालके राजस्वके सम्बन्धमें एक सूचीको उद्धृत करके लिखा है "कि बहुत पुरानी हिसाबकी पुस्तकमें मारवाडकी आमदनीका सब मिलाकर प्रायः तीस लाख रुपयेका उल्लेख पाया जाता है, हम उसके सम्बन्धमें इस स्थानपर फिर व्याख्या करनेकी अभिलाषा करते हैं। किस २ अंशका कितना अतिरिक्त परिमाण धरा गया है इस समय उसका वर्णन करना कुछ सहज बात नहीं है कारण कि उसमें अन्तर आ गया है।

१–खालसा अर्थात् नरपतिके निज अधिकारी १४८४ ग्राम और नगरोंकी आमदनी।	...	१५००००० रुपया।
२–वाणिज्यशुल्क		४३०००० "
३–लवणहद		७१५००० "
४–हासिल अर्थात् अन्यान्य कर जो सब समय ठीक स्थिर नहीं हो सकता.	...	३००००० "
	जोड	२९४५००० रुपया।
सामन्त और मंत्री समाजकी आमदनी	...	५०००००० रुपया।
	कुल जोड	७९४५००० रुपया।

इस प्रकारसे देखा जाता है "कि चिरकालसे मारवाडपतिको निजका तथा अधीनके सामन्तोंका सब मिलाकर राजकीय कर प्रायः अस्सी लाख रुपया है। यद्यपि हमें इस विषयमें सन्देह है कि आजकल इसका अर्द्धांश भी नहीं आता पर इसमें सन्देह नहीं कि मारवाडके प्राचीन मन्त्री वंशोंमें तथा सन्धी परिवारमें बहुतसा धन है, वह लोग अत्यन्त धनवान् गिने जाते हैं, उनका समस्त धन विदेशीय नगरोंसे प्राप्त हुआ है, इस देशके मनुष्य स्वभावसे ही उस समस्त धनको गुप्तभावसे रखते हैं, रुपयेसे लेनदेनका व्यवहार भी नहीं करते; इसी लिये धनकी वृद्धि भी नहीं होती। जिस समय महाराज विजयसिंहने नागौरके कितने ही महलोंको तुडवा दिया था उस समय उनको उनमेंसे बहुत धन मिला था।"

मारवाडके उस समयकी सेना बलके सम्बन्धमें अन्तमें कर्नल टाड साहब लिख गये हैं, "कि इस समय केवल राठौर जातिके युद्धके बलके सम्बन्धमें वर्णन करना शेष रहा है। उनकी आमदनीकी घटती बढतीके साथ ही साथ सेनाकी भी घटती बढती होती रहती है। उपद्रवी सामन्तोंको दमन करनेके लिये मारवाडके महाराजने एक सम्प्रदाय वेतन भोगी सेना रक्खी थी। इस सेनामें प्रायः रुहेले और अफगानी पैदल अधिक थे; वह सभी बन्दूकधारी थे। उनके साथमें तोपें भी थीं, वे युद्ध विद्यामें विशेष पारदर्शी थे। इस समय वे लोग असीम साहसी राठौर अश्वारोहियोंके सम्मुख प्रतिद्वन्द्वी हो गये थे। कई वर्षके बीत जानेपर महाराज मानसिंहने इस प्रकार साढे तीन हजार पैदल पन्द्रहसौ अश्वारोही और २५ तोपें इस सेनामें नियत की थी। पानीपतके

एक निवासी हिन्दालखांको उस सेनाका नायक किया था । विजयसिंहके शासन समयसे वह मनुष्य मारवाड महाराज वंशके साथ मिल गया था, राजाके यहां उसकी बात अधिक चलती थी, उसके साथ राजाकी मित्रता हो गई थी महाराज मानसिंह उसको बडे सम्मानके साथ "काका" कहकर पुकारा करते थे । इस वेतनभोगी सेनाके अतिरिक्त मारवाडमें एक और भी योधाओंका दल था, उसका नाम विष्णुस्वामी था और कायमदास नामके एक मनुष्यको उनके सेनापति पदपर वरण किया था । इस सेनामें सात सौ पैदल थे, तीन सौ अश्वारोही और एक दल धनुर्धारियोंका था । यह धनुर्धारी धनुष बाण लेकर युद्ध किया करते थे । विलायतमें बारूदके निर्माण होनेके आधी शताब्दी पहले भारतवर्षमें इस प्राचीन धनुष बाणका व्यवहार होता था । एक समयमें राजाका एक दल विदेशीय सेनामें नियुक्त था, अथवा वह लोग उनके अधीनमें नियुक्त थे, उनकी संख्या ग्यारह हजार थी । इसमेंसे आधी सेना अर्थात् दो हजार अश्वारोही थी, पचास तोपें और एक दल धनुषधारियोंका था । मासिक वेतनके अतिरिक्त भिन्न २ सेनादलके प्रधान २ नेताओंको भूवृत्ति दी जाती थी,जिस कारणसे मारवाडके सामन्त अत्यन्त उद्धत हो गये थे; और राजाके साथ उनका घोर झगडा हुआ था, इससे पहले उसका वर्णन कर चुके हैं । उन असन्तुष्ट हुए सामन्तोंको दमन करनेके लिये यह अतिरिक्त सेना नियुक्त की थी, इसीसे राज्यका नैतिक बल हानि हो गया था, और देशके विध्वंस होनेकी भी बारी आ गई थी । सामन्तोंके साथ घोर झगडा होनेके कारण इसी अतिरिक्त सेनाका नियोग किया था । इसीसे परस्परका विश्वास नष्ट हो गया ।"

साधु टाड साहबकी इस कथाको हम पूर्ण सत्यरूपसे स्वीकार करते हैं । राजपूत जातिके पतनके समयमें केवल मारवाड ही नहीं बरन् रजवाडेके सभी राजपूत राजाओंके साथ अधीनके सामन्तोंकी विवादकी अग्नि भयंकर रूपसे प्रज्वलित हो गई थी । हम देखते हैं कि राजपूत जातिके पतनके बहुत पहले सभी सामन्त अत्यन्त उद्धत हो राजाके विरुद्धमें अस्त्र धारण करनेमें कुछ भी भयभीत नहीं हुए थे, परन्तु इस प्रकारका झगडा सभी सामन्तोंने नहीं किया था, बरन् उनमेंसे ऐसे भी बहुत थे कि जिन्होंने उन विद्रोही सामन्तोंको दमन करनेके लिये राजाकी सहायता भी की थी । सारांश यह है कि यह सामन्त शासनकी रीति जिस देशमें प्रचलित थी, उस देशके राजा यदि स्वयं बलशाली और नीतिज्ञ होते तो उनके अधीनके सामन्त इस प्रकारसे विद्रोहकी आगको कभी प्रज्वलित न कर सकते । राजाके ही बलहीन होनेसे सामर्थ्यवान् सामन्त सभी देशोंमे सरलतासे अपनी शक्तिको प्रबल करनेके लिये अग्रसर होते हैं । रजवाडेके सामन्तोंने हमारी इस उक्तिको समर्थन किया है । गवर्नमेण्टके शासनमें आजतक एक भी सामन्त राजाके विरुद्ध खडे होनेके लिये समर्थ न हो सका ।

उपसंहारमें साधु टाड साहब उस समयकी सामन्त श्रेणीके सम्बन्धमें लिखते हैं, "मेवाडके सामन्तोंकी संख्या सोलह थी और जयपुरके सामन्तोंकी संख्या बारह थी । मारवाडकी प्रथम श्रेणीकी संख्यामें आठ जने थे । नीचे सूचीमें उनके नाम लिखते हैं ।

उनके नाम, उनकी सम्प्रदायके नाम, निवास स्थानके नाम और उनकी कितनी आमदनी थी उसका वर्णन भी नीचे करते हैं। उन्होंने राजाकी सहायताके लिये कितनी सेना दी थी, उससे वह उनकी आमदनीका निश्चय कर सकते हैं। वह लोग प्रति पाँचसौ रुपयेकी आमदनीपर एक २ अश्वारोही सेनाके देनेमें समर्थ हुए थे।''

प्रथम श्रेणी।

नाम।	सम्प्रदायके नाम।	वासस्थान।	आमदनी।	मन्तव्य।
			रुपया.	
१ केसरीसिंह	चांपावत	अहोवा	१०००००	मारवाडके यही सबमें श्रेष्ठ सामन्त हैं। इनकी आमदनी अर्द्धांश इनके पिताकी पृथ्वीसे संग्रह की जाती है; इन्होंने ही सम्प्रदायके नीची श्रेणीके सरदारोंकी भूवृत्तिको बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर लिया था, इसी कारणसे आधी आमदनी होती है।
२ बख्तावरसिंह	कंपावत	आसोप	५००००	
३ सालिमसिंह	चांपावत	पोकरण	१०००००	पोकरणके सामन्त मारवाडके सभी सामन्तोंमें अधिक सामर्थ्यवाले हैं।
४ सुरतानसिंह	उदावत	नीमाज	५००००	
५ *	मेरतिया	रियां	२५०००	समस्त राठौरजातिमें मेरतिया सबसे अधिक साहसी वीर हैं।
६ अजितसिंह	मेरतिया	घाणेराव	५००००	पहले यह देश मेवाडके सोलह सामन्तोंमेंसे एकके अधिकारमें था; अति बडा नगर भग्न हो गया और कितने ही ग्राम राजपरिवारके अधिकारमें हो गये।
७ *	करमसोत	खीमसर वा किमसर	४००००	यह शहर बहुत बडा था, पर अब वैसा नहीं है।
८ *	भाटी	खेजड़ला	२५०००	मारवाडके प्रथम श्रेणीके सामन्तोंमें यही एक मात्र विदेशी थे।

दूसरी श्रेणी ।

			रुपया.	
१ शिवनाथसिंह	ऊदावत	कुचामन	५००००	यह अत्यन्त सामर्थ्यवान् थे ।
२ सुरतानसिंह	जोधा	खारीकादेव	२५०००	
३ पृथ्वीसिंह	ऊदावत	चंडावल	२५०००	
४ तेजसिंह	ऐ०	खादा	२५०००	
५ ओनाडसिंह	भाटी	आहोर	२१०००	निकाले गये थे ।
६ जीतसिंह	कूंपावत	बगडी	४००००	
७ पदमसिंह	कूंपावत	गजसिंहपुरा	२५०००	
८ *	मेरतिया	मीटरी	४००००	
९ कर्णसिंह	ऊदावत	मारोत	१५०००	
१० जालिमसिंह	चांपावत	मारोट	१५०००	
११ सवाईसिंह	जोधा	चापुर	१५०००	
१२ *	......	बूडसू	२००००	
१३ शिवदानसिंह	चांपावत	कावटा (बडा)	४००००	
१४ जालिमसिंह	ऐ०	हरसोलाव	१००००	
१५ सांवलसिंह	ऐ०	दीगोद	१००००	
१६ हुकमसिंह	ऐ०	कावटा (छोटा)	१२०००	

महात्मा टाड साहब सबसे पीछे लिखते हैं, "यही मारवाडके प्रधान सामन्त हैं तथा राजाकी अनुगतयता स्वीकार कर राजकार्यमें नियुक्त होकर भूवृत्तिको भोग करते हैं । मारवाडके अधीनके सरदारोंकी श्रेणी इनमें नहीं है । विशेष २ घटनाओंके उपलक्षमें यह राजाकी आज्ञा पालन करते हैं उन अनधीन सामन्तोंकी श्रेणीमें

(१) मेडतिया । (२) चम्पावत । (३) जेतावत "सही हैं" ।

बाढमेर, कोटडा, जसोल, फलसूंद, बडगांव, वांकडा, कालिन्द्री और बारूंदाके सामन्त प्रधान हैं। यदि राजा उनको संतुष्ट करके अपनी आज्ञा पालन करा सकते तो वे अपनी प्रबल सेनाके साथ राज्यकी सहायता करनेके लिये इकट्ठे होकर आते। सामन्तोंके अधिकृत जिन देशोंकी सूची लिखी गई है वह ठीक सत्य नहीं हो सकती। उपरोक्त सूची एक अत्यन्त प्राचीन पुस्तकसे संग्रह की गई है। इसका विश्वास करना सर्वथा संभव है। अराजकता विद्रोहिता इत्यादि, हम जिन शोचनीय घटनाओंका वर्णन करते आये हैं उन घटनाओंमेंसे इस राज्यका प्रत्येक विषय जिस प्रकारकी शीघ्रतासे बदल गया है, राजस्व विभागके कर्मचारियोंने सरलतासे इस सूचीको त्यागकर नवीन सूची बनानेकी आवश्यकता स्वीकार की है। पहले यह नियम प्रचलित था कि जिन २ सामन्तोंकी जितनी २ आमदनी थी उसमेंसे प्रति पाँचसौ रुपयेकी आमदनीपर जो राजाकी सहायताके लिये देते थे उस धनसे एक अश्वारोही और दो पैदल सेना रक्खी जाती थी, परन्तु इस समय उनकी भूवृत्तिकी सीमा घटा दी गई है और उनके समस्त देशोंका मूल्य भी घट गया है, इस समय उन पाँचसौ रुपयेके स्थानमें एक हजार रुपया नियत किया गया है। अर्थात् हजार रुपयेकी आमदनीपर एक अश्वारोही और दो पैदल सेना सामन्त रखते हैं। "

१८८६ इसवीमें आचिसन साहबने अपनी पुस्तकमें लिखा है;—" जोधपुर राज्यकी भूमिका परिमाण ३५६७२ वर्गमील है और प्रजाकी संख्या १७५३६०० है। राज्यकी आमदनी साढे सत्रह लाख रुपयेकी है। उसमें लवण ह्रदसे प्रायः पाँच लाख रुपया राजस्वका आता है। महाराजने जो सेना रक्खी है उस सेनाकी संख्या ६००० से अधिक नहीं है। स्थानीय पोलिटिकेल एजेण्ट मारवाडके वकील समितिमें सभापतिका कार्य करते हैं। मारवाडके साथ बीकानेर, जैसलमेर, कृष्णगढ, सिरोही और पालनपुरकी सीमासे लगाकर यदि कोई विवाद अथवा किसी प्रकारका उपद्रव उपस्थित हो तो इस वकील समितिसे ही उसका विचार होता है, उस समितिमें उक्त राज्य, उदयपुर, जयपुर और सीकरके वकील इकट्ठे होते हैं। प्रतिवर्षमें एक एक बार अजमेर, नागौर और आबू शिखरमें इस समितिका अधिवेशन हुआ करता है।

मिस्टर. जे. थैम्सह्वीलर[2] अपनी पुस्तकमें[3] १८१८ ईसवीमें लिखा है कि मारवाडकी भूमिका परिमाण ३६६७० वर्गमील था, प्रजाकी संख्या प्रायः २०००००० जन थी और वार्षिक आमदनी २५००००० रुपया थी "।

---

(1) Adchison's Treaties.
(2) Wheeler's Histery of the Imperial Assemblage.
(3) At Delhi

वीसवाँ अध्याय २०.

आधुनिक विवरण, जोधपुरमें अंग्रेज रेसिडेन्सी स्थापन; ऋतुफल; सस्य; स्वास्थ्य; शासन विभाग; फौजदारी विचारालय; जागीरदार विचारालय; अपील विचारालय, वकील विचारालय; वाणिज्य शुल्क; अफीमके वाणिज्यकी आय व्यय; ऋण सीमाका निश्चय; पूर्त्तकार्य; रेलव डकैतोंका दमन; मारवाडकी वर्तमान सेनाकी संख्या; उपसंहार।

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड साहब मारवाडकी जनसंख्या; आमदनी, राजस्व, कृषि और विचार--विभाग इत्यादिक सम्बन्धमें अपने ग्रंथमें जो कुछ भी वर्णन कर गये हैं पहिले अध्यायमें हमने उसे अविकल प्रकाशित किया है। यह हम पहले ही कह आये हैं कि,समयकी विपरीततासे उनके सम्बन्धमें इस समय बहुत कुछ अदल बदल हो गया है। हम इस विस्तारित इतिहासको समाप्त करनेकी इच्छासे उस परिवर्तन विवरणको प्रकाश करनेकी अभिलाषा करते हैं। सन् १८२४ ईसवीसे गतवर्षतकके प्रत्येक वर्षका परिवर्तन प्रकाश किया गया है; ग्रंथके अधिक बढजानेकी संभावना जानकर हम उसके बदलेमें केवल गतवर्षके प्रयोजनीय समस्त विवरणको लिपिबद्ध करनेके लिये आगे बढे हैं। पाठकगण इस विवरणके साथ कर्नल टाड साहबके वर्णित विवरणकी तुलना करके सरलतासे जान जायँगे कि किस २ विषयमें किस २ प्रकारका परिवर्तन हुआ है; और कान२से विषयोंमें मारवाडकी उन्नति हुई है। पश्चिम राजपूतानेके अंग्रेज रेसिडेण्ट लेफ्टिनेण्ट कर्नल पी. डबल्यू. पावलेटने सन् १८८३ ईसवीकी १७ वीं अप्रैलको भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके पास मारवाडके शासनसंबन्धमें जो विस्तारित विज्ञापन भेजा था हम उसीके ऊपर विश्वास करके आगे बढे हैं, इस कारण यह जैसी विश्वासतासे संग्रह हुआ वैसे ही इसकी सभी कथा सत्यतासे पूर्ण है इसमें कुछ सन्देह करनेकी आवश्यकता नहीं है।

अंग्रेज रेसिडेण्ट।

समालोच्य वर्षमें अर्थात्--सन् १८८२-८३ ईसवीमें लेफ्टिनेण्ट कर्नल पी.डबल्यू. पावलेट, मारवाडके अंग्रेज गवर्नमेंटके प्रतिनिधि अर्थात् रेसिडेण्ट पदपर नियुक्त थे। अंग्रेज रेसिडेण्ट इतने दिनोंतक एरिनपुरा नामक स्थानमें अपना प्रधान कार्यालय स्थापन कर वहां रहे; परन्तु भारतवर्षकी गवर्नमेंटने राजनैतिक उद्देश्यको भलीभाँतिसे साधन करनेके लिये उस कार्यालयको १८८२ ईसवीके जौलाई मासमें एरिनपुरासे जोधपुरमें स्थापित किया था।

ऋतुफल।

इस वर्षमें जोधपुरमें कुल सब मिलाकर १२ इञ्च वृष्टि हुई थी; इस कारण वृष्टिके अभावसे राजधानीकी सभी प्रधान २ नदियां जनवरीके महीनेमें ही सूख गईं; राज्यके अनान्य स्थानोंमें उचित वृष्टि न होनेसे जलका कष्ट हुआ था।

सस्य ।

जलके अभावके कारण राज्यमें जितना धान्य उत्पन्न होता था इस वर्षमें उसकी अपेक्षा कम धान्य उत्पन्न हुआ ।

स्वास्थ्य ।

इस वर्षमें किसी प्रकारकी भयानक महामारी नहीं हुई । राज्यमें देशीय प्रणालीके मतसे चिकित्साके अतिरिक्त अंग्रेजी रीतिके मतसे चिकित्सालय और चिकित्सक नियुक्त हुए । मारवाडके महाराज राजभण्डारसे चिकित्सा विभागकी सब प्रकारसे सहायता करते हैं ।

बृटिश रेसिडेण्ट लेफ्टिनेण्ट कर्नल पावलेट गत वर्षके स्वास्थ्य सम्बन्धी विवरणमें उल्लेख कर गये हैं कि गत वर्षमें जोधपुर नगरमें कई एक पागल कुत्तोंने विशेष उपद्रव आरम्भ किये थे । उन पागल कुत्तोंके काटनेसे चौवालीस मनुष्योंसे भी अधिक मनुष्योंकी मृत्यु हुई । महाराजने यह समाचार पाते ही कुत्तोंको पकडकर एक स्थानमें बाँध रखनेकी आज्ञा दी । परन्तु इस समाचारको पाते ही राजधानीके समस्त वणिक् और दूकानदार महा अप्रसन्न हुए और सभीने दूकाने बन्द कर दीं, और दलके दल बाँधकर नगरके प्रधान २ स्थानोंमें जाकर राजकर्मचारियोंको भय दिखाने लगे । पशु पक्षियोंके ऊपर मारवाडके निवासी चिरकालसे दया प्रकाश करते आये हैं; अधिक क्या कहूँ कालके पडनेपर भी स्त्री पुरुष सभी पहिले पशु पक्षियोंको भोजन कराकर पीछे आप भोजन करते हैं, इस कारण पाठक सरलतासे अनुमान कर सकते हैं कि यह वणिक लोग राजाकी आज्ञासे क्यों इतने रुष्ट हुए थे । रेसिडेंट लिख गये हैं, कि तीन दिनके पीछे जिन बनियोंने नेता स्वरूपसे विद्रोह भाव प्रकाशित किया था राजकर्मचारी उनको पकडकर राजाके सम्मुख ले गये; वहां जाते ही राजाके दंडके भयसे अन्तमें सब बनियोंने राजाकी आज्ञा माननी स्वीकार की ।

शासनविभाग ।

विगत अक्टूबरके महीनेमें महाराज प्रतापसिंह सी. एस. आई "मुसाहिबआला" की उपाधि पाकर राज्यके प्रधान मन्त्रीपदपर नियुक्त हुए । महाराजने इस पदपर नियुक्त होनेके पहले कई महीनेतक विशेष परिश्रम करके राज्यमें डकैतीको रोककर बहुतसे अत्याचारियोंको बन्दी करके शांति स्थापन की । इसी कारण इनके द्वारा राज्यके अन्याय, अपव्यय सरलतासे दूर हो जाँयगे यह विचार कर मारवाडके महाराजने इनको प्रधान मन्त्रीपदपर वरण किया । महाराज प्रतापसिंह एक प्रचीन कालके राठौरोंके समान असीम साहसी महावीर और नीतिविशारद हैं । इनके शासनके समयमें मारवाडमें सुखशांतिकी विशेष आशा है ।

मेहता विजयसिंह और पंडित शिवनारायण पूर्वपदपर स्थित होकर बडी प्रशंसाके साथ कार्य करते हैं । मारवाडके दूसरे मन्त्री खाँबहादुर फैजउल्लाखाँ इस समय राज्यके पुलिस विभागमें हैं । पुरातत्वकी खोज करनेका भार भी उन्हींके ऊपर है ।

विचारविभाग ।

मारवाडके महाराज यशवन्तसिंह बहादुरने राज्यमें सुविचार प्रचलित करनेके लिये विचारविभागकी ओर अधिक ध्यान दिया था । गतवर्षमें विचार विभागमें बहुत कुछ अदल बदल हुई । बडे आनन्दका विषय है कि बृटिश रेसिडेण्टने इस विचार-विभागका संस्कार करनेसे विशेष सन्तोष प्रकाश किया ।

फौजदारी विचारालय ।

अलवरके मुन्शी मखदूमबख्श जोधपुरके फौजदार अर्थात् मजिस्ट्रेट हैं । रेसिडेण्ट साहब लिखते हैं, " मैं विचार करता हूं कि इनके द्वारा यथार्थरूपसे सफलता प्राप्त होगी " । मुन्शी मखदूँमबख्शने कार्यभारको ग्रहण करके देखा कि ३७४६ फौजदारीके मुकद्दमोंका विचार करना बाकी है । गत वर्षमें उन्होंने उन सब मुकद्दमोंका विचार किया, उनमेंसे केवल ७२ बाकी रहे थे, और इसके अतिरिक्त ८५० नवीन फौजदारीके मुकद्दमोंका विचार किया था।देशीय राजा जिस प्रकारकी रीतिसे शीघ्रतासे विचारकार्य करते हैं, रेसिडेण्ट साहब लिखते हैं कि मुन्शी मखदूँमबख्शने उस प्रकारकी शीघ्रतासे विचारकार्य नहीं किया; वह सभी विषयोंको सुनकर न्यायपूर्वक विचार करते हैं ।

दीवानी विचारालय ।

मेहता अमृतलालको दीवानीके विचारालयका भार प्राप्त हुआ है। पहले वर्षमें विचारके मुकद्दमे ५३४० थे और गत वर्षके सब मिलाकर ११४२ मुकद्दमे उपस्थित हुए । इनमेंसे गतवर्षके ४१०० मुकद्दमोंका विचार हो गया ।

जागीरदार विचारालय ।

मारवाडके जागीरदारोंके मुकद्दमोंका विचार करनेके लिये गत वर्षमें "जागीरदार-विचारालय" नामका एक नवीन विचारालय स्थापित हुआ । जोधपुरके जो सामन्त कार्योंके लिये आते हैं उनमेंसे उच्च सामन्तोंको लेकर राजदरबारके एक कुटुम्बी मनुष्यने इस विचारालयके विचारकार्यको किया था। रेसिडेण्ट साहब लिखते हैं कि इस विचारालयका फल इस समय तक भी प्रीतिदायक नहीं हुआ । बृटिश शासित भारतवर्षसे एक विद्वान् विचारपतिको इस विचारालयके प्रधान विचारपति पदपर नियत करनेका विचार हुआ है । इस कार्यके पूर्ण होनेसे सफलताप्राप्तिकी सम्भावना है ।

अपील विचारालय ।

पहले भी राजदरबारके द्वारा अपीलोंका विचार होता था, परन्तु दरबारके अनेक कार्योंमें लगे रहनेके कारण अपीलका विचार बडी कठिनतासे होता था। इसी कारण गत वर्षसे एक स्वतन्त्र अपीलका विचारालय स्थापित हुआ है। कविराज मुरारिदान इस अपीलके विचारपदपर नियत हुए हैं । रेसिडेण्ट साहब लिखते हैं कि विचारकार्य स्पष्टतासे किया जाता है । कविराज मुरारिदानने पद ग्रहण करते ही

देखा कि १३८ मुकद्दमोंके अपीलका विचार करना बाकी है; फिर तिसपर गत मार्च महीनेके शेषतकके १६१ नये मुकद्दमे उपस्थित हैं; इनमेंसे विचारपतिने २७३ अपीलके मुकद्दमोंका विचार किया। मारवाडके नाबालिग सामन्तोंकी भूसम्पत्तिकी रक्षाका भार भी उन्हीं विचारपति कविराजके ऊपर था।

वकील विचारालय।

मारवाडमें जो वकील विचारालय है उसको हमारे पाठक पहले अध्यायमें पढ चुके हैं। पश्चिम राजपूतानेके वकील अर्थात् राजाकी ओरके प्रतिनिधि एकसाथ मिलकर सीमाके सम्बन्धके उपद्रवोंका तथा और भी अनेक प्रकारके उपद्रवोंका विचार करते थे। १८८२ ईसवीकी पहिली अप्रैलसे १८८३ ईसवीकी ३१ मार्चतक इस विचारालयमें कुल सब १२८ मुकद्दमे विचार करनेके लिये उपस्थित हुए थे, इनमें ९२ मुकदमोंका विचार हो गया है और सब ७५५८ रुपया, दश आना, ८ पाई डिग्री हुई है। इसमें २३ मुकदमोंकी अपील हुई उनमेंसे ८ मुकदमोंकी राय बहाल रही और एक खारिज किया गया। विचार करनेके लिये ४ मुकद्मे बाकी हैं।

उपरोक्त विचारालयंके उक्त ९२ मुकदमोंमें निम्नलिखित अपराधोंके मुकदमोंका विचार हो गया है:—डकैती १५ आघातके २, डकैती एवं हत्या ५, राजमार्गमें चोरीके १०; राजमार्गमें तस्कर एवं आघात २, राजमार्गमें दस्यु एवं हत्या ३, चोरी १९, चोरी और हत्या १, हत्याके ३, बलपूर्वक धन लेनेके २, चराईके पशु ग्रहण ६, सेंता चोरी २, अनेक भाँतिके अपराध १५, क्षतिसाधन १, एवं पशुचोरी ६, कुल ९२।

वाणिज्य शुल्क।

विचार एवं शांति रक्षा विभागके समान वाणिज्य शुल्कके विभागका भी गत वर्षमें मारवाडपतिने सम्पूर्ण रूपसे संस्कार किया। मारवाडसे भिन्न देशको रवानगी, आमदनी तथा देशमें एक देशसे अन्य देशकी रवानगी शुल्कके सिवाय और भी बारह प्रकारका वाणिज्य शुल्क मारवाडमें प्रचालित था। परन्तु वह बारह प्रकारका शुल्क सर्वत्र समभावसे ग्रहण नहीं किया जाता था। अफीमका महसूल भिन्न स्थानोंमें लिया जाता था दौलतपुरामें अफीमका महसूल २।।) रुपयेके हिसाबसे लेते थे। और नागौरमें उतनी ही अफीमके ऊपर १७ रुपया महसूलका लिया जाता था। कोई २ वणिक् सम्प्रदाय महसूल देती थी और किसी किसीने एक बार ही छुटकारा पाया था। धान्यके ऊपर भी महसूल लिया जाता था, यदि नगरमें कोई काष्ठका बोझा लाता, अथवा बगीचेके मालीकी स्त्री एक टोकरी फल लाती तो नगरके द्वारपर ही उसको महसूल देना पडता था, परन्तु इस समय गवर्नमेण्टके प्रस्तावके मतसे मारवाडराजने आमदनी, रवानगी तथा एक देशकी वस्तुको दूसरे देशमें भेजनेके अतिरिक्त और सभी वस्तुओंसे महसूल लेनेकी रीतिको एक वार ही रहित कर दिया है। धान्यके ऊपर जो महसूल दिया जाता था वह भी रहित कर दिया गया, तथा जागीरदारोंके जो देश अधिकारमें थे उन देशोंपर जो "मापा" नामका शुल्क प्रचलित था इस समय वह

भी छोड दिया गया। यद्यपि इससे जागीरदारोंको हानि हुई परन्तु उस हानिके पूर्ण करनेकी भी व्यवस्था हुई है शुल्कके लेनेमें जो समस्त कर्मचारी नियुक्त थे, उनको तत्वाविधान कार्यमें नियुक्त किया गया। अफीमके ऊपर अधिक महसूलको बढाकर नित्यके प्रयोजनीय द्रव्योंके ऊपरका महसूल घटा दिया गया। गत २० वीं सितम्बरसे यह नवीन रीति प्रचलित हुई। बृटिश रेसिडेण्टने अपने विज्ञापनमें लिखा कि कई वर्ष व्यतीत हो गये, कर्नल वेलडरने इस प्रकारके संस्कारका प्रस्ताव किया था परन्तु वह राजदरबारकी आमदनी और रफ्तनोंके ऊपर महसूल बढाकर और सभी वस्तुओंके ऊपरके महसूलको एक बार ही छोड देनेको कहते थे सो ऐसा नहीं किया गया। इस समय गवर्नर जनरल एसिस्टेण्ट एजेण्ट मि. हिडसनने इस वाणिज्य शुल्कके संस्कार-पर नियुक्त होकर इस अभिलषित फलके संग्रहका प्रारंभ किया। पहले वाणिज्य शुल्कसे मारवाडपतिको समस्त खर्चा बाद देकर ५ लाख रुपयेकी आमदनी होती थी। इसके पीछे सात लाख रुपये की आय होती थी। किन्तु इस समय जिस प्रकारका संस्कार होकर नवीन व्यवस्था हुई है, इससे मारवाडके महाराजको पचास हजार रुपयेकी हानि हुई है। वर्तमान वर्षमें वाणिज्य शुल्क द्वारा ९१४००० की आमदनीका अनुमान किया गया है। रेसिडेण्ट साहब कहते हैं कि इन रुपयोंमेंसे महसूलके संग्रह भागका सभी रुपया खर्च हो गया है, राजभंडारमें साढेछः लाख रुपया दिया जायगा। जागीरदारोंकी हानि पूर्ण की जायगी और वर्तमान समयमें जो कितने ही प्रयोजनीय द्रव्योंके ऊपर अधिकतासे महसूल लिया जाता है वह कम किया जायगा यह अनुमान सत्य और अवश्य ही प्रीतिदायक होगा। यद्यपि इससे महाराजको आधे लाख रुपयेकी हानि हुई है, परन्तु इस समय महसूलके घट जानेसे वाणिज्यके बढनेके साथ ही अधिक आमदनीके बढ जानेकी भी संभावना है। महाराजने इस वाणिज्य शुल्कके संग्रह विभागमें मि० हिडसनके द्वारा विशेष उपकार पाकर उनको इस विभागमें कुछ समयतक और रखनेके लिये गवर्नमेण्टसे प्रार्थना की थी।

अफीमका वाणिज्य।

महात्मा टाडसाहब बारम्बार लिख गये हैं कि राजपूतोंके श्रेष्ठ गुणोंके नाश करनेका कारण एक मात्र अफीम ही थी। महाबली दृढप्रतिज्ञ राजपूत अधिकतासे अफीमका सेवन कर एक बार ही कर्महीन हो गये थे। इसी कारणसे उनकी जातीय शक्ति भी धीरे २ घटती जारही थी, राजपूत लोग जिससे अफीमका खाना छोड दें इसके लिये साधु टाड साहबने विशेष चेष्टा की थी दुर्भाग्यके वशसे उनकी वह अभिलाषा सफल न हुई, कारण कि वह इसके पहले ही राजस्थानको छोडकर अपने देशको चले गये। राजपूत बांधव टाड साहब रजवाडोंसे अफीमके लोप हो जानेकी अभिलाषा करते थे, उन्हीं रजवाडोंमें इस समय अफीमका प्रचार प्रत्येक वर्षमें अधिकतासे बढता जाता है। राजपूतानेके सभी राजपूत राज्यमें पहले जितनी अफीमका सेवन होता था इस समय उसकी अपेक्षा बहुतगुणा बढ गया है। राजपूतानेमें जाकर गवर्नर जनरलके एजेण्ट

लेफ्टिनेंट कर्नल ई. आर. सी. ब्राडफोर्ड. सी. एस. आई. ने विगत १८८३ ईसवीकी २७ वीं अगस्तको राजपूतानेका शासनवृत्तान्त भारतवर्षकी गवर्नमेंटके पास भेजा था, उन्होंने उसमें लिखा था कि " राजपूतानेके प्रधान २ धनी महाजन हुंडीके व्यापारको छोडकर अधिक धनप्राप्तिकी आशासे अफीमके वाणिज्यकी ओर झुके हैं। बडे २ प्रधान महाजनोंने ग्रामके महाजनोंको अग्रिम रुपया दे दिया है । वह ग्रामके महाजन उस रुपयेको लेकर किसानोंको ऋणस्वरूपसे देते हैं । किसान लोग उस रुपयेके बदलेमें अफीम तैयार करके ग्रामके महाजनोंको देते हैं और ग्राम्य महाजन उस अफीमको लेकर नगरके प्रधान २ महाजनोंको बांट देते हैं। " धीरे २ रजवाडेमें अफीमकी विक्री किस प्रकारसे बढ गई है, उसके संबन्धमें वह लिखते हैं कि " अफीमके वाणिज्यके साथ समाजका न्यूनाधिक घनिष्ठ संबन्ध उपस्थित है । वर्तमान समयमें अफीमकी विक्री बडी शीघ्रतासे बढ गई है, खाल एवं कुएँके खोदनेकी वृद्धिके साथ ही साथ पोस्तकी डंडीकी विक्री भी अफीमके बराबर ही बढ गई है। जो पृथ्वी पोस्तकी डंडोके खेतीके लिये ठीक मानी गई है, तथा बम्बईके जानेके मार्गसे बहुत दूर है, इतने दिनोंतक उसमें और वस्तुओंकी खेती होती थी. राजपूताना मालवा रेलवेकी प्रतिष्ठासे उस समस्त भूमिमें इस समय अफीमकी खेती आरंभ हुई है ! " लेफ्टिनेंट कर्नल ब्राडफोर्डने समस्त राजपूतानेके संबन्धमें इस प्रकारका मन्तव्य प्रकाश किया है। मारवाडमें अफीमकी खेती और इसका वाणिज्य जो अन्यान्य रजवाडोंके अन्य राज्योंके समान क्रमशः बढ गया है इसका अनुमान बडी सरलतासे हो सकता है । इस अफीमके वाणिज्यकी वृद्धिका केवल शुभ फल यही प्रत्यक्ष हुआ है कि इसकी खेतीके लिये सर्वत्र कुएँ खुदा दिये गये हैं । समयपर कुएँ और तालाबोंसे ईख आदिकी खेतीको बडा सुभीता होगा। लेफ्टिनेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डकी यह आशा थी, परन्तु हम कह सकते हैं कि इस अफीमकी खेती और वाणिज्य वृद्धिसे किसान और महाजनोंको धन प्राप्त होता है तथा राजाको भी राजस्वकी वृद्धि होती है।यह ठीक है परन्तु इसके साथ राजपूत जातिमें अफीमके सेवनका प्रचार प्रबलतासे होता जाता है और इसका परिणाम बुरा है। बहुत थोडे मूल्यकी सुराको पाकर जिस भाँतिसे मदिरा पीनेवालोंकी संख्या अधिक बढ जाती है, इसका अनुमान पाठक सरलतासे कर सकते हैं । उसी भाँतिसे राजपूत भी प्रत्येक ग्राममें अल्प मूल्यमें अफीमको पाकर अधिक अफीमसेवी हो गये । चीन इत्यादि देशोंमें रफ्तनीके लिये जो श्रेष्ठ श्रेणीकी अफीम तैयार होती थी, राजपूत गण उस अफीमका सेवन नहीं करते थे। यहां बट्टी नामकी एक प्रकारकी अफीम तैयार होती थी उसका मूल्य पहली अफीमकी अपेक्षा प्रति मनपर ४० वा ५० रुपये कम हो गया था। राजपूत जाति इस कम मूल्यवाली अफीमका ही सेवन करती थी। कर्नल टाड १८२३ ईसवीमें जो ईस्ट इण्डिया कम्पनीकी अफीम और लवणके वाणिज्यका एक चेटियाके कारण दृढ प्रतिवाद कर गये हैं,इस समय अंग्रेज गवर्नमेंटने उन दोनों वाणिज्योंका उसी प्रकारसे एक चेटिया रक्खा है, इस कारण पहलेके समान देशीय राजाओंको लवण और अफीमके वाणिज्यमें विशेष लाभकी संभावना नहीं रही।

आय व्यय ।

महात्मा टाड साहबने मारवाडकी आमदनी और खर्चकी जो सूची प्रकाश की है उसको हमने यथास्थानमें वर्णन किया है। वर्तमान अंग्रेज रोसिडेंट लेफ्टिनट कर्नल पावलेट लिखते हैं * कि १८८२ ईसवीकी १ ली जौलाईको जो वर्ष समाप्त होता है उस वर्षमें मारवाडके महाराजको निम्नलिखित आमदनी हुई थी ।

राजस्व	...	...	...	३२५३२३९ रुपया ।
व्यय	...	...	...	३०५५७४६ ”

जोधपुरशाखा रेलवेके निमित्त जो ४५४७७८ रुपया कर्जमें लिया था, वह खर्चकी सूचीमें नहीं लिखा है, ऐसा विदित होता है कि उस ऋणके रुपयेको छोडकर शेष दो लाख रुपया उद्धृत हुआ है । कर्नल टाड साहबने मारवाडकी जो अवस्था देखी थी इस समय उसकी अपेक्षा राजस्वकी अवस्थाने कैसी उत्कर्षता पाई है, इसको अवश्य मानना होगा । परन्तु ऐसे दीर्घ सुशासनमें राजस्वकी जैसी प्रीतिदायक अवस्था होनी चाहिये सो नहीं हुई । पहिलेकी अपेक्षा शासन--विभागमें जो अधिक खर्चा हो गया था इसका अनुमान हो सकता है, इसी कारणसे समस्त खर्चेको छोडकर उद्धृत परिमाणसे विशेष वृद्धि नहीं जानी जाती ।

ऋण ।

मारवाडके महाराजपर आजतक कुछ रुपया कर्ज है। अंग्रेज रेसिडेण्टने लिखा है “कि, यह तो निश्चय नहीं जाना जाता कि राज्यके ऋणका कितना रुपया है, परन्तु गत सन् १८८२ ईसवीकी १ ली जौलाई तक १३७८००० रुपया कर्जका था, इसको मैं जानता हूं । वर्तमान वर्षकी समाप्तिमें यह ऋण कमती था अर्थात् १२ लाख रुपया था ।” गत वर्षमें मारवाडके महाराजकी भगिनीके साथ बून्दीके एक राजकुमारका विवाह हुआ था उसमें जो तीन लाख रुपया खर्च हुआ है, वह इसी ऋणके अन्तर्गत है। रेसिडेण्टने आशा की थी कि वर्तमान समयके प्रधान मंत्री महाराज प्रतापसिंहके द्वारा सरलतासे यह ऋण चुक जायगा ।

सीमान्त निर्धारण ।

मारवाडके आभ्यन्तरिक शासनके अन्यान्य अनुष्ठानोंके समान सामन्तोंके साथ महाराजका जो सीमापर झगडा चलता था; उसके संबन्धकी मीमांसा करनेकी सुव्यवस्था की गई है । सीमाका निश्चय करनेके लिये सन् १८८२ ईसवीके जनवरी मासमें कप्तान लेक नियुक्त हुए थे । गत वर्षमें उन्होंने १३ परगनोंकी सीमाका निश्चय कर दिया था, कृष्णगढकी सीमासे मारवाडकी शेष दक्षिण सीमातक अर्वली पर्वतोंके शिखरके पाददेशसे बीकानेर राज्यकी सीमातक सब ढाईसौ मील स्थानकी सीमाका निश्चय

---

* Report of the political Administration of the Rajpootana States for 1882-1885. P. 115.

किया गया है। इस प्रकार उनके द्वारा १३५ सीमाका निश्चय हुआ है। इसमें जो ३०००० रुपया खर्च हुआ है, रेसिडेण्ट साहब लिखते हैं कि उसके बहुतसे हिस्सेकी अभियुक्तोंके पाससे संग्रह होनेकी संभावना है। जिन सीमाके अन्तमें विवाद लेकर शोचनीय कांड उपस्थित होनेकी संभावना थी, कप्तान लेकने पहिले उन्हींका विचार किया है, सन्तोषका विषय है कि पंचायतियोंके मध्यमें होनेसे उनकी मीमांसा सरलतासे हो गई है। रासके सामन्तोंकी सीमामें जो महाकांड उपस्थित करनेके पूर्ण लक्षण दिखाई दिये थे कप्तान लेकने सबसे पहिले उन्हींपर हाथ डालकर प्रीतिदायक विचार कर दिया है।

पूर्त्तकार्य।

राज्यकी श्रीवृद्धि और सर्वसाधारण प्रजाका कल्याण साधन तथा अन्यान्य विषयोंमें राजाके यहांसे अधिक धन खर्च होता था। कृषिकार्यकी सुविधाके लिये गत वर्षमें महाराजने अनेक स्थानोंपर बांध—बन्धनकार्यमें बहुत धन खर्च किया। रेसिडेण्टने इस बातको मान लिया है कि इससे विशेष उपकार हो सकते हैं; क्योंकि राजधानी जोधपुरमें अधिकतासे जलके संग्रह करनेके लिये सुव्यवस्था होनेकी आवश्यकता है।

रेलवे।

बृटिशशासनका स्मरणीय प्रधान अनुष्ठान लौहवर्त्म है। सात समुद्रके पारवर्ती श्वेतद्वीपवासी अंग्रेजोंने भारतके वक्षस्थलपर रेलरूप लोहेका हार अर्पण किया है। इस रेलवेके विस्तारसे जैसे एक ओर वाणिज्य व्यवसायका विशेष सुभीता हुआ है, प्रजाके एक देशसे भिन्न देशमें अत्यन्त अल्पव्ययसे बहुत थोडे समयमें आनेजानेका यथेष्ट सुभीता हो गया है, जिस प्रकार भारतके इस प्रान्तके निवासियोंके साथ अन्य प्रान्तके साथ आलाप, परिचय तथा घनिष्ठ सम्बन्धमें विशेष सुभीता हो गया है, उसी प्रकारसे दूसरी ओर बृटिशशासनशक्तिको दृढ करनेके लिये भी यह यथेष्ट सहायकारी है। पचीस करोड प्रजापूर्ण भारतवर्षमें सत्रह हजार अंग्रेज और अंग्रेजोंके अधीनमें एक लाख पचीस हजार देशीय सेना बृटिश शासनशक्तिकी सहायता करती है। भारतके एक प्रान्तमें युद्धविग्रह अथवा विद्रोह उपस्थित होते ही गवर्नमेण्ट बडी सरलतासे एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तको रेलमें बैठालकर सेनाको भेज विशेष उपकार कर सकती है। जैसे १८५७ ईसवीमें सिपाही विद्रोहके समय भारतकी अंग्रेज राजलक्ष्मीके ऊपर विपत्ति आई थी उस समय एक मात्र इस रेलके अभावसे गवर्नमेण्ट एक स्थानसे दूसरे स्थानको अल्पसमयमें सेनाकी सहायता न भेजसकी थी। परन्तु वर्तमान समयमें भारतके रेलविस्तारके साथ ही साथ अंग्रेज गवर्नमेंटका वह अभाव भी दूर हो गया है।

भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तमें रेलकी गति पहुंच गई है। इस रेलके विस्तारसे देशीय राजाओंको जो उपकार प्राप्त हुआ है उसे अवश्य ही मानना होगा, राजस्थानके एक राजपूत राज्यसे अन्य राजपूत राज्यमें जानेके लिये कितना कष्ट पडता था, उसे हमारे

पठाकोंने यथास्थान पढा होगा । कर्नल टाड साहबने मारवाडमें जानेके समय रास्तेमें कितना कष्ट उठाया था, वह उनके भ्रमण वृत्तान्तमें भली भांतिसे प्रकाशित किया गया है । इस समय उसी राजपूतानेमें रेलका विस्तार हो गया है, और प्रधान राजपूताना तथा मालवा रेलवेसे शाखा निकलकर भिन्न २ राजपूत राज्योंमें गई हैं । जोधपुर शाखा रेलवेके सम्बन्धमें भली भांतिसे प्रकाशित हुआ है, कि "जोधपुरकी शाखा रेलवे जौलाई मासमें पालीतक खोली गई है । गत मार्च मासकी समाप्तितक इस शाखा रेलवेको जितनी आमदनी हुई है, उसकी समस्त आमदनी रेलमें ही लग गई है, और इसमें जो पांच लाख रुपया खर्च हुआ है, उसका सैकडा पीछे दो रुपया करके अदा किया गया है । यह निश्चय है कि लूनी नदीके किनारेसे चवां ग्रामतक इस शाखारेलवेका यथासम्भव शीघ्र विस्तार किया जायगा । इस समय जितनी रेलें खोली गई हैं उनका परिमाण साढेनौ कोशतकका है । चवांतक विस्तार होनेसे इसका विस्तारित परिमाण साढेबाईस कोशतक होगा । जब जोधपुरकी राजधानीसे नौ कोश दूरतक रेल आवैगी । हमें ऐसी आशा है कि वर्षकी समाप्तिमें इस रेलकी शाखा पूरे तौरसे बनकर खुल जायगी । मि० डबल्यू० होम इस शाखा रेलवेके मैनेजर और इंजिनियर पदपर नियुक्त हैं ×" ।

यह रेलवे महाराजने स्वयं अपने व्ययसे खुलवाई है इसके तयार होनेसे मारवाडके वाणिज्यमें अधिक लाभकी संभावना है ।

डकैती दमन ।

कर्नल टाड साहबकी उक्तिसे पाठक अवश्य ही जान गये होंगे कि डकैती और चोरी मारवाडमें चिरकालसे प्रचलित थी । पर्वतकी सीमाके निवासी भील मीना इत्यादि सब जातियां डकैती और चोरी करके ही अपना निर्वाह करती थीं, विशेष करके नीची श्रेणीके सामन्त भी बीच २ में डकैती दलके नेता बनकर राज्यमें महा अशान्ति उपस्थित कर देते थे । इन डकैत और चोरोंके दमन करनेके लिये गत वर्ष मारवाडके महाराजने विशेष प्रबन्ध किया था, और इसी कारण इस कार्यमें विशेष सफलता प्राप्त हुई थी, पर प्रतापसिंहजी महोदयने तस्करोंको दमन करके उसके पुरस्कारमें प्रधान राजमन्त्रीपद पाया था । भील मीना और बावरी चोरोंकी जातिपर विशेष दृष्टि रखकर उनको कृषिकार्यमें शिक्षित करनेके लिये विशेष प्रबन्ध किया गया है । पुलिसके पहरेवालोंकी संख्याकी वृद्धि, पहरेवालोंके अफसरोंका तत्वावधान करके प्राचीन रीतिका संस्कार और शांतिरक्षा विभागमें योग्य कर्मचारियोंको नियुक्त किया था, गत वर्षमें सब प्रकारसे डकैतोंको दमन करनेके निमित्त मारवाडकी सेनाकी संख्या बढाई गई; महाराज प्रतापसिंहने बहुतसे डाकू और चोरोंको पकडकर दण्ड दिया था, अंग्रेज रेजिडेण्ट आशा करते हैं कि शीघ्र ही डकैतोंके उपद्रव पूर्णरीतिसे शान्त हो जायंगे ।

× Report of political Administration of the Rajputana States for 1882-1883. P, 115.

मारवाडकी वर्तमान सैन्यसंख्या।

विभाग	उपविभाग	विवरण	संख्या
गोलन्दाज.		युद्धक्षेत्रकी तोपे.	५५
		कार्यकी उपयोगी तोपे.	४०
		अन्यान्य तोपे.	१२५
		कार्यके उपयोगी	३५
		जगी तोपें.	१८०
		जगीकार्यके उपयोगी.	१५
		गोलन्दाज सेना.	३२०
		तोपोंके ले जानेवाले घोडे	१२
		तोपोंके ले जानेवाले बैल.	२८
अश्वारोही और पैदल.	अश्वारोही	तोपोंके ले जानेवाले खच्चर.	६
		शिक्षित घुडसवार.	+९६०
		सामन्तमंडली और जागीरदारोंके अधीनकेअश्वारोही	१८००
		अन्यान्य नियमित अश्वारोही.	७३९
		अश्वारोही.	३८९९
	पैदल.	नियमित पैदल.	१४७७
		किलेकी रक्षामें नियुक्त पैदल.	११५०
		नागा और अन्य जातिके पैदल.	८५१
		तहसीलके सिपाही और नाजिर.	२४८६
		पैदल.	५९५४

कर्नल टाड साहबने मारवाडकी सेनाकी संख्याकी जो सूची दी है उसको हमने यथा स्थान प्रकाशित किया है हमारे पाठक गण उस सूचीके साथ इस सूचीको मिलाकर भलीभाँतिसे समझ लेंगे कि इस समय मारवाडकी सामरिक अवस्था कैसी है एक समय मारवाडेश्वरके अधीनमें राठौरोंकी ५०००० पचास सहस्र सेनाने एकत्र होकर अनेक युद्धोंमें महावीरता प्रकाश करक अक्षय कीर्ति प्राप्त की थी। वही मारवाडकी अत्यल्पसेना संख्याको देखकर हृदय व्याकुल हो उठता है पर साथमें यह हर्ष भी है कि ५०००० सेनाके होते हुए भी जहां शान्ति न थी आज गवर्नमेण्टकी कृपासे अत्यल्प सेना होते हुए भी पूर्ण शान्ति विराजमान हो रही है।

जिस अज्ञान अमेय शक्तिने राठौर राज्यकी मरुदेशमें प्रतिष्ठाके लिये सियाजीकी सहायता की थी, जिस शक्तिने एक समय राठौर जातिको महावीर रूपसे विख्यात किया था, जिस शक्तिने राठौर जातिके द्वारा एक समय भारतके गौरवको बढा दिया था, आज उसी शक्तिने मरुक्षेत्रमें राठौर जातिकी वर्तमान भाग्यलिपिको विधिबद्ध कर दिया है, यह राठौर जाति फिर कब गर्वसहित अपना मस्तक

* इनमे पांच तोपें इग्लेण्डकी बनी हैं। + ५०० से कुछ अधिक पैदल है और ६०अश्वारोही। १८८१—८२ ई० के शीतकालमे चोरजातिके दमन करनेमें नियुक्त हुए थे। इनमें ६० ऊंटोंपर चढनेवाले योधा भी है।

उठाकर जननी भारतभूमिके अस्त हुए गौरवको उदय करनेमें समर्थ होगी ? पर इस बातका निश्चय कोई नहीं कर सकता कि वह अज्ञेय शक्ति राठौर जातिकी पुनः उन्नतिमें तथा उद्धारमें सहायक होगी या नहीं ? गवर्नमेण्टके सुशासनमें उन्नति करनेमें कुछ भी बाधा नहीं है ।

इस समयका वृत्तान्त ।

यह राज्य राजपूतानेमें सबसे बडा है, इसके उत्तरमें बीकानेर और शेखावाटी हैं जो जयपुरराज्यका एक भाग है, पूर्वको जयपुर और किशनगढ, अग्निकोणमें अजमेर, मेरवाडा और मेवाड दक्षिणमें सिरोही और पालनपुर, पश्चिममें कच्छका-रण और सिंध और वायुकोणको जैसलमेर राज्य है । २४ अंश ३६ कला, उत्तर अक्षांशसे लेकर २७ अंश ४२ कला उत्तर अक्षांशतक, और ७० अंश ६ कला पूर्व देशान्तरसे लेकर ७५ अंश २४ कला पूर्व देशान्तरतक फैला हुआ है । ३७००० वर्गमीलमें इसका विस्तार है । राजधानी जोधपुरसे अर्वली पहाडके बीचका देश उपजाऊ है, लूनी नदीसे बडी सहायता मिलती है, यहां रेतके टीले टीबे कहलाते हैं, यहांका पानी खारी विशेष है, कहीं कहींका पानी विषैला भी है, जिसके पीनेसे बहुत हानि हो सकती है । यह वहां वेरावण पानी कहाता है । सांभर, डीडवाना और पचधारा स्थानोंमें नमक बहुत होता है । सांभरकी झीलसे सात आठ कोश पश्चिमको मकराना ग्राम है । यहां स्वच्छ श्वेतपत्थरकी खान है । इसे संगमर कहते हैं । गोडवाड परगनेके घाणेराव स्थानके पास भी ऐसे ही पत्थरकी दूसरी खाने हैं । जोधपुर राजधानी पहाडपर बहुत ही दृढरूपसे बनी है । गरमीमें यहां पानीका कष्ट रहता है । नागौर जोधपुरसे ईशानकोणको पाली जोधपुरसे १८ कोश अग्निकोणको बसे हुए इस राज्यमें प्रसिद्ध नगर हैं । नागौरका तलभूमिका गढ राजस्थानमें बहुत प्रसिद्ध है, जोधपुरसे ३५ कोश दक्षिणको जालौरका प्रसिद्ध गढ है, यह गढ मारवाडमें सबसे बिकट है। जोधपुरसे ४० कोश पूर्वको मेरताका प्रसिद्ध नगर है जहांके चकमें घूंघी प्रसिद्ध हैं इसके सिवाय सोजत, पचपधरा, फलोदी, पोकरण और बालोतरा आदि कई प्रसिद्ध स्थान हैं । कुचामन, नीमाज, रियां, जयपुर, अहवा, आसोप, माराेह, जसोल वाढमेर और सांचोर आदि स्थान भी जानने योग्य हैं बालोतरामें बडा मेला होता है ।

सन् १८९१ ईसवीमें २५२४०३० मनुष्योंकी संख्या थी । लोग बहुधा गुम्बजरूपी घरोंमें रहा करते हैं । जोधपुरमें पगडी और पीतलके वर्तन बहुत बनते हैं, इसकी वार्षिक आमदनी ४१००००० इकतालीस लाख रुपया है । यह नगर ६ मील लम्बी चहार-दीवारीसे घिरा हुआ है । इस दृढ दीवारमें ७० फाटक हैं, नगरमें पाषाणके बने हुए बहुत अच्छे २ घर और मन्दिर हैं और तालाबोंपर पक्के घाट बने हैं । सन् १८९१ की जन संख्यामें ६२००० मनुष्य थे । जोधपुरसे तीन मीलपर मंडोरके, जो पहिले पुराना मुख्य नगर था खण्डहर दिखाई देते हैं ।

संवत् १९४३ में महाराज प्रतापसिंहको सरकारकी ओरसे K. C. S. I. की उपाधि मिली, संवत् १९४४ में प्रतापसिंहजी महाराणी राजराजेश्वरीकी जुबिलीके

उत्सवमें इंगलेंड गये । वहां उनको लेफ्टिनेंट कर्नेलकी उपाधि मिली । इन्हीं महाराज प्रतापसिंहजीने महाराजकुमार सरदारसिंहजीको शिक्षा दी है जिसके कारण वह सब प्रकारके कलाकौशल तथा राजविद्यामें चतुर और प्रवीण हो गये हैं।

राज्यका काम कौन्सल, 'राजसभा' द्वारा सम्पादन किया जाता है । इसमें पोकरणके ठाकुर मंगलसिंहजी चाँपावत, कविराज मुरारिदानजी, पंडित शिवनारायणजी, मुन्शी हरदयालसिंहजी मुख्य सभासद हैं । महाराज प्रतापसिंहजी महाराजा साहब यसवन्तसिंहके तीसरे भाई और महाराजा जालिमसिंहजी सबसे छोटे भाई हैं, हम परमात्मासे प्रार्थना करते हैं कि इस राज्यकी सब प्रकारसे वृद्धि हो और हमारे वर्त्तमान महाराजा साहब बहादुर धन सुत सम्पत्तिशाली होकर आनन्द लाभ करें ।

जोधपुर राज्यके वर्तमान शासक श्रीमान् महाराजाधिराज श्रीसरदारसिंह साहब बहादुरजी बडे विद्वान और योग्य महाराजा हैं । इस समय जोधपुर राज्यकी शासनप्रणालीका प्रबन्ध राजपूतानेकी रियासतोंमें सबसे अच्छा है। दीवानी, फौजदारी, पुलिस, फौज आदि सब महकमोंका अच्छा प्रबन्ध है । प्रजावर्ग और जागीरदार सब प्रसन्न हैं । जोधपुर राज्यकी घुडसवार फौज बहुत ही अच्छी है, इस वर्ष सन् १९०९ के दिसम्बर मासमें, गवर्नर जनरल लार्ड मिण्टो महोदय जोधपुरमें पधारे थे, और हिजमजेस्टी सम्राट् महोदयका आज्ञापत्र आपने जोधपुरमें ही सुनाया था। तात्पर्य्य यह है कि उक्त महाराजके सब भाँतिसे सुयोग्य और नीतिचतुर होनेसे अंग्रेज सरकार भी आपका बडा सन्मान करती है ।

महाराज सरदारसिंहजी साहब बहादुरके दो महाराजकुमार हैं । उनमेंसे बडेका नाम महाराजकुमार श्रीसुमेरसिंह बहादुर है ।

इस समय (जोधपुर) मारवाडमें रेलका अधिक प्रचार व विस्तार हो गया है; जोधपुर बीकानेर रेलवे तथा मारवाड रेलवेने इतना विस्तार पाया है कि प्रायः मुख्य स्थानोंमें रेल हो गई है. मारवाड—जंकशन, पाली, करला, लूनी—जंकशन, सालावास, जोधपुर, पीपाड, मेरता, खजवाना, मूँडवा, नागौर, बालोतरा, पचपधरा, कुलेरा, कुचामन आदि स्थानोंमें रेल चल रही है, जिससे व्यापारोंमें बहुत उन्नति हुई है ।

दोहा—सिया सहित श्रीरामके, चरणकमल हियलाय ।
पूर्ण भयो इतिहास यह, जोधनगर सुखदाय ॥ १ ॥
महावीरके चरण गहि, द्विज बलदेव प्रसाद ।
चाहत पाठक जननके, रहै हिये अहलाद ॥ २ ॥

जोधपुरका इतिहास समाप्त ।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस--बम्बई.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

बीकानेरका इतिहास.

एच्. एच्. महाराजा राजराजेश्वर नरेन्द्रशिरोमणि श्रीमहाराजाधिराज
सर गङ्गासिंहजी बहादुर जी. सी. आई. ई. के. सी. एस. आई.
एच्. आर. एच्. धी प्रिन्स आफ् वेलस् के एडीकाङ्ग—बीकानेर.

बीकानेर।
(१) राव बीका.
(२) ,, नारा.
(३) ,, लून करन.
(४) ,, जैतसी.
(५) ,, कल्यानसिंह.
(६) राजा रायसिंह.
(७) ,, दलपतसिंह.
(८) ,, सुरसिंह.
(९) ,, करनसिंह.
(१०) महाराजा अनोपसिंह.
(११) ,, सरूपसिंह.
(१२) ,, सुजानसिंह.
(१३) ,, जोरावरसिंह.
(१४) ,, गजसिंह.
(१५) ,, राजसिंह.
(१६) ,, प्रतापसिंह.
(१७) ,, सुरतसिंह.
(१८) ,, रतनसिंह.
(१९) ,, सरदारसिंह.
(२०) ,, डुंगरसिंह.

श्रीः ।

राजस्थानका इतिहास ।

दूसरा भाग २.

बीकानेरका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

बीकानेरकी राजसृष्टिका आदि विवरण-आर्य राजाओंकी दिग्विजयकी रीति-राज्यप्रतिष्ठता तथा इन दशाके आदिम निवासी जाटोंको उस समयकी अवस्था-सिक्ख जातियोंकी सख्या-विस्तृति तथा पश्चिम राजपूताना और उत्तर भारतमें इन जाट कृषकोंकी सन्याकी अधिकता, उनके कृषिका व्यवसाय-शासनविधान-धर्मप्रणाली-बीकाके अभ्युदयके समय बीकानेरमें स्थित जाटोंकी नगरावली-बीकाकी जयप्राप्तिका मूल कारण-जाटनेताओंका बीकाके समीप इच्छानुसार अधीनता स्वीकार करना-उनके सम्बन्धकी व्यवस्थाका निश्चय करना-बीका और उनकी जात प्रजाका जोहियोंपर आक्रमण-बीकाका जय प्राप्त करना-बीकाका भाटियोंके पाससे नागौर देशको छीनकर १४८९ ईसवीमें उसके द्वारा बीकानेर राजधानीकी प्रतिष्ठा करना-उनके चचा कांधलका उत्तरांशको जीतना-बीकाकी मृत्यु-उसके पुत्र लूनकरणका अभिषेक-उसका भाटियोंसे कितने ही देशोंको जीतना-उनके पुत्र जैतसिंहका अभिषेक-बीकानेरमें शासनशक्तिका विस्तार-रायसिंहका सिंहासन प्राप्त करना-बीकानेरके जाटोंकी स्वाधीनताका नाश-राजशक्तिकी प्रबलता-अकबरके साथ रायसिंहका मिलन-उनका सन्मान और सामर्थ्य वृद्धि-जोहियोंकी विद्रोहिता और उनका दमन-जोहियोंके अधिकारी देशोंमें अलिकजण्डरके आक्रमणके चिह्न-राजभ्राता रामसिंहसे पूणियाके जाटोंकी पराजय-रायसिंहकी कन्याके साथ कुमार सलीमका परिणय-रायसिंहकी मृत्यु-उनके पुत्र करणसिंहका अभिषेक-करणसिंहके तीन पुत्रोंका यवनसम्राटके कार्यमें प्राण त्यागना-सबसे छोटे अनूपसिंहको सिंहासनकी प्राप्ति-उनके द्वारा काबुलका विद्रोहनिवारण-उनकी मृत्युके सम्बन्धमें मतभेद-स्वरूपसिंहका अभिषेक-उनका हनन-सुजानसिंह, जोरावरसिंह, गजसिंह और राजसिंहको क्रमानुसार सिंहासन प्राप्ति-विमाताका विषप्रयोग-राजसिंहका प्राणनाश और उसका सामन्तोंके विरुद्ध सिंहासनपर अधिकार करना-सिंहासनके न्यायअधिकारी अपने भतीजेका प्राणनाश करना-आत्मविग्रह-जोधपुरपर आक्रमण-बीकानेरकी वर्तमान अवस्था-बोदावाटीका वृत्तान्त ।

वर्त्तमान विजित भारतकी पतित आर्य जातिके गौरव स्वरूप आर्य शासनके शेष स्मृति चिह्नस्वरूप दो प्रधान राजपूत राजाओंके इतिहासको वर्णन करके; हम इस समय राठौर वंशकी शाखा बीकानेरके इतिहासको वर्णन करते हैं । प्रकृतिकी आप्रय-

स्थली, मरुक्षेत्रमें कान्यकुब्ज वंशीय सियाजीके आदि राज्यस्थापनसे मारवाडके वर्तमान महाराजा यशवन्तसिंहके शासन समयतक सम्पूर्ण जाननेयोग्य विषयोंको पाठकोंके सम्मुख भेंट किया गया है। इस समय हमें आशा है कि गुणवान् पाठक उस राठौर राज्य–वंशरूपी वृक्षकी एक प्रधान शाखाके ज्ञातव्य इतिहासको पढकर अवश्य ही उसी प्रकारकी धीरताके साथ समय बितानेमें कातर न होंगे।

इतिहासवेत्ता टाड साहब सबसे पहिले लिख गये हैं कि, "राजपूतानेके राजाओंमें बीकानेरका राज्य दूसरी श्रेणीका गिना जाता है, यह मारवाडकी एक शाखा है, इसके महाराज जोधपुरके वंशधर हैं। इनके आदि अधीश्वर मूलराज्यने मारवाडकी उत्तर सीमामें स्थित देशको जीतकर इस राज्यकी प्रतिष्ठा की थी और इस राजको ठीक मारवाडके मध्यस्थलमें स्थापित करके इसकी स्वाधीनताकी विशेष रूपसे रक्षा की थी"।

हमारे पाठकोंने मारवाडके इतिहासमें महावीर जोधाके शासन समय, सन् १५१५, संवत् १४५९ ईसवीमें प्राचीन राजधानी मण्डोरको छोडकर जोधपुर-नामक नवीन राजधानीके स्थापित होनेके वृत्तान्तको पढा है। जिस समय मारवाडके महाराज जोधगिरिसे नवीन राजधानीमें आये उस समय उनके दूसरे कुमार बीका अपने चचा कांधलके साथ तीन सौ राठौरोंकी सेना लेकर मरुक्षेत्रमें पिताके राज्यको मारवाडकी सीमामें बढानेके लिये बाहर हुए। बीकाके जानेके पहले ही उनके भ्राता बीदाने अत्यन्त प्राचीन निवासी मोहिलोंकी निवासभूमिपर आक्रमण कर उनको परास्त करके उनके देशोंको जीत लिया। अपने भ्राता बीदाकी इस सम्पूर्ण फलदायक जय प्राप्तिसे उत्साहित हो बीकाजी दिग्विजयके लिये चले थे।

आर्य राजाओंमें दिग्विजयकी रीति भारतवर्षमें चिरकालसे प्रचलित थी। हमारे शास्त्र, पुराण और इतिहासोंमें इस दिग्विजयके सम्बन्धमें बहुतसी कथाएं पाई जाती हैं। चिर वीर व्रतधारी क्षत्रियोंके लिये दिग्विजयकी रीति वीरधर्मका प्रधान अंग गिनी जाती थी। वीरधर्म, वीरनीति, और राजनीतिके मतसे यह दिग्विजयकी रीति आजतक निन्दनीय नहीं गिनी गई थी। स्वाधीन भारतमें वीरताका महान् आदर था, इसीसे सतयुग, त्रेता और द्वापर तथा कलियुगके आर्यराजा इस दिग्विजयके लिये बाहर जाकर अनन्त धन उपार्जन कर यश और सन्मानसे विभूषित हो अपनी वीरताकी ऊंची प्रशंसासे भारतवर्षको कम्पायमान करते हुए अपने २ राज्यमें लौट आते थे। भारतवर्ष कभी भी एक आर्यमहाराजके अधीनमें नहीं रहा। जहाँतक जाना जाता है, उसके पहलेसे ही चन्द्रवंश और सूर्यवंशने दो भागोंमें विभक्त होकर भारतके भिन्न २ प्रान्तोंमें राज्यका विस्तार किया था, और अन्तम सबसे पहले आर्यावर्तके अधिकारमें होते ही क्रमशः दक्षिणतकको जीतकर सम्पूर्ण भारतमें अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर लिया था। उस क्षत्रीवर्णके मूल सूर्यवंश और चन्द्रवंशसे धीरे २ अनेक शाखाएं निकल कर भारतवर्षके छोटे २ अगणित स्थानोंमें पहुँच गई। इस सूर्यवंश और चन्द्रवंशके बीचमें जब जिस वंशमें कोई महावीर महा योधा जन्म लेता था,

तभी वह दिग्विजयके लिये बाहर जाकर अपने बाहुबलसे छोटे २ राज्योंको जीतकर चक्रवर्ती महाराजकी उपाधि धारण करता था। यद्यपि वह चक्रवर्ती महाराज भिन्न २ राज्योंको जीतकर अतुल धन और विवाहके योग्य सुन्दर २ स्त्रियोंको हरण करके लाते थे;परन्तु वह किसी समय भी कूट राजनीति जालके विस्तारसे उन समस्त राज्योंको अपने अधिकारमें नहीं करते थे। किसी राजवंशका एकबार ही लोप नहीं करते थे,न किसीका राज्य अपने हस्तगत करते थे। पूर्वकालमें जिस समय देशीय राजा दिग्विजयके लिये बाहर जाकर समरभूमिमें युद्ध करनेकी इच्छासे डटते थे, उस समय वह केवल उन्हींके साथ युद्ध करते थे जो समर चाहते थे । जो अपनेको असमर्थ जान बिना युद्ध किये अधीनता स्वीकार कर लेते थे उनके साथ वे कभी युद्ध नहीं करते थे। दिग्विजयी राजा वीर धर्मके अनुसार युद्धमें प्रवृत्त होकर कभी किसी जातिका लोप तथा राज्यका नाश नहीं करते थे। उनमें कुछ ही समयके उपरान्त मित्रता होकर वैवाहिक सम्बन्ध हो जाता था । यद्यपि प्रधान २ राजवंशके वीर-व्रतधारी कुमार स्वतंत्र राज्यके स्थापनकी अभिलाषासे अन्य देशोंपर आक्रमण कर उनपर अधिकार कर लेते थे, परन्तु वह ऐसा कदापि नहीं करते थे कि उस देशको एक ही बार कठोर पराधीनतामें बाँधकर प्रत्येक प्रजाके राजनैतिक अधिकारको हरण कर प्रजाके सर्वस्व हरणकी इच्छा करते हों । वीर-धर्मके अनुसार वह यूद्धभूमिमें जाकर देशको जीतकर वहाँके निवासियोंके साथ मिलकर उनमेंसे एकको लेकर उस नवीन राज्यको शासन करते थे। वहाँके निवासी भी इनको अपनी ही समान जानकर नवीन शासनमें पूर्वकी नाई स्वाधीनता और सुख शान्ति संभोग करते, तथा किसी स्थानमें नवान राजाके बल विक्रम और शिक्षा ज्ञानकी सहायतासे स्वदेश और जातिकी उन्नति कर लेते थे। अतएव मारवाडके राजकुमार बीकाने इस शपाक्त श्रेणीके समान दिग्विजयके लिये बाहर जाकर इस नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा की थी। कर्नल टाड साहब लिखेत हैं कि बीकाने दिग्विजयके लिये बाहर जाकर सब प्रकारसे सर्व साधारणमें सफलता प्राप्त की; विजयकी अभिलाषावाले यही प्रतिज्ञा करके घरस चलते थे कि या तो मार डालेंगे या मर जाँयगे,दूसरे जाति धर्मकी विधिके अनुसार शत्रु हो अथवा मित्र हो दिग्विजयके समय उनके हाथसे देशको छीन लेनेकी रीति वीरधर्मावलम्बी राजपूतोंमें प्रबल थी, इसीसे सफलता प्राप्तिका और भी सुभीता हुआ ।

मारवाडके राजकुमार बीकाजी पहिले पहिल केवल तीनसौ राठौर वीरोंकी सेना साथ लेकर दिग्विजयके लिये चले। उन्होंने जाङ्गल नामक स्थानपर सांखला नामकी प्राचीन जातिपर आक्रमण किया।प्रबल युद्ध होनेके पीछे राठौरोंने सांखला लोगोंको परास्त करके मार डाला; बीकाजीके बलविक्रमसे राठौरोंकी सेनाका दल साहस और वीरताके ऊंचे गौरवसे शीघ्र ही मरुक्षेत्रको प्रतिध्वनित करने लगा। उस प्रथम युद्धमें सब प्रकारसे जय प्राप्त करके बीकाजीके साथ पुंगल देशमें भाटियोंका परिचय हुआ । पुंगलपतिने बीकाको महावीर पुरुष देखकर अपनी एक कन्याका विवाह उनके साथ कर दिया। बुद्धिमान

पुंगलपति इस बातको भलीभांतिसे जान गया था कि वीर बीकाके साथ युद्धके बदलेमें उसके साथ संबन्ध करके अपनी स्वाधीनताकी रक्षा करना ही कर्तव्य है। बीकाने देखा कि भाटी जातिके अधीश्वरने जब अपने वंशमें होकर कन्या दी है तब पुंगलपर अधिकार करना किसी भाँति भी उचित नहीं; इस कारण उसने भाटियोंकी स्वाधीनतामें किसी प्रकार हस्ताक्षेप न करके कोडमदेसर नामक स्थानमें नवीन किला बनाकर वहां निवास किया, और वह धीरे २ निकटवर्ती अन्यान्य प्रदेशोंको जीतकर अपने अधिकारमें करने लगा। असीम साहसी राठौरोंकी सेनाके विरुद्ध कोई भी स्थानी सम्प्रदाय जय प्राप्त करनेमें समर्थ न हुई, इस कारण बीका धीरे २ क्षुद्र देशोंकी सीमा दबाकर प्रबल हो गया। विजयी बीका धीरे २ राज्यकी सीमाको बढाकर अंतमें वहांके प्राचीन निवासी जाटोंके अधिकारी देशोंकी ओर जा पहुँचा, जाट चिरकालसे ही इन देशोंमें निवास करते थे। इस समय बीकानेर राज्यके अधिकांश देशोंमें जाट लोग ही रहते थे; जोधपुरवंशीय बीकास कृषिजीवी जाटोंमें सामन्त शासनकी रीति प्रवर्तित होनेके पहिले उनकी अवस्था किस प्रकार थी, महात्मा टाड साहब उस विषयको प्रयोजनीय जानकर इस स्थानपर वर्णन कर गये हैं। उन देशोंके जाटोंके प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्वको लिखना उचित जानकर हम भी यहां प्रकाश करते हैं।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं "इस विख्यात् तथा सुविस्तारित जातिके संक्षिप्त विवरणको हमने इससे पहिले भी प्रकाशित किया है। टिमिरिस (Tomyris) तथा साइरस (Cyris) के समय लाहौरके वर्तमान जाट राजाके समयतक प्राचीन एशियाकी जातिमें इन जाटोंकी संख्या सबसे अधिक थी, यह बात सभी इतिहासोंमें प्रसिद्ध है, वर्तमान लाहौरपतिके उत्तराधिकारी यदि इनके समान उद्यम एवं प्रतिभाशाली होते तो जाटजातिके पुनर्वार उदयमें वह अपने प्राचीन पैतृक वासस्थानमे एशियाके सिंहासन पर एक दिन अवश्य बैठ सकते। उस मध्य एशियाकी ओरसे यह इतनेमें अनेक दूरतक आगे बढे हैं। ईसोंकी चतुर्थ शताब्दीमें पंजाबमें जट्ट वा जाट राज्य प्रतिष्ठित था, परन्तु इन्होंने कितने समय पहिले इस जाटजाति और इस देशके प्रथम उपनिवेशको स्थापन किया था, वह विषय हमें ज्ञात नहीं है। मुसलमान भारतवर्षमें अपनी शक्तिको विस्तार करनेके लिये जब उद्यत हुए थे तब इस जाटजातिने ही उनके विरुद्ध खडे होकर विशेष बाधा दी थी। महमूदने जिस समय सिन्धु नदीके पार होनेकी चेष्टा की थी, उस समय इस जाटजातिने ही अपने बाहुबलसे उनके मार्गको रोककर अपनी रक्षा की थी, तथा कठोर हृदय तैमूरने जिस समय इन जाटोंके विरुद्ध भयंकर संग्राम किया था,

(१) कर्नल टाड साहबने पंजाबपति रणजीतसिंहको जाट कहकर इस टीकेमे लिखा है, "रणजीतसिंहने बहुत पहिलेसे पेशावर पर अधिकार किया है, और काबुलपर भी अधिकार करनेकी इच्छा की है। काबुलकी वर्तमान विशृंखलामें उनकी आशा पूर्ण होनेका विशेष सुभीता उपस्थित हुआ है।"

(२) प्रथम भागका परिशिष्ट देखो।

उस समय इन्होंने जैसा बल विक्रम प्रकाश किया था, उसको हम पहिले ही कह आये हैं। सम्राट बाबरने स्वयं लिखा है कि जब जब वह भारतवर्षमें अपनी शासनशक्तिको स्थापन करनेके लिये अग्रसर हुआ तब तब जाटोंने ही उसके विरुद्ध हथियार पकडे थे। पंजाबके किसान जिस समय मुसलमानी धर्मसे आक्रान्त हुए उस समय प्रधानतासे इस जाटजाति और पंजाबके समर व्यवसाइयोंने नानकके द्वारा प्रचारित धर्मका अवलम्बन करके उस समय जाट नामको छोड कर सिक्ख नाम धारण किया"।

इसके पीछे साधु टाड साहब लिखते हैं, "कि इस बातका हमें निश्चय है कि इनके जूति, जिति, जित, जट वा जाट यही नाम हैं; तीन शताब्दीके पहिले भारतवर्षमें अन्यान्य जातियोंकी अपेक्षा इनकी संख्या अधिक थी, और इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि रजवाडेके पश्चिमांश और उत्तरांशके किसानोंमें इनकी संख्या अधिक नहीं थी"।

पीछेसे इस बातको भी लिखा है, कि "किस समय इस जाटजातिने भारतवर्षके मरुक्षेत्रमें सबसे पहिले आकर निवास किया था। यह तो हम पहिले ही कह चुके हैं कि यह विषय हमें विदित नहीं है, परन्तु जिस समय राठौर गण इस जाट जातिको जीतनेमें प्रवृत्त हुए थे उस समय इसी जाटजातिमें जैसे आचारोंके व्यवहार करनेकी रीति प्रचलित थी उससे भलीभाँति जाना जाता है कि यह जाटजाति सीदियन जातिसे उत्पन्न है। यह लोग केवल खेती करके ही अपना जीवन निर्वाह करते थे;इनके नेताओंने कभी अपना प्रभुत्व इनके ऊपर नहीं प्रकाश किया, केवल उपदेश और सम्मति देते रहे। विश्वजननी भवानी एक जाटकी कन्यास्वरूपसे प्रगट हुई थी। इसीके विश्वाससे उन्होंने उस भवानीकी आराधनाके अतिरिक्त हिन्दू धर्मका और कोई विधान ग्रहण नहीं किया, अर्थात् हिन्दू धर्मके साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं था। सारांश यह है कि, जरकसीजसे पहिले जाट लोग जिस पौत्तलिक रीतिको भारतवर्षमें लाये थे, विख्यात मुसलमान साधु शेख फरीदने उनकी इस पौत्तलिकताको नष्ट कर दिया; इस लिये धर्मके सम्बन्धमें उनका कोई एक निश्चित विधान न रहा। मरुक्षेत्रके जाट पौत्तलिकता और मुसल्मानता दोनोंको पालन करते थे, और उन्होंने अपनेको एक स्वतन्त्र जाति विचार लिया था। एक पूनिया जाटने हमसे कहा कि " हमारा आदि वासस्थान

---

(१) बादशाह बाबरने लिखा है, कि "पहिली रबीउलकी १४ वीं तारीख शुक्रवारके दिन २९ दिसम्बर १५२५ ईसवीको मैं स्यालकोटामें गया। हिन्दुस्तानमें मैं जितनी बार आया जाट और गूजर लोगोंने उतनी ही बार नियमितरूपसे पर्वत और झाडियोंमेंसे बडी संख्याके सहित बैल और भैंसोंको चुरा कर हमारे ऊपर धावा किये।"

(२) मिस्टर एलफिन्स्टन जिस समय अंग्रेज गवर्नमेण्टके दूत बनकर काबुलमें गये, उस समय कर्नल पिटमान उनके साथ गये थे, कर्नल पिटमानने लिखा है कि काबुलके जाट किसान मुसल्मान थे; वहां सिक्ख किसान बहुत थोडे दिखाई देते थे, परन्तु वह जाट सिक्ख जातिके द्वारा एकबार ही परास्त हो गये थे।

पंजाबके बाहर है" । अधिक क्या कहैं ? बीकाने मारवाडके जो छः नामधारी जाटोंकी सम्प्रदायका दमन करके केवल अपने अधिकारका विस्तार किया था । उसमें एक सम्प्रदायका नाम असिख देखा जाता है । अकसम एवं जक्षरतेसितोसे जो चार जाटोंकी सम्प्रदायने वेटरियाके ग्रीक राज्यका नाश किया था, उसी सम्प्रदायके नेताका नाम असि था इसी कारणसे दोनोंमें भलीभांति सदृशता विराजमान है । "

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि, तैमूर और बाबरके भारतपर अधिकार करनेके मध्य समयमें राठौरोंने जाटोंको पराजित किया था । तैमूर चगताई वंशका आदि पुरुष है उसनें जाटोंको भारतके मरुक्षेत्रमें ट्रेन्स सक्रियानासे भगा दिया ।

इस कारण हम यह सिद्धान्त कर सकते हैं कि मध्य एशिया संसारकी सभी जातिका उत्पत्तिस्थान है । जाट गण वहांसे सिन्धुनदीके पूर्वप्रान्तकी ओर भाग गये थे । बीकाजीने जिन जाटोंको परास्त किया था उन जाटोंने बहुत शताब्दियोंके पहले यहां आकर निवास किया था ।

जाटोंके अधिकारी देशोंका विस्तार भी इस सिद्धान्तकी पुष्टि करता है, कारण कि बीकानेर राज्यकी सीमाके प्रायः सभी देश नीचे लिखी हुई छः सम्प्रदायोंके जाटोंसे परिपूर्ण हैं;--

१ पूनिया ।	४ असिघ ।
२ गोदारा ।	५ वेनीवाल ।
३ सारन ।	६ जोया ।

यद्यपि शेषोक्त सम्प्रदायको बहुतोंने भाटियोंकी शाखा कहा है, परन्तु भाटियोंके द्वारा पुत्ररूपसे परिपालित हुए जोया गण इस जाटजातिसे उत्पन्न नहीं थे यह भी सिद्धान्त है ।

"बीकानेरके जाटोंकी प्रत्येक सम्प्रदायके नामसे एक २ विभाग है, और वह प्रत्येक विभाग जिलारूपमें विभक्त है । जाटोंकी वस्ती छः विभागोंके अतिरिक्त बागौर, खारी पट्टा और मोहिल नामके राजपूतोंसे छीने हुए और भी तीन विभागोंमें है । यह छः जाट विभाग बीकानेरके मध्य और उत्तरांशमें स्थित हैं और राजपूत विभाग दक्षिण और पश्चिमकी सीमोंमें स्थापित है ।

उस समयके छः विभाग इस प्रकार हैं ।

विभाग	ग्रामसंख्या	जिलोंके नाम ।
१ पूनिया ।	३००	भादरां, आजितपुर, सीधमुख, राजगढ, दादर, योह सांकू इत्यादि ।
२ वेनीवाल ।	१५०	भूखरखा सून्दरी, मनोहरपुर, कूई बाई इत्यादि ।
३ जोया ।	६००	जैतपुर, कंवानो, महाजन; पीपसर, उदयपुर इत्यादि ।
४ असिघ ।	१५०	रावतसर, विरामसर, दादूसर, गुँडइली, कोजर, फुआग ।
५ सारन ।	३००	बूचावास, सोवाई, बादनू सिरसिला इत्यादि ।
६ गोदारा ।	७००	पुन्दरासर, गोसेनसर, (बडा) शेखसर, गडसीसर, गरीबदेसर, रंगीसर काल्ह इत्यादि ।
जोड संख्या	२२००	(जाटोंके प्रदेश)

७ भागौर	३०००	बीकानेर, नार, किला, राजासर, सतासर, चतरगढ, रिनदीसर, बीतनख, भवानीपुर, जयमलसर इत्यादि ।
८ मोहिला	१४०	चौपुरा (मोहिलोंकी राजधानी) सावन्ता, हीरासर, गोपालपुर, चारवास, बीदासर, लाडन्, मलसीसर, खरबूजारा-कोट इत्यादि।
९ खारीपदा अर्थात् खारी-नामकका देश ।	३०	

सब जोड २६७०

महात्मा टाड साहबकी उक्तिका प्रतिवाद करना हम किसी प्रकार भी उचित नहीं समझते, परन्तु सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये हम उनकी इस बातका प्रतिवाद करनेको बाध्य हैं कि भारतवर्षके जाट मध्य एशियाके जट्ट जातिके वंशधर नहीं हैं । इसमें उनको चाहे दृढ विश्वास हो, परन्तु हम उसका पोषण किसी भांतिसे नहीं कर सकते । इसी विश्वाससे उन्होंने राजपूतोंको पोरसका राजवंशी कहा है। सारांश यह है कि जहां नामका कुछ भी सादृश्य रहै, जहां आचार व्यवहारमें किञ्चित् भी समानता देखी है वहीं पर टाड साहबने अपनी विचित्र युक्तिमय कल्पनाओंका विकाश किया है । जैसे उनका यह अनुमान है कि जट्ट जातिने मध्य एशियासे भारतमें आकर जाट नाम धारण किया । इसी प्रकार उनका यह भी विश्वास था कि ब्राह्मण, क्षत्री इत्यादिने भी मध्य एशियासे भारतवर्षमें प्रवेश करके आदिमक निवासियोंको जीतकर क्रमानुसार अपना राज्य विस्तार किया है । एलफिनिस्टन्, कोलब्रुक आदिने भी इसी मतका अनुमोदन किया है, आधुनिक मैक्षमूलर इत्यादि विद्वानोंका भी यही मत है। इन्हींके आदर्शसे विश्वविद्यालयके शिक्षित देशियोंका भी यही विचार प्रवल हो गया है। परन्तु हम इस मतके पक्षपाती नहीं हैं। हमारे शास्त्र, पुराण, इतिहास इत्यादिमें इसका कोई प्रमाण नहीं पाया जाता कि आर्य गणोंने मध्य एशियासे भारतमें आकर राज्यका विस्तार किया है । वरन् हमैं महाभारत इत्यादिमें इस प्रकारक प्रमाण मिले हैं, कि भारतवर्षकी अनेक जातियां म्लेच्छ होकर मध्य एशियाकी ओरको चली गई थीं । हमारे देशके सम्बन्धमें, जातिके सम्बन्धमें देशके इतिहासके सम्बन्धमें साहबोंके वचनोंपर जिनका वेदवाक्यके समान विश्वास है, हम उनके उस भ्रामक विश्वासके विरुद्ध किसी बातके कहनेकी अभिलाषा नहीं करते । हां केवल इतना ही कह सकते हैं कि शास्त्र, पुराण और इतिहासोंको पढकर

(१) कर्नल टाड साहबने टीकेमें लिखा है कि पहिले जाटोंने अपनेको वियानाके यदुवंशका उत्तराधिकारी कहकर परिचय दिया था । उनसे इस प्रकार किंवदंती प्रचलित है कि उनका आदि वासस्थान कन्धारमें था ।

इसके सम्बन्धमें अपना गठन प्रकाश करना कृतविद्य सम्प्रदायको उचित है और शास्त्रोंके देखनेसे यह भ्रांति सहजमें मिट जाती है।

खैर—महात्मा टाड साहबने जो कुछ पीछे वर्णन किया है कि "इस समय राज्यकी वसती इतनी शीघ्रतासे पूर्ण हो रही थी कि बीकाजी अपने पिताके वासस्थान मंडोरको छोड कर कई वर्षके बीचमें ही २६७० ग्रामोंके अधीश्वर हो गये। परन्तु इतने बडे प्रदेश विजय करनेके लिये बीकाजीको अपनी प्रबल शक्तिके प्रयोग करनेकी आवश्यकता न पडी, कारण कि वहांके निवासियोंने अपनी इच्छानुसार, बिना युद्ध किये ही उनकी अधीनता स्वीकार करके उनको अपना प्रभु बना लिया। वह जाटगण बीकाके अधीनमें एक राज्यकी प्रजारूपसे रहने लगे थे, परन्तु वर्तमान समयमें पूर्वोक्त संख्यक ग्रामोंकी संख्या आधी भी नहीं रही।

बीकावंशके वर्तमान बीकानेरके अधिपति सूरतसिंहके राज्यके ग्रामोंका परिमाण १३०० खण्ड भी नहीं हुआ।"

बीकाजी मारवाडके जिन अंशोंको अपने अधिकारमें करनेके लिये बाहर गये थे, उस उत्तरके गारा अंशके जाट तथा जोहिया गण अत्यन्त सामान्य अवस्थासे केवल पशुओंके पालनसे अपनी जीविका निर्वाह करते थे। उनकी धन सम्पत्ति और उनका सर्वस्व केवल पशु ही थे। वह दलके दल पशुओंको साथमें लेकर अतिरिक्त पशुओंको बेचा करते थे; और गाय भैंस इत्यादिके दूधमेंसे घी निकाल कर, तथा भेड इत्यादिका रूआं सारस्वत ब्राह्मणोंके हाथ बेचा करते थे। इस देशमें उपरोक्त याजन कार्यके अतिरिक्त वाणिज्य व्यवसाय भी करते रहते थे। जाट और जोहिया उक्त कई एक द्रव्योंके बदलेमें उन वणिक ब्राह्मणोंसे गेहूँ चावल इत्यादि आवश्यक पदार्थोंको लेते थे।

वीरश्रेष्ठ बीका जिस समय नवीन राज्यके प्रतिष्ठाकी इच्छासे इन जाट और जोहियोंके अधिकारी देशोंको जीतनेके लिये वीरताके गर्वसे आगे बढा, उस समय उनकी उस कामनाके पूर्ण होनेके पक्षमें बहुत सा सुभीता मिल गया था। इस कारण उन्होंने बडी सरलतासे बिना युद्ध किये एक विस्तीर्ण देशका राज्य प्राप्त कर लिया। क्षीणहृदय दुर्बलशरीर बंगाली जातिने जिस भांति सिराजुद्दौलाके घोर अत्याचार और उपद्रवोंसे पीडित हो अन्तमें अंग्रेजोंके करकमलमें जननी जन्मभूमिको अर्पण किया था, इन जाटोंने भी उसी प्रकारसे बिना युद्ध किये वीरश्रेष्ठ केशरी बीकाके हाथमे जननी जन्मभूमिके शासनका भार अर्पण किया।

टाड साहब लिखते हैं, कि "एक २ करके अनेक भिन्न कारणोंके समावेशसे बीकानेरकी राज्यसृष्टिमें विशेष सुभिता हुआ था; तथा उसी कारणसे जाटोंने प्राचीन मीदियोंके सरलभावको छोडकर राजपूत सामन्त शासनकी रीतिके अनुसार नवीन प्रथाको धारण किया। यद्यपि बीकाके भाई बीदाने मोहिलोंको परास्त करके और उनके देशोंपर अधिकार करके बीकाकी जयप्राप्तिका मार्ग साफ कर लिया था; परन्तु जि पापसे संसारकी समस्त साधारण शासनरीतिका विध्वंस हो गया है, यदि

जाटोंमें वह पापाग्नि प्रज्ज्वलित न होती तो बीका कभी भी इस प्रकारसे बिना युद्ध किये देशको नहीं जीत सकता था। जाटोंकी छः सम्प्रदायोंमेंसे जोहिया और गोदारा नामक अत्यन्त सामर्थ्यवान् जाट सम्प्रदायमें परस्पर विद्वेष अधिक बढ गया था, इसी कारणसे यह जोधाके वंशधर सरलतासे राजसिंहासनपर विराजमान हुए। बीकाकी जयप्राप्तिका एक दूसरा कारण यह भी था कि इसके पहिले अत्यन्त कठिन स्वभाव मोहिल जातिके साथ इन जाटोंकी भयंकर शत्रुता थी, बीदाने राठौरोंकी सेनाके साथ आकर उनका एकबार ही विनाश कर अपनी वीरता प्रकाश की थी, अस्तु जाट इनके भयसे बीकाकी शरण आये, और फिर इन्हीं देशोंकी सीमामें जैसलमेरका राज्य विराजमान था; उसी जैसलमेरमें भाटी लोग अत्यन्त प्रबल होकर जाटोंके ऊपर अन्याय उपद्रव और घोर अत्याचार करते थे, इस कारण जब उन्होंने उन अत्याचार करनेवालोंके हाथसे स्वजातिकी रक्षा होनी असंभव देखी, तब इन जाटोंने बिना युद्ध किये बीकाकी अनुगत्यता स्वीकार कर ली। विशेष करके बीकाके अधीनकी महाबली राठौर सेनाने दिग्विजयके लिये बाहर जाकर जिस भाँतिसे अपने बल विक्रमको प्रकाशित कर जंगलके निवासियोंका नाश कर दिया था, इसीसे उन्होंने बीकाकी शरण जानेके अतिरिक्त अपनी रक्षाका दूसरा उपाय न देखा "।

तब गोदाराके जाटोंने घोर संशयमें पडकर, बीकाको आत्मसमर्पण करना उचित है अथवा नहीं, इसका निश्चय करनेके लिये शीघ्र ही एक जातीय सभा की। सबसे पहले गोदाराके नेताने उस सभामें आकर अनेक तर्क कुतर्क करनेके पीछे यह निश्चय किया कि राठौर वीर बीकाको संतुष्ट करना परम कर्तव्य है।

गोदारा जाटोंके प्रधान नेता पाण्डु सेखासरमें निवास करते थे। पाण्डुको नीचे लिखे हुए रूनियाँके नेतासे संमान और मर्यादा प्राप्त हुई थी। इन जाटोंमें सब प्रकारसे सौम्यभाव प्रचलित था। सभी मनुष्य समभावसे भूसम्पत्तिको भोगकर पशुओंका पालन करके जीविका निर्वाह करते थे।

गोदाराके जाटोंने जातिकी साधारण सभामें एकताका अवलम्बन कर उक्त सेखासर और रूनियाँके अधिनायकको राठौर राजकुमार बीकाजीके निकट भेजकर निम्न लिखित व्यवस्था कर उनके करकमलमें आत्मसमर्पण करनेके लिये अनुरोध प्रकाशित किया।

प्रथम–जोहिया तथा जो अन्यान्य जाट गोदाराके साथ शत्रुता और अत्याचार करते हैं बीकाको उनकी ओरसे जोहिया आदिके विरुद्धमें खडा होना होगा।

• (१) पाक पत्तनके मुसल्मान साधु, शेख फरीदके नामके अनुसार इस गाँवका नाम शेखासर रक्खा गया था। इस देशमें शख फरीदकी एक दरगाह आजतक है। टाड साहब लिखते हैं कि, "जाट भवानी देवी माताकी आराधनामें लिप्त होनेके पहले इसी शेख फरीदकी ओर विशेष भक्ति प्रकाश करते थे। ऐसा जाना जाता है कि कर्नलटाड साहबने यही विश्वास करके जाटोंको सीदियन जातिसे उत्पन्न माना है तथा उन्हें मुसल्मानसे हिन्दू होना निश्चय किया था। उस समय भारतवर्षमें सर्वत्र ही बहुतसे हिन्दू, मुसल्मान पीरोंकी भक्ति और पूजा करते थे, इससे क्या वे मुसल्मान समझे जाते हैं। इससे जाटोंको मुसल्मान धर्मवाला कहना ठीक नहीं है।

द्वितीय-भाटीगण जिससे फिर आक्रमण न कर सकें इस हेतु पाश्चात्य सीमाकी रक्षा करनी होगी।

तृतीय-यहांके निवासियोंके चिर-प्रचलित स्वत्व और अधिकारपर आप किसी प्रकारका हस्ताक्षेप न कर सकेंगे।

दोनों जाट नेताओंने बीकाके सम्मुख जाकर उपरोक्त तीनों प्रस्तावोंको कह सुनाया, नीति-विशारद बीकाने गोदारादिकोंके उस प्रस्तावमें तुरन्त ही अपनी संमति दी। जब कि बिना युद्ध हुए वहां अपना अधिकार होना है, तब ऐसा कौन है कि जो अपनी संमति न देगा? बीकाके इस प्रकार संमति देते ही गोदारालोगोंने उसको तथा उसके उत्तराधिकारियोंको तुरन्त ही अपना अधीश्वर मान लिया। विजयी बीकाके साथ गोदारावासियोंका यह नियम निश्चित हुआ कि बीका और गोदारावासियोंकी वासभूमिमें जितने घर हैं उन सब घरोंसे करका एक २ रुपया लिया जाय, और गोदाराके अधिकारी भूभागोंपर प्रत्येक सौ बीघे जमीन पर किसानोंसे दो रुपया करका लिया जायगा। राठौर बीकाने इसमें भी अपनी संमति देनेमें विलम्ब न किया। क्या इस समय कोई भारत जाति आत्मसमर्पण करते समय अपने स्वत्वकी रक्षा करनेके लिये कुछ कह सकी है? कोई भी नहीं, क्लाइवके सन्मुख मीरजाफरसे कष्ट पाकर क्या आत्मसमर्पण करते समय बंगाली कुछ कह सके थे। अहा! एक सामान्य पशुपालक गोदाराके जाटने वीरश्रेष्ठ बीकाके हाथमें आत्मसमर्पण करके तथा उसको स्वजातिके अधीश्वर पदपर वरण कर, करदेनेमें अपनी सम्मति प्रकाशित करके भी अपने स्वजातिके स्वार्थ और अधिकारको विस्मृत न किया। उन्होंने निर्भय होकर स्पष्टरूपसे कहा "आप अथवा आपके भविष्य उत्तराधिकारी हमारे जातीय अधिकारके ऊपर किसी प्रकारसे हस्ताक्षेप न करें इसमें प्रमाण क्या है? तथा इसका साक्षी कौन है?" धर्मनीतिके साथ राजनीतिका कहाँतक सम्बन्ध है? इस बातको बीका भली भाँतिसे समझता था, और वह यह भी जानता था कि कूट राजनीतिके चक्रको घुमाकर अपना स्वार्थ साधन करना किसी प्रकार भी उचित नहीं, इसी कारणसे गोदाराके जाटोंने बिना समर किये जब उसकी वश्यता स्वीकार कर ली तब उसने अपनी नवीन प्रजाके ऊपर किस प्रकार व्यवहार करना कर्त्तव्य है तथा किस प्रकारसे उनके भयको दूर किया जाय इसका निश्चय शीघ्र ही कर लिया, और वह निश्चय जिस प्रकारसे एक पक्षके भयका दूर करनेवाला तथा गौरवका बढानेवाला था दूसरे पक्षमें भी वही मत राजनीतिज्ञताका चूडान्त परिचय देनेवाला था। बीकाने गोदारासे उसी समय कह दिया कि "मैं तथा मेरे उत्तराधिकारी किसी समय भी तुम्हारे चिर प्रचलित अधिकारके ऊपर हस्ताक्षेप नहीं करेंगे, उसकी साक्षी यही है कि तुमने जो बिना युद्ध किये हुए हमारे हाथमें आत्मसमर्पण किया है, और मुझे अपने अधीश्वर पदपर वरण किया है, इसके स्मृति चिह्नस्वरूपमें हमारे उत्तराधिकारियोंके पक्ष और हमारे निज पक्षसे इस नियमका निर्धारण होगा, और इन नियमोंके पालन करनेकी यह रीति बाँधते हैं कि, मैं और मेरे उत्तराधिकारी, तुम

और तुम्हारे दोनों नेताओंके वंशधरोंसे अभिषेकके समयमें राजतिलक ग्रहण किया करेंगे। जबतक इस प्रकारसे राजतिलक न दिया जायगा तबतक राजसिंहासन सूना विचारा जायगा"। अहा! कैसी सरल और उदार राजनीति है।

जिस प्रकार वीरश्रेष्ठ बीकाने बिना युद्ध किये अत्यन्त सरलतासे एकमात्र अपने बल विक्रमका भय दिखाकर गोदाराके ऊपर अपना अधिकार किया था, इस प्रकारकी घटनाएँ भारतवर्षके इतिहासमें बहुत कम पाई जाती हैं। एक और भी विचित्र दृश्य हमारे नेत्रोंके सम्मुख आया है? वह यह कि राजपूत वीरोंने रजवाडों वा मारवाडके जिन देशोंके प्राचीन निवासियोंको राजनैतिक बलसे परास्त करके अपने अधिकारका विस्तार किया है और वहाँके प्राचीन निवासियोंने जिस भावसे उनकी अधीनता स्वीकार कर उन्हें अपना अधीश्वर स्वीकार किया है उसके स्मृति चिह्न—स्वरूप अनेक प्रथाएँ आजतक मेवाड, मारवाड और आमेर आदि राज्योंमें प्रचलित हैं! मेवाडके आदि निवासी भील गणोंने गहलोत वंशके आदि पुरुषको जिस भावसे राजपदपर अभिषिक्त कर उनको राजतिलक दिया था, उदयपुरके महाराणाके यहाँ आजतक उसी भावसे भीलनेताके द्वारा राजतिलक देनेकी रीति प्रचलित देखी जाती है। आज भी मेवाडके महाराणाके अभिषेकके समय वह ओगना भील सम्प्रदायके नेता अपने हाथके अँगूठेको छेदन कर उस रक्तसे महाराजके मस्तकपर तिलक कर और महाराणाका हाथ पकड कर उनको सिंहासन पर बैठाते हैं। और उन्दरी नामक भील सम्प्रदायके नेता अपने पूर्वपुरुषोंके समान टीका देनेके समय, एक चाँदीके पात्रमें धान, दूर्वा और रुपये रख कर नजर देते हैं। आमेर अर्थात् जयपुरके आदिम निवासी मीनागण भी राजाके अभिषेकके समय इस प्रकार तिलक किया करते हैं। कोटा और बूँदी राज्य हाडौतीके आदिम अधीश्वरोंके नामसे आजतक पुकारा जाता है। महाराज बीकाने बिना युद्ध किये जो जाटोंको अपने वशमें कर लिया था सो बीकाके उत्तराधिकारियोंने भी दो प्रथाएँ उसके स्मृति चिह्नस्वरूप रक्खी थीं। पाण्डुने जिस प्रकार बीकाके मस्तकपर राजतिलक किया था, आजतक बीकानेरके अधीश्वरोंके मस्तकपर उसी पाण्डुके वंशधरोंके सबमें प्रधान नेता उसी भाँति तिलक किया करते हैं। अभिषेकके समय महाराज पाण्डुके वंशधरोंको भेंटमें पचीस सुवर्ण मुद्रा दिया करते हैं। अहा! राजाकी प्रतिज्ञा पालनका कैसा उज्वल निदर्शन है। पलासीके युद्धके पीछे क्लाइवने जालपत्रको प्रकाश कर अमीचन्दको वंचित किया था, और समरके प्रधान सहायकारी मीरजाफरको भी सिंहासनसे रहित कर दिया था, परन्तु क्षत्रिय वीर बीकाने जो प्रतिज्ञा की थी उसके वंशधर भी आजतक उस प्रतिज्ञाको उसी प्रकारसे पालन करते आते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि बीका स्वयं इस बातको भलीभाँतिसे जानते थे कि राजाको किस प्रकारसे प्रतिज्ञा पालन करना चाहिये और किस प्रकारसे प्रजाके हृदयपर अधिकार करना उचित है। इसका एक और प्रमाण यह भी है कि बीकाने उसके निकट यह प्रस्ताव किया था कि "यह देश मुझे दे दो, मैं इस स्थानपर राजधानी स्थापित करूँगा"। यदि बीका इच्छा करते तो

अपनी चतुरता तथा कूट राजनीतिके जालका विस्तार करके उस देशपर अधिकार कर सकते थे, परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। उनके उस प्रस्तावके करते ही उस भूखण्डके अधिकारीने कहा "मैं इस देशको देनेके लिये तैयार हूं, परन्तु यह देश जो कि मेरे अधिकारमें था वह मैंने आपको दिया, इसके स्मरणके लिये आपके नामके साथ मेरा नाम मिलाकर इस राजधानीका नाम रखना होगा"। बीकाने तुरन्त ही यह बात भी मान ली। इसी कारणसे उस राजधानीका नाम बीकानेर हुआ। क्योंकि उस जाटका नाम नेरा था।

दिवाली और होलीके समयमें शेखासर और रूणियांके वर्तमान प्रधान नेता आजतक बीकानेरके अधीश्वर और समस्त राठौर सामन्तोंका तिलक करते हैं। रूणियांके नेता चांदीके पात्रमें टीका देनेके समय चन्दनादि समस्त सामग्री हाथमें लेते हैं और शेखासरके नेता उसे हांथमें लेकर स्वयं महाराजके मस्तकपर तिलक लगाते हैं। महाराज तिलक पाकर उनको भेंटमें एक सुवर्णकी मोहर और पांच रुपये देते हैं। इस प्रकार जाट नेताओंके राजतिलक दे चुकनेपर पीछे सामन्त लोग अपने अपने पदके अनुसार एक २ करके महाराजका तिलक करते हैं। राजाकी ओरसे कुछ सुवर्णकी मुद्रा शेखासरके नेताको और चाँदीकी मुद्रा रूणियांके नेताको मिलती हैं।

विजयी बीकाने इस प्रकारसे गोदाराके जाटोंपर अपने अधिकारका विस्तार करके प्रतिज्ञा की, कि वह और उनके उत्तराधिकारी किसी समयमें भी उनके पैतृक अधिकारपर हस्ताक्षेप नहीं करेंगे। गोदारागणोंने तुरन्त ही उस प्रतिज्ञासे प्रसन्न हो महाबली राठौर राजा वीर बीकाकी अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकारसे बीकाने गोदारा देशको जीतनेके लिये निकटवर्ती जोहियोंके देशको जीतनेका संकल्प किया। जोहिया और जाटोंके साथ गोदाराओंका बहुत समयसे वैमनस्य चल रहा था, इस कारण वीर व्रतधारी बीका असीम साहसी राठौर सेनाको लेकर नवजीत गोदारोंके साथ मिलकर शीघ्र ही जोहियोंके जीतनेके लिये चले। थोडे ही समयमें गोदारावासी बीकासे इतनी प्रीति करने लगे थे कि बीकाके प्रस्ताव करते ही उन्होंने अस्त्र धारण करके रणभूमिमें जाकर जोहियोंपर आक्रमण करनेमें कुछ भी बिलम्ब न किया। इन्हीं जोहियोंके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "मरुक्षेत्रके समस्त उत्तरांशमें अधिक क्या सतलजतक इन जोहियोंकी बस्तीका विस्तार था। उनके अधिकारी देशोंमें ग्यारहसौ ग्राम थे, परन्तु तीन शताब्दियोंके बीचमें अब जोहिया नामतक लोप हो गया।"

जोहियोंके सर्वप्रधान नेता शेरसिंह मरूपाल नामक स्थानमें निवास करते थे, विजयी बीका अपनी पराक्रमशाली सेनाको साथ लेकर शेरसिंहपर आक्रमण करनेके लिये चले। शेरसिंहने भी समस्त जोहियोंकी सेनाके साथ अपनी रक्षा करनेके लिये युद्धकी तैयारी की। बराबर कई युद्धोंमें विजयी होकर इस बारके युद्धमें बीका सरलतासे जय प्राप्त न कर सके। शत्रुगण घोर पराक्रम दिखाकर आक्रमण करनेवालोंको निराश करने लगे। परन्तु कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि अन्तमें षड्यन्त्र

द्वारा शेरसिंहके प्राण नाशकर, बीकाने फिर उत्साहके साथ आक्रमण करके मरूपालपर अधिकार कर लिया । यहाँतक कि अन्तमें विवश होकर उन्हें राठौरोंकी अधीनता स्वीकार करनी पडी ।

विजयी बीकाने इस प्रकारसे सामान्य सेनाके साथ एक एक करके एक सुविस्तृत प्रदेशको अपने अधिकारमें कर लिया और अन्तमें पश्चिमकी ओरको दिग्विजयके लिये कूच किया, पश्चिम सीमाके निकटवर्ती भाटीराज्यके अधीश्वरने बहुत दिनों पहिलेसे जाटोंके हाथसे वागर नामक देशको अपने अधिकारमें कर लिया था । अस्तु बीकाने अपनी सेनाके साथ पहिले उसी देशपर जाकर भाटियोंके ग्राससे उस देशको छीन लिया । बीकाने इस प्रकारसे अपने पिताकी राजधानी मंडोरसे दिग्विजयके लिये बाहर जाकर तीस वर्षके पीछे चारोंओर अपना आधिकार करके इस वागोरदेशमें राजधानी स्थापित करनेका विचार किया और नेरा नामक जाटसे पूर्वोक्त भूखंडको लेकर संवत् १५४५ सन् १४८९ ईसवी की १५ मईको वैशाख मासमें "बीकानेर" नामक नवीन राजधानी स्थापित की ।

हम पहिले ही एक स्थानपर वर्णन कर चुके हैं कि बीका अपने चाचा काँधलके साथ इस दिग्विजयके लिये बाहर गये थे । वीरश्रेष्ठ काँधलने अपनी वीरता और नीतिचातुरी द्वारा अपने भतीजे बीकाकी इस नवीन राज्यके स्थापनमें विशेष सहायता की थी; बीकाने मंडोरको छोडकर क्रमानुसार तीस वर्षतक अपने अधिकारके विस्तार करनेमें लिप्त रहकर अंतमें जब नवीन राजधानीकी प्रतिष्ठा कर अपनी शासनशक्तिको भली भाँतिसे दृढ कर लिया तब वीरश्रेष्ठ काँधलने अपने निकट-आत्मीय राठौरोंके साथ बीकानेरको छोडकर उत्तर प्रान्तमें एक स्वतंत्र राज्यकी प्रतिष्ठा करनेके लिये यात्रा की । राठौर वीर काँधलने अपनी साहसी सेनाके साथ क्रमानुसार सियाग, वेनीवाल और सारण नामक जाटोंकी तीनों सम्प्रदायोंको पराम्त कर अपनी शासन शक्तिको शीघ्र ही प्रबल कर लिया। इन कांधौलजीके वंशधर अबतक बीकानेरके उत्तर प्रदेशमें पाये जाते हैं और वे इस समय काँधलोत राठौर नामसे प्रसिद्ध हैं । यद्यपि उस समय यह तीनों देश बीकानेर राज्यके एक प्रधान अंशस्वरूप थे; परन्तु इन कांधलोत राठौरोंने बीकानेरके महाराजको सम्पूर्णरूपसे अपना अधीश्वर नहीं माना केवल कुटुम्बके संम्बन्धसे उनके गौरवका परिचय दिया । यदि उनसे बीकानेर राज्यकी ओरसे कोई कर माँगा जाता तो वे उत्तर देते कि क्या हमारे पूर्वपुरुष कांधल ही इस देशपर अधिकार नहीं कर गये हैं ? क्या हमारे पूर्वज कांधलने ही बीकाको राज्यपदपर अभिषिक्त नहीं किया था और जब कि हमारे पूर्वपुरुष काँधलने ही बीकाको राजेश्वर बनाया है ? तब बीकाजीकी संतान बीकानेरके महाराजको हमसे कर लेनेका क्या अधिकार है ?

जो हो ! वीर तेजस्वी काँधल एक स्वतंत्र राज्यकी प्रतिष्ठा करनेके पहिले ही इस संसारसे चले गये । जब वह हिसारके किलेपर अधिकार करनेको गये तब उसी समय

दिल्लीके यवनसम्राट्के प्रतिनिधिने इनको मार डाला। इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि यदि कांधल जीवित रहते तो और भी एक सुविस्तृत राज्यको स्थापित कर जाते।

महाराज बीका नवीन राजधानी बीकानेरको स्थापित करनेके पीछे अधिक दिन तक राज्य न कर सके। उन्होंने भारतवर्षमें इस नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा करके संवत् १५५१ में इस मायामय शरीरको त्याग दिया। बीकाने पूंगलके जिस भाटियोंके अधीश्वरकी कन्याके साथ विवाह किया था, उसके गर्भसे बीकाके लूनकरन और गडसी नाम दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेंसे सबसे बडे पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए और छोटे गडसीने गडसीसर और अडसीसर नामक दो नगर स्थापन किये। उनके अगणित वंशधर इस समय गडसियोत बीका नामसे पुकारे जाते हैं और वह गडसीसर अथवा गरीबदेसर नामक स्थानमें निवास करते हैं। इन दोनो देशोंमें प्रत्येक देशके अधिकारमें चौबीस चौबीस ग्राम हैं। विजयी बीकाके बडे पुत्र लूनकरणने राजपद्पर अभिषिक्त होकर अपने राज्यकी पश्चिम सीमाको बढानेके लिये एक एक कर भाटियोंके अधिकारी अनेक देशोंको जीत लिया। जिस समय लूनकरणने स्वयं अपने बाहुबलसे बीकानेर राज्यकी सीमाको बढा लिया था, उस समय इनके चारों पुत्रोंमेंसे बडे पुत्रने महाजन नामक देश और १४४ ग्रामोंको लेकर स्वतन्त्र भावसे रहनेकी इच्छा प्रकाश की। महाराजने तुरन्त ही अपने पुत्रकी इस इच्छाको पूर्ण किया। इस कारण बडे पुत्रने उक्त महाजन देश और १४४ ग्राम लेकर सिंहासनका समस्त अधिकार अपने छोटे भाई जैतसीको दे दिया। संवत् १५६९ में लूनकरणकी मृत्यु हो गई तब जैतसी पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। उनके और भी दोनों भ्राताओंने दो स्वतंत्र देश और थोडी सी जमीन ले ली। जैतसीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए–पहिले कल्याणमल, दूसरे शिवजी और तीसरे अश्वपाल। जैतसिंह भी बीकाके ही समान वीर थे उन्होंने स्वाधीनगिरासियाके अधीश्वरोंमेंसे अन्यतर नारनोत नामक देशके अधिनायकको युद्धमें परास्त करके नारनोतपर अधिकार कर लिया, और अपने दूसरे पुत्र सिरंगजीको उन देशोंका अधिकार दे दिया। बीका और कांधलके इस मारवाडमें बैठनेके पहले ही राठौर वीर वीदाने राठौर सेनाके साथ आकर वहां छावनी स्थापन की थी। वीरश्रेष्ठ जैतसीने भी उसी बीदावंशको परास्त करके उनको अपने आधीन कर उनसे वार्षिक कर लेनेका प्रस्ताव, किया और इस वार्षिक करके अतिरिक्त और भी कुछ कर उनसे ग्रहण किया।

संवत् १६०३में, जैतसीके परलोकवासी होनेपर कल्याणमल पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। यद्यपि कल्यणमलके शासन समयमें बीकानेरकी कुछ उन्नति नहीं हुई और न कोई परिवर्तन हुआ, परन्तु इन्होंने दीर्घकालतक निर्विघ्नतासे राज्य किया। इनके

---

(१) महात्मा टाड साहबने टीकेमें लिखा है कि "इन मरुक्षेत्रके दूरवर्ती देशोंका प्राचीन समयके युद्धका वृत्तान्त यथारीतिसे वर्णन किया गया है (पर यहां उसके लिखनेका प्रयोजन नहीं है) कारण कि सभी युद्ध समान थे, केवल उनके नाम और स्थान भिन्न हैं।

तीन पुत्र उत्पन्न हुए—पहिले रायसिंह दूसरे रामसिंह और तीसरे पृथ्वीसिंह। कल्याणसिंहकी संवत् १६३० में मृत्यु हो गई, तब रायसिंहके मस्तकपर राजछत्र शोभायमान हुआ।

रायसिंहके शासनसमयमे बीकानेरके गौरवकी सीमा बढनी प्रारंभ हुई। बीकानेर इतने दिनोंतक अत्यन्त सामान्यरूपसे एक छोटा राज्य गिना जाता था। परन्तु साहसी वीर और नीतिचतुर रायसिंहने अपने राज्यकी उन्नति करनेके लिये ही पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर बडे राजनैतिक रंगभूमिमें चरण रक्खा था। इस समय दिल्लीके सिंहासनपर बादशाह अकबर विराजमान थे। रायसिंह यह भलीभाँतिसे जान गये थे कि भारतवर्षके राजपूत राजाओंने दिल्लीके बादशाहके अधीनमें रहकर जिस भावसे अपने गौरव और राज्यकी सीमाको बढा लिया है। युद्धभूमिमें जिस भावसे यवन बादशाह उनसे प्रसन्न हुआ है और जिस भावसे उन्होंने अपना राज्य बढाया है। इस समय हमें भी केवल बीकानेरके शासनकार्यसे ही संतुष्ट होकर समय बिताना उचित नहीं है बरन् इस समयके बराबरवाले अन्यान्य देशी राजाओंके समान नाम और यश पानेकी चेष्टा करना उचित है। विशेष करके वह इस बातको भी जान गये थे कि ऐसा एक दिन अवश्य ही आवैगा कि जिस दिन दिल्लीके बादशाह बीकानेरपर अधिकार करके हमैं अपनी आधीनतामें करनेका यत्न करेंगे, इस कारण जब कि भारतवर्षके प्रधान २ राजा ऐसे प्रबल बलशाली होकर भी स्वाधीनताकी रक्षा न कर सके तब मेरा उपेक्षा दिखाकर स्वाधीनताकी रक्षा करना अवश्य ही असंभव है। इस लिये इस समय यहाँ उचित है कि मैं पहिलेसे ही बादशाहके साथ मित्रता करलूँ। रायसिंहके सिंहासनपर बैठनेके समयतक इस देशके जाट अधिकतासे अपने प्राचीन स्वत्वकी रक्षा करते आये थे, परन्तु समयकी गतिसे राठौरोंकी संख्या क्रमानुसार बढती जाती थी। और उन जाटोंको पहिलेके समान अपना स्वत्वपालन कष्टदायक हो गया था इसीसे उनके राजनैतिक अधिकार घटते जाते थे। स्वाधीनता होनेके साथ ही साथ उनका वह साहस बल विक्रम इत्यादि भी एक २ करके लोप होते जाते थे। इसी प्रकारसे बीकानेर राज्य शक्तिशाली हो गया, परन्तु समयकी प्रबलताके कारण जाटोंकी स्वतंत्रता छीननेवाला वह राज्य भी शीघ्र ही दिल्ली राज्यकी परतंत्रताका अनुगामी होनेपर विवश हुआ।

पिताके परलोकवासी होनेपर रायसिंह स्वयं पिताकी भस्म सिरानेके लिये गंगाजीको गये। रायसिंहने जैसलमेरकी जिस कन्याके साथ पाणिग्रहण किया था। बादशाह अकबरने भी उसी राजाकी एक अन्य कन्याके साथ विवाह किया था, इस कारण सम्राट् अकबरके साथ रायसिंहका पारिवारिक सम्बन्ध पहिलेसे ही था। वह पिताकी भस्म और अस्थियोंको गंगाजीमें डालकर यवन बादशाहकी राजधानीको चले आये। पहिले सम्बन्धके होनेसे बादशाह अकबरके समीप इनको अपना परिचय देनेमें बडा सुभीता मिला। आमेरके महाराज राजा मानसिंहने इस समय बादशाह अकबरकी सभामें विशेष प्रतिपत्ति प्राप्त की थी, उन्हीं राजा मानसिंहने बीकानेरके महाराज रायसिंहका परिचय सम्राट् अकबरके समीप करा दिया। रायसिंहका भाग्य प्रसन्न

हो गया था इस कारण बादशाह अकबरने अपने हिन्दू आत्मीय रायसिंहको बडे आदर भावके साथ ग्रहण कर, उनको चार हजार अश्वारोही सेनाके नेता पदपर महाराजकी उपाधि और हिसारदेशके शासनका भार अर्पण किया। बीकाने सामान्य रावकी उपाधि लेकर नवीन राज्यकी प्रतिष्ठा की थी, इस समय रायसिंह सबसे पहिले राजाकी उपाधि धारण कर उस बीकानेर राज्यका गौरव बढानेको अग्रसर हुए। बादशाह अकबरके इस प्रकार प्रसन्न होनेपर भारतके राजाओंमें बीकानेर और बीकानेरपतिका नाम विख्यात हो गया। विशेष करके बादशाह इस समय मारवाडपर आक्रमण करनेके लिये बाहर गये, और नागौर देशको जीतकर उसका अधिकार उन्होंने रायसिंहको ही दे दिया, इससे रायसिंहका सन्मान और भी बढ गया। भाग्यवान् रायसिंह इस प्रकारसे बादशाह अकबरसे संमानित हो सामर्थ्य पाकर अपने राज्यको लौट आये, और विशेष करके यह बादशाहकी चार हजार अश्वारोही सेनाके नेतापदको प्राप्त हुए। इसीसे रजवाडोंमें उनका गौरवरूपी सूर्य पूर्ण रूपसे उदय हो गया। महाराज रायसिंहने बीकानेरमें आकर अपने छोटे भाई रामसिंहको एक सेनाके साथ भाटियोंके प्रधान स्थान भटनेरपर अधिकार करनेके लिये भेज दिया। रामसिंहने बडी सरलतासे वीर विक्रमी राठौरोंकी सेनाके साथ उन देशोंपर अधिकार कर लिया।

जोहियाके जाट सामान्य पशुपालन एवं कृषि व्यवसायमें नियुक्त होकर भी भारतकी वीर जातिके समान विशेष स्वाधीनताप्रिय थे। यद्यपि बीकानेरके महाराजने उनके उस स्वाधीनताके रत्नको हरण कर लिया था; यद्यपि जोहियोंके अधिकारी देशोंपर राठौरोंकी शासनशक्ति अत्यन्त प्रबल हो गई थी, तथापि वह जोहिया जाटगण अपनी हरण की हुई स्वाधीनताको फिर संग्रह करनेके लिये फिर भी हत उद्योग नहीं हुए। रायसिंह जिस समय यवन बादशाहसे सन्मानित होकर अपनी राजधानीको जा रहे थे उसी समयमें यह जोहिया जाति फिर स्वाधीनताको उपार्जन करनेके लिये अग्रसर हुई। रायसिंहने तुरन्त ही जाटोंके उस जातीय उदयको अस्त कर देना कर्त्तव्य जानकर विजयी राठौरोंकी सेनाको फिर जोहियोंकी वासभूमिमें भेज दिया। जिससे जोहिया गण फिर किसी प्रकारसे मस्तक न उठा सकें, और न फिर राठौरोंकी शासनशक्तिके विरुद्ध खडे होनेका साहस करें। राठौरोंकी सेनाने उसी अभिप्रायसे जोहियोंके अधिकारी देशपर भयंकर काण्ड उपस्थित कर दिया। प्रबल समराग्नि प्रज्ज्वलित हो गई, हजारों जोहिया जाटगण स्वाधीनताके लिये उस संग्रामभूमिमें प्राण त्यागने लगे। अंतमें रणवीर राठौरोंकी सेनाने उस देशको यथार्थ मरुक्षेत्रके समान कर दिया। महात्मा टाड साहब लिख गये हैं कि तभीसे अबतक यह देश जनशून्य अवस्थामें पडा है यद्यपि इस देशके बहुतसे नगर और ग्रामोंमें जोहिया जाटोंके अत्यन्त प्राचीन स्मृतिचिह्न विराजमान थे, परन्तु अब जोहियोंका नामतक यहांसे लोप हो गया है।

जोहियोंके अधिकारी देशोंमें भारतविजेता विख्यात् सिकन्दर यूनानी अर्थात् मैसिडोनियाके महावीर एलिकजण्डरका नाम आजतक विख्यात हो रहा है,

और उनके स्मृतिके चिह्न भी आजतक पाये जाते हैं। दादूसर नामक स्थानमें रंगमहल नामका एक प्राचीन महल टूटाफूटा विद्यमान है। सुना जाता है, कि यही प्राचीन राजवंशकी राजधानी थी। महावीर एलिक्जण्डर जिस समय भारतवर्षको जीतनेके लिये आया था, उस समय उसने दादूसरपर आक्रमण करके वहांके अधीश्वरको परास्त कर राजधानीको विध्वंस कर दिया था। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि यद्यपि एलिक्जण्डरने जोहियोंकी निवासभूमिके निकट पंजाबमें समराग्नि प्रज्वलित कर दी थी, परन्तु इतिहासमें ऐसा कोई प्रमाण नहीं पाया जाता कि जिससे वह गारा मार्गकी ओरसे इन जोहियोंके जीतनेके लिये आए हों। साधु टाड साहब अनुमान करते हैं कि महावीर एलिक्जण्डरके अधनिम्थ ग्रीक सेनापतिने समुद्रके किनारे जिस राज्यको स्थापित किया, विदित होता है कि, उसी राजाके किसी राजाने किसी समयमें आकर इस रंगमहलको विध्वंस किया होगा।

वीरश्रेष्ठ रामसिंह अपने अग्रजकी आज्ञासे जोहियोंको सब भांतिसे दमन कर, जिससे वह किसी प्रकार भी मस्तक न उठा सकें इस प्रकारसे अपनी शासनशक्तिको प्रबल करके, अन्तमें विजयी राठौरोंकी सेनाके साथ पूणियाके जाटोंके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये आगे बढे। बीकाके वंशधरोंने गोदारा और जोहियाका दमन करके अपने अधिकारका विस्तार कर तो लिया था, परन्तु वे पूणियाको परास्त नहीं कर सके थे। पूणियाके जाट अबतक अपनी प्राचीन स्वधीनताकी सब प्रकारसे रक्षा करते आये थे। महाराज रायसिंहने उनको दमन करके अपने राज्यकी सीमाको बढानेके लिये अनुज रामसिंहको आज्ञा दी। रामसिंहने तुरन्त ही पूणियाके जाटोंके विरुद्ध घोर युद्ध किया। भयंकर युद्ध होनेके पीछे अत्यन्त बलशाली राठौरोंने जय प्राप्त करके पूणियाके अधिकारी देशको अपने हस्तगत कर लिया। विजेता रामसिंहने नवीन अधिकारी देशमें राज्य स्थापित करके स्वयं वहां निवास करनेका विचार किया। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि वीरश्रेष्ठ रामसिंह जयलक्ष्मी प्राप्त करके भी स्वाधीनताकी रक्षाके लिये प्राणपणसे यत्न करनेवाले पूणियाके जाटोंके हाथसे थोडे ही दिनोंमें मारे गये। रामसिंहके मारे जानेपर विजयी राठौरगण अधिकार स्थापन करनेमें फिर भी विचलित न हुए। समृद्धिशाली प्रधान २ सभी नगर राठौरोंके अधीनमें हो गये। यहांके राठौरगण रामसिंहोत नामसे विदित हैं। कर्नल टाड साहब लिखते हैं। कि यद्यपि रामसिंहोतके द्वारा बीकानेरके राठौरोंके संख्या वृद्धि और उस पूणियाके अधिकारी देश बीकानेरके अधिकारमें होनसे राज्यकी सीमा और भी बढ गई थी। परन्तु कांधलोतगणोंने बीकानेरके महाराजकी पूर्ण अधीनता स्वीकार नहीं की; और बीकानेरके महाराजको जिस भांति कांधलोतोंके द्वारा युद्धके समयमें विशेष सहायता नहीं मिली थी, यह रामसिंहोत राठौरगण भी बीकानेरके महाराजके साथ उसी प्रकारका व्यवहार करते आये थे, और बीकानेरके महाराज भी उसी प्रकारसे इनके बलसे अपने बलको प्रबल न जान सके। सीधमुख एवं सांखू रामसिंहोतोंकी दो प्रधान वासभूमि थीं।

इस प्रकारसे पूणियाकी स्वाधीनता हरनेके साथ ही साथ मारवाडके छः जाटोंके अधिकारी देश भी बीकानेरके महाराजके अधिकारमें हो गये। यह जाट इस समय खेती और पशुपालनके व्यवसायमें अपना समय व्यतीत करते थे। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि इन निरीह जाटोंने वर्तमान समयमें सम्पूर्ण बली राठौरोंके प्रभुको रीतिके अनुसार कर देनेमें किसी प्रकारकी भी आपत्ति न की।

यद्यपि बीकाके वंशधर रायसिंहने यवन शासनके समय सबसे पाहिले राजाकी उपाधि धारण कर समयके अनुसार नीतिज्ञताके समान कार्यक्षेत्रमें विचरण करना प्रारंभ किया, परन्तु वह साहस बल और विक्रममें किसी अंशमें भी हीन नहीं थे उस समय वीरतामय कार्यक्षेत्र, वीरलीलास्थान जितना ही विस्तारित होता था उन्हें उतने ही शूर वीरता प्रकाश करनेके अनेक साधन संघटित होते थे और उतना ही उनके गौरवका सूर्य अपनी पूर्ण मूर्तिसे मध्याह्न समयके सूर्यके समान चारों ओर अपनी तीक्ष्ण किरणोंके फैलानेमें समर्थ हुआ। रामचन्द्र और लक्ष्मणजीके बाहुबल प्रचार करनेका एकमात्र मूल लंकाका युद्ध था। यदि रावण सीताजीको हरण करके न ले जाता तो कभी भी दो सूर्यवंशी वीर-व्रतधारी वीरोंकी ऐसी प्रशंसा सुनाई न देती। लंकाके विजयके पीछे महाराज रामचन्द्र और लक्ष्मणजीका ऐसा गौरवयुक्त युद्ध क्यों नहीं हुआ? भीमसेन अथवा अर्जुन इत्यादि पांण्डवोंने अपने महान् बलविक्रमको प्रकाश कर महावीरकी उपाधि धारण की थी। मेवाडके वंशधर इतने दिनोंतक मरुक्षेत्रके सीमाबद्ध देशमें अपने बल विक्रमको प्रकाश करते आये थे। परन्तु महाराज रायसिंहको दिल्लीके बादशाह अकबरकी अधीनता स्वीकार करनके पीछे अपने पूर्वपुरुषोंकी अपेक्षा अधिक गौरव संग्रह करनेमें विशेष सुभीता मिलने लगा। उनका कार्यक्षेत्र विस्तृत हो गया। वह भारतके अनेक प्रान्तोंमें क्रमानुसार राठौरोंके बाहुबलका पूर्ण परिचय देने लगे। सम्राट् अकबरने अपने शासनसमयमें भारतवर्षके जिस २ प्रान्तमें जिस जिस युद्धको उपस्थित किया रायसिंहने भी उसी २ समरभूमिमें जाकर असीम साहसके साथ अपने बाहुबलकी पराकाष्ठा दिखलाई। रायसिंहने अहमदाबादके शासनकर्ता मिरजा मुहम्मद-हुसनेके साथ वीर विक्रमशाली राठौरोंकी सेनाको ले युद्ध करके घोर वीरता प्रकाश कर उसको परास्त कर दिया, और अहमदाबादपर भी शीघ्रतासे अधिकार कर लिया। इसी कारणसे यह बादशाहके सम्मुख बडे वीर गिने जाते थे, और इनका सम्मान भी सबसे अधिक होता था। सम्राट् अकबरकी, इन वीर बिक्रमशाली हिन्दूराजाओंके साथ पारिवारिक सम्बन्ध करके, भारतमें यवन शासनको दृढ करनेकी, विशेष इच्छा थी। इस लिये वह हिन्दूराजाओंमें जिसको वीर और असीम साहसी जानता था उसीको अपने हस्तगत करनेके लिये उसके बल विक्रमका ऊँचा पुरस्कार देकर उसके हृदयपर अधिकार कर लेता था। रायसिंहके बल विक्रमको देखकर अकबर विशेष प्रसन्न हुआ, और उसने उनका अधिक सन्मान बढाया। यद्यपि रायसिंहके साथ उसने सांसारिक सम्बन्ध पहिलेसे ही कर लिया था, तथापि उस सम्बन्ध बन्धनको दृढ करनेके लिये उसने अपने पुत्र कुमार सलीमके (जिसने पीछे जहांगीर नाम धारण किया)

साथ रायसिंहकी कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित किया। महाराज रायसिंह समयके सेवक और नीतिके जाननेवाले थे, इस कारण उन्होंने अन्यान्य राजपूत राजाओंका पहिलेसे यवन सम्राट वंशके साथ वैवाहिक सम्बन्ध होता हुआ देखकर उस प्रस्तावमें कुछ भी आपत्ति न की। विवाहका कार्य बडी धूमधामके साथ समाप्त हो गया। इस विवाहके फलस्वरूपमें अभागे कुमार परवेजने जन्म लिया। महाराज रायसिंहने इस प्रकार सबसे पहिले भारतवर्षमें बीकानेरका नाम और यश विस्तार करके, बादशाहके सन्मुख सन्मानित हो, संवत् १६८८ (१६३२ ईसवीमें) इस मायामय शरीरको त्याग दिया।

महाराज रायसिंहकी मृत्युके पीछे उनके एकमात्र पुत्र करणसिंह पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। करणसिंह पिताकी जीवित अवस्थामें ही दिल्लीके सम्राटकी अधीनतामें दो हजार अश्वारोहीके नेताकी उपाधि धारण कर दौलताबादके शासनकर्त्ता पदपर नियुक्त थे। करणसिंह सुलतान दाराशिकोहके विशेष अनुगत थे। दाराका भी प्रवेश जिससे बादशाहके यहाँ हो जाय इस विषयमें करणसिंहने विशेष सहायता की थी। इसी कारणसे दाराके प्रतिद्वन्द्वीके प्रधान सेनापति करणसिंह जिनके अधीनमें रहते थे, उन्होंने करणसिंहके प्राणनाश करनेके लिये गुप्तभावसे एक षडयंत्र जालका विस्तार किया। परन्तु बूंदीके महाराजने पहिलेसे ही करणसिंहको सावधान कर दिया, इस कारण करणसिंहने बडी सरलतासे शत्रुओंकी उस पापकामनाको निष्फल कर दिया। करणसिंहने कई वर्षतक अपने प्रबल प्रतापके साथ राज्यशासन करके निम्नलिखित चार पुत्रोंको छोडकर शरीरको त्याग दिया।

१-पद्मसिंह।
२-केसरीसिंह।
३-मोहनसिंह।
४-अनूपसिंह।

करणसिंहके चार कुमारोंमेंसे प्रथम दोनोंने यवन सम्राट्के कार्यमें अपने जीवनका बलिदान किया। जिस समय बादशाहकी सेना बीजापुरके युद्धमें नियुक्त थी, उस समय पद्मसिंह और केसरीसिंहने राठौरोंकी सेनाके साथ बादशाहकी ओरसे रणभूमिमें असीम साहस प्रकाश करके प्राण त्याग किये। तीसरे पुत्र मोहनसिंहके जीवनके वियोगान्त अभिनयका जो वृत्तान्त फरिश्ताने दक्षिणके इतिहासमें वर्णन किया है। हमने इस स्थानपर उसका वर्णन करना उचित जाना है। क्योंकि इससे

(१) करणसिंह तो रायसिंहके पोते थे और रायसिंह संवत् १६६८ में मरे थे। उनके ४ बेटे दलपतसिंह सूरसेन किसनसिंह और भूपतसिंह थे। रायसिंहके पीछे दलपतसिंह गद्दीपर बैठे और संवत् १६७० में शाही सेनासे लड़कर काम आये, तब सूरसेन राजा हुए। उनका देहान्त संवत् १६८८ में हुआ। उनके पीछे कर्णसिंह गद्दीपर बैठे थे। इस तरह ऊपर लिखे लेखमें दो राजाओं अर्थात् दलपत और सूरका हाल नहीं है।

प्रगट होता है कि अपने पद और सन्मानकी रक्षाके लिये क्षत्रियजाति किस प्रकारसे अपने प्राणतक देनेमें तैयार हो जाती थी ।

जिस समय बादशाहकी सेना दक्षिणको विजय करनेके लिये जा रही थी उस समय करणसिंहके चारों कुमार भी राठौरोंकी सेनाके साथ गये थे । एक समय दक्षिणकी मुहिममें शाहजादे मोअज्जिमके डेरोंमें उनके सालेके साथ मोहनसिंहका एक मृगके बच्चेके लिये झगडा हो उठा । धीरे २ वह झगडा इतना बढ गया कि दोनों क्रोधके मारे उन्मत्त होकर कमरसे तलवारें निकाल परस्पर युद्ध करने लगे । उस युद्धमें मोहनसिंहके गिरते ही यह शोचनीय समाचार शीघ्र ही राठौरोंके डेरोंमें पद्म-सिंहके पास भेजा गया । असीम साहसी पद्मसिंह अपने भ्राताके अपमान और मरणका समाचार पाकर क्रोधित सिंहके समान कंपायमान होते हुए नंगी तलवार हाथमें ले कितने ही राठौर सेवकोंके साथ उसके डेरोंमें आ पहुँचे । डेरोंमें जाते ही उन्होंने देखा कि भाई मोहनसिंहका सारा शरीर रुधिरसे सन रहा है, और प्राणपक्षी पयान कर गये हैं, ऐसी अवस्थामें वह पृथ्वीपर अचेत पडे हैं, और इस अवस्थामें भी शत्रु उनकी छातीपर बैठा है । यह देखकर राठौर कुमारके दोनों नेत्रोंसे मानो अग्निकी चिनगारियां निकलने लगीं । पद्मसिंहकी उस संहारमूर्ति तथा प्रतिहिंसा दानार्थी आकृतिको देखकर हत्याकारी यवनोंके हृदयमें महाभय उत्पन्न हुआ । राठौरोंके हाथसे निश्चय ही मृत्यु जानकर उन पापियोंने उसी समय अपने प्राणोंके भयसे कायरपुरुषोंके समान डेरोंसे भाग जानेकी चेष्टा की । परन्तु शाहजादेको भी डेरेमें बैठा हुआ देखकर पद्मसिंह कुछ भी शंकित न हुए, वरन् महाक्रोधित हो सिंहके समान गर्जन करके भ्राताकी हत्याकरनेवालेको मारनेके लिये उसके पीछे चले ।

तवारीख फरिस्तामें लिखा है कि " पद्मसिंहने क्रोधसे उन्मत्त होकर इस प्रकार बलके साथ तलवारका प्रहार किया कि उस प्रहारसे एक स्तंभके दो टुकडे हो गये और उसके साथ ही साथ हत्या करनेवालेके देहके भी दो खण्ड होकर एक ओरको जा पडे । " उचित दंड देकर पद्मसिंह अपने मृतक भ्राताका शरीर ले शाही डेरोंको छोडकर अपने स्थानको चले आये । जयपुर जोधपुर और हाडौती इत्यादि देशोंके जिन राजाओंने सेनाके साथ उन डेरोंमे निवास किया था । उन सबको बुलाकर हृदय-भेदी वक्तृतामें पद्मने सभीसे कहा कि पापात्मा यवनोंने मोहनसिंहका प्राण नाश करके समस्त राजपूत जातिका अपमान किया है, इस कारण यवन बादशाहके अधीनमें अब किसी भाँति भी रहकर रणभूमिमें उनकी सहायता करना राजपूतमात्रको उचित नहीं । उनके यह वचन सुनकर सभी राजपूतोंने कहा " शीघ्र ही इन डेरोंको छोडकर हम सबको अपने२ राज्यमें जाना उचित है और वह सभी लोग सेना साथ ले डेरोंको छोड अपने २ राज्यमें जानेके लिये तैयार भी हुए । शाहजादे मोअज्जिमने उनको सावधान करनेके लिये एक बुद्धिमान मुसलमान उमरावको भेजा । उमरावने राजपूत राजाओंको अनेक भाँतिसे समझाया, परन्तु उन्होंने उमरावकी बातपर कुछ भी ध्यान न दिया, उमरावने कहा, कि वीरश्रेष्ठ पद्मसिंह मोहनसिंहके हत्या करनेवालेको मारकर निश्चिन्त हो गये,

इससे शाहजादा इनके ऊपर कुछ भी क्रोधित न हुए, बरन् पद्मसिंहको इस कार्यके करनेमें उन्होंने अपनी सम्मति दी है, पर क्रोधित हुए राजपूतोंने किसीकी भी बातको न सुना और अपनी २ सेनाको साथ ले डेरोंको छोडकर दशकोशकी दूरीतक चले गये, अन्तमें जब महाविपत्तिको सम्मुख आया देखा तब शाहजादेने स्वयं जाकर उनको धीरज दिया और उनकी हानिको पूरण करनेकी प्रतिज्ञा की, तब राजपूत राजा फिर लौट कर डेरोंमें आये। इस घटनाके पीछे महाराज पद्मसिंह तथा केशरीसिंह बीजापुरके युद्धमें मारे गये। फरिस्ताके इतिहासमें केशरीसिंहकी वीरताका एक विशेष निदर्शन उल्लेख किया है। वह यह है कि एक समय केशरीसिंहने बादशाहके सम्मुख उनकी आज्ञासे राठौर जातिका बाहुबल दिखानेके लिये एक बडे भारी बलवान् सिंहके साथ तलवार हाथमें लेकर युद्ध किया था, और उसको मारकर उन्होंने केशरी नाम पाया था। इसके पहिले उनका क्या नाम था इसको हम नहीं जानते। केशरीसिंहने उस सिंहको मारकर ही बादशाहको सन्तुष्ट किया, इसके पुरस्कारमें बादशाहने इनको पच्चीस ग्राम दिये थे। उक्त इतिहाससे यह भी जाना जाता है कि केशरीसिंहने दक्षिण देशाधिपति एक राजाके हवशी जातके एक महाबलवान् सेनापतिको तलवारसे मारकर विशेष यश और गौरव प्राप्त किया था।

राजा करणसिंहके स्वर्गवासी होनेके पीछे उनके सबसे छोटे पुत्र अनूपसिंह संवत् १७३० (१६७४ इसवी) में राजाकी उपाधि धारण कर पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। महाराज रायसिंहके समयसे लेकर बादशाहके यहाँ बीकानेरके राजाओंकी विशेष प्रतिष्ठा होगई थी। विशेष करके बीकानेरके राजवंशसे बादशाहको अनेक समयमें सहायता मिली थी, वह इसका उचित पुरस्कार देनेके लिये कातर नहीं थे। महाराज अनूपसिंह एक महावीर और असीम साहसी पुरुष थे। बादशाहने इनको पाँच हजार अश्वारोही सेनाका मनसब अर्थात् उसके अधिपतिकी उपाधि देकर देशकी भूमिका अधिकार, तथा बीजापुर और औरंगाबाद देशके शासनका भार अपर्ण किया। अनूपसिंहने प्रबल प्रतापके साथ अपने राजशासनके समय सम्राट्के अधीनमें अनेक बार वीरता दिखाई, इससे इस वंशका गौरव दुगना बढने लगा। जिस समय काबुलके अफगान दिल्लीके बादशाहके विपक्षमें विद्रोही हो गये थे, उस समय मारवाडपति उस विद्रोहको दमन करनेके लिये बादशाहके द्वारा भेजे गये। बादशाहकी आज्ञासे वरिश्रेष्ठ अनूपसिंहने भी बीकानेरकी सेनाके साथ काबुलमें जाकर विद्रोहके निवारण करनेमें विशेष सहायता की थी। विद्रोह शांत हो जानेके पीछे वह अपने राज्यमें लौट आये; और फिर भी बादशाहके यहाँ रहकर उन्होंने अनेक युद्धोंमें यश पाया था। उनकी मृत्युके सम्बन्धमें फरिस्ता और राजपूत इतिहासमे मतभेद है। फरिस्ता लिखता है कि राजा अनूपसिंहने दक्षिणमें प्राणत्याग किये, परन्तु राठौरोंके इतिहाससे जाना जाता है कि जिस समय राजा अनूपसिंह दक्षिणमें सेनासहित गये थे तब वहाँ उनके डेरा स्थापनके स्थानपर बादशाहके प्रधान सेनापतिके साथ कुछ झगडा हो गया था, इससे वह अत्यन्त विरक्त होकर दक्षिणको छोडकर अपने

राज्यमें चले आये, और तुरन्त ही उन्होंने शरीर त्याग दिया। इसी शेषोक्त वृत्तान्त-को हम सत्य मानते हैं। महाराज अनूपसिंह, स्वरूपसिंह और सुजानसिंह नामक दो कुमारोंको छोडकर परलोकवासी हुए।

इतिहासवेत्ता टाड महोदय लिखते हैं कि स्वरूपसिंह संवत् १७६५ सन् १७०९ ई० में पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए, परन्तु इन्होंने अधिक दिनतक राजशासन नहीं किया। महाराज अनूपसिंहने जीवनकी शेषदशामें बादशाहकी सेनासे अपना सभी सम्बन्ध त्याग दिया था, इसीसे ओडनी देश जो इनको बादशाहसे पहिले मिला था, इनसे वापिस ले लिया गया। स्वरूपसिंहने अपनी सेनाको साथ ले उस ओडनी देशपर फिर अधिकार करनेके लिये धावा किया, उसी युद्धमें यह मारे गये। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि इनसे छोटे भाइ सुजानसिंह राजसिंहासनपर विराजमान हुए, परन्तु इनके राज्यकालमें कोई स्मरणीय घटना नहीं हुई। संवत् १७९३ (१७३७ ई०) में जोरावरसिंह बीकानेरके अधीश्वररूपसे विख्यात हुए, परन्तु सुजान-सिंहके समान इनका शासनकाल भी स्मरणीय नहीं था।

दश वर्षतक राज्य करके जोरावरसिंह इस असार संसारको छोड गये। तब वीर-श्रेष्ठ गजसिंह बीकानेरके सिंहासनपर विराजमान हुए। सुजानसिंह और जोरावरसिंहके शासनसमयमें बीकानेरमें किसी प्रकारकी घटना नहीं हुई। परन्तु गजसिंहका शासन अनेक घटनाओंसे पूर्ण था। महाराज गजसिंह वास्तवमें एक यथार्थ राठौर वीर थे, इस कारण उन्होंने इकतालीस वर्षतक राज्य करके राज्यकी सीमा और अपने गौरवको बहुत बढा लिया था। बीकानेरकी सीमाके भाटियोंके साथ तथा भावलपुरके मुसलमान राजाओंके साथ बराबर कई युद्ध करके इन्होंने अपने बाहुबलका चूडान्त परिचय दिया था। महाराज गजसिंहने भाटियोंके निकटसे राजासर, कालिया, रानियार, सत्यसर, बूझिपुरा, मुताळाई और अन्यान्य कितने ही छोटे २ प्रदेश तथा अन्य शत्रुओंके कितने ही छोटे २ देश और भावलपुरके अधिनायक खाँके साथ युद्ध करके अपने राज्यकी सीमामें स्थित विशेष प्रयोजनीय अनूपगढ नामक किलेको अपने अधिकारमें कर लिया था। दाऊदके पोतडा जिससे सीमामें किसी प्रकारका उपद्रव न कर सकें, अथवा अनूपगढपर फिर अधिकार करनेमें समर्थ न हों, इसलिये गजसिंहने अनूपगढकी पश्चिम ओरकी भूमिको विध्वंस करके वहांके सभी कुओंको मट्टी भरवाकर पटवा दिया था।

---

(१) बीकानेरके गद्यकाव्यमें लिखा है कि महाराज अनूपसिंह संवत् १७५५ में ओडनी (दक्षिण) में स्वर्गधामको प्राप्त हुए थे, और उनके साथमें १८ रानियां सती हुई थीं।

(२) बीकानेरके इतिहासमें संवत् १७५५ है।

(३) सुजानसिंह सं० १७५७ में गद्दीपर बैठे थे।

(४) बीकानेरके इतिहासमें सं० १७९२ माघ वदी ५ लिखा है।

(५) भावलपुरके आदि अधीश्वरका नाम दाऊदखाँ था। उसके वंशधरोंको राठौर गण दाऊद पोतड़ा कहते थे।

राजा गजसिंहके औरससे ६१ पुत्र उत्पन्न हुए, परन्तु इनमेंसे केवल छः पुत्र विवाहिता स्त्रीसे उत्पन्न हुए थे। उनके नाम यह हैं।

(१) छत्रसिंह। (४) अजबसिंह।
(२) राजसिंह। (५) सूरतसिंह।
(३) सुरतानसिंह। (६) श्यामसिंह।

उपरोक्त छःपुत्रोंमेंसे छत्रसिंहकी मृत्यु बालकपनमें ही हो गई थी और सूरतसिंहकी माताने विष देकर राजसिंहका प्राण नाश किया था, सुरतानसिंह और अजबसिंहने विचारा कि हम भी भाई राजसिंहकी तरह मारे जॉयगे, इस कारण वे अत्यन्त भयभीत होकर पिताके स्थानको छोड जयपुरको चले गये। इस प्रकार सूरतसिंह अत्यन्त घृणित उपायोंसे पिताके सिंहासन पर विराजमान हुए। और श्याम-सिंह बीकानेरके अन्तर्गत एक छोटे देशका अधिकार पाकर वहां निवास करते थे। महाराज गजसिंह अपने घोर पराक्रमके साथ इकतालीस वर्षतक राज्य करके परलोकवासी हुए। राजपूतरीतिके अनुसार संवत् १८४३ (१७८७ ई०)में राजसिंह-के मस्तकपर बीकानेरका राजछत्र शोभायमान हुआ, परन्तु उनकी साक्षात् पिशाचिनी सौतेली माताके हृदयमें हिंसा और विद्वेषकी अग्नि प्रबल हो गई थी इस कारण वह पन्द्रह दिन भी राजसिंहासनपर न बैठ सके। गजसिंहके पांचवें पुत्र सूरतसिंहकी माताने स्वयं अपने हाथसे विष देकर राजसिंहके जीवनको समाप्त कर दिया, इसी कारण-से राजसिंह केवल तेरह दिनतक ही राजसिंहासनपर बैठे थे। माता जैसी पिशाच-बुद्धिकी थी पुत्रका हृदय भी उसी प्रकारका कठोर था। इस कारण राजसिंहकी मृत्युके पीछे सूरतसिंहने पिशाचमूर्ति धारण करके बीकानेरके राजवंशमें घोर कलंक लगानेका अभिनय प्रारंभ कर दिया।

महाराज राजसिंहके प्रतापसिंह और जयसिंह नामके दो पुत्र थे। सूरतसिंहकी पिशाचिनी माताकी इच्छा थी कि राजसिंहको मारकर अपने पुत्रको सिंहासनपर बैठाऊंगी। परन्तु बुद्धिमान् सूरतसिंहने देखा, कि बीकानेरके वीर सामन्त और अमात्यगणोंके सम्मुख इस शोचनीय हत्याकाण्डके पीछे सिंहासनपर बैठना महा-विपत्तिकारक है, इस कारण उन्होंने अपनी इस पापिनी अभिलाषाको मनमें ही रख लिया; और प्रगटमें सौतले भाईकी मृत्युसे शोक प्रकाश करके भविष्यत्में लोमहर्षण पैशाचिक कार्य करनेम प्रवृत्त हुए। पिशाचबुद्धि सूरतसिंह सबसे पहिले अमात्य-मण्डली और सामन्त तथा प्रजाके हृदयको आकर्षण करनेके लिये राजसिंहके बालक पुत्रको सिंहासन पर बैठाल कर स्वयं राजप्रतिनिधिरूपसे राज्य शासन करने लगे। इन्होंने क्रमानुसार अठारह वर्ष तक विशेष चतुरता और बडी सावधानीसे राज्य किया, और प्रधान २ सामन्त तथा अमात्यगणोंको अपने हस्तगत करनेके लिये बहुत कीमती उपहार देकर उनको विशेष लोभ दिखाया। सामन्तोंके हस्तगत करनेमें समर्थ होते ही अपनी अभिलाषा सरलतासे पूर्ण होजायगी, यही बिचार कर वह चतुरनीतिजालका विस्तार करने लगे, परन्तु इन्होंने अठारह महीनेतक अपने इस गुप्त अभिप्रायको किसीके

सम्मुख भी प्रकाश न किया। अठारह वर्षके बीत जानेपर जब उन्होंने देखा कि उनकी बाहरी दया और नम्रताके व्यवहारोंसे सामन्त प्रसन्न हो गये हैं, तब उन्होंने सबसे पहिले अपने विशेष अनुगत महाजन और भादरांके दोनों सामन्तोंसे अपने हृदयके पापी अभिप्रायको कह सुनाया, यद्यपि वह दोनों सामन्त इनके अनुगत थे, तथापि वह इस प्रस्तावको सुनकर महादुःखी और भयभीत हुए। परन्तु चतुर सूरतसिंहने उन दोनों सामन्तोंको अधिक भूमि देकर सरलतासे उनको अपने वशमें कर लिया। यद्यपि महाजन और भादरांके राजद्रोही दोनों सामन्तोंने पिशाचबुद्धि सूरतसिंहको उस पापी अभिप्रायके पूर्ण करनेमें सहायता और अपनी सम्मति दी थी, परन्तु उनके उस पैशाचिक अभिनयके पूर्ण लक्षण सरलतासे प्रकाशित हो गये। बीकानेरके दीवान बख्तावरसिंह सूरतसिंहकी, इस पैशाचिक कल्पनाको जानकर अपने सुकुमार प्रभुके प्राणोंकी रक्षाके लिये भयभीत होकर आगे बढे। बख्तावरसिंहके ऊर्द्धतन चार मनुष्य इस दीवान पदपर नियुक्त थे, इस कारण उन्होंने राजसिंहके बालक कुमारकी जीवनरक्षा करना सब प्रकारसे उचित जाना परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि, बख्तावरसिंहने ऐसे कुसमयमें अधिक देरीमें सूरतसिंहके षट्चक्रका समाचार पाया कि वह उस समयमें किसी भाँतिसे भी उस जालको छिन्नभिन्न न कर सके, वरन् उसका विपरीत फल हुआ। सूरतसिंहने बख्तावरसिंहको अपना प्रधान शत्रु जानकर उसी समय उसे पकडकर कारागारमें बंदी कर दिया। सूरतसिंह इस बातको भली भाँतिसे जानते थे कि बख्तावरसिंह ही मेरी राज्यप्राप्तिमें कंटकस्वरूप है, इस कारण उसको बंदी करके समस्त विघ्न बाधाओंको दूर करनेके लिये भटिंडा इत्यादि भिन्न देशोंसे सेना संग्रह की। पाशविक बल प्रयोगके अतिरिक्त वह सरलतासे अपने मस्तकपर राजमुकुट धारण न कर सकेंगे इसको वह भलीभांतिसे जान गये थे, इस कारण वह बडी सावधानीके साथ शीघ्रतासे रंगभूमिमें आ पहुँचे। सूरतसिंहके पापकी कामनाके प्रकाश होनेके पहिले ही बालक महाराजकी बडे गुप्तभावसे रक्षा होती थी। सूरतसिंहने अधिक सेना संग्रह कर बीकानेरके सभी सामन्तोंके पास अपने नामसे यह आज्ञापत्र भेजा। वह सभी एक २ करके इनकी राजधानीमें आकर इनकी आज्ञा पालनमें नियुक्त हुए। महाजन और भादरां नामक दोनों स्थानोंके दो राजद्रोही सामन्तोंने राजभक्तिके मस्तकपर पदाघात करके सूरतसिंहकी आधीनता स्वीकार की, उन दोनोंके अतिरिक्त और कोई सामन्त भी राजधानीमें आनेके लिये सम्मत न हुआ। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि अन्य राजभक्त सामन्तोंने सूरतसिंहकी पापलिप्साको जानकर भी अपनी २ सेनाके साथ राजधानीमें आकर उसकी जघन्य अभिलाषामें किसी प्रकार बाधा न दी। वे अज्ञानकी तरह अपने २ किलोंमें बैठे रहे।

जब सूरतसिंहने सामन्त मण्डलीको अपनी आज्ञापालनमें असम्मत देखा, तब उन्होंने अपने मनमें निश्चय कर लिया, कि यह लोग मेरा स्वत्व स्वीकार करनेको तैयार नहीं हैं। इस कारण वह सेनाको साथ लेकर सामन्तोंको दमन करनेके लिये चले।

इन्होंने सबसे पहिले नौहर नामक स्थानमें जाकर भूखरका देशके सामन्तोंको छलबल और बडी चतुरतासे अपने सम्मुख बुलाकर उनको नौहरके किलेमें बंदी कर दिया। इसके पीछे अजितपुरा नामक स्थानको लूटकर सांखू नामक स्थानपर आक्रमण किया। सांखूके सामन्त दुर्जनसिंहने असीम साहस और वीरताके साथ अपनी रक्षा की, और जब अंतमें देखा कि हमारी सेनाका बल धीरे २ घट गया है तब उन्होंने शत्रुओंको आत्मसमर्पण न करके, अत्यन्त दुःखित हो आत्मघात कर लिया। सूरतसिंहने शीघ्र ही विजय पाकर दुर्जनसिंहके पुत्रोंके हाथ पैर बाँध साँखू देशके प्रधान सरदारोंसे दंडमें बारह हजार रुपये लिये। राजासिंहासनके लोभी सूरतसिंहने इस प्रकारसे पाहिले उद्योगमें सफलता प्राप्त कर शेषमें बीकानेरके प्रधान वाणिज्यके स्थान चूरू नामक देशको जा घेरा। यह छः महीनेतक इस प्रकारसे नगरीको घेरकर भी अपनी अभिलाषाको पूर्ण न कर सका, परन्तु इस समय एक और उपायसे सूरतसिंहके सौभाग्यका द्वार खुल गया। भूखरकाके जिन सामन्तोंको सूरतसिंहने नौहरके किलेमें बंदी कर रक्खा था वही सामन्त बीकानेरके राज्यमें एक प्रबल और सामर्थ्यवान् ठाकुर गिने जाते थे। उन्होंने उसी बंदी अवस्थामें विचारा कि सूरतसिंहकी अभिलाषा अवश्य ही पूरी हो जायगी। कारण कि सब सामन्त इस समय एकमत न होकर केवल अपने २ किलोंकी रक्षामें नियुक्त हैं, तब सूरतसिंह सरलतासे एक २ को परास्त करनेमें क्यों असमर्थ होंगे? इस प्रकारसे उनकी जय हो जायगी और अंतमें उनके क्रोधसे अपने भी प्राण नष्ट होनेकी संभावना है, यह विचारकर समस्त बंदी सामन्त अपने जीवन और स्वाधीनताकी रक्षाके लिये सूरतसिंहको सिंहासनपर बैठालनेको राजी हो गये। सूरतसिंहने बंदी सामन्तोंके वचन तथा उनकी प्रतिज्ञापर विश्वास करके उनको छोड दिया, और दो लाख रुपये लेकर चूरू नगरकी लूट भी छोड दी।

इस प्रकारसे सूरतसिंह अपने पाशविक बलकी सहायतासे बीकानेरके प्रत्येक प्रान्तमें अपने कठोर शासनका विस्तार कर और वहांके कई सामन्तोंको अपने हस्तगत करके अंतमें राजधानी बीकानेरसे लौट आया और फिर बीकानेरके बालक महाराजको संसारसे बिदा करनेके उपायोंकी खोज करने लगा, परन्तु उसकी उस घृणित आशाके पूर्ण होनेमें अनेक विघ्न उपस्थित होने लगे। सूरतसिंह और इसकी माता यद्यपि हिंसक पशु बुद्धि की थी परन्तु इसकी भगिनीके कोमल हृदयकी कली दया और ममताके रससे परिपूर्ण थी। वह इस बातको भलीभाँतिसे जान गई थी कि भाई सूरतसिंह किसी दिन अवश्य ही बालक महाराजके प्राण नाश कर निष्कंटक होकर राज्य करेंगे, इस कारण वह उस बालक भूपाल भाईको नित्य अपने पास रखती थी, किसी समय भी उसको आंखोंकी ओट नहीं होने देती थी। सूरतसिंहने अनेक उपाय और छल कपटसे लोभ दिखाकर भगिनीको हस्तगत करनेके अनेक उपाय किये, परन्तु बलपूर्वक कुछ भी करनेका साहस न कर सका। अंतमें उसने एक और उपाय सोचा। वह यह कि उक्त दयामयी भगिनी जो राजसिंहके छोटे पुत्रको अपनी गोदीमें रखती थी, अब तक कुमारी थी, अतएव सूरतसिंहने उसके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित करके उसको सुसराल भेज देना चाहा और तब

अपने भतीजेको मारना निश्चित किया। सूरतसिंहने नरवरके दरिद्री राजाके यहाँ कहला भेजा कि आप हमारी भगिनीके साथ विवाह करनेके लिये तैयार हो जाइये।

भारतवर्षमें विख्यात महाराज नलसे नरवरके राज्यवंशकी सृष्टि हुई है। सूरतसिंह जिसको अपनी बहिन देनेके लिये तैयार हुए वह नरपति उसी नलके वंशधरोंमें थे, परन्तु दुष्ट सिन्धियाने उन नरवरपतिकी अत्यन्त दुर्गति कर दी थी, इसीसे उनकी इस समय अत्यन्त हीन दशा हो गई थी। सिन्धियाने नरवरके अभेद्य किलेपर अधिकार करके राजधानीकी समस्त धन सम्पत्ति लूट ली थी, इसीसे महाराज नलके वंशधर धनके अभावसे इस समय घोर कष्ट पा रहे थे। उन्होंने सूरतसिंहका पत्र पाते ही उसी समय उनकी भगिनीके साथ विवाहका प्रस्ताव भेज दिया। राजभगिनी इस समाचारको सुनकर अत्यन्त दुःखी हो नेत्रोंमें आँसू भर सूरतसिंहके चरणोंमें गिर डरते २ बोली, भ्रातः! इस समय मेरी अवस्था अधिक हो गई है. मैं सर्वदा कुमारी अवस्थामें ही रहनेकी इच्छा करती हूँ, इस कारण आप मेरा विवाह न करैं, और उधर वह राजा जिससे उसके साथ विवाहकी तैयारी न करैं इस कारण बुद्धिशीला दयावती राजभगिनीने उनके पास भी समाचार भेज दिया कि मेवाडके महाराणा अरिसिंहके साथ मेरा विवाह होगा, यह बात पहिलेसे ही निश्चय हो गई है इस कारण आप वृथा उद्योग न कीजिये, वागदत्ता कन्याका विवाह करके सनातन आर्य धर्मका अपमान नहीं किया जायगा। परन्तु हाय! कोमल हृदय राजकुमारीके उस हृदय भेदी रोदन, उस करुणापूर्ण वचन, उस सविनय निवेदनसे क्या सूरतसिंहका पाषाणहृदय पिघल सकता था? उसने किसी प्रकार भी उस अबलाके वचनोंपर ध्यान न दिया, उसका मुख्य अभिप्राय यह था कि चाहे जिस प्रकारसे हो यह कन्या घरसे बाहर चली जाय तो मैं सरलतासे अपने भतीजेको मारकर निष्कंटक राज्य करूं। फिर भला वह अपनी भगिनीकी बातको क्यों सुनने लगा था? दयावती राजकुमारीकी समस्त चेष्टा; समस्त प्रतिवाद तथा समस्त आपत्ति निष्फल हो गई। राजप्रतिनिधि सूरतसिंहने नरवरके दीन महाराजको विवाहके यौतुकमें तीन लाख रुपये देनेका विचार किया, नरवरके महाराज अत्यन्त आनंदित हो शीघ्र ही विवाहके लिये आये। राजकुमारीने देखा कि अब मैं अपने भ्राता-की किसी भाँति भी रक्षा न कर सकूंगी, तब वह अत्यन्त करुणास्वरसे रुदन करने लगी और विवाहके न होनेके लिये भी उसने अनेक यत्न किये परन्तु दृढप्रतिज्ञ पिशाच-बुद्धि सूरतसिंहने बलपूर्वक विवाह कर ही दिया। इतने दिनोंसे राजकुमारीने अपने मन ही मनमें सूरतसिंहकी वह पापकल्पना छिपा रक्खी थी। एक दिनके लिये भी साहस करके उनके सम्मुख इस बातकी चर्चा तक भी न की थी; परन्तु अंतमें जब देखा कि अब किसी प्रकारसे भी राजाके जीवनकी रक्षा नहीं कर सकती, तब उसने अत्यन्त क्रोध और दुःखके वशीभूत होकर सूरतसिंहके सम्मुख कहा " भाई! मैं इतने दिनोंसे आपके गुप्त अभिप्रायको भलीभाँतिसे जानती थी। आप कुमार बीकानेरके प्राण नाश करनेके लिये मुझे घरसे निकालनेको तैयार हुए हैं। " चतुर सूरतसिंह भगिनीके यह वचन सुनकर कुछ भी लज्जित अथवा दुःखित न हुआ और प्रकाशमें बोला, " नहीं.

मेरे हृदयमें कभी ऐसी आशाका उदय नहीं हुआ। " यह सुनकर भगिनीने कहा, "यदि सत्य ही आपके हृदयमें उस घृणित पापकारी आशाको स्थान नहीं मिला है तब आप सबके सामने देवताका नाम लेकर शपथ करिये कि मैं अपने भ्रातृपुत्र कुमार महाराजका प्राण नाश नही करूंगा।" परन्तु हाय! विचारी कन्याकी कौन सुनता था। दयावती राजकुमारीके मुसरालको चले जाने पर कुछ ही दिन पीछे पाखण्डी सूरतसिंहने महाजनके सामन्तोंको बुलाकर आज्ञा दी कि "आप अपने हाथसे शिशु नरपतिके प्राणोंका नाश कर मेरे अभिषेकका मार्ग स्वच्छ कर दें।" यद्यपि सामन्त राजद्रोही थे परन्तु इस कार्यमें हस्ताक्षेप करनेको किसी प्रकार भी सम्मत न हुए। अन्तमें उस दुष्टने एक दिन स्वयं अपने हाथसे अपने भतीजे बीकानेरके बालक महाराजाके गलेमें तलवार मारकर उनका जीवन नष्ट कर दिया!!

भ्रातृपुत्र हन्ता—राजहन्ता सूरतसिंहने इस प्रकारसे अपने सौभाग्यके प्रधान कंटकको उखाड कर बीकाके पवित्र सिंहासनपर बैठ बीकाके पवित्र रक्तको कलंकित किया। यद्यपि अत्याचारी सूरतसिंहके इस शोचनीय हत्या करनेके पीछे बीकानेरके राजछत्रको अपने मस्तकपर धारण करते ही राठौरजाति अगाध शोकसमुद्रमें डूब गयी, परन्तु समस्त सामन्तोंमेंसे कोई भी उसके विरुद्ध साहस करके खडा न हो सका। राजसिंहके और दो भाई सुरतानसिंह और अजीबसिंह जो पहिलेसे ही अपने प्राणोंके भयसे जयपुरमें चले गये थे, सूरतसिंहके इस पैशाचिक अभिनयका समाचार सुनते ही महा क्रोधित हो सूरतसिंहको इसका उचित फल देनेके लिये भटनेर नामक स्थानमें आ उपस्थित हुए। उन्होंने बीकानेरके समस्त असन्तुष्ट सामन्त और भटनेरके समस्त सामन्तोंको बुलाकर राक्षसबुद्धि सूरतसिंहको शीघ्र ही सिंहासनसे उतारनेके लिये युद्धकी तैयारी की। यद्यपि सभी भाटीगण एक मनसे दोनों राजकुमारोंकी आज्ञापालनके साथ सूरतसिंहको दण्ड देनेके लिये तैयार हो गये थे, परन्तु राठौर सामन्तोंमें से बहुतसे सूरतसिंहके घोर अत्याचारोंको स्मरण करके इच्छाके होते हुए भी साहसमें भरकर योग देनेमें समर्थ न हुए इधर चतुर सूरतसिंहने अनेक सामन्तोंको घूस देकर अपने दलमें भरती कर लिया। इस कारण सुरतानसिंह और अजीबसिंहकी कामना पूर्ण होनेमें अनेक विघ्न उपस्थित होने लगे। सूरतसिंहके भयसे राठौर सामन्तोंमेंसे बहुतोंको पीठ दिखाते हुए देखकर भी उन्होंने केवल भाटियोंकी सेनाकी सहायता लेकर युद्धकी तैयारी की, परन्तु चतुर सूरतसिंहने विचार किया कि शत्रुओंका बल अधिक होने देना उचित नहीं, इस कारण तुरन्त ही साहसमें भरकर उसने सेनासहित उनपर आक्रमण किया। बागोर नामक स्थानमें भयंकर संग्राम उपस्थित हो गया; दोनों ओरके शत्रुओंने घोर पराक्रमके साथ युद्ध करके रणभूमिमें रुधिरकी नदी बहा दी। तीन हजार भाटियोंकी सेनाके नाश हो जानेपर अन्तमें सूरतसिंहने विजय प्राप्त की। कालचक्रकी गतिसे अधर्मकी ही जय हुई। सूरतसिंहने इस प्रकारसे शत्रुओंको परास्त करके निष्कंटक राज्यसिंहासनपर विराजमान हो सभी विघ्नोंको दूर कर दिया। उस भयं-

कर युद्धके स्मृति चिह्नस्वरूपमें सूरतसिंहने उस रणभूमिमें जयदुर्ग फतहगढ नामका एक नवीन किला बनाया।

रणविजयी सूरतसिंह अपने देश और विदेशमें अपनी शासनशक्तिको प्रबल करनेकी इच्छासे एक प्रबल सेनादलके द्वारा वीरोचित कार्य करने लगा। सबसे पहिले उसने अपने आत्मीय उद्धतस्वभाव बीदावतोंके अधिकारी देशपर आक्रमण कर वहांसे दण्डमें पचास हजार रुपये, करमें लिये। पहिले यह सुना था कि चूरूनामक स्थानके सामन्त सुरतान और अजबसिंहकी सहायता करेंगे इस लिये सूरतसिंहने फिर उस चूरू देशपर आक्रमण कर चूरू नगरीको जा लूटा। विजयी सूरतसिंहने इस प्रकारसे धीरे २ अनेक देशोंपर आक्रमण कर तथा लूटमार कर अन्तमें भादरां स्थानके निकट छानीदेशके सामन्तोंके किलेको घेर लिया। परन्तु वहांके महाबली सामन्तोंने बडा पराक्रम करके सूरतसिंहकी सेनासे अपनी रक्षा की, क्रमानुसार सूरतसिंह छः महीनेतक किलेको घेरे रहे परन्तु किसी प्रकारसे भी विजय प्राप्त न कर सके; अन्तमें वह सेनासहित अपनी राजधानीको लौट आये।

राजा सूरतसिंह इस प्रकारके पाशविक बलकी सहायतासे अपनी शासनशक्तिको दृढकर प्रबल प्रतापके साथ राज्य करने लगा। परन्तु सामन्त और प्रजाको अत्यन्त असन्तुष्ट देखकर वह अन्य उपायोंसे उनको अपने हस्तगत करनेके लिये व्याकुल हो गया। जिससे प्रजा इसके अन्यायाचरण करनेपर भी सिंहासनके अधिकारके सम्बन्धमें किसी प्रकारका आन्दोलन न कर सके, तथा कोई राजकीय प्रश्न लेकर कहीं क्रोधित न हो जाय, इस लिये वह विशेष सावधान होने लगा, इसके सौभाग्य बलसे उसी सम्बन्धमें एक और भी शुभ सुयोग उपस्थित हो गया। बीकानेरकी सीमावाले भावलपुरके महाराजके साथ बहुत समयसे विवाद चला आता था। उस सीमा सम्बन्धी विवादके उपलक्षमें बीकानेरके सामन्तोंने कई बार युद्धभूमिमें जाकर वीरता प्रकाश की थी। इस समय भावलपुरके अधीश्वर भावलखांने अपने आधीनके तियारो नामक स्थानके किरणी जातीय खुदाबख्श नामक एक यवन सामन्तपर आक्रमण किया। उस सामन्तने शीघ्र ही सूरतसिंहकी शरण ली; और उन्हें अपने अधीश्वर भावलखांके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये उत्तेजित करने लगा। सूरतसिंहने भी देखा कि वीर विक्रमशाली राठौर अवश्य ही युद्धमें प्रवृत हो जांयगे; इस सुयोगपर वे मेरे अन्यायसे राज्यसिंहासन लेने और अपने भतीजेको मार डालने आदि कठोर आचरणोंको भूलकर इस युद्धमें उन्मत्त हो जांयगे, इस कारण उसने शीघ्र ही इस नवीन राजनैतिक कार्यका प्रबन्ध प्रारम्भ किया। जैसे ही तियारोंके सामन्त खुदाबख्शने बीकानेरका आश्रय लिया कि, वैसे ही राजा सूरतसिंहने उनको बीस ग्राम दे दिये। और उनके प्रतिदिनके खर्चके लिये एक सौ रुपया रोज देनेकी आज्ञा दी। किरणीकी सम्प्रदाय भावलपुरमें सबसे अधिक प्रबल बलशाली और असीम साहसी थी। राजा सूरतसिंहने इन्हीं किरणियोंकी सहायतासे अपने राज्यकी सीमाके बढानेका विचार किया, और तियारोंके महाराजने खुदाबख्शसे कहा कि "मैं आपकी सहायता करनेके लिये सब

प्रकारसे तैयार हूँ, परन्तु आपके द्वारा क्या मैं किसी प्रत्युपकारको आशा कर सकता हूँ ? " खुदाबख्शने शीघ्रतासे उत्तर दिया, कि " मैं आपके राज्यकी सीमाको समुद्रतक विस्तार करनेमें भलीभांतिसे सहायता दूँगा। " सूरतसिंहने इस प्रतिज्ञासे प्रसन्न हो वीरव्रतधारी राठौरोंकी सामन्त मंडलीके निकट तुरन्त ही युद्धका समाचार भेज दिया। यद्यपि बीकानेरके सभी सामन्त सूरतसिंहसे अप्रसन्न हो गये थे, परन्तु इस समय रणभूमिमें अपना २ पराक्रम दिखानेके लिये वे अपनी२ सेनाको साथ लेकर राजधानीमें आने लगे। नियारोके सामन्त पाँचसौ पैदल और तीनसौ अश्वारोही सेनाके साथ आये थे। इस समय उस सेनाके साथ बीकानेरकी निम्नलिखित सामन्तोंकी निम्नलिखित संख्यक सेना आकर मिली थी;—

	पैदल.	अश्वारोही.	बन्दूकधारी।
भूखरकाके सामन्त अभयसिंह	२०००	३००	
पूंगलके सामन्त रावरामसिंह	४००	१००	
रानेरके सामन्त हाथीसिंह	१५०	८	
सतीसरके सामन्त करणसिंह	१५०	५	
जसाना शारोहके सामन्त अनूपसिंह	२५०	४०	
इमनसरके सामन्त खेतसिंह	३५०	६०	
जाँगलके सामन्त बनीसिंह	२५०	५	
वितनोके सामन्त भूमसिंह	६१	२	
जोड	३६११	५२८	
मोजी पडिहारके अधीनकी तोपैं ...	—	—	२१
नरपतिके अधीनकी विदेशीय सेना वा खासपायगाँ ...	...	२००	
गंगासिंहके अधीनकी मंडली ...	१५००	२००	४
दुर्जनसिंहके अधीनकी " ...	६००	६०	४
अनोकसिंह (सिक्खसामन्त गण)		३००	
लाहौरीसिंह (सिक्खसामन्त गण)		२५०	
बुधसिंह (सिक्खसामन्त गण)		२५०	
अफगान सामन्त सुलतानखाँ तथा अहमदखाँके अधीनकी ...	...	४००	
	५७११	२१८८	२९

राजा सूरतसिंहने इस प्रकारसे अपनी प्रबल सेनाको इकट्ठा करके अपने दीवानके पुत्र वीरश्रेष्ठ जैतराव महताके हाथमें प्रधान सेनापतित्वका भार अर्पण किया। संवत् १८५६में माघमासकी तेरहवीं तारीखको राठौरसेना भावलपुरके राज्यपर अधिकार करनेके लिये चली। प्रधान सेनापति जैतराव, कुनमर राजसर केली रानेर होकर

अनोहागढमें आकर प्राप्त हुए और वहांसे चलकर शिवगढ मोजगढ तथा फूलरामें क्रमशः डेरे डाले गये। हिन्दूसिंह नामके एक भाटिया सरदारने साहसके साथ मोजगढपर अधिकार करके अपने नामको अक्षय किया। उसने अपने प्रबल पराक्रमसे मौजगढके किलेकी दीवालको लांघकर और उसके भीतर जाकर वहांके शासनकर्ता किरणी नामक यवन जातिके मुहम्मद मासफको सेनासहित विध्वंस कर दिया, और अंतमें उसकी स्त्रीको बंदी कर बीकानेरमें भेज दिया। उस स्त्रीने पांच हजार रुपये और चारसौ ऊंट देकर अपनी स्वाधीनता प्राप्त की। विजयी सेना बराबर कई सप्ताहतक उन तीनों किलोंको घेरे रही, फिर जय प्राप्त करके फूलरासे एक लाख पच्चीस हजार रुपये और कितने ही मूल्यवान् द्रव्य और नौ तोपें अपने अधिकारमें कर लीं।

विजयी राठौरोंकी सेना इस प्रकारसे भावलपुरकी राज्यसीमामें अपना आतंक जमाती हुई सिंधुसे डेढ कोशके फासलेपर खैरपुर नामक स्थानमें आ पहुँची। भावलपुरके अन्य असन्तुष्ट सामन्त भी इस समय जैतरावके साथ मिल गये, परन्तु बुद्धिमान् भावलखाँ अपने सम्मुख विपत्तिको आते देखकर तथा राठौर सेनाको पग २ पर विजय पाती हुई देखकर भयभीत हो अन्य उपायसे शत्रुओंकी गतिको रोकनेकी चेष्टा करने लगा। यदि जैतराव शीघ्रतासे राजधानीपर आक्रमण करता तो निश्चय ही राठौरोंकी विजयपताका भावलपुरके किलेपर फहराती परन्तु उसने अपना समय वृथा नष्ट किया, उस सुअवसरमें उस राज्यके जो सामन्त शत्रुओंकी ओर जा मिले थे, उन्हें भावलखाँ अनेक छल बल और चतुरता करके तथा लोभ दिखाकर अपने दलमें बुलाने लगा। इस कारण राठौरोंकी सेनाका दल धीरे २ घट गया तब राठौर सेनापतिने भावलपुरके अधिपतिको धमकाकर और उसे बहुत कुछ भला बुरा कहकर उससे बहुतसा धन दंडमें लिया और उसे बीकानेरको भेज दिया और इसीसे संतुष्ट होकर उन्होंने भावलपुरका घेरा छोड दिया। इससे सूरतसिंहने अत्यन्त असंतुष्ट होकर उक्त सेनापति सामन्तका पद और मान घटा दिया।

राजा सूरतसिंह इस प्रकारसे बीकानेरका गौरव विस्तार करनेके लिये भावलपुरपर आक्रमण करनेके पीछे भी निर्विघ्नतासे अधिक समयतक शांति न भोग सके। बागोरके युद्धमें पराजित भाटिया लोग अपने घोर अपमानका बदला लेनेके लिये दो वर्षतक फिर भी युद्धके साजसे सजे रहे, और बीकानेरको जय करने और सूरतसिंहको उसकी शठताका उचित फल देनेके लिये आगे बढे। परन्तु सूरतसिंहने इस समय सब भाँतिसे प्रजाके हृदयपर अधिकार करके अपना बल वैभव खूब बढा लिया था, इस कारण वह उनसे कुछ भी भयभीत न हुआ, वरन् क्रोधित हो सेना ले भाटियोंके आक्रमणको रोकनेके लिये चला। फिर भी युद्धकी अग्नि भडक उठी। फिर रणक्षेत्र मनुष्योंके रुधिरसे भीग गया। और अंतमें फिर भी सूरतसिंहने जय प्राप्त करके

(१) पहिले इस स्थानका नाम फुल्लूर था। मारवाडमें जिस भांति फूलरा एक अत्यन्त प्राचीन नगर है, यह भी उसी प्रकारसे प्राचीन स्थान था।

भाटियोंकी आशालताको छिन्न भिन्न कर दिया। यद्यपि भाटीगण इस दूसरी बारके युद्धमें भी परास्त होकर भाग गये थे, परन्तु महामान्य टाड साहब लिखते हैं कि संवत् १८६१ तक राजा सूरतसिंहके साथ उनका बीच २ में संग्राम होता ही रहा। पीछे उक्त संवत्में सूरतसिंहने भाटियोंको एकबार ही बलहीन करनेकी प्रतिज्ञा की, और भाटियोंकी राजधानी भटनेरपर आक्रमण किया। भटनेरके यवन अधीश्वर जाब्ताखाँने क्रमानुसार ६ महीनेतक बडे साहसके साथ अपनी रक्षा करके अन्तमें राजा सूरतसिंहके करकमलमें सेनासहित सारी धन सम्पत्ति अर्पण कर दी। राजा सूरतसिंहने नवीन जीते हुए भटनेर देशको बीकानेरमें मिला लिया और जाब्ताखां रहानियां नामक स्थानमें जाकर वहाँ निवास करने लगा।

उपरोक्त घटनाके पीछे राजा सूरतसिंहने अपने बल विक्रमको प्रकाश कर गौरव बढानेके साथ ही साथ राज्यकी सीमाको बढानेकी इच्छासे फिर भी रणभूमिमें पदार्पण किया। इस समय सवाईसिंहने धौंकलसिंहको मारवाडके सिंहासनपर बैठालनेके लिये जयपुरके महाराजकी सहायतासे समस्त राठौर सामन्तोंके साथ मारवाडपति मानसिंहके साथ युद्ध करनेका विचार किया। राजा सूरतसिंहने सवाईसिंहकी प्रार्थनानुसार जिस भावसे अपनी सेना भेजी थी, अथवा जिस भावसे उसने जाकर युद्ध किया था, उसका वर्णन मारवाडके इतिहासमें विधिपूर्वक किया जा चुका है। प्रथम सूरतसिंहने अपना बल विक्रम प्रकाश करके जय प्राप्त कर मारवाडके अन्तर्भुक्त फलोदी देशको अपने अधिकारमें कर लिया, परन्तु अन्तमें जब देखा कि धौंकलसिंहके पक्षमें जय प्राप्त करना कोई साधारण बात नहीं है तब वह शीघ्र ही उनका पक्ष छोडकर अपनी राजधानीको चले आये, परन्तु मानसिंह अपनी शासनशक्तिको प्रबल करके फलोदी देशपर फिर अधिकार कर बीकानेरपर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुए तब सूरतसिंहने अत्यन्त भयभीत होकर उनसे सन्धि करके और हानिके बहुतसे रुपये देकर अपनी रक्षा की। माहामान्य टाड महोदय लिखते हैं कि राजा सूरतसिंहने अपनी दुर्बुद्धिवश मानसिंहके विरुद्ध धौंकलसिंहका पक्ष लिया था। और अन्तमें अपमानके साथ भागकर अपने पहिले प्रभुत्व और गौरवको भी लुप्त कर दिया था। इन्होंने इस समय धौंकलसिंहकी सहायताके लिये अपने छोटे राज्यकी प्रायः पांच वर्षकी आमदनी अर्थात् चौबीस लाख रुपया खर्च करके बडे छलबलके साथ युद्धका साहस किया था, परन्तु अन्तमें इस युद्धमें परास्त होकर मानसिक वेदनासे दुःखित राजा सूरतसिंह कठिन रोगसे पीडित होकर रुग्णशय्यापर गिर पडे। अपमान, आत्मघृणा और धनके नाश होनेसे वह मृतप्राय हो गये थे, सभीने उनके जीवनकी आशा छोड दी। वैद्य डाक्टर सभी हताश हो गये थे; आर्यरीतिके अनुसार मृत्यु समयके पहिले जो पारलौकिक कर्म किये जाते हैं, वह भी प्रारम्भ हो गये थे परन्तु अपने दुर्भाग्यवश तथा सौभाग्यवश राजा सूरतसिंह मरे नहीं भयानक मृत्युके मुखसे निकल कर उन्होंने शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त की।

राजा सूरतसिंहके पुनर्जीवन प्राप्त होनेके पीछे महात्मा टाड साहब अपने प्रिय राजस्थानको छोडकर विलायतको चले गये। इस कारण वे इसी स्थानपर राजा

सूरतसिंहके शासनके साथ ही साथ बीकानेरके इतिहासको भी समाप्त कर गये हैं। हमने राजा सूरतसिंहके शेष शासनवृत्तान्तके साथ बीकानेरके वर्तमान समयतकके इतिहासको वर्णन करनेके पहिले साधु टाड साहबके उपसंहारमें वर्णन किये हुए, प्रबन्धको अनुवाद करना उचित समझा। साधु टाड साहब लिख गये हैं, "कि सूरतसिंहने केवल खजानेको भरनेके लिये प्रजासे बलपूर्वक कर लेनेमें किसी प्रकारका संकोच नहीं किया। उन्होंने विचारा था, कि पुरोहितोंको धन देकर धर्मकार्य करनेसे मेरे सम्पूर्ण पाप दूर हो जाँयगे; इस कारण हर समय उनको लोभी ब्राह्मण घेरे रहते थे। सूरतसिंहसे धन पाकर ब्राह्मण भी अत्यन्त प्रसन्न होकर समय व्यतीत करते थे। राजा सूरतसिंह जैसे लोभी थे उसी प्रकारके भीरु अत्याचारी और निष्ठुर भी थे। भूखरकाके सामन्तोंने अनेक समयमें उनके बहुतसे उपकार किये थे। परन्तु इन्होंने उनके भी प्राण नाश किये, राज्यके सर्वप्रधान सामन्तोंमें सीधमुखके नाहरसिंह, गुन्दाइलके गुमानसिंह और ज्ञानसिंह भी इसी प्रकारसे मारे गये। राजा सूरतसिंहके फिर चूरूपर तीसरी बार आक्रमण करनेसे, वहाँके सामन्त तथा, वह देश भी इनके हस्तगत हो गये"।

कर्नल टाड साहब लिख गये हैं कि "इस प्रकारसे सभीको भयप्रद और कठोर शासनसे राजा सूरतसिंहके कुसंस्कार जितने २ बढते गये वैसे २ ही राजकार्यके करनेमें भी इनकी अनिच्छा होती गई और उतनी ही प्रत्येक वर्षमें बीकानेर राज्यकी धन और जनसंख्या क्रमशः घटती गई। उत्तर प्रान्तके सामन्तोंने उनकी अधीनता स्वीकार न की, और भाटी जातिके तस्कर भी क्रमानुसार बीकानेरके आदि भूस्वामी जाट और किसानोंके ऊपर धावा करके उनके गो आदि पशुओंको हरण कर खेतपरसे समस्त नाज काटकर ले जाने लगे, इस कारण जाट लोगोंने विचारा कि अपने प्राण धनकी रक्षाके लिये यहाँसे भाग जाना ठीक होगा, नहीं तो यहाँ भोजनके न मिलनेसे प्राण त्याग करने होंगे। इस प्रकारसे अत्याचार और उपद्रवोंसे पीडित होकर बहुतसे जाट किसान सीमामें स्थित वृटिश गवर्नमेण्टके अधिकारी देश हाँसी और हरियानाको चले गये, वहाँ इनको बडे आदरभावके साथ लिया गया। विशेष करके उसी समयसे अंग्रेज गवर्नमेंटने बहादुरखाँके अधिकारी देश और अन्यान्य भूखण्डको भी अपने अधिकारमें कर लिया था; तभीसे बीकानेरके उत्तरप्रान्तवाले निवासियोंको दुगुना कष्ट मिलता था। कारण कि उसी बहादुरखाँकी ओरके मनुष्य इस समय तस्करवृत्तिका अवलम्बन कर उनके ऊपर घोर अत्याचार करने लगे, और फिर उनसे इन उपद्रवोंके दूर करनेका कुछ उपाय नहीं होता था। बीकानेरके किसी २ देशके जाटोंने इस प्रकारसे तस्करोंके हाथसे अपनी रक्षा करनेके लिये स्वयं उपयुक्त उपायका अवलम्बन किया। प्रत्येक ग्रामके जाटोंने अपने ग्रामोंमें एक मट्टीका बडा ऊँचा टीला बनाकर उसपर एक पहरेदार रक्खा। यदि वह पहरा देनेवाला मनुष्य दूरसे ही किसी तस्करको आता हुआ देखता तो उसी समय सबको सावधान करनेके लिये बडे जोरसे डंका बजा देता था। उसी बाजेके शब्दको सुनकर सभी ग्रामवाले सावधान हो जाते थे। एक ग्रामके शब्दको सुनकर दूसरे ग्रामवाले भी उसी भाँति बाजा बजा देते थे। क्रमानुसार उस

बाजेके शब्दको सुनकर सभी ग्रामोंके मनुष्य इकट्ठे होकर तस्करोंको भगा देते थे । इन तसकरोंका भय इतना प्रबल हो गया था कि सभी जाट और किसान अपनी रक्षा और धान्यकी रक्षाके लिये ढाल और बडे २ भाले हाथमें लेकर खेती रखाते थे । बीकासे तीनसौ तेईस वर्षके पीछे सूरतसिंहने जाटोंकी प्रजासे परिपूर्ण उस राज्यकी ऐसी दीन हीन अवस्थाकर दी । "

उपसंहारमें इतिहासवेत्ता टाड साहब लिख गये हैं, कि " जो बीदाबाटी इस समय बीकानेरका एक प्रधान अंशस्वरूप था और जिस देशमें राव बीदाके वंशधर वास करते थे, हम बीकानेरकी प्राकृतिक अवस्थाको वर्णन करनेके पहिले, उस देशके सम्बन्धमें कुछ कहनेकी अभिलाषा करते हैं । पाठकोंको पहिले ही विदित हो चुका है कि राव बीकाके दिग्विजयके लिये बाहर जानेके पहिले, उनके भ्राता बीदाने सबसे पहिले प्राचीन राजधानी मंडोरसे सेनासहित बाहर हो राठौरोंका उपनिवेश स्थापन किया । बीकाने प्रथम राणाके अधिकारी गोडवाड प्रदेशपर लडाई की, और वहां अपनी छावनी स्थापन करनेके लिये तैयार हुए, परन्तु राणाकी प्रबल सेना उनके विरुद्ध खडी हो गई, इस लिये वह शीघ्र ही उस देशको छोडकर उत्तरकी ओरको चले गये । और मोहिलोंके अधीश्वरोंके अधीनमें रहने लगे । कोई २ ऐसा कहते हैं कि यही मोहिलजाति यदुवंशकी एक शाखा है, परन्तु अन्य लोग इनको क्षत्री जातिमेंसे एक स्वतन्त्र जाति बतलाते हैं । वे मोहिलोंके अधीश्वर छापर नामक स्थानमें निवास कर ठाकुरकी उपाधि धारण कर एकसौ चौवालीस खंड ग्राम और नगरोंका शासन करते थे । बुद्धिमान् बीदाने देखा, कि संख्याबद्ध सेनाके साथ प्रगटरूपसे प्रबल पराक्रमी मोहिलपतिके साथ युद्ध करके अपने हृदयगत अभिप्रायका पूर्ण होना असंभव है, इस कारण वह अन्य उपाय सोचकर अपनी अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये अग्रसर हुए । चतुर राठौर राजकुमार बीदाने जो उपाय किया था उसपर मोहिल किसी प्रकारसे भी संदेह नहीं कर सकते थे।बीदाने सबसे पहिले मारवाडकी एक राजकुमारीके साथ मोहिल पतिके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित किया । वीर राठौर वंशके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बंधन स्थापन करना महा सन्मानका विषय जान मोहिलपतिने शीघ्र ही इस प्रस्तावमें अपनी सम्मति दी । कुछ ही दिन पीछे बीदाने विचित्र चातुरी जालका विस्तार कर राठौर राजकुमारीके पदोचित सज्जित सेनाको साथ ले,कन्यायात्री और कन्याको छापरमें ले आये । कन्यायात्रीगण और कन्या सवारीमें गुप्तभावसे आई, किसीको कुछ भी संदेह करनेका अवसर प्राप्त न हुआ, कन्या और कन्या यात्रिगणोंको बडे आदर-भावसे ग्रहण करनेके लिये मोहिलपतिने अपने राज्यके समस्त सामन्तोंके साथ किलेमें डेरे दिये । कन्या और कन्याके कुटुम्बके लोग सभी एक २ करके सवारीमेंसे उतरकर किलेके भीतर गये । परन्तु शीघ्र ही रथ और वहालियोंमेंसे नंगी तलवारें हाथमें लिये हुए सैकडों राठौरोंने निकलकर मोहिलपति और

सामन्तोंके ऊपर भीम वेगसे आक्रमण किया । विवाहका अनुष्ठान समाधिमें बदल गया । बीदाकी चतुरता सफल हो गई है, यह समाचार पाकर मारवाडके महाराजने शीघ्र ही उनकी सहायताके लिय अधिक राठौरोंकी सेना भेज दी । उस सेनाकी सहायतासे साहसी बीदाने मोहिलोंके शासनको एकवार ही लुप्त करके अपनी शक्तिको प्रवल कर लिया । पिता जोधाने सेनाके द्वारा पुत्र बीदाकी सहायता की, बीदाने नवीन जीते हुए राज्यके लाडणूँ नामक देश और बारह खंड ग्राम पिताको दे दिये । वह देश आजतक मारवाडके अधिकारमें हैं । बीदाके परलोक जानेके पीछे उनके पुत्र तेजसिंहने अपने पिताके नामसे बीदासर नामकी नवीन राजधानीकी प्रतिष्ठा की । यही बीदावत सम्प्रदाय बीकानेरमें सबसे अधिक बलवान् थी । इसीसे बीकानेरके महाराज अपने राज्यमेंसे सभीसे इच्छानुसार कर लेते थे, परन्तु इस बीदाबाटीसे कभी अपनी इच्छानुसार कर नही लिया । यह देश अच्छे विस्तारवाला था परन्तु पृथ्वी एकसार थी । वर्षाऋतुमें चारों ओरके बालुमय छोटे २ पहाडोंपरसे जल निकलकर इस स्थानको तर करता रहता है । वहांकी पृथ्वी बंजर है, इस कारण इस स्थानके चारों ओर अधिकतासे गेहूँ उत्पन्न होते हैं । समस्त बीदाबाटी देशके एकसौ चौवालीस खण्ड ग्रामोंमें इस समय जो चौवालीस वा पचास हजार निवासी रहते हैं, इनमेंसे तीन अंशोंमेंसे एक अंशके निवासी राठौर हैं, यह हमें निश्चय नही होता । यह देश बारह भागोंमें विभक्त है, इनमेंसे पांच श्रेष्ठ हैं । इन देशोंके आदि निवासी मोहिलोंमेंसे इस समय बीस परिवारसे अधिक सारी बीदाबाटीमें नहीं दिखाई देते । और शेष निवासियोंमेंसे प्रधानतः अधिकांश जाट किसान और वाणिज्यका व्यापार करनेवाली जातियां हैं । "

द्वितीय अध्याय २.

बृटिश गवर्नमेंटके साथ सूरतसिंहके सन्धिबंधनकी चेष्टा करना-संधिके प्रस्तावमे बृटिश गवर्नमेंटका असम्मति देना-राजा सूरतसिंहका इच्छानुसार शासन-राजद्रोह-बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन-संधिपत्र-कर देनेसे छुटकारा पाना, शांतिस्थापन-राजा सूरतसिंहका परलोक जाना-उनके चरित्रोंकी समालोचना-रत्नसिंहका अभिषेक-पीडित सामन्त और प्रजाकी नवीन आशा-जैसलमेर राज्यके साथ विवाद-दोनों राज्योंमें युद्धकी तैयारी-जयपुर और मेवाड़पतिकी रणशय्या-राणा रत्नसिंहका सेना सहित जैसलमेरमे जाना-अंग्रेज गवर्नमेण्टका युद्धमें विघ्न करना-संधिपत्रके अनुसार रत्नसिंहके निकट प्रस्ताव भेजना-युद्धसे शान्ति होना-मेवाडके महाराणाका मध्यस्थ होकर विवाद भजन करना-दोनों राजाओंके द्वारा दोनोंकी क्षति पूर्ण करना-असंतुष्ट सामन्तोंका फिर विद्रोहके लक्षण प्रगट करना-उनका दमन करनेके लिये रत्नसिंहका अंग्रेज रेसिडेण्टके निकट सहायताकी प्रार्थना करना-सहायता देनेमें रेसिडेण्टकी प्रतिज्ञा करना-गवर्नर जनरलका उस प्रतिज्ञापालनमे बाधा देना-गवर्नमेंटकी इच्छानुसार संधिपत्रका अर्थ करना-जैसलमेरपतिके साथ रत्नसिंहका फिर विवाद-गवर्नमेंटका विवादकी मीमांसा करना-दोनो राजाओंमे मित्रता-रत्नसिंहका राज्यसीमावृद्धिकी चेष्टा करना-वाणिज्य-शुल्ककी नवीन व्यवस्था-राजा रत्नसिंहकी मृत्यु ।

जिस समय महाराज सूरतसिंह मृत्युके मुखसे छुटकारा पाकर नवीन जीवन पा अपने राज्यमें फिरसे भयंकर राजनैतिक शासन करनेके लिये अग्रसर हुए । उसी समय महामाननीय टाड साहब अपने प्रियस्थान रजवाडेको छोडकर अपनी जन्मभूमि इंगलैण्डको चले गये, इसी कारणसे उनको बीकानेरका इतिहास उसी समय समाप्त करना पडा था । प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये हम मेवाड और मारवाडके समान बीकानेरके पीछेके इतिहासको भी लिखनेमें प्रवृत्त हुए हैं ।

राजा सूरतसिंह जिस समय मारवाडके महाराज मानसिंहसे परास्त हो गये थे, उस समय विजयी बृटिशसिंहने भारतके अनेक प्रान्तोंमें अपना अधिकार करके भावी प्रबल शासनशक्तिको दृढ कर लिया था । सूरतसिंहने अपनी दुर्बुधिके वशीभूत होकर मानसिंहके विरुद्ध धौंकलसिंहके साथ मिलकर अपने राज्यकी पाँच वर्षकी आमदनीको वृथा खो दिया था, इसी कारणसे उनका आर्थिक बल और विक्रम घट गया था, मानसिंहकी सेनाके प्रबल दावानलके समान बीकानेरकी सीमामें आते ही सूरतसिंहका साहसपूर्ण हृदय कंपायमान हो गया. उन्होंने विचारा कि इस अगाध विपत्तिसागरसे उद्धार पाना तो दूर रहा बरन् राज्यके भी नाश होनेकी संभावना है । इस हेतु उन्होंने उस समय भारतमें एकमात्र बृटिश गवर्नमेंटको प्रबल बलशाली जानकर १८०८ ईसवीमें गवर्नमेण्टके निकट संधिका प्रस्ताव भेज दिया। गवर्नमेण्ट उस समय अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर रही थी अस्तु उस राजनीतिसे सूरतसिंहका पक्ष समर्थन न किया गया, और कहा गया कि यमुनाके पारवाले किसी देशीय राजाको आश्रय न दिया जायगा न किसी देशी राजाके साथ रक्षण पडिन तथा संधिस्थापन किया जायगा। मान्यवर टाड साहब-ने न जाने क्यों इस घटनाका वर्णन नहीं किया, इसका विचार करनेमें हम असमर्थ हैं ।

राजा सूरतसिंहने कठोर रोगसे छुटकारा पाकर प्रजाके प्रति फिर उसी प्रकारके उपद्रव और अत्याचार करने प्रारंभ कर दिये तथा सामन्तोंके प्रति भी कठोर व्यवहार करना प्रारंभ किया । राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें फिर भयंकर असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित हो गई। खाली खजानेको परिपूर्ण करनेके लिये अधिकतासे करकी वृद्धि की गई और प्रत्येक सामन्तोंके अधिकारी देशपर जाकर उनकी समस्त धन सम्पत्ति भी लूटी जाने लगी । इत्यादि इन्हीं सब दुरुपायोंका अवलंबन कर सूरतसिंह इस समय उस हानिको पूर्ण करने लगे जो उन्हें मानसिंहके विमुख होनेसे हुई थी, और इसीसे प्रजा तथा सामन्त लोग सूरतसिंहको राक्षस स्वरूप जानते थे और उससे भयभीत होकर सभी उपद्रवोंको सहन करते थे । यद्यपि सब सामन्त एकमत होकर सरलतासे सूरतसिंहको राज्यच्युत कर सकते थ, परन्तु उसके असह्य अत्याचारोंको स्मरण कर, वे यह सोचकर रह जाते थे कि कदाचित् पीछे सूरतसिंहकी जय हो जाय तो यह हमारा सर्वनाश कर देंगे । इसी भयसे कोई भी साहसके साथ सूरतसिंहके विरुद्ध खडे न हो सके । अत: सूरतसिंहके अत्याचारोंका स्रोत समभावसे बहने लगा ।

यही नहीं कि सूरतसिंह केवल राजहन्ता ही हों, बरन् अनेक प्रकारके पापोंसे इनका जीवन महाकलंकित हो गया था; इस कारण यह उन पापोंके नाश होनेकी इच्छासे प्रायः ब्राह्मणोंको बहुतसा धन देते थे; तथा दरिद्र ब्राह्मणोंको अपने यहाँ आश्रय देकर उनका अधिक संमान करते थे, और देवसेवा तथा धर्मकार्यमें भी लिप्त रहते थे, और जो दुराचारीगण उनके बालकपनके संगी थे, उन्होंने ही उस समय राज्यभारको ग्रहण करके चारों ओर इच्छानुसार उपद्रव करने प्रारंभ कर दिये थे। यद्यपि राजा सूरतसिंह पापोंका प्रायश्चित करनेके लिये ब्राह्मणोंकी सेवा और देवकार्यमें लिप्त रहते थे, तथापि दुराचरण करनेसे भी कदापि न चूकते थे। तब एक ओर जो शासनकर्ताने अपने स्वार्थसाधन तथा राजभंडारको पूर्ण करनेके लिये लोहेका दंड धारण करके प्रजाको पीडित करना प्रारंभ कर दिया, तब दूसरी ओर उसी भाँति अराजकताकी वृद्धि होनेसे चोरोंका बल इतना प्रबल हो गया कि लोग अपने धन और प्राण बचानेके लिये भी व्याकुल हो गये। अन्तमें सामन्त लोग अधिक अत्याचार सहन न कर सके, और वे प्रगट रूपसे सूरतसिंहके विरोधी हो गये ।

ब्राह्मणोंको धन देकर पूजा होम इत्यादिसे पापोंके नाशमें नियुक्त सूरतसिंह राज्यके चारों ओर प्रबल असंतोषकी अग्नि प्रज्वलित और सामन्तोंको विद्रोही हुआ देखकर अत्यन्त भयभीत हो गये। उस समय न जाने उनके पुण्यसंचयकी वाञ्छा कहाँ भाग गई। उस समय वह अपने प्राणोंकी रक्षा, सिंहासनकी रक्षा और राज्यकी रक्षाके लिये व्याकुल होकर चारों ओर आश्रय पानेके लिये चेष्टा करने लगे। इस समय पिंडारियोंकी लडाई-के पहिले १८२८ईसवीमें बृटिश सरकार रजवाडोंके सभी राजाओंके साथ प्रथम संधिबंधन करनेके लिये अग्रसर हुई थी। गूढ राजनैतिक उद्देशको गुप्त रखकर अपनी भावी शासन-शक्तिका विस्तार करने और राजपूत राजाओंकी स्वाधीनता लोप करनेके लिये ही बृटिश गवर्नमेण्टने हतवीर्य राजपूत राजाओंको संधिबंधन करनेके लिये बुलाया था, बीकानेरके महाराज सूरतसिंहने तुरन्त ही बडे आनन्दके साथ गवर्नमेण्टके डेरोंमें उपयुक्त प्रतिनि-धिको दिल्ली भेज दिया। राजनीतिचतुर सूरतसिंह भलीभाँतिसे जान गये थे कि अंग्रेजोंकी सहायतासे अवश्य ही हम ऊधमी सामन्तोंको वशमें कर सकेंगे। इस कारण उन्होंने एकमात्र गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन करना ही अपने भावी मंगलका कारण निश्चय किया, और बडे आग्रहके साथ शीघ्र ही संधि कर ली। राजा सूरतसिंहको उस समय स्वप्नमें भी यह ध्यान नहीं था कि हमारे भावी प्रतिनिधि इसी संधिबंधनके वशीभूत होकर सदाके लिये गवर्नमेण्टके अधीन होकर रहेंगे ।

राजा सूरतसिंहके प्रतिनिधि ओझा काशीनाथ दिल्लीमें गये और बृटिश गवर्न-मेण्टके साथ निम्नलिखित संधिपत्र तैयार किया गया ।

सन्धिपत्र ।

माननीय ईस्ट इण्डिया कम्पनीके साथ बीकानेरके अधीश्वर महाराज सूरतसिंह बहादुरका यह संधिपत्र माननीय कम्पनीकी ओरसे महामाहिमवर मार्किस आफ

हैसटिन्स भारतवर्षके गवर्नर जनरलसे सम्पूर्ण क्षमता प्राप्त मि० चार्लस थियोफिलास मेटकाफ और राजराजेश्वर श्रीमान् सूरतसिंह बहादुरको उनके द्वारा दिया गया, तथा सम्पूर्ण सामर्थ्यवान् ओझा काशीनाथ द्वारा निर्द्धारित हुआ।

पहिली धारा।

माननीय कम्पनीके साथ महाराज सूरतसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा जो इनके स्थानपर अभिषिक्त हों वह चिरस्थाई मित्रता करके संधिबंधन कर लें, अपने अपने स्वार्थकी ओर दोनोंका ही ध्यान रहै। जिस किसी पक्षके मित्र और शत्रु होंगे वह दोनों ओरके मित्र शत्रुरूपसे गिने जायँगे।

दूसरी धारा।

बृटिश गवर्नमेण्टने बीकानेर राज्य और उसके अधिकारी देशोंको शत्रुपक्षके हाथसे रक्षा करनेका भार ग्रहण किया।

तीसरी धारा।

महाराज सूरतसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टकी अनुगतरूपसे सहयोगिता करैं, और बृटिश गवर्नमेण्टका प्रभुत्व स्वीकार करते हैं, और वे अन्य किसी राजा अथवा राज्यके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध न कर सकैंगे।

चौथी धारा।

बृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार और अनुमतिके अतिरिक्त महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त किसी राजा वा किसी राज्यके साथ संधिबंधन नहीं कर सकैंगे; परन्तु अपने कुटुम्बी तथा मित्र राजाओंके साथ नियमितरूपसे पत्रव्यवहार कर सकैंगे।

पाँचवीं धारा।

महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त किसीके प्रति अत्याचार नहीं कर सकैंगे; यदि दैवयोगसे किसीके साथ विवाद उपस्थित हो जाय तो उसकी मीमांसा तथा दंडकी मध्यस्थताका भार बृटिश गवर्नमेण्टके ऊपर रखना होगा।

छठवीं धारा।

जिस कारणसे बीकानेर राज्यके कितने ही मनुष्योंने राजमार्गपर लूटमार की है तथा समस्त धन सम्पत्ति लूटकर इस संधिबंधनमें आबद्ध हुए दोनों राज्योंकी शान्तिप्रिय प्रजाके ऊपर अत्याचार किये हैं और अंग्रेजोंके अधिकारी देशके निवासियोंकी चोर और डकैतोंने बहुतसी धन सम्पत्ति लूट ली है, उन सबको लौटा देनेके लिये तथा अंतमें राज्यसे चोर और चोरीको जडसे नाश करनेके लिये महाराज स्वीकार करते हैं। यदि महाराज चोर और डाकुओंको निवारण करनेमें समर्थ न होंगे, तो उनके प्रार्थना करनेपर गवर्नमेण्टकी ओरसे उनको सहायता मिलेगी; और उस कार्यके लिये जो सेना रक्खी जायगी महाराजको उसका सब खर्चा देना होगा। यदि वह

इस खर्चेके देनेमें किसी प्रकारकी अरुचि करेंगे तो उसके पलटेमें अपने राज्यके कई देश गवर्नमेण्टको देने होंगे; और बृटिश गवर्नमेण्ट उन देशोंकी आमदनीसे वह द्रव्य लेकर फिर वह देश राजाको लौटा देगी ।

सातवीं धारा ।

महाराजके राज्यके जो ठाकुर तथा अन्यान्य निवासी विद्रोही हो गये हैं तथा जिन्होंने उनकी शासनशक्तिकी अवमानता की है, महाराजके आवेदन करनेपर बृटिश गवर्नमेण्ट उनको दमन करेगी। इस कार्यके लिये जो सेना रक्खी जायगी, महाराजको उसका भी खर्चा देना होगा, यदि महाराज उस खर्चेके देनेको समर्थ न होंगे तो उसके बदलेमें बृटिश गवर्नमेण्टको अपने राज्यके कुछ देश देने होंगे और बृटिश गवर्नमेंट उन देशोंकी आमदनी लेकर उन्हें फिर महाराजको लौटा देगी ।

आठवीं धारा ।

बृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोधसे बीकानेरके महाराज अपनी सामर्थ्यके अनुसार सेनाकी सहायता करेंगे ।

नवीं धारा ।

महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त अपने राज्यको स्वाधीनभावसे शासन करते रहैं; और उस राज्यमें बृटिश गवर्नमेण्टके शासनकी सीमाका विस्तार नहीं होगा ।

दशवीं धारा ।

बृटिश गवर्नमेण्टकी यह इच्छा और यह अभिलाषा है कि काबुल और खुरासान इत्यादि देशोंसे, जिससे वाणिज्य द्रव्य निर्विघ्नतासे आ सकें, इस कारण बीकानेर और भटनेर राज्यके मार्गकी रक्षा भलीभांतिसे की जाय; इस निमित्त महाराज स्वीकार करते हैं कि वह अपने राज्यमें उक्त उद्देशको इस प्रकारसे सफल करनेकी चेष्टा करैं कि वणिक् लोग जिससे निर्विघ्नतासे आ जा सकें; और उनको चोर डाकू किसी प्रकारकी बाधा न दे सकें, अथवा वाणिज्य महसूल इस समय जितना लिया जाता है उससे अधिक न बढाया जाय ।

ग्यारहवीं धारा ।

यह ग्यारह धाराओंसे युक्त संधिपत्र मि० चार्लेस थियोफिलास मेटकाफ और ओझा काशीनाथके द्वारा तैयार होकर हस्ताक्षर करके इसपर मोहर लगा दी गई, और यह महामाहिमवर गवर्नर जनरल तथा राजराजेश्वर महाराज श्रीमान् सूरतसिंह बहादुरका स्वीकृत हुआ, आजकी तारीखसे लेकर बीस दिनके बीचमें परस्परमें लेन देन हो जायगा।

दिल्लीमें आज सन् १८१८ ईसवीकी ९ मार्चको लिखा गया.

(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ.

(हस्ताक्षर) ओझा काशीनाथ ।

हस्ताक्षर हैसटिन्स ।

गवर्नर जनरलका छोटी मोहर.

गोगराके किनारे पात्राम्याघाटके निकट डेरोंके भीतर मान्यवर गवर्नर जनरलका यह सन्धिपत्र १८१८ इसवीकी २१ मार्चको तैयार हुआ ।

(हस्ताक्षर) जे.—आडाम ।
गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी । *

राजा रायसिंहने अपनी इच्छानुसार बादशाह अकबरकी अधीनता स्वीकार करके और अपने गौरवको बढाकर राज्यकी श्रीवृद्धि की थी, परन्तु सूरतसिंहने अपनी निर्बुद्धिताके दोषसे सामन्त और प्रजाके अप्रियमात्र होकर प्रबल बलशालिनी ईस्टइण्डिया कम्पनीसे संधि कर ली । परन्तु सूरतसिंहके सम्मानका विषय यह है कि मेवाड मारवाड तथा आमेर इत्यादि राज्यके प्रबल राजाओंको उक्त कम्पनीके साथ संधिबन्धन करके कम्पनीको जिस प्रकारसे वार्षिक कर देना पडा था, सूरतसिंहको उस तरहसे कर न देना पडा । कर देनेसे छुटकारा पानेका एकमात्र कारण यह है कि महाराष्ट्रोंके दलसे व्याकुल हो रजवाडोंके सब राजाओंने उनको चौथ स्वरूपसे कर दिया था । परन्तु उन्होंने न तो कभी बीकानेर पर आक्रमण किया और न बीकानेरके महाराजसे एक पाई ली, अस्तु मेवाड और मारवाडके महाराज महाराष्ट्रोंको जो कर देते थे, अंग्रेज कम्पनीके साथ संधि होनेके समय इनको कम्पनीको भी उतना ही कर देना निर्धारित हुआ, परन्तु बीकानेरके महाराजने मरहठोंको कर नहीं दिया, इसी कारणसे कम्पनी भी सूरतसिंहसे कर न ले सकी । यद्यपि बीकानेरके महाराज अंग्रेज गवर्नमण्टके अधीनमें गिने गये, तथापि उक्त संधिके मतसे आजतक गवर्नमेण्टको किसी प्रकारका कर नहीं दिया गया ।

अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ महाराज सूरतसिंहकी संधि होते ही जो सामन्त इनके विरुद्ध खडे हुए थे वह इस समय महा भयभीत हुए । प्रबल पराक्रमशाली अंग्रेजीसेना किसी दिन अवश्य ही बीकानेरमें आकर हमारा सर्वनाश करेगी, यह विचार कर उन्होंने चुपचाप सूरतसिंहके अत्याचारोंको सहन करनेका विचार किया । और शीघ्र ही बीकानेरमें अंग्रेजी सेनाने जाकर राजाकी आज्ञानुसार शांति स्थापन की तथा चोर डाकुओंके उपद्रवोंको निवारण करके वह चली गई ।

यद्यपि राज्यमें बाहरी शांति हो गई थी तथापि सामन्त और प्रजाके हृदयमें भीतर ही भीतर पहिलेके समान असन्तोषकी अग्नि प्रबल होती रही ।

---

* Aitcheson's Treaties Vol IV P. 148.

महाराज सूरतसिंहने सन् १८२४ इसवीमें इस मायामय शरीरको त्याग दिया । अंग्रेज गवर्नमेंटके साथ सन्धि होनेके समय यद्यपि राज्यमें अधिकतासे शांति हो गई थी, परन्तु उनकी मृत्युके पहिलेसे ही उन असन्तुष्ट सामन्तोंने फिर विद्रोह उपस्थित कर दिया। राज्यके चारों ओर फिर अराजकता उपस्थित हो गई । अफगानिस्तानसे बहुतसे वाणिज्यके द्रव्य इस बीकानेर राज्यमें होकर भारतके अनेक प्रान्तोंमें जाते थे । इसी लिये उस सन्धिमें एक यह धारा भी रक्खी गई थी कि जिससे बीकानेरके सामन्त इन वाणिज्य द्रव्योंसे भरे हुए छकडोंके साथ जानेवाले वणिकोंके ऊपर किसी प्रकारका अत्याचार न करें. परन्तु. इस समय उस धाराके अनुसार कार्य करनेमें महाराज सरतसिंह निपट-असमर्थ थे ।

इस बातको महाराज स्वयं मानते थे कि मैं घोर पातकी हूँ, परन्तु अपनी सामर्थ्य तथा अपने गौरवको बाढनेके लिये उन्होंने कितनी ही बार युद्धभूमिमें जाकर प्रशंसनीय वीरता दिखाई थी । इनके राज्यकी सीमा जैसी सामान्य थी, उनकी सेनाका बल जैसा सामान्य था । यदि अपने कार्यक्षेत्रको भी उसी भांति सीमाबद्ध रखनेकी चेष्टा करते तो अन्तसमयमें वह कभी भी आपत्तिग्रस्त तथा हीनबल नहीं हो सकते थे । किन्तु वह अपनी दुर्बुद्धिवश मारवाडपति मानसिंहके साथ ऐसे कुसमयमें युद्धमें लिप्त हुए कि वही युद्ध उनकी अवनतिका कारण हुआ । महाराज सूरतसिंहके मारवाडपति मानसिंहका विरोधी होनेका यद्यपि टाड साहबने कोई कारण नहीं लिखा परन्तु हमारे विचारवान् पाठक सरलतासे इसका अनुमान कर सकते हैं कि सूरतसिंहके हृदयमें अवश्य ही एक गूढ और ऊँचा उद्देश छिपा हुआ था; उसी अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये यह धन और सेनाका नाश करनेमें प्रवृत्त हुए थे । अनुमान होता है कि उन्हें इस बातपर पूरा विश्वास था कि मानसिंहके परास्त होते ही धौंकलसिंह अवश्य ही मारवाडके सिंहासनपर बैठेंगे, परन्तु जिस सूरतसिंहने अपने भतीजेको मारकर राज्यसिंहासन पाया था उसकी आशा क्यों फलीभूत हो और इनका प्रताप और प्रभुत्व क्यों लोप न हो जाय ?

महाराज सूरतसिंहके परलोकवासी होनेपर उनके पुत्र रत्नसिंह राजसिंहासनपर विराजमान हुए । रत्नसिंहके सिंहासनपर बैठनेके साथ ही साथ बीकानेरके सामन्त और समस्त प्रजाके मनका भाव भी सहसा बदल गया । सभीने विचारा कि सूरतसिंहके परलोक जानेके साथ ही साथ उनके निग्रह भोग भी समाप्त हो जांयगे, इस कारण वह नवीन राज्यके शासनमें मंगल और शांतिकी आशा करके नवीन २ आशाओंसे हृदयको शोभायमान करने लगे । महाराज सूरतसिंहकी मृत्युके पाहिले राज्यमें जिस प्रकारकी अशान्ति, उत्पीडन और अत्याचारोंके समुद्रकी तरंगमालाके विस्तारसे बीकानेर विध्वंस हो गया था, चोर डाकुओंके घोर उपद्रवोंसे अराजकता अपनी पूर्णमूर्तिसे विभीषिकामय दृश्य दिखा रही थी, नवीन शासनके प्रारम्भमें वह तरंगमाला और वह दृश्य न जाने कहां चले गये ।

रत्नसिंह सिंहासनपर बैठते ही एक बडे भारी युद्धमें गये । जयसलमेरकी दुष्ट प्रजाने और राजकर्मचारियोंने वहांके राजाके अज्ञान होनेसे अराजकतासे पूर्ण बीकानेर राज्यकी सीमामें जाकर बीकानेरकी प्रजाके ऊपर घोर अत्याचार करने प्रारंभ कर दिये थे । वह बीकानेरकी प्रजाकी सारी धन सम्पत्ति लूट कर ले गये थे । तब रत्नसिंहने अत्यन्त कुपित होकर जयसलमेरके महाराजके पास युद्ध करनेका प्रस्ताव भेजा और इधर जयपुर और मेवाड इत्यादिके राजाओंसे सहायता मांगी । रत्नसिंहके इस युद्धके प्रस्तावको सुनकर जयसलमेरके महाराज कुछ भी भयभीत न हुए, वरन् वह दुगुने उद्योगके साथ अपनी रक्षा और रत्नसिंहकी आशाको व्यर्थ करनेके लिये तुरन्त ही युद्धकी तैयारी करने लगे। बीकानेर और जयसलमेर दोनों राजाओंकी सेना जिस प्रकार सजने लगी, जयपुर और मेवाडकी सेना भी उसी प्रकारसे इस जातीय युद्धमें प्रवृत्त होनेके लिये जयसलमेर राज्यकी सीमामें आकर इकट्ठी हुई । बहुत दिन पहिलेसे दोनों राज्योंमें जो झगडा चल रहा था; उसकी अन्तिम मीमांसा करनेके लिये ही दोनों राजाओंने युद्धके लिये तैयार होना आवश्यक समझा, परन्तु युद्धके प्रारम्भ होनेके पहिले ही एक कारण विशेषने दोनों राजाओंको युद्धसे विमुख कर दिया । वह यह कि बीकानेरके महाराज सूरतसिंहने पहिले ही अंग्रेजोंके साथ संधि करनेमें स्वीकार किया था कि किसी देशीय राज्यपर आक्रमण न किया जायगा, और उस समय महाराज रत्नसिंह उस संधिकी धाराको भंगकरके जयसलमेरपर आक्रमण करनेके लिये गये, इनके इस आचरणसे बृटिश गवर्नमेण्ट अत्यन्त क्रोधित हुई, और महाराज रत्नसिंहसे कहला भेजा कि तुम संधिपत्र-की धाराके अनुसार जयसलमेरपर आक्रमण नहीं कर सकते । जिस कारणसे आपमें झगडा हो रहा है उसकी परस्पर मीमांसाका भार मेवाडके महाराणाके हाथमें अर्पण करना होगा। वही इसका निबटेरा कर देंगे । बृटिश गवर्नमेण्टके पाससे इस प्रस्तावके आते ही महाराज रत्नसिंहने शीघ्र ही युद्ध रोक दिया, और अन्तमें गवर्नमेण्टकी सम्मतिसे मेवाडके महाराणाने इस झगडेमें मध्यस्थ होकर इसकी मीमांसा की । प्रजाके द्वारा दोनों राज्योंका जो अनिष्ट हुआ था, दोनों राजाओंने उनकी हानिको पूर्ण कर दिया और विवादाग्नि कुछ कालके लिये शांत हो गई ।

महाराज रत्नसिंह उक्त विवादकी मीमांसा होनेके पीछे, पिछले वर्ष सन् १८३० इसवीमें राज्यके भीतरी झगडेमें पडे । महाराज सूरतसिंहके शासनकी शेष अवस्थामें बीकानेरके सामन्तोंने जिस भांति प्रकाशरूपसे विद्रोही होकर उनको सिंहासनसे उतारने-का संकल्प किया था, इस वर्षमें भी उसी प्रकारसे उन सामन्तोंने फिर राजद्रोही होकर भयंकर काण्ड उपस्थित कर दिया । उन सामन्तोंकी विद्रोहितासे महाराज रत्न-सिंह अत्यन्त भयभीत हो गये, उनको इतनी सामर्थ्य न हुई कि वह बिना सहायता पाये इस विद्रोहाग्निको शान्त करते, महाराज रत्नसिंहने इस समय संधिपत्रके बलसे अंग्रेज गवर्नमेंटसे सहायता मांगी। संधिपत्रकी छठवीं और सातवीं धाराके अनुसार महाराज रत्नसिंहने अंग्रेज गवर्नमेंटसे बीकानेर राज्यकी रक्षा और विद्रोही सामन्तोंको दमन करनेके लिये दिल्लीमें अंग्रेज रेसिडेण्टके निकट उक्त सहायताकी

प्रार्थना भेजी। रेसिडेण्ट शीघ्र ही सेनाकी सहायता देनेके लिये सम्मत हुए। बृटिश गवर्नमेंटने संधिपत्रका अर्थ सभी समयमें समभावसे नहीं किया है सो हमारे पाठक इससे पहिले ही अनेक स्थानोंमें पढ चुके हैं, परन्तु रेसिडेण्टके सहायताके लिये सेना भेजनेको तैयार होते ही अंग्रेज गवर्नर जनरलने असंतोष प्रगट करके रेसिडेण्टसे कहला भेजा कि,—"देशीय राजाओंके घरेलू झगडोंको शान्त करनेके लिये कभी सहायताके लिये सेना नहीं भेजी जायगी। यदि किसी विशेष कारणके उपस्थित होनेपर गवर्नमेण्ट आज्ञा देगी तो उस प्रकार सहायता दी जा सकती है। इस समय बीकानेरकी अवस्था ऐसी नहीं है कि उनको सेनाकी सहायता दी जाय।" गवर्नमेण्टकी यह आज्ञा पाते ही रेसिडेण्टने फिर सहायताके लिये अपनी सेना नहीं भेजी। संधिपत्रका यथार्थ अविकल अनुवाद हम पहिले लिख चुके हैं, उसी संधिपत्रके मतसे अंगरेज गवर्नमेंटने राजा सूरतसिंहको सेनाकी सहायता देकर राज्यके विद्रोही सामन्तोंको दमन किया था, परन्तु न जाने क्यों बृटिश गवर्नमेंटने इस समय उस संधिपत्रका भिन्न अर्थ कर लिया। जिस धाराके मतसे गवर्नमेण्टने एक बार ही बीकानेरके आभ्यन्तरिक उपद्रवोंको शान्त करनेके लिये सेनाकी सहायता दी थी, इस समय उसी धाराका क्या अर्थ कर लिया। एचिसन साहब अपने ग्रंथमें वर्णन कर गये हैं कि "रेसिडेण्ट १८१८ ईसवीके संधिपत्रकी छटवीं और सातवीं धाराका यथार्थ अर्थ नहीं समझ सके। उपरोक्त दोनों धाराओंके मतसे इस समय कार्य करना था। असंतुष्ट प्रजा और सामन्तोंको दमन करनेके लिये बीकानेरके महाराजको परिणाममें उक्तधाराके अनुसार बृटिश गवर्नमेंटके निकट कभी भी सेनाकी सहायताकी प्राथना करनेका अधिकार प्राप्त नहीं था"। परन्तु हम कह सकते हैं कि एचिसन साहबकी यह उक्ति यदि सत्य है, संधि पत्रकी उक्त दोनों धाराओंका यदि इस प्रकारका अर्थ है तो १८१८ ईसवीमें बीदावाटीके सामन्तोंके विद्रोही होनेसे बृटिश सेना क्यों उनको दमन करनेके लिये बीकानेरमें आई थी? तब उक्त दोनों धाराओंका दूसरा अर्थ क्यों हुआ? सारांश यह है कि बृटिश कम्पनीने जिस समय जैसी आवश्यकता देखी उस समय वैसा अर्थ किया।

जब महाराज रत्नसिंहने सुना कि गवर्नमेण्टसे सहायता न मिलैगी तब इन्होंने शीघ्र ही अपनी सामर्थ्यके अनुसार अपने आधीनकी सेनाके द्वारा ही विद्रोही सामन्तोंको वशीभूत करनेकी चेष्टा की, परन्तु इनकी यह चेष्टा सफल भी न होने पाई थी कि, बीचमें ही और विवादाग्नि प्रज्वलित हो गई। यद्यपि जयसलमेरपतिके साथ महाराज रत्न-सिंहके विवादकी एकवार मीमांसा हो गयी थी परन्तु इस समय अर्थात् १८४५ ईसवीमें दोनों राजेश्वरोंमें वह विवाद इतना प्रबल हो गया, कि बृटिश गवर्नमेण्टको फिर शान्ति स्थापन करनेके लिये एक अंग्रेज राजपुरुषको मध्यस्थ करके भेजना पडा। उस अंग्रेज राजपुरुषने कार्यक्षेत्रमें आकर दोनों राजाओंका विवाद इस प्रकार संतोषदायक रूपसे निपटा दिया कि, दोनोंमें ही जो दीर्घकालसे शत्रुता चली आ रही थी उसे दोनों भूल गये, और दोनोंमें परस्पर मित्रताका सम्बन्ध स्थापित हो गया।

कर्नेल म्यालिसन साहब लिख गये हैं कि, महाराज रत्नसिंहने उन उपद्रवोंके बीचमें ही हिसारकी ओरतक अपने राज्यकी सीमाके विस्तार करनेका दृढ यत्न किया था। परन्तु बृटिश गवर्नमेण्टने दृढरूपसे असंतोष प्रकाश कर कठोर नीतिका अवलम्बन किया इससे महाराजकी वह आशा दूर हो गयी।

वाणिज्यकी श्रीवृद्धिकी ओर बृटिश गवर्नमेण्ट विशेष ध्यान रखती थी। एक समय बीकानेरके वाणिज्यकी अधिक उन्नति थी। काबुलसे अनेक प्रकारके वाणिज्य द्रव्य बीकानेरमें होकर भारतमें आते थे। सन् १८१८ ईसवीके संधिपत्रके मतसे बृटिश गवर्नमेण्टने ऐसी व्यवस्था कर दी कि जिससे यह वाणिज्य द्रव्य निर्विघ्नतासे बीकानेरमें होकर भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमें पहुँच जाया करें। १८४४ ईसवीमें अंग्रेज गवर्नमेण्टने उस वाणिज्यकी श्रीवृद्धिके लिये महाराज रत्नसिंहके निकट एक नवीन प्रस्ताव उपस्थित किया। जो वाणिज्यके द्रव्य बीकानेरसे होकर सिरसा और भावलपुरमें जाया करते थे उन सभी द्रव्योंपरसे बीकानेरके महाराज अधिक महसूल लेते थे। इस वर्षमें बृटिश गवर्नमेण्टने वही महसूल घटा देनेका प्रस्ताव किया।

महाराज रत्नसिंहने इस प्रकारसे पचीस वर्षतक राज्य करके १८५२ ईसवीमें इस मायामय शरीरको छोड दिया।

तृतीय अध्याय ३.

सरदारसिंहका अभिषेक; राजपूत जातिका साहस तथा बल विक्रम घटनेका कारण; यवन शासन और अंग्रेज शासनमें राजपूत जातिकी अवस्थाका भेद–बृटिश गवर्नमेंटकी ओर सरदारसिंहकी अनुरक्ति; सिपाही विद्रोहके समयमें सरदारसिंहका बृटिश गवर्नमेंटको सहायता देना; बृटिश गवर्नमेंट का सरदारसिंहको पुरस्कार देना; अंग्रेज राजप्रतिनिधिका सरदारसिंहको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण करके सनद देना; सनदपत्र; बृटिश गवर्नमेंटका सरदारसिंहको इकतालीस खंड ग्रामोंका चिर स्वत्व देना; दानपत्र; सीमान्तपर उपद्रवकर; वृद्धिके पलटेमें सामन्तोंके साथ विवाद विसम्वाद; बृटिश गवर्नमेंटके दिये हुए ग्रामोंपर करकी वृद्धि करना; उन ग्रामोंके निवासियोंका अनुयोग; ग्रामनिवासियोंके पूर्व अधिकारको अक्षत रखनेके लिये सरदारसिंहको अंग्रेज राजप्रतिनिधिका आदेश; करवृद्धि; बीदावाटीके सामन्तोंको नवीन सनद देना; महाराज सरदारसिंहकी मृत्यु; नवीन मंत्री समाजके द्वारा बीकानेर राज्यका शासनभार अर्पण; वर्तमान महाराज डूंगरसिंहका अभिषेक; मंत्रीसमाज; अमरसिंहका महाराजके प्राणनाशकी चेष्टा करना; अमरसिंहके द्वारा महाराज डूंगरसिंहको दंड; तीर्थयात्रा; माननीय प्रिन्स आफ वेल्सके साथ महाराजाका साक्षात; सामन्तोंके साथ राजपूत राजाओंका सम्बन्ध परिवर्तन; महाराज डूंगरसिंहका सामन्तोंकी कर वृद्धिके लिये प्रस्ताव करना; उसके सम्बन्धमें पंचायतका नियोग; जरीब बनाना; वर्द्धित कर देनेमें सामन्तोंकी असम्मति; बीदासरके सामन्तोंपर करवृद्धि; प्रधान २ सामन्तोंका कर देनेमें असम्मति प्रकाश; सामन्तोंका तीन प्रस्ताव उपस्थित करना; कारागारसे अमरसिंहको छोड देना; उनके पुत्र रावको राजाकी उपाधि देना; नोरवादेशके सामन्तोंकी अवाध्यता;

महाराजका उनके अधिकारको ग्रहण करना; नीची श्रेणीके सामन्तोंकी वार्द्धित कर देनेमें असम्मति; महाराज डूंगरसिंहके निकट उनका कर घटानेके लिये आवेदन; महाराजका उस आवेदनको ग्रहण न करना; असिस्टेंट पोलिटिकल एजेन्ट कप्तान टालबटका सामन्तोंको राजधानीमें बुलाकर वार्द्धित कर देनेकी आज्ञा देना; सामन्तोंका असंतोष प्रकाश; उनका भागना; सामन्तोंको दंड देनेकी तैयारी; बीकानेरके प्रधान सेनापति हुकुमसिंहका सेनाके साथ सामन्तोंके विरुद्ध युद्धकी यात्रा करना; विद्रोही सामन्तोंकी युद्धके लिये तैयारी; हुकुमसिंहका महाजन, रावतसर और गान्धोलो देशपर अधिकार करना; सामन्तोंका बीदासरके किलेका आश्रय लेना; उनको युद्धके लिये तैयारी; विद्रोहियोंको दमन करनेके लिये महाराजका गवर्नमेंटसे सहायता मांगना; सेनाकी सहायता देनेमे गवर्नमेंटकी सम्मति अंग्रेजी सेनाका बीकानेरमें आगमन; अंग्रेजी सेना और महाराजकी सेनाका बीदासरके किलेको घेरना; सामन्तोंका युद्ध करनेकी प्रतिज्ञा करना; कप्तान टालबटका बीदासरके किलेके साथ आत्मसमर्पण करनेके लिये सामन्तोंके निकट दूत भेजना; सामन्तोंका उत्तर; घेरेहुए किलेपर गोलोंकी वर्षा; सामन्तोंका आत्मसमर्पण; अंग्रेजोंकी सेनाका राव बीदाके प्राचीन दुर्गोंको समभूमि करना; विद्रोही सामन्तोंको कारागारमें भेजना; पार्लियामेंटके हाउस आफ लार्डका भारतवर्षके स्टेट सेक्रेटरीका उक्त समरके सम्बन्धमें मतव्य-प्रकाश; बीकानेरके आभ्यन्तरिक शासनके सम्बन्धमें अंग्रेज असिस्टेंट पोलिटिकल एजेंटका असंतोष प्रकाश; शासनविभागका व्यक्तिगत परिवर्तन; शासन व्यवस्थाके सम्बन्धमें मतव्य प्रकाश; शासनविभागके सम्बन्धमें वर्तमान पोलिटिकल एजेंटका मन्तव्य; उपसहार ।

अपने पिताक परलोक जानेके पीछे सन् १८५२ ईसवीमें सरदारसिंह पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए । सरदारसिंहके अभिषेकके समयसे बीकानेरकी राजशक्ति मानो क्रमशः हीनबल होने लगी । जो बल विक्रम साहस शूरता आदि गुण राठौर राजाओंके अंग भूषण थे वे सब एकबार ही निर्जीवसे हो गये । राजपूत जातिकी चिर वीरताका मानों एकबार ही लोप हो गया । प्रतिवासी राजाओंके साथ युद्ध होनेसे यवनसम्राट्के आधीन भारतके अनेक स्थानोंपर संग्राममें केवल राठौर ही नहीं वरन् चौहान इत्यादि सभी राजपूत युद्धके अभ्याससे पतित अवस्थामें भी जातीय धर्म पालनके साथ शूरवीरता और बल विक्रमकी अचल भावसे रक्षा करते आये थे । परन्तु सरदारसिंहके समयमें उस जातीय धर्म पालनके भाव सहसा ह्रास हो गये । एक सरदारसिंह ही नहीं, रजवाडा ही नहीं, समस्त भारतक्षेत्र ही मानों स्तम्भित हो गया, सन्धिबंधन होते ही युद्धकी चर्चा न्यून होनेसे सब शांतिका सुख भोगने लगे । जैसी सरकार अंग्रेजोंसे संधि कर रियासतोंको शांति मिली है यदि इस शांति समयमें गवर्नमेण्टके समान बनावटी युद्धोंसे अपनी समर कुशलता भारतके राजा बनाये रखते तो उनकी सेनामें वीरता धीरता और प्रताप बराबर बना रहता, कारण कि जो विद्या पढकर उसका अभ्यास न रहे तो उसमें अवनति हो जाती है, युद्धविद्या भी केवल सीखनेसे बिना समर किये फलीभूत नहीं होती । हृदयमें दृढताका आविर्भाव नहीं होता, चुप रहनेसे बल विक्रम साहस अवनतिको प्राप्त हो जाता है, कोई भी वीरजाति यदि तलवार भाला हाथमें लिये सौ वर्षतक चुपचाप बैठी रहे तो क्या उसमें साहस रह सकता है ? कभी नहीं,

हमारा इससे यह अभिप्राय नहीं कि देशीय राजा परस्पर युद्ध करते रहें पर हमारी यह इच्छा है कि,वे आलस्य और विलासितामें अपना समय व्यतीत न करके बल विक्रम सम्पन्न रहें, सरकार अंग्रेजको बहुत स्थानोंपर सेनाकी आवश्यकता होती है; यदि क्रमसे रियासतोंकी सेना इस कार्यमें ली जाया करै तो उनमें वह गुण सदा वृद्धिको प्राप्त होते रहें, यवनसम्राटोंने भी देशीय राजाओंकी सेनाके साथ ही साथ अपना प्रभुत्व संपादन किया था, इन सेनाओंसे कार्य लेनेसे उनका बल वीर्य साहस वृद्धिको प्राप्त होता रहेगा, साथमें ऐसी शिक्षाकी भी आवश्यकता है जिससे राजपूत जाति अपने आचार विचार और जातीय धर्मको भली प्रकारसे जानती रहे, इन बातोंके बने रहनेसे राजपूत जातिमें जातीय गौरव बराबर बना रहेगा।

महाराज सरदारसिंह बीकानेरके सिंहासनपर विराजमान होकर भलीभाँति जान गये थे कि भारतवर्षके देशीय राजाओंका चिर-प्रचलित कर्त्तव्यकर्म केवल समयके गुणसे बदल गया है, इस कारण वह समयानुसार कार्य करनेका यत्न करने लगे। सरदारसिंह समझ गये कि विश्वविजयी बृटिशसिंह भयंकर मूर्तिसे भीषण गर्जन कर भारतवर्षको कंपायमान कर रहा है इससे उसीकी आधीनता स्वीकार करके उसीका मन प्रसन्न करना उचित है।

नवीन महाराजको केवल पांच ही वर्ष राज्य करते हुए थे कि इसी समयमें प्रबल पराक्रमी अंग्रेजोंने प्रबलतासे अंतिम आर्त्तनाद उपस्थित किया। १८५७ ईसवीमें सिपाही विद्रोहका जघन्य काण्ड उपस्थित हुआ,उस समय हजारों अंग्रेजोंके कुटम्बोंकी हत्याके समय तथा महाविपत्तिके समय महाराज सरदारसिंह बडे आग्रहके साथ सेनासहित बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायताके लिये सन्नद्ध हुए। बीकानेरके समीप हांसी और हिसार देशपर बृटिश गवर्नमेण्टका अधिकार था, वहांकी अंग्रेजी सेनाने विद्रोह उपस्थित करके अंग्रेजोंपर आक्रमण करना प्रारंभ किया, उस समय बीकानेरके महाराजने बडे साहसके साथ उस विद्रोही दलको दमन किया, और अंग्रेजोंकी सेनाको सहायता देकर जो अंग्रेज अपने प्राणोंके भयसे भयभीत हो भागनेके लिये तैयार हो गये थे, उनको बडे आदर और यत्नके साथ अपनी राजधानीमें आश्रय दिया। महाराज सरदारसिंहने अंग्रेजोंको प्राणपणसे अपनी सामर्थ्यके अनुसार सहायता देनेमें कसर न की। जिस बृटिश गवर्नमेण्टने बीकानेरके विद्रोही सामन्त दलको दमन करनेके लिये रत्नसिंहको संधिपत्रके अनुसार सेनाकी सहायता नहीं दी थी, उसी गवर्नमेण्टसे विपत्तिके समयमें उस रत्नसिंहके पुत्रने कैसा व्यवहार किया, इसे हमारे पाठक भलीभाँतिसे स्मरण रक्खेंगे।

उस महा विद्रोहानलके शांत हो जानेके पीछे सौभाग्यवश देशी राजाओंकी सहायतासे अंग्रेजोंकी शासनशक्ति भारतवर्षमें फिर स्थापित होनेके पीछे राजपूतानेके गवर्नरके एजेण्टने महाराज सरदारसिंहकी बडी प्रशंसा करके गवर्नरजनरलको पत्र लिखा, इसपर भारतवर्षके गवर्नरजनरल और प्रथम राजप्रतिनिधि लार्ड केनिंगने परम संतुष्ट हो

सहायकारी अन्यान्य भूपालोंके समान बीकानेरके महाराज सरदारसिंहके पास एक बहुमूल्यउपहार भेजा, इसके पहले देशी राजाओंके हृदयमें ऐसा विचार हुआ था, कि यदि यह पुत्रहीन अवस्थामें प्राणत्याग करेंगे तो इनकी रानी आर्य रीतिके अनुसार पोष्यपुत्र वा दत्तकपुत्रको ग्रहण नहीं कर सकेंगी तथा वह पोष्य वा दत्तकपुत्र सिंहासन प्राप्तिका अधिकारी नहीं हो सकेगा, और बृटिश गवर्नमेण्ट उस राज्यको अपने हस्तगत कर लेगी, परन्तु सिपाही विद्रोहके पीछे बृटिश गवर्नमेण्टने देशीय राजाओंकी उस भीतिको दूर करनेके लिये सभीको इस भावकी एक सनद दे दी, कि वह हिंदूरीतिके अनुसार दत्तकपुत्रको ग्रहण कर सकते हैं; इनका दत्तकपुत्र उनका उत्तराधिकारी हो सकेगा, और गवर्नमेण्ट उसके राज्यको अपने हस्तगत न करेगी। महाराज सरदार-सिंहने बृटिश गवर्नमेण्टकी जो सहायता की थी उसके लिये अन्यान्य राजाओंके समान इस समय उनको भी सनद दी गई।

सनदपत्र।

महामान्या (रानी विक्टोरिया) की अभिलाषा है कि जो राजा इस समय अपने २ देशको शासन करते हैं वह सब देश चिरकालतक उनके वंशधरोंके द्वारा शासित होते रहेंगे और उनके पद संमानको अक्षतभावसे रक्खा जायगा; उस अभिला-षाको पूर्ण करनेके निमित्त मैं आपको इसके द्वारा सूचित करता हूं; कि यदि आपके पुत्र उत्पन्न न हो तो आप अथवा आपके राज्यके भावी शासनकर्ता, हिन्दूविधान और अपने वंशकी रीतिके अनुसार दत्तकपुत्रको ग्रहण कर सकते हैं, इसमें गवर्नमेण्टकी भी सम्मति है।

जबतक आपके वंशधर राजभक्तरूपसे स्थित रहेंगे तथा जिस सन्धि आदिके द्वारा गवर्नमेण्टके साथ मित्रता स्थापित हुई है, उस सन्धि आदिपर जबतक विश्वासके द्वारा विशेष ध्यान रक्खा जायगा तब तक किसी प्रकार भी यह नियम भंग नहीं किया जायगा।

(हस्ताक्षर कैनिंग)

गवर्नर और वाइसराय, हिन्द।

महाराज सरदारसिंहने बृटिश गवर्नमेण्टकी जिस प्रकारसे प्राणपणसे सहायता की थी, उसके बदलेमें केवल एक मूल्यवान् खिलत और उक्त सदनका देना उपयोगी न जानकर १८६१ ईसवीके पहिले महीनेमें राजप्रतिनिधि एवं गवर्नरजनरल बहादुरने महाराज सरदारसिंहके हिसार देशके४१ग्राम भी प्रदान किये। गोकि वे गांव कई वर्ष पहिले इनसे ही छीनकर हिसार प्रदेशमें संमिलित कर लिये गये थे। निम्नलिखित सनद-पत्रके द्वारा नीचे लिखेहुए ग्राम राजा सरदारसिंहको दिये गये।

बीकानेरके महाराज सरदारसिंहको ग्राम दियेजानेका सनदपत्र।

हर्षका विषय है कि, जिस कारणसे राजपूतानेके गवर्नरजनरलके एजेण्टके विज्ञापनमें प्रकाशित हुआ, कि विद्रोहके समयमें महाराज सरदारसिंह बहादुर बृटिश

गवर्नमेण्टकी ओर राजभक्ति और उनकी अनुरक्तिके वश होकर स्वयं कार्यक्षेत्रमें उपस्थित हुए हैं। उन्होंने धन खर्च करके कितने ही अंग्रेजोंके जीवनकी रक्षा की है तथा गवर्नमेण्टके और भी अनेक प्रकारके उपकार किये हैं। इस लिये यह व्यवहार गवर्नमेण्टके पक्षमें विशेष संतोषदायक विचारा गया। इस लिये उक्त महाराजको गवर्नमेण्टके निकटसे धन्यवाद लाभ और सन्मानसूचक खिलत प्राप्त हुआ है, गवर्नमेण्ट इस समय अत्यन्त संतुष्ट होकर सिरसाके जिलेके मध्यमें स्थित वार्षिक चौदह हजार दो सौ बानवे रुपयेकी आमदनीवाले ग्रामोंकी एक स्वतन्त्र तालिका लिपिबद्ध करके उन ग्रामोंका सभी अधिकार महाराजको देती है। इससे वह ग्राम उनके राज्यके अन्तर्गत किये गये, उनके राज्यके साथ जो नियम प्रचलित थे इनके सम्बन्धमें भी वही नियम नियत किये गये। १८६१ ईसवीके पहिले महीनेकी पहिली तारीखसे यह सनद मानी जायगी।

११ अप्रैल १८६१ ई०।

ग्रामोंकी सूची।

सन् १८६१–६२.

संख्या.	ग्रामोंके नाम.	वार्षिक आमदनी.	मन्तव्य.
१	सात्रूरा	३०० रुपया.	
२	मानकटीवी	१७० ”	
३	खाडखाडा	४९० ”	१८६५-६६ ईसवीमें इसकी आमदनी ५९० रुपया है.
४	उदियाखाडा	४०६ ”	
५	कामपुरा	१३७ ”	उक्तवर्षमें २३५ की आमदनी बढी.
६	सोलावाली	२३४ ”	
७	मूलाकाखाडा	४५१ ”	
८	वासीहर	५०० ”	
९	गिलवाला	४१० ”	
१०	सहारन	३५० ”	
११	फूलचंद	२५० ”	
१२	सुरावाली	९४८ ”	
१३	चन्द्रवाली	२०० ”	
१४	पीरकामडिया	७४० ”	
१५	पुन्यावाली उर्फ जगरानी	२०७ ”	
१६	फुल्लानी	४५१ ”	
१७	मगरानी	५३४ ”	
१८	मासानी	३४६ ”	
१९	टिविवाराजेफा	८८९ ”	
२०	रउआखाडा	१९९ ”	

२१	रातिखाडा	१६ ”	१८६५--६६ ई० में इसकी आमदनी २३५ रुपये बढी ।
२२	किसनपुरा	१२० ”	७०-७१ ई० में ३०० रुपये बढे ।
२३	सलीमगढ	१७ ”	७०-७१ ई० में १३० बढे ।
२४	धारुई	२१० ”	६५-६६ ई० में ३४० की वृद्धि हुई ।
२५	सिलवानाखुर्द	१९४ ”	६५-६६ ई० में २२६ की वृद्धि हुई ।
२६	वैरवाला कल्यान	२८० ”	
२७	सिलवाला कल्यान	२४१ ”	६५-६६ ई० में ३६६ की वृद्धि हुई।
२८	तलवाराकल्यान	७५७ ”	
२९	जलालाबाद	१७६ ”	६५-६६ ई० में २७६ की वृद्धि हुई ।
३०	मोहरवाला	४८२ ”	६५-६६ ई० में ५५४ की वृद्धि हुई ।
३१	असितावाली	२२३ ”	६५-६६ ई० में २६१ की वृद्धि हुई ।
३२	रामसर	२५८ ”	६५--६६ ई० में ३०८ की वृद्धि हुई ।
३३	दुवलीखर्द	३९४ ”	६५-६६ ई० में ४५४ की वृद्धि हुई ।
३४	रामनगर	२०० ”	
३५	दुवलीकल्यान	७३० ”	६५-६६ ई० में ७८० की वृद्धि हुई ।
३६	मिर्जावाली	३५१ ”	६५-६६ ई० में ४२३ की वृद्धि हुई ।
३७	चाउवाली	३१० ”	६५-६६ ई० में ३६० की वृद्धि. हुई ।
३८	बुरहानपुरा	१७४ ”	६५--६६ ई० में २२५ की वृद्धि हुई ।
३९	खैरवाली	१८१ ”	६५--६६ ई० में २३१ की वृद्धि हुई ।
४०	शिवधनपुरा	४७३ ”	
४१	खान्दानिया	२८५ ”	

सब जोड १४२९१ रुपये ।

बीकानेरके महाराज सरदारसिंह बहादुरने गवर्नमेण्टके अनेक उपकार करके यह जो ४१ ग्राम पाये थे यह अवश्य इनके पुरस्कारके योग्य थे, परन्तु यवनसम्राटोंने ऐसे उपकार पाकर बहुतसे प्रत्युपकार किये हैं, जिनकी तुलनासे यह उपकार सामान्यमात्र हो रहता है, परन्तु जहां धन्यवादका ही बडा मूल्य गिना जाता है, वहां बीकानेरके महाराजको ४१ ग्रामोंका मिलना अवश्य ही उच्चकक्षाका पुरस्कार गिना जायगा ।

महाराज सरदारसिंहके शासनसमयमें सीमाका विवाद फिर प्रबल हो गया, १८६१ ई० में मारवाडके साथ बीकानेर राज्यकी सीमासे लेकर फिर संग्रामके पूर्वलक्षण दिखाई दिये । बीकानेरकी सीमावाले निवासियोंने मारवाडकी सीमामें जाकर घोर

1. Aitcheson's Treaties Vol IV.

अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये, अन्तमें बृटिश गवर्नमेण्टने मध्यस्थ होकर सब उपद्रवोंको शान्त कर दिया।

यह हमने बारंबार इस लिये कहा है कि राजाके दुर्बल होनेसे ही अधीनस्थ सामन्त विरक्त होकर अपनी शक्तिके विस्तार करनेकी अभिलाषा करते हैं। महाराज सूरतसिंहके शासनसमयमें बीकानेरके सामन्त उद्धत होकर राजद्रोही हो जाते थे। रत्नसिंहके साथ सामन्तोंका जैसा असद्भाव था, वह दूर न होकर सरदारसिंहके साथ भी वह सामन्त अनेक अप्रिय आचरण करने लगे। महाराज सरदारसिंहने बीकानेरके समस्त सामन्तोंपर करके बढानेका विचार किया, इसीसे राज्यमें फिर उपद्रव उपस्थित होने लगे। विशेष करके इस समय गवर्नमेण्टके दिये हुए इकतालीस ग्रामोंपर भी कर बढाया गया था, इसीसे उपद्रव प्रबल हो गये। उक्त ग्रामोंके निवासी अबतक बृटिश गवर्नमेण्टके आधीनमें थे, इस समय नवीन शासनमें अपने अधिकारको नष्ट होता-हुआ देखकर वह अत्यन्त असन्तुष्ट हुए; और तुरन्त ही बृटिश गवर्नमेण्टके समीप बीकानेरके महाराजके विरुद्ध आवेदन करनेको तैयार हुए। अंग्रेज राजप्रतिनिधिने उस आवेदनपत्रको पाकर महाराज सरदारसिंहके समीप विशेष असन्तोप प्रकाश करके एक पत्र लिख भेजा कि इन ग्रामोंकी प्रजाको गवर्नमेण्टने जैसा अधिकार दिया है आप भी उसीके अनुसार कार्य करें, और इन सब ग्रामोंमें अपने राज्यके सुशासनके लिये सब अंशोंमें योग्य मनुष्योंको शीघ्र ही नियत कीजिये। महाराज सरदारसिंहने भारतवर्षके गवर्नर-जनरल और राजप्रतिनिधिके इस पत्रको पाकर आवश्यक संस्कार और सुशासनके अनुष्ठान करनेमें जरा भी विलम्ब न किया। परन्तु राव बीका द्वारा संवत् १५४५ में बीकानेर राज्यकी प्रतिष्ठाके समयसे संवत् १९२६ पर्यन्त जो सामन्तगण एकहारा राज्यकर देते आये हैं, अब उनपर कर बढाकर राज्यकोषकी आय बढाये जानेका अनुष्ठान किया गया। बीकाजीके समयसे जो सामन्त प्रति अश्वारोही सेनाका वार्षिक १००) रुपया प्रति ऊंटपर ५०) रुपया प्रतिपैदलपर पच्चीस रुपया देते आये थे; इस समय महाराजके अधिक कर बढाय जानेसे प्रधान अप्रधान सभी सामन्त महा असन्तुष्ट हो गये, और उसीसे राज्यमें फिर अशान्तिके लक्षण दिखाई दिये। परन्तु मेजर पावलेट (इस समयके कर्नल) जो अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट थे, उन्होंने इन उपद्रवोंको निवारण करनेके लिये यह अहारा कर नियत कर दिया कि सामन्तोंको प्रत्येक अश्वारोहीके प्रति वार्षिक २०० रुपया ऊंटके प्रति १०० रुपया और पैदलके प्रति ५० रुपया देना होगा। पहिलेकी अपेक्षा इस समय दुगुने करके बढ जानेसे सभी सामन्त विरक्त हो गये थे, परन्तु बृटिश गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि पावलेट साहबने भी जब यही स्वीकार कर दिया, तब उनको गवर्नमेण्टके भयसे कुछ भी कहनेका साहस न हुआ। सभीने एक साथ प्रतिज्ञा करके हस्ताक्षर कर दिये और उपद्रवोंकी समाप्ति हो गई।

हमारे पाठक पाठिकाओंने राव बीदा द्वारा अधिकार कीहुई बीदावाटीका वृत्तान्त पढा होगा। यद्यपि यह बीदावाटी बीकानेर राज्यके अन्तर्भुक्त था, परन्तु यह एक छोटा राय गिनाजाता था। महाराज रत्नसिंहके पूर्ववर्ती बीकानेरके

महाराजने बीदाबाटीके सामन्तोंपर कर नहीं लगाया, राव बीकाके बीकानेर राज्यक स्थापन करनेके छः वर्ष पहिले अर्थात् सवत् १५४० में उनके भ्राता बीदासिंहने इस बीदावाटी राज्यको स्थापन किया था। बीका और बीदा दोनों ही सहोदर भ्राता थे। बीदाके साथ इनकी माताने आकर इस बीदाबाटीमें निवास किया बीकाने इसी लिये प्रतिज्ञा की थी कि जबसे माता बीदाबाटीमें आकर निवास करेंगी तबसे मैं तथा मेरे वंशधर किसी समय भी बीदाबाटीपर आक्रमण नहीं करेंगे। रत्नसिंहने इस प्रतिज्ञाका पालन न करके बीदाबाटीके सामन्तोंसे नियमित कर ग्रहण किया। महाराज सरदारसिंहने भी उसी प्रकारसे संवत् १९२६ में बीदाबाटीके सामन्तोंके निकटसे वार्षिक पचास हजार रुपया नियत कर ग्रहण किया।

इस करके उपद्रवोंके शांत होजानेके पीछे महाराज सरदारसिंह १८७२ इसवीके पहिले महीनेमें स्वर्गवासी हुए।

महाराज सरदारसिंहकी पुत्रहीन अवस्थामें मृत्युहोनेसे बीकानेरका सिंहासन शून्य हो गया इसी कारणसे बृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार मन्त्रिसमाजकी सृष्टि करके उस समाजके हाथमें शासनका भार सौंपा गया। प्रधान राजनैतिक अंग्रेज कर्मचारी उस मन्त्रीसमाजके सभापति होकर राज्य करने लगे। इस प्रकारसे कुछ काल-तक राज्य होनेके पीछे नवीन महाराजको नियुक्त करनेके लिये राजधानी और सामन्तोंने विचार किया कि राजहन्ता सूरतसिंहके वंश लोपहोनेसे शीघ्र ही मृतक महाराजके कुटुम्बमेंसे किसी मनुष्यको दत्तक पुत्र रूपमें ग्रहण कर उनका अभिषेक करना उचित है। अतएव लालसिंह नामक एक बुद्धिमान् मनुष्यके पुत्र डुंगरसिंहको शेष दत्तक पुत्रस्वरूपसे ग्रहण करनेका प्रस्ताव किया गया। राजरानी और सामन्तोंने भी इसमें अपनी सम्मति दी। गवनमेण्ट पहिलेसे ही प्रतिज्ञाके पाशमें बंधगई थी कि महाराजकी यदि पुत्रहीन अवस्थामें मृत्यु हो जाय तो राजरानी हिन्दूरीतिके अनुसार किसीको दत्तकपुत्रस्वरूपसे ग्रहण करें, इस कारण गवर्नमेण्टने विना कुछ आपत्ति किये इनको बकिानेरका अधीश्वर स्वीकार कर लिया और अभिषेकके प्रस्तावमें शीघ्र ही अपनी सम्मति दे दी। अल्पावस्थामें डूंगरसिंह राजाकी उपाधि धारण कर बडी धूमधामके साथ बीकानेरके सिंहासनपर शोभायमान हुए।

महाराज डूंगरसिंह बहादुर अल्प वयस्क होनेके कारण राज्यकार्यको कुछ नहीं जानते थ, इसीसे इनके हाथमें सम्पूर्ण राज्यशासनका भार देना असम्भव जानकर अंग्रेज गवर्नमेण्टकी रीतिके अनुसार एक स्वयं मन्त्रीसमाज नियुक्त हुआ। महाराजके पिता लालसिंह उस मन्त्रीसमाजके सभापतिपदपर विराजमान हुए, और महाराव, हरिसिंहराव, यशवन्तसिंह, मेहता मानमल और मंगनहरीलाल यह सब सदस्य पदपर नियुक्त हुए।

१८७५ ईसवीमें महाजनके सामन्त अमरसिंह महाराज डूंगरसिंह बहादुरका जीवन नाश करनेको उन्हें विष देनेके लिये तैयार हुए। महाराजने उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हो उनको प्राणदण्डके बदलेमें बारह वर्षके लिये कारागारमें

रहनेकी आज्ञा दी । अमरसिंहके कारागारमें जाते ही उनके पुत्र रामसिंह पिताके पदपर नियुक्त हुए।

महाराज डूंगरसिंह बहादुर अवस्थाके अधिक होनेपर भी मंत्रीसमाजकी सहायतासे राज्यशासन करते थे। महाराज १८७६ ईसवीमें हरद्वार और गया तीर्थको गये, और वहांसे जब यह अपने राज्यको लौट रहे थे तब इन्होंने आगरेमें जाकर भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफवेल्स बहादुरके साथ साक्षात् किया। महा माननीय प्रिन्स आफवेल्स बहादुरने महाराजको बडे आदरभावके साथ ग्रहण कर उनके सम्मानको बढानेमें किसी भांतिकी कसर न की।

राजपूत राजाओंकी पूर्ण स्वाधीनता लुप्त होने और अवस्थाके परिवर्तनके साथ ही साथ सामंत मण्डलीके संग उनका पूर्वसम्बन्ध भी बदलता गया। राजपूत राजा जिस समय सम्पूर्णरूपसे स्वाधीनताके अमृतमय फलको भोगते थे, अपने बाहुबलसे राज्यकी रक्षा तथा शासन करते, अंग्रेज गवर्नमेण्टकी रीति जाननेसे पहिले उन्होंने सामन्तोंसे करस्वरूपसे नगद रुपया नहीं लिया था। जो सामन्त जितनी आमदनीवाली पृथ्वीको भोगते थे उनको उसी प्रकारस निर्द्धारित रीतिके अनुसार युद्धके समयमें सेना देना, तथा वर्षमें कई महीनेतक राजाके यहां रहकर राज्यशासनकी सहायता करनी पडती थी। यवनशासनके समय देशीय राजाओंने स्वाधीनताके हेमागिरिसे गिरकर भी सामन्तोंसे नगद धन ग्रहण नहीं किया था। उस समय आधीनके सामन्त राजाओंके साथ मिलकर यवनसम्राट्की आज्ञानुसार भारतके अनेक प्रान्तोंमें सेना सहित युद्ध करनेको गये थे; पर अंग्रेजी राज्यमें वह रीति बदल गयी। इस समय चारों ओर शांतिमयी देवी विराजमान है, किसी देशी अथवा विदेशी राजाके द्वारा आक्रमणका भय नहीं है, और अंग्रेज गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार सेना सहित समरक्षेत्रमें भी जाना नहीं पडता; इस कारण सामन्त जो चिरकालसे सेनाकी सहायता करते थे उन्हें भी देशीय राजाओंके पक्षमें सेनाकी सहायता देनेकी आवश्यकता नहीं होती है? विशेष करके बुद्धिमान अंग्रेज गवर्नमेण्टने प्रायः प्रत्येक देशीय राज्यको निर्विघ्नतासे रखनेकी प्रतिज्ञा कर उन देशीय राजाओंसे वार्षिक कई लाख रुपया ले स्वतंत्र सेनाकी सृष्टि करके उसे अपने आधीनमें रक्खा है; इस कारण राजाओंको इसके लिये अधिक खर्चा देना पडा है, और सामन्तोंने जो सेना रक्खी है इस समय उस सेनाके रखनेकी भी आवश्यकता नहीं होती इस कारण देशीय राजाओंकी इस अवस्थाके बदलनेसे उन्हें अपने२आधीनके सामन्तोंसे उस सेनाके बदलेमें नगद रुपया लेना पडा है और इसी लिये देशीय राजाओंके साथ विवाद विसंवाद तथा युद्धतक भी हो गया है।

बीकानेरमें स्थित गवर्नर जनरल असिस्टैण्ट एजेण्ट ए. डवालिड रिचार्ड्सने गत १८८३ ईसवीकी ११ मईको बीकानेरके शासन विज्ञापनमें लिखा कि "१८७० ईसवीमें दशवर्षके जो कर देनेकी व्यवस्था हुई थी, चार वर्ष बीत गये, वह नियमित समय समाप्त हो गया है। १८८२ ईसवीके अप्रेलके महीनेमें सामन्तोंकी सम्मतिके अनुसार कार्य करना चाहिये कि उस करको अब किसी प्रकारसे बढाया जाय; इस कारण उनके

अधिकारकी पृथ्वीको हस्तगत करना ठीक है, इस प्रस्तावके होजानेपर पाँच महीनेके पीछे सभी सामन्त बीकानेरमें इकट्ठे हुए, और उन्होंने श्रीमान् महाराजके प्रति निवेदन किया कि एक पंचायतके हाथमें इस कार्यका भार अर्पण किया जाय। उनके इस अनुरोधकी रक्षा की गई, अर्थात् चार सामन्त और चार राजपुरुषोंने उस पंचायतमें नियुक्त होकर तीन महीनेतक घोरपरिश्रम कर उपस्थित प्रश्नोंका विचार कर दिया। इस समय ठाकुर (सामन्त सर्वसाधारणमें ठाकुर नामसे विख्यात थे) ऐसा कहते हैं कि १७७० ईसवीमें जो २०० रुपयेका नियम हुआ था; वह लोग उससे अधिक कर नहीं दे सकते और उन्होंने अपने २ पट्टेको लौटा दिया है। नियमित करकी संख्या घटा देनेसे इन उपद्रवोंके विचार करनेका चेष्टा की गयी है। ऐसी आशा होती है कि शीघ्र ही इसका विचार हो जायगा * मेजर रिचार्ड्सने यह आशा प्रकाशित की। अत्यन्त दुःखका विषय है कि थोडे दिनोंमें ही उनकी आशाके विपरीत फल फलनेके पूर्वलक्षण दिखाई देते हैं।

बीकानेरके महाराजने अन्यान्य साधारण सामन्तोंके समान बीदावाटीके सामन्तोंके ऊपर एक बार ५० हजार रुपयेसे लेकर फिर ८६००० हजार रुपया नियत कर दिये। यद्यपि महाराज रत्नसिंहके समान सरदारसिंहने भी इन सामन्तोंसे ५० हजार रुपया कर ग्रहण करके सनद दे दी थी कि अबसे कभी कर नहीं बढाया जायगा, परन्तु महाराज डूंगरसिंहने उस सनद पर विश्वास न करके उपस्थित अवस्थाको समझकर ही प्रस्तावित करके बढा देनेकी आज्ञा दी इस करके बढनेसे ही धीरे २ भयंकर उपद्रव होने लगे।

महाराज डूंगरसिंहने प्रचलित करको दुगुना बढाकर राज्यके प्रधान २ सामन्तोंमें महा आपत्ति उपस्थित की परन्तु अंतमें सामन्तोंने अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्टको राजाका पक्ष लेते हुए देखकर शीघ्र ही उस करके देनेमें राजी होकर स्वीकारपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये। परन्तु उन्होंने इस वर्द्धित करके देनेके पहिले महाराजके निकट यह प्रस्ताव किया, कि महाजनके भूतपूर्व सामन्त समरसिंहने जो महाराजको विष देकर मारनेकी चेष्टा की थी, इस कारण उनको कारागारमें रक्खा गया था; इस समय उनको छोड देना चाहिये क्योंकि इसका कोई प्रबल प्रमाण नहीं पाया जाता कि जिससे यह जाना जाय कि वह निश्चय ही विष देनेके लिये तैयार हुए थे, और फिर १८७८ ईसवीसे अभीतक कारागारमें बंदी रहनेसे उनको भलीभांतिसे फल भी मिल गया है। दूसरे रावतसरके सामन्तोंको उनके अधिकारसे रहित कर महाराजने जो उनके आधिकारी देशोंको अपने अधिकारमें करलिया है, वह देश उन सामन्तोंको दे दिये जाँय, और पहिले उनका जैसा सम्मान तथा पदमर्यादा थी इस समय वह भी करनी होगी। तीसरे गान्धोली तथा जसानाके सामन्त मेघसिंहको

* Report of the Political Administration of Rajputana States for 1882–83.

भी उनका पूर्व अधिकार देना होगा" । महाराज डूंगरसिंहने सामन्तोंकी इन अभिलाषाओंको तुरन्त ही पूर्ण कर दिया और केवल कारागारके बन्दी अमरसिंहको छोड कर ही निश्चित न हुए वरन् उनके पुत्र महाराव रामसिंहको "राव राजा" की उपाधि दी,और इससे उनका और भी अधिक सम्मान बढाया। जसानाके ठाकुर और इनके भ्राता जोरासरके ठाकुरोंका पूर्व अधिकार भी दे दिया गया ×, और नोखा नामक देशके सामन्तके कामदार अर्थात् प्रधान कर्मचारीके बीकानेर राजदरबारका अपराधी होनेसे महाराजने नोखाके सामन्तोंको आज्ञा दी, कि उसको शीघ्र ही राजदरबारमें भेज दें परन्तु सामन्तने राजाकी आज्ञा पालन न की और उक्त कामदारको लेकर उन्होंने भिन्न देशमें प्रस्थान किया। इसपर महाराजने उक्त नोखा देशपर अधिकार कर लिया था,इस समय उस अराजभक्त सामन्तको भी चले आनेकी आज्ञा दी गई परन्तु सामन्तने उस आज्ञाको पालन न किया।

यद्यपि महराज डूंगरसिंह बहादुरने सामन्तोंकी उक्त प्रार्थनाको स्वीकार किया था, तथा सामन्त गण, उस वर्द्धित करके देनेमें सम्मत भी हो गये थे परन्तु नीची श्रेणीके सामन्त इस वर्द्धित करके देनेसे फिर भी असन्तुष्ट रहे।वह किसी भांति भी उस वार्द्धित करके देनेमें राजी न हुए।अन्तमें उन सबने मिलकर डूँगरसिंहके पास यह समाचार भेजा, कि इस करके देनेमें हम लोग सब प्रकारसे असमर्थ हैं। इस कारण हमें क्षमा किया जाय, महाराजने इसके उत्तरमें कहला भेजा कि राज्यके प्रधान २ सामन्त जब कि इस बढेहुए करको दे रहे हैं तब मैं इस विषयमें आपकी कोई बात नहीं सुन सकता। तब तो वह नीची श्रेणीके सामन्त निराश हो राज्यमें असन्तोषदायक उपद्रव करने लगे।

इस समय मेजर रिचार्ड्स अन्य स्थानको बदले गये और कप्तान टालवट उनके पद पर नियुक्त होकर आये। कप्तान टालवटने बीकानेरमें आकर महाराजके मुखसे समस्त वृत्तान्त सुनकर जानलिया कि करके देनेमें जो हडबडी हो रही है इसका विचार सरलतासे नहीं होगा, इस कारण उन्होंने सब सामन्तोंको बुलाकर आज्ञा दी कि किसी २ स्थानपर दुगुना और किसी २ स्थानपर तिगुना कर आपको देना होगा, और सभीको पहिले सन्धिपत्रकी पांचवीं धाराके अनुसार एक संधिपत्र पर हस्ताक्षर करने होंगे। सामन्तोंने इस प्रस्ताव पर अत्यन्त असन्तुष्ट होकर कहा कि इस समय जो कर बढा दिया गया है उसको घटा दिया जाय, और सब स्थानोंपर समभावसे करके ग्रहण करनेकी व्यवस्था की जाय।कप्तान टालवट भलीभांतिसे जान गये थे कि सामन्त अस-

(१) महाजनके सामन्तोंके कर्मचारी लक्ष्मीचन्द महताने सिविल और मिलिटरी गजट नाम समाचारपत्रमें इसके सम्बन्धका जो पत्र प्रकाशित किया है, तथा १८८४ ईसवीकी तीसरी जोलाईको इन्डियनमिररमें जो पत्र उद्धृत हुआ है, हमने उसीसे इस अंशको उद्धृत किया है।

× Report of the Political Administration of Rajputana states for 1882-83.

न्तुष्ट हो गये हैं; यह सरलतासे कर देनेमें राजी न होंगे,इस कारण उन्होंने सबके सामने कहा कि यदि तुम लोग. हमारा नियमित कर नहीं दोगे तो तुमको इसका उचित फल मिलेगा। सामन्त यह बचन सुनकर अत्यन्त क्रोधित हो उसी समय राजधानी छोडकर चले गये।

इस प्रकारसे जब सामन्त राजाकी आज्ञा न मानकर और राजधानी छोडकर चले गये तब महराज डूँगरसिंहने अत्यन्त क्रोधित हो सामन्तोंको दमन करनेके लिये उचित उपाय सोचा। बृटिश एजेण्टने भी तुरन्त ही महाराजके इस प्रस्तावको समर्थन कर लिया। अन्तमें रेसिडेन्टकी सम्मतिके अनुसार बीकानेरके प्रधान सेनापति हुकमसिंहको महाराजने आज्ञा दी कि राज्यके प्रधान २ सामन्तोंके अधिकारी देशोंपर शीघ्र ही अपना अधिकार किया जाय। प्रधान सेनापति हुकमसिंह अपनी समस्त सेना साथ लेकर राजाकी आज्ञा पालन करनेके लिये चले। यह सुनकर सभी सामन्त अपने२ स्वार्थकी रक्षाके लिये राजाकी सेनासे युद्ध करनेके लिये अपनी २ सेना और कुटुम्बियोंको साथ ले महाजन नामक ठिकानेमें इकट्ठे हुए। प्रधान सेनापतिने वहां सेना रखकर विद्रोही सामन्तोंसे कहला भेजा, कि "महाराजकी ऐसी आज्ञा है कि तुमलोग अपने २ नगरों और किलोंको हमें दे दो। उपस्थित उपद्रवोंका विचार होते ही फिर यह नगर और किले आपको दे दिये जांयगे"। सामन्तोंने देखा कि इस समय महाविपत्ति उपस्थित है। महाराजकी सेनाके साथ युद्ध करनेकी हमारी सामर्थ्य नहीं है, और फिर दीर्घकाल तक यहां रहना भी असम्भव है, इस कारण दुर्भेद्य किलेमें चले जाना उचित जाना और रावतसर तथा गान्धोली नामक तीनों ठिकानोंके किलोंको छोडकर वे बीदावाटी देशके बीदासर नामक स्थानके दुर्भेद्य किलेमें गये। बीदावाटीके सामन्तोंने भी वर्द्धित करको देना स्वीकार नहीं किया था, इसीसे उन्होंने विद्रोही सामन्तोंके नेता पदको ही ग्रहण किया था; सामन्तोंने वहां इकट्ठे होकर महाराजके साथ युद्ध करनेका विचार किया।

सामन्तोंकी इस प्रकारसे विद्रोही व्यवस्था देखकर महाराज डूंगरसिंहने कप्तान् टालवटके सम्मुख यह प्रस्ताव किया कि अंग्रेजी सेनाकी सहायताके अतिरिक्त इस विद्रोहकी अग्निके शान्त होनेका दूसरा उपाय नहीं है। कप्तान जनरलने राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजेण्ट कर्नल ब्रेड फोर्डके पास यह प्रस्ताव भेजा और गवर्नमेण्टकी सम्मतिके अनुसार उन्होंने शीघ्र ही १८२८ ईसवीके संधिपत्रके अनुसार अंग्रेजी सेनाको सहायता देनेकी आज्ञा दी। शीघ्र ही प्रबल अंग्रेजी सेना युद्धसाजसे सज गई। मेजर जनरल डवलिड एम टारण बुलके आधीनमें एक रायल आर्टलेरी नामक गोलन्दाज दलकी तीन तोपें मेजर क्यारिटनके आधीनकी के वार्सेस्टार रेजिमेंट नामक सेनादलके दो कंपनी, मेजरटांडिरोके आधीनकी आठ कंपनी, बंबईके पैदलोंकी एक शाखा, लेफटिनेण्ट कर्नल कोनसरके आधीनकी एक कंपनी, सापार्स तथा मिनार्स मेजर क्रिगरके आधीनमें मेरवाडा सेनाका दल, एवं मेजरप्सि सरके आधीनमें एरनपुरके पैदलोंकी ४०० सेना और दिल्लीइरेगडार सेनादलकी १५० सेना सजकर बीकानेरमें आ

पहुँची। जनरल जिलेसपि इस सेनाके प्रधान सेनापति पदपर नियुक्त होकर आये। पाठक गण! यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि अंग्रेज सरकारने संधिपत्रके अर्थको समयके भेदसे दूसरी प्रकारका कर लिया था। १८३० ईसवीमें जब महाराज रत्नसिंहने इस प्रकारसे विद्रोही सामन्तोंके दमन करनेके लिये बृटिश रेसिडेण्टके निकट सेनाकी सहायता मांगी थी और रेसिडेण्ट सेना देनेको तैयार हुए तब बृटिश गवर्नमेण्ट-ने उस सेनाके देनेका निषेध किया, संधिकी धाराका इस प्रकारका अर्थ कर लिया कि गवर्नमेण्ट बीकानेर राज्यके भीतरी झगडोंमें अथवा विद्रोहको निवारण करनेके लिये सेनाकी सहायता नहीं देगी, केवल संधिबन्धनके समय महाराज सूरतसिंहको इस प्रकारकी सहायता देनेके लिये सम्मत होनेसे सहायता दी थी, परन्तु इस समय गवर्नमेण्टने संधिधाराकी उसी प्रकारकी व्याख्या करके बीकानेरके आभ्यन्तरिक उपद्रवोंको निवारण करनेके लिये सेना भेजी।

बीकानेर राज्यके प्रधान सेनापति हुकुमसिंहने महाराजकी आज्ञानुसार सेना सहित शीघ्र ही बीदावाटीमें जाकर बीदासरके किलेको घेर लिया। इस ओर अंग्रेजी सेना भी जनरल जिलेसपिके साथ आकर बीकानेरकी सेनाके साथ मिल गई। अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान टालवट भी शीघ्रतासे वहां पहुंच गये। राजाकी सेना और अंग्रेजी सेनाको आया हुआ सुनकर बीदावाटीके सामन्त विद्रोही सामन्त तथा अन्यान्य सामन्त साथ मिलकर राठौरोंका बाहुबल दिखानेको युद्धके निमित्त पहिलेसे ही सज गये थे यद्यपि राठौरोंका बल विक्रम लुप्त हो गया है यद्यपि जातीय बल एकबार ही क्षीण हो गया है, यद्यपि वीरोंकी संख्या रजवाडेमें नहीं रहा है, कि बहुना ऐसा कहनेसे भी अत्युक्ति नहीं होगी कि यद्यपि राजपूत जातिका वह विश्वविदित साहस शूरता इस समय प्रवाद वचनोंमें परिणत हो गई है, तथापि वह सम्मिलित विद्रोही सामन्त राजाकी सेना और अंग्रेजोंकी युक्त सेनाके साथ युद्ध करनेको तैयार हुए। उन्होंने इस कारण भी रणक्षेत्रमें जानेकी प्रतिज्ञा की, कि पीछे जयपुर, जोधपुर, जयसलमेर और मारवाड इत्यादि राज्यके सामन्त उनको भीरु और कायर पुरुष कहकर उपहास न करें।

इसको तो हम पहिले ही कह आये हैं कि विद्रोही सामन्तोंके साथ कैसा व्यवहार किया गया। कप्तान टालवट्ने सब विद्रोही सामन्तोंसे कहला भेजा कि किलेके भीतर उनका जो परिवार है उसको वे वहांसे और किसी स्थानपर भेज दें, सामन्तोंने तुरन्त ही यह आज्ञा पालन की। इस आज्ञासे सामन्त भली भांति समझ गये कि हमारे भाग्यकी परीक्षा सरलतासे समाप्त नहीं होगी। इसके पीछे कप्तान टालवटने यह भी कहला भेजा कि तुम शीघ्र ही बीदासरके किलेको हमें दे दो। कप्तान टालवटकी यह आज्ञा सुनकर सामन्तोंने कहला भेजा कि, "बीकासिंहने संवत् १५४५ में बीकानेर राज्यकी प्रतिष्ठा की है, उनके छोटे भ्राता बीदासिंहने इससे पहिले अर्थात्

(१) १८८४ ईसवीके ३ जौलाईका इण्डियनमिरर देखो।

(२) १८८४ ईसवीके ३ जौलाईके इण्डियनमिररको देखो।

संवत् १५४० में बीदासर राज्य स्थापन किया था। बीकासिंहने अपनी माताके साथ निवासकर शपथ करके यह प्रतिज्ञा की थी कि,मैं तथा मेरे उत्तराधिकारी किसी समय भी बीदासरपर आक्रमण नहीं करेंगे। यह बीकानेरके इतिहासमें भली भांतिसे प्रकाशित हो चुका है, उसी समयसे इस बीदासरके ऊपर बीकानेरके किसी राजाने भी हस्ताक्षेप नहीं किया। जबतक करका विचार भली भांतिसे न हो जायगा, तभीतक हम निर्विघ्नतासे इस बीदासरमें रहेंगे।" सामन्तोंके यह बचन सुनकर कप्तान भली भांतिसे जान गये कि राठौर सामन्त अंग्रेजोंकी सेनाको आया हुआ देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, वे अपने ओजस्वी स्वभावके वश युद्ध करनेके लिये तैयार हैं, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही बीदाके बनायेहुए किलेको घेरनेकी आज्ञा दी। १८८३ ईसवी की १६ वीं दिसम्बरको अंग्रेजी सेना और बीकानेरके महाराजकी सेनाने किलेको जा घेरा, और उसके मुँहपर तोप लगाकर गोलोंकी वर्षा करने लगे। बहुत समयके पीछे आज फिर समरानलने प्रज्वलित होकर विचित्र दृश्य दिखाया। एक ओर प्रबल पराक्रमी अंग्रेजी सेना दूसरी ओर संख्याबद्ध क्षीणबल राठौर सामन्त केवल जातीय गौरव तथा राजपूतोंके सम्मानकी रक्षाके लिये अपनेको बलहीन जानकर भी युद्धमें लिप्त हुए थे। निरन्तर गोलोंकी वर्षा करके अंग्रेजी सेनाने उस प्राचीन किलेको विध्वंस कर दिया। तब उन विद्रोही सामन्तोंने अन्तमें १८८३ ईसवीकी २५ दिसम्बरको अंग्रेजी सेनाको आत्म समर्पण कर दिया। विजयी अंग्रेजी सेनाने बीदासरके किलेके अतिरिक्त और भी कई एक किले एक बार ही तोड फोड डाले।

बीदासरके सामन्तोंके आत्मसमर्पण करते ही उनको राजनैतिक बंदीरूपसे देहलीके किलेमें भेज दिया गया वह वहां बंदी भावसे रहने लगे। अन्यान्य सामन्त भी बंदीभावसे कारागारमें रक्खे गये। इन बंदी सामन्तोंके विषयमें उस समय कोई विचार नहीं हुआ, परन्तु ऐसी आशा की जाती थी कि बृटिश गवर्नमेंट शीघ्र ही बीकानेरके महाराजके साथ परामर्श करके अच्छी व्यवस्था कर देगी।

उपरोक्त समयके सम्बन्धमें इंगलैण्डकी पार्लियामेंट, हाउस आफलार्डस नामक सभामें भारतवर्षके सेक्रेटरी आफस्टेटस आर्लआफ किम्बर्लीने जो कहा था "वह प्रकाशित करते थे कि बीकानेरके महाराजके साथ विद्रोह उपस्थित हुआ; और वह उस विद्रोहको निवारण करनेमें समर्थ न हुए तभी उन्होंने भारतवर्षकी गवर्नमेण्टसे सहायता मांगी। भारतवर्षकी गवर्नमेण्टने इनकी सहायताके लिये जनरल जिलेसपिके आधीनमें प्रायः १८०० सेना भेजी। यह हमें संतोष है कि इस सेनाने बीकानेर राज्यमें जाकर एक मनुष्यका भी प्राणनाश नहीं किया और कईएक किलोंको विध्वंस करनेके अतिरिक्त और कोई अनिष्ट नहीं किया। इस काण्डमें शेषतक यही वृत्तान्त है"।

---

१ महाजनके सामन्तोंके कर्मचारी, सिविल और मिलिटरी गजटमें यह प्रकाशित किया है तथा १८८४ की ३ जौलाईके इण्डियनमिररमें यह उद्धृत हुआ है।

२ लन्दनके टाइमूस नामक पत्रमें यह वृत्तांत प्रकाशित हुआ है। १८८४ ईसवीकी छठवीं अगस्तको इण्डियनमिररमें यह उद्धृत हो चुका है।

अत्यन्त दुःखका विषय है कि महाराजके राज्यशासनके संबन्धमें साधारण प्रजा और सामन्तोंके समान बृटिश गवर्नमेण्टने भी संतोष प्रकाश नहीं किया। यद्यपि अंग्रेजी सेनाने पूर्वोक्त विद्रोहको निवारण करनेके लिये सब प्रकारसे महाराजकी सहायता की थी, परन्तु भूतपूर्व पोलिटिकल एजेण्ट मेजर, एडवालिड रिचार्ड्सने १८८१–८२ईसवीमें राजपूत राज्योंके शासन वृत्तान्तमें जो मन्तव्य प्रकाशित किया है उससे भलीभाँति जाना जाता है कि,उस समय बीकानेर राज्यकी उचित सुशासन व्यवस्था नहीं हुई थी। * परन्तु मेजर रिचार्ड्सने पिछले वर्षके अर्थात् १८८१–८३ ईसवीके शासन विज्ञापनमें बीकानेरके शासनके सम्बन्धमें लिखा है कि "अबतक जिस प्रकार मन्त्री समाज (कौन्सिल) द्वारा शासनकार्य निर्वाह होता चला आया है, उसमें इस समय केवल एक पुरुषका परिवर्तन हुआ है। महाराव हरीसिंह जो दरबारके पुरुषानुक्रमिक राजकर्मचारी थे, और जो अनेक वर्षोंसे मन्त्रीसमाजके प्रधान सेनापति थे, उन्होंने गत अक्टूबर महीनेमे प्राणत्याग किये हैं। वह शून्य पद कुछ दिनके लिये पूर्ण किया गया है, अर्थात् उनके भ्राता राव यशवन्तसिंह जो एक समय मन्त्रीसमाजके सदस्य थे, और जो अपने कर्त्तव्य पालनमें दृढ नहीं थे, इसीसे वह १८७९ ईसवीमें पदसे रहित किये गये थे, अब पुनः उसी पदपर नियुक्त किये गये हैं। गत मार्चके महीनेमें जिस समय गवर्नर जनरलके एजेण्ट बीकानेरमें आये, उस समयसे माननीय महाराज प्रति सोमवार और बृहस्पतिवारको प्रजाका आवेदन पत्र लेकर सुना करते हैं, एवं ऐसी आशा की जाती है कि वह इस भाँति आवेदन पत्रको सुनेंगे, कि जिससे मंत्रीसमाज शासन विभागके किसी विषयमें विलम्ब न करै। इस लिये वह विशेष ध्यान रक्खेंगे। भूतपूर्व मृत महाराज किसानोंके स्वार्थसाधनके लिये विशेष ध्यान रखते थे, और राजकर्मचारियोंके कार्यकी ओर अधिक ध्यान देते थ, परन्तु आजकलके माननीय महाराज राजकर्मचारियोंकी ओर अत्यन्त मृदु व्यवहार करते हैं।" * गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेण्ट लेफटिनेण्ट कर्नल ई. आर. सी. बाडफोर्ड सि. एस. आई. ने १८८३ ईसवीकी २७ वीं अगस्तको माननीय राजप्रतिनिधि गवर्नर जनरलके निकट लिखा कि बीकानेरके माननीय महाराज सब प्रकारसे स्वस्थ शरीर है परन्तु वह प्रजाके प्रति विच्छिन्न भावसे रहते हैं, और महलके बाहर क्या हो रहा है, इसके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानते, राज्यके सुशासनके लिये किस प्रकारके अनुष्ठानका प्रयोजन है, इसको कुछ भी स्थिर नहीं कर सकते हैं, हमारे वहाँ रहनेके समय माननीय महाराजने स्वयं प्रजाके आवेदनपत्रको ग्रहण कर सुननेका विचार किया, और इससे उन्होंने प्रजाके कल्याणकी अभिलाषा की, इससे उनके सामान्य आभासमें भी प्रजामें सुफल उत्पन्न होनेकी संभावना है, परन्तु शासनके सम्बन्धमे इतना सामान्य संतोप दायक मन्तव्य प्रकाश किया जाता है। ×

---

* Report of the political Administration of Rajputana states for 1882-83.

× Selections from the Records of the Government of India foreign Department No. C GIII

उपसंहारमें हमें केवल इतना ही कहना है, यद्यपि हम अंग्रेजी पोलिटिकल एजेण्ट-की उक्तिके प्रति ऐसी आस्था नहीं दिखाते तथापि हम बीकानेरके शासन सम्बन्धमें अन्यान्य लक्षणोंसे भली भाँति जान गये हैं, कि राज्यके आभ्यन्तरिक शासनके सम्बन्ध-में सुव्यवस्था करना कर्त्तव्य है; हम आशा करते हैं, कि महाराज बडे उद्योगके साथ हमारी अभिलाषाको पूर्ण कर सामन्तमंडली तथा प्रजाके हृदयको आकर्षित करनेमें समर्थ होंगे ।

वर्तमान वृत्तान्त ।

यह बीकानेर देश जोधपुरके उत्तरकी ओर है । पृथ्वीके हिसाबसे यह राजपू-तानेका दूसरा और निवासियोंके हिसाबसे चौथा राज्य ठहरता है । इसमें २२३४० वर्गमील पृथ्वी है और ८३१२१० निवासी सन् १८९१ की गिन्तीमें पाये गये । इसकी वार्षिक आमदनी अठारह लाख १८००००० रुपये हैं । यहां नादियां नहीं, कुओंसे जल लिया जाता है । नगरके कुएं ३०० फुट तक गहरे हैं, बाहर२० फुट खोद-नेसे पानी निकलता है । यहांके घोडे गाय भैंस बैल आदि जैसे होते हैं वैसे सब भारत-वर्षमें नहीं पाये जाते । भीतें यहांकी ऐसी ऊंची हैं और मुंडेरों तथा बुर्जोंसे ऐसी विभूषित हैं कि दूरसे बडा नगर दिखाई देता है, सडकें तंग और तिरछी हैं इसमें पत्थरके विचित्र अनेक घर हैं, राज्यमें कालिजके सिवाय कितनी ही पाठशाला हैं संवत् १९४४ में महाराज डूँगरसिंहके छोटे भाई,

महाराज राजराजेश्वर नरेन्द्र शिरोमणि
श्रीगंगासिंहजी बहादुर

गद्दीपर विराजमान हुए । इनकी अवस्था उस समय अनुमानन दशवर्षकी थी, इस कारण राजपूतानेके पोलिटिकल एजेण्ट मेजर टालवट साहब C. I. E. के अधि-कारमें कौंसिल द्वारा राजकाज होता था अब श्रीमान् कालिजसे विद्या पढ कर योग्यता प्राप्त करके अधिकार संपन्न हुए हैं । आपने विलायतकी यात्रा भी की है । भली प्रकार प्रजापालन करते हैं । इनके समय बीकानेरकी उन्नतिमें बहुत आशा है परमेश्वर महाराज-को चिरंजीव रखकर प्रजापालनमें तत्पर रक्खे ।

चतुर्थ अध्याय ४.

बीकानेरकी प्राचीन और वर्त्तमान अवस्थाका भेद; बीकानेरकी भूमिका परिमाण; मनुष्योंकी संख्या; जाटजाति; सारस्वत ब्राह्मण; चारण; उद्यानपाल; क्षौरकार; राजपूत; प्राकृतिक अवस्था; सस्य; फल; वृक्ष; कर्षणयंत्र; जल; लवणहृद; प्राकृतिक सौन्दर्य; खनिज पदार्थ; पशुपालक, वाणिज्य और शिल्प; पशम; लौहद्रव्य; मेला; राजस्व; खास भूराजस्व; धुंआकर; अंगकर आमदनी और नगरके वाणिज्य पर महसूल; पुषायेति अर्थात् कृषिकर; मालभा प्राचीन राजस्वकी सूची; धातूईकर; दंड एवं खुशियाली; सामन्तोंके आधीनके पूर्वतन सेनाकी सूची; पूर्वतन राजसेनाकी संख्या, बीकानेरके प्रधान २ सामन्तोंके नाम धाम; राजस्व और सेनाकी तालिका; 'पूर्वतन विदेशीय सेनाकी सूची; आधुनिक विवरण; राजस्व; स्वास्थ्य चिकित्सालय; राजस्व सम्बन्धी मुकदमे; दीवानी विचारालय; फौजदारी विचारालय, बन्दियोंकी संख्या; विद्यालय।

इतिहासवेत्ता टाड साहब बीकानेर राज्यके प्राकृतिक वृत्तान्तको वर्णन करनेके पहिले लिख गये हैं, कि "अंग्रेजोंके समीप यह देश अत्यन्त अपरिचित था, अंग्रेज इस देशको सब प्रकारसे मरुक्षेत्र जानते थे। प्रवादियोंके मुखसे इस देशके अत्यन्त प्राचीन कालके उत्कर्षावस्थाके अनेक परिचय पाये जाते हैं, पर उनके साथ वर्तमान अवस्थाकी बराबरी नहीं की जासकती। जिस समयसे राजपूतोंने यहांके निवासी जाटोंके ऊपर अपने अधिकारका विस्तार किया उसी समयसे गत तीनसौ वर्षमें इस देशकी जो अवनति हो गई है इसको देखकर हमारा अनुमान ठीक होता है, यह मरुक्षेत्र एक समय उर्वर और घनी वस्तीसे पूर्ण था, यद्यपि इस देशमें इस समय बालू अधिक बढ गई है तथापि यह देश अब भी इतना धान्य उत्पन्न करनेमें समर्थ है कि इससे बहुतसे निवासियोंका भोजन संग्रह हो सकता है, यह अनुमान सभी संदेहोंसे रहित है। बीकानेरके भूतपूर्व राजा रणक्षेत्रमें अपनी स्वजातीय दश हजार सेनाको इकट्ठा करनेमें समर्थ होते थे, यद्यपि वह प्रबल सेनादलके व्ययसम्पादन करनेके लिये यवनबादशाहोंसे कुछ अतिरिक्त भूवृत्ति भोग करते थे, परन्तु वे केवल अपने राज्यकी आमदनीसे भी उस सेनाके पालन करनेमें समर्थ थे। अधिक अनुर्वरताके अतिरिक्त इस राज्यकी शोचनीय अवस्थाके कुछ अन्य कारण भी देदीप्यमान थे। एक ओर जिस भांति यहांके निवासी चोर डकैतोंके द्वारा सताये जाते थे, उसी प्रकारसे राज्यमें भी अत्याचारी राजाके अधिक कर बढानेसे प्रजा अत्यन्त पीडित होती थी, उस शासनके सम्बन्धमें प्रजा इस करके देनेसे शान्ति नहीं पाती थी। यही बडे आश्चर्यका विषय है कि इस अवस्थामें भी राज्यकी प्रजा अधिकतासे विध्वंस नहीं हुई। बीकाने जिन ग्राम और नगरोंको बल पूर्वक अपने अधिकारमें किया था और जिन ग्राम निवासियोंने इच्छानुसार उनकी आधीनता स्वीकार की, पिछली तीन शताब्दियोंमें इस समय उन ग्रामोंके कोई चिह्न भी नहीं पाये जाते और जो ग्राम बचे थे वह भी क्रमानुसार उसी

दशाको पहुँच गये हैं। एक समय जिस भांति बहुतसे वाणिज्यकी वस्तुओंसे पूर्ण छकडे इस राज्यमें आया करते थे। और उनपरसे महसूल लेकर राज्यकी आमदनी बढती थी इस समय राज्यकी शान्ति नष्ट होनेसे और चोर डाकुओंकी वृद्धि होनेसे अब उस भांतिसे वाणिज्य द्रव्य नहीं आते हैं, इससे बीकानेरके महारावको जिस भांति हानि पहुँचती है, उसी भांति वाणिज्यके प्रधान स्थान चूरू, राजगढ और रेनी इत्यादिकी अवनतिसे प्रजाको भी यथेष्ट हानि पहुची है। एक समय इस वाणिज्य स्थानपर सिन्धुजात और गंगाजीके किनारेके देशोंसे बहुतसे वाणिज्य द्रव्य आया करते थे। यही नहीं कि केवल बीकानेर राज्यकी ही यह शोचनीय अवस्था हो गई है, जिस कारणसे बीकानेरकी यह दुर्गति हुई है उसी कारणसे जयसलमेर तथा और भी पूर्व सीमावर्ती राज्योंकी ऐसी दुर्दशा हो गई थी। बीकानेरके समान उन सब राज्योंमें सुशासनके अभावसे चोर और डाकू प्रबलतासे बढ गये थे। बीकानेरके बीदावत स्वयं जैसे अत्याचारी और तस्कर थे, वैसे ही जयसलमेरके मालदेवोत और जयपुरके सेखावत भी हो गये थे। फिर इनके साथ अधिक पश्चिम मरुक्षेत्रके सराई, खोसा और राजडगण राज्यके सभी स्थानोंपर चोर डाकू लूटते हुए फिरा करते हैं। यह भी जाना गया है कि अरब देशके बद्दूगणोंके समान यह शेषोक्त कई एक जातियाँ समान आचार व्यवहारवाली कही जा सकती हैं।" महात्मा टाड साहबकी इस उक्तिको पढ कर हमारे पाठक सरलतासे अनुमान कर सकेंगे कि उस समय बीकानेर राज्यकी आभ्यन्तरिक अवस्था कैसी थी। यद्यपि अनेक वर्ष बीत गये हैं परन्तु हम अत्यन्त दुःखके साथ प्रकाश करते हैं, कि इस दीर्घकालमें बीकानेर राज्यकी अवस्था उचित रीतिसे नहीं बदल सकी थी। यद्यपि अधिकतर चोर और डाकुओंके उपद्रव निवारण हो गये हैं यद्यपि आभ्यन्तरिक सुशासनके लिये अनेक उपाय हो रहे हैं तथापि राज्यमें आजतक पूर्णरूप शांति विराजमान नहीं है। यद्यपि वाणिज्य और व्यापारमें अधिकतासे लाभ हुआ है, रजवाडोंके अन्यान्य राजपूत राज्योंमें इस दीर्घकालमें वाणिज्यकी इतनी उन्नति हो गई है पर बीकानेर उतनी उन्नति नहीं कर सका है।

बीकानेरकी भूमिका परिमाण—महात्मा टाड साहब लिख गये हैं कि "इस राज्यके पूंगलसे राजगढतक देश पूर्वकी अपेक्षा विस्तारवाले हैं और इसका परिमाण प्रायः नव्वे कोशतक है, और चौडाई उत्तरसे दक्षिण तक है। भटनेर और महाजन परगनेके मध्यस्थ भूमिका परिमाण अस्सी कोश तक है, सम्पूर्ण बीकानेर राज्यकी भूमिका परिमाण कोई ग्यारह सौ कोशसे अधिक नहीं होगा। पूर्वकालमें इन विस्तारित देशोंमें दो हजार सातसौ नगर और ग्राम थे, परन्तु इस समय उससे आधे भी नहीं हैं।" "आचिसन साहबने १८७६ ईसवीमें लिखा है कि बीकानेरकी भूमिका परिमाण १७६७६ मील है"।

मनुष्योंकी संख्या—साधु टाड साहब जिस समय रजवाडेमें उपस्थित थे उस समय बीकानेरके निवासियोंकी संख्या कितनी थी, उसके सम्बन्धमें लिख गये हैं, "इसके कुछ एक उदाहरणोंके विना दिये हुए मारवाड देशकी जनसंख्याकी

अनुमानिक सूचीको देखकर सन्तोषदायक विचार कर सकते हैं। जैतपुरके पश्चिमकी ओरके देश इस समय एकबार ही जनशून्य हो गये हैं, और उस स्थानसे भटनेरतकके देशोंकी भी प्रायः इसी प्रकारकी दशा हो रही है। उत्तर पूर्वके सीमाके देशोंकी जनसंख्या अत्यन्त स्वल्प है, अन्य पक्षमें बीकानेरकी मध्य रेखासे जैसलमेर राज्यकी सीमातकके देशोंकी जनसंख्या भी उसी प्रकार है, इस स्थानसे आभ्यन्तरिक देशोंकी जनसंख्या सर्वत्र समान है और मारवाडके उत्तर सीमाकी समतुल्य है। विशेष करके कितने ही निवासियोंके राज्यके जो बारह प्रधान नगर हैं उनकी सूची दी है. उसे देखकर हम भलीभाँतिसे ठीक करके मनुष्योंकी संख्यासूची स्थिर कर सकते हैं"।

"बारह प्रधान नगर हैं. और उन नगरोंके घरोंकी संख्या नीचे देते हैं:–

प्रधान २ नगर।				घर संख्या.
बीकानेर,	...	...	...	१२०००
नोहर,	...	...	...	२५००
भादरां.	...	...	...	२५००
नारैनी.	...	...	...	१५००
राजगढ.	...	...	...	३०००
चूरू.	...	...	...	३०००
महाजन.	...	...	...	८००
जैतपुर.	...	...	...	१०००
बादासर.	...	...	...	५००
रत्नगढ,	...	...	...	१०००
देशनोक,	...	...	...	१०००
सनथाल.	...	...	...	५०
			कुल	२८८५०

१००	ग्राम जिनके घरोंकी संख्या	२००	से.	२०००० तक है।
१००	ऐ. ऐ,	१५०	से.	१५००० "
२००	ऐ, ऐ.	१००	से,	२०००० "
८००	छोटेग्राम-- ऐ.	३०	से,	२४००० "

सब मिलाकर घरोंकी संख्या १०७८५०"

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिख गये हैं कि,–" यदि प्रत्येक घरमेंके पाँच मनुष्य लिये जाँय तो सबको मिलाकर ५३९२५० औसत जनसंख्या होती है। जो कि प्रतिवर्ग मील पीछे २५ मनुष्यकी आबादी बैठती है, इसके अतिरिक्त हम और नहीं विचार सकते। बीकानेरके आधीनकी मरुस्थलियोंको इसके साथ मिलानेसे स्काटलैण्ड-

के समान जनसंख्या होगी।'' इन निवासियोंमें चार अंशोंमेंके तीन अंश यहांके आदि निवासी जाट हैं, और शेष उनके विजेता बीकाके वंशधर हैं। इनमें सारस्वत ब्राह्मण, चारण कवि और अन्यान्य कितनी ही जातियां हैं। समस्त निम्न जातियोंके निवासियोंकी संख्या राजपूतोंके दश अंशोंमेंकी एक अंश भी नहीं होगी। अधिक शांतिके होनेसे बीकानेरके निवासियोंकी संख्या इस समय बढ गई है।

जाटजाति--बीकानेरके जाट निवासियोंके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहब लिख गये हैं कि, यहांके निवासियोंमें जाटोंकी संख्या समधिक है, और वह सबसे अधिक धनवान् भी हैं, जाटोंके प्राचीनकालके सामाजिक नेतागणोंके समान इस समय सभी प्राचीन भूमिहार अर्थात् भूस्वामी हैं, वह विशेष धनवान् हैं, परन्तु उनका धन किसी भी कामका नहीं होता, कारण कि राज्यके भयसे वे सदा चिथडों लगे रहते हैं, केवल विवाह इत्यादिके समयमें वह लोग अधिकतासे धन खर्च करते हैं। अधिक क्या कहें वह लोग भोजन करानेके लिये राजमार्गपर मनुष्य रखकर अनिमन्त्रित मुसाफिरोंतकको बडी विनती-से घर बुलाकर भोजन कराते हैं। इस प्रकारसे वह जितने मनुष्योंको भोजन करा सकते हैं उनका गौरव उतना ही सौ गुणा बढता है।

सारस्वत ब्राह्मण--''इस देशमे प्रायः सारस्वत ब्राह्मण ही अधिक निवास करते हैं। वे लोग इस बातका गर्व करते हैं कि जाटगणोंके इस देशमे उपनिवेशके स्थापनके पहिले उनके पूर्वपुरुष ही इस देशके अधीश्वर थे, वे लोग शांतिप्रिय और परिश्रम करनेवाले हैं। वे ब्राह्मण होकर कोई कुसंस्कार नहीं करते। परन्तु मांस खाते हैं, तमाखू सेवन करते, कृषिकार्य करते और अधिक क्या कहे वह लोग पवित्र गौओंका व्यव-साय भी करते हैं।''

चारणगण-- ''चारण गण इस देशके निवासियोंमें सबसे पवित्र गिने जाते हैं और वे पूजनी भी हैं। वह वीरव्रतधारी राजपूत, ब्राह्मणोंके धर्मादेशकी अपेक्षा चारण गणोंके वीरगाथाके प्रति विशेष मान्य दिखाते हैं। चारणगणोंका देशके सभी राठौर सम्मान करते हैं और प्रचीन गाथाके बलसे सभी भूवृत्तिको भोगते हैं, जैसलमेरके इतिहासमें इनका वर्णन विस्तारपूर्वक किया जायगा।''

''प्रत्येक राजपूत परिवारमें माली एवं नाई यही क्षौर कार्य करते हैं। यह लोग प्रत्येक ग्राममें पाये जाते हैं ये लोग प्रायः राजपूतोंके भोजन भी बनाते हैं।''

चूहड एवं थोरी--कर्नल टाड साहब लिख गये हैं कि,–''चूहड एवं थोरी यह प्रकृत चोरजाति है। चूहडगण लक्खी जंगलके और शेपोक्तगण मेवाडके निवासी हैं। बीकानेरके प्रायः सभी सामन्तोंने इस चूहड और थोरी जातिके कितने ही नेताओंको वेतन देकर सेवककी भांति अपने यहां रक्खा है। किसी असाध्य कार्यके लिये इनको रक्खा जाता है भादरांके सामन्तोंने अपने अधीनके सभी राजपूतोंको बिदा देकर केवल चूहड और थोरी जातिके मनुष्योंको अपने यहां रक्खा था। चूहड अत्यन्त विश्वासी गिने जाते हैं। सीमान्त और नगरके द्वारकी रक्षाका भार उनके हाथमें रक्खा

जाता है। प्रत्येक शवदाह होनेपर यह एक २ आना करके दस्तूरी लेते हैं, इससे यह जाना जाता है कि यह यहांके आदिम निवासी हैं"।

राजपूत—बीकानेरके राठौरोंके सम्बन्धमें साधु टाड साहबका यह मत है, "कि बीकानेरके राठौरोंके वीरत्वमें कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ, भारतवर्षके अन्यान्य "वीरजातियोंके समान उन्होंने भी वीर कहाकर यश प्राप्त किया था। जिस तरह मारवाड आमेर और मेवाडके वीर राजपूत महाराष्ट्र और पठानोंके द्वारा बहुत वर्षोंसे पीडित होते आये थे। बहुत दूरतक स्थित होनेसे बीकानेर राज्यके राठौरगण उनके द्वारा कभी पीडित नहीं हुए,परन्तु उन्हें उस तरह राज्यके भीतरी अत्याचारोंसे विशेष दुःख भोगने पडे हैं। पूर्वाञ्चलवर्ती स्वजातियोंकी अपेक्षा राठौर इनसे अधिक कुसंस्कार युक्त नहीं हैं। वे लोग खानपानके विषयमें विशेष विचार नहीं रखते। जिसके हाथका जल पीते हैं उसके हाथका भोजन भी कर सकते हैं। वह लोग जैसे साहसी, सहनशील, सरलहृदय और अत्यन्त धीर हैं. वैसे ही यदि युद्धकी शिक्षा तथा शासनरीतिके वशी होते तो संसारमें वह सबसे श्रेष्ठ योधा हो सकते थे। परन्तु इसके विरुद्ध वे इस देशके उपनिवेशके स्थापनकी अवधिसे मादक सेवनमें अत्यन्त आसक्त हो गये हैं। अफीम और गांजे वर्तमान समयके वंशधरोंमें अपनी प्रबल शक्ति विस्तार की है"।

प्राकृतिक अवस्था—महात्मा टाड साहबने बीकानेर प्रदेशकी प्राकृतिक अवस्थाके सम्बन्धमें लिखा है, कि "इस राज्यमें कितने ही स्थानोंके अतिरिक्त अन्य सभी न्यूनाधिक परिमाणसे बालुकामय हैं। पूर्वसे लेकर पश्चिमको सीमातक जो अंश सबसे अधिक विस्तारवाले हैं,वह अंश भी बराबर बालुकामय है। यद्यपि बालुकामय छोटे २ शिखर राज्यके मध्यस्थलसे आरंभ हुए हैं, परन्तु प्रधान भूधरमाला प्रत्येक ओरके छोटे २ पर्वतोंको भेदकर जैसलमेर राज्यकी ओरको गई है; अन्य पक्षमें यही ठीक कहना होगा कि, यह शिखरमाला समुद्रके पूर्ववर्ती देशोंसे आरंभ होकर बीकानेरके हृदयमें आकर शेष हो गई है। उत्तर पूर्व प्रान्तमें राजगढसे नोहर और रावतसर देशतककी मिट्टी उत्तम है। उस मिट्टीका रंग काला है, कुछ एक बालुका मिली हुई है, कृषिकार्यके उपयोगी है और वहां जल अत्यन्त निकट पायाजाता है, इस देशमें गेहूं चना और चावल भी अधिकतासे उत्पन्न होते हैं। भटनेरसे गाराके किनारेतककी मिट्टी भी इसी प्रकार है। मोहिलोंके अधिकारी समस्त देश बालुकामय हैं शिखरके शेष अंश इन्हीं देशोंकी उत्तर सीमामें शेष हो गये हैं। प्रत्येक वर्षकी वर्षाऋतुमें वर्षाका जल चारों ओर भर जाता है। यहाँ गेहूँ भलीभाँतिसे उत्पन्न होते हैं। यद्यपि मृत्तिकाके दोषसे यहाँ ऊँची श्रेणीका नाज उत्पन्न नहीं होता है मोहिलके उर्वर क्षेत्रकी अपेक्षा इस मरुक्षेत्रका बाजरा बहुत उत्तम है,मेवाड और मारवाडके श्रेष्ठ धान्यके साथ मिलान करनेसे यहाँके निवासियोंने अपने देशके बाजरेकी स्वयं प्रशंसा की है। जिस वर्षमें बहुतसा बाजरा उत्पन्न होता है उसी वर्षमें वहाँके निवासी दो वर्षके लिये उसे संग्रह करके रख लेते हैं, इस

बाजरेकी खेतीमें अधिक जलका प्रयोजन नहीं होता, परन्तु वर्षाके ठीक समयमें होनेसे ही बहुत धान्य उत्पन्न होता है" ।

"बाजरेके अतिरिक्त तिल और मोठ भी यहाँ उत्पन्न होते हैं । यह मनुष्य और पशु दोनोंके लिये उपयोगी और खाद्य हैं, तिलोंसे रंधन और जलानेका कार्य होता है । गेहूँ, चना और जव उर्वरक्षेत्रमें उत्पन्न होते हैं परन्तु हमने केवल बीकानेरके प्रधान २ धान्योंका उल्लेख किया है" ।

"जिस मिट्टीमें गेहूँ उत्पन्न होते हैं वहाँ रुई भी उत्पन्न होती है।इस देशके कपासमें सात और दश वर्षतक फल लगते हैं । रुईके फल उतार कर वहाँके निवासी उन वृक्षोंकी शाखाको काट डालते हैं, और केवल जडकी रक्षा करते हैं । प्रत्येकवर्षमें यह वृक्ष बढते रहते हैं, और अन्तमें यही वृक्ष बडे आकारवाले हो जाते हैं, इस देशमें रुई अधिकतासे उत्पन्न होती है, इससे अन्य देशोंमें इतने बडे बडे वृक्ष नहीं देखे जाते" ।

"मनुष्योंके आहारके लिये अनेक प्रकारकी शाक सब्जी उत्पन्न होती है।गौ आदि पशुओंके भोजनके लिये उत्तम धान्य बोया जाता है। ज्वार, कचरी, ककडी और बडर तरबूज यहाँ बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं,यह फल विशेप उपकारी हैं,कारण कि जिस समय दुर्भिक्ष होता है, अथवा जिस समय कोई फल नहीं मिलता उस समयेक व्यवहारके लिये उन्हें खण्ड २ करके धूपमें सुखा रखते हैं । इस फलका वाणिज्य भी होता है और जिस समय अन्यान्य फल भली भाँतिसे उत्पन्न होते हैं उस समय भी मनुष्य इन फलोंको बडे आदरके साथ भोजन करते हैं। सूखेहुए तरबूजके आटेका पदार्थ स्वास्थ्यके लिये विशेप उपकारी है, समुद्रकी यात्राके समय सामुद्रिक रोगमें इसको अत्यन्त प्रयोजनीय जानकर ग्रन्थकारने कुछ थोडसा पदार्थ कई वर्ष बीते कलकत्तेको भेजे थे । हमारे भारतके जहाज बहुतायतसे इन पदार्थोंको संग्रह कर सकते हैं । कारण कि जितनी आवश्यकता होती है तरबूजकी उतनी ही खेती की जाती है, जिससे जहाजवाले और मारवाडके निवासी दोनोंको अच्छा लाभ हो सकता है । भारतवर्षके भीतरी देशोंमें जो तरबूज उत्पन्न होते हैं; उनकी अपेक्षा यहाँके तरबूज अत्यन्त श्रेष्ठ माने गये हैं,और मरुस्थलमें यात्रा करनेवाले मुसाफिरोंका कथन है कि यहांकी बालूके शिखरपर जितनी जगह तरबूज उत्पन्न होते हैं उन तरबूजोंसे अश्वारोही और घोडोंतककी तृषा दूर हो सकती है" ।

"इस सूखे देशके निवासी लोगोंका सर्वस्व वर्षाके ऊपर निर्भर है । उन्हें प्रायः प्रतिसात वर्षके अन्तर दुर्भिक्षका सदह रहता है, इस कारण जो द्रव्य मनुष्योंके

---

(१) कर्नल टाड साहब अपने टीकेमें लिख गये हैं, " १८१३ ईसवीमें मैंने मि० मोरक्राफ्टके पास परीक्षाके लिये कुछ द्रव्य भेजे थे परन्तु उसका फल क्या हुआ सो कुछ नहीं जाना जाता " ।

(२) मि० वारोने अपनी बनाई हुई दक्षिण अफरीकाकी विवरणी पुस्तकमें लिखा है कि वहां तरबूज स्वतः बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं ।

आहारके लिये उपयोगी है, यहांके निवासी उन सबको बडे यत्नके साथ संग्रह कर रखते हैं। गरीब लोग, प्रायः भुरुट बूर हिरारू सेवन, इत्यादिके फलोंका पूर्ण करके उसे बाजरेके मैदाके साथ मिलाकर भोजन करते हैं। बनबेर, खैर और करीर आदि छोटे २ फल भी बहुतसे नीची श्रेणाके मनुष्य संग्रह कर रखते हैं। खेजडा वृक्षकी छाल जो अति तिक्त है उसको भी संग्रह करते हैं और सुखाकर उसे मैदाकी तरह चूर्ण करके खाते हैं, तात्पर्य्य यह कि, खानेके योग्य किसी वस्तुका संग्रह और उपयोग करनेमें वहांके लोग कसर नहीं लगाते।

"फलवाले बडे २ वृक्ष यहां नहीं पाये जाते, राजधानीके मुख्य २ स्थानोंमें आम और इमलीके वृक्ष लगाए जाते हैं, परन्तु बबूल, पीलू और जाल नामक छोटे २ फलवाले वृक्ष अधिकतासे उत्पन्न होते हैं, सेहुडा नामके एक प्रकारके वृक्ष और भी उत्पन्न होते हैं, उनकी ऊंचाई बीस फीट होती है।

यह घरोंके बनानेके काममें आते हैं। भारतविख्यात नीमके वृक्ष भी यहां उत्पन्न होते हैं। सक नामक एक और प्रकारके जो वृक्ष उत्पन्न होते हैं वह यहांके लिये विशेष उपकारी हैं। यहांके निवासी कुएँके चारों ओर इसको फैलाकर कुएमें रेतेके गिरनेको रोकते हैं"।

बीकानेरमें मंदार (आक) के वृक्ष बहुत होते हैं, यहांपर वे जैसे बडे होते हैं, वैसे ही मजबूत भी होते हैं, उनकी जडसे जो रस्सियां बनती हैं वे बडी कडी और खटाऊ होती हैं, और प्रायः मूंजकी रस्सियोंकी अपेक्षा उत्तम होती हैं सन मूंज यहाँ बीदावाटीमें उपजती है।

कृषियन्त्र--"यहाँके कृषियन्त्र साधारण हैं, पर यहाँके कृषिक्षेत्रोंके लिये उपयोगी हैं हल केवल एक बैल या ऊंटके द्वारा चलाया जाता है दो बैल वा ऊंटका हल अकसर माली लोग उस समयमें चलाते हैं जब कि मिट्टी अधिक कठिन होती है। सभी चलनीका व्यवहार करते हैं, और उस चलनीसे एक २ धान्य पृथक् और दूर २ बोया जाता है"।

जल-"इस मरुदेशकी पृथ्वीमें बडे गहरेपर जल पाया जाता है, बीकानेरकी राजधानीके निकटवर्ती देश नख नामक स्थानमें दो तीनसौ फुट खोदनेसे जल दिखाई पडता है। थाल अर्थात् मरुक्षेत्रमें ६० फुटसे अधिक बिना खोदे हुए मनुष्योंके पीने योग्य जल नहीं निकलता। ३०.फुट खोदनेसे जो जल निकलता है, वह पशुओंके पीने योग्य होता है। प्रत्येक कुएँके चारों ओर सक नामक वृक्षकी दीवारी बँधी रहती है।

---

(१) सभी प्रधान २ नगरोंमें माली जल बेचा करते हैं। इस जल बेचनेका कार्य उनकी एक चेटियासे होता है प्रायः सभी घरोंमें हौज बने होते हैं, वर्षा ऋतुमें इनमें खूब जल भर जाता है, यह जलधारा ईंट वा पत्थरकी बनी होती है और सब ढकी रहती है, केवल ऊपरके भागका एक द्वार खुला रहता है, उसमें पवन जाती है। उसके द्वार सभी बंद करके रखते हैं इसमें जल एक वर्षतक उत्तम अवस्थामें रहता है।

हिन्दुस्तानके रेगिस्तानमें कई एक नमककी झीलें एकमें मिलकर ' शिर ' नामसे प्रसिद्ध हैं। परन्तु उनमेंसे कोई भी मारवाडकी झीलोंकी भांति नहीं हैं । उक्त झीलके किनारेपर ' सिरा ' नामका एक बडा भारी नगर भी बसा हुआ है जिसका नामकर्ण झीलके ही नामसे संबन्ध रखता है । सिरा झीलका लंबान चौडान प्राय: छ: मील होगा । दूसरी नमककी झील दो मील लंबी चौडी चौपूरके पास है । ये दोनों झीलें सर्वत्र प्राय: पांच फुटगहरी होंगी । गरमीके दिनोंमें गरम वायुके संयोगसे लवण आपसे आप पानीके ऊपर जम जाता है। उसीमेंसे नमकके चैलेके चैले उतार लिये जाते हैं। उक्त दोनों झीलोंका नमक दक्षिणी झीलसे कम दामका होता है ।

प्राकृतिक सौन्दर्य-" इस देशमें प्राकृतिक सौन्दर्य कुछ भी नहीं है, और ऐसे दृश्य बहुत थोडे हैं कि जिनको नेत्रोंके लिये आनन्ददायक कहा जाय । परन्तु हमने यहाँके ऐसे मनुष्य देखे हैं कि उन लोगोंको अन्य देशके उपादेय आहारकी अपेक्षा यहांकी रावडी और बाजरेकी रोटी ही अत्यन्त प्यारी होती है। वह मनुष्य हिममण्डित अचलराज हिमालयकी अपेक्षा यहाँकी बालुकामय छोटी२ भूधरमालाको ही प्रीतिपूर्वक देखते हैं हमारे पाठक पाठिकागण अवश्य ही स्मरण करेंगे, कि जहाँ जन्म हो वही देश प्यारा लगता है ।

खनिज पदार्थ-" यहाँ खनिज पदार्थोंकी उपज बहुत कम है । राज्यके कई प्रदेशोंमें शुद्ध पत्थरकी खाने हैं। विशेष करके बीकानेरकी राजधानीके तेरह कोश उत्तर पश्चिमको पूसियारा नामक स्थानकी खानसे दो हजार रुपया वार्षिक आय है. बीदासर और बिरामसरमें ताँबेकी खाने है । परन्तु बिरामसरकी खानसे तो लागतका भी खर्च नहीं निकलता और बीदासरकी खानोंसे ३० वर्षतक ताँबा निकाला जा चुका है इसलिये इस समय वहाँ भी लाभ होना असम्भव है ।

" कोलाद नामक स्थानके निकट एक खानसे एक प्रकारकी मिट्टी अधिकतासे तेलसे भीगी सी निकलती है, और वह वाणिज्यके अन्य द्रव्योंकी तरह विदेशको भेजी जाती है। इसीसे राज्यको वार्षिक पन्द्रह सौ रुपयेकी आमदनी होती है। यह मिट्टी मनुष्योंके बाल और शरीरके साफ करनेके लिये विशेष काममें आती है । और ऐसा भी विदित है कि एक श्रेणीकी स्त्रियाँ अपने लावण्य और बुद्धिके लिये इस मिट्टीको खाती भी हैं " ।

पशु--मरुक्षेत्रकी गौ अत्यन्त श्रेष्ठ हैं । ऐसे ही यहाँके ऊंट भी लादने और युद्धक्षेत्रमें सवारीके काममें आते हैं, उनका मूल्य भी अधिक होता है, और भारतवर्षमें यह सब ऊंटोंसे श्रेष्ठ गिने जाते है । इन ऊंटोंका सर प्राय: बडा सुन्दर होता है और यहां भेडें भी बहुत होती हैं, और यहांके स्वाभाविक उपजनेवाले घास पातसे उनके आहारमें कुछ कमी नहीं होती; नीलगाय तथा प्रत्येक जातिके हरिन भी यहाँ देखे जाते हैं । मारवाडकी लोमडीका गठन अत्यन्त चमत्कारक है । शृगाल और हरिन ही नहीं वरन शेरतक बीकानेरके जंगलोंमें पाये जाते हैं ।

वाणिज्य और शिल्प—"बीकानेर राज्यमें राजगढ वाणिज्यमें प्रधान नगर है । और सब देशोंसे इसी स्थानपर वाणिज्यके द्रव्योंसे भरे हुए छकडे आया करते हैं । पंजाब और काश्मीरके द्रव्य.हांसी हिसार होकर यहां आते हैं, और पूर्वाञ्चलके वाणिज्य द्रव्य भी अर्थात् पशमीनेके वस्त्र, नील, चीनी, लोहा, तांबा इत्यादि दिल्ली, रिवाडी और दादरीके रास्तेसे आते हैं । हाडोती और मालवेसे अफीम आती थी और फिर यहांसे सम्पूर्ण राजपूत राज्योंमें उन वस्तुओंका आवागमन होता है,समुद्रदेशसे जैसलमेर होकर मुलतान और शिकारपुरसे शकटोंमें खजूर,गेहूं,चावल और स्त्रियोंके लुंगी नामके वस्त्र,फल इत्यादि और पाली समुद्रके किनारेके देशोंसे टीन, औषधि.नारियल, हाथीदांत इत्यादि आते हैं, इन सब द्रव्योंमेंसे कितने ही द्रव्य बीकानेरके निवासियोंके व्यवहारमें आया करते थे, और वहुतसे यहांसे अन्य देशोंको भी जाते थे,उसी कारणसे यहां समाधिक वाणिज्यका महसूल संग्रह होता है ।

पशम—" मारवाडमें जो अधिक भेडें उत्पन्न होती हैं, उनके शरीरके रुएँसे अनेक भांतिके वस्त्र बनते हैं, और उनका भी वाणिज्य होता है । भेडोंके रुएँसे स्त्री पुरुषोंके पहिरनेके योग्य पोशाकें बनती हैं जो धनी निर्धन सभीके काममें आती हैं,इस पशमके अच्छे निकृष्ट सभी श्रेणीके वस्त्र यन्त्रोंके द्वारा बनाये जाते है । मोटी एक जोडी लोई तीन रुपयेकी बिकती है, और बढिया बारीक लोई ३० रुपयेकी बिकती है । शेषोक्त मोलकी लोई देखनेमे अधिक सुन्दर होती है वरन उसको एक प्रकारसे शाल कह सकते हैं । उनकी पगडी भी बनती है, जिनकी लम्बाई ४० से ६१ फुटतक होती है, इतनी लम्बी पगडीके शिरपर बांधनेसे कुछ भी बोझा नही मालूम होता, और न देखनेमें बडी ही लगती है-अर्थात् इतनी वारीक होती है" ।

"भैंस, बकरी और गौ इत्यादिके दूधसे जो घी निकलता है वह भी यहांके वाणिज्यका एक प्रधान द्रव्य गिना जाता है " ।

लोहद्रव्य—"बीकानेरके शिल्पियोंने लोहके अनेक भाँतिके द्रव्य बनाकर विशेष प्रशंसा प्राप्त की है । राजधानी और प्रधान २ नगरोंमें लोहेके कारखाने हैं । उन सब कारखानोंमें छुरी, तलवार, चाकू, भाले, बन्दूक इत्यादि बनते हैं, शिल्पीगण हाथीदांतके भी अनेक प्रकारके द्रव्य तैयार करते हैं; इनमें स्त्रियोंके पहिरने योग्य चूडी और कडे भी तैयार होते हैं" ।

"देशमें व्यवहार करनेके लिये पहरने योग्य स्थूल वस्त्र अधिकतासे बनते हैं " ।

मेला-"कार्तिक और फाल्गुनके महीनेमें कोलाद और गजनेर नगरमें प्रत्येक वर्षमें मेला हुआ करता है; और उस मेलेमें आसपासके स्थानोंसे अनेक वणिक् आया करते हैं । उस मेलेमें मारवाडसे ऊँट गाय तथा मुलतान और लक्खी जंगलके घोडे बिकनेके लिये आते हैं । परन्तु इस समय उस मेलेका अब वैसा गौरव नहीं रहा सारांश यह है कि इस समय यहांका वाणिज्य एकबार ही लोप हो गया है" ।

राजकर-" पहिले बीकानेरके अधीश्वरका राजस्व कर कई प्रकारसे संग्रह किया जाता था । खालसा अर्थात् राज्यके अधीनकी भूमिका कर, कृषिकर और दण्ड यह तीन आमदनीके प्रधान द्वार थे, परन्तु सब प्रकारसे राजाका राजस्व वार्षिक पांच लाख रुपयेसे अधिक नहीं होता था । यदि रजवाडोंके अन्यान्य राजपूत राज्योंके साथ इसका मिलान किया जाय तो मालूम होगा कि जितना बीकानेरकी भूमिका परिमाण है उसके हिसाबसे वहांके सामन्त अधिकांश पृथ्वीके अधिकारी हैं । रजवाडोंके अन्यान्य राज्योंके सामन्त उतनी परिमिति भूमिके अधिकारी नहीं हैं । इसका कारण केवल यही है कि बीदावत और कांधलोतगणोंने सबसे पहिले इस देशकी भूमिके अधिक भागपर अधिकार किया था, उन दोनों सम्प्रदायोंका भूभाग एकसाथ मिलानेसे बीकाके अधिकारी राज्यकी अपेक्षा बडा हो गया । दूसरा बीदावत और कांधलोतगण बीकाको अपने अधिकारी देशमेंका कोई अंश देनेके लिये सम्मत नहीं हुए । वह बीकाको केवल नाममात्रका अधीश्वर मानते थे । राजगढ, रेवी, नोहर, गारा, रत्नगढ और चूरू यह कितने ही देश महाराजकी खास भूमि है । कुछ ही दिनोंसे चूरू राजाके अधिकारमें हो गया है" ।

इतिहासलेखक टाड साहब लिखते हैं, कि "निम्नलिखित प्रकारसे छः प्रकारका कर संग्रह होता है;-खालसा अर्थात् खासभूमिका कर, धुआंकर, अंगकर, चुंगी और आमदरफ्तीका महसूल, कृषिकर और छठा मालमा" ।

१ खालसामें खास भूमिकरसे पहिले वार्षिक दो लाख रुपयोंकी आमदनी थी परन्तु कुसंस्कार और फजूलखर्चीके कारण राजाओंने निजके कुल नगर और गांवोंमेंसे दो तिहाई उजाड दिये है। पहिले इन खास ग्रामोंकी संख्या २०० थी परन्तु इस समय केवल ८० से अधिक नहीं है, और उन अस्सी ग्रामोंका राजस्व कर लाख एक रुपयेसे अधिक नहीं है सूरतसिंह अपनी इच्छानुसार चलते है। वे पात्र कुपात्र या कर्त्तव्य अकर्त्तव्यका कुछ भी विचार न करके जिसे जो जो चाहा सो बक्स देते थे । वह चाहे ब्राह्मण हो चाहे एक ढेंटेरा उनकी नजरमें सब बराबर है, और खालसा अर्थात् खास भूमिमें ही उनके सब खर्च चलते हैं । इसी लिये वह यथेच्छ दान करनेके लिये सर्व साधारण प्रजासे मनमाना धन उगाहते हैं ।

२ "धुँआकर-यद्यपि यह कर साधारणतः धूम्रका कर समझा जाता है, परन्तु वास्तवमें इसको अग्निकर कहना चाहिये । सभी रसोई बनाना चाहे और २ सभी काम करना चाहै पर सबके घरमें आतिशदान या धुआंकर कहांसे आया, सूरतसिंहके सचिवने इसे राहगीर कर यह कर नियत कर लिया, प्रत्येक घरसे इस कारका एक रुपया लिया जाता था; प्रबल सामर्थ्यशाली सामन्त यदि इस करके देनेसे छुटकारा न पाते तो इससे अपार धन संग्रह हो सकता था।प्रधान २सामन्तोंके इस करके बिना दिये भी इस समय इससे एक लाख रुपया आता है । राजा लूनकरणके बडे पुत्र रत्नसिंहने बीकानेरके सिंहासनको छोडकर केवल महाजन देशको ग्रहण किया था वह भी

इस धुएँके करको नहीं देते। अन्यान्य कर जिस प्रकारसे बढाया जाता था तथा उसके बढाये जानेकी सम्भावना रहती थी, वैसी इस करकी अवस्था नहीं थी। यदि किसी ग्रामकी वस्ती आधी घट जाती तो जो ग्राममें निवास करनेवालोंसे ही समस्त कर नहीं संग्रह किया जाता यह धुएँका कर केवल जैसलमेर और बीकानेर राज्यमें प्रचलित है"।

३ "अंगकर—यह देखकर राजा अनूपसिंहने प्रचलित किया था। यह एक प्रकारसे सम्पत्तिकर कहा जा सकता है। प्रत्येक अवस्थाका मनुष्य एक अंगरूपसे विचारा जाता है और उसके प्रति चार आना कर नियत होता है; गौ, बैल, भैंस इत्यादि भी अंगकरकी गणनामें सम्मिलित हैं, और इन सबके ऊपर भी कर लगता जाता है। दश बकरी और एक भैंसका एक ही अंग नियत किया गया है, परन्तु एक ऊँटको चार अंगके समान गिना है, और उसपर एक रुपया कर लिया जाता है। राजा गजसिंहने इसको दुगुना कर दिया: यह कर यद्यपि समय २ पर अनेक रूपसे बदलता गया है, तथापि इससे वार्षिक दो लाख रुपयेकी आमदनी होती है"।

४ "आमदरफ्ती—तथा नगरका वाणिज्य शुल्क—यह कर अधिक परिवर्तनशील है; परन्तु महाराज सूरतसिंहके शासनसमयसे इस करको बहुत हानि पहुँची है। पूर्वकालमें एकमात्र राजधानीसे जो वाणिज्य शुल्ककी आमदनी होती थी, इस समय समस्त राज्यसे आती है, यह उतनी आय नहीं है। पहिले इसका परिणाम दो लाख रुपयेसे अधिक था, परन्तु इस समय एक लाख रुपयेसे भी कम है। इस एक लाखसे अधिक रुपयेमें बीकानेरके प्रधान वाणिज्य स्थान राजगढसे आधे लाख रुपयेकी आमदनी होती थी। चोर और डाकुओंके द्वारा अधिक अत्याचार और उपद्रओंके होनेसे पंजाबके साथ वाणिज्य कार्य एकबार ही बंद हो गया। पहिले मुलतान भावलपुर और शिकारपुरसे वणिकलोग व्यापारी द्रव्योंको बीकानेरमें होकर पूर्वाञ्चलको ले जाते थे, इस समय वह व्यापार भी नष्ट हो गया है, और राज्यमें स्थिर प्रकृष्ट नीतिका अभाव ही इसका कारण है। इस समय केवल प्रति सौ मन विक्रीके धान्यके ऊपर सैकडा पर ४ चार रुपया कर संग्रह होता है।" कर्नल टॉड साहबने अंग्रेजी गवर्नमेण्टके साथ महाराज सूरतसिंहके संधिबंधनके पहिले बीकानेरके वाणिज्यकी जो अवस्था थी, यहाँ उसका वर्णन भलीभांतिसे किया है; परन्तु हम यहाँ अत्यन्त आनंदके साथ प्रकाशित करते हैं कि इस समय बीकानेरके वाणिज्यकी अवस्थाकी अधिक उन्नति हो गई है, और इसीसे राज्यकी आमदनी भी बढ गई है।

५ कृषिकर—कृषिकार्यमें जितने हलोंका व्यवहार होता है, उनमेंसे प्रत्येक हलपर पांच रुपया कर लिया जाता है। पूर्वकालमें किसानोंके यहांसे नाज संग्रह कर लेते थे। खेतमें जितना धान्य उत्पन्न होता था, उसका एक चतुर्थांश राजा ग्रहण कर लेता था। राजा रायसिंहने इस करको तोड दिया और एक और कर स्थापन किया, जिससे जाट अत्यन्त ही आनंदित हुए, कारण कि जिस समय धान्य ग्रहण करनेकी रीति थी उस समय राजाके यहांके कर्मचारी इच्छानुसार किसानोंको

कष्ट देते थे। पहिले इसी कारणसे दो लाख रुपया राजस्वका दिया जाता था, परन्तु अन्यान्य विभागोंके समान बीकानेरकी खेतीकी भी क्रमशः अवनति हो गई, उसके साथ ही साथ इस करका परिमाण भी घट गया। बीचमें दो लाख रुपया दिया जाता था, इस समय एक लाख पचीस हजार रुपया संग्रह होता है। इस स्थानपर हम अत्यन्त सन्तोषके साथ प्रकाशित करते हैं कि राज्यमें सम्पूर्ण शान्तिके होनेसे कृषिकार्यकी श्रीवृद्धिके साथ राज्यकी आमदनी भी बढ गई है।

"६ मालभा–इस देशके आदि निवासी जाट जिस समय बीका और उनके उत्तराधिकारियोंकी अधीनता स्वीकार करके बीकाको अनुगत प्रजापदपर अपनी इच्छासे नियुक्त हुए; उस समय वह जाट स्वयं ही कर देनेमें सम्मत हो गये थे, इस कारण वह कर समभावसे प्रचलित है। माल शब्दका अर्थ भूमि है इस लिये यह भूमिकर नामसे विदित है। बीकानेर राज्यकी प्रजा जितनी पृथ्वीको जोतती है उसमें प्रतिसौ बीघे पृथ्वीके ऊपर दो रुपया इस करका नियत हुआ है। इस करसे इस समय पचास हजार रुपया भी संग्रह नहीं होता"।

राजस्वकी सूची।

१	खालसा*	२००००० रुपया.
२	धुआँकर	१००००० "
३	अंगकर	२००००० "
४	वाणिज्यशुल्क+	७५००० "
५	हलका कर	१२५००० "
६	मालभा (भूमिकर)	५०००० "
		जोड ६५०००० रुपया हुआ.

* कर्नल टाड साहबने टीकेमें निम्नलिखित सूची प्रकाशित की है।

"नाहरजिलेके	८४	ग्रामोंका राजस्व	१००००० रुपया.
रेनी "	२४	ऐ	१०००० "
राणिया "	४४	ऐ	२०००० "
जालोली "	१	ऐ	५००० "

सब आदिम खास भूमिका राजस्व कर ... ... १३५००० रुपया.

जबसे राजगढ, चुरू और अन्यान्य कई देश खास अधिकारमें हो गये हैं।

+प्राचीन समयके वाणिज्य शुल्ककी सूची।

नूनकरण ग्रामका वाणिज्य शुल्क		...	२००० रुपया.
राजगढ "	ऐ	...	१०००० "
सेखसर "	ऐ	...	५००० "
राजधानी बीकानेरके	ऐ	...	७५००० "
चुरू और अन्यान्य नगरके	ऐ		४५००० "

सब आमदनी १३७००० रुपया हुई.

उपरोक्त वार्षिक करके अतिरिक्त और भी कई प्रकारका कर संग्रह किया जाता है, और उससे राजा सूरतसिंहका राजभण्डार पूर्ण किया जाता है।

"धातूई नामका कर प्रति तीन वर्षके भीतर लिया जाता है इस करका परिमाण पाँच मुद्रा है, और प्रत्येक हलके ऊपर यह प्रचलित है, राजा जोरावरसिंहने इस करकी सृष्टि की थी, केवल आसियागातिके ५० ग्राम और चेगीवनके १० ग्रामोंके अतिरिक्त इस करको और सभी देते हैं। उक्त वार्जित ग्रामनिवासी सीमाकी रक्षामें नियुक्त रहते हैं, इसी कारणसे उनसे कर नहीं लिया जाता। प्रधान २ सामन्त भी इस करको नहीं देते, इसके द्वारा एक लाख रुपयेकी भी आमदनी नहीं होती।

कर्नल टाड साहब लिख गये हैं, कि "उपरोक्त निर्द्धारित करके अतिरिक्त वर्तमान महाराज सूरतसिंहने अपनी इच्छानुसार अतिरिक्त करको अनेक उपायोंसे संग्रह किया है; और राजाके यहांके कर्मचारी भी अपने उदर पूर्ण करनेके लिये कृषि-जीवी और श्रमजीवियोंके ऊपर घोर अत्याचार ते हैं, और अनेक भांतिके कष्ट देकर उनसे धन संग्रह करते हैं, इस प्रकारक उपायोंसे महाराज सूरतसिंहने निर्द्धारित राजस्वकी आमदनी दुगुनी कर ली है"। अत्यन्त सन्तोषका विषय है कि वर्तमान महा राज डूँगरसिंह बहादुरने अपनी प्रजासे इच्छानुस बलपूर्वक कोई कर संग्रह नहीं किया।

इतिहासवेत्ताने १८१३ इसवीमें लिखा है, कि "दण्ड और खुशाली नामके अन्य प्रकारके कर भी प्रचलित हुए थे।दण्डकर बलपूर्वक आज्ञा न माननेवाले अपराधीसे ग्रहण किया जाता था,और खुशाली कर प्रजाको सन्तोष प्रकाश स्वरूपसे प्रदान करनेकी आज्ञा देता था। सामन्तवृन्द वणिकदल और महाजनोंके निकटसे सर्वसाधारणमें इस करके ग्रहण करनेकी रीति थी। नीची श्रेणीकी प्रजा भी गुप्तभावसे इस करको देती थी।दंड-करको ग्रहण करनेके लिय चौदह कर्मचारी नियुक्त थे। प्रत्येक जिलेमें एक २ कर्मचारी रहते थे। यह कर्मचारी अपनी २ इच्छानुसार दण्डकरको निर्द्धारण करके संग्रह करते थे। गान्धोलेके सामन्त उक्त करके ग्रहण करनेवालेको इस आशयसे दो वर्षमें दश हजार रुपये देनेके लिये तैयार हुए थे, जिससे कि तीसरे वर्षमें उनको दण्ड न देना पडे, परन्तु कर लेनेवाला मनुष्य इस प्रस्तावमें सम्मत न हुआ, इससे सामन्तोंने अत्य न्त क्रोधित होकर कर ग्रहण करनेवालेको अपने नगरसे निकाल दिया, और आप स्वयं स्वामीके विरुद्ध खडे हुए। इच्छानुसार दंडकर किस प्रकारसे संग्रह किया जाता था उसके प्रमाण भलीभांतिसे पाये जाते है"।

"सूरतसिंहने एक समय जिस खुशाली करको संग्रह किया था, उस वृत्तान्तको प्रकाशित करना हम अत्यन्त आवश्यक समझते है। राजा सूरतसिंहने जिस समय बीकानेरके समस्त राठौरोंकी सेनाके साथ भेटनेरको जीतकर अपने राज्यकी सीमाको बढाया था, उस समय उन्होंने विजयसे उद्दीप्त हो उस युद्धके खर्चके लिये अपने राज्यमेंके प्रत्येक घरसे १० रुपया देनेको प्रजाको आज्ञा दी। सूरतसिंहने घोररूपसे अत्याचार करके प्रजासे जब इस प्रकारसे कर ग्रहण किया और प्रजाने उनकी विजयके

लिये जब रुपया दे दिया तब उनके परास्त होनेसे मानो प्रजाके भाग्यमें कैसी दुर्घटना हुई इसका अनुमान इतिहासप्रिय हमारे पाठक स्वयं कर सकते हैं ।

सामन्तोंके अधीनकी सेनाकी संख्या–कर्नल टाड साहबने महाराज सूरतसिंहके शासनकालीन सामन्तोंके अधीनकी सेनाकी संख्याके सम्बन्धमें वर्णन किया है कि " सामन्त शासनकी रीतिके मतसे देशको शासन करनेवाले राजाओंके चरित्रोंके ऊपर सामन्तोंसे सेना संग्रह कराना निर्भर है, यदि सूरतसिंह सर्वजनप्रिय होते, यदि किसी प्रबल समरके उपलक्षमें जातीय सेनाके समावेशकी आवश्यकता होती तो राजा सूरतसिंह समरक्षेत्रमें बीकाके वंशकी दश हजार राजपूत सेनाको इकट्ठी कर सकते थे, विदेशीय सेनाके अतिरिक्त उनमें बारह हजार अश्वारोही उपस्थित होते । परन्तु इतना सन्देह है कि वर्त्तमान अवस्था और समाजके उद्देश्यमें प्रत्येक विषयकी अवनति होनेसे इस समय उपरोक्त संख्यामेंसे आधी भी इकट्ठी नहीं हो सकती । " राजाके निज आधीनकी सेनामें केवल एक दल विदेशीय पांचसौ पैदल; ५ तोपै और ढाईसौ अश्वारोही हैं । यह सभी विदेशीय सेनापतिके अधीनमें चलते हैं । इसके अतिरिक्त बीकानेरकी राजधानीके किलेकी रक्षाके लिये एक राजपूत सेनापति नियुक्त हैं । उन्होंने पुरोहित जातीय और उस किलेकी रक्षाके हेतु जो सेना नियुक्त रक्खी है उसको वेतन देनेके लिये राजाके यहाँसे पचीस खण्ड ग्रामोंकी आमदनी मिलती है ।

साधु टाड साहब उपरोक्त सामन्तोंकी सूचीको प्रकाश करनेके पहिले लिख गये हैं कि यद्यपि बीकानेरके सामन्तोंके अधीनमें अधिक सेना थी, परन्तु वर्त्तमान महाराज सूरतसिंहको इसकी चतुर्थांश सेना इकट्ठी करनी कठिन है ।

महाराज सूरतसिंहके शासनसमयकी विदेशी सेना ।

	अश्वारोही	पैदल	तोपैं
सुलतानखाँ		२००	
अनोखेसिंह सिक्ख		२५०	
बुधसिंह देवडा		२००	
दुर्जनसिंह बटालियनके अधीनकी	७००	४	४
गंगासिंह बटालियनके अधीनकी	१०००	२५	६
जोड विदेशीय	१७००	६७९	१०
बडी तोपैं			२१
	१७००	६७९	३१

बीकानेरके पूर्वतन सामन्त श्रेणीकी सूची।

सामन्तोंके नाम	कुल	वासस्थान	तहसील वसूल रु०	सेनाकी संख्या पैदल	सेनाकी संख्या सवार	विशेष.
वैरीशाल ...	बीका	महाजन	४००००	५०००	१००	राजा लूनकरणके उत्तराधिकारीने एकसो चौवालीस ग्रामोंको पाकर सिंहासनके अधिकारको छोड दिया।
अभयसिंह ...	वनीरोत	भूकरका	२५०००	५०००	२००	यह बीकानेरके सबमें प्रधान सामन्त हैं।
अनूपसिंह ...	बीका	जसाना	५०००	४००	४०	
प्रेमसिंह ...	ऐ०	ब्राई	५०००	४००	२५	
चैर्नसिंह ...	वन रोत	सावह	२००००	२०००	३००	
हिम्मतसिंह ...	रायोत	रावतसर	२००००	२०००	३००	
शिवसिंह ...	वनीरोत	चूरू	२५०००	२०००	२००	
उमेदसिंह, जैतसिंह ...	बीदावत	बीदासर, साउनदवा	५००००	१००००	२०००	
बहादुरसिंह, सूर्यमल्ल, गुमानसिंह, अताईसिंह ...	नारनोत	मैननसर, तिनदीसर, काटर, कुटचोर	४००००	४०००	५००	
शेरसिंह ...		निम्बाजी	५०००	५००	१२५	
देवीसिंह, उमेदसिंह, सुरतानसिंह, कर्णीदान ...	नारनोत	सीधमुख, कारीपुरा, अनीतपुरा, विपासर	२००००	५०००	४००	
सुरतानसिंह	कच्छवाहा	नयनावास	४०००	१५०	३०	
पद्मसिंह ...	पँवार	जैसीसर	५०००	२००	१००	यह दोनों विदेशी सामन्त हैं एक तो जयपुरके और दूसरे प्राचीन पँवार वंशके।
किसनसिंह ...	वीका	हथ दीसर	५०००	२००	५०	

सामन्तोंके नाम	कुल	वासस्थान	तहसील वसूल रु०	सेनाकी संख्या		विशेष.
				पैदल	सवार	
रावसिंह ...	भाटी	पूगल	६०००	१५००	४०	जैसलमेरके भट्टियों के समीपसे पूगलदेश-को छीन लिया है।
सुलतानसिंह ...	ऐ०	राजासर	२५००	२००	५०	
लखनेरसिंह ...	ऐ०	सनेर	२०००	४००	७५	
कर्णसिंह ...	ऐ०	सतीसर	१०००	२००	९	
भूमसिंह ...	ऐ०	चक्करा	१०००	६०	४	
बीकाके आदि अधिकृत देशके चारों सामन्त हैं।						
१ मानीसिंह ...	भाटी	विहचनाक	१५००	६०	६	
२ जालिमसिंह ...	ऐ०	गरविशाना	१०००	४०	४	
सरदारसिंह ...	ऐ०	सुरजीरा	८००	३०	२	
कायतसिंह ...	ऐ०	रनदिसर	६००	३२	२	
चंदसिंह ...	करमसोत्	नोरवा	११०००	१०००	५००	११ वर्ष हुए २७ ग्राम जोधपुरके महाराजसे लेकर इन्होंने यहां निवास किया था।
सतीदान ...	रूपावत्	वदीलह	५०००	२००	२५	
भूमसिंह ...	भाटी	जांगलू	२५०००	४००	९	
कैतसी ...	ऐ०	जामिनसर	१५०००	५००	१५०	
ईश्वरीसिंह ...	मॅडला	सारोडा	११०००	२०००	१५०	ग्राम संख्या २७।
पद्मसिंह ...	भाटी	कुदसू	१५००	६०	४	
कल्याणसिंह ...	ऐ०	नयनियाह	१०००	४०	२	
		सब जोड़—	३३१४००	४३५७२	५४०२	

आधुनिक विवरण।

भूमिकर कर्नल टाड साहबने महाराज सूरतसिंहके शासनसमयकी बीकानेर राज्यकी आमदनीकी जो सूची प्रकाश की है हमने उसे यथास्थान दिखलाया है।१८८२-८३ईसवीमें राजपूत राज्योंके शासनविज्ञापनमें बीकानेरके असिष्टेण्ट पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है "कि दरबारका कथन है कि, गत संवत्की आमदनी और खर्चका यथार्थ हिसाब जिलोंसे अबतक नहीं मिला, वह अपूर्ण रह गया है, इस कारण इस समय राज्यकी ठीक आमदनी और उसके खर्चकी सूची देनेमें दरबार असमर्थ है। गतवर्षमें राज्यकी आमदनीकी अवस्था उत्तम रही है। परगने हनुमानगढका भूमिकर २५००० रुपया और टीबी परगनेका ७००० रुपया वार्षिक २० वर्षसे बढा दिया गया है। ऐसा विदित है कि इस समय राज्यकी आमदनी बारह लाख रुपयेकी थी और खर्च भी उतना ही था।" इसको पढकर हमारे पाठकगण सरलतासे अनुमान कर सकते हैं कि बीकानेरकी आमदनी क्रमशः बढ गई थी। विशेष करके वर्तमान वर्षमें सामन्तोंके कर बढानेसे इसमें कुछ संदेह नहीं कि आगामी वर्षमें आमदनी अधिक बढ जायगी, तब हमें केवल यही कहना है कि जितने रुपयेकी आमदनी होनी थी उतने ही रुपयेका खर्च कर देना किसी प्रकार भी उचित नहीं था। राजभण्डारको धनसे परिपूर्ण करना उचित है, और यह भी सत्य है कि शासन विभागकी उन्नतिके साथ ही साथ खर्चकी भी वृद्धि हुई थी, परन्तु आमदनी देखकर उन्नति करना शोभा पाता है। पोलिटिकल एजेण्टको विश्वास था कि वर्तमान व्यय करनेपर दो लाख रुपया बचत है, यदि यह सत्य है तो अत्यन्त संतोषका विषय होगा।

स्वास्थ्य–मेजर रिचार्ड्स उक्त शासन विज्ञापनमें लिख गये हैं कि गत "नवम्बर और दिसम्बर महीनेमें राजधानीमें चेचक रोगका प्रबलतासे प्रादुर्भाव हुआ था। सर्वसाधारण प्रजा टीका लगानेके फलको अनुभव करनेमें असमर्थ है। गत वर्षमें २७२ लोगोंके अंग्रेजी टीका लगाया गया, राजभारकी जनसंख्याके हिसाबसे यह अति अल्प परिणाम है। नगरके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें कितने ही उन्नतिमूलक अनुष्ठान किये गये हैं"।

चिकित्सालय–"समस्त बीकानेर राज्यमें अथवा राजधानीमें केवल एक चिकित्सालय है। गतवर्षमें वहां ५४ रोगियोंने जाकर चिकित्सा कराई थी और ३६७४ रोगियोंने केवल औषधी लेकर ही चिकित्सा की थी। चिकित्सकोंके वेतन और औषधिके मूल्यके हिसावमें १४३४ रुपया खर्च हुआ था"।

राजसम्बन्धी मुकदमे–पोलिटिकल एजेंट लिखते हैं, "वर्षमें ३१६ मुकदमे आये थे, और पहिले वर्षके २२७ मुकदमोंका विचार करना बाकी था, इनमेंसे २७१ मुकदमोंका विचार हो गया है और १८८३ ईसवीके ३१ मार्चतक ३१७ मुकदमोंका विचार करना बाकी है"।

दीवानी विचारालय—" गत वर्षमें बीकानेरकी सदरदीवानी अदालतमें ५८८ नवीन मुकदमे आये थे । पूर्ववर्षके ४२१ मुकदमोंका विचार करना बाकी था । इस प्रकारसे सब १०१० मुकदमोंमें गत वर्षमें ६४० मुकदमोंका विचार शेष हो गया है । बीकाके वंशधर किस प्रकार न्याय प्रिय थे वह इस सूचीसे जाना जाता है ।

फौजदारी विचारालय—मेजर रिचार्ट्स लिखते हैं कि " फौजदारी विचारालयके कार्यका विवरण इस सूचीमें प्रकाशित है १२३१ मुकदमे आये. इनमेंसे ७१७ मुकदमे कर दिये गये हैं और ५१४ मुकदमोंका विचार करना बाकी है । सब मिलाकर १०८० अपराधी पकडे गये हैं ।

कारागारसे दण्ड पानेवाले	३४०	मनुष्य
अर्थ दण्डवाले	२५५	"
छोड दिये गये	२४६	"
भाग गये	१५	"
जमानतपर छूटे	१३९	"
मर गये	१६	"
देश निकालेवाले	८	"
जिनकी खोज हो रही है...	६१	"

छोटी कन्याकी हत्याका एक भी अपराध नहीं हुआ " ।

" बीकानेरके कारागारमें निम्नलिखित अपराधी बंदी हैं ।—

जन्मभरके लिये	१३	मनुष्य
१४ वर्षके लिये	५	"
१२ "	३	"
१० "	२	"
९ "	१	"
८ "	२	"
७ "	१३	"
६ "	७	"
५ "	१४	"
५ वर्षसे कमती वर्षके लिये	५८	"
९ माससे कम समयके लिये... ...	३३	"
विचाराधीन	२१	"
सब	२१२	मनुष्य

उपरोक्त बंदियोंमेंसे १९६ पुरुष और १६ स्त्री हैं । सामन्तोंके आधीनके देशोंके जो अपराधी, विचार होकर कारागारमें भेज दिये गये थे उनको इस सूचीमें नहीं लिखा है । हमने नगरका कारागार दिखाया है, देखो कैसा साफ और परिमित है " ।

विद्यालय--बीकानेरमें आजतक एक भी राज्यविद्यालय नहीं था। १८८३ ईसवीमें २७ फर्वरीको राजधानीमें एक विद्यालय स्थापित हुआ है। उस विद्यालयका नाम वर्त्तमान महाराजके नामसे "डूँगरसिंहकालिज" रक्खा गया है हम कह सकते हैं कि राज्यमें जितना विद्याधन वितरण किया जायगा उतनी ही राज्यकी श्रीवृद्धि होगी; विद्या, शिक्षाके विषयमें महाराजको भलीभाँतिसे धन खर्चना कर्त्तव्य है।

पंचम अध्याय ५.

भटनेरकी आदि उत्पत्ति और उसका नामकरण-भटनेरकी जाटजातिकी ऐतिहासिक श्रेष्ठता-बरमीकी छावनी स्थापन करना-भीरोको उत्तराधिकारकी प्राप्ति-उसका मुसल्मानधर्मावलम्बन-रावदुलीच-हुसैनखाँ-हुसनमुहम्मद-इमाममुहम्मद-बहादुरखाँ-जावताखाँ, देशकी अवस्था-प्राकृतिकपरिवर्त्तन-प्राचीन प्रासादोंका ध्वंसावशेष-पौराणिकखोजप्राणी और उद्भिजतत्त्व-प्राचीन नगरोंकी सूची-मरुक्षेत्रमें प्राप्त प्राचीन ताम्रफलक।

इतिहासलेखक टाड साहबने बीकानेरके इतिहासको समाप्त करनेके पीछे भटनेर देशके सम्बन्धमें एक अध्याय लिखा है। हम उस अध्यायका अनुवाद करके बीकानेरके इतिहासको समाप्त करते हैं, कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "भटनेर जो इस समय बीकानेरके सम्पूर्णतः अधिकारमें है, वह देश बहुत पहिले एक श्रेणीके जाटोंका स्वतन्त्र वासस्थान था। वह जाटजाति एक समय इतनी बलवान् थी कि राजाके साथ भी विरोध करके उनको घोर विपत्तिमें डालती थी; और राजाओंपर जब शत्रु चढाई करते उस समय उनकी भलीभाँतिसे सहायता करती थी। यह प्रसिद्ध है कि भाटीजातिने ही इस देशका उपनिवेश स्थापन किया था, इसीसे इसका नाम भटनेर हुआ। एक प्रबल बलशाली भाटी राजाने इस राज्यकी प्रतिष्ठा करके यह देश भाटियोंके वंशाधीनरूपसे प्रसिद्ध किया, इसीसे इसका नाम भटनेर रक्खा गया। जैसलमेरके इतिहासमें इस नामकरणके सम्बन्धमें और भी एक विवरण देखा गया है। भाटियोंके इतिहाससे जाना जाता है कि भाटी जातिने यहाँ उपनिवेश स्थापन किया था, इसीसे इस समय इसका नाम भटनेर हुआ है, परन्तु भाटी जाति इस राज्यकी आदि प्रतिष्ठाता नहीं है। समस्त उत्तरांश 'नेर" नामसे विख्यात हुआ है। यह 'नेर' शब्द मरुस्थलीका प्राचीन नाम विशेष है। जब भाटीजातिके कितने ही मनुष्योंने मुसल्मान धर्म अवलम्बन किया तब उनको आदि भाटीजातिसे विभिन्न करनेके लिये भाटी नाम रक्खा गया"।

कर्नल टाड साहबने पीछे लिखा है, कि "भटनेरके आधीनका भूखण्ड और उसके उत्तराचलमें स्थित जो पृथ्वी गाडा नदीके किनारेतक गई है, वह भूमि इस समय जनशून्य अवस्थामें पडी हुई है; परन्तु पूर्वकालमें ऐसी जनशून्य नहीं थी, हमने यहां पर कितने ही प्राचीन समयके नगरोंकी सूची प्रकाशित की है वह नगर पूर्वकालमें

विशेष प्रसिद्ध थे, और उनके पूर्वगौरवके चिह्न आजतक विराजमान हैं, उन नगरोंके इतिहासको विचार करनेसे अवश्य ही हमारे इस मन्तव्यके बहुतसे प्रमाण मिल सकते हैं"।

"इस भटनेर प्रदेशने मध्य एशियासे भारतवर्षके आक्रमणके मार्गमें स्थापित होकर विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की है। इस जाटजातिने गजनीके मुहम्मदके साथ सिन्धु नदीमें जलयुद्ध करके उसके भारतमें प्रवेश करनेमें विघ्न डाला था, इस जातिके पूर्व पुरुषोंने उक्त समरके बहुत समय पहिले मारवाड और पंजाबमें उपनिवेश स्थापन किया था, हम जब उनको ३६ राज्यघरानोंमेंकी एकजातिरूपसे देखते हैं तब हम सरलतासे अनुमान कर सकते हैं कि भारतविजेता गजनीके सुल्तानसे बहुत शताब्दी पहिले इन जाटोंने प्रबल राजनैतिक सामर्थ्य प्राप्त की थी। शहाबुद्दीनके भारतवर्षपर अधिकार करनेके बारह वर्ष पाहिले अर्थात् १२०५ ईसवीमें शहाबुद्दीनका स्थलाभिषिक्त कुतुबउद्दीन स्वयं उत्तर मरुक्षेत्रके जाटोंके विरुद्ध युद्धभूमिमें गया था, कारण कि उस समय जाटोंने यवनोंके अधिकृत हासी देशको बलपूर्वक छीन लिया था। फीरोजकी उपयुक्त उत्तराधिकारिणी हतभागिनी महारानी रजिया बेगम जिस समय सिंहासन छोडनेको बाध्य हुई थी उस समय वह जाटोंकी शरण गई और जाटोंने इसको आश्रय दिया और प्रचीन टिमिरियोंके समान धाईकारियोंके साथ मिलकर रजियाके आधीनमें उसके शत्रुओंके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये वे अग्रसर हुए, परन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि रजिया शत्रुओंको बदला देनेमें समर्थ न हुई केवल वह रणक्षेत्रमें जीवन देकर अपने गौरवको बढा गई। फिर १३९७ ईसवीमें जिस समय तैमूरने भारतवर्षपर अधिकार किया, उस समय उसने अत्यन्त क्रोधित हो भटनेरपर आक्रमण किया। आक्रमणका कारण यह था कि तैमूरने जिस समय मुलतानपर आक्रमण किया था उस समय जाटोंने उसके विरुद्ध विषम बाधा देकर उसको अस्तव्यस्त कर दिया था। तैमूरने उसी क्रोधसे स्वयं सेनासहित भटनेरपर आक्रमण कर जाटोंको भयंकररूपसे निगृहीत किया। सारांश यह है कि भट्टि और जाट इस प्रकारसे परस्पर मिले हुए थे कि उनको दो जाति कहना कठिन था। हमारी इस प्रश्नकी भाटियोंके इतिहासमें विशेष रूपसे समालोचना करनेकी इच्छा थी, पर जिस समय राठौर जातिकी शासनशक्तिका इस भटनेरपर विस्तार हुआ, हम उस समय भटनेरके उस समयके इतिहासको वर्णन करनेके लिये प्रवृत्त हुए हैं"।

कर्नल टाड साहबने इतिहासके सम्बन्धमें लिखा है, "कि तैमूरके आक्रमण करनेके कुछ काल पीछे मरोठ और फूलरा स्थानकी एक सम्प्रदायने भाटियोंके नेता वैरसीहके आधीनसे बाहर होकर भटनेरपर अधिकार कर लिया था, उस समय एक मुसल्मान भटनेरका शासन करता था। वह तैमूरके अधीन था या दिल्लीके बादशाहके अधीनमें यह कुछ विदित नहीं हुआ, परन्तु यह अनुमान है कि वह तैमूरके अधीन हो, इस यवन अधीश्वरका नाम चिगातखां था। इसने जाटोंके भटनेर पर अधिकार कर लिया था"।

वैरसी सत्ताईस वर्षतक भटनेरपर राज्य करके परलोकवासी हुए। उनके पुत्र भीरो भटनेरके अधीश्वर हुए। भीरोके शासन समयमें चिगातखाँके उत्तराधिकारीने दिल्लीके यवनसम्राट्की सहायता लेकर बराबर दो बार भटनेरपर आक्रमण किया, और दोनों बार वह भाग गया; वरसाके वंशधरोंने उसका यथेष्ट हानि की, परन्तु तीसरी बार प्रबलपराक्रमके साथ आक्रमण करके चिगातखांके वंशधरोंने भटनेरको घेरकर भरोको घोरविपत्तिमें डाला। भीरोने दीर्घ कालतक अपनी रक्षा करके अन्तमें जब देखा कि भोजनके अभावसे सना सहित प्राण त्यागनेकी पूर्ण सम्भवना है तब उसने संधिकी सूचना देनेवाली सफेद पताका किलेपर लगा दी, और अपने किलेकी रक्षाके लिये आक्रमणकारियोंके पास संधिका प्रस्ताव भेजा। आक्रमणकारियों-ने कहला भेजा कि यदि आप मुसलमानधर्मको अवलम्बन करें, अथवा अपनी कन्याको दिल्लीके बादशाहके करकमलमें समर्पण करें तो आपका राज्य विध्वंस नहीं किया जायगा। भीरोने इस घोर विपत्तिमें पडकर अपनी प्राणरक्षाका अन्य कोई उपाय न देखकर शीघ्र ही यवनधर्मको स्वीकार कर लिया। उसी दिनसे यवनधर्मी भट्टीजातीय भरोके वंशको भट्टीजातिसे पृथक् करनेके लिये उनका भट्टी नाम रक्खा गया है। भीरो-के पीछे और भी छः वंशधरोंने क्रमानुसार इस प्रकारसे यवन होकर भटनेरका शासन किया था। भरोसे छठे पुरुष रावदुलिच उर्फ हयातखा जिस समय भटनेरक सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय बीकानेरके अधीश्वर महाराज रायसिंहने भटनेरपर अधिकार कर लिया। भटनेर बाकानेरक आधीन हो गया। भीरोके वंशधरोंने खानगढ फतेहाबादमें जाकर निवास किया। हयात्खाँकी मृत्युके पीछे हुसेनखाँ नामक उसके पोतेने राजा सुजनसिंहके पाससे फिर भटनेरको अपने अधिकारमें कर लिया। हुसेनमुहम्मद और इमाममुहम्मदके समयतक यह देश इनके अधिकारमें था, शेषमें महाराज सूरतसिंहने बहादुरखाके शासन समयमें इस भटनेरको फिर अपने अधिकारमें कर लिया।

साथ टाड साहबके समयमें जावताखाँ इस देशका अधीश्वर था, महाराज सूरतसिंहने उनको विताडित किया, बीकानेरके इतिहासमें इसका वर्णन किया गया है। उसी जावताखांके सम्बन्धमें महात्मा टाड साहब लिख गये हैं, जावताखाँ जो इस समय रेनी नामक स्थानमें निवास करता है, इस समय केवल पचीस ग्रामोंका भोक्ता है। बीकानेरके रायसिंहने अपनी रानीके नामसे इस रेनी नगरको बसाया था। इमाममुहम्मदने इसको अपने अधिकारमें कर लिया था। जावताखांने इस समय चोरी डकैती करके तीन लाख रुपया वार्षिक संग्रह कर लिया था। इसके अत्याचार और लूटमारके भयसे समस्त दरिद्र जाट धन और प्राणके मारे सदा शंकित रहते थे, इसके

(१) कर्नल टाड साहब अपने टीकेमें लिखते हैं "संवत् १८५७-१८०१ ईसवीमें विख्यात वीर जार्ज टामसने तीन लाख रुपये पाकर कुछ दिनके लिये इस देशको भाटियोंके अधीनमें कर दिया था, परन्तु पिछले वर्षमें राठौरोंने फिर अपने अधिकारमें कर लिया"।

अधिकारी देश बृटिश राज्यकी सीमामें स्थापित थे, इसको वहां चोरी करनेका साहस न हुआ, तब उसने उत्तरांशमें चोरी करनी प्रारम्भ की। इसी कारणसे उत्तरांश जनशून्य हो गया है, एक समयमें इस देशके खेतोंमें बहुतसे पशु चरा करते थे। बीकानेरकी उत्तर सीमासे गाड नदीतकके देश अधिक उर्वर थे और इनके निकट ही जल पानेका विशेष सुभीता था, इन विस्तारित खेतोंमें बालुकामय भूधरमालाका नामतक नहीं है, इसीसे यहाँ कृषिकार्यमें विशेष सुभीता था, अनेक शताब्दी बीतनेपर कगर और हाकडा नदी सूख गई, ऐसा विदित होता है कि इसी कारणसे यह देश जनशून्य हो गया है और ऐसा भी लोग कहते हैं कि यह नदी पूर्वकालमें पश्चिमकी ओरको फूलरा होकर गई थी। उस फूलरामें नदीका चिह्न आजतक विराजमान है। फूलरा होकर वह नदी उच्च नामक स्थानमें सिन्धुनदीके साथ मिल गई थी। नेर अर्थात् मरुक्षेत्रकी बालुकामय भूधरावलासे यह नदी घाटके अधीश्वर राव हमीरके शासनसमयमें लुप्त हो गई थी, कविकी गाथामें उसकी ऐसी ही कीर्ति है। यदि कोई अंग्रेज भ्रमण करनेको इस भारतीय मरुक्षेत्रमें जाय तो वह अमरकोटके निकटवर्ती चोर नामक स्थानके अत्यन्त प्राचीन सोढा राजके वंशधरोंको देखेगा और यदि उस राजवंशके कवि जीवि रहे तो उस कविके मुखसे इस स्मरणीय इतिहासके अनेक विवरण उक्त घटना सन् तारीखके हिसावसे सरलतासे जाने जा सकेंगे, कि इस देशका उक्त प्राकृतिक और राजनैतिक परिवर्तन किस प्रकारसे हुआ था। अत्यन्त प्राचीन कालके प्रधान २ नगरोंका मूल चिह्न आज भी इस देशकी बालुकाके गर्भमें विराजमान है। उन सब चिह्नोंसे सरलतासे उक्त प्रवाद प्रमाणित होता है। और उस नगरमें भटनेरकी पश्चिमी सीमामें स्थित पूर्वोक्त रंगमहल इत्यादि जो भूगर्भमें स्थित कक्षादि आजतक श्रेष्ठ अवस्थामें थे जो सब ऐतिहासिक घटनासे पूर्ण थे वह भी सरलतासे जाने जा सकते हैं, भटनेरके साढे बारह कोश दीक्षण सीमान्तवर्ती दंदूसर नामक स्थानके एक अत्यन्त वृद्ध निवासीने हमारे प्रश्नके उत्तरमें उक्त देशकी प्राचीन अवस्थाके सम्बन्धमें कहा है, कि जब पँवारवंशके महाराज इस समस्त देशको शासन करते थे तब सिकन्दररूमीने आकर उनपर आक्रमण कर इस देशको विध्वंस कर दिया था।

कर्नल टाड साहब लिख गये हैं, कि "हमारे राज्यकी पश्चिम सीमाके अन्तमें हांसी हिसारसे उसने इस देशमें गमन किया था। उपरोक्त सम्बन्धके प्रवाद वाक्य कहांतक सत्य हैं उनकी परीक्षा की जा सकती है। प्राचीन प्रमारजातिके महलोंके ध्वंसावशेषका अनुमान हो सकता है परन्तु और भी पश्चिम प्रान्तके मरुक्षेत्रके सम्बन्धमें भी इस प्रकारके प्रवाद प्रचलित हैं, इस प्रकारके टूटेफूटे महल अबतक विराजमान हैं। प्रवाद मुखसे प्राचीन राजधानीका नामतक सुना जाता है, परन्तु उसका कोई चिह्न इस समय दृष्टिगोचर नहीं हुआ। उक्त देशमें बडी सरलतासे जाया जा सकता है, मार्गमें जाते हुए कोई कष्ट नहीं होता। यह भ्रमण करनेवालोंके लिये अवश्य ही प्रीतिकारक है। इस स्थानमें जानेसे राजपूतानेके उत्तर मरुक्षेत्रके अनेक प्राचीन तत्त्व बडी सरलतासे ज्ञात हो सकते हैं। और वहांके अनेक प्रकारके प्रवाद तथा भिन्न२जातिके अनेक विधिके सामाजिक आचार व्यवहार खोज करनेवालोंके लिये विशेष लाभकारी हैं।

यद्यपि इस देशमें उद्भिज्ज और पशु अत्यन्त अल्प हैं, परन्तु यहांका कृषिकार्य बडी सरलतासे होता है, और गंगाजीके किनारके देशोंकी अपेक्षा यह देश उद्भिद है, तथा प्राणियोंकी श्रेणियां भिन्नतासे देखी जाती हैं, कहा गया है कि अफरीकाके विश्वविदित मरुभूमिके साथ यहांके प्राकृतिक दृश्य और स्वभाव जाति द्रव्योंके अनेक अंशोंकी तुलना यहांसे हो सकती है । भट्टि, खोसा, राजड, सराई, मांगालिया, सोढा और अनेक जातिकी श्रेणियां खोज करनेवालोंके लिये उपयुक्त हैं। जीवतत्त्वज्ञाता मनुष्य यहांके मनुष्य समाजके आचार व्यवहार और प्रयोजनीय विवरणको संग्रह करनेके पीछे ग्राम्यपशुसे तत्त्वानुसन्धान कर सकते हैं । यहां बनैले गधे और प्रत्येक श्रेणीके हरिण आदि पशु हैं,यहांकी भैंसें साधारण तृणका आहार करके डेढ महानतक जल नहीं पीतीं। यहां लवणहृद है और अनेक श्रेणियांके धान्य उत्पन्न होते हैं,यहांके मनुष्य विलासी नहीं हैं और उनमें सभ्यताके अनेक चिह्न पाये जाते हैं । यहांके वर्तमान निवासी वृक्षोंकी शाखाओंसे कुटी बनाते हैं । कुटीका नाम झोपडा है । कुटीको भीतरसे मिट्टीसे लीपते हैं । यह कुटी अफरीका निवासियोंकी कुटीकी अपेक्षा श्रेष्ठ हैं "।

साधु टाड साहबने इस देशके प्राचीन नगरकी निम्नलिखित सूची प्रकाशित की है;-

"आभोर, बंजारे,बञ्जारेका नगर रंगमहल,सोदल वा मृगतगढ,माचोतल, रायतीबंग,कालीबंग, कल्यानसर,फूलरा,मरोट,तलवारा, गिलवारा,बुन्नी,मानिकखर,सूरसागर, भामेली, कोरीवाला, कालधरानी, फूलरा और मरोटनदेश आजतक प्रसिद्ध हैं; पहिले अत्यन्त प्राचान और पवांरवांशियोंके आद शासनके समयमें इसकी गणना नाकोटी मारुकामें हुई थी।जैनियाक प्राचीन शलाका मुख अक्षरोंसे अंकित ताम्रफलक यहां बहुत मिलते हैं. मरुक्षेत्रके दुर्लभा नामक स्थानमें हमने इस प्रकारका एक ताबेका अनुशासन पत्र पाया था । नौ शताब्दीके बीत जानेपर वह देश विध्वंस हो गया है । फूलरादेशमें लाखाफूलानी निवास करते थे; मरुक्षेत्रके इतिहासमें पाठकगणोंके सम्मुख उनका नाम भली भांतिसे विदित है । लाखाफूलानी अनहलवाराके सिद्धराय और धाराके उदयादित्य एक समयके हैं " ।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने भटनेरके जिस इतिहासका वर्णन किया है, हमने ऊपर उसका वर्णन किया । भटनेरके देशका सीमा यद्यपि बडी नहीं है, परन्तु इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि यह एक अत्यन्त प्राचीन राज्य है । टाड महोदयने सभी प्राचीन नगरोंकी तालिकाको प्रकाश किया है, समयके प्रभावसे इस समय वह सब लुप्त हो गया है; स्थान २ पर टूटे फूटे जो चिह्न विराजमान हैं, टाड साहबके उपदेशके मतसे खोज करनेवाले यदि उन सब विध्वंसहुओंकी परीक्षा करनेमें अग्रसर होंगे तो अनेक प्राचीन तत्त्व प्रकाश हो सकते है । मरुक्षेत्रमें राठौरोंकी शासन शक्तिका विस्तार होनेक बहुत शताब्दीके पहिले प्रमरवंशीय राजा इस देशमें प्रबल प्रतापके साथ राज्य करते थे, और उनके बाहुबलने एक समय समस्त भारतवर्षको

कम्पायमान कर दिया था । मेसोडोनियाके भुवन विदित बीर अलिकजंडरने इस देशके अधीश्वरके साथ बाहुबलकी परीक्षा की थी, आज भी उसी प्रकार जनरव सुनाई देता है, तब सरलतासे स्वीकार किया जा सकता है, कि, इस देशके अधीश्वर सामान्य बलशाली नहीं थे। कर्नल टाड साहबने इस बातको स्वीकार नहीं किया कि आलिकजंडर इन देशोंमें समरके लिये आये थे, परन्तु हम कह सकते हैं कि जब सहस्रों लोगोंमें यह बात प्रचलित है कि "सिकन्दररूमीने रंगमहल इत्यादिको विध्वंस किया है, तब उस प्रवादमें कैसे अविश्वास कर सकते हैं ?

अलिकजंडरने भारतजयके अभिप्रायसे बीरसाजसे आकर जो वीरता दिखाई थी, उसका विस्तार इतिहासकी भिन्न पुस्तकमें पाया जाता है । उसने जो रंगमहल विध्वंस किये यह किसी इतिहासमें प्रकाशित नहीं किया, इसीसे कर्नल टाड साहबने इसके सम्बन्धमें सन्देह प्रकाश किया है; परन्तु हमें विश्वास है कि अलिकजंडर भारतविजयके लिये जिस मरुक्षेत्रमें आया था, उनमेंसे प्रधान २ समरके अतिरिक्त अन्याय युद्धोंका विवरण इतिहासवेत्ताने वर्णन नहीं किया । वे कट्रियाके जिस ग्रीक-वंशियोंने रंगमहलपर आक्रमण किया था, उसका भी कोई प्रमाण किसी इतिहासमें नहीं पाया जाता । इस अवस्थामें हम किस प्रकार अनुमानके द्वारा सिद्धान्त करसकते हैं कि अलिकजंडरने रंगमहलपर आक्रमण नहीं किया जब कि सैकडों वर्षसे यह बात प्रचलित है कि सिकन्दर रूमीने इस देशको जीतकर स्वयं अपने बाहुबलसे इस दृष्टान्तकी रक्षा की थी, तब अन्य प्रमाणोंके अभावमें वह प्रवाद ही ग्रहण करनेके योग्य है ।

भटनेर इस समय बीकानेरके अधिकारमें है। यद्यपि इस देशकी अवस्था इस समय अधिकतासे बदल गई है, परन्तु ऐसी कोई विशेष राजनैतिक घटना नहीं हुई कि जिसके विस्तार सहित उल्लेख करनेका प्रयोजन हो; इस कारण हमने इस स्थानपर बीकानेर राज्यके इतिहासका उपसंहार किया ।

बीकानेरका इतिहास समाप्त ।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस—बम्बई.

बीकानेरके राज्यवंशका कुरसीनामा.

* पहला संवत् राज्याभिषेकका और दूसरा मृत्युका है. × यहांसे सन् ईसवी आरंभ होता है।

जैमलमेर।

(१) भीमसिंह. सन नहीं मालुम,
(२) साबलसिंह,–,,–
(३) अमरसिंह,–,,–
(४) जसवंतसिंह, १७०२
(५) बुढासिंह, (कुछहीं रोज राज किया)
(६) तेजसिंह, (यूरूपर) वो शक्स कि जो विना अधिकार किसीका राज पाट छीन ले–
(७) अखैसिंह, १७२२
(८) मूलराज, १७६२
(९) गजसिंह, १८२०
(१०) रणजीतसिंह, १८४६
(११) बरीमाल, १८५४
(१२) महारावलशालिवाहन १८९१

राजस्थान.

दूसराभाग.

जयसलमेरका इतिहास.

श्रीः ।

राजस्थानका इतिहास ।

दूसरा भाग २.

जयसलमेरका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

सूचना-जयसलमेर राज्यके प्राचीन नाम-जयसलमेरके भाटी राजपूतोंका यदुवंश सम्भूत प्रमाण-भारतवर्षके अधीश्वर भरतसे इस वंशकी उत्पत्ति-प्राचीन भारती गणोंकी समुद्र यात्रा-यदुवंशका आदि नगर प्रयाग, मथुरा और द्वारका, उनका अन्तर्जातिक समर-यदुवंशके नेता मथुरा द्वारकापति श्रीकृष्णवंशका विस्तार-उनके प्रपौत्र नाभ और खीरका द्वारकासे निकाले जाकर, नाभ द्वारा मरुस्थलमें राज्य स्थापन करना-जाडेचा और यदुभान-नाभके परलोक जानेपर मरुक्षेत्रमें प्रतिबाहुका अभिषेक-उनके पुत्र-सुबाहु राजा गज-उनके द्वारा गजनी स्थापन-सीरिया और खुरासानके दोनों अधीश्वरोंद्वारा राजा गजका आक्रान्त होना-दोनों अधीश्वरोंकी पराजय-राजा गजका कश्मीरपर आक्रमण-उनका विवाह-खुरासानके पतिका दूसरी बार आक्रमण-गजकी मृत्यु-गजनीका अधिकार-कुमार शालिबाहनका पंजाबमें आगमन, संवत् ७२ में उनके द्वारा शालिबाहन नगरका स्थापन-पंजाब विजय-दिल्लीके तूंबरवंशीय जयपालकी कन्याका पाणिग्रहण, फिर गजनीपर अधिकार-बालन्दका अभिषेक-उनके बहुत वंशधर-उनकी देशविजय-बालन्दका शालिवाहन नगरमें निवास-उनके पुत्र चाकितोंको गजनी दना-चाकितोंका मुसल्मान धम अवलम्बन-खुरासानके हासनपर अभिषेक-चाकितोंसे एक सम्प्रदाय मुगलकी उत्पत्ति-बालन्दकी मृत्यु-उनके पुत्र भट्टीका राज्याभिषेक-यदुवंशके परिवर्तित भाटीवंशका नामकरण-मंगलरावको राज्यप्राप्ति-उनके भ्राता मनसूर राव और पुत्रोंका गारानदीके पार होना और लक्खी जंगलपर अधिकार-मंगलरावके पुत्रोंकी जातिका नाश-उनके राजपूतनामका लोप-उनके वंशधरोंको आभोरिया और जाटकी उपाधि प्राप्ति-तक्षशीलकी राजधानीका आविष्कार-मंगलरावका मरुक्षेत्रमें आगमन-मरुक्षेत्रमें तत्कालीन जातिसमूह-मंगलरावके पुत्र मंडमरावके साथ अमरकोटके महाराजकी कन्याका विवाह-उनके पुत्र केहर-जालौरके देवरागणोंके साथ मित्रता-तणोटकी प्रतिष्ठा केहरका अभिषेक-वाराह जातिका तणोटपर अधिकार-संवत् ७८७ में तणोट निर्माण समाप्ति-वाराह जातिके साथ संधिबंधन-समालोचना ।

उद्दीप्त दिनमणिकी तीक्ष्ण किरण, शरदऋतुके चन्द्रमाकी स्निग्ध चन्द्रिका, सुख-शांति, धनधान्यसे भरे भूलोकमें जिस प्रकार परिपूर्ण देह होकर महादेवकी अशेष महिमाकी घोषणा कर रही है एक समय इसी स्वर्णभूमि भारतवर्षमें उसी प्रकारसे उन चन्द्र सूर्यके वीरव्रतावलम्बी वंशधर क्षत्रिय नरपतियोंकी वीरता, उद्दीपना, साहस, शूरता और उन्नति ऊंचे शिखरपर पहुँच गई थी, परन्तु हाय! वह क्षत्रिय कुलका भारत, वह अर्जुन, कर्ण, दुर्योधनवाला भारत, वह दिलीप, अज, राम, लक्ष्मणका भारत आज अवनतिके नीचे पडाहुआ है। जो चन्द्रमा और सूर्य आकाशरूपी विमानमें बैठ हुए एक समय आनंदित नेत्रोंसे भारतक्षेत्रमें अपने २ वंशधरोंकी वीरलीलाको देखकर भीतर ही भीतर संतोष पाते थे, हाय! इस अनन्त शून्यमें वह चन्द्रमा सूर्य विराजमान हैं, इस भारतमें उनके वंशधर आज भी राजदंडको धारण कर रहे हैं, परन्तु हाय! कैसा हृदयभेदी विचित्र दृश्य है! जो सूर्य और चन्द्रवंशीय क्षत्रिय सैकडों वर्ष पहिले मध्याह्न सूर्यके समान जगत्में विराजमान रहते थे, वही वीरवंशधर आज अस्त हुए दीपकके समान पडे हैं। वाल्मीकि, वेदव्यासजी मधुर शब्दकारिणी वीणासे जिस चन्द्र सूर्य्यवंशकी कीर्तिगाथाको कीर्तन कर गये हैं, जो गाथा आज भी इस अनन्त श्मशानमें परिणत हुए भारतमें पूर्व स्मृतिको जागरित करके मृतसंजीवन मंत्रके प्रचार करनेमें समर्थ है। हाय! उन्ही दो वीरवंशोंके गौरवकी गरिमा आज प्रवाद वाक्यसे परिणत है! जिस गौरव गरिमाका सोता उत्ताल तरंग मालाके समान समस्त जगत्में व्याप्त हो रहा था; हाय! उसी विशाल गौरवगरिमाका सूर्य आज सूखा हुआ पडा है! अनन्त श्मशानमें वह वीर जाति मानो आज अनन्त निद्रामें सोरही है। केवल मनोहारिणी आशा मानो क्षीण स्वरूपसे कह रही है प्रतीक्षा और क्रिया–ईर्साको धारण करो।

विश्वविदित अत्यन्त प्राचीन दो वीर क्षत्रियवंशोंके इतिहासका वर्णन करनके पहिले हम इस समय और भी एक प्राचीन पवित्र वीरवंशके भूपाल कुलका इतिहास वर्णन करनेमें प्रवृत्त हुए हैं। जिस पवित्र देववंशने एक समय समस्त भारतमें अपनी शासनशक्तिका विस्तार कर असीम गौरव उपार्जन किया था। जिस वंशके राजा इतिहासकी गोदीमें अपने २ अकथनीय बल विक्रम और नीतिज्ञता देकर धर्ममूलक अगणित कार्य कलापके विवरणको हीरेके अक्षरोंमें गूँथ गये हैं वही चंद्रवंश इस समय हमारा अवलम्बन है। जिस पवित्र चंद्रवंशमें श्रीकृष्ण भगवानने जन्म लेकर भारतमें अनन्त लीला की थी; जिन हरिका नाम लेकर आज भक्तवृन्द मतवाले हो रहे हैं, उन्हीं हरिका वंश वर्णन करनेके लिये हम आगे बढे हैं नादियाकी निमाई स्नीने जिन हरिके नामसे एक समय केवल बंगविहार उडीसा ही नहीं वरन् समस्त भारतवर्षमें प्रेमभक्तिका अनन्त सोता वहा दिया था; विश्वजननीका भ्रातृभाव विस्तार करके पापी, तापी, साधु भक्तको एक प्रेमकी जंजीरमें बाँधकर भक्तिमंदार प्रफुल्लित किया था, शाक्त, शैव, म्लेच्छ और मुसलमानोंको भी जिस मधुर हरिनामके गुणने एक जातिमें परिणत किया था, आज उन्नीसवीं शताब्दीका निराकार उपासक दल, "जलमें हरि, स्थलमें हरि, अनन्त आकाशमें हरि" मानकर जिस विश्वजयी

हरि नामके महात्म्य कीर्तनमें मग्न हैं, विधर्मी देशीय ईसाई परिणामके एकमात्र सार धन हरि नामका उच्चारण करनेके लिये ईश शब्दके साथ जिस हरि नामको मिलाकर "ईश हरि" कहकर खडताल बजाकर कीर्तन करते हैं, उन्हीं हरिके वंशावतंस राजकुलकी कथा इस समय हम वर्णन करते हैं। अंग्रेजी शिक्षक युवक पाठक! तुम्हीं कहो-"कि ब्राह्म, ईसाई, दयानन्दी उन मोरमुकुटधारी वंशीधरका नाम दूसरी प्रकारसे लेते हैं वा नहीं? हम इस बातको मस्तक झुकाकर स्वीकार करते हैं। वाल्मीकिने जिस भाँति नारदजीसे उपदेश ले अपनी मुक्तिका द्वार खोलनेके लिये "मरा मरा" शब्द उच्चारण करके गुप्तभावसे जंगलमें राम नाम कीर्तन किया था; हम इस बातको कहते हैं कि ब्राह्म, ईसाई इसी प्रकार उस भावसे क्या हरि नाम कीर्तन नहीं करते हैं? उस नामके गुणसे उनके परिणामका मार्ग स्वच्छ होता है। हरि स्वयं कह गये हैं कि "मुझे जो जिस भावसे पुकारता है मैं उसको उसी भावसे दर्शन देता हूं; उसी भावसे उसकी कामना पूर्ण करता हूं।" इसीसे कहता हूं कि सिक्ख, ईसाई मुसल्मानतक दयालु हरिके नामको जिस भावसे उच्चारण करते हैं हरि उसी भावसे उनकी कामनाको पूर्ण करते हैं।

विजातीय भाषाके शिक्षित उन्नीसवीं बीसवीं शताब्दीके दुहाई दाता अभक्त हिंदू, मुसलमान, ईसाई, ब्राह्म, नास्तिक तथा अद्भुतजीव! उन्हीं हरिका नाम लेकर शरीरको कंपित कर अवज्ञाके स्वरसे कहते हैं कि "श्रीकृष्ण लम्पट थे, यह कभी ईश्वरका अवतार नहीं हो सकते"। हम कहते हैं कि यह तुम्हारी विजातीयताकी भ्रान्ति है। ज्ञान कहता है कि इस संसारके प्रत्येक स्त्री पुरुष प्रकृतिके प्रतिकृतिस्वरूप हैं। पुरुष प्रकृति सर्वमय है। स्त्री पुरुषोंके देहमें आत्मा पुरुष प्रकृतिका मंगलमय है--शांतिमय, पवित्रमय छायामें पडा है। स्त्री पुरुषोंकी छोटी शक्ति उस अनन्त शक्तिके साथ जडित है। जो स्त्री पुरुष उस अनन्त शक्तिके साथ अपनी उस अत्यन्त छोटी "अस्तित्व" शक्तिको मिलाकर पृथ्वीमण्डलपर विराजमान करते हैं, वही स्त्री पुरुष देवता और देवी हैं; और जो मानव मानवी अपने शरीरमें आत्माकी उस महान् शक्तिके अस्तित्वको अनुभव करनेमें समर्थ न होकर अपनी छोटी "अस्तित्व" शक्तिको एक बार प्रबल कर कुमार्गमें चलते हैं, उसी महाशक्तिको लेकर वे मानव मानवी इस संसारमें दानव दानवी हैं। तुम यदि अपनी देहमें आत्मामें ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार करते हो तब तुम किस प्रकारसे कह सकते हो कि ईश्वर सर्वव्यापी है? ईश्वरकी व्यापकता क्या इससे सीमाबद्ध नहीं हो सकती, तुम अवतारवादको स्वीकार नहीं करते हो, इसमें कुछ हानि नहीं है। परन्तु ज्ञान इस बातको कहता है, कि अनन्त शक्तिके साथ मनुष्यकी छोटी शक्ति पवित्रताके बलसे मिलकर मनुष्यको देवता कर देती है; इस लिये तुमको स्वीकार करना होगा कि महान् शक्तिके साथ श्रीकृष्णकी शक्तिने जटित होकर उनको देवतारूपसे संसारमें पूजित कर दिया है। पर यह बात कुतार्किकोंके निमित्त है। हमारे सिद्धान्त और वैदिक मर्मसे श्रीकृष्ण साक्षात् ईश्वर हैं, और प्रेमिक भक्त साधु ज्ञानके नेत्रोंसे देखते हैं कि, हरि सब जीवोंके आश्रय हैं, हरिका नाम संसारमें सार धन है, हरि स्वयं ईश्वरके अवतार हैं।

ईश्वरको न माननेवाले नास्तिक ईश्वरके आस्तित्वको सम्पूर्णरूपसे स्वीकार नहीं करते। जो कहते हैं कि सृष्टिसे यहां तक जिसको ईश्वर कहते हैं वह अज्ञात और अज्ञेय है। उनके गुरुदेवने बहुत (५) हजार वर्ष पहिले भारतमें यह बात कही थी; फिर उसका खण्डन भी नहीं हो गया है, भक्तको हरि कह गये हैं–"मैं दुर्ज्ञेय हूं प्रेम भक्ति-योग और पवित्रताके बिना कोई मुझे नहीं पासकेगा"। जब ऐसा है तब केवल युक्तिके प्रकाशसे उस दुर्ज्ञेय पदार्थको कौन जान सकैगा। प्रेम भक्ति योग साधना और पवित्रताके अतिरिक्त उस दुर्ज्ञेय हरिका दर्शन प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है; नई सभ्यता-वालो! तुम्हारा गुरुदल उस प्रेम भक्ति योग साधन भजन, पूजनसे रहित है, इसी लिये तुम्हारे शिक्षक गण केवल आधे मार्गमें जाकर अन्धकारमें घूमते २ फिर अपने स्थान-को लौट आते हैं। तुम भी उनका अनुकरण करते हो। तुम अहंकारसे गर्जन करके कहोगे "कि क्या मिल, कामैल, कार्लाइल, स्पेन्स इत्यादि विश्वविदित गाढ पण्डित विख्यात वैज्ञानिक प्रशंसनीय नैयायिकोंको भी भ्रांति हो सकती थी?" तो भक्त भी कहते हैं कि यदि पण्डित होकर अभ्रान्तता स्वीकार करैं तो पूर्वतन ऋषि मुनि जो एक २ गाढ पण्डित थे उनका मत अभ्रान्त क्यों नहीं मानते, उन्हींके मतके अनुसार ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार नहीं करते? तुम कहोगे कि "मुनि ऋषि असभ्य वनवासी और वर्वर थे, उस समयका मत इस समय नहीं चल सकता"। अच्छा तब तुम कार्लाइल स्पेन्सरके समान विलायतकी ईसाई समाजमें जो गाढ पण्डित डिनविशप, आर्टविशप, कार्डिनल इत्यादि विराजमान हैं; पश्चिमी विलायतवाले जिनको महान् विद्वान् मानते हैं, फिर वह क्यों शिक्षित होकर भी ईसाइयोंको उनके मतसे सूत्रधार पुत्र ईसूको ईश्वरका पुत्र और उसके भजनके अतिरिक्त निस्तारका उपाय न बताकर उसकी आराधनामें प्रवृत्त होते हैं? भक्त कहते हैं कि केवल पंडित होनेसे ही भक्त प्रेमिक और योगी नहीं हो जा सकता, और भक्त प्रेमिक योगी बिना हुए उन महा योगेश्वर हरिको कोई नहीं पा सकता।

हमने विजित देशकी जातिमें जन्म लिया है। जातीय धर्म, जातीय आचार व्यवहार, जातीय व्यवस्था विधान सभी मृतभावसे पडे हुए हैं। एकमात्र धनकी लालसासे उदरान्नके लिये इस समय मनुष्य इधर उधर भ्रम रहे हैं, बहुत थोडे मनुष्य शिक्षित हैं ज्ञानकी खोजमें लग रहे हैं। हमारे जातीय धर्मकी शिक्षा तुलसीकृतरामायण और महाभारतमें भी बहुत मिल सकती है! पर विद्यालयमें शिक्षकके निकट गुरुजनोंके निकट धर्मकी शिक्षा और नीतिकी शिक्षा हमको नहीं मिली। विजातीय भाषा शिक्षाके गुणसे विजातीय धर्मका मर्म हमैं जहाँतक ज्ञात है उसके अनुसार हमको जातीय धर्ममें उसके शतांशका एक अंश भी विदित नहीं है। हम यह भी नहीं बता सकते कि दशरथजीके कितनी रानी और उनके पुत्रोंका क्या नाम था। एकजातिके पतनसे जो हृदयभेदी दृश्य उपस्थित हुआ है, वही दृश्य हमारे नेत्रोंके सम्मुख पडा है। तुम मिलकामेतके शिष्य युवक हो। प्रश्न करनेपर तुम उसी मुहूर्तमें विजातीय ईसूके अमूल्य जन्मको वर्णन कर सकते हो, लूथरकी धर्म संस्कार

व्याख्या कर सकोगे, मिलकोमेतके मतकी व्याख्या करोगे, परन्तु यदि तुमसे श्रीकृष्णके जन्मका प्रश्न किया जाय तो तुम्हारी अन्तरात्मा सूख जायगी ? श्रीकृष्णने भगवद्गीतामें क्या कहा है, उसका यदि प्रश्न किया जाय तो तुम चारों ओर अन्धकार देखोगे ? और ईसाने पहाडपर बैठकर किस प्रकारकी उपासना की थी, उसको पूँछा जाय तो झट कह डालोगे ? तुम्हारी जन्मभूमिमें स्वजातिमें वेद, पुराण, उपपुराण, न्याय, स्मृति, दर्शन, विज्ञान इत्यादि सब कुछ हैं यह तुमने सुना है, पर उनको तुम भ्रमसे भी जाननेकी इच्छा नहीं करते कि वह सब क्या पदार्थ हैं? उनके बीचमें क्या अनन्त महामूल्य रत्न विद्यमान हैं ? उन रत्नोंके लेनेकी तुम चेष्टा नहीं करते, उनके लेनेकी न तुम्हारी इच्छा है, न यत्न है । तुम्हारी जननी जन्मभूमि इस दुष्प्राप्य अनन्त धनसे धनवती है, और तुम इस विजातीय भाषाकी शिक्षित सन्तान हो, इस भ्रमके धनके लिये सात समुद्र पार भिन्न जातिके द्वार पर स्थित होते हो ! तुम्हारे घरमें धन है या नहीं है एक बार भूलकर भी इसका अनुसन्धान नहीं करते, और मार्गके भिखारी बनकर नवीन धनसे,अत्यन्त अल्प धनसे धनी हुई भिन्न जातिके समीप तुम प्रार्थना करते हो ? धर्मसम्बन्धके प्रबन्ध लिखनेके समय तुम्हारे पूर्वगुरु मिलकोमेत इत्यादिने अगणित मत उस प्रबन्धमें उद्धृत किये हैं, परन्तु तुम्हारे पितृ पुरुष जिस धर्मके आश्रयसे जीवन व्यतीत कर गये हैं, उसी धर्मके उस सनातन हिन्दूधर्मके शास्त्रोंसे दो श्लोक उद्धृत कहते हुए चारों ओर अन्धकार दिखाई देता है ? वेदसे दो बात लिखते हुए अध्यापक मोक्षमूलरके ऋग्वेदसंहिताके अंग्रेजी अनुवादके भिन्न तुम्हारी कार्यसिद्धिका अन्य उपाय नहीं है ? श्रीमद्भागवतके दो श्लोक उद्धृत करनेके समयमें भट्टाचार्यका आश्रय लेना पडता है ? तुम्हारा शास्त्र ज्ञान ही एकमात्र इसकी सीमा है; और तुम अंग्रेजी शिक्षक युवक हो ! तुमसे यदि प्रश्न कियाजाय कि ४४९ ईसवीसे भारतेश्वरी महारानीके समय तक इंग्लेण्डके प्रधान२ विवरणोंका वर्णन करो तो तुम शीघ्रतासे महीना सन् तारीखके साथ तुरन्त कह दोगे।यदि कहा जाय कि चन्द्रवंशकी प्रधान २ घटनाओंको लिखो तो तुम्हारी लेखनी एकबार ही निश्चल हो जायगी ? तुमसे यदि प्रश्न किया जाय कि भारतेश्वरी विक्टोरियाके प्रपितामहका नाम क्या था तो तुम एक मिनटमें ही बता सकोगे, यदि तुमसे पूछा जाय कि जहांगीरके वृद्धपितामहका नाम क्या था तब उसे भी तुम उसी समय बतादोगे, और यदि तुमसे श्रीकृष्णके वृद्धप्रपितामहका नाम क्या था ? यह प्रश्न किया जाय तो नासिकाको सकोड लेते हो ? हे शिक्षित शर्मन् महोदय ! यदि तुमसे पूछा जाय कि तुम्हारे वृद्धपितामहका नाम क्या है तो तुम्हारा मुखचन्द्र मलीन क्यों हो जाता है?जब तुम्हारा जातीय धर्मज्ञान शास्त्रज्ञान कुछ भी न रहा तब श्रीकृष्णके नामसे तुम्हारे हृदयमें विजातीय घृणाका जो संचार हो तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? और सत्य भी है भक्ष्याभक्ष्य मांस मद्यके निरन्तर सेवन तथा मुर्गवंशध्वंस करनेमें जिनकी जिह्वा सदा लपलपाती है उनमें धर्मभाव कहां ठहर सकता है ।

हम आज देशवासी शिक्षित मनुष्योंको स्मरण कराते हैं;-कि इस तत्त्वके जाननके लिये श्रीमद्भागवत देखो वहां क्या लिखा है ।

" निगमकल्पतरोर्गलितं फलं शुकमुखादमृतद्रवसंयुतम् ।
पिबत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः ॥"

हम हृदयसे प्रत्येक स्वजातीय भ्राताको अनुरोध करते हैं कि वह एक बार श्रीमद्भागवत और भगवद्गीताका अध्ययन करें। जो लोग संस्कृत भाषाको नहीं जानते हैं तो वह उनके अनुवादको पढैं तब वह अवश्य जान जायँगे कि श्रीकृष्ण कौन थे ? तभी श्रीकृष्णके सम्बन्धमें जो भ्रान्ति और अविश्वास है वह छिन्न भिन्न हो जायगा, तब तुम लोग यह भली भांतिसे जान जाओगे, कि समस्त विलायतमें धर्मपुस्तक एवं मिलकोमित स्पेन्सर इत्यादिके धर्मकी व्याख्याको एकत्र करनेपर श्रीमद्भागवत और भगवद्गीताके शतांशका एक अंश भी उपदेशका देनेवाला न होगा, जिन्होंने धर्म जगत्में दृष्टिकी रक्षा की है वह मुक्तकण्ठसे इस बातको स्वीकार करैंगे कि प्रत्येक धर्म ही कालक्रमसे अज्ञानी, अनभिज्ञ और मूर्खोंके दोषसे विकृतभाव युक्त हो जाता है. और धर्मनेताओंके चरित्र कालक्रमसे उपासकोंकी रुचिके अनुसार भिन्न आकृति हो जाते हैं, पर तत्त्व निकालनेवाले उसका तत्त्व जानते रहते है तो क्या हमारे शिक्षित युवक चिरकालतक हरिके प्रति कुसंस्कारापन्नभावसे ही रहैंगे ? इस स्थानपर उन दयामय हरिके चरित्रोंका आख्यान और हरि नामके माहात्म्यका प्रचार तथा श्रीमद्भागवत और गीता इत्यादि ग्रंथोंका स्थूल मर्मप्रकाश करना प्रसंगके विरुद्ध जानकर हम अपनी इच्छासे अत्यन्त दुःखके साथ विराम करते हैं ; परन्तु हम देशके आशा भरोसा स्वरूप पुरुषोंसे कहते हैं, कि इस अनन्त श्मशानके समान भारतवर्षमें जिस प्रकारकी महा शक्तिकी साधनाका प्रयोजन है, मृतसंजीवनमन्त्रके प्रचार की शीघ्र ही आवश्यकता है, इसी प्रकारसे इस मरुक्षेत्रमें हरिनामरूपी अमृतसे सींचकर प्रेमभक्तिकी लहरका प्रबल आन्दोलन करना उचित है। इस अनैक्यसमुद्रमें मग्नहुए देशमें अब हम शाक्त और वैष्णवोंमें विवाद नहीं चाहते, हम केवल योग ही चाहते हैं। उन सर्वेश्वर हरि और योगमायाकी शक्तिको एकत्र मिलाना चाहते हैं, पुरुष और प्रकृतिका परिणय चाहते हैं । केवल विजातीय शिक्षाके बलसे जातीय उन्नति कभी नहीं हो सकैगी । जातीय शास्त्रकी आलोचना, जातीय धर्मकी श्रेष्ठता साधनके सिवाय उन्नतिका और उपाय नहीं है, एकता साधन ही उन्नतिका मुख्य उपाय है। हे भारतवासी ! इसीसे कहते हैं कि तुम अपने मिलकोमित स्पेन्सरको इस समय दूर रख दो, तुम्हारे घरमें जिस अमूल्य धनका अनादर हो रहा है; जिस रत्नके आश्रयसे इस भवसागरके पार सरलतासे हो सकोगे उस रत्नकी ओर आंख उठाकर देखो । भाई ! महाशक्तिकी भैरवी ध्वनिके संगमें विश्वविजयी हरि नामकी ध्वनिके संयोगका इस समय प्रयोजन है । भइया ! याद रक्खो कि अन्तमें हरिनाम ही सार पदार्थ है ।

वेदविभाजक महर्षि वेदव्यासने अपनी अमृतमयी लेखनीसे जिस पवित्र हरिवंशके वृत्तान्तको वर्णन किया है, जो, हरिवंश महाभारतके परिशिष्टमें सब प्रकारसे गिना जाता है; जो हरिवंश आर्य धर्मावलंम्बी आर्यमात्रके आदरका धन है, भारतके गौरव

स्वरूप संस्कृतभाषाके उज्ज्वल मणिस्वरूप उन्हीं हरिवंशावतंसके परवर्ती नरपति कुलके वंशका वर्णन करनेको हम प्रवृत्त हुए हैं। सर्वजीवोंके आधारस्वरूप दयामय हरिकी मानवलीला समाप्तिके पीछे वैकुंठधाममें जानेतकका वृत्तान्त कविकुलपति वेदव्यासके हरिवंशमें लिखा गया है। इस कारण उसके परवर्ती यदुवंशियोंके राजाओंके शासनका इतिहास इस समय वर्णन करना योग्य है। जिन आर्यसन्तानोंने हरिवंशके पर्वको पाठ किया है, जिन्होंने यदुवंशके विध्वंस वृत्तान्तको पढा है उनके उस यदुवंशकी शेष अवस्था क्या हुई, वह हमें आजतक विदित नहीं है। यह वक्ष्यमाण इतिहास उनके इस कौतूहलको मिटा देगा, हमारी यही आशा है। जो दयामय हरि इस भारतवर्षमें अक्षय अवर्णनीय लीला कर गये हैं उन हरिके कौनसे वंशधर इस समय भारतवर्षमें विराजमान हैं, पाठक उसको पढकर भलीभांतिसे जान जांयगे और इसमें फिर वह अत्यन्त ही आनन्दित होंगे जो हरि भारतवर्षमें प्रेमभक्तिका पूरा परिचय कर गये हैं जिन हरिने प्राणियोंकी मुक्तिका मार्ग स्वच्छ कर दिया है, जिन्होंने मित्रताका तथा राजनीतिका चूडान्त निदर्शन दिखा दिया है, जिन दयामय भगवान्‌ने भारतवर्षको पवित्र कर दिया है उन्हीं हरिके चरणकमलोंका ध्यान कर हम इस समय इतिहासका आरंभ करते हैं।

अनुवादककर्ताकृत भूमिका समाप्त।

मारवाडका जो अंश इस समय जैसलमेर नामसे विख्यात है वही[१] जयसलमेर उक्त हरिके वंशधरोंकी वर्तमान राजधानी है, जयसलमेर नाम आधुनिक है, पहिले भारतीय मरुक्षेत्रके मध्यमें यह अंश प्राचीन भूगोलके अनुसार मरुस्थल नामसे विदित था। प्राचीन जनप्रवादके मतसे इसका नाम मरु है। मरुका प्रादेशिक अर्थ भूधर है, रेतीले मरुक्षेत्रमें केवल यही देश पाषाणमय उर्वर है। यह जिस प्रकार स्वाधीन हिन्दूराजवंशकी राजधानी है, इसी प्रकार इसके प्राकृतिक दृश्य और स्वाभाविक अवस्थाएँ विशेष जानने योग्य हैं, इस देशके स्थानीय आचार, व्यवहार, कृषि, स्वभाव, वृक्ष और खेतीका विवरण वडा विचित्र और अवश्य जानने योग्य है, इस देशमें जो जाति निवास करती है उस जातिका विवरण और इतिहासकी अपेक्षा उसका तत्त्वसंधान विशेष उपयोगी और अत्यन्त प्रयोजनीय है।

भाटी यादव या जादववंशकी एक शाखा है जो कि अबसे तीन हजार वर्ष पहिले समस्त भारतवर्षके धाता विधाता थे। इस समय देशके एक कोनेमें राज्य करनेवाले (बीकानेरके) महाराज अपनेको उसी महाराज मनुकी संतान बतलाते हैं, जो किसी समय यमुनासे लेकर भूगोलकी अंतिम सीमातक शासन करते थे।

---

(१) श्रीकृष्णने जो द्वारकापुरी निर्माण की थी पहिले उसका जगत्कुण्ठ नाम हुआ, ग्रंथकारने जगत्कुण्ठका अर्थ जगत्‌की शेषसीमा लिखा है, परन्तु इसका वास्तविक अर्थ भूस्वर्ग है [अनु०] मूल पुस्तकमें worlds end है।

उन यदुवंशियोंके संबंधमें इस समय ऐसे शृंखलाबद्ध ऐतिहासिक प्रमाण पाना तो असंभव है, जिससे यह निर्णय हो जाय कि वे निःसन्देह आदिवंशसम्भूत हैं । परन्तु जिस भावसे वे वंशावलीकी रक्षा करते आये हैं उससे प्रमाणित होता है कि वे आदिवंशसम्भत हैं । यदुवंशियों (भाटियों) के इतिहासकी खोज करनेसे हमारे मनमें दो एक अनुमान उदय हुए हैं और वे अवश्य मान्य भी हो सकते हैं। पहला यह कि यदु भट्टि (भाटी) सिथियन वंशसे उत्पन्न हे । दूसरा यह कि वे आर्य हैं । यदि हम अत्यन्त प्राचीन कालके उस ऐतिहासिक समयकी ओर ध्यान देते हैं जब कि हिन्दू और सीथियन लोग एक ही थे तथा दोनोंने एक दूसरसे पृथक् होकर दो भिन्न राष्ट्र स्थापित किये तो मालूम होता है कि कास्पियन समुद्रसे लेकर गंगाके किनारे तकके भिन्न भिन्न संप्रदायोंके लोग उस एक ही सुबृहत् वंशकी संतान हैं जो किसी समय एक ही भाषा बोलते थे और एक ही धर्मके अनुयायी थे । उसी अतिप्राचीन कालमें सीथियन लोगोंके मध्य साम्राज्यके अवशिष्ट अथवा विनष्ट हो जानेपर बुधके पुत्र भारतने भारतवर्षमें अपना साम्राज्य स्थापित किया–(इसीको इन्डोसीथियन राज्य कहा है) उसी सार्वभौम राजा भारतके संतानोद्भव यदु भाटी इस समय मरुस्थलके एक संकीर्ण कोनेमें शासन करत हैं ।

भारतवर्षके प्रथम उपनिवेशके संबंधमें राजकुल (सूर्य्यवंश चंद्रवंश) को यहांका

---

(१) ग्रंथकारने टीकामे लिखा है कि प्रसिद्ध कुवेरने प्राचीनमध्य साम्राज्यके अस्तित्व सम्बन्धमें इस प्रकार सन्देह किया है : कि Ni Meise ni Homere ne nous parlit d'an grand empire dansla Haute A sie (Discours surles Rev olutiqns dela surface du globe P. 206.)

इजेकियेल कहता है कि जिसने मिसरको जीतकर बहुत कालतक वहां अधिकार किया था, वह तोगरमाहके पुत्र किसके थे, ग्रन्थकारका वह मत है कि तोगरमाहके पुत्रोंने उक्त मध्य साम्राज्यसे जाकर मिसरपर अधिकार किया था ।

(२) इसपर ग्रन्थकारका टिप्पण है कि निम्नलिखित क्षत्रिय जाति पवित्र विधिका पालन न करनेसे तथा ब्राह्मणोंकी सेवा न करनेसे क्रमशःनीच वर्ण अर्थात् शूद्रत्वको प्राप्तहुई,वह पौंड्रक उड्र द्रविड कम्बोज यवन पारद पह्लव चीन किरात और शक कहलाई । देखो मनु अध्या० १० श्लोक ४३ । ४४. बक्तियनके ग्रीकलोगोंका इस यवन मतका मानना भ्रांतिमात्र है कारण कि नहुषके तीसरे पुत्र ययातिके पंचम पुत्र यवनसे उत्पन्न थे आइयोनिया इस जातिके हो सकते हैं,शक एशियाकी शकजाति है पह्लवगण प्राचीन पारसिक वाग्रबेजाति हैं । चीनी (चायना) चीन निवासी हैं, और शकगण प्रबल हिमानीमंडित भूधरके निवासी हैं खो अर्थात् भूधर शब्दके साथ शक शब्दके मिलनेसे खोशाका शब्दकी उत्पत्ति है पोटेलमिन इसको कासिमामाण्टेस कहा है खोशाका शब्दका अपभ्रंश काकेशश है ।

---

(१) ययाति नहुषके तीसरे पुत्र नहीं वरन् दूसरे भाग० स्क० ९ अध्याय १८. अनुवादक ।

(२) ययातिके पांचवें पुत्रका नाम यवन नहीं था किन्तु यदु, तुर्वसु, द्रुह्यु, अनु और पुरु यह पांच पुत्र थे । भाग० स्कं० ९ अ० १८. (अनुवादक)

आदि भूमियां अनुमान करना वृथा है। यह स्वयं सिद्ध है कि यहाँके आदि भूमियां गोंड, भील, मीना आदि लोग हैं। वास्तवमें एक ही पूर्वपुरुषकी संतान हैं और राजनीति विहीन होनेसे विजेताओं द्वारा इस शोचनीय दशाको पहुँचाये गये हैं।

यद्यपि हमें ऐसा विश्वास है कि चंद्रवंश और सूर्यवंशके प्रादुर्भावके पहिले उक्त आदिम निवासी भारतवर्षमें रहते थे परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं पाया जाता कि वे चंद्र और सूर्यवंशसे उत्पन्न थे, इस अत्यन्त प्राचीन हिंदू जातिकी क्षमता और उस क्षमताके विस्तारके सम्बन्धमें मध्यकालके पुरातत्त्ववेत्ताओंने भ्रान्त और संकीर्ण मत संगठन किया है। बहुतोंका यह विचार है, कि मुसलमानोंके भारतपर अधिकार करनेके समयसे हिन्दू जातिमें जो संस्कार प्रचलित हुए हैं, अर्थात् अटक नदीके पार या जहाज पर चढकर समुद्रमें जानेवाले हिन्दूओंको निषिद्ध बतलाया गया है, यह कुसंस्कार चिरकालसे हिन्दूसमाजमें प्रचलित है। नवीन और अभ्रान्तमत ग्रहण करनेकी अपेक्षा प्राचीन और भ्रान्तमतका छोडना यदि अधिक कठिन नहीं है तो सरलतासे ज्ञात हो सकता है कि, हिन्दुओंकी यह समुद्रयात्रा निषेधक रूढि अतीव आधुनिक है। दूसरे हिन्दूगण स्मरणातीतकाल पहिलेसे जल युद्धमें निपुण और बल-सम्पन्न थे और उसीके बलसे उन्होंने अफ्रीका अरब और पारसके उपकूलमें आष्ट्रेलियाके अर्चीपेलागो द्वीपपुंजोंमें गमन किया था।

---

(१) ग्रन्थकारने इसपर टिप्पण किया है कि कावा जातिका प्रायः लोप हो गया है। श्रीकृष्णके समयमें यह जाति सौराष्ट्रके वन्यनिवासी रूपसे विदित थी, जब वनके भीलने श्रीकृष्णको गुप्तरूपसे आहत कर "मैंने अनिच्छा और भूलसे ऐसा किया यह कहकर शोक प्रकाश किया" तब श्रीकृष्णने उसे यह कह कर क्षमा किया कि 'रामावतारमें मैंने तुम्हारा वध किया था इसी लिये तुमने इस जन्ममें मुझे आहत करके अपना बदला लिया है। इससे जाना जाता है कि रामचन्द्रने यहाँके निवासियोंको अधीनताकी शृंखलामे बांधकर सभ्य कर दिया था और यह भी जाना जाता है कि इसी कावा जातिने श्रीकृष्णकी मृत्युके पीछे उनके परिवारको हरण कर लूट लिया था।

(२) ग्रन्थकार टिप्पणीमें लिखते हैं कि, गम्बिया और सेनिगल नदीके समीपके नगरका नाम तम्बाकुण्डा है वहां और भी बहुतसे कुण्ड पाये जाते है।

(३) मि० मार्सडेनने हिन्दूसाहित्यके सम्बन्धमें तत्त्वकी खोज करनेके समय सर विलियम जोन्सके साथ इसका आविष्कार किया है कि सब द्वीपपुंज अर्थात् मेडेगास्करसे पूर्व द्वीपतक जो मालियन भाषा प्रचलित है इस भाषामे बहुतसे संस्कृत शब्द पाये जाते है। उनके मुसलमान धर्ममें दीक्षित होनेके बहुत शताब्दी पहिले उस भाषाकी यह अवस्था थी। उन्होंने विश्वास किया है कि गुजरातसे उक्त द्वीपपुंजकी गति चली है यहांके निवासियोंके अनेक प्रवाद और विवरण रामायण और महाभारतमे विद्यमान हैं एशियाटिक रिसर्चेज वाल० ६ पृ० २२६.

मि० मार्सडेनने उक्त मतको प्रकाश करनेके पीछे उपरोक्त द्वीपपुंज बृटिश अधिकारभुक्त होनेसे वहांके प्राचीन स्थानोंमें प्रासादादिके विशेष तत्त्व पाये थे, कि उक्तद्वीपोंमें सूर्यवंशियोंने जाकर अपने महल बनाये; उन मंदिरोंमें जिस भावसे देवी देवताओंकी मूर्तियें खोदी गई हैं और—

हमारा यह अनुमान अत्यन्त हास्यजनक है कि हिन्दू लोग सदासे अपने इसी वर्तमान भारत सीमाके भीतर गुजर करते आये है। एक प्रकारके अपूर्ण और कल्पना-संपन्न ऐतिहासिक पुस्तक पुराण और मनुसंहिता आदि हिन्दूओंकी प्राचीन पुस्तकोंसे स्पष्ट प्रमाणित है कि पहिले आक्सस नदीसे लेकर गंगातक सब देशोंमें बराबर आते जाते थे। पुराणोंके रूपक वर्णनसे यह भी जाना जाता है कि एशियाके मध्य साम्राज्य इस समय म्लेच्छ गिने जाते हैं, वहींसे हिन्दुस्थानमें अनेक विद्या और ज्ञानके स्रोत बहे थे। मनुजीने भी पुराणोंके मतकी पुष्टी की है जिससे जाना जाता है कि अति प्राचीनकालमें शाकद्वीपसे लेकर गंगाके किनारे तक एक ही (सनातन धर्म) का प्रचार था।

—स्थानीय ग्रन्थोमे वीरोंकी वीरगाथाका कीर्तन हुआ है उससे उक्तमतके और भी प्रमाण पाये जाते हैं। बहुत पुराने समयसे भारतवर्षके साथ मिसरवालोंका जो सम्बन्ध था, खोज करनेसे इसके संबन्धमें बहुत प्रमाण पाये जाते हैं, इसमे हम आशाहीन नहीं है। सिइलद्वीपसे मिसरके साथ भारतवर्षका प्रथम सम्बन्ध उपस्थित हुआ था, लंकाविजयी रामचन्द्रके पास भी अपने पूर्वपुरुष सगरके समान बहुत नौकाबल था इसमें सन्देह नहीं। मेरा बहुत दिनोंसे यह विचार था कि लंका ही प्राचीन इथोपिया का राज्य था, प्राचीन लेखकोंने लिखा है कि इथोपीयगण भारतवर्षमे उत्पन्न है और इथोपियोंसे ही मिसरमें शिक्षा और सभ्यताकी वृद्धि हुई।

(१) टिप्पणीमें टाड साहब लिखते हैं, कि अग्निपुराणमें जो सृष्टिका विवरण है वहाँ सात द्वीपोंका वर्णन किया गया है, उनमें शाकद्वीप भी एक द्वीप है, शाकद्वीपनिवासी भूपसे उत्पन्न हैं इसीसे उनका नाम शाकेश्वर है; भूपके पुत्रोंका नाम जुलदद सुकुमार मानीचक कुरम उत्तर दरविक और द्रुम हैं, इन प्रत्येकने अपने २ नामसे एक २ खण्ड स्थापन किया, यथा सुकुमारखण्ड इत्यादि। यहाँके प्रधान २ पर्वतोंके नाम जुलूद रैवत श्याम इन्दक अमकीगेम और केसरी हैं। सात प्रधान नदी मग मगध अरवर्णा इत्यादि हैं यहाँके निवासी सूर्योपासक थे। सक्षेप तत्त्वज्ञानके आधारपर हम विश्वास करते है कि शाकद्वीप ही प्राचीन सिथियन देश था, और शाकेश्वर मनु और विलायतके शाकि जातिके पुरुष ही पार्थियन लोगोंके आदि पुरुष थे, उनके आदि अधीश्वरका नाम अरशक था, अरवर्णा नामके साथ अरक्षस नामकी सादृश्यता देखी जाती है वह जक्षरतीसका अपभ्रंश है। दूसरे शाकद्वीपके प्रथम नरपतिके पुत्र जुलूदका नाम देखा गया है, तातारजातीय इतिहासवेत्ता अबुल गाजीने हिन्दुओंके समान ही उसको जुलूदस कहा है। उसका अर्थ शैल श्रेणी है, पुराण और तातारके इतिहासमे इस प्रकारकी समानता क्यों हुई।*

एक ब्राह्मणोके नेताको विष्णुजीके गरुड़ शाकद्वीपसे जम्बूद्वीपमें लाये, उसीसे शाकद्वीपके ब्राह्मण जम्बूद्वीपमें परिचित हुए। देखो मि० कोलब्रुकका एशियाटिक रिसरचेज पांचवाँ खण्ड पृ० ५३.

---

* टाड साहबकी इस युक्तिको हम पुराणसंगत नहीं मानते। उन्होंने पुराणका नाम लेकर जो लिखा है वैसा पुराणोंमें नहीं पाया जाता तथा नामोंमें भी बहुत गडबड है. मार्कण्डेयपुराणमें लिखा है कि, मनुके दश पुत्र हुए, उनसे यह सब पृथ्वी व्याप्त हो गई। प्रियव्रतने अपने पुत्रोंको सब द्वीपोंका राज्य दिया।

प्रियव्रतोभ्यषिञ्चत्तान् सप्त सप्तसु पार्थिवान् ।
द्वीपेषु तेषु धर्मेण द्वीपांस्तांश्च निबोध मे ॥
जम्बूद्वीपे तथाग्नीध्रं राजानं कृतवान् पिता ।
प्लक्षद्वीपेश्वरस्यापि तेन मेधातिथिः स्मृतः ॥
शाल्मले तु वपुष्मन्तं ज्योतिष्मन्तं कुशाह्वये ।
क्रौञ्चद्वीपे द्युतिमन्तं हव्य शाकाह्वये सुतम् ॥
पुस्कराधिपतिश्चक्रे सवन कृतवान् सुतम् ।

प्रियव्रतने जम्बूद्वीपमें अग्नीध्रको, प्लक्षद्वीपमें मेधातिथिको, शाल्मलिमें वपुष्मान्‌को, कुशद्वीपमें ज्योतिष्मान्‌को, क्रौञ्चमे द्युतिमन्तको, शाकद्वीपमें हव्य और पुष्करमें सवन पुत्रको स्थापित किया. भागतमे इनके नाम अग्नीध्र, इध्मजिह्व, यज्ञबाहु, हिरण्यरेत, घृतपृष्ठ, मेधातिथि, वीतिहोत्र लिखे हैं। शाकद्वीपका वर्णन मत्स्यपुराणके १२२ अध्यायमे लिखा है ।

शाकद्वीपस्य वक्ष्यामि यथावदिह निश्चयम् ।
जम्बूद्वीपस्य विस्ताराद्द्विगुणस्तस्य विस्तरः ॥
तत्र पुण्या जनपदा चिराच्च म्रियते जनः ।
ऋज्वायताः प्रतिदिशं निविष्टा वर्षपर्वताः ॥
रत्नाकराद्रिनामनः सानुमन्तो महाचिताः ।
उभयत्रावगाढो च लवणक्षीरसागरौ ।
शाकद्वीपे तु वक्ष्यामि सप्त दिव्यान्महाबलान् ।
देवर्षिगन्धर्वयुतः प्रथमो मेरुरुच्यते ।
प्रागायतः स सौवर्णः उदयो नाम पर्वतः ॥
तस्यापरेण सुमहान् जलधारो महागिरिः ।
स वै चन्द्रः समाख्यातः सर्वौषधिसमन्वितः ॥
नारदो नाम चैवोक्तो दुर्गशैलो महाचितः ।
तत्राचलौ समुत्पन्नौ पूर्वं नारदपर्वतौ ।
तत्रापरेण सुमहान् श्यामो नाम महागिरिः ॥
यत्र श्यामत्वमापन्नाः प्रजाः पूर्वमिमाः किल ।
स एव दुंदुभिर्नाम श्यामपर्वतसन्निभः ॥
तस्यापरेण रजतो महानस्तो गिरिः स्मृतः ।
स वै सोमक इत्युक्तो देवैर्यत्रामृते पुरा ॥
तस्यापरे चाम्बिकेयः सुमनाश्चैव स स्मृतः ।
आम्बिकेयात्परो रम्यः सर्वौषधिनिषेवितः ॥
विभ्राजस्तु समाख्यातः स्फाटिकस्तु महान्गिरिः ।
सैवेह केशवेत्युक्तो यतो वायुः प्रवाति च ॥

अर्थात् शाकद्वीपका जम्बूद्वीपसे दूना विस्तार है, वहाँ पुण्यात्मा पुरुष रहते हैं और वे बहुत कालमें मरते हैं, वहाँ भी प्रतिदिशामें सात पर्वत हैं जो लवण और क्षीरसागरसे मिलते हैं, देवर्षि—

अन्यत्र चले जानेके विषयमें जो वृत्तान्त देशीय इतिहासोंमें जिस भावसे वर्णन किया है,

---

—गन्धर्वोंसे युक्त पहिला सुमेरु है यह सुवर्णका उदय पर्वत है, इसके आगेका पर्वत जलधारा नामवाला है उसपर बहुतसी औषधियां हैं, इसको चन्द्र भी कहते है; अगला पर्वत नारद नामक है उसीसे नारदपर्वत नाम दो गिरि प्रगट है, इसके आगे श्यामपर्वत है; जहांकी प्रजा पूर्वकालमें श्यामत्वको प्राप्त हुई थी, वहीं दुंदुभी नामवाला श्यामपर्वतके समान है उसके आगे अस्त वा रजत नामक पर्वत है उसीको सोमक भी कहते है; इसके आगे अम्बिकेय है जिसको सुमना कहते हैं उसके आगे सब औषधियोंसे युक्त स्फटिकका विभ्राज नाम पर्वत है, उसे केशव भी कहते हैं; जहांसे वायु चलते है। इसके आगे वर्षोंका वर्णन किया है उनके नाम यह हैं । एक एकके पर्वतके समान दो दो नाम हैं: उदयवर्ष वा गतभय; सुकुमार वा शैशिर, कौमार वा सुखोदय, श्यामप- र्वतवर्ष वा अनीचक वा आनन्दक, कुसुमोत्कर वा असितसोमक, मैनाक वा क्षेमक, ध्रुव वा विभ्राज। सात ही नदी दो दो नामवाली है। सुकुमारी वा शिवजला, सुकुमारी तपःसिद्धा, नन्दा वा पावनी, शिविका इक्षु वा कुहू, वेणुका वा अमृता, सुकृता, वा गर्भस्ति, इत्यादि-हमारा पुराणोक्त शाकद्वीप और टाड साहबका सीदिया एक ही देश है या पृथक् हैं यह पाठक गण सहजमें अनुमान कर सकते हैं। अग्निपुराणमें भी शाकद्वीपक राजाका नाम भूप नहीं है, टाड साहबने जो उसके पुत्र लिखे है, वे नाम भी ठीक नहीं है, केवल एकाध नाम मिलता है।

शाकद्वीप निवासियोंको म्लेच्छत्व कैसे प्राप्त हुआ, उस विषयमें ग्रन्थकारने लिखा है कि "उन्होंने ब्राह्मणोंको अपने देशमे न वसने दिया इसीसे वह म्लेच्छ हो गये, " परन्तु पुराण देखनेसे यह बात विदित नहीं होती। पहिले खण्डमे इस बातको दिखा चुके हैं, कि सगरने शकादिको यहाँसे निकाल दिया था वही म्लेच्छ हो गये। कोलब्रुक साहबने जैसा अपने ग्रन्थमें लिखा है उसी मतको टाड साहबने लिया, इसीसे यह भ्रम पड़ गया है। सहस्रों वर्षोंकी मीमांसा अनुमानसे नहीं लगाई जा सकती, यह अंग्रजी सिद्धान्त कि सूर्य तथाचन्द्रवंश मध्य एशियाकी सिदियन जातिसे उत्पन्न है, मध्य एशिया ही सबका आदि निवास स्थान है आदि यह सर्वथा भ्रान्तिपूर्ण है। आर्य जातीय इतिहासपुराणमें ही इस गुरुतर प्रश्नकी मीमांसा हो सकती है। अनुमान लगानेसे बहुत भूल होती है।

ग्रन्थकारने कहा है कि जो यह यदुवंश आदिसे उत्पन्न है उसका कोई प्रमाण इतिहासमे नहीं पाया जाता, हम इसपर कहते हैं कि महाभारत, हरिवंश और श्रीमद्भागवतमें इसके अनेक प्रमाण हैं। वहाँ इनका धारावाहिक वृत्तान्त है, आगे इतिहासलेखकने लिखा है कि कारिका देखनेसे ज्ञात होता है कि यदुवंश आदि चन्द्रवंशसे उत्पन्न है, यदुवंशी सिदियन जातिके थे, यह बात भी भ्रान्तिपूर्ण है। हां यहहम मानते हैं कि पहिले सबकी एक ही भाषा थी, परन्तु सीदिया शाकद्वीप है, यह हम नहीं मानते, सीदिया शकजातिकी सृष्टिके पहिले शाकद्वीपकी सृष्टि हुई है, शकादिके म्लेच्छ होनेपर सर्वथा उनके साथ संबन्ध छूट गया था, इसको हम पहिले ही लिख चुके हैं, जब सगरके समय उनसे सम्बन्ध छूटा, तब चन्द्रवंशके आदिपुरुष इस म्लेच्छ जातिसे कैसे उत्पन्न हैं, चन्द्रवंश- का वृक्ष देखनेसे ही विदित होता है कि शकजातिके साथ यदुवंशका कोई सम्बन्ध नहीं है, जब कि आदिकालसे आर्य नृपति यहाँके निवासी लिखे है, तब मध्य एशियासे उनका यहाँ आना भ्रान्ति मूलक है। अनुमानके सामने जातीय इतिहासका खण्डन नहीं हो सकता। हाँ यहाँकी निकाली हुई—

इस समय सबसे पहिले उसीकी ओर ध्यान देते हैं। वहाँ लिखा है कि यदुवंशी भारतवर्षके बाहर छिन्नभिन्न होकर चले गये इस बातको हम प्रमाण करते हैं। यद्यपि यदुवंशके आदिपुरुष बुधसे श्रीकृष्णजी तक पचीस पुरुष व्यतीत हो गये, परन्तु

—जातिने म्लेच्छत्वको प्राप्त हो पश्चिमी देशोंतक गमन किया हो,यह सत्य हो सकता है। ग्रन्थकारने लिखा है कि नहुषके तीसरे पुत्र ययाति थे, उसके पांचवें पुत्र यवनसे यवन जातिकी उत्पत्ति हुई परन्तु हम इसमे भी भ्रम देखते हैं कारण कि पुराणमे प्रमाण है कि—

"यदोस्तु यादवा जातास्तुर्वसोर्यवनाःसुताः।
द्रुह्योस्तु वै सुता भोजा अनोस्तु म्लेच्छजातयः" ॥ मत्स्यपु०अ० ३४.

यदुसे यादव, तुर्वसुके यवन, द्रुह्युके भोज और अनुके म्लेच्छ जाति हुई हैं। पिताने यदुको शाप दिया था कि तुम्हारे वंशमे चक्रवर्ती राजा न हो, मत्स्यपुराणके दशवें अध्यायमें लिखा है कि वेनुके शरीर मथनेसे म्लेच्छ जाति प्रगट हुई, तथा यवनपतिके निस्सन्तान होनेसे उसकी स्त्रीसे गर्गका सम्बन्ध होनेसे कालयवन उत्पन्न हुआ, उसने म्लेच्छजातिका बडा संग्रह किया। विष्णुपुराण अंश ५ अ० २३.भिन्न २ समय भारतमे किस किस सम्प्रदायको म्लेच्छत्व प्राप्त हुआ यह बात इन प्रमाणोंसे भलीभांति जानी जाती है, इससे यह स्पष्ट है कि चन्द्र तथा सूर्यवंशी यहांके आदिम निवासी हैं तब सीदियासे उनका आगमन ग्रन्थकारका आनुमानिक सिद्धान्त है न कि प्रामाणिक।

इस समय भारतवर्षकी जैसी सीमा है आदिमें इससे विशेष थी। यहां आर्यजनोंके निवासकी भूमि आर्यावर्त थी पहिले खण्डमें इसका वर्णन कर चुका हूँ यहांके निवासियोंकी वृद्धिके साथ ही साथ भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमे उनके निवासका प्रचार हुआ। महाराज भरतके समयसे इसका नाम'भारतवर्ष'हुआ;पीछे इंदुवंशकी प्रतिष्ठासे'इन्दोस्थान' और अब'हिन्दोस्थान'कहाता है। सूर्य चन्द्रवंशीय क्षत्रिय और ब्राह्मण; क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और संकरजातिकी उत्पत्तिके साथ साथ यहांके निवासियोंने धीरे धीरे दाक्षिणात्य इत्यादि स्थानोंमें उपनिवेश स्थापन किये। साम्राज्यभ्रष्ट और जातिसे पतित हुए मनुष्योंने भारतसे निकलकर अन्यान्य प्रान्त तथा मध्य एशियाका आश्रय लिया, इस कारण आर्यगण सिदियासे भारतमें आये और सिदियासे भारतमें ज्ञानका विस्तार हुआ, परन्तु शास्त्रके मतसे यह स्वीकार नहीं किया जा सकता,हां यह ठीक है कि जो लोग भारतसे चले गये थे उनके साथ भारतके वैश्योंका वाणिज्यकार्य चलता था दोनोंमें आवागमन था, मध्य एशियावाले भारवर्षसे ताडित होकर ही म्लेच्छत्वको प्राप्त हुए थे और आर्यजाति विस्तारको प्राप्त हो पश्चिम देशोंतक अर्चन धर्मका बिस्तार करने लगी। [अनुवादक.]

(१) टाड साहबने एशियाटिक रिसर्चेजके तीसरे बालमें यदुवंशका वर्णन किया है अंग्रेजी पाठक उसे देखें और देशीय पाठकोंको हरिवंश और महाभारत देखनेका हम अनुरोध करते हैं।

[अनुवादक]

(२) एक कारिकासे चन्द्रसे श्रीकृष्णतक ५२ पीढी पाई जाती हैं। (अनु०)

उस बुधने जिस मार्गसे भारतवर्षमें आकर सूर्यवंशकी कुमारी इलाके साथ विवाह किया था [इलासे उसके वंशका विस्तार हुआ] उस मार्गको यदुवंशी भूले[१] नहीं थे। पीछे ग्रंथकार जैसलमेरके इतिहासलेखककी पुस्तकसे उद्धृत करके लिखते हैं कि, चंद्रवंशीय यादवोंकी आदि निवासभूमि प्रयाग थी, पीछे पुरूरवाने मथुरामें राजधानी स्थापित की और बहुत समयतक वहीं राजधानी रही। इन्हीं यादवोंसे छप्पन कुलकी उत्पत्ति हुई है; इसी विख्यात वंशमें हरिकृष्णने जन्म लेकर द्वारकाकी प्रतिष्ठा की थी।

कुरुक्षेत्रमें यदुवंशियोंके छप्पन कुलका जो भयंकर संग्राम हुआ था और उसके

---

(१) ग्रन्थकार टिप्पणीमें लिखते हैं कि भागवतसे जाना जाता है कि बुध अपने पापोंको नष्ट करनेके निमित्त देवकार्य साधन करने तथा इलाके साथ विवाह करनेको भारतवर्षमें आये थे। इलाके गर्भसे बुधके पुरूरवा नाम पुत्र हुआ, इसने मथुरामें अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की। पुरुके और भी छः पुत्र उत्पन्न हुए वह भारतमें यदुवंशी नामसे विख्यात हैं, यह आयु ही भारतमें आदि पुरुष थे, उनकी भाषामें आयु शब्दका अर्थ चन्द्र है। उनकी और राजपूतोंकी दोनों ही भाषा चन्द्र कही गई हैं। पहिलेके अनेक लक्षणोंसे जाना जाता है कि भारतमें यदुवंश सिदियन था, आयु शब्दका अर्थ संस्कृतभाषामें चन्द्र है। *

(२) इस समय इसको इलाहाबाद कहते हैं, यहां गंगा यमुनाका संगम है ग्रीक इतिहासवेत्ताने इसको प्रासिक कहा है।

(३) कुरुक्षेत्रमें यदुवंशी छप्पन कुलोंका समर नहीं हुआ, परन्तु वहां कौरव पाण्डवोंका युद्ध हुआ था। पाण्डवोंका समर यदुवंश समर कहना भ्रान्ति है। ग्रन्थकारने छप्पन करोडको छप्पन कुल माना है, यह ठीक है।

(४) यादवोंका समर भी द्वारिकामें नहीं किन्तु प्रभासक्षेत्रमें हुआ था। [अनु०]

---

* ग्रन्थकारने जो बुधका वृत्तान्त लिखा है यह भी अस्तव्यस्त है। भागवतके नवमस्कन्धमें जहां बुधका वर्णन है वहां कहीं भी यह बात नहीं लिखी कि बुध अपने पाप दूर करनेके निमित्त, भारतवर्षमें मध्य एशियासे आये थे, और यह जो मत है कि श्रीकृष्णके पीछे यदुवंशी भारतको छोड मध्य एशियामें चले गये यह भी समीचीन नहीं। महाभारत और भागवत पढनेसे हमारे पाठक भलीभांति जान जांयगे कि यदुवंशियोंने परस्पर युद्ध करके ही रणक्षेत्रमें शयन किया था। उनमें कोई मध्य एशियाको नहीं गया, तथा भाग जानेका कोई कारण भी नहीं था। जब कि उस युद्धमें समस्त यदुवंशका ध्वंस हो गया, और एकमात्र वज्र बचा और कोई दूसरा शत्रु भी वहां न था तब मध्यएशियाको बचे हुए कैसे भाग गये। आयुशब्दका अर्थ संस्कृतभाषामें चन्द्र हो ऐसा किसी कोषमें नहीं पाया जाता, तातारीभाषामें आयुका अर्थ चन्द्र है, तो आयु उनका आदि पुरुष है इस बातको कौन मानेगा, और एक बात यह है कि आयुके पुत्र नहुषसे यदुवंशकी उत्पत्ति है। यह वंशकारिकामें कहा गया है, उससे तातारियोंके साथ यदुवंशका कोई सम्बन्ध दिखाई नहीं देता। अंग्रेजीमें बहुतोंके नाम कृष्टफरीद हैं तो क्या हम उनको श्रीकृष्णका वंशोत्पन्न कह सकते हैं? [अनुवादक].

पीछे जो द्वारिकोंमें भयंकर समर हुआ था, हिन्दू इतिहासपाठकोंसे वह छिपा नहीं है। ईसासे ११०० सौ वर्ष पहिले इस घटनाकी गणना की जाती है। इस वंशके छिन्नभिन्न हो जानेसे बहुतोंने भारतवर्षको छोड दिया, इनमें श्रीकृष्णजीके दो पुत्र भी थे। इन देवोपम यदुवंशके नेता श्रीकृष्णजीकी आठ प्रधान रानियां थीं इनमेंसे पहिली और सातवी रानीके वंशधर वे लोग हैं जिन्हें अब हम हिन्दू नहीं कह सकते।

सब रानियोंमें रानी रुक्मिणी ही प्रधान थी, उसके पुत्रोंमें प्रद्युम्न सबसे श्रेष्ठ थे, इन्होंने विदर्भकी राजकुमारीके साथ विवाह किया, उसके गर्भसे अनिरुद्ध और वज्र दो पुत्र उत्पन्न हुए, वज्रसे भाटियोंकी उत्पत्ति हुई वज्रके नाभ और खेर (क्षीर) नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए।

---

(१) महाभारत और प्रभासक्षेत्रका समर द्वापरके अन्त और कलिकी आदिमे हुआ जिसको इस समय ५००० वर्षसे अधिक होते है इस बातको हम प्रथम खण्डमें लिख चुके है। [अनु०]

(२) इसका शोधन आगे करेंगे।

(३)टीकामें ग्रन्थकारने लिखा है कि सातवीं रानीका नाम जाम्बवती था, जाम्बवतीके बडे पुत्रका नाम साम्ब था, यह सिन्धुनदीके दोनों तीरवर्ती देशोंका अधीश्वर हुआ इससे सिन्धुमे साम्बवंशकी उत्पति हुई, उस वंशसे जाडेचागणोंकी उत्पत्ति हुई, मीनगढमें जो साम्बजाति एलिकजंडरके विरुद्ध खडी हुई थी यह सम्भव हो सकता है कि वे श्रीकृष्णके पुत्र इन्हीं साम्बसे उत्पन्न हों जाडेचा जातिके इतिहाससे जाना जाता है कि उनके पूर्वपुरुष साम वा सीरियासे आये थे, उनको अपना आदि वर्ण विदित नहीं था इसी कारण उन्होंने ऐसा लिखा है।

(४)ग्रन्थकारको यहां भ्रम हुआ है। श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्न और प्रद्युम्नके अनिरुद्ध और वज्र लिखे हैं, यहां पिता पुत्र एक कर दिये हैं, वज्र अनिरुद्धके भ्राता नहीं वरन पुत्र थे, यथाहि–

प्रद्युम्न आसीत्प्रथमः पितृवद्रुक्मिणीसुतः।
स रुक्मिणो दुहितरमुपयेमे महारथः॥
तस्यां ततोनिरुद्धोभून्नागायुतबलान्वितः।
स चापि रुक्मिणः पौत्री दौहित्रो जगृहे ततः॥
वज्रस्तस्याभवद्यस्तु मौसला—दवशेषितः।
प्रतिबाहुरभूत्तस्मात्सुबाहुस्तस्य चात्मजः॥३॥

भागवत० १० स्कन्ध ९ अध्याय।

तथा च–अनिरुद्धात्सुभद्रायां वज्रोनाम नृपोऽभवत्।
प्रतिबाहुर्वज्रसुतश्चारुस्तस्य सुतोभवत्॥ गरुडपु०अ०१४४.

अर्थात् श्रीकृष्णके बडे पुत्र प्रद्युम्नने रुक्मीकी पुत्रीके संग विवाह किया उसके महाबली अनिरुद्ध हुए, उसने रुक्मकी पोतीसे विवाह किया उसका पुत्र वज्र हुआ, मौसल युद्धमें यही एक बचा। इसका पुत्र प्रतिबाहु और उसका सुबाहु हुआ, गरुड़पुराणमें भी यही लिखा है अनिरुद्धसे सुभद्रा [कदाचित् रुक्मकी पोतीका नाम है] में वज्र पुत्र हुआ वज्रका प्रतिबाहु उसका चारु पुत्र हुआ।

इन श्लोकोसे जाना जाता है कि वज्र अनिरुद्धके छोटे भ्राता नहीं न वज्रके क्षीर नव नामवाले दो पुत्र थे किन्तु वज्रके प्रतिबाहु उनके सुबाहु उनके शांतसेन उनके शतसेन हुए यहांतक श्रीमद्भागवत और हरिवंशमें लिखा है इससे ग्रन्थकारका वह मत मान्य नहीं। [अनुवादक]

ग्रंथकार लिखते हैं कि देशीय इतिहास लेखकने लिखा है कि जिस समय यादव गण द्वारकाके युद्धमें विध्वंस हो गये और कृष्णभगवान् स्वर्गको चले गये, उस समय वज्र मथुराजीसे अपने पिताको देखनेके लिये जारहे थे, परन्तु वह बीस कोश गये होंगे कि मार्गमें उनको समाचार मिला कि उनके सब कुटुम्बियोंका नाश हो गया है तब इन्होंने उसी स्थानपर प्राण छोड दिये, और नाभ राजसिंहासनपर अभिषिक्त हो मथुराजीमें आये और क्षीर द्वारकाको चले गये।

यादवोंने समस्त भारतवर्षमें अपने प्रबल प्रतापसे शासनशक्तिका विस्तार कर जिन छत्तीस राजकुलोंको निगृहीत और पीडित किया था, इस समय वे सब बदला लेनेमें प्रवृत्त हुए। अन्तमें नाभ पवित्र नगरी द्वारिका पुरीको भाग गया, पीछे यह पश्चिम प्रान्तमें मरुस्थलीमें राज्यपर अभिषिक्त हुआ, भागवतमें यहांतक इतिहास देखा जाता है। हमने भाटी जातिके परवर्ती इतिहासको मथुराके ब्राह्मण शुकधर्मके लिखे हुए इतिहाससे वर्णन किया है।

नाभके एक पुत्रका नाम प्रतिबाहु था। क्षीरसे जोडचा और यदुभानका जन्म हुआ, यदुभानु एक समय तीर्थयात्राको गये थे, कुलदेवीने उनकी इच्छा जानकर उनको सोतेसे जगाकर कहा कि तुमको जिस वरकी इच्छा हो मांगो मैं तुमको वही वर दूँगी, राजकुमारने कहा कि हे देवि! तुम मुझे एक राज्य दो कि मैं वहाँ निवास करूँ। देवी बोली तुम इस भूधरका शासन करो, यह कहकर अन्तर्द्धान हो गई। जब सबेरे यदुभानु जागे और रात्रिके स्वप्नका स्मरण कर रहे थे कि उसी समय दूरसे महा कोलाहल सुनाई देने लगा, उन्होंने इधरउधर देखकर जानलिया कि इस देशके राजाने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये हैं उस कारण राजपदपर किसीको बैठानेके

---

(१) यह कथा भी हमको मूल भागवतके अनुसार विदित नहीं होती। देशीय इतिहास लेखकने विना श्रीमद्भागवतके देखे ऐसा कैसे लिखा। मूलभागवतमें तो ऐसा है कि यदुवंश ध्वंस होनेके पीछे वज्र मथुरामें आये और अर्जुनने उनको भलीभांति समझा बुझाकर मथुराके राज्यपर अभिषिक्त कर दिया।

यदि ग्रन्थकारने देशीय इतिहास लेखकका अविकल अनुवाद किया है तो ऊपरकी कथामें उसका भ्रम है अन्यथा ग्रंथकार अनुवादकका भ्रम मानना होगा, न वज्रने प्राण छोडे न नाभको राज्य मिला श्रीमद्भागवतकी सहस्रों पोथी हैं और सबमें ही एकसी बात है, तब हम यह नहीं कह सकते कि यह भ्रम कैसे हुआ, पर जब वह इतिहास ही हो हमारा अवलम्बन है तब यहां उसीका अनुसरण करना होगा। (अनुवादक)

(२) शुकधर्मके ग्रन्थसे भी शंका होती है कि वह कौनसी भागवत थी कि जिसमें नाभका भागना लिखा है। (अनुवादक)

(३) ग्रंथकारने यदुभानके बदलेमें यदभान लिखकर भान शब्दका अर्थ हवाईबान् किया है, और कहा है, जब ऐसा है तब पूर्वकालमें हिन्दू अवश्य बारूद निर्माण करना जानते थ। यह अर्थ समीचीन नहीं, यदि वे यह विचारते कि भानुशब्दका अर्थ सूर्य है तो ऐसा न लिखते।

निमित्त आन्दोलन हो रहा है। उधर प्रधान राजमंत्रीने कहा कि मैंने स्वप्नमें देखा है कि श्रीकृष्णके एक वंशधर इस बीहडमें आये हैं, यह सुन बहुतसे मनुष्य राजतिलक देनेके लिये उनकी खोजमें बाहर निकले, और वे यदुभानको नगरमें ले आये, अस्तु सबकी सम्मतिके अनुसार यदुभानु उस गद्दीपर विराजमान हुए। वह अपने बाहुबलसे एक प्रबल सामर्थ्यवाले राजा गिने गये। क्रमशः उनके वंशधरोंकी संख्या बढती गई, उन्होंने जहां राज्य किया वह स्थान "यदुगिरि नामसे विख्यात हुआ।"

---

(१) ग्रन्थकार टीकेमें लिखते हैं,—कि भाटीग्रन्थमें जिस प्रकार प्राकृतिक भूगोलका वर्णन लिखा है, वह इतिहास अत्यन्त विश्वासके योग्य है इस समय यदि जैसलमेरके निवासी किसी महोदयसे यह प्रश्न किया जाय कि यदुकाडांग यदुगिरि ना विहाड किस स्थानमें है तो इसे कोई नहीं बता सकेगा, परन्तु बाबर बादशाहकी स्मारक पुस्तकका जिसका अनुवाद मिस्टर आर्सकिनने प्रकाश किया है उसके विना हम यदुगिरिका पता न पा सकते। सन् १५१७ ई० की १७ फरवरीको बाबरने सिंधुपर आक्रमण किया। वहाँ कई नदियोंके बीचमें विहाड़ नगर है। यहा २५ पच्चीस सौ वर्ष पहिले श्रीकृष्णके वंशधरोंने राजस्थापन किया था।१९ तारीखको मैं यहां आया। उसने फिर लिखा है कि वहींसे सात कोशपर एक पर्वत है। जाफरनामा [तैमूरका इतिहास] और दूसरी पुस्तकोंमें इस पर्वतको यदुगिरि लिखा है,सबसे पहिले हमको इसका नाम विदित नहीं था, किंतु पीछेसे विदित हुआ कि इस पर्वतमें एक महानुभाव उत्पन्न हुए दो पुत्रोंके वंशधर यहां निवास करते थे। एक सम्प्रदाय यदु नामसे, और दूसरी जनजूहा नामसे विख्यात थी। अत्यन्त प्राचीन कालसे वह इस पर्वतके निवासियोंको शासन करते थे, और उनकी शासनरीति नीलाबसे बहीरातकके देशोंपर थी। वह भ्राता और मित्रभावसे देशको शासन करते थे। वह इच्छानुसार प्रजासे कुछ भी नहीं ले सकते थे। चिरकालसे जो नियम किये गये थे वह उसीके अनुसार प्रजासे केवल करमात्र लेते थे। इस समय यदुवंश अनेक शाखाओंमें बँट गया था और जनजूहाका वंश भी इसीके अनुसार विभक्त हुआ। इनमें जो प्रधान नेता थे उनको "राय" की उपाधि मिली"

आरस्किन साहबकी अनुवादित बाबरकी स्मारक पुस्तकके २५४ पृष्ठको देखो।

"इन हिंदू उपनिवेशियोंने बाबरके समयतक अपने आचार व्यवहारोंकी जो समभावसे रक्षा की थी यही उसका यथार्थ प्रमाण है। जनजूहा जातिका जो उल्लेख लिखा गया है, इसीसे जोहिया जाति संदेह करनेके योग्य नहीं है; शतद्रुके किनारे यह जोहिया जाति विशेष प्रसिद्ध हुई थी। इसका वर्णन पीछे किया जायगा। इस जातिके इतिहासमूलक एक छोटे ग्रन्थको मैंने रायल एशियाटिक सुसायटीको अर्पण किया है। बाबरने कहा है कि यदुओंके समान यह उनके एकवंशसे उत्पन्न है, यह भी सम्भव है कि यही भट्टियोंके भ्राता भूपतिके वंशधर हों। भट्टीने यदुवंशके बदलेमें अपने नामके अनुसार भट्टीवंश नाम प्रधान किया,और इससे यह प्रसिद्ध होता है कि जब ज्येष्ठ वंशकी शाखा गजनीमें ताडित हुई थी, उस समय उन्होंने वहांसे यदुओंको अपने कुटुम्बियोंके साथ मिलाया। बाबर इस यदुगिरिकी अतुलनीय सुन्दरतासे युक्त उपत्यकाको देखकर एकबार ही मोहित हो गया था। उसने लिखा है कि यही कश्मीरका अनुरूप है।"

" नाभके पुत्र प्रतिबाहुने मरुस्थलीके राजा होकर श्रीकृष्णके चिह्नस्वरूप विश्वकर्मा के बनाये हुए राजछत्रको शिरपर धारण किया। उनके बाहुबल नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, बाहुबलने मालवेके राजा विजयसिंहकी कन्या कमलावतीके साथ विवाह किया। विजयसिंहने विवाहके यौतुकमें उनको खुरासान देशके एक हजार घोडे, एकसौ हाथी, बहुतसे हीरे मोती, बहुतसा सुवर्ण और पांचसौ सुन्दरी दासी, रथ और कितने ही सुवर्णके बने हुए पलँग दिये। प्रमारवंशकी कमलावतीने प्रधान पटरानी होकर सुबाहु नामवाला एक पुत्र उत्पन्न किया "।

" बाहुने घोडपरसे गिरकर प्राण त्याग किया। उसके औरससे सुबाहुने जन्म लेकर अजमेरके चौहान वंशके राजा नंदकी कन्याके साथ अपना विवाह किया। उस विवाहिता स्त्रीने विष देकर सुबाहुको मार डाला "।

सुबाहुके रज नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इसने बारह वर्षतक राज्य किया, उसने मालवाके राजा वैरसीकी कन्या सौभाग्यसुन्दरीके साथ विवाह किया था, सौभाग्यसुन्दरीने गर्भावस्थामें एक स्वप्न देखा कि उसके एक हाथी उत्पन्न हुआ है। ज्योतिषियोंने यह स्वप्नका वृत्तान्त जानकर कहा कि रानीके महा बलवान् पुत्र उत्पन्न होगा। पुत्रके उत्पन्न होते ही ज्योतिषियोंकी आज्ञानुसार उसका " गज " नाम रक्खा गया। गजके युवा अवस्थामें पहुँचते ही पूर्वदेशके राजा यदुभानुने गजके साथ अपनी कन्याके विवाहका प्रस्ताव किया, और क्षत्रियोंकी सामाजिकरीतिके अनुसार उनके पास नारियल भेजा। इसी समयमें यह बात भी प्रगट हुई कि म्लेच्छोंने पहिले सुबाहुको आक्रमण किया है।

---

(१) पूर्वकालमें प्रमार गण मध्य भारतवर्षके प्रबल बलशाली राजा थे। सुन्दर दासी और सुवर्णके पलंग हिन्दू राजकुमारियोंके विवाहके समयमें यौतुकरूपसे दिये जाते थे, उनके यहांकी यह रीति अखण्ड थी।

(२) टाड साहबने लिखा है " अबुलफजल कहता है कि तातारियोंके आदि पुरुष उगज़खांने गासमिन और कश्मीरके राजा जोगाको मारा था।

(३) इतिहासवेत्ता टाड साहबने लिखा है, कि" भट्टियोंके इतिहासके प्रथम अंशमें ही ऐतिहासिक तथ्यका मिलान दृष्टि आता है, और यह पाया जाता है कि यदु भट्टियोंके लेखकने सीरिया और बेक्ट्रियाके ग्रीक और प्रथम मुसल्मानोंने भारतविजेताओंके साथ संघर्षण होना वर्णन किया है।

सुबाहु, उनके पुत्र और पोते गजका यह शासनसम्बन्धी वृत्तान्त कितना ही असम्पूर्ण क्यों न हो, पर गज जो खुरासानके फरीद और उसके सहयोगी रूमके राजासे आक्रान्त हुआ है, हमें एण्टियोकसके इतिहासमें इसका प्रबल प्रमाण मिला है, उसने ईसाके जन्मके दोसौ चार वर्ष पहिले बेक्ट्रिया और भारतवर्षपर आक्रमण किया था। सीरियापति जो इस युद्धमें आया था, इनमें भारतवर्षके राजा साफाग सेनूस (Sofhasusenus) के साथ संधि करके करस्वरूपमें हाथी लिये थे, यह वृत्तान्त आजतक पाया जाता है, और इसीका अनुमान मिश्रकी घटनावलीमें––

और वही समुद्रके किनारसे आते हैं, खुरासानका फरीदशाह चार लाख घुडसवारी

—भी वर्णन किया जा सकता है कि सोफागसेनस गजनीमे यदुवंशियोंके अधीश्वर थे। सुबाहु और गज नामसे ग्रीक गणोंने सोफागसेनस नामकी सृष्टि की है। मालवेकी राजनंदिनी सुभगा सुन्दरीका पुत्र कहकर गजको सोफागसेनस कहा है इसकी मीमांसा करनेका भार हमने विचार करनेवालोंका हा दिया है।

(क) यह भी सम्भव हो सकता है कि ग्रीकराजको भारतीय राजाने करस्वरूपमें हाथी दिया था, इसीसे उसका नाम गज हुआ।

(ख) कर्नल टाड साहबने लिखा है कि इस इतिहासके बीचमे मध्य एशियाके प्रान्तसे मुसल्मान जातिके आदिम अभ्युदयके सम्बन्धमे अनेक विषयोंका उल्लेख पाया जाता है, प्रेन्स साहबने गुलास-तुलअहबरी नामक ग्रन्थसे अपने उत्कृष्ट इतिहासमें उद्धृत किया है कि "हिजाजको खुरासानके शासनका भार और अब्दुल्लाको सीस्तानके शासनका भार मिला। अब्दुल्लाको उसके स्वामी हिजाजने काबुल पर अधिकार करनेकी आज्ञा दी, इस समय रितेल वा रितपेल नामका एक मनुष्य काबुलपर राज्य करता था, ग्रन्थकारने ऐसा अनुमान किया है कि वह हिन्दू वा तातारी था।

(ग) उक्त राजाकी चतुराईसे पीठ दिखाते ही मुसल्मानोंकी सेनाका दल जैसे ही गिरि संकटमें पहुँचा कि वैसे ही उन्होंने इनका पाछा रोककर इनके जानेका मार्ग एकबार ही बन्द कर दिया। अब्दुल्ला महा विपत्तिमें पडा, उसने अपने उद्धारका कोई उपाय न देखा तब सात लाख दिरम नाम मुद्रा देकर छुटकारा पाया। ७८ हिजरी साल अर्थात् ६९७ ईसवीमें यह घटना हुई थी. इसके पीछे और जो घटना हुई उनसे जाना जाता है कि गजके पिता रज इस घटनाके नेता थे। फिर भी लिखा गया है कि-

"अब्दुल्ला और अब्दुलरहमानने चालीस सहस्र सेना लेकर सीस्तानपर चढाई की यद्यपि काबुलके राजाने छलका विस्तार किया था, परन्तु इस बार मुसल्मानोंने उसके उस चातुरी जालको—

(क) हमने श्रीमद्भागवतसे पहिलेही वर्णन किया है कि वज्रके पुत्र प्रतिबाहु, उनके शांतसेन, शांतसेनके पुत्र शतसेन हुए। यदि हम यह स्थिर कर लें कि भट्टियोंके इतिहासलेखकने भ्रममें पड़कर लिखा है कि वज्रके पुत्र नाभि नामके प्रतिबाहु, प्रतिबाहुके बाहुबल, उनके पुत्र बाहु, बाहुके पुत्र सुबाहु, सुबाहुके पुत्र रज और रजके पुत्र गज हुए, और ऐसा होनेसे हो ग्रीक इतिहासके लेखक उक्त मतको हमारे पक्षमे समर्थन करते हैं। सुभगा सुन्दरीसे कदापि सोभागसेनका नाम नहीं हो सकता। हमें ऐसा बोध होता है कि शांतसेन वा भद्रसेनको ही ग्रीक गणोंने सोफागसेनस नामसे पुकारा है।

(ख) टाड महोदयके इस अनुमानको हम बहुत अंशमें सत्य मानते हैं। टाड साहबने जो भट्टी इतिहासदृष्टिसे जयसलमेरका इतिहास लिखा है, हमने उसकी बहुत खोज करी परन्तु वह नहीं मिला। यदि हमें वह मिल जाता तो हम जान सकते थे कि कर्नल टाड साहबने उस इतिहासके अनुवादके समयमे कुछ गडबड़ की है या नहीं। यह हमें विश्वास है कि यह गज ही शतसेन नामसे विख्यात हुआ है। इसकी माताने स्वप्नमें गज उत्पन्न किया था, इसीसे इसका नाम गज रक्खा गया। [अनु०]

(ग) हिन्दुओंका नाम रितैल वा रितपैल कभी नहीं हो सकता। तब फिर जो मूल बातको विकृतरूपसे लिखा है; यह स्वतन्त्र बात है [अनु०]

सेनाको साथ लिये आ गये है, और सम्पूर्ण प्रजा मारे भयके चारों ओर को भाग रही है; राजाने यथार्थ समाचार जाननेके लिये एक दूतको भेजा। और स्वयं आप भी शीघ्रतासे सेना साथ ले शत्रुओंको दमन करनेके लिये हरिभू नामक स्थानपर जा पहुँचा। उस समय शत्रुओंके दलने दो कोसकी दूरीपर कुंज शहरमें अपने डेरे डाले।

दोनों ओरसे भयंकर युद्धकी अग्नि भडक उठी। आक्रमणकारी यवन इस युद्धमें तीस हजार सेनाके साथ विध्वंस होकर परास्त हो गये। हिन्दुओंकी केवल चार हजार

—छिन्नभिन्न कर दिया। मुसलमानोंने काबुलके बहुतसे स्थानोंको जीत लिया और वहाँकी समस्त धन सम्पत्ति लूटकर सीस्तानको ले आये। इससे हिजाज अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ। अब्दुलरहमानने विभक्त होकर रितरेयेके साथ षडयन्त्र किया, और वह हिजाजपर आक्रमण कर काबुलको कर देनेसे हटानेके लिये प्रवृत्त हुआ। अब्दुलरहमानकी मृत्युके उपरान्त मुगीरा खुरासानके अधिनायक हुए, और उसके पिता हलबन जहूके पार देशमें जाकर पेचस रोगसे प्राण त्याग किये। उस देशके शासनका भार यजादके हाथमें पडा।

खुरासानके शासनकर्त्ता मुगीरा जिस समय काबुलके हिन्दू राजाओंके विरुद्ध युद्ध करनेको तैयार हुए, उस युद्धमें उनकी मृत्युका जो विवरण प्रकाशित हुआ है, उस घटनाके साथ जाबली स्थान (जाबुलिस्तान) के नरपति रुकके साथ साम्राज्यकी अचानक मृत्युकी सादृश्यता देखी जाती है; इस समय यह मीमांसा स्थिर होती है कि मुसलमानोंके प्रथम अभ्युदयके समय हिन्दू राजा इन देशोंपर सर्वत्र शासनशक्ति चलाते थे और अन्तमें बहुत शताब्दियोंतक फिर इन देशोंको जय करनेकी सर्वदा चेष्टा करते थे। इसके प्रमाणके सम्बन्धमें बाबरने गजनीके विवरणमें लिखा है कि "मैंने एक और इतिहासमें लिखा देखा है कि जब हिन्दुओंके राजाने सुबुक्तगीनपर गजनीमें आक्रमण किया उस समय उसने कुएँमें गोमांस आदि अपवित्र वस्तुओंके डालनेकी आज्ञा दी। उसके यह कहते ही हाड मांसकी वर्षा होने लगी, और ऊपरसे बरफ पडने लगा, आँधी आई, इस सुअवसरमें सुबुक्तगीनने शत्रुको परास्त किया।" बाबरने और भी लिखा है कि-"मैंने गजनीमें उस कुएँके विषयमें अनेक बार पूछा, परन्तु किसी प्रकार भी मुझे उसका भेद न मिला (१८० पृष्ठ) बाबरने जब भारतवर्षको जय किया तब उसको हिन्दुओंके आचार व्यवहार सब विदित हो गये थे, उस समय वह अवश्य ही इस प्रवादके मूल कारणको प्रगट करनेमें समर्थ हुआ था, वह इस बातको भली भाँतिसे जानता था कि सुबुक्तगीनने केवल अपने शत्रुओंको धर्मसंस्कारके कारण ही जय किया था। जिस कुएँका जल हिन्दू पाते हैं उसमें गोमांस आदि अपवित्र वस्तुओंके पडनेसे वह कभी उसके जलको अपने व्यवहारमें नहीं लावेंगे, यही विचार कर उसने ऐसा किया था, और इसी लिये हिन्दू युद्धभूमिसे भाग गये। और ऐसे ही उपायोंसे विख्यात बहुगण परास्त हुए थे।"

(१) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखा है कि इस अरसेमें खबर आई कि, समुद्रके किनारेसे म्लेच्छ, जिन्होंने पहिले सुबाहुपर हमला किया था, फिर फरीदशाह खुराशानवालेकी सरदारीमें चार लाख सवार लिये हुए लडनेकी तैयारीसे चले आते हैं।

(२) किसी मानचित्रमें भी उक्त दोनों नगरोंके नामका उल्लेख दिखाई नहीं देता। सरविलियम लिखते हैं कि "खुरासानमें कुजरे साख और वालखमें पिंकेर नामका नगर है।"

सेना युद्धमें मारी गई। फिर यवनोंका दल बचीबचाई सेनाको साथ ले लडनेको आया, नरेश्वर रजने इस समय भी पहिलेकी ही तरह अपने प्रबल बाहुबलसे समरसागरमें शत्रुओंको परास्त कर दिया, परन्तु इस समय उनका पुत्र गज पूर्व राज्यके राजा यदुभानुकी पुत्री हंसावतीके साथ विवाह करके स्त्रीके साथ इस रणभूमिमें आया था, नरनाथ रजने विपक्षियोंके शस्त्रोंके आघातसे क्षतविक्षत होकर प्राण त्याग किये। इसके ऊपरके दोनों संग्रामोंमे ही खुरासानपति एकबार ही परास्त हो गया, और अन्तमें उसने पौत्तलियोंके राज्यमें कुरानको प्रचार होने और मोहम्मदियोंकी व्यवस्थाके विधानको चलानेके लिये रूमके राजासे सेनाकी सहायता माँगी। जिस समय इस प्रकारसे यवन लोग दलबलको जुटाकर अपना बल प्रबल करने लगे उस समयसे ही राजा गज मंत्रीयोंको बुलाकर इसका विचार करने लगे।

जिस देशमें यह समरानल प्रज्वलित हुई थी; उस देशमें कोई भी ऐसा बडा किला नहीं था कि जिसपर अगणित सेनाके विरुद्धमें खडे होकर संग्राम किया जाय. सबकी सम्मतिसे उत्तरकी ओरवाले पर्वतके ऊपर एक बडा भारी किला बनाया गया, राजा गजने इसकी सहायताके लिये अपने मित्रोंको बुलाया और वह अपनी कुलदेवीकी उपासना करने लगे। देवीने राजासे कहा कि हिन्दुओंके शासनकी सामर्थ्य लोप हो जायगी। परन्तु देवीने राजा गजको एक किला बनवाकर उसको गजनी नाम रखनेकी आज्ञा दी। जिस समय किला बनकर तैयारीपर आया उस समय राजा गजको समाचार मिला कि रूम और खुरासानके दोनों अधीश्वर अपनी सेना लेकर अत्यन्त निकट आ गये है"।

रूमीपति खुरसानपति, हय गय पाखड पाय।
चिन्ता तेरे चित्त लगि, सुनियो यदुपतिराय॥

भट्टी इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है, "कि राजा गज यदुपतिकी जयका डंका बजाने लगा· सेनाके व्यूहकी रचना करके स्वयं सज गया, उपहारके द्रव्य पात्रोंमें दिये जाने लगे, और ज्योतिषियोंको इस प्रकारसे शुभ मुहुर्त देखनेकी आज्ञा दी, उन्होंने मूहर्त देखकर कह दिया कि, इस शुभ मुहूर्तमें यात्रा करनेसे अवश्य विजय होगी"।

"माघ महीनेकी सुदि त्रयोदशी बृहस्पतिके दिन एक पहरके पीछे वह शुभ दिन था। उसी शुभ मुहूर्तमें शुभ यात्राकी सूचना देनेवाला बाजा बजने लगा। उस दिन महाराजने केवल आठ कोशपर ही जाकर अपने डेरे डाल दिये, दोनों म्लेच्छ राजा भी अपनी २ सेनाको एकसाथमें मिलाकर आगे बढने लगे, परन्तु उसी रात्रिको खुरासानपतिने उदररोगसे प्राण त्याग किये। जब रूमके राजा शाह सिकन्दर[२] रूमीके पास यह समाचार भेजा गया, कि शाह सामेराजकी मृत्यु हो गई है, तब उसने महा

(१) उर्दू टाड राजस्थानके पेज २५७में यों लिखा है कि मशहूर मुकाम पलासी भी इसी तर-कीबसे फतह हुआ था।

(२) उर्दू तर्जुमेमें शाह ममरेज।

भयभीत होकर कहा,हम मर जाते तो अच्छा था;जिस समय इस महान् कल्पनाजालका विस्तार किया था उस समय भगवान्ने अन्य अभिप्रायसे न जाने हमें क्यों अलग कर दिया। परन्तु रूमीपति अत्यन्त भयभीत होकर भी प्रबल समुद्रकी तरंगके समान अपनी सेनाको साथ लेकर चला। हाथीकी पीठपर हौदा रक्खा गया और शृङ्खलाबद्ध मनुष्योंके पैरोंकी ध्वनिके कानमे पहुँचते ही चारोंओर भयंकर रणभेरी बजने लगी। सचल और अचलके समान सेनादल चलने लगा. धूलिके उडनेसे आकाशमें अंधकार छा गया, उज्ज्वल शस्त्रोंपर सूर्य भगवानकी उज्ज्वल किरणें पडकर उनकी शोभाको और भी उज्ज्वल करने लगीं. जब दोनों पक्षकी सेनाका दल चार कोशपर पहुँच गया, तब राजा गज और उनके सामन्तोंने कुल देवताकी पूजा करके योगिनियोंको पीछे रक्षामें रखकर असीम साहसके साथ युद्धमें आगे गमन किया। क्रोधित हुए सिंहके समान प्रत्येक योद्धा परस्पर एक दूसरेपर आक्रमण करने लगे; पृथ्वी कंपायमान हो गई;आकाशमें अंधकार छा गया.उस गंभीर अंधकारमें वीरोंकी उज्ज्वल तलवारोंके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई नहीं पडता था। समरका घंटा बजने लगा. घोडोंके विकट शब्दने रणक्षेत्रको कंपायमान कर दिया, भादोंके महीनेकी अंधरी रात्रिके समान सेनाकी श्रेणी परस्पर एक दूसरेसे टकराने लगी, योधाओंका सिंहनाद चारों ओर होने लगा, तलवारकी धारसे सैकडों वीरोंके शरीर छिन्न भिन्न होकर पृथ्वीपर गिरने लगे और रुधिरकी नदी बह निकली। दोनों पक्षमें प्रबल युद्धकी अग्नि भडक उठी। रणभूमिके एक प्रान्तमें यदुराय और दूसरी ओर खाँ और अमीर गणोंने महावीरता प्रकाश करके अपने यशको उज्वल कर दिया। प्रबल बलशाली वीरोंके शवोंसे युद्धभूमि ठसाठस भर गई। वीर अपने २ स्वामिके लिये असीम साहस करके प्राण त्याग करने लगे। अन्तमें हार मानकर शाहकी सेना भाग गई। उसमें की पचीस हजार सेना युद्धमें कट गई; वह हाथी और सिंहासन तकको छोडकर प्राणोंके भयसे भाग गए। उस भयानक रणभूमिमें केवल सात हजार हिन्दुओंने अपने जीवनकी आहुति दी, शीघ्र ही हिन्दूओंकी सेनामें विजयका डंका बजने लगा और यदुवंशी राजा जयलक्ष्मीका आलिंगन कर गौरवके साथ अपनी राजधानीको लौट आये।

महाराज गज इस प्रकारसे जय प्राप्त करके अपनी राजधानीमें आ राज-सिंहासनपर विराजमान हुए। यदुवंशियों (भट्टी) के इतिहासवेत्ताने लिखा है. कि धर्मराज युधिष्ठिरके ३००८ संवत्में वैशाख महीनेके तीसरे दिन रविवार रोहिणी नक्षत्रमें महाराज गज गजनीके सिंहासनपर विराजमान हुए, और यदुवंशियोंका शासन करने लगे।

इस जयप्राप्तिके कारण उनकी शासनशक्ति अत्यन्त ही प्रबल हो गई, उन्होंने क्रम २ से सम्पूर्ण पश्चिमी देशोंको जीतकर अंतमें काश्मीरके राजा कंदर्पकेलिको

(१)कर्नल टाडने इस निर्दुक्त समयको भी भ्रांतिपूर्ण कहा है. हम कह सकते हैं कि इतिहास वेत्ताकी यह युक्ति सत्य है।

अपने घरपर आनेके लिये कहला भेजा। परन्तु महाराज कंदर्पकेलिने उनकी उस आज्ञाको पालन नहीं किया, उन्होंने कहला भेजा कि रणभूमिमें विना परास्त हुए यदि सम्पूर्ण ब्रह्मांड भी मेरे ऊपर पतित हो जाय तो भी मैं दूसरे राजाके यहाँ नहीं जा सकता। राजा गज यह उत्तर सुनकर अत्यन्त ही क्रोधित हुए और शीघ्र ही वह कश्मीरको विजय करनेकी इच्छासे चले। उन्होंने घोर युद्ध करके कश्मीरको विजय कर कंदर्पकेलिकी कन्याके साथ विवाह किया। उस रानीके गर्भसे राजा गजके शालिवाहन नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ"।

जब इन राजकुमारकी अवस्था बारह वर्षकी थी उस समय यह समाचार आया कि म्लेच्छगण फिर खुरासानसे युद्ध करनेके लिये चढे चले आरहे हैं, यह समाचार पाते ही राजा गज अपनी कुलदेवीके मंदिरमें जाकर इकला तीन दिनतक देवीकी उपासना करता रहा, चौथे दिन देवीने महाराज गजको दर्शन दिया और कहा कि तुम्हारे हाथसे शत्रुदल अवश्य ही गजनीको छीन लेगा, परन्तु समय आनेपर तुम्हारे वंशवाले फिर इस गजनीको अपने अधिकारमें कर लेंगे, पर हिन्दू स्वरूपसे नहीं वरन् मुसल्मान होकर। देवीने राजा गजको एक और आज्ञा दी कि अपने पुत्र शालिवाहनको पूर्वदेशकी ओर हिंदुओंमें भेज दो, शालिवाहन वहाँ जाकर अपने नामसे नई राजधानी स्थापित करेंगे। देवीने और भी कहा कि उसके पन्द्रह पुत्र उत्पन्न होंगे और उस वंशका क्रमसे विस्तार होता रहेगा। यद्यपि आप गजनीकी रक्षाके समय रणक्षेत्रमें शयन करोगे, परन्तु परलोकमें आपको महान गौरव देनेवाला पुरस्कार प्राप्त होगा।

"महाराज गजने देवीके मुखसे यह भविष्य वार्ता सुनकर शीघ्र ही अपने कुटुम्बी और मित्रमंडलीको बुलाकर ज्वालामुखी[1] तीर्थके दर्शन करनेका बहाना कर अपने पुत्र शालिवाहनके साथ सबको पूर्वदेशमें भेज दिया"।

"कुछ कालमें ही शत्रुओंका दल गजनीसे पांच कोश दूरीपर आ पहुँचा। राजा गज अपने चचा श्रीदेवको गजनीकी रक्षापर नियुक्त कर स्वयं सेनाको साथ ले शत्रुओंपर आक्रमण करनेके लिये आगे बढे। खुरासानके अधीश्वरने अपनी सेनाको पांच भागोंमें विभक्त करके चारों ओर रणकी अग्नि प्रज्वलित कर दी; राजा गजने अपनी सेनाको तीन भागोंमें विभक्त करके शत्रुदलपर आक्रमण किया, क्रमसे विभीषण समरने अत्यन्त भयंकर मूर्ति धारण की। अन्तमें रणभूमिमें खुरासान पति और राजा गज दोनों ही मारे गये। पाँच पहरतक यह संग्राम हुआ। इस युद्धमें एक लाख म्लेच्छ और तीस हजार हिन्दुओंके जीवनका बलिदान हुआ। खुरासान पतिके पुत्रने गजनीपर आक्रमण किया। श्रीदेवने तीस दिनतक प्रबल आक्रमण करके गजनीकी रक्षा की और अन्तमें जौहरकी[2] किया, जिसमें नौ हजार वीर हिन्दुओंका संहार हुआ।

---

(१) ज्वालामुखी हिंदुओंका पवित्र तीर्थ कहा गया है, यह शिवलाक पर्वतपर स्थित है।

(२) जौहर वा जुहारकी रीतिका वृत्तान्त पाठकगणोंने प्रथम काण्डमें यथास्थान देखा होगा।

हमारे स्वदेशी इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है कि जब यह हृदयभेदी शोचनीय संवाद शालिवाहनतक पहुँचा, तब वह महा शोकसमुद्रमें मग्न होकर बारह दिनतक पृथ्वीपर सोये, और अन्तमें उन्होंने पंजाबमें आकर नद नदी और तडाग आदिसे पूर्ण एक देशमें सबको इकट्ठा किया और नवीन राजधानी स्थापित करनेके उपरान्त अपने नामके अनुसार उस नगरीका नाम शालिवाहनपुर रक्खा। उनकी नवीन राजधानीके चारों ओरके आदि भूमिहारोंने आकर उनको अपना अधीश्वर स्वीकार किया। महाराज विक्रमादित्यके प्रचलित किये संवत् ७२ के भादोंके महीनेकी अष्टमी रविवारके दिन शालिवाहनपुर नामक राजधानी प्रतिष्ठित हुई थी।

"शालिवाहनने समस्त पंजाबके देशोंको एक २ करके जीत लिया। उसके औरस पन्द्रह पुत्र उत्पन्न हुए, और सभीको राज्यपदपर अभिषेक हुआ उनमें तेरहके नाम इस प्रकार हैं–

१–बालबन्द।	७–लेख।
२–रसाल।	८–जसकर्ण।
३–धर्माङ्गद।	९–नीमा।
४–वच्छ।	१०–मात।
५–रूपा।	११–नेपक।
६–सुन्दर।	१२–गांगेव।

१३—जगेव।

इन सबोंने बाहुबलसे एक २ स्वाधीन राज्य स्थापित कर अपनी २ शासनशक्तिका विस्तार किया।"

देशीय इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है. "बालन्दके युवा होते ही दिल्लीके अधीश्वर तंवरवंशी[२] जयपालने अपनी[२] कन्याके साथ बालंदका विवाह कर देनेके लिये प्रचलित रीतिके अनुसार नारियल भेज दिया, उसे बालन्दने आदरसहित ग्रहण किया। बालन्द

---

(१) कर्नल टाड साहब अपने टीकेमें लिखते हैं कि, गजनीसे भागे हुए शेष यदुवंशी राजाके पंजाबमें इस शालिवाहनपुरके स्थापनके समय ७२ शकाब्दी अथवा १६ ईसवी निर्धारित होती है। शालिवाहनपुर पंजाबके ठीक किस स्थानमें था, उसका हम निश्चित निर्द्धारण करनेका कोई उपाय भी नहीं देखते, किंतु ऐसा बोध होता है कि वह लाहोरके अत्यन्त निकट था।

(२) टाड साहब अपने टीकेमें लिखते हैं कि इतिहासवेत्ताने प्राचीन और परवर्ती घटनाको गोलमाल करके एक जगह मिला दिया है। उन्होंने कहा है कि इतिहासलेखक धारावाहिक वृत्तान्तको इतिवृत्तमें न लिख सके। उनका कथन है कि दिल्लीके राजाका नाम जयपाल हो सकता है, परन्तु तुंवार राजवंश कारिकाओंकी ओर दृष्टि करनेसे शालिवाहनके सामयिक जयपाल नामवाला कोई भी दिल्लीका राजा नहीं था। टाडका दूसरा मत यह है कि शालिवाहन गजनीसे ७२ संवत्में पंजाबमें न आकर उससे और भी पीछे आये थे।

दिल्लीपतिकी बेटीके साथ पाणिग्रहणके लिये बडे समारोहके साथ गये । महाराज जयपालने आगे बढकर उनको अत्यन्त आदरके साथ ग्रहण करनेमें किसी प्रकारकी कसर न की । बालन्द नवविवाहिता वधूके साथ शालिवाहनपुरमें आये, महाराज शालिवाहनने अपने पिताकी मृत्युका बदला लेनेके लिये तथा शत्रुदलसे गजनीको अपने अधिकारमें करनेके अभिप्रायसे सेना सजायी, और शीघ्र ही वीरसाजसे सुसज्जित होकर उन्होंने म्लेच्छोंका संहार और गजनीका उद्धार करनेके लिये अटक नदीके पार होकर शत्रुपक्षके नेता जलालकी बीस हजार सेनाके विरुद्ध रणभूमिमें दर्शन दिया ; इस समरमें सम्पूर्ण म्लेच्छ मारे गये । महाराज शालिवाहनने जयलक्ष्मीका आलिंगन करके गवके साथ अपने पिताकी राजधानी गजनीको फिर अपने हस्तगत कर लिया । कुछ समयतक गजनीमें रहकर अन्तमें महाराज शालिवाहन अपने बडे पुत्र बालन्दको राज्यशासनका भार अर्पण करके आप अपनी राजधानी पंजाबको लौट आये। परन्तु अब उन्हें अधिक समयतक इस संसारमें रहना नहीं बदा था, शीघ्र ही उनकी मृत्यु हो गई । महाराज शालिवाहनने तेंतीस वर्ष और नौ महीने तक राज्यछत्र धारण किया था ।

"पिताकी मृत्युके उपरान्त बालन्द राज्यपर अभिषिक्त हुए । उनके अन्य भाइयोंने इस समय पंजाबके सम्पूर्ण पर्वती देशोंमें स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया था, परन्तु इस समय म्लेच्छ फिर प्रबल हो गये । उन्होंने फिर अपने आधिपत्यका विस्तार कर विशेष यत्नपूर्वक गजनीके चारों ओरके स्थानोंको अपने अधिकारमें कर लिया । इस समय बालन्दका कोई भी प्रधान मंत्री नहीं था वह इकले ही समस्त राज्यके विभागोंकी देखभाल करते थे, उनके सात पुत्र उत्पन्न हुए ।

१–भट्टी ।	४–झंझ[१] ।
२–भूपति ।	५–सहराव ।
३–कलूराव ।	६–भैंसडेच ।

७–मंगरेव ।

बालन्दके दूसरे पुत्र भूपतिके औरस चाकेता नामवाले एक पुत्रने जन्म लिया, उससे चाकेता जातिकी उत्पत्ति हुई" ।

"चाकेताके औरस निम्नलिखित आठ पुत्र उत्पन्न हुए ।

१—देवसी ।	५—जयपाल ।
२—भैरों ।	६—धरसी ।
३—क्षेमकर्ण ।	७—विजली खान ।
४—नाहर ।	८—साहसमन्द ।"

---

(१) ग्रन्थकार कहते हैं कि बाबरने यदुवंशसे उत्पन्न यदुगिरिकी जिस जनजूही जातिका उल्लेख किया है वही जोहिया या जदु जाति है, यह झंझ, जोहिया जदू ज्ञातिके आदि पुरुष हैं ।

"बालन्द अपने पौत्र चकेताके हाथमें गजनीके शासनका भार अर्पण करके शालिवाहनपुरमें लौट आया, परन्तु इस समय म्लेच्छ इतने प्रबल हो गये थे, और उनकी संख्या भी क्रमसे इतनी बढ गई थी कि जिससे चाकितोंने उन म्लेच्छोंकी सेनाको अपनी सेनामें युक्त कर लिया, और कितने ही म्लेच्छोंको सामन्तोंके पदपर भी वरण किया, उस म्लेच्छ सामन्तमण्डली और सारी सेनाने महाराज चाकेतोंके सम्मुख यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि यदि आप अपने पिताके धर्मको छोड दें तो हम आपको बलखबुखाराकी गद्दीपर बिठावेंगे। उस देशमें केवल उजबक जाति ही निवास करती थी, और वहांके राजाके कोई पुत्र भी न था, केवल एक परम सुन्दरी कन्या थी"। चकेताने उसी लालचमें आकर बलखबुखारेके अधिपतिकी कन्याक साथ पाणिग्रहण किया, और अन्तमें यहाँके अधीश्वर पदपर अभिषिक्त हो अट्ठाईस हजार अश्वारोही सेना अपने अधीनमें की। "वाह्लीक (बलखबुखारा) इन दोनों राज्योंके बीचमें एक स्रोतस्वती नदी वहती थी। चकेता उस बाह्लीक (बलख) स्थानसे लेकर भारतप्रदेशके मार्गतक सुविस्तृत राज्यके अधीश्वर हो गये। उस चाकितोंसे ही चगत्ता मुगलजातिकी उत्पत्ति हुई है"।

"बालन्दके तीसरे पुत्र कलूरावके आठ पुत्र उत्पन्न हुए, उनके वंशधर कलर नामसे विदित हैं। उनके नाम इस भांति हैं,—

१—श्योदास।	५—समोह।
२—रामदास।	६—गंगू।
३—अस्सो।	७—जम्सू।
४—किसतन।	८—भागू।

इन सभीने मुसल्मान धर्मको धारण किया, इस संप्रदायकी संख्या अधिक थी; यह नदीके पश्चिमी तीरपर स्थित पहाडी देशमें निवास करते थे और कालान्तरसे यही नामसे विख्यात हुए[२]"।

"चौथे पुत्र झुझके औरस सात पुत्र उत्पन्न हुए;—

---

(१) कर्नल टाडने लिखा है कि "प्राचीन भारतके सिदियन यदुवंशियोंके राजाने इसी स्थान-पर मुसल्मान धर्मको स्वीकार किया है, इस समाचारमें कुछ सन्देह करनेकी आवश्यकता नहीं है, कि मुसल्मान इतिहासवेत्ताओंका मत है कि चकितोंके नेता तमूचीन जो चेंगचखां नामसे विदित है उसे पौत्तलिक कहा है और मुहम्मदख्वारजमके पिता तकशका भी ऐसा ही वृत्तान्त लिखा है। इनमें एकको जट वा जुति जातीय और दूसरेको ताक वा तक्षक जाति लिखा है। दोनोंसे ही एशियाकी दो प्रधान जातियां उत्पन्न हुई हैं।

(२) टाड महोदय लिखते हैं कि यह पहिले ही कहा जा चुका है कि वालन्दके पन्द्रह भाइयोंने पंजाबके पर्वती देशोंमें अपना राज्य स्थापित किया, और उनके पुत्रोंने सिन्धुनदीके पश्चिम (दामन) में अपने राज्यका विस्तार किया। सम्पूर्ण अफगानजाति नियूज अर्थात् यहूदी वंशसे उत्पन्न कही गई हैं ऐसा अनुमान होता है, इससे सर्व साधारणका कौतूहल बढता है। और—

१-चम्पू।	४-हंसा।
२-गोकुल।	५-भांदो।
३-मेघराज।	६-रासू।

७-जग्गू।

इनके वंशधर भुज नामसे पुकारे गये, और इसीसे अन्यान्य पुत्र भी भिन्न जातिके नेता हुए।

"बालन्दके ज्येष्ठ कुमार भट्टी अपने पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। भट्टीने अपने प्रबल पराक्रम और बाहुबलसे इकले ही चौदह राजाओंको जीतकर उनकी सारी धनसम्पत्ति अपने अधिकारमें कर ली, उनके धनका परिमाण इतना था कि चौबीस हजार खच्चरोंपर चला करता था। ६० हजार अश्वारोही और अगणित पैदल सेना उनके आधीनमें थी, महाराज भट्टीने सिंहासनपर बैठते ही अपनी सम्पूर्ण सेनाको लाहौरमें इकट्ठा करके कनकपुरके राजा वीरभानु बघेलके विरुद्ध युद्ध करनेकी तैयारी की। शीघ्र ही कनकपुरमें भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गई, और उस रणक्षेत्रमे वीरभानुकी चालीस हजार सेनाका नाश हुआ।"

"भट्टीके दो पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम मंगल राव और दूसरेका नाममसूर वा महीसुर राव था। इन महावीर भट्टीसे ही भट्टी वंशका नाम चला; सैकडों वर्षसे यह वंश यदुवंशियोंके नामसे विख्यात था, परन्तु इस समयसे अब भट्टीवंश लोक प्रसिद्ध हुआ।

"भट्टीकी मृत्यु होनेपर उनके पुत्र मंगलराव पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। परन्तु यह अपने पिताके समान भाग्यशाली नही थे। इसी समयमें गजनीके अधीश्वर धुन्धीने अपनी अगणित सेना ले शीघ्र लाहौरपर आक्रमण किया। परन्तु मंगलरावने उन म्लेच्छोंकी सेनाके विरुद्ध युद्धकी तैयारी नहीं की और अपने बडे पुत्रको लेकर वह नदीके

---जो आफगान इस समय शालिवाहनके वंशधरोंद्वारा अधिकारके देशोंमे निवास करते हैं, वे भी सभव है कि यदुवशी हों। उन्होंने मुसल्मान धर्म्ममें दीक्षित होकर अपने प्राचीन वंशके गौरवकी रक्षाके लिये यदु शब्दको यहूदी शब्दमें बदलकर अपनी जातिका शेष विवरण कुरानसे ले लिया है, अफगानियोंका प्रधान वंश यूसुफजई अर्थात् यूसुफके वंशवाले विख्यात हैं, और काबुल और गजनी देशमें उनका आदि निवासस्थान है और आजतक उनके एक सम्प्रदायका नाम जादून रक्खा है। बालन्दके वंशधरोंने सिंधुनदीके पूर्वप्रान्तकी ओर पहाडी देशको विजय किया था, वह आजतक उसी देशमें निवास करते है। आफगान यहूदी नहीं हैं, वह यदुवंशी है यह हमें प्रमाण मिला है और वह वास्तवमें माननीय भी हैं।

(१) देशीय इतिहासवेत्ताकी उक्तिसे ऐसा बोध होता है कि लाहौर और शालिवाहनपुर एक ही राजधानीका नाम था, परन्तु पीछे जाना गया कि यह दोनों नगर एक नहीं थे उस समय यह दोनों नगर पास पास थे, शालिवाहनपुर वा शालपुर पंजाबके किस स्थानमें था,इसका निश्चय नहीं हो सकता। टाड साहबने ऐसा अनुमान किया है कि प्राचीन नगरोके विध्वंस होनेके पीछे ही उसके ऊपर यह शालिवाहनपुर बनाया गया था।

वीरवाले बनमें भाग गये। शालिवाहनपुरके जिन स्थानोंमें राजाका कुटुम्ब रहता था उन्हें शत्रुदलने जा घेरा; परन्तु महीसुर राव वहाँसे भी भागकर लक्खा जंगलमें जा रहे। लक्खा जंगलमें केवल किसान लोग ही रहते थे, इस कारण महीसुर रावने बडी सरलतासे उन्हें पराधीनताकी शृंखलामें बाँधकर वहीं अपना राज्य जमाया। महीसुर रावके दो पुत्र उत्पन्न हुए उनमें एकका नाम अभयराव और दूसरेका नाम शारण राव था। बडे अभय रावने अपने बाहुबलसे समस्त लक्खी जंगलके देशोंमें अपनी शासनशक्तिका विस्तार किया। उस समय उनके वंशकी संख्या बढने लगी; और वे आभोरिया भट्टी नामसे विदित हुए। शारण अपने भतीजेसे झगडा करके अन्य स्थानपर चला गया और वहाँ उसके वंशधर समयानुसार कृषकश्रेणीमें गिने गये। वह सर्व साधारणमें शारण नामसे प्रसिद्ध है।"

भट्टीके ज्येष्ठ पुत्र मंगलराव जो म्लेच्छोंके भयसे अपने पिताकी राजधानी शालिवाहनपुरको छोडकर भाग गये थे, उनके निम्नलिखित छः पुत्र थे-

१—मंडमराव	४—शिवराज
२—कलरसी।	५—फूल।
३—मूलराज।	६—केवल।

जिस समय मंगलराव अपने पिताके राज्यसे भाग गए उस समय उनके पुत्रोंकी रक्षा प्रजाने स्वयं गुप्तभावसे की थी। तक्षक जातीय सैतादिम्न नामका

---

(१) कर्नल टाड साहब बीकानेरके इतिहासमें लिखते हैं कि जाटोंका वासस्थान कन्धार था। परन्तु जाट इस बातको स्वयं कहते हैं कि वहां यदुवंशी रहते थे। इस समय किसकी बातपर विश्वास किया जाय? यहां देशीय इतिहासवेत्ताओंने प्रमाण दिये हैं कि शारणसे एक श्रेणीमें जाटोंकी सृष्टि हुई है और वही यदुवंशी हैं। कर्नल टाड साहबने हजारों बार मध्य एशियाके जिस नामके साथ जाट जातिके नामकी सादृश्यता अनेक स्थानोंमें दिखाई है कि जाटगण जट जातीय हैं। उन्होंने केवल यत्किंचित् नामकी सादृश्यता देखकर ही इस प्रकारका विचित्र सिद्धान्त किया है, उन्होंने यहां लिखा है कि मैंने सुना था कि बियाना और भरतपुरके जाट कन्धारसे आये थे और वही यदुवंशी है, परन्तु यह नहीं कह सकते कि शारणके वंशधर क्यों जाट नामसे पुकारे गये, इसको हम कह सकते हैं कि, शारण अवश्य ही अपने बडे भाईका कोई बडा अपराध करके समाजसे अलग हुआ था, और इसी कारणसे उसके वंशवालोंकी अवनति हुई।

(२) इतिहासवेत्ता टाड महोदयने इस स्थानपर अपने टीकेमें लिखा है कि "इस घटनासे एक जातिका उल्लेख पाया जाता है, और यदुवंशियोंके पंजाबके सिंहासनपर बैठनेके सम्बन्धमें यहां एक अत्यन्त प्रयोजनीय बात जानने योग्य है। मैंने इतिहासमें एक स्थानपर इस जातिका संक्षिप्त वृत्तान्त लिखा है; परन्तु उसे लिखनेके पीछे मैंने टाकजातिकी प्राचीन राजधानीका उद्धार किया है, और अलिकजंडरके मित्र तक्षशिलाकी राजधानीमें जो स्थान था उससे हमने अनुमान किया है कि ठीक उस स्थानकी भी खोज कर ली है। पहिले मैंने एक जातिका विवरण वर्णन किया था कि उस नगरका नाम किसी मनुष्यके नाम विशेषसे उत्पन्न नहीं हुआ है। वहांके-

एक भूमिया था । जिसके पूर्वपुरुषगण, पुरातन भट्टिराजगणोंके द्वारा सामर्थ्यहीन हो अत्यन्त दीनदशामें पडे थे। उसने पिताका प्राचीन बदला लेनेकी इच्छासे विजय पाये हुए म्लेच्छराजसे प्रगट किया, कि मंगलरावके कितने ही पुत्र और कुटुम्बके मनुष्य इसी नगरमें एक महाजनके घर रहते हैं । म्लेच्छराजने उनके यह वचन सुनकर शीघ्र ही अपनी सेनाको उसके साथ भेज दिया। सतीदास उस सेनाके साथ उक्त श्रीधर महाजनके घर गया और इसको पकड कर राजाके सम्मुख ले आया। म्लेच्छराजने श्रीधरसे कहा–“ कि यदि तुम शालिवाहनके प्रत्येक राजकुमारको मेरे सम्मुख नहीं लाओगे तो याद रक्खो कि तुम्हारे कुटुम्बमें एकको भी जीता न छोडूँगा। इसपर महा भयभीत होकर महाजन श्रीधरने विनय करके म्लेच्छराजाके सम्मुख निवेदन किया कि“मेरे यहां राजाका एक पुत्र भी नहीं है । जो कई बालक मेरे यहां रहते हैं, वह एक भूमियाके पुत्र हैं। वह मिया मेरे ऋणसे बँधा हुआ इस युद्धके समय भाग गया है । म्लेच्छराजने महाजनके इन वचनोंपर किंचित् भी ध्यान नहीं दिया, और शीघ्र ही बालकोंको अपने सम्मुख लानेकी आज्ञा दी । जब महाजन श्रीधरने देखा कि राजकुमारोंके प्राणोंकी रक्षाका और कोई उपाय नहीं है, तब उनके प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये वह म्लेच्छराजाकी आज्ञानुसार कार्य करनेमें सम्मत हुआ। शीघ्र ही यदुवंशी राजकुमार किसानके बालकके वेषमें म्लेच्छराजाके सम्मुख लाये गये, और म्लेच्छराजाने उनके साथ भूमिहारोंकी कन्याका विवाह कर दिया। इस प्रकारस शालिवाहनके वंशसे उत्पन्न सम्पूर्ण राजकुमार जो श्रीधरके घरमें थे, उनमें कलोरके पुत्र भी कलोरिया जाट, मुंदराज और शिवराजके पुत्र मुंदाजत और शिवराजत नामसे विख्यात हुए। कुमार फूल और कुमार केवलाका नाई और कुम्हारके पुत्र कहकर म्लेच्छराजाके सम्मुख परिचय दिया था, इस कारण उन दोनों जनोंके वंशवाले उन दोनों श्रेणियोंमें गिने गये ” ।

भट्टी इतिहासलेखकने फिर लिखा है, कि “ मंगलराव जिस गाडा नदीके किनारेके बनैले देशोंमें रहते थे, उन्होंने पीछे उस नदीके पार होकर एक नवीन देशपर अधिकार करके उसने अपना अलग राज्य स्थापित किया; इस समय बरा-

---

—अधीश्वर तक्षक वा नागवंशके राजा थे, इसीसे उक्त नाम हुआ है। पुस्तक बाबरीकी सहायतासे मैं इसका उद्धार करनेको समर्थ हुआ हूं। बाबर तो देशकी सीमाके वर्णनमे लिखता है, कि, “पश्चिममे एक जंगल है जिसे बाजार या टाक भी कहते हैं वहाँके राजाका ताक नाम भी है” इस कथाको अनुवादकने यहाँ मिलाकर कहा है कि “तक नगर बहुत समयसे दामानकी राजधानी था।” मि० एलफिन्स्टोनके मानचित्रमें जो बाजार ताक नामक स्थान है जिसको बाबरने तक कहा है, वह बाजार ताक अटकसे कुछ ही कोस दूरीपर है। “जो तक वा तक्षक अर्थात् नागवंश एक समयमें समस्त भारतवर्षमे विस्तारित हुआ था, निस्सन्देह यह नगर और नदीका नाम उसी तक्षकवंशके नामके अनुसार पडा है ” ।

हाजाति उस नदीके किनारे निवास करती थी । उनसे पहिले वहां बूत गणोंके बूता राजपूत राजा थे। पुगलदेशके प्रमार गण[3] धातदेशके सोढा जाति, लुद्रदेशके लुद्रराजपूत[4]गण निवास करते थे। मंगलरावने इन राजाओंके निकट आश्रय लिया और सोढा जातिके अधीश्वरोंकी सम्मतिके अनुसार उन्होंने लुद्र बराहा और सोढा जातिके मध्यस्थ भूखण्डोंपर अपना वासस्थान बनाया। जब मंगलरावकी मृत्यु हो गई तब उनका पुत्र मंडमराव पिताके पदपर विराजमान हुआ "।

मंडमराव अपने पिताके साथ शालिवाहनपुर भाग आया था । धोरके राजाओंने उसको राजा मानकर उसके अभिषेकके समय महामूल्यवान् द्रव्य भेजे । अमरकोटके सोढा जातिके राजाने मंडमरावके करकमलमें अपनी कन्याको अर्पण करनेकी इच्छासे उसके पास यह समाचार कहला भेजा। मंडमरावने तुरन्त ही इस बातको स्वीकार कर लिया, इस शुभ विवाहके समयमें अमरकोटकी राजधानीमें बडी धूमधाम हुई । मंडमरावके औरस तीन पुत्र उत्पन्न हुए:–

१—केहर ।

२—मूलराज ।

३—गोगेली ।

" केहर अमित तेजस्वी और असीम साहसी पुरुष था । एक समय आरोर[6]से कई सौ वाणिज्य द्रव्यसे भरे हुए घोडे मुलतानको जा रहे थे, उसने यह समाचार सुनते ही अपने कितने ही योधाओंको ऊँटोंके व्यापारियोंका भेष धारण कराकर उस वणिक्‌दलके पीछे भेजा; उन्होंने बडी शीघ्रतासे पञ्चनदके किनारे जाकर वणिक्‌दलपर आक्रमण कर उनके सारे द्रव्योंको लूट लिया, और फिर अपने स्थानको लौट आये । इस प्रकारकी छल चातुरीके कार्यसे उसका नाम सर्वत्र विख्यात हो गया । पीछे जालौरके

---

(१) बराहा जाति राजपूतोंकी एक शाखा है। टाड साहबने कहा है कि, यही इस समय मुसल्मान जातिमें गिने गये है।

(२) इस बूता राजपूत जातिका इस समय लोप हो गया है ।

(३) अत्यन्त प्राचीन कालसे प्रमारजाति पुंगलमें निवास करती आई है । स्मरणातीत कालसे अमरकोटके सोढाराजवंश मरुक्षेत्रमें निवास करते आये हैं एलिकजंडरने जो मगदा जातिका उल्लेख किया है ऐसा बोध होता है कि वह जाति यही है ।

(४) लुद्रभाका विवरण पीछे प्रकाश किया जायगा ।

(५) मूलराजके तीन पुत्र उत्पन्न हुए । उनके नाम यह है राजपाल, लोहवा, चूबर, बडे पुत्र राजपालके औरस रेन्नू और गेगू नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए । रेन्नूसे निम्नलिखित पाँच पुत्रोंने जन्म लिया, धोकर, पोहर, बुध, कलसू और जयपाल । इनके पुत्र भी एक २ सम्प्रदायके नेता हुए।

(६) टाड साहब टीकेमें लिखते हैं कि " सिन्धुनदीके ऊपर उपत्यकामे इस अत्यन्त प्राचीन राजधानीको १८११ ईसवीमें पाकर मै परम आनन्दित हुआ । अबुलफजलने जिस राजा श्रीधरकी राजधानी आलोरका उल्लेख किया है, यह वही राजधानी है ।

आलनसिंह देवराने, मंडमरावके बयप्राप्त पुत्रोंके निकट नारियल भेजा। विवाहका कार्य बडे समारोहके साथ समाप्त हो गया। विवाह हो जानेके उपरान्त यह अपने स्थानको चले आये, केहरने अपनी कुलदेवी तन्नोमाताके नामसे एक किलेका दीवार स्थापितकी परन्तु किलेके बिना तैयार हुए ही मंडमरावकी मृत्यु हो गई"।

केहर पिताके पदपर अभिषिक्त हुए। उनके राजसिंहासनपर बैठनेपर तनोटका किला बराहाजातिके अधीश्वर राज्यकी सीमामें बनाया गया है। यह कहकर बराहापति यशोरथ * ने सेनासहित तनोटपर आक्रमण किया। परन्तु मूलराजने बडे विक्रमके साथ तनोटकी रक्षा करके अन्तमें बराहियोंको परास्त करके भगा दिया।

अन्तमें यदुभट्टीके इतिहासवेत्ताने लिखा है, कि "७८७ संवत् ७३१ ईसवीमें माघमासकी पूर्णिमाको मंगलवारके दिन तनोटका किला बनानेका कार्य समाप्त हो गया, और देवी तनोमाताका एक पवित्र मंदिर वहाँ स्थापित हुआ। कुछ ही दिनोंके उपरान्त बराहाराजके साथ संधि हो गई। और उस संधिका यह फल हुआ कि मूलराजकी कन्याके साथ बराहापतिका विवाह हो गया"।

मुरक्कामें यदुभाटियोंकी राजधानी स्थापित होने तक ही हम उनकी प्राचीन वंशख्यातिका वर्णन करना आवश्यक समझते हैं। यद्यपि एक सुविस्तृत और विख्यात वंशका इतिहास ऊपर बहुत ही संक्षेपमें वर्णन किया गया है परन्तु इसके साथ ही साथ जो टीका टिप्पणी दिये गये है उनसे पाठकोंको पूरी सहायता मिलना संभव है और वे इसीसे निम्नलिखित चार सिद्धान्तोंपर अपना विचार स्थिर कर सकते है एवं निम्न बातोंका निश्चय कर सकते हैं।

प्रथम। यदुवंशियोंके पूर्व पुरुष श्रीहरिसे उत्पन्न हैं।

द्वितीय। जो यदुवंशी भारतवर्षसे भाग गये, वा जिन्होंने इच्छानुसार हरिकुल अथवा पांडवोंके साथ भारतवर्षको छोडकर सिन्धुनदीके पश्चिम देशोंको गमन किया उन्हींने मरुस्थलीमें उपवेशन स्थापन किया, गजनी राज्यकी प्रतिष्ठा की और रूम और खुरासानके बादशाहोंसे युद्ध किया।

तृतीय। वह लोग जावुलिस्थानसे भाग गये और पंजाबमें उपनिवेश स्थापन किया तथा उन्होंने शालिवाहनपुर नामक नवीन राजधानी प्रतिष्ठित की।

चौथा। उनका पंजाबसे भागना; मरुक्षेत्रके पवतके ऊपर विराजमान होना और तनोट दुर्गका बनाना।

साधु टाड साहबने उपरोक्त प्रकारसे इतिवृत्तको चार अंशोंमें विभक्त करके ऊपमें

---

* (१) कर्नल टाड साहबने लिखा है, "इससे ज्ञात होता है कि बराहाजाति (?) भट्टियोंके समान एक धर्मका अवलम्बन करती थी। इस घटनाके बहुत काल पीछे भी मुसल्मानोंने इन स्थानपर अपने अधिकारका विस्तार नहीं कर पाया। –(२) उर्दू तर्जुमेमें जसरथ।

कहा है कि,-"इस यदुवंशके आदि इतिहासकी अन्यत्र विशदरूपसे समालोचना की गई है इस कारण इस वंशके आदिमें इतिवृत्तके स्थानपर अधिक समालोचना करनेकी आवश्यकता नहीं है। छिन्नभिन्न सत्य घटनायें और भौगोलिक प्रमाणोंसे हम इस इतिहास-का साधारणतः विश्वास करते हैं, अर्थात् यदुवंशी राजाओंका एशियामें राज्य होना; और मुसल्मानोंके अभ्युदयके साथ ही साथ उनका वहांसे भागकर फिर भारतवर्षमें आना आदिमतोंकी विशेष पुष्टि करते हैं। हम ग्रीक इतिहासवेत्ताओंकी पुस्तकमें इस प्रकारके प्रत्यक्ष प्रमाण देखते हैं, कि ग्रीक वीर आटियोंक्रस इस देशके सोफागसेनस नामक भारतसिद्यन राजाके द्वारा मारे गये थे। इसीसे यदुवंशिओंने सारिया और वैक्ट्रियाके अधीश्वरके साथ युद्ध किया था। उसीसे कल्पना करके अनुमान करना होगा कि सुबाहु और उसके पुत्र गजसे इस नाम सोफागसेनसकी उत्पत्ति हुई है, और यह संभव भी हो सकता है क्योंकि ग्रीक इतिहासमें यह भी प्रकाशित है कि गजनीके यदुवंशी राजाओंने खुरासानके राजाओंके साथ युद्ध किया था।"

महात्मा टाड महोदय फिर लिखते हैं "कि सेइस्तान और उपत्यकाके दोनों ओर आदि समयमें और एक शाखा बसती थी। सिन्दसंमावंश साम्बसे उत्पन्न है। और ग्रीक गणोंने भी इस वंशका साम्ब कहा है, और इसी वंशके एक राजाने अलिकजंडर-के भारतविजयके समय विषम विघ्न उपस्थित किया था, इस वंशकी राजधानीका नाम साम्बका कोट वा संबनगरी था और आजतक सिन्धुके किनारे वह नगरी विराजमान है, ग्रीक गणोंने उसके नामको बदलकर मीनगढ नामसे उल्लेख किया।"

इतिहासवेत्ताका अन्तमें यह कहना है कि "चगत्ताई गण यदुवंशसे उत्पन्न हैं, इस अनुमानका अत्यन्त प्रयोजन है। मेवाडके राणा गणोंके आदि पुरुष बापा रावने इसी प्रकार चित्तौरमें अपनी राजधानी स्थापित कर वंशकी रक्षाके पीछे मध्य भारतवर्षको छोडकर खुरासानको गमन किया था। इन प्रमाणोंसे जाना जाता है कि

---

(१) कर्नल टाड साहबने राएल एशियाटिक सुसाइटीकी पुस्तकके तीसरे वाल्यूममें यदुवं-शियोंके इतिवृत्तकी समालोचना की है।

(२) इस भ्रमको हमने पहिले ही प्रगट कर दिया है इस कारण उसका उल्लेख करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। [अनु०]

(३) टाड महोदयने अपने टीकेमें लिखा है "मि० विलसन" को पोटालमी साहबके जुगरा-फियेसे सोगदियानाके भूवृत्तमें पांडु नाम मिला है और यवन हेकलके मतसे हिरात नगरको हरि नामसे कहा है।

इसके निकट मर्व वा मरुस्थली देश है। पांडु तथा हरिकुल भारतवर्षसे चलकर उक्त देश तथा मरुस्थलीमें चले गये। यदि इन दूर देशोंमें खोज की जाय तो बडी सरलतासे बहुतसे शिलालेख प्राप्त हो सकते हैं। समरकन्दके तोरणद्वार पर जो हमीरी भाषामें वर्णबद्ध खोदी हुई लिपि है वह क्या है ? बौद्धोंके देवमंदिर और बामियाकी गुहावलि तथा खोदा हुई अनुलिपि सभी अत्यन्त प्रयोजनीय और जानने योग्य बातें हैं"।

इतने दूरवर्ती देशोंमें हिन्दूधर्म प्रचलित था; और मध्य भारतवर्ष तथा भारतवर्षमें गतिविधिसे वाणिज्यका व्यवसाय विलक्षणतासे चलता था। ट्रान्सकाजियाना देश और पंजाब देशोंमें इसके तत्त्वकी विशेष खोज करने और पुराने स्थानोंकी खोज करनेमें नियुक्त होनेपर इस सम्बन्धमें अनेक आविष्कार पाये जा सकते हैं। शालिवाहनपुर कपिल्य नगरी, बहीरा, यदुका, डाङ्गबूमी, फालिया उसके सात नगर और तक्ष-शिलाकी राजधानी पाई जा सकती है। खोज करनेवाले वनवासी अफ्रीकाके बदले यदि इन देशोंकी खोजमें लिप्त होते तो, अनेक प्रयोजनीय ऐतिहासिक तत्त्व प्राप्त कर सकते थे, कारण कि यही स्थान सभ्यताकी जन्मभूमि है"।

द्वितीय अध्याय २.

खलीफा वलीदके समयमें राजा केहर, उनके वंशधरोंका भिन्न सम्प्रदायोंका नेता होना और पहिलेके समतलक्षेत्रमें अपना राज्य बढाना–उसकी हत्या–तनुको उस पदकी प्राप्ति–बराहा और लगा दोनों जातियोंपर आक्रमण–मुलतानके राजासे तनोटका किला घेरा जाना, उसकी हार-बूताकी राजकुमारीसे राव तनुका विवाह–उसके पुत्र गण–तनुसे गुप्तधनका आविष्कार होना–बीझनोट दुर्गका निर्माण–तनुकी मृत्यु—विजेरावको उस पदका मिलना–भट्टियोंके अधिपतिपर आक्रमण करनेके निमित्त लंगा जातिके साथ बराहा जातिका षडयन्त्र और विजेरावका उनपर आक्रमण–विजेराव और उनके स्वजनोंको विश्वासघातसे मारना–एक ब्राह्मणसे देवराजकी जीवन रक्षा—तनोट अधिकार—वहांके निवासियोंको मारना–बूनावत नामक स्थानमें अपनी मातासे देवराजका मिलना—देरावर बनाना और बूता जातिके स्वामीका उसपर आक्रमणके समयमें वंचित होना और देवराजसे उसका मारा जाना—एक योगीके साथ भट्टी राजाका मिलना और राजाका उसकी शिष्यता स्वीकार करना–रावसे रावल उपाधिका बदला जाना–देवराजसे लगाहोंका मारा जाना और उनका देवराजका आश्रय लेना–लगाजातिका इतिहास–देवराजका लुप्त राजपूतोंका राजधानी लुद्रवापर अधिकार करके राजासे बदला लेना–स्वदेशहितैषिताका उत्कृष्ट प्रमाण–धारणपर आक्रमण–लुद्रवामें फिर आना–खडाल नामक स्थानमें हौद खुदाना–उनकी हत्या–रावलमन्धको पिताका सिंहासन मिलना–पिताकी मृत्युका बदला लेना–उनके पुत्र बाछका अनहलवाडा पत्तनके बल्लभसेनकी लडकीसे विवाह होना–गजनीके महम्मदके सामयिक राजगण–घोडोंको तितर बितर करना–यों भट्टी गणोंसे मुगलके जोहियोंका हारना–दुसाजका खीचियोंपर आक्रमण–उसका तीन भाइयोंके साथ खड प्रदेशमें जाना और गिहलोत राजाकी कन्याके साथ विवाह होना–वाछू रावकी मृत्यु–दुसाजका सिंहासनपर बैठना–सोढा जातिके राजा हमीरका आक्रमण करना–हमीरके शासन समयमें मरुक्षेत्रमें कागार नदीका प्रवाह रुकना–जनप्रवाद—दुसाजके पुत्रगण–कनिष्ठ कुमार लांझाविजयरावका अनहलवाडाके राजा सिद्धराज सोलंकीकी कन्यासे विवाह–दुसाजके अन्यान्य पुत्र गण–जयसल और विजैराव–लांझा विजयरावके पुत्र भोजदेवके, दुसाजके मरजा-नेपर लुद्रवाका सिंहासन मिलना–अपने भतीजे भोजदेवके विरुद्ध जयसलका षडयन्त्र–गोरके सुलतानसे

सहायता मांगना और अरोड नामक स्थानमे उसके साथ मिलना-सुलतानके साथ मित्रतामूलक शपथ करना-भोजदेवको सिंहासनसे हटानेके लिये महम्मदसे सहायता पाना—लुद्रवापर आक्रमण और लूट लेना-भोजदेवकी हत्या-जयसलसे भाटियोंको रावल पद मिलना-लुद्रवा प्रदेशको छोडना—नूतन राजधानीकी प्रतिष्ठाका पूर्व आयोजन-ब्रह्मसरकुंडकी देव अनुलिपि-जयसलमेर राजधानीकी प्रतिष्ठा-जयसलकी मृत्यु-और दूसरे शालिवाहनका सिंहासन पर बैठना।

" पूर्व अध्यायमें जिन २ भिन्न घटनाओंका वर्णन हुआ है उन सबमें जो जो तारीख और सन् दिये हुए है विचार करनेसे उनमें संदह होता है परन्तु अब अन्तमें हम इस समय भट्टीजातिके इतिहासका सम्पूर्णतः विश्वास करने योग्य वृत्तान्त प्रकाश करनेमे प्रवृत्त होते है। गजनीके यदुवंशी राजाने युधिष्ठिरसं. ३००८ वर्ष पीछे रूम और खुरासानके अधीश्वरोंको परास्त किया था। हम इस निश्चय की हुई अवधिको सत्य नहीं स्वीकार करते; और ७२ वीं विक्रमाब्दमें शालिवाहनने अपने कुटुम्बियोंके साथ जाबुली स्थानसे भागकर पंजाबमें निवास किया। हम इसका भी विश्वास नहीं करते; परन्तु मरुक्षेत्रमें यदु भट्टियोंके उपनिवेश स्थापन, और संवत् ७८७ (७३१ ई०), उनकी प्रथम शासनशक्तिके विस्तारके प्रमाणस्वरूप तनोट

---

(१) बादशाह बाबरने लिखा है कि भारतवर्षके निवासी सिन्धुनदीकी पश्चिम सीमाके बाहर स्थित समस्त भूखण्डको खुरासान कहते थे।

(२) कर्नल टाड महोदयने टीकेमे लिखा है "यद्यपि ग्यारह सौ वर्षके बीत जानेपर भट्टीगण पंजाबसे भाग गये थे, और शालिवाहनके उत्तराधिकारियोंके उक्त स्थानके त्यागनेके पीछे धर्म, भाषा इत्यादिका अदलबदल हो गया था; परन्तु आजतक उक्त देशोंमें भौगोलिक ऐसे अनेक प्रमाण विराजमान है कि भट्टियोंका वहां अधिकार रहना प्रमाणित होता है, जहांपर शालिबाहनपुर था हम उसका अनुसंधान करें तो वहां " भट्टिकापिंडि " और भट्टिकाचक्र इत्यादि देख सकेंगे.-और एलफिन्स्टोनके मानचित्रको भी देख लेंगे।

(३) हम साधु टाड महोदयकी उस उक्तिको किसी प्रकार नहीं मान सकते। हमारे स्वदेशी भट्टी इतिहासलेखक जब कि यदुवंशियोंके इतिहासमें सन, तारीख, महीना, वार, तिथि और नक्षत्रोंतकको लिख गये है, तब उनकी उक्ति किस प्रकारसे अविश्वास करनेके योग्य हो सकती है। हमारे देशके प्रचलित युग और सवत्के सम्बन्धमे पश्चिमी पडितोंको ऐसा विश्वास नहीं है, यह सभीको विदित है। और इसका अनुमान भी सरलतासे हो सकता है कि कर्नल टाडने जिन कुसस्कारोंके वश भट्टिइतिहास लेखकोके लिखे हुए इतिहासके पहिले अंशमे सन् और तारीखको विश्वास नही किया। हमारे देशमे चिरकालसे भी पहिले अनेक समयमें अनेक भांतिके सवत् सन् और शाके इत्यादि प्रचलित होते आये है, और उन २ सन् सवत् वा शोकेका राष्ट्रविप्लव वा राज्यके बदलनेके कारण लोप होता चला आया है, और उनके स्थानोंमें नया सबत् दिखाई पडता है, इस अवस्थामे यदुभट्टियोंके इतिहासलेखकने जिन सवतोंका उल्लेख किया है, यदि वह धारावाहिक सबतरूपसे प्रचलित रहते तो उनके संवत्में हम अपने मतको प्रकाश करनेमे समर्थ हो सकते थे। पर युधिष्ठिरके संवत्में किसी प्रकारकी शका नहीं है, टाड साहबने इसी कारणसे इसको नहीं माना है कि उससे उनके दूसरे अंग्रेजोंके माने वर्षों तथा उनकी सृष्टिके वर्षोंकी आधुनिकताका लोप होता है।

दुर्गके बनानेका जो समय निर्द्धारित हुआ है, वह इस इतिहासका प्रमाण अनेक स्थानोंमें सन्देहसे रहित प्रमाणित हुआ है" ।

"भाटी जातिके इतिहासमें जिस केहरका नाम विशेष प्रसिद्ध दिखाई पडता है और जिसके असीम साहस और वीरताका वर्णन पहिले हुआ है, वह अवश्य ही प्रसिद्ध खलीफा वलीदका समकालीन था । सबसे पहिले भारतभूमिमें उसने ही अपना अधिकार किया, और उत्तरसिन्धुके देशोंमें अटरोड नगरमें उसने ही सबसे प्रथम अपनी राजधानी स्थापित की" ।

"कर्नल टाड साहबने जिस यदुभट्टी इतिहासलेखकके ग्रन्थसे भट्टीवंशके परवर्त्ती इतिहासको उद्धृत किया है, उस इतिहासमें यह प्रकाशित किया गया है कि केहरके पांच पुत्र उत्पन्न हुए, तनू, उतेराव, चहा, खाफरिया, आथहीन इन सभीके पुत्र उत्पन्न हुए, और वह अपने २ पिताकी उपाधिके साथ एक एक सम्प्रदायके नेता हुए । यह सभी वीर योधा थे, और इन्होंने चन्नराजपूतोंके अधिकारी बहुतसे देशोंको जीत लिया । राजपूतोंने इसी लिये केहरके साथ विलक्षणतासे इसका बदला लिया कि, जिस समय केहर शिकार खेलनेमें रत थे, उसी समय इन्होंने इनके प्राणोंका नाश किया । "

"केहरकी मृत्युके उपरान्त तनू पिताके पदपर अभिषिक्त हुए । उन्होंने अपने प्रबल पराक्रमके साथ बराहा जाति और मुलतानकी लंगा जातिके अधिकारी देशोंपर चढाई करके उनको विध्वंस कर दिया, परन्तु हुसेन शाह लोहेका बख्तर पहिनकर लंगोंके साथ दूदी, खीची, खोकर, मुगल, जोहिया, जूद और सैद जातिके दश

---

(१) उतेरावके पांच पुत्र उत्पन्न हुए, मुरना, सेहसी, जीवा, चाको और अजो । इनके वंशधर साधारणतासे उतेराव नामसे पुकारे जाते हैं ।

(२) चन्न जाति इस समय लुप्त हो गई है ।

(३) टाड महोदय अपने टीकेमें लिखते हैं " कि यह हिन्दू सिदियन जाति पशुओंके नामसे भी पुकारी गई है जैसे-बराह शब्दका अर्थ शूकर है और नूमरि शब्दका लोमडी, तक्षक शब्दका अर्थ सर्प है; अश्व शब्दका अर्थ घोडा है । " हमारे स्वजाति पाठकोंको पुराणादिसे इनके नामोंकी उत्पत्तिका कारण भलीभांतिसे विदित हो सकता है ।

(४) कर्नल टाड महोदय लिखते हैं कि " लगा गण अग्निकुलकी चार प्रधान शाखाओंमें सोलंकी राजपूतोंकी शाखासे उत्पन्न है । वह पीछे मुसल्मान हो गये, और ऐसा भी संभव है कि वह लोग सिधुनदीके पश्चिम ओर गलमान देशमें रहते थे ।"

(५) बादशाह बाबरने भारतपर अधिकार करनेके समय मार्गमें जिन जातियोंके साथ साक्षात् किया था, उसने उन सभीके नामोंका उल्लेख किया है । परंतु उसने दूदी जातिके नामको नहीं लिखा । शायद डोड हो ।

(६) खीची जातिको भट्टी कविने लिखा है कि खीची जाति उत्तर प्रान्तमें रहनेवाली थी और सिधु सागर अर्थात् पंजाबके दो आवेके बीचमें एक देश उनके अधिकारमे था ।

(७) टाड साहबने कहा है कि "यह भी सम्भव हो सकता है कि, यह खोकर जाति ही गक्कड जाति थी । बाबरने उसे घोकर लिखा है ।"

हजार अश्वारोही वीरोंको साथ ले यादवोंपर आक्रमण करनेके लिये आगे बढा । इसके वराहा राज्यमें पहुँचते ही बराहा जातिने इसके साथ सम्मति की, और सभीने वहां डेरे डाल दिये । वीरश्रेष्ठ तनूको असीम साहस और बलके साथ आया हुआ देखकर विजातीय गण अपने २ स्वजातियोंको इकट्ठा करके अपनी रक्षाकी तैयारी करने लगे । क्रमानुसार चार दिनतक यदुवंशपति तनूने अतुल पराक्रमके साथ अपनी रक्षा की, और पांचवें दिन अपने रोके हुए किलेके द्वारको खोल देनेकी आज्ञा दी । इनकी आज्ञानुसार किलेका द्वार खोल दिया गया । और वह अपने प्राणप्यारे पुत्र वीर विजैरावके साथ नंगी तलवारें हाथमें ले म्लेच्छोंके विरुद्ध सम्पूर्ण यादवोंकी सेनासहित शत्रुके सम्मुख हुआ । यदुवंशी क्षत्री वीरोंके प्रबल पराक्रमसे शीघ्र ही शत्रु परास्त हो गये । सबसे पहिले बराहा जाति भाग गई, और उसके पीछे अन्य म्लेच्छ गण युद्धमें भंगा डाल चारों ओरको भाग गये । रणमें जय प्राप्त कर तनूने शत्रुओंके डेरोंपर चढाई कर उनके धन रत्नोंको लूट लिया । मुलतान और लंगाहोंकी सेना जब परास्त होकर भाग गई तब बूतावानके वूता राजपूतोंके अधीश्वर जीजूने महाराज तनूजीके पास नारियल भेजा । और यह विवाह हो जानेके पीछे तनूजीकी मुलतानके अधीश्वरके साथ संधि होकर मित्रता हो गई ।"

तनूके औरस निम्नलिखित पांच पुत्र उत्पन्न हुए;–

१—विजैराव ।	३—जयतुंग ।
२—मुकुर ।	४—आलन ।

५—राखेचा ।

"दूसरे कुमार मुकुरके औरस एकमात्र माहपा हुए, माहपाके औरस महोला और दिकाउ उत्पन्न हुए । इस दिकाउने अपने नामसे एक विख्यात् ह्रद खुदवाया था, इसीके वंशधर सुतार हुए, और आजतक वह मुकुर सुतार नामसे पुकारे जाते हैं ।"

"तीसरे पुत्र जयतुंगके रत्नसी और चोहर नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए । रत्नसी बहुत प्राचीन समयके विध्वंस हुए बीकमपुर नगरमें जाकर रहे । और चोहरके कोला और गिरिराज नामवाले दो पुत्र हुए, इन दोनोंने कोलासर और गिरराजसर नामके दो स्वतन्त्र नगर प्रतिष्ठित किये ।"

"चौथे पुत्र आलनके औरस निम्नलिखित चार पुत्र उत्पन्न हुए;—

१—देवसी ।	३—भवानी ।
२—त्रिपाल ।	४—राकेचो ।"

---

(१) मुकुरके जारज पुत्रोंकी गणना राजपूतोंमें नहीं हुई; उनकी गणना माताओंके वर्णानुसार हुई थी ।

" देवसीके वंशवाले रेवारी अर्थात् उष्ट्रपालक हुए, और राकेचोके उत्तराधिकारी वणिक् हुए, और उनकी गणना इस समय ओसवाल जातिमें हुई ।"

" तनूको विजासनी देवीकी कृपासे एक स्थानपर बहुतसा गुप्त धन मिला, उसने उसी धनसे एक बडा भारी किला बनाया और उसका नाम विजनोट रक्खा, और उसी किलेमें उन्होंने संवत् ८१३ (७५७ ई०) के माघमासकी त्रयोदशी तिथि रोहिणी नक्षत्रमें देवीकी मूर्ति स्थापित की और वह अस्सी वर्षतक अतुल पराक्रमके साथ राज्य करके स्वर्गको चले गये " ।

देशी इतिहासलेखकने फिर लिखा है कि " विजयरावजी संवत् ८७० सन् ८१४ इसवीमें पिताके राज्यपर विराजमान हुए थे; उन्होंने राज्यसिंहासनपर बैठकर अपनी जातिकी प्राचीन शत्रु बराह (बारहा) जातिके साथ युद्ध करनेका प्रस्ताव किया, और शीघ्र ही युद्धमें उनको परास्त करके उनकी सारी धन सम्पत्ति लूट ली, संवत् ८९२ में बूता जातिकी रानीके गर्भसे एक कुमार उत्पन्न हुआ । उसका नाम देवराज रक्खा गया । बराह जाति और लङ्गागण शत्रुसे बदला लेनेके लिये एकसाथ मिल गये, और उन्होंने भट्टिराज विजयरावपर आक्रमण किया; परन्तु असीम साहसी विजयरावने अपने पिताकी तरह वीरता प्रकाश करके उनको रणक्षेत्रमें परास्त कर भगा दिया, जब बराह जाति और लंगाहोंने देखा कि रणभूमिमें इनका परास्त करना असम्भव है तब अन्तमें उन्होंने षड्यन्त्रके साथ विश्वास दिलाकर उनके नाशका विचार किया, और बहुत कालसे प्रज्वलित हुई शत्रुताकी आगको बुझानेका बहाना कर बराह जातिके अधीश्वरने अपनी कन्याका विजयराजके पुत्र देवराजके साथ विवाह करनेका प्रस्ताव किया । भट्टिराजको इस षड्यन्त्रका समाचार कुछ भी विदित नहीं था, इस लिये वह अपने पुत्र देवराज और आठसौ स्वजातियोंको साथ लेकर बराहपतिकी राजधानी भटिंडामें चले गये । उनके वहाँ पहुँचते ही दुराचारी बराहोंने उनपर संहार मूर्तिसे सहसा आक्रमण करके उन्हें और उनके प्रत्येक साथीको खंड २ कर दिया । जब कुमार देवराजने देखा कि अब मृत्यु निकट ही है तब वह अपने प्राणोंकी रक्षाके

---

(१) भारतवर्षके वैश्योंमें यह ओसवाल जाति सबसे विशेष धनवान् थी और इनकी संख्या भी अधिक थी, यह पहिले ओसिया नगरमें आकर रहे थे इसी कारणसे ओसवाल नामसे प्रसिद्ध हुए । टाड साहबने कहा है कि, यह विशुद्ध राजपूत हैं परन्तु एक संप्रदायके नहीं हैं, इनमें पँवार, सोलंकी, भाटी इत्यादि सब संप्रदाय हैं । यह सभी जैनधर्मका अवलम्बन करनेवाले हैं भारतवर्षमें सर्वत्र ही यह ओसवाल बणिक् वाणिज्यमें लिप्त रहते हैं यह सर्वसाधारणमें मारवारी नामसे पुकारे जाते हैं, बहुतोंका मारवाडसे ही मारवाडी नाम हुआ है, इसका अनुमान किया जा सकता है परन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं है ।

(२) चारण रामनाथवाले राजस्थानमें लिखा है कि विवाह हो गया था सोतेमें विजयराजजीको मारा । तब उनकी सासने देवराजको भगा दिया, ऊंटपर बैठाकर भगाया था । सवेरे सांगीरलके एक खेतमें पहुंचकर देवराजजीको उसे सौंप दिया और इनके साथ पीछेसे उक्त भोजनादि व्यवहार हुआ ।

लिये बराहराजके पुरोहितकी शरणमें गये । बराहगणोंने इस शोचनीय अवस्थामें कुमारके मारनेकी इच्छासे पुरोहितके घरपर आक्रमण किया । पुरोहितने देखा कि इस समय भयंकर विपत्ति उपस्थित है राजकुमारका भागना भी असंभव बोध होता है इस कारण उसने अपने बुद्धिबलसे देवराजके गलेमें जनेऊ डालकर आक्रमण करनेवालोंसे कहा कि "जिसको आप ढूँढ रहे हैं वह हमारे घर नहीं आया । इसके पीछे ब्राह्मणने उनके सामने ही एक थालीमें देवराजके साथ भोजन भी किया, यह देखकर शत्रुओंने विचारा कि जिसको हम देवराज विचारते थे वह मनुष्य देवराज नहीं निकला देवराज तो क्षत्री है यदि यह मनुष्य जो क्षत्री होता तो ब्राह्मण पुरोहित किस प्रकारसे इसके साथमें भोजन करता ? यह विचार कर उन लोगोंने पुरोहितके घरको छोडकर अपने दलके साथ भट्टियोंकी राजधानी तनोटपर आक्रमण किया और जितने मनुष्य किलेके भीतर थे उन सबको एक २ करके मार डाला । इस प्रकारसे कुछ दिनोंके लिये भाटी जातिका नामतक लोप हो गया ।"

इस प्रकार प्राणोंके भयसे भयभीत हो देवराज बहुत समय तक बराहा जातिके बीचमें गुप्तभावसे रहे, और अन्तमें भागनेका सुअवसर जान वहांसे चलकर अपने नाना बूतावनके राज्यमें चले गये । देवराजने ननसालमें जाकर वहां अपनी माताके चरण कमलोंका दर्शन किया, जिस समय शत्रुओंने तनोटके किलेको अपने अधिकारमें करके वहांके प्रत्येक स्त्री पुरुषोंके प्राणोंका नाश किया था, उस समय देवराजकी माता अपने किसी पुरातन पुण्यकी सहायतासे प्राण लेकर शत्रुओंके ग्राससे निकल भागी थी । देवराजके मुखचन्द्रको देखकर दुःखिनी माताने अत्यन्त आनन्दके साथ कुँवरके मस्तक पर लवण लगाकर उसे जलमें डालकर कहा "कि हे पुत्र ! तुम्हारे शत्रुओंका इसी भांति लोप हो जाय"। देवराज बहुत दिन तक पराधीन अवस्थामें रहे, अन्तमें अत्यन्त कातर हो उन्होंने अपने नानासे एक ग्राम मांगा । बूतानके अधीश्वरने पहिले ही इनको एक ग्राम देनेके लिये कह रक्खा था, जब उनके कुटुंबियोंने देखा कि महाराज इनको ग्राम देनेके लिये तैयार हैं तो वे लोग राजाको भय दिखाने लगे, और बोले कि यदि तुमने देवराजको अपने राज्यमें ग्राम दे दिया तो अन्तमें इस राज्यका महा अनिष्ट होगा, इस कारण आप किसी भांति भी देवराजको ग्राम न दीजिये; बूतापतिने अपने कुटुंबियोंके इन भयदायक वचनोंपर शंकित हो देवराजको वहां ग्राम न देकर मरुक्षेत्रमें एक अत्यन्त सामान्य भूखण्ड दिया । देवराजने उसी पृथ्वीमें केकय नामक एक शिल्पीकी सहायतासे भटनेर नामका किला बनवाया, और फिर कुछ दिनोंके

---

(१) कर्नल टाड साहबने कहा है कि "भट्टियोंके नेताने दुर्ग बनानेके लिये जो प्रवञ्चना की थी वह भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमें भी विदित है । भाटना अर्थात् विभागसे ही इसका नाम भटनेर हुआ । कलकत्तेके नामकरणका मूल भी इसी प्रकार है । यह खालकाटासे अंग्रेजीमें कलकत्ता हुआ है इसका असल नाम खालकाटा है"

पीछे एक बडाभारी किला बनाकर अपने नामसे उसका देवगढ वा देवरावले नाम रक्खा। संवत् ९०९ के माघ महीनेकी[२] पांचवीं तारीखको सोमवारके दिन[१] इस किलेकी प्रतिष्ठा की गई थी।

"जब बूताके अधीश्वरने यह सुना कि मेरे दौहित्रने रहनेके लिये स्थान न बनाकर किला तैयार कराया है, तब उसने क्रोधित हो उस किलेको तोडनेके लिये एक सेना भेजी। देवराजने यह समाचार सुनते ही किलेकी चाबी माताको देकर उसे नानाके पास भेज दिया और जो सेनाके नेता थे उनको किला लेनेके लिये बुला भेजा। वह उस सेनामेंके एकसौ बीस नेताओंको सुसम्मतिका बहाना करके किलेके भीतरी भागमें ले गया, और वहां ले जाकर एक २ करके सबको मार डाला, इस प्रकारसे सब नेता मारे गये, बची बचाई सेना नेताओंके अभावसे उसी समय भाग गई; देवराजने उन नेताओंकी लाशोंको किलेके बाहर फेंक दिया।"

देवराज जिस समय गुप्तभावसे बराहोंके राज्यमें रहता था, उस समय एक योगीने आकर उसके प्राण बचाये थे; कुछ ही दिनोंके पीछे यह योगी देवराजके सम्मुख आया और उसने देवराजको सिद्धपुरुषकी उपाधि दी। इस योगीमें ऐसी शक्ति थी कि, प्रत्येक धातुको सुवर्ण कर सकता था। देवराजके पिता और कुटुम्बी लोग बराह राज्यमें मारे गये। देवराज जिस घरमें रहता था उसी घरमें यह योगी अपने यज्ञके घडेको रखकर किसी कार्यके लिये चला गया। उस रसके घडेकी एक बूँद देवराजकी तलवारमें स्पर्श होनेसे सारी तलवार सुवर्णकी हो गई। यह देखकर देवराज उस घडेको ले भागे और उस घडेकी सहायतासे ही यह देवरावल किला बनवाया था। योगिराजने बहुत दिनोंके पीछे आकर यह समाचार सुना कि देवराज इस समय राजसिंहासनपर विराजमान हैं। उन्होंने देवराजके साथ साक्षात् करके कहा कि "यदि तुम हमारे शिष्य होकर योगीका वेष धारण करो तो मैं उस घडेके ले आनेकी बात किसीके सम्मुख नहीं कहूँगा।" देवराजने, शीघ्र ही गुरुकी आज्ञाको मान लिया; देवराजने गुरुकी आज्ञानुसार गेरुये वस्त्र पहिने, कानोंमें मुंदरे धारण किये। इसके उपरान्त वह हाथमें कमंडलु लेकर अपनी जातिके लोगोंके दरवाजोंपर भिक्षा मांगने लगा। उसका वह कमंडलु सुवर्ण और मोतियोंसे भर जाता था। योगीद्वारा यदुवंशियोंमें चिरकालसे प्रचलित हुई रायकी उपाधिके बदले उसी समयसे रावलकी उपाधि दी गई। राजतिलक देनेके पीछे योगिराजने देवराजको इस प्रतिज्ञामें बांध लिया कि "जबतक यदुवंश रहैगा तबतक इसी रीतिके अनुसार राजतिलक हुआ करैगा। इसके पीछे योगी बाबा[३] अन्तर्द्धान हो गये"।

---

(१) मि. एलफिन्स्टोन जिस समय गवर्नमेण्टके दूत बनकर काबुलमें गये थे उस समय उन्होंने इस देवरावल नामक स्थानमें ही विश्राम किया था। बूता राजपूतोंका राज्य कहां था यह इस किलेसे प्रमाणित होता है।

(२) उर्दू तर्जुमेमें पुष्य नक्षत्र भी लिखा है।

(३) उर्दू तर्जुमेमें बाबा रत्त [रता उस योगीका नाम था] लिखा है।

" जब देवराजने देखा कि मेरी इस समय अवनतिसे उन्नति हो गई है और क्रमशः मेरी सेनाका बल भी बढ गया है तब उसने यदुवंशियोंको विध्वंस करनेवाली बराह जातिको उचित फल देनेकी प्रतिज्ञा की, और उस क्षत्रियकुलतिक देवराजने अपनी उस प्रतिज्ञाको शीघ्र ही पूर्ण भी कर लिया। उन्होंने बराह जातिको इस भाँति परास्त किया कि इनके रनवासकी कुलबन्धुओंका घूंघटतक अपने हाथसे खोला, इस प्रकार बराह जातिको उचित फल देकर वह देवरावलमें चले आये। फिर उसने शत्रु लङ्गाहोंपर आक्रमण करने और उनको उचित दंड देनेकी प्रतिज्ञा की। इस समय लङ्गाहोंके युवराज अर्लीपुर नामक स्थानको विवाहके लिये सेनासहित जा रहे थे, यह सुअवसर पाय देवराजने सेनासहित कुमारके ऊपर धावा किया, और बातकी बातमें एक हजार लङ्गाहोंको मार डाला। लङ्गाहोंने देवराजसे परास्त हो: उसी समयसे इनकी अधीनता स्वीकार कर ली। लङ्गाह गण बडे ही वीर राजपूत थे "।

कर्नल टाड साहबने लङ्गाह जातिके सम्बन्धमें अपनी सम्मतियां प्रकाश की हैं कि " यदुभट्टीवंशके पंजाबसे विताडित होकर भागनेके समयसे लेकर मरुक्षेत्रमें उनकी शेष राजधानीके स्थापनतकके समयके पीछे पूर्व वर्णित समयसे यदुभट्टी जातिके प्रत्येक अन्तर्जाति समरमें यह लङ्गाह जाति यदुभट्टियोंकी सहायतामें नियुक्त थी तब इस जातिका आदिमें विवरण और उसके शेष भाग्यके सम्बन्धमें कुछ कहना इस स्थानपर उचित जान पडता है; यह तो भली भाँतिसे प्रकाशित किया जा चुका है कि इस समय लङ्गाह गण राजपूत थे और वह वास्तविक अग्निकुलकी चार शाखाओंमें चालुक्य वा सोलङ्की जातिसे सम्बन्ध रखते थे। उनका आदि वास-स्थान नोकोटदेशमें था। इससे बोध होता है कि यह आबू शिखरसे आकर हिंदूधर्मका अवलम्बन करनेके पहिले नौकोट देशमें रहते थे।

संवत् ७८७ (सन् ७३१ ईसवीमें) भट्टि उपनिवेशीदलके नेताद्वारा तनोट दुर्गके निर्माणसे लेकर संवत् १५३० सन् (१४७४ ईसवी) तक ७४३ वर्ष सीमाके निमित्त भाटीजातिके साथ लङ्गाहोंका विवाद और युद्ध चला था। परन्तु युद्धोंके कारण पूर्वमें दीर्घकालसे चली आई हुई इन दोनों जातियोंकी विवादाग्नि एकबार ही बुझ गई। इसके कुछ समयके पीछे बाबरने भारतवर्षपर आक्रमण किया, और मुलतान उसके साम्राज्यका एक अंशरूपसे गिना गया। उसी समय इस जातिका अधिकार लोप हो गया। तारीख फारिस्ताने इस जातिको मुलतानके राज-वंशी कहकर उल्लेख किया है, और इस वंशके जाननेयोग्य वृत्तान्तका भी वर्णन किया है। इस वंशके पांच राजाओंमें सबसे पहिले राजा ७४७ हिजिरी (१४४३ ईसवीमें) अर्थात् रावल चाचककी मृत्युके तीस वर्ष पहिले राज्य करते थे। मुसल्मान इतिहासवेत्ताने कहा है कि जबतक खिजरखाँसैयद दिल्लीके तख्तपर आरूढ थे: तबतक उन्होंने शेख यूसुफको अपने प्रतिनिधिरूपसे मुलतानमें भेजा। शेख यूसुफने मुलतानमें

जाकर अपने उत्तम व्यवहारोंसे पासके देशोंके और राजाओंके मनको हरण कर लिया। उन्हीं राजाओंमें लंगाह जातिके अधीश्वर राय सेहरा भी एक थे। राय सेहराने मुलतानमें जाकर शेख यूसुफको बुलाकर उनके करकमलमें अपनी पुत्री देनेकी इच्छा प्रगट की, और उनके अधीनमें रहकर कार्य करनेको भी कहा। शेख यूसुफ उनकी बातपर सम्मत हो गया। सेवीसे मुलतानतक उस समय यह समाचार आने जाने लगा, और राय सेहरने क्यों यूसुफका इतना सम्मान किया और क्यों उसके सम्मुख अपने मनका ऐसा भाव प्रकाशित किया था इसका मतलब छिपा न रहा। तात्पर्य यह था कि उसने इसी मित्रताके बहानेसे शेख यूसुफको बंदी कर लिया, और उसे दिल्ली भेजकर अपना नाम कुतुबउद्दीन रक्खा। फिर आप मुलतानके अधिष्ठाता पदपर प्रतिष्ठित हुआ।"

कर्नल टाड साहबने फिर लिखा है "फरिस्ताने, राय सेहरा और इनके स्वजातीय लंगाहगणोंको अफगान कहा है, सेवी देशके निवासी नूमरी जातिके थे, यही नूमरी जाति अगणित जाट जातिकी एक शाखा थी; और विशेप करके इन्होंने यवनधर्मके अवलम्बनके समयसे बिलोचकी उपाधि धारण की है। भट्टीवंशके इतिहासवेत्ताने लंगाहोंको एक स्थानमें पठान और दूसरे स्थानमें राजपूत कहा है। पठान और अफगान यह उस समय मुसलमान थे। यह स्पष्ट प्रकाशित नहीं होता। एकमात्र रायकी उपाधि ही इस बातको साबित करती है कि यह जाति किसी समय हिन्दू थी। अफगान जाति यहूदी जातिसे उत्पन्न है,इस बातको मिष्टर एलफिन्स्टोनने बदल दिया है; उनका कथन है कि अफगानियोंकी पस्तोभाषा संस्कृत थी, तथा उसमें जुन्दभाषाके अनेक शब्द देखे जाते हैं,परन्तु हिब्रू भाषाका कोई शब्द भी उसमें नहीं था। परन्तु मैं यह प्रकट कर चुका हूं कि अफगानी यदुवंशसे उत्पन्न हैं, और यदु शब्दके बिगडनेसे ही यहूदी वा जूजि शब्द हुआ है, इस मतको किसी भांति नहीं बदला जा सकता। अब इसके प्रमाणकी आवश्यकता है कि यदुजाति यूति वा जट जातिसे उत्पन्न है या नहीं? "मि० एलफिन्स्टोनके समान हम पहिले ही कह आये हैं कि अफगान जातिसे यहूदी जातिकी उत्पत्ति नहीं हुई।"

इस समय इतिहासका अनुसरण करते हैं—"देवरावलकी दक्षिण सीमामें लोद्र राजपूत निवास करते थे। उनकी राजधानीका नाम लुद्रवा था; और वह नगरी जिस भांति विस्तारवाली थी उसी भांति उसमें जानेक लिये बारह बडे २ दरवाजे थे। लुद्रवाके राजपुरोहितने किसी कारण वश राजासे विवाद कर अन्तमें देवराजके पास आकर आश्रय लिया। और वह लुद्रवाके राजाको सिंहासनसे अलग करके उक्त राज्यको अपने अधिकारमें करनेके लिये देवराजको सम्मति देने लगा। देवराजने राजपुरोहितकी सम्मतिके अनुसार लुद्रवाराजके नृपभानुके पास यह संदेशा भेजा कि मैं आपकी कन्याके साथ विवाह करनेकी अभिलाषा करता हूं। राजाने देवराजको अपनी कन्या देनेमें महा गौरव समझा और शीघ्र ही उनके प्रस्तावको स्वीकार कर लिया। वीर श्रेष्ठ देवराज बारहसौ असीम साहसी अश्वारोही सेनाको

साथमें लेकर वरका भेष धरे लुद्रवाकी राजधानीमें आ पहुँचे। शीघ्र ही नगरका द्वारा खोल दिया गया। परन्तु देवराजने अपने सेवक और सेनाके साथ नगरमें पहुँचते ही युद्ध आरम्भ कर दिया। लोद्रेगणोंके परास्त होते ही देवराज लुद्रवाके सिंहासनपर विराजमान हुए। और अन्तमें नृपभानुकी कन्याके साथ विवाह करके यादवोंकी सेनाके एक दलको वहां छोड आप देवरावलको लौट आये। देवराज इस समय छप्पन हजार अश्वारोही और एक लाख ऊँटोंके अधीश्वर हुये।"

"इस समय देवरावलसे यशोकर्ण नामका वैश्य धारानगरीमें जा रहा था। धारापति वृजभानु पँवारने उसे धनवान् जानकर बंदी कर लिया और उसका समस्त धन छीनकर अन्तमें उसे छोड दिया। जब यशोकर्ण देवरावलमें आया तब देवराजके सम्मुख नेत्रोंमें आंसू भर विनती कर नम्रतासे कहने लगा, कि "महाराज! धारापतिने बिना ही कारण मुझे बन्दी करके अनेक कष्ट दिये हैं, और मेरे पास जितना धन था वह छीनकर अब मुझे छोड दिया है। उन्होंने मुझे जैसा कष्ट दिया है उसे आप देखिये कि मेरे गलेमें रस्सीके बांधनेका चिह्न अबतक विद्यमान है।" देवराजने यशोकर्णके गलेमें रस्सीका चिह्न देखकर विचारा कि इससे तो मेरा बडा अपमान हुआ है, पँवार राजाने जो यशोकर्णका अपमान किया है सो मानो मेरा ही अपमान किया है यह विचार कर वह अत्यन्त क्रोधित हो गये और उन्होंने उसी समय यह प्रतिज्ञा की कि मैं अपने इस अपमानका बदला लिये बिना जलपान भी न करूंगा।

"पाठक गण! अपने अंग्रेजी भाषामें लिखी हुई संसारकी प्रत्येक प्रान्तीय अनेक जातिक राजाओंकी प्रतिज्ञाओंको पढा होगा, वह राजप्रतिज्ञा किस प्रकारसे पूर्ण होती थी, और होती है वह आपसे छिपी नहीं है। परन्तु ऐसे बहुत थोडे राजा हैं कि जिन्होंने प्रतिज्ञा करके उसे पूर्ण किया है। परन्तु राजपूत राजा अपनी प्रतिज्ञाको किस प्रकारसे पालन करते थे वह आपने इस इतिहासके अनेक स्थानोंमें पढा है तदनुसार इस समय यदुवंशी देवराजकी प्रतिज्ञापूरणके वृत्तान्तको भी पढिये:--देवराजने प्रतिज्ञा की है कि यशोकर्णके अपमानका बदला लिये बिना जलतक भी स्पर्श नहीं करूँगा। यह प्रतिज्ञा कोई साधारण प्रतिज्ञा नहीं है। धारानगरी बहुत दूर है एक दिनमें वहाँ

---

(१) टाड महोदयने टीकेमें लिखा है "कि यह हमें विदित नहीं है कि लुद्रगण राजपूत जातिके किस कुलमें उत्पन्न हैं, परन्तु एक समयमें पँवार वा प्रमार जाति भारतवर्षमें सबसे पहिले मरुक्षेत्रकी अधीश्वर थी। संभव है कि यह भी वही हों। भट्टी जातिके द्वारा वर्तमान राजधानी जयसलमेरके स्थापनके पूर्व तक लुद्रवा भट्टियोंकी राजधानी थी। लुद्रवा अत्यन्त प्राचीन नगरी कही जाती है; परन्तु इस समय यह एकबार ही विध्वंस हो गई है। इस समय गडेरिये ही लुद्रवामें निवास करते हैं। मरुक्षेत्रके और भी अनेक प्राचीन नगर इस समय विध्वंस हो गये हैं, और निरन्तरके युद्ध ही इसके कारण है। मुझे लुद्रवामे व्रजराजके समयका अर्थात् दशवीं शतब्दीका एक तांबेका अनुशासन पत्र मिला था। वह जैनभाषामें लिखा हुआ था। उससे यह जाना जाता है कि इस देशमें उस समय जैनधर्म प्रचलित था।"

(२) टाड साहबने कहा है कि लिखनेवालोंके दोषसे ही यह संख्या विशेषरूपसे गिनी गई है।

आकर उसका जय करना किसी प्रकार भी सम्भव नहीं हो सकता, फिर जब प्रतिज्ञा की है कि बिना धारानगरीको जीते हुए जल भी स्पर्श नहीं करूंगा ? तब क्या उपाय है? तिसपर फिर कई दिनतक बिना जलपान किये हुए जीना भी असंभव है, और जब यह प्रतिज्ञा की है तो शरीरमें प्राण रहते हुए प्रतिज्ञाको भंग नहीं कर सकते "। अन्तमें मन्त्रियोंने यह सम्मति दी कि धारानगरीके निवासी पँवार हैं और वहाँका राजा भी पँवार है, आपकी सेनामें बहुतसे पँवार और प्रमार जातिकी सेना है। आप मट्टीकी एक धारानगरी तैयार करवाइये, तलवार हाथमें लेकर आपकी सेनाके पँवार उसकी रक्षा करें, और आप सेना सहित उस कृत्रिम धारानगरी पर आक्रमण कर विजयी हो अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कीजिये। इस सम्मतिके अनुसार शीघ्र ही कार्य आरंभ हो गया। देवराजकी सेनामें जितने पँवार थे वह सभी अपने २ हाथमें तलवारें और भाले लेकर वीरसाजसे सजकर धारानगरीकी रक्षामें नियुक्त हुए। वीरश्रेष्ठ देवराजने सेना साथ ले उसपर आक्रमण किया। दोनों और भयंकर समरानल प्रज्ज्वलित हो गई, इसी समयमें पँवारोंकी सेनाने कहा;—

दोहा—जहाँ पँवार तहाँ धार है, जहाँ धार तहाँ पँवार।
धारके बिना पँवार नहिं, नहिं पँवार बिन धार ॥

इसका अर्थ यह है कि जिस स्थानपर पँवार हैं वह स्थान ही धार है और जिस स्थानपर धार है उसी स्थानपर पँवार हैं। पँवारके अतिरिक्त धार नहीं है और धारके अतिरिक्त पँवार नहीं।

पँवारोंकी सेना अपने नेता तेजसिंह और सारङ्गके आधीनमें बडे विक्रमके साथ उस कृत्रिम धारानगरीकी रक्षा करने लगी। भयंकर युद्धमें एकसौ बीस पँवार मारे गये और देवराजने उस कृत्रिम धारानगरीको जीतकर अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण किया। जिस पँवार सेनाने उस रणभूमिमें महावीरता दिखानेके पीछे जीवन त्याग किया था, देवराजने उनकी असीम वीरतासे प्रसन्न हो उनके स्त्री पुत्रोंके भरण पोषणके लिये उचित वृत्ति नियत करदी। " किस देशके किस राजाने इस प्रकार अपनी प्रतिज्ञाको पालन किया है ? राजपूत राजा जो प्रतिज्ञा करते थे शरीरमें प्राण रहते हुए उसे किसी भाँति भी भंग नहीं कर सकते थे। क्षत्रियोंकी यही रीति थी, उसी क्षत्रिय जातिको आजकलके अंग्रेजी पढोंने जंगली और बरबर बताकर उपहास किया है परन्तु इस बातको हम दावेके साथ कह सकते हैं कि इस संसारमें जिस भावसे अपनी प्रतिज्ञाको क्षत्रिय जाति पूरा कर गई है, शिक्षित सभ्य और उन्नतिवाले कोई राजा भी उनके समान सहस्रों अंशोंमें एक अंशकी भी प्रतिज्ञा पालनमें सामर्थ्य नहीं रखते। "

इतिहासवेत्ता पीछे लिखते हैं " कि देवराजने इस प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाको पूरा करनेके पीछे जल ग्रहण किया, और कुछ ही दिनोंके पीछे अपनी बलवान् सेनाको सजाकर धारानगरीको जीतनेके लिये प्रस्थान किया। धारापति व्रजभानुने इनकी गति रोकनेके लिये

(१) यह कुटेशनका लेख विशेष है।

पहिलेसे ही सीमापर सेना भेज दी थी, परन्तु अतुल पराक्रमी यादवोंकी सेनाने प्रलयकालीन मेघमालाके समान उस प्रमारोंकी सेनाको न जाने कहाँ छिन्नभिन्न कर दिया। देवराजने अन्तमें धारानगरीपर धावा किया। धारापति वृजभानु धन और प्राण तथा राज्यकी रक्षाके लिये पाँच दिनतक लडाई करते रहे, और अन्तमें आठसौ सेनाके साथ युद्धभूमिमें मारे गये। देवराजने अत्यन्त प्राचीन धारानगरीके किलकी चोटीके ऊपर अपनी विजय पताका लगाई, और फिर आप लुद्रवानगरीको लौट आये "।

"देवराजके औरस मूंद और छेणो नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए; और शेषोक्त पुत्रोंके पांच पुत्र उत्पन्न हुए, वह लोग छेणोराजपूत नामसे विख्यात् हैं। जिस खदाल नामक देशमें देरावर स्थापित था उस देशमें देवराजने बहुतसे बडे २ सरोवर खुदवाये, तनोट नामक स्थानमें जो सरोवर खुदवाया था वह तनोटसर नामसे प्रसिद्ध है, और देवसर नामवाला एक बडा सरोवर अपने नामसे खुदवाया था। एक समय देवराज कुछ थोडेसे सेवकोंको साथमें ले शिकार खेलनेको गये, ऐसे सुअवसरको पाकर छानिया जातिके बलोचोंने छब्बीस अनुचरोंके साथ देवराजपर आक्रमण करके उनको मार डाला। देवराजने ५२ वर्षतक अतुल पराक्रमके साथ राज्य किया।"

"देवराजके शरीर त्याग करनेपर इनके बडे पुत्र मूंदजी पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए, उन्होंने बारह दिनतक अशौचमें रहकर पिताका श्राद्ध कार्य समाप्त किया तदनन्तर राज्याभिषेक हुआ ६८ कुओंके जल और एकसौ आठ भिन्न २ पवित्र वृक्षोंके पत्तोंसे, मूंदने स्नान किया और एक उत्तम आचरणवाली सती स्त्रीने मूंदके मस्तकपरसे सुगंधित द्रव्योंको उतारा; मूंदके सम्मुख पंचामृत रक्खा गया; सुवर्ण, चाँदी, मूँगा, मोती, राजछत्र, दूर्वा और अनेक भाँतिके सुगन्धित पुष्प, दर्पण, एक राजकुमारी कन्या, एक रथ, एक पताका, एक बेलका वृक्ष, सात प्रकारके खरगोश[2], दो मछली, एक घोडा, एक बैल, एक बडा शंख, एक कमल, एक पात्रजल, चामर, वत्सतरी, नारियल, हर वर्णकी मट्टी और नैवेद्य इत्यादिसे सुसज्जितकर रक्खी गई। शेरकी खालके ऊपर (उस खालके ऊपर सात द्वीपोंका चित्र खिचा हुआ था) योगीभेषसे कुमार बैठाये गये उनके शरीरमें विभूति लगाकर कानोंमें मुंदरे पहराये गये उनके ऊपर सफेद चमर डुलने लगा। वह अपने पिताके सिंहासनके ऊपर विराजमान हुए, पुरोहितने आशीर्वाद दिया और सामन्त गण उपहार देने लगे; मूंदने पिताके सिंहासनपर बैठते ही अपने पिताके मारनेवालोंके विरुद्ध बदला लेनेके लिये युद्धकी तैयारी की। हत्या करनेवाले पहिलेसे ही अपनी रक्षाके लिये सज रहे थे; मूंदजीने उनको आक्रमण करके शत्रुओंकी आठसौ सेनाका नाश कर उन्हें उचित फल दिया। रावलमूंदके बाछू नामक एकमात्र पुत्र

---

(१) पर दूसरा इतिहास कहता है इनकी अवस्था १२० वर्षकी थी। इतिहास चारण रामनाथ रत्नू।

(२) उर्दू तर्जुमेमें कागज।

उत्पन्न हुआ,जब कुमारबाछूकी अवस्था चौदह वर्षकी हुई उस समय (पातन) पट्टनके राजा सोलंकी जातिके वल्लभसेनने उनके साथ अपनी कन्या व्याह देनेके लिये क्षत्रियोंकी रीतिके अनुसार नारियल भेजा । वाछूरावने पातनमें जाकर सोलंकी राजकुमारीका पाणिग्रहण किया।"

"राव मन्धजी (मूंदजी) के शरीर त्याग करनेपर वाछूराव संवत् १०३५ श्रावण कृष्ण द्वादशी शनिश्चरके दिन पिताके सिंहासनपर बैठे । इनका भी पूर्वोक्त रीति भांतिके अनुसार राज्याभिषेक हुआ । बाछूके औरस निम्न लिखित पांच पुत्र हुए।

१–दूसाजी । २–सिंह ।

३–बापेराव । ४–इनवे ।

५–मूलअपसा ।

उक्त पाँच पुत्रोंके वंशधर अनेक शाखाओंमें विभक्त हुए।"

" एक अश्व व्यवसाई एकसौ घोडे लिये जा रहा था, उसके घोडोंमें एक घोडा सबसे श्रेष्ठ था; और उसका मूल्य एक लाख रुपया रक्खा गया था । सिन्धुनदीके पश्चिम सीमाका निवासी गाजीखाँ नामक पठान उस घोडेका अधीश्वर था । दूसाजीने अपने भ्राताके साथ मिलकर सेना साथमें ले उस देशमें जाकर गाजीखाँके प्राणोंका संहार किया, और उस घोडेको विजयके धनस्वरूपमें ले आया।"

"सिंहके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम सच्चाराय था । उसके पुत्र बल्लाके औरस, रत्न और जग्गा नामके दो कुमार उत्पन्न हुए, और वह मंडोरके अधीश्वर पडिहार जातीय जगन्नाथपर आक्रमण करके उनके अधीनके पाँचसौ ऊंटोंको जीतकर ले आये । उसके उत्तराधिकारीगण सिंहराव राजपूत नामसे विदित हैं।"

"बापे रावके दो पुत्र उत्पन्न हुए,एकका नाम पाहुर और दूसरेका नाम माँदन था। पाहुरके औरस, विरम और तोलर नामवाले पुत्र उत्पन्न हुए, उनके अगणित वंशधर पाहु राजपूत नामसे विदित हैं । पाहु राजपूतोंने उनके निवास स्थान बीकमपुरसे जाकर जोहियोंके जितने देश उनके अधिकारमें थे उनपर और देवी छालतक अपना अधिकार कर लिया । और उन्होंने पुंगलमें अपनी राजधानी स्थापित करके वहां अगणित कुएँ खुदवाये । वह सभी पाहु कूप नामसे विख्यात हैं । "

"मारवाडके अधीन नागौर देशके निकट खाष्टूनामक स्थानमें खिची जातिका यदुराय नामवाले एक महाबलवान् और असीम साहसी वीर निवास करता था । यह मनुष्य इतना साहसी था कि इसने पुंगलनगरीके द्वारतक जाकर वहां उनका सर्वस्व लूटकर जयतुंग भाटियोंका संहार किया।इन तस्करोंके नेताओंके उपद्रव दूर करने और उनको उचित दण्ड देनेकी इच्छासे दूसाजीने एक समय गंगाजीमें स्नान करनेका बहाना कर कितने ही साहसी वीर योधाओंको अपने साथमें ले दस्युनेताओंके अधिकारी देशमें जाकर उनके नेता और उनके अधीनके नौ सौ मनुष्योंका एक बार ही नाश कर दिया"

"गहिलोतोंके अधीश्वर प्रतापसिंह जिस खेडदेशमें रहते थे दूसाजी अपने तीन भाइयोंको लेकर वहां गया, और प्रतापसिंहकी तीन कन्याओंके साथ अपना विवाह किया, उस खेडदेशमें यदुवंशियोंने मुक्त हाथसे धन खर्च किया था। कितने ही दिनोंके पीछे बिलोचोंने खडाल राज्यमें जाकर विषम अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये, उस कार्यसे भयंकर युद्धाग्नि प्रज्वलित हो गई। इस युद्धमें पांचसौ बिलोच मारे गये, और शेष सब भाग गये, वाछूरावके प्राणत्याग करनेपर उसके पुत्र दूसाजी ११०० संवत्‌में आषाढके महीनेमें यदुवंशके सिंहासनपर विराजमान हुए"।

दूसाजीके मस्तकपर राजछत्र शोभित होनेके कुछ ही दिन पीछे सोढाजातिके अधीश्वर हमीरसिंहने अपना दल ले दूसाजीके राज्यपर आक्रमण किया, और वहाँ जाकर उसकी बहुतसी धन सम्पत्ति लूट लाये। हमीरको इस प्रकारसे आक्रमण करता हुआ देखकर दूसाजीने उनके पास एक दूतके हाथ कहला भेजा कि हम दोनों बहुत काल पहिलेसे सम्बन्धबन्धनमें बँधेहुए हैं इस कारण आप हमारे राज्यमें लूट न करें; परन्तु हमीरने इनके वचनोंपर कुछ भी ध्यान न दिया, तब दूसाजी अत्यन्त क्रोधित होकर अपनी सेना साथ ले धाट राजधानीमें गया; और वहाँ प्रबल पराक्रम करके हमीरको परास्त कर दिया। दूसाजीके जैसलदेव और विजैराव नामक दो पुत्र हुए उन्होंने मेवाडके राणाकी कुमारीके साथ विवाह किया था। दूसाजीको वृद्धावस्थामें उस राजबालाके गर्भसे एक और पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम लाँझ विजयराज रक्खा गया। दूसाजीके परलोकवासी होनेपर राज्यके सम्पूर्ण नेता और सामन्तोंने उसी तीसरे कुमार लाँझ विजयराजको राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त किया। लाँझ विजयराजने राज्यसिंहासनपर बैठनेके पहिले सोलंकीवंशके सिद्धराज जयसिंहकी कन्याके साथ विवाह किया था। विवाहके समयमें जयसिंहकी रानीने लांझाविजयराजके माथेपर तिलक करनेके समय कहा "वत्स उत्तरांशके जो नवीन राजा प्रबल होकर इस राजनसे शत्रुता करते हैं और पीडा देते हैं, उनसे आप ही हमारे राज्यके उत्तरप्रान्तकी रक्षा करो। पत्तनकी सोलंकिनी रानीके उदरसे लांझाके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम भोजदेव रक्खा; भोजदेवके प्राण त्यागनेपर वह पचीस वर्षकी अवस्थामें लुद्रवा देशके अधीश्वर हुए; दूसाजीके और भी पुत्र इसी समय योग्य हो गये थे। इस समय जयसलकी अवस्था ३५ वर्षकी थी और विजैराज बत्तीस वर्षकी अवस्थाके थे।

"दूसाजीकी मृत्युके कितने ही वर्ष पहिले धारराजेश्वर उदयादित्यके वंशधर राय धवल पँवारकी तीन कन्याओंमेंसे एकके साथ शोलंकी वंशीय सिद्धराजके पुत्र जयपाल वा अजयपालने विवाह किया, और दूसरी कन्याके साथ भट्टीराजकुमार विजैराजने

---

(१) टाड साहबने अपने टीकेमें लिखा है कि "कुमारपालचरित नामक जिस पुस्तकमें अनहलवाडा पत्तनके राजाओंके इतिहासका वर्णन है, उनमें सिद्धराजके शासनका समय संवत् ११५२ से १२०१ तक अर्थात् १०९४ से ११४५ ईसवी तक लिखा है।

और तीसरी कन्याका सम्बन्ध चित्तौरके राणाके साथ ठहर गया। भट्टीजातिके अधीश्वर सातसौ अश्वारोही सेना साथ ले लुद्रवासे धारानगरीको विवाह करनेक लिये गये। उस समय शिशोदिया और सोलङ्की राजा भी वहाँ पहुंच गये थे। भट्टीराज विवाह करनेके पीछे लुद्रवाको चले आये, और महादेवजीका एक बडाभारी मंदिर बनवाया, और उसके सम्मुख एक बडा सरोवर खुदवाया, उस पँवार राजकन्यासे राहड नाम बेटा पैदा हुआ, इनके नेतसी और केकसी नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए।"

भट्टी इतिहासवेत्ताने लिखा है कि "भोजदेव बहुत दिनोंतक लुद्रवाके सिंहासनपर निश्चिन्त न बैठ सके, कारण कि कुछ ही समयमें इनके चचा जयसलदेवने इनके विरुद्ध भयानक षड्यन्त्रका विस्तार किया। परन्तु भोजदेव सदा पांचसौ सोलंकी राजपूत वीरोंसे रक्षित रहते थे, इस कारण जयसल किसी प्रकार भी उनके शरीरपर हस्ताक्षेप न कर सके। इस समय पाटनके अधीश्वर भारतविजयकी अभिलाषासे गजनीके शहाबुद्दीनके साथ युद्धमें लिप्त थे, शहाबुद्दीन उस समय ठट्टानामक देशको जीतकर पाटनके अधीश्वरको परास्त करनेमें लग रहा था; चतुरनीतिविशारद जयसलने देखा कि भोजदेवको सरलतासे हस्तगत करके उनके सिंहासनपर बैठना कोई साधारण बात नहीं है; इस कारण बहुत चिन्ता करनेके पीछे अन्तमें उसने एक उपाय स्थिर किया। उसने अन्तमें शहाबुद्दीनके साथ मिलकर अनहलवाडा पट्टनपर आक्रमण करनेका दृढ संकल्प किया। उसने यह विचारा कि जो सेना भोजदेवके शरीरकी रक्षा करनेके लिये स्थित है, अनहलवाडा पट्टनपर आक्रमण करते ही विपत्तिको सम्मुख देखकर वह अवश्य ही भाग जायगी, और हमारा मनोरथ सरलतासे सिद्ध हो जायगा। नीतिविशारद जयसलने मन ही मन यह सिद्धान्त निश्चित कर अपने प्रधान २ कुटुम्बियोंके दो सौ असीम साहसी अश्वारोही सेनाके साथ पंजाबको गमन किया। इसी समय शहाबुद्दीन गोरी ठट्ठको जीतकर वहां एक दल यमनोंकी सेनाका रख सिंधुदेशकी प्राचीन राजधानी अरोड नगरको जा रहा था। जयसल यवनराजाके साथ साक्षात् करनेके लिये उसी आरोडमें आये। शहाबुद्दीनने जयसलको आया हुआ देखकर इनका भलीभाँतिसे आदर सत्कार किया। जयसलने अपने मनका अभिप्राय कह सुनाया, इसपर शीघ्र ही दोनोंकी मित्रता हो गई। शहाबुद्दीनने करीमखाँ नामक एक प्रधान सेनापतिको कई हजार सेनाके साथ जयसलकी सहायताके लिये अर्थात् भोजदेवको परास्त करने और लुद्रवाराज्यको जयसलके हाथमें समर्पण करनेको भेज दिया। वीरश्रेष्ठ जयसलने इस प्रकार यवनोंकी सेना साथ ले लुद्रवापर आक्रमण कर प्रबल युद्धकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। इस भयंकर युद्धमें भोजदेवके मरते ही उसकी बची बचाई सेनाने जयसलकी अधीनता स्वीकार कर ली। जयसलने लुद्रवाके निवासियोंको अपनी २ धन सम्पत्ति अन्यत्र ले जानेके लिये दो दिनकी अवधि दी। तीसरे दिन यवनसेनापति करीमखाँ लुद्रवाको लूटकर भक्खर देशको चला गया"।

" इस प्रकारसे वीरश्रेष्ठ जयसलने लुद्रवाके सिंहासनपर अपना अधिकार किया। उनके अभिषेकके विरुद्धमें और कुछ कहनेका साहस नहीं होता। परन्तु जयसलने राज्यपर बैठकर जब देखा कि लुद्रवा देश एक ऐसे स्थानमें स्थित है कि जहां शत्रु-दल बडी सरलतासे आकर विजयी हो सकते हैं और ऐसे स्थानपर राजधानीकी रक्षा करना किसी प्रकार भी संभव नहीं हो सकता, तब उसने अपनी रक्षाका एक स्थान निर्धारित किया। वह स्थान लुद्रवासे पांच कोश दूर था। एक समय एक पत्थरके ऊपर जयसलने एक ब्राह्मणको बैठा हुआ देखा। ब्रह्मसर नामक कुंडके समीप उस ब्राह्मणकी कुटी थी। जयसलने उस पूजनीय ब्राह्मणको प्रणाम करके अपने आनेका समाचार कहा; ब्राह्मणने अभय देकर निभृत आश्रमके अत्यन्त समीप त्रिशृंगके शिखरपर आदिसे इतिहासका वर्णन करना आरम्भ किया। ब्राह्मणने कहा त्रेतायुगमें कावा काग नामका एक योगी इस कुंडके निकट वास करता था। उसी योगीके नामके अनुसार उस कुंडसे निकलनेवाली तरंगिनी कागनदी नामसे विख्यात हुई। पाण्डुकुल धुरन्धर अर्जुन श्रीकृष्णके साथ एक समय इस कुंडकी यात्रा करनेके लिये आये थे। उस समय श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा कि बहुत कालके पीछे हमारे ही वंशका एक मनुष्य इस त्रिकूट पर्वतपर राजधानी स्थापित करेगा। श्रीकृष्णके यह वचन सुनते ही अर्जुनने कहा कि " हे मित्र ! यदि यहां राजधानी बनगई तो यहांके निवासियोंको जलका अत्यन्त कष्ट होगा, कारण कि इस नदीका जल निर्मल नहीं है। यह वचन सुनते ही सर्वमय हरिने अपने चक्रसे उस पर्वतको संघर्षण किया जिससे अमृतके समान सुन्दर स्वादिष्ट जलकी नदी बह निकली। उस नदीके पार्श्वमें ही भविष्यद्वाक्य-मूलक एक कविता पत्थरके ऊपर खुदी हुई थी, उक्त योगीने जयसलको वह भी पढकर सुनाई;—उसका आशय नीचे लिखा जाता है।

१ " हे यदुवंशावतंस ! नरपति। आप इस देशमें पधारिये, और इस शिखर-के ऊपर त्रिकोण किला बनवाओ।"

२ "लुद्रवा विध्वंस हो गया है और जयसलदेश इस स्थानसे पांच कोश दूर है। जो उससे मजबूत है। "

३ " हे यदुवंशसम्भूत ! जयसल लुद्रवाको त्याग कर इस स्थानपर राजधानीकी प्रतिष्ठा करे।

" जिस नदीके पार्श्वमें उक्त श्लोक लिखे थे एकमात्र योगी ही उस स्थानको जानता था। उस योगीका नाम ईसाल था। उसने अपने स्वार्थ साधनके लिये जयसलसे इतना कहा था कि दुर्गके पश्चिम पार्श्वमें स्थित क्षेत्र मेरे नामसे ईसलक्षेत्र कहा जाय और उसकी रक्षा रहे, उसने गणनासे जयसलको यह भी प्रगट किया, कि आप जो दुर्ग बनानेकी अभिलाषा करते हैं वह दो बार अन्यान्य जातियोंसे लूटा जायगा,

(१) उर्दू तर्जुमेमें त्रिकुटा पहाड।

और रुधिरकी नदी बहेगी; और कुछ दिनोंके लिये आपके उत्तराधिकारी गण सर्वस्व हार जायँगे । "

"संवत् १२१२ (सन् ११५६ ईसवी) श्रावण कृष्णा द्वादशी रविवारके दिन जयसलमेर राजधानी प्रतिष्ठित हुई और थोडे ही दिनोंमें लुद्रवाके सब निवासी अपनी समस्त धन सम्पत्ति लेकर नवीन राजधानी जयसलमेरमें आकर निवास करने लगे । जयसलमेरके औरस केलन, शालिवाहन नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए । जयसलने अतुल पराक्रमी पाहुजातिके एक विद्वान पुरुषको अपने प्रधान मंत्री और उपदेष्टा पदपर नियुक्त किया । भट्टी जातिके प्राचीन शत्रु चन्ना राजपूतोंने फिर लोदी देशपर आक्रमण किया, परन्तु उनको इसके लिये उचित फल मिला; कारण कि जयसल इस घटनाके पाँच वर्ष पीछे तक जीवित थे । उनके प्राण त्याग करनेपर उनके छोटेपुत्र शालिवाहन (द्वितीय) पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए । "

तृतीय अध्याय ३.

जयसलके ज्येष्ठ पुत्र केलनजीको निर्वासन दंड—शालिवाहनका अभिषेक—काठी वा काथि देशके अधिपतिके विरुद्ध युद्धकी यात्रा—उनकी उत्पत्तिका विवरण—बद्रीनाथके यदुवंशी राजाकी मृत्यु हो जानेपर उनके सिंहासनपर बैठनेके लिये एक यदुवंशी राजकुमारसे प्रार्थना करना—शालिवाहनके उपस्थित न होनेसे उनके पुत्र बीजलदेवको सिंहासनका अधिकार देना—शालिवाहनका खडाल देशमें जाना और वल्लोचोंके साथ युद्ध करना—बीजलदेवका आत्मघात करके प्राण त्याग करना—केलनजीको फिर बुलाकर सिंहासनपर बैठालना—उनकी सन्तानोंसे संप्रदायकी सृष्टि होना खिदरखांका फिर खडालपर आक्रमण—केलनका खिजरखांपर आक्रमण और अपने पिताकी मृत्युका बदला लेना—केलनकी मृत्यु—चाचकदेवको सिंहासनकी प्राप्ति—उनका चन्ना राजपूतोंको भगाना—अमरकोटके सोढा राजपूतोंको परास्त करना—राठौरोंका मरुक्षेत्रमें आना और उनका उपद्रव मचाना—चाचककी मृत्यु—उनके पुत्र करणका सिंहासनपर बैठना—करणके ज्येष्ठ भ्राता जैतसिंहका जयसलमेरको त्यागना—करणकी मृत्यु—लाखणसेनका सिंहासनपर बैठना—उनकी उन्मत्तता—उनके पुत्र पुण्यपालका सिंहासनपर बैठना—पुन्यपालको गद्दीसे अलग करना—उनके पोते रणंगदेवका रोट और पूँगलपर अधिकार करना—पुन्यपालको निर्वासन दंडके पीछे जैतसीको फिर बुलाकर सिंहासन देना—अलाउद्दीनने जिस समय मण्डोरके परिहार राज्यपर आक्रमण किया उस समय जैतसीको मण्डोरराज्यका आश्रय देना—जैतसीके पुत्रोंद्वारा तथा और मुलतानसे भेजे हुए दिल्लीके बादशाहका प्राप्य कर लूटना—यवन बादशाहका जैसलमेरपर आक्रमण करना—जैतसी और उनके पुत्रोंका युद्धके लिये उद्योग करना—जयसलमेरका घेरना—यवनोंका पहिला आक्रमण व्यर्थ करना—रणक्षेत्रमें भट्टी सैन्यकी रक्षा—जैतसीकी मृत्यु—जैतसीके पुत्र रत्नसिंहके साथ आक्रमणकारियोंके सेनापतिके साथ विचित्र मित्रता—मूलराजको सिंहासनप्राप्ति, फिर यवनोंकी राजधानीपर अधिकार करनेकी चेष्टा करना—उनकी दुबारा पराजय—दुर्गमें पहुंची हुई सेनाको अत्यन्त कष्टकी प्राप्ति—युद्धके विचारकी सभा—जोहरकी रीति—रत्नके मुसलमान मित्रका उनके दोनों पुत्रोंके प्रति उदार व्यवहार—शेषमें आक्रमण—रावलमूलराज और रत्नके प्रधान यादवोंका रणभूमिमें प्राण त्यागना—यवनोंका जयसलमेरपर अधिकार करना—जयसलमेरका विध्वंस होना और उसका त्याग ।

यदुवंशावतंस जयसल नवीन राजधानी जयसलमेरकी प्रतिष्ठा हो जानेके पीछे वारह वर्ष तक जीवित रहकर अपने प्रबल पराक्रमके साथ राज्य करते रहे। इस वीर श्रेष्ठ जयसलके नामसे ही जयसलमेर नामकी सृष्टि हुई। जयसलमेर आजतक यदुवंशियोंके अधिकारमें है, और उसी नामसे पुकारा जा रहा है। यह तो पहिले ही कह आये हैं कि पाहु जातिके कृतविद्य मनुष्यने जयसलमेरके प्रधान राजमन्त्री पदपर नियुक्त हो भट्टीराज्यमें अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार किया था। यह मन्त्री इतनी सामर्थ्यवाला हो गया था कि इसके मन प्रसन्न रखनेके लिये सभी अपनी २सामर्थ्यके अनुसार चेष्टा करते रहते थे। उसकी इच्छाके अनुसार ही राज्यशासन होता था। रावल जयसलके केलन और शालिवाहन नामवाले दो पुत्र थे, पाठकोंने पहले अध्यायमें उनका वृत्तान्त पढा होगा, प्रचलित नियमोंके अनुसार युवराज केलन पिताके सिंहासनपर बैठे--इनके सिंहासनपर बैठनेसे मंत्री पाहु अत्यन्त असंतुष्ट हो गये। युवराजको सिंहासनसे अलग करनेपर भी उनके हृदयकी आग न बुझी, उसको एकबार ही निर्वासित कर दिया। इन युवराज केलनको निर्वासन होनेसे पाठकगण सरलतासे समझ जायँगे कि पाहुमन्त्रीमें कैसी सामर्थ्य थी। केलणके निर्वासित होते ही रावल जयसलकी मृत्यु होनेके पीछे उनके छोटे कुमार शालिवाहन सबकी सम्मतिसे संवत् १२२४ (सन् ११६८ ईसवीमें) राज्य सिंहासनपर विराजमान हुए।

यदुकुलदिवाकर पहिले शालिवाहनके समान इस दूसरे शालिवाहनने भी शीघ्र ही अपने बाहुबल और पराक्रमसे अपने नामको सर्वत्र विख्यात कर दिया।

जालोर वा आरावलीके बीचवाले देशोंमें काटी वा काठी नामकी एक जाति निवास करती थी। जगभान नामका एक मनुष्य उस जातिका अधीश्वर था। शालिवाहनने राजदण्ड धारण करनेके पीछे सबसे पहिले उस जगभानुसे युद्ध करनेका विचार किया। काठीजातिके अधिपति उस समरमें परास्त होकर मारे गये। रावल शालिवाहनने विजयी हो काठी जातिके समस्त घोडे और ऊंट अपने अधिकारमें कर लिये और फिर वह अपनी नगरीको लौट आये। इस युद्धमें शालिवाहनके विशेष पराक्रमसे उनके यशका सूर्य अपनी पूर्ण मूर्तिसे उदय हुआ, और सभी इनके बाहुबलकी प्रशंसा करने लगे। शालिवाहनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए;—

१--बीजलदेवजी।
२--बानर।
३--हंसू।

यदुवंशी पहिले शालिवाहन, जिसने गजनीसे पंजाबमें आकर शालिवाहनपुरमें राजधानीकी प्रतिष्ठा की थी, उसीके पुत्रने बद्रीनाथके पर्वतपर एक स्वतन्त्र और

(१) कर्नल टाड साहबने टीकेमें लिखा है "एलिकजण्डरके भारतपर अधिकार करनेके समयमें जिस काठी जातिने अपनी विषम वीरता प्रकाश करके उसमें विघ्न किया था, यह वही काठी जाति है। यह उस समय मुलतानमें रहती थी; सौराष्ट्रके अन्तर्गत काठियावार राज्यकी एक श्रेणीके मनुष्य उक्त स्थानमें आकर रहे थे और यदुभट्टिराजने उन्हींपर आक्रमण किया था।"

स्वाधीन राज्य स्थापन किया। वह यदुवंशी राजा पर्वत शिखरपर इतने दिनोंतक अपने प्रबल प्रतापसे राज्यशासन करते आये थे। जयसलमेरके सिंहासनपर जिस समय उक्त दूसरे शालिवाहन बैठे थे उसी समय उक्त बदरीनाथके यदुवंशी अधीश्वरने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये। वहांके मंत्री और सामन्तोंने मिलकर यदुवंशके सिंहासनपर एक यदुवंशीको बैठालनेके लिये यदुवंश धुरंधर शालिवाहनके पास कई एक सामन्तोंको भेजकर एक यदुवंशी राजकुमारकी प्रार्थना की। रावल शालिवाहनने अपने स्वजातीय राजाके सिंहासनकी रक्षाके लिये अपने तीसरे कुमार हस्सूको बदरीनाथमें भेज दिया। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि कुमारने बदरीनाथमें जाते ही प्राण त्याग दिये। हस्सूकी स्त्री गर्भवती थी वह उसी अवस्थामें बदरीनाथको जा रही थी कि मार्गमें ही उसे प्रसवकी वेदना उपस्थित हुई। उसने पलाश वृक्षके नीचे जाकर एक कुमार उत्पन्न किया। पलाश वृक्षके नामके अनुसार ही कुमारका नाम पलाश रक्खा गया। वही बालक कुमार बदरीनाथके राज्यपर अभिषिक्त हुआ; और उसीके नामके अनुसार उक्त राज्यका नाम भी पलासिया रक्खा गया और उसके उत्तराधिकारी वंशधर लोग पलासिया भाटी कहाये।

इस समय सिरोहीके देवरा जातीय मानसिंहने रावल शालिवाहनको अपनी कन्या देनेका प्रस्ताव करके उनके पास नारियल भेजा। शालिवाहन अपने ज्येष्ठ कुमार बीजलदेवको राज्यकी रक्षाका भार देकर आप विवाह करनेके लिये सिरोहीको गये। शालिवाहनके जानेके दो चार दिन पीछे बीजलके धाभाई अर्थात् धात्री माताके पुत्रने राज्यमें यह बात उडा दी कि रावल शालिवाहन मार्गमें एक व्याधके साथ युद्ध करके मारे गये। वह धाभाई इस जनरवको फैलाकर ही तृप्त न हुआ वरन् उसने इस सुअवसरमें बीजलको पिताके सिंहासनपर नियमित रूपसे अभिषिक्त करनेके लिये विशेष प्रयत्न किया। बीजल अपने धाभाईकी सम्मतिसे ही सब कार्य्य करता था कुछ दिन पीछे रावल शालिवाहनने सिरोहीसे आकर देखा कि मेरा विश्वासहन्ता पुत्र सम्पूर्ण राजशक्तिको धारण करके सिंहासनपर दृढभावसे बैठा है। इस समय पुत्र बीजलने पिताके प्रति कुछ भी भक्ति न दिखाई वरन् प्रकाशरूपसे यह कह दिया कि "जयसलमेरके सिंहासनपर अब आपका कोई अधिकार नहीं है, आप सिंहासनसे अलग हो गये हैं इस कारण आपकी जहां इच्छा हो वहां जा सकते हैं"। रावल शालिवाहनने अपनी सारी प्रजाको भी अपने पुत्रकी पक्षपाती जानकर जब देखा कि राज्यपर हमारा अधिकार किसी प्रकार नहीं हो सकता तब वह शीघ्र ही देरावर नगरके अधीन खडाल देशको चले गये। यद्यपि सिंहासनसे भ्रष्ट होकर शालिवाहनने प्राचीन राजधानी देरावरका आश्रय लिया था परन्तु वह इस शोचनीय अवस्थासे बहुत दिनोंतक जीवित न रहे। खिजरखां वल्लोचने वहां विद्रोह उपस्थित किया। रावल शालिवाहन उसको दमन करनेके लिये गये और तीनसौ सेवकोंके साथ वहींपर मारे गये। पिता शालिवाहनको राज्यसे निकालकर बीजलने भी बहुत दिनोंतक सुख न भोगा। एक समय किसी द्वेषविशेष-

वश मनोरागसे बीजलने अपने धाभाईपर तलवार चला दी । उसने भी इसपर तलवारका वार किया । तब अत्यन्त लज्जित हो बीजलने आत्महत्या करके जीवनके दिन पूरे किये ।

शालिवाहन और उनका पापी पुत्र बीजल इस संसारसे विदा हो गये । अब सर्व साधारणमें यह प्रश्न उठा कि जयसलमेरके राज्यसिंहासनपर किसको बैठाया जाय । बहुतसे तर्क वितर्क होनेके पीछे यह निश्चय हुआ कि शालिवाहनके बडे भाई केलन (जो कि मंत्रीसमाजसे निर्वासित हुए थे) उनको बुलाकर राज्यसिंहासनपर बैठाया जाय । सभीने इस बातको मान लिया और इस समय (सन् १२०० ईसवीमें) केलन फिर अपने पिताके राज्यमें आकर पचास वर्षकी अवस्थामें अभिषिक्त हुए । केलनके औरससे निम्नलिखित छः पुत्र उत्पन्न हुए,—

१—चाचकदेव ।	४—पीतमसी ।
२—पाल्हन ।	५—पीतमचंद ।
३—जयचंद ।	६—भोसराड ।

दूसरे और तीसरे कुमारोंके वंशकी संख्या अगणित हुई, और वह राजपूतवंश उन्हीं नामसे विख्यात हैं।[1]

इतिहाससे जाना जाता है कि इसी समय उक्त खिजरखाँने दूसरी बार पांच हजार अश्वारोही सेनाके साथ सिन्धुनदीके पारसे आकर फिर खडालपर आक्रमण किया । प्रथम वार इसी खिजरखांने रावल शालिवाहनको परास्त किया था । अब जब केलनने सुना कि खिजरखाँ अपनी सेनासहित फिर खडाल देशपर आ पहुँचा है तब उसने तुरन्त ही सात हजार यादवोंकी सेना सजाकर युद्धकी तैयारी की; और रणभूमिमें जाकर उससे घोर घमसान युद्ध किया; इस भयंकर युद्धमें खिजरखाँने पाँचसौ[2] सेनाके साथ पीठ दिखाई । इस भाँति बडी वीरतासे शत्रुको परास्त करके वृद्धावस्थामें केलनने उन्नीस वर्षतक राज्य किया, और अंतमें इस अनित्य शरीरको त्याग कर वे सुरलोकको सिधार गये ।

रावल केलनके प्राण त्याग करनेपर इनके ज्येष्ठ पुत्र चाचकदेव संवत् १२७५ सन् १२१९ ईसवीमें जयसलमेरके राजसिंहासनपर बैठे । उन्होंने सिंहासनपर बैठते ही चन्ना राजपूतोंके साथ भयंकर युद्ध किया । उस समय यदुपतिने दो हजार चन्ना राजपूतोंका जीवन शेष करके उनकी चौदहसौ दूध देनेवाली गौओंको अपने अधिकारमें कर लिया; और चन्नाजातिको चिरकालके लिये उस देशसे निकाल दिया । चन्नाराजपूत अपने प्राणोंके भयसे भयभीत हो शीघ्र ही जोहियोंके अधिकारी देशमें जाकर रहे, विजयदर्पी रावल चाचकदेवने कुछ दिनोंके पीछे सोढाके अधीश्वर राणा अमरसी[3]के अधिकारी देशपर आक्रमण किया । अमरसी रावल चाचकदेवको अकारण

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें लिखा है कि उनकी औलाद जेसर और सोहाना राजपूत कहलाते हैं ।

(२) उर्दू तर्जुमेमें १५ सौ ।

(३) उर्दू तर्जुमेमें रोनसी ।

अपने राज्यपर आक्रमण करता हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुआ, परन्तु वह उसी समय चार हजार अश्वारोही सेनाको इकट्ठा करके रणभूमिमें भी आ डटा। यादवोंके प्रबल पराक्रमसे पँवारराजपूत परास्त होकर अपनी निज राजधानी अमरकोटको भाग गये। और अन्तमें अपनी एक परम सुन्दरी कन्या चाचकदेवको देकर उन्होंने इस महाविपत्तिसे छुटकारा पाया।

इसी समयमें कान्यकुब्जके राठौर खेड मरुभूमिमें आकर धीरे २ अपनी शासन-शक्तिका विस्तार करते थे। राठौर गणोंने अपने बाहुबलसे चारों ओर अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये थे, अतएव रावल चाचकने सोढा जातिके अधीश्वरकी सेनामें अपनी सेना मिलाकर उन उदय होते हुए राठौरोंको दमन करनेका विचार किया। जशोल और बालोत्तरानामक दो देशोंपर राठौरोंने अपना अधिकार किया था; अस्तु यदुपतिने उक्त सम्मिलित सेनाके साथ स्वयं उस देशमें जाकर राठौरोंके साथ घोर युद्ध किया, परन्तु राठौर वीर छाडा और उसके पुत्र टीडाने रावल चाचकको एक साथ राठौर राजकुमारी देकर उनकी क्रोधाग्निको शान्त किया।

रावलचाचक प्रबल पराक्रमके साथ बत्तीस वर्ष तक राज्य करके सुरलोकको सिधारे, उनके सम्मुख ही उनके इकलौते पुत्र तेजराव बयालिस वर्षकी अवस्थामें वसन्त रोगसे ग्रसित होकर इस असार संसारको छोड गये थे। तेजरावके जैतसी और कर्णसी नामके दो पुत्र थे; कनिष्ठ कर्णसीके ऊपर उनके दादा अत्यन्त प्रीति करते थे, मृत्युशय्यापर शयन करके चाचकने समस्त सामन्त और कुटुम्बियोंको बुलाकर सबसे कहा कि, " आप हमारे इन अंतिम वचनोंको मानो। मेरे छोटे पुत्र कर्णसीको मेरे उत्तराधिकारी रूपसे सिंहासनपर अभिषिक्त करो "।

रावल चाचककी मृत्युके उपरान्त उनकी अन्तिम आज्ञानुसार सामन्त मंडलीने कर्णसीको जयसलमेरके सिंहासनपर बडे समारोहके साथ अभिषिक्त किया। छोटेको राजमुकुट धारण करते हुए देखकर बडा पुत्र जैतसी अत्यन्त दुःखित और लज्जित हो अपनी जन्मभूमिको छोडकर गुजरातमें जाकर वहाँके मुसलमान अधीश्वरके अधीनमें रहने लगा। जिस समय रावल कर्णसी जयसलमेरके राजसिंहासनपर सुशोभित हुए उसी समय मुजफ्फरखाँ नागौरमें पांच हजार सवारोंके साथ हिन्दुओंके ऊपर भयंकर अत्याचार करके उनको दुःखी कर रहा था। इस समय नागौरसे पांच कोशपर बराहा जातिके अधीश्वर भगौतीदासके अधीन एक हजार पांचसौ अश्वारोही सेना थी। भगौतीदासकी एक कन्या अत्यन्त रूपवती सुनी जाती थी, दुराचारी यवन मुजफ्फरखाँने उसी कन्याके रूपलावण्यकी प्रशंसा सुनकर उसको लेनेकी इच्छासे उसके पास एक मनुष्यको भेजा। पापी म्लेच्छोंको अपनी कन्या देना किसी प्रकार भी उचित न जानकर भगौतीदासने स्पष्ट कह दिया कि मैं यवनको अपनी कन्या नहीं दे सकता। परन्तु भगौतीदास यह भी जानता था कि मुजफ्फरके साथ युद्ध करना मेरी सामर्थ्यसे बाहर है इस लिये उसने अपनी समस्त धनसम्पति और

---

(१) चेचक। (२) उर्दूतर्जुमेमें १५ कोश।

कुटुम्बके लोगोंको लेकर जयसलमेरपतिकी शरणमें जानेका निश्चय कर लिया। जब भगौतीदास अन्तमें सपरिवार जयसलमेरकी ओरको चले और दुरात्मा खाँने यह समाचार सुना तब वह भी शीघ्र ही अपनी सेना लेकर उसके पीछे पीछे चला। और मार्गमें उसे जालिया दोनों सेनाओंमें भयानक युद्ध होने लगा, यवनोंकी सेना अधिक थी इस कारण मुजफ्फरखाँने बडी सरलतासे चारसौ वराहवंशी राजपूतोंको मारकर भगौतीदासको परास्त कर दिया और अन्तमें भगौतीदासकी परम सुन्दरी कन्या तथा उसके और भी कुटुम्बकी स्त्रियोंको बन्दी करके वह ले गया। इस महाअपमानसे अपमानित और परास्त हो भगौतीदासने शीघ्र ही जयसलमेरमें जाकर वहाँके अधीश्वरसे मुजफ्फरखाँके अत्याचारोंको कह सुनाया। कर्णसीने पापाचारी यवनोंके इन अत्याचारोंको सुनकर शीघ्र ही अपनी बलवान् सेनाको साथ लेकर मुजफ्फरखाँ पर आक्रमण किया। रावल कर्णसीने घोर युद्ध करके मुजफ्फरखाँ और उसकी तीन हजार सेनाका नाश करके भगौतीदासकी हरी हुई समस्त धन सम्पत्ति और कन्याको लाकर फिर भगौतीदासको दे दिया, इस प्रकार कर्णसी अट्ठाईस वर्ष राज्य करके स्वर्गको सिधारे।

कर्णसीके पीछे उनके पुत्र लाखनसेन १३२७ सन् १२७२ ईसवीमें पिताके सिंहासनपर बैठे। यह बडे ही भोले पुरुष थे परन्तु उनको एक प्रकारका उन्माद सा रहता था। एक दिन रात्रिके समय गीदड बडे ऊंचे स्वरसे चिल्ला रहे थे, लाखनसेनने सभासदको बुलाकर पूछा कि यह इतनी जोरसे क्यों चिल्ला रहे हैं? इसपर सभासदने उत्तर दिया कि वे दारुण शीतसे पीडित होकर चिल्ला रहे हैं, यह उत्तर सुनकर राजाने आज्ञा दी कि प्रत्येक शृगालको एक २ वस्त्र तैयार करा दो। कई दिनोंके पीछे राजाने फिर उनके चीत्कार शब्दको सुना और फिर उसी सभासदको बुलाकर पूछा कि क्यों इनको अभीतक कपडे नहीं बनवाये? इसके उत्तरमें सभासदने कहा कि महाराज कपडे तो सबको बनवाकर दे दिये गये हैं। तब लाखनसेन बोले, फिर यह इतना शोर क्यों मचा रहे हैं, अच्छा इनके रहनेके लिये मकान बनवा दिये जाँय यह सब उसी बडे भारी घरमें रहा करेंगे। इतिहासलेखक इसको लिख गये हैं कि, राजकर्मचारियोंने तुरन्त ही राजाकी इस आज्ञाका पालन किया। शृगाल इत्यादि पशुओंके लिये मकान बनवाये गये। टाड साहबने कहा है कि उन पशुशालाओंमें आजतक कितने ही घर देखे जाते हैं। यह लाखनसेन, कानडदेव सोनगराका समसामयिक था, उसकी जान लाखनकी रानीके सगुन जाननेसे बची थी इसकी सोढा जातिकी रानी लाखनसेनके ऊपर अपना विशेष प्रभुत्व चलाती थी। रानीने अपने पिताकी राजधानी अमरकोटसे अपने बहुतसे कुटुम्बियोंको जयसलमेरमें बुलाकर उनके हाथमें राज्यके एक २ विषयका भार अर्पण किया। परन्तु उसके उन्मादग्रस्त स्वामी लाखनसेनने उन सभीको मारकर उनकी लाशोंको एक ओर डाल दिया। इतिहासमें लिखा है कि यह निर्बोध राजा चार वर्षतक यदुवंशियोंके राजसिंहासनपर स्थित रहा था।

लाखनसेनके पीछे उनके पुत्र पुण्यपालने जयसलमेरके राजमुकुटको अपने मस्तकपर धारण किया, परन्तु यह इतने क्रोधी थे, कि इनके रूखे व्यवहारोंसे समस्त सामन्तमंडली अप्रसन्न रहती थी इस हेतु सभीने मिलकर सम्मति करके उनको सिंहासनसे उतार दिया। और जैतसीजी जो पहिले ही निकल कर गुजरातमें यवनोंकी सेनाके नेताओंके साथ जा मिले थे, सामन्तोंने उन्हींको बुलाकर उनके हाथमें राज्यशासनका भार अर्पण किया। अपने ही दोषसे सिंहासनसे अलग होकर पुण्यपालने जयसलमेरके राज्यसे कुछ दूर जाकर अपने रहनेके लिये एक स्थान बनवाया। कुछ ही समयमें लाखनसी नामक उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसी लाखनसीके पुत्र राणिगदेवजीने, खरल राजपूत जातिके एक मनुष्यके साथ परामर्श करके षड्यन्त्रका विस्तार किया, और जोहियोंसे मेल करके मरोट और थोरी नामक दस्यु जातिके अधिकारीसे पुंगल देश पर अपना अधिकार कर लिया। उक्त दस्युदलके नेताने रावकी उपाधि धारण कर रक्खी थी, राणिगदेव उनको बंदी करके पुंगल नामक देशमें सकुटुंब रहते थे। राव राणिगदेवके सादोल नामवाला एक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह जैसा विषयविलासी था वैसा ही वीरतामें भी विख्यात हुआ।

जैतसी संवत् १३३२ सन् १२७६ ईसवीमें जयसलमेरके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए। उनके औरससे मूलराज और रत्नसी नाम दो पुत्र उत्पन्न हुए। मूलराजके पुत्र देवराजने जालौरके (सोनगडे) जातिके अधीश्वरकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया। जब मुहम्मद (ग्वूनी) बादशाहने मंडोरके पडिहार जातीय राणा रूपसीजीके राज्यपर आक्रमण किया, तब राणा रूपसीजीने उससे परास्त हो अपनी बारह कुमारियोंके साथ जयसलमेरपतिका आश्रय लिया। रावलने इनको अभय देकर वारू नामक स्थानमें रहनेके लिये एक स्थान दे दिया।

सोनगडे वंशकी रानीके गर्भसे देवराजके जंवन, सिरवन और हमीर नामके तीन पुत्र उत्पन्न हुए। यही हमीर एक महाबलवान् वीर थे, और यह महबोदवाले कंपोहसेनपर आक्रमण कर उनकी राजधानीकी बहुतसी धन सम्पत्ति लूटकर ले आये थे। हमीरके तीन पुत्र उत्पन्न हुए, उनमें बडेका नाम जैतू, दूसरेका नाम लूनकर्ण और तीसरे पुत्रका नाम मीरो था। इस समय गोरी अलाउद्दीनने भारतवर्ष राजाओंके विरुद्ध घोरयुद्धकी अग्नि प्रज्वलित कर दी थी। मुलतान और ठट्ठा उस समय दिल्लीपति अलाउद्दीनके अधिकारमें थे। इन दोनों देशोंका राजधन इससमय पन्द्रहसौ अश्व और पन्द्रहसौ खच्चरोंकी पीठपर लादकर भक्खर नामक स्थानसे दिल्लीकी ओर बादशाहके निकट भेजा गया था। उस समस्त धनसंपत्तिको लूटनेकी इच्छासे जैतरावके पुत्र अत्यन्त गुप्तभावसे रास्तेमें आ डटे। वे समस्त राजकुमार वैश्योंका वेष धारण करसातसौ अश्वारोही और बारहसौ ऊँटोंकी सेनाको साथ ले बाहर हुए, पञ्चनदमें एक नदीके किनारे जाकर उन्होंने देखा कि चारसौ मुगल और चारसौ पठान अश्वारोही उस समस्त धनको लिये हुए जा रहे हैं। भाटियोंने उस सम्राट्सेनाके पीछे२ जाकर एक स्थानपर विश्राम लिया, दैवयोगसे मुगल और पठानोंने

भी उसी स्थानपर विश्राम करनेके लिये अपने डेरे डाल दिये। जब रात्रि हो गई और समस्त मुगल पठान निद्रित अवस्थामें हुए तब उसी समय भाटियोंने उस निद्रित यवन सेनापर जाकर धावा किया, और सबको मारकर सारे रत्न और धनको लूटकर वे जयसलमेरमें ले आये। मुगल और पठानोंकी सेनामेसे दो चार मनुष्य जो किसी तरह भाग्यवश बच गये थे, बादशाहके संमुख जाकर रोये। उन्होंने भाटियोंके इस अत्याचारका सारा वृत्तान्त कहा, इसपर बादशाहने तुरन्त ही भट्टीराजकुमारोंसे इसका बदला लेनेके लिये सेना तैयार करनेकी आज्ञा दी। इधर यदुपति रावल जैतसीने भी जब सुना कि यवन सम्राट् जयसलमेरपर आक्रमण करनेके लिये सेनासहित चलकर अजमेरके समीप सागर स्थानपर आ पहुँचा है, तब निश्चिन्त न रहकर उन्होंने भी प्रबल उद्योगके साथ शत्रुके करालगालसे रक्षाके लिये अपनी तैयारी की. उन्होंने किलेके भीतर बहुतसे धान्य रक्खे और किलेकी चारों ओरकी दीवारोंपरपत्थरके बडे२टुकडे सजाकर रक्खे; उसने यह निश्चय किया कि शत्रुओंकी सेना जैसे ही किलेके समीप आवैगी वैसे ही उसके ऊपर पत्थरोंकी वर्षा करके उसका नाश करेंगे. और वृद्ध मनुष्य और कुटुंबके मनुष्य तथा रनवासकी सभी स्त्रियोंको मरुक्षेत्रके भीतर भेज दिया। रावल जैतसी इस प्रकारसे अपनी रक्षाकी तैयारी कर अपने दो पुत्र और पांच हजार सेनाको साथ ले किलेमें रहने लगे, और देवराज और हमीर एक सेनाको साथ लेकर बाहरमे यवन सेनाके मोरचे तोडनेको सन्नद्ध हुए। अलाउद्दीन तो स्वयं उस समरक्षेत्रमें न आकर अजमेरकी ओरको गया और भादोंके मेघोंके समान लोहेके बख्तर पहरे हुये अगणित खुरासानी सेनाने जयसलमेरको जा घेरा। जयसलमेरके ५६ बुर्जकी रक्षाके लिये तीन हजार सात सौ योद्धा खडे हुए थे. और दो हजार सैनिक आवश्यकता होने पर किले पर किलेके भीतर ही सहायताके लिये तैयार थे। पहिले सप्ताहमें जब कि यवन सेना अपनी रक्षाके लिये मोरचेबंदी तैयार कर रही थी कि भाटियोंकी सेनाके अस्त्राघातसे सात हजार यवन मारे गये, परन्तु मीर महबूबखां और अलीखां नामके दो यवन सेनापति बर्चाबचाई सेनाको साथ लिये रणभूमिमें डटे रहे। यवनसेनाको दो वर्षतक तो जैसलमेरपर विवश होकर घेरा डाले रहना पडा, क्योंकि उनके लिये मंडोरसे जो रसद आती थी उसे उक्त देवराज और हमीर लूटलाट कर बराबर कर देते थे और किलेवालोंको बखूबी रसद पहुँचती जाती थी, इसी प्रकार क्रमानुसार आठ वर्षतक दोनों ओरकी सेना युद्धभूमिमें डटी रही। आठ वर्षके पीछे जयसलमेरपति जैतसीजी इस असार संसारसे चल बसे उनकी दाह क्रिया किलेमे ही की गई।

इस प्रकार दीर्घ कालतक स्थाई समर रहनेसे रत्नसी और यवन सेनापति नव्वाब महबूबखांमें एक प्रकारकी मित्रता हो गई और दोनों परस्पर इतने मित्र बन गये कि वे प्रतिदिन अपने डेरोंको छोडकर मार्गमें जा एक खोजडाके वृक्षके नीचे मिला करते थे उस समय उनके साथमें बहुत थोडे सेवक रहते थे वह प्रतिदिन उसी खोजडाके वृक्षके नीचे अनेक प्रकारकी वार्तालाप किया करते, परन्तु जिस समय युद्ध हुआ करता उस समय वे दोनों परस्पर अपनी विलक्षण वीरता प्रकाश करके अपनी २ रक्षामें

नियुक्त हो जाते थे। इसी समय जयसलमेरके राजा जैतसी अठारह वर्षतक राज्य क के पीछे स्वर्गधामको सिधार गये।

जैतसीजीके प्राण त्यागनेपर उनके पुत्र मूलराज (तृतीय) ने संवत् १३५० (सन् १२९४ ई.) में शत्रुओंकी सेनासे घिरे हुए किलेके भीतर ही राजातिलक ग्रहण किया उस समय यादवश्रेष्ठ रत्नसी, यवनयोद्धा नव्वाब महबूबखाँके साथ नियमपूर्वक उक्त वृक्षके नीचे बैठे हुए परस्परमें वार्तालाप कर रहे थे कि उसी समय मूलराजका अभिषेक मूलक महोत्सव आरम्भ हुआ। नव्वाब महबूबखाँने विस्मित होकर रत्नसीसे पूछा कि किलेमें किसलिये आनंद हो रहा है? उन्होंने उसी समय किलेके आनन्दका यथार्थ कारण कह सुनाया। नव्वाब महबूबखाँने वह समाचार सुनकर कहा, कि "मित्र! आपके साथ जो हमारी मित्रता हो गई है, और इस प्रकारसे प्रतिदिन इस स्थानपर आकर परस्परमें वार्तालाप होता है इसकी खबर अलाउद्दीनको हो गई है उन्होंने कहला भेजा है कि तुम्हारे दोषसे ही जयसलमेरका किला अपने अधिकारमें नहीं हुआ है और उन्होंने मेरे ऊपर अत्यन्त क्रोधित हो यथासम्भव शीघ्र ही किलेको अधिकारमें करनेकी आज्ञा दी है, हे मित्र! इस कारण मैं कल प्रातःकालसे ही अपनी सेना साथ ले किलेपर अधिकार करनेमें लगूँगा"।

नव्वाब महबूबखाँके ऐसे वचन सुनकर रत्नसी किञ्चित भयभीत न हुए। वह नियमित समयपर किलेमें लौट आये।

दूसरे दिन प्रभात होते ही यवनसेनापति महबूबखांने समस्त यवनसेनाके साथ जयसलमेरके किलेपर आक्रमण किया। उस आक्रमणके होते ही भयंकर संग्राम उपस्थित हुआ। एक पक्षमें यवनगण किलेपर अधिकार करनेके लिये प्रवल बल विक्रमके साथ प्रयत्न करने लगे, दूसरी तरफ यादवोंकी सेना किलेकी रक्षा करनेमें तत्पर हुई इस भयानक युद्धमें नौ हजार यवनसेना मारी गई। तब नव्वाब महबूबखाँ अपने प्राणोंके भयसे, बची हुई सेनाको साथ लेकर मैदानसे भाग गया, परन्तु उसने बहुतसी सेना सहायताके लिये इकट्ठी करके फिरसे किलेको घेर लिया. जब एक वर्षतक यवनोंकी सेना इस प्रकारसे किलेका घेरे रही और किलेके भीतरकी सेनाको भोजनके न मिलनेसे अत्यन्त कष्ट पहुँचने लगा। तब जयसलमेरपति मूलराजने अपनी रक्षा करना सब भांतिसे असम्भव जानकर और शत्रुके व्यूहको छेदन कर भाग जानेमें भी अपनेको सामर्थ्य हीन देखकर उन्होंने अपने ज्ञाति बांधव कुटुम्बो और सरदारोंको बुलाकर कहा, " कि कई बर्षोसे हम अपनी राजधानीकी रक्षा करते हुए आये हैं, परन्तु इस समय हमारे पासकी भोजनकी सामग्री चुक गई है और यहांसे निकलकर भोजनके लानेका भी अब कोई उपाय नहीं रहा है क्योंकि शत्रुओंने प्रत्येक द्वारोंको भली भांतिसे घेर लिया है। अब हमें क्या करना उचित है सो सलाह दीजिये?" राजाके यह वचन सुनकर सिहर और बीकमसी नामक दो सामन्तोंने कहा "कि रनवासकी रानियां जौहर-

व्रतका अवलम्बन करें और हमलोग रणभूमिमें अपने २ जीवनका बलि देंगे। उधर जयसलमेरके किलेमें तो यादवगण यह गोष्ठी कर रहे थे इधर यवनसेनाको इस बातकी लेशमात्र भी आशा नहीं थी कि यादवोंकी सेनाको भोजनके न मिलनेसे बडा कष्ट उपस्थित है इस लिये वे उसी समय व्याकुल हतोत्साह और निराश हो किलेका घेरा छोडकर चले गये। वे समझते थे कि यादवोंकी सेना बहुत दिनोंतक किलेकी रक्षा करनेमें समर्थ है, इस कारण किलेको रोकना वृथा है।

सम्राट्की सेनाके भागत ही यवनसेनापतिके छोटे भाईको रत्नसीने जयसलमेरके किलेमें बुलाया और उसको मित्रका भ्राता जानकर उन्होंने उसका बडा आदर सत्कार किया। नव्वाब महबूबखाँके भाईने किलेमें जाते ही देखा कि भोजनके अभावसे यादवोंकी सेना महा कष्ट पा रही है, तब वह किंचित भी विलम्ब न करके वहाँसे निकल भागा और सम्राट्की सेनाके साथ मिला। उसने अपने भाईको किलेकी भीतरी अवस्थाका सब समाचार कह सुनाया। नव्वाब महबूबखाँ इस शुभ समाचारको पाते ही उसी समय अपनी सेनाको साथ लेकर जयसलमेरकी ओरको चला, और बडी शीघ्रतासे जाकर उसने फिर किलेको घेर लिया। जब यदुपति मूलराजने देखा कि यवनोंने पुनः किला आ घेरा है तो वे अत्यन्त विस्मित हुए। बहुत सी छानबीन करनेसे जाना गया कि रत्नसीके अपराधसे ही जयसलमेरके भाग्यमें यह कालरात्रि उपस्थित हुई है।

मूलराजने अत्यन्त क्रोधित हो रत्नसीको बुलाकर बडा फटकार बतलाई और कहा;–" कि इस समय तुम्हारे दोषसे ही हमारा यह सर्व नाश उपस्थित हुआ है। तुमने पापात्मा यवनोंके साथ मित्रता करके अपने पैरमें जानबूझकर आप कुल्हाडी मारी है अब इस समय क्या करना उचित है?--इस महा विपत्तिसे जयसलमेरका, किस प्रकारसे उद्धार हो सकता है? रनिवासकी रानियोंके सतीत्वकी रक्षा किस प्रकारसे होगी? यवनोंने इस समय दुगुने बलके साथ किलेको घेर लिया है, इस लिये हमें अपने कल्याणकी आशादृष्टि नहीं आती?

बडे भाईके ऐसे वचन सुनकर अत्यन्त उत्तेजित हो रत्नसी क्षत्रियोचित वचन बोले, उन्होंने कहा–" हम इस समय जैसी अवस्थामें पडे हैं, उससे स्वजातिकी रक्षा होनेका केवल एक उपाय है। पापी यवनोंके हस्तगत होनेकी अपेक्षा मोक्ष मार्गका अवलंबन करनेसे यदुवंशियोंका सन्मान रहेगा और यही हमारा कर्तव्य भी है। जब कि हम देखते हैं कि यवनोंकी सैन्यसंख्या अधिक है, और हमारे पासका समस्त भोजन भी निबट गया है, तब जयकी आशा करनी वृथा है। अस्तु यवनोंकी आधीनताके बदले आत्मघात करके मरजाना कहीं अच्छा है। यदि एकबार भी यवनोंकी सेना इस पवित्र जयसलमेरके किलेमें आकर अपना अधिकार करलेगी तो वह हमारे ऊपर अत्याचार करनेमें किसी भाँतिकी भी त्रुटि न करेगी। हमारी पवित्र साध्वी सती यदुवंशी स्त्रियोंके शरीरपर यवनोंका हाथ लगनेसे कुलमें घोर कलंक लगेगा; और यवनगण सबसे पहिले यही काम करेंगे। इस अवस्थामें सबसे पहिले रानियोंको

जौहरव्रतकी आज्ञा दी जाय। अमरावतीके समान इस जयसलमेरमें जो सुन्दर २ महल बनवाये हैं, हमारे परास्त होते ही यह पापी उनमें सुखसे विहार करेंगे, इसको हम कभी नहीं सहन कर सकते; इस कारण इन सभी मकानोंको तोड़फोड़ डालें, और जितनी धनसम्पत्ति है उसे इसी समय नदीमें बहा: दें। इसके पीछे हम सभी यदुवंशी नंगी तलवारें हाथमें ले रणभूमिमें जाकर शत्रुओंका संहार करते हुए स्वर्गको सिधारें और इसीसे हमारे पवित्र यदुवंशके सम्मानकी रक्षा होगी"। वीरश्रेष्ठ रत्नसीके यह वचन सुनकर मूलराज अत्यन्त संतुष्ट हुए, और समस्त सामन्त तथा कुटुम्बी जनोंको इकट्ठा कर उन्होंने उनसे यह वचन कहे "आप सभीका जन्म वीरवंशमें हुआ है, और आपके अधीश्वरोंने अपने स्वार्थ और सम्मानकी रक्षाके लिये प्रबल बाहुबल धारण किया है; आप लोग सदैव क्षत्रियोचित मार्गपर ही चलते आये हैं, किस क्षत्रिय जातिने आपके समान इस प्रकार अपने कर्तव्यको पालन किया है? संग्रामभूमिमें महाबलवान् हाथीतक भी आपके सम्मुख नहीं ठहर सकता। हमारे सम्मानकी रक्षाके लिये आपने तलवार हाथमें ली है अब आप इसी तलवारसे शत्रुओंका संहार करके जयसलमेरका सच्चा उद्धार करनेके लिये आगे हूजिये"।

यदुपति मूलराज इस प्रकारसे समस्त यादवोंको उत्तेजित कर अन्तमें रत्नसीको अपने साथ ले रनिवासमें गये, सब रानी और कुटुम्बकी स्त्रियोंको इकट्ठा करके, दोनों यदुवंशी सबसे कहने लगे "कि हमने अपने पिताके धर्म और जातिके गौरवके सम्मानकी रक्षाके लिये इस महा विपत्तिमें जीवन उत्सर्ग किया है। इस समय हमारी जो अवस्था हो रही है उससे उद्धार होनेका कोई उपाय समझमें नहीं आया तब हम हत उद्योग होकर यहां आये हैं। इसमें कोई भी संदेह नहीं है कि दुराचारी यवनोंकी जय होते ही वे पापी हमारे प्राण नाश कर, तुम्हारा सारा धन, विधिदत्त धन और क्षत्रियोंकी स्त्रियोंका एकमात्र सार—धन, तुम्हारे पवित्र सतीत्व—धर्म धनको नष्ट करेंगे। इस अवस्थामें तुम सभीको सुहागबल[1]का अवलंबन करना उचित है। इस समय तुम सभी जौहरव्रत करके अपने प्राण त्याग दो। हम लोग शीघ्र ही सुरलोकमें आकर तुमसे मिलैंगे। यदुपति मूलराजकी सोढा वंशीय ज्येष्ठा रानीने पतिके ऐसे वचन सुनकर विनीत भावसे हँसते हँसते कहा--नाथ! जौहरव्रतके अवलंबनके लिये आज रात्रिमें ही हम सारी तैयारी कर लेंगी और कलह प्रभात होते ही हम सब सुरपुरको चल बसेंगी"। पटरानीकी तरह और भी समस्त यादवकुल ललना और सामन्तोंकी स्त्रियोंने प्रज्वलित अग्निमें आहुति होनेका दृढ़ संकल्प किया।

अतएव! इसी कालरात्रिमें यदुवंशियोंकी समस्त स्त्रियां अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये जौहरकी तैयारी करने लगीं। प्रभात होते ही रनिवासके द्वारपर हृदय-भेदी भयंकर दृश्य दिखाई देने लगा। बाला, प्रौढ़ा और वृद्धा सब अवस्थापन्न

(१) स्वामीकी मृत्यु होनेके पहिले जो सती स्त्री प्रज्वलित अग्निमें दग्ध होती थीं उसको सुहागबल कहते थे, और स्वामीकी मृत्युके पीछे इस प्रकारसे दग्ध होनेको भी सुहागबल कहा है।

यदुवंशियोंकी स्त्रियाँ स्नान कर रेशमी वस्त्रोंको पहिरे देवताओंका पूजन करके हरिगुण गान करती हुई इकट्ठी हुई, तदनन्तर प्रत्येक स्त्रीने आत्मीय और जातिवर्गके लोगोंकी चरणवन्दनाके उपरान्त जौहरव्रतका प्रारंभ किया। पर्वतके समान प्रज्वलित अग्निशिखामें वे राजकुल ललनायें अपने २ शरीरको स्वयं आहुति देने लगीं। बालिकासे लेकर वृद्धातक इस भाँति चौबीस हजार स्त्रियोंने अग्निमें प्रवेश करके प्राण त्यागे। किसी किसीने तलवारसे ही अपने गले काट डाले। एक तो अग्निका तेज उसके ऊपर सती स्त्रियोंके सतीत्वके तेजने उसको और भी भयंकर कर दिया। समस्त जयसलमेरमें उस अग्निका तेज प्रकाशमान हो गया, उस समय यादवोंने स्त्रियोंके बहुमूल्य वस्त्र और आभूषणोंको भी उसी अग्निमें डाल दिया। राजमहलकी प्रत्येक वस्तु भस्मीभूत हो गई। शत्रुसेनासे स्पर्श किये जानेके लिये रनवासका एक तिनकातक शेष न रक्खा गया। यदुपति मूलराज आज इतने दिनोंके पीछे श्रीहरिके वंशका लोप होता हुआ देखा, उस समय आप भी महा दुःखित हो प्रत्येक जाति और कुटुम्बियोंके साथ स्नान करके कुलदेवताकी पूजा कर दरिद्रोंको बहुतसा धन दे रणशय्या सजाने लगे, सभीने बख्तर पहने, शिरपर तुलसीकी शाखा और गलेमें शालिग्रामकी मूर्ति बाँधी, और मस्तकपर टोप धारण कर उन्होंने एक दूसरेसे अन्तिम आलिंगन किया। इसके पीछे वे संग्रामकी बाट देखने लगे; तीन हजार आठसौ यादववीरोंने इस भाँति पैतृक धर्म और जातीय संमानकी रक्षाके लिये क्रोधोद्दीपित मुखसे राजाके साथ जीवन त्याग किया।

रत्नसीके घडसी और कानड दो पुत्र थे इस समय घडसीकी अवस्था बारह वर्षकी थी; रत्नसीने उन दोनों कुमारोंके प्राण बचानेकी अभिलाषासे शत्रुओंके नेता महबूबखांके पास यह कहला भेजा कि आपको मेरे इन दोनों कुमरोंके जीवनकी रक्षा करनी होगी। मुसल्मान नेता महबूबखांने उस दूतके सम्मुख ही शपथ करके कहा कि अपने मित्रके दोनों पुत्रोंके जीवनकी रक्षा करूँगा। इसके पीछे महबूबखांने अपने दो विश्वासी सेवकोंको रत्नसीके पास भेज दिया। रत्नसीने अपने दोनों कुमारोंको हृदयसे लगा लिया, और उनके शिरपर हाथ धर कर आशीर्वाद दिया, इसके पीछे उन्होंने अपने दोनों पुत्रोंको महबूबखांके सेवकोंके साथ भेज दिया। घडसी और कानडके डेरोंमें आते ही महबूबखांने उन्हें बडे आदर सम्मानके साथ लिया, और इनके शिरपर हाथ फेरकर धीरज दे भलीभांतिसे अभय दान दिया। महबूबखांने उसी समय दो ब्राह्मणोंको इन दोनों कुमारोंकी सेवामें नियुक्त कर दिया।

इधर सूर्यदेवके उदय होते ही महबूबखांकी समस्त सेना साक्षात् कालरूप संहारमूर्तिसे जयसलमेरके किलेको जीतनेके लिये आगे बढी। शत्रुओंकी सेनाको आता हुआ

(१) रणभूमिमें मृत्यु होनेसे स्वर्गकी अप्सराओंके साथ विवाह होता है-क्षत्रियवीरोंका ऐसा विचार है। इसीसे वह विवाहके समयमे जिस भांतिका टोप (मौर) धारण करते हैं रणभूमिमे प्राण त्यागका निश्चय सकल्प कर अप्सराओंके साथ विवाह होनेकी आशासे इस समय भी उसी तरह टोप (मौर) धारण किया।

देखकर यदुपति मूलराज उन तीन हजार आठसौ वीर योद्धाओंके साथ समरसागरमें कूद पडे । इस भयंकर युद्धमें वीरश्रेष्ठ रत्नसी एकसौ बीस यवनोंका प्राणनाश करके महानिद्रामें सो गये, धीरे २ युद्ध बढता ही गया। यदुपति मूलराजने भी कईसौ यवन-सेनाका संहार करके अन्तमें रणशय्यापर शयन किया । उनके साथ सातसौ यादव मारे गये, अन्तमें युद्ध शान्त हो गया; विजयी यवन वीरनादसे जयसलमेरको कंपित करते हुए किलेमें जा पहुँचे । यवन सेनापति महबूबखाँने मूलराज और रत्नसीकी लाशको रणभूमिसे मंगाकर यदुवंशियोंकी रीतिके अनुसार उनकी दाहक्रिया करवाई । संवत् १३५१ (सन १२९५ ईसवीमें) इस प्रकारसे यदुवंश फिर विध्वंस हो गया, देवराज जो सेनाके साथ बाहर रहते थे, उन्होंने भी इस समय ज्वररोगसे प्राण त्याग किये । यवनोंकी सेना इस प्रकारसे यदुवंशको विध्वंस करके दो वर्षतक जैसलमेरके किलेमें रही । अन्तमें उस किलेकी दीवारें तोडकर और समस्त दरवाजोंमें ताले लगाकर नव्वाब वहाँसे चला गया । जयसलमेरका दुर्ग इस प्रकारसे बहुत समयतक शोचनीय अवस्थामें पडा रहा । क्योंकि न तो यदुवंशियोंमें उस किलेके सुधारनेकी सामर्थ्य थी न उसकी रक्षा करनेकी ।

चतुर्थ अध्याय ४.

विध्वंस हुए जयसलमेरमें महोबेके राठोरोंका आगमन और वहां उनका निवास–भट्टी सामन्त दूदाजीका राठोरोंका परास्त करना--दूद का रावलकी उपाधि धारण करना–तिलोकसीका सम्राट् फीरोजशाहके घोडेको चुराना–दूसरी वार जयसलमेर पर आक्रमण और फिर जौहरका अनुष्ठान–दूदाका प्राण नाश—भट्टीराजके दोनो कुमारोंको स्वाधीनताकी प्राप्ति–रावल घडसीको जयसलमेरके राज्यकी प्राप्ति और उनका वहां निवास-देवराजके पुत्र केहर और उसके भविष्य भाग्यका प्रकाश-जसहडके पुत्रोंद्वारा घडसीके प्राणनाश–घडसीकी विधवा रानीका केहरको दत्तक लेना केहरको राज्य-सिंहासनकी प्राप्ति–विमला देवीका प्रज्वलित चितापर चढना–हमीरके पुत्रोंको उत्तराधिकारी पदकी प्राप्ति–मेवाडके राणाका जेतसीके पास विवाहका प्रस्ताव भेजना,उनके प्रस्तावका त्याग–दोनों भ्राता-ओंका प्राणनाश–राव राणिगदेवका अनुताप–केहरके वंशधर बडे पुत्र सोमका गिरावमें जाना और वहां निवास करना–पिताकी हत्याका बदला लेनेके लिये राणिगदेवके पुत्रोंका मुसल्मानधर्म अव-लम्बन करना–यदुराजका उनकी सारी धनसम्पत्ति और राजसरस मुक्त करना–अभीरिया भाटि-योंके साथ उनका सम्मिलन-केहरके तीसर पुत्र केलणका दुर्गवद्ध स्थानमें रहना–खडालसे दहियादि-कोंको परास्त करके भगाना–ठट्ठा वा गारादेशपर केलणका कोहर नामक दुर्ग बनाना–अमीरखा कुरईके आधीनमें स्थित जोहिया और लगाह गणोंका उनपर आक्रमण और उनकी पराजय–चाहिल और मोहिलोंको वशमें करना–पचनद राज्यमें अपने राज्यका अधिकार–रावल केलणके समावंशकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण–समा जातिका विवरण–केलणका समाराज्यपर अधिकार–सिन्धुन-दीको अपनी सीमामें करना–केलणकी मृत्यु–चाचकको राज्यसिंहासनकी प्राप्ति–मरोटमें राजधानीका स्थापन–मुलतानके अधिनायक लोगोंका आक्रमण–दूसरी बार विजय प्राप्ति–पचनदमें एक सेनाका रख-

ना–दूद्दीजातिके अधीश्वर महापालको परास्त करना–उसके सम्बन्धमे प्रवाद–सातलमेरके साथ विवाद–उसका फल–हैबतखां–राव चाचकका पीली बँगादेशपर आक्रमण–खोडरका वृत्तान्त–लगाहोंका उसकी सेनाको दीनापुरसे भगाना–राव चाचककी पीड़ा–मुलतानके अधीश्वरको युद्धके लिये बुलाना–दीनापुरमें गमन–चाचककी हत्या–कम्ब्रोहका प्रतिहिंसा दान–बरसलका दीनापुरमें फिर राजधानी स्थापन करना–किरोर स्थानमें जाना–लंगाह और बलोचोंका आक्रान्त होना–उनको परास्त करना–रावल बरसीके साथ रावल बरसलका साक्षात्–बाबरका मुलतानको जीतना–परवर्ती छः राजाओंका विवरण।

पूर्व अध्यायमें जो यदुवंशियोंके वंशविध्वंसका विवरण किया गया है, उसके कई वर्ष पीछे महोबाके नेता मालाजीके पुत्र जगमालने जयसलमेरकी राजधानीको विध्वंस अवस्थामें पडी हुई देख और यदुवंशियोंमेंसे किसीको वहां न पाकर स्वयं जयसलमेरपर अपना अधिकार कर वहाँ राजधानी स्थापन करनेका विचार किया। वास्तवमें यदुवंशका प्रायः एक वार ही लोप हो गया था, इस कारण यदि राठौर सामन्त इस सुअवसरको विचार कर अनाथ भट्टियोंकी राजधानी जयसलमेरपर अपना अधिकार करके वहाँ रहनेकी इच्छासे आगे हुए तो इसमें आश्चर्य क्या है, जगमाल राठौरने सातसौ गाडी रसद और बहुतसी सेनाको तथा कुटुम्बी जनोंको साथ लेकर जयसलमेरमें प्रवेश किया, परन्तु उसके मनकी कामना पूरी न हुई। इस समय भट्टी राजवंशीय जसहडके दो पुत्र दूना और तिलोकसीजीने जब सुना कि एक राठौर हमारे वंशकी राजधानीपर अपना अधिकार करके वहां रहनेके लिये तैयार हुआ है तब वे अपने वंशके गौरवकी रक्षाके लिये समस्त कुटुम्बी और सेनाको साथ ले शीघ्र ही जयसलमेरमें आ पहुँचे। और उन्होंने चढी सवारी राठौरोंपर आक्रमण किया और भयंकर युद्ध करके अन्तमें उनकी सारी धनसम्पति लूटकर उनको अपने प्रबल पराक्रमसे भगा दिया।

विजयी दूदाने इस भांति अपने प्रबल पराक्रम और बाहुबलसे राठौरोंको भगा दिया और फिर अपने वंशका प्राचीन राजधानी अपने हाथमें कर ली। प्रजावर्गने भी सन्तुष्ट होकर उनको जयसलमेरका स्वामी स्वीकार कर रावलकी उपाधि देनेमें क्षणमात्रकी भी विलम्ब न की। दूदाने जयसलमेरके राज्यसिंहासनपर बैठाकर टूटे फूटे मकान और किलेको फिर बनवा लिया। और जयसलमेर आज फिर कई वर्षोंके पीछे अपनी पहिली मूर्ति धारण करके देखनेवालोंके मनको आनन्दित करने लगा।

रावल दूदाके औरस पांच पुत्र उत्पन्न हुए। दूदाके भ्राता तिलकसी महावीर विख्यात थे। उन्होंने अपने बाहुबलसे बलोच, मुसल्मानों, मांगोलियों, देवरा जाति और आबूशिखर तथा जलौरके सोनगडोंको परास्त करके अपनी वीरताकी पराकाष्ठा दिखाई थी। तिलोकसी बारम्बार विजयी होनेसे इतने साहसी हो गये थे कि इसने सेनासहित अजमेरमें जाकर अपने बाहुबलका परिचय दिया, दिल्लीके बादशाह फीरोजशाहने अपने बहुतसे उत्तम २ घोडे अजमेरसे आनासागरमें स्नान करानेके लिये भेजे थे; एक समय उसी वीरश्रेष्ठ तिलकसीने निर्भय हो उन सब घोडोंको लूट लिया और फिर आप जयसलमेरमें चला आया। अलाउद्दीनके अप्रसन्न होनेसे यदुवंश जिस

भांति एक बार लुप्त हो गया था, तिलकसीने भी उसी भांति बादशाह फिरोजशाहके घोडोंको लूट कर अपने भाग्यमें कालरात्रि बुला ली।

जब सम्राट् फिरोजशाहने सुना कि जयसलमेरके अधीश्वरके भ्राता तिलकसी असीम साहस करके हमारे बहुमूल्य घोडे रक्षकोंके हाथसे छीनकर ले गया है, तब तो उसके क्रोधका ठिकाना न रहा; उसने शीघ्र ही जयसलमेरके विध्वंस करनेके लिये एक बलवान् सेना भेजी। यदुभाट्टियोंके इतिहास लेखक इस बातको लिखते हैं कि पहिलेके समान इस बार भी जयसलमेरमें भयंकर घटना उपस्थित हुई। प्रबल पराक्रमी यवनसेनाके विरोधसे अपनी रक्षा होना कठिन जानकर यदुवंशियोंके अधीश्वर दूदा और तिलकसीहने रनिवासकी सोलह हजार रानियोंको अग्निमें भस्म करके सोलहसौ स्वजातीय सेनाके साथ युद्धक्षेत्रमें प्राण त्याग कर अपने जातीय गौरवकी रक्षा की। इतिहाससे जाना जाता है कि रावल दूदाने दश वर्ष तक जयसलमेरमें राज्य किया था, इस समय फिर जयसलमेरकी पहलेके समान अवस्था हो गई।

संवत १३६२ सन् १३०६ ईसवीमें रावल दूदा रणभूमिमें कुटुम्बियों समेत मारे गये, उसी युद्धमें पूर्व कथित नव्वाब महबूबखाँकी मृत्यु हो जानेसे उसके मित्र रत्नसीके जो दोनों कुमार थे इस समय उनकी रक्षाका भार महाबूबखाँके दो पुत्र गाजीखाँ और जुलफकारखाँके ऊपर पडा। इस समय कानड अत्यन्त गुप्तभावसे एक बार जयसलमेरमें आया और ज्येष्ठ घडसीने जो देश पश्चिम प्रान्तमें महेवाके अधिकारमें था वहाँ जाकर महेवाके राठौर नेताकी भगिनी विमला देवीके साथ विवाह किया। जिस समय घडसी विवाहकी धूमधाममें लग रहे थे उस समय उनके रिश्तेदार सोनिंगदेवने आकर इनके साथ साक्षात् किया। सोनिंगदेव जैसे भीमकाय थे वैसे ही बलवान् भी थे विवाह होजानेके पीछे घडसी उन महाबली सोनिंगदेवको अपने साथ दिल्लीको लिवा ले गये।

दिल्लीके सम्राट्ने इस भीमकाय वीर पुरुषको देखकर इनके बाहुबलकी परीक्षा करनी चाही। खुरासानके अधीश्वरने दिल्लीके बादशाहको एक लोहेका बना हुआ धनुप भेटमें दिया था। उस धनुषकी प्रत्यंचा चढाना कोई साधारण बात नहीं थी। बादशाहने विचारा कि हिन्दू वीर कभी भी इस धनुपके चढानेमें समर्थ नहीं होगा, परन्तु वीर श्रेष्ठ सोनिंगदेवने उस धनुपको इतना झुकाया कि उसके दो टुकडे हो गये, बादशाहने हिन्दूवीरके इस बाहुबलको देखकर उसको बडे आदरके साथ घरके भीतर ले गया। इसी समय तैमूरशाहने दिल्लीपर आक्रमण किया। घडसीने बादशाहकी ओरसे इतना बलविक्रम प्रकाश किया और सम्राट्की ऐसी सहायता की कि, जिससे वह समस्त उपद्रव एक बारही शांत हो गया। बादशाहने घडसीके इस असीमबल विक्रमसे प्रसन्न हो पुरस्कारमें उनके पिताकी राजधानी जयसलमेरके शासनका भार उनके हाथमें अर्पण करके रीतिके अनुसार उन्हें सनद भी लिख दी, और जयसलमेरके किलेको तैयार करनेकी आज्ञा दी।

(१) उर्दू तर्जुमेमें १७ सौ लिखा है।

(२) उर्दू तर्जुमेमें इतना और लिखा है कि विमलादेवी वेश्या थी और देवडाको व्याही जा चुकी थी।

यदुवंशके भाग्यका आकाश मानो फिर निर्मल हो गया; घडसी एकमात्र अपने बाहुबल और विक्रमसे सौभाग्य लक्ष्मीकी गोदमें बैठकर फिर जयसलमेरके यदुवंशियोंकी लुप्त हुई कीर्तिको प्रकाशमान करनेके लिये आगे बढे । उनकी जाति और कुटुम्बके मनुष्य अनेक स्थानमें रहते थे, घडसीने उन सबको बुलाया; और महेवाके अधीश्वर अपने परम मित्र जगमालके आधीनकी सामन्तमंडलीकी सहायतासे शीघ्र ही बडी भारी सेना तैयार कर उन्होंने जयसलमेरमें जा, चारोंओर शान्ति स्थापन करके अपनी शासनशक्तिका विस्तार किया । हमीर और उनके पक्षवालोंने घडसीको आया हुआ देख कर इनको यदुपतिरूपसे स्वीकार किया । परन्तु जसहडके पुत्र घडसीके सिंहासनपर बैठनेसे संतुष्ट न हुए ।

हमारे पाठकोंने पहिले अध्यायमें वीरश्रेष्ठ देवराजके वृत्तान्तको पढ लिया है । देवराजने मंडोरके अधीश्वर राणा रूपडाकी कन्याके साथ विवाह किया था । उसी राजकुमारीके गर्भसे और देवराजके औरस केहर नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जिस समय बादशाहकी सेनाने जयसलमेरको घेर लिया था उस समय उक्त केहर और उसकी माताको मंडोर भेज दिया गया था । जिस समय केहरकी अवस्था बारह वर्षकी थी उस समय वह अपने नानाके यहां ग्वालोंके साथ[१] जंगलमें जाया करता था और बच्चोंके साथ जंगलमें खेलता हुआ फिरा करता था, एक समय केहर खेलता २ जाकर एक सर्पके बिलके पास लेट रहा, केहरके निद्रित होते ही उस बिलमेंसे सर्प निकला और केहरके मस्तक पर अपने फनसे छाया करके बैठा रहा, इसी समय उस मार्गसे एक चारण जा रहा था, उसने उस परम सुन्दर बालकके शिरपर सर्पके फनकी छाया देखकर उसी समय मंडोर पतिसे समस्त वृत्तान्त जा सुनाया, राणा शीघ्र ही उस स्थान पर गये और जाकर देखा कि दौहित्रके मस्तक पर सर्प अपने फनको फैलाये हुए बैठा है । उन्होंने जान लिया कि यह कुमारका शुभलक्षण है, यह केहर किसी समयमें अवश्य ही राजसिंहासनपर विराजमान होगा ।

यद्यपि रावल घडसी अपने प्रबल प्रतापके साथ राज्य करने लगे, परन्तु विमला देवीके गर्भसे एक भी पुत्र न हुआ, इस कारण उनका मन अत्यन्त ही दुःखी रहता था, उन्होंने रानीको एक पुत्र गोद लेनेकी सम्मति दी । रानीने स्वामीकी आज्ञासे पुत्रको गोद लेनेकी इच्छासे राज्यमें जितने बालक यदुभट्टियोंके थे उन सभीको बुलाया, परन्तु केहरके समान दूसरा बालक रानीके मनमें न भाया । घडसी केहरको गोद लेते हैं; यह समाचार पाते ही जसहडजीके दोनों पुत्र अत्यन्त ही असंतुष्ट हुए, और यह उपाय सोचने लगे कि किस प्रकारसे जयसलमेर पर हमारा अधिकार हो जाय, ऐसा षडयन्त्र सोचने लगे, इसी समय घडसीजी एक बडाभारी सरोवर खुदवा रहे थे, उसको देखनेके लिये वह प्रतिदिन जाया करते थे, एक दिन घडसी नियमितरूपसे उस सरोवरको देखनेके लिये जा रहे थे, इसी समयमें जसहडजीके दोनो पुत्रोंने इनपर आक्रमण कर इनके प्राणोंका नाश किया ।

(१) उर्दू तर्जुमेमें भाट लिखा है ।

साध्वी विमलादेवीने जसहडजीके दोनों पुत्रोंके द्वारा स्वामीकी मृत्युका समाचार सुना, वह इस बातको भलीभांतिसे समझ गई कि इन पापियोंने राज्यके लोभसे ही मेरे स्वामीके प्राणोंका नाश किया है, अस्तु उसी समयमें रानीने केहरको जयसलमेरका अधीश्वर कहकर मनादी फिरवा दी, और उन दुराचारियोंका मनोरथ सिद्ध न होने दिया। विमलादेवी अपने पतिके साथ ही क्षत्रियरीतिके अनुसार चितापर चढती, परन्तु कई एक कारणोंसे उसने कई महीनेके पीछे यह कार्य किया। उसके स्वामी जिस पुष्करणीको तैयार करा रहे थे उसको पूर्ण कराना था और बालक केहरकी रक्षाके लिये भी कुछ समयकी अपेक्षा थी। छः महीनेके पीछे वह सरोवर बनकर तैयार हो गया। विधवा रानीने अपने स्वामीके नामसे ही उस सरोवरका नाम "घडसीसर" रक्खा। अब शत्रु लोग केहरके प्राणोंका नाश करनेकी चिंतामें हुए, यह जान कर विमलादेवीने प्रज्वालत चितामें अपने शरीरको भस्म कर सुरलोकको प्रस्थान किया। इतिहाससे जाना जाता है कि रानी विमलादेवी चलते समय यह कह गई थी कि हमीरके पुत्र ही केहरके दत्तक और उत्तराधिकारी हों। हमीरके दो पुत्रोंमेंसे एकका नाम जैतसी और छोटेका नाम लूनकर्ण थी।

जैतसीकी युवा अवस्था आनेपर चित्तौरके राणा कुंभाने उनके निकट विवाहका नारियल भेजा। भट्टीराजकुमार अपने बहुतसे सेवकोंको साथ ले विवाह करनेके लिये मेवाडको चले। आरावली शिखरसे बारह कोश दूर जाते ही उनको सांकला मेहराज नामक प्रसिद्ध सालवनीके नेता मिले। उस दिन वहाँ विश्राम करके दूसरे दिन प्रभातकाल ही राजकुमार जैतसीने अपनी शुभयात्रा की। इसी अवसरमें घूघू पक्षी चिल्लाता हुआ इनकी दाहिनी ओर गया, सांकलाका साला पक्षियोंकी बोलीके शुभाशुभ फल जाननेमें विशेष विद्वान् था। उसने दाहिनी ओरको घूघू पक्षीके बोलनेका फल इस शुभयात्रामें अमंगलकारी बतलाया। उसके यह बचन सुनते ही जैतसीने अपने घोडेकी लगाम रोक कर उस दिन वहीं विश्राम किया। इसी अवसरमें उस पक्षीको पकड कर देखा गया कि उसके एक नेत्र भी नहीं है। दूसरे दिन प्रभात होते ही जैतसीने पुनः यात्रा प्रारम्भ की कि, इसी समयमें कुछ दूर पर व्याघ्रोंके चिल्लानेका शब्द सुनाई पडा, जैतसीने उसी समय सांकलाके सालेको बुला कर उसे व्याघ्रोंके शुभाशुभ फलको बतलानेकी आज्ञा दी। उक्त मनुष्यने इसे न बताकर केवल इतना ही कहा कि आप इसी स्थानपर रहें, और एक नौ जवान युवकको नाईके भेषमें कूंमलमेरको भेज दें, वह मनुष्य वहाँ जाकर वहाँकी यथार्थ अवस्था जान आवे, इस प्रकारसे राणा कुंभाकी चतुरताका सरलतासे पता पड जायगा और यह भी विदित हो जायगा कि यह अमंगलके लक्षण किस कारण दिखाई पडते हैं।

पहिली आज्ञाके अनुसार शीघ्र ही एक साहसी युवक नाईकी स्त्रीका भेष धारण कर कूंमलमेरको चला, उसने उस भेषसे रनिवासमें जाकर देखा कि अब मंगल नहीं है,

(१) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखा है कि एक तीतर दाहिने हाथकी तर्फसे बोला।

उसने लौट कर अमंगलका समस्त समाचार कह सुनाया । जैतसीने उसके वचन पर विश्वास कर राणा कुंभाके ऊपर अत्यन्त कुपित हो सांकलाकी कन्या मारूसे विवाह किया, जैतसीने प्रस्तावकोंके मतसे कूंमलमेरमें जाकर राणा कुंभाकी कन्याका पाणिग्रहण न किया, इससे राणा अत्यन्त क्रोधित हो गये, परन्तु वह लज्जित होकर जैतसीको इसका बदला देनेमें समर्थ न हुए। राणा कुंभाने अन्तमें मनके क्रोधको मनमें ही रखकर अपनी कन्याको यागरोनके विख्यात खीची राज अचलदासके करकमलमें समर्पित किया। इसके पश्चात् जैतसी पूंगल देश पर अपना अधिकार करने गये; और इन्होंने यहीं अपने भ्राता लूनकर्ण और सालेके साथ रणभूमिमें शयन किया। उस समय इनके एक सौ बीस सेवक मारे गये। पूंगलपति वृद्ध राणिङ्गदेव नहीं जानते थे कि मैंने जयसलमेरपतिके अत्यन्त निकट संबन्धी दो मनुष्योंके प्राण नाश किये हैं, जब यह जाना तब वे अत्यन्त दुःखित हो काले रंगके वस्त्र पहर सम्पूर्ण भारत वर्षके प्रत्येक तीर्थोंमें गये। तब इनके पापोंका नाश हो गया। फिर ये घरको लौट आये। रावल केहरने इनको क्षमा करके धीरज दिया।

केहरके औरस निम्न लिखित आठ पुत्र उत्पन्न हुए।

१—सोम। इसके अगणित वंशधर सोमभाटी नामसे विदित हैं।

२—लखमन।

३—केलणजी। इन्होंने अपने बाहुबलसे बडे भ्राताके अधिकारमें स्थित वीकमपुरको अपने अधिकारमें कर लिया। और सोमजी इसी लिये अपने वरसी अर्थात् सेवकोंके साथ गिराव स्थानमें जाकर रहने लगे।

४—कलकरन।

५—सातल। इसने अपने नामसे सातलमेर राजधानी स्थापित की।

६—बीजू।

७—तन्नू।

८—तेजसी।

नागौरके राठौरोंके अधीश्वरसे अपने पिताका बदला लेनेके लिये जिस समय राणिगदेवके पुत्रोंने यवन धर्मका अवलम्बन किया उस समय वह पूंगल और मरोटके उत्तराधिकारसे वंचित हो आभारिया भाटियोंके साथ जा मिले और इनका नाम मोमन अर्थात् मुसल्मान भाटी रक्खा गया। इस समय रावल केहरके तीसरे पुत्र केलणने पूंगल और मरोडपर अपना अधिकार करके वीकमपुरको भी अपने अधिकारमें कर लिया। इसके अतिरिक्त यदुवंशकी शोचनीय दशामें दाहिया राजपूतोंने जिस प्रचीन राजधानी

(१) कर्नल टाडने यदुभट्टियोंके इतिहाससे अंग्रेजीमें जिस प्रकार लिखा है हमने वैसा ही अनुवाद किया है परन्तु जैतसीका भेजा हुआ नायन स्वार्गी हुवा कूमलमेरमें क्या देख आया और राणा कुम्भाने किस लज्जासे बदला नहीं लिया वह नहीं लिखा।

(२) इन्हीं राणिगदेवका वृत्तान्त पाठकोंके लिये प्रथम काण्डमें यथास्थान वर्णन किया गया है।

देरावलपर अपना अधिकार कर लिया था; उस देशपर भी इन्होंने अपना अधिकार करनेमें त्रुटि न की।

केलणने व्यासाके समीप अपने पिताके नामसे एक किला बनवाया। उसी कारणसे फिर जोहियों और लंगाहोंके साथ भट्टियोंमें विवाद और विसंवाद उपस्थित हो गया। लंगाहोंके नेता अमीरखां कुराईने केलणके ऊपर आक्रमण किया। परन्तु केलणने क्षत्रियोंके समान साहस करके अमीरखांको एकबार ही परास्त कर दिया। केलण इस समय अपने बाहुबलसे इतना विख्यात् हो गया था कि उससे चाहिल, मोहिल और जोहिया गण भी भय मानते थे। केलणने धीरे २ पंचनद तक अपने बाहुबलका विस्तार किया। केलणने समाजाम नामक समावंशकी एक राजकुमारीके साथ विवाह किया, उस समावंशमें सिंहासन लेनेके लिये आपसमें भयंकर विवादानल प्रज्वलित हो गई थी। केलणने मध्यस्थ होकर उस विवादाग्निको शान्त कर दिया। उन्होंने सुजाअत-जाम नामक जिस समावंशके नेताका पक्ष समर्थन किया था, वही सुजाअत केलणके साथ मरोटनामक स्थानमें गया। दो वर्ष पीछे सुजाअतने अपने प्राण त्याग दिये। तब केलणने समावंशके आधीनके सम्पूर्ण देशोंपर अपना अधिकार कर लिया। इसीसे सिन्धुनदी उनके राज्यकी शेष सीमारूपसे नियत हुई, केलणने ७२ वर्षकी अवस्थामें प्राण त्याग किये।

केलणके स्वर्गवासी होने पर चाचकदेव उनके पदपर अभिषिक्त हुए, भाटियोंका अधिकार इस समय गाडानदीके किनारे तक हो गया था, इससे मुलतानके यवननेता अत्यन्त क्रुद्ध हो गये थे। परन्तु यवन नेता इस राज्य पर अधिकार करनेमें समर्थ न थे, इसी कारण चाचकदेव मरोट नामक स्थानमें जा वहां राजधानी स्थापित करके रहने लगे थे। कुछ दिनोंके पीछे मुलतानके अधीश्वरने फिर यदुवंशियोंको विध्वंस करनेकी इच्छासे बडी भारी तैयारी की। लंगाह, जोहिया, खीची इत्यादि देशोंके जिन २ जातियोंके साथ भट्टियोंकी शत्रुता चिरकालसे चली आती थी सब लोग मुलतानपतिके साथ जा मिले। दूसरे पक्षमें वीरश्रेष्ठ चाचकदेव मुलतानपतिको युद्ध करनेके लिये तैयारी देखकर सावधान हो, सात[2] हजार अश्वारोही और चौदह हजार पैदलोंकी सेना इकट्ठी कर व्यासनदीके पास जाकर असीम साहससे डट गये। दोनों ओरकी सेनाके सम्मुख होते ही घोर युद्ध उपस्थित हुआ। इस युद्धमें यवनोंके नेता परास्त होकर भाग गये। वीरश्रेष्ठ चाचक शत्रुओंके पडावपरसे बहुतसा सामान लूट लाए और पृथ्वीको कंपायमान करते हुए मरोट नामक स्थानमें आये, परन्तु इतनेमें ही युद्धकी अग्नि शान्त न हुई। दूसरे वर्षमें मुलतानपतिने पहिली हारका बदला लेनेके लिये फिरसे बडे जोर शोरसे लडाई ठानी। इस संग्राममें सातसौ चौवालीस भट्टी और तीन हजार मुलतानी मारे गए, मुलतान पतिके दूसरी

(१) उर्दू तर्जुमेमे अमरखां गोरी।

(२) उर्दू तर्जुमेमें ११.

बार परास्त होते ही चाचकके राज्यकी सीमा और भी बढ गई। उसने असनीकोट नामक स्थानमें किलेके भीतर एक सेना अपने पुत्रकी मातहतीमें रक्खी और आप पूंगलको लौट आये। इसके पीछे चाचकने दूंदीके अधीश्वर महिपालपर आक्रमण कर उसको परास्त किया। इसके उपरान्त जयसलमेरमें आय अपने भ्राता लखमनके साथ साक्षात् किया। असनीकोटके किलेके आधीनमें जितने ग्राम थे उन सबकी आमदनी जयसलमेरमें लाकर राजसभामें खर्च कर दी। चाचक जिस समय जयसलमेरसे अपनी राजधानीमें आ रहे थे उस समय वारू स्थानके जंजराजने उनके साथ साक्षात् किया। यह मनुष्य बहुतसे बकरी और भेडोंको पाला करता था। बरजांग नामक एक राठौर तस्कर पासके एक ग्राममेंसे आकर बीच २ में इसके भेड और बकरोंको चुराकर ले जाता था। वीरश्रेष्ठ जंजने यह विचारा कि चाचककी सरण लेनेसे यह तस्कर मेरे बकरे और भैंसोंको न चुरा सकेगा, इस हेतु उसने बडे २ मोलके बकरे और भैंसे चाचकको भेंटमें दिये। यह वीर असीम साहसी योधा था। इसने सातलमेर नामक वाणिज्यके प्रधान देशको एक भाटी सामन्तके पाससे अपने बाहुबलसे ले लिया था; बरजांगका नाम सुनते ही मरुक्षेत्रके निवासी अत्यन्त भयभीत हो जाते थे। राव चाचक जंजको अभय देकर चले गये और कह गये कि यदि बरजांग फिर अत्याचार करके तुमको पीडित करे तो मैं उसको उचित फल दूँगा। कुछ दिनोंके पीछे राव चाचक जंजके अधिकारी देशोंमें गये, और उससे साक्षात् किया। जंजने फिर उनके निकट बरजांगके अत्याचारोंका वृत्तान्त कहकर अभय चाही। चाचकने जंजकी विनतीसे प्रसन्न हो सातलमेरके तस्कर नेताको दमन करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेना इकट्ठी करके सीता जातिके अधीश्वरके साथ संधिबंधन कर लिया। नवीन मित्रने तीन हजार अश्वारोही सेनाको साथ लेकर चाचकके साथ योग दिया। सातलमेरके राठौर तस्कर नगरके बाहर घोडोंको रखकर, नगरीके सामन्त धन लेकर किस समय नगरके बाहर जाते हैं इसको गुप्त भावसे देखते रहे, और अवसर पाकर उन नगरवासियोंकी सारी धनसम्पत्ति लूट ली, यह जानकर चाचकने अपनी चतुरतासे समस्त राठौर और नगरके बडे धनी महाजन और वैश्योंको पकड लिया। नगरके महाजनोंने अपने छुटकारेके लिये बहुतसा धन देना चाहा परन्तु चाचकने उनसे कहा कि यदि तुम इस स्थानको छोडकर जयसलमेरमें जाकर निवास करो तो छूट सकते हो। इस पर ३६५ बडे २ धनवान चाचककी आज्ञा स्वीकार कर अपनी समस्त धन सम्पत्ति समेत जयसलमेरमें जाकर रहने लगे।

बरजांगके तीन पुत्र बन्दी किये गये थे। वीरश्रेष्ठ चाचकने उनमेंसे मझले और छोटेकी अत्यन्त कम अवस्था देख कर उन दोनोंको छोड दिया, परन्तु बडे मेराको उसके पिता बरजंगकी सच्चरित्रताके बदलेमें बंदी कर रक्खा। चाचकने जिस सीता जातिके अधीश्वरके साथ इस घटनाके पहिले मित्रता की थी, उसकी पोती साळदेवीके साथ अपना विवाह किया। कन्याके पिताने विवाहके यौतुकमें चाचकको पचास घोडे, पैंतीस दास, चार सवारी और दोसौ ऊँट दिये, इन सबको लेकर चाचक मरोट नगरको आये।

उपरोक्त घटनाके दो वर्ष पीछे वीरश्रेष्ठ चाचकने पीलबंग स्थानके अधिपतिके साथ युद्ध आरम्भ किया, यह समर एक भट्टीसे एक मूल्यवान घोडेके छीन लेनेपर हुआ था। चाचक पीलबंगेश्वरको परास्त करके उसकी राजधानीके समस्त धनरत्नोंको लूटने लगे, किन्तु जिस समय चाचक इस भयानक युद्धमें लड रहे थे उसी समय यदुवंशके पुराने वैरी लंगाहोंने सुभीता पाकर चाचकके दीनापुरके किले पर आक्रमण कर वहाँकी समस्त सेनाको हटा दिया।

इधर चाचक चिरकालतक लडता रहा और अनेक देशोंको दमन करके उसने वहांजय पाई। इसी प्रकार उसने पञ्जाबतक अपना अधिकार कर लिया अन्त समय बुढापेमें जब चाचक कठिन रोगसे पीडित हुआ और उसने जान लिया कि अब मेरा अन्त समय आ पहुँचा है और रोगसे मुक्त होनेकी आशा करनी वृथा है तब उसने बहुत दिनोंतक कष्ट भोगकर प्राण छोडनेके बदले क्षत्रियोंकी भांति प्राण त्यागनेका संकल्प किया। समरभूमिमें शत्रुओंके भीषण अस्त्रोंके आघातसे प्राण छोडनेपर मरनेके पीछे प्राणी सुरलोकमें जाता है यही क्षत्रियोंका परम धर्म है। इसी विश्वासपर क्षत्रिय जाति स्वर्ग सिधारनेकी इच्छासे जीवन पर्यन्त केवल तलवारकी सेवामें लगे रहते हैं। इसी विश्वासके बलसे क्षत्रियोंकी महिमा और गौरव संसारमें बढी चढी है। वीरश्रेष्ठ चाचकने क्षत्रियोंके शिरोभूषण पदको प्राप्त किया था, और वह जीवनपर्यन्त क्षत्रिय धर्मके पालन करनेमें तत्पर रहा था। अतएव उसने अपने अन्त समयको सम्मुख देख क्षत्रियोंकी भाँति इस जगत्को छोडनेकी इच्छा की तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

चाचकदेवने इस भाँति शस्त्र हाथमें ले रणभूमिपर महा निद्रामें सोनेकी लालसासे अपने आसपासवाले देशोंमें अपने समान वीरशत्रुसे भिडना चाहा। अन्तमें उन्होंने एक मनुष्यको दूत बनाकर मुलतानके लङ्गाह जातिके राजाके पास भेजा। वीर चाचकदेवके दूतने जाकर मुलतानपतिसे कहा कि, "चाचकदेव रोगशय्यापर पडे हैं, जिसमें बहुत दिनोंतक रोगी रहकर उनका प्राणवायु पंचमहाभूतोंमें लय न हो जाय, इस कारण शत्रुकी तलवारके द्वारा वह क्षत्रियोंके समान जीवन छोड सुरपुर जाना चाहते हैं, अतएव आपसे युद्ध करनेके लिये प्रार्थना की है"। मुलतानके राजाने दूतकी बातपर विश्वास नहीं किया और मनमें कहा ऐसा जान पडता है कि वीर चाचकदेव छलसे हमें समरभूमिमें बुला कर अपनी गुप्त अभिलाषाको पूर्ण किया चाहते हैं, इसीसे युद्ध करनेकी प्रार्थना कर भेजी है। राजा यह शोच कर प्रकाशमें दूतसे बोले "तुम्हारे स्वामी षड्यन्त्रसे मेरा अनिष्ट करा चाहते हैं–अतएव मैं युद्ध नहीं करूँगा" मुलतानके राजका यह उत्तर सुन दूतने शपथ खाकर कहा "राजन्! आप वृथा सन्देह करते हैं महाराज चाचकदेव निश्चय ही दुःसाध्य रोगसे पीडित हो रहे हैं,

(१) कर्नल टाडने टिप्पणीमें लिखा है कि ट्रान्सक्सियाके प्राचीन विजयी वीरगण अन्तमें रोगी होनेपर तलवार हाथमे ले रणक्षेत्रमें प्राण त्यागते हैं यह रीति शेष जटलैण्ड तक फैली है।

उनकी और किसी प्राकारकी इच्छा नहीं है, वह अन्त समयमें क्षत्रियोंके समान गति पानेकी इच्छासे ही केवल सातसौ सेनाके साथ रणक्षेत्रमें आवेंगे। आप अपने चित्तको वृथा सन्देहसे चिन्तित न कीजिये और हमारे स्वामीकी मनोकामनाको पूर्ण करिये" मुलतानके महाराजने दूतके शपथ खानेपर विश्वास कर लिया और शीघ्र ही प्रतिज्ञा की कि मैं चाचकदेवकी मनोकामनाको पूर्ण करनेके निमित्त युद्ध करनेको तैय्यार हूँ। दूतने यह बात जाकर चाचकदेवसे कह सुनाई। वीर शिरोमणि चाचकदेवने अपनी अभिलाषाको पूर्ण हुआ जान परम आनन्दके साथ अपने जातिके वीरोंको बुलाकर अपने हृदयके भावको कह सुनाया। सेनापति और सेनामेंसे जिन जिन वीर पुरुषोंने चाचकदेवके साथ प्रत्येक युद्धमें अपनी वीरतासे जय पाई थी, उनमेंसे सातसौ वीरोंको चाचकदेवने चुन लिया। उन सातसौ वीरोंने भी अपने स्वामीकी अन्तिम कामना पूर्ण करनेके लिये अपने जीवनका उत्सर्ग करनेका दृढ संकल्प कर लिया। चाचकदेवने रणभूमिमें जानेसे पाहिले अपने राज्यकी व्यवस्था कर दी। सीता जातिकी रानीके गर्भसे उत्पन्न हुए गर्जसिंह नामक पुत्रको चाचकदेवने सीतारानीके साथ ननसालमें भेज दिया। उनके सोढा जातिकी लीलावती रानीके गर्भसे बरसल, कम्बोह, भीमदेव ये तीन पुत्र हुए थे और चौहान वंशकी रानी सूरजदेवीके गर्भसे रत्तू और रणधीर नामक दो पुत्र हुए थे। वीर शिरोमणि चाचकने इन पांच पुत्रोंके बीचमें बडे पुत्र बरसलको अपने सिंहासनका उत्तराधिकारी निर्द्धारित कर खडाल (इसके प्रधान नगरका नाम तेरावर) प्रदेश छोड कर उनको अपने समस्त अधिकारी प्रदेश दिये, और खडाल प्रदेश रणधीरको देकर दोनोंके माथे पर राज्य-तिलक कर दिया। बरसल सत्रह हजार सेनाको लेकर अपनी राजधानी किरोहरको[२] चला गया।

वीरवर चाचकने इस भांति अपना राज्य दो पुत्रोंको बांट दिया, और स्वयं अपने जीवनको त्यागनेके लिये उक्त सातसौ वीर पुरुषोंके साथ दीनापुरके मैदानकी ओर चला। वहां पहुँच कर उसने सुना कि मुलतानका राजा यहांसे दो कोशकी दूरीपर पडा हुआ है। इस बातके सुनते ही उसका हृदय मारे आनन्दके खिल गया। फिर चाचकने स्नान कर पवित्र चित्तसे अस्त्रोंका पूजन कर अपने इष्ट देवका पूजन किया, और दीन दारिद्रोंको धन रत्नादि देकर इस मायामय संसारसे अपने चित्तको हटाकर परम पिता परमेश्वरके ध्यानमें लगाया।

थोडी देरके पीछे रणका बाजा सुनाई पडा। दोनों ओरकी सेनाके सामने होते ही वीरश्रेष्ठ चाचकने अपनी सातसौ सेनाको लेकर मुलतानके राजाकी कई हजार सेनाके साथ घोर युद्ध किया। बराबर लडते रहकर युद्ध क्षेत्रमें अपने प्यारे सातसौ

(१) उर्दू तर्जुमेमें ५ सौ।

(२) विरोहर नामक स्थानका बडा किला राव केलणका बनवाया, भावलपुरसे बाईस कोश दूर था, किंतु आजकल इसका कोई चिह्न नहीं मिलता।

वीर पुरुषोंके साथ चाचकदेवने दो घडी तक वीरता दिखाते हुए महा निद्रामें शयन किया यदुभट्टी इतिहासके जाननेवालेने लिखा है कि उस युद्धमें उन सातसौ वीरोंने मुलतानकी दो हजार सेनाको नष्ट किया। चाचकदेवने इस भांति संग्रामक्षेत्रमें अपने जीवनको विसर्जन किया, और मुलतानपति अपनी राजधानीको लौट गये।

जिस समय रणधीर देरावरमें अपने पिताका श्राद्धकर रहा था उस समय मृतक वीर चाचकका दूसरा पुत्र कुंभा पिताके शोकमें उन्मत्त हो गया। अतएव उसने श्राद्धके मण्डपमें जाकर सबके सामने प्रतिज्ञा की कि, "मुलतानपतिने मेरे पिताको अन्यायसे मारा है, मैं उसका बदला उससे अवश्य लूँगा।" कुम्भा उसी समय एक नौकरको अपने साथ लेकर मुलतानपतिके डेरेमें गया। डेरेके चारोंओर बाईस हाथ चौडी एक खाई थी, कुंभाने रातमें घोडे पर चढकर खाईको फाँद साहसके साथ घोडेको डेरेकी रसियोंसे बाँधा और आप मुलतानके राजा जैसे वस्त्रोंको पहिना करते हैं, वैसे कपडोंको पहिन संतरोंके सामनेसे डेरेमें घुस गया, उस समय मुलतानका राजा सो रहा था, कुंभाने सोतेमें ही उसका शिर काट लिया और वह आकर देरावरमें अपने भाईसे मिला।

वरसल दीनापुरमें फिर अपना अधिकार स्थापन कर किरोहरमें चला गया। उसके पुराने शत्रु लंगाहोंने फिर हैवतूखाँकी सहायतासे उस पर आक्रमण किया, परन्तु वरसलने अपने अतुल पराक्रमसे उनको परास्तकर भगा दिया, उस युद्धमें कई हजार लंगाह खेत रहे। इसी समय हुसेनखाँने[1] भी वीकमपुरपर आक्रमण किया, वरसलने उसको भी परास्त किया।

संवत् १५३० सन् १४७४ ई. में वरसलने वीकमपुरकी चहारदीवारी और किला बनवाया।

कर्नल टाडने यहीं पर यह अध्याय समाप्त किया है। भट्टी इतिहासके लेखकने भी यहाँ पर कोई विशेष घटना नहीं लिखी। उसने केवल रावल केलणके वंशवालोंके साथ पंजाबके सामन्तोंकी सीमान्त सम्बन्धी छोटी २ लडाइयोंका होना लिखा है। उसके पढनेसे जान पडता है कि, उन लडायोंमें एक बार यदि एक पक्षवाले जीते तो दूसरी बार वह हार गये। इस प्रकारके नीरस विवरणको हम प्रकाश करना नहीं चाहते। अन्तमें केलणके वंशजोंने बढ कर गारा नदीके दोनों किनारोंके देशोंको बाँटकर स्वतंत्रतासे निवास किया। इस घटनाके कुछ समय पीछे ही दिल्लीके सम्राट् सुलतान बाबरने लंगाहोंसे मुलतानको छीनकर अपने अधिकारमें ले वहाँपर मुसल्मान प्रबन्धकर्त्ता नियुक्त कर दिया। कर्नल टाड लिखते हैं कि इसी समय किरोहरकोट, दीनापुर, पूँगल और मारोटके यदुवंशियोंने यथासम्भव अपना अधिकार और अपना कब्जा बनाये रखनेके लिये मुसल्मानी धर्मको स्वीकार कर लिया।

यदुभट्टी इतिहासलेखकने पीछे जयसलमेरके प्रधान राजवंशका कुछ सामान्य विवरण लिखा है। उन्होंने केवल रावल जैत, नूनकरण, भीम, मनोहरदास और सुबलसिंहके वंशधरोंकी नामावली लिखी है। रावल सुबलसिंहके शासन समयसे ही जैसलमेरकी राजनैतिक अवस्था बदल गई थी।

(१) उर्दूतर्जुमेमें हुसेनखां बल्लोच लिखा है।

पंचम अध्याय ५.

जयसलमेरके राज्यवंशका उत्तराधिकारी बदलना-सुबलसिंहका यवनसम्राटद्वारा जयसलमेरका स्वामी होना—जयसलमेरके स्वामीका यवनसम्राटकी आधीनतामें रहना-बाबरकी दिग्विजयके समयमें जयसलमेरकी सीमाकी अवस्था-मुबलसिंहके स्वर्गवास होनेपर उनके पुत्र अमरसिंहका सिंहासनपर बैठना—अमरसिंहने बल्लूच प्रदेशमें युद्ध होना-युद्धमें उनकी जीत होना-उनका अपनी लड़कीका विवाह करनेके लिये प्रजासे द्रव्यकी प्रार्थना करना-राजपूतमन्त्री रघुनाथका उस विषयमें आपत्ति करनेसे मारा जाना-चन्ना राजपूतोंका विद्रोही होना-बीकानेरवासी राठौरोंके उपद्रव मचानेसे भट्टी सामन्तोंसे उसका सुधार होना-सीमा सम्बन्धी विवादका कारण-भट्टीगणोंकी जीत होना-आधीनतामें रहनेवाले सामन्तोंके बीचमें विवादके उपलक्षमें बीकानेर और जयसलमेरके स्वामियोंमें झगडा होना-बीकानेरके स्वामी अनूपसिंहका कलंक छुटानेके लिये अपने आधीन रहनेवाली सामन्त मण्डलीको बुलाना-जयसलमेरपर आक्रमण करनेवाले राठौरोंकी पराजय-रावलका पूंगलपर फिर अधिकार करना—बाडमेरपतिको करद श्रेणीसे मुक्त करना-अमरसिंहकी मृत्यु-यसवन्तका राजसिंहासनपर बैठना—जयसलमेरका पतन-राठौरोंसे पूंगल, बाडमेर और फलोदीका निकल जाना-दाऊदके बेटोंका खडालसे गाडातक अधिकार करना-अक्षयसिंहका अभिषेक-तेजसिंहका जयसलमेरके शासनको अपने हाथमें लेना-तेजसिंहको फिर राज्य मिलना-उनका चालीस वर्ष राज्यशासन—भावलखाका खडालपर अधिकार-रावल मूलराज—स्वरूपसिंह मेहताको राजमन्त्रीका पद मिलना—भट्टीसामन्तोंपर उनकी घृणा होना-युवराज रायसिंह द्वारा स्वरूपसिंहका मराजाना-रावल मूलराज का बन्दी होना-रायसिंहका सिंहासनपर बैठनेमें अनिच्छा प्रगट करना-एक राजपूत रमणीका मूलराजको कैदसे छुटाना-मूलराजको पुनः राज्य मिलना-युवराज रायसिंहका निर्वासन-उनका जोधपुरमें जाना-भट्टीसामन्तोंका विद्रोह करना-दण्डमें उनके सब अधिकारी प्रदेश लेकर राज्यमें मिलाये जाना-और सब किलोंका तुडवाना-बारह वर्षके पीछे उनको फिर भूमिका अधिकार देना-रायसिंहद्वारा एक बनियेका शिर काटा जाना-उनका जयसलमेरमें फिर आना-उनको देवाके किलेमें भेजना-सालिमसिंहका मन्त्री होना-उसका चरित्र-उसका शत्रुके हाथमें पडना, किन्तु जोरावरसिंहकी सहायतासे छूटना-उसकी भावजसे उसके मारजानेकी इच्छा प्रगट होना-जोरावरको विष देना-मेहतासे उनके भाई और स्त्रीका मारा जाना-देवाके किलेमें आग लगना-रायसिंहका आगमें जलकर मरना-उनके पुत्रोंका मारा जाना-गजसिंहको राज्य देना-मूलराजके छोटे लडकोंका बीकानेरमें भाग जाना-मन्त्रीके द्वारा चिरकालतक राज्यका प्रबन्ध होना-भट्टी इतिहासकी समालोचना ।

पाठकगण पहिले अध्यायमें जान चुके हैं कि जयसलमेरके स्वामी घडसीके शोचनीय दशामें मरनेसे रानी विमलादेवीने केहरको दत्तक पुत्र लेकर उसीको जयसलमेरका सिंहासन दिया था। किन्तु उसने जलती हुई चितामें बैठ कर मरनेके समय यह भी कहा था कि हमीरके दोनों बेटे जैत और लूनकरण केहरके पोष्य पुत्र और उत्तराधिकारी होंगे । अतएव केहरके जयसलमेरके सिंहासनपर बैठ जानेसे और उनके औरस आठ संतानोंके होनेपर भी जैत और लूनकरण ही केहरके उत्तराधिकारी कहे गये । किन्तु जैत राज्य पानेके पहिले ही पूंगलको

जीत लेनेकी इच्छासे लूनकरणके साथ समरक्षेत्रमें जाकर मृत्युको प्राप्त हुआ । जैतके कोई पुत्र मरते समयतक नहीं हुआ था अतएव लूनकरणके वंशधरोंको ही जयसलमेरका सिंहासन प्राप्त हुआ, लूनकरणके तीन पुत्र हुए;—

१—हरराज ।

२—मालदेव ।

३—कल्याणदास ।

केहरके मरनेके पीछे लूनकरणके बडे पुत्र हरराजको जयसलमेरके सिंहासनपर बैठना चाहिये था, किन्तु हरराज केहरके सामने ही मरचुका था; अतएव हरराजके एकमात्र पुत्र भीम ही जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा । भीमके राज्यसमयका कोई भी इतिहास कर्नल टाड साहबने प्रकाशित नहीं किया है । परवर्ती इतिहासको विस्तारके साथमें दिखानेकी अभिलाषासे हम यहां लूनकरणकी वंशावली प्रकाशित करते हैं ।
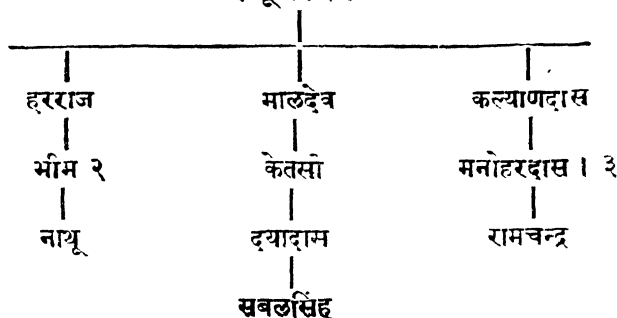
भीमके मरनेके पीछे उनका बेटा नाथू जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा; किंतु नाथू सिंहासन पानेके कुछ ही समय पीछे बीकानेरमें एक राजकुमारीके साथ विवाह करनेको गया विवाहके पीछे वह जिस दिन जयसलमेरके अन्तर्गत फलोदी देशमें आकर टिका उसी दिन कल्याणदासके पुत्र मनोहरदासने सिंहासन पानेके लोभसे एक स्त्री द्वारा विष दिलाकर उसे मरवा डाला ।नाथूके मरजानेपर मनोहरदासने जयसलमेरके राजमुकुटको अपने शिरपर धारण किया । मनोहरदासने भाईके बेटेको मारकर कुछ समय तक राज किया, अन्तमें अपने मरनेके समय अपने बेटे रामचन्द्रको सिंहासनपर बैठानेके लिये उसने बडा परिश्रम किया किन्तु हत्यारके वंशमें राजसिंहासन कोई नहीं पासकता इससे उसकी आशा पूरी न हो सकी । लूनकरणके मझले बेटे मालदेवका परपोता सुशील सच्चरित्र और वीर सबलसिंह अपने सौभाग्य एवं गुणोंसे जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा ।

रामचन्द्र बडा ऊधमी और दुश्चरित्र था, पर सबलसिंह धीर और शान्त प्रकृतिवाला था इस कारण साधारण प्रजाने सबलसिंहको राजा बनानेके लिये प्रार्थना की। विशेष कर सबलसिंहके सौभाग्यरूपी सूर्यके उदय होनेके और भी कारण उपस्थित थे ।

सबलसिंह महाराज आमेरका भानजा था; वह आमेर नरेशकी आधीनतामें यवनोंकी राजधानी पेशावरके राज्य प्रबन्धमें एक ऊंचे दरजेपर नियुक्त था। एक समय पहाडी अफगानी लुटेरोंने यवन सम्राट्का खजाना लूटना चाहा था परन्तु सबलसिंहकी असीम वीरतासे वह न लूट सके। इस कारणसे वह सम्राट्का भी अधिक प्यारा था। सबलसिंहने अपने सद्गुणोंसे सभी नरेशोंमें मान पालिया, मनोहरदासके मरनेपर यवनसम्राट्ने जोधपुरके राजा वीर यसवन्तसिंहको आज्ञा दी कि तुम शीघ्र ही रामचन्द्रको हटाकर सबलसिंहको जयसलमेरके सिंहासन पर बैठा दो। महाराज यसवन्तसिंहने यह आज्ञा पाते ही प्रसिद्ध नाहरखांके साथ एक सेना भेज कर सबलसिंहको जयसलमेरके सिंहासनपर बैठानेके लिये कहा, नाहरखाँने जयसलमेर जाकर राजाकी आज्ञासे सम्राट्के आदेशको पालन किया। सबलसिंहने जयसलमेरके सिंहासनपर बैठकर नाहरखाँको इनाममें पोकर्ण देशका अधिकार चिरकालके लिये दे दिया, तभीसे पोकर्ण देश जयसलमेरसे अलग होकर जोधपुरके राज्यमें मिल गया है।

रावल जयसल और उनके उत्तराधिकारीगण अबतक तलवारसे अपने राज्यको बढाते आते थे, अबतक राज्यका कोई अंश भी दूसरके अधिकारमें नहीं गया था। नाहरको दिया हुआ पोकर्णका अधिकार ही सबसे पहिले जयसलमेर राज्यका अंगभंग करनेवाला हुआ। इसके उपरान्त विस्तृत जयसलमेरके राज्यका अंग क्रमानुसार कटता आया है। बादशाह बाबरकी दिग्विजयके कुछ दिन पहिले जयसलमेर राजधनीकी सीमा उत्तरमें गाडा नदीतक थी, पश्चिममें मेहराण वा सिन्धुतक, पूर्व और दक्षिणमें बीकानेर और मारवाडतक थी। बीकानेर और मारवाडके राठौर राजा दोसौ वर्षसे क्रमानुसार जयसलमेरके अधिकारी प्रदेशोंका बहुत सा अंश अपने अधिकारमें करते आते थे। रावल सबलसिंहने यादवोंके सिंहासनपर बैठकर बडी प्रशंसाके साथ राज्य चलाया, जब वह स्वर्ग सिधारे तब उनके पुत्र अमरसिंहने बलोचोंके साथ युद्ध करके विजय पाई, उस युद्धक्षेत्रमें ही उसको राजतिलक मिला। अमरसिंहने पिताके सिंहासन पर बैठनेके कुछ दिन पीछे अपनी पुत्रीके लिये सर्वसाधारण प्रजासे द्रव्यकी प्रार्थना की। राजपूत मंत्री रघुनाथने अमरसिंहके इस कार्यमें बाधा डाली, इसपर अमरसिंहने उसको मरवा डाला। कुछ दिनोंके पीछे चन्ना राजपूतोंने फिर पहलेकी तरह राज्यके उत्तर और पूर्वकी ओर उपद्रव और अत्याचार करने आरंभ किये, तब रावल अमरसिंहने स्वयं सेना ले जाकर उनको पराजय कर ऐसा दबाया और अपने आधीन बनाया कि भविष्यमें उनकी सच्चरित्रताका कारण अमरसिंह ही हुए।

कुछ समयके उपरान्त जयसलमेरके और बीकानेरके सामन्तोंके बीचमें विवाद होनेपर दोनों देशोंके राजा रणभूमिमें आ खडे हुए। बीकानेरके कांधलोत राठौरगण बहुत दिनोंसे जयसलमेरकी सीमापर बडे २ अत्याचार करते थे। जयसलमेरके आधीन बीकमपुरके सुन्दरदास और दलपत नामक दोनों सामन्त उन कांधलोतोंके दुराचरणोंसे बिगड कर शेष कांधलोतोंको यथार्थ रूपसे दमनकर उनके अत्याचारोंका

फल देनेके लिये सम्मत हुए। दलपतने कहा "आओ, हम लोग राठौरोंकी भूमिपर आक्रमण करके जगत्में कीर्ति बढावें"। अत: उन दोनों सामन्तोंने अपनी अपनी सेना साथले बडे साहसके साथ बीकानेर राज्यकी सीमाके अन्तमें जाजू नामक नगरपर आक्रमण किया, और उसको लूट कर जला दिया। कांधलोत गण इससे बडे लज्जित हुए। फिर उन्होंने बडे दलबलसे आकर जयसलमेरकी सीमापर आक्रमण कर अपना बदला लिया। इसी बातपर आपसमें बडा झगडा हो गया और अन्तमें घोर संग्राम आरम्भ हुआ। इस संग्राममें भट्टीगणोंने दो सौ राठौरोंको मारकर विजयलक्ष्मी प्राप्त की और राठौरगण हारकर भाग गये। अपनी आधीनतामें रहनेवाले सामन्तोंको विजयी हुआ देख रावल अमरसिंहने बडा आनन्द मनाया।

बीकानेरके राजा अनूपसिंह इस समय दक्षिणमें दिल्लीके सम्राटकी सेनामें नियुक्त थे; उन्होंने जब सुना कि जयसलमेरके सामन्तोंने राठौरोंको परास्त कर दिया है, तब उनके क्रोधका ठिकाना न रहा। उन्होंने उसी समय डेरेमेंसे निकल कर अपने प्रधान मंत्रीके हाथ अपनी राजधानीमें यह संदेशा कहला भेजा कि समस्त राठौर जो शस्त्र धारण कर सकते हों, जयसलमेरके जीतनेके लिये धारण करके तैयार हो जायँ। कान्धलोतगण शीघ्र ही बीकमपुरके समान जयसलमेरको कर देवें नहीं तो विश्वासघाती कहावेंगे। राजाकी आज्ञा पाते ही मंत्रीने शीघ्रतासे समस्त राठौरोंमें यह ढिंढोरा फिरवा दिया। तब तो सम्पूर्ण राठौर तलवारें हाथमें ले जय-सलमेरपर धावा करनेके लिये एकत्रित होने लगे। अपमानित राजा अनूपसिंहने राठौरोंकी सहायताके लिये हिसारसे एक पठानोंके सेनापतिको सेनाके साथ भेज दिया। इधर जयसलमेरके स्वामी रावल अमरसिंहने राठौरोंको युद्धके लिये तैयार होते देख उसी समय समस्त भाटीसेनाको एकत्रित किया। अमरसिंह चतुर और युद्धमें कुशल थे। उन्होंने विचारा कि उत्तेजित राठौरोंको जयसलमेरकी सीमामें न आने दिया जाय, इस कारण बीकानेरके ही राज्यमें प्रवेश कर उनपर आक्रमण करना चाहिये। अमरसिंहने यह विचार कर बीकानेरके अन्तवाले नगरोंपर आक्रमण कर उन्हें लूटना आरम्भ कर दिया। अन्तमें बहुतसे राठौरोंको मारकर पूंगल प्रदेशको फिर अपने राज्यमें मिला लिया। इसी समयमें बाडमेर और कोतडा प्रदेशके दोनों राठौर सामन्तोंको अपनी अधीनताकी साँकलमें बांध लिया। रावल अमरसिंहने इस भांति बडी शूरवीरताके साथ जयसलमेरका राज्य करके संवत् १७५८ (सन् १७०२ ई०) में इस जगतको छोड स्वर्गमें वास किया। अमरसिंहके आठ पुत्र हुए. उनमेंसे बडे पुत्रका नाम यशवन्तसिंह था, बाकी सात लडकोंमेंसे केवल हरीसिंहका नाम पाया जाता है। बडे पुत्र यशवन्तसिंह-की एक कन्याके साथ मेवाडके युवराजका विवाह हुआ। यदुभट्टी इतिहासके लिखने-वालेने अमरसिंहके मरनेतकका ही इतिहास लिखा है। इसके पीछे एक दूसरे मनुष्यने जयसलमेरका इतिहास लिखा है। टाड साहबके सामने यह मनुष्य जीवित था। "कर्नल टाडने बडी खोज और परीक्षा करके उस इतिहासके अंशको सच्चा मानकर उसीके

आधार पर जयसलमेरके इतिहासका शेष अंश लिखा है। किन्तु यह इतिहासका अंश शोचनीय और हृदयभेदी चित्रोंसे अङ्कित है। इसमें श्रीकृष्णके वंशावतंस जयसलमेरके राजाओंका पतन समाचार विशेपतासे देखा जाता है।

अमरसिंहके मरनेके उपरान्तसे ही जयसलमेरके गौरवका सूर्य वर्षा ऋतुके बादलोंसे ढक गया। जयसल और उसके उत्तराधिकारी गण अपनी भुजाओंके बलसे राज्यकी सीमाको भलीभांति बढा गये थे और अमरसिंहने भी अपने पराक्रमसे राज्यकी सीमाके बढानेमे कुछ कमी नहीं की, किन्तु वडे दुःखका विषय है कि, पराक्रमी अमरसिंहके सुरलोक जानेके पीछे ही यादवोंके प्रधान शत्रु बीकानेरके राठौरोंने शुभ योग पाया। उन्होंने संहार मूर्तिको धारण कर जयसलमेरकी शोचनीय दशा कर दी। उन्होंने पुरानी शत्रुतासे फिर संग्रामक अग्निको प्रज्वलित कर बडी शीघ्रतासे जयसलमेरके बीचवाले पुंगल, बाडमेर, फलोदी और अनेक वडे बडे नगर तथा गाँवोंको छीन कर बीकानेरके राज्यमें मिला लिया। दूसरी ओर राठौरोंके समान शिकारपुरके एक अफगान सेनापति दाऊदखांने भी जयसलमेरके महाराज अमरसिंहके मरनेके पीछे विशेष सुभीता जान गाडानदीके समीपवाले जयसलमेरक अधिकारी प्रदेश जबरदस्ती छीन लिये, इस भाँति अमरसिंहके मरजाने पर थोडे ही दिनोंके बीचमें जयसलमेरके वहुतसे प्रदेश अन्य जातिवालोंके अधिकारमें हो गये।

अमरसिंहके मरनेके पीछे ही उनके पुत्र यसवन्तसिंह जयसलमेरके सिंहासनपर बैठ। माननीय टाड साहबने उनके शासनके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं लिखा किन्तु आगे पीछेके लक्षणोंको देखनेसे अनुमान होता है कि यसवन्तके शासन समयमें जयसलमेरकी अवनतिके सिवाय उन्नति नहीं हुई। यसवन्तक नीचे लिखे पांच पुत्र हुए:–

१–जगतसिंह–इन्होंने आत्महत्या की।
२–ईश्वरीसिंह।
३–तेजसिंह।
४–सरदारसिंह।
५–सुलतानसिंह।

आत्महत्या करनेवाले जगत्सिंहके नीचे लिखे तीन पुत्र हुए:–

१–अखैसिंह।
२–बुधसिंह–इनकी वसन्तरोगसे मृत्यु हुई।
३–जोरावरसिंह।

इतिहास बतालाता है कि यसवन्तसिंहके मरनेके पीछे उनके पोते अखैसिंहको सिंहासन मिलना चाहिये था। किन्तु अखैसिंहको छोटा बालक देख कर उनके चचा तेजसिंह जबरदस्ती राज्यसिंहासनपर बैठ गये। अखैसिंह और जोरावरसिंह दोनों भाई अपने प्राणोंके भयसे दिल्लीको भाग गये। इस समय मरे हुए रावल यसवन्तसिंहके भाई हरीसिंह दिल्लीके सम्राटके यहां राजकार्यमें नियुक्त थे,

अखैसिंह और उसके छोटे भाईने हरीसिंहकी शरण ली। हरीसिंहने अपने भाईके दोनों पोतोंको शरणमें आया देख कर प्रतिज्ञा करी कि शीघ्र ही जयसलमेर जाकर तेजसिंहको सिंहासनसे उतार दूँगा। थोडे दिन पीछे हरीसिंह जयसलमेरको गये। जयसलमेरमें इस समय ऐसी एकरीति थी कि वर्षके अन्तमें जयसलमेरके महाराज एक दिन घडसीसरके किनारे सब सामन्त, कुटुम्बी मनुष्य, सेना और समस्त प्रजाको लेकर जाते थे। पीछे उस सरोवरमेंसे सबसे पहिले राजा अपने हाथसे एक मुट्ठी रेत उठाकर फेंकता था इसके उपरान्त सामन्त लोग, कुटुम्बी जन, मन्त्रीगण फिर समस्त प्रजा एक २ मुट्ठी रेती निकाल कर बाहर फेंकते थे। इसको "ल्हास" कहते हैं। इसके द्वारा उक्त सरोवर वर्षके अन्तमें साफ होकर सुधर जाता था। हरीसिंहने जयसलमेरमें आकर विचारा कि तेजसिंह जिस समय उक्त ल्हासमें दत्तचित्त होंगे उसी समय उसपर आक्रमण करके कार्य सिद्ध करूँगा। हरीसिंहने उक्त प्रस्तावके अनुसार ल्हास खेलनेके दिन तेजसिंहपर आक्रमण किया, किन्तु दुःखका विषय है कि हरीसिंहकी आशा पूरी न हो सकी; वह भलीभाँति तेजसिंहको परास्त न कर सके। इस प्रबल संग्राममें कितने ही मनुष्य मारे गये, और तेजसिंह भी ऐसे घायल हुए कि इन्हीं घाओंके होनेसे उनके प्राण निकल गये।

तेजसिंहके मारेजाने पर उनका तीन वर्षका बेटा सवाईसिंह जयसलमेरके सिंहासन पर बैठा। सिंहासनसे हटाये हुए अखैसिंहने इस समय बडा सुभीता जान जयसलमेरके रहनेवाले समस्त भट्टी सरदारोंके पास यह सूचना पत्र भेजा,—"कि न्यायसे जयसलमेरका सिंहासन मेरा है, तेजसिंहने बडे अन्यायसे मुझे सिंहासनसे हटा दिया था, अब उनका जो बालक पुत्र इस समय सिंहासनपर बैठा है, देखा जाय तो उसका कोई अधिकार सिंहासनपर बैठनेका नहीं है। मैं अपनी तलवारके बलसे जयसलमेरके सिंहासनपर बैठनेकी फिर अभिलाषा करता हूँ। जो प्रजा राजभक्त है उसे मैं अपनी सहायताके लिये बुलाता हूं।" अखैसिंहके इस सूचनापत्रके प्रचार होते ही जयसलमेरके सैकडों भट्टीसरदार आकर उनसे मिलने लगे। इस भांतिसे अखैसिंहने अपने बडे दलके साथ जयसलमेरके किलोंपर अधिकार करनेके लिये आक्रमण किया और असीम वीरता दिखाकर उन्होंने तीन किले छीन लिये। सुकुमार सवाईसिंहका जीवन थोडे ही कालमें नष्ट हो गया, अखैसिंह फिर सिंहासनपर विराजमान हो गये।

रावल अखैसिंहने इस प्रकारसे बडे कष्ट उठाकर सिंहासन पाया और चालीस वर्ष तक राज्य किया। यद्यपि उन्होंने इतने दिन राजकाजको सुखपूर्वक चलाया तो भी उनके शासनके समयमें दाऊदखाँके बेटे भावलखाँने जयसलमेरके आधीनके प्राचीन देरावर और भाटी गणोंने जो सबसे प्रथम खडाल देश अपने अधिकारमें किया था उस खडालका हिस्सा काढ कर अपनी राजधानी भावलपुरमें मिला लिया।

रावल अखैसिंहके चिरकालतक राज्य कर मृत्यु होनेपर संवत् १८१८ (सन् १७६२ ई०) में मूलराज जयसलमेरके सिंहासनपर बैठे । मूलराजके तीन पुत्र हुए;—

१—रायसिंह ।
२—जैतसिंह ।
३—मानसिंह ।

मूलराज सिंहासन पर बैठ तो गये परन्तु इनके मन्त्रीके दोषसे इस भट्टी राज्यकी नैतिक अवस्था एकसाथ ही बिगड गई । इनके मन्त्रीका नाम स्वरूपसिंह था; यह जातिका वैश्य जैनधर्मका माननेवाला और मेहतावंशमें उत्पन्न था । यह स्वरूपसिंह बडा ऊधमी स्वेच्छाचारी और सामन्तोंसे बडा द्वेष रखनेवाला था; इसने मन्त्रीके पदपर आते ही थोडे ही दिनोंमें जयसलमेरकी बडी शोचनीय दशा कर दी । इसके स्वेच्छाचारी होनेसे जयसलमेरके चारोंओर अशान्ति और असन्तोषकी आग बल उठी, और पुरानी राजनीतिका लोप होने लगा । मानो भाटी सामन्तोंके भाग्य जलने लगे । किस कारणसे भट्टीसामन्त गण स्वरूपसिंहके विषेल नेत्रोंमें गिरे, इसके संबन्धमें एक बडी कलंकजनक घटनाका लेख दिखाई देता है। स्वरूपसिंह एक वेश्यापर आसक्त था किन्तु वेश्याने उसकी ओर कुछ भी ध्यान न देकर अयाक जातिके राजपूत सरदारसिंहसे प्रेम कर लिया । इसपर स्वरूपसिंह सरदारसिंहका अनिष्ट करने लगा । सरदारसिंहने दुःखी होकर अन्तमें युवराज रायसिंहसे प्रार्थना की । स्वरूपसिंह पहिलेसे ही युवराजकी नित्यप्रतिकी आमदनीको कम किया करते थे इससे युवराज उस पर स्वयं बडे खिन्न रहते थे, अब उन्होंने सरदारसिंहकी प्रार्थना सुन मंत्रीको उसका फल देनेका संकल्प किया । अन्तमें युवराजके आगे प्रस्ताव हुआ कि स्वरूपसिंहके मारे विना राज्यमें किसी भाँतिसे मंगल होनेकी संभावना नहीं है । युवराज भी उसमें सम्मत हो गये । एक समय मन्त्री स्वरूपसिंह राजसभामें रावल मूलराजके सामने बैठे थे, समस्त सामन्त सरदार चारों ओर विराजमान थे । इसी समयमें रायसिंहने सभामें जाकर स्वरूपसिंहके मारनेके निमित्त तलवार म्यानसे निकाली । स्वरूपसिंहने इस अकस्मात् विपत्तिको देख मारे जानेके भयसे रावल मूलराजसे सहायता करने लिये प्रार्थना की, किन्तु रायसिंहकी तलवारने बडी शीघ्रतासे स्वरूपसिंहके मस्तकको धडसे अलग कर दिया । सामन्तमण्डली जानती थी कि स्वरूपसिंह रावल मूलराजसे अधिकार लेकर ही स्वेच्छाचारी हुआ था अतएव उन्होंने इस समय सभामें बैठे हुए मूलराजके जीवनरूपी दीपकके बुझा देनेका प्रस्ताव उठाया । परन्तु युवराज रायसिंहने इस मर्म भेदी प्रस्तावको उसी समय तोड दिया ।

अपने पुत्रकी संहारमूर्ति और सामन्तोंकी हिंसक अभिलाषा देखकर मूलराज मारे जानेके भयसे अन्तःपुरमें चले गये । इधर सामन्तोंने विचारा कि रावल मूलराजके सिंहासन पर बैठे रहनेसे अब हमारा निस्तारा नहीं हो सकता । विशेष कर जब उनके सम्मुख ही हमने उनके मारनेका प्रस्ताव उठाया है, तब वह अवश्य ही हमको मरवा डालेंगे । ऐसा विचार कर सामन्तोंने उसी समय रायसिंहसे कहा कि आप राजसिंहासन पर बैठिये । आज ही हम लोग आपका राजतिलक किये देते हैं और यदि आप इसमें

राजी न होंगे तो हम आपके भाईको सिंहासनपर बैठा देंगे। रायसिंहने समस्त सामन्तोंको एकमत देखकर पिताको कैद करा लिया। और स्वयं राज्यभार ग्रहण करनेमें सम्मत हो गये। थोडे ही दिनोंमें उनके नामसे सब राजकाज होने लगा। किन्तु सामन्तोंके बहुत कहने पर भी रायसिंह सिंहासनपर नहीं बैठे उसके बदले वह दूसरे आसन पर बैठा करते थे।

रावल मूलराज सिंहासनच्युत होकर बन्दीदशामें तीन महीने चार दिन तक रहे, इसके पीछे उनकी भाग्यलक्ष्मी प्रसन्न हुई। उनको बन्धनसे छुटानेके लिये एक रमणीका हृदय व्याकुल हुआ। वह रमणी कौन है ? प्यारे पाठको ! यह रमणी षड्यंत्र-दलके नेता और रायसिंहके प्रधान उपदेशककी स्त्री है। इसका जन्म मोहचा सम्प्रदायमें हुआ था जो राठौर राजपूतोंमेंसे एक है। इसके स्वामी जयसलमेरके प्रधान सामन्त जिञ्जियालीके मालिक अनूपसिंह हैं, ऊंचे भावको हृदयमें धारण कर राठौर रमणी रंगभूमिमें विचित्र अभिनय करनेको उतरी। इसके स्वामी अनूपसिंहने प्रधानमंत्री होकर राजाको बंदीमें डलवा कर राजधानीमें जो अशान्ति फैलाई है, आज अपने स्वामी अनूपसिंहके मारे जाने पर भी यदि राज्यमें शान्ति हो जाय और रावल मूलराज बंधनसे छूट जॉय तो मेरा कर्तव्य पूर्ण हो जाय, आज इसने इस कामके करनेकी अपने मनमें ठान ली है। उसने विचारा है कि रायसिंहने अपनी कम हिम्मतीसे पिताको बंदी करके बडा बुरा काम किया है; अतएव दुष्ट रायसिंहको भी सिंहासनसे उतार देना चाहिये। राठौर रमणीने क्यों अपने पतिके मरनेसे भी मूलराजको छुटानेका उद्योग किया, इसका कोई विशेष कारण इतिहास नहीं बतलाता, तब राजभक्ति ही इसका मुख्य कारण ज्ञात होता है। जो हो राठौर रमणीने उक्त संकल्प करके अपने पुत्र जोरावर-सिंहको पास बुलाकर हृदयका भाव कह सुनाया। पुत्र जोरावरसिंहने माताकी बात मान ली, तब माताने कहा, "वत्स ! इस कामके करनेमें तुम्हारे पिता भी यदि कोई बाधा डालें तो तुम अपने पिताके भी मार डालनेसे न चूकना। उनके मरजानेपर मैं उनके शवके साथ सती हो सुरलोकको चली जाऊँगी। जोरावरसिंह भी माताके ऐसे भयानक आदेशके पालन करनेमें राजी हो गया। राठौर रमणीने इस भांति पुत्रसे प्रतिज्ञा कराकर फिर अपने देवर अर्जुनसिंह और वारूके सामन्त मेघसिंहको बुलाकर इन दो-नोंसे मूलराजके उद्धारके निमित्त प्रतिज्ञा कराई।

रावल मूलराज तीन महीने चार दिनतक बंदीघरमें रहकर विचारते थे कि मुझे अपने कुलांगार पुत्रके दोषसे ही इस भयंकर बंदीघरमें जीवनका शेष करना पडेगा। उनके हृदयसे कारागारसे छूटनेकी आशा एक साथ ही जाती रही थी। अनूपसिंहने मंत्री होकर जयसलमेरमें जैसी प्रशंसा और प्रभुता पाई थी। रायसिंह जैसी उनकी आज्ञा पालन करते थे उससे जयसलमेरमें कोई यह नहीं कह सकता था कि मूलराज अब जीते जी बंधनसे छूटेंगे। पांचवें दिन उस वीर नारी राठौर रमणीके प्रस्तावसे प्रतिज्ञाबद्ध जोरावरसिंह, अर्जुनसिंह और मेघसिंह बहुत सी सेना लेकर कारागारमें

घुस गये और मूलराजको बंधनसे छुटा लाये। किन्तु रावल मूलराजने विचारा कि कुलांगार रायसिंह अब न जाने किस बुरे अभिप्राय वा छलके साथ जेलसे निकालता है, इस लिये उन्होंने पहिले निकलनेसे नाहीं की। अन्तमें जोरावरसिंहने अपनी माताके षड्यन्त्रको बताया, तब मूलराज उस राठौर रमणीको धन्यवाद देते हुए कारागारसे बाहर निकल आये और राजसिंहासनपर बैठ गये।

जिस समय जोरावरसिंह, अर्जुनसिंह और मेघसिंहने रावल मूलराजका उद्धार किया था उस समय रायसिंह राजशय्या पर निद्रा देवीकी गोदमें विराजमान थे। मूलराजके सिंहासनपर बैठते ही नगाडे बजने लगे। उस नगाडेके शब्दसे रायसिंहकी नींद जाती रही। उन्होंने उठ कर सुना कि पिताजी बंधनागारसे निकलकर सिंहासन पर बैठ गये हैं। उसी समय मूलराजके दूतने रायसिंहके पास निर्वासन दंडका आज्ञापत्र और राजपूत समाजमें प्रचलित निर्वासन दंडके चिह्न स्वरूप काले वस्त्र, काले म्यानकी तलवार, काली पगडी, काली ढाल लाकर रायसिंहकी शय्याके पास रखकर कहा:-कि, काला घोडा नीचे खडा है। रायसिंहने हताश हो पिताकी आज्ञाका पालन किया। वह तुरन्त ही काले वस्त्रोंको पहिन काले घोडेपर सवार होकर जयसलमेरसे बाहर हुए। जो सामन्त मूलराजके विरोधी और रायसिंहके पक्षपाती थे उनको भी अपने नौकरोंके साथ रायसिंहके साथ ही जाना पडा। रायसिंहने सब सामन्तोंके साथ राजधानीसे निकल कोटराके सामने घोडा चलाया। जयसलमेरकी दक्षिण सीमाके अन्तमें उक्त कोटरा नगरमें जब सब पहुँचे तब सामन्तोंके प्रधानने रायसिंहसे कहा 'नगरको लूट लेना चाहिये'। किन्तु रायसिंहने राजी न होकर कहा,—"जन्मभूमि हमारी जननी स्वरूप है, जो राजपूत जन्मभूमि पर अत्याचार करेगा वह मेरा शत्रु कहा जायगा"। यह सुन कर सामन्त गणोंने वहाँ लूट नहीं की।

अपने किये पापका यथार्थ फल पाकर रायसिंह जयसलमेरको छोडकर जोधपुरके राजाके पास आये। जो सामन्त उनके साथ आये थे वे भी श्योकोटडा और वाढमेरमें रहने लगे। उनको इसी भांति रहते हुए बारह वर्ष बीते, किन्तु पहिले तीन वर्षतक उन्होंने छिप २ कर जयसलमेरके बहुतसे गांवोंको लूटकर द्रव्य संचय कर लिया था। यही नहीं वरन् उन्होंने जयसलमेरकी राजधानीके समीपवाले गांव और नगर भी लूट लिये थे। उनके ऐसे अत्याचार और उपद्रवोंको देख कर रावल मूलराजने उन समस्त विद्रोही सामन्तोंके घरोंको खुदवाकर उनके स्थानपर कुएँ बनवा दिये और उनके सब प्रदेशोंको छीन कर राजधानीमें मिला लिया। सामन्तोंके बारह वर्षलों निर्वासित दंड भोगनेके पीछे रावल मूलराजने उनके अपराधोंको क्षमा कर उनके देशको दे दिया। सामन्तोंने भी शपथ खाकर तबसे राजसेवामें कोई आपत्ति नहीं की।

राज्यसे निकालेहुए रायसिंहने ढाई वर्ष तक जोधपुरके राजा विजयसिंहके पास निवास किया। महाराज विजयसिंहने रायसिंहपर अपने पुत्रके समान स्नेह

किया। किन्तु दुर्भाग्यसे रायसिंहने जोधपुरमें बडे आदर और सत्कारसे रहने पर भी अपने ऊधमी स्वभावसे एक बडा अन्याय कर डाला। रायसिंहने जोधपुरके एक बनियेसे कुछ रुपया कर्ज लिया। एक समय जब विजयसिंहके साथ रायसिंह शिकार खेलने जाते थे उसी समय मार्गमें उक्त महाजनने रायसिंहके घोडेकी लगाम पकड महाराज विजयसिंहकी दुहाई दे रायसिंहसे अपने द्रव्यकी प्रार्थना की। रायसिंहने अपने पिताकी दुहाई देकर बनियेसे घोडेकी लगाम छोडनेको कहा। किन्तु धनी बनियेने ऐंठकर कहा कि "मूलराजकी दुहाई मैं क्यों मानूं?" रायसिंहने इतना सुनते ही क्रोधित होकर तलवारसे बनियेका शिर काट गिराया और उसी समय जयसलमेरकी तरफ अपने घोडेकी बाग फेरी। उन्होंने जाते समय कहा कि-"पराये अन्नसे पेट भरनेवालेसे मोल लिये दासका भी स्वत्व अच्छा है" रायसिंहके सहसा जयसलमेरकी राजधानीमें आजानेसे राजधानीकी समस्त प्रजा उनको देखनेके लिये आने लगी, मूलराजने अपने बडे पुत्र रायसिंहको लौट आया देखकर दूतके द्वारा पूछा कि जयसलमेरमें क्यों आये हैं? रायसिंहने कहला भेजा "मैं तीर्थयात्रा करने जाता हूं अतएव एक बार जन्मभूमिको देखने आया हूँ" रावल मूलराजने अपने कुपूत बेटेकी यह बात सत्य नहीं मानी, उन्होंने विचारा कि रायसिंह अवश्य ही फिर कोई षड्यन्त्र रचने आया है इस कारण उन्होंने उसी समय रायसिंहके नौकरोंसे हथियार ले लिये और रायसिंहको भी राजधानीमें न आने देकर देवाके किलेमें रहनेको भेज दिया।

राजदरबारोंमें यह रीति चिरकालसे चली आती थी कि ऊंच दर्जेके कर्मचारोंके मरनेपर उसके पुत्रको ही वह पद दिया जाय। बस इसी रीतिके अनुसार मूलराजने अपने पुराने मंत्री स्वरूपसिंहके मारे जाने पर उसके बेटे सालिमसिंहको मंत्री बनाया था। जिस समय स्वरूपसिंह मारे गये थे, उस समय सालिमसिंहकी अवस्था ग्यारह वर्षकी थी। उस थोडी ही उमरसे सालिमसिंहके हृदयमें प्रतिहिंसाकी वृत्तिका अंकुर उत्पन्न हो लिया था, अब थोडे ही दिनोंमें वह फल और फूलोंसे शोभायमान होकर बडा विशाल वृक्ष हो गया था। कर्नल टाड लिखते हैं कि, राजपूतगण जैसे असीम साहस और वीरतामें प्रसिद्ध हैं यद्यपि सालिमसिंहमें वैसा साहस और वीरता नहीं थी तथापि वह वर्षोंतक सर्पकी समान क्रूरता और व्याघ्रके समान क्रोधकी सहायतासे अपनी इच्छासे प्रत्येक विरोधी मनुष्यको विषैले डंकसे मारता था। उसका शरीर तो, स्त्रियोंके समान कोमल था, वैसे ही बोलचालमें उसका स्वभाव नरम था। वह आचार व्यवहारसे निरन्तर विनय पूर्वक प्रतिज्ञा करके सर्वसाधारणको आशा और धीरज देता था। यद्यपि बाहरसे तो वह सबको प्यार करता था किन्तु वह किसी बातकी प्रतिज्ञा करके उसे कभी पूर्ण नहीं करता था। यह प्रकाशरूपमें जितना नरम और सरल जान पडता था। हृदयमें उतना ही क्रूर था। सालिमसिंह जैनमतावलंबी था किन्तु जातिके धर्मको किसी भाँति नहीं मानता था। जैनियोंके यहां यह रीति है कि रात्रिके समय अन्धेरेमें बैठ रहना अच्छा है किन्तु पतंग आदिके जलनेकी सम्भावनासे दीपक जलाना उचित नहीं, कारण कि दीपक जलानेसे पतंगादिकी हत्या होनी संभव है।

परन्तु सालिमका चरित्र ऐसा पिशाचरूप था कि बहुत दिनोंके बीचमें विदेशी

शत्रुओंसे जितने भट्टीगण मारे गये थे। इकले इसके षड्यन्त्रसे थोडे ही दिनोंमें उनसे अधिक भट्टियोंका संहार हो गया। इतिहासके जाननेवालोंने लिखा है कि सालिमसिंहके बालकपनमें ही इसकी विचित्र घटनासे रायसिंहके साथ निकाले हुए सामन्तोंने फिर अपने २ देशको रावल मूलराजसे ले लिया। इसी समय मारवाडके महाराज विजयसिंहके स्वर्ग पधारनेपर राजा भीमसिंह मारवाडके सिंहासनपर बैठे। जैसलमेरके रावल मूलराजने नवीन मारवाडेश्वर राजा भीमसिंहका अभिनन्दन करनेके लिये मंत्री सालिमसिंहको अपने प्रतिनिधि स्वरूपसे मारवाडको भेजा। सालिमसिंह मारवाडमें जाकर अभिनन्दन दे जिस समय जयसलमेरमें आरहे थे उसी समय मार्गमें निकाले हुए सामन्तोंने उनको पकड कर कैद कर लिया। उन सामन्तोंने उसी समय अपने सर्वस्व छिन जाने और दंड दिलानेके कारणस्वरूप सालिमसिंहको प्राणदण्ड देना निश्चय किया, परन्तु उन्होंने जैसे ही सालिमसिंहके शिर काटनेको तलवार उठाई वैसे ही मृत्युको समीप देख सालिमसिंहने आँखोंमें आँसू भरकर गिडगिडाते हुए वचनोंसे अपने शिरकी पगडी उतार कर जोरावरसिंहके चरणोंमें धरके अपने प्राणोकी भिक्षा माँगी शत्रु भी अपनी शरणमें आकर आश्रय पानेकी इच्छा करे तो उसको आश्रय देना और अभय करना राजपूतोंका स्वाभाविक धर्म है, अतएव कुटिल चक्री सालिमसिंहने जिनका सर्वनाश किया था, जिनकी दुर्गतिका अंत कर दिया था वह आज उन्हींके हाथोंमें पडकर उन्हींसे अपने प्यारे प्राणोंकी भीख माँगता है। यह देख कर सामन्तोंने शीघ्र ही उस आश्रय पानेवाले प्राणोंके भिखारी सालिमको छोड दिया। सालिमके शिर काटनेके लिये निकाली हुई तलवार फिर म्यानमें कर ली। किन्तु किसने इस नरपिशाच सालिमको निकट आई हुई मृत्युके हाथसे बचाया? जिस राजपूत राठौर रमणीने एकमात्र "समान धर्म" कहकर मूलराजको कारागारसे छुटानेके लिये अपने प्राणपतिके प्राणनाश करनेमें भी संकल्प कर लिया था, उसी राठौर रमणीके सपूत बेटे, उसी मूलराज को बंधनसे छुटाकर राज्यपर बिठानेवाले जोरावरसिंहने सालिमको अभयदान दिया। जोरावरसिंहने यद्यपि मूलराजको कारागारसे छुटाकर राज्यसिंहासनपर बैठाया था, यद्यपि रावल मूलराज जोरावरसिंहके असीम ऋणसे बँधेहुए थे तौ भी दुरात्मा सालिमसिंहने अपनी प्रधानता दिखानेके लिये मूलराजके उस असीम उपकारी जोरावरसिंहको जयसलमेरसे हटाकर निकाले हुए सामन्तोंके साथ बाहर कर दिया था। उस निरपराधी जोरावरसिंहने ही पत्थरके हृदयवाले सालिमसिंहके जीवनकी रक्षा की। सालिमसिंहके छोड देनेसे उनको भी छुटकारा मिला। उसने निकाले हुए सामन्तोंके अधिकारके देश फिर उनको रावल मूलराजसे दिलवा दिये। सालिमसिंहने यद्यपि सामन्तोंके देश उन्हें दिलवा दिये, परन्तु उनको राजसभामें पहिलेके समान स्वाधीनता नहीं मिली। केवल जोरावतसिंहको ही पहिलेके समान समस्त अधिकार प्राप्त हुए।

जिस समय रायसिंह देवाके किलेमें बंदी होकर रहते थे, उसी समय उनके बडे

पुत्र अभयसिंह और धौंकलसिंह निकाले हुए सामन्तोंके साथ वाढमेरमें रहते थे। रावल मूलराजने निकाले हुए सामन्तोंसे बारंबार दूत भेजकर अपने पौत्रोंको अपने पास भेजनेको कहा, किन्तु सामन्तोंने किसी भाँतिसे नहीं माना। तब रावल मूलराजने अपनी सेनाको ले जाकर वाढमेरको चारों ओरसे घेर लिया।

निकाले हुए सामन्तोंने छः महीनेतक बडे पराक्रमके साथ किलेकी रक्षा करी, अन्तमें रसदके चुक जानेसे उन्होंने आत्मसमर्पण कर दिया। किन्तु इस नियमपर उन्होंने रावल मूलराजको उनके दोनों पोते दिये कि वे रावल उनके प्राणरक्षाकी शपथ कर लें। जोरावरसिंहने दोनों कुमारोंके जीवनकी जामिनी की, तब दोनों कुमार मूलराजको दे दिये गये। रावल मूलराजने दोनों बालकोंको देवाके जिस किलेमें रायसिंह कैद थे वहां रहनेके लिये भेज दिया। किन्तु कुछ दिनोंके पीछे ही देवाके दुर्गमें भयंकर आग लगी और उस जलती हुई आगमें रायसिंह और उसकी स्त्री दोनों जल गये। अभयसिंह और धौंकलसिंहने बडे सौभाग्यसे उस आगसे छुटकारा पाया। सालिमसिंहने स्वयं दोनों कुमारोंकी रखवालीमें जोरावरसिंहको करके मूलराजके राज्यशासनके विघ्न दूर करनेके लिये जयसलमेरके दूरवाले प्रदेश रामगढमें उनको भेज दिया था। अभयसिंह और धौंकलसिंहके राजधानीमें वा समीपके किसी स्थानपर होनेसे सामन्तगण उनको ले फिर किसी षड्यन्त्रको रचकर मूलराजको सिंहासनसे हटा देनेका विचार करेंगे, इस भयसे मेहता सालिमसिंहने उनको बडी दूरपर रक्षा करके निश्चिन्तता पाली थी। किन्तु जयसलमेरके सबमें प्रधान सामन्त जोरावरसिंह जो अभयसिंह और धौंकलसिंहके जीवनके जामिन हुए थे-उन्होंने सालिमसिंहकी इस आज्ञासे दोनों राजकुमारोंको राजधानीसे अनेक दिनके मार्गपर दूर चला देनेमें सन्देह किया। उन्होंने विचारा कि सालिमसिंहने अवश्य ही कोई षड्यन्त्र रचकर कुमारोंको इतनी दूर अन्य स्थानपर भेजा है। जोरावरसिंहने अन्तमें एक समय रावल मूलराजके सामने निर्भय होकर कह दिया कि "आपके सिंहासनके उत्तराधिकारी राजकुमार अभयसिंहके जीवनका मैं जामिन हुआ हूँ, राजकुमारको जब आगे राज्यपर बैठना होगा तब उसको दूर स्थानपर रखना किसी भांतिसे उचित नहीं है उसको राजधानीमें ही रखकर उसे राज्यकार्यकी शिक्षा देना ही आपका कर्तव्य है"।

जोरावरसिंहकी ऐसी सम्मति देखकर मेहता सालिमसिंहका हृदय काँप उठा। उसने विचारा कि, जोरावरसिंहके समान प्रतापशाली सामन्त राजसभामें खडा होकर ऐसी सम्मति दे तो इसमें हमारा मंगल नहीं हो सकता, अतएव सालिमसिंह जोरावरसिंहके मार डालनेकी चिन्ता करने लगा। इसी समयसे सालिमसिंहको पिशाचमूर्ति धारण करते देख जयसलमेरमें बडे २ हृदयविदारक दृश्य दृष्टि आने लगे। जोरावरसिंहका खेतसी नामक एक भाई था। उस खेतसीकी स्त्रीसे रजवाडेकी रीतिके अनुसार सालिमसिंहने भाई बहिनका सम्बन्ध जोड लिया। सालिमसिंहने अपनी पैशाचिक अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त अपने पापके उद्देशपूर्ण होनेके मार्गके कांटे उखाडनेके

लिये उस खेतसीकी स्त्रीकी सहायता लेनेका संकल्प किया । सालिमसिंहने उक्त स्त्रीको अपने घर बुलाकर, बहुतसी बातें करनेके पीछे उससे बडी चतुराईसे कहा "क्या तुम्हारी ऐसी इच्छा नहीं हो सकती कि जिससे तुम्हारे स्वामी जोरावरसिंहके पदपर जयसलमेरके प्रधान सामन्त हो जांय" । अबला स्त्रीने सालिमकी इस षड्यन्त्रकी बातको समझा नहीं, तब सालिमने स्पष्ट रूपसे अपने मनका भाव सुनाकर कहा कि तुम्हारे स्वामी राजसभाके प्रधान सामन्त हो सकते हैं ? इस बडी आशासे स्त्री सालिमका कार्य करनेको तुरन्त ही राजी हो गई । किन्तु सालिमने उस समय उसको यह नहीं बताया कि जोरावरसिंह किस भाँतिसे मारा जाय । कई दिनके पीछे सालिमसिंहने जब स्त्रीको कामके करनेमें उत्सुक देखा तब कहा " मैं अपने हाथसे प्राणघातक जहर दूँगा, तुम उस विषको लेकर जोरावरसिंहके भोजनमें मिला देना । जोरावरसिंह उस विषैले भोजनको खाकर निश्चय मर जाँयगे, तभी तुम्हारे स्वामीको प्रधान सामन्तका पद मिल जायगा ।" हतभागिनी रमणीने अपने स्वामीका ऐश्वर्य बढानेकी अभिलाषासे समय पाकर वह विष जोरावरसिंहको खिला दिया; जिससे वह वीर सामन्त मायामय संसारको छोडकर परलोकको सिधारा । कृतघ्न सालिमसिंहने ऐसे वीर जोरावरसिंहको मारकर अपने पैशाचिक अभिनयके मार्गको स्वच्छ कर लिया, और खेतसी जिञ्झनियालीके प्रधान सामन्त हो गये ।

पापात्मा सालिमने इस भाँति जयसलमेरके सबमें श्रेष्ठ सामन्तको मारकर अन्तमें संहारमूर्ति धारण कर क्रमानुसार हत्या करना आरम्भ की । उसने इस प्रकार विषसे और समयानुसार तलवारसे बारू, डाँगरी आदिके सामन्तोंको एक २ करके मार डाला, खेतसी भी अपने भाई[1]के मारनेमें सरीक थे वा नहीं ! यह नहीं जाना गया ।

उन्होंने यद्यपि सामन्त पद पा लिया परन्तु दुरात्मा सालिमसिंहके समयमें ही उनका भी जीवन नष्ट हो गया । खेतसीसे सालिमसिंहका इस बातपर विवाद हो गया कि जब सालिमसिंहने अभयसिंहको जयसलमेरके उत्तराधिकारसे एक वार ही वंचित करके मूलराजके छोटे पुत्र मानसिंहके बेटे गजसिंहको राज्यका स्वत्व देनेकी इच्छा की और खेतसीने उस प्रस्तावमें किसी प्रकार सम्मति न दी, तब अभयसिंह और धौंकलसिंहको बिना मारे सालिमसिंहने अपनी इच्छा पूर्ण होनेका दूसरा उपाय न देखकर सबसे पहिले खेतसीसे इस कार्यके करनेको कहा 'कि तुम दोनों कुमारोंको मार डालो' खेतसीने इस नीच और घृणित कामके करनेसे क्रोधित होकर कहा कि, "अपने स्वामीके वंशधरोंके मारनेमें मैं सहायता भी नहीं दे सकता मारना तो एक ओर रहा ।"सालिमने जब खेतसीकी यह बात सुनी तब मनमें कहा कि तुम्हें भी अब जोरावरसिंहके पास भेजता हूँ ।कई दिनके पीछे खेतसी अपने साले स्वरूपसिंहके साथ बालोतरा देशके अन्तर्गत फूलियो नामक स्थानमें विवाहके न्योतेमें गये । सालिमसिंहने उसी समय खेतसीके मारनेका निश्चय कर लिया । खेतसी और स्वरूपसिंह जब विवाहके पीछे जयसलमेरकी

(१) उर्द्दूतर्जुमेमें भाई ।

सीमामें विजोराय स्थानपर लौटकर आये तब सालिमसिंहके गुप्तचरने उन्हें बडे आदरके साथ किलेमें लेजाकर दोनोंको मार डाला। थोडी देरके पीछे शवदाह करनेको उन्हें किलेमें-से निकाला। खेतसीकी स्त्रीने जब किसीके मुखसे सुना कि तुम्हारे स्वामीके मारनेका उद्योग किया गया है तब वह स्वामीके घरपर न आनेसे सालिमसिंहको अपना परम हितू जान उसीके घर चली गई, और साथमें अपने छोटे पुत्रको भी ले गई। दुरात्मा सालिमने उस स्त्रीको आश्रय तो दिया परन्तु उसे यह नहीं बतलाया कि मेरे ही षड्यन्त्रसे तेरा स्वामी मारा गया है। स्त्री इसी प्रकार सालिमके स्थानपर रहने लगी। एक नौकर आकर प्रतिदिन स्त्रीको भोजन दे जाता था, चार पांच दिनके बाद उस नौकरने एक दिन स्त्रीसे आकर कहा कि तुम्हारे स्वामी और भाई दोनों मारे गये इस दारुण शोचकी बात सुनकर रमणीका शोकरूपी समुद्र उछलने लगा। थोडी देर पीछे उसके हृदयमें बदला लेनेकी इच्छा प्रबल हुई। दुराचारी सालिमने उसके स्वामीको मारा है यह जानकर वह उसी समय प्रतिहिंसा करनेको तैयार हुई। इतिहाससे जाना जाता है कि राक्षस सालिमसिंहने चिरशान्तिके लिये स्त्रीके पास एक छुरी भेजी। वास्तवमें स्त्रीने स्वयं अपनी हत्या कर ली या सालिमने ही उसको मारा, यह इतिहाससे नहीं ज्ञात हुआ। रमणीने जैसे जोरावरसिंहको मारकर महा पातक किया था उसका उसको यहींपर उचित फल मिला।

नराधम सालिमसिंह एक २ करके अनेक भट्टी सामन्तोंको मारकर पीछे राजवंशके ध्वंस करनेको आगे बढा। जयसलमेरके आगे होनेवाले उत्तराधिकारी अभयसिंह अपने छोटे भाई धौंकलसिंहके साथ रामगढमें रहते थे। नरपिशाच सालिमने अपने षड्यन्त्रसे विषद्वारा अभयसिंह, धौंकलसिंह उनकी स्त्री और उनके छोटे २ बालकोंको भी मरवा डाला। इन भयंकर हत्याओंके पीछे सालिमसिंहने रावल मूलराजके छोटे बेटेके तीसरे पुत्र गजसिंहको जयसलमेरके उत्तराधिकारी रूपसे प्रकाशित कर दिया। गजसिंहके और पाँच भाई पिशाच प्रकृतिवाले सालिमसिंहके विकराल ग्राससे अपने जीवनकी रक्षा करनेके लिये जयसलमेरको छोड, बीकानेरमें जाकर वहांके राजाकी शरणमें रहने लगे। नीचे लिखी वंशावलीके देखनेसे पाठक गण सहजमें ही जान सकेंगे कि महा पातकी सालिमने राजवंशकी कैसी शोचनीय दशा करदी थी।

(१) उर्दू तर्जुमेमें जहर देनेसे मरे।

महासिंह काना था, हिन्दूशास्त्रके अनुसार कानेको राजसिंहासनका अधिकार नहीं है, अतएव महासिंहका स्वयं ही अधिकार जाता रहा, इसी लिये सालिमसिंहके कराल ग्राससे उनका जीवन नष्ट नहीं हुआ।

टाड साहब इस अध्यायमें लिखते हैं, कि " रजवाडेमें जिस समय मंत्रियोंके सर्वाधिकारमें अखण्ड प्रभुता प्रकाश हुई है हम केवल उसी समयमें उन मंत्रियोंके खिलौने स्वरूप राजाओंको चिरकाल तक राज्य करते देखते हैं। कोटा राजके भूतपूर्व महाराव भी पचास वर्षसे अधिक राज्यसिंहासन पर बैठे थे और रावल मूलराज भी इस जयसलमेरके राजसिंहासनपर ५८ वर्षतक रहे। इनके पिता ४० वर्षतक राज्य कर गये थे। जगतके जिस किसी राज्यके इतिहासमें पिता और पुत्रमें एक शताब्दी राज्य रहा हो ऐसा लिखा है वा नहीं,इस विषयमें मुझे सन्देह है। जिस शताब्दीमें यह पिता पुत्र राज्य कर गये हैं उसी शताब्दीसे इस यदुवंशका घोर परिवर्तन और बडा पतन हुआ है। यदि हम रावल मूलराजके पितामह जसवन्तसिंहके शासन समय पर दृष्टि डालें तो हम इस जयसलेमरकी सीमाको बडी विस्तारवाली देखते हैं। उत्तरकी सीमा गाडा नदी-तक (जो नदी इस राज्यको मुलतानसे अलग करती है) पश्चिममें पंचनद और सिन्धुका उपजाऊ प्रदेश इसके अन्तर्गत देखते हैं। उक्त समयके कुछ दिन पहिले इसकी सीमा और भी बडी थी। इसके दक्षिणमें धातराज्य है। दक्षिणके अंचलमें विराजमान स्योकोटडा और वाढमेर देश इसके मध्यमें थे। किन्तु इस समय वह मारवाडकी राजधानीमें हैं। पूर्व सीमाके फलोदी, पोकण और अन्यान्य नगर आदि भी बीकानेरमें मिल गये हैं। इस समय जो भावलपुर राज्य स्वतंत्र हो रहा है वह भी इसी जयसलमेरकी राजधानीका एक अंश है। राठौरोंने जयसलमेरके पश्चिमी सीमाके बहुतसे प्रदेश अपने अधिकारमें कर लिये हैं "।

छठवाँ अध्याय ६.

अंगरेज गवर्नमेण्टके साथ रावल मूलराजका सन्धि करना-संधिपत्रका लिखा जाना-मूलराजकी मृत्यु-उनके पोते गजसिंहका सिंहासनपर बैठना-उनका मन्त्रीके हाथमें पडकर खिलौना बन जाना-संधिपत्रकी तीसरी धारा-राजनैतिक प्रश्नावली-सालिमसिंहका फिर शासन करना-सालिमसिंहके अत्याचार और उपद्रवोंका बढना-जयसलमेरके प्रधानमन्त्री पदको अपने उत्तराधिकारियोंको दिलानेका परिश्रम करना-बृटिश दूतसे बृटिश गवर्नमेण्टके पास दरख्वास्त भेजना-पल्लीवालोंका स्वतः निर्वासन-आमिनस्वरूप बनियेके परिवारकी रक्षा करना-बलके साथ राजकर लेना-सालिमसिंहकी सम्पत्ति-बारूके मालदेवतोंका इतिहास-बीकानेरके राठौरोंसे उनका ध्वंस होना-विश्वासघातकता-बृटिश गवर्नमेण्टसे सहायता मांगना-सहायता मिलना-उसका फल-रावल गजसिंहका उदयपुरमें आना-रानाकी कन्यासे उनका विवाह होना।

श्रीकृष्णके स्वर्ग चले जानेपर यदुवंशकी जो दशा हुई उसे पहिले ही अध्यायमें लिख आये हैं । इस समय हम फिर यदुवंशकी आगेकी दशा दिखानेको तैयार हुए हैं। संवत् १८१८ में रावल मूलराज रावल जयसलके सिंहासनपर बैठे थे और १८१८ ईसवीमें उन्होंने ईस्टइंडिया कंपनीके साथ संधि कर ली। कालकी कैसी विचित्र गति है? पवित्र यदुवंशके स्वामी भगवान् श्रीकृष्णके वंशधर जो अबलों स्वछन्द थे, अब उनके वंशमें उत्पन्नहुए, मूलराजको अनेक शताब्दियोंके पीछे संधि स्थापन करनी पडी। इतिहाससे जाना जाता है कि भारतवर्षके प्रत्येक राजपूत राजाओंने बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधि कर ली थी; उसके पीछे जयसलमेरके राजा मूलराजने संधि स्थापन की तो क्या? जिस दिल्लीमें राजपूत राजाओंने ईस्ट इंडिया कंपनीके साथ संधिपत्र लिखा था उसी दिल्लीमें जयसलमेरके रावल मूलराजके दूतने भी संधिपत्र लिखा ।

संधिपत्र ।

माननीय अंग्रेज ईस्ट इंडिया कंपनीके साथ जयसलमेरके मालिक श्रीयुत महा रावल मूलराज बहादुरका यह संधिपत्र माननीय कंपनीकी ओरसे महामहिमवर मार्किस आव हेटिंग्स के. जी. भारतके गवर्नर जनरलसे प्राप्त पूर्ण शक्तिके अनुसार, मि० चार्लस थियोफिलस् मेटकाफ, और महाराजाधिराज महा रावल मूलराज बहादुरकी ओरसे प्राप्त पूर्ण शक्तिके अनुसार मिश्र मतिराम और ठाकुर दौलतसिंह मानते हैं ।

पहिली धारा ।

माननीय अंग्रेज कंपनी और जयसलमेरके मालिक महा रावल मूलराज बहादुर और उनके उत्तराधिकारियोंसे तथा अन्य जमींदारोंसे चिरस्थाई मित्रता, संधि-सम्बन्ध, और समान स्वार्थता रहेगी ।

दूसरी धारा ।

महा रावल मूलराजके वंशधर ही उत्तराधिकारी क्रमसे जयसलमेरके सिंहासनपर बैठेंगे ।

तीसरी धारा ।

जयसलमेर राज्यका पतन करनेके लिये यदि कोई राजा सेना लेकर आक्रमण करे अथवा उक्त राज्यके बीचमें कोई बडा भारी झगडा उपस्थित हो जाय और जयसलमेरके राजासे वह दूर न हो सके तो बृटिश गवर्नमेण्ट उक्त राज्यकी रक्षाके लिये अपनी शक्तिपूर्वक सहायता देगी ।

चौथी धारा ।

महा रावल और उनके उत्तराधिकारी गण एवं स्थलाभिषिक्तगण अटल नियमके साथ आश्रितरूपसे बृटिश गवर्नमेण्टके सहायक होंगे, और बृटिश गवर्नमेण्टका आधिपत्य मानेंगे ।

पांचवीं धारा।

यह पाँच धाराओंसे युक्त संधिपत्र मुझ चार्लस थियोफिलस मेटकाफ और मिश्र मतिराम एवं ठाकुर दौलतसिंहका निर्धारित और हस्ताक्षर युक्त तथा दोनों ओरकी मोहरोंसे भूषित है, महा महिम गवर्नर जनरल और महाराजाधिराज महा रावल मूलराजबहादुरके स्वीकार होनेपर आजकी तारीखसे छः सप्ताहोंके बीचमें दोनो ओरके लेनदेनका कार्य पूरा हो जायगा।

दिल्लीमे आज सन् १८१८ दिसम्बर महीनेकी १२ वी तारीखका लिखा गया है।

(हस्ताक्षर) मतिराम मिश्र,
ठाकुर--दौलतसिंह।
(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ।

उक्त संधिपत्र लिखनेके पीछे रावल मूलराज दो वर्षतक जिये। उनकी १८२० ईसवीमें मृत्यु हो गई। इस बातको पहिले ही कह आये हैं कि मूलराजने ५८ वर्ष तक राज्य किया था, किन्तु नाममात्रके राजा थे। सालिमसिंहने और उसके पिताने ही इतने दिनोंतक अपनी इच्छानुसार जयसलमेरमें प्रबंध किया था।हम कह सकते है कि मूलराज केवल मंत्रीके हाथके खिलौने ही नहीं थे,वह एक तेजहीन पुरुष भी थे।जो समस्त गुण क्षत्रिय राजाओंमें होने चाहिये. उनमेंसे एक भी मूलराजमें नहीं था। उनके जीते जी ही नरपिशाच सालिमसिंहने उनके वंशधरोंकी जैसी दुर्गति की। जिस भांतिसे उनके बेटे और पोतोंको मारा उससे यही कहना बहुत है कि जितना साहस और तेज उस राजपूत रमणीमें था जिसने मूलराजको जेलसे छुटाया था इनमें उतना भी नहीं था। मूलराज इतिहासमें यादवकुल अवनतिकारक कहे गये हैं।

मूलराजके मरनेके पीछे उनका पोता गजसिंह जयसलमेरके सिंहासनपर बैठा। पापी सालिमसिंहने अपनी प्रभुता सदा बनाये रखनेके लिये ही गजसिंहको अपना खिलौना जान मूलराजके बेटे और पोतोंको मार और निकाल कर गजसिंहको उत्तराधिकारी प्रसिद्ध किया था। गजसिंह भी मूलराजके समान सालिमसिंहके हाथके खिलौने होकर जयसलमेरके सिंहासनपर बैठे। जिसमें गजसिंह राज्यके किसी विषयमें हस्ताक्षेप न कर सकें, जिसमें सामन्तों और प्रजाके साथ उनकी किसी भांतिसे प्रीति न हो सके,जिसमें वह सालिमसिंहके सेवक और आज्ञाकारी होकर सदा रहें; इसी उद्देशसे नीच सालिमसिंहने गजसिंहको बचपनसे ही लिखापढा लिया था। दादा मूलराज जैसे सालिमसिंहके हृदयमें ही आचरणोंको देखकर मौन रहते थे, ऐसे ही यह नये राजा भी उन्हींके समान रहने लगे। सालिमसिंहने गजसिंहको बालकनसे ही सामन्त समाज और समस्त प्रजासे अलग रक्खा था,इस कारण वह किसी सम्प्रदायसेभी सहानुभूति नहा प्रकाश कर सकते थे।नीच सालिमने गजसिंहको ऐसी दशामें रखकर भी इतनी देखभाल की,कि जिसमें यह किसी कामक करनेका साहस न कर सकें।गजसिंहके राजसिंहासनपर बैठनेसे चतुर सालिमसिंहने अपने सेवकोंको उनके पास नियुक्त किया। वह सेवक गजसिंहसे

सालिमसिंह की बडी प्रशंसा किया करते, और उसको देवताके समान बताते थे। गजसिंह राज्यसिंहासनपर बैठकर किस समय क्या बात करते हैं, उनके मनका भाव किस २ भांतिसे दिनमें बदलता है इन बातोंपर सेवक विशेष रूपसे दृष्टि रखते और समय २ पर वे अपने स्वामी सालिमसिंहसे सब कहते थे। रावल गजसिंह, उनकी रानियां और परिवारके मनुष्य सभी पूर्णरूपसे सालिमसिंहकी दयापर निर्भर रहते थे, किन्तु दुरात्मा सालिम समय पाकर गजसिंहपर भी निर्दयता प्रकाश करनेमें नहीं चूकता था, यदि कभी रावल गजसिंह किसी घोडेको मोल लेना चाहते तो उनको सालिमसिंहसे प्रार्थना करनी पडती, यदि कभी वह किसीको कुछ देना चाहते तो सालिमसिंहसे आज्ञा लेनी पडती थी। सालिमसिंह यदि रावल गजसिंहके दश रुपये मांगनेपर पांच भी दे देते तो इसमें गजसिंह अपना अहोभाग्य समझते थे। इन सब बातोंसे हमारे पाठक स्वयं जान सकते हैं कि मूलराजके मरनेके पीछे जयसलमेरके राज्यमें परिवर्तन तो अवश्य हुआ किन्तु सालिमसिंहकी प्रभुता कुछ कम नहीं हुई; बरन् दिनप्रति बढने लगी।

इतिहासके लिखनेवाले टाड साहबने यहाँपर लिखा है कि जयसलमेरका संधिपत्र जिस तारीखमें समाप्त हुआ (सन् १८१८ ई. १२ दिसम्बर) उसके देखनेसे जाना जाता है कि केवल जयसलमेरके महा रावलने ही देशी राजाओंमें सबसे पीछे बृटिश गवर्नमेंटका आश्रय लिया था। मूलराजने सालिमसिंहकी सलाहसे बहुत दिनोंतक बडे कष्टके साथ अपना राज्य चलाया था। इस पर विशेष कर सालिमसिंहकी, पहिले यह इच्छा नहीं थी कि रावल मूलराज अंग्रेजोंसे संधि करलें, कारण कि उसने पहिले ही विचार लिया था कि संधि हो जानेसे उसकी शक्ति और प्रभुता कम हो जायगी।

किन्तु सालिमसिंहने जब बडी खोजके साथ देखा कि समस्त रजवाडेमें इकला जयसलमेर राज्य ही बृटिश गवर्नमेण्टके आधीन नहा है, और हमारे अत्याचार उपद्रवोंसे पीडित राज्यमें शत्रुओंकी संख्या बढी हुई है, इस कारण विना अंग्रेजोंसे संधि किये शत्रुओंद्वारा अंग्रेजोंसे मिलकर चढाई होनेसे महा अनिष्ट हो जानेकी सम्भावना है यही सोचकर सालिमसिंहने मूलराजको संधि करनेकी सम्मति दी थी। जब संधिपत्र लिख गया तब सालिमसिंहका यह भय जाता रहा। सालिमसिंहको प्रायःइस बातका भी बडा भारी डर था कि मेरे अत्याचारोंसे पीडित होकर गजसिंहके जो अन्य भाई जयसलमेरको छोडकर बीकानेरमें भाग गये थे शायद वे ही इकट्ठे होकर अपनी २ सेना सहित किसी न किसी समय राज्यपर आक्रमण करें। किन्तु अंग्रेजोंके साथ संधि होनेसे उसकी तीसरी धाराके अनुसार सालिमसिंहका यह भय भी जाता रहा। "बाहरसे किसीके आक्रमण करनेपर बृटिश गवर्नमेण्ट अपनी सेनासे सहायता करेगी"। तीसरी धारामें ऐसे नियमके रहनेसे गजसिंहके भाई कभी मेरी इस अखण्ड प्रभुतामें बाधा नहीं डाल सकेंगे। प्रधान मंत्री सालिमसिंह बृटिश गवर्नमेंटके साथ संधि हो जानेपर भी शान्त नहीं हुआ, बरन् दिन २ अपने अत्याचारोंकी अग्निको प्रज्वलित करता रहा।

टाड साहबने फिर बृटिश गवर्नमेंटकी उक्त सन्धिसम्बन्धी राजनैतिक उद्देशके सम्बन्धमें लिखा है, कि इस संधि होनेके कारण जयसलमेरका शीघ्र ही उपकार होगा, यही उपकार उक्त राज्यके लिये अत्यन्त प्रयोजनीय है। जयसलमेरका राज्य और आधी शताब्दीतक स्वाधीन दशामें स्वतंत्र रह सकता था वा नहीं, यह सन्देहकी बात थी। अतएव जिस दिनसे बृटिश गवर्नमेण्टके साथ जयसलमेरके स्वामीकी संधि हुई उसी दिनसे जयसलमेरकी स्थित निश्चित हो गई। जयसलमेरकी शासनशक्ति क्रमानुसार हीन होती चली आती थी, और राज्यकी सीमा क्रमानुसार घटकर अंतमें केवल राजधानीमात्र शेष रहा चाहती थी। कारण कि समस्त भावलपुर राज्य ही एक ओर जयसलमेरके राज्यके उत्तरीय देशोंसे बन गया है, दूसरी ओर सिंधु; बिकानेर और मारवाडके तीन राजा क्रमानुसार जयसलमेरके बहुतसे देशोंको अपने अधीन करते आते थे। यह तीनों राजा जब जयसलमेरको निर्बल देखते तभी अपने राज्यको बढा लेते थे, और विश्वासघाती सालिमसिंहके दुराचरणोंसे ही अन्य राजाओंसे विवाद होता था। केवल अन्य राज्योंमें कई वर्षोंसे अराजकता फैल जानेसे जयसलमेरका राज्य नाममात्रकी स्वधीनतामें रह गया था और उसीसे इस राज्यका अंग अधिक न्यून नहीं हो सका था। यदि बीकानेर और मारवाड प्रभृति राज्योंमें अराजकता न फैल जाती तो निस्सन्देह उन दिनोंमें ही जयसलमेरका राज्य बहुत ही थोडे टुकडेमें पृथ्वीपर दिखाई पडता। अब बृटिशगवर्नमेंटके साथ सन्धि हो जानेसे सबने जान लिया कि जो कोई जयसलमेरपर आक्रमण करेगा तो जयसलमेरकी ओरसे बृटिश गवर्नमेण्ट उस आक्रमण करनेवालेके साथ युद्धमें तत्पर होगी। अतएव सैन्धव दाऊके बेटे और राठौरोंने जयसलमेरपर चढकर राज्यसीमामेंसे कुछ देश जैसे पहिले अपने राज्यमें मिला लिये थे वैसे मिलाना बन्द कर दिया। यदि हम समस्त रजवाडेमेंसे इकले जयसलमेरसे सन्धि नहीं करते तो जयसलमेर राज्यको अपने शत्रुओंकी असंख्य सेनाके मुखमें असहाय अवस्थामें गिरना पडता, उसमें भी फिर अत्याचारोंकी प्रबल अग्निसे जयसलमेर जलकर दूसरी मूर्तिमें बदल जाता और भट्टी जाति वेदौनियोंके समान दस्यु जातिमें बदलकर मरुक्षेत्रके रेतमें मिल जाती। स्वाधीन देशीय राज्योंमें एक जयसलमेरनेही पहिले गंगा और सिन्धु नदीके किनारेवाले राज्योंके साथ वाणिज्य स्थापन किया था, किन्तु आत्मविग्रह और अशान्तिसे वह वाणिज्यका सोता एक बार ही रुक गया, अब चिरकालतक शान्ति और विश्वासको विना जमाये वह वाणिज्य नहीं चल सकता। केवल वाणिज्यकी उन्नतिके लिये ही हमने जयसलमेरके साथ मित्रता की है। किन्तु यदि हम भविष्यको देखें, यदि हम अन्य देशवालोंका भारतपर आक्रमण करनेका अनुभव करें तो आनेवाले अरबसे जलमार्गद्वारा समुद्रके किनारे२ सरलतासे आकर इस स्थानसे भारतको जीत सकते हैं। इन्हीं विदेशियोंका भारतपर आक्रमण दूर करनेके लिये हमको जयसलमेरका अधिकार बडा ही सुखदाई होगा। कारण कि हम जयसलमेरमें प्रवेश करके उत्तर सिन्धुमें जाकर सहजमें ही अपनी सेनाको वहाँतक ले जा सकते हैं और भारतमें आनेवालोंके मार्गको पहिलेसे ही भलीभाँति रोक सकते हैं।

अब इतिहासका अनुसरण किया जाता है। दुष्ट सालिमसिंह अंग्रेजोंसे सन्धि हो जानेके पीछे अपने शत्रुओंका भय दूर हुआ जान, पहिलेके समान भयानक मूर्तिसे संहारमूर्ति धारण कर जयसलमेरके राज्यको उजाड देनेको तैयार हुआ। कर्नल टाड लिखते हैं कि "उक्त संधि हो जानेसे बडे लोभी और शठ सालिमसिंहको जैसी शक्ति प्राप्त हुई उस शक्तिको लिखना लेखनीसे बाहर है"। पाठकगण इस लेखसे विस्मित हुए होंगे कि सालिमसिंहने इस समय संहारमूर्तिसे देशकी दशा कैसी कर दी। कर्नल टाडने लिखा है "अन्य राज्योंसे आक्रमणका भय दूर हो जानेमें महता सालिमसिंह क्षणमात्रको भी यह नहीं समझा कि मैंने अपने स्वामी और सामन्तोंके रुधिरसे स्नान किया है, अतएव कल्पित ही अनुताप करके सर्व साधारणमें अपना विश्वास जमा लूं। बनिये किसान और भ्रमणकारी सालिमसिंहसे इतने क्रुद्ध रहते थे कि सालिमकी कसमका मूल्य मरुभूमिके रेतेके कणसे भी हीन समझते थे।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने लिखा है "संधिपत्रके लिख जानेके उपरान्त कुछ समयतक सालिमसिंहने प्रकाशमें राज्यके सभी प्रबंधोंमें मन लगाया; किन्तु उसका यह भाव अधिक दिनलों नहीं रहा। जिस महापापके कीचडमें उसका हृदय सना हुआ था, वही पाप उसको सबके पाससे घृणा उपजाता था अथवा यों समझना चाहिये कि वह अपने स्वाभाविक महा पाप करनेके सिवाय जीवनको कष्टदायक जान जयसलमेरमें बडा उधम मचाने लगा। कुछ दिनोंतक उसने शान्ति इस कारणसे धारण की थी कि जयसलमेरके रावलके साथ जो अंग्रेजोंकी संधि हुई है, उस संधिपत्रमें १ धारा और नियत कराना उसका अभीष्ट था कि मेरे उत्तराधिकारीके सिवाय जयसलमेरके प्रधानमंत्री पदपर और कोई न बैठने पावै। उसने अपने मनमें सोचा कि मेरा ही वंश जयसलमेरको लूटता रहै इसीसे यह प्रस्ताव किया।"

किन्तु जब उसने देखा कि बृटिश गवर्नमेण्टने उसकी यह अभिलाषा पूरी नहीं की, तब अपने पिशाच वंशको मंत्रीपदपर न होता हुआ देखकर उसने अपनी संहारमूर्तिसे राज्यमें असहनीय और अकथनीय अत्याचारोंकी भयानक अग्नि प्रज्वलित कर दी। बृटिश गवर्नमेण्टके दूतने सालिमसिंहके उस हृदय भेदी अत्याचारोंको देख १८२५ ई. १७ दिसम्बरको गवर्नमेण्टके पास सालिमसिंहके उक्त अत्याचारके संवादोंको भेजकर लिखा कि "विदित होता है कि जयसलमेरके रावलके साथ जो हमारा संधिपत्र लिखा गया था, वह अब हमारा सन्मान रखनेमें हानि करते हैं, कारण कि हमारे आश्रयमें रहकर प्रजा इतने

---

(१) सालिमसिंहके सम्बन्धमें बाबू लोकनाथघोषने अपनी बनाई पुस्तकमें लिखा है;–

Salim was as unscrupulous as he was unprincepled. He put death nearly all the relativersof the Rawal, interrupted the trade of the cowntry by heavy extortions from the merchants depopulated the city of Jaisalmir by the cruelty. The Modeqn History of Ihdian cheeps Rajas Ac. Part I.

अत्याचार और कष्टोंको सहै, यह घोर कलंकका विषय है। महता सालिमसिंहसे उन अत्याचारोंके बारेमें कहनेसे कुछ नहीं हुआ। वह अत्याचारोंसे दुःखी मनुष्योंको झूंठा कहकर अपने कहे हुए अपराधोंको छिपाने लगा है। चतुराईसे कहता है कि न्याय-विचार और दया प्रकाशकी मैं सदासे इच्छा रखता आया हूं। इसके पीछे उसने दूने उत्साहसे निरपराधियोंको दूना दंड और प्रजाका सर्वस्व हरण करना आरम्भ किया है; महता सालिमसिंहके इस लोमहर्षण अत्याचारसे समस्त रजवाडेके मनुष्य दुःखी हो रहे हैं। पलीवाल नामक धनवान्से मूलधनकी सहायता लेकर समस्त बनियें भारतमें वाणिज्य करते हैं। किन्तु महताके अत्याचारोंसे इस धनवान् परिवारके प्रायः पांच हजार मनुष्य जन्मभूमिको छोडकर निर्वासित दशामें दूसरे स्थानपर बसते हैं। महाजन लोगोंने भी जो दूरदेशोंमें जाकर धन उत्पन्न किया है वह उसको लेकर प्राणोंके भयसे जयसलमेरमें नहीं आसकते हैं। किन्तु उद्दंड सालिमसिंहने उनके परिवारोंको जामिन स्वरूपमें बांध रक्खा है। जयसलमेर राज्यकी खेती एक साथ जाती रही है। जामिनके अभावसे देशी और विदेशी व्यवसाय भी उठ गया है। जबरदस्ती प्रजाका धन छीनकर राज्यकर लिया जाता है''।

कर्नल टाडने जिस समयकी बात लिखी है, उस समय वह रजवाडेमें विद्यमान थे, अतएव सालिमसिंहके उस अकथनीय अत्याचारोंके वह प्रत्यक्ष दर्शक थे। उन्होंने लिखा है, "प्रकाशमें मंत्री सालिमसिंहने दो करोडकी सम्पत्ति इकट्ठी कर ली है। यह धन सब भारतवर्षमें फैला हुआ था, महताने केवल जबर्दस्ती बनियें और महाजनोंसे छीनकर इसको बारह[1] वर्षके बीचमें इकट्ठा कर लिया है। यह भी प्रसिद्ध है कि जयसलमेरके राजाके समस्त आभूषण जो हीरे जवाहिरके बने बहुमूल्य थे, वह भी उसने अपनी चतुरतासे निकालकर दूसरे स्थानपर छिपा रक्खे हैं। बनियें महाजन अपने कुटुम्बको जयसलमेरसे दूसरे स्थानपर लेजानेके लिये प्रतिदिन बृटिश गवर्नमेण्टके पास परवानगीके लिये प्रार्थना करते हैं; किन्तु नरपिशाच सालिमसिंहके भयसे कोई सहसा साहसपूर्वक अपने परिवारको दूसरे स्थानपर ले जानेका साहस नहीं करता। यद्यपि सालिमसिंह बृटिश एजेण्टके प्रस्तावसे परवाना देते हैं, किन्तु मार्गमें उन जयसलमेर छोडनेवालोंको मारकर लुटवा लेते हैं"।

टाड साहबने फिर लिखा है कि-"बृटिश गवर्नमेण्टके साथ रजवाडेके राजाओंसे निर्धारित संधिपत्रका मूल उद्देश यह है कि समस्त राजपूतानेमें परस्पर विवाद उपस्थित हो जानेके समय बृटिश गवर्नमेण्ट मध्यस्थता करेगी; इस समय जयसलमेरकी सीमामें एक विवाद उपस्थित है जिस विवादकी मीमांसाके लिये बृटिश गवर्नमेण्ट प्रथम धाराका प्रयोग करेगी, हम यहाँपर उस विवादका सविस्तार वृत्तान्त लिखकर जयसलमेरके इतिहासको समाप्त करना चाहते हैं। वारूप्रदेशके मालदेवतोंका भयंकर विवाद उपस्थित हुआ है, और उस विवादसे दोनों राज्योंमें महा संग्राम होने और

(१) उर्दू तर्जुमेमें २० वर्ष।

राठौरोंसे इस प्रकारके आक्रमणका भय उपस्थित हो गयाहै कि जिसमें बृटिश गवर्नमेण्ट-को मध्यस्थ बनना ही पडेगा। मालदेवोत जो बीकानेरियोंकी विषदृष्टिमें गिरे हैं मंत्री सालिमसिंह ही उसका मूल कारण है यह बात सहजमें नहीं जानी जा सकती सालिमसिंहने केवल मालदेवोतोंके जडसे नष्ट करनेके लिये ही उनसे कपटकी। मित्रता कर अपनी इच्छा पूरी करी है। सालिमसिंहने क्यों इस चतुरतासे काम किया उसका विवरण नीचे लिखा जाता है "।

मालदेवोत, केलन, वरसङ्ग, पोहर और तेजमालोतृगण सभी भट्टिजातिवाले हैं, किन्तु एकमात्र लूटमार करनेसे त्रिदौ, अकुज्ञाक और पिंडारियोंके समान यह भी दस्यु नामसे प्रसिद्ध होगये हैं। पहिले कहेहुए मनुष्यगण भी रावमालदेवसे उत्पन्न और वारूप्रदेश-के अठारह खंड गाँवोंके अधिवासी हैं। यह वारूप्रदेश खारीपट्टा नाम स्थानके समीप है। बीकानेरके राठौरोंने भट्टियोंसे उक्त खारपट्टा प्रदेश छीन लिया है। वास्तवमें भट्टीगण न्याय-की दृष्टिसे उक्त राठौरोंसे विशेष रूपसे बदला लेनेके अधिकारी हैं कारण कि राठौरों-ने भाट्टियोंके बहुतसे देश बाहुबलसे छीन लिये हैं। पचीस वर्ष पहिले बीकानेरके उक्त राठौरोंने जिस समय अपनेको बलवान देखा उसी समय वारूपर आक्रमणकर नीच पशुओंके समान आचरण करनेमें कसर नहीं की। राठौरोंने वारूप्रदेशपर चढकर मनुष्यभक्षी राक्षसोंके समान वारूप्रदेशके उक्त भट्टी जातीय आबाल वृद्ध वनिता प्रत्येकको मार कर गांव और नगरोंको उजाडकर समस्त कूपोंको बंद कराकर, गांव और नगरके पशुओं और धनको लूट लिया। जिन भट्टियोंने अपने सौभाग्यसे राठौरोंके हाथसे छुटकारा पाया वह मरुक्षेत्रके एक परम गुप्तस्थानमें जा छिपे थे। क्रमानुसार उनकी वहींपर वंशवृद्धि हुई। पीछे जब जयसलमेरमें बृटिश गवर्नमेंटका अधिकार फैला-उसी समय उक्त भट्टीगण फिर साहस करके अपने छोडे हुए और नष्टभ्रष्ट हुए स्थान-पर आकर बसने लगे, पीछे जब यह प्रसिद्ध हुआ कि प्रधान मंत्री सालिमसिंह इसमें भट्टियोंपर कुपित हुए और उन्होंने देखा है कि उस वारूप्रदेशमें मालदेवोत फिरसे वसते है तो मालदेवोतोंके प्रधान शत्रु बीकानेरके राठौरोंके समान वह जल उठे, और मालदेवोतोंको फिर ध्वस्त करनेकी अभिलापासे राठौरोंको बुलाया। मालदेवोत-गण दस्युवृत्ति (चोरी) से अपना निर्वाह करते है, अतएव उनको दमन करना दूषित नहीं है; सालिमसिंह सहजमें ही यह कह सकते थे, किंतु मूलबात तो यह है कि सालिम-सिंह उस विचारसे मालदेवोतोंका नाश नहीं करता था। पाठकोंको पहिले ही ज्ञात हो चुका है कि नीच सालिमसिंहने जिस समय संहारमूर्तिसे विषके द्वारा और तलवारसे जयसलमेरके बहुतसे सामन्तोंको मारा है, उस समय वह वारूप्रदेशके सामन्तको भी उक्त हत्याकांडसे मार चुका था। वारूके सामन्त राजकुमार रायसिंहके बडे अनुगत और रायसिंहकी शक्तिके बढानेमें सहायक थे, उसीसे सालिमसिंहने उनके जीवनरूपी दीपकको बुझा दिया। सालिमसिंहने केवल उक्त सामन्तको मारकर ही अपने कोपको दूर नहीं किया। वरन् वारूप्रदेशके प्रत्येक रहनेवालोंको भी वह शत्रुकी दृष्टिसे देखने लगा। किस भांतिसे वह वारूप्रदेशको एक साथ उजाड दे केवल यही चिन्ता उसके

हृदयमें रातदिन उठती रहती थी। उसकी वह इच्छा पूरी होनेका यह एक सुयोग उपस्थित हो गया। बारूके मालदेवोतोंने गुप्तरीतिसे बृटिश गवर्नमेण्टका एक उपकार किया था, वह उपकार ही सालिमसिंहकी आशा पूरी होनेकी सीढी बन गया। जिस समय पेशवाके साथ बृटिश गवर्नमेण्टका संग्राम हुआ था उस समय पेशवाका एक कर्मचारी ऊंट खरीदने जयसलमेरमें आया था जिस समय वह चारसौ ऊंट खरीद कर जयसलमेरकी सीमाको छोड बीकानेरके राज्यमें पहुँचा, उसी समय उक्त बारूप्रदेशके अधिनायकने अपने दलबलसे उक्त कर्मचारीपर छापा मार ऊंट छीन लिये इस बातको देख बीकानेरके स्वामी अपनेको बडा अपमानित जान शीघ्र ही प्रबल सेनाको साथ ले उक्त मालदेवोतोंको दमन करनेके लिये चले। टाड साहब लिखते हैं " कि सालिमसिंहके गुप्तभावसे बीकानेरके स्वामीको मालदेवोतोंको दमन करनेके लिये उत्तेजित न करनेसे वह कभी इतनी शीघ्र सेना लेकर मालदेवोतोंपर चढाई नहीं करते। सालिमसिंहने यद्यपि गुप्तरीतिसे बीकानेरके स्वामीको उत्तेजित किया, किन्तु प्रकाशमें वह संग्राम करनेका प्रतिवाद ही करता रहा। सालिमसिंहने विचारा था कि चतुराईसे सहजमें ही बीकानेरके स्वामी मालदेवोतोंको नष्ट कर देंगे, किन्तु अन्तमें उसके विपरीत फल हुआ। बीकानेरकी प्रबल सेनाने शीघ्र ही मालदेवोतोंके प्रदेश नोखा और बारूमें आकर वहां एक साथ समान भूमि कर दी, मालदेवोतोंके सामन्तको मारकर ग्रामके सभी कुए बन्द कर दिये। वह लोग इस प्रकारसे जीतकर अन्तमें बीकमपुरकी ओर शीघ्रतासे चले, और जयसलमेरकी मुख्य भूमिपर रहनेवाली प्रजाका महा अनिष्ट करने लगे। तब सालिमसिंह चैतन्य हुआ। मालदेवोतोंका नाश होते देख उसने देखा कि अब राज्यका सर्वनाश होना आरम्भ हो गया तब अपनी चतुरताको छोडकर संधिपत्रकी धाराके अनुसार अंग्रेजोंकी शरणमें जाकर उसने सेनाकी सहायता मांगी। बृटिश गवर्नमेंटने संधिपत्रके नियमानुसार जयसलमेरपर आक्रमण करनेवालेको अपनी सेना भेजकर हटा दिया। बीकानेरके स्वामी अंग्रेजी सेनासे न लडकर अपनी राजधानीमें लौट आये। जिस लिये वह युद्धमें प्रवृत्त हुए थे उसको पूर्ण हुआ देखकर फिर समररूपी आगको प्रज्वलित करना आवश्यक नहीं समझा "।

जिस समय गजसिंह जयसलमेरके सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय सालिमसिंह अपनी इच्छानुसार ही काम करता था, टाड साहब उसी समयमें रजवाडेको छोडकर विलायतको चले गये। उन्होंने नीचे लिखे अनुसार जयसलमेरके राजनैतिक इतिहासके अंशका उपसंहार किया है। " प्रधान मंत्री सालिमसिंहकी घटनाओंके लिखनेके सिवाय हम जयसलमेरके रावलके सम्बन्धमें अब कोई बात नहीं कह सकते। गजसिंह जो इस समय जयसलमेरके सिंहासपर बैठे हैं, और जिनके बडे भाइयोंने अपने प्राणोंके भयसे भागकर बीकानेरकी शरण ली है, प्रसिद्ध है कि वह मंत्री सालिमसिंहके स्वार्थसाधनके पात्र हैं। वह अब केवल घोडेको लेकर चुपचाप निर्जन स्थानमें रहनेसे ही प्रसन्न हैं। चतुर सालिमसिंहने विचारा कि मेवाडके राणाकी कन्याके साथ रावल गजसिंहका विवाह हो जाय तो मेरा और भी सम्मान बढेगा, साथ ही

लाभ भी अधिक होगा।' सालिमसिंहने यह विचार कर मेवाडके राणाके पास यह प्रस्ताव भेजा, राणाने शीघ्र ही प्रसन्न होकर गजसिंहके पास राजपूतोंकी रीतिके अनुसार नारियल भेजा, गजसिंहने उसको सादर ग्रहण किया। मेवाडपतिने इस समय गजसिंहको जैसे कन्या देनेकी अभिलाषा की उसी प्रकार दूसरी कन्याको बीकानेरके स्वामीको और एक पोतीको कृष्णगढके राजाको देनेका उद्योग किया, महारावल गजसिंह अपनी सेना और सामन्तोंके साथ जिस समय उदयपुरमें पहुंचे, बीकानेर और कृष्णगढके दोनों राठौर स्वामी भी उसी समयमें विवाहके निमित्त वहां गये। इस विवाहोत्सवपर शिशोदियोंकी राजधानीमें महा महोत्सव हुआ। चार राजवंशोंमें इस समय फिर सम्मिलन हुआ। गजसिंह अपनी रानीके साथ परम सुखसे रहने लगे। उदयपुरकी राजकुमारीके एक पुत्र हुआ। सो रानावतजी (रानी) के ऊपर सबोंकी भक्ति बढ गई। सालिमसिंहको बडा सम्मान मिला और सब प्रजाने भी आनन्द मनाया, जिससे बडे घरानेकी शोभा प्रकाश होती है, वह सहजमें ही हमारे पाठक जान सकते हैं। पीछे रानी और राजा दोनों ही सर्व साधारण प्रजाको प्रेमभावसे चलाने लगे।

सातवां अध्याय ७.

सूचना–जातिकी स्वाधीन और पराधीन अवस्थाका भिन्न दृश्य–देशी राजाओंकी वर्तमान अवस्था–सालिमसिंहके अत्याचार–दूसरे राजाओंके देश लेनेमें सालिमसिंहकी अभिलाषा करना–उसमें हाथ डालनेसे बृटिश गवर्नमेंटका रोकना–सालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा–सालिमसिंहका मारा जाना–सालिमसिंहके दोनों बेटोंको मंत्रीपद मिलना–सालिमसिंहके बेटेसे अपनी सौतेली माता और उसके उपपतिका मारा जाना–रावल गजसिंहसे उसको जेलखाना होना–उसके पक्षवालोंका असंतोष होना–छोडनेमें गजसिंहकी असम्मति–इस सम्बन्धमें हाथ डालनेसे गवर्नमेंटकी अनिच्छा–गजसिंहका अपने हाथमें राज्यके भारको लेना–राज्यमें शान्ति स्थापन–बृटिश गवर्नमेंटके साथ परम मित्रता–बृटिश गवर्नमेंटकी सहायता करना–बृटिश गवर्नमेंटका रावल गजसिंहको धन्यवाद देना–पंजाबके युद्धमें गजसिंहसे गवर्नमेंटको सहायता मिलना–गवर्नमेंटका रावल गजसिंहको तीन किले देना–गजसिंहकी मृत्यु–रणजीतसिंहका सिंहासनपर बैठना–गवर्नमेंटकी ओरसे उनको वंशके क्रमसे दत्तक पुत्रके लेनेमें सनद मिलना–रणजीतसिंहकी मृत्यु–जयसलमेरमें वर्तमान राजा महा रावल बैरीशालका शासन विवरण।

---

(१) टाड साहबने नोटमें लिखा है, 'मरुक्षेत्रकी इस रानीसे मुझे कई एक पत्र प्राप्त हुए जिनसे जाना गया कि सालिमसिंहके समान मनुष्य जब उनके निजके और उनके स्वामीके भाग्य निर्द्धारक पदपर विराजमान हैं, तब वह उन्हें अपने पिता और मित्रोंको आश्रितरूपमें रहना पडता है'।

इतिहासलेखक टाड साहब जहांतक जयसलमेरका इतिहास विस्तारपूर्वक अपने ग्रन्थमें लिख गये हैं; हमने पिछले अध्यायतक उसको उसी प्रकारसे लिखा है। वर्तमान अध्यायमें हम परिवर्ती समयसे वर्तमान समयतकके इतिहासका सारांश यहांपर प्रकाश करते हैं।

जातिकी स्वाधीन अवस्थामें राजा सामन्तगण और सम्पूर्ण प्रजा जैसे अटल राजनैतिक व्यापारमें लगी रहती है, उस समयमें जिस भांतिसे राजनैतिक भिन्न २ घटनाएं उपस्थित हो जाती हैं, जाति जिस प्रकारसे राजनैतिक आन्दोलनमें सजीविता दिखानेमें शान्त नहीं होती है, जातिकी पराधीन अवस्थामें उसी भांतिसे वह सब घटनाएँ विपरीत भावसे दृष्टि आने लगती हैं। पराधीन जाति वा नाममात्रकी स्वाधीन जातिकी जीवनशक्ति एकसाथ क्षीण हो जाती है। आलस्य, विलासिता, स्वजाति विद्वेष, अनैक्यता और अनुद्यम आकर जातिको एक साथ निर्बल बना देते हैं। अतएव जातिकी उस पराधीन व नाममात्रकी स्वाधीन अवस्थामें किसी प्रकारकी विशेष राजनैतिक घटना प्रायः दृष्टि नहीं आती; तब राजासे जातिके नीचे दरजेके किसानतक केवल आहार विहारमें ही प्रसन्न रहकर दिन विता देते हैं; तब मनुष्यत्व लोप होकर किसी विषयमें ही किसी प्रकार उद्यम वा किसी प्रकारकी सजीविता उस जातिमें नहीं दृष्टि आती।जाति तब जैसे अनन्त निद्रामें सो रही है, उस पराधीन वा नाममात्रकी स्वाधीन जाति उस समय स्वप्नमें भी अपनी जातिका पहिला गौरव स्मरण करके बाप दादोंके समान जन्मभूमिके निकट, स्वजातिके निकट, समाजके निकट, स्वधर्मके निकट अपने २ दायके पालन करनेमें भी आगे नहीं बढ सकती। आर्य्यक्षेत्र भारतके वर्तमान देशी राजाओंके राज्यमें जो लोग दृष्टि उठाकर देखते हैं, वह लोग इस बातको अवश्य ही स्वीकार करेंगे कि वह सब देशी राजा, वह सब बडे पराक्रमी सामन्त, वह सब असीम साहसवाली प्रजा इस समय सोई हुई है। पचास वर्ष पहिले प्रत्येक देशी राज्य सजीविता दिखलाता था, प्रत्येक प्रान्तमें राजनैतक घटनामें प्रत्येक राजा और सामन्त गण उन्मत्त थे, किन्तु आज वे आनन्दकी निद्रामें शयन कर रहे हैं।

विधिके विधानसे ही छोटा द्वीप इंगलैंड आज भारतके भाग्यका निर्द्धारक है। विधिके विधानसे ही अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ संधि करके देशी राजा आनन्द भोगते हैं। इस समय देशी राजाओंके राज्यमें अब किसी प्रकारकी राजनैतिक घटना नहीं होती है। अतएव टाड साहब जो रजवाडेके राज्योंकी पूर्ण स्वाधीन और आधी स्वाधीन दशाको लिख गये हैं, वर्तमानमें निद्रित हुए उन राजपूत राज्यके राजनैतिक घटनाहीन समयका इतिहास वर्णन करते हुए उस प्रकार समुत्तेजक और कीर्तिमूलक दृश्य पाठकोंके सामने उपस्थित नहीं कर सकते।

दुष्ट सालिमसिंहने जिस समय जयसलमेरके सिंहासनपर महा रावल गजसिंहको बैठाकर अपनी इच्छानुसार सब काम कर लिये थे, टाड साहब उस समयमें ही अपने प्यारे क्षेत्र रजवाडेको छोडकर अपनी जन्मभूमि विलायतको चले गये। अतएव

जयसलमेरका इतिहास गजसिंहके सिंहासनपर बैठते ही समाप्त हो गया है । इस समय परिवर्ती इतिहासके पीछे चलना पडता है ।

जिस समयमें महा रावल गजसिंहने अपने शिरपर राजमुकुटको धारण किया उस समय वह व्यवहारशून्य थे । नीच सालिमसिंह गजसिंहके राजतिलक हो जानेके पीछे चार वर्षतक और जिया, किन्तु उन चार वर्षोंमें उसके अत्याचार, क्लेश और भयानक स्वार्थने जयसलमेरको एक साथ ध्वंस कर दिया । उसने श्रेष्ठ भट्टीसामन्तोंको और धनवान् बनियें महाजनोंको बडे कष्ट देकर लूट लिया, समस्त प्रजाको अपनी इच्छानुसार चलाया । कर्नल म्यालिसन अपने ग्रन्थमें लिखते हैं कि "वह सालिम दूसरे राजाओंकी राजधानीको अपने स्वामीके नामसे क्रमानुसार दबाया करता, यही नहीं ! वह उन सब देशोंके लिये कलकत्ते जानेका भय भी दिखाता था । रावलको स्पष्ट भावसे समझाता कि और२राजाओंके साथ जैसे सन्धि हुई है उसमें उन राजाओंके अधिकारी देशोंपर सन्धिपत्रके समान हाथ डालना सब प्रकारसे असम्भव है ।" दुष्ट * सालिमसिंह इस प्रकारसे जयसलमेरको भस्म करके अन्तमें अपने पापके भारसे दुःखी हुआ । यह बात प्रसिद्ध है कि उस नर पिशाचके हाथसे राज्यकी रक्षा करनेके लिये रावल गजसिंहने १८२४ ई. में उसके मारनेके लिये एक हत्यारेको नियुक्त किया । सालिमसिंह उस समय इतना डरा कि उसने अपने समस्त परिवारको अपनी जागीरमें भेज दिया । उसी वर्षमें दुरात्मा सालिमके पापी प्राण कलुषित शरीरको छोड गये । किन्तु कर्नल म्यालिसन लिखते हैं कि "सालिमसिंहने इसी विश्वाससे प्राण त्यागे कि मन्त्रीके पदपर सदा मेरे वंशधर ही रहेंगे ।" सालिमसिंहके चरित्रके सम्बन्धमें यहाँपर हम और अधिक नहीं कहना चाहते । यहाँ इतना ही कहना बहुत है कि पवित्र हरिवंशमें दुष्ट दस्युरूपसे सालिमसिंह प्रचण्ड प्रभुतासे सदाके लिये घृणित लीला कर गया है ।

जयसलमेरका प्रधान मंत्रीपद अपने बडे, बेटेके पीछे उसके वंशधरोंको ही मिले अपनी जीवित अवस्थामें ही सालिमसिंहने उसके लिये बडी चेष्टा की थी । बृटिश गवर्नमेण्टने यद्यपि उसके प्रस्तावके समान प्रतिज्ञा नहीं की किन्तु पापात्मा सालिमसिंहने गजसिंह और सब सामन्तोंसे जबर्दस्ती स्वीकार करा लिया कि उसके वंशधरोंके सिवाय कोई भी प्रधान मंत्रीका पद न ले सके, विशेष कर जो जयसलमेरके सब सामन्त और कर्मचारी थे वह सभी सालिमके भक्त थे, सालिमकी प्रत्येक आज्ञाका पालन करनेसे ही वह भक्त हुए थे । उन्होंने अपने स्वार्थके लिये सालिमके वंशधरोंके हाथमें ही प्रधान मन्त्रीपद दिलानेका यत्न किया था । सालिमसिंहके मरनेके पीछे उनके अनुयायी नौकरोंने ऐसा षड्यन्त्र रचा कि जिसमें गजसिंहको सालिमके बडे बेटेको ही प्रधान मन्त्री बनाना पडा; किन्तु उस समयमें यह भी निश्चय हुआ कि उक्त बडे बेटेके अतिरिक्त सालिमकी दूसरी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न छोटे बेटेको भी मन्त्रीपद मिलै । सालिमका बडा बेटा पहिलेसे ही उक्त प्रस्तावके समान अपने सौतेले भाईके साथ

---

* Mallesan's Native states & India. Part I. chap XIV. Page 123.

मंत्रीका काम करने लगा। सालिमसिंह जैसा क्रूर था उसका बडा बेटा भी उसी भाँतिसे हुआ। कर्नल* म्यालिसन लिखते हैं, कि बडे बेटेने उक्त सौतेली माताको एक नौकरके साथ प्रेम करते देखकर अथवा सन्देहसे ही अपनी कुलटा सौतेली माताको उसके उपपतिके साथ (दोनोंको ही) मार डाला। इस× कारणसे महा रावल गजसिंहने जो अब व्यवहारमें कुशल हो गये थे उसी समय सालिमके बडे बेटेको कैदकर जेलमें भेज दिया। इस भाँति कैद हो जानेसे सालिमके बेटेको और जो कर्मचारी थे। उन्होंने महारावल गजसिंहका यह आचरण देखकर बडा उपद्रव मचा दिया, किन्तु महा रावल गजसिंहने किसी प्रकारसे उसको जेलसे नहीं छोडा, और न उस मन्त्रीके पदपर बैठनेको ही राजी हुए, वरन् जो अपनेसे अप्रसन्न सामन्त और कर्मचारी थे उनको बृटिश गवर्नमेण्टके पास भेज दिया, बृटिश गवर्नमेण्टने महा रावलकी आज्ञाको बहाल रक्खा। बृटिश गवर्नमेण्टके ऐसा करनेसे अप्रसन्न सामन्तगण पहिलेसे ही उपद्रवोंको छोडकर चुप हो गये।

जयसलमेरके कालस्वरूप महता स्वरूपसिंहके वंशधरोंके हाथसे मन्त्रीपदको निकालकर इस समय व्यवहारमें दक्ष महारावल गजसिंहने अपने हाथमें राज्यके शासनका भार लिया, गजसिंहके राज्यशासनके भारको लेते ही जयसलमेरमें शान्ति स्थापित हो गई। अत्याचार पीडा और असन्तोषके स्थानमें शान्ति, न्याय, विचार और सन्तोष दिखाई देने लगे, जयसलमेरकी सब प्रजा बहुत दिनोंसे कष्ट भोग रही थी। सभी श्रेणीके मनुष्य धन और प्राणोंको लेकर भयभीत रहते थे, इस समय स्वयं राजा गजसिंह राजदण्डको अपने हाथमें लेकर पुत्रभावसे प्रजाका पालन और प्रजामें शान्ति स्थापन करने लगे। महारावल गजसिंह केवल राज्यकी उन्नति ही नहीं करते थे, वरन् उन्होंने अच्छी तरहसे जान लिया था कि चिरकालसे अराजताके कारण स्वरूपसिंह और सालिमसिंहके स्वेच्छाचारपिनेसे राज्य एकसाथ ध्वस्त हो गया है, समस्त प्रजाका धन हर लिया गया है, प्रजाकी जातीय जीवन शक्ति क्षीण हो गई है, राज्यका बल जाता रहा है, अतएव समयकी गति देखकर अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रभाव रखना चाहिये, और जबतक वह जिये तबतक उन्होंने मित्रताको भली भाँतिसे निभाया।

---

* This man pessessed all the vices of his father. Baboo Loka Nath Ghose's Modern History of the Indian Cheefs, Rajas, Zimidars Ex. Part I. chep XIV.

× बाबू लोकनाथघोषने अपने ग्रन्थमे उक्त घटनाका उल्लेख नहीं किया किन्तु उन्होंने लिखा है, कि–

He murdered his step brother who was associated with him in the munistry.

इसका अर्थ यह है कि उसका जो सौतेला भाई उसके साथ मन्त्रीपदपर नियुक्त था उसने उसको मार डाला

सन् १८३८-१८३९ ईसवीमें पंजाबके युद्धमें बृटिश सेनाके नियुक्त होनेसे जयसलमेरके स्वामी महारावल गजसिंहने ऊँट आदिकोंकी सहायतासे बृटिश गवर्नमेण्टका इतना उपकार किया, जिससे उक्त गवर्नमेण्टने महारावल गजसिंहको अपना सच्चा मित्र जानकर बडा धन्यवाद दिया।

कर्नल म्यालिसन लिखते हैं कि "सन् १८४४ ईसवीमें सिंधुके जीतनेके पीछे शाहगढ घडसिया और कोटरा नामक तीन किले जो बहुत दिनों पहिले जयसलमेरके राज्यसे दूसरे राजाओंने छीन लिये थे वह सब फिर जयसलमेरके स्वामीको लौटा दिये। बृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञानुसार मीरअली मुरादने यह तीनों किले महारावल गजसिंहको दे दिये, किन्तु उस समय उसके सम्बन्धमें बृटिश गवर्नमेण्टने महारावलको कोई सनद* नहीं दी थी।"

महारावल गजसिंह जिस प्रकारसे बृटिश गवर्नमेण्टके प्रियपात्र हुए थे, उसी भाँतिसे शासनके गुणसे प्रजाके भी हृदयपर उन्होंने अपना अधिकार कर लिया था, किन्तु बडे दुःखका विषय यही हुआ कि उन्होंने अधिक दिन राज्यके सुखको नहीं भोगा। सन् १८४६ ईसवीमें महारावल गजसिंहने मायामय शरीरको छोड परलोकवास किया, कर्नल टाड लिखते हैं कि गजसिंहके औरस मेवाडकी राजकुमारीसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, किन्तु परिवर्ती इतिहास लेखक लिखते हैं कि गजसिंह अपुत्रावस्थामें ही परलोकवासी हुए, इससे प्रत्यक्ष जान पडता है कि राणाकी कुमारीके जो पुत्र हुआ था वह बालकपनमें ही मर गया था।

महारावल गजसिंहके अपुत्रावस्थामें प्राण त्यागनेसे उनकी विधवा रानीने गजसिंहके भाईके बेटे रणजीतसिंहको गोद ले लिया। रणजीतसिंहके सिंहासनपर बैठनेसे बडी सावधानीके साथ राज्यशासन हुआ। इनके शासन समयमें भारतमें विख्यात सिपाही विद्रोह हुआ। रणजीतसिंहने उस विद्रोहके समयमें गवर्नमेण्टकी सहायता करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं की। सन् १८६२ ईसवीमें जिस समय भारतके देशी राजाओंको भारत गवर्नमेण्टने दत्तकपुत्र (पुत्र गोद) लेनेकी सनदें दीं। महारावल रणजीतसिंहको भी उसी समयमें उसी प्रकार एक सनदपत्र प्राप्त हुआ। रणजीतसिंहके शासनसमयमें राजधानीमें किसी प्रकारकी विशेष राजनैतिक घटना नहीं हुई। सन् १८६४ ईसवीके जून महीनेमें रणजीतसिंह इस जगत्को छोडकर परलोक सिधारे।

गजसिंहके समान रणजीतसिंह भी अपुत्रावस्थामें मनुष्यलीलाको समाप्त कर गये थे। अतएव रणजीतसिंहकी रानीने अपने देवर अर्थात् रणजीतसिंहके छोटे भाई वैरीशालको गोद लिया। उस समय महारावल वैरीशाल पंद्रह वर्षके थे।

रणजीतसिंहकी रानीने इनको गोद तो ले लिया किन्तु महारावल वैरीशालने किसी प्रकार भी उस समय सिंहासनपर बैठना नहीं चाहा, सबोंके कहने सुननेसे इन्होंने यह कहकर आपत्ति दिखाई कि "मुझे विश्वास है कि जयसलमेरका स्वामी

---

* Malleson's Native states of India. Part I. Chap. XIV P. 124.

होकर मैं सुखी नहीं रह सकता "। महारावल वैरीशालने क्यों ऐसा कहा, पाठक सरलतासे उसका अनुमान कर सकते हैं। गजसिंह और रणजीतसिंह बहुत थोडे दिनोंमें ही सिंहासन छोडकर चले गये थे अतएव हमको जान पडता है कि हिन्दूसमाजके प्रचलित संस्कारके समान यह ही विचारा हो कि राजा होनेसे अधिक दिन नहीं जीते हैं। महारावल वैरीशालके इस प्रकार सिंहासनपर न बैठनेसे सभी अप्रसन्न हुए। अंतमें बृटिश गवर्नमेण्टसे पूँछनेपर उसने कहा कि "इस समय इस प्रश्नको नहीं उठाना चाहिये कारण कि महारावल इस समय व्यवहारशून्य और बालक हैं, जब वह बडे होंगे तब अवश्य ही उनकी बुद्धि बदल जायगी"। गवर्नमेण्टके इस प्रस्तावके अनुसार वह प्रश्न रुक गया और महारावल वैरीशालके पिता केशरीसिंह बेटेके नामसे राज्यशासन करने लगे।

महारावल वैरीशालकी बुद्धि पलटनेमें अधिक विलम्ब नहीं लगा। दूसरे ही वर्षमें अर्थात् १८६५ ईसवी अक्टूबरके महीनेमें उन्होंने कह दिया कि "मैं सिंहासनपर बैठनेको तैयार हूँ"। इस बातको सुन राजधानीमें महा आनन्द होने लगा। बृटिश गवर्नमेण्टके पोलिटिकल एजेण्टने बडे समारोहके साथ महारावल वैरीशालका राजतिलक करा दिया। जयसलमेरके वर्त्तमान राजा श्रीकृष्णके वंशावतंस श्रीमन्महारावल वैरीशालसिंहबहादुर बडी बुद्धिमानी और धीरजके साथ राज्यका शासन करते हैं। राज्यके चारों ओर इस समय शान्तिमयी मूर्ति अविश्रान्तभावसे नृत्य कर रही है। स्वार्थपरायणता, स्वजातिविद्वेष, असंतोष और अत्याचारोंकी पीडा इस समय एक साथ अदृश्य हो गई है।

आठवां अध्याय ८.

जयसलमेरका भौगोलिक विवरण-परिमाण-ग्राम नगर संख्या-लवणहद-कानोदसर-मृत्तिका-उद्भिजश्रेणी-कृषि-शिल्पवाणिज्यद्रव्य-राजकर-भूमिकर-एवं वाणिज्य शुल्क-किसानोंसे इकट्ठा हुआ भूमिकर-धुँआकर-थाली वा आहार्य्यकर-दंडकर-मंत्री सालिमसिंहका जबर्दस्ती सम्पत्ति संग्रह-राज्यका अपव्यय-अधिवासीश्रेणी भट्टिजाति, उसकी आकृति और वेश-अफीम और ताम्रकूटसे भट्टीगणोंके पूर्वका अनुराग-पालीबाल जाति-उसका इतिहास-उसकी संख्या-धनपरिमाण-कार्य-विचित्र पूजा पद्धति-पोकर्णा ब्राह्मण जाति-उपाधिसंख्या-जाटजाति-जयसलमेरके किलेकी अटारियां-आधुनिक विवरण।

टाड साहब जयसलमेर राज्यके राजनैतिक इतिहासके वर्णन करनेके पीछे वहाँकी भौगोलिक, प्राकृतिक, सामाजिक और अन्यान्य जानने योग्य बातें विस्तारसे लिख गये हैं। हम वर्त्तमान समयके उन समस्त विवरणोंसे पहिले टाड साहबकी युक्तियां अनुवादित करना चाहते हैं। इतिहासके जाननेवाले टाड साहब लिखते हैं "जयसलमेरकी पृथ्वी असरल है, इसका परिमाण अनुमानसे पंद्रह हजार वर्गमील

है। इसके बडे प्रदेशमें नगर ग्राम और छोटे २ कसबोंकी संख्या दोसौ पचाससे अधिक न होगी, कोई २ अनुमान करते हैं कि इसकी संख्या तीनसौ होगी और कोई २ कहते हैं कि दोसौ होगी, पर पिछली बात सत्य जान पडती है। १८१५ ईसवीमें जयसलमेरकी ठीक जनसंख्या कितनी थी, पाठकोंके जाननेके लिये, उसकी हम अग्रिम पृष्ठमें एक विश्वासजनक सूची*देते हैं।

टाड साहबने लिखा है "ग्रेट् ब्रिटेनके दूसरे श्रेणीके एक नगरमें जितने मनुष्य वसते हैं इस सूचीके अनुसार इस पन्द्रह वर्गमीलमें राज्यके मनुष्योंकी संख्या उससे बहुत कम है। इस राज्यके आधे अंशके बराबर तो भूमि राजधानीमें है; उस राजधानीकी आधी भूमिको छोड देनेसे हम देखते हैं कि प्रत्येक वर्गमें दोसे लेकर तीन मनुष्यतक बसते हैं"।

कर्नल टाड लिखते हैं कि जयसलमेरकी पृथ्वीका परिमाण पन्द्रह हजार वर्गमील है। कर्नल म्यालिसनने सन्१८७५ईसवीमें लिखा*है कि जयसलमेरकी पृथ्वीका परिमाण १२२५२ वर्गमील है। कर्नल + टाडके कथनसे जाना जाता है कि सन्१८१५ ईसवीमें जयसलमेरकी मनुष्यसंख्या ७४४०० थी, मि० आचिसन् सन्१८६४ ईसवीमें संख्या १३६०० और बाबू लोकनाथ घोष सन् १८७९ ईसवीमें ७५००० लिखते हैं। चिरकालसे शान्तिपूर्वक रहनेके पीछे भारतवर्षके अन्य २ देशी राज्योंकी जैसी मनुष्य संख्या बढी है, उसके साथ मिलान करनेसे जयसलमेरकी जनसंख्या न बढकर समान भावसे ही है, इसका सहजमें ज्ञान हो सकता है।

जयसलमेरके प्राकृतिक अवस्थाके सम्बन्धमें इतिहास जाननेवाले लिखते हैं, जयसलमेरका अधिक भाग थल वा रोही अर्थात् ऊजड, वन्य प्रदेश है। जोधपुरके सीमास्तंभ लोवारसे सिन्धुप्रदेशके सीमाके पिछाडी खाडातक पृथ्वी केवल रेतीली और जलरहित है; इसके बीच २ में बालुकास्तूप विराजमान है, और कोई २ अंश छोटे २ जंगलोंसे पूर्ण है। लोवारसे खाडातक यह जो समान्तराल अंश है इसीने जयसलमेर राज्यको दो भागोंमें बाँटा है, और स्वभावसे ही यह अंश अनुर्वर है, और यहाँ कुछ उपजता भी नहीं है। उत्तरांश भी ऊजड प्रदेश है; दक्षिणांश मगरा और रोई नामक छोटे २ पहाडोंसे युक्त है। यह छोटी२पर्वतमाला इस राज्यके भूतत्त्वकी विशेष दर्शनीय है। कच्छभुज प्रदेशसे पर्वतश्रेणी निकलकर देशके प्राकृतिक अवस्थानुसार कहीं

---

(१) सन् १८९६ की छपी हिन्ददेशीय राजावली पुस्तकके अनुसार १६४४७ वर्गमील भूमि लिखी है। सन्१८८१की जनसंख्यामें१०८१४३मनुष्य पाये गये और राज्यकी आमदानी१५८०००थी उत्तरमें महावलपुर राज्य, पूर्वमें बीकानेर और मारवाड, दक्षिणमें जोधपुर और मारवाड, पश्चिममें सिंध, २६ अंश ५ कला उत्तर अक्षांशसे लेकर २८ अंश २४ कला उत्तर अक्षांशतक, ६९ अंश ३० कला पूर्वदेशान्तरसे लेकर ७२ अंश ५० कला पूर्वदेशान्तरतक जैसलमेर राज्य है।

* Mallessn's Native of India Part I.

* Ghose's Indian cheefs Rajas U. Part I.

*जन संख्याकी सूची।

नगरोंके नाम	खालसा और सामंत शासित	घरोंकी संख्या	मनुष्य संख्या	मन्तव्य।
जयसलमेर	राजधानी	७०००	३५०००	
वीकमपुर	सामन्त शासित	५००	२०००	और भी २४ गांव हैं।
सेरूरो	"	३००	१२००	आजकल बसनेवाली केलण भट्टी जाति।
नचना	"	४००	१६००	रायलोत सामन्त।
कटोरी	"	३००	१२००	
कवाह	"	३००	१२००	
कोलदरू	"	२००	८००	
सत्तोद	सामन्त शासित	३००	१२००	
जिन्झिनियाली	"	३००	१२००	यहांके मालिक जयसलमेरके प्रधान सामन्त।
देवीकोट	मुख्य	२००	८००	
भाप	"	२००	८००	
बलाना	सामन्त शासित	१५०	६००	
सत्यामोद	"	१००	४००	
वारू	"	२००	८००	माल देवोतगण यहांके बसनेवाले है।
चान	"	२००	८००	
लोहरकि	"	१५०	६००	
नानतलो	"	१५०	६००	
लाहर्ता	"	३००	१२००	
डांगरी	"	१५०	६००	
विजौराय	मुख्य	२००	८००	
मुन्दाई	"	२००	८००	
रामगढ	"	२००	८००	
वरसलपुर	सामन्त शासित	२००	८००	
गिराजसर	"	१५०	६००	
सब जोड २४		१२३५०	५६४००	
दो हजार पच्चीस गांव २०२५ है, और भी छोटे छोटे मजेर है, प्रत्येक ग्राम और कसबोंमे ४ से पचास तक घर हैं। प्रत्येक घर और गढमें जनसंख्या चारके हिसाबसे है।			१८०००	
कुलजोड—			७४४००	

स्थूल और कहीं सूक्ष्म रूपसे दृष्टि आती हैं।चोहतन नामक स्थानके समान किसी२स्थान पर इसने वास्तवमें पर्वतरूपको भी धारण किया है,और फिर अगाडी जाकर अपनी छोटी२ पर्वतश्रेणीके ही रूपसे हो गये हैं, कि उनको देखकर पर्वत नहीं कह सकते । यह छोटी २ पर्वतश्रेणियां जितनी जयसलमेरके राज्यमें आई हैं उन सबने आकर पर्वतमूर्तिको धारण कर लिया है । राजधानी जयसलमेरके बीचमें इस शिखरकी उचाई दो सौ पचास फुट है, और यह देखनेमें यथार्थरूपसे पर्वत प्रतीत होताहै । भट्टियोंकी राजधानी जयसलमेर पर्वत मूलमें कही जाती है कारण कि उस स्थानसे साढेसात कोशलों बराबर प्रदेशोंमें भिन्नभिन्न रूपसे पर्व्वत शृंगोंकी शाखाएं गई हैं । एक जयसलमेरसे साढे सत्रह कोश उत्तर पश्चिमके प्रान्तमें रामगढ नामक स्थानतक गई है और एक पूरबसे चलकर जोधपुर राज्यमें होती हुई पोकर्णतक मिल गई है, और फिर वहांसे उत्तरकी ओर फलोदीतक गई है और वहांसे अन्तमें छिन्न भिन्न भावसे होकर उत्तरकी ओर पच्चीस कोसतक जाकर गारियालातक गई है । यह शृंगश्रेणी रेतीले पत्थरोंसे पूर्ण है, उसमें अधिकतासे गेरू मट्टी उपजती है । जयसलमेरके रहनेवाले उस गेरू मट्टीमें अपने पहरनेके वस्त्रोंको रंगते है'' ।

टाड साहब लिखते हैं कि ''यह अनुर्वर शिखरश्रेणी और ऊंची तरंगाकार बालूकी स्तूपश्रेणी इस प्रदेशमें सर्वत्र कठिन भूमिस्वरूपसे विराजमान है, उसके विपरीत दृश्यको देखो ! मार्गके थके मनुष्योंको आश्रय और छाया देनेके लिये कोई वृक्ष यहां नहीं उपजता है । यह प्रायः बडा सीमा रहित उजाड पृथ्वीखण्ड है, केवल किसी २ स्थानपर दो चार बटके वृक्ष दृष्टि आते हैं'' ।

समस्त जयसलमेर राज्यमें एक भी स्रोतस्वती नदी नहीं है, किन्तु बालुका पूर्ण शिखरमालासे बर्षाऋतुमें जल गिरनेसे समय समय पर कई एक खारी तलइयें कई महीनोंके लिये बन जाती हैं । मनुष्य उसके चारोंओरसे रेतेकी दीवाल बनाकर दो एक महीने तक उसे बनाये रखते हैं किन्तु वह तलइयें अधिक दिनतक नहीं रहतीं; कभी अधिक वृष्टि होनेके कारण कोई २ तलैया सालभर बनी रहती हैं । इनमेंसे एकका नाम कानो-दसर वा ह्रद है; यह कानोदसे मोहनगढ तक नौ कोस बडा है और इसमें सभी दिन जल रहता है । बरसातमें यह बडा ह्रद पूर्ण हो जानेसे इसमेंसे एक छोटी नदी सी निकलकर पूरबकी ओर पन्द्रह कोशलों चली जाती है । मूलह्रदमें जबतक जल रहता है यह छोटी नदी भी तब तक नहीं सूखती । इस ह्रदमें जो नमक होता है वह राजकीय होता है, और उससे राजाको कुछ लाभ भी हो जाता है ।

खेती और उद्भिजके सम्बन्धमें टाड साहबने लिखा है ''यद्यपि इस रेतीले प्रदेशका बाहिरी अनुपजाऊ दृश्य दृष्टि आता है किंतु प्रकृतिने इस प्रदेशकी उपजाऊ शक्तिका लोप नहीं किया है, बरन यह रेतीला प्रदेश एक प्रकारसे धान्यके उत्पन्न होनेमें बडा

---

(१) उर्दू तर्जुमेमें यों लिखा है कि इसमें पीले रंगकी मिट्टीका पत्थर है जिससे आदमी अपने मकानोंपर रंग करते हैं ।

उपकारी है, विशेष कर बाजरा यहाँपर अधिक होता है। फसलमें बाजरा इतना होता है कि उसमें तीन वर्षका भोजन चलता है। यहाँके निवासी केवल सिन्धुप्रदेशसे गेहूं लाते हैं। जिन स्थानोंपर बाजरा होता है वहाँपर दो तीन बार अच्छे पानी पड जानेसे किसान लोग बाजरेका बीज बो देते हैं। फिर स्वयं ही शीघ्र वह उत्पन्न हो जाता है, धान्य हो जानेपर यदि कहीं प्रबल वृष्टि हो जाती है तो उससे वह सब धान्य नष्ट हो जाता है। भारतवर्षके और स्थानोंकी अपेक्षा इस देशका बाजरा बडा अच्छा होता है; जिस समय अधिक बाजरा होता है उस समय रुपयेका डेढ मन बिकता है। किन्तु इस प्रकार वर्षोंतक नहीं होता है। यहाँके निवासी पाँच २ वर्षके पीछे अधिक बाजरा होनेकी आशा करते हैं। यहाँ ज्वार भी होती है किन्तु वह कहीं कहीं छोटी २ शृंगमालाके अगल बगलमें अनेक प्रकारके डाल, तिल और गवार नामक एक प्रकारका फल होता है। यह फल बडे स्वादिष्ट होनेसे भारतके अनेक प्रदेशोंमें भेजे जाते हैं। जयसलमेरकी राजधानीके चारों ओर जिस २ स्थान पर पानी ले जानेका सुभीता होता है वहाँ पर बहुतायतसे श्रेष्ठ गेहूँ हरिद्रा और फलवाले वृक्ष उत्पन्न होते हैं; यहाँ चावल नहीं होते परन्तु सिंधुदेशसे लाये जाते हैं"।

कर्षणयन्त्रके सम्बन्धमें टाड साहब लिख गये हैं, "कि जहांकी मट्टी कोमल होती है वहांपर खेतीके काममें सामान्य यन्त्रका व्यवहार होता है। किसान लोग दो तरहके हलोंका व्यवहार करते हैं; एक प्रकारके हलमें केवल एक वा दो बैल लगते हैं, और दूसरे प्रकारके हलोंमें ऊंट जोते जाते हैं"।

शिल्पके सम्बन्धमें प्रसिद्ध है, कि "यहाँ कोई शिल्पका काम उत्तम नहीं होता, कपडा बुननेवाले एक प्रकारका मोटा वस्त्र बनाते हैं। शिल्पकार्यके उपयोगी जो रुई आदि होती है वह सभी बाहर भेजी जाती है। यहाँके प्रधान शिल्पकार्यके बीचमें जो भेड उत्पन्न होते हैं उनके रोमोंसे एक प्रकारकी लोई, कम्बल, उत्तरीय घाँवरा और नानाप्रकारकी पगडी बनाई जाती है। आचरी नाम खानकी काली मट्टीके अनेक पीनेके और भोजन करनेके पात्र बनते हैं। यहाँके जितने अस्त्र बनते हैं वह अच्छे नहीं होते"।

टाड साहब लिखते हैं "वाणिज्य स्थलरूपसे जो जयसलमेरकी प्रसिद्धि सुनी जाती है। वह स्वयं जयसलमेरके भीतर वाणिज्यके विस्तारके लिये नहीं है। जयसलमेर केवल वाणिज्यकी संधि स्थलमात्र है; भारतके पूर्वप्रान्तसे वाणिज्यके समस्त द्रव्य जयसलमेर होकर सिन्धुके उपत्यका प्रदेश और सिन्धुके बाहरी देशोंमें भेजे जाते हैं। दूसरी ओर हैदराबाद, रौडी, भक्खर, शिकारपुर और उससे वाणिज्यके सम्पूर्ण द्रव्य इधरको लाते हैं। गंगाके समीपवाले प्रदेश और पंजाबसे भी समस्त वाणिज्यके

(१) टाड साहब टिप्पणीमें लिखते हैं कि "मैं कई जोडे विलायतको ले गया था, वहां वे बडे पसन्द किये गये। इस देशमे शीतकालमें दुशालेके समान सब व्यवहार करते है, यह देखनेमें भी बडे सुहावने होते हैं"।

पदार्थ जयसलमेरमें आते हैं। दुआबेका नील, कोठा और मालवेकी अफीम, बीकानेरकी[1] प्रसिद्ध गुड और जयपुरके बने हुए लोहेके द्रव्य जयसलमेर होकर शिकारपुर[2] और नीचेके सिन्धुप्रदेशोंमें भेजे जाते हैं। वहाँपरसे अफरीकासे आया हुआ हाथीदांत, रंग, नारियल, औषधि और चंदनकी लकडी इधरको लाई जाती हैं। भागलपुरसे सूखे मेवे आते हैं।"

राजस्व और करके सम्बन्धमें टाड साहब लिखते हैं कि "जयसलमेरमें राजाकी आमदनी पहिले चार लाख रुपयेसे अधिक थी, तिसमें एक लाख रुपयेसे अधिक भूराजस्वमें जाते थे। पहिले[3] एकमात्र वाणिज्य शुल्क ही राज्यकी निश्चित अधिक आमदनी थी किन्तु मंत्री सालिमसिंहके अत्याचारोंसे और उसीसे भट्टीसामन्तोंके दस्युताचरणसे साधारण वाणिज्य कम होजानेसे एक साथ ही वाणिज्य शुल्क जाता रहा। पहिले इस वाणिज्य शुल्कसे तीन लाख रुपयेकी आमदनी थी। इस शुल्कको दान और शुल्कसंग्रह करनेवाले दानी कहते थे। राजधानीसे जो समस्त प्रधान २ मार्ग राज्यके चारोंओरको गये हैं उनके एक निर्द्धारित स्थानपर यह शुल्क संग्रह करनेवाले रहा करते हैं।"

"भूराजस्व–भूमिमें जितना धान्य उत्पन्न होता है किसान लोग उसमेंसे पांचवां हिस्सा और कहीं २ पर सातवां हिस्सा राजाको देते हैं। राजा कभी भी किसानोंसे पाँचवें हिस्सेमे एक हिस्सा कम वा सात अंशमेंसे एक हिस्सा कम धान्य कररूपमें नहीं लेते हैं। जिस खेतमें जो धान्य अधिक उपजता है राजा उसीको अपने नियमानुसार करमें लेते हैं राजाके कर्मचारी जिस समय किसानोंसे अपने करस्वरूपमें धान्यको लेते हैं, पल्लीवाल ब्राह्मण वा बनिये उसी समय नकद रुपया देकर उस धान्यको खरीद लेते हैं, फिर वह रुपयोंको राज्यके खजानेमें भेज देते हैं"।

"धुँआ--तीसरे करका नाम धुँआकर है, यही इस समय राज्यका निश्चित कर है। धुँआ शब्दसे रंधनकर जाना जाता है। इसको थाली नामसे भी पुकारते हैं। थाली शब्दका अर्थ है भोजनका पात्र अतएव यह आहारकर भी अनुमित हो सकता है? इसकी आमदनी सालमें बीस हजार रुपये होती है। कोई भी घर इस करसे छूटा नहीं है"।

दंड--इस प्रदेशमें दंडके नामसे और एक कर प्रचलित है, यह प्रजाको कष्टदायक है। राजाको धनकी आवश्यकता होनेसे इस करसे उस करको पूरा किया जाता है। यह जयसलमेरमें संवत् १८३० सन् १७७४ ईसवीमें प्रचलित हुआ था,

(१) बीकानेरकी प्रसिद्ध मिसरी।

(२) टाड साहब टिप्पणीमें लिखते हैं "सिन्धुनदीके पश्चिममें विराजमान सिन्धु प्रदेशके बीचमें शिकारपुर एक प्रधान वाणिज्यका स्थल है"।

(३) कर्नल टाडने लिखा है कि सामन्तोंकी आय कितनी थी, इसको मैं ठीक २ नहीं जान सका। साधारण रजवाडेके अन्यान्य राज्योंके राजाओंको जितने रुपये भूमिकरके देने पडते थे यहां सामन्तोंकी आय उससे दुगुनी अर्थात् दो लाख रुपये होगी। यह लोग आवश्यकता होनेपर सातसौ घुडसवार राजाको दिया करते हैं।

उस समय यह अतिरिक्त धुंआ वा थाली करके नामसे पुकारा जाता था । महाजन लोग जो रुपये पर सूद लेकर अपनी आजीविका करते हैं केवल उनके ऊपर तो यह कर उस समयसे लग जाता है, इसमें २७०० सौ रुपये सालकी आमदनी होती है। महेसरी महाजन इस करको प्रसन्नतासे दिया करते हैं, किन्तु ओसवाल वैश्य इस करके न देनेसे जबर्दस्ती जेलमें रहनेसे अपना कर चुका देते हैं किन्तु जेलसे छूटनेके पीछे सब मिलकर प्रतिज्ञा करते हैं कि अब आगेको कभी रावल मूलराजका मुख नहीं देखेंगे । वह लोग बहुत दिनोंतक इस प्रतिज्ञाका पालन भी करते रहते हैं । जयसलमेरके रावल मूलराज जिस समय राजधानीके प्रधान २ मार्गोंमें होकर निकलते थे तब यह ओसवाल बनियें अपनी दुकानोंको बंद करके घरोंमें जा बैठते थे । इस भांति उन्होंने कई वर्षलों राजाका मुख नहीं देखा । ओसवाल बनियोंकी ऐसी प्रतिज्ञा देखकर जयसलमेरके रावल मूलराज अपने मनमें परिताप करते थे । जो राजधानीके श्रेष्ठ प्रतिष्ठित और धनी महाजन हैं वह मुख नहीं देखें, इससे बढ-कर राजाको और क्या कष्ट होगा । तब मूलरावलने उन बनियोंको प्रसन्न करनेके लिये सरल हृदयसे ओसवाल बनियोंके प्रधान २ नेताओंके घर बिना ही बुलाये जाकर अपने शिरकी पगडी उतार उनके आगे पृथ्वीपर रख अपने अपराधोंके क्षमाकी प्रार्थना की; और एक पत्रपर यह लिखकर अपने हस्ताक्षर कर दिये कि बनियें यदि धुंआकर सदा दिया करें तो फिर कभी दंडकरका प्रचार नहीं होगा । धनी ओसवाल बनियोंने राजाको ऐसा पछतावा और प्रतिज्ञा करते देख मूलराजके कहनेको मान लिया । मूलराजने संवत् १८४१ और सन् १८५२ में रुपयेकी आवश्यकता होनेसे उक्त महाजनोंसे पहिली वार तैंतीस हजार और दूसरी बार चालीस हजार रुपया कर्ज लिया फिर वह कुछ कालके पीछे रीतिके अनुसार चुका दिया " ।

टाड साहबने लिखा है "गजसिंहको सिंहासनपर बैठनेके दो वर्ष पीछे अबतक सालिमसिंहने दंडके कर स्वरूपमें चौदह लाख रूपया इकट्ठा किया है । वर्द्धमान नामक एक बडा धनी और प्रतिष्ठित पुरुष था जिसके पुरुषाओंका रजवाडेके बीचमें बडा सम्मान होता चला आया था, सालिमसिंहने अनेक समयपर क्रमानुसार उसका सब धन हर लिया है " ।

टाड साहबने जिस समय जयसलमेरका इतिहास लिखा है उस समयमें रजवाडेका व्यय कैसा था उसकी सूची नीचे लिखी जाती है ।

	रुपये
"बारे	२००००

(१) इसको "पला पसारना" कहते हैं अर्थात् किसी मनुष्यसे क्षमा मांगनेपर अपनी शिरकी पगडी उसके सामने रखनेसे उससे नवनेका पूर्व लक्षण पाया जाता है ।

(२) कर्नल टाड टिप्पणीमें लिखते हैं," राजाके निज अनुचर, भृत्य, शरीररक्षक और खरीदे हुए दास इसके मध्यमें आ गये । यह लोग वेतनस्वरूपमें सीधा पाते हैं और नगरमें मेहनत मजदूरी करके उस धनसे अपने और खर्च करते हैं, इन लोगोंकी संख्या १००० होगी " ।

रोजगार सरदार[1]	४००००
सेवन्दी वा वेतनभोगी सैन्यदले[2]	७५०००
राजाके निजके घोडे; १० हाथी, ...	...
२०० ऊँट और गाडी	३५०००
घुडसवार पाँचसौ	६००००
रानीका व्यय	१५०००
परिच्छद (तोशाखाना)	५०००
दान	५०००
पाकशाला	५०००
अतिथिसेवा(मिजमानी)...	५०००
पर्वोत्सव	५०००
वार्षिक ऊंट, घोडे, बैल इत्यादि खरीदना	२००००
सब जोड	२९१०००रुपये.

" मंत्रियोंको और राज्यके कर्मचारियोंको भूवृत्ति भी मिलती है। केवल वाणिज्य शुल्कमें ही यह समस्त व्यय किसी २ सालमें पूरा पड जाता है। उस वाणिज्य शुल्ककी आमदनी प्रायः तीन लाख रुपये होती है " ।

जयसलमेरकी रहनेवाली भाटी जातिके सम्बन्धमें टाड साहब लिखते हैं कि " जो सब भाटी जाति इस समय जयसलमेरकी वर्तमान सीमामें रहती है, वह सब हिन्दू है पर उत्तर और पश्चिम सीमाके अन्तमें बसनेवाले मुसल्मानोंके साथ वाणिज्यके व्यवहारमें बोलचाल और रहन सहनसे पुरानी रीति कुछ बदल गई है । जो सब भट्टी बहुत दिनोंसे फूलरा और गाडाकी ओर रहते हैं वह चिरकालसे जातिसे अलग होकर मुसलमान हो गये हैं, उनका सब व्योहार भी मुसल्मानोंके साथ हो गया है । राठौरं, चौहान और शिशोदियोंके समान भट्टीजाति इस समय वीरजातिसे ही नहीं किन्तु कछवाहे वा वरूका और शेखावाटीके रहनेवालोंसे अधिक साहसी वीर कहकर प्रसिद्ध हैं। भाटी राजपूतगण राठौरोंके समान बलवान् और कछवाहोंके समान लम्बे चौडे नहीं हैं, किन्तु दोनों जातियोंसे देखनेमें सुन्दर और यहूदियोंके समान लावण्ययुक्त हैं । भाटीजातिका रजवाडेके समस्त राजपूतोंके साथ विवाह सम्बन्ध हो जाता है " ।

---

(१) जो सामन्त राजधानीमें रहकर राज्यका काम करते हैं उनके भोजनके व्ययका नाम रोजगार--सरदार है। पहिले जो सामन्त राजधानीमें आते थे तब उनका प्रतिदिनका व्यय उठानेके लिये शुल्क संग्रह करनेवालोंके यहांसे मँगाया जाता था, किन्तु यह रीति दोनों ओरसे ओछी समझकर उठा दी गई। तबसे इस नित्य व्ययके खर्चके लिये सामन्योंको योग्यतानुसार ।।) आठ आनेसे लेकर ७) रुपये तक दिये जाते हैं। इसमें वार्षिक ४०००० रुपया खर्च पडता है।

(२) "किलेमें जो तनख्वाह पानेवाली १००० सेना है उसको सेवन्दी कहते हैं " । उसका खर्च ७५००० है ।

भाटीजातिके पहिनावेके सम्बन्धमें इतिहास जाननेवाले टाड साहब लिखते हैं कि, भाटीगण सफेद वा छीटका जामा पहिनते हैं, वह जानुतक लम्बा होता है, कमरमें कमरबन्द बांधते हैं। पाजामा घेरदार किन्तु पैरके हिस्सेके साथ दृढरूपसे लगा रहता है। शिरपर कुंकुममें रंगीहुई पगडी बांधते हैं। यह लोग कमरमें एक छूरी उरसते हैं, बांई पीठपर ढाल और परतलेमें तलवार लटकाये रहते हैं। नीचे दरजेके आदमी धोती पहिनते और पगडी बांधते हैं। भाटीजातिकी स्त्रियां साधारण तौरसे ३० फुट (१०गज) का लम्बा लाल रेशमी कपडेका घांघरा पहिनती और उसी कपडेका दुपट्टा ओढती हैं। वहांकी सब स्त्रियाँ अवस्थानुसार हाथीदांतकी वा और किसी पशुकी हड्डियोंकी चूडियां पहिनती हैं कि जिससे उनकी भुजासे लेकर हाथके गट्टेतक बाँह ढक जाती है। एक जोडा चूडीका मूल्य १६ रुपयेसे ३५ रुपयेतक होता है। स्त्रियां चाँदीके कडे भी हाथोंमें पहिनती हैं जिस स्त्रीके हाथोंमें चाँदीके कडे नहीं होत वह अपनेको अभागिनी समझती हैं। नीच जातिकी स्त्रियाँ टहलनीका काम और खेतीके काममें बडी सहायता करती हैं।

"अन्यान्य राजपूतोंके समान भाटीजाति भी अफीम खाती है, अफीम और शर्वत पीनेके पीछे सब तमाखू खाते हैं। उस समय यह नसेमें इतने बेहोश हो जाते हैं कि इनके शरीरपर किसी भाँतिका आघात करनेसे भी इन्हें ज्ञात नहीं होता है"।

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं " कि हरिवंशावतस भाटियोंके समान यहां पर पालीवाल नामक एक श्रेणीके ब्राह्मण बसते हैं। इनकी संख्या प्रायः भाटियोंके समान है, परन्तु यह भाटियोंसे अधिक धनी हैं। राठौरोंके मारवाडमें, वस्ती स्थापन करनेसे पहिले इन पालीवाल ब्राह्मणोंके पूर्वपुरुष पाली वा पाल्ली नामक स्थानमें वास करते थे। बारहवीं शताब्दीमें जिस समय सियाजीने कन्नौजसे जाकर मारवाडमें पाल्लीको जीता है उसी समयसे इन पालीवाल ब्राह्मणोंका भाग्य पतित हुआ है। सियाजी पालीवालोंको तो जीत लिया किन्तु उनको एक साथ नष्ट नहीं किया। जब एक मुसल्मान बादशाहने इस स्थानको जीता तब उसने मारवाडके प्रत्येक रहनेवालोंसे कर माँगा, उस समय पालीवालोंने कहा कि हम ब्राह्मण हैं, इस लिये हमसे किसीने कर नहीं लिया और न हम कर किसीको देंगे। इतना सुन बादशाहने नाराज होकर इनके प्रधान प्रधान नेताओंको कैद कर लिया, परन्तु इन्होंने किसी प्रकारसे भी कर नहीं दिया, तब बादशाहने इन्हें राज्यसे निकाल दिया। उसी समयसे पालीवाल अधिकतासे जयसलमेरमें आ गये हैं। पीछे सबने बीकानेर, धाट और सिन्धुके उपत्यकामें जाकर निवास किया। यह पालीवालगण जयसलमेरमें प्रधान वणिक्‌रूपसे गिने जाते हैं। देशी और विदेशी समस्त वाणिज्य व्यवसाय यही लोग करते हैं। यह किसानोंको पहिले रुपया देकर उसका धान्य लेते हैं। यह लोग देशका सम्पूर्ण सूत रेशम खरीदकर विदेशको भेजते हैं"।

जयसलमेरमें पोकर्णा नामक ब्राह्मण और एक प्रकारके द्विज रहते है। इनकी संख्या दो हजार होगी। मारवाड और बीकानेरमें भी अनेक पोकर्णा ब्राह्मण हैं। यह लोग

खेती करते और पशुओंको पाला करते हैं। वाणिज्यके व्यवसायको पहिले नहीं करते थे। इनके आदि विवरणके सम्बन्धमें यह कहावत प्रसिद्ध है कि यह पहिले खुदाई करते थे पीछे यह पवित्र तीर्थ पुष्कर ह्रद खोदने लगे तबसे ब्राह्मणोंने प्रसन्न होकर इनको पोकर्णा वा पुष्कर ब्राह्मण मान लिया है। यह कुदाल आकृतिवाली मूर्तिको पूजते हैं"।

"इस प्रदेशमें जाट आदि अनेक प्रकारकी जातियाँ भी बसती हैं"।

इतिहास लिखनेवाले टाड साहबने जयसलमेरके किलेके सम्बन्धमें नीच लिखे हुए मन्तव्यको प्रकाश करते हुए जयसलमेरके इतिहासको समाप्त किया है। "इस मरु-भूमिके राजाका किला एक असंयुक्त ढाई सौ फीट ऊँचे शिखरपर बना हुआ है। एक अभेद्य दीवार शृंगके ऊपर बनी है इस किलेके चार दरवाजे हैं किन्तु किलेपर तोपें बहुत कम हैं। राजधानी इसके उत्तरांशमें स्थापित है और चारों ओर चाहर दीवारोंसे घिरी हुई है। तीन तोरण और दो गुप्त दरवाजे हैं। राजधानीमें धनी महाजनोंके अनेक मनोहर मकान बने दृष्टि आते हैं, किन्तु अधिकांश स्थानोंमें कुटी बनी हुई हैं, राजभवन जितना बडा है उतना ही सुन्दर है। यदि सामन्तोंके साथ राजाका प्रेम हो तो युद्धके समय अपने ऊँट-पर चढकर लडनेवाली सेनाके सिवाय पैदल और एक हजार घुडसवार इकट्ठे हो सकते है"।

जयसलमेरका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस—बम्बई.

H. H. Maharajadhiraj Sawai Mansinghji of Jaipur (Rajputana).

जैपुर।

(१) प्रथवीराज, १५०३-२८
(२) पूरनमल, १५२८-३४
(३) भीम, १५३४-३७
(४) रतन, १५३७-४८
(५) आसकरन १५४८,
(६) भारमल, १५४८-७४

नंबर १-६ की तसवीरें नहीं हैं।

(७) भगवानदास, १५७४-९०
(८) मानसिंह १५९०-१६१५
(९) भाउसिंह, १६१५-२२
(१०) जैसिंह, १ १६२२-६८
(११) रामसिंह १ १६६८-९०
(१२) बिशनसिंह, १६९०-१७००
(१३) जैसिंह २ १७००-४४
(१४) इसरीसिंह, १७४४-५१

(१५) माधोसिंह, १ १७५१-६८
(१६) प्रथवीसिंह, १७६८-७९
(१७) प्रतापसिंह, १७७९-१८०३
(१८) जगतसिंह, १८०३-१८
(१९) जैसिंह ३ १८१८-३५
(२०) रामसिंह २ १८३५-८०
(२१) महाराजासरमाधोसिंह २ जी. सी. एस. आई.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

जयपुरका इतिहास.

श्रीः।

राजस्थानका इतिहास।

दूसरा भाग २.

जयपुरका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

सूचना–जयपुरका प्राचीन नाम ढूंढाड तथा आमेर है–कछवाहा वा कछावा गणोंके हस्तगत होनेसे वह प्रदेश कछवाहा देश कहलाया–ढूंढाड़का वृत्तान्त–कछवाहे गणोंका आदि विवरण–राजा नलका नर्वर राज्यकी स्थापना करना–दूलरायको नगरसे निकालकर उनके द्वारा ढूंढाड़की प्रतिष्ठा–दूलेरायके सम्बन्धमें प्रवाद वाक्य–आश्रयदाता खोगांवके सम्बन्धमें मीनाके अधीश्वरके प्रति दूलेरायका दुष्ट व्यवहार–बडगूजर जातिके अधीश्वरकी कन्याका पाणिग्रहण–उक्त अधीश्वरके उत्तराधिकारी पदकी प्राप्ति–राज्यसीमाका विस्तार–रामगढमें राजधानीका स्थापन करना–अजमेरकी राजकन्याके साथ उनका विवाह होना–मीनोंके साथ युद्धमे उनका प्राण त्यागना–उनके पुत्र कांकिलका ढूंढाडको जीतना–मेंदलजीका आमेर और अन्यान्य स्थानोंपर अधिकार–हणूदेवकी देश विजय–कुंतलकी देश विजय–पजोनीको[1] सिंहासनकी प्राप्ति–इस समयके अतिरिक्त आदिके निवासियोंका वृत्तान्त–मीनाजाति–पजोनीका दिल्लीके अधीश्वर पृथ्वीराजकी बहनके साथ बिवाह करना–युद्धमें उनका बलविक्रम–कान्यकुब्जकी राजनन्दिनीके स्वयवरके समयमे महा युद्धमें उनका प्राण त्याग करना–गलेसीजीको सिंहासनकी प्राप्ति,उनके उत्तराधिकारी गण और पृथ्वीराजका राजवंशको " बाराकोटरि " अर्थात् बारह सामन्तशाखामे परिणत करना–उनका हत्याकांड–भारमल्लका मुसल्मान बादशाहके साथ प्रथम सम्बन्ध स्थापन–राजपूत राजाओंमें भगवानूदासका यवनसम्राट्वंशको प्रथम कन्यादान–उनकी कन्याके साथ जहांगीरका विवाह–उस कन्याके गर्भसे खुसरोका जन्म–मानसिंहको सिंहासनकी प्राप्ति–उनकी सामर्थ्य,प्रताप, प्रभुत्व–उनकी मृत्यु–राव भावसिंहजी–महाराजा मान व भ्राता[2] मिरजा राजा जयसिंहको सिंहासनकी प्राप्ति–अपने वंशका कलंक मोचन–यवन सम्राट्की विशेष सहायता करना–पुत्रके वियोगसे प्राण त्याग–रामसिंह–विशनसिंह।

साधू टाड साहब जयपुरके इतिहासके वर्णन करनेके पहिले ही भारतीय अंग्रेजोंके एक विषम भ्रमका उल्लेख कर गये हैं, उन्होंने लिखा है कि "भारतवर्षके अंग्रेजी राजपूतानेके राज्योंके यथार्थ नामोंको बदल कर उनके स्थानमें राजधानीके नामके अनुसार राज्यको संबोधन करते हैं–जैसे मारवाड और मेवाड राज्यके नामके स्थानमें

(१) पजोनीको टाड साहबने पजाने लिखा है ।

(२) मिरजा राजा जयसिंहका मानसिंहका भ्राता नहीं पोतेका बेटा था ।

उन्होंने उक्त दोनों राज्योंके प्रधान राजधानी जोधपुर और उदयपुरसे नामके राज्योंका नामकरण किया है, जिस भूखंडको हाडौती नामसे कहना चाहिये उसे उन्होंने कोटा और बूंदी नामसे प्रसिद्ध किया है वह लोग आजतक हाडौती नामका उल्लेख नहीं करते। अंग्रेजोंके निकट ढूंढाड नाम तो एकवार ही गुप्त था, उन्होंने ढूंढाड राज्यकी राजधानीको आमेर वा जयपुरके नामसे लिखा है।

कछावा वा कछवाहेगण जिस राज्यमें निवास करते हैं, इस समय सर्वसाधारणमें वही जयपुर नामसे विख्यात है"। इन्हीं कारणोंसे भारतवर्षके प्राचीन देशोंके नाम एकबार ही विस्मृतिके समुद्रमें डूब गये हैं। महाभारत और रामायण इत्यादिमें भारतवर्षकी सम्पूर्ण राजधानी और स्थानोंके नामोंका जो उल्लेख पाया जाता है आज कल वे सभी निराकारण असंभव हो गये हैं। यह तो ठीक ही है कि राजनैतिक विप्लवमें और एक २ प्रबल परिवर्तनके मुखमें पतित होनेसे यह इस प्रकारसे परिवर्तित हुए हैं, परन्तु भारतीय अंग्रेज तो विना कारण अपनी इच्छासे ही कई नामोंका बदल करते आये हैं। इससे इतिहासका महा अनिष्ट होता है। अस्तु; इस समय इतिहास-को ही मानना होगा।

चौहान और राठौरोंने जिस भाँति भिन्न समयमें राजस्थानकी विभिन्न आदिम जातियोंको जीता तथा स्वाधीन राजाओंका शासन लोप कर एक २ राज्यको स्थापन किया, उसी भाँतिसे जयपुरका राज्य भी स्थापित हुआ है। समय २ पर भिन्न आदिम निवासियोंके हाथसे सम्पूर्ण देशोंको छेदन कर और स्थान २ पर छोटे २ राजाओंके शासनको लुप करके इस राज्यकी सृष्टि हुई है, इस कारण राज्यमें जो भिन्न जातियोंकी समष्टि विराजमान है उसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। जो सुविस्तृत राज्य इस समय जयपुर नामसे विख्यात है, उसका पहिले ढूंढाड नाम था। ढूंढाड एक प्राचीन स्थानका विशेष नाम है, इस कारण एकमात्र ढूंढाड कहनेसे ही समस्त राज्य नहीं समझ सकते। टाड साहब लिखते हैं कि पूर्वकालमें जो बनेर नामक स्थानके निकट ही ढूंढ नामका एक विख्यात शिखर था। उसीसे ढूंढाड नामकी उत्पत्ति हुई है उस ढूंढके शिखरके सम्बन्धमें चौहान जातिमें एक चरचा चली आती है वह यों है कि "चौहान जातिके विख्यात राजा अजमेरके अधीश्वर बीसलदेवने इसी शिखपर तपस्या की थी, वह अपनी प्रजाके ऊपर अत्यन्त अत्याचार करते थे, इसीसे उनको राक्षसकी योनि मिली, वह राक्षस होकर भी पहिलेके ही सामान प्रजाका संहार करके उसको खाजाया करते थे, पीछे वहांके मनुष्योंने उसीके पोतेको उसके सम्मुख ला धरा। अपने पोतेके प्रेम भरे और कातर वचनोंसे बीसलदेव चैतन्य हो गये, और उस चैतन्यताके आते ही उन्होंने यमुनाके किनारे जाकर प्राण त्याग दिये। राक्षसयोनिसे परिणत चौहानराजका वह ढूंढ खुदवा डालना कर्तव्य है। यह हमैं विश्वास है कि वही उनकी समाधिका मंदिर है"। इस प्रवाद और टाड साहबकी युक्तिके सम्बन्धमें हमैं केवल इतना ही कहना है कि यह प्रवाद जिस भावसे चल रहा है उसका बहुतसा अंश मिथ्या है। विद्वान्

लोग सरलतासे समझ जाँयगे, ऐसा बोध होता है कि महाराज वीसलदेव प्रजाके ऊपर अत्याचार करते थे इसी लिये उनको राक्षसकी उपाधि दी गई थी, क्या वह निश्चय ही प्रजाको मारकर उनके शवोंको खा जाते थे, क्या ऐसा कभी सम्भव हो सकता है? अत्याचारसे प्रजाको पीडित करते २ जब वह चैतन्य हुए तब उन्होंने इस ढूंढके शिखरपर पापोंका नाश करनेके लिये तपस्या की थी और टाड साहबकी युक्तिके मतसे यह ढूंढ शिखर वीसलदेवकी समाधिका स्थान हो यह बात असंगत नहीं कही जा सकती।

कर्नल टाड साहबने लिखा है कि कौशलराज्य (जिसकी राजधानी अयोध्या है) के अधीश्वर महाराज रामचन्द्रके दूसरे पुत्र कुशसे कछवाह वा कछवाहे वंशकी सृष्टि हुई है। यह जाना जाता है कि कुश अथवा उनके कई पीढी पश्चात् उन्हींके किसी वंशधरने पिताकी राजधानीको त्याग शोणनदके किनारे रोहतास नामका विख्यात किला बनवाया था। इसके कई पीढी पीछे इस वंशके और भी एक राजा नलने संवत् ३५१ सन् २९५ ईसवीमें इस स्थानको छोड पश्चिमकी ओर जाकर नरवर वा निषध नामकी राजधानी स्थापित की, इस विख्यात राजधानीके स्थापित होनेके पहिले प्रवादमूलक इतिहासमें देखा जाता है, कि और भी कई एक स्थानोंमें कसबे स्थापित हुए थे, इनमें पहिलेका नाम लाहर था यह इस समय कछवाहा-घार नामसे प्रख्यात है,

---

(१) विहारमें इस समय जो रोहतास गढ है, वह राजा हरिश्चन्द्रके पुत्र रोहिताश्वका निर्माण किया हुआ है। टाड साहबकी उक्तिकी अपेक्षा इसे ही सत्य कहनेमें हमें विश्वास होता है।

साधु टाड साहबकी उक्तिमें हमे कितने ही सन्देहात्मक प्रश्न उपस्थित होते हैं, हमने जो पहिली संख्यामें सूर्यवंशकी कारिका प्रकाशित की, उसको पाठकोंने पढा होगा कि कुशके पुत्र अतिथि उनके पुत्र निषध और निषधके पुत्र राजा नल थे। अतिथि, निषध और नल इन तीनों पुरुषोंके बीचमें रोहिताश्व, लाहौर, ग्वालियर और नरवर वा निषध यह कइ राजधानी एकसाथ कैसे स्थापित हो सकती हैं? फिर और एक बात टाड साहबने कही है कि नरवरका दूसरा नाम निषध है, इस कारण उसके नामसे ही राजधानीका नामकरण हुआ था। नलने जो अपनी राजधानी स्थापित की थी वही नरवर नामसे विख्यात है। (अनुवादक)

(२) साधु टाड साहबने अपने टीकेमें लिखा है कि "नरवर राजधानीको एक ऐतिहासिक विवरणमें वर्णन किया है, कि राजा नलने संवत् ३५१ में नरवर राजधानीकी प्रतिष्ठा की; परन्तु उस समयकी अनुशासन लिपिको देखनेसे जाना जाता है कि इसमें कैसी झगडेलू बातें लिखी हुई हैं, उन्हें हम नहीं जानते; परन्तु नलसे दूलेरायतक ३३ पुरुष हुए इससे उनका विशेष समर्थन होता है। यदि प्रत्येक पुरुषने बाईस वर्षतक राज्य किया, यह निश्चय किया जाय, तो ७२६ वर्ष हुए। दूलेराय संवत् १०२३ में निकाले गये, इस कारण ७२६ को घटा देनेसे २९७ वर्ष बचे अर्थात ५४ वर्षका अन्तर होता है। यदि हम प्रत्येकके शासनकालको २१ वर्षतक निश्चय करें तो अति सामान्य भेद दिखाई पडता है, इस कारण राजा नलने जिस संवत् ३५१ में निषध राजधानी स्थापित की थी; इसको हम सरलतासे ठीक कर सकते हैं"।

(३) उर्दू तर्जुमेमें नहर।

और दूसरेका नाम ग्वालियर है राजा नलके उत्तराधिकारियोंने " पाल " की उपाधि धारण की थी (यह उपाधि राजपूत राजाओंके पक्षमें मान्यसूचक कही गई है) राजा नलसे ३३ पुरुषोंके पीछे सोढासिंहके पुत्र दुलेराय पिताके राज्यसे निकाल दिये गये थे और उन्होंने संवत् १०२३ (सन् ९६७ ईसवीमें) ढूंढाड नामकी राजधानी स्थापित की " ।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने फिर लिखा है कि जिस वंशमें कौशल राजाके राम, निषधके नल, और मारुमीके प्रिय ढोलाराव उत्पन्न हैं, वह वंश आपको अवश्य ही वीरताके गौरवसे गौरवान्वित मानना होगा । भारतवर्षमें कुशवंशसे उत्पन्न पुरुष अपने वंश और गौरवके स्मरणके निमित ही बडे समारोहके साथ प्रति वर्ष एक दिन सूर्यदेवका उत्सव किया करते थे, उसी उत्सवके समयमें मन्दिरके भीतरसे एक परम सुन्दर रथ--जो सूर्यरथ नामसे विदित था--बाहर करके उसमें आठ घोडे जोते जाते थे । रामचन्द्रके वंशधर कच्छवपति उसी रथपर चढकर राजाधानीमें भ्रमण करते थे ।

इस समय आमेर राज्यकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें इतिहासको ही मानना होगा, इसको तो हमारे पाठक पहिले ही जान चुके हैं कि रामचन्द्रके पुत्र कुशसे कच्छव वंशकी सृष्टि हुई है, कुश वा उनके वंशधरोंमेंसे कोई एक मनुष्य अयोध्यासे कहीं अन्यत्रको चला गया । निषध वा नरवर राजधानीकी सृष्टि पीछे हुई है, नलसे सोढादेवजीतक ३३ पुरुषोंने उस नरवरको शासन किया । यहां तक उस राजवंशके दो भेद नहीं हुए, सोढादेवके पुत्र दूलेरायसे नवराज्यकी सृष्टि हुई है; उसी समयसे वर्तमान कच्छव वा कछावावंशको स्वतन्त्रता मिली है । साधू टाड साहबने कछवाहोंके प्रचलित इतिहासके विवरणको देखकर लिखा है, कि नलसे लेकर ३१ पीढी तक नरवरके अधीश्वर सोढादेवने प्राण त्याग किये तब इनके भ्राताने बलपूर्वक अपने सुकुमार भतीजेको गद्दीसे अलग कर दिया । दूलेरायकी माता देवरका ऐसा कठिन अत्याचार देखकर अत्यन्त ही दुःखित हो चिन्ता करने लगी; उसने एक महा विपत्तिको सम्मुख जानकर कंगालिनीका वेष बनाया और अपने पुत्र दूलेरायको एक झोलीमें बांधकर वह राजधानीसे बाहर हुई । उसने विचारा कि जब देवरने बल करके सिंहासनपर अपना अधिकार कर लिया है तो वह निष्कण्टक होनेके लिये अवश्य ही मेरे बालकको मार डालेगा । सोढादेवकी रानी यह विचारकर पुत्रकी प्राणरक्षाके लिये भिखारिनीका भेष धर राजधानीको छोड गई, वह कंगालवेषधारिणी रानी पुत्रको गठरीमें बाँधे शिरपर रखे हुए अकेली कोशोंतक चली गई; अन्तमें खोहगांव स्थानमें (जो जयपुर राज्यसे ढाई कोश दूर था) पहुँची । उस समय मीना जाति उस खोहगांवमें निवास करती थी । इस विपत्तिग्रस्त अत्यन्त कातरहृदया रानीने मस्तकपरसे पुत्रको उतारा, एक तो राजरानी, काहेको कभी इतना मार्ग चली होगी, तिसपर भी भूख प्यासका कष्ट इस महा विपत्ति पडनेसे रानी इस समय अत्यन्त अधीर हो गई, चारोंओर विपत्तिकी भयंकर मूर्तिको देखकर उसका

(१) टाड साहबने इनको सोरासिंह लिखा है ।

हृदय कंपायमान होने लगा। अधिक क्या कहैं रानी इस अवस्थामें पुत्रको रखकर एक वृक्षके नीचेसे कुछ फल लेनेके लिये गई, उसने आकर देखा कि एक सर्प पुत्रके मस्तकपर फन फैलाये हुए बैठा है, यह भयंकर दृश्य देखकर उसके हृदयपर मानो वज्रटूट पडा, वह बिकल होकर रोने और चिल्लाने लगीं। दैवयोगसे एक ब्राह्मण उसी रास्तेसे जा रहा था उसने रानीकी ऐसी अवस्था देख उसे धीरज बँधाकर कहा, "आप निर्भय होकर शान्त हो जाओ, भयभीत होनेका कोई कारण नहीं है, वरन् आपका पुत्र किसी समय राजा होगा। यह सुनकर रानी आनन्दित हुई"। फिर शान्त हो रानीने कहा "कि भविष्यतमें क्या होगा इसकी तो मुझे कुछ चिन्ता नहीं है, बालक इस समय बहुत भूखा है, इसके खानेके लिये कहाँ मिलै, मैं इसी विचारमें पडी हूँ। तब उस ब्राह्मणने रानीको खोहगांवका मार्ग दिखाकर कहा कि आप खोहगाँवको चली जाओ, वहाँ तुम्हें आश्रय मिलेगा"। सर्प पहिले ही अपने स्थानको चला गया था, इस कारण रानी ब्राह्मणके वचनोंसे धीरज धर बालकको मस्तकपर धरकर खोहगांवकी ओरको चलीं। रानीने नगरोंमें घुसते ही एक स्त्रीको देखकर उससे कहा; "यदि कोई मुझे अपने यहाँ दासीके कामपर रख ले और भोजन दे दिया करे तो मैं उसके यहाँ रहनेको राजी हूं।" उक्त स्त्री खोहगांवके राजाके यहाँकी दासी थी, इस कारण उस कंगालिनी भेषधारिणी रानीको वह स्त्री रनिवासमें ले गई। मीना रानीने उस रानीको अभयदेकर कहा, कि आजसे हमने तुम्हें अपनी दासीके पदपर नियुक्त किया और अन्यान्य मोल ली हुई दासियोंके साथ रहनेके लिये कहा। महाराज सोढादेवकी रानीने अपना परिचय किसी भाँति भी नहीं दिया। इस प्रकारसे कुछ दिन बीत गये-एक दिन मीनारानीकी आज्ञासे सोढादेवकी रानीने भोजन तैयार किया, मीना राजा लालनसी उस भोजनको खाकर बोले;-"कि भोजन तो हम नित्य ही करते हैं परन्तु आजका बडा सुन्दर और स्वादिष्ट बना है?" मीनाराजके इतना कहनेसे छद्मवेशी सूर्यवंशकी राजवधू उनके महलमें बुला ली गई, मीनाराजा इस परिचारिकाका परिचय पाते ही उसी समयसे रानीको अपनी भगिनी कहकर पुकारने लगे, और दूलेरायको भानजेके नातेसे उसका विशेष आदर सम्मानके साथ लालन पालन करने लगे। बालक दूलेराय भी मीनाराजके आश्रयसे अवस्था बढनेके साथ ही साथ क्षत्रियधर्म सीखने लगे। इसी समयमें दिल्लीके सिंहासनपर तंवरवंशके राजाने बैठकर समस्त भारतवर्षमें अपनी प्रबल प्रभुताका विस्तार किया था। सभी राजा उसे कर दिया करते थे। जब दूलेरायकी अवस्था चौदह वर्षकी हुई तब मीनाराजने इनको दिल्लीमें कर देनेके लिये भेजा।

दूलेराय दिल्लीमें पाँच वर्षतक रहे। इस समय मीनाजातिके कविके साथ इनका विशेष परिचय हो गया था, दिल्लीकी राजधानीमें रहनेसे और तंवरराजके प्रबल प्रतापको देखकर सूर्यवंशी दूलेरायके हृदयमें राजमुकुट धारण करनेकी इच्छा उत्पन्न होने लगी। विशेष करके यह युवा होनेके साथ ही इस बातको भी जान गये कि उनकी नस २ में राजरुधिर बह रहा है, इस कारण उनके राज्यशासनकी जो इच्छा क्रमशः बलवती होती गई तो इसमें आश्चर्य ही क्या है।

उन्होंने अपने मनके भावको मीना कविसे कहा—और यह भी कहा "कि किस प्रकारसे मेरी अभिलाषा पूर्ण हो सकती है ? आप ऐसा कोई उपाय बता दीजिये"। कविने उत्तर दिया, कि "आप अपने आश्रयदाता मीनाराजको दमन करके उनके राज्यभारको अपने हाथमें लीजिये। दिवालीके पर्वके समयमें चिरकालसे प्रचलित रीतिके अनुसार समस्त मीना उस अमुक सरोवरमें स्नान किया करते हैं आप उसी समय अपना दल लेकर उनपर आक्रमण कीजिये, तब उनका वंश नष्ट होनेसे आपको सिंहासनकी प्राप्ति हो सकती है"। कविकी सम्मतिसे दूलेराय दिल्लीसे बहुतसी राजपूतसेना साथ ले दिवालीके पर्वके दिन खोहगांवमें जा पहुँचे, इस समय समस्त मीनागण सरोवरमें स्नान कर रहे थे, दूलेरायने उसी समय उनपर आक्रमण करके उनके शवोंसे सारे सरोवरको भर दिया। परन्तु जिस मीनाकविने यह सम्मति दी थी उसके प्राण भी न बचे; दूलेरायने अपने हाथसे ही उसको मार डाला। उसने कहा कि "जो मनुष्य अपने प्रभुके साथमें ही विश्वासघात करता है वह कदापि दूसरेका विश्वासपात्र नहीं हो सकता"। इस प्रकारसे दूलेरायने मीनाओंके शासनका लोप कर खोहगांवको अपने अधिकारमें कर लिया। इस खोहगांवके अधिकारमें होनेसे ढूंढार, आमेर वा वर्तमान जयपुर राज्यकी उत्पत्ति हुई।

जो दूलेराय बाल्यावस्थामें पिताके सिंहासनसे उतारे जाकर जननीके शिरपर पिताकी राजधानीसे अनाथके समान खोहगांवमें आये थे, इस समय उन्हीं दूलेरायकी, भाग्यलक्ष्मी प्रसन्न हो गई, दूलेरायको खोहगांवपर अधिकार करनेके पीछे अपनी राज्यसीमा विस्तार करनेकी बडी उत्कण्ठा हुई. उस समय वर्तमान जैपुरसे १५ कोश पूर्वकी ओर बाणगंगाजीके किनारे द्योसा नामक स्थानमें राजपूतोंकी बडगूजर सम्प्रदाय स्वाधीनभावसे निवास करती थी। दूलेरायने अपनी सेना साथले बडगूजरोंके किलेके समीप जाकर कहला भेजा कि तुम अपनी कन्याका विवाह हमारे साथ कर दो। बडगूजरपतिने यह सुनकर कहा भला "यह किस प्रकार हो सकता है"? हम दोनो ही सूर्यवंशी हैं, अभी सौ पीढी भी नहीं बीती हैं इस कारण विवाह किसी प्रकार नहीं हो सकता ? बडगूजरपतिके इस बचनको सुनकर दूलेरायने समझा दिया कि सौ पुरुष तो बीत गयेहैं तब बडगूजरपतिने आनन्दित हो नवविजयी दूलेरायके करकमलमें अपनी कन्याको समर्पण किया और इनके कोई पुत्र नहीं था इसीसे इनको अपने राज्यका उत्तराधिकारी भी स्वीकार किया, और इनके हाथमें अपने राज्यका भार अर्पण करनेमें किंचित् भी विलम्ब न किया। इस प्रकारसे दूलेरायकी सामर्थ्य और प्रभुता बढती गई। उस सामर्थ्य बढनेके साथ ही साथ दूलेरायके हृदयमें राज्यकी इच्छा बढने लगी। माची नामक स्थानमें राव नाटू नामक एक मीनाराज निवास करता था दूलेराय उसको भी परास्त करके अपना प्रभुत्व विस्तार करनेकी अभिलाषा की। प्राचीन मीनाराज अपनी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमें उतरे, परन्तु अतुल पराक्रमी दूलेरायकी सेनाने युद्धभूमिमें मीनाओंको सेनासहित परास्त कर दिया। विजयी दूलेरायने नये अधिकारी माचीदेशमें जाकर देखा कि खोहगांवकी

अपेक्षा यह स्थान अत्यन्त सुन्दर और रमणीक है, यहाँ एक राजधानी स्थापन कर किलेका बनाना भी यहीं ठीक होगा, इस कारण वह शीघ्र ही खोहगांवसे अपनी राजधानी उठा लाये, और एक नवीन किला बनवाया, और अपने विश्वविदित पूर्वपुरुष रामचन्द्रके स्मरणके लिये उस किलेका नाम रामगढ रक्खा।

इसके पीछे दूलेरायने अजमेरकी राजकुमारी भारोनीके साथ विवाह किया। एक समय दूलेराय रानीके साथ जमवाय माताके मंदिरमें दर्शन करनेके लिये गये, जब वहाँसे लौटे तो क्या देखते हैं कि इनके ही देशके ग्यारह हजार मीने इकट्ठे होकर अस्त्र शस्त्र लिये मार्ग रोके खडे हुए हैं वीरश्रेष्ठ दूलेरायने उन्हें इस प्रकारसे युद्ध करनेके लिये तय्यार खडा देखकर निर्भय हो उनके साथ युद्ध किया। शत्रुओंकी सेना अधिक थी इसी कारण दूलेरायकी सेना विशेष विक्रम न कर सकी। क्रोधित हुए सिंहके समान दूलेरायेन अपनी तलवारसे सैकडों योधाओंके प्राण नाश किये, और अन्तमें आप भी चिरकालके लिये अनन्त निद्रामें सो गये। दूलेरायके मरते ही इनकी सम्पूर्ण सेना भी छिन्नभिन्न होकर भाग गई, इस समय दूलेरायकी रानी गर्भवती थी इस कारण वह वहांसे बडे कष्टसे भाग सकी, कछवाहोंके आदि पुरुष दूलेरायकी जीवनीके सम्बन्धमें इतिहासमें यहींतक लिखा है। दूलेराय एक बडे वीर और साहसी क्षत्री थे, इसका अनुमान सरलतासे ही हो सकता है।

दूलेरायकी मृत्युके पीछे उनकी विधवा रानीसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम कांकिल रक्खा गया। इसीने पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर ढूंढाड राज्यको जय किया। इनके पुत्र मेदल भी अत्यन्त वीर और पराक्रमी थे, इस समय सुसावत मीनोंके राज्यमें आमेरके राव भत्तो निवास करते थे, उक्त राव मीनाजातीय तथा समस्त मीनोंकी सम्प्रदायोंमें सबमें श्रेष्ठ राजा थे। मेदलरावने सेनासहित आमेर राज्यमें आकर मीनोंको पराजय कर आमेरको अपने अधिकारमें कर लिया। मेदलरावने इस प्रकारसे पिताके राज्यको विस्तार करनेके पीछे कुछ दिनोंके उपरान्त नान्दला नामक मीनोंको एक बार ही आधीनताकी शृंखलामें बांधकर गतौर नामक देशको भी अपने अधिकारमें कर लिया।

दूलरायके वंशधरोंका सौभाग्य सूर्य इस समय धीरे २ अपनी पूर्णमूर्तिसे उदय होने लगा। मेदलरावके स्वर्ग चले जाने पर उनके उत्तराधिकारी हणदेवने राजछत्र धारण किया। इस समय भी चारों ओरके मीनागण स्वाधीनभावसे राज्य करते थे। हणदेव भी अपने पूर्व पुरुषोंके समान पिताके राज्यका विस्तार करनेके लिये क्रमानुसार मीनालोगोंके साथ युद्धमें लिप्त रहते थे। हणदेवकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र कुंतलने राजदंड धारण किया, इन्होंने अपने ही बलसे सम्पूर्ण पहाडियोंके ऊपर अपना शासन विस्तार किया, भूडवाड नामक स्थानमें इस समय एक चौहान राजा निवास करते थे। कुन्तलके साथ उन चौहानपतिकी कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ, राव कुंतल अपनी समस्त सेना साथ ले भूडवाड देशमें जानेका उद्योग करने लगे, उस समय उनकी समस्त

मीनोंकी प्रजाने पहिले भयंकर काण्डको स्मरण करा दिया कि, यदि आप इस राज्यकी सीमाको उल्लंघन करके जाते हैं तो "आप राज्यका चिह्नस्वरूप नगारा और पताका यहीं रख जाइये।" राव कुन्तलने मीनोंका यह प्रस्ताव स्वीकार न किया, इस कारण शीघ्र ही मीनोंके साथ भयंकर संग्राम उपस्थित हो गया। उस संग्राममें बहुतसे मीना तो मारे गये और बहुतसे परास्त हो गये; इस कार्यसे रावकुन्तलका अधिकार दृढतासे स्थापित हो गया।

कुन्तलके परलोकवासी होनेपर एक प्रबल धनुर्द्धर कछवाहा राजसिंहासनपर विराजमान हुआ। इसका नाम पजोनीजी था। वीरविक्रमी राजपूत जातिमें इसका नाम प्रशंसित होकर विख्यात है, रजवाडेके प्रसिद्ध कवि चंदवरदाईने दिल्लीश्वर पृथ्वीराजकी गुणावलीको जिस मधुर काव्यमें वर्णन किया है उसी काव्यमें अन्तःकरणसे इस वीर-श्रेष्ठके वीर विक्रमको भी वह कवि अक्षय कवितामें वर्णन कर गये हैं।

इतिहासवेत्ता टाड इस स्थानपर लिखते हैं "कि हमने रजवाडेके इस विस्तारित इतिहासके पूर्वअंशको अनेक स्थानोंमें देखा है, कि यहाँके सम्पूर्ण आदिम निवासियोंने पराधीनता और दासत्वकी शृंखलासे मुक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की है, इस समय ढूंढाड देशमें कछवाहोंके उदय होनेसे आदिम निवासियोंकी वह चेष्टा भलीभाँतिसे प्रकाशमान हो रही है। ढूंढाडकी आदिम पवित्र अमिश्र मेनाजातिके पहिले पाँच नाम थे, और उनकी पाँच शाखा विभक्त थीं, अजमेरसे लेकर यमुनाजीतक विस्तारित भूधरमाला जो 'काली खो' नामसे विख्यात थी, मीनागणोंका वही आदिम वासस्थान था, उन्होंने वहाँ आमेर राज्यकी प्रतिष्ठा की और अपनी कुलदेवी अम्बा माताके नामसे उसका नाम आमेर रक्खा। मीनागण अम्बादेवीको "घाटारानी" अर्थात् पवित्र देवी भी कहते थे। उस शिखरकी श्रेणीमें भिन्न भिन्न मीनाओंकी सम्प्रदायके आधीनमें खोहगाँव, माची और अन्यान्य प्रधान २ नगर भी थे। परन्तु बाबर और हुमायूंके समयमें और कच्छवराज भारमल्लके शासन समयमें भी मीना जाति अत्यन्त बलवान् थी; और इसके बलविक्रमको देखकर राजपूत सदा शंकित रहते थे। उन स्वाधीन मीनोंकी सम्प्रदायमें एक अत्यन्त प्राचीन नगरी नाहन थी, भारमल्लने मुगलोंकी सहायतासे उस नगरको विध्वंस कर दिया। एक प्राचीन ऐतिहासिक कवितामें नाहनकी मीनाजातिकी सामर्थ्य इस प्रकारसे वर्णन की गई है।

बावन कोट छप्पन दरवाजा।
मीना मरद नाहनका राजा॥
बूडो राज नाहनको।
जब भूसमें बाटो मांगो॥

इस कविताका अर्थ इस प्रकार है कि नाहनके राजा मेनाके ५२ किले और तोरणद्वार थे, जिस समय उसका शासन नाहनसे लुप्त हो गया, उस समय उसने सामान्य भूसेके अंशको भी कररूपसे ग्रहण किया था। यदि उक्त वर्णन अतिरिक्त रंगसे रंगा जाता तो ऐसा बोध होता है कि जिस समय दिलीके सिंहासनपर

प्रथम मुसलमान बादशाह विराजमान हुए उस समय मीनागण अत्यन्त बलवान थे, यह तो हमैं निश्चय है कि दिल्लीपति पृथ्वीराजके अधीन कर देनेवाले नरपति पजौनीसे लेकर बाबरके समसामयिक उस पजौनीके वंशधर भारमल्लतक कच्छवाहे राजा अपनी अधिक सीमाके बढानेमें समर्थ न हुए। भारमल्लने नाहनके पचास द्वारोंको विध्वंस करके उस स्थानपर मलिवाण नामका नगर बसाया। इस समय वही राजावत् सामन्तोंकी वासभूमि है"।

महात्मा टाड साहब फिर लिखते हैं, कि "इस मीनाजातिकी भिन्न २ सम्प्रदायोंके नाम उच्चारण और वर्णबद्ध पदोंमें एक विभिन्नता विराजमान है। मेना शब्दका अर्थ असल वा "अमिश्र" श्रेणी है। इस अमिश्रित श्रेणीमें इस समय केवल ओसारा नामकी एक सम्प्रदाय दिखाई पडती है। अन्य पक्षमें मीना शब्दका अर्थ मिश्र है वही मिश्र जाति 'बारापाल' अर्थात् बारह सम्प्रदायोंमें विभक्त हुई है, और वही चौहान, तूंवर, यादव, पडिहार, कछवाहे, सोलंकी, साकला, गिहलोत इत्यादि राजपूतोंके औरस मेना स्त्रियोंके गर्भसे उत्पन्न है। यही वर्णसंकर मीना जाति पाँच हजार दोसौ सम्प्रदायोंमें विभक्त हुई। जागा, धोली, बाडोम नामक उनके कारिका कारोंने उन सभी सम्प्रदायोंकी कारिकाकी रक्षा की है। अमिश्र उसारा सम्प्रदाय इस समय दिखाई नहीं पडती; अन्य पक्षमें मिश्र, मीना सम्प्रदाय मध्य और पश्चिम भारतवर्षके सम्पूर्ण पर्वतों और दुर्गम देशोंमें विस्तृत हुई है। यह भली-भाँतिसे जाना जाता है कि राजपूतगणोंसे विदित इस समयकी जेट जाति और कोल, भील, मीना, गोण्ड, साईरिया वा सार्जा जाति यहाँके आदिम निवासी हैं। मीना जातिका धर्म, सामाजिक नियम और आचार व्यवहार एक अलग अध्यायमें वर्णन किया जायगा"।

पजौनी[1] जिस भाँति महान् ऊंचे वंशमें उत्पन्न हुआ था, उसी भाँति वह अत्यन्त सुन्दर और अनन्त भूषित था; इसीसे दिल्लीके चौहान सम्राट् पृथ्वीराजकी भगनीके साथ उसका विवाह हुआ था। वीर पृथ्वीराजने सिंहासनपर बैठते ही भारतवर्षके भिन्न प्रान्तोंके एकसौ अस्सी राजाओंको अपने यहाँ बुलाया, इनमें राव पजौनीको ही ऊंचा आसन दिया गया था, पृथ्वीराजने जिन २ स्थानोंमें युद्ध किया, राव पजोनीने भी उनके साथ उन्हीं २ युद्धोंमें अपने बलविक्रमकी पराकाष्ठा दिखाई, महावीर पजोनीने उन बहुतसे युद्धोंमेंसे दो युद्धोंमें अपनी तलवारका चूडान्त परिचय देकर महान् यश संचय किया था। जिस समय उत्तरांशसे शहाबुद्दीन भारतवर्षको विजय करनेके लिये आया उस समय वीरश्रेष्ठ पजौनीने अपनी सेनाको चलनेकी आज्ञा दी, पजौनीने इस प्रकारके असीम साहससे सेनाको चलाया कि जिससे शहाबुद्दीन एकबार ही परास्त हो गया और उसी समय समरसे भाग गया। विजयी पजौनी उसके पीछे २ गजनीतक गये। राव पजौनीने चँदेलोंकी निवास-

(१) पजोनी या पज्जूनराय पृथ्वीराजका बहनोई नहीं बरन् साला था।

भूमि महोबाको अधिकारमें करनेसे ही अपने बलविक्रमकी प्रसिद्धि की थी और वह उस समय वहाँके प्रधान शासन कर्ताके पदपर प्रतिष्ठित हुए; दिल्लीश्वर पृथ्वीराज कन्नौजपति जयचंदकी कन्या (संयोगिता) अनंगमंजरीको हरण करके ले आये; उस समय दोनो राजाओंमें जो भयंकर युद्ध हुआ था उस युद्धमें भी पृथ्वीराजकी ओरके चौंसठ राजा नियुक्त थे, इनमें एक पजौनी भी थे। पृथ्वीराजका जयचंदके साथ जिस समय पाँच दिनतक निरन्तर युद्ध हुआ था,उस युद्धमें नियुक्त होकर पृथ्वीराज जिस भाँतिसे कन्नौजकी राजनंदिनीको ले निर्विघ्नतासे चले जाँय,इसी अभिप्रायसे पजौनीने अपनी सेना सहित मार्गमें खडे होकर शत्रुओंके साथ अकथनीय समर करते २ अपने जीवनको त्याग दिया। पजौनीके साथमें मेवारके गाहिलोत सामन्त भी जयचंदके साथ युद्धमें लिप्त था, और दोनोंने एक ही साथ रणशय्यापर शयन किया। कविकुलकेसरी चंदकवि वीरश्रेष्ठ पजौनीकी वीरता विक्रम और अन्तिम युद्धके अभिनयके सम्बन्धमें अपने काव्यमें लिख गये हैं; जिस समय गोविन्दराय मारे गये उस समय शत्रु अत्यन्त प्रसन्न हो नृत्य करने लगे, परन्तु कुछ ही समयके पीछे पजौनी उस समरके आकाशमें गर्जकर दिखाई दिये। वह शत्रुओंके ऊपर दोनों हाथोंसे शस्त्र चलाने लगे। एक साथ चारसौ शत्रुवीर इनके ऊपर आ झुके,परन्तु एकमात्र केहरि,पीपा,'बाहु'नरसिंह और कच्चेचरराय नामके वीरभ्राता पजौनीकी सहायतामें आगे बढे। तलवार और भालोंकी खटाखट चारों ओरसे होने लगी,रणभूमिमें सहस्रों शिर लुढकते हुए दिखाई देने लगे,रुधिरकी नदी बह निकली, पजोनीने एतमाद पर आक्रमण किया, परन्तु एतमादका कटा हुआ मस्तक जैसे ही पजोनीके पैरोंके नीचे गिरा कि वैसे ही खाँनोंके भाले विषम वेगसे पजोनीके हृदयमें घुस गये, कूर्म रणक्षेत्रसे पतित हुए, स्वर्गमें अप्सरा पजोनीको पतिरूपसे वरण करनेके लिये आपसमें झगडा करने लगीं, जो उत्तरदेशकी सेना युद्धमें थी उनके शवोंसे रणभूमि भर गई, मनुष्योंके कटे हुए शिरोंसे महादेवजीकी मुंड-माला बढ गई; जिस समय पजोनी और गोविन्द युद्धमें मारे गये, उस समय केवल एक पहर दिन बाकी था। "अपने आत्मीय वीरोंकी सहायताके लिये जंजीरसे

(१) मेवाडसे कोई भी पृथ्वीराजके साथ कन्नौजको नहीं गया।

(२) पीपा, अजानबाहु,नरसिंह,कच्चर, पजूनरायके भाई नहीं थे अन्यान्य जातीय सामन्त थे।

(३) चंदकविके इस प्रकारके वर्णनसे ऐसा बोध होता है कि जिस समयमें दिल्लीपति पृथ्वीराजके साथ कान्यकुब्जपति जयचंदका शेष युद्ध हुआ था, उस समय जयचंदकी ओर एक दल यवनोंकी सेनाका भी था। परन्तु भारतवर्षके इतिहासमें इसका कोई उल्लेख नहीं पाया जाता,जयचंदके साथ पृथ्वीराजके उक्त समरके पीछे यवनोंकी सेनाने भारतमें आकर दिल्लीको जय किया, इसके पहिले भारतवर्षमें यवनोंकी सेना नहीं थी यही इतिहासमें देखा जाता है।

(४) जयपुरके राजा जिस भांति कच्छवा नामसे विख्यात थे उसी प्रकारसे कूर्म नाम भी हुआ था, कूर्म नाम क्यों हुआ; टाड साहबने उसका कोई विशेष कारण प्रकाश नहीं किया। " पर एक स्थलमें लिखा है कि राजा कसवादके पिताका नाम कूर्म था जिसके नामसे कछवाहे कूर्म वा कूर्मा कहे जाते हैं। " [अनु०]

(५) उर्दू तर्जुमेमें १ घडी।

छूटेहुए सिंहके समान वीरश्रेष्ठ पाल्हन महाक्रोधित हो रणभूमिमें आ पहुँचा । कन्नौजकी उस प्रबल सेनाने प्राणोंके भयसे भयभीत हो पीठ दिखा दी । पजोनीके भ्राता पाल्हन अपने पुत्रके साथ कर्णके समान वीरता दिखाने लगे । अंतमें युद्धभूमिमें दोनो ही अपने प्राण त्यागकर सूर्यलोकको चले गये, सूर्यका रथ आगे बढकर इनको बडे आदर सम्मानके साथ चढाकर ले गय "।

कविचंदने फिर लिखा है कि गंगादेवीके भयसे भयभीत होकर, चन्द्र चंचल हुआ और दिकपाल गण अपने २ स्थानोंमें चीत्कार शब्द करने लगे। कन्नौजकी सेनाकी गति रुक गई, पजोनीने जैचंददेवकी ढालको खंड २ कर दिया था, उसके पुत्रने उसकी अन्त्येष्टि क्रिया कर दी। पजोनी पृथ्वीराजके ढालस्वरूप थे, उन्होंने कन्नौजके वीरोंको विलक्षण अस्त्राघात स्वरूप उपहार दान किया था। कवियोंकी भी उस वीरताकी कहानीको वर्णन करनेकी सामर्थ्य नहीं हुई, उन्होंने अंतमें बहुतसे वीरोंके शिर काट डाले और अगणि वीरोंके प्राण नाशको परन्तु, महाबली शत्रुगण साहस करक भी उनके सम्मुख नहीं हो सके। पजोनीने उस रणभूमिमें पतित होकर कहा,–" कि मनुष्यकी आयु सौवर्षकी है, जिसमें आधी तो निद्रा अवस्थामें जाती है; और इसका कुछ एक हिस्सा बालकपनमें नष्ट हो जाता है, परन्तु उस सर्वशक्तिमानने मुझे इस अस्त्राघातको सहन करनेकी शिक्षा दी है "। वह यमराजकी गोदमें बैठेहुए जिस समय यह कह रहे थे उसी समय उन्होंने देखा कि "मेरा प्राणप्यारा पुत्र एक बीर पुरुषकी भाँति शत्रुओंके संहारमें प्रवृत्त हो रहा है। यह दृश्य देखकर अंतमें उनकी आत्मा अत्यन्त सन्तुष्ट हुई। मलैसीजीके शरीरपर शत्रुओंने सात तलवारोंके आघात किये थे, उनका घोडा भी रुधिरमें भीज रहा था। पजोनीका पुत्र उस रणक्षेत्रमें अतुल बल विक्रम प्रकाश कर रहा था "।

चंदकविने मलैसीके गुणोंकी, महिमाकी और उनके बलविक्रमकी बडी प्रशंसा की है। इतिहास कहता है, कि यही अपने पिता पजोनीके पदपर आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए। साधु टाड साहबने जिस इतिहाससे इस विवरणको संग्रह किया है, उसमें मलैसाजीके शासनसमयकी कोई विशेष घटनाका उल्लेख नहीं था परन्तु रजवाडेमें प्रचलित बहुतसी दंथकथाओं व गाथाओं और काव्योंमें पजोनीके उत्तराधिकारीके बहुतसे कीर्ति कलाप तथा राजपूतोंके धर्म्मपालनके विशेष उल्लेख दृष्टि आते हैं। एक स्थानमें ऐसा लिखा है कि मलैसीने मांडू नरपतिके साथ भयंकर युद्ध करके रुत्राहि नामक स्थानमें विजयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त किया थ।

---

(१) एक काव्यमें निम्नलिखित कविता वर्णबद्ध हुई है।

"पालन पजूनी जीती महोवा कन्नौज लडाई
मांडूमलैसी जीती राररुत्राहिका
राजा भगवान्दास जीती मेवासी लाड
राजा मानसिंह जीती खोतनफौज दुवाकि—"

मलैसीजीके पीछे निम्नलिखित ग्यारह राजा आमेरके सिंहासनपर क्रमानुसार बैठे;—

१-बीजलदेवजी ।	६-उदयकर्ण ।
२-राज देवजी ।	७-नरसिंहजी ।
३-कल्हणजी ।	८-बनवीरजी ।
४-कुंतलजी ।	९-उद्धरणजी ।
५-जोणसीजी ।	१०-चन्द्रसेनजी ।
	११-पृथ्वीराजजी ।

उपरोक्त ग्यारह राजाओंके शासनके समयके विवरणका उल्लेख इतिहासमें नहीं हुआ है । केवल पृथ्वीराजके शासन समयमें आमेरराज्यका एक विशेष नवीन अनुष्ठान हुआ । पृथ्वीराजके सत्रह पुत्र उत्पन्न हुए;इनमेंसे पाँचकी तो अकालमें ही मृत्यु हो गई, और बारह पुत्र स्थित रहे।पृथ्वीराजने उन बारह पुत्रोंको अपने राज्यके बारह अंशोंका भाग करके दे दिया । उसीसे आमेरका राजवंश "बाराकोटरि" अर्थात् बारह पुत्रोंके परिवारोंमें विभक्त होकर प्रसिद्ध हुआ है, जिस समय पृथ्वीराजने इन बारह पुत्रोंके राज्यका भाग कर दिया, उस समय आमेर राज्यकी भूमि बहुत थोडी थी, इस कारण प्रत्येक राजकुमार जिस परिमित भूखंडको वंशानुक्रमसे भोगता था वह भूमि अत्यन्त सामान्य थी।परन्तु उस समयआमेर राज्यकी भूमिका जितना परिमाण था इस समय उक्त बारह वंशोंमेंके एक२वंशधर उतनी२भूमिको भोग करते हैं।पृथ्वीराजके बारह वंशधरोंके इस प्रकार राजभोग करनेमें मलैसी और पृथ्वीराजके मध्यवर्ती समयमें राजपरिवारके साथ राजवंशकी कनिष्ठ शाखाओंमें विवाद उपस्थित हुआ था और उसी कारणसे मूलराज्य-की अपेक्षा और भी राज्यकी एक शाखा अधिक प्रबल हो गई थी।यह घटना उदयकरणके शासनसमयमें हुई थी,उनके पुत्र बालाजीने पिताका महल छोडकर अमृतसर नाम नगर और छोटे२ देशोंपर अपना अधिकार कर लिया । उस समय उनके पुत्र शेखाजीने उस देशके अधीश्वर होकर अपने बाहुबलसे राज्यकी सीमांका विस्तार कर एक प्रबल बलशाली सम्प्रदायकी सृष्टि कर शेखावाटी नामक राज्यको स्थापित किया। शेखावाटीकी भूमिका परिमाण उस समय दश हजार मील था, शेखावाटीका वृत्तान्त टाड साहबने अन्य स्थानपर विस्तारसहित लिखा है, हम भी यथास्थान उसे अपने पाठकोंके सम्मुख उपस्थित करेंगे ।

पृथ्वीराजके सम्बन्धमें ऐसा जाना जाता है कि उन्होंने सिंधुनदीके किनारे स्थापित देवल नामक एक पवित्र तीर्थमें जाकर यश प्राप्त किया था, परन्तु शोकका विषय है कि वह अपने ही पुत्र भीमके द्वारा मारे गये। इस शोचनीय हत्याकाण्डका वृत्तांत इतिहासमें दिखाई नहीं देता । परन्तु ऐसा जाना जाता है कि उस पितृघातीको

—इसका अर्थ यहहै कि पालन और पजोनीने महोवे और कन्नौजके युद्धमें जय प्राप्त की । मलैसीने रुत्राहिके समरमें मांडूपर अधिकार किया, राजा भगवान्दासको मवासीमें जय प्राप्त हुई, राजा मानसिंहने खतनके सेनादलको परास्त किया था, इससे जाना जाता है कि एक समय काबुलके बाहिरी देशोंमें भी राजपूत राजाओंने जय प्राप्त की थी ।

एक और मनुष्यने उचित दंड दिया। भीम जिस प्रकारसे अपने पिता पृथ्वीराजको मारकर महान् पापमें लिप्त हुए उन भीमके पुत्र आसकर्णने भी उसी प्रकारसे उस पितृघाती पिताके जीवनका नाश किया। भीम पिताके मारनेसे सबके अप्रिय हो गये थे और सभी इनको घृणाकी दृष्टिसे देखते थे; राजवंशधरोंने भीमको संसारसे बिदा करनेके लिये उनके पुत्र आसकर्णसे कहा "कि आप भीमको मारकर राजवंशके कलंकको दूर कीजिये। इसके पीछे तीर्थोंकी यात्रा करके आप अपने पापोंका नाश कीजिये"। आसकर्णने इस संमतिको उचित जानकर अपने पिताके जीवनरूपी दीपकको सर्वदाके लिये शान्त कर दिया। आमेरराजवंशके इतिहासमें इन दो महा पापियोंके नाम नहीं लिखे गये हैं। इस प्रकारके कलंकियोंका इस संसारसे नाम लोप हो जाना ठीक ही है।

दूलेरायके समयसे लेकर पृथ्वीराजतक प्रत्येक राजा सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्यशासन करते आये। दिल्लीके तूंवरवंशीय पृथ्वीराज जिस समय अपने बाहुबलसे भारतके सम्राट् पदपर विराजमान थे, उस समय यद्यपि राव पजोनी उनके यहाँ आधीनरूपसे नियत थे परन्तु राज्यके आभ्यन्तारिक शासनसे तूंवर राजवंशपर किसी समय भी हस्ताक्षेप नहीं किया, विशेष करके पजोनीके साथ पृथ्वीराजका सांसारिक सम्बन्ध हो गया था इसलिये वह दिल्लीमें बडे सम्मानके साथ रहते थे, आमेरके राजाओंमेंसे भारमल्लने सबसे पहिले यवन शासनके निकट अपना मस्तक झुकाया और उन्होंने ही सबसे पहिले यवनसम्राट्के साथ सम्बन्ध बंधन किया; बाबरने जिस समय भारतवर्षमें अपनी प्रभुताका विस्तार किया उस समय भारमल्लने उनकी आधीनता स्वीकार कर ली। इसके पीछे पठानोंके अभ्युदयके पहिले भारमल्ल हुँमायूंके निकटसे आमेरके अधीश्वरस्वरूप "पंचहज़ारीमनसब" अर्थात् पाँच सहस्र सेनाके नेता पदपर नियत हुए। इतिहासमें भारमल्लके शासनका अन्य कोई विशेष उल्लेख दिखाई नहीं देता।

भारमल्लके पुत्र भगवान्दासने आमेरके सिंहासनपर बैठकर यवन सम्राट्के साथ एक और भी घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया। सम्पूर्ण भारतवर्षमें सम्पूर्ण वीर और पवित्र वंशीय राजपूतोंमें एकमात्र भगवान्दासने ही सबसे पहिले पवित्र क्षत्रियोंके रुधिरको कलंककी स्याहीसे अनुलिप्त किया, भगवान्दास बादशाह अकबरके परम मित्र तथा प्रियपात्र थे। नीतिविशारद अकबरने सिंहासनपर बैठकर इस बातको

---

(१) राजपूतोंके इतिहासमें लिखा है कि आसकर्ण पिताको मारकर अपने पापको नाश करनेके लिये तीर्थोंको गये, और जब वहांसे लौटे तो यवन सम्राट् (हुँमायू वा बाबर) ने इनको राजाकी उपाधिमे नरवरका राज्य दिया था, नरवरराज्यके वंशसे जिस आमेरराज्यवंशकी उत्पत्ति हुई है वह पाठकोंको पहिले ही विदित हो चुका है। नरवर वा आमेर इन दोनों राज्योंमेसे किसी राज्यके राजाकी अपुत्र अवस्थामें मृत्यु हो जाय तो आमेर राज्यकी मृत्यु होनेपर नरवर राजके राजकुमार और जो नरवर राजकी मृत्यु हो तो आमेरके राजकुमार सिंहासनपर विराजमान होते हैं, जयपुरके राजा जयसिंहकी मृत्यु अपुत्रावस्थामें ही हुई थी, तब नरवरराजके एक राजकुमारको आमेरके सिंहासनपर बैठाया गया था।

(२) पृथ्वीराज तूंवरवंशी नहीं थे चौहानवंशी थे।

भलीभांतिसे जान लिया था कि भारतवर्षमें यवनशासनको दृढ और चिरस्थाई करना ही कर्त्तव्य है, इस कारण प्रजाके हृदयमें अधिकार करनेके साथ ही साथ भारतके प्राचीन राजाओंको भी अपने हस्तगत करनेके लिये उनके साथ मित्रता करनी आवश्यक है। उसने यह भी समझ लिया था कि एकमात्र तलवारकी सहायतासे ही भारतपर अधिकार रखना दुराशामात्र है। भय, कठोर शासनदंड, तलवारके बल और इच्छासे जो सामर्थ्य, प्रभुत्व और प्रबलता प्राप्त की जाती है वह चिरस्थायी नहीं है, और उसका फल विषमय होता है, परन्तु एक प्रसिद्ध शान्तिसंभोग, दया और न्यायके विचारसे युक्ति पूर्वक अनेक भाषा भाषी, अनेक सम्प्रदायोंमें बँधे हुए भारतवासियोंके प्रति जो शासन किया जायगा उससे जो फल उत्पन्न होगा वह स्थायी होगा और वही यवन साम्राज्यके पक्षमें मंगलमय होगा। अकबरने यही सब सोच समझकर भगवान्दासकी भांति प्रशंसित राजाके साथ मित्रता की थी। टाड साहबने लिखा है "कि किस उपाय और किस चतुरतासे अकबरने कछवाहोंके राजाको अपने हस्तगत किया था, वह मुझे विदित नहीं, तब ऐसा जाना जाता है कि उन्होंने कच्छवपतिको उच्च गौरवकी आकांक्षा वा सम्मानकी लालसासे ही तृप्त किया था"। भगवान्दास बादशाह अकबरके इतने अनुगत हो गये थे कि वह अपने महान् पवित्र वंशकी पवित्रताकी रक्षा करना भी भूल गये थे। वह भारतके राजाओंमें सबसे पहिले यवनसम्राटके साथ वैवाहिक सम्बन्ध करनेमें कुछ भी लज्जित न हुए। भगवान्दासकी कन्याके साथ कुमार सलीमका (जिसने पीछे जहाँगीर नाम धारण किया) विवाह हो गया उस विवाहके फलस्वरूपमें अभागे खुसरोका जन्म हुआ था।

---

(१) मुसल्मान इतिहासवेत्ताने लिखा है कि ९९३ हिजरी सन् (१५८६ ई०) में यह विवाह हुआ था, इस समय आमेरराजके वंशमें स्वयं आमेरराज भगवान्दास * उनके दत्तक पुत्र मानसिंह और उनके पोते यह तीनों जने, संम्राट्की सेनामें अधिक सम्मान प्राप्त थे, विशेष करके मानसिंहने इस समय सबसे अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जब बादशाहके भाई विद्रोही हो गये, उस समय मानसिंहने उनके उस विद्रोहको शान्त करा दिया, औरोंकी अपेक्षा राजा भगवान्दास + जिस समय सम्राट्वंशीय सेनानीके अधीनमें कश्मीरके युद्धमें नियुक्त थे उस समय मानसिंहने खैबरके कठिन अफगानोंको दमन किया और उनके पुत्र काबुलके राजप्रतिनिधिके पदपर नियत हुए। फरिश्ताके इतिहासमें इसका वर्णन भलीभांतिसे लिखा है। [जिल्द २]

---

* यहां सब जगह भगवान्दासका नाम गलत लिखा गया है और मानसिंह भी उसका दत्तक नहीं था और न भगवान्दासने शाहजादे सलीमको अपनी बेटी दी थी। टाड साहबको सही इतिहास नहीं मिला, जिससे ऐसी गलती हुई है; असल बात यह है कि राजा भारमल्लने पहिले अकबरसे अपनी बेटीका बिबाह किया। फिर उसके बेटे भगवन्तदासने शाहजादे सलीमको अपनी बेटी दी। मानसिंह भगवन्तदासका बेटा था, भवन्तदासका भाई भगवान्दास था वह आमेरका राजा नहीं था, अकबरने उसको बांका कछवाहाकी पदवी दी थी उसकी औलादमें बांकावत कछवाहे लिवाणके राजा हैं।

+ यह भी गलत है भगवान्दास नहीं भगवन्तदास है क्योंकि मानसिंह जगत्सिंहका बेटा नहीं राजा भगवन्तदासका बेटा था और जगत्सिंह तो मानसिंहका बेटा था। माधोसिंह मानसिंहका भाई था, सूरतसिंह नहीं, सूरसिंह भी राजा भगवन्तसिंहका बेटा और मानसिंहका भाई था।

मानसिंहके सम्बन्धमें इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं, कि भगवान्दासके भतीजे उत्तराधिकारी मानसिंह अकबरकी सभामें उज्वल मणिस्वरूप थे। सम्राट्के सहकारी होकर उन्होंने बहुतसे कठिन २ कार्योंका भार लिया था, तथा खुतनसे समुद्रतकके समस्त देशोंको अपनी ही तलवारके बलसे यवनराज्यके अधिकारमें किया था। मानसिंहने उडीसाको अपने अधिकारमें कर तथा आसामको जीत वहांके राजाको यवनसम्राट्के आधीन किया था, इनके बाहुबलसे भयभीत हो काबुलने भी अधीनता स्वीकार की थी; वह क्रमानुसार बंगाल, विहार, दक्षिण और काबुलके शासनकर्ता हुए। सम्राट् अकबरने राजपूत राजाओंको सिंहासनके साथ सम्बन्धमें बांधकर जिस बलके बढानेकी चेष्टा की थी मानसिंहने अपने व्यवहारसे उसे प्रमाणित कर दिया वह निर्विघ्नताका देनेवाला नहीं है उस सम्बन्धसे ही साम्राज्यके ऊपर उन राजपूतोंकी अत्यन्त प्रभुता चलती हुई दिखाई देती थी और उसी कारणसे सम्राट्के उद्देशसाधनमें नित्य उपद्रव होते रहते थे। राजा मानसिंह उस प्रभुतामें इतने प्रबल हो गये थे, अधिक क्या कहैं, सम्राट् अकबर अपनी प्रबल सामर्थ्य और प्रतिपत्तिके समयमें भी उस वेगका ह्रास करनेके लिये–पाशुविक इच्छाचारी राजाओंने सचर और अचरके ऊपर जिसका प्रयोग किया था, उसी विष प्रयोग करनेमें सन्नद्ध हुए, यह तो पहिले ही कह आये हैं, कि "सम्राट्ने मानसिंह पर विष प्रयोग करके किस प्रकारसे अपना नाश किया था"। कर्नल टाडकी कथासे जाना जाता है कि "मानसिंहकी उस प्रबल प्रभुताको असहनीय जानकर सम्राट् अकबरने अत्यन्त घृणित उपायसे अर्थात् विष प्रयोगके द्वारा मानसिंहके जीवनको नाश करनेकी चेष्टा की थी, परन्तु अपने दुर्भाग्यसे उस विषको अज्ञानतासे खाकर स्वयं ही प्राण हीन हो गया, परन्तु अन्य किसी इतिहासमें हमें इसका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं मिला। सम्राट् अकबरकी विषपान करनेसे मृत्यु नहीं हुई, अन्यान्य इतिहासोंसे तो ऐसा ही जाना जाता है"।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि " सम्राट् अकबरने जिस समय मृत्युकी शय्यापर शयन किया, उस समय अपने भानजे खुशरोको भारतवर्षके सिंहासनपर बिठानेके

---

(१) टाड साहब लिखते है, "कि भगवान्दासके और भी तीन भ्राता थे उनमे एकका नाम सूरतसिंह, दूसरेका माधोसिंह और तीसरेका जगतसिंह था; मानसिंह इसी जगतसिंहके पुत्र थे"।

(२) यवनोंके इतिहास फरिश्ताने कहा है, कि मानसिंह जब उडीसाको जय कर चुके तब सम्राट् अकबरने इनको १२० हाथी उपहारमे दिये थे।

(३) फरिश्ता इस बातको स्वीकार करता है। उसने लिखा है कि जिस समय मानसिंह केवल कुमार उपाधिधारी थे, उस समय विहार, हाजीपुर और पटनेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त हुए और उसी वर्षमें अर्थात् १५८९ ईसवीमें उनके बडे चचा+राजा भगवान्दासकी मृत्यु हो गई; और उनकी नंदिनीके गर्भसे जहाँगीरके औरस खुसरोका जन्म हुआ, मानसिंहने बंगालेको जीतकर प्रतापादित्यको परास्त किया, बंगालेके पाठकोंसे यह बात छिपी नहीं है।

+ बडे चचा नहीं राजा भगवन्तदास मानके पिता थे।

हेतु राजा मानसिंहने षड्यन्त्र जालका विस्तार किया था, यदि इस बातको बादशाह जान जाते तो समस्त राजनैतिक भविष्य उपद्रवोंको शान्त करनेके लिये कुमार सलीमके मस्तकपर राजमुकुट अर्पण करनेके अभिलाषी होते, परन्तु कुछ ही कालके लिये इस-समय उक्त षड्यन्त्र स्थित रहा और राजा मानसिंह बंगालके शासनपर भेज दिये गये परन्तु उस षडयन्त्रका विस्तार बढता गया, कुमार खुसरोको चिरकालके लिये कारागारमें रक्खा और इनके सेवकोंकी अत्यन्त शोचनीय रूपसे मृत्यु हो गई। राजा मानसिंहकी बुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण थी, इस कारण उन्होंने उस समय प्रगटमें उस विद्रोहका बदला नहीं दिया, परन्तु छिपे २ भागिनेयके पक्षको समर्थन करते रहे, राजा मानसिंह बीस हजार राजपूतोंकी सेनाके अधिनायक होनेसे प्रबल बलशाली थे, इस कारण उनका प्रकाशमें दमन करना बादशाहकी सामर्थ्यसे बाहर था; परन्तु देशीय इतिहाससे जाना जाता है कि सम्राट्ने दश करोड रुपये रिश्वत देकर मानसिंहको अपने हस्तगत कर लिया था। मुसल्मान इतिहासवेत्ताकी उक्तिके मतसे जाना जाता है कि राजा मानसिंहने १०२४ हिजरी (१६१५ इसवी) में बंगालमें प्राण त्याग किये, परन्तु इतिहाससे यह भी जाना जाता है कि उत्तराञ्चलमें खिलजी जातिके साथ युद्ध करनेको गये थे वहां इससे दो वर्ष पहिले मारे गये थे"।

राजा भगवान्दासके स्वर्गवासी होनेपर मानसिंह जयपुरके सिंहासनपर बैठे। मानसिंहके शासन समयमें आमेर राज्यने भारतवर्षमें. अन्यान्य राज्योंकी अपेक्षा अधिक प्रसिद्धि प्राप्त की, मानसिंहको सम्राट्के यहां जितना सम्मान मिलता था उतना ही यह अपने बाहुबलसे राज्यपर अधिकार करते जाते थे, और अनेक देशोंसे जो धनरत्न हरण कर २ के लाते थे, उससे उस छोटेसे आमेर राज्यकी क्रमशः धनसम्पत्ति भी बढती जाती थी। दूलेरायके पीछे आमेर राज्य रजवाडेमें एक सामान्य राज्य गिना जाता था, परन्तु मानसिंहके समय उसी सामान्य राज्यकी सीमा वृद्धिके साथ ही साथ भारतवर्षमें उसकी प्रसिद्धि भी बढ गई। कच्छवगण अबतक भारतवर्षमें इतने वीर नहीं गिने जाते थे, परन्तु राजा भगवान्दास और मानसिंहके समयसे कच्छवोंके दलने खतनसे समुद्रतक भारतके प्रत्येक प्रान्तमें अपने अतुल पराक्रम और बाहुबलसे अपनी जातिके गौरवको बढा लिया था, राजा मानसिंहकी सेना बादशाहकी सेनासे अधिक बलवान् और साहसी तथा वीर गिनी जाती थी। राजा मानसिंह भारतवर्षमें यवनराज्यके शासनमें चिरस्मरणीय और प्रशंसनीय अभिनय करनेके पीछे स्वर्गको चले गये, इसके पीछे उनके पुत्र राव भावसिंह आमेरके राजसिंहासनपर बैठे। स्वयं यवनसम्राट्ने उनका अभिषेक करके उन्हें सम्मान सूचक "पंचहजारीमनसब" की उपाधि दी। इतिहाससे यह जाना जाता है, कि यह अत्यन्त निर्बोध और मद्यपानमें

(१) राजपूत इतिहाससे जाना जाता है कि मानसिंह १६९९ सम्वत् अर्थात् १६४२ ईसवीमें स्वर्ग सिधारे।

(२) भगवन्तदास।

अधिक रत थ। कई वर्ष राज्य करनेके पीछे उसी अधिक मदिराके पीनेसे सन् १०३० हिजरीमें प्राणत्याग किये। उनके राज्यके समयमें कोई विशेष घटना नहीं हुई।

भावसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र महासिंह राजसिंहासनपर बैठे, परन्तु यह भी पिताके समान अत्यन्त इन्द्रियलोलुप और मदिरापानमें आसक्त थे, इस कारण बहुत थोडे दिनोंमें ही इस संसारको छोड गये। राजा मानसिंह जैसे महावीर नीतिज्ञ और असीम साहसी थे, उनके पुत्र और पौत्र भी उसी भाँति उनके सम्पूर्ण गुणोंके विपरीत हुए, आमेर राज्यकी प्रभुता और प्रताप इसीसे एकबार ही क्षीण हो गया; इस समय इस सुअवसरमें जोधपुरके अधीश्वरोंने सम्राट्के यहाँ अपने प्रताप और प्रभुताईका विस्तार कर लिया, इतिहाससे विदित होता है कि महासिंहकी मृत्युके पीछे आमेरके सिंहासन पर कौन बैठेगा? यह बडाभारी प्रश्न उपस्थित था। विख्यात राजपूत–नन्दिनी जोधाबाईके साथ जहाँगीरका विवाह हुआ था, उसे हमारे पाठक यथास्थान पढचुके होंगे, उस विख्यात जोधाबाईके अनुरोधसे सम्राट् जहाँगीरने जगत्सिंहके पोते जयसिंहको आमेरका सिंहासन दे दिया। राजपूतोंके इतिहास लेखकोंने कहा है कि इससे सम्राट्को प्रियतमा रानी नूरजहाँ अत्यन्त संतुष्ट हुई थी। उक्त देशीय इतिहासवेत्ता लिख गये हैं कि आमेरका सिंहासन किसको दिया जाय, रनिवासमें जोधाबाई बादशाहके साथ इसका निश्चय कर लें; जयसिंह उस समय अंत:पुरके नीचे थे। बादशाहने उस समय अन्त:पुरके बरामदेसे निम्नस्थ जयसिंहको आमेरका राजा स्वीकार कर अभिवादन पूर्वक कहा–कि "जोधाबाईको सलाम करिये, यही आपके राजपदप्राप्तिका मूल है"। परन्तु रजवाडेकी चिर-प्रचलित रीतिके अनुसार राजपूत राजा कभी किसी राजपूत कुमारीको सलाम नहीं कर सकते, इस कारण बादशाहकी आज्ञा होने पर भी जयसिंह उस रीतिका तिरस्कार न कर सके और बोले कि "मैं आपक रनिवासकी अन्यास्त्रियोंको सलाम कर सकता हूं परन्तु जोधाबाईको किसी भाँति भी सलाम नहीं कर सकता"। परन्तु जोधाबाईने इससे अपना कुछ भी अपमान न समझा वरन् मंदमुसकानसे कहा "इससे कुछ हानि नहीं है; मैंने आपको आमेरका राज्य दिया"।

राजा मानसिंहके पीछे दो अयोग्य उत्तराधिकारियोंसे कच्छवजातिके गौरवकी कांति अत्यन्त ही हीन--प्रभा हो गई थी, राजा जयसिंहने आमेरके सिंहासनपर बैठकर अपने बुद्धिबल, नीतिबल और बाहुबलसे उस कलंकको दूर करके कई वर्षमें आमेर राज्यके लुप्त हुए गौरवको फिर प्रकाशमान कर दिया। जयसिंह मिर्जाराजाके नामसे विख्यात थे, मानसिंहने जिस प्रकार अकबरके शासन समयमें राज्यका विस्तार तथा सामर्थ्य और सम्मानको बढाया था, और बहुतसे युद्धोंमें जिस भाँतिसे अपनी प्रबल सामर्थ्य और बाहुबलका परिचय देकर अक्षयकीर्ति प्राप्त की थी, मिर्जा राजा जयसिंहने भी उसी प्रकार दुर्दान्त औरंगजेबके शासन समयमें

(१) महासिंह भावसिंहके बेटे नहीं थे मानसिंहके कुंवर जगत्सिंहके बेटे थे।

यवन साम्राज्यके बहुतसे उपकार किये [औरंगजेब जिन संग्रामोंमें नियुक्त थे, प्रायः जयसिंहने भी इन्हीं युद्धोंमें लिप्त होकर जयलक्ष्मीको आलिंगन किया] औरंगजेबने इनकी इस वीरतासे संतुष्ट होकर इन्हें छः हजारीमनसब पुरस्कारमें दिया। [भारतवर्षके इतिहासमें पाठकोंने औरंगजेबके शासनकालीन इतिहासमें इन्हीं जयसिंहकी वीरताकी कहानी भलीभाँतिसे पढी होगी। जो असीम साहसी महावीर शिवाजी महाराष्ट्रदेशके आदि नेता थे, जिन शिवाजीके नामसे सम्राट्की सेना कंपायमान होती थी, जिन शिवाजीके साथ युद्ध करके बादशाहकी सेना बारंबार परास्त हुई थी, उन शिवाजीको यही आमेरपति महाराज जयसिंह बन्दी करके दिल्लीके बादशाह औरंगजेबके यहाँ ले आये थे]। जयसिंहके शिवाजीको बंदी करके लानेका वर्णन भारतके इतिहासमें भलीभाँतिसे लिखा हुआ है, इस कारण हमने उस विषयको यहां लिखना आवश्यक न समझा। [यद्यपि राजा जयसिंहने विजातीय विधर्मी औरंगजेबकी आज्ञासे स्वदेशीय महावीर शिवाजीको बंदी किया था तथापि उन्होंने राजपूत वीरोंके समान शिवाजीके सम्मुख यह शपथ की थी कि बादशाह आपका एक बाल भी स्पर्श नहीं कर सकेगा, इसका साक्षी मैं हूं] शिवाजीने इस राजपूतकी प्रतिज्ञापर ही दृढ विश्वास करके अपनेको बंदी करा दिया था,, परन्तु शिवाजीके आते ही औरंगजेब अत्याचार करके इनके जीवनके नाशकी चेष्टा करने लगा, [तब राजपूत राजा जयसिंहने बादशाहका कुछ भी भय न करके अपनी शपथको पालन करनेके लिए शिवाजीको दिल्लीसे भगा देनेमें विशेष सहायता कर राजपूत नामके गौरवकी रक्षा की] इसी कारणसे बादशाह जयसिंहपर अप्रसन्न रहता था, यह हमारे पाठकोंसे छिपा नहीं है। दिल्लीके सिंहासन लेनेके समय राजकुमारोंमें महा विवाद उपस्थित हुआ, मिर्जा राजा जयसिंहने पहिले तो सुल्तान दाराकी ओरका पक्ष लिया और फिर उसके साथ विश्वासघात किया, इससे दाराके सिंहासन प्राप्तिकी आशा एकबार ही जाती रही। जयसिंह बारंबार नीतिज्ञताके बलसे कईएक कार्योंमें प्रधानता प्राप्त करके अत्यन्त गर्वित हो गय थे, और इसी कारणसे नरराक्षस औरंगजेबने उनका अनिष्ट करनेके लिये प्रतिज्ञाकी थी। देशीय इतिहासवेत्ता लिख गये है कि, मिर्जा राजा जयसिंहके आधीनमें बाईस हजार अश्वारोही सेना थी, और बाईसजने प्रथम श्रेणीके संभ्रान्त कर देनेवाले देशी जागीरदार भी उनके आधीनकी सेनामें नियत थे। जयसिंहने उन महावीरोंसे युक्त हो राजदरबारमें बैठकर दो हाथोंमें दो गिलास लेकर एकको दिल्ली और दूसरेको सितारा कहकर एकको तो बड़े वेगसे पृथ्वीमें गिरा दिया और दूसरेको चूर्ण २ करके कहा:- सितारेके पतन होनेसे दिल्लीका भाग्य मेरे दहिने हाथमें रहा, मैंने विचारा है कि "इसी भाँति सरलतासे, दिल्लीके भाग्यको पतन कर सकता हूँ"। पाठकगण इस उक्तिसे सरलतासे जान सकेंगे, कि मिरजा राजा जयसिंह किस प्रकारके दुर्दमनीय क्षात्रियतेजसे प्रकाशमान थे, उनके द्वारा ही सतारापति शिवाजीका पतन हुआ, और यदि वह विचारते तो औरंगजेबका भी पतन कर सकते थे, महावीर और प्रबल प्रभुता युक्त मनुष्यके अतिरिक्त और कौन ऐसी स्पर्द्धा कर सकता है परन्तु यह स्पर्द्धा ही उनका

कालस्वरूप हुई, क्रम २ से बादशाह औरंगजेबके कानोंतक भी यह बात पहुँच गई कि, राजा जयसिंह इस प्रकारसे सबके सामने कहा करता है, यद्यपि औरंगजेब प्रबल पराक्रमी बादशाह था तथापि वह जयसिंहके अनिष्ट साधनमें प्रत्यक्षरूपसे कोई उपाय करनेका साहस न कर सका। दुराचारी औरंगजेब अपने शासनसमयमें केवल तलवार और विषकी सहायतासे भारतके प्रधान २ राजपूत वीरोंके प्राण नाश करके निष्कंटक हुआ था, जिस उपायसे उसने यशवन्तसिंहके जीवनका नाश किया था, उसी घृणित उपायसे उसने जयसिंहको भी इस संसारसे विदा दी, उसने अन्य कोई उपाय न देखकर अंतमें राजा जयसिंहके कुटुम्बमें अपना षड्यंत्र चलाया, राजपूतोंकी रीतिके अनुसार बडे राजकुमारको ही पिताका सिंहासन प्राप्त होता है, छोटेको कदापि सिंहासनकी प्राप्ति नहीं हो सकती, परंतु दुराचारी औरंगजेबने जयसिंहके छोटे पुत्र कीरतसिंहको अनेक भाँतिके लोभ दिखाकर अपने वशमें करके कहा कि "यदि आप अपने पिता जयसिंयको मार डालें तो मैं राजपूतोंकी रीतिके मस्तकपर लात मारकर आपके शिरपर आमेरका राजमुकुट अर्पण करूँगा, आपके बडे भाई रामसिंह किसी प्रकार भी राजसिंहासनपर अपना अधिकार नहीं कर सकते। अभागे निर्बोध कीरतसिंहने पापात्मा औरंगजेबके षड्यंत्रमें फँसकर उसके मनोरथको पूर्ण करनेमें कुछ भी विलम्ब न किया। राजपूत कुलांगार कीरतसिंहने अफीमके साथ विष मिलाकर अपने जन्मदाता जयसिंहको पिलाकर उन्हें मार डाला। जयसिंहने उस कुलकलंकी पुत्रके हाथसे विष पानकर प्राण त्याग दिये। पितृहन्ता कीरतसिंह अपने महापापके पुरस्कारस्वरूप राजतिलक प्राप्तिके लिये अंतमें नरपिशाच औरंगजेबके सम्मुख गया, बादशाहने उसका मनोरथ पूर्ण न करके केवल कामा नामक एक देश उसे जागीरमें दे दिया।

महावीर जयसिंहके प्राण त्याग करनेपर उनके बडे पुत्र रामसिंह आमेरके सिंहासनपर बैठे। जयसिंहको छः हजारी मनसब प्राप्त हुआ था, परन्तु रामसिंह "चार हजारी मनसब" प्राप्त कर आसामके निवासियोंके साथ युद्ध करनेको गये। संवत् १७४६ में रामसिंहकी मृत्यु होनेपर उनके पुत्र विशनसिंह आमेरके राजपदपर स्थित हुए, इस समय पुनर्वार आमेरका पूर्व गौरव दिन २ क्षीण होता आया था, अब बादशाहके यहाँ आमेर राजकी उस प्रकारकी प्रभुता और सम्मान नहीं था। इस कारण विशनसिंहको "तीन हजारी मनसब" मिला। परन्तु उन्होंने बहुत दिनोंतक राज्यसुख नहीं भोगा। "वे संवत १७५६ में बहादुरशाहके साथ काबुलको गये थे वहीं उनकी मृत्यु हुई"।

द्वितीय अध्याय २.

प्राचीन और मध्य समयके क्षत्रिय राजगण-पश्चिमी और प्राच्य जगत‌में भावी समिलन, हिन्दू जातिमें भविष्य आलेख्य-सवाई जयसिंहका राज्याभिषेक-आजिमशाहके साथ उनका योगदान-सम्राटका आमेर राज्यपर खालसा करना-जयसिंहका बादशाहकी सेनाको जयपुरसे भगाना-उनका स्वभाव और चरित्र-उनकी ज्योतिष विद्याकी अभिज्ञता-दिल्लीका तख्त पाकर गोलयोगके समयतक उनका आचरण-बहुत विवाहोंके विषमय फलकी एक प्रमाणसूचक घटना-जयसिंहकी गुणावली-जयसिंहके अश्वमेध यज्ञ करनेकी इच्छा-उनके सग्रह किये और लिखे हुए दुष्प्राप्य और मूल्यवान बहुतसे ऐतिहासिक और पौराणिक तथा वैज्ञानिकग्रन्थ-उनकी मृत्यु ।

जिसने इस विशाल इतिहासरूपी समुद्रके भीतर प्रवेश किया है, उसके नेत्रोंके सम्मुख एक विशेष चित्ताकर्षक दृश्य आता है । वीरमाता भारतभूमिकी गोदमें सूर्य और चंद्रवंशी क्षत्रिय जाति ही वीरनेतारूपसे चिरस्मरणीय अभिनय करती आई है, रामायण और महाभारत इत्यादि इतिहास-मूलक महा काव्योंमें उसी चंद्र और सूर्यवंशी वीरनेताओंके अतुल बल विक्रम, अमित साहस और प्रबल प्रतापके वर्णन है, उनकी अनुपम और अक्षय कीर्ति अद्यावधि स्थिर है। उन्हींके वंशधरोंका वर्णन जो इस इतिहासके पाठाकोंने पढा है क्या उससे यह प्रगट नहीं होता कि, वे अपने ही पूर्वपुरुषाओंके समान यशभाजन होनेके योग्य हैं, यदि वे भारतकी स्वाधीन अवस्थाके समय अथवा वाल्मीक एवं व्यासजीके समयमें जन्म लेते तो वे केवल अंग्रेजों द्वारा लिखित रजवाडेके इतिहासमें ही नहीं, एक राजपूत जातिमें ही नहीं, वरन् समस्त संसारमें प्रशंसनीय यश और गौरवके भागी होते। उनके यशरूपी सूर्यकी उज्वल किरणोंसे समस्त भूमण्डल जगमगा उठता । महात्मा व्यास और वाल्मीकिजीकी अक्षय लेखनी उस अमृतमय काव्यमें उनके गुणोंको संग्रह करके भारतके गलेमें अनुपम उपहार दान करती,इसमें किंचित् भी संदेह नहीं । हम महाभारत और रामायणमें जिन क्षत्रिय वीरोंके प्रताप,प्रभुत्व, क्षमता,साहस, प्रतिभा,उद्दीपना और शूरवीरताके स्रोत बहते हुए देखते हैं, जिनका कार्यकलाप वीरविक्रम आजतक इस अन्तःसार-शून्य पतित जातिके हृदयमें भी जातीय गर्वदर्पको उदित कर देता है, यदि उन वीरोंके साथ मध्य समयके राजपूत वीरोंकी बराबरी करी जाय, तो सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि मध्य समयके एक २ राजपूत वीर उनकी अपेक्षा भी ऊँची प्रशंसाके योग्यपात्र हो गये हैं । मेवाड, मारवाड, बीकानेर, जयसलमेर और जयपुरके इतिहासमें कठिन यवनशासनमें भी एक जन राजपूत अपने बाहुबलसे, तलवारके बलसे और राजनीतिके बलसे जिस प्रकार अक्षय कीर्तिको स्थापित कर यवनसम्राट्के ऊपर अपना आधिपत्य स्थापित कर गये हैं, उसकी प्रशंसा नहीं की जा सकती । यदि वह विचारते तो भारतवर्षसे यवनराज्यको लोप कर सकते थे, परन्तु केवल

विधिकी वासनासे उनके हृदयमें ऐसी प्रेरणा नहीं हुई। जिन्होंने इतिहासपर ध्यान दिया है वही इस बातको मानेंगे कि यवन राज्यके शासनका जो प्रचंड प्रताप फैला था, उसका कारण एकमात्र राजपूत राजाओंका बाहुबल था। बादशाह अकबरके समयमें देशीय राजा यवन शासनकी स्थापना दृढता और गौरवसाधनके लिये एक दूसरेकी प्रतियोगिता कर देनेमें लगे थे; यदि राजनीति चतुर अकबर इस प्रकारसे देशीय राजाओंको पद मर्यादा, सम्मान, भूवृत्ति, राजवंश, धन, पुरस्कार और अन्तमें वैवाहिक सम्बन्धमें बांधकर अपने सिंहासनके साथ संयुक्त न करता तो उस समयमें यवनराज्यका वह प्रबल प्रताप और किसी भी उपायसे विस्तार न पा सकता। यद्यपि औरंगजेबने अपनी चतुरताके बलसे ही भारतवर्षमें समस्त राज्योंकी अपेक्षा अपना प्रताप और अपनी प्रभुताका विस्तार किया था, परन्तु वह किसी देशीय राजाओंकी सहायता बिना नहीं बढ। हाँ उसने अपनी कूटराजनीति, चातुरी, छलकपट, भयदंड और विषकी सहायतासे देशीय राजाओंको अपने हस्तगतकर तो लिया था परन्तु विचारवान् अपनी दिव्य दृष्टिसे देखते हैं कि उसीका फल स्वरूप यवनराज्यका विनाश साधन हुआ। उसका वह महान प्रताप और प्रभुता एक बार ही रसातलमें जाकर चूर्ण २ हो गई। यदि औरंगजेब भी अकबरके समान मित्रता, आत्मीयता, आर्द्रता और प्रीतिके द्वारा देशीय राजाओंको हस्तगत कर लेता तो उसकी मृत्युके उपरान्त यवनराज्यकी ऐसी दुर्दशा कभी न होती। औरंगजेबकी मृत्युके पीछे वह राजपूत राजा भारतवर्षसे यवनराज्यका नामतक लुप्त कर देते परन्तु इतिहासका एक महान कार्य सिद्ध होगा इसी कारण उस समय उनकी उस आशाके विरुद्ध भिन्न २ बाधायें इकट्ठी हुई, और उस भावी महान् कार्यके निमित्त ही महाराष्ट्र जातिने अपनी तलवारकी सहायतासे यवनराज्यके विरुद्ध और सम्पूर्ण प्राचीन राजाओंके विरुद्ध खडे होकर उनके ऊंचे मस्तकोंको झुका दिया।

वह महान् कार्य क्या है? पश्चिमी और पूर्वी परिणय! जगत्के इतिहासकी ओर जिनकी दृष्टि गई है वही अपने ज्ञानके नेत्रोंसे देखते हैं कि, एक अलौकिक ऐतिहासिक घटनाके निमित्त ईश्वरने विचित्र उपाय निर्देश कर दिया था, यह भारतभूमि ही सृष्टिकी बाललीलाका क्षेत्र है। धर्मशिक्षा, सभ्यता, विज्ञान यह इसी भारतकी सृष्टि हैं; यहींसे जो दूसरे देशोंमें विद्या गई है इसी विद्याने उन देशोंको उन्नत किया है, इसीने पश्चिमी देशोंको ऊंचा बनाकर पूर्वदेशोंको पर्वावस्थामें रक्खा है, ज्ञानी पुरुषोंका अनुमान है कि उसी पूर्व प्रकारसे सब शिक्षाएं ज्ञान और विज्ञान पश्चिमसे पूर्वमें आकर पुनः पूर्व्वीय देशोंको उन्नतिके शिखरपर पहुंचावेगा; अतएव उन सब महान् ऐतिहासिक घटनाओंके संयोगका भार एक मात्र अंग्रेजोंके ही ऊपर रक्खा गया है। अंग्रेज देशियोंके ऊपर चाहे कितने अत्यचार क्यों न करें, न्यायान्यायके उपायसे चाहे भारतके समस्त धनको हरण कर लें, गवर्नमेण्ट चाहै कितनी ही स्वेच्छाचारी क्यों न हो परन्तु भारतभूमिमें या भारतकी भिन्न २ जातियोंमें जितने पश्चिमके रत्न हैं वह सभी अंग्रेज जातिकी सहायता, कल्याण और अनुग्रहसे प्राप्त हुए हैं। पश्चिम और प्राच्यके मिलन होनेसे यह प्राचीन आर्यक्षेत्र फिर

एक दिन ऊंचे आसनपर अधिकार करैगा। आर्यवंशधर फिर एक दिन नवीन लीलामें लीन होकर पश्चिमी शिक्षा और विज्ञानके साथ प्रशंसित होकर ज्ञानबुद्धिके संयोगसे इस जगतमें नवीन अभिनय कर, भाग्यके पूर्व दृश्यको दिखावेंगे। वह दृश्य, वह अभिनय, वह पाश्चात्य और प्राच्यके संमिलनसे जब जगत् उन्नतिके ऊंचे मार्गपर जायगा तब आर्यवंशधरोंकी कीर्तिका गौरव आकाशमें जाकर कीर्तिमान होगा। आर्यवंशधर फिर नवीन युगमें, नवनि जीवनमें नवीन जातिरूपसे संसारमें अनन्त लीलाओंका अभिनय करेंगे; इसको अपने हृदयपर अंकित करनेके लिये विचारवान् ही समर्थ हैं। जिनको भीतरी दृष्टि नहीं है, वह अंग्रेजी राज्यमें किसी विषयका भी परिवर्तन वा कोई सुलक्षण नहीं देख सकते, वह केवल भारतके धननाश, बलनाश और अंग्रेजोंके चरणप्रहारसे ही देशियोंके जीवनका नाश होता हुआ देखते हैं परन्तु जिन्होंने धीरज धरकर स्थिरभावसे अन्तर्दृष्टिसे देखा है, वही जान सकते हैं कि उस धननाश, बलनाश और प्राणनाशमें प्रकाण्ड पश्चिमी प्रकाशने आकर प्रत्येक भारतवासीके नेत्रोंके सम्मुख उजेला किया है; अलक्ष्यमें एक महान् गन्तव्य मार्गकी रेखा उनके नेत्रोंको प्रकाशित किये देती है। जो प्राचीन हिन्दूजाति, जगत्के शिक्षादाता दीक्षागुरुके पदसे रहित होकर आज अन्तःसारशून्य पराये मुखकी अपेक्षा करनेवाली, परार्या आशावाली, दूसरेके चरणोंकी सेवा करनेवाली गिनी गयी है, उस जातिके मंगल और उन्नतिके लिये ही पश्चिमी और पूर्वी शिक्षाका संमिलन हुआ है। हिन्दूधर्म अभेद्य हिमालयके समान अचल और अटल है, हिन्दूधर्मकी मूलनीति अक्षय पत्थरके अक्षय उपकरणसे बनी हुई है। यद्यपि आजकल चारों ओर भयंकर कोलाहल मच रहा है कि " हिन्दूधर्म गया, हिन्दूसमाज गई, अदलबदलके मुखमें समस्त ही हिन्दू समाज गई "। परन्तु विचारवान् देखते हैं कि हिन्दूधर्म जानेवाला नहीं है केवल उस पूर्व पश्चिमके सम्मिलनसे ही संसारके हितके लिये उस हिन्दूजातिकी सामाजिक रीतिनीति, आचार, व्यवहार, शिक्षा, सभ्यता, ज्ञान, बुद्धि, शिल्पविज्ञान, प्रतिभा उद्दीपना यह नवीन संस्कार और नवीन भावसे नवीन युगमें उपयुक्तरूपसे भविष्यतमें संगठित होगी, इस समय केवल वही आभासमात्रसे प्रकाश पा रही है। उस नवीन युगमें हिन्दूधर्म नहीं जायगा, हिन्दूजाति नहीं जायगी, हिन्दुओंका कुछ भी नहीं जायगा, सब यहीं रहैगा, नवीन जीवन पाकर, नवीन उपकरणसे तथा नवीन रीतिसे, समस्त नवीन बलसे बलवान् होकर जातिको फिर ऊंचे शिखरपर पहुँचा देंगे। अधिकतर धर्मकी, समाजकी तथा जातिके सम्पूर्ण दृश्य विजातीय, विदृश्य-विपरीत और प्रार्थना रहित बोध होती है, वह सभी उपद्रवोंके मुखमें पूर्ण होकर समयके उपयोगी रूपसे प्रयोजनीय रूपसे फिर तैयार होगी। समयके प्रखर स्रोतेको रोकनेकी किसकी सामर्थ्य है? सहस्र बलशाली राजा वा प्रबल सामर्थ्यवाली समाज कभी भी उस स्रोतेको निवारण नहीं कर सकते। समय आनेपर समाज कार्यको अवश्य ही करैगी। एक देश, एक जातिकी अवस्था कभी भी चिरकालतक समान नहीं रह सकती, यह बात कौनसे इतिहासलेखकको विदित नहीं है? जो हिन्दूजाति असंख्य उपद्रव और अनेक

भांतिकी पीडाओंको सहन करके आजतक भी भारतवर्षमें व्याप्त हो रही है, जो हिन्दूधर्म कठिन यवनसम्राट्के भयंकर आक्रमण और अत्याचारोंसे किंचित् भी विचलित न हुआ, वह जातिधर्म फिर एक दिन अवश्य ही संसारमें शांतिमंगल और संतोषकी तरंगको प्रवाहित करेगा, इसका अनुमान करना चिन्ताशील मनुष्योंपर ही निर्भर है ।

उस पूर्व पश्चिमके सम्मिलन साधनके लिये ही अंग्रेजोंका भारतमें आना हुआ, उस पूर्व पश्चिमके सम्मिलनके लिये ही अंग्रेजोंद्वारा यवनशासनका विनाश साधन हुआ, और पूर्व पश्चिमका शुभ परिणय सिद्ध करनेके निमित्त सम्पूर्ण सामर्थ्य और सत्वसम्पन्न होकर भी राजपूत राजा दिल्लीके सिंहासनपर बैठनेमें यत्नशील न हुए । उनमें सवाई राजा जैयसिंह दूसरे थे, उन्हींके सम्बन्धका इतिहास इस अध्यायमें लिखा जायागा। राजपूत राजवंशमें जयपुरपति सवाई जयसिंह सबसे ऊंचे सिंहासनप्राप्तिके योग्य थे, यही महाराज इतिहासके सम्मुख महा सम्मानके पात्र हुए, प्रवादियोंके मुखपर सबसे पहिले इन्हींकी प्रशंसा होती थी, जिन्होंने भारतके इतिहासको पढा है वे अवश्य ही इसके पूर्ण आभासको संग्रह कर लेंगे । इस विशाल इतिहास कल्पद्रुममें पाठकोंने जिन राजाओंके चरित्रोंको पढा है उन सभी राजाओंको केवल जातीय क्षत्री धर्मपालन और तलवारके बलसे भारतमें चिरस्थायी कीर्तिको स्थापित करते देखा है परन्तु सवाई महाराज जयसिंहने केवल जातिधर्म और बाहुबलको प्रकाश करके भारतवर्षमें अपने नामको विख्यात नहीं किया वरन् शास्त्र और उसके नामको भी भारतमें अक्षय करके रक्खा । वे ज्योतिष शास्त्रके उन्नतिसाधन हेतु थे । नवीन संस्कार, नवीन रीति नियत करके भारतवर्षके चार प्रधान २ स्थानोंमें मानमंदिर स्थापन कर गये हैं, वही आजतक उनकी अक्षय कीर्तिकी घोषणा कर रहे हैं । विजित भारतके एकमात्र सवाई जयसिंहसे ही ज्योतिष शास्त्रका उद्धार हुआ है । ज्योतिष शास्त्रके वेत्ता उसे आजतक मुक्तकण्ठसे स्वीकार करते आये हैं ।रजवाडेके राजपूतोंकी गौरवकी कला केवल भारतमें ही विख्यात है परन्तु सवाई जयसिंहके यशका सूर्य इतना ऊंचा हो गया था, कि उसने दूर २ तक अपनी किरणजालका उज्ज्वल प्रकाश किया था, पश्चिमके ज्योतिर्वेत्तागण मुक्तकण्ठसे उस सवाई जयसिंहकी प्रशंसा करनेको तैयार हैं, परन्तु शोकका विषय है कि साधु टाड उपयुक्त प्रयोजनके होनेपर भी उपकरणावलीके अभावमें उस महापुरुषकी विस्तारित जीवनी इतिहासमें अंकित नहीं कर सके, यदि वह सवाई जयसिंहके जीवनकी प्रधान २ घटनाएँ और उनके द्वारा अनुष्ठान किये विषयोंका भली भांतिसे वर्णन करते तो पृथक् एक बडा ग्रंथ बन जाता, तथापि इस इतिहासमें उन महापुरुषकी जीवनी इतनी बडी है कि जिसको कर्नल टाड साहब नहीं दे सके, विशेष करके सुविधाके अभावमें हम भी यथाशक्ति चेष्टा करके उनकी जीवनीको यहां भली भांतिसे प्रकाशित नहीं कर सके इससे हमको अत्यन्त दुःख है । भूमिका समाप्त ।

साधु टाड महोदय लिखते हैं कि,–"पहिले जयसिंह जिस भांति मिर्जाराजा नामसे विदित थे, दूसरे जयसिंह उसी प्रकार सवाई नामसे विदित थे और संवत् १७५५ सन्

१६९९ई०में औरंगजेबके शासनके४४वर्ष बीतनेपर अर्थात् उसकी मृत्युके छः वर्ष पहिले राजसिंहासनको प्राप्त हुए। उन्होंने दक्षिणके युद्धमें अपने बाहुबलका विशेष परिचय दिया था,और औरंगजेबकी मृत्युके पहिले जिस समय सिंहासन पानेको सम्राट् कुमारोंमें युद्धकी आग भडक उठी थी, उस समय उन्होंने औरंगजेबके उत्तराधिकारी रूपसे विख्यात आजिमशाहके पुत्र कुमार वेदारवख्तका पक्ष लिया था और उसी कुमारकी सहायताके लिये वे धौलपुरके युद्धमें लिप्त हुए थे। दुःखका विषय है कि उस संग्राममें वेदारवख्त मारा गया,शाहआलम (बहादुरशाह) दिल्लीके तख्तपर बैठा। तब आमेरका राज्य खालसा कर लिया गया क्योंकि सवाई राजा जयसिंह कुमार वेदारवख्तका पक्ष अवलम्बन करके शाहआलमके विपक्षमें थे। सम्राट् शाहआलमकी तरफसे एक व्यक्ति-विशेष आमेर राज्यका शासनकर्ता नियुक्त होकर भेज दिया गया, परंतु वीरश्रेष्ठ जयसिंहने बादशाहका यह अन्याय देख सिंहके समान क्रोधित हो गर्जन करते हुए कछवाहोंकी समस्त सेनाको सजा उन्होंने नंगी तलवारें हाथमें लेकर अपने पैतृक राज्य-मेंसे सम्राट्की समस्त सेनाको भगाकर अपने महान् बाहुबलका परिचय दिया"। उसी समयसे जयसिंहके हृदयपर यवनसम्राट्के वंशकी ओर विजातीय क्रोध उपस्थित हुआ और उन्होंने यवनराज्यका नाश करनेके लिये मारवाडके अधीश्वर महाराज अजि-तसिंहके साथ मित्रता करके संधि कर ली।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "यह विख्यात राजपूत जयसिंह चौवालीस वर्षतक आमेरके सिंहासनपर स्थित होकर जबतब भयंकर युद्धोंमें लिप्त रहे। उन सब बातोंका फिर फिर वर्णन करना नीरस होगा। वह मेवाड और बूँदीराजके प्रबल शत्रु थे, उसी मेवाड और बूँदीराजके वंशधरोंके इतिहासके साथ उनका वहीं वीर अभिनय जडित किया गया है, इस कारण उसका परिचय पाठकोंको हो ही जायगा। जिस समय भारतमें दीर्घकालतक अराजकता नृत्य कर रही थी उसी समयमें तैमूरके वंशधरोंका सिंहासन शीघ्रतासे छिन्नभिन्न होकर पृथ्वीमें घुसनेका उपाय कर रहा था। "यद्यपि महाराज जयसिंह उस समय प्रत्येक युद्ध और विपत्तिमें पडे हुए थे, परंतु वीर स्वरूपसे उनका यश कभी अक्षय नहीं हो सका, वरन् राजपूत वीरोंका साहस जैसा जलती हुई अग्निके समान होता है उनका साहस वैसा नहीं था, परन्तु राज्यशासन और राज्यसंसारमें और षड्यंत्रजालके विस्तारमें उनकी विशेष शक्ति थी"। अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम साधु टाड साहबकी शेष उक्तियोंके समर्थन करनेमें समर्थ नहीं हो सकते। इतिहासवेत्ता टाड इस विस्तारित इतिहासके प्रत्येक स्थानमें सत्य और सम्मानके रक्षा करनेकी विशेष चेष्टा कर गये हैं, उसे हम शिर झुकाकर स्वीकार करते हैं, वह एक उदारहृदय देवस्वरूप और राजपूत जातिके यथार्थ मित्र थे, इस बातको राजपूत जाति भी स्वीकार करती है, परन्तु हम इतना कह सकते हैं कि वह यद्यपि रजवाडेके भिन्न २ राज्योंके इतिहासको समभावसे लिख गये हैं, परन्तु वह उनमें सबसे अधिक मेवाडके अधीश्वर और मेवाडके निवासियोंको अत्यन्त प्रिय जानते थे। मारवाड, बीका-नेर, जयसलमेर, जयपुर, कोटा और बूँदी राज्यके अधीश्वर और निवासियोंकी अपेक्षा

मेवाडके अधीश्वर और वहांके निवासियोंके ऊपर उनका विशेष स्नेह प्रेम, दया और मित्रता थी। अभागिनी कृष्णाकुमारीके पिता महाराणा भीमसिंहके साथ उनकी प्रबल मित्रता थी, इसी लिये वह महाराणाके चरित्रोंको जिस भावसे वर्णबद्ध कर गये हैं उसमें उनके प्रेमके अनेक परिचय पाये जाते हैं। यदि सवाई जयसिंहके साथ भी उनकी उसी प्रकार दया और मित्रता होती तो वह ऐसा कभी नहीं लिख सकते थे कि जयसिंहकी शूरवीरता तथा उनका साहस अन्य राजाओंसे हीन था। विशेष करके भारतके इतिहासमें और उन्हींके निर्माण किये इतिहासमें सवाई जयसिंहके बलविक्रमको हमने जिस प्रकारसे पढा है, उससे कभी ऐसा सिद्धान्त नहीं किया जा सकता कि सवाई जयसिंह राजनैतिक रंगभूमिमें विभिन्न युद्ध क्षेत्रमें जिस प्रकारका दृश्य दिखा गये हैं, उससे उनकी कीर्ति कलापका स्मरण नहीं हो सकता यद्यपि महाराज मानसिंहके समान वह दिग्विजयी और महान वीर नहीं थे, किन्तु वह अपने बराबरके वीरोंमें एक अग्रणीय पुरुष गिने गये थे, यह उनके चौवालीस वर्षतक राज्य करनेसे ही विदित है।

टाड महोदय फिर लिखते हैं कि, "राजनीति और न्यायके सम्बन्धमें श्रीसवाई जयसिंहकी जीवनी उच्च आसन पाने योग्य है। हम (अंग्रेज) ने प्रायः इन्हीं राजपूतानेके राजाओंकी कीर्ति और दक्षताके सम्बन्धमें अत्यन्त सामान्य विचार प्रगट किया है, उस सबके प्रकाश होते ही वह भी प्रमाणित होगा। जयसिंहने अपने नामसे जयपुर वा जयनगर नामकी नवीन राजधानी स्थापित की, वह राजधानी उनके

---

(१) कर्नल टाड साहब टीकेमें लिखते हैं "कि उस प्रकार पूर्णालेख्य कवितामें बहुतसे उपकरण आमेरराजके महलमें विराजमान थे, उन सबमें कल्पद्रुम नामका भी एक ग्रन्थ था। उसी ग्रंथमें सवाई जयसिंहके प्रधान २ कार्योंका उल्लेख है। "एकसौ नव गुण जयसिंह" नामक ग्रन्थमें कितने ही विवरण सुने हैं, और वर्णन किये हैं, सवाई जयसिंहने बराबरके सम्राट्, सम्राट्कुमार और देशीय राजाओंको जो अगणित पत्र लिखे थे, इस समय उन सबका अनुवाद करके परिश्रमको सफल विचारा। अंग्रेज बहुतसा परिश्रम करके जिनके चरित्रोंके आचार व्यवहारोंको इतिहासमें लिख गये हैं उन सबके बदलेमें उन पत्रोंको पढनेसे ही उन स्वदेशियोंके आचार व्यवहार भलीभाँतिसे जाने जा सकते हैं। उनके समयके भारतवर्षके इतिहासमें एक प्रधान अर्थात् सम्राट् फर्रुखसियरके सिंहासनच्युतिके सम्बन्धमें सवाई जयसिंहके हाथका एक पत्र लिखा हुआ हमारे हाथ आ गया है, इसमें उन्होंने राणाको लिखा है।"

कर्नल टाडने आशा की थी कि अवश्य ही कोई न कोई अंग्रेज रेसिडेण्ट जयपुर राज्यके सविस्तार इतिहासको प्रणयन करेगा, परन्तु दुःखका विषय है कि उनकी वह आशा आजतक पूर्ण न हुई। जयपुर राजके महान ऊँचे पदपर बहुत दिनोंसे अनेक सम्भ्रान्त शिक्षित बंगाली नियुक्त रहे। वे चाहते तो अनायास ही इस इतिहासको अपनी मातृभाषा वा अंग्रेजी भाषामें लिखकर इसका प्रचार करके प्राचीन इतिहासके तत्त्वका उद्धार कर सकते थे, परन्तु दुःखका विषय है कि विशेष सुबिधा होनेपर भी वह उस विषयमें आजतक हस्ताक्षेप नहीं कर सके। जयपुरके वर्तमान शिक्षित महाराज यदि ऐसा विचार करते तो वह सरलतासे अपने पूर्वपुरुषोंकी कीर्तिसे भरे हुए उक्त इतिहास और पत्रोंको प्रकाश कर सकते थे!

समयमें शिल्प और विज्ञानकी अधिष्ठान क्षेत्र हो गई थी, और उसी नवीन नगरीने अत्यन्त प्राचीन आमेर राजधानीके प्रकाशको लुप्त कर दिया। दोनों राजधानी एक दूसरीसे तीन कोश दूरीपर थीं, इसी कारणसे उस आमेर नगरीके साथ दुर्ग श्रेणीके योगसे नवीन राजधानीका परस्पर मेल हो गया। समस्त भारतवर्षमें एकमात्र जयपुरकी राजधानी ही नियमितरूपसे बनी थी, और सभी राजमार्ग नियमसहित बनाये गये थे। सुना जाता है कि विद्याधर नामवाले एक बंगालीने कल्पना करके राजधानी जयपुरके शहरको बनवाया था। सवाई जयसिंह जो समस्त ज्योतिर्विद्या सम्बन्धी और इतिहास सम्बन्धी आविष्कार और श्रेष्ठता साधन कर गये हैं, उन सबमें उक्त विद्याधर उनका अत्यन्त प्रसिद्ध सहयोगी था, प्रायः सभी राजपूत ज्योतिष विद्या और सामुद्रिक विद्याको भली भाँतिसे जानते थे। परन्तु जयसिंहने विज्ञानके भीतर प्रवेश किया था। वह केवल वैज्ञानिक रीतिकी शिक्षा करके ही शान्त न हुए, वरन् स्वयं एक यथार्थ कार्यसाधक वैज्ञानिक थे। वह ज्योतिष विद्यामें इतने बढ गये थे कि दिल्लीके बादशाह मुहम्मदशाहने इन्हींके हाथमें पंचांगके संस्कारका भार अर्पण किया था, यह ग्रह, नक्षत्र, गति, विधि, चंद्रमा, सूर्यका उदय अस्त, ग्रहण इत्यादि भली भाँतिसे देख लेते थे। उन्होंने निरीक्षण तथा आविष्कारके लिये अपने ज्ञानबलसे बहुतसे यंत्रोंकी रचना की थी, और दिल्ली, जयपुर, उज्जैन, वाराणसी, मथुरा आदि शहरोंमें बहुत करके बडे २ मानमंदिर बनाकर उन समस्त यंत्रोंको वहाँ स्थापित करवाया था तथा उन्हीं सब यंत्रोंके द्वारा गणना करनेमें वे इतने पंडित हो गये थ कि बडे २ ज्योतिषी भी आश्चर्यमें हो जात थे। महाराज जयसिंहने उक्त समस्त यंत्रोंका आविष्कार करनेके पहिले, समरकन्दके राजज्योतिषी उलगवेगके बनाये हुए यंत्रका व्यवहार किया था, परन्तु उन समस्त यंत्रोंसे उनको ईप्सित फल प्राप्त न हुआ। क्रमानुसार सात वर्ष तक भिन्न २ मान मंदिरोंमें परीक्षा करनेके पीछे उन्होंने स्वयं नवीन यंत्र बनाये थे। जिस समय सवाई जयसिंह इस वैज्ञानिक आलोचनामें प्रवृत्त थे, उस समय पुर्तगालसे इमानुएल नामके एक पादरी भारतवर्षमें आये थे, जयसिंहने उनसे पुर्तगालराज्यमें ज्योतिष विद्याकी उन्नतिक विषयमें जानना चहा, और अपने कितने ही विश्वासी सेवकोंको इसी लिये उस पादरीक साथ पुर्तगालके अधीश्वर इमानुएलकी राजसभामें भेजा था,। पुर्तगालके राजा ईमानुएलने जयपुरपति जयसिंहके पास जेवियर डिसिलवा नामके एक प्रवीण ज्योतिषीको भेज दिया। जेवियर डिसिलवाने जयपुरमें आकर, पुर्तगालके डेलाहायरके बनाये हुए समस्त यंत्र जयसिंहको दे दिये, महाराज जयसिंहने उन

---

(१) काशीके मानमंदिरको हमारे अनेक पाठकोंने अवश्य ही दर्शन किया होगा; आजतक भी वह समस्त यंत्र समस्त उपकरणसहित अव्यवहार अवस्थासे उस मानमंदिरमें पतित, तथा दीवारों पर लगे हुए है। उन सबको देखकर बहुतसे पश्चिमी ज्योतिषियोंने जयसिंहकी बडी प्रशंसा की है।

(२) टाड साहब अपने टीकेमें लिखते हैं कि "पुर्तगालकी राजधानीमे लिसबनके राजमहलमें उस सम्बन्धके कोई कागजपत्र पाये गये या नहीं इसका विचार करना कर्तव्य है।

यन्त्रोंकी परीक्षासे उनके सम्बन्धमें निम्नलिखित मन्तव्योंको वर्णबद्ध किया, "यथार्थ परीक्षा करनेके पीछे इन सब यंत्रोंमें नियुक्त की हुई गणना और सिद्धान्तोंको देखकर तथा उनकी बराबरी और समालोचनासे यही प्रकाशित होता है कि वह आधी डिग्री कम हैं, इस कारण वह अत्यन्त भ्रामक हैं, यद्यपि अन्यान्य ग्रहोंके स्थानके सम्बन्धमें उतना भ्रम नहीं है, परन्तु मैं देखता हूँ कि इस मतमें: सूर्य और चन्द्रमाके ग्रहणके सम्बन्धकी गणना ठीक नहीं हुई,६ मिनटका भेद पडता है" । "महाराज जयसिंह तुर्की ज्योतिषीके पीतलके बनाये हुए यन्त्र और तालिकाके सम्बन्धमें भी इसी प्रकारका मत प्रकाश कर गये हैं, तथा उन्होंने अनुमान किया था कि हिपारकस और पोटेलमी भी ऐसे ही यन्त्र बनाया करते थे और उन्होंने कहा कि डेलाहायरकी गणना केवल नीचे-वाली श्रेणीके ग्रहोंके लिये अविरुद्ध हुई है । राजपूत राजा अवश्य ही उस अपने बनाये यन्त्रके लिये अपनेको गौरववान् जाननेके अधिकारी हैं । हमारे स्वजातीय ज्योतिषी डाक्टर डवलिड हन्टर सवाई जयसिंहकी गणना और यन्त्रादिकी सत्यताके सम्बन्धमें विशेष परीक्षा करके प्रसन्न हुए थे" ।

"ज्योतिष शास्त्रके सम्बन्धमें बहुतसी चिन्ता, बहुतसी गणना और बहुतसे श्रम तथा मस्तिष्कश्रमके फलस्वरूप सवाई महाराज जयसिंहने कितने ही नियमोंकी रीति और संकेतकी तालिका बनाई थी; उसी रीति और सिद्धान्तोंके अनुसार इस समय ग्रह नक्षत्रोंकी गतिका संचार, ग्रहणादिकी गणना और पंचांग तैयार किये गये हैं" ।

कर्नल टाड साहब सवाई जयसिंहके ज्योतिष शास्त्रकी दक्षताके सम्बन्धमें जिन मन्तव्योंको प्रकाश कर गये हैं ? उनसे क्या प्रगट होता है ? यह तो अवश्य ही संभव है कि जयसिंह भारतवर्षमें ज्योतिषशास्त्रका पुनरुद्धार कर इसको नवीन जीवन देकर एक बडा भारी कार्य साधन कर गये हैं, वह ज्योतिष विद्यामें बडे भारी पण्डित थे, यही नहीं उनका प्रकाश विलक्षण था और उसी प्रकाशके बलसे वह इस सम्बन्धमें सत्यका आविष्कार कर गये हैं, एकमात्र उस प्रकाशके बलसे केवल भारतवर्षमें ही नही वरन् विलायतमें भी उनका सम्मान हुआ था । टाड साहबकी उक्त उक्ति उसे भी प्रमाणित करती है । उन्होंने जब विलायतमें बडे २ ज्योतिषियोंके भ्रम दिखाये थे, तब यह तो बडी सरलतासे जाना जाता है कि वह ज्योतिषशास्त्रमें बहुत बढे चढे थे, और वह केवल प्राचीन ज्योतिषशास्त्रके ग्रंथोंको संग्रह करके ही शान्त न हुए, वरन् भारतवर्षके बाहिरी देशोंमें, मुसलमानोंमें तथा ईसाइयोंमें जो ग्रंथ प्रचलित थे, उन सभीको बहुतसा धन खर्च करके बडी युक्तिसे संग्रह किया था, उन्होंने रेखागणितकी त्रिकोण-मिति और नेपायरकी बनाई गणितकी पुस्तकोंका संस्कृतमें अनुवाद किया था । इन्होंने विलायतसे भी वैज्ञानिक यंत्र और ग्रंथोंका संग्रह किया था, सारांश यह है कि ज्योतिषशास्त्रके ग्रंथोंको केवल धन व्यय करके ही नहीं पाया था, वरन् राजकाजमें रहकर भी एक वडे भरी कार्यको पालन करके उन्होंने दीर्घ कालतक अपनी मस्तिष्क शक्तिको व्यय किया था । इस ज्योतिषशास्त्रके उन्नति करनेसे वह कीर्तिस्वरूप मुकुटकी उज्ज्वल मणि हो गये हैं ।

प्राचीन तथा आजकलके सभी विज्ञानी नास्तिक कहे जाते हैं । वह अपने विज्ञान-के बलसे ही इस अनन्त संसारके सुन्दर और प्राकृत पदार्थोंको संग्रह करके तथा दृश्यावलीकी सृष्टि, प्रक्रिया-रीति, कार्यकारण, अवान्तर गुण इत्यादिकी गवेषणा करके संसारमें नये नये सत्य तत्त्वोंका प्रचार करनेसे सर्वशक्तिमान सर्वश्रेष्ठ परमेश्वरके अस्तित्वको एकवार ही लोप करनेमें यत्नवान् हुए हैं । आकाशमें अनेक रंगवाला रामधनुष निकला करता है, उसके मानस मोहनी दृश्य देखते ही मन प्रफुल्लित हो जाता है, और उसी महान् विश्व मोहन दृश्यसे भावुक भक्तकी भक्ति उस महापुरुषकी ओर दौडती है, परन्तु विज्ञानके जाननेवाले नाक चढाकर कहते हैं, " कि कुछ नहीं है, कुछ नहीं है ! सूर्यकी किरण और जलकी वर्षा इस दोनोंका मिलान होनेसे रामधनुषका जन्म हुआ है, कितने ही रसायनिक पदार्थोंके संयोगसे ही ऐसे मनोहर दृश्यकी उत्पत्ति हुई बतलाते हैं और जगत्‌शुद्ध मनुष्य कहते हैं कि यह रामधनुष नहीं है, वरन् इसको रामचक्र कहना चाहिये । इसका आकार धनुषके समान नहीं है वरन् चक्रके समान है । यदि हम इसको आधा देखते तो धनु कह सकते थे परन्तु वास्तवमें इसका आकार चक्रके समान है " । विज्ञानियोंको इस युक्तिमें प्रेम नहीं है, भक्ति नहीं है, महान् भाव नहीं है, ईश्वरके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है, केवल एकमात्र रसायनका सम्बन्ध है । भावुक भक्त जिस दृश्यको देखकर अनन्त शक्तिमानकी अनन्त शक्तियोंका स्मरण करते हैं, विज्ञानके जाननेवाले उस दृश्यमें केवल रसायनकी क्रीडा देखते हैं, इसी कारणसे उन्होंने ईश्वरकी उस अनन्त शक्तिको स्वीकार नहीं किया, पश्चिमी जगत्‌के टिंताल इत्यादि आधुनिक विज्ञानी इस मतमें नास्तिकरूपसे संसारमें प्रसिद्ध हैं । टिन्तालने विज्ञानकी सहायतासे सम्पूर्ण जगत्‌के प्रत्येक पदार्थको अलग २ करके एक रसायन पदार्थको पाया है, अणुके ऊपर परमाणु, परमाणुतककी विज्ञानके बलसे उन्होंने परीक्षा करके कहा है कि " हमने अज्ञय परमाणुतकको देखा, इसके अतीत यदि कुछ है तो उसको हम नहीं जान सकेत । वही अतीत अज्ञेयपदार्थ यदि सृष्टिका मूल हो और यदि इसीको ईश्वर कहते हो तो कहो " यह प्रेमिक भक्तके हृदयकी उक्ति है ? अर्थात् नहीं ।

प्राचीन और आधुनिक विज्ञानियोंने इस अनन्त विश्वकी अनन्त ग्रह नक्षत्रादिकी गति, क्रिया इत्यादिकी खोजमें नियुक्त होकर कहीं भी उस सर्वशक्तिमानकी शान्तिमय मूर्तिका पता न पाया, परन्तु विज्ञान् विशादर सवाई जयसिंहने उनके समान एक ही मार्ग पर चलकर उन सम्पूर्ण ग्रह नक्षत्रोंमें पार्थिव पदार्थोंके दृश्यमें क्या देखा ? गवेषणामें नियुक्त उनके हृदयका तंत्र किस सुरसे बज उठा है, इस अनन्त विश्वमय पुस्तकके प्रत्येक पत्रेमें उस अनन्त प्रेममयकी शान्तिशाखाका मुखकमल देखकर उनके हृदयने किस तानको लेकर प्रेमभक्तिका गान गाया था ? विज्ञान विशारद सवाई जयसिंह अपने वनायेहुए ग्रन्थके मुखबंधमें लिखते हैं कि,–"जगदीश्वरकी अनन्त महिमाकी जय हो " गाढविज्ञानी तत्त्वदर्शियोंकी भिन्न २ रूपसे दृष्टि शक्तियुक्त प्रतिभा उन महेश्वरके अनन्त विश्वकी खोजमें अणुमात्र समर्थ होकर मानो उस ऊँची महिमाके कीर्तनमें अपनी

असामर्थ्यता स्वीकार करती है और इसी प्रकार "उस महेशकी महान् शक्तिकी जय हो" जो सब ज्योतिषी हैं, जो अनन्त सौर जगत् और नक्षत्र जगत्के परिमाण कार्यमें नियुक्त हैं, उनकी वह गवेषणा वह आलोचना मानो उन महान् शक्तिकी कीर्तिके वर्णनमें अपनी अयोग्यता दिखा रही है और वह ज्योतिषी मानो उसी दृश्यको देखकर मोहित होना स्वीकार करते हैं। जिन महेश्वरकी अनन्त सामर्थ्ययुक्त पुस्तकोंके अनन्त आकाशके मध्यमें प्रबल २ ग्रहमण्डली केवल कई एक पत्रके समान स्थित है और प्रभा करनेवाली तारकामण्डली भी असीम आकाशके आंगनमें जिस अनन्त शक्तिमानके संसाररूपी राज्यके धनागारकी छोटी २ मुद्रास्वरूप हैं, उन्हींके पवित्र नामकी जय हो, और हम उन्हीं राजराजेश्वरके चरणोंमें भक्तिके वश होकर प्रणाम करते हैं।

भजन पूजन साधनहीन प्रेम भक्तिके आलिंगनसे रहित पश्चिमी, प्राचीन और आजकलके विज्ञानी इस अनन्त विश्वकी खोजमें नियुक्त होकर कहीं भी उस मण्डलमय देवादिदेवके आविर्भावको न देख सके; किन्तु प्रेमभक्तिकी लीलाक्षेत्र भारतभूमिमें, जगत्के प्रत्येक पदार्थमें, ईश्वरके आस्तित्वको माननेवाले भारतके एकमात्र जयसिंहने उस गवेषणामें नियुक्त होकर भी केवल रसायनकी क्रीडाको न देखा, वरन् उन्होंने अनन्त शक्तिकी अपार लीलाको देखा, वह पश्चिमी नास्तिक विज्ञानियोंके सम्बन्धमें क्या लिख गये हैं ? उन्होंने सबसे पहिले असीम साहसके साथ निर्भय हो अपने ग्रन्थोंमें वर्णन किया है, " कि जगदीश्वरकी सर्व मंगलमय अनन्त शक्तिका पीछा करनेमें असमर्थ होकर ही हिपारकसने (प्राचीन वैज्ञानिक) निर्बोध कृषकके समान विरक्ति उत्पन्न की है, और जगदीश्वरकी महान् सामर्थ्यकी कल्पनाके सम्बन्धमें पोटेलमी उल्लूक स्वरूप है, वह कभी सत्यरूपी सूर्यके सम्मुख नहीं हो सकता, रेखागणितकी व्याख्या केवल महान् सृष्टिके असंपूर्ण आलेख्यकी कल्पित रेखामात्र है"। प्राचीन प्रधान २ वैज्ञानिकोंके अनीश्वरवादके विरुद्धमें जयसिंह जो यह अव्यर्थ बाण प्रयोग कर गये हैं, क्यों नहीं उससे उनके साहसज्ञानकी ऊंची प्रशंसा की जाय ? जयपुरपतिने फिर लिखा है कि " इस अनन्त ज्ञानमयकी इस असीम विश्वसृष्टिके विमुग्धदर्शक सवाई जयसिंह हैं। जिस दिन उनके हृदयमें ज्ञानका संचार हुआ है उसी दिनसे आरम्भ करके वह ज्ञान जितने दिनोंतक निर्मल होकर बढा था, उतने दिनोंतक केवल गणितविज्ञानकी आलोचनामें यह सब प्रकारसे नियुक्त थे, और उनका चित्त उसी कठोर समस्याके पूर्ण करनेमें लग रहा था। महान् विश्वस्रष्टाकी सहायतासे उन्होंने इस विज्ञानके मूलसूत्र और रीतिको जान लिया।"।

---

(१) हमारी सम्पूर्ण इच्छा होनेपर भी बहुतसे ग्रन्थोंको प्राप्त कर तथा अन्य कई एक कारणोंसे हम जयसिंहके बनाये हुए वैज्ञानिक ग्रथ और गणनाकी रीतिको यहां लिखनेमें असमर्थ हैं, इस कारण हमको महा दुःख है, विलायतके वैज्ञानिक डाक्टर हण्टर एसियाटिकरिसर्चेस, ५ वीं वाल्म १०७ पृष्ठमें महाराज जयसिंहके बनाये यंत्र और अवलम्बित गणना प्रणालीके सम्बन्धमें एक प्रवन्ध लिख गये हैं, अंग्रेजी भाषा जाननेवाले पाठक उसे पढकर अपने संदेहोंको दूर कर सकते हैं, और उनको यह भी विदित हो जायगा कि महाराज जयसिंह ज्योतिषशास्त्रके कितने पंडित थे।

सवाई जयसिंह केवल अनेक भाषाओंमें लिखे हुए ज्योतिषशास्त्रके सम्बन्धके तथा गणित सम्बन्धके ग्रन्थोंको संग्रहकर और उनका अनुवाद संस्कृतमें कर,उनको बहुत परिश्रमसे पढकर उनकी आलोचनासे महान् पंडित हो गये थे, और अनेक स्थानोंमें मान मन्दिर स्थापन कर बहुतसी खोज करके ज्योतिषके यन्त्रोंको बनाय गणनाकी रीतिको नियत कर भारतवर्षमें ज्योतिष विद्याकी महान् उन्नति कर गये हैं, इतना ही नहीं कि वह केवल उन्नति करके ही शान्त हुए हों, वरन् वह विलायतके प्रधान २ ज्योतिषियोंको अपने यहां बुलाते और उनका बडे आदर भावके साथ अधिक सम्मान करते थे। प्रसिद्ध ज्योतिषशास्त्रके वेत्ता बंगालियोंको विद्याधरके समान तथा अन्यान्य ज्योतिषियोंको भी अपनी राजधानीमें बुलाते और उनको बडे आदरसे अपने यहां जागीरें देते थे। अब यह सरलतासे अनुमान किया जा सकता है कि भारतवर्षमें उन्हींके समयसे ज्योतिषविद्याकी अधिक उन्नति हुई और इसका प्रबल विस्तार हुआ है।

कर्नल टाड साहबने फिर लिखा है, कि "विज्ञानसम्बन्धी उक्त मानमन्दिर बनानेके अतिरिक्त जयसिंहने यात्रियोंके निवास करनेके लिये अपने राज्यमें अनेक स्थानोंपर बहुतसा धन खर्च करके अनेक धर्मशालाएँ बनवाई हैं"। हम इस बातको कह सकते हैं, यद्यपि पूर्वतन देशीय राजा अपने २ राज्यमें अनेक स्थानोंपर अतिथि—शाला और धर्मशाला बनाया करते थे, परन्तु सवाई जयसिंहने उस रीतिके सम्मानकी रक्षाके लिये धर्मशाला इत्यादि नहीं बनाये। उनका हृदय उदार था, पराये दुःखको देखकर वे दुःखी होते थे,उन्होंने संसारके हितके लिये इस व्रतका अवलम्बन किया था, उसी पराये दुःखसे दुःखी और हितसाधनके व्रतने ही उनको अनेक धर्मशालाएं इत्यादि बनानेमें बाध्य कर दिया था।

कर्नल टाड साहबने पहिले कहा है कि जयसिंहके साहसमें राजपूत वीरोंके समान ज्वलन्त प्रकाश नहीं था, और वही टाड फिर इस स्थानपर लिखते हैं, "कि जब हम विचार करते है कि, जिस समय भारतवर्षमें अविश्रान्त युद्धकी अग्नि प्रज्वलित हो रही थी, और सम्राट्की सभामें क्रमानुसार षडयन्त्रके जालका विस्तार हो रहा था,

---

(१) डाक्टर डबलिउ हण्टर जिस समय भारतबर्षमे आये थे, उस समय उन्होंने जयसिंहके बनवाये हुए मानमंदिर तथा यन्त्रादिकी परीक्षा करके जयसिंहकी बुद्धिमानीकी विशेष प्रशसा की थी। वह जिस समय उज्जैनमे गये उस समय एक युवक पंडितके साथ उनकी बातचीत हुई। उस पंडितके पितामह महाराज जयसिंहके परममित्र थे, और उन्हें "ज्योतिषरायकी उपाधि दी गई थी। जयसिंहने उन ज्योतिषरायको पॉच हजार रुपये सालकी जागीर भी दी थी। परन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि अत्याचारी महाराष्ट्रोंके उपद्रवसे वह भूखण्ड एकबार ही विध्वंस हो गया था। डाक्टर हण्टर उक्त युवकके साथ वार्तालाप करके ज्योतिषशास्त्रमें जो वह महान् पंडित थे इसको भली भांतिसे जान गये थे, और प्रकाशमें भी उनको ज्योतिषका महान् पंडित विख्यात कर गये है। डाक्टर हण्टरके उज्जैनसे चले जानेके कुछ काल पीछे अर्थात् सन् १७९३ ईसवीमें उक्त पंडितने प्राण त्याग किये थे।

" उस षड्यन्त्रसे यह अपनेको न बचा सके, उस भयंकर उपद्रवके बीचमें रहकर भी यह विज्ञानशास्त्रकी ऐसी उन्नति कर गये हैं कि जब हम उसकी खोज करते हैं; कि राष्ट्रविप्लव, साम्राज्यका विध्वंस साधन और धूम्रकेतुके समान हठात् महाराष्ट्र जातिके प्रबल उत्थानमें उन्होंने भयंकर विपत्तिमें अपनी ही निर्विघ्नतासे रक्षा न की, वरन् चारों ओर अराजकतामें एकमात्र आमेर राजकी समस्त धन, सम्पत्ति और उन्नतिमें अधिक रक्षा की थी, तब हम अवश्य ही इस बातको मानते हैं कि वह एक असाधारण मनुष्य थे। यह वह भली भांतिसे जान गये थे कि मुगलराज्यका पतन शीघ्र ही हो जायगा, यद्यपि उन्होंने उस राज्यके पतनकी सुबिधा प्राप्तिमें अपने राज्यकी उन्नति करनेका ध्यान रक्खा था, तथापि उन्होंने सम्राट्के साथ विश्वासघात नहीं किया, कारण कि जिस समय फर्रुखसियरके प्राणनाश और उनके हाथसे राज्य छीननेका षड्यन्त्र हो रहा था उस समय कईएक सामान्य राजाओंने फर्रुखसियरका साथ दिया था, इनमें महाराज जयसिंह भी थे, जिस भांति तैमूरके अन्यान्य वंशधर असीम साहस और बल विक्रमसे विभूषित थे, फर्रुखसियर भी यदि उन समस्त गुणोंमेंसे एक कणमात्रके भी अधिकारी होते तो यह जयसिंह इत्यादि अन्यान्य राजा उनके लिये अवश्य ही प्राण तक दे देते "। महात्मा टाड साहबने यहांपर सब प्रकारसे सत्यके सम्मानकी रक्षा की है। आमेरपति सवाई जयसिंह भी एक असाधारण मनुष्य थे, इसमें किंचित् भी संदेह नहीं। यद्यपि रजवाडेके इतिहासमें राजाओंके बीचमें हम बहुतसे राजाओंको महाबलवान्, असीम साहसी, दृढप्रतिज्ञ तथा गाढनीतिज्ञ देखते हैं; परन्तु जयसिंहके समान किसीको भी सर्वगुण विभूषितकी उपाधि नहीं दे सकते।

साधु टाड साहब फिर लिखते हैं, कि " मेवाडके महाराणाके वंशधरोंके साथ जयसिंह जिस समय राजनैतिक और वैवाहिक सम्बन्धमें आवद्ध थे, उक्त राज्यके उस समयके इतिहासमें उनके प्रकाशमें जीवनकी बहुतसी घटनाओंका वर्णन भलीभांतिसे हुआ है, जिस समय सय्यदके दोनों भ्राताओंने उनके स्वामी फर्रुखसियरको मारकर राज्यमें प्रबल सामर्थ्य दिखाई थी, उस समय उन्होंने अपनी बुद्धिकी चतुरतासे अप्रयोजन दिखाकर अपने शत्रुओंके बढानेकी अभिलाषा नहीं की, और महाराज जयसिंह भी स्वामी फर्रुखसियरको कायर पुरुषोंके समान देखकर उनके उद्धारमें हतउद्योग हो अपने पिताकी राजधानीमें जाकर परम प्रिय ज्योतिषशास्त्र और इतिहासकी आलोचनामें लिप्त हुए। फर्रुखसियरकी मृत्युके पीछे राज्यमें जो राजनैतिक विप्लव होते रहते थे, तीन वर्ष पीछे सन् १७२१ ईसवीमें सम्राट मुहम्मदशाहके द्वारा वह प्रतिद्वन्द्वी सैयद दोनों भ्राता मारे गये, और बादशाहकी विजय होते ही उन उपद्रवोंकी शांति हो गई। प्रकाशमें तीन वर्षतक सवाई जयसिंह उन राजनैतिक उपद्रवोंमें लिप्त न रहकर विश्राम पा रहे थे, मुहम्मदशाहके जय प्राप्त करनेपर उसने जयसिंहको ज्योतिषशास्त्रकी आलोचनाके लिये अपने यहां बुलाया, और इनको क्रमानुसार प्रतिनिधिके स्वरूपसे आगरे और मालवेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त किया। इस स्थायी शांतिके समयमें

जयसिंहने उक्त मानमंदिरोंको बनवाया था, वही भारतवर्षमें. उस समयके कृष्णजलद जालसेपूर्ण इतिहासमें उज्वलतासे प्रकाशित हो रहे हैं।

यद्यपि सवाईसिंहने ज्योतिषशास्त्र और इतिहासकी उन्नतिका व्रत लिया था। परन्तु वह एक दिनको भी स्वजातिके स्वार्थकी रक्षा और आमेरके गौरव बढानेमें हतउद्योग नहीं हुए। उन्होंने सम्राट्के यहां अत्यन्त ऊंचापद पाकर सम्राट्के यहां जो अत्यन्त घृणित जिजियाकर चिरकालसे चला आता था उसको उठा देनेका उद्योग किया, और इसमें उन्होंने सब प्रकारसे सफलता भी प्राप्त की। आमेर राज्यके निकट ही अत्यन्त बलवान् जाटोंकी सम्प्रदाय क्रमानुसार मस्तक उठाकर आमेरराज्यमें कंटक-स्वरूप हो गई थी, उन नवीन बलवानोंके दमन करनेमें भी इन्होंने अपनी विलक्षण नीतिज्ञता और चतुरता दिखाई। सन् १७३२ ईसवीमें जिस समय जयसिंह फिर प्रधान शासनकर्तापदपर नियुक्त हुए, उस समय नवीन बलसे बलवान् हुए महाराष्ट्र संहार-मूर्ति धारण कर, दक्षिणसे निकले और अन्यान्य देशोंको विजय करते हुए यवनराज्यके विनाशका उपाय करने लगे। उस समय जयसिंह अपनी चतुरतासे इस बातको भली भांतिसे जान गये थे कि महाराष्ट्र जातिसे भारत साम्राज्यकी रक्षा होनी असंभव है, इस कारण वह शीघ्र ही उस समय अपने राज्यका स्वार्थरक्षामें दृढप्रतिज्ञ हो गये। कर्नल टाड साहबने लिखा है, कि "हम नहीं जानते कि जयसिंहने महाराष्ट्रोंके नेता बाजीरावके साथ किस कारणसे संधि की थी। जयसिंहकी सामर्थ्य और सहायतासे ही बाजीराव मालवेमें सूबेदार हुए। देशीय सामयिक इतिहासवेत्ताने लिखा है, कि "दोनो सद्धर्म अर्थात् एक ही धर्मके थे इसीसे उनमें मित्रता उत्पन्न हुई, परन्तु हमारा ऐसा विचार है कि उक्त कारणके सिवाय अवश्य ही और कोई प्रबल कारण था अर्थात् जयसिंहके इसी आचरणसे महाराष्ट्रोंके साथ उनका विवाद न बढा, बाजीराव जो मालवेकी सूबेदारीपर नियुक्त किये गये, इसमें स्वदेशीय स्पष्टतास कहते हैं, कि महाराष्ट्रोंके हिन्दुस्थानके मार्गको महाराज जयसिंहने ही साफ कर दिया है, परन्तु महाराज जयसिंहने उक्त आचरणोंसे महाराष्ट्रोंके ऊपर जिस प्रकारकी प्रभुताका विस्तार किया था इससे उस समयके उनके स्वामी यवनसम्राट्के पक्षमें वह विशेष उपकारी हो गया था, कारण कि एकमात्र उसीसे महाराष्ट्रोंके प्रबल प्रताप और देशपर अधिकार करनेका स्रोता कुछ दिनोंके लिये थम गया था, परन्तु पीछे वही स्रोता सम्राट्की राजधानी दिल्लीतक गया और कई वर्ष पीछे सन् १७३९ ईसवीमें नादिरशाहने भारतपर आक्रमण किया। उस समय राजपूत वीरगण बुद्धिबलसे अपने स्वार्थकी ओर विशेष ध्यान देकर नादिरशाहके साथ सम्राट्के पक्षपाती होकर युद्धमें नहीं गये, कारण कि वह उस समय यह भली भांतिसे जान गये थे कि एक

(१) टाड साहब टीकेमें लिखते हैं, कि "राजा जयसिंहने कहा है कि मैंने सन् १७२८ ईसवीमें ज्योतिष गणनाकी रीति और यन्त्र बनानेके कार्यको शेष किया, और इससे पहिले सात वर्ष तक इनकी खोजमें तथा इनकी आलोचनामें लगा रहा।"

तलवारके बलसे अथवा कूट राजनीतिके द्वारा नादिरशाहके उस आक्रमणको दूर करना सर्वथा असंभव है। राजपूत राजा उस समय बादशाहका विशेष सम्मान करते थे, परन्तु उस समयमें यवनराज्यकी रीति ऐसी अयोग्य और घृणित थी, कि उससे यवनसम्राट्के साथ देशीय राजाओंका सम्बन्धबंधन एकदम दूर हो गया था"।

महाराज जयसिंह एकसौ नौ गुणोंसे विभूषित होनेके कारण एक असाधारण पुरुष थे। इसीसे वह सारे रजवाडेमें प्रसिद्ध हो गये थे। इसके सम्बन्धमें एक ग्रंथ भी लिखा है। साधु टाड साहबने उन एकसौ नौ गुणोंमेंसे जयसिंहके कईएक गुण-सम्बन्धी कहानी संग्रह की थी, परन्तु दुःखका विषय है कि उन्होंने सबको प्रकाश नहीं किया। तथापि वह यहाँपर कईएक घटनाओंको उल्लेख कर गये हैं, हमने उसके सम्बन्धमें विना कुछ कहे ही पहिले उन घटनाओंको अविकल प्रकाशित किया है। टाड साहबने इन घटनाओंको बहुविवाहका विषमय फलस्वरूप कहा है।

टाड साहब लिखते हैं, कि "महाराज विशनसिंहके दो पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम जयसिंह और दूसरेका नाम विजयसिंह था। दोनोंका जन्म भिन्न २ माताओंके गर्भसे हुआ था; अपने पुत्रका अमंगल होगा, इस पर बडी विपत्ति आवैगी यह विचारकर विजयसिंहकी माताने इनको अपने पिताके यहाँ भेज दिया। जब विजयसिंह नानाके यहाँ रहकर बडे हो गये तब उनकी माताने बादशाहकी दया और अनुग्रहके पात्र होनेके लिये इनको दिल्लीके बादशाहकी सभामें भेज दिया। माताने पुत्रको भेजनेके समय बादशाहके दरबारके प्रधान २ अमीर, उमराव और राजकर्मचारियोंको हस्तगत करनेके निमित्त रिश्वतस्वरूपसे पुत्रके हाथमें अपने बडे कीमती जडाऊ कंगन और गहने पहरा दिये, विजयसिंहने उन समस्त अलंकारोंको उपहारमें देकर बादशाहके प्रधानमंत्री कमरुद्दीनखाँको अपने हस्तगत कर लिया। विजयसिंह बादशाहके यहाँ राजकार्यमें नियुक्त होनेके लिये तथा सेनामें नेता बननेकी इच्छासे दिल्लीमें नहीं गये थे। आमेर राज्यमें बसवा नामका जो देश अत्यन्त ऊपजाऊ था वह उस देशके समस्त अधिकारकी प्राप्तिके लिये चेष्टा करना चाहते थे। विजयसिंहके सौतेले भाई आमेरपति जयसिंहने अपने सौतेले भाईकी उस कामना पूर्ण करनेमें एक मुहूर्त्तका भी विलम्ब न किया। विजयसिंह यद्यपि भ्राताके इस स्नेह और दयासे अत्यन्त प्रसन्न हुए, परन्तु विजयसिंहकी माता और जयसिंहकी मातामें सौतियाडाह बढ़ने लगा। उन्होंने पुत्रसे कहा, कि केवल "बसवादेशके लेनेसे क्या होगा, तुम प्रधान मंत्री कमरुद्दीनखाँसे कहो कि, वह बादशाहसे कहै जिससे कि जयसिंहको सिंहासनसे उतारकर आमेरके सिंहासनपर तुम्हारा तिलक करें; तुम्हारा यह काम उनके द्वारा हो सकता है। यदि ऐसा हो गया तो मैं, तुमको पाँच करोड रुपये पुरस्कारमें दूंगी, और सम्राट् जिस समय आज्ञा देंगे उसी समय पाँच हजार अश्वारोही सेना लेकर उनकी सेनाके साथ योग दिया जायगा"। विजयसिंहने माताकी इस आज्ञाके पालन करनेमें किंचित् भी विलंब न किया, उसी समय प्रधान मंत्री कमरुद्दीनके

पास जाकर सब समाचार कह सुनाया; कमरुद्दीनने तत्काल ही यह वृत्तान्त बादशाहसे कहा। सम्राट्ने सुनकर कहा, "अच्छा जयसिंहको सिंहासनसे उतारकर विजय-सिंहको आमेरका राज्य दे दिया जायगा, तब जो विजयसिंह पाँच करोड रुपये देंगे, और पाँच हजार अश्वारोही सेना आवश्यकता होनेपर मदत देगी, इसका जामिन कौन है?" मंत्रीने कहा 'मैं ही इसका जामिन रहा'। अपने प्रधानमंत्री की ही बातपर विश्वास करके सम्राट्ने उसी समय विजयसिंहको आमेरका राज्य देनेके लिये सनद तैयार करनेकी आज्ञा दी। सवाई जयसिंहने खाँन दौरानखाँ नामक एक चतुर मुसल्मान अमीरसे " पगडी बदल भाई " अर्थात् भातृसम्बन्ध स्थापन किया था। उक्त खाँसाहब बादशाहके यहाँ ऊँचे पदपर स्थित थे, जिस समय उन्होंने गुप्त रीतिसे यह समा-चार सुना कि जयसिंहको सिंहासनसे उतारकर विजयसिंहको आमेरके राजछत्रके नीचे बैठालनेकी तैयारी हो रही है, तब उन्होंने कृपाराम नामक दूतको गुप्तभावसे यह सब समाचार कह सुनाया, दूत कृपारामने तुरन्त ही यह समचार जयसिंहके पास भेज दिया। इस समय दिल्लीमें बादशाहकी सभामें कमरुद्दीनखाँ अपनी प्रबल सामर्थ्य विस्तार करनेके कारण बहुत ऊँचे पदपर पहुँच गया था। जयसिंह कृपारामके दिये हुए इस पत्रको पढकर अत्यन्त ही दुःखित हुए, फिर उन्होंने अपने विश्वासी नाजिरको बुलाकर उसको वह पत्र दिया। नाजिरने पत्र पढकर कहा "जिस प्रकारका भयंकर काण्ड उपस्थित है, उसमें किसी प्रकार भी तलवारकी सहायता नहीं ली जा सकती, इसमें धन, बल यह सभी व्यर्थ जायगा, इसमें तो केवल राजनैतिक कौशलसे साम, दाम, दंड, भेद इत्यादिसे विजय होगी, और षडयन्त्री विजयसिंहके द्वारा ही यह षड्-यंत्र जाल छिन्नभिन्न हो जायगा। नाजिरकी अनुमतिसे जयसिंहने अपने राज्यके प्रधान २ सामन्तोंको बुला भेजा। नाथावत् संप्रदायके प्रधान नेता सामन्त मोहनसिंह, बांसखोके सामन्त दीपसिंह कुंभानी, सुवरम, पोताके सामन्त जोरावरसिंह, नरूका सामन्त हिंमतसिंह, झोलायके सामन्त कुशलसिंह, मोजाबादके सामन्त भोजराज और माओलीके सामन्त फतेसिंह इत्यादि सभी इकट्ठे हुए। जयसिंहने उनके संमुख अपने ऊपर आनेवाली विपत्तिकी वार्ता सुनाकर कहा, कि "आपने मुझे आमेरके राज्यपर अभिषिक्त किया है, और मेरे भाई जो एकमात्र वसवाको पाकर ही संतुष्ट हो गये थे, नवाब कमरुद्दीन उनको जबरदस्तीसे आमेरराज्यका सिंहासन देते हैं "। यह वचन सुनकर सभी सामन्तोंने एक स्वरसे आमेरपति जयसिंहको धीरज बँधाते हुए कहा, "कि आप कुछ भी चिन्ता न करिये " यदि आपने सरलभावसे यह स्थिर कर लिया है कि, वसवा देश विजयसिंहको दे देंगे तो हम प्रतिज्ञा करके कहते हैं, कि हम स्वयं ही इन समस्त उपद्रवोंको शान्त करा देंगे।" जयसिंहने तुरन्त ही सामन्तोंके विश्वासके लिये विजयसिंहको वसवादेशका समस्त अधिकार देनेके लिये दानपत्र बनवाकर उसे सामन्तोंको दे दिया, और उन सबको प्रतिनिधिस्वरूपमें समस्त कार्य करनेके लिये कहा। आमेरमें जब यह पंचायत हो गई तब सामन्त मंडलीने अपना एक २ मंत्री विजयसिंहके पास भेजा और जो कुछ कहना था वह सभी उससे

कह दिया। विजयसिंहने सामन्तोंके प्रतिनिधियोंसे मिलकर स्पष्ट कह दिया "कि मुझे अपने भाईकी प्रतिज्ञा तथा उनकी बातका कुछ भी विश्वास नहीं है"। परन्तु जो मनुष्य इनके पास आये थे उनमेंसे "बाराकोटडी आमेरका" अर्थात् आमेर राजवंशके बारह प्रधान २ शाखाओंके नेताओंने "सीताराम" नामका उच्चारण करके जामिन बनकर कहा, "यदि जयसिंह अपनी प्रतिज्ञासे हट जायगा तो हम सभी आपका पक्ष लेंगे और हम ही आपको आमेरके सिंहासन पर बैठाल देंगे"।

"विजयसिंह बहुत समझाने बुझानेपर राजी हुए, सवाई जयसिंहने जो बसवाके समस्त अधिकारोंका दानपात्र भेजा था उसको उन्होंने ग्रहण किया। विजयसिंह उसी सनदको लेकर अपने परम हितैषी कमरुद्दीनखांके पास गये और जाकर सारा वृत्तान्त कह सुनाया, यह सुनकर खाँसाहब सन्तुष्ट न हुए। खैर उन्होंने खांनदौरान और कृपारामको आज्ञा दी, कि आप दोनों जने विजयसिंहके साथ जाइये, और इसपर ध्यान रखना कि यह बसवादेशके अधीश्वर पदपर स्थित होते हैं। आमेरके सामन्त विजयसिंहको राजी हुआ देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए, और ऐसे उपाय करने लगे कि जिससे दोनों भ्राताओंमें फिर सौहार्द प्रेम स्थापित हो जाय; सामन्तोंके प्रस्तावके अनुसार विजयसिंहने अपने भाईके साथ साक्षात् करनेसे नाहीं नहीं की, परन्तु उन्होंने कहा कि मैं भाईसे मिलनेके लिये आमेरकी राजधानीमें नहीं जाऊंगा, आमेरके प्रधान सामन्तोंकी इच्छा थी कि किसी न किसी तरह दोनों भ्राताओंका साक्षात् हो जाय, परन्तु विजयसिंह किसी विशेष कारणसे चोमूमें न गये और जयपुरसे पश्चिमको जो तीन कोश दूरीपर साँगानेर नगर है वहां जाकर डेरोंमें रहने लगे।

इस ओर जयसिंह अपने सौतेले भाई विजयसिंहके साथ मिलनेके लिये सामन्तोंके घरसे बाहर हो रहे थे कि, इसी समय पूर्वोक्त नाजिरने आकर सबके सामने जयसिंहके निकट कहा, कि "महारानी माताने मुझे आपके पास भेजा है।" उन्होंने कहा है, कि "लालजीमें[1] जो दोनों भाइयोंका परस्पर मेल और सद्भाव स्थापित होगा सो ऐसे आनन्ददायक दृश्यको देखनेसे मुझे क्यों वंचित किया गया है?" यह सुनकर महाराज जयसिंहने कहा; कि सामन्तोंसे पूछा जाय, "यदि वह महारानी माताके वचन माननेके लिये राजी हैं तो माता वहां जा सकती हैं"। सामन्तोंने तुरन्त ही इसके उत्तरमें कह दिया "कि इसमें हमें कुछ आपत्ति नहीं है, महारानी माता अवश्य ही जा सकती हैं"।

"सामन्तोंकी आज्ञा पाकर नाजिरने बडी शीघ्रतासे रानीके लिये पालकी सजानेकी आज्ञा दी। रानीकी अनुगामिनी अन्तःपुरकी स्त्रियोंके लिये तीन सौ रथ सजाये गये। परन्तु पालकीके भीतर वृद्धा रानीके बदलेमें महावीर भट्टीसामन्त उग्रसेन स्वयं विराजमान हुए और प्रत्येक रथके भीतर स्त्रियोंके बदले दो दो जने अत्यन्त विश्वासी "शिलहपोश" अर्थात् शस्त्रधारी सैनिक सुसज्जित होकर बैठे। सामन्तगण तो पहिले ही महाराजके साथ चले गये थे। वे इस तैयारीका अनुभव स्वप्नमें भी न कर सके, एकमात्र जयसिंह

---

(१) राजपूतोंकी माता पुत्रको "स्नेहसूचक शब्द "लालजी" कहकर पुकारती हैं।

और बुद्धिमान् नाजिरकी ही सलाहसे यह तैयारी हुई थी। उग्रसेन और साधारण अस्त्रधारी वीरोंके अतिरिक्त प्रजामें इस बातकी और किसीको भी खबर नहीं थी; जिस समय पालकी और तीन सौ रथ महा धूमधामके साथ राजमार्गसे चलने लगे, उस समय रजवाडेकी प्रचलित रीतिके अनुसार राजाके सेवकोंने पालकीके पीछे २ सुवर्णकी मुद्रा वर्षाई, सभीने मानो यह सिद्धान्त कर लिया कि इस पालकीमें वृद्धरानी ही जा रही हैं, और उन्हींके सेवक मुद्रा वर्षाते हुए जा रहे हैं, अन्तमें राजमार्गमें बहुतसी भीड होने लगी, दीनदरिद्र उन लूटीहुई मोहरोंको लेकर महाराजका गुणानुवाद गाने लगे और साधारण प्रजा दोनों भ्राताओंके सम्मिलनको सुनकर आनन्दके समुद्रमें मग्न हो गई।

"महाराज जयसिंह और सामन्त गण यह तो पहिलेसे ही सांगानेरमें आकर राजमाताकी बाट देख रहे थे, कि इसी बीचमें एक दूतने आकर कहा, कि रानीसाहिबा सांगानेरके महलमें चली गई है। यह समाचार पाते ही महाराज जयसिंह घोडेपर सवार हो महलकी ओर चले। रास्तेमें ही जयसिंहके साथ विजयसिंहका साक्षात् हुआ। दोनों भ्राता परस्पर आलिंगन करके मिले, और फिर स्नेह और प्रेमभरे वचन कहने लगे; जयसिंहने विजयसिंहको अत्यन्त हर्षित हो बसवा देशकी शासन सनद देकर कहा, "यदि विजयसिंह आमेरके सिंहासनपर बैठनेकी अभिलाषा करें तो मैं प्रसन्न होकर उनको आमेरका राज्य दे दूंगा, और मैं बसवादेशमें ही जाकर राज्य करूंगा।" विजयसिंहका हृदय जयसिंहके इस प्रेमभरे वचन सुनकर बिचलित हो गया, और वह तुरन्त ही बोले; "अब मेरी सम्पूर्ण आशा पूर्ण हो गई"। इस प्रकार दोनों राजभ्राता और सामन्तोंमें कुछ कालतक वार्तालाप होनेके उपरान्त वे चलनेको हुए, कि इसी समय महारानीकी ओरसे नाजिरने आकर कहा, कि "यह सामन्त कुछ कालके लिये यदि यहांसे चले जांय तो महारानी माता यहां आकर अपने दोनों पुत्रोंको देखेंगी, या आप ही महारानीके कमरेमें चलिये"। महाराज जयसिंहने यह सुनकर कहा, "कि आप सामन्तोंसे पूछिये यह जैसा कहेंगे वही हमारा मत है, यह सुनकर सामन्तगण दोनों भाइयोंको महारानीके आनेके लिये कहकर आप सब वहांसे दूसरे कमरेमें चले गये। कुछ कालके पीछे जयसिंह उठकर जिस कमरेमें महारानी थीं उसीमेंको जानेके लिये विजयसिंहके साथ चले। कमरेके द्वारपर एक पहरेदार खोजा खडा था, जयसिंहने अपनी कमरसे तलवार निकाल ली, और विचारा कि माताके निकट जानेमें शस्त्रका क्या प्रयोजन है इस लिये तलवारको पहरेदारको दे दिया, विजयसिंहने भी भाईका अनुकरण किया, इसके पीछे नाजिरने कमरेका द्वार खोला। विजयसिंह उसके भीतर गये परन्तु माताके स्नेहालिंगनके बदलेमें बिराट्काय भट्टीसामन्त उग्रसेनके प्रबल आक्रमणमें फँस गये। उग्रसेनने उसी समय विजयसिंहके हाथ पैर बांधकर उन्हें पालकीके भीतर डाल दिया; पालकी जिस भावसे सांगानेरमें आई थी उसी भावसे आमेरकी राजधानीकी ओरको चली; सभीने जाना कि वृद्धारानी महलसे जा रही हैं। एक घंटेके उपरान्त जयसिंहके पास समाचार आया कि विजयसिंह बंदी होकर किलेमें आ गये। कुछ कालके उपरान्त जयसिंह सामन्तगणोंके

साथ मिले, परन्तु जयसिंहको इकला ही अस्त्रधारियोंके साथ आता हुआ देखकर सभीने इधर उधर देखकर पूछा, विजयसिंह कहां हैं? उसी समय जयसिंहने उत्तर दिया "मेरे पेटमें हैं"। हम दोनों ही विशनसिंहके पुत्र हैं उनमें मैं बडा हूँ यदि आपकी यह इच्छा हो कि वही आमेरका राज्य करेंगे तो आप मुझे मारकर मेरे पेटसे उन्हें निकालिये। केवल आपके ही लिये मैं विश्वासघाती हुआ हूँ। विजयसिंह अवश्य ही आपके और मेरे शत्रुओंको आमेरमें बुलाते और उसी कारणसे आपका विनाश हो जाता। इनके यह बचन सुनकर सभी सामन्त मण्डली विस्मित हो गईं; परन्तु अन्य कोई उपाय न देखकर सब चुपचाप उस स्थानसे चल दिये, सांगानेरके बाहर यवन सम्राट्की छ: हजार अश्वारोही सेना विजयसिंहके आनेकी बाट देख रही थी; प्रधानमन्त्री कमरुद्दीनखांने उस सेनाको विजयसिंहकी सहायताके लिये भेजा था। विजयसिंहके आनेमें विलम्ब हुआ देखकर उस सेनाके नेताने पूछा "विजयसिंह कहां हैं? जयसिंहने उत्तर दिया, "तुम्हें इसके पूछनेका कुछ अधिकार नहीं है, तुम अपने २ स्थानको चले जाओ, नहीं तो मैं तुम्हारे सभी अश्वोंको छीन लूँगा" सेना कुछ उपाय न देखकर लौट गई और इस प्रकारसे विजयसिंह बन्दी हो गये"।

इतिहासवेत्ता टाड साहब उपरोक्त घटनाओंको वर्णन करके अन्तमें लिखते हैं; ॐ "आमेरराज ज्योतिषीके एक सौ नौ गुणोंके आदर्शस्वरूप: यही एक गुण है। जो न्यायमत गुणोंके बदलेमें अगुण कहा गया है) इस सम्बन्धमें नीतिवेत्ताने किसी ...कारके मन्तव्यको क्यों नहीं प्रकाशित किया? परन्तु कोई भी नहीं मान सकता, कि विशेष ...तुरताके साथ इन कार्योंको पूर्ण किया था; और ऐसे स्थानमें "चाल" अर्थात् चतुरता ही प्रधान उपायस्वरूप थी; और यह जयसिंह भी नाजिरकी बुद्धिको भलीभांतिसे ...नते थे। प्रकाशमें एकमात्र नाजिर ही इस षड्यन्त्रजालके प्रधान सृष्टिकर्ता थे। ...शेष करके इस प्रकारके घटना स्थलमें षड्यन्त्रका विस्तार करना न्यायसंगत है, कारण प्रबल सामर्थ्यवान् प्रधान मंत्रीकी सहायतासे विजयसिंह शीघ्रतासे अथवा विलम्बसे भ्राताको सिंहासनसे अलग करते। विजयसिंहके भाग्यमें क्या होगा; यह नहीं जाना ...। इस स्थानपर हमें केवल इतना ही कहना है, कि महात्मा टाड साहबने जय- ...एक सौ नौ गुणोंके" शब्दके अर्थको भली भांतिसे नहीं विचारा। एक सौ नौ ...क मनुष्य इस संसारमें कोई उत्पन्न नहीं हुआ, और न उत्पन्न हो सकता है, यह ...ना भी असंभव है। दूसरे पक्षमें एक सौ नौ गुण कभी भिन्न नहीं हो सकते। "गुण" शब्दका प्रकृत अर्थ गुणपरिचायक कार्य है। सवाई जयसिंह ...न २ गुणोंसे विभूषित थे, उन गुणोंके परिचायक एक सौ नौ प्रधान "एक सौ नौ गुण जयसिंहका" नामक ग्रंथमें लिखा गया है, यदि टाड ...र कर उक्त ग्रंथसे कई एक घटनाओंको उद्धृत करते तो एक २ घटनाका

...ाहबने अपने टीकेमें लिखा है कि "मैंने इन गुणोंका अविकल अनुवाद किया ...े कहते हैं कि हमने भी इन सब अंशोंका अविकल अनुवाद किया है।

गुण परिचायक और एक कार्यको भी कभी एक गुण नहीं कह सकते; ऐसा करनेसे उक्त प्रकारसे उनको गुणके बदलेमें अगुणशब्दका प्रयोग करना नहीं होता; यथार्थ गुणका परिचय देनेकी इच्छा करके टाड साहब अवश्य ही उस ग्रंथसे प्रशंसनीय घटनाओंका उल्लेख कर सकते थे, जब टाड साहब स्वयं ही इसके पीछे स्वीकार करते हैं कि जयसिंहके उक्त कार्य न्यायसंगत थे तब इस विषयमें हमें अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है। जयसिंह अपने पिताके बडे पुत्र थे, राजपूतरीतिके अनुसार, राजधर्मके अनुसार और हिंदू व्यवस्थाके मतसे यही पिताके सिंहासनके अधिकारी थे, और क्षत्रियोंकी रीतिके अनुसार इन्होंने अनेक उपाय करके शत्रुओंसे सिंहासनकी रक्षा की थी, इस कारण उनका यह कार्य कभी भी निन्दनीय नहीं हो सकता; उन्होंने इस गंभीर राजनैतिक जालको विस्तार कर रुधिरका एक बूँद भी न बहाकर अपने स्वार्थकी रक्षा की थी, यह काम अवश्य ही उनके एक गुणका परिचायक था।

कर्नल टाड साहबने फिर लिखा है कि "कछवाहे राज्य और उस राज्यकी राजधानीकी प्रत्येक विधिकी उन्नति एकमात्र जयसिंहके द्वारा ही हुई है। उनके समयके पहिले जो कछवाहे राजा आमेरपर अपना राज्य कर गये हैं, केवल उनमें व्यक्तिगत सामर्थ्य और मुगल बादशाहकी सभामें अपने मान प्रभुताईके बलसे कुछ एक राजनैतिकतामें विख्यात थे; नहीं तो इस राज्यमें अन्य विशेष राजनैतिक गुरुत्व औ प्रभुत्व कुछ भी नहीं था। और यद्यपि सम्राट् बाबरसे औरंगजेबके समयतकके शासनसमयमें आमेरके राजाओंके साथ सम्राट्के परिवारका घनिष्ठ सम्बन्ध था, परन्तु दिल्लीके शेष राजपूत अधीश्वरके समान पजोनीसे यहांतक जयपुरके कोई राजा भी अपने पिताके राज्यकी अतिसामान्य सीमाके विस्तार करनेमें समर्थ न हुए; औरंगजेबकी मृत्युके पीछे जिस समय भारतवर्षमें महा हलचल पड गई थी, और समस्त राज्य खण्ड २ होकर विभक्त हो गया था, उस समयके पहिले आमेर यथार्थमें राज्यस्वरूप नहीं गिना जाता था, औरंगजेबकी मृत्युके पीछे जिस समय राज्यके चारों ओर भयं उपद्रव होने लगे, उस समय सवाई जयसिंह बादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे [illegible] राज्यके निकट आगरेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे, इस कारण उस समय राज्यको बढाकर अपना बल भलीभांतिसे प्रबल कर लिया"।

टाड साहबकी उपरोक्त उक्तिसे यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि दूलेर कई जनोंने आमेरपर राज्य किया, उनमें पजोनीके शासनसमयतकके नव सा[illegible] राज्यका अंग कुछ एक बढा गये थे, इसके पीछे कोई राजा भी अपने बाहुब[illegible] सीमा बढानेको समर्थ न हुआ। यद्यपि मिर्जाराजा जयसिंह वा मानी[illegible] सम्राट् वंशके परम प्रिय थे परन्तु यह महावीर होकर भी पिताके [illegible] भांति भी न बढा सके, एकमात्र सवाई जयसिंहने ही आमेर राज्यकी स[illegible]

सवाई जयसिंहने किस रीतिसे देवती और राजौर नामक दोनों [illegible] अधिकार किया था, कर्नल टाड साहब इसका वर्णन नीचे कर गये हैं।

जातिके चरित्र और विशेष करके सवाई जयसिंहके चरित्र पूर्णरूपसे वर्णन किये गये हैं। उन्होंने कहा है "कि, जिस समय महाराज जयसिंह आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए; उस समय आमेर, देवसा और बसाऊ यह तीनों परगने उनके अधिकारमें थे। इन्हीं तीनोंके समूहका नाम आमेर राज्य था। राज्यके पश्चिम प्रान्तके देश सम्राट्के अधिकारमें थे, और इनका मिलान अजमेरके साथ हो गया था। शेखावाटी राज्य जो आमेरराज्यसे हुआ था, इस समय उस शेखावाटीके राज्यका अंग आमेर राज्यसे अधिक बढा हुआ था; वह शेखावाटी राज्य निम्नलिखित प्रकारसे चार सीमाओंमें बँधा था। दक्षिणमें चाँतसू नामक राजदुर्ग था, पश्चिममें सांभरकी झील, पश्चिमोत्तरमें हस्तिना, पूर्वमें देउसा और बसाऊदेश था। कोटरिवन्द अर्थात् बारह प्रधान सामन्त वंश इस समय इस परिमित भूमिके अधिकारी थे, उसका परिमाण अत्यन्त सामान्य था।

"देवती नामक क्षुद्र और अत्यन्त प्राचीन राज्यकी राजधानीका नाम राजोर था। बडगूजर जातिके राजा उसका शासन करते थे। कछवाहे जिस प्रकारसे रामचन्द्रके वंशधर कुशसे उत्पन्न थे। बडगूजर जाति भी उसी प्रकार रामचन्द्रके वंशधर लवसे उत्पन्न हैं। यह बडगूजर जाति यवन सम्राट् वंशमें कन्यादान करना अत्यन्त [illegible]णित और अपमानसूचक बात समझते थे, इसलिये यह किसी प्रकार भी [illegible]ाट् वंशको अपनी कन्या तथा बहन नहीं देते थे, उसी सूत्रसे उन्होंने जातिमें तथा [illegible]जपूतोंमें विशेष मान, सम्मान और प्रसिद्धि प्राप्त की थी; जिस समय कछवाहे राजाने [illegible]वन सम्राट्के वंशमें कन्या देकर अपने वंशको कलंकित किया था और इस कार्यसे [illegible]पनेको अंतमें पद और मानसे युक्त जाना; उस समय बड़गूजर जातिने स्वजातीय [illegible]यों के सतीत्वकी रक्षाके लिये इन्हें जलती हुई अग्निमें डालकर भस्मीभूत कर [illegible]या था, इससे जातीय कविने उनकी अक्षय कीर्तिकी बडी प्रशंसा की है। [illegible]स समय महाराज जयसिंह सम्राट्के प्रतिनिधि स्वरूपसे देशपर नियुक्त थे, उस [illegible] उक्त देवती राज्यके बडगूजर जातिके अधिपति अपनी सेनाके साथ गंगाजीके [illegible] अनूपशहरमें सम्राट्की सेनाके अधीनमें थे, बडगूजरपति जिस समय उस [illegible]रमें उपरोक्त कार्यमें लग रहे थे, उस समय वह अपने अनुजको देवतीके [illegible]भार निर्विघ्नतासे दे सकते थे। बडगूजरपतिने एक समय वनमें शूकरका [illegible]रनेका विचार किया, और शीघ्रतासे जानेके लिये भोजन करनेको अधीर [illegible]की भौजाई देवरकी इतनी व्याकुलता देखकर मुँह चढाकर बोली "आप [illegible] क्यों हो रहे हैं; ऐसा जाना जाता है कि आप जयसिंहके साथ समर [illegible]दयमें भाला मारनेके लिये जा रहे हैं"। यह बात बडगूजरवीरके हृदयमें [illegible]रे पाठकोंको स्मरण होगा, कि कछवाहे राजवंशके आदिपुरुष दूलेरायने [illegible]कर इस देशमें सबसे पहिले बडगूजरोंके अधिकारी घोसा नामक [illegible] किया था, यद्यपि स्त्रीने ताना मारकर कहा था, परन्तु बडगूजरके [illegible] दूसरी ओर ले जाकर प्रतिज्ञा करी, कि मैं इष्ट देवताका नाम लेकर [illegible]के आपके हाथसे भोजन ग्रहण करनेके पहिले ही जयसिंहके

हृदयमें भालेका आघात करूँगा । प्रतिज्ञाकारी वीरन उसी समय दश शस्त्रधारी अश्वारोही वीरोंको साथ ले आमेरकी ओरको गमन किया । अंतमें आमेरके 'धूलकोट' अर्थात् मृत्तिका प्राकारके पार्श्वमें आकर डेरा डाला । सप्ताह बीता, पखवाडा बीता, महीना गया, इस प्रकारसे कई महीने बीत गये परन्तु इनको अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेका अवसर न मिला । धीरे २ सब घोडोंको बेचकर उनसे जो धन मिला उसीसे वह अपनी जीविका करने लगे, अंतमें जब सब घोडे भी बिक गये और धन भी चुकता हो गया तब इन्होंने अपने अनुचरोंको बिदा कर दिया. और आप इकले ही उसी स्थानमें रहकर जयसिंहके वक्षस्थलमें भाला मारनेका अवसर देखने लगे । जो कुछ धन पास था वह भी समाप्त हो आया, तब उसने अपने पेट भरनेके लिये अस्त्रोंका बेचना आरंभ कर दिया; सभी अस्त्र बेच डाले केवल अपने पास एक वस्त्र और एक भाला शेष रक्खा, जब इस धनको भी खा लिया तब तीन दिनतक निराहार रहा और चौथे दिन अपनी पगडी बेच डाली, उस दिन उस धनसे क्षुधा निवारण की । उसी दिन महाराज जयसिंह किलेसे बाहर हो पर्वती मार्गको न जाकर केवल मोरा नामक सरल मार्गकी ओरको जा रहे थे, इसी समयमें एक भाला तीक्ष्ण वेगसे आकर इनके एक ओर गिरा, पहरेवाला उसी समय अपनी कमरसे तलवार निकाल इस पापात्माका शिर काटनेके लिये तैयार हुआ, परन्तु राजा जयसिंहने ऊँचे स्वरसे कहा, "इसको म ने डालना, राजधानीमें पकडकर ले जाओ । इसके पीछे राजसभामें महाराज जर सिंहके सामने वह दृढप्रतिज्ञ बंदी लाया गया, जयसिंहने प्रश्न किया, तुम कौन हो और किस लिये तुमने इस प्रकारसे भाला फेंककर मारा था ? " प्रतिज्ञाकारी वीर साहसमें भरकर कहा, कि " मैं देवतीके बडगूजरपतिका अनुज हूँ; मैंने अपनी भौजा ईके साथ बातों बातोंमें आपके हृदयमें भाला मारनेकी प्रतिज्ञा की थी, इस समय यी आपकी इच्छा हो तो मुझे मार डालिये, या छोड दीजिये । बडगूजर वीर कई दिनत आपकी राह देखता रहा है, फिर धीरे २ अपने सब घोडे और शस्त्रोंको बेचकर जी निर्वाह की, और मैं इस अवस्थामें चार दिनतक बिलकुल निराहार रहा. " नीतिज्ञ जयसिंहने विचार करके उसी समय प्रतिज्ञाकारीको छोड दिया, और वस्त्र उपहारमें देकर पचास घुडसवारोंके साथ उसे उसके राज्यमें भेज दिया; वीरने राज्यमें आकर अपनी भौजाईसे समस्त वृत्तान्त कह सुनाया, रा "आपने सोते हुए विषधर सर्पको जगाया है, अब तुम्हारे इस कार्यसे यह रा नष्ट हो जायगा । रानी इस बातको जानती थी कि जयसिंह राज्यपर अप करनेके लिये किसी अवसरकी राह देख रहे हैं, इस समय अपने दुर्भाग्यसे व हाथ आ गया । राजोरके वृद्धोंकी सम्मतिसे राजवंशकी स्त्री और बालकों बडगूजर राजके निकट भेज दियो और देवती राजोरके किलेमें युद्धकी तै

(१) टाड साहब अपने टीकमें लिखते हैं "कि, उक्त नरपतिके व शहरकी भूर्वृत्ति संभोग करते हैं ।"

टाड साहब लिखते हैं, "कि उक्त घटनाके तीन दिन पीछे सवाई जयसिंहने सम्पूर्ण सामन्तोंको सभामें बुलाकर सबके सामने इस वृत्तान्तको कहा" कि "अब शीघ्र ही देवतीपर अधिकार करना कर्त्तव्य है, मैं यह बीडा रखता हूं आपमेंसे जिस वीरकी अभिलाषा हो वह इसे उठाकर देवतीके साथ युद्ध करनेको जाय"। आमेरके प्रधान सामन्त चौमूपति मोहनसिंहने जयसिंहको सावधान करके कहा, कि "देवतीके विरुद्ध युद्ध करना महाविपत्तिदायक है, कारण कि बडगूजरपति सम्राट्की सभामें माननीय मनुष्य हैं, विशेष करके वह अपनी सेनाको साथ लिये सम्राट्के अधीनमें हैं"। आमेरके प्रधान २ सामन्तोंके इस वचनसे अन्यान्य सामन्त भी भयभीत हो गये, और किसीने भी साहसमें भरकर उस विपत्तिजनक युद्धका बीडा न उठाया, इस प्रकारसे एक महीना बीत गया। देवतीके साथ फिर युद्ध करनेका विचार उपस्थित हुआ, परन्तु सामन्तोंमेंसे कोई भी अपने प्रधाननेता मोहनसिंहकी सम्मति उल्लंघन करनेको सहमत न हुए। इस कार्यमें किसीको भी आगे हुआ न देखकर अन्तमें डेढसौ भूमि अधिकारियोंके अधिपति बनवीर पोता फतहसिंहने उस बीडेको उठाया, यह देखकर महाराज जयसिंहने शीघ्र ही फतेसिंहके अधीनमें पाँच हजार अश्वारोही सेनाको इकट्ठा ...नेकी आज्ञा दी। फतेहसिंहने सेना साथ ले देवतीकी ओर जाकर सुना, कि बडगूजर ...पके भ्राता राजोरको छोडकर गंगोर नामक परब (मेला)पर चले गये हैं, इस ...रण इन्होंने उसी ओरको प्रस्थान किया; और वहाँ पहुँचकर एक दूतके हाथ ...हला भेजा कि सावधान ! वीर पोता फतेसिंहका अभिवादन पहुँचे, मैं बहुत ...कट आ पहुँचा हूं। युवक बडगूजर इस समयमें पर्वोत्सवके उत्सवमें महामतवाले हो रहे ...। दूतने आकर उसके हाथमें पत्र दिया, पत्रको पढते ही उसने आज्ञा दी ... इस दूतका शिर काट डालो, परन्तु जयपुरकी सेनाने शीघ्र ही सबकों-...त बडगूजर राज्यके भ्राताको बंदी करके, उसके अन्य सब साथियोंको खण्ड २ ... दिया। राजोरकी रानी उक्त चौमूके कछवाहे सामन्तकी बहिन थी, वह ...ी पीडासे जिस समय सूतिकागारमें गयी थी उसी समय फतेसिंहकी सेनाने ...र आक्रमण करके उसको अपने अधिकारमें कर लिया, प्रसववेदनासे कातर ...रकी रानीने नेत्रोंमें आंसू भरकर विजयी फतेसिंहसे कहा;—" भ्रातः ! मेरे इस ...त बालकके प्राणकी रक्षा करना, परन्तु इतना कहते ही अकस्मात् उसको ...या कि एकमात्र मेरे ही आक्षेपक वचनोंसे राजौरके भाग्यमें आज यह ...परिस्थित हुई है, इस कारण उसने मन ही मनमें कहा कि झगडेको बढानेके ...ा जीवन धारनेका क्या प्रयोजन है ?" रानीने उसी समय अपने सुकुमार ...र मारकर प्राण त्याग दिये। पराजित और निहत बडगूजरनेताके कटे ...एक कपडेमें बाँधकर विजयी जयपुरी वीरगण जयशब्दसे पृथ्वीको ...अंतमें जयपुरमें आ पहुंचे, जयसिंहने सभामें बैठकर अपने जीवन ... उस दृढप्रतिज्ञ बडगूजर राजभ्राताके कटे मस्तकको लानेकी आज्ञा ...ठाया गया आमेरके सबमें प्रधान सामन्त मोहनसिंह अपने आत्मीयका

कटा हुआ शिर देखकर नेत्रोंसे आँसू वर्षाने लगे। मोहनसिंहको इस प्रकारसे रोता हुआ देखकर जयसिंहको स्मरण हुआ कि इन सबमें प्रधान सामन्तने ही मुझे बदला लेनेमें विघ्न किया था यह अवश्य ही राजद्रोही और विश्वासघाती है, इस लिये उन्होंने कुछ कालके पीछे मोहनसिंहका तिरस्कार करते हुए कहा;" जब मेरे प्राणनाशके लिये भाला फेका गया था, तब तो किसीके नेत्रोंमें एक बूँद भी आंसू नहीं आये! यह कहकर शीघ्र ही चोमू देशको राज्यमें मिलाकर मोहनसिंहको राज्यसे निकाल दिया, मोहनसिंह इस प्रकारसे आमेरसे निकाले जाकर उदयपुरके महाराणाकी शरणमें गये, और जयसिंहने इस प्रकारसे बडगूजराके हाथसे देवती और राजोर देशपर अधिकार करके उसे अपने राज्यकी सीमामें मिला लिया। वह देश इस समय माचेरी नामसे विख्यात है[1] "।

टाड साहबने फिर लिखा है, " कि जयसिंहके चरित्रदोषोंमेंसे एक दोष यह बडा भारी था कि वह मदिरा पीते थे। वह किस प्रकारकी मदिरा पीते थे, मधुसंजात मदिरा अथवा चावलकी मदिराको पिया करते थे।आमेरके प्रवाहमूलक इतिहासमें इसको प्रकाशित नहीं किया गया, परन्तु टाड साहबने लिखा है कि यद्यपि जयसिंहके चरित्रोंमें अनेक दोष थे तथापि उस समयमें अपनी जातिमें वह एक अत्यन्त ही प्रशंसनीय मनुष्य थे, उनका नाम चिरकालतक इतिहासमें रहेगा यह बात भविष्यद्वाणीके समान "

सवाई जयसिंहके शासनके पहिले आमेरका राजमहल जा मानसिंहका बना हुआ था; वह नवीन राजधानीकी बस्तीकी अपेक्षा अनेकांशमें श्रीहीन था। मिर्जा रा[illegible] जयसिंहने उस महलमें कई एक कमरे बनवाये थे, परन्तु वह भी राजमहलके लि[illegible] उपयुक्त न थे इसीसे जयसिंहने उसीसे लगाकर ऐसा एक मनोहर और श्रीमान् महल बनवाया कि, जिसको देखकर नेत्रोंको आनंद प्राप्त हो, संवत् १७८२सन्१७२८ ईसवी में सवाई जयसिंहने जयपुर नामकी नवीन राजधानी स्थापित की; जयपुरके देशी [illegible] हाससे जाना जाता है कि इस समय राजामल्ल सवाई जयसिंहके मुसाहब पदपर नि[illegible] थे, कृपाराम जयपुरके दूतस्वरूपसे दिल्लीमें थे; और बुधसिंह कुम्भानी दक्षिणमें स[illegible] डेरोंमें दूतरूपसे नियत थे, यह सभी विख्यात और ऊँची श्रेणीके थे। जयपुरके [illegible] वर्तमान विवरण हम पीछे यथास्थान वर्णन करेंगे।

महाराज जयसिंह राजनीति, शासननीति और समाजनीति तथा शास्त्र[illegible] में भी महान् पंडित थे। इसका प्रमाण देनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। कन्याके विवाहके समयमें और श्राद्ध इत्यादिकार्योंमें राजपूतोंके य[illegible]

---

(१) इतिहासवेत्ता अपने टीकेमें लिखते हैं,-"कि राजोर एक अत्यन्त प्रा[illegible] जाता था, इस स्थानमें बडगूजर जाति बहुत पुरुषोंसे बास करती आई है। चंदकी वीरताके सम्बन्धमें बडी प्रशंसा कर गये हैं। इसने पृथ्वीराजके समयमें विशेष प्रसि[illegible]

(२) मिर्जा राजा जयसिंहने इस स्थानपर तीन महल बनवाये थे, [illegible] उनको न तोडकर उसीके बराबरमें नया महल बनवा दिया-हिन्दूराजा प[illegible] लोप करनेकी अभिलाषा नहीं करते थे, इसीसे जयसिंहने प्रचीन महलोंको नहीं [illegible]

धन खर्च होता था, और बहुतसे इस अधिक धनके भयसे छोटी २ कन्याओंको सूतिकागारमें ही मार डालते थे, और बहुतसी स्त्रियां इसी लिये आत्महत्या करके प्राण त्याग देती थीं। जब महाराज जयसिंहने देखा कि इससे तो समाजका महा अनिष्ट हो रहा है, तब उन्होंने रजवाडेमें और समस्त राजपूत जातिमें ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि जिससे विवाह और श्राद्धके समयमें खर्च कम पडे। इस विषयमें उन्होंने बहुतेरे नियम नियत कर दिये, और उन नियमोंको अपने राज्यमें प्रचलित कर दिया था। हमारे पाठकोंने राजस्थानक प्रथम काण्डमें इसका विस्तारित विवरण पढा होगा, इसीसे हम यहांपर फिर उसका लिखना आवश्यक नहीं समझते। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि, एकमात्र इस समाजसंशोधक कार्यसे ही जयसिंहकी कीर्तिके गौरवका सूर्य सर्वदा तीक्ष्णतासे चमकता रहेगा। टाड साहब लिखते हैं, " कि इस महापुरुषने समाजसम्बन्धी जो अनुष्ठान किये थे, उनके तत्त्वका अनुष्ठान करना अत्यन्त प्रयोजनीय है। महाराज । जयसिंह भी हिन्दुओंके समान सभी जातिके ऊपर दयावान थ। क्या ब्राह्मण, क्या मुसलमान, क्या जैन सभीको समान भावसे देखते थे। जैनियोंको ज्ञानशिक्षामें श्रेष्ठ जानकर जयसिंह उनके ऊपर अत्यन्त अनुग्रह करते थे।ऐसा भी प्रगट होता है कि जयसिंहने जैनियोंके इतिहास और धर्मके सम्बन्धमें स्वयं शिक्षा प्राप्त की थीं। विद्याधर नामका जो मनुष्य उनके वैज्ञानिक तत्त्वकी आलोचनामें सबमें अग्रणी था, और उसीके प्रभावबलसे जयपुर राजधानीकी सृष्टि हुई, वह जैन धर्मावलम्बी विख्यात है। विद्याधर सुप्रसिद्ध सिद्धराज जयसिंहके प्रधानमन्त्री और गुरु नहरवालाके विख्यात-पण्डित हेमाचार्यके वंशधर थे।

सवाई जयसिंहने एक समय अश्वमेध यज्ञ करनेकी अभिलाषा की। कर्नल टाड जयसिंहके पक्षमें इनकी इस अभिलाषाको ऊँची अभिलाषा बता गये हैं। उन्होंने लिखा है, " पांडुवंशीय जन्मेजयसे लेकर कन्नौजके शेष राजा जयचन्दतक जिन २ ने अश्वमेध यज्ञ किया था उन सभीका नाश हो गया है, इस यज्ञका प्रकृत उद्देश यह था कि समस्त राजाओंमें प्रधानता प्राप्त हो।" यद्यपि महाराज जयसिंह दिल्लीके बादशाहके यहां प्रबल सामर्थ्यवाले थे, यद्यपि वह यज्ञके लिये उत्सर्ग किये घोडेको निर्विघ्नतासे गंगाके किनारेतक स्वेच्छानुसार विचरण करा सकते थे, कोई भी राजा उनके उस घोडेके पकडनेका साहस नहीं करता; परन्तु यदि उनका वह अश्वावली मरुक्षेत्रकी ओर जाती तो निश्चय ही राठौर राजा उसको पकडकर अश्वशालामें रख लेते अथवा वह अश्व चम्बलके

---

(१) टाड महोदयने अपने टीकेमें लिखा है, कि जयसिंहने बहुत परिश्रम तथा धन खर्च करके राजपूतानेके भिन्न २ राजवंशके प्राचीन इतिहासको संग्रह किया था,राजवाली और राजतरंगिनी नामकी प्राचीन कारिका संग्रह की थी, इसके अतिरिक्त मूल और अनुवादित ग्रंथ भी उन्होंने संग्रह किये थे। यदि हम उनकी खोज करते तो सबका पता लग सकता था; विशेष करके वैज्ञानिक ग्रंथोंके प्रकाश करनेसे विज्ञानके अनेक उपकार होते।

किनारे जाता तो हाडाजातीय राजा निश्चय ही अपने जीवन और सिंहासनको विपत्तिमें डालकर भी उस घोडेको पकडते । सवाई जयसिंहने बहुतसा धन खर्च करके परम सुंदर उज्ज्वल यज्ञशाला बनवाई थी, और उस यज्ञशालाके स्तंभ और ऊपरकी छत चांदीसे मढवाई थी। परन्तु दुःखका विषय है कि जयसिंहके भ्रष्ट वंशधर मृत्त जगत्सिंहने उस चांदीके पत्रको छुडा लिया; और जयसिंहने जिन ग्रन्थोंको बडे परिश्रम और धनव्ययसे संग्रह किया था तथा जो ग्रन्थ विज्ञानके परिचय स्वरूप थे; उन सबको दो भागोंमें विभक्त कर उनका एक अंश जयपुरकी एक साधारण वेश्याको दे दिया।

सवाई जयसिंहके सम्बन्धमें शेषमें टाड साहबने कहा है कि संवत् १७९९ सन् १७४३ ईसवीमें चौवालिस वर्षतकराज्य करके अन्तमें महाराज जयसिंहने प्राण त्याग किये; उनकी तीन विवाहिता रानी और कितनी ही उपपत्नियां उनके शवके साथ सती हुई; अधिक क्या कहें उनके साथ ही साथ उनके प्रिय विज्ञानका भी लोप हो गया"।

समस्त रजवाडेके इतिहासमें सवाई महाराज जयसिंहके राज्यका अध्याय और सबकी अपेक्षा उज्ज्वलतासे प्रकाश पा रहा है और यह चिरकालतक कीर्तित भी रहेगा; राजपूत राजाओंके राज्यके समयमें केवल रणभेरीकी भयंकर ध्वनि, रणटंकार, भैरवनाद, तलवारोंकी झनकार, कमानोंका गगनभेदी हुंकार और वीरोंकी जयध्वनि ही सुनाई देती थी, परन्तु सवाई जयसिंहके राज्यमें इन सबके अतिरिक्त,समाजमें शान्तिमूलक विधान लहरी, जातिके उन्नति सूचक अनुष्ठान, विज्ञानकी प्रकाशमान ज्योति, काव्यकी मधुरवाणी, इतिहासकी स्निग्ध आभा और जातीय गौरवकी प्रचण्ड प्रभा विराजमान थी। ऐसे राज्यको कौन भूल सकता है ?।

तृतीय अध्याय ३.

ईश्वरीसिंहका जयपुरके सिंहासनपर अभिषेक–बहु विवाहका विषमय फल–सवाई जयसिंहके दूसरे पुत्र माधोसिंहका आमेरपर राज्य करनेके लिये उद्योग करना–मेवाडके राणाका ईश्वरीसिंहके पास दूत भेजना–उसका महान् विपत्तिमे पडना–ईश्वरीसिंहका महाराष्ट्र नेताका आश्रय लेना–आमेरका सिंहासन लेकर राणाके साथ ईश्वरीसिंहका युद्ध होना–ईश्वरीसिंहकी विजय–कोटा और बूंदीकी विजयके समयमें ईश्वरीसिंहका महाराष्ट्र नेताओंकी सहायता लेना–अपने भानजे माधोसिंहको आमेरके सिंहासनपर बैठानेके लिये राणाकी फिर युद्धके लिये तैयारी–उनका हुलकरका आश्रय लेना–ईश्वरीसिंहका विष खाकर प्राण नाश–माधोसिंहका आमेरपर अभिषेक–उदीयमान जाटजातिका विशेष विवरण–जाटराजका आमेरराज्यपर सेना चलाना–आमेरकी सेनाके साथ जाटोंका संग्राम–माचेरीके सामन्तका पुनः स्वत्वलाभ–माधोसिंहका प्राण त्याग–पृथ्वीसिंह–उनकी मृत्यु–प्रतापसिंह–माधोसिंहकी विधवा पटरानीकी फीरोजपर कृपा–माचेरीके सामन्तोंकी स्वाधीनता–खुशियालीरामके षड्यंत्रजालका विस्तार–फीरोजका प्राणनाश–पटरानीकी मृत्यु–महाराष्ट्रोंके साथ मतान्तर–प्रतापसिंहका राज्यभारग्रहण करना–उनका तुंगाके समरमें जयलाभ–पाटनके समरमें शोचनीय घटना–प्रतापसिंहपर विपद–महाराष्ट्र इत्यादिके द्वारा जयपुरपर आक्रमण–प्रतापसिंहकी मृत्यु।

सर्वगुणसम्पन्न महाराज जयसिंहके परलोक चले जानेपर उनके ज्येष्ठ पुत्र ईश्वरीसिंह जयपुरके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए। इस समयमें जयपुरका राज्य केवल रजवाडेमें ही नहीं वरन् सारे भारतवर्षमें एक प्रबल बलशाली राज्य गिना जाता था, सर्वत्र कछवाहोंकी सेनाका वीरस्वरूपसे सम्मान हो रहा था। इस समय जयपुर राज्यकी सीमा यथार्थरूपसे नियत थी। राजकोष धन रत्नोंसे परिपूर्ण था, मंत्रीसमाजमें राजनीति चतुर प्राचीन सदस्य नियुक्त थे--और सेना भी संग्रामविद्यामें संपूर्णरूपसे दक्ष और चतुर थी। ईश्वरीसिंह अपने पिताके ज्येष्ठ पुत्र थे, इससे वही सिंहासनपर विराजमान हुए। इनके राज्यमें कईवर्ष तक कोई विशेष ऐतिहासिक घटना नहीं हुई। "यह सन् १७४७ ईसवीमें अपनी सेना साथ लेकर दुर्रानियोंके साथ युद्ध करनेके लिये सतलज नदीके किनारे गये। इतिहाससे जाना जाता है कि उस समरमें उन्होंने विशेष भीरुता दिखाई, और वह जिस पक्षमें नियुक्त थे उसी पक्षके प्रधान सेनापति कमरुद्दीनखाँके रणक्षेत्रमें मारे जानेपर वह अपनी सेना लेकर भाग आये। यद्यपि यह जाना जाता है कि उनका वह भागना एक राजनैतिक उद्देश्य था"। परन्तु उनके भागनेसे उनकी रानी अत्यन्त ही अप्रसन्न हुई। वीरवंशीय वीरपतिके कापुरुषोंकी भाँति संग्रामभूमिसे भाग आनेसे ऐसी कौनसी राजपूत वीरबाला है जो स्वामीके इस आचरणसे क्रोधित न होगी?

सर्वगुणमंडित असाधारण मनुष्य सवाई जयसिंहके यहाँ जन्म लेकर ईश्वरीसिंह अपने पिताके नामकी रक्षा करनेमें उपयुक्तगुणोंसे विभूषित न हुए। उन्हें यद्यपि सिंहासनपर स्थित हो अपने शासनसे प्रजाको प्रसन्न करनेका अवसर मिला, परन्तु उनका हृदय क्षत्रियतेजसे तथा पूर्ण साहस और प्रबल राजनीतिसे परिपूर्ण नहीं था। इसी लिये उन्होंने शीघ्र ही अपने भाग्यमें कालरात्रि बुला ली।

पाठकोंने मेवाडके इतिहासके तेरहवें और चौदहवें अध्यायमें पढा होगा कि जिस समय दिल्लीके प्रबल सम्राटवंशके विरुद्ध मेवाड, मारवाड और आमेर इन तीनों राज्योंके सामर्थ्यवान् तीनों राजाओंने एकत्र मिलकर परस्पर दृढ संधि की थी, उसी समयसे तीनों राजवंशोंमें परस्पर वैवाहिक संबन्ध भी स्थिर हो गया था। उस संधिका यह फल हुआ कि बादशाहके उन दुर्दिनोंमें मारवाडपतिने जिस प्रकार गुजरातके समस्त देशोंपर अधिकार करके उन्हें अपनी राजधानीमें मिला लिया, दूसरी ओर आमेरराज्यके सवाई जयसिंहने भी इसी प्रकारसे आमेरके चारों ओरके देशोंपर अपना अधिकार कर लिया, और उसी समयमें उन्होंने शेखावाटीके अधीश्वरको कर देनेके लिये राजी कर लिया; यदि उस समय जाटजाति नवीन बलसे बलवान् होकर अपनी उन्नति कर सकती तो उस समय आमेरराज्यकी सीमाका साभर हृदसे यमुनातक विस्तार हो जाता। एक ओर तो इस संधिका फल जिस प्रकारसे मंगलदायक हुआ, दूसरे पक्षमें उस वैवाहिक संबन्ध बंधनने अत्यन्त विषैला फल उत्पन्न किया। आमेर और मारवाडका राजवंश दिल्लीके यवन सम्राट्वंशमें कन्या देकर पवित्र आर्य रक्तको कलंकित करता आया था। समस्त भारतवर्षमें एकमात्र मेवाडके राणावंशने प्राणान्त तक भी यवनसम्राटको अपनी कन्या

नहीं दी; इस कारण उन्हीं राणाका वंश आजतक भारतवर्षमें ऊँचा स्थान पा रहा है, जिस समय उक्त तीनों राजवंशोंका संधिबंधन हुआ था उस समयके पहिलेसे यवन सम्राट्के वंशमें कन्या देनेके समयसे मारवाड और आमेरके राजवंशके साथ मेवाडके राणावंशके आदान प्रदानकी रीति एकबार ही दूर हो गई थी। इस नवीन संधिबंधनके समयसे फिर उक्त तीनों राजवंशोंमें आदान प्रदानकी रीति प्रचलित हो जाय इस कारण सवाई जयसिंहने इस समय राणाकी कुमारीका पाणिग्रहण किया था, परन्तु विवाहके पहिले ऐसे नियम किये गये कि मारवाडपति वा आमेरराज मेवाडकी जिस राजकुमारीका पाणिग्रहण करें उस कुमारीके गर्भसे यदि पुत्र उत्पन्न हो या मारवाड वा आमेरराजका औरस अन्य किसी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हो, और वह पुत्र बडा हो तथा राणाकी कन्यका पुत्र छोटा हो तो चिरप्रचालित रीतिक अनुसार जो ज्येष्ठ पुत्रको ही राज्य प्राप्तिका अधिकार होना उचित है उसे उल्लंघन कर राणाकी बेटीके पुत्रको ही राज्यसिंहासन दिया जायगा, और यदि राजनंदिनीके गर्भसे कन्याका जन्म हो तो वह कन्या कदापि यवनसम्राट्के वंशमें नहीं दी जायगी। सवाई जयसिंह और मारवाडराजने इस विचारमें अपनी सम्मति दी, जयसिंहने जिस राजनंदिनीके साथ पाणिग्रहण किया था, उसके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उस पुत्रका नाम माधोसिंह रक्खा गया, जयसिंहने अपनी जीवित अवस्थामें ही पुत्रके मान सम्मानकी रक्षाके लिये माधोसिंहके मामा राणा संग्रामसिंहकी सम्मतिसे आमेर राज्यके अधीन टोंक, रामपुरा, फागी और मालपुरा नामके चार परगने कुमार माधोसिंहको दे दिये, और इधर अपने दौहित्रको राणा संग्रामसिंहने मेवाडके अधीन रामपुरा, भानपुरा नामके दोनों देश दे दिये। इन कई देशोंकी आय ८४ लाख रुपये थी।

ईश्वरीसिंह पिताके ज्येष्ठ पुत्र होनेके कारण राजसिंहासनपर बैठे, प्रथम पाँच वर्षतक किसीने भी माधोसिंहके पक्षका समर्थन नहीं किया। पाँच वर्षमें ही राजशासनमें अयोग्यता दिखाकर ईश्वरीसिंह सामन्तोंके अप्रियपात्र हो गये। इनके आचरणसे असंतुष्ट हो आमेरके सामन्तोंने बहुतसे षड्यंत्र किये, और इनको सिंहासनसे उतारकर माधोसिंहको आमेरके सिंहासनपर राजतिलक करनेकी अभिलाषा की। कुमार माधोसिंहके अबतक संतुष्ट होकर अपने पिता और मामाकी दी हुई सम्पत्तिको भोग रहे थे उन्होंने भ्रमसे भी पिताके सिंहासन प्राप्तिकी इच्छा नहीं की, और राणाने भी माधोसिंहके सिंहासन प्राप्तिके लिये विशेष चेष्टा नहीं की, परन्तु माधोसिंह और उनके मामा जगत्सिंहके निकट मंत्रियोंके द्वारा उपरोक्त प्रस्तावके उपस्थित होते ही ईश्वरीसिंहके भाग्यपतनके द्वार खुलनेकी तैयारी होने लगी। मेवाडपति राणा जगत्सिंहने आमेरपति ईश्वरीसिंहके पास दूतके द्वारा कहला भेजा, "कि सवाई जयसिंह मरतेसमय यह प्रतिज्ञा कर गये हैं, कि अन्य पुत्रोंके अवस्थामें बडे होनेपर भी हमारा भानजा माधोसिंह ही आमेरकी राजगद्दीपर बैठेगा। इस कारण आप माधोसिंहको सिंहासन दे दीजिये।" यह समाचार सुनते ही ईश्वरीसिंहके मस्तकपर

मानो वज्र टूट पड़ा, वह मानो चारों ओर अन्धकार देखने लगे; उन्होंने समझ लिया कि इतने दिनोंके पीछे जब राणाने यह प्रश्न कियाहै तब सरलतासे इसका निबटेरा कभी नहीं हो सकता, अंतमें राज्यरक्षाका कोई भी उपाय न देखकर ईश्वरीसिंहने यह संकल्प किया कि अकेले राणाके साथ युद्ध करना अत्यन्त असंभव है, इस कारण उन्होंने उस समय उदीयमान् महाराष्ट्र जातिके नेता आपाजी सेंधियाके साथ संधि कर ली, आपाजीने ईश्वरीसिंहके पक्षका समर्थन किया। इस ओर जब मेवाडपति राणाने सुना कि ईश्वरीसिंह किसी प्रकारसे भी माधोसिंहको सिंहासन देनेको राजी नहीं हैं, वरन् वह महाराष्ट्र नेता आपाजीके साथ मिलकर अपने अधिकारकी रक्षाके लिये यत्न कर रहे हैं, तब उन्होंने ईश्वरीसिंहके विरुद्ध युद्धका प्रस्ताव उपस्थित किया। कोटा और बूँदीके दोनों अधीश्वरोंने भी माधोसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये मेवाडकी सेनाका साथ दिया। राजमहल नामक स्थानपर दोनों पक्षकी सेना परस्पर सम्मुख हो भयंकर संग्राम करने लगी। शिशोदियोंकी सेनाका बलविक्रम उस समय एक बार ही प्रभाहीन हो गया था, इस कारण राणा विशेष चेष्टा करके भी विजय प्राप्त न कर सके, नवीन बलशाली महाराष्ट्रोंकी सेनाने अपना प्रबल पराक्रम दिखाकर मेवाड कोटा और बूँदीकी मिली हुई समस्त सेनाको परास्त कर दिया। उसके साथ ही साथ माधोसिंहकी आशाका आकाश भी मानो अंधकारसे ढक गया।

ईश्वरीसिंहने महाराष्ट्रोंकी सहायतासे जय प्राप्त करके गर्वित हो आपाजीकी कुमकके साथ माधोसिंहकी सहायता करनेवाले कोटा और बूंदी दोनो राज्योंपर आक्रमण किया। उस आक्रमणसे ईश्वरीसिंहका बदला देनेके अतिरिक्त और कोई अभिप्राय नहीं थाँ परन्तु महाराष्ट्रनेता आपाजी भारत विजयके लिये बाहर गये थे, इस कारण वह कोटे और बूंदीमें अपने अधिकारका विस्तार करनेके लिये उस युद्धमें लिप्त हुए थे। यद्यपि कोटेके अधीश्वरने प्रबल पराक्रम करके दीर्घकालतक अपनी रक्षाके लिये बडी वीरता की, यद्यपि उस समरमें आपाजीका एक हाथ कट गया, परन्तु अंतमें कोटा और बूंदी इन दोनों राज्योंके राजा, पंग पालके समान अगणित सेनाके साथ महाराष्ट्रोंसे परास्त हो गये। आपाजी केवल जय प्राप्त करके ही संतुष्ट नहीं हुआ, उसने दोनों राज्योंके अनेक ग्राम और नगर अपने अधिकारमें करके दोनो राजाओंसे कर देना स्वीकार करा लिया। यद्यपि इस ओर ईश्वरीसिंह आपाजीकी सहायतासे उस यात्रामें विजय प्राप्तकर फिर पिताके सिंहासनपर निर्विघ्नतासे बैठे, परन्तु शीघ्र ही घनघोर बादलोंने आकर उनके सौभाग्य सूर्यको ढांक लिया।

ईश्वरीसिंहने जिस भाँति महाराष्ट्र जातिके नेता आपाजी सेंधियाका आश्रय लेकर राजमहलके युद्धमें विजय प्राप्त की। मेवाडपति राणा जगत्सिंहने भी इस बार उसी प्रकार उसी महाराष्ट्रजातिके अन्य नेता हुलकरका आश्रय लिया। राणाने हुलकर-के साथ इस नियमपर संधि की कि तुम यदि ईश्वरीसिंहको समरमें परास्त कर सिंहासनसे उतार, माधोसिंहको आमेरके राज्यपर अभिषिक्त करो तो छयालीस लाख

रुपया मैं तुमको दूंगा। धनके लोभी हुलकर तुरन्त इस बातपर सम्मत हो गये। शीघ्र ही युद्धकी तैयारी होने लगी, परन्तु ईश्वरीसिंहने इस समाचारको पाते ही हुलकरके सामने अपनी विजय होनी असंभव जानकर कायरपुरुषोंकी तरह विषपान करके प्राण त्याग दिये। ईश्वरीसिंहकी मृत्युके पीछे माधोसिंह निर्विघ्न होकर पिताके सिंहासनपर बैठे। हुलकरने जो माधोसिंहका पक्ष समर्थन किया था इस कारण माधोसिंहने सिंहासन प्राप्त कर प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये चौरासीलाखके कितने ही देश जो पिता और मामाके पाससे बालकपनमें मिले थे वे सब हुलकरको दे दिये।

माधोसिंह क्षत्रियोचित गुणोंसे विभूषित थे। साहस, वीरता, नीतिज्ञता, उच्च अभिलाषा और एकाग्रता इत्यादिके बलसे उन्होंने शीघ्र ही सामन्त और प्रजाके प्रति असाधारण शासन करके उनके चित्तको आकर्षित कर लिया। ईश्वरीसिंहके शासन समयमें आमेरका राज्य जिस प्रकार कांतिहीन हो गया था, माधोसिंहके सिंहासनपर अभिषिक्त होते ही राज्यमें फिर उसी प्रकारसे कान्तिके प्रकाशके पूर्वलक्षण दिखाई देने लगे। यद्यपि माधोसिंहको महाराष्ट्रनेता हुलकरकी सहायतासे पिताका सिंहासन मिला था, यद्यपि उन्होंने राजपूतजातिकी अवश्य प्रतिपाल्य अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये हुलकरको चौरासी लाख रुपयेकी सम्पत्ति दी, परन्तु इस बातको वह भली भाँतिसे जान गये थे कि महाराष्ट्र जातिका विना दमन किये अथवा उसे रजवाडेसे बिना निकाले हुए किसी प्रकार भी हमारा मंगल नहीं हो सकता। माधोसिंहने अपनी वीरता और नीतिज्ञताका बल शीघ्र ही प्रकाशित कर दिया। उन्होंने किसी प्रकारसे भी महाराष्ट्र नेताओंको आमेर राज्यपर आक्रमण न करने दिया, कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "यदि इस समय उदीयमान जाट जातिके प्रति माधोसिंह कुछ भी हस्ताक्षेप न करते, यदि उनका जीवन और कुछ कालतक स्थायी रहता तो अवश्य ही वे राठौरोंके साथ मिलकर महाराष्ट्रोंकी शासनशक्तिको चूर्ण कर सकते थे, परन्तु उनके प्रतिवासी शत्रुओंने समस्त कल्पनायें व्यर्थ कर दीं। यद्यपि जाट जातिके इतिहासमें इस समय सब विदित है, परन्तु यह जाति किस प्रकार सामान्यकृषक अवस्थासे अर्द्धशताब्दीमें एक प्रबल जातिरूपसे मस्तक उठानेमें समर्थ हुई थी, उसका वर्णन करना इस स्थानपर असंगत होगा। भारतमें जितने अंग्रेज सेनापति नियुक्त थे; उनमें सर्वश्रेष्ठ वीर सेनापति अंग्रेजोंने अपनी फौजको रणक्षेत्रमें चलाया था; परन्तु उस जाट जातिने उस वाहिनीका उद्देश निष्फल कर दिया"।

भारतवर्षमें जाट जातिकी उन्नतिके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "जाटजाति जिस प्रधान जाट जातिकी शाखा थी उसका वर्णन इस पुस्तकमें अनेक स्थानोंमें हुआ है। यद्यपि वह एक समय भारतवर्षमें छत्तीस राजवंशोंमें अन्यतररूपसे सम्मान पाकर अंतमें अवनतिके मुखमें पतित हुई थी, परन्तु उसने एक दिनको भी जातिकी स्वाधीनताकी आशाको न छोडा। जाटजातिमें

जिस वीरपुरुषने सबसे पहिले अपने जातीय कृषिकार्य (हलचलाने) को न छोडकर अपनेको पीडित करनेवालोंके विरुद्ध तलवार चलानेके लिये जाटजातिको उत्तेजित किया था, उसका नाम चूडामाणि था। औरंगजेबके उत्तराधिकारियोंको राज्यके निमित्त जातीय जनोंके साथ भयंकर युद्धमें लिप्त होते और सभीको रुधिरकी नदी बहाते हुए देख इस सुअवसरपर जो जाट सम्राट्के अधीनमें थून और सिनसीनी नामक ग्राममें खेती करते थे, उन्होंने उन ग्रामोंमें छोटे२ किलोंका बनाना प्रारंभ कर दिया, और वह शीघ्र ही कज्जाक, अर्थात् तस्करनामसे प्रख्यात हो गये। वह इस उपाधिको धारण करनेमें किंचित् भी लज्जित न हुए; कारण कि उन्होंने शीघ्र ही दिल्लीके सम्राट फर्रुखासियरके महलतकको लूटनेका साहस किया था, इस समय सैयदके दोनों भ्राता दिल्लीकी राजसभामें सबके ऊपर अपना अधिकार चलाते थे, जब उन्होंने देखा कि इस समय जाट बहुत शिर उठा रहे हैं तब उन्होंने इनके दमन करनेके लिये आमेरराज सवाई जयसिंहसे कहा, जयसिंहने उस आज्ञाको पालन करनेके लिये शीघ्र ही सेना साथ ले थून और सिनसीनीको जा घेरा। परन्तु अंतमें जाटोंने अंग्रेजोंके साथ युद्ध करके असीम साहसके साथ वीरता और पराक्रम दिखाकर किलेकी रक्षा की थी, वह लोग उनके इस प्रथम उत्थानके समय उसी प्रकार भयंकर विक्रमके साथ उन छोटे २ मट्टीकी दीवारोंके किलोंकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए। आमेरराज जयसिंह क्रमानुसार एक वर्षतक उनके किलेको घेरकर विशेष चेष्टा करके भी किसी प्रकार उसपर अधिकार न कर सके, अंतमें हताश हो किलेको छोडकर चले आये"।

"इस घटनाके कुछ काल पीछे चूडामाणिके छोटे भ्राता बदनसिंह जो जाटभूमिके आधे भागके अधिकारी थे, अनेक उपद्रवोंके करनेसे चूडामाणिके द्वारा बंदी होकर कई वर्षतक उसी अवस्थामें रहे; अंतमें आमेरराज जयसिंहके मध्यस्थ होनेपर और कईएक भूमिहार जाटोंकी सम्मतिसे चूडामणिने अपने कनिष्ठ भ्राता बदनसिंहको छोड दिया। बदनसिंह छूटते ही जयपुरमें जा पहुँचा और थूनपर अधिकार करनेके लिये जयसिंहको आशा दी, जयसिंहने तुरन्त ही बदनसिंहके कहनेसे अपनी सेना साथ ले जाटोंकी भूमिपर जाकर थूनके किलेको घेर लिया। जाटपति चूडामणिने पहिलेकी ही तरह प्रबल पराक्रमके साथ छः महीने तक अपनी रक्षा की, और अन्तमें अपनेको हीनवल देखकर अपने पुत्र मोहनसिंहको साथ ले किलेसे भाग गया। आमेरराजने इस प्रकारसे थूनके किलेपर अधिकार किया, और बदनसिंहको जाटजातिके अधीश्वररूपसे डीगनामक स्थानपर अभिषिक्त कर यह घोषणापत्र प्रकाशित किया कि यह डीग इसी प्रकारसे अन्य कारणोंसे भविष्यत्में विशेप प्रसिद्धि प्राप्त करेगा"।

"कर्नल टाड फिर लिखते हैं कि बदनसिंहके अनेक संतान उत्पन्न हुईं; इनमें सूर्यमल्ल, शोभाराम, प्रतापसिंह और वीरनारायण नामके चार पुत्रोंने अपने बाहुबलसे विशेष यश प्राप्त किया। बदनसिंहने अपने पूर्ण शासनसे दिल्लीके बादशाहके अधिकारवाले कितने ही देशोंपर अपना अधिकार करके वहां अपना आधिपत्य जमाया;

बदनसिंहने पहिले ही वेर नामक स्थानमें एक किला बनाकर अपने तीसरे पुत्र प्रतापको दे दिया, और अंतमें अपने बडे पुत्र सूर्यमल्लको समस्त अधिकार दे दिया "।

"पूर्वपुरुषोंने जिस कल्पना जालका विस्तारकर स्वजातिकी उन्नति करनेका विचार किया था, सूर्यमल्ल उस कल्पनाको कार्यमें परिणत करनेके लिये बलविक्रम साहस इत्यादि सभी गुणोंसे विभूषित थे। सूर्यमल्लने पिताके पदपर स्थित हो सबसे पहिले भरतपुर नामक स्थान (जो स्थान पीछे जाटजातिकी विख्यात राजधानीरूपसे गिना गया और आजकल भी उसी अवस्थामें है) के अधिनायक अपने आत्मीय खेमाको युद्धमें परास्त कर भरतपुरपर अपना अधिकार कर लिया "।

संवत् १८२० सन् १७६७ ईसवीमें सूर्यमल्लने ऐसा साहस और ऊँची अभिलाषा प्राप्त की, कि उसने यवन सम्राट्की राजधानी दिल्लीतकके लूटनेका विचार किया, परन्तु उसका वह मनोरथ पूर्ण न हो सका; जिस समय यह शिकार खेलनेमें लग रहा था उस समय बिलोचोंके दलने आकर इसपर भयंकर आक्रमण किया; और उसके प्राणोंका भी नाश किया। सूर्यमल्लके औरस जवाहरसिंह, रतनसिंह, नवलसिंह, नाहरसिंह और रणजीतसिंह नामवाले पांच पुत्र उत्पन्न हुए, इसके अतिरिक्त सूर्यमल्ल एक समय शिकार खेलनेको गये थे, वहाँ मार्गमें इनको हरदेवबक्श नामवाला एक सुकुमार बालक मिला था, इन्होंने उसको भी पुत्ररूपसे ग्रहण कर पालन किया था। उक्त पांच पुत्रोंमेंसे पहिला और दूसरा पुत्र कुर्मीजातिकी विवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था। तीसरा पुत्र मालिनके गर्भसे उत्पन्न हुआ, और अन्यान्य दो पुत्र स्वजातीय जाटस्त्रियोंके गर्भसे उत्पन्न थे।

सूर्यमल्लकी मृत्युके पीछे जिस समय जवाहिरसिंह पिताके पदपर अभिषिक्त हुए उस समयमें ही माधोसिंहके शिरपर आमेरका राजमुकुट शोभायमान हुआ। जवाहिरसिंहने सिंहासनपर बैठते ही माधोसिंहके साथ शत्रुता की। उस शत्रुताका पहिला उद्देश तो यह था कि जिससे माधोसिंह महाराष्ट्रोंको परास्त न कर सकें, और दूसरा उद्देश यह था, कि माधोसिंह जयपुरके अधीन माचेरीके सामन्तको निकाल कर उस देशपर अपना अधिकार कर लें; माचेरीके सामन्तके पक्षका समर्थन करैं। सन् ११८२ हिजरीमें जवाहिरसिंह आमेरपतिके निकट बारम्बार प्रार्थना करने लगे, कि कामा नामक देश उनको दिया जाय, परन्तु आमेरराज माधोसिंहने उस प्रार्थनापर कुछ भी ध्यान न दिया, तब जवाहिरसिंह आमेरपतिके साथ युद्ध करनेकी इच्छासे अवसरकी खोज करता हुआ शीघ्र ही जाटसेनाको सजाय गर्वमें भर जयपुर राज्यसे होकर पवित्र पुष्करतीर्थकी ओरको चला। राजाओंमें ऐसा नियम प्रचलित है कि यदि एक राज्यका राजा अन्य राजाके राज्यमें हो कर अन्यत्र जानेकी इच्छा करै तो पहिले उस राजाको समाचार देकर उसकी अनुमति लेनेके लिये प्रार्थना करनी होती है, परन्तु जवाहिरसिंहने इस समय इस नियमकी भी रक्षा न की, उन्होंने आमेरराजके प्रति अवज्ञा प्रकाश कर बिना ही आज्ञा लिये जयपुरसे पुष्करको गमन किया। जिस

समय जवाहिरसिंह पुष्कर तीर्थपर गये उस समय उस तीर्थमें मारवाडपति राजा विजयसिंह भी उपस्थित थे। जवाहिरसिंहके साथ विजयसिंहका साक्षात् हुआ। यद्यपि जवाहिरसिंह जाटजातिसे उत्पन्न थे, तथापि सूर्यवंशधारी मारवाड राज विजयसिंहने जवाहिरसिंहके साथ जातीय रीतिके अनुसार पगडी बदलकर मित्रता की। इस समय आमेरेश्वर माधोसिंह रुग्णावस्थामें थे, उनके और दो भ्राता हरसहाय और गुरुसहाय इनकी आज्ञासे राजकार्य करते थे, जिस समय उन दोनों भ्राताओंने यह सुना कि जवाहिरसिंह अहंकारमें भरकर बिना हमारी आज्ञा लिये जयपुरराज्यसे चले गये हैं, तो दोनों भाइयोंने यह समाचार माधोसिंहसे कहा और पूँछा कि इस समय क्या करना उचित है? यह सुनकर माधोसिंहने अत्यत क्रोधित होकर कहा कि "जवाहिरसिंहको इस प्रकारका एक पत्र लिखो कि वह पहिलेके समान हमारे राज्यमें फिर न आवें और सामन्तोंको सेना सजानेके लिये आज्ञा दो। यदि जवाहिर गर्वित होकर पहिलेके ही समान फिर जयपुर राज्यमें आकर हमारा अपमान करें तो सामन्तगण सेनासहित उनपर आक्रमण करके उन्हें उचित दंड दें"। अतः तुरन्त ही माधोसिंहकी आज्ञानुसार कार्य किया गया। जवाहिरसिंह भी डरनेवाला मनुष्य नहीं था, वह माधोसिंहके साथ युद्ध करनेकी पहिलेसे ही राह देख रहा था; इस कारण माधोसिंहके पत्रपर कुछ भी ध्यान न देकर वह पहिलेकी ही तरह पुष्करसे जयपुरको चला, जवाहिरके इस आचरणसे संग्रामका उपयुक्त कारण उपस्थित हो गया इस कारण आमेरके सम्पूर्ण सामन्तोंने शीघ्र ही माधोसिंहकी आज्ञानुसार स्वजातीय बलविक्रम प्रकाश करके वीर जवाहिरको दंड देनेके लिये प्रबल वेगसे आक्रमण किया। दोनों ओरसे भयंकर युद्ध होने लगा। यदि इस युद्धमें जाटनेता जवाहिरसिंह पहले ही भाग जाते तो भी इसी कारणसे आमेरराजकी विजय हो जाती, परन्तु आमेरके प्रायः सभी प्रधान २ सामन्त इस रणभूमिमें मारे गये"।

इतिहासवेत्ता जाटजातिका शेष विवरण निम्नलिखित प्रकारसे वर्णन कर गये हैं; कि "जवाहिरसिंहके परलोक चले जानेपर उनके छोटे भ्राता रत्नसिंह राजसिंहासनपर बैठे। वृन्दावनके एक गोस्वामीके साथ इन जाटराजका विशेष परिचय हुआ। गोस्वामीने रत्नसिंहसे कहा कि हम मंत्रोंके बलसे अनेक उपाय करके निकृष्ट धातुको भी सुवर्ण कर सकते हैं। जाटराजने इनकी बातोंपर विश्वास कर सुवर्णके लालचमें आ बहुतसे रुपये इनको दिये। गोस्वामीने इस प्रकार बहुतसे रुपये लेकर कहा कि अमुक दिन आपको यह सुवर्णके रुपये मिल जाएँगे; क्रमानुसार जब उस पाखंडी गोस्वामीने अवधिका दिन निकट आया देखा तो उसने विचारा कि इस धोखेबाजीसे तो मेरे प्राणनाशकी संभावना है, इस कारण अंतमें उसने ही रत्नसिंहके हृदयमें छुरी मारकर उनके प्राण ले लिये। रत्नसिंह इस प्रकारसे मारे गये, उनके छोटे पुत्र केसरीसिंह पिताके सिंहासनपर बैठे; और केसरीके चाचा रत्नसिंहके अनुज नवलसिंह अपने भ्रातृपुत्रके नामसे राज्यशासन करते थे। केसरीसिंहके पीछे रणजीतसिंह जाटराजके पदपर अभिषिक्त हुए। इन रणजीतसिंहने अपने बाहुबलसे भारतमें विशेष प्रसिद्धि

प्राप्त की। अंग्रेज सेनापति लार्ड लेकने इनके विरुद्ध भरतपुरपर आक्रमण किया, इन रणजीतसिंहने अमित तेज और बलविक्रमके साथ अपना प्रबल प्रताप प्रकाशित किया; भारतके इतिहासमें इनकी प्रशंसा भलीभांतिसे हुई है और अंग्रेज सेनापति भी उस प्रतापको देखकर अत्यन्त आश्चर्यमें हो गया था। रणजीतसिंहने सन् १८२५ ईसवीमें अपने प्राण त्याग किये। रणधीरसिंह, बलदेवसिंह, हरदेवसिंह और लक्ष्मणसिंह नामवाले रणजीतके चार पुत्र थे, इनमें रणधीरसिंह पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। पीछे रणधीरसिंहके कनिष्ठ भ्राताके संरक्षक होनेसे रणधीरके छोटे पुत्र भरतपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए। अंग्रेजोंकी सेनाने उनको भगानेके लिये फिर बडे समारोहके साथ भरतपुरपर आक्रमण किया, और बहुत समय तक किलेको घेरकर अन्तमें विजय प्राप्त की, इसी कारणसे उस विजयी सेनाने भरतपुरके खजाने और प्रजाकी सारी धनसम्पत्तिको लूट लिया"।

अब आमेरके इतिहासका अनुसरण करते हैं, कर्नल टाड जाटजातिके वृत्तान्तको वर्णन कर अंतमें लिखते हैं कि "जाटनेताके साथ आमेर राज्यका उक्त समर ही माचेरी देशके परिणाममें संपूर्ण स्वाधीनता प्राप्तिका प्रत्यक्ष मूलकरण था, यह कई एक बातोंसे जाना जाता है। नरूका संप्रदायके प्रतापसिंह आमेरराजके आधीनमें माचेरीके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित थे, किसी बडे अपराधसे आमेरपति माधोसिंहने प्रतापसिंहको निकालकर माचेरीको अपने हस्तगत कर लिया था। प्रताप निकाले जाकर जाटराज जवाहिरसिंहकी शरणमें गये; उन्होंने इनको आश्रय देकर उनके पदोचित संमानकी रक्षाके लिये अपने राज्यमें थोडीसी जमीन दे दी। माचेरीके निकाले हुए सामन्त प्रतापसिंहके कार्याध्यक्ष पदपर खुसहालीराम नामका एक मनुष्य नियुक्त हुआ और जयपुर दरबारमें दूतके पदपर नन्दराम नामका एक मनुष्य नियुक्त हुआ। प्रतापके निकलते ही इन दोनोंने उसके साथ जाटभूमिमें आश्रय लिया। यद्यपि प्रतापसिंह खुसहालीराम और नंदराम जाटपतिकी कृपादृष्टिसे निर्विघ्न होकर भरतपुरमें रहते थे और जाटराजकी दी हुई पृथ्वीसे अपना जीवन व्यतीत करते थे, परन्तु इनके हृदयमें उस समय भी जातीयगर्व इतना प्रकाशमान था, कि वह स्वजातिके संमानकी रक्षाके लिये सर्वदा उत्कंठित रहते थे, और स्वजातिके अपमानसे वह अपना ही अपमान जानते थे, यहांतक कि जिस समय जाटपति जवाहिरसिंह अपनी सेना साथ लेकर आमेरसे पुष्करको जा रहे थे; उस समय उन्होंने जवाहिरसिंहके इस गर्वित आचरणसे अपना अधिक अपमान माना और वह शीघ्र ही जाटराजका आश्रय और भूवृत्तिकी ओर अवज्ञा प्रकाश करके फिर जातिके संमानकी रक्षाके लिये आमेरको चले गये। जिस दिन आमेरकी सेनाके साथ जाटोंके सेनाका घोर युद्ध उपस्थित हुआ था; प्रतापसिंह उसी दिन अपनी सेना साथ ले आमेरपतिकी ओर जाकर जाटोंकी सेनाका नाश करने लगे। युद्धमें जाटराज परास्त हो गया। प्रतापसिंहको आमेर पतिने बडे संमानके साथ ग्रहण किया। यद्यपि आमेरपति उक्त समरके पांच चार दिन बाद तक जीवित रहे थे, परन्तु उन्होंने प्रतापसिंहको स्वजाति वा वात्सल्य और राजभक्ति देखकर उन्हें क्षमा किया, और उनका पूर्व

अधिकारी माचेरी देश फिर दे दिया। प्रतापसिंहके इस आचरणसे यद्यपि आश्रय दाता जाटोंके साथ उनका युद्ध होता हुआ देखकर किसी २ ने उनको अकृतज्ञकी उपाधि दी थी, परन्तु इस बातको हम कह सकते हैं कि स्वजातिवात्सल्य उनके हृदयमें इतना प्रवल था कि स्वजातिके अपमानसे वह अपना ही अपमान हुआ जानते थे, तथापि जन्मभूमिके उपयुक्त पुत्रके कर्तव्य पालनके लिये उन्होंने अकृतज्ञकी उपाधि धारण करनेपर भी दुःख न माना। प्रतापसिंहका ऐसा आचरण स्वजातिवात्सल्यका उज्ज्वल निदर्शन है।

सत्रह वर्षतक राज्य करके माधोसिंह उदरामयसे उपरोक्त युद्धके चार दिन उपरान्त परलोकवासी हुए। विजातीय राजनीतिज्ञ टाड साहब लिखते हैं, "यदि माधोसिंह कुछ कालतक और जीवित रहते तो जो इस विषमय युद्धके पीछे आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए थे और उनको अनिष्ट फल भोगने पड़े, वह यथाशक्ति उस समरके शोचनीय फलको अवश्य ही दूर कर सकते थे, परन्तु उनके पुत्रकी शैशव अवस्था थी इस हेतु राजमें राजाके न होनेसे उनके उस मृत्यु समयसे कछवाहे राज्यके शासनकी सामर्थ्य एकबार ही क्षीण होने लगी। उन्होंने कई नगर बनाये थे, इनमेंसे सबसे श्रेष्ठ रजवाडेमें वाणिज्यका प्रधान स्थान रणथंभोरके प्रसिद्ध किलेके निकट अपने नामसे माधोपुर नामका एक रमणीक नगर स्थापन किया। उन्होंने ज्योतिष विद्यामें पारदर्शी अपने स्वर्गीय पिता सवाई जयसिंहके गुणोंमेंसे एकपर भी अधिकार नहीं किया। उनके राज्यके समयमें जयपुरमें अनेक देशोंसे इतने पंडित आया करते थे कि जिससे पवित्र वाराणसीके पंडितोंका गौरव भी प्रभाहीन हो गया था"।

माधोसिंहके दोनों रानियोंके गर्भसे औरस पृथ्वीसिंह और प्रतापसिंह नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। माधोसिंहके स्वर्ग चले जानेपर, व्यवहारोंको न जाननेवाले कुमार पृथ्वीसिंह जयपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए। पृथ्वीसिंहकी माता छोटी रानी और प्रतापसिंहकी माता पटरानी थी। इस कारण प्रतापकी माता ही पृथ्वीसिंहके अभाविकास्वरूपसे राज्य करने लगी। साधु टाड साहब लिखते हैं, कि "चन्द्रावतवंशमें उत्पन्न पटरानी प्रभुत्वके चलानेकी अभिलाषिणी तथा दृढ़प्रतिज्ञ स्त्री थीं; परन्तु वह फीरोजनामक महावतको उपपति पदपर वरण करके अत्यन्त कलंकित हुई। रानीने फीरोजको राजसभाके सदस्यपदपर नियुक्त किया, इससे समस्त सामन्त विरक्त हो राजधानी छोडकर अपने अपने अधिकारी देशोंको चले गये और वहीं रहने लगे। रानी उन सामन्तोंकी सहायता न लेंगी यह विचार कर धनके लोभी विख्यात महाराष्ट्रोंने अम्बाजीके अधीनमें एक वेतनभोगी सेना नियुक्त की, और उसके द्वारा राजस्वका संग्रह किया। इस समय आरतराम नामका एक मनुष्य आमेरके दीवान वा प्रधान मंत्रीपदपर नियुक्त था और खुशहालीराम वोरा जो परिणाममें आमेरकी राजनैतिक रंगभूमिमें प्रस्थान हुआ था, वह उसी मंत्री समाजमें नियुक्त था, यद्यपि यह अति ऊंची श्रेणीका नीति जाननेवाला था, परन्तु फीरोजके प्रभुत्व और प्रबलताने इसको भी एकवार ही सामर्थ्यहीन कर दिया। फीरोज उस

राजरानी और राज्यके ऊपर पूरा आधिपत्य रखता था। क्रमानुसार नौ वर्षतक आमेरका राज्य घृणितभावसे चला, नौ वर्षके उपरान्त आमेरपति पृथ्वीसिंह घोडेपरसे गिरकर परलोकवासी हुए, परन्तु उस समय सर्वसाधारणके हृदयमें इस प्रकारका प्रबल सन्देह उपस्थित हुआ कि पटरानीने अपने पुत्र प्रतापसिंहको राज्यपर बैठालनेकी अभिलाषासे ही पृथ्वी सिंहको विष देकर मरवा डाला है। यद्यपि यह रानी मृत माधोसिंहकी पटरानी थी, परन्तु पृथ्वीसिंहकी मृत्युसे जिनके स्वार्थके सिद्ध होनेकी संभावना थी उनको अविभाविका पदपर नियुक्त करनेसे सामान्य बुद्धिका भी अपमान किया गया था। पृथ्वीसिंह यद्यपि राजकार्यको नहीं जानते थे; यद्यपि वह पटरानीकी शासनश्रृंखलाको दूर नहीं कर सके परन्तु उन्होंने उस अज्ञान अवस्थामेंही बीकानेर और कृष्णगढ़की राजकुमारियोंका पाणिग्रहण किया था। कृष्णगढ़की राजनंदिनीके गर्भसे पृथ्वीसिंहके औरस मानसिंह नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वह शिशु मानसिंह बहुत दिनोंतक आमेर राजवंशके कंटकस्वरूप थे, पिताके मर जानेपर इनकी माता गुप्तभावसे इनको कृष्णगढ़ नानाके यहाँ भेज देती परन्तु उसने देखा कि यह वहाँ भी निर्विघ्नतासे न रह सकेंगा इस कारण इनको अपने साथ लेकर वह सिंधियाके डेरोंमें चली गई, और उसी दिनसे यह सेंधियाके ग्वालियोंके द्वारा पाले गये "।

पृथ्वीसिंहके अकालमें ही स्वर्गवास होनेपर आमेरके सून सिंहासनपर सरलतासे पटरानीके प्यारे पुत्र प्रतापसिंह बैठ। खुसहालीराम इस समय राजाकी उपाधि प्राप्त कर तथा आमेरके प्रधान अमात्य पदपर नियुक्त थे, उन्होंने अभिषेकके समयमें भलीभांतिसे सहायता की। राजा खुसहालीराम प्रधान मंत्रीपदको पाकर राज्यमें धीरे २ अपनी प्रबलताका विस्तार करता था, वह इस सुअवसरको पाकर क्रम क्रमसे अपने शत्रु फीरोजकी शासनशक्तिको एकबार ही लोप करनेके लिये विशेष चेष्टा करने लगा। वास्तवमें राजा खुसहालीराम अपना वह गुप्त मनोरथ पूर्ण करनेके लिये जिन २ उपायोंको करता था उन्हीं उपायोंसे उसके पूर्वतन प्रभु माचेरीके सामन्तको सम्पूर्ण स्वाधीनताका सुअवसर उपस्थित कर दिया। प्रतापसिंहके अभिषेकके समयमें आमेरके समस्त सामन्त यथानियम महलमें उपस्थित थे, केवल उक्त माचेरीके सामन्त उनमें नहीं थे, ऐसा विदित होता है कि राजा खुसहालीरामने फीरोजकी सामर्थ्य लोप करनेकी इच्छासे विशेष चेष्टा करके राज्यमें विप्लव उपस्थित कर दिया था, और उसने उक्त सामन्तको गुप्तभावसे अनुरोध किया था, कि वह इसीसे अभिषेककी सभामें नहीं आये। दूसरे पक्षमें धनके अभावसे जिससे प्रजामें कष्ट उपस्थि हो, इस अभिप्रायसे उक्त राजमंत्रीने गुप्तभावसे राज्यके जिमींदारोंको यह अनुरोध कर भेजा, कि जिससे

(१) कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "इनके भाग्यमें दो या तीन वार आमेरके सिंहासनकी प्राप्तिका अवसर मिला, सेन्धियाके साथमें रहकर अंग्रेज रेसिडेण्टने सन् १८१२ ई० की २१ वीं मार्चको इण्डिया गवर्नमेंण्टको जो पत्र लिखा था उसे देखो। सन १८२० ई० में जयपुरके सामन्त जिस समय राजा जगत्सिंहके आचरणोंसे कुपित हुए थे उस समय तथा उक्त राजाकी मृत्युके समयमें मानसिंहको सिंहासनप्राप्ति होनेकी संभावना थी।

वह राजाको कर न दे, इतना करके भी खुसहालीरामको सन्तोष न हुआ, वह राजनीतिमें चतुर था, इस कारण अपना मनोरथ पूर्ण करनेके लिये मुगल सिंहासनपर विराजमान बादशाहका आश्रय लेनेके लिये दिल्ली गया। इसने विचारा कि सम्राट्की सभामें अपना प्रभुत्व चलते ही तत्काल फीरोजरूपी कांटा सरलतासे उखाड दिया जायगा।

इस समय नजफ़खां दिल्लीश्वर सम्राट्के प्रधान सेनापति थे। इस समय नवीन बलको पाकर जाटोंने अतुल पराक्रमके साथ आगरेपर आक्रमण कर अपने अमित तेजको प्रकाशित किया था। प्रधान सेनापति नजफ़खाँ बादशाहकी आज्ञासे उस कठिन जाटोंकी सेनाको आगरेसे भगानेके लिये बादशाहकी सेना लेकर महाराष्ट्रोंकी सेनाका संयोग कर रणभूमिमें गये। राजनीतिमें कुशल खुसहालीरामने यह सुअवसर देखकर शीघ्र ही अपने पूर्व प्रभु माचेरीके सामन्तसे कहला भेजा, वह उसी समय सेना साथ ले बादशाहके प्रधान सेनापतिके साथ मिलकर जाटोंके साथ युद्ध करने लगे। बादशाहकी सेना जिस समय महाराष्ट्रोंकी सेनाके साथ जाटोंको आगरेसे भगा उनकी राजधानी भरतपुरपर आक्रमण कर रही थी उसी समय माचेरीके सामन्त राजा खुसहालीरामकी सम्मतिसे आवश्यकता न होनेपर भी सेना लेकर नजफ़खांके साथ जा मिले। इस समय जाटोंके नेता पदपर नवलसिंह थे। मिली हुई सेनाने जाटोंपर प्रबल वेगसे आक्रमण करके उन्हें एकबार ही परास्त कर दिया। इस युद्धमें माचेरीके सामन्तने प्रबल पराक्रम करके सम्राट्का विशेष उपकार किया इससे बादशाहने प्रसन्न होकर इनको रावराजाकी उपाधि दी, और जयपुरके राजाकी आधीनतामें न रहकर स्वाधीन भावसे सम्राट्के अधीनमें माचेरीके शासनके लिये एक सनद भी लिख दी, इस प्रकारसे माचेरीके सामन्त स्वाधीन राजपदपर प्रतिष्ठित हुए।

राजा खुसहालीरामने जो अपने प्राचीन प्रभुके सौभाग्यको बढानेके लिये उपरोक्त प्रकारका मार्ग साफ कर दिया था, उन्होंने भी अपने पूर्वतन प्रभुकी सफलता प्राप्तिके लिये उसी प्रकारके उपायसे अपने शत्रु फीरोजका नाश करनेके लिये संकल्प किया। राजा खुसहालीरामने आवश्यकता न होनेपर भी इस समय आमेरके समस्त सामन्तोंके साथ सम्राट्की सेनाके साथ मिलनेकी तयारी की, पटरानीने राजा खुसहालीराम वोराके उक्त प्रस्तावमें कुछ भी आपत्ति न की वरन वह इस उपायसे सम्राट्को सन्तुष्ट करनेके लिये फीरोजमहावतका राजपद और सम्मानके बढानेकी अभिलाषणी हुई। सदस्य राजा खुसहालीरामने स्वयं आमेरकी सेनाके नेतारूपसे जानेकी इच्छा की थी परन्तु पटरानीने उसके बदलेमें फीरोजको ही उस पदपर नियुक्त करके खुसहालीरामके साथ भेज दिया। अभागा फीरोज ही इस ऊँचे पदको पाकर उनका कालस्वरूप हो गया। फीरोज आमेरके प्रधान सेनापतिरूपसे माचेरीके रावराजाके साथ समान सम्मान पाकर बादशाहके प्रधानसेनापतिके डेरोंमें गया। माचेरीके रावराजा खुसहालीरामके साथ गुप्त षड्यन्त्र करके जिस उपायसे फीरोजको दूर करके आप आमेरराज्यके सर्वमय कर्ता होनेके अभिलाषी हुए थे, वर्तमान समयमें उनकी वह कल्पना सफल होती हुई न देखकर माचेरीके अधिनायकने

अपने सहयोगी खुसहालीरामके साथ परामर्श कर दूसरा उपाय शोचा, मधुर सम्भाषण, प्रीतिभरे वचन तथा सौजन्यता दिखाकर सबसे पहिले फीरोजका विश्वासपात्र बनकर मित्र होनेकी चेष्टा करने लगा, शीघ्र ही उसकी वह चेष्टा सफल हो गई । फीरोजने रावराजाको अपना परम मित्र जाननेमें कुछ भी सन्देह न रक्खा । रावराजाने इस प्रकारसे फीरोजको अपने हस्तगत कर शीघ्र ही विष देकर उसके प्राण ले लिये, कांटा निकल गया; इसके उपरान्त माचेरीके अधीश्वर रावराजाने खुसहालीरामके साथ मिलकर आमेरके शासनकार्यका भार लिया ।

फीरोजकी मृत्युके कुछ ही समयके उपरान्त हतभागिनी पटरानीने भी अपने प्राण त्याग दिये । प्रतापसिंहकी अवस्था इस समय बहुत थोडी थी, इस कारण वह बिना दूसरोंकी सहायताके राजकार्य नहीं कर सकते थे । माचेरीके रावराजा और राजा खुसहालीराम यद्यपि पहिलेसे ही दोनों एकमत होकर एक कार्यको साधन कर अर्थात् अपने २ स्वार्थके लिये राजनैतिक रंगभूमिमें चातुरीजालका विस्तार करते आये थे, परन्तु दोनों ही उच्च शासनकी सामर्थ्यके लालची होनेसे शीघ्र ही महाविपत्तिमें पडे, खुसहालीरामकी प्रार्थनासे शीघ्र ही विख्यात योधा हमदानीखांके अधीनमें एक सम्राट्की सेना आमेरमें आयी, क्रमसे राज्यमें भयंकर आत्मविग्रह उपस्थित होता हुआ दिखाई दिया । बादशाहकी सेनाको आमेरसे भगानेके लिये अन्तमें एक पक्षने महाराष्ट्रोंके साथ संधि करनेका विचार किया । एक दिन संधि हो गई, दूसरे दिन फिर वह संधि तोड दी गई । इस प्रकारसे कुछ समयतक राज्यमें महा अशान्ति अत्याचार और रुधिर बहता रहा, जब प्रतापसिंह समर्थ हो गये तब उन्होंने राज्य अपने हाथमें लिया । महाराज प्रतापसिंहने राज्यभारको अपने हाथमें लेकर समस्त विपत्तियोंको छिन्नभिन्न कर दिया, और दोनों सम्प्रदायोंके पापकी आशा व्यर्थ करके महाराष्ट्रोंको दमन करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की ।

इस समय अत्याचारी महराष्ट्रोंने भारतके प्रत्येक प्रान्तमें भयंकर अत्याचार करने आरम्भ कर दिये थे, उनके इस उपद्रव और अत्याचारोंसे समस्त भारतवर्ष कंपायमान हो गया था । महराष्ट्रोंने रजवाडेके राज्योंपर भी बारम्बर आक्रमण करके वहांकी समस्त धन सम्पत्ति लूट ली थी, आमेरपति प्रतापसिंहने सिंहासनपर बैठते ही असीम साहसके साथ अपनी नीतिज्ञता दिखानी प्रारम्भ की । वह इस बातको भली भांतिसे जान गये कि यह महाराष्ट्र किसी भांतिसे भी पंगपालको विध्वंस नहीं कर सकेंगे, परन्तु किसी प्रकार आमेर राज्यका नहीं वरन् अब समस्त रजवाडेका मंगल भी नहीं है । इस समय सन् (१७८७ इसवी) में मारवाडके सिंहासनपर महाराज विजयसिंह विराजमान थे, प्रतापसिंहने मारवाडराजके पास एक दूतके हाथ पत्र लिखकर भेज दिया—"यह भयंकर अत्याचारी महाराष्ट्र हमारे प्रति शत्रुस्वरूप अत्यन्त हृदयभेदी अत्याचारोंसे हमें पीडित कर रहे हैं इस कारण उनको दमन करना हमारा परम कर्त्तव्य है, और उन शत्रुओंको दमन करनेके लिये सभी राजपूत राजा, मिलकर युद्धमें

उन्हें परास्त करके निश्चिन्ततासे राज्य करें। मैंने स्वयं रणभूमिमें जाकर महाराष्ट्रोंको उचित दंड देनेकी अभिलाषा की है, इस कारण आप यदि राठौर सेनाको हमारी सहायताके लिये भेज दें तो सरलतासे हम अपनी जातिके शत्रुदलके गर्वको एकबार ही चूर्ण करके रजवाडे-को निष्कंटक कर दें।" मारवाडपति महाराज विजयसिंहने अपने स्वजातीय भ्राताका यह पत्र पाते ही शीघ्रतासे उनकी सहायता करनेके लिये तैयारी की, एक समय इससे पहिले विजयसिंहने महाविपत्तिमें पडकर महाराष्ट्रोंके नेताको अपने अधिकारका अजमेर देश दे दिया था। इस समय वह प्रतापसिंहको विशेष उद्योगी देखकर साहसके साथ उनकी सहायता करके महाराष्टोंके हाथसे फिर अजमेरको छीननेके लिये आगे बढे, शीघ्र ही मारवाडकी सेना सजाई गई। महाबलवान् राठौर सामन्त जवानदासने मारवाडकी सेनाके नेतास्वरूपसे आमेरराजके अधीनस्थ चमूदलके साथ जाकर मेल किया।

तुंगानामक स्थानमें महाराष्ट्रोंके नेता सेंधिया और उनके शिक्षित फरासीसी सेनापति डिवाइनने प्रबल वेगसे मारवाड और आमेरकी मिली हुई सेनापर आक्रमण किया। भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गया। एक ओर जिस भाँति राजपूतोंकी सेना स्वजातिके शत्रु महाराष्ट्रोंका नाश करनेके लिये प्राणपणसे युद्ध करने लगी, उसी प्रकार दूसरी ओर नवीन बलसे बलवान हुए महाराष्ट्र भी अपनी स्वभाव--सिद्ध तस्करता और लूटमारकी वृत्तिको अक्षय करनेके लिये यथाशक्ति वीरता दिखाने लगे। बहुत देरतक युद्ध होनेके उपरान्त सेंधिया परास्त हो गया, और समस्त अस्त्र शस्त्र तथा द्रव्योंको रणभूमिमें छोड प्राण लेकर भाग गया। विजयी राठौर और कछवाहोंकी सेनाने आनं-दित होकर उन समस्त द्रव्योंको परस्परमें बाँट लिया। महाराज प्रतापसिंहने स्वयं रणक्षेत्रमें सेना चलाई थी, इस कारण उनके पक्षमें यह विजय विशेप प्रशंसित विचारी गई। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि सन् १७८९ ईसवीमें इस तुंगाके युद्धमें विजय प्राप्तकर महाराज प्रतापसिंहने एक बडा उत्सव करके दीन दुःखियोंको २४ लाख रुपये दान किये थे।

इस तुंगाके समरमें विजय होनेसे आमेरराज प्रतापसिंहके यशका गौरव समस्त रजवाडेमें फैल गया, और वह अपने पूर्णप्रतापसे पिताका राज्य करने लगे, आमेरमें फिर शान्तिमती देवी नृत्य करने लगी, प्रजाने अत्याचारोंसे उद्धार पाकर निर्विघ्न हो संतोषके साथ प्रतापसिंहके न्यायमूलक राज्यमें फिर अपनेको उस शोचनीय अवस्थासे बदला हुआ देखा। परन्तु राजपूतजातिके भाग्यका चक्र एकबार ही बदल गया था, वह शान्ति अधिक दिनतक स्थिर न रह सकी यद्यपि माधोजीसेंधिया तुंगाके युद्धमें परास्त होकर भाग गया था, परन्तु कई वर्षके पीछे वह फिरसे मारवाडको विध्वंस करनेके लिये चला।

प्रतापसिंहकी सम्मतिसे मारवाडके राजा विजयसिंहने अपनी सेनाको तुंगाके युद्धमें भेज दिया था, इस समय माधोजी सेंधिया फिर बदला लेनेके लिये बहुतसी

(१) इस युद्धका वर्णन राजस्थानके प्रथम कांडके ३२ अध्यायमें लिखा गया है।

सेना साथ लेकर आ रहा है यह समाचार सुनते ही महाराज विजयसिंहने आमेरपति प्रतापसिंहसे सेनाकी सहायता पानेके लिये दूतके द्वारा कहला भेजा, वीर श्रेष्ठ प्रताप-सिंहने तुरन्त ही अपनी सेनाको महाराष्ट्रोंका दमन करनेके लिये मारवाडको भेज दिया, परन्तु दुःखका विषय है कि मारवाड और आमेरकी सेनाने यद्यपि मिलकर युद्ध किया, परन्तु राठौरोंके कवियोंने इस समय आमेरकी सेनाको निंदनीय बताकर गीतोंमें रचना की, इससे आमेरकी सेना स्वजातिका अपमान जान शीघ्रतासे राठौरोंकी सेनासे अलग हो गई। उस संगीतके कारण राठौरोंके ऊपर आमेरकी सेनाका इस प्रकारसे जातिक्रोध उपस्थित हुआ कि, वह उस समय जातिके परम शत्रु महाराष्ट्रोंको दमन करना भी भूल गये, और राठौरोंको विपत्तिमें डालनेके लिये तैयार हुए। इतिहाससे यह भी जाना जाता है कि आमेरका सेनापति गुप्तभावसे महाराष्ट्रोंके साथ मित्रता करके दूर रहने लगा था, राठौर इस समाचारको कुछ भी नहीं जानते थे। इसके पीछे पातन नामक स्थानमें जाकर राठौरोंकी सेनाने पहलेके समान प्रबल विक्रमके साथ महाराष्ट्रोंपर आक्रमण किया। कछवाहोंकी सेना इनको सहाहता न देकर इकली खडी रही। राठौर गण उस समय इस गुप्त रहस्यको जान गये थे, परन्तु वे युद्धसे विमुख न हुए, अंतमें महाराष्ट्र नेताको जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त हुआ। यद्यपि इस पातनके युद्धमें कछवाही सेनाकी सहायताके बिना राठौर परास्त हो गये, परन्तु यह अवश्य ही मानना होगा कि महाराज प्रतापसिंह अपनी सेनाके ऐसे व्यवहारसे दुःखी हुए थे, यदि प्रतापसिंह पहिलेके समान इस समय भी स्वयं रणक्षेत्रमें चले जाते तो आमेरकी सेना इस प्रकारके जातीय कलंकको न सहकर गौरव बढा सकती थी।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं, " कि पातनके युद्धमें पराजय और राठौरोंके साथ संधि टूटनेपर सन् १७९१ ईसवीमें तुकाजी हुलकरने जयपुरपर आक्रमण करके प्रतापसिंहको परास्त किया और उनसे वार्षिक कर लेना स्वीकार कराया। वह कर अंतमें अमीरखाँको मिला। उस समयसे प्रतापकी मृत्युके समय अर्थात् सन् १८०३ ईसवीतक जयपुर राज्य बडी दुर्दशामें रहा, एक तरफ महाराष्ट्र दूसरी ओर फरासीसी अपने २ अधिकारके लिये परस्पर लडकर प्रजाका सत्यानाश करते रहे।

कर्नल टाड महाराज प्रतापसिंहके शासनके सम्बन्धमें लिखते हैं, "कि इनके राज्यकी प्रत्येक घटनाका विवरण वर्णन करनेमें यवनराज्यकी अंतिम अवस्थाका इतिहास फिर वर्णन करना होगा, प्रतापसिंहने पचीस वर्षतक राज्य किया। उस समयसे ही वह और उनका राज्य भिन्न अवस्थामें पडा। वह एक साहसी राजा थे, उनका बुद्धिबल भी कुछ कम नहीं था, परन्तु इनके साहस और बुद्धिके विचारोंसे अगणित लूटप्रिय तस्कर और आभ्यन्तरिक अनेकताके विरुद्धमें इस सामान्य शक्तिके प्रयोग-से कभी भी सफलता प्राप्त न हो सकी। माचेरी देशकी स्वाधीनता प्राप्तिमें जयपुरके राज्यकी आमदनी बहुत घट गई थी, और प्रतापसिंहके पूर्व पुरुषोंने जो अगणित धन

हरण किया था, महाराष्ट्र इत्यादिकोंको एक २ बारमें कई २ लाख रुपये देनेसे वह धन भी शीघ्र समाप्त हो गया, महाराष्ट्रोंक तस्कर दलने उस समय जयपुरसे अस्सी लाख रुपये ग्रहण किये; परन्तु आमेरके खजानेमें इतना अधिक धन था कि माधोसिंहने पिताके सिंहासनपर बैठनेकी इच्छासे मुट्ठी भर २ कर धनकी वर्षा की थी परन्तु तब भी महाराज प्रतापसिंहने तुंगाके युद्धमें विजय पाकर आनंदित हो चौबीस लाख रुपये खर्च किये " ।

पूर्वोक्त वृत्तान्तसे यह भलीभाँति प्रमाणित होता है कि दिल्लीके यवन राज्यका नाश करनेके समयमें महाराष्ट्र और जाटजाति नवीन बल पाकर भारतवर्षकी रंगभूमिमें नवीन राजनैतिकताका अभिनय कर रही थी । उस अभिनयके फलस्वरूप यवनराज्यकी शक्ति एक साथ ही तेजहीन हो गई, और उसके साथ ही साथ प्राचीन राजपूतराज्यकी सुख शान्तिके मार्गको बंदकर राजपूत जातिके सौभाग्यका द्वार भी एक बार ही बंद कर दिया । कुछ समयके उपरान्त पिंडारोंके दलने फिर मस्तक उठाकर राज्यमें अराजकता बढानेके लिये रंगभूमिमें दर्शन दिया, परन्तु इसका अंतिम फल यह हुआ कि मुगलराज्यका एकबार ही लोप, महाष्ट्रोंके प्रबल वेगकी गतिका रुकना, जाटजातिका गतिरोध, पिंडारोंको उचित दंड, राजपूतोंकी जातीय जीवनी शक्तिकी कमी और अंतमें क्षुद्रद्वीपवासी अंग्रेजोंकी विजय आदिसे भारतवर्षमें नवीन राज्यकी सृष्टि और नवीन युगका प्रारंभ हुआ । राजनीतिमें चतुर महात्मा टाड साहब ठीक ही कह गये हैं कि जब चारों ओरसे अनेक जातियोंने लूटना पीटना आरंभ कर दिया तब जयपुरके समान छोटेसे राज्यके अधीश्वर कभी भी उनके वेगको निवारण न कर सके । जातिकी अनैकता ही केवल आमेरके पतनका कारण नहीं थी, पिंडारे, जाट इत्यादिके निरन्तर आक्रमणसे रजवाडेके अन्यान्य राज्योंकी तरह आमेरकी भी अवनति हो गई । यदि इस समय मेवाड, मारवाड, आमेर, बीकानेर, जयसलमेर इत्यादिके राजपूत राजा एकमत होकर जातीय प्रेमसे मतवाले हो रणभूमिमें सिंहनाद करते हुए सम्मुख होते, तो कभी भी महाराष्ट्र और पिंडारे रजवाडेकी ऐसी शोचनीय अवस्था नहीं कर सकते थे । तुंगाके युद्धमें इकले प्रतापसिंहने ही केवल मारवाड सेनाकी सहायतासे महाराष्ट्रोंके नेताको परास्त कर दिया था । तब यदि वह इस पातनके युद्धमें भी उपस्थित होते यदि: राठौरके कवि अपनी दुर्बुद्धिवश जयपुरकी सेनाके विरुद्धमें इस प्रकारके ग्लानिसे भरे हुए गीत बनाकर जातिमें विद्वेष उत्पन्न न करते, तो अवश्य ही सेंधियाका सर्वदाके लिये पतन हो जाता ।

यद्यपि ईश्वरीसिंहके राज्यके समयसे महाराष्ट्रोंके दस्युदलके साथ आमेरका प्रथम संयोग सूचित होता है, यद्यपि माधोसिंहके शासनसमयसे महाराष्ट्रोंने आमेरसे बहुतसा धन संग्रह कर लिया, यद्यपि प्रतापसिंहके शासनसमयमें महाष्ट्रोंको एकबार ही आमेरसे निकाल दिया गया था। परन्तु यह बात अवश्य ही माननी होगी कि प्रतापसिंहने तुंगाके युद्धमें सेन्धियाको परास्त करके विशेष प्रशंसा प्राप्त की थी । प्रतापसिंह एक महावीर और बुद्धिमान राजा थे, टाड साहबने इस बातको मान लिया है कि केवल कालके वशसे ही उनकी वह प्रतिज्ञा और वीरता आमेरकी विविन्नतासे रक्षा करनेमें समर्थ न हुई।

चतुर्थ अध्याय ४.

महाराज जगत्‌सिंहका सिंहासनपर बैठना-महाराष्ट्रोंके अत्याचारोंसे राजपूत राज्यका निग्रह भोग-वृटिश गवर्नमेंण्टके साथ महाराज जगत्‌सिंहका प्रथम संधिका प्रस्ताव-संधिबंधन-संधिपत्र-संधिभंगके लिये अंग्रेज गवर्नमेण्ट जनरलका आज्ञा देना-हुलकरके विरुद्ध जगत्‌सिंहका अंग्रेज सेनापति लार्डलेकके साथ योग देना-जगतसिंहके संधिपालन करनेपर भी अंग्रेज गवर्नमेण्टका पूर्वसंधिका नाश करना-महाराज जगत्‌सिंहका दूसरा राजनैतिक अभिनय-मेवाडके राणाकी कन्या कृष्णाकुमारीके साथ विवाह करनेके लिये जगतसिंहका मेवाडको उपहार द्रव्य भेजना-मारवाड-पति मानसिंहका उन समस्त द्रव्यको लूटना-मानसिंहके आचरणसे जगतसिंहका क्रोध-सेन्धिया-मानसिंहके विरुद्ध जगत्‌सिंहका युद्ध-पोकर्णके सामन्त सवाईसिंहका जगत्‌सिंहके साथ योगदान-जयपुरमें लक्षाधिक सेनाका संग्रह-मानसिंहके साथ युद्ध-मानसिंहकाभागना-जगत्‌सिंहका जोधपुरकी राजधानीको लूटना-जोधपुरके किलेका घेरना-अमीरखांका जयपुरपर आक्रमण-जगत्‌सिंहका रणस्थल छोडकर कलंकित होकर अपने राज्यमें भागना-महाराष्ट्रोंका जयपुर पर आक्रमण-चौथ ग्रहण-अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ दूसरी बार संधिका विचार-संधि करनेमे जगत्‌सिंहकी आपत्ति-संधिबंधन-संधिपत्र-जगत्‌सिंहकी जीवनीके सम्बन्धमें टाड साहबका मन्तव्य-जगत्‌सिंहकी मृत्यु-मोहनसिंह-मोहसिंहके अभिषेक सम्बन्धी षड्यंत्रसे अंग्रेजोंके योगदानका विषमय फल-राजसिंहासनाधिकारीका निर्णय करना-राजपूतरीतिके बिना जाने शोचनीय फल-मोहनसिंहको जयपुरके सिंहासनपर अभिषिक्त करनेसे राजपूतरीतिका अपमान-प्रचलित रीतिके नाशका कारण-उसके सम्बन्धमे वृटिश कर्मचारियोंका आचरण-मोहनसिंहके अभिषेकमें यथार्थ सिंहासनाधिकारीका आपत्ति करना-नाजिरका विपत्तिमे पड़ना-जातीय युद्धकी संभावना-जगत्‌सिंहकी विधवा रानीका एक पुत्र उत्पन्न करना-समस्त उपद्रवोंकी शान्ति-जयसिंहका जन्म—

महाराज प्रतापसिंहके स्वर्ग चले जानेपर जगत्‌सिंह आमेरके राजसिंहासनपर विराजमान हुए। इतिहासवेत्ता टाड साहब आमेर राज्यवंशके प्रत्येक राजाके राज्यका इतिहास वर्णन कर गये हैं, परन्तु अत्यन्त शोकका विषय है कि उन्होंने महाराज जगत्‌सिंहके राज्यको इतिहासमें वर्णन नहीं किया। उनके नेत्रोंके सम्मुख जगत्‌सिंहका शासन अत्यन्त कलंकमय था, जगत्‌सिंहके चरित्र घृणित विचार कर ही उन्होंने अपने इतिहासमें उनका वर्णन नहीं किया। परन्तु हम उनकी इस नीतिका अनुसरण नहीं कर सकते, जब किसी राजवंशके इतिहासको लिखनेके लिये बैठते हैं तो उसके कैसे भी आचरण क्यों न हो इतिहास लेखकको उन सबका लिखना कर्तव्य है। लेखकका किसीके प्रति उपेक्षा दिखानी उचित नहीं। इसी कारणसे हमने जगत्‌सिंहके शासन समयके वृत्तान्तको इतिहासमें लिखना किसी भांति भी अयोग्य न समझा। कर्नल टाड साहब महाराज जगत्‌सिंहके शासनके सम्बन्धमें कई एक कथाएँ लिख गये हैं, उन्हें हम सबसे पीछे वर्णन करेंगे। पहिले महाराज जगत्‌सिंहके ही शासन सम्बन्धी कई एक प्रधान प्रधान घटनाओंका वर्णन करते हैं।

सवाई महाराज जगत्सिंहने सन् १८०३ ई० में अपने मस्तकपर आमेरका राजमुकुट धारण किया। इस समय एक आमेर ही नहीं वरन् समस्त राजपूतराज्य अवनतिकी अवस्थाको पहुँच गये थे। यद्यपि दुराचारी औरंगजेबके शरीर त्यागनेके उपरान्त रजवाडेके समस्त राजाओंने सुअवसर पाकर अपने राज्यकी सीमा तथा जातीय बलको बढा लिया था, परन्तु यवनराज्यके पतनके साथ ही साथ महाराष्ट्रोंके उदयसे राजपूत राज्योंकी वह क्षणिक सुख शांति और राजनैतिक ख्याति अवनति अवस्थामें पलट गई।

यद्यपि एक २ यवन सम्राट् पिशाच स्वरूप धारण करके समय समयपर राजपूतराज्योंको विध्वंस किये देते थे, परन्तु उससे राजपूतोंकी जातीय शक्तिका लोप नहीं होता था, वरन् एक २ यवन सम्राट्के अधीनमें रहकर आमेर मारवाड इत्यादिके राजपूत राजाओंने अपने जातीय गौरवके सूर्यको भलीभांतिसे प्रकाशमान कर लिया था और इसी कारणसे उन्होंने अपने २ राज्यमें धन, सम्पत्ति, सन्मान, कीर्ति तथा बलके बढानेमें भी कसर न की। महाराष्ट्रोंके लुटेरे दलने रजवाडेके प्रत्येक राज्यमें इस प्रकारसे लूट की कि, वहांकी समस्त धन सम्पत्तिको हरण करके शून्य कर दिया, इसीसे प्रजामें सुख और शांतिका लेश भी न रहा। वाणिज्य व्यापार सब बंद हो गये, किसानोंने खेती करनी छोड दी, इनके उपद्रवोंसे रजवाडेके प्रत्येक राज्यकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय हो गई। हुलकर और सेन्धिया यही दोनों महाराष्ट्रोंके नेता थे तथा इनके अधीन अमीरखां इत्यादि पठान और लुटेरोंके यवन शासनसे भारतके प्रत्येक प्रान्तमें अराजकता उपस्थित हो गई और यह बराबर राजपूत जातिका विध्वंस करनेके लिये तैयार हो गये। यद्यपि तुंगाके युद्धकी तरह एक और युद्धक्षेत्रमें मिलकर राजपूतोंकी सेनाने सेन्धियाके समान लुटेरोंके नेताका सर्वनाश किया था, परन्तु यह कार्य किसी विरलेका ही है। राजपूत जातिकी एकताके अभावमें महाराष्ट्रगण लोमहर्षण अभिनय करते हैं। जिस समय महाराज जगत्सिंह आमेरराज्यके छत्रके नीचे शोभायमान हुए उसके बहुत दिन पहिलेसे महाराष्ट्रोंने रजवाडेमें भयंकर अत्याचार करने आरंभ किये थे, परन्तु इस समय उनके अत्याचार भयंकररूपसे प्रबल हो गये थे, सौभाग्यका विषय है कि अंग्रेजोंकी ईस्ट इण्डिया कंपनी इस समय बंगालमें अपना पूर्ण अधिकार स्थापित कर धीरे धीरे भारतके अन्य प्रान्तोंकी ओर बढ रही थी। बृटिशसिंहने देखा कि महाराष्ट्रोंकी गतिको बिना रोके हुए संपूर्ण भारतवर्षको पाना असंभव है, इस कारण इस समय बृटिशसिंहने महाराष्ट्रोंके दमन करनेके लिये कूटनीतिका विस्तार करना आरंभ किया। गवर्नमेंट इस बातको भली भांतिसे जान गई थी कि, महाराष्ट्र तस्करोंके दोनों नेताओंके भयंकर अत्याचार और उपद्रवोंसे राजपूत राजा अत्यन्त ही हानि उठाते आये हैं, इस कारण यदि वह राजा महाराष्ट्रोंके अत्याचारोंसे रक्षा करनेके अभिप्रायसे हमारे साथ स्थायी संधिबन्धन कर लें तो हमारे राज्यके पक्षमें विशेष सुभीता हो जायगा। बृटिश गवर्नमेंटने इसी अभिप्रायसे इस समय आमेरपति महाराज जगत्सिंहके साथ संधिकरनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। महाराज जगत्सिंहने

राजसिंहासनपर बैठकर देखा कि एक ओर तो जिस भाँति सात सौ वर्षका यवनराज्य एकबार ही लुप्त हो गया, उसी भाँति दूसरी ओर गवर्नमेंटका राज्य धीरे २ अपनी उन्नति कर रहा है; उन्होंने यह भी विचारा कि, यद्यपि महाराष्ट्र जाति सब श्रेणीके मनुष्योंको पीड़ित करती हुई उनकी धन सम्पत्तिको लूटती हुई फिर रही है, और अनेक देशोंपर अपना अधिकार करके नवीन राज्यकी सृष्टि कर रही है, परंतु बृटिशसिंहने जिस प्रकार प्रबल बलशाली रूप धारण कर भारतवर्षमें दर्शन दिया है इससे तो बृटिशसिंहके साथ संधिबन्धन करनेमें अपना कल्याण है।

टाड साहबने इस प्रथम संधिबन्धनका कोई उल्लेख नहीं किया। हम विश्वस्त होकर उस विवरणको संग्रह करनेके लिये तैयार हुए हैं। आचिसन साहबने अपने बनाये हुए ग्रन्थमें लिखा है कि " राजपूत राज्योंपरसे मुसलमानोंका प्रभुत्व लोप होनेके पीछे महाराष्ट्रोंके प्रभुत्वका विस्तार हुआ। सन् १८०३ ईसवीमें अंग्रेजोंके साथ जयपुरके महाराजकी राजनैतिक संधि स्थापित हुई। उस समय जगत्सिंह जयपुरके महाराज थे। महाराष्ट्रोंके साथ युद्ध उपस्थित होनेके समय गवर्नमेंटने जो साधारण राजनीति सूत्रका अवलम्बन किया, अर्थात् जिस राजनीतिके अनुसार राजपूत राजाओंको अपना मित्र ठहराकर महाराष्ट्रोंको हिन्दुस्थानसे निकालना विचारा था उसी नीतिके अनुसार सन् १८०३ ईसवीमें जयपुरके महाराजके साथ गवर्नमेण्टका एक संधिपत्र तैयार किया गया "।

यद्यपि महाराज जगत्सिंह अंग्रेजोंके साथ संधि करनेके लिये राजी हो गये थे, परन्तु गवर्नमेंट इस समय भारतवर्षपर अपनी प्रभुता तथा इनके समान प्रतापका विस्तार न कर सकी थी, इस कारण जगत्सिंहने अपने हस्ताक्षर न देकर केवल साधारण राजकीय मैत्रीका स्थापन संबन्ध करना स्वीकार किया। ईस्ट इंडिया कंपनीने शीघ्र ही इस प्रस्तावको स्वीकार कर लिया। इस प्रकारसे महाराज जगत्सिंहके साथ सन् १८०३ ई. में गवर्नमेण्टका निम्न लिखित संधिपत्र तैयार किया गया।

सन्धिपत्र।

माननीय अंग्रेज ईस्टइंडिया कम्पनीके साथ राजराजेन्द्र सवाई जगत्सिंह-बहादुरकी मित्रता और संधि सम्बन्धमूलक यह संधिपत्र महिमवर मार्किसवेलेसली सेण्टपाटिक आदि महासंभ्रान्त उपाधियोंसे विभूषित महा महिमवर बृटिश राजराजेश्वरके माननीय प्रिवीकौंसिलर, समस्त बृटिशाधिकृत देशोंके अधीश्वर गवर्नर जनरल, और भारतवर्षमें स्थित समस्त बृटिशसेनाके कप्तान जनरलका अधिकार प्राप्त संधिबंधनके लिये संपूर्ण सामर्थ्यवान् महामाहिमवर जनरल जिरार्डलेक, भारतवर्षमें स्थित बृटिशसेनाके प्रधान सेनापतिका माननीय अंग्रेज ईस्ट इंडिया कंपनीके पक्षसे और महाराजाधिराज राजराजेन्द्र जगत्सिंह बहादुरका उनके पक्षमें उनके उत्तराधिकारी और उनके भविष्य स्थलाभिषिक्तोंके पक्षमें नियत किया गया।

प्रथम धारा—माननीय अंग्रेज ईस्ट इण्डिया कम्पनी और महाराज जगत्सिंह बहादुर तथा उनके भविष्य उत्तराधिकारियोंमें दृढ और चिरस्थाई मित्रता तथा संधिका सम्बन्ध बन्धन स्थापित हुआ।

दूसरी धारा–किसी कारणसे दोनों राज्योंमें मित्रता होकर भी किसी ओरके शत्रु और मित्र दोनों पक्षके शत्रु और मित्ररूपसे गिने जायंगे, और दोनों राज्य ही चिरकालके लिये इस व्यवस्थाकी ओर ध्यान रक्खेंगे।

तीसरी धारा–महाराजाधिराज इस समय जिस देशके अधिकारी हैं, माननीय कम्पनी भी उस देशके शासनके सम्बन्धमें हस्ताक्षेप नहीं करेगी और न उनसे कर ले सकती है।

चौथी धारा—माननीय कम्पनीने सम्पूर्ण हिन्दुस्तानके देशोंपर अपना अधिकार कर लिया है, यदि माननीय कम्पनीका कोई शत्रु उन देशोंपर अधिकार करनेके पूर्वलक्षण प्रकाश करे तो महाराजाधिराज कम्पनीकी सेनाको सहायताके लिये अपने अधीनकी समस्त सेनाको भेजेंगे, और उस शत्रुको भगानेके लिये वह स्वयं अपनी सामर्थ्य दिखावेंगे, तथा वह अपनी मित्रताका यथार्थ परिचय देनेमें किसी प्रकारकी कसर न करेंगे।

पांचवीं धारा–जिस कारण वर्तमान सन्धिपत्रकी दूसरी धाराके अनुसार मित्रता स्थापित हो कर—शत्रुओंके हाथसे महाराजाधिराजके अधिकारी राज्यकी रक्षाके पक्षमें माननीय कम्पनी प्रतिभूस्वरूपसे कही जा रही है, महाराजाधिराज इसे स्वीकार करते हैं; यदि उनके साथ अन्य किसी राजाका विवाद उपस्थित हो जाय तो महाराजाधिराज सबसे पहिले गवर्नमेण्टके निकट उस विवादका कारण कहें, और गवर्नमेण्टके प्रीतिभावसे उस झगडेके मिटा देनेकी चेष्टा करेगी। यदि विरुद्धपक्षके दोषसे किसी प्रकार उचित मीमांसा न की जाय तो महाराजाधिराज कम्पनीके निकट सैनिक सहायताकी प्रार्थना कर सकते हैं। उपरोक्त अवस्था होनेपर उस सहायताकी प्रार्थना ग्रहण की जायगी, और महाराजाधिराज इस बातको स्वीकार करते हैं, कि इस प्रकारसे सहायताका समस्त व्यय भारतवर्षके अन्यान्य राजाओंसे जिस भांति लेनेकी व्यवस्था हुई है उसी प्रकार हमसे लिया जाय।

छठवीं धारा—महाराजाधिराज इस बातको स्वीकार करते हैं कि, यद्यपि वह यथार्थमें अपनी सेनाके प्रभु हैं परन्तु युद्धके समयमें और संग्रामकी पूर्व तैयारीके समयमें वह अपनी सेनाके साथ जहां अंग्रेज सेनाका दल नियुक्त रहेगा वह उसी अंग्रेज सेनादलके प्रधान सेनापतिके उपदेश और उसकी सम्मतिके अनुसार कार्य करेंगे।

सातवीं धारा—कम्पनी–गवर्नमेंटकी सम्मतिके बिना महाराजा अपने राजकार्यमें किसी अंग्रेज वा फरासीसी वा यूरूपके अन्य किसी निवासीको नियुक्त अथवा अन्य किसी उपायसे उसकी रक्षा नहीं कर सकेंगे।

ऊपर लिखा हुआ सात धाराओंसे युक्त सन्धिपत्र महामहिवर जनरल जिराडलेकका अकबराबाद, सुवार अधीन सरहिन्द नामक स्थानमें संवत् १८६० अर्थात् सन् १८०३ ईस-

वीके दिसम्बर महीनेकी बारहवीं तारीखको तैयार किया गया और उसी दिन उसपर हस्ताक्षर करके मोहर लगा दी गई । महामहिवर सकाउन्सिल गवर्नर जनरलके हस्ताक्षर होकर तथा मुहर लगाकर ऊपर लिखी हुई सात धाराओंसे युक्त सन्धिपत्र महाराजके हाथमें दिया गया, महामहिवर जनरल लेकका हस्ताक्षर और मोहर लगा हुआ यह वर्तमान सन्धिपत्र महाराजने लौटा दिया । (हस्ताक्षर) वेलेसली ।

कम्पनीकी मोहर.

सकाउन्सिल गवर्नर जनरल द्वारा यह सन्धिपत्र सन् १८०४ इसवीमें जनवरीकी १५ तारीखको मान्य तथा स्वीकृत हुआ ।

(हस्ताक्षर) जी. एस. वारलो ।

जी० डडनि ।

इस सन्धिपत्रको देखकर पाठकगण सरलतासे जान जायँगे कि बृटिश गवर्नमेण्ट यथार्थ मित्रभावसे ही महाराज जगत्सिंहको प्रबल बृटिश शासनके अधीनमें बाहरी शत्रुओंके हाथसे रक्षा करनेके लिये सम्मत हुई । इस समय महाराष्ट्रगण अपने भयंकर अत्याचारोंसे जयपुरको क्षारखार कर रहे थे इस कारण अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सहायतासे ही जयपुर राज्यकी रक्षा करना महाराज जगत्सिंहने कल्याणकर समझा, विशेष करके यद्यपि उक्त सन्धिसे आमेरराजने अंग्रेजोंकी अधीनता स्वीकार कर ली, परन्तु जब उन्होंने इस सान्धिसूत्रसे गवर्नमेण्टको एक कौडी भी करकी न दी और गवर्नमेंटने आमेर राज्यके भीतरी शासनपर हस्ताक्षेप नहीं किया तब आपको भी अवश्य ही मानना होगा कि यह सन्धिपत्र गवर्नमेण्ट और महाराज जगत्सिंह इन दोनोंके लिये समान सम्मानदायक था ।

यद्यपि आमेरपति महाराज जगत्सिंहने अंग्रेज कम्पनीके साथ सन्धि कर ली थी, और उस सान्धिपत्रपर हस्ताक्षर भी कर दिये, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि, उनका वह मित्रभाव अधिक दिनतक स्थिर न रह सका । आचिसन साहब अपनी पुस्तकमें लिखते हैं, "कि जयपुरके महाराज सन्धिपत्रमें लिखे हुए अपने कर्तव्य कर्मको पालन करनेमें त्रुटि करने लगे, और लार्ड कर्नवालिसने भी देशीय राजाओंके मित्रता सम्बन्ध-बन्धनको एकबार ही तोडनेका विचार किया था। उन्होंने स्पष्ट प्रकाशित किया था कि जयपुर राज्यके साथके समस्त सम्बन्ध बंधन दूर किये जाय, क्योंकि गवर्नमेण्ट जिस भावसे जयपुरके राज्यकी रक्षा करनेके लिये तैयार हुई है उस भावसे वह उक्त राज्यकी रक्षा न कर सकेगी ।" यह तो लिखा किन्तु महाराज जगत्सिंहने संधिबन्धन स्वीकार करके भी सन्धिपत्रकी किसी २ धारका पालन नहीं किया । परन्तु उन्होंने कौनसा अपराध किया था सो किसी इतिहाससे भी नहीं जाना जाता, हमारा ऐसा विचार है कि लार्ड कार्नवालिस जिस समय भारतवर्षके गवर्नर जनरल पदपर प्रतिष्ठित थे, उस समय उन्होंने देशीय राजाओंके सम्बन्धमें एक स्थायी मूलनीतिके अवलम्बन करनेका भी साहस नहीं किया, ऐसा विदित होता है कि उनके मतसे देशीय राजाओंके साथ मित्रता करना गवर्नमेण्टके पक्षमें मंगलकारी नहीं था, इसी लिये उन्होंने

देशीय राजाओंकी स्थिर की हुई पूर्वसंधिको भी व्यर्थ कर दिया, और इसी कारणसे महाराज जगत्सिंहपर संधिपत्रकी किसी धाराके उल्लंघन करनेका वृथा दोष लगाकर उक्त संधिको भी व्यर्थ कर दिया था। हमारे इस अनुमानकी सत्यता आगे आप ही मालूम हो जायगी।

यद्यपि गवर्नर जनरल लार्ड कार्नवालिसने महाराज जगत्सिंहको संधिपत्र भंग करनेवाला बताकर उनके साथ ईस्ट इण्डिया कंपनीके समस्त बंधनोंको तोडनेकी आज्ञा दी, परन्तु आचिसन साहब उक्त मन्तव्योंके पीछे वर्णन कर गये हैं, "कि लार्ड कार्नवालिसकी उक्त आज्ञाको सुननेके पहिले ही महाराज जगत्सिंहने हुलकरके साथ युद्ध करनेके समय लार्ड लेकके साथ भलीभांतिसे योग दिया और अपने पहिले सम्मानको फिर प्राप्त कर लिया, इसी कारणसे लार्ड लेकने महाराजकी चिरकालतक सहायता करनेकी प्रतिज्ञा की। लार्ड कार्नवालिस इनके सम्बन्धमें जिस मूलनीतिके सूत्रको नियुक्त कर गये, सर जार्जबालोंने भी उसीका अवलम्बन किया, परन्तु लार्ड लेकके विशेष प्रतिवाद करनेपर सर जार्जबालोंने साधारण राजनीति और सरल विश्वासकी रक्षाके लिये जयपुरराज्यके साथ सम्बन्धबन्धन दूर कर दिया*"। हमारे पाठक इससे भलीभांति जान गये होंगे कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी और महाराज जगत्सिंह इन दोनोंमेंसे संधिभंग करनेका कौन अपराधी था। महाराज जगत्सिंह संधिपत्रकी किसी धाराका भी पालन नहीं करते इसीसे लार्ड कार्नवालिसने संधिबंधन तोडनेकी आज्ञा दी परन्तु जब कि उस आज्ञाके प्रचार होनेके पहिले ही महाराज जगत्सिंहने सेनापति लार्ड लेकके साथ मिलकर गवर्नमेण्टके परम शत्रु हुलकरके साथ युद्ध किया, जब कि उन बृटिश सेनापतिके संधिमतके पूर्वसम्बन्धकी रक्षा की जाती थी तब सर जार्जबालोंका उक्त आज्ञाका प्रचार करना अवश्य ही अन्याय मूलक था। इससे स्पष्ट जाना जाता है कि कम्पनीने ही प्रतिज्ञा भंग की। इस संधिके भंग होनेसे तो कम्पनीकी कुछ विशेष हानि न हुई, परन्तु अंतमें जयपुरपति महाराज जगत्सिंहका विशेष अनिष्ट हुआ।

महाराज जगत्सिंह आमेरके सिंहासनपर विराजमान होकर गवर्नमेण्टके साथ राजनैतिक अनुष्ठानमें लगे परन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि बृटिश गवर्नमेण्टने उनके साथ अकारण ही समस्त सम्बन्ध तोड दिये। जयपुर राज्यको फिर महाराष्ट्री लुटेरोंका दल, भयंकर क्रोधाग्निसे भस्म करने लगा। जयपुरके महाराजने संधिपत्रपर पूर्ण विश्वास करके बृटिश सेनापति जनरल लेकके साथ मिलकर हुलकरके विरुद्ध शस्त्र धारण किये थे, इसी कारणसे महाराष्ट्र लुटेरोंके दलने महाराज जगत्सिंहका सर्वनाश करनेका संकल्प किया था।

महाराज जगत्सिंहने राजछत्र धारण कर उपरोक्त राजनैतिक अभिनयके पीछे एक अत्यन्त शोचनीय कार्यमें हाथ डाला; आमेर राज्यका भाग्यरूपी आकाश इस समय काले २ घनघोर बादलोंसे छा रहा था, आत्मविग्रह, और स्वजातिमें द्वेष होनेसे

* Aitcheson's Treaties & Vol. IV.

समस्त रजवाडा इस समय अवनतिकी सीढीपर पहुँच गया था, इसी कारण महाराज जगत्सिंहने इस शोचनीय काण्डमें हाथ डाला और प्रथम राजपूत वीरोंके योग्य शूरवीरता, तथा बलविक्रम और पंडिताई दिखाकर कार्य किया। यद्यपि वह इस अति ऊँचे यशके संग्रह करनेमें समर्थ भी थे, परन्तु अंतमें कलंकित हो गये। इन घटनाओंका वर्णन राजस्थानके दो स्थानोंमें पहिले हो चुका है, उन दोनों घटनाओंके साथ महाराज जगत्सिंहका विशेष सम्बन्ध है इसीसे महाराज जगत्सिंहके शासनवृत्तान्तको संक्षेपसे उल्लेख करना विचारा है।

जिस समय महाराज जगत्सिंह आमेरके सिंहासनपर विराजमान थे उसी समय मेवाडके सिंहासनपर महाराणा भीमसिंह और मारवाडके सिंहासनपर महाराणा मानसिंहजी विराजमान थे। यह तीनों राजा बराबर थे। मानसिंहके साथ उनके अधीनकी सामन्त मंडलीका मेल नहीं था। विशेष करके मारवाडके प्रधान सामन्त पोकर्णके अधिपति सवाईसिंहके साथ महाराज मानसिंहका इस समय घोर विद्वेष उपस्थित हुआ। सवाईसिंहने अपने स्वाभाविक क्रोधके वशीभूत हो मानसिंहको किसी न किसी उपायसे सिंहासनसे रहित करके अपना मनोरथ पूर्ण किया था। उनके उस मनोरथके सफल होते ही इस समय और भी कितने ही कारण उपस्थित हो गये। मानसिंहके पहिले महाराज भीमसिंह मारवाडके सिंहासनपर विराजमान थे, उन भीमसिंहकी रानीने इनके स्वर्गवासी होनेपर इन्हींके औरससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। सवाईसिंह उस राजकुमार धौकलसिंहको मारवाडके सिंहासनका अधिकारी बनाकर उसीके सहारे मानसिंहको विपत्तिके जालमें डालनेको तैयार हुए। नीतिचतुर सवाईसिंहने विचारा कि मैं इकला ही सरलतासे मानसिंहको सिंहासनसे भ्रष्ट नहीं कर सकूंगा, इस कारण उसने छिपे २ षड्यंत्र फैलाया। उन्होंने विचारा कि इस समम आमेर और मारवाडके अधीश्वरोंमें यदि किसी प्रकारसे झगडा हो जाय तो इस उपायसे धौकलसिंहके सिंहासन प्राप्तिका मार्ग स्वच्छ हो जायगा। क्रमानुसार उस कल्पनाकार्यके परिणत होत ही एक सुअवसर आ पहुंचा। मेवाडेक महाराणा भीमसिंहके औरससे कृष्णकुमारी नामकी एक कन्याने जन्म लिया, और कुछ समयमें उस अनुपम रूपलावण्यतासे युक्त कन्याने समस्त रजवाडेमें "फलनलिनी" रूपसे प्रसिद्धि प्राप्त की। उस रूपवती कृष्णकुमारीके साथ मृत मारवाडपति भीमसिंहके विवाहका प्रस्ताव पहिले ही उपस्थित हुआ था, परन्तु भीमसिंहकी मृत्यु अकालमें ही हो गई, इसीसे वह प्रस्ताव भी दूर हो गया। कुटिलहृदय सवाईसिंह उस समय उस कृष्णकुमारीके ऊपर लक्ष्य करके समस्त रजवाडेमें भयंकर उत्पात मचाने लगे। इन्होंने प्रकाशमें तो मानसिंहके साथ मित्रता की और गुप्तभावसे षड्यंत्र करके आमेरपति महाराज जगत्सिंहके पास यह प्रस्ताव भेजा, " राणा भीमसिंहकी कन्या अत्यन्त रूपवती है इस कारण आप उसके साथ विवाह करनेके लिये राणाके निकट समाचार भेजिये सवाईसिंह इस बातको भली भांतिसे जानते थे कि महाराज जगत्सिंह अत्यन्त इन्द्रियपरायण पुरुष हैं, वह कृष्णकुमारीके रूपलावण्यको सुनकर अवश्य ही उस रमणी-रत्नकी प्राप्तिके लिये चेष्टा

करेंगे, और वास्तवमें ऐसा ही हुआ, महाराज जगत्‌सिंहने उसके मुखसे कृष्णकुमारीकी सुन्दरताको सुनते ही सवाईसिंहकी सम्मतिके अनुसार बहुतसा धन खर्च करके चार हजार सेनाको मेवाडमें भेज दिया और विवाहका प्रस्ताव लेकर एक माननीय दूत भी उनके साथ भेज दिया।

इस ओर सवाईसिंहने जगत्‌सिंहको उत्तेजित करके जब सुना कि आमेरसे मेवाडको उपटोकन द्रव्य भेजे गये हैं तब तुरन्त ही उसने मारवाडपति मानसिंहकी सभामें जाकर मित्रभावसे कहाः--"महाराज ! मेवाडपति राणा भीमसिंहकी रूपवती नंदिनी कृष्णाकुमारीके साथ मृतक महाराज भीमसिंहके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, इस समय जयपुरपति जगत्‌सिंहने उनके साथ विवाह करनेके लिये उपहारका द्रव्य भेजा है। यदि जगत्‌सिंहको कृष्णाकुमारी मिल गई, तो इस संसारमें आपके कलंककी सीमा न रहेगी। मारवाडके अधीश्वर रूपसे ही भीमसिंहके साथ कृष्णाकुमारीके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित हुआ था, आप उसी मारवाडके सिंहासनपर विराजमान हैं, इस कारण आपके बदलेमें यदि जगत्‌सिंह कृष्णाकुमारीका पाणिग्रहण करनेमें समर्थ हों तो मारवाडके सिंहासनके कलंककी सीमा न रहेगी!" जगत्‌सिंहके समान महाराज मानसिंह भी उन सवाईसिंहकी चतुरताके जालमें फँस गये। वह शीघ्र ही तीन हजार राठौरोंकी सेनाको साथ लेकर बाहर निकले। हीरासिंह नामक एक धनलोभी सैनिक भी सेनासहित मानसिंहके साथ आ मिला, जगत्‌सिंहने जो चार हजार सेनाके साथमें उपहारद्रव्य भेजा था, उसके मेवाडमें विना पहुँचे ही मानसिंहने उनपर आक्रमण करके वह समस्त द्रव्य लूट लिया, और जयपुरकी सेनाको छिन्नभिन्न करके भगा दिया। सवाईसिंहकी कामनाके पूर्ण होनेका यही पहिला सूत्रपात हुआ।

मारवाडपति मानसिंहने जो आमेरपति जगत्‌सिंहकी समस्त सेनाको छिन्नभिन्न करके उसके समस्त द्रव्य लूट लिये थे इससे जगत्‌सिंहके हृदयमें भयंकर क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो गई, इससे उन्होंने अपना अधिक अपमान जाना और मानसिंहको इसका उचित दंड देनेके लिये और अपने सम्मान और गौरवकी रक्षाके लिये आमेरपति अत्यंत क्रोधित एवं उत्तेजित हो गये, परन्तु इसी समय वे एक भारी विपत्तिमें पड गये। इस समय महाराष्ट्रोंके नेता सेंधिया केवल रजवाडेके राजाओंमें आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित करके किसी एक पक्षका अवलम्बन कर अगणित धन लूटनेमें लग रहे थे। मानसिंहके साथ जगत्‌सिंहके झगडेका समाचार पाते ही लुटेरोंने जगत्‌सिंहसे बहुतसा धन पानकी इच्छा प्रगट की और उनसे यह कहला भेजा कि यदि तुम हमको इतना धन नहीं दोगे तो हम तुम्हारा भली भाँतिसे नाश करेंगे। परन्तु आमेरपति जगत्‌सिंहने सेन्धियाकी बातपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, इससे सेन्धियाने क्रोधित हो प्रतिज्ञा की कि मैं ऐसा उपाय अवश्य ही करूँगा कि जिससे कृष्णाकुमारीका विवाह जगत्‌सिंहके साथ न हो। वास्तवमें सेन्धियाने ऐसा ही किया। उसने मेवाडपर आक्रमण करनेके लिये एक महाराष्ट्र सेनाको उदयपुरकी ओर भेज दिया।

लुप्तप्रताप हतबल राणा भीमसिंह महाराष्ट्रोंके दलके आनेका समाचार सुनते ही अत्यन्त भयभीत हुए और जगत्सिंहसे अपनी सहायताके लिये उन्होंनें प्रार्थना की,जगत्सिंहने सेन्धियाको युद्धकी तैयारीसे जाता हुआ देख और उसकी प्रतिज्ञाका समाचार सुनकर राणाकी सम्मतिके अनुसार एक दूतके साथमें कई हजार सेना मेवाडको भेज दी। सीसोदिया और कछवाहोंकी सेनाने मिलकर महाराष्ट्रोंकी सेनाके मेवाडमें आनेका मार्ग रोक दिया। सेंन्धियाने सबसे पहिले महाराणा भीमसिंहके पास यह प्रस्ताव भेजा कि "आप किसी प्रकारसे भी जगत्सिंहको अपनी कन्या नहीं दे सकेंगे। जयपुरकी जो सेना मेवाडमें आई है, उस सेनाको और जगत्सिंहके दूतको आप शीघ्र ही मेवाडसे विदा कर दें।" यद्यपि महाराणा भीमसिंह इस समय अत्यन्त हीनबल थे परन्तु उन्होंने साहसमें भरकर सेन्धियाके प्रस्तावको स्वीकार न किया वरन इसके विरुद्ध वे कुछ ऐसा उपाय सोचने लगे कि जिससे सेंधिया मेवाडमें न आ सके। परन्तु महाराष्ट्रोंकी सेना अपने बाहुबलसे सीसोदिया और आमेरकी सेनाके द्वारा रोके हुए मार्गको स्वच्छ करके मेवाडमें आ पहुंची और उसके साथही साथ कालान्तक यमराजके समान स्वयं लुटेरोंके नेता सेन्धिया भी उदयपुरकी राजधानीमें आठ हजार सेना साथ लिये हुए आ पहुँचा। महाराष्ट्रोंके अत्याचार और उपद्रवोंको स्मरण करके महाराणा भीमसिंह अत्यन्त भयभीत हो गये और अपनी सामर्थ्य न देखकर सेन्धियाकी सम्मतिके अनुसार ही कार्य करनेको वे सम्मत हो गये। सेंधियाकी अनुमतिसे महाराणा भीमसिंहने आमेरपतिके दूत और उनकी सेनाको मेवाडसे बिदा कर दिया। जयपुरकी सेना जिस रास्तेसे आई थी उसी रास्तेसे होकर वापिस चली गई।

इस ओर महाराणा जगत्सिंह मानसिंहके विरुद्धमें युद्धका विचारकर,चतुर सवाईसिंह भीमसिंहके पुत्र धौंकलसिंहको लेकर जगत्सिंहके साथ आ मिले। जगत्सिंहने धौंकलसिंहको मारवाडके सिंहासनके अधिकारीरूपसे स्वीकार किया और वे शीघ्र ही एक लाख सेना सजाकर मारवाडको विजय करनेके लिये चले। इतिहाससे जाना जाता है कि, जयपुरका कोई राजा भी इसके पहिले एक लाख सेना लेकर युद्ध के लिये नहीं गया था, इस कारण जगत्सिंहका एक लाखसे भी अधिक सेनाका संग्रह करना अवश्य ही बडी सामर्थ्यका हेतु था। विशेष करके जयपुरका खजाना भी अतुल धनसे पूर्ण था। जगत्सिंहने उसी धनके बलसे महाराष्ट्रों और पठानोंको भी अपने दलमें मिला लिया। गांगोली नामक स्थानके पहिले युद्धमें मानसिंह एक बार ही परास्त हो गये थे और मारवाडके संपूर्ण सामन्तोंने सवाईसिंहकी उत्तेजनासे मानसिंहका पक्ष छोड कर जगत्सिंहका पक्ष लिया। जगत्सिंह सरलतासे विजय प्राप्त करके अपनेको गौरवान्वित जानने लगे। मानसिंहके भागते ही जगत्सिंहके अन्यान्य नेताओंने उनके डेरोंमें जाकर बहुतसी धन और सम्पत्तिको लूट लिया। मानसिंहके भागनेसे जगत्सिंहने विचारा कि यह स्वयं ही अब कृष्णाकुमारीके विवाहका प्रस्ताव नहीं करेगे; परन्तु इतनेमें ही चतुर सवाईसिंहने बाधा देकर कहा कि "मानसिंह अभीतक परास्त

नहीं हुए हैं, मानसिंहको भलीभाँतिसे परास्त कर मेवाडमें जाकर कृष्णाकुमारी-का पाणिग्रहण करना आपका अत्यन्त कर्तव्य है।". जगत्सिंह सवाईसिंहकी चतुरताके जालमें पहिलेसे ही फँस गये थे इस कारण उन्होंने इस कार्यके करनेका भी निश्चय कर लिया।

मानसिंह युद्धमें परास्त होकर अपनी राजधानी जोधपुरको चले गये। जयपुरके महा-राजकी विजयी सेनाने शीघ्र ही जोधपुर राजधानीपर जाकर अपना अधिकार किया। तब मानसिंह किलेके भीतर चले गये।महाराज जगत्सिंहने भी तुरन्त ही किलेको जा घेरा। और विजयी सेना छः महीनेतक बराबर किलेको घेरे हुए गोलोंकी वर्षा करती रही परन्तु किला विजय न हो सका, मानसिंह अतुल पराक्रम करके अत्यन्त सामान्य सेना साथ ले उस अभेद्य किलेकी रक्षा करते रहे, छः महीनेतक निरन्तर एक लाख सेना किलेको घेरे पडी रही, इसमें जगत्सिंहका बहुत धन खर्च हुआ,तो भी इनका वह परिश्रम सफल न हुआ। दुर्भाग्यवश छः महीनेके पीछे विजयी जगत्सिंहका भाग्य भयंकर जलद-जालसे ढक गया। इनकी सेनामें अमीरखाँ नामका एक पठान नियुक्त था, उस अमीरखाँने अपने अधीनकी सेनाको साथ लेकर स्वाधीनभावसे दूरदेशोंमें जाकर मार-वाडके अनेक स्थानोंमें लूटमार करके बहुतसा धन इकट्ठा कर लिया। इससे जगत्सिंह अत्यन्त ही अप्रसन्न हुए और उन्होंने अमीरखाँको दमन करना आवश्यक विचारा।जब अमीरखाँने यह समाचार सुना तब वह डेरोंमें न आकर पहिलेके समान जिधर तिधर लूटने लगा। इस आचरणसे जगत्सिंह और भी कुपित हुए और उसके साथ युद्ध करनेके लिये अपनी एक सेना भेजी। अमीरखाँने ज्यों ही देखा कि महाराजकी सेना मेरे साथ युद्ध करनेको आ रही है त्योंही वह वहांसे भाग गया। अमीरखाँको भागता हुआ देखकर जयपुरकी सेना भी बहुत दूर तक उसके पीछे २ गई और अंतमें जयपुरके बाहर सेनाको रखकर सेनाके नेता स्वयं जयपुरमें चले गये।इस सुअवसरको पाकर अमीरखाँने उक्त जयपुरकी सेनापर आक्रमण करके उसको एकबार ही परास्त कर दिया और अपनी सेनासहित जयपुरमें जाकर अरक्षित राजधानीको लूट लिया। जब जयपुर-पति जगत्सिंहने यह सुना तो अपने राज्यकी रक्षा करना अवश्य कर्तव्य विचारकर वह जोधपुरसे चल आये। इनके जाते ही राठौरकी सेनाने इनपर आक्रमण कर समस्त द्रव्योंको लूट लिया। महाराज जगत्सिंह इससे महा अपमानित और कलंकित होकर अपनी राजधानीमें चले आये। इस युद्धमें महाराज जगत्सिंहका खजाना बहुतसा खाली हो गया और इसी भांति अगणित सेना भी नष्ट हो गई। जगत्सिंहके पक्षमें यह राजनैतिक अभिनय महा अपमानदायक हुआ, इसमें कुछ भी संदेह नहीं।

इस युद्धमें बहुतसा खजाना खाली हो गया, बहुतसी सेना नष्ट हो गई, विचारे जगत्सिंह इस समय अत्यन्त हीनबल हो गये; जिस राजनन्दिनी कृष्णाकुमारीके लिये उनका इतना उद्योग, इतना धनव्यय और ऐसा भयंकर युद्ध हुआ था, पर अपने दुर्भा-ग्यसे वह उस कृष्णाकुमारीको न पा सके, उक्त युद्धकी इच्छाके पीछे महाराज जगत्सिंह

क्रमानुसार महाराष्ट्रों और पठानोंके द्वारा सताये गये । हुलकरकी सेनाने बारम्बार आमेर राज्यपर आक्रमण करके बहुतसे देशोंपर अपना अधिकार कर लिया; दुर्दान्त अमीरखाँ हुलकरके नामसे बहुतसे देशोंपर अधिकार करके चौथस्वरूप उन समस्त देशोंकी आमदनीको स्वयं भोगता था । सारांश यह है कि पिछले कई वर्षोंतक आमेर राज्यकी अत्यन्त ही शोचनीय दशा हो गई थी।

महाराज जगत्सिंहके जीवनके शेषमें राजनैतिक अनुष्ठानसे बृटिश गवर्नमेण्टके साथ फिर संधिबन्धन स्थापित हुआ सो हमारे पाठकोंको पहिले ही ज्ञात हो चुका है कि सन् १८०३ ईसवीमें लॉर्ड वेलसली महाराज जगत्सिंहके साथ मित्रता स्थापित करके संधिबन्धनमें नियुक्त हुए और महाराज जगत्सिंहने उस संधिपत्रके मतसे बृटिशसेनापति लॉर्ड लेकके साथ मिलकर महाराष्ट्रोंके नेता हुलकरके साथ युद्ध भी किया पर लॉर्ड कार्नवालिस और उनके स्थलाभिषिक्तने अन्यान्य रूपसे उस मित्रताकी शृङ्खलाको छिन्न कर दिया । बृटिश गवर्नमेण्टकी इस प्रतिज्ञाभंगसे जयपुरपति जगत्सिंह अत्यन्त हीनबल होनेसे अत्यन्त दुःखित विस्मित और परितापित हुए होंगे यह सहजमें ही अनुमान हो सकता है । आचिसन साहबने अपनी बनाईहुई पुस्तकमें लिखा है कि " इस मित्रता और संधिबंधनका भंग करना कर्तव्य कर्म हुआ था या नहीं ? होम, गवर्नमेण्ट (विलायतकी कोर्ट आफ डाइरेक्टर्स) ने इसको विशेष सन्देहयुक्त बताकर इसका विचार किया था,इस कारण सन १८१३ ईसवीमें होम गवर्नमेण्टने यह आज्ञा प्रचार की कि जब अवसर आवेगा तब फिर जयपुरराज्यको अंग्रेजी रक्षाके आधीनमें ग्रहण किया जायगा । इस समय नैपालके साथ युद्ध उपस्थित है पर जिस समय पिंडारियोंको दमन करके उनके साथ राजनैतिक बंदोबस्त किया जाय तबतक इस मामलेको मुलतबी रक्खा है । सन् १८१७ ई०में फिर जब संधिका प्रस्ताव उपस्थित हुआ तब यह प्रकाश किया गया कि जयपुर राज्यको नवीन संधि करनेमें इस समय आग्रह नहीं है, परन्तु इसके पीछे जिस समय जैपुरराज्यने अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये संधि करना विशेष प्रयोजनीय जाना कि सम्पूर्ण निकटवर्ती राजा संधिबंधन कर चुके है,इधर जयपुरराज्यके आधीन छोटे छोटे राजसमूह स्वतंत्रभावसे गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन कर चुके हैं तब अन्तमें जयपुरपति सन् १८१८ ई०में दूसरी अप्रैलको संधि निर्धारण करनेपर बाध्य हुए।

इस संधिबंधनके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहब अन्य स्थानोंमें लिखते हैं कि, "भारतवर्षकी बृटिश गवर्नमेण्ट, राजपूतानेके जिन राजाओंको आश्रय देना चाहती है इनमें जयपुरराज्यने सबसे पीछे उनका आश्रय लिया है । इस रीतिके अवलम्बन करनेसे सर्वदाके लिये शान्तिनाशक शत्रुओंको भगा दिया जा सकता है; गवर्नमेण्टके प्रस्तावको उस धारामें जयपुरराजने अपनी सम्मति देनेमें किंचित् भी विलम्ब नहीं किया । जबतक भारवर्षमें लूटनेवाले कई एक सम्प्रदाय एक २ करके हमारे चरणोंकी शरणमें न आवेंगे, तबतक जयपुरके महाराज हमारे प्रस्ताव और

हमारी युक्तियोंको ग्रहण नहीं करेंगे। इस समय पिंडारीगण एकबार ही विदलित हुए हैं, पेशवा पूनासे बंदी होकर गंगाजीके किनारे भेजे गये हैं और भोंसलाकी अवनति हुई, सेंधिया भयभीत हुआ और हुलकरने जयपुरसे नियमित करलेनेके अतिरिक्त बहुतसे देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया। मेदिनीपुरके युद्धसे उसके शासनकी सामर्थ्यमें बहुत रोक टोक होनी आरंभ हुई है।

यद्यपि राजपूत जाति अदृष्टवादी है परंतु प्रायः दीर्घ सूत्रतासे अपने कार्यका उद्धार करती है। हुलकरके प्रतिनिधि जिस अमीरखाँने जायदादस्वरूपसे अर्थात् सेना दलके व्ययस्वरूपसे जयपुर राज्यके अनेक देश अपने अधिकारमें कर लिये थे और नियमित कर भी ग्रहण किया था, एकमात्र उस अमीरखाँने ही इस समय जयपुर राज्यके समाजमें शान्तिका नाश कर भयको उत्पन्न किया था और अलक्ष्यमें उन जयपुरपति महाराजको हमारे साथ संधिबंधन करनेके लिये उत्तेजित किया। अधिक क्या वही अमीखाँ स्वयं इस समय माननीय मित्ररूपसे ग्रेट बृटेनके आश्रयमें वंशानुक्रमसे बंधुताके भावमें आबद्ध होनेका उद्योगी हुआ। अमीरखाँने ठीक इसी मुहूर्त्तमें राजधानी जयपुरके अत्यन्त निकट माधोराजपुरा नामक स्थानपर गोले वर्षाये थे, और जिस भाँतिसे कछवाहेराज हमारे प्रस्तावमें तुरन्त ही अपनी सम्माति दे दें इस कारण अमीरखाँने उक्त गोलोंको वर्षाकर अप्रत्यक्षके उपायस्वरूपसे हमें ग्रहण किया। आमेरराजने संधि करनेके लिये क्यों आनाकानी की थी, उसका वर्णन नीचे किया जायगा"।

"सन् १८०३ ईस्वी में जिस समय हमने जयपुरराज्यके साथ पवित्र संधिबंधन किया था और हमारे पक्षमें जिसका होना अत्यन्त आवश्यक विचारा गया था। उस समय हमने जिस उपायसे उस संधिबंधनसे अपना उद्धार कर लिया, अथवा हमारे मित्र उन जयपुरके महाराजको संधिभंगके अपराधसे अपराधी बताकर वृथा दोष लगाया था वह जयपुर राज्यके हृदयमें भली भाँतिसे अंकित था। उस विभिन्न राजनैतिक घटनापूर्ण समय में जो मनुष्य राजनैतिक विषयों में लिप्त थे जिस समय हमारे पूर्वराज्यके राजप्रतिनिधिका भेजा हुआ वह संधिभंगसूचक पत्र जयपुरके दरबार में हमारे दूतने अर्पण किया, उस समय जयपुरके महाराजने उसके सम्बन्धमें दृढरूपसे प्रतिवाद किया और उस संधिभंगके कारणसे जिस विपत्ति के आनेकी संभावना थी उसे एक मुहूर्त्तके लिये भी न भूलकर वे अंग्रेजजातिके प्रति उपयुक्त सम्मान दिखानेमें शान्त न हुए। परन्तु जयपुर राज्यका जो दूत वीरश्रेष्ठ लेकके डेरोंमें स्थित था, उसने इसकी अपेक्षा और भी तीक्ष्ण शब्दोंका प्रयोग किया और यथार्थ मनुष्यत्वके प्रकाशके साथ क्रोधित होकर कहा कि "अंग्रेज गवर्नमेण्ट जबसे भारत में प्रतिष्ठित हुई है, तभीसे जाना जाता है कि गवर्नमेण्टने अपनी सुविधा और स्वार्थ के लिये ही सब कार्य करती है"।

यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि बृटिश कम्पनीने स्वयं ही संन्धि भंग की थी और टाड सहबकी उपरोक्त उक्ति इसकी पुष्टता भी कर रही है। जयपुरके दूतने कहा था कि अंग्रेज गवर्नमेण्टने अपने सुभीतेके ऊपर विश्वास पालन किया है,

जयपुरके साथ संधिभंग करना यह उसकी प्रमाणमूलक प्रथम घटना है, परन्तु हम इतने दिनोंके पीछे कहते हैं कि जब पलासीके युद्धमें अंग्रेजी राज्य भारतवर्षमें सबसे पहिले स्थापित हुआ, तभी क्लाइवने अमीचन्दके साथ उससे पहिले विश्वासभंग किया था, यही अंग्रेजोंके विश्वासपालनका पहिला चूडान्त निदर्शन ह। कम्पनीने किस कारणसे जगत्सिंहके साथ निन्दनीयरूपसे संधि भंग की, उसके संबन्धमें टाड साहबने लिखा है कि वह मार्किस आफवेलेसलीकी विस्तारित और उदार राजनीति थी; जिस राजनीतिके मतसे सम्पूर्ण देशीय राजाओंको भारतके लुटेरोंके विरुद्ध एकत्र संबन्ध करनेका प्रस्ताव हुआ था, लार्ड कार्नवालिसके मनके भावने और सामरिक राजनीतिने उसे एकबार ही व्यर्थ कर दिया, लार्ड कार्नवालिसने हमारे इस प्रबल विस्तारमें एकमात्र हमारी भावी दुर्दशाको ही निरीक्षण किया था। महा माननीय लेकने (क्या देशीय और क्या यूरूपीय सभी जिनके नामको सम्मानके साथ स्मरण करते हैं) मध्यस्थ होकर देशीय राजाओंके साथ जो मित्रता और संधिबंधन किया था, यदि उस मित्रता और संधिबंधनकी रक्षा की जाती तो वह समस्त देशीय राजा न जाने कितने कष्टसे उद्धार पाते. इसका निर्णय नहीं हो सकता, कारण कि गत अर्द्ध शताब्दीमें रजवाडेका इतना अनिष्ट हुआ था कि समस्त राजाओंने दुराचारी महाराष्ट्रोंके अत्याचारोंसे सन् १८०३ ई० से १८१८ ईसवीतक अर्थात् प्रथम संधिभंगसे दूसरे संधिबंधनके समयतक महान कष्ट भोग किया था और हमें यह भी संदेह है कि अर्द्ध शतब्दीमें भी उनकी वह शोचनीय अवस्था बदलेगी या नहीं।

इतिहासवेत्ता टाडसाहबने लिखा है कि "हमारे ऊपर इस विश्वासकी वृद्धिका और भी एक प्रबल कारण था कि, जब वजीरअली जयपुरराज्यकी शरणमें गया तब हमने बल करके उसको वहाँसे छीन लिया। अधिक क्या कहें यदि घोर अपराधी शत्रु भी राजपूत जातिकी शरणमें जावे तो वे उस शरणागत मनुष्यकी तन मन धनसे रक्षा करते हैं। शरणागतको आश्रय देना राजपूत लोग किस प्रकारसे अपनी जातिका परम धर्म मानते हैं, हम इस इतिहासके पहिले अध्यायमें उसका वर्णन करचुके हैं। जयपुरके महाराज उस समय हमारे आधीन अथवा कर देनेवाले मित्रराजाओंमेंसे नहीं थे, परन्तु हमने बलपूर्वक उनको शरणागतको आश्रय देनेवाले जातीयधर्मको उल्लंघनके लिये विवश किया, वह आश्रित मनुष्य नरहत्याकारी होनेसे हमारे मतमें कृपापात्र नहीं हो सकता, पर उस वजीरअलीको हमारे हाथमें अर्पण करनेके लिये प्रार्थना करनेकी हमारी कोई क्षमता नहीं थी"।

संधिके सम्बन्धमें अंतमें टाड साहब लिखते हैं, कि जयपुरराज्यको उपरोक्त कईएक आपत्तियोंके अतिरिक्त और भी कितनी ही गुप्त और व्यक्तिगत आपत्ति अंग्रेजोंकी संधि प्रस्तावके विरुद्धमें उठानी पडी थी, उसका उदाहरण देते हैं। एक अंग्रेज रेसिडेण्ट राजदरबारमें आया और उसने दरबारमें चारों ओर अपनी दृष्टि रक्खी, परन्तु अपनी सामर्थ्यका विस्तार होना कठिन जाना, तब उसने मंत्रीसमाजपर आपत्ति की।

दूसरी ओर समस्त सामन्त, जो चिरकालसे प्रचलित रीतिके अनुसार मन्त्रीस्वरूपसे राजसभामें पद सम्मानको सम्भोग करते आये थे, इस समय समझ गये कि अब उन्हें उस स्वभूमिसे अपना अधिकार हटाना पडेगा। जिसे इतने दिनोंतक छल प्रपंचसे अथवा बलप्रयोग तथा नरपतिकी कृपासे अपने अधिकारमें भोगते आये हैं, इस कारण उन्होंने आपत्ति उपस्थित करनेमें त्रुटि न की। आमेरराज और बृटिश सरकार गवर्नर जनरलस सन्धिस्थापनके समयमें कई एक प्रधान अपत्तियां उपस्थित हुई थीं; परन्तु लार्ड हेष्टिंसने जिस साधारण राजनीतिका अवलम्बन किया था यदि वह उस नीतिके अनुसार जयपुर राज्यको अंग्रेजोंके अधीनमें न करते तो उनकी उस नीतिके अंगकी हानि होती। इस समय जल्दी २ कितनी ही घटना हुई थी। अमीरखांकी जयपुरमें उपस्थित-रजवाडेकी पताकाको महाराष्ट्रोंका लोप करना—और अजमेरके किलेके ऊपर पताकाका लगाना—अन्तमें शीघ्रतासे अनिच्छायुक्त भाव-सन् १८१८ ईसवीकी दूसरी अप्रैलको १० धाराओंसे युक्त एक संधिपत्रपर जयपुरके महाराजने अपनी सम्मति प्रकाश की और उसीसे कछवाहेराज अपने वंशानुक्रमसे करदपदपर नियुक्त हुए।

महराज जगत्सिंहने किस कारणसे अंग्रजोंके साथ फिर सन्धि की थी, आचिसन साहबने कर्नल टाड साहबकी उस उक्तिको भलीभांतिसे प्रकाशित कर दिया है, इस कारण हम इसके सम्बन्धमें अब कुछ अधिक कहनेकी इच्छा नहीं करते। परन्तु महाराजा जगत्सिंहके पक्षमें यह दूसरी सन्धि पहिले सन्धिपत्रकी अपेक्षा विशेष हानिकारक हुई, अधिक क्या कहें स्वयं सन्धिपत्रको पढकर ही पाठक भलीभांतिसे समझ जांयगे कि कम्पनीने आमेरराज्यसे पहिले एक कौडी भी करको नहीं ली थी, परन्तु इस दूसरे संधिपत्रमें जयपुर महराजको चिरकालके लिये कम्पनीको कर देना पडा, उस संधिपत्रको हम नीचे प्रकाशित करते हैं।

सन्धिपत्र।

"माननीय अंग्रेज ईस्ट इण्डिया कम्पनी और सवाई महाराज जगत्सिंह बहादुर जयपुरके अधीश्वरमें यह सन्धिपत्र निश्चित हुआ। महामहिमवर मार्किस आफ हेष्टिंस के, जो गवर्नर जनरलके प्रतिनिधि पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त मि० चार्लसथियोंफिलास मेटकाफका माननीय कम्पनीकी ओरसे और राजेन्द्र श्रीमहाराजाधिराज सवाई जगत्सिंह बहादुरके प्रतिनिधि पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त ठाकुर रावल वैरीशाल नाथावत उक्त महाराजकी ओरसे नियुक्त हुए"।

पहिली धारा--माननीय कम्पनी और महाराज जगत्सिंह उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तोंमें वंशानुक्रमसे यह संधिसम्बन्धबन्धन सदा एकसा माना जाय और किसी ओरके मित्र तथा शत्रु दोनों ओरके मित्र और शत्रुरूपसे विचारे जांयगे।

दूसरी धारा—जयपुर राज्यकी रक्षा करने और उस राज्यके शत्रुओंको परास्त करनेके लिये गवर्नमेण्ट तैयार रहेगी।

तीसरी धारा–सवाई महाराज जगत्सिंह और उनके उत्तराधिकारी गण तथा स्थलाभिषिक्त बृटिश गवर्नमेंटकी अनुगतरूपसे सहयोगिता करें और जिन्होंने बृटिश गवर्नमेण्टकी अनुगतता स्वीकार की है वह अन्य किसी राज्य अथवा राजाके साथ किसी प्रकारका सम्वन्ध नहीं कर सकेंगे ।

चौथी धारा—महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टकी विना अनुमतिके अन्य किसी राज्य अथवा राजाके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध स्थापन नहीं कर सकेंगे, परन्तु मित्र और आत्मीय राजाओंके साथ नियमित साधारण पत्र-व्यवहार कर सकेंगे ।

पांचवी धारा—महाराज वा उनके उत्तराधिकारी अथवा स्थलाभिषिक्त किसी राजाके ऊपर अत्याचार अथवा आक्रमण नहीं कर सकेंगे, किसी राजाके साथ कुछ झगडा उपस्थित होगा तो इसके विचारके लिये तथा दण्ड दनेके लिये गवर्नमेण्टपर इसका भार रहेगा ।

छठवीं धारा–निम्नालिखित व्यवस्थाक अनुसार जयपुरराज्यके वंशानुक्रमसे गवर्नमेण्टके दिल्लीके धनागारके लिये कर देना होगा—

जयपुरराज्यमें कई वर्षस अवतक अत्याचार और लूट (महाराष्ट्रों) द्वारा प्रबलतासे हो रही थी इस कारण इस सन्धिकी तारीखसे पहिले एक वर्षका कर छोड दिया जायगा ।

दूसरा वर्ष ...	...	चार लाख	रुपया ।
तीसरा वर्ष ...	...	...	पांच लाख ।
चौथे वष ...	...	...	छः लाख ।
पांचवें वर्ष ...	...	...	सात लाख ।
छठवें वर्ष ...	...	...	आठ लाख ।

पीछे जबतक राज्यकी आमदनी चालीस लाख रुपयेसे अधिक न हो तबतक प्रतिवर्ष आठ लाख रुपया करस्वरूपसे देना होगा ।

और जिस समय राज्यकी आमदनी ४० लाख रुपयेसे अधिक हो उस समय नियमित आठ. लाख रुपयेके अतिरिक्त बढी हुई आमदनीके सोलहवें अंशका पांचवां अंश देना होगा ।

सातवीं धारा—गवर्नमेण्टको आवश्यकता होनेपर जयपुरराज्यको अपनी सामर्थ्यके अनुसार सेना देनी होगी ।

आठवीं धारा—महाराज और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त चिरस्थायी रीतिके अनुसार उनके अधिकारी राज्यमें और अधीनस्थोंको सम्पूर्ण शासनकर्ता स्वरूपसे रहना होगा और इस राज्यमें गवर्नमेण्ट अपनी फौजदारी और दीवानीको स्थापित नहीं करेगी ।

नवमीं धारा-महाराज यदि गवर्नमेण्ट पर विश्वास कर उसके साथ प्रीति प्रकाशित करेंगे तो उनकी उन्नति तथा कल्याणके लिये विशेष विचार किया जायगा।

दशवीं धारा-दश धाराओंसे युक्त यह संधिपत्र मि० चार्लस थियोफिलास मेटकाफ एवं ठाकुर वैरीशाल नाथावत्का नियुक्त किया हस्ताक्षर और मोहर लगा हुआ तैयार हो गया, महामहिम गवर्नर जनरल और राजराजेन्द्र श्री महाराजाधिराज जगत्सिंह बहादुरका आजकी तारीखसे एक महीनेके भीतर परस्पर मित्रभाव हो जायगा।

सन् १८१८ ईसवीकी अप्रैल महीनेकी दूसरी तारीखको दिल्लीमें नियुक्त हुआ।

(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ
रसिडेण्ट।
(हस्ताक्षर) ठाकुर रावल वैरीशालनाथावत्।
(हस्ताक्षर) हेष्टिंस। *

यह संधिपत्र गवर्नरजनरलका तुलसीपुरके निकट डेरोंमें सन् १८१८ ईसवीकी १५ अप्रैलको स्वीकृत हुआ।

(हस्ताक्षर) जे. आडम।
गवर्नरजनरलके सेक्रेटरी"।

यद्यपि महाराज जगत्सिंह इस दूसरी बार संधिबंधनमें सम्मत हो गये थे, परन्तु इससे जयपुर राज्यने चिरकालके लिये अपने स्वाधीन ऊंचे मस्तकको नीचा कर लिया और आठ लाख रुपया वार्षिक कर देना स्वीकार किया, परन्तु महाराज जगत्सिंहके शासनके दोषसे इस समय जयपुरराज्यकी जैसी शोचनीय अवस्था होगई थी इससे अंग्रेजोंका आश्रय लिये विना इसका विशेष अनिष्ट होनेकी संभावना थी। महाराज जगत्सिंह इस संधि बन्धनके पीछे बहुत दिनोंतक राज्य करते रहे। सन् १८१८ ई. में उक्त संधिबंधनके कई महीने पीछे उन्होंने इस मायामय शरीरको छोड दिया।

यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि महात्मा टाडने इन महाराज जगत्सिंहके शासन इतिहासको आदिसे वर्णन नहीं किया। वह इनके सम्बन्धमे कई एक कथाएँ कह गये हैं; उन्हींको यहांपर अविकल प्रकाश करके महाराज जगत्सिंहकी जीवनीको समाप्त करनेकी अभिलाषा है। कर्नल टाडने लिखा है, कि जगत्सिंहने सन् १८०३ ईसवीमें सिंहासनपर विराजमान होकर सत्रह वर्षतक राज्य किया। अपने समय तथा अपने स्वजातीय राजाओंमें वह अत्यन्त भ्रष्ट पुरुष थे। उनके राज्यके समयमें जो घटनाएं बराबर होती रहती थीं यदि वर्णन करनेके योग्य होतीं तो वे एक विराटकाय बडे भारी ग्रन्थमें भी समाप्त न होतीं। उनके राज्यके समयमें विदेशियोंके द्वारा आमेर राज आक्रान्त हुआ, शत्रुओंने नगर घेर लिया; उन्होंने आत्मसमर्पण करके लडाईका खर्च देना स्वीकार किया। जिस समय आक्रमणकारियोंने भ्रान्तिके वश हो असावधानता प्रकाश की थी, केवल उस समयमें ही उन्होंने बीच २ में अपनी वीरता दिखाई थी,

---

* Aitcheson's Treates & Vol. IV.

और बीच बीचमें उसी षड्यन्त्रसे दरबारमें भी तलवार और छुरीका प्रयोग किया था। बीच २ में रावला अर्थात् राजाके अंतःपुरसे भी कलंकका समाचार पहुंचा था और उस लम्पट नृपतिका रसकर्पूरनाम्नी स्त्रीके ऊपर आसक्त होना भी एक अत्यन्त निन्दनीय कार्य था। इन राजाके जीवनमें एक भी श्रेष्ठ गुण दिखाई नहीं दिया, जो राजपूतोंकी विशेष घृणा कापुरुषकी उपाधिसे युक्त थे उनकी जीवनीको लिखकर हमारी इच्छा इतिहासको कलंकित करनेकी नहीं है। उदयपुरकी राजनंदनी कृष्णाकुमारीके सम्बन्धमें उन्होंने अत्यन्त ही निन्दनीय कार्य किया था, उसका वर्णन पहिले ही हो चुका है, केवल इसीके करनेसे उनके चरित्र कलंकित नहीं हुए, उन्होंने कईलाख रुपये भी वृथा नष्ट किये थे। जयमंदिर नामक उज्वल मंदिरकी महामूल्य वस्तुएं अत्यन्त घृणित कार्यके लिये उन्होंने वृथा नष्ट कीं। कालीखो नामक स्थानमें मीना लोग वंशानुक्रमसे जयमंदिरके ऊपर विश्वासी रक्षक नियुक्त थे, प्रभु जगत्सिंहको उस मंदिरको विध्वंस करता हुआ देखकर वे लोग अत्यन्त दुःखित हुए और किसी२ने आत्मघात करके शरीर छोड दिया। सवाई जयसिंहके निर्माण किये अत्यन्त सुंदर जयपुर नगरके चारों ओरकी ऊंची२दीवारोंको प्रत्येक श्रेणीके तस्कर और लुटेरे घेरे रहते थे। वाणिज्य व्यापार एकवार ही बंद हो गया। अराजकता फैल गई और राजा जगत्सिंहके आलसी होनेसे तथा राजकर्मचारियोंके द्वारा लूटमार होनेसे किसानोंने खेती करनी भी छोड दी। एक दिन एक दरजीने राजसभामें प्रभुत्व किया, दूसरे दिन एक बनियेने और इसके पीछे एक ब्राह्मणने, इस प्रकारसे प्रभुत्व चलाकर पर्यायक्रमसे सभी राजधानीके निकटवर्ती नाहरगढ नामके किलेमें कि जहां फौजदारीके अपराधी जाते हैं, वहां वे भेजे गये, करद सामन्तोंने उनके प्रति तथा उनकी आज्ञाके प्रति अत्यन्त घृणा दिखाई। जगत्सिंहने जो रसकर्पूरको लेकर घृणित कार्य किया उससे एक समय उनको सिंहासनसे उतारनेके लिये एक बडा भारी आन्दोलन उपस्थित हो गया था। उस प्रस्तावसे कार्य होनेके लिये समस्त तैयारियां हो गई, आमेरराजके अर्द्धाधिकारीयोंने उस रसकपूरको नाहरगढके किलेमें भेजना चाहा, पर वह प्रस्ताव भी व्यर्थ हो गया। इस मुसल्मान उपपत्नीके प्रेममें महाराज जब अत्यन्त आसक्त हुए, तब उसके प्रेमसे उन्मत्त हो उन्होंने अपने राज्यके आधे अंशपर अर्धीश्वरीरूपसे रसकपूरका अभिषेक किया और वास्तवमें उनका राज आधे अंशपर ही था। अधिक क्या कहें महाराज जयसिंहने जिन अमूल्य ग्रंथोंको संग्रह किया था उसका आधा भागभी उसको दे दिया, वह समस्त ग्रन्थ विध्वंस हो गये और धन उस बारविलासिनीके अधीनवाले कुटुम्बियोंने बाँट लिया। राजा जगत्सिंहने उस स्त्रीके नामसे सिक्का प्रचलित किया था, केवल उस स्त्रीके साथ एक वार वह घोडेपर चढकर भ्रमण करनेके लिये

---

(१) टाड साहब लिखते हैं, कि "रोरजीखवास नामका एक मनुष्य जातिका दरजी थ हमें ऐसा अनुमान होता है कि यह मनुष्य बालकपनसे दरजीके कार्यको करता था, परन्तु वह मनुष्य, जगत्सिंहके मुसाहिबोंमें प्रधान मुसाहिब था, ऐसा भी अनुमान है कि जगत्सिंहने लार्डलेकके पास जो कई एक दूत भेजे थे वह मनुष्य भी उनमें दूतरूपसे गया था"।

गये थे, यथार्थ राजस्त्रियोंको जो संमान प्राप्त होता है, उन्होंने सामन्तोंसे भी उस वेश्याके प्रति वैसा ही सम्मान दिखानेको कहा। परन्तु क्षत्री सामन्तोंका हृदय गर्वसे पूर्ण होता है, वह क्या इस आज्ञाको सहन कर सकते हैं? यद्यपि मिश्र शिवनारायण नाम ब्राह्मण जो दीवान और प्रधान मंत्रीपदपर नियुक्त था, वह उस वेश्याको कन्या कहकर पुकारता था, परन्तु दूनीके सामन्त असीम साहसी चांदसिंहने क्रोधित होकर कहा कि "रसकपूरका जहां जो कार्य होगा मैं उसमें सहायता नहीं दूंगा, उसके इस वचनको सुनकर जगत्सिंहने उसके ऊपर २००००० रुपया जुर्माना किया, यह दूनी देशके चार वर्षकी आमदनी थी"।

"मनुजी राजाको सिंहासनसे उतरनेकी व्यवस्था कर गये हैं और आमेरके सामन्तोंको भी उसी भांति जगत्सिंहको सिंहासनसे भ्रष्ट करनेका यथार्थ कारण प्राप्त हुआ था। परन्तु दुर्भाग्यसे सामन्तोंकी वह कल्पना प्रगट हो गई। राजा जगत्सिंहके कितने ही बुद्धिमान् मित्रोंने इनके पद सम्मानकी रक्षाके लिये अनेक भांतिसे विचार किये, उस रसकपूरके चरित्रके सम्बन्धमें कितने ही घृणित वृत्तान्त राजाने सुने, राजा जगत्सिंहने सरलतासे उसपर विश्वास कर लिया। उन्होंने जो रसकपूरको धन सम्पत्ति दी थी, शीघ्र ही उसके लेलेनेकी आज्ञा दी और जिस किलेमें अन्य अपराधी रक्खे गये थे उसीमें इसको भी बंदी रखनेकी आज्ञा दी। उस कारागारसे वह स्त्री निकलकर भाग गई, जगत्सिंहने इसपर तनिक भी ध्यान न दिया, जगत्सिंहने इससे पीछे अपनी मृत्युके समयतक जयसिंहके पवित्र सिंहानको कलंकित किया था। सन् १८१८ ईसवीकी २१ वीं दिसम्बरको उन्होंने प्राण त्याग किये"।

"राजा जगत्सिंहने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये थे। इनके कोई पुत्र नहीं था और अपनी जीवित अवस्थामें इन्होंने किसीको उत्तराधिकारी भी नहीं बनाया। राजपूतोंमें यह रीति है कि यदि राजाके कोई पुत्र न हो तो राजाकी मृत्युके पीछे किसी बालक या युवकको दत्तकरूपसे नियुक्त कर लिया जाता है और उस दत्तक पुत्रसे ही मृतक राजाकी दाहक्रिया कराई जाती है, इस कारण महाराज जगत्सिंहकी मृत्युके पीछे नरवरके भूपतपूर्व एक राजाके पुत्र मोहनसिंह आमेरराजके अधीश्वररूपसे नियुक्त हुए"।

मोहनसिंहको आमेरराज्यपर निर्वाचन करनेक सम्बन्धमें इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं कि "२१ वीं दिसम्बरको जगत्सिंहने प्राणत्याग किये, परन्तु चिरप्रचलित रीतिके अनुसार उनके उत्तराधिकारीको नियुक्त करनेके समय मंत्रिसमाज इस बातको भलीभांतिसे जान गया कि पुरान समयकी रीतिके अनुसार अपनी पूरी सामर्थ्यका अपने देशपर चलाना और अपने अधीनोंपर वैसा बर्ताव करना इस समय सर्वथा असंभव है और इस बातका निश्चय संधिपत्रमें भी हो गया था। हमारा काम राजा और प्रजाका विरोध मिटाना था, परन्तु उनकी पुरानी रीति भांतिसे अभिज्ञ होनेके कारण जब हमने उत्तराधिकारीके निर्णयमें हस्तक्षेप किया तो हमारा हस्तक्षेप

करना आक्रमणके तुल्य हुआ और जयपुरके सरदारोंको उस मेलमिलापपर अफसोस करना पडा जो इस समयकी चालाकीके लिये वहांके सामन्तोंने उसे स्वीकार कर लिया था"।

"नवीन राजाके नियुक्त होनेके सम्बन्धमें राजपूतोंके राज्योंमें जैसी रीति प्रचलित है उसको यहाँपर लिखना भविष्यमें राजाओंको नियुक्त करनेके सम्बन्धमें विशेष लाभदायक दृष्टि आती है। बडे पुत्रको उत्तराधिकारी पदपर अभिषिक्त करनेकी रीति समस्त राजपूतोंमें प्रचलित है;कही दो एक स्थानोंपर ही इस रीतिका निषेध दिखाई पडता है, पर उनकी संख्या अति सामान्य है। इसके सम्बन्धमें मनुजी पूरी व्यवस्था कर गये हैं, पर मध्यकालके राजपूत मनुकी कितनी ही व्यवस्थाओंका अनुसरण नहीं करते, प्रचलितरीति और पूर्वदृष्टान्तके मतसे राजसिंहासनके सम्बन्धमें हो अथवा और किसी अधीन सामन्तके पदसे हो बडा पुत्र ही जो 'पाटकुमार' 'राजकुमार' अथवा 'कुमार' नामसे पुकारा गया है वही उत्तराधिकारीरूपसे नियुक्त किया जायगा। और दूसरी ओर राजकुमारके अन्यान्य भ्राता अपने २ नामके पहिले केवल कुमार शब्दका प्रयोग करते हैं। राजदरबारसे हो या सामन्त पदसे हो, सभीके यहाँ अवस्थाके अनुसार सम्मान दिखाया जाता है। सभीके यहाँ 'पटरानी' और "पाटकुमार"है। पटरानीकी सामर्थ्य और रानियोंकी अपेक्षा अधिक है, राजकुमारके अज्ञान होनेपर स्वयं पटरानी सामाजिक रीतिके अनुसार राजकार्य करती हैं, भारतवर्षमें सबसे प्राचीन राजधानी मेवाडकी पटरानी ही महाराणाके साथ सिंहासनपर अभिषिक्त हुई थीं। राजाने सबसे पहिले जिस रानीके साथ विवाह किया था, वही पटरानी हुई थीं और संतानके उत्पन्न होते ही उनका उक्त उपाधि प्राप्त हुई, उसी दिनसे वह पटरानी "माजी" नामसे पुकारी गई। उन्होंने जिस समय कार्य किया था, उस समय राज्यके कईएक देशोंके सामन्त उनकी सहायता करते थे, उन सामन्तोंने राजाके यहाँ कितने ही कर्मचारियोंके सहित उस प्रचलित वंशकी रीतिके अनुसार उस सम्मानको भोगा था"।

यदि कोई राजा पुत्रहीन अवस्थामें मर जाय तो उनका जो अत्यन्त कुटुम्बी है अथवा सहोदर भ्राताके न होनेपर रजवाडेके प्रत्येक राज्यमें जो ऐसे राजवंशीय कितने ही परिवार हैं, वही उसी अवस्थामें राजपदपर नियुक्त होनेकी सामर्थ्य रखते हैं। राज्यसिंहासनके प्राप्तिकी संख्या सीमाबद्ध करनेके लिये प्रत्येक राज्यमें इस प्रकारकी विधि नियत हुई है; जिन प्रत्येक राज्योंमें केवल कितनेही राजवंशियोंका परिवार उक्त निर्वाचन अधिकारको प्राप्त हुआ है। इस रीतिके अनुसार मेवाडराज्यमें केवल राणावत सम्प्रदायोंके सबसे बडोंने जो "बाबा" की उपाधि धारण की है, केवल वही उपरोक्त अवस्थामें सिंहासन प्राप्तिके अधिकारी हैं। मारवाड राज्यमें जोधावंशीय ईडर राजवंशको उक्त अवस्थामें मारवाडका सिंहासन प्राप्त होता था। बून्दीराज्यमें दुंगारिवंश, कोटाराज्यमें पलाइताका आपजीवंश, बीकानेरराज्यके महाजन गांवका सामन्तवंश और जयपुरराज्यके राजा मानसिंहके वंशधर-शाखा राजावत

सम्प्रदाय व्यवस्थाके अनुसार उक्त अवस्थामें सिंहासन प्राप्तिके अधिकारी हैं । परन्तु उस राजावत सम्प्रदायमें जिन्होंने मानसिंहके पहिले जन्म लिया है और जिन्होंने पीछे जन्म लिया है उनमें भी भिन्नता है, प्रथमोक्त केवल राजावत वा समय२ पर 'मानसिंहहोत, नामसे और शेषोक्त 'माधानी' नामसे पुकारे जाते हैं । राजावत संम्प्रदायोंमें बहुतसे वंश हैं, इनमें झिलांयके सामन्तोंका परिवार सबसे श्रेष्ठ है और उस वंशमें सबसे बडोंके यदि शारीरिक अथवा मानसिक किसी अंगकी हानि अथवा शरीरमें किसी प्रकारका रोग न हो तो उपरोक्त अवस्थामें वही जयपुरके सिंहासनकी प्राप्तिके अधिकारी हैं, और चिरप्रचलित रीतिके अनुसार उस नियुक्त की हुई विधिका त्याग करना अनुचित है ।''

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं कि यद्यपि संधिपत्रकी आठवीं धाराके अनुसार महाराज और उनके उत्तराधिकारी उनके राज्य तथा उनके अधीनके मनुष्योंके ऊपर सब प्रकारसे राज्यके चलानेकी सामर्थ्य युक्त होकर राजा रहेंगे इत्यादि और प्रत्यक्षमें अंग्रेज गवर्नमेण्टन कहा है कि किसी प्रश्नकी भी अन्यायरूपसे मीमांसा न होगी परन्तु उसने सबसे पहिले जयपुरके राजसिंहासनपर नवीन नरपतिके नियुक्त होनेके संम्बन्धमें जो व्यवहार किया है वह उक्त प्रतिज्ञा भंगमूलक और चिरप्रचलित रीतिके विपरीत है । गवर्नमेण्टने इस प्रथम हस्ताक्षेपके समय ऐसा काण्ड उपस्थित कर दिया कि जिसका समन्तोंने पहिले कभी भी अनुमान नहीं किया था, "इससे भलीभांति प्रमाणित होता है, कि जयपुरके अधीश्वरने जो हमारे साथ अपने भाग्यको विजडित करनेमें आनाकानी की है, वह अवश्य ही न्यायसंगत है ।'' हम वर्तमान रेसिडेन्टोंसे पूछते हैं—उनमेंसे ऐसा कौन है कि जो इस प्रकारसे टाड साहबके समान सत्यके सम्मानके रखनेकी सामर्थ्य रखता हो ?

संधिपत्रकी छठवीं और सातवीं धाराके सम्बन्धमें महात्मा टाड साहब लिखते हैं:— "छठवीं और सातवीं धाराओंसे ही अनेकताका वीज बोया गया है । आश्रितोंको हृदयमें जब अविश्वाश उपस्थित हो अथवा आश्रयदाता स्वेच्छाचारी होते हैं तभी अनेकता देखी जाती है । इसीमें अविश्वास उपस्थित होता है कारण कि जयपुरके सम्पूर्ण सामर्थ्यवान् राजा हमारे रेसिडेण्ट एजेण्टके सामने अपने राज्यके राजस्वका वृत्तान्त प्रादेशिक समस्त बन्दोवस्तको प्रकाश करनेमें वाध्य हो गये हैं कि राज्यकी आमदनी चालीस लाख रुपयेसे अधिक नहीं है[1] ।''

---

(१) महात्मा टाड साहबने इस स्थानपर अपनी टीकामें लिखा है, कि "मेवाडराज्यकी भी उन्नति और राजस्वकी वृद्धि होनेपर इस प्रकारके अतिरिक्त करको बढा देनेकी व्यवस्था हुई थी, ग्रंथकारने बहुत भांतिसे चेष्टा की कि इसके बदलेमें एक नियत कर देनेकी व्यवस्था हो परन्तु उनका वह मनोरथ सफल न हुआ, परन्तु यह सुनकर वह अत्यन्त आनंदित हुए थे कि मेवाड और आमेरके करदानके सम्बन्धमें परिवर्तन पूर्वक नवीन व्यवस्था हुई है, कई लाख रुपयोंसे भी अधिक खर्च करनेपर राजपूतानेका असंतोष दूर नहीं हुआ । जब कि हम उन्नति इत्यादि सभीको गवर्नमेण्टके—

साधु टाडने अंतमें निर्वाचनके सम्बन्धमें कहा है कि "जयपुरकी रीतिके अनुसार जिस बालकका अभिषेक होना निश्चित हुआ था उसके सम्बन्धमें तथा गोदके उपलक्षके मन्तव्य हम यहां प्रकाशित करना आवश्यक समझते हैं। इस समय जो कुछ अभिषेकके सम्बन्धमें लिखते हैं उससे इस विषयकी रीति नीतिका ज्ञान होनेसे भविष्यके लोगोंको सुविधा होगी।

मोहनसिंह नामका जो बालक था, जगत्सिंहकी मृत्युके पीछे प्रभात होते ही जयपुरके सिंहासनपर अभिषिक्त हुआ। वह बालक नरवरराज्यके भूतपूर्व राजा मनोहरसिंहका पुत्र था, सेंधियाने उस मनोहरसिंहको सिंहासनसे च्युत कर राज्यसे निकाल दिया था, यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि जयपुरराज्य वंशके आठ सौ वर्ष पहिलेसे नरवरराज्य वंशकी शाखा चली थी। परन्तु आदिराज्य नरवरके अधीश्वर पुत्रहीन अवस्थामें स्वर्गवासी हो गये, इसलिये नरवरवासी सामन्तोंने आमेरपतिके निकट एक पुत्रकी प्रार्थना की, उसपर पृथ्वीराजने अपने एक पुत्रको नरवरके सिंहासनपर अभिषिक्त होनेके लिये भेज दिया, उक्त मोहनसिंहका अभिषेक आमेरके कुमारसे चौदह पीढी पीछे हुआ था। हम पहिले कह आये हैं कि मोहनसिंहका यह अभिषेक प्रचलित रीतिके संपूर्णतः विपरीत था, कारण कि आमेरके महाराजके कोई पुत्र नहीं था, प्रचलित रीतिके अनुसार राजा मानसिंहके उत्तराधिकारीगण और माधोसिंहके उत्तराधिकारी जो सर्वसाधारणमें राजावत नामसे विख्यात थे, उनमें झिलाँयके सामन्त सबसे प्रथम आमेरराजके पदपर नियुक्त होनेके अधिकारी थे, उनके अयोग्य होनेपर और भी कितने ही सामन्तवंश अभिषिक्त होनेकी सामर्थ्य रखते थे"।

—अनुग्रहपर निर्भय करते है, तब हमने निर्भय होकर गवर्नमेण्टके निकट अपने मन्तव्यको प्रकाश किया, परन्तु जब कि उस गवर्नमेण्टके निकट हमारी आशा और भय कुछ भी नहीं है, तब हम अपने उस मन्तव्यको गुप्त नहीं रख सकते। यह देश गवर्नमेण्टके शासनका स्थायी है और जिन राज्योंने हमारा आश्रय लिया है उन सब राज्योंमें सुख शांति और स्वाधीनताकी वृद्धि होती रहै, यही हमारी अभिलाषा है। जिन मनुष्योंने राजपूत जातिकी यथार्थ अवस्था और मानसिक भावको न जानकर उन राजपूतोंकी स्वाधीनताको और भी अधिक संकोच करनेकी चेष्टा की वह इस देशके भयानक शत्रु हैं यह भलीभांतिसे प्रमाणित होता है। औरंगजेबके साथ राठौरोंकी जो तीस वर्षसे बराबर शत्रुता चली आ रही थी, इसे इतिहासमें पढिये; उन राठौरोंके प्रति अत्याचार करनेवाले औरंगजेबका अब वंश कहां है? मानचित्रके प्रति दृष्टि उठाकर देखो, उसके पीछे मरुक्षेत्र और सम्मुख ही अरावलीके शिखर खडे हुए हैं, इस समय कौन शत्रु उन राठौरोंके ऊपर आक्रमण करनेके लिये तैयार है। घृणित व्यवहार करनेवाले तथा विश्वासघाती नव्वाबोंके धनसे पली हुई जिस सेनाने सरलतासे हमको जीत लिया था, उसकी अपेक्षा राजपूत जाति किस भयंकर रूपसे प्रमाणित हो सकती है! देशी सेनाके प्रति यत्न करो, राजपूतोंको धीरज दो, पीछे शत्रुओंके विरुद्धमें हंसना। महात्मा टाड साहब निर्भय होकर जो सार कथा कह गये हैं, बडे दुःखका विषय है कि आज कलकी अंग्रेज राजनीति उसकी सुननेके लिये भी तैयार नहीं है, इस समय महात्मा टाड साहबकी उपरोक्त उक्ति विशेष शिक्षा दे सकती है।

परन्तु निम्नलिखित कारणोंसे चिरप्रचलित रीति भंग की गई। जगत्सिंहकी मृत्यु-के समय रनिवासमें मोहन नामक एक नाजिर था। उसीके हाथमें उस समय राजशासनकी लगाम थी। वह नाजिर प्रबल बुद्धिमान् था, यद्यपि उसने अनेक चतुरता करके अपने आशयको पूर्ण कर लिया, इससे उसको राजभक्तकी अपेक्षा स्वार्थपरायण अनुमान कर-सकते हैं, पर यह वास्तवमें राजाके मंगलकी इच्छा करनेवाला एक निःस्वार्थ मनुष्य था। इस समय मोहनसिंहकी अवस्था केवल नौ वर्षकी थी, इस कारण नाजिरने उनके दीर्घकालतक अप्राप्त व्यवहारकी अवस्थामें पूर्ण सामर्थ्य दिखानेकी इच्छासे उनको सिंहासनपर अभिषिक्त किया था। राज्यके श्रेष्ठ सामन्तगणोंके मध्यमें डिग्गीके मेघसिंह नाजिरके एक प्रधान सहयोगी थे, मेघसिंहने अपनी चातुरी और बल प्रकाशसे राजाकी खास भूमिमें अपना अधिकार करने और उसे निर्विघ्न होकर भोगनेकी इच्छासे आमेरके बारह बलवान् सम्प्रदायोंमें अपना प्रबल सम्प्रदाय (खँगारोत) के प्रभुत्व और प्रबलताके साथ नाजिरके उस प्रस्तावको समर्थन किया था। पुरोहित और धाभाई इत्यादि राजदरबारमें कुटुंबके कर्मचारीगण तथा महलके अधीनके कर्मचारी सभी नाजिर-के स्वार्थमें अपना स्वार्थ जानते थे। राजाके अज्ञान अवस्था होनेपर नाजिरकी कृपासे वह कर्मचारी निर्विघ्नतासे अपने पदपर स्थित रह सकेंगे। यदि दूसरे पक्षमें कोई मनुष्य राजपदपर प्रतिष्ठित होगा तो वह अपनी इच्छानुसार कार्य करेगा और अपनी मित्रमंडलीको भी राजकर्मचारियोंके पदपर नियुक्त करेगा; यही विचार कर राजकर्मचारी गणोंने भी नाजिरके पक्षको समर्थन किया।

"मोहनसिंहके अभिषेकके सम्बन्धमें सामन्तोंके साथ वा राजरानियोंके साथ पहिले कुछ भी परामर्श न करके नाजिरने केवल अपने दायित्वके भारको ग्रहण कर स्वामीकी मृत्युके पीछे दूसरे दिन प्रभातकाल ही बालक मोहनसिंहको सूर्यके रथपर चढाया और जगत्सिंहकी प्रेतक्रिया करानेके लिये ले गया दाहक्रिया हो जानेके पीछे मोहनसिंहने पवित्र स्नान किये और जितने मनुष्य इकट्ठे थे, सभीने मोहनसिंहको कछवाहोंका राजा स्वीकार कर उनका दूसरा नाम मानसिंह रखकर सम्मान दिखाया। उपरोक्त घटनाके पीछे जयपुरकी राजधानीमें जयपुरके सामन्तोंमें जो प्रतिनिधिरूपसे रहते थे, नाजिरने मोहनसिंहके अभिषेकमें उनकी संपूर्ण सम्मति प्रकाशकपत्रपर

---

(१) यवन सम्राटोंके अन्तःपुरके रक्षक प्रधान खोजे नाजिर कहाते थे, राजपूत राजाओंमें जयपुर और बूंदीके राजाओंने यवन सम्राटोंका अनुकरण करके अपने अन्तःपुरके रक्षकोंको नाजिरकी उपाधि दी था।

(२) टाड साहबने लिखा है कि, खांगारोत सम्प्रदाय बाईस वंशोंके सामन्त वंशमें विभक्त था; उन सबकी वार्षिक आमदनी ४०२८०६ रुपये थी। जयपुरपतिकी सहायताके लिये उनको ६४३ अश्वारोही सेना देनेका नियम था। यद्यपि मेघसिंह इस सम्प्रदायमे छठवीं वा सांतवीं श्रेणीके पदके मनुष्य थे, पर वह अपनी बुद्धि और तेजस्विताके बलसे इस सम्प्रदायके नेता हुए थे और राजदरबारमें इस सम्प्रदायके मुख्य यन्त्रस्वरूप थे।

हस्ताक्षर करके मोहर लगानेकी चेष्टा की । उक्त प्रतिनिधियोंने नाजिरके लिखे हुए प्रस्तावको स्वीकार करके सावधान होकर सम्मान दिखाते हुए ऐसा उत्तर दिया कि, जिससे न तो मोहनसिंहके अभिषेकके सम्बन्धमें कुछ उनकी सम्मति ही विदित हुई और न कुछ असम्मति ही जान पडी, वरन उसके सम्बन्धमें परस्परमें विचार करनेके लिये समय प्राप्त हो गया; इससे उस समय कुछ दिनोंके लिये अभिषेक सम्बन्धी मीमांसा स्थिर न हुई । इस समय सभी अंग्रेजोंकी ओर दृष्टि उठाकर देखने लगे, अंग्रेजोंको प्रसन्न रखना नाजिरकी प्रथम चेष्टा थी इस कारण उसने शीघ्र ही दिल्लीमें अंग्रेज रेसिडेण्टके पास ऐसा अनुरोध प्रकाश कर भेजा, कि सरकारने तुरन्त ही अपने एक विश्वासी मुन्शीको जयपुरमें भेज दिया । रेसिडेंटका भेजा हुआ मुन्शी जगत्सिंहकी मृत्युके छः दिन पीछे दिल्लीसे जयपुरमें आ पहुँचा, रेसिडेण्टने उक्त मुन्शीको निम्नलिखित कईएक प्रश्नोंका उत्तर संग्रह करनेके लिये आज्ञा दी थी " नरवरराजके पुत्रको आमेरके सिंहासनपर अभिषिक्त करनेका कारण क्या है ? मोहनसिंहके वंशका विवरण, उनके वंशकी कारिका, सिंहासनपर अधिकार पानेका उनका कोई स्वत्व है या नहीं और किसकी सम्मतिसे उनका अभिषेक हुआ है । इन ग्यारह प्रश्नोंके अतिरिक्त उक्त कईएक प्रश्नोंमें और भी पूछा गया कि इस अभिषेकमें रानी और सामन्तोंने संमति दी है या नहीं ? रानी और सामन्तोंके हस्ताक्षर सहित इस सम्बन्धका एक पत्र रेसिडेण्टके निकट लानेके लिये भी हुक्म दिया गया था । "

इतिहासवेत्ताने फिर लिखा है कि " नाजिर और रेसिडेंटके विश्वासी मुन्शीने उक्त प्रश्नोंका इस प्रकारसे उत्तर भेजा कि, बृटिश गवर्नमेंटने सन्तुष्ट होकर पहिली फर्वरीको मोहनसिंहके अभिषेकके समयमें एक अभिनंदन पत्र भेजा और इसी प्रकारका अंग्रेज गवर्नरने भी इनके पास सम्मान सूचक एक पत्र भेज दिया । दरबारमें यह दोनों पत्र पढे गये, "फिर आज नरवरमें बाजा बजने लगा, बालक मोहनसिंह प्रतापके महलसे चलकर राजसिंहासनपर विराजमान हुए " बृटिश गवर्नमेंटने इस प्रकारसे मोहनसिंहके अभिषेकमें अपनी पूर्ण सम्मति दी, जयपुरके राजदरबारमें जयपुरके संपूर्ण सामन्तोंके प्रतिनिधि नाजिरने उनसे पूछा, "कि आपके प्रभु सामन्तोंकी इस सम्बन्धमें क्या सम्मति है?" प्रतिनिधियोंने तुरन्त ही उत्तर दिया, कि आपके इस प्रश्नके पूछनेपर हम उत्तर देनेको प्रस्तुत हैं पर उन्होंने उसके साथ ही साथ यह भी कह दिया कि "जोधपुरके राजाकी भगिनी जो आमेरकी पटरानी है, उन्हींके मतपर हमारे प्रभु सामन्तोंका मत निर्भर हुआ है" । पटरानीने यहाँतक प्रकाश्यरूपसे नाजिर और उनके पक्षवालोंके विरुद्धमें अपना मत प्रकाश किया था कि मार्च मासके पहिले अभिषेकके संबन्धमें सर्व साधारणमें असंतोषके प्रबल चिह्न दृष्टि आने लगे और झिलाँयके राजावत् सामन्त जो सिंहासन प्राप्तिके समान अधिकारी थे, उन्होंने उस स्वत्वकी रक्षाके लिये अस्त्र धारण करनेका विचार किया और शीघ्र ही सिवाड और ईसरदाके दो सामन्त जो उक्त संप्रदायके कनिष्ठ थे, परन्तु उस शाखामें प्रबल बलशाली थे उनके साथ योग देनेको सन्नद्ध हुए ।

"इस उपद्रवके समयमें और भी एक सम्प्रदाय थी,पृथ्वीसिंहके पुत्र जिसके विषयमें हम पहिले वर्णन कर आये हैं, और जो इस सोंधियाकी दयाके आश्रयविभूषित होकर ग्वालियरमें रहते थे, उनको आमेरके सिंहासन पर अभिषिक्त करनेका उद्योग किया गया, परन्तु मूर्खता और कुचरित्रताका विषय प्रकाश हो गया इस लिये माधोसिंहके पुत्रोंकी ज्येष्ठ शाखासे राज्याधिकार नष्ट हो गया।

कर्नल टाड साहबके उक्त मन्तव्यको पढनेसे भली भांतिसे जाना जाता है कि इस समय आमेर राज्यमें ऐसा एक भी राजनीतिका जाननेवाला वा साहसी वीर नहीं था,जो उपस्थित हुए उपद्रवोंकी भली भांतिसे मीमांसा करता। नाजिरने अपनी चिरकाल प्रचलित रीतिके हृदयपर लात मारकर अपनी गुप्त अभिलाषा पूर्ण करनेको राज्यपर दीर्घकालतक अधिकार चलानेके लिये नरवरराजके राजकुमारको आमेरकी गद्दीपर बैठाल दिया; बडे आश्चर्यका विषय है कि सामन्त मण्डलीने प्रकाशरूपसे सबसे पहिले ठीक समयपर इसके विरुद्ध कोई प्रतिवाद करनेका साहस नहीं किया। यह ठीक भी है कि, इस समय नाजिर आमेरमें अपनी अतुलनीय सामर्थ्यका विस्तार कर रहा था, किन्तु यदि सामन्तोंमें एक भी साहसी वीर होता तो नाजिर कभी भी इस भांतिसे इच्छानुसार अपनी सामर्थ्यका विस्तार नहीं कर सकता। टाड साहबकी उक्तिसे भलीभांतिसे जाना जाता है कि, अंग्रेज कम्पनीने विशेष तत्त्वका अनुसन्धान किये बिना केवल एक नाजिरकी उक्तिके ऊपर सम्पूर्ण विश्वास स्थापन करके चिर प्रचलित राजपूतरीतिका अपमान किया था। अंग्रेज रेसिडेण्टने सबसे पहिले अपने एक विश्वासी मुन्शीको जयपुरमें भेजकर कई एक प्रश्न किये थे। यदि उस बातको अटल रखकर वह यथार्थ तत्त्वको जान लेते तो किसी प्रकार भी अंग्रेज सरकार नाजिरकी उक्तिके मतसे मोहनसिंहको अभिषेक करानेमें अपनी सम्मति नहीं देती। मुन्शीके परामर्शसे उन्होंने मोहनसिंहको आमेरके सिंहासनपर बैठाकर समस्त राज्यमें भयंकर अग्नि सुलगा दी, अंग्रेजोंके विशेष खोज न करनेसे मोहनसिंह नाजिरकी चतुरताके जालमें फँस गये। एक ओर जिस भांति सामन्त श्रेणी उत्कंठित हो गई, दूसरी ओर सिंहासन प्राप्तिके लिये राजावत् सामन्तोंकी सम्प्रदायने अस्त्र धारणकर मोहनसिंहके विरुद्ध समरकी तैयारी की। शीघ्र ही राज्यमें जातीय समरानलके प्रज्वलित होनेके पूर्वलक्षण दृष्टि आने लगे। आमेरकी पटरानी जोधपुरपतिकी भगिनी[1] पहिलेसे ही नाजिरके ऊपर अत्यन्त क्रोधित थीं; उन्होंने पहिलेसे ही मोहनसिंहके अभिषेकमें अपनी सम्मति नहीं दी, इस कारण वह भी इस समय प्रबल आपत्ति करने लगी। चतुर नाजिर चारोंओरसे अपनेको आपत्तिसे घिरा हुआ देखकर उपाय सोचने लगा। नाजिरने देखा कि, एकमात्र पटरानीके सन्तोष होते ही समस्त उपद्रवोंकी शांति हो जायगी। उक्त पटरानी मारवाडके राजा मानसिंहकी बहिन थीं। इस कारण नाजिर सबसे पहिले उन मारवाडपतिकी शरणमें जाकर अनेक प्रकारसे बिनती करने लगा। नाजिरने विचारा कि रानी अपने भाईकी आज्ञाको अवश्य ही मानैंगी, और मोहनसिंहके अभिषेकके

(१) भगिनी नहीं पुत्री थीं।

संबन्धमें यह अपनी सम्मति भी अवश्य ही देंगी । चतुर नाजिरने मानसिंहके समीप कहला भेजा कि महाराज अपनी मृत्युके समय कह गये हैं कि, मोहनसिंह ही आमेरके सिंहासनपर अभिषिक्त हों; अतः उनकी अंतिम इच्छाके अनुसार ही हमने मोहनसिंहको आमरके सिंहासनपर अभिषिक्त किया है । इस समय आप अपनी भगिनीसे सम्मति देनेके लिये कह दीजिये; तभी सब उपद्रवोंकी शांति हो सकती है । राजा मानसिंहने नाजिरके छलमें न आकर यह उत्तर भेजा कि " जयपुरके सिंहासनपर अभिषिक्त होनेका किसको अधिकार है, इस विषयके पत्रपर हम या हमारी भगिनीके हस्ताक्षर होनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है, इन प्रश्नोंकी मीमांसाका भार चिर प्रचलित रीतिके अनुसार बारह श्रेष्ठ सामन्तोंके वंशधरोंपर निर्भर है, वह यदि मोहनसिंहके सम्बन्धमें अपनी सम्मति देकर उस स्वीकारपत्र पर अपने हस्ताक्षर कर दें तो आवश्यकता होनेपर हमारी भगिनी भी अपने हस्ताक्षर करसकती हैं " ।

राजा मानसिंहके उक्त उत्तरसे नाजिरको चारों ओर अंधकार दिखाई पडने लगा । उसने समझा था कि, गवर्नमेण्टके उसकी चतुरतासे भ्रांतिरूपी कुएंमें गिरते ही और गवर्नमेंटके द्वारा भेजे हुए मुन्शीको उसके पक्षको भलीभांतिसे समर्थन करते ही निर्विघ्नतासे मोहनसिंहको आमेरके सिंहासनपर बैठाल सकेगे । पर अब उसमें भी कठिनाई दीखी, तब बहुतसी चिन्ता करनेके उपरान्त उसन आर भी एक षड्यन्त्र जालका विस्तार किया । उसने विचारा जब कि गवर्नमेण्टने मोहनसिंहको आमेरके अधीश्वररूपसे स्वीकार कर लिया है तब यदि कोई सामर्थ्यवान् राजपूत राजा मोहन-सिंहके पक्षमें लाया जाय तो आमेरकी सामन्त मण्डली और पटरानीकी की हुई समस्त आपत्तियां दूर हो सकेंगी । उसने इस प्रकारकी चिन्ता करके मेवाडके राणाकी पोतीके साथ मोहनसिंहके विवाहका प्रस्ताव एक दूतके हाथ उदयपुरमें भेजा । महाराणाने इस विवाहके प्रस्तावको सरलस्वभावसे स्वीकार कर लिया; और राणाके जो प्रबल सामर्थ्यवान् प्रतिनिधि दिल्लीमें रहते थे वह भी इस प्रस्तावमें सम्मत हो गये, परन्तु राणाके यहांके और कितने ही सामर्थ्यवान् मनुष्य इस प्रस्तावके विरुद्ध खडे हुए। अतएव राणाको हताश होकर इस प्रस्तावमें अपनी असंमति प्रकाश करनी पडी । कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि फिर यह सम्मति ठहरी कि राजा अपना विवाह जैपुर-राजकी बहनसे करलें कि, जिसकी सगाईकी रीति बारह वर्ष पहिले हो चुकी थी, और उसमें बहुतसा रुपया खर्च हुआ और दिया गया था, और उस समय राणाकी इच्छा जयपुर नगरमें जानेके लिये अनेक आपत्ति दिखाकर रोकदी गई थी । किसी हिन्दू जातिक महाराजको प्रतिष्ठासे लेनेके लिये समस्त आमेरके सामन्त अपने शासित देशोंको छोडकर परस्पर मानी गई और बनाई गई रीतोंके अनुसार वहां आवें कि, जिसकी प्रसन्नताके स्वत्व स्वयं ही संग्रह किये गये हैं, और जिन रीतोंको यह विवाह भलीभांतिसे दृढ कर देगा । यद्यपि नाजिरने दृढतासे इस ग्रंथिको बांधा था परन्तु न जाने परमेश्वरने मोहनसिंह और नाजिरके भाग्यमें क्या लिखा था कि, एक ही उपायसे

दोनोंके भाग्यका चक्र पलटा खा गया। अचानक यह समाचार सुन पडा कि, जगत्-सिंहकी भटियानी रानी गर्भवती है।

महाराज जगत्सिंहने सन् १८१८ ईसवीके २१ दिसम्बरमें प्राण त्याग किये थे परन्तु सन् १८१९ ईसवीकी २४ मार्चको यह समाचार प्रकाशित हुआ था कि, भटियानी रानीको आठ महीनेका गर्भ है, इतने दिनोंतक इस समाचारके छिपे रहनेसे सभीको आश्चर्य हुआ, परन्तु कई महीनेतक यह समाचार किसीने भी नाजिरसे न कहा यह नहीं विदित हुआ। गर्भके समाचारको प्रकाशित होते ही इसका निर्णय करनेके लिये कि, क्या रानी निश्चय ही गर्भवती हैं। अप्रैलको तीन घडी दिन चढे मृतक महाराज जगत्सिंहकी सोलह विधवा रानी और आमेर राज्यके प्रधान २ सामन्तोंकी भार्यायें सब मिलकर भटियानी रानीके महलोंमें गई; और दूसरी ओर राज्यके समस्त सामन्त "जनानी ड्योढ़ी" अर्थात् अंतःपुरके तोरणसे लगे हुए कमरेमें जाकर उस रानीमंण्डलीके निर्णयके फलकी बाट देखने लगे; तीन प्रहरसे भी अधिक दिन चढ़े तक उन रानियोंने विशेष परीक्षा करनेके पीछे स्थिर किया कि भटियानी रानी निश्चय ही गर्भवती हैं, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। सामन्त इस समाचारको पाकर अत्यत संतुष्ट हुए, और सम्मति करनेके पीछे वहाँपर एक लिखा हुआ पत्र हस्ताक्षर करानेके लिये भेज दिया, "यदि रानीके पुत्र उत्पन्न होगा, तो हम उसको अपना प्रभु स्वीकार करेंगे, अन्य किसीके भी पक्षको ग्रहण न करेंगे।" नाजिरके निकट शीघ्र ही वह प्रतिज्ञापत्र भेजा गया, उन्होंने उसी पत्र पर हस्ताक्षर करके शीघ्र ही उसे दिल्लीमें बृटिश एजण्टके पास भेज दिया, और उनको इस प्रकारका अनुरोध किया कि, विशेष परामर्श करके राठौर रानीकी आज्ञासे नाजिरको पृथक् कर दिया जाय। नाजिर भटियानी रानीके गर्भके समाचारको सुनकर अत्यन्त भयभीत हुआ, यद्यपि वह इस समाचारसे निराश भी हो गया था परन्तु अंतमें एक और भी उपाय करे बिना न रहा। उसने समस्त सामन्त मण्डलीसे इस गर्भके एक स्वीकारपत्रपर हस्ताक्षर करानेकी चेष्टा की कि मृतक महाराज जगत्सिंहकी आज्ञासे ही मोहनसिंहको राज-सिंहासन पर अभिषिक्त किया गया है, परन्तु नाजिरके इस वचनको मिथ्या जानकर किसी सामन्तने उसपर हस्ताक्षर नहीं किये, इस कारण नाजिरकी वह अन्तिम चेष्टा भी व्यर्थ हो गई।

राजरानीके गर्भका समाचार समस्त राज्यमें फैल गया, जो संप्रदाय सिंहासन लेनेके लिये तैयार हुई थी वह सभी शांत हो गई। इस प्रकारसे जगत्सिंहकी मृत्युके चार महीने और चार दिन पीछे २६ अप्रैलको प्रभात होते ही भटियानी रानीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। राजकुमारने जन्म लिया है यह समाचार सुनते ही सामन्तमंडली महा आनंदित हुई, राजधानीमें भाँति भांतिके उत्सव होने लगे, मोहनसिंह और नाजिरके ऊपर मानो भयंकर वज्र टूट पडा। टाड साहब लिखते हैं कि सामन्तोंने अत्यन्त आनंदित होकर नवकुमारको कछवाहोंके अधीश्वररूपसे स्वीकार किया, और उसके साथ

ही साथ मोहनसिंह सिंहासनसे उतार दिये गये, और जिस अवस्थामें वह पहिले थे उसीमें पहुँच गये । इस घटनासे एक समय रजवाडेमें महा आनंद हो गया, जहाँ भयंकर युद्धकी तैयारी हो रही थी वह एकबार ही शांत हो गई । इस घटनासे जो सबने मीमांसा की थी वह सभीके पक्षमें मंगलकारी थी । इन नवीन राजकुमारके जन्म वृत्तान्तके साथ साधु टाड साहबने जयपुरके इतिहासको समाप्त किया है; हम भी जयपुर राज्यकी सृष्टिसे यहाँतक साधु टाडका अनुसरण करते हुए आये, इन नवीन राजकुमारके शासनसे जयपुरके वर्तमान अधीश्वरके अभिषेकतकका इतिहास हमने स्वाधीनभावसे संग्रह किया है, पाठक उसको अगले अध्यायमें भलीभाँतिस पढ सकेंगे ।

पंचम अध्याय ५.

भटियानीरानीका राज्यशासन–राजमत्री पदपर बृटिश गवर्नमेण्टके मनोनीत रावल वैरीसालका नियोग–सामन्तोंका अन्याय करके अधिकृत खास भूमिको ग्रहण करना–सामन्तोंका प्रतिज्ञा पत्र–विश्वासीरूपसे राजकार्य संभारनेके लिये मुसद्दीगणोंका प्रतिज्ञापत्र–आमेर राज्यमें फिर अशान्तिका आविर्भाव–भटियानी रानीके कृपापात्र झूताराम–वैरीसालको पदच्युत करके झूतारामका मत्रीपद ग्रहण करना–झूतारामका प्रबलप्रताप प्रभुत्व–उनके द्वारा राज्यमें फिर अराजकता अत्याचार और उत्पीडन प्रारंभ होना–भटियानीरानीका प्राण त्याग–जयपुरके आभ्यन्तरिक शासन पर बृटिश गवर्नमेण्टके हस्ताक्षेपकी चेष्टा–महाराज जयसिंहका प्राण त्याग–उनकी अकालमृत्युके सम्बन्धमे संदेह–झूतारामका जयसिंहके विषप्रयोगका समाचार प्रचार करना–जयसिंहकी जीवनी–जयपुरके आभ्यन्तरिक शासनपर गवर्नमेण्टका हस्ताक्षेप–गवर्नर जनरलके एजण्टका जयपुरमें आगमन–वैरीसालको फिर मंत्रित्व पदकी प्राप्ति–उनके द्वारा शासनविभागकी नवीन व्यवस्था–झूतारामके षड्यंत्रजालका विस्तार–अंग्रेज एजेण्टके प्राण नाशकी चेष्टा–उनके सहायकका प्राणनाश–हत्याकारियोंका पकडा जाना–उनको प्राणदंड–झूताराम और उनके साथियोंका यावज्जीवन चुनारके किलेमे बंदी होना ।

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड साहब जयपुरराज्यके वृत्तान्तको इतिहासमें जिस रूपसे वर्णन कर गये हैं, हमने उन सभीको पूर्वाध्यायतक प्रकाश किया है, इस समय टाडके लिखेहुए इतिहासके आगे शेष समयतकके अंशको लिखनेके लिये अग्रसर हुए हैं।

हमारे पाठक गण महाराज जगत्सिंहकी मृत्यु, मोहनसिंहका अभिषेक, जयसिंहका जन्म और मोहनसिंहके सिंहासनच्युतिके वृत्तान्तको पहले ही पढ चुके हैं । जयसिंहके जन्म लेनेसे जयपुर राज्यकी राजनैतिक अवस्था फिर बदल गई, राजसिंहासनपर जो उपद्रव मचा था, नाजिरके षडयंत्रसे राज्यमें जो भयंकर जातीय समरके पूर्व लक्षण दिखाई दिये थे, राजावत सामन्तोंने असंतुष्ट होकर सिंहासन प्राप्तिके लिये घोर विवाद करके युद्धकी तैयारी की थी, गवर्नमेण्टने भी नाजिरके चक्रमें फँसकर शोचनीय

राजनैतिक काण्डके झमेलेमें पड रही थी, वह जयसिंहके जन्म लेते ही एकबार ही शान्ति हो गई। जयसिंहकी माता भटियानी रानी थी, इन्होंने अपने पुत्रके नामसे राज्यशासन करना प्रारंभ कर दिया, परन्तु गवर्नमेण्टने जयपुरके सुशासन, शान्ति, मंगल, न्याय-विचारसाधन और बालक महाराजकी स्वार्थ रक्षाके अभिप्रायसे रावल वैरीसाल नामक एक बुद्धिमान मनुष्यको जयपुरके मंत्रीपदपर नियुक्त कर दिया। रावल वैरीसाल उस ऊँचे पदको पाकर अपने सुकुमार प्रभुकी स्वार्थरक्षाके साथ राज्यके मंगल साधनके निमित्त भटियानी रानीके राज्यशासनकी सहायता करनेमें प्रवृत्त हुए।

जयपुरराज्यके पतन समयमें मृतक महाराज जगत्सिंहकी अंतिम दशामें आमेरके प्रबल बलशाली सामन्तोंने छल कपट और अपनी चतुरता तथा बाहुबलसे राज्यकी खास भूमिको अपने अधिकारमें कर लिया था, गवर्नमेण्टकी आज्ञासे महाराज जगत्सिंहने उस समस्त भूमिको फिर अपने अधिकारमें कर लिया। आचिसन साहबने लिखा है, कि "संधिबंधनके समाप्त होनेके पीछे सबसे पहिले महाराजने यह आज्ञा दी थी कि आमेरके सामन्तोंने अन्याय करके जिस पृथ्वीको अपने अधिकारमें कर लिया है उस सबको लौटा लिया जाय, और उद्धत सामन्तोंको उनके पूर्व नियत किये हुए अधीन पदपर नियुक्त करना ठीक होगा। सर डविड अकटरलोनोकी मध्यस्थतासे उदयपुरके सामन्तोंके साथ महाराणाका जिस प्रकारका युक्तिपत्र नियुक्त हुआ था, आमेरमें भी उसी प्रकारका युक्तिपत्र नियत हुआ। सामन्तोंने अन्याय करके जिस पृथ्वीको अपने अधिकारमें कर लिया था, वह सभी सामन्तोंसे छीनकर महाराजको फिर दे दी गई और सामन्तगण न्यायद्वारा चिरकालसे जिस अधिकारको भोगते आये थे, गवर्नमेण्टने उसी प्रकारका उनको प्रतिभू प्रदान किया"। यद्यपि सामन्तमण्डली अंग्रेजोंके साथ संधिके इस प्रथम फलको देखकर मन ही मन भलीभाँतिसे असंतुष्ट हुई थी परन्तु उन्होंने अन्यान्यरूपसे राजाकी खास भूमिपर अपना अधिकार किया था, इसीसे प्रकाशमें कुछ कहनेका साहस न कर सके।

महाराज जयसिंहकी नाबालिग अवस्थाके समयमें जिससे आमेरके सामन्त फिर किसी प्रकारसे खास भूमिपर अपना अधिकार न कर सकें, इस लिये बृटिश गवर्नमेण्टके प्रस्तावके अनुसार भटियानी रानीने सब सामन्तोंसे एक प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर करा लिये। उस प्रतिज्ञापत्रको हम नीचे प्रकाश करते हैं।

प्रतिज्ञापत्र।

"समस्त ठाकुर (सामन्त) और मुसद्दियोंकी ओरसे श्रीमती महारानी बाई साहिबाको विदित किया जाता है कि जबतक महाराज जयसिंहजी राजकार्यमें समर्थ न हो जाँय तबतक हममेंसे कोई भी अपने व्यवहारके लिये खालिसा पृथ्वीके किसी अंशको भी अपने अधिकारमें नहीं कर सकेगा, और हमलोग सभी विश्वासके साथ अपने २ कर्तव्यको पालन करेंगे।

(हस्ताक्षर) रावल वैरीशाल।

बाघसिंह चतुर्भुजोत

कृष्णसिंह ।	चेतरामसाह ।
बहादुरसिंह राजावत ।	मंगलसिंह खुमानी ।
कायमसिंह बलभद्रोत ।	बाँशखो ।
लक्ष्मणसिंह झुंजनूवाला ।	सवाईसिंह कल्याणोत ।
उदयसिंह खांगारोत ।	रायज्वाला नाथ ।
राजा अभयसिंह क्षेत्री ।	दीवान अमरचंद ।
राव चतुर्भुज ।	बारहट स्वरूपसिंह ।
मानसिंह खांगारोत ।	कूमावत मोहरवाला ।
वैरिशाल थूकारोत ।	दीवान नन्दीराम ।
स्वरूपसिंह बनवीरपोता ।	राय अमरचंद पल्लीवाल ।
बख्शी श्रीनारायण ।	सिंगी मन्नालाल ।
भारतसिंह चाम्पावत ।	बालमसिंह राणावत ।
अमानसिंह पचानोत ।	रामलाल धाभाई ।
शरतसिंह चंपावत ।	छाडतराम बदर्गी ।
शार्दूलसिंह नरूका ।	रावलवैरीशाल ।
कृपाराम बकायानवीस ।	कृपाराम साह" ।

सामन्तमंडली और मुसद्दियोंने सन् १८१९ ई० की१२वीं तारीखको उस प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर किये, राय ज्वालानाथ और दीवान अमरचंदने एक पत्र जनरल अक्टर लोनीके पास भेज दिया ।

मुसद्दी अर्थात् राज्यके कर्मचारी जिसमें विश्वासके साथ अपना २ कार्य साधन किया करें, और किसी प्रकार भी घूंस ग्रहण करके शान्तिको भंग न करें । इसी लिये उनसे भी उसी दिन राजमहिषी माताने एक प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर करा लिये । वह प्रतिज्ञापत्र नीचे प्रकाशित हुआ है ।

प्रतिज्ञापत्र ।

सम्पूर्ण मुसद्दियोंके पक्षसे श्री श्रीमती बाई साहिबाको विदित किया जाता है कि महाराज श्री सवाई जयसिंह बहादुर जबतक राजकाजके व्यवहारोंमें समर्थ न होंगे तबतक दरबारका जो कारभार हमारे हाथमें अर्पित हुआ है उस समस्त कार्यसाधनके समयमें और समय २ पर जो समस्त आज्ञाएं प्राप्त हों, उन सम्पूर्ण आज्ञाओंके पालन करनेमें हम सब निम्नलिखित व्यवस्थाके अनुसार कार्य करेंगे ।

प्रथम—हम विश्वासके साथ अपने १ कार्य करेंगे, और किसीसे भी घूंस ग्रहण नहीं करेंगे ।

---

1 Aitchisons Treaties Vol. IV.

दूसरा–प्रत्येक फसलके समयमें मुख्तारके द्वारा हम प्रत्येक राजदरबारमें एक २ हिसाब भेजेंगे ।

तीसरा–अत्याचारी अपराधीके अतिरिक्त हम और किसीको दानका दंड नहीं देंगे ।

चौथा–राज्यशासन सम्बन्धी कार्यमें हम आपसमें किसीके साथ भी प्रकाश्य वा अप्रकाश्य विवाद नहीं करेंगे ।

(हस्ताक्षर) राव ज्वालानाथ । चतुर्भुज ।

मुन्शी दयाचंद । दीवान नोनिधराय ।
दीवान अमरचंद । सिंगी मन्नालाल ।
सोजीलाल । घासीराम ।
कृपाराम । आडतराम ।
जेतरामसाह । श्रीनारायण बख्शी ।
लछमन । संपतराम ।
मदनचंद । जीवनराम ।
भीहराज नारायण । रामलाल धाभाई ।
राय अमृतराम । ज्ञानचंद ।
रूपचंद दरोगा । देवराम दरोगा ।
कृपा कपूर । मुन्शी श्रीलाल ।
रावल वैरीशाल ।

उपरोक्त दोनों प्रतिज्ञापत्रोंने प्रकाशित कर दिया है कि जगत्‌सिंहकी मृत्युके पीछे आमेर राज्यमे शान्ति और न्याय–विचार प्रवर्त्तनके लिये सबसे पहिले यथोचित आयोजन और अनुष्ठानमें कोई भी त्रुटि नहीं हुई, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि, बहुत थोडे दिनोंमें ही आमेरराज्यकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय हो गई, यद्यपि भटियानी रानी अपने पुत्रके नामसे राज्यशासन करती थीं परन्तु वह राजपूत स्त्रियोंके समान साहस, प्रतिज्ञा, ज्ञान और बुद्धिके बलसे उनके समान बलवती न होकर जितने दिनोंतक जीवित रहीं उतने दिनोंमें आमेरराज छारखार हो गया । सुखशांति और मंगलमय विचार आमेरसे एकबार ही लोप हो गये । आचिसन साहबने लिखा है कि, "रानीकी मृत्यु अर्थात् सन् १८३३ ईसवीतक जयपुर राज्य अराजकता और अविचारका क्षेत्रस्वरूप हो गया था" । कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि "शिशु राजाके नाबालिग अवस्थाके समयमें जयपुरराज्य अराजकता और उपद्रवोंका तो मानो क्षेत्रस्वरूप हो गया था *" ।

"सारांश यह है कि भटियानी रानी अच्छे चरित्रवाली न थीं । झूताराम नामके एक मनुष्यने अपने कौशलमें रानीको फाँसकर आमेरराज्यमें अशान्तिकी आग्नि प्रज्वलित कर दी थी । गवर्नमेण्टने बैरीशालको दीवानके पदपर नियुक्त किया था,

* Atcheson's Treaties Vol IV,

परन्तु झूतारामने विधवारानीके हृदयपर अधिकारके साथ ही साथ उस पदपर भी अधिकार कर लिया। झूतारामने धीरे २ राज्यमें अपने प्रभुत्वका विस्तार कर दिया और अपनी स्वतन्त्रताका एक शेष प्रदर्शन दिखा दिया, राजदरबार और राजाके यहां सम्पूर्ण ऊँचे पदोंपर उनके अनुगत मनुष्य नियुक्त हुए ×"। झूतारामने उस प्रबल सामर्थ्यको विस्तार करके स्वयं ही राज्यमें स्वेच्छाचारिताका एक शेष प्रदर्शन दिखाया था, यही नहीं किन्तु इसीके समान इसके अनुगत नियुक्त हुए, राजकर्मचारियोंने भी राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें अत्याचार और उपद्रवोंके मारे भयंकर अग्नि प्रज्वालित कर दी। गवर्नमेण्ट संधिपत्रके अनुसार जो कर लेनेकी अधिकारी थी झूतारामके शासनसे वह कर भी बहुत कम रह गया। सन् १८३३ ईसवीतक झूतारामने इस भाँतिसे आमेर राज्यपर शासन करके एकाधिपत्यके साथ राज्यकी अवस्था अत्यन्त ही सोचनीय कर दी। इसके पीछे इसी संवत्में भटियानी रानीने भी प्राण त्याग किये। रानाकी मृत्युसे झूतारामके प्रतापपर भयंकर वज्रपात हुआ।

जबतक भटियानी रानी जीवित रहीं तबतक बृटिश गवर्नमेण्टके संधिपत्रके सम्मानकी रक्षा करती रहीं, और इसी कारणसे गवर्नमेण्टका कर सालके साल दिया जाता रहा, इससे कोई विघ्न भी उपस्थित नहीं हुआ, परन्तु सन् १८३३ ईसवीमें महारानीके मरते ही गवर्नमेण्ट भिन्नमूर्तिसे जयपुरकी रङ्गभूमिमें आ पहुँची। कर्नल म्यालिसनने अपने इतिहासमें लिखा है कि, "जिस प्रकारसे गवर्नमेण्टके स्वार्थकी रक्षा और नियमित करमें बाधा न पडे उस अभिप्रायसे जयपुरकी राजधानीमें निवास करने और राज्यके भीतरी शासनपर हस्ताक्षेपके लिये सरकारने एक अपने कर्मचारीको नियुक्त कर उसके हाथमें संपूर्ण सामर्थ्यका देना अपना मुख्य कर्तव्य विचारा"। आचिसन साहबने अपने ग्रंथमें इस प्रकारका मत प्रकाश किया है कि इसको कौन नहीं स्वीकार करेगा कि, बृटिश सरकारने अपने स्वार्थसाधनके लिये जयपुरके आभ्यन्तरिक शासनपर हस्ताक्षप करके संधिपत्रका अपमान किया। गवर्नमेण्ट जब पहिलेसे ही प्रतिज्ञामें वद्ध हुई थी कि, वह किसी प्रकारसे भी जयपुरके आभ्यन्तरिक शासनपर हस्ताक्षेप न करैगी तब केवल प्राप्य करको अदा करनेके लिये उस प्रतिज्ञाका भंग करना क्या न्याय संगत है?

जो कुछ भी हो कर्नल म्यालिसने लिखा है-सन् १८३४-३५ ईसवीमें शेखावाटीमें शान्ति स्थापनके लिये बृटिश गवर्नमेण्टने इस समय एक अंग्रेजी सेना भेजी उस समय उस समरके व्यय चुकानेके लिये सांभरके लवण ह्रदपर जयपुरराज्यका जो अंश था, गवर्नमेण्टने अपनी सेनासे उस अंशपर अपना अधिकार कर लिया। जिस समय शेखावाटीमें समर होनेकी मीमांसा हुई थी उस समय महाराज जयसिंहने जयपुरमें ऐसी अवस्थासे प्राण त्याग किये कि जिससे एक प्रकारका प्रबल सन्देह उपस्थित होता था, राजमंत्री झूताराम और राजमहलकी एक परिचारिका

× MalLeson's Native states of India. Chap II.

बड़ारणके षड्यंत्रसे महाराजकी अकाल मृत्यु उपस्थित हुई थी" । आचिसन साहबने अपने बनाये हुए ग्रंथमें लिखा है "कि, युवक महाराज जयसिंहने सन् १८३५ ईसवीमें वर्तमान महाराज रामसिंहको दो वर्षका छोड कर प्राण त्याग किये । उस समयका ऐसा विचार किया जाता है कि भटियानी रानीके समय जो झूताराम राज्यमें असीम सामर्थ्य विस्तार कर रहा था, और गवर्नमेण्टके मनोनीत मंत्री रावल वैरीशालको पदसे उतार कर स्वयं उस पदपर विराजमान हुआ था उसी मनुष्यने विष देकर राजाको मार डाला" । बाबू लोकनाथ घोषने अपने बनाये हुए ग्रंथमें लिखा है, कि "सन् १८३५ ई० में महाराज जयसिंहने सत्रह वर्षकी अवस्थामें प्राण त्याग किये, यह भी विचारमें आता है कि झूताराम की आज्ञासे महाराजको विष दिया गया था" *

अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि महाराज जयसिंह यौवनकी सीमापर पैर धरते ही, नारकी झूतारामके हाथसे मारे गये, अधिक क्या, महाराज जयसिंहको राज्यशासनका भार प्राप्त नहीं 'हुआ' झूताराम ही सर्वमय कर्ता स्वरूपसे राज्यको छारखार करता था, झूतारामने किसलिये महाराज जयसिंहके नवीन जीवनका नाश किया, इस बातका विचार पाठक स्वयं कर सकते हैं । थोडे ही दिनों पीछे महाराज जयसिंह समस्त व्यवहारोंको जानकर स्वयं राज्यको ग्रहण करते, इसी कारणसे नराधम झूतारामने विचारा कि इनके समर्थ होते ही मेरा प्रताप लोप हो जायगा, और इस पापीके प्राणनाशकी भी सम्पूर्ण संभावना थी, इसीलिये पिशाचबुद्धि झूतारामने महाराजके जीवनका नाश करके निर्विघ्नतासे अपने पूर्व प्रतापको इच्छानुसार अखंड रखनेकी प्रतिज्ञा की थी । इसीसे उस दुष्टात्माने यह पिशाची कार्य किया, परन्तु उस पापात्माने अपनी करनीका फल भी तुरन्त ही भोग लिया ।

भटियानी रानीकी मृत्युके पीछे यद्यपि बृटिश गवर्नमेण्ट जयपुरके आभ्यन्तरिक शासनपर हस्ताक्षेप करके आगे बढ़ी थी; परन्तु इस समयतक सम्पूर्णरूपसे हस्ताक्षेप नहीं किया था । महाराज जयसिंहकी अकालमृत्यु होते ही गवर्नमेण्टने जयपुरमें प्रवेश किया । आचिसन साहबने लिखा है, कि "महाराजकी मृत्युके पीछे गवर्नर जनरलके एजण्टने महाराजकी मृत्युका कारण अनुसंधान करने तथा राज्यके शासनविभागके संस्कार करने और शिशुकुमारके अविभावक पदको ग्रहण करानेके लिये जयपुरमें गमन किया" गवर्नर जनरलके एजण्ट कर्नल अलवीसने जयपुरमें जाकर शीघ्र ही झूतारामको पदसे उतार कर रावल वैरीशालको फिर मंत्री पदपर नियुक्त कर दिया, और वह राज्यके चारोंओर शांति स्थापनका उद्योग करने लगे । कर्नल म्यालिसने लिखा है कि "उन्होंने जिस समय प्रबल विधिकी व्यवस्था करनी प्रारंभ की, उसी समय झूतारामने एक षड्यन्त्र जालका विस्तार किया, उसने एजण्ट कर्नल अलवीसके प्राणनाशकी चेष्टा की, और उनके सहकारी मि० ब्लेक उन षडयंत्रियोंके द्वारा मारे गये । परन्तु हत्याकारी

* Malleson's Native states of India Chap. II

शीघ्र ही पकडे गये, प्रधान मंत्री वैरीशालने उन्हें प्राणदंडकी आज्ञा दी, झूतारामऔर उसके षड्यंत्री चुनारके किलेमें जन्मभरके लिये बंदी होकर रहे । झूतारामको प्राण दंडकी आज्ञा दी जाती तभी उसको उसकी करनीका उचित फल मिलता ।

छठा अध्याय ६.

महाराज रामसिंहका जयपुरके सिंहासन पर अभिषेक-जयपुरके आभ्यन्तरिक शासनपर बृटिश गवर्नमेण्टका हस्ताक्षेप-बृटिश पोलिटिकल एजण्टका महाराज रामसिंहका अविभावकपद ग्रहण करना-शासन समाज स्थापन-नवीन शासनसे जयपुरमे शान्ति और मंगलसाधन-महाराज रामसिंहका शिक्षालाभ--महाराज रामसिंहकी वयः प्राप्ति-उनका राज्याभिषेक-बृटिश गवर्नमेण्टका महाराजके हाथमे राज्यभार अर्पण-महाराजका पूर्वानुष्ठित शासनप्रणालीकी रक्षा करना-सन् १८५७ ईसवीमें सिपाही विद्रोहके समय महाराज रामसिंहका अंग्रेजी गवर्नमेण्टकी सहायता करना-विद्रोहकी शान्तिके पीछे अंग्रेजी गवर्नमेंटका पुरस्कार स्वरूप महाराजको कोटकासिम नामक देशका स्वत्व देना-अंग्रेजी गवर्नमेंटका महाराजको दत्तकपुत्रके ग्रहण करनेकी सामर्थ्य देना-महाराज रामसिंहका अपने राज्यमे मंगलमूलक नानाप्रकारके अनुष्ठान करना-प्रजासाधारणके स्वास्थ्य बढानेके लिये समाज स्थापन तथा बहुतसे अनुष्ठान-राजधानीमें नये २ राजमार्ग बनाना-राजधानीमे यन्त्रके द्वारा पानीका लाना-नगरमें सुधार-चित्रशाला-शिल्पशाला, नगरनिवास-नाटयशाला-दातव्य-रोगीनिवास और चिकित्सालय इत्यादिकी प्रतिष्ठा-वाणिज्यकार्यकी सुविधाके लिये राज्यके अनेक स्थानोंमें बडे २ राजमार्गोंका बनवाया जाना-कृषिकार्यके सुलभ करनेको अनेक देशोंमे खाल खुदवाना-राज्यमें रेलका विस्तार-शिक्षाके प्रचारके ऊपर महाराजकी पूर्णदृष्टि और बहुतसा रुपया खर्च करके अंग्रेजी कालिज, संस्कृत विद्यालय, साधारण विद्यालय और स्त्रीशिक्षाके विस्तारके लिये बालिकाविद्यालयकी प्रतिष्ठा-शिक्षितवंगालियोंका जयपुरके राजकार्यमें नियोग-सन् १८६८ ईसवीमें जयपुरके दुर्भिक्षके समय महाराजका प्रजाको सहायता देना-और आभ्यन्तरीण, शस्य वाणिज्य शुल्क ग्रहणसे रहित-बृटिश गवर्नमेण्टका महाराजकी सम्मान वृद्धिके लिये दो तोपोंकी सलामी बढाना-अंग्रेज गवर्नर जनरल और राजप्रतिनिधियोंका कौन्सिल नामक समाजके सभ्य पदपर महाराजको दुबारा नियोग करना-अपनी सद्गुणावलीसे महाराजका बृटिश गवर्नमेण्टके हृदय पर अधिकार-बडोदा गायकवाड मल्हाररावके विचारके समय बृटिश गवर्नमेण्टका महाराज रामसिंहको दूसरे विचार पदपर नियुक्त करना-भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफ वेल्सकी अभ्यर्थनाके लिये महाराज रामसिंहका कलकत्तेमें जाना-कलकत्तेके महलमें महाराजके साथ भावी सम्राट्का साक्षात्-भावी सम्राट्का प्रतिसाक्षात् दान-भावीसम्राट्की अभ्यर्थनाके लिये महाराज रामसिंहका जयपुरमें नानाविधके अनुष्टान-भावी सम्राट्का जयपुरमें जाना-महाराज रामसिंहका बडे समारोहके साथ उनको ग्रहण करना-भावीसम्राट्का बडे आडम्बरके साथ जयपुरकी राजधानीमे जाना-भावी सम्राट्का शिकारके लिये जाना-व्याघ्रोंका शिकार-जयपुरकी राजधानीका आलोकदान-भावीसम्राट्के सम्मानके लिये महाराजका दीवान आम नामक सभागृहमें दरबार

Malleson's Native states of India Chap. II

करना–राजभोज–वक्तृता–चंद्रमहलमें नृत्यगीतानुष्ठान–महाराजको भावी सम्राटका बहुमूल्य उपहार देना–अग्निक्रीडा–भावीसम्राट्का आमेर देखना–भावी सम्राट्के स्मरणार्थ चिह्न बनानेके लिये "अलवर्ट-हाल" नामक साधारण आवासकी भित्ति बनाना–महाराज रामसिंहकी अभ्यर्थनासे भावी सम्राट्को महा आनंद प्रकाश–भावीसम्राट्का जयपुरसे जाना–सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीमे बृटिश रानीकी दिल्लीमें "भारतकी राजराजेश्वरी" उपाधि धारणके उपलक्षमें महाराजका दिल्लीमें जाना–राजप्रतिनिधि लार्ड लिटनका महाराजको सम्मान सहित ग्रहण करना–पताका दान–भारतकी राजराजेश्वरीकी उपाधि धारणके लिये स्मारक पदक देना–महाराज रामसिंहके सम्मान बढानेके लिये सलामीकी इक्कीस तोपे नियत करना–"कौन्सिलर आफ दी एम्प्रेस" नामकी उपाधि देना–महाराज रामसिंहका स्वर्गवास ।

महाराज जयसिंहने सत्रह वर्षकी अवस्थामें प्राण त्याग किये थे इस कारण उस समय उनके पुत्र रामसिंह अत्यन्त ही अल्प अवस्थाके थे । रामसिंहने सन १८३३ ईसवीमें जन्म लिया था, अत: वे अपने पिताकी अकालमृत्युके समय दो वर्षकी अवस्थामें आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए । इस समय जयपुर राज्यकी जीवन-शक्ति एकबार ही क्षीण हो गई थी । सामन्तोंका पहिला प्रताप जाता रहा था । कछ-वाहोंकी जातिमें पुन: दीर्घस्थाई अराजकता फैलगई थी । अशान्ति, अत्याचार, उत्पीडन और लूटमारके होनेसे तथा विजातियोंके आक्रमणसे इस समय जयपुर निपट निर्जीव हो गया था । सुअवसर और सुयोगको पाकर बृटिश गवर्नमेण्टने इतने दिनोंके पीछे जयपुर राज्यमें अपनी प्रचंड शासनशक्तिका प्रयोग किया । आचिसन साहब लिख गये हैं, कि "जयपुरराज्यमें दीर्घस्थायी अराजकताके कारण गवर्नमेण्टका बहुत कर रह गया था, और राज्यकी आमदनी भी एकबार ही न्यून हो गई थी, इसी कारणसे गवर्नमेण्टने फिर आभ्यन्तरी शासनमें हस्ताक्षेप करना कर्तव्य विचारा " हम कह सकते हैं कि आमेरके सामन्तोंमें यदि एक भी पहिलेके समान साहसी बलवान और राजभक्त होता तो कभी भी बृटिश गवर्नमेंट इस कार्यसाधनके लिये अर्थात् अपने बाकी करको चुकानेके लिये बालक महाराजके अविभावक पदको ग्रहण करके राज्यमें अपनी शासनशक्तिको न चलाती । राजपूतरीतिके अनुसार बालक महाराजके अविभावक पदको राज्यके संभ्रान्त उच्चश्रेणीके सामन्त ही पा सकते थे उस पदमें विजातीय विधर्मी राजाओंके प्रतिनिधि कभी स्थित नहीं हो सकते थे, क्या जयपुर राज्य इस समय एकबार ही बलहीन हो गया था, राजलक्ष्मी क्या अन्तर्द्धान हो गई थी ? इसी लिये एक विजातीय शक्तिने आकर हिन्दू महाराजके अविभावक पदको अयाचित होकर ग्रहण किया । कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि " शिशुमहाराज रामसिंह बृटिश पोलिटिकल एजण्टके अधीनमे रक्खे गये, उस पोलिटिकल एजण्टके तत्त्वावधानसे एक प्रतिनिधि शासन समाज स्थापित हुआ, पाँच प्रधान सामन्त उस समाजके सदस्य हुए, और समस्त प्रयोजनीय भारी विषय उनके द्वारा नियत किये मन्तव्योंसे ही गृहीत होने लगे " । कर्नल म्यालिसनकी उक्तिसे ऐसा बोध होता है कि मानो वह पाँच सामन्त ही जयपुर राज्यका शासन करते थे, परन्तु

वास्तवमें ऐसा नहीं था, बृटिश पोलिटिकल एजण्ट ही जयपुरके सर्वमय कर्ताधर्ता थे, और पाँच सदस्य अपनी आज्ञाके अनुसार कार्य करने पर सम्मत किये गये थे। पोलिटिकल एजण्टने बडी खोज करके जयपुरकी अराजकता दूर की, और शांति स्थापित होनेसे अनेक मंगलमय कार्य होने लगे। इस बातको हम स्वीकार करते हैं कि, वह नियुक्त हुई शासनसमाज शीघ्र ही जयपुरके चारोंओर शांति स्थान करनेमें प्रवृत्त हुई। आचिसन साहब लिखते हैं कि " सेनाकी संख्या एकबार ही घटा दी गई थी, राजकार्यके प्रत्येक विभागमें संस्कार हुआ। सतीदाह, क्रीत-दासव्यवसाय और शिशुकन्याके प्राणनाश आदि भी दूर हो गये थे। देखा जाय तो राज्यकी जैसी आमदनी थी गवर्नमेण्टका पहिला कर उससे भी अधिक हो गया, इसी कारणसे सन् १८४२ ईसवीमें गवर्नमेंटने अपने पिछले करमेंसे ४६ लाख रुपया एकबार ही छोड दिया और ४ लाख रुपया वार्षिक देना नियत हुआ "।

महाराज रामसिंह जबतक अज्ञान रहे तबतक जयपुरराज्य इस भांति बृटिश पोलिटिकल एजण्ट और मंत्रीसमाजकी सहायतासे शासित होता रहा। जो दीर्घकालसे आमेरराज्यमें अराजकता और उपद्रवोंका सोता बराबर चला आता था इस समय वह एकबार ही दूर हो गया। महाराज रामसिंह जिससे वीरोंके समान शिक्षा प्राप्त करें, इस लिये यथासमय उपयुक्त अनुष्ठान किया गया। पण्डित शिवधन महाराज-शिक्षकके पदपर नियुक्त होकर महाराजकी शिक्षाके विषयमें विशेप परिश्रम करते थे। संस्कृत और उर्दू भाषाके समान महाराजने अंग्रेजी भाषामें भी शिक्षा प्राप्त की।

सन् १८५७ ईसवीमें महाराजने सर्वगुणसंपन्न होकर सम्पूर्ण राज्य शासनका भार गवर्नमेंटसे अपने हाथमें ले लिया। "परन्तु महाराजकी अवस्था उस समय बहुत थोडी थी, इसी कारणसे राज्यशासनके अनेक विषयोंमें पोलिटिकल एजण्टकी सम्मति लेकर कार्य करते थे। उसी पोलिटिकल एजण्टकी सम्मतिसे स्वभावसे आलसी और अधिक खर्चालू प्रधानमंत्री रावल वैरीशालको पदसे अलग कर सम्पूर्ण कार्योंमें कुशल और विशेप सावधान भ्राता लछमनसिंहको उनके पदपर नियुक्त किया और उस समय महाराजके पूर्वशिक्षक पंडित शिवधन राजस्वविभागके सर्वाध्यक्ष पदपर नियुक्त हुए "।

महाराज रामसिंहने पूर्ण सामर्थ्यके प्राप्त होनेपर भी स्वयं चिर प्रचलित इच्छा-नुसार शासनरीतिके सम्मानकी रक्षा नहीं की। वह भलीभाँति शिक्षित हो गये थे; इस कारण सुशासनकी ओर स्वभावसे ही उनकी विशेप दृष्टि थी। इस कारण उनके अप्राप्त व्यवहारके समयमें राज्यशासनके लिये जिस कौन्सिलकी सृष्टि हुई थी उन्होंने आजीवन उसी कौंसिल नामक मंत्रीसमाजकी रक्षा की, वह मंत्रीसमाजके द्वारा ही राज्यशासन करते थे। समस्त देशीय राजाओंमें एकमात्र इस जयपुरमें ही मंत्रीसमाजके द्वारा शासनकी रीति प्रचलित थी। यह रीति सब प्रकारसे ठीक थी। समय २ पर इसी रीतिने राज्यके बडे २ उपकार किये। उनका अनुमान सरलतासे हो सकता है।

जयपुरपति महाराज रामसिंह जिस वर्षमें पूर्णशासनकी सामर्थ्यको प्राप्त हुए थे उसी वर्षमें भारतवर्षके अंग्रेजी राज्यकी जडमें भयंकर वज्रपात हुआ। इस वर्षमें

अर्थात् सन् १८५७ ईसवीमें भयंकर सिपाही विद्रोहानल प्रज्वलित होकर अंग्रेजी शासनके विलोपका पूर्णभास प्रकाश करने लगा । महाराज रामसिंहने उस महा कष्टमें यथार्थ मित्रके समान गवर्नमेण्टकी भलीभांतिसे सहायता की, इन्होंने धनकी सहायतासे तथा सेनाकी सहायतासे विपन्न अंग्रेजोंको आश्रयदानके साथ अपनी सेनाको अंग्रेजी पक्षमें नियुक्त कर यथार्थ मित्रके समान अपना कर्त्तव्य पालन किया, आचेसन साहब लिखते है, कि "सिपाही विद्रोहके समयमें महाराज रामसिंहने गवर्नमेंटके विशेष उपकार किये, और उसी कारणसे इनको पुरस्कारमें कोटकासिम परगना मिला, परन्तु उन्होंने इसको इस शर्तपर लिया कि यह देश जबतक गवर्नमेंटके अधीनमें था तबतक गवर्नमेंटने जो उक्त देशका राजस्व नियत किया था आगे भी उसी नियमसे चलना होगा, और उसे दत्तकपुत्रके लेनेकी भी सामर्थ्य होगी" ।

पवित्ररुचि और उदारचरित्र महाराज रामसिंहकी अवस्थावृद्धिके साथही साथ राज्यकी यथार्थ मंगलकामना उनके हृदयमें भलीभांतिसे दृढ हो गई, महाराज यथार्थ हिंदूधर्मके अनुसार चिरप्रचलित पैतृक कौन्सिल और सामाजिक रीतिके परिपोषक हुए, उन्होंने एक मात्र शिक्षाके बलसे ही सम्भ्रान्त अंग्रेज जाति और अंग्रेजी गवर्नमेण्टके आदर्शके अनुकरणसे अपने राज्यकी अवस्थाको अन्यरूपसे बदलनेका यत्न किया । जयपुरकी राजधानी यद्यपि पहिलेसे ही उत्तम प्रकारसे बनी थी परन्तु रामसिंहने अंग्रेजी आदर्शसे उस राजधानीकी सुन्दरता और भी बढानेके लिये जितना अधिक रुपया खर्च किया था, इससे उनका प्रबल परिश्रम समझा गया । बृटिश और देशीय भारतवर्षमें जयपुरकी राजधानी ही इस समय सुन्दरतामें परम प्रसिद्ध हुई है, जयपुर नगरीके देखनेवाले इसकी सुन्दरताको देखकर ऊंचे स्वरसे उसकी प्रशंसा करते है; महाराज रामसिंह ही उसका एक मूलकारण थे, यह इतिहास मुक्तकण्ठसे कह रहा है महाराज रामसिंहने इस जयपुर नगरीको भारतवर्षकी राजधानी कलकत्ते नगरीके समान सर्वगुणसम्पन्न कर दिया था ।

यद्यपि अत्यन्त प्राचीन कालमें राजाओंने साधारण प्रजाकी स्वास्थ्यरक्षाकी ओर विशेष ध्यान दिया था, और प्रजाके स्वास्थ्यके ही लिये विशेष अनुष्ठान किये थे, ऐसे बहुतसे प्रमाण पाये जाते है, परन्तु मध्यसमयके देशीय राजाओंसे इस प्रकारके किसी अनुष्ठानका प्रमाण नहीं पाया जाता । जलकष्टको दूर करनेके लिये यद्यपि उन राजाओंने बडे २ तालाब और कुएँ खुदवा दिये थे, और चलनेके सुभीतेके लिये राज्यमें बडे २ लम्बे चौडे मार्ग बनवा दिये थे, रास्तेके दोनों ओर वृक्ष लगवा दिये थे, परन्तु इसके अतिरिक्त और कोई भी ऐसा स्वास्थ्यकर अनुष्ठान नहीं किया । महाराज रामसिंहने उन्नीसवीं शताब्दीमें प्रजाके साधारण स्वास्थ्यकी ओर विशेष दृष्टि करके वैज्ञानिक रीतिसे वर्तमान समयके अनेक उपयोगी अनुष्ठानके लिये, अंग्रेजी राजधानीमें जिस प्रकारकी

---

(१) पाठकोने गवर्नमेंटके दिये इस दत्तक ग्रहणकी क्षमतापत्रको मारवाड मेवाड इत्यादिके इतिहासोंमें पढा होगा ।

मिउनिसिपैलिटी है उन्हींका आदर्श मिउनिसिपैलिटी अर्थात् स्वास्थ्यरक्षा और सौष्ठव-वर्द्धन समाजकी प्रतिष्ठा करके सब अशोंमें योग्यपात्रोंको सदस्य पदपर नियुक्त किया। परन्तु अंग्रेजोंकी मिउनिसिपैलिटीने जिस प्रकारसे प्रजासे धन लेकर प्रजाके स्वास्थ्यकी रक्षाके लिये अनुष्ठान किये है, महाराजकी राजधानीकी मिउनिसिपैलिटीने उस प्रकार प्रजासे धन न लेकर सर्वसाधारणके लिये अपने खजानेसे कई लाख रुपया खर्च करके बहुतसे आवश्यकीय कार्य किये, और आजतक भी उसी प्रकारसे बराबर होते चले आते है।

यद्यपि जयपुर नगरके राजमार्ग पहिली अवस्थामें वैज्ञानिकरीतिसे बनाये गये थ, परन्तु महाराज रामसिंहके शासनके समयमे वह बहुत बढ गये थे, और इस समय सुन्दर श्रीको धारण कियेहुए है, राजधानीके समान राज्यके अनेक स्थानोमें प्रधान २ नवीन राजमार्ग बनकर प्रजाका अशेष उपकार कर रहे हैं। बडे २ राजमार्गोंके अतिरिक्त नियमितरूपसे राजमार्गमें जलसेक जलग्रहणके स्थान स्वच्छ बने हुए हैं, जलकी निकासीके लिये बडी २ नालियां बनी हुई हैं। नगरनिवासियोंको जिससे सरलतासे अच्छा पानी मिल सके एसा सुभीता भी कर दिया गया है। आजतक अनेक उच्चश्रेणीके देशीय राजाओके राज्यमे गैसकी रोशनी नहीं है, परन्तु महाराज रामसिंहके बहुतसे परिश्रम और अधिक धन खर्चसे जयपुरकी राजधानी सूर्यकी कान्तिके समान प्रकाशमान होकर नगरीकी सुन्दरताको बढा रही है। यद्यपि प्राचीन ग्रन्थोंमें हमने देशिय राजाओंकी राजधानी तथा राजउद्यानके अस्तित्वको जाना है, परन्तु साधारण प्रजाओंके स्वास्थ्य बढानेके लिये वैज्ञानिक रीतिसे साधारण उद्यानोंके बनानेकी कथाको कहीं भी नहीं पढा; परन्तु बुद्धिमान् महाराज रामसिंहने अंग्रेजी राजधानीके आदर्शके अनुसार रामनिवास नामक अत्यन्त सुन्दर उद्यान बनाकर जयपुरकी राजधानीके निवासियोंका विशेष उपकार किया। सारांश यह है कि सर्व साधारणकी स्वास्थ्यवृद्धिके अथवा राजधानीकी सुन्दरताके लिये उन्नीसवीं शताब्दीमें महाराज रामसिंहने बहुतसा रुपया खर्च करके प्रजाके हितके लिये अनेक उपकार किये। राजधानीकी सुन्दरताको बढानेके लिये और स्वास्थ्यकर अनुष्ठानोंके अतिरिक्त शिक्षा और सभ्यताके विषयमें भी अनेक अनुष्ठान किये। चित्रशाला, शिल्पशाला, टौनहाल वा नगरनिवास, नाट्यशाला, दातव्य, रोगीनिवास, चिकित्सालय इत्यादि भी बनवाये—इस कार्यसे महाराज रामसिंहके कल्याणसे प्राचीन जयपुर भलीभांतिसे नवीन जीवन पाकर नवीनभावसे नवीन मूर्तिसे देशीय अन्यान्य राज्योंकी राजधानियोंका तिरस्कारके साथ ही साथ मानो महाराजकी शिक्षा रुचि, ज्ञान और बुद्धिकी ऊँचे स्वरसे बडाई कर रहा है।

महाराज रामसिंह केवल राजधानीकी उन्नति करके ही शान्त न हुए थे। समस्त राज्यकी प्रत्येक श्रेणीकी प्रजाओंके मंगलकी ओर उनका पूर्ण ध्यान रहता था, इसी कारण उन्होंने राजधानीके समान अपने राज्यमें सर्वत्र ही वाणिज्यकार्यकी

सुविधा और मार्गमें सुगमतासे जानेके लिये अगणित धन खर्च करके अनेक राजमार्ग बनवा दिये, तथा किसानोंके सुभीतेके लिये भी बहुतसा धन खर्च करके अनेक स्थानोंमें सरोवर खुदवा दिये थे। इसके अतिरिक्त उन्नीसवी शताब्दीमें वाणिज्यकार्यमें प्रधान सुविधासाधक रेलवेको अपने राज्यमें विस्तार कर दिया, इन कामोंमें स्वयं महाराजने अपने ही खजानेसे रुपया लगाया था, आजतक प्रत्येक वर्ष उसी प्रकारसे बहुतसा धन खर्च होता है, इसका अनुमान हमारे विचारवान् पाठक स्वयं कर सकेंगे।

बुद्धिमान् महाराज रामसिंह राज्यभारको ग्रहण करके इस बातको भलीभांतिसे जान गये थे कि इस संसारमें एकमात्र शिक्षासे ही अनेक जातियो और राज्योंकी उन्नति हुई है। जितनी शिक्षा बढती जायगी उतनी ही राज्यकी उन्नति होती जायगी, और उन्नतिसे ही मंगल होगा, यही उनका विचार दृढतासे था। सवाई महाराज जयसिंह यद्यपि एक उच्चअंगके शिक्षित मनुष्य थ, यद्यपि उन्होंने शास्त्रकी चर्चा और शिक्षाके विस्तारके लिये शिशित पण्डितमंडलीके सम्मानको बढानेके लिये बहुतसा रुपया खर्च किया था, परन्तु हम इस बातको मुक्तकण्ठसे स्वीकार करते हैं कि, उन्होंन अपने राज्यमें विश्वजननी शिक्षाके विस्तारका संकल्प नहीं किया था। महाराज रामसिंहने उच्च शिक्षाके बलसे राज्यमें उस विश्वजननी शिक्षाका विस्तार करनेके लिय बहुतमा धन खर्च किया था, उन्होंने राजधानी जयपुरमें संस्कृत विद्यालयके अतिरिक्त उर्दूविद्यालय और अंग्रेजी शिक्षाके लिये कालिज तक भी बनवा दिये थे। केवल इतना करक ही वह संन्तुष्ट नही हुए उन्होंने शिल्प शिक्षाके लिये भी एक स्वतन्त्र विद्यालय बनवाया था। जयपुरका शिल्पकार्य भारतवर्षमें सबसे उत्तम गिना जाता है, शिल्पविद्यार्थी फिर वैज्ञानिक रीतिके अनुसार नवीन शिक्षा पाकर उन प्रशंसित शिल्पकी अधिक श्रेष्ठतासाधन कर रहे हैं। महाराज रामसिंह प्रधान सहायक थे; अतएव राजधानीमें एक एक करके अनेक कन्या पाठशालाएँ भी बनवाई। इन सब कालिज और विद्यालयोंसे आज अमृतमय फल निकल रहा है। किसी समयमें यह अनेक विद्यालय जयपुरकी बडी प्रतिष्ठाको बढावेंगे।

यद्यपि महाराज मानसिंह अपने हृदयमें विचार करते ही पूर्वपुरुषोंके समान राज्यकी पूर्णसामर्थ्यको अपने हाथमें लेकर पाहिलेके समान स्वेच्छाचारकी रीतिसे सम्मानकी रक्षा कर सकत थ, परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया; प्रजाके कल्याणके लिये शासनविभागकी प्राचीन रीतिको भी बदल दिया, उनकी अज्ञान अवस्थामें जिस समय मंत्रीसमाजके द्वारा राज्यशासन होता था; इन्होंने अपने हाथमें राज्यभारको लेकर भी उसी रीतिको प्रचलित रक्खा। विशेप करके स्वयं सब विभागोंपर दृष्टि रखनेका अवसर उनको नही मिलता था, इसीसे राज्यके एक २ विभागपर सम्भ्रान्त शिक्षित मनुष्योंको नियुक्त करके उन २ विभागोंके कर्त्तृत्वभारको उन्हींको सौंप दिया। यह तो प्रथम ही कह आये हैं कि महाराज रामसिंहने जिस समय राज्यभारको अपने हाथमें लिया उस समय उनकी अवस्था बहुत थोडी थी, अंग्रेज पोलिटिकल एजण्टके साथ उन्होंने अनेक विषयोंमें राजकार्य्यके संबन्धकी सलाह की थी। परन्तु अवस्थाकी

वृद्धिके साथ ही साथ इनकी विद्या बुद्धि बलकी भी वृद्धि हुई, तब शीघ्र ही बृटिश पोलिटिकल एजण्टने महाराजके हाथमें सम्पूर्ण शासनका भार अर्पण किया ।

आजकल अनेक विद्वान् बंगाली अनेक रियासतोंमें अधिकार पाकर देशीय राजाओंका मंगलसाधन करते हैं परन्तु हम इस बातको मुक्तकण्ठसे स्वीकार करते हैं कि जयपुर राज्यके शिक्षित बंगालियोंने जिस प्रकारसे ऊंचे पदपर नियुक्त होकर राजकार्य किया अन्य किसी देशीय राज्यके शिक्षित बंगाली उस प्रकारसे आजतक प्रबलताका विस्तार न कर सके । कलकत्तेके विख्यात बाबू रामकमलसेनके पुत्र बाबू हरमोहनसेन जयपुरराज्यमें अत्यन्त आदर सम्मानके साथ पधारे थे।हरमोहनबाबूके वंशधर इस समय उस जयपुर राज्यके अनेक पदोंपर नियुक्त होकर बंगाली जातिकी दक्षता और योग्यताका चूडान्त परिचय दे रहे हैं । महाराज रामसिंह केवल सेनवंशकी ही ओर नहीं वरन् शिक्षित बंगाली मात्रसे ही संतुष्ट हुए थे; इसी लिये अनेक बंगाली ब्राह्मण तथा कायस्थ भी महाराजके आश्रयसे राज्यके भिन्न २ उच्चपदोंपर प्रतिष्ठित हुए । इन शिक्षित बंगालियोंके कार्यसे महाराज रामसिंह इतने संतुष्ट हुए कि राज्यके एक २ विभागके कर्त्तृत्वभारको उनके हाथमें अर्पण करके उन्हें मंत्रीसमाजमें आसन दिया । गुप्त मन्त्रीपदपर भी महाराजने एक विद्वान बंगालीको नियुक्त किया; उच्च वंशोद्भव कृतविद्य बाबू संसारचन्द्रसेनने महाराज रामसिंहके गोपनीय मंत्री पदपर नियुक्त होकर महाराजकी मृत्युके समयतक बडी चतुरतासे कार्य करके जयपुरराज्यके कल्याणकी कामना की, इससे इनके ऊपर वर्तमान महाराज अत्यन्त प्रसन्न हुए, और बडे आदरभावके साथ बाबू संसारचन्द्रसेनको अपने गुप्तमंत्रीपदपर नियुक्त किया, और बाबू मतिलालको गुप्तसहकारी प्राइवेट सेक्रेटरी पदपर नियुक्त किया ।

सन् १८६८ ईसवीमें रजवाडेमें भयंकर दुर्भिक्ष पडा, उस समय महाराज रामसिंह प्रजाके कष्टको दूर करनेके लिये स्वयं अपने यहांसे बहुतसा धन देते थे, और उन्होंने प्रजासे कर लेना एकबार ही छोड दिया और प्रजाके भोजनके सुभीतेके लिये बहुतसा सुभीता कर दिया । इससे महाराजका बहुत धन उठ गया, इस विषम दुर्भिक्षके समयमें महाराजको अधिक धन उठाता हुआ देखकर गवर्नमेंट अत्यन्त संतुष्ट हुई, और महाराजके संमान बढानेके निमित्त दो तोपोंकी सलामी बढा दी गई । जयपुरके महाराजके संमानस्वरूप सत्रह तोपोंकी सलामी अंग्रेजीराज्यमें जानेके समय होती थी, परन्तु गवर्नमेंटने व्यवस्था की, कि महाराज रामसिंह जबतक जीवित रहेंगे तबतक उन्नीस तोपोंकी सलामी हुआ करेगी ।

देशीय राजाओंमें महाराज रामसिंह यथार्थ रीतिसे राज्यशासन कर प्रजाके हितके लिये उन्नीसवीं शताब्दीके उच्च आदेशसे वैज्ञानिक रीतिसे राज्यसंस्कार और सुशासनकी व्यवस्थाके विषयमें सफलमनोरथ हुए उनकी योग्यता देखकर गवर्नमेण्ट अत्यन्त ही संतुष्ट हुई । भारतवर्षके अंग्रेजी राजप्रतिनिधि और गवर्नर जनरल बहादुरने कौन्सिलके अवैतनिक माननीय सभ्यपदपर उनको नियुक्त किया । उस कौन्सिलमें

जानेके समय महाराजने विशेष दक्षता प्रकाश की; अंग्रेजी गवर्नमेण्टने फिर दूसरी बार उनको उस पदपर नियुक्त किया। महामान्या भारतेश्वरीने जिस समय भारतके देशीय राजाओंका सम्मान बढानेके लिये 'भारतनक्षत्र' उपाधिकी सृष्टि की, उस समय अन्यान्य राजाओंके समान महाराज रामसिंह प्रथम श्रेणीके भारतनक्षत्र अर्थात् "नाइट ग्राण्ट कमाण्डरस्टार आफ इंडिया" नामक सबसे उच्च सम्मानसूचक उपाधि पदकको प्राप्त हुए; वास्तवमें जयपुरके विख्यात महाराजा मानसिंह, मिरजा राजा जयसिंह और गाढ-पंडित सवाई महाराज जयसिंह यवनराज्यपर जिस प्रकार अपनी सामर्थ्यके बलसे सम्राट्‌की सभामें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त कर गये थे, अंग्रेजी शासनमें उसी प्रकारसे महाराज रामसिंहने सबसे पहिले अंग्रेजी दरबारमें कीर्ति, यश और सम्मानको प्राप्त किया था। भारतवर्षके राजाओंम एकमात्र महाराज रामसिंह ही गवर्नमेण्टके इतने प्रिय हो गये थे कि, सन् १८७५ ईसवीमें जिस समय बडोदेके हतभाग्य अधीश्वर मल्हारराव गायकवाड अंग्रेजी रेसिडेण्ट कर्नल फिरारको विष देनेके अपराधमें अपराधी हो अपने राज्यमें कुशासनके लिये बंदीभावसे विचारके लिये अंग्रेजी गवर्नमेण्टके द्वारा लाये गये उस समय उनके विचारके लिये जो कमीशन नियत हुआ उस समयके राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकने महाराज रामसिंहको योग्य पात्र जानकर उस कमीशनके अन्यतर सभ्यपदपर नियुक्त कर गायकवाडके विचारका भार उनके हाथमें दिया, तब भी महाराज रामसिंहने अन्यान्य विचारवानोंके साथ विचारासन-पर बैठकर विचारके अंतमें गायकवाडके अपराधके सम्बंधमें निरपेक्ष भावसे अपना मत प्रकाश करके विशेष प्रशंसा प्राप्त की थी।

सन् १८७५ ईसवीके शेषांशमें भारतके भावी सम्राट् ग्रेट् ब्रिटेनके युवराज माननीय प्रिन्स आफ वेल्स बहादुर भारतवर्षमें भ्रमण करनेके लिये आये। उन भावी सम्राट्‌की अभ्यर्थना और अभिनंदनके लिये संपूर्ण भारतवर्ष मानो एक मनुष्यकी भांति खडा हो गया, और आनंदित हो महा उत्सवके मारे उन्मत्त हो गया। भारतके भावी सम्राट्‌को अपने राज्यमें लाकर उनका विशेष सम्मान करनेको अनेक देशीय राजाओंने अपने मनोरथ प्रकाश किये थे, परन्तु सभी राजाओंके उस मनोरथका पूर्ण करना भावी सम्राट्‌के पक्षमें अवश्य ही असंभव था। परन्तु जयपुरपति महाराज रामसिंह स्वयं अशेषगुणोंसे गवर्नमेण्टके परमप्रियपात्र हो गये थे, जयपुर नगर ही भारतवर्षमें रमणीक स्थान नहीं है, वरन् वह एक दर्शनीय स्थान कहा गया है। इस कारण भारतवर्षमें युवराजके आनेसे पहिले ही महाराज रामसिंहके प्रस्तावसे निश्चय हुआ कि प्रिन्स आफ वेल्स बहादुर जयपुरकी राजधानीमें आकार महाराजकी आतिथ्यता स्वीकार करें। महाराज रामसिंह बहादुरके साथ प्रायः सभी अंग्रेजोंके प्रतिनिधियोंकी विशेष मित्रता हो गई थी। विशेष करके अर्ल आफ मेओ महाराज रामसिंहको अपना परम मित्र जानते थे। जिस समय अर्लमेओको एण्डमान द्वीपमें पापात्मा सेरअलीने मारा था उस समय महाराज रामसिंहने उनके वियोगसे यथार्थ शोक प्रकाश किया था, और प्यारे मित्रके स्मरणके निमित्त चिह्न स्थापनके लिये राजधानी जयपुरमें "मेओ

अस्पताल" स्थापन कर आर्लेमेओकी एक धातुकी बनी हुई मूर्ति राजधानीमें स्थापित की। प्रिन्स आफ वेल्सने जिस समय भारतवर्षमें आगमन किया था इस समय राजप्रतिनिधि पदपर लार्ड नार्थब्रुक विराजमान थे, लार्ड नार्थब्रुकके साथ महाराजकी विशेष मित्रता हो गई थी, इस कारण भावी सम्राट्के आनेके पहिले ही उन्होंने महाराज रामसिंहको कलकत्तेमें बुलानेके लिये निमंत्रण भेजा था।

बृटिश गवर्नमेण्टके परम भक्त महाराज रामसिंह बहादुर ठीक समयपर सेवकों सहित कलकत्तेमें आये। राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकने बडे आदर सम्मानके साथ महाराजको राजमहलमें ले जाकर विशेष सन्तोष प्रकाश किया, और महाराज राजधानीके जिस स्थानमें रहे थे राजप्रतिनिधि वहां नित्यप्रति जाकर रोज साक्षात् कर आते थे। सन् १८१५ ईसवी २३ दिसम्बरको भारतके भावी सम्राट् प्रिन्स आफ वेल्स बहादुर कलकत्तमें आये। उस दिन उनको बडे आदरमानके साथ ग्रहण करनेके लिये प्रिन्सपेसू घाटपर एक बडी भारी सभा हुई। उस सभामें बुलाये हुए देशीय राजा भी आये। अधिक क्या महाराज रामसिंह बहादुरने वहां ठीक समयपर जाकर युवराजके सम्मानके कार्यमें योगदान किया। राजप्रतिनिधि लार्ड नार्थब्रुकने अन्यान्य राजाओंके समान महाराज रामसिंहका उस स्थानपर युवराजके निकट विशेष परिचय दिया। दूसरे दिन २४ दिसम्बरको १० बजेके समय आमेरपति महाराज रामसिंह युवराजके साथ साक्षात् करनेके लिये गवर्नमेंट हाउसमें गये। जैसे ही यह गवर्नमेंट हाउसकी प्रधान सीढीपर चढे थे कि वैसे ही युवराजके परिषद् मेजर ऐण्डार्सने मेजर सारटारियस और दो एडिंकागोंने आगे बढकर महाराजको बडे आदरसम्मानके साथ ग्रहण किया। महाराजके सीढी पर चढते ही दोनों ओरकी स्थित सेनाने सम्मानपूर्वक सलामी ली, और उसी समय किलेपरसे तोपें छूटीं। भावी सम्राट सिंहासनपरसे उतरकर कईएक पग आगे चलकर स्वयं उनका हाथ पकडकर ले गये और अपने पासके सिंहासनपर उन्हें बैठाला। परस्पर कुशलप्रश्न होनेके उपरान्त बहुतसी बातचीत होती रही, और सबसे पीछे प्रचलित रीतिके अनुसार अतर लगाकर ताम्बूल दिया गया, महाराजने पहिले सम्मानके साथ विदा ग्रहण की। भावी सम्राट् २९ दिसम्बरको महाराजके साथ साक्षात् करनेके लिये गये, महाराजने भी उसी प्रकार बडे आदर मानके साथ उनको ग्रहण किया। भावी सम्राट्ने कई दिनतक नगरमें रहकर समस्त उत्सव देखे। महाराजके साथ निम्नलिखित सम्भ्रान्त राजपुरुष और सामन्त कलकत्तेमें गये थे; ठाकुर किशोरीसिंह, ठाकुर करनसिंह, ठाकुर जुझारसिंह, राव राजा संग्रामसिंह, दुर्जनलालसिंह, जोरावरसिंह, प्रतापसिंह और करमसिंह, महाराज रामसिंह कलकत्तेके उत्सव समाप्त हो जानेके पीछे अपनी राजधानीको आये।

भारतके भावी साम्राट् प्रिन्स आफ वेल्स बहादुरको बडे आदर मानके साथ जयपुरमें ग्रहण करनेके लिये महाराज रामसिंह बहादुरने बहुतसा धन खर्च करके अनेक भांतिके अनुष्ठान किये। ४ फर्वरीको प्रिन्स आफ वेल्स बहादुर जयपुरमें गये। "प्रिन्स

आफ वेल्स बहादुरके सम्मानके लिये महाराजने बहुत पहिलेसे अनेक तैयारियाँ की थी" युवराज जिससे संतुष्ट हों, जिससे उनके मानकी रक्षा हो इसमें महाराजने किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं की। वे जिस प्रकारसे बहुतसा धन खर्च करते थे उसी प्रकारसे उनका सम्मान भी होता था। क्योंकि युवराज यहाँ कल चार बजे आवेंगे इससे उनके आनेके पहिले समस्त नगर आनन्दसे परिपूर्ण हो गया; सम्पूर्ण प्रजा और सेना तथा जयपुरके सभी जिमींदारोंने आनन्दोन्मत्त हो परम रमणीय दृश्य प्रकाश किया। जयपुरके महाराजने हिन्दूराजके समान हिन्दू भावसे ही युवराजकी अभ्यर्थना की थी। आर्यपताका, आर्यवाद्य, आर्यसैन्य, आर्यआनन्द ध्वनि, आर्यपूजा, सभी काम आर्यरीतिके अनुसार हुए थे। यह दृश्य देखकर हृदय अधिक सन्तुष्ट होता था। जिस समय युवराजकी रेल जयपुरनगरसे ८१ मील दूर थी उसी समय जयपुरकी राजपताका उठी और इनके सम्मानके लिये तोपें छुटीं। जब रेल दोसा स्टेशनपर पहुँची तो किलोंपरसे तोपोंकी ध्वनि हुई। जयपुरके महाराज पहिलेसे ही अपने राजमंत्री और प्रधान २ सरदारोंके साथ जयपुरके स्टेशनपर युवराजको सम्मानसहित लेनेके लिये उपस्थित थे, स्टेशन बडी सुन्दरता-से सजाया गया था। पताकावली, पत्र पुष्पमाला और राज चिह्न इत्यादिसे स्टेशनकी शोभा और भी अधिक हो गई थी। एक ओर तो पैदलसेना स्टेशनपर युवराजको मान दिखानेके लिये खडी हुई थी और बीचमें मधुर ध्वनिसे बाजा बजता जाता था। रेलके स्टेशनसे लेकर शिवपोलतक मार्गके दोनों ओर घुडसवार खडे हुए शान्तिकी रक्षा कर रहे थे, शिव-पोल गेटसे जयपुरकी राजधानीके कृष्णपोल गेटतक मार्गके दोनों ओर राजपैदल और नागापैदलोंका दल खडा हुआ था। समस्त जागिरदार सजधजकर घोडोंपर चढे हुए युवरा-जका मान दिखानेके लिये बाट देख रहे थे। शिवपोल फाटकके सम्मुख ही युवराजके लिये सजा हुआ हाथी खडा था।"

युवराजके स्टेशनपर आते ही जो सेना युवराजको आदर सम्मानके साथ लेनेके लिये खडी हुई थी उसने मान्य दिखाकर तोपध्वनि की। इसके पीछे युवराज स्टेशनसे चलकर सजे हुए घोडोंकी गाडीपर सवार हो शिवपोल गेटतक गये। उस समय अंग्रेजी अश्वारोही दल उनके पीछे २ चला और कितनी ही घुडसवार सेना उनके आगे २ चली। मार्गमें जिमींदार, सरदार और जागीरदारोंने देशीय रीतिके अनुसार युवराजका आदर सम्मान किया। युवराज शिवपोल गेटमें जाकर महाराजके साथ उस सुन्दर सजे हुए हाथीपर बैठे। युवराजके प्रत्येक सेवक और कर्मचारियोंने हाथीपर चढे हुए युवराजके पीछे २ गमन किया। अंग्रेज दाहिनी ओरको खडे हुए, देशी बाईं ओरको खडे हुए इसके पीछे बीचमें हाथी चला। युवराजके शिवपोल गेटसे चलते ही फिर तोपोंकी ध्वनि हुई मार्गमें जयपुरके प्रधान २ श्रेणीके ब्राह्मणोंने घंटा और शंख बजाकर युवराजकी आरती की। युवराजके आगे २ सेना, असंख्य पैदल, असंख्य पताकाधारी, आसाधारी और बल्लम लिये हुए जा रहे थे, अगणित देशीय क्रीडा करनेवाले आनंदके मारे नृत्य करते आगे २ चले। यह दृश्य युवराजके समान प्रत्येक दर्शकको मोहित करता था। युवराज भारतवर्षमें आकर आर्यरीतिके

अनुसार इस प्रकारके भावसे और कहीं भी संमानित नहीं हुए थे। इस समय राजमार्गमें लाखों मनुष्योंकी आनन्दध्वनिसे आकाश पूर्ण हो गया था; इस प्रकारसे इस पवित्र आनन्द और सन्मानको युवराजने और कहीं भी नहीं देखा। जयपुरके महाराजने इस सम्मानसे युवराजको इतना मोहित किया था कि. श्री मती महारानी भी उस सम्मानके विषयको सुनकर बहुत ही आनन्दित हुई। शिवपोल गेटसे निम्नलिखित प्रकारसे यात्रा आरंभ हुई,-

अश्वारोही जमादार	तलवारकी क्रीडा करनेवाले नागे
एकदलदेशीय पदाति	महाराजके खवास
अश्वारोही नगर कोतवाल	महाराज रामसिंह और प्रिन्स आफवेलस
बृहत् राजपताकाधारी दो हाथी	हाथीपर चढे ढालधारी दो सामन्त
एक दल प्रासादरक्षक सैन्य	अश्वारोही खास चौकीके दो कर्मचारी
ऊंटोंपर चढा गोलन्दाज दल	चार श्रेणियोंमें विभक्त हस्त्यारोही
राजपताकाधारी घुडसवार	युवराजके सहचर अंग्रेजी कर्मचारी
अश्वारोही नगाडेवाले	देशीय सामन्त
अश्वारोही	
ताजीमी सरदारोंके पुत्रगण	अंग्रेजी सैन्यदल
खास चौकीके कर्मचारिगण	हाथीपर चढे वाद्यकगण
राजकर्मचारीगण	अश्वारोही नायब कोतवाल
बाजोंका दल	
महाराजके अश्वारोही नगाडावाद्यक दल	
राजपताकाधारी गण।	
बर्छाधारी दल।	
हलकारे।	
आसा सोटा आदि राजचिह्नधारी गण	

युवराजके कृष्णपोल गेटके पार होते ही समस्त सेना और अनुचर अंग्रेजी रेसिडेण्टीकी ओरको चले। युवराज भी उस समय महाराजके साथ सजे हुए हाथीपर चढेहुए रेसिडेण्टीकी ओरको चले। युवराजके वहाँ पहुँचते ही महाराजकी पैदल सेनाने सम्मान दिखाया और तोपध्वनि की गई। युवराजको रेसिडेण्टीमें पहुँचाकर महाराज अपने स्थानको लौट आये, और कुछकालके पीछे युवराजके साथ साक्षात् करनेके लिये गये। इस संमानके समयमें जयपुरकी समस्त सेना राजमार्गमें खडी हुई थी। सब अठसौ सजे हुए हाथियोंपर युवराजके सहचर और आमेरके सामन्त सवार थे; अन्यान्य और भी बहुतसे हाथी थे।

युवराजके आनेके समय इस समय पोलिटिकल एजण्ट वेनन साहबने बहुतसा धन खर्च करके स्थानको सजाया था। वेनन साहबने युवराजके रहनेके स्थानको

भलीभाँतिसे सजाया था। प्रिन्स लुइस, व्याटनवर्ग लार्ड साफिल्ड, और लार्ड क्यारिटनने युवराजके साथमें ही रहना स्वीकार किया, और इनके अन्यान्य सेवक और और स्थानों-पर चले गये, युवराजकी भक्ति दिखाने तथा मित्रता बढाकर अपने सामने समस्त विषयों-की खोज करनेके लिये महाराज रेसिडेण्टके निकट कलसे एक सामान्य स्थानपर रहे थे; इसलिये मृत लार्डमेओ भी इनके ऊपर अत्यन्त संतुष्ट हुए थे, और इसी कारणसे इस समय युवराजने महा संतुष्ट होकर महाराज रामसिंहकी गणना अपने प्रिय-बंधुओंमें की थी, ४ फर्वरीको एक भोजनके अतिरिक्त और कोई प्रकाश करने योग्य घटना नहीं हुई"।

"कल प्रभात होते ही समस्त नगरमें यह समाचार फैल गया कि युवराज शिकार खेलनेको जाँयगे। इस लिये जो उनको देखनेके लिये महलके संमुख खडे हुए थे, वह लोग निराश होकर अपने स्थानको लौट आये। युवराज प्रातःकाल ही भोजन करके लार्ड आइलेसफोर्ड, लार्ड क्यारिटन, लार्ड आल्फ्रेड, पेजेट, मेजर, ब्रेडफोर्ड जोधपुरके राजा प्रतापसिंह और किशोरसिंह नाम दोनों भ्राता महाराज रामसिंहके साथ शिकार खेलनेको गये, सभी मिजिकाबाग नामक स्थानपर गये, वहाँ जाकर भोजन किया। भोजन करनेके उपरान्त सभी वनमें गये। नगरसे छः मील दूरीपर झालाना नामक वनमें शिकार खेलना प्रारंभ हुआ। युवराज किशोरसिंह और अन्य एक सहचरके साथ ऊँचे स्थानपर घोडेपर चढकर गये; और महाराज मेजर ब्रेडफोर्ड, प्रतापसिंह और शिकारियोंके साथ नीचेसे व्याघ्रको भगाने लगे। कुछ ही समयके उपरान्त एक बडी लम्बी चौडी आकारवाली व्याघ्रीने आकर दर्शन दिया। वह अपने भागनेका उद्योग कर ही रही थी कि महाराज और प्रतापसिंहने उसपर चोट की। कुछ कालके पीछे वह शेरनी युवराजसे ४० हाथ दूर रह गई कि, युवराजने उसपर गोली चलाई। वह गोली उसके बायें कंधेमें लगी। गोली खाकर शेरनी जैसे ही भागनेको हुई कि, वैसे ही युवराजने फिर एक गोली मारी, वह गोली उसकी पूँछमें लगी। गोली लगते ही शेरनी शान्त हो गई, और युवराजकी तीसरी गोली खानेसे पहिले ही अबकी बार वह शेरनी दौडकर छिप गई। चोट लगनेके कारण वह अधिक दूरतक न जा सकी, एक पत्थरके ऊपर जाकर बैठ गई प्रतापसिंहने उसको ढूंढते २ युवराजको आकर समाचार दिया, युवराजने वहाँ जाकर कहा, यह शेरनी मर गई है, परन्तु प्रतापसिंहने कहा कि अभी मरी नहीं है, यह सुनकर युवराजने फिर एक गोली मारी, वह गोली भी खाली गई, युवराजने फिर और एक गोली मारी तब व्याघ्रीने इस शेष आघातसे प्राण छोडे। इसके पीछे प्रतापसिंह और युवराजने हाथीपरसे उतरकर व्याघ्रीके पास जाकर देखा, कि अब इसका जीवन नहीं रहा है, अंतमें व्याघ्रीको हाथीपर लादकर रेसिडेण्टीको ले जानेकी आज्ञा दी। युवराजने भारतवर्षमें आकर यह प्रथम ही व्याघ्रोका शिकार किया था। इससे वह अत्यन्त ही प्रसन्न हुए थ। यह शेरनी देखनेमें अत्यन्त बडी थी। युवराजके रेसिडेण्टीमें आते ही महाराज रामसिंह समस्त परिषदोंके साथ एकत्र

खडे हुए, और शेरनीको उनके चरणोंके नीचे रक्खा। इसके उपरान्त एक फोटोग्राफरने फोटो ली"।

"युवराज कल पांच फर्वरीको व्याघ्रीका शिकार करके रेसिडेण्टके साथ जयपुरमें आये। मारे आनंदके जयपुर नगर प्रफुल्लित हो गया, चारों ओर ऊँचे २ पर्वतोंकी शोभा और भी अधिक बढ रही थी। राजप्रासाद और राजमार्ग अत्यन्त रमणीक हो रहा था। जयपुर नगर देखनेमें चित्रपटके समान था, इस पर लाखों दीपकोंके प्रज्वलित होनेसे उसकी और भी शोभा बढ गई थी, इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। रेसिडेण्टीसे राजमहल ३ मील था। संपूर्ण मार्गोंमें पताका लगी हुई थी, प्रकाशमान दीपकोंसे बाजारकी शोभा और भी अधिक बढ गई थी, वन, नगर, बडे २ आवास और राजकार्यालयके प्रकाशमान होनेसे सभीके नेत्र मोहित हो गये थे। युवराज इस परम प्रभामय दृश्यको देखकर अत्यन्त ही संतुष्ट हुए और महाराजको आनंद प्रकाश करके दिखाया। उस समय भारतवर्षमें वास्तवमें अन्यान्य देशीय राजाओंके राज्यकी अपेक्षा जयपुरका प्रकाश अत्यन्त ही चमत्कृत हुआ था, महाराजने रुपया खर्च करनेमें किसी प्रकारकी कसर नहीं की थी। दीपकोंका प्रकाश भी उसी प्रकार मनोगत हुआ। महाराजकी इच्छा थी कि युवराज जबतक यहाँ रहें तबतक गैसकी रोशनी हो, परन्तु रेल और कम्पनीके दोषसे गैसका सामान इकट्ठा न हो सका, महाराज इस मनोरथके पूर्ण न होनेसे अत्यन्त दुःखित हुए थे। हमारा ऐसा अनुमान होता है कि एक महीनेमें जयपुरमें गैसकी रोशनी हो सकती थी"।

"कल रात्रिके सात बजेके समय दीवान आम नामक बडे सभागृहमें एक दरबार हुआ, यह गृह अत्यन्त स्वच्छ और सुन्दर २ वस्तुओंसे सजा हुआ था। इसकी सुन्दरताको देखकर दर्शकोंका मन मोहित होता था। इस घरमें १२ सौ कुरसियां सजाई गई थी। युवराज और महाराजके बैठनेके लिये दो रत्नजडित आसन उनके बीचमें विराजमान थे। सन्ध्या होनेसे कुछ पाहिले युवराज सभागृहमें आये। उस समय जयपुरके समस्त सामन्त, जागीरदार और प्रधान २ राजकर्मचारियोंने वहाँ आसन ग्रहण किये। उस दरबारमें कितने ही सम्भ्रान्त अंग्रेज और देशीय मनुष्योंने युवराजको अपना परिचय देनेके उपरान्त पीछे जोधपुरके महाराजके दोनों भ्राता महाराजा प्रतापसिंह और महाराजा किशोरसिंह इन दोनोंको युवराजने भारतभ्रमणके स्मारकका पदक पुरस्कारमें दिया। जयपुरके प्रधान २ सामन्तोंने युवराजको नजरमें कितने ही रुपये दिये, परन्तु युवराजने उनको स्पर्श करके सबको लौटा दिये। दरबार समाप्त हो जानेके पीछे जयपुरके महाराजने जयपुरके कितने ही शिल्पद्रव्य उपहारमें दिये। युवराजने उन समस्त द्रव्योंको देखकर अत्यन्त संतोष प्रकाश किया। इसके पीछे युवराज और एक सौ सम्भ्रान्त अंग्रेज राजभोजमें विराजमान हुए, भोजन समाप्त होनेके पीछे युवराज अन्य कमरेमें गये। महाराज रामसिंहने उस कमरेमें जाकर हिन्दुस्तानी भाषामें महारानी विक्टोरियाके प्रति, युवराजके प्रति और अंग्रेज गवर्नमेण्टके

प्रति भक्ति, अनुरक्ति और सम्मान प्रकाशक एक वक्तृता दी। अंग्रेजी भाषाका अनुवाद और छपा हुआ पत्र अग्रजोंके हाथमें दिया गया, वक्तृताके समाप्त हो जाने-पर महारानी विक्टोरियाके स्वास्थ्यके निमित्त और युवराजके प्रस्तावसे महाराज रामसिंहके स्वास्थ्यके उद्देशसे सुरा पी गई; इसके पीछे महाराजने युवराजको उपहारमें बहुतसे द्रव्य दिये। बड़ी कीमती एक सुन्दर तलवार, आसे, बडी २ छुरीं, अतरदान इत्यादि बहुमूल्य द्रव्य दिखाकर युवराजका विशेष सम्मान किया। यह देखकर युवराजने अत्यंत आनंद प्रकाश किया। महाराजने १४ हजार रुपयेके मूल्यका एक अतरदान भी उपहारमें दिया था, यह देखनेमें अत्यंत सुन्दर था"।

"इसके पीछे युवराज, महाराजके साथ चंद्रमहल नामक नृत्यवाटिकामें देशीय नाँचनेवालोंका नृत्य देखनेंके लिये गये। नाँचनेवाले वेशकीमती पोशाकें पहिरे हुए सुन्दर छबिसे सभागृहको प्रकाशमान कर रहे थे। युवराज इस नृत्यको देखकर अत्यंत संतुष्ट हुए। अधिक क्या कहें युवराज विश्रामगृहमें गये। वहाँ महाराजके साथ अनेक प्रकारकी बातचीत होनेके पीछे चुरट और अपने नामका खुदा हुआ एक दियासलाईका बक्स महाराजको उपहारमें दिया। रात्रिमें अग्निक्रीडा भी बडी धूमधामके साथ की गई थी। लंदनकी ब्रुक कम्पनीने १० हजार रुपये लेकर आतिशबाजी तयार की थी। इसको देखकर सभी दर्शकोंने अत्यंत आनंदित हो जयध्वनि की। युवराज कोई दो पहर रात्रिके बीतनेपर रेसिडेण्टीमें लौट आये। कल जिस प्रकारसे जयपुर प्रकाश-मान हुआ था, इस प्रकारसे इसकी शोभा और कभी नहीं हुई थी"।

"कल पाँच फर्वरी रविवारको प्रकाश करनेयोग्य कोई उत्सव नहीं हुआ। युवराज भोजन करनेके उपरान्त जयपुरका प्राचीन नगर आमेर देखनेके लिये गये। वहाँके प्राचीन कीर्तिस्तंभ और परम रमणीय दृश्यको देखकर युवराजने संतोष प्रकाश किया। आमेरको देखकर आगमनके समय युवराजने "एडवर्ड हाल" नामक अपने नामके असाधारण स्थानकी दीवारमें अपने हाथसे पाषाण स्थापन किया। युवराजके जयपुर भ्रमणके स्मरणके निमित्त महाराज रामसिंहने बहुतसा धन खर्च करके यह स्थान बनाया था। कल दिनको और कोई घटना नहीं हुई। युवराज आज प्रभात होते ही जयपुरको छोडकर आगरेको चले गये। विदा होनेके समय राजमार्गमें अत्यन्त मनोहर दृश्य हुए थ, युवराजने यहांके शिकारियोंको सौ रुपये पुरस्कारमें दिये थे। महाराजने युवराजको जो द्रव्य उपहारमें दिये थे, उसके अतिरिक्त युवराजको एक अत्यन्त मनोहर अश्वयान उपहारमें दिया था। युवराज जयपुरके महाराजका आतिथ्य और अभ्यर्थना और उत्सवसे अत्यन्त ही प्रसन्न हो गये थे। भारतवर्षके अन्यान्य राजाओंकी अपेक्षा महाराज युवराजके विशेष प्रीतिपात्र हुए थे"।

यद्यपि भारतके भावी सम्राट् एडवर्ड प्रिन्स आफवेल्स बहादुरने भारतके अनेक देशीय राजाओंके राज्यमें सम्मान प्राप्त किया था, और उन देशीय राजाओंने

बहुतसा धन खर्च करके अनेक उत्सवों द्वारा उनका सम्मान बढ़ाया था, परन्तु पाठकगण उपरोक्त वृत्तान्तको पढ़कर सरलतासे समझ जाँयगे कि जयपुरपति महाराज रामसिंहने केवल इस प्रकारसे बहुतसा रुपया खर्च करके अनेक अनुष्ठानोंके द्वारा ही युवराजके मनको हरण नहीं किया था, वरन् इन्होंने यथार्थ प्रीति, नम्रता और विनयके साथ पवित्र रुचिसे प्रिन्स आफ वेल्सको अपना मित्र बना लिया था। जिन सम्पूर्ण श्रेष्ठ गुणोंसे शिक्षित अंग्रेज स्त्री पुरुषमात्रके हृदयपर वह अधिकार करनेको समर्थ हुए थे, उन्हीं समस्त गुणोंसे उन्होंने भावी सम्राट्को मोहित किया । शिक्षित अंग्रेज स्त्री पुरुषोंके साथ मित्रताके सूत्रमें बँधनेके लिये अत्यन्त अभिलाषी थे । कर्नल म्यालिसनने अपने ग्रंथमें लिखा है कि,–"महाराज रामसिंह अंग्रेजोंके साथ स्त्री पुरुषोंकी मित्रताका होना अत्यन्त श्रेष्ठ मानते थे।" महाराजके अंग्रेजमात्र ही अत्यन्त भक्त थे पाठक ऐसा अनुमान न करें । महाराज रामसिंह स्वयं ही एक बुद्धिमान् मनुष्य थे, इस कारण शिक्षित मनुष्यमात्रके साथ वह स्वभावसे ही प्रीति स्थापन करना अपना कर्त्तव्य जानते थे, केवल अंग्रेज ही नहीं वरन् संपूर्ण देशीय समाज भी उनकी प्रीतिपात्र थी ।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीके ग्रेट्ब्रिटेन और आयरलैण्डकी अधिराज्ञी महारानी विक्टोरियाने भारतवर्षमें राजराजेश्वरीकी उपाधि धारण की। भारतवर्षकी प्राचीन राजधानी दिल्लीमें इसके उत्सवमें राजसूय समिति की गई। यहांपर भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तके राजाओंकी तरह आमेरके महाराज रामसिंह भी निमंत्रित होकर अपने परिषद् और अनुचरोंके साथ सेना सहित वहाँ गये, इनके पहुँचते ही बड़े सम्मानसे राजप्रतिनिधिने इनको ग्रहण किया। सन् १८७६ ईसवीके २६ दिसम्बरको महाराज रामसिंह बहादुर अंग्रेज राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन बहादुरके साथ साक्षात् करनेके लिये उनके स्थानपर गये । प्रधान मार्गपर सबसे पहिले अंग्रेजी अश्वारोही कर्मचारियोंने महाराजका विशेष सम्मानके साथ अभिवादन किया । इसके पीछे राजप्रतिनिधिके निवासस्थानपर पहुँचते ही उस स्थानपर खडी हुई अंग्रेजी सेनाने अस्त्र दिखाकर उनका सम्मान किया। सवारीपरसे उतरकर राजप्रतिनिधि वैदेशिक सेक्रेटरी परनटन साहबने आगे जाकर आदरमानके साथ ग्रहण कर परम रमणीक चन्द्रकिरणोंसे शोभित सजे हुए अभ्यर्थनाके स्थानमें राजप्रतिनिधि लार्ड लिटनके पास महाराजको उपस्थित किया, राजप्रतिनिधिने आनंदित हो सिंहासनसे उतरकर कई एक पग आगे जा महाराजको बडे आदरसे ले जाकर दाहिनी ओरके रत्नसिंहासनपर बैठाला और पीछे स्वयं सिंहासनपर बैठे । इसके पीछे बहुत देरतक वार्ता होती रही, महाराज रामसिंहने अपने राज्यमें जो हितकारी कार्य किये थे, उन सबका उल्लेख किया । गवर्नमेण्टने रामसिंहकी भक्ति, प्रीति और अनुरक्ति देखकर उनकी विशेष सहायता करनी स्वीकार की, और महाराजके गुणोंकी प्रशंसा करने लगे । इसके पीछे दो हाईलैण्डके सैनिकोंने एक राजसूर्य पताका लाकर राजप्रतिनिधिके सामने रक्खी । इस पताकाके एक ओर "विक्टोरिया कैसरहिन्द" और दूसरी ओर जयपुरके राजवंशका चिह्न अंकित था । पताकाके ऊपर एक ओर

महाराज रामसिंहका नाम और दुसरी ओर "विक्टोरिया एम्प्रेस, १ जनवरी सन् १८७७" लिखा हुआ था। राजप्रतिनिधि महाराज रामसिंहका हाथ पकडकर सिंहासनसे उतरकर पताकाके सम्मुख गये और महाराजसे बोले।

"महामान्या भारत राजराजेश्वरीके उपाधिधारणके स्मरणमें उनके उपहार स्वरूप आपके परिवारिक चिह्नसे अंकित यह पताका महिमवरको दी जाती है"।

"महामान्याका विश्वास है कि इंगलैण्डके राजसिंहासनके साथ आपके सम्भ्रान्त राजवंशका जो विशेष घनिष्ट सम्बन्ध है, केवल यही नहीं वरन् प्रधान राजक्षमता (अंग्रेज गवर्नमेण्ट) जो आपके वंशकी स्थायी उन्नति और प्रबलताकी इच्छा करती है, इसको आप भुलाकर कभी इस पताकाको त्यागन करना उचित न समझेंगे"।

राजप्रतिनिधिने महाराज रामसिंहके हाथमें उस पताकाको दिया, महराजने मस्तक झुकाकर सम्मानसहित उसे ग्रहण किया।

पताका देनेका कार्य समाप्त हो गया, भारतक राजराजेश्वरीकी उपाधि धारणके स्मरणार्थ एक सोनेका पदक भी राजप्रतिनिधिने महाराजके गलेमें डाला; उस पदकके एक ओर भारतेश्वरीका आनन और नाम तथा १ जनवरी सन् १८७७ ईसवी, यह खुदा हुआ था; और दूसरी ओर अंग्रेजीभाषामें "एम्प्रेस आफ इण्डिया" और हिंदी उर्दू भाषामें "कैसरहिंद" खुदा हुआ था। राजप्रतिनिधिने उक्त पदक देनेके समय कहा:—

महारानी और भारतकी राजराजेश्वरीकी आज्ञानुसार मैंने आज इस पदकसे आपको भूषित किया। यह पदक जिस शुभ दिनमें अंकित हुआ है उसके स्मरणके लिये आप इसको चिरकालतक धारण करें, और आपके वंशमें यह पुरुषानुक्रमिक अलंकार स्वरूपसे रक्खा जाय"।

पताका और पदक देनेके पीछे राजप्रतिनिधिने महाराजको सूचित किया-"इसके पीछे आपके सम्मानसूचक इक्कीस तोपोंकी सलामी हुआ करेगी।" जयपुरके महाराजकी अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ संधि करके सम्मानसूचक सत्रह तोपोंकी सलामी हुआ करती थी। महाराज रामसिंहने अपने न्यायसहित राज्यशासनके गुणसे पहिले ही उन्नीस तोपोंकी सलामी प्राप्त कर ली थी, इस समय इक्कीस तोपें नियत हुई। महाराज रामसिंह राजप्रतिनिधिक द्वारा सम्मानित होकर उस दिन उस स्थानको त्यागकर आनन्दित हो अपने स्थानको लौट आये, उनके आते और जाते समय नियमितरूपसे तोपोंकी सलामी हुई।

दूसरे दिन (२१ दिसम्बरको) अपराह्नके समयमें राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन बहादुरने महाराजके स्थानपर जाकर उनसे साक्षात् किया। महाराज रामसिंहने बडे आदर मानके साथ राजप्रतिनिधिको ग्रहण करके अपने श्रेष्ठ गुणोंका विशेष परिचय दिया।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीको मध्याह्नके समय उस महान् विक्टोरिया समितिमें लार्ड लिटन द्वारा बृटिश रानीसे "भारतकी राजराजेश्वरी" की उपाधि धारण

करनेकी सूचना हुई। राजपूतानेके राजाओंके प्रतिनिधि स्वरूपसे "उदयपुर और जयपुरके दो अधिपतियोंने उठकर कहा कि, महामान्याके भारतमें राजराजेश्वरीकी उपाधि धारण करनेपर राजपूतानेके सम्मिलित राजाओंने राजभक्तिके साथ जो अभिवादन किया है; यह समाचार महारानीको प्रगट करनेके लिये शीघ्रतासे भेजा जाय, राजाओंकी यही प्रार्थना है"।

उक्त उपाधिके उपलक्षमें भारतकी राजराजेश्वरीकी ओरसे "कौन्सिलर आफ दी एम्प्रेस" नामक एक श्रेणीकी नवीन उपाधि नियत हुई। इस उपाधिकी सृष्टिका कारण राजप्रतिनिधिकी निम्नलिखित उक्तिसे प्रकाशित होता है,-"सम्मिलित राज्यकी महामान्यारानी भारतकी राजराजेश्वरीने समय २ पर प्रयोजनके अनुसार आवश्यकीय कार्योंमें भारतवर्षके राजा और सरदारोंकी शुभ मन्त्रणा ग्रहण करके और उससे प्रधानराज अंग्रेजी गवर्नमेंटके साथ उनका सम्मानसूचक सम्मिलनसाधन और उस उपायसे साम्राज्यके साधारण मंगलकी सुविधा स्थापनके लिये भारतवर्षके प्रधानमन्त्रियों द्वारा हमें निम्नलिखित राजा और गवर्नमेण्टके उपस्थित कर्मचारियोंको कौन्सिलर आफ दी एम्प्रेस, भारतकी (राजराजेश्वरीके मन्त्री) को उपाधि देनेकी सामर्थ्य दी है, और इससे हम उनके नाम और उनके पक्षसे उस महा सम्मानित उपाधिको देते हैं"। समस्त भारतवर्षमें जो आठ देशीय राजा उक्त महा सन्मानसूचक उपाधिको प्राप्त हुए हैं, इनमें जयपुरपति महाराज रामसिंह भी एक हैं। इस प्रकारसे महाराजा रामसिंह विक्टोरिया राजसमितिमें सम्मान पाकर ठीक समयपर अपनी राजधानीको लौट आये।

अत्यन्त दु:खका विषय है कि बहुत थोडे समयके पीछे ही अर्थात् सन् १८८० ईसवीके सितम्बर महीनेमें सर्वमनरंजन महाराज रामसिंह बहादुरने प्राण त्याग किये। महाराज रामसिंहकी जीवनीके सम्बन्धमें हमें अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं; उपसंहारमें केवल इतना ही कह सकते हैं कि समस्त देशी राजओंमें महाराज रामसिंह सबसे अधिक बुद्धिमान् थे, इनकी प्रकृति उदार थी, यह उन्नतिप्रिय, कुसंस्कारहीन और प्रजारंजन पुरुष थे। जयपुरराज्यकी जिस प्रकारसे अवनति हो गई थी, इनके राज्यमें जयपुरने उसी प्रकारसे सबसे ऊँचे पदपर अधिकार प्राप्त किया था। इनके राज्यमें अत्याचार अशान्ति अराजकता इत्यादि सभी उपद्रव शांत हो गये थे, जैसे २ प्रजाके हितकारी कार्य महाराज रामसिंहने किये थे पांच देशीय प्रधान २ राज्योंमें आजतक वह कार्य नहीं हुए। उन सम्पूर्ण हितकारी कार्योंके अतिरिक्त देशीय राजा आजतक भी इस बातको स्वीकार नहीं करते कि बुद्धिमान् महाराज रामसिंह पवित्र रुचि और सभ्यताके सम्मानकी रक्षाके लिये उन २ कार्योंको कर गये हैं। उन सम्पूर्ण कार्योंसे राज्यमें जो भावी महान् मंगलका बीज बोया गया; और कहीं इतिहासमें अंकुरित और पल्लवित होकर मोहन सुखमाका अमृतमय फल उत्पन्न करते हैं, इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। महाराज रामसिंहजी और भी जीवित रहते तो उनसे जयपुरके राज्यकी और भी अधिक श्रीवृद्धि और उन्नति होती, इसमें किंचित् भी सन्देह

नहीं । जयपुरराज्यका इतिहास महाराज रामसिंहके नामसे चिरकालतक हीरेके अक्षरोंसे ग्रथित रहेगा, जयपुरके प्रजापुंजके वंशधर एकमात्र महाराज रामसिंहको अपना नवजीवन और नवीन बलप्राप्तिका मूल; जयपुरराज्यका यथार्थ उद्धारकर्त्ता स्वीकार करते हैं-केवल राजस्थापनमें ही नहीं वरन् समस्त भारतवर्षके प्रत्येक देशीय राजसिंहासनोंपर महाराज रामसिंहके समान राजा विराजमान होते तो भारतवर्षके दुर्दिन शीघ्र ही दूर हो जाते, इसको सभी मान लेंगे, राजपूत राजकुलके मार्तण्डस्वरूप महाराज रामसिंहकी अकालमृत्युसे जयपुरकी समस्त प्रजा गंभीर शोकसागरमें निमग्न होकर हाहाकार करने लगी, उसके हाहाकारसे आकाश परिपूर्ण हो गया;इनके वियोगसे बृटिश गवर्नमेण्टने भी तथा स्वाजातीय और विजातीय मित्रमंडलीने भी महान् शोक प्रकाश किया था । सर्वगुणमंडित महाराज रामसिंहके शोक और वियोगको ऐसा कौन मनुष्य है जो भूल सकता हो ? ।

सातवां अध्याय ७.

महाराज माधोसिंहका आमेरके सिंहासनपर अभिषिक्त होना-उनकी अज्ञान अवस्थामें बृटिश रेसिडेण्टका जयपुरके शासनभारको ग्रहण करना-शासन समाजका नियोग-कृष्णगढ और ध्रांगादडाकी दो राजकुमारियोंके साथ महाराजका विवाह-महाराज माधोसिंहका बम्बई और कलकत्तेको जाना-महाराजका जयपुरमें शिल्पशालाकी प्रतिष्ठा करना-महाराजका अभिषेक-बृटिश गवर्नमेण्टका महाराजके हाथमें राज्यभार अर्पण-महाराजका जयपुरमें शिल्प और प्रदर्शनीका अनुष्ठान-प्रदर्शनीका उद्देश-प्रदर्शनीकी प्रतिष्ठा-महाराजका अभिषेक-प्रदर्शनीकी सफलता-जयपुरमें प्रकृष्ट शासनकी रीति-मंत्रीसमाज वा कौन्सिल-कौन्सिलकी सामर्थ्य-राजदरबारमें नाना पदोंपर सामन्तोंका नियोग-कौन्सिलके सभ्यगणोंके नाम-कौन्सिलके सभ्यगणोंका नियमित वेतन-दानकी व्यवस्था-का चलाना-सामन्तोंके साथ सम्बन्ध-शेखावाटीके सामन्तोंका असंतोष-असंतोषका कारण-असतोष निवारण-बृटिश गवर्नमेंटके साथ महाराजका अकृत्रिम सद्भाव-प्रतिवासी राजाओंके साथ महाराजका मैत्रीभाव-महाराज माधोसिंहके सम्बन्धमें बृटिश पोलिटिकल एजण्टका मन्तव्य-उपसंहार-

महाराज रामसिंहने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग किये; परन्तु मृत्युके शय्यापर शयन करते समय गवर्नमेण्टने उनको दत्तकपुत्रके लेनेकी सामर्थ्य दी, उसी सामर्थ्यसे उन्होंने इकट्ठे हुए सामन्त और कर्मचारियोंके सम्मुख अपने कुटुम्बी ईशरदाके युवक सामन्त ठाकुर कायमसिंहको अपने उत्तराधिकारी पदपर नियुक्त किया । महाराज रामसिंहकी मृत्युके पीछे उनकी इच्छासे उनकी रानी और सामन्तोंने उक्त सामन्तको नियुक्त करनेकी सम्मति दी, पोलिटिकल एजेण्टके प्रस्तावसे गवर्नमेण्टने भी अपनी पूर्ण सम्मति दी । ठाकुर कायमसिंहने चिरप्रचलित रीतिके अनुसार अपने पहिले नामको बदलकर माधोसिंह नाम रक्खा, और सन् १८८० ईसवीके सितम्बर महीनेमें वह आमेरके

सिंहासनपर विराजमान होकर राज्य करने लगे। महाराज माधोसिंह जिस समय आमेरके राजछत्रके नीचे विराजमान हुए उस समय उनकी अवस्था उन्नीस वर्षकी थी। जयपुरके रेसिडेण्ट मिस्टर जे०पी०स्टेटन सन् १८८३ ईसवीकी पहिली मईको जयपुरके सन् १८८२–८३ईसवीके शासनके वृत्तान्तमें लिखते हैं "कि जिस समय महाराज राज्यपर नियुक्त नहीं थे उस समय इन्होंने कोई उपयुक्त शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, इसी कारणसे दो वर्षतक जयपुर राज्य रेसिडेण्टकी सम्मतिसे एक कौन्सिल वा मंत्रीसमाजके द्वारा शासित हुआ, और युवक महाराज क्रम २ से शासनकी शिक्षा पाने लगे * । महाराज माधोसिंहने अप्राप्त व्यवहार अवस्थामें अपने हाथमें राज्यभार लिया था; गवर्नमेण्टने अपनी अवलम्बित नीतिके मतसे महाराजके हाथमें प्रथम शासनकी सामर्थ्य न दी, जयपुरराज्य बहुत दिनोंसे जिस मंत्री समाजके द्वारा शासित होता आया था, रेसिडेण्टने शीघ्रतासे उसी समाजेक हाथमें शासनका भार अर्पण किया । वास्तवमें महाराज माधोसिंह पहले एक साधारण प्रदेशके सामन्त थे । यह किसी दिन आमेरके सिंहासनपर विराजमान होंगे एसा किसीको अनुमान नहीं था, इस कारण उन्हें राज्यशासनके उपयुक्त कोइ विशेष शिक्षा नहीं दी गई थी। यद्यपि वह उन्नीस वर्षकी अवस्थामें राज्यपर स्थित हुए परन्तु उस समय उनके पक्षमें पूर्णशासनकी सामर्थ्यका चलाना असंभव था; जबतक महाराज माधोसिंह अज्ञान अवस्थामें रहे तबतक रेसिडेण्टकी सम्मतिसे मंत्रीसमाज राज्यशासन करता था; और महाराजने इस सुअवसरमें राज्यशासनकी प्रयोजनीय शिक्षा प्राप्त कर ली ।

महाराज माधोसिंह बहादुरने आमेरके राज्यपदपर प्रतिष्ठित होनेके पीछे कृष्णगढ और काठियावाडके अन्तर्गत ढ्रांगाद्डाके राजाकी दो कन्याओंके साथ पाणिग्रहण किया; इस विवाहमें महाराजके२२७४५७रुपये खर्च हुए,यद्यपि बहु विवाहसे विषमय फल चिरकाल तक उत्पन्न होता है, परन्तु अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि देशीय राजा सुशिक्षा प्राप्त करके भी उस अनिष्टमूलक रीतिको आजतक पूर्ण सम्मानसे रक्षा करते आये हैं । भारतवर्षके देशीय राजा स्मरणातीत कालसे बहु विवाहके अभिलाषी हैं, उन्होंने इस बहु विवाहके विषमयफलको प्रत्यक्ष करनेमें किसी प्रकारसे अनादर प्रकाश नहीं किया था, जबतक देशीय राजा भलीभांतिसे ऊँची शिक्षाको न पा सकें, तबतक बीचमें बहु विवाहस शान्त हो जाँयगे, हम ऐसी आशा नहीं कर सकते ।

महाराज माधोसिंह सन्१८८१ईसवीमें बम्बई कलकत्ते और गयाजीको गये।अपने राज्यमें लौटनेके पीछे उन्होंने जयपुर राज्यमें एक उन्नतिका परिचायक कार्य किया सन् १८८१ईसवी,२३अगस्तको जयपुरमें एक इकानामिक और इण्डिष्ट्रियल मिउजियम नामक शिल्पकी द्रव्य शाला प्रतिष्ठित की।महाराज और बहुतसे प्रतिष्ठित मनुष्योंके सामने कर्नेल बाटलरने इसकी प्रतिष्ठा की।इसक देखनेके लिये बहुतसे दर्शक गये थे ।डाक्टर

* Report of the Political Administiations of the Rajputana states 1882-1887.

हिंडली इसके अवैतनिक सम्पादक थे। महाराज माधोसिंहने इस हितकारी कार्यमें बहुतसा रुपया खर्च किया, इस मिउजियमकी प्रतिष्ठासे विशेष उपकार हुआ था।

सन् १८८२ इसवीके सितंबर महीनेमें वर्तमान महाराज माधोसिंह बहादुरने बाईस वर्षकी अवस्थामें पदार्पण किया, इस कारण राजपूत रीतिके अनुसार इस वर्षमें ही यह संपूर्ण राज काजको जान गये, महाराज इतने दिनोंतक राजकार्यमें आशिक्षित रहे इसीसे गवर्नमेण्टने उनके हाथमें राज्यके पूर्ण शासनका भार नहीं दिया था, परन्तु इस समय वह सर्वगुण सम्पन्न हो गये, तब गवर्नमेंटने शीघ्र ही बडी धूमधामके साथ सितंबर मासकी ६ तारीखको महाराज माधोसिंहको आमेरके राज्यपर अभिषिक्त किया, और उनके हाथमें समस्त राज्यका भार अर्पण किया"।

इस अभिषेकके उत्सवके समयमे कितनी धूमधाम हुई थी इसका अनुमान हमारे पाठक सरलतासे कर सकेंगे। यद्यपि महाराज माधोसिंह पूर्ण शासनके भारको प्राप्त हो गये थे, परन्तु राज्यके प्रधान २ बडे कार्योंमें अब भी पोलिटिकल एजंटकी सम्मति लेकर कार्य करते थे। महाराजकी अवस्था अब भी बहुत थोडी है, अब कई वर्षके पीछे सर्वगुणसंपन्न हो गये हैं, और इसमें भी कुछ संदेह नहीं कि इस समय वह समस्त राजकार्योंमें निपुण हो गये है। जयपुरके रेसिडेंट, मिस्टर जे० पी० स्टेटन जयपुरके सन् ८२।८३ ईसवीके शासन विवरणमें लिखते हैं कि "गत ६ सितंबरको महाराज माधोसिंह इक्कीस वर्षकी अवस्थामे राज्यकी संपूर्ण शासनसामर्थ्यको प्राप्त हुए थे; परन्तु उस समय आवश्यकता होनेपर यह व्यवस्था ठहरी कि जबतक महाराज संपूर्ण अभिज्ञता प्राप्त न कर लें तबतक वह सब विषयोंमें रेसिडेण्टके साथ परामर्श करके राजकार्य करैं। और उनके अप्राप्त व्यवहारके समय मंत्रीसमाजके द्वारा जिन कार्योंकी व्यवस्था नियत हुई है, उक्त रेसिडेण्टकी सम्मतिके अतिरिक्त वह उसके संबन्धमें कुछ भी अदलबदल नहीं कर सकेंगे* "।

राज्यके अनेक विषय और साधारण हितकारी अनुष्ठानके विषय जयपुरराज्यमें जो भारतवर्षके अन्यान्य देशीय राज्योंको पीछे रखकर अग्रसर हुए हैं, सर्वसाधारण मनुष्य इसको मुक्तकंठसे स्वीकार करेंगे। बुद्धिमान् महाराज रामसिंहने जिस प्रकारसे बहुतसा धन खर्च करके राज्यमें अनेक हितकारी और मंगलदायक कार्य किये थे, अत्यन्त संतोषका विषय है कि नवीन युवक महाराज माधोसिंह भी इसी प्रकार बहुतसा धन खर्च करके उन मंगलदायक कार्योके करनेके लिये अग्रसर हुए। सन् १८८३ ईसवीके जनवरी महीनेमें जयपुरमें एक अभूतपूर्व अनुष्ठान हुआ। ऐसा अनुष्ठान आजतक किसी देशी राज्यमें नहीं हुआ था। वह अनुष्ठान शिल्प प्रदर्शनीका स्थापन था। शिल्प प्रदर्शनीके द्वारा वाणिज्य शिल्प इत्यादिके जो उपकार होनेकी संभावना है, उसे शिक्षित मनुष्यमात्र स्वीकार करैंगे।

* Report the, Political Administration of the Rajputana States for 1882 1883

" महाराज माधोसिंहने अपने राज्यमें उस विश्वविदित शिल्प और साधारण वाणिज्यकी उन्नतिके लिये कई लाख रुपये खर्च करके उस प्रदर्शनीकी प्रतिष्ठा की थी । प्रदर्शनीके उद्देशके संबन्धमें जयपुरके रेसिडेण्ट लिखते है कि प्रदर्शनीका यह उद्देश है कि राजपूताना और जो देश इससे लगे हुए हैं उन सब देशाम शिल्पका प्रचार हो जाय" ।

" इस राज्य (जयपुर) में और इसकी सीमामें स्थित देशोंमें कौन २ से द्रव्य उत्पन्न होते हैं, अथवा शिल्पियोंके द्वारा बनाये जाते हैं, उनके संबन्धमें अभिज्ञता प्राप्त हो तथा उन संपूर्ण द्रव्योंको उत्पादन करनेवाले, निर्माण करनेवाले और क्रेताओंको एकत्र करके उसके सम्बन्धमें सर्व साधारणको शिक्षाविधान और अभिज्ञता प्रदान ही इस प्रदर्शनीका उद्देश है " ।

"जयपुरके इकानामिक और इण्डष्ट्रियल मिउजियममें जो जो द्रव्य संकलित हुए थे, इन सबके अतिरिक्त जिन२का संग्रह नहीं किया था, इस प्रदर्शनीसे उन सबका संग्रह करना इसका उद्देश है ।"

जयपुरके रेसीडेण्ट चिकित्सक डाक्टर हेण्डलीने सबस पहिले इस शुभ प्रस्तावको महाराजक निकट उपस्थित किया था । महाशय महाराजने इस प्रस्तावको उत्तम जानकर शीघ्र ही इस कार्यको पूण परिणत करनेकी आज्ञा दी, और इस प्रदर्शनीमें जितना रुपया लगा था वह सभी राजाके खजानेसे दिया गया । कई वर्ष हुए " अलबर्ट हाल " नामक प्रिन्स आफ वेल्सके स्मरणके लिये जो बडा मनोहर स्थान बनाया गया था; उसी स्थानमें प्रदर्शनी होना निश्चय हुआ; जयपुरके एक जिक्यूटिव इंजीनियर मेजर जेकबने बहुत थोडे समयमें उसके निर्माणका कार्य किया था, उन्होंने प्रदर्शनीको प्रतिष्ठाके योग्य कर दिया ।

रेसीडेण्ट लिखते हैं, " कि जो प्रस्ताव किया गया उसके अनुसार सब द्रव्य इकट्ठे किये गये, क्रमानुसार दश सहस्र पदार्थोंका संग्रह किया गया । गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेंट कर्नल ब्राडफोर्ड और महामान्य महाराजके द्वारा सन् १८८३ ईसवीकी ? जनवरीको प्रदर्शनी खोली गई । और दूसरी मार्चको बंद हुई, उन दोनों महीनोंमें ८५४ अंग्रेज और सब २३६५५४ दर्शक प्रदर्शनी देखनेके लिये गये थे, और बहुतसे रुपयोंकी चीजें खरीदी भी गई थीं " ।

" प्रदर्शनीके समस्त द्रव्योंके गुणागुण और उत्कृष्टापकृष्टताकी परीक्षा और योग्यपात्रको पुरस्कार देनेके लिये बंबई, लाहौर, कलकत्ता और इलाहाबाद इत्यादि स्थानोंसे मि०ग्रिफिथस् और मि० किपलि इत्यादि न्यायवेत्ता निरपेक्ष शिक्षित पुरुष जूरर अर्थात् परीक्षकस्वरूपसे आये थे । दो सौसे अधिक जनोंको पुरस्कार दिया गया । इस प्रदर्शनीमें जिस प्रकारसे महाराजने रुपया खर्च किया था, उसी प्रकारसे वह पुरस्कार भी उनके द्वारा दिया गया " ।

राजपूतानेमें स्थित बृटिश एजण्टने इस प्रदर्शनीके सम्बन्धमें सन् १८८३ ईसवीकी २१ अगस्तको लिखा है "कि पहली जनवरीको मैं जयपुरमें गया, उस समय शिल्पको

प्रदर्शनी भलीभांतिसे खुली थी। इसको भलीभांतिसे सफल करनेके लिये धन खर्च करने और परिश्रम करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं की गई। प्रदर्शनीमें जो बहुतसे दर्शक आये थे, और जितनी वस्तुयें विकी थीं; ऐसी राजपूतानेभरकी किसी प्रदर्शनीमें भी वस्तुओंकी विक्री नहीं देखी गई, यही एक प्रकार अनुष्ठानकी उपकारिताका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

पाठकमंडली अंग्रेजी राजपुरुषोंके उक्त मन्तव्योंको भलीभाँतिसे जान गई होगी कि, जयपुरकी इस प्रथम शिल्पप्रदर्शनीने किस प्रकारका शुभ फल उत्पन्न किया था। हम आशा करते हैं कि महाराज माधोसिंह बहादुरने राज्यभारको ग्रहण करके प्रथम इस शुभ अनुष्ठानमें अपना हस्ताक्षेप प्रारम्भ किया था, उन्होंने जन्मभर इस प्रकारसे आग्रह, उत्साह और धन खर्च करके इस प्रकारके बहुतसे हितकारी अनुष्ठानोंसे राज्यके और प्रजाके अनेक हितकारी कार्य किये।

यद्यपि महाराज माधोसिंह बहादुरको राज्यकी पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त हो गई थी, यदि वह विचारते तो अपने हाथमें समस्त राज्यभार लेकर पूर्वप्रचलित रीतिके अनुसार जयपुरमें फिर व्यक्तिगत यथेच्छाचारसे शासनकी रीतिको प्रचलित कर सकते थे, परन्तु अत्यन्त संतोषका विषय है कि, गत कई वर्षोंमें जिस प्रकारके लक्षण प्रकाशित हुए थे उससे महाराज माधोसिंहने उस व्यक्तिगत यथेच्छाचारके शासनकी रीतिका अनुसरण न करके महाराज रामसिंहके द्वारा चलाई हुई शासन प्रणालीके पूर्ण सम्मानकी रक्षा की। इसका अनुमान हम निसन्देह कर सकते हैं, कि भारतवर्षके संपूर्ण देशीय राज्योंमें व्यक्तिगत यथेच्छाचारके शासनकी रीति प्रचलित है। केवल एकमात्र महाराज रामसिंह बहादुरने, साधारण प्रजाके कल्याणका विधान और राज्यकी उन्नतिसाधनके लिये मंत्रीसमाजकी सृष्टि करके उसके हाथमें प्रत्येक विभागके पूर्ण शासनका भार अर्पण किया था, इस रीतिसे जो सुशासन और न्यायका विचार अधिकतासे सूचित होता है यह कहना बाहुल्यमात्र है; महाराज माधोसिंहने भी इस समय उस शासनरीतिका अवलम्बन करके अपनी पवित्र रुचि और प्रजानुरागिताका विशेष परिचय दिया।

जयपुरकी वर्तमानरीतिके संबन्धमें रेसिडेण्ट मिस्टर जे० पी० स्टेटन सन् १८८३ ईसवीकी १७ मईको लिखते हैं कि, अन्यान्य सामान्य राज्योंकी अपेक्षा जयपुरकी शासनरीति अत्यन्त सुन्दररूपसे अनुष्ठित हुई है। यह कहा जा सकता है, नरपतिकी इच्छासे अथवा किसी राजकर्मचारीके प्राबल्यमें यदि किसी विषयकी मीमांसा होनेकी संभावना न हो तो वर्तमान जयपुरकी शासनरीति अत्यन्त अल्पसमयमें उसे निर्धारित कर सकती है, और देशीय राजाओंमें जैसे एक जनके हाथमें शासनकी सामर्थ्य है इस स्थानपर वैसा नहीं है।

"महाराजके अप्राप्त व्यवहार अवस्थामें स्वभावसे ही इस प्रकारके शासनकी व्यवस्था थी, और महाराजकी अल्प अवस्था तथा अनभिज्ञताके कारणसे यह रीति प्रचलित रही है। महाराजके सभापतित्वके अधीनमें यह कौंसिल अर्थात् शासनसमाज

सभारूपसे अनेक शुभकार्य कर रही है। महाराज जिस समय राजधानीमें स्वयं उपस्थित नहीं थे; उस समय भी शासन कार्य नियमितरूपसे होता था; और किसी भारी विषयमें महाराज जिस प्रकार कौंसिलके परामर्श और सहायताका ग्रहण करना उचित जानते हैं कौंसिल भी उसी प्रकारसे उन २ विषयोंमें उनके मतकी अपेक्षा करती और संमति ग्रहण करती है"।

"उक्त मन्तव्य केवल कौंसिलके संबन्धमें ही प्रयोग नहीं होता, किन्तु कौंसिलके अधीनमें जो २ विभाग हैं उन सबके कार्य सुन्दर रीतिसे होते हैं"।

"यद्यपि उपरोक्त प्रकारसे कौंसिलकी सृष्टि सबसे पहिले असंपूर्णतासे कार्यमें परिजित हुई, परन्तु यह रीति इस राज्यमें बहुत दिनोंसे प्रचलित है। अर्द्ध शताब्दीके पहिले मृत महाराज रामसिंहके अप्राप्त व्यवहारके समय इसकी सृष्टि हुई थी और इस समय यह पूर्ण अवयवोंसे परिणत हुई है। उक्त महाराजकी मृत्युक पीछे यह कौंसिल वास्तवमें यथार्थ रीतिसे स्वाधीनताके भावकार्यमें समर्थ हुई है। प्रत्येक विभागसे उपयुक्त संख्यावाले सदस्य नियुक्त हैं"।

"महाराजके अप्राप्त अवस्थामें रेसिडेण्टके अधीनमें कौन्सिल जिस प्रकारसे राजकार्य करती थी, इस समय महाराजके आधीनमें भी उसी प्रकारसे कार्य करती है। कौन्सिलके अधिवेशनके नियमित समय नियुक्त हैं, और उसी समयके अनुसार कार्य होता है"।

"इस राज्यमें और भी दो एक शुभ अनुष्ठान हुए हैं। यहांके अनेक विभागोंके कार्यमें राज्यके मैनेजरके पदपर, वकील पदपर, अन्यान्य कार्योंमें सामन्तोंको और उनके कुटुंबियोंको नियुक्त किया गया है। अन्यान्य देशीय राज्योंके सामन्त इस प्रकारके पदोंपर नियुक्त होनेसे घृणा करते हैं और राजा भी उनको विश्वासपूर्वक नियुक्त नहीं करते, इसी कारण अन्यान्य राज्योंमें राजकर्मचारी नामकी एक श्रेणी प्रबल होकर अपने धन आगमनकी चेष्टामें नियुक्त रहती है, प्रभुके कल्याणकी ओर दृष्टि नहीं रखती"।

देशीय राजाओंके छिद्र देखनेवाले रेसिडेंट जब जयपुरकी शासनरीतिके सम्बन्धमें इस प्रकारका संतोपदायक मन्तव्य प्रकाश करते हैं, तब पाठक अवश्य ही सरलतासे इसका अनुमान कर सकते हैं कि, जयपुरके शासनकी रीति वर्तमान समयमें अवश्य ही प्रीतिदायक है, और महाराज माधोसिंह बहादुर उस उदारनीतिके किस प्रकारसे दृढ परिपोषक हैं।

जयपुरकी कौन्सिल वा शासन समाज तीन प्रधान भागोंमें विभक्त है। १ राजस्व विभाग, २ शासन विभाग, ३ समर वैदेशिक और अन्यान्य विभाग। महाराज रामसिंहकी मृत्युके पीछे सन् १८८० ईसवीमें निम्नलिखित विभागोंमें नीचे लिखे हुए सदस्य नियुक्त हुए।

राजस्व विभाग- १-डिग्गीके ठाकुर प्रतापसिंह
२-ठाकुर शम्भूसिंह
३-बाबू यदुनाथसेन

शासन विभाग-	१-बगरूके ठाकुर सामंतसिंह ।
	२-ठाकुर समन्दरकरन ।
	३-मीर कुरवानअली।
समर वैदेशिक-	१-चौमूके ठाकुर गोविन्दसिंह ।
एवं-	२-पुरोहित रामप्रसाद ।
अन्यान्यविभाग-	३-बाबू कान्तिचंद्रमुखोपाध्याय ।

उपरोक्त सदस्योंमें पुरोहित रामप्रसादने सन् १८८३ ईसवीकी १३ वीं अगस्तको प्राण त्याग किये, और सन् १८८२ ईसवीमें बाबू यदुनाथसेन और ठाकुर समन्दरकरनने पेन्सन लेकर पद त्याग किया; उक्त तीनों मनुष्योंके पदोंपर तीन नवीन सभ्य नियुक्त हुए हैं ।

रेसीडेण्टके मन्तव्यसे जाना जाता है कि महाराजने जिस समय स्वजातीय तीन सामन्तोंको सदस्य पदपर नियुक्त किया, उस समय यह सभी मूल्यवान् जागीरोंको भोगते थे; परन्तु यह कौन्सिलके सदस्य पदपर नियुक्त होकर राजकार्य करेंगे, इससे परिश्रमके स्वरूपमें महाराजके निकटसे स्थाई वृत्तिकी प्रार्थना की, परन्तु स्थाई वृत्तिका देना असम्भव विचार कर, सन् १८८३ ईसवीमें कौन्सिलके प्रत्येक सभ्योंको नियमित वेतन मिलनेकी रीति प्रचलित हुई ।

इस बृहत् इतिहासके अनेक स्थानोंमें पाठकोंने पढा होगा कि, जिस राज्यमें सामन्तोंके साथ अधिपतिका मतान्तर विवाद और झगडा होता है वह राज्य नष्ट हो जाता है । सामन्त शासित देशमें, सामन्त ही नरपतिके प्रधान बल और उपाय स्वरूप हैं । सामन्तोंके प्रति नरपतिका सद्भाव; और उनकी चिरप्रचलित रीतिके समान संगत, स्वत्वरक्षा और सन्मान प्रदर्शन जैसा अवश्य कर्तव्य है; सामन्तोंके पक्षमें भी उसी प्रकारसे अकृत्रिम राजभक्ति दिखानेके साथ अधीश्वर प्रभुकी आज्ञा पालन करना उचित है । दोनोंमें व्यतिक्रम होनेसे वीर तेज राजपूत सामन्त और राजामें महाअसंतोषदायक कार्य उपस्थित होता है रजवाडेके राजपूत राज्योंमें प्रथमसे ही सामन्तोंके शासनकी रीति प्रचलित है, इस कारण सैकडों वर्षोंसे सामन्त ही समस्त राजनैतिक स्वत्वाधिकारको भोगते आते हैं । उन सम्पूर्ण राजनैतिक स्वत्वोंपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप होनेसे राज्यमें अनेक विपत्तियाँ आई हुई दृष्टि आती हैं, इस कारण राजपूत राजाओंके पक्षमें जिस भाँतिसे सामन्तोंके उस समस्त राजनैतिक स्वत्वको अक्षत रखकर राज्यशासन करना कर्तव्य विचारा गया है, सामन्तोंके पक्षमें भी उसी प्रकारसे अपनी निर्दिष्ट की हुई राजनैतिक सामर्थ्यकी सीमाका उल्लंघन करना उचित नहीं है । महाराज रामसिंहके शासनके समयसे आमेरके सामन्तोंमें किसी प्रकारका असंतोष वा अशांति आजतक दृष्टि नहीं हुई । वर्तमान समयके महाराज माधोसिंहने भी सामन्तोंके ऊपर विशेष दया करके राज्यके अनेक भागोंमें सम्भ्रान्त विश्वासी सामन्तोंको नियुक्त कर परोक्षमें उनके हाथमें राज्यके अनेक विषयोंके शासनका भार अर्पण किया

है, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि आमेरके सामन्तोंमें बहुतसे अल्पबुद्धिवालोंने बीच २ में प्रायः एक अत्यन्त अप्रयोजनीय घटना उपस्थित की थी।

"जयपुरमें स्थित रेसिडेण्टके मतसे जाना जाता है कि, जयपुरकी सीमाके अन्तमें पुलिसका बंदोबस्त और व्यवस्था प्रयोजनके अनुसार न होनेके कारण क्रमानुसार पंजाबसे उचित अनुयोग उपस्थित होता था। इसीलिये जयपुरके राजदरबारमें उक्त सीमामें स्थित सामन्तोंको इसके सम्बन्धमें यह दृढ आज्ञा दी गई कि उनकी इस आज्ञाका देना वास्तवमें अत्यन्त ही प्रयोजनीय था, पर दुर्भाग्यवश उस आज्ञापत्रकी भाषा कुछ कठोर हो गई, इस कारण शेखावाटीके सामन्तगण और दूसरे सामन्तगणोंने समझा कि जिन छोटे २ विषयोंमें बहुत कालसे हमारी क्षमता चली आती है, अब महाराज हमारी सामर्थ्य लोप करनेमें प्रवृत्त हुए हैं, इससे भयानक घटना उपस्थित हुई और उसी घटनासे उक्त सामन्त राज्यके अन्यान्य सामर्थ्यशाली सामन्तोंने एक साथ मिलकर एक प्रबल प्रतिवाद उपस्थित किया"।

"सन् १८८३ ई०के गत जनवरी महीनेमें जिस समय गवर्नर जनरलके एजण्ट यहाँ आये थे उस समय महाराजने उन सामन्तोंको जयपुरमें बुलाया और निष्कपट भावसे सब विषयोंको प्रकाश करके कह सुनाया, विशेष करके धीरज देकर सामन्तोंको सावधान कर दिया जिससे यह झगडा शीघ्र ही मिट जाय, परन्तु एक समय इस झगडेसे भयंकर अनिष्ट होनेके लक्षण दिखाई देते थे +"।

गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजण्टलेफ्टिनेण्ट कर्नल ई. आर. ब्राडफोर्डने इसके संबन्धमें लिखा है, "कि हमारे उपस्थितिके समयमें शेखावाटीके सामन्त जयपुरमें आये तथा दरबार और उनके मध्यमें किसी २ विषयमें जो झगडा उत्पन्न हुआ था, उससे दोनोंमें ही चिरकालतक झगडा रहनेकी संभावना थी, अत्यन्त संतोषका विषय है कि दोनों ओरका अमंगल करनेहारा झगडा दूर हो गया"।

महाराज माधोसिंह जितनी दया सामन्तोंके ऊपर करते हैं उतने ही वह उनके राज्यकी बढती करते हैं, अधिक क्या कहैं, जबतक सामन्त भलीभाँतिसे शिक्षा प्राप्त न कर सकैं तबतक संपूर्ण मंगल और शान्तिकी आशा नहीं है। सामन्तोंके पुत्रोंको विद्याकी शिक्षाके लिये यद्यपि राजधानी जयपुरमें उपयुक्त विद्यालय स्थापित है और अनेक दिनोंसे बडी २ तैयारियाँ हो रही हैं परन्तु जिससे सामन्तोंके कुमार विद्या पढ़नेमें भलीभाँतिसे मन लगावैं, उस विषयमें भी महाराजका विशेष ध्यान है और कुमारोंको उत्साहित करना उनका एकान्त कर्तव्य है, राज्यकी प्रजा जितनी शिक्षित और बुद्धिमान् होगी उतना ही राज्यका मंगल होगा।

इस बातको अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि भारतके देशीय राजाओंके मंगलके निमित्त जगदीश्वरने गवर्नमेण्टके हाथमें भारतके भाग्यका भार अर्पण किया है।

+ Report of the political Administration of the Rajputana state or 1882-1883.

जिन राजपूतराजाओंने सात सौ वर्षतक यवन सम्राटोंकी अधीनता स्वीकार की थी। इस समय वही राजपूत बृटिश गवर्नमेण्टके अधीनरूपसे गिने जाते हैं, उन्हें उस बृटिश गवर्नमेण्टके साथ सद्भावकी रक्षा करना अवश्य ही कर्तव्य है। महाराज रामसिंह बहादुर सामयिक राजनीतिकी विद्यामें विशेष पारदर्शी थे, इसी कारणसे उन्होंने गवर्नमेण्टके परम प्रियपात्र होकर विशेष सम्मान प्राप्त किया था, वर्तमान महाराज माधोसिंह बहादुरने भी इसी प्रकारसे गवर्नमेण्टके साथ विशेष प्रीति करके अपने राज्यका मंगल साधन किया है। हम सरलतासे ऐसी आशा कर सकते हैं कि "बृटिश रेसिडेण्टने लिखा है कि गवर्नमेण्टके साथ जो सम्पूर्ण संधिका संबन्ध नियत हुआ था इस समय विश्वासके साथ उसका पालन किया जा रहा है, और महाराज भी उनके दरबारके साथ बृटिश रेसिडेण्टके संबन्धमें सम्पूर्ण प्रीतिजनक हैं"। बृटिश रेसिडेण्टने जब कि स्वयं उक्त मंतव्यको प्रकाश किया है तब अवश्य ही यह मानना होगा कि महाराज माधोसिंहने महाराज रामसिंहकी अवलंबित नीतिका अनुसरण किया है।

भारतके पतनका कारण देशी राजाओंमें अविश्वासका होना है; अनैक्यता विवाद, विसम्वाद और स्वजातिविद्वेष है। यदि देशीय समधर्मका अवलंबन करनेवाले राजा परस्पर विश्वास स्थापनके साथ साथ एकताके सूत्रमें बँधे रहते तो भारतका वर्तमान मानचित्र अवश्य ही भिन्नवर्णसे रँगा जाता। वर्तमान बृटिश गवर्नमेण्टके शान्तिपूर्ण शासनसे देशीय राजा प्रतिवासी एक धर्मका अवलंबन करनेवाले राजाओंके साथ जितनी अकृत्रिम मित्रताके सूत्रमें बँधेंगे उतना ही भविष्यमें मंगलदायक बीज बोया जायगा। अत्यंत संतोषका विषय है कि आमेरराज माधोसिंहके साथ रजवाडेके अन्यान्य राजाओंकी विशेष मित्रता विराजमान है। जयपुरके रेसिडेण्ट मि० स्टेटनने लिखा है, "कि निकटवर्ती देशोंमें राजाओंके साथ इस प्रकारसे मैत्रीभाव साधारणतः विराजमान है। वास्तवमें उस मित्रतासे ही कितने राजाओंने जयपुरकी प्रदर्शनीमें बहुमूल्य द्रव्योंको भेजा। यदि इनमें मित्रता न होती तो ऐसी आशा कहाँ थी *"

वर्तमान महाराज माधोसिंहके सम्बन्धमें राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है। हम इस स्थानपर उसको प्रकाश करनेके साथ जयपुरराज्यके इतिहासका उपसंहार करनेकी अभिलाषा करते हैं! कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "अभिषेकके पीछे महामान्य महाराजने स्वयं शासन कार्यमें भली भाँतिसे मन लगाया और उन्हें पहिले सम्पूर्ण विषयोंमें अभिज्ञता प्राप्त करनेका कोई सुअवसर नहीं मिला। वर्तमान समयमें शीघ्रतासे उन संपूर्ण विषयोंमें अभिज्ञता प्राप्त करके वह विशेष आग्रहान्वित हुए। जयपुरका भविष्य मंगल किस प्रकारसे सूचित होगा, उस संबन्धमें मन्तव्य प्रकाश करना वर्तमान समयमें असामयिक है, परन्तु महाराज इस समय अपने राज्यके शासन संबन्धमें जिस प्रकारसे दृष्टि रखते हैं, यदि इसी

---

* Report of the political Administration of the Rajputan states for the 1882-83.

प्रकारसे दृष्टि रखते रहे तथा प्रत्येक विभागकी कार्यकारिता संपादनके लिये उन्होंने जिस प्रकारका आग्रह प्रकाश किया है यदि क्रमानुसार उसी प्रकारसे आग्रह प्रकाश करते रहे तो यह सरलतासे अनुमान किया जा सकता है कि अधिक उन्नतिशील अन्यान्य देशीयराज्योंके साथ जयपुर सबसे अग्रणीय हो जायगा। " बृटिश रेसिडेण्टका यह मन्तव्य वर्तमान महाराजके संपूर्ण गुणोंका परिचायक है। महाराज माधोसिंहके शासनसे जयपुरमें जो भविष्यमें उन्नतिकी संभावना है उससे मंगलकी निःसंदेह आशा की जा सकती है, इसको ही हम मुक्तकंठसे स्वीकार कर सकते हैं, कि महाराज माधोसिंह दीर्घजीवन प्राप्त कर जयपुरके सिंहासनको उज्ज्वलतासे प्रकाशमान और गौरवान्वित करेंगे, भविष्यमें इतिहासलेखक उनके शासनवृत्तान्तको उज्ज्वलतासे चित्रित करनेमें समर्थ हों, जगदीश्वरसे हमारी यही प्रार्थना है।

आठवां अध्याय ८.

जयपुरकी चारों सीमाएँ और भूपरिमाण-अधिवासी जनोंकी संख्या-जातिविभाग-सीमा-जाट-ब्राह्मण, कछवाहे, राजपूत-जयपुरकी मृत्तिका-कृषि उद्भिज-राजस्व-अन्य जातिकी बनाई आमेरके अधिकारी सग्रह प्रदेशोंकी सूची-प्राचीन राजकरकी सूची-वर्तमान राजकर-वाणिज्य-लवणविभाग-पूर्त्तकार्यका विभाग-शिल्प-रेलवे-टेलीग्राफ-स्वास्थ्यविभाग-चिकित्साविभाग-शान्तिरक्षाका विभाग, विशेष शान्तिरक्षाविभाग-जयपुरका कालिज-चांदपोलविद्यालय-राजपूतविद्यालय--संस्कृतकालिज-प्रथम शिक्षाविद्यालय—सहायताकारी विद्यालय-मेओकालिज—स्त्रीशिक्षा-समरविभाग—सामन्तोंकी प्राचीन और आधुनिक सूची-जयपुरके कुछेक बडे और प्राचीन ऐतिहासिक स्थान।

इतिहास जाननेवाले टाड साहबने जयपुर राज्यके भौगोलिक और भीतरी अन्यान्य विवरण एक स्वतंत्र अध्यायमें लिखे हैं। हम उन सब विवरणोंको वर्तमान समयके कुछ जाननेयोग्य समाचारोंके साथ इस समय पाठकोंको विदित कराते हैं।

कर्नल टाड साहब सबसे पहिले लिखते हैं " हम कछवाहे जातिकी सृष्टि और विस्तारका विवरण लिखते हैं। अवश्य ही यहां ऐसे कितने मनुष्य विद्यमान होंगे जो आठसौ वर्षोंमें पन्द्रह हजार वर्गमील पृथ्वीपर विस्तृत प्रत्येक कछवाहे वंशके इतिहास जाननेको और चालीस हजार कछवाहोंके नंगी तलवार हाथमें लेकर अपनी जन्मभूमि और राज्यकी रक्षाके लिये खडे होनेके वृत्तान्तको न जानना चाहते हैं। " जन्मभूमि " यह शब्द इन्द्रजालके मंत्रके समान राजपूतोंके हृदयमें अपने प्रकाशसे प्रबल पराक्रम उत्पन्न कर देता है। राजपूत भ्रमसे भी अपनी स्त्रीका नाम मुखसे नहीं निकालते और जन्मभूमिके नामको सम्मानके साथ किसीके न लेनेसे उसी समय तलवारें खिंच जाती हैं। इस संबन्धके अनेक ज्ञातव्य विषय इस इतिहासके अनेक स्थानोंमें प्रकाशित

हुये हैं, किन्तु अनभिज्ञ परदेशी (विदेशीय) बड साहसके साथ कहते हैं कि राजस्थानमें स्वदेश हितैषिता और कृतज्ञता बोधक कोई शब्द प्रचलित ही नहीं है "। हम कहते हैं कि जो विदेशी राजपूतोंकी देशहितैपितापर सन्देह करते हैं उन्होंने राजपूतजातिका मर्म नहीं जाना।

चारों सीमाएं और भूमिका नाप।

टाड साहब फिर आमेर राज्यकी सीमाके सम्बन्धमें लिखते हैं। आमेर और उसकी राजधानीके चारों ओरकी सीमा मानचित्रसे भली भांतिसे जानी जा सकती है। पश्चिममें मारवाडकी सीमाके अन्तमें सांभरहृदतक,पूर्वमें जाटसीमाके उस पार ग्रौथनगरतक, आमेर सबसे बडा प्रदेश है। यह गवर्नमेंट मीलसे एकसौ बीस मील चौडा और उत्तरसे दक्षिणमें शेखावाटी समेत एकसौ अस्सी मील लम्बा है। इसकी आकृति एकसी नहीं है। हम अनुमान कर सकेत हैं कि, खास आमेर राज्यकी पृथ्वी नापमें नौ हजार पांचसौ वर्गमील है, और उसके अधीनमें शेखावाटीकी पृथ्वीका नाप पांच हजार चार सौ वर्ग मील है,समस्त पृथ्वीका नाप चौदह हजार नौ सौ मील है। आचिसन साहबने सन् १८६४ ईसवीमें लिखा है "जयपुरराज्यकी पृथ्वीका नाप १५००० वर्ग मील है। किंतु बाबू लोकनाथ घोषने अपने बनाये ग्रन्थमें लिखा है कि आमेरकी पृथ्वीका नामी १५२५० वर्ग मील है।

अधिवासी।

आमेरराज्यकी भिन्न २ जातिके आदि निवासियोंके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहबने लिखा है इस राज्यके रहनेवालोंकी संख्या ठीक २ कितनी है, उसका अनुमान करना सहज काम नहीं है, किन्तु विश्वाससे ऐसा जान पडता है कि आमेरके प्रत्येक मीलमें १५० और शेखावाटीके प्रत्येक मीलमें ८० मनुष्य बसते हैं।

दोनो प्रदेशोंकी संख्या मिलानेसे १२४ मनुष्यके हिसाबसे १८५८७० मनुष्य होते हैं और जब हम विचारते हैं कि इस राज्यमें बहुत मनुष्योंसे भरपुरे बडे २ मकान विराजमान हैं तब उक्त संख्यामें शंका हो जाती है। सब चार हजार गांव और नगर हैं और शेखावाटीके गांव और नगरोंकी संख्या उससे आधी है। आचिसन साहब सन्-१८६४ ई० में और म्यालिसन साहबने सन् १८७४ ईसवीमें आमेरकी मनुष्यसंख्या १९००००० बताई है और बाबू लोकनाथ घोषने उनके पीछे १९९५००० मनुष्य संख्या लिखी है। चिरकालसे रहनेवाली शान्तिके सूत्रमें आमेरराज्यकी मनुष्य संख्या क्रमानुसार बढी है यह सहजमें ही जाना जाता है।

जाति विभाग।

कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "उक्त निवासियोंमें भिन्न जातिकी सम्प्रदाय और उसकी संख्याका निर्णय करना अत्यन्त कठिन है यद्यपि इसको हम विश्वासके साथ कह सकते हैं कि यथार्थ राजपूतोंकी संख्या अन्यान्य जातिकी समष्टिकी अपेक्षा

अत्यन्त थोडी है, परन्तु यहांके आदि निवासी मीनाजातिके अतिरिक्त और अन्याय प्रत्येक जातिकी अपेक्षा राजपूत जातिकी संख्या अधिक है। बडे आश्चर्यका विषय है कि आजतक मीनोंकी संख्या अत्यन्त अधिक है। निम्नलिखित कई एक जातिके प्रधान नाम लिखे गये हैं, पाठक उसके अनुसार इनकी संख्याका अनुमान कर सकते हैं।

१-मीना।　　४-वैश्य।
२-राजपूत।　　५-जाट।
३-ब्राह्मण।　　६-धाकर वा किरार (कीरात)
७-गूजर"

मीना-"जाति भिन्न २ बत्तीस सम्प्रदाय वा श्रेणियोंमें विभक्त है, यदि उनकी प्रत्येक सम्प्रदायका विषय वर्णन किया जाय तो ग्रन्थ बहुत बढ जायगा। रजवाडेके प्रत्येक राज्यमें यह मीनाजाति बहुतायतसे निवास करती है, हमने एक स्वतन्त्र अध्यायमें उसका वर्णन करना उचित समझा है। मीनागण आमेर राज्यमें सब राजनैतिक स्वत्वाधिकार और अनुग्रह भोग करते हैं, नरवरके निकाले हुए नरपति मीनोंके द्वारा ही आमेरके अधीश्वर पदपर अभिषिक्त हुए थे, इसका प्रमाण पाया जाता है। मीना जो स्वत्वाधिकार भोगते थे, इससे यह भी निःसन्देह प्रकाशित होता है कि आदिमें कछवाहे राजाने इनको जीत कर इनपर अधिकारका विस्तार नहीं किया था, किन्तु मीना गणोंने अपनी इच्छासे उनको अधीश्वर पदपर वरण करलिया था, कारण कि कालीखोह नामक स्थानसे मीना; जयपुरके प्रत्येक नरपतियोंके अभिषेकके समयमें उनके मस्तकपर अपने शरीरसे रुधिर निकाल कर तिलक करते थे। वृद्धके पैरके अंगूठेमेंसे रुधिर निकालकर उसीसे तिलक किया जाता था, यद्यपि इस प्रकारसे इस समय टीका देनेकी रीति और और भी अनेक प्राचीन व्यवहार और प्रथाएँ (जैसे मेवाडके रानाका भीलद्वारा अभिषेक) उठगई हैं, परन्तु यह दोनों ही निःसन्देह इसको प्रमाणित करते हैं कि वर्तमान समयमें पतित यह मीनागण आदिमें इस देशके अधीश्वर थे। मीनागण आजतक आमेरके अधीश्वरके यहां अत्यन्त विश्वासी पदपर नियुक्त हैं। जयगढके धनागार और राजकीय कागजपत्रोंके देखनेमें नियुक्त हैं, राजधानीमें यह आमेरराज्यके शरीरकी रक्षा अर्थात् प्रहारितामें नियुक्त हैं, और राजाके अन्तःपुरकी रक्षाका भार भी इन्हींने हाथमें सौंपा गया है। आमेरके कछवाहे राजवंशके प्रथम अभ्युदयके समय यह मीनागण राजकीय समस्त चिह्नोंका व्यवहार करते थे,और आमेरपतिके जीवनकी रक्षाका भार भी उन्हींके हाथमें था, परन्तु परिणाममें इनकी उस राजकीय ध्वजा पताकाका व्यवहार अत्यन्त ही असंगत विचारा गया,और उनका वह स्वत्वरहित किया गया। अन्तमें मीनागणोंने नक्कारा और पताकाके व्यवहार करनेके लिये अनुमतिकी प्रार्थना की। आमेरराजने उसको भी असंगत विचारा। इस कारण रक्तपातके पीछे उन उपद्रवोंकी मीमांसा हुई। मीना, जाट, किरार वा किरात जाति ही आमेरकी प्रधान कृषिव्यवसायी थी, और उनमें बहुतसी कृषिक्षेत्रकी अधिकारिणी थी"।

जाट-"जाटोंकी संख्या मीनाओंके समान है, इनके अधिकारी देशोंकी संख्या भी प्रायः समान है, और सम्पूर्ण किसानोंमें यही सबसे अधिक श्रमशाली हैं"।

ब्राह्मण-"ब्राह्मण जाति अध्यापन और पवित्र धर्मकार्यमें भी अनेक लगे हुए हैं। सम्पूर्ण रजवाडेमें आमेरके धर्मकार्यमें लिप्त ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है, परन्तु इससे हम ऐसा अनुमान नहीं कर सकते कि आमेरके राजा सबसे अधिक धार्मिक हैं, वरन् इसके विपरीत सिद्धान्त है"।

"कछवाहे वा कछवाह राजपूत जातिके सम्बन्धमें इतिहासवेत्ता लिखते हैं कि यदि आवश्यक हो, यदि जातीय समरमें कछवाहे सामन्त-वृन्दके हृदयपर स्वजातिकी हितैषिता प्रकाशित हो जाय तो रणक्षेत्रमें वह एक पिताके वंशीय, तीस हजार आत्मीय राजपूतोंको इकट्ठा कर सकते थे, इस समय ऐसा अनुमान हो सकता है कि उस तीस हजारमें नरूका संप्रदाय और शेखावाटी सामन्तोंको भी लिया जायगा; यद्यपि कछवाहे गणोंने सर्वजनप्रिय पजोनी, राजामान और मिरजाराजा इत्यादिके समान राजाओंके अधीनमें अन्यान्य जातिके सदृश वीरता प्रकाश करके अपनी प्रशंसाको संग्रह किया था, परन्तु वर्तमान समयके राठौर जैसे साहसी और विक्रमी विख्यात हैं,वह उस प्रकारसे विख्यात नहीं हुए। मुगल बादशाहके साथ विशेष घनिष्ठ संबन्ध और उन यवनोंके कदाचारका अनुसरण करनेसे उनकी अवनति हुई तो थी, परन्तु महाराष्ट्रोंके द्वारा उनकी सबसे अधिक अवनति हुई"। "कछवाहे राजपूत जातिके सम्बन्धमें साधु टाड साहबने ऊपर जो मन्तव्य प्रकाश किया है, उनके पहिले अंशका हम समर्थन नहीं कर सकते। मुगलसम्राट्के साथ घनिष्ठताके कारण कछवाहोंका पतन नहीं हुआ, वरन् उन्नति हुई। महाराज मानसिंह, मिरजाराजा जयसिंह और सवाई जयसिंह मुगलसम्राट्के अधीनमें अपनी सेनाको नियुक्त करके समस्त भारतवर्षमें कछवाहोंकी सेनाके अतुलनीय बलविक्रमका चूडान्त प्रमाण दिखा गये हैं; जबतक बारम्बार दीर्घकालतक कठिन महाराष्ट्रोंके दस्युदलने कछवाहोंकी जातीय जीवनशक्तिकी जडमें दारुण आघात न किया, और उससे कछवाहोंकी जाति पूर्व वीरत्व और बलविक्रम तथा साहससे हीन न हुई तबतक हमारा यही न्यायसंगत अनुमान है अर्द्धशताब्दीके पहिले कर्नल टाड कछवाह जातिके सम्बन्धमें जो मन्तव्य प्रकाश कर गये हैं, इस समय हम उसकी अपेक्षा संतोषदायक मन्तव्य प्रकाशित करनेमें असमर्थ है। कछवाहोंकी जाति विधाताकी गतिसे इस समय मानो अनन्त निद्रामें मग्न है। राजपूत जातिका बलविक्रम साहस और शूरता मानों उनके हृदयमें चिरकालसे निद्रित हो रही है। जगदीश्वर जाने किस समय वह निद्रित सद्गुणावली कछवाहजातिको फिर भारतके नवीन प्रशंसनीय अभिनयसे उत्कृष्ट करेगी।

मृत्तिका, कृषि, उद्भिज-कर्नल टाड साहब जयपुर राज्यके कृषिकार्यके संबन्धमें लिखते हैं कि ढूंढाड़ राज्यमें सब प्रकारकी मृत्तिका पाई जाती है, तथा खरीफ वा हैमन्तिक एवं रवी वा वसन्ती शस्य दोनों फसलें ही समान अंशोंमें उपजती हैं।

हैमन्तिक धान्यमें ज्वारकी अपेक्षा बाजरा अधिक होता है, और वसन्ती धान्यमें गेहूंकी अपेक्षा जौ अधिक उत्पन्न होता है। हिंदुस्थानमें सर्वत्र जिस प्रकार अन्यान्य धान्य और फल मूलादि उत्पन्न होते हैं, आमेरराज्यमें भी वह बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं, इस कारण उन सबके संबन्धमें विशदरूपसे वर्णन करनेका प्रयोजन नहीं है। पहिले ईख बहुत होती थी परन्तु कई एक कारणोंसे विशेष करके अधिक लगानसे किसानोंको इसमें बहुतसा नुकसान उठाना पडा। इस कारण अब ईखकी पैदावारी बहुत न्यून हो गई है, पाहिले ईखकी खेती पर फी बीघे ४) चार रुपयेसे लेकर छः रुपये तक कर नियत हुआ था, परन्तु अब अग्रिम साठ रुपये लेकर ईखकी खेती करने देते हैं। आमेर राज्यके अनेक स्थानोंमें रुई बहुतायतसे होती है, और भारतवर्षके नील इत्यादि वर्ण भी यहाँ यथेष्ट उत्पन्न होते हैं, रजवाडेके अन्य स्थानोंमें जिस प्रकारके हलका व्यवहार होता है, यहाँके हल भी उसी प्रकारके होते हैं।

अर्द्ध शताब्दीके पाहिले आमेरराज्यके राजस्वके संबन्धमें इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं, कि "इस देशके राजस्वकी अवस्था चिरकालसे समान नहीं रही है, कभी बढ़ जाती और कभी घट जाती थी, इस कारण राजस्वका ठीक हिसाब करना अत्यन्त कष्टसाध्य है, हमें अतीत और वर्तमान कालके राजस्वके संबन्धके कितने ही हिसाबके पत्र मिले थे। राजदरबारकी जिन बडी पुस्तकोंपर राज्यके प्रत्येक जिलेका नाम, विवरण, राजस्व, नागरिक कर, वाणिज्य शुल्क और अन्यान्य नाना प्रकारकी आमदनीका वृत्तान्त लिखा हुआ था। परंतु वह सब हिसाब पाठकोंके पक्षमें सुखदायक न होगा, इस लिये हमने उसे प्रकाशित नहीं किया। ढूंढाड अर्थात् जयपुर राज्यका खास राजस्व, सामंतोंकी अधिकारी भूमिका राजस्वकर, वाणिज्य शुल्क इत्यादिकी सब आमदनी एक करोड रुपयेकी थी परंतु जिस समय एक करोड रुपयेकी आमदनी सब मिलाकर होती थी, उस समय कठिन महाराष्ट्रों और माचेडीके नरूका सामंतोंने आमेरराज्यके सत्रह समृद्धिवान् ग्राम और नगर आमेरसे छीन लिये थे इसी कारणसे राज्यकी आमदनी बहुत घट गई थी।

आमेरके जो सत्रह प्रदेश महाराष्ट्रों तथा अन्य मनुष्योंने छीन लिये थे, कर्नल टाढ साहबने नीचे उनकी सूची प्रकाश की है।

१ कामा २ खोरी ३ पहाडी	जनरल पीरनने अपने प्रभु सेंधियाके लिये यह तीन देश आमेरसे छीन लिये थे; पीछे जाटोंने इसपर इजारा किया था और उन जाटोंने तीनों देशोंपर अपना अधिकार कर लिया।

४ कान्ति

५ उकरोद

६ पुन्दापुन

७ गाजीका थाना

८ रामपुरा (खिरदा) ...... माचेडीके रावके अधिकारमें

९ गौनराई

१० रान्नाई

११ पूर्वानाई

१२ मौजपुर वरसाना

१३ कानोढ वा कानौद[1] } डिवाइनने लेकर मुरतजाखाँ भेडचको दिये तथा लार्ड लेकने इसमें अपनी संमति दी।

१४ नारनौल

१५ कोट पूतली सन् १८०३-४ईसवीके समरमें महाराष्ट्रोंके निकटसे लार्ड लेकने छीनकर खेतरीके अभयसिंहको दे दिया।

१६ टोंक } राजा माधोसिंहने हुलकरको यह दोनों देश दे दिये। लार्ड
१७ रामपुर } हेष्टिंगसने अमीरखाँको इन देशोंका अधिपति किया।

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं कि "यह अवश्य ही स्मरण करना उचित है, कि बहुत थोडे समय पहिले यह देश ढूंढाडराज्यके प्रधान अंशस्वरूप थे और इनमें अधिकांश यवन सम्राट्के अधिकारमें थे, आमेरके राजा यवनसम्राट्के प्रतिनिधिस्वरूपसे उक्त देशोंको जायदाद अर्थात् सेनादलके वेतनके हिसाबसे भोगते थे। अर्द्धशताव्दी पहिले राजा पृथ्वीसिंहके शासन समयमें आमेरराज और उसके अधीनस्थ करद सामन्तोंकी सब आमदनी ११ लाख रुपये थी, और राजा प्रतापसिंहके शासनके शेष वर्षमें अर्थात् संवत् १८५८ सन १८०२ ईसवीमें आमदनीका हिसाब १९ लाख रुपया था ऐसा अनुमान होता है।

संवत् १८५८ में जिस समय महाराज जगत्सिंह सिंहासनपर विराजमान हुए, साधु टाड साहबने उस समयकी आमदनीकी निम्नलिखित सूची प्रकाश की है:—

"खालसा वा खास भूमिकी आमदनी।

राजाके निज तत्त्वावधानसे रक्षित वा
जमाबंदी... ... ... २०५५००० रुपया।

देवदी ताल्लुका. (राजाकेअन्तःपुर खर्चके लिये नियुक्त) ५००००० "

शागिर्द पेशा (राजदरबारके सेवकोंके लिये नियत की
हुई देशोंकी आमदनी) ... ... ३००००० "

राजमंत्री और दीवान कर्मचारियोंकी अधिकारी भूमिकी
आमदनी... ... ... २००००० "

सिलहपोष नामक अस्त्रधारी सेनाकी जागीरोंकी आमदनी १५०००० "

दसदल पैदल और अश्वारोही सेनाकी जागीरोंकी आमदनी ७१४००० "

खास आमदनी ... ... ३९१९००० "

जयपुरके सामन्तोंके द्वारा शासित देशोंकी आमदनी १७००००० "

---

(१) आमेरके बारह प्रधान सामन्तोंमें अन्यतर अमरसिंह खांगरोत इन देशोंके अधीश्वर थे।

ब्राह्मणोंको दी हुई उदक वा ब्रह्मोत्तर भूमिकी आमदनी	१६०००० रुपया।
दान और मौपा अर्थात् राज्यके भीतरी वाणिज्य शुल्क एवं कृषिशुल्क...	१९०००० "
राजधानी जयपुरकी कचहरी (नागरिक शुल्क जुरमाना इत्यादि)	२१५००० "
टकसाल...	६०००० "
हुंडी भाडा बीमा इत्यादि	६०००० "
फौजदारी(समस्त आमेरके वार्षिक जुरमानेकी आमदनी)	१२००० "
फौजदारी, जयपुरराजधानीके जुरमानेकी आमदनी ...	८००० "
बिदत अर्थात् काछाविर (सामान्य२जुरमानोंकी आमदनी)	१६००० "
सब्जीमंडी अर्थात् बाजारोंकी आमदनी	३००० "
कुल जोड ...	७७८३००० रुपया,
शेखावाटी देशकी आमदनी	३५०००० रुपया.
राजावत और जयपुरके अन्यान्य सामन्तोंके निकटकी आमदनी...	३००० "
हाडौतीके सामन्तोंकी आमदनी	२०००० "
शेखावाटीकी आमदनीका जोड	४००००० "
सब मिलाकर ...	८१८३००० रुपया.

ऊपर लिखी हुई तालिका प्रकाशके साथ साधु टाड साहब इस प्रकारसे अपना मन्तव्य प्रकाश करते हैं, कि "जगत्सिंह जिस समय सिंहासनपर विराजमान हुए उस समय राज्यकी आमदनी अस्सी लाख रुपयेसे अधिक थी, उसकी आधी खालसा अर्थात राजाके निज अधिकारी देशोंकी आमदनी थी, रजवाडेके अन्यान्य समस्त राजाओंकी अपनी आमदनीसे यह प्रायःदुगुनी थी। गवर्नमेंटके साथ जब संधि हुई उस समय इनकी निज आमदनी ४० लाख रुपयेमेंसे वार्षिक आठ लाख रुपया करस्वरूप अंग्रेजी गवर्नमेंटको देना स्वीकार हुआ था और ४० लाख रुपयेसे जितनी अधिक होती जाय उसके सोलहवें अंशका पांचवा अंश अतिरिक्त कर देना निश्चय हुआ।

यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि इतिहासवेत्ता कर्नल टाड अर्द्ध शताब्दीके अधिकाल पहिले जयपुरकी आमदनीके संबन्धमें उक्त मन्तव्य और तालिकाको प्रकाश कर गये हैं पर उक्त समयके पीछे जयपुरकी अवस्था अवश्य ही बदल गई। सन् १८६४ ईसवीमें आचिसन साहब लिखते हैं, " जागीर और धर्मसंबन्धी दानसूत्रसे राज्यकी आमदनी बहुतायतसे घट गई, राजाको सब ३६००००० रुपयामात्र प्राप्त होते हैं।

(१) बरवारा खीरनी सावर ईशरदा इत्यादि।
(२) बसवान और इन्द्रगढ।

सांभर हृदका अधिकांश भी जयपुरके नरेशके अधिकारमें है, उस हृदसे जो लवण उत्पन्न होता है उससे राज्यको ४०००० रुपयेकी आमदनी होती है।"*

कर्नल म्यालिसनने जयपुरपतिकी समस्त आमदनी ३६ लाख रुपया लिखी है और गवर्नमेण्टके संधिपत्रके मतसे वार्षिक आठ लाख रुपयेके बदले चार लाख रुपया कर निश्चय किया गया है, यह पाठकोंने इतिहासमें पढा होगा। यह अत्यन्त संतोषका विषय है कि दीर्घस्थायी शान्ति और सुशासनके गुणसे जयपुरके महाराजकी आमदनी वर्तमान समयमें ४० लाख रुपयेसे भी अधिक होती है। सन् १८८१–१८८२ ईसवीके शासन विवरणसे प्रकाशित होता है कि " सन् १८८०--८१ ईसवीकी आमदनी ५२४२१७६ रुपये और खर्च ५५८६५३० रुपया हुआ. ऐसा अनुमान किया जाता है, परन्तु ठीक आमदनी ५५०११६२ रुपया और खर्च ४९८५८६६ रुपये हुए इसमें ५१५२९६ रुपयेकी बचत हुई, प्रधान २ आमदनीके निम्नलिखित कईएक उल्लेख किये जाते हैं। भूराजस्व (वेतनके परिवर्तनमें प्रदत्त भूमिकी)

आमदनी	२७३४२४८	रुपया
लवणकी आमदनी	७१३६६०	"
वाणिज्यकी आमदनी	७१२९८९	"
सामन्तोंसे जो कर लिया जाता है	५१२४९६	"

व्ययमें निम्नलिखित कईएक प्रधान—

पूर्तकार्यविभाग	४४९९०९	रुपया
सैन्यदल	८०९६७७	"
शासनविभागका व्यय	३४९२७९	"
शिक्षाविभाग	४८३११	"
विशेष दातव्य और धर्मसम्बन्धी वृत्ति इत्यादि ...	२२६४६०	"
राजदरबारमें विवाहका व्यय	२२७४५७	"
वृटिश गवर्नमेण्टको देय कर	४०००००+	"

दूसरे वर्षमें अर्थात् सन् १८८१–८२ ईसवीकी आमदनीके सम्बन्धमें रिपोर्टके वृत्तान्तसे जाना जाता है, कि इस वर्षमें कुल ४९५८७६३ रुपया आमदनी और ४८८५९९ रुपया खर्च हुआ। इस कारण ७२७६४ रुपया बचा। सन् ८०–८१ ई० की अपेक्षा सन् ८१· ८२ ईसवीमें राजस्वकी अवस्था अच्छी नहीं रही। सारांश यह कि राज्यकी आमदनी किसी देशमें किसी समय भी समान नहीं थी। अनेक कारणोंसे राज्यकी आमदनी घटती बढती रहती थी, पाठक अवश्य ही इस बातको स्वीकार करेंगे कि, महाराज जगत्सिंहके शासनके समयमें अथवा उसके पहिले राज्यकी समस्त आमदनी

---

* Report of Rajputana

+ Report of the Political Administration of the Rajputana states for 1882-1883.

जिस प्रकार राजाकी इच्छानुसार ही किसी कार्यमें व्यय होती थी वा स्थल विशेषमें रुपया अपव्यय होता था, वर्तमान समयमें ऐसा नहीं हुआ। मृतमहाराज रामसिंहके शासनसमयसे राज्यकी आमदनी श्रेष्ठ और हितकारी कामोंमें खर्च होती है। वर्तमान महाराज माधोसिंह भी महाराज रामसिंहका अनुकरण करके अनेक कार्य करते हैं।

वाणिज्य--सन् १८८१--८२ ईसवीके आमदनीके घटनेका दूसरा कारण यह था कि, महाराज माधोसिंहने अपने राज्यमें वाणिज्य कार्यकी वृद्धिके लिये सब प्रकारके द्रव्योंपर जो आभ्यन्तरिक वाणिज्य शुल्क बराबर लिया जाता था, अफीमके सिवाय उन्होंने और समस्त वाणिज्य शुल्कको एकबार ही माफ कर दिया। इससे शुल्कके हिसाबसे राजस्व यद्यपि घट तो गया परन्तु अन्तमें वाणिज्यवृद्धिके साथ२ आमदनीकी वृद्धिकी संभावना है। अन्यान्य वाणिज्य द्रव्योंका आभ्यन्तरिक शुल्क जिस प्रकारसे एकबार ही माफ किया गया, उसी प्रकारसे अफीमके ऊपर वाणिज्य शुल्ककी वृद्धि की गई। शासनरिपोर्टसे जाना जाता है कि "गत बारह महीनेके वाणिज्य शुल्ककी आमदनी ७३१०९५ रुपये हुई। पहिले वर्षमें ७२०५४१ रुपया आया था। इससे जाना जाता है कि, वाणिज्यकी क्रमशः श्रीवृद्धि होती जाती है"।

रेल इत्यादिके विस्तारसे वाणिज्यकी उन्नतिकी और भी सम्भावना है, इसका कहना बाहुल्यमात्र है।

लवणविभाग--सांभर ह्रद अधिकांश जयपुर अधीश्वरके अधिकारमें है। बृटिश गवर्नमेण्टने महाराजके साथ एक नवीन संधिपत्र नियुक्त करके महाराजको वार्षिक कई लाख रुपया देना स्वीकार करके उक्त लवणह्रदको ठेकेमें ले लिया है, महाराज उक्त संधिपत्रके मतसे अपने राज्यके किसी स्थानमें भी लवण नहीं बना सकते, इस संधिपत्रसे और बृटिश गवर्नमेण्टको सांभरह्रद देनेसे महाराजको लाभके बदलेमें कितनी हानि हुई है, इसका अनुमान करना असम्भव है, और हम इसका अनुमान सरलतासे कर सकते हैं कि, इससे गवर्नमेण्टको ही अधिक लाभ हुआ है।

पूर्त्तकार्यविभाग-- जयपुरके पूर्तकार्यविभागका नाम एक स्वतन्त्र विभाग है। राजपूतानेके सन् १८८२--८३ ईसवीके शासन विवरणसे जाना जाता है कि, उक्त वर्षमें पूर्तकार्य बिभागमें महाराजने ८ लाख रुपयेसे अधिक खर्च किया, इसके अतिरिक्त इमारतके विभागमें उक्त वर्षमें ९६८४२ रुपया खर्च हुआ था। इस विभागके हाथमें प्रासाद इत्यादिका बनाना, राजमार्गका बनाना या सुधारना, खालखनन, जयपुरकी राजधानीमें जलके कलका विस्तार, ग्रासा लेकिन, साधारण उद्यानकी रक्षा और बनकी रक्षाका भार अर्पण हुआ है।

सन् १८८२--८३ ईसवीमें एकमात्र सरोवरादिके खुदवानेमें इस विभागमें २३८६२४ रुपया खर्च हुआ था। इस विभागमें उक्त वर्षमें सब १४०१५६ रुपया खर्च हुआ है। सन् १८६८ ईसवीसे उक्त वर्षतक खालखनन कार्यमें महाराजका सब १४८०७९४ रुपया खर्च हुआ था। सन् १८७१--७२ ईसवीसे १८७१।

८२ ईसवीतक सब ४४०१२३ रुपयेकी आमदनी हुई, इस खालखननसे कृषिकार्यकी उन्नतिके साथ महाराजकी आमदनीके बढ़नेकी और भी अधिक संभावना है ।

शिल्प-जयपुरके शिल्प द्रव्य समस्त भारतवर्षमें प्रसिद्ध हैं । दीर्घस्थायी शान्तिके कारण एवं मृत और वर्तमान दोनों महाराजोंके व्यय, उत्साह और अनुष्ठानसे उस प्राचीन शिल्पकी उन्नति क्रमशः होती गई, जयपुरके स्वतंत्र विद्यालयमें १८८२।८३ में एक शिल्पशालाकी भी प्रतिष्ठा हुई थी।शिल्पविद्यालयमें सन् १८८२।८३ ईसवीमें १०३ विद्यार्थियोंने शिक्षा प्राप्त की थी । इस विद्यालयमें उपयुक्त शिक्षकोंके द्वारा अनेक प्रकारके शिल्पोंकी शिक्षा दी जाती है । जिससे स्वराज्यमें शिल्पकी विशेष उन्नति हो, उसके प्रति वर्तमान महाराजकी विशेष दृष्टि है । सन् १८८२।८३ में जयपुरके महाराजने बहुतसा रुपया खर्च करके शिल्पप्रदर्शनीका अनुष्ठान किया था, यह उनके शिल्प-प्रेमका प्रमाण आज तक विद्यमान है ।

रेलवे-राजपूताना स्ट्रेट रेलवेका जयपुरराज्यमें १०५ मीलतक विस्तार हुआ है । राज्यमें सब मिलाकर २२ स्टेशन हैं । जयपुरका स्टेशन बडा बना हुआ है; इस रेलके विस्तारसे जयपुरके राज्यमें अनेक प्रकारके असीम उपकार हुए हैं ।

टेलिग्राफ-जयपुर राज्यके समस्त रेलके स्टेशनोंके अतिरिक्त राजधानीमें भी एक टेलिग्राफ आफिस है ।

स्वास्थ्य और पोष्टविभाग-जयपुरराज्यमें बृटिश गवर्नमेण्टके अधीन२०पोष्टआफिस हैं, इसके सिवाय राज्यके अधीनमें पृथक् पोस्टआफिस हैं, उनका कार्य भली प्रकारसे चलता है साधारण प्रजाकी स्वास्थ्यरक्षाके प्रति महाराजका विशेष ध्यान है । राजधानी जयपुरमें एक मिउनिसिपैलिटी है, सम्पूर्ण बातोंमें कुशल पुरुष इस मिउनिसिपैलिटीके सभापति पदपर नियुक्त हैं । राजधानीके स्वास्थ्यकी रक्षा, सौष्टववर्धन, गैसकी रोशनी, राजपथ-परिष्कार संस्कार इत्यादि समस्त कार्य सुन्दरतासे चलते हैं । मिउनिसि-पैलिटीके तत्त्वावधानसे जयपुरकी राजधानीका स्वास्थ्य दिन २ बढता जाता है । कई वर्षोसे केवल राजधानी जयपुरके निवासियोंकी संख्या सब १२५२८५ जन थी सन् १८८२।८३ ईसवीमें राजधानीमें २०८५ पुत्र और १८१४ कन्याएं जन्मी । अतएव सबकी संख्या मिलाकर ३८३९ हुई । इस वर्षमें ११४० पुरुष,११४४ स्त्री और १४०७ शिशु; सब ३५९१ मनुष्य मरे,निम्नलिखित तालिकाके पढनेसे जाना जाता है कि मिउ-निसिपैलिटीके द्वारा नगरमें किस प्रकारसे स्वास्थ्यकी वृद्धि हुई ।

	जन्म	मृत्यु
"१८७९-८० ईसवी०		६६६६ मनुष्य ।
८०—८१ "	२३११	५३५० "
८२—८३ "	३८३९	३५९१ " *

* Report of the political Administration for 1882-3.

जयपुरकी राजधानीके चारों ओर बडी २ दीवारें बनी हुई हैं; मुर्दे फूकनेके लिये नगरसे बाहर भेजे जाते हैं। इस कारण उस नगरके द्वारसे मृत्युकी तालिका ग्रहण करनेका विशेष सुभीता हुआ है।

चिकित्साविभाग—अंग्रेजी चिकित्साकी रीति तथा औषधिके व्यवहार करनेमें राजपूत जाति बहुत दिनोंसे बीतराग थी, परन्तु समयके गुणसे उनमेंसे बहुतसे आजकल अंग्रेजी शिक्षाके पक्षपाती हुए हैं। राज्यके निःसहाय दरिद्रोंके प्राणोंकी रक्षा तथा रोगनिवारणके लिये महाराजने प्रत्येक वर्षमें बहुतसा धन खर्च किया है। ब्रटिश रेसिडेण्टके चिकित्सक डाक्टर हेण्डली महाराजके चिकित्साविभागमें अध्यक्ष पदपर नियुक्त हैं, भारतवर्षके भूतपूर्व मृतकराज्यके प्रतिनिधि अर्ल मेओ, जयपुरके मृत महाराज रामसिंहके परम मित्र थे। लार्ड मेओकी मृत्युसे उनके स्मरणचिह्न स्थापन करनेके लिये महाराजने बहुतसा रुपया खर्च करके एक "मेओहास्पिटल" और चिकित्सालय स्थापित किया था। इसके अतिरिक्त कारागारमें और भी एक अस्पताल है, तथा सब मिलाकर २२ और चिकित्सालय हैं।

सन् १८८२।८३ इसवीमें समस्त अस्पताल और चिकित्सालयोंमें मिलाकर १२२६९ रोगियोंकी चिकित्सा हुई, पूर्व वर्षकी अपेक्षा इस वर्षकी संख्या १४९५९ अधिक रही। संख्या बढनेका कारण यह था कि उक्त वर्षमें दो नवीन विभागी चिकित्सालय स्थापित हुए थे, और एक प्राचीन चिकित्सालय दुबारा स्थापित हुआ था, और प्रजा अंग्रेजी चिकित्साकी विशेष पक्षपातिनी हुई *।

अन्यान्य अनुष्ठानोंके समान जयपुरमें चेचकका टीका देनेकी रीति भी प्रचलित हुई है। सन् १८८२।८३ ईसवीमें सब ३०९९६ मनुष्योंको टीका दिया गया था; पूर्व वर्षकी अपेक्षा इस वर्षमें ११४८५ मनुष्योंको अधिक टीका लगाया गया।

शांतिरक्षाविभाग—जिस राज्यमें सब प्रकारसे शान्ति विराजमान होती है, उस राज्यमें प्रजाकी उन्नति सरलतासे होती है और उसीसे राज्यके मंगल सूचित होते है। अशांति, अत्याचार, उत्पीडन, अराजकता जिस प्रकारसे राज्यको विध्वंस करनेवाले हैं, उसी प्रकारसे प्रजाके प्राणधनकी रक्षा और वाणिज्य कृषिके व्याघात निवारणसे शान्ति होकर राज्यकी उन्नतिके द्वार स्वतः ही खुल जाते हैं। जयपुर महाराजकी प्रार्थनासे पंजाबके लेफ्टिनेण्ट गवर्नर एक्स्ट्रा असिस्टेण्ट कमिश्नरने महाराज किशन नामक एक योगपात्रको जयपुरमें शांतिरक्षाके विभागपर अध्यक्ष करके भेजा।

उन्होंने उस पदको ग्रहण करके आमेरमें शान्ति स्थापित की थी। शान्तिरक्षा विभागकी अवस्था इस समय संतोषदायक है।

---

* Report of Political Administration of the Rajputana states for the 1882-1883.

गिराई वा विशेष शांतिरक्षाविभाग–बृटिशभारतवर्षमें जिस प्रकार ठगी और डकैतीको निवारण करनेके लिये एक स्वतन्त्रविभाग है। जयपुरके महाराजने भी अपने राज्यमें इसीप्रकारसे डकैती, राजमार्गमें तस्करता और राज्यकी सीमाके अन्तमें उपद्रव इत्यादिको दूर करनेके लिये एक स्वतन्त्र शांतिरक्षाके विभागकी सृष्टि की। यह गिराई पुलिसके नामसे विख्यात है। कुँवर नारायणसिंह नामक एक साहसी कार्याध्यक्ष मनुष्य इस विभागके अध्यक्ष हैं, इसके शासनसे आमेरराज्यमें इस समय समस्त प्रजा निर्भय होकर वाणिज्य और कृषिकार्यमें लग रही है।

कारागार–जयपुरके कारागारकी अवस्था इस समय बहुत उत्कृष्ट है, पाठकोंने कर्नल साहबके लिखे हुए इस इतिहासके अनेक स्थानोंमें राजपूत राज्यके कारागारोंके शोचनीय वृत्तान्तको पढा होगा। कारागारके अनेक स्थान यमालय स्वरूप थे। कैदी अनेक स्थानोंपर अनाहार दण्ड पाकर उसी कारागारमें. बन्द रहते थे। जयपुरके कारागारकी वर्तमान अवस्था उससे सम्पूर्ण विपरीति है। सभ्य रीतिसे इस समय कारागार बनाये गये हैं और कैदियोंको इस समय शिल्प इत्यादि अनेक विषयोंकी शिक्षा दी जाती है, और कैदियोंके स्वास्थ्यकी ओर भी विशेष ध्यान रहता है। जयपुरके गतवर्षके शासनवृन्तान्तसे जाना जाता है कि, सन् १८८२—८३ ईसवीमें वहांके कारागारमें प्रतिदिन ६०० कैदी बन्दी रहते हैं, पहिले "वर्षकी अपेक्षा इनकी संख्या बहुत कम है। उक्त वर्षमें कैदियोंने जिन शिल्प द्रव्योंको बनाया था उनको बेंचकर १४१८ रुपयेकी आमदनी हुई।"

सतीदाह–यद्यपि बहुत दिनोंसे सतीदाहकी रीति एकसाथ ही लोप हो गई है; परन्तु इस समय बीच२में अनेक राजपूत स्त्रियां मृतक स्वामीके साथ चितामें भस्म होनेकी चेष्टा करती हैं। यद्यपि सबकी वह चेष्टा सफल नहीं हुई, परन्तु एक दो स्थानपर अपने कुटुम्बियोंकी सहायतासे किसी २ स्त्रीने प्रज्वलित अग्निमें जीवन त्याग किया है। जयपुरके रेसिडेण्ट मिष्टर ष्ट्राटनने लिखा है–"सन् १८८२ इसवी अक्टूबर महीनेमें जयपुरके अधीनके देशमें एक ठाकुरकी विधवा स्त्रीने चिताकी अग्निमें जीवन विसर्जन किया। दरबारमें यह समाचार पहुंचते ही मनुष्य भेजा गया; जो लोग इस कार्यमें लिप्त थे उनको पकड कर ले आये और विचार करके उसमेंके प्रधान अपराधियोंको कठिन परिश्रमके साथ एक वर्षके लिये कारावासकी आज्ञा दी गई; और अन्यान्य अपराधियोंको तीन वर्षके लिये कारावासकी आज्ञा दी"।

"शिशुकन्याकी हत्या—रजवाडेमें बहुत समयसे शिशुकन्याकी हत्याकी रीति प्रचलित थी। योग्यपात्रके न मिलनेसे तथा विवाहमें अधिक धनके खर्च होनेसे असमर्थ पुरुष कन्याके जन्म लेते ही उसको मार डालते थे। इस समय वह रीति भी दूर हो गई है। मिस्टर ष्ट्राटने लिखा है कि, गत वर्षसे शिशुकन्याकी हत्या आजतक नहीं हुई"।

शिक्षाका विभाग—जो जाति जितनी शिक्षित होती है उसकी उन्नति भी उतनी ही होती जाती है। यही नहीं कि, यह शिक्षा केवल मनुष्योंके मंगलके ही लिये हो, पर-

न्तु यह शिक्षा जातिविशेषकी और सम्पूर्ण जगत्‌की उन्नतिका कारण है । शिक्षाके विस्तारके साथ ही साथ मानवमण्डलीको यथार्थ मनुष्यत्व-प्राप्तिकी सुविधा प्राप्त हुई है। जयपुरके मृत महाराज रामसिंह बहादुरने शिक्षाके शुभफलका अनुसन्धान करके अपनी प्रजामें विद्याका प्रचार करना आवश्यक विचारा था, और उसीसे जयपुर राज्यमें सर्वत्र शिक्षाके विस्तारका बीज बोया गया था और थोडेसे ही समयमें उस अमूल्य शिक्षा-रूपी वृक्षका अमृतमय फल उन्होंने अपने राज्यमें उत्पन्न होता हुआ देखा । देशीय राज्योंमें जितना शिक्षाका विस्तार हुआ है उतनी ही उस जातिकी जीवन शक्तिने पहिलेकी अपेक्षा दृढतासे प्रबल होकर राजपूतजातिकी नवीन मूर्ति संसारमें उपस्थित कर दी। विचारवान् मनुष्य इसका अनुमान सरलतासे करनेमें समर्थ होंगे । मृत महाराज रामसिंहने केवल संस्कृत,अंग्रेजी,हिन्दी,उर्दू इत्यादि भाषाओंकी शिक्षाके विस्तारके लिये प्रति वर्ष बहुतसा धन खर्च किया था, यही नहीं, वरन् वे इसको भलीभांतिसे जानते थे कि अंग्रेजी भाषाकी शिक्षाका अपने राज्यमें प्रचार होनेसे प्रजा विलायतकी शिक्षाको पाकर समयपर जन्मभूमिके बहुतसे उपकार कर सकेगी। इसी कारणसे उन्होंने जयपुरमें अंग्रेजी पढनेके लिये बहुतसे कालिज बनवा दिये । सन्१८८२—८३ ईसवीकी शासन-प्रणालीके देखनेसे हमने जयपुरके शिक्षाविभागको निम्नलिखित संक्षिप्ततासे संकलित किया है।

कालिज—राजधानी जयपुरमें "महाराज कालिज" नामका एक ऊँची श्रेणीका कालिज है । सन१८४४ ईसवीमें यह कालिज स्थापित हुआ था । यह कलकत्तेके विश्व-विद्यालयके अधिकारमें है । इस कालिजके तीन भाग हैं, प्रथम अंग्रेजी भाग—दूसरा संस्कृत और हिन्दीभाग, तीसरा फारसी और उर्दू विभाग। सन् १८८२—८३ ईसवीमें इसमें सब विद्यार्थी ९८२ थे । औसतसे प्रतिदिन ३३१ छात्र उपस्थित होते थे । इसके पहिले वर्षमें छात्रोंकी संख्या ८८६ थी । अंग्रेजी भागमें ८०९ विद्यार्थी पढा करते हैं। अन्यान्य विभागोंमें छात्रोंको अंग्रेजी शिक्षा भी दी जाती है। कालिजके सब भागोंमें समस्त विद्यार्थियोंमें तीन अंशमेसे दो अंशोंके विद्यार्थियोंको अंग्रेजी शिक्षा दी जाती है। कालिजमें उक्त वर्षमें सब २४३१५ रुपया खर्च हुआ था;इसमें विद्यार्थियोंको३३४४ रुपया दिया गया, कालिजके विद्यार्थियोंमें हिन्दू ७८१, मुसल्मान १९८, ईसाई २ और १ पारसी थे । कितने ही उपयुक्त शिक्षित बंगाली इस कालिजके अध्यापक पदपर नियुक्त हैं । उनके यत्न, श्रम और पढानेसे कालिजकी उन्नति क्रमशः होती जाती है।गवर्नर जनरलके राजपूतानेमें स्थित एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "जयपुरके कालिजमें विद्यार्थियोंकी संख्या बढ गई है । इस कालिजसे फर्स्टआर्ट अर्थात् कलकत्तेके विश्वविद्यालयमें प्रथम परीक्षा देनेके लिय नौ विद्यार्थी गये थे,जिनमेंसे तीन पास हुए,और दश विद्यार्थियोंने प्रवेशिका की परीक्षा दी थी,इनमेंसे एक पास हुआ।

1 Report of the political Administration of the Rajputana states for the 1892-1883.

चाँदपोल विद्यालय-जयपुर राजधानीके अन्तर्गत चाँदपोल नामक स्थानपर उक्त कालिजके अधीनमें एक शाखा पाठशाला है। यह शाखा सन् १८८२ ईसवीमें स्थापित हुई थी। उक्त वर्षमें उक्त विद्यालयके ४९ हिन्दू और पाँच मुसलमान सब ५४ विद्यार्थी पढा करते थे। इस विद्यालयमें हिन्दी, उर्दूकी शिक्षा दी जाती है, इस विद्यालयका उक्त वर्षमें २८९॥) खर्च हुआ था।

राजपूत विद्यालय-राज्यक सामन्त इत्यादि उच्च राजपूतोंके पुत्रोंको विद्याप्राप्तिके लिये राजधानीमें सन् १८६२ ईसवीमें एक विद्यालय स्थापित हुआ है। सन् १८८२।८३ ईसवीमें उस विद्यालयमें ३५ विद्यार्थी पढते थ। उसमें ३१ हिन्दू और चार मुसलमान थे। उक्त वर्षमें औसत प्रतिदिन १५ विद्यार्थी पढने आते थे। इस विद्यालयमें भी तीन दरजे हैं। उक्त वर्षमें इस विद्यालयमें कुल ४४३२॥) रुपये खर्च हुए।

संस्कृत कालिज-सन् १८४४ ईसवीमें राजधानीके बीच यह संस्कृत कालिज स्थापित हुआ है। इस कालिजमें संस्कृतके अतिरिक्त हिन्दी भाषा भी सिखाई जाती है। सन् १८८२।८३ ईसवीमें इस कालिजके छात्रोंकी संख्या २६१ थी, पहिले वर्षमें छात्रसंख्या २१७ थी। औसत प्रतिदिन उपस्थित १०० विद्यार्थी, उक्त वर्षमें कुल ७५१६) रुपया व्यय हुआ।

प्रथम शिक्षा विद्यालय-राजधानीके अतिरिक्त मुफस्सिल राजकीय प्रथम शिक्षाके विद्यालयोंकी संख्या सन् १८८२।८३ ईसवीमें ४६ थी इसमें २६ में उर्दू और २० में हिन्दी की शिक्षा दी जाती है। विद्यार्थियोंकी संख्या कुल १०६५ है।

सहाय्यकृत विद्यालय-राजधानी जयपुर और राज्यके अन्यान्य प्रदेशोंमें सन् १८८२।८३ ईसवीमें राज्यसे सहायता पानेवाले विद्यालयोंकी संख्या ४१० थी। इसमें ३०३ हिन्दी और १०७ में उर्दूकी शिक्षा दी जाती है, उक्त वर्षमें विद्यार्थियोंकी संख्या ८२२० थी।

मेओकालिज-देशीय राजकुमार और सामंत कुमारोंके लिये अजमेरमें मेओकालिज स्थापित है। उस कालिजमें जयपुरके बारह राजकुमार और सामन्तोंकी पढाईका खर्चा स्वयं महाराज ही देते हैं।

स्त्रीशिक्षा-बुद्धिमान् मृत महाराज रामसिंह स्त्रीशिक्षाके विशेष प्रेमी थे, इस कारण उन्होंने अपने राज्यमें स्त्रीशिक्षाका प्रचार होनेके लिये विशेष यत्न किया था, और इस विषयमें वह सफलमनोरथ भी हुए थे। सन् १८८२।८३ ईसवीमें राजधानी जयपुर और उपनगरमें १० और अन्यत्र तीन सब मिलाकर १३ कन्या पाठशालाएं थीं। कन्याओंको हिन्दी उर्दू भाषाकी शिक्षा और परिवारिक्त शिल्प शिक्षा भी दी जाती थी। कन्याओंकी संख्या ७६२, औसत उपस्थितिकी संख्या ५४७। उक्त समस्त विद्यालयोंमें उक्त वर्षमें कुल ६१५० रुपया खर्च हुआ था।

शिक्षा ही मनुष्योंको मनुष्यत्व प्राप्तिके मार्गपर चला देती है। आर्य राज्यमें साधारण लोकशिक्षा भलीभाँतिसे प्रचलित थी, इसका कोई प्रमाण नहीं पाया जाता। इस कारण

आर्यशासनसे जो श्रेणी शिक्षाके बलसे बलवान् थी, केवल उसी श्रेणीके लोग मनुष्यत्व प्राप्त करके अपने स्वार्थसाधन करनेके लिये सब प्रकारसे समर्थ हुए थे। यदि आर्यराज्यमें साधारण लोकशिक्षा भली भाँतिसे प्रचलित हो जाती तो सामन्त शासनकी रीतिके द्वारा देशीय राज्योंमें जो भयंकर घटनाएं उपस्थित हुइ थीं वे इससे अवश्य ही दूर हो सकती थीं। उच्च श्रेणीके सामन्तोंमें बहुतोंको शिक्षाका स्वाद आजतक नहीं मिला। अधिक क्या कहें वह अपने नामके हस्ताक्षर तक भी लिखने नहीं जानते। कई सौ वर्षके पहिले यूरूपमें जिस प्रकार उच्च श्रेणीके सम्मानित सामन्त और नाइटगण घोर मूर्ख थे, हस्ताक्षर करनेकी आवश्यकता पडनेपर वह केवल अपने हाथसे अस्त्रका चिह्न पत्रमें अंकित कर देते थे। हमने देखा है कि, सैकडों वर्ष पहिले रजवाडेके ऊँची श्रेणीके सामन्तोंमें बहुतसे सामन्त इस प्रकारसे अस्त्रोंका चिह्न ही पत्रमें अंकित कर देते थे। सन्तोषका विषय है कि, अब वह समय नहीं रहा है। यद्यपि इस समय शिक्षाकी ज्योतिका प्रकाश धीरे २ रजवाडेमें हो रहा है, परन्तु यह अवश्य ही कहना होगा कि यदि राजा और सामन्त इस बातको विचारते तो इतनी शिक्षाका विस्तार कर सकते थे, कि जिसके कारण आज यह घटी न होती।

जयपुरके शिक्षाविभागकी व्यवस्था रजवाडेके सम्पूर्ण राज्योंकी अपेक्षा सबसे श्रेष्ठ और वर्तमान समयके लिये उपयोगी है। इसको सभी मुक्त कण्ठसे स्वीकार करते हैं। हमें ऐसी आशा है कि, वर्तमान महाराजके शासनसे शिक्षाविभागकी क्रमशः उन्नति होती रहेगी।

समरविभाग—इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं कि "सन् १८०३ ईसवीमें आमेरराजने तेरह हजार विदेशीय सेना अपने अधीनमें रक्खी थी, इनमें तोपखाने सहित दश कम्पनी पैदल, चार हजार नागासेना, एकदल अलिगोल नामक सैनिक प्रहरी और सातसौ अश्वारोही सेना थी। इस सेनाके अतिरिक्त सामन्त प्रायः चार हजार शिक्षित अश्वारोही सेनाकी सरबराही करते थे, यह संख्या राज्यरक्षाके पक्षमें यथेष्ट थी, परन्तु किसी विजातिपर आक्रमण उपस्थित होनेपर कछवाहोंकी जातिमें बीस हजार सेना इकट्ठी हो सकती है" आचिसन साहब सन् १८६४ ईसवीमें लिखते हैं कि, जयपुरकी रणकुशल सेनामें गोलन्दाज ४५२७, पदाती ४६००; अश्वारोही ५१४२ और नागा ४०९६ थे*"।

वर्तमान सेनाकी संख्या ७६८ गोलन्दाज, १०५०० पैदल, ३५३० अश्वारोही ४०९६ नागा और ७८ तोपखाने हैं। समरविभागमें इस समय प्रत्येक वर्षमें औसत ८०१००० रुपये खर्च होते हैं।

गवर्नमेण्टके प्रतापसे इस समय भारतवर्षके चारों ओर शान्तिमतीदेवी नृत्य करती है; कोई विदेशी शत्रु आमेरपर आक्रमण करनेके लिये उपस्थित नहीं हुआ, इस कारण जयपुरकी सेना बहुत दिनोंसे कार्यहीन भावसे रहती थी, कोई वीरजाति क्यों न हो जहां बहुत समयतक सेनाने आलस्यभावसे समय व्यतीत किया, कि उसकी सामर्थ्य नष्ट हो जाती है, इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। सेनादल जितना समरक्षेत्रमें

* Report of the Political Administration for the Rajputana states 1882-1883.

उपस्थित रहेगा उतना ही उसका उत्साह, बल और विक्रम बढेगा। यवन राज्यमें जयपुरकी सेना तथा मानसिंह और मिरजा राजा जयसिंहके अधीनकी सेना भारतकी सम्पूर्ण सेनाओंमें वीर और योधा गिनी जाती थी? इसी जयपुरकी सेनाने एक समय बंगालेको विजय किया था, देशीय राजाओंकी सेनाको इस समय किसी प्रकारका कार्य नहीं है, पर उसमें बल उत्साह ज्योंका त्यों बना रहै इस प्रकारका उससे कार्य लेना उचित है।

सामन्त श्रेणी—जयपुरपति पृथ्वीराजने अपने बारह पुत्रोंको बारह प्रधान सामन्त पदपर वरण किया था साधु टाड उन बारह पुत्रोंके नाम और उनके उस समयके सामन्तोंके नाम इत्यादि निम्नलिखित प्रकारसे वर्णबद्ध कर गये हैं।

पृथ्वीराजके पुत्र.	परिवारिक नाम.	अधिकारी देशोंके नाम.	वर्तमान सामन्तो के नाम.	आमदनी.	सैन्य संख्या.
चतुर्भुज	चतुर्भुजोत	पवार, वगरू	बाघसिंह	१००००	२८
कल्यान	कल्यानोत	लाटवाडा	गगासिंह	२५०००	४७
नाथू	नाथावत	चौमू	किसनसिंह	११५०००	२०५
बलभद्र	बलभद्रोत	अचरोल	कायमसिंह	२८८५८	५७
जगमाल उनके पुत्र खगार	खांगारोत	टोडरी	पृथ्वीसिंह	२५०००	४०
सुरतान	मुलतानोत	चांदसर	"	०	०
पचायन	पचानोत	सम्बूरा	शैलसिंह	१७७००	३२
गोगा	गोगावत	धूनी	रावचांदसिंह	७००००	८८
कायम	खूभानी	भांसखो	पद्मसिंह	२१५३५	३१
कुभो	कुंभावत	माहर	रावत स्वरूपसिंह	२७५३८	४५
सूरत	शिवबरन पोता	नैनदिर	रावत हरिसिंह	१००००	१९
वनवीर	वनवीर पोता	बाटको	स्वरूपसिंह	११०००	३५

इतिहासवेत्ता टाड साहब पृथ्वीराजके द्वारा बनाई हुई उस "बाराकोटरी" अर्थात् बारह सामन्त वंशकी तालिका प्रकाश करके उनके उस समय आमेर राज्यमें कितने सामन्त थे और उनमें एक २ सम्प्रदायके अधीनमें कितने सामन्त थे, उन सबको मिलाकर कितनी आमदनी होती थी; और उनकी राज सरकारमें कितनी अश्वारोही सेना युद्धके समय सहायता देती थी, उसकी एक तालिका प्रकाश कर गये हैं। हम उसको नीचे अविकल प्रकाश करते हैं।

आचिसन साहब सन् १८६४ ईसवीमें अपने ग्रन्थमें जयपुर राज्यके सामन्तोंकी श्रेणीकी निम्नलिखित तालिका प्रकाश कर गये हैं, हमने टाड साहबके लिखे हुए और आचिसन साहबकी प्रकाशित सामन्त श्रेणीकी तालिकाको प्रकाशित किया, अधिक क्या कहैं वर्तमान समयमें इस सामन्त श्रेणीकी अवस्थाका परिवर्तन हो गया है।

सम्प्रदाय	अधिकारी देशोंके नाम	प्रधान सामन्तोंकी आमदनी रु०	वंशोंके उपवंशकी संख्या	सब आमदनी रु०	
पूर्णमल्लोत	नीमंडा	१००००	५	५००००	
भीमपोता	लुप्त	०	०	२०००	
नाथावत्	चूरन	१००००	१०	२४७००	
पचायेनोत	सांभर	१७७००	३	०	बारह प्रधान सामन्त.
सुलतानोत	सूरत	२२०००	०	१३००००	
खांगारोत	डिग्गी	५०००	२२	०	
राजावत	चंदलाई	२००००	२६	२४५०००	
प्रतापजी	विलुप्त	०	०	१०००००	
बलभद्रोत	आचरोल	२८८५०	२	१६७९००	
सूरदास	विलुप्त	०	०	२३७८७	
कल्यानोत	कालवार	२५०००	१८	४०७३८	
चर्तुभुजोत	बगरू	४००००	६	४९५००	
गोगावत	दूनी	७००००	१३	४६५७५	अन्यान्य राजवंशधर,
कुम्भानी	भानुक	२१०००	२	३००००	
कुम्भावत	महार	२७५३८	६	३४६००	
सुवर्णपोता	नीनधार	१००००	३	०	
वनवीरपोता	वाटको	१९०००	३	०	
नरूका	उनियारा	२००००	६	०	
बांकावत	लवान	१५०००	४	०	

इतिहासवेत्ता टाड साहबने निम्नलिखित मन्तव्यको प्रकाश करके जयपुर राज्यके इतिहासका उपसंहार किया है; आमेरराज्यके कितने ही अत्यन्त प्राचीन नगरोंके नाम प्रकाशित करके हम इतिहासका उपसंहार करते हैं, खोज करनेसे इन सब नगरोंके सम्बन्धमें अनेक प्राचीन प्रमाण मिल सकते हैं।

"मोरा देवसाहसे नौकोश पूर्वकी ओर स्थित मोरध्वज ? "मयूरध्वज नामक एक चौहान राजाने इसको बनाया था।

" आमानेर-यह लालसोठसे तीन कोस पूर्वकी ओर स्थित है, यह नगरी अत्यन्त प्राचीन है। यह पहिले एक चौहान राजाकी राजधानी थी।

मानगढ-यह थोलाईसे पांच कोस दूर है इसके दुर्गके ऊपर बना हुआ एक प्राचीन नगरका ध्वंश स्तूप है, यह कछवाहोंके अभ्युदयके पहले ढूढाडके आदिमें राजाने बनाया था।

अमरगढ-खुशालगढसे तीन कोस दूर है,यह नागवंशियोके द्वारा बनाया गया था।

वरोत-माचेरीके अन्तर्गत वस्तीसे तीनकोस है, प्रवाद यह है कि पाण्डवोंके द्वारा बनाया गया है।

पाटन और गनीपुर-यह दोनों दिल्लीके प्राचीन तुंअर राजाओके द्वारा बनाये गये थे।

खेरार व खण्डार-रनथम्भौरके निकट है।

ओटगिर--चम्बलके तीरवर्ती है।

आमेर वा आम्बकेश्वर--प्राचीन आमेर राजधानीमें यहा देवादिदेव महादेवके नामसे एक कुण्ड विशेष है, कुण्डके बीचमें एक शिवलिग है। कुण्डका जल लिंगके आधे अंगतक ढका हुआ है। ऐसामत प्रचलित है कि, जिस दिन कुण्डके जलसे सब लिग ढक जायगा उसी दिन जयपुर राज्यका पतन होगा। इस स्थानपर अनेक शिलालेख भी है *।

---

* सूचना-मूल पुस्तकमें आमेरके वर्णनके केवल ८ अध्याय हैं। प्रथम चार अध्यायोमें वंशानुक्रमसे जयपुर राज्यका इतिहास वर्णन करके तीन अध्यायोंमें शेखावाटीके इतिहासका वर्णन है तत्पश्चात पुनः एक अध्यायमे जयपुरके भूगोलका वर्णन एव उपसहार है,

परन्तु ध्यान रहै कि यह भाषा अनुवाद बगला भाषासे हुआ है और बगाली लेखकने केवल जयपुरके इतिहासको आठ अध्यायोमे बढाया है और जैपूरके शेखावाटीके इतिहासको समाप्त करके पुनः जयपुरके इतिहासका परिशिष्ट लिखा है। इस प्रकारसे कुल आठ अध्यायोंको बगाली आलोचक महाशयने १४अध्यायोंमें खतम किया है, परन्तु शेखावाटीके इतिहासम अध्यायोंकी गणना पुनः एकसे आरम्भ होती है। इससे पाठकोंको भ्रम होना सभव है। अत केवल भ्रम निवारणके लिये यहांपर उल्लिखित बातोंका ध्यान रहना आवश्यक है।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

शेखावाटीका इतिहास.

शीकर (शेखावाटी.)

एंच्. एच्. राव राजा माधोसिंह बहादुर.

शेखावाटीका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

शेखावत सम्प्रदायकी सृष्टिका आदि विवरण-आमेरराज्यके उदयकरणके तीसरे पुत्र बालूजीसे उक्त सम्प्रदायकी उत्पत्ति-मोकलजी-मुसलमान धर्मप्रचारक शेख बुरहान-उनके आशीर्वादसे मोकलजीको पुत्रलाभ-पुत्रको शेखाजी नामका प्रदान-शेखाजी द्वारा राज्यका विस्तार-रायमल-राजा, रायसाल, उसकी वीरताका प्रकाश करना-सम्राट् अकबरका शासनकी सनद देना-खण्डेला और उदयपुर लाभ-उनकी वीरता और चरित्र-गिरिधरजी-उनकी हत्याका विवरण-द्वारकादास-सिंहके साथ उनका विचित्र समर-खां जिहानलोदीके साथ समरमें उनका प्राणनाश-वरसिंहदेव-बहादुरसिंह-औरंगजेबका खण्डेलाके देवमंदिरको विध्वंस करनेकी आज्ञा देना-बहादुरका राजधानी छोडकर भाग जाना-देवमंदिरकी रक्षाके लिये सुजनसिंहकी प्रतिज्ञा-यवनसेनाके साथ युद्ध-मंदिरका विध्वंस करना-सम्राट्की सेनाका खण्डेला राज्यपर अधिकार करना-केसरीसिंह और फतेसिंह दोनों भ्राताओंका खण्डेला राज्यपर विभाग करना-फतेसिंहका प्राणनाश-दिल्लीके सम्राट्के विरुद्ध केसरीसिंहकी अवाध्यता प्रकाश-सम्राट्की सेनाके साथ केसरीसिंहका युद्ध-उनका प्राणनाश-यवनसेनाका उनके पुत्र उदयसिंहको बंदी करना-उदयसिंहका बंदीभावसे अजमेरमे रहना-खण्डेलापर फिर अधिकार-उदयसिंहका मुक्तिलाभ और खण्डेलाकी प्राप्ति-मनोहरपतिके विरुद्ध उदयसिंहका समर-षड्यन्त्र-आमेरपति जयसिंहका खण्डेलाको घेरना-उदयसिंहका भागना-उनके पुत्र सवाईसिंहका खण्डेला प्राप्त करना-सवाईसिंहका आमेरराज्यकी अधीनता स्वीकार करना-खण्डेला विभाग करना-सवाईसिंहका प्राणत्याग ।

इतिहासवेत्ता कर्नल टाड साहब मूल जयपुरराज्यके राजनैतिक इतिहासको वर्णन करनेके पीछे उस मूलराज्यसे उत्पन्न हुई शेखावाटी नामक एक स्वतंत्र सामन्तोंके अधिकारी देशके इतिहासको वर्णन कर गये है । इतिहासवेत्ताने लिखा है, "कि हम शेखावत् सामन्त सम्प्रदायके इतिहासको वर्णन करनेके लिये आगे बढ़े हैं । यह सम्प्रदाय आमेरकी बहुतसी सामन्त श्रेणीसे सृष्ट हुई थी और ऐसी कितनी ही घटनाओं और समयके गुणसे यह सामन्तोंकी सम्प्रदाय इस समय प्रबल सामर्थ्यको संचय कर रही है । इसका मूलराज जयपुरके समान है; यद्यपि इस सम्प्रदायमें किसी लिखी हुई शासनमूलक व्यवस्थाका प्रचार नहीं हुआ, स्थायी राजनैतिक सम्मिलित शासनकी सभा नहीं है, न इसका कोई प्रधान नेता नियुक्त है; परन्तु सामन्त साधारणकी स्वार्थरक्षाके लिये सभी एकताके सूत्रमें बँध रहे हैं, मानो इसका किसीने भी इस प्रकारका विचार नहीं किया । इस सम्मिलित सम्प्रदायमें कोई निर्दिष्ट राजनीति नहीं है, कारण कि जिस समय साधारण सामन्त अथवा किसी सामन्तके विशेष स्वार्थ नाशके लिये कोई उद्योग हुआ उस समय शेखावाटीके समस्त सामन्तोंने उदयपुरमें इकट्ठे होकर किस प्रकारके उपाय अवलंबन करके कल्याणके निमित्त एक मतसे कार्य किया था" ।

इस शेखावाटी सामन्त सम्प्रदायकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें टाड साहब लिखते हैं, "आमेरके राजा उदयकरणके तीसरे पुत्र बालोजी संवत् १४४५ सन् १३८९ ईसवीमें आमेरके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए, यह सामन्त उन्हींके वंशधर हैं। बालोजीके समयमें आमेरके समाजकी जैसी राजनैतिक अवस्था थी यदि उसकी ओर हम देखते हैं तो जाना जाता है कि, वर्तमानक समस्त भूखंड शेखावाटीके सामन्तोंकी सम्प्रदायके अधिकारमें थे। वह चौहान और नरवरराजवंशीय सामन्त इस देशको खंड २ में विभक्त करके शासन करते थे, तभी वह कठिन मुसल्मानोंके अत्याचार और पीडनसे शीघ्र ही समय २ पर वश्यता स्वीकार करनेको बाध्य होते थे।

इस समय शेखावत नामकी जो सामन्त सम्प्रदाय विशेषरूपसे प्रसिद्ध है, वास्तवमें बालोजी उन अगणित वंशधरोंके आदि पुरुष थे। बालोजीके पोतेको अमृतसर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ; परन्तु उन्होंने अपने बाहुबलसे उक्त देशपर अधिकार किया था, या और किसी उपायसे प्राप्त किया हो यह नहीं जाना जाता। उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए-(१) मोकलजी, (२) खेमराजजी (३) खारद। मोकलजी अपने पिताके पदपर अमृतसरके अधीश्वर हुए। दूसरे पुत्र खेमराजजीके वंशधर बालापोता नामसे विदित थ। इनमें एक आमेरके बाराकोटरी अर्थात् बारह प्रधान सामन्तोंके अन्यतर हैं। खारदका औरस नुमन नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसके उत्तराधिकारी कूंपावत नामसे विदित थे, परन्तु इस समय उनकी संख्या प्रायः लोप हो गई थी।

" मोकलने दीर्घकालतक पुत्रहीन अवस्थासे समय व्यतीत किया, एक मुसल्मान धर्मप्रचारक फकीरके आशीर्वादसे मोकलके एक पुत्र उत्पन्न हुआ; उस फकीरके सम्मानके लिये पुत्रका नाम सेखाजी रक्खा गया। राजपूतानेका एक प्रधान अंश जो वर्तमान समयमें सेखावत् नामसे विदित है, इस भूखंडमें अगणित सामन्त वंशधरोंके आदिपुरुष यह सेखाजी थे। उस मुसल्मान धर्मप्रचारक फकीरका नाम सेख बुरहान था। उसकी दरगाह अचरोलसे तीन कोस और मोकलके स्थानसे सात कोस दूरीपर बनी हुई है। वह दरगाह इस समय भी विराजमान हो रही है। यह घटना तैमूरके भारतजयके थोडे ही कालके पीछे हुई थी। इस कारण यह भी संभव हो सकता है, कि उक्त सेख बुरहान एक परमधार्मिक धर्मप्रचारक हो, वह वीर तेजस्वी राजपूत जातिका अपने धर्ममें दीक्षित करनेके लिये इस देशमें रहते थे, इस बातको वह भली भाँतिसे जान गये थे, यद्यपि वह अपने उद्देशको पूर्ण अर्थात् राजपूतजातिमें मुसल्मान धर्मका प्रचार करके सफलमनोरथ नहीं हो सकते थे। परन्तु अतिथि और शरणागतपालक राजपूत गण अवश्य ही उनके प्राणोंकी रक्षा करके उनका प्रतिपालन करते थे "।

शेख बुरहान भ्रमण करनेके लिये बाहर जाकर एक समय अमृतसरकी सीमाके एक विस्तारित प्रान्तमें पहुँच गये। दैवयोगसे मोकलजी भी उस स्थानपर

उपस्थित थे, शेखबुरहान मोकलजीके समीप जाकर अभिवादन करके बोले—क्या आप हमको कुछ भिक्षा देंगे ?" मोकलजीने नम्रतापूर्वक कहा, कि "आप जो इच्छा करेंगे वही मिलेगा।" शेखबुरहानने केवल थोडेसे दूधकी इच्छा की। शेखावत् सामन्तोंको दृढ विश्वास था कि शेखबुरहान उक्त प्रार्थनाके पीछे एक असंभव कार्य दिखावेंगे इस कारण एक दो दूधवाली भैंस कि जिनका दूध कुछ ही समय पहिले दुहागया था, शेखजीके समीप ले आये। शेखबुरहानने कुछ ही समयके उपरान्त उन दुग्धहीन भैंसोंके थनोंमेंसे नदीके समान प्रबल स्रोतसे दुग्धको दुह लिया। इस आश्चर्यजनित कार्यको देखकर वृद्ध मोकलजीके मनमें दृढ विश्वास हो गया कि यह मुसल्मान फकीर अवश्य ही देवशक्ति सम्पन्न है, यह अवश्य ही इस प्रकारसे दैवशक्तिका कार्य दिखानेमें समर्थ है। उन्होंने कुछ ही कालके पीछे उस फकीरसे आशीर्वाद माँगा कि मेरे एक पुत्र उत्पन्न हो। वास्तवमें मोकलजीकी यह अभिलाषा पूर्ण हो गई, यथासमयमें उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ और बुरहानकी आज्ञासे उस पुत्रका नाम बुरहानकी जातिके नामके अनुसार "शेखा" रक्खा गया। बुरहानने और भी आज्ञा दी कि "यह बालक मानों आजीवन मुसल्मान बालकोंके व्यवहारयोग्य बद्धी नामक माला धारण करेगा। जिस समय मालाको खोलकर रखनेका प्रयोजन होगा उस समय वह पीरकी दरगाहके किसी ऊँचे स्थानपर रखनी होगी और इस बालकको नीले वर्णका जामा और टोपी पहराई जायगी। किसी समय शूकरका मांस वा अन्य कोई मांस जिसमें उसका रुधिर रहे, बालकको आहार न कराया जायगा। शेखबुरहानने मोकलसे यह कहा कि शेखावत वंशमें जिस समय कोई पुत्र उत्पन्न होगा, उस समय एक बकरेकी बलि दी जायगी। कुरानके कलमेका पाठ किया जायगा, और उस बकरेके रुधिरसे बालकको स्नान कराया जायगा" यद्यपि इस बातको चार सौ वर्ष बीत गये परन्तु मोकलजीने शेखबुरहानसे उक्त नियम पालन करनेके लिये जो प्रतिज्ञा की थी वह बराबर मानी जाती है। मोकलजीके अगणित वंशधर दश हजार मीलकी भूमिमें निवास करते हैं, वह लोग आजतक धर्मविश्वासके साथ उस आज्ञाका पालन करते आते हैं। यद्यपि चिरकालसे प्रचलित हुई रीतिके अनुसार प्रत्येक राजपूत प्रत्येक वर्षमें एक दिन शूकरका शिकार करके उसके मांसको खाते हैं ऐसी विधि प्रचलित है, परन्तु शेखावतने किसी समय भी वराहका शिकार नहीं किया। यद्यपि समयके फेरसे शेखावत बालकोंको बद्धी पहराना, उसे दरगाहमें रखनेकी प्रथा इस समय प्रबल नहीं है परन्तु आजतक भी प्रत्येक शेखावतका बालक जन्म लेते ही दो वर्षतक नील रंगके कुर्त्ता टोपी पहिरा करता है। शेखावतोंने उक्त शेखबुरहानके संमानके लिये और एक प्रबल चिह्नकी आजतक सम्मान सहित रक्षा की है, अर्थात् शेखावतकी जातीय हारिद्रा वर्णकी पताकाके चारों ओर नीला फीता लगाया जाता है। शेखावतोंमें ऐसा प्रबल मन्तव्य प्रचलित है, कि शेखावत् चाहे दूर स्थान-पर निवास करनेसे अथवा अन्य किसी कारणसे शेखकी दरगाहमें अपने २ बालकोंके गलेमेंकी बद्धीकी रक्षा नहीं कर सकें, नहीं तो वह किसी समय भी सौभाग्यवान् नहीं हो सकेंगे, राजपूतजातिकी प्रतिज्ञापालनका एक चूडान्त निदर्शन यह है कि यद्यपि उक्त

अमृतसर और उनके निकटवर्ती देश आमेरराज्यके अधिकारमें थे, परन्तु उक्त शेख बुरहानकी दरगाह आजतक स्वाधीन भावसे रक्षित है; और उसपर राजसामर्थ्यका प्रयोग नहीं किया जाता। जो कोई उनकी शरणमें जाता है, राजा उसको बलपूर्वक नहीं पकड सकता। दरगाहके निकट ताला नामक नगरमें उक्त शेखके सौसे अधिक वंशधर बसते हैं और वे जमीजोतका लगान नहीं देते।

शेखाजी पिताकी मृत्युके पीछे पितृपदपर विराजमान हुए, और अपने बाहु-बलसे प्रतिवासियोंके निकटसे तीनसौ साठ खण्ड ग्रामोंको उन्होंने अपने अधिकारमें कर लिया। शेखाजीके बाहुबल और प्रतापका समाचार शीघ्र ही आमेरराज्यके अधीश्वरने सुना। तुरन्त ही आमेरकी सेनाने उनपर आक्रमण किया, पर उन्होंने यूनानी पठानोंकी सहायतासे अपने अधीश्वर प्रभु आमेर राज्यकी सेनाको भगा दिया। इस समय इस देशके प्रत्येक सामन्त आमेरपतिको अपना अधीश्वर मानते थे, इस देशमें जो घोडेका बच्चा उत्पन्न होता था; वह करस्वरूपमें आमेरराजको दिया जाता था, परन्तु शेखाजीने अपने बाहुबल और प्रबल प्रतापसे आमेरराज्यक अधीन तानीगढोंको एकबार ही छीन लिया और सम्पूर्ण स्वाधीनताको सग्रह कर लिया। इस कारण जिस आमेर राज्यसे यह शेखावाटी-का राज्य बना था, इसी समयसे उस मूलराज्यके साथ परस्परमें सम्पूर्णतः विच्छिन्नभाव स्थापित हुआ। आमेरपति सवाई जयसिंहके समयतक दीर्घकालसे शेखावाटीके सामन्त इस प्रकारसे स्वाधीनताके अमृतमय फलको भोगते रहे। पीछे सवाई जयसिंहने दिल्लीके सम्राट्के अधीनमें ऊँचे पदपर नियुक्त होकर सम्राट्की सेनाकी सहायतासे इस शेखा-वाटीके स्वाधीन सामन्तोंपर आक्रमण करके उन्हें युद्धमें परास्त किया, और इनको आमेर राज्यके अधीन सामन्त पदपर स्थापित कर रीतिके अनुसार उनसे कर लिया।

शेखावाटीके आदि नेता शेखाजीने दीर्घकालतक प्रबल प्रभुता विस्तार करके अपने प्राण त्याग किये। उनके पुत्र रायमल्ल पिताके पदपर स्थित हुए। रायमल्लके शासन और बलविक्रमका इतिहासमें कोई लेख दिखाई नहीं दिया। रायमल्लके पीछे सूजा अमृतसरके सिंहासनपर विराजमान हुए। उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) नूनकरण (२) रायसाल और (३) गोपाल। बडा पुत्र अमृतसर और उसके अधीनके ३६० ग्रामोंका अधीश्वर हुआ, और रायसाल, लाम्बी नामक देशपर और गोपाल झाडली नाम देशके सामन्त पदपर स्थित हुए। दूसरे भ्राता रायसालसे एक घटनाके कारण शेखा-वाटीके सौभाग्यका सूर्य शीघ्रतासे उदित हुआ।

शेखावाटीके नेता नूनकरणका देवीदास नामका एक बनिया मंत्री था, वह बडा ही तेजस्वी और चतुर पुरुष था, एक समय देवीदासने अपने प्रभुके साथ तर्क करते

---

(१) कर्नेल टाड साहबने टीकेमें लिखा है कि " इस रीतिका पाठ करके पाठकोंको स्मरण हो सकेगा कि प्राचीन फारिसराज्यमें इस प्रकारकी रीति प्रचलित थी, दूरके शासनकर्ता इस प्रकारसे घोडोंके बच्चेको करमें भेजते थे। हेरोडाटसने कहा है कि एक आरमेनियाने करस्वरूपमें वर्षदिनमें बीस हजार घोडे भेजे थे "।

हुए कहा " कि पिताकी सम्पत्तिपर अधिकार प्राप्त करनेकी अपेक्षा अपने ही बल और पराक्रमसे सौभाग्यका उपार्जन मनुष्यका कर्त्तव्य है, यही जगदीश्वरका अनुग्रह है । नूनकरणने इसका बिना ही समर्थन किये दृढतापूर्वक प्रतिवाद करके उत्तर दिया कि आपकी यह युक्ति कदापि न्यायसंगत नहीं है; वरन् अब आप हमारे भ्राता रायसालके समीप लाम्बीमें जाकर इस युक्तिकी सत्यताकी परीक्षा कीजिये । नूनकरणने सरलभावसे उसको पदसे उतार दिया, परन्तु दवीदासने किसी प्रकार भी अपने मन्तव्यको न बदला, और शीघ्र ही वह अमृतसरको छोडकर अपनी धनसम्पत्ति और कुटुंबको साथ ले लांबीमें आ पहुँचा । यद्यपि रायसालने उनको भलीभाँति आदर सत्कारके साथ ग्रहण किया परन्तु देवीदास तुरन्त ही इस बातको जान गया कि रायसालकी आमदनी बहुत थोडी है इस कारण यहाँ रहनेसे खर्च बहुत बढ़ जायगा । फिर जिस मन्तव्यको प्रकाश करनेके लिये पदसे अलग हुआ हूँ उस मन्तव्यकी परीक्षा करनेका यहाँ कोई विशेष उपाय नहीं है, अतएव उसने स्पष्ट शब्दोंमें कहा कि मैं दिल्लीमें यवनसम्राट्के दरबारमें जानेकी अभिलाषा करता हूँ। वरन् इसने रायसालको भी अपने साथ वहाँ ले जाकर दरबारमें अपने भाग्यकी परीक्षा करनेका परामर्श दिया। रायसाल एक ऊँची अभिलाषाका वीर पुरुष था यह केवल अपनी सामर्थ्यके बलसे बीस सवारोंको साथ ले दिल्लीको गया । इस समय अफगानियोंके आक्रमणको रोकनेके लिये सम्राट्के अधीनकी एक सना सज रही थी । ऐसी घटना प्रायः हुआ ही करती है। रायसाल मना करनेपर भी अपने उन बीस सवारोंके साथ रणक्षेत्रपर गया, और इस भयंकर युद्धमें उसने असीम बलविक्रम प्रकाश करके बादशाही सेनाके प्रधान सेनापतिके सम्मुख रणक्षेत्रम शत्रुपक्षके एक नेताका मस्तक काटकर विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की । उस दिन उसी नेताके मारे जानेसे युद्धमें विजय प्राप्त हुई थी । रायसाल कौन है, और कहाँ रहता है । यवनसेनापति इसको कुछ भी नही जानता था युद्ध समाप्त होनेके पीछे सेनापति उस अपरिचित वीरकी खोज करने लगा, परन्तु किसी विशेष कारणसे रायसालने स्वजातीय सेनाका संग त्याग दिया, यह पहिलेसे ही अन्य स्थानपर रहने लगे, इस कारण यवन सेनापतिको इसका कुछ पता न मिला । परन्तु उन्होंने रायसालकी खोज कुछ विशेषतासे नही की । उसीसे देवीदासकी उक्तिकी सत्यताकी परीक्षा सरलतासे न हो सकी । तब प्रधान सेनापतिने शीघ्र ही यह समाचार प्रचारित किया कि सेनाकी प्रत्येक श्रेणीके सेनापति जो रणक्षेत्रमें उपस्थित थे सबको "जियाफत्" नामक प्रमोदसभामें आना होगा और वह उस स्थानपर प्रधान सेनापतिके प्रति सन्मान दिखावैं । शीघ्र ही जियाफत् नामक प्रमोदसमिति स्थापित हुई; प्रत्येक जातिक प्रत्येक श्रेणीके प्रधान २ सेनापति एकएक करके प्रधानसेनापतिके सम्मुख आ उपस्थित हुए, और उनको मान दिखाने लगे, रायसाल भी उक्त घोषणापत्रके अनुसार वहाँ गये इनके सम्मुख होते ही प्रधान सेनापतिने तुरन्त ही इनको पहिचान लिया; कि इसी असीम साहसी वीरके लिये इतनी खोज रही थी । शीघ्र ही उसका नाम और उसके वंशका वृत्तान्त पूछा गया । अमृतसरके महाराज नूनकरण भी अपनी सेनाके साथ इसी स्थानपर यवनसेनाके

अधिकारमें उपस्थित थे। उन्होंने रायसालको देखकर ईर्षावश हो तिरस्कार करते हुए कहा, कि मेरी बिना आज्ञाके तुम इस स्थानपर क्यों आये? परंतु नूनकरणके इस तिरस्कारसे रायसालकी कोई हानि नहीं हुई। प्रधान सेनापतिने वीरश्रेष्ठ रायसालको सम्राट् अकबरके निकट परिचित करा दिया, और उसके बलविक्रमकी ऊँची प्रशंसा की। बादशाह अकबर सदैव गुणियोंको उचित पुरस्कार दिया करता था। उसने शीघ्र ही रायसालको "रायसाल दरबारी" की उपाधी दी, और अपनी कृपाके विशेष चिह्नस्वरूप उस समय चन्देल राजपूतोंके अधिकार भुक्त देवासो और कासली नामके दो देशोंका अधिकार उसको दिया। रायसालका अपने ही भाग्यसे उन्नति पानेका प्रथम सूत्रपात हुआ। उसने सम्राट्के दिये हुए नवीन देशोंपर अपना अधिकार किया था कि, इतनेमें सम्राट् अकबरका बुलावा आनेसे उसे वहां फिर जाना पडा, इस समय भटनेरके विरुद्ध सम्राट्की सेना जा रही थी। सम्राट् अकबरने रायसालको महाबलवान् पुरुष जानकर उसको उस सेनाके साथ भेज दिया। युद्धक्षेत्रमें फिर इनके विशेष बल विक्रम प्रकाशसे सम्राट् अकबर और भी संतुष्ट हुए, और इसको खण्डेला तथा उदयपुर नामक दो देशोंकी सनद दी। यह दोनों देश उस समय निरबाण राजपूतोंके अधिकारमें थे, परंतु उन राजपूतोंने यवन-सम्राट्की अधीनता स्वीकार न की थी, और क्रमानुसार अत्याचार उत्पीडन और लूटमारमें लिप्त थे।

वीरश्रेष्ठ रायसालने देखा कि सम्राट्ने उनको जिन देशोंके अधिकारका स्वत्व दिया है उन दोनों देशोंपरसे राजपूतोंको भगानेकी किसीकी सामर्थ्य नहीं है; इस कारण वह कौशलजालका विस्तार करने लगे। रायसालने भटनेरके युद्धमें जानेके पहिले खण्डेलाके अधीश्वरकी एक कन्याके साथ पाणिग्रहण किया था। विवाहके समय कन्याके पिताने जो दहेज दिया था वह अत्यन्त सामान्य था, इनके योग्य न था इसीसे इसने दहेजको बढानेके लिये कहा; निरबाण राजपूतने धीरज धरनेमें असमर्थ होकर कहा, कि "हमारे पास अब कुछ नहीं है, केवल यह शिखर प्रस्तुत है, यदि इच्छा हो तो ले लीजिये"। यह बात उस समय रायसालके हृदयमें चुभ गई थी, इस समय रायसाल उपयुक्त समरमें जाकर सेनासहित खण्डेलाकी ओर चला। वह इस बातको भली भाँतिसे जानता था कि आवश्यकता होनेपर अपनी सेना इस विषयमें सहायता करेगी। रायसालको सेनासहित आता हुआ सुनकर जब खण्डेलाके अधीश्वरने अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखा तब वह भयभीत हो नगर छोडकर भाग गया। नगरनिवासियोंने भ्रमके वश हो रायसालकी अधीनता स्वीकार की, इसी समयसे यह खण्डेला देश शेखावाटीका एक प्रधान नगर माना गया। रायसालके उत्तराधिकारी रायसालोत नामसे पुकारे जाकर शेखावाटीके समस्त दक्षिण देशमें निवास करते थे। परिणाममें सृष्ट और एक वंशकी शाखासे उत्पन्न सिद्धानी नामकी सम्प्रदाय उत्तर अंशमें निवास करती थी। रायसालने खण्डेलापर अधिकार करनेके बहुत

दिन पीछे उदयपुरको अपने अधिकारमें कर लिया; उदयपुर पहिले निरबाण राजपूतोंके अधीनमें कसुंबी नामसे प्रख्यात थी।

रायसाल अपने यथार्थ अधीश्वर आमेरराज मानसिंहके साथ मेवाडके महाराणा प्रतापसिंहके साथ युद्ध करनेको गये थे। काबुलके अधीन कोहिस्थानके अफगानियोंके विरुद्धमें दिल्लीके सम्राट्ने जो सेना भेजी थी, रायसालको उस सेनाके साथ भी वहां भेजा था। रायसालने प्रत्येक युद्धमें बडी वीरता दिखाकर बादशाहसे बहुतसा पुरस्कार पाया था। इस विषयका हमै कोई समाचार नहीं मिला कि, रायसालने किस समय प्राणत्याग किये। देवीदासने जो कहा था कि, पिताके उत्तराधिकारित्व लाभकी अपेक्षा अपनी प्रतिभाके बलसे अपना सौभाग्य उपार्ज्जन करना ही आवश्यक है; और वही जगदीश्वरका प्रधान अनुग्रह है, सो रायसालने सम्पूर्णरूपसे कर दिखाया।

वीरश्रेष्ठ रायसालने अपने सुशासनसे अपने अधिकारी देशोंमें सम्पूर्णरूपसे शांति स्थापन करके प्राण त्याग किये, वह जिस सुविस्तृत देशपर शासन करते थे उसे उन्होंने सात भागोंमें विभक्त कर अपने सातों पुत्रोंको दे दिया। उन सात पुत्रोंसे अगणित परिवार और सम्प्रदायोंकी सृष्टि हुई; और वह पैतृक आदि पुरुषके नामके अनुसार भोजानी, मिद्धानी, लाडखानी, ताजखानी, परशुरामपोता, हररामपोता नामसे रजवाडोंमें सर्वत्र शेखावत व्याख्यातिसे विदित हुए।

रायसालके निम्नलिखित सात पुत्रोंको निम्नलिखित यह सात देश मिले थे—

१–गिरिधर	खण्डेला और रेवासा।
२–लाडखान	खाचरियावास।
३–भोजराज	उदयपुर।
४–तिरमलराव	कासली और ८४ ग्राम।
५–परशुराम .. .	बिबाई।
६–हररामजी	मून्दर्डी।
७–ताजखान	कोई देश प्राप्त नहीं हुआ।

ज्येष्ठ पुत्र गिरधरजीको जिस प्रकार पिताके अधिकारी देशोंका प्रधान अंश प्राप्त हुआ था, उन्होंने उसी प्रकारसे पिताके समान साहस शूरवीरता और बल विक्रमको प्रकाशित कर दिल्लीके यवनसम्राट्के द्वारा "खण्डेलाके राजा" की उपाधि प्राप्त की। इस समय भारतके यवन साम्राज्यमें बडी गडबड हो रही थी। मेवातके पहाडी देशोंपर मेव जातिके पहाडी तस्कर लोगोंने भारतवर्षकी राजधानीके निकट विशेष

(१) निरबाण सम्प्रदाय चौहान जातिकी एक शाखा विशेष थी। इन निरवाण राजपूतोंने इस देशमें बडा आधिपत्य विस्तार किया था, और उक्त कसुंबी जो इस समय उदयपुर नामसे प्रसिद्ध है, वहां उनकी राजधानी थी। इस उदयपुरमे ही शेखावाटीके समस्त सामन्त समयपर जातीय प्रश्नकी मीमांसाके लिये इकट्ठे होते थे।

लूटमार करनी प्रारम्भ की। यवनसम्राट्ने वीरवंशीय खण्डेलापति गिरधरजीको सब अंशोंमें योग्य जानकर उस दस्युदलके नेताके जीवित पकड लाने वा मारनेका भार उन्हींको अर्पण किया। गिरधर उस कार्यके पूर्ण करनेमें समर्थ भी हुए। गिरधर उक्त आज्ञाको मान विचारने लगे कि यदि एक बडी सेना साथमें लेकर उस तस्कर दलके पकडनेके लिये बाहर होंगे तो वे अवश्य ही भयभीत हो पहाडकी कन्दराओंमें छिप जांयगे और कभी भी सरलतासे हाथ नहीं आवेंगे इस कारण उन्होंने असीम साहसके साथ निर्भय हो अत्यन्त सामान्य सेना साथ ले प्रत्येक पर्वतपर भ्रमण करनेके पीछे तस्करोंके नेताको एक स्थानमें पाकर उसपर आक्रमण किया। आक्रमण करते ही समर उपस्थित हो गया, उस समरमें असीम बलविक्रम प्रकाश करके गिरधरने दस्युदलको परास्त करके उनके नेताका जीवन समाप्त कर दिया। बादशाहने इससे अत्यन्त ही संतुष्ट हो उनको राजाकी उपाधि दी। अत्यन्त दुःखका विषय है कि गिरधर बहुत दिनोंतक इस संसारमें जीवित न रह सके। वह एक समय यमुनाजीमें स्नान कर रहे थे, इसी समयमें सम्राट्की सभाके एक उच्च पदाधिकारी दुश्चरित्र मुसलमानने अत्यन्त शोचनीय रूपसे उनके प्राणनाश किये। नीचे उसका वर्णन किया गया है।

एक समय खण्डेलाराज गिरधरजीका एक अनुचर दिल्लीके एक लुहारकी दूकानमें बैठा हुआ अपने स्वामीकी तलवार बनवा रहा था। उस समय रास्तेमें एक मुसलमान जा रहा था। उसने इस राजपूतको अकेला खडा हुआ देखकर कोई असभ्य मनुष्य समझा और उसे चिढानेकी इच्छासे उसने लुहारकी दूकानपर जाकर उस राजपूतको व्यंग वचन कहना और विद्रूप करना प्रारम्भ किया। राजपूतने अपनी मातृभाषामें धीरभावसे उत्तर दिया। इसपर मुसलमानने एक जलता हुआ अंगार उस राजपूतकी बडी पगडीके ऊपर डाल दिया। राजपूत इससे भी कुछ कुपित न हुआ मुसलमान आनन्दित होकर हंसने लगा। परन्तु कुछ ही समयके पीछे पगडीमें आग जलने लगी। तब तुरन्त ही उस राजपूतने अपनी सानधरी हुई तलवारसे मुसलमानके दो टुकडे कर दिये। वह मुसलमान बादशाहकी सभाके एक प्रतिष्ठित अमीरका सेवक था। उक्त अमीर खण्डेलाराजके एक सेवकसे अपने सेवकके प्राणनाशकी वार्ता सुनकर अत्यन्त ही क्रोधित हुआ। वह अपने अनुचरोंके साथ खण्डेलाके राजाके निवासस्थानपर गया। खण्डेलाराज गिरधर उस समय वहां नहीं थे। वह उस समय इकले ही अस्त्रहीन अवस्थामें यमुनामें स्नान कर रहे थे। अन्तमें उक्त अमीरने यमुनाके किनारे जाकर कायर पुरुषोंकी तरह उस अस्त्रहीन वीर खण्डेलाराज गिरधरकी हत्या की।

खंडेलाराज गिरधरने कई एक पुत्र छोडे थे, इनमें बडे पुत्र द्वारकादास पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। परन्तु उनको सिंहासनपर बैठनेके कुछ ही दिनके पीछे एक भयानक षड्यन्त्रजालमें फँसना पडा। शेखावत् सम्प्रदायकी प्रधान शाखाके आदि पुरुष नूनकरणके एक वंशधर थे, जो उस समय मनोहरपुरके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित

थे; उन्होंने जाति शत्रुताको चरितार्थ करनेके लिये द्वारकादासको उस महाविपत्तिमें डालनेकी गुप्तभावसे चेष्टा की । दिल्लीके बादशाह इस समय शिकार करके एक सिंहको पकड लाये । उन्होंने प्रचलित रीतिके अनुसार एक समय उस सिंहके साथ वीरोंसे युद्ध करनेका समाचार प्रकाशित किया गया, उक्त प्रचारके प्रकाश होते ही उल्लिखित मनोहरपुरपतिने सम्राट्के यहां जाकर कहा "हमारे जातिके रायसालोत द्वारकादास जो विख्यात वीर नाहरसिंहके शिष्य हैं वही इस पशुराजसिंहके साथ युद्ध करनेके योग्य पात्र हैं" । बादशाहने यह बात सुनकर द्वारकादासको सिंहके साथ युद्ध करनेकी आज्ञा दी । द्वारकादास इस बातको भलीभांतिसे जान गये थे कि मनोहरपुरपतिने ही उनके प्राणनाशके लिये इस षड्यन्त्रजालका विस्तार किया है, परन्तु वे इससे कुछ भी विचलित वा भयभीत न हुए, वरन् शीघ्र ही उस आज्ञाके पालन करनेमें सम्मत हुए । रंगभूमि मनुष्योंसे भर गई । द्वारकादास स्नान पूजा कर एक पीतलके पात्रमें पूजाकी समस्त सामग्री अर्थात् फूल नैवेद्य लेकर रंगभूमिमें जा पहुँचे और उस भयानक सिंह पशुराजके सम्मुख हुए । मनोहरपुरपति विचार रहे थे कि द्वारकादास जिस समय निरस्त्र होकर उन्मत्तके समान पूजनकी सामग्री लेकर महाबली सिंहके निकट जा रहे हैं, तब तो इनकी मृत्यु अत्यन्त ही निकट होगी । इस रंगभूमिमें साधारण दर्शकोंके अतिरिक्त स्वयं बादशाह भी आये थे और द्वारकादासको उस भावसे बैठा हुआ देखकर अत्यन्त विस्मित हुए।परंतु द्वारकादासने सिंहके सम्मुख जाकर सबसे पहिले सिंहके मस्तकपर चन्दनका टीका लगाकर उसके गलेमें माला डाली और आप आसनपर बैठकर पूजा करने लगे, सिंह धीरभावसे आगे जा द्वारकादासके मुखकमलको अपनी जीभसे चाटने लगा। द्वारकादास यथार्थ भक्तके समान अपनी अन्तर्हित शक्तिसे निर्भय हो अटलभावसे बैठा रहा । कुछ ही समयके पीछे द्वारकादास सम्राट्की आज्ञासे वहांसे चला आया।सिंह किंचित् भी क्रोधित न हुआ, और न उसने उनपर आक्रमण करनेकी चेष्टा की । यह देखकर प्रत्येक दर्शक अगाध विस्मयके समुद्रमें निमग्न हुए । यवनसम्राट्ने विचारा कि द्वारकादास अवश्य ही दैवीमन्त्रसे बलवान् है, इस कारण उन्होंने इनको अपने निकट बुलाकर कहा; कि "आपकी जो इच्छा हो सो मांगो, मैं वही तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा ।" द्वारकादासने केवल इतना ही कहा " कि मैंने इस विपत्तिसे अपने भाग्यबलसे ही उद्धार पाया है; आप ऐसी विपत्तिके मुखमें अब और किसी मनुष्यको न डालना, बस आपसे मेरी एकमात्र यही प्रार्थना है" ।

मालूम होता है कि द्वारकादास उस समयके सुप्रसिद्ध महायोधा खाँजिहान लोदीके द्वारा मारे गये । शेखावाटीकी दन्तकथाओंमें वर्णित है कि उक्त खांजिहान लोदी भी द्वारकादासके द्वारा मारा गया था । उक्त प्रवादमें दोनों वीरोंकी वीरताकी कहानी जिस भावसे वर्णित हुई है, वह इस वीरजातिके इतिहासके पक्षमें अत्यन्त प्रशंसाजनक है । खांजिहान और द्वारकादास दोनों ही परम मित्र थे, एक समय दिल्लीके सम्राट् खांजिहानके प्रति अत्यन्त ही कुपित हुए और द्वारकादासको आज्ञा दी कि शीघ्र ही

खांजिहानके जीवित वा मृत शरीरको लाकर हाजिर करो । इस आज्ञाको सुन कर द्वारकादास महा विपत्तिमें पडे । उन्होंने खांजिहानसे कहला भेजा कि हमारे ऊपर यह अत्यन्त घृणित कार्यके साधनका भार अर्पित हुआ है अतएव या तो आप ही आत्मसमर्पण कीजिये नहीं तो आप भाग जाइये परन्तु उस वीरने कादरकी भांति भागनेकी अपेक्षा मित्रके हाथसे मरना ही श्रेष्ठ समझा । फरिश्तेसे यह खाजिहानकी जीवनी और वीरतामूलक कार्यकौतूहलका पूर्ण विवरणका वर्णन पाया जाता है अधिक क्या कहे उसी कारणसे उक्त शेखावत्के नेताकी वीरताका वर्णन भी उसमें सम्बद्ध हुआ है । दोनों वीर संग्रामक्षेत्रमें जाकर एक दूसरेकी तलवारसे मारे गये ।

द्वारकादासके पुत्र वीरसिंह देव अपने पिताके पदपर विराजमान हुए, वीरसिंहदेव सेनासहित यवनसम्राट्की आज्ञासे उनकी सेनाके साथ दक्षिण देशकी विजयमें नियुक्त थे, और उन्होंने अपने बलविक्रमके बलसे बादशाहको सन्तुष्ट कर परनाला देशके शासनकर्ता पदपर प्राप्त हो प्रबलप्रतापके साथ उस देशपर अपना राज्य स्थापित किया । खण्डेलाके इतिहासलेखक लिखते हैं कि वीरसिंहदेव, उनके अधीश्वर प्रभु आमेरपतिके अधीनमें न रहकर स्वयं स्वाधीनभावसे कार्य करते थे, परन्तु कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि मिरजा राजा जयसिंह इस समय राजपूत राजाओंमें सम्राट्की सभामें सबसे अधिक सम्मानित और प्रसिद्ध तथा सेनानीरूपीसे प्रबल सामर्थ्यवान थे, और वीरसिंह उनके अधीनमें आज्ञा पालन करते थ ।

वीरसिंहदेवके निम्नलिखित सात पुत्र उत्पन्न हुए, (१) बहादुरसिंह, (२) अमरसिंह (३) श्यामसिंह, (४) जगदेव (५) भूपालसिंह (६) मोकरासिह (७) प्रेमसिंह । वीरसिंहने जीवित अवस्थामें बहादुरसिंहको युवराज पदपर अभिषिक्त किया, और अन्यान्य पुत्रोंको राज्यका एक २ देश जागीरमें दिया । राजा वीरसिंहदेव, बहादुरसिंहको अपनी राजधानीमें रखकर अपनी सेनासहित सम्राट्की सेनाके साथ दक्षिणको गये, उन्होंने वहां जाते ही यह समाचार पाया कि उनके ज्येष्ठ पुत्र बहादुरसिंहदेव स्वयं राजकी उपाधि धारण करके राज्यशासन कर रहे हैं । वीरसिंह यह समाचार सुनकर पुत्रके आचरणसे अत्यन्त ही क्रोधित हुए, और चार सवारोंको साथ लेकर दक्षिणके डेरोंसे अपने राज्यकी ओरको चले आये । राजा वीरसिंहदेवने खण्डेलासे दो कोशकी दूरीपर एक ग्राममें जाकर एक जाटकी स्त्रीके यहां डेरा लिया और उससे भोजन तैयार करनेके लिये कहा, और यह भी कहा कि हमारे घोडोंको सावधानीसे रखना, कहीं चोर आदि न ले जांय । यह वचन सुनकर जाटकी स्त्रीने कहा, कि क्या "बहादुरसिंह यहांके राजा नहीं हैं ? तुम राजमार्गमें सुवर्णकी मुद्रा फेंक आओ कोई भी उनको नहीं छू सकता" । पुत्रके ऐसे युक्तिसंगत राज्यकी प्रशंसा सुनकर वृद्ध वीरसिंहदेव इतने प्रसन्न हुए कि वह जिस छद्मवेशसे आये थे उसीसे अपने डेरोंको लौट गये । वीरसिंहदेवने दक्षिण देशमें ही प्राण त्याग किये ।

पिताकी मृत्युके पीछे बहादुरसिंह पिताके पदपर नियमितरूपसे अभिषिक्त हुए। इस समय दिल्लीके सम्राट् औरंगजेब स्वयं सेनासहित दक्षिणके युद्धमें लिप्त थे। बहादुरसिंह भी अपनी सेनाके साथ दाक्षिणात्यमें जाकर बादशाहकी सेनाके साथ जा मिले। परन्तु बहादुरखाँ नामक एक प्रतिष्ठित मुसलमानने बहादुरसिंहका घोर अपमान किया था, गोंडा मुसल्मानको बादशाहके निकटसे उस अपमान करनेका कोई फल न मिला इससे तेजस्वी राजपूत बहादुर अपने डेरे त्यागकर चले आये। इसी कारणसे मनसबदार सरदारोंकी तालिकासे इनका नाम काट दिया गया। इस कठिन समरमें नरपिशाच औरंगजेबने प्रत्येक हिन्दू प्रजासे जिजियाकर संग्रह करके राज्यके समस्त हिंदूमात्रको एकबार ही समभूमि करनेकी आज्ञा दी।

शेखावाटीके अधीश्वर राजा बहादुरसिंहके साथ जिस यवनसेनापति बहादुरखाँकी शत्रुता हो गई थी, दुराचारी औरंगजेबने उसी बहादुरखाँको खण्डेलासे जिजियाकर संग्रह करने और खण्डेलादेशके समस्त देवमंदिरोंको तुडवानेके लिये भेजा। बहादुरखाँके सम्राट्की सेनाके साथ खण्डेलाके सम्मुख पहुँचते ही खण्डेलाराज बहादुरसिंह कापुरुषोंकी तरह अपनी राजधानी छोड़कर भाग गये। सम्राट्की भयंकर सेनाके साथ जयकी आशा न देखकर यद्यपि वह भाग गये परन्तु जब जातीय धर्म जातीय विग्रह विध्वंस करनेके लिये विजातीय विधर्मी इकट्ठे हुए थे तब यथार्थ राजपूत वीरोंके समान उनके लिये तो रणभूमिमें यथाशक्ति बल प्रकाश करके जीवनका बलिदान करना ही उचित था। सम्राट्की सेना खण्डेला राजधानीके दो कोशपर निर्विघ्नतासे आ गई, समस्त शेखावत देशमें यह समाचार फैल गया कि बहादुरसिंह खण्डेलासे भाग गये उसी समय यवन खण्डेलामें विग्रह मचाकर संपूर्ण मंदिरोंको विध्वस्त करने लगे। इस समय रायसालके दूसरे पुत्र भोजराजके वंशधर सुजानसिंह चापोली प्रदेशके अधिष्ठाता पदपर प्रतिष्ठित थे। सुजनसिंहने इस समाचारको सुनते ही यथार्थ राजपूत वीरोंके

---

(१) पापात्मा औरंगजेबकी इस आज्ञाको किस प्रकारसे प्रबल आग्रहके साथ उसके सेवकोंने पालन किया था उसके प्रत्यक्ष उदाहरणस्वरूप प्रत्येक नगर और गावोंके अगणित देवालय एवं मंदिरोंके टूटे फूटे खंडहर और खंडित मूर्तियां आजलों हीनदशामे पडी हैं; लाहोरसे कन्याकुमारीतक इतने बडे प्रदेशमें ऐसी एक भी प्राचीन मूर्ति नहीं है, जिसका कोई न कोई अंग औरंगजेबकी आज्ञा पालनेके लिये न तोड दिया गया हो। नर्मदाके एक छोटे द्वीपपर ओंकारजीकी मूर्ति है, इस मूर्तिने भारतकी मूर्तियोंके तोडते समय अपनी विचित्र शक्ति प्रकाशित की थी। नराधम औरंगजेबने कहा, कि-"यदि यथार्थ देवता हो तो अपनी शक्तिको प्रगट कर मेरी आज्ञा व्यर्थ करे। इतिहास कहता है कि उक्त ओंकारजीके मस्तकमें लगुडका अघात लगते ही उनकी नाक और मुखसे रुधिरकी धारा बह निकली, उसको देखकर पापी यवनोंने दूसरी वार मूर्तिमें कुल्हाडा मारनेका साहस नहीं किया, यद्यपि ओंकारजीने पापी औरंगजेबको प्रत्यक्षमें किसी प्रकारका दंड नहीं दिया किन्तु उक्त समयसे ओंकारजीके प्रति सर्वसाधारण हिंदूमात्रकी प्रबल भक्ति हो गई और उस देशकी समस्त मूर्तिमें ओंकारजीकी अधिक पूजा होने लगी।

समान महाक्रोधित हो उसी समय यह प्रतिज्ञा की "कि मैं अवश्य ही प्राणपणसे खण्डेलाके समस्त मंदिरोंकी रक्षा करूँगा, यदि ऐसा न करूँ तो अपना जीवन दे दूँगा"। जिस समय खण्डेलामें बादशाहकी सेनाने प्रवेश किया उस समय सुजानसिंह मारवाडकी सीमामें विवाह करनेके लिये गये थे, अतएव वह शीघ्र ही नवविवाहिता वधूके साथ अपने स्थानको लौट आये और उसको अपनी माताके समीप रखकर दोनोंसे अन्तिम विदाले खण्डेलाकी ओर चले। इसी समय उनके समस्त कुटुम्बके लोग भी आकर उनको खण्डेलामें जानेके लिये मना करने लगे, और बोले कि "जब बादशाहकी सेना खण्डेलाके मंदिरोंको तोडनेके लिये आई है तब खण्डेलाके राजा बहादुरसिंह ही इसको रोकनेका उपाय करेंगे, आपको इस कार्यमें हस्ताक्षेप करनेका कोई प्रयोजन नहीं है"। इसपर क्रोधितचित्त सुजानसिंहने उत्तर दिया था कि "क्या मैं रायसालके वंशधरोंमें नहीं हूँ? यवन ठाकुरजीके मंदिरोंको तोड डालैं और मैं उनको निवारण न कर सकूँ! झगडेके मिटानेका उपाय न करू!! भला यह कैसे हो सकता है? राजपूत क्या कभी इस आक्रमणको सहन कर सकते हैं?" इस कार्यमें सुजानसिंहको दृढप्रतिज्ञ देखकर उनके कुटुम्बियोंमेंसे ६० वीर और भी उनकी सहायता करनेके लिये चले। और उसी अल्पसेनाके साथ सुजानसिंहने खण्डेलामें प्रवेश किया। यवनसेनापति बहादुरखाँने यह नहीं विचारा था कि, हमारे साथ लडनेके लिये यह इस प्रकारसे आ जायँगे इस कारण यह समाचार सुनकर वह अत्यन्त ही आश्चर्यमें हुआ। वह भली भाँतिसे जान गया कि, जब राजपूत वीर किसी कार्यमें दृढप्रतिज्ञ हो जाते हैं तब वे महा भयंकर कार्य कर डालते हैं, इस कारणसे अथवा यह स्मरण करके कि अत्यन्त सामान्य संख्यक राजपूत उसी प्रबल सेनाके विरुद्ध समर करके जीवन देनेके लिये आये हैं; उसने दयाके वश हो सुजानसिंहके दो बुद्धिमान अनुचरोंको अपने डेरोंमें सलाह करनेके लिये बुला भेजा, तदनुसार इधरसे दो सम्भ्रान्त राजपूत बहादुरखाँके डेरोंमें जा पहुँचे, बहादुरखाँने उनसे कहा "यद्यपि बादशाहने खण्डेलाके देवमन्दिरोंके तोडनेकी आज्ञा दी है परन्तु यदि आप नियमितरूपसे हमारी अधीनता स्वीकार करके मन्दिरोंके समस्त सुवर्णके कलशोंको हमें दे देंगे तो हम प्रसन्न होकर मन्दिरोंको नहीं तोडेंगे। यह सुनकर राजपूत वीरोंने बहादुरखाँसे अपनी सामर्थ्यके अनुसार बहुतसा धन देकर उक्त कार्य रोकनेका अनुरोध किया, पर बहादुरखाँने किसी भांति भी इस बातको स्वीकार नहीं किया। वह बारम्बार कहने लगा "कि आपको कलशे ही तोडकर देने होंगे" इस वचनको सुनकर उक्त दोनो राजपूतोंमेंसे एक भी वीर धीरज धारण करनेको समर्थ न हुआ, वह सिंहके समान गर्जने लगा "कलश उतार लेंगे!" उसके इतना कहते ही उसी समय उसने एक मिट्टीके पिंडका कलश बनाकर सम्मुख स्थापित कर क्रोधित हो सिंहके समान लाल २ नेत्र करके कहा—"कलश तोड लोगे? अच्छा, मैं कहता हूँ यदि तुममेंसे किसीकी भी सामर्थ्य है तो इस मिट्टीके कलशको ही पहिले तोडकर देख लो?" उस राजपूतके ऐसे क्रोध भरे वचन सुनकर शत्रु बहादुरखाँ भी मन ही मनमें राजपूत जातिके साहसको धन्यवाद देने लगा, परन्तु वह कलश तोड लेनेकी प्रतिज्ञासे

विरक्त न हुआ। इसके पीछे वे दोनों राजपूत उसके डेरोंसे चले गये, और सम्मुख युद्ध करनेका प्रस्ताव पक्का कर गये।

हम जिस समयकी बात लिख रहे हैं उस समयतक खण्डेलामें कोई किला नहीं था। उच्च शिखरपर स्थित खण्डेलाके राजप्रासाद और उक्त विग्रह मूलमंदिरके बीचोबीच जो एक भोंहरा था, उसी मार्गके मध्यस्थानमें एक बडा तोरण (फाटक) था। सुजानसिंहने अपनी कितनी ही सेना उस तोरणमें रखी और आप स्वयं कुटुम्बियोंके साथ उस मंदिरकी रक्षापर नियुक्त हुए। यद्यपि वह इस बातको जानते थे, कि मुसलमानों-की सेनाकी संख्या अधिक है, उनसे परास्त होनेकी संपूर्ण संभावना है, तथापि वह यथार्थ राजपूत वीरोंके समान अपने धर्मकी रक्षाके लिये अटलभावसे शत्रुओंके आनेकी बाट देखने लगे, थोडे ही समयके उपरान्त पापात्मा औरंगजेबकी सेनाने आगे बढकर तोरणद्वारकी रक्षापर सन्नद्ध राजपूतोंके ऊपर गोलियोंकी वर्षा करनी आरंभ की। इसके उत्तरमें राजपूतसेनाने भी महापराक्रमसे आक्रमण किया, और शत्रुदलका संहार करते २ अंतमें उन सभीके प्राणोंका नाश हो गया। तब विजयी मुसलमानोंका दल मंदिरके रक्षक राजपूतोंपर आक्रमण करनेके लिये आगे बढा; यह देखते ही सुजानसिंहके अनुचर राजपूत मंदिरमें स्थित प्रतिमाको प्रणाम कर नंगी तलवारें हाथमें ले, कालांतक कालके समान शत्रुओंके सम्मुख आ डटे वे शत्रु सेनाका नाश करते २ अंतमें आप भी नाशको प्राप्त होने लगे। सबसे पीछे वीरश्रेष्ठ सुजानसिंह रणभूमिमें सर्वदाके लिये निद्रित हुए। रणविजयी यवनोंने तुरन्त ही मंदिरोंको तोडफोड कर मूर्तियोंको चूर्ण २ कर डाला। जहाँ मंदिर थे वहाँ मसजिदें बनवा दीं, और उस मसजिदकी दीवारोंकी जडमें उस पापीने मूर्तियोंके टुकडे भरवा दिये। कर्नल टाड लिखते हैं कि "समस्त रजवाडेमें ऐसा एक भी प्रसिद्ध नगर नहीं है कि जिसमें पापात्मा औरंगजेबने मंदिरोंके तोडनेके लिये अपनी सेना न भेजी हो और उन मंदिरोंकी रक्षा करनेमें इस प्रकारसे राजपूतोंने अपने जीवनका बलिदान न किया हो"। यवनसेनापति बहादुरखाँने खण्डेलाको जीतकर वहाँ एक दल बादशाही सेनाका छोड दिया। परन्तु खण्डेलाके राजा बहादुरसिंहके अधीनमें जो समस्त प्राचीन राजकर्मचारी नियुक्त थे विजयी बहादुरखाँने उन सबको शासन और राजस्वभागके कामोंपर अपने अधीनमें रक्खा।

भागे हुए कायर बहादुरसिंह समीपके ही एक नगरमें निवास करते थे। कुछ ही दिन पीछे वहाँके दीवानकी सहायतासे उन्होंने बहादुरखाँसे उक्त देशकी पैदावारीका कुछ अंश और वाणिज्य शुल्कका कुछ अंश पानेकी अनुमति ली, अर्थात् उत्पन्न धान्यके मन पीछे एक सेर और वाणिज्य शुल्कके ऊपर रुपये पर एक पैसेके हिसाबसे उनको मिलने लगा। इस प्रकारसे राजा बहादुरसिंह अतिकष्टसे कुछ समय व्यतीत करते रहे, पीछे बादशाहने इनको बाग और महल दे दिये। इसके पीछे जिस समय सैयदके दोनों भ्राता दिल्लीके बादशाहकी सभामें अपनी प्रबल सामर्थ्य चलाते थे, उस समय बहादुर-सिंहने उनको संतुष्ट कर अपने समस्त राज्यको पालिया, परन्तु उस समय भी खण्डेलामें

(१ तहसील वसूलका महकमा।

बादशाहकी एक सेनाका दल रहता था, और बहादुरसिंह उसका सारा खर्च देते थे। राजा बहादुरसिंहके तीन पुत्र थे। केसरीसिंह, फतेसिंह और उदयसिंह।

बहादुरसिंहकी मृत्युके पीछे केसरीसिंह पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए, और जिस प्रकारसे इनके बापदादे खंडेलाको शासन करते थे अर्थात् वे जिस भाँतिसे सेनाके साथ दिल्लीके बादशाहकी सेनाके अधीनमें रहकर स्वाधीनभावसे खंडेलाको शासन कर गये हैं उसी भावसे शासन करनेके अभिप्रायसे केसरीसिंहने अपने समस्त अनुचर और सेनाको इकट्ठा करके फतेसिंहके सहित बादशाहके डेरोंमें जाकर सब प्रकारसे अधीनता स्वीकार कर बादशाहकी आज्ञामें रहनेकी अभिलाषा की। खण्डेला बहादुरसिंहके पतनके साथ ही साथ रायसालकी ज्येष्ठ शाखासे उत्पन्न मनोहरपुरके अधीश्वरने सम्राट्के यहाँसे नष्ट हुई सामर्थ्यका फिर उद्धार कर लिया था। इस समय जब केसरीसिंह फिर सम्राट्के डेरोंमें आकर अपने वंशकी पूर्ण कीर्तिको संग्रह करनेके अभिलाषी हुए, तब उक्त मनोहरपुरपतिके हृदयमें ईर्षाग्नि प्रज्वलित हो गई कि जिससे केसरीसिंह राजसभामें और स्वत्व प्राप्त न कर सकें, और वह ऐसे षडयंत्रोंका विस्तार करने लगे कि उन्होंने फतेसिंहको कलाकौशलसे हस्तगत करके कहा "आप भी तो बहादुरसिंहके पुत्र हैं, खंडेला देशपर आपका भी तो हक है। इकले केसरीसिंह ही क्यों राज्यसुख भोगैं? आप केसरीसिंहसे राज्यका आधा हिस्सा बँटा लीजिये"। अज्ञानी फतेसिंहने मनोहर-पुरपतिके उक्त वचनोंसे उत्तेजित और ऊंची अभिलाषासे प्रदीप्त होकर भाईके साथ झगडा करना प्रारंभ किया। खण्डेलाराज्यके दीवानने इन दोनों भ्राताओंमें विवादकी अग्नि प्रज्वलित होते देखकर स्थिर किया, कि इससे तो सर्वनाश होनेकी संभावना है, इस कारण उसने शीघ्र ही खण्डेलाकी राजधानीमें जाकर राजमाताको समस्त वृत्तान्त सुनाकर दोनों भाइयोंकी रक्षाके लिये और खंडेलाके कल्याण साधनके निमित्त दोनों पुत्रोंको राज्य बाँट देनेका अनुरोध किया। राजमाताने उस प्रस्तावमें अपनी सम्मति प्रकाशित की और केसरीसिंह और फतेसिंहने शीघ्र ही अपना २ भाग लेना स्वीकार किया तब खंडेला देशकी समस्त जनसंख्या भूमिको पांच हिस्सोंमें विभाजित कर दो भाग फतेसिंहको और राजा केसरीसिंह-को तीन भाग दिये गये। इसी प्रकारसे राजधानी नगरके भी भाग करके विभा-जित किये गये। इसी समयसे दोनों भ्राताओंमेंसे परस्पर प्रेम तो एक बार ही दूर हो गया वरन् वे एक दूसरेकी सूरतसे घृणा करने लगे। राजा केसरीसिंह खंडेलाको त्याग कर कावटा नामक स्थानमें रहने लगे। वह जब कभी २ राजधानी खण्डेलामें आते तब फतेसिंह वहाँसे चले जाते थे। दोनों भ्राताओंमें इस प्रकारसे भयंकर विद्वेष चला जाता था। मनोहरपुरपति इस समय शेखावत सम्प्रदायके संपूर्ण रूपसे नेता बन गये इस प्रकारसे कुछ दिन व्यतीत हो गये, राजा केसरीसिंहसे उक्त दीवानने गुप्तभावसे प्रस्ताव किया कि फतेसिंहको मारकर मनोहरपुरपतिकी प्रबलताको दूर करना अवश्य कर्तव्य है परन्तु राजा केसरीसिंह इस बातपर सम्मत न हुए। चतुर दीवानजीने प्रगटमें दोनों भ्राताओंमें मेल होनेकी इच्छासे कावटामें जानेकी तैयारी

की। फतेसिंहको इस बातका स्वप्नमें भी ध्यान न था कि, मेरे प्राणनाशके लिये यह षड्यंत्र हो रहा है। वह भाईके साथ प्रेम बढ़ानेकी इच्छासे कावटेमें आये और उसी समय तलवार मारकर उनके प्राण ले लिये गये, परन्तु इस हत्या करनेके मूलकारण दीवानजीने भी अपनी करनीका फल तुरन्त ही पा लिया; उसने जो तलवार फतेसिंहजी पर चलाई थी वही तलवार दीवानजीके भी गलेमें जाकर लगी, जिससे वह तुरन्त ही इस संसारसे बिदा हो गये।

राजा केसरीसिंहने महापाप करके अपने भाईके प्राणोंका नाश कर उसकी सम्पूर्ण सम्पत्ति और देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया और दिल्लीके बादशाहके ऊपर प्रवंचना भक्ति दिखाकर केसरीसिंहने इस प्रकारसे अपना मनोरथ पूर्ण किया। इस प्रकारसे संपूर्ण खंडेला राज्यका पूर्ण स्वत्व प्राप्त करके रेवासो स्थानका कर जो अजमेरके खजानेमें और खण्डेला देशका कर नारनोलके खजानेमें दिया जाता था उसे भी इस समय बंद कर दिया। इस समय सैयद अब्दुल्ला दिल्लीके बादशाहके यहाँ प्रधानमंत्रीपदपर अभिषिक्त था, वह केसरीसिंहकी ऐसी अराजभक्ति देखकर अत्यन्त ही क्रोधित हुआ; और उन्हें इसका बदला देनेके लिये उसने खंडेला देशपर एक सेना भेज दी, परन्तु राजा केसरीसिंहने इस समय अपनी सामर्थ्यको इतना फैला दिया था कि जिससे शेखावतकी समस्त सम्प्रदायोंमें उनका अधिकार फिर प्रबल हो गया था। सम्राट्की सेनाके आनेका समाचार सुनकर केसरीसिंहने समस्त शेखावत सामन्तोंको अपनी अपनी सेनासहित बुलाया–उनके उस बुलावेपर जातीय स्वत्व और सम्मानकी रक्षाके लिये प्रत्येक रायसालोत इकट्ठे होने लगे। अधिक क्या केसरीसिंहके चिरशत्रु मनोहरपुरके सामन्त भी अपने धात्री पुत्रके अधीन बादशाहकी सेनाके विरुद्धमें केसरीसिंहकी सहायता देनेके लिये आये। राजा केशरीसिंह इस प्रकारसे स्वजातीय सेनाके बलसे बलवान् हो बादशाहकी सेनाके साथ युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। सीमाके अन्तमें स्थित देवली नामक स्थानमें दोनों ओरसे भयंकर समारानल प्रज्वलित हो गई, परन्तु अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि उस युद्धमें राजा केसरीसिंहके भाग्यमें जयकी आशा शीघ्र ही असंभव हो गई; शोचनीय जातिवैरने उनके भाग्यका द्वार तुरन्त ही बंद कर दिया। राजा केसरीसिंहकी जय होते देख उनके जातिशत्रु मनोहरपुरपतिकी सेनाका सेनापति उनका धामाई केसरीसिंहका पक्ष छोड अपनी सेनासहित रणक्षेत्रसे इकबारगी हट गया। राजा केसरीसिंह इस समय और भी एक विपत्तिमें पडे। कासलीके जिस महावीर सामन्तने इस समय राजा केसरीसिंहके पक्षमें सेनासहित प्रबल युद्धमें प्रबल पराक्रम प्रकाश किया था, जिसके ऊपर केसरीसिंहको बडा भरोसा था, वह भी इस समय युद्धमें मारे गये। इस प्रकारसे केसरीसिंहको विपत्तिमें पडा हुआ देखकर दांता वा दाता देशके लाडखानी सम्प्रदायके सामन्तनेताने इस सुअवसरपर अपना स्वार्थ साधन करना कर्तव्य विचारा, और कापुरुषोंकी तरह युद्धभूमि छोडकर राजा केसरीसिंहके अधिकारी खासा देशपर अधिकार करनेके लिये सेनासहित वह उधरको चला गया।

इस समय युद्धभूमिमें चारों ओरसे राजा केसरीसिंहकी जयध्वनि हो रही थी, परन्तु उन्होंने स्वजातिके उक्त असत् व्यवहारको देखकर अत्यन्त विषादपूर्ण हृदयसे कहा, "हा पाप ! यदि जो इस समय फतेसिंह जीवित होते तो वे कभी भी इस प्रकारसे मुझे पीठ न दिखाते, यद्यपि उपरोक्त दोनों सामन्त केशरीसिंहको छोडकर चले गये परन्तु वे इससे कुछ भी विचलित नहीं हुए। यथार्थमें रायसालोतने वीरके समान रणक्षेत्रमें अपने भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये उन्होंने दृढ़प्रतिज्ञा की। इस समय दोनों ओरकी सेना प्रबल पराक्रमके साथ अपनी २ वीरता दिखा रही थी। उसी समय उन्होंने युद्धमें विषम वीरता प्रकाश करते हुए अपने छोटे भाई उदयसिंहको बुलाया और उनको युद्धक्षेत्र छोडकर अपनी रक्षा करनेके लिये अनुरोध किया। इस प्रकार राजपूत वीरोंके पक्षमें अपमानकारी आज्ञा पालन करनेमें उदयसिंहने सर्वथा सम्मति प्रकाश की, परन्तु जब राजा केसरीसिंहने कहा कि "मैंने अपने वंशके मस्तकपर कलंकका टीका देनेके लिये सेनासहित युद्धमेंसे भागनेके लिये नहीं कहा मैं स्वयं रणक्षेत्रमें रहूँगा, तुम इस स्थानसे चले जाओ। यदि तुम भी मारे जाओगे, तो हमारा वंश एकबार ही नष्ट हो जायगा। राजा केसरीसिंहके यह वचन सुनकर दूसरे सामन्त भी उदयसिंहको रणक्षेत्र त्यागनेका अनुरोध करने लगे, उन्होंने केसरीसिंहको भी समरभूमिसे भागनेका आग्रह किया, परन्तु राजा केसरीसिंहने कहा " नहीं अब हम जीवित रहनेकी इच्छा नहीं करते, मेरे मस्तकपर दो महापापोंके कलंककी रेखा खचित हो चुकी है। मैंने अपने भाईके प्राणनाश किये हैं, और विवाहके समय बीकानेरके चारणकविको विवाहका उपहार नहीं दिया। इसी कारण उसने मुझे शाप दिया था। इन दोनों कलंकोंके ऊपर कायर पुरुषोंके समान भागनेका तीसरा कलंक अब संचय करना नहीं चाहता, यह कहकर राजा केसरीसिंहने फिर भी उदयसिंहसे वही अनुरोध किया। तब उदयसिंह इच्छा न होनेपर भी भाईकी आज्ञानुसार रणभूमिसे चले गये।

जिससे खण्डेलाका राज्य शत्रुओंके हाथमें न जाय। जिससे खण्डेला देशपर शेखावत वंशका शासन प्रचलित रहे। उस महायुद्धमें स्थित राजा केसरीसिंहने इसी लिये प्रचलित रीतिके अनुसार " मेदिनी माताको " रुधिर मांस, और मट्टीके पिंड देनेका संकल्प किया। उन्होंने शीघ्र ही अपने शरीरमेंसे एक मांसका टुकडा काट डाला, किन्तु उस कटे हुए टुकडेसे प्रयोजनके अनुसार रुधिर न निकला, तब उन्होंने अपने दूसरे अंगको काटकर उसमेंसे निकले हुए रुधिरसे अपना संकल्प पूर्ण किया। कविश्रेष्ठ मंत्र पढ़ने लगे, पिंडदान समाप्त हो गया, कविने कहा कि मेदिनीमाताने दान लिया है, आपके पीछे सात पुरुष खण्डेलापर राज्य करेंगे।

महाराज केसरीसिंह पृथ्वीमाताके निमित्त इस प्रकारसे रुधिर मांस और मट्टीका पिंडदान करके संहारमूर्ति धारण कर नंगी तलवार हाथमें ले युद्धसागरमें कूद पडे। मनोहरपुर और दांताकी सामन्त सेनाने विश्वासघातकता करके पीठ दिखाई और केसरी-सिंहकी सेनाका बल भी अत्यन्त क्षीण हो गया था, परन्तु उन्होंने फिर भी अतुल पराक्रमके

साथ संग्राम किया। अंतमें यवनसेनाने विजय प्राप्त की और वीरश्रेष्ठ केसरीसिंह जन्म भूमिके निमित्त रणशय्यापर अनंत निद्रामें सो गये। उदयसिंह पहिलेसे खंडेलाको चले गये थे। पर विजयी बादशाहकी सेनाने खंडेला जीतकर उदयसिंहको बंदी कर लिया। खंडेलादेश बादशाहके अधिकारमें हो गया; उदयसिंह बंदीभावसे तीन वर्षतक अजमेरके किलेमें रहे। तीन वर्षके पीछे उदयपुर और कासलीके शेखावत दो सामन्तोंने सम्राट्की सेनाको विध्वंस कर फिर खंडेलाको स्वाधीनता देनेकी अभिलाषा की। किन्तु अजमेरके किलेमें कैद राजा उदयसिंहपर विपत्ति आ पडनेकी आशंकासे उन्होंने गुप्तभावसे एक दूतको उदयसिंहके पास भेजकर कहला भेजा, कि "हमने खंडेलापर फिर अधिकार करनेका उद्योग किया है। पीछे अजमेरमें स्थित बादशाहके प्रतिनिधि आपको भी इसमें सम्मिलित समझेंगे. इस कारण आप अपनी निर्दोषिता दिखानेके लिये उक्त राजाके प्रतिनिधिसे कह दीजिये, जिससे कि हम खंडेलापर अधिकार न कर लें। जब आप उनसे ऐसा कह देंगे तब वह कभी नहीं बिचारेंगे कि आपके ही लिये हमने खंडेलाको विजय करनेका उद्योग किया है तथा आप भी इसमें शरीक हैं।" वह दूत उदयसिंहसे ऐसा कहकर लौट आया; उसी समय उदयपुर और कासलीके दोनों सामन्तोंने अपनी प्रबल सेनाके साथ हठात् खंडेलापर आक्रमण कर वहांसे दिल्लीके बादशाहकी सेनाको परास्त करके और उसके सेनापति देवनाथको मार डाला। उदयसिंहने उक्त दोनों सामन्तोंके उपदेशसे पहिले ही अजमेरके यवनराजप्रतिनिधिको यह समाचार प्रगट कर दिया था, इस कारण राजप्रतिनिधिने उक्त दोनों सामन्तोंका खंडेलापर अधिकार करके समस्त सेनाके विनाशका समाचार सुना तो उसने विचारा कि अब किस प्रकारसे फिर उसपर अपना अधिकार हो सकता है, इसलिये उसने उदयसिंहके साथ सलाह की। उदयसिंहने कहा कि "यदि आप मुझको कैदसे छोड दें तो मैं खंडेलादेशको फिर बादशाहके अधिकारमें करा सकता हूँ, उनके यह वचन सुनकर राजप्रतिनिधिने कहा "कि मैं आपको छोड सकता हूँ परन्तु आप अपनी प्रतिज्ञाको पालन करेंगे इसका क्या प्रमाण है?" तब युवक उदयसिंहने कहा, "मेरे बंधु तथा कुटुम्बी कोई भी नहीं है; केवल एक वृद्धा माता है, मेरी साक्षीस्वरूपमें आप उनको बंदी रख सकते हैं"। वास्तवमें उदयसिंहकी वृद्धा माता अपने पुत्रकी साक्षीस्वरूप हो बंदीदशामें रहने लगी। अंतमें उदयसिंहने इस प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाको पूरण किया कि, जिससे राजप्रतिनिधि इनकी भक्ति और विश्वासको देखकर अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ। उदयसिंहने उस राजप्रतिनिधिको बहुतसा धन भी दिया इससे राजप्रतिनिधिने अत्यन्त ही प्रसन्न होकर खंडेला देशका अधिकार इनको अर्पण किया।

उदयसिंह इस प्रकारसे पिताके नष्ट हुए राज्यका फिर उद्धार करके खण्डेलाके सिंहासनपर विराजमान हुए, और सबसे पहिले वह अपने समस्त स्वजातिय और अनुचरोंकी सेनाको इकट्ठा करने लगे। मनोहरपुरके अधीश्वरकी विश्वासघातकतासे ही खण्डेलाका पतन हुआ था; इसको स्मरण करके उनको उचित दंड देनेके लिये उन्होंने शीघ्र ही प्रबल सेनाकी सृष्टि की। मनोहरपुरपतिने उदयसिंहको अपने नगरपर

आक्रमण करनेके लिये आता हुआ देखकर अपने धाभाईके हाथमें सेनाका भार अर्पण कर उसीको युद्ध करनेके लिये भेजा, परन्तु वह तो मुकाबिला होनेके पहिले ही अपने प्राण लेकर भाग गया, इस कारण विजयी उदयसिंहने सरलतासे मनोहरपुरको जा घेरा। जब मनोहरपुरपतिने शत्रुओंसे अपनेको घेरा हुआ देखा तब वह अपने उद्धारका उपाय शोचने लगे और षड्यंत्र करने लगे। कासलीके सामन्त दीपसिंहने सेनासहित उदयसिंहके अधीनमें मनोहरपुरको घेर लिया था। अस्तु मनोहरपुरपतिने दो विश्वासी सामन्तोंके हाथ एक पत्र लिखाकर दीपसिंहको जनाया कि "उदयसिंह केवल मनोहरपुरपर ही अधिकार करके शान्त न होंगे यह हमें भली भाँतिसे विश्वास हो गया है, वह मनोहरपुरपर अधिकार करनेके पीछे आपके अधिकारी देश कासलीको भी जीत लेंगे, यह आप निश्चय जानिये।" दीपसिंह इस पत्रको पाकर इस पर संपूर्णतः विश्वास कर दूसरे दिन प्रभात होते ही जिस समय मनोहरपुरपर अधिकार करनेके लिये रणभेरी बजने लगी, उसी समय उस सामन्तने अपनी सेनासहित डेरोंको छोड दिया, और वह अपने देशकी ओरको चला गया। उदयसिंह इस षड्यंत्रको कुछ भी नहीं समझे, इस कारण दीपसिंहको उस भावसे भागता हुआ देख तथा उसी कारणसे मनोहरपुरपर अधिकार करके अपना बदला लेनेमें सफलता न देखकर वह मारे क्रोधके उन्मत्त हो गये, और शीघ्रतासे सेनासहित दीपसिंहके पीछे चले। दीपसिंह भलीभाँतिसे जान गये कि यह किसी प्रकारसे भी उदयसिंहके आक्रमणको निवारण नहीं कर सकेंगे, इस कारण वह कासलीको छोडकर जयपुरके महाराजका आश्रय लेनेके लिये भाग गये। यद्यपि उदयसिंहने कासलीपर अपना अधिकार कर लिया। परन्तु मनोहरपुरपतिने उक्त षड्यंत्रजालके विस्तारसे शत्रुओंके हाथसे उद्धार पाया; महावीर जयसिंह इस समय आमेरके सिंहासनपर विराजमान थे, उन्होंने शरणागत दीपसिंहको अभय देकर कहा कि "यदि आप शपथ करके हमारी अधीनता स्वीकार कर हमको कर देनेमें सम्मत हो सामन्तोंकी श्रेणीमें नियुक्त हों तो मैं उदयसिंहसे कासली देशको छीनकर आपको दे दूंगा, और उदयसिंहको इसका उचित दण्ड दूंगा।" दीपसिंहने इन धीरजदायक वचनोंपर विश्वास करके शीघ्र ही आमेरराजके अधीनता-स्वीकारपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये, और जयपुरेश्वरको वार्षिक चार हजार रुपया कर देना भी स्वीकार कर लिया।

इस प्रकारसे शेखावतके सामन्तोंके सम्प्रदायके ऊपर बहुत दिनोंके पीछे जयपुरपतिके आधिपत्य विस्तारका फिर सूत्रपात हुआ, हमारे पाठकोंको यह तो भलीभाँतिसे स्मरण होगा कि जिस समय शेखावतके सामन्तोंकी संख्या बहुत सामान्य थी, और उनकी सेनाकी संख्या कई सौ थी, उस समय प्राचीन रीतिके अनुसार अमृतसरसे घोडोंके बच्चे करस्वरूप देनेमें शेखावतके नेता असम्मत हुए थे, और इसी कारणसे आमेरपतिके साथ प्रबल समर उपस्थित हुआ था, उसीके फलस्वरूपमें शेखावतपतिने आमेरराज्यकी अधीनताकी श्रृंखला भंगकर सब प्रकारसे स्वाधीनताको संग्रह कर लिया था। पर आज इतने दिनोंके पीछे उस शेखावत

देशमें फिर आमेरराजवंशके आधिपत्यका विस्तार आरम्भ हुआ। जब कासलीके सामंत दीपसिंहने इस प्रकारसे वश्यता स्वीकार करके कर देनेमें अपनी सम्मति प्रकाश की, तब कई दिनोंके पीछे आमेरराज जयसिंह सूर्यग्रहणके समय गङ्गाजीपर स्नान करनेके लिये गये। उस समय दीपसिंह भी उनके साथ गये। जयसिंहने गंगाजीके निकट जा स्नान कर ब्राह्मण और दीन दरिद्रियोंको धन देनेके लिये उद्यत हो एक सेवकसे पूछा, "आज कौन दान लेनेके लिये उपस्थित है ?" कसालीके सामन्त दीपसिंहने यह वचन सुनकर महाराज जयसिंहके सम्मुख अपने अँगरखेका दामन फैलाकर कहा, "मैं आपकी कृपाका प्रार्थी हूं" महाराज जयसिंहने हँसकर कहा, "इस दानको ब्राह्मग, संन्यासी और दरिद्री ले सकते हैं। आप क्या चाहते है ?" दीपसिंहने उसी समय उत्तर दिया कि "आपकी कृपासे फतेसिंहके पुत्रको खण्डेला देशके वह अंश जिनपर इनके पिताका अधिकार था मिल जाय, आपसे मेरी एकमात्र यही प्रार्थना है"। महाराज जयसिंहने गंगाजीके किनारे खडे होकर प्रतिज्ञा की कि मैं आपकी इस प्रार्थनाको पूर्ण करूंगा।

सन् १७१६ ईसवीमें यह घटना हुई थी, इस समय जाटजाति नवीन बलसे बलवान् होकर मस्तक ऊंचा कर रही थी, और आमेरपति महाराज जयसिंह इस समय दिल्लीके बादशाहके यहां प्रतिनिधि स्वरूपसे अगणित सेनादलके ऊपर सेनापति भावसे नियुक्त थे। और समस्त नीची श्रेणियोंके राजा उनके अधीनमें रहते थे। करौली, भदावर, शिवपुर और अन्यान्य देशोंके तीसरी श्रेणीके राजाओंमें खण्डेलाके राजा उदयसिंह भी इस समय अपनी सेनासहित जयपुरके महाराजके अधीनमें रहते थे, महाराज जयसिंहने जाट जातिके नवीन बलसे बलवान् नेता चूडामणिके अधिकारी थून नामक किलेको इस समय घेर लिया उक्त राजाओंके साथ खंडेलापति उदयसिंहने भी उनकी सहायता की। परन्तु उदयसिंह नियमसहित अपने कर्तव्यको पालन न कर सके; इसपर जयसिंहने उनका महा तिरस्कार किया। जयसिंह उदयसिंहके निकटवर्ती उच्च कक्षाके प्रभु अधीश्वर और सम्राट्के प्रतिनिधि थे। उदयसिंह उनके ऊपर विशेष सन्मान दिखानेको बाध्य थे, तथापि वह न्यायके विरुद्ध इस तिरस्कारको न सहन कर क्रोधित हो उक्त स्थानको छोडकर सेना सहित वहांसे चले गये। महाराज जयसिंहने दीर्घकालतक थूनके किलेको घेरकर जिस समय वह किलेको जीतनेकी सम्पूर्ण सम्भावना करने लगे; उस समय थूनपति चूडामणिने गुप्तभावसे दिल्लीके बादशाहके मन्त्री सैयदके साथ संधिबन्धन कर लिया। इस कारण जयसिंह नव बलसे बलवान् हुए जाटपतिको उचित दण्ड देनेमें असमर्थ हो अत्यन्त व्यथित हो गये, परन्तु खंडेला राज उदयसिंहको उस गुप्त संधिका एक नेता मानकर उसको उचित दंड देकर अपना बदला लेनेके लिये उद्यत हुए।

उदयसिंहने खंडेलाके शासनका अधिकार पाकर वहां उदयगढ नामक एक दुर्भेद्य किला बनवाया, इस कारण उन्होंने जयसिंहके खण्डेला जयकी इच्छा जानकर सेनासहित उस किलेमें प्रवेश किया, और दृढभावसे वहां रहने लगे। इस ओर महाराज जयसिंहने वाजीदखांके अधीनकी समस्त सामन्त सेना और जयपुरकी राजसेनाको

इकट्ठा करके उस उदयगढको जा घेरा। उदयसिंह अपने नामसे बनाये हुए, उस उदयगढमें एक महीनेतक रहे। पर जब उन्होंने देखा कि भोजनकी समस्त सामग्री समाप्त हो गई है, भूखोंके मारे सेनाके प्राणनाशकी सम्भावना है तब वह उसी समय किलेको छोडकर मारवाडके अन्तर्गत नारू नामक स्थानको चले गये। उदयसिंहके पुत्र सवाईसिंहने पिताको भागा हुआ देखकर विजयी जयसिंहके चरणोंमें आत्मसमर्पण करके किलेकी ताली उनके हाथमें दे कृपाकी प्रार्थना की। महाराज जयसिंहने उसको बडे आदरसहित ग्रहणकर क्षमा किया, और उसको आमेरकी अधीनता स्वीकार करनेके लिये कहा। कासलीके अधीश्वरके समान सवाईसिंह आमेरराजकी वश्यताके स्वीकारपत्रपर अपने हस्ताक्षर करके वार्षिक एक लाख रुपया कर देनेके लिये सम्मत हुए। समयपर उक्त करमेंसे पन्द्रह हजार रुपया घटाया गया और फिर खण्डेलापति आमेरराजको ६४ हजाररुपया प्रत्येक वर्षमें करस्वरूपसे देने लगे। पीछे जब आमेरराजका प्रताप अत्यन्त हीन हो गया और मरहठे तथा पठानोंके तस्करदलने आमेरराजके चारों ओर अत्याचार करने आरम्भ कर दिये। तब जयपुरपति खण्डेलासे नियमित करके संग्रह करनेमें असमर्थ हो गये, और उस समय करका परिमाण भी पहिलेके समान नहीं रहा। यद्यपि आमेरराज जयसिंहने सवाईसिंहको अभय देकर उनको खण्डेलाके शासनका अधिकार और शेखावत् सम्प्रदायके नेताकी उपाधि दी थी, परन्तु उन्होंने गंगाजीके किनारे कासलीके अधीश्वरके सम्मुख जो प्रतिज्ञा की थी कि फतेसिंहके पुत्रको खण्डेलाका पूर्व अधिकार दिया जायगा, उसको स्मरण करके इस समय उस प्रतिज्ञाके पालन करनेमें भी शान्त न हुए। फतेसिंह जिस प्रकार खण्डेलाराजके दो अंशाको भोगते थे उनके पुत्र धीरसिंहको वही अंश दिये गये। इस प्रकारसे सवाईसिंहके दोनों जाति भ्राता खण्डेलाका अधिकार पाकर अपने अधीश्वर प्रभु जयसिंहके अधीनमें सेनासहित चले गये। सवाईसिंहके खण्डेलाके छोडते ही इस सुअवसरको पाकर उदयसिंहने लाडखानी नामक स्वजातीय एक दल मन्दस्वभाव राजपूतोंकी सहायताको लेकर हठात् उदयगढपर आक्रमण कर उसे अपने अधिकारमें कर लिया। पुत्र सवाईसिंहने पिताका यह आचरण जयपुरके महाराजको कह सुनाया, जयपुरपति महाराजने शीघ्र ही सवाईसिंहके साथ सेनाको खण्डेलामें भेजकर उदयसिंहको भगा देनेकी आज्ञा दी। सवाईसिंहने तुरन्त ही महाराजकी आज्ञानुसार जयपुरकी सेनाके साथ उदयगढपर आक्रमण कर वहांसे अपने पिताको भगा दिया। सवाईसिंहके उदयगढको घेरनेमें उदयसिंहने पहलेसे ही विशेष बाधा दी थी और अन्तमें फिर पहिलेके समान नारूदेशको भाग गये। उन्होंने अपने जीवनके शेष अंशको उस नारूदेशमें ही व्यतीत किया और पुत्र सवाईसिंहने उनके खर्चके लिये प्रतिदिन पांच रुपया नियत कर दिया था, परन्तु सवाईसिंहने पिताकी मृत्युके पहिले ही इस संसारको छोड दिया। सवाईसिंहके तीन पुत्र उत्पन्न हुए, बडा वृन्दावन, बिचला शंभु और छोटा कुशल था। बडा पुत्र खण्डेलाके राजपदपर प्रतिष्ठित हुआ, मध्यम रानौली देशपर और छोटा पिपंरौली देशपर स्थित हुआ।

द्वितीय अध्याय २.

वृन्दावनदास-उनका आमेरपति माधवसिंहकी सहायता करना-और माधवसिंहका वृन्दावनदासको सम्पूर्ण खण्डेलाका राज्य देना-वृन्दावनदासके साथ इन्द्रसिंहका युद्ध-वृन्दावनका प्रजा और ब्राह्मणोंसे दण्डस्वरूप कर लेना-उसके उपलक्षमें ब्राह्मणोंका आत्मनाश-माधवसिंहका पहिली आज्ञाका उलंघन करना-ब्राह्मणोंको धन देना-इन्द्रसिंहको फिर पिताके अधिकारका प्राप्त होना-खण्डेलाके दोनों राजाओंमें झगड़ा-फिर समर-नजफ अलीखांपर आक्रमण-पापोंके नाश होनेके लिये वृन्दावनका ब्राह्मणोंको भूवृत्ति देना-उनके पुत्र गोविन्ददासपर आपत्ति-वृन्दावनका खण्डेला राज्यका अधिकार पुत्रके हाथमें देना-गोविन्दसिंहका हत्याकांड-नरसिंहको पिताके पदकी प्राप्ति-शेखावाटी देशपर महाराष्ट्रोंका अत्याचार-महाराष्ट्रोंके द्वारा खण्डेलापर आक्रमण करनेका उद्योग-संधिका प्रस्ताव-महाराष्ट्रोंके द्वारा खंडेलाके दो सामन्तोंकी हत्या-प्रातिहिंसा देनेके लिये इन्द्रसिंहका उद्योग-इन्द्रसिंहका प्राणत्याग-प्रतापसिंह—महाराष्ट्रोंको कर देना—नरसिंह और प्रतापसिंहका खण्डेलापर शासन-सीकरके सामन्तोंकी प्रबलताका विस्तार-सीकरके सामन्तोंके दमनके लिये नन्दराम हलदियाका सेनासहित आगमन-सीकरपतिके साथ विचित्र उपायसे संधि स्थापन-प्रतापसिंहका समस्त खण्डेलापर अधिकार प्राप्त करना-रावल इन्द्रसिंह-चौमूके सामन्तको पदसम्मान प्राप्त होना-प्रतापका समस्त खंडेलापर अधिकार करनेकी चेष्टा करना-युद्ध-नरसिंहका फिर पैतृक स्वत्व प्राप्त करना-जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिये शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंका एक साथ मिलना-नन्दराम हलदियाको पदसे अलग करना-रोडाराम-शेखावाटीके अधीश्वरके साथ आमेरराजकी संधि-आमेरराजका संधिभंग-सामन्तोंका अपने बलसे अपने २ अधिकारी देशोंको ग्रहण करना-नरसिंहकी आमेरराजको कर देनेमें असम्मति-आमेरराजका खण्डेला राज्यपर अधिकार करना-कौशलद्वारा नरसिंहको बंदी करके उसे आमेरके कारागारमें रखना।

वृन्दावनदास जिस समय खंडेलाके अधीश्वर पदपर प्रतिष्ठित हुए, उस समय आमेरके सिंहासनको लेनेके लिये माधवसिंहने ईश्वरीसिंहके साथ भयंकर युद्धानल प्रज्वलित की थी। वृन्दावनदास पहिलेसे ही माधवसिंहका पक्ष समर्थनकर सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता करते थे, जिस समय माधवसिंह आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए, उस समय उन्होंने उपकारी वृन्दावनदासके प्रति उपकार करनेकी इच्छा की। वृन्दावनदासने यह प्रार्थना करी कि खंडेलाका राज्य दो भागोंमें विभक्त होकर उसमें दो प्रतिवासी अधीश्वर स्थित हैं, इस लिये आपसमें बहुत दिनोंसे झगडा और युद्ध चला आ रहा है। इस कारण उस वृथा रक्तपातको दूर करनेके लिये एकके हाथमें खंडेलाका राज्य देना उचित है, ऐसा करनेसे फिर परस्परमें क्लेश नहीं होगा। इस समय फतेसिंहके पुत्र धीरसिंहके अप्राप्त व्यवहार पौत्र इन्द्रसिंह खण्डेलाके अन्यान्य अंशोंके अधीश्वर थे। आमेरपति माधवसिंहने वृदावनदासकी कामनाको पूर्ण करनेके लिये शीघ्र ही उसके अधीनमें पांच हजार सेना भेजकर इन्द्रसिंहको भगानेकी आज्ञा दी, वृदावनदास इस प्रकारसे उस पांच हजार सेनाके साथ शीघ्र ही खंडेलापर गये, और उसने इन्द्रसिंहपर आक्रमण किया। इन्द्रसिंह प्रबल पराक्रमके साथ कई महीनेतक

किलेमें रहे और अंतमें प्रबल बलशाली शत्रुओंके कराल ग्राससे अपनी रक्षा करना असंभव विचार कर वह शीघ्र ही किलेको छोडकर पारसोली स्थानको चले गये। वृन्दावनदासने फिर वहाँ जाकर इन्द्रसिंहपर आक्रमण किया, उन्होंने कुछ कालतक अपनी रक्षा करके अंतमें आत्मसमर्पण करना ही कर्त्तव्य समझा। उस समय इनके सौभाग्यसे ही एक विचित्र घटना हुई, उसीसे उन्होंने अपना उद्धार कर लिया। यही नहीं, वरन् अपने पिताके अधिकारको भी फिरसे प्राप्त कर लिया।

आमेरराज माधवसिंहने वृन्दावनदासके अधीनमें जो पांच सहस्र सेना भेजी थी, उसके वेतन देनेका भार वृन्दावनके ही ऊपर रक्खा गया था, परन्तु वृन्दावनके पूर्व पुरुष खजानेकी रक्षा भलीभांतिसे न कर सके थे, उसी प्रकार वृन्दावनने भी शीघ्र ही उस सेनाका वेतन देनेके लिये अन्य उपायका अवलम्बन किया। वृन्दावनने सर्व साधारण प्रजासे और देवालयोंसे दंड लेना आरंभ कर दिया। उसने अन्याय करके ब्राह्मणोंके निकटसे कर ग्रहण किया था, इससे वे महा क्रोधित होकर वृन्दावनको धिक्कार देने लगे, परन्तु वृन्दावनने कुछ भी ध्यान नहीं दिया, कारण कि इस समय तो किसी उपायसे हो धनका संग्रह करना ही उसने आवश्यक समझा। इधर ब्राह्मणोंने वृन्दावनदासका अपमान किया और उसके कहनेपर भी कुछ नहीं सुना, तथा उसको बलपूर्वक कर ग्रहण करते हुए देखकर वे लोग शीघ्र ही रजवाडेमें बहुत समयसे प्रचलित रीतिके अनुसार आत्मघात करके वृन्दावनको ब्रह्महत्यारूपी महापापका भागी करनेके लिये उद्यत हुए। उनके दलके दल वृन्दावनके सम्मुख जाकर अपने २ शरीरपर अस्त्राघात करके अपने प्राणोंका बलिदान करने लगे। इस ब्रह्महत्याके कारणसे वृन्दावनदास अपनी जातिसे पतित हो गये। इधर परम हिन्दू आमेरराज माधवसिंहने वृन्दावनको बलपूर्वक ब्राह्मणोंसे दंड लेते हुए देखकर और इसीसे ब्राह्मणोंको आत्मघात करते हुए देखकर अपनेको भी अप्रत्यक्ष भावसे उस ब्रह्महत्या पापके अंशका भागी जानकर शीघ्र ही उस भेजी हुई सेनाको आमेरमें बुला भेजा, और दंडित ब्राह्मणोंको अपनी राजधानीमें बुलाकर उनको बीस हजार रुपये दिये। इस प्रकार वृन्दावनदासके अन्यायकार्यसे सेना बलहीन हो गई और घोर विपत्तिमें पडे हुए इन्द्रसिंह सहसा श्रेष्ठ उपायको प्राप्त कर अपने समस्त सेवकोंको फिर इकट्ठा करके आमेरपतिका अनुग्रह संग्रह करनेके लिये बाहर हुए। इसी समय माचेडीके राव आमेरराजके विषले नेत्रोंमें पतित होनेसे, खुशालीराम बोहरा आमेरराजकी ओरसे समस्त सेना लेकर माचेडीके रावपर आक्रमण करनेके लिये जा रहे थे, इन्द्रसिंह आयाचित होकर समस्त सेनाके साथ उस आमेरकी सेनाको लेकर माचेडीके रावके साथ युद्ध करनेके लिये चले। माचेडीके रावने देखा कि इस समय अपनी रक्षा करना असंभव है तब उसने तुरन्त ही जाटोंके अधीश्वरके निकट जाकर उसकी शरण ली। उक्त माचेडीपर बहुत समय तक इन्द्रसिंहने इस प्रकारसे अपने बलविक्रमके द्वारा आमेर राजका उपकार किया, इससे आमेरपति इनके ऊपर परम प्रसन्न हुए, इस समय इंद्रसिंहने भेंटमें आमेरपतिको पचास हजार रुपये भी दिये। तब आमेरराजने नियमित पट्टा देकर फिर उनको खंडेलाराज्यमें पिताका अंश दे दिया।

यद्यपि इन्द्रसिंहको अपने स्वामी आमेरराजसे राज्यकी सनद मिल गई, परन्तु वृन्दावनदासके साथ उनकी बराबर शत्रुता चली आती थी। खण्डेलाके दोनों राजाओंने अपने २ किलेको भलीभांति सेनासे पूर्ण करके आत्मविग्रहके समुद्रको बराबर मथन करनेमें त्रुटि न की। इस परस्परके झगडेने धीरे धीरे ऐसी भयंकर मूर्ति धारण की, कि ऐसा द्रोह आजतक किसी जातिमें भी नहीं हुआ था। पिताके साथ पुत्र, चचाके साथ भ्रातृपुत्रने सांसारिक सम्बन्धबन्धनको भूलकर उस झगडेके मुखमें युद्धकी अग्नि प्रज्वलित कर दी।

वृन्दावनदास जिस प्रकारसे सेनाके बलसे वीरता और बलविक्रमसे बलवान् हो गये थे, इन्द्रसिंहने भी उसी प्रकार प्रजाके ऊपर असीम प्रेम और भक्ति दिखाकर अपना पक्ष प्रबल कर लिया था। इन्द्रसिंह एक समय अपनी सेना साथ लेकर वृन्दावनदासके उदयगढ नामक किलेपर अधिकार करनेके लिये चले, उनके विपक्ष वृन्दावनके छोटे पुत्र रघुनाथसिंहने आकर उस समय अपने जन्मदाता पिताके साथ युद्ध करनेके लिये इन्द्रसिंहका साथ दिया। वृन्दावनदासने अपने उक्त पुत्र रघुनाथको कुचोर नामक देशका अधिकार दिया था, परन्तु रघुनाथने पिताकी असम्मतिसे और भी तीन देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया था। इसीसे वृन्दावनने क्रोधित हो रघुनाथपर अपना बल प्रबल करनेकी इच्छासे इन्द्रसिंहके साथ मेल किया था। वृन्दावनदास गुप्तभावसे इन्द्रसिंहके बलको घटानेके लिये कितनी ही सेना साथमें लेकर कुचोरपर आक्रमण करनेके लिये चले। तब रघुनाथने इन्द्रसिंहका साथ छोडकर उनके भानेजे रानोलीके सामन्त पृथ्वीसिंहको साथ लेकर कुचोरकी रक्षा करनेके लिये उधरको रास्ता लिया। परन्तु वृन्दावनदास पहिले ही कुचोरपर अधिकार करनेमें असमर्थ हो जिस समय खण्डेलाकी ओरको जा रहे थे, उस समय मार्गमें इन्द्रसिंह और रघुनाथने सेनासहित इनका मार्ग रोका। जिससे किसी ओरका भी मनुष्य नगरमें प्रवेश न करने पावे, इस लिये खण्डेला नगरके द्वारको बन्द कर दिया। जिस समय इन्द्रसिंहने वृन्दावनका मार्ग रोका उसी समय उदयगढपर भी आक्रमण हुआ था। वृन्दावनके बडे पुत्र गोविन्दसिंहने जिस प्रकार प्रबल विक्रमके साथ उदयगढकी रक्षा की थी, उसी प्रकारसे इन्द्रसिंहके शत्रु चिरानाके सामन्त नाहरसिंहने उदयगढपर अधिकार करनेके लिये विशेष चेष्टा की थी। क्रमानुसार कितने ही दिनोंतक प्रतिदिन नगरके बाहर युद्ध होता रहा। उस युद्धमें पितापुत्र, पितृव्य, भ्रातृपुत्र और जातिके भ्राता परस्पर संहारमूर्ति धारण करके आक्रमण करने लगे। अंतमें दोनों पक्ष अत्यन्त हीनतेज हो गये, वृन्दावनदास अन्तमें इन्द्रसिंहके पहिले अधिकार देनेको बाध्य हुए। इन्द्रसिंहने इस प्रकारसे अपने अधिकारको पाकर खण्डेलाका आत्मविग्रह शान्त किया।

यद्यपि खण्डेलाराज्यपर शान्तिकी वर्षा हो गई, परन्तु शीघ्र ही और एक शत्रुने आकर शेखावाटीके देशोंपर अशान्तिकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। इसी समयमें लुप्तप्रताप

(१) उर्दू तर्जुमेमें भतीजे

और हीनबल दिल्लीके बादशाहकी सेनाका सेनापति नजफकुलीखां एकबार ही अंतिम बलके साथ अपने प्रभुत्वका विस्तार करनेके लिये बादशाहकी सेनाके साथ शेखावाटी राज्यमें आ पहुँचा। माचेडीके विश्वासहन्ता राव उस यवनसेनापतिकी विशेष सहायताके लिये तत्पर थे। वही उसको शेखावाटीमें लाये थे, उसने प्रत्येक देशके अधीश्वरके ऊपर अनेक भांतिसे अत्याचार कर बलपूर्वक दंड संग्रह करना प्रारंभ कर दिया। नवलगढके नवलसिंह, खेतडीके बाघसिंह, बसाऊके सूर्यमल इत्यादि सिद्धानी सम्प्रदायके अधीश्वर उस यवनसेनापतिके निर्धारित दंडस्वरूप कई लाख रुपये देनेमें असमर्थ हो गये, तब नजफकुलीखांने उनको बंदी कर लिया। शेषमें शेखावाटीके दीनदरिद्री किसानोंसे कई लाख रुपये संग्रह करके वह समस्त धन यवनसेनापतिको दे दिया, इसके पीछे उक्त सामन्तोंको मुक्ति प्राप्त हुई।

इस प्रकारसे खंडेलाराज्यमें आत्मविग्रह दूर होनेके पीछे धनके लोभी ब्राह्मण दिन प्रतिदिन वृन्दावनदासको जातिवध इत्यादि महापातकोंका भय दिखाकर उसे उन पापोंके नाशके लिये प्रायश्चित और भूसम्पत्ति दान करनेके लिये उत्तेजित करने लगे। वृन्दावनदास और उपाय न देख ब्राह्मणोंके शापसे प्रायः प्रतिदिन उनको राज्यके एक २ देशकी भूमिका अधिकार देकर अपने पापनाश करनेमें प्रवृत्त हुए। उनको इस प्रकारसे अपने भविष्य वंशधरोंका स्वत्व लोप करते हुए देखकर उनके बडे कुमार गोविंददास महाविरक्त हो उनके इस कार्यमें प्रबल प्रतिवाद किये बिना न रह सके। वृन्दावनदासने अन्तमें अपने बडे पुत्र गोविन्दके करकमलमें खंडेलाराज्य देकर केवल अपने प्रतिपालन करनेके लिये पांच नगरोंका भूस्वत्व और खंडेलाराज्यका कुछ कर नियुक्त कर सिंहासन छोड दिया।

यद्यपि पिताके वर्तमान समयमें ही गोविंदसिंह खंडेलाके राज्यसिंहासनपर अभिषिक्त हुए थे परन्तु उनको बहुत समयतक रायसालोत गणोंके अधीश्वर पदका सम्मान भोग करनेका सौभाग्य प्राप्त न हुआ। वह जिस सालमें सिंहासनपर अभिषिक्त हुए उस वर्षमें वर्षाके न होनेसे राज्यमें प्रयोजनके अनुसार धान्य उत्पन्न न हुए, इसीसे प्रजामें चारों ओर हाहाकार मच गया, और प्रजा कर देनेसे छुटकारा पानेके लिये प्रार्थना करने लगी। नारोली देशके अधीन सामन्तने खंडेला राज्यके गोविंदसिंहको इस समय यह सलाह दी कि आप एकबार राज्यमें घूमकर खुद अपनी आंखोंसे खेतीकी अवस्था देख आवें फिर आप इसपर बिचार कर सकते हैं, कि इस समय प्रजासे कर लेना ठीक है या नहीं। गोविन्दसिंह अपने पिताकी अपेक्षा अधिक कुसंस्कारहीन थे, इस कारण ब्राह्मणोंने उनको पूस मासकी आमावस्या तिथिमें भ्रमण करनेके लिये बाहर जानेका निषेध किया, और कहा कि आपके जानेके लिये आज अच्छा दिन नहीं है, आज जानेसे अमंगल होनेकी संभावना है, परन्तु गोविन्दसिंहने उनकी बातपर किंचित् भी ध्यान न दिया और खेतीकी अवस्था देखनेके लिये वह उसी दिन चले। काजरोली स्थानका निवासी एक सेवक गोविन्दसिंहके

साथ गया था । गोविन्दसिंहने उस सेवकके पास कितने ही बहुमूल्य द्रव्य रख दिये थे । उस सेवकने अपनी असावधानीसे उन सब द्रव्योंको खो दिया । परन्तु अधीश्वर गोविन्दसिंहने उन समस्त मूल्यवान् द्रव्योंके खो जानेसे उसका बहुत तिरस्कार किया, सेवकने अपनी निर्दोषताके बहुतसे प्रमाण दिखाये, परन्तु राजा गोविन्दसिंहने किसी प्रकार भी सेवककी बातका विश्वास न किया । स्वामीको इस प्रकारसे अत्यन्त क्रोधी देखकर और अंतमें अपनेको किसी भारी दंड मिलनेकी संभावना विचार कर उस सेवकने रात्रिके समय अपने स्वामी गोविन्दसिंहके प्राण ले लिये । गोविन्दसिंहके औरससे पांच पुत्र उत्पन्न हुए (१) नरसिंह (२) सूर्यमल्ल (इन्हें दोदिया देश मिला था) (३) बाघसिंह (४) ज्वानसिंह और (५) रणजीत (इनसे प्रत्येक वंशका ही विस्तार हुआ था) ।

पिताकी शोचनीय मृत्युके पीछे नरसिंह खण्डेलाके सिंहासनपर विराजमान हुए । परस्परमें प्रबल आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे और निकटवर्ती राज्योंमें अनैक्यताके बढ जानेसे शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंने अपने २ अधिकारी देशोंकी सीमाको बढा लिया; और उनकी प्रजाकी संख्या भी क्रमशः बढ गई । अतुल बलशाली मुगलसम्राट्के वंशधर इस समय केवल नाममात्रके बादशाह थे; अन्य पक्षमें शेखावाटीके निकटवर्ती उपरितन प्रभु आमेरराज इस समय उनसे किंचित् कर, सम्मान और समय२पर सेनाकी सहायता मिलनेसे अत्यन्त संतुष्ट हुए थे; उन्होंने सेखावत नेताओं-की जातीय स्वाधीनताके ऊपर इस समय हस्ताक्षेप करना उचित न समझा । परन्तु दुर्भाग्यसे इस समय और एक शत्रुदलने आकर दर्शन दिया । वह शत्रुदल समधर्मा-वलम्बी होनेपर भी अत्याचारी मुसलमानोंकी अपेक्षा अधिक उत्पीडक और विध्वंसकारी था । वह शत्रुदल नवीन बलसे उद्दीप्त महाराष्ट्रोंका दस्युदल था ।

जब महाराष्ट्रोंके नेताके अधीनमें स्थित फरासीसी सेनापति डिवाइनने मेरताके युद्धमें विजय प्राप्त की, तब उनके अधीनस्थ कठिन महाराष्ट्रीदलने पंगपालके समान कई दलोंमें विभक्त होकर शेखावाटीमें जाकर लूटमार करनी प्रारंभ की, और अंतमें वे प्रत्येक दुर्बल सामन्त और उनके पुत्रोंको बंदी करके ले जाने लगे । इन्हीं कारणोंसे उस नरघातक सर्वस्व लूटनेवाले महाराष्ट्रोंके तस्करदलके हाथसे छुटकारा पानेके लिये शीघ्र ही उन बंदी हुए सामन्तोंने अपना सर्वस्व बेचकर उनको धन देना स्वीकार किया, और किसी २ सामन्तको धन देनेमें असमर्थ होनेके कारण बंदीभावसे ही रहना पडा । पीछे उनकी रखवालीमें विशेष कष्ट होता हुआ जानकर तस्करोंके दलने अंतमें उनको भी छोड दिया ।

महाराष्ट्रोंके तस्करदलका एक दिनके अत्याचारका वृत्तान्त पढनेसे पाठक सरलतासे इसका अनुमान कर सकते हैं कि इन दुराचारियोंके द्वारा शेखावाटी देशमें कैसा भयंकर लोमहर्षण काण्ड उपस्थित हुआ होगा । मेरताके युद्धके पीछे महाराष्ट्र दलने शेखावाटीमें जाकर सबसे पहिले बिबाईपर आक्रमण किया बिबाईके सम्पूर्ण निवासी तस्कर दलकी

संहारमूर्ति देख उसके हाथसे किसी प्रकार भी उद्धारका उपाय न देखकर अपनी २ धन सम्पत्ति लेकर प्राणोंके भयसे आसपासके प्रधान२नगरोंमें भागने लगे । केवल अस्सी राजपूत वीर जातीय गौरवकी रक्षाके लिये बिबाईके किलेके भीतर जाकर तस्करोंके दलकी राह देखने लगे । महाराष्ट्र तस्कर दलने बलवान् होकर बिबाईके किलेपर अधिकार कर लिया, परन्तु उन अस्सी राजपूतोंमेंसे एक भी न भागा । तथा बराबर शत्रुओंके साथ युद्ध करते २ अंतमें वे सब मृत्युशय्यापर शयन किये । वह तस्करोंका दल इस स्थानसे चलकर पीछे खण्डेलाकी ओरको बढा, और जाते २ मार्गमें भी अत्याचार और उपद्रवोंके करनेमें उसने कसर न की ।

महाराष्ट्र तस्कर-दलने खण्डेलासे दो कोस दूर होदींगांग नामक स्थानमें जाकर वहां अपने डेरे डाल दिये । और खण्डेलाके दोनों अधीश्वर नरसिंह और इन्द्रसिंहसे दंडस्वरूप बीस हजार रुपया मांग भेजा । महाराष्ट्रोंके दूतने इन्द्रसिंहके पास जाकर अपने नेताका संदेश कहा कि आपको दंडमें बीस हजार रुपया देना होगा । तब नरसिंह और इन्द्रसिंहकी ओरसे दो बुद्धिमान् सामन्त शीघ्र ही उस पण्डितके साथ शत्रुओंके डेरोंमें गये, और दंड देनेके निमित्त संधि करनेके लिये तैयार हुए । उन दोनों सामन्तोंके नाम नवलसिंह और दलेलसिंह थ ।

" उक्त दोनों सामन्त दो राजकर्मचारियोंको भी साथमें लाये थे और वह इस लिये कि जबतक करका अपेक्षित रुपया महाराष्ट्र नेताके पास न पहुँच जाय तबतक वे दोनों वहां साक्षीस्वरूपसे रहैं । अतएव सामन्तोंने महाराष्ट्रनेतासे सब प्रकारकी बातें तय करके उक्त कर्मचारियोंको वहीं छोडकर रुपया लेनेके लिये किलेको वापिस जाना चाहा, परन्तु महाराष्ट्रनेताने इसमें अपनी असम्मति प्रकाश करके कहा कि आपको स्वयं साक्षीस्वरूपसे यहां रहना होगा "। इस वचनसे अपना अपमान हुआ जानकर एक सामन्तने कहा कि यह कभी नहीं हो सकता । इसके पीछे वह अपने सेवकसे हुक्का लेकर तमाखू पीने लगा यह देखकर एक असभ्य दक्षिणी महाराष्ट्रने बलपूर्वक उक्त सामन्तके हाथसे हुक्का छीनकर फेंक दिया । इस व्यवहारसे उस सामन्तने अपना विशेष अपमान जाना, इसके पीछे जैसे ही वह अपनी कमरसे तलवार निकालकर इसका शिर काटनेके लिये उद्यत हुआ कि वैसे ही महाराष्ट्र नेताने दलेलसिंहके मस्तकको लक्ष करके पिस्तौल दाग दिया । जो सेवक दलेलसिंहके साथमें थे वे यह देखकर अत्यंत क्रोधित हुए, तथा बदला देनेके लिये तैयार हुए, पर बलवान् तस्करदलने एक २ करके सबके प्राणोंका नाश कर दिया ।

खंडेलाके एक अंशके अधीश्वर इन्द्रसिंह संधिके परामर्शका फल जाननेके लिये स्वयं उत्कंठित चित्तसे कितने ही सेवकोंके साथ शत्रुओंके डेरोंकी ओरको जा रहे थे ।

---

(१) महाराष्ट्र दस्यु दलके मंत्री तथा दूतपदपर केवल ब्राह्मण नियुक्त होते थे । कर्नल-टाड साहबने लिखा है कि यह श्रेणी जिस प्रकारसे चतुर है उसी प्रकारसे प्रयोजन होनेपर असीम साहस भी दिखाती है । दौत्यकार्यमें ब्राह्मणगण ही सबसे चतुर होते थे, विख्यात पश्चिमी नीतिज्ञ मेकिया वेलीने भी इनसे हार मान ली थी ।

उन्होंने डेरोंके समीप जाते ही सुना कि दस्युदलने हमारे कुटुम्बियोंकी हत्या की है। इन्द्रसिंहके सेवकोंने उनको उसी समय खंडेलामें लौटजानेकी सम्मति दी, परन्तु इन्द्रसिंहने कहा, "नहीं ऐसा कभी नहीं हो सकता। जब कि हमारे कुटुम्बियोंकी हत्या की गई है तब उस हत्याका बदला दिये बिना अपमानित होकर मैं खंडेलामें जानेकी अपेक्षा इस स्थान पर प्राण त्याग करना कल्याणकर समझता हूँ" इन्द्रसिंहने वीरपुरुषके समान यह वचन कहकर उसी समय घोडेपरसे उतर कर उसे छोड दिया; इनके सेवक भी उसी समय इनकी आज्ञासे घोडोंपरसे उतर पडे। सभीने नंगी तलवारें हाथमें लेकर शत्रुओंके डेरोंमें प्रवेश किया। और विषमवेगसे बदला लेनेके लिये उन्होंने महाराष्ट्रोंपर आक्रमण किया, बडे २ बुद्धिमान् महाराष्ट्र उस समय डेरोंके भीतर थे, इस कारण साधारण थोडेसे सेवकोंके साथ इन्द्रसिंह विषमवीरता प्रकाश करके पीछे स्वयं मारे गये। सबको मृतक हुआ देख दस्युदलने विचारा, कि दलेलसिंहके अपमानसे ही यह कार्य हुआ है और वह दलेलसिंह भलीभाँतिसे घायल होकर भी जीवित हैं। इस कारण वह लोग इनको उसी अवस्थामें डेरोंके भीतर ले गये।

मुगलपठानोंके स्थलाधिकारी, मुगलपठानोंके समस्त असद्गुणोंके अधिकारी सभ्यता और भद्रतासे अशिक्षित महाराष्ट्र दस्युदलने इस प्रकारसे सबसे पहिले शेखावाटीका वियोगान्त अभिनय आरंभ किया, परन्तु नरपिशाच महाराष्ट्रोंके पक्षमें वह सामान्य भूखंड शेखावाटी,अभिनयका उपयुक्त पूर्णक्षेत्र नहीं विचारा गया। उन्होंने एक समय सम्पूर्ण भारतवर्षमें, सतलजसे समुद्रतक प्रत्येक देश, प्रत्येक नगर और प्रत्येक ग्रामोंपर इस प्रकारसे आक्रमण कर रक्तपात और लोमहर्षण काण्डद्वारा अपनी पैशाचिक वृत्तिका पूर्ण परिचय दिया था।

जिस समय राव इन्द्रसिंह महाराष्ट्रोंके डेरोंमें मारे गये, उस समय उनके पुत्र प्रतापसिंहने अपनी माताके साथ खण्डेलासे पाँच कोस दूर शिखरपर स्थित शिखराई नामक अभेद किलेमें निवास किया। प्रतापसिंह उस समय राजकार्यको कुछ भी नहीं जानते थे, इस कारण महाराष्ट्र दस्युदलके हाथसे नगर और अल्पवयस्क कुमारके जीवनकी रक्षाके लिये, प्रधान २ मनुष्योंने शीघ्र ही समस्त धान्यके गालोंको खोलकर उनमेंका समस्त अन्न और सम्पूर्ण धन सम्पत्ति बेंच डाला और इस प्रकारसे धन संग्रह करके महाराष्ट्रोंकी अभिलाषाको पूर्ण किया। इस प्रकारसे तस्करोंका दल खंडेलासे धनसंग्रह करके पीछे संहारमूर्ति धारण कर सिद्धानी सम्प्रदायके अधिकारी देशोंपर आ पहुंचा। उन्होंने सबसे पहिले उदयपुरपर आक्रमण कर वहाँकी समस्त धन सम्पत्तिको लूट उसपर अपना अधिकार कर लिया। उन्होंने पीछे नगरकी समस्त दीवारोंको तोडकर अतुल धन प्राप्तिकी आशासे दीवारोंके नीचे खोदकर क्रमानुसार चार दिनतक अत्याचारका स्रोता बहाया, और उदयपुरको एकबार ही विध्वंस कर उत्तर प्रदेशके सिंहाना, झुंझुनू और खेतरी आदिके सामन्तोंके देशोंको लूटनेके लिये गमन किया।

महाराष्ट्रोंके तस्करदलके चले जानेके पीछे प्रतापसिंह और नरसिंह खंडेलामें आकर राज्य करने लगे, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह पूर्वोक्त संघात वेगको सहन न कर सके। तब उनके अधीश्वर आमेरराजने उनसे असमयमें कर लेना चाहा। प्रतापसिंहने अपने राज्यमें जितना अन्न उत्पन्न हुआ था उसका चतुर्थांश देकर आमेरपतिको सन्तुष्ट किया, परन्तु नरसिंहने पूर्व पुरुषोंके समान उद्धत स्वभावके वशीभूत हो आमेरपतिको कुछ भी न दिया। उन्होंने कहा कि इस प्रकारके कर देनेसे हमको सामान्य भूमिया जमीदारके पदपर स्थित होना होगा "।

इस समय शेखावत वंशकी एक दूरवर्ती शाखामें उत्पन्न हुए एक सामन्तने अपने बाहुबल और विक्रमके साथ आशातीतरूपसे अपना मस्तक उठाया था। उसका नाम देवीसिंह था। वह कासलीके राव तिरमलका वंशधर था, और उसके अधिकारी देशका नाम सीकर था। देवीसिंहने शेखावतपति खंडेलाराजके अधीन सामन्त होकर भी अपने बाहुबलसे धीरे २ लोहागढ खोह इत्यादि पचीस नगर और किलोंपर अपना अधिकार कर लिया। जिस समय उनक अधीश्वर प्रभु नरसिंह आमेरराजके क्रोधमें पतित हुए उस समय वह उपयुक्त सुअवसर जानकर रिवासो देशपर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए, परन्तु इस समय उनके प्राण वियोग होनेसे उनका वह मनोरथ अपूर्ण ही रह गया देवीसिंहके आजतक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ, इस कारण उन्होंने मृत्युके पहिले साहपुराके सामन्तके पुत्र लक्ष्मणसिंहको दत्तकरूपसे ग्रहण करके उसको अपने उत्तराधिकारी पदपर नियुक्त किया था। परन्तु देवीसिंहके शेखावाटीके दुर्बल सामन्तोंके प्रति बल प्रकाश करके ग्राम नगरोंको अपने अधिकारमें कर लेनेके आचरणसे आमेरराजने महा क्रोधित हो अपने मन्त्री दौलतरामके भ्राता नन्दराम हलदियाको देवीसिंह पर आक्रमण करके राज्यकर संग्रह करनेकी आज्ञा दी। जिससे उसने शीघ्र ही लक्ष्मणसिंहपर आक्रमण करके उनको अधीन बना लिया। जयपुरके महाराजकी उक्त आज्ञाके प्रचार होते ही सीकरपति देवीसिंहने समस्त स्वजातीय सामन्तोंको निकालकर उनके अधिकारी देशोंपर बलपूर्वक अपना अधिकार कर लिया था। वह सब जयपुरके महाराजकी कृपासे फिर अपने २ देशोंके पानेकी इच्छासे दलके दल सेना सहित उक्त कर संग्रह करनेवाले नन्दराम हलदियाके डेरोंमें आने लगे। खण्डेलाके अधीश्वर स्वयं अपनी सेना सहित जाकर उस पक्षके साथ मिले। तिरमल्लके वंशके अन्यान्य शाखाके अर्थात् कासली विलारा इत्यादिके पट्टावत् भी शीघ्र ही इनके साथ आ मिले। तथा जिससे सिद्धानीकी सम्प्रदाय किसी समय भी रायशालोतूपर उपद्रव वा आत्मविग्रह करनेमें किसी प्रकार भी हस्ताक्षेप न कर सके इससे वह भी इस समय आनन्दित होकर अपने २ दियेहुए करको लेकर सेना सहित जयपुरके सेनापतिके डेरोंमें आने लगे। सारांश यह है कि सीकरपति देवीसिंहने इस समय शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंके ऊपर मस्तक उठाया था, इसीसे शेखावाटीके प्रत्येक अधीश्वर उनके दत्तकपुत्रके विरुद्ध एक मनुष्यके समान सेना सहित खडे हुए। परन्तु सीकरपति देवीसिंह सामान्य मनुष्य नहीं थे। उनमें चतुरता और नीतिज्ञता तथा

षड्यंत्रके विस्तारकी सामर्थ्य भलीभांतिसे विद्यमान थी। इन्होंने सबसे पहिले आमेर-राजकी सभामें सदस्योंके साथ विशेष प्रीति स्थापन की थी, कारण कि वह इस बातको भलीभाँतिसे जानते थे कि राजसदस्योंके साथ विशेष सद्भावकी रक्षा करनेसे जिन समस्त देशोंपर बलपूर्वक अधिकार कर लिया है, इस समय उन सबको निर्विघ्नतासे उपभोग करनेमें समर्थ होंगे। देवीसिंहके साथ जयपुरके राजमंत्री और उनके भ्रातामें विशेष प्रीति उत्पन्न हो गई थी। उस समय उस मित्रताकी परीक्षाका समय उपस्थित हुआ। जैसे ही नंदराम उस सम्मिलित प्रबल सेनादलके साथ सीकरपर आक्रमण करनेके लिये पहुंचे कि, वैसे ही एक चन्द्रावत् सामन्त सीकरके दीवान और एक धाभाईने लक्ष्मणके प्रतिनिधि स्वरूपसे नंदरामके निकट जाकर नम्रतायुक्त वचनोंसे मृत देवीसिंहके नामसे यह कहकर प्रार्थना की, कि जिससे वह देवीसिंहके अज्ञानी पुत्रको प्रतिहिंसा देनेके निमित्त क्रोधित हुए शेखावतोंके मुखमें अर्पण न करें। नंदरामने कहा कि " आपके अनुरोधकी रक्षाका मैं इस समय केवल एक उपाय देखता हूँ कि जिससे आप सरलतासे आक्रमणको निवारण करसकेंगे। और हम भी राजाकी आज्ञाको पालन करनेमें समर्थ होंगे। आप बहुतसी सेनाको इकट्ठा करके सीकरकी रक्षामें यत्नवान् हों तो कोई भी इस बातको नहीं जान सकेगा कि हमी गुप्त षड्यंत्र करके राजाकी आज्ञाको व्यर्थ करनेके लिये उद्यत हुए हैं"। देवीसिंह फतेपुरके अधीनके कई एक देशोंको लूटकर यहांसे बहुतसा धन ले गये थे, इस कारण लक्ष्मणसिंहकी ओरके मनुष्योंने शीघ्र ही बहुतसे रुपये खर्च करके बहुत थोडे समयमें ही दश हजार सेना सजाली और वे सीकरकी रक्षा करनेमें नियुक्त हुए। इस ओर पूर्व गुप्त प्रस्तावके मतसे नन्दराम सम्मिलित सेनादलके साथ सीकरको घेरकर यथार्थ युद्धके बदले केवल बाहरी समर कौशल दिखाकर युद्ध करने लगे। कई दिनतक इस प्रकारसे कृत्रिम युद्ध और सीकरपर अधिकारकी चेष्टा दिखानेके पीछे नन्दरामने जयपुरमें अपने भ्राता राजमंत्रीके पास इस मर्मका एक पत्र भेजा कि "सीकरको विजय करना किसी भाँति भी सरलकार्य नहीं है और सीकरपति लक्ष्मणसिंह वश्यता स्वीकार करके दंडस्वरूपमें दो लाख रुपये देनेके लिये तैयार हुए हैं, हमारी सम्मतिसे उस धनको लेकर सीकरको छोड देना उचित है।" नंदरामने उक्त पत्रके उत्तरकी प्रतीक्षा न करके आमेरराजके निमित्त लक्ष्मणसिंहके पाससे दो लाख रुपया और अपने लिये रिशवतमें एक लाख रुपया लेकर सीकरको छोड दिया। इस प्रकारसे सीकरपति लक्ष्मणसिंह निर्विघ्नतासे अधिकारी देशोंको भोगने लगे। विशेष करके इस समय खंडेलाके दोनों अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंहमें विसंवादकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे नंदरामके स्वार्थसाधनमें विशेष सुभीता होने लगा।

खण्डेलाके अन्यतर अधीश्वर नरसिंह पाहिलेसे ही आमेर राजकी आज्ञाके अनुसार कर दान करनेमें असम्मत होनेसे उनके क्रोधानलमें पतित हो चुके थे, इस कारण खंडेलाके अन्य अधीश्वर प्रतापसिंह इस सुअवसरमें पिताके विवाद विसंवादको एकबार ही निर्वाणके साथ नरसिंहको चिरकालके लिये खण्डेलाके अधिकारसे रहित

कर खंडेला राज्यके संपूर्ण अधीश्वर होनेके लिये इस समय अपनी सामर्थ्यके अनुसार विशेष चेष्टा करने लगे। उन्होंने जयपुरके सेनापति उक्त नंदरामके निकट यह प्रस्ताव किया "कि जितनी आमदनी खंडेलाकी है उसका सब कर मैं अकेला दूँगा; सब देशका अधिकार मुझे दिला दिया जाय। जिस समय महाराज आज्ञा देंगे तभी मैं सेना सहित उनकी आज्ञाको पालन करनेके लिये हाजिर हूँगा; और मेरे अभिषेकके समय जयपुरपतिको बहुतसा धन भेंटमें दिया जायगा"। नंदराम प्रतापसिंहकी प्रार्थनाके मतसे उनको समस्त खण्डेला राज्यके अधीश्वरके पदपर वरण कर तथा शासनकी सनद देनेमें शीघ्र ही सम्मत हुए।

नन्दरामके डेरोंमें नाथावत् सम्प्रदायके नेता सामोदके सामन्त रावल इन्द्रसिंह निवास करते थे। उन्होंने नरसिंहका सर्वनाश होता हुआ देखकर उनकी ओर हो उनको अभय देनेके लिये खंडेलासे अपने शिविरमें आनेके लिये बुला भेजा।

रावल इन्द्रसिंहके बुलानेसे नरसिंहके आते ही इन्द्रसिंहने उनसे समस्त समाचार कह दिया कि "आपके प्रतियोगी प्रतापसिंहको समस्त खंडेलादेशका अधिकार देनेके लिये सनदपत्र तैयार हुआ है। आप शीघ्र ही पिताके अधिकारसे रहित हो जाँयगे, इस कारण यदि आप इस समय भी आमेरराजकी आज्ञाके पालन करनेमें सम्मत होंगे तौ भी हम आपके अधिकारकी रक्षाके लिये विशेष यत्न और उपाय कर सकैंगे"। परन्तु नरसिंह किसी प्रकारसे भी उस प्रस्तावके अनुसार आमेरराजको कर देनेमें सम्मत न हुए, इसलिये इन्द्रसिंहने शीघ्र ही नरसिंहके जीवनकी रक्षाके लिये उनको उसी समय डेरोंको छोडकर खण्डेलासे भागनेकी सम्मति दी। उन्होंने कहा कि "आपके यहाँ रहनेसे मैंने जो आपका पक्ष समर्थन करनेके लिये चेष्टा की थी वह प्रगट हो जायगी, इस कारण इसमें हमपर अधिक विपत्ति आनेकी संभावना है। यदि आप इसमें सम्मत हो जाते तो इस विपत्तिकी आशा न थी" उस दिन रात्रिके समय इन्द्रसिंहने अपने ६० अनुचरोंके साथ अत्यन्त गुप्तभावसे नरसिंहको डेरोंमेंसे नवलगढमें भेज दिया और नरसिंहने दूसरे दिन प्रभात होते ही अपने किले गोविन्दगढमें निर्विघ्नतासे प्रवेश किया। परन्तु इन्द्रसिंहने जो विचार किया था वही हुआ, उनकी उस सावधानीके अवलम्बनका कोई फल न देख पडा। कारण कि उन्होंने नरसिंहको डेरोंमेंसे नवलगढमें भेजा था इससे नंदरामने उनके ऊपर क्रोधित होकर उन्हें राजकोषका भय दिखाया। परन्तु वीरतेजस्वी राजपूत इन्द्रसिंहने कहा, कि "मैंने राजपूतोंका कर्तव्य कार्य किया है, तथा उसका फल भोगनेके लिये मैं कुछ भी भयभीत नहीं हूँ"। अत्यन्त दुःखका विषय है कि, इन्द्रसिंह वास्तवमें ही आमेर-पतिके क्रोधमें पतित हुए।

नाथावत् सम्प्रदायमें सामोत और चौमू इन दोनों देशोंके दो सामन्त सबमें प्रधान थे, प्रथम शाखावाले सामोतके सामन्त सबसे अधिक सम्मानित थे, तथा रावल-की उपाधि धारण करके नीचे पदपर स्थित अगणित सामन्तोंके ऊपर अपना अधिकार

चलाते थे, परन्तु चौमूके सामन्त बहुत दिनोंसे सामोतके सामन्तोंके उक्त पद सम्मान और सामर्थ्यकी हिंसा प्रकाशके साथ स्वयं उक्त पद और सम्मानकी प्राप्तिके लिये बीच २ में झगडा करते थे, अधिक क्या इसी कारणसे रक्तपात भी हुआ था। सामोतके सामन्त इन्द्रसिंह जभी उपरोक्त प्रकारसे आमेर राजके क्रोधमें पतित हुए तभी शुभ अवसर पाकर चौमूके सामन्त शीघ्र ही जयपुरकी राजसभामें आये, और नाथावत सम्प्रदायके सबमें श्रेष्ठ सामन्त पद और उपाधि धारण करनेके लिये आमेरके महाराजको बहुतसे रुपये भेंटमें देनेके लिये तैयार हुए। आमेरके महाराज चौमूके सामन्तकी प्रार्थनापर शीघ्र ही उनकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिये सम्मत हुए। नन्दरामके समीप सामोतके सामन्त इन्द्रसिंह इस समय भी निवास करते थे। इन्द्रसिंहको शीघ्र ही आमेरराजके निकटसे इस मर्मकी एक आज्ञा हुई कि आपने जो अपराध किया है उस अपराधके दंडमें सामोत देशको आमेरराजने अपने अधिकारमें कर लिया, इस निमित्त आप शीघ्र ही सामोतसे अलग हो जाँय। सामोतके सामन्त इन्द्रसिंहने राजाकी उक्त आज्ञाको पाते ही उसमें किंचिन्मात्र भी आनाकानी न की, वरन् यथार्थ राजभक्तके समान उस आज्ञापत्रको मस्तक पर धारण करके शीघ्र ही उन्होंने सामोतको गमन किया। वहाँ इनकी जो कुछ भी धनसम्पत्ति थी उस सबको लेकर वह कुटुंबके साथ चिरकालके लिये सामोतका त्याग कर निर्वासित अवस्थासे मारवाड राज्यके आश्रयमें चले गये। कुछ समयके उपरान्त सामोतके उसी अधीश्वरकी स्त्रीको आमेरराजकी सभासे पिपली नामक एक ग्रामका अधिकार मिला। इन्द्रसिंह वार्धक्यदशामें अपनी मृत्युको अत्यन्त निकट देखकर अन्तमें अपनी जन्मभूमिमें तथा स्वजातिमें प्राण त्याग करनेके लिये उस ग्राममें चले आये। इन्द्रसिंहकी इस राजभक्तिसे जानागया कि, यह अत्यन्त ही प्रशंसनीय पुरुष हैं अधिक क्या कहैं इन्द्रसिंह स्वभावसे ही असीमसाहसी और वीर थे, यदि वह विचार करते तो अवश्य ही बहुत सी सेना संग्रह करके आमेरराजके उक्त अन्यायमूलक आचरणोंके विरुद्ध खडे होकर अपने पिताके राज्यखंडकी रक्षा कर सकते थे, परन्तु उन्होंने केवल राजभक्तिके भावसे स्वार्थत्याग किया था।

इस समय खण्डेलाकी ओर दृष्टि डालनी होगी। खण्डेलापति नरसिंह आमेरपतिके विषैले नेत्रोंमें पडे, आमेरके सेनापति नन्दराम हलदियाने खण्डेलाके अन्यान्य अंशोंके अधीश्वर प्रतापसिंहको जब खण्डेला प्रदेशके अधिकारकी सनद दी तब प्रतापसिंह अत्यन्त प्रसन्न होकर अपनी समस्त सेना साथ लेकर खण्डेलामें आये। उन्होंने खण्डेलापर अधिकार करके सबसे पहिले उस तोरणको तोडकर एकसर करनेकी आज्ञा दी, जिसे नरसिंहने नगर रक्षाके लिये दुर्गस्वरूपसे बनवाया था और उसीके ऊपरसे प्रतापके पिताके महलोंपर गोले वर्षाते थे। उस तोरणके ऊपर गणदेवकी एक मूर्ति थी। गणदेवता सिद्धिदाता और सर्वमंगल विधातारूपसे पूजे जाते थे। दुर्घटनाके वश तोरणके टूटनेके समय वह गणदेवकी मूर्ति भी टूट फूट कर चूर्ण हो गई। यह बात प्रतापके पक्षमें अवश्य ही भावी अमंगल अनुमान किया जा

सकता है। जो कुछ भी हो प्रतापसिंह उस तारणको एकसर करके राजधानी खण्डेलाके शासनका बंदोबस्त कर रेवासोपर अधिकार करनेके लिये गये। अपने बाहुबलसे रेवासो जीत कर प्रतापसिंहने नन्दराम हलादियाके अधीनकी कितनी ही सेनाके साथ उस गोविंदगढ नामक किलेको भी जा घेरा जिसमें नरसिंह रहते थे। गोविन्दगढसे दो कोस और रानोलीसे चार कोस दूरीपर गोरानामक स्थानपर डेरे डाले, रानोलीके जो सामन्त इस समय तक अपने उपरितन प्रभु अधीश्वर हतभाग्य नरसिंहका पक्ष समर्थन करते थे, उन्होंने अपने मंत्रीको हलदियाके पास भेजकर यह समाचार कहला भेजा कि आमेरराजको जो कर नरसिंहके पाससे मिलता है हम उस सबको देनेके लिये तैयार हैं और यदि नंदराम नरसिंहको उनका पहला आधिकार अर्थात् खंडेलाके राजपदपर प्रतिष्ठित कर देंगे तो उनको यथेष्ट पुरस्कार दिया जायगा। इस प्रस्तावसे नंदरामने बहुतसे धनकी आशासे फिर कौशलजालका विस्तार किया। उसने थोडीसी सेनाके साथ खंडेलामें जाकर कहला भेजा कि "गोविंदगढसे नरसिंहकी सेना रात्रिके समय बाहर होकर हमारी सेनापर आक्रमण करै तो आक्रमण होने॰पर हम लोग सेना सहित परास्त होकर शीघ्र ही वहांसे भाग जायँगे। ऐसा करनेसे प्रतापसिंह कुछ भी नहीं जान सकैंगे और कार्य सिद्ध हो जायगा।" नन्दरामके उक्त गुप्त प्रस्तावसे सूर्यमल्ल और बाघसिंह नामक नरसिंहके दो भ्राता गोविंदगढसे डेढसौ अस्त्रधारी सेना साथ लेकर रात्रिके समय बाहर हुए, और उन्होंने हलदियाकी सेनापर बनावटी आक्रमण किया जिससे वह परास्त होकर उसी समय भाग गये, और उस सुअवसरमें उक्त विजयी सेनाने खंडेला पर अधिकार कर लिया। इस घटनासे प्रतापसिंह अत्यन्त ही क्रोधित हुए और जिससे उक्त अधिकार व्यर्थ हो जाय, इस कारण बहुतसी सेनाको एक प्रवेश मार्गपर रखनेकी आज्ञा दी। परन्तु नरसिंहकी सेनाने पहिले ही उस स्थानपर अधिकार कर लिया था, इस कारण प्रतापसिंहकी वह कामना व्यर्थ हो गई। नरसिंहके ओरकी बहुतसी सेनाके दलके दल आकर खंडेलामें प्रवेश करने लगे, प्रतापसिंहने दूसरा कोई उपाय न देखकर शत्रुओंको पानीकी त्रास देनेके लिये कुओंको बंद करनेकी आज्ञा दी।इसी कारणवश नरसिंहकी सेनाके साथ प्रतापकी सेनाका एक प्रबल युद्ध उपस्थित हुआ, और दोनों पक्षकी बहुतसी सेना घायल हुई। शेषमें नन्दराम हलदियाने दोनों पक्षमें आमेरराजकी पंचरंगी पताका उडाकर युद्ध रोक दिया, और नन्दरामके प्रस्तावसे शेषमें दोनों पक्षमें एक संधि नियत हुई। उस संधिके मतसे प्रतापसिंहका रेवासो देशपर अधिकार हुआ और नरसिंहको खंडेला राज्यके समस्त पैतृक अधिकार प्राप्त हुए।

यद्यपि उक्त संधिके अनुसार खंडेलादेशमें शांति स्थापित हो गई, परन्तु दोनों वंशोंका झगडा एकबार ही समाप्त नहीं हुआ। बीच २ में बहुधा दोनों पक्ष एक दूसरे-पर आक्रमण करने लगे। गंगोर नामक पर्वोत्सवके समयमें एक बार बडा झगडा हुआ। अन्तमें और एक घटनाके उपलक्षमें समस्त शेखावाटीके सामन्तोंकी संप्रदाय सन्नद्ध हो गई। रानोलीके सामन्त प्रतापसिंहके अधीनमें स्थित एक सामन्तके बंदी

करनेसे शीघ्र ही समस्त शेखावतोंकी संप्रदाय चमक उठी। अन्तमें सभीने एकवाक्यसे अपने प्रभु अधीश्वर आमेरराजको मध्यस्थरूपसे नियुक्त किया। आमेरपतिके उस झगडेका विचार करने और अपराधी मनुष्योंको दण्ड देनेसे उसी समय समस्त उपद्रव दूर हो गये।

शेखावाटीके उत्तर देशके सिद्धानी नामक शेखावत संप्रदायके सामन्त और रायशालोतोंके उक्त प्रकारसे अविश्रान्त जातीय विवादसे विषैला फल उत्पन्न हुआ, और उसी कारणसे शेखावाटी देशपर आमेरराजके अधिकारका विस्तार क्रमशः होता गया। आमेरपतिके कर उगाहक नन्दराम हलदियाको छल बल चतुरता और कौशलसे अनेक देशोंको अपने हस्तगत करके शेखावतोंकी स्वाधीनतापर हस्ताक्षेप करते हुए देखकर वे महा असंतोष प्रकाश करने लगे। इस समयके पूर्वतक यह सामन्त वा छोटे २ देशोंके राजा जयपुरपतिकी संपूर्ण वश्यता स्वीकार करके भी उनको किसी प्रकारका कर नहीं देते थे, केवल किसी सामन्तके प्राण त्याग करनेपर उसके उत्तराधिकारीके अभिषेकके समय आमेरराजको अपनेमें सबसे श्रेष्ठ सामर्थ्यवाला आत्मीय जानकर कुछ रुपये भेंटमें दिये जाते थे। परन्तु इस समय आमेरराजकी सेनाका दल क्रमानुसार सीमाके अन्तमें इकट्ठा हो गया, और कब कौन किस समय उनकी स्वाधीनताके हरण करनेको उद्यत होगा यह विचार कर सिद्धानी गणोंने अपने स्वार्थकी रक्षा करना एकान्त कर्तव्य विचार लिया। नंदराम हलदियाने इससे पहिले नवलगढके सामन्तोंके अधीनमें स्थित हुई नगरको घेर लिया, और रानोली देशपर प्रतापसिंहका अधिकार करनेके लिये उनको भी बंदी किया गया। इसी कारणसे समस्त सिद्धानी सामन्त महाक्रोधित होगये। यद्यपि वह लोग इतने दिनोंसे रायशालोतगणोंपर आत्मविवाद विसंवादसे हस्ताक्षेप न करके निरपेक्षभावसे निवास करते चले आये थे। परन्तु उन्होंने देखा कि इस समय निरपेक्षभावसे रहना सर्वथा असंभव है। इस कारण वह लोग सम्पूर्ण शेखावाटी देशके प्रत्येक सम्प्रदायके भीतरी झगडेको एकबार ही दूर करके सब एकवाणी और एकमत हो शेखावाटीकी जातीय स्वाधीनता और चिर अधिकारकी रक्षा करनेके लिये आग्रहके साथ आगे बढे। पूर्वकालमें उदयपुर नामक जिस स्थानपर समस्त शेखावतके सामन्त किसी जातीय प्रश्नकी मीमांसा वा स्वार्थ रक्षाके लिये इकट्ठे होते थे, उसी उदयपुरमें सम्पूर्ण शेखावतोंके नेता और सामन्तोंके एकत्रित होते ही यह घोषणापत्र प्रचारित हुआ। जिससे किसीके मनमें भी किसी प्रकारका संदेह उपस्थित न हो जिससे कोई भी किसी प्रकारका षड्यंत्र न चला सके, जिससे उक्त जातिकी समितिके सूत्रमें कोई भी किसी प्रकारका अनिष्ट वा किसी प्रकारके पहिले झगडेको स्मरण करके उसका बदला देनेके लिये समर्थ न हो, इसलिये पहिलेसे ही ऐसा प्रस्ताव नियत किया गया कि जातिकी प्राचीन और पवित्र रीतिके अनुसार एकत्रित हुए समस्त अधीश्वरोंको सरलविश्वास प्रकाश करनेके लिये "लूनधाव" अर्थात् नमकमें हाथ डालकर परस्परमें सद्भाव प्रकाश करनेके लिये सौगंध खानी होगी।

शीघ्र ही प्रत्येक सिद्धानीके सामन्त अपने ५ अनुचरोंके साथ नियत हुए समय-पर उस उदयपुर स्थानपर आ पहुँचे। केवल खंडेलाके उक्त अधीश्वर दोनों प्रताप और नरसिंहदासके अतिरिक्त रायशालोतोंके प्रत्येक अधीश्वर भी उस जातीय महा समितिमें आ पहुँचे। नरसिंह और प्रतापसिंहमें परस्परमें जो झगडा चिरकालसे चला आता था, इसी कारणसे उनका अधिक अविश्वास हो गया था; लोग किसी प्रकारसे भी उस समितिमें सामिल होनेका साहस न कर सके। ठीक समयमें उस जातीय समितिमें सबकी सम्मतिके मतसे कार्य किया गया। समस्त शेखावाटी देशके सामन्तोंमें जो कुछ भीतरी झगडा था, उसे चिरकालके लिये सभीने छोड दिया। अंतमें यदि किसी अधीश्वरके साथ अन्य अधीश्वरका झगडा उपस्थित हो जाय तो वर्तमान समयमें जिस प्रकार आमेरराजको उस विवादके मीमांसा पदपर नियुक्त किया जाता है उस प्रकारसे अब नहीं किया जायगा। वरन विवादकी मीमांसाके लिये, वा जिस किसी प्रकारसे जातीय स्वार्थकी रक्षाके लिये इस उदयपुरमें जातीय सभाद्वारा ही उचित अनुष्ठान होगा। उस सभामें उस विवादका विचार किया जायगा, यदि आमेरराज बलपूर्वक हमारे जातीय स्वार्थमें हस्ताक्षेप करेंगे तो आवश्यकतानुसार प्रत्येक सामन्तकी सेना इकट्ठी होकर आमेरराजके विरुद्ध खडी होगी।

शेखावाटीके समस्त अधीश्वरोंको इस प्रकारसे एक मनुष्यके समान खडा हुआ तथा दृढप्रतिज्ञ देखकर जयपुरपति महाराज अत्यंत भयभीत हुए। नन्दराम हलदियाके ही अत्याचार और उपद्रवोंसे शेखावाटीके सामन्त इस प्रकारसे खडे हुए हैं यह जानकर जयपुरेश्वरने शीघ्र ही नन्दरामको पदसे रहित कर रोडाराम नामक एक मनुष्यको उस पदपर नियुक्त किया, और उनको सेनासहित शेखावाटीमें भेजा। और नन्दराम हल-दियाको बन्दी करके जयपुरमें भेजनेकी आज्ञा भी दी। नंदराम हलदिया जयपुरपतिकी इस आज्ञाका समाचार पाकर पहिलेसे ही भाग गया। उसने जान लिया कि पकडे जाने-पर अवश्य जयपुरके कारागारमें बन्दी किया जाऊंगा। जयपुर राजने, उक्त नंदराम और उनके भ्राता जो आमरके प्रधान राजमंत्री पदपर नियुक्त होकर नन्दरामके अत्याचार और उपद्रवोंमें सहायता करते थे उनके भी समस्त अधिकारी देशोंकी धनसम्पत्तिको राजदरबारके अधिकारमें कर लिया।

नव नियोजित सेनापति जातिका दरजी था, वह नंदराम हलदियाको बंदी करनेके लिये और उसके अधीनकी सेनाको विध्वंस करनेके निमित्त अनेक यत्न करने लगा। नंदराम हलदिया यद्यपि पहिले आमेरराजका सेवक था परन्तु आमेरराजके उसे पदसे उतारकर सारी धन सम्पत्ति छीन लेनेसे इस समय वह अपने पूर्वस्वामीको अपना दृढ शत्रु विचार कर चारों ओर अत्याचार करके गाँव २ में अग्नि लगाने लगा। नवीन सेनापतिने नन्दरामको पकडने और उसके अत्याचारोंको निवारण करनेके लिये अंतमें शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंसे सहायताकी प्रार्थना की। परन्तु शेखावाटीके सामन्त पहिलेसे ही इस भाँतिकी शिक्षा पाये हुए थे इस कारण वह सहसा उसकी

सहायता करनेमें सम्मत न हुए, और अपने स्वार्थकी रक्षाके लिये सबसे पहिले पदोपयुक्त संधि करने, और आमेरपतिके साथ भविष्य राजनैतिक सम्बन्ध निर्धारित करनेके लिये अग्रसर हुए।

संधिपत्र।

पहिली धारा-नन्दराम हलदियाने जो बलपूर्वक तुई और ग्वाला इत्यादि नगरोंपर अधिकार कर लिया है, वे नगर पूर्व अधिकारियोंको लौटा देने होंगे।

दूसरी धारा-शेखावतोंकी सम्प्रदाय इच्छानुसार पहिलेसे ही जो कर देती आई है, आमेरराजको इसके अतिरिक्त और कर ग्रहण करनेकी सामर्थ्य न होगी। शेखावाटीके सामन्त अपने २ स्वीकार किये करको आमेरकी राजधानीमें स्वयं भेजते रहेंगे।

तीसरी धारा-जिस किसी कारणसे क्यों न हो आमेरराजकी सेना किसी समय भी शेखावाटीमें प्रवेश न कर सकेगी, कारण कि उसी सेनादलकी उपस्थितिके कारण खण्डेलाके युद्धमें वृथा रक्तपात हुआ है।

चौथी धारा-उक्त सम्मिलित अधीश्वरगण आमेरपतिकी सहायताके लिये एक सेना भेजेंगे, परन्तु वह सेना जबतक आमेरराजके कार्यमें नियुक्त रहेगी उतने दिनोंतक उसका खर्चा आमेरके महाराजको देना होगा।

उक्त नवीन राजसेनापतिकी मध्यस्थतामें उक्त संधिपत्र आमेरराज और शेखावतोंकी संप्रदायमें नियुक्त हुआ, उक्त संमिलित सामन्तगणोंने सेनाकी सहायताके लिये व्ययस्वरूप अग्रिम दश हजार रुपया लेकर अपने २ अनुचरोंके साथ जयपुरमें जाकर अपने स्वामीको सम्मान दिखाया। जयपुरपतिने उनके संमानको उसी समय स्वीकार भी किया; और जिससे नन्दराम तथा उनकी सेनाका दल शीघ्र ही पकडा जाय इस लिये उनको शीघ्र ही कार्यक्षेत्रमें जानेके लिये आज्ञा दी। अनिरुद्ध शेखावतने तुरन्त ही कार्यक्षेत्रमें जाकर पहिले उन गावोंका उद्धार किया, जिन्हें नन्दरामने बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर रक्खा था। परन्तु सामन्तगण शीघ्र ही जानगये कि यद्यपि वह संधिके अनुसार आमेरराजकी यथेष्ट सहायता करते हैं, परन्तु आमेरराज उस संधिके मतसे उनके स्वार्थकी रक्षामें प्रस्तुत नहीं हुए। उन्होंने देखा कि उन लोगोंने नन्दरामकी सेनाको भगा दिया है, परन्तु इस समय रोडारामकी सेना निर्विघ्नतासे उन स्थानोंपर अधिकार कर रही है। जो सामन्तोंकी सम्प्रदाय यहाँ इकट्ठी हुई थी वह महा दुःखित हुई-और शीघ्र ही उन्होंने परामर्श करके अपने निज संधिपत्रकी धाराके कार्यको पूर्ण करनेका संकल्प किया। रोडारामकी सेनाका दल शेखावाटीके जिन ग्राम और नगरोंको सामन्तोंकी सम्प्रदायकी सहायताके लिये नन्दरामकी सेनाके हाथसे लेकर वहाँ निवास कर रहा था, सामन्त सम्प्रदायोंने उन सब ग्राम तथा नगरोंपर आक्रमण करके रोडारामकी सेनाको दूर कर दिया। और उन सब ग्राम और नगरोंको पूर्व आदि अधिकारियोंके हाथमें अर्पण किया।

उक्त समयमें ही आमेरपतिने खंडेलाके राजा नरसिंहदासके निकट बाकी कर अदा करनेके लिये एक दूत भेजा, परंतु नरसिंहने उस दूतको मारपीट करके भगा दिया। वह दूत आमेरराजके मंत्रीके कुटुम्बका था; वह उक्त रीतिसे अपमानित और विताडित हुआ, तब वह जयपुरपति महाराजके निकट जाकर नेत्रोंमें जल भरकर उनके चरणोंमें अपनी पगडी रख यह वचन बोला, "नरसिंहदासने मेरा घोर अपमान किया है"। आमेरके महाराजने समस्त वृत्तान्त जानकर शीघ्र ही यह आज्ञा दी कि खण्डेलाराज्य आमेर राज्यके अधिकारमें रहै, और नरसिंहको बंदी करके शीघ्र ही जयपुरमें लाया जाय।

तुरन्त ही आशाराम नामक एक सेनापति सेना साथमें लेकर खण्डेलापर अधिकार करनेके लिये भेजा गया। नरसिंह गोविन्दगढ़में जाकर अधीश्वर आमेरपतिके प्रति उपेक्षा दिखाने लगे। आशारामके खण्डेलामें जाते ही नरसिंह और प्रतापसिंह दोनोंको एक साथ एक ही समयमें पकडनेके लिये षड्यंत्र जालका विस्तार करने लगा। नरसिंह तो गोविन्दगढ़में ही रहते थे, परन्तु प्रतापसिंह अपनी किसी विपत्तिकी सम्भावना न विचारकर जयपुरकी सेनाके साथ खण्डेलामें ही निवास करते थे। प्रतापसिंह विचार रहे थे कि नरसिंहके अपराधसे केवल उन्हींके हिस्सेके खण्डेलापर जयपुरराज्यका अधिकार हो जानेकी सम्भावना है। उधर आशारामने प्रतापसिंहको किसी प्रकारका भय न दिखाकर केवल नरसिंहको पकडनेके लिये सबसे पहिले कौशलजाल विस्तारा। आशारामने मनोहरपुरपति नरसिंहसे कहला भेजा कि उन्हें किसी प्रकारका कोई भी शारीरिक अनिष्ट नहीं होसकैगा। राजपूत प्रतिज्ञा और सौगंधके ऊपर चिरकालसे ही विशेष विश्वास स्थापन करते आये हैं। शरीरमें प्राण रहते हुए कोई भी अपनी प्रतिज्ञाको भंग नहीं कर सकता, यही राजपूतजातिका स्वाभाविक धर्म है, मनोहरपुरपति आशारामके उपदेशसे ही उसके वचनोंमें बंध गये, और उनके ऊपर सम्पूर्ण विश्वास स्थापित कर वह गोविन्दगढ़से बाहर हुए; और खण्डेलामें पहुँच गये। आशारामने उनको आदर सहित ग्रहण करके बाकी करके सम्बन्धमें सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित किया। संधिपत्र तैयार होने लगा। नरसिंहके डेरोंको छोडते ही आशाराम भी सेनासहित वहाँसे कितनी दूर चला गया। चतुर आशारामने इस प्रकारसे नरसिंहको असावधान और गाफिल कर दिया और फिर तीसरे दिन लौटकर मध्यरात्रिके समय उनके घरको घेरकर उनको उसी समय डेरोंमें जानेकी आज्ञा दी। नरसिंह आशारामकी इस चातुरीजालसे अत्यन्त क्रोधित हो आत्महत्या करनेके लिये उद्यत हुए पर आशारामने उनका वह उद्योग व्यर्थ कर दिया। तब नरसिंह शीघ्र ही कितने विश्वासी राजपूतोंके साथ आशारामके डेरोंमें चले गये।

नरसिंहको हस्तगत करके उसने प्रतापको बुलाया और वह निर्भय होकर उसके डेरोंमें चले आये। प्रताप विचार रहे थे कि अबकी बार वह अवश्य ही समस्त खंडेला देशके अधीश्वर होंगे, परन्तु चतुर आशारामने उनको घोर विपत्तिमें डालनेकी तैयारी की। इसका उन्हें स्वप्नमें भी ध्यान नहीं था। दूसरे दिन प्रताप और नरसिंह जिस समय

अस्त्रहीन होकर भोजन कर रहे थे, उसी समयमें आशारामकी आज्ञासे एक सेनादलने दोनोंको एकबार ही बंदी कर लिया। घोर अपराधियोंके समान जंजीरोंसे बांधकर बद और एक सवारीमें चढाकर पांच सौ पहरेवालोंकी सेनाके साथ उनको जयपुरमें भेज दिया। जयपुरमें पहुँचते ही दोनों राजाके कारागारमें बंदी हो गये, इस प्रकारसे दोनोंके बंदी हो जानेपर जयपुरके महाराज और उनके मंत्री अत्यन्त ही प्रसन्न हुए और आशारामको धन्यवाद देने लगे। आशारामने राजाकी आज्ञासे शीघ्र ही समस्त खंडेलादेशपर आमेरराजका खास अधिकार करके शान्ति रक्षाके लिये वहां पांचसौ सिपाही रख दिये। वह सब नीची श्रेणीके सामन्त खंडेलाके दोनों राजाओंके अधीनमें थे, आशारामने उनको पूर्व पदपर नियुक्त रख कर उनको रीतिके अनुसार कर देनेमें सम्मत कर लिया, और उसने उनसे ऐसी प्रतिज्ञा भी करा ली कि वह कभी किसी प्रकारसे भी शान्ति भंग अथवा किसी प्रकारका उपद्रव नहीं करेंगे। इस प्रकारसे खंडेला-राज्य फिर अवनतिकी अवस्थामें पतित होकर पराधीन हो गया।

तीसरा अध्याय ३.

आमेरपतिके विरुद्धमें बाघसिंहका अभ्युत्थान–बाघसिंहके साथ जार्ज थामसका योगदान–भयंकर युद्ध–बाघसिंहका खंडेलाके किलेमें जाना–हनुमंतसिंहका उनकी सेना और अनुज लक्ष्मणसिंहके प्राण नाश करना–बाघसिंहका फिर खंडेलाके किलेको जीतना–आमेरराजद्वारा एक ब्राह्मणको खण्डेलादेशमें जामाबंदीके लिये भेजना–उक्त ब्राह्मणका अपमानित होना–संग्रामसिंहका अभ्युत्थान–गावोंका लूटना–उनकी मृत्यु–जोधपुरके विरुद्धमें आमेरराज्यके साथ शेखावाटीके सामन्तोंका मिलन–आमेरराजकेसाथ शेखावतोंका नवीन संधिबंधन–नरसिंह और प्रतापसिंहका छूटना–मारवाडके युद्धमें नरसिंहकी मृत्यु–अभयसिंहको पितृपदकी प्राप्ति–आमेरराजकी विश्वासघातकता–हनुमन्तका गोविन्दगढ और खण्डेला इत्यादिपर अधिकार करना–खुशालीरामको मुक्तिलाभ और जयपुरमें मंत्रीपदकी प्राप्ति–खण्डेलाके करद सामन्तोंको नवीन शासनकी सनद मिलना–अभय तथा प्रतापसिंहको पिताके अधिकारकी प्राप्ति–मोहम्मदशाहके विरुद्ध शेखावाटीके सामन्तोंका सेनासहित गमन–आत्मविवाद–सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहका खण्डेलापर आक्रमण–हनुमन्तसिंहकी वीरताका प्रकाश करना–उनकी मृत्यु–लक्ष्मणसिंहका खण्डेलापर अधिकार–खण्डेलाके दोनों अधीश्वरोंका चिरकालके लिये पैतृक अधिकारसे वंचित होना–उनका निकाला जाना–राजमंत्रीके साथ लक्ष्मणसिंहका विवाद–विवादका फल–सिद्धान्तियोंका इतिहास–लाडखानी लोग–शेखावाटीका राजस्व–

दीनाराम बोहरा इस समय सन् १७९८-९९ ईसवीमें जयपुरके प्रधानमंत्री पदपर नियुक्त थे। आशारामको खंडेला विजय करते हुए देखकर वह शीघ्र ही राजधानी छोडकर सिद्धानीके समन्तोंके पाससे कर लेनेके लिये शेखावाटीको चले। दीनाराम उदयपुरमें आशारामकी सेनाके साथ मिलकर सिद्धानी सामन्तोंके अधिकारी देशोंके

बीचमें परशुरामपुर नामक नगरमें सेनाको ले गये। वहां जाकर इन्होंने सम्पूर्ण सामंतोंके पास आज्ञापत्र भेजकर शीघ्र ही अपने २ देय करको उपस्थित करनेके लिये कहा। इतना ही करके वह शान्त न हुए, जिससे शीघ्र ही कर अदा हो जाय इस हेतु प्रत्येक देशमें एक २ अश्वारोही दल भी भेज दिया। इस सेना भेजनेका नाम धोंस था। इसका मूल उद्देश यही था कि अश्वारोही सेनाका दल सामन्तोंके यहाँ जाकर उनसे सरकारी कर मांगे। सामन्त जितने दिनोंतक कर देनेमें विलम्ब करैगे सेना उतने दिनोंतक प्रतिदिन निर्द्धारित धन उनके निकटसे दंडमें लेती रहैगी। यदि सामन्त कर देनेमें राजी न हों तो उनके साथ युद्धका विचार किया जायगा। जब जयपुरके राजमन्त्री उक्त अपमानकारक उपायसे कर लेनेके लिये उद्यत हुए तब समस्त सिद्धानी सामंतोंने अत्यन्त क्रोधित हो शीघ्र ही मिलकर एक पत्रपर हस्ताक्षर करके उनके पास भेज दिया। उन्होंने उस पत्रमें लिख भेजा, कि दीनाराम यदि एक मुहूर्तका भी विलम्ब न करके उस भेजी हुई सेनाको बुलाकर स्वयं सेनासहित झुंझुनूमें न चला जायगा तो उसे विलक्षण फल मिलैगा, वह यदि झुंझुनूमें चला गया तो सामन्तोंके दिये हुए करका जो दश हजार रुपया इकट्ठा हुआ है वह शीघ्र ही मिल जायगा। समस्त शेखावाटीके नेताओंने एकमत होकर उक्त पत्रको लिखा। परन्तु खंडेलाके बंदी राजाके भ्राता वाघसिंह किसी प्रकार भी उसमें सम्मत न हुए। शेखावत देशके समस्त अधीश्वरोंने एक साथ मिलकर थोडे ही दिनोंके पहिले आमेर राजके जिस प्रकारसे उपकार किये थे, नन्दरामकी प्रबलता विनाश करनेके लिये आमेरकी सेनाकी जिस प्रकार सहायता की थी, तिसपर भी आमेरपतिके विपरीत पुरस्कार देनेसे वाघसिंह आमेरपतिके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। आमेरराजके साथ शेखावतोंकी पहिले जो संधि हो गई थी, उसकी एक धारामें यह भी उल्लेख था कि शेखावत जितने दिनोंतक कर देते रहैंगे उतने दिनोंतक आमेरराज किसी प्रकार भी शेखावत देशपर सेना नहीं भेज सकेंगे, ऐसा प्रबंध सदा रहैगा। सारांश यह है कि संधिकी उस धाराको भंग करके आमेरकी सेनाने जब शेखावत देशमें प्रवेश किया तब वाघसिंह अपने बाहुबलसे उसी समय जन्मभूमिकी रक्षाके लिये कृतसंकल्प हुए। वाघसिंहके उक्त मन्तव्यके प्रकाश होते ही खेतरीके पांच सौ राजपूत आकर उनके साथ मिले। वाघसिंहने उस सेनादलके साथ सीकरके अधीश्वरके निकटसे सिंहाना और फतेपुरका दंडस्वरूप धन संग्रह करके इस समयके सुप्रसिद्ध जार्ज थामस नामक यूरूपीय सेनापतिको अपने पक्षमें नियुक्त कर लिया। जार्जथामस स्वयं इस समय इस विवादमान राजपूत जातिके किसी एक पक्षमें नियुक्त होकर धन उपार्जनके लिये व्यग्र हो रहे थे। जार्ज थामसने अपनी शिक्षित सामान्य संख्यक सेनाके साथ वाघसिंहके साथ मिलकर शीघ्र ही आमेरकी सेनाके साथ युद्धका प्रस्ताव किया। यद्यपि इस समय जयपुरराजकी समस्त वेतन भोगी सेना और उनके अधीनके सामन्तोंकी सेना एकसाथ मिलनेसे उनकी संख्या वाघसिंह और थामसकी सेनाकी संख्याकी अपेक्षा अधिक हो गई थी। परन्तु

जार्ज थामस अपनी उस सामान्यसंख्यक शिक्षित सेनाकी सहायतासे इस समय समस्त रजवाडेमें सभीके भयके कारणस्वरूप हो गये थे। इस कारण जब उन्होंने स्वयं अपनी सेनाके साथ बाघसिंहका पक्ष अवलम्बन किया, तब राजपक्षकी सेना संख्यामें अधिक होनेसे भी बलमें हीन हो गई। जार्ज थामसने इस प्रकारसे बल विक्रमके साथ जयपुरकी सेनापर आक्रमण किया, कि जयपुरके सेनापति रोडारामने उस आक्रमणके वेगको किसी प्रकार भी सहन न करके खेत छोड दिया। उसी समय जार्ज थामसने जयपुरके कितने ही तोपखानोंको लूट लिया। प्रधान सेनापतिकी भीरुतासे जयपुरके पक्षमें जो कलंक लगा उसको दूर करने और तोपखानेको फिर अपने अधिकारमें करनेके निमित्त आमेरराजकी तरफसे चौमूके सामन्त रणजीतसिंहने सम्पूर्ण सामन्त सेनाको इकट्ठा करके प्रबलरूपसे दल बांधकर स्वयं जार्ज थामसपर आक्रमण किया। उस प्रबल समरमें रणजीतसिंहकी ही विजय हुई, यद्यपि रणजीतसिंहने तोपखानेको छीन लिया। परन्तु वह अधिक घायल हुए और सेना भी बहुतसी मारी गई। खांगारोत सम्प्रदायके दो नेता बहादुरसिंह और पहाडसिंह भी गोलोंके आघातसे हत हुए। परन्तु जार्ज थामस शेषमें एकबार ही परास्त हो गये, और प्राणोंके भयसे उनकी सारी सेना भाग गई।

उपरोक्त समरमें बाघसिंहके परास्त होनेसे आमेरराजने उनको खडलामें प्रबल बलशाली देखकर अपने हस्तगत कर लिया; इधर जयपुरके कारागारमें बंदी दशामें पडे हुए खण्डेलाके दो अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंह बाघसिंहको उद्योगी और प्रभावशाली जानकर स्वयं सरलतासे मुक्तिकी आशा करने लगे। और जिससे उनकी वह आशा पूर्ण हो जाय इस लिये उनके पास उत्साहसूचक अनुरोध भी भेजा। जिससे रोडाराम उनके ऊपर अनुकूल होकर सहायता करें इस लिये उनके साथ भी वह गुप्तभावसे प्रस्ताव चलाने लगे। रोडारामने कहला भेजा कि यदि एक दल प्रबल रायसालोतकी सेनाका मेरे साथ मिल जाय तो मैं आपकी आशाको पूर्ण कर सकता हूँ। इस प्रस्तावसे बाघसिंहको ही प्रतिनिधि नेतारूपसे नियुक्त किया गया। बाघसिंहने अपनी सामर्थ्यके बलसे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। जो राजपुरुष आमेरराजकी ओरसे इस समय खंडेलाको शासन करते थे, वे एकमात्र बाघसिंहके उस प्रभुत्वकी सहायतासे खंडेला देशका कर संग्रहकर भूमिके सम्बन्धमें नवीन विधिकी व्यवस्था करनेमें समर्थ हुए थ। इससे उनको हस्तगत कर रखनेके लिये शासकने खंडेलाके किलेमें रहनेकी आज्ञा दी थी। बाघसिंह बहुत थोडीसी सेनाके साथ खंडेलाके महलमें निवास करते थे। इस समय जयपुरके सेनापतिने बाघसिंहको एक स्वजातीय सेना दलके साथ मेल करनेकी आज्ञा दी, बाघसिंह अपने अनुज लक्ष्मणसिंहको अत्यन्त स्नेहके साथ खंडेलामें रखकर आप जयपुरके सेनापतिके साथ मिले।

खंडेलाके दूसरे शासक राज्यबंदी प्रतापसिंहके पुत्र हनुमन्तसिंहने जब सुना कि बाघसिंह राजाकी सेनादलके साथ मिल गये हैं तब उन्होंने शुभ सुअवसर जानकर खंडेलाके किलेको जीतनेका विचार किया। रात्रि हो गई थी, हनुमन्तने कितनी ही

अस्त्रधारी सेनाके साथ खंडेलामें जाकर दुर्गकी दीवारोंको उलंघन करके किलेमें प्रवेश कर सावधानीसे समस्त सेना और लक्ष्मणसिंहकी हत्या करके किलेको जीत लिया। वाघसिंह इस समयमें रानोलीमें निवास कर रहे थे। उन्होंने हनुमन्तसिंहको अपने अनुज लक्ष्मणसिंहकी हत्या और खंडेलापर अधिकार करते हुए सुनकर शीघ्रतासे खंडेलामें जाकर उसको घेर लिया। वाघसिंह बाहरसे ही अस्त्र चलाने लगे और हनुमन्तसिंहने किलेके भीतरसे गोला वर्षाना प्रारंभ किया। परन्तु हनुमन्तसिंहने बहुत थोडी अवस्थावाले लक्ष्मणकी हत्या की थी इससे नगरनिवासी उस हत्याकाण्डसे उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। इस कारण वे इस समय आग्रहके साथ वाघसिंह-की सहायता करने लगे। अधिक क्या कहैं, स्त्रियांतक किलेको जीतनेके लिये सेनाकी विशेष सहायता करने लगीं। वाघसिंह प्रबल विक्रमके साथ किलेको जीतनेके लिये प्रवृत्त हुए। हनुमन्तकी सेनाने अपने प्रभुपर भयंकर विपत्ति देखकर प्राणपणसे युद्ध किया। परन्तु जयकी आशा न देखकर अंतमें उन्होंने प्रचलित रीतिके अनुसार संधिका प्रस्ताव-सूचक श्वेत पताका दिखाकर किलेका दरवाजा खोल दिया। वाघसिंह सानन्द किलेमें पैठ गये। वहां जाकर उन्होंने चाहा कि अपने सुकुमार भाईकी हत्या कर-नेवाले हनुमन्तसिंहसे उचित बदला लें किन्तु वह पहिले ही किलेसे निकल भागा था। इस लिये वाघसिंहकी वह प्रतिहिंसक अभिलाषा मनकी मनमें ही रह गई।

उधर दीनाराम जयपुरके राजमंत्रीपदसे उतार दिये गये। और मानजीदास उस पदपर नियुक्त हुए। रोडाराम पूर्व कथित युद्धमें पराजित और कलंकित नहीं हुए थे। इससे वह इस समयतक शेखावाटी देशके करसंग्रहके पदपर नियुक्त थे। उन्होंने खण्डेलादेशके एक ब्राह्मणको वार्षिक बीस हजार रुपयेकी जमाबन्दी पर नियुक्त किया था। उक्त ब्राह्मणने प्रथम वर्षमें विलक्षण लाभ दिखाया। इसीसे उसे फिर दो वर्षका ठेका दिया गया। इस समय जयपुरराज्यकी सिलहपोश सेना उक्त ब्राह्मणके अधीनमें नियुक्त थी। वह ब्राह्मण उक्त सेनाकी सहायतासे खंडेलाके जो समस्त सामन्त अबतक स्वाधीनभावसे रहते थे; उनके पाससे भी बलपूर्वक करसंग्रह करनेमें प्रवृत्त हुआ। जो लोग कर देनेमें असम्मत हुए उसने सेनासहित उनपर आक्रमण करके उनके कितने ही किलोंपर अधिकार कर लिया। यद्यपि जयपुरपतिने नरसिंह और प्रतापसिंहको बंदी करके समस्त खंडेलाराज्यपर अधिकार कर लिया था; परन्तु प्रताप और नरसिंहकी खास अधिकारी भूमिके अतिरिक्त अन्य सम्पूर्ण देशोंके सामन्तोंके साथ संधिबंधन करके उनसे नियमित कर लेते आये थे। इस समय उक्त ब्राह्मणने उन सामंतोंपर भी आक्रमण करके उनके ऊपर इस प्रकारके अत्याचार करने प्रारंभ किये। खंडेलाके रायसल वंशोद्भव समस्त सामन्त महाक्रोधित हुए, और बदला देनेके लिये संहारमूर्तिसे सेनासहित सुसज्जित हुए। उन्होंने नरसिंह और प्रतापसिंहके निकटसे यह समाचार पाया कि जयपुरके महाराजके निकटसे उनको कारागारसे मुक्त होनेकी अब कोई आशा नहीं है, इस कारण सामन्त और भी उत्तेजित हुए। राजपूत जाति समस्त आशाओंके लुप्त होते ही जिस प्रकार महाक्रोधित हो भयंकर काण्ड उपस्थित कर देती है, इस समय वह लोग उसी

प्रकारसे खण्डेला देशपर लोमहर्षण काण्ड उपस्थित करनेके साथ बदला लेनेके लिये अग्रसर हुए। उन्होंने सबसे पहिले महावेगसे उस ब्राह्मणके अधिकारी खण्डेला नगरपर आक्रमण किया। और वहां भयंकर युद्धानल प्रज्वलित कर दी। ब्राह्मणकी ओर सात सहस्र दादूपन्थी सेना थी, तथापि सम्मिलित सामन्तोंने उस सेनाको विध्वंस कर ब्राह्मणको भगाकर नगरको लूट लिया। उन्होंने सबसे पहिले इस प्रकारसे जयलक्ष्मीका आलिंगन करके अन्तमें गगनभेदी जयशब्दसे शेखावाटीको कम्पायमान करके जयपुर राज्यमें जाकर ग्राम और अनेक नगरोंको लूट लिया। अधिक क्या जयपुरकी महाराणीके खास अधिकारी देशोंमें जाकर वे इनको विध्वंस करने लगे। इससे जयपुरके महाराज अत्यन्त क्रोधित हुए और उनको दमन करनेके लिये उन्होंने फिर एक नवीन सेना भेजी, दोनों ओरमें महा संग्राम उपस्थित हुआ। अन्तमें सामन्तोंकी सम्प्रदाय अत्यन्त हीनबल हो गई। रानोली और अन्य कितने ही देशोंके सामन्तोंने अन्तमें जयपुरपतिके साथ सन्धि स्थापन कर वश्यता स्वीकार कर ली। परन्तु रायसालकी कनिष्ठ शाखामें उत्पन्न हुए सामन्तोंने किसी प्रकार भी वश्यता स्वीकार न की। उन्होंने अपने देशको छोडकर बीकानेर और मारवाडमें जाकर वहांके दोनों अधीश्वरोंकी शरण ली। प्रतापसिंहके जाति भ्राता सूजावासके सामन्त संग्रामसिंह मारवाडमें और बाघसिंह और सूर्यसिंह बीकानेरमें चले गये, वहांके दोनों राजाओंने उनको अभय देकर उनके भरण पोषणके निमित्त उन्हें जागीरें लगा दीं। वे कुछ समयतक वहां इस प्रकारसे रहे, और फिर प्रबल दल बांधकर जयपुरको विध्वंस करनेके लिये चले।

वीरश्रेष्ठ संग्रामसिंह उस निर्वासित सामन्त वृन्दके नेता पदपर नियुक्त होकर शीघ्र ही आमेरमें गये। और उस राज्यके बहुतसे देशोंको लूटकर विध्वंस करने लगे। अनेक स्थानोंके निवासियोंसे दण्डकर लेकरके जिस जिस स्थानपर जयपुर राजके छोटे २ किलोंमें सेना निवास करती थी, उन्हीं २ किलोंपर आक्रमण करके निर्दयीभावसे राज्यकी सेनाका विनाश करने लगे। उक्त सम्मिलित सामन्तोंने इस प्रकारसे चारों ओर अशान्ति स्थापित करते २ अन्तमें जयपुरकी राजधानीके बहुत ही निकट खोह नगरमें जाकर उस नगरको लूट वहांसे बहुतसे घोडे चुराकर अपनी सेनाके लिये ले गये। नेता संग्रामसिंह इस समय क्रमानुसार जय प्राप्त करके इतने बलवान् हो गये कि वह मनमें आते ही किसी असीम साहसके कार्यपर हाथ डाल देते थे। इनके इस उपद्रव और अत्याचारोंसे प्रजाको महान् कष्ट उपस्थित हुआ, और अन्तमें जयपुरपतिके यहां लोग चारों ओरसे हाहाकार मचाने लगे। और उनके द्वारा अपना सर्वनाश बताकर सहायताके लिये प्रार्थना करने लगे। इस समाचारसे जयपुरके महाराज भयभीत हो शीघ्र ही विद्रोही-नेता संग्रामसिंहके साथ संधि करनेके लिये अग्रसर हुए। विसाआदेशके सिद्धानी सामन्त श्यामसिंहने जयपुरके महाराजके प्रतिनिधिस्वरूपसे संग्रामसिंहके पास जाकर संधिका प्रस्ताव उपस्थित किया; और भविष्य जयपुरेश्वरका कोई अनिष्ट न करनेके लिये उन्होंने राजपूत रीतिके अनुसार संग्रामसिंहको वचनबद्ध कर लिया। संग्रामसिंहने उक्त वचनोंपर विश्वास कर अन्तमें जयपुरकी राजधानीमें

जाकर जयपुरपतिके साथ साक्षात् करनेकी सम्मति प्रगट की । कई दिनोंमें वीर तेजस्वी संग्रामसिंहने अपनी विजयी सेनाके साथ जयपुर नगरमें प्रवेश किया। नगरमें जाते ही अनेक सम्प्रदायोंके लोग इकट्ठे होकर उनके ऊपर तीक्ष्ण दृष्टि डालने लगे। विशेष करके वेतनभोगी सिक्खोंने देखा कि संग्रामसिंहने उनमेंसे किसीके घोडे और किसीके ऊँट इत्यादि छीन लिये थे, उन्होंने उन सबको लेकर राजधानीमें प्रवेश किया है। परन्तु संग्रामसिंहने इस प्रकार बलविक्रमके साथ गर्वित हो राजधानीमें प्रवेश किया कि, उक्त सेना वा अन्य सर्व साधारण संग्रामसिंहकी सेना अपने २ घोडे ऊँट वा अस्त्र देखकर भी प्रार्थना करने वा उनका दावा करनेका साहस न कर सके।

राजमन्त्री मानजीदासने मनही मन स्थिर किया था कि संग्रामसिंहके राजधानीमें प्रवेश करते ही किसी न किसी उपायसे उनको बन्दी करके कांटेको उखाड दिया जाय और मंत्रीके अनुरोधसे ही जयपुरपतिने शपथ की थी, कि वह संग्रामसिंहके शरीरपर हस्ताक्षेप नही करेंगे। परन्तु मानजीदासने जयपुरके महाराजकी प्रतिज्ञा भंग करनेसे महाकलंक लगेगा यह जानकर भी संग्रामको बन्दी करनेके लिये उद्योग किया। श्यामसिंह जो राजाके वचनोंपर विश्वास करके संग्रामसिंहके निकट वचनबद्ध हुए थे उन्होंने मन्त्रीके उस गुप्त अभिप्रायको जानकर तुरन्त ही संग्रामसिंहसे समस्त समाचार कह दिया। ४८ घंटेके पीछे जयपुरके महाराजने समाचार पाया कि संग्रामसिंह जयपुरको छोडकर तंवरावाटीको चले गये और तंवर और लाडखानी भी उनके साथ मिल गये हैं। संग्रामसिंह इस समय एक हजार अश्वारोही सेनाके नेता हुए थे।

संग्रामसिंहने अपनी सेनाका बल बढाकर असीम साहसके साथ जयपुरपतिके खास अधिकारी देशोंमें जाकर शीघ्र ही ग्राम और नगरोंको लूटना प्रारम्भ कर दिया। वह सबसे पहिले दण्डस्वरूपमें एक २ नगर और ग्रामनिवासियोंके निकटसे कर मांगनेके लिये दूत भेजने लगा। जो लोग उसकी प्रार्थनाको पूर्ण करने लगे उनके ऊपर तो किसी प्रकारका अत्याचार नहीं किया। परन्तु जो कर देनेमें राजी नहीं हुए उनके प्रधान२ नेताओंको बन्दी करके ले जाने लगा, शेषमें करके पाते ही उनको छोडनेमें भी उसने किंचित् भी विलम्ब न किया। परन्तु जिन्होंने किसी प्रकारसे भी कर नहीं दिया उनके ग्राम और नगरोंको लूटकर समस्त धन रत्न ऊँटोंपर लदवाकर वह ले जाने लगा। संग्रामसिंहने इस प्रकारसे जयपुरराजके खास पृथ्वीके अधिक स्थानोंको लूटकर अन्तमें जयपुरकी दूसरी रानीके अधिकारी माधोपुर नगरको जा घेरा। वहां भयंकर युद्धके समय अचानक एक गोली संग्रामसिंहके मस्तकमें आकर लगी, और इसी आघातसे उन्होंने प्राणत्याग दिये। उनका शव शीघ्र ही रानोलीमें लाकर भस्म किया गया। संग्रामके मारे जानेपर उनका पुत्र पिताकी मृत्युका बदला लेनेके लिये पिताके समान महातेजस्वी हो चारों ओर अत्याचार करके लूटमार करने लगा। अन्तमें जयपुरपतिने उसके साथ सन्धि करके पिताका अधिकारी देश सूजावास उसको दे दिया, और उक्त लूटनेवालोंका दल भंग कर दिया।

जिस समय यह घटना हुई थी उस समय आमेरके सिंहासनपर महाराज जगत्सिंहजी विराजमान थे, तथा रायचंद आमेरके प्रधान मंत्री पदपर नियुक्त थे। इस समय रजवाडेमें फूलनलिनी कृष्णाकुमारीके जन्म लेनेसे समस्त राजस्थानमें महा युद्धानल प्रज्वलित हो गया था। उसी युद्धके होनेसे शेखावाटीके अधीश्वरोंकी पूर्व शोचनीय अवस्था इस समय और भी बढ गई थी। इसी समय पोकरणके सामन्त सवाईसिंहने मारवाडपति भीमसिंहके पुत्र धौंकलसिंहको अपने साथ लेकर जयपुरके महाराजका आश्रय लिया था। प्रधान मंत्री रायचन्दने यथासाध्य इस बातकी चेष्टा की कि जिसमें जगत्सिंह कृष्णाकुमारीका पाणिग्रहण करनेमें समर्थ हो जाँय। उसने अपने प्रभुकी सेना-को बढानेके लिये शीघ्र ही इस समय शेखावाटीके असंतुष्ट सामन्तोंको अपने हस्तगत करनेका यत्न किया। मंत्रीवर रायचंदने सबसे पहिले अपने भाईके पुत्र कृपारामको शेखावाटीके अधीश्वरोंके निकट भेजा। कृपारामने वहां जाकर शेखावाटीके अधीश्वरों-में कृष्णसिंहको अपने प्रतिनिधि पदपर नियुक्त किया, और उन्हींके अधीनमें सब शेखा-वत् सेनासहित उदयपुरके मार्गमें इकट्ठे होने लगे।

इस शुभ सुअवसरपर आमेरराजकी विशेष कृपासे अपनी पूर्वस्वाधीनता प्राप्त करनेमें समर्थ होकर उक्त सामन्त वर्ग अपने सर्वश्रेष्ठ नेता खण्डेलापति नरसिंह और प्रतापसिंहका बंदी अवस्थासे उद्धार करनेकी विशेष चेष्टा करने लगे। महाराज जगत्-सिंहने अपने स्वार्थसाधनके लिये शीघ्र ही शेखावाटीके सम्मिलित अधीश्वरोंकी कामनाको पूर्ण कर दिया। कृपारामने तुरन्त ही आमेरपति महाराज जगत्सिंहकी ओर-से संधि करली। सन्धिपत्रके नियुक्त होते ही खण्डेला राज्यके सम्मिलित अधीश्वर नर-सिंह और प्रतापसिंहको मुक्ति देकर उनका वह राज्य उन्हींको लौटा दिया गया। उसी समय इस प्रकारकी सन्धि भी हो गई कि जबतक दूसरे शेखावतोंके नेता आमेर-पतिको कर देते रहेंगे, तबतक आमेरराज किसी प्रकार भी उक्त देशके भीतरी शासनपर हस्ताक्षेप नहीं कर सकेंगे। कृपाराम और कृष्णसिंहने जयपुरकी राजधानीमें जाकर महाराज जगत्सिंहके सम्मुख वह संधिपत्र रक्खा; महाराजने तुरन्त ही उसपर हस्ताक्षर कर दिये, उक्त सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर होते ही शेखावाटीके नेता दश हजार सेना इकट्ठी करके आमेरपतिके अधीनमें युद्ध करनेके लिये तैयार हुए। महाराजने यह भी स्वीकार किया कि जितने दिनोंतक वे लोग रणक्षेत्रमें रहेंगे उतने दिनोंतक महाराज ही उनको सब खर्च देते रहेंगे।

पोकरणके सामन्त सवाईसिंह धौंकलसिंहको लेकर पहिले ही खेतडी नामक स्थानमें आ गये थे। इस समय शेखावत् नेताओंके साथ सन्धिबन्धन समाप्त हो गया तब पोकरणके सामन्तके भ्रातृपुत्र श्यामसिंह चाँपावत् कृपारामके साथ खेतडीमें जाकर वहांसे धौंकलसिंहको ले उन सम्मिलित शेखावतोंके डेरोंमें आये। आमेरके भूतपूर्व महाराज प्रतापसिंहकी कन्या महाराणी आनन्दकुमारी और मारवाडपति भीमसिंहकी रानी महारानी आनन्दकुमारीने अपने सेवकोंके साथ उन्हीं डेरोंमें जाकर धौंकलसिंहको अपने

दत्तकपुत्रस्वरूपसे गोद लेलिया। इसके पीछे सब लोग राजधानी जयपुरमें आ गये। और वहांसे एक लाखसे भी अधिक सेना संहारमूर्ति धारण कर मारवाडको जीतनेके लिये रवाना हुई।

सम्मिलित सेनादल खण्डेलासे दशकोश दूर खट्टू स्थानमें पहुँचा, वहाँ बीकानेरके महाराज तथा अन्यान्य योगदेनेवालोंके आनेकी बाट देखने लगे। इसी समयमें शेखावाटीके सम्मिलित नेताओंने आमेरके महाराजसे यह प्रार्थना की कि "हमारे यथार्थ स्वामी दोनों अधीश्वर नरसिंह और प्रतापसिंहको छोड दिया जाय। सम्मिलित अन्य ख्यातनामा वीरोंके समान उन प्रसिद्ध वीर दोनों नेताओंके अधीनमें हम रहनेकी इच्छा करते हैं"। परन्तु सम्मिलित शेखावतोंके नेताओंकी उक्त प्रार्थनाको अस्वीकार करनेसे महा संकट उपस्थित होनेकी सम्भावना थी, इस कारण आमेरपतिने शीघ्र ही उनके मनोरथको पूर्ण कर दिया। बहुत दिनोंतक बंदीभावमें रहकर नरसिंह और प्रतापसिंह मुक्ति प्राप्त करके अपनी सेनाके साथ आकर मिले। खण्डेलाके भूतपूर्व अधीश्वर बृन्दावनदास जो इतनेदिनोंतक कई ग्रामोंका अधिकार पाकर इकले रहते थे। इस जातीय युद्धको उपस्थित देखकर वृद्धावस्थामें वह भी तलवार हाथमें लेकर आमेरकी सेनादलके साथ योग देनेको सन्नद्ध हुए। महाराज जगत्सिंह इस समय इतने अधिक संख्यक "शेखाजी" के वंशधरोंसे युक्त हुए कि किसी समय भी कोई आमेरपति इस प्रकारके बहु संख्यक रायसालोत सिद्धानी, भोजानी, लाडखानीको एकत्र करके अपन अधीन में रखनेको समर्थ न हुए थे। शेखावतोंके सब अधीश्वर शीघ्र ही जगत्सिंहके साथ मारवाडमें जानेके लिये तैयार हुए। कृष्णाकुमारीके लिये जगत्सिंहके साथ मारवाडपति मानसिंहका जो युद्ध हुआ था, उसका वर्णन पाठकोंने मारवाड और जयपुरके इतिहासमें भलीभाँतिसे पाठ किया होगा। इस कारण अब यहां दुबारा उल्लेख करनेका प्रयोजन नहीं है, हम यहां केवल इतना कह सकते हैं कि इस युद्धमें शेखावतोंकी सेनाने जैसी वीरता प्रकाश की थी, जगत्सिंहके भागजानेसे अन्तमें उसी प्रकारका कलंक भी संचित किया। अत्यन्त दुःखका विषय है कि उस युद्धमें खण्डेलाराज नरसिंह और वृद्ध वृन्दावनदास दोनोंने ही प्राण त्याग किये।

नरसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र अभयसिंह पिताके पदपर स्थित हुए, और उन्होंने खण्डेलाकी सेनापर अपना अधिकार किया। अन्तमें महाराज जगत्सिंह मारवाड छोडकर अपने राज्यकी ओरको चले आये। वह भी शेखावतोंकी सेना लेकर खण्डेलामें लौट आये। परन्तु महाराज जगत्सिंह इस समय पहिली सन्धिको भंग करके अभयसिंहको खण्डेलाका राज्य देनेमें असम्मत हुए, तब अभयसिंहने दुःखित चित्तसे माचेडीके राजा वख्तावरसिंहके यहां आश्रय लिया। परन्तु बख्तावरसिंहने उनके ऊपर जैसा अप्रिय व्यवहार किया अभयसिंहने उससे अपना अधिक अपमान जानकर एक सप्ताहके पीछे माचेडीको छोड दिया। इस समय दिवसा स्थानमें महाराष्ट्रोंके नेता बापू सेंधिया निवास करते थे, खण्डेलाके दूसरे अधीश्वर प्रतापसिंह अपने पुत्रके साथ उनके निकट

जाकर उनकी शरणमें हुए। इधर हनुमन्तसिंह राजपूत स्वभाव सिद्ध विक्रमसे इस समय फिर गोविन्दगढपर अधिकार करनेके लिये उद्योग करने लगे। उन्होंने समस्त समाचार जानकर वीर तेजस्वी ६० अस्त्रधारियोंको संध्याके समय एक नदीके किनारे छिपा रक्खा, पीछे आधीरातके समय वे पहाडी मार्गसे एक एक करके किलेकी तरफ जाने लगे। और चुपकेसे किलेकी दीवारों पर चढकर उन्होंने दुर्गरक्षक सेनाका संहार करना प्रारंभ किया। थोडे ही समयके बीचमें किलेकी सेनाके जागते ही घोर युद्ध होने लगा। वीर विक्रमी हनुमंतसिंहने उस शत्रुदलकी सेनाका संहार करके शेष सेनाको भगाय शीघ्र ही गोविंदगढ पर अधिकार करलिया। किलेको जीतते ही उस गंभीर रात्रिके समय शेखावतोंने आनंदित होकर नक्कारेको बजाया; लाडखानी मीना और निकटवर्ती अन्यान्य जातीय राजपूत लोग जातीय शब्दसे आनंदित हो शीघ्रतासे किलेमें घुसपडे। हनुमंतकी जयध्वनिसे गोविंदगढ कंपायमान हो गया। कई सप्ताहके पीछे महावीर हनुमंतने दो हजार सेना इकट्ठी करके आमेरके महाराजके साथ सब प्रकारसे सामना करनेका साहस किया। उन्होंने खंडेला और निकटवर्ती अन्यान्य स्थानोंको एक २ करके अपने हस्तगत कर लिया। जयपुरके महाराजकी जो सेना किलेमें रहती थी वह विजयी हनुमंतके आनेका समाचार पाकर प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगी। खुशियाली नाम एक दरोगा प्रसिद्ध षड्यंत्रकारी इस समय खंडेला पर शासन करनेके लिये आमेरपतिके द्वारा नियुक्त हुआ था। उसने प्राणोंके भयसे भयभीत हो आमेरमें जाकर जयपुरके महाराजके सम्मुख अपनी पराजयका वृत्तान्त कह सुनाया। यद्यपि वह दरोगा खंडेलाके किलेमें एकसौ सेना रखनेके लिये आमेरपतिके निकटसे वेतन लेता था, परन्तु वह तीस मनुष्योंकी रक्षामें रखकर बचेहुए समस्त धनको अपने अधिकारमें करता था। विजयी हनुमंतसिंहने इसी कारणसे सरलतासे विजय प्राप्त की थी।

हनुमंतसिंहने अपने बाहुबलसे ही खण्डेलाको विजय कर लिया है, खुशहाली दरोगाके मुखसे यह समाचार सुनकर आमेरके महाराज अत्यन्त ही क्रोधित हुए। और खंडेला पर फिर अधिकार करनेके लिये रतनचँद नामक एक सेनापतिके अधीनमें दो दल पैदल सेना और एक दल गोलंदाज खुशहाली दरोगाके साथ भेजे। महाराजने यह आज्ञा भी सुना दी थी कि यदि खण्डेलाको खुशहाली न जीत सके तो उसको उचित दंड दिया जायगा। खुशहाली इस समय नवीन सेनाके बलसे बलवान् होकर मारे गर्वके आगे बढा है यह सुनते ही महावीर हनुमन्तसिंहने प्रतिज्ञा की कि मैं अपने जीतेजी शत्रुसेनाको नगरमें घसने न दूंगा, और अपनी सजी हुई सेनाके साथ वह खुशहालीके आनेकी बाट देखने लगा। इसी अवसरमें खुशहालीकी सेनाका दल सम्मुख आया, हनुमन्तसिंहके अधीनकी सम्पूर्ण सेनाने प्रबल विक्रमके साथ युद्ध करते २ खुशहालीकी सेनाको भगादिया। अंतमें जिस समय हनुमन्त संपूर्ण रूपसे विजय पानेके लिये उद्यत हुए, ठीक उसी समयमें उन्होंने दुर्भाग्यसे घायल हो शीघ्र ही अपनी सेनाको खंडेलाके किलेमें भेज दिया। खुशहालीराम दरोगाने सेनासहित किलेको घेर लिया और घायल हुए वीर हनुमंतने दूसरी वार शत्रुओंकी सेनापर आक्रमण करके सिलहपोस सेनाके ३०

मनुष्योंको मार डाला। यद्यपि खुशहाली किसी प्रकारसे भी किलेको न जीत सका था, परन्तु किलेमें जो पानी था उसके समाप्त हो जानेपर हनुमंतसिंहने अन्तमें आत्मसमर्पण करना निश्चय कर लिया, परन्तु आत्म समर्पण करनेके पहिले ही जयपुरके महाराजकी ओरसे खुशहाली दरोगाने हनुमंतसिंहको पाँच ग्रामोंके अधिकार देनेका प्रस्ताव किया, हनुमन्तसिंहने शीघ्र ही उन पाँच ग्रामोंको पाकर किलेको छोड दिया।

विख्यात खुशहालीराम बोहरा इस समयकी अर्द्ध शताब्दीके पहिलेसे आमेरराजदरबारमें विलक्षण प्रताप और प्रभुत्वको चलाता आया था, राजा प्रतापसिंहने उसको अत्यन्त दुश्चरित्र जानकर जन्मभरतक कारागारमें रखनेकी आज्ञा दी, और उसके वंशके किसी बोहराके परिवारमेंसे किसी मनुष्यको भी राजमंत्री पदपर नियुक्त नहीं किये जानेकी इच्छा की। हम जिस समयका वृत्तान्त लिखते हैं खुशहालीराम उस समय कारागारमें वृद्धावस्था बिता रहे थे इस समय सौभाग्यवश महाराजने इनको फिर छोड दिया, और वह राजमंत्री पदपर फिर स्थित हुए। शेखावाटीके अधीश्वरोंकी सम्प्रदायने कितने ही प्रतिनिधियोंको उनके पास भेज कर प्रार्थना की कि "आप कृपा करके हमारे पिताके अधिकारी देशोंको हमैं फिर दे दीजिये।" सौभाग्य बलसे खुशहालीरामने सामन्तोंकी प्रार्थनाको पूर्ण करनेके लिये आमेरके महाराजके निकट यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि "सामन्त ही राज्यके प्रधान बल हैं, उनके सतुष्ट रहनेसे ही राज्यका मंगल है। यद्यपि शेखावाटीके सामन्त बहुत समयसे अबाध्यता प्रकाश करके राज्यमें अनेक प्रकारके उपद्रव करते थे, परन्तु जब कभी जाति साधारणका अधिकार लेनेके लिये कोई झगडा होता है तभी वह महाराजकी वश्यता स्वीकार करके अपना पक्ष समर्थन करनेके लिये सेनाकी सहायता करनेमें भी त्रुटि नहीं करते। मारवाड विजयके समय शेखावाटीके सामन्तोंने दश हजार सेनाके साथ आमेरकी सेनामें मिलकर महाराजके अनेक उपकार किये थे। विशेष करके शेखावाटीके सामन्तोंके साथ महाराजका सद्भाव न होनेसे किसी कुअवसरपर कठिन महाराष्ट्रोंका आमेरराज्यमें आकर अत्यन्त हृदय विदारक जघन्य उपद्रव करनेकी आशंका है, इस कारण हमारे मतसे इन सामन्तोंको सब प्रकारसे संतुष्ट करके उनको अपने हस्तगत रखना ही उत्तम बात है"। खुशहालीराम बोहराके उक्त वचनोंको सुनकर आमेरके महाराजने कहा कि "आप जो अच्छा समझें सो करें" राजाकी आज्ञा पाकर खुशहालीरामने शीघ्र ही शेखावत् सामन्तोंके साथ एक नवीन संधिपत्र नियुक्त किया। उस संधिपत्रके मतसे यह निश्चय हुआ कि रायसालोत्गण वार्षिक ६० हजार रुपया करमें दिया करें और इस समय भेंटमें ४० हजार रुपया दें। इसपर सब सामन्त संमत हो गये; और खंडेला नगर तथा उनके अधीनके देशोंके अधीश्वरोंको फिर नवीन शासनकी सनद दी गई। इस प्रकारसे निकाले हुए खंडेलाके दोनों अधीश्वर अभयसिंह और प्रतापसिंह फिर अपने पिताके अधिकारको पा गए।

यद्यपि नवीन शासन सनदपत्रपर आमेरके महाराज और उनके प्रधान मंत्रीने अपने हस्ताक्षर कर दिये, परन्तु इस समय जितने नागा सेना खंडेलाके किलेमें

और शेखावत् देशकी सीमामें स्थित किलोंपर अधिकार किये हुए थी वह किसी प्रकारसे भी अभयसिंह और प्रतापसिंहको उक्त देश देनेके लिये राजी न हुई। वीरश्रेष्ठ हनुमंतसिंहने विचारा कि ऐसा बोध होता है कि खुशहालीराम वोहराने चतुरतासे चालीस हजार रुपया भेंटमें संग्रह करके इस समय धोखा देनेके लिये गुप्तभावसे इस प्रकारकी आज्ञा दी है। तब हनुमन्तसिंहने विशेष चिन्ता करनेके पीछे खण्डेलाके दोनों अधीश्वरोंके निकट यह प्रस्ताव किया कि "आप हमको कितनी सेना देंगे? मैं जिस उपायसे भी होगा उसी उपायसे खण्डेलाको अपने हस्तगत कर लूँगा"। अभयसिंह और प्रतापसिंहके अधीनमें इस समय पाँच सौ अस्त्रधारी सेवक थे, हनुमन्तसिंह उनमेंसे बीस वीर तेजस्वी मनुष्योंको चुनकर उदयगढके द्वारपर जा पहुँचा। उसने अपनेको छिपाकर किलेमें कहला भेजा, कि मैं हनुमन्तसिंहका दूत हूं, और उन्हींके पाससे आया हूं। किलेके अध्यक्षने उसको त्रसि अस्त्रधारियोंके साथ किलेमें जाने दिया, पश्चात् बीस अस्त्रधारी उनके पीछे और आये। उन्होंने भी किलेमें प्रवेश करनेका अधिकार प्राप्त किया। कुछ समयके पीछे अभय और प्रतापसिंहके अन्य अस्त्रधारी उनके पीछे २ किलेके द्वारपर आकर इकट्ठे हुए। हनुमन्तने कुछ ही कालके पीछे दुर्गाध्यक्ष नागोंके निकट अपना परिचय देकर आमेरके अधीश्वर और राजमंत्रीके हस्ताक्षर सहित नवीन शासनकी सनद दिखा कर उनसे कहा कि "यदि तुम इसी समय किलेसे न चले जाओगे तो इसी तलवारके बलसे मैं एक २ के प्राणोंका नाश करूँगा" वीर श्रेष्ठ हनुमन्तको इस प्रकारसे बलवान् और दृढप्रतिज्ञ देखकर नागागण शीघ्र ही प्राणोंके भयसे किलेको छोड कर भाग गये। अभय और प्रतापने बहुत दिनोंके पीछे फिर अपने पिताके विध्वंस हुए देशपर अधिकार किया। जिस हनुमन्तसिंहके बल विक्रम और साहस तथा शूरवीरताके बलसे अभयसिंह और प्रतापसिंहको इस प्रकारसे पैतृक अधिकार प्राप्त हुआ; वह दोनों ही उन हनुमन्तसिंहके प्रस्तावके मतसे प्राचीन शत्रुताको छोडकर सरल स्वभावसे रहने लगे।

अभयसिंह और प्रतापसिंहको पैतृक राज्य मिलनेके कुछ ही काल पीछे विख्यात पठान दस्युनेता अमीरखाँ कालान्तक कालके समान आमेरराज्यमें आया। महाराज जगत्सिंहने उसको दमन करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेनाके साथ अधीन सामन्तोंकी सेनाको एक साथ मिला लिया। पूर्वसंधिके मतसे इस समय खण्डेलापति अभय और प्रतापकी सेनाने भी उक्त सेनादलके साथ मेल कर लिया। अमीरखाँके प्रधान सेनापति मोहम्मदशाहखाँके विरुद्धमें शीघ्र ही वह सम्मिलित सेनादल दूनीके सामन्त राय चाँदसिंहके अधीनमें वीरदर्पसे अग्रसर हुआ। धोमगढमें मोहम्मदशाह रहता था सेनाने उस किलेको घेर लिया। अंतमें किलेको जीतनेकी सम्पूर्ण सम्भावना हो गई पर एक सामान्य कारणसे ही राजपूत सेनाके सब प्रधान उद्देश व्यर्थ हो गये।

शेखावत्सेनाके एकदलने इस समय टोंकके अधीनमें स्थित एक नगरको जीत कर लूट लिया। उसमें एक गोगावत सम्प्रदायका निवासी निहत हुआ। विजयी शेखावतोंकी सेनाने उसकी सारी धन सम्पत्ति लूट की। उन मारे हुए मनुष्योंके पुत्र

शीघ्र ही गोगावतोंके नेता प्रधान राय चाँदसिंहके पास गये। और उनको समस्त वृत्तान्त सुनाकर उनसे सहायता माँगी। चाँदसिंहने उनको पैतृक सम्पत्तिपर फिर अधिकार करनेके लिये कितनी ही वर्मोवृत्तिसेनाको उनके साथ भेजा। शेखावत् किसी प्रकारसे भी उनकी सम्पत्ति देनेमें राजी नहीं हुए, और अपना दल प्रबल कर लिया। इस समाचारसे चाँदसिंहने भी महाक्रोधित होकर उन बालकोंका पक्ष समर्थन करनेके लिये अपनी सेनाकी संख्याको बढा लिया। इस प्रकारसे शेखावत् और गोगावतोंमें परस्पर युद्ध होनेकी संभावना हो गई। शेखावाटीके दो अधीश्वरोंने समस्त शेखावत् सामन्तोंकी सेना लेकर विवाद स्थानमें आकर दर्शन दिया। चांदसिंहके साथ उस बालकका विशेष सम्बन्ध था, दूसरे यह चाँदसिंह उस समस्त सम्मिलित सेनाके ऊपर अध्यक्षरूपसे भेजे गयेथे इस कारण उन्होंने अपने सम्मानकी रक्षाके लिये किलेको घेरनेवाली सेनामेंसे बहुतसी सेनाको विवाद स्थलपर भेज दिया। तुरन्त ही आमेरके सम्पूर्ण सामन्तोंके अधीनमें स्थित सेनाने आत्मविग्रह उपस्थित करके महा समरानल प्रज्वलित कर दी। केवल सीकरके सामन्त ही इस विवादसे दूर रहे। अंतमें झगडा अधिक बढ गया। तब खाङ्गारोत् सम्प्रदायके नेताने मध्यस्थ होकर कहा, कि जिससे दोनों ओरका सम्मान बना रहे ऐसा कार्य करना उचित है। यद्यपि खंडेलापतिने गोगावतोंकी सम्पत्ति लूट ली, और वह उसे अपने राज्यमें ले गये हैं, पर वे समस्त संपत्तिको प्रधान सेनापतिके पास फिर भेजदें इससे दोनों ओरका सम्मान रह जायगा। शेखावत इसमें उसी समय सम्मत हो गये यद्यपि यह झगडा मिट गया, परन्तु चांदसिंह संतुष्ट न हुए। जो हो सम्मिलित सेनादलमें उक्त प्रकारसे आत्मविग्रह शांत हुआ, इसीसे भीमगढ़का अवरोध छोड दिया गया. सामन्त अपने २ देशको चले गये। सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंह जो इस झगडेमें सामिल नहीं हुए थे; शेखावाटीके दोनों अधीश्वरोंको असरल मार्गसे खंडेलाके नगरकी ओरको जाता हुआ देखकर अच्छा सुअवसर जान शीघ्रतासे अपनी सेनाको सीकरमे ले जाकर फिर इस समय खंडेलाके अधीश्वर पदको पानेके लिये आगे बढे। इन्होंने सबसे पहिले सीसोह नामक स्थानको घेर लिया, और अनेक प्रकारकी चतुराई तथा छलबलसे उसपर अपना अधिकार कर लिया। जिन पठानोंके विरुद्ध सीकरपति कितने दिनोंके पहिले युद्धमें नियुक्त थे, अन्तमें उसी पठानको दो लाख रुपया देनेकी प्रतिज्ञा कर उससे सहायता पानेके लिये उन्होंने कहला भेजा मन्नू और महाताबखाँ दो पठान सेनापति उस धन पानेके लिये शीघ्र ही सेना सहित सीकरपतिके साथ गये। सीकरपति लक्ष्मणसिंह खंडेलापर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुए हैं. यह समाचार वीर श्रेष्ठ हनुमन्तसिंहने पहिले ही सुन लिया था। इस लिये उन्होंने इस भारी विपत्तिमें अभयसिंह और प्रतापसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये पठान सेनापति महताबखाँको ५० हजार रुपये देनेको कहा कि वह किसी प्रकारसे भी खंडेलापतिके साथ युद्ध न करे, और न खंडेलामें जाय। परन्तु दुराचारी महताबखाँने उस प्रतिज्ञाको भंग करके शीघ्र ही अधिक धन पानेके लिये लक्ष्मणसिंहके साथ मेल करनेमें कसर न की।

वीरश्रेष्ठ हनुमंतसिंह पठानसेनापति महताबखाँको ५० हजार रुपया लेकर भी प्रतिज्ञा भंग करते हुए देखकर अत्यन्त क्रोधित हुए, और वह शीघ्र ही खंडेलाकी रक्षाके लिये उपयुक्त युद्धकी तैयारी करने लगे । परन्तु विपक्षियोंके नेता लक्ष्मणसिंहने अपने पितृसंचित अगणित धनकी सहायतासे इस समय अपने पक्षको धीरे २ अनेक उपायोंसे प्रबल कर लिया था। उसने शीघ्र ही उस धनवृष्टिके द्वारा रेवासो और अन्यान्य नगरों पर अपना अधिकार कर लिया। विजयी लक्ष्मणसिंहने शीघ्र ही प्रबल सेनाके साथ खण्डेला नगरमें जाकर नगरपर अधिकार कर लिया, परन्तु वीरश्रेष्ठ हनुमन्त खण्डेलाके किलेमें भलीभाँतिसे रहकर दूरवर्ती कोटके किलेमें बहुत दिनोंके लिये बहुतसे खाद्य द्रव्योंको गुप्तभावसे अन्य मनुष्यों द्वारा संचित कराने लगे। शेषमें तीन सप्ताहतक उस प्रबल विपक्षियोंकी सेनाके हाथसे खण्डेलाके किलेकी रक्षा करके जब उन्होंने इनके मुखसे सुना कि कोटका किला सब प्रकारसे धन संपत्तिसे पूर्ण कर लिया गया है, तब वह सेनासहित नंगी तलवारें हाथमें ले विपक्षियोंके द्वारा विध्वंस होनेवाले खंडेलाके किलेको छोडकर शत्रुओंका संहार करने लगे और शत्रुओंके डेरोंको भेदन कर सेनाके साथ कोटके किलेमें चले गये। संपूर्ण सामन्तोंने अभय और प्रतापसिंहके लिये अपने प्राणतक देनेका निश्चय कर लिया था, और इसीसे वह लोग पहिलेसे ही इस कोटके किलेमें इकट्ठे होगये थे।

सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंह और शेखावाटीके प्रभु दोनों अधीश्वर अभयसिंह और प्रतापसिंहके नीचे पदपर स्थित सामन्त मात्र थे। इनके नीचे पदपर स्थित होकर उपरितन प्रभुके अधिकारको लोप करते हुए देखकर अन्यान्य सामन्त महाक्रोधित हो गये, और बहुतसे अभय और प्रतापसिंहकी सहायता करने लगे। परन्तु चतुर लक्ष्मणसिंहने उनमेंसे अनेकोंका बहुतसा धन अपने हस्तगत कर लिया। जिन्होंने धन नहीं दिया लक्ष्मणसिंहने उनके अधिकारी देशोंमें पठानोंकी सेनाको भेजा, इससे उन लोगोंने अन्तमें अपना सर्व नाश जानकर निरपेक्षतासे रहना स्वीकार किया। यद्यपि किसी २ सामन्तने आमेरराजके निकट यह प्रार्थना की कि सीकरपतिने अन्यायाचरणसे खण्डेलापर आक्रमण किया है, परन्तु आमेरराजने उनकी प्रार्थनाको नहीं सुना, शेखावाटीके दोनों अधीश्वरोंके दोषसे ही भोमगढका अवरोध व्यर्थ हो गया है यह जानकर आमेरके महाराज उनके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए। इस कारण शेखावाटीके दोनों अधीश्वरोंका पतन आमेरराजकी इच्छासे ही हुआ।

वीरश्रेष्ठ हनुमन्तसिंह कोटके किलेमें आकर शीघ्रतासे किलेके बाहरकी दीवारोंको बनाकर कई सौ सेनाके साथ प्रबल बलशाली लक्ष्मणसिंहकी बाट देखने लगे। लक्ष्मणसिंहने पठानोंकी सेनाकी सहायतासे खंडेलापर अधिकार करनेके पीछे कोटको भी जा घेरा; हनुमन्तसिंहने किलेमें न जाकर उस बाहिरी किलेमें रहकर क्रमानुसार तीन महीनेतक शत्रुओंकी आशाको व्यर्थ किया। अंतमें तीन महीनेके पीछे शत्रुओंने अतुलविक्रमके साथ उस बाहिरी किलेपर आक्रमण किया। सभीने हनुमन्तको मूल किलेमें

जानेके लिये अनुरोध किया, परन्तु वीर विक्रमी हनुमन्तने कहा, " जब कि खंडेला चिरकालके लिये शत्रुओंके हाथमें पड गया है, तब अब किलेके भीतर जानेका प्रयोजन क्या है ? " उन्होंने शीघ्र ही अपनी सेनाको राजपूतस्वभाव सुलभ तेजस्विताके साथ उद्दीपित करके कहा, " क्या तो आप शत्रुओंका संहार करिये, और नहीं तो आओ अपने जीवनका बलिदान करैं । " उसी मुहुर्तमें सेनासहित हनुमन्तसिंहने नंगी तलवारें हाथमें लेकर बडे वेगसे शत्रुओंपर धावा किया और उन्हें परास्त कर दिया । और बाहिरी किलेको पुनः अपने हस्तगत कर लिया । पर भागी हुई शत्रुसेना फिर सहसा आ गई और प्रभातकालसे लेकर संध्यातक दोनोंमें घोर युद्ध होता रहा । हनुमन्तसिंह ने अंतिम बलके साथ फिर प्रचंडवेगसे शत्रुदलके व्यूहको भेदकर सब सेनाको भगा दिया । असीम साहसी हनुमन्तसिंहने इस समय शत्रुदलको भागा हुआ देखकर उनका पीछा किया, किन्तु खेद है कि उनके तोपखानेके सम्मुख तक पहुँचते ही अचानक एक गोलेके आघातसे उसी क्षण उनके प्राणपखेरू पयान कर गये । हनुमन्तकी मृत्यु होते ही उसी समय शत्रुओंकी जय हो गई। परन्तु नेताकी मृत्युसे उस अवरुद्ध सेनादलने शीघ्र ही बाहिरी किलेको छोडकर भीतरके किलेका आश्रय जा लिया । उक्त समरमें पाँचसौ पठानों की सेना और सीकरपतिके अधीनकी सेनाके सिवाय हनुमन्तके अधीनमें अधिक सेना नहीं थी, दूसरे दिन प्रभात होते ही हनुमन्तका शव संस्कार करने और घायल मनुष्योंको अन्य स्थानपर भेजनेके लिये किलेमें स्थित सेनादलने लक्ष्मणसिंहसे कुछ कालके लिये समरको स्थित रखनेकी प्रार्थना की, लक्ष्मणने उसमें अपनी सम्मति प्रकाश की; और उसी अवसरमें अभय और प्रतापसिंहके साथ संधिका प्रस्ताव उपस्थित किया गया। परन्तु अभय और प्रतापसिंहने अवज्ञाके साथ उस प्रस्तावको अस्वीकार किया । हनुमन्तके मारेजानेका समाचार पाते ही उदयपुरके अधीश्वर जो पहिलेसे ही अभय और प्रताप-सिंहका पक्ष समर्थन करते थे, उन्होंने फिर कितनी ही सेनाके साथ भोजनकी सामग्रीको किलेमें भेज दिया । खेतडीके सामन्त इस समय उपस्थित होते तो वह अवश्य ही सहायता करते, परन्तु वह इस समय जयपुरमें थे । यद्यपि उन्होंने अपने पुत्रसे कह दिया था कि बिसाऊ देशके सामन्तकी सम्मतिसे कार्य करना परन्तु बिसाऊ देशके सामन्तने लक्ष्मणसिंहसे घूंस लेने और अंतमें खंडेलाराज्यके कितने ही अंश पानेकी आशासे लक्ष्मणसिंहका ही पक्ष समर्थन किया था, इसी कारणसे खेतडीके सामन्तपुत्रोंने अपने पिताके कहनेके अनुसार अभय और प्रतापसिंहकी सहायता नहीं की । अभय और प्रतापसिंहके अधीनकी सेना कहीं भी सहयताके न मिलनेसे वीर स्वभाव राजपूतोंके समान केवल साधारण बाजराकी रोटी खा करके और भी पाँच सप्ताहतक किलेकी रक्षा करती रही । अंतमें आहारके अभावसे किलेमें सेनाके प्राणनाशकी संभावना होगई । तब सब कोई आत्मसमर्पण करनेके लिये चिन्ता करने लगे । इसी समयमें अवरोधकारी लक्ष्मणसिंहने प्रस्ताव कर भेजा कि वह अभय और प्रतापसिको दश ग्रामोंका अधिकार देनेके लिये तैयार है, इसी पर किलेमें की सेनाने आत्म समर्पण कर दिया। प्रतापसिंहने तो पाँच

ग्रामोंका लेना स्वीकार किया, पर अभयसिंह अपने वंशगौरवको स्मरण करके पैतृक तेजके साथ उन पांच ग्रामोंके लेनेमें राजी न हुए । यद्यपि प्रतापसिंहने पांच ग्रामोंको ले लिया परन्तु कुछ ही दिनके पीछे दुराचारी लक्ष्मणसिंहने उनको उन ग्रामोंके अधिकारसे वंचित कर दिया । इतिहासवेत्ता टाड साहब सन् १८१४ ईसवीमें लिखते हैं कि जिस समय खण्डेलाके शेष शेखावत् दोनों अधीश्वर अभय और प्रतापसिंह झुंझुनू नामक स्थानमें अत्यन्त दीनभावसे थे, उस समय सिद्धानीके सामन्तोंने सभीसे चन्दा संग्रह किया, और उस महाविपत्तिमें उनको वह प्रतिदिन पांच रुपया दिया करते थे ।

सन् १८१४ ईसवीमें जिस समय आमेरके राजमन्त्री पदपर मिश्र शिवनारायण विराजमान थे, उस समय अफगान लोगोंने अमीरखाँ महाराष्ट्रनेताकी ओरसे जयपुरपतिके पाससे दण्डमें नौ लाख रुपया माँगा । आमेरके राजाका खजाना इस समय एकबार ही खाली हो गया था । राजमन्त्रीने अन्य कोई उपाय न देखकर अन्तमें सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहकी ओर दृष्टि डाली । लक्ष्मणसिंहने जयपुरपतिके मतको ग्रहण न करके बलपूर्वक खंडेलापर अधिकार कर लिया था और इस समयतक जयपुरेश्वरके पाससे खण्डेलाके शासनकी सनद न मिली थी । उसने बहुत दिनोंतक शासनकी सनद संग्रह करनेके लिये भलीभांतिसे चेष्टा की थी इस समय विशेष सुभीता पाकर मिश्र शिवनारायणने लक्ष्मणसिंहके पास यह प्रस्ताव भेजा कि यदि वह स्वयं पांच लाख रुपया दें और जयपुरकी सेनाकी सहायताके लिये सिद्धानीके सामन्तोंके पाससे चार लाख रुपया इकट्ठा करके अमीरखांको दे दें तो उनको खण्डेलाकी शासनसनद दी जायगी । लक्ष्मणसिंह उक्त प्रस्तावके अनुसार कार्य करनेको राजी हो गये । इस समय अमीरखां रानोलीमें निवास करता था। लक्ष्मणसिंहने वहां जाकर उसके हाथमें नौ लाख रुपया देकर उसकी रसीद जयपुरपतिके यहां भेज दी, जयपुरके महाराजने भी लक्ष्मणको खण्डेलाका पट्टा दे दिया ।

लक्ष्मणसिंह पट्टेको पाकर महा आनन्दित हो जयपुर राजधानीमें गये और वहां जाकर खण्डेलाका एक वर्षका राजस्व उन्होंने अग्रिम दे दिया, जयपुरपति महाराज जगत्सिंहने उनका दिया हुआ राजस्व वार्षिक ५७ हजार रुपया नियुक्त कर उन्हें खिलत अर्थात् (सिरोपा) पोशाक और आभूषण देकर उनको अपने हाथसे अभिषिक्त कर दिया । इस प्रकारसे रायसलके शेष वंशधर अभय और प्रतापका पैतृक अधिकार सर्वदाके लिये लोप हो गया, खण्डेलादेश शेखावतोंकी एक नीची शाखामें उत्पन्न हुए लक्ष्मणके अधिकारमें हो गया ।

पाठकोंको स्मरण होगा कि एक ब्राह्मणने खंडेला देशको जयपुरपतिके पाससे जमाबंदीमें ले लिया था । उसने प्रजाको पीडित करके और निकटके देशोंके सामन्तोंपर आक्रमण करके अत्यन्त दुःख दिया था । इस समय उस ब्राह्मणने अपमानित होकर अपने भाग्यके उद्धारके लिये विशेष चेष्टा करके अपने पोषक राजमंत्री मिश्र शिवनारायणके पास जाकर आश्रय लिया । अंतमें चातुरी और षड्यंत्रजालका विस्तार करके

शिवनारायणको राजाके समीप इस प्रकारसे कलंकित किया कि अंतमें उसी कारणसे उन्होंने आत्महत्या कर ली। ब्राह्मणने पीछे असीमसाहसके साथ षड्यन्त्रके बलसे शेषमें आमेरके मंत्रीपद पर अधिकार कर लिया। लक्ष्मणसिंह जिस समय आमेरकी राजसभामें आये तब इन्होंने अपनी बुद्धिमानीसे वहाँ अपनी प्रभुताईका विस्तार किया वह ब्राह्मण उस समय मंत्रीपदपर प्रतिष्ठित था। उस चतुर ब्राह्मणने लक्ष्मणको इस प्रकारसे अपना प्रभुत्व बढाते देख कर अपनी सामर्थ्य और अधिकारके लोप होनेकी आशंका की और शीघ्र ही उसने लक्ष्मणको किसी न किसी उपायसे राजकोपमें डालनेकी चेष्टा की। ब्राह्मणने यह स्थिर कर लिया कि कुछ ऐसा उपाय करना उचित है, कि जिससे लक्ष्मण राजाके विरुद्धमें खडा हो जाय, उसने लक्ष्मणसिंहके नवीन अधिकार भुक्त खंडेलादेशपर आक्रमण करनेके लिये गुप्तभावसे आज्ञा दी। सिद्धानी राजपूत गणोंने फिर अपने पूर्व अधिकार प्राप्तिकी संभावना विचार कर शीघ्र ही उक्त ब्राह्मण राजमंत्रीके अधिकारमें स्थित जयपुरकी सेनाके साथ मिल कर खंडेलापर आक्रमण किया। ब्राह्मण मंत्री अपने उस आक्रमणकार्यमें नेतृत्व करने लगा परन्तु चतुर लक्ष्मणसिंह इस समय इस प्रकारके राजनैतिक उपायका अवलम्बन किया कि जिससे ब्राह्मण सफलमनोरथ न हो सका। लक्ष्मणसिंह खंडेलाकी रक्षाके लिये स्वयं वहां न जाकर जयपुरमें ही रहने लगे। परन्तु उन्होंने अत्यन्त गुप्तभावसे पठान नेता जमशेदखांके पास बहुतसा धन भेजा। जमशेदने शीघ्र ही सेनासहित जाकर ब्राह्मण मन्त्रीके डेरोंपर अधिकार करके और उसको महाभय दिखाकर उसकी सारी धन सम्पत्ति लूट ली। मन्त्रीने अकस्मात् आई हुई विपत्ति देखकर शीघ्र ही अवरोधको त्याग महाक्रोधित हो राजधानी जयपुरकी ओरको कूच किया। क्रुद्ध हुए मन्त्रीने राजधानीमें जाकर अपने शत्रु लक्ष्मणसिंहको पकडनेकेलिये पीछा किया लक्ष्मणसिंह शीघ्र ही प्राणोंके भयसे केवल पांचसौ अश्वारोही साथ लेकर राजधानी छोडकर शीघ्रतासे भाग गये। राजमंत्रीने कुछ दूरतक पीछा किया। अन्तमें मन्त्रीने राजधानीमें जाकर लक्ष्मणसिंह और उनके पक्षके समस्त सामन्तोंकी धन सम्पत्तिपर अपना अधिकार कर लिया। इतिहाससे जाना जाता है कि उक्त ब्राह्मण मंत्री जमशेदके आक्रमणके भयसे डेरोंको छोडकर भाग गया, और सम्मिलित सिद्धानी सामन्त अभयसिंहको नेतापदपर वरण करके उसने फिर अंतिम बलके साथ खंडेलापर आक्रमण किया; परन्तु अन्तमें परास्त होकर भाग गया। इस प्रकारसे अभयसिंहकी शेष आशा एकबार ही दूर हो गई।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने लक्ष्मणसिंहके पूर्व पुरुषोंके विषयमें वर्णन किया है। वह लिखते हैं कि " यह स्मरण हो सकता है कि शेखाजीके पुत्रोंमें सबसे बडे राजा रायसलके सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। इनमें चौथे पुत्र तिरमल थे, रावकी उपाधि पाकर उन्होंने कासली देश और ८४ ग्रामोंका अधिकार प्राप्त किया। तिरमलके पुत्र हरिसिंहने अपने बाहुबलसे फतेपुरके कायमखानियोंके पाससे बीलाडा नामक स्थान और उसके अधीनके १२५ ग्रामोंपर अधिकार कर लिया

और कुछ ही समयके पीछे रेवासोके और भी २५ ग्रामोंपर बलपूर्वक अधिकार कर लिया। हरिसिंहके पुत्र श्योसिंह कायमखानियोंके प्रधान स्थान उक्त फतेपुरको जीत कर वहाँ निवास करते थे। श्योसिंहके पुत्र चाँदसिंह सीकरनगरके स्थापनकर्ता थे। उन चाँदसिंहके वंशोत्पन्न देवीसिंहने अपने अत्यन्त कुटुम्बी साहपुराके ठाकुरके पुत्र उक्त लक्ष्मणको दत्तकपुत्ररूपसे ग्रहण किया था। लक्ष्मणसिंहने जिस समय सीकरपर अधिकार किया उस समय सीकरकी अवस्था बहुत अच्छी थी। लक्ष्मणसिंहने अपने बुद्धिबलसे देशकी अवस्थाको और भी सुधार लिया था। लक्ष्मणने खण्डेलापर अधिकार करनेके पहिले ही अपने अधीनमें स्थित प्रत्येक करद सामन्तको हीनबल करनेके लिये उनके प्रत्येक अधिकारी देशोंके किलोंको विध्वंस कर दिया। अधिक क्या कहैं, उसने अपनी पितृभूमि साहपुराके दुर्ग और वीलाडा भटौती और पासलीके किलोंको भी गिराकर सम कर दिया। लक्ष्मणसिंह इस प्रकार प्रचंड प्रतापसे शासन करते थे कि उक्त साहपुराके ठाकुर उनके जन्मदाता पिता भी अत्यन्त दुःखित होकर अपने अधिकारी देशोंको छोडकर जोधपुरको चले गये, और वहीं महाराणाके आश्रयमें रहने लगे।

साधु टाड साहबने लिखा है, "लक्ष्मणसिंहके अधिकारी देश इस समय एकत्र सम्बन्ध और उन्नत अवस्थामें थे। ग्राम और नगरोंकी संख्या पंद्रहसौ थी, और उनसे वार्षिक आठ लाख रुपयेकी आमदनी होती थी। लक्ष्मणने अपने नामको अक्षय करनेके लिये लक्ष्मणगढ नामका एक किला बनवाया तथा अन्यान्य अनेक स्थानोंको दुर्गबद्ध किया। अधिकारी देशोंकी रक्षाके लिये उन्होंने अलीगोल नामके बन्दूकधारी आठदल सेनाकी सृष्टी की थी। प्रत्येक दलमें एक २ दल गोलन्दाज थे। इसके अतिरिक्त उनके अधीनमें एक हजार शिक्षित अश्वारोही सेना थी। इसमें पाँचसौ वेतनभोगी और पाँचसौ भूवृत्ति पानेवाले थे। लक्ष्मणसिंह जिस प्रकार प्रबल बलशाली थे, यदि जयपुरपति अंग्रेज गवर्नमेण्टके संधिबंधनके कारण उनकी लूटनेकी रीतिको दूर न करते तो लक्ष्मणसिंहने जिन पठानोंके दस्युदलकी सहायतासे खंडेलापर अधिकार किया था उन्हींकी सहायतासे यह समस्त शेखावाटीपर अपना अधिकार कर सकते थे"।

अर्द्धशताब्दीके बहुतकाल पहिले कर्नल टाड साहबने खंडेलादेशका जो इतिहास वर्णन किया है अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम अनेक कारणोंसे इससे आगे उसको यहांपर नहीं लिख सकते उन्होंने इतना ही लिखा है।

---

(१) कर्नल टाड साहबने टीकेमे लिखा है कि "संवत १८६२ सन् (१८०६ ईसवी) में सबसे ऊँचे शिखर अर्थात् किसी प्राचीन किलेके ध्वंस होनेसे बचे हुए शिखरके ऊपर यह लक्ष्मणगढ बनाया गया था, यह नगर भी जयपुरके समान श्रेष्ठ रीतिसे बनाया गया था"।

(२) टाड साहबने कहा है कि खोकर राजपूतोंसे खंडेला नामकी उत्पत्ति हुई है खंडेला नगरमें ४ हजार घर हैं, और उनके अधीनके ग्रामोंकी संख्या ८० है;

खंडेलाके राजवंशका वर्णन करके इतिहासवेत्ताने अंतमें शेखावाटीकी और एक प्रबलशाखा सिद्धानियोंका संक्षिप्त वृत्तान्त यहाँपर वर्णन किया है । उन्होंने लिखा है, कि "रायसालके तीसरे पुत्र भोजराजसे सिद्धानियोंकी उत्पत्ति हुई है । रायसाने जिस समय सातपुत्रोंमें अपने राज्यको विभक्त कर दिया था उस समय भोजराजको उदयपुर नगर और उनके अधीनके देश मिल गये थे । भोजराजके वंशधरों की संख्या अधिक थी, समयपर वह भोजानी नामसे विदित हुए, परन्तु किस कारणसे यह प्रकाशित नहीं हुआ कि वह उदयपुर अत्यन्त पूर्वकालसे शेखावतोंका प्रधान समिति स्थानरूपसे प्रसिद्ध हो गया था । इसी उदयपुरमें अनेक समयपर शेखावत् नेताओंने इकट्ठे होकर जातिकी एकता की थी" ।

भोजराजकी कई पीढियोंके पीछे जगराम उनके वंशधर उदयपुरकी गद्दीपर बैठे थे । उनके छः पुत्रोंमें सबसे बडेका नाम साधु था । यह दशहरेके पर्वोत्सवके समय किसी कारणसे पिताके साथ झगडा करके पिताके राज्यको छोड कर अन्य स्थानपर सौभाग्य उपार्जन करनेके लिये चला गया । इस समय सिद्धानी गण जिन समस्त भूखंडोंपर निवास करते थे । यह देश फतेपुर (प्राचीन नाम इसका झुंझुनू था) नामक देशके अफगान जातीय कायमखानी सम्प्रदाय नव्वाबके अधीनमें था । वह नव्वाब दिल्लीके सम्राट्के अधीनमें कर देकर उस देशका शासन करते थे । साधु घरसे निकल कर उक्त नव्वाबके पास गया । तब नव्वाबने इनको अत्यन्त आदरके साथ ग्रहण करके अपने घरमें रक्खा । साधु अपने बाहुबल और बुद्धि बलसे शीघ्र ही इस प्रकारसे नव्वाबका विश्वासभाजन और प्रियपात्र हो गया कि जिससे नव्वाबने इसको फतेपुरके समस्त कार्योंका भार अर्पण कर दिया । इस विषयमें दो विवरण प्रकाशित हुए है और दोनों ही विश्वासयोग्य है । एकसे जाना जाता है कि नव्वाबके कोई पुत्र नहीं था, इसी कारणसे उन्होंने साधुको दत्तक स्वरूपसे ग्रहण करके उसको उक्त झुंझुनूदेश और उसके अधीनके ८४ ग्राम दे दिये । दूसरा यह कि नव्वाबकी मृत्युके पीछे साधुका ही अधिकार हुआ था । इसके सम्बन्धमें एक प्रवाद प्रचलित है, उससे जाना जाता है कि साधुने उक्त नव्वाबके अधिकारी देशोंपर अपना अधिकार भली भाँतिसे करके एक समय वृद्ध नव्वाबसे कहा कि आपने मुझे जो शासनका भार अर्पण किया है उसको मै अपने हाथमें रखनेकी इच्छा करता हूँ । आपके निवासके लिये मैंने जो अमुक ग्राम नियुक्त कर रक्खे हैं आप उनमें जाकर अपने पदोचित वृत्तिको भोग करते रहैं । नव्वाबने देखा कि साधुने जिस भाँतिसे अपने अधिकारोंको फैला लिया है इससे इस समय राज्यमें किसी प्रकार भी अपने पक्षका संग्रह करके साधुके विरुद्धमें खडे होनेका कोई उपाय नहीं है

(१) उदयपुरका प्राचीन नाम काइस है, और इसके अधीनमें चार भागोंमें विभक्त ८५ गाव है ।

(२) कायमखानी अफगान नहीं है चौहान जातिके मुसलमान राजपूत हैं ।

यह विचार कर नव्वाबने शीघ्र ही झुंझुनूसे फतेपुरमें जाकर वहाँके निवासी अपने कुटुम्बियोंके अधीनके शासनकर्ताका आश्रय लिया। वह कुटुम्बी शीघ्र ही साधुको झुंझुनूसे भगानेके लिये अपनी सेनाको सजाने लगा। साधुने उस विपत्तिमें पडकर अंतमें अपने पितासे सहायता माँगी। यद्यपि पिता इसके ऊपर अत्यन्त कुपित हुए थे, परन्तु उन्होंने पुत्रकी सहायता करना स्थिर किया। उदयपुरपति जगरामका और एक पुत्र इस समय मिरजा राजा जयसिंहके अधीनमें सेना सहित रहता था। जगरामने उस पुत्रको लिख भेजा कि वह तुरन्त ही आमेरके महाराजसे सहायताके लिये अपने साथ सेना लेकर साधुके साथ जा मिले। वह पुत्र उस पत्रको पाकर आमेरके महाराजके अनुग्रहसे कितनी ही शिक्षित सम्राट्की सेना और तोपखानेको साथ लेकर साधुके पास पहुँच गया। साधुने अपने भाईको आता हुआ देख शीघ्र ही फतेपुरतक अपना अधिकार करके झुंझुनूको अपने अधीनमें कर लिया। साधुने इस प्रकारसे कायमखानी नव्वाबको दूरकर अपने देशके समान मूल्य विशिष्ट उक्त फतेपुर और उसके अधीनके समस्त देश उक्तभ्राताको देकर दोनोंने ही पूर्व प्रस्ताव के अनुसार आमेरके महाराजको अपना प्रभु स्वीकार किया। और अपने वंशधरोंमें प्रत्येकके अभिषेकके समयमें भेंटमें कर देना स्वीकार किया। वीरश्रेष्ठ साधुने कुछ काल के पीछे और एक संप्रदायके अधिकारी सिंहाना देशको अपने बाहुबलसे अधिकारमें कर लिया। इस देशके अधीनमें १२५ ग्राम थे। साधुने इसके पीछे गौड़ राजपूतोंके अधीनमें स्थित ८४ ग्रामोंमेंसे बचे हुये सुल्तानो नामक ग्रामपर अधिकार कर लिया। अन्तमें साधुने दिल्लीके अत्यन्त प्राचीन सम्राट् तुंअरवंशमें उत्पन्न हुये खेतडीके अधिपतिके अधीनमें स्थित संपूर्ण ग्रामोंको अपने हस्तगत कर लिया, इस प्रकारसे साधुके अधीनमें सहस्रसे अधिक ग्राम और नगर हो गये। मृत्युके कुछ काल पहिले साधुने उन समस्त देशोंको अपने पाँचो पुत्रोंमें बाँट दिया। पुत्रोंके नाम इस प्रकार थे (१) जोरावरसिंह; (२) किशनसिंह (३) नवलसिंह, (४) केसरीसिंह और (५) पहाडसिंह। इनके वंशधर साधुके नामके अनुसार ही सिद्धानी नामसे विदित हुए"।

साधुके बडे पुत्र जोरावरसिंहको पैतृक अंशके अतिरिक्त सबसे बडे चोकेडी नामक नगर और उसके अधीनके बारह ग्राम तथा सर्वोच्च मंत्रमूलक चिह्नस्वरूप हस्ती और अनेक सवारी आदि प्राप्त हुई। परन्तु समयपर साधुके मध्यमपुत्र किशनसिंहके वंशधर-ने जोरावरके वंशधरोंको पैतृक अधिकारसे रहित करके उनके समस्त देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया। ज्येष्ठ शाखा जोरावरके वंशधर इस समय केवल सामान्य चोकेडी देशके अधिकारको भोग करते थे। यद्यपि किशनसिंहके वंशधर एकमात्र चोकेडीके अधीश्वर थे तथापि वह अपने वंश और पदमर्यादामें सबसे श्रेष्ठ गिने जाते थे।

"साधुके अन्य चार पुत्रोंके वंशधरोंमें निम्नलिखित सिद्धानी सम्प्रदायोंमें सबसे श्रेष्ठ सामर्थ्यवान् गिने गये—

१ खेतडीके अभयसिंह। ३ नवलगढके ज्ञानसिंह।

२ बिसाओंके श्यामसिंह। ४ सुलतानोंके शेरसिंह"।

" साधुने अपने बडे पुत्रको जिस भाँति कितने ही देश दिये थे, उसी प्रकारसे कनिष्ठ शाखाके लिये सिंहाना,झुंझुनू और सूर्यगढ (प्राचीन उडैछा) आदि कई एक देश दिये। खेतडीके अभयसिंहने उक्त सिंहाना और उसके अधीनके १२५ ग्रामोंको अपने अधिकारमें कर लिया था। परन्तु उन कनिष्ठ शाखाके वंशधरोंकी संख्या क्रमशः दिन २ बढती गई थी, और अन्य देश तथा ग्राम भी क्रम २ से खण्ड २ में विभक्त होते गये "।

" सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहने जिस प्रकार अपने बाहुबलसे अनेक भाँतिके असत् उपायोंसे रायसालोत् पर अपनी प्रधानता तथा प्रभुताका विस्तार कर लिया, उक्त अभयसिंहने भी उसी प्रकारसे अपने बाहुबलसे वा घृणित उपायोंसे सिद्धानियोंमें उसी प्रकार मस्तक उठाया। सीकरके सामन्तने केवल खण्डेलाकी श्रेष्ठ शाखाको एकबार ही लुप्त कर दिया, परन्तु खेतडीके सामन्त अभयसिंहने केवल साधुकी श्रेष्ठ शाखाको ही नहीं वरन् साधुकी कनिष्ठ शाखाका भी सर्वनाश करनेमें कसर न की। शेरसिंहके वंशधर किस प्रकार सुलतानोंदेशके अतिकारसे उतार दिये गये? उस लोमहर्षण वृत्तान्तको पढनेसे पाठक सरलतासे जान सकेंगे कि उस भूमिपर अधिकार करनेके लिये राजपूतोंने कहांतक शोचनीय काण्ड उपस्थित किये थे "।

"वीरश्रेष्ठ साधुके सबसे छोटे पुत्र पहाडसिंहके औरससे भूपाल नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। भूपालसिंहके लुहारूकी विजयके समय निहत होनेसे पहाडसिंहने अपने भ्राताके पुत्र खेतडीके सामन्त बाघसिंहके सबसे छोटे पुत्रको दत्तकरूपसे ग्रहण किया। पहाडसिंहकी मृत्युके पीछे दत्तक पुत्रने सुलतानोंके सामन्त पदको ग्रहण किया। परन्तु उसकी अवस्था उस समय बहुत थोडी थी, इससे वह शीघ्र ही पिताके घर जाकर निवास करने लगा। परन्तु दुराचारी बाघसिंहने बारह वर्षके पीछे प्राण त्याग किये। जिस समय उसका शव दाह करनेक लिये बाहर किया गया उस समयमें भी उसके समस्त कुटुम्बियोंने उससे अत्यन्त घृणा की थी "।

इतिहासवेत्ता टाड साहब रायसालोत् और सिद्धानियोंके पूर्वोक्त विवरणको वर्णन करके अंतमें लाडखानियोंके सम्बन्धमें लिखते हैं कि " लाडखानी शब्दका अनुवाद प्रियतम प्रभु हैं" परन्तु लाडखानीगण राजपूतानेमें विख्यात दस्युरूपसे विदित थे, इस नामका अप्रयोग किया गया है। लाडला शब्दका प्रयोग सर्वसाधारणमें बालकोंपर स्नेह प्रकाशके लिये किया जाता है। रायसलके उक्त पुत्रके इस नामके साथ खाँशब्दका

---

(१) बाघसिंहने अपने बेटको मारकर सुलतानोंको खेतडीमें मिला लिया। इसका फल भी उसको इस पापकर्मके अनुसार ही मिला। प्रत्येक कुटुम्बीने उससे घृणा की उसके मुहँपर थूका उसके शिरपर धूल डाली यहां तक कि वह इस लायक नहीं रहा कि किसीको अपना मुहँ दिखावे। उसकी स्त्रीने भी उसका मुहँ देखना छोड दिया। तब उसने अपने बेट अभयसिंहके नामसे जो विद्यमान है राज करना शुरू किया इसके पीछे बाघसिंह बारह वर्षतक जीता रहा मगर कभी खेतडीके किलेमें अपने मकानसे बाहर नहीं निकला।

क्यों संयोग हुआ और उनके कनिष्ठ पुत्रका नाम "ताजखां" क्यों रक्खा गया,. यह जाना नहीं जाता। क्या अन्य एक मुसल्मान फकीरके संमानके निमित्त खां शब्दका संयोग किया गया था यह हमें विदित नहीं है। उक्त लाडखांने मारवाड राज्यकी सीमामें स्थित आमेरके अधीन दाँतारामगढ नामक देशको अपने बाहुबलसे अधिकारमें कर लिया, उनके पिता बादशाहकी सभामें अधिक सम्मान पाते थे, इसी कारण उन लाडखाँको उक्त देशका मिलना सम्भव हो सकता है। उक्त देशके अतिरिक्त उन्हें तप्पनोसल प्राप्त हुआ, सब मिलाकर ८० नगर इसके अधिकारमें हुए। इनमें कितने ही मारवाड और बीकानेरके दोनों राजाओंने अपने अधीनमें कर रक्खे थे। लाडखानीगण जिससे उक्त दोनों राज्योंके लूटनेमें नियुक्त न हो इस कारण यह देश उन्हें रक्षाके लिये दिये गये थे। लाडखानीगण इस देशके पिंडारी आदिके समान भयंकर तस्कर जाति गिने जाते थे। वह इच्छा करते ही पाँचसौ अश्व इकट्ठे कर सकते थे। यह सभी भयके कारणस्वरूप थे; इनके अधीश्वर जयपुरके महाराज यद्यपि समय २ पर इनसे अपने २ करकी प्रार्थना करते थे परन्तु यह जिस देशमें निवास करते थे। वह अत्यन्त दुर्गम और इनके अधिकारी रामगढ नामका किला अत्यन्त दुर्भेद्य था। यह अनायास ही जयपुरके महाराजके निकट उस प्रार्थनाकी उपेक्षा कर जाते पर समय २ पर अमीरखाँके समान तस्करोंका दल सेनासहित वहाँ पहुँचता तब इनको विवश होकर करका वार्षिक बीस हजार रुपया देना पडता था। इतिहासवेत्ता टाड साहबने उक्त सिद्धानी और लाडखानियोंके जिस विवरणको वर्णन किया है, इसका पाठकोंको स्मरण होगा कि उन्होंने उसे सन् १८१४ ईसवीमें लिखा है, इस कारण आजकलके समयमें उक्त दोनों संप्रदायोंकी अवस्था अत्यन्त परिवर्तित हो गई थी।

कर्नल टाड साहब शेखावाटी राज्यके इतिहासके उपसंहारमें उन देशोंके राजस्वोंकी एक तालिकाको प्रकाशित करगये हैं।हमने भी यहाँपर उस तालिकाको प्रकाशित किया है।

"सीकरके सामन्त लक्ष्मणसिंहको खंडेलाकी आमदनी
सीकर सहित ... ... ८००००० रुपये।
खेतडीके अभयसिंहको लार्डलेककी दी हुई कोटपूतलीकी
आमदनी सहित ... ... ६००००० "
बसाओके श्यामसिंह और उनके भ्राता रणजीतसिंह जिन्होंने
उनकी हत्या कीथी उनकी४०००आमदनीके सहित १९०००० "
नवलगढके ज्ञानसिंह मंडावाके५०ग्रामों सहित... ... ७०००० "
मेदसरके लक्ष्मणसिंह ... ... ३०००० "
साधुके बडे पुत्र जोरावरसिंहके २७ प्रपौत्रोंके अधिकारी
ताइन और उससे लगी हुई भूमिकी आमदनी ... १००००० "
उदयपुरवाटी ... ... १००००० "

मनोहरपुर	... ...	३०००० रुपया.
लाडखानियोंकी आमदनी	... ...	१००००० ”
हररामजीगण	... ...	४०००० ”
गिरिधर पोताओंकी आमदनी...	... ...	४०००० ”
छोटे सामन्तोंके अधिकारी देशोंकी आमदनी	...	२००००० ”
		कुल २३००००० रु० ।

जयपुरके महाराजको निम्नलिखित देशोंसे नीचे लिखा हुआ कर मिला करता है ।

सिद्धानीगण	... ...	२००००० रुपया.
खंडेला	... ...	६०००० ”
फतेपुर	... ...	६०००० ”
उदयपुर और बवाई	... ...	२२००० ”
कासली	... ...	४००० ”
		३५०००० रुपया थी ।

उपसंहारमें हम केवल इतना ही कहते हैं कि शेखावाटीके सामन्तोंके उक्त राजस्व और करके सम्बन्धमें गत पचास वर्षोंमें अधिक परिवर्तन हो गया है ।

शेखावाटीका इतिहास समाप्त ।

---

(१) मनोहरपुरके अधीश्वरके जयपुरपतिके विरुद्धमें उत्तेजित होनेसे महाराज जगत्सिंहने उनके प्राणोंको नाश करके उनके अधीनमें स्थित समस्त देशोंपर अपना अधिकार कर लिया था, और शेखावाटीको अन्यान्य सामन्तोंमें विभाग कर दिया था ।

श्रीः ।

जयपुरके इतिहासका परिशिष्ट ।

जयपुरके इतिहासका भाषान्तर और इसके मुद्रित होनेके पीछे हमे जयपुरके दरबारके एक उच्च मनुष्यकी कृपासे "जयवंश" नामका एक महाकाव्य मिला; यह सीताराम नामक एक कविके द्वारा संस्कृत भाषामे रचा गया है । इस काव्यमें कुशावह वा कछवाहे राजवंशके आदि-पुरुष सोढदेवसे तीसरे जयसिंहके शासनतकका वृत्तान्त प्रवाहित धाराके समान वर्णन किया गया है । हमने आदिसे अन्ततक पढकर देखा कि कितने ही स्थानोंपर इतिहासवेत्ता कर्नल टाड साहबके लिखे हुए इतिहासके साथ उक्त काव्यके मतका भेद और असमंजस बिराजमान है । इस बातको अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि कर्नल टाडने अर्द्ध शताब्दीके अधिक कालके पहिले कछवाहोंके द्वारा लिखे हुए अत्यन्त प्राचीन अनेक ग्रन्थोंको देखकर जयपुरके इतिहासका वर्णन किया है । और "जयवंश"के प्रणेता कविश्रेष्ठ सीताराम जयपुरके महाराजके तीसरे जयसिंहकी आज्ञासे संवत् १९४२ में उक्त ग्रन्थको वर्णन किया है । कविने भी अवश्य ही जयपुरके महाराजके महलमे स्थित प्राचीन ग्रंथ और राजकीय कागजपत्रोंको देखकर अपने ग्रथोंको निर्माण किया है यह भी मानना होगा, इस कारण इस प्रकारके स्थलोंपर दोनोंमे जिस २ स्थानपर मतभेद विराजमान है उस स्थानपर किसका वर्णन अभ्रान्त है इसका निसन्देह निर्णय करना कोई सहज बात नहीं है ।

कर्नल टाड साहबने यथार्थ इतिहासवेत्ताके समान निरपेक्षभावसे जयपुरके राजनैतिक इतिहासका वृत्तान्त वर्णन किया है, परन्तु " जयवंशके प्रणेताने सोढदेवसे जयसिंहके शासनतकका वृत्तान्त वर्णन करके निरपेक्षभावसे समस्त अंशोंको प्रकाशित नहीं किया । उनका काव्य भारतवर्षके प्राचीन कविकुलकी लेखनीसे निकले हुए काव्यके समान कल्पनासे जडित और ऊँची प्रशंसासे परिपूर्ण है । अनेक प्रयो-जनीय ज्ञातव्य राजनैतिक विषयोंको उसमें एकबार ही छोड दिया है । जयपुर राजवंशके साथ दिल्लीके सम्राट् वंशकी जो विशेष आत्मीयता और घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ था, जयपुरके महाराजको जिस सम्राट्वंशकी अधीनता स्वीकार करनी पडी थी इस काव्यमें उसका कोई उल्लेख नही हुआ है । इस कारण कर्नल टाड साहबने निरपेक्षभावसे जिन समस्त ऐतिहासिक सत्य और तथ्यको प्रकाशित किया है, उन सबको इस काव्यमें स्थान नहीं मिला । पर हम ऐसा भी निश्चय नहीं कर सकते कि यह सब काव्य भ्रान्तिसे परिपूर्ण है । तब दोनोंने जिन २ विषयोंका उल्लेख किया है । उसी २ स्थानपर सावधानीके साथ हमें किसी एक पक्षका अवलम्बन करना ही होगा ।

कर्नल टाड साहब संस्कृतभाषाके विद्वान् नहीं थे । उन्होंने अपने ग्रंथोंमें अनेक स्थानोंपर इस बातको स्वीकार किया है । उनके गुरु यति ज्ञानचंद्र प्राचीन ग्रंथोंको पढकर मुखसे उसकी व्याख्या करके अर्थ करते जाते थे, और वह उसी समय उन सबको अंग्रेजी भाषामें लिख लेते थे । यद्यपि यति ज्ञानचंद्र बडे भारी पाण्डित थे तथापि शीघ्रतासे

व्याख्याके समय किसी स्थानपर उनसे कहीं भी भ्रम न हुआ हो अथवा उन्होंने भ्रमसे किसी स्थानको भी नहीं छोडा हो अथवा कर्नल टाड साहबने भाषान्तर करनेके समयमें किसी स्थान विशेषका नाम वा किसी कविताका कोई अंश भ्रमसे विपरीत अर्थमें न लिखा हो यह असम्भव नहीं हो सकता । मुनियोंको भी भ्रम हो जाता है, सारांश यह है कि यति ज्ञानचन्द्र वा कर्नल टाड साहबको भ्रम न हुआ हो यह कदापि सम्भव नहीं हो सकता । जयवंशके कर्ताको भ्रम न हुआ हो यह भी असम्भव नहीं है पर वह संस्कृतके एक विख्यात पण्डित थे। उन्होंने स्वयं राजमहलके अनेक ग्रन्थोंको देखकर जयपुरराजवंशके प्राचीन राजाओंकी संक्षिप्त जीवनीको संग्रह किया था, इस कारण इसके सम्बन्धमें उनके अल्प भ्रम होनेकी सम्भावना है ।

जिस २ स्थान पर दोनों मत और घटनाओंकी एकता नहीं है हम अत्यन्त संक्षेपसे उन कई एक घटनाओंके उल्लेख करनेकी अभिलाषा करते हैं, जयपुरके इतिहासके प्रथम अध्यायका पाठक पढकर भलीभाँतिसे जान सकेंगे कि टाड साहबने लिखा है कि "राजा नलसे ३३ पुरुष पीछे नरवरके महाराज सूरसिंह[1]के प्राण त्याग करनेपर उनके भ्राताने बलपूर्वक सिंहासनपर विराजमान होकर कुमार भाईके पुत्र दूलेरायको अधिकारसे रहित कर दिया" इत्यादि जयवंशकाव्यमें अन्य प्रकारका वर्णन देखा जाता है, कविने जो लिखा है उसका सारा मर्म यह है कि निषधदेशके अन्तर्गत बरेली राजधानीमें ईशसिंह राज्य करते थे। ईशसिंहके औरस सोढदेव नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ । सोढदेवने युवा होकर अपने पिताकी आज्ञासे गुर्जर देशके अधीन योधानामक राज्यपर आक्रमण किया । प्रबल युद्धके समयमें उक्त राज्यको जीतकर उसने वहां अपनी आधिपत्यताका विस्तार कर अपने पिताको वहां जानेके लिये कहा, पिता ईशसिंह अपने कुटुम्बसहित नवजीत राज्यमें जाकर वहां निवास करने लगे। सोढसिंह कुछ समयके पीछे पूर्वाञ्चलके माचीके महाराजके साथ युद्ध करनेके लिये चले। माचीके राजा और उनके अधीनमें स्थित छोटे २ राजाओंके साथ सोढदेवका भयंकर युद्ध हुआ । सारे दिन संग्राम होनेके पीछे रात्रिके समय जब कुलदेवी प्रसन्न हुई तब देवीने सोढदेवको प्रत्यक्ष दर्शन देकर अभय दी । दूसरे दिन प्रभात होते ही फिर प्रबल युद्ध हुआ, देवीके वरसे सोढदेवने विपक्षी माचीपतिके तथा अन्य राजाओंके जीवनको नाश कर जय प्राप्त की। माची नगरमें सोढदेवने देवीका एक मन्दिर बनाया । माचीदेशके जीतनेके पीछे सोढदेवने खोह[2] नामक देशको जीतकर वहां अपना अधिकार किया । पिता ईशसिंहकी

---

(१) कर्नल टाड साहबने सूरसिंह लिखा है । अंग्रेजी भाषामें "ढ" वर्ण नहीं है, इस कारण अंग्रेजीमें लिखनेके समयमें उन्होंने (R) (र) शब्दको ही प्रयोग किया हो।

(२) पाठकोंको जयपुर इतिहाससे विदित हुआ होगा कि सोढदेवके पुत्र दूलेरायने आश्रयदाता मीनाके अधीश्वरकी हत्या करके खोहगांवपर अधिकार किया । परंतु जयवंशकार कहते हैं कि सोढदेवने खोह देशको जय किया था। खोह शब्दकी दूसरी विभक्तिसे खोह हुआ । ऐसा जाना जाता है कि कविने ज्ञानचन्द्रके मुखसे खोह शब्दको सुनकर भूलसे खोहगांव लिख दिया है।

आज्ञासे सोढदेवने उस नवजीत खोहदेशमें निवास किया। कुछ ही समयके पीछे उनके पिता ईशसिंहने इस संसारसे बिदा ली, तब सोढदेव संवत् १०२३ में पिताके राज्यपर अभिषिक्त होकर प्रबल प्रतापके साथ राज्य करने लगे।

इस समय देखा जाता है कि इतिहासवेत्ता टाड साहबने सोढसिंहके शासनका कोई उल्लेख नहीं किया; केवल उन्होंने उनके पुत्रके द्वारा खोहकी जयका उल्लेख किया, परन्तु जयवंशकार कहते हैं कि सोढसिंहने स्वयं खोहको जय किया, हमें ऐसा अनुमान होता है कि यति ज्ञानचन्द्रके अनुवादके दोषसे ही टाड साहबने इस प्रकार लिखा है, अथवा टाड साहबने जिस ग्रंथसे सहायता ली थी उसीमें इस मतका वर्णन होगा।

कर्नल टाड साहबने सोढदेवके पुत्र दूलेरायके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है जयवंशकारने उसका समर्थन नहीं किया। पहिली बात यह है कि टाड साहबने सोढदेवके पुत्रका नाम दूलेराय लिखा है, परन्तु कविने उनका नाम दुर्लभ लिखा है। दुर्लभके बदलेमें दूले होना कभी संभव नहीं हो सकता, तब टाड साहबने अनेक स्थानोंमें नामोंका अदलबदल किया है, जयवंशकारने लिखा है कि सोढदेवके प्राण त्याग करनेपर उनके पुत्र दुर्लभसिंह पिताके राज्यपर विराजमान हुए। दुर्लभ अतुल विक्रमके साथ राज्यशासन करते थे; टाड साहबने जिन दूलेरायकी विपत्तिका विवरण और उनके द्वारा खोहदेशके मीनाके अधीश्वरका आश्रय ग्रहण करना तथा मीनापतिके प्राणनाशका वृत्तान्त वर्णन किया है, कविने उसका कोई उल्लेख नहीं किया। टाड साहब लिखते हैं कि "दूलेरायकी मृत्युके पीछे उनकी विधवा रानीके एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम काकिल रक्खा गया।" परन्तु जयवंशके प्रणेताने लिखा है, कि "दुर्लभसिंहके औरस काकिल नामवाला पुत्र उत्पन्न हुआ जब काकिल स्याना हुआ तब राजा दुर्लभसिंहने उसको भांडारेजको जीतनेके लिये भेजा। कुमार काकिलने अपनी प्रबल सेनाकी सहायतासे भांडारेजपतिको परास्त करके वहां अपने पिताके अधिकारका विस्तार कर फिर पिताकी राजधानीमें लौट आये। इस स्थानपर दोनोंके मतका भेद फिर दृष्टि आता है। किस ओरकी बात ठीक है इसका निर्णय करना कोई सरल बात नहीं है।"

इतिहासवेत्ता टाड साहबने लिखा है, कि उन्होंने काकिलका भ्रमवश हो (कंकाल लिखा) पुत्र माईदल अथवा मादल पिताके सिंहासन पर विराजमान हुआ; इसके पीछे उनके पुत्र हनूने राजसिंहासनको प्राप्त किया। जयवंशकाव्यमें माईदल वा मादल नामका आजतक कोई उल्लेख नहीं है। कविने कोकिलका पुत्र हनूदेव, लिखा है।

साधु टाड साहब लिखते हैं कि हनूदेवके पुत्र कुण्डलको पीछे राज्य प्राप्त हुआ जयवंशके प्रणेताने लिखा है कि हनूदेवके पुत्र ज्ञानदेव थे।यहांपर फिर भेद देखाजाता है।

महामान्य टाड महोदयने लिखा है कि पीछे, पंजन वा पजून कछवाहोंके सिंहासनपर विराजमान हुए। कविने उस नामको "प्रंजोन" लिखा है। पर हमको पजवन ज्ञात हुआ है। यहां भी भ्रम है।

टाड साहबने मलेसीके पीछे जिन ग्यारह राजाओंकी नामावली प्रकाश की है उसके साथ जयवंशके प्रणेताके ग्रंथमें मलेसीके परिवर्ता जो १० नाम लिखे हैं, हमने क्रमानुसार उनकी नामावलीको प्रकाशित किया है,—

टाड साहबकी लिखी।		जयवंशके प्रणेताकी लिखी हुई।
(१) बीजल	... ...	(१) बीजर।
(२) राजदेव	... ...	(२) राजदेव।
(३) कल्याण	... ...	(३) कीलन।
(४) कुन्तल	.. ..	(४) कुतिलक।
(५) ज्वानसिंह	... ...	(५) जूनसी।
(६) उदयकरण	... ...	(६) उदयकरण
(७) नरसिंह	... .	(७) नृसिंह।
(८) वनवीर	... .	
(९) उद्धारण	... ...	(८) उद्धरण।
(१०) चन्द्रसेन	... .	(९) चन्द्रसेन।
(११) पृथ्वीराज	.. ..	(१०) पृथ्वीराज।

उपरोक्त दोनों तालिकाओंमें किस प्रकारका भेद पडा है, यह तो सरलतासे ही जानाजासकता है। टाडने जिन ११ जनोंके नाम लिखे हैं कविने दशहीके नाम लिखे हैं। कविने वनवीरके नामको आजतक प्रदान नहीं किया; उसने अपने ग्रंथमें स्पष्ट लिखा है कि नृसिंहके औरससे उद्धरणका जन्म हुआ परन्तु हम कभी यह अनुमान नहीं कर सकते कि कर्नल टाड साहबने इच्छानुसार ही नृसिंहके पुत्रको वनवीर लिख दिया हो, उन्होंने जिस ग्रंथके आश्रयसे इस तालिकाको प्रकाश किया है उस ग्रन्थमें अवश्य वनवीर नाम होगा।

जयवंशके प्रणेताने पृथ्वीराजके एक मात्र पुत्र भारमल्लका वर्णन किया है। टाड साहबने पृथ्वीराजके सत्रह पुत्रोंकी कथा लिखी है, परन्तु उक्त कविने उसको नहीं लिखा। पृथ्वीराजके भारमल्लके अतिरिक्त और भी पुत्र थे. उनके अनेक प्रमाण विराजमान हैं। पृथ्वीराजने आमेरराज्यको बारह अंशोंमें विभाग करके उन बारह पुत्रोंको देदिया, इसको सभी जानते हैं, और उसीके अनुसार आमेर " बाराकोटरि " अर्थात् बारह प्रधान सामन्तोंकी सम्प्रदायमें विभक्त हैं। हमें ऐसा बोध होता है कि जयवंशकारने इस ऐतिहासिक तथ्यको इच्छानुसार ही छोड दिया था।

कर्नल टाड साहबने लिखा है कि पृथ्वीराजके दूसरे पुत्र भीमने अपने पिता पृथ्वीराजके प्राण नाश किये। जयवंशकारने इसको नहीं लिखा। उन्होंने पृथ्वीराजकी स्वाभाविक मृत्युका उल्लेख किया है, हमें ऐसा विदित होता है कि कविने राजवंशके कलंकको गुप्त रखनेके लिये ही उक्त दुःखदाई घटनाका उल्लेख नहीं किया।

राजवंशके प्रणेताने लिखा है कि भारमल्लके पुत्र। भगवत्दास थे टाड साहबने इनके नामको भगवान्दास लिखा है "परन्तु साधु टाड साहबने भगवान्दासके साथ

दिल्लीके बादशाह अकबरकी मित्रताके विषयमें जो उल्लेख किया गया है, उस विषयमें जयवंशकार तो एकबार ही मौन रहे। कविने भूलसे भी किसी स्थानमें एक पंक्तिमें भी यह नहीं लिखा कि यवन बादशाहके साथ जयपुरके महाराजकी मित्रता थी; या आत्मीयता वा करदका कोई सम्बंध था। भगवान्दासकी कन्याके साथ कुमार सलीमके विवाहका वृतान्त केवल कर्नल टाड साहबने ही नहीं वरन अन्यान्य इतिहास लेखकोंने भी लिखा है, परंतु कविने उसका कोई उल्लेख नहीं किया।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने लिखा है कि "भगवान्दासके चचाके पुत्र और उत्तराधिकारी मानसिंह थे"। परंतु जयवंशकारने लिखा है कि "मानसिंहने भगवान्दासके औरससे जन्म लिया। यहांपर केवल टाड साहबका ही भ्रम विदित होता है। टाड साहबने लिखा है, कि भगवान्दासके अन्य तीन भ्राता थे, उनके नाम सूरतसिंह, माधोसिंह और जगन्सिंहके पुत्र थे।" कविने लिखा है "कि मानसिंहके औरस कनकावती रानीके गर्भसे जगन्सिंहका जन्म हुआ।" हमें ऐसा बोध होता है कि टाड साहबने भ्रमसे ही जगन्सिंहको मानसिंहका पुत्र न लिखकर मानसिंहको जगन्सिंहका पुत्र लिख दिया था। जगन्सिंह मानसिंहके पुत्र थे इसका वृत्तान्त अनेक स्थानोंमें पाया जाता है।

जयवंश प्रणेताने लिखा है, "कि राजा भगवत्दासने अपने पुत्र मानसिंह और पौत्र जगन्सिंहके साथ भारतवर्षके अनेक देशोंके युद्धमें जयप्राप्त की। मानसिंहके समान जगत्सिंह एक महाबलवान् धनुर्धारी थे। वह पिताके साथ अनेक स्थानोंपर जय प्राप्त करके विशेष यशस्वी हुए। परन्तु अकालमें ही वह संसारसे बिदा हो गये, भगवत्दास और मानसिंह महान् शोकसागरमें निमग्न हुए, कुछ दिनोंके पीछे मानसिंह गुर्जर देशको जीतनेके लिये गये; राजा भगवान्दास उस समय संसार छोड गये। इसके पीछे मानसिंह आमेरके सिंहासन पर विराजमान हुए और अपने पोते (जगत्सिंहके पुत्र) महन्सिंहके साथ अनेक देशोंको जीतनेके लिये गये। दुर्भाग्यसे महत्सिंहकी मृत्यु अकालमें हो गई, इस प्रबल शोकसे थोडे दिनोंके पीछे ही मानसिंहने भी अपने प्राण त्याग किये।" टाड साहबकी अपेक्षा कविकी यह उक्ति सत्यतासे पूर्ण विदित होती है।

अंतमें टाड साहबने लिखा है, कि जगन्सिंहके पोते जयसिंह आमेरके सिंहासनपर विराजमान हुए। कविने भी इस बातको माना है, उनके पुत्र रामसिंह आमेरके राजछत्रके नीचे शोभयमान हुए, यह दोनों ग्रंथोंसे प्रकाशित होता है। टाड साहबने लिखा है कि "रामसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र विशन वा विष्णुसिंह आमेरके सिंहासनपर प्रतिष्ठित हुए।" परन्तु जयवंशकारने लिखा है कि रामसिंहके पुत्र कृष्णसिंह थे। उनका वर्ण काला था, इसीसे उनका नाम कृष्णसिंह रक्खा गया। रामसिंहने अपने पुत्र

---

(१) जयपुरके इतिहासकी टिप्पणी १ अध्यायकी देखो।

(२) टाड साहबने लिखा है कि महासिंहके पुत्र भावसिंह थे, परन्तु कविने भावसिंहके नामका उल्लेख नहीं किया।

कृष्णसिंहके साथ दक्षिणके युद्धमें गमन किया । रणभूमिमें रामसिंह शत्रुओंके आघातसे घायल हुए, कृष्णसिंहने आघात करनेवालेकी ओरको महाक्रोधित हो अस्त्रोंकी वर्षा की। इसी कारणसे शत्रुओंके आघातसे कृष्णसिंह रणभूमिमें मारे गये । उन्हीं कृष्ण-सिंहके पुत्र विष्णुसिंह हैं। रामसिंहके प्राण त्याग करने पर उनके पोते उक्त विष्णुसिंह आमेरके महाराजा हुए। " विष्णुसिंहके पुत्र जयसिंह और विजयसिंह थे । यह दोनों ग्रंथोंमें प्रगट हैं। टाड साहबने लिखा है कि जयसिंह अश्वमेध यज्ञ करनेके लिये गये थे, परंतु कवि सीतारामने लिखा है कि उन्होंने महा समारोहके साथ अश्वमेध यज्ञको पूर्ण किया था इसके उपलक्षमें महाराजने बहुतसा धन खर्च किया था।

कर्नल टाड साहबने लिखा है कि जयसिंहके बडे पुत्र ईश्वरीसिंहने शत्रुओंके भयसे विषपान करके आत्महत्या की, परन्तु कवि लिखते हैं कि ईश्वरीसिंहने मल्लारी देशको जीतकर वहाँके महाराजको पैरोंसे प्रहार किया, उसी मल्लारीपतिने उनको विष देकर मारडाला। कवि सीतारामने अपने काव्यमें सब प्रकारसे जयपुर राजवंशकी हीनताकी कथाको प्रकाशित नहीं किया था, इसी कारणसे उसने ईश्वरीसिंहके गौरवकी रक्षाके लिये उक्त विवरणको प्रकाशित न किया हो ऐसा अनुमान करना असंगत नहीं है। जयपुरका सिंहासन लेकर ईश्वरीसिंहके साथ माधवसिंहका प्रबल विवाद और संग्राम हुआ था; कविने उसका भी कोई उल्लेख नहीं किया ।

ईश्वरीसिंहके पीछे माधवसिंह जयपुरके सिंहासनपर विराजमान हुए,यह दोनों ग्रंथों-में प्रकाशित है, माधवसिंहके दोनों पुत्र पृथ्वीसिंह और प्रतापसिंह हुए । कविने लिखा है कि पृथ्वीसिंहने एक वर्ष ही राज्य करके शरीर त्याग दिया, तब प्रतापसिंह राजा हुए । प्रतापसिंहके पुत्र जगत्सिंहके विषयमें कविने कुछ भी नहीं लिखा है । अंग्रेजी गवर्न-मेण्टके साथ जगत्सिंहका जो संधिबन्धन हुआ है कविने उसका उल्लेख नहीं किया । जगत्सिंहके पुत्र जयसिंह थे कवि सीतारामने इन्हींकी आज्ञासे " जयवंशक " नामक एक महा काव्यको निर्माण किया है ।

तीसरे जयसिंहके पुत्र रामसिंह और उनके दत्तक पुत्र वर्तमान महाराज माधोसिंह हैं ।

जयपुरका इतिहास समाप्त ।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बम्बई.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

बूँदीराज्यका इतिहास.

H. H. Maharao Raja Sir Raghabir Singh Bahadur,
G. C. I. E., K. C. S. I.
of Bundi.

बून्दी।

(१) सुरजन, १५३३.	(५) चतुरसाल १६३१.	(१०) अजीतसिंह. १७७१.
(२) भोज, १५८८.	(६) भाऊसिंह. १६५७.	(११) बिशनसिंह. १७७३.
(३) रतन, १६०७.	(७) अनुरायसिंह, १६८२.	(१२) रामसिंह, १८२१
(४) गोपीनाथ. १६१४.	(८) बुद्धसिंह.(ता० नहीं मालुम)	(१३) महारावराजा रघुवीरसिंह.
	(९) उम्मेदसिंह.१७४४.मरे१८०४.	१८८९.

श्रीः।

राजस्थानका इतिहास।

दूसरा भाग २.

बूँदीराज्यका इतिहास.

हाडौतीप्रदेश–अग्निकुलकी उत्पत्तिका वृत्तान्त–आबूपर्व्वत–चौहान जातिकी महकावती (मेकावती) गोलकुण्डा और कोंकनदेशकी प्राप्ति–अजमेरकी प्रतिष्ठा–जयपाल–माणिकराय–प्रथम बार यवनोंका आक्रमण–अजमेरपर अधिकार–समरके लवणह्रदकी उत्पत्तिका विवरण–माणिकरायका वंश–चौहानोंका राजपूतानेमें प्रवेश–मुसल्मानोंके साथ युद्ध–अजमेरका वीलनदेव–गोगाकी वीरता–मैडीका चौहान–महमूदका उभयकी हत्या करना–उनके अधीन राजाओंका सेना सहित इकट्ठे होना–उनका समय निश्चय करना–हाडा जातिकी उत्पत्ति–अनुराजका आसेर देशको प्राप्त करना–उनका राज्य नाश–अस्थिपालका आसेरदेशको प्राप्त करना–रावहमीर–रावचन्द–अलाउद्दीनका आसेर पर अधिकार–वहां निवास–उनके पुत्र कोल्हनका पटार देशपर अधिकार करना–राववागा–उनका मयनाल पर अधिकार करना–बबावदाके किलेका बनवाना–दिग्विजय–रावदेवा–बूंदीकी राजधानीकी स्थापना।

राजस्थानके जो अंश हाडौती नामसे प्रसिद्ध है, उन अंशोंमें दो राज्य स्थापित हैं एकका नाम बूँदी और दूसरेका नाम कोटा है। बूँदी कोटा पहिले एक ही राज्य था, तीनसौ वर्षसे इसके दो भाग हो गये हैं। चम्बल नदी इन दोनों राज्योंके बीचमें बहती है; इस कारण इस तरंगिनीने दोनों राज्योंकी सीमा नियत कर दी है। हाडा वंशीय राजपूत इस देशके निवासी हैं, उन्हींके नामके अनुसार इस देशका नाम हाडौती हुआ है। इसी हाडौती देशमें, बूँदीराज्यके इतिहासके लिखनेको हम आगे बढे हैं।

चौहान राजपूतोंकी चौबीस शाखाओंमें यह हाडा नामकी शाखा ही श्रेष्ठ गिनी गई है। अजमेरके अधीश्वर माणिकरायके पुत्र अनुराज इस शाखाके आदिपुरुष हैं। माणिकरायने संवत् ७४१ सन् ६८५ ई. में सबसे पहिले भारतीय राजाओंके साथ भारतके विजयकी इच्छासे मुसल्मानोंके साथ महायुद्ध किया था।

इतिहासलेखक कर्नल टाड साहबने चौहान जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें विख्यात कवि चन्दका आश्रय लिया है। चंदकविने अपनी अमृतमयी लेखनीसे अग्निकुलकी उत्पत्तिके संबन्धमें जो कुछ वर्णन किया है, उसकी सत्यताके संबन्धमें वर्तमान

समयमें संदेह उपस्थित होनेपर भी यहाँपर उसका वर्णन करना हमने अत्यन्त आवश्यक समझा है। चंद कवि लिख गये हैं कि "वीर तेजस्वी क्षत्री राजा अनाचार-युक्त हो परशुरामके क्रोधमें निमग्न हुए। परशुरामने इक्कीस बार पृथ्वीको क्षत्रियहीन किया, उस समय बहुतसे क्षत्रियोंने अपने जीवनकी रक्षाके लिये अपनेको क्षत्री न बताकर उसके बदलेमें कवि जातिका परिचय दिया था, और बहुतोंने स्त्रियोंका स्वरूप धारण कर परशुरामके हाथसे छुटकारा पाया। इस प्रकारसे बहुतसे क्षत्रियोंने अपने प्राणोंकी रक्षा की। परशुरामने समस्त राज्य ब्राह्मणोंको शासन करनेके लिये अर्पण किया। नर्मदानदीके किनारे माहेश्वर नगरके हैहय जातिके राजा सहस्त्रार्जुनने परशुरामके पिताका संहार करके शेष युद्ध उपस्थित किया था।

'ब्राह्मणोंके प्रधान अस्त्रोंमें केवल अभिशाप और आशीर्वाद ही सबसे प्रधान। राज्यपालन, शान्तिरक्षा और दुष्टोंको दमन करनेमें किसीकी भी सामर्थ्य न थी, इसी कारणसे राज्यमें शीघ्र ही अराजकता विराजमान हो गई। अशान्तिरूपी भयंकर अग्नि प्रज्वलित हो गई। राज्यमें सर्वत्र मूर्खता और अधार्मिकता फैल गई, पवित्र धर्मग्रन्थोंको मनुष्य पापमार्गसे दलन करने लगे, और तस्कर असुर चोर तथा दानव मनुष्योंके ऊपर घोर अत्याचार करने लगे। आयुध–गुरु महर्षि विश्वामित्रने उस अशान्ति और अत्याचारोंको देखकर दुःखित हो, मनही मन विचार किया कि फिर क्षत्रियोंकी सृष्टि करना कर्तव्य है। आबू शिखरके जिस स्थान पर ऋषि मुनि निवास करते थे और तप योग यज्ञ तथा योगके साधनसे जिस शिखरको पवित्र किया था: महर्षि विश्वामित्रने उस स्थानमें जाकर क्षत्रियोंकी सृष्टिके लिये यज्ञ करनेका विचार किया। पीछे समस्त ऋषि मुनि क्षीरोद समुद्रके किनारे जाकर सृष्टिकर्ताकी आराधनामें नियुक्त हुए। सृष्टिकर्ताने उनको फिर वीर क्षत्रिय जातिकी सृष्टि करनेकी आज्ञा दी। ऋषि मुनि उस आज्ञाको पाते ही इन्द्र, ब्रह्मा, रुद्र, विष्णु और अन्यान्य देवताओंके साथ आबू शिखरपर आये। शीघ्र ही यज्ञ प्रारंभ होगया। पवित्र गंगाजीके जलसे यज्ञकुंडको पवित्र कर यज्ञकार्य होनेके पीछे देवताओंने आपसमें सलाह की। देवराज इन्द्रने नवीन दूबसे एक पुतली बनाकर उसकी प्राणप्रतिष्ठा कर उसे उस प्रज्वलित यज्ञकुंडमें डाल दिया। इसके पीछे संजीवन मंत्रका पाठ करते ही उस कुंडमेंसे दाहिने हाथमें गदा धारण किये एक वीर पुरुष "मारमार" शब्द करता बाहर निकला। उस वीर पुरुषका नाम प्रमार रक्खा गया, और देवताओंने उसको आबू धार, तथा उज्जयिनी देश शासन करनेके लिये दिये"।

(१) कर्नल टाड साहबने इस स्थानपर लिखा, "कि चिन्दने जिन चोर और तस्कर जातियोंका उल्लेख किया है, यह उत्तर पश्चिमाचलकी भारतकी सीदियन जाति होगी। यह ब्राह्मणोंके ऊपर किसी प्रकारकी दया नहीं करती थी"। परंतु हमारा ऐसा अनुमान है कि कविने इस स्थानपर भारतवर्षका बन्यमीना इत्यादि जातियोंपर ही लक्ष्य किया है। त्रेता युगमें परशुरामके समयमें भारतमें "सीदियन" जाति थी, इसका प्रमाण शास्त्रमें नही पाया जाता।

"इसके पीछे सभी मिल कर पितामह ब्रह्माजीसे अपने अंशसे एक क्षत्रियकी सृष्टि करनेकी प्रार्थना करने लगे। तब पद्मासन ब्रह्माजीने सभीके अनुरोधसे दूर्वाकी एक पुतली बनाकर अग्निकुंडमें डाली। पुतली कुंडमें डालते ही उसमेंसे एक वीर पुरुष निकला। इसके एक हाथमें खड्ग और दूसरे हाथमें वेद शोभायमान थे। उसका नाम चालुक वा सोलंकी रक्खा गया। अनलपुर पत्तन देशका उसको राज्य मिला"।

"देवादिदेव रुद्रने उसके पीछे और भी एक वीर पुरुषकी सृष्टि की। देवादिदेव महादेवने दूर्वादलकी बनीहुई पुतलीको पवित्र गंगाजलमें स्नान कराकर यज्ञकुण्डमें डाल दिया, और आप मंत्र पढने लगे, मन्त्रके पढते ही धनुष बाण हाथमें लिये कृष्णवर्ण भयंकर मूर्तिका एक वीर पुरुष सम्मुख आया। असुरोंके साथ युद्ध करनेको जानेके समय उस वीर पुरुषका पदस्थल न हुआ इसीसे उसका नाम प्रतिहार रक्खा गया, उसको देवतारूपसे नगर तोरणकी रक्षाका भार मिला, और मरुस्थलीके नौ देश उसको दिये गये"।

"सबसे पीछे विष्णु भगवानने चौथे वीरको उत्पन्न किया, विष्णु भगवानके दूर्वादलकी बनी हुई पुतलीको अग्निकुंडमें मंत्र उच्चारण कर डालते ही उनके अवयव स्वरूप चार हाथ युक्त अस्त्रधारी एक वीर पुरुषने जन्म लिया। चार हाथ होनेसे उसका नाम चतुर्भुज चौहान हुआ। समस्त देवताओंने आशीर्वाद देकर उसको मैहकावती नगरीका राज्य दिया। इस समय जो स्थान गढामंडला नामसे विख्यात है द्वापरयुगमें वह मैहकावती नामसे प्रसिद्ध था"।

चंदकवि इसके पीछे लिखते हैं कि "जिस समय यज्ञकार्य समाप्त हो रहा था उस समय असुर और दानव उसकी दृढ दृष्टिसे देख रहे थे, उनके दो नेता अग्निकुंडके बहुत धोरे खडे हुए थे, परन्तु यज्ञकार्यके समाप्त होते ही क्षत्रियोंकी सृष्टिका कार्य भी समाप्त हो गया। वह चारों वीरक्षत्री उन दानव और असुरोंके साथ युद्ध करनेके लिये भेजे गये। दोनों ओरसे भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गई, परन्तु जैसे २ वह क्षत्रिय वीर अस्त्राघातसे असुरोंको मारते जाते थे वैसे २ उनको मृतकोंके रुधिरसे फिर नवीन असुर जन्म लेकर युद्ध करते जाते थे। इस प्रकार किसी भाँति भी दानवोंकी सेनाकी घटती नहीं हुई। अन्तमें उस नवीन सृष्टिके चारों वीरोंकी कुलदेवी अनुचरोंके साथ रणक्षेत्रमें जाकर उन निहत असुरोंका रक्तपान करने लगी। इस कारणसे उस रुधिरसे उत्पन्न होनेवाले असुरोंकी संख्या एक बार ही समाप्त हो गई"।

उन चारों देवियोंके नाम इस भांति चन्दकविके ग्रन्थमें लिखे गये हैं—

चौहानोंकी कुलदेवी ... ... आशा पूरा।

पडिहारोंकी कुलदेवी ... ... गाजनमाता।

सोलंकियोंकी कुलदेवी ... ... खींवजमाता।

प्रमारोंकी कुलदेवी ... ...सिचियायमाता।

इसके पीछे कवि लिखते हैं कि " समस्त दैत्योंके निहत होते ही जयध्वनिसे आकाशमंडल कम्पायमान होने लगा। स्वर्गसे देवता फूलोंकी वर्षा करने लगे, और उस जयप्राप्तिसे महा असंतुष्ट होकर देवता अपनी २ सवारी पर चढ कर रणभूमिमें जा विजयी वीरोंको धन्यवाद देने लगे "।

चौहानोंके प्रधान कविचन्द वरदाईका शेष कहना यह है कि छत्तीसकुली क्षत्रियोंमें अग्निकुल सबसे श्रेष्ठ है शेष सभी स्त्रियोंके गर्भसे उत्पन्न हैं, ब्राह्मणोंके द्वारा सृष्टि हुए चौहानोंमें गोत्रोच्चार यथा सामवेद सोमवंश माध्यंदिनी शाखा, वत्स गोत्र, पंच प्रवर जनेऊ, चन्द्रभागा नदी, भृगु निशान, अम्बिकाभवानी, बालनपुत्र, कालभैरव आबू अवलेश्वर महादेव चतुर्भुज चौहान "।

" इतिहासवेत्ता टाड साहबने चंदकविके महाकाव्यसे उक्त अंशको उद्धृत करके कहा है, कि जिस समय भारतवर्षमें सर्वत्र व्याप्त धर्म--द्रोहियोंको दमन करनेके लिये भारतकी वीर जातिकी पुनः सृष्टिकी अभिलाषासे आबूके शिखर पर देवताओंकी महा समिति हुई, उस समय हिंदूजातिका दूसरा युग हो गया था, इसके सम्बन्धमें हम किसी प्रकारका तर्क करनेकी इच्छा नहीं करते। इतिहासका अनुसरण करनेके पहिले यहां पर इसकी खोज करनी होगी कि ब्राह्मणोंके पक्षको समर्थन करनेके लिये इस नवीन जातिकी सृष्टि हुई, और हिंदूसमाजमें ग्रहण की गई, यह वीर किस जातिके थे। या तो वह लोग अवश्य ही यहाँके आदिम प्रतीत निवासी होंगे और ब्राह्मणोंने उनको फिर हिन्दूजातिमें ग्रहण किया होगा, या वह लोग विदेशी होंगे और ब्राह्मणोंने उनको बलवान् देखकर अपने धर्ममें दीक्षित कर लिया होगा। यदि यहांकी आदिम पतित जाति और विदेशियोंकी आकृतिकी तुलना की जाय तो इस प्रश्नका विचार सरलतासे हो सकता है। यहांके आदिम पतित निवासी काले शरीरके होते हैं खर्व और श्रीहीन होते हैं, अन्य पक्षमें अग्निकुली क्षत्री प्राचीन राजाओंके समान सबल सुन्दर और वीर मूर्तियुक्त थे। अतीव पूर्वकालमें सिदियोंमें जिस प्रकार वीररसका स्रोत बहता था, अग्निकुल सम्भूत क्षत्रियोंके हृदय भी उसी रसमें प्रबल हैं "। कर्नल टाड साहब उक्त मन्तव्यको प्रकाश करनेके साथ ही साथ यह सिद्धान्त कर गये है कि जब परशुरामने क्षत्रियोंको विध्वंस कर दिया तब कुछ दिनोंके लिये ब्राह्मणोंने राज्य किया था; परन्तु वह लोग अत्यन्त दुर्बल थे। इस कारण भारतवर्षके सिदियोंने

---

(१) कविचन्दने रासोमें एकमात्र गोत्रके सिवाय वेद प्रवर आदि किसीका वर्णन नहीं किया है रासोमें केवल इतना ही लिखा है।

आसापूर कहै मो नाम, पुज्जे पुत्र पौत्र धन धाम
कुलह गोत्र मुझ थप्पे नाम, अप्पो ऋद्धि अचलह ताम

किन्तु चाहुआणोंका सही शिखासूत्र इस प्रकारसे है:—वत्सगोत्र सामवेद—कौथमीशाखा—गोभिलसूत्र,--आप्रवान, जामदग्नि, च्यवन, भार्गव, और्व, पांचप्रवर—आशापूरा कुलदेवी—श्री कृष्ण कुलदेवता—चन्द्रभागा नदी,--मयूरपक्षी, वामशिखा, वामपाद—ध्वजरक्षक गरुड और आयुध खड्ग।

ब्राह्मणोंके ऊपर घोर अत्याचार किये थे। ब्राह्मणोंने उस महा विपत्तिमें पड़कर भारतासि-दियोंके एक दलको हिन्दूधर्ममें दीक्षित कर उनको राज्यशासनका भार दिया. और वही चौहान पडिहार, सोलंकी और प्रमार नामसे गिने गये।

इस समय इतिहासका ही अनुसरण करना होगा। चौहान पडिहार सोलंकी और प्रमार इन चारों अग्निकुल राजवंशोंमें चौहानोंने सबसे अधिक विस्तारित राज्य पाया था। प्रमार राजवंशका आधिपत्य सर्वत्र फैलरहा था, यह प्रवाद वाक्य आजतक विख्यात है, परन्तु चौहानोंका आधिपत्य जैसा अधिक था वह कठिनाईसे जाना जा सकता है, क्यों-कि जिस समय प्रमारवंशियोंकी गौरव गरिमा मध्याह्नकालके सूर्यके समान भारतके प्रत्येक प्रान्तमें विभासित होरही थी, उस समय चौहानोंके गौरवका सूर्य धीरे २ अस्ताच-लकी ओरको चलने लगा था।

चौहानोंके जातीय इतिहासमें देखा जाता है कि एक समय उन्होंने सबके ऊपर अतुल सामर्थ्य और प्रभुत्वका विस्तार किया था, परन्तु वह अधिक कालतक स्थाई नहीं रहा। मैहकावर्तीसे माहेश्वरीपुरीतक नर्मदाके दोनों किनारोंके उत्तर और दक्षिणमें

---

(१) हम इस बातको कह सकते हैं कर्नल टाड साहबने भ्रममें पडकर यह सिद्धान्त किया है। जब कि वर्तमान कलियुगमें हिन्दूधर्मकी शोचनीय दुर्दशा होनेपर भी कोई विधर्मी विजातीय हिन्दूधर्मको ग्रहण कर हिंदूसमाजमें युक्त होनेके लिये समर्थ नहीं हुआ; तब अत्यन्त प्राचीन समयमें हिन्दूधर्म परमपवित्ररूपसे प्रबलताके साथ भारतवर्षमें फैल रहा था, उस समय विश्वामित्र आदि ऋषि अथवा ब्राह्मणोंने भारतवर्षके बहिःस्थित भारतसिदियोंको अपने धर्ममें दीक्षित कर उनके हाथमें राज्यभार अर्पण किया हो यह कभी सम्भव नहीं हो सकता। कहीं किसी जातिके किसी मनुष्यने जगतके किसी धर्ममें प्रवेशका अधिकार प्राप्त किया हो परन्तु हिन्दूधर्ममें विजातीय किसी मनुष्यको भी प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है। यदि कहो मुसल्मान इत्यादि विजातीय मनुष्योंने वैष्णवधर्म स्वीकार किया था। परन्तु वह वैष्णवधर्मावलम्बी कोई मुसल्मान भी हिन्दू समाजमें भुक्त नहीं हो सका था। इस कारण भारतसे विताडित हुए विजातियोंको ब्राह्मणोंने हिन्दू-ओंके धर्ममें दीक्षित कर लिया होगा, यह कभी सम्भव नहीं हो सकता। और दूसरी बात यह है कि चन्दकविने जिन चार नवीन क्षत्रियश्रेणीकी उत्पत्तिका विषय वर्णन किया है यदि हम उसको सब प्रकारसे कविकी कल्पना भी मानें तो भी यह ठीक ही है कि पितामह ब्रह्माजीने प्रथम सृष्टिके समय ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य और शूद्रकी सृष्टि करनेके पीछे परिणाममें फिर किसी जातिकी सृष्टि की हो, हमने इस प्रकारका उल्लेख किसी शास्त्रमें नहीं पाया। हमें अनुमानसे भी यही विदित होता है कि परशुराम किसी प्रकारसे भी एक ही समय प्रत्येक क्षत्रियको संहार करनेमें समर्थ नहीं हुए थे। यद्यपि उन्होंने बराबर युद्धोंमें अनेक क्षत्रियोंका प्राण नाश किया था, तथापि भारतके प्रत्येक प्रान्तोंमें अनेक क्षत्रिय राजा उस समय जीवित थे इसका भी प्रमाण है, उस अंशसे भारतके असभ्य जंगली जातियोंने ब्राह्मणोंके ऊपर घोर अत्याचार कर हिंदूधर्मको विशेष हानि पहुँचाई हो और ब्राह्मणोंने जीवित बचे हुए क्षत्रियोंके वंशधरोंमेंसे चार प्रधान वीरोंको नवीन यज्ञमें दीक्षित कर चार देशोंका राज्यभार दिया हो तो इसमें क्या आश्चर्य है अथवा मन्त्रबलसे भी चार वीरोंको उत्पन्न होना तो हिंदूशास्त्रके अनुसार असंभव नहीं है"।

स्थित समस्त देशोंमें चौहानोंका आदि राज्य था । राजवंशधरोंकी संख्या प्रबल होनेसे क्रमशः समस्त द्वीपोंमें माण्डू आसेर गोलकुण्डा और कोकनतक तथा उत्तरमें गंगाजीके किनारेतक उनके राज्यकी सीमा फैल रही थी । कविश्रेष्ठ चन्दचौहानोंके राज्यके संबन्धमें लिख गये हैं कि "राजधानी मैहकावतीके ५२ किलोंमें चौहानराजके अनुकूल शपथ सुनाई जाती थी।चौहानोंने अपने बाहूबलसे ठट्टा, लाहौर, मुलतान, पेशावर आदि देशोंपर अधिकार कर अन्तमें भारतके शिखरतक अपना अधिकार कर लिया था । विधर्मी असुर चौहानराजके भयसे भाग गये थे । दिल्ली और काबुलमें चौहानराजका शासन स्थापित था, तथा उनकी जय विघोषित होती थी । चौहानराजने ही नैपालका राज्य माल्हनको प्रदान किया था । देवताओंसे वर और आशीर्वादको पाकर चौहानराज अपनी राजधानी मैहकावतीको लौट आये ।" और माल्हनको साथ न लाये ।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि यह तो पहिले ही जाना गया है कि गढमण्डलाका प्राचीन नाम मैहकावती था । उस मैहाकावतीके राजा बहुत कालसे "पाल"उपाधिधारी थे । ऐसा विख्यात है कि वह लोग पशुओंका पालन करते थे इसीसे इनका यह उपाधि दी गई थी । अहीर-लोगोंने एक समय समस्त मध्य भारतपर अधिकार किया था वे परिणाममें केवल एकमात्र"अहीरवाडा"अपना चिह्न छोड गये हैं। यह अहीरशब्द पाल शब्दके अन्य अर्थका बोधक है, और यह अहीरजाति उक्त जातिकी एक शाखामात्र है । पाल अथवा पालियोंके द्वारा जो समस्त प्राचीन नगर प्रतिष्ठित हुए थे,उनमें भेलसा, भोजपुर, दाप, भूपाल, आइरण, गार्सपुर यह कितने ही प्रधान हैं ।

---

(१) कर्नल टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "मुसल्मान इतिहासवेत्ताने इस घटनाके सत्यताको स्वीकार किया है । संवत् ७४६ में मुसल्मान जिस समय प्रथम भारतवर्षपर अधिकार करनेको आये थे उस समय लाहौर और अजमेरके हिन्दू राजा इसी चौहानजातिके थे । वह अपने प्रबल पराक्रमके साथ यवनोंके विरुद्ध युद्ध करनेको सनद्ध हुए थे । यह हम निस्संदेह जानते हैं कि उस समय अजमेर चौहानोंकी प्रधान राजधानी थी" ।

(२) टाड साहब लिखते है, कि "माल्हन चौहानोंकी एक शाखा है । अलिकजेंडरके भारतपर आक्रमण करनेके समय समुद्रके किनारे मल्लारी नामके जिस राजाने उसपर आक्रमण किया था, ऐसा बोध होता है कि वास्तवमें वही माल्हन होंगे । इस शाखाका इस समय लोप हो गया है । पांच शताब्दी पहिले इसके अस्तित्वको कोई नहीं जानता था । हाडा जातीय बूँदीके एक अधीश्वरने एक माल्हन स्त्रीका पाणिग्रहण किया । परन्तु अन्तमें एक चतुर भाटने प्राचीन ग्रंथसे प्रमाणित किया कि उक्त माल्हन स्त्री उसकी स्वगोत्रिया थी । तब बून्दीके महाराजने उस स्त्रीको त्याग दिया था ।

(३) टाड महोदयने अपनी टीकामें लिखा है कि कितने ही नगर, विशेष करके दीय भोजपुर और भेलसामें बहुतसे प्राचीन स्मृतिचिह्न विराजमान थे; बीस वर्षके पहिले हम भ्रमण करनेके लिये आईरन नगरमें गये थे; उस नगरीमें दो नदियोंके मुहानोंपर एक बडा भारी खम्भ स्थित देखा । यह तीस फुट ऊँचा था, इसके ऊपर एक मनुष्यकी मूर्ति विराजमान थी । उस मूर्तिके शिरपर मुकुट शोभायमान था; और स्तम्भके नीचे एक बैलकी आकृति खुदी हुई थी;-

"अजयपाल नामक मैहकावतोंके एक राजवंशधरने अजमेर राज्य स्थापन कर वहाँ तारागढ नामवाला अभेद्य किला बनाया। प्राचीन राजाओंमें अजयपालका नाम आजतक भलीभाँतिसे प्रसिद्ध है, वह राजा चक्रवर्ती अर्थात् बहुत राजाओंके अधीश्वर थे, यह भी इसी सूत्रसे जाना जाता है, वह किस समय राज्यशासन करते थे, उसका निश्चय करना कठिन है।

"पालीभाषामें लिखे हुए ताँबेके अनुशासनपत्रोंमें और पत्थरके स्तंभोंपर खुदी हुई अनुलिपियां पाई जाती हैं परन्तु वह भाषा जबतक हमारे हस्तगत न हो तबतक उक्त समयका निश्चय करना कोई साधारण बात नहीं है। मैहकावतोंसे कुमार पृथ्वीपहाड अजमेरमें आये यद्यपि यह निश्चय नहीं कहा जा सकता कि वह किस कारणसे आये थे परन्तु ऐसा जाना जाता है कि राजाके पुत्र नहीं था इसीसे वह पृथ्वीपहाड अजमेरमें आये थे। उनकी एकमात्र स्त्रीके गर्भसे (इस समय इस जातिमें अनेक विवाह प्रचलित नहीं थे) चौवीस पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेंसे एकके वंशधर माणिकराय संवत् ७४१सन्६८५ई० में अजमेर और सांभरके अधीश्वर हुए"।

कर्नल टाड साहबने इसके पीछे लिखा है, कि माणिकरायके समयसे चौहान जातिके इतिहासने घोर अंधकारसे मुक्ति प्राप्त की। इसी समय संवत् ७४१ हिजरी सन्६३ में सबसे पहिले मुसल्मानोंने राजपूतानेमें सेना सहित प्रवेश किया था। अजमेरके सिंहासनपर इस समय दुर्लभ वा दूलेराय विराजमान थे। यवनोंके साथ युद्ध करके अजमेरपति दुर्लभ मारेगये। इनका इकलौता सात वर्षका अवस्थाका पुत्र किलेकी छत्तपर खेल रहा था, वह भी शत्रुओंके आघातसे अकालमें ही मृत्युको प्राप्त हुआ। दुर्लभरायने रोशनअली एक मुसल्मान धर्मप्रचारकके प्रति घोर अत्याचार किये थे, इसीसे यवनोंने सिन्धदेशसे अजमेरमें जाकर यह युद्ध उपस्थित किया और इसी कारणसे मुसल्मानोंमें यह धर्मयुद्ध कहकर विदित हुआ है। ऐसा भी प्रसिद्ध है कि उक्त रोशनअलीके अंगूठेको काटा गया था, वह अंगूठा देकर मक्केको चला गया, और राजपूत पौत्तालियोंके विरुद्धमें इस अत्याचारका बदला चाहा शीघ्र ही यवनोंकी सेना अश्व व्यवसायीरूपसे भेष बदलकर अजमेरमें आई। उसने दुर्लभराय और उनके पुत्रोंका प्राण नाश कर गढबीटली और महलों पर अधिकार कर लिया।" कर्नल टाड साहबने कहा है कि "यद्यपि

—= उसी समय मिस्टर कोलब्रुकके पास हमने उसकी प्रतिमूर्तिको भेज दिया परन्तु इस समय हमारे पास उसकी कोई अनुलिपि नहीं है"

(१) कर्नल टाड साहबने टीकामें लिखा है कि "यह स्थान अन्यरूपसे अजयमेर अर्थात् अजेयशिखर और अजयगढ अर्थात् अजेयदुर्ग नामसे विदित हुआ है। परन्तु ऐसा विख्यात है कि राजपूतानेके प्रवेशके द्वारस्वरूप इस स्थान पर युवक चौहान-राज अजयपाल निवास करते थे इसीसे इसका नाम अजमेर हुआ।" परन्तु देशियोंका यह विचार है कि पुराणोक्त विख्यात राजा अजमेरसे इसका नाम अजमीढ हुआ और इस समय उसीका अपभ्रंश अजमेर हुआ है।

यह समर सम्बन्धी प्रवाद बालककी उक्तिके समान जाना जाता है, परन्तु दूसरी प्रकृत सत्यताके द्वारा यह घटना प्रमाणित हुई है। खलीफा उमरने ठीक उसी समय सिन्धु-देशमें एक सेना भेजी थी। उस सेनादलके नेता अतुलआस प्राचीन राजधानी आलोरपर अधिकार करनेके समय मारे गये; ऐसा जाना जाता है कि उस सेनादलने स्वजातीय धर्म प्रचारकके उक्त अपमानसे महाक्रोधित और धर्मके नामसे उत्तेजित होकर मरुक्षेत्रमें जाकर अपमानकारी राजपूतोंपर आक्रमण किया था"।

जिस कारण वा जिस उपायसे अजमेरके अधिकारी दुर्लभराय मारे गये, और अजमेर छीना गया, वह घटना चौहानोंके हृदयपटपर भलीभाँतिसे अंकित हो गई। चौहान उक्त समरके स्मृति-चिह्न स्वरूप दुर्लभरायके मृतक पुत्र लौठको आजतक देवताके समान पूजा करते हैं। अधिक क्या कहें लौठ अपने पैरमें जिन घूंघरूओंको पहिने हुए था चौहान उन्हींकी देवालंकाररूपसे पूजा करते हैं, और उन्ही लौठके सम्मानके लिये वह अपने २ बालकोंके पैरोंमें और घूंघरू नही पहिनाते।

कविश्रेष्ठ चंदकवि लिख गये हैं कि "चौहान जातीय दुर्लभरायके उत्तराधिकारी लौठदेव, शिवकी इच्छानुसार ज्येष्ठ मासकी बारहवी तिथि सोमवारके दिन स्वर्गवासी हुए"।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने फिर लिखा है कि चौहानोंकी स्त्रियाँ आजतक जिन लौठदेवकी पूजा करती हैं उन्हीं लौठदेवके चाचा माणिकराय यवनोंके अजमेर पर अधिकार करनेसे, संवत् ७४१ में स्वर्गवासी हुए थे। माणिकराय उस विपत्तिमें पडकर देवीके वरसे निर्भय होगये, राजपूत कविने यहाँपर इस प्रकार वर्णन किया है, कि माणिकराय निर्दयी शत्रुओंके हाथसे प्राणरक्षा करनेके लिये भाग गये। उस समय शाकम्भरी देवीने दर्शन देकर माणिकरायसे कहा कि हे वत्स! मैंने तुमको यहाँपर दर्शन दिया, तुम इस स्थानपर अपना राज्य स्थापन करो, आज तुम घोडे पर सवार होकर जितनी दूरतक जासकोगे उतनी ही दूरतक तुम्हारे राज्यकी सीमाका विस्तार

(१) पृथ्वीराज रासोमें इस बातका कहीं भी कोई जिक्र नहीं आया। कहीं अन्यत्र कविचंदने इस विषयमें कुछ लिखा हो तो कह नही सकते। मीर रोशन अलीके कारण मुसलमान और चौहानोंके युद्धके विषयमे मीरा समय नामसे एक पद्य पुस्तक और भी है जिसे महाकवि चदवरदाईकृत पृथ्वीराजरासोका एक अंश कहा जाता है क्योंकि उसमें इस घटनाका होना पृथ्वीराजके समयमे वर्णन किया गया है परन्तु यह किसी अन्य कविकी कपोलकल्पना मालूम होती है क्योंकि कन्नोज समयमें उसी घटनाको पृथ्वीराजके परपिताके समयमें होना बतलाया गया है।

(२) राजपूत कविकी निम्नलिखित कवितासे प्रमाणित होता है कि माणिकराय वास्तवमें संवत् ७४१ में सांभरको गये थे।

(३) बूंदीराज्यवंशावलीमें लिखा है कि देवीने यह वरदान दिया था कि घोडेपर चढकर तुम जितनी पृथ्वीकी परिक्रमा कर आवोगे वह सब चांदीकी हो जायगी परन्तु दुर्भाग्यवश--

होगा, परन्तु जबतक तुम यहाँ न लौट आओ तबतक घोडेपर चढकर जानेके समय कभी पीछे फिर कर न देखना'' । ''माणिकरायने अपने घोडेको अधिक बलशाली और बहुत दूरतक जानेमें समर्थ देखकर देवीकी आज्ञानुसार शीघ्रतासे भ्रमण करना प्रारम्भ किया । कुछ ही दूर चलनेके पीछे वह देवीकी आज्ञाको भूल गये, जैसे ही उन्होंने पीछे फिरकर देखा कि वैसे ही इनको महा आश्चर्य हुआ कि समस्त प्रदेश ऊसर हो गया है । रजवाडेके विख्यात लवणहृदकी उत्पत्तिका यही कारण है । माणिकरायने देवीकी आज्ञानुसार उक्त हृदका नाम शाकम्भरी हृद रक्खा, और उस हृदके निकट ही एक छोटेसे द्वीपमें देवीकी प्रतिष्ठा की । वह प्रतिमा आजतक वहाँ विराजमान है । प्रतिमाका शाकम्भरी नाम बिगडते २ इस समय सांभर हो गया है''।

माणिकराय जिनको हम उत्तर देशके चौहानोंके आदिपुरुष मानते हैं, उन्होंने समयपर फिर अजमेरपर अधिकार करलिया, उनके अनेक सन्तान उत्पन्न हुई । उनके वंशधरोंने पश्चिम रजवाडेमें फैलकर बहुतसी सम्प्रदायोंकी सृष्टि की है, अधिक क्या कहैं सिन्धुतक एक २ सम्प्रदायका विस्तार हो गया है । खीची, हाडा, मोयल, निरवान, भदौरिया, भूरेचा, धनेरिया (धंधेरिया) और बागडेचा इत्यादि समस्त सम्प्रदाय इन्हीं माणिकरायसे उत्पन्न हुए हैं । खीची सम्प्रदायने बहुदूरवर्ती दोआब; नामक स्थानमें जो सर्वसाधारणमें सिन्धु सागर नामसे विख्यात है, वहाँ जाकर बास किया, इस देशकी भूमिका परिमाण वेतवासे लेकर सिन्धुतक ६८ कोस परिमित है और इनकी राजधानीका नाम खीचीपुर पाटन था । हाडा सम्प्रदायमें हरियानादेशके मध्यस्थ असी वा हांसी देशको जीतकर वहाँ निवास किया, और एक सम्प्रदाय गोवाल कुंड जो इस समय गोलकुंडा नामसे विदित है वहाँ गई, और अंतमें वहाँसे चलकर आसेर नामक स्थानपर अधिकार करलिया । मोयलोंको नागौरके चारों ओरके देश मिले । भदोरियोंको चम्बलके किनारेका एक देश प्राप्त हुआ । वह देश उन्हींके नामके अनुसार भदावर नामसे विदित है, और आजतक वह देश उन्हीके अधीनमें है । धुंधेरियोंने शाहाबाद

—माणिकरायने देवीकी आज्ञा भंग करके जो पीछेको देखा तो चांदीके स्थानमे सारी भूमि नमककी हो गई थी ।

(१) संवत् सातसो एकतालिस, मालौत वाली वेश । सॉभर आयो तुतिसरस, माणिकराय नरेश ॥ टाड साहबने अपने टीकामें लिखा है " कि दिल्लीमें फीरोजशाहाके मकानके निकट इस वंशके एक राजाका स्मृतिस्तंभ है. उसके गात्रमे शाकम्भरी शब्द खुदा हुआ है । सरविलियम जोन्स, मि० कोलब्रुक और कर्नल विलफोर्डने उसमे कितने ही भ्रान्त अनुमान किये हैं " ।

(२) वंशभास्करके आधारपर लिखित बूँदीराज्य वंशावलीमें लिखा है कि चाहुआणवंशके आदि पुरुषसे १३३ वीं पीढीमें माणिकरायजीका जन्म हुआ । उनके १० पुत्र थे । तीसरे हरिसिंहजीने सिन्धुदेश जीत कर वहा राज्य किया, और उनकी संतानके लोग धुन्धेरिया चाहुआण कहलाये । परन्तु आजकल धुंधेरिये चहुआण अधिकांश बुन्देलखण्ड और चंबलके किनारे मालवेमें ही अधिक पाये जाते है । बुन्देलखण्डके धुंधेरिये धंधेर नामसे प्रसिद्ध है और उनका व्यवहार बुन्देलोंमें है (पर यह भी तो होसकता है कि सिन्ध पर मुसल्मानी आक्रमण होनेके समय ही ये लोग वहांसे भगाकर शाहाबादमें आ रहे हों)

नामक स्थानमें जाकर निवास किया, परन्तु समयके फेरसे वह देश कोटेकी हाडा सम्प्रदायके हस्तगत होगया, और एक सम्प्रदायने नारोलमें निवास किया, परन्तु उनका चौहान नाम कभी भी परिवर्तित नहीं हुआ।

टाड साहब लिखते हैं कि, इस वंशके बहुतसे वीर पुरुष मरुक्षेत्रके अनेक स्थानोंमें फैल गये थे। अनेक स्थानोंमें उन्होंने अपने २ बाहुबलसे देशोंपर अधिकार करनेके साथही साथ स्वाधीनता सम्भोग की थी, और बहुतसे अपनी अपेक्षा बलवान् स्वजातियोंके अधीनके देशोंको शासन करनेमें नियुक्त हुए। उनका इतिहास विशेष प्रयोजनीय होनेपर भी यहाँ उसका प्रकाश करना अप्रासंगिक विचारा गया। जागा ग्रन्थमें माणिकरायसे वीसलदेव तक ग्यारह राजाओंके नाम लिखे हैं। उन ग्यारहोंमेंसे हर्षराजके विषयका उल्लेख करनेका इस स्थानपर विशेष प्रयोजन है, कारण कि उक्त जागा ग्रन्थमें तथा हमीररासा ग्रंथमें हर्षराजके विशेष बल विक्रमकी कहानी ऊंची प्रशंसाके साथ वर्णन की गई है। वीरश्रेष्ठ हर्षराजका आधिपत्य अरबलीके शिखरसे आबूकेशिखर तक तथा पूर्वमें चम्बलतक विस्तारित था। उन्होंने संवत् ८१२ से ८२७ तक हिजरी १३८ से १५३ तक राज्यशासन किया। यह रणभूमिमें शत्रुओंका संहार करके "अरिमर्दनकी उपाधि प्राप्त कर अन्तमें रणभूमिमें ही मारे गये। तवारीख फरिस्तामें लिखा है कि सन् १४३ हिजरीमें मुसल्मानोंकी संख्या अधिकतासे बढ गई थी। उन्होंने पर्वतोंपरसे उतर कर किरमान, पेशावर और २ भी आसपासके सभी देशोंपर अपना अधिकार कर लिया। अजमेरके राजाके स्ववंशीय लाहौरके राजाने उक्त अफगानोंके विरुद्धमें

---

(१) कर्नल टाड साहबने टीकामें लिखा है, कि नाडोल एक समय अत्यन्त समृद्धिशाली देश था, स्थानीय इतिहास और उक्त देशकी तांबेकी अनुशासन पत्रावलीसे इसका प्रमाण मिला है। आठवीं शताब्दीमें उक्त राज्यकी प्रतिष्ठाके समयसे बारहवीं शताब्दीतक उस देशके पतन समयके मध्यमे वहांके सिंहासन पर संवत् १०३९ सन् ९८३ ईस्वी मे राव लाखनसी विराजमान थे, उन्होंने नहरवालाके अधीश्वरके साथ घोर विक्रम प्रकाश करके युद्ध किया। निम्नलिखित कविता उस भावको प्रकाश करती है।

संवत् दश सो उनचालीस, बरइखोता पाटन।
दानचौहान अगावी, मेवाडदानी दण्डभरी॥
तिसवार राव लक्ष्मण थप्पी, जो आरंभे सो करि।

इसका अर्थ यह है कि संवत् १०३९ मे पाटन नगरके शेष तोरनद्वारमे चोहानराजने वाणिज्य शुल्क संग्रह किया और मेवाडपतिसे भी उन्होंने कर ग्रहण किया। उनके मनमें जो अभिलाषा होती उसको पूर्ण करनेमें वह समर्थ होते।

सुब्बुकतगीन और उसके पुत्र महमूदने लक्ष्मणके शासनकालमे नाडोलको आक्रमण करके उसे लूटा और किलेको विध्वंस कर दिया, किन्तु समयपर नाडोलराजने फिर अपने लुप्त प्रतापको संग्रह कर लिया। तेरहवीं शताब्दीमे इस वंशकी बहुतसी सेना अलाउद्दीनके साथ समर करके नष्ट हुई थी, शहाबुद्दीन जिस समय भारत जय करता था, उस समय नाडोलपति भी कर देकर उसके अधीन हुए।

अपने भ्राताको युद्ध करनेके लिये भेजा, उस राजभ्राताके साथ काबुलकी खिलजी और गौरी जातिने उसके साथ मिलकर युद्ध किया पर पीछे उनको मुसलमान धर्म स्वीकार करना पडा। इतिहासवेत्ता लिखते हैं कि पाँच महीनेके बीचमें सात युद्ध हुए। इसीसे राजपूतगण एकबार ही परास्त होकर भाग गये। परन्तु शीतकालके व्यतीत होते ही राजपूत फिर नवीन सेनादलके साथ पेशावरके मध्यस्थानोंमें आपहुँचे। फिर भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गई। उस युद्धमें कभी तो राजपूत विजयी होकर मुसल्मानोंको भगाकर कोहिस्थानतक अधिकार करलेते, और किसी समय मुसलमान नवीन सेनाका संग्रह कर बाणोंके आघातसे उनको फिर भगा देते थे"।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं कि "अजमेरके अधीश्वर स्वयं उन दूरवर्ती देशोंके युद्धमें लिप्त हुए थे या नहीं, राजपूतोंके इतिहाससे यह कुछ नहीं जाना जाता। हमीररासेंसे जाना जाता है कि हर्षराजके पीछे दुजगनदेव वा दुर्जदेवने राजमुकुटको अपने शिरपर धारण किया। उनकी अग्रगामी सेनाके डेरे भटनेर तक स्थापित हुए थे। दुजगनदेवने नासिरुद्दीन नामक मुसल्मानसेताको युद्धमें परास्त करके उसके बारह सौ अश्व बलपूर्वक छीन लिये, इसीसे उन्हें "मुलतानग्राह" अर्थात् राजाको बंदी करनेवालेकी उपाधि प्राप्त हुई। विख्यात महमूदके पिता सुबुक्तगीनका ही नाम नासिरुद्दीन था, अलप्तगीनके पन्द्रह वर्षतक शासनके समयमें सुबुक्तगीन क्रमानुसार भारतपर अधिकार करनेके लिये आया।

महात्मा टाड साहबने अजमेरके अन्यान्य राजाओंके शासन वृत्तान्तको छोडकर अन्तमें एकबार ही वसिलदेवके शासन समयके इतिहासका वर्णन करना आरम्भ किया है। छोडेहुए राजाओंके शासन समयमें केवल मुसल्मानोंके साथ संग्राम हुआ, इसके सिवाय और कोई वृत्तान्त नहीं है, यही उन्होंने कहा है अजमेरपति वीसलदेवके सम्बन्धमें टाड साहबने लिखा है, कि हाडा जातिकी कारिकाकारोंके मतके अनुसार वीसलदेवके पिताका नाम धर्मगज था, परन्तु जागाकी कारिकामें वीर वेलनदेव लिखा गया है। इससे ऐसा बोध होता है कि उनका वीरवेलनदेव ही यथार्थ नाम था। वह अत्यन्त धार्मिक थे; इसीसे उनको "धर्मगज" की उपाधि मिली थी; दिल्लीके विजयखम्भमें जो खोदी हुई लिपि है, उससे भी इसी अनुमानका समर्थन होता है। वीर वीलनदेवके शासन समयमें सुल्तान महमूदने पिछली बारमें भारतवर्षपर आक्रमण किया था। वीलनदेव उस समय दुर्द्धर्ष बलशाली थे, उन्होंने विजेता महमूदको एकसाथ ही परास्त कर अजमेरसे भगाकर अतुल यश प्राप्त किया था, परन्तु उस समरमें वह भी स्वयं मारेगये।

वीसलदेवके शासन वृत्तान्तको वर्णन करनेके पहिले इतिहास लेखक टाड साहबने इस स्थानपर एक चौहान वीर पुरुषकी वीरताकी कहानीको वर्णन किया है। जब सुल्तान महमूद पहिली बार भारतको लूटनेको आया, उसी समय इस चौहान

(१) महमूद गजनवी जिसने सन् १०१० ई० से सन् १०२४ तक हिन्दुस्थान पर बारह हमले किये और काशीतक मुसल्मानी दीनका प्रभाव डाला था। महमूद गजनवीके बारह हमले हिन्दुस्थानके इतिहासमे प्रसिद्ध हैं।

वीरने महावीरता प्रकाश करके अपने नामको अक्षय किया था। टाड साहबने लिखा है कि विख्यात चौहान राजा वाचाके गोगा नामवाला एक पुत्र था। उस राजा गोगाने सतलजसे हरियानेतकक विस्तारित देशोंके समस्त " जांगल देश " को शासन किया। सतलजके किनारे महलावा " गोगाकी मैडी " नामकी उसकी राजधानी थी। वीरश्रेष्ठ गोगाने सुलतान महमूदके करालग्राससे अपनी राजधानीकी रक्षाके लिये भयंकर युद्धसागरमें निमग्न हो अतुलनीय वीरता प्रकाश करके पीछे अपने ४५ पुत्र और ६० भतीजोंके साथ उस युद्धमें प्राण त्यागन किये। रविवार नौमी तिथिमें गोगाने इस चिरस्मरणीय लीलाको समाप्त किया था, समस्त राजस्थानकी छत्तीस राजपूत संप्रदाय उस तिथिको परम पवित्र जानकर गोगाके समाधिमंदिरमें इकट्ठे होते हैं, विशेष करके मरुक्षेत्रके निवासियोंने गोगाको सबसे अधिक भक्तिके साथ स्मरण किया है। मरुस्थलीमें " गोगाका थल " आजतक विराजमान है। गोगाके " जवादिया " नामका रणाश्व था, इसीसे राजपूत अपने २ पराक्रान्त समरके घोड़ोंको आजतक ' जवादिया ' नामसे पुकारते हैं।

साधु टाड साहबने ऐसा अनुमान किया है, "कि यह सम्भव हो सकता है कि महमूदके शेष भारतको जयकरनेके समय उक्त युद्ध हुआ हो, उस समय महमूद सुलतान बराबर मरुक्षेत्रमें होकर अपनी सेनाको लेगया होगा। महमूदके अजमेरपर आक्रमण करते ही चौहानराज उस स्थानको छोडकर भाग गये, यवनोंकी सेनाने अजमेर और उसके आसपासके सभी देशोंको लूट कर विध्वंस करदिया। परन्तु राजपूतराजने प्रबल पराक्रमके साथ गढबीठली नामक किलेकी रक्षा की। इससे महमूद परास्त और घायल होकर अन्य चौहानराजके अधिकारी नाडौलको भाग गया, परन्तु भागनेके समय महमूदने नाडौलको लूटकर समभूमि कर नहरवाला

(१) कर्नल टाड साहब अपने टीकामें लिखते हैं कि राजपूत इतिहास लेखकने कहा है कि गोगाके पहिले एक भी पुत्र नहीं था इस लिये वह अत्यन्त दुःखित होकर समय व्यतीत करते थे। एक समय उनकी कुलदेवीने प्रसन्न होकर गोगाको दो जव प्रदान किये, गोगाने उनमेंसे एक जव अपनी रानीको और दूसरा अपनी घोडीको दिया, उस जवके खानेसे युक्त घोडीने एक बछडा दिया। जव खानेसे उत्पन्न होनेके कारण गोगाने उस बछडेका नाम "-जवादिया " रक्खा। उदयपुरके राणाने ग्रंथकारको (कर्नल टाडको) काठियावारका एक रणाश्व उपहारमें दिया था उसका नाम भी जवादिया था। यद्यपि वह घोडा देखनेमें बिलकुल सीधा सादा था, परन्तु सवारी होने पर वह अपनी प्रचंड शक्तिको भली भाँतिसे प्रकाश करना जानता था। इस समय शिक्षित अश्व दिखाई नहीं देते। टाड महोदय उस जवादिया और मृगराज नाम एक अश्वको अपने देशमें लेजानेके लिये उदयपुरसे समुद्रके किनारेतक ले आये; परन्तु समुद्रकी यात्राके समय घोर अनिष्ट होनेकी आशंकासे उन्होंने मृगराजको एक मित्रको उपहारमें भेज दिया, और जवादियाको छः सौ मील मार्गकी दूरी से उदयपुरके राणाके पास यह कहकर भेजा कि दशहरा अर्थात् विजयादशमी तिथिको जो रणोत्सव होता है उस उत्सवमें इस जवादियाकी सबसे पहिले पूजा कीजाय। यह मैं (ग्रन्थकार) आशा करता हूँ राणाने उनकी इस आज्ञाको पालन किया होगा।

राज्यपर अधिकार करलिया। सुलतान महमूदने अधिकारी देशोंके निवासियोंके ऊपर घोर अत्याचार करने प्रारम्भ किये, इससे सभी जातियां इसके विपरीत हो गईं, तब महमूद प्राणोंके भयसे मरुक्षेत्रके पश्चिम ओर होकर समुद्रकी उपत्यकाकी ओरको भागा।

दिल्लीपति पृथ्वीराजके सर्व प्रधान कवि चंदवरदाईने अपने विख्यात रासाकाव्यमें राजा वीसलदेवकी वीरताकी कथाको भली भाँतिसे वर्णन किया है।—

कविचंदने वीसलदेवका शासन समय संवत् ९२१ में लिखा है परन्तु महात्मा टाड साहब उसे भ्रान्त कहते हैं।

वीसलदेव उस समयके हिन्दू राजाओंके सर्वप्रधान नेतारूपसे माने जाते थे। कविचन्दने लिखा है; कि "विसलदेवको हिन्दू जातिके नेता जानकर यवन लुटेरे महमूदके साथ युद्ध करनेक लिये आये राजाओंने उनके अधीनमें सना सहित गमन किया था। उस समय राजाओंमें एकमात्र अनहलवाडेके चालुक्य राजाके अतिरिक्त और सभी राजा उस जातीय महासमितिमें गये थे, अनहलवाडेके अधिपति वीसलदेवके अधीनमें कौन २ राजा सेना सहित आये थे, सो कविचन्दके लिखे हुए काव्यमें भलीभाँतिसे इसका वर्णन हुआ है।

कविकुल केसरीचंदवरदाईने लिखा है कि "जयतके हाथमें बीसलदेवने अजमेरकी रक्षाका भार अर्पण करके कहा कि "मैंने आपको विश्वास पालनके ऊपर निर्भर किया। अनहलवाडेका राजा चालुक्य भागकर कहां जायगा?" वीसलदेवने यह कहकर अपनी सेनाके साथ अजमेरनगरीको छोड दिया और वीसलताल नामक सरोवरके किनारे जाकर वहाँ डेरे स्थापन कर अनुमत और ऋणिराजाओंको सेना सहित शीघ्र इकट्ठे होनेके लिये भेजा। मोहनसी मण्डोरके पडिहारने सेनादलके साथ आकर उनके चरणोंकी वंदना की। इसके पीछे वीरोंके अलंकारस्वरूप गहिलोत एवं तुंबारके (१) साथ पावासरके, एवं मेवातके अधीश्वरके मेवक (२) साथ गौडजातिके राम (३)

(१) यद्यपि वीसलदेवने सहस्र वर्ष पहिले यह बहुत बडा सरोवर तैयार करवाया था, परन्तु आजतक यह बीसलताल नामसे विख्यात है। बादशाह जहांगीरने इस "वीस ताल" के किनारे एक बड़ाभारी मकान बनवाया था, और इंगलैंडराज प्रथम जेमसके भेजे हुए दूतको उन्होंने इसी महलमें ग्रहण किया था।

(२) इससे जाना जाता है कि पडिहारजाति अजमेरके चौहान अधीश्वरोंके अधीनमें थी।

(३) चन्दकविने चीतोडके महाराजको "वीरेन्द्रोंका अलंकार" कहकर उल्लेख किया है। यह गहिलोत जाति चीतोडराज अजमेरपतिके समीप मित्ररूपसे सेना सहित यवनोंके विरुद्धमें आये थे। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि वीसलदेवके साथ चीतोडके महाराज तेजसिंहका जिस प्रकारसे मित्रता मूलक संमिलन हुआ है, बारहवीं शताब्दीमें उसी प्रकार वीसलदेवके वंशधर दिल्लीके महाराज पृथ्वीराजके साथ तेजसिंहके पौत्र समरसिंहका संमिलन हुआ था, तथा दोनों महाराजोंने उसी प्रकार सेना सहित अनहलवाडेके अधीश्वरके विरुद्ध युद्ध किया था। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि उक्त तेजसिंह संवत् ११२० (सन् १०६४ ई०) में चीतोडके राजसिंहासनपर विराजमान हुए; वे वीसलदेवके साथ मिलकर यवनोंके साथ युद्धमें गये। कविचंदकी उक्त सूचीमें उदयादित्यके नामका उल्लेख पाया जाता है। कर्नल टाड साहबने उक्त तांबेके—अनुशासन पत्रोंको देखकर उनका जो समय—

उपस्थित हुए। द्रोनपुरके मोयल (४) ने अधीश्वरके पास करको भेज कर उपस्थित न होनेके कारण क्षमा माँग भेजी। वालोच राज (५) ने हाथ जोडकर दर्शन दिया। वामनाके अधीश्वर (६) सिन्धुको छोडकर वहाँ आये। पीछे भटनेर (७) से कर, और ठट्टा (८) और मुलतान (९) से नालवनी उपस्थित हुए। देरावरके भूमिया भट्टीगण (१०) वीसलदेवकी आज्ञा पाते ही इकट्ठे होगये। मालनवासके दो यादव (११) भी तुरन्त ही उपस्थित हुए। मोरी (१२) बडगूजर (१३) अन्तर्वेदके कछवाहे (१४) योग दनेमें शान्त न हुए। मेरगण वीसलदेवके चरणोंकी पूजा करते हुए आये (१५) इसके पीछे जेयतके अधीनमें ताखतपुरकी सेना उपस्थित हुई (१६) निरवाण (१७) डेडे (१८) चंदेला (१९) एवं दाहिमाक अधीश्वरोंके (२०)साथ उदय प्रमार आदि राजालोग (२१) घोडों पर चढचढ कर शीघ्रतासे आ पहुँचे।

-स्थिर किया है वह रायल एशियाटिकसोसाइटीके १ वाल्मके ३२३ पृष्ठमें प्रकाश हो चुका है।

(१) टाड साहबने ऐसा अनुमान किया है कि यह तुवर राज अवश्य ही दिल्लीके तुवर सम्राट्के अधीनके कोई राजा होंगे।

(२) मेवातके मेवजातिका विषय सर्वत्र विख्यात है, इस जातिने पीछे मुसल्मानी धर्म ग्रहण किया था।

(३) गौडजाति विशेष प्रसिद्ध थी, और चौहानके कर्द राजाओंमें मह वीर गिनी जाती थी।

(४) मोयलोका विषय भलीभांतिसे कहा गया है।

(५) टाड साहबने कहा है कि इस बलोचजातिने पीछे मुसल्मान धर्म ग्रहण किया है।

(६) वामनी देशको अन्यत्र वा मनवासा नाम कहा गया है, इसका मूल नाम ब्राह्मणवाद, वा देबल था। उसी स्थानपर ठट्टा नगर स्थापित है।

(७) जयसलमेरके इतिहासको देखो।

(८-९) उक्तदेशके सोढा समा और सोमरा इत्यादि जातिके ऊपर चौहान अधिकार करते थे,

(१०) इसका विषय यथास्थान पर पहिले ही वर्णन हो चुका है।

(११) मलनवास कहां था टाड साहब इसको नहीं जान सके।

(१२-१३-१४) पाठकोंको इसका वर्णन यथास्थान विदित हो चुका है।

(१५) मेरगण आडावलाके शिखर पर निवास करते थे।

(१६) इस स्थानका वर्तमान नाम टोडा है, यह टोंकके निकट स्थापित है, इस स्थानपर अनेक प्राचीन कीर्तिस्तम्भ विराजमान हैं।

(१७) शेखावाटीके इतिहासमें जाना जाता है कि निरवाण अजमेरके महाराजाओंको कर देते थे।

(१८-१९) डोड एवं चन्देल जाति प्रसिद्ध है। चन्देलोंने एक समय पर पृथ्वीराजके साथ युद्ध किया था। पृथ्वीराजने उनसे महोबा और कालिंजर तथा समस्त बुन्देलखण्ड छीनकर अपना अधिकार करलिया था।

(२०) दाहिमा बियानाके अधीश्वरका नाम है। वह धरणीधर नामसे भी पुकारे जाते थे।

(२१) उदयादित्यने समस्त भारतवर्षमें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

चँदकवि भारतवर्षके शेष चौहान राजा पृथ्वीराजकी सभामें "राजकवि" थे। उनके रचेहुए प्रसिद्ध काव्यमें पृथ्वीराजके गुण भलीभाँतिसे परिपूर्ण हैं। कविचंदने पृथ्वीराजके पूर्व पुरुषोंकी नामावली और कारिकाको प्रकाश करके उक्त सूचीको सबसे पहिले संग्रह किया था। अत्यन्त प्राचीनकालके कवियोंके ग्रन्थोंसे कविचंद इत्यादिने राजपूत कवियोंके उक्त श्रेणीके जिन इतिहासोंको उद्धृत किया है, वह सब राजपूतानेके प्राचीनकालके राजाओंके वंशकी सूचीके निर्णय करनेमें विशेष सुभीता देनवाले हैं।

कर्नल टाड साहब कहते हैं कि मेवाड़के अत्यन्त प्राचीनकालके एक इतिहासमूलक काव्यसे उक्त प्रमार वंशकी कारिकाको उद्धत कर मुसलमानोंके आक्रमणके वृत्तान्तको उद्धृत किया है। महात्मा टाड साहबने इसके पीछे माणिकरायसे चौहान सम्राट् पृथ्वीराजतकके जिन प्रधान २ राजाओंके नाम लिखे हैं, उनमें सबसे अधिक तेजस्वी वीर वीसलदेवके समयका निर्णय करना इस स्थानपर विशेष प्रयोजनीय हुआ है। उन्होंने सबसे पहिले आनलसे लेकर लाखनसीतककी जो सूची प्रकाश की है हमने यहां पर उसीको ग्रहण किया है।

महा कविचंदने वीसलदेवके शासनका समय ९२१ लिखा[1] है परन्तु टाड साहबने इसको उनकी भूल कहकर इस स्थानपर अनेक प्रमाणोंका प्रयोग कर सिद्ध किया है कि वीसलदेवने संवत् १०६६ से ११३० तक राज्य किया, इसके सम्बन्धमें उन्होंने जिन युक्तियोंका प्रयोग किया है हमने सबसे पहिले उन्हींको प्रकाशित किया है। चंद-कविने अपने ग्रंथमें लिखा है कि चौहानराज वीसलदेवकी वीरताके स्मरण करनेके निमित्त निगमबोध स्थानमें एक कीर्तिस्तंभ स्थापित किया गया था। टाड साहब कहते हैं यह निगमबोध दिल्लीसे थोडी दूर यमुनाके किनारे है। उन्होंने कहा कि "दिल्लीके फारोजशाहके महलके सम्मुख जो विख्यात कीर्तिस्तंभकी चोटी पर विशालदेव वा वीसलदेवका नाम खुदा हुआ है, यही स्तंभ कवि श्रेष्ठ चन्द लिखित निगमबोध नामक स्थानका कीर्तिस्तंभ है, यह अवश्य ही उस निगमबोधसे उखाडकर इस स्थानपर स्थापित किया[2] गया है।

---

(१) यहांपर कविचन्दका भ्रम नहीं है वरन टाड साहबका स्वयं भ्रम नाश नहीं हुआ है। वह ९२१ नहीं संवत् ९३१ है उसमें यदि ९१ जोडे जांय तो १०२२ होते है और यह संवत् वीसलदेवजीके पाट बैठनेका है रासोमे आगे लिखा है कि "चौसठि बरस वर राज कीन" इससे १०२२ में ६४ जोड देनेसे वीसलदेवजीका समाप्तिकाल १०८६ निश्चित होता है।

मूल संवतमें ९१ जोडनेसे यह मतलब है कि पृथ्वीराज रासोमे जितने संवत दिये हैं वे आनन्द शक है यथा एकादशसे पंचदश, विक्रम शाक आनन्द (१००–९–९१)

(२) एशियाटिकरिसर्चेज पहिला वालम ३७९ पृष्ठ और ७ वालम १८० पृष्ठ और पहिला-वालम ४५३ पृष्ठ, कर्नल टाड साहबने इसके सम्बन्धमें जो मन्तव्य प्रकाश कियाहै वह देखने योग्य है।
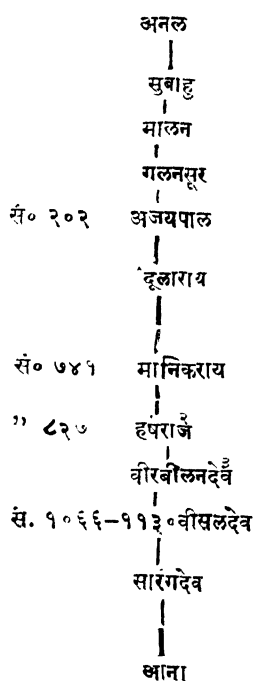
चौहानोंका वंशवृक्ष ।)
या अग्निपाल, चाहुआन वंशके आदि पुरुष जो विक्रमादित्यसे ६५० वर्ष पहले अग्निकुण्डसे उत्पन्न हुए । इन्होंने तुरष्क लोगोंको जीतकर मेहकावर्नमें राजधानी स्थापित की और फिर कोकन असीर और गौलकुण्डाको जीता.
अनल
सुबाहु
मालन
इनके वंशधर मालन चौहान कहलाते है
गलनसूर
सं० २०२
अजयपाल
इन्होने अजमेर नगर स्थापित किया.
दूलाराय
सन् ६८५ ई० में मुसल्मानोंके हाथसे मारे गये और इन्हीं से अजमेरका राज्य चौहानोंसे गया.
सं० ७४१
मानिकराय
इन्होंने सांभरमें चहुआणोंकी राजधानी स्थापित करके संभरीरावकी उपाधि पाई । तभीसे चौहान संभारीराव कहे जाते हैं
" ८२७
हर्षराज
वीरबीलनदेव
सं. १०६६-११३० वीसलदेव
सारंगदेव
कुमार अवस्थामें मरे.
अजमेरमें आना सागर ताल बनवाया जो अब तक उन्हींके नामसे विख्यात है ।
आना
जेपाल
हर्षपाल
अजयदेव
विजयदेव
उदयदेव
आनंददेव
सोमेश्वर
कन्हराय
जतगोलवाल
ईश्वरीदास
पृथ्वीराज
चाहडदेव
रेनसी
विजयदेवराज
लखनसी [अंकवाले नामोंकी टि० आगेके पेजमें देखो]
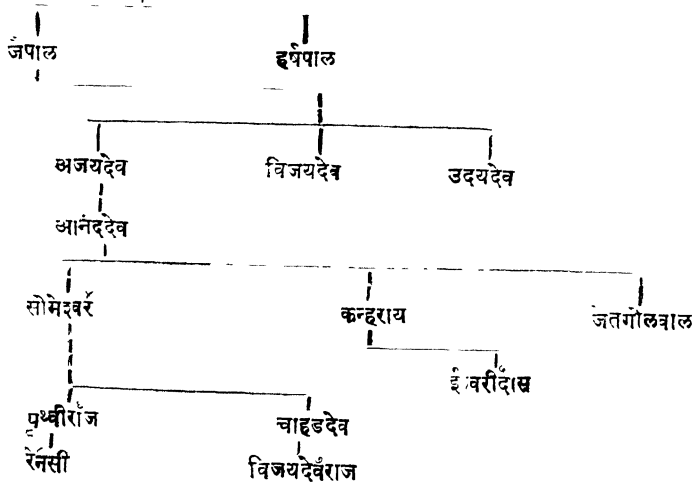
इतिहासवेत्ता टाड साहब फिर लिखते हैं कि " उक्त कीर्तिस्तम्भके गात्रमें अंकित श्लोकके पहिले और अंतमें एक प्रकारका सन और तारीख लिखी गई है, यथा—१५ वैशाख संवत् १२२० यदि अनुलिपि शुद्ध है तो वीसलदेवके साथ इसका कोई संसर्ग नहीं। केवल इतना ही संसर्ग है कि विशालदेव (वीसलदेव) चौहान तिलक शाकम्भरी पृथ्वीराज भूपतिके आदि पुरुष थे, पृथ्वीराजने संवत् १२२० में दिल्लीको शासन किया, और संवत् १२४९ में मारे गये। दूसरी कविताकी ओर देखनेसे हम अवश्य ही इस स्मृतिस्तम्भके गात्रमें प्रथम जो समय अंकित हुआ है, उसको भ्रामक कह सकते हैं। संवत् १२२० के बदलेमें संवत् ११२० पढना न्यायसिद्ध है और उसी समय ही वीसलदेवने आर्यावर्तसे यवनोंको भगाया था, संस्कृत भाषामें एक दो अंक प्रायः एकसे हैं, इसी लिये सरलतासे भूल होनेकी सम्भावना है। परन्तु अन्य पक्षमें यदि यह निश्चय हुआ कि संवत् १२२० है, ऐसा माना जाय तो यह केवल चौहानपति पृथ्वीराजके स्मरणका स्तम्भमात्र है "।

वीसलदेवसे पृथ्वीराजके शासनसमयके मध्यमें और भी छः राजाओंके नाम लिखे हैं। स्तम्भके गात्रमें प्रथम जो कविता वर्णन की गई है ऐसा बोध होता है कि वह पृथ्वीराजके पूर्व पुरुषोंने वीसलदेवके नामके उल्लेखके लिये ही वर्णन की है और उस पर खुदी हुई तारीख भ्रमवश ठीक नहीं लिखा गई"।

इसके पीछे इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं, कि "हमारी समझमें पहिले कवितामें (वीसलदेव) विशालदेवके सम्बन्धमें लिखा है, और दूसरीमें उनके वंशधर

---

(१) अग्निपाल प्रमार कुलके आदिपुरुषका नाम था। चाहुआण कुलके आदि पुरुषका नाम चतुर्बाहुमानजी या चुहाणजी था। इसके बाद जो सुबाहु और गिलनमूर दो नाम दिये है वे भी गलत हैं। इसमें रासोके आधारपर नाम लिखे गये हैं पर रासोके छन्द समझमें न आनेसे ऐसा हुआ है। यह कारिका न तो रासोसे ठीक मिलती है। न वंशभास्करके आधारपर बनी हुई बून्दी राजवंशावलीसे मिलती है। (२) इन्होंने नाजिमुद्दीन या सुवक्त दीनको शिकस्त दी। (३) महमूद गजनवी के विरुद्ध अजमेरकी रक्षामें मारे गये। इनका दूसरा नाम धर्मगज भी है। (४) दिल्लीके तुंअर राजा अनंगपालकी बेटी रूकाबाईसे व्याह किया। (५) इन्होंने दिल्लीका राज्य प्राप्त किया और सन् ११९३ में शहाबुद्दीनके द्वारा मारे गये। (६) मुसल्मान होगये। (७) दिल्लीकी रक्षामें काम आये। (८) पृथ्वीराजके दत्तक पुत्र इनका नाम दिल्लीके एक स्तूपपर खुदा हुआ है। (९) लखनसीके २२ पुत्र हुए जिनमें ७ असली थे, उनसे चाहुबाणोंके सात वंश प्रख्यात हुए, नीम राणाके सरदार नन्दसिंह उक्त लखनसीसे २६ वीं पीढीमें हैं यही अजैपाल या पृथ्वीराजके मूलवंशधर हैं।

(१) कर्नल टाड साहब लिखते है कि "चौहानराजका आदि वासस्थान हांसी, वा असि था। इस स्थानके ध्वंसावशेषसे संवत् १२२४ की खुदी हुई अनेक अनुशासन लिपियोंका संग्रह किया था।" इसके सम्बन्धमें टाडने रायल एशियाटिकसोसाइटीके पहिले वाल्यूमके १३३ पृष्ठमें जो कुछ लिखा है वह द्रष्टव्य है।

(२) प्राचीन नाम विशालदेव ही ठीक मालूम होता है और वीसलदेव उसका अपभ्रंश मात्र है।

पृथ्वीराजके सम्बन्धमें लिखा है । ऐसा विदित होता है कि पृथ्वीराजने अपने पूर्वपुरुष वीसलदेवके वार्षिक जयोत्सवके समयमें उक्त स्मरणस्तम्भमें अपनी कीर्तिकी कविताको अंकित करवाया था । पृथ्वीराजने अवश्य ही वीसलदेवके समान भारतवर्षमें यवनोंको अपने बलविक्रमसे बारम्बार परास्त किया । अधिक क्या कहैं यवन इतिहासवेत्तागणोंने स्पष्ट ही लिखा है कि उत्तर भारतवर्षको सब प्रकारसे जय करनेके पहिले शहाबुद्दीन बारम्बार युद्धमें परास्त हुए थे ''।

''मैं जिस प्रकारका अनुमान करता हूं कि यही प्रथम कविता वीसलदेवके सम्बन्धमें लिखी गई है, और वीसलदेवने संवत्११२० सन् १०६४ ई० में कविचन्द-के द्वारा लिखे हुए मतसे यवनोंको भगानेके लिये बहुतसे वीरोंको इकट्ठा किया था, और उसी घटनाके स्मरणके लिये उक्त स्तंभ स्थापित हुआ है ''।

वीसलदेवके अधीन जो राजा सेना सहित इकट्ठे हुए थ कविचन्दके ग्रंथोंमें उनकी नामावली प्रकाश की गई है उनमेंसे चार राजाओंके समयका निर्णय हुआ है पर हम प्रत्यक्षरूपसे एक ही नामके समयको यथार्थ निर्णय कर सकते हैं, और तीन नाम समयके निश्चय करनेके पक्षमें अप्रत्यक्षतामें सहायता करते हैं । पहिले राजा भोजके पुत्र धारनगरके अधीश्वर प्रमार उदयादित्य थ । मैंने बहुतसे ताम्रानुशासनें लिपियोंसे प्रमाणित किया है कि उदयादित्य ११०० संवत् ११४० के मध्यमें थे, इस कारण उदयादित्य जिस समय वीसलदेवके साथ सेना सहित आये थे वह उसके शासनके समय थे । और भी दो प्रत्यक्ष अथवा प्रबल प्रमाण हैं—

प्रथम ' देरावरके भूमियांभट्टी लोग आये ' ऐसा लिखा है । कविचन्दकी उक्तिसे ही यह प्रमाण सिद्ध हुआ । तथा भाटियोंकी वर्तमान राजधानी जयसलमेरका उल्लेख भी दृष्टिगत हुआ है ।

द्वितीय-यमुना और गंगाजीके मध्यवर्ती अन्तरवेदसे कछवाहे आये, ऐसा लिखा गया है । कारण कि नरवरसे कछवाहोंने आमेरमें जो राजधानी स्थापन की थी वह इस समय प्रसिद्ध नहीं हुई थी ।

तीसरा प्रमाण-मेवाडकी खुदी हुई अनुशासनलिपि । उन अनुशासन पत्रोंमें अंकित हुई है समरसिंहके पितामह तेजसिंह वीसलदेवके मित्र थे । ऐसा जाना जाता है कि वीसलदेव ६४ वर्षतक जीवित रहे । यदि ऐसा अनुमान किया जाय कि उक्त संवत् ११२० उनके शासनका मध्य समय था, तो यह स्थिर किया जाता है कि वह संवत् १०८८ से संवत् ११५२ तक अर्थात् १०३२ ई० से १०९६ ई० तक जीवित थे,किन्तु जब यह प्रकाश हो चुका है कि वीसलदेवके पिता धर्मगज वा वीर बलिनदेव; हमीर रासाग्रन्थमें इनका नाम मालनदेव लिखा है, महमूदके शेष आक्रमणके समय अजमेरकी रक्षामें मारे गये, तब अवश्य ही वीसलदेवके जन्मका समय (उक्त

---

(१) टाड साहबने वीसलदेव और विशालदेव दोनों ही नाम लिखे हैं ।

युद्धके समय वह बालक थे ऐसा अनुमान हो सकता है, और भी दश वर्ष पहिले अर्थात् संवत् १०७८ निश्चित होता है" ।

इसके पीछे टाड साहब कहते हैं कि " वीसलदेव दिल्लीके तुंअर राजा जयपाल गुजरातके राजा दुर्लभ और भीम, धारके दोनों अधीश्वर भोज और उदयादित्य, मेवाडके दोनों महाराणा पद्मसिंह और तेजसीके समसामयिक थे, और वह जो प्रबल-सेनादलके नेतारूपसे यवनोंके विरुद्धमें खडे हुए वह यवननेता अवश्य ही महमूद था । वीसलदेवने उस महमूदको राजपूतानेके उत्तरांशसे निकाल दिया था, तभीसे आर्यावर्तमें फिर आर्यधर्मकी रक्षा हुई । महमूद पिछली बार भारतवर्षसे सिन्धुदेशको भागा और उसके विरुद्धमें जो वीरमदेव अजमेरके अधीश्वरोंके साथ मिलकर उनके विरुद्धमें खडे हुए वह युद्ध हिजरी ४१७ सन् १०२६ ईसवी वा संवत् १०८२ में हुआ । परन्तु चँदकवि लिखते हैं कि संवत् १७८६ में हुआ था " ।

इतिहासवेत्ता फिर लिखते हैं कि वीसलदेवने गुजरात राजके विरुद्धमें समर उपस्थित कर उसमें जो जय प्राप्त की थी, और अपने बाहुबलसे शत्रुओंके साथ जिस स्थान पर विजय प्राप्त की थी, उस स्थान पर जयचिह्नस्वरूप वीसलनगरकी प्रतिष्ठा की, हम उसे इस स्थानपर विस्तारसहित वर्णन करते परन्तु जगत्‌विख्यात पृथ्वीराजके शासन-वर्णनके समय उस सबका वर्णन किया जायगा, इसीसे यहाँ उस प्रसंगको नहीं कहते । कालिक जुहनेर स्थानमें जो वीसलदेवका धोंध अर्थात् तपस्याका स्थान था उसके विषयमें हमारे पाठक इतिहासके कितने ही स्थानोंमें पढ चुके होंगे।

हाडाजातिके राजकवि गोविन्दरामके बनाये हुए "राजग्रन्थ" में लिखा है कि वीसलदेवके पुत्र अनुराजसे हाडाजातिकी उत्पत्ति है । परन्तु खीची राजवंशके कवि मगजीने अपने ग्रंथमें लिखा है कि अनुराज माणिकरायके पुत्र थे और वह खीची वंशके आदिपुरुष थे । हाडा कविने गोविन्दरामका अनुसरण किया होगा ।

गोविन्दराम कहते हैं कि अनुराजको सीमान्तवर्ती असि (सर्वसाधारणमें विख्यात हाँसी) नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ था । अनुराजके पुत्र अस्थिपाल एवं सिन्धुसागर देशके अन्तर्गत खीचीपुर पाटनके आदि प्रतिष्ठाता और अजयराजके पुत्र अगनराज दोनों मिलकर अपने सौभाग्यके उपार्जनकी इच्छासे गोलकुंडाके चौहान राज रणधीरके अधीनमें नियुक्त होनेके लिये सजे । परन्तु दुर्भाग्यसे इस समय कजलीवनके बर्बरोंने एकसाथ ही आसि और गोलकुंडापर आक्रमण किया । उस समय चौहानराज रणधीरने पुत्रोंके साथ असीम बलविक्रम प्रकाश करके रणक्षेत्रमें प्राण त्याग किये । उनके वंशमें केवल एकमात्र सूराबाई एक कन्या प्राणरक्षामें समर्थ होकर शत्रुओंके हाथसे अपनी रक्षा करनेके लिये गोलकुंडाको छोड कर आश्रयके निमित्त असिकी ओरको भाग गई । परन्तु उक्त वनवासी बर्बरोंने इस समय उस असिप्रदेश पर भी महाविक्रम प्रकाश करके आक्रमण किया । शत्रुओंके आगमनका समाचार पाते ही असिपति अनुराज भी भाग गये; परन्तु उनके उक्त पुत्रोंने शत्रुओंके आक्रमणकी

प्रतीक्षा न करके वीरपुरुषोंके समान असीम साहससे आगे बढ सेना सहित उनपर आक्रमण किया। भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गयी, उस घोर युद्धमें शत्रुपक्षके नेता अस्थिपाल अस्त्रोंके आघातसे घायल हुए, तुरन्त ही शत्रुओंकी सेना प्राणोंके भयसे भागने लगी यह क्षत विक्षत देह उस शत्रुओंकी सेनादलके पीछे २ चले। परन्तु बहुत दूर चलनेके पीछे मार्गमे ही अचेतन होकर गिर गये। इस ओर सूराबाई भी आश्रय पानेके लिये इकली असिकी ओरको चली, अंतमें थकित होकर मार्गमें ही संज्ञाहीन (क्षुधा तृष्णासे कातर और जीवनकी आशासे वंचित) होकर एक वृक्षकी जडके नीचे गिर गई। उस समय सूराबाई अपनी मृत्युको अत्यन्त समीप देख रही थी। जिस समय वह अश्वत्थ वृक्षकी जडमें गिरी थी, उसी समय उस वृक्षके दो खंड हो गये। और उसमेंसे चौहानोंकी कुलदेवी आशा पूरामाताने बाहर निकल उसको दर्शनकर दिया। देवीका दर्शन पाते ही सूराबाई विचलित हृदयसे नेत्रोंमें जलभर कर देवीके चरणोंमें हृदयको भेदन करनेवाली अपनी विपत्तिको वर्णन करने लगी। कजलीवनके वनवासी वर्वरोंके हाथसे राजधानी गोलकुण्डाकी रक्षाके लिये किस प्रकारसे उसके पिता और बारह भ्राता युद्धमें मारे गये और किस प्रकारसे वह इकली भाग कर आई, उसने एक २ करके सभी बातोंको निवेदन किया। तब देवीने उसको अभय देकर कहा, "हे वत्से! अब तुम्हें कुछ भय नहीं है, तुम्हारे स्वजातीय एक चौहान वीरने उस शत्रुपक्षके नेताको अपने हाथसे मार डाला है, और वह बहुत ही समीप स्थित है।" यह कह कर देवी उस सूराबाईको अपने साथ ले, घायल हुए अस्थिपाल जिस स्थान पर अचेत अवस्थामें पडे थे वहां ले गई, देवीके वरसे उनका शरीर ज्योंका त्यों हो गया और फिर बल पाकर चैतन्य हो अस्थिपाल अन्तमें चौहानोंके विख्यात पैतृक अभेद्य किले आमेरगढको चले गये।

इस स्थान पर कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "हाडा जातिके आदि पुरुष अस्थिपालको संवत् १०८१, १०२५ ई० में असिका किला मिला था। अब जाना जाता है कि सुलतान महमूद भारतपर शेष आक्रमण करनेके लिये मुलतान होकर मरुक्षेत्रको मध्यमें छोड अजमेरमें, हिजरी ४१७, सन् १०२२ ईसवीमें आया था, तब हम अवश्य ही इस बातको स्थिर कर सकते हैं कि अस्थिपालके पिता अनुराजने गजनीके महमूदके साथ युद्ध करके अपने जीवन और असि नगरको खो दिया था। इसी समयमें मुसलमान विजेता महमूदने अजमेरको भी विध्वंस किया।

(१) टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "इस प्रकारकी गप्प प्रचलित है कि सूराबाईने अस्थिपालके छिन्नभिन्न हाथपर यथास्थान जोडे और देवीने अभिमंत्रित जल छिडककर अस्थिपालको प्राणदान दिया। उक्त प्रकारसे सब हाडोंके एकत्र होनेसे अस्थिपालको जीवन प्राप्त हुआ,इसीसे उनके वंशधरोंको हाडाकी उपाधि प्राप्त हुई। परन्तु इसीकी अपेक्षा यह भी संभव हो सकता है कि उन्होंने असिराज्यको खोदिया था इसीसे हारा नाम प्राप्त हुआ हो।"

(२) हाडाजातिके कविने अपने ग्रन्थमे उक्त घटनाका समय संवत् ९८१ लिखा है,परन्तु टाड साहबने कहा है कि वह भूल है।

हिन्दू कविने इसको "कजलीवनका असुर" कहकर अपने काव्यमें लिखा है। यद्यपि कर्नल टाड साहबने इस मन्तव्यको प्रकाशित किया है, परन्तु मुसलमान इतिहासवेत्ताने भ्रमसे भी इसका उल्लेख नहीं किया कि सुलतान महमूद सेना लेकर किस समय दक्षिणमें आया था, और किस समय उसने गोलकुंडेको जय किया था। परन्तु कवि गोविन्द-रामने जो कजलीबनकी बर्बरजातिका उल्लेख किया है, सुलतान महमूद उसी कजली-वनका बर्बरनेता था, यह विश्वास सरलतासे नहीं हो सकता। यद्यपि यदुवंशीय राजा गजसे गजनीकी सृष्टि हुई है, परन्तु महमृदके दाक्षिणात्यमें जानेपर मुसलमान लेखकों-मेंसे कोई न कोई अवश्य ही उसका उल्लेख करता। हमारा ऐसा विचार है कि दक्षिणाके किसी पर्वतीदेशका कजलीवन नाम हो। वह कजलीवन कहां था, इसका निर्णय करना सामर्थ्यसे बाहर है। टाड साहबने इस स्थान पर और भी एक मन्तव्य प्रकाशित किया है कि "उत्तर और दक्षिण देशके जो समस्त राजपूत राज्य थे, उन्हीं राजवंशधरोंने वहाँके आदिम निवासियोंके साथ मिलकर नूतन मिश्र महाराष्ट्र जातिको जन्म दान किया, महाराष्ट्रोंने राजपूतोंके समान वीरविक्रमी होकर भी जादव तुंवर पंवार इत्यादि प्राचीन राजपूतवंशके नामकी रक्षा न करके जिस देशमें जन्म ग्रहण किया उसी देशके नामसे वह निमालकर, फाल किया और पाटनकर इत्यादि नामसे परिचित हुये।

अस्थिपालके औरस चन्द्रकरण नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। चन्द्रकरणके पुत्रका नाम लोकपाल था। लोकपालके दो पुत्र हुए, एकका नाम हमीर और दूसरेका गम्भीर था। यह दोनों महापुरुष थे। दिल्लीपति पृथ्वीराजके शासनसमयमें यह उनके अधीनमें थे उस समय इन्होंने अनेक युद्धोमें महावीरता प्रकाश की थी। दिल्लीपति पृथ्वीराजके अधीनमें जो १०८ करद राजा थे, इन दोनों वीर भ्राताओंने उन सबोमेंसे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। इससे हमें ऐसा अनुमान होता है कि असिदेश यद्यपि दिल्लीके बादशाहके सब प्रकारसे अधीनमें न था तथापि चौहानवंशीय असिदेशके अधी-श्वर उनका अधिक सम्मान करते थे।

चौहानवंशके शिरोमणि राजा पृथ्वीराज जिस समय कान्यकुब्जपति जयचंदके साथ घोर संग्राम कर उनकी कन्या अनंगमंजरी (संयोगिता) को बलपूर्वक हरण करके ले आये थे, चन्दकविने अपने ग्रन्थमें उसका विवरण भलीभांतिसे वर्णन किया है, उन्होंने उसमें वीरश्रेष्ठ हमीर और गंभीरके बल विक्रमकी ऊँची प्रशंसा करनेमें त्रुटि नहीं की है।

---

(१) कर्नल टाड साहब लिखते हैं, " कजलीवनका अर्थ हस्तीका जगल है। राजपूत कहते हैं कि गिजनीका प्रकृत नाम गजनी है, और वह यदुवशीय राजा गजके द्वारा स्थापित हुई। हमने रायलएशियाटिक सुसाइटीको एक प्राचीन हिन्दू भूवृत्तान्त प्रदान किया है, उस भूवृत्तान्तसे गगाजीके तीरवर्ती समस्त पहाड़ी देश 'कजलीवन' वा 'गजलीबू' नामसे लिखे गये हैं। उसका अर्थ हाथीका जगल है। अबुलफजल लिखते है वजोर अचलपर गजलीगढ नामका एक देश है वहां सुलतानो यादो और योसु-फ़जई जाति निवास करती है। "

कवि चंदकी उक्ति है कि " इसके पीछे हाडाराव हमीर अपने अनुज गंभीरके साथ रण तुरंगिनीपर चढकर अपने अधीश्वर पृथ्वीराजके सम्मुख जाकर बोले, "जंगलेश! हम जयचंदकी सेनाको विध्वंस करनेमें प्रवृत्त हुए हैं, आप निर्विघ्नतासे चलिये। नौका जिस प्रकारसे सागरके वक्षस्थलको विदलित करती हुई चलती है उसी प्रकारसे हमारे रणतुरंगोंके खुरोंसे युद्धक्षेत्र कंपित होगा "।

कविकी पिछली उक्तिसे जाना जाता है कि "जयचंदके अधीनमें इकट्ठे हुए महाबली राजाओंमें जो काशीराज सेनासहित उपस्थित थे, उक्त दोनों वीर भ्राताओंने उनपर आक्रमण किया। वीरश्रेष्ठ हमीरने वीरगर्वसे आगे बढकर इस प्रकार सिंहनाद किया कि कैलासके शिखरपर भगवती दुर्गाजीका सिंहासनतक उच्च स्वरसे कंपायमान हो गया। " कविचंद लिखते हैं कि उन दोनों वीर भ्राताओंने अतुल बल विक्रम प्रकाश करनेके पीछे उस समरभूमिमें प्राण त्याग किये।

हमीरके कालकर्ण नामक एक पुत्र था। शहाबुद्दीनने जिस समय कग्गरोंके युद्धमें भारतकी स्वाधीनताको हरण किया उस समय वह वीरश्रेष्ठ कालकर्ण पृथ्वीराजके अधीनमें उनके विरक्षमें नियुक्त होगये थे। कालकर्णके पुत्रका नाम महामुग्ध था। उनके औरससे राववाचाने जन्म ग्रहण किया। उनके पुत्रका नाम रावचंद था।

कठिन यवन अलाउद्दीनने चौहान जातिके समस्त स्वाधीन राजाओंके शासनको लुप्त कर दिया, उन्हींमें यह रावचंद भी एक थे। आसेरगढका किला अत्यन्त अभेद्य गिना जाता था, इसीसे अलाउद्दीनने बलपूर्वक उस किलेको फतह कर रावचंदको वंशसहित निहत किया। केवल रावचंदके ढाई वर्षकी अवस्थाका रैनसी नामका एक पुत्र था। वह बालक चीतौडपति महाराणाका भानजा था इस कारण अलाउद्दीनके किलेको जीतनेके पीछे वह बालक चीतौडके महाराणाके निकट भेज दिया गया। रैनसी मामाके यहाँ जाकर सब व्यवहारोंको जान गये; एक समय इन्होंने अपनी सेना सहित जाकर भैंसरोड नामक देशके विध्वंस हुए किले पर आक्रमण करके वहाँके दूंगानामक भील नेताको वहाँसे भगा दिया।

यह भैंसरोड पहिले मेवाडके अधीनमें था, अलाउद्दीनने चित्तौडपर आक्रमण करनेके समय इस देशको विध्वंस कर दिया था, और उक्त दूंगाने सुविधा पाकर उस स्थानपर अपना अधिकार कर लिया।

रैनसी वा रैनसिंहके औरससे कुलन और कनकल नामके दो पुत्र उत्पन्न हुए। बडा पुत्र कोल्हण दुरारोगसे ग्रसित होकर गंगाजीके किनारे केदारनाथकी तीर्थयात्रा करनेको गया, इससे उसे शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त हुई, केदारनाथका बहुत दिनोंका मार्ग था; परन्तु यह न तो पालकीकी सवारी पर चढ कर गये और न घोडे पर ही गये, यह देवादिदेव केदारनाथ, जिससे अधिक प्रसन्न हो इससे किसी सवारीपर

---

(१) पृथ्वीराजकी एक उपाधि जंगलेशकी भी थी।

(२) वंशभास्करमें रतनसिंह लिखा है।

न चढ कर केवल साष्टांग दंडवत करते हुए राजधानी भैंसरोडसे केदारनाथके मंदिरतक गये। इस बातको तो सभी जानते हैं कि यह तीर्थयात्रा महा कठिन है। इसी रीतिसे छः महीने तक बराबर चलनेके पीछे वह बूंदीके समीपमें आपहुँचे। उस स्थान पर एक पर्वतके शिखरसे निकली हुई बाणगंगा नदीमें जाकर इन्होंने स्नान किया, और स्नान करते ही समझ गये कि मैं आरोग्य हो गया। उस स्थान पर ही देवादिदेव केदारनाथने उनको आज्ञा दी कि हे वत्स! मैं तुम्हारी भक्तिसे अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ तुम अब सब भाँतिसे अरोग्य हो गये हो। आजसे तुम पठार देशके अधीश्वर हुए"। उक्त समस्त पठारदेश पहिले चित्तौडके राणाके अधिकारमें था, परन्तु दुराचारी अल्लाउद्दीनने उस विख्यात किलेको लूट कर वहाँके अगणित गेहिलोतोंको निहत कर इस देशसे राणाकी प्रभुता घटादी, यहाँके आदिम निवासी मेरगणोंने इस सुअसरमें अपने इस आदिम पर्वतके स्थान पर अपना अधिकार करलिया।

यह प्रसिद्ध है कि पूर्वकालमें प्रमारजातिके राजा हूँन इस पठारदेशके अधिपति थे, और मैनाल नामक स्थानमें उनकी राजधानी थी। उक्त मैनाल नामक स्थानमें उस प्राचीन हूंणाराजाके अनेक स्मृतिचिह्न विराजमान हैं। ऐसा प्रगट है कि आठवीं शताब्दीमें जिस समय चीतौड पहिले पहिल आक्रांत हुआ था उस समय हूनपति अंगतसीने अपनी सेनाके साथ इन महाराणाकी सहायता की थी और ऐसा कहा जाता है कि विख्यात बारौलीका मंदिर इन्हीं हूंसराजका बनवाया हुआ है।

कोल्हनके पुत्र राव बांगाने उस पुराने मैनालपर अधिकार करलिया उन्होंने पठारके पश्चिमकी ओर एक शिखर पर बंबावदा किला बनाया, पूर्वमें भैंसरोड, पश्चिममें बंबावदा और मैनाल यह सब पठार देश हाडाजातिके अधिकारमें हो गये, इसके पीछे मांडलगढ बिजोलिया बेगूं रत्नगढ और चौराइतगढ इत्यादि पर अधिकार करनेसे राज्यकी सीमा क्रमशः बढगई।

राव बांगाके बारह पुत्र हुए उन सभीने पठार देशका विस्तार करके अपने वंशको बढाया, राव देवा राव बांगाके पीछे राजसिंहासन पर विराजमान हुये। राव देवाके हर-राज हरजी और समरसी यह तीन पुत्र हुए।

हाडानरेशोंने उक्त प्रकारसे अपने अधिकारको स्थापन कर प्रसिद्धि प्राप्त की। तब दिल्लीके बादशाहका ध्यान इनकी ओर गया। सिकन्दरलोदी इस समय दिल्लीके सिंहासनपर स्थित थे। उन्होंने हाडा नरेशको दिल्लीमें बुलाया। रावदेवा दिल्लीश्वरकी आज्ञा-

---

(१) मध्य भारतवर्षका नाम पठार था, कवि लिखते हैं कि कोल्हणको जो देश मिले थे उनके दश अशोंमेका एक अश उन्होंने अनुजको देदिया था।

(२) हरराजके बारह पुत्र जन्मे, हावुके वीरताका वर्णन टाड साहबके दूसरे भ्रमण वृत्तान्तमें प्रकाशित होगा यह हांवु सबमें बडा था। बंबावदाका अधिकार इसे ही मिला था।

(३) ये गलत लिखा है क्योंकि सिकन्द लोदी तो देवायतजीके समयमें २०० वर्ष आसर पीछे हुआ है और उस समय देवायतजीकी ओलदमें राव नागरदास बंदीके राजा थे।

को शिरपर धारण कर अपने ज्येष्ठ पुत्रको बंबावदाके सिंहासन पर अभिषिक्त कर छोटे पुत्र समरसीके साथ दिल्लीको गये। हाडाजातीय कविने लिखा है कि राव देवा बहुत दिनतक दिल्लीमें रहे, अंतमें जब रावदेवाके घोडा लेनेकी दिल्लीपतिकी प्रबल इच्छा हुई और राव देवाने किसी प्रकार भी उसको देना न चाहा और अपने देशको जानेकी तैयारी की। उस घोडेका वृत्तान्त इस प्रकार है कि सम्राट्के मन्दोराका एक अश्व था, " वह नदीके पार होजाता परन्तु उसके पैरमें एक बूँद जल भी नहीं लगता था, रावदेवाने सम्राट्के प्रधान अश्वपालको रिश्वत देकर वशीभूत किया, और पठारदेशकी एक अश्वनीके गर्भसे उक्त अश्वद्वारा एक बछडा उत्पन्न कराया। वह अश्वका बच्चा धीरे २ बढकर पूरा घोडा हो गया। बादशाहने उस घोडेको लेनेके लिये अत्यन्त अभिलाषा प्रगट की। रावदेवाने बादशाहकी अभिलाषाको जानकर धीरे २ दिल्लीसे अपने परिवार और परिषदोंको एक २ करके सभीको गुप्तभावसे विदा दी, और अन्तमें आप तलवार हाथमें ले उसी श्रेष्ठ घोडे पर चढकर बादशाहके महलके सम्मुख पहुँचे। बादशाह उस समय बरामदेमें विराजमान थे। रावदेवाने नीचेमें ही उस घोडे पर चढे रहकर बादशाहको अभिवादन करके कहा, " जहाँपनाँह! यह शेष अभिवादन जानये। मेरा यह निवेदन है-कि आप राजपूतोंसे तीन वस्तुओंकी इच्छा न करें, प्रथम उनका अश्व, दूसरी उनकी स्त्री और तीसरी उनकी तलवार।" यह कहते ही रावदेवान बडी शीघ्रतासे अश्वको चलाया, और शीघ्र ही निर्विघ्नतासे वह पठारमें आपहुँचे।

रावदेवा बंबावदा देशका समस्त अधिकार अपने बडे पुत्र हरराजको पहिले ही दे गये थे, इस कारण उन्होंने वहाँ न जाकर, बुंदानाल नामक जिस स्थानपर उनके पूर्व पुरुषोंने कठिन रोगसे आरोग्यता प्राप्त की थी उसी स्थानपर आपहुँचे। इस देशमें मीना और उसाराजाति उनके अधीश्वर जेताके अधीनमें निवास करती थीं। उस समय उस देशमें एक भी रीतिके अनुसार नगर नहीं था, केवल उपत्यकाकी बाहरी सीमाके अन्तर चारों ओर पाषाणप्रकार और तोरणसे युक्त था एवं उसके मध्यवर्ती किसी स्थानमें इच्छानुसार मीनागणोंने कुटी बनाई थी उसीमें आप निवास करते थे। यहाँके निवासी चितौडके विध्वंस होनेके पहिले महाराणाकी अनुगत्यता स्वीकार कर उनके अधीनमें वास करते थे; परन्तु इस समय राणाकी सामर्थ्य घट गई थी इसीसे रामगढक खीची जातिके अधीश्वर राव गांगा इस देशमें जाकर अपने बाहुबलसे प्रत्येक निवासियोंके निकटसे बलपूर्वक कर लेते थे। रावगांगाके उत्पीडन और अत्याचारासे अपनी रक्षा और बुंदादेशकी रक्षाके लिये उसारा और मीना जाति शीघ्र ही रावगांगाके साथ इसप्रकार संधिबंधनमें आबद्ध हो गई कि वह प्रति दो महीनेके बीचमें पूर्णिमाके दिन बुंदाकी सीमाके बाहर करस्वरूप चौथ दिया करते थे। उन्होंने इस संधिक मतसे अनेक दिनतक चौथ दी। अंतमें रावदेवा उक्त समयमें वहाँ पहुँच गये, सब बात जानकर उन्होंने मीना और उसारा-

(१) " थरु " और " नाल " शब्दका अर्थ उपत्यका है। नाल शब्दमें गिरिसंकटको समझना।

दिकोंको रावगांगाके उत्पीडनसे उद्धार और कर देनेसे रहित करनेकी प्रतिज्ञा की। राबदेवाको वीर पुरुष जानकर उसारा और मीनागण उनके ऊपर विशेष विश्वास स्थापन कर उनके द्वारा रावगांगाके हाथसे अपने उद्धारप्राप्तिके लिये प्रतीक्षा करने लगे।

यथासमयमें रावगांगा सेनासहित बुंदी देशकी सीमामें पहिलेके समान कर ग्रहण करनेके लिये पहुँच। ठीक समय पर करको आया हुआ न देखकर वह अत्यन्त विस्मित हुए अन्तमें उन्होंने दूरसे सेनासहित रावदेवाको उस श्रेष्ठ घोडेपर आता हुआ देखकर पूछा, "कौन आरहा है?" कुछ ही समयमें उत्तर आया "पठारके महाराज आरहे हैं"। रावगांगा जिस अश्वके ऊपर सवार थे वह अश्व भी रावदेवाके उक्त अश्वकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट नहीं था, कवि लिखते हैं कि रामगढके निकटवर्ती पार्वती नदीके किनारे खीचीराज रावगांगाकी एक घोडी एक समय विचरण कर रही थी, इसी अवसरमें पहाडी नदीके गर्भसे एक घोडेने आकर उस घोडीको गर्भाधान कराया, उसीसे उस अश्वका जन्म हुआ, रावगांगा उसी घोडेपर चढकर गये थे। वह घोडा जैसा अद्भुत सामर्थ्यवान् था वैसा ही सुशिक्षित भी था। रावगांगा उस घोडेपर चढकर महावेगसे पठारपती राव देवाकी ओरको चले।

शीघ्र ही दोनों ओर भयंकर युद्धानल प्रज्वलित हो गइ। उस युद्धमें पठारपति रावदेवाकी विजय होनेसे रावगांगा युद्धभूमि छोडकर भाग गये। पठारपति रावगांगाके अश्वके बल और उसके गुणकी परीक्षाके लिये उसके पीछे२ गये। रावगांगाने उपत्यका-को छोडकर शीघ्र ही चम्बल नदीमें प्रवेश किया। रावदेवा अत्यन्त विस्मित होकर चारों ओरको देखने लगे,कुछ ही समयमें रावगांगा चम्बल नदीके पार हो गये हैं। यह देखकर रावदेवाने अत्यन्त विस्मित होकर कहा, "राजपूत तुम धन्य हो! आपका नाम क्या है?" तुरन्त ही उत्तर आया "गांगारखीची" राव देवाने कहा "हमारा नाम देवाहाडा है; हम दोनों जातिके भ्राता हैं, हममें परस्पर कभी शत्रुता नहीं हो सकती, यह चम्बल नदी हम दोनोंके राज्यकी सीमा है"।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं "कि संवत् १३९८ (सन् १३४२ ई०) में मीना और उसारादिकोंके अधीश्वर जैतने रावदेवाको अपना अधीश्वर राजा स्वीकार किया। रावदेवाने उस बुंदानाल नामक देशके मध्यस्थलमें बूँदी नामके एक नगरकी प्रतिष्ठा की, और अंतमें वही हाडाजातिकी राजधानीके नामसे परिणत हुई। पूर्वोक्त घटनासे यद्यपि चम्बल नदी उस समय इसकी पूर्वसीमारूपसे निश्चित हुई थी, परन्तु शीघ्र ही बीचमें हाडाजातिने बलविक्रमसे उस सीमाको लांघकर चम्बलके उस पारके बहुत देश बूँदीके अधीनमें कर लिये। कुछ ही कालके पीछे हाडाजातिका बलविक्रम दिल्लीके बादशाहने सुना, बादशाहके सेनापतिके साथ मिलकर हाडाजातिने अपना अधिकार यहाँतक फैला दिया, और बादशाहसे इतनी भूमि प्राप्त की कि बुँदीराज्यकी सीमाका विस्तार मालवेतक होगया। यही विस्तृत समस्त देश पीछे हाडवती हाडोती नामसे विख्यात हुआ है।

द्वितीय अध्याय २.

रावदेवाका वून्दीमे राजधानीकी प्रतिष्ठा करना—उसारा जातिकी हत्या—रावदेवाका राज्य-त्याग—समरसीका अभिषेक—चम्बलके पूर्वाञ्चलतक उनके शासनका विस्तार—कोटिया भील-पर आक्रमण और उसका मारा जाना—कोटेकी उत्पत्तिका वृत्तान्त—नापाजीका अभिषेक—टोडासोलकी-राजके साथ विवाद—नापाजीका हत्याकाण्ड—हामाका अभिषेक—पठारदेशमे चीतौडपति राणाका अपने अधिकारके विस्तारनेकी चेष्टा करना—हाम का राणाकी सम्पूर्ण आधीनता स्वीकार करनेमे असम्मति—हामाका राणापर आक्रमण—राणाकी प्रतिज्ञा—प्रतिज्ञापालनमे विचित्र प्रवाद—वरसिंह वेरिसाल राधभांडा दुर्भिक्ष—इनके सम्बन्धमे प्रवाद—वूंदके भाडाके दोनों भाइयोंका समर और अमरका वून्दीपर अधिकार—नारायणदासका यवनधर्मावलम्बी चाचाके साथ समर और अमरकी हत्या—नारायणदासका वून्दीपर अधिकार—उनके चरित्रोंके सम्बन्धमे झगडा—नारायणदासका चीतौडके राणकी सहायता करना—नारायणदासकी विजय—राणा रायमलकी भतीजीके साथ नारायणदासका विवाह—उनकी मृत्यु—राव सूर्यमल राणा रत्नसिंहकी भगिनीके साथ उनका विवाह—मृगया—राणा रत्नसिंहका सूर्यमलके प्राणनाश करना—सूर्यमलकी प्रतिहिंसादान—राव सुरतान—उनको सिंहासनसे उतारना—राव अर्जुनका अभिषेक—उनकी प्रशंसनीयमृत्यु—बून्दीके सिंहासनपर राव सुरजनका अधिरोहण।

रावदेवाने संवत १३९८, सन् १३४२ ई० में मीनादिकोंसे बुंदी नामक उपत्यका लेकर वहां बुंदीनामक राजधानीकी प्रतिष्ठा की इसी समयसे समस्त देश हाडौती नामसे विख्यात हुआ। हाडाजातिके राजकवि लिखते हैं कि इसी समय रावदेवाकी हाडाजातीय प्रजाकी अपेक्षा मीना प्रजाकी संख्या बहुत अधिक थी। यद्यपि मीनागण रावदेवाको अपना अधीश्वर मानते थे, परन्तु उनके राजकी सामर्थ्यको घटानेका यत्न हो रहा था। दूसरी ओर मीनाजातिके नेताने रावदेवाकी एक कन्याके साथ विवाह करनेके लिये बडे साहसके साथ उनके समीप यह प्रस्ताव उपस्थित किया। असभ्यनीच जाति मीनानेताको यह अनुचित प्रस्ताव उपस्थित करते हुए देखकर राव देवाने महा क्रोधित हो मीनोंको उचित दंड देनेका विचार किया। इसी कारणसे मीनोंके साथ उनका विवाद होगया। रावदेवाके अधीनमें इस समय जो बहुतसी हाडाजातीय सेना थी, उसकी अपेक्षा निवासी मीनोंकी संख्या अधिक होनेसे रावदेवाने शीघ्र ही बंबावदासे हाडाजातिको और टोडासे सोलंकी जातिको बुलाकर ओसारा जाति और मीनोंको एकवार ही विध्वंस कर दिया। प्रायः सभी मीना इस कारण मारे गये"।

कविने लिखा है, कि "मीनावंशध्वंसके पीछे बुंदीराज देवाने दूसरी बार अपने पुत्रके हाथमें यह दूसरा राज्यभार अर्पण किया। वे पहली बार अपने बडे पुत्र हरराजके हाथमें बंबावदाराज्यको अर्पण कर दिल्लीको चले गये थे। फिर वे बंबावदामें नहीं आये इस समय उन्होंने यह नवीन राज्य बुंदी देश अपने छोटे पुत्र समरसीको दे दिया। राव देवाने किस कारणसे दूसरी बार राज्यको त्याग किया इसका कोई

विशेष भेद नहीं पाया जाता तब केवल इतना अनुमान हो सकता है कि मीनोंके वंशको विध्वंस करके राव देवाका हृदय अत्यन्त व्यथित हुआ था; और इसी कारणसे उनको फिर राज्य करनेकी अभिलाषा नहीं हुई " पुत्रको राज्यपर अभिषिक्त करनेपर राजपूत राजा फिर उस राजधानीमें नहीं रहते। कारण कि उस समय वृद्ध राजाको राज्यशासनकी कोई सामर्थ्य नहीं रहती है। पुत्र ही प्रकृत राज्यरूपसे समस्त शासनशक्तिका प्रयोग करता है। ऐसी अवस्थामें वृद्ध राजा शासनशक्तिका त्याग कर राजधानीमें प्रजारूपसे रहना न्यायसंगत नहीं समझता। उसी प्राचीन रीतिके अनुसार राव देवा बूँदी छोडकर वहांसे पांच कोशकी दूरीपर अमरथून नामक एक ग्राममें रहने लगे फिर वह कभी बूँदी वा बंबावदामें नहीं गये। राजपूत जातिमें इस प्रकारकी रीति प्रचलित है कि राजा वृद्ध होने पर पुत्रको राज्यभार देकर राजधानीसे चले जाते है। क्षत्रियोमें जिस भांति बारह दिन तक अशौच रहता है, उन्हीं बारह दिनोंके पीछे उस शासनशक्तिसे रहित वृद्ध राजाकी एक प्रतिमा निर्माण कर रीतिके अनुसार उसकी दाह क्रिया की जाती थी। रावदेवाके छोटे पुत्र समरसीके हाथमें बूँदीका राज्यभार अर्पण किया गया, बूँदी और बम्बावदा यह दोनों देश स्वतन्त्र दोनो राजाओंके द्वारा शासित होते थे।

समरसीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए ज्येष्ठ नापाजी, यह बूँदीके सिंहासनपर विराजमान हुए, (२ हरपाल) यह जजावर गांवको प्राप्त कर वहीं रहने लगे, और इनके अगणित वंशधर हरपालपोता नामसे पुकारे गये, तीसरे जैतसिंह इन्होंने सबसे पहिले चम्बलके बाहर हाडाजातिके प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार कर दिया। कवि लिखते हैं " कि जैतसिंहने एक समय अस्त्रधारी अनुचरोंके साथ केतून देशके तुंबर अधीश्वरके साथ साक्षात् करनेके लिये, आनेके समय मार्गमें नदीके पार्श्वमें स्थित गिरिसंकटवासी भीलोंके अधिकारी देशपर सहसा आक्रमण किया और उनको परास्त कर दिया। हाडाजातिकी सेनाके महाविक्रमके सम्मुख बहुतसे भीलोंका जीवन नष्ट हो गया। उक्त गिरिसंकट प्रवेशके मार्गमें बाहर एक किला था, जैतसिंहने उसी स्थानपर भीलोंके नेताके प्राण संहार किये। उनके स्मरणके अर्थ उन्होंने इस स्थानपर रणदेव भैरवके उद्देशसे एक विराट्काय पत्थरका हाथी स्थापन किया। वह हाथी कोटा-राजधानीके किलेके चार झोंपरा नामक स्थानके निकट स्थापित है। कोटिया नामक एक श्रेणीके भीलसे कोटा नामकी उत्पत्ति हुई है।

---

(१) इतिहासवेत्ता टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "जैतसिंह और उनके वंशधरगणोंके कई एक पुरुषोंने जब उक्त किले और आसपासके देशपर अधिकार कर लिया था। पंचम पुरुष भोनंगसीके शासनसमयमें बून्दीके राव सूर्यमल्लने उसपर अधिकार किया। जैतसिंहके सुरजन नामका एक औरस पुत्र उत्पन्न हुआ। उसने भीलोंके आदि वासस्थान उक्त देशका नाम कोटा रक्खा, और चारों ओर उसके दीवारें बनवा दी। सुरजनके पुत्र धीरदेवने बडे २ बारह सरोवर खुदवाये, और नगरके पूर्व प्रान्तमें बाँध बंधनसे एक बडा भारी हद तैयार करवाया यद्यपि वह इस समय किशोर—

समरसीके स्वर्ग चले जानेपर नापाजी बुंदीके राजसिंहासनपर विराजमान हुए। राजपूतकविने अपने ग्रंथमें नापाजीकी वीरताकी कथा बहुतसी वर्णन की हैं। नापाजीने टोडा देशके सोलंकी अधीश्वरकी एक कन्याके साथ विवाह किया। वह सोलंकी राजा अन्हलवाडाके अत्यन्त प्राचीन राजाओंके वंशधर थे। एक समय नापाजी टोडा राज्यमें

—सगर नामसे पुकारा जाता है परन्तु यह सभीको विदित है कि वह किसके द्वारा बनाया गया है। धीरसिंहके पुत्र खंधल खंधलके पुत्र भोनंगसी थे; भोनंगसने कोटाराज्यको ले कर फिर उसपर निम्नलिखित उपायोंसे अधिकार कर लिया। धाकर और केसरखां नामके पठानोंने कोटेपर आक्रमण किया भोनगसी इस समय अफीम अधिकतासे सेवन करता था और मदिरा भी पीता था इसीसे उसे उन्माद हो गया,इस कारण उसको बूंदीसे निकाल दिया। उसकी स्त्री अपने स्वामीकी समस्त सेनाके साथ केतन देशको चली गई। उस केतनदेशके निकट ३६० ग्राम हाडाजातिके अधिकारमें थे। भोनंगसी निर्वासित अवस्थामें कुछ दिन रहकर क्रमानुसार चैतन्यता प्राप्त होनेपर अधिक नशा सेवन करनेसे अत्यन्त दुःखित हुए; अतमें उन्होंने कहा कि अब हम अफीम और मदिराका पान नहीं करेंगे और मैं इसी समय केतूनमें स्थित अपनी स्त्री, तथा अपने कुटुम्बीजनोंके साथ मिलनेकी इच्छा करता हूँ। भोनंगकी स्त्री अपने स्वामीके ज्ञानप्राप्ति होने और उनका आगमन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। बुद्धिमती राजपूत स्त्रीने उस समय एक विचित्र उपायसे कोटाराजधानीपर अधिकार करनेका विचार कर अपने स्वामीको उस कार्यमें लिप्त होनेकी सलाह दी। सेनाबलके द्वारा पठानोंके हाथमें कोटेपर अधिकार करते ही जडसे नष्ट होना होगा, यह निश्चय जानकर भोनंगकी रानीने केवल साहस और चतुरतासे अपने मनोरथको सिद्ध करनेका विचार किया। वसंतऋतुमें फाल्गुनोत्सवके समीप आते ही जिस उत्सवके कुछ दिनके लिये क्षत्रिय राजपूत समाजमें सामाजिक रीति नीति एकबार ही दूर हो जाती है, जिस उत्सवमें स्त्री पुरुष सभी स्वाधीनभावसे स्वेच्छाचारका प्रदर्शन किया करते हैं। अश्लीलताकी श्रद्धासे उत्सवके उपलक्षमें भोनंगकी रानीने केतूनकी समस्त राजपूत युवतियोंको अपने यहां बुला भेजा कि "हम सभी कोटेके पठानोंके साथ होली खेलेंगी"। अन्य पक्षमें भोनंगरानीने पठानोंसे भी कहला भेजा; कि वह समस्त राजपूतोंकी स्त्रियोंके साथ मिलकर होलीक्रीडा करें पठानोंने कोटेकी भूतपूर्व रानीके इस आमंत्रणसे अत्यन्त प्रसन्न होकर किंचित् भी विलम्ब न करके उस आमंत्रणको स्वीकार कर लिया। इधर भोनंगकी रानीने अत्यन्त गुप्तभावसे तीनसौ अत्यंत सुन्दर हाडाजातिके अल्प अवस्थावाले-युवकोंको स्त्रीवेशमें सजाकार वृद्धाधात्रीके साथ भेज दिया। ठीक समयपर वह तीनसौ छद्मवेशी युवक अबीर हाथमें लेकर ताली बजाते हुए होली खेलनेके लिये आगे बढे। जिस समय वह छद्मवेशी युवक कोटेमें जाकर पठानोंके मुख और शरीरपर अबीर छिडकने लगे, उस समय वृद्धाधात्रीने भोनंगको लेकर पठाननेताके केसरखांके निकट उपस्थित किया। छद्मवेशी भोनंगने पठाननेताके निकट आते ही अपने हाथमेंके अबीरपात्रको उनके मस्तकपर दे मारा। इसी समय पूर्वसंकेतके अनुसार वह तीन सौ हाडायुवक घाघरेमेंसे तलवार निकाल कर पठानोंका संहार करने लगे। कुछ ही समयके पीछे पठाननेता और उनके अधीनके समस्त पठान यमराजके यहां पहुँच गये और भोनंगने कोटेपर अधिकार कर लिया। पठाननेता केसरखांने नगरमें जो मसजिद बनवाई थी आजतक वह विद्यमान है। भोनंगकी मृत्युके पीछे डूंगरसी कोटेके अधीश्वर हुए। बूंदी अधीश्वर राव सुर्जनने इनको शासनकी सामर्थ्यसे रहित कर कोटेको बूंदीराज्यके अंतर्गत कर लिया।

गये वहाँ इन्होंने एक अत्यन्त सुन्दर संगमर्मरके पत्थरका स्तंभ देखा । तब उसको लेनेके लिये अपनी स्त्रीको आज्ञा दी कि तुम अपने पितासे इसको मांग लेना । हाडाराज-रानीने अपने पिताके निकट उक्त कामनाको प्रकाशित किया, सोलंकी राजने उसकी आशा पूर्ण करना तो दूर रहा, वरन् उसको विशेष अपमानकारक उत्तर दिया । उन्होंने कहा, "कि यों तो एक दिन हाडाराज नापाजी हमारी स्त्रीतकको मांग लेंगे । " वह केवल इतना कहकर ही शान्त न हुए, वरन् जामाता नापाजीको टोडा छोड जानेके लिये आज्ञा दी । यद्यपि नापाजी इस अपमानसे अत्यन्त ही क्रोधित हुए, परन्तु उन्होंने प्रगटमें अपने श्वशुरके साथ झगडा करना न विचारा, इस लिये वह अपने राज्यको चले आये, और तभीसे सोलंकी रानीका तिरस्कार कर उससे घृणा करने लगे; अधिक क्या उन्होंने रानीको अपने शयनागारमें आनेतकका निषेध कर दिया । सोलंकी रानीने इस प्रकारसे अपने स्वामीके क्रोधमें पडकर कुछ दिनके पीछे अपने पिताके निकट समस्त वृत्तान्त कहला भेजा ।

श्रावणमासकी तृतिया तिथि राजपूतोंमें कजलीतीज नामसे विदित है । इस दिन प्रत्येक राजपूत निश्चय ही अपनी २ स्त्रियोंके निकट विवाह करनेके लिये जाते हैं । हमारे देशमें जिस भांति षष्ठीदेवी परम आराध्य है, उक्त कजलीतीजको राजपूत जनक जननी उसी प्रकार षष्ठीदेवीकी पूजा करती हैं । बूँदीराज नापाजीने चिरप्रचलित रीतिके अनुसार उस तिथिमें अपने अधीनमें स्थित समस्त सामन्तोंको अपने अपने देशमें स्त्रियोंके पास जानेकी आज्ञा दी, और उनको बिदा किया । इस कारण उसी दिन बूँदीराजधानी एकबार ही सामन्तोंसे शून्य हो गई, इस शुभ सुअवसरको पाकर उक्त सोलंकी रानीके भ्राता टोडा राजकुमार अपने कितने ही विश्वासी अस्त्रधारियोंके साथ रात्रिके समय अत्यन्त गुप्तभावसे बूँदीकी राजधानीमें आये और महलके भीतर जा अपनी तीक्ष्ण तलवारसे नापाजीके शरीरको खंडखंड करके उनके जीवनको समाप्त कर बूँदीसे भाग गये । उस दिन जितने सामन्त बूँदीराज्यसे बिदा हुए थे उनमेंसे एक सामन्तकी स्त्री अत्यन्त पीडित थी, इस कारण उस सामन्तने ऐसी अवस्थामें स्त्रीको देशमें ले जाना उचित न जाना और वह बूँदी नगरके बाहर राजमार्गमें बैठकर अफीम सेवन कर रहा था । इसी समयमें टोडाके राजकुमार नापाजीका जीवन समाप्त कर अपने सेवकोंके साथ उस मार्गसे हँसते २ जा रहे थे और जिस भाँतिसे उनका प्राण हरण किया था, उसकी सब वार्तालाप करते जाते थे । बूँदीके उक्त सामन्तने उसी समय इस वृत्तान्तके सुनते ही अपनी कमरसे तलवार निकाल कर नापाजीके जीवन हननकारी टोडाके राजकुमारके ऊपर वार किया । राजकुमारका एक हाथ तलवारके आघातसे कटकर राजमार्गमें गिर पडा सोलंकी राजकुमारके सेवकोंने राजकुमारको लेकर उसी समय बडी शीघ्रतासे घोडा चलाया । सामन्त राजकुमारके कंकणसहित कटे हुए हाथको ले अपने दुपट्टेमें बाँधकर उसी समय बूँदीकी राजधानीमें आये ।

सामन्तने बूँदीमें आकर देखा कि सर्व नाश हो गया है नापाजी मारे गये हैं । तथा राजमहलमें हाहाकार मच रहा है । सोलंकी रानी जिसके भ्राताने उसके स्वामीका

प्राण नाश किया है वह शीघ्र ही राजपूतरीतिके अनुसार स्वामीके मृतक शरीरको लेकर चितापर चढनेके लिये तैयार हुई। परन्तु उन्होंने जिस वीरवंशमें जन्म लिया था, उसी वीरवंशके उग्र तेजके बलसे इस महाशोकके समयमें भी वह अपने भ्राताको महावीर कहकर उसकी ऊँची प्रशंसा करने लगी। उनके भ्राताने तलवारके आघातसे नापाजीके शरीरमें सहस्रों घाव कर दिये थे। सोलंकी रानी उस प्रत्येक स्थलको नापाजीका मुख जानकर उस प्रत्येक मुखमें जिसमें ताम्बूल दे सकें इसे निमित्त देवतोंसे प्रार्थना करने लगीं। सोलंकनी जिस समय पतिके शवके साथ चितापर चढनेके लिये सज रहीं थीं उसी समय उक्त सामन्तने आकर हत्याकारी जो टोडा राजकुमारका कंकनसहित कटा हुआ हाथ कपडेमेंसे निकाल कर उनके हाथमें अर्पण किया। सोलंकनी कंकनको देखते ही तुरन्त पहचान गई कि यह उसके भाईका हाथ है। इससे वह कुछ भी शोकित न हुई, और चितापर चढनेके पहिले कलम दवात लेकर अपने भ्राताको इस मर्मका एक पत्र लिखा कि आपके हाथ कट जानेसे आपके वंशमें महाकलंक लगा है। आप जिस भांतिसे हो इस कलंकको दूर करनेका उद्योग करिये। नहीं तो आपके वंशधरोंका सभी एक हाथवाले सोलंकीके वंशधर कहकर उपहास करेंगे। कवि लिखते हैं टोडा राजकुमारने अपनी सती भगिनीके उक्त मंत्रको पढकर उस कलंकको दूर करना असंभव जान शीघ्र ही थंभपर अपना मस्तक बडे वेगसे दे मारा उसीसे उनका मस्तक चूर्ण २ हो गया। और वह इस संसारसे विदा हो गये।

नापाजीके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) हामाजी, (२) नौरंग, वा नवरंग और (३) थर। संवत् १४४० में हामाजी पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। नवरंगके वंशधर नवरंग पोता और थरके उत्तराधिकारी थरु हाडा नामसे विदित हुए।

यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि रावदेवाने जिस समय बूँदी राज्यकी प्रतिष्ठा की उसके पहिले उन्होंने पटार देश और बंबावदाका किला बडे पुत्र हरराजको दे दिया था। हरराजके बडे पुत्र हालूहाडा पिताके वियोगके पीछे पठारके अधीश्वर हुए परन्तु हालूके साथ चीतौडके महाराणाका विवाद उपस्थित हुआ, महाराणाने उक्त पठार देशको बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर बंबावदाके किलेको एकसा कर दिया। इस प्रकार स्वतंत्र स्वाधीन पठार राज्य एकवार ही लुप्त हो गया।

अलाउद्दीनके द्वारा चीतौड विध्वंस होकर राणाके प्रबल प्रतापके लुप्त होनेके पीछे राणाओंने बहुत समय तक हीनवीर्य होकर चीतौडका शासन किया था। चीतौडके अधीनके सामन्त और छोटे २ राजाओंने राणाके इस दुःखमय समयमें मस्तक उठाकर स्वाधीनताको संग्रहकर पिताके देशोंपर अधिकार कर लिया। कुछ ही दिनोंके पीछे चीतौडके महाराजका बलविक्रम पहिलेके समान बढ गया, वह सबसे पहिले उक्त सामन्त और

(१) उर्दू तर्जुमेंमें यों लिखा है कि वे यह प्रार्थना करती थीं कि जितने जखमके मुंह उसके भाईने पतिके शरीरमें बना दिये हैं उतने ही हाथ उसके हो जावे तो एक एक हाथसे एक एक मुँहमे पान देवें।

छोटे२ राजाओंको दण्ड देने और उनको आधीनताकी जंजीरमें बांधनेके लिये अग्रसर हुए। चीतौरके महाराजने सबसे पहिले बूंदीके अधीश्वर हामाजीकी ओर तीक्ष्णदृष्टिसे देखा। महाराणाने हामाजीसे कहला भेजा कि जिस देशमें बूँदीराजधानी स्थापित हुई है वह देश राणाके अधिकारमें है, इस कारण बूंदीराजके राणाकी वश्यता स्वीकार कर नियमित कर देकर राणाकी आज्ञा पालन करनेके लिये नियमित समयपर चीतौडमें उपस्थित होना होगा। राणाक निकटसे उक्त पत्रको पाकर बूंदीराज हामाजीने कहला भेजा " मैं किसी समयमें भी किसी प्रकारसे चीतौड-पतिके अधीनका सामन्त नहीं हूं। यद्यपि मैं चीतौडपतिके प्रभुत्वको स्वीकार करनेमें नित्य तैयार रहता हूँ, परन्तु अपने अधीनके देशोंका हमने राणाके अनुगत रूपसे पट्टा ग्रहण नहीं किया, हमने तलवारके बलसे पठारके मीनोंके निकटसे इस राज्यको जीता है" वास्तवमें महाराणा और हामाजी इन दोनोंकी उक्ति कहांतक सत्य है, यह विचारकी बात है। हामाजीके पूर्वपुरुष रणसीवा रायसी असीरगढसे निकाल दिये गये थे, उस समय चितौडपति राणाने ही उनको आश्रय दिया था और उन्होंने भैसरोडपर अधिकार करनेमें सहायता की थी तथा अलाउद्दीनके चित्तौडपर आक्रमणकरने के पहिले समस्त पठार देश सिसोदीया राज महाराणाके अधिकारमें था। अलाउद्दीनके चीतौडको जय करनेके पीछे राणाका प्रताप और प्रभुत्व एकबार ही लुप्त हो गया। और उसी सुअवसरमे भूमियाँ आदिमें मीना इत्यादि जातिने अपने पिताके देशपर अधिकार कर लिया, और शेषमें उनसे हाडाजातिक पठारदेशको हस्तगत करनेका संकल्प किया।

यद्यपि हामाजीने कहला भेजा था कि उनके पूर्व पुरुषगण तलवारके बलसे बूंदी राज्यको स्थापन कर गये हैं, परन्तु महाराणाने कहा, कि कुछ समयके लिये हमारा शासन रहित हो गया था, पर कोई भी बलसे हमारे पूर्वाधिकारी देशोंपर अधिकार करनेमें समर्थ नहीं है। राणाने फिर हामाजीसे कहला भेजा, कि वे तुरन्त ही बूंदी राज्यके कारण वश्यता स्वीकार करें। हाडाराज हामाजीने बहुतसी चिन्ता करनेके पीछे स्वीकार किया कि वह प्रत्येक दशहरा तथा होली पर्वके समय सेनासहित चीतौडमें जाकर राणाकी आज्ञा पालन करेंगे और अभिषेकके समय राणासे राजतिलक ग्रहण करनेके लिये तैयार हैं, परन्तु वह नित्य चीतौडमें जाकर सामान्य सामन्तोंके समान कभी नहीं रह सकते। हामाजीके इस उत्तरसे महाराणा किसी प्रकार भी संतुष्ट न हुए। और उन्होंने उनको एकबारही अधीनताकी जंजीरमें बाँधने वा रावदेवाके वंशको पठार-से एक वार ही दूर करनेका विचार किया। बूँदीराज हामाजी राणाके अभिप्रायको जानकर कुछ भी भयभीत न हुए वरन् उन्होंने यह स्थिर किया कि इस समय प्राणपण-से स्वाधीनताकी रक्षा करना कर्तव्य है।

चीतौडके महाराणाने शीघ्र ही अपनी सेना और सामन्तोंके साथ बूंदीको जय करनेके लिये बाहर जाकर बूंदीसे कई कोश दूर निमोरिया नामक स्थानमें अपने डेरे डाले। महाराणाके आगमनकी वार्ता सुनकर हामाजीने शीघ्र ही स्वजातीय पाँचसौ बल-वान् सेनाको सुसज्जित किया। नेता हामाजीके अधीनके वीर लाल वर्णके वस्त्र धारण

करके संहारमूर्तिसे आगे बढे। घोर रात्रिके समय अत्यन्त संतापित हो उन पाँचसौ वीर पुरुषोंने निमोरिया नामक स्थानमें राणाके डेरोंमें जाकर बिना सावधान हुई सिसोदीय सेनाका संहार करना प्रारम्भ कर दिया। राणा अचानक एकाएक शत्रुदलसे अपनेको घिरा हुआ देखकर प्राणोंके भयसे चीतौडको भाग गये, और हाडादलकी तीक्ष्ण तलवारसे अगणित सिसोदिया सेना और बहुतसे सामन्त मारे गये। हामाजी विजय प्राप्त कर महा आनंदित हो बूंदीकी राजधानीको लौट आये।

इसके पीछे कविने लिखा है कि हिन्दू कुलतिलक महाराणा उस अति सामान्य सेनासे परास्त और अपमानित होकर राजधानीमें आ बूँदीराजसे बदला देनेके लिये महा क्रोधसे उन्मत्त चित्त हो सेनाका संग्रह करने लगे, और यह प्रतिज्ञा की कि जबतक मैं उनको न जीत लूंगा तबतक अन्न जल नहीं ग्रहण करूंगा। राजपूत महाराजने एकबार जो प्रतिज्ञा की है प्राण रहते हुए वह प्रतिज्ञा किसी प्रकार भी अपूर्ण नहीं होगी। चीतौडके महाराज बिना बूंदीको जय किये हुए अन्नजल नहीं करेंगे ऐसी प्रतिज्ञा की है यह सुनते ही मंत्री समाज और सामन्त अत्यन्त उत्कंठित हुए उनकी उत्कण्ठाका कारण यह था कि बूंदी राजधानी चीतौडसे ३० तीस कोश दूर है, और महा पराक्रमी हाडाजाति प्राणपणसे बूंदीकी रक्षामें नियुक्त हैं। इस कारण सरलतासे बूँदीको जय करना असंभव है, इस लिये राजाकी प्रतिज्ञा पालन करना भी अत्यन्त दुष्कर है। इसी निमित्त मंत्री और सामन्त महाराजको ऐसी कठिन प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये बारंबार निषेध करने लगे, परन्तु चीतौडके राजाने जब इस प्रकारकी प्रतिज्ञा की है तब अब किसी प्रकारसे भी वह प्रतिज्ञा रहित नहीं होसकते बिना प्रतिज्ञाका पालन किये महाराज किसी भांति अन्नजलको ग्रहण नहीं करेंगे अन्तमें कुटुम्बियोंने एक विचित्र उपायसे चीतौडके महाराजको उस कठोर प्रतिज्ञाके पाशसे मुक्त कर लिया। मंत्रियोंने महाराजके समीप प्रस्ताव किया कि चीतौडमें हम एक कृत्रिम बूँदी दुर्ग बनाये देते हैं आप सेनासहित उस किलेपर अधिकार कर अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कर लीजिये। सामन्तोंकी सम्मतिसे महाराज शीघ्र ही सम्मत हुए। शीघ्र ही चीतौडमें कृत्रिम बूँदी दुर्ग तैयार हो गया सच्चे बूँदीके किलेमें जितने अंश तथा वह जिस नामसे पुकारा जाता था तथा जो स्थान जिस भावसे स्थित थे शिल्पीदलने अविकल ठीक ज्योंका त्यों किला बनाकर तैयार कर दिया। चीतौडके महाराजके यहाँ पाथर हाडा पठारहाडा जातिकी सेनाका एक दल था कुंभावैरसी उस दलके प्रधान नेता थे। वैरसी शिकार खेलकर लौट रहे थे कि मार्गमें उस कृत्रिम किलेको बनता हुआ देखकर कौतूहलके वशीभूत हो उसके निकट गये वैरसीने सुना कि इस कृत्रिम बूँदीके बिना जय किये हुए महाराणा अन्न जल ग्रहण नहीं करेंगे। यह सुनते ही वैरसीके हृदयमें जातीय गौरवकी कामना उदय हुई, उन्होंने कहा कि बूँदीके किलेके कृत्रिम होनेसे भी हम इसकी महाराणाके हाथसे रक्षा करेंगे।

किलेका बनना समाप्त हो गया, राणाके पास समाचार भेजा गया। राणा सेना लेकर उस कृत्रिम किलेपर अधिकार करके अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये आगे

बढे । महाराणाने आज्ञा दी थी कि किलेमें सभी सिसोदिया सेना रहकर खाली बंदूकों-का फैर करे, और वह बल प्रकाश करके किलेकी रक्षा करनेमें नियुक्त रहे । परन्तु जैसे ही महाराणा किलेके समीप गये कि वैसे ही उस शब्दके बदलेमें सन् सन् शब्द करती हुई यथार्थ गोली किलेके भीतरसे निकलकर राणाकी सेनादलके ऊपर गिरने लगी । राणाने इस आश्चर्यदायक घटनाकी खोज करनेके लिये किलेके भीतर एक दूतको भेजा । वैरसीने उस मट्टीके बने हुए किलेके द्वारपर दूतने आते ही उससे कहा "कि तुम राणासे जाकर कह दो कि हाडाजातिके इस कृत्रिम किलेको भी सरलतासे जय करके हाडाजातिके मस्तकपर कलंकका टीका नहीं दे सकते ।" हाडाजातिके नेता वैरसीने महाराणाके प्रति सम्मान दिखाकर शीघ्र ही उस छोटे किलेके द्वारपर अपनी पगडी बिछाकर किलेपर अधिकार करनेके लिये बुला भेजा । शीघ्र ही प्रबल समर उपस्थित हो गया । जातिके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये वैरसी और उनके अधीनकी सेनाने घोर पराक्रमके साथ युद्ध करके अन्तमें सभीने उस अगणित सिसोदिया सेनादलके द्वारा आक्रान्त हो अपनी जातिके गौरवकी रक्षाके लिये जीवन त्याग कियाँ ।

कविने लिखा है कि हिन्दूपति राणाने उक्त प्रकारसे कृत्रिम बूँदीको जय करनेके पीछे फिर यथार्थ बूँदीपर अधिकार कर हामाजीको दंड देने वा पठारसे हाडाजातिको दूर करनेकी अभिलाषा नहीं की, कारण कि उन्होंने यह निश्चय जान लिया था कि हाडाजाति अत्यन्त बलशाली और असीम साहसी है इससे यह विपत्ति आनेपर भली भाँतिसे सहायता करेगी, इसीसे हाडाजातिको असंतुष्ट न किया । वरन् हामाजी जहांतक वश्यता स्वीकार करनेको सम्मत हुए उसीसे महाराणाने भलीभाँतिसे तृप्त होना अपना कर्तव्य जाना ।

वीरश्रेष्ठ हामाजी सोलह वर्षतक बूँदीके सिंहासन पर बैठकर स्वर्गको चले गये । हामाजीके दो पुत्र उत्पन्न हुए नरसिंह और लाला । लालाको खुटकड नामवाला देश मिला, लालाके नोवर्म और जैता नामवाले दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनके अगणित वंशधर नोवर्मपोता और जैतावत नामसे विख्यात हुए।हामाके बडे पुत्र वरसिंहने बूँदीके राजछत्रके नीचे पंद्रह वर्षतक बैठकर राज्य किया । उनके तीन कुमार उत्पन्न हुए बैरीसाल जवद और तीसरे नीमा । जवदसे तीन शाखाओंकी उत्पत्ति हुई, और नीमाके वंशधर नीमावत नामसे विख्यात हुए । वीरसिंहके बडे पुत्र बैरीसालने एकादि क्रमसे पचास वर्षतक राज्य करके पीछे संवत् १५२६ में प्राण त्याग किये । उनके औरससे निम्नलिखित सात

---

(१) इतिहासवेत्ता टाड साहब इस स्थानपर लिखते हैं कि फ्रान्सके एक बादशाहका इतिहास इस घटनासे बहुत मिलता जुलता है ।"फ्रांसमे वाइसडी बलुगन" स्थान है उसे मडरिड कहते हैं । जब कि फ्रांसिस १ को राजधानीको लौटनेकी आज्ञा हुई तो उसने "मडरिड" का सर्वनाश करनेकी प्रतिज्ञा की, परन्तु सौभाग्यवश उसका पेरिसमे आ जाना ही बडे आनन्दकी बात थी, अतएव उस समय इसके मंत्रियोंने उसे ऐसी ही सलाह दी थी जैसी कि राणाके मंत्रियोंने राणाको दी ।

पुत्र उत्पन्न हुए। (१) राय भांडा, (२) राव सांडा, (३) अखैराज, (४) राव ऊधो, (५) राव चूडा, (६) समरसिंह और (७) अमरसिंह। टाड साहब लिखते हैं कि पहिले पांच वीरोंसे पाँच वंशोंकी शाखाओंका विस्तार हुआ। परन्तु समर और अमरसिंहने हिन्दू धर्मको छोडकर यवनधर्मका अवलम्बन किया था।

राव भांड दान वीरता और चतुराईके बलसे समस्त रजवाडेमें अपना नाम अक्षय करगये हैं। उनके समान निःस्वार्थ दाता इस समय रजवाडेमें दूसरा नहीं था। संवत् १४४२, सन् १४८६ ई० मे जिस समय समस्त राजस्थानमे दुर्भिक्षकी अग्नि प्रबलतासे प्रज्वलित होकर अगणित जीवोंका प्राण संहार करती थी. राव भांडाने उस समय मुक्तहाथसे अन्न और धन दान करके अपनी अक्षय कीर्तिको उज्ज्वल किया था। कविने लिखा है, कि उस समस्त भारतवर्षव्यापी दुर्भिक्ष होनेके एक वर्ष पहिले बूँदीराज रावभांडा स्वप्न देखकर जान गये थे. अर्थात् उन्होंने स्वप्नमें महाकाल पडा हुआ देखा था। उन्होंने स्वप्नमें देखा कि अत्यन्त काले वर्णके भैंसे पर सवार हुआ काल आकर उनके सम्मुख उपस्थित हुआ। रावभांडाने कालको स्वप्नमे देखकर उसी समय ढाल तलवार लेकर कालपर आक्रमण किया। कालने कहा, " धन्य भाँडा ! मै काल हूँ मेरे शरीरमे तुम्हारी तलवारका आघात नहीं लगेगा सृष्टि भरमे एकमात्र तुमहीने साहसमें भरकर मुझपर आक्रमण किया है। इस समय मै जो कहता हूँ उसे श्रवण करो। मैं संवत् १५४२ में दर्शन दूंगा, समस्त भारतवर्ष मरुभूमि हो जायगा; तुम पहिलेसे ही धन धान्यका संग्रह करना प्रारम्भ करना और जब दुर्भिक्ष पडैगा उस समय उस धान्यके द्वारा सबकी सहायता करना, कभी तुम्हारा धान्य समाप्त नहीं होगा।" यह कहकर काल उसी समय अन्तर्ध्यान हो गया। राव भांडाने कालकी इस आज्ञा पालन करनेमें शीघ्रतासे यत्न किया। उन्होंने आसपासके प्रत्येक राज्योंसे बहुतसा धान्य संग्रह कर लिया। इस प्रकार एक वर्ष बीत गया। फिर इसी प्रकारसे दूसरा वर्ष व्यतीत हुआ, परन्तु इस वर्षमे वर्षा न हुई इससे शीघ्र ही समस्त भारतवर्षमें महा दुर्भिक्षने आकर दर्शन दिया। राव भांडा पहिला संग्रह किया हुआ धान्य जौ, गेहूँ, चावल इत्यादि नाज बराबर अनाहारी प्रजाको दान करने लगे। अन्तमें भारतवर्षके दूरवर्ती देशके राजाओंने राव भांडाके निकटसे धान्यकी सहायता मांगी। राव भांडाने उनकी वह कामना पूर्ण करनेमे किंचित् विलम्ब नहीं किया। यद्यपि उस महा दुर्भिक्षके समयमें भारतके अगणित देशोंके बहुतसे मनुष्योंने प्राण त्याग किये परन्तु बूँदी राज्यके सब श्रेणीके मनुष्य राज्यकी सहायतासे दुर्भिक्षके प्रबल कोपसे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ हुए। राव भांडा के स्मरणके अर्थ आजतक "लंगरवा गूघरी" नामसे बूँदीमे दीन दुःखियोंको धान्य वितरण किया जाता है।

यद्यपि राव भांडा परम दयाशील और परोपकारी पुण्यवान राजा थे; परन्तु विधाताने उनके भाग्यमें अन्त समयमें अत्यन्त दुःख भोगना लिखा था। राव भांडाके

दो भाई इनसे छोटे थे समरसिंह और अमरसिंह, यह मुसलमान धर्मका अवलम्बन करनेसे दिल्लीश्वरके प्रियपात्र होकर दिल्लीश्वरकी सहायतासे बूंदीराज्यको जय करनेमें अग्रसर हुए । राव भांडा प्रबल बलशाली होकर भी सम्राट्की शिक्षित सेनाके अधिक होनेसे कुछ न कर सके। शीघ्र ही समर और अमरने बूंदीराज्यको जय कर लिया। यवन धर्मावलम्बी दोनों भ्राताओंके हाथमें बूँदीके पडते ही अन्तमें राव भांडाने मातोंदा नामक स्थानमें जाकर पर्वत शिखरपरसे गिरकर प्राण त्याग दिये, उन्होंने सब मिलाकर इक्कीस वर्षतक राज्य किया था। उक्त समर और अमरने यवन होकर समरकंदी और अमरकंदी नाम धारण कर एक साथ मिलकर ग्यारह वर्षतक बूँदीका राज्य किया था।

राव भांडा दो पुत्र छोड गये थे, एकका नाम नारायणदास था और दूसरेका नाम नरवद था । नरवद अन्तमें मातोंदा ग्रामके अधीश्वर हुए। नारायणदास उस मातोंदा गाँवमें रहकर जब अवस्थापर पहुँचे तभी इनके वीर हृदयमें पिताके राज्यके उद्धार करनेकी कामना प्रबल हो गई । नारायणदासने शीघ्र ही पठार देशकी समस्त हाडाजातिको इकट्ठा करके कहा, कि हम क्या तो बूँदी राज्यपर अधिकार करैंगे, और नहीं तो रणभूमिमें अपना प्राण त्याग देंगे । सभी हाडा-जातिके प्रत्येक वीरने नारायणदासके समान उक्त प्रतिज्ञाके करनेमें किंचित् भी विलंब नही किया। थोडे ही दिनोंके पीछे नारायणदासने उक्त बूँदीपति दोनो यवन चचाओंके पास कहला भेजा, "कि मैं आपसे साक्षात्कर आपके चरणवंदन करनेकी अभिलाषा करता हूं ।" नारायणदास अशिक्षित है; और एक सामान्य देशमें रहकर इतने बडे हुए हैं, इस कारण उनसे कुछ अनिष्टकी संभावना नही है, यह विचार कर दोनों चचाओंने नारायणदासको बूँदीके महलमें चले आनेमें सम्मति दे दी।

दोनों विधर्मी चचाओंकी अनुमति पाकर नारायणदास अत्यन्त अल्पसंख्यक परम विश्वासी और महाबली कितने ही अस्त्रधारी अनुचरोंके साथ बूँदी नगरके चौकमें आकर दिखाई दिये। वह अपने सेवकोंको वहाँ ही गुप्तभावसे रखकर इकले महलकी ओरको चले। नारायणदासके दोनों चचा विपत्तिकी कुछ भी आशंका न करके अस्त्र-हीन हुए एक कमरेमें बैठे थे । नारायणदासके हृदयपर प्रतिहिंसाकी अग्नि भयंकर रूपसे प्रज्वलित हो रही थी। इस कारण खड्ग हाथमें लिये हुए उसकी संहारमूर्तिको देखते ही उनके दोनों चचा प्राणोंके भयसे सुरंगके रास्तेसे भाग जानेके लिये बडी शीघ्रतासे कमरेसे चल दिये। नारायणदासने दोनों विधर्मी चचाओंके अभिप्रायको जानकर उसी समय क्रोधित हुए सिंहके समान छलांग मारकर आगे बढे खड्गके प्रहा-रसे अपने चचा समरको पृथ्वीपर गिरा दिया। उस अवसरमें अमर दूसरे कमरेमें न जा सका था कि इसी अवसरमें नारायणदासने अपने तीक्ष्ण भालेसे अमरके शरीरको बेध दिया। उसी समय वीर नारायणदासने अपने खड्गके आघातसे दोनोंका शिर काटकर उस रुधिरसे भीगे हुए शरीरको बूँदीमें ले जाकर देवीके मंदिरमें देवीके सन्मुख मुंडोंका

उपहार दिया और जयशब्दका उच्चारण कर चौकमें स्थित अपने अनुचरोंको बुला लिया। अनुचरगण पहिले इशारेसे नारायणदासके बुलाते ही नंगी तलवारें लिये हुए नगरमें आये और उन्होंने बडी शीघ्रतासे यवनोंका विध्वंस करना प्रारंभ कर दिया। इस समय नगरवासी प्रत्येक हाडाजातिकी प्रजाने नारायणदासके साथ मिलकर बूँदीमें रहनेवाले प्रत्येक यवन वीरका प्राण नाश करके अवज्ञाके साथ उनके शवोंको नगरकी हदसे दूर फेंक दिया। राव नारायणदासने अतुल वीरताके साथ यवनोंका संहार करके अपने पिताकी राजधानी बूँदीपर अधिकार कर लिया था, इसके स्मरणार्थ हाडागण राव नारायणदासने महलके भीतर जिस कमरेमें समरके मारनेके समय खड्गका आघात किया था, तथा उस हत्याके समय कमरेमें स्थित जिस पत्थरपर वह खड्गके आघातसे गिरे थ। दशहरा पर्वोत्सवके समयमें उस आघात चिह्नयुक्त रुधिरसे सने हुए पत्थरकी पूजा की जाती है[1]।

कविके वर्णनसे जाना जाता है कि नारायणदास एक विराट्काय महाबलवान् वीरपुरुष थे। प्राचीन राजपूत वीरोंमें बहुतसे वीर भय किसको कहते हैं; इसको जानते ही नहीं थे। नारायणदासके साथ भी भयका इसी प्रकारका सम्बन्ध था वह कहा करते थे, कि मैं बडा हूँ, विपत्ति छोटी है। वास्तवमें नारायणदासने यौवन समयसे मृत्युतक जैसे असीम साहससे अपने बलविक्रमको प्रकाशित किया था इससे उनका वह गर्वपूर्ण वचन सत्य बोध होता है, परंतु अत्यंत दुःखका विषय है कि वह असीम साहसी वीर पुरुष होकर भी एकमात्र अधिक अफीमके सेवन करनेसे समय २ पर अपनी सद्गुणावलीको भली भाँतिसे प्रकाशित न कर सके। वरन् उनके उसी व्यसनके कारण एक २ समयपर अत्यन्त अप्रीतिदायक कारण उपस्थित हो जाते थे। नारायणदासके समयमें समस्त रजवाडेमें अफीम सेवनकी रीति अत्यन्त प्रबल हो गई थी। सर्वसाधारण राजपूत एक पैसेके मूल्यकी अफीमको सेवन करते थे। अनभ्यासियोंके पक्षमें उस बूँदी राज्यमें प्रचलित एक पैसेकी अफीमसे प्राण नाश हो जाते थे परन्तु वीर तेजस्वी नारायणदास एक दफेमें सात पैसेकी अफीम खाते थ। इसी कारण अधिक अफीमके सेवन करनेसे अनक प्रकारके अप्रार्थनीय काण्ड उपस्थित हो जाते थे, इसीसे बूँदीमें आजतक नाना भाँतिके प्राचीन प्रवाद प्रचलित देखे जाते हैं।

नारायणदासके समसामयिक राणा रायमल्ल जिससमय चीतोडके सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय मांडू देशके पठानोंने चीतौडपर आक्रमण कर किलेको घेर लिया, पूर्वसंधिके मतसे चीतौडपतिने नारायणदासको सेनासहित सहायता करनेके लिये बुला भेजा, वीरवपु नारायणदासने हाडा सेनादलके मध्यमेंसे ५०० वीरोंको चुन लिया और उन्हींके साथ आप चीतौडकी ओरको चले। बूँदीसे चलकर पहिले दिन मार्गमें विश्राम करनेके लिये नारायणदास एक वृक्षके नीचे नित्य नियमानुसार

(१) कर्नल टाड साहब लिखते है कि बून्दीके प्राचीन महलमें सीढीवाले कमरेके पार्श्वमें उन्होंने वह पत्थरका टुकडा देखा था।

अफीम सेवन कर नेत्रोंको मूँदकर सो रहे थे, और मक्खियाँ आ आ कर उनके मुखमें घुस रही थीं। इसी अवसरमें एक तेलीकी स्त्री कुएँसे जल भरनेके लिये उसी वृक्षके नीचे आकर खडी हुई। उसने नारायणदासको देखकर एक सेवकसे पूछा कि "यह कौन है ?" उत्तर मिला कि, "यही बूंदीके महाराव हैं, चीतौडपतिकी सहायताके लिये वहाँ जा रहे हैं।" इसपर उस रमणीने नारायणदासकी उस अवस्थाको देखकर कहा कि "हा भाग्य ऐसा बोध होता है कि महाराणाको और किसीकी सहायता न मिली जो कि इस नशेखोरकी सहायता माँगी है।" रजवाडेमें इस प्रकारका प्रवाद प्रचलित है कि अफीमके सेवन करनेवाले नेत्र मूंदे रहते हैं, पर जो कुछ बात उनके कानमें कही जाती है उसको वह बडी जल्दी सुन लेते हैं। वास्तवमें उस स्त्रीकी उक्त उक्तिको सुनते ही अधखुले नेत्रोंसे मुख फैलाये हुए उस वीर श्रेष्ठ नारायणदासने शय्यासे उठकर उस स्त्रीके पास जाकर गंभीरस्वरसे पूछा "कि तुम क्या कह रही हो ?" तब वह नारायणदासकी भयंकर मूर्तिको देखकर भयभीत हो क्षमा मांगनेके लिये उद्यत हुई; नारायणदासने कहा कि "कुछ भय नहीं है, क्या कहरही थी सो कहो"। अतः उस स्त्रीके हाथमें एक दीर्घकठिन लोहेका दंड था, नारायणदासने उस दण्डको लेकर दोनों ओरसे पकडकर थोडे बलसे ही झुका कर उस स्त्रीके गलेमें अलंकारके समान पहरा दिया, वह अत्यन्त काठिन लोहेका दंड दोनों ओरसे परस्परमें मिलकर स्त्रीके गलेमें हारके समान पड गया, वीरश्रेष्ठने उसी समय स्त्रीसे कहा कि "मैं जब तक राणाकी सहायता करके न लौट आऊँ तब तक तुम उस लोहेके अलंकारको पहिरे रहना। यदि यवनोंमें ऐसा कोई वीर हो जो कि तुम्हारे गलेमेंसे इसे निकाल सकै तो उससे इसको निकलवा लेना।" वास्तवमें तेलीकी स्त्रीके उस लोहके अलंकारको निकालनेका योग्य पात्र एक नारायणदासके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं था।

जो हो, पठानगणोंने इस समय सेनासहित चीतौडको चारों ओरसे इस प्रकारसे घेर लिया था कि चितौडसे एक प्राणीको भी बाहर होनेकी आशा नहीं थी। बूंदीके राव नारायणदासने पठारके गिरिसंकटमें होकर पांचसौ वीर सेना ले रात्रिके समय हठात् पठानोंके डेरोंमें जाकर शत्रुओंका संहार करते २ पठानोंके सेनापतिके डेरोंमें प्रवेश किया। उनकी उस विराट्मूर्ति और हाडासेनादलका वह भयंकर हुंकार और संहार मूर्ति देखकर पठानोंकी सेना महाभयभीत हो डेरोंको छोडकर चारों ओरको भागने लगी। वीर नारायणदास और उनके अधीनके हाडादलने उस समय मनकी साधसे पठानोंका संहार करनेमें कसर न की। पठानोंने चीतौडके घिरते ही भागना प्रारम्भ कर दिया, बूंदीके राजमें नगारे बजने लगे, चीतौडके राजा रायमलने दूसरे दिन प्रातःकाल ही चीतौडक किलेकी दीवारपरसे देखा कि समस्त पठान भाग रहे हैं, और राव नारायणदास सेना सहित आ पहुँचे हैं। महाराणा रायमलने महा आनंदित होकर उसी समय चीतौडसे बाहर जा नारायणदासको बडे आदरभावके साथ ग्रहण कर जयजयकार करते हुए चीतौडमें प्रवेश किया। बूंदीके अधीश्वर नारायणदासके केवल पांचसौ हाडा

सैन्यकी सहायतासे पठानोंको भगानेसे राणाके अधीनके सिसोदिया वीरसामन्त प्रगट रूपसे उनकी वीरताकी ऊँची प्रशंसा करने लगे । शीघ्र ही महलमें नारायणदासके सम्मानके लिये एक बडी भारी सभा हुई । उस सभामें मेवाडके सभी सामन्तोंने बूंदीके महारावके प्रति सम्मान दिखाया, जिन महावीरकी सहायतासे चीतौडकी रक्षा हुई उन वीरको देखनेके लिये राणाके रनिवासकी स्त्रियाँ परदेके भीतरसे उनकी उस विराट्मूर्तिको देखने लगीं । यद्यपि नारायणदास अफीमको अत्यन्त सेवन करते थे, और अफीम सेवन करनेमें अधिक प्रसिद्ध हो गये थे, यद्यपि उनकी मूर्ति यथार्थ भीमके समान थी, परन्तु राणाके भाईकी कन्याने उन महावीरको पतिरूपसे वरण करनेके लिये सखियोंके सामने अपनी अभिलाषाको प्रकाशित किया । दूसरे दिन यह समाचार राणाके कानमें भी पहुँचा, वीरश्रेष्ठ नारायणदासके द्वारा जिस प्रकारके उपकार हुए हैं, उनकी कृतज्ञता प्रकाश करनेके लिये अपनी भतीजीको उनके करकमलमें अर्पण कर उनका सम्मान बढाना अवश्य कर्त्तव्य है, राणाने यह सिद्धान्त कर लिया । इधर बूंदीके महाराज नारायणदासने भी महाराणाके वंशसे कन्या लेनेमें अधिक सम्मान जानकर शीघ्र ही उस विवाहमें अपनी सम्मति दी, बडी धूमधामके साथ विवाह हो गया । नवीन विवाहिता बहूके साथ वीरश्रेष्ठ नारायणदास गौरवके साथ बूंदीको लौट आये । ऐसा भी प्रसिद्ध है कि वीरश्रेष्ठ नारायणदास दिनपर दिन अधिक अफीम सेवन करते थे और इसी कारणसे नशेकी तरंगमें एक समय उन्होंने रात्रिको मेवाडकी राजकुमारीके अंगको क्षत विक्षत करके उसके अनुपम सौन्दर्यको नष्ट कर दिया था । जब दूसरे दिन प्रातःकाल उन्हें चैतन्यता हुई तो देखा कि मेवाडकी राजकुमारी कुछ भी दुःखित नहीं हुई है और उसने मेरा कुछ भी तिरस्कार नहीं किया है, तब उन्होंने स्वयं अपनेको धिक्कार दिया, और जिस पात्रमें अफीम थी उस पात्रको स्त्रीके हाथमें देकर कहा कि अब मैं किसी प्रकारसे अधिक अफीम सेवन करके ऐसा कुकर्म नहीं करूँगा । इस प्रकारसे वीर तेजस्वी नारायणदासने अपने पिताके राज्यको अधिक बढा लिया था, और शांति स्थापन कर बत्तीस वर्ष तक उस राज्यको शासन करके आप स्वर्गको चले गये ।

नारायणदासके स्वर्ग चले जानेपर उनके एकमात्र पुत्र सूर्य्यमल संवत् १५९० सन् १५३० ईसवीमें बूंदीके सिंहासनपर विराजमान हुए, कवि कर्णीदानने इस बातको भलीभांतिसे लिखा है कि सूर्यमल भी अपने पिताके समान दृढ बलिष्ठ और असीमसाहसी पुरुष थे; कवि लिखते हैं कि रामचन्द्र और पृथ्वीराजकी जिस भाँति जानुतक लंबी भुजा थी सूर्यमलकी भी दोनों भुजायें उसी प्रकारसे महावीरोंके समान जानुतक लम्बी थीं ।

सूर्यमल राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए, मेवाडके राणाके वंशके साथ फिर एक वैवाहिक सम्बन्ध बंधन स्थापित हुआ राव सूर्यमलने सूजाबाई नामकी अपनी एक भगिनीको चितौडके महाराजा राणा रत्नसिंहके करकमलमें अर्पण किया, और राणा

(१) इस प्रकार लंबी भुजाओंवाले पुरुषको आजानुबाहु कहते हैं ।

रत्नसिंहने भी अपनी बहिनको राव सूर्यमलके करकमलमें अर्पण किया । इस दोनों ओरके विवाह होनेसे मेवाड़के महाराजके साथ बूँदीराजकी दृढ़ आत्मीयता स्थापित हो गई । परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि यह आत्मीयता अन्तमें महा शत्रुतामें परिणत हुई । कवि लिखते हैं कि राव सूर्य्यमल अपने पिता नारायणदासके समान अत्यन्त अफीमची थे । एक समय राव सूर्यमल चीतौडकी राजधानीमें जाकर राजसभामें अधिक अफीम सेवन करनेसे नेत्रोंको मूँदे हुए बैठे थे । कि इसी समयमें मेवाडके पूर्वदेशके एक सामन्तने सूर्यमलको सोया हुआ जानकर हँसीसे इनके कानमें एक तिनका कर दिया । तुरन्त ही सूर्य्यमलने अपने दोनों नेत्र खोले और क्रोधित हुए सिंहके समान उठकर अपनी तलवारके एक ही आघातसे उस सामन्तके शिरके दो खंड कर दिये । उस मृतक सामन्तके पुत्रके हृदयमें बदला लेनेकी अग्नि प्रबलतासे भडक उठी । परन्तु सूर्यमलके अत्यन्त बलशाली वीर और महाराणाका परम आत्मीय जानकर उस समय उसने किसी भांति भी बदला लेनेका साहस न किया, परन्तु उसी समयमें उसके मनही मनमें प्रतिहिंसाकी अग्नि प्रबल होने लगी। मृतकसामन्तके पुत्रने सबसे पहिले सूर्यमलके प्रति महाराणा रत्नसिंहके विजातीय कोपको उत्तेजित करनेके लिये चेष्टा की।उसने राणा रत्नसिंहसे कहा कि "सूर्यमल केवल अपनी भगिनी सूजाबाईके साथ साक्षात् करनेकी इच्छासे आपके रनिवासमें नहीं गये हैं, उनके हृदयके भीतर अवश्य ही अन्य कोई दुरभिसंधि है ।" पिछली एक घटनासे राणाके हृदयमें वह कथा प्रबलरूपसे अंकित हो गई ।

सुन्दरी सूजाबाईने अपने स्वामी और भ्राताको परितोषरूपसे भोजन करानेके लिये स्वयं अनेक भांतिके व्यंजन बनाकर दोनोंको भोजन करनेके लिये रनिवासमें बुला भेजा । राणा रत्नसिंह और सूर्य्यमल रनिवासमें भोजन करनेके लिये गये, सूजाबाई दोनोंको भोजन परोस कर स्वयं व्यंजन करनेके लिये बैठी।राजपूतानेमें नारीकुलमें सभीने जिस वंशमें जन्म लिया है वह पतिके वंशकी अपेक्षा उस पिताके वंशके गौरव और सम्मानकी रक्षा करना मुख्य जानती हैं । पिताके कुलकी यदि कोई निन्दा करने लगे, तो वह उसको कदापि सहन नहीं कर सकती । इसीसे पहिलेसे ही राजवाडोंमें अनेक अनिष्ट होते आये हैं । जब राणा और राव दोनों भोजन कर चुके तब सूजाबाईने व्यंग वचनसे कहा, कि "हमारे भ्राताने सिंहके समान भोजन किया है, परन्तु मेरे स्वामीने तो मानों बालकके समान अन्न और व्यंजन लेकर खेल किया है" । जैसे ही राणाने यह वचन सुने कि वैसे ही वह अपने मनमें अत्यन्त क्रोधित हुए। उन्होंने समझा कि मानों उनके

(१) यह बात असंगत मालूम होती है । पहिले तो जब राणारायमलकी भतीजी नारायणदासको व्याही गई थी तब नारायणदासकी पुत्री सूजाबाईका व्याह राणा रत्नसीके साथ होना अनुचित है फिर हिंदूशास्त्रका राजपूतरीतिके अनुसार यह तो और भी आयोग्य सम्बन्ध है कि राणा रत्नसी भी अपनी बहिन सूर्य्यमलको व्याह दे । इसमें कवियोंकी कुछ गडबड अवश्य है और विदेशी होनेके कारण टाड साहब इस बातको समझ नहीं सके ।

अपमानके लिये ही रानी सूजाबाई और राव सूर्यमलने इस प्रकारसे व्यंग किया है। यह अनुभव कर वह प्रतिहिंसाका बदला लेनेके लिये उत्तेजित हुए। परन्तु राजपूतजातिके पक्षमें अतिथिके प्रति अभद्र आचरण वा उसका जीवन नाश करना महाकलंककारी जानकर राणाने उस समय उनसे बदला नहीं लिया। कुछ ही दिनके पीछे इस रहस्यसे ही सूजाबाई अकालमें इस लोकको छोडकर परलोकवासिनी हुई; और राव सूर्यमल भी मारे गये। और इसी काण्डकी प्रतिक्रियास्वरूपमें राणा रत्नसिंहने स्वयं भी प्राण त्याग किये।

राव सूर्यमल चीतौड़से बिदा होकर बूँदीको जानेके लिये तैयार हुए तब राणा रत्नसिंहने सूर्यमलसे कहा कि "आगामी वसन्तऋतुमें फाल्गुनोत्सवके समयमें हम बूँदीके वनमें शिकार खेलनेके लिये आवैंगे।" राव सूर्यमलने यह सुनकर आनंद प्रकाश कर राणाको निमंत्रण भेजा। कुछ दिनके पीछे फाल्गुनोत्सवके आनेपर राणा रत्नसिंह अपनी सेना और सामन्तोंके साथ पठारके मार्गसे बूँदीकी ओरको चले। चम्बल नदीके पश्चिम किनारे नान्दना नामक स्थानके गहनवनमें मृगया की जायगी पहिले यह निश्चय हो गया था। उस वनमें अगणित पशु थे, सिंहसे लेकर सामान्य खरगोशतक रहते थे। राणाके वहाँ पहुँचते ही बूंदीके अधीश्वर राव सूर्यमल भी सेनासहित उनसे आ मिले। तुरन्त ही दोनों महाराज सेनासहित मृगया करनेके लिये बाहर चले। सबसे पाहिले सेनादल दो भागोंमें विभक्त होकर आगे २ भयंकर नादसे चीत्कार करते हुए जंगलमें जाने लगे। उनके उस भयंकर स्वरसे तथा ताडनासे सिंह व्याघ्र, भालू अनेक जातिके मृग; नीलगाय, शृगाल, खरगोश और छोटे २ बनके कुत्ते शीघ्र ही व्याकुल होकर चारों ओरको भागने लगे। राजपूतवीर उस भयंकर हिंस्रक जन्तुओंसे युक्त गहन वनमें जाकर महा आनंदित हुए।

उसी सघन वनमें कापुरुष राणा रत्नसिंहने अपनी पहिली प्रतिहिंसाको सफल करनेकी चेष्टा की। दोनोंके अधीनकी सेना दो भागोंमें विभक्त होकर वनके दोनों ओरसे पशुओंको भगाने लगी। और दोनों राजा वनके अन्य प्रान्तमें इस प्रकारके स्थानमें घोडेपर खडे हुए कि भागे हुए सभी पशु उनके सम्मुखसे निकलैं। उस समय दोनों राजाओंके साथ केवल दो दो चार २ सेवक थे; पाठकगणोंको स्मरण होगा कि बूँदीके रावके कानमें तिनका देनेसे उन्होंने मेवाडके पूर्वदेशके एक सामन्तकी हत्या की थी और उस सामन्तपुत्रने बदला लेनेके लिये मनही मनमें दृढ़ प्रतिज्ञा की थी। इस घटनास्थलमें राणा रत्नसिंहके साथ वह सामन्त पुत्र भी उपस्थित था। राणा रत्नसिंह उस सामन्तपुत्रको बुलाकर बोले कि "समय आ गया है बराहका शिकार करिये"। कुछही समयके पीछे उस सामन्तपुत्रने धनुष खैंचकर तीव्र वेगसे राव सूर्यमलकी ओरको एक बाण छोडा, परन्तु तीक्ष्णदृष्टि राव सूर्यमलने उसकी ओरसे बाण आता हुआ देखकर उस बाणको अपने धनुषसे बाण छोडकर व्यर्थ कर दिया। उन्होंने उस समय भी यह नहीं विचारा कि बदला लेनेके लिये राणा और उक्त सामन्तपुत्रने

षड्यंत्र करके इस बाणको छोडा है। परन्तु प्रथम बाणको व्यर्थ हुआ देखकर राणाके धाभाई (धात्री) पुत्रने सूर्यमलकी ओर दूसरा बाण छोडा; तब तो सूर्यमल चैतन्य हो गये, और उन्होंने समझा कि हमारा प्राण नाश करनेके लिये इस षड्यंत्र जालका विस्तार हुआ है। राव सूर्यमलके उस दूसरे बाणको व्यर्थ न करते २ कापुरुष राणा रत्नसिंहने घोडेको शीघ्रतासे आगे बढा बूंदीके अधीश्वर राव सूर्यमलको खांडेके आघातसे पृथ्वीपर गिरा दिया। भलीभाँतिसे घायल होकर राव सूर्यमलने पृथ्वीपरसे उठ अपने घावोंपर पट्टी बाँधी। बदला भलीभाँतिसे ले लिया है यह विचार कर राणा उसी समय उस स्थानको छोडनेके लिये उद्यत हुए, राव सूर्यमल उसी अवस्थामें सिंहके समान शब्दसे बोले "भागते क्यों हो! निश्चय जान लो कि अब मेवाडका पतन बहुत पास आ गया है।" राणाने इनकी बातपर कुछ भी ध्यान न देकर शीघ्रतासे घोडा चला दिया, पूर्वोक्त सामन्तपुत्रने उनके पीछे २ जाकर कहा "अभी कार्य सम्पूर्णतासे शेष नहीं हुआ है, राव सूर्यमल अभी जीवित हैं।" तुरन्त ही कायर पुरुषोंके समान राणा रत्नसिंहने घोडेपरसे गिरे हुए सूर्यमलकी ओरको अपना घोडा चलाया, राणाने सम्मुख आकर जैसे ही फिर सूर्यमलके प्राण नाश करनेके लिये दूसरी बार खड्ग उठाया कि वैसे ही क्रोधित हुए सिंहके समान घायल सूर्य्यमलने अन्तिम बलके साथ उठकर राणाके पिछले भागको पकडकर बडी शीघ्रतासे उनको घोडेपरसे पृथ्वीपर गिरा दिया; बहुत देरतक दोनों वीरोंकी कुस्ती होती रही फिर कुछ ही समयके पीछे राणाके वक्षस्थलपर बैठकर वीर तेजस्वी सूर्यमलने एक हाथसे तो राणाका गला पकडा और दूसरे हाथसे अपनी कमरमेंसे तलवार निकाली, देखो, कैसा बदला लिया कि कुछ ही समयके बीचमें घायल हुए राव सूर्यमलने हत्याकी अभिलाषा करनेवाले राणा रत्नसिंहके हृदयमें अपनी उस तीक्ष्ण धारवाली तलवारको घूँस दिया। राणाका प्राणपक्षी तुरन्त ही उड गया। यद्यपि वीर सूर्यमलकी प्रतिहिंसा सफल हो गई थी परन्तु उन्होंने उसी समय शत्रुके मृतक शरीरके ऊपर गिरकर प्राण त्याग कर दिये।

कवि लिखते हैं कि "शीघ्र ही यह हृदयभेदी शोचनीय संवाद बूंदी नगरके रनिवासमें जा पहुँचा। वीरश्रेष्ठ राव सूर्य्यमलकी माता पुत्रके मृतक होनेका समाचार सुनकर वीरांगनाओंके समान बोली, "क्या सूर्य हत हो गया है? क्या वह इकला ही मृतक हुआ है, अवश्य ही किसी शत्रुके प्राण लेकर वह इस संसारसे बिदा हुआ होगा।" रानी जिस समय वीरमाताके समान यह वचन कहने लगी थी, इस समय असीम मातृस्नेह उद्वेलित हो गया, और उसके दोनों स्तनोंसे दूध निकल कर प्रबलवेगसे पृथ्वीको प्लावित करने लगा"।

रानी केवल पुत्रके मारे जानेका समाचार सुनकर अधीर हो गई थी और पुत्र शत्रुका संहार न कर सका यह विचार कर स्वामीवंशको कलंकित होता हुआ देखकर अपने मनमें अत्यन्त दुःखित हुई थी, परन्तु उसी समयमें एक मनुष्यने रनिवासमें जाकर वृद्धारानीसे कह दिया कि राव सूर्यमलने अपने शत्रु राणा रत्नसिंहके प्राण

नाश कर अपना बदला लिया है । यह सुनते ही वीरमाताका हृदय उसी समय आनंदसे भर गया । कुछ ही समयके पीछे बूंदी राज्य और चीतौडके राज्यमें फिर शोचनीय वियोगान्त अभिनय हो गया । राव सूर्यमलने राणा रत्नसिंहकी भगिनीका पाणिग्रहण किया था । उन दोनों राजबालाओंने मृतक पतियोंके साथ प्रज्वलित चितानलमें अपने जीवनकी आहुति दी । बूँदीके महाराज और चीतौडके महाराज जिस स्थानपर मारे गये थे, उसी स्थानपर दोनोंके समाधि मंदिर बनाये गये, तथा सूजाबाईका समाधिमंदिर शिखरके ऊपर स्थापित हुआ । इस स्थानका दृश्य जैसा परम रमणीय है उक्त समाधिमंदिर भी उसी प्रकारसे हृदयमें इस वियोगान्त अभिनयकी विचित्र स्मृतिको जाग्रत करता है ।

वीर तेजस्वी सूर्यमलके मारे जानेपर उनके पुत्र सुरतान संवत् १५९१, सन् १५३५ ई०में बूंदीके सिंहासनपर विराजमान हुए । मेवाडके शक्तावत सम्प्रदायके आदिपुरुष शक्तसिंहकी एक कन्याके साथ सुरतानका विवाह हुआ था । इसी समयमें बूंदीराज्यमें तांत्रिक शैवियोंका भयानक प्रादुर्भाव हुआ । बहुतसे राजपूत उन तांत्रिकोंके दलमें नियुक्त होकर रणदेव महाकालभैरवकी उपासनामें नियुक्त हुए तांत्रिक अनुष्ठानावली जिस प्रकार महाभीतिदायक लोमहर्षणकारी थी, उसी प्रकारसे वह नरबलिदानका एक साक्षात् नरपिशाचके समान समाजके भयस्वरूप गिने जाते थे । राव सुरताननें स्वयं तांत्रिक दलमें मिलकर महाकाळ भैरवके मंदिरमें अपनी प्रजाका बलिदान करना आरंभ किया, इसके सामन्त तथा उनकी प्रजावर्ग सभी उनसे अप्रसन्न हो गये, और सभीने एकताका अवलम्बन करके शीघ्र ही उनको सिंहासनसे रहित कर दिया । सुरतानको चम्बलके किनारे एकमात्र छोटासा ग्राम रहनेके लिये मिला, उन्होंने उस ग्रामका नाम सुरतानपुर रक्खा । राव सुरतानके कोई पुत्र नहीं था, इस कारण बूँदीके सामन्तोंने परामर्श करके बूँदीके पूर्वतन अधीश्वर राव भांडाके दूसरे पुत्र नरबुधके ज्येष्ठ तनय अर्जुनको मातोंदासे बुलाकर बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त किया ।

राव अर्जुन बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर नियमसहित राज्य पालन करने लगे । हाडाजातिके पूर्ववर्ती राजाओंके समान राव अर्जुन भी महाबलशाली और असीम साहसी वीर पुरुष थे । राजपूतोंमें एक समय कैसा महानुभाव विराजमान था यदि भारतवासियोंमें किसी कुटुम्बके साथ अन्य परिवारकी शत्रुता होगई, तब हम वंशानुक्रमसे उस शत्रुको पोषण कर एक दूसरेका अनिष्ट करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि न करेंगे । परन्तु चित्तौडके महाराणा रत्नसिंह और बूंदीके महाराज राव सूर्यमल परस्परके वैरभावसे ही एक दूसरेके द्वारा मारे गये। राव अर्जुन और रत्नसिंहके पुत्र नवीन राणा परस्परकी उस शत्रुताको भूलकर सद्भावके सूत्रमें बँध गये।गुजरातके बहादुर शाहने जिससमय चीतौडको घेरलिया था, उस समय जिस हाडाजातिके अधीश्वर चीतौडपतिकी सहायताके लिये सेनासहित उस युद्धमें लिप्त थे, और जो सेना चीतौडके

चि.लके एक बुर्जकी रक्षामें नियुक्त होनेके समय शत्रुओंकी गोलीसे भस्मीभूत हो गई थी, मेवाडके इतिहासमें उसका वर्णन हो चुका है। यह राव अर्जुन ही वह असीम साहसी हाडाराज थे । यह राव अर्जुन ही जिस समय प्रबल पराक्रमके साथ चीतौडके एक बुर्जकी रक्षामें नियुक्त थे, उस समय बहादुरशाहने बुर्जके नीचेके भागमें सुरंग लगवाई; और उसके भीतर बारूद भरकर आग लगा दी। राव अर्जुनने सम्मुख विपत्तिको आया हुआ देखकर कहीं न जाकर नंगी तलवार हाथमें ले वहीं प्राण त्याग दिये। हाडा कविने वीरश्रेष्ठ अर्जुनकी वीरताकी अत्यन्त ही प्रशंसा की है। मेवाडके कवियोंने भी उस वीरकी कीर्तिको कीर्तन करनेमें त्रुटि नहीं की है। कवि लिखते हैं,-

सोर किया बहु जारे । धर परवत आडी खिला ॥
तैं काटी तलवार । अधिपतिया हाडा अजा ॥

इसका अर्थ यह है कि अर्जुनने उस सुरंगसे निकली हुई अनलराशिमें एक पत्थरको रख उसपर बैठकर तलवार निकाली, समस्त जगत्में उनका वह स्वर्गारोहण, अत्यन्त आश्चर्यके साथ देखा।

अर्जुनके चार पुत्र उत्पन्न हुए, इनमें सबसे बडे सुरजन संवत् १५९८, सन् १५५५ ई० में पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए।

तीसरा अध्याय ३.

राव सुरजनको रणथभोरके किलेकी प्राप्ति-बादशाह अकबरका उक्त किलेको घेरना-विचित्र उपायसे अकबरका उक्त किलेमें प्रवेश-राव सुरजनका बादशाहको उस किलेका देना-राव सुरजनका अकबरकी अनुगत्यता स्वीकार करना-संधिबंधन-अकबरका सुरजनको राव राजाकी उपाधि देना-गोंडवानाको जय करनेके लिये सुरजनका जाना-जयप्राप्ति-बादशाहका सम्मान प्रदान-राव भोजका अभिषेक-अकबरका गुजरातको जय करना-हाडाराज भोजका सूरत और अहमदनगरको जीतनेके समय महावीरता प्रकाश करना-भोजका अपमान-राव रतन-सम्राट् जहांगीरके विरुद्धमें विद्रोह-राव

---

(१) सोर शब्दका अर्थ "बारूद" है।

(२) कविने छन्दके सुभीतेके लिये अर्जुन शब्दको अज कहकर लिखा है।

* अर्जुनके दूसरे पुत्रका नाम रामसिंह था, इनके वंशधर राम हाडानामसे विख्यात थे। चौथे पुत्रका नाम अखैराज था, इनके वंशके अखैराज पोता नामसे विख्यात हैं, छोटे कुमारका नाम कांदल था उनके वंशज जसाहाडा नामकी सम्प्रदायसे विख्यात है।

रतनका विद्रोहियोंको पराजित करना—हाडावर्तीका विभागकरण–माधवसिंहको कोटेराज्यकी प्राप्ति–राव रतनका प्राणनाश–उनके उत्तराधिकारी गोपीनाथकी हत्याका वृत्तान्त–राव छत्रशालका अभिषेक–छत्रशालको आगरेके शासनकर्ताकी पदप्राप्ति–दक्षिणमें गमन–दौलतबादके किले पर अधिकार–गुलबरगा–धामूनी–शाहजहांके पुत्रोंमे युद्ध–हाडाराजका विश्वासपालन–उज्जयनी और धौलपुरका युद्ध–छत्रशालकी विषम वीरताका प्रकाश करना–छत्रशालकी मृत्यु–राव भावसिंहका अभिशेक–बूँदीपर आक्रमण–बादशाहकी सेनाकी पराजय–राव भावसिंहका फिर बादशाहकी कृपापाना–उनका औरंगाबादके शासनकर्ता पदपर नियोग–उनकी मृत्यु–राव बुधसिंहका जाजो नामक स्थानमे समर–कोटाराजकी मृत्यु–राव बुधसिंहका वीरता प्रकाश करना–बहादुरशाहके पक्षमे जयप्राप्ति–बूँदीराजकी राजभक्ति–भागजाना–आमेरराजके साथ विवाद–विवादका कारण–आमेरराजकी ऊँची आशा–आमेरराजका षड्यंत्र–समर–राव बुधसिंहका भागना–कोटेराजका बूँदीके बहुतसे देशोंको अपने अधिकारमें करना–बुधसिंहकी मृत्यु–उनके दो पुत्र।

राव सुरजनसिंहके अभिषेकके समयसे बूंदीकी राजनैतिक अवस्था बदल गई। बूंदीके महाराज इतने दिनोंतक अपने राज्यमें सब प्रकारसे स्वाधीनताको भोगते आये थे; कोई भी किसी राजाके अधीनकी जंजीरमें नहीं बंधा, केवल स्वजातिय और आत्मीय जानकर उन्होंने मेवाडके महाराणाके प्रति सम्मान दिखाया था, और महाराणाके विपत्तिमें पडनेपर वे सेनासहित उनकी सहायता करते थे। परन्तु राव सुरजन पिताके सिंहासनपर विराजमान होकर अपने पूर्वपुरुषोंके समान केवल बूँदीराज्यमें ही नहीं, एक मात्र रजवाडेमें ही नहीं, वरन समस्त भारतसाम्राज्यमें राजनीतिक अभिनय करनेके लिये सबसे पहिले अग्रसर हुए। उनके समयसे बूँदीके राजवंशने यवनशासनके समयमें भारतसाम्राज्यमें राजनैतिक क्षेत्रमें ऊंची प्रशंसाके साथ अपने वंशके गौरवकी गरिमाको और बूँदीके सामर्थ्यकी प्रतिपत्तिको धीरे २ बढा लिया था।

बूँदीके राजवंशकी कनिष्ठ शाखामें उत्पन्न सामन्तसिंह नामक एक सामन्त इस समय बूँदीराज्यका विशेष विख्यात मनुष्य था। सेरशाहका शासन लुप्त होनेके पीछे उक्त सामन्तने बेदलाके चौहान सामन्तके साथ मिलकर रणथंभोर नामक अत्यन्त प्रसिद्ध किलेके अफगान शासनकर्ताओंके किलेको छोड देनेके लिये पत्र लिखा। अफगान शासनकर्ताने विशेष चिन्ता करनेके पीछे शीघ्र ही उस किलेको सामन्तसिंहके हाथमें अर्पण कर दिया। सामन्तसिंहने राव सुरजनसिंहको वह किला दे दिया। बूँदीराजके अधीनमें ऐसा अभेद्य और प्राचीन प्रसिद्ध किला उनके अधीनके भूखंडमें दूसरा नहीं था। इस कारण राव सुरजनसिंहने उस देश और किलेको पाकर सामन्तसिंहसे विशेष सन्तुष्ट हो उनको नगरके निकट भूवृत्तिदान की। सामन्तसिंह एक महाबलशाली वीर थे उनके वंशधर उनके नामसे सामन्त हाडा नाम प्रसिद्ध हैं।

बेदलाके जिन चौहान सामन्तोंने उक्त किलेको लेनेके समयमें विशेष सहायता की थी, उन्होंने राव सुरजनके समीप यह प्रस्ताव किया कि राव सुरजनको मेवाडके अधीनरूपसे उक्त किलेकी रक्षा करनी होगी। राव सुरजनने इसमें सम्मत होकर रणथंभोरके किलेपर अधिकार कर लिया। यह रणथंभोरका किला और उसके

अधीनके देशके बहुतसे पुरुष अजमेर राज्यके अधीनमें थे, चौदहवीं शताब्दीमें वीसलदेव-के वंशमें उत्पन्न महावीर हमीरके शासनसमयमें यह किला उनके पाससे प्रबल युद्धके पीछे छीन लिया गया था। इस समय वही किला उक्त प्रकारसे उस चौहानजातिके हस्तगत हो गया।

मुगल कुलतिलक अकबरने भारतके सिंहासनपर विराजमान होकर इस प्राचीन किले तथा रणथंभोरपर अधिकार करनेके लिये विशेष अभिलाषा कर स्वयं सेना-सहित उस किलेको जा घेरा। वीर तेजस्वी सुरजनने अपने असीम बलविक्रमको प्रकाश करके यवन बादशाहकी अगणित सेनाके आक्रमणसे उस किलेकी रक्षा की थी। बादशाह अकबर कुछ कालतक सेनासहित उक्त अभेद्य किलेकी दीवारोंको विध्वंस करते रहे, अंतमें जब देखा कि इसमें प्रवेश करनेका कोई उपाय नहीं है और राव सुरजनने भी आत्मसमर्पण करनेके कुछ चिह्न न दिखाये, तब यह हतउद्योग हो गये। और कुछ दिन इस प्रकारसे व्यतीत किये; तब आमेरके महाराजा भगवान् दासने तथा उनके पुत्र मानसिंहने इस समय दिल्लीके बादशाह अकबरकी अनुगत्यता स्वीकार की; और इसी समय भगवानदासने अकबरको अपनी एक कन्या देकर राजपूतजातिके पवित्र रुधिरको कलंकित कर दिया।

बादशाह अकबर किसी प्रकार भी रणथंभोरपर अधिकार न कर सके। मानसिंह अन्य उपायसे राव सुरजनको चीतौडपतिकी अनुगत्यता छुटाकर उक्त किलेको बादशाहको अर्पण करनेके लिये तैयार हुए। यदि प्रबल शत्रु भी अतिथ्यकी प्रार्थना करता तो राजपूत जाति प्राणतक देकर उसके अतिथिसत्कारमें तथा आश्रय देनेमें किसी प्रकार-की कसर न करती। मानसिंहने राव सुरजनसे आतिथ्यकी प्रार्थना की, बूँदीके महाराजने उनको स्वजातीय राजपूत और राजवंशधर जानकर बिना कुछ कहे सुने रणथंभोरके किलेमें बुला लिया[१]। बादशाह अकबरने कपटभेष धारण कर साधारण अनुचरोंके समान सोंटा हाथमें लिये मानसिंहके साथ बिना बाधाके उस किलेमें प्रवेश[२] किया। मानसिंह किलेमें जाकर जिस समय राव सुरजनके साथ बातचीत कर रहे थे, उस समय राव सुर्जनके चाचाने कपटभेषधारी अकबरको पहिचान लिया और तुरन्त ही उनके हाथसे सोंटा छीनकर उनको एक ऊंचे सिंहासनपर बैठाया। धीरचेता अकबरने उसी समय सुरजनको बुलाकर कहा, "राव सुरजन! इस समय क्या करना उचित है?" राजा मानसिंहने राव सुरजनसे कहा कि "आप चीतौडपति राणाकी अधीनता छोडकर रणथंभोरके किलेको बादशाहके करकमलमें अर्पण कीजिये। आपको बादशाहकी

(१) प्रसिद्ध चँदकविके एक वंशधरने उक्त हमीरकी वीरता प्रकाशक एक महाकाव्य लिखा है, वह काव्य हमीर रासा नामसे विदित है।

(२) हाडा जातिके कविने इस स्थानपर मानसिंहको कलियुगकी प्रतिकृतिरूपसे वर्णन किया है, वह लिखते हैं कि मानसिंहने यवन सम्राटकी अनुगत्यता स्वीकार की थी, और उनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बंधन होनेसे राजपूतोंके पवित्र चरित्र और सामाजिक आचार व्योहार बदल गये थे।

वश्यता स्वीकार करते ही महा ऊँचा सम्मान प्राप्त होगा । आपको ५२ देशोंके शासनकर्ताका पद दिया जायगा, आप उन सब देशोंकी समस्त आमदनीको उपभोग करैंगे, बादशाह उस आमदनी और खर्चका कोई हिसाब आपसे नहीं लेंगे, परन्तु नियमितरूपसे आपको समस्त सेनाके साथ बादशाहकी आज्ञा पालन करनी होगी। इसके अतिरिक्त आप और जो कुछ न्यायसंगत प्रार्थना करैंगे, बादशाह उसको पूर्ण करनेके लिये तैयार है " वास्तवमें राजा मानसिंहने बादशाहकी ओरसे जो अनेक प्रकारके लोभ दिखाये उनको अवश्य ही ऊंचा कहना होगा । शीघ्र ही उस स्थानपर संधिपत्र लिखना प्रारंभ हुआ । बादशाह अकबरने उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये । उस संधिपत्रका सारा मर्म नीचे लिखा गया है, पाठक इसको पढ़कर भली भांतिसे जान जायँगे कि राव सुर्जनने किस प्रकारके उपायसे जातीय स्वाधीनता और अपने स्वत्वकी रक्षा की थी ।

संधिपत्रकी पहिली धारा—कि बूंदीके राजा किसी समय भी दिल्लीके सम्राट् वंशको कन्या नहीं देंगे ।

दूसरी धारा–जिजियाकर नहीं दिया जायगा ।

तीसरी धारा–बूंदीके महाराजको बादशाह कभी भी अटकके बाहर युद्ध करनेके लिये न भेज सकैंगे ।

चौथी धारा–नौरोजा पर्वके उपलक्षमें दिल्लीके बादशाहके महलमें जो मीनाबाजार नामकी समिति है. और उस समितिमें जो राजपूत राजा तथा सामन्तोंकी अंत:पुरवासिनी स्त्रियोंको भेजनेकी विधि है, बूंदीके अधीश्वर, और उनके अधीनके सामन्तोंकी अंत:पुरवासिनी स्त्रियोंको उस मीनाबाजारमें नहीं बुलाया जायगा ।

पांचवीं धारा–बूंदीके महाराज दीवान हाथमें हथियारोंसे सजे हुए जा सकेंगे ।

छठवीं धारा–उनके पवित्र देवस्थानोंपर कोई व्याघात न किया जायगा ।

सातवीं धारा–बूंदीके अधीश्वर और उनके अधीनके सामन्त किसी समय सेनाके साथ किसी हिन्दूराजाके अधीनमें नियुक्त नहीं हो सकेंगे ।

आठवीं धारा–सम्राट्के अधीनस्थ राजाओंकी अश्वारोही सेनादलके अश्वोंपर जो बादशाहका चिह्न अंकित किया जाता है बूंदीके अश्वारोहियोंके अश्वोंपर उस प्रकारका चिह्न नहीं दिया जायगा ।

नौवीं धारा–जब बूंदीके महाराज दिल्लीमें जायँगे तो दिल्लीके राजमार्गसे तथा महलके लाल दरवाजे तक नगाड़े बजनेके साथ २ जा सकैंगे ।

दशवीं धारा–बूँदीके महाराज जिस समय बादशाहके सम्मुख जायँगे उस समय वह घुटने झुकाकर सम्मान नहीं दिखावैंगे ।

उपरोक्त संधिपत्रके तैयार हो जानेपर बादशाह अकबरने राव सुरजनको पुरस्कारस्वरूपमें हिन्दुओंके पवित्र तीर्थक्षेत्र काशीधाममें एक महल बनानेकी आज्ञा

---

(१) कर्नल टाड साहबने बूँदीके राव राजाके द्वारा लिखे हुए जिस इतिहासको पाया था। उन्होंने उसीका अविकल अनुवाद इस स्थानपर किया है, पिछले समस्त अंश रावराजाके द्वारा लिखे हुए हैं ।

दी। हिन्दूराजाओंके पक्षमें तीर्थक्षेत्रमें रहनेके लिये अज्ञानकी प्राप्ति कोई सामान्य नहीं थी। राव सुरजनके पितृपुरुष अबतक मेवाडपति राणाकी अनुगत्यता स्वीकार करते आये थे, राव सुरजनने इतने दिनोंके पीछे उस अनुगत्यताकी जंजीरको खोल-कर यवन बादशाहकी अधीनता स्विकार की। वास्तवमें इस समय प्रबल प्रताप-शाली अकबरके प्रचण्ड शासनसे मेवाडपति वीरोंमें शिरोमणि महाराणा प्रतापसिंह राज्यसे राहित होकर वनमें निवास करते थे। इस कारण राव सुरजनने उनकी उस दुर्गतिको देखकर मुगलबादशाहकी सहायतासे अपने भाग्यके सूर्यको उदय कर भविष्यके वंशधरोंके गौरवकी गरिमाका मार्ग साफ कर दिया, बूँदीके अधीश्वरगण यहाँतक केवल "राव" की उपाधि धारण करते आये थे। किन्तु इस समय बादशाह अकबरने सुरजनको "रावराजा" की उपाधिसे विभूषित किया। राव राजा सुरजन इसी समयमे राजनैतिक क्षेत्रमें प्रशंसनीय अभिनय करनेके लिये प्रवृत्त हुए।

सम्राट् अकबरने सबसे पहिले रावराजा सुरजनको सेनासहित सेनापति पदपर वरण कर गौडपतिको दमन करके उनके वासस्थान गोंडवाना देशको जय करनेके लिये भेजा। वीरश्रेष्ठ सुरजनने बलशाली हाडादलके साथ प्रबल युद्धके पीछे गोंडवानापर आक्रमण कर गोंडोंकी राजधानी वाडीपर अधिकार कर लिया। उस गोंडवानाके जयके चिह्नस्वरूपमें राव सुरजनने उक्त राजधानीमें अपने नामसे "सुरजनपोल" नामका एक बडा दरवाजा बनवा दिया! वह आज भी उसी नामसे पुकारा जाता है। गोंडवानाकी जयके पीछे राव सुरजन गोंडोंके प्रधान २ नेताओंको बंदी करके सम्राट् अकबरके सामने ले गये। परन्तु उन्होंने दयालुचित्तसे उनको मुक्तिदान तथा राज्यके कितने ही अंश प्रदान करनेके लिये बादशाहसे अनुरोध किया, शीघ्र ही उनकी प्रार्थना पूर्ण की गई। राव सुरजनने उक्त पहिले युद्धमें प्रशंसनीयरूपसे जय प्राप्त की इससे बादशाह अकबरने उनसे अत्यन्त संतुष्ट होकर उनको पवित्र तीर्थ बाराणसी और चुनार यह दो स्थान तथा और भी पाँच देशोंका अधिकार दिया। संवत् १६३२, सन् १५७६ ई०- में अर्थात् जिस वर्षमें मेवाडके राणा प्रतापने शाहजादा सलीमके विरुद्ध हलदी घाटीपर चिरस्मरणीय महा-युद्ध उपस्थित किया था, उसी वर्षमें राव सुरजनको यह पुरस्कार मिला।

रावराजा सुरजनने नवप्राप्त वाराणसीधाममें रहकर इस प्रकारके नियमसे शासनकार्य चलाया कि क्या प्रशंसा करें, ऐसी दया, ऐसे विचार और उदारताके साथ शासनकार्यकी रीति नियत की कि उससे समस्त हिन्दूजातिका महा उपकार हुआ। एक ओर तो हिन्दूधर्मके प्रति अत्याचार लोप हो गये और दूसरी ओर हिन्दू निश्चिन्त भावसे रहने लगे। पहिले इस देशमें चोर और डाँकुओंका भयानकरूपसे प्रादुर्भाव था,

---

(१) शाहजादा सलीम इस लडाईमें नहीं था। उस समय उसकी अवस्था केवल छः वर्षकी थी।

धन प्राण लेकर सभी शंकितभावसे रहते थे, परन्तु राव सुरजनके शासनगुणसे वह चोर तस्करोंका भय एकबार ही दूर होगया और चारोंओर स्थायी शान्ति स्थापित हो गई। राव सुरजनने वाराणसी नगरमें और विशेश करके वाराणसीके जिस स्थानमें वह रहते थे, उस स्थानमें अत्यन्त रमणीय महल और सर्वसाधारणके उपयोगी ८४ भिन्न स्थान बना दिये, तथा गंगाजीके किनारे स्नान करनेके लिये २० घाट बनवाये। इससे उनका बहुत धन खर्च हुआ अधिक क्या कहैं, राव सुरजन अपने शासनगुणसे सभीके प्रियपात्र हो गये। उन्होंने उसी वाराणसी धाममें प्राण त्याग किये। उनके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) राव भोज (२) दूदा, सम्राट अकबर इनको लकडखां नामसे पुकारा करते थे, और (३) रायमल। रायमलको पलायता नगर, और उसके अधीनके देश प्राप्त हुए और किसी समयमें उनके अधीनमें कोटा राज्य हो गया।

पूर्वोक्त समयमें बादशाह अकबर दिल्लीसे राजधानी उठाकार आगरेमें ले गये। अकबरने आगरेको विस्तारित और शोभायमान करके अपने नामके अनुसार उसका नाम अकबराबाद रक्खा। अकबराबादमें जानेके पीछे. बादशाह अकबरने गुजरातको जीतनेका विचार किया, और वहां बहुतसी सेना भेजी पीछे स्वयं कितनी ही निर्वाचित ऊंटपर चढीहुई सेनाके साथ वहां गये। मरुक्षेत्रके राजपूत राजगण जिस प्रकारकी रीतिसे एक २ ऊंटकी पीठपर दो २ आसन स्थापन कर, दो २ जनोंके साथ सेनाको बैठालकर लेजाते है, अकबर उसी रीतिसे पांचसौ सेना प्रधानतः राजपूतसेनाको भी ऊंटोंपर चढाकर ले गये,और उसी सेनादलके नेतापदपर रावभोज और उनके भ्राता दूदा नियुक्त होकर गये। बादशाहकी प्रधान सेनाने पहिले आगे बढकर सूरतको घेर लिया था। परन्तु बादशाह भी उक्त सेनाके साथ शीघ्रतासे वहां जाकर प्रधानसेनाके साथ मिल गये। क्रमानुसार भयंकर युद्ध उपस्थित हो गया। उस युद्धमें राव भोजने असीम साहस करके शत्रुओंके प्रधाननेताओंका मस्तक काटलिया। बादशाहने सरलतासे जयलक्ष्मीका आलिंगन पाकर संतुष्ट हो राव भोजसे पूछा कि "आप क्या पुरस्कार चाहते हैं ?" राव भोजने कहा, कि " प्रतिवर्षमें वर्षा ऋतुके आनेपर मैं जिससे अपनी राजधानी बूँदीमें जाकर वर्षाऋतुको वहाँ व्यतीत करसकूँ ऐसी आज्ञा चाहता हूं।" बादशाह अकबरने राव भोजकी वह प्रार्थना तत्काल पूर्ण की।

इतिहाससे जाना जाता है कि महाबली अकबरने एक २ करके अनेक राज्य जीते; और अपने अधिपत्यका विस्तार करता साम्राज्यकी शक्तिको बढानेके लिये पहिलेसे जिस २ स्थानपर युद्ध उपस्थित किया; उसी २ युद्धमें राजपूतराजाओंने नियुक्त होकर अपने बल विक्रमको प्रकाश करनेके साथ ही साथ अपने गौरवकी गरिमाको बढा लिया। उनमें बूँदीके महाराज राव भोजने भी बहुतसे युद्धोंमें अतुलनीय विक्रम प्रकाशकर बडा ऊंचा पद पाकर सम्मान प्राप्त किया था अहमदनगरके प्रसिद्ध युद्धमें चांदाबेगमने सातसौ अस्त्रधारिणी स्त्रियाके साथ बादशाहकी अगणित सेना दलके विरुद्धमें भली भांतिसे वीरता प्रकाशकर और उस युद्धमें जीवन दान कर भारतके इतिहासमें अपनी

अक्षय कीर्तिका परिचय दिया है। उस अहमदनगरको जीतनेके लिये बादशाहने राव भोजको प्रधान सेनापतिपदपर नियुक्त करके भेजा। वीरश्रेष्ठ भोजने असीम साहसके साथ अहमदनगरके किलेकी दीवारको लांघकर सेनासहित उसमें प्रवेश कर किलेको जीत लिया। बादशाह अकबरने इससे महा संतुष्ट होकर राव भोजके पदसम्मान बढ़ानेमें और उनको पुरस्कार देनेमें कुछ भी विलम्ब न किया। विशेष करके अहमद नगरके युद्धमें राव भोजने अतुलनीय वीरता प्रकाश करके जिस किलेके बुर्जपर आक्रमण कर अधिकार कर लिया था, बादशाह अकबरने भोजके सम्मानके लिये उसी स्थानपर एक नवीन बुर्ज बनाकर उसका "भोजबुर्ज" नाम रक्खा।

हम इतिहासमें देखते हैं कि बूँदीके राव राजा भोजने सम्यक् प्रकारसे बादशाह अकबरके अनेक उपकार किये थे। और इसी कारणसे वह उनके अत्यन्त प्रियपात्र हो गये थे। तो भी वह एक समय बादशाहके भयंकर कोपमें गिरे। जब अकबरकी राजपूत रानी जोधबाईकी मृत्यु हो गई तब बादशाहने समस्त राजपुरुष और देशीय राजाओंको उस रानीके अशौच ग्रहण तथा उसके शोकचिह्न धारण करनेकी आज्ञा दी। बादशाह अकबरने राजपूत राजाओंके समान मुसलमान और अमीर इत्यादिकोंको भी आज्ञा दी कि तुम सभीको मृत रानीके सम्मानके लिये डाढ़ी मुड़वानी होगी। जिससे सभी बादशाहकी इस आज्ञाको पालन करें, इसलिये बादशाहकी हजामत करनेवाला नाई बादशाहकी आज्ञासे उक्त मनुष्योंकी हजामत करनेमें नियुक्त हुआ। राजाका नाई अंतमें बादशाहकी राजधानीमें स्थित बूँदीराजके यहाँ जाकर बादशाहकी आज्ञा पालन करनेके लिये उद्यत हुआ। राजाके सेवकोंने उस नाईको मारकर भगा दिया। राव भोजके शत्रुओंने शीघ्र ही यह समाचार बादशाहतक पहुँचा दिया। राव भोजके विरुद्धमें यह अनृतयोग उपस्थित किया कि "राव भोजने केवल नाईको मारकर ही शान्ति नहीं पाई है वरन् उन्होंने मृतक महारानीको भी अनेक प्रकारके कटु वचन कहे हैं" शोकसे आतुर हुए अकबरने यह समाचार सुनते ही उसी समय राव भोजके समस्त गुणग्रामोंको भूलकर तुरन्त ही आज्ञा दी कि "राव भोजको बाँधकर बलपूर्वक उनकी डाढ़ी मूँछोंको मुड़वा दो।" बादशाहकी इस आज्ञाको सुनते ही राव भोज और उनकी सेना क्रोधित हुए सिंहके समान उन्मत्त होकर शीघ्र ही तलवार निकालकर भयंकर काण्ड उपस्थितके पूर्वलक्षण प्रकाश करने लगे; परन्तु बादशाहने उक्त आज्ञा देनेके पीछे जब समझा कि हमने अत्यन्त अन्यायकी आज्ञा दी है तब वह स्वयं शीघ्रतासे हाथीपर चढ़कर राव भोजके यहां गये। यदि बादशाह इस समय न जाते तो निश्चय ही हाडाराज भोज और उनके सैनिक राजधानीमें रुधिरकी नदी बहा देते, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। बादशाह हाथीपरसे उतरकर राव भोजके विक्रमकी भलीभाँतिसे प्रशंसा करके उनको धीरज देने लगे और राव भोजने स्वयं बादशाहके सम्मुख आकर विशेष विचारके साथ कहा, कि "अपने स्वर्गीय पिताके नामसे मैं क्षमा प्रार्थना करता हूँ। मैं अत्यन्त निर्बोध हूँ, मृतरानीके सम्मानके लिये क्षौरकर्म करानेके योग्यपात्र भी मैं नहीं हूँ।" बादशाह

अकबर यह वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और राव भोजको साथ लेकर अपने स्थानको लौट आये। बादशाह अकबरकी मृत्युके पीछे राव भोजने अपनी राजधानी बूँदीमें जाकर कुछ कालतक वहाँ रहनेके पीछे प्राण त्याग किये। राव राजा भोजके तीन पुत्र उत्पन्न हुए (१) राव रतन (२) हिरदेव नारायण[1] और (३) केशवदास[2]।

अकबरकी मृत्युके पीछे जहाँगीर मुगल राजछत्रके नीचे शोभायमान हुए। वह अपने पुत्र परवेजको दक्षिणके शासनकर्ता पदपर नियुक्त कर बुरहानपुरमें शासनकी सनद देकर उत्तरकी ओरको चले आये। परन्तु जहाँगीरके दूसरे पुत्र कुमार खुर्रमने भ्राताके सौभाग्यसे वैरभावके वश हो षड्यंत्रजालका विस्तार करके उनके प्राण नाश करनेमें किञ्चिन्मात्र भी त्रुटी न की। कुमार खुर्रम अपने सौतेले भाईका प्राण संहार कर अपने जन्मदाता सम्राट् जहाँगीरको सिंहासनसे रहित करके स्वयं भारतके साम्राज्यका भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हुए। कुमार खुर्रम राजपूत राजनंदिनीके गर्भसे उत्पन्न थे। इस कारण उन पितृद्रोहीकी सहायताके लिये बाईस राजपूत राजा मिलकर जहांगीरको सिंहासनसे उतारनेके निमित्त उनके अधीनमें सेनासहित इकट्ठे हुए। परन्तु एकमात्र बूँदीके अधीश्वर राव रतनने उस दुःखके समयमें बादशाह जहाँगीरके पक्षका अवलम्बन कर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई थी। इसके सम्बन्धमें हाडा कविने लिखा है।

"सरवर फूटा जल बहा, अब क्या करो यतन्न ?
जाता घर जहाँगीरका, राखा राव रतन्न"।

इसका अर्थ यह है कि सरोवरका जल उबलकर प्रवल तरंगोंसे बह रहा है इस समय अब क्या यत्न करना होगा ? जहाँगीरका शासन लुप्त हो गया था, राव रतनने उसकी रक्षा की है।

बूँदीराज रतनसिंहने माधवसिंह तथा हरिसिंह नामक दोनों पुत्रोंके साथ सेनासहित जहाँगीरके उस महादुःख समयमें बुरहानपुरमें जाकर पितृद्रोही खुर्रम और उनके अधीनके राजपूत राजाओंके साथ प्रबल संग्राम करके उनको एकबार ही परास्त कर दिया। बूँदीके इतिहाससे जाना जाता है कि संवत् १६३५सन् १५७९ई० में कार्तिक शुक्ल मंगलवारके दिन यह स्मरणीय संग्राम हुआ था,[3] और उसी रणक्षेत्रमें राव रतनके उक्त दोनों पुत्र भयंकररूपसे घायल हुए। बुरहानपुरके युद्धमें राव रतन और उनके दोनों पुत्रोंने घोर वीरता प्रकाश की थी और बादशाहके अनुकूल विजय प्राप्त की।

---

(१) हिरदेवनारायणको बादशाहसे कोटेराज्यके शासनकी सनद मिली थी इन्होंने १५ वर्षतक उसे शासन किया।

(२) इन्हें चाम्बलके किनारे डीपरी नगर और उसके अधीनमें २७ ग्रामोंका अधिकार मिला।

(३) उर्दू तर्जुमेमें संवत् १६८१ सन् १६२५ लिखा है और ये ही सही है क्योंकि संवत् १६३५ में तो अकबरबादशाह था, जहांगीर संवत १२६२ मे हुआ था।

इससे दिल्लीके महाराजने प्रसन्न होकर पुरस्कार स्वरूपमें राव रतनको बुरहानपुरके शासनकर्ता पदका भार अर्पण किया और उनके दूसरे पुत्र माधवके कोटानगर और उनके अधीनके समस्त देशोंके अधिकारकी सनद वंशानुक्रमसे साक्षात् दिल्लीश्वरके अधीनमें संभोग करनेको प्राप्त हुई। इसी समय हाडोती देश रीतिके अनुसार दो भागोंमें विभक्त हो गया। राव रतनने बादशाहके अनेक उपकार किये थे, इससे इसका अनुमान तो सरलतासे हो सकता है कि उनको कितना पुरस्कार मिला था।

टाड साहब लिखते हैं कि जहाँगीरने एक प्रबल गुप्त राजनैतिक कारणसे इस प्रकारके अन्यायका कार्य किया था। वह राव रतन और उनके पुत्रको अत्यन्त बलशाली योधा देखकर अपने मन ही मनमें भलीभाँतिसे जान गये कि यदि यह दोनों वीर पिता पुत्र एक साथ मिलकर असीम साहसी स्वजातीय सेनादलका नेतृत्व करेंगे तो यह दोनों एक मत होकर जिस किसी विषयमें सरलतासे प्रधानका विस्तार और राजनैतिक विपत्तिको उपस्थित करनेमें समर्थ हो जायँगे, इस कारण पिता पुत्रमें भेद साधन करके प्रबल सामर्थ्यको विभक्त कर देना उचित है। बादशाहने उसी अभिप्रायसे राव रतनको केवल बुरहानपुरके शासनका भार देकर उनके पुत्रको स्वाधीनभावसे कोटा राज्य दे दिया। शाहजहाँने माधवसिंहको जिस प्रकार कोटेके राज्यसंभोगकी सनद दी उसका वृत्तान्त कोटेके इतिहासमें वर्णन किया जायगा।

राव रतन जिससमय बुरहानपुरके शासन करनेमें नियुक्त थे, उस समय उन्होंने वहाँ एक नगर स्थापनकर अपने नामके अनुसार उसका नाम "रतनपुर" रक्खा। बूंदीके जातीय इतिहाससे जाना जाता है कि राव रतनने फिर एक ऐसा कार्य किया कि जिससे एक ओर तो दिल्लीके बादशाह प्रसन्न हुए और दूसरी ओर बूंदी राजवंशने पहिले जिन मेवाडपति राणाओंकी अनुगत्यता स्वीकार करके उनसे विशेष शान्ति प्राप्त की थी वे भी प्रसन्न हुए।

दरियाखां नामक एक मुसलमान अमीरने बादशाहकी आज्ञा न मान कर मेवाडराज्यमें जाकर सेनासहित प्रजापुंजके ऊपर अत्यन्त अत्याचार किये थे। राव रतन सेनासहित वहां जाय दरियाखांपर आक्रमण कर युद्ध होनेके पीछे उसको पकडकर बादशाहके सम्मुख ले गये। दरियाखां कठिन वीररूपसे प्रसिद्ध था, इस कारण उसको पकडनेसे राव रतनका बल विक्रम विशेषरूपसे विदित हो गया। बादशाहने उनकी उस वीरतासे महासंतुष्ट होकर पुरस्कारमें उनको एक दल नौबतके बाजेका दिया और रतनके स्थानपर लाल पताका उडानेकी आज्ञा दी। तथा वह जिस समय सेनासहित बाहर हों उस समय एक बडी पीले वर्णकी पताका उनके समीप उडाई जाय। राव रतनके उत्तराधिकारी आजतक उस राजसम्मानसूचक पताकाको रखते आये हैं। राव रतनने केवल स्वजातिके निकटसे ही महा ऊंचा सम्मान नहीं पाया था बरन् भारतवर्षकी समस्त हिन्दूजाति हिन्दूधर्मके रक्षकस्वरूपसे उनके प्रति सम्मान दिखाती थी। बादशाहके यहां उन्होंने जिस प्रकारकी सामर्थ्य और प्रतिपत्ति प्राप्त की

थी, उससे उनकी हिन्दूजातिकी मुसलमानोंके अत्याचारोंसे सरलतासे रक्षा हो सकी थी। वह जिस किसी स्थानमें भी रहते मुसलमानोंको किसी प्रकारसे उस स्थानपर गोहत्या करनेका साहस नहीं होता था। बूंदीक इतिहाससे जाना जाता है कि राव रतनने युद्धमें बहुतसी वीरता प्रकाशकर प्रशंसनीय यश संग्रह किया था, केवल हाडाजाति ही नहीं वरन् समस्त हिन्दूजातिमें महा ऊंचा गौरव संग्रह करके अन्तमें बुरहानपुरके एक भयंकर युद्धमें वह मारे गये। हाडा जाति आजतक सबसे पहिले राव रतनसिंहके नामको स्मरण करती है।

राव रतनके चार पुत्र उत्पन्न हुए (१) गोपीनाथ, (२) माधवसिंह; (३) हरिजी और (४) जगन्नाथ। यह तो हमारे पाठकोंको पहिलेसे ही ज्ञात हो गया है, कि माधवसिंहने कोटेराज्यको पाकर उसे स्वाधीनभावसे शासन किया था। तीसरे पुत्र हरिजीको गूंगेर नामक देश प्राप्त हुआ। कर्नल टाड साहबके समयमें हरिजी वंशोत्पन्न प्रायः पचास आदमियोंका कुटुम्ब नीमोदा नामक स्थानमें रहता था चौथे जगन्नाथने पुत्रहीन अवस्थामें प्राण त्याग दिये। सबसे बडे और उत्तराधिकारी गोपीनाथ पिताकी मृत्युके पहिले ही मारे गये। युवराज गोपीनाथकी मृत्युका वृत्तान्त पढनेसे राजपूतोंके चरित्रोंका और भी एक विचित्र निदर्शन पाया जाता है।

युवराज गोपीनाथ बूंदीके बलदिया जातीय एक ब्राह्मणकी अत्यन्त सुन्दरी स्त्रीके प्रेममें मोहित होकर अत्यन्त गुप्तभावसे अपनी प्रेमपिपासाकी निवृत्ति करते थे। गोपीनाथ प्रतिदिन रात्रिके समय उस ब्राह्मणके घर दीवार लांघकर जाया करते थे। और चुपचाप अपनी कुप्रवृत्तिको चरितार्थ कर आते थे। कुछ दिन इस प्रकारसे व्यतीत हुए एक समय उक्त ब्राह्मणने उनको रात्रिके समय अपने घरमें आया हुआ देखकर अत्यन्त क्रोधित हो उनके हाथ पैर बांधकर घरमें रख लिया, और राजमहलमें जाकर राव रतनके सम्मुख निवेदन किया कि, "एक चोरने हमारे यहां रात्रिमें आकर हमारी स्त्रियोंके सतीत्व नाश करनेकी चेष्टा की थी। हमने उसको पकड लिया है। उसको क्या दंड दिया जायगा सो आप निश्चय कीजिये।" बूंदीराज रतनसिंहने उसी समय कहा कि "उसको जानसे मार डालना ही उचित दंड होगा"। ब्राह्मणने तुरन्त ही अपने घरमें आकर एक खड्ग लेकर युवराज गोपीनाथका मस्तक चूर्ण कर दिया। गोपीनाथने उस दारुण आघातसे प्राण त्याग किये, ब्राह्मणने युवराजकी लाशको राजमार्गमें फेंक दिया। शीघ्र ही राव रतनके पास यह समाचार गया कि युवराज गोपीनाथ मारे गये हैं। यद्यपि राव रतनने इस समाचारसे पहिले तो भयंकररूपसे क्रोधित हो हत्याकारीको पकडकर उसको उचित दंड देनेकी आज्ञा दी थी, परन्तु जब उन्होंने सुना कि उनकी आज्ञानुसार ही ब्राह्मणने गोपीनाथकी हत्या की है तब राव रतनने बिना कुछ कहे सुने पुत्र शोकको सहन किया।

युवराज गोपीनाथके बारह पुत्र उत्पन्न हुए थे। राव रतनने उन सबको एक २ देश दिया, वह राज्यके प्रधान सामन्त श्रेणीमें गिने गये। उन बारहमेंसे गोपीनाथके सबसे बडे पुत्र छत्रशालको बूँदीका राजसिंहासन प्राप्त हुआ, और वे नीचे लिखे हुए चार देशोंके अधीश्वर हुएः-

१-इन्द्रसिंह- इन्होंने इन्द्रगढको स्थापन किया-

२-वैरीशाल- इन्होंने बलवान और फिलोदी नामक दो नगरोंको स्थापन किया, और करवर तथा पिपलोदा दो देश भी इनको मिले।

३-मोखिमसिंह- इनको आंतरदा ग्राम प्राप्त हुआ।

४-महासिंह- इनको थाना ग्राम प्राप्त हुआ।

गोपीनाथके अन्य कई एक पुत्रोंका वंश लोप हो गया है, यहां पर उनके नामोंका उल्लेख करना निष्प्रयोजन है।

राव रतनके स्वर्ग जानेपर गोपीनाथके बडे पुत्र शत्रुशाल (छत्रसाल) पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए। बादशाह शाहजहांने स्वयं बूँदीकी राजधानीमें जाकर शत्रुशालका अभिषेक किया और उनका सम्मान बढानेके लिये उन्हें दिल्ली राजधानीके प्रधान शासनकर्ता पदपर नियुक्त किया। शाहजहांने जितने दिनोंतक राज्य किया था, राव शत्रुशाल उतने दिनोंतक उक्त पदपर नियुक्त रहे। बादशाह शाहजहांने जिस समय अपने विस्तारित भारतसाम्राज्यको चार भागोंमें विभक्त कर अपने चार पुत्रों(दारा औरंगजेब सुजाय और मुराद) को चार भागोंके राजप्रतिनिधि पदपर नियुक्त करके भेजा, उस समय राव शत्रुशाल औरंगजेबकी एक प्रधान सनोके सेनापतिपदपर नियुक्त होकर दक्षिणको गये। औरंगजेबने दक्षिण प्रान्तके भिन्न २ प्रान्तोंमें प्रबल समरानल प्रज्वलित करके कई किलोंको घेर लिया तथा उन्हें आक्रमण कर अपने अधिकारमें कर लिया। विशेष करके दौलताबाद और बीदर नामक किलेपर अधिकार करनेके समय हाडाराज शत्रुशालने अतुल बल विक्रम प्रकाश कर अपने बाहुबलका चूडान्त बल दिखा दिया। वीर श्रेष्ठ शत्रुशालने स्वयं सेनासहित वीदरके किलेपर आक्रमण कर तथा उसको जीत शत्रुकी समस्त सेनाको तलवारसे नाश करके यमराजके यहाँ भेज दिया। संवत् १७०९,

---

(१) इन्द्रगढ वलवन और आन्तदा यह तीन प्रधान देश कोटेके जालिमसिंहने अपने षड्यंत्रसे बूँदीसे छीन लिये थे।

(२) उर्दू तर्जुमेमें "थानवा" लिखा है।

(३) टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि "यह थाना ग्राम पहिले युजावर नामसे विदित था। गोपीनाथके बारह पुत्रोंमें केवल थानाके अधीश्वर आजतक बूँदीके अधीश्वरकी अनुगत्यता स्वीकार करते आये थे; महासिंहके वंशधर महाराज विक्रमसिंह इस समय इसी थानाके अधीश्वर हैं, यदि वह जीवित होते तो हम कह सकते हैं कि इस संसारमें उनके समान सम्माननीय साहसी और सरलचित्त राजपूत दूसरा नहीं था, वह अपने अधीश्वरके अत्यन्त प्रियपात्र और हमारे सच्चे मित्र थे, इनका सिंहके साथ युद्धका वृत्तान्त हमारे भ्रमण वृत्तांतमें पाया जायगा।

सन् १६५३ ई०में प्रबल युद्धके पीछे कलवर्णका पतन हुआ, और शत्रुशालने फिर असीम साहसके साथ किलेकी दीवारको लांघकर उसको जीत लिया। धामूनीनामक स्थानके किलेको जीतनेके पीछे दक्षिणमें पूर्णरूपसे शांति विराजमान हो गई।

बूँदीके राजमहलमें स्थित ग्रंथके देखनेसे जाना जाता है कि "जिस समय दक्षिणमें यह सब घटनाएँ हुई उसी समय यह जनरव हुआ कि सम्राट् शाहजहांने प्राण त्याग किये हैं। विशेष करके बादशाहके बराबर बीस दिनतक सभामें न बैठनेसे उस समाचारको सभीने सत्य मान लिया था। बादशाहके पुत्रोंमें एकमात्र दाराशिकोह इस समय राजधानीमें रहते थे। उनके अन्य भ्राताओंने जब यह समाचार सुना तब वह सिंहासन पानेके लिये बडे आग्रहके साथ राजधानीकी ओरको गये। जिस समय शुजाने वंगदेशसे यात्रा की, उस समय औरंगजेबने भी दक्षिणको छोडनेके लिये तैयार होकर मुरादको सेनासहित योग देनेके लिये अनुरोध किया। औरंगजेबने मुरादसे यह कहला भेजा कि "मैं एक उदासीन विरागी हूँ सिंहासन वा संसारके किसी भी सुखकी मुझे लालसा नहीं है, केवल निर्जनमें रहकर मोहम्मदकी आज्ञानुसार धर्मका साधन करना मेरे जीवनका मुख्य उद्देश है। दारा एक नास्तिक है, मैं उदासीन हूँ इस कारण बादशाह शाहजहाँके पुत्रोंमें एकमात्र आपही सब अंशोंमें योग्यपात्र हैं। आपको ही राजसिंहासनपर बैठालनेके लिये हम विशेषरूपसे तय्यार हैं।

"बादशाह शाहजहाँने औरंगजेबकी पापकामनाको जानकर गुप्तभावसे हाडाराज शत्रुशालको राजधानीमें सेनासहित आनेके लिये बुला भेजा। शत्रुशालने बादशाहकी यह आज्ञा पाकर विशेष विचार कर यह कार्य किया कि, मैं जब बादशाहके अनुगत अधीन हूँ, तब उनकी आज्ञा पालन करना ही मुझे सबसे पहिले कर्तव्य है। अतः शत्रुशाल शीघ्र ही दक्षिणके डेरोंके छोडनेकी तैयारी करने लगे। राव शत्रुशाल डेरोंको छोडनेके लिये उद्यत हो गये हैं, औरंगजेबने यह समाचार पाते ही पूछा कि इतनी शीघ्रतासे डेरोंको छोडनेका कारण क्या है कुछ दिन और ठहरिये; हम सभी एक साथ राजधानीमें चलेंगे। बूँदीके अधीश्वर शत्रुशालने सिंहासनपर बैठे हुए बादशाहकी आज्ञाका पालन करना हमारा प्रथम कर्तव्य कार्य है।" यह कहकर बादशाह शाह-जहाँने उनके निकट जो आज्ञापत्र भेजा था; उसे औरंगजेबके हाथमें अर्पण किया। परन्तु पापाचारी औरंगजेबने उस आदेशपत्रको पढते ही शत्रुशालको आज्ञा दी, कि 'आप किसी प्रकारसे इस समय डेरोंको न छोडिये'। दूसरी ओर औरंगजेबने आज्ञा दी कि "राव शत्रुशालके डेरोंको जिस प्रकारसे हो सके उखडने न दो"। परन्तु बुद्धिमान् शत्रुशालने ऐसा होगा जानकर पहिलेसे ही अपने समस्त द्रव्य संभार और कितनी ही सेनाको आगे भेज दिया था। उन्होंने इस समय औरंगजेबकी

(१) राजपूत इतिहास लेखकने औरङ्गजेबकी इस उक्तिको प्रकाशित किया है, अन्यान्य इतिहासवेत्ताओंने भी अविकल इसी भावको लिखा है।

आज्ञाको अग्राह्य करके अपनी बची बचाई सेना और जो राजा शाहजहांके पक्षावलम्बी थे, उनको एकत्र दलबद्ध करके वीरतेजसे डेरोंको छोडकर नर्मदाकी ओरको गमन किया। यद्यपि औरंगजेबकी सेना उनके पीछे २ गई परन्तु किसी प्रकारसे भी उन असीम साहसी और महाबली राजपूतोंको आक्रमण करनेका साहस प्राप्त न हुआ। इस समय प्रबलवर्षाके उपस्थित होनेसे नर्मदा नदीने भयंकरी मूर्ति धारण की थी। राव शत्रुशाल उस नर्मदा नदीके किनारेके कितने ही देशोंके सोली राजाओंकी सहायतासे उस भयंकर तरंगोंसे समायुक्त नर्मदानदीके पार हो गये। तब भी औरंगजेबने निराश होकर शत्रुशालका पीछा करनेमें त्रुटि न की। राव शत्रुशाल निर्विघ्नतासे अपनी राजधानी बून्दीमें चले आये। राव शत्रुशालने अपनी राजधानीमें कई दिनतक रहकर राज्यके अनेक विषयोंकी प्रयोजनीय व्यवस्था कर दिल्लीकी ओरको सेनासहित गमन किया। वृद्ध बादशाहके पुत्रोंको कुलांगारके समान उनकी जीवितदशामें ही राजसिंहासन ग्रहण करनेकी इच्छासे बादशाहके करसे राजदण्ड छीनने और उनके जीवनमें हस्ताक्षेप करनेको अग्रसर हुआ देखकर राव शत्रुशालने उस वृद्ध बादशाहकी विपत्तिमें सहायता करनेके लिये शीघ्रतासे दिल्लीको गमन किया।

"टाड साहब लिखते हैं, कि पितृद्रोही पापात्मा पिशाच औरंगजेब छलना, चातुरी और षड्यन्त्रजालका विस्तार कर फतेहाबादमें जा पहुँचा। मारवाडके महाराज जसवन्तसिंह बहादुरने सेनादलके साथ उस फतेहाबादमें भयंकर समरानल प्रज्वलित कर दी। परन्तु कूट षड्यन्त्रजालका विस्तार कर औरंगजेबने सरलतासे उस युद्धमें जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त कर भारतके सिंहासनपर चढनेका मार्ग साफ कर लिया। राव शत्रुशालको हमने उस युद्धमें बादशाहके पक्षमें नियुक्त होता नहीं देखा, बादशाह अकबरके साथ बून्दीके अधीश्वर राव सुरजनका जो पहिला संधिबन्धन हुआ था, उस संधिबन्धनके अनुसार वह वा उनके भविष्य उत्तराधिकारी किसी हिन्दूराजाके अधीनमें किसी रणभूमिमें गमन नहीं करेंगे ऐसा नियम था। बोध होता है कि उस संधिके मतसे राव शत्रुशाल महाराज मानसिंहके अधीनमें फतेहाबादके रणक्षेत्रमें न गये। परन्तु बूंदीके राजवंशोत्पन्न कोटेके अधीश्वर अपने चार भ्राताओंके साथ सेनासहित उस फतेहाबादके संग्राममें बादशाहकी ओरसे नियुक्त होकर आये थे विषमवीरता प्रकाश करनेके पीछे चारों भ्राताओंने उस संग्राममें अपना प्राण देकर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई।

दुराचारी औरंगजेबने पिताके सिंहासनपर अधिकार करनेके पहिले अपने बडे भ्राता दाराके साथ धौलपुरमें फिर युद्ध किया। उस धौलपुरके युद्धमें बून्दीके अधीश्वर राव राजा शत्रुशालने कुंकुमवर्णक भेष और विवाहके समयका जिस प्रकार पहरावा राजपूतजातिमें व्यवहार किया जाता है, उसी प्रकार पहरावा धारण कर क्या तो नंगी तलवार हाथमें लेनी होगी नहीं तो जीवन त्याग दिया जायगा, यह दृढप्रतिज्ञा करके वीरदर्पसे दाराके समस्त सेनादलमें सबसे आगे जाकर औरंगजेबके साथ भयंकर समर-

नल प्रज्वलित कर दी । प्राच्य जगत्की चिरप्रचलित रीति यह थी कि युद्धके समय दोनों ओरके राजा वा प्रधान सेनापति रथ वा हाथीपर चढकर जब युद्धभूमिमें जाते थे तब सेनादल उस राजा अथवा सेनापतिको जबतक युद्धसे जाता हुआ न देखते तबतक प्राणोंकी बाजी लगाकर दुगने उत्साहके साथ युद्ध करते रहते थे । उसी रीतिके अनुसार दारा एक हाथीपर चढकर उस भयंकर रणभूमिमें जाने लगा । यदि वह और कुछ समयतक साहसमें भरकर उसी भावसे वहां विराजमान रहता तो अवश्य ही शाहजहां बादशाहको वृद्धावस्थामें कुलांगार पुत्र औरंगजेबके द्वारा बन्दी होकर राज्यसे च्युत होना नहीं पडता, दाराके हठात् रणभूमिसे जाते ही उसकी समस्त सेना संग्रामको छोडकर चारों ओरको भागने लगी । वीर तेजस्वी शत्रुशालने भीरु कापुरुष दाराको भागता हुआ और उसी कारणसे उसकी सेनाको भी भागता हुआ देखकर अपने अधीनके सामन्त और सेनासे गर्वपूर्ण यह वचन कहे "कि जो कोई युद्धभूमिसे भागेगा वह नरकको जायगा । मैं बादशाहके अधीन हूं, मैंने युद्धभूमिमें चरण रक्खा है, यह मेरा अटल है, क्या तो इस समय विजय ही होगी, और नहीं तो प्राण त्याग दूंगा " । इन प्रकाशमान वचनोंसे सामन्त और सेनाको उत्साहित करके, शत्रुशाल अपने हाथीपर चढकर अपने आदर्शसे जिस समय सेनाको शत्रुपक्षकी ओरको चला रहे थे, उसी समय शत्रुओंकी ओरसे एक जलता हुआ गोला आकर उनके हाथीके ऊपर गिरा । हाथीने घायल होनेसे उन्मत्त हो रणक्षेत्रको छोडकर भागना प्रारम्भ कर दिया, परन्तु महावीर शत्रुशाल तुरन्त ही उस भागते हुए हाथीकी पीठपरसे छलांग मारकर कूद पडे, और घोडेपर चढकर अपनी समस्त सेनाको चक्राकारमें मिलाकर जयस्वरसे रणभूमिको कम्पायमानकर कुमार मुरादके साथ संग्राम करनेके लिये उसकी ओरको चले । राव शत्रुशाल मुरादके अत्यन्त निकट जाकर अपने विषम भालेसे मुरादके बाहुबलकी परीक्षाके लिये जिस समय उद्यत हुए उसी समय शत्रुओंकी ओरसे एक गोली आकर उनके मस्तकमें लगी । राव शत्रुशालने उसी गोलीके आघातसे अपने जीवनकी लीला समाप्त की । राव शत्रुशालके छोटे पुत्र भारतसिंह उस रणभूमिमें उपस्थित थे । पिताके मरनेसे वह महाक्रोधसे उन्मत्त हुए और केशरीके समान मुरादके साथ प्रबल संग्राम करने लगे; शत्रुशालके भ्राता मोखमसिंहने अपने दोनों पुत्र और उदयसिंह नामके भतीजेसहित संहारमूर्ति धारण कर युद्ध करना प्रारम्भ किया, प्रबल युद्धके पीछे बहुतसे शत्रुओंका संहार करके भारतसिंह और उक्त कई जने राव शत्रुशालके समान युद्धभूमिमें प्राणदान दे सूर्यलोकको चले गये । कर्नल टाड साहब कहते हैं कि " उज्जैनी और धौलपुर इन दो

(१) राजपूत वीर किसी युद्धमें जयका सन्देह होनेपर, अथवा किसी प्रकारसे भी हो शत्रुसे जय प्राप्त करना अथवा शत्रुका संहार करना कर्तव्य है ऐसी प्रतिज्ञा करनेपर उक्त प्रकारका वर वेश धारण कर युद्धमें प्रवेश किया करते है । और युद्ध भूमिमें मरते ही सूर्यलोकको या अप्सराओंकी सभामे हो जायँगे, इसी विश्वाससे वह उक्त वर वेशका व्यवहार करते हैं ।

स्थानोंके संग्राममें बारह राजपूत राजवंशीय और हाडा सम्प्रदायके प्रत्येक नेताने अपना जीवन त्यागकर राजभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई थी, हमने ऐसा दृष्टान्त और कहीं नहीं पाया "।

बूँदीके इतिहासमें पीछे वर्णन किया गया है कि राव शत्रुशाल समस्त जीवनमें ५२ युद्ध करके असीम साहसका चूडान्त निदर्शन और विश्वासकी अक्षय कीर्ति स्थापन कर गये हैं। राव शत्रुशालने बूँदीके राजमहलका विस्तार कर "छत्रमहल" नामका एक अंश निर्माण किया था, पाटन नामक स्थानमें "केशवराय भगवान्" का एक रमणीक मंदिर उन्हींके व्ययसे बना है। संवत् १७१५ में राव शत्रुशालने प्राण त्याग किये। राव शत्रुशालके औरससे चार पुत्र उत्पन्न हुए–(१) राव भावसिंह, (२) भीमसिंह, (३) भगवन्तसिंह, (४) और भारतसिंह। भीमसिंहको गुगोर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ, भगवन्तसिंह मऊनामक स्थानके अधिकारी हुए, भारतसिंह धौलपुरके युद्धमें मारे गये, इसका वर्णन पहिले ही कर चुके हैं। राव शत्रुशालकी मृत्युके पीछे बूँदीका राजमुकुट उनके बडे पुत्र राव भावसिंहके मस्तकपर शोभायमान हुआ"।

हिन्दूजातिके परम शत्रु औरंगजेबने दिल्लीके सिंहासनपर विराजमान होकर बूँदीश्वर राव शत्रुशालके प्रति उसका जो कुछ कोप क्रोध और शत्रुता थी उसे उनके पुत्र राव भावसिंहके प्रति प्रयोग करनेमें कसर न की। शिवपुरदेशके राजा आत्मारामको बुलाकर औरंगजेबने उनको आज्ञा दी कि "उद्धत स्वभाव और सदा असन्तुष्ट हाडा जातिको भलीभांतिसे दंड देकर बूँदीराज्यको रणथम्भोरके अधीनमें स्थापित करो। बूँदीको जय और हाडाजातिको दंड देते ही दक्षिणमें जानेके समय बूँदी राज्यमें प्रवेश करके इस जयप्राप्तिसे आपको सम्बन्धित करूँगा।" राजा आत्मारामने बादशाहकी आज्ञानुसार शीघ्र ही बारह हजार शिक्षित सेनाके साथ हाडौती देशमें जाकर तलवार तथा अग्निकी सहायतासे चारों ओर अत्याचार कर देशका सर्वस्व विध्वंस करना प्रारंभ कर दिया। जैसे ही राजा आत्मारामने बूँदीके सबमें प्रधान सामन्तके अधीन इन्द्रगढ़के मध्यमें स्थित खातौलीनगरको घेरा कि वैसे ही हाड़ाजातिने चुपचाप दल बांधकर गोठडा स्थानमें राजा आत्मारामके अधीनमें स्थित उस बारह हजार शिक्षित सेनाके साथ भयंकर युद्ध करना प्रारंभ किया, उस युद्धमें राजा आत्माराम एकबार ही परास्त होकर प्राणोंके भयसे भाग गये। विजयी हाडासेनाने उस भागे हुए राजा आत्माराम और बादशाहकी सेनापर फिर आक्रमण करके समस्त युद्धके द्रव्य तथा बादशाहकी चिह्नात्मक पताका आदि छीन ली। हाडाजातिने इससे भी संतुष्ट न होकर हतभाग्य राजा आत्मारामसे अत्याचारोंका बदला लेनेके लिये उसके शिवपुरीको जा घेरा। परास्त और अपमानित राजा आत्माराम कलकका भार शिरपर लकर बादशाह औरंगजेबके निकट गये और जाकर हाडाजातिका बलविक्रम तथा अपने उद्धत स्वभावका नवीन परिचय दिया। औरंगजेबने राजा आत्मारामसे अत्यन्त घृणा प्रकाश की। और इनका उचित तिरस्कार किया।

कपटी औरंगजेबने हाडाजातिके वीर विक्रमका विशेष परिचय पाकर हाडाराजको अपने हस्तगत करनेके लिये प्रकाशमें हाडाजातिकी वीरतासे संतोष प्रकाश करते हुए उनको सब प्रकारसे क्षमा कर अपनी राजधानीमें आनेके लिये बुला भेजा। राव भावसिंह, पहिले किसी प्रकारसे भी कुचक्री औरंगजेबकी बातपर विश्वास करके दिल्ली जानेके लिये सम्मत न हुए, परन्तु बादशाहने बारम्बार प्रतिज्ञापूर्ण पत्र भेजकर "मुझसे आपका कोई अनिष्ट नहीं होगा" इस बातकी शपथ की इसी कारणसे वीरतेजस्वी राव भावसिंह अन्तमें सेनासहित दिल्लीको गये। बादशाह औरंगजेबने राव भावसिंहको बडे आदरभावके साथ ग्रहण कर कुमार मोअज्जिमके अधीनमें उनको औरंगाबादको प्रधान शासनकर्ता पदपर नियुक्त कर दिया।

हाडाजातिके इतिहाससे जाना जाता है कि राव भावसिंहने औरंगाबादके महा ऊँचे पदपर प्रतिष्ठित होकर स्वजातीय राजपूतोंको औछडा एवं दतियाके बुंदेला सेनादलके साथ बहुतसे युद्धोंमें अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश किया था। बीकानेरके राजा करणके प्राणनाश करनेके लिये इस स्थानपर जो षड्यंत्रजालका विस्तार हुआ था, राव भावसिंहने ही अपने असीम साहससे उस षड्यंत्रजालको नष्ट कर बीकानेरके महाराजके जीवनकी रक्षा की। राव भावसिंहने औरंगाबादमें सर्वसाधारणके हितकारी बहुतसे महल बनवाये। उक्त इतिहासके पढनेसे जाना जाता है, कि उन्होंने अपने साहस, वीरता, दया और अपने पवित्र स्वभावके बलसे औरंगाबादकी सब जातियोंके हृदयपर इस प्रकारका अधिकार कर लिया था कि इनके ऊपर पूर्ण विश्वास और भक्तिके बलसे ही बहुतसे असाध्य रोगियोंने इनके द्वारा पूर्ण आरोग्यता प्राप्त की थी। संवत् १७३८, सन १६८२ ई० में राव भावसिंहने इसी औरंगाबादमें प्राण त्याग किये।

राव भावसिंहके कोई पुत्र नहीं था। इस कारण उनके भ्राता भीमसिंहके पुत्र अनिरुद्धसिंह बूँदीके सिंहासनपर विराजमान हुए। भीमसिंहको गुरोर नामक देशका अधिकार प्राप्त हुआ था। उन्हीं भीमसिंहके पुत्र किसनसिंह थे। दुराचारी औरंगजेबने पहिले ही इन किसनसिंहका प्राण नाश किया था। उनकी मृत्युसे उनके स्थलाभिषिक्त राव अनिरुद्धसिंहको राजसम्मान दिखानेके लिये अभिषेकके समय मूल्यवान ही उपहार और अपना एक अति उत्तम हाथी सजाकर उनके पास भेजा। राव अनिरुद्धसिंहने बूँदीके सिंहासनपर अभिषेकके कुछ ही समय पीछे दिल्लीमें जाकर बादशाहके प्रति सम्मान दिखाया, कुछ दिन पीछे बादशाह औरंगजेबने जब सेनासहित दक्षिणमें युद्ध करनेके लिये गमन किया तो राव अनिरुद्धसिंह भी सेनासहित उनके साथ गये। दक्षिणके एक प्रबल युद्धमें एक समय शत्रुपक्षकी सेनाने, बादशाह औरंगजेबके महलकी बेगमें जिन डेरोंमें निवास करती थीं, उन डेरोंपर आक्रमण किया तब राव अनिरुद्धसिंहने विषम वीरता प्रकाश करके उन शत्रुओंको विताडित कर राजरानियोंका उद्धार किया। इससे औरंगजेबने उनके प्रति अत्यन्त संतुष्ट होकर उनसे पूछा, " कि आप क्या पुरस्कार चाहते हैं ? "

वीरश्रेष्ठ अनिरुद्धने कहा, "मैं अन्य कोई पुरस्कार नहीं चाहता, मैं इस समय आपके पीछे चलनेवाले सेनादलके अधिनायक पदपर नियुक्त हुआ हूँ, आप उसके बदलेमें मुझे सबके आगे सेनादलके नेताका पद दीजिये। औरंगजेबने तुरन्त ही उस वीरकी वह प्रार्थना पूर्ण की। बादशाह औरंगजेब बीजापुरके जीतनेमें नियुक्त हुए, राव अनिरुद्धने उस समय भी अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश कर बडे साहसके साथ बादशाहको संतुष्ट किया था।

बूँदीके इतिहासमें फिर लिखा गया है कि बूँदीके प्रधान सामन्त दुर्जनसिंहके साथ विवाद होनेसे राव अनिरुद्धसिंह विपत्तिके मुखमें पडे। विवादके पीछे दुर्जनसिंहने शीघ्रतासे दक्षिणके डेरोंको छोड अपने अधिकारी देशमें आकर स्वजातीय सेनाको सजाकर बूँदीकी राजधानीमें आय बलवन्तसिंहके मस्तकपर बूँदीका राजतिलक दिया। बादशाह औरंगजेबने यह समाचार पाकर शीघ्र ही राव अनिरुद्धसिंहके अधीनमें एक शिक्षित सेनाको भेजकर दुर्जनसिंहको भगाने और उनके अधिकारी देशोंको बूँदीराजके अधिकारमें करनेके लिये भेजा। अनिरुद्धसिंहने सेनासहित बूँदीमें आकर दुर्जनसिंहको उचित दंड दे तथा बलवन्तको सिंहासनसे भ्रष्ट करके उनके अधिकारी देशोंको राज्यके अधिकारमें कर लिया, इसके पीछे राव अनिरुद्धसिंहने राज्यशासनकी सुव्यवस्था की। बादशाहके पुत्र शाहआलम भारतसाम्राज्यके उत्तरविभागके शासनकर्तारूपसे नियुक्त होकर लाहोरको गये। राव अनिरुद्धसिंह वहाँ शान्ति स्थापन करनेके लिये गये। आमेरके महाराज विष्णुसिंह भी उसी कार्यके लिये वहाँ भेजे गये थे। राव अनिरुद्धसिंहने वहाँ कुछ काल निवास करके पीछे प्राण त्याग किये।

उक्त इतिहासलेखकने लिखा है कि "राव अनिरुद्धसिंहने बुधसिंह और जोधसिंह नामवाले दो पुत्र छोडे, बडे पुत्र बुधसिंह थे, इन्हींको पिताका राज्यसिंहासन प्राप्त हुआ। बादशाह औरंगजेब बुधसिंहके अभिषेक होनेके कुछ ही दिन पीछे औरंगाबाद नामक जिस स्थानमें रहते थे, वहाँ घोररूपसे पीडित हुए, यहाँतक कि उस रोगसे इनके जीवनमें भी सन्देह हुआ। इनकी मृत्युकी सम्भावना जानकर राज्यके सभी सामन्त राजपुरुष तथा अमीर उमराओंने बादशाहसे विशेष आग्रहके साथ कहा कि आपके सिंहासनपर उत्तराधिकारीस्वरूपसे कौन बैठेगा, उसको आप इसी समय नियत कर दीजिये। मृत्युके मुखमें पडे हुए बादशाह औरंगजेबने कहा, कि किसके मस्तकपर राजमुकुट शोभायमान होगा, यह जगदीश्वरकी इच्छा है! मैं जगदीश्वरकी इच्छानुसार ही इच्छा करता हूँ कि मेरा पुत्र बहादुरशाह आलम मेरे सिंहासनका उत्तराधिकारी हो, परन्तु मुझे ऐसा अनुमान होता है कि कुमार आजिम भी अपने शस्त्रबलसे भारतके सिंहासनपर बैठनेकी चेष्टा करेगा। वास्तवमें बादशाहने जो बात कही थी अन्तमें वही हुआ। आजिमशाह दक्षिणी सेनादलकी सहायतासे अपने बलको प्रबल जानकर सिंहासन लेनेके लिये अपने बडे भ्राताके साथ सामना करनेके

लिये तैयार हुआ। इसने अपने बडे भाईको रणभूमिमें राजमुकुट लेकर भाग्यकी परीक्षाके लिये धौलपुरमें बुला भेजा। जो हिन्दूराजा बहादुरशाहकी ओर थे उन सभी राजाओंको बुलाकर राजनैतिक व्यवस्थाको सुना दिया। उन आये हुए राजाओंमें बूँदीके राव बुधसिंह भी थे। उस समय बुधसिंहकी अवस्था बहुत थोडी थी, परन्तु उस समय यह अपने अनुज जोधसिंहकी मृत्युसे अत्यन्त शोकित थे। जोधसिंहकी मृत्युका समाचार पाते ही बादशाह बहादुरशाह आलमने बुधसिंहको अपनी राजधानी बूँदीमें जाकर श्राद्ध करनेकी आज्ञा दी, राव बुधसिंहने कहा, " बादशाहकी ऐसी अवस्थाके समय मुझे बूँदीमें जाना किसी प्रकार भी उचित नहीं है; धौलपुरके रणक्षेत्रमें—कि: जहाँ बहुतसे युद्धोंमें अनेक वीरोंने अपना बलविक्रम प्रकाश करके प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जिस रणभूमिमें मेरे पूर्वपुरुष शत्रुशालने जीवन त्याग किया था, उसी पवित्र रणभूमिमें जाकर बादशाहकी विजयप्राप्तिके लिये मैं अस्त्र धारण करके अपने पूर्वपुरुषोंकी कीर्तिकी रक्षा करूँगा, इस समय मैं अपना यही कर्तव्य समझता हूँ।"

" शाह आलम सेनाके साथ लाहौरसे और आजिम अपने पुत्र वेदारवक्तके साथ युद्ध करनेके लिये आगे बढे। दोनों ओरकी सेना शीघ्र ही धौलपुरके समीप जाजौ नामक स्थानमें सम्मुख हुई; तत्काल भयंकर युद्धकी आग भडक उठी, भारतवर्षके इतिहासमें इस प्रकारका लोमहर्षण घोर युद्ध और कभी नहीं हुआ था। यदि केवल एकमात्र बादशाहके कुमार ही सिंहासनप्राप्तिके लिये मुसल्मानोंकी सेनाकी सहायतासे रणभूमिमें उपस्थित होते तो ऐसे युद्धका अंतिम फल जैसा होना उचित था वैसा ही हो जाता, अर्थात् प्रबल युद्धके पीछे एक ओरकी सेनाका दल विश्वासघातकताका कार्य करके युद्धको विध्वंस कर देता, परन्तु इस युद्धमें ऐसा नहीं हुआ। राजपूतानेके प्रत्येक राजा ही अपनी २ सेनाके साथ शाहआलम और आजिम इन दोनोंके सिंहासन प्राप्तिमें एक एककी सहायता करके परस्पर स्वजातिय सेनादलके साथ युद्ध करनेमें नियुक्त हुए। दोनों मुसल्मानोंको सिंहासन पानेकी आज्ञाको पूर्ण करनेके लिये राजपूत राजाओंने आपसमें ही युद्ध करके अपना नाश करनेमें कुछ भी कसर न की। दतिया और कोटा राज्यके दोनों राजा दीर्घकालतक कुमार आजिमके अधीनमें दाक्षिणके युद्धमें नियुक्त थे। कुमार आजिम उनके ऊपर विशेष संतुष्ट रहते थे, इस कारण उक्त दोनों राजाओंने बादशाह औरंगजेबकी अन्तिम इच्छाकी ओर दृष्टि न रखकर अन्यायके साथ छोटे कुमारको सिंहासनपर बैठालनेके लिये आजिमके पक्षका अवलम्बन किया। बूँदीके महाराजके साथ दतियाके अधीश्वरकी विशेष मित्रता थी, और दोनोंने ही दक्षिणके युद्धमें विशेष वीरता प्रकाश करके प्रशंसा प्राप्त की थी, परन्तु इस समय दतियाके महाराज अपने प्यारे मित्र अनिरुद्धके पुत्र बुधसिंहके विरुद्धमें खडे होते हुए कुछ भी लज्जित न हुए। कोटेके

(१) जोधसिंहकी मृत्युका वृत्तांत कर्नल टाड साहबके दूसरी बारके भ्रमण वृत्तान्तमें वर्णन किया जायगा।

(२) मित्रके पुत्रके सम्मुख शस्त्र धारण करनेमें लज्जा कैसी ? राजपूत जिस पक्षका अवलम्बन करते हैं उसके लिये सगे पिता पुत्र भी एक दूसरेके सम्मुख शस्त्र धारण करते हैं भालो—

महाराज रामसिंहने एक गुप्तकार्यके वशीभूत होकर शाहआलमके विरुद्ध आजिमके पक्षका अवलम्बन किया। बूंदीके महाराजने चिरकालसे हाडाजातिके सबमें प्रधान नेतारूपसे बादशाहकी सभा तथा सभी स्थानोंमें सबसे ऊंचा संमान प्राप्त किया था। उसी कारणसे कोटेके महाराजके हृदयमें भयंकर विद्वेषने आश्रय लिया था। कोटेके महाराज रामसिंहने हाडाजातिके शिरस्थानीय पदको प्राप्त करने तथा सम्मान पानेकी आशासे ही आजिमका साथ दिया। बुधसिंह शाह आलमके पक्षमें नियुक्त थे, इस कारण आजिमकी विजय होते ही बुधसिंहको दंड दिया जायगा, और उनको अपना प्रार्थित फल मिल-जायगा, इसी कारणसे उनके हृदयमें अनेक शंकाएँ उदय होती थीं। वास्तवमें जय-प्राप्तिके पहिले ही आजिमने कोटेके महाराज रामसिंहको हाडाजातिका शिरमौर कह-कर उनको पद और सम्मान दिया था। युद्ध होनेके पहिले कोटेके महाराज रामसिंहने बुधसिंहके निकट इस मर्मका एक पत्र लिखा कि जिससे वह शाहआलमका पक्ष छोडकर आजिमकी ओर आ मिले, उस पत्रको पाते ही राव बुधसिंहने अत्यन्त क्रोधित होकर यह उत्तर दिया, कि हमारे पूर्वपुरुषोंने रणक्षेत्रमें असीम वीरता प्रकाश करके प्राण त्याग किये हैं, उसी युद्धभूमिमें मैं अपने न्यायके अनुसार बादशाह शाह आलमका पक्ष छोडकर अपने वंशमें कलंकका टीका लगाना नहीं चाहता। इसीसे जाजौके रणक्षेत्रमें दोनों बादशाह कुमारोंके समान राजपूत राजाओंने भी एक २ के पक्षका आश्रय ले भविष्यमें अपने भाग्यकी उन्नति करनेके लिये नंगी तलवारें हाथमें ले महासंग्रामकी अग्निको प्रज्वलित कर दिया"।

"राव बुधसिंहने रणभूमिमें बादशाह शाहआलमके द्वारा एक प्रधान सेनाके नेता पदपर नियुक्त हो इस प्रकारका अतुलनीय साहस और शूरवीरता प्रकाश की कि उसीसे बादशाह बहादुरशाह आलम रणमें विजय पाय शत्रुओंसे शून्य होकर भारतके राज्यसिंहासनपर शोभायमान हुए। दोनों ओरकी राजपूत सेनाओंने इस युद्धमें विशेष आघातोंको सहन किया। कोटेके हाडाजातिके अधिराज रामसिंह और बुन्देलोंके अधिपति दतियाके दलीप यह दोनों ही उस रणभूमिमें आजिमके स्वार्थकी रक्षाके कारण मारे गये। आजिम और वेदारवक्त इन दोनोंने भी मृत्युके साथ ही साथ सिंहा-सनकी आशाको छोड दिया"।

"जाजौके युद्धमें हाडावीर बुधसिंहने विशेष वीरता प्रकाश की थी, इसी कारणसे बादशाह बहादुरशाह आलमने उनको राव राजाकी उपाधि दी, और उनको अपना परममित्र बना लिया। बादशाह जितने दिनोंतक जीवित रहे उतने दिनों-तक उनकी वह मित्रता अचल रही। बादशाह बहादुरशाहकी मृत्युके पीछे सिंहासन लेनेके लिये राज्यमें फिर हलचल पड गई। उसी कारणसे औरंगजेबके सभी पोते मारे गये। पीछे फर्रुखसियरके दिल्लीके सिंहासनपर बैठते ही बाराके

—चक महाशयने आलोचना अच्छी की पर खेद है कि उन्होंने फिर भी राजपूत जातिके धर्म और स्वभावके मर्मको न जाना।

सैयद दोनों भ्राताओंने उनके अधीनमे असीम शासनसामर्थ्य प्राप्त करके राज्यमें घोर अत्याचार कर धन आदिको लूटकर राज्यको नष्ट भ्रष्ट कर दिया। सैयदके दोनों भ्राताओंने जिस समय बादशाह फर्रुखसियरको सिंहासनसे उतारकर उनको मार डालनेके लिये जिस षड्यन्त्रजालका विस्तार किया था उस समयमें स्वयं बूंदीके महाराज यथार्थ राजभक्तके समान बादशाह फर्रुखका उन नराधम दोनों सैयदोंके हाथसे उद्धार करनेके लिये आगे बढे। उस उद्धार करनेवाली सेनाके जाते ही हाडा सेनादलके साथ दोनों सैयदोंकी सेनाने दिल्लीकी राजधानीमें घोर युद्ध किया। और उस घोर युद्धमें बुधसिंहके चचा जयसिंह तथा और भी बहुतसे सामन्तोंने अपने जीवनका बलिदान किया।"

"जाजौकी युद्धभूमिमें कोटा और बूंदाके दोनों देशोंके राजाओंमें जो शत्रुता उत्पन्न हुई, और जिस संग्राममें कोटेके महाराज रामसिंह मारे गये; उसी युद्धके समयसे दोनों राजवंशोंमें वही शत्रुता प्रबल हो गई थी। विशेष करके कोटेके महाराज भीमसिंह पिताका बदला लेनेके लिये अपने मनही मनमें बहुत दिनोंसे उपाय सोच रहे थे। इस समय सैयदके दोनों भ्राताओंको क्रोधित होता हुआ देखकर भीमसिंह दोनों सैयदोंको संतुष्ट करनेके साथ बदला देनेके लिये राजपूत जातिके जातीय धर्मको भूलकर अत्यन्त कापुरुषोंके समान अभिनय करनेको तय्यार हुए। राव राजा बुधसिंह इस समय दिल्लीकी राजधानीके बहिर्देशमें स्थित अपने घोडोंको शिक्षा दे रहे थे। उस समय कोटेके महाराज भीमसिंह ठीक समय विचार कर अपने अनुचरोंके साथ वहां जाय राव राजा बुधसिंहको पकडकर उन्हें दोनों सैयदोंके हाथमें देनेके लिये तैयार हुए। यद्यपि उस समय बुधसिंहके साथ बहुत थोडे सेवक थे तथापि उन्होंने बुधसिंहको घिरा देख कोटाके महाराजके साथ युद्ध करते २ निर्विघ्नतासे उनकी रक्षा की थी। राव बुधसिंहने देखा कि इस समय दोनों सैयद अत्यन्त बलवान् हो गये हैं, बादशाह फर्रुखसियरके उद्धारका अब कोई उपाय दृष्टि नहीं आता, तब अन्तमें वह अपनी रक्षा करनेके लिये राजधानी छोडकर भाग गये। बहुत थोडे दिनोंके पीछे ही बादशाह फर्रुखशियरको दोनों सैयदोंने मार डाला, राज्यके चारों ओर अशान्तिका राज्य हो गया, इस समय उन पिशाचबुद्धि दोनों सैयदोंका यह लोमहर्षण कार्य देखकर अपने २ प्राणकी रक्षा करनेके लिये एक २ करके सभी देशीय राजा अपने २ राज्योंको चले गये।"

उक्त इतिहासमें वर्णन किया गया है कि "इस समय आमेरके महाराज जयसिंहने बूंदीके महाराज बुधसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये चेष्टा की। राव बुधसिंह इस समय आमेरके महाराजके यहां आतिथ्यता स्वीकार कर उनके यहां स्थिति कर रहे थे। आमेरके महाराजके साथ बुधसिंहके झगडेका कारण यह था कि राव बुधसिंहने जयसिंहकी एक भगिनीके साथ विवाह किया था। और पहिले यह बात स्थिर हो चुकी थी कि जयसिंहकी उसी भगिनीके साथ बादशाह बहादुरशाह आलमका विवाह होगा। परन्तु जाजौके युद्धमें बुधसिंहके अतुलबल प्रकाश करनेसे

बादशाह शाहआलम अपने मित्र बुधसिंहसे अत्यन्त ही संतुष्ट हुए, और अपने साथ उस सुन्दरी राजकुमारीका विवाह न करके बुधसिंहके साथ उसका विवाह करनेके लिये कहा। जयसिंहने शीघ्र ही बादशाहकी आज्ञानुसार बुधसिंहके साथ अपनी बहिनका विवाह कर दिया। दुर्भाग्यसे जयसिंहकी भगिनीके कोई पुत्र नहीं हुआ। पहिले बुधसिंहने मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें बेगूंके काला मेघकी एक कन्याके साथ विवाह किया था। उस रानीके गर्भसे बुधसिंहके दो सन्तान उत्पन्न हुई थीं इन छोटे २ सौतेले लडकोंको देखकर जयसिंहकी भगिनीके मनमें ईर्षाकी आग भडक उठी। बुधसिंहके परदेश चले जानेपर जयसिंहकी उस भगिनीने अपनेको गर्भवती कहकर प्रकाशित किया। और एक छोटेसे लडकेको गुप्तभावसे लेकर, मेरे गर्भसे यह कुमार जन्मा है, यह सबमें प्रगट कर दिया। जब राव बुधसिंह अपनी राजधानीमें आये तब तुरन्त ही उनको वह पुत्र खिलानेके लिये दिया। बुधसिंह यह समस्त वृत्तान्त जान गये और रानीके इस आचरणसे महा क्रोधित हुए। अपने उन दोनों पुत्रोंके इससे अनिष्ट होनेकी संभावना विचार कर उन्होंने यह समस्त समाचार जयसिंहको लिख भेजा। महाराज जयसिंह यह समाचार सुनकर महा क्रोधित हो अपनी सौतेली बहिनका तिरस्कार करने लगे परन्तु उनकी बहिन उनके इस तिरस्कारसे कुछ भी लज्जित न हुई, वरन उसने समझा कि स्वामी महाराज बुधसिंह और भ्राता जयसिंहने मेरे सतीत्वमें सन्देह किया है अथवा इसने छल करके दूसरेके पुत्रको अपना पुत्र बनाया है उनको यह दृढ विश्वास हो गया है, यह अनुमान करके वह उसी समय अपने भाई जयसिंहकी कमरसे तलवार निकालकर उन्हींका संहार करनेके लिये तैयार हुई। तब जयसिंहने तुरन्त ही वहाँसे भागकर अपने प्राणोंको बचाया"।

बूँदीके इतिहासमें आगे लिखा है कि बुधसिंह तथा उक्त भगिनीके द्वारा अपमानित होकर आमेरके महाराज जयसिंहने राव बुधसिंहको बूँदीके सिंहासनसे उतारनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा की। जयसिंहने सबसे पहिले बूँदीके प्रधान सामन्त इन्द्रगढके अधीश्वर देवसिंहको बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त करनेका प्रस्ताव उपस्थित किया। इसमें राजभक्त देवसिंहने सब प्रकारसे अपनी असम्मति प्रगट की। पीछे जयसिंहने करवरके सामन्त सालिमसिंहको बूँदीका राजपद देना चाहा। उन्होंने उसके ग्रहण करनेमें कुछ भी असम्मति प्रगट न की। सालिमसिंह बूँदीके राव बुधसिंहके अधीन सामन्त तथा तारागढके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "महाराज जयसिंह अपने बहिनोई बूँदीराज राव बुधसिंहको सिंहासनसे उतारनेके लिये तैयार हुए थे, यह उनका और भी एक चिर-अभिलाषित राजनैतिक षड्यंत्रका अंशमात्र था; इस समय महाराज जयसिंह मुगल-बादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे मालवा अजमेर और आगरेके शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे। उन्होंने उस महान् ऊँचे पदपर स्थित होकर आसपासके निवासी अन्यान्य

राजाओंके ऊपर अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार कर उनको अपने अधीनमें करनेकी अभिलाषा की, विशेष करके दिल्लीका सिंहासन लेनेसे इस समय मुगल सम्राट् वंशमें आत्मविग्रह उपस्थित होनेके कारण महाराज जयसिंहने इस सुअवसरमें अपनी बहुत दिनोंकी इस अभिलाषाको पूर्ण करनेका विचार किया । शीघ्र ही बादशाह फरुखसियरके सिंहासनसे रहित होते ही महाराज जयसिंहने अपन उस आशयको सफल करनेका यथार्थ अवसर जानकर दिल्लीसे अपने राज्यमें आकर कार्य करना प्रारंभ किया " ।

इस समय आमेरराज्यकी भूमिका परिमाण बहुत थोडा था, सबसे पहिले महाराज जयसिंहने अपने राज्यकी सीमाके जितने भी देश थे उन सबको अपने अधिकारमें करनेका विचार किया । और दूसरी ओर जिन छोटे२ राजाओंकी सेना मुगल बादशाहकी आज्ञानुसार महाराज जयसिंहके अधीनमें नियुक्त थी, जयसिंहने उनको अपने अधीन पदपर वरण कर लिया ।

पूर्व वर्णित युद्धमें आमेरराजकी सीमामें लालसोढके पचवाना चौहान, गोरा, नीमराणा इत्यादि अनेक अनधीन सामन्त थे । वह जयपुरके महाराजको न तो कर देते थे और न उनके अधीनमें कोई कार्य करते थे, परन्तु आवश्यकतानुसार उस प्रत्येक सम्प्रदायमें अपनी २ सेनाके साथ आमेरके अधीनमें मिलकर रणभूमिमें जाते थे, परन्तु शेखावाटीके सामन्त उस प्रकारसे सेनाके साथ आमेरके महाराजके साथ नहीं मिलते थे। राजौरके बडगूजर और बियानाके जादौ इत्यादि प्राचीनकालके सामन्त गण भी पहिलेक समान स्वाधीनभावसे रहते थे, परन्तु मुगलोंके शासनके पतनसमयमें उन्होंने शत्रुओंके कराल ग्राससे रक्षा करनेमें अपनेको असमर्थ जानकर अन्तमें अपने २ उन प्राचीन स्वाधीन देशोंको आमेर राजके अधीनमें स्वीकार कर उनकी आज्ञा पालन और आवश्यकतानुसार सेनाकी सहायता करना स्वीकार किया था। यद्यपि महाराजने उक्त अधीश्वरोंको अपने हस्तगत कर लिया था, परन्तु उन्होंने उसी प्रकार सरलतासे बूँदीके महाराजको हस्तगत कर अपनी अनभिज्ञताका परिचय दिया।बिना रुधिर बहाये बूँदीके महाराज राव बुधसिंहको अपने अधीनताकी जंजीरमें बांधना कठिन जानकर महाराज जयसिंह बुधसिंहको सिंहासनसे उतारकर उनके पदपर अपने अभिलाषित मनुष्यको अभिषिक्त करनेम प्रवृत्त हुए ।

जिस समय महाराज बुधसिंह अपने साले जयसिंहकी राजधानी आमेरमें उनकी आतिथ्यता स्वीकार करते थे, उस समय जयसिंह गुप्त षड्यंत्रजालका विस्तार करके बुधसिंहके सर्वनाश करनेकी चेष्टा कर रहे थे । सबसे पहिले जयसिंहने बुधसिंहके निकट यह प्रस्ताव किया, "कि आप जो आमेरराज्यमें निवास करते रहैं, तो मैं प्रतिदिन आपको तथा आपक सेवकोंके लिये पाँचसौ रुपया देता रहूँगा । " बुधसिंहके चचा जयसिंह जो आगरेके चौकमें सैयदोंकी सेनाके साथ संग्राममें मारे गये थे, और जिन्होंने अपना जीवन देकर बुधसिंहके प्राणोंकी रक्षा की थी, उनके

एक भ्राता इस समय बुधसिंहके साथ जैपुरमें निवास करते थे। जयसिंहने जो यह प्रस्ताव उपस्थित किया; उसका गुप्त उद्देश क्या था इसको वह भलीभाँतिसे समझ गये। उन्होंने शीघ्र ही इस भावका एक पत्र बूँदीको भेजा, कि वेगूवाली रानी (बुधसिंहने वेगूके जिस सामन्तकी कन्याके साथ विवाह किया था) शीघ्र ही अपने पुत्रोंके साथ अपने पिताके यहाँको चली जायँ। कुछ दिनोंके पीछे उन्होंने बुधसिंहके समस्त अनुचरोंको अत्यन्त गुप्तभावसे जैपुरके बाहर इकट्ठा करके बुधसिंहकी समस्त विपत्तियोंका समाचार कह सुनाया। राव राजा बुधसिंह जयसिंहकी विश्वासघातकता और मारनेकी चेष्टा जानकर शीघ्र ही तीनसौ हाडा सेनाको साथ ले जैपुरके बाहर हुए। यद्यपि उनके साथ उस समय केवल तीनसौ सैनिक थे तथापि उस वीरके हृदयमें इस समय इस प्रकारकी प्रबल आशा विराजमान थी कि इस तीनसौ सेनाकी सहायतासे ही मैं इस महाविपत्तिसे अपना उद्धार कर सकूंगा। राव राजा बुधसिंहने उन तीनसौ अनुचरोंके साथ अपनी राजधानी बूंदीकी ओरको यात्रा प्रारंभ कर दी। परन्तु उनके पंजोला स्थानमें जाते ही आमेरराज जयसिंहकी पूर्व आज्ञानुसार जयपुरके प्रधान पाँच सामन्तोंने सेनासहित राव राजा बुधसिंहपर आक्रमण किया। वह तीनसौ सैनिक शीघ्र ही शत्रुओंकी सेनाके द्वारा घर लिये गये। राव बुधसिंह उस विपत्तिसे कुछ भी भयभीत न हुए। उस बहुत थोडी सेनाके साथ उन्होंन युद्ध करना प्रारंभ किया। उन राजपूतोंने युद्धमें अपनी २ वीरताकी पराकाष्ठा दिखानेमें किसी भाँतिकी कसर न की, परन्तु राव राजा बुधसिंह असीम साहसी केवल तीनसौ हाडासेना साथ लेकर इस प्रकार महापराक्रमके साथ युद्ध करने लगे। जैपुरके उक्त ईशरदा, सेवाड और भावर इत्यादि स्थानोंके पाँच सामन्त और उनके अधीनकी नीची श्रेणीके बहुतेस सरदार मारे गये। आजतक सामन्तोंके समाधिमंदिर उस स्थानमें विराजमान होकर बुधसिंहकी प्रतिहिंसाकी साक्षी दे रहे हैं। परन्तु उपरोक्त युद्धमें राव बुधसिंहके उक्त चचा भी मारे गये। इस समय बुधसिंहकी सेनाकी संख्या बहुत घट गई थी, इससे वह उस थोडासा सेनाकी सहायतासे शत्रुओंकी सेनामेंसे निकल बूँदीमें न जा सके, इसीसे वह निर्विघ्नतासे पहाडी रास्तेसे चले गये। जयसिंहने इस प्रकारसे राव बुधसिंहको भगाकर कारडके सामन्त दलेलसिंहके साथ अपनी कन्याका विवाह करके उनको बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त कर दिया।

"इसका वर्णन तो पहिले ही कर चुके हैं कि कोटाराजवंशके साथ बूँदीके राजवंशकी घोर शत्रुता हो गई थी। यद्यपि दोनों राजवंशोंका जन्म एक ही मूलसे हुआ था, और बूँदीका राजवंश श्रेष्ठ तथा कोटका राजवंश छोटा था, यद्यपि दोनों राजाओंकी नाडियोंमें एक ही रुधिर बहता था, परन्तु जातिमें वैरभावके कारण एक दूसरेका विनाश करनेमें विशेष तत्पर थे। राव बुधसिंहको महाविपत्तिग्रस्त देखकर कोटके महाराज भीमसिंह इस समय अत्यन्त आनन्दित हो मारवाडके अधीश्वर महाराज अजितसिंह और दिल्लीके बादशहाके दोनों सैयदमन्त्रियोंके साथ दृढ मित्रता करके उनकी सहायतासे भरवार, हाडोती इत्यादि देशोंमें अपनी प्रधानता विस्तार करनेमें लगे। उन्होंने इस

समय निर्भय हो सम्बलनदीको अपने राज्यकी सीमामें निर्देश करके उक्त नदीके पूर्व तीरवर्ती बूँदी राज्यके खास अधिकारी देशके पृथ्वीके भागोंको शीघ्रतासे कोटेके राज्यके अधिकारमें कर लिया "।

राव बुधसिंहको इस प्रकारसे चारों ओरसे शत्रुओंने घेर लिया, यह महाविपत्तिके समुद्रमें मग्न होकर राजपूत जातिके स्वाभाविक पराक्रमके साथ अपने पिताकी राजधानी-पर फिर अधिकार करनेके लिये बारम्बार चेष्टा करने लगे। अधिक क्या, इसी कारणसे बारम्बार युद्ध हुआ और उन युद्धोंमें बहुतसी हाडा सेना मारी गई। परन्तु अभागे बुध-सिंहका किसी प्रकार भी मनोरथ सिद्ध न हुआ। अन्तमें मनके दुःखको मनमें ही रख-कर ससुरालमें ही निवास करनेके पीछे उन्होंने प्राण त्याग दिये। राव बुधसिंहने दो पुत्र छोडे, बडेका नाम उमेदसिंह और छोटेका नाम दीपसिंह था।

राव बुधसिंहके परलोक जानेके पीछे उनके दोनों कुमार भी महाविपत्तिके मुखमें पडे। उनके वंशके शत्रु आमेरके महाराज जयसिंहकी आज्ञानुसार मेवाडके महाराणाने बेगूदेशको अपने अधिकारमें करके उमेदसिंह और दीपसिंहको मामाके यहांसे निकाल दिया। निःसहाय आश्रयहीन विपत्तिमें पडे हुए राजकुमार दोनों बालक उमेदसिंह और दीपसिंह एकमात्र साहसमें भरकर निर्भय हो अपने पिताके कितने ही विश्वासी सेवकोंको लेकर पुचैल नामक गहन देशको चले गये। कुछ दिनोंके उपरान्त कोटेके महाराज भीमसिंहके प्राण त्याग करते ही राजा दुर्जनशाल कोटेके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए। अनाथ उमेदसिंह और दीपसिंहने उस विपत्तिमें पडकर कहीं भी सहायताकी आशा न जान अन्तमें अपनी जातिके उक्त दुर्जनशालके निकट अपनी वह शोचनीय अवस्था सुनाकर उनसे सहायताकी प्रार्थना की। कोटेके महाराज दुर्जनशाल अत्यन्त उदार और दयालु-हृदय थे इन्होंने जातिके वैरभावको भूलकर उमेदसिंह और दीपसिंहका उद्धार किया वरन् वह इतना करके भी शान्त न हुए जिससे इनको फिर बूँदीका राज्य मिल जाय, इसमें भी उनकी सहायता करनेमें तत्पर हुए।

चतुर्थ अध्याय ४.

उमेदसिंहका जयपुरकी सेनाको परास्त करना—दबलाना नामक स्थानमें युद्ध—उमेदकी पराजय और भागना—उनके घोडेकी मृत्यु—चम्बलके ध्वंसस्तूपमें उमेदका आश्रय लेना- उमेदका बूँदीको जय करना-फिर बूँदीसे उमेदका भागना—उनकी विमाताका उमेदके साक्षात् होना—उक्त विमाताका हुलकरसे सहायता मांगना—हुलकरका उमेदको बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त करनेकी प्रतिज्ञा करना—युद्धके लिये तैयार होना-जयपुरके महाराजका उमेदको बूँदीका महाराज कहकर स्वीकार करना- उमेदको बूँदीके राज्यकी प्राप्ति होना—महाराष्ट्रोंका अत्याचार करना-इन्द्रगढके अकृतज्ञ सामन्तोंका प्राण नाश-उमेदका राज त्याग करना-अजितसिंहका अभिषेक-पितामह

उमेदसिंहके प्रतिपोते विष्णुसिंहका अविश्वास प्रकाश करना--फिर परस्परमें मिलन होना–हाडोती राज्यको छोडकर अंग्रेजी सेनाका भागजाना- उमेदका उस सेनाकी सहायता करना–उमेदसिंहकी मृत्यु-बूँदीके महाराजके साथ गवर्नमेण्टका संधिबंधन-संधिपत्र--विष्णुसिंहके प्रति गवर्नमेण्टका अनुग्रह प्रकाश करना–विष्णुसिंहकी मृत्यु–उनके चरित्रोंकी समालोचना करना–राव राजा रामसिंहका अभिषेक।

संवत् १८९० सन् १७४४ ईस्वीमें जिस समय उमेदके पिताके शत्रु महाराज जयसिंहने प्राण त्याग किये थे, उस समय उमेदसिंहकी अवस्था केवल तेरह वर्षकी थी–जब उमेदसिंहने जयसिंहकी मृत्युका समाचार पाया तब उस बालावस्थामें ही उन्होंने असीम साहसके साथ अपनी जातिके बहुत थोडे अनुचरोंके साथ बाहर जाकर सबसे पहिले पाटन और गेनोली दोनो देशोंपर आक्रमण करके अपना अधिकार कर लिया। जब इस बातका सर्वत्र हाडोती देशमें प्रचार हो गया कि बूँदीके मृतक महाराज बुधसिंहके बालक पुत्र उमेदसिंह अपने पिताके अधिकारको संग्रह करनेके लिये बाहर हुए हैं, तब प्राचीन हाडाजातिके दलके दल चारों ओरसे आकर उमेदकी विजय-पताकाके नीचे इकट्ठे होने लगे। कोटेके उदारचित्त अधीश्वर दुर्जनशालको जब यह समाचार ज्ञात हुआ कि एक तेरह वर्षका बालक उमेदसिंह राजपूतवीरके समान राजनैतिक रंगभूमिमें आकर वीरता दिखा रहा है, तब उन्होंने तुरन्त ही महा आनंदित होकर उमेदकी सहायताके लिये अपनी सेनाको भेज दिया।

जयसिंहकी मृत्युके पीछे महाराज ईश्वरीसिंह जयपुरके सिंहासनपर विराजमान होकर पिताकी निर्दिष्ट राजनैतिक नीतिको चलानेमें प्रवृत्त हुए। उन्होंने विचार किया कि हाडाजातिकी श्रेष्ठ शाखा बूँदीके राजवंशके समान छोटीशाखावाले कोटेके राजवंशको भी अवश्य ही जैपुरकी अधीनता स्वीकार करनी होगी। कोटेके महाराज दुर्जनशाल जयपुरके महाराज ईश्वरीसिंहकी उस अन्यायकारी ऊँची अभिलाषाके प्रति घृणा दिखाकर उमेदकी सहायता करनेमें प्रवृत्त हुए, ईश्वरीसिंहने शीघ्र ही कोटेके महाराजके विरुद्ध युद्ध करनेका विचार कर कोटेराज्यपर आक्रमण किया। इस कोटेके आक्रमणका शेष फल क्या हुआ; वह इस बूँदीके इतिहासमें प्रकाशित नहीं किया गया, वह हमारे पाठकोंको कोटेके इतिहासमें मिलेगा।

ईश्वरीसिंहने कोटेसे भागनेके समय एक दलवृद्ध लोहारी नामक पन्थी सेनाका नायक जिस स्थानमें उमेदसिंह जा रहे थे वहाँ उनपर आक्रमण करनेके लिये भेजा उस लोहारी नामक स्थानक मीनाजाति उक्त पहाडी देशके आदिम निवासी थे, यद्यपि हाडाजातिने उनकी स्वाधीनता हरण कर ली थी तथापि उन मीनागणोंने हाडाराजके अनेक समयपर बहुतसे उपकार किये थे तथा वे उनके साथ युद्धोंमें भी गये थे। बालक उमेदसिंहकी विषम वीरता और साहसको देखकर तथा उनकी शोचनीय दुर्दशा देखकर उस मीना जातिका हृदय भी इनकी ओरको खिंच गया। पाँच हजार धनुषधारी मीना उमेदसिंहका पक्ष समर्थन कर उनकी सहायता करनेके निमित्त इकट्ठे होकर उमेदसिंहके अधीनमें युद्ध-

भूमिमें जानेके लिये विशेष आग्रह प्रकाश करने लगे। वीरबालक उमेदसिंहने उस मीना सेनाकी सहायतासे महा पराक्रमके साथ अग्रसर विचोरीनामक स्थानमें शत्रुओंके साथ समरानल प्रज्वलित कर दी। मीनाजाति अपने प्रबल पराक्रमसे शत्रुओंके ऊपर जाकर जिस समय उनके डेरोंको लूटने लगी उस समय उमेदसिंह नंगी तलवार हाथमें लेकर हाडासेनाकी सहायतासे जयपुरकी सेनादलपर आक्रमण करके उसका संहार करने लगे। उस समय अगणित शत्रुओंकी सेना मारी गई। उमेदसिंहने रणडंके और राजपताकापर अधिकार कर लिया। अंतमें जयपुरका सेनादल उस बालक वीरसे परास्त होकर अपने प्राणोंके भयसे भाग गया।

जैपुरके महाराजने उस वीरबालक उमेदसिंहकी वीरताका समाचार सुनकर तथा अपनी सेनाकी पराजय सुनकर उमेदसिंहको एकबार ही परास्त करनेके लिये नारायणदास खतरीके अधीनमें फिर अठारह हजार सेनाको भेजा। विचोरी नामक स्थानके युद्धमें जय प्राप्त करके उमेदसिंह भविष्य आशाको अलक्ष्यमें देखने लगे। जिस हाडाजातिके सामन्त वीरोंने अबतक सहायता नहीं की थी उमेदसिंहकी जयप्राप्तिसे वही इस समय महा आनंदित होकर दलके दल उनके साथ आकर मिलने लगे। उमेदसिंह इस समय पिताके सिंहासनको पानेके लिये इतने उत्तेजित हुए थे कि उन्होंने उस महायुद्धमें प्राणतक भी उत्सर्ग कर देनेकी प्रतिज्ञा की थी। इस समय जयपुरके महाराजकी भेजी हुई अठारह हजार सेना डबलाना नामक स्थानमें आकर इकट्ठी हुई। युद्ध करनेके पहिले उमेदसिंह कुलदेवी आशापूरा माताके मंदिरमें गये और भलीभांतिसे पूजा तथा प्रार्थना करके लौट आये, परन्तु मंदिरसे लौटते समय यह प्रतिज्ञा की कि क्या तो बूंदीपर ही अपना अधिकार होगा और नहीं तौ मैं रणभूमिमें अपने प्राण खो दूँगा।

असीम साहसी हाडादलने भी उमेदके समान प्रतिज्ञा की कि क्या तो विजय ही होगी नहीं तो युद्धक्षेत्रमें प्राण त्याग करेंगे। दिल्लीके बादशाह जहाँगीरने बूँदीके अधीश्वर राव रतनको जो राजपताका दी थी; उमेदसिंह इस समयके युद्धमें उस पताकाको ले आये थे, हाडा सेनादल बूँदीकी उस प्राचीन राजपताकाके अधीनमें शीघ्र ही इकट्ठा हुआ; सम्मिलित हाडादलने संहारमूर्तिसे डबलाना सीमाको लांघते ही देखा कि प्रबल शत्रुओंकी सेनाको आक्रमण करनेके लिये आगे आ रही है। वीरश्रेष्ठ उमेदसिंह शत्रुओंकी सेना उनको अधिक देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, वरन् अपनी सेनाको चक्राकारसे सजाकर भाला हाथमें लेकर शत्रुओंके व्यूहको भेदनेके लिये आगे बढे। शीघ्र ही दोनों सनाओंका परस्पर मुकाबला हो गया। परन्तु हाडादलने इस प्रकार असीम साहसके साथ अपना अंतिम बल प्रकाश करके शत्रुओंके व्यूहपर आक्रमण किया कि वह प्रबल शत्रुओंकी सेना दृढ दल बाँधकर भी इस समय छिन्न भिन्न हो गई, परन्तु कुछ ही कालके पीछे शत्रुओंकी सेनाने फिर एक दल बाँधा, और उमेदसिंहके जानेके मार्गमें भयंकर गोले वर्षाने लगी, परन्तु उमेदने उन गोलोंकी वर्षापर

कुछ भी ध्यान न दिया। फिर नंगी तलवार हाथमें लेकर शत्रुओंके व्यूहको भेद डाला। हाडासेनाने केवल तलवारसे ही शत्रुओंकी सेनाका संहार किया। परन्तु हाडादलने जितनी बार जयपुरकी सेनापर आक्रमण किया, उतनी ही बार उसकी अधिक हानि हुइ। प्रथम आक्रमणमें उमेदसिंहके मामा पृथ्वीसिंह मारे गये। इसके पीछे मोटराके महाराज मर्जादसिंह नामक हाडाजातिके अर्धाश्वरके जिस समय जयपुरके सेनापति नारायणदास खतरीके मस्तकको काटनेके लिये चक्रमें भेजा था, उन्होंने भी उसी समय रणभूमिमें जाकर शयन किया। सारनके सामन्त प्रागासिंह तथा अन्यान्य नीचीश्रेणीके वीर भी धीरे २ प्राण त्याग करने लगे। अपने प्रधान २ वीरोंके मारे जानेपर भी वह अल्पवयस बालक वीर उमेदसिंह कुछ भी भयभीत न हुए। वरन् अपना अतुल बल विक्रम प्रकाश करते हुए शत्रुओंका संहार करने लगे। परन्तु अन्तमें अपने दुर्भाग्यसे उमेदसिंहका घोडा गोलोंके आघातसे घोररूपसे घायल हुआ, उसकी देहसे रुधिरकी धारा बहने लगी। बून्दीके इतिहासलेखकने लिखा है कि यद्यपि उमेदसिंह तथा उनकी सेनाने घोररूपसे बलविक्रम प्रकाश किया था परन्तु अन्तमें शत्रुओंकी सेनाके अधिक होनेसे शीघ्र ही इनकी पराजय हो गई। वीर सामन्तोंने उमेदको शत्रुओंके मुखमें पडा हुआ देखकर कहा, कि "यदि आपका प्राण रहेगा तो किसी न किसी समय अवश्य ही बूंदीपर अपना अधिकार हो जायगा, और यदि अपने ही इस रणभूमिमें अपने प्राणोंका बलिदान किया तो सभी आशाएँ लोप हो जायंगी, इसलिये आप युद्ध करना छोड दीजिये।

इतिहासलेखकने लिखा है कि "वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने महाशोकित और दुःखित होकर शीघ्र ही युद्धभूमिको छोड दिया। उमेदसिंह हताश होकर अपनी बचीबचाई सेनाको साथ लेकर सवाली नामक घाटी मार्गसे आये, इन्द्रगढको बहुत पास जानकर उस घायल हुई घोडीको विश्राम करानेके लिये आप उसपरसे उतर पडे। परन्तु जैसे ही इन्होंने उसका साज खोला कि वैसे ही उसने प्राण त्याग दिये। वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहका हृदय शोकके आघातसे चलायमान हुआ; विचारे उमेद उस घोडीके सिरहाने बैठकर रुदन करने लगे। उस घोडीका नाम हुंजा था, वास्तवमें वह घोडी अधिक सम्मानके योग्य थी। यह घोडी ईरान देशकी थी, दिल्लीके बादशाहने उमेदके पिता बुधसिंहको वह घोडी उपहारमें दी थी और बुधसिंहने उसपर चढकर बहुतसे युद्धोंमें विजय प्राप्त की थी"। फिर जो घोडीका शोक हाडाराज उमेदसिंहने इस प्रकारसे किया तो इसमें कुछ आश्चर्य नहीं! कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "भविष्यत्में उमेदसिंहने बून्दीके सिंहासनको प्राप्त कर सबसे पहिले इस घोडीकी एक सुन्दर पत्थरकी मूर्ति बनवाकर बून्दीकी राजधानीके चौकमें स्थापित की। प्रत्येक हाडाजातिके वीरने ही उस मूर्तिका महान् ऊँचा सम्मान किया था।

(१) कर्नल टाड साहबने अपनी टीकामे लिखा है कि "मैने हुंजाकी मूर्तिको देखकर उसको सलाम किया था। यदि मैं हाडाजातिमें निवास करता तो राजपूतोंके प्रत्येक युद्धके उत्सवके समयमें हाडाजातिके समान मै भी उस मूर्तिके गलेमें माला पहराता।"

महा दुःखित हो उमेदसिंह इन्द्रगढ़में आये । यह इन्द्रगढ बूँदीके प्रधान सामन्तों-के अधिकारमें था । इन्द्रगढ़पति उमेदके पिताके आज्ञावाहक अधीन सामन्त थे, इन्होंने राजभक्तिके मस्तकपर कुठाराघात करके विश्वासहन्तास्वरूपसे आमेरके महाराजकी अधीनता स्वीकार की थी । उमेदसिंह इनके पास गये, इन्द्रगढके महाराजका सम्मान दिखाना तो दूर रहा वरन् उन्होंने अत्यन्त नराधमके समान उमेदसिंहकी प्रार्थनानुसार उनको एक घोडा भी नहीं दिया, वरन् उनको शीघ्र ही इन्द्रगढ छोड देनेके लिये कहा। उमेदसिंह इन्द्रगढके अधिपतिके इस व्यवहारसे अत्यन्त दुःखित और क्रोधित हो मनका क्रोध मनमें ही रखकर इन्द्रगढमें जलतकको भी ग्रहण न करके करवान देशकी ओरको चले गये । उस देशके अधीश्वर इन्द्रगढके महाराजके समान अराजभक्त विश्वासहन्ता नहीं थे । वह उमेदसिंहके आनेका समाचार सुनते ही बडी प्रसन्नतासे आगे बढ उनको बडे सम्मानके साथ ग्रहण करके अपने यहां लिवा लाये, और एक घोडा देकर वह अपनी सामर्थ्यके अनुसार उनकी सहायता करनेके लिये भी तैय्यार हुए । उमेदसिंहने उस समय देखा कि इस समय शीघ्र ही जयपुरकी सेनाके साथ युद्ध करना असंभव है तो जितने विश्वासी हाडाजातीय वीर इनके पास थ उन सबको यह कहकर विदा दी कि " इस समय अपनेस्थानको जाओ फिर सुअवसर आनेपर आपकी सहायता ग्रहण करूंगा ।" उमेदसिंह इस प्रकारसे सबको बिदा करके चम्बलके किनारे रामपुरा नामक स्थानके प्राचीन विध्वस्त महलमें जाकर रहने लगे ।

परन्तु वीरतेजस्वी उमेदसिंहको उस भावसे अधिक दिनतक रहना नहीं हुआ । कोटेके महाराज उदारहृदय दुर्जनशालने कि जिन्होंने अपने प्रबल पराक्रमसे आमेरके महाराज ईश्वरीसिंह और उनके सहयोगी महाराष्ट्रनेता आपाजी सेंधियाके करालग्राससे कोटेराज्यकी रक्षा तथा अंतमें ईश्वरीसिंह और आपासिंधियाको परास्त कर भगा दिया था, इस समय उन्होंने सबसे अधिक उमेदसिंहकी सहायता की । इधर हाडा-वर्तीके एक ऊंची श्रेणीके कविने उस बालक उमेदसिंहका पराक्रम और साहस देखकर अत्यन्त मोहित हो जिससे वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहको उनके पिताका सिंहासन मिल जाय इसमें विशेष यत्न किया । राजपूतकविके हाथमें केवल लेखनी ही शोभा नहीं पाती थी वरन् तलवार भी भलीभाँतिसे उसके करकमलमें शोभायमान होती थी । लेखनीके समान तलवारके चलानेमें भी राजपूत कवियोंको अभ्यास था। वह राजपूतकवि एक ओर तो लेखनीके बलसे इस प्रकार हृदयको उत्तेजित करनेवाली वीर गाथावलीमें उमेदकी वीरताका अभिनयरूपी काव्य बनाकर हाडाजातिको उत्तेजित करने लगे, और दूसरी ओर वह उसी प्रकारसे स्वयं अपनी तलवारके बलसे उमेदके सौभाग्यके सूर्यको उदित करनेके लिये आग्रहके साथ कार्यक्षेत्रमें चले । उन कविकी प्रार्थनापर कोटेके महाराज दुर्जनशालने शीघ्र ही अपनी सेनाको उन कविश्रेष्ठके अधीनमें बूँदीको जीतनेके लिये भेजा । वीरतेजस्वी उमेदसिंहने फिर अपने भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये अपने कुटुम्बी जनोंके साथ कोटेकी सेनाका योग देकर नवीन अवस्थामें संहार-मूर्तिसे शत्रुओंका पीछा किया ।

निरन्तर घोरयुद्ध होनेके कारण बूँदीके नगरकी दीवारें एक प्रकारसे विध्वंस होगई थीं। विश्वासघाती अराजभक्त दलेलसिंह जिनको जयसिंहने बूँदीके सिंहासन-पर अभिषिक्त किया था, वह उमेदसिंहके आनेका समाचार सुनकर नगरकी रक्षा करनेके लिये बाहर हुए तो थे परन्तु किसी प्रकारसे भी सफल मनोरथ न हुए, वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने बडी सरलतासे नगर पर अधिकार करलिया। अंतमें दलेलसिंह अपनी रक्षा करनेके लिये बूँदीके प्रधान किले तारागढमें चले गये। उमेदसिंहने तारागढके घेरनेमें किंचित् भी विलंब नहीं किया, जिस वीरकविके कल्याणसे उमेदसिंहने इस भाग्यकी परीक्षा की थी अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि, जिस समय सेनादल तारागढपर अधिकार करनेके लिये उद्यत हुआ, उस समय उक्त कविश्रेष्ठ अपने जातिके एक विश्वासघाती मनुष्यके द्वारा मारे गये। उनकी मृत्युका समाचार गुप्त रक्खा गया, इनके शिरके ऊपर एक सफेद चादर उढादी जिससे कोई जान न सके। अन्तमें उमेदसिंह घोर पराक्रमके साथ किलेपर अधिकार करनेके लिये तत्पर हुए, दलेलसिंह महा भयभीत होकर किलेको छोडकर भाग गये और उमेदसिंह किलेके जीतनेके पीछे पिताके सिंहासनपर विराजमान हुए।

दलेलसिंहने भागकर शीघ्रतासे जयपुरमें जा ईश्वरीसिंहको अपनी पराजयका समाचार सुनाया। जयपुरके महाराज उस समाचारको सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुए; और शीघ्र ही विख्यात वीरश्रेष्ठ खत्री केशवदासके साथ एक सेनाको फिर बूँदीपर अधि-कार करनेके लिये भेजा। उमेदसिंहने उस विध्वंस हुए नगरकी दीवारों तथा किले-की मरम्मत करानेका अवसर न पाकर आमेरकी सेनाके आनेका समाचार पाकर महायुद्ध आरंभ किया। यद्यपि उमेदसिंह बडे कष्टसे बूंदीको जयकर पिताके सिंहासन-पर विराजमान हुए थे परन्तु वह समयके न मिलनेपर उचित तैयारी न कर सके, इसी कारण सरलतासे आमेरकी शिक्षित सेनाने उस युद्धमें जय प्राप्त की। यद्यपि आमेरकी राजपताका फिर बूंदीके किलेके शिखरपर उडी परन्तु आमेरके महाराजकी ओरसे जब दलेलसिंहको फिर बूंदीके सिंहासनपर बैठानेका प्रस्ताव उपस्थित हुआ, तब दलेलसिंह पहिले कलंकको स्मरण करके फिर राजसिंहासनपर बैठनेके लिए किसी प्रकार भी राजी न हुए।

उमेदसिंह फिर दुर्भाग्यरूपी अगाध समुद्रके जलमें निमग्न हुए। इन्होंने पिताके सिंहासनपर अधिकार करनेके लिये मारवाड और मेवाडके महाराजसे सहायता मांगी परन्तु किसीने भी इनको सहायता न दी, जिन विश्वासी सेवकोंने इस समय-तक उमेदसिंहका साथ नहीं छोडा था, उमेदसिंह उन्हींका दल बांधकर निरन्तर गतिसे बूंदीके सिंहासनपर अन्यायसे बैठे हुए मनुष्यका अनिष्ट साधन करने लगे। ग्रामोंको लांघते हुए अंतमें अपने पिताके राज्यमें जा पहुँचे। जिस समय यह उस कार्यमें दत्तचित्त हो विनोदियानामक ग्राममें आये, इसी ग्राममें इनके पिता तथा इनकी सम्पूर्ण विपत्तियों-को पहुंचानेवाली सौतेली माता जयसिंहकी भागिनी निवास करती थी। उक्त कष्ट-

वाही रानीने अपने दोषसे अपने स्वामी और सौतेले पुत्रका सर्वनाश किया, इस दुःखसे महादुःखित होकर मनके दुःखको मनमें ही रखकर समय व्यतीत करती थी। उमेद-सिंहने माताका वहाँ निवास सुनकर शीघ्र ही उनके साथ साक्षात् कर चरणवंदना की। उमेदको देखते ही महारानीके मनमें अनुतापकी अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित हो गई। उमेदकी ऐसी शोचनीय अवस्था तथा ऐसा कष्ट देखकर रानीके हृदयमें स्वभावसे ही दुःख और सहानुभूति उत्पन्न होने लगी। रानीने इतने दिनोंके पीछे परितापानलसे विदग्ध हुए हृदयमें चिन्ता करनेके पीछे स्थिर किया कि एकमात्र उसीके व्यवहारसे जिस प्रकार बूँदीके राजवंशका सर्वनाश हुआ है उसी प्रकार अपनी सामर्थ्यके अनुसार बूँदीके राजवंशकी अवस्थाका परिवर्तन करना उनके पक्षमें एकान्त कर्त्तव्य है। रानीने उमेदसिंहके साथ बहुतसी बातचीत करनेके पीछे निश्चय किया कि तुम स्वयं दक्षिणमें जाकर महाराष्ट्रनेतासे सहायता मांगो। और जिससे उमेदसिंहको महाराष्ट्रोंकी सहायतासे पिताका सिंहासन प्राप्त हो, इसके लिये यथेष्ट चेष्टा करनी होगी। रानी शीघ्र ही उक्त प्रस्तावके अनुसार दक्षिणकी ओर चली, थोडे दिनोंके पीछे ही रानी अपने पुत्रके साथ दक्षिणके महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकरके डेरोंमें जा पहुँची। निकाले हुए उमेदसिंहके भाग्यको बदलनेके लिये जयसिंहकी भगिनी उक्त बुधसिंहकी रानीने मेषपाल जातिके हुलकरकी शरणमें जाकर उनसे सहायता मांगी और जिससे हुलकर बूँदीका उद्धार कर दें रानीने इसीके लिये हुलकरके साथ भाई बहिनका सम्बन्ध स्थापित किया।

यद्यपि मल्हारराव हुलकरने नीच वंशमें जन्म लिया था परन्तु ऊँचे वंशमें उत्पन्न हुए मनुष्यके समान उसमें अनेक गुण थे, इस कारण वह रानीकी इच्छानुसार बूँदीपर अधिकार करनेके लिये तय्यार हुए। बूँदीके इतिहाससे जाना जाता है कि पहिले वृद्धारानी हुलकरके साथ सेनासहित बूँदीका उद्धार किये बिना ही पहिले उसको जयपुरमें ले गई। आमेरके महाराज ईश्वरीसिंहको युद्धमें परास्त किया जायगा तो वह स्वयं अपने वंशधर तथा प्रतिनिधियोंके पक्षसे बूँदीका अधिकार एकबार ही छोडकर संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर देंगे। इसी लिये रानी सबसे पहिले महाराष्ट्र नेताको जयपुरमें ले गई। आमेरके महाराज ईश्वरीसिंह महाराष्ट्रोंके आनेका समाचार पाकर युद्ध करनेके लिये सेनासहित राजधानीको छोडकर आगे बढे। ईश्वरीसिंहने इससे पहिले अपने मंत्री केशवदासकी हत्या की थी। केशवदासके दो पुत्र हरसहाय और गुरुसहाय थे। अंतमें यही दोनों भ्राता पिताके हत्या करनेवाले ईश्वरीसिंहको उचित दंड देनेके लिये इस समय गुप्त षड्यंत्रमें लिप्त होकर, ईश्वरीसिंह जिससे प्रबल महाराष्ट्रोंके साथ युद्धमें प्रवृत्त हों उसकी चेष्टा करते थे। दोनों भ्राताओंने ईश्वरीसिंहसे कहा कि महाराष्ट्रोंकी सेनाकी संख्या अत्यन्त सामान्य है इस कारण आप युद्धभूमिमें जाकर उनको परास्त करिये। परन्तु वास्तवमें महाराष्ट्रोंके सेनाकी संख्या सामान्य नहीं थी उन दोनों भ्राताओंने केवल ईश्वरीसिंहको विपत्तिमें डालनेके लिये ही उनसे शत्रुओंकी सेना-संख्याको सामान्य बताया था। विचारे ईश्वरीसिंह उक्त दोनों

भ्राताओंकी बातपर विश्वास करके आमेरके अधीनमें बगरू नामक स्थानतक गये तब जाना कि हम धोखेमें आ गये हैं, हरसहाय और गुरुसहायके प्रति उन्हें जो विश्वास हो गया था, उसके उचित फलको निकटवर्ती हाडाजातिके एक कविने इस स्थानपर लिखा है,–

मंत्री मोटो मारियो, खतरी केशोदास ।
जबहीं छोडी ईशरी, राज करनकी आस ।।

इसका अर्थ यह है कि ईश्वरीसिंहने जिस दिन मंत्री केशवदासका प्राण नाश किया उसी दिनसे उन्होंने राज करनेकी संपूण आशा छोड दी थी ।

ईश्वरीसिंह बहुत थोडी सेना लेकर युद्ध करनेके लिये गये थे; इस कारण शत्रु-पक्षकी सेनाकी संख्या अधिक देखकर उनके साथ युद्ध करना असंभव जान आमेर-राजने उक्त बगरूदेशके सामन्तके अधिकारी किलेका आश्रय लिया । महाराष्ट्रनेता मल्हा-रराव हुलकरने शीघ्र ही बगरूके किलेको जा घेरा, ईश्वरीसिंह दश दिनतक किलेमें रहे, अन्तमें अपनीरक्षाअसंभव जानकर शत्रुके साथ संधिकरनेकोराजीहुए।मल्हाररावकेप्रस्ताव-के अनुसार ईश्वरीसिंहने अपनी और भविष्यके उत्तराधिकारियोंकी ओरसे बूँदी राज्यपर अपना सब प्रकारसे अधिकार छोडकर बूँदीके संपूर्ण अधिकार उमेदसिंहको दे दिये। उन्होंने केवल उसी त्याग स्वीकारपत्रको देकर छुटकारा नहीं पाया वरन् उस स्थानपर उन्होंने उम्मेदसिंहको बूँदीका महाराजा भी स्वीकार किया। हुलकर उक्त त्याग स्वीकार-पत्र और कोटेकी सेनादलके साथ शीघ्र ही उमेदको साथ लेकर बूँदीमें आ पहुँचे । जो विश्वासघाती बूँदीके सिंहासनपर विराजमान था उस मनुष्यको भगानेमें किंचित्मात्र का भी विलंब नहीं किया । थोडे ही दिनोंके पीछे बूंदीकी राजधानीमें बडी धूमधामके साथ उमेदसिंहका अभिषेक किया गया । इस अभिषेकके समयमें राव राजा उमेदसिंहने समाचार पाया कि उनके शत्रु आमेरके महाराज ईश्वरीसिंहने महा अपमानके कारण आत्मघृणासे विष पान कर प्राण त्याग किये हैं ।

इस प्रकारसे संवत् १८०५ सन् १७४९ ईसवीमें उमेदसिंह क्रमानुसार चौदह वर्ष-तक वन वन पर्वत २ पर भ्रमण कर अनेक कष्टोंको सहन करनेके पीछे पिताके सिंहासन-पर विराजमान हुए । मल्हारराव हुलकर जिसने बुधसिंहकी विधवा रानीकी प्रार्थनासे उम्मेदसिंहके इन सौभाग्यरूपी सूर्यको चमकाया, उसने इसके पुरस्कारमें उम्मेदसिंहसे चम्बलनदीके किनारेवाले पाटन देश और उसके अधीनके समस्त ग्रामोंको मांगा, उमेद-सिंहने तुरन्त ही रीतिके अनुसार दानपत्र लिखकर वह ग्राम उसको दे दिये ।

---

(१) कर्नल टाड साहबने टीकामें लिखा है कि सन् १८१७ ईसवीमें अंग्रेजी गवर्नमेण्टने महाराष्ट्रोंसे यह देश लेकर फिर बूँदीके महाराज (उमेदके पौत्र) को दे दिये, बूँदीके महाराज इससे अत्यन्त सन्तुष्ट हुए । कर्नल टाड साहबने बडे यत्न और घोर परिश्रम करके यह कार्य किया था ।

बूँदीका राज्य जो चौदह वर्षसे दूसरेके हस्तगत था, उस दीर्घ समयमें निरन्तर युद्ध होनेसे तथा अनेक कारणोंसे श्रीभ्रष्ट हो गया था। दलेलसिंहने उस दीर्घ युद्धमें केवल राजमहलमें और तारागढ नामक किलेके चारों ओर दीवारें बनवा दी थीं, वही उस दीर्घकालमें एकमात्र उन्नतिका कारण हुई। उमेदसिंह पिताके सिंहासनपर विराजमान होकर सबसे पहिले राज्यकी श्रीवृद्धि और सर्वसाधारण प्रजाका कल्याण करनेके लिये नियुक्त हुए, परन्तु जो कि वह महाराष्ट्रजातिकी सहायतासे पिताके सिंहासनपर बैठनेमें समर्थ हुए थे, इस समय समस्त रजवाडेमें उस महाराष्ट्रदलके प्रबल प्रादुर्भाव होनेसे उमेदसिंहके समस्त उद्योग उद्दीपना, तथा मंगल आशामें भयंकर आघात लगने लगा। राजपूतजाति इस समय विचारने लगी कि बीच २ में जो पंगुपालके समान महाराष्ट्रदल इनके राज्यमें आकर अत्याचार और लूटमार करते हैं चिरकालतक यह व्यवहार नहीं रहैगा। उन्होंने इस महाभ्रान्तिरूपी कुँएमें पडकर अपना सर्वनाश किया। विशेष करके राजपूत जाति आत्मविग्रहके समय उस महाराष्ट्रदलका आश्रय लेनेसे और भी बलहीनताको प्राप्त हुई, और उन्होंने सरलतासे अपने प्रताप और प्रभुत्वका विस्तार कर लिया। समस्त राजपूतजातिमें बूँदीकी हाडाजातिकी महाराष्ट्रोंके प्रादुर्भावसे अधिक हानि हुई थी। यदि वीरश्रेष्ठ उमेदसिंह जन्मभरतक अपने स्वाभाविक साहस और पराक्रमके साथ बूँदी राज्यका शासन करते, यदि वह असमयमें अपनी इच्छासे राज्यशासनका भार न छोड देते तो कभी भी महाराष्ट्रगण हाडाजातिके प्रति इस प्रकारकी प्रबलताका विस्तार नहीं कर सकते थे।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "उमेदसिंह स्वभावसे ही धार्मिक थे, परन्तु एक प्रतिहिंसाके करनेसे उनके निर्मल चरित्रोंमें कलंक लग गया था, यदि उनमें कलंक न होता तो हम राजपूतजातिके इतिहासमें उनको अत्यन्त साहसी ज्ञानी और निर्मल चरित्रोंवाला लिख सकते थे।" "परन्तु हम टाड साहबके उक्त मन्तव्यको सब प्रकारसे समर्थन नहीं कर सकते। इसको हमारे पाठक पहिले ही पढ चुके है, उमेदसिंह डबलानाके अधीश्वर देवसिंहके पास गये, देवसिंहने इनके साथ किस प्रकारका घृणित व्यवहार और कैसा अराजपूत-उचित कायर पुरुषोंके समान व्यवहार किया। उमेदसिंह बूँदीके सिंहासनपर बैठकर विचार करते तो बडी सरलतासे उस कायरपुरुष देवसिंहको उचित दंड दे सकते थे। परन्तु उन्होंने आठ वर्ष तक उस हिंसाकी बातको भूलकर भी मनमें न आने दिया। इससे सरलतासे जाना जा सकता है कि उमेदसिंहने सामर्थ्यवान् होकर भी जब आठ वर्ष बदला न लिया तब तो वह अवश्य ही एक ऊँच हृदयवाले पुरुष थे, परन्तु अन्य पक्षसे यह भी जाना जाता है कि जिन इन्द्रगढपति देवसिंहने अपने अधीश्वर प्रभुको महाविपत्तिमें भी आश्रय नहीं दिया, अथवा उनको एक घोडा भी नहीं दिया और आत्मघृणा तथा अनुताप प्रकाशके बदलेमें अत्यन्त कायर पुरुषोंके समान व्यवहार करता रहा, उमेदसिंहने अपने अभ्युदयमें उस देवसिंहको क्षमा करके

उससे बदला नहीं लिया, इसीको स्मरण करके वह मनुष्य अपने मनही मनमें उमेदकी ओर घृणा करता था। वह इतना करके ही शान्त न हुआ, वरन् किस प्रकारसे उमेद्-सिंहका अनिष्ट साधन करूं इसी चिन्तामें नित्य लिप्त रहता था। इतिहाससे जाना जाता है कि उमेदसिंहने सिंहासनपर बैठनेके आठ वर्ष पीछे जयपुरके महाराज माधोसिंहके साथ अपनी भगिनीके विवाहका सम्बन्ध स्थिर करनेके लिये अपनी जातीय रीतिके अनु-सार नारियल भेजा। माधोसिंहने राजसभामें अपने सामन्त और कुटुम्बियोंके साथ बडे सम्मानसे उस नारियलको ग्रहण किया। दैवयोगसे उस समय उक्त इन्द्रगढपति देवसिंह आमेरमें जा पहुंचे। आमेरराज माधोसिंहने उनसे पूछा कि बुधसिंहकी कन्या किस प्रका-रकी सुन्दरी है और उसके गुणोंकी प्रशंसा किस प्रकार है?''नीचबुद्धि देवसिंहने उचित सुअवसर पाकर उमेदसिंहके अनिष्ट साधनकी इच्छासे ऐसा घृणित अनृतपूर्ण उत्तर दिया कि वह केवल एकमात्र उनके समान कायर पुरुषोंके पक्षमें ही शोभा पाता है। देवसिं-हने कहा कि वह कन्या बुधसिंहके औरससे उत्पन्न नहीं हुई है। जो राजपूत राजा विवाहका प्रस्ताव स्वीकार कर फिर उस नारियलको कन्याके पक्षवालोंके पास फेरकर भेज दें तो राजपूतोंके लिये इससे अधिक अपमान दूसरा नहीं है। माधोसिंहने देवसिंहके मिथ्या वचनोंपर विश्वास करके बूंदीमें नारियल फिरवा भेजा, उस समय उमेदसिंहके हृदयमें कैसा बाण लगा था, उसका अनुमान सरलतासे हो सकता है, परन्तु अत्यन्त संतोषका विषय है कि मारवाडके अधीश्वर महाराज विजयसिंहने शीघ्र ही उमेदसिंहकी उस भगिनीका विवाह करके देवसिंहकी उक्तिको असत्य कर दिया।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं,कि''संवत् १८१२,सन् १७५७ ई०में उमेदसिंह कर-वरके समीप विजयसेनी माताके मंदिरमें पूजा करनेके लिये गये। यह स्थान इन्द्रगढके समीप था। इस कारण उमेदसिंहने आकर इन्द्रगढपति देवसिंहको पुत्रों सहित इकट्ठे हुए सामन्तोंसे मिलनेकी आज्ञा दी। औरोंके निषेध करनेपर भी देवसिंहने उमेदकी आज्ञा-नुसार अपने पुत्र और पोतेके साथ उपस्थित होनेमें किंचित्मात्रका भी विलम्ब नहीं किया। वहां उन्होंने प्रत्येकका संहार करके देवसिंहके वंशको लोप कर दिया, उनके चिताके धुएँसे जिससे आकाश कलंकित न हो इस कारण उदयसिंहकी आज्ञासे उनके शव नदीमें डाल दिये गये। उमेदसिंहने इन्द्रगढ देवसिंहके भाईको दे दिया।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने उक्त घटनाओंको ही उमेदसिंहके चरित्रोंमें महाकलंक बताकर वर्णन किया है। परन्तु जब हम विचार करते हैं कि प्रतिहिंसा दान वीर तेजस्वी राजपूत जातिका स्वाभाविक धर्म है, बिना प्रतिहिंसा दान किये वे कायर पुरुष समझे जाते हैं तब उमेदसिंहका प्रतिहिंसा दान महा कलंकदायक नहीं समझा जाता।

''देवसिंहने प्रथमसे ही उमेदके साथ जैसा व्यवहार किया संसारमें इनके समान सामर्थ्यवान् राजा बहुत कम पाये जायँगे कि जो उमेदके समान आठ वर्षतक प्रतिहिंसा देनेमें शान्त रह सके। दूसरी बात यह है कि जो राजपूती स्त्री सती नामसे

गिनी जानेके लिये प्रज्वलित चितानलमें प्राण त्याग करती थी" उस राजपूत स्त्रीके सतीत्वकी दोषारोपकी अपेक्षा महापापका विषय और क्या हो सकता है? देवसिंहने जब सबके सम्मुख सभामें कहा कि उमेदसिंहकी भगिनी वास्तवमें बुधसिंहकी औरस-जात कन्या नहीं है तब उमेदसिंहकी माताके सतीत्वके ऊपर भयंकर वज्रपात हुआ। संसारमें ऐसे कितने राजा हैं जो अपने अधीनके सामन्तोंको अपनी माताके सतीत्वपर कलंक लगाते हुए देखकर चुप रह सकते हैं। उमेदसिंहने जो उसे प्रतिहिंसा दान की तौ उन्होंने अवश्य ही वह वीर राजपूतोंके उचित कार्य किया। वह कभी कलंकदायक नहीं हो सकता। तब यह बात अवश्य ही कही जा सकती है कि देवसिंहके अपराधके कारण उनके पुत्र और पोतेके प्राणोंका नाश करना उचित नहीं हुआ। परन्तु उक्त कारणसे उमेदसिंहने अन्तमें जिस मार्गका अवलम्बन किया उसीसे उनके समस्त पापोंका प्रायश्चित्त होकर उनके यशकी चंद्रिकाको निर्मल कर उनके चरित्रोंको संसारमें प्रकाशित कर दिया।

एक एक करके अनन्तकालके समुद्रमें पंद्रह वर्षरूपी उपद्रवकी धारा बही। वीर तेजस्वी उमेदसिंह उस पंद्रह वर्षतक राज्यके अविश्रान्त संघटित नानाप्रकारसे राजनैतिक उपद्रवोंको निवारण तथा सुशासनमें लिप्त रहकर वर्षोंको लांघने लगे। परन्तु वह राजनैतिक विप्लव वह शासनके गोलयोग, उस विभिन्न विभ्राटमें उमेदसिंहके हृदयमें वह एक घटना, उस देवसिंहके प्राण नाश करनेका विचार दिन २ जागरित रहकर उनके हृदयको वेधने लगा। यद्यपि सभीने उस घटनाको विस्मृतिके जालमें डाल दिया था, यद्यपि किसीने भी उस घटनाके विरुद्धमें किसी प्रकारका असंतोष प्रकाश नहीं किया, यद्यपि उमेदसिंह जानते थे कि दुराचारी देवसिंहने जो अपराध किया था उससे उनको प्राणदण्ड देना ठीक ही हुआ था, परन्तु तो भी उनका उदार और साहस पूर्ण हृदय उस हत्याकांडके लिये अत्यन्त व्यथित होता था। उन्होंने अपनेको उस हत्याकांडके सम्बन्धमें महा अपराधी जानकर उस पापनाशके लिये पन्द्रह वर्षके पीछे इच्छानुसार पाये हुए पिताके राज्यके छोडनेकी अभिलाषा की। उमेदसिंहने सिंहासन छोडकर तीर्थयात्राके लिये भारतवर्षके प्रत्येक तीर्थोंमें जाकर जीवनके शेष कई एक वर्षोंको केवल धर्माचरण और अनुतापसे उक्त पापके प्रायश्चित्त करनेका संकल्प किया।

संवत् १८२७ सन् १७७१ ई० में उमेदसिंहका राजनैतिक आस्तित्व लुप्त हो गया। राजपूत राज्यकी चिरप्रचलित रीतिके अनुसार शीघ्र ही समस्त अनुष्ठान होने लगे। उमेदसिंहके पुत्र अजितसिंहने अपने पिताकी एक मूर्ति बनाकर जिस नियमसे चितामें दाह किया जाता है उसी नियमसे उस मूर्तिको अग्निपर रखकर प्रज्वलित चितानलमें भस्मकर दिया, और पिताके वियोगमें जिस प्रकार अशौचकी व्यवस्था है उसी प्रकार अशौचको ग्रहण किया। राजाके अन्तःपुरमें हाहाकार मच गया, सभी जगह रोनेका शब्द सुनाई आने लगा। नियत हुए अशौचकालके बीतनेपर अजितसिंहने क्षौरकर्मके पीछे पिताकी

श्राद्धक्रिया समाप्त की। सारांश यह है कि यथार्थ मृत्युके होनेसे जैसा कार्य किया जाता है, वह सभी किया गया, श्राद्धके हो जानेके पीछे अजितसिंह बडी धूमधामके साथ बूँदीके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए।

उमेदसिंह राज्यभारको छोडकर एकमात्र श्रीजी (वह जितने दिनोंतक जीवित रहे उतने दिनोंतक श्रीजी नामसे पुकारे गये) उपाधि धारण कर उक्त अनुष्ठानके पहिले ही बूँदीकी राजधानीको छोडकर, पठारके आदिम प्रधान अधीश्वरने जिस तीर्थमें विचित्ररूपसे आरोग्यता प्राप्त की थी, उसी केदारनाथ तीर्थमें जाकर वहां वास करने लगे। उन्होंने राज्य छोडनेके समय विचारा था कि एकमात्र योगीभेषसे तीर्थोंमें भ्रमण करने और इष्टदेवताके ध्यानसे सब प्रकारसे शांति प्राप्त होगी, और जो हमने हत्या करके पापसंग्रह किया है उस अपराधसे भी छुटकारा मिल जायगा। उमेदसिंहने वीर राजपूत वेशको त्याग कर तीर्थयात्रीका वेश धारण किया था, यह जिस महान् ऊंचे वंशमें जन्म लेकर महा ऊंचे पदपर प्रतिष्ठित थे उस वंशका गौरव और पदोचित महा ऊंचा मानसिक भाव उनके हृदयसे दूर नहीं हुआ। उन्होंने धर्मकी खोजमें भारतके जिस २ प्रान्तके जिस २ तीर्थमें संन्यासी, योगी, यति, ब्रह्मचारी इत्यादि पवित्रचेता साधुओंके साथ मिलकर शास्त्रकथा और धर्मोपदेश सुने थे, उन्हीं २ साधु भक्तवृन्दोंके सम्मुख यह परम विज्ञानी पूर्वचेता साधु और महात्मारूपसे माने गये और उन्होंने इनका महान् सम्मान किया था। उमेदसिंहने स्वदेशी और विदेशी राज्यके इतिहासको पढा था कि "राज ऐश्वर्य और आडम्बर सम्मान केवल आत्माके विनाशका कारणस्वरूप है। जो राजा सुअवसरमें ऐश्वर्य आडम्बरको छोडकर देवाराधना और पुण्य संचय करनेमें नियुक्त होते हैं वही यथार्थ सुखी हैं" बुद्धिमानी और सामाजिक रीतिके वशीभूत होकर उमेदसिंह भलीभाँतिसे जान गये थे कि केवल श्रीकृष्णजीके मंदिरमें वा गंगाजीके किनारे रहनेकी अपेक्षा समस्त भारतवर्षमें भ्रमण करके भगवान्‌की अनन्त महिमा और सृष्टिका चूडान्त निदर्शनके साथ ज्ञानका संचय करना श्रेष्ठ है इस कारण जातीय शास्त्र पुराण और महा काव्योंमें भारतके जिन पुण्यतीर्थ और पवित्र स्थानोंका वर्णन पढा था उन्होंने उन सबको अपने नेत्रोंसे देखनेका दृढ संकल्प किया। परन्तु उमेदसिंहका अतीत जीवन केवल वीररसके सोतेसे ही आजतक सींचा गया था, इसी कारण वह महाभारतके तीर्थयात्री व्रतको ग्रहण करके भी सम्पूर्णरूपसे संन्यासीवेश करके बाहर नहीं गये। वह उस तीर्थयात्री वेशसे ही वीरोंके समान अस्त्रोंके आभूषणोंसे सुसज्जित होकर बाहर गये थे। उस समय तीर्थ करनेवाले मनुष्योंको मार्गमें अनेक प्रकारके विघ्न होते थे। इस कारण उमेदसिंहने अस्त्र लेकर अपने बाहुबलसे उन विघ्नोंको दूर करके अपने मनोरथको सिद्ध करना कर्तव्य विचारा। तीर्थोंमें भ्रमण करनेके समय अनेक प्रकारके शारीरिक कष्टोंको भोग करना अधिक पुण्यदायक विचारा। तीर्थयात्रामें उमेदसिंहने जो बडे २ भारी अस्त्र शस्त्र धारण किये थे, दो राजपूतवीर उन अस्त्रोंको बडे कष्टसे धारण कर सकते थे। इन्होंने सबसे पहिले अस्त्राघातको रोकनेके लिये रुईपूर्ण अंगरखेसे शरीर ढका उसके

पीछे बडी भारी ढाल, बन्दूक, एक भाला, एक तलवार एक छोटी तलवार और उस समयके उपयोगी एक बडी भारी छुरी, और छोटी २ युद्धके उपयोगी पूर्ण खलीते बारूद पूर्ण बडे शृंग रण कुठार, बर्छा, कटारी, तीक्ष्ण धारवाले लोहेके चक्र धनु और बाण तूणसे अपने शरीरको शोभायमान किया। उस समय ऐसा देखा गया कि सत्तर वर्षकी अवस्थावाले वीर उमेदसिंहने इन बडे २ भारी अस्त्रोंको ढालमें रखकर खेल करते हुए उसको एक हाथसे उठा लिया हो. यही नहीं वरन वह कितनी ही देरतक उसको अपने हाथमें लिये रहे थे।

वीर तीर्थयात्री उमेदसिंह बहुत थोडे विश्वासी सेवक साथ लेकर कई वर्षतक तो उत्तरमें गंगोत्तरी स्थान, दक्षिणमें सेतुबन्ध रामेश्वर और अराकानमें गरम सीताकुण्ड तथा उडीसासे भारतकी शेष सीमा द्वारकातक घूमते रहे। यही नहीं कि वह केवल हिन्दुओंके ही तीर्थमें गये हों वरन प्राकृतिक सौंदर्यपूर्ण प्रत्येक प्रसिद्ध स्थान और पंडितोंके रहनेके स्थानमें भी वह गये। बीच २ में एक २ देशमें भ्रमण करनेके पीछे वह अपने पैतृक राज्यकी सीमामें आ पहुँचे, उस समय उनके स्वजातीय नहीं वरन प्रत्येक राजा, तथा रजवाडेके प्रत्येक राजपूतोंने उनका बडे सम्मानके साथ अभिनंदन किया था। वीर तीर्थयात्री उमेदसिंह भ्रमण करते हुए जिस राजाके राज्यमें जाते, वही राजा इनके आनेसे अपनेको पुण्यवान् मानता था, और उमेदके आनेसे ही राजमहलको पवित्र मानता था। इस समय संसार और राज्यसे विरागी हुए उमेदसिंहको रजवाडेके सभी मनुष्य भविष्यद्वक्ता देवताके समान जानते थे, तथा उमेदके ज्ञानशिक्षा और अभिज्ञताको अतुलनीय जानकर सभी उनके उपदेशके अनुसार कार्य करते थे। उमेदसिंह जिसको जिस विषयमें उपदेश करते थे वह प्राणपणसे उसको अभ्रान्त जानकर पालन करता था। उमेदके प्रत्येक उपदेशके वचनोंको सभी वर्णबद्ध करके रखते थे। उमेदसिंहकी जीवित अवस्थामें उनके साथ हाडाजातिके प्रत्येक राजपूतने जिस प्रकारका ऊँचा सम्मान दिखाया और उनकी देवताके समान भावसे पूजा की उनके वियोगमें भी हाडा जातिने उसी प्रकारसे उनके प्रति महान् ऊंचा सम्मान दिखाया। उमेदसिंह जिस समय जो बात कहते थे हाडाजाति उसको धर्मविधानके समान पालन करती थी, और उनके स्मृतिचिह्नस्वरूपमें हाडाजातिने जो कुछ पाया था उसको देवताके द्रव्य स्वरूपसे भक्तिसहित रखती आई थी, उमेदसिंह सबसे पीछे भारतवर्षकी सीमाके बाहरे मकरानके तीरवर्ती हिंगलाजनामक स्थानमें गये, और अग्नि देवके तीर्थमें जाकर फिर द्वारकाको गये, जब यह वहांसे लौट रहे थे तब रास्तेमें एक कावा नामक चोरोंके दलने इनको घेर लिया। परन्तु वीरश्रेष्ठ उमेदसिंहने उन चोरोंके दलके साथ अपना बाहुबल दिखाकर उनको एकबार ही परास्त करके चोरोंके सरदारको बन्दी कर लिया। चोरोंके सरदारने अपनेको छुडानेके लिये सौगन्ध की कि मैं आजसे कभी भी द्वारकाके यात्रियोंपर आक्रमण नहीं करूंगा।

यद्यपि वीरवेषधारी उमेदसिंहने उपरोक्त प्रकारसे दीर्घकालतक तीर्थोंमें भ्रमण करके पुण्यके साथ ही साथ ज्ञानको भी संचय किया था, यद्यपि उन्होंने अपने मनमें इस

बातका निश्चय कर राजसिंहासनको त्याग किया था कि हम अब कभी राजसिंहासनको ग्रहण नहीं करेंगे। परन्तु एक वियोगान्त घटनासे वह उस तीर्थ भ्रमणसे कुछ कालके लिये वंचित हुए। वह घटना यह थी कि उनके इकलौते पुत्र रावराजा अजितसिंहकी मृत्यु हो गई, तब उमेदसिंह अपने अज्ञानी पोतेको शिक्षा देने और प्रतिनिधि रूपसे राज्य चलानेको बाध्य हुए। हमने जो शोचनीय वियोगान्त घटनाकी बात कही वह मेवाड और हाड़ाजातिके इतिहासमें लिखी गई है। और बहुत शताब्दीके पहिले बम्बावदाकी सती रानीने प्रज्वलित चिताकी अग्निमें प्राण त्याग करनेके समय जो निषेध वाक्य कहे थे वह इस प्रकार थे कि "यदि राव और राणा कभी भी वसन्ती उत्सव (अहेरके) होनेके पहिले परस्परमें एकसाथ मिलेंगे तो अवश्य ही दोनोंकी मृत्यु होगी।" उपरोक्त घटना उस सती साध्वीकी उक्तिका समर्थन करती है। वह घटना अवश्य पढ़नेके योग्य है।

वीलहठा नामक ग्राममें एक मीनाओंकी सम्प्रदाय रहती थी और वहाँ आमके वृक्षोंमें बहुतसे उत्तम आम लगते थे, वही इस झगडेका मूलकारण हुए। बूँदीके महाराज अजितसिंहने उस विलहठा नामक ग्रामको अपने राज्यभुक्त जानकर अथवा राज्यमें भुक्त करनेके लिये उसके चारों ओर किला बनवा दिया। मेवाडके बहुतसे सामन्तोंके भडकानेसे एक चोरोंका दल उस ग्रामपर आक्रमण करनेके लिये तय्यार हुआ। अजितसिंहने उनको भय दिखानेके लिये उस किलेमें एक सेना रख दी। राणाने यह समाचार पाकर महाक्रोधित हो अपने समस्त सामन्त और वेतनभोगी सैन्धवी सेनाके साथ उक्त विवादके स्थानमें जाकर बूँदीके महाराज अजितसिंहको अपने डेरोंमें बुला भेजा। अजितने आते ही अपने व्यवहार और मधुरवचनोंसे तथा सच्चरित्रता और उदारतासे राणाको ऐसा मोहित किया कि राणा विलालाइताकी बातको एकवार ही भूल गये। सम्मुख ही वसन्तकाल उपस्थित था; मधुर फाल्गुनीके महीनेमें राजपूत वीर गौरीदेवीके आश्रयसे वराहका शिकार करते थे। युवक हाडाराज अजितने राणाके निकटसे सदय व्यवहार पाकर उसके बदलेमें राणाको यह कहकर बुला भेजा कि बूँदीके रक्षित राजभवनमें जो उत्सव होगा उसमें आप अवश्य ही आवैं। राणाने उसी समय उस आमंत्रणको स्वीकार किया। सीसोदियोंके अधीश्वर राणा प्रचलितरीतिके अनुसार दूसरे दिन सामन्तोंको हरे वर्णके वेशसे सजाकर बूँदीके अधीनमें स्थित नन्दता नामक पहाडी देशमें आमंत्रणकी रक्षा करनेके लिये जा पहुँचे।

इस समय उमेदसिंह बदरीनाथसे लौटे हुए आ रहे थे, जब उन्होंने यह सुना कि राणाके साथ उनके पुत्र अजितसिंहने शूकरके शिकार करनेका विचार किया है, तब इन्होंने तुरन्त ही पुत्रके पास एक मनुष्य भेजकर उस सती स्त्रीकी उक्तिको स्मरण कराकर राणाके साथ मिलनेको मना करा भेजा। अजितसिंहने उसके उत्तरमें कहला भेजा कि इस समय मैं कायर पुरुषोंके समान आचरण कभी नहीं कर सकता। क्रमानुसार निश्चित उत्सवके दिन प्रभाकर भगवन्ने पूर्वकी ओरको दर्शन दिया। राणा युवक रावें अजितके साथ मित्रभावको प्रकाश कर एकसाथ शिकार खेलनेके लिये चले। परन्तु इसके पहिले दिन तीसरे पहरके समयमें मेवाडके राजमंत्रीने राव अजितके सम्मुख जाकर अत्यन्त

अपमानकारक वचनोंमें राव अजितसे कहा कि "वीलहठा राणाको लौटा देना होगा और यदि ऐसा न करोगे तौ मैं एक सिन्धी सेनाको भेजकर आपको बंदी करूँगा।" मंत्रीने अजितसे यह भी कहा कि मैंने राणाकी आज्ञानुसार तुमसे समस्त समाचार कहा है, राव अजितने मेवाडके मंत्रीके उन अपमानकारक वचनोंको सुनकर उसके इस व्यवहारसे मनही मनमें समस्त रात्रिमें घोर क्रोध संचय किया था। दूसरे दिन उक्त मृगयाका कार्य समाप्त होते ही राणाने अजितको बिदा किया कि इसी अवसरमें अचानक अजितके मनमें राणाके मंत्रीका वह अपमान याद आया, यद्यपि वह राणासे बिदा होकर कुछ दूरतक चले गये थे, परन्तु हमें राणा बंदी करेंगे यह विचार कर वह फिर राणाके सम्मुख गये। अजितको फिर आया हुआ देखकर राणा किसी प्रकार भी स्थिर न रह सके उन्होंने हँसते हुए फिर अजितको बिदा कर दिया। दोनोंने फिर परस्परमें साक्षात् किया। अजित उस समय भी क्या करैं इसका कुछ भी स्थिर न करके राणाके दयालु व्यवहारसे मोहित हो फिर राणाके सम्मुखसे चले आये, परन्तु अजितके फिर कुछ दूर आते ही उनके हृदयमें प्रतिहिंसाकी अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित हो गई अजितने उसी समय तीक्ष्ण भालेको हाथमें लेकर बडे वेगसे बलपूर्वक राणाके ऊपर भाला चलाया। उस भालेने राणाकी देहको भेदकर उनके घोडेको भी जा भेदा; दारुणरूपसे घायल हुए राणा जिस अजितको अपना परमप्यारा मित्र जानते थे उसको प्राणघाती देखकर केवल इतना ही कहकर प्राण त्याग किये, "ओह हाडा! क्या किया?" घायल हुए राणाके घोडेपरसे गिरते ही इन्द्रगढके सामन्त तलवारके आघातसे राणाका जीवन एकबार ही समाप्त कर दिया। हाडाराज अजित् इस कार्यसे अपना महान् गौरव जानकर मेवाडके महाराजकी "छत्रझांगी" अर्थात् गोलाकार मोरकी पूँछके चक्रमें सुवर्णके सूर्याङ्कित राजचिह्नोंको लेकर अपनी राजधानी बूँदीमें चले आये। वह मेवाडके राजचिह्न बूँदीके महलमें रक्खे गये। उमेदसिंहने जो देवसिंहके प्राण नाश करनेके लिये राजसुखको छोडकर संन्यासीके समान अनेक देशोंमें भ्रमण कर अपने पापोंका नाश किया था उन्होंने जब यह समाचर सुना कि हमारे पुत्र अजितने मेवाडके महाराजके प्राण नाश किये हैं तब उनके हृदयमें प्रबल आवेग उछलने लगा। उन्होंने अपने वंशमें फिर महापाप संचय होता हुआ देखकर अत्यन्त दुःख प्रकाश किया, उन्होंने उसी समय यह प्रतिज्ञा की कि अब जन्मभर पुत्रका मुख नहीं देखूंगा।

बूँदीके जातीय इतिहासमें लिखा जा चुका है कि कृष्णगढ़के राजाओंकी दो कन्याओंके साथ राणा और बूँदीराज अजितका विवाह हुआ था, इसीसे दोनों दृढ सांसारिक सम्बन्धबन्धनमें बंध रहे थे, बूँदीराज अजितसे उनका कुछ अमंगल होगा राणाके हृदयमें यह विचार भूलसे भी उदय नही हुआ। परन्तु राणाकी स्त्रीने अपने स्वामीको यह कहकर पहिलेस ही सावधान कर दिया कि जिससे वह किसी प्रकारसे भी अजितके ऊपर विश्वास न करैं। कई पीढी पहिले मेवाड और बूँदी दोनों राज्यके राजा जो परस्परमें आक्रमण करके इस मृगयाक्षेत्रमें मारे गये थे, उस वृत्तान्तको

हमारे पाठक पहिले ही पढ़ चुके हैं परन्तु इस घटनाके हो चुकनेपर दोनों राजवंशोंमें प्राचीन शत्रुताका एकबार ही लोप हो गया था। जिस दिन अजितसिंहने राणाके प्राणनाश किये, उसके पहिले दिन मेवाडके राजमंत्रीने एक भोजदान किया था। उस भोजसभामें दोनों राजा और उनके सामन्तोंने उपस्थित होकर अकपट मित्रताके साथ परस्परमें साक्षात् किया था। परन्तु इतिहाससे जाना जाता है कि मेवाडके सामन्त अपने अत्याचारी अधीश्वर राणाके ऊपर अत्यन्त क्रोधित हुए थे। उनके सिखानेसे ही यह शोचनीय वियोगान्त अभिनय हुआ था, ऐसे बहुतसे प्रमाण विराजमान हैं। मेवाडके राजमंत्रीने भी अजितको महाभय दिखाकर अपमान करनेवाले बहुतसे कटु वचन कहे थे, इसका वर्णन भी पहिले हो चुका है। जिस समय अजितसिंहने भालेके आघातसे राणाका प्राण नाश किया उस समय एकमात्र नीचे पदवाले अनुचरके अतिरिक्त मेवाडके किसी सामन्तने भी राणाके प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये चेष्टा नहा की थी, मेवाडके सामन्तोंने राणाके जीवनकी रक्षा न की, न अजितको पकडा, और राणाके घायल होते ही सभी अपने २ प्राणोंके भयसे राणाके मृतक शरीरको छोडकर अपने २ डेरोंमें भाग गये। इससे यह जाना जाता है कि राणाके प्राणनाशके सम्बन्धमें मेवाडके सामन्तोंकी भी गुप्तभावसे सम्मति थी।

राणाके मृतक होते ही केवल राणाकी एक मात्र उपपत्नी राणाकी और्द्ध्वदैहिक क्रिया करनेके लिये उस समय वहां विद्यमान थी। वह बहुतसा धन खर्च करके चिता सजानेकी आज्ञा दे स्वयं राणाके शवके साथ भस्म होनेके लिये स्वर्गमार्गमें जानेको तैयार हुई। प्रज्वलित चिताकी आग्रम राणाका शव आलिंगन करके उस स्त्रीने यह शाप दिया कि "आजितसिंहने यदि अपने स्वार्थसाधन करनेके लिये षड्यंत्र करके राणाका प्राण नाश किया है तो उस हत्या करनेवालेको दो महीनेके भीतर उचित फल मिल जायगा, और यदि प्राचीन वंशसे परस्परमें चली आई हुई शत्रुताका बदला लेनेके लिये यह कार्य किया है तो मेरा शाप उसको नहीं लगेगा"। बूँदीके हाडाजातीय इतिहासवेत्ताने लिखा है कि "उस स्त्रीके इस प्रकार शाप देते ही उसके वचनको समर्थन करनेके लिये उसके पासके वृक्षकी सहसा एक शाखा टूटकर पृथ्वीपर गिर पडी, तथा राणा और सतीकी चिताभस्मसे बिलाईता सफेद वर्णका हो गया"।

हाडाकविने लिखा है कि सती स्त्रीके शापके अनुसार दो महीनेमें ही उसकी भविष्यद्वाणी पूर्ण हो गई। बूँदीराज अजितके शरीरसे आपसे आप मांसके टुकडे २ होकर गिरने लगे, इस प्रकारसे महान् कष्टको भोगकर सबमें घृणाके योग्य हो उन्होंने अंतमें प्राण त्याग किये।

अजितसिंहके एकमात्र पुत्र विशनसिंह इस समय अज्ञान बालक थे। उमेदसिंहको अन्तम राज्यमें सुशासन स्थापन करनेको बाध्य होना पड़ा। उमेदसिंहने बूँदीकी राजधानीसे चिरकालके लिये विदा ग्रहण की थी। सारांश यह है कि उन्होंने राजधानीमें बिना गये ही दूर ही रहकर एक बुद्धिमान् धाभाई अर्थात् धात्रीपुत्रको राज्यके प्रधान तत्त्वविधायक

(१) चिताभूमिका नाम।

पदपर नियुक्त करके यह बता दिया कि किस रीतिसे राज्यशासन होना चाहिये। सुशासन स्थापन हो जानेके पीछे उमेदसिंह फिर तीर्थ करनेके लिये चले गये। एक२ समय में उन्होंने बराबर चार वर्षतक बूँदीमें न जाकर अनेक तीर्थोंमें भ्रमण करना प्रारंभ किया। अंतमें उनका शरीर वृद्धताके आनेसे अत्यन्त क्षीण हो गया, मृत्युके कई वर्ष पहिले यह केदारनाथ तीर्थमें निवास करनेको बाध्य हुए।

अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि उक्त घटनाके कई वर्ष पीछे उमेदसिंह जिस समय अत्यन्त वृद्ध होकर संसारसे जानेकी बाट देख रहे थे, उस समयमें उनके पोते विशनसिंहने उनको राज्यका लोभी और विश्वासघाती जानकर उनके साथ अत्यन्त ही शोचनीय व्यवहार किया। उमेदसिंहके पीछे ही बिशनसिंह युवा अवस्थापर पहूँचे तब उस समय राज्यके कितने ही दुश्चरित लोभी मूर्ख सामन्त और राजकर्मचारियोंने उमेदके विरुद्धमें षड्यंत्रजालका विस्तार किया। वह भलीभाँतिसे जान गये थे कि उमेदसिंहके समान नीतिज्ञ और शासनज्ञाता तथा बुद्धिमान् मनुष्यकी यदि विशन-सिंहके ऊपर दृष्टि रही तो अवश्य ही यह उमेदसिंहकी परामर्शके अनुसार चलेंगे, तब हमारा मनोरथ किसी प्रकार सिद्ध नहीं हो सकेगा, इस कारण वह सभी इकट्ठे होकर उमेद की और जिससे विशनसिंहको अविश्वास और अभक्ति उत्पन्न हो जाय विशनसिंह जिससे उमेदको बूँदीसे निकाल दें। वह यही उपाय करने लगे। नवयुवक विशनसिंह ऐसे बुद्धिमान् वा शिक्षित नहीं थे वह उन पापियोंके वचनोंपर विश्वास करके अपने पितामह उमेदसिंहके साथ घृणित व्यवहार करनेके लिये आगे बढ़े। विशनसिंहने अपने एक सेवकके हाथ दादासे यह कहला भेजा "कि आप बूँदीको छोडकर वाराणसीमें जाकर रहिये"। जो सेवक उस पत्रको लेकर गया था उसने उमेदसिंहको नये शहर जानेमें तत्पर देखकर कहा कि "आपकी शवभस्म आपके पूर्व पुरुषोंकी शवभस्मके साथ नहीं रक्खी जायगी"। परन्तु उमेदसिंहका रजवाडेमें बडा सम्मान था तथा इनकी देवताके समान पूजा होती थी, कारण कि इन्होंने बहुत समयतक तीर्थोंमें भ्रमण किया था इसी कारणसे सर्वसाधारण मनुष्य इनको साधु मानकर सम्मान करते थे। विशनसिंहकी इस आज्ञाके प्रचार होते ही रजवाडेके प्रायः सभी राजा बडे आग्रहके साथ उमेदसिंहको अपनी २ राजधानीमें सम्मानके साथ लानेके लिये तैयार हुए। उमेदके युवा अवस्थाकी वीरताने बुढ़ापेके पुण्यपवित्रताने आमेरराज प्रतापसिंहके हृदयपर महा ऊँचा सम्मानसूचक भाव प्रकाश किया था। महाराज प्रतापसिंहने श्रीजी उमेदसिंहके समीप पुत्र और सेवकरूपसे अपना परिचय देकर उनके चरणदर्शन करनेके लिये कछवाहोंकी राजधानी जयपुरमें ले जानेके निमित्त प्रार्थना की श्रीजी (उमेदसिंह) तुरन्त ही आमेरमें जानेके लिये राजी हो गये; परन्तु प्रतापसिंहने जो उनको बडे सम्मानके साथ ग्रहण करना चाहा था वह उस सम्मानके ग्रहण करनेमें राजी न हुए।

उमेदसिंहके आमेरराज्यमें जाते ही महावीर प्रतापसिंहने बडे आदरभावके साथ इनको ग्रहण किया। उमेदसिंहके साथ विशनसिंहने जो कुव्यवहार किया था उससे

प्रतापसिंहके हृदयमें ऐसा क्रोध उदय हुआ कि उन्होंने उमेदसिंहसे कहा कि "यदि आपके हृदयमें इस समय भी कोई संसारकी वासना वा राज्यकी कामना हो तो कहिये, मैं अपने बाहुबलसे इसी समय आमेरकी समस्त सेना दलके साथ आगे बढकर बूँदी और कोटेको जीतकर आपके करकमलमें अर्पण कर सकता हूँ।" बुद्धिमान् श्रीजीने कहा "यह दोनों राज्य तो हमारे ही हैं, एकमें मेरे पोते और दूसरेमें भतीजे राज्य करते हैं।" पवित्रचित्त श्रीजीके यह बचन सुनकर मुक्तकंठसे सभी इनको धन्यवाद देने लगे।

उमेदसिंहने अपने अबोध पोतेके द्वारा इस प्रकारसे अपमानित होकर आमेरराज्यमें जानेके समय कोटेके प्रसिद्ध नितिज्ञ राजमंत्री जालिमसिंहने मध्यस्थ स्वरूपसे कार्यक्षेत्र में दर्शन दिया। उसने बूँदीमें जाकर विशनसिंहने जो उमेदसिंहसे अपने स्वार्थनाशका भय किया था उसको उनकी भूल बताकर खंडन किया। जालिमसिंहकी उक्तिसे विशनसिंह सब प्रकारसे समझ गये कि स्वार्थपरायण अबोध सामन्त और राजपुरुषोंके कहनेसे उन्होंने अपने पितामहकी ओर अविश्वास कर उनका तिरस्कार करके महा कलंक संचय किया है। जालिमसिंहके प्रस्तावके अनुसार उन्होंने अपने दादाके चरणोंमें क्षमा प्रार्थना की। जालिमसिंहने विशनसिंहको अनुतापित और क्षमा प्रार्थना करते हुए देखकर शीघ्र ही वृद्ध उमेदसिंहको आमेरसे बुलानेके लिये लालजी पंडितको भेजा।

उदारहृदय उमेदसिंह स्नेहाधार पोतेके समस्त अपराधोंको विस्मृतिके जलमें डाल कर तुरन्त ही बूँदीमें चले आये। शीघ्र ही परस्पर दोनोंका मिलन हो गया उस मिलन से जैसे दृश्य देखनेकी संभावना हुई थी वैसा ही हुआ। सभीका हृदय उफन उठा, सभीके नेत्रोंसे झर २ आँसुओंकी धारा बहने लगी। प्राणप्यारे पोते विशनसिंहको आलिंगन करके वृद्ध उमेदसिंहने सजल नेत्रोंसे उसके हाथमें तलवार देकर कहा कि "यह तलवार लो; मै तुम्हारा अनिष्ट करनेवाला नहीं हूँ, यदि तुमको विश्वास है कि तुम्हारा अशुभचिन्तक हूँ तो तुम अपने हाथसे इसी तलवारसे वृद्धके निर्वाणोन्मुख जीवनको समाप्त कर दो, मुझे वृथा कलंकित न करना।" युवक विशनसिंह ऊँचे स्वरसे रोते २ नेत्रोंमें जल भरकर पितामहके चरणोंको पकडकर क्षमा प्रार्थना करने लगे। उमेदसिंहने क्षमा करनेमें किंचित् मात्रका भी विलम्ब न किया, विशनसिंहने वारम्बार उनसे बूँदीके राजमहलमें रहनेके लिये प्रार्थना की, पर उमेदसिंह इसमें किसी प्रकार भी राजी नहीं हुए। इस प्रकारसे पितामह और पोतेमें फिर सद्भाव स्थापित हो गया, षड्यंत्रियोंके पापकी आशा व्यर्थ हुई यह देखकर मध्यस्थ जालिमसिंह अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। उक्त घटनाके पीछे आठ वर्ष तक उमेदसिंह जीवित रहे, उनकी मृत्युका समय सन्मुख आते ही विशनसिंहने विनयपूर्वक उनके चरणोंमें यह प्रार्थना की कि "आप बूँदीके महलमें चालिये, उसी स्थानपर आपके पूर्व पुरुषोंकी शैय्या बिछी हुई है उसी पर शयन करके आप स्वर्गको जाँय"। उमेदसिंहने स्नेहके वशीभूत होकर विशनसिंहकी प्रार्थनाको पूर्ण किया, सुखपालपर चढकर उमेदसिंह

बूँदीके महलमें चले गये। और उसी रात्रिमें महावीर महाज्ञानी महापुण्यवान् पवित्र चित्त उमेदसिंहका शरीर बूँदीके राजमहलमें छूट गया। संवत् १८६० (सन् १८०४) इसवीमें उमेदसिंहके जीवनका सूर्य सर्वदाके लिये अस्त हो गया। बूँदीराजके भाग्यका आकाश घनघोर मेघजालसे ढक गया। उमेदसिंहने तेरह वर्षकी अवस्थाके समयमें जिस दिन प्रज्वलित उत्साहसे सामान्य संख्यक अनुचरोंके साथ अतुलनीय बलविक्रम प्रकाश करके पिताके हरे हुए राज्यको उद्धार करनेके लिए पाटन और गेनोलीको अपने अधिकारमें किया, उस समयसे वह साठ वर्ष तक इस संसारमें रहे थे उमेदसिंहके समान वीर नीतिज्ञ और साधु राजा इस संसारमें बहुत थोडे उत्पन्न हुए हैं, इस बातको हम मुक्तकंठसे स्वीकार करते हैं।

जिस समय उमेदसिंह इस संसारसे विदा हो गये उस समयके हाडाजातिके इतिहासको एक घटनापूर्ण युग कहना होगा। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "इसी समयमें एक दल अंग्रेजी सेनाका मानसनके अधीनम इस देशमें पहिले गया था, समस्त राजपूत जातिके और विशेष करके बूँदीके प्रधान शत्रु हुलकरको परास्त आर निर्मूल करनेके लिए गया था, परन्तु उस समयमें वृद्ध उमेदसिंह जीवित थे या नहीं, अथवा उन्हींकी परामर्शके अनुसार यह कार्य हुआ था या नहीं इस बातको हम नहीं कह सकते। परन्तु हमने बूँदीके लिए कुछ किया या नहीं बूँदीराजने भी तो सेनाकी सहायता करनेमें कसर नहीं की थी। जिस समय हमारी सेना जयकी इच्छासे उत्साहित होकर बृटिश पताकाको उडाती हुई आगे बढ रही थी, उसी समयमें नहीं, वरन् जिस समय हमारी सेना प्राणोंके भयसे भागनेको बाध्य हुई उस समय बूँदीके महाराजने केवल हमारी सेनाको अपने राज्यमें होकर जानेकी आज्ञा दी हो, इतना ही नहीं, वरन् उन्होंने अपनी भविष्य विपत्ति और अनिष्टकी संभावना जानकर यथाशक्ति हमारी सेनाको सहायता दी थी। वास्तवमें बूँदीके महाराज हमारी सहायता करनेके कारण ही महाराष्ट्रनेता हुलकरसे आक्रान्त हो घोर विपत्तिमें पडे थे, परन्तु अपनी उस समयकी संकीर्ण राजनीतिके कारण हमको उसका कुछ भी पता न मिला, और न उसकी ओर कुछ ध्यान दिया"। कर्नल टाड साहबने लिखा है कि कर्नल मानसन जिस समय हुलकरके आक्रमण करनेसे प्राणोंके भयसे सेनासहित भागे उस समय उमेदसिंहने उनकी और उस भागी हुई सेनाकी सहायता की थी या नहीं, यह उन्हें ज्ञात नहीं हुआ। परन्तु हमने आचिसन साहबके ग्रन्थमें इसके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन हुआ है इस स्थान पर उसका अनुवाद करते हैं पाठक उसको पढकर उसके यथार्थ मर्मको जान सकेंगे। आचिसन साहबने लिखा है कि "बूँदीमें पहिले जिस राजाके साथ बृटिश गवर्नमेण्टका प्रथम संबन्ध स्थापित हुआ उसका नाम उमेदसिंह है। सन् १८०४ ईसवीमें कर्नल मानसनके अधीनकी सेना जिस समय हुलकरसे परास्त होकर भागी थी, उस समय उमेदसिंहने अपनी सामर्थ्यके अनुसार हमारी सहायता की, और इसी कारणसे हुलकर उनके ऊपर महाक्रोधित हुआ था। उन्होंने पचास वर्षसे अधिक समय तक राज्यशासन

करनेके पीछे सन् १८०४ ईसवीमें प्राण त्याग किये।" * आचिसन साहबकी उपरोक्त उक्तिसे यह भलीभाँति प्रमाणित होता है कि उमेदसिंहने बृटिश गवर्नमेंटकी उस महाविपत्तिके समयमें यथेष्ट सहायता की थी। परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि बूँदीके महाराज जो अंग्रेजोंकी सहायता करनेके लिये गये इसी कारणसे उस समय महाराष्ट्र नेता हुलकर और सेन्धियाके महाकोपमें पतित हुए, जिस समय महाराष्ट्रोंने बूँदीराज्यमें जाकर सर्वस्व लूटकर राज्यके समस्त करोंको अपने हस्तगत किया था, जिस समय बूँदीके किलेकी चोटीपर महाराष्ट्रोंकी पताका उडी थी, और बूँदीके महाराजको उन्होंने अत्यन्त हीन दशामें डाला था, बृटिश गवर्नमेंटने उस समय बूँदीके महाराज विशनसिंहकी सहायता करनेके लिये एक पग भी नहीं बढाया।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि, "इतना ही कहना बहुत होगा कि सन् १८१७ ईसवीमें जिस समय अत्याचार और उपद्रवोंको दूर करनेके लिये समस्त राजपूत जातिको सेनासहित अंग्रेजोंने मिलनेको बुलाया था, उस समय सबसे पहिले बूँदीके महाराजने ही आगे बढकर हमारे साथ मित्रताकी डोरी बांधी थी। ऐसा होना भी उनके पक्षमें उचित ही था, कारण कि इस समय महाराष्ट्रोंकी विजयपताका बूँदीकी राजपताकाके साथ मिलकर किलेकी चोटीपर उड रही थी, तथा दूसरी ओर बूँदीके महाराज प्रजासे इस समय जितना कर लेनेके अधिकारी थे, वह उनकी आत्मरक्षाके किसी प्रकार भी उपयुक्त नहीं था। सन् १८०४ ईसवीमें जिस समय बूँदीके महाराजने यथाशक्ति हमारी सहायता की, इस समय महाराष्ट्रोंने उस सहायता देनेवाले बूँदीके महाराजपर आक्रमण किया। पर हमने बूँदीके महाराजकी कुछ भी सहायता न की इसीसे बूँदीके अधीश्वरकी यह शोचनीय दुर्गति हुई थी। सन् १८११ ईसवीके युद्धके समयमें बूँदीके महाराज सब प्रकारसे हमारी आज्ञा और इच्छानुसार कार्य करते थे, बूँदीके महाराज और उनके अधीनके सभी अस्त्रधारी वीर हमारी आज्ञाको पालन करते थे, और जिस समय सब ओरसे हमने विजय की उसके पीछे शांति स्थापित होते ही हम राव राजा विशनसिंहको नहीं भूले। महाराष्ट्र नेता हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोंको बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर लिया था, जो देश प्रायः आधी शताब्दीसे अधिकतक उनके हस्तगत रहे थे, हमने उसी हुलकरको युद्धमें जीतकर उन सब देशोंको अपने हस्तगत कर लिया, और वह समस्त देश एकबार ही बूँदीके महाराज विशनसिंहको दे दिये। और भी महाराष्ट्रदलके अन्यतर नेता सेन्धियाने बलपूर्वक जो देश बूँदीसे छीन लिये थे, हमने मध्यस्त होकर वह सब देश भी बूँदीके महाराजको फिर दिलवा दिये, परन्तु उन सब देशोंके लिये बूँदीके महाराजने हमारे द्वारा वार्षिक निर्द्धारित किये हुए रुपये जो पिछले दश वर्षोंकी आमदनीके थे, सेंधियाको दिये, इसके निमित्त महाराज विशनसिंहजीने पवित्र हृदयसे असीम कृतज्ञता प्रकाश की। उन्होंने कहा मैंने एकबार ही जो प्रतिज्ञा की है वह प्रतिज्ञा किसी समय भी भंग नहीं होगी। आप

* Aitchison's Treatits & Vol IV

जब आज्ञा देंगे तभी उस आज्ञाको पालन करनेके लिये मैं अपना मस्तक दे दूँगा। यह बात अर्थशून्य कृतज्ञताकी प्रकाश करनेवाली उक्ति नहीं थी, वास्तवमें यदि हम उनके विश्वासकी परीक्षा लेते तो निसन्देह वह और उनके अनुगत सामन्त सभी हमारी आज्ञा पालन करनेनेके लिये अपने प्राण दे देते। यद्यपि बूँदीके महाराजके ऊपर बहुतसे उपकारोंकी वर्षा की गई थी; यद्यपि उनके लिये बूँदीके महाराजने गंभीर कृतज्ञता प्रकाश की थी, तथापि उनमेंसे एक विषयका भी सुविचार नहीं किया गया। कोटेके वृद्ध राजमंत्री जालिमसिंहने राजा विशनसिंहके पहिले अपनेको अंग्रेजी सरकारके क्रीतदास नामसे परिचित इन्द्रगढ बलवान आनरदा और ग्यातोली इत्यादि बूँदीके प्रधान २ सामन्त शासित देशोंको कोटाराज्यके अधीनमें करनेका विचार किया।

वास्तवमें जालिमसिंहके बूँदीके अधीनवाले उक्त देशोंको अधिकारमें करनेसे राव राजा विशनसिंह अत्यन्त ही संतापित हुए। कर्नल टाड साहबने इसके संबन्धमें लिखा है कि "गवर्नमेंटने जालिमसिंहके करकमलमें उक्त कई देशोंको अर्पण करनेकी जो व्यवस्था की, इससे साहसी और सरलचित्त राव राजा विशनसिंहने अत्यन्त व्यथित होकर निष्कपट भावसे कहा कि "इस व्यवस्थाके द्वारा हमको पक्षहीन किया गया"। वास्तमें ही यह व्यवस्था ठीक नहीं हुई, न्यायविचार और राजनैतिक मंगलसाधन करनेके लिये इस व्यवस्थाका परिवर्तन करना श्रेष्ठ था। गवर्नमेंटके पक्षमें उक्त अनुगत छोटे राज्यके प्राप्त उक्त देशोंको लौटा देना ही उचित है"।

आचिसन साहबने अपने ग्रंथमें इसके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है, हम यहाँपर उसका प्रकाश करना उचित जानते हैं; उन्होंने लिखा है, कि "बूँदीराज्य जिस स्थानमें स्थापित था उससे सन् १८१७ ईसवीके युद्धमें पिंडारोंके पलायन निवारणके लिये वह बूँदीराज्य विशेष प्रयोजनीय स्थान विचारा गया है, और यथेष्ट उपकारी दृष्टि आता है, बूँदीके महाराव राजा विशनसिंहने सबसे पहिले बृटिश गवर्नमेंटके साथ मित्रता की और सन् १८१८ ईसवीकी १० दशमी फर्वरीको दोनोंका सन्धिबंधन हुआ। यद्यपि बूँदीके महाराजकी सेना-संख्या अधिक नहीं थी परन्तु उन्होंने अंतःकरणसे उक्त समरके समयमें बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता की थी। महाराष्ट्रोंने बूँदीके महाराजको जो अत्यन्त ही शोचनीय दशामें डाला था बृटिश गवर्नमेंटके साथ संधिबंधन होते ही गवर्नमेण्टने बूँदीराजको उस शोचनीय दशासे उद्धार कर दिया।" कर्नल टाड साहबके समान आचिसन साहबने भी जिस भावसे मुक्तकंठसे बूँदीराज विशनसिंहके द्वारा बृटिशसिंहकी सहायता करनी स्वीकार की थी, उससे अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि बूँदीराज सब प्रकारसे गवर्नमेण्टके अनुग्रहका अधिकारी हुआ था।

बृटिश गवर्नमेण्टके साथ बूँदीके महाराज महाराव राजा विशनसिंहका जो संधिबंधन हुआ था हमने इस स्थानपर उस संधिपत्रको प्रकाशित किया है। उदार

हृदय कर्नल टाड साहबने (उस समय कप्तान थे) अंग्रेजोंकी ओरसे यह संधिपत्र तैयार कराया ।

संधिपत्र ।

महामहिमवर मार्किस आफ हेष्टिंस के० जी० गवर्नर जनरल बहादुरकी दी हुई सम्पूर्ण सामर्थ्यके अनुसारमें कप्तान जेम्स टाड माननीय अंग्रेजी कम्पनीकी ओरसे और बूंदीके महाराजकी दी हुई पूर्ण सामर्थ्यके अनुसार उक्त राजाकी ओरसे बोहरे तुलारामके द्वारा माननीय अंग्रेज ईस्ट इंडिया कम्पनी और बूंदीके राजा महाराव राजा विशनसिंहकी संधि हुई ।

प्रथम धारा-एक ओर बृटिश गवर्नमेण्ट और दूसरी ओर बूंदीके महाराजा और उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोंमें चिरस्थाई मित्रता समस्वार्थता और आत्मीयता बिराजमान की जाय ।

दूसरी धारा-बृटिश गवर्नमेण्ट बूंदीके राजाके अधीनमें स्थित समस्त राज्यको शत्रुओंके द्वारा आक्रमणसे रक्षा करनेका भार लेगी ।

तीसरी धारा-बूंदीके महाराजाने चिरकालके लिये बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रभुता स्वीकार की है, और बृटिशगवर्नमेण्टकी चिरकालके लिये सहकारिता मानी है, बृटिश गवर्नमेंटकी अनुमतिके अतिरिक्त बूंदीके अधीश्वरका और किसीके साथ किसी प्रकारका संधि बंधन नहीं होगा । यदि दैवात् अन्य किसी राजाके साथ विवाद अथवा मतान्तर उपस्थित होगा तो उसकी मध्यस्थताका भार अथवा दंड देनेका भार बृटिश गवर्नमेंटपर होगा राजा अपने राज्यके सब प्रकारसे अधीश्वर रहैंगे, और उक्त राज्यमें बृटिश गवर्नमेंटके शासनकी सामर्थ्यका विस्तार नहीं हो सकैगा ।

चौथी धारा-राजा, महाराज हुलकरको जो कर देते आये हैं, महाराज हुलकरने बृटिश गवर्नमेंटको उस करके लेनेका अधिकार एकबार ही दे दिया है। बृटिश गवर्नमेंटने अपनी इच्छानुसार राजा और उनके उत्तराधिकारियोंको उस करके देनेसे छुटकारा दिया महाराजहुलकरने बूंदीराज्यके जिन देशोंको अपने अधिकारमें किया था; उनसे मिले हुए प्रथम सूचीके अनुसार उन सब देशोंको बृटिश गवर्नमेंटने बूंदीके महाराजको दे दिया ।

पांचवीं धारा-बूंदीके राजा इतने दिनोंतक महाराज सेंधियाको जो कर और राजस्व देते आये है उन सबके साथ दूसरी सूचीके अनुसार वह कर और राजस्व बृटिश गवर्नमेंटको देनेके लिये बूंदीके महाराज स्वीकार करते हैं ।

छठवी धारा-बृटिश गवर्नमेंटके अनुरोधसे बूंदीके महाराज अपनी सामर्थ्यके अनुसार बृटिश गवर्नमेंटका सेनाद्वारा सहायता करैंगे ।

सातवीं धारा-यह सात धाराओं युक्त संधिपत्र बूंदीमें निर्द्धारित हुआ और कप्तान जेमस टाड और बोहरा तुलारामके हस्ताक्षरसहित तथा मोहरांकित होकर महामान्यवर गवर्नर जनरल और बूँदीके महाराव राजा आजकी तारीखसे लेकर एक महीनेके बीचमें इसको निर्द्धारित करके परस्परमें परिवर्तन कर लेंगे ।

बूंदी, आजकी तारीख १०वीं फर्वरी, सन् १११८, चौथी रविउलसानी हि० सन् १२२३,५ माघ, संवत् १८७४।

यह संधिपत्र महामान्यवर गवर्नर जनरलके आदेशसे कानपुरक निकट डेरोंमें आज १८१८ईसवीकी मार्च महीनेकी पहिली तारीखको स्वीकार किया गया।

गवर्नर जनरलकी मोहर	हस्ताक्षर "हेष्टिंग्स"।

प्रथम सूची।

संधिपत्रकी चौथी धाराके अनुसार जो देश बृटिश गवर्नमेण्टने राव राजा विशनसिंहजीको दिये थे उनकी सूची इस प्रकार है।

परगना	बामणगांव
"	लाखेरी।
"	कारवरका अर्द्धांश
"	बरोंधनका अर्द्धांश
"	पाटणका अर्द्धांश

बूंदीका चौथ अर्थात् राजस्वके चार अंशोंमेंका एक अंश।

दूसरी सूची।

महाराज सेंधिया अबतक बूंदीके राज्यसे जो राजस्व और कर लेते हैं,बूंदीके संधिपत्रकी पांचवीं धाराके अनुसार इसके पीछे वह सब बूंदीके महाराज बृटिश गवर्नमेंटको देंगे उसकी सूची इस प्रकार है,—

दिल्लीके सिक्केका .... ८०००० रुपया

परगने पाटनके तीन अंशोंमेंका दो अंश राजस्व ... ४०००० "

परगना उर्मिला।

प. समेदी।

ऐ. करबरका अर्द्धांश।

ऐ. बरूंधनके तीन अंशोंमें एक अंश।

बूंदी और अन्यान्य स्थानोंका चौथ ... ... ४०००० रुपया।

राजाकी मोहर	जेम्स टाड "बाहरा तुलाराम।"

उदारहृदय कर्नल टाड साहबने अंग्रेजी गवर्नमेंटकी ओरसे बूंदीके महाराज राजा विशनसिंहके साथ उस संधिपत्रको तैयार कर लिया, उन्होंने अपने आप इसके

सम्बधमें अपने ग्रंथमें एक स्थानमें लिखा है कि सन् १८१८ ईसवीके फर्वरी मासमें बूँदीके साथ संधिबंधन समाप्त करके ग्रन्थकारने (टाड साहबने) अत्यन्त आनंद अनुभव किया।"

आचिसन साहबने उक्त संधिबंधनके सम्बंधमें अपने ग्रन्थमें लिखा है कि "बूँदीके महारावराजाने इतने दिनोंतक हुलकरको जो कर दिया था, तथा हुलकरने बूँदीराज्यके जिन देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया था, सन् १८१८ ई०के संधिपत्रके अनुसार महाराजको उस कर देनेसे छुटकारा मिला, और हुलकरके अधिकारी समस्त देश भी महाराजको लौटा दिये गये। इधर महाराज इतने दिनोंसे सेंधियाको जो कर देते थे वह कर बृटिश गवर्नमेण्टके देनेको राजी हुए। वह देय करका ८०००० रुपया निश्चय किया गया। इसमें सेन्धिया पाटन देशके जो तीन अंशोंमेंसे दो अंशोंके अधिकारी थे, उन देशोंके कारण उन रुपयोंमेंसे आधे रुपये निश्चित हुए; अथवा पाटन देशके बचेबचाये तीन अंशोंमेंसे जो एक अंश हुलकरके अधिकारमें था वह संधिपत्रकी चौथी धाराके अनुसार बूँदीके महाराजको लौटा दिया। बृटिश गवर्नमेण्टकी ऐसी इच्छा थी कि सेन्धिया और हुलकरने बलपूर्वक बूँदीके जिन समस्त देशोंपर अधिकार कर लिया था वह सभी महाराजको लौटा दिये जाँय और सेंधियाने पाटन देशके तीन अंशोंमेंके जो दो अंश बलपूर्वक अपने अधिकारमें कर लिये हैं वह गवर्नमेण्टकी धारणाके अनुसार संधिपत्रकी संलग्न सूचीमें सन्निवेशित किये जायँ। उस समय गवर्नमेण्ट नहीं जानती थी कि नाना फडनवीस जिस समय व्यवहारोंको नहीं जानते थे, उस समय अन्य जिस मनुष्यने बून्दीके सिंहासनपर अधिकार किया था, उसको भगाकर बून्दीके यथार्थ अधीश्वर (उमदेसिंह) को बून्दीके सिंहासनपर बैठाल दिया। बून्दीके महाराजने समस्त पाटन देश पेशवाको दे दिया, और पेशवाने उस पाटन देशके तीन अंशोंमेंसे दो अंश सेंधियाको और बचे हुए अंश हुलकरको दे दिये। अंतमें यह यथार्थ विवरण प्रकाशित हो गया; और पाटन देशके तीन अंशोंके दो अंशोंका कारण जो ४०००० रुपया कर ठहरा था वह बूंदीके महाराजसे कभी नहीं लिया गया। पाटनदेशके जो अंश हुलकरके अधिकारमें थे, उनके उस अधिकारका नाश हो गया और बृटिश गवर्नमेण्टके द्वारा उन्हें वार्षिक ३०००० रुपया कर मिलना निश्चय हो गया।"

इतिहासलेखक टाड साहबने लिखा है कि बून्दी राज्यका कल्याण करनेके लिये हमने जिस आग्रहके साथ यत्न किया है वह सम्पूर्ण सफल हो गया। अन्य राज्य जिस प्रकार किसी न किसी कारणको उपस्थित करके गवर्नमेण्टको क्रोधित कर कष्ट उत्पन्न कर लेते हैं। परन्तु बूँदीके महाराजने अन्य किसी राज्यके साथ किसी प्रकारका उपद्रव न करके चुपचाप उपयुक्त उन्नतिकी ओर दौडकर अपनी स्वाधीनताका सुख भोग किया था। राव राजा विशनसिंह फिर अपनी लुप्त हुई स्वाधीनताकी प्राप्तिके पीछे बहुत थोडे समय अर्थात् चार वर्षतक जीवित रहे। उस कुछ समयके पीछे ही विशनसिंहने कालरामार्वस (chalera morbus) गोला रोगसे जर्जर

होकर प्राण त्याग किये । इस भयंकर रोगके नामसे दृढ़ बली और असीम साहसी मनुष्य भी कम्पित और भयभीत हो जाते हैं, यह बहुत शीघ्र मनुष्यको हीनवीर्य करदेता है इसी रोगसे आक्रान्त होकर विशनसिंहने परलोक यात्रा की, और अपनी स्त्रीसे सती होनेका निषेध कर अपने अज्ञानबालकपुत्रके अभिभावक पदपर बृटिश गवर्नमेण्टको प्रतिनिधि करनल टाडको नियुक्त किया । विशनसिंहने युवावस्थामें ही प्राण त्याग न किये, उन्होंने सत्रह वर्षतक राज्य किया । सन् १८२१ ईसवी १४ जोलाईको इनका स्वर्गवास हुआ ।

कर्नल टाड साहबने निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशके साथ महाराव राजा विशनसिंहके शासन इतिहासका उपसंहार किया है, दो चार बातोंसे विशनसिंहके चरित्रोंकी समालोचना हो सकती है, वह एक अकपटचित्त और अंशोंमें यथार्थ राजपूतोंके समान मनुष्य थे । यद्यपि इनका राज्यशासन उज्ज्वल नहीं था, तथापि इनका हृदय उदारतापूर्ण और चित्त उद्यमशील था । उनकी अभिज्ञतासे शक्तिका अभाव दृष्टि नहीं आता था और उनका शुभाशुभ वा हिताहित ज्ञान विलक्षण था । जिस समय महाराष्ट्रोंने धीरे २ उनके राज्यका समस्त राजस्व प्राप्त कर उनकी शासनसामर्थ्य और सुखस्वच्छन्दताको घटा दिया था, उस महाविपत्तिके समयमें भी उन्होंने भलीभाँतिसे प्रमाणित करदिया कि उन्होंने किस प्रकार सरलतासे अपनी सुखस्वच्छन्दता और स्वार्थके प्रति उपेक्षा दिखाई थी । उस समय इन्होंने एकमात्र वीर राजपूतोंके समान मृगया करके अपने चित्तमें संतोष प्राप्त किया था । वह अत्यन्त मृगयाप्रिय थे, और क्या कहैं वह सिंहकी खोजमें बाहर जाकर बराबर तीन चार दिनतक सिंहके विवरके पास पडे रहते थे और जबतक उस सिंहका वध न करलेते तबतक स्थानको नहीं छोडते थे । वह प्रधानता पशुराजसिंहको ही अपने शिकारका उपयुक्त पात्र जानते थे अन्य पशुकी ओर उनकी दृष्टि नहीं थी; उन्होंने इकले ही समस्त जीवनमें अपने हाथसे सहस्रों सिंहोंका शिकार किया था, इसके अतिरिक्त अगणित हिंस्र व्याघ्रोंको भी अपने बर्छेके आघातसे मारा । इस वीरश्रेष्ठके संकटापन्न तथा आनन्ददायक मृगयामें लिप्त रहनेके कारण इनका एक पैर टूट गया था उसीसे चिराकालतक वह लँगडे रहे थे, और छोटे दिखाई पडते थे । जब घोडेपर सवार होकर वीरमूर्तिसे अपने मस्तकके ऊपर भाला घुमाया करते थे, उस समय बलविक्रम और शूरवीरता पूर्णरूपसे उनके मुखपर दिखाई पडती थी । उस दृश्यको देखकर सरलतासे जाना जाता है कि विशनसिंहके महावीर पूर्वपुरुषोंने जिस प्रकार एक समय जहाँगीर और शाह आलमके लिये रणक्षेत्रमें महावीरता प्रकाश की थी, उसी प्रकारसे बिशनसिंह भी हमारे लिये तलवार धारणकी सामर्थ्य रखते थे । वह इसी कारणसे अपने इस छोटेसे राज्यमें अधिकतासे इच्छानुसार विचरण करते थे, कारण कि वह इस बातको जानते थे कि शासित होनेवालोंके निकटसे और विशेष करके राजकर्मचारियोंसे सम्मान संग्रह करनेमें स्वेच्छाचारिताका प्रयोजन है ।”

साधु टाड साहबने यहांपर महाराव राजा विशनसिंहजीके चरित्रके सम्बन्धमें एक प्रवाद कथा लिखी है कि राजाके यहाँ एक स्वतंत्र धनसंग्रहका भंडार था। बूँदीके राजमंत्रीको प्रतिदिन उस भंडारमें १०० मुद्रा डालनी होती थी। मंत्री यदि अन्य किसी कार्यमें अवहेला कर जाते तो राजा चाहे उस अवहेलाके कारणकी साधारण पूछपाछ करते, पर यदि भंडारमें सौ मुद्रा न पडती तो मंत्रीको इन्द्रजितका भय दिखाकर अपमानित किया जाता। यह इन्द्रजित किसी देवताकी मूर्ति नहीं थी वरन् एक बडे आकारके काष्ठकी पादत्रानके समान था, भंडारके स्थानमें एक लोहेकी कीलके ऊपर यह इन्द्रजित टँगा रहता था, अन्य राजाके वहाँ आनेपर उस स्थानमें राजदंड रक्खा जाता था, विशनसिंहने मंत्रीको डरानेके लिये ही यह रख छोडा था, यह प्रवाद कहाँतक सत्य है हम सरलतासे इसका विश्वास नहीं कर सकते, राजमंत्रीके लिये पादुका प्रहारके भयकी अपेक्षा और अपमान क्या हो सकता है।

साधु टाड साहबने फिर लिखा है कि दूसरे राजपूत राज्योंके समान विशेष कर बूँदी राज्यके राजपुरुषोंकी संख्या भी बहुत सामान्य है नीचे लिखे चार पुरुषोंके हाथमें शासनकी सामर्थ्य रहती है (१) दीवान वा मुसाहिब, (२) फौजदार वा किलेदार, (३) बख्शी, (४) रिसाले वा हिसाब विभागके तत्त्व विवेचक। दिल्लीके बादशाहके साथ जो बूँदीके महाराजोंका संमिलन हुआ था, जैसे जयपुर नरेशने बादशाहके दरबारके समान अपने यहाँ कितने ही नियम चलाये थे इसी प्रकार बूँदी नरेशने भी अपने यहां वैसे ही नियम चलाये। प्रधान मंत्री दीवान वा मुसाहिबके नामसे पुकारे जाते थे, उनके हाथमें ही राज्यका समस्त शासन और राजधनका भार था। फौजदार वा किलेदार बूँदीके किलेका अध्यक्ष था, इस पदपर कोई और राजपूत नियुक्त नहीं होता, बूँदीक राजाका कोई दृढ़ सम्बन्धी वा धाई भाई इस पदपर नियुक्त होता है, वह राजसेना, वेतनभोगी सेना और सामन्तोंकी सैन्य समूहका सेनापति होता है, बख्शी साधारणतः सब विभागोंकी जांच करता है हिसाब देखता है, रिसाले और राजदरबारके हिसाबकी जांच करता है। मृतराजा विशनसिंह अपने धनागारको केवल जमा न करके उस धनसे व्यापार करते थे, उस वाणिज्यसे जितनी आमदनी होती राजा उसका अंश ग्रहण करते। यद्यपि मंत्री उसका हिसाब करके सैकडे पीछे पन्द्रह रुपयेकी बढती दिखाते थे, पर वास्तवमें तीस रुपये सैकडा आमदनी होती थी, इस वाणिज्यकी आमदनीसे सेना तथा राजअनुचरोंको वेतनके हिसाबसे अन्न तथा दूसरे पदार्थ मिलते थे। राजा स्वयं इस वाणिज्यके अंशभागी थे इस कारण मंत्रीने जिस पदार्थका जो मूल्य निश्चय कर दिया वह चाहे ठीक न हो पर वहीं निश्चित रहता, यदि सेना वा सेवक उसपर विनयपत्र देते तो राजाके स्वयं अंशभागी होनेके कारण उसका कोई फल नहीं होता और इसीसे मंत्री सब प्रजाके प्रियपात्र न हो सके।

कर्नल टाड साहबने निम्नलिखित उक्तिसे बूँदीराजके इतिहासका उपसंहार किया है, " विशनसिंह दो पुत्र छोड गये, इनमें सबसे बडे राव राजा रामसिंह थे, यह

सन् १८२१ ईसवी अगस्त मासमें ग्यारह वर्षकी अवस्थामें पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए। छोटे महाराज गोपालसिंह राव राजा रामसिंहकी अपेक्षा कई महीने छोटे थे। राव राजा रामसिंह अपने पिताके समान मृगयामें रत रहते थे, अधिक क्या कहैं इस छोटी अवस्थामें ही इन्होंने सबसे पहिले बनैले बराहका शिकार किया, उसके लिये उनके सामन्तोंने महा प्रसन्नता प्रकाश करके उनको नजरें दी थीं। इसके पहिले यह छोटीसी तलवार लेकर बकरे और भेड़ोंका वध करते थे। इनकी माता कृष्णगढकी राजकुमारी थीं, यह जिस भांति बुद्धिमानी और सुलक्षणा थी उसी प्रकारसे पुत्रके मंगलकी कामना करती रहती थी। यह विशेष आशा होती है कि जिस गवर्नमेण्टने इस बूंदी राज्यका शोचनीय दशासे उद्धार किया था उसी गवर्नमेंटके आश्रयसे यह बूंदीराज पूर्वकालके समान श्रीवृद्धियुक्त होगा। हम शुद्ध अंतःकरणसे हाडाजातिके मंगल और उन्नतिकी कामना करते हैं"।

पञ्चम अध्याय ५.

महाराव राजा रामसिंह-कर्नल टाड साहबका महारावके अविभावक पदको ग्रहण करना राज्यके सुशासनकी व्यवस्था करना मंत्री कृष्णराम-रानीके साथ महाराजके अन्यान्य व्यवहारोंको निवारण करनेके लिये जोधपुरसे सामन्तोंका आना-कृष्णरामकी शोचनीय मृत्यु-खंडसमर-हत्याकारियोंका प्राण नाश करना-जोधपुरके महाराजके साथ समरकी सूचना करना-बृटिश गवर्नमेण्टकी मध्यस्थतासे उसका निवारण करना-महाराव राजा रामसिंहका अपने हाथमे राज्यभार ग्रहण करना-पाटनदेशके सम्बन्धमे नवीन व्यवस्था-सन् १८५७ ईसवीमे सिपाही विद्रोहके समय महाराव राजा रामसिंहका बृटिश गवर्नमेण्टकी सहायता करनेमें असम्मति देना-बृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराव राजा रामसिंहका राजनैतिक सम्बन्ध छेदन होना-फिर सद्भाव स्थापन-बृटिश गवर्नमेण्टका महारावको दत्तकपुत्र ग्रहण करनेकी अनुमति देना-दिल्लीके दरबारमें महाराव राजा रामसिंहका जाना-प्रथम श्रेणीके भारतनक्षत्र और भारतेश्वरीके भारत साम्राज्यमंत्री की उपाधि प्राप्त करना-सलामीकी तोपोंकी संख्या वृद्धि-बूँदीका शासन समाज-प्रजाके जलकष्टको निबारण करनेके लिये अनुष्ठान करना-बूँदीके राजकुमारोंका विवाह-विवाहमें व्यय-यौतुक-राजकुमारोंके शिक्षाकी अवस्था-महाराव राजा रामसिंहके चौथे पुत्रका जन्म-बूँदीराज्यकी आमदनी और खर्चकी सूची-शासनविभागकी उन्नति-शान्तिरक्षाका विभाग--वाणिज्य शुल्कसंस्कार-बूँदीराजका प्रजाकी शिक्षाकी व्यवस्था करना।

---

(१) विशनसिंहने मृत्युके समय कर्नल टाड साहबको अपने पुत्रके अविभावक पदपर नियुक्त किया। कर्नल टाड साहब जितने दिन रजवाडेमे थे उतने दिनोंतक इन्होंने अपने कर्त्तव्यको संतोषसे पालन किया। साधु टाड साहबने राव राजा रामसिंहको भतीजा कहकर पुकारा था, और इसी प्रकारसे चचा भतीजेका सम्बन्ध स्थापित किया। साधु टाड साहबने राव राजा रामसिंहको भतीजा कहकर पुकारा तथा इसी प्रकारसे स्नेह दिखानेमे भी कसर न की। उक्त प्रथम मृगया—

महात्मा टाड साहबने जहां तक बूंदीराज्यके इतिहासको अपने ग्रन्थमें संग्रह किया था, उसको चौथे अध्यायतकमें लिखकर इस समय उसके पिछले समयके इतिहासको हम विश्वासी प्रमाणोंसे संकलन करके पाठकोंको आदरपूर्वक बडे सम्मानके साथ उपहार देनेके लिये अग्रसर होते हैं।

जो महाराव रामसिंह जी० सी० एस० आई० सी० आई०ई० बहादुर इस समय बूंदीके सिंहासनको उज्वल कर रहे हैं वह अपने पिता महाराव विशनसिंहकी मृत्युके समय केवल ग्यारह वर्षके थे। महाराव विशनसिंह बहादुरने उदारहृदय महाशय कर्नल टाड साहबको अपने अप्राप्त व्यवहार कुमारके शिक्षातत्त्वविधायक और उनके अविभावक पदपर नियुक्त किया था, उनकी मृत्युके समय कर्नल टाड साहब मेवाडकी राजधानी उदयपुरको गये थे। वह महाराव विशनसिंहकी मृत्युका समाचार पाकर और विशनसिंहकी विधवा रानीके बुलानेका पत्र पाते ही शीघ्रतासे बूंदीराज्यकी ओर को चले गये। कर्नल टाड साहबने बूंदीमें जाकर विधवा रानीके साथ भाई बहनका सम्बन्ध स्थापन करके बालक रामसिंहकी शिक्षा और तत्त्वावधानका भार और बूँदी राज्यमें सुशासन स्थापनका भार अपने हाथमें लिया। राजपूतजातिके परममित्र कर्नल टाड साहबने अपनी स्वाभाविक दयाके वश होकर विधवा रानीको बहन कहकर रामसिंहको अपना भानजा माना मृतक महाराज रामसिंहकी अन्तिम आज्ञा पालन करनेमें किंचित् मात्र भी विलम्ब न किया। इन्होंने शीघ्र ही अपने भानजे महाराव रामसिंहके मंगलकी इच्छासे बूंदीकी राजधानीमें सर्वत्र सुशासन स्थापन करनेके लिए अच्छा प्रबंध कर दिया और कुछ समय तक आपने स्वयं बूंदीमें रहकर सब विषयोंपर ध्यान दिया और उन सब विषयोंको स्थिर सिद्धान्त करनेमें किंचित् मात्रका भी विलम्ब न किया। कर्नल टाड साहब जब तक भारतवर्षमें रहे तबतक बराबर महाराव रामसिंहका कल्याण साधन करते रहे। और यह अपने देशमें जाकरभी अपने भानजे महाराव रामसिंहके कल्याणकारी विचारोंमें लगे रहे।

महाराव विशनसिंहके स्वर्ग चले जानेके पीछे उच्च आशय विद्वान् बुद्धिमान् कृष्णराम नामके एक मनुष्य बूंदीके प्रधान मंत्री पद पर नियुक्त हुए। जब तक कर्नल टाड साहब रजवाडेके बृटिश एजेण्ट पद पर नियुक्त थे, कृष्णराम उतने दिनों तक उनके परामर्शके अनुसार समस्त भारी प्रश्नोंकी मीमांसा कर लेते थे। साधु टाड साहबके अपने देशको जाते ही मंत्री श्रेष्ठ कृष्णरामने अपनी चतुराई और नीतिज्ञताके बलसे बालक महाराव रामसिंहका स्वार्थ साधन किया। कर्नल म्यालिसन अपने ग्रंथमें लिखते हैं कि "जब साढे छः वर्षतक कृष्णराम शासनकर्ता पदपर नियुक्त थे उस समय बूँदीके राज्यका समस्त बाकी ऋण चुका दिया गया, उन्होंने नियमपूर्वक

—के उपलक्षमे सन्तोंके समान साधु टाड साहबने भी राजा रामसिंहको सम्मान सूचक उपहार दिया था।

(१) इसका विवरण कर्नल टाड साहबके दूसरे भ्रमण वृत्तान्तमें देखो।

हिसाब किताब रक्खा, और राजस्वका एक रुपयातक वसूल कर कोशागारमें दे दिया। उन्होंने राजस्वके हिसाबसे तीन लाखसे पाँच लाख रुपया बढा दिया, उनके शासनमें खर्च करके दो लाख रुपया बचता था, उन्होंने राजकार्यके प्रत्येक विभागकी अवस्था संतोषदायक कर दी, और वह सेनाको नियमसहित बराबर वेतन देते गये"।

अत्यन्त दुःखका विषय है कि वह सर्वगुणसंपन्न मंत्री कृष्णराम अधिक दिनतक बूँदीराज्यका कल्याण न कर सके। उनके शासनभारको ग्रहण करनेके साढे छः वर्ष पीछे एक घोर घटनाके होनेसे वह अत्यन्त शोचनीयरूपसे मारे गये, उनके वियोगसे समस्त राज्यको जो कष्ट हुआ उसका लिखना लेखनीकी शक्तिसे बाहर है।

कर्नल म्यालिसनने लिखा है कि "महाराव रामसिंहका काइ नौ वर्ष राजसिंहासन पर बैठे हुए होंगे कि इसी बीचमें एक ऐसी घटना हुई कि यदि बृटिश गवर्नमेण्ट मध्यस्थ होकर अपनी शक्तिका प्रयोग न करती तो बूँदीके साथ जोधपुर राज्यका युद्ध उपस्थित हो जाता। राव (रामसिंहने) जोधपुरकी राजनंदिनीके साथ विवाह किया था, बीचमें ऐसा जाना जाता है कि उन्होंने उस स्त्रीके साथ अत्यन्त निठुर व्यवहार किया था, जिससे वह जोधपुरकी राजकुमारीके साथ इस प्रकारसे व्यवहार न कर सकें, उसका उत्तम प्रबंध करनेके लिये सन् १८३० के पहिले महीनेमें जोधपुरसे बहुतसे सामन्त सेवकोंको साथ लेकर बूँदीकी राजधानीके पास आ पहुँचे। उनके आनेके तीसरे दिन उन आयेहुए जोधपुरियोंमेंसे एक सामन्तके द्वारा अत्यन्त बुद्धिमान निष्कलंकचरित्र बूँदीके राजमंत्री कृष्णराम मारे गये, युवकराव रामसिंहने इससे महा क्रोधित होकर हत्या करनेवालोंको उचित दंड देनेका दृढरूपसे विचार किया। जोधपुरके जो मनुष्य किलेके भीतर बंदीभावसे रहते थे उस स्थानपर क्रमानुसार गोलोंकी वर्षा होने लगी, और जिससे उनको पानी न मिल सके ऐसे उपाय भी किये गये। उस जोधपुरकी सेनाके दो नेता और जिन मनुष्योंके कुपरामर्शसे हत्याकाण्ड हुआ था वह लोग भागनेके समय पकडे गये। रावराजाकी आज्ञानुसार उनको प्राणदंडकी आज्ञा दी गई। अंतमें नीचे पदपर स्थित मनुष्योंके क्रमसे आत्मसमर्पण करते ही उनको बूँदीराज्यकी सीमासे निकाल दिया गया। छः दिनमें जोधपुरके एक सामन्त बभूतसिंह जिसने बूँदीके मंत्रीको मार डाला था वह भी युद्धमें मारा गया। उस बभूतसिंहके और दो नेताओंके प्राण नष्ट होते ही बूँदीके अधीश्वरने अपने मंत्री श्रेष्ठके प्राणनाशका उचित बदला हो गया, यह मानलिया।

"उपरोक्त कारणसे ही जोधपुरके साथ युद्ध होनेकी सम्पूर्णतः संभावना थी, परन्तु गवर्नमेंटने वहाँ अपने एजेण्टको भेजकर युद्धमें असम्मति प्रकाश कर सरलतासे शांति स्थापित की" आचिसन साहबने लिखा है कि "महाराज रामसिंहके सुदीर्घ अप्राप्त व्यवहारके समयमें बृटिश गवर्नमेण्टको एक साथ ही अधिकतर बूँदीराज्यके आभ्यन्तरी शासनके विषयमें हस्ताक्षेप करना पडा था।

(१) गांव बाजोली मारवाडके मेडतिया राठोड था।

मंत्रिश्रेष्ठ कृष्णरामके वियोग होनेके कुछ ही दिन पीछे महाराव रामसिंहने अपने हाथमें बूँदीका राज्य लिया, और आजतक बराबर उसको शासन करते रहे "।

आचिसन साहबके ग्रंथमें लिखा है कि "गवर्नमेण्टकी रक्खी हुई सेनाका खर्चा देनेके लिये सन् १८४४ ईसवीमें महाराज सेन्धियाने पाटनदेशके तीन अंशोंमेंसे यह जिन अंशोंके अधिकारी थे वह अंश गवर्नमेण्टको दे दिये, उसी कारणसे बूँदीके महाराजने उक्त देशके अंशोंकी प्राप्तिके लिये प्रश्न उपस्थित किया। सेंधिया उक्त देशके अधिकार देनेके लिये राजी न हुआ, परन्तु सन् १८४७ ईसवीमें ग्वालियरके महाराज सेन्धियाकी सम्मतिके अनुसार जो नवीन संधि की हुई उसके अनुसार बूँदीके महाराजने ग्वालियरके महाराजको वार्षिक ८०००० रुपया कर देना स्वीकार किया था, इसी कारणसे उक्त देश चिरकालके लिये बूँदीके महाराजका समझा गया, सन् १८६० ईसवीमें सेंधियाके साथ जो संधि हुई थी उसीके अनुसार पाटनदेशका राजस्व भी गवर्नमेण्टको मिलता था। इस प्रकार बूँदीके महाराजने उस पाटन देशको गवर्नमेण्टके अधीनमें भोग किया था, बूँदीके महाराज सन् १८१८ ईसवीकी संधिके अनुसार बूँदी और अन्यान्य देशका चौथस्वरूप गवर्नमेण्टको जो वार्षिक ४०००० रुपया करका देते थे, उक्त देशके कारण उसके सिवाय और भी ८०००० रुपया करस्वरूपमें दिया करते थे।

इस बातको हमारे पाठक पहिले ही जान चुके हैं कि भारतवर्षके देशीय राजाओंमें बूँदीके महाराज उमेदसिंहने सबसे पहिले गवर्नमेण्टकी मित्रभावसे सहायता की थी और सन् १८१८ ईसवीमें महाराव विशनसिंहने गवर्नमेंटके साथ संधिबन्धन करके मित्रभावका चूडान्त परिचय दिया था। परन्तु अत्यन्त ही दुःखका विषय है कि सन् १८५७ ईसवीमें जिस समय भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तसे विद्रोहकी आग भडक उठी थी उस समय विपत्तिका समुद्र अपनी तरंगमालाको विस्तार करता हुआ भारतसे अंग्रेजी राज्यको लुप्त करनेके लिये तैय्यार हुआ, उस महाविपत्तिके समयमें बूँदीके महाराज रामसिंह बहादुरने सन् १८१८ ई० के संधिपत्रके अनुसार गवर्नमेंटको सेनाकी सहायता नहीं दी। जो राजवंश गवर्नमेंटका परम मित्ररूपसे प्रसिद्ध था, महाराव रामसिंहने उसीके वंशधर होकर उस वंशके गौरवकी रक्षा न की। इससे गवर्नमेण्ट अत्यन्त दुःखित हुई, और तुरन्त ही गवर्नमेण्टने क्रोधित होकर बूँदीके महाराजके साथ समस्त सम्बन्ध तोड दिये। परन्तु संतोषका विषय है कि बूँदीके महाराजको इस भावसे अधिक दिनतक बृटिश गवर्नमेंटका अप्रियपात्र होकर न रहना पडा। सन् १८६० ईसवीमें फिर बूँदीके अधीश्वर महाराव रामसिंहके साथ गवर्नमेण्टका राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित हुआ और उसी समयसे वर्तमान समयतक महारावके साथ गवर्नमेंटकी पूर्ण प्रीति रही है।

यद्यपि वर्तमान समयके महाराव रामसिंह बहादुरने सिपाहियोंके विद्रोहके समय गवर्नमेंटकी सहायता नहीं की थी, परन्तु विद्रोह वासनाके पीछे बृटिश गवर्नमेंटने अन्य राजाओंके समान महारावको वंशानुक्रमसे दत्तकरूपसे पुत्र ग्रहण करनेकी सनद दी थी।

सन् १८७७ ईसवीकी पहिली जनवरीको ग्रेट ब्रिटेन और आयर्लैण्डकी अधिराज्ञी विक्टोरियाने दिल्लीके प्रकाश महान् दरबारमें जो भारतकी राजराजेश्वरीकी

उपाधि धारण की, महाराव रामसिंह बहादुरने उस दरबारमें आमंत्रित होकर वहां जाकर राजप्रतिनिधि लाॅर्ड लिटनके द्वारा अन्यान्य राजाओंके समान स्वयं सम्मान ग्रहण किया। अन्यान्य भूपालोंके समान महारावको उक्त उपाधि धारण करनेकी स्मारक पताका और स्मारक पदक भी मिला था, महाराव रामसिंहके साथ गवर्नमेंट की जो इस समय महामित्रता हुई है उसका दूसरा प्रमाण यह है कि बृटिश गवर्नमेण्ट-ने "ग्रान्ड कमान्डार स्टार आफ इण्डिया" नामकी जो ऊंची श्रेणीकी भारत नक्षत्र उपाधिकी सृष्टि करके देशीय राजाओंको उस उपाधिका पदक दिया था, बूँदीपति महाराव रामसिंह बहादुरको भी गवर्नमेंटने उक्त दरबारमें उस प्रथम श्रेणीके भारत-नक्षत्रकी उपाधि और 'कौन्सिलर आफ दि एम्प्रेस' नामक भारतेश्वरीके मंत्री नामकी नवीन उपाधिके भूषणसे विभूषित किया, और महारावका सम्मान बढाकर तोपोंकी सलामी-की संख्या भी बढा दी थी। महारावको इस समय बृटिश शासित देशमें जाने आनेके लिये सत्रह तोपोंकी सलामी होती थी। वृद्ध महाराव रामसिंहके साथ गवर्नमेंटका यह प्रीतिपूर्ण सम्बन्ध अवश्य ही आनंददायक हुआ।

आजकल भारतवर्षके प्रत्येक देशीय राज्यमें गवर्नमेण्टके प्रतिनिधि रेसिडेंटकी उपाधि धारण करनेवाले अंग्रेज निवास करते हैं। बृटिश शासनकी राजनीतिके अनुसार वह रेसिडेंट ही इस समय देशीय राज्योंके यथार्थ शासनकर्तारूपसे विदित हैं। राजालोग स्वाधीन होकर भी उन्हींके अधीन हैं और उन रेसिडेण्टोंके द्वारा उनकी स्वाधीनता बहुतायतसे घट गई है, वह रेसिडेण्ट प्रत्येक वर्षमें देशीय राजाओंका एक शासन विवरण तय्यार कर गवर्नर जनरलके एजेण्टके पास भेजते हैं। एजेण्ट एक २ विस्तारित देशके राजाओंके ऊपर राजनैतिक कर्मचारी होते हैं। वह उन समाचारोंको पाकर उसमें अपना मन्तव्य मिलाकर राजप्रतिनिधिके यहाँ उसको भेजते हैं। भारतवर्षकी गवर्नमेण्टके विदेशिक मंत्री उसे पुस्तकाकार छपाकर सर्वसाधारणमें उसका प्रचार कर देते है। राजपूतानेके पोलिटिकल एजेण्टने सन् १८८१-८२ ईसवीमें बूंदीके इतिहासमें जो कुछ लिखा है उसकी समालोचना सन् १८८३ ईसवीकी १८ मईके इण्डियन मिरर नामक अंग्रेजी दैनिक पत्रमें निम्नलिखित प्रकारसे प्रकाशित हुई थी।

गतवर्ष बूंदीके महाराव राजा अत्यन्त रोगी हो गये थे, अधिक पीडाके होनेसे महाराव राजाने राज्यका समधिक शासनभार कामदार पंडित गंगासहायके हाथमें सौंप दिया था। महारावने राज्यशासन करनेके लिये एक मंत्रीसमाज तय्यार किया। उसमें छः सदस्य नियुक्त थे। उक्त पंडितजी उस समाजके सभापति हुए। एक पुरुष समरविभागमें, एक मनुष्य साधारणविभागमें, एक एजेन्सीविभागमें, एक शान्तिरक्षाविभागमें और एक अपीली मुकदमोंके विभागमें नियुक्त हुआ। महाराव राजाने अपने राज्यकी प्रजाके जलकष्टको दूर करनेके लिये यथेष्ट तय्यारी की और महारानीने भी हिन्दूस्त्रियोंके समान प्रजाको जल देनेके लिये एक

बडा अनुष्ठान किया है । उनके व्ययसे दो कुण्ड तैयार हुए महाराव राजा भारतवर्षके अन्य राजाओंमें अत्यन्त रक्षणशील मतके हैं । निज राज्यमें अंग्रेजी शिक्षाके विस्तारकी ओर उनका ध्यान नहीं गया उन्होंने एक छोटासा विद्यालय स्थापित किया, उसमें १२० विद्यार्थी पढते हैं।परन्तु हमैं ऐसा विश्वास है कि महाराजने संस्कृत शिक्षाका प्रचार करनेके लिये बहुत यत्न किया है,इस कारण इस प्रकारक राजा हमारे अधिक सम्मान योग्य हैं ।

बृटिश पोलिटिकल एजेण्टन सन् १८८३ इसवीकी३तीसरी मईको बूँदीके शासन सम्बन्धी विवरणमें जिस मन्तव्यको राजपूतानेके गवर्नर जनरलके एजेण्टके पास भेजा था । आर जो भारतवर्षीय गवर्नमेण्टके द्वारा सन् १८८२-८३ ईसवीमें रजवाडेकी शासन वृत्तान्त पुस्तकमें प्रकाशित हुआ है, हमने उन सबके अंशोंका भाषान्तर किया है पाठक इसको पढकर बूँदीराजके वर्तमान शासनका आय व्यय और शिक्षा उन्नतिकी विशेप अवस्थाको जान सकैंगे ।

एजेण्टने लिखा है, कि "हम बडे आनंदके सहित कहते हैं कि महामान्य महाराव राजाने विशेष स्वस्थता प्राप्त की है । मारवाडकी राजवंशीय तीन स्त्रियोंके साथ महाराव राजाके तीनों पुत्रोंका विवाह करनेके लिये गत वर्षमें अधिक तैयारी करनेमें मन लगाया गया, गत वर्षके विज्ञापनमें लिखा गया है कि यह विवाहका कार्य शीतकालमें होगा । यह निश्चय हो गया है । महामान्य महाराव अपने पुत्रोंसे इतना स्नेह करते हैं कि दिसम्बर महीनेके पहिले जब मैंने उनसे साक्षात् किया तब यह जाना गया कि विशेष वृद्धावस्था और अस्वस्थ शरीर होकर भी वह स्वयं पुष्करजीतक पुत्रोंके साथ जाकर वहाँ उनके लिये अपेक्षा करते रहे और जो व्यवस्था वहाँ रहनेकी स्थिर की उस व्यवस्थासे उनके दो उद्देश सिद्ध हुए ।

प्रथम पुत्रका साथ बहुत थोडे समयमें विच्छिन्न हो जायगा दूसरे तीर्थस्थानमें जाकर कुटुम्बके मंगलकी इच्छासे देवताकी पूजा भी कर सकैंगे । परन्तु मारवाडके महाराजके दृढरूपसे बारम्बार अनुरोध करनेपर महाराव राजा रामसिंह बहादुर अंतमें कुटुम्बसहित छठी जनवरीको बूँदी छोडकर २५ जनवरीको जोधपुर पहुँचे, पिछले दो दिनोंमें बडे उत्सवके साथ विवाहकार्य किया गया । महारावके बडे पुत्रके साथ मारवाडपतिकी एक भगिनीका और मध्यम तथा तीसरे पुत्रसे मारवाडके महाराजकी दो भतीजियोंका विवाह हुआ, इसके अतिरिक्त महाराव राजा रामसिंहने अपने मृतपुत्र भीमसिंहके पुत्रके साथ महाराज बख्तासिंहकी पोतीका विवाह किया (१) । मारवाडके महाराजने जिस प्रकार बडे आदरभावके साथ महाराव राजा रामसिंहकी संवर्द्धना और

Report of the poletecal Adminition of the Rajpootana states for the 1882-83.

(१) यह बात बिलकुल गलत लिखी गई है क्योंकि न तो भीमसिंहके कोई बेटा था और न महाराजा बख्तसिंहकी पोती थी, न कोई ऐसा विवाह उस समय हुआ था ।

अभिनंदन किया उससे वह अत्यन्त प्रसन्न हुए, परन्तु उस समय मारवाडके महाराज अस्वस्थ थे, इसीसे उन्होंने असुख माना। ठीक५८वर्ष बीते कि महाराव रामसिंह बहादुरने चौदह वर्षकी अवस्थामें जोधपुरमें जाकर अपनी मृत पहली रानी जोधपुरके मृत महाराज मानसिंहकी कन्यासे विवाह किया था, उसी रानीके गर्भसे कुमार भीमसिंहने जन्म लिया, परन्तु अत्यन्त दुःखका विषय है कि सन् १८६८ ईसवीमें कुमार भीमसिंहकी मृत्यु अकालमें हो गई, सारा बूँदीका राज्य शोकके समुद्रमें डूब गया था। महाराव राजाके जोधपुरमें जाते ही उसी समयमें महाराजको "द्वारकानाथ" नामक बागके महलमें उतारा गया। महाराव राजाने कृष्णगढके राजाके साथ इस समय साक्षात् किया। विवाह हो जानेके पीछे वह ११ फर्वरीको जोधपुर छोडकर कुटुम्बसहित अजमेरको चले गये और वहाँ राजपूतानेके स्थित गवर्नर जनरल एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डके साथ साक्षात् कर पुष्कर तर्थिका दर्शन करनेके पीछे पहिली मार्चको अपनी राजधानी बूँदीमें चले आये"।

"इस विवाहमें और आने जानेमें बूँदीके महाराजका ढाई लाख रुपया खर्च हुआ था, और विवाहके कौतुकमें अनेक प्रकारके द्रव्य और अश्वादि सब मिलाकर डेढ लाख रुपया मिला था"।

राजकुमारोंकी शिक्षाके सम्बन्धमें उक्त विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है कि "महामान्य महाराव राजा रामसिंहके तीनों कुमारोंकी अवस्था क्रमसे इस समय साढे तेरह वर्ष ग्यारह वर्ष और नौ वर्षकी है। प्राचीन कालकी हिन्दूरीतिके अनुसार बडे यत्नसे राजकुमारोंको शिक्षा दी गई है, ऐसी आशा की जाती है कि बडे राजकुमार इस समय संस्कृत विद्यामें इतने विद्वान् हो गये हैं कि इसके दो वर्षके पीछे उन्होंने संस्कृतको समाप्त कर उर्दूभाषा का पढना प्रारंभ किया। परन्तु इसी अवसरमें उनको राजकार्यके शासनकी शिक्षा करनी पडी है। तीनों राजकुमारोंने शारीरिक व्यायाम और युद्धकी शिक्षा भी प्राप्त की है, एक समय हमने महारावके साथ साक्षात् करनेके लिये महलमें जाकर देखा कि महाराव स्वयं महलके एक कमरेमें बैठे हुए पिस्तौल चलानेकी शिक्षा राजकुमारोंको दे रहे हैं। मध्यम और तीसरे राजकुमारोंके कारण इतिहासमें बूँदीराज्यकी प्रचलित रीतिके अनुसार वार्षिक २०००० हजार रुपयेकी आमदनीकी भूमि नियत कर दी है, और उन दो जनोंके लिये जो दो महल बनाये जानेका विचार हुआ था उनमेंसे एक तो बनकर तैयार हो गया है और दूसरेके बनानेकी समस्त सामग्री तैय्यार धरी है"।

"गत जौलाई मासकी चौथी तारीखको महाराव राजा रामसिंहके और एक पुत्रने जन्म लिया, इनका नाम रघुवरसिंह रक्खा गया।" यह महाराजके चौथे पुत्र हैं।

बूँदीराज्यके वर्तमान आय व्ययके संबन्धमें अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि "महारावने जो राज्यके आय व्ययकी सूची हमें दी है। प्रकाशमें तो यह संवत्

(१) यह भी गलत लिखा है चौथा पुत्र कोई नहीं हुआ रघुवीरसिंह नाम बडे पुत्रका है जिसकी शादी जोधपुरमे हुई थी वही अब बूंदीके रावराजा है।

१९३८ (जो गत १ पहिली जौलाईको समाप्त हुआ है) की अभ्रान्त अनुमान की हुई सूची है यथार्थ आय व्ययकी सची और भी कई एक महीने बीतनेपर तैयार होगी। महाराव राजाके पुत्रोंके विवाहमें बहुतसा धन खर्च हुआ है, महारावने ऐसा अनुरोध प्रकाशित किया है कि गवर्नमेण्टको जो नियमित वार्षिक कर दिया जाता है वह रुक गया है। उन्होंने उस करको कईबार करके दो तीन वर्षके भीतर ही बिना सूद चुकानेको कहा है। उनका यह प्रस्ताव विचारके आधीनमें ग्रहण किया गया है। ” संवत् १९३८ अर्थात् (१८८२-१८८३ ईसवीमें) बूंदीराज्यके आय व्ययकी सूची नीचे दी गई है।

आमदनी।

भूराजस्व और अनेक छोटी २ तहसीलोंकी आमदनी	४७५०००	रुपया।
कापरेन और अन्यान्य देशोंके जागीरदारोंके समीपसे आया हुआ कर	१८०००	”
जेला, विल्ला अर्थात् वाणिज्य शुल्क, बन विभाग, उद्यान, कोटपाला, टकसाल इत्यादिकी आमदनी	९००००	”
नाना प्रकारकी छोटी २ आमदनी	३५०००	”
सब	६२८०००	रुपया।

खर्च।

महाराव राजका स्वकीय और कुटुम्बका खर्च ...	४५०९०	रुपया।
पुण्य वा दातव्य व्यय	२२०००	”
सेनादलका खर्चा	८८०००	”
राजकर्मचारी और— परिवारिक कुटुम्बियोंके नौकरोंका वेतन	७२०००	”
रथ-घोड खाना तथा राज्यके— अन्यान्य कार्यालयोंका व्यय	७२०००	”
हवाला और तहसील खर्च	५५०००	”
और भी अनेक प्रकारका खर्च	७८०००	”
अंग्रेज गवर्नमेंटको देयकर-तथा पूर्तकार्य विभाग विचारालयमें पुरस्कारादि देना इत्यादि	१२८०००	”
फुटकर	३८०००	”
	५९८०००	”
उद्धृत	३००००	”
सब जोड	६२८०००	रु०

बृटिश एजेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "महारावने परिवारके अनेक विषयोंमें भलीभांतिसे मन लगाया है। इससे महामहिमवरके राज्यके आभ्यन्तरीय शासनके सम्बन्धमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ"।

"खालसा भूमिसमूहकी जमाबन्दीके विषयमें विशेष उन्नति नहीं हुई। गतवर्षमें केवल पचास ग्राम जमाबंदी किये गये हैं। पहिले वर्षके साथ मिलान करनेसे इनकी संख्या केवल १५० हुई है। इसका फल अधिक असंतोषदायक नहीं हुआ"।

"प्रकाशमें कहा गया है कि शांतिरक्षाविभागकी अवस्था पहिलेके समान असंतोषदायक रही है परन्तु संतोषका विषय यह है कि महामान्यवर महारावने १०० मीनोंको विशेष शांतिरक्षक पदपर एक जमादार और दो उपजमादारोंके अधीनमें नियुक्त करके डकैती निवारण करनेपर ध्यान दिया है"।

गत वर्षके विज्ञापनमें बूंदीके शुल्कविभागके साधनका जो उल्लेख हुआ है इस वर्षमें उसका फल यह हुआ है, कि इससे राज्यकी आय ८०००० रुपया बढी है। यह एक जानने योग्य बात है, राज्यके वाणिज्य शुल्कके संस्कारसे, प्रजा और राजा दोनोंकी ही सुभीतेके साथ आमदनी बढी है।

बूँदीराज्यकी पृथ्वीका परिमाण २३०० मील है, प्रजाकी संख्या २२४०००, सेनामें पैदलोंकी संख्या १३७५, अश्वारोहियोंकी संख्या १०० और तोपोंकी संख्या ८८ है।

बूँदीराज्यकी सर्वसाधारण प्रजामें शिक्षा विस्तारके संबन्धमें बूँदीमें स्थित पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि "राजधानीमें जो राजविद्यालय स्थापित हैं; मैं दुःखित होता हूँ कि मैं उन विद्यालयोंके संबन्धमें उन्नतिमूलक विवरणको प्रकाश करनेमें असमर्थ हूँ, उन विद्यालयके विद्यार्थियोंकी संख्या उपयुक्त नहीं है। प्रायः १२० विद्यार्थी पढा करते हैं। जो बारह हिन्दू-विद्यालय विभिन्न ग्रामोंमें स्थापित हैं उन सबमेंके विद्यार्थियोंकी संख्या ४१९ है।" सारांश यह है कि रजवाडेके अन्यान्य राजाओंकी प्रजामें जिस भांति शिक्षाका विस्तार हुआ है, अत्यन्त दुःखका विषय है कि बूँदीराज्यमें आजतक शिक्षाके विस्तारके विषयमें ऐसा यत्न नहीं किया गया। कर्नल ब्राडफोर्ड लिखते हैं कि बूँदीराज्यकी शिक्षा इस समय शैशव अवस्थामें है, परन्तु जब शिक्षा विस्तारकी सूचना हुई है तब ऐसी आशा की जाती है कि किसी समय इसके द्वारा अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी।

बूंदी राज्यका इतिहास समाप्त।

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बम्बई.

Lt. Col. H. H. Maharao Sir Umed Singhji Bahadur,
G.C.S.I., G.C.I.E.—Kotao-Rajputana.

कोटा।

(१) माधोसिंह, १६२५.
(२) मुकुंदसिंह, १६३१.
(३) जगतसिंह, १६५८.
प्रेमसिंह, १६७०, (तसवीर नहीं है)
(४) किशोरसिंह, १६७०.
(५) रामसिंह, ११८६.
(६) भीमसिंह, १७०८.
(७) अरजुनसिंह, १७२०.
(८) दरजनमाल १७२४.
(९) अजीतसिंह, १७४७.
(१०) चतरमाल १७४१.
(११) गुमानसिंह, १७६६.
(१२) उम्मेदसिंह, १७७१.
(१३) किशोरसिंह, १८२०.
(१४) रामसिंह, १८२८.
(१५) चतरसिंह, १८६६.
(१६) महाराव उम्मेदसिंह १८८९.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

कोटाराज्यका इतिहास.

श्रीः।

राजस्थानका इतिहास।

दूसरा भाग २.

कोटाराज्यका इतिहास.

प्रथम अध्याय १.

बूँदीसे कोटाराज्यका भिन्न होना–कोटिया भील–भील जाति–कोटेके प्रथम राजा माधोसिंह–कोटाराज्यमे सामन्त मंडलीका स्थापित होना–माधानी–राजा–मुकुन्द–रणभूमिमें चारों भाइयोंका सम्राट्के लिये प्राण देना–जगत्सिंह–प्रेमसिंह–उनका सिंहासनसे उतरना–किशोरसिंह–अरकाटमे उनका मारा जाना–रामसिंह–जाजवमे उनकी मृत्यु–भीलोंका अधिपति चक्रसेन–ऊमटवंश–भीमसिंह–भीमसिंहका निजामुलमुल्कपर आक्रमण–भीमसिंहका मारा जाना–भीमकी सचित्र समालोचना–बूँदीके राजाके साथ उनकी शत्रुता–राव अर्जुनका सिंहासनपर बैठकर कुटुम्बियोंसे कलह–श्यामसिंहका मारा जाना–महाराव अर्जुनशाल–महाराष्ट्रोंका प्रथम अभ्युदय–कोटेपर आक्रमण–हिम्मतसिंह झालासे कोटेकी रक्षा–जालिमसिंहका जन्म–महाराष्ट्रोंको कर देना–दुर्जनशालका मारा जाना–उनके चरित्रकी समालोचना–उनकी शिकार–उनकी रानियोंकी शिकार–हिम्मतसिंहकी व्याघ्रकी शिकार–महाराव अजित–राव छत्रशाल–जयपुरके राजा माधोसिंहका कोटेपर आक्रमण–भटवाडेका समर–जालिमसिंह झाला–हाडाजातिका जय पाना–आमेरकी सेनाका भागना–कोटेका स्वाधीन होना–छत्रशालका मारा जाना।

कोटेका हाडा राजवंश बूँदीराज वंशधरोंकी छोटी शाखा है अतएव कोटेकी हाडा जातिका पहिला इतिहास बूँदी राज्यके इतिहासके साथ मिला हुआ है। बादशाह शाहजहाँ जिस समय भारतवर्षके सिंहासनपर बैठा था उस समयमें बुरहानपुरके समरमें बूँदीके रावराजा रत्नसिंहके दूसरे पुत्र माधोसिंहने अपने प्रबल पराक्रमसे बादशाहकी ओरसे जय प्राप्त की, तब बादशाह शहाजहाँने प्रसन्न होकर उक्त कोटा प्रदेश और उसके अधीनवाले सब गांव नगर उनको दे दिये। उसी समयसे माधोसिंह पिताके बूँदीराज्यको छोडकर स्वाधीनभावसे कोटेराज्यका शासन करने लगे। तबसे कोटा और बूँदी दो पृथक २ राज्य गिने गये। हाडाजातिके इतिहासमें लिखा है कि माधोसिंहका जन्म संवत् १६२१ सन् १५६५ ई० में हुआ था, चौदह वर्षकी अवस्थामें माधोसिंहने बुरहानपुरकी लडाईमें अपने साहस और पराक्रमसे ऐसी विजय पाई कि जिससे प्रसन्न हो बादशाह शाहजहाँने उनको तीनसौ साठ नगर और

गांवोंसे पूर्ण कोटाराज्य पुरस्कारमें दे दिया। पहिले यह कोटाराज्य बूँदीराज्यके प्रधान सामन्तोंके अधीनमें था और उसका राजकर दो लाख रुपये मिलते थे। माधोसिंहने बादशाहसे "राजा" की उपाधि प्राप्त की और वह उक्त कोटेराज्यका स्वाधीनभावसे शासन करने लगे।

बूँदीराज्यके इतिहासमें पाठक पढ़ चुके हैं कि अमिश्र आदिम कोटिया भीलका सबसे पहिले इस प्रदेशपर अधिकार था। उन प्रथम निवासी भीलोंके हाथका जलतक राजपूत नहीं छूते थे। जिस समय कोटेपर अधिकार किया गया उस समय उस प्रदेशके स्थान २ में केवल कुटी ही थी। कोटाके राजा कोटेसे पाँच कोश दक्षिणमें इकेलगढ़ नामक बडे पुराने किलेमें रहते थे। किन्तु जिस समय माधोसिंहने दिल्लीके बादशाहसे कोटाप्रदेशकी शासनसनद प्राप्त की उस समय कोटाराज्यकी सीमा चारों ओरसे बढाई गयी। उस समय कोटेके दक्षिणमें गागरौन और घाटौली प्रदेश था। खीची जातीयगण उस प्रदेशके स्वामी थे। पूर्वीय सीमामें गोंडजातिके अधीनमें मांगरोल और राठौर राजपूतोंके स्वामीके अधिकारमें नाहरगढ़ था। नाहरगढ़के अधिपति राजपूत होनेपर भी वह अपने अधिकारी प्रदेशकी रक्षा करनेके लिये मुसल्मानी धर्मका अवलम्बन कर नव्वाबकी उपाधिसे भूषित थे। उत्तरमें कोटेकी सीमा चम्बल नदीके किनारे किनारे सुलतानपुरतक थी, चंबल नदीके पारमें नाशता नामक एक स्वतंत्र छोटा राज्य विराजमान था। इस चारों ओरकी सीमामें बँधे प्रदेशके बीचमें ३६० नगर और गाँव थे और बहुत सी नदियोंके द्वारा पृथ्वीकी उपजाऊ शक्ति भी बडी थी।

कोटेके राजा माधोसिंहने बादशाहके बलसे बलवान् होकर थोडे ही दिनोंमें कोटेकी राज्यसीमा बहुत बढ़ा ली। माधोसिंहके मरनेके समय मालवा और हाडौतीकी सीमातक उनकी शासनशक्तिका विस्तार था। माधोसिंह संवत् १६८० में पांच योग्य पुत्रोंको छोड परलोक सिधारे। उनके चार पुत्र कोटाराज्यके चार प्रधान सामन्त पदोंपर नियुक्त थे। बूँदीके प्रधान हाडा शाखाके साथ उक्त माधोसिंहके उत्तराधिकारी गणोंकी पृथक्ता दिखानेके लिये दोनों राजवंशोंके आदि पुरुषोंके नामसे दोनों वंश प्रसिद्ध होते हैं। माधोसिंहके वंशधरगण माधानी नामसे परिचित हैं।

माधोसिंहके पांच पुत्रोंके नाम।

१ मुकुन्दसिंह; कोटेके अधीश्वर हुए।
२ मोहनसिंह, इन्होंने पलायता प्रदेशको प्राप्त किया।
३ जुझारसिंह इन्होंने कोठडा और उसके पीछे रामगढ़ रेलावन प्राप्त किया।
४ कनीराम इन्होंने कोयलाप्रदेशको प्राप्त किया। इसके सिवाय दिल्लीके बादशाहसे स्वतंत्र शासनपत्र प्राप्त देह और जोरा प्रदेश प्राप्त किया।
५ किशोरसिंह इन्होंने सांगोप्रदेश प्राप्त किये।

माधोसिंहके मरनेके पीछे उनके बडे बेटे मुकुन्दसिंहके मस्तकपर राज्यमुकुट शोभित हुआ। इतिहास कहता है कि जिस सीमाके अन्तमें स्थित पहाडी मार्ग

हाडोतीसे मालवेको अलग करता है वहीं इन मुकुन्दसिंहने एक घाटा बनाया और इन्हींके नामानुसार इसका नाम "मुकुन्ददर्रा" वा "मुकुन्दद्वार" हुआ है। इसी मार्गसे सन् १८०४ ईसवीमें ब्रिगेडियर मानसूनकी आज्ञाकारी बृटिश सेना रणमेंसे मुँह छिपाकर प्राणोंके भयसे भागी थी कोटेके जातीय इतिहासमें मुकुन्दसिंहकी कीर्तिकी प्रशंसा पाई जाती है। उन्होंने अपने राज्यके अनेक स्थानोंपर अनेक अभेद्य किले और सर्वसाधारणके उपकारी तालाब बनवाये हैं। आणता नामक स्थानकी मनोहर दीवारें और "पेट्टा" उन्हींने बनवाई हैं।

राजा मुकुन्दसिंह अपने पिताके समान ही प्रबल पराक्रमी और असाधारण साहसी थे। रजवाडेकी राजपूत जाति पहिलेसे ही दिल्लीके मुसलमान बादशाहोंके बीच न्यायसे सिंहासनके अधिकारियोंके अधिकारके लिये जिस भांति अनेक बार सेनाके साथ जीवन दान करके राजभक्तिकी पराकाष्ठाको दिखा गयी है मुकुन्दसिंह भी उसी भाँति इतिहासमें पूर्वजोंके समान राजभक्तिकी प्रज्वलित ज्योति दिखा गये हैं। जिस समयमें पापात्मा औरंगजेबने अपने जन्म देनेवाले पिताको कैद किया और राजसिंहासनसे हटानेके लिये पिशाचकी मूर्ति धारण कर सेनाके साथ आगे बढ़कर अपने षड्यन्त्रके जालको फैलाया उस समय प्राय: प्रत्येक राजपूत राजाओंने अपनी २ सेनाके साथ बुड्ढे बादशाह शाहजहांके अधिकारकी रक्षा करनेके लिये तलवार पकडी थी। उनमें राठौर जाति,बूँदी और कोटेकी हाडा जाति सबमें आगे हुई थी। कोटेके स्वामी माधोसिंहके पुत्रोंने बादशाह शाहजहांको उस महाविपत्तिके समयमें विलक्षणतासे स्मरण किया, कि अब बादशाह शाहजहांके पक्षको लेना चाहिये, केवल राजभक्तिसे ही नहीं बरन् बादशाह शाहजहांके अनुग्रहसे ही पिता माधोसिंहने कोटेका राज्य स्वाधीन भावसे पाया है। अतएव माधोसिंहके पांचों पुत्र बादशाह शाहजहांके सिंहासनकी रक्षाके लिये जीवन देनेमें विमुख नहीं हैं। संवत् १७१४ में उज्जयनीके समीपवाले प्रदेशमें नर पिशाच औरंगजेबके साथ राजपूत गणोंने बादशाह शाहजहांकी सेनामें मिलकर भीषण समरकी आगको प्रज्वलित कर दिया उस संग्राममें औरंगजेबने जय पाई, और उस स्थानका नाम फतेहाबाद रक्खा गया। इतिहास बतलाता है कि राजपूत वीरगण यातो समरमें जय प्राप्त करेंगे; नहीं तो अपना जीवन देंगे,-परन्तु किसी भाँति कोई राजपूत युद्धसे भागेगा नहीं,ऐसी प्रतिज्ञा करके युद्ध क्षेत्रमें जाते समय प्रत्येक राजपूतने अपने शिरपर विवाह समयका मौर धारण कर वरके भेषमें गमन किया; माधोसिंहके उक्त पांचों पुत्र उसी प्रकार अपने शिरपर मौर धरकर नंगी तलवारें हाथमें ले सेनासहित युद्धक्षेत्रमें उतरे। किन्तु चतुरोंमें श्रेष्ठ राठौर सेनापतिके दोषसे उक्त पाँचों भाई यद्यपि समरमें जय न पा सके किन्तु रणक्षेत्रमें जीवन विसर्जन करके उन्होंने असीम वीरताके साथ अपने प्रणको रक्खा। युद्धके अन्तमें सबसे छोटे किशोरसिंहको उस समरभूमिसे लौटना पडा, यद्यपि उनके समस्त शरीरमें सांघातिक क्षत अनेक थे, किन्तु विशेष यत्नसे चिकित्सा होनेपर वह पुन: जीवित हुए। इन किशोरसिंहने ही अन्तमें दक्षिणके समरमें विशेष कर बीजापुरको अधिकारमें करते समय राजपूतोंके बीच सबसे बढ़कर वीरता प्रकाश कर युद्ध

कौशलमें प्रतिष्ठा और सम्मान पाया। किन्तु दुर्भाग्यसे किशोरसिंहके समान सिंह बिक्रमी वीरोंसे किस भाँति आचरण करना चाहिये उसको बादशाहके कुमार नहीं जान सके अतएव अन्तमें बडा शोचनीय दृश्य उपस्थित हुआ।

राजा मुकुन्दसिंह रणक्षेत्रमें मारे गये। उनके पुत्र जगत्सिंह कोटेके राजसिंहासन पर बैठे और दिल्लीके बादशाहकी अधीनतामें दो हजार सेनाके "मनसबदार" अर्थात् सेनापतिके पदपर नियुक्त हुए। संवत् १७२६ तक जगत्सिंह दक्षिणके समरमें नियुक्त थे। उक्त संवत्में ही वह अपुत्रावस्थामें स्वर्गवासी हुए, तब माधोसिंहके चौथे पुत्र कनीराम जिन्होंने कोइला प्रदेशका अधिकार पाया था, उन्हींके पुत्र प्रेमसिंह कोटाके राजसिंहासन पर शोभित हुए। किन्तु छः महीने भी उन्होंने राज्यकार्यको नहीं चलाया था कि इतनेहीमें प्रेमसिंह अपने निन्दनीय कार्यसे प्रजाकी दृष्टिमें घृणित हुए। कोटाके पंचायत समाजने उनको सिंहासनसे उतार कर फिर पिताके प्रदेश कोइलामें भेज दिया। उनके वंशधर अभीलों उसी प्रदेशमें विराजमान हैं। माधोसिंहके पंचम पुत्र किशोरसिंह जो रणक्षेत्रमें बडे घायल होकर दैवयोगसे बच गये थे, सामन्त समाजने उन्हींको कोटाके राजसिंहासन पर बैठाया। जिस समय औरंगजेबने दिल्लीके सिंहासन पर अधिकार कर लिया, उसी समय कोटेके राजा किशोरसिंह औरंगजेबकी सेनाके साथ अपनी सेना लेकर दाक्षिणात्यमें मरहठोंको दमन करनेके लिये नियुक्त हुए। मरहटोंके साथ युद्धमें उनके बलकी और साहसकी सभीने मुक्तकंठसे प्रशंसा की थी। अन्तमें संवत् १७४२ में अरकाटगढ किलेके अधिकारके समय किशोरसिंह मारे गये। किशोरसिंह हाडाजातिके आदर्श वीरपुरुषस्वरूप थे; कहा गया है कि अनेक समरोंमें उनके शरीरमें पचास घावोंके चिह्न अङ्कित होगये थे। वह मरते समय तीन पुत्रोंको छोड गये। (१) विशनसिंह, (२) रामसिंह (३) हरनाथसिंह।

राजपूतोंकी रीतिके अनुसार बडे पुत्र विशनसिंहको कोटेका राज्यसिंहासन प्राप्त होना चाहिये था किन्तु किशोरसिंह जिस समय दाक्षिणात्यमें सेना लेकर गये थे उस समय विशनसिंहको पीछेसे आनेको कहा था, परन्तु विशनसिंहने उनकी आज्ञा नहीं मानी, वह न गये तब किशोरसिंहने क्रोधित होकर उनको भविष्यमें राज्य पानेसे हटा दिया। विशनसिंहने उत्तराधिकारीके अधिकारसे हीन होकर केवल आणता नामक स्थानको पाया। विशनसिंहके औरससे पृथ्वीसिंहने जन्म लिया। वही पीछे आणता प्रदेशके सामन्त हुए। उनके पुत्रका नाम अजीत हुआ, अजीतसिंहके तीन पुत्र हुए (१) छत्रसाल, (२) गुमानसिंह (३) राजसिंह।

किशोरसिंहके दूसरे पुत्र रामसिंहने अपने पिताके साथ दाक्षिणात्यमें जाकर मरहठोंके प्रत्येक युद्धमें लिप्त रहकर अपने पिताके समान प्रशंसा पाई थी। पिताके मरजाने पर वही पिताके पद सम्मानको प्राप्त हुए। औरंगजेबके मरने पर जिस समय दिल्लीके सिंहासनके लिये उसके उत्तराधिकारियोंमें झगडा हुआ उस समय कोटेके स्वामी रामसिंहने बडे शाहजादे मोआजिमके विरुद्ध दाक्षिणात्यके राजप्रतिनिधि कुमार आजिमका पक्ष अवलम्बन

किया और संवत् १७६४ में जाजव नामक स्थानके समरमें इन्होंने प्राण गँवाये। उक्त समरमें बूँदीके राजाने कुमार मोआजिमके पक्षको लिया था, पाठकगण बूँदीके इतिहासमें उसको पढ चुके हैं। उस समय उसी युद्धमें रामसिंहने अपनी ज्ञातिवाले बूँदीके राजाके साथ युद्ध किया। रामसिंहके हृदयमें ऐसी प्रबल कामना उदय हुई थी कि बूँदीके राजाको परास्त करनेमें प्रतिष्ठा पाई और उसीसे उन्होंने बूँदीके राजाके अनिष्ट साधनमें त्रुटि नहीं की, किन्तु दुर्भाग्यसे जाजव नामक स्थानके समरमें ही गोलोंके आघातसे वह मारेगये।

रामसिंहके मरनेके उपरान्त भीमसिंह कोटेके राजा हुए। हाडाजातिके इतिहासमें लिखा है कि भीमसिंहके शासन समयसे ही कोटाराज्य धन, सम्मान, सामर्थ्य और प्रभुतामें भारतवर्षके प्रथम श्रेणीके राज्यकी योग्यताको प्राप्त हो गया था। अभीतक कोटा तीसरी श्रेणीके राज्योंमें गिना जाता था। किन्तु चतुर बुद्धिमान् भीमसिंहके अभ्युदयके साथ ही साथ कोटा राज्यकी भी उन्नति हो गई। बादशाह बहादुरशाहके मरने पर फर्रुखसियरके दिल्लीके सिंहासन पर बैठते हुए जिस समय दोनों सय्यद भाई प्रबल शक्तिसे भारतका शासन करते थे, कोटेके राजा भीमसिंहने उन दोनों सय्यदोंके पक्षका अवलम्बन किया और उनकी ही नीतिका पालन करते हुए अपनी उन्नतिके दरवाजेको खोल लिया। माधोसिंहके समयसे कोटेके राजा तीसरी श्रेणीके राजाओं- में दिल्लीके बादशाहके अधीनमें दो हजार सेनाके मनसबदार होते आये थे। किन्तु उक्त दोनों सय्यद भीमसिंह पर ऐसे प्रसन्न हुए कि उन्होंने भीमसिंहको भारतवर्षके प्रथम श्रेणीके राजाओंको प्राप्त सम्मान सूचक "पाँच हजारी" अर्थात् पाँच हजार सेनाके मनसबदारका पद देदिया। हाडाजातिकी श्रेष्ठ शाखासे उत्पन्न बूँदीके राजा बादशाह फर्रुखसियरके पक्षका अवलम्बन करके उक्त अत्याचारी दोनों लडकोंकी सर्वसंहारिणी नीतिके विरुद्धमें खडे हुए, अतएव छोटी शाखासे उत्पन्न कोटेके राजा भीमसिंह उक्त दोनों मन्त्रियोंके पक्षको लेकर जाजवके समरमें दोनों राजवंशोंके बीच शत्रुताकी आगमें जलने लगे। बूँदीके इतिहासमें पाठक भलीभाँतिसे पढ चुके हैं कि कोटेके राजा भीमसिंहने किस प्रकार कायरपुरुषोंके समान घृणित उपायसे बूँदीके राजा बुधसिंहका जीवनरूपी दीपक बुझानेकी चेष्टा की थी। राजा भीमसिंहने उक्त सय्यद मंत्री और आमेरके राजा जयसिंहसे मिलकर सभी निन्दित कामोंमें सलाह दी थी, अतएव जयसिंहने जिस समय बूँदीके राजा बुधसिंहका सर्वनाश किया उस समयमें भीमसिंहने उनकी सब प्रकारसे सहायता की, इसका भी वृत्तान्त पाठक पढ चुके हैं। दोनों सय्यदोंके प्रियपात्र होकर भीमसिंहने उनके अनुग्रहसे पश्चिममें कोटेसे और पूर्वमें अहीरवाडेसे पठारकी समस्त पृथ्वीका सनदपत्र पा लिया। उस बडे भूखण्डके बीचमें खीची जातिकी और बूँदी राज्यकी बहुतसी भूमि थी। उन्होंने उक्त उपायसे हाडौती प्रदेशके बीच सबसे श्रेष्ठ गांगरोनका किला प्राप्त किया; और अलाउद्दीनके आक्रमणके विरुद्धमें बडे साहस और बलसे उस किलेकी रक्षा कर उसकी कीर्तिको बढा लिया। मऊ, मैदाना, शेरगढ, बारां, माङ्गरौल और बडोदा आदि चम्बलके पूर्ववाले किले भी अपने अधिकारमें कर लिये।

हाडौती राज्यकी दाहनी सीमामें विराजमान कुछ एक गिरिसंकट प्रदेशोंपर, अमिश्र आदिम भीलोंने अपनी पैतृक सम्पत्तिस्वरूप मानकर, अपना अधिकार प्राप्त कर लिया। उन सब देशोंके बीचमें मनोहर थाना अब भी कोटेराज्यके शेष दक्षिण सीमास्वरूप है, उसमें भीलोंने अपनी राजधानी बनाई और भीलोंके राजा चक्रसेन वहाँपर रहकर राज चलाते थे। भीलोंके राजाके अधिकारमें पाँचसौ घुडसवार और आठसौ धनुषधारी सेना थी, मेवाडसे लेकर शेष सीमातक सभी स्थानोंके भील उनको अपना स्वामी मानते थे। यह आदिम आधिवासी भील धारके राजा भोजके समयसे कोटेके राजा भीमसिंहके समय तक राजनैतिक विप्लवोंमें अपनी जातीय स्वाधीनताकी रक्षा करते आये थे, किन्तु कोटेके राजा भीमसिंहने उनके अधिकारी देशोंपर चढाई कर भीलवंशको ध्वंसकर उनके सब देशोंको अपने कोटेराज्यमें मिला लिया। नरसिंहगढ पाटनको भी ले लिया। राजा भीमसिंह यदि और कुछ दिन जीवित रहते तो कोटे राज्यकी सीमा पर्वत मालाके बाहरतक निःसंदेह बढा लेते। अनारसी डिग पडावा और चंद्रावतोंके अधिकारी प्रदेश भी कोटाराज्यमें मिलाये, किन्तु भीमसिंहके परलोकवासी होनेपर वह सब प्रदेश कोटाराज्यसे निकल गये।

कोटेके इतिहाससे जाना जाता है कि प्रसिद्ध कुलीचखाँ जिसने पीछे इतिहासमें निजामुलमुल्क नामसे प्रगट होकर दाक्षिणमें स्वाधीनभावसे हैदराबाद राज्य स्थापन किया। उसने दिल्लीके बादशाहकी अधीनता न मान जिस समय अपनी सेनाके बलसे बादशाहके विरुद्धमें खडे हो स्वाधीनभावसे दिल्लीके अधिकारी देशोंको लूटकर पलायन किया उस समय दिल्लीके बादशाहने अपने प्रतिनिधि स्वरूपमें आमेरके राजा जयसिंह, कोटेके राजा भीमसिंह और नरवरके राजा गजसिंहको यह आज्ञा दी कि तुम सब भागे हुए कुलीचखाँको कैद करके लाओ। उक्त निजामुलमुल्कके साथ भीमसिंहने आपसमें पगडी बदलकर भाईका सम्बन्ध स्थापित किया था, कुलीचखाँने जयसिंहसे पूर्वोक्त बात सुनकर भीमसिंहको मित्रभावसे एक पत्र लिखा दिया कि मैंने बादशाहका किसी प्रकारसे धन रत्नादि नहीं लूटा है, अतएव मेरे विरुद्धमें जो सब अन्याय और अपवादकी बातें उठ रही हैं आप उन सबको मिथ्या जानो, यही मेरा अनुरोध है, जयसिंह एक षड्यन्त्री हैं, वह हमारे नाश करनेकी निरन्तर चेष्टा करते हैं। इस लिये आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप उनकी बातका विश्वास न करना और मेरी दक्षिण यात्रामें रोक टोक नहीं करना। निजामुलमुल्कका यह पत्र पाकर हाडाराज भीमसिंहने यह उत्तर लिख भेजा कि "स्वामीकी आज्ञाका पालन और मित्रताकी रक्षाके बीचमें एक रेखा है वह मैं जानता हूँ, आपके मार्ग रोकनेको मुझे आज्ञा मिली है और उसीसे मैं इतनी दूर सेना लेकर आया हूँ, इसको बादशाहकी आज्ञा जानो, आपके साथ हमको अवश्य युद्ध करना होगा और कल प्रातःकाल मैं आपपर आक्रमण करूँगा"।

"कल आपपर आक्रमण करेंगे" यह बात वीर तेजस्वी भीमसिंहने लिखकर मित्रको सावधान कर दिया और अपने वीरभावको भी प्रकाश कर दिया, चतुर मुसलमान कुलीचखां स्वामिभक्त राजपूतको राजभक्तिसे मित्रताका बलिदान करते देखकर छलबल

और कौशलसे अपनी रक्षाके लिये युद्ध करनेको तैयार हुआ । निजामने सिंध--नदी प्रदेशके कुरवाई भौंरासा नामक नगरके समीपवाले गिरिसंकटके मार्गमें अपना डेरा डाला । यदि इस समय कुलीचखां पर आक्रमण किया जाय तो उसी एक पहाडी मार्गसे होकर जाना होगा नहीं तो राजपूत लोग ढूंढकर चले जाँयगे और पता नहीं लगेगा, वह अवश्य ही इसी मार्गसे आवेंगे, इस बातको निश्चय जान निजामने उस गिरि-संकटके सामने तोपें लगाकर उन्हें वृक्षोंकी लताओंसे इस तरह छिपा दिया कि सम्मुखसे कोई तोपोंका अनुमान भी न कर सके और भीतरसे तोपका गोला सीधा चला जाय।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही वीरवर भीमसिंह अपने अधिकारकी सब सेनाका कच्छवाही सेनादलके साथ मिलाकर अफीमखानेके पीछे निजाम पर आक्रमण करनेके लिये एक दल बांधकर भालेको हाथमें ले बाहर निकले । वह निजामकी सेनाके साथ भिडनेवाले थे, यदि और कुछ आगे बढ जाते तो राजपूतोंका नाम भी न रहता । राजपूतोंको अपनी सेनाके पास आते हुए देख निजामने तोपोंमें बत्ती लगवा दी, गोलोंकी ऐसी वृष्टि हुई कि उसके द्वारा हाथी सहित राजा भीमसिंह और राजा गजसिंह दोनों ही मारे गये।दोनोंके मारेजानेसे सब पैदल और घुड सवार इधर उधर भाग निकले । कुलीचखांने इस भांति जय पाकर दक्षिणकी ओर कूच किया और निसन्देह स्वाधीन भावसे जाकर हैदराबादमें राजकार्य करने लगा । हैदराबाद आजतक कुलीचखाँके वंशधरोंके शासनमें चला आता है ।

इतिहासमें लिखा है कि उस समयमें कोटेकी हाडाजातिपर दो विपत्तियां पडीं; एक तो राजा भीमसिंहका मरना दूसरे कोटेके राजवंशियोंके पूज्य विग्रह वृजनाथका अन्तर्धान होना । प्रत्येक राजपूत राजा ही सदासे प्रत्येक समरक्षेत्रमें अपने इष्टदेवकी मूर्ति ले जाते हैं, यह मूर्ति तर्कसमें रक्षित रहती है । युद्धके आदिमें राजासे लेकर सामान्य दरजेके सैनिकतक उसी देवविग्रहके नामसे जयध्वनि करके शत्रु पर आक्रमण करते हैं । कोटेराजवंशके उक्त वृजनाथजीकी मूर्ति स्वर्णनिर्मित और छोटे आकारकी थी और उस विग्रह (मूर्ति) ने अनेक युद्धोंमें जय लाभ और असंख्य मनुष्योंका विनाश देखा था । कोटाराज्यकी सेनाने "जय वृजनाथ !" की इस शब्दसे चारों दिशाओंमें गुंजारकर शत्रुकी सेनापर आक्रमण किया था; परन्तु उस समय वृजनाथ जाने कहाँ अदृश्य हो गये उनका कुछ पता नहीं चला । इतिहासमें लिखा है बहुत समय तक खोजनेके पीछे उस मूर्तिके समान और एक मूर्ति प्राप्त हुई उनको महासमारोहके साथ कोटेकी राजधानीमें लाये । कोटावासियोंने वह मूर्ति पाकर बडी खुशी मनाई । जो हो भीमसिंह १५ वर्ष तक राज्य करके संवत् १७७६ में (सन् १७२० इसवीमें) उक्तरीतिसे मारे गये । किन्तु उन १४ वर्षोंमें भीमसिंहने जिस रीतिसे राज्यके कार्यको चलाया उसीसे उसकी अवस्था बदली थी, यह निश्चय उनकी वीरता और राजनीतिज्ञता मानी गई ।

दोनोंके एक वंशमें उत्पन्न होनेपर भी बूँदीके राजा बुधसिंहके साथ कोटेके राजा रामसिंहकी जो लडाई हुई सो धौलपुरके रणक्षेत्रमें हाडा जातीय दोनों राजाओंने एक दूसरे पर आक्रमण करके जातिकी विद्वेषताको चरितार्थ कर दिया। कोटेके राजा भीमसिंहने समय पाकर बूँदीके राजाका सर्वनाश करनेमें त्रुटि नहीं की थी। राजा भीमसिंहने बादशाह फर्रुखसियरकी ओरसे राजा बुधसिंहके मारनके लिये जो कायरपुरुषोंके समान उनपर आक्रमण किया था पाठकमंडली उसको पहिले ही जान चुकी है। उसी लडाईके कारण हाडाजातिकी श्रेष्ठ शाखासे उत्पन्न बूँदीका राजवंश निधन होकर महाविपत्तिमें पडा। राजा भीमसिंहने दोनों सय्यदोंकी सहायतासे बलवान् होकर अपने कुटुम्बी बुधसिंहको मारनेमें कोई त्रुटि नहीं की थी, आमेरके राजा जयसिंहसे जिस समय बुधसिंह सिंहासनच्युत और विताडित हुए,ऐसे शुभ योगको पाकर राजा भीमसिंहने बूँदीपर आक्रमण किया और वहाँपर छिपे हुए राजचिह्न, बूँदीराज्यका नगाडा और प्राचीन समयका संचित प्रसिद्ध रण शंख प्रभृति लूटकर कोटे राज्यमें ले आये। बादशाह जहाँगीरने बूँदीके राजा रत्नसिंहको जो पीली राजपताका दी थी जिस पताकाके मूलदेशमें हाडासेनाके अनेक बार समरमें बडे पराक्रम प्रकाश के चित्र अंकित थे; भीमसिंहने उस राजपताका तकको बूँदीके राजमहलोंमेंसे लाकर अपने यहाँ उसका व्यवहार किया। बूँदीके इतिहासमें लिखा है कि कोटेसे बूँदीराज्यके उक्त समस्त राजचिह्न फिर प्राप्त करनेके लिये बूँदीके राजाने बारम्बार चेष्टा की किन्तु किसी प्रकारसे भी वह नहीं पासके, बूँदीके राजाने कोटेके प्रधान दरवाजे और किलेमें प्रवेश होनेवाले दरवाजेकी भी ताली बनवाकर पहरेदारको लालच देकर गुप्तभावसे उन चीजोंके लानेकी चेष्टा की, किन्तु प्रकाश हो जानेसे उनकी चेष्टा निष्फल हुई। कर्नल टाडने लिखा है कि "उस समयसे आजतक प्रतिदिन सायंकालके उपरान्त कोटेका नगरद्वार बंद हो जाता है और यहाँ तक कि स्वयं कोटेके राजा यदि संध्याके उपरान्त आना चाहे तो उनके लिये भी दरवाजा नहीं खुलता। इसके सम्बन्धमें कोटाके हाडा जातीय कविने लिखा है कि एक दिन कोटेके राजा दुर्जनशाल युद्धमें परास्त होकर थोडेसे सेवकोंके साथ आधीरातके समय नगरके दरवाजेपर आये और द्वाररक्षक पहरेदारसे बोले कि दरवाजा खोलो, परन्तु पहिले उन्होंने ही आज्ञा दे रक्खी थी कि किसी प्रकारसे भी किसीको रात्रिके समयमें दरवाजा नहीं खोलना, अतएव पहरेवालेने उनकी आज्ञाका पालन किया, तब राजा दुर्जनशालने स्वयं दरवाजेपर आकर अपना परिचय दे पहरेदारसे द्वार खोलनेको कहा उस समय पहरेदारने समझा कि कोई दूसरा राजा आकर द्वार खुलाना चाहता है, अतएव पहरेदारने द्वारके भीतरसे कहा कि राजाको इस रात्रिके समय दूसरे स्थान पर रहना चाहिये, यह सुनकर राजाने फिर कहा तब पहरेदारने बन्दूक दिखाकर कहा चले जावो हम नहीं खोलेंगे यदि आप नहीं मानोगे तब हमैं विवश हो गोली चलानी पडेगी। दुर्जनशालने अपनी प्रथमकी आज्ञाके अनुसार पहरेदारको बन्दूक चलानेमें उद्यत देखकर दरवाजेसे हटकर दूसरे स्थानपर जाय शेष रात्रि बिताई। दूसरे दिन प्रातःकाल दरवाजा खोला गया; जो पहरेदार रात्रिमें द्वार रक्षक था वह

रात्रिका समाचार अपने जोडीदारसे कह ही रहा था कि सामनेसे राजा दुर्जनशाल आते हुए दृष्टि पडे। राजाको देख वह पहरेदार विस्मयके साथ डरने लगा और धीरे २ चलकर अपने हाथकी बन्दूकको राजाके चरणोंके आगे धरकर दोनों हाथ जोड घुटने झुकाय पृथ्वीपर मस्तक रख दंड पानेके लिये उसने निवेदन किया। तब राजा दुर्जनशालने उसका हाथ पकड कर उठाया और अपनी पूर्व आज्ञाके पालन करनेसे उसकी विशेष प्रशंसा करते हुए स्वयं जो कुछ उत्कृष्ट वस्त्रादि पहरे हुए थे वे सब उतार पुरस्कार स्वरूपमें उसे दे दिये।

हाडा इतिहासके जाननेवालेका लेख है कि राजा भीमसिंहके समस्त शरीरमें शस्त्रोंके आघातके चिह्न थे, उनके शरीरको देख मनुष्य कुरूपी कहेंगे इस कारण वह किसीके सामने अपने शरीरपरसे वस्त्रोंको नहीं उतारते थे। कुरवाईके युद्धक्षेत्रमें जिस समय कुलीचखॉके गोलेसे घायल हुए थे केवल उसी समयमें उनके शरीरमें अगणित शस्त्रोंके चिह्न देख एक नौकरने उनसे पूछा, तो भीमसिंहने उस अवस्थामें उसको उत्तर दिया "जो हाडाजातिके शासनके लिये जन्मा है और जो पैतृक राज्यकी रक्षा करनेके अभिलाषी हैं उनको इसी प्रकारसे अस्त्रशस्त्रोंके चिह्न धारण करने पडैंगे। कोटेके राजाओंमें राजा भीमसिंहने सबसे पहिले दिल्लीके बादशाहसे बडे सम्मान सूचक "पञ्चहजारी मनसबदार" अर्थात् पॉच हजार सेनाके नायकके पदको धारण किया। उसी प्रकार उन्होंने सबसे पाहिले "महाराव" की उपाधि पाई। उक्त उपाधि यद्यपि दिल्लीके बादशाहने उनको नहीं दी थी किन्तु राजपूत जातिके मुकुटमणि हिन्दुकुलपति मेवाडके महाराणाने दी थी। और दिल्लीके सम्राट्ने भी उस पदवीको स्वीकार किया। बूँदीके गोपनिाथके वंशवाले हाडौतीके प्रधान सामन्तोंमें गिने जाते थे; उनके सम्मान सूचक "आपजी" शब्दका व्योहार होता था, किन्तु जिस समयमें इंद्रशाल उदयपुरमें गये उस समय उनको महाराणाकी ओरसे अपने भाइयोंमें सम्मानके लिये "महाराज" की पदवी व्यवहारमें लानेकी आज्ञा हुई। उस समयसे उक्त सम्मान सूचक आपजी शब्द केवल कोटेके दूसरी श्रेणीके माधानी सामन्तोंके सम्मानके अर्थ व्यवहारमें चला आता है। राजा भीमसिंह अपने तीन पुत्रोंको छोड परलोक सिधारे, उनके पुत्रोंके नाम इस भॉति हैं (१) अर्जुनसिंह (२) श्यामसिंह और (३) दुर्जनशाल।

महाराव अर्जुनसिंहका विवाह कोटाराज्यके भविष्यमें होनेवाले मंत्री जालमसिंह झालाके पूर्वपुरुष माधोसिंहकी बहिनके साथ हुआ। किन्तु अर्जुनसिंह चार वर्षतक कोटेका राज्य करके निःसन्तान अवस्थामें ही परलोक सिधारे। अर्जुनसिंहके मरनेके पीछे कोटेके राजसिंहासनके लिये श्यामसिंह और दुर्जनशाल दोनों भाइयोंमें युद्धरूपी अग्नि प्रज्वलित हुई। उस जातिय विवाद्में कोटेकी सामन्त मंडली भी दोनों पक्षकी ओर होनेसे महा दुःखी हुई। उदयपुरके रणक्षेत्रमें दोनों राजभाइयोंने अपने २ पक्षकी सेना और सामन्तोंके साथ आपसमें राजसिंहासनके लिये रुधिरकी नदी बहा दी। भयानक युद्धके पीछे श्यामसिंहके मारे जानेसे लडाई शांत हुई। हाडा जातीय

कविने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि श्यामसिंहके मरनेपर दुर्जनशाल भ्रातृ वियोगके शोकमें मग्न हो रोताहुआ हाहाकार करने लगा। मैं बुरे मुहूर्तमें अनुचित आशाके वश होकर सिंहासनके लिये भाईके साथ युद्ध कर उसकी मृत्युका कारण हुआ, ऐसा हृदयसे अनुताप करने लगा। जिस समय कोटेराज्यमें यह दुर्घटना हुई इसी समय कोटेके राज्यमें एक और हानि हुई। दिल्लीके बादशाहने जो भीमसिंह पर प्रसन्न होकर पुरस्कारस्वरूपमें रामपुरा, भानपुरा और कलापति नामक तीन धनशाली प्रदेश वहाँके आदिम राजाओंसे छीन कर दिये थे सो कोटेमें आपसकी लडाईके समय उन २ प्रदेशोंके स्वामियोंने अपने २ देशोंको अपने राज्यमें मिला लिया।

दुर्जनशाल संवत् १७८० (सन् १७२४ इसवी) में कोटेके राजा हुए। इस समयमें तैमूरवंशके शेष सम्राट् मोहम्मदशाह दिल्लीके सिंहासन पर विराजमान थे। दुर्जन शालको उन्होंने सम्मानके साथ दिल्लीमें बुलाया और खिलत दी। दुर्जनशालकी प्रार्थनासे बादशाह मोहम्मदशाहने उस आज्ञाका प्रचार किया कि हाडा जाति यमुनाके तीर २ जिन २ स्थानों पर बसती है उन स्थानों पर गो हत्या न होने पावे। दुर्जनशाल अपनी जातिके इतिहासकी अनेक घटनाओंके समयमें राजसिंहासन पर विराजमान थे। उन्हींके शासन समयमें सबसे पहिले बाजीरावने अपनी मरहटोंकी सेनाके साथ उत्तर भारतवर्ष पर अधिकार करनेके लिये चढाई की। उस स्मरणीय घटनाके समयमें बाजीरावने हाडौती देशकी पूर्वीय सीमाके अन्तमें तारज पास नामक पर्वती मार्गमें जाते समय नाहरगढके किलेको जीतकर दुर्जनसिंहको दे दिया। उक्त किला और उसके अधिकारी प्रदेश एक यवनके पास थे। संवत् १७७५ (सन् १७३९ इसवी) में यही प्रथम मरहठोंके साथ हाडा जातिका पहिला सम्मिलन हुआ। हाडाराज दुर्जनशालने उक्त किलेको पाकर उसके बदलेमें पेशवा बाजीरावकी सहायताके लिये तथा उनके पक्षमें उस समय विशेष प्रयोजनीय सामरिक द्रव्यावली और सेनाके लिये भोज उपहारस्वरूपमें दिया। महाराष्ट्रपति बाजीरावके साथ दुर्जनशालकी वह जो मित्रता हुई, दुःखका विषय है कि कई वर्षके पीछे वह मित्रता महाराष्ट्रपतिने एक साथ विस्मृतिके जलमें बहा दी।

बूँदीराज्यके इतिहासमें पाठक पढचुके हैं कि आमेरके राजा जयसिंह दिल्लीके बादशाहके प्रतिनिधिस्वरूपसे असीम शासनशक्तिको पाकर अपने राज्यकी सीमा बढाने और शासनशक्तिको प्रबल करनेके लिये बूँदी आदि नरेशोंको राज्यसे हीन बल बनाकर सामन्त पदपर नियुक्त करनेका विचार करने लगे। उनके उत्तराधिकारियोंने भी उसी ऊंची आशाके वश होकर बूँदीके राजा बुधसिंहको सिंहासनच्युत करके निकाल दिया। बुधसिंहने वृद्धावस्थामें राज्यके शोकमें अपने प्राण छोड दिये। किन्तु आमेरनरेशने अन्तमें महाराष्ट्रोंके दलसे परास्त होकर अपनेको धिक्कारकी अग्निमें जलाकर

---

(१) कर्नल टाडने टिप्पणीमें लिखा है कि "इस वर्षमें जिस समय बाजीराव हाडौती प्रदेशमें होते हुए हिन्दुस्तान पर अधिकार करनेको आये उस समय हिम्मतसिंह झाला कोटाराज्यके फौजदार थे। इस वर्षमें शिवसिंह और अगले वर्षमें जालिमसिंहका जन्म हुआ"।

आत्महत्या की। यह भा पाठकोंको स्मरण होगा। उस आमेर नरेशने बुधसिंहको बूंदी से निकाल कर अपने एक सामन्तको बूँदीके सिंहासन पर बैठाया था और उसे कर देनेको कहा। उसी समय वह विजय पानेके गर्वसे कोटाराज्यमें अधिकार बढानक लिये आगे बढे। इस समय दुर्जनशाल कोटेके सिंहासन पर बैठे थे। संवत् १८०० में आमेर नरेश ईश्वरीसिंहने कोटेको जीतनेकी इच्छासे तीन महाराष्ट्र वीर नेता और जाटपति सूर्य्यमल्लको सेनासहित बुलाकर अपनी २ सेनाके साथ कोटेपर अधिकार करनेकी तय्यारी की। कोटडी नामक स्थानमें महा समरके पीछे जयपुरके राजाने सेनाके साथ कोटेकी राजधानी घेर ली। क्रमानुसार तीन महीने तक राजधानी घिरी रहने पर उसके जीतनके लिये अनेक उपायोंको अवलम्बन करनेपर भी वीरश्रेष्ठ दुर्जनशालने उनकी उस अभिलाषाको पूर्ण न होने दिया। अन्तमें निराश होकर आमेर नरेश ईश्वरीसिंह उप नगरके वृक्षोंको और राज्यके उद्यानको ध्वंस करके अपने राज्यको लौट गये। इसी समय महाराष्ट्रदलके दूसरे नेता जयआपा सेंधियाका एक हाथ गोलेसे उड गया।

शत्रुदलने जिस समय कोटेको घेरा था उस समय झाला जातिके राजपूत हिम्मतसिंह जो कोटेके फौजदार अर्थात् प्रधान सेनापतिके पदपर नियुक्त थे, उन्होंने अपनी वीरता और युद्धकौशलसे कोटके राजा दुर्जनशालके साथ स्वामिभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई। उनके ही परामर्शसे और मध्यस्थ होनेस दुर्जनशालको बाजीरावसे नाहरगढका किला मिला था। संवत् १७९५ से १८०० के बीचमें पूर्वोक्त दोनों घटनाओंके समय जालिमसिंहका जन्म हुआ। जालिमसिंहने इतनी कीर्ति प्राप्त की कि उनके साथ कोटे राज्यके इतिहासका इतना घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ कि कर्नल टाडने कोटाराज्यके इतिहासमें उनकी बडी प्रशंसा की है।

जयपुरनरेश ईश्वरीसिंहके काटक जीतनेमें समर्थ होकर लौटाते समय वीर तेजस्वी दुर्ज्जनशालने पैतृक लडाईकी शत्रुताको विस्मृत कर बुधसिंहके पुत्र उमेदसिंहको उसेक पैतृकराज्य बूँदीके सिंहासन पर बैठानेके लिये बडी सहायता की। महाराष्ट्रनेता हुलकरकी सहायताके बिना ईश्वरीसिंहको परास्त करके बूदाके अधिकारको न पाते देख दुर्जनशालने उमेदको हुलकरका आश्रय लेनेकी सलाह दी। संवत् १८०५ सन् १७४९ में जिस समय उमेदसिंहने हुलकरकी सहायतासे बूँदीका राज्यसिंहासन पाया तब पाटणप्रभृति प्रदेश महाराष्ट्रनेता हुलकरको दिय, उस समय उन्हीं हुलकरने कोटेक राजा दुर्जनशालसे भी कर लेना आरम्भ कर दिया। उमेदसिंहका उपकार करनेको गये हुए दुर्जनशाल स्वयं बलशाली हुलकरको कर देनेके लिये बाध्य हो गये।

वीरश्रेष्ठ दुर्जनशालने अपनी भुजाओंके बलसे अनेक प्रदेशोंको जीतकर कोटाराज्यमें मिला लिया, खीचीजातिके अधिकारी फूलबरोद नामक प्रदेशको भी उन्होंने अपने राज्यमें मिला लिया था। गूगोर नामक किलेको जीत कर हाडाजातिके साथ खीची जातिका भयानक युद्ध आरम्भ हुआ। गूगोरके स्वामी बलभद्रने

असीम साहससे उस किलेकी रक्षा की, इतिहासमें लिखा है कि बलभद्रपुरा रामपुरा और शिवपुर प्रभृतिके सामन्तोंको अपने दलमें मिलाकर हाडाजातिके विरोधमें खडे हुए थे। संवत् १८१० में चौहानवंशसे उत्पन्न हाडा और खीची यह दोनों जाति उस समररूपी अग्निमें जलने लगीं। बूँदीके राजा महावीर उमेदसिंहने इस समय कोटेके राजा दुर्जनशालके पक्षमें बडी वीरता प्रकाश की। एकमात्र उमेदसिंहकी ही वीरतासे कोटेकी राजपताकाका उस रणक्षेत्रमें विपक्षी खीची गणोंके हाथसे उद्धार हुआ। उससे तीन वर्ष पीछे दुर्जनशालकी प्राणवायु पंचभूतमें लय हो गई। कर्नल टाडने लिखा है कि वह एक साहसी राजा थे, और जिन गुणोंकी राजपूतोंमें आवश्यकता होती है वह सभी गुणोमें विराजमान थे। अमायिकता उदारता और साहस आदि किसीकी भी उनमें कमी नहीं थी। वह शिकार बडे चावसे खेलते थे, अधिक करके शेर और बाघकी शिकार उनको प्यारी लगती थी। उनके राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें शिकार खेलनेके लिये सिंह व्याघ्रादि भयानक जानवरोंसे वन परिपूर्ण रहता, और उन सभी वनोंमें शिकार खेलनेका स्थापन पडाव, बना हुआ था।

जिस समय दुर्जनशाल शिकार खेलनेको निकलते थे इतिहास कहता है कि उस समय वह अपनी रानियोंको भी साथमें ले जाते थे। वह राजपूत वीराङ्गनाएँ भी उत्तम रीतिसे बन्दूक चलानेकी शिक्षा पाये हुए रहती थीं। शिकार खेलनेके मञ्चपर सबसे ऊपरके दरजे पर गोली भरी हुई बन्दूक हाथमें लेकर वह बैठती थीं। जिस समय शिकार खेलनेवाले वनमेंसे सिंह व्याघ्रादिकोंको घेरकर उस मंचपर लाते तभी वह वीराङ्गना बन्दूककी गोलीसे इस सिंह व्याघ्रादिका वध करती थीं।

कोटेके इतिहासमें लिखा है कि एक दिन शिकार खेलते समय फौजदार हिम्मतसिंह झाला शिकार खेलनेके मंचके नीचे पृथ्वीपर खडे थे; उसी समय एक व्याघ्र सेनादलसे और शिकारी लोगोंसे महाक्रोधित होकर मुँह फैलाये वहाँ आकर खडा हुआ, किन्तु राजा दुर्जनशालने तब भी उसको गोलीसे मारनेकी आज्ञा नहीं दी, किसीने विना राजाकी आज्ञा उसके मारनेका साहस भी नहीं किया। अवसर पाकर विकट आकारवाले वाघने बडी तेजीसे हिम्मतसिंहपर आक्रमण किया। तब उन्होंने ढालसे अपनी रक्षा की और तुरन्त ही तडप कर वाघके समीप जाय अपनी तलवारसे उसके मस्तकके दो खण्ड कर दिये। ऐसे असीम साहस और वीरताको देख दुर्जनशाल और सामन्त मण्डलीने हिम्मतसिंहकी बडी प्रशंसा की।

दुर्जनशालने अपुत्रकावस्थामें प्राण त्यागे। उन्होंने मेवाडके राणाकी एक कन्याके साथ विवाह किया था। दुर्भाग्यसे अपने कोई पुत्र न होता हुआ देख हताश होकर मरनेके तीन वर्ष पहिले वह रानीसे बोले कि "देखो भगवानकी इच्छासे जो मेरा औरसजात कोई पुत्र कोटेके सिंहासन पर नहीं बैठेगा, तो इस समय एक पुत्रको गोद लेना चाहिये।" पाठकोंको स्मरण होगा कि कोटेके भूतपूर्व राजा महाराव राम-

सिंहके बडे पुत्र विशनसिंह अपनी माताकी आज्ञासे दक्षिणकी लडाईमें न जानेके कारण कोटेके राजसिंहासनसे च्युत होकर केवल चम्बलके किनारेवाले आणता नामक प्रदेशमें शासन करते थे। जिस समय दुर्जनशालने दत्तक पुत्रके लेनेकी इच्छा प्रकट की, उस समयमें उक्त आणता प्रदेशमें उपरोक्त विशनसिंहके पौत्र वृद्ध अजीतसिंह विद्यमान थे। अजीतसिंहके तीन पुत्र थे। उनमें सबसे बडे छत्रसालको दुर्जनशालने दत्तक स्वरूपमें लेकर महारानीकी गोदमें बैठा दिया। इतिहासमें लिखा है कि यद्यपि दुर्जनशालने छत्रशालको अपने पुत्र और भविष्यमें उत्तराधिकारी स्वरूपमें राज्यमें प्रकाशित कर दिया, यद्यपि सामन्त मण्डली और समस्त प्रजाने छत्रसालको भविष्यमें अपने राजा स्वरूपसे मान लिया किन्तु दुर्जनशालके मरनेपर फौजदार हिम्मतसिंह झालाने अपनी प्रबल शक्तिसे उस व्यवस्थाको व्यर्थ कर दिया, उस समय आणताके वृद्ध राजा अजीतसिंह जीते थे। हिम्मतसिंह उनके पक्षको लेकर सबके सामने बोले कि "पुत्रको राजसिंहासनपर तिलक हो और पिता अधीन प्रजाके समान आज्ञा पालन करे, यह कभी नहीं हो सकता है। यह प्रकृतिके विपरीत बात है।" जो कुछ हो झाला हिम्मतसिंह अपने किसी गुप्त स्वार्थसाधनसे हो अथवा छत्रसालके प्राप्त व्यवहारकी अवस्थामें राज्यकी कोई होनहार नैतिक अनिष्टकी आशंकासे हो; उन्होंने उन अजीतसिंहको ही राजसिंहासनपर बैठालनेका उद्योग किया। किसीने उनकी बातके विपरीत खडे होकर कुछ न कहा। उन्होंने उन वृद्ध अजीतसिंहको कोटेके राजसिंहासनपर शोभित कर दिया। ढाई वर्ष तक राज्यको चलाकर अजीतसिंह स्वर्गको सिधारे। उनके तीन पुत्रोंके नाम यह हैं (१) छत्रसाल (२) गुमानसिंह (३) राजसिंह।

अजीतसिंहके स्वर्ग पधारनेपर सबसे बडे पुत्र छत्रसालको कोटेका राजसिंहासन मिला। विख्यात हिम्मतसिंह झाला इसके प्रथम ही मर चुके थे, अतएव फौजदारके पदपर उनके भतीज जालिमसिंह नियुक्त हुए।

इसी समय अपने सौतेले भाई ईश्वरीसिंहकी आत्महत्या करके माधोसिंह जयपुरके सिंहासनपर बैठे। किन्तु ईश्वरीसिंहने ऊँची आशाके अनुसार हाडा जातिपर प्रताप और अधिकार एवं बूँदी और कोटा राज्यको जय करनेके लिए जो चढाई की थी उसका फल यह हुआ कि स्वयं युद्धमें परास्त और अपमानित होकर उनको आत्महत्या करनी पडी, इसको देखकर भी माधोसिंहके नेत्र नहीं खुले वह फिर कोटाराज्यपर अधिकार करनेके लिए तैयार हुए। राजपूत राजपूतोंके साथ युद्ध, तथा एक ओरसे दूसरे पर अधिकार करने और दूसरी ओरसे अपनी रक्षा करनेके लिए तैयार हुए। माधोसिंह बोले कि आमेरनरेश जिस समय दिल्लीके बादशाहके प्रतिनिधि स्वरूपसे शासनकर्ताके पदपर नियुक्त हैं तब बूँदी और कोटेके राजाओंको हमारी स्वाधीनता माननी होगी। किन्तु हाडाजातिने इस बातसे घृणा दिखाई और जातीय स्वाधीनताकी रक्षाके लिए दूने उत्साहके साथ आपसमें बाहुबल दिखानेके लिए उन्होंने बडी शीघ्रतासे तैयारी की।

आमेरके राजा माधोसिंह संवत् १८१७ सन् १७६१ ई०में अपनी संपूर्ण सेनाको सजाकर हाडाजातिपर अधिकार करनेके लिए उद्यत हुए। इस समय अबदालीके आक्रमणसे महाराष्ट्र वीर एक साथ तेजहीन और उत्साहरहित हो गये थे, अतएव कछवाहे और हाडाजाति निर्भय होकर जातीयसंग्रामके लिए प्रबल बलके साथ आगे बढी। माधोसिंहने हाड़ौती प्रदेशपर सेना सहित चढनेके लिए यात्रा करनेके समय सबसे पहिले उनियारा प्रदेशपर आक्रमण और अधिकार कर उसे अपने राज्यमें मिला लिया। उसके पीछे उन्होंने लाखेरी प्रदेशमें जाकर हतबल मरहटोंको भगाकर उसको भी अपने राज्यमें कर लिया। इस भाँति विजय पाकर हृदयमें प्रसन्न हो पार और चम्बल नदीके बीचमें पालीघाटपर उतरे। सुलतानपुरके हाडाजातिके सामन्तपर उक्त नदीके प्रदेशकी शत्रुओंसे रक्षा करनेका भार समर्पित था, किन्तु माधोसिंहने शीघ्रतासे उन पर आक्रमण कर अपना अधिकार कर लिया। सुलतानपुरके रक्षकने बडी वीरतासे किलेके बाहर निकलकर अपने कुटुम्बियोंके सहित प्रबल समररूपी अग्निमें जल जीवनरूपी आहुति को दे पराजयके कलंकसे छुटकारा पाया। जिस समय सुलतानपुरके स्वामी युद्धक्षेत्रमें गिरे उस समय उन्होंने अपने दोनों हाथोंसे पृथ्वीको पकडा, विजेताओंमेंसे कोई २ इसको देखकर हँसे किन्तु विचारवानोंका कथन है कि राजपूत मरते समय भी जन्मभूमिका आलिंगन करते हैं।

फिर जय प्राप्त करके महा दर्पित और उत्साहित होकर विजयी कछवाहादल कोटाराज्यके बीच माधोसिंहकी जयशब्दसे आकाशको गुंजारता आगे बढा। अन्तमें भटवाडे नामक स्थानमें जाकर देखा कि एक वंशमें उत्पन्न पाँच हजार हाडा जातीय सेना उनकी गति रोकनेके लिए संहारमूर्तिको धारे खडी हुई है। कोटाराज्यकी सेनाकी संख्या माधोसिंहकी सेना-संख्यासे यद्यपि कमती थी, परन्तु वह वीर पुरुष राजपूत राजपूतजातिकी परम प्रिय स्वाधीनताकी और जन्मभूमिकी रक्षा करनेके लिए जीवन उत्सर्ग करनेको ही खडे हुए थे,। सबसे पहिले कछवाहेराजकी अगणित घुडसवार सेनाने हाडाजातिकी सेनापर आक्रमण किया। कोटाराज्यकी घुडसवार सेना अवश्य कमती थी कछवाही सेनाके सम्पूर्ण घोडे पहिलेसे ही थके हुए थे, तिस पर भी उन्होंने समरमें निश्चय जीतेंगे यह विचारकर बिना विश्राम लिए ही आक्रमण किया। थोडी संख्यावाली हाडासेनाने उनके उस प्रबल आक्रमणको अनायास ही सह लिया और किसी भाँति भी अपने व्यूहको भंग नहीं होने दिया। तुरन्त ही माधोसिंहने रणभूमिमें नई सेना खडी की। तब घुडसवारोंके साथ पैदल भिडजानेसे रणक्षेत्रमें रक्तकी नदी बह निकली। ठीक इसी समयमें कोटेके फौजदार जालिमसिंहने चतुराईसे राजनैतिक जाल फैलाया उस समय जालिमसिंहकी अवस्था इक्कीस वर्ष की थी, हिम्मतसिंहने उनको पोष्य पुत्रके रूपसे ग्रहण किया था, अतएव जालिम सिंह इस समय हिम्मतसिंहके पदपर विराजमान हो कोटेके फौजदार हो रणक्षेत्रमें उपस्थित हुए थे। जिस समय क्रमानुसार युद्ध प्रबल हो गया उस समय

वीरश्रेष्ठ जालिमसिंह घोडेसे उतर पैदल ही अपनी सेनाके साथ असीम साहस और वीरताके साथ शत्रुओंपर आक्रमण करने लगे। जालिमसिंहका जिस बुद्धिमानीके कारण जीवन प्रसिद्ध हुआ था, इन्होंने सबमें पहिले महासंकटके समय उसी चतुराई-को दिखाया।

महाराष्ट्रनेता मल्हारराव हुलकर इस समय उक्त रणक्षेत्रके समीप ही थे, किन्तु पानीपतके समरके पीछे वह ऐसे बलहीन हो गये थे कि किसी प्रकारसे दोनों ओरमें किसीकी ओर भी नहीं हो सकते थे। जिस समय माधोसिंहकी सब प्रकारसे जीत होनेकी सम्भावना हुई उसी समय चतुर जालिमसिंहने अपने घोडे पर चढ़; बडी शीघ्रतासे हुल-करके डेरोंमें जाय यह प्रार्थना की कि आप यदि युद्ध करनेको राजी नहीं हैं तो एकबार अपनी सेनाको लेकर इस सुयोग पर माधोसिंहके डेरोंको लूट लीजिये। हुलकरने यह बात बडे प्रेमसे मान ली।

डेरोंपर आक्रमण होते ही कछवाही सेनाका दल मारे भयके रणभूमिको छोड भाग निकला। हाडाजातीय कविने लिखा है कि "हाडाजातिकी सेनाने अपनी नंगी तलवारको शत्रुओंके रुधिरमें स्नान कराकर संग्रामरूपी तीर्थकी क्रियाको समाप्त किया।

माचेडी ईशरदा, वातका, वारोल, अचरोल प्रभृति जयपुरके अधिकारी प्रदेशोंके समस्त सामन्त उस पांच हजार हाडाजातीय सेनासे परास्त होकर भाग गये। बूँदीकी सेनाका दल कोटेकी सेनाके साथ मिलनेको आया था किन्तु इस समय तक उसने, आमेर नरेशने जो बूँदीके प्रदेशोंको जीत लिया था, उनका उद्धार नहीं करने पाया था। जो हो उक्त संग्राममें कछवाही जातिकी पंचरंगी पताका कोटेकी सेनाके हाथमें आगई कोटेके कविने उक्त हाडाजातिकी सेनाकी जीतमें और जालिमसिंहकी वीरतामूलक कविता मालाके गूथनेमें विलम्ब नहीं किया। हाडाजाति आजतक गौरवके साथ उस कविताका गान करती है। कवितामें एक स्थान पर लिखा है—

"जङ्गभटवाडारोजीत। नारोजालिमझाला।
रङ्ग एक रङ्ग चढ़ा। रङ्ग पँचरंगका॥

इसका अर्थ यह है कि भटवाडाके युद्धमें जालिमसिंहका सौभाग्यरूपी सितारा उदय हुआ। उस रणक्षेत्रमें (रङ्ग) एक रगा रहा, पंचरंग पताकाको दाब दिया अर्थात् आमेरकी राजपताका रुधिरसे रंग गई।

उक्त भटवाडेकी लडाईसे ही आमेरनरेशकी प्रभुता जाती रही। इतने दिनोंसे बादशाहके प्रतिनिधि स्वरूपमें कछवाहे नरेश जिस प्रभुताको पाये चले आये थे, इस समय वह प्रभुता एकसाथ जाती रही। इस लढ़ाईके पीछे आजतक आमेर नरेशोंमें हाडाजातिके ऊपर अपना अधिकार करनेका साहस नहीं हुआ, कर्नल टाडने लिखा है

(१) कर्नल टाडने टिप्पणीमें लिखा है कि "यह विचित्रता है कि जिस वर्षमे नादिर-शाहने भारतपर आक्रमण किया, जालिमसिंह उसी वर्षमे जन्मे और अबदालीके आक्रमणके समय उन्होंने राजनैतिक रगभूमिमें प्रथम प्रवेश किया।

कि जातीय स्वाधीनता और जन्मभूमिकी रक्षाके लिये हाडाजातिने भटवाडेके रणक्षेत्र-में जिस असीम वीरतासे जय प्राप्त की प्रतिवर्षमें उसके स्मरणार्थ एक सामरिक महोत्सव होता है, हाडाजाति एकत्रित होकर एक कृत्रिम आमेरका किला बनाय जय जय करके उस किलेपर अधिकार करके उसको ध्वंस करती है "। उपरोक्त लडाईके पीछे छत्रशाल बहुत दिन नहीं जिये। उनके कोई पुत्र न होनेसे उनके भाई कोटेके राजसिंहासन पर बैठे।

द्वितीय अध्याय २.

महाराव गुमानसिंह-जालिमसिंह-उनका जन्म और वंशविवरण-जालिमसिंहका पद-उनका सम्मान पाना-झालावंशके फौजदार पदको वंश परम्परासे पाना-जालिमसिंहके अन्यायसे प्रभुता करने पर महाराव गुमानसिंहको असंतोष होना--जालिमसिंहका पदसे च्युत करना--महारावका जालिमसिंहकी सब सम्पत्तिका हरलेना--जालिमसिंहका कोटेको छोडदेना--मेवाडमें जाना--राणाकी आधीनतामें रहना--राणासे उनको "राजराणा" उपाधि और भूसंपत्ति मिलना--मरहठोंके विरोधमें युद्ध--रणभूमिमें जालिमसिंहका घायल होकर बंदी होना--उनका फिर कोटेमें आना-मरहठोंका कोटे राज्यपर आक्रमण करनेकी चेष्टा-बुकायनीका युद्ध-प्रशंसनीय वीरताका प्रकाश-जालिमसिंहपर फिर गुमानसिंहका दयालु होना-जालिमसिंहके द्वारा महारावकी ओरसे मरहठोंके साथ संधि करना-जालिमसिंहका मनोरथ सफल होना-मृत्युशय्यामें पडे हुए गुमानसिंहका जालिम सिंहके द्वारा अपने पुत्र उमेदसिंहके लिये राज्यसिंहासन देनेको कहना-महाराव गुमानसिंहकी मृत्यु-उमेदसिंहका राज्यतिलक होना-टीका दोडकलवाडे पर अधिकार-जालिमसिंहके विरोधमें षड्यंत्र-षड्यंत्रभेद-हाडाजातिके सामन्तोंका निकालना-मोसेनके सामन्तका षड्यंत्र-षड्यंत्र भेद-बहादुरसिंहकी मृत्यु-राजभाइयोंका कारागार भोगना-जालिमसिंहके विरोधमें बहुतसे षड्यंत्र-वीरांगनाओंका वीरभेषसे जालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा करना-जालिमसिंहका उद्धार पाना-जालिमसिंहकी सावधानता।

संवत् १८२२ सन् १७६६ ईसवीमें गुमानसिंह पिताके सिंहासनपर बैठे। गुमान सिंहके मस्तकपर जिस समय कोटेका राजछत्र शोभित हुआ; उस समय वह पूर्ण युवक बडे साहसी और बुद्धिमान थे। इसी समयमें दक्षिणके महाराष्ट्रदलने पङ्गपालके समान राजपूतानेमें आकर राजपूतजातिके जो सर्वनाश करनेका उद्योग किया था. गुमानसिंह उनके उस आक्रमणसे अपने राज्यकी रक्षा करनेमें सब भाँति समर्थ थे, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि थोडे ही दिनतक राज्यका सुख भोगने पर उनको एक बालकके हाथमें राज्यका भार देना पडा। गुमानसिंहकी उस शासनप्रणालीको वर्णन करनेके प्रथम हम और चिरस्मरणीय महानीतिज्ञ मनुष्यको उपस्थित करना चाहते हैं। वह राजपूत नीति-शास्त्रके जाननेवालोंमें प्रधान जालिमसिंहकी जीवनी ही कोटेके भविष्य इतिहासका

स्वरूप है; जालिमसिंहको लेकर ही कोटा है, और कोटेके इतिहासके प्रत्येक पत्रेमें हरएक राजनैतिक घटनाके साथ ही नहीं वरन् आधी शताब्दीतक समस्त राजपूतानेके इतिहासके साथ जालिमसिंहका पवित्र नाम मिला है। "माननीय टाडने लिखा है कि जालिमसिंह भारतके जिस स्थान पर रहे वह उस स्थानकी श्रेष्ठनीतिको जानते थे, उनकी उस नीतिकी प्रतिभाके प्रकाशके लिये वह सीमा बद्ध प्रदेश कभी योग्य नहीं था, सुभीता और अवसर पानेसे वह किसी एक महादेशकी महान् जातिका शासन निःसन्देह कर सकते थे।" वास्तवमें कर्नल टाडका यह कथन आगेके इतिहासको विलक्षणतासे प्रमाणित करता है।

जालिमसिंह झालाजातिके राजपूत थे। संवत् १७९६ सन् १७४० ईसवीमें भारतवर्षकी एक चिरस्मरणीय घटनाके समय जब विजयी नादिरशाहने अपनी प्रबलसेना दलके साथ भारतमें आकर दिल्लीके सिंहासन पर बैठे हुए तैमूरके शेष-वंशधरोंके शासनके विरोधमें अन्तिम युद्ध किया था, उस समयमें जालिमसिंहका जन्म हुआ। यद्यपि उस समय तैमूरके वंशधरोंकी शासनशक्ति प्रबल प्रतापसे बढनी असम्भव थी, यद्यपि दुरात्मा औरंगजेबके कठोर शासनकी नीतिसे यवन बादशाहीकी जड उखाडनेका बीज बोया जा चुका था; किन्तु इस समयमें नादिरशाहके भारतपर अधिकार करनेके लिये न आने पर दिल्लीके बादशाहकी शासनशक्ति और भी कुछ दिनतक प्रबल रहसकती थी। नादिरशाह जिस समय भारतविजय करनेको आया, उस समयमें मोहम्मदशाह दिल्लीके सिंहासनपर और महावीर दुर्जनशाल कोटेकेराजसिंहासन पर बैठे हुए थे। जालिमसिंहके जन्म लेनेके समयसे क्रमानुसार पाँच राजा कोटेका राज्य करके परलोक सिधारे और छठवें राजाके सिंहासनपर बैठने तक जालिमसिंह जीवित थे। उक्त राजाओंके बीचमें एक महाराव किशोरसिंहने अवश्य ५० वर्ष तक राज्य किया था। यद्यपि जालिमसिंह एक नेत्रसे हीन थे किन्तु भटवाडेके रणक्षेत्रमें उन्होंने सबसे पहिले जैसी असीम नीतिज्ञता और वीरता दिखाई थी उनकी राजनैतिक दृष्टि चिरकाल तक वैसी ही बनी रही।

जालिमसिंहके पूर्व पुरुष सौराष्ट्र देशके अन्तर्गत झाला प्रदेशके बीच हलवद नामक स्थानके सामान्य शक्तिवाले सामन्त थे। भावसिंह नामक उस परिवारके छोटे पुत्रने कुछ विश्वासी सेवकोंके साथ अपने सौभाग्यकी परीक्षा करनेके लिये पिताकी भूमिको छोड विदेश यात्रा की। इस समय औरंगजेबके वंशधरोंमें दिल्लीके सिंहासन पानेके लिये लडाईकी आग प्रज्वलित हो रही थी, उस समय अनेक स्थानोंसे अनेक वीर आ आकर दोनोंकी ही ओर हो हो कर अपने भाग्यकी परीक्षा करनेमें लगे हुए थे। भावसिंहने भी उनमें से एकका पक्ष लिया। जिस समय महाराज भीमसिंह कोटेके सिंहासनपर बैठे हुए दोनों सय्यद मंत्रियोंको सहायतासे बडे पराक्रमसे शक्तिको बढा रहे थे, उस समय उक्त भावसिंहके पुत्र माधोसिंह कोटेमें आये। यद्यपि उस समय माधोसिंहके साथ केवल पचीस घुडसवार थे, किन्तु महाराज भीमसिंहने उनको माननीय

झाला वंशी जान बडे आदरसे ग्रहण किया और पीछे मित्रता ही नहीं जोडी वरन् अपने पुत्र अर्ज्जुनके साथ माधोसिंहकी भगिनीका विवाह करके उन्हें अपना सम्बंधी बना लिया। थोडे ही दिन पीछे कोटाराज्यके भीमसिंहने माधोसिंहके रहनेके लिये नाणता प्रदेश दे दिया और उन्हें कोटेकी समस्त सेनाका प्रधान सेनापति बनाया एवं कोटानरेश जिस किलेके महलोंमें रहते थे, उसी किलेके अध्यक्ष पदपर उनको सुशोभित किया। माधोसिंहने कोटाराज्यमें बडी शक्ति और सम्मान पाया, उनके मरनेपर मदनसिंह नामक उनके पुत्रने अपने पिताके पदानुसार कोटेके फौजदारका पद पाया। उनके दो पुत्र हुए (१) हिम्मतसिंह और (२) पृथ्वीसिंह। हम यहाँ भावसिंहके वंशकी कारिका लिखते हैं।
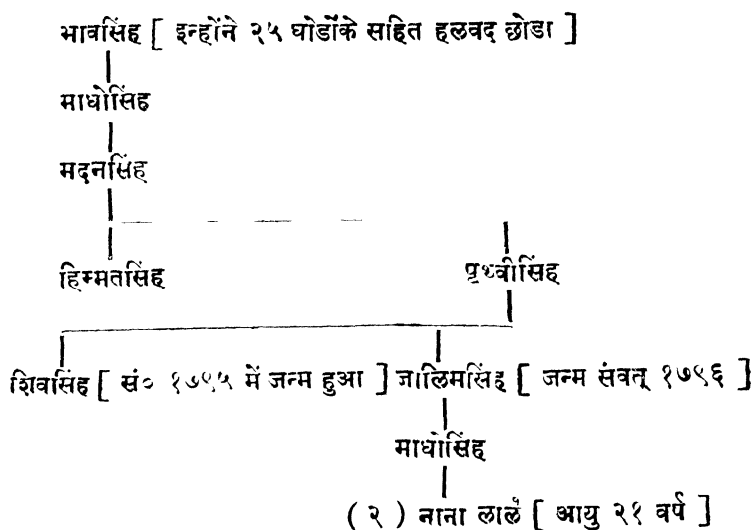
राजपूतोंके राज्योंमें प्रधानमन्त्री, दीवान, प्रधानसेनापति आदिके प्रत्येक पदको उनकी सन्तान क्रमानुसार पाती है, अतएव मदनसिंहके मरनेपर हिम्मतसिंह झाला कोटाराज्यके फौजदार हुए। हिम्मतसिंह जस महावीर नीतिमें कुशल और शक्ति सम्पन्न मनुष्य थे पठाकोंको वह पहिले ही ज्ञात हो चुका है। जिस समय जयपुरके राजाने महाराष्ट्र दलके साथ मिलकर कोटेपर आक्रमण किया, उस समय इन्हीं हिम्मतसिंहने अपनी वीरताको दिखाकर कोटेके किलेकी रक्षा की, किन्तु चारों ओरसे विषमविपत्तियोंको देख इन्होंने पहिले ही मरहटोंसे संधि करके उनको कर देना स्वीकार करालिया। महाराज दुर्जनशालके मरनेके पीछे इन्हीं हिम्मतसिंहने अपनी शक्तिसे अजीतसिंहको कोटेके सिंहासनपर बैठा दिया। हिम्मतसिंहके कोई पुत्र नहीं था, इस कारण उन्होंने अपने भतीजे जालिमसिंहको गोद ले लिया था। हिम्मतसिंहके परलोक सिधारने पर

(१) यह वर्तमान झालावाड राज्यके प्रथम राजा हुये।

जालिमसिंह कोटेके फौजदार हुए। जालिमसिंहने युवा अवस्थामें भटवाडेके रणक्षेत्रमें जिस वीरता और साहससे कोटाराज्यको आमेर नरेशकी अधीनताकी सांकलसे चिरकालके लिये छुटा लिया। राजनैतिक रंगभूमिमें वही उनका सबसे प्रथम प्रशंसनीय अभिनय हुआ। किन्तु परितापका विषय है कि उक्त घटनाके थोडे ही दिन पीछे जालिमसिंहका प्रकाशित यशरूपी सूर्य हठसे घोर बादलोंसे छिप गया।

गुमानसिंहके राजसिंहासनपर बैठनेके कुछ दिन पीछे जालिमसिंह कुछ अधिक शक्ति और प्रभुता दिखानेके कारण उनकी आखोंमें खटके। महाराज गुमानसिंह उसीसे जालिमसिंहपर इतने क्रुद्ध हुए कि नान्दता प्रदेश जो महाराज भीमसिंहने जालिमसिंहके प्रपितामह माधोसिंहको दिया था, उनसे वह प्रदेश छीन लिया। उक्त नान्दता प्रदेश चम्बल नदीके किनारे है और अब भी वह झाला परिवारके अधीन है। उस समय कोटेका राजवंश बूँदीके अधीन सामन्तोंसे शासित देशके रूपमें गिना जाता था। महाराज गुमानसिंहने उक्त फौजदारका पद और नान्दता प्रदेश जालिमसिंहके मामा वागडोत जातीय भूपतसिंहको दे दिया।

अपने स्वामी गुमानसिंहके अधीनमे फिर अपना पूर्वपद और नान्दता प्रदेश जाता देख जालिमसिंहने अपने उस अपमान स्थान कोटाराज्यको छोड अन्यत्र भाग्योदयकी कामना की। वह किस मार्गका अनुसरण करैं, अधिक दिनतक उनको विचार करना नहीं पडा। आमेरराज्यमें उनका प्रवेश द्वार भटवाडाकी लडाईसे पहिले ही बंद होगया था, दूसरे मारवाडराज्य उनको स्वयं उपयुक्त नहीं जान पडा। इस समय जालिमसिंहके जाति और वर्णका एक प्रधाननेता मेवाडके राजा महाराणाकी सभामें विराजमान था। मेवाडके सामन्त दो दलोंमें बँटकर एक दल महाराना अडसी और दूसरा दल एक अन्य मनुष्यके सिंहासनकी अभिलाषासे पक्षको लेकर अडसीको सिंहासनपर नहीं बैठने देता था। मेवाडके पहिली श्रेणीके सोलह सामन्तोंके बीचमें जालिमसिंहके उक्त स्वजातीय डेलवाडाके झाला सामन्तने अडसीके पक्षको लेकर उनको मेवाडके सिंहासनपर बिठा दिया। अडसीने उन सामन्तोंकी सहायतासे पिताके सिंहासनको पाय उन सामन्तोंके प्रताप और प्रबलशक्तिके विरोधमें कुछ बाधा नहीं दी। झाला सामन्तोंने राणाके ऊपर इतना प्रभाव डाल लिया कि उन्होंने वेतनभोगी विजातीय सेनाके दलको राणाकी शरीररक्षाके लिये नियुक्त किया। दूसरी ओरसे जो सब शक्तिसम्पन्न मनुष्य थे वे भी उनकी ओरसे नीतिका समर्थन करते थे। झाला सामन्त राणाके मतको न ले कर अपनी ही इच्छानुसार उन[1] सब मनुष्योंको जागीरें देते थे, सो राणाने अपनी खास भूमि और जो सामन्त अपने विरोधी थे वा अपने विपरीत करनेवाले थे उनके अधिकारी प्रदेशोंको छीन कर अपने राज्यमें मिला लिया। इस कारण राज्यकी आमदनी बहुत बढ गई, और कोई साहससे उन झाला सामन्तोंकी उस इच्छाके विरोधमें किसी भांतिकी आपत्ति भी नहीं कर सका।

---

१ उर्दू तरजुमेमे बालावत्।

जिस समय झाला सामन्तोंने मेवाडके महाराणाकी सभामें उक्त प्रकारसे अपने प्रबल प्रतापको बढाया था उस समय कोटेके पदसे गिरे हुए फौजदार युवक जालिमसिंह अपने सौभाग्यकी परीक्षाके लिये मेवाडमें आये। जालिमसिंहकी प्रबलवीरताकी सूचना पहिले ही महाराणा अडसी पा चुके थे। इस कारण जालिमसिंहके आते ही महाराणाने उनको सम्मानपूर्वक ग्रहण किया। साहस, नीतिज्ञता, वीरता और प्रतिभासे जालिमसिंह शीघ्र ही महाराणाके प्रियपात्र और विश्वासभाजन हो गये। महाराणा झाला सामन्तोंके खिलौने बन रहे थे, किन्तु किसी प्रकारसे वह उनके हाथसे अपना उद्धार न पाते देख मनही मनमें विषम वेदनाका अनुभव भी करते रहते थे। उस समय युवक जालिमसिंहको पा कर उनको भलीभांतिसे योग्यपात्र जान महाराणाने उनके हाथमें अपने उद्धारका भार दिया, जालिमसिंहने अपनी चतुरता, साहस, नीतिज्ञता और वीरता से शीघ्र ही सामन्तोंपर आक्रमण कर महाराणा अडसीको उस विपत्तिके मुखसे निकाल दिया। झाला सामन्तोंने उस युद्धमें अपने प्राण त्याग दिये। महाराणाने जालिमसिंहकी सहायतासे पूर्ण स्वाधीनता पा ली, और अधीन सामन्तोंके अन्यायको अपनी प्रभुतासे दूर करके संतोषित हो जालिमसिंहको " राजराणा " की उपाधि और मेवाडके दक्षिणसीमावाला चित्र खाडियाँ नामक प्रदेश पुरस्कारस्वरूपमें दिया। उस समयसे जालिमसिंह मेवाडके दूसरी श्रेणीके सामन्त हुए। यद्यपि झाला सामन्तोंके मरजानेसे महाराणा अनेक प्रकारसे निष्कण्टक हो गये थे किन्तु उनके प्रधान शत्रु जो वंशधर सिंहासनके अभिलाषी थे वह कुछ सामन्तोंके साथ उनका वध करनेके लिये यत्न करते थे। उन्होंने इस समय पूर्वके समान विद्रोह उपस्थित कर शेषमें मरहठोंकी सहायतासे सिंहासनपर अधिकार करनेका उद्योग किया। जालिमसिंहकी संमतिसे महाराणाने शीघ्र ही एक दल प्रबल सेनाका एकत्रितकर उन्हीं मिले हुए विद्रोही और मरहठोंके साथ समररूपी अग्निको प्रज्वलित कर दिया, उस समरका हाल पाठकोंको विदित ही है। जिस समय जय लाभकी संपूर्ण आशा हुई उसी समय दुर्भाग्यसे शत्रुओंके जीतजानेसे जालिम घायल होकर मरहठोंके द्वारा कैद हो गये। सुविख्यात महाराष्ट्र सेनानी अम्बाजी इंगलियाके पिता त्र्यंबकरावने जालिमसिंहको कैद कर लिया। अन्तमें दोनोंने परस्पर मित्रता कर ली और उस मित्रतासे अन्तमें जालिमकी राजनैतिक अभिनयके अनेक उपकार हुए।

उपरोक्त संग्राममें पराजय पानेसे महाराणा अडसी और संपूर्ण मेवाडराज्य विजेताओंकी दयाके अधीनतामें आये। विजेताओंके उदयपुर घेरनेपर राजपूतोंने अपनी वीरता दिखाकर आत्मसमर्पण करनेकी मनमें ठानी। अन्तमें संधिके होजानेसे वह गोलयोग जाता रहा। घायल जालिमसिंहने आरोग्यता प्राप्तकर विशेष विचार करके यह निश्चय किया कि लुप्तप्रताप हीनबल महाराणाके अधीनमें रहकर भाग्योदयकी

---

(१) उर्दू तरजुमेमें जनेरखेडा—

(२) मेवाडके इतिहासमें अडसीकी शासन प्रणाली देखो।

इच्छा नहीं करनी चाहिए, अतएव वह उदयपुरमें अधिक दिन न रहकर अपने भावी सौ-भाग्य सहचर पण्डित लालाजीवल्लालके साथ फिर कोटेमें आये। बुकाचनीकी लडाईमें वहुत सी महाराष्ट्र सेनाके मारे जानेसे महाराष्ट्र नेता मल्हारराव हुलकर अत्यन्त साहस-हीन हो गये थे। किन्तु और भी एक लडाईमें समस्तरूपसे जीतनेको समर्थ होकर वह महादर्पके साथ कोटेपर अधिकार करनेके लिए आगे बढे। विपत्तिको शीघ्र ऊपर आते देख कोटानरेश गुमानसिंहने अपने पक्षको निर्बल जानकर हुलकरसे सन्धिकर विपत्ति-रूपी समुद्रसे पार होनेका एक यही उपाय निश्चय किया। राजा गुमानसिंहने शीघ्र ही वाङ्कडोत फौजदारको सन्धि करनेके लिए मरहटोंके डेरेमें भेजा। किन्तु वह निष्फल मनोरथ होकर लौट आये।

जालिमसिंहके कोटेमें आने और आगे होनेवाली घटनाके सम्बन्धमें इतिहास कहता है कि नीतिके जाननेवाले जालिमसिंहने जिस समय देखा कि कोटाराज्यके भाग्यरूपी आकाशमें घनघोर राजनैतिक बादल छाए हुए हैं। इस कारण कोटेके क्षेत्रमें राजनैतिक अभिनयका वास्तवमें समय उपस्थित है, जालिमसिंह अपनी नीति, वीरता और साहससे कोटेके उस दुर्दिनको हटावेंगे इसी आशासे वह कोटे राज्यमें आये हैं।

जालिमसिंह यद्यपि कोटेमें आ तो गये किन्तु महाराज राजा गुमानसिंह उस समयतक जालिमसिंहसे इतने क्रुद्ध थे कि वह जालिमसिंहके अपराध क्षमाकर राजसभामें आनेके लिये राजी नही हुए। उन्होंने भाग्यसे एकबार किसी भाँतिसे हो गुमानसिंहसे मिलनेकी मनमें ठानली। सौभाग्यसे इसी अवसरपर यह घटना हुई कि जिस कारणसे कोटा नरेश गुमानसिंहने क्षमा ही नहीं किया वरन् उनको अपने अधीनमें नियुक्त कर लिया।

इस समय महाराष्ट्रदलने कोटाराज्यकी दक्षिण सीमामें आकर बुकायनी प्रदेशके किलेको घेर लिया। सामन्त हाडा सम्प्रदायके नेता माधोसिंह चारसौ असीम साहसी हाडासेनाके साथ उस किलेकी रक्षा करनेमें नियुक्त थे। मरहठोंने किलेको घेरकर उसे जय करनेकी बारम्बार चेष्टा की परन्तु किसी भाँतिसे भी वह किलेकी दीवारको लांघ-कर भीतर नहीं जा सके। किलेको तोडनेके लिये जिन २ वस्तुओंकी आवश्यकता होती है मरहठोंके पास इस समय वह कुछ भी नहीं थी। तब एक बडे हाथीके द्वारा किले-की दीवारको तोड मरहठोंने किलेको ध्वंसकर अपना अधिकार कर लिया। बुकायनीके किलेके दरवाजेको तोडनेके लिए मरहठोंने अन्तमें यही उपाय किया। हाडासेनानायक माधोसिंहने जब देखा कि अब किलेकी रक्षा करना असंभव है, और शीघ्र ही हाथीके विषम आघातसे दरवाजा टूट जायगा तब वह अमानुषिक वीरता दिखानेको उद्यत हुए। जिस समय शत्रुका हाथी किलेके दरवाजेपर प्रबल वेगसे अपने मस्तककी टक्कर लगा-कर फाटक तोडने लगा। उस समय माधोसिंह नंगी तलवार लेकर किले परसे हाथीकी पीठपर कूद पडे और तुरन्त ही पीलवानको मार गिराया। पीछे हाथीके टुकडे २ कर डाले। माधोसिंह इकले जिस समय शत्रुओंमें किलेपरसे कूदे निश्चय ही उनके

जीवनकी आशा नहीं थी, किन्तु किलेकी हाडासेनाने अपने नायकको ऐसी वीरता दिखाते देख फिर विलम्ब नहीं किया। हाडासेना उस समय किलेका दरवाजा खोल प्रबलसागरके तरंगोंके समान महावेगसे शत्रुसेनाके संहार करनेको प्रवृत्त हुई। किन्तु शत्रुसेनाके अधिक और प्रबल होनेसे शीघ्र ही हाडासेनाने प्रशंसनीय वीरताको दिखाय अपने जीवनको विसर्जन किया, किन्तु हाडासेनाने बिना शत्रुसेनाको संहार किये अपने जीवनको नहीं छोडा। जो हो, मरहठोंने अन्तमें विजय लक्ष्मीको पाकर कोटा राज्यकी सीमामें अत्याचार करते पीडा देते और लूटते हुए सुकेत नामक किलेको घेर लिया। कोटानरेश गुमानसिंहने उक्त संबादको पाकर सुकेत किलके रक्षकको लिख भेजा कि "सेनाके साथ अपनी रक्षा करनी चाहिए। मातृभूमिकी रक्षाके लिये वीरता प्रकाश करते हुए जीवन विसर्जन करना ही श्रेष्ट है: बुकायनीके समरमें हाडाजातिकी सेनाने विलक्षणरूपसे वीरता दिखाई है, कोटेकी रक्षा करना ही परमधर्म और प्रयोजनीय है।" राजाकी इस आज्ञासे किलेके रक्षकने कोटा राजधानीमें जानेके लिए आधीरातके समय गुप्तरीतिसे समस्त सेनाके साथ किलेमेंसे निकलकर यात्रा की। किन्तु दुर्घटनासे हो वा षड्यंत्रेस हो जिस मार्गसे यह सब चले उस मार्गके दोनों ओर सूखे तिनकोंमें आग बल रही थी तिस पर महाराष्ट्रसेनाने जागकर उनपर आक्रमण किया। अगणित शत्रुसेनाको भेद करते हुए जो बहुतसी हाडासेना गई उसका कहना बाहुल्यमात्र है।

राजा गुमानसिंहके इस महाविपत्तिके समय जालिमसिंह अपने नष्टभाग्यके उद्धारके लिए गुमानसिंहके पास बिना बुलाये ही पहुँचे। जालिमसिंहने जाकर इस समय गुमानसिंहको निश्चय कर दिया कि पहले जालिमसिंहके ही भुजबलसे और राजनीतिसे भटवाडेकी लडाईमें हाडाजातिकी सेनाने जय पाई थी और उनकी ही राजनीतिके द्वारा कोटाराज्य आमेर नरेशकी अधीनताकी सांकलसे चिरकालके लिए बचा था एवं जो हुलकर मल्हारराव आजदिन कोटेपर अपना अधिकार करनेके लिए वीररूपसे आगे बढे हैं उन्हीं हुलकरकी सहायतासे वह कोटेराज्यकी रक्षा कर चुके हैं। राजा गुमानसिंहने समझ लिया कि इस विपत्तिरूपी सागरसे उद्धार पानेका उपाय एक जालिमसिंह ही मल्लाहस्वरूप है। अतएव उन्होंने जालिमसिंहके सब अपराधोंको क्षमाकर उन्हींके हाथमें परस्पर सन्धि स्थापन करानेका भार अर्पण करके इन्हें मरहठोंके डेरोंमें भेजा। चतुरनीति शास्त्रके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ जालिमसिंहने शीघ्र ही मल्हाररावके पास सन्धिका प्रस्ताव उपस्थितकर संतोषजनक फलको प्राप्त कर लिया अर्थात् कोटा नरेश गुमानसिंहके छः लाख रुपये देनेपर हुलकर मल्हारराव अपनी सेना सहित लौट जाँयगे। इस सन्धिको होता हुआ देख जालिमसिंहके द्वारा कोटेकी रक्षा हुई, यह जान गुमानसिंहने प्रसन्न होकर उनके जो अधिकारी प्रदेश छीन लिए थे वह शीघ्र ही उनको दे दिये और वांकडोतके सामन्त सन्धि स्थापन करनेमें असमर्थ हुए थे, इस कारण उनको पदसे हटाकर जालिमसिंहको ही उनके पैतृक कोटाके फौजदारका पद दे दिया किन्तु जालिमसिंहने जिस समय अपने पैतृक पदको पाया उससे कुछ काल पीछे कोटानरेश गुमान-

सिंह रोगसे ग्रसित हुए और सब जनोंने उनके जीवनकी आशा छोड दी । मृत्युकी शय्यापर पडे हुए गुमानसिंहको यह चिन्ता हुई कि इस समय अपने पुत्रोंका भार किसके हाथमें दिया जाय परन्तु इस चिन्तासे उनको कष्ट नहीं हुआ, उन्होंने तुरन्त ही यह विचारा कि दो बार जालिमसिंहके हाथसे कोटाराज्यकी रक्षा हुई है,इस कारण गुमानसिंहने उनको एक विश्वासी और योग्यपात्र जान अपने सब सामन्तोंको बुलाय दशवर्षके कुमार उमेदसिंहको जालिमसिंहकी गोदमें बैठा दिया । और सबके सम्मुख जालिमसिंहको ही अपने पुत्रके अभिभावक पदपर नियुक्त कर दिया ।

राजागुमानके मरनेसे संवत् १८२७, सन् १७७१ इसवीमें उमेदसिंह कोटेके राजासिंहासनपर बैठे । सदासे राजपूत जातिमें यह रीति चली आती है कि कोई नवीन राजा यदि राज्यसिंहासनपर बैठे तो उसको शीघ्र ही दिग्विजयके लिये जाना पडता है और वह समरमें जय पाकर अभिषेककी क्रियाको समाप्त करता है । उसी पुरानी रीतिके अनुसार उमेदसिंहने राजतिलकके पीछे अपनी सेनादलके साथ नरवर राजवंशीय कैलवाडेके स्वामीके साथ युद्ध करके उक्त प्रदेशको कोटाराज्यमें मिला लिया । जालिमसिंहने उमेदसिंहके अभिभावक रूपमें जो सबसे पहिले यह प्रशंसनीय काम किया; उसके आगेके शासनमें इसी भांति उनकी ऊंची प्रतिभाका पूर्ण परिचय पाया जाता है । जालिमसिंह अप्राप्त व्यवहार कोटाराज्यके अभिभावक पदको ग्रहण करनेके कुछ समय पीछे भयानक विपत्तिके जालमें पड गये । जालिमसिंह एक ऊंचे दरजेके कूट राजनीतिके जाननेवाले थे; उसी कूटनीतिके बलसे उन्होंने अपनी प्रबल शक्तिको जीवनपर्यन्त बनाये रक्खा । जालिमसिंह मृत महाराज गुमानसिंहके बडे विश्वासी मित्र स्वरूपमें गिने जाने पर भी कोटेके सम्पूर्ण सामन्तोंके प्रियपात्र नहीं थे । उनका अभ्युदय और प्रताप प्रतिपत्ति अनेक सामन्त एवं राजपुरुषोंके नेत्रोंमें खटकती थी । इस कारण जालिमसिंह महाराजके अभिभावक पदको पाकर जिस भाँति धीरे २ सबके ऊपर अपने प्रतापको फैलानेमें प्रवृत्त हुए इसी प्रकारसे सामन्त समाज उनकी उस शक्ति और प्रतिपत्ति संचयके विरोधमें अनेक विघ्न और बाधाओंको डाल शत्रुता करने लगे । जालिमसिंह जो पहिले कोटेके फौजदार थे, वह केवल सामरिक शक्ति मूलक पद था । उस पदसे यद्यपि जालिमसिंह किलेके महलोंके अध्यक्ष थे और उसमें उमेदसिंह रहा करते थे, किन्तु कुछ दिन पीछे जालिमसिंहके साथ दीवानीविभाग अर्थात् राज्यैक शासनविभागके मन्त्री समाजके साथ उनका किसी २ विषयमें एक ही कार्य हो जाता था, परन्तु ऐसा होने पर भी जालिमसिंहको प्रचलित व्यवस्थाके अनुसार किसी प्रकारसे भी शासनविभागमें हस्तक्षेप वा बाधा डालनेका अधिकार नहीं था । दीवानीविभागमें राय अखैराम नामक एक मनुष्य सब भाँतिसे योग्य और ऊंचे दरजेकी शासननीतिको जाननेवाला नियुक्त था । अतएव जालिमसिंह जिस समय फौजदारके पदपर नियत हुए, उस समयमें भी अखैराम प्रधानमन्त्री थे । इतिहासमें लिखा है कि धीर अखैरामके सुपरामर्शसे और सुशासनके गुणोंसे कोटाराज्यने बड़ी क्षमता, प्रताप, शान्ति और उन्नति पाई ।

किन्तु परितापका विषय है कि अखैरामसे राज्यकी उन्नति होने पर भी वह गुमानसिंहके मरनेके उपरान्त थोडे ही दिनोंमें अन्यायसे मारे गये। जालिमसिंहकी सलाहसे अखैराम मारे गये वा नहीं इसका निश्चय नहीं हुआ। इन अखैरामके मरनेके उपरान्त जालिमसिंह कोटाराज्यके सामरिक और शासन विभागमें सबके ऊपर अधिकार करनेको जब उद्यत हुए तब उनके विरोधी बहुत ही कम थे। किन्तु तब भी जालिमसिंह विषम विपत्तियोंको बिना दूर किये अपनी अभिलाषाको पूर्ण नहीं कर सके।

जालिमसिंहने गुमानसिंहके मरनेके पीछे ही अपनेको राजप्रतिनिधिरूपसे प्रकाशित किया, और समय तथा शासनविभागके सब अधिकारोंको स्वाधीन करनेको वह उद्यत हो गये। इसपर जो सामन्त जालिमसिंहके विरोधी थे, वह बोले कि स्वर्गवासी गुमानसिंहने जालिमसिंहके हाथमें इतने अधिकार नहीं दिये हैं। उन सामन्तोंमें महाराज स्वरूपसिंह और बाङ्कडोतके सामन्त भी थे। पाठकोंको स्मरण होगा कि इन बाङ्कडोतक सामन्तको पदच्युत करके जालिमको फौजदारका पद मिला था। इन दोनों मनुष्योंको छोड राजा उमेदसिंहके धाभाई जशकर्ण भी जालिमसिंहके विपक्षमें थे। जशकर्ण चतुर और नीतिके जाननेवाले थे। वह बालक महाराजके समीप रहते थे और उसी कामके लिये नियुक्त थे। जो सब मनुष्य जालिमसिंहके विरोधी हुए उनको उस धाभाईकी सहायतासे अपने मनोरथके पूर्ण होनेमें विशेष सफलता प्राप्त हुई। जालिमसिंहने अभिभावक पद पाकर पूर्णशक्तिसे कार्य चलाना आरंभ किया, तो वह सबसे पहिले उक्त विरोधियोंके मुखमें पतित हुए। किन्तु विपक्षियोंके षड्यन्त्र बिना बढे ही जालिमसिंहने अपनी चतुराई और कूटराजनीतिके बलसे उस षड्यन्त्रको छिन्न भिन्न कर दिया। धाभाई जशकर्णके द्वारा ही महाराज स्वरूपसिंह मारे गये, बाङ्कडोतके सामन्त अपने प्राण बचाकर भाग गये और बाकी हत्या करनेवालोंको धाभाई अपने साथ ले गये। जालिमसिंहने इस भाँति शीघ्रतासे इस अभिनयको कर डाला कि उसको देख राज्यके चारोंओरके मनुष्य डर गये। जालिमसिंहने कांटेसे ही काँटेको उखाड डाला। महाराज स्वरूपसिंह धाभाई पोकर्ण और बाङ्कडोतके सामन्त यह तीनों ही जालिमसिंहके प्रधान शत्रु थे। जालिमसिंहने सबसे पहिले धाभाईको हस्तगत कर उन्हींसे अपने उद्देशको पूरा कराया और पीछेसे उसे भी निकाल देनेपर सभी विस्मित हुए और जालिमसिंहके असीम साहस और चतुराईको देख महाव्याकुल हो अन्य शत्रुगण अपने महा अनिष्टकी सम्भावना कर डर गये।

महाराज स्वरूपसिंहके साथ धाभाईके विवादका ऐसा कोइ भी कारण नहीं था जिसके लिये धाभाई उनका प्राणले, किन्तु जालिमसिंहकी कूटनीतिसे युद्ध होकर धाभाईने एकदिन बृजविलास नामक राज उद्यानमें महाराज स्वरूपसिंहपर आक्रमण किया, और अपनी तलवारसे उनका शिर काट डाला। जालिमसिंहने धाभाईपर

स्वरूपसिंहको मारडालनेके अपराधमें बडा क्रोध प्रकाश किया और उसी अपराधमें उसको कैदकर अन्तमें हाडौतीसे एक साथ ही निकाल दिया । जालिमसिंहने इस भाँति अपने मनका भाव प्रगट किया कि जिससे यह जाना गया कि वह इस हत्याकाण्डमें सम्मिलित नहीं थे, यही नहीं वरन् उनकी सलाह भी नहीं थी, किन्तु पापकर्म किसी प्रकारसे भी छिप नहीं सकता अतएव शीघ्र ही यथार्थ बात प्रकाशित हो गई । धाभाई जशकर्णने निकल कर अपमानके होनेसे जयपुरमें प्राण त्यागे । अन्तमें प्रगट हुआ कि जालिमसिंहने ही धाभाईसे कहा था कि महाराज स्वरूपसिंह राजसिंहासनपर अपना अधिकार किया चाहते हैं इसीसे वह विरोध करते हैं और अप्राप्त व्यवहार महाराज उमेदसिंहके मारडालनेका उनका मुख्य उद्देश है । धाभाईने इसकी विशेष खोज न करके जालिमसिंहकी उसी बातको सत्य मान महाराज स्वरूपसिंहको राज्यका अभिलाषी जान उनका वध कर डाला । इस विषयमें कुछ भी हो जालिमसिंहने जिस नियतसे वह वियोगान्त अभिनय किया शीघ्र उनका वह उद्देश पूरा हुआ । उक्त हत्याकाण्डके पीछे ही कोटेके जो सामन्त जालिमसिंहके विरोधी थे उन सबने विरोधको छोड दिया उसी समय कोटेके बहुतसे सामन्त और धनियोंने अपने प्राणभयसे जन्मभूमि एवं अपने २ अधिकारी प्रदेशोंको छोडकर दूसरे राज्योंमें जाकर वास किया । जालिमसिंहने उन सामन्तोंके भाग जानेमें कोई बाधा नहीं दी, वरन् भागनेके समय यह कह-गये कि इसका दंड हम जालिमसिंहको अवश्य देंगे । वह भागे हुए सामन्त जयपुर और जोधपुरमें जाकर वहाँके अधीश्वरोंका आश्रय लेने लगे, और जाकर उन्होंने रज-वाड़ेके अन्य राजाओंसे मिलकर जालिमसिंहके अन्याय और अत्याचारोंको रोकनेके लिये तथा जालिमसिंहकी सामर्थ्यको रोकनेके लिये विशेष चेष्टा की, परन्तु उसी समयमें महा-राष्ट्रोंके दलने रजवाडेके समस्त राज्योंमें जाकर जिस प्रकारके उपद्रव करने प्रारंभ किये थे, उससे कोई राजा किसी प्रकार भी अपनी इच्छानुसार जालिमसिंहके विरुद्धमें जानेके लिये तैयार न हुए । इधर चतुर जालिमसिंहने सुअवसर पाकर जयपुर और जोधपुर इत्यादि जिन राजाओंके यहाँ जाकर कोटके सामन्तोंने आश्रय लिया था उनसे कहला भेजा कि यह सामन्त कोटेराज्यके विपक्षी विद्रोही हैं इस कारण विद्रोहियोंको आश्रय देना किसी प्रकार उचित नहीं है । ऐसा होते ही वह भागे हुए सामन्त सब निराश हो गये । किसी २ सामन्तने तो विदेशमें जाकर अत्यन्त दुःखित हो प्राण त्याग कर दिये और किसी २ ने विदेशी राजाओंके आश्रयमें रहकर उनके अन्नसे जीवन धारण करनेकी अपेक्षा अपने देशमें चला आना अच्छा माना । तब उन्होंने जालिमसिंहसे कहला भेजा कि हम लोगोंको जन्मभूमिमें आनेका अधिकार दीजिये । जालिमसिंहने उनकी इस प्रार्थनाको पूर्ण करनेमें असम्मति प्रगट न की, परन्तु उनके कोटे राज्यमें आते ही अपने अधीश्वर और जन्मभूमिके छोडनेसे उनकी गणना विद्रोहियोंमें की गई, जिस समय सामन्त भाग गये थे उस समय उनके समस्त अधिकारी देश जालिमसिंहने अपने अधि-कारमें कर लिये थे, इसीसे इस समय उनको वह समस्त देश नहीं दिये, और दयाके वशीभूत हो उनके जीवन धारण करनेके लिये सामान्य भूखंड दिये गये । इस प्रकारसे

जालिमसिंहने कोटेराज्यके सर्वमय कर्तापदपर अधिकार कर सबसे पहिले इस प्रकारसे असीम साहस कर कूटनीति और चातुरी जालका विस्तार कर शत्रुओंके चक्रको भेदन कर अपनी प्रबलताका विस्तार कर लिया, परन्तु उनके इस राजनैतिक अभिनयसे कोटेका उद्धत सामन्त सामाज किसी प्रकार भी नम्र नहीं हुआ वरन यह सब उपद्रव जालिमसिंहके ही हैं यह जानकर वह सर्वदा शंकित भावसे रहने लगे । परन्तु शीघ्र ही फिर उनके मनका भाव बदल गया ।

जालिमसिंहके विरुद्धमें जो दूसरी बार षडयन्त्रजालका विस्तार हुआ वह पहिलेकी अपेक्षा अत्यन्त प्रबल और दुर्भेद्य था । आथून देशके सामन्त देवसिंहने उस षड्यंत्रीदलके प्रधाननेतापदको ग्रहण किया । वह सामन्त छः हजार रुपयेकी[1] आमदनीवाले देशके अधीश्वर थे । देवसिंह जालिमसिंहकी सामर्थ्यको देखकर उनके विरुद्धमें शीघ्र ही शत्रु होकर खडे हुए । इन्होंने अपना बहुतसा रुपया खर्च करके किलेको भलीभाँतिसे सजाया था जो कि समस्त सामन्त जालिमसिंहके ऊपर महा विरक्त हुए थे, वह शीघ्र ही आकर देवसिंहके साथ मिले । चतुर जालिमसिंहने सब सामन्तोंको एक स्थानपर खडा देखकर जाना कि केवल राजकी सेनासे उनको परास्त करना सहज बात नहीं है, अतएव दूसरे उपायसे इस विपत्तिको हटाना चाहिये । इस समय दिल्लीके बादशाहका प्रभाव लोप हो जानेसे चारों ओर अशान्ति फैली हुई थी । मरहठोंके दल अपने अभ्युदयके साथ ही साथ फरासीसी पठानजातिका एक वीर एक सेनाका दल लेकर राज्यके किसी प्रदेशपर आक्रमण कर सर्वस्व लूट लेते और कभी किसी दो राज्योंमें झगडा होनेसे एकके पक्षको लेकर द्रव्यसंग्रह कर लेते थे । मोसेज नामक एक श्रेणीके एक मनुष्य नेताको जालिमसिंहने बुलाकर उसको आथूनके किलेपर अधिकार करनेके लिये और विद्रोही सामन्तोंके दमन करनेको नियुक्त किया । मोसेजने द्रव्यके लोभसे शीघ्र ही आथूनके किलेको घेर लिया । वहाँके सामन्त गणोंने किलेमेंसे निकलकर शत्रुओंपर आक्रमण किया, परन्तु जय लाभ नहीं कर सके । इसी प्रकारसे कई महीने तक मोसेजके प्रबल पराक्रमसे किलेके घिरे रहनेके कारण किलेमें जितना भोजनका सामान था वह सब चुक गया तब सब सामन्त मिलकर प्राण बचानेक लिये चेष्टा करने लगे । जालिमसिंहकी सम्मतिसे मोसेजने घिरे हुए सामन्तोंकी प्रार्थनासे उनको किलेमेंसे सुखपूर्वक बाहर निकलजाने दिया । उन सामन्तोंने हताश होकर अपनी सेनाके साथ कोटा राज्यको छोड दूसरे राज्यमें प्रवेश किया । इस भांति चतुर जालिमसिंहने इस दूसरे षड्यन्त्रको भी छिन्न भिन्न कर दिया । कोटेके सब सामन्तोके चले जाने पर जालिमसिंहने उनके अधिकारी प्रदेशोंको कोटे-राज्यमें मिला लिया । विरोधियोंके प्रधान नेता देवसिंहने विदेशमें जाकर दुःखसे प्राण छोड दिये । देवसिंहके पुत्रने कइ वर्षोंके पीछे विदेशसे आकर अन्तमें जालिमसिंहसे अपनेको निरपराधी बता आश्रय पानेकी प्रार्थना करी, तब जालिमसिंहने उसपर दया

१ उर्दू तर्जुमेमें ६० हजार ।

प्रकाशकर उसको पैतृक सब प्रदेश तो नहीं दिये परन्तु वार्षिक पन्द्रह हजार रुपयेकी आमदनीवाला नामोलिया प्रदेश दे दिया। बीचके और नीचे दरजेके जो सामन्त विद्रोही हुए थे, जालिमसिंहने उनके प्रति क्षमा प्रकाश की। और कोटे राज्यमें उन्हें पुनः बसनेकी आज्ञा तो दी; परन्तु उनकी शक्ति इतनी घटा दी कि जिसमें वह फिर किसी प्रकारका अनिष्ट न कर सकें, इन दोनों घटनाओंसे जान पडता है कि जालिमसिंह कैसे चतुर और राजनीतिके जाननेवाले थे,और किस प्रकारसे उन्होंने कोटे राज्यमें अपना अखंड प्रताप फैलाया था।

उपरोक्त प्रकारसे उभरे हुए शत्रुदलके विरोधमें समर और उनके षड्यन्त्रके भेदन करनेमें एवं अपनी शक्तिके फैलानेमें जालिमसिंहको अधिक समय लगा। जालिमसिंहने मेवाडके महाराणाके वंशकी दूरवाली एक शाखाकी कन्यासे विवाह किया था। उस कन्याके गर्भसे जालिमसिंहके पुत्र एवं उत्तराधिकारी माधोसिंह उत्पन्न हुए। जालिमसिंहने कोटके शासन करते समय चारोंओरकी विपत्तियोंसे घिरे रहनेपर भी मेवाडके दुःसमयमें दृष्टि रखते हुए मेवाडकी मंगलकामनाका सदा ध्यान रक्खा था। संवत् १८४७ सन्(१७९१ ई०) में जिस उद्देशसे जालिमसिंहने कोटेकी अपेक्षा मेवाडके स्वार्थ-साधन और उन्नतिका विशेष व्रत किया था, वह पाठक मेवाडके इतिहासमें पढ चुके हैं। जालिमसिंहने अपने राजनैतिक स्वार्थके लिये कोटेकी सेना सामन्त और राजभण्डारको जिस मेवाडके लिये वृथा नियुक्त करके कोटेक अलक्षमें अनिष्ट साधन किया, पाठक उसको भी पढ चुके हैं। सम्वत् १८४७ से १८५६ तक जालिमसिंहने जो राजनैतिक अभिनय किया वह मेवाडके उक्त इतिहासमें लिखा जा चुका है, इस कारण हम यहाँपर उसको फिर लिखना उचित नहीं समझते।

संवत् १८५६ में कोटेके सामन्तगणोंने जालिमसिंहके उस शासन और स्वेच्छाचारको न सहकर फिर उनके मारनेके लिये षड्यन्त्र किया। जालिमसिंहके जीवनरूपी दीपकके बुझानेके लिये अनेक समयपर गुप्तरीतिसे बहुतसी चेष्टाएँ हुई किन्तु जालिमसिंहके सदा सतर्क रहनेके कारण मारनेवालोंकी आशा किसी समय भी पुरी न हुई। संवत् १८३३ में आथूनके सामन्त जालिमसिंहके विरोधमें हुए, अन्तमें उनको देशसे निकाल देनेके पीछे फिर २० वर्षतक किसीने जालिमसिंहके मारनेकी चेष्टा नहीं की। बीस वर्षके पीछे संवत् १८५६ में दस सहस्रकी आयुवाले मोसेन देशके सामन्त बहादुरसिंहने जालिमसिंहके विरोधमें षड्यन्त्र रचा। जालिमसिंहके प्रबल प्रतापसे कोटेके जिन सामन्तोंकी सब सम्पत्ति छीनी गई थी अब वह सब सामन्त बहादुरसिंहके साथ मिल गये। उन्होंने बडे गुप्तभावसे षड्यन्त्रको चलाया, कि जिससे उसकी पवनको भी कोई स्पर्श न कर सके,जिस दिन उन्होंने अपने उस षड्यंत्रके कार्यको पूरा करनेका संकल्प किया, उस दिन दोपहरके समय कवल जालिमसिंहको उसकी खबर मिल गई। षड्यन्त्र रचनेवाले किस २ को मारेंगे,अति गुप्तभावसे उनके नामोंकी एक सूची बनाली उसमें सपरिवार जालिमसिंहको,उनके मित्र और उपदेष्टा पंडित लालाजीको मारडालनेके

सम्बन्धमें लिखा था। षड्यन्त्री गणोंका विचार था कि जिस समय जालिमसिंह दरबारमें बैठे हों उसी समय सबके सामने यह हत्याकाण्ड हो। कहा जाता है कि जिस समय जालिमसिंह दरबारमें बैठे थे उसी समय उन्होंने षड्यन्त्र रचनेवालोंके गुप्तभेदको पाकर क्षणमात्रमें ही अपनी रक्षाके लिये उपाय कर लिया। जो पहरेदार उनके शरीरके रक्षक थे उन सबोंको हटाकर उन्होंने "पायेगा" नामक प्रबल पराक्रमी अश्वारोही सेनाको बुलाकर अपनी रक्षाके लिये नियुक्त किया। अतएव हत्याकी अभिलाषासे षड्यन्त्र रचनेवालोंने जिस समय दरबारपर आक्रमण किया उसी समय वह दरबारमें शस्त्रधारी घुडसवार-सेना देखकर हताश हो गये। तब घुडसवारोंने शीघ्र ही उनपर आक्रमण किया, और वह भाग निकले, तिसपर भी बहुतोंको पकड लिया और बहुत भाग गये। षड्यन्त्रके नेता बहादुरसिंहने भागकर चम्बल नदीके किनारे पाटननामक स्थानके बीच हाडा-जातिके कुलदेव केशवरायके मंदिरमें शरण ली। उन्होंने विचारा कि पुरानी रीतिके अनुसार जब केशवरायके मंदिरमें आश्रय लेता ँ तब जालिमसिंह कभी बूँदीराजके बीच इस मंदिरमें बलपूर्वक आकर मुझे नहीं पकडेगा। किन्तु उनकी वह आशा शीघ्र ही भ्रांतिके रूपमें बदल गई। उग्र प्रतापी जालिमने सरलतासे मंदिरकी पवित्र प्रथाको नष्ट कर उसमेंसे बहादुरसिंहको पकडवाकर मरवा डाला।

इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंहके अनुकूल पक्षको लेनेवालोंका कथन है कि जालिमसिंहने अपनी रक्षा वा अपने स्वार्थके लिये बहादुरसिंहको नहीं मारा, उनके हाथमें जो गुरुभार अर्पित था उस गुरुभारको पालन करने अर्थात् कोटाके महाराव उमेदसिंहके स्वार्थ और जीवनकी रक्षाके लिये ही उन्होंने इस कठोर व्यवहारको किया था। षड्यंत्र करने-वालोंका यह आशय था कि हत्याकाण्डका अभिनय करके महाराव उमेदसिंहको सिंहासनसे हटाकर महाराजके एक छोटे भाईको कोटेके राजसिंहासनपर बैठा दें। यह बात कहाँ लों सत्य है, इसका विशेष प्रमाण नही मिलता। किन्तु जालिमसिंहने जैसे कठोर शासनके दंडको चलाकर सामन्तोंके हृदयको चूर्ण किया था और महाराव उमेदसिंहको जैसे अपना खिलौना बनाया था उससे यह बात सत्य कही जा सकती है। इस समय कोटाके राजपरिवारके बीच महाराव उमेदसिंहके चचा राजसिंह और दोनों भाई गोवर्द्धन सिंह एवं गोपालसिंह जीते थे। आर्यूनके सामन्तगण जिस समय महा षड्यन्त्रके जालको फैलाकर जालिमसिंहके विरोधमें खडे हुए थ, उसी समय गोवर्धन और गोपालसिंह सिंहासन पानेकी इच्छासे उस षड्यन्त्रमें लिप्त थे, इस बातके प्रकाश होनेसे जालिमसिंहने तुरन्त ही उन दोनों भाइयोंको भी कैद कर लिया। बडे गोवर्धन दशवर्षतक कैदमें रहकर परलोक सिधारे, और छोटे गोपाल भी बहुत दिनोंतक कैदमें रहकर परलोकवासी हुए। महारावके चचा राजसिंह वृद्ध होकर बहुत दिनोंतक जीते रहे किन्तु राजनैतिक किसी षड्यन्त्रमें, किसी गोलयोगमें युक्त नहीं होते थे, इसीसे जालिमसिंह उनकी ओर नेत्र उठाकर नहीं देख सकते थे। राजसिंह नगरके बीच देव-मन्दिरकी श्रेणीके बाहर कभी नही जाते थे।

कर्नल टाड लिखते हैं कि "जालिमसिंहकी शक्तिको हटाने और उनके जीवनको नष्ट करनेके लिये अनेक प्रकारके उपाय उनके विरोधियोंने किये। सब मिलाकर अठारह बार उनके मारनेके लिये षड्यन्त्र रचे गये, किन्तु प्रत्येक बारमें जालिमसिंहके बुद्धिबलने विरोधियोंके उद्देश्यको व्यर्थ कर दिया। कहा जाता है कि प्रकाशमें और गुप्त रीतिसे बलसे, विषसे और अस्त्र शस्त्र आदिसे उनके मारनेके उपाय रचे गये। किन्तु राजमहलोंमें राजपूतोंकी स्त्रियोंने जो जालिमसिंहके वध करनेकी अभिलाषा की थीं, वह षड्यन्त्र बडा भयानक था। जालिमसिंहके रूप सौन्दर्य्यपर मोहित राजमहलमें रहनेवाली एक रमणी यदि अपनी चतुराईसे सहायता न करती तो जालिमसिंह अपनी रक्षा उस समय नहीं कर सकते थे। एक समयकी बात है,—छोटे राजकुमारकी माताने जालिमसिंहको राजमहलमें बुलाया। जालिमसिंह राजमाताके बुलानेसे उनके महलके समीपवाले घरमें पहुँचे, इस समय बहुतसी राजपूत रमणीगणोंने नंगीतलवार लिये अनेक अस्त्र शस्त्रोंसे सजी हुई अवस्थामें जालिमसिंहपर आक्रमण किया। और शीघ्रही जालिमसिंहको बांधकर कैद कर लिया। राजपूत रमणी कैसी वीर नारी हैं, अस्त्र चलानेमें कैसी चतुर हैं, कैसे साहस और बलशालिनी हैं, जालिमसिंह इसको भली भांति जानते थे। अतएव उन शस्त्रधारिणी महाशक्तियोंसे जालिमसिंह बँध गये और उन्होंने जाना कि अब किसी भांतिसे भी यहांसे छुटकारा नहीं मिल सकता। सौभाग्यसे जालिमसिंहको एक साथ न मारा और जालिमसिंहसे उनके प्रधान २ जीवनचरित्रोंको पूँछने लगी। उनकी यही इच्छा थी कि जालिमको प्रश्नोंके उत्तर देते समय अचानक मारडालेंगी। बीरबालागण जालिमसे एक २ करके पूँछती थीं, इसी समय प्रधानरानीकी अत्यन्त बलशालिनी प्रधानदासीने महाकालभैरवीकी मूर्तिसे आकर जालिमसिंहको अनेक तिरस्कार और कटुवचनोंसे धिक्कार कर बलके साथ उन सब वीरनारियोंको क्रमसे निकाल दिया। जालिमसिंहने उस महा विपत्तिसे उद्धार पाया और जाना कि प्रधानदासी यदि इस चतुराईसे मेरी सहायता न करती तो अवश्य ही आज प्राण त्यागने पडते।

इतिहास जाननेवाले टाड साहबने लिखा है कि जालिमसिंहके विरोधमें जैसे क्रमानुसार षड्यन्त्र रचे गये उसमें शत्रुओंको विफलमनोरथ कर यदि अन्य मनुष्य होता तो निश्चय ही उन्मत्त होकर प्रत्येक शत्रुसे बदला लेता, किन्तु जालिमसिंहने कभी किसीके साथ अपने बदला लेनेकी इच्छा नहीं की। यद्यपि वह रात्रिके समय एक बडे मंदिरमें शयन करते थे परंतु कभी अप्रयोजनीय भयजालमें नहीं फंसे, अपनेको वह सभी प्रकारसे छोटा मानते थे एवं सरलतासे इस बातको जानलेते थे कि कौन उनका स्वार्थ नष्ट करनेकी इच्छा रखता है, अतएव वह पहिले ही सावधान हो जाते थे। उनके अधिकारमें पुलिस अर्थात् शान्तिरक्षाविभाग इतना चतुर था कि अनेक स्थानोंमें वैसी पुलिस नहीं थी। वह कर्म्मचारियोंको उचित तनख्वाह देते और काम करनेवालोंको बडा पुरस्कार देते थे। वह अपने सब विभागोंके ऊपर बडी दृष्टि रखते थे। किसी पर भी वह पूर्ण विश्वास नहीं करते थे। वह अपनी चतुरता,

नीतिज्ञता और विलक्षणताके साथ राज्यके सब विभागोंमें दृष्टि रखते थे, इसीसे चारों ओर अत्याचार, उपद्रव, राजनैतिक गोलयोग, षड्यन्त्र और बडे २ युद्ध होनेपर भी उन्होंने आधी सदीतक अपने प्रबल प्रतापसे और अतुल शक्तिसे राजकार्यको चलाया। " कर्नल टाडकी यह युक्ति सत्य पूर्ण इतिहासको प्रमाणित करती है।

तीसरा अध्याय ३.

जालिमसिंहकी शासननीति—मेवाडके सम्बंधमे जालिमसिंहके राजनैतिक गुप्त उद्देश--मेवाड़के कल्याणके लिये जालिमसिंहसे कोटेका स्वार्थ नाश होना--जालिमसिंहके अत्याचार--जालिमसिंहका राजमहलोंको छोड़ राज्यमें घूमना--वस्त्रावासमें रहना-नवीन शिक्षित सेनाको तैयार करना--सेनाके दलको विलायती अस्त्र देना, और शिक्षा देना—कोटेकी राजप्रणालीका संस्कार-पटेलकी रीति--करलेनेकी रीतिको बदलना--पटेलोंको पुनः पद मिलना--पटेल समिति--उनके शासनकी शक्ति--बोहरागण--नूतन पटेलोंसे किसानोंको कष्ट पहुंचना—पटेलोंको कैद करके उनको अर्थ दंड देना एवं पदसे हटाकर पटेलकी रीतिको तोड देना।

हम कोटाराज्यके जिस समयके इतिहासको वर्णन करते हैं वास्तवमें महाराज राणा जालिमसिंह ही उस समय कोटेक स्वामी थे, और महाराव उमेदसिंह उनके खेलके खिलौनेस्वरूप सिंहासनपर विराजमान थे। जालिमसिंहके राजनैतिक अभिनयका कुछ विवरण हम पहिले अध्यायमें लिख आये हैं, उन्होंने शासनकर्त्ता एवं विधानकर्त्ताके रूपसे किस प्रकार अभिनय किया, अब उसका ही वर्णन करते हैं। जालिमसिंहने कोटाराज्यके ऊपर अपनी महान् राजनैतिक ऊंची अभिलाषाको पूर्ण करनेके लिये कोटाराज्यकी धन-सम्पत्ति और सेनाकी शान्ति सभीको नष्ट किया। संवत् १८२१ में जिस समय मेवाडके महाराणाके साथ जालिमसिंहकी बातचीत हुई उसी समयसे संवत् १८५६ तक राज-राणा जालिमसिंहने कोटाराज्यपर जिस भाँति अपना प्रताप फैला रक्खा था, मेवाड-राज्यके ऊपर भी उसी प्रकारसे अपना प्रबल प्रताप और अधिकार बढानेके लिये वह दृढ चेष्टा करते थे। उन्होंने उस महान् नैतिक आशाको पूरा करनेके लिये कोटाराज्यका सर्वनाश कर किसानोंको खरीदे हुए दासके समान कर डाला। संवत् १८४० में अत्याचार और पीडा भयङ्कर रूपसे बढ गई, सब कुछ लेकर भी किसानोंपर जालिमसिंहने उनकी आमदनीके ऊपर जो कर बांध रक्खा था उसके देनेमें स्वभावसे ही किसान असमर्थ थे। तिसपर जालिमसिंहके नौकर जब कर वसूल करने जाते और किसानोंसे न पाते तो उनके हल, गऊ आदि उस करके नामसे ले आते थे, इस कारण किसान लोग एक साथ अपने जीवनकी आशा छोड चुके थे। बहुतसे किसान

भूखों मरने लगे, कोई २ भागगये किन्तु उस समय रजवाडेके चारोंओर विपत्तियोंका सोता बहनेमें वह किसका आश्रय लें ? राजराणा जालिमसिंहने उन किसानोंके जो पिताके क्षेत्र थे, उनको और हल इत्यादि खेती करनेकी सामग्री और बैल आदि पशुओंको छीन लिया था, इससे बहुतसे किसान दूसरा उपाय न देखकर कुछ सामान्य वेतन लेकर दासस्वरूपसे अपने पासके पहिले ही खेतोंमें उन हल आदिसे खेती करनेमें सम्मत हुए ! कोटेके प्रायः सभी किसानोंके भाग्यमें इस प्रकारका शोचनीय व्यापार हुआ, इस कारण राजराणा जालिमसिंहने महाराव राजा उमेदसिंहकी ओरसे कोटेराज्यके समस्त कृषि क्षेत्रोंके अधीश्वर होकर जो पृथ्वी अबतक परित्यक्त भावसे पडी थी उस सबमें कृषिकार्य करना प्रारंभ कर दिया और आप स्वयं कृषकपति पदपर प्रतिष्ठित हुए ।

यद्यपि जालिमसिंह मेवाडराज्य पर आधिपत्य विस्तार करनेके लिये बराबर कई वर्षसे चेष्टा करते आये थे, और उसी उद्देशको पूर्ण करनेमें उन्होंने कोटेका सर्वनाश किया था, परन्तु अंतमें एक भयंकर घटनाके होनेसे उनकी उस ऊंची अभिलाषाकी जडमें भयंकर आघात लगा । महाराष्ट्र नेता इंगिलया परिवारके साथ जालिमसिंहकी अधिक मित्रता थी । उसी इंगिलियाके वंशधर बालाराव मेवाडके महाराणाके द्वारा बंदी होकर उदयपुरके कारागारमें रक्खे गये, जालिमसिंह उन्हीं झालारावका उद्धार करनेके लिये गये, उसीसे महाराणाका कोप इनके ऊपर हुआ इस कारणसे उन्होंने महाराणाको अपने हस्तगत करके मेवाडमें अपनी प्रबलता विस्तार करनेके अपने हृदयरूपी बगीचेमें जिस आशाके वृक्षको यत्नरूपी जल सींचकर बढाया था, वह एकबार ही चिरकालके लिये जडसे उखड गया । तब तो जालिमसिंहको चैतन्यता हुई, वह यह समझ गये कि अपने स्वार्थसाधन करनेके लिये काल्पनिक भ्रान्त आशाको पूर्ण करनेके लिये उन्होंने अन्याय और अकारणसे कोटेकी प्रजा और कोटेके अधीश्वरका सर्वनाश किया है । चतुर राजनीतिज्ञ जालिमसिंह सावधान हो पूर्वोक्त हानिको पूर्ण करनेके लिये शीघ्र ही नवीन अनुष्ठान करनेमें प्रवृत्त हुए ।

संवत् १८५६ में मोसेनके सामन्तके द्वारा षड्यन्त्र जालका विस्तार होनेके पूर्वतक जालिमसिंहने किलेके महलमें निवास किया था, परन्तु संवत् १८६० सन् (१८०३-४ ई०) में उन्होंने झाला रावको छोडकर मेवाडसे लौटते ही उस महलमें निवास न कर अन्यत्र वास करनेकी इच्छा की । उस समय बृटिश सेनाने सम्मिलित महाराष्ट्र दलके विक्रम और प्रतापकी जडमें विषम आघात किया और महाराष्ट्रोंके अधिकारी बहुतसे देशोंको छीन लिया, तब महाराष्ट्र शीघ्र ही दल भंग करके भारतवर्षके अनेक प्रान्तोंमें जाकर लूटमार और अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगे । जालिमसिंह अपनी तीक्ष्णबुद्धिके बलसे समझ गये कि महाराष्ट्रोंके इस प्रकारके अत्याचारके समयमें राजधानीके महलोंमें न रहकर जिस स्थान पर उनके द्वारा आक्रमण होनेकी संभावना है उसके ही निकट रहना इस समय उचित है । उनके उस महलके छोडनेमें दो प्रधान उद्देश थे-पहिला तो कोटेकी राजस्वरीतिका संस्कार साधन, दूसरा महारा-

ष्ट्रोंका दल कोटराज्यके जिस प्रान्तमें जाकर पडेगा उसी प्रान्तमें जाना। यद्यपि हमारा यह विश्वास था कि बुद्धिमान् जालिमसिंहने उन दोनों उद्देशोंके वशवर्ती होकर महलको छोडनेका आग्रह किया था, परन्तु कोटेके जातीय इतिहाससे जाना जाता है कि एक समय रात्रिमें महलके ऊपर बैठकर एक (पेचक) उल्लूने बिकट स्वरसे चीत्कार किया था, जालिमसिंहने राजधानीके समस्त गणक और ज्योतिषियोंको बुलाकर पूछा, उन्होंने गणना करके कहा कि "इस महलमें निवास करना अब किसी प्रकार भी उचित नहीं, अब इसमें निवास करनेसे आपके भविष्यत्में अमंगल और अनिष्ट होनेकी पूरी संभावना है।" जालिमसिंहने ज्योतिषियोंके उस उपदेशसे महलको छोड दिया, हाडाजातिके इतिहास लेखककी यही उक्ति है, परन्तु हमारा यह बिश्वास नही है कि जालिमसिंहने महलके ऊपर कुलक्षण युक्त पेचकके चीत्कार करनेसे ही महलको छोड दिया था।

गणकाचार्योंने महलकी अपवित्रताके विषयमें एक बाक्य प्रकाशित किया था इससे राजराणा जालिमसिंह शीघ्र ही महलको छोडकर अनुचरोंको साथले कोटेराज्यमें भ्रमण करने और इतने दिनोंके पीछे उस राज्यमें अपनी राजनैतिक ऊंची अभिलाषाको बांध रखनेमें प्रवृत्त हुए। जालिमसिंह भ्रमण करनेके समय भलीभांतिसे जान गये और उन्होंने स्वयं अपने नेत्रोंसे देख लिया। अपने स्वार्थसाधनके लिये मेवाडके निमित्त जो कुछ अनुष्ठान किया था उससे कोटेराज्यका किस प्रकारका अनिष्ट साधन हुआ और प्रजा किस प्रकारकी शोचनयिदशामें पडी है, वह और भी जान गये कि उनकी कठोर राजनीतिके दोषसे कोटेराज्यके तीन अंशोंमेंसे एक एक अंशकी बराबर किसान एकबार ही सर्वस्वात हो गये हैं, तथा और भी दो अंश एकबार ही भरोसाहीन और घोररूपसे असंतुष्ट हुए हैं। इस समय कोटेके राजस्वकी अवस्था भी जैसी शोचनीय हो गई है उससे भी उनको अपने पूर्वानुष्ठित नीतिके कुफलका भलभिांतिसे परिचय मिल गया। इस समय वैश्य और महाजन समाजमें उसकी प्रतिपत्ति कुछ भी नहीं थी, कोई वैश्य वा महाजन उनकी बात अथवा उनके हस्ताक्षरकी हुँडीपर विश्वास नहीं करता था। इतने दिन कोटेकी सर्वसाधारण प्रजा किसी विषयपर कुछ अभियोग उपस्थित करती थी, कारण यही था कि वह उसपर कुछ भी ध्यान नहीं देते थे, जिस उपायसे हो धनका संग्रह करना ही उनका मुख्य उद्देश था, इस कारण वह किसीकी कुछ सुनते न थे, प्रजाके अतिरिक्त कर देनेमें असमर्थ होते ही यह उनका सर्वस्व छीन लेते थे। परन्तु शीघ्र ही प्रकाशित हो गया कि कठोर और अन्याय राजनीतिकी प्रबलतरंगके निवारण न करनेपर समयपर राज्यकी विपत्तिके समयमें प्रजासे सहायता प्राप्त करना अत्यन्त कठिन हो गया है, इस कारण ऊंची प्रतिभाशाली जालिमसिंह शीघ्र ही उस प्रबल राजनैतिक रोगका प्रतिकार साधन करनेके लिये अनेक प्रकारकी औषधियोंका अविष्कार करनेमें प्रवृत्त हुए। वह सबसे पहिले गागरौलके अभेद्य किलेके निकट एक स्थायी डेरा स्थापन करके वहाँ रहने लगे; किसी महलमें न रहकर उन्होंने केवल उसी डेरेके ऊपर एक सामान्य शामियाना

बना लिया। इनको इस भांति सामान्य भावसे रहता हुआ देखकर अन्यान्य सम्भ्रान्त सामन्त और राजपुरुष भी उसी भावसे रहने लगे। उन्हीं सामान्य डेरोंमें समस्त राजकार्य भी होने लगे।

चतुर जालिमसिंहने जिस स्थानपर डेरे स्थापन किये थे वह स्थान भी उनके राजनैतिक उद्देश साधनके लिये सम्पूर्ण रूपसे उपयुक्त था। दक्षिणाञ्चलसे कोटेराज्यमें जानेके लिये जो प्रधानमार्ग हैं उन स्थानोंके वह ठीक बीचमें था, और दूसरी ओर कोटेके अधीनके जिन देशोंमें कठिन भील जाति वास करती थी वह स्थान भी निकट ही थे, शेरगढ और गागरौल नामक दो प्रबल किलोंके कुछ ही दूर होनेसे उनको अपनी रक्षा करनेका विशेष सुभीता हो गया था। जालिमसिंहने अपनी समस्त धनसंपत्ति और सामरिक उपकरण शेषोक्त किलेमें रख लिये और अपनी सामर्थ्यके अनुसार दोनों किलोंको अभेद्य करनेमें भी कसर नहीं की। इन्होंने शीघ्र ही एक नवीन सेनाकी सृष्टि करके अंग्रेजी रीतिके अनुसार उनको शिक्षादान और अस्त्रदान करके एक२ सेनादलको एक २ जन "कप्तान की उपाधिकारी सैनिक पुरुषोंके अधीन रक्खा"। अन्य पक्षमें "राजपल्टन" नामक राजकीय सेनाको भी उन्होंने इस प्रकारसे शिक्षा दी कि उसने अनेक युद्धोंमें विशेष वीरता और असीम साहस प्रकाश किया। जालिमसिंहने सेनादलको इस भावसे शिक्षित और सजाकर रक्खा कि वह दल आज्ञा पाते ही एक मुहूर्तमें जिस प्रान्तमें शत्रु आते, उसी प्रान्तमें जाकर युद्ध उपस्थित कर सकता था, इस भावसे सेना तैयार रहती थी। राजधानीमें राजमहलोंके भीतर रहनेसे इसके सम्बन्धमें अधिक विलम्ब होनेकी जो संभावना थी, इस स्थानपर वह सब विलंबके कारण भी दूर हो गये।

जालिमसिंहको अपने जीवनके इस समयतक राजनैतिक षड्यन्त्ररूपी समुद्रकी प्रबल तरंगोंमें निमज्जित होनेसे भूमिकी अवस्थाके संबन्धमें और राजस्वके संबन्धमें कोई विशेष अभिज्ञता प्राप्त करनेका अवसर नहीं मिला था। वह अबतक चिरकालसे प्रचलितरीतिके अनुसार राजस्वके बदलेमें क्षेत्रोत्पन्न द्रव्य निर्द्धारित परिमाणके अनुसार ग्रहण करते आये थे। परन्तु वह इस समय भली भाँतिसे जान गये कि यह रीति सभी अंशोंमें असुविधाजनक थी; एक ओर इस रीतिसे राजस्व संग्रह करनेवालोंने जिस प्रकार प्रजाके ऊपर अत्याचार और उपद्रव किये थे, अधिकतासे द्रव्यको ग्रहण करके अपने उदरको पूरण किया था, दूसरी ओर किसी २ प्रजाने भी इसी कारणसे राजप्राप्य राजस्वदानके समयमें भी वंचना की थी, इसी रीतिको राजाके पक्षमें संपूर्ण अहितकारी जानकर उसे केवल कर संग्रहकरनेवाले पटेलोंके उदर पूर्णका उपायस्वरूप देखकर वह शीघ्र ही उस प्रजाकी अनिष्ट मूलक तथा राजकी क्षतिमूलक रीतिको एकबार ही दूर करनेमें प्रवृत्त हुए।

राजमन्त्री जालिमसिंहने सबसे पहिले बटाई अर्थात् राजस्व कर शुल्कके बदलेमें क्षेत्रमें उत्पन्न हुए द्रव्य ग्रहणका समस्त तथ्य, एवं विवरण संग्रह किया और किस उपायसे पटेलोंने प्रजाके ऊपर अत्याचार करके अपना पेट भरा था, उसको अत्यन्त गुप्तभावसे

जानकर कोटेराज्यके समस्त देशके पटेलोंको अपने यहां बुला भेजा । पटेलोंके आते ही उन्होंने प्रत्येक पटेलको उनके अधीनमे कितनी भूमि है? कितने किसान कर आदि देते हैं, किस प्रकारके उपायसे कर लिया जाता है, और उनकी निजकी अवस्था कैसी है ? आमदनी कितनी है ? लगत कहांतक है ? इसको लिखकर सरलतासे जान लिया कि समस्त राज्यमे कितने किसान और कृषिक्षेत्र हैं, और कितना राजस्व संग्रह होता है, जालिमसिंह समस्त ज्ञातव्य विवरणको संग्रह करके देशमें भ्रमण करनेके लिये बाहर हुए । भ्रमणकरनेके समयमे प्रत्येक ग्राम चकबन्दी अर्थात् भूमिका परिमाण निर्द्धारण करके उस भूमिमे किस २ नदीसे खेती होती है, और किस २ भूमिकी खेती वर्षाके ऊपर निर्भर करती है, किस २ भूमिमे खेती सरलतासे होती है, किस २ भूमिमे खेती कठिनतासे होती है, और कौन २ भूमि पहाडी है तथा किस २ भूमिमे पशु आदि चराये जाते हैं, उसको वह स्वतन्त्र २ रूपसे बिभक्त करने लगे । उन्होने पिछले कई वर्षोंका हिसाब देखकर भूमिकी सब आमदनी कितनी होती थी उसका अनुमानसे एक २ का हिसाब कर दिया । उसके पीछे पूर्वप्रचलित रीतिके अनुसार और राजस्वके बदलेमें प्रजासे धान्यादि उत्पन्न अनाज नहीं लिया जायगा सभीको उसके बदलेमें नगद रुपया देना होगा यह निर्धारण किया ।

नीतिविशारद जालिमसिंहने इस प्रकारसे समस्त भूमिका कर नियत करके अन्तमे करसग्राहक पटैलगणोंको परिश्रम स्वरूपसे प्रत्येक पटेलके अधीनमे जितने वीघे जमीन होगी, पटेलको उस जमीनके प्रत्येक वीघके ऊपर डेढ आना कर देना होगा इस प्रकारका नियम निश्चय कर दिया, परन्तु पटेलोको यह भी विदित कर दिया कि उनसे अपनी अधिकारी भूमिका साधारण प्रजाके कर देनेकी अपेक्षा बहुत कम कर लिया गया है । तब जो कोई पटेल प्रजासे प्राप्त उस डेढ आनेके अतिरिक्त और कुछ ग्रहण करेगा तो उसके अधिकारकी भूमि राजा अपने अधिकारमे कर लेगा । इस नवीन व्यवस्थाके अनुसार किसी पटेलको वार्षिक ५रुपये १५ रु०सहस्र मुद्रा कर संग्रह करनेके परिश्रम स्वरूपसे मिलेगी।यह जाना जाता है कि पहिले पटेलोंने फिर अपने२ पदपर अभिषिक्त होनेके लिये विशेष चेष्टा की और एक २ जनने जालिमसिंहको नजरमें दश२ बीस २ इस प्रकार करके पचास हजार रुपये दिये,इस उपायसे जालिमसिंहने नजरानामें दश लाख रुपया पाया और उसको अपने शून्यराजभण्डारमें मिला लिया ।

उक्त प्रकारसे नवीन व्यवस्थाको देखकर किसान लोग आशा करने लगे और इतने दिनोके पीछे समझा कि उनके सुखका सूर्य उदय हो गया, कारण कि जो कर दिया जाता था उसके बढनेसे यह जान गये कि पटैलोंके अत्याचार उत्पीडन और अन्याय कर दानके हाथसे अब एकबार ही छुटकारा मिलेगा । परन्तु उनकी उस आशाके साथ ही साथ और एक भयंकर कारण दिखाई दिया । जालिमसिंहने यह आज्ञा प्रचार कर दी, कि पहिले जिस भाँति किसी २ जमीनपर वर्षाके न होनेसे प्रायः और किसी नैसर्गिक कारणसे फसलके न होनेसे उसका कर घटाया जाता

था; इस समय वह नहीं होगा, और जिस जमीनको किसानोंने आबाद नहीं किया पटैल उस जमीनको अन्य मनुष्यको नवीन व्यवस्थाके अनुसार खेती करनेके लिए दे दें। यदि कोई उस जमीनको न ले तो वह जमीन जालिमसिंहकी खास जमीनरूपसे परिणत होगी और दूसरी ओर जालिमसिंहने राजस्वके लेने न लेनेका समस्त भार एकमात्र पटैलोंके ऊपर ही अर्पण किया।

इतने समय तक पटैल लोग किसानोंके ऊपर इच्छानुसार व्यवहार करते, और केवल वार्षिक वा त्रिवार्षिक पटैलवराके नामसे कर देते थे, इस समय जालिमसिंहने उस करको दूर करनेकी आज्ञा दे दी, यदि पटैल प्रजाके ऊपर किसी प्रकारके अत्याचार न करके कर देते हों तो राजदरबारसे इनको आश्रय देकर सम्मानित किया जायगा। इस प्रकारसे पटैल लोग ग्राम समारोहके प्रतिनिधि और प्रजाके रक्षकरूपसे राजकीय कर्मचारीरूपमें गिने गये। इन पटैलोंको सन्तुष्ट करके राज्यके आभ्यन्तरिक उत्कर्षसाधनमें उनको उत्साहित करना जालिमसिंहका आभ्यन्तरिक उद्देश था इस कारण इस नवीन व्यवस्थासे उस उद्देशके पूर्ण होनेके विशेष लक्षण प्रकाशित होने लगे। जालिमसिंहने नव नियोजित पटैलोंको सम्मानस्वरूपमें सुवर्णके कंगन और पगडी देकर सबको यथास्थानपर भेज दिया।

इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंहने उन बहुतसे पटैलोंमेंसे चार बुद्धिमान् चतुर पटैलोंको एक समितिके सदस्य पदपर नियुक्त करके अपने यहां रक्खा था। सबसे पहिले वह चारों पटैल एकमात्र राजकीय विषयक कार्य्योंमें नियुक्त हुए, शीघ्र ही शान्तिरक्षा अर्थात् पुलिसविभागके कार्य भी उनके हाथमें सौंपे गये, सबसे पीछे जालिमसिंह राज्यके भीतरी विषयमें भी उनका परामर्श लेकर कार्य करते थे। ग्रामसमाहार नगरसमूह और राजधानीके पंचोंसे जिन विषयोंकी मीमांसा होती थी, जो सब विचार निष्पन्न होते थे, उन सबके पुनर्विचार होनेका भार तक उसी समितिके हाथमें अर्पण किया गया।

इस प्रकारसे कुछ ही समयमें उस समितिका राजस्व, विचार और शान्तिरक्षा तीन विभागोंपर अधिकार हो गया। कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "समस्त जगत्‌में जालिमसिंहके शान्तिरक्षा विभागके समान अन्य किसी राज्यमें शान्तिरक्षाका विभाग किसी समय भी नहीं था, कोटेराज्यमें सभी जगह गुप्त चारित्ररूपी जाल विस्तारित था, और उस जालके बाहर कोई नहीं भाग सकता था।

यथार्थपक्षमें उक्त नवनियोजित पटैलोंने सर्व साधारण प्रजाके स्थानीयप्रभु होकर भली भाँतिसे जान लिया कि प्रजाके ऊपर अर्थ दंड वा बलपूर्वक प्रजासे जो कुछ लेते थे वह सरलतासे प्रकाशित हो जायगा। फिर प्रजाके ऊपर उत्पीडन कैसे करें इस कारण वह अर्थ पिशाची पटैलगण अन्य उपायसे अपने उदर पूर्ण करनेके लिए उद्यत हुए, और विचारने लगे कि इस उपायके करनेसे उनके अत्याचार और उपद्रव शान्त नहीं होंगे और कार्य सिद्ध हो जायगा। रजवाडोंमें बोहरानामक एक श्रेणीके बनिये हैं,

वही दीन दुःखी किसान और प्रजाको समय समय रुपया कर्ज देकर उनकी सहायता करते हैं, पटैलोंने अनेक चिन्ता करनेके पीछे उन्हीं महाजनोंसे कार्य कराना प्रारम्भ किया।

रजवाडेके बोहरोंके सम्बन्धमें महात्मा टाड साहबने लिखा है कि "बोहरागण किसानोंके कृषी कार्यको समाधान करनेके लिये जिस किसी प्रयोजनीय द्रव्य अर्थात् गोकर्षण यन्त्र बीज आदि देते थे, और जब तक धान्य न उत्पन्न हो और वह न कटै तब तक सहायता देते रहते थे। परन्तु इस प्रकारसे सहायता करनेके पहिले किसानोंके साथ बोहरोंका नियम निश्चय होता था कि धान्यके उत्पन्न होते ही बोहराने जो कुछ धन-की सहायता की है उसको सूद सहित रुपया मिलैगा। इन्हीं बोहरोंसे किसानोंको वि-शेष सहायता मिलती थी इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। विशेष करके बोहरा-गण किसी समय भी अपने प्राप्त धनके अतिरिक्त ग्रहण वा किसानोंके प्रति किसी प्रकारका उपद्रव नहीं करतेथे, और किसान भी बोहरोंकी असंतुष्टिके लिए चेष्टा नहीं करते थे, कारण कि बोहरा इस बातको भली भाँतिसे जानते थे कि अत्याचार और उत्पीडन करनेसे कोई किसान भी फिर उनसे सहायता नहीं लेगा, और इस बातको किसान भी जानते थे कि एक बोहराको ठगनेसे फिर और कोई बोहरा उनकी सहायता नहीं करेगा। इस कारण दोनों ही सावधानीके साथ कार्य करते थे, अधिक क्या कहैं एक २ ग्रामका बोहरा सदा एक२ किसानको सहायता देता आया था, किसान भी ग्रामके बोहरोंको छोडकर अन्य किसी ग्रामके बोहरोंका आश्रय नहीं लेता था"।

राजराणा जालिमसिंहके कोटाराज्यसे पूर्वरीतिके अनुसार किसानोंसे कर स्वरूप उत्पन्न हुए धान्यका अंश ग्रहण करनेकी रीति एक बार ही दूर करके उसके बदलेमें नगद रुपया ग्रहण करनेकी रीति प्रचलित करनेके पूर्व तक किसान उसी उपायसे खेतीका कार्य करते थे। नवीन नियोजित पटैलोंने इस समय देखा कि एक मात्र निय-मित कर ग्रहण करनेके अतिरिक्त अन्य किसी उपायसे कुछ धन किसानोंसे ग्रहण करने पर प्रधान मंत्री जालिमसिंह सर्वनाश साधन करेंगे, इस कारण वह सब लोग षड्यंत्र करके उक्त बोहरोंका नाश करके आप स्वयं महाजनोंका कार्य करनेके लिए तैयार हुए। प्रकाश्यरूपसे बोहरोंके कार्यमें बाधा देनेसे राजराणा जालिमसिंह महाक्रोधित होंगे यह जानकर उन्होंने एक मध्यवर्ती उपायका अवलम्बन किया। क्षेत्रमें धान्यके पकजाने पर जिस समय किसानोंने धान्यको काटनेके लिए पटैलोंके समीप अनुमतिकी प्रार्थना करनी आरंभ की उसी समय पटैलोंने कहा, "पहिले पहल राजाका कर दे दो, पीछे धान्य काटना।" दीन किसान धान्य काटकर बिना बेचे हुए कहाँसे रुपया दें? इसी कारण वह महा विपत्तिमें पडे और उन्होंने जाकर बोहरोंका आश्रय लिया। परन्तु चतुर पटैलोंने बोहरोंसे जता दिया कि "जिन किसानों पर राजाका प्राप्त कर बाकी है तब तक वह किसानोंको किसी प्रकार भी ऋण न दे सकेंगे।" बोहरागणने पटैलोंके इस निषेध वचनोंसे भयभीत होकर किसानोंको आगे ऋणदान नहीं किया,

इस कारण किसान अन्य उपाय न देखकर अंतमें उन पटैलोंके शरणागत हुए, किसानोंने अपने २ उत्पन्न हुए धान्यके कितने ही अंश पटैलोंके समीप बाँधकर रक्खे। पटैलोंका उद्देश भी यही था, वह अपनी २ इच्छानुसार उत्पन्न हुए धान्यका मूल्य निर्णय करके उनको राज्य प्राप्य कर मिल गया है इसकी रसीद देने लगे। दूसरी ओर किसानोंने पटैलोंके प्रस्तावके अनुसार इस मर्मके एक पत्रमें हस्ताक्षर कर दिये कि, "राजप्राप्य कर देनेके लिये यथेच्छ द्रव्य न होनेसे और उस अर्थके अन्यत्र संग्रह करनेका कुछ सुभीता न होनेसे मैं अपनी इच्छानुसार धान्यका उपयुक्त मूल्य निश्चय करके धान्यके कितने अंश अमुक पटैलके समीप रहन रखकर रुपया लेता हूँ"।

किसानोंसे इस प्रकारके भावसे लिखवा लेनेका कारण यह है कि जालिमसिंह उक्त पत्रको देखकर समझ लेंगे कि किसानोंने अपनी २ इच्छानुसार पटैलोंकी सहायता ग्रहण की है, पटैलोंने अपनी इच्छानुसार किसी प्रकारका अत्याचार वा बलप्रयोग नहीं किया है? इस भांति पटैल उक्त उपायसे बोहरोंके कार्यका नाश करके बहुतसा धान्य प्रतिवर्षमें संचय करने लगे। रजवाडोंमें कोटाराज्य ही धान्यका प्रधान स्थान गिना गया है, पटैल उस समस्त धान्यको बेंचकर बहुतसा धन उपार्जन करने लगे। इधर किसानोंकी अवस्था दिन २ शोचनीय होने लगी। यद्यपि थोडे ही समयमें पटैलोंका यह अत्याचार संवाद राजराणा जालिमसिंहके कानतक पहूँचा, तथापि चतुर पटैलने यथासमय पर्याप्त करको संग्रह करके राजभंडारको पूर्ण कर दिया, और बहुतसे खेतोंको जप्त करके जालिमसिंहके अधिकारमें करा दिया, जालिमसिंहने पहिले इन अत्याचार और उपद्रवोंकी ओर ध्यान न दिया था। संवत् १८६७ (सन् १८११ ई०) तक इस भाँति कार्य चलता रहा। इसके पीछे सहसा बिना मेघके वज्र पातके समान जालिमसिंहने कोटेराज्यके प्रत्येक पटैलको बंदी करनेकी आज्ञा दी और प्रत्येक पटैल बंदी होकर इनके समीप आये। जितने पटैलोंने इतने दिनोंतक असत् उपायसे बलपूर्वक प्रजाका सर्वनाश करनेके साथ बहुतसा धन उपार्जन किया था उन सबको जालिमसिंहने खजानेमें मिला लिया। विचार होजानेके पीछे बहुत रुपया जुर्माना किया गया। केवल एकमात्र पटैलने अपना उपार्जित सात लाख रुपया अन्यराज्यमें भेज दिया। इस एक मनुष्यके दृष्टान्तसे ही हमारे पाठक इतना अनुमान कर सकते हैं, कि पटैलोने इतने दिनोंमें किस भावसे किसानोंका सर्व नाश किया था।

जालिमसिंहने नवीन प्रचलित पटैलरीतिसे अनिष्ट कारक फल उत्पन्न होता हुआ देखकर फिर कोटे राज्यमें पूर्वकालकी प्रचलितरीतिका अवलम्बन किया, और उसके साथ ही साथ वह अपने कृषिकार्य करनेमें लगे। इस बाहुल्य जनक कृषिकार्यसे उनको निजकी जो बहुतसी आमदनी हुई थी उसका वर्णन पिछले अध्यायमें किया गया है।

चतुर्थ अध्याय ४.

जालिमसिंहकी कृषिप्रणाली-कृषिकार्यका विस्तार-कृषिविभागकी उन्नति-उसका विवरण-कोटेका कृषिक्षेत्र-उत्पन्न धान्यका परिमाण-मूल्य-खलिहान-सुभिक्ष और दुर्भिक्ष-समयके धान्यका मूल्य-जालिमसिंहका एक वर्षके बीचमे एक करोड रुपयेका धान्य बेचना-खानगी धान्यके ऊपर शुल्क स्थापन-शुल्कसंग्राहक-उस शुल्कके प्रचार होनेसे अत्याचार और उपद्रवोंका होना-कोटेराज्यकी सब आमदनी-जालिमसिंहका अफीमका एक चेटिया व्यवसाय-विधवा विवाहके ऊपर कर स्थापन-संन्यासियोंके ऊपर कर स्थापन-संमार्ज्जनीके ऊपर करका प्रचार करना-जालिमसिंह और कवि-जालिमसिंहके शासनमे कोटेकी अवस्थाकी समालोचना।

जालिमसिंहके आभ्यन्तरी शासनकी रीतिको उनके एक चेटिया कृषि व्यसायको वर्तमान अध्यायमें वर्णन किया है। एक मात्र एक चेटिया कृषि कार्यसे जालिम सिंहने समस्त प्रासिद्ध प्राप्त की। जिस समय जालिमसिंहने कृषिकार्य करके कोटेके क्षेत्रोंकी अवस्थाको बदल लिया उस समय किसी पर्यटन करनेवालेने कोटे राज्यमें जाकर सर्वत्र श्यामल शस्य पूर्ण क्षेत्रोंको देखकर विचारा कि कोटेकी प्रजाकी अवस्था अवश्य ही प्रीतिपूर्ण है। परन्तु किसी कारणसे ही कोटेके कृषि विभागके इस प्रकारके रूपका रूपान्तर हुआ, तथा उस कृषिकार्यका प्रधान फलभोगी कौन था इसका यथार्थ तथ्य जाननेसे अवश्य ही उसके मनका भाव बदल जाता। सबसे पहले जालिमसिंहने मेवाडका मंगल साधन किया और मेवाडमें अपनी प्रबलता विस्तार करके कोटेका सर्वनाश किया, इसीसे उन्होंने कोटेके किसानोंके ऊपर अत्याचार और उपद्रव करके उनके ऊपर कर स्थापन करके किसानोंके रुधिरको सुखा दिया था, इसीसे किसानोंके कुलका नाश हो गया, कृषिक्षेत्र सब बेजुते बोये छोड दिये गये और अन्तमें समस्त प्रजाने दूसरे देशोंमें जाकर आश्रय लिया। जालिमसिंहने जब देखा कि प्रजाका नाश करनेके लिये उन्होंने भयानक अमंगल किये हैं, जब यह जान लिया कि उनकी अवलम्बित अर्थशोषक नीतिने राजभण्डारके भविष्यका अनिष्ट किया है तब उन्होंने करस्वरूप जो किसानोंके हल और अन्यान्य कर्षणके यंत्र तथा किसानोंकी पैतृक भूमिपर अधिकार कर लिया था, उस समस्त उपकरणसे आप स्वयं उन क्षेत्रोंमें कर्षण करनेके लिये प्रवृत्त हुए, उसीसे कोटेराज्यका कृषिकार्य इतना अधिकतासे साधित हुआ कि पहिलेके समान किसी समय भी दिखाई नहीं आया, जालिमसिंहने कोटे राज्यके प्रत्येक प्रान्तकी जिस किसी भूमिमें खेती होना सम्भव था उसी प्रत्येक भूमिमें ही अधिक क्या गहनवनको भी कृषिक्षेत्र कर दिया, और जिस पथरीले देशमें हल चलाना असम्भव था उस कठोर पहाडी भूमिमें भी कुदालके द्वारा खेती करना प्रारम्भ कर दिया, इस कारण बहुत थोडे समयमें समस्त कोटाराज्यमें बहुतायतसे धान्य उत्पन्न हुए थे।

संवत् १८४०, सन् १७८४ ई० में जालिमसिंहके निजके तीन वा चार सौ हल थे, परन्तु कई वर्षोंसे उनकी संख्या आठसौ थी, जालिमसिंहने जिस समय प्रचलित रीतिको रहित करके नवीन पटेलोंकी रीतिको चलाकर उत्पन्न हुए द्रव्यके बदलेमें नगद रुपया राजस्व स्वरूपसे ग्रहण करना आरम्भ किया, उस समय उक्त हलोंकी संख्या एक हजार छः सौ थी, और कर्नल टाड साहबने लिखा है कि सन् १८२१ ईसवी में जालिमसिंहके निजके व्यक्तिगत सम्पत्ति स्वरूप क्षेत्रोंमें चार हजार हल चलते थे और उनमें सोलह हजार बैल नियुक्त थे इससे हमारे पाठक समझ सकते हैं कि जालिमसिंहने कृषि विभागमें किस प्रकारका श्रेष्ठ उपाय किया था। जालिमसिंहके निजके उक्त संख्यक हल और बैलोंके अतिरिक्त कोटके अधीश्वरोंके निजके और राजवंशके निकट आत्मीयोंकी स्वतंत्रताके सब मिलाकर एक हजार हल और चार हजार बैल कृषिकार्यमें नियुक्त थे।

राजराणा जालिमसिंहने जिस रजवाडेमें यश प्राप्त किया वह केवल एकमात्र विस्तारित कृषिकार्यके कारण ही इतने यशस्वी हुए थे और उन्होंने इसी उपायसे कृषिक्षेत्रसे बहुतसा धन उपार्ज्जन किया था, जिस समय रजवाडेमें प्रधान २ राज्य महाराष्ट्रोंके अभ्युदय और उत्पीडनसे एकबार ही उन्नतिके ऊँचे शिखरसे अवनतिके अगाध जलमें गिरे थे, उस समय एकमात्र जालिमसिंहके कल्याणसे ही यह अवश्य संभव था कि कोटाराज्य उस ध्वंसताके हाथसे अवश्य छुटकारा पालेता परन्तु जालिमसिंहके प्रबल-शासनसे यद्यपि कोटेमें धनधान्यकी रक्षा भली भाँतिसे हुईथी परन्तु उसके अतीव कठोर शासनसे राज्यके सम्भ्रान्त सामन्तोंसे दीन किसानतक सभी उत्पीडित होकर उनके ऊपर अत्यन्त विरक्त होगये थे, और उनके शासनके विनाशकी कामना स्वभावसे ही सब श्रेणीके मनुष्यके हृदयमें प्रबल हो गई। वीर विक्रमी हाडासामन्तोंकी अधिकारी भूमिको अपने अधिकारमें कर कठोर शासन और रक्तशोषक कररूप रुधिरके ग्रहण करनेसे किसानोंकी श्रेणीने अन्य उपाय न देखकर सर्वस्वान्त हो अपने पैतृक कृषि क्षेत्रोंको छोड दिया, और उनपर जालिमसिंहने अपना अधिकार करके स्वयं कृषिकार्यका विस्तार किया था, जो किसान चिरकालसे चिर प्रचलित रीति नियम और विधानके अनुसार पैतृक भूमिपर अधिकार और उसमें खेती करते आये थे, जिन खेतोंमें कृषक कुलका अविनाशी अधिकार था वह समस्त किसान उन सब क्षेत्रोंके कारण जालिमसिंहके विधानके अनुसार महान् ऊंचा कर देनेमें असमर्थ थे, जालिमसिंहने वह प्राचीन रीति, नियम और विधान भंग करके इच्छानुसार उस सब भूमिपर अधिकार कर लिया।

इतिहाससे जाना जाता है कि वह जिस क्षेत्रको अत्यन्त उपजाऊ जानते थे उन्हींको छल बल और चतुरतासे उसके यथार्थ अधिकारीके अविनाशी स्वत्वाधिकारको लोपकर उसपर अपना अधिकार कर लेते थे। यद्यपि कोटके कृषिकार्यकी उन्नति एक पक्षमें प्रीतिदायक थी, परन्तु जब हम विचारते हैं कि दीन किसानोंकी मंडलीका सर्वनाश करके जालिमसिंहने उन किसानोंके पैतृक अविनाशी स्वत्वको अन्यायसे नाश

करके उस क्षेत्रपर अपना अधिकार कर लिया तब उन किसानोंको पैतृक अधिकारको खोकर क्रीतदासके समान जालिमसिंहके अधीनमें रहकर उन क्षेत्रोंमें कृषिकार्य करके सामान्य पारिश्रमिक धान्य मिलने लगा, तब हम इस उन्नतिको कभी मंगलकारक नहीं कह सकते।

समस्त राजस्थानमें जो स्वदेशानुराग और भूमिके ऊपर विशेष अनुरक्ति चिरकालसे अत्यन्त प्रबल थी। इसीसे किसानोंने क्रीत दासस्वरूपसे पैतृक भूमिमें खेती करना स्वीकार किया, परन्तु अन्यत्र जाकर सुख भोग करनेकी इच्छा नहीं की। जालिमसिंहने अत्याचार और उपद्रव करने प्रारंभ कर दिये, समस्त प्रजा अनेक कष्ट जानकर यद्यपि अन्य देशको चली गई थी परन्तु इस समय राजस्थानके चारोंओर महाराष्ट्रोंके अत्याचार और उपद्रवोंका स्रोता अत्यन्त प्रबल हो गया कहीं भी उनको आश्रय ग्रहण करनेकी आशा नहीं रही, इस कारण बहुतोंने जालिमसिंहके उपद्रवोंको सहन करके स्वदेशमें ही अपनी पैतृक क्षेत्रमें क्रीतदासस्वरूपसे कृषिकार्य करने आरंभ किये थे। और महाराष्ट्रों इत्यादिके उपद्रवसे अन्य निकटके स्थानोंमें बहुतसे किसान जो प्राणोंके भयसे भाग गये थे, वे फिर कोटेमें आकर जालिमसिंहके अधीनमें नियुक्त हो कृषिकार्य करने लगे।

इतिहास लेखक टाड साहबने अपने नेत्रोंसे जालिमसिंहके कृषिकार्यको देखकर जो वृत्तान्त लिखा है हमने इस स्थान पर उसीको ग्रहण किया है। वह लिखते हैं, कि " कोटेके कृषिक्षेत्रकी मट्टी निम्न मालवेकी मट्टीके समान उर्बर और कठोर है, एकमात्र हलसे उस क्षेत्रकी पीठको विदीर्ण करना बडा कष्ट साध्य है इस कारण जालिमसिंहने कोकनदेशमें प्रचलितरीतिके अनुसार दो हलोंको एक साथ व्यवहार किया था। उनके बैल आदि पशु प्रथम श्रेणीके समान श्रेष्ठ और उनके हलके समान तोपैं चलाने में भी समान उपयुक्त थे। उन्होंने पासके बाजारोंसे प्रधानता अपने राज्यमेंसे इन सब पशुओंको मोल लिया था, और उनके प्रियस्थान झालरापाटन पर जो वार्षिक मेला होता है उसमेंसे अनेक पशु खरीदे थे। मारवाड और अन्यान्य स्थानोंके मरुक्षेत्रके स्थानोंमें जो सब बैल श्रेष्ठ जातिके माने जाते थे, जालिमसिंहने उनको भी मोल लेकर कृषि

---

(१) बूँदीराज्यमें किसानोंका भूस्वत्व अविनाशी था। किसी कारणसे भी राजा वा अन्य कोई मनुष्य भी किसानोंके उस अधिकारको नाश न कर सके। किसानलोग अपनी २ इच्छानुसार अपने २ क्षेत्रको गिरवी रख सकते अथवा बेच सकते थे। ऐसा भी सुना जाता है कि पूर्वकालमें बूँदीके एक अधीश्वरने समस्त भूस्वत्वको बेचकर एक मात्र कर ग्रहण करके अपने स्वत्वकी रक्षा की थी उसीसे भूमिके ऊपर किसानोंका अविनाशी अधिकार उत्पन्न हुआ। यदि बूँदीमें कोई किसान नियमित कर देनेमें असमर्थ होता तो राजा उस भूमिपर अपना अधिकार नहीं कर सकता था, किसान दूसरेको वह भूमि दे देता था। यदि कोई किसान किसी अपराधसे निकाल दिया जाता तो भी भूमिके ऊपर उसका जो अधिकार था वह विनष्ट नहीं होता, और दूसरा उस पर अधिकार कर लेता था।

कार्यमें नियुक्त किया था, परन्तु वह समस्त पशु बालुमय क्षेत्रके उपयोगी होने पर भी कोटेके क्षेत्रोंके उपयुक्त नहीं थे। इसीसे उनको त्याग दिया था"।

पीछे टाड महोदय लिखते हैं कि "प्रत्येक वर्षमें दो वार करके खेती होती थी प्रत्येक हलसे एक सौ बीघेकी भूमिमें खेती होती थी, इस कारण ४००० हलोंसे प्रत्येक बारमें ४००००० बीघा खेती होनेपर प्रतिवर्ष दो बारमें ८००००० बीघा जमीन अर्थात् अंग्रेजी प्रायः ३००००० एकड जमीन जोती जाती थी, जिस जमीनमें प्रत्येक बीघेके प्रति सातसे दशमन तक गेहूँ और पांचसे सातमन तक बाजरा उत्पन्न न हो तो उस जमीनकी मिट्टी अच्छी नहीं मानी जाती। इस कारण अत्यन्त कम करनेसे यदि हम प्रत्येक बीघे प्रति चारमन गेहूँके उत्पन्न होनेका हिसाब करें तो इसका दुगुना हिसाब करनेपर भी अतिरिक्त नहीं होगा"। तब ३२००००० मन गेहूँ और बाजरा उत्पन्न होना यह ठीक होगा। इसका मूल्य उस समय कितना था उसका निश्चय करना होगा। जिस वर्षमें अधिकतासे धान्य उत्पन्न हुआ है उस वर्षमें एक मानी गेहूँका मूल्य बारह रुपया होता है।

अन्य वर्षमें १८ रुपया करके एक २ मानी बेंची जाती है, यदि हम गढमें सभी समयमें धान्यका मूल्य १२ रुपया करते तो इससे वार्षिक ३२ लाख रुपयेकी आमदनी होती है[1]।

कर्नल टाड साहब कहते हैं कि कृषिकार्यमें जालिमसिंहका निम्न लिखित खर्चा होता था;–

गौ आदि पशुओंका आहार, किसानोंका वेतन क्षेत्रकी सफाई हलआदिके संस्कारमें व्यय	४००००० रुपया।
बीजके खरीदनेमें	६००००० "
गौ आदिके अव्यवहार्यहोनेपर नवीन गौ आदिके मोल लेनेमें	८०००० "
फुटकर खर्च	२०००० "
कुल	११००००० रुपया।

ऊपर लिखी हुई सूचीसे जाना जाता है कि कृषिकार्यसे जालिमसिंहको जितनी आमदनी होती थी, खर्चा उसका सब मिलाकर उसके कुल तीन अंशोंमेंका एक अंश भी दिखाई नहीं पडता।

हमारे देशमें जिस प्रकार खलिहान (खत्ते) में धान्यादिकी रक्षा होती है कोटेमें भी उसी प्रकारसे धान्यादिके रक्षा करनेकी रीति प्रचलित है, परन्तु वहांका खत्ता अन्य प्रकारसे बनता है। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि प्रधानतः ऊंची और सूखी भूमिके ऊपर खत्ता अनेक आकारसे बनाया जाता है। वेष्टनीके नीचेके भागमें एक प्रकारसे घास पत्ते वहां जलाकर फिर इसके पीछे भूसा लगाया जाता है, तब इसके

(१) राज पूतानेमे ४३ सेरका एक मन, १२ बारह मनकी एकमानी, १०० मानीका एक मनासा होता है।

ऊपर धान्य रखकर उसके ऊपर भूसा रखकर चारों ओर बन्द कर दिया जाता है। उसके ऊपर एक इञ्च चौडी मट्टीका लहेसन देकर उसको मट्टी और गोबरसे लीपकर वह खत्ता ऐसा दृढ हो जाता है कि प्रबल वर्षा भी धान्यका कुछ अनिष्ट नहीं कर सकती; और कई वर्ष तक रखने पर भी धान्यका कुछ अनिष्ट नहीं होता । जालिमसिंहने प्राय: इस प्रकारसे राज्यके अनेक स्थानोंमें ५० लाख मनका अनल्प धान्य संचित रक्खा रहता है, और जिस वर्षमें अन्न अधिक उत्पन्न नहीं होता उस वर्षमें आवश्यकतानुसार यह सब धान्य बाहर किये जाते हैं, उस समय एक २ मानी परिमित मूल्य ४० रुपया था और दुर्भिक्षके समयमें वह ६० रुपयेको बेचा जाता है। यह सब खत्ते उस समय स्वर्णखानकी तुल्य गिने जाते थे । जालिमसिंह प्राय: प्रत्येक वर्षमें ६० लाख मन धान्य बेचा करते थे। संवत् १८६०, सन् १८०४ ई० में जिस समय हुलकर भरतपुरराज्यमें आया और सर्वस्व लुन्ठनकारी महाराष्ट्रदल रजवाडेके प्रत्येक प्रान्तमें विस्तीर्ण हो गया, और उसीसे समर और दुर्भिक्षने एक साथ मिलकर रजवाडेको विध्वंस किया था, उस समय एकमात्र कोटेराज्यके ही उत्पन्न हुए अन्नसे समस्त रजवाडों और उक्तदलने जीवधारण किया था, उस समय धान्यका मूल्य मानी प्रति ५५ रुपये था। जालिमसिंहने धान्यको बेचकर एक करोड रुपया प्राप्त किया"।

राजराणा जालिमसिंहने कोटेराज्यमें जो अनेक प्रकारके बडे २ कर प्रचलित करके प्रजाका रुधिर सुखा दिया था, उसके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहबने अपने इतिहासमें लिखा है, कि "एकमात्र जमाके कागद पत्रोंको देखनेसे जाना जाता है, कि कोटेराज्यमें राजाको कर स्वरूपमें जो समस्त उत्पन्न हुआ द्रव्य मिलता है, उसका परिमाण केवल २५ लाख रुपया है। जालिमसिंहने कहा है कि एकमात्र किसानोंको उन्होंने अपने व्यक्तिगत सम्पत्तिस्वरूपसे जो सब जमीन दे दी थी उससे उनको उक्त परिमित रुपया मिलता था"।

"संवत् १८६५ में जालिमसिंहने कोटेराज्यसे जितने धान्य रवाना होते थे, उसके ऊपर एक नवीन कर प्रचलित किया, प्रत्येक मानी धान्यके ऊपर डेढ रुपया कर नियत हुआ । इसी करसे अत्याचार और उपद्रव अत्यन्त प्रबल हो गये। पहिले पहल यह शस्योत्पादनकारियोंके ऊपर ही स्थापित हुआ था, परन्तु अप्रत्यक्षमें यह मोल लेनेवालोंके ऊपर भी जाकर पडा। शुल्कसंग्राहकोंके प्रधान अध्यक्षने इस करके प्रचलित होनेसे महासंतुष्ट हो जालिमसिंहको यह परामर्श दिया कि किसान और क्रेता दोनोंके ऊपर ही यह कर स्थापित करना कर्त्तव्य है, तथा जालिमसिंहने शीघ्र ही उस प्रस्तावके अनुसार कार्य करना प्रारम्भ किया । इससे एक साथ ही दश लाख रुपयेकी प्राप्ति हुई। उस नवीन करके प्रचलित होनेसे एक अनाजके ऊपर अनेक स्थानोंमें तीन चार पांच बार तक कर लिया जाता था और तब वह क्रेताके घर लाया जाता था। यद्यपि कोटेराज्यमें अधिकतासे धान्य उत्पन्न होता था तथापि इस करकी अधिकतासे ही प्रजा बड कष्टसे अपना समय व्यतीत करती थी, कोटेराज्यके

सामन्त उनके अधीनके मनुष्य वा किसान किसीको भी कर देनेसे छुटकारा नहीं मिला था प्रधान शुल्कसंग्राहकोंने अपनी २ इच्छानुसार प्रत्येकके ऊपर ही वह कर नियत कर दिया, और उस करके नियमके विरुद्धमें किसीकी कुछ भी आपत्तिको न सुना। जिस समय बृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेराज्यके मैत्री बन्धनकी सूचना हुई थी उसी समय उस करके ग्रहण करनेसे अत्याचार और उपद्रव अत्यन्त प्रबल हो गये थ, उन कर संग्राहकोंने जालिमसिंहकी आज्ञा उल्लंघन करके लोगोंको इतना उत्पीडित किया था कि जालिमसिंह यदि किसी समय भी कहते कि "एक लाख रुपया चाहिये" करसंग्राहक उसी समय कहते जो आज्ञा और तुरन्त ही उसे संग्रह कर देते। करसंग्राहक उक्त आज्ञाको पाते ही उसी समय बाकी करकी एक सूची बनाकर शीघ्र ही क्या मित्र, क्या शत्रु, क्या राजकर्मचारी, क्या महाजन, क्या वैश्य, क्या व्यवसायी, क्या किसान प्रत्येकके समीप ही एक आज्ञापत्र भेज देते थे। कोई भी उस आज्ञाके विरुद्धमें आपत्ति नहीं करता था, कारण कि आपत्ति करनेपर यही नहीं कि वह ग्राह्य नहीं होता वरन् उनका विशेष अनिष्ट होता था। किसीको भी उस करके देनेसे छुटकारा नहीं मिलता था, अधिक क्या कहें जालिमसिंहके प्राचीन मित्र पंडित बेलालने उस सूचीके अनुसार एक समयमें २५ लाख रुपया, एक विश्वासी सामन्तके अधीनवाले एक अनुष्यने पाँच हजार रुपया, उनके वैदेशिक मन्त्रीने पांच हजार रुपया और नगरके महाजनोंमेंसे बहुतोंने प्रत्येकको चार पांच और दश लाख रुपया दिया था, इसी करके ग्रहण करनेसे इस प्रकारके उपद्रव और अत्याचार प्रबल होगये, प्रत्येक मनुष्य ही जालिम सिंहके ऊपर इतने विरक्त हुए कि जिससे जालिमसिंहके शासनके लोप हानकी संभावना हो गई; कारण कि सर्वसाधारण प्रजाके असंतोष प्रकाश करते ही कोटेके महाराज अत्यन्त विरक्त होकर जालिमसिंहके अधीनमें अपनी रक्षा न करके स्वाधीनता उपार्जन करनेके लिये व्याकुल होगये"।

इतिहास वेत्ता टाड साहबने लिखा है कि "जिस समय अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ रजवाडेका राजनैतिक सम्बन्ध बंधन उपस्थित हुआ था उस समय गवर्नमेण्टके मूलशासनकी नीतिके उद्देशके अनुसार जब मत प्रचलित हुआ तब क्या प्रजा, क्या शासक सभीको अंग्रेज गवर्नमण्टने समान दृष्टिसे देखा था। उस समय बुद्धिमान् जालिमसिंह भलीभांतिसे समझ गये कि अब प्रजाके ऊपर अत्याचार न करके प्रजाकी अवस्थाको सुधारना कर्त्तव्य है, यदि ऐसा न किया जायगा तो अंग्रेज गवर्नमेण्ट विरक्त हो जायगी इस कारण उन्होंने उस रक्तशोषक करको एकबार ही घटाकर किसान विक्रेता और क्रेताओंके ऊपर उचित कर लेनेकी व्यवस्था करदी, परन्तु तब भी उक्त करसे पांच लाख रुपये संग्रह होते थ"।

" इस प्रकार जालिमसिंहकी कठोर रीतिसे क्षेत्रोंसे सबमें पन्द्रह लाख रुपया लिया जाता था इसके अतिरिक्त उसके कुटुम्बी, स्वजन और कोटेराज्यके क्षेत्रोंसे और भी पांच लाख रुपयेकी आमदनी होती थी, और उसीसे उनके घरका खर्चा चलता था"।

सत्यप्रिय टाड साहब इस स्थानपर स्वदेशी किसानोंको सम्बोधन कर कहते हैं–"विलायतके बहुतसी सामर्थ्यवाले एवं अभिज्ञ किसानोंने जालिमसिंहके चौवालीस वर्ष-तक इस कठोर और राजनैतिक उपद्रवोंके समयमें कृषिकार्यको सावधानीसे करते हुए देखकर क्या विचार किया होगा? जालिमसिंहकी प्रबल मानसिक शक्तिके सम्बन्धमें कि जिस जालिमने अस्सी वर्षकी अवस्थामें भी एकाक्ष और गति शक्ति हीन होकर उक्तरीतिसे सावधानता की थी उसके सम्बन्धमें वे क्या मन्तव्य प्रकाश करेंगे? कि जालिमसिंहकी स्मरणशक्ति प्रस्तरांकितके समान उनके चित्तपर अंकित है जिसने राज्यके प्रत्येक प्रान्तके प्रत्येक कृषिक्षेत्र, प्रत्येक शस्याधार गोलेकी अवस्था स्मृति दर्पणमें नियत प्रतिविम्बित कर रक्खी थी, जिसको किसी विषयमें भी भ्रम नहीं होता था। और जो उस वृद्ध अवस्थामें भी नेत्र हीन होकर राज्यके जिस प्रान्तके जिस क्षेत्रमें जिस प्रकारका धान्य उत्पन्न होता है उसे अनायास ही स्थिर कर सकता था, उसी जालिमसिंहके सम्बन्धमें उन्होंने क्या कहा"?

"यही नहीं कि एकमात्र कोटेराज्यके कृषिकार्यमें ही जालिमसिंहका समस्त समय व्यतीत होता हो, वरन् उनके कार्योंमेंसे यह उनका एक अंशमात्र था। उन्होंने जिस भावसे राज्यशासन किया उसमें प्रबल शक्ति और विशेष सावधानताका प्रयोजन था, बीस हजार सेनाकी सृष्टि, उसका पालन और शिक्षादान तथा किलोंकी सावधानी अस्त्रादिका संग्रह एवं निर्माण और समर विभागके प्रत्येक विषयमें दृष्टि रखना इसमें शासनकर्ताका समस्त समय लगता था, राज्यके कई सौ पुलिस कर्मचारियोंके निकटसे प्रतिदिन प्रयोजनीय गुप्त और सत्य सम्वाद संग्रह करना एवं राज्यके प्रत्येक जिलेके एक शासनकर्ताके निकटसे आये हुए वृत्तान्तको सुनना और उसके सम्बन्धमें आज्ञा देना, इस विचारमें अन्य किसी शासनकर्ताके विचारकी शक्ति अवश्य विकृत होजाती। परन्तु इस समय जाना जाता है कि उक्त कठोर श्रमसाध्य कार्य करनेके अतिरिक्त जालिम-सिंह वाणिज्यकार्य भी करते थे, महाजनी कार्यमें लिप्त थे और शिल्प कौशलका उत्साह दिलाते थे, विदेशी वैश्योंको भी उत्साह देते थे, और क्या कहैं अनेक प्रकारके फलवान वृक्षोंकी भी खेती करते थे। तब उनके साथ किसकी तुलना की जा सकती है? साहित्य, न्याय, दर्शन और ऐतिहासिक पुराणोंके सुननेमें वह अपना समय व्यतीत करते थे। उन्होंने जिस राज्यके अन्नका भाव जैसा देखा अपने यहाँके अनुसार निकटके बाजारोंका भी कर लिया उससे केवल कोटेके धान्यका मूल्य उनके द्वारा घटता बढता था, यह नहीं वरन् समीपके राज्योंमें धान्यका मूल्य भी इसी कारणसे घट बढ जाता था। गवर्नमेण्टने जिस समय समस्त मालवादेशमें अफीमकी खेतीकी सब पैदावारको अपने अधीन कर लिया उस समय जालिमसिंहने भी उस अफीमके क्रय विक्रय कार्यमें लिप्त होकर अपनी इच्छानुसार इसका मूल्य घटा बढा दिया था। कोटेराज्यके अनेक स्थानोंमें उन्होंने बहुतसे बाग बनाये थे, और उन बगीचोंके अनेक भाँतिके फल मूल कोटेके अनेक स्थानोंके बाजारोंमें बेचे जाते थे

और उनके रक्षित वनसे काष्ठ संग्रह होता था, उसको सर्वसाधारण प्रजाके ईंधनके लिये बेचा जाता था "।

साधु टाड साहबने जालिमसिंहक द्वारा स्थापित अन्यान्य करके सम्बन्धमें लिखा है कि " जालिमसिंहने इस भावसे कर स्थापन किया था कि किसी विषयमें भी कोई छुटकारा नहीं पा सकता था, जो कोई विधवा पुनर्विवाह करैगी उसको कर देना होगा। जो संन्यासी भिक्षा वृत्तिसे जीवन व्यतीत करते हैं जालिमसिंहने उनको भी अपने कर लेनेसे न छोडा। गिरि कन्दरामें अथवा जिस २ स्थानमें संन्यासी बास करते थे, जालिमसिंहके मनुष्य प्रत्येक वर्षमें वहाँ जाकर उनसे यह पूछा करते कि भिक्षावृत्ति करनेसे तुम्हें कितना धन प्राप्त हुआ है, उसका यथार्थ पता लगाकर उस पर कर स्थापित कर आते। एक वर्ष तक संन्यासियोंके ऊपर कर प्रचलित रहा, अंतमें मित्रोंके कहने सुनने से जालिमसिंहने उस करको उठा दिया, जालिमसिंहने " झाडूवराके " अर्थात् सम्मार्जनीके ऊपर भी कर स्थापित करनेमें लाज न मानी थी। कोटेके भाटोंने जालिमसिंहके ऊपर व्यङ्ग व्यञ्जक अनेक गीत बनाये, जालिमसिंहके पुत्र माधोसिंहने अंतमें इस घृणित करको उठा दिया "।

रजवाडेके प्रत्येक राजा, प्रत्येक सामन्त अधिक क्या प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक मनुष्य ही भाट चारण और कवियोंका विशेष सम्मान करते थे। और विवाह श्राद्ध इत्यादिके समयमें उनको यथाशक्ति धन देते थे। वे उस धनको पाकर मनमोहनी कविता बनाकर दाताका यश गान करते थे, वह सब गीत वंशानुक्रमसे रजवाडेके अनेक स्थानोंमें गाये जाते थे। टाड साहबने कहा कि जालिमसिंह भाट चारण वा कवि श्रेणीके प्रियपात्र नहीं थे। कवि भी जालिमसिंहकी प्रशंसा कीर्तन नहीं करते थे। टाड साहबने एक उदाहरण दिया है कि "एक दिन एक प्रसिद्ध कविने जालिमसिंहके सामने प्रशंसा व्यंजक गीत गाया। परन्तु जालिमसिंहने उससे सन्तोष न प्रकाश करके आग्रहके साथ कहा कि कविलोग केवल मिथ्या वर्णन करते हैं, यदि सत्य वर्णन करते तो मैं आनन्दके साथ उसको सुननेकी इच्छा करता। " कविने यह सुनकर उसी समय उत्तर दिया कि " बाजारमें सत्यका आदर बहुत थोडा है, मैं कितनी ही सत्य विवरण पूर्ण कविता जानता हूँ, उसको भी सुनाता हूँ। " कविने अन्तमें जालिमसिंहके समीप, अभय और क्षमाकी प्रार्थना करके जालिमसिंहके चरित्रोंके सम्बन्धमें इस प्रकार सत्य पूर्ण विषमय तूलिका चित्रित कविताकी आवृत्ति की कि जालिमसिंहने इससे महाक्रोधित हो उस कविके समस्त पैतृक भूसम्प्रदायको जप्त कर लिया, और उसी दिनसे किसी कविको फिर अपने यहां न आने दिया "।

राजस्थानके राजा और शासनकर्तागण हिन्दूधर्मके अनुसार ब्राह्मण इत्यादि उच्चवर्णके प्रति अधिक दया दिखाना और ब्राह्मणके किसी अपराधसे अपराधी होनेपर उसको अनेक परिमाणसे बहुत थोडा दंड देते थे। परन्तु साधु टाड साहब लिखते हैं, " यद्यपि जालिमसिंह हिन्दूधर्मानुमोदित प्रत्येक कार्य और

प्रत्येक अनुष्ठान करते और प्रत्येक कर्म विधानको ग्राह्य करके चलते परन्तु तौ भी उन्होंने ब्राह्मण इत्यादि उच्चवर्णके प्रति राजनैतिक व्यापारमें कभी भी दया प्रकाश नहीं किया। जो कोई मनुष्य ब्राह्मण हो अथवा अन्य वर्णका मनुष्य हो राजाके विरुद्धमें यदि अपराध करै तो किसी प्रकारसे भी उसको छुटकारा नहीं मिल सकता था, एवं वह ब्राह्मण क्षत्रिय वाणिज्य व्यवसायमें नियुक्त होता तो ब्राह्मण बताकर उसके ऊपर सर्वसाधारणके समान शुल्क स्थापनसे क्षमा नहीं होता था"।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने निम्न लिखित मन्तव्य प्रकाशके साथ वर्तमान अध्याय का उपसंहार किया है, "राजप्रतिनिधि जालिमसिंहके कोटे राज्यके आभ्यन्तरिक शासन कि व्यवस्था ही इसका संक्षिप्त चित्र थी। जिस समय जालिमसिंहको कोटेके शासनका भार मिला था, उस समय कोटेराज्यकी सीमा पूर्वप्रान्तसे कैलवाडे तक विस्तारित थी, परन्तु उन्होंने पीछे उसी सीमाको पहाडी उपत्यका तक विस्तीर्ण कर लिया, और जो दुर्ग श्रेणी उस सीमान्तसे रक्षित थी उसको महाराष्ट्रोंके बलसे उद्धार करके कोटेमें मिला लिया था। उन्होंने राज्यभार पाते ही देखा कि राज्यका खजाना शून्य है और राज्यपर ३२ लाख रुपया ऋण है दूसरी ओर उन्होंने देखा कि वैदेशिक आक्रमणसे राजरक्षाके पक्षमें केवल कितने ही टूटे हुए किले और सामन्तोंके अधीनमें बेकाबू वीर सेना है। तब बहुतसा रुपया लगाकर टूट हुए किलोंका फिरसे संस्कार करके कितनी ही तोपोंसे उसको सजा दिया। उन्होंने चार हजार अश्वारोही सेनाके स्थानमें बीस हजार सेना संग्रह करके उसको शिक्षित किया था; और १०० तोपें संग्रह की थीं। इसके अतिरिक्त सामन्तोंके अधीनमें बहुतसी सेना थी"।

यद्यपि जालिमसिंह हाडाजातीमें एक विख्यात पुरुष हैं, परन्तु जैसा अन्न कोटेमें पैदा होता है जो उनकी आराजीमें है उससे कोई मूरत उत्तमताकी दृष्टि नहीं आती और न सेना ही वैसी सजधजकी गिनी जाती है, कारण कि उनके हृदयके भावमें बिकार उत्पन्न हो गया है। हिस्सेवालोंका भाग नहीं मिलता है। जबतक यथायोग्य विभाग उन भागवालोंको न दिया जायगा तबतक जो यह सब प्रबन्ध दृष्टि गोचर होता है यह सब इस मूलपर नियत हुआ है कि जिससे आगेके विशेषमें विपत्तिकी आशंका है।

पञ्चम अध्याय ५.

जालिमसिंहकी राजनैतिक प्रणाली-उनकी वैदेशिक राजनीति-रजवाडेमें उनकी प्रबलता-अंग्रेज गवर्नमेंटके साथ उनका पहिला सम्बन्ध-मानसनका भागना-कोयेलाके सामंतोंकी महावीरता दिखाना-उनका प्राण त्यागना-जालिमसिंहका अंगरेज गवर्नमेण्टकी सहायता करना-हुलकरका क्रोध--हुलकरका कोटेमे आना-राजधानीपर आक्रमण का उद्योग-जालिमसिंहके साथ हुलकरकी मुलाकात होना-दोनोंमे संधि होना-जालिमसिंहका विदेशीय राजाओंकी सभामें दूत नियुक्त करना-अमीरखां और पिण्डार नेताओंके साथ जालिमसिंहका सद्भाव-जालिमसिंहकी गुप्तराजनीति-महाराव राजा उमेदसिंहका चरित्र-महारावके साथ जालिमसिंहका आचरण-पठान दलेलखां-झालरा पाटन नगरका स्थापन-मेहराबखां।

इतिहासको जाननेवाले टाडने कहा कि जालिमसिंह बडे चतुर और परम राजनीतिके जाननेवाले थे। यदि जालिमसिंह विलायतमें पैदा होते तो अपनी राजनैतिक कार्यावलीसे अक्षय कीर्ति पाते । वास्तवमें टाड साहबकी यह कहावत ठीक है क्योंकि, टाड साहब जालिमसिंहकी राजनैतिक ऐतिहासिक घटनाओंको लिख गये हैं । वह इतिहास दो हिस्सोंमें बटा हुआ है, पहिला वैदेशिक और दूसरा आभ्यन्तरिक । राजनीतिके सुभीतेके लिये ही टाड साहबने जालिमसिंहके राजनैतिक अभिनयको दो भागोंमें बांटा है।

जालिमसिंहकी शासन-प्रणाली प्राय: भेदनीति पर स्थिर थी, वह अपने अधीनस्थ दरबारियों या राज कर्मचारियोंको इस बातका अवसर नहीं देते थे कि वे एक दूसरेसे मिलकर किसी प्रकार शक्तिसम्पन्न हो सकें । जालिमसिंह इस तरहसे स्वयं प्रत्येक कर्मचारी पर अपना ही प्रभुत्व रखते थे और इसीसे उनमें यह सामर्थ्य थी कि यावत् अनुगत लोगोंको अपने पक्षमें रखते और लकडीके बल बन्दर नचाते थे।

कोटाराज्य भारतके ठीक हृदय स्थानमें स्थापित है । कई वर्षसे जबतक इस कोटेके चारोंओर राज्यमें अत्याचार उत्पीडन, विद्रोह, राजशक्तिका नाश एवं प्रजाशक्तिका विप्लव होता था। यद्यपि उन सब देशोंके समान इस कोटेराज्यकी धनसम्पत्तिसे आकृष्ट होकर महाराष्ट्र एवं पिंडारे इत्यादि लूटनेवाले व्यवसायी अत्याचारी दलोंने कोटेको लूटनेका उद्योग किया । परन्तु जालिमसिंहने अपने विरोधित उग्र तेजसे इस प्रकार शासनदण्ड चलाया कि उन्होंने उसीसे अर्द्धशताब्दीतक सबको भय उत्पन्न करनेवाली उन मरहठोंकी उस आशाको व्यर्थ कर दिया । इस कारण उस अर्द्धशताब्दीमें कोटेराज्यमें कोई डांकू चोर लूटनेवाला साहसके साथ प्रवेश न कर सका । यद्यपि दीर्घकालसे अबतक राजपूतानेके समस्त राज्योंमें राजनैतिक विप्लव, राजनैतिक परिवर्त्तन, सेना विनाश, क्रमानुसार शासनशक्तिका लोप, दुर्भिक्ष, महामारी और नैतिक बल क्षयके

साथ शोचनीयकाण्ड उपस्थित हुए और रजवाडा विध्वंस हुआ, परन्तु उस दीर्घकालमें ही एकमात्र जालिमसिंहने पच्चीस वर्षकी अवस्थासे प्राय: नव्वे वर्षकी अवस्थातक अपनी विज्ञता, वीरता, उद्यम और विवेचना शक्तिसे अपने हाथमें समर्पित हुई राज्यनौकाको उस भयंकर विपद् संकुल घोर राजनैतिक तरंगावर्तमें जरा भी न डग मगाने दिया ।

साधु टाड महोदय लिखते हैं " कि रजवाडेमें ऐसा कोई भी राजा नहीं था, अधिक क्या लुटेरोंमें भी इस प्रकारका नेता नहीं था जिसने कि किसी न किसी प्रकारसे जालिमसिंहके परामर्शके अनुसार और मन्तव्यके अनुसार कार्य न किया हो । प्रत्येक राजाकी सभामें उनका एक २ दूत रहता था । जहां उनके किसी प्रकारके स्वार्थ साधन की सम्भावना होती, उसी स्थानपर वह किसी न किसी प्रकारसे उस स्वार्थको सिद्धकर लेते । दुर्बल शून्य सम्मानकी अभिलाषा करनेवाला जो कोई मनुष्य भी होता उसको यह तुरन्त ही अपने पक्षमें मिला लेते, इन्होंने राजसिंहासन पर बैठ हुए मनुष्यसे लेकर पिंडारी दलके नेतातक सभीके साथ पिता, चचा वा भ्राताका कोई न कोई सम्बन्ध बन्धन आबद्ध कर लिया था । सारांश यह है कि अपने राजनैतिक उद्देशको साधन करनेके लिये इन्होंने अनेक उपाय किये थे "

इतिहाससे जाना जाता है कि यद्यपि जालिमसिंह एक क्रूर स्वभाव अत्यन्त क्रोधी और अहंकारी थे, परन्तु एक २ समयमें कार्यगतिसे इन्होंने यथेष्ट अवनत भाव भी प्रकाश किया था । वह जहां देखते कि विनीतभावके विना प्रकाश हुए कार्यके उद्धार होनेका उपाय नहीं है उसी स्थान पर अपनी पदमर्यादा और सामर्थ्यके विस्तारित होनेसे वह उसमें विनीतभाव प्रकाश करते और क्या कहें सामान्य पिंडारी इत्यादिके नेताके निकट भी समय २ पर वह अत्यन्त विनीतभावसे पत्र लिखकर नम्रताके साथ बातचीत करके कार्य कर लेते और यह जहां देखते कि यहां युद्ध होनेके अतिरिक्त इस विवादके विचार होनेका उपाय नहीं है, उस स्थान पर जो वीर अथवा जो कोई सामर्थ्यवान् राजा होता उसीके साथ युद्ध करनेको आगे बढते थे । रजवाडेके चारोंओर जब अशान्ति और समर इत्यादि होते रहते थे उस समय यह कोटेराज्यके शासन करनेमें नियुक्त हुए, इस कारण उनको उस समय अन्यान्य विवाद मान राजाओंके साथ शीघ्र ही राजनैतिक चातुरीमूलक व्यवहार करना होता था । सन् १८०६ एवं १८०७ ईसवीमें जिस समय जोधपुरके साथ समरानल प्रज्वलित हुआ उस समय तीन अन्य राजाओंने इनसे सहायता मांगी, इसी कारण तीनोंको सन्तुष्ट करना एकबार ही असम्भव हो गया । इन्होंने तीनोंके पास दूत भेजकर तीनों जनोंकी ओरसे विवादकी मीमांसा होनेकी चेष्टा की, और किसीको भी किसी प्रकारसे सेनाकी सहायता न दी, यह सामान्य नीतिज्ञताका परिचय नहीं है ।

जालिमसिंहके वैदेशिक राजनीतिके इतिहासके संग्रहको सब भांति निष्फल जानकर साधु टाडने उससे एकबार ही शान्त हो, सन् १८०३ । ४ ईसवीमें बृटिश

गवर्नमेण्टके साथ उनको जो पहिला साक्षात् सम्बन्ध स्थापित हुआ था, उसीको वर्णन किया है। इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं कि "हुलकरको आक्रमण करनेके लिये जिस समय जनरल मानसन एक बृटिश सेनादलको साथ लेकर मध्य भारतवर्षकी ओरको गये, उस समय जालिमसिंह अंग्रेजोंकी सामर्थ्यको अजेय जानकर उस सेनाके कोटेराज्यमें आते ही इन्होंने उस सेनादलके आहार्य सरवराह और अनुचरोंको संग्रह करनेमें कुछ भी विलम्ब नहीं किया। परन्तु जिस समय वह बृटिश सेनादल दुर्भाग्य-वश समरमें परास्त होकर भाग गया, उस समय बृटिश सेनापति जनरल मानसनने पूर्वमतसे कोटेराज्यमें होकर जानेके लिये प्रार्थना की, जालिमसिंहने निम्नलिखित उक्तिसे एकबार ही असम्मति प्रकाश की। उन्होंने कहा कि "हमारे शान्तिपूर्णराज्यमें शांति संभोगकारी प्रजामें आप अपनी छिन्नभिन्न सेनाको लावेंगे तो अराजकता उपस्थित हो जायगी। आप अपनी सेनाको हमारे राज्यकी सीमामें ठहराइये, मैं सब रसद संग्रह कर दूंगा और मेरी जितनी सेना है, सब सेनाको लेकर आपको आपके शत्रुदलमेंसे ले जाऊँगा और आपका शत्रुदल यदि मेरे ऊपर आक्रमण करेगा तो मैं इकला ही उस आक्र-मणको सहलूँगा।" मानसनने जालिमसिंहके कथानानुसार कार्य नहीं किया, वह बून्दी और जयपुरराज्यमें होकर चले गये, किन्तु अन्तमें उस समस्त सेनामें एकमात्र इकले ही बचकर जनरल लेकके पास गये, और अपनी शोचनीय पराजयका समाचार कहा। अपमानित, निगृहीत, पराजित और पलायित जनरल मानसनने अपने उपरितन प्रभुके निकट उस घोर कलंकदायक पराजयका समाचार देनेके समय अपने अपराधको थोडा करनेके लिये अन्य मनुष्योंको भी उसी अपराधसे अपराधी और उस भागनेका कारण स्वरूप बताकर घोषणा की। यह कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है। जनरल मानसनने जालिमसिंहके विरुद्धमें दृढ़ अनुयोग उपस्थित करके उनके शिरपर भारी कलंक लगानेकी चेष्टा करके कहा कि जालिमसिंहने शत्रुदलके साथ षड्यंत्र करके हमारे भागनेके समयमें कुछ भी सहायता न की? दुःखका विषय है कि बृटिश कर्तृपक्ष गणने दीर्घकालतक मानसनकी इस उक्तिको सत्य मात्र माना था। परन्तु जालिमसिंह तो सम्पूर्ण निर्दोषी थे, उन्होंने जनरल मानसनकी प्राण रक्षाके लिये विशेष चेष्टा की थी। उनकी ही आज्ञा-नुसार मुकुन्दराकी घाटीसे कोयेलाके सामन्त लखन महाराष्ट्र दलकी गतिको रोकनेके लिये जाकर सेनासहित मारे गये, उनका प्रत्यक्ष उदाहरण आजतक विराजमान है"।

साधु टाड साहबने पीछे लिखा है कि "जनरल मानसनके भागनेकी सुविधाके लिये जो हाडा सेनाने महाराष्ट्रदलके साथ युद्ध किया, कोयेलाके सामन्तके अतिरिक्त अन्य अनेक सेनाने भी उस समरमें निहत होकर बखशी अर्थात् प्रधान सेनानायक उस युद्धमें विपक्षी महाराष्ट्रोंके द्वारा बंदी हो गये, जालिमसिंहके अधीनकी उस सेनाने बृटिश गवर्नमेण्टकी उक्त प्रकारसे सहायता की थी, इसीसे महाराष्ट्रनेता हुलकरने उस बखसीके निकटसे दश लाख रुपयेका एक खत लिखकर बखशीको मुक्ति देकर कहा कि शीघ्र ही दश लाख रुपया न देनेसे समस्त कोटे देशको तलवार और तोपोंके मुखसे विध्वंस कर दूंगा। पराजित बखशीने जालिमसिंहके समीप जाकर जब

उक्त दश लाख रुपयेके खतका उल्लेख किया तब उन्होंने उसको सामनेसे हटाकर कहा, कि "तुम जो दश लाख रुपयेका खत लिखकर दे आये हो, उसके हम देनदार नहीं हैं।" जालिमसिंहने उसके पीछे बखशीको फिर हुलकरके समीप भेजनेके लिये कहा वह जिस प्रकारसे कर सके उस प्रकारसे बख्शीके पाससे दश लाख रुपया लेकर उनको छोड दे। हुलकर जालिमसिंहके उस व्यवहारसे उस समय केवल भय दिखाकर ही शान्त न हुआ वरन्, पीछे सुभीता होनेपर कोटेराज्यमें जाकर उसने राजधानीके बहुत पास ही डेरे डाल दिये"।

वीर तेजस्वी जालिमसिंह हुलकरको उपस्थित देखकर कुछ भी भयभीत न हुए, उन्होंने नगरकी दीवारोंके ऊपर समस्त तोपें सजाकर सेनाको सजानेकी आज्ञा दी। उन तोपोंकी श्रेणीके इस भावसे सजते ही गोलोंकी वर्षा होनी आरंभ हो गई, नगरके बाहर स्थित समतलक्षेत्रके समस्त आवास ही एकबार समभूमि हो जाते। उधर जालिमसिंहकी गुप्त आज्ञाके अनुसार पहाडी भी हुलकरके डेरोंके पिछले भागपर आक्रमण करने और समस्त द्रव्य लूटने तथा रसद प्राप्तिमें व्याघात देनेके लिये तैयार हुए। हुलकरने डेरोंको स्थापित करके बखशीके द्वारा हस्ताक्षर युक्त उस दश लाख रुपयेक खतको फिर जालिमसिंहके पास भेज दिया, जालिमसिंहने शीघ्र ही उस खतके लेखानुसार रुपया देनेमें असम्मति प्रगट की। तब समरका होना अनिवार्य विचारा गया, उस समय दोनों ओरके मंत्रियोंने यत्नवान होकर परस्परमें साक्षात् करनेके लिये प्रस्ताव उपस्थित किया। परन्तु जालिमसिंह महाराष्ट्रनेता हुलकरका सब प्रकारसे अविश्वास करते थे, इस कारण उन्होंने कहला भेजा कि अपनी अभिलाषित व्यवस्थाके अतिरिक्त अन्य प्रकारसे वह साक्षात् करनेके लिये तैयार नहीं हैं। जालिमसिंहकी वह मनोगत व्यवस्था अत्यन्त विचित्र थी। उन्होंने कहला भेजा कि युद्ध वा संधि सम्बधी प्रस्ताव चम्बलनदीके ऊपर नौकाके वक्षमें उपस्थित करने होंगे, हुलकर इसीमें सम्मत हुए। जालिमसिंह उक्त उद्देशसे दो नौका सजाकर प्रत्येक खानेमें २० अस्त्रधारी सैनिक रखकर आप स्वयं एक छोटी नौकामें चढ़कर चम्बलनदीके मध्यस्थलमें जा पहुँचे। हुलकर भी शीघ्र ही अपनी कितनी ही शरीर रक्षक सेनाके साथ नदीके किनारे आकर एक नौका पर चढ़कर उस नदीके मध्यस्थानमें जालिमसिंहके समीप जा पहुँचा। शीघ्रतासे नदीके ऊपर सुन्दर गलीचा बिछाया गया, वह दोनों अद्भुत पुरुष जिनमें केवल एक आँख थी असीम सामर्थ्यवान् राजनीतिज्ञ शान्तिस्थापन करनेके लिये प्रस्तावका आन्दोलन करने लगे। हुलकरने जालिमसिंहको 'काका' और जालिमने हुलकरको 'भ्रातृपुत्र' कहकर पुकारा। परन्तु दोनोंके पक्षमें तरीस्थ सेनाका दल इस प्रकारके भावसे तैयार था कि जो कोई एक ओरसे विश्वासघातकताका

---

(१) कर्नल टाड साहब अपनी टीकामें लिखते हैं कि इस अभागे बखशीने अपमानसे अत्यन्त दुःखी होकर विषपान करके आत्महत्या की, ऐसा अनुमान होता है।

(२) टाड साहबने यहां जालिमसिंहको अंधा और हुलकरको एकाक्ष समझकर दोनोंमे एक आंखवाला कहा है।

लक्षण देखता तो तुरन्त ही आक्रमण करनेके लिये उद्यत होता। हुलकर इस समयमें जितनी जल्दी कोटेका त्याग देगा उसके लिये उतना ही सुभीता होगा, इस कारण जालिमसिंहके प्रस्तावके अनुसार शेषमें हुलकरको तीन लाख रुपया लेकर जाना पडा। बुद्धिमान् जालिमसिंहने इस प्रकारसे तीन लाख रुपया देकर हुलकरके आक्रमणके हाथ से राज्यकी रक्षा कर ली।

इतिहासवेत्ता टाड साहब लिखते हैं कि जालिमसिंहका समस्त समय कोटेके शासन कार्यमें व्यतीत होता था, उनको प्रतिवासी राजाओंके राज्यकी ओर दृष्टि रखनेका अवसर नहीं मिलता था, यह सरलतासे अनुमान किया जा सकता है, परन्तु उन्होंने कोटेराज्यके प्रत्यक्ष स्वार्थ साधनके लिये हुलकर और सेन्धियाके अधिकारी देश जो कोटेकी दक्षिण सीमाके साथ लगे हुए थे, उन देशोंमें कृषिकार्यसे विशेष प्रतियोगिता दिखाई थी। जालिमसिंहने सेन्धियासे पाँच महल नामक देश और हुलकरके निकटसे डिग पिडावा इत्यादि चारजिले जमामें ग्रहण किये। जिस समय बृटिश गवर्नमेण्टने हुलकर और सेन्धियाके साथ युद्धमें जय प्राप्त की उस समय बृटिश गवर्नमेण्टने उक्त देशको एकबार ही कोटेके अधीश्वरको दे दिया। जालिमसिंह उक्त दोनों जने महाराष्ट्र नेताओंके साथ सद्भाव स्थापन और स्वार्थ सम्बन्ध स्थापन करके ही शान्त न हुए, वरन् उन दोनों महाराष्ट्र नेताओंके विश्वासी मंत्रियोंके प्रति गुप्तभावसे तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये उन्होंने एक दूत नियुक्त कर दिया था। उस दूतने मंत्रियोंके प्रत्येक कार्यको गुप्तभावसे देखकर जालिमसिंहसे कह दिया। इधर जालिमसिंहने भी कितने ही प्रथम श्रेणीके नीतिज्ञ महाराष्ट्र पंडितोंको अपने यहाँ नियुक्त कर रक्खा था, और उनके द्वारा ही महाराष्ट्र जातिके जिस किसी राजनैतिक अनुष्ठानको वह जान सकते थे। जो जैसा मनुष्य होता, जालिमसिंह उसके साथ उसी प्रकारका व्यवहार करते थे। विख्यात अमीरखांके साथ जालिमसिंहने विशेष सद्भाव स्थापित करके उसको अपने हस्तगत कर रक्खा था। लुटेरा अमीरखाँ भी आवश्यकतानुसार जालिमसिंहके पाससे समरके उपकरण ले लेता था, विशेष करके अमीरखाँके रहनेके लिये जालिमसिंहने शेरगढ नामक किला दे दिया था। अमीरखाँ सन्तुष्ट चित्त होकर जालिमसिंहका शुभ साधन करता था, जालिमसिंह समझ गये थे कि अमीरखाँको बिना हस्तगत किये उससे विशेष अनिष्ट होनेकी संभावना थी, इस कारण उन्होंने उसको हस्तगत किया था, जालिमसिंहके हस्तगत हुआ मनुष्य कोटेराज्यका कुछ भी अनिष्ट नहीं कर सका।

पिंडारी नामक लुटेरोंका दल भी चतुर जालिमसिंहकी ओर विशेष सद्भाव प्रकाशित करता था। प्रधान २ पिंडारे नेताओंके प्रति सम्मान दिखानेसे वे कोटेराज्यका कुछ भी अनिष्टसाधन नहीं करते थे। पिंडारियोंके अनेक नेता जालिमसिंहसे भूवृत्ति पाकर कोटेमें निवास करते थे, इन पिंडारियोंके साथ जालिमसिंहका यहांतक सद्भाव स्थापित हुआ था, कि सन् १८०७ ईसवीमें जिस समय सेंधियाने विख्यात पिंडारी नेता करीमखाँको बंदी करके ग्वालियरके किलेकी रक्षा की, उस समय जालिमसिंह उस करीमखाँकी

मुक्तिके लिये केवल बहुतसे रुपये देकर ही शांत नहीं हुए थे, वरन् करीमखाँके भविष्यत् सच्चरित्रताके लिये वह उसके साक्षी भी हुए। यद्यपि उनके साक्षी होनेके समयमें उनकी अविवेचकताने प्रकाश पाया परन्तु उसीसे सेंन्धियाने जो यथेच्छाचार किये थे उसका फल उसने पाया।

शरणागतका प्रतिपालन करना राजपूत जातिका परम धर्म है। अधिक क्या शत्रुके भी शरण आनेपर राजपूत जाति तन मन धनसे उसको आश्रय देकर उसकी रक्षा करती थी। अन्यान्य राज्योंके प्रधान २ सामन्त अथवा माननीय मनुष्य भी विपत्तिमें पडकर कोटेमें आय जालिमसिंहके शरणागत होकर आश्रय लेते थे। जालिमसिंह किसी प्रकारसे भी आश्रय देकर शान्त नहीं होते थे। इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंह अपनी सामर्थ्यसे भी परे शरणागतका प्रतिपालन कर उसको आश्रय देते थे। मारवाड और मेवाडके बहुतसे सामन्त उसी राज्यके राजकोटमें पडकर जालिमके शरणागत हुए, जालिमसिंहने उनको इस प्रकारसे भूवृत्ति दान की कि वह सामन्त अपने २ देशमें जितनी भूवृत्तिको भोग करते थे, वह उसकी अपेक्षा समधिक थी। जिस जातिमें शरणगतका प्रतिपालन करना तथा आश्रय देना महान् धर्म और पुण्यदायक विचारा जाता था, उस जातिमें जालिमसिंहके इस व्यवहारसे वह जितने अधिक प्रशंसित होंगे, इसका अनुमान सरलतासे हो सकता है। यही नहीं था कि जालिमसिंह उन शरणागततोंको केवल अभय देकर ही ग्रहण करते हों वरन् वह अभयप्रार्थियोंके साथ उनके राज्यके विवाद विसम्वादोंको भी मिटादेते थे। इसी कारणसे वह रजवाडेके सर्वसाधारण मनुष्योंमें " मध्यस्थ " और " शान्ति स्थापक " नामसे विख्यात हुए थे। सद् उपदेशके वशसे हो या किसी राजनैतिक उद्देशके अनुवर्ती होनेसे हो जालिमसिंहने उस मध्यस्थताको करके विशेष यश प्राप्त किया था। इतिहाससे जाना जाता है कि जालिमसिंह कहते हैं कि " सभी मनुष्य वृद्ध जालिमसिंहके समीप विपत्तिमें पडकर गये, उनका यह विचार था कि जालिमसिंह इस सामान्य भूखंड कोटेसे सरलतापूर्वक सबकी पालना करनेमें समर्थ हैं।

इस समय जालिमसिंहके अभ्यंतरीय राजनीतिके सम्बन्धमें कुछ कहना है। जालिमसिंहके आभ्यन्तरिक शासनकी नीतिको यथास्थानमें वर्णन किया गया है, उसी शासन नीतिको पढकर हमारे पाठक अनेक प्रकारसे उनकी आभ्यन्तरीय राजनीतिका परिचय पा चुके हैं। हम यहाँतक जालिमसिंहके दीर्घ शासनके इतिहासको वर्णन करते आये हैं, उसमें एकवार भी कोटेके अधिराज महाराव उमेदसिंहके नामका उल्लेख करनेका अवसर प्राप्त नहीं हुआ। इसका प्रधान कारण यह था कि यद्यपि महाराव राजा उमेदसिंह कोटेके सिंहासनपर विराजमान थे, परन्तु मूलतः जालिमसिंह सर्वमय कर्तास्वरूपसे अतीत दीर्घकालतक कोटेको शासन करते आये थे। कहा गया है कि राजा उमेदसिंह कोटेके नाममात्रके अधीश्वर थे। वह जालिमसिंहके खिलौने या साक्षी गोपालस्वरूप थे, और चतुर चूडामणि जालिमसिंह ही कोटेके अधीश्वर थे। जालिमसिंहकी आभ्यन्तरीय

राजनीतिका उल्लेख करते हुए यहांपर फिर महाराव राजा उमेदसिंहको उपस्थित करनेकी आवश्यकता होती है ।

पाठक गण ! महाराव राजा गुमानसिंहने मृत्युके समय अप्राप्त व्यवहार उमेदसिंहको कोटेके सिंहासनपर बैठाल कर जालिमसिंहको उनके अभिभावक स्वरूपसे स्थापित किया था, हम जिस समयके इतिहासको इस समय लिखते हैं, वह इसके परवर्ती अर्द्ध शताब्दीके अधिक कालकी कथा है । इस दीर्घकालके पीछे भी हम उसी महाराव राजा उमेदको उस अप्राप्त व्यवहारके समान उन जालिमसिंहके रक्षणावेक्षणपर स्थित देखते हैं । जिस दिन मृत्युशय्यापर शायित गुमानसिंहने जालिमसिंहकी गोदीमें उमेदको स्थापन कर उनको उमेदका अभिभावक पद दान किया । उसी दिनसे चतुर चूडामणि जालिमसिंह उमेदकी ओर जैसा व्यवहार करते आये थे, और उमेदसिंहके चरित्रोंकी प्रकृति जैसी थी उससे वह एक दिनके लिये भी जालिमसिंहके उस प्रभुत्वको लुप्त करनेके अभिलाषी नहीं हुए ! सारांश यह है कि जालिमसिंह जैसी प्रकृतिके मनुष्य थे उसी उच्च क्षमता और स्वाधीनताके साथ राज्यशासन करनेके अभिलाषी थे । उमेदसिंह भी उनके ठीक उसी प्रकार मनोगत पात्र हुए थे । यद्यपि जालिमसिंह राजकीय प्रत्येक विषयपर महाराव उमेदसिंहका मत ग्रहण करते और उनसे परामर्श करते थे । परन्तु ऐसा होनेपर भी जालिमसिंह अपनी इच्छानुसार ही समस्त कार्य करते थे । साधु टाड साहब लिखते हैं कि महाराव उमेदसिंह एक ऊंचीश्रेणीके चिन्ताशील मनुष्य और राजपूत स्वभाव सुलभ अनेक गुणोंसे विभूषित थे । इनको शिकार खेलनेका अधिक शौक था और श्रेष्ठ घोडेपर चढकर बंदूक चलानेमें अच्छी सामर्थ्य रखते थे । जालिमसिंहने इनके प्रति यहांतक आधिपत्यका विस्तार किया और उनको यहांतक अपने हस्तगत किया कि वह कभी भी जालिमसिंहके हाथसे अपने उद्धार करनेके अभिलाषी हुए थे या नहीं, इतना सन्देह है । जालिमसिंह किसी प्रकारसे भी किसी विषयमें महाराव उमेदसिंहके ऊपर कभी बलप्रकाश नहीं करते थे;इधर उमेदसिंहकी भी जितनी अवस्था बढती जाती थी उतने ही वह धर्मके अनुशीलनमें लिप्त होते जाते थे, इस कारण उन्होंने कठोर राजकार्यसे छुटकारेकी अधिक चेष्टा की । बुद्धिमान् महाराव उमेदसिंह इस बातको भलीभांतिसे जान गये कि सम्पूर्ण स्वाधीनभावसे राज्यशासन करनेमें ऐसा विशेष प्रयोजन नहीं है, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही उस आशाको छोड दिया । उमेदसिंह जितना ही राज्यशासनसे वैराग्य दिखाते थे इतना ही जालिमसिंहकी अनुगतता स्वीकार करते जाते थे, जालिमसिंहकी क्षमता तथा प्रतापका आधिपत्य उतनी ही अधिकतासे बढता गया " ।

बुद्धिमान् जालिमसिंह महाराव उमेदसिंहके साथ कैसा व्यवहार करते थे उसके सम्बन्धमें इतिहाससे जाना जाता है कि यदि किसी भिन्नराज्यसे कोई राजदूत कोटेमें चला आवे तो सबसे पहिले उसको महाराव उमेदसिंहके समीप जाना पडता था । दूत उमेदसिंहको अपना परिचय देकर उन्हींसे उत्तर पाता था, परन्तु वह उत्तर उमेदसिंह

अपनी इच्छानुसार नहीं देते थे। मन्त्री जालिमसिंह जो कुछ लिख देते थे वही दिया जाता था। रजवाडे वा अन्य किसी स्थानका कोई उच्च सामन्त निकाली हुई अवस्थामें यदि कोटेमें आकर आश्रय अथवा सहायता मांगता तो महाराव उमेदसिंह ही उसको आश्रय वा सहायता देते थे, परन्तु सहायताका परिमाण जितना जालिमसिंह नियत कर देते थे उमेदसिंह उसको नहीं बढा सकते थे। इधर जालिमसिंहका पुत्र अपनी भूवृत्तिको बढानेके लिये प्रार्थना करता तो महाराव उमेदसिंहके विशेष अनुरोध न करनेपर जालिमसिंह उसे नहीं दे सकते थे। बुद्धिमान् जालिमसिंह सभी विषयोंमें महाराव उमेदका मत यहांतक ग्रहण करते कि वह अपने निजका व्यय बढाने पर भी महाराव उमेदसिंहके बारम्बर अनुरोध प्रकाश करने पर भी वह उस व्ययको पूरा करनेके लिये अपनी आमदनीको बढाते थे। यदि परदेशसे कोटेकी राजधानीमें व्यापारीगण बेचनेके लिये घोडे लाते तो जालिमसिंह सबसे पहिले सर्वोत्तम घोडेको खरीद कर महाराजा और उनके पुत्रको दे देते। चिरप्रचलित रीतिके अनुसार राजकीय समस्त कागज पत्र पुस्तक मोहर और सब प्रकारके राजचिह्न महलके भीतर महारावके निजके सेवकोंकी सावधानीमें रक्खे जाते थे, परन्तु जालिमसिंहकी अनुमतिके विना कोई भी उनका प्रयोग वा व्यवहार नहीं कर सकता था। एक दिन महाराव उमेदसिंहके पुत्र कुमारकिशोरसिंह जालिमसिंहके एकमात्र पुत्र माधोसिंहके साथ एक क्षेत्रमें जिस समय अपने अपने घोडोंको शिक्षा दे रहे थे उस समय किशोरसिंहके प्रति माधोसिंहने अनादर दिखाया, जालिमसिंहने दण्डस्वरूपमें अपने पैतृक देश नांगतामें माधोसिंहको भेज दिया। जालिमसिंहके इस व्यवहारसे अवश्य ही उनके सुविचार और राजभक्तिने प्रकाश पाया। महाराव उमेदसिंहके बारम्बार अनुरोध करने पर उन्होंने पुत्रको क्षमा नहीं किया।

जालिमसिंहने महाराव उमेदसिंहके साथ प्रकाशमें जिस राजभक्तिको प्रकट किया था उसके सम्बन्धमें बहुतसे प्रवाद प्रचलित हैं। एक समय जालिमसिंह महलमें बैठे हुए राजकीय देवमंदिरमें पूजा कर रहे थे। इसी समयमें महाराव उमेदसिंहके पुत्र वहां गये। वह यह नहीं जानते थे कि जालिमसिंह वहां पूजा कर रहे हैं। उस समय शीतकाल था मन्दिरकी जमीन कुछ एक भीग रही थी। जालिमसिंह जिस रजाईको कन्धेके ऊपर रक्खे हुए पूजा कर रहे थे उसी रजाईको पृथ्वीपर आसनकी जगह उन्होंने बिछा दिया, और राजकुमारको उसपर बैठकर पूजा करनेके लिये कहा। जब पूजा समाप्त हो गई तब राजकुमार चले गये। जालिमसिंहका जो सेवक उस स्थानपर था उसने विचारा कि जब राजकुमार इस रजाईके ऊपर बैठ गये हैं तो हमारे स्वामी इसको अपने व्यवहारमें नहीं लावेंगे। इस कारण वह उस रजाईको निकम्मी जानकर एक कोनेमें फेंक देनेके लिये उद्यत हुआ, परन्तु जालिमसिंहने उसके मनके भावको जानकर उसी समय उस रजाईको उसके हाथसे ले लिया, और अपने शरीरपर डालकर "राजकुमारके चरणोंसे यह पवित्र हो गई" भक्तिके साथ यह बात कही। इसका सरलतासे अनुमान हो सकता है कि अत्यन्त सामर्थ्यवान् मनुष्य यदि ऐसा आचारण

करे तो अत्यन्त विचित्रता है। जालिमसिंहने जिस प्रकार विनय और नम्रता प्रकाश करके अपने प्रबल आधिपत्यका विस्तार किया, ऐसा अन्यत्र दृष्टिमें नहीं आता। सारांश यह है कि चतुरता और नीतिज्ञता ही इसका मूल है।

जालिमसिंह जैसे परम ज्ञानी विख्यात थे अपने यहाँ सेवक और कर्मचारियोंके रखनेमें भी उसी प्रकारसे विशेष प्राज्ञता दिखाते थे। उनमें इस प्रकारकी एक शक्ति थी जिससे उन्होंने अपने कर्मचारी और सेवकोंको अपने वशीभूत कर रक्खा था। और वह कर्मचारी और सेवकोंके ऊपर विशेष दया प्रकाश करते थे, और उनके साथ मित्रता हो जानेसे कोई भी इनका किसी प्रकारका अनिष्ट नहीं कर सकता था, यद्यपि जालिम उन कर्मचारी और सेवकोंके प्रति प्रयोजनीय समस्त अभावको पूरण कर देते थे, और न्यायके साथ उनको प्रत्येक विषयमें सीमाबद्ध स्वाधीनता देते थे। परन्तु उनको किसी प्रकार भी स्वेच्छाचारी नहीं होने देते थे। वह उन कर्मचारियोंको उनके आत्मीय स्वजनोंके प्रतिपालन करनेके समस्त अनुष्ठान कर देते थे, पर्वोत्सवमें, विवाहमें, जन्म और मृत्युके समयमें मुक्तहाथसे उनको रुपया देते थे, परन्तु कभी भी उनको इच्छानुसार बलसे वा अन्यायसे धन उपार्जन नहीं करने देते थे। इतिहाससे जाना जाता है कि पठान और महाराष्ट्र पंडित ही उनके यहां सबसे अधिक विश्वासी कर्मचारी थे। इन्होंने पठानोंको सामरिक पदपर नियुक्त किया और मरहटोंको राजनैतिक कार्यपर नियुक्त किया। यह अपने स्वजातीय मनुष्यको किसी कार्यमें नियुक्त नहीं करते थे। उनके शासनके शेष समयमें एकमात्र शक्तावत सम्प्रदायके विशनसिंह कोटेकी फौज-दारी पदपर नियुक्त थे। दलेलखां और महरावखां नामक दो मनुष्य जालिमके अत्यन्त विश्वासी कर्मचारी और मित्र थे। कोटेका विराट् किला आगरेके किलेके अतिरिक्त भारतवर्षमें जिसकी बराबर दूसरा नहीं है वही किला दलेलखांने बनवाया था। उसी दलेल-खांने झालरापाटन नामका अत्यन्त रमणीक नगर बनवाया। कोटेके अन्यान्य समस्त किलोंका भी संस्कार इसी दलेलखांने करवाया था, जालिमसिंह दलेलखांको इतना प्यार करते थे। वह कहा करते थे कि "दलेलखांकी मृत्युके पहिले मानो हमारी मृत्यु हो जायगी"। महरावखां कोटेके पैदल दलके नेता थे। इन्होंने अपनी सुशिक्षासे उस सेनाको अत्यन्त ही रणनिपुण कर दिया था। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "वह सेनादल प्रत्येक मासमें बीसरोज अर्थात् बीस दिनका वेतन पाता था, और दो वर्षके शेष होनेपर बाकी सब वेतन मिल जाता था"।

---

(१) कर्नल टाड साहबने इस स्थानपर टीकामें लिखा है कि हमारे अधीनसे जालिमसिंहने एक सेनादल इस महारावखांके अधिनायकत्वमें दिया, उस सेनादलने आठ दिनमें हाडौतीसे लगेहुए हुल-करके अधिकारी समस्त देशोंपर अधिकार कर लिया था। उस सेनादलने जनरल सरजान मालकाकामके अधीनमें स्थित सेनादलके साथ मिलकर "मौदी" किलेकी दीवारको लांघकर विशेष वीरता दिखाई थी।

छठवां अध्यांय ६.

कोटेराज्यकी नवीन राजनैतिक अवस्थाका परिवर्तन-बृटिश गवर्नमेंटके साथ कोटेराज्यकी संधिका-सूत्रपात-संधि स्थापनमे जालिमसिंहका अभिमत-पिंडारियोंको दमन करनेके लिये सधिका प्रस्ताव-संधिबन्धन-सधिपत्र-महाराष्ट्रनेता कोटेराज्यसे जो कर लेते थे, अंग्रेजी गवर्नमेंटका वह ग्रहण करना-करकी सूची-पिंडारियोंका युद्ध-उस युद्धमे जालिमसिंहको सहायता करना-उसके पुरस्कारमे कोटेराज्यको बृटिश गवर्नमेंटका कईएक देश देना-जालिमसिंहके वंशानुक्रमसे कोटेके शासनकर्ता पदपर नियोगपत्रमे गवर्नमेण्टकी सम्मति देना और उसपर हस्ताक्षर करना-उसके सम्बन्धके नियोगपत्र-गवर्नमेंटके द्वारा कोटेराजको प्रदत्त देशकी राजसनद-दानपत्र-कोटाराज्यके महाराव राजा उमेदसिंह-कोटाराज्यका परिवार-किशोरसिंह-विशुनसिंह-पृथ्वीसिंह-राजकुमारोंके स्वभाव:और चरित्र-जालिमसिंहके दो पुत्र माधोसिंह और गोवर्धनदास-दोनोंके स्वभाव और चरित्र-भ्रातृविच्छेद-पिताकी सामर्थ्य घटानेके लिये गोवर्धनदासकी चेष्टा करना-किशोरसिंहके साथ पृथ्वीसिंह और गोवर्धनदासका मिलन-षड़यन्त्र-माधोसिंहको फौजदारपदकी प्राप्ति-महाराव उमेदसिंहकी मृत्यु-कर्नल टाडका कोटेमे आगमन-कर्नल टाडका राजदरबारमे षड़यन्त्रका समाचार पाना-जालिमसिंहको भयंकर पीडा होना-आरोग्यप्राप्ति-कर्नल टाडके द्वारा जालिमसिंहको षड्यंत्रका सम्बाद ज्ञात होना—राजनैतिक विभ्राट्-कर्नल टाडका राजनैतिक आचरण-जालिमसिंहकी सामर्थ्यका लोप करनेके लिये प्रकाशरूपसे चेष्टा करना-कोटेके राजा किशोरसिंहको कर्नल टाड और जालिमसिंहके प्रास्तावके अनुसार सेनाके द्वारा महलमें बन्दकरना— किशोरसिंहका महलको छोडकर बाहर जाना-कर्नल टाडका महाराव किशोरसिंहको फिर महलमे लाना-गोबर्धनदासको कोटेसे निकलवाना-कर्नल टाडके उद्योगसे महाराव किशोरसिंहके साथ जालिमसिंहका फिर संमिलन-महाराव किशोरसिंहका अभिषेक-जालिमसिंहका कोटेसे दड नामक कर को रहित करना।

इस समय हम कोटेराज्यके इतिहासका एक नवीन अध्याय अंकित करनेके लिये आगे बढे हैं। यवनशासनके पीछे मरहठे पिंडारी इत्यादि अत्याचारी लुटेरे भारतवर्षके शांति—नाशकोंके प्रबल प्रतापके समय चतुर नीतिज्ञ जालिमसिंह कोटेराज्यकी किस भावसे रक्षा करते आये हैं, पहिले अध्यायमें उसका वर्णन भलीभांतिसे किया गया है। जिस समय सामान्य वाणीकीवेशी ईस्ट इण्डिया कम्पनीने जगदीश्वरकी कृपासे समस्त भारतमें अपने प्रबल प्रभुत्वका विस्तारकर शासनशक्तिको दृढ कर लिया, और देशीय राजाओंकी अवस्थामें अन्तर उपस्थित कर दिया,इस समय हम उसी समयके इतिहासको वर्णन करनेमें प्रवृत्त हुए हैं। जिस कार्यसे रजवाडोंके राजा एक समय प्रबलप्रतापसे राज्यशासन कर अक्षयकीर्ति संचय कर गये हैं, जिन राजपूत राजाओंने अप्रमेय वीरता, असीम साहस,अनुपम शूर-वीरता और प्रबल पराक्रम प्रकाश करके अफगानिस्थानतकको जीत लिया था, जिन राजपूतराजाओंने एक समय एक २ पराक्रमी यवन बादशाहकी शासनशक्तिको विचालित किया था, जिन राजपूतराजाओंकी सहायतासे अकबर, शाहजहां, आरंगजेब इत्यादि बादशाहोंने भारतके प्रत्येक प्रान्तमें अपनी शासनशक्तिको फैला

दिया था, जिन राजपूत राजाओंसे यवन बादशाह मनही मनमें अधिक भय करते थे, जिन राजपूत राजाओंके प्रचंड बाहुबलसे भारतवर्षकी अन्य सभी जातियां थर २ कांपती थीं वही राजपूतराजा, वही राजपूतजाति, बिना युद्ध और बिना रुधिर बहाये तथा विना आपत्ति किये किस प्रकारसे बृटिश गवर्नमेण्टकी आज्ञा पालनके लिये तैयार हुई, हमारे बुद्धिमान् पाठक कर्नल टाड साहबकी उक्तिको पढ़ कर इसका अनुमान सरलतासे कर सकेंगे " ।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "सन्१८१७ईसवीमें जब कि भारतवर्षके गवर्नर जनरल मार्किस आफ हेष्टिंगसने पिंडारियोंके साथ युद्ध करनेकी घोषणा की, उस समय घोषणापत्रमें लिखा था कि, पिंडारी लुटेरे दस्युदलके नेता तथा लूटमारकी प्रथा चलानेवालोंका यह उदय हुआ है, यह प्रकाश किया जाता है कि कोई भी इस युद्धके समयमें निरपेक्षभावसे नहीं रह सकेगा" और यह भी घोषणा की गयी कि "भारतवर्षके समस्त देशीय राज्योंके सर्वसाधारणकी मंगल कामनाके लिये जब उन लुटेरे पिंडारियोंके नाश करनेकी आवश्यकता हुई है, तब जो कोई अंग्रेजोंको सहायता न देगा उसे अंग्रेजोंका शत्रु समझा जायगा । राजपूत राजा हमारे समान शांति और सुशासन स्थापन करनेके विशेष अभिलाषी थे, इस कारण उनको हमारे साथ रक्षण, पीडन संधि स्थापन करनेके लिये इस प्रकारसे बुलाया गया । और इस संधिबंधनसे वह चिरकालके लिये लूटनेवाले तस्करोंके हाथके छुटकारा पा सकेंगे, यह भी उनको सूचना दी गई, और इसी उपकारके बदलेमें वे हमारी शासनशक्तिकी अधीनता स्वीकार करें, और हम उनके राज्यकी रक्षाका भार ग्रहण करते हैं, इस कारणसे उनको राज्यकी आमदनीके कितने ही अंश कर स्वरूपमें देने होंगे, यह भी कहा गया" ।

कर्नल टाड साहबकी उक्त उक्ति भलीभाँति प्रकाश कर रही है कि राजपूत राजाओंकी अवस्था शोचनीय हो गई थी, इसीसे राजपूत जातिका वह जगत्‌विख्यात साहस, शूरता, वीरता, पराक्रम एकबार ही लुप्त हो गया था । उन्हीं राजपूतोंके सिंहासनों-पर राजपूत राजाकी वीरतापर दोष लगानेवाले बैठे थे । गवर्नमेण्टने विना युद्ध किये इसीसे उन सबको बडी सरलतासे अपनी अधीनतामें बाँध लिया । राणा प्रताप, महाराज जशवन्त, महाराज जयसिंह इत्यादिके समान चिरस्मरणीय राजपूत राजा यदि उस समय जीवित होते तो पिंडारियोंके भयसे ऐसी अधीनताको न स्वीकार करते ।

सरकारके बुलानेसे राजपूत राजाओंने एक एक करके बृटिश गवर्नमेंण्टके साथ संधिबंधनमें आबद्ध होकर करदपदको ग्रहण किया । राजस्थानके अन्य राज्यके इतिहासमें पाठक उसको पढ़ चुके हैं । उक्त आवाहन पत्रको पाकर जालिमसिंहने किस प्रकारका व्यवहार किया, उसके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "सूक्ष्म दृष्टि जालिमसिंह शीघ्र ही समझ गये थे कि बृटिश गवर्नमेण्ट उस प्रस्तावको पूर्ण करनेमें यथेष्ट उपकार दिखावेगी, और उस प्रस्तावके पूर्ण करनेमें सम्मान भी अधिक प्राप्त होगा । उसीके अनुसार उनके दूतने सबसे पहिले अंग्रेजी गवर्नमेण्टके साथ संधिबंधन स्थापित कर लिया । शीघ्र ही समस्त रजवाडे भी बृटिश गवर्नमेण्टके साथ मिल गये ।

"उस संधिबंधनके सम्बन्धमें आचिसन साहबने अपने ग्रंथमें लिखा है कि, सन् १८१७ ईसवीमें पिंडारियोंका नाश करनेके लिये जिन समस्त राजपूत राजाओंने बृटिश गवर्नमेण्टकी सहयोगिता की थी। जालिमसिंहके द्वारा सन् १८१७ ईसवीके दिसम्बर मासमें कोटेके अधीश्वरके साथ एक संधिबंधन तय्यार हुआ। उस संधिमें बृटिश गवर्नमेण्टने बाहरी शत्रुओंके आक्रमणसे कोटे की रक्षाका भार ग्रहण किया, कोटेसे मरहठोंको जो कर पहिले मिला करता था, अब वह कर बृटिश गवर्नमेण्टको मिला करेगा, यह नियत किया गया। सेंधियाको कोटेसे जो करांश मिलता था बृटिश गवर्नमेण्टने उसके संम्बन्धमें उसके साथ स्वतंत्र व्यवस्था की, और महाराव आवश्यकतानुसार अंग्रेजगवर्नमेण्टको सेनाकी सहायता देंगे, यह भी निश्चय हुआ"। *

हमने आचिसन साहबके ग्रन्थसे इस संधिपत्रको नीचे प्रकाशित किया है।

संधिपत्र।

पहली धारा-एक ओर बृटिश गवर्नमेण्ट और दूसरी ओर महाराव उमेदसिंह बहादुर और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोंमें चिरस्थायिनी मित्रता संधि सबन्ध और समस्वार्थ विराजमान किया जायगा।

दूसरी धारा-इस संधिपत्रमें हस्ताक्षर करनेवालोंके शत्रु मित्र एक दूसरेके शत्रु-मित्ररूपसे गिने जायगे।

तीसरी धारा-बृटिश गवर्नमेण्ट कोटाराज्य और उनके अधीनके देशोंसे अपने अधीनमें रक्षण वे क्षणका भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हुई है।

चौथी धारा-महाराव और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त चिरकालतक बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रभुता स्वीकार करेंगे और इससे पहिले कोटाराज्यका जो अन्य सब राज्योंके साथ सम्बन्धबन्धन था वह सब राजा अथवा राज्य इसके पीछे कोई सम्बन्ध नहीं रख सकेंगे।

पांचवी धारा-बृटिश गवर्नमेण्टकी सम्मतिके अतिरिक्त महाराव और उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तगण अन्य किसी राजा वा राज्यके साथ किसी प्रकारका संधिबंधन स्थापन नहीं कर सकेंगे। परन्तु वह अपने मित्र और कुटुम्बी राजाओंके साथ सांसारिक पत्रव्यवहार कर सकेंगे।

छठवीं धारा-महाराव और उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्तगण किसी राज्यपर अत्याचार वा आक्रमण नहीं कर सकेंगे, और यदि दैवात् किसीके साथ कुछ झगडा उपस्थित हो जाय तो वह झगडा चाहै महारावकी ओरसे हो चाहै अन्य किसी राजाकी ओरसे, उस विवादकी मध्यस्थताका भार बृटिश गवर्नमेण्टको ही रहेगा।

सातवी धारा-कोटेराज्यसे इतने दिनोंतक जो कर महाराष्ट्र राजाओंको अर्थात् पेशवा, सेंधिया, हुलकर और पँवारोंको देते थे, इसके पीछे चिरकालके लिये वह समस्त कर दिल्लीमें बृटिश गवर्नमेण्टके उसके साथ लगी हुई सूचीके अनुसार देने होंगे।

* Aitchison's Treaties

आठवीं धारा-अन्य कोई राजा कोटेराज्यसे और किसी प्रकारके करका दावा नहीं कर सकेगा और यदि अन्य कोई राजा उस प्रकारके करके लिये दावा करेगा तो बृटिश गवर्नमेण्ट उस दावीका उत्तर देगी, ऐसा निश्चय हो चुका है।

नववीं धारा-बृटिश गवर्नमेण्टके अनुरोधके अनुसार कोटेको यथाशक्ति सेनाकी सहायता करनी होगी।

दशवीं धारा-महाराव, उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तगण उनके राज्यमें पूर्ण शासक क्षमता युक्त अधीश्वररूपसे रहेंगे, और बृटिश गवर्नमेण्ट अपनी दीवानी और फौजदारीकी शासनशक्ति कोटेराज्यपर नहीं फैला सकेगी।

ग्यारहवीं धारा-ग्यारह धाराओंसे युक्त यह संधिपत्र दिल्लीमें लिखा गया और एक ओर मिष्टर चार्लस थियोफिलास मेटकाफ और दूसरी ओर महाराज शिवदानसिंह, शाह जीवनराम और लाला फूलचंदके हस्ताक्षर सहित यह मोहरांकित हुआ। और यह महामहिमवर गवर्नर जनरल और महाराव उमेदसिंह और उनके शासनकर्ता राजराणा जालिमसिंहके स्वीकार करने पर आजकी तारीखसे एक महीनेमें लिया जायगा।

दिल्ली
२६ दिसम्बर सन १८१७

(हस्ताक्षर) सी. टी. मेटकाफ।
रेजिडेण्ट।

महाराज शिवदानसिंह।
फूलचँद।
महाराजा उमेदसिंहबहादुर।
राजराणा जालिमसिंह।
(हस्ताक्षर) हेष्टिंगस्।

सन् १८१८ ईसवीकी २६ जनवरीको ऊचरनामक स्थानके डेरोंमें महामान्यवर गवर्नर जनरलसे यह संधिपत्र स्वीकृत हुआ।

(हस्ताक्षर) जे० आडाम।
गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी।

ऊपर लिखा हुआ संधिपत्र प्रकाशित करता है कि सन् १८१८ ईसवीकी २६ वीं जनवरीसे कोटेराज्यने उमेदसिंहके वंशानुक्रमसे अंग्रेज गवर्नमेण्टकी अधीनता स्वीकार कर ली, और इतने दिनसे जो महाराष्ट्रदल बलपूर्वक उनके राज्यपर अत्याचार और उपद्रव करता था, और उनसे कर लेता था, इतने दिनोंमें उसकी शान्ति होगई, सेन्धिया हुलकर पँवार और पेशवा यही चार प्रधान नेता कोटेराज्यसे जो कर ग्रहण करते थे कोटाराज उस करको नवीन प्रभु अंग्रेज गवर्नमेण्टको देनेके लिये तैयार होगा। महाराष्ट्रगण कोटेराज्यसे कितना कर लेते थे, हम आचिसन साहबके ग्रन्थसे उसकी सूची नीचे प्रकाश करते हैं।

(महाराष्ट्रोंको इससे पहिले जो कर दिया जाता था–उसकी सूची।)

(१) कोटा, (२) ७ काटडियों और (३) शाहाबाद इन तीन परगनोंके लिये स्वतंत्र करदेना होता था।

कोटेका कर।

नगद मुद्रा ... ... २००००० रुपया।
द्रव्यादि ... ... १००००० "
जोड ३००००० "
द्रव्यके हिसाबसे घटाकर मूल्य २०००० "
नगद बचत २८०००० रुपया।
दो लाख अस्सी हजार, चांदोडी उज्जयनी, एवं इन्दोरी
रुपयेके कारण प्रतिसैकडा ८ रुपया बट्टेके हिसाबसे घटत २२४०० रुपया।
शेष बचा २५७६०० रुपया।

दो लाख सत्तावन हजार छः सौ गुमानशाही रुपया, दिल्लीका दो लाख चौवालीस हजार सात सौ रुपयेके समान।

उक्त रुपया निम्नलिखित प्रकारसे विभक्त होता था।

सेन्धियाका अंश।

नगद ... ... ७७००० रुपया।
द्रव्य ... ... ३८५०० "
जोड ११५५०० "
द्रव्यके हिसाबसे रुपये करनेमें कमी ... ... ७७०० "
नगद ... ... १०७८०० "
एक लाख सात हजार और आठसौ उज्जयनी चांदोडी
एवं इन्दौरी रुपया। उक्त रुपया आठ रुपया सैकडे
बट्टे पर बना ... ... ८६२४ "
बाकी गुमानशाही रुपया ९९१७६ रुपया।

हुलकरका प्राप्त कर उक्त प्रकारसे सेंधियाके समान था।

पंवारका अंश।

नगद ... ... ४६००० "
द्रव्य ... ... २३००० "
६९००० "
द्रव्यहिसाबसे रुपया बनानेमें घटी ... ... ४६०० "
नगद ... ... ६८४०० "
प्रतिसैकडा आठ रुपया घटीसे देशी रुपया बनानेमें घटी। ५१५२ "
शेष गुमानशाही ५९२४८ रुपया।

सातोंकोटडियोंका देय कर।

नगद	बूँदीका	२२१५८ रुपया।
घटी सैकडा ५ के हिसाबसे		११०८ "
		२१०५० रुपया।
	गुमानशाही	२११०५० "
	दिल्लीके सम तुल्य	१९९९७॥० रुपये।

विशेष विवरण।

प्रथम कोटरि

आंतरदाका कर	बूँदीका	३८०० रुपया।
घटी (५ सैकडा हि०)		१९० "
बाकी गुमानशाही रुपया		३६१० "

उक्त रुपया निम्न लिखित दो बराबर अंशोंमें विभक्त होता था,

सेन्धियाका अंश	१८०५ रुपया।
हुलकरका अंश	१८०५ "
	३६१० "

दूसरी कोटरि

बलवानका कर	बूँदीका	१००० रुपया।
घटी		५० "
गुमानशाही		९५० "

उपरोक्त रुपया निम्नलिखित तीनभागोंमें विभक्त होता था;

सेन्धियाका अंश	४०० रुपया।
हुलकरका अंश	४०० "
पंवारका अंश...	१५० "
	९५० "

३,४, एवं पांचवीं कोटरि

करवर गैंता और पीपलादाका कर ...	बूँदीका	३५६० रुपया।
घटी ५ सैकडा हिसाबसे...		१७८ "
गुमानशाही रुपया		३३८२ "

उक्त रुपया निम्नलिखित अंशोंमें विभक्त होता था,

सेन्धियाका अंश	१५२० रुपया।
हुलकरका अंश	१५२० "
पँवारका अंश	३४२ "
	३३८२ रुपया।

छठवाँ और सातवीं कोटरि
इन्द्रगढ और खातोलीका कर ... ...१३७९८ रुपया।
५ सैकडा हिसाबसे बट्टा ... ... ६९० "

गुमानशाही १३१०८ "

सेंधिया और हुलकर उक्त रुपया बराबर दो अंशोंमें विभाग कर लेते थे।

शाहाबाद देशका कर।

पेशवाको उक्त परगनेसे ठीक कितना रुपया कर मिलता था इसका निश्चय नहीं जाना जाता, परन्तु ऐसा अनुमान है कि वे २५००० रुपये लेते थे, उसका आधा अंश नगद और अपरार्द्धांश द्रव्य लिया जाता था।

(हस्ताक्षर) सी० टी० मेटकाफ।
राव राजा उमेदसिंह।
राजराणा जालिमसिंह।
महाराज शिवदानसिंह।
फूलचंद।

ऊपर लिखे हुए संधिपत्रको पढकर पाठक भलीभांतिसे जानगये होंगे कि सन् १८१८ ईसवीके शेष भागमें रजवाडेके अन्यान्य राज्योंके समान कोटेके भाग्यका चक्र भी बदल गया था।

मरहठे, पठान और पिंडारियोंकी अधीनताकी जंजीरको तोडकर जालिमसिंह बृटिश गवर्नमेंटके अधीन हुए। यद्यपि सरकारने देशीय राजाओंको मरहठे और पिंडारियोंके हाथसे उद्धार कर लिया था परन्तु इतिहास इसको प्रमाणित करता है कि गवर्नमेंटने अपनी सेनाके द्वारा ही नहीं वरन् अपनी राजनीतिके बलसे देशीय राजाओंकी सहायता लेकर पिंडारियोंका नाश करके अपना प्रताप प्रबल कर लिया था। जो राजपूत राजा गवर्नमेण्टके साथ संधि करके उनकी आधीनताके पाशमें बँध गये, और चिरकालतक उनकी अधीनतामें रहना स्वीकार किया, उनकी अवस्था शोचनीय होनेपर भी वह यदि एकताका अवलम्बन करके महाराष्ट्र और पिंडारियोंपर आक्रमण करते तो सरलतासे महाराष्ट्र और पिंडारियोंका प्रताप और प्रभुत्व लुप्त कर सकते थे, पर इनके लिये एकता होना असम्भव था। जैसे भी हो इस समय इतिहासका ही अनुसरण करना होगा।

कर्नल टाड साहबने उक्त संधिबन्धनका उल्लेख करके लिखा है कि इस समय अवसर पाकर समस्त भारतवर्ष हाथमें अस्त्र लेकर उठा। दो लाख मनुष्य एक उद्देशसे एकसाथ मिलकर भारतवर्षसे लुटेरे अत्याचारी और पीडित करनेवालोंकी रीतिको जडसे उखाडनेको लिये धावमान हुए। हाडौती देशकी सीमामें ही सबसे पहिले पहिल समर होनेकी सम्भावना थी, इस हेतु जालिमसिंहके समीप एक अंग्रेज एजेण्टका भेजना अत्यन्त आवश्यक हुआ, कोटे राज्यसे सेना सामन्त और रसद आदि जहांतक मिल

सके उसको संग्रह करके शत्रुके साथ उन सबका प्रयोग कर शत्रुओंको कोटे वा उसके आसपासके देशोसे भगानेके लिये उक्त एजेण्ट तैयार हुआ; कोटेसे उक्त एजेण्टको इतनी सहायता मिली कि उसने जालिमसिंहके डेरोंमें पहूँचते ही पांच दिनमें कोटराज्यके प्रत्येक घाट वा प्रधान २ मार्गके मुखपर सेनाके डेरे स्थापित किये, इसी समयमें जनरल सर जान मालकम नर्मदाके पार होकर दाक्षिणसे बहुत थोडी सेना ले अगणित शत्रुओंसे घिरकर भी उत्तरकी ओरको जा रहे थे, कोटेसे पांच सौ पैदल अश्वारोही और चार तोपें उक्त जनरलकी सहायताके लिये गई थीं, बृटिश भारतके शासन इतिहासमें इस उज्वल और घटनापूर्ण समयमें जब गंगाजीके किनारेसे समुद्रतकके विस्तारित देश रणमदसे उन्मत्त हो गये थे, उस समय एकमात्र जालिमसिंहके डेरोंमें ही समर चलानेका प्रधान केन्द्रस्थल हो गया, उस समय जालिमसिंहने अंग्रेज गवर्नमेण्टकी यथाशक्ति सहायता करनेमें कसर नहीं की। "सेनासे घोडोंसे और रसद आदिके द्वारा उन्होंने उस समय पिंडारियोंका नाश करनेके लिये सब प्रकारसे सरकारकी सहायता की" ।

इतिहाससे जाना जाता है कि यद्यपि जालिमसिंहने प्रतापशाली बृटिश गवर्नमेण्टके साथ कोटेका भाग्य विजाडित किया था परन्तु उनके अधीनमें जो मरहठे मंत्री और कर्मचारी नियुक्त थे उन सभीने एक मुखसे अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रताके न करनेका अनुरोध किया। परन्तु जालिमसिंह भलीभांतिसे जान गये थे कि अंग्रेजोंकी शासनशक्ति क्रमशः जिस भावसे प्रबल हो गई है उससे अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ मित्रता किये बिना अन्तमें अनिष्ट होनेकी सम्भावना है । इसी लिये अपनी तीक्ष्णबुद्धिसे भारतवर्षकी राजनैतिक अवस्था परिवर्तनोन्मुख देखकर ही उन्होंने पिंडारियोंके नाश करनेमें सम्पूर्ण सहायता की। पिंडारियोंके नाश करनेके पीछे गवर्नमेण्टने जिन देशोंपर आपना अधिकार कर लिया था उनमें हुलकरके अधिकारी चार देश जो जालिमसिंहने हुलकरसे जमामें लिये थे, उन चारों देशोंका राजस्वत्व जालिमसिंहको गवर्नमेण्टने दे दिया। परन्तु नीतिज्ञ जालिमसिंहने अपने पुरस्कार स्वरूप उन चारों देशोंको किसी प्रकारसे भी न लेकर अपने प्रभु कोटापति महाराव राजा उमेदसिंहके नामसे उनको देनेके लिये कहा। गवर्नमेण्टने जालिमसिंहके इस विश्वासी व्यवहारको देखकर अत्यन्त संतुष्ट हो शीघ्र ही उनकी कामनाको पूर्ण कर दिया।

सन् १८२७ ईसवीके २६ दिसम्बरको गवर्नमेण्टके साथ जिस समय कोटेराजका संधिबंधन समाप्त हो गया। उस समय जालिमसिंहके मंत्रित्व पक्षमें गवर्नमेण्टने

---

(१) महात्मा टाड साहब ही अंग्रेजोंके एजेण्ट होकर कोटेमें भेजे गये थे, वह इस स्थानपर अपनी टीकामें लिखते हैं कि "इस इतिहासके लेखक उस समय सेन्धियाकी सभामें एसिस्टैण्ट रेजिडेण्ट पदपर नियुक्त थे, लार्ड हेष्टिंग्सने उनको राजराणा जालिमसिंहके निकट भेजा। वह (टाड) सन् १८१७ ईसवीकी १२ वीं नवम्बरको ग्वालियर छोडकर २३ तारीखको कोटेसे बाहर कोश दक्षिणके पूर्वमें रउता नामक स्थानमें जालिमसिंहके डेरोंमें गये"।

किसी प्रकारका भी हस्ताक्षेप नहीं किया। ऐसी विधि, वा संधिमें ऐसी कोई धारा नहीं रक्खी गई परन्तु जालिमसिंहके द्वारा गवर्नमेण्टने विशेष सहायता पाकर सन् १८१८ ईसवीकी २६ फरवरीको उक्त संधिपत्रमें निम्नलिखित धाराको और भी नियुक्त किया।

"संधि बंधनमें आबद्ध होकर दोनों पक्ष इस बातको स्वीकार करते हैं कि कोटेराज्यके अधीश्वर महाराव उमेदसिंहके परलोक जानेके पीछे कोटाराज्य उनके बडे पुत्र और उत्तराधिकारी महाराज किशोरसिंहके वर्तमानमें और अवर्तमानेंम उनके वंशधर उत्तराधिक्रमसे चिरकालतक उस राज्यको भोगते रहेंगे, और कोटेराज्यके समस्त विभागकी शासन सामर्थ्य राजराणा जालिमसिंहके ही हाथमें रहेगी, और उनके परलोक जानेके पीछे उनके बडे पुत्र कुमार माधोसिंह और उनक पीछे उनके वंशधर उत्तराधिकारी क्रमसे उक्त शासन सामर्थ्यको पावेंगे।

दिल्ली,
१० फरवरी सन् १८१८ ई०

(हस्ताक्षर) सी. टी, मेटकाफ।
महाराव राजा उमेदसिंह बहादुर।
राजराणा जालिमसिंह।
महाराज शिवदानसिंह।
फूलचंद।
गोविन्दराम।

मन्तव्य—यह अतिरिक्त धारा महामहिमवर गवर्नर जनरलसे सन्१८१८ईसवीकी १ मार्चको लखनऊमें स्वीकृत हुई।

(हस्ताक्षर) जे. आडाम.
गवर्नर जनरलके सेक्रेटरी.*

इस अतिरिक्त धाराने जितनी अधिकतासे कोटेराजका महान् अनिष्ट किया, पाठकगण उसको यथास्थान पढेंगे।

पिंडारियोंके नाश करनेके सम्बन्धमें विशेष सहायता करनेसे गवर्नमेण्ट जालिमसिंहको चार परगनोंका राजस्वत्व एक बार ही देनेक लिये तय्यार हुई थी, उसे हमारे पाठक पहिले ही पढ चुके हैं।

परन्तु जालिजसिंहके स्वयं उस पुरस्कारको ग्रहण करनेमें असम्मत होनेसे उनकी कामनाके अनुसार कोटेराज उमेदसिंहको वह पुरस्कार दिया गया, हमने यहांपर उसकी सनद प्रकाश की है।

सनद।

"जिस कारणसे गवर्नमेण्ट और कोटेके अधीश्वर महाराव उमेदसिंहमें मित्रता स्थापित हुई है, और उक्त महारावने अंग्रेज गवर्नमेण्टसे जो विशेष सहयोगिता की है वह सर्वसाधारणंम विशेषरूपसे विदित है। उस मित्रताके चिह्न स्वरूप महामहिमवर मार्किस आव हेष्टिंगस् सकौन्सिल गवर्नर जनरल बहादुरने कप्तान टाडके द्वारा निम्नलिखित

---

* Aitchison's treaties Vo IV.

परगनोंका राजस्वत्व ऊपर लिखे हुए महारावको दिया है और उसके साथ सन् १८१८ ईसवी २६ दिसम्बरको दिल्लीमें जो संधिबन्धन होगया है उसीके अनुसार महारावके समीपसे शाहाबाद परगनाका जो कर मिलता है उस करके देनेसे उनको छुटकारा मिलगया है, वह और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्त गण उसे वंशानुक्रमसे भोग करें।

इसके पीछे महाराव उक्त स्थानोंके प्रभुस्वरूपसे अपनेको विचारेंगे, और दयालुताके व्यवहारसे वहांकी प्रजाके अनुराग भाजन होकर उनको अपने शासनके अधीनमें रक्खेंगे। अन्य कोई भी उसमें हस्ताक्षेप नहीं कर सकेगा।

परगना	डीग।
,,	पचपाड।
,,	अहवार।
,,	गंगरा।

सन् १८१९ ईसवीकी २५ वीं सितम्बरको सकौन्सिल गवर्नर जनरलके द्वारा दस्ताक्षर सहित और मोहरांकित हुआ"।

यद्यपि गवर्नमेण्टके साथ मित्रता होनेके पहिले राजराणा जालिमसिंह कोटेकेराजकी समस्त राजशक्तिको अपने हाथमें रखकर एकाधिपत्य करते आये थे, परन्तु ऐसा होनेपर भी महाराव उमेदसिंह बहादुर अपनेको जालिमसिंहका खिलौना नहीं जानते थे, परन्तु बृटिश गवर्नमेण्टके साथ संधिबन्धन समाप्त होनेपर जिस दिन महाराज उमेदसिंहको कोटेका नाममात्रका अधीश्वर और जालिमसिंह तथा उनके वंशधरोंका कोटेकी समस्त शासनशक्ति युक्त अधीश्वर कहकर स्वीकार कर लिया उसी दिनसे महाराव उमेदसिंह मानों प्रकृत क्रीडामें विघोषित हुए, वृद्ध महाराव उमेदसिंहने यद्यपि उसी कारणसे किसी प्रकारका उपद्रव वा आपत्ति उपस्थित नहीं की, तथा अपना तिरस्कार जानकर किसी प्रकारसे भी असंतोष प्रकाश नहीं किया, और अपने भविष्यके उत्तराधिकारियोंपर महा अनिष्टकारक बीज बोता हुआ देखकर किसी प्रकारका प्रतिवाद भी नहीं किया, परन्तु अन्तमें उसी सूत्रसे कोटेराज्यमें महा विभ्राट उपस्थित हुआ।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "सन् १८१९ ईसवीके नवम्बर मासतक सम्पूर्ण शांति बिराजमान रही, परन्तु उसके पीछे महाराव उमेदसिंहकी मृत्यु होनेपर सिंहासनके अधिकारियोंके हृदयमें नवीन भावका उदय होनेसे राजराणा जालिमसिंह ऐसी शोचनीय अवस्थामें पडे कि वह ठीक समयमें अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सहायता न पाकर एकमात्र अपनी चतुरबुद्धिके बलसे किसी प्रकार भी उस विपत्तिसे उद्धार प्राप्त न कर सके।" महाराव उमेदसिंहकी मृत्युके समयमें कोटेराज्यके परिवारकी अवस्थाके सम्बन्ध में साधु टाड साहब लिखते हैं-"इस समय महाराव उमेदसिंहके तीन कुमार (१) किशोरसिंह (२) विशनसिंह और (३) पृथ्वीसिंह जीवित थे। युवराज किशोरसिंहकी अवस्था इस समय चौवालीस वर्षकी हो गई थी। उनके स्वभाव चरित्र

मृदु और नम्र थे, यद्यपि उन्होंने बाल्यावस्थासे ही उत्तम शिक्षा पाकर मनुष्य समाज से पृथक् हो सरलतासे स्वजातीय धर्म कर्म पद्धतिके सम्बन्धमें अद्वितीय ज्ञान प्राप्त किया, परन्तु मनुष्य समाजके सम्बन्धमें वैसी अभिज्ञता प्राप्त करनेमें समर्थ न हुए। वह अपने एक महोच्च पैतृक वीरवंशके इतिहासके एक गाढ पंडित थे, और जातीय गौरव और जातीय महोच्चभाव उनके हृदयमें इस प्रकारसे भर रहा था कि वह सरलतासे अपने वंशके पूर्व गौरवको स्मरण कर गर्व कर सकते थे, परन्तु वह स्वभावसे ही नम्रतादि गुणों और शिक्षासे विभूषित हो अपने धीरस्वभाव पिताके समान शान्त बुद्धि हो गये थे, इस कारण उन्होंने गौरवगरिमाकी सामर्थ्य और प्रभुत्वकी ओर ध्यान न देकर कोटा राजको जालिमसिंहके द्वारा शासित होनेमें कोई आपत्ति न की।

दूसरे राजकुमार विशनसिंह किशोरसिंहकी अपेक्षा तीन वर्ष छोटे थे, और वह भी बडे भाईके समान नम्र प्रकृति विद्वान् और सीधे थे। वह भी जालिमसिंहकी भाँति सरल और श्रद्धालु थे पर तीसरे राजकुमार पृथ्वीसिंह जिनकी अवस्था तीस वर्ष से कम थी; वह वीर तेजा हाडाजातिके आदर्शस्वरूप और राजपूतस्वभाव सुलभ शस्त्र भक्त थे।

महाराव उमेदसिंहके तीनों कुमारोंमें एकमात्र पृथ्वीसिंह ही जालिमसिंहको राज्य का सर्वमय कर्ता हर्ता देख कर और पिता उमेदसिंहको क्रीडनस्वरूपसे जालिमसिंह की आज्ञापालनमें नित्य तत्पर देखकर मन ही मनमें महा असंतुष्ट हुए, और वह अपने नेत्रोंमें उनको तुच्छ देखने लगे। इस लिये उन्होंने जालिमसिंहके हाथसे अपना और अपने वंशका उद्धारसाधन करने वा उनके लिये जीवनतक देनेका संकल्प किया। तीनों राजकुमार परस्पर परम शोभाकी शृंखलामें बँधकर प्रीति और स्नेहसे अपना समय व्यतीत करते थे। परन्तु दूसरे राजकुमार विशनसिंह जालिमसिंहके पुत्र और उत्तराधिकारियोंके प्रति अधिक सद्व्यवहार करते थे, बहुतोंके मनमें इस प्रकारके संदेह उपस्थित होते थे कि इनमें अवश्य ही कोई भीतरी भेद है। प्रत्येक राजकुमारको वार्षिक पचीस हजार रुपय आमदनीवाली भूमिका अधिकार मिला था, वह अपने २ कर्मचारियोंको उन देशोंमें सावधानीसे रखते थे।

राजराणा जालिमसिंहके दो पुत्र थे। माधोसिंह और गोवर्धनदास। बडे माधोसिंह उनकी विवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे और गोवर्धनदास एक जार स्त्रीसे थे। परन्तु गोवर्धनदाससे जालिमसिंह अधिक स्नेह करते थे, और उन्होंने अपने भविष्य उत्तराधिकारी माधोसिंहके समान उनको भी अधिक सामर्थ्य दी थी। हम जिस समयका वृत्तान्त लिखते हैं उस समय माधोसिंहकी अवस्था ४६ वर्षकी थी। माधोसिंहकी मूर्तिको देखकर उनको प्रतापशाली कहनेका बोध नहीं होता था वरन् आलसी और गर्वित कहना ठीक होता था। विशेप करके महाराव उमेदसिंह माधोसिंहको बालकपनसे ही अधिक श्रेष्ठ जानते थे, और माधोसिंहकी प्रत्येक प्रार्थना बिना बाधा दिये पूर्ण करते थे, इसीसे उनके चरित्र इस प्रकारके हुए, विशेप करके

थोडी अवस्थामें ही माधोसिंह शासनशक्तिको प्राप्त होकर अर्थात् जिस समय जालिमसिंह मेवाडसे चलकर महलको छोड कोटेराज्यमें भ्रमण करनेके लिये गये उस समय माधोसिंहको कोटेका फौजदार पद दिया गया था, इससे वह अधिक गर्वित हो गये। उनके उस फौजदार पदपर नियुक्त होते ही समस्त सेनाके वेतन आदि देनेका भार उनके हाथमें सौंपा गया। उसी कारणसे बहुतसा धन उन्होंने अपने हाथमें रक्खा परन्तु राज्यके अन्यान्य कर्मचारियोंके ऊपर जैसी शासन-दृष्टि थी माधोसिंहके ऊपर वैसी दृष्टि नहीं थी। कोई भी साहस करके माधोसिंहके विरुद्ध कुछ कह नहीं सकता था। इधर माधोसिंहने बहुतसा धन अपने हस्तगत देख उस साधारण धनका जिस भांति अपव्यय किया उस कारणसे इनके ऊपर बहुतोंको संदेह हुआ। इन्होंने उस धनसे अत्यन्त सुन्दर रमणीक बगीचा बनवाया, उत्तम घोडे मोल लिये, जल विहार करनेके लिये सजी हुई नौकाएँ बनवाईं। राजकुमार यह देखकर अपनी उन सब विषयोंमें हीनता मानते थे। उधर माधोसिंह जैसे महा मूल्यवान् वस्त्रोंका व्यवहार करते थे, महाराव उमेदसिंह भी उस प्रकारके वस्त्र नहीं पहरते थे। ऐसा जाना जाता है कि माधोसिंहके पिता जालिमसिंह अपने पुत्रको इस प्रकार विलासी और अधिक खर्चालू देखकर नित्य उपदेश देते थे परन्तु उनके इस उपदेशका कुछ भी फल नहीं हुआ।

उस समय गोवर्द्धनदासकी अवस्था सत्ताईस वर्षकी हो गई थी। गोवर्द्धनदास एक चतुर, साहसी, बुद्धिमान् और चंचल पुरुष थे। माधोसिंह राजपरिवारके साथ जैसा असद्व्यवहार करते थे उसी भांति गोवर्द्धनदास राजपरिवारके प्रति भक्ति, प्रीति और स्नेहपूर्ण व्यवहार करते थे, उसीसे गोवर्द्धनदासके साथ राजकुमारोंकी विशेष मित्रता हो गई। विशेष करके वीर तेजस्वी पृथ्वीसिंहके चरित्रोंके साथ गोवर्द्धनदासके चरित्रोंकी ऐक्यता होनेसे दोनोंमें विशेष मित्रता उत्पन्न हुई। गोवर्द्धनदास जालिमसिंहकी वृद्ध अवस्थाके पुत्र थे, इस कारण जालिमसिंह स्वभावसे ही माधोसिंहकी अपेक्षा गोवर्धनदाससे अधिक स्नेह करते थे। इसी कारणसे उन्होंने गोवर्द्धनदासको "प्रधान" पदपर नियुक्त किया और गोवर्द्धनदास राज्यके कृषि-विभागके कर्ता हुए। गोवर्द्धनदासके उस पदपर प्रतिष्ठित होते ही राज्यका समधिक धन उनके हाथमें प्राप्त हुआ। अधिक क्या कहैं माधोसिंह और गोवर्द्धनदासमें परस्पर कुछ भी सद्भाव नहीं था। वरन् वे सदा परस्परमें शत्रुता और झगडा करते रहते थे। कर्नेल टाड साहब लिखते हैं कि जालिमसिंहने चतुर और राजनीतिज्ञ होकर भी दोनों पुत्रोंको रीतिके अनुसार शिक्षा न दी इसीसे अंतमें उनको बहुत दुःख उठाना पडा था।

हमने ऊपर जिस समयके राजपरिवार और जालिमसिंहके परिवारका वृत्तान्त वर्णन किया है, उस समय अर्थात् सन् १८१७ ईसवीके नवम्बर मासमें कोटेके अधीश्वर महाराव उमेदसिंह बहादुरने प्राण त्याग किये। उनके स्वर्ग चले जानेके पहिलेसे राजपरिवारमें अति गुप्तभावसे जो राजनैतिक षड्यन्त्रका बीज बोया जाकर अंकुरित हुआ था

वह इस समय प्रकाशित हो गया, और इसीसे अत्यन्त शोचनीय राजनैतिक घटना हुई। महाराव उमेदसिंह जिस समय इस संसारसे बिदा हुए उस समय राजराणा जालिमसिंह गागरौनके डेरोंमें थे, इन्होंने मृत्युका समाचार पाते ही जिससे महारावकी प्रेतक्रिया यथा रीतिसे हो जाय और युवराज किशोरसिंह कोटेके राजपदपर अभिषिक्त हों, उनकी सुव्यवस्था करनेके लिये शीघ्र ही राजधानीको कूच किया।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "जिस समय पोलिटिकल एजेण्ट (कर्नल टाड) मेवाडसे मारवाडमें गये थे उस समय उन्होंने उक्त मृत्युसंवाद पाकर इस सम्बन्धमें क्या करना कर्तव्य है इसको जाननेके लिये गवर्नमेण्टके निकट एक प्रार्थनापत्र भेजा। इसी अवसरमें इन्होंने कई दिनतक उदयपुरमें विश्राम कर कोटेके राजपरिवारकी आभ्यन्तरिक अवस्था और राजकुमारोंके मन ही मनमें जो गुप्त राजनैतिक उद्देश बदल गये थे, और जिस उद्देशको अनिष्टकारक विचारा था, उसका विशेष तत्त्व जाननेके लिये वह कोटेकी राजधानीको गये। टाड महोदयने कोटेमें जाकर देखा कि वृद्ध जालिमसिंह उस समयतक महलके निवास सुखको छोडकर राजधानीसे आध कोश दूरीपर अपने विश्वासी सेवकोंके साथ डेरोंमें जा रहे हैं, उनके पुत्र और उत्तराधिकारी माधोसिंह रात्रिके समय अपने महलमें रहते हैं। उन्होंने और भी देखा कि कोटेके नवीन महाराव और उनके दोनों छोटे भ्राता पहिलेके समान किलेके महलमें निवास करते हैं, और गोवर्धनदास तथा पृथ्वीसिंह नवीन अधीश्वरको अपनी इच्छानुसार सलाह देकर अपने हस्तगत कर रहे हैं, और कुमार विजनसिंहको उस चक्रसे बाहर कर दिया है। यदि महाराव उमेदसिंहके प्राण त्याग करनेसे पहिले जालिमसिंहके दोनों पुत्रोंमें बहुत दिनोंसे ठना हुआ झगडा प्रकाशित हो जाता और उससे महल में ही दोनोंके साथ समर होना संभव था; परन्तु जालिमसिंह उस समय तक उस झगडेको अंशमात्र भी न जान सके।

---

(१) सन् १८१९ ईसवीकी २१ वीं नवम्बरको राजराणा जालिमसिंहने जिस पत्रमें अपने स्वामी की मृत्युका समाचार कर्नल टाड साहबको भेजा था उसी पत्रका अनुवाद इस स्थानपर दिया गया है।

"रविवारके दिन अपराह्न समयतक महाराव उमेदसिंहका स्वास्थ्य सब प्रकारसे उत्तम था। सूर्यास्तकी एक घडीके पीछे वह श्रीव्रजनाथजीके दर्शन करनेके लिये गये। महाराव मूर्तिके समीप छः वार साष्टांग प्रणाम करके सातवीं बार जैसे प्रणाम करनेके लिये चले कि वैसे ही मूर्छित होकर अचेत हो गये, उस अवस्थामें उनको महलमें लाकर शय्यापर लिटा दिया। उस समय यथाशक्ति चिकित्सा करनेमें भी कसर न की गई परन्तु सभी चेष्टाएँ विफल हो गई; रात्रि दो घडी जानेपर महाराव स्वर्गवासी हुए।

शत्रुको भी ऐसा महाशोक प्राप्त न हो, परन्तु भगवान्की इच्छाके विरुद्धमें क्या हो सकता है? आप हमारे बंधु हैं, महाराव जिन राजकुमारोंको छोड गये हैं उनका सम्मान और मंगल भार आपके हाथमे अर्पित है, मृत महारावके बडे पुत्र महाराव किशोरसिंह सिंहासनपर अभिषिक्त हुए हैं। मित्रोंकी अवगतिका कारण प्रकाश किया"।

जिस समय महाराव उमेदसिंह परलोकवासी हुए उसके कुछ ही दिनों पीछे जालिमसिंह भयंकर रोगसे पीडित हुए। राजदरबारमें जो जालिमसिंहकी शासनशक्तिको लुप्त कर महाराव किशोरसिंहके हाथमें राज्यका समस्त भार, अर्पण करनेके लिये गुप्तरूपसे तैयारियाँ कर रहे थे, वह लोग जालिमसिंहकी उस कठोर पीडासे मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुए, और अपनी आशाको सरलतासे पूर्ण हुआ जानकर बहुत प्रसन्न हो रहे थे, परन्तु कुछ दिनके पीछे जालिमसिंहने सम्पूर्ण आरोग्यता प्राप्त की। तब वह परम दुःखित हो शोकसागरमें निमग्न हुए, परन्तु उस पीडाके अवसरमें उन्होंने अपनी अभिलाषित कार्यसिद्धिके समस्त अनुष्ठान तैयार कर लिये। उनकी वह कामना उनके वह अनुष्ठान सर्वसाधारणमें विदित होनेपर भी वृद्ध जालिमसिंह उस समयतक उसको बिन्दुमात्र भी नहीं जान सकते थे। वृटिश पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल टाड साहबने सबसे पहिले यह समाचार वृद्ध जालिमसिंहसे कहा उन्होंने कहा "कि आपके दोनों पुत्र परम्परमें अनिष्ट साधन करनेके लिये समरकी तैयारी कर रहे हैं और महाराव किशोरसिंहकी अभिलाषा है कि भगवानकी इच्छानुसार आपकी मृत्यु होते ही आपका शासन दण्ड भी आपकी चिताके साथ भस्मीभूत हो जाय।"

शीघ्र ही कोटेमें भयंकर राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित हुआ। राजराणा जालिमसिंह साठ वर्षतक अपने कठिन प्रतापसे कोटेको शासन कर अतुलसामर्थ्यवान् होकर रहे थे, परन्तु इस समय उनके उस प्रताप और उस सामर्थ्यकी जडमें विषम आघात लगना आरंभ हुआ। वृटिश गवर्नमेण्टने राजराणा जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके सर्वमय शासनकर्ता पदपर नियुक्त कर जिस अतिरिक्त सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर किये उसका विषमय फल इस समयसे प्रारंभ होने लगा। गवर्नमेण्टने उस नवीन संधिकी धारापर हस्ताक्षर कर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे सर्वमय कर्तापद भोग करनेकी सामर्थ्य दान की। यह किस प्रकार अविवेकता और कैसी अविचारिता दिखाई गई। इसी समयसे यह प्रमाणित होने लगा।

"कर्नल टाड साहबने जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके सर्वमय शासनकर्ता पददान सम्बन्धी अतिरिक्त संधिपत्रको दृढतासे समर्थन किया है। उनके मतसे गवर्नमेण्टकी ओरसे यह कर्त्तव्य कर्म हुआ है, उन्होंने इस कार्यसे केवल इतना ही कारण दिखाया कि पिंडारियोंके युद्धके समयमें जालिमसिंहने वृटिश गवर्नमेण्टके अनेक उपकार किये थे, इस कारण उन कार्योंके पुरस्कारमें उक्त वंशानुक्रमसे उपभोग्य पद देना अन्यायकारक नहीं है। अत्यन्त दुःखका विषय है कि हम कर्नल टाड साहबके इस मतको पोषण नहीं कर सकते। हम पूछते हैं कि भिन्न स्वाधीन राज्यके राजमंत्री वा प्रधान शासनकर्तापदको एक मनुष्यको वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये सनद देनेकी क्या वृटिश गवर्नमेण्टको सामर्थ्य थी? कभी नहीं। महाराव उमेदसिंह यदि उस समय अपने भविष्य उत्तराधिकारियोंके मंगलकी ओर दृष्टि रखते, यदि वह यथार्थ राजपूतोंके समान वीर तेजस्वी और नीतिज्ञ होते तो क्या गवर्नमेण्ट जालिमसिंहको उक्त अधिकार दे सकती थी?

उमेदसिंहके आपत्ति करने पर क्या बृटिश गवर्नमेण्ट फिर भी बलपूर्वक जालिमसिंहको न्यायके अनुसार वंशानुक्रमसे कोटेका हर्ता कर्ता विधाता पद देनेमें समर्थ होती ? गवर्नमेंट विलायतके किसी राज्यके किसी अमात्यको क्या इस प्रकार वंशानुक्रमसे कोई पद दे सकती थी ? विलायतकी बात तो दूर जाने दो इस भारतवर्षमें हैदराबाद, हुलकर, सेन्धिया इत्यादि राज्यके किसी प्रधानमंत्रीको क्या इस प्रकार वंशानुक्रमसे कोई पद देनेमें समर्थ होती ? हम इसको कह सकते हैं कि जालिमसिंहको उस भावसे उक्त पद देनेकी सरकारको कोई सामर्थ्य नहीं थी, केवल महाराव उमेदसिंहको अत्यन्त निरीह देखकर कौशलतासे पूर्ण उस प्रकार कार्य हुआ था । मानते हैं कि जालिमसिंहने गवर्नमेण्टकी विपत्तिके समयमें विशेष सहायता की थी परन्तु इन्होंने जो सेना सामन्त रसद धनादि दिया था वह किसका था ? क्या वह महाराव उमेदसिंहका नहीं था ? अवश्य ही मानना होगा कि कोटेके अधीश्वरकी सेना सामन्त लेकर जालिमसिंहने गवर्नमेण्टकी सहायता की थी । चतुर राजनीतिज्ञताके बलसे जालिमसिंह कोटेके प्रबल सामर्थ्यवान् प्रधानमन्त्री होकर भी उस समय महाराव उमेदसिंहके वेतनभोगी सेवक थे, उस अवस्थामें भविष्यत्की ओर दृष्टि न करके गवर्नमेण्टने जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेका समस्त शासनशक्ति युक्त अधीश्वर पद देकर महाराव उमेदसिंहको वंशानुक्रमसे नाममात्रका राजपद रहने देकर अत्यन्त ही अज्ञताका कार्य किया था । इसके फलस्वरूपमें थोडे दिनोंमें ही कोटे-राज्यमें जो अत्यन्त शोचनीय काण्ड संघटित हुआ । पाठक पीछे उसको भली-भाँतिसे पढ चुके हैं ।

उपस्थित राजनैतिक विभ्राट्में कर्नल टाडने जिस राजनीतिके अनुवर्ती होकर जिस भावसे कार्य किया उससे हम अत्यन्त प्रसन्न नहीं, उन्होंने पहिलेसे ही जालिमसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये प्राणपणासे चेष्टा की । उन्होंने उस संधिपत्रकी अतिरिक्त धाराको सम्पूर्ण प्रबल करनेके लिये अपनी समस्त शक्तियोंका प्रयोग किया था; परन्तु उन्होंने इसके सम्बन्धमें जो एक बात कही है वह अवश्य ही विचारने योग्य है । वह लिखते हैं कि बृटिश गवर्नमेण्टने जब जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेका सर्व शक्तियुक्त शासनकर्ता पद देकर दानपत्रपर हस्ताक्षर किये थे । तब किसी प्रकारसे उसे प्रबल रखना गवर्नमेण्टका प्रधान कर्म था । यदि ऐसा न करती तो राजपूत राजा कभी गवर्नमेण्टके उक्ति और प्रतिज्ञा पर विश्वास नहीं करते । सारांश यह है कि इससे गवर्नमेंटकी गौरवकी हानि होनेकी सम्पूर्ण संभावना थी । इस लिये जालिमसिंहका यह पक्ष समर्थन करना अवश्य कर्तव्य हो गया । कर्नल टाड साहबने अवश्य ही सरलभावसे इस कथाको लिखा है । बृटिश गवर्नमेंटको प्रतिज्ञा पालन करनेके लिये ऐसा करना अवश्य ही प्रशंसनीय और प्रार्थनीय था, परन्तु कर्नल टाड यदि आजतक जीवित रहते, वह यदि भारतेश्वरीके सन् १८५७ ईसवीके विख्यात घोषणापत्रकी प्रत्येक प्रतिज्ञाको देखते तो वह कभी भी उस प्रतिज्ञाकी रक्षाकी दुहाई देकर अज्ञानता मूलक पक्षका समर्थन नहीं कर सकते थे ।

इस समय यथार्थ घटनाका ही अनुसरण करना ठीक होगा। राजकुमार पृथ्वीसिंह और मंत्रीपुत्र गोवर्द्धनदास दोनों ही क्षत्रियस्वभाव सुलभ वीरता बल विक्रममें बलवान दोनों ही साहसी और दोनों ही राजनीति विद्यामें पारदर्शी थे। उन्होंने नवीन महाराव किशोरसिंहको भलीभांतिसे समझा दिया कि वृद्ध जालिमसिंहने अन्यायसे राजनैतिक स्वाधीनताको संग्रह करके राज्यके यथार्थ अधीश्वर पदको ग्रहण किया है और इसी प्रकार अन्याय बृटिश गवर्नमेंटकी सहयोगिता कर एक अतिरिक्त सन्धिधारापर हस्ताक्षर करके बडे पुत्र माधोसिंहको वंशानुक्रमसे सर्वशक्तिसम्पन्न शासनकर्तापद दिया है। अंग्रेज गवर्नमेंटके साथ महाराव उमेदसिंहका पहिला जो संधिपत्र नियत हुआ था, उन्होंने उसी संधिपत्रको उपस्थित करके महारावको उसका समस्त अर्थ व्याख्या करके समझा दिया, और उसी कारणसे भलीभांतिसे उनके हृदयपर इस भावको अंकित कर दिया। मूलसंधिपत्रके अनुसार राजराणा जालिमसिंह किसी प्रकार भी कोटेके सर्व शक्ति सम्पन्न शासनकर्ता पद वंशानुसार भोग नहीं कर सकते थे। उन्होंने महाराव किशोरसिंहसे कहा कि आप गवर्नमेंटके समीप यह प्रस्ताव करिये कि जिससे गवर्नमेंट मूल संधिपत्रके अनुसार कार्य करनेको तैयार हो। उन्होंने मूलसन्धिपत्रकी दशमी धाराका उल्लेख करके कहा कि इस धारामें लिख रहा है कि " महाराव और उनके उत्तराधिकारीगण तथा स्थलाभिषिक्त अपने राज्यके पूर्ण शासन क्षमतापन्न अधीश्वररूपसे रहेंगे। इस कारण गवर्नमेंट मूलसंधिपत्रमें इस प्रकार लिखकर उसके पीछे किस प्रकारसे अतिरिक्त धारासे जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेके पूर्ण शासनशक्ति सम्पन्न मंत्रीका पद दे सकती ? उन्होंने और भी कहा कि मूलसंधिपत्रमें महाराव उमेदसिंह और गवर्नमेंट सभीके हस्ताक्षर और मोहर लगी है, परन्तु अतिरिक्त धारामें यह नहीं है और महाराव उमेदसिंह उस अतिरिक्त धाराके अस्तित्व तकको नहीं मानते।

नवीन महाराव किशोरसिंहके साथ राजराणा जालिमसिंह और उनके बडे कुमार माधोसिंहके शीघ्र ही साक्षात् होनसे रहित मित्रताकी जंजीर छिन्न भिन्न हो जायगी। कर्नल टाड साहबने बृटिश गवर्नमेंटके पोलिटिकल एजेण्टरूपसे इस समय विचित्र अभिनय आरम्भ किया। उन्होंने इस समयसे जालिमसिंहके अनुकूल पक्षका अवलम्बन करके, जिससे जालिमसिंह वंशानुक्रमसे उक्त सामर्थ्यको संभोग कर सकें और जिससे किशोरसिंह और उनके उत्तराधिकारीगण चिरकाल तक नाममात्रके कोटेके अधीश्वर पदपर स्थित रहैं, वह इसलिये अपनी समस्त शक्तिको प्रयोग करने लगे। उन्होंने दोनों पक्षोंमें राजनैतिक विवादानलको प्रज्वलित देखकर प्रकाशरूपसे महाराव किशोरसिंहसे कह दिया कि "जब कि हमने जालिमसिंहके समीप प्रतिज्ञा की है तब हम नाममात्रके राजाकी उपाधि धारण करनेवाले कोटेके अधीश्वरकी कोई भी ऊँची अभिलाषाका पक्ष समर्थन नहीं कर सकते। एक मात्र जालिमसिंह ही कोटे राज्यके यथार्थ अधीश्वररूपसे गिने जाते हैं आप केवल नाममात्रके राजा हैं। कोटेके शासनकर्ता नहीं हैं।" यह सरलतासे जाना जा सकता है कि कर्नल टाडने केवल अपने प्रभु बृटिश गवर्नमेंटकी अवलम्बित नीतिका पक्ष समर्थन करनेके लिये कहा था

परन्तु महाराव किशोरसिंहने टाड साहबकी उस उक्तिकी ओर इस समय तक ध्यान नहीं दिया। कर्नल टाडने जालिमसिंहके प्रति महाराव किशोरसिंहको उस भावसे दृढ प्रतिज्ञ होते देखकर अंतमें स्थिर किया कि पृथ्वीसिंह और गोवर्द्धनदासकी परामर्शके अनुसार महारावने यह राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित किया है; उन दोनोंको अन्य स्थानपर बिना भेजे हुए किसी प्रकार भी शान्त प्रकृति महाराव किशोरीसिंहको हस्तगत नहीं कर सकते, इस कारण उन्होंने पहिले उस उद्देशको सिद्ध करनेका यत्न किया।

कर्नल टाड और जालिमसिंहने उस अत्यन्त निन्दनीय और अप्रयोजनीय उद्देशको साधन करनेके लिये सबसे पहिले स्थिर किया। जिस किलेमें पृथ्वीसिंह और गोवर्द्धनदास महाराव किशोरसिंहके साथ रहते हैं, उस किलेकी दीवारको लांघकर दोनोंको बंदी किया जाय। परन्तु वह उसी समय समझ गये कि ऐसा करनेसे महा गडबड होगी, और अन्तमें युद्ध होनेसे महाराव किशोरसिंह तक मारे जायँगे, इस कारण उन्होंने इस प्रस्तावको छोडकर अन्तमें यही निश्चय किया कि सेनासे किलेकी दीवारोंको चारों ओरसे घेर रक्खो और जिससे किलेमें भोजनकी सामग्री न पहुँच सके ऐसा उपाय करो ऐसा होनेसे जब भोजनके अभावसे महाकष्ट होगा तब महाराव किशोरसिंह अवश्य ही आत्मसमर्पण करेंगे। वास्तवमें कर्नल टाड और जालिमसिंहके उक्त परामर्शके अनुसार शीघ्र ही वह उपाय किया गया। कोटेके न्यायसंगत अधीश्वर किशोरसिंह बृटिश गवर्नमेंटकी राजनीतिके मानकी रक्षाके लिये अपनी राजधानीमें अपने महलमें अपनी ही सेनाके द्वारा परिवेष्टित हुए। बृटिश राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है। परन्तु कर्नल टाड और जालिमसिंहकी आशा पूर्ण न हुई, भोजनके अभावसे आत्मसमर्पण न करके महाराव किशोरसिंह प्रजाके ऊपर विश्वास स्थापित कर अपने पैतृक राजकी पूर्ण शासन सामर्थ्यको प्राप्त करनेकी आशासे पांच सौ अश्वारोही हाडासेनके साथ अपने कुलदेवताको तूगमें रखकर विजयपताका उडाय रणबाजेके शब्दसे चारों दिशाओंको कम्पायमान करते हुए साहसमें भरकर किलेसे बाहर हुए। जिस सेनाने कर्नल टाड और जालिमसिंहकी आज्ञासे किलेको घेर रक्खा था उसने किसी प्रकारकी भी बाधा न देकर भयभीत हो मार्ग छोड दिया, और महाराव किशोरसिंह विना बाधा दिये किलेको छोडकर उस पांचसौ सेनाके साथ दक्षिणकी ओरको चले गये।

कर्नल टाड साहबने अपने परवर्ती घटनाके सम्बन्धमें लिखा है "कि महाराव किशोरसिंहके बाहर जानेकी वार्ता सुनते ही एजण्टने शीघ्रतासे जालिमसिंहके डेरोंमें जाकर देखा कि महा गोलमाल उपस्थित हो रहा है, तब उन्होंने वृद्ध जालिमसिंहसे पूछा कि राज्यमें अशान्तिके विस्तारको रोकनेके लिये तुमने किस उपायका अवलम्बन किया है अथवा क्या करनेकी इच्छा करते हो? इस समय जालिमसिंहने जैसा व्यवहार किया वह अत्यन्त ही कष्टदायक था। सत्य हो वा काल्पनिक हो सन्देहसे चलायमान जालिमसिंहके मुखसे एजंण्टने इस समय कृत्रिम

न होकर असामयिक राजभक्तिको प्रकाश करनेवाली उक्तिको श्रवण किया । जालिमसिंहने कहा, "मैं महारावके अधीनमें रहकर राजकर्म करूँगा, नाथद्वारेके मंदिरमें जाकर जीवनके शेष दिनोंको व्यतीत करूँगा, तथापि अपने प्रभुका विश्वासहन्ता होकर कलंकका टीका नहीं लगाऊँगा।" एजेण्टने जालिमसिंहके यह वचन सुनकर विचारा कि इससे हमारे राजनैतिक उद्देशमें कोई विघ्न नहीं होगा, इस कारण उन्होंने बडे आग्रहके साथ कहा कि "आपका उद्देश साधनके विरुद्धमें इस राज्यमें कोई बाधा नहीं है"। परन्तु उपस्थित राजनैतिक विभ्राट्के समय दो भावसे कार्य करनेपर महा अनिष्ट होनेकी संभावना है, यह उन्होंने जालिमसिंहसे कह दिया। महाराव किशोरसिंहके साथ जो पाँच सौ अश्वारोही सेना गई थी, वह जिससे राज्यमें सर्वत्र विस्तार कर महा विभ्राट् उपस्थित न कर सके, इसके लिये जालिमसिंहसे विदा लेकर घोडेपर सवार हो टाड साहब महाराव किशोरसिंहका पीछा करनेके लिये बाहर चले। इन्होंने राजधानीसे तीन कोश दक्षिणमें " रंगवाडी " नामक ग्रामके महलमें जाकर देखा कि महारावके अनुचर और सवार श्रेणीदलके दलमें विभक्त होकर बागकी दीवारके बाहरको जारहे हैं, और महाराव किशोरसिंह, अपनी सामन्तमंडली और उपदेष्टा महलमें भविष्यत्‌में क्या करना कर्त्तव्य है इसके सम्बन्धमें परामर्श कर रहे हैं यथारीतिसे पहिलेसे समाचार देनेका अब समय नहीं था, इस कारण वह शीघ्र ही सभास्थानमें जा पहुँचे। उस सम्भावित विवादमें मान्य दिखाकर अभिवादन की रीतिको भंग नहीं किया; यद्यपि बहुत थोडी देर सम्मानके साथ वार्तालाप हुई; परन्तु टाड साहबने बडे आग्रहसे महाराव किशोरसिंह और सामन्तोंको बुलाकर उपस्थित अवस्थाको समझा दिया। उन्होंने सामन्तोंसे कहा कि "आपने जिस पक्षका अवलम्बन किया है उससे आप प्रकाशमें गवर्नमेण्टके शत्रु हुए हैं, और इससे आपके अधीश्वरका कोई मंगल नहीं होगा वरन् इससे आपके विध्वंस होनेकी संभावना है "। सामन्तोंने प्रीति और संतोषके बदलेमें यह अत्यन्त कष्टदायक तिरस्कार पाया और एजेण्टने गोवर्धनदासकी ओर आगे बढकर कहा कि " आप ही अपने पिताके विश्वासहन्ता शत्रु हैं, और आपसे महारावका किसी प्रकारका अमंगल प्राप्त नहीं होगा, आपने केवल स्वार्थ सिद्ध करनेके लिये इस विभ्राट्को उपस्थित किया है, इस कारण इसके फलमें आपको यथेष्ट दंड मिलेगा "। तुरन्त ही गोवर्द्धनदासने अपनी तलवार निकाल कर हाथमें ले ली, परन्तु एजेण्टने कुछ एक हँसते हुए उनकी ओर अवज्ञा दिखाकर गोवर्द्धनदासके गर्वित उत्तरकी ओर कुछ भी ध्यान न देकर महाराव किशोरसिंहके समीप आगे बढकर उनसे कहा कि " महाराव ! इस समय भी समय है। इस समय भी विशेष करके भविष्यत्‌की चिन्ता करनेका समय है, आप जिस मार्गपर अग्रसर हुए हैं वह किसी प्रकार भी मंगलकारक नहीं है, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि न्यायसंगत और आपके पदोचित जिस किसी प्रार्थनाको पूर्ण कर दूँगा, परन्तु केवल जालिमसिंहकी सामर्थ्यको लोप नहीं कर सकता, कारण कि सर्वसाधारणके विश्वासकी रक्षाके लिये हम उनकी उस शासनसामर्थ्यको अक्षत रखनेमें

बाध्य हैं, परन्तु आपके पद सम्मान और सुखस्वच्छन्दताकी ओर हम सम्पूर्ण दृष्टि रखते हैं, । एजेण्टके यह वचन सुनकर महाराव जिस समय इधर उधर कर रहे थे, उस समय एजेण्टने ऊँचे स्वरसे "महारावका घोडा ले आओ" यह कहकर महाराव किशोर सिंहकी बाहु पकडी और दोनों सभाके कमरेसे बाहर हुए । महाराव किशोरसिंहने कुछ भी आपत्ति नहीं की । अंतमें उन्होंने घोडोंकी पीठकर चढकर एजेण्टसे केवल इतना कहा, कि " मैं आपकी ही मित्रताके ऊपर सब प्रकारसे निर्भर हूँ । महारावके भ्राता पृथ्वीसिंहने भी उस समय अपने मनके भावको प्रकाशित किया था, परन्तु सामन्त मंडली मौन रही, गोवर्द्धनदास और उनके दो एक राजपारिषदोंने उस समय जो एक बात कही एजेण्टने उसपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया । एजेण्ट (टाड) अपने परिषदोंसे युक्त होकर महाराव किशोरसिंहके साथ घोडेपर चढकर चले । सभी चुपचाप थे, कोई कुछ न बोल सका, इस प्रकारसे उन सबने किलेमें प्रवेश किया । एजेण्टने महाराव किशोरसिंहको राजसिंहासनपर बैठाकर पूर्व प्रतिज्ञाकी पुनरावृत्ति करके कहा कि " वर्तमान संकटावस्थामें महाराव विशेष सुविचारके साथ कार्य करें, उन्होंने और भी महारावसे कह दिया कि "महारावके भ्राता पृथ्वीसिंह और गोवर्धनदास दोनों ही महारावके पाससे अलग रहेंगे । गोवर्द्धनदासको हाडौतीसे एक बार ही बाहर करना होगा । इसी निश्चयके अनुसार जून मासमें गोवर्द्धनदास राज्यविद्रोहके अपराधमें दोषी ठहराकर निर्वासितरूपसे दिल्लीमें रख दिये गये । और सपरिवार उसके भरण पोषणका प्रबंध रियासतसे कर दिया गया । उसी समयसे महाराव किशोरसिंह और राजराणा जालिमसिंहमें फिर पूर्ववत् सद्भाव स्थापित हो गया।

" महाराव किशोरसिंह और राजराणा जालिमसिंहमें फिर सद्भाव स्थापन करनेके लिये महामहोत्सवकी तैयारी की गई । उसके उपलक्ष्में सर्वसाधारण प्रजा स्वत: प्रवृत्त होकर महा आनन्द ध्वनि करती थी । महलमें गन्तव्य मार्गसे सब दलके दल इकट्ठे होकर जालिमसिंह और उनके पुत्रको अभिवादन करते थे । पूजनीय जालिमसिंह इस संमिलन स्थानमें पितृस्थानीय रूपसे गये, और राजकुमार अपराधी सन्तानके समान क्षमा मांगनेके लिये अग्रसर हुए । उन्होंने आगे बढकर जालिमसिंहकी जानु आलिंगन करनेके लिये चेष्टा की, जालिमसिंहने उस सन्मान प्रदर्शनको रहित करनेमें वृथा चेष्टा की । और उस प्रकार नम्रभावसे अपने अधीश्वरके प्रति सम्मान दिखानेमें कसर न की । पीछे परस्परके प्रति विश्वास विज्ञापन और सद्भाव प्रकाशक वार्तालाप होने लगी ।

एकमात्र कर्नल टाडके राजनैतिक कौशल-यत्न और उद्योगसे महाराव राजा किशोरसिंह, पृथ्वीसिंह और गोवर्द्धनदासके न्यायसंगत उद्योगके व्यर्थ होजानेपर निरीह स्वभाव महाराव किशोरसिंह फिर साक्षी गोपालस्वरूपसे राजसिंहासनपर विराजमान होनेके लिये तैयार हुए । वीर तेजस्वी गोवर्द्धनदासके निकाले जाने पर कर्नल टाडने जालिमसिंहके साथ महाराव किशोरसिंहका सद्भाव स्थापित करा दिया, ऐश्वर्य आडम्बर

और राजसम्मान दिखाकर किशोरसिंहको जालिमसिंहने हस्तगत करनेका उद्योग किया। सत्यप्रिय साधु टाडने एकमात्र बृटिश राजनीतिके मानकी रक्षाके लिये कोटेके क्षेत्रमें यह विचित्र अभिनय किया। उन्होंने आत्मविवेक बुद्धिका अपमान करके कूट राजनैतिक कौशल जालका विस्तार कर महाराव किशोरसिंहकी संमान स्वत्व स्वाधीनता और क्षमताको लोप कर जालिमसिंहका पक्ष समर्थन किया। जो हो कर्नेल टाडने किशोरसिंह और जालिमसिंहमें सद्भाव स्थापित कराके प्रकाशरूपसे महाराव राजा किशोरसिंहके राज्याभिषेककी तैयारी की। सन् १८२० इसवी अगस्त मासकी सत्रह तारीखको बडी धूमधामके साथ वह अभिषेक कार्य किया गया। राजपुरोहितने सबसे पहिले महाराव किशोरसिंहके मस्तकपर राजतिलक दिया, राजटीका देते ही कर्नेल टाड साहबने सबसे आगे बढकर राजाके मस्तकपर राजतिलक देकर महाराज किशोरसिंहको अनेक भांतिके हीरोंका अलंकार पहारकर उनकी कमरमें राजदंडस्वरूपसे तलवार बांधे दी। महारावने भेंटमें गवर्नमेण्टको एकसौ सुवर्णकी मोहर उपहारमें दी। इस समय भारतवर्षके गवर्नर जनरलके नामसे कर्नेल टाडने राजराणा जालिमसिंहको महामूल्यवान् राजवेश खिलत दिया। जालिमसिंहने उस वेशको पाकर उपयुक्त उक्तिसे कृतज्ञता प्रकाशके साथ नजरमें गवर्नमेण्टको पचीस सुवर्णकी मोहरें और भी दान कीं।

इस प्रकाश्य अभिषेकके उत्सव अनुष्ठानका एक गुप्त उद्देश था। कर्नेल टाडने इस समय उस उद्देशको सिद्ध कर लिया। पहिले प्रस्तावके अनुसार माधोसिंहने आगे बढकर कोटेके फौजदाररूपसे महाराव किशोरसिंहके मस्तकपर राजतिलक देकर कमरमें तलवार बांध दी. और नजर दी; प्रचलित रीतिके अनुसार महारावने उस भेंटको लौटा कर माधोसिंहको खिलत देनेके साथ उनको वंशानुक्रमसे कोटेके फौजदारी पदकी सनद दान की। इस सनदके लिये ही इतनी तैयारी और उद्योग था। वह उद्योग इतने दिनोंमें सफल हुआ। कर्नेल टाड साहबने लिखा है "कि सबमें जो सद्भाव पुनः स्थापनका सूत्रपात हुआ, उसको बढानेके लिये एजेण्ट (टाड) उक्त अभिषेकके उत्सवके पीछे और एक महिने तक कोटे राज्यमें रहे। उन्होंने इस समय महाराजको समझा दिया कि वह जैसी अवस्थामें पडे हैं उसीके अनुसार कार्य करना सब प्रकारसे कर्त्तव्य है, और उधर उन्होंने माधोसिंहको समझा दिया, कि पवित्र संधिपत्रसे उनके ऊपर जो भारी दायित्व अर्पित हुआ है वह जिससे दुर्व्यवहार और निर्बुद्धिता वा असावधानतासे उस संधिको भंग न करें। कोटेको छोडनके पहिले ४ सितम्बरको एजेण्टने फिर सबको एक समितिमें इकट्ठा किया, और उसीमें सबने अकृत्रिम सद्भाव स्थापित किया। जालिमसिंह महाराव और माधोसिंह परस्परमें अतीत घटनाके लिये परस्पर एक दूसरेको क्षमा करके भविष्यत्में मित्रभावसे रहें ऐसी प्रतिज्ञा की "।

(१) कर्नेल टाड साहबने अपने दूसरी बारके भ्रमणवृत्तान्तमें इस अभिषेकके उत्सवको वर्णन किया है। वह भ्रमणवृत्तान्तमें देखो।

"सत्यकी जय अवश्य ही होगी। यद्यपि कर्नल टाड साहबने प्रबल बृटिश शक्तिकी सहायतासे कोटेके न्यायमत अधीश्वर महाराव किशोरसिंहकी सामर्थ्यको लोप कर जॉलिमसिंहको वंशानुक्रमसे राजशक्ति दी परन्तु भविष्यत्में उस अन्याय और असत्यकी पराजय भली भाँतिसे हो गई।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि "उपरोक्त साक्षात् शेष होनेके समय राजराणा जालिमसिंहने अपने राजनैतिक जीवनके शेष अभिनय स्वरूप दो उपयुक्त कार्य किये, उन कार्योंसे उनके अधीश्वर प्रभु और कोटेकी प्रजाके प्रति उनकी विलक्षण सज्जनताने प्रकाश पाया। अपनी मृत्युके पीछे अपने प्राचीन विश्वासी सेवकोंके लिये उन्होंने एक प्रतिभूपत्र तैयार करके महाराव किशोरसिंह, पुत्र माधोसिंह और एजेण्टसे यह कहकर उनको हस्ताक्षर करनेका अनुरोध किया कि "यदि हमारे उत्तराधिकारी प्राचीन कर्मचारियोंको कार्यमें नियुक्त करनेमें असम्मत हों तो उनको सम्पूर्ण स्वाधीनता देनी होगी, और उसके अतीत किसी कार्यके लिये भी उनसे जवाबदेही नहीं ली जायगी; और वह अपनी इच्छानुसार निवास कर सकेंगे।" महाराव और माधोसिंहने उस पत्रपर हस्ताक्षर करके जालिमसिंहकी अभिलाषाके अनुसार बृटिश एजेण्टने भी उस पत्रके मतसे जिससे भविष्यत्में कार्य हो उसके प्रतिभू स्वरूप हो स्वयं उसपर हस्ताक्षर कर दिया"।

जालिमसिंहके और शेष कार्योंके सम्बन्धमें कर्नल टाड साहबने लिखा है, "कोटे राज्यमें जालिमसिंहने जिस अत्यन्त कष्टदायक दंड नामक करका प्रचार किया था उस करको एक बार ही दूर कर दिया।" इस रक्तशोषक करके रहित होनेसे जालिमसिंह एक और जैसे कोटेकी सर्व साधारण प्रजासे वृद्धावस्थामें प्रशंसाको प्राप्त हुए, उधर गवर्नमेण्ट भी उसी प्रकारसे इस कार्य द्वारा जालिमसिंहसे अत्यन्त संतुष्ट हुई। जालिमसिंहने अपनी कीर्तिकी रक्षाके लिये "दंडकर" रहितके स्मरण करनेके अर्थ कोटेराज्यके प्रत्येक प्रधान २ नगरमें पत्थरका स्तंभ स्थापित करके उसपर कर रहितकी आज्ञा लिखवा दी।

सप्तम अध्याय ७.

राजनैतिक विभ्राट्में कर्नल टाडका व्यवहार—बृटिश गवर्नमेंटका जालिमसिंहका पक्ष समर्थन-गोवर्धनदासको निर्वासन दंड-मालवादेशमें गोवर्धनकी उपस्थिति-कोटेमें फिर राजनैतिक महा विभ्राट्—महाराव किशोरसिंहके साथ सेनाका योगदान-जालिमसिंहका महलके ऊपर गोले वर्षाना-महाराव किशोरसिंहका किलेको छोडकर बाहर जाना-महारावका बूँदीमें जाना—राजभ्रातर विशनसिंहका जालिमसिंहके साथ योगदन—गोवर्धनदासका महारावके साथ योगदेनेको चेष्टा करना-उसका व्यर्थ होना—महारावका बूँदीको छोड़ना-महारावके प्रति हाडाजातिका सहानुभूति प्रकाश करना—महारावका वृन्दावनमें आगमन—गोवर्धनदास और बृटिश गवर्नमेंटके अधानमें स्थित राजपुरुषोंका षड्यन्त्र—महारावका सेना सहित कोटेकी ओरको जाना-महारावका घोषणापत्र प्रचार करके हाडाजातिको अपने पक्षमें योग देनेके लिये बुलाना-महारावका बृटिश गवर्नमेंटके निकट अपना प्रस्ताव भेजना-जालिमसिंहका आचरण-महारावके विरुद्ध जालिमसिंहका सेनाके साथ बृटिश सेनाका अग्रसर होना-सम्मिलित सेनाका महारावपर आक्रमण करना-महारावकी सेनाका जालिमसिंहके व्यूहको भेदन करना-अंग्रेजी सेनाका उस कार्यमे बाधा देना—अंग्रेजोंके विरुद्ध समर करनेकी अनिच्छासे महारावका सेनासहित रणक्षेत्र त्याग करना—अंग्रेजी सेनाका फिर महारावकी सेनापर आक्रमण करना-महारावकी सेनाका उस आक्रमणको व्यर्थ करना-महारावका सेनासहित प्रस्थान-अंग्रेजी सेनाका महारावके पैदलदलका नाश करना-कुमार पृथ्वीसिंहकी मृत्यु-दो वीरोंकी वीरता दिखाना-कर्नल टाडका महारावके साथ और संयुक्त सामन्तोंके साथ क्षमाप्रदर्शनमूलक घोषणापत्रका प्रचार करना-सामन्तोंका अपने २ स्थानको चले जाना-समरका फल-अनुसगिक घटनावली-महारावके साथ फिर संधिबन्धनकी चेष्टा करना-नूतन संधिपत्र-महारावके लिये निर्द्धारित बृत्तिकी सूची-कर्नल टाडकी व्यवस्था—व्यवस्थापत्र-महारावके कोटेमें आनेके समय व्याघातमूलक घटना—महारावका फिर अपने राज्यमें चलेजाना--विशनसिंहका राजधानीसे दूसरे स्थानको भेजना--जालिमसिंहके साथ महाराव किशोरसिंहका संमिलन--माधोसिंहके साथ महारावकी प्रीति स्थापन--जालिमसिंहकी मृत्यु--उनकी जीवनीकी समालोचना।

कर्नल टाडके समान राजपूत बान्धव अंग्रेज यहाँतक भारतमें कोई भी नहीं आया। यह पाठकोंको मुक्तकंठसे स्वीकार करना होगा। राजपूत जातिके प्रति साधू टाडका यहाँतक अनुराग, प्रीति और स्नेह था कि उन्होंने सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये समय २ पर एकमात्र उस अनुराग, प्रीति और स्नेहसे परिचालित होकर अपने प्रभु गवर्नमेण्टके द्वारा अनुष्ठित राजपूत जातिके अपकारमूलक कार्यका प्रतिवाद, निन्दा और कठोर समालोचना करनेमें भी कसर न की। देशियोंके पक्षका अवलम्बन करनेसे किसी अंग्रेज कर्मचारीको भी आजतक उस भावसे सत्यके सम्मानकी रक्षा करनेका साहस नहीं देखा। हम प्रत्येक पगपर इस इतिहासमें यथास्थान कर्नल टाड साहबके साधु व्यवहार, उदार आचरण और निरपेक्ष न्याय विचार और श्रेष्ठ अनुष्ठानकी मुक्त कंठसे ऊँची प्रशंसा करते आये हैं। परन्तु अत्यन्त दुःखित हृदयसे वर्तमान प्रबन्धमें उनके एक मात्र राजनैतिक अभिनयका विषमय फल देखकर हम यहां दुःखी हुए हैं।

यद्यपि हम भलीभाँतिसे जान गये हैं, कि कर्नेल टाड अपने उपरितन प्रभू भारतवर्षके गवर्नर जनरलकी आज्ञासे अंग्रेज गवर्नमेण्टके राजनीतिकी आज्ञा पालन करनेके लिये यह शोचनीय अभिनय करनेके लिये बाध्य हुए, तथापि हमारा ऐसा विचार है कि वह स्वयं जिस कार्यमें मध्यस्थ थे और स्वयं ही जिस कार्यके एक प्रधान नेता थे वह चाहते तो अवश्य ही उस शोचनीय अभिनयको अन्य प्रकारसे रहित कर सकते थे।

महाराव राजा उमेदसिंहके साथ बृटिश गवर्नमेण्टका संधिबंधन जिस समय हुआ था; उस समय राजराणा जालिमसिंहने कोटेके सर्वमय प्रभु स्वरूपसे असीम सामर्थ्य चलाई थी, इसको कौन नहीं मानेगा? परन्तु तब उन जालिमसिंहको कोटेमें सर्वमय प्रभु स्वरूपसे वंशानुक्रमसे रहनेका अधिकार देनेमें बृटिश गवर्नमेण्ट किसी प्रकार भी सामर्थ्यवान् न हुई, इस बातको कौन नहीं मानेगा? जालिमसिंहने पिंडारियोंके युद्धक समयमें और उससे पहिले अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सम्पूर्णरूपसे सहायता की थी, परन्तु कोटेके प्रकृति राजशक्तिसम्पन्न उमेदसिंहको वंशानुक्रमसे साक्षी गोपाल स्वरूपमें रखकर उनकी वंशानुक्रमसे समस्त शासनशक्तिको हरण कर जालिमसिंहको उस शासनशक्तिका देना कौन राजनीतिक संगत था? कौन धर्मशास्त्र संगत था? कौन सभ्यता-विधि संगत था? जालिमसिंह तो महाराव उमेदसिंहके वेतनभोगी भृत्यमात्र थे उन्होंने जो सेनाकी सहायता, रसदकी सहायता और जो आर्थिक सहायता की थी, वह सभी उमेदसिंहकी थी, जालिमसिंहकी निजकी कुछ भी नहीं थी, इस अवस्थामें उन जालिमसिंहको बृटिश गवर्नमेण्टने पुरस्कार स्वरूपमें किस प्रकार यथार्थ नरपतिकी शक्तिको हरण करके उनको उसे वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये दिया था? किसी राज्यके इतिहासमें हमने ऐसी घटनाका दूसरा प्रमाण नहीं पाया! एक राज्यके प्रधान मंत्रीद्वारा अन्य राजाको उपकार प्राप्त हुआ है इसीसे क्या उस अन्य अन्य नरपतिके न्यायके वक्षस्थलपर, धर्मकी छातीपर, सत्यके वक्षस्थलपर पदाघात करके उस प्रधानमंत्रीको एक राज्यकी शासन सामर्थ्य वंशानुक्रमसे उपभोग करनेके लिये दी जा सकती है, जालिमसिंहके द्वारा कोटेराज्यके बहुतसे उपकार हुए थे यह उन्होंने वेतनभोगी कर्मचारी स्वरूपसे अपने कर्तव्यको पालन किया था, उसके लिये वह कोटेकी शासनशक्तिको वंशानुक्रमसे भोग करनेके अधिकारी नहीं हो सके, गवर्नमेण्टने न्याय न करके बलपूर्वक महाराव उमेदसिंहको अत्यन्त निरीह और नम्र देखकर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेका प्रकृत अधीश्वरपद प्रदान किया, इसको कौन नहीं मानेगा। यदि एकमात्र जालिमसिंहको ही जन्मभर तक उक्त शासनशक्ति चलानेकी सामर्थ्य देते तो इतनी हानि नहीं होती, वंशानुक्रमसे उस शासनशक्तिका देना किस प्रकार युक्तिसंगत हो सकता था? जालिमसिंह बुद्धिमान् नीतिज्ञ और शासनकार्यमें सुदक्ष थे, इससे उनके उत्तराधिकारी भी इनके समान होंगे यह गवर्नमेण्टने किस प्रकार स्थिर किया था? और जालिमसिंहके समान उनके उत्तराधिकारी भी केवल शासनशक्तिको पाकर संतुष्ट होंगे, कोटेके यथार्थ अधीश्वरके कभी भी अनिष्ट कामना नहीं करेंगे, यह किस प्रकारसे विचार हुआ था? राजनीतिज्ञ कर्नेल टाड साहबने अवश्य ही जालिमसिंहको

उक्त अधिकार देनेके समय यह विचार लिया था। परन्तु उन्होंने ऐसा विचार करके भी न्यायसंगत कार्य नहीं किया। वरन् बृटिश गवर्नमेण्टके उस विचारहीन अनुष्ठानके कार्यको परिणत करनेके लिये अपनी समस्त शक्तियोंको प्रयोग कर इतिहासमें अपनी एकमात्र पक्षपातकी रेखाको अंकित किया है।

जालिमसिंहको अन्यायरूपसे कोटेकी शासनशक्तिको वंशानुक्रमसे उपभोग करनेका अधिकार देकर जो विषैला फल फला था वंशानुक्रमसे उसीसे कोटेकी शोचनीय अवस्था हुई। वह हमारे पाठकोंको परवर्ती इतिहाससे विदित हो सकैगा। उस शोचनीय अभिनयके लिये हम इतने दुःखित नहीं हैं, परन्तु इसी एकमात्र अनुष्ठानसे अंतमें कोटाराज दो भागोंमें विभक्त हो जायगा, कोटेके मूलराजकी शक्ति एकबार ही हीन हो जायगी, जालिमसिंहके उत्तराधिकारी कोटेके प्रायः आधे अंशके अधीश्वर होंगे! बृटिश गवर्नमेण्टकी राजनीतिको फलस्वरूप हाडावती देशके सामान्य झालापरिवार भी महान् ऊँचे राजपदपर प्रतिष्ठित होंगे यह कौन जानता था।

पूर्व अध्यायमें वर्णन कर आये हैं कि बृटिश पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल टाडने मध्यवर्ती होकर बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रतिज्ञाकी रक्षाके लिये, महाराव किशोरसिंहको सम्मत कराकर उनको साक्षी गोपालस्वरूपसे कोटेके सिंहासनपर बैठाल कर जालिमसिंहको कोटेके हर्ता कर्ता पदपर दृढरूपसे नियुक्त कर दोनोंमें प्रीति स्थापन करके कोटेराज्यको छोड दिया। कर्नल टाड साहबने विचारा था कि बृटिश गवर्नमेण्टने इस कार्यको जब न्यायमूलक कहकर उसे प्रबल रखनेमें यत्न करना चाहा है तब महाराव किशोरसिंह भी अवश्य ही उस कार्यको न्यायमूलक विचार कर अपने समस्त स्वार्थके नष्ट होनेपर भी जालिमसिंहके साथ चिरकाल तक सद्भावसे रहेंगे; परन्तु शीघ्र ही उनका वह अनुमान व्यर्थ हो गया। शीघ्र ही फिर किशोरसिंहके न्यायसंगत स्वार्थके साथ जालिमसिंहके अन्यायमूलक स्वार्थका भयंकर संघर्षण हुआ।

जालिमसिंहके पुत्र गोवर्द्धनदासको समस्त षड्यन्त्रका मूल और उसके द्वारा परिचालित होकर महाराव किशोरसिंहको जालिमसिंहकी शक्ति लोप करनेके लिये उद्यत जानकर कर्नल टाड और जालिमसिंहने उस गोवर्द्धनदासको कोटेराज्यसे एक बार ही निकाल दिया। गोवर्द्धनदासने राजनैतिक बंदीस्वरूपसे दिल्ली और इलाहाबाद इन दोनों नगरोंमेंसे दिल्लीमें रहनेकी इच्छा की इस कारण उसकी प्रार्थनाके अनुसार उसको दिल्लीमें ही बंदीभावसे रक्खा गया। कर्नल टाड साहबने लिखा है "कि दिल्लीमें वह अपने कुटुम्बसहित रहे थे, और उनका भरण पोषण करनेके लिये उचित वृत्ति नियत कर दी गई थी, वह जिस स्थानपर रहैं वहाँ उनके भ्रमण और व्यायाम करनेके लिये विस्तारित स्थान दिया गया। और उस स्थानपर अंग्रेजोंने उनकी ओर दृष्टि रखनेके लिये कितनी ही अश्वारोही सेनाको नियुक्त रक्खा था"।

इसके पीछे कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "जावुआके महाराजकी एक जारज कन्याके साथ विवाह करनेके लिये निकाले हुए गोवर्द्धनदासको सन् १८२१

यद्यपि हम भलीभाँतिसे जान गये हैं, कि कर्नल टाड अपने उपरितन प्रभू भारतवर्षके गवर्नर जनरलकी आज्ञासे अंग्रेज गवर्नमेण्टके राजनीतिकी आज्ञा पालन करनेके लिये यह शोचनीय अभिनय करनेके लिये बाध्य हुए, तथापि हमारा ऐसा विचार है कि वह स्वयं जिस कार्यमें मध्यस्थ थे और स्वयं ही जिस कार्यके एक प्रधान नेता थे वह चाहते तो अवश्य ही उस शोचनीय अभिनयको अन्य प्रकारसे रहित कर सकते थे।

महाराव राजा उमेदसिंहके साथ बृटिश गवर्नमेण्टका संधिबंधन जिस समय हुआ था; उस समय राजराणा जालिमसिंहने कोटेके सर्वमय प्रभु स्वरूपसे असीम सामर्थ्य चलाई थी, इसको कौन नहीं मानेगा? परन्तु तब उन जालिमसिंहको कोटेमें सर्वमयं प्रभु स्वरूपसे वंशानुक्रमसे रहनेका अधिकार देनेमें बृटिश गवर्नमेण्ट किसी प्रकार भी सामर्थ्यवान् न हुई, इस बादको कौन नहीं मानेगा? जालिमसिंहने पिंडारियोंके युद्धके समयमें और उससे पहिले अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सम्पूर्णरूपसे सहायता की थी, परन्तु कोटेके प्रकृति राजशक्तिसम्पन्न उमेदसिंहको वंशानुक्रमसे साक्षी गोपाल स्वरूपमें रखकर उनकी वंशानुक्रमसे समस्त शासनशक्तिको हरण कर जालिमसिंहको उस शासनशक्तिका देना कौन राजनीतिक संगत था? कौन धर्मशास्त्र संगत था? कौन सभ्यता-विधि संगत था? जालिमसिंह तो महाराव उमेदसिंहके वेतनभोगी भृत्यमात्र थे उन्होंने जो सेनाकी सहायता, रसदकी सहायता और जो आर्थिक सहायता की थी, वह सभी उमेदसिंहकी थी, जालिमसिंहकी निजकी कुछ भी नहीं थी, इस अवस्थामें उन जालिमसिंहको बृटिश गवर्नमेण्टने पुरस्कार स्वरूपमें किस प्रकार यथार्थ नरपतिकी शक्तिको हरण करके उनको उसे वंशानुक्रमसे भोग करनेके लिये दिया था? किसी राज्यके इतिहासमें हमने ऐसी घटनाका दूसरा प्रमाण नहीं पाया! एक राज्यके प्रधान मंत्रीद्वारा अन्य राजाको उपकार प्राप्त हुआ है इसीसे क्या उस अन्य अन्य नरपतिके न्यायके वक्षस्थलपर, धर्मकी छातीपर, सत्यके वक्षस्थलपर पदाघात करके उस प्रधानमंत्रीको एक राज्यकी शासन सामर्थ्य वंशानुक्रमसे उपभोग करनेके लिये दी जा सकती है, जालिमसिंहके द्वारा कोटेराज्यके बहुतसे उपकार हुए थे यह उन्होंने वेतनभोगी कर्मचारी स्वरूपसे अपने कर्तव्यको पालन किया था, उसके लिये वह कोटेकी शासनशक्तिको वंशानुक्रमसे भोग करनेके अधिकारी नहीं हो सके, गवर्नमेण्टने न्याय न करके बलपूर्वक महाराव उमेदसिंहको अत्यन्त निरीह और नम्र देखकर जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे कोटेका प्रकृत अधीश्वरपद प्रदान किया, इसको कौन नहीं मानेगा। यदि एकमात्र जालिमसिंहको ही जन्मभर तक उक्त शासनशक्ति चलानेकी सामर्थ्य देते तो इतनी हानि नहीं होती, वंशानुक्रमसे उस शासनशक्तिका देना किस प्रकार युक्तिसंगत हो सकता था? जालिमसिंह बुद्धिमान् नीतिज्ञ और शासनकार्यमें सुदक्ष थे, इससे उनके उत्तराधिकारी भी इनके समान होंगे यह गवर्नमेण्टने किस प्रकार स्थिर किया था? और जालिमसिंहके समान उनके उत्तराधिकारी भी केवल शासनशक्तिको पाकर संतुष्ट होंगे, कोटेके यथार्थ अधीश्वरके कभी भी अनिष्ट कामना नहीं करेंगे, यह किस प्रकारसे विचार हुआ था? राजनीतिज्ञ कर्नल टाड साहबने अवश्य ही जालिमसिंहको

उक्त अधिकार देनेके समय यह विचार लिया था। परन्तु उन्होंने ऐसा विचार करके भी न्यायसंगत कार्य नहीं किया। वरन् बृटिश गवर्नमेण्टके उस विचारहीन अनुष्ठानके कार्यको परिणत करनेके लिये अपनी समस्त शक्तियोंको प्रयोग कर इतिहासमें अपनी एकमात्र पक्षपातकी रेखाको अंकित किया है।

जालिमसिंहको अन्यायरूपसे कोटेकी शासनशक्तिको वंशानुक्रमसे उपभोग करनेका अधिकार देकर जो विषैला फल फला था वंशानुकमसे उसीसे कोटेकी शोचनीय अवस्था हुई। वह हमारे पाठकोंको परवर्ती इतिहाससे विदित हो सकैगा। उस शोचनीय अभिनयके लिये हम इतने दुःखित नहीं हैं, परन्तु इसी एकमात्र अनुष्ठानसे अंतमें कोटाराज दो भागोंमें विभक्त हो जायगा, कोटेके मूलराजकी शक्ति एकबार ही हीन हो जायगी, जालिमसिंहके उत्तराधिकारी कोटेके प्रायः आधे अंशके अधीश्वर होंगे! बृटिश गवर्नमेण्टकी राजनीतिको फलस्वरूप हाडावती देशके सामान्य झालापरिवार भी महान् ऊँचे राजपदपर प्रतिष्ठित होंगे यह कौन जानता था।

पूर्व अध्यायमें वर्णन कर आये हैं कि बृटिश पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल टाडने मध्यवर्ती होकर बृटिश गवर्नमेण्टकी प्रतिज्ञाकी रक्षाके लिये, महाराव किशोरसिंहको सम्मत कराकर उनको साक्षी गोपालस्वरूपसे कोटेके सिंहासनपर बैठाल कर जालिमसिंहको कोटेके हर्ता कर्ता पदपर दृढरूपसे नियुक्त कर दोनोंमें प्रीति स्थापन करके कोटेराज्यको छोड दिया। कर्नल टाड साहबने विचारा था कि बृटिश गवर्नमेण्टने इस कार्यको जब न्यायमूलक कहकर उसे प्रबल रखनेमें यत्न करना चाहा है तब महाराव किशोरसिंह भी अवश्य ही उस कार्यको न्यायमूलक विचार कर अपने समस्त स्वार्थके नष्ट होनेपर भी जालिमसिंहके साथ चिरकाल तक सद्भावसे रहेंगे; परन्तु शीघ्र ही उनका वह अनुमान व्यर्थ हो गया। शीघ्र ही फिर किशोरसिंहके न्यायसंगत स्वार्थके साथ जालिमसिंहके अन्यायमूलक स्वार्थका भयंकर संघर्षण हुआ।

जालिमसिंहके पुत्र गोवर्द्धनदासको समस्त षड्यन्त्रका मूल और उसके द्वारा परिचालित होकर महाराव किशोरसिंहको जालिमसिंहकी शक्ति लोप करनेके लिये उद्यत जानकर कर्नल टाड और जालिमसिंहने उस गोवर्द्धनदासको कोटेराज्यसे एक बार ही निकाल दिया। गोवर्द्धनदासने राजनैतिक बंदीस्वरूपसे दिल्ली और इलाहाबाद इन दोनों नगरोंमेंसे दिल्लीमें रहनेकी इच्छा की इस कारण उसकी प्रार्थनाके अनुसार उसको दिल्लीमें ही बंदीभावसे रक्खा गया। कर्नल टाड साहबने लिखा है "कि दिल्लीमें वह अपने कुटुम्बसहित रहे थे, और उनका भरण पोषण करनेके लिये उचित वृत्ति नियत कर दी गई थी, वह जिस स्थानपर रहें वहाँ उनके भ्रमण और व्यायाम करनेके लिये विस्तारित स्थान दिया गया। और उस स्थानपर अंग्रेजोंने उनकी ओर दृष्टि रखनेके लिये कितनी ही अश्वारोही सेनाको नियुक्त रक्खा था"।

इसके पीछे कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "जाबुआके महाराजकी एक जारज कन्याके साथ विवाह करनेके लिये निकाले हुए गोवर्द्धनदासको सन् १८२१

ईसवीमें मालवादेशमें जानेकी आज्ञा देकर अत्यन्त अज्ञानताका कार्य किया गया। गोवर्द्धनदासके उस नगरमें पहुंचते पहुंचते सब प्रकारसे शांतिके बदलेमें कोटेराज्यमें उत्तेजनाके लक्षण प्रकाशित हो गये। कोटे और बूँदीराज्यमें षड्यंत्रमूलक पत्रादिके प्रकाशित न होते २ जालिमसिंहके प्राचीन विश्वासी वीरोंमें विद्रोह और उत्तेजना दिखाई दी। सैफअली नामक तीस वर्षके पुरातन सेनानायक जो "राजपलटन" अर्थात् नरपतिके खास सेनादलके नेता थे, और जो विश्वासी वीरता और दक्षताके लिये विशेष विख्यात थे ऐसा जाना जाता है कि पहिले उन्होंने अपने नाममात्रके अधीश्वर (किशोरसिंह) का पक्ष अवलम्बन किया था। पहिले इस संवादको मिथ्या अनुमान किया गया, परन्तु ज्ञानी जालिमसिंहने इसमें विश्वास न करके वह असंतुष्ट सेनादल जिससे महलमें स्थित महारावके साथ न मिल सके, इस कारण दोनोंके मध्यस्थलमें एक सेनाको रक्खा। शीघ्र ही महाराव जलमार्गसे जाकर सैफअली और उनके अधीनमें स्थित कितनी ही सेनाको महलमें ले आये, इस समाचारके प्रचारित होते ही एक नेत्रहीन जालिमसिंहने तामदानपर चढकर अपनी सेनाके साथ सैफअलीकी शेष सेनापर आक्रमण किया, और दो बडी २ तोपोंको ऊँचे स्थानपर इस भावसे रखकर गोलोंका चलाना प्रारंभ किया कि उससे एकमात्र राजधानी ही नहीं वरन् चम्बल नदीके दोनों किनारोंके देश और मकानोंके ऊपर गोलोंकी वर्षा होने लगी। इस गोलोंकी वर्षासे महाराव, उनके भ्राता पृथ्वीसिंह और उनके अनुचर नौकापर चढ कर नदीके पार हो बूँदीको चले गये। इस और बचीबचाई सेनाने अस्त्र छोडकर आत्मसमर्पण किया। प्रबल उद्योगके साथ इस अनुष्ठानको करके जालिमसिंहने, महारावके द्वारा अपने प्रभुत्वके नाशकी चेष्टा व्यर्थ कर दी, और हाडाजातिका राजसिंहासन शून्य हो गया। उस युद्धके समय विशनसिंहने दोनों भ्राताओंसे अलग होकर जालिमसिंहके साथ मेल किया, जालिमसिंहने इस समय विशनसिंहके साथ गुप्तभावसे जैसा सम्मान करते हुए व्यवहार किया उसी प्रकारका मन्तव्य प्रकाश किया, वह सरलतासे जाना जाता है"।

कर्नल टाड साहबकी उक्त उक्तिसे पाठक भलीभांतिसे जान गये होंगे कि चतुर चूडामणि जालिमसिंह कैसे पुरुष थे और उन्होंने विश्वासघातीके समान कैसा कार्य किया था। जो किशोरसिंह न्यायके अनुसार धर्मके मतसे जालिमसिंहके अधीश्वर थे जालिमसिंहने उन्हीं अधीश्वर किशोरसिंहके विरुद्धमें "तोपें चलानेमें एक मुहुर्त्तमात्रका भी विलम्ब नहीं किया। जिस कोटेराज्यमें सूचीके अग्रभागमात्र भूमिमें जालिमसिंहका न्यायके अनुसार कोई भी अधिकार नहीं था, जिस कोटेराज्यके अधीश्वरकी करुणा दयासे जालिमसिंहने कोटेमें प्रवेशका अधिकार प्राप्त कर फौजदार पदको प्राप्त किया, जिस कोटे राज्यसे जालिमसिंह एक समय सर्वस्वान्त हो गये थे, जिस कोटेराज्यके अधीश्वरने फिर उनको क्षमाकर उनको ग्रहण किया और अपने पुत्रको अभिभावक पदका प्रदान किया था, वही जालिमसिंह उन नरपतिके पोतेके विरुद्धमें तोपें चलाकर अपने स्वार्थ साधन करनेके लिये अग्रसर हुए। यह क्या विचित्र राजनीति नहीं कही जायगी, यह

बात क्या अत्यन्त अन्याय अत्यन्त अधर्ममूलक नहीं समझी जायगी। जालिमसिंहने जो आचरण किया वह सरकारके बलपर ही किया। जालिमसिंह किशोरसिंहको कोटेसे निकाल कर ही शान्त न हुए, वरन् उन्होंने महारावके भ्राता विशनसिंहको कि जिन्होंने राजसिंहासन प्राप्तिकी इच्छासे जालिमसिंहका पक्ष अवलम्बन किया था, धर्मके मस्तक-पर पदाघात करके बृटिश एजेण्ट कर्नल टाड महोदयके सम्मुख उन विशनसिंहको कोटेके अधीश्वरपदपर अभिषेक करनेके लिये प्रस्ताव किया। परन्तु साधु टाड साहबने किसी प्रकारसे भी जालिमसिंहके उस घृणित प्रस्तावमें अपनी सम्मति नहीं दी। कर्नल टाडके विषयमें अवश्य ही यह प्रशंसाकी बात कहनी होगी। परन्तु महाराव किशोरसिंहने अपने पैतृक अधिकारको प्राप्त करनेके लिये यह दूसरी बार उद्योग किया। यद्यपि जालिमसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये इससे पीछे कर्नल टाडने जो राजनैतिक अभिनय किया उस अनुष्ठानसे जालिमसिंहका मत अन्याय क्षमताके लोभसे विश्वासहन्ता हो सकता था, परन्तु उदारहृदय सत्यप्रिय टाडके पक्षमें यह कभी शोभा नहीं देता।

महाराव किशोरसिंह बृटिश गवर्नमेण्टके हस्ताक्षर सहित पहिले संधिपत्रके मतसे कोटेकी सम्पूर्ण शासनशक्तिसम्पन्न राजशक्तिको पानेके लिये वीरतेजा हाडा-जातिके समीप प्रतिवासी राजाओंसे सहायता लेनेको गये। इसके पीछे जालिम-सिंहके परामर्शके अनुसार कर्नल टाड और गवर्नमेण्टने उस महाराजके विरुद्धमें जैसा अनुष्ठान किया उसके सम्बन्धमें कुछ कहनेके पहिले कर्नल टाडने अपने हाथसे इतिहासमें जो वर्णन किया है हम इस स्थानपर सबसे पहिले उसको प्रकाश करना उचित जानते हैं। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "उपस्थित उपद्रवोंके निवारणके पक्षमें एकमात्र संधिकी धारासे कार्य परिणत कर सर्व साधारणमें दृढरूपसे शांति रखनेका उपाय था। बूँदीके अधीश्वरके निकट यह कहकर पत्र लिखा गया कि भागे हुए किशोर-सिंहको अतिथि स्वरूपसे ग्रहण कर उनके साथ कुटुम्बियोंके समान व्यवहार करनेका कुछ निषेध नहीं है, परन्तु यदि जालिमसिंहके विरुद्धमें किशोरसिंह समर करनेके अभिप्रायसे सेना इकट्ठी करें तो बूँदीराजको उसके लिये सम्पूर्ण दायी होना होगा, उस समय नीमच नामक स्थानपर जो बृटिशसेनादल रहता था उस सेनादलके अंग्रेज सेनापतिको यह आज्ञा दी गई, कि जाबुआ और बूँदीराज्यके मध्यस्थ मार्गमें एक सेना स्थापित करो। गोवर्द्धनदास महाराव किशोरसिंहके साथ मिलनेकी चेष्टा करें तो वह दल गोवर्द्धनदासको मृत वा जीवित अवस्थामें बंदीकर ले। उसको पकडनेके लिये जो उत्तम अनुष्ठान किया गया, गोवर्द्धनदासने गिरिसंकटसे गुप्त पन्थद्वारा भागकर उस अनुष्ठानको व्यर्थ करदिया। किन्तु बूँदीराजको उस समय भयभीत और इधर उधर करते हुए देखकर वह बराबर मारवाड राज्यमें भाग गये। किन्तु मारवाडपति गोवर्द्धन-दासको किसी प्रकार भी आश्रय देनेमें सम्मत न हुए, तब वह शीघ्र ही दिल्लीमें आनेको बाध्य हुए, गोवर्द्धनदास दिल्लीमें गये तब उनको दृढरूपसे बंदीभावसे रक्खा गया। परन्तु ऐसा जाना जाता है कि पहिले गुप्त षड्यन्त्रके मतसे ही

गोवर्द्धनदासने दिल्लीमें आकर आत्मसमर्पण किया था; कारण कि शीघ्र ही महाराव किशोरसिंह बूँदीको छोडकर वृन्दावनकी ओरको तीर्थयात्रा करनेके लिये गये और उस समय ऐसी आशा की थी कि हमको अपने पैतृक कुलदेवता व्रजनाथजीके मंदिरमें अवश्य शांति और संतोष प्राप्त होगा, इसीसे उन्होंने जीवनके शेष समयको धर्मकी आलोचनामें व्यतीत करनेकी अभिलाषा की थी। वह जितने दिनोंतक बूँदीमें रहे थे उतने दिनोंतक सर्व साधारणमें किसी प्रकारके राजनैतिक उपद्रव होनेकी सम्भावनाका अनुमान नहीं था। कोटेसे बूँदी बहुत पास थी, इस कारण सबने विचारा कि महाराव क्रोधके वश यद्यपि बूँदीमें गये हैं पर फिर शीघ्र ही लौट आवेंगे। परन्तु महाराव किशोरसिंहके बूँदीको छोडकर उत्तरकी ओरको जाते ही सरलतासे प्रकाशित हो गया कि बूँदीसे न सही वह अन्य देशसे अपने स्वार्थसाधनके लिये सम्पूर्ण रूपसे सहायता पालेंगे। रजवाडोंके प्रत्येक राजा प्रत्येक प्रधान २ सामन्तने महारावको उस विपत्तिके समयमें सहानुभूति प्रकाश करनेवाला पत्र लिखकर धीरज दिया था, और वह जिस जिस राज्यमें होकर गये थे उसी राज्यके अधीश्वरने महाराव किशोरसिंहको कोटेके अधीश्वर रूपसे महा आदरसे ग्रहण करके उनके प्रति यथेष्ट सम्मान दिखाया था, "केवल जो भरतपुरराज्य कोटे राज्यके अत्यन्त समीप था, उस राज्यके अधीश्वरने ऐसा ऊंचा सम्मान नहीं दिखाया। विख्यात भरतपुरके अधीश्वरने कितने ही प्रतिनिधियोंको महाराव किशोरसिंहके समीप भेजकर क्षमा प्रार्थना की, उन्होंने कहा कि वह अत्यन्त वृद्ध और दृष्टिशक्ति हीन होनेसे महारावके निकट स्वयं नहीं आ सके हैं। जाट जमीदारने सौभाग्यवलसे ऊंचा पद पाया है, इस कारण उनके निकट जिस प्रकारका सम्मान प्रकाश करना उचित था जाटपतिको उसे न करते देखकर महाराव किशोरसिंहने अवज्ञाके साथ उनके प्रतिनिधिको विदा देकर उपहार द्रव्य फेर दिये। महारावके इस गर्वित आचरणके कारण जाटपतिने शीघ्र ही महारावको भरतपुर राज्यकी सीमा छोडनेकी आज्ञा दी। महाराव किशोरसिंहने कुछ समय तक वृन्दावनधाममें "व्रजकुंजमें" निवास किया। उस समय भलीभांतिसे प्रकाशित होने लगा कि जयदेवकी मधुर पदावलीने महारावके हृदयमें सामान्य राजमुकुटकी असारताको प्रतिपादित किया है और राधाकृष्णकी विचित्र लीलाके स्थानमें वीर कविचंदकी उत्तेजक वीरगाथा और चौहानकुलकी वीरताकी कहानी और गौरवगरिमा स्मृति महारावके हृदयसे एकबार ही निकल रही है, इस कारण महारावने इस समय इच्छानुसार ठहरनेकी इच्छा प्रगट की। सर्व साधारणके पहिले अनुमानके मतसे महाराव शीघ्र ही अपने जीवनकी अतीत और वर्त्तमान अवस्थाको समझ गये, उन्होंने अपनेको विदेश भूमिमें केवल धनके लोभियोंके द्वारा घिरा हुआ देखा। परन्तु महाराव अप्रैल मासमें वृन्दावनसे कोटेको जानेके लिये फिर तैयार हुए। उनको शैतान स्वरूप गोवर्द्धनदासने स्थिर कर दिया कि महाराव यहां इस भावसे नहीं रह सकेंगे। गोवर्द्धनदासके प्रति तीक्ष्ण दृष्टि रक्खी गई थी यह सत्य है, पर उन्होंने अपराधीके समान कारागारमें बन्द होकर भी महोच्चपदपर स्थित देशीय कर्मचारियोंद्वारा महारावके समीप अत्यन्त गुप्तरीतिसे पत्रव्यवहार किया था। यह बात पीछे प्रकाश हुई"।

क्रमशः राजनैतिक विभ्राट् प्रबल हो गया । कर्नल टाड इसके पीछे लिखते हैं कि "क्रमानुसार षडयन्त्रजालका विस्तार और महारावके दुष्टचरित्र चरोंके द्वारा वृथा आश्वास, वृद्धिको प्राप्त होने लगे । महारावने अतिरिक्त सेना और अनुचरोंको इकट्ठा करके हाडौतीकी ओरको यात्रा की । वह जिस २ राज्यमें जाने लगे उसी २ राज्यके अधिपतिसे कहने लगे कि गवर्नमेण्टकी इच्छाके अनुसार अपनी राजशक्तिको फिर ग्रहण करनेके लिये जाता हूँ । ऊँचे पदवाले कितने ही देशीय राजकर्मचारियोंके कितने ही चिह्नित अनुचर और दिल्लीके कोषागारमें देशीय धनरक्षक जिन्होंने महारावको धनकी सहायता दी थी, उनका एक एजेण्ट इस समय महारावके साथ गया । सर्वसाधारणने इसका अनुमान सरलतासे कर लिया कि, महाराव निश्चय ही गवर्नमेण्टकी इच्छानुसार जा रहे हैं, इस कारण सर्वसाधारणने इस समय महारावकी जिससे आशा पूर्ण हो, ऐसी कामना प्रकाश की । महाराव जितने आगे बढने लगे उतने ही उनकी सेनाकी संख्या भी बढने लगी । सन् १८२२ ईसवीकी वर्षाऋतुके शेष भागमें प्रायः तीन हजार सेना साथ लेकर चम्बल नदीके किनारे महाराव किशोरसिंह जा पहुँचे । नदीके पार होकर महाराव किशोरसिंहने इस प्रकारकी स्वजाति भाषासे अपनी प्रजामें घोषणा प्रचार कर दी कि राजपूत सरलतासे उसका अर्थ समझें और कोई महारावके उस आह्वानपत्रके अग्राह्य करने और महरावके पक्षका अवलम्बन करनेमें असम्मत न हो । महाराव किशोरसिंह संधिपत्रके अनुसार न्याय विचारकी आशा करनेके लिये उतारू हैं, इसीसे सबको उसमें योग देनेके लिये बुलाया है, प्रत्येक हाडा-राजपूत आमन्त्रणके अनुसार आने लगे । राजपूतजाति कैसी विश्वासी राजभक्त थी, महाराव किशोरसिंहकी वर्तमान अवस्थामें उसका प्रबल प्रमाण दिखाई दिया । जालिमसिंहके साथ जो मनुष्य समरक्त सम्बन्ध बन्धनमें बँधे थे, जिन्होंने जालिमसिंहके द्वारा बहुतसे उपकार प्राप्त किये थे, उनतकने इस समय जालिमसिंहको छोडकर न्यायके अनुसार अपने अधीश्वर महाराव किशोरसिंहके साथ योग देनेको गमन किया। उनमेंसे बहुतोंने तो महाराव किशोरसिंहको नेत्रोंसे भी नहीं देखा था और बहुतसे मनुष्य उनके विषयमें कुछ भी नहीं जानते थे।" यहांपर हमारा यह प्रश्न है कि एकमात्र जाटराजके अतिरिक्त समस्त रजवाडेके प्रत्येक राजा प्रत्येक सामन्त प्रत्येक राजपूतने किस कारणसे महाराव किशोरसिंहके प्रति सहानुभूति दिखाई थी ? किस कारणसे प्रत्येक हाडाजातीय वीरने महारावका साथ देकर उनका पक्ष समर्थन किया था ? किस कारणसे जालिमसिंहके आत्मीय अनुगत मनुष्योंने भी उनको छोड कर किशोरसिंहका साथ दिया था ? किस कारणसे वृटिश गवर्नमेण्टके अधीनस्थ देशीय उच्चपदवाले कर्मचारियोंतकने महारावका साथ दिया था ? कर्नल टाडने स्वयं इस बातको स्वीकार किया है कि महाराव किशोरसिंहको कोटेको न्यायके अनुसार शासनशक्ति युक्त अधीश्वर जानकर ही सबने महारावका पक्ष अवलम्बन किया। तभी यह प्रश्न उठता है कि रजवाडेके प्रत्येक मनुष्यने जब कि किशोरसिंहको न्यायके अनुसार अधीश्वर जानकर उनका पक्ष

अवलम्बन किया था, तब गवर्नमेण्टने उस न्यायके अनुसार अधिकारकी शासनशक्तिको एक बहिरस्थ मनुष्यको देकर क्या उस न्यायके वक्षस्थलपर पदाघात नहीं किया ? ।

महाराव किशोरसिंहने अपने पैतृक अधिकारको पानेके लिये स्वजातिसे सहायता मांगी, सभी उचित आशाकी संभावनासे सहायता करने लगे । महाराव किशोरसिंहको कुछ भी इच्छा नहीं थी कि, गवर्नमेण्टके साथ विवाद विसम्बाद करके अपने पूर्व अधिकारपर बलपूर्वक अधिकार कर लिया जाय । गवर्नमेण्टने जिस भ्रममें पडकर अत्यन्त अविचारसे उनके पैतृक अधिकारको लोप करनेके लिये एक मनुष्यको वह अधिकार दे दिया और उस दानको प्रबल रखनेके लिये पक्षपातसे उस मनुष्यका पक्ष समर्थन किया है । उस गवर्नमेंटको समझानेके लिये किसी प्रकारसे कसर न की । महारावने सरलतासे उन उपद्रवोंका विचार करानेके लिये यथाशक्ति चेष्टा की । पर गवर्नमेण्टके साथ समस्त सद्भावकी रक्षाके लिये महाराव किशोरसिंह यथाशक्ति यत्न करके भी कृतकार्य न हो सके । सन् १८२२ ईसवीकी १६ वीं सितम्बरको महाराव किशोरसिंहने बृटिश एजेण्ट कर्नल टाडके पास एक पत्र भेजकर सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित किया । उसे पढकर महरावके मनका भाव भलीभांतिसे जाना जाता है । उस पत्रको हम इस स्थानपर प्रकाशित करते हैं ।

"हमारे मनका भाव क्या था, उसको प्रकाश करनेके लिये कवि चांदखांने बारम्बार जाननेकी इच्छा की । अपने दो वकील-मिरजा मुहम्मद अलीबेग और लाला शालिग्रामके द्वारा मैंने अपनेको परिज्ञात कराया है । मैंने फिर आपके पास संधिके धाराको भेजा है । आप उसीके अनुसार कार्य कीजिये, यही हमारी इच्छा है । गवर्नमेंटके प्रतिनिधिस्वरूप होकर आप हमारे प्रति न्याय विचार करिये । प्रभु, प्रभुके समान, सेवक सेवकके समान रहे, सर्वत्र ही ऐसा हुआ है, और यह आपसे कुछ छिपा नहीं है" ।

महाराव उमेदसिंहके समयमें दिल्लीमें जो संधिबन्धन हुआ है, मैं उस संधिपत्रके मतसे समस्त कार्य करूँगा ।

---

(१) महाराव किशोरसिंहके उक्त पत्रसे क्या प्रकाशित होता है ? गवर्नमेण्टके साथ सम्पूर्ण सद्भावकी रक्षा करके उस गवर्नमेण्टके निकट उन्होंने जिस न्याय विचारकी प्रार्थनाकी, वह क्या न्याय संगत नहीं थी ? "प्रभु, प्रभुके समान और सेवक सेवकके समान रहे, यह सर्वदा ही सम्मत उक्ति कौनसी सरकार अग्राह्य कर सकती है । सब जगत् महारावके इस न्याय और धर्मयुक्त कथनको समर्थन कर सकता है । महाराव किशोरसिंहने न्याय विचारकी प्रार्थना करके कर्नल टाडके निकट जो संधियोंकी धाराओंको भेजा था, उसके प्रति दृष्टि रखनेसे महारावके उदार हृदयका चूडान्त प्रमाण पाया जाता है । महाराव संधि धाराको प्रबल रखनेके लिये अपनी अनेक स्वार्थोंमें हानि स्वीकार करके भी राजराणा जालिमसिंहको पूर्णपद पर रखनेके लिये सम्मत हुए । उद्धत स्वभाव गर्वित और दुर्विनीत माधोसिंहको लेकर यह राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित हुआ है, इसी लिये महाराव उक्त माधोसिंहको उपयुक्त जमीन देकर उनको दूसरे स्थानपर भेजना चाहते हैं, और उनके पुत्रको अपने यहां रखकर वंशानुक्रमसे रक्षा करनेके लिये संमत हैं । सभ्य बृटिश गवर्नमेण्टकी राजनीतिने उसे ग्राह्य नहीं किया । महारावने जो संधिपत्रकी धारा भेजी थी वह आगे लिखी है ।

२-नानाजी जालिमसिंहके ऊपर हमें सम्पूर्ण विश्वास है। वह महाराज उमेदसिंहके अधीनमें जिस भावसे कार्यकरते थे,हमारे अधीनमें भी उसी भावसे कार्य करेंगे। उनके हाथमें राज्यशासनका भार अर्पण करनेके लिये मैं सम्मत हूं,परन्तु मुझे माधोसिंहपर संदेह और संशय उपस्थित हुआ है हम किसी समय भी एक मत नहीं हो सकते, इस कारण मैंने उनको एक जागीर दी है, वह वहां रहेंगे। उनके पुत्र बाप्पालाल मेरे निकट रहेंगे, और अन्यान्य मंत्री जिस प्रकार राजाके समीप रहकर राजकार्य करेंगे वह भी उसी प्रकार मेरे निकट काम काज करेंगे। मैं उनका प्रभु हूं और वह मेरे मृत्य स्वरूप रहेंगे, और यदि वह भृत्यके समान कार्य करेंगे तो यही वंशानुक्रम उसी भावसे चलता रहेगा।

३-अँग्रेज गवर्नमेंट अथवा अन्यान्य राजाओंके समीप जो पत्रादि भेजने होंगे वह हमारी सम्मति और उपदेशके अनुसार लिखने होंगे।

४-अंग्रेज गवर्नमेंट हमारे और उनके जीवनके लिये अवश्य ही प्रतिभू रहेगी।

५-पृथ्वीसिंहको मैंने एक जागीर दी है और वह वहां निवास करेंगे, उनके साथ और मेरे अन्य भ्राता विशनसिंहके साथ जो मनुष्य नियुक्त रहेंगे मैं उनको मनोनीत कर दूँगा,इसके अतिरिक्त मेरे स्वजाति और कुटुम्बियोंको उनकी पद मर्यादाके अनुसार जागीर दान की जायगी, और चिर प्रचलित प्राचीन रीतिके अनुसार वह मेरे समीप रहेंगे।

६-मेरे शरीर रक्षक खास तीन हजार सेनाके साथ बाप्पालाल (जालिमके पोते) मेरे समीप उपस्थित रहेंगे।

७-राज्यका समस्तराजस्व प्रथमतः साधारणकोषागारमें जमा करना होगा, इसके पीछे वहाँसे समस्त खर्चा किया जायगा।

८-समस्त किलेदार अर्थात् दुर्गरक्षक मेरे द्वारा नियुक्त होंगे और सारी सेना मेरी आज्ञामें रहेगी। वह राजकर्मचारियोंको उनकी आज्ञा पालनके लिये अनुमति देते रहेंगे परन्तु उसमें मेरे उपदेश और सम्मतिका प्रयोजन होगा।

मैं इन धाराओंका प्रस्ताव करता हूं और इसी राजनीतिका अनुयायी हूं। आसौज पंचमी संवत् १८७८ सन् १८२२ ई०।

महाराव किशोरसिंहने सरकारके निकट जो ऊपर लिखा हुआ प्रस्ताव भेजा था, कोई साधारण पुरुष भी इसको अनुचित नहीं कह सकता, परन्तु उनका प्रस्ताव सरकारने स्वीकार नहीं किया, एक महीना इस प्रस्तावकी प्रतिज्ञाके बीचें गया, परन्तु बृटिश सरकारने एकमात्र जालिमसिंहके स्वार्थकी रक्षामें दृष्टि देकर मंत्रीके प्रस्तावके अनुसार शोचनीय राजनैतिक दृश्य आरम्भ कर दिया। उदारचित्त सत्यप्रिय टाड साहबने भी अपने प्रभुकी आज्ञानुसार उस कार्यमें सब प्रकारसे योगदान करनेमें कसर न की। कर्नल टाडने अपनी परिवर्ती घटनाका जो वृतान्त वर्णन किया है, हम यहांपर उसीको प्रकाश करना उचित जानते हैं। कर्नल टाड साहब लिखते हैं, कि

" जालिमसिंहको उनकी विश्वासी सेनाके ऊपर भी निर्भर नहीं किया जाता, उन्होंने स्वयं ही कहा हैं कि सेनाके ऊपर उनका सम्पूर्ण विश्वास नहीं है। उनका शासनकार्य किस प्रकार कठोरताके साथ होता था इस समय उसका बिलक्षण साक्षी मिला है। जिस जालिमसिंहने स्वदेशी और विदेशी प्रत्येक सेनाका अपने हाथसे पालन किया था, उसी सेनादलके प्रत्येक पुरुष उनके विरुद्धमें न्यायके अनुसार अधिकारियोंका पक्ष अवलम्बन करनेके लिये तैयार होते देखा। इस राजनैतिक उपद्रवोंके समयमें सभीको उन्होंने यहांतक अविश्वासका आर्विभाव दिखाया कि, उन्होंने विपत्तिसे मुक्त होकर कहा कि "मेरे शरीरपर पहिरे हुए वस्त्रोंतकमें मानो षड्यन्त्रकी गंध आ गई है"। जालिमसिंह चारों ओर उस अविश्वासताको देखकर विरक्त हुए, और सहज ही ऊंची सामर्थ्य प्राप्तिकी आशाको छोडनेके लिये उद्यत होते, तो उससे बृटिश गवर्नमेंट भी अत्यन्त कष्टदायक विपत्तिग्रस्त अवस्थासे उद्धार पानेमें समर्थ होती। जालिमसिंहके समीप इस राजनैतिक कठोर ग्रंथिको छेदन करनेके लिये यथेष्ट सुअवसर दिये थे, और इशारोंसे यह विदित किया था कि यदि वह विचारेंगे तो इस ग्रंथिको काट सकेंगे, नहीं तो तलवारसे अवश्य ही यह राजनैतिक बिभ्राट् ग्रंथि छेदन की जायगी। परन्तु सभी चेष्टाएँ निष्फल होगई; जालिमसिंहने सन्धिपत्रके मतसे कार्य करने और स्वयं शासनकी सामर्थ्यको जिस प्रकारसे ग्रहण करनेकी प्रतिज्ञा की, जालिमसिंहके नाममात्रके प्रभु महाराव किशोरसिंह भी उसी प्रकारकी भित्तिपर खडे हुए और अंग्रेज गवर्नमेण्टके साथ निर्द्धारित पूर्व सन्धिपत्रकी एक लिपिको एजेण्टके निकट भेजकर पूँछा कि वह सन्धिपत्र स्वीकार होगा या नहीं ? जालिम सिंहको वंशानुक्रमसे शासनशक्तिको दनके लिये जो अतिरिक्त सन्धिधारा नियुक्त हुई थी वही धारा यदि मूलसन्धिपत्रमें नियुक्त की जाती तो यह समस्त उपद्रव सरलतासे दूर हो सकते थे। ऐसा होने से सन्धिपत्रका मूल मर्म और अर्थ कभी भी दो भावोंसे ग्रहण नहीं किये जाते, और गवर्नमेंटने अविचारका कार्य किया है, इसकी कोई विवेचना नहीं कर सकता। वास्तवमें कोई भी उस विश्वासघातके दोषसे कलंकित नहीं होता कारण कि जिन्होंने आदि संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये हैं, अतिरिक्त संधिपत्रपर भी उन्हींके हस्ताक्षर थे। एक राज्यमें एक मनुष्यको नाममात्रके राजा और दूसरेको समस्त शासनशक्ति युक्त राजा कह कर हमने जिस बातको स्वीकार किया है, उसके बदलेमें जालिमसिंहके द्वारा उपकृत होकर हमारे उस उपकारके लिये किसी प्रकारका पुरस्कार देना उत्तम नहीं हो सकता, इस विवादसे यह प्रश्न उपस्थित हुआ है। बडे सौभाग्यकी बात है कि नाममात्रके अधीश्वर (किशोरसिंह) ने इस समय जिस प्रश्नको उपस्थित किया है वह गवर्नमेंटके प्रस्तावमें सम्पूर्ण विपरीत दिखाई पडा और वह आदि और अतिरिक्त सन्धिपत्रके मूल उद्देशके मतसे काम करनेमें प्राय: प्रकृत पक्षमें असम्मत हुए। महाराव किशोरसिंहने प्रस्ताव किया कि उनके स्वजातीय तीन हजार शरीर रक्षक उनके पास नियत रहें, और वह अपनी इच्छानुसार सामन्तोंको जागीरें देंगे, और सेनादलके नेता पदपर स्वयं नियुक्त रहेंगे। यह सब प्रस्ताव

मित्रतामूलक सन्धिके प्रत्येक मौलिक नियमके विपरीत हुए; और अन्य पक्षमें जालिमसिंहके उत्तराधिकारियोंके राज्यकी शासनशक्तिकी प्राप्तिकी आशा केवल उनकी दयाके ऊपर निर्भर रहेगी"।

शीघ्र ही रणभेरी बाजा बजा! बृटिश गवर्नमेंटने जालिमसिंहके द्वारा उपकार पाकर उस उपकारका पुरस्कार देनेके लिये भारतवर्षके एक प्राचीन उच्च राजपूत राजदरबारकी शासनशक्तिको लोप करके वह शक्ति जालिमसिंहको देनेकी इच्छा की और महारावके विरुद्धमें शीघ्र ही सेनाको चलाया। महाराव किशोरसिंहके पितामह महाराव गुमानसिंहके द्वारा प्रतिपालित आश्रयप्राप्त अनुग्रहीत जालिमसिंह भी अपनी राजभक्तिका चूडान्त परिचय देनेके लिये सेनासहित महाराव किशोरसिंहके साथ युद्ध करनेके लिये चले। कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "हतबुद्धि महाराव किशोरसिंहको कुचक्री और कुमंत्रणदाताओंके हाथसे उद्धार करनेके लिये, एवं प्रतिदिन उनकी पताकाके नीचे जो समुत्तेजित राजपूत वृन्द इकट्ठे होते थे, उनके हाथसे उनका उद्धार करनेके लिये उनकी समस्त चेष्टाएं व्यर्थ और निराश करनेके जो अंग्रेजी सेनाका दल संधिको प्रबल रखनेके लिये बुलाया गया था, वह जालिमसिंहकी सेनाके साथ मिलकर आगे बढने लगा। सेनादल कालीसिन्धुनामक स्थानमें इकट्ठा हुआ, वह स्थान दोनों रणोन्मत्त सेनादलके मध्यवर्ती था। सेनादलके वहां पहुँचते ही कई दिनतक बराबर घोर वर्षा होनेसे जलके द्वारा समस्त स्थान प्लावित हो गये, सेनाको उस नदीके पार होना असम्भव था, इस कारण कई दिनका विलम्ब होनेसे महारावको उपस्थित सर्वनाशसे उद्धार करनेके लिये मित्रता और सुमंत्रणसे यथेष्ट सुभीता मिलनेका अवसर मिला भी परन्तु वह सभी व्यर्थ हो गया। सामने घोर विपत्तिको देखा, पर निराशाके साथ उस विपत्तिके आगमकी प्रार्थना करने लगे, और उन्होंने बृटिश गवर्नमेण्टके सम्मुख अत्यन्त अनुगत्य घोषणा करके गवर्नमेण्टके प्रतिनिधिकी मित्रता और श्रेष्ठ उपदेशके ऊपर अपना पूर्ण विश्वास स्थापित किया, परन्तु प्रत्यक प्रतिवादके समय वह यह उत्तर देते जाते थे कि संमानशून्य जीवनका क्या प्रयोजन है? शासनशक्तिहीन राज्यका क्या फल है? कथा तो मत्यु ही हो जाय और या पूर्णतया पैतृक राजशक्ति मिल जाय"।

इसके पीछे कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "जालिमसिंहके आचरण भी इस समय महारावके आचरणोंकी अपेक्षा कुछ अल्प विरक्तिके नहीं थे, कारण कि एक ओर तो वह प्रगटमें यद्यपि महारावके प्रति राजभक्ति प्रकाश करते थे, और अपने सफेद बालोंपर कलंक लगानेकी उनकी अभिलाषा नहीं थी, परन्तु आत्मस्वार्थसाधन करनेके लिये संधिपत्रके धारा स्वरूपको भी अपने सामने रक्खा था, उन्होंने आशा की कि संधिपत्रकी धारा पालन करनेके लिये उनको स्वयं किसी विशेष दायित्वका भार ग्रहण करके कोई प्रबल तैयारी नहीं करनी होगी। इस समय उस प्रकारसे दायित्वविहीन होनेकी चेष्टा किसी प्रकार भी सहन नहीं हो सकती।

उन्होंने प्रकाश किया कि उनको सेनादलके ऊपर विश्वास नहीं है, सेनादल समरके समयमें अवश्य हमारे विरुद्ध अस्त्र चलावेगा। इससे हम उससे कहे देते हैं कि हम उस विपत्तिको सहन करनेके लिये तैयार हैं। उसने और भी कहा कि हमको वंशानुक्रमसे जो अधिकार भोगनेके लिये दिया गया है, उस अधिकारकी किसी प्रकारसे रक्षा करनी ही होगी। इससे उसको रक्षण पीडन दोनों प्रकारके कार्योंमें योगदान करना होगा कि जिससे किशोरसिंहके प्रति राजभक्ति प्रकाशके साथ शांतिके सहित अपनी सामर्थ्यकी रक्षा प्राप्त रहे। चतुर जालिमसिंहने उस समय कहा कि हम गवर्नमेण्टके साथ मित्रता होनेसे जो कुछ सहायताकी आशा करते है, हमारी उस शासन सामर्थ्यको अक्षत रखनेके लिये सहायता करनी होगी। एजेण्ट (टाड) ने शेष मुहूर्त्ततक आशा की थी कि जालिमसिंह जो सब मनुष्योंके रक्षकस्वरूप हैं वे उनको रणके मुखमें डालनेसे जगत्‌में कलंक और तिरस्कारका संचय और सद्धर्मके नाशसे अपमानका संचय न करेंगे, परन्तु वह घृष्टपद होकर अपनी शक्तिकी खर्वता साधन करनेके लिये अग्रसर हुए, उनके क्रमशः इधर उधर करनेसे और मनमें एकभाव तथा प्रकाश्यमें अन्यभाव प्रकाश करनेसे उसमें केवल विपत्ति की ही वृद्धि होती थी, इस कारण एजेण्टकी वह आशा शीघ्र ही लुप्त हो गई,यद्यपि उस समय जालिमसिंहके भीतर ही भीतर विषम संशय विराजमान था परन्तु राज्यप्राप्तिकी इच्छासे अंतमें उन्होंने सभीको दूर कर दिया "। कर्नल टाड साहबकी उक्त उक्तिसे भलीभांति जाना जाता है कि केवल जालिमसिंहको संतुष्ट करनेके लिये इसके पीछे यह शोचनीय राजनैतिक अभिनय प्रारंभ हुआ। कर्नल टाड यदि इस समय सत्यके सम्मानकी रक्षाके लिये जालिमसिंहको समझाकर महाराज किशोरसिंहके पक्षका अवलम्बन करते तो जालिम-सिंह कभी सुअवसर पाकर संधिकी धाराका उल्लेख करके बृटिश गवर्नमेण्टको उसके पालन करनेके लिये उन्हें अन्यायके युद्धमें लिप्त नहीं कर सकते थे।

इतिहासलेखकने फिर लिखा है कि "जालिमसिंह और उनकी सेना आगे और अंग्रेजसेना उनकी सेनादलके पीछे होकर युद्धके सम्मिलनका प्रस्ताव उपस्थित किया गया और जिससे दोनों सेना एकभावसे कार्य कर सकें उसके लिये जालिमसिंहके अनुरोधसे अंगेजी सेनापतिको उनकी सेनादलपर नियुक्त किया गया। अक्टूबर मासकी १ तारीखको सेनादल आक्रमण करनेके लिये अग्रसर हुआ। जालिमसिंहकी सेनामें ८ दल पैदल ३२ तोपें और चौदह रिसाले प्रबल अश्वारोही सेनाके थे, उस सेनादलमें पाँच दल पैदल, १४ तोपैं और दश दल अश्वारोही दल सबसे आगे चली। और बाकी समस्त सेनाके साथ जालिमसिंह उसके पीछे हजार हाथ दूरी-पर चलने लगे, बृटिश सेनामें दो दल पैदल और छः दल अश्वारोही और एक दल अश्ववाहित (गोलन्दाज) महारावकी सेनादलके निकटवर्ती होकर जालिमसिंहके

(१ पांच रजिमेंट देशी पदाति दलके मालिक लेफटिनेण्ट मि० मिलन थे और उन साहसी वीरसे जैसे कार्यकी आशा थी वैसाही उन्होंने किया।

दक्षिण ओर जाने लगा। सेनादल सबसे पहिले एक विस्तारित क्षेत्रमें जाकर शेषमें एक छोटी नदीके किनारे ऊँची भूमिपर जा पहुँचा। महाराव किशोरसिंहकी सेनाका दल नदीके दूसरे पारसे कुछ दूर एक ऊँचीसी भूमिपर इकट्ठा हुआ था। शत्रुओंकी सेनाके आनेसे महारावने नदीके पारसे अपने डेरोंको पूर्वमतसे रक्षित रखकर अपनी सेनाको नदीके इस पार लाकर इकट्ठा किया था। "राज पलटन" नामक सेनाको उसके नेता सैफअली कि जिसने अपने प्राचीन प्रभु जालिमसिंहको छोडकर महारावके साथ योग किया था, उसकी सेनाको बाँई ओर रखकर महराव किशोरसिंह स्वयं सामन्तोंके साथ पांच सौ हाडा अश्वारोही लेकर दक्षिण भागको गये, और मध्यभागमें समरमें अशिक्षित अस्त्रधारी राजपूत रक्खे गये। युद्ध वा भागनेका बिन्दुमात्र भी चिह्न न दिखाकर अंग्रेजी सेना और जालिमसिंहकी सेना शत्रुओंसे चार सौ हाथके समीप अपने २ डेरोंसे निकलकर स्थित हुई। इस समय एजेण्टने कुछ ही समय पाकर हतबुद्धि महराव और उनके अनुरक्त अनुचरोंको सम्मुख विपत्तिसे उद्धार करनेके लिये अन्तिम चेष्टा करनेकी कामनासे बृटिश सेनापतिको अनुरोध किया कि समस्त सेनादलको विश्राम करनेकी आज्ञा दी जाय। एजेण्टने दोनों ओरकी सेनाके मध्यस्थान तक जाकर पहिले जिस सन्धिका प्रस्ताव किया था उसी प्रकारके प्रस्तावसे सबको क्षमा करेंगे, यह मत प्रकाशित किया और महाराव किशोरसिंहको फिर राजधानीमें लेजाकर उनको पिताके सिंहासनपर अभिषिक्त करेंगे, यह भी कह दिया। परन्तु महाराव अपने नेत्रोंके सम्मुख केवल भावी सर्व नाशको देख रहे थे, तथापि उन्होंने अपने पहिले जो सन्धिका प्रस्ताव किया था उसकी एक धाराको भी त्यागन करना नहीं चाहा, वह अपने प्रस्तावोंके ऊपर ही अधिक हठ करने लगे और तीन हजार स्वजातीय हाडा राजपूतोंके साथ यदि कोटेमें प्रवेश कर सकें तो वह कोटेमें चलेंगे, नहीं तो नहीं जायँगे, यह बात प्रगट कर दी। सुविचारके लिये उनको आधे घण्टेका समय देने पर पीछे दोनों ओरकी सेना युद्धके लिये आगे बढने लगी। महारावकी निर्वाचित सेना दहिनी ओरको इकट्ठी होकर जालिमसिंहके आगे जानेके मार्गमें खडी हुई, दूसरी ओर बृटिश सेनादल उनका दल भंग करनेके लिये उसी भावसे उस ओर इकट्ठा हुआ"।

"पूर्वोक्त आधे घण्टेका समय बीतने पर और महारावके अन्यायकी आकांक्षाकी कुछ भी निवृत्ति न होनेसे पूर्व प्रस्तावके मतसे संकेत करते ही जालिमसिंहके अधीनकी सेनाके अस्त्र चलाकर तोपोंके द्वारा गोलोंकी वर्षा करनी प्रारम्भ कर दी, और उसके पीछे अश्वारोही सेनाका दल आक्रमण करनेके लिये आगे बढा। फतेहाबाद और धौलपुरके विख्यात समरमें हाडाजातीय सेनाने जैसी विषम वीरता दिखा कर यश संग्रह किया था, महारावकी सेनादलने उसी प्रकारके बल विक्रमसे जालिमसिंहकी सेनापर प्रबल वेगसे आक्रमण किया, और उसी कारणसे कितनी ही हाडासेना तोपोंके मुखमें पडी, परन्तु उस समय यदि तीन दल बृटिश सेनाके आगे बढकर महारावकी उस सेनापर आक्रमण न करते तो अवश्य ही महारावकी वह सेना जालिमके वाम भागकी सेनाको

भगाकर जालिमसिंह स्वयं जिस स्थानपर सेनादलके साथ ठहरे थे, वहां आ पहुँचती। परन्तु अंग्रेजी सेनादलके आनेसे उनकी वह चेष्टा व्यर्थ हो गई और अंग्रेजी सेनादलके साथ समर करना असम्भव जानकर वह शीघ्र ही भागनेके लिये तैयार हुई। और महाराव किशोरसिंह स्वाजातीय चार सौ अश्वारोही वीरोंके साथ नदीके पार होकर आध कोश दूर उस ऊँची भूमिपर स्थित हुए। इस ओर उस युद्धमें उनके पैदल सेनादल भंग करके चारोंओरको फैल गया, बृटिश सेनादल शीघ्रतासे नदीके पार हो गया, और पैदल सेनाने जिस समय महारावकी सेनादलके दहिनी ओरके भागनेका मार्ग घेरा था उस समय अन्य और दो सेनादलोंने महारावपर आक्रमण किया। इस समय भी महाराव बृटिशसेनापर आक्रमण नहीं करेंगे, यह स्थिर कर इस महा विपत्तिके समयमें भी वह अपनी पूर्व प्रतिज्ञाको दृढ रखनेके लिये खडे रहे, और बृटिश सेनादल शीघ्रतासे प्रबल वेगसे आक्रमण करनेके लिये आगे बढ रहा है, यह देखकर भी महारावकी सेनाके दलने भागने वा आत्म समर्पणके कुछ भी चिह्न न दिखाये, और सब इकट्ठे होकर अचल पर्वतके समान खडे रहे। एक बृटिश सेनापति प्रत्येक सेनाको चलाकर आक्रमण करनेके लिये आगे बढने लगा, उन सेनापति और बृटिश सेनादलने भारतके अनेक स्थानोंके युद्धोंमें शत्रु पक्षको नित्य बृटिशके आक्रमणसे भागता हुआ देखा था; परन्तु राजपूत नहीं भागे बरन् पिंडारी ही भाग गये थे। राजपूत अभेद्य विराट् पर्वतके समान खडे रहे, और हमारी सेना उस हाडासेनादलपर आक्रमण करनेके लिये जाकर प्रत्येक संघातसे पीछेको हट गई, और दोनों साहसी अंग्रेज सेनानायक उसी कारणसे रणभूमिमें मारे गये। उसी सेनादलके साहसी प्रधान अंग्रेज सेनापति संघातके समयमें अत्यन्त आश्चर्य रूपसे जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए। शत्रुपक्षके एक वीरके भयंकर अस्त्रके आघातसे जिस समय उन प्रधान सेनापतिका शिरस्त्राण भेद कर दूसरी बार अस्त्रका आघात करनेके लिये उद्यत हुए, उसी समय प्रधान सेनापतिके एक परिषदने पिस्तौलके आघातसे उन आक्रमणकारियोंका प्राण विनाश कर दिया। एक मुहूर्त्तके बीचमें ही यह कार्य हुआ था, महाराव किशोरसिंहने विचारा था कि बृटिश सेनाके विरुद्धमें अस्त्र नहीं चलावेंगे, उन्होंने उसी विचारसे केवल बृटिश सेनादलके आक्रमणको व्यर्थ करके सन्तोष चित्तसे रणक्षेत्रसे धीरतापूर्वक अपनी सेनाको चलाया। परन्तु बहुत थोडी देरके पीछे घुडसवारी गोलन्दाज दलने फिर महारावकी सेनाके समीप जाकर उनकी

---

(१) टाड साहबने अपनी टीकामें लिखा है कि "जालिमसिंहकी सेनाके दो भाव प्रकाशित थे। या तो समर करेगी या भाग जायगी, इस चिन्तासे इधर उधर करते हुए देखकर जिससे वह भाग न सके उसके लिये टाड साहब स्वयं जालिमकी वाहिनीके सबसे पीछे खडे थे। मेजरकेनेडिके इस समय अग्रसर होते ही महारावकी सेनाका वह आक्रमण व्यर्थ हो गया"।

(२) यह लेफटिनेण्ट क्लार्क और रीड ४ चौथे अश्वारोही दलके नेता थे।

(३) मेजर लेफटिनेण्ट करनल जे. रिज. सी. बी.।

सेनाके ऊपर गोलोंकी वर्षा प्रारंभ करदी, महारावकी सेना शीघ्रतासे चलने लगा, और कुछ ही समयके पीछे नूतन बृटिश सेनादल फिर आक्रमण करनेके लिये तैयार हुआ कि महारावकी सेना मक्काके दीर्घाकार शस्यपूर्ण क्षेत्रमें जाकर अदृश्य हो गई।

कर्नेल टाड साहबकी लेखनीने इसके पीछे निम्नलिखित हृदयभेदी घटनाको वर्णन किया है। महाराव किशोरसिंहके कनिष्ठ भ्राता पृथ्वीसिंहने हाडाजातिके स्वभाव-सिद्ध बल विक्रमकी उत्तेजनासे उत्तेजित होकर और अब जीवित दशामें हाडौतीके डेरोंमें निवास नहीं कर सकेंगे, यह जानकर उस मातृभूमिमें जीवन त्याग करनेका विचार किया। पृथ्वीसिंह केवल पचीस जन सेनाके साथ मृत्युके मुखमें निश्चिंत पतित होनेके लिये फिर लौट कर बृटिश सेनापर आक्रमण करनेको चले। बृटिशसेना जिस समय आगे बढ़ रही थी उस समय एक बाजरेके खेतमें पृथ्वीसिंहको घायल अवस्थामें पडे हुए देखा। उनको एक नरयानमें स्थापन कर अश्वारोही सेनादलके कितने ही सैनिकोंके द्वारा डेरोंमें भेज दिया। बृटिश डेरोंमें ले जाकर इनकी भलीभांतिसे शुश्रूषा की गई परन्तु उनकी रक्षा किसी प्रकार भी न हो सकी, उन्होंने दूसरे दिन प्राण त्याग दिये। उस अंतिम समयमें उन्होंने यथार्थ वीरके समान आचरण किया, और उन्होंने अपने भाग्यके ही ऊपर समस्त दोष रक्खा, अपने जीवनके लिये एकवार भी आशाको प्रकाश नहीं किया और डेरोंके समीप एक वृक्ष देखकर कहा कि हमारी प्रेतात्मा इस वृक्षका आश्रय पाकर अपने पैतृक राज्य को देखकर ही संतुष्ट रहेगी। एक सैनिकने उनकी तलवार और अंगूठी ले ली, किन्तु उनकी छुरी, मोतियोंकी माला और अन्यान्य मूल्यवान् अलंकार उन्होंने एजेण्टके हाथमें सौंप दिये, और उनके हाथमें ही पृथ्वीसिंहने अपने पुत्रकी रक्षाका भार दिया, एकमात्र उन्हीं पृथ्वीसिंहके पुत्र कोटेराजासिंहासनके क्षमता शून्य नाममात्रको नरपति पद पानेके भावी अधिकारी थे"।

वीर तेजस्वी पृथ्वीसिंहकी मृत्युके सम्बन्धमें महात्मा टाड साहब लिखते हैं कि "अंग्रेजी सेनाके किसी सैनिकके हाथसे पृथ्वीसिंहके वह संघातिक अस्त्रका आघात नहीं लगा, किन्तु भालोंकी वर्षाके द्वारा ही वह आघात लगा था, और वह आघात पीछेसे इस भावसे बडे वेगसे लगाया गया था कि जिससे पृथ्वीसिंहकी पीठ भेदकर वक्षस्थलपर्यन्त विदीर्ण हो गया था। पृथ्वीसिंहने कहा कि किसी शत्रुने प्रतिहिंसा सफल करनेके ही लिये यह अंतिम आघात लगाया था, कारण कि उन्होंने कहा कि बर्छा हमारे शरीरको भेदकर इस भावसे चलाया गया है और वह बर्छा हमारे शरीर-में इस प्रकार घुमाया गया है कि जिससे हमारे जीवनकी कोई आशा नहीं है। यद्यपि जालिमसिंहकी सेनाने अंग्रेजी सेनाके साथ मिलकर महारावकी सेनादलका पीछा किया था, परन्तु उन जालिमकी सेनादलमें एक भी महारावकी सेनाके समीप जानेका साहस न कर सकता था, इसी कारणसे अनुमान किया जाता है कि किसी विश्वासहन्ता मनुष्यने महारावकी सेनाके साथ मिलकर पृथ्वीसिंहको उस भावसे सांघातिक अस्त्राघात कर जालिमसिंहके पुत्र और उनके उत्तराधिकारियोंको आगेके

लिये निश्चिन्त कर दिया। " यद्यपि हम इस बातको मानते हैं कि किसी अंग्रेजी सैनिकने पृथ्वीसिंहका प्राण नाश नहीं किया तथापि टाडकी उक्तिसे अवश्य ही अनुमान कर सकते हैं कि जालिमसिंहकी ओरके किसी विश्वासहन्ताने ही इस वीरके जीवनका नाश करके जालिमका स्वार्थ साधन किया था, इस हत्याकारीके समान जालिमसिंह भी अपने प्रभु भाईका प्राण नाश करके उस पापके भागी हुए थे, इसमें किञ्चिन्मात्र भी संदेह नहीं है।

सत्य और न्यायकी जय अवश्य होगी। पाशविक बलके द्वारा चाहे कितना ही धर्मके वक्षस्थलपर न्यायकी छातीपर पदाघात क्यों न हो, कितना ही न्यायको और धर्मको पाप पदसे बिदलित क्यों न किया जाय, परन्तु समयपर उस धर्म और न्याय की जय अवश्य ही होगी। लोभी विश्वासहन्ता जालिमसिंह चिर दिनसे जिस प्रभुके अन्नसे प्रतिपालित हुए थे, उन ही प्रभुवंशीय और प्रभुस्थानीय किशोरसिंहके साथ उन्होंने यह संग्राम उपस्थित कर दिया, परन्तु टाडकी उक्तिसे जाना जाता है कि यदि विक्रान्त बृटिश गवर्नमेण्ट न्याय और धर्मकी परवाह न करके जालिमके अन्याय पक्ष को समर्थन करनेके लिये सेनाके द्वारा सहायता न करती तो इस समरक्षेत्रमें भला जालिमसिंहको स्ववंश सहित विध्वंस होकर धर्मके समीप उचित दंड मिलता, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। परन्तु हम यह भी कहते हैं कि महाबलशाली बृटिश वाहिनी जो जालिमसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये गई थी, इसीसे उस प्रकार केवल चार सौ हाडाजातीय सेनाके द्वारा परास्त होकर पीछा दिखा गई यह घटना जिस प्रकार उस सेनाको कलंककारक हुई उसी प्रकारसे किशोरसिंहको न्यायसंगत कामनाका समर्थन करती है। और एक बात हम बडे दुःखके साथ कहते हैं कि इसमें संलिप्त होकर कर्नल टाड साहबने जो अभिनय किया कि जिससे जालिमसिंहकी सेना न भाग जाय, उस अभिप्रायसे उसके समीप रहकर अत्यन्त ही अन्याय पक्षका समर्थन किया। उन्होंने जो बारम्बार कहा था कि दोनों पक्षमें संधिबंधन स्थापन करनेके लिये यथाशक्ति चेष्टा की गई, हम इस बातको कह सकते हैं कि वह भी निर्मूल थी। उन्होंने महारावके प्रस्तावोंमेंसे एक बातको भी नहीं सुना। जब जालिमकी प्रार्थनाके अनुसार बृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे अतिरिक्त संधिकी धाराको प्रबल रखनेकी चेष्टा की थी, तब हम किस प्रकारसे मान लें कि वास्तवमें ही उन्होंने प्रकृत मध्यस्थके समान दोनों ओरके स्वार्थकी ओर दृष्टि रक्खी थी। इसी लिये हम कह सकते हैं कि राजपूत जातिके अकृत्रिम बांधव कर्नल टाडके जीवनमें यह जालिमसिंहके सम्बन्धका एकमात्र अभिनय ही अनुचित कार्य है "।

इस समय पिछली घटनाका ही अनुसरण करते हैं। कर्नल टाड लिखते हैं कि महाराव किशोरसिंहने एकमात्र घनघोर मकईसे परिपूर्ण क्षेत्रमें आश्रय लेकर इस विपत्तिके हाथसे छुटकारा पाया। वह मकईके वृक्ष इतने घने और बडे थे कि उनमें महारावका हाथीतक नहीं दिखाई देता था। पांच मील तक यह खेतों खेत बराबर चले गये थे। महाराव

कोटेराज्यके बाहरी भागमें भाग गये हैं उनका पीछा न करना ही उचित है कारण कि एकमात्र कोटेमें ही उनका जाना विपत्तिकारक गिना गया था। महारावका पैदल और अन्य देशका सेनादल भंग करके चारोंओरको भाग गया, और हमारी अश्वारोही सेनाके द्वारा उनमेंसे बहुतसे मारे गये''

कर्नल टाड साहबने इस बातको स्वयं ही स्वीकार किया है कि महाराव किशोरसिंहने पहिलेसे ही बृटिश सेनाके विरुद्धमें अस्त्र नहीं चलाया था, वह ऐसा विचारते थे और अंततक अपनी उस प्रतिज्ञाका पालन भी किया था। इस कारण हम सरलतासे अनुमान कर सकते हैं कि केवल चार सौ हाडा सेनाने बृटिश गोलन्दाज पैदल अश्वारोहियोंको जब प्रथम संघातमें ही विताडित कर दिया था, तब उनके वीर विक्रमसे रणभूमिमें उस वाहिनीके विरुद्धमें राजपूत स्वभाव सुलभ तेजसे समर करने पर बृटिश वाहिनीके भाग्यमें अवश्य ही शोचनीय घटना हो सकती थी। महात्मा टाड साहबने इस स्थानपर महारावकी वीरताके साम्बन्धमें लिखा है कि "महाराव और उनके स्वजातियोंकी धीरता और निर्भीकता और वीरता देखकर इनके शत्रुओंकी ओरके वीरोंने भी ऊँची प्रशंसा की थी, और उस दिन महारावके विपक्षमें जो सब सेना नियुक्त हुई थी उनमेंसे बहुत थोडी सेनाने जाना था कि महाराव और उनके अधीनकी सेना किस प्रकार नैतिक बलसे बलवान हुई थी। उस नैतिक बलने किस प्रकारसे उनको अभेद्य जंजीरमें बाँध रक्खा था।

कर्नल टाड साहबने इस स्थानपर दो राजभक्त वीरोंकी विचित्र वीरताकी कहानी प्रकाश की है। उन्होंने लिखा है कि "हाडा जातिके इतिहासमें जो समस्त बल विक्रम की कहानी वर्णन की गई है, और एकमात्र जो बल विक्रम ही हाडाजातिकी पैतृक सम्पत्ति इस समय गिना गया था, महाराव किशोरसिंह और उनके स्वजातियोंने इस समय पूर्वपुरुषोंके मतसे उस प्रकार बल विक्रमको प्रकाश किया, परन्तु इस समरमें दो राजपूतोंने राजभक्तिकी जो पराकाष्ठा दिखाई, हम इस स्थानपर उसका उल्लेख किये विना नहीं रह सकते। वह राजभक्ति ग्रीस और रोमके प्राचीन वीरोंकी वीरताकी कहानीकी अपेक्षा हीन नहीं है। जिस स्थानपर उक्त युद्ध हुआ था उस स्थानका भौगोलिक विवरण इसके पहिले प्रगट हो चुका है। वह स्थान समतलक्षेत्र है परन्तु शेषमें जिस स्थानमें नदीके किनारे वह स्थान शेष हुआ है, वह स्थान संकीर्ण और नदीके पारस्थ भूमि और क्रमशः ऊँचा होकर भूधराकार दृष्टि आता है। जालिमसिंहकी सेना उस संकीर्ण स्थानसे होकर जिस समय जा रही थी उस समय नदीके परपारवर्ती ऊँची भूमिसे अचानक कितनी ही गोलियां आकर उनके ऊपर गिरीं। विना अनुमतिके समस्त सेना अचानक उन गोलियोंके शब्दसे चलनेसे रुककर खडी हो गई, और देखा कि दो मनुष्य उस ऊँचीं भूमिके ऊपर बंदूक हाथमें लिये हुए गोली चला रहे हैं। सभी दो मिनटतक चुपचाप विस्मयाचित्त होकर खडे रहे फिर सेनाको आगे बढ़नेके लिये आज्ञा दी परन्तु उस आज्ञाके न देते २ अग्रवर्ती सेनाके कई जने उस गोलीके आघातसे घायल

होकर पिछले भागमें भाग आये। और उस समय वह दोनों मनुष्य विना श्रमके धम २ गोली चला रहे थे। हमारी सेना एकबार भी जितने समयमें गोली न चला सकी उतने समयमें वह वीस वार गोलियोंकी वर्षा करने लगे। उन दोनों वीरोंकी बडी २ बंदूकोंसे धम २ गोलियाँ निकलकर हमारी विस्तारित सेनादलके ऊपर गिरने लगीं, परन्तु वह मानो इन्द्रजालके बलसे शरलतासे अपने शरीरकी रक्षामें समर्थ हुए। हमारी गोलियाँ भी उनके चारों ओरसे विस्तीर्ण होकर गिरने लगीं; उनके शरीरमें वह स्पर्श तक भी न कर सकीं, इन दोनों वीरोंमें एक मनुष्य बंदूकको फिर भरने लगा और अव्यर्थ निशानेसे छोडने लगा। अन्तमें हमारी दोनों तोपोंसे उन दोनों वीरोंको लक्ष्य करके गोलोंकी वर्षा की गयी। समस्त गोले उनके धोरे होकर निकल गये, वह दोनों जने उस ऊँचे स्थानपर खडे होकर व्यंगभावसे हमें सलामी करके शेषमें अपने पूर्वमतसे सेनादलके ऊपर गोलियोंकी वर्षा करने लगे। हमारी समस्त सेना उसी कारण उन दोनों व्यक्तियोंद्वारा अविरुद्धगातिसे जाने लगी। यद्यपि उक्त दोनों वीरोंद्वारा हमारी अनेक सेना घायल हुई तथापि उनके बल विक्रमको देखकर उनके प्राणोंकी रक्षा करनेकी अभिलाषा उत्पन्न हुई। सेनाको गोलियां वर्षानेका निषेध किया गया, और आज्ञा दी कि आगे बढ़ो और सेनादलके बीचमें यदि कोई दो साहसी वीर अग्रसर होकर उन दोनों वीरोंपर आक्रमण करना चाहें तो आक्रमण करसकेंगे, उस शेष आज्ञाको पाते ही दो रुहेल नंगी तलवारें हाथमें लेकर दोनों वीरोंके सम्मुख होनेके लिये आगे बढ़े। सभी कौतुहल चित्तसे प्रतीक्षा करने लगे। उन दोनों वीरोंका शारीरिक बल बहुत थोडा था। यह समझा कि वह गोलोंके आघातसे पहिले ही हततेज हो गये थे या वह जिस स्थानपर स्थित थे वह द्वन्द्वयुद्धके योग्य नहा था, वह अंतमें दोनों रुहेलों के हाथसे मारे गये। बडे आश्चर्यकी बात है कि केवल इन्हीं दोनों हाडा वीरोंने जालिमसिंहके दश दल पैदल और वीस तोपोंके साथ गोलन्दाजकी गतिको रोक लिया था। यह दोनों हाडावीर जालिमसिंहके द्वारा सौभाग्यलक्ष्मीकी गोदीसे रहित होकर प्रतिहिंसा देनेके लिये इस प्रकारकी वीरता प्रकाश करके परलोकगामी हुए थे"।

साधु टाड साहबने इस स्थानपर लिखा है कि हाडौतीके समस्त सामन्त और समस्त निवासियोंने महाराव किशोरसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये जो सम्पूर्ण योगदान किया उसीके द्वारा राजपूत जातिके प्रधान गुण और सम धर्मकी रक्षाका चूडान्त प्रमाण पाया जाता है, और उसके साथ ही साथ यह भी जाना जाता है कि जालिमसिंहका शासन कहाँतक कठोर था, और वह सर्व साधारणको कितने अप्रिय थे। जिस सामन्तने संधिकार्यकी मध्यस्थता की थी और जालिमके अनुग्रहसे भूवृत्ति भी पाई थी, जिसका एक पुत्र उस युद्धमें घोररूपसे घायल हुआ, जालिमसिंहके साथ वैवाहिक सम्बन्धबन्धनमें बंधकर भी उसने महारावका पक्ष समर्थन किया। "कर्नल टाड साहबने कोटेके सैकडों स्थानोंमें स्वीकार किया है कि जालिमसिंहके कठोर शासनसे समस्त कोटेके प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक मनुष्य ही महाविरक्त और असन्तुष्ट थे, तथापि उन्होंने बृटिश गवर्नमेण्टकी ओरसे उन जालिमसिंहको अन्याय

रूपसे वंशानुक्रमसे शासनकी सामर्थ्य देनेके लिये महाराव किशोरसिंहके साथ युद्ध किया। राजनीतिकी कैसी विचित्र महिमा है"।

टाड साहब लिखते हैं कि-" महाराव किशोरसिंह पर्वत नदीके किनारे जाकर सन्तरणसे उस नदीके पार हो गये, उनके घोडेने नदीके पार जाते ही पहिली गोलीके आघातसे प्राण त्याग दिये।" (इससे समझा जाता है कि महाराव किशोरसिंहका जीवननाश करनेके लिये सेनाने गोली चलाई थी। उधर इन महारावने यह प्रतिज्ञा की थी कि मैं अंग्रेजी सेनाके विरुद्धमें तलवार नहीं चलाऊंगा, इसी लिये यह रणभूमिसे चले आये) टाड फिर लिखते हैं कि "प्रायः तीन सौ आश्वारोही सेनाके साथ महाराव किशोरसिंह बडोदाको चले गये, हमारी प्रतिहिंसा देनेका और कोई प्रयोजन नहीं था, इसी कारणसे जिन सब साहसी वीरोंने राजभक्ति प्रकाश कर समधर्म पालन करनेके लिये अपनी वासभूमि अपना आवास और अपने परिवार तकको त्याग कर महारावके पक्षका अवलम्बन किया था।

हमने अपने प्रबल शत्रु महाराष्ट्रोंके समान उन हाडावीरोंके पीछे धावमान होकर उनका विनाश करना कर्त्तव्य न जाना, यह बात सत्य है कि वह रणभूमिमें हमारे सम्मुख हुए थे, परन्तु आक्रमणके लिये नहीं वरन् अपनी रक्षाके लिये सम्मुख हुए थे, और उनका वह कार्य अवश्य ही सम्पूर्ण नीतिसंगत है।" कर्नल टाडका यह मंतव्य अवश्य ही प्रीतिदायक है। अन्य अंग्रेजके होनेसे उन सामन्तोंके विनाशमें कुछ भी विलम्ब नहीं होता।

कोटेराज्यके न्यायसंगत अधीश्वर महाराव किशोरसिंहको भगा कर कर्नल टाडन साहब लिखते हैं कि "मूलसंधिपत्रके विरुद्धमें इतने दिनोंसे जो अन्यायरूपसे उत्तेजना प्रकाश की गई थी, उसने एकबार ही दूर होकर ऊँची आकांक्षाको विध्वंसकर दिया। इस विद्रोहके प्रधान षड्यंत्री दो मेंसे एक पृथ्वीसिंह मारे गये,और दूसरे गोबर्धनदास निकाल दिये गये। उधर जालिमसिंहका शिक्षित नियमित सेनामें जिन्होंने जालिमसिंहका पक्ष त्याग कर महारावका पक्ष अवलम्बन किया था, उनको इस प्रकार दंड मिला कि जिससे जालीमके अधीनमें स्थित बची हुई सेनाके पक्षमें उस प्रकारसे जालिमसिंहका पक्ष त्यागनेकी कामना अवश्य ही विलुप्त हो गई। उस दिनके युद्धमें उस प्रकारकी पराजय होगी, सामन्तोंने पहिले इस प्रकारका अनुमान नहीं किया था, इसी कारण उन्होंने उसके लिये पहिले कोई तैयारी नहीं कर रक्खी थी। इस समय हमारी आज्ञा होनेपर समस्त रजवाडेमें उनको कहीं भी आश्रय नहीं मिलता, परन्तु उनकी समस्त धनसंपत्ति छीन कर उन सबका नाश करना हमने कर्तव्य नहीं जाना, कारण कि हम जानते हैं कि उन्होंने अनेक कारणोंसे महारावका साथ दिया था,इन सब कारणोंका निवारण करना उनकी सामर्थ्यसे बाहर था। महारावके डेरोंमें अरक्षितभावसे रहनेके कारण हमने

(१) कर्नल टाड साहबने टीकामें लिखा है कि "कितने ही प्रधान २ सामंतोंने एजेण्टके द्वारा जालिमसिंहके पासको जो पत्र लिखे थे इसमें उन्होंने कहा है कि महारावके विश्वासी मंत्रीके उपदेशके अनुसार उन्होंने महारावकी आज्ञानुसार योगदान किया था"

उनके समस्त गुप्त कागज पत्र अपने हस्तगत कर लिये । उन कागज पत्रोंके पढनेसे जाना जाता है कि, ऐसे प्रबल षड्यन्त्र जालका विस्तार कर ऐसी शठता मूलक तैयारी की थी, उसी कारणसे महाराव और उनके समस्त साहसी वीर उनकी ऊँची आकांक्षा-को पूर्ण करनेमें सहायताके लिये जाकर पूर्ण हानि उठाने और वह प्रत्येक ही कठोर दंडके उपयोगी हुए "।

साधु टाड साहब भली भांतिसे जान गये थे कि एकमात्र संधिकी धाराको प्रबल रखनेके लिये यह जो राजनैतिक अभिनय किया गया है यह अत्यन्त ही अन्याय मूलक और शोचनीय है। टाड साहबने इस स्थानपर लिखा है कि, "इस विशद-रूपसे वर्णित हुई घटनाओंमें ग्रंथकार (टाड) ने सोचनीय कर्तव्यको पालन किया वह हाडा जातिके अतित इतिहासको जानते थे, और विभिन्न घटनाओंके प्रकृत मूलकी अवस्थाको जानते थे, उनके उस कर्तव्य पालनके समय एक ओर जैसे उस अभिज्ञताके बलसे सहायता प्राप्त थी, दूसरी ओर उसी कारणसे उसको विव्रत होना हुआ था । वास्तवमें उस अभिज्ञताका न होना ही अच्छा था-केवल मूल संधिपत्रकी धाराका मर्म जानकर दृढतापूर्वक उस धारासे कार्य परिणत करनेमें दृढ यत्नवान् होनेपर कोई उद्द्रव नहीं होता । किसी पक्षके प्रति सहानुभूति वा न्याय विचार करना सर्व साधारणकी राजनीतिका उद्देश नहीं था, इस कारण यहाँपर अवस्थान अभिज्ञताके द्वारा अपने उपकार देखे जाते थे । परन्तु कठोर कर्तव्य पालनमें दृढ आज्ञाके प्रति दृष्टि रख कर भी उन्होंने विचार किया कि बृटिशके प्रभुत्वकी रक्षाके लिये जिससे अत्याचार और उपद्रव किसी प्रकार न हों, और हाडाजातिकी जो कुछ भी जातीय स्वाधीनता है, बृटिश राजनीति वा बृटिश गवर्नमेण्टके भयसे जालिमसिंह उस स्वाधीन ताके भारपर हस्ताक्षेप नहीं कर सकें और वह स्वाधीनता भी जिससे नष्ट न हो । उन्होंने इसीसे उक्त समरके कुछ दिन पीछे अपने ऊपर समस्त दायित्वका भार लेकर समस्त सामन्तोंके ऊपर क्षमा दिखा कर उनको अपने २ स्थानोंपर जानेके लिये घोषणपत्रका प्रचार किया । उन्होंने जालिमसिंहसे कहा कि सामन्तोंके ऊपर यह तो साधारण क्षमा दिखाई है, यदि किसी प्रकारसे उस क्षमाके दिखानेमें कसर होगी तो गवर्नमेण्ट अत्यन्त असन्तुष्ट होगी । सामन्तमंडली इस घोशणपत्रको पाकर शीघ्रतापूर्वक अपने २ स्थानोंको लौट आई । इस प्रकार सब ओर उस क्षमाके प्रकार पर संतोषदायक फल उत्पन्न किया गया था । सर्व साधारणमें जो उस घोर विभ्राट्से महा संकटके कारण तथा राजनैतिक संघर्षणसे जो घाव पहुंचा था इस क्षमाको दिखानेसे घोषणारूप अव्यर्थ औषधीने उस घावको सब प्रकारसे भर दिया । टाड साहब जिस कठोर कार्यसाधनमें बाध्य हुए थे इसके मध्य भी अनेक स्थानोंमें वह अभिनंदित हुए।

(१) कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "दिल्लीके जो देशीय धन रक्षक इस षड्यंत्रमें लिप्त थे, बडी खोज करनेके पीछे उनको पदसे रहित किया गया । और गवर्नमेंटके प्रधान कार्य स्थानके फारसी भाषाके सेक्रेटरी मुनशीके भाग्यमें भी वह दंड प्राप्त हुआ था ।

थे उसके सम्बन्धमें उन्होंने राजपूतोंके चरित्रोंको प्रकाश करनेवाली एक घटनाका इस स्थानपर उल्लेख किया है। सन् १८०७ ईसवीमें जिस समय ग्रंथकार (टाड साहब)ने राजनैतिक कार्यमें सबसे पहिले प्रवेश किया था, उस समय वह इकले ही इस कोटे-राज्यके अनेक स्थानोंमें भ्रमण करनेके लिये बाहर जाकर हाडौतीके भूवृत्त और इतिहासको संग्रह करनेमें प्रवृत्त हुए। वह (टाड) राहतगढसे सेंधियाके डेरोंको छोड अत्यन्त सामान्य अनुचरोंको साथले चन्देरीके गहन वनसे युक्त देशमें होते हुए समान पश्चिमकी ओरको आगे बढ कर वेतवां और चम्बल नदीके मध्यवर्ती समस्त नदियोंके उत्पत्ति स्थानको ढूंढते हुए गये। बारा नामक स्थानपर जाकर इन्होंने अपने डेरे डाल दिये। हाडौती देशसे साढ़े आठकोश दूर कालीसिन्धु नामक नदीके किनारे जाकर अपने सेवकोंकी इच्छानुसार विश्राम करके आनेके लिये कहा, और आप शीघ्रतासे घोडेपर सवार होकर लौटने लगे। वह वमोलिया नामक नगरसे होकर जिस समय जा रहे थे, उस समय एक मनुष्योंके दलने बडी शीघ्रतासे बाहर होकर उनको पकडा। इन्होंने कहा कि आपको अधीश्वरके निकट अवश्य ही जाना होगा। यद्यपि उस समय वह अत्यन्त क्लान्त हो गये थे, तथापि उस समय उनके उन वाक्योंकी रक्षा न करनेसे अत्यन्त ही अविवेचकताका कार्य होगा। इससे टाड साहब उनके वाक्यकी रक्षा करनेमें सम्मत होकर एक बगीचेमें गये। उस बगीचेके मध्यस्थलमें एक सघन पल्लव समाकीर्ण वृक्षोंकी छायासे ढके हुए स्थानमें एक ऊँचे मचानको देखा। उस मचानके ऊपर मनोहर गलीचे पर वमोलियाके अधश्विर पारिषदोंके साथ बैठे थे। उन्होंने ग्रंथकार (टाड) को बडे सम्मानके साथ ग्रहण किया। सबसे पहिले ग्रंथकारने बूट (जूते) के खोलनेकी चेष्टा की, परन्तु उस समय वह अत्यन्त क्लान्त थे इससे उनकी वह चेष्टा सफल न हुई, इससे पीछे उनके सम्मुख खाद्यादि रक्खा गया, और उनके हाथ मुँह धोनेके लिये एक ब्राह्मण जल ले आया। यद्यपि वह उस समय राजपूत जातिके आभ्यंतारिक आचार व्यवहारको भली भाँतिसे नहीं जानते थे, वह उसके पालनमें वीतरागी थे, तथापि एक घडी तक वहाँ बडे आनन्दसे निवास किया, और उस समय वार्तालाप होनेमें एक बार भी विश्राम नहीं मिला। शीघ्र ही वह स्थान मनुष्योंसे भर गया और अनेक सुन्दरी कृष्णनयना रमणी निर्भय होकर मुस्कराती हुई उनकी ओरको देखने लगीं, टाड साहब यह देखकर अत्यन्त विस्मित हुए, कारण कि वह स्त्री जातिकी सामाजिक अवस्थाके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानते थे। टाड साहब-की घोडी लंगडी हो गई थी। वमोलियाके अधीश्वरने उसे देखा और जिस समय टाट साहब जानेके लिये तैयार हुए उस समय उन्होंने देखा कि उनके लिये एक उत्तम घोड़ा सजा सजाया तैयार खडा है, परन्तु उन्होंने उस घोडेको ग्रहण नहीं किया। ग्रंथकारने अपने डेरोंमें आकर कितनेक ही छोटे २ द्रव्य सम्मानसे उपहार स्वरूपमें उन सामन्तोंके पास भेजे। उस घटनाके चौदह वर्ष पीछे मांगरोलमें जिस दिन महा-राव किशोरसिंहके विरुद्धमें युद्ध हुआ था उसके दूसरे दिन वमोलियाके सामन्तोंकी

माताके समीपसे उनको एक पत्र मिला। सामन्त जननीने उस पत्रपर उनको आशीर्वाद लिख कर पूर्व मित्रताको स्मरण कराकर उनसे यह प्रार्थना की थी कि हमारे पुत्रने अपने सम्मानकी रक्षाके लिये महारावका साथ दिया था, हमारी सन्तानकी रक्षा करनी होगी। ग्रंथकारने बडे सन्तोषके साथ सामन्त माताके निकट उस पत्रका उत्तर भेजा। पत्रग्राहकके तुह्मारे पास न पहुँचते२ आपका पुत्र आपके पास पहुँच जायगा। स्मरण होगा कि, जालिमसिंहको जब सबसे पहिले कोटेके शासनकर्ताका पद मिलता था उस समय आथूनके जो सामन्त जालिमसिंहके प्रधान शत्रुरूपसे उनके विरुद्धमें खडे हुए, यह बमोलियाके सामन्त उनके ही उत्तराधिकारी थे"।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "महाराव किशोरसिंह इसके पीछे मेवाडके अन्तर्गत नाथद्वारेमें गये, इससे प्रमाणित होता है कि ऊँची आकांक्षाके स्थानपर एकमात्र धर्म भाव ही अधिकार कर सकता है। जो मनुष्य अपने घृणित उद्देशको साधन करने के लिये कुसम्मति देकर महारावके भाग्यको विध्वंस करनेके लिये उद्यत हुए थे, इस समय वह उनको छोड़ कर चले गये, महारावके नेत्रोंसे आवरणके उतरते ही उन्होंने देखा कि, यह कैसी अवस्थामें पड कर किस भावसे जीवन व्यतीत कर रहे हैं। मूल संधिपत्र और अतिरिक्त धाराके विरुद्धमें जो सब आपत्ति और उपद्रव हो रहे थे; थोडे ही समयमें उन सभीको महारावने छोड दिया। उस समय जालिमसिंहकी सम्मतिके अनुसार महारावके निकट एकपत्र भेजा गया, और कैसी व्यवस्थाके करनेसे वह फिर कोटेराज्यमें आ सकेंगे यह भी उस पत्रमें लिखा दिया गया। उस व्यवस्थामें महारावकी सम्मतिसे उत्तर भेजनेपर, एजेण्टने मूल संधिपत्रको तैयार कर दिया, उस संधिपत्रमें केवल महाराव और जालिमसिंहका प्रकृतपद निर्द्धारित हुआ हो यही नहीं—वरन् भविष्यत्‌में जिससे किसी प्रकारका संघर्षण न हो उसके लिये केवल नाममात्रके राजाके उत्ताधिकारी महारावके साथ जालिमसिंहकी क्षमता और स्वत्वाधिकार निर्देश कर दिया गया था। मूल प्रधान उद्देश महारावके पदकी मर्यादा शांति और आत्मरक्षाकी उपयुक्त व्यवस्था करनी थी, सो उसका अत्यन्त उदारभावसे निश्चय किया गया था। महारावके पिता वा कोटेके भूतपूर्व किसी राजाको वृत्ति प्राप्त नहीं हुई पर उनको वृत्ति देनी होगी। समस्त राजपूत जातिके प्रकृत शिरस्थानीय मेवाडके महाराणाके दरबारमें जो व्यय नियत हुआ है; महारावके लिये भी इसी प्रकारका व्यय नियत किया जायगा"।

(महात्मा टाडने अपने इतिहासमें महाराव किशोरसिंहके इस शेष स्वाधीनता विनाशक संधिपत्रको प्रकाशित नहीं किया है, हमने आचिसन साहबके ग्रन्थसे संग्रह करके उसको यहांपर प्रकाशित किया है)।

सन्धिपत्र।

"मैं महाराव किशोरसिंह—गत दो वर्षतक विशेषतः सम्प्रति जो समस्त कांड उपस्थित हुआ है, उन सबका फल विशेषरूपसे अनुसंधान कर और उस प्रकारके आचरणसे अत्यन्त कुफल फला है, उसीसे बृटिश गवर्नमेण्ट असन्तुष्ट हुई है, कोटे राज्यका

अमंगल हुआ है और हमारे निजकी सुखशांतिमें आघात लगा है। इसको भलीभांतिसे जानकर मैंने आजकी तारीखसे निम्नलिखित धाराओंसे युक्त संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये और उसको मोहरांकित कर दिया। इस संधिपत्रके मतसे मैं भविष्यत्में सब कार्य करूँगा। मेरी मानसिक श्रेष्ठ इच्छाके श्रीनाथजी साक्षी रहेंगे। यदि मैं भविष्यत्में इस संधिपत्रकी किसी धाराको भंग करूँ तो मैं बृटिश गवर्नमेण्टके निकटसे भविष्यत्में किसी प्रकारका अनुग्रह नहीं पा सकूँगा।

पहिली धारा—बृटिश गवर्नमेण्ट जिस प्रकारकी आज्ञा देगी मैं आनंदित होकर उन सबका पालन करूँगा और मेरे भविष्यत्में सुख शान्ति स्वच्छन्दता तथा सांसारिक विषयके सम्बन्धमें आपकी (टाड) मध्यस्थतामें जो निर्द्धारित होगा, मैं उसके विरुद्धमें किसी प्रकारकी आपत्ति नहीं करूँगा।

दूसरी धारा—मेरे पिता राजा उमेदसिंहकी जीवित दशामें नानाजी जालिमसिंह जिस प्रकार राज्यके समस्त राज्यकार्यको निर्वाह करते आये हैं, दिल्लीके संधिपत्रके मतसे हमारे नामसे तथा हमारी ओरसे और हमारे उत्तराधिकारीकी ओरसे नानाजी जालिम-सिंह और उनके उत्तराधिकारियोंको उसी प्रकारसे शासनका भार प्राप्त होगा, अर्थात् राज्यशासन; राजस्व, सेनादल, दुर्गसमूह, कर्मचारीनियोग, कर्मचारियोंके पदच्युतिकी सामर्थ्य उन्हींके हाथमें रहेगी, सभी विषयोंमें उनकी सामर्थ्य चूडान्तरूपसे गिनी जायगी, उसके सम्बन्धमें हम हस्ताक्षेप नहीं करेंगे।

तीसरी धारा—शांति भंग करनेवालोंको उचित दंड प्राप्त होगा। मेरे सभी कुपरामर्श देनेवाले चले गये हैं, वा आपकी आज्ञानुसार मैंने उनको निकाल दिया है। गोवर्द्धनदास, सैफअली, महाराज बलवन्तसिंह, काजी मिरजामोहम्मद् अली, सेखहवीब और अन्यान्य व्यक्तिगण, जिनकी कुपरामर्शसे मैं चला था। मैं उनके साथ भविष्यत्में अब किसी प्रकार सम्बन्ध वा उनके साथ पत्रव्यवहार नहीं करूँगा।

चौथी धारा—हमारे शरीरकी रक्षाके लिये जो सेना नियत होगी, उसके अतिरिक्त हम किसी समयमें भी अतिरिक्त सेनाके रखनेकी चेष्टा नहीं करेंगे।जो मनुष्य शासनकर्ताके विपक्षी वा अन्य सब मनुष्य उन सब मनुष्योंके साथ किसी प्रकारका सम्बन्ध रक्खेंगे, मैं अपने दरबारमें उनको नहीं आने दूँगा।

नाथद्वारा, २२—नवम्बर सन् १८२१ इसवी "।

(हस्ताक्षर) महाराव किशोरसिंह *।

जो महाराव किशोरसिंह प्रकृत राजपूत वीरके समान जालिमसिंहके विरुद्धमें खडे हुए थे। पैतृक शासन स्वत्वकी स्वाधीनता पानेके लिये समरमें अवतीर्ण हुए थे उन्हीं महाराज किशोरसिंहको इस समय संधिबंधनमें बँधा हुआ देखकर और उनको बृटिश गवर्नमेण्टके क्रीतदास स्वरूपसे वश्यता स्वीकार करते हुए देखकर किसीने उनको कायर पुरुष विचारा था। परन्तु हम कह सकते हैं कि जो महाराव

---

* Aitchison's treaties Vo IV.

किशोरसिंहको इस प्रकारकी उपाधि देनेमें अग्रसर हुए थे, वह इस समय भ्रान्त थे। महाराव यदि अपना पैतृक अधिकार और स्वाधीनता प्राप्तिके लिये वीर पुरुषोंके समान खडे न होते तो हम उनको यथार्थ कापुरुष कह सकते थे। वह गवर्नमेण्टको जालिमसिंहका सब प्रकारसे पृष्ठपोषण करते हुए देखकर जिस जातीय अभ्युत्थानको उपस्थित करके वह समरसागरमें कूदे थे, उसके लिये वह अवश्य ही प्रशंसाके पात्र हुए। कौन कह सकता है कि प्रबल बलशाली बृटिशसिंहको जालिमसिंहका पक्ष समर्थन करते हुए देखकर और भावी फल क्या होगा; महारावने इसका अनुमान न किया था, तब युद्धका न करना ही उचित था। हम कह सकते हैं कि महाराव यद्यपि जानते थे कि गवर्नमेण्ट विपुल विक्रमशाली है तथापि उन्होंने नहीं विचारा था कि जगत्में सर्व प्रधान बृटिश गवर्नमेण्ट वास्तवमें ही उस भावसे न्यायके मस्तकपर धर्मके मस्तकपर राजनीतिके मस्तकपर पदाघात करके जालिमका पक्ष समर्थन करनेके लिये उनके विरुद्धमें सेनाको चलावैगी। उन्होंने विचारा था कि समस्त हाडा जाति तथा जालिमसिंहके कुटुम्बीतकको जालिमके विरुद्धमें खडे होते देख बृटिश गवर्नमेण्ट अवश्य ही अपना कार्य अनुचित जानकर हमारे पक्षको समर्थन करेगी। पर यह न हुआ बृटिश गवर्नमेण्टके साथ उनकी कोई शत्रुता नहीं थी, इसी लिये मांगरोलके समरमें बृटिश सेनादल उनको आक्रमण करनेके लिये धावमान हुआ, पर उन्होंने केवल अपनी रक्षाके लिये ही उस बृटिशसेनाके आघातको व्यर्थ करके रणक्षेत्रको छोड दिया। उक्त संधिपत्रसे भलीभाँति प्रमाणित होता है कि महारावने अत्यन्त अनिच्छासे उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये थे, उन्होंने उपस्थित अवस्थाको समझ कर बृटिश एजेण्टको अत्यन्त ही अविचार करते हुए देख कर भविष्यत्में अपना उद्देश साधनके लिये किसी उपायको न जान कर उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर कर दिये। परन्तु बृटिश सरकारने एक राज्यमें एक नाममात्रके राजा और एक जनेको शासनशक्तिशाली राजाकी उपाधिसे हीन अधीश्वर नियुक्त रखकर अत्यन्त अविचारका कार्य किया, संधिके ऊपर संधि करके स्वपक्षके उस उनुचित कार्यको चिर दिनतक प्रबल रखनेके लिये जो चेष्टा की, समयपर वह सब प्रकारसे व्यर्थ हो गई, और उस अज्ञानताका चूडान्त प्रमाण प्रकाशित हो गया।

इस प्रकार महाराव किशोरसिंहको फिर शासनक्षमता हीन नरपति पदपर प्रतिष्ठित करके उनके लिये जो अर्थ नियत हुआ था कर्नल टाडने उसे प्रकाशित नहीं किया इतिहासके अंगको पूरण करनेके लिये हम उन सूचियोंको आचिसन साहबके ग्रंथसे लेकर यहाँ लिखते हैं।

पहिली संख्याकी सूची।

महाराव किशोरसिंहको उनके दरबार और कार्यकारक वर्गोंके लिये निम्नलिखित वृत्ति सन् १८२२ की ८ वीं जनवरीसे आरंभ करके प्रत्येक महीनेमें समयपर कोटेके शासनकर्ताके द्वारा मिलैंगी।

	वार्षिक ।
१ श्रीव्रजराजजीकी सेवामें	४८०० रुपया ।
२ महारावका दान दातव्य	२२०० ”
३ रसोई १५) रोजाना	५४०० ”
४ राजमहलका व्यय...	९३०६॥-॥।
५ रानियोंके अलंकार	१२,०००
६ महाराव और महारानियोंकी पोशाक वश और दातव्य वस्त्रक्रय	१८००० ”
७ हाथखर्च वा गुप्तव्यय	२४००० ”
८ राजसेवकादिका वेतनादि...	१२००० ”
९ तबेला	६७९६॥ ”
१० फीलखाना (हस्तीशाला)	३२७६॥- ”
११ रथगाडी, नरयान इत्यादि	१४०३।-॥ ”
१२ पालकीक कहार...	१२३९ ”

प्रासादरक्षक सेनाका व्यय ।

१३-१०० अश्वारोही (प्रत्येकको २५) हिसाबसे...	३०००० रुपया ।
पैदल १०० (सूबेदार २ प्रत्येकको २० मासिकक हिसाबसे २ जमादारको मासिक १२) पताकाधारी मासिक ८) पदातिको ७ के हिसाबसे...	१७५८० ”
१४ ऊंट ५	३५७ ”
१५ सांडनी ४	४८४ ≡।॥ ”
१६ ईंधनकी लकड़ी	७२० ”
१७ घास	८५० ”
१८ रोसनाई तेल बत्ती काली आदि	१८०० ”
१९ रंग	२०० ”
२० इमारत संस्कार	३००० ”
२१ घोडा गाय बैल ऊँटकी खरीददारीके वास्ते ...	६००० ”
२२ फराश रँगना अर्थात् पर्दा गलीचे डेरा वगैरा ...	१००० ”
२३ चिकित्सालय औषधीकी खरीददारी	४०० ”
२४ लंगरखाना	३०० ”
वार्षिक जोड	१६४८७७॥ =)

वा मासिक १३७३९॥।)॥

हस्ताक्षर माधोसिंह ।

दूसरी सूची ।

पृथ्वीसिंहके पुत्र नानालाल और उनके कुटुम्बके भरण पोषणके लिये कोटेके शासनकर्ता द्वारा सन् १८२२ ईसवी आठ ८ जनवरीसे प्रत्येक महीनेमें निम्नलिखित वृत्ति दी जायगी।

वार्षिक कोटेशाही रुपया	१८०००	"
वा मासिक	१५००	"

हस्ताक्षर माधोसिंह *

कर्नल टाड साहबने मध्यस्थ होकर किशोरसिंहकी वृत्ति नियत कर राज्यमें उनकी जो क्षमता और शक्ति निर्द्धारण करके उसे लिपिबद्ध कर कुमार माधोसिंह जिससे चिरकाल तक उसी नियमके अनुसार कार्य करैं, इसके लिये उनसे हस्ताक्षर करा लिये। उस पत्रको इतिहासमें प्रकाशित नहीं किया है हमने उसे भी विशेष प्रयोजनीय जान कर आचिसन साहबके ग्रंथसे इस स्थानपर प्रकाशित किया है।

" पहिली धारा—कोटेकी राजधानी और उनके निकट प्रासाद विश्राम स्थान और उद्यान समूह यथा राजधानीके मध्यस्थ महल, उमेदगंजस्थ महल, रंगवाडी जगपुरा मुकुन्दरा ब्रजराजजी नामक उद्यान, गोपालनिवास, और ब्रजविलास नामक उद्यान महारावके अधिकारमें रहैंगे, महाराव उन सबके सम्बन्धमें जो कोई आज्ञादान वा कार्य करेंगे, शासनकर्ता उनपर किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं कर सकेंगे।

राजधानीके मध्यस्थ राजमहलके जिन अंशोंके कितने ही हर्म्य राजराणा जालिमसिंहके परिवार और सेवकोंके निवास करनेके लिये नियत हैं, वह मूलमहलसे पृथक् कर दिये गये हैं, नव्यवजे किलेसे खेतर द्वार तक जो गली गई है उन दोनों मार्गोंमें सीमा चिह्न स्वरूप हो रही है। उस सीमाके बाहर कोई पक्ष भी नहीं जा सकेगा। शासनकर्ता उक्त हर्म्य और उससे लगे हुए स्थानोंकी रक्षाके लिये ५० जनोंसे अधिक चौकीदार नियुक्त नहीं कर सकेंगे।

दूसरी धारा। प्रथम संख्यक तालिकाके मतसे महाराव और उनके परिजनोंके भरण पोषणके लिये वार्षिक कोटाशाही एक लाख चौंसठ हजार आठसौ सत्तर रुपया दश आना तीन पाई वा मासिक १३७३९।।।)।।। १-१/५ देना होगा। राजराणा जिस महाजनको स्थिर कर देंगे, उनको उक्त प्रतिमासका रुपया मध्य समयमें मिलैगा, महाराव उस रुपयेकी प्राप्तिपद्पर हस्ताक्षर कर देंग, और हिसाबकी रक्षाके लिये उनको एक अनुलिपि बृटिश गवर्नमेण्टके निकट भेजनी होगी।

प्रथम संख्याकी सूचीक जो निर्देश किया गया है वह महारावके अंतःपुरका व्यय है राजदरबारके सेवकादिका वेतन और प्रासाद रक्षक सेनाके वेतनके सम्बन्धमें महाराव अपनी इच्छानुसार समस्त व्यय करेंगे।

---

* Aitchison's Treaties Vol IV.

तीसरी धारा-राजगृहमें विवाह और जन्म इत्यादि उत्सवके समयमें जो कुछ व्यय आवश्यक है, शासन कर्ताके द्वारा वह प्राचीनरीतिके अनुसार राजपदोचित रूपसे दिया जायगा। यदि महारावके कोई उत्तराधिकारी जन्म लेगा तो अवस्थानुयायी और प्राचीन रीतिके अनुसार भरण पोषणके लिये और भी अतिरिक्त वृत्ति नियत कर देनी होगी।

चौथी धारा-दशहरा, जन्माष्टमी इत्यादि साधारण उत्सवोंके समयमें महाराव और उनके परिवारको अबतक जिस भावसे सम्मान मिलता है उसी भावसे सम्मान मिलेगा, कर्तृत्व करेंगे, और दान पुण्य इत्यादि जो समस्त व्ययजनक कार्य सांसारिक गिने जाते हैं उन सबके ऊपर भी महाराव कर्तृत्व करेंगे और समस्त राजचिह्न इतने दिनोंतक जिस भावसे रहते आये हैं इसके पीछे भी उसी भावसे रक्खे जाँयगे।

पाँचवीं धारा-जिस समय महाराव वायु सेवन करनेके लिये बाहर जायँगे उस समय पूर्वके समान राजचिह्न सभी उनके साथ भेजे जायँगे, और राज्यका एक सेनादल भी उनके साथ जायगा।

छठवीं धारा-प्रथम संख्यक सूचीके अनुसार १०० अश्वारोही एवं २०० पैदल जो उनके शरीररक्षक और प्रासादरक्षकरूपसे निर्दिष्ट हुए हैं वह सम्पूर्ण रूपसे महारावके अधीनमें रहैंगे। अन्य कोई भी उनके ऊपर किसी प्रकारका कर्तृत्व नहीं कर सकैगा। उक्त सेनादलके और राजदरबारके अन्य किसी प्रकारके भृत्य वा परिषद् जो तालिकाके निर्दिष्ट अर्थमें प्रतिपालित और रक्षित होंगे महाराव उनके एकमात्र प्रभुस्वरूपसे रहैंगे।

सातवीं धारा-पृथ्वीसिंहके पुत्र नानालालजी और उनके कुटुम्बके तथा उनके पिताके और कुटुंबियोंके भरण पोषणके लिये वार्षिक १८००० रुपयेकी जो वृत्ति नियत हुई है, महारावकी वृत्ति जिस समय जिस नियमसे दी जाती और स्वीकृत होती है, वह भी उसी समय उसी नियमसे दी जायगी और स्वीकार की जायगी। उनके प्रथम विवाहके समयमें कोटके शासनकर्ता उनके पदके उपयोगी समस्त व्यय प्रदान करेंगे।

आठवीं धारा-कोटेके शासनकर्ता जो समस्त सिपाही और मुसद्दीको पदसे रहित करेंगे वा जो अपनी इच्छानुसार पद त्याग करेंगे, महाराव उनको अधीनमें नियुक्त अथवा आश्रय नहीं दे सकेंगे। दूसरी ओर कोटेके शासनकर्ता उसी प्रकारसे महारावके निकाले हुए उन श्रेणीके किसी मनुष्यको अपने अधीनमें नियुक्त वा आश्रय नहीं दे सकेंगे।

नौमीं धारा-गवर्नर जनरलके एजेण्टकी ओरसे एक विश्वासी मनुष्य नित्य महारावके समीप हाजिर रहैगा और उसके द्वारा पत्रादि भेजकर कथोपकथन चलैगा।

दशवीं धारा-पिछले उपद्रवोंके समय महारावने जिस प्रकारका ऋण किया है

अथवा इसके पीछे जो कोई ऋण करेंगे उस ऋणके चुकानेको खजानेसे किसी भाँति भी रुपया नहीं दिया जायगा ।

(हस्ताक्षर) माधोसिंह ।

फाल्गुन संवत् १८७६।७ वीं फर्वरी सन् १८२२ ई०

"जो लिखा गया है उसमें कुछ भी व्यतिक्रम नहीं होगा* "।

भविष्यत्में जिससे अब किसी प्रकारका उपद्रव न हो इसके लिये टाड साहबने यह व्यवस्था कर दी थी। परन्तु दुःखका विषय है कि उन्होंने एक ऊंची श्रेणीके राजनीतिज्ञ होकर भी इस स्थानपर परिणामकी चिन्ता नहीं की। एक राज्यमें एक नाममात्रका राजा, और एक पूर्ण शासन शक्तियुक्त व्यक्ति वंशानुक्रमसे व्यवस्था न करै यह व्यवस्था कभी भी चिर दिनतक नहीं चल सकती, इस बातका टाड साहबने विचार नहीं किया। कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "संधिकी पूर्व व्यवस्था संतोषदायक होनेपर भी जिस संधिपत्रकी धाराको भंग करके उनकी उससे अधिक दुर्दशा हुई है उस संधिपत्रकी रक्षाके लिये जिसमें दृढतासे मन लगाया जाय उसके मंगल और सुख शांति-के लिये उसी प्रकार विशेष मन लगाना होगा। कुपरामर्श पाये हुए महाराावके हृदयमें उस विश्वासका प्रबल करना आवश्यक हो गया है, उन्होंने पहिले जो व्यवहार किया उसके अनेक कारणोंमें यह एक कारण दिखाया कि उन्होंने अपने जीवनके भयसे ही यह किया था, वास्तवमें यही उनके भयका कारण था, और इसी लिये उनके उस भयके दूर करने और मंगल साधन करनेके लिये चेष्टा कीगई है। अधिक क्या कहें, जिस दिन उन्होंने समस्त पूर्व भीति और अविश्वासको कर नाथद्वारेको छोडकर कोटेमें जानेका उद्योग किया उस दिन उनको फिर सिंहासनपर अभिषिक्त करनेको इतनी चेष्टा और व्यवस्था की गई थी, उस चेष्टाको व्यर्थ करनेके लिये एक भयानक षड्यन्त्र प्रकाशित हुआ। एक दुश्चरित्र लँगडेने अपनेको महारावके भ्राता विशनसिंहके नामसे परिचय दिया और प्रकाशित किया था कि जालिमसिंहके पुत्रकी आज्ञासे मुझको लँगडा किया गया है"। वह दुराचारी महारावके वासस्थानके एक कोश निकट तक जानेका साहसी हुआ था, विशनसिंहकी आकृतिके साथ उसकी आकृतिका अत्यन्त सामान्य सादृश्य था इसीसे उसकी चातुरी सरलतासे प्रकाशित हो गयी और उसकी वह प्रतारणा शीघ्रतासे जानी गई, परन्तु जिस उद्देशसे वह मनुष्य इस कार्यको करता था उसके सफल होनेमें कुछ विलम्ब नहीं हुआ। महाराव माधोसिंहके द्वारा अपने प्राणनाशके भयसे भयभीत हो गये। अन्तमें बडे कष्टसे उनका वह भय दूर किया गया। उदयपुरके महाराणाने महाराव किशोरसिंहकी भगिनीके साथ विवाह किया था जिससे किशोरसिंहको फिर अपना सिंहासन मिल जाय इसके लिये उन्होंने विशेष यत्न किया। उन्होंने उक्त समाचारको पाकर समस्त चेष्टा और यत्न व्यर्थ होता हुआ देखकर शीघ्र ही उस प्रतारकको पकडवा कर उदयपुर राजधानीमें मंगवा लिया उस प्रतारकके उस व्यवहारसे सर्वत्र

* Aitchison's Treaties Yol IV.

महा उत्तेजना दृष्टि आई । किसलिये उस मनुष्यने ऐसा कार्य किया था, किसी प्रकार भी वह प्रकाशित न हुआ, इस षड्यन्त्रका मूल क्या था, वह चिर दिनके लिये गुप्त रक्खा गया, और शीघ्र ही उसको प्राण-दण्ड दिया गया । उसके सम्बन्धमें केवल इतना ही प्रकाशित हुआ है, कि वह मनुष्य जयपुर राज्यका निवासी था और किसी घोर अपराधके करनेसे उसको दंडमें लंगडा कर दिया गया था ।

" उक्त शेष अभिनयके समाप्त होते ही महाराव कन्हैयाजीके मंदिरको छोड कर अपने पिताके राज्यकी ओरको चले । वर्षके शेष दिनमें जालिमसिंह एजेण्ट (टाड) के साथ महारावको राजधानीमें बुलानेके लिये आगे बढे । महारावके जानेके समय सर्व साधारण प्रजाने महा आनन्द प्रकाश किया । यह देख कर जाना जाता है कि अन्य प्रकारसे कोई भी व्यवस्था करनेपर मंगल नहीं हो सकता था । दो बार जिस सिंहासनको छोड दिया था उस दिन महाराव फिर उसी सिंहासनपर बैठे, परन्तु अबकी बार उनके हृदयसे समस्त ऊँची आकांक्षाएँ या उपद्रवोंके बँधानेकी आशाएँ एकबार ही लोप हो गई " ।

महारावको अपने व्ययके सम्बन्धमें जो सम्पूर्ण एकाधिपत्य: मिला है, उसके अतिरिक्त राजभंडारके अर्थसे जो सब अनुष्ठान होते हैं, अर्थात् दानपर्वोत्सवमें उपहार-देने और सामरिक उत्सवोंके प्रति भी उनका कर्तृत्व हुआ । जिस प्रकार चिरकालसे राज-महल में समस्त राजचिह्न रहते थे, इस समय भी उसी प्रकारसे वहां रहेंगे, वाद्यकदल प्रधान तोरणके ऊपर रहेंगे यह नियत हो गया । महारावके भ्राता विशनसिंह जो अपने आचरणके दोषसे महारावके कोपमें पतित हुए थे महारावके सन्तोष साधनके लिये उनको राजधानीसे निकाल कर उनके परिवारके वासस्थान राजधानीसे दश कोश दूर अणता नामक स्थानमें रक्खा गया: । उसी समयमें महारावने भी अपनी इच्छानुसार उनकी जागिर बढा दी " ।

किशोरसिंहके साथ जालिमसिंहका पहिली बार राजनैतिक विभ्राट् उपस्थित होने-पर कर्नेल टाडने जिस प्रकार कोटेराज्यमें एक महीने तक रहकर दोनोंके बीचमें मध्यता स्थापित की, इस दूसरी बार शोचनीय और कष्टदायक राजनैतिक अभिनयके पीछे वह उसी प्रकारसे चिरस्थायी सख्यता स्थापन करनेके लिये एक महीने तक कोटेकी राजधा-नीमें रहे । टाड साहब लिखते हैं कि " उन्होंने किशोरसिंह और माधवसिंहमें पुन-सद्भाव स्थापित किया था । उस संमिलनके समय महारावने विशेष बुद्धिके साथ अत्य-न्त शोचनीय घटनाओंके समस्त अपराध ग्रहण किये । दोनोंने दोनोंका करस्पर्श करके भविष्यमें मित्रताके लिये शपथ की, और महारावने जिन माधोसिंहको अपने दुर्भाग्यका एकमात्र कारण बता कर अनुयोग किया था, उन्ही माधोसिंहको अयोचित रूपसे आलिंगन किया । इसी समय महारावकी सुख स्वच्छन्द और पद मर्यादाके प्रति और किसीको क्षमता चलानेका कुछ अधिकार नहीं था । जिससे महा-रावको किसी विषयपर कुछ भी कष्ट न हो, अथवा किसी प्रकारकी त्रुटि न हो इस निमित्त

ध्यान रखनेके लिये एक अभिभावकको नियुक्त किया। इस पुनः संमिलन और सख्यता स्थापनसे वृद्ध जालिमसिंह सन्तुष्ट हुए। अथवा इस प्रकारका सन्तोष प्रकाश करनेवाला भाव प्रकाशित किया। जालिमसिंहके आचरणसे जो नैतिक कलंक लगा था उसके लिये वह मन ही मनमें अत्यन्त दुःखित हुए और उन्होंने उसीके लिये माधोसिंहको बुलाकर कहा, "तुम्हारे पापसे हमें दंड भोगना होगा"।

साधु टाड साहबने इस स्थानपर लिखा है "कि ६० वर्ष पहिले भटवाडेके रणक्षेत्रमें जिन जालिमसिंहका प्रबल अभ्युदय हुआ, उसी रणक्षेत्रके निकट मांगरोलमें जालिमसिंहने अपने जीवनका यह शेष राजनैतिक अभिनय किया, यह अत्यन्त विचित्र घटना हुई। जालिमसिंहके मनमें अपने उस अभ्युदयके दिनकी घटनाको स्मरण कर इस शेष स्मरणीय घटनाका विषय विचारनेसे कैसे दो भिन्न भावोंका उदय हुआ था। अपनी जिस तलवारसे जालिमसिंहने आमेरराजकी अधीनताकी जंजीरको काट कर कोटेका उद्धार किया था, उसी कोटेराज्यके अधीश्वरने उनको पुरस्कारमें राज्यका सबसे श्रेष्ठ पद प्रदान किया, जालिमसिंहने उसी राजाके पोतेके ऊपर अपनी तलवार चलाई।" टाड साहबने उस भावसे उन बातोंको क्यों न कहा, हम कह सकते हैं कि सुसभ्य बृटिशगवर्नमेंट यदि जालिमसिंहका पक्ष समर्थन न करते तो जालिमसिंह कभी भी महाराव किशोरसिंहके विरुद्धमें खडे नहीं हो सकते थे। महाराव किशोरसिंहके विरुद्धमें तलवार चला कर जालिमसिंहने जो अन्याय किया इतिहासमें चिरकालतक पाठक उसे स्मरण करेंगे।

यह अत्यन्त शोचनीय राजनैतिक अभिनय होनेके पीछे फिर शांति स्थापित हुई। टाड साहबने लिखा है कि "इस शोचनीय समाप्तिके कुछ ही समयके पीछे जालिमसिंह अपने निर्दिष्ट छावनीमें आकर राज्यके चारों ओर जो अशान्ति, उपद्रव, और शासन विशृंखला उपस्थित हुई थी उसके दूर करनेके लिये फिर एक बार राज्यमें भ्रमण करनेके लिये गये। वह शीघ्र ही प्रार्थनीय शांतिकी शृंखला स्थापित करनेमें समर्थ हुए और जो राजनैतिक विभ्राट् समाजको एक बार ही विध्वंस करने और राज्यमें रक्तकी नदी बहानेके लिये उद्यत हुआ था शीघ्र ही उसके चिह्न दूर हो गये। उक्त घटनाके पीछे जालिमसिंह और पांच वर्षतक जीवित रहे थे"।

कर्नल टाड साहबने पीछे जालिमसिंहकी जीवनीकी समालोचना करते हुए निम्नलिखित मन्तव्य प्रकाशित किये हैं "यदि इस असाधारण मनुष्यके चरित्रकी समालोचना वा वर्णना करनेको इतिहासमें तैयार होते तो हम उसको किस दृष्टिसे देखते? हमने उसके जीवनके जिन कार्योंको अंकित किया है उससे बहुतोंका कौतूहलक निवृत्त हो सकता है परन्तु अपने चरित्रोंके समस्त चित्रोंको अंकित करनेका उन्होंने कुछ सुभीता दिया हो ऐसा नहीं हुआ। उनके हृदयका गुप्तभाव एकमात्र सर्वान्तर्यामी जगदीश्वरके अतिरिक्त और किसीको भी ज्ञात नहीं था। कोई मनुष्य किसी समय राजस्थानमें इनके समान विश्वासपात्र नहीं हो

सका। जालिमसिंह अपने राजनैतिक जीवनकी उषासे, उस राजनैतिक जीवनके विनाश तक अस्सी वर्षसे भी अधिक कालतक नित्य कहा करते थे कि हमारे हृदयकी कथा हमारे मनके भावके बल हमी जानते हैं। उनके चरित्रोंमें एकमात्र यही गुण उनके नाना विपदोंसे युक्त जीवनमें उनके चरित्रोंकी मौलिकता प्रमाणित कर रहा है। सुख विलासके आवेगसे, सफलता वा सहानुभूतिके उद्योगसे अत्यन्त कठोर स्वभावके मनुष्य भी बीच २ में अपने हृदयकी बात प्रकाशित कर देते हैं परन्तु जालिमसिंह ऐसा नहीं करते थे और हठात् मनके उल्लाससे, आनन्दसे, शोकसे आशा व प्रतिहिंसाके समयमें भी जालिमसिंहके मनकी बात बाहर नहीं होती थी। यदि उनकी कोई कल्पना निश्चय सिद्ध होगी तौ भी उसकी प्रबल धारणा करते थे। यद्यपि वह अत्यन्त ही उग्रभाव युक्त थे, परन्तु उन्होंने अपने स्वाभाविक दोषको सरलतासे बंद कर रक्खा था, वह धीरचित्तसे अपने कल्पनाके फलकी प्रतीक्षा करते थे, अधिक क्या कहैं उन्होंने युवा अवस्थामें भी अपने जीवनको निजाधीन कर रक्खा था, उन्होंने पहिलेसे ही शिक्षा और सावधानतासे अनेक षड्यन्त्र जालोंसे अपने जीवनकी रक्षा की थी और उनकी विपत्तिकी राशि जिस भाँति क्रमशः बढ गई थी, उन्होंने उसी भाँति कार्यमें सफलता प्राप्त की। ऐसा कौन सा कार्य था, ऐसा कोई भी अवनत भावको प्रकाश करनेवाला कार्य नहीं था जिसे वह करनेके लिये कातर होते, वह बाहरी सरलता जो प्रकाशित करते उससे नम्र भावका ही प्रकाश होता था और आवश्यकतानुसार वह उस चातुरीसे सहाय लेते उधर वह अपने स्वजातीय धर्म-विधानके प्रत्येक अंगको पालन करते थे। वह जिस किसी विषयमें शपथ करते मनुष्य उस विषयमें संदेह नहीं कर सकते थे उनकी गंभीरता उनके मन्तव्य और विचार बहुतायतसे बढे हुए थे और सुशीलताके द्वारा वे सरलतासे अपने अधीनके कर्मचारियोंका सम्मान संग्रह कर सकते थे, और वह तोषामोदके कार्यमें भली भाँतिसे निपुण थे, इस कारण वह जिस प्रकारकी चतुरतासे तोषामोद करते इससे उनके ऊपरवाले मनुष्य मोहित हो जाते सारांश यह है कि उन्होंने गुन कितनी ही बातोंसे मनके भावको इस भाँति प्रकाशित किया कि बातचीतके समयमें भी श्रोता उनको धन्यवाद देते थे। सुमन्तव्य पुरस्कारके संग्रहके विष में इन्होंने विशेष चेष्टा की थी और उसको अत्यन्त प्रयोजनीय जानते थे। उपरोक्त घटनाके पूर्व समयतक उन्होंने अपने आचार उत्पीडन और प्रतिहिंसा मूलक कार्यके ऊपर चातुरीजालका आवरण फैला दिया था। जिस समय उन्होंने हाडा सामन्तोंके अधिकारी देशोंपर अधिकार किया, उस समय उन्होंने सभी पृथ्वीको धान्यसे परिपूर्ण कर दिया, अनेकता और परिश्रमका फल क्या होता है, उसके द्वारा प्रकाश कर अपनी प्रशंसा को संग्रह किया। जिस समय उन्होंने राजशक्ति तक पर अधिकार किया उस समय उन्होंने राजगौरवके सूर्यके कमनीय मंडलको प्रकाश कर उसकी सुन्दरताको प्रकाश कर दिया, जिस प्रकार उन्होंने अपने गौरवको प्राप्त किया था, इस प्रकार उनके पूर्व पुरुषोंको कभी प्राप्त नहीं हुआ, उनके प्रत्येक कार्यसे ही प्रमाणित हुआ है कि मनुष्य चरित्र और उनके लक्षण ज्ञानके सम्बन्धमें उनकी चूडान्त बुद्धि उत्पन्न हुई थी; वह धूर्त महाराष्ट्रियोंको धोका दे सकते थे, वीर तेजस्वी राजपूतोंको शान्त और

दमन कर सकते थे, और अंग्रेज एशियावासी जो किसीके गुणको स्वीकार नहीं करते उन्हीं अंग्रेजोंके निकटसे उन्होंने प्रशंसा संग्रह की थी। उन्होंने स्वजातीय सामाजिक और धर्म विषयोंको भलीभाँतिसे पालन किया था, इसीसे अपने समाजमें माननीय थे परन्तु विचित्रता यह है कि उन्होंने जिन विधानोंको भंग किया उनका ऐसे अलक्ष्यमें भंग किया था कि बहुत थोडे लोगोंने उनको जान पाया। एक ओर दाता दूसरी ओर कृपण एक ओर अत्याचारकारी और दूसरी ओर आश्रयदाता रूपसे वह खडे रहते थे। एक हाथसे यह सुवर्णके अलंकार दान करते, और दूसरे हाथसे संन्यासियोंके भिक्षा लब्ध धनका दशमा अंश ग्रहण करते थे; इधर वह कोटेके प्राचीन सामन्त वंशको निकाल कर उनके सर्वस्व पर अधिकार कर लेते दूसरी ओर यदि परदेशी कोई सामन्त आश्रयकी प्रार्थना करता तो उसका बडे आदर भावके साथ ग्रहण करके उसे यथाशक्ति सहायता देकर आश्रय देते थे"।

इसके पीछे कर्नल टाड साहबने लिखा है कि "हम पहिले ही वर्णन कर आये हैं कि कवियोंके ऊपर उनका भलीभाँतिसे विराग था और रसायनिक वा जादूगरोंके ऊपर भी इनकी बडी शत्रुता थी, उन्होंने दोनों सम्प्रदायोंको ही कोटेराज्यमें अपना २ व्यवसाय नहीं करने दिया, परन्तु जालिमसिंहके शत्रुओंने कहा है जालिमसिंहने उक्त सम्प्रदायोंका कार्य अच्छा नहीं माना था, इसीसे उनके साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया गया, यह बात नहीं थी वरन् वह एक जादूगरके मन्त्रोंसे छलनामें आये थे, और दूसरी ओर कवियोंकी सत्यता पूर्ण गीतावलीके द्वारा निन्दित हुए थे, इसीसे उन्होंने ऐसी शत्रुता की। उन्होंने "डाँकन वा डायनोंके ऊपर जैसा अत्यन्त कठोर व्यवहार करके दंड दिया उसकी अपेक्षा प्राणदंड अच्छा था। तापित लोहेका गोला उनके हाथमें अर्पण किया गया, पर सर्वसाधारण जानते थे कि डाँकन ऐसे द्रव्यका व्यवहार करती थी कि जिससे वह लोहेका गोला उनके हाथको दग्ध नहीं कर सकता था उनको जलमें डाल कर एक और प्रकारकी परीक्षा ली जाती थी; यदि वह जलमें डूब जाँय तो निर्दोष गिनी जाती थीं अर्थात् उनको डाँकन नहीं कहा जाता था, और वह जो जलमेंसे ऊपरको उठ आती तो उनको डाँकन बता कर दंड दिया जाता। जिसको डाँकन बताया जाता तो उनकी परीक्षाके लिये चनोंके थैलेसे मुख बाँधा जाता, यदि उनका श्वाँस न रुका तो उन्हें डाँकन गिना जाता। इधर सर्व साधारण मनुष्य उनके नेत्रोंमें सूखी मिर्च पीस कर डालते यदि उससे उनके नेत्रोंमेंसे जल न निकलता तो उनको डाँकनरूपसे दंड मिलता, और ऐसा जाना जाता है कि यह डाँकन जब अपनी शक्तिको मनुष्योंके अङ्गोंके ऊपर प्रयोग करती तो वह अपने जादूके मन्त्रोंसे धीरे २ उनके अङ्गोंको क्षय कर देती थी। सर्वसाधारण मनुष्योंको यह विश्वास था कि डाँकनोंने यदि एक वार भी देख लिया तो अवश्य ही मृत्यु हो जायगी परन्तु कोटेराज्यमें ऐसी डाँकन कोई भी नहीं थी। किसी २ वृद्धने भी अपने

(१) डायनोंकी परीक्षा इसी प्रकार करते हैं।

दुर्भाग्यवशसे मनुष्योंके द्वारा ऐसी डॉकनोंकी उपाधि भी पाई।" अबुलफजलने इसको जिगरखोर लिखा है कि सुबहके समय यह बालकोंका कलेजा चाटती हैं।

"जिस समयतक जालिमसिंहकी अवस्था ८५ वर्षकी हो गई थी उस समय भी वह यह नहीं जानते थे कि आलस्य किसको कहते हैं, वह इस बातको जानते थे कि राजपूतोंको सिंहासनकी नित्य अपने घोडेके पीछे रक्षा करनी होती है। जिस समय उनकी दृष्टिशक्ति एकबार ही लुप्त हो गई, तब वह एक साथ अंधे हो गये और घोडेपर चढकर शिकार करनेमें असमर्थ हो गये; तब वह पालकीपर सवार होकर मृगया करनेको जाते और उनके पीछे कई हजार सेना जाती। शिकारके समयमें वह अपने अधीनके सामन्तोंकी लज्जा और भय सबको दूर कर देते थे, और उस आनन्दके समयमें वह बहुतसी बातें किया करते थे। उस शिकारके समयमें अनुचरोंके परस्परमें सम्भाषणके समय मनकी कथाको सुना करते, और जिस राजपूत जातिके पक्षमें मृगया एक प्रधान आनंददायक व्यापार गिना गया था, और जिस मृगयाके अतिरिक्त उनका जीवन विषाद-मय होता है, यह उसी मृगयाका अनुष्ठान करके उन राजपूतोंकी प्रीति संग्रह करनेमें समर्थ होते। मृगया करनेके पीछे वह उस सघन वनमें सैकडों सेवकोंके साथ बैठते थे, और मृगयाके समयकी अनेक घटनाओंका वर्णन कर हास्य परिहाससे सबको संतुष्ट करते थे; इस मृगयाके समयमें ऊँटोंपर बहुतसी मैदा, घी, चीनी, तरकारी और अन्यान्य अनेक प्रकारके द्रव्य इस स्थानमें लाये जाते थे; और उन सबका भोजन बना कर परमानन्दसे भोजन करते थे; उस उत्सव और आनन्दमें भी जालिमसिंह अपने राजकार्यके अनेक विषयोंका आन्दोलन—वाणिज्य नीति—वैदेशिक नीतिकी आलोचना और कृषिविभाग, शांतिरक्षाविभाग और समरविभाग इत्यादि अनेक कार्य इस स्थानपर करते और हमारे एलफ्रेड्यार्फ्रेंकके एसटीछोयसके समान जिस समय मृगयाका प्रबल उत्साह उद्वेलित होता था, जिस समय चारों ओर बाणोंके ऊपर बाणोंकी प्रबल वर्षा होती थी, उस समय किसी एक पीपलके नीचे बैठकर जालिमसिंह विचार कार्य करके अपराधीको दंड देते थे। इसी तरह सारा दिन मृगयामें व्यतीत होता था। पुराणका पाठ वा धर्मसम्बन्धी गीत भी होते थे। पर वह सब कार्य कर-नेका अवसर पाते थे किसी समय भी किसी विषयमें शीघ्रता नहीं करते थे, उनकी दृष्टिशक्ति एकबार ही दूर हो गई थी वह उस समय अपने हाथसे अपना नाम नहीं लिख सकते थे, उस समय उन्होंने अपने हस्ताक्षरके अनुरूप अपने नामके अक्षर खुद-वा लिये थे। वह एक विश्वासी मनुष्यके निकट रहते थे, और वह जिस समय आज्ञा देते तो वह किसी पत्रमें अंकित कर देते थे। परन्तु उनकी एक इन्द्रियके एक साथ नष्ट होनेसे उनकी इससे अधिक और कोई हानि नहीं हुई, और कोई भी उनको किसी प्रकारका धोखा नहीं दे सका, कारण कि जिस समय वह अन्धे हो गये तब उनको किसी प्रकारका दुशाला वा कपडा भले बुरेकी परीक्षाके लिय दिया जाता, तो वह हाथसे देखकर ही उसे अच्छा बुरा बता देते थे"।

कर्नल टाड साहबके सम्मुख जालिमसिंहने जो कार्य और गुण दिखाये गये थे वह उनके किसी भी उल्लेखको नहीं भूले । उन्होंने फिर लिखा है कि, देशके जिस स्थानपर कभी भी धान्य उत्पन्न नहीं हुआ, उस स्थानपर जो मनुष्य धान्यको उत्पन्न करनेम समर्थ हों, वही देशके यथार्थ धन्यवादके पात्र हैं। यह कहना यदि सत्य है तो जालिमसिंहने कोटेराज्यके जिन २ स्थानोंमें कभी भी तृण उत्पन्न नहीं हुए थे उन्हीं २ स्थानोंतकमें बहुतसे अनेक प्रकारके स्वादिष्ट फल मूलोंसे पूर्ण वृक्ष लगाये थे, राजधानी-के चारों ओर कठोर पर्वतोंके ऊपर मट्टी डलवा करके सिंहल तथा पश्चिम महासागरके द्वीपोंसे अनेक प्रकारके फलवान् वृक्ष मँगा कर लगाये थे, और यह प्रमाणित कर दियो था कि, यह वृक्ष इन देशोंमें लगानेसे अवश्य ही फल उत्पन्न करेंगे, इस कारण उनकी प्रशंसा जिस प्रकार हो सकती है ? जालिमसिंहके बागमें काबुलके सेव मारवाडके विख्यात काँगेके बागके अनार और सिलहटकी सब प्रकारकी नारंगी, माँऊ गाँवके आम, और राजपूतानेके समस्त प्रधान २ फलोंके अतिरिक्त दक्षिणकी स्वर्णकदलीतक (चम्पा केला) पाई जाती थी। उन बागोंमें उन वृक्षोंमें जल देनेके लिये जो पर्वतोंके वक्षस्थलको विदीर्ण कर उन्होंने कूप खुदवाये थे, उन प्रत्येक कुँएको खुदवानेमें एक २ में तीस तीस हजार रुपये खर्च हुए थे, वह भी अपने मित्रोंको भी अपना अनुकरण करनेका परामर्श देते, वह भी कार्य करते रसायन विद्यामें भी वह भलीभाँतिसे प्रसिद्ध हो गये थे। वह स्वयं अतर, गुलाब जल, केतकी और केवडा तैयार करते थे। वह इतर सर्वसाधारणमें प्रचलित अतर इत्यादिकी अपेक्षा श्रेष्ठ होते थे। इन्होंने कश्मीरसे पशम बुननेके यन्त्र और बुनानेवालोंको कोटेराज्यमें लाकर श्रेष्ठ दुशाले तैयार कराये थे । अपने विचारसे तलवार और अन्यान्य अस्त्रोंके बनवानेमें भी उन्होंने विशेष प्रशंसा प्राप्त की थी "।

" जेठी नामका जो एक दल व्यायाम क्रीडक वा पहलवानोंका उनके अधीनमें नियुक्त था उसके लिये उन्होंने एक और जैसी प्रशंसा की थी, दूसरी ओर उसी प्रकारसे कलंक भी संचय किया था, इसके लिये उनका वार्षिक पचास हजार रुपया खर्च होता था, परन्तु उनके अधीनमें स्थित उन पहलवानोंने रजवाडोंके समस्त राजदरबारोंके पहलवानोंको परास्त किया था । अन्यान्य राज्यके पहलवान कोटेमें आते ही इनके द्वारा परास्त हो जाते थे, जालिमसिंह जिस समय युवक थे, उस समय यह केवल अपने पहलवानोंको एकमात्र अपने बाहुबलसे परस्पर परास्त करके संतुष्ट नहीं होते थे । उन्होंने उस समय पहलवानोंके हाथमें बाघनख, नामक यथार्थ व्याघ्रनखके द्वारा बना एक प्रकारका अस्त्र विशेष दिया था और इसीसे युद्धमें उनके अंग क्षतविक्षत हो जाते थे, बूँदीके विख्यात वीर महाराज उमेदसिंह बहादुरने इस अत्यन्त लोमहर्षण करनेवाली रीतिको एकबार ही दूर कर दिया था । महाराज उमेदसिंह एक समय द्वारकाजीसे होकर लौटते समय कोटेराज्यमें आये उस समय जालिमसिंह अखाडेमें बैठे थे, और दो दीर्घाकार पहलवान उस "बाघनख" को हाथमें लेकर परस्पर युद्ध कर रहे थे, महावीर उमेदसिंहको हठात् उस स्थानपर आया हुआ देखकर वह

रक्तात्क युद्ध कार्य निवारण हो गया। उमेदसिंहने क्रोधित होकर जालिमसिंहको विलक्षण भर्त्सना करके कहा कि इस रुपयेको ज्ञातिभाइयों वा दीन दरिद्रोंमें खर्च न करके इन लोगोंको देते हो फिर इस प्रकार इनका अकारण रक्तपात करना अत्यन्त अन्यायकी बात है, जालिमसिंहने उनकी बातपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, परन्तु उमेदसिंह ऐसे क्रोधित हो गये थे कि वह उसी समय अपनी ढालको पृथ्वीपर रख कर अपने शरीरमें जितने अस्त्र थे उन सबको एक २ करके ढालके ऊपर रख दिया, अर्थात् उन्होंने स्वभावसे तलवार, बंदूक, छुरी, रणकुठार इत्यादिका व्यवहार किया था, उन सबको स्थापन कर उन इकट्ठे हुए पहलवानोंको बुलाकर कहा, कि तुममेंसे किसमें इतना बल है जो एक हाथसे इस ढालको उठा ले. महाराज उमेदसिंहके बुलानेसे समस्त पहलवान एक २ करके आगे बढे, और उस ढालको पृथ्वीपरसे उठानेकी चेष्टा करने लगे, परन्तु कोई भी उठानेको समर्थ न हुआ, शेषमें साठ वर्षकी अवस्थाके महाराज उमेदसिंहने सबके सामने एक हाथसे उठा लिया और कितनी ही देरतक उसे लिये खडे रहे। सभी हाडा जाति उस वृद्ध स्वजातीय महावीरके उस कार्यसे महा आनंदित हुए, और पहलवानोंने लज्जासे नीचेको मुख कर लिया। जालिमसिंहने उसी दिनसे यह दृश्य देखकर उन पहलवानोंके प्रति फिर पूर्वके समान सदय दृष्टि नहीं की। परन्तु उनके यह सब दोष उनकी युवा अवस्थामें ही थे वृद्धावस्था तक नहीं रहे''।

कर्नल टाड साहबने यह कह कर, जालिमसिंहकी जीवनीके उपसंहारके साथ ही साथ कोटेराज्यके इतिहासका उपसंहार किया है जालिमसिंहने एक मात्र अपने सम्मानकी रक्षा और शासनशक्तिकी रक्षाके लिये उस वृद्धावस्थामें भी राजकार्यको नहीं छोडा। उन्होंने एकाधिक्रमसे एवं विदेशीय समस्त शत्रुओंका नाश किया था; और हाडौती राज्यके सम्बन्धमें उनके मनमें जो सब अभिलाषाएँ थीं वह सभी पूर्ण हो गई थीं। शासनशक्तिके त्याग करनेपर सर्व साधारणको यह विदित होगा कि वह निकाले गये हैं, यही विचार कर उन्होंने उस शक्तिको हाथसे अलग नहीं किया। वृद्धावस्थामें जिस समय उनका स्वास्थ्य एकबार ही नष्ट हो गया, उस समय भी विश्रामकी इच्छा और धर्मधनकी वासनाका उनके मनमें उदय न हुआ, उस समय वह अपनी शासनशक्तिको हाथसे अलग कर देते तो यथेष्ट सम्मान पा सकते थे।

अष्टम अध्याय ८.

माधोसिंहको कोटेके पूर्ण क्षमता युक्त शासनकर्ता पदकी प्राप्ति-उनके संबन्धमें महाराव किशोरसिंहका सुव्यवहार-महाराव किशोरसिंहकी मृत्यु-महाराव रामसिंहको सिंहासनकी प्राप्ति-माधोसिंहकी मृत्यु-उनके पुत्र मदनसिंहका कोटेकी शासन क्षमताका ग्रहण करना-महाराव रामसिंहके साथ मदनसिंहका मतान्तर-मदनसिंहके व्यवहारमें कोटेकी सर्वसाधारण प्रजाका महाक्रोध-उनको निकालनेके लिये जातीय अभ्युत्थानका उद्योग-बृटिश गवर्नमेंटका कोटेराज्यके सत्रह परगनोंको छीन कर झालावाड नामक नवीन राज्यकी सृष्टि करके उसे मदनसिंहको देना-महाराव रामसिंहकी उसमें अनिच्छासे सम्मति देना-नवीन संधिपत्र-सत्रह परगनोंकी सूची-बृटिश गवर्नमेण्टका व्यवहार-कोटेके महाराजके साथ बृटिशके अधीनमें सेनाकी रक्षा और उसके व्यय देनेके लिये बृटिश गवर्नमेण्टका प्रबल आदेश-अत्यन्त अनिच्छासे महाराव रामसिंहका उस व्यय देनेमें सम्मति देना-सन् १८५७ ईसवीके सिपाही विद्रोहके समय उस नवीन सृष्टिसेनादलका अभ्युत्थान-पोलिटिकल एजेण्ट और उनके दोनों पुत्रोंका प्राण नाश-महारावके प्रति अंग्रेज गवर्नमेंटका असंतोष प्रकाश करना-अंग्रेज राजप्रतिनिधिका महारावको वंशानुक्रमसे पोष्य पुत्रके ग्रहण करनेकी सनद देना-महाराव रामसिंहकी मृत्यु-उनकी रानियोंका प्रज्वलित चितामें प्राण त्यागकी चेष्टा करना-पोलिटिकल एजेण्टका इस विषयमें व्याघात देना-महाराव छत्रशालसिंहका अभिषेक-सामन्तोंके ऊपर शासनभार डालना-बृटिश गवर्नमेंटका कोटेके शासन भारको ग्रहण करना।

महात्मा टाड साहबने अपने विस्तारित ग्रन्थमें कोटेराज्यके जिस समय तकके इतिहासको प्रकाशित किया है हमने पहिले अध्यायमें उसका वर्णन किया है, इस समय इतिहासके अंगको सम्पूर्ण करनेके लिये हम परिवर्ती समयके इतिहासको संग्रह करनेमें प्रवृत्त हुए हैं।

जिस जालिमसिंहको बृटिश गवर्नमेंटने कोटेके प्रकृत अधीश्वररूपसे स्वीकार किया। जिस जालिमसिंहके स्वार्थसाधनके लिये सब कुछ किया उन्हीं जालिमसिंहने सन् १८२२ ईसवीकी २५ वीं जूनको प्राण त्याग किया। महाराव किशोरसिंहने पहिलेस ही वचन दे दिया था। उन्होंने माधोसिंहको पितृपद पानेके विरुद्धमें किसी प्रकारका उपद्रव व बाधा उपस्थित न की, यद्यपि माधोसिंह पितृ पद पानेके लिये सम्पूर्ण अयोग्य थे, तथापि महाराव किशोरसिंहने इस समय किसी प्रकारकी आपत्ति उपस्थित न की। आचिसन साहबने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि "जालिमसिंहने सन् १८२४ ईसवीमें प्राण त्याग किये, और उनके पुत्र माधोसिंह उस पदपर विराजमान हुए। माधोसिंह उस पदकी अयोग्यतामें भलीभांतिसे विख्यात हो गये थे; तथापि उन्होंने सन्धिपत्रके अनुसार बिना किसी बाधाके शासनभारको प्राप्त किया *। कर्नल म्यालिसनने इसके सम्बन्धमें अपने ग्रन्थमें मन्तव्य प्रकाश किया है"। यह मनुष्य [माधोसिंह] शासनकर्तृत्व पदके अयोग्य है, यह भलीभाँतिसे विख्यात है।

* Aitchison's Treaties Vo IV.

परन्तु संधिकी धारा अवश्य ही पालन करनी होगी, इसी कारणसे उनको उस पद पानेमें किसीने कुछ बाधा नहीं दी+" किसी राज्यके किसी एक मनुष्यको वंशानुक्रमसे मंत्रित्व वा शासन कर्तृत्वका भार देना अत्यन्त अविचारका कर्म है इस व्यवस्थासे जैसा बुरा फल होता है यह जान कर भी किसप्रकारसे जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे शासनकर्ताका भार दिया था, हम इस बिचारको भी स्थिर नहीं कर सकते। इस समय देखा जाता है कि माधोसिंह शासनकार्यके लिये सम्पूर्ण अयोग्य रूपसे सर्वसाधारणके निकट परिचित थे, तथापि उनके हाथमें कोटेका शासनभार अर्पण किया गया।

माधोसिंहके सब प्रकारसे अयोग्य होनेपर भी वह जानते थे कि बृटिश गवर्नमेंटने जब संधिबन्धनमें आबद्ध होकर उनको और उनके भविष्यत् वंशधरोंको सदा उस पदपर स्थित करनेका विचार किया है तब अब भय क्या है? इस कारण माधोसिंहने निर्भय होकर अपनी इच्छा–शासनके द्वारा अपनी अयोग्यताका चूडान्त परिचय देकर राज्यके अनिष्टसाधनमें कसर न की। बृटिश गवर्नमेण्ट भी उस स्वेच्छाचारसे कोटे राज्यका अनिष्ट होता हुआ देख मौनभाव किये रही। संधिपत्रमें माधोसिंहका पक्ष समर्थन करनेके लिये बृटिश सरकार वचनबद्ध थी। इस कारण किसी बातके भी कहनेकी सामर्थ्य उसकी नहीं थी।

महाराव किशोरसिंहने देखा कि बृटिश गवर्नमेंटने माधोसिंहको सब प्रकारसे अयोग्य देख कर भी जब चुपचाप स्थिति की है, एवं कोई भी प्रतिविधान करनेके लिये तैयार नहीं है, और किसी प्रकारका अनुयोग उपस्थित करनेसे फिर संधिका उल्लेख करके भय प्राप्त होगा। तब मौन रहना ही कर्तव्य जाना, इस कारण वह हृदयकी ज्वालाको हृदयमें ही सहन करते थे, परन्तु उनको अब अधिक दिनतक अपने पैतृक राज्यकी ऐसी दुर्दशा नहीं देखनी पडी, महाराव किशोरसिंहने सन् १८२८ ईसवीमें प्राणत्याग किये। उनकी जीवनीके सम्बन्धमें हम अधिक कुछ कहनेकी इच्छा नहीं करते। वह जैसे विद्वान् धीर और नम्र थे; उसी प्रकार प्रबल पराक्रमशाली बृटिश सरकारके भक्त थे। जालिमसिंहका दृढ पक्ष समर्थन करनेपर भी उन्होंने उसके विरुद्धमें सेनासहित खडे होकर अपने साहसका चूडान्त परिचय दिया था, और सामयिक अवस्थाको विचार कर अंग्रेज गवर्नमेंटके साथ फिर संधिबन्धनमें आबद्ध हो राजनीतिज्ञताका भी अल्प परिचय नहीं दिया।

कोटेपति महाराव किशोरसिंहने अपुत्रावस्थामें प्राणत्याग किये थे; इस कारण कुमार पृथ्वीसिंहके एकमात्र पुत्र नानालाल, रामसिंहके नामसे पुकारे जाकर कोटेके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए।

महाराव रामसिंहकेअभिषेक कार्य होनेके कुछ ही दिन पीछे राजराणा माधोसिंहने प्राणत्याग किये। माधोसिंह जैसे विलासी, अयोग्य और अहंकारी थे उसी प्रकार उनकी स्वेच्छाचारिताके कारण कोटेके बहुतसे अनिष्ट हुए थे। एकमात्र

+ Maleson's Native states.

माधोसिंहकी उत्तेजनाके अनुरोधसे जालिमसिंहने अपने वंशानुक्रमसे फौजदार वा कोटेको समस्त राजशक्तिको अपने हाथसे ग्रहण करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की और उसीसे कोटेराज्यका सर्वनाश हुआ। इस स्थानपर उसके पुनर्वार उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है, माधोसिंहकी मृत्युके साथ ही साथ कोटे की सुख शान्तिका विषम कंटक उखड जायगा। पाठक गण ऐसा विचार न करें, माधोसिंहकी मृत्युके पीछे बृटिश गवर्नमेण्टके संधिपत्रके अनुसार उनके पुत्र मदनसिंह राजराणाकी उपाधिको पाकर पिताके पदपर प्रतिष्ठित हुए। जालिमसिंह और माधोसिंह यद्यपि कोटेराज्यकी केवल राजशक्तिको ही हरण करके संतुष्ट हुए थे, परन्तु मदनसिंहके शासन समयमें कोटेराज्यके चिरस्थायी महा अनिष्ट हुए, किन्तु एक ओर उस सर्वनाशके हानसे कोटेके अधीश्वर चिरकालकेलिये उस हानिकारक संधिपत्रके हाथसे अपना उद्धार करनमें समर्थ हुए। कर्नल म्यालिसनने लिखा है, कि इस प्रधानमंत्री और महाराव(रामसिंह)में किसी समय भी सद्भाव नहीं था, एवं सन्१८३४ ईसवीमें दोनोंके बीचमें ऐसा विवाद प्रबल हो गया कि प्रधान मंत्री पदके संबन्धमें फिर नवीन व्यवस्था करना कर्तव्य हो गया।" आचिसन साहबने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि सन् १८३४ईसवीमें रामसिंह और उनके मंत्री माधोसिंहके पुत्र और उत्तराधिकारी मदनसिंहमें फिर विवाद उपस्थित हुआ मन्त्रीको निकालनेके लिये सर्वसाधारण प्रजाके अभ्युत्थान होनेसे महा विपत्ति होनेकी संभावना हो गई और इसी कारणसे कोटेके अधीश्वरकी सम्मतिके अनुसार कोटेराज्यको दो खण्डोंमें बिभक्त करके जालिमसिंहके उत्तराधिकारियोंका भरण पोषण करनेके लिये झालावाड नामक एक स्वतन्त्र नूतन राज्यकी सृष्टि करना उचित विचारा गया। वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनीवाले सत्रह परगने मदनसिंहको दिये जायगे। इस नवीन बन्दोबस्तके अनुसार कोटेराज्यके साथ फिर नवीन संधिबन्धन हुआ"।

एक राज्यमें एक भाव राजा और एक समस्त शासन शक्ति युक्त मनुष्यवंशानुक्रमसे नहीं रह सकता, अंग्रेज गवर्नमेंटने इसको भलीभांतिसे जानकर भी कोटेके शासन कर्ताका पद वंशानुक्रमसे उपभोग करनेको दिया इस कारणसे विषमयफल उत्पन्न होता हुआ देखकर भी गवर्नमेंटने अपनी समस्त शक्तियोंको प्रयोग करके अब तक उस बातको सिद्ध रक्खा; परन्तु इतने दिनोंके पीछे सरकारने कार्यद्वारा स्वीकार किया कि जालिमसिंहको वंशानुक्रमसे शासनशक्ति देकर भूलका कार्य किया है। उसके लिये इस समय गवर्नमेंटने फिर एक नवीन कार्य किया। कोटेराज्यके सत्रह परगनोंको छीन कर जालिमके उत्तराधिकारी सब अंशोंमें अयोग्य सर्व साधारणके अप्रिय मदनसिंहको देकर नवीन झालावाड राजके सिंहासनपर उनको बैठाल दिया। जालिमसिंहने गवर्नमेंटके बहुतसे उपकार किये थे इस कारण वह उनके समीप कृतज्ञताके ऋणमें बँधी थी कोटेराजसे यह परगने लेकर उस कृतज्ञताका ऋण चुकाया गया।

जब कि शरीरके किसी अंगमें भाव हो जाय और उसकी चिकित्सा करनी कठिन हो जाय, और उससे समस्त शरीरके नाश होनेकी सम्भावना होजाय, तब शरीरकी

रक्षाके लिये उस अंगको कटवा देना ही उचित है। महाराव रामसिंहने जालिमके वंशधरोंके द्वारा कोटेरूपी कमलको भीतर ही भीतर अंतःसार शून्य होते हुए देखकर शीघ्र ही बृटिश गवर्नमेण्टके प्रस्तावके अनुसार अपने पैतृक राज्यके वह सत्रह परगने छोड दिये। शीघ्र ही सुसभ्य न्यायपरायण सरकारकी कृतज्ञताके ऋण चुकानेमें सहायताके लिये उस त्यागको स्वीकार किया। परन्तु उसके उपलक्षमें नवीन संधि-बंधनके समान महाराव रामसिंहके मस्तकपर और एक भारी भार अर्पण किया गया।

बृटिश गवर्नमेण्ट और महाराव रामसिंहमें संस्थापित संधिपत्र।

१ दिल्लीके संधिपत्रकी अतिरिक्त धारासे राजराणा जालिमसिंह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोंको कोटेराज्यकी जो शासनशक्ति दी गई है, राजराणा मदनसिंहने उसी शासनशक्तिको छोड कर महाराव रामसिंहकी उक्त अतिरिक्त धाराके रहित पक्षमें सम्मति दी है।

२-बृटिश गवर्नमेण्टकी सलाहसे महाराव सूचिके अनुसार समस्त परगने राजराणा मदनसिंह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्त गणको प्रदान करनेमें सम्मत हुए हैं।

३-इस सूचीके अनुसार इन परगनोंके पृथक् करनेको हस्तान्तर करनेकी व्यवस्थामें जो धन व्यय होगा उसको महाराव और उनके उत्तराधिकारी गण तथा स्थलाभिषिक्त गण पूरा करेंगे।

४-राजधानी कोटेसे अभीतक जो कर दिया जाता था, महाराव अपने उत्तराधिकारी गणोंके साथ तथा स्थलाभिषिक्तोंके साथ सम्मत हुए हैं; कि उस करमेंसे वार्षिक ८०००० रुपये छोड कर शेप सब कर सरकारको हम देंगे, बृटिश गवर्नमेण्ट उक्त ८०००० रुपये करस्वरूपसे राजराणा मदनसिंह तथा उनके उत्तराधिकारियोंसे लेनेमें सम्मत है, राजराणाने संवत् १८९५ के पहिले उक्त कर देना, प्रथम आरम्भ किया। संवत् १८९४ के प्रथम वर्षके कारण वर्तमान देय कर १३२३६० रुपये कोटा राज्यसे दिये जाते थे।

५-महाराव अपनी ओरसे और उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोंकी ओरसे कहते हैं कि एक दल नवीन सेनाका रखना होगा और बृटिश गवर्नमेण्ट यदि कर्तव्यको विचार करैगी तो वह सेनादल एक बृटिश सेनापतिके अधीनमें रक्षित होगा-, इस स्थानपर इसको स्पष्टरूपसे प्रकाशित करना उचित है कि इस प्रकार सेनाकी रक्षा होनेसे महाराव और उनके उत्तराधिकारी तथा स्थलाभिषिक्तोंके कोटराज्यमें आभ्यन्तरिक शासनशक्तिको चलानेके पक्षमें किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं होगा।

६-उस सेनादलका व्यय किसी समय भी वार्षिक तीन लाख रुपयेसे अधिक नहीं होगा।

७-यदि उस सेनादलकी सृष्टि हुई तो उस सेनादलका व्यय महाराव और उनके उत्तराधिकारी स्थलाभिषिक्त गवर्नमेण्टको जो कर देते हैं उसके साथ प्रति छः मासके भीतर सरकारको देंगे। और किस समयसे प्रथम अर्थ दान आरंभ होगा बृटिश गवर्नमेण्ट उसे स्थिर कर देगी।

८-यह भी स्पष्टरूपसे प्रकाशित रहै कि सन् १८१७ ईसवीके २६ वीं दिसम्बरमें बृटिश गवर्नमेण्टके साथ महाराव उमेदसिंह बहादुरका दिल्लीमें जो संधिपत्र नियत हुआ है वर्तमान संधिपत्रके द्वारा उस संधिपत्रकी जिन २ धाराओंसे कोई संश्रव नहीं रहा है वह २ धाराएँ प्रबल रहेंगी।

९-बृटिश गवर्नमेण्ट और कोटेके महाराव रामसिंहमें इस संधिपत्रकी उपरोक्त धाराओंका निर्णय होने पर इसमें एक ओर तो अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान जान लाडलो; एवं राजपूतानेमें स्थित गवर्नरजनरलके एजेण्ट लेफटिनेण्ट एल आलवसिके हस्ताक्षर और मोहर लगा कर महाराव रामसिंहके भी हस्ताक्षर सहित मोहर लगा दी गई; और आजकी तारीखसे दो महिनेमें महा महिमवर गवर्नरजनरल द्वारा प्रत्यर्पित होगा।

(हस्ताक्षर) जे. लाडलो।
कोटा, १० वीं अप्रैल, सन् १८३८ ईसवी।
अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट।

| महाराव रामसिंहकी मोहर. |

एन. अलबीस।
गवर्नर जनरलके एजेण्ट।

सूची।

राजराणा मदनसिंह उनके उत्तराधिकारी और स्थलाभिषिक्तोंके कारण संधिपत्रके मतसे झालावाड नामक जो नवीन स्वतंत्र राज्यकी सृष्टि होगी; उसके लिये निम्नलिखित परगने निर्धारित हुए।

१-चाँईहाट
२-सकेत
३-चोमहला
  पचपाड
  अवहोर
  डिग
  गंगराड
४-झालरा पाटन,
५-रमचवा
६-कोटडाभट्टा
७-सुरेरा।

८-रखाई।
९-मनोहर थाना।
१०-फूलबडोद
११-चाचुरणी।
१२-कंकुरनी।
१३-छीपाबडोद।
१४-शेरगढके कुछ अंश पूर्वमें।
१५-परवन.।
१६-निवाजके पूर्वांश।
१७-शाहाबाद।

यह प्रकाशित रहे कि नर.सिंह झालावाड राज्यसे महारावके राज्यमें उठ आवेगा और उनकी समस्त भूमि राजराणाको प्राप्त रहेगी।

कोटा, १० अप्रैल सन् १८३८ ईसवी।
जे. लाडलो।
अफिसिएटिंग पोलिटिकल एजेण्ट।
एन अलबीस गवर्नर जनरलके एजेण्ट।

राजराणा मदनसिंहकी मोहर।

विदेशी विधर्मी यवन सम्राट् शहाजहाँने जिस कोटे राज्यकी सृष्टि करके हाडा राजपूत माधोसिंहको दिया था, सुसभ्य बृटिश गवर्नमेंटने अपनी कृतज्ञताका ऋण चुकानेके लिये उसी राज्यको दो खंडोंमें विभक्त कर दिया। जालिमसिंहके अयोग्य उत्तराधिकारीने वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनीका स्वतंत्र नवीन राज्य पाया, और कोटेके यथार्थ अधिकारीको केवल वह वार्षिक बारह लाख रुपया नहीं वरन् सरकारके अधीनमें रक्षणावेक्षणके लिये सेनाको रख कर वार्षिक तीन लाख रुपया और देना पडा। इससे वार्षिक पन्द्रह लाख रुपया चिरकालके लिये कोटेपतिका चला गया।

बृटिश गवर्नमेंटके साथ कोटेके महाराज उमेदसिंहका जब प्रथम संधिबंधन हुआ था, तब उक्त प्रकारसे सेनाके व्यय दानका कोई उल्लेख नहीं था, परन्तु इस समय सुअवसर पाकर उक्त सेनाकी सृष्टिके विषयमें महारावको सम्मत कर लिया गया। सेनादलका व्यय महाराव देंगे, परन्तु वह महारावकी आज्ञा पालन नहीं करेगी। अंग्रेज सेनापतिके अधीनमें अंग्रेज गवर्नमेंटकी सेनारूपसे रहेगी। यद्यपि महारावने इस नवीन संधिके समयमें वार्षिक ८०००० रुपया कर देनेसे छुटकारा पाया, परन्तु उस स्थानपर वार्षिक तीन लाख रुपया विशेष देनेको तैयार हुए। महाराव रामसिंह भलीभांतिसे जान गये थे कि विचार करानेसे अब कुछ न होगा विशेष चेष्टासे कदाचित् शेष अंशमें भी हानि पडे है, इस कारण वह उस प्रबल पक्षकी आज्ञा पालन करके पैतृक राज्यके नामकी रक्षा

करनेको बाध्य हुए। परन्तु थोडे ही समयमें महाराव जान गये कि अंग्रेज गवर्नमेंटको नियमित वार्षिक कर देनेके सिवाय सेनाके लिये वार्षिक तीन लाख रुपया देना सब प्रकारसे असम्भव है, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही दीनभावसे अंग्रेज सरकारके समीप इसके सम्बन्धमें प्रार्थना की। कर्नेल म्यालिसन लिखते हैं कि "पहिले भी अत्यन्त अनिच्छासे महाराव इस सेनासृष्टिके विषयमें असम्मत हुए थे और बारम्बार अनुयोग उपस्थित करनेके कारण सन् १८४४ ईसवीमें उक्त सेनादलके व्ययमेंसे लाख रुपया क्षमा करके दो लाख रुपया नियत किया गया। उसी समय यह विचार हुआ कि यदि इस रुपयेसे सेनादलके व्ययकी पूर्त्ति न हो सकैगी, तौ कोटेके करमेंसे वह रुपया दिया जायगा और उस समय महारावको सावधान करना होगा कि, यदि वह ठीक समयपर रुपया न दे सकेंगे, तो उक्त सेनाके लिये जो रुपया दिया गया है वह और करके निमित्त जो कितने:ही ग्राम हैं उनको प्रतिभूस्वरूपसे रखना होगा।" * महाराव रामसिंहने इस शेष व्यवस्थासे अपनेको सौभाग्यवान जान लिया।

बृटिश गवर्नमेण्टने कोटेपतिके पाससे समस्त व्यय लेकर उपरोक्त सेनादलकी सृष्टि कर उसको अपने अधीनमें रक्खा। सन् १८५७ ईसवीके विख्यात सिपाही विद्रोहके समय उस सेनाने अंग्रेज गवर्नमेंटके विरुद्धमें खडे होकर पोलिटिकल एजेण्ट और उनके दोनों पुत्रोंको मार डाला। अंग्रेज इतिहासवेत्ताने कहा है कि महाराव रामसिंहने उस विद्रोही सेनाको दमन करनेके लिये किसी प्रकार सहायता नहीं की परन्तु हम कह सकते हैं कि प्रभुताहीन महाराव रामसिंहमें उस प्रबल विद्रोहके निवारण करनेकी कुछ सामर्थ्य थी या नहीं ? इस विषयमें हमें सन्देह है। बृटिश गवर्नमेण्टने उनसे असंतुष्ट होकर उनके संमानके लिये जो सत्रह तोपें नियत की थीं उनमेंसे चार घटा कर तेरह तोपोंकी सलामी नियत की। परन्तु उदार हृदय अंग्रेज राजप्रतिनिधि लार्ड क्यानिंगने सिपाही विद्रोहके पीछे जिस समय भारतवर्षमें प्रत्येक देशीय राजाको वंशानुक्रमसे पुत्रके अभावमें दत्तक पुत्र ग्रहणका सामर्थ्य दी थी. उस समय महाराव रामसिंहको भी उस सनदके देनेमें त्रुटि न की।

महाराव रामसिंह बहादुरने सन् १८६६ ईसवी २७ मार्चको अपराह्न समयमें ६४वर्षकी अवस्थामें प्राण त्याग किये। कर्नेल म्यालिसनने लिखा है कि जब सर्वसाधारणमें प्रचार हो गया कि महारावकी मृत्यु निकट है, तब सर्वत्र यह जनरव उठा कि उनकी विधवा रानियोंमेंसे एक रानी महाराजके साथ सती होनेकी अभिलाषा करती हैं। जिससे ऐसी घटना न हो उसके लिये पोलिटिकल एजेण्टने उसी समय उपयुक्त व्यवस्था की, उन्होंने राजमहलका द्वार बंद करके ताला लगा दिया और उसकी रक्षाके लिये सेना नियुक्त कर दी, और यह आज्ञा दी कि जहाँतक सम्भव हो सके

---

* Malleson's Natve states.

(१) दत्तकपुत्रकी सनदप्राप्तिका वृत्तांत मेवाड और मारवाडके इतिहासमें देखो।

वहाँतक महारावकी मृत्युका समाचार रनिवासमें मत जाने दो। रानियां चार घंटे तक महारावकी मृत्युका समाचार न जान सकीं। इसके पीछे एक रानीने कहला भेजा कि मैं स्वामीके साथ चितामें जलूँगी और उन्होंने यहाँतक बल प्रकाश किया कि उस बंद दरवाजेको भी तोड डाला परन्तु उनको किसी प्रकारसे भी राजमहलसे बाहर न होने दिया। दूसरे दिन प्रभात होते ही निर्विघ्नतासे महारावका मृतक कार्य किया गया। समयकी कैसी विचित्र महिमा है, एक समय जो राजपूत रानियां स्वामीका अनुगमन कर अपने सतीत्वकी पराकाष्ठा दिखाती थीं, भारतके गौरवकी रक्षा करती थीं, आज उस सती कुलकी स्वर्गीय आशाकी जडमें दारुण कुठाराघात लगा।

महाराव रामसिंहकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र भीमसिंह छत्रसालसिंह नामसे कोटेके सिंहासनपर अभिषिक्त होकर आजतक उस सिंहासनकी शोभाको उज्ज्वल कर-रहे हैं। महाराव छत्रसालसिंह सिंहासन आरूढ होनेके समयमें बहुत थोडी उमरके थे। बृटिश गवर्नमेण्टने महाराव रामसिंहसे असंतुष्ट होकर सन् १८५७ इसवीके पीछे उनकी जो तोपोंकी सलामी घटा दी थी इन नवीन महारावके सिंहासनपर आरूढ होनेके समय फिर संतुष्ट हो पहिलेके समान सत्रह तोपें नियत करदीं।

महाराव छत्रसालसिंह अप्राप्त व्यवहार थे, इससे महाराव रामसिंहकी मृत्युके पीछे राज्यका शासनभार प्रथमके समान कई एक उच्च सामन्त और राजकर्मचारियों-के ऊपर पडा, परन्तु अंग्रेज इतिहासवेत्ताने लिखा है कि उनके शासनमें राज्यमें अनेक शोचनीय घटनाएँ उपस्थित हुई। राज्यकी आमदनीका घटना, ऋणवृद्धि इत्यादि होनेसे अन्तमें बृटिश गवर्नमेण्टको राज्यके आभ्यन्तरिक शासनकार्यमें हस्तक्षेप करना पडा। कोटाराज्य उस समय तक बृटिश गवर्नमेण्टकी सावधानतासे शासित होता रहा। सन् १८७४ ई० में जयपुर राज्यके भूतपूर्व प्रधानमंत्री नवाब, सर मुहम्मद फैजलअलिखाँ के. सी. एस. आई. कोटेके प्रधानमन्त्री और सर्वशक्ति सम्पन्न कर्ता पदपर नियुक्त हुए उन्होंने सभी विषयोंमें गवर्नरजनरलके एजेण्टके मत और परामर्शके अनुसार कार्य किया।

अंग्रेज गवर्नमेण्टकी सावधानीसे कोटेके आभ्यन्तरिक शासनमें विशेष परिवर्तन होगया है। सभी विभागोंमें अच्छे बंदोबस्त और न्याय विचारकी सुव्यवस्था की गई है। वर्तमान महाराव छत्रशालसिंह बहादुर इस समय केवल वार्षिक १५०००० रुपया पाते हैं। उनको शीघ्र ही राजकाज जानने पर अपने राज्यके सम्पूर्ण शासनका भार मिल जायगा।

नवम अध्याय ९.

कोटेके वर्तमान शासनकी रीति–शासन समिति–आयव्ययकी व्यवस्था–आयव्ययकी सूची–राजऋण–राज समृद्धिके सम्बन्धमें नवीन बन्दोबस्त–विचारविभाग–फौजदारी अपराधकी सूची–उसके सम्बन्धमें पोलिटिकल एजेण्टका मन्तव्य–कारागार विभाग–शिक्षाविभाग।

कोटाराज्य इस समय गवर्नमेण्टकी सावधानीसे अंग्रेजी रीति और अंग्रेजी व्यवस्थाके अनुसार अंग्रेजीभावसे शासित होता है, कोटेराज्यके हर्ता कर्ता विधाता असीम सामर्थ्यशाली इस समय अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट हैं। महाराव छत्रसालसिंह इस समय अप्राप्त व्यवहार हैं, इसी कारण वह राज्यशासनके किसी विषयको भी अपनी इच्छानुसार पूर्ण सामर्थ्यसे नहीं चलाते हैं। महाराव सामर्थ्यको पाकर अवश्य ही पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करेंगे। अवश्य ही आभ्यन्तरिक शासनकार्यमें उस समय अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट फिर हस्ताक्षेप नहीं करेंगे।

हम अवश्य ही इस बातको मानते हैं कि वर्तमान समयमें अंग्रेजोंके अधीनमें कोटेराज्यने शासित होकर अनेक विषयोंमें बहुतसे उपकार प्राप्त किये हैं। विचार विभाग-राजमन्त्रविभाग–शांतिरक्षाविभाग–स्वास्थ्यविभाग इत्यादि इस समय सम्पूर्णरूपसे यथायोग्य व्यक्तियोंके तत्त्वावधानसे उत्तम रीतिसे परिचालित होते हैं।

कोटाराज्य प्रधानतःएक कौन्सिल वा समितिके द्वारा शासित होता है। कई जन उच्च मनुष्य राज्यके एक २ विभागका शासनभार लेकर उस समितिके सभासद पदपर नियुक्त रहते हैं। अंग्रेज पोलिटिकल एजेण्ट उसी समितिके सभापति हैं, उन्हींकी परामर्श और सम्मतिके अनुसार कौन्सिलके सभ्यगण काय निर्वाह करते हैं। राजपूतानेके सन् १८८२। १८८३ ईसवीके शासनविज्ञापनमें राजपूतानेमें स्थित गवर्नरजनरलके एजेण्ट लेफटिनेण्ट कर्नल ब्राडफोर्डने लिखा है कि "इस राज्यका शासनकार्य पूर्व कार्यके समान लेफटिनेण्ट कर्नल सी.ए, वेलीके सभापतित्वपर एक कौन्सिल द्वारा शासित होता है*"। उक्त विज्ञानपत्रमें पोलिटिकल एजेण्टने स्वयं लिखा है कि कौन्सिलके सभ्यगणोंके सम्बन्धमें किसी प्रकारका परिवर्तन नहीं हुआ है, सभ्यगण अपने कार्यको सन्तोषके साथ पूरा करते हैं, और राज्यके शासन सम्बन्धमें परामर्श दाता स्वरूपसे हमारी यथेष्ट सहायता करते हैं"।

राज्यका आयव्ययकी व्यवस्थाके जानते ही उस राज्यकी आभ्यन्तरिक अवस्था भलीभांतिसे जानी जा सकती है। राजराणा जालिमसिंहके शासनसमयमें कोटेराज्यकी

* The rebort of tne Political Administration of the Rajputana states 1882- 83.

+ The report of the Political Administration of the Rajputana states 1882- 83.

आमदनी किस प्रकार थी-वह हमारे पाठकोंको यथास्थानमें ज्ञात हुई है। बृटिश राजनीतिसे कोटाराज्य दो भागोंमें विभक्त हुआ; इस कारण वार्षिक बारह लाख रुपयेकी आमदनी सरलतासे लुप्त हो गई. इस समय बृटिश सरकारकी सावधानतासे राज्यकी आमदनी और खर्चा किस प्रकारसे हो गया है सो परवर्ती सूचीमें उसे प्रकाशित करते हैं।

कोटेराज्यकी आयव्ययकी सूची।

संवत् १९३८।

(आमदनी)

	प्रकृत आमदनी सन् १८८१-८२ ई० रु०	आनुमानिक आमदनी सन् ८२-८३ ई० रु०
भूराजस्वचलित	१७७३२१७॥-) ११ पा०	१८५००००
बकाया	५१४७८॥=) ११ पा०	५००००
लवणका शुल्क बृटिश गवर्नमेण्ट-के समीपसे प्राप्त क्षतिकी पूर्ति		१६०००
कोटाराज्य जागीरदारगण		३१७५
छूट	६१५५३॥)	९००००
कानूनगो	९५४०॥-) ७ पा०	१००००
उद्यानविभाग	४२९०।=) ५ पा०	३५००
(वनविभाग)		
तृण	८६५३॥=) ९ पा०	६०००
काष्ठ	१४४४१=) ९ पा०	१३०००
कर	५६४८०।=)	६००००
तलवाना	३३५८६४॥=) ५ पा०	२७५०००
आबकारी	१२६२८।-)	१२०००
टकशाल	१३०५।=) ५ पा०	३०००
जुरमाना	१२१४५॥) ३ पा०	१५०००
फीस	७२३=) १० पा०	१०००
स्टाम्प	२०६४९।)	२००००
तकावी	३७६॥=) ६ पा०	१०००
नानाविध	४४५६४॥।-) ९ पा०	१०००
वार्तावह विभाग	४१९।-) ९ पा०	५००
काराविभाग	१९३३॥।) ८ पा०	१५००
वेतन बचा हिसाब	१८९२२।) ७ पा०	१५००

विनिमय एवं सूद	२०९२७॥≡) ५ पा०	२००००
विविध प्रकार	४६०९२॥=) ८ पा०	५०००
जोड साधारण आमदनी	२४९७१६६॥) ५ पा०	२५२७१७५

अतिरिक्त आमदनी ।

सन् १८७९ ईसवीकी पहिली अगस्तसे सन् १८८२ ईसवी ३१ जौलाई तक लवणका शुल्करहित करके उसके बदले-में बृटिश गवर्नमेंटके निकटसे क्षति पूर्ण प्राप्ति—	४८०००		
१० वर्षके कारण जागीरदारियोंको माफ करके उक्त गवर्नमेंटके निकट-से क्षति पूर्ण प्राप्ति— ...	१५९०५		
सन् १८८१ ईसवीकी पहिली अग-स्तका जेर		४४४८०७–) ७ पा०	६३९०५
सब मिलाकर आमदनी		२९४१९७३॥=)	२५९१०८०

(व्यय)

प्रकृत । ८१-८२ ईसवी		अनुमानिक ८२-८३
बृटिश गवर्नमेंटको देय कर	३८४७२०	३८४७२०
जयपुरके महाराजको देय कर	१४३९७॥।–)	१४३९७॥।–)
महारावकी निज वृत्ति और रनिवासका व्यय	१५७०००	१५७०००
पोलिटिकल एजेन्सी	३०२२२॥≡) ५ पा०	३०५९४
अश्वशाला	३३१६८) २ पा०	३९१००।–)
हस्तीशाला	१७३८९≡) १ पा०	१४९७॥)
गोशाला	७६६०॥=) ३ पा०	९८९३।–)
उष्ट्रशाला	९०१२	१०३६०
फर्रास खाना	६६७८।–)	५२७९
खड, घास, काष्ठ	६१४॥।=) ३ पा०	७८७॥)
अन्यान्य विभाग	६४५५॥) ३ पा०	८०२८=)
कौंसिलके–सभ्यगणोंका वेतन	१८०४८	१८०४८

आफिस खर्च और कर्मचारियोंका वेतन	४६२६=) ६ पा.	४८०५
(राजस्व विभाग)		
माल सरदार	१७२०९।।।) ९ पा.	१७६९॥≡
विजामत	१०११९२।≡	११९३०६
वनविभाग	४४९५।।।–) ६ पा.	६५५५=
छूट	७५३०५=)	९००००
कानूनगो हक्क	३१२४।।।) ५ पा.	४५००
शुल्कसंग्रह विभाग	१६७०१≡)९ पा.	१९८८४
वार्तावह विभाग	५११९७≡	५२७३ ।।।)
हिसाब रक्षाविभाग	७०२६	७५९६
धनागार रक्षाविभाग	३९५८	५५२४
अम्बर	३५४४	३६०८।।)
टकशाल	८२१	१३२
अपील अदालत	६२१८	६५१६
दीवानी	४११५	४११९
फौजदारी	३९७६	४०८६
पुलिस विभाग	१३४०५।।।) १पा.	१३५२७।)
थानासमूह	१४७४७।।।≡	१०५२८
ष्टाम्प विभाग	५४३।=) १ पा.	७००
(समरविभाग)		
कार्यालयका विभाग	८०७१।–	८१६०
गोलन्दाज दल	६०२६६।–)९ पा.	६१८९९॥
दुर्गरक्षक सेनादल	३०८१६।) ६ पा.	२९१८९॥
नियमित अश्वारोहीदल	७३८९४।।।≡)९ पा.	७५४२०
अनियामित अश्वारोहीदल	३१०४९≡	३१०५६
नियामित पैदल	७८४८१॥=	६९०६७
अनियामित पैदल	१३६५१७) १ पा.	१४१९८०।
वृत्ति	५००५।–	५६७४।।।=
पूर्वकार्यविभाग	३३०२२	२९९१९६
काराविभाग	१४५६५।।)१ पा.	१५२२४॥
उद्यानविभाग	७२५४=	८००७=
बन्दोबस्ती विभाग	४९०२९	३९५२८॥

वकीलोंका वेतन	८१७५॥=)१० पा.	८७०९।
धर्मसम्बन्धी और दातव्य	१३१११७) ९ पा०	५५००
पर्वोत्सव	६३०९॥	६६०३।≡
विवाहका व्यय	५४१२।–)९ पा०	५५००
श्राद्धमें सहायता देना	३५५८।।।)	४००००
अतिथिसत्कार	१८३१≡)९ पा०	२०००
नानाविध	३४८५।≡)६ पा०	३५००
सरंजाम	८९८९)१ पा०	९३७६
तकावी	१०	५००
अन्यान्य खर्च	४८०॥)८ पा०	५००
शिक्षाविभाग	३९०४।≡	५४५५
चिकित्साविभाग	१०२३८॥≡)८ पा०	१०४५२
विनिमय शुल्क और सूद	८८२–)८ पा०	१०००
वकीयत	१२४८	१२४८
इजलाईका व्यय	१५७०	१९०८
जुरमाना प्रतिप्रदान	३३४६।≡)३ पा०	२५००
लवणका कर नहीं लेनेसे साम-न्तोंकी क्षति पूर्ण ...	... ...	३१७५
भत्ता	६०००	७०००
अनेक प्रकारका व्यय	२५७५५=)९ पा०	३५०००
घरका संस्कार	१००००≡)	१००००
मेउ कालिजका बोर्डिंगहौस	२५०१४।।।)६ पा०	२५००
कुल साधारण व्ययका जोड	२०५५३२२।–)२ पा०	२०५०७०२।–)
अतिरिक्त व्यय अजमेरका कैसर-बाग उद्यानके वृक्ष बावडीके-बनानेका व्यय	६२२७।।।–)९ पा०	
२० वषक कारण लवणणे माप राहित करनेमें जागीरदारोंकी क्षति पूर्ण-ऋणशोध	३३५११८)७ पा०	१५९०५)
कुल व्यय	२३९६६६६≡)६ पा०	२०६६६०७।–)
सन् १८८१ ईसवी ३१ जुलाई तक	५४५३०५।=) ६ पा०	
कुल	३९४१९७१॥=)	

जिस दिनसे बृटिश गवर्नमेण्टने कोटेराजधानीके दो भाग कर झालावाडकी राजधानी बनाई है, जिस दिनसे कोटेराजके वार्षिक पन्द्रह लाख रुपये आमदनीमेसे घट गये उसी दिनसे कोटेके राजा महाराव रामसिंहजी अपने पैतृक पदके सम्मानकी रक्षा करनेसे ऋणी हो गये। उनकी मृत्युके पीछे सामन्त मण्डलीने जिस समय कोटेके शासन भारको लेकर राज्य चलाया उस समयमें भी ऋण बढता गया। वर्तमान समयमें वह ऋण प्रायः जा चुका ह, यह बडे सन्तोषकी बात है, । पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है कि " ऋण चुकानेमें जो रुपये दिये जाते हैं वह व्ययके बीचमें नहीं गिने जाते। सन् १८८० और १८८१ ईसवीमें ऋण देनेवालेको असल और सूदके हिसाबसे ३३५११८) रुपये दिये गये हैं। आगामी ३१ जुलाईमें वर्तमान वर्षका जो शेष होगा उसमें ऋणके हिसाबमें चार लाख रुपये दिये जांयगे। अतएव राज्यका ऋण चुकानेमें और प्रायः तीन लाख रुपये बाकी रहैंगे। राज्यको ऋणसे मुक्त करके अवश्य ही गवर्नमेण्ट धन्यवादकी पात्र होगी।

राज्यकी आमदनी बढानेमें वर्तमान शासकोंकी दृष्टि हो रही है। राज्यकी भूमिका नाप मानचित्र बना कर उसके द्वारा पृथ्वीपर कर बढाया जाता है; पोलिटिकल एजेण्ट लेफटिनेण्ट कर्नल वेली साहब उक्त विषयके सम्बन्धमें लिखते हैं, कि " इस विषयका यथोचित उत्कर्ष साधित होता है, यह मैं खुशीके साथ सूचित करता हूँ; दश निजामत वा परगनोंका नवीन राजकर निर्द्धारित हो चुका है, एवं उनमें नौ परगनोंसे नवीन राजकर वसूल होता है, दूसरे दो निजामत् वा परगनोंका राजकर निर्द्धारित करनेका काम चल रहा है उसके समाप्त होनपर और ३ परगनोंका नूतन कर निर्द्धारित करना शेष रहेगा। उपरोक्त नौ परगनोंके नूतन बन्दोबस्तसे वार्षिक ६४१६०) रुपयेका राजकर अर्थात् ५॥ रुपये सैकडा बढाया हुआ आता है।" पंडित शिवबक्स इस बन्दोबस्ती विभागके अध्यक्ष हैं; उनके निरीक्षणमें पोलिटिलल एजेण्टको बडा सन्तोष है, इस नये बन्दोबस्ती विभागके व्ययके सम्बन्धमें पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, कि "गतके मार्चके अखीर तक इस बन्दोबस्ती कार्यमें कुल ३२७४१५) रुपये खर्च हुए हैं इसमेंसे जारीफ कार्यमें ९३४८८) रुपये उठे हैं, जरीफका काम समाप्त हो गया है"।

समस्त प्रजाके साथ न्यायका विचार हो इस बातपर बडा ध्यान रक्खा गया है सैयद जाफरहुसने कोटेके सबसे प्रधान विचारपति हैं। उनके सम्बन्धमें पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, " पहिली रिपोर्टमें मैंने सैय्यद जाफरहुसेनके सम्बन्धमें जो मन्तव्य प्रकाश किया था वर्तमान रिपोर्टमें भी उसी प्रकार सन्तोषके साथ प्रीतिजनक मन्तव्य प्रकट करता हूँ।

+ The Report of the political Administration of the Rajpu'ana states 1882—83

(१) वर्तमान अध्यायमें उद्धृत समस्त अंश सन् १८८२-८३ ईसवीके राजपूतानेकी शासन रिपोर्टसे लिये हैं।

"वह बडी सावधानी और न्यायसे कोटेके सामन्तोंके अभियोगकी मीमांसा करते हैं। वह कोटेकी अपील अदालतके जजका काम भी करते हैं"।

पुलिसविभागकी रिपोर्ट देखनेसे राज्यके भीतरी शासनका यथार्थ हाल जाना जाता है। हम इसी स्थलपर कोटेराज्यके फौजदारी अपराधोंकी सूची प्रकाशित करते हैं।

कोटा राज्यके फौजदारी अपराधोंकी सूची।

सन् १८८२।८३ ईसवी.

अपराध	संख्या	अभियोग उपस्थित	पकडे गये	दंड	मुक्ति	हरणकीहुई संपत्तिका मूल्य	आदाय		
							पशु	रुपये.	पशु.
हत्याकांड	२	१	६	१	५	..			
हत्याचेष्टा	४	३	३	१	२	...	३५	२१५)	०
अन्यभांति	२७	८	२१	७	१४	१०३१।=)।	१६	१७३॥।-)॥	१
पशुचोरी	७६	५२	१०२	७६	२६	...	४७४	०	३३५
अन्य विधचोरी	२६२	१५२	३०४	१८२	१२३	२१७५४।=॥	०	११५०॥=॥।	०
आत्महत्या	४७	२६	४७	३१	१६	...	...	...	...
विष प्रयोग	५	५	५	३	२	...	...	...	...
विशेष आघात	१७	११	१३	९	४	...	...	...	...
मनुष्यविक्रय	२	२	६	५	१	...	...	...	...
मनुष्य चोरी	२८	२१	५२	३०	२२	८५९)	...	...	...
भ्रूणहत्या	६	५	११	४	७	...	...	...	...
शिशुकन्या हत्या	१	१	१	१	०	...	...	...	...
जेलसे भागना	५	४	५	५	०	...	...	...	...
चोरीका माल लेना	१४	८	९	४	५	...	...	६२।-)॥	...
घरमें आग लगाना	३	२	३	२	१	...	...	...	...
अन्य अपराध	६२४	३११	५२७	३८४	१८३	१०२४।)	१७	२५८॥)	१०
डकती	७	१	१	१	०	२४२०।)	...	...	...
	११३१	६१३	११९६	७४५	३७१	२७२५९।=	५४२	२६६९।=)।	३४६

लेफटिनेण्ट कर्नल बेलीने लिखा है, सन् " १८८२।८३ ईसवीमें जो अपराध हुए हैं उन सबकी संख्या ११३१ है, अतएव पहिले वर्षके सब अपराधोंकी संख्या १००७के साथ मिलाई जाय तो इस सालकी कुछ अधिक जान पडती है। विशेषकर पशु और सामान्य चोरीके अपराध अधिक हुए हैं। पहिले वर्षोंकी अपेक्षा इस वर्षमें अनाज कम हुआ, इसीसे ऐसा हुआ, कारण लुटेरोंके दलने उक्त दशामें अधिक अपराध किये, इस राज्यकी सीमाके अन्तमें जैसे घोर भयानक और बडे जंगल हैं उसमें ऐसे अपराधोंका एक साथ दूर करना कठिन है "।

"गत वर्षमें डकैती हुई। पहिले वर्षमें नौ डाके पडे, यदि इसके कई वर्ष पहिलेके डाकोंकी संख्याके साथ तुलना की जाय. तो यह फल अवश्य ही संतोषजनक होगा, कारण कि पूर्व वर्षोंमें हिसाबसे ५० से भी अधिक डाँके पडे हैं "।

" ८ डॉकोमेंसे ५ तो सामान्य हैं कारण कि उनमें अति सामान्य मूल्यकी सम्पत्ति नष्ट हुई है "

हम इस बातको मुक्तकंठसे कहते हैं कि कोटेराज्यकी डकेतीके दमन करनेमें पुलिसने बडी प्रशंसाका काम किया है। पहिले धनवान् प्रजा शंकित रहती थी अब पुलिसके कठोर शासनसे सब प्रजा निर्भय रहती हैं।

वर्तमान शासन समितिके तत्त्वावधानमें अन्य विभागोंके समान कोटेके जेलखानेकी अवस्था बहुत सुधर गई है। पोलिटिकल एजेण्टने लिखा है, " नया जेलखाना बडा सन्तोषदायक बना है और आगरेके सेंट्रलजेलके तत्त्वावधायकसे जो एक दारोगा प्राप्त हुआ है उसके द्वारा जेलखानेके समस्त कार्य बडी उत्तमताके साथ चलते हैं। कैदियोंका स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

सन् १८८१ ईसवीमें इस नये जेलमें कैदियोंके आनेपर उनका स्वास्थ्य जो अच्छा हुआ है वह नीचे लिखी सूचीसे जाना जा सकता है।

सन्	१००० पर मृत्यु संख्या।
७९–८० ईसवी	९१
८०–८१	६२
८१–८२	२९--९६
८२–८३	१०

प्रतिदिन जेलमें औसतसे निम्न लिखित कैदी थे.

दण्ड प्राप्त कैदी-- २८४

विचाराधीन– २१

शिक्षाविभाग सम्बन्धमें उक्त रिपोर्टमें लिखा है कि बाबू यदुनाथ घोषके प्रबंधसे कोटेके विद्यालयने क्रमशः उन्नति पाई है। प्रतिदिन औसत२४६विद्यार्थी उपस्थित होते हैं पहिले वर्षोंसे इनकी संख्या बढी है, इससे राज्यसे मिले हुए गवर्नमेण्टके अधिकारी

प्रदेशोंके रहनेवाले मनुष्य शिक्षाविषयमें जितना मन लगाते हैं वैसा कोटेके रहनेवाले मन लगाकर नहीं पढते ।

" कोटेराज्यके बीच एक प्रधान नगर बारनमें एक नया विद्यालय खुला है और साधारण मनुष्योंके लिये इसी भांति जिलास्कूल बनाये जा रहे हैं " ।

"कोटेके विद्यालयके विद्यार्थी और शिक्षकोंकी संख्या नीचे लिखी जाती है " ।

	अंगरेजी विभाग	फारसी विभाग	संस्कृत विभाग	हिन्दी विभाग	कुल
विद्यार्थी	३८	१५२	२६	२०२	४१८
शिक्षक	२	४	१	४	११

कोटेके पोलिटिकल एजेंटकी यह बात यद्यपि हम मानते हैं कि कोटेके रहनेवाले मनुष्योंका विद्योपार्जनमें बडा अनुराग नहीं है तो भी हम कह सकते हैं कि वर्तमान शासन समिति राज्यके भिन्न विभागके लिये जैसा व्यय निर्देश करती है, उसके साथ मिलान करनेसे जान पडता है शिक्षाविभागका व्यय बहुत ही कम है । जातिकी उन्नति शिक्षापर ही निर्भर है । उस स्थायी यथार्थ उन्नतिका साधन करना यदि वर्तमान शासनसमितिका वास्तवमें उद्देश हो तो शिक्षाविभागका व्यय शीघ्र ही बढा देना चाहिये ।

कोटेराज्यका परिमाण पाँच हजार वर्ग मील है, अधिवासियोंकी संख्या कुछ कम पाँच लाख है । सेनामें ४६०० पैदल, ७७०० घुडसवार और ११९ तोपें हैं । सम्पूर्ण सेना आजकल महारावके तत्त्वावधानमें है ।

(कोटेराज्यका इतिहास समाप्त)

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.
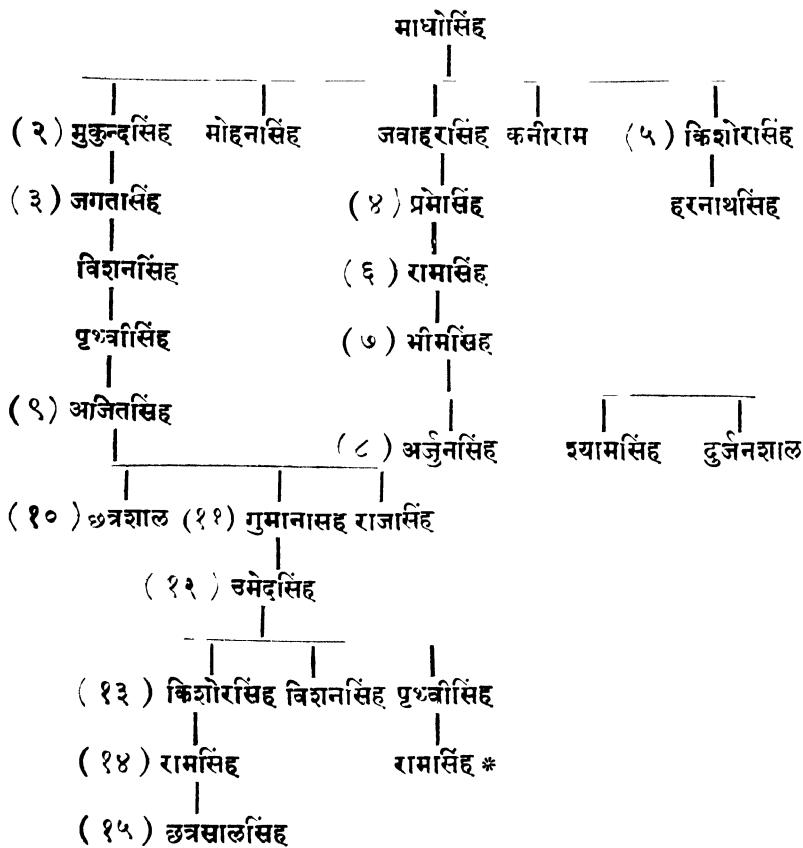
* महाराज किशोरसिंहके बाद गद्दी पर बैठे।

राजस्थान.

दूसरा भाग.

कर्नल टाडका भ्रमणवृत्तान्त.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसरा भाग २.

कर्नेल टाडका भ्रमणवृत्तान्त ।

प्रथम अध्याय १.

उदयपुरसे यात्रा–खैरोदाका सर–मानदेश्वरका प्राचीन मंदिर–भारतीवार–वहांके जैन मंदिर–खैरोदा–मेवाडके आत्मविद्रोह सम्बन्धकी कहानी–संग्रामसिंहकी वीरता–उनका खैरोदा लाभ–संग्राममें दत्तकपुत्र जयसिंह–विलायतमें राजनैतिक सधिबंधनके समय दोनों ओर वीरता प्रकाश करना–खैरोदाके कृषिवाणिज्यका विवरण–हिन्ता–धर्मके आशयसे बहुत विस्तारित पृथ्वीका देना–देवताके निमित्त अर्पित पृथ्वीमें हिता और दूदियाका स्थापन–राजा मांधाता–उनके संबंधी प्रवाद–अश्वमेधयज्ञ–उनके द्वारा ऋषियोंको माइनाद देश मिलना–महाराष्ट्रोंके विरुद्धमें राजसिंहकी वीरता प्रकाश करना–मेवाडके राज्यकी सीमा–मसवन–कर्नेल टाड साहबके हृदयकी कथा ।

कर्नेल टाड साहबने राजस्थानके समस्त इतिहासको वर्णन करनेके पीछे स्वयं अपने भ्रमण वृत्तान्तको भी वर्णन किया है, और उसी भ्रमण वृत्तान्तके समाप्तिके साथ यह बडाभारी इतिहास भी समाप्त किया गया है । दयालु पाठकगण धीरे २ हमारा अनुसरण करके इस समय इस विशाल इतिहासके शिखरकी अंतिम चूडापर पहुँच गये हैं । इस अंतिम स्थानमें हमारा अंतिम अनुरोध यही है कि पाठकगण किञ्चित् धैर्य धारण करके इतिहासरूपी कल्पवृक्षके शिखरपर पहुँच कर अमृतमय संतोषरूपी फलको प्राप्त करनेमें समर्थ होंगे और उसके साथ ही साथ हमारा भी परिश्रम सफल होगा, और पाठक भी अपने समयको सफल हुआ जानेंगे—हमारा यही आन्तरिक अनुमान है ।

राजस्थानके प्रथम कांडमें कर्नेल टाड साहबने तथा मारवाडमें जाकर वहांसे लौट कर रजवाडेके अनेक देशोंकी प्राकृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक और शासन सम्बन्धी कहानी पाठकोंको विदित कराई थीं । इतिहासवेत्ता कर्नेल टाड साहब उक्त भ्रमण समाप्त करनेके पीछे सन् १८२० ईसवीकी २९ जनवरी तक उदयपुरकी राजधानीमें रह कर विशेष राजनैतिक घटनाओंके होनेसे बूँदी और कोटेराज्यको चले गये । बूँदी और कोटा इन दोनों राज्योंके राजनैतिक विषयोंके देखनेका भार गवर्नमेण्टने

इनके हाथमें सौंप दिया था। कोटा और बूँदीराज्यमें कर्नेल टाड साहबके पहले और कोई अंग्रेज नहीं गया था। इस स्थानसे हम कर्नेल टाड साहबके अनुगामी हुए।

": उदयपुर—२९ जनवरी सन् १८२० ईसवीमें यद्यपि हम उदयपुरमें जाकर वहाँ एक महीने भी विश्राम न करसके, तथापि शीतऋतुके आते ही भारतवर्षकी प्रकृतिने अत्यन्त आनन्ददायक मूर्ति धारण की, हमारे हृदयमें उसी समय भ्रमण करनेकी अभिलाषा हुई। अंग्रेज लोग भारतके प्रचंड ग्रीष्ममें तथा कष्टदायक वर्षाऋतुके विशेष क्लेश भोगनेके पीछे, शीतऋतुको स्वास्थ्यके लिये उपयोगी और सुखदायक मानते हैं।

खैरोदा—२९ जनवरीको हमने तूष शिखरसे चलकर छः कोशपर जाय खैरोदाके विस्तारित ह्रदके किनारे डेरे डाल दिये, हम जिस मार्गसे हो कर आये थे वहांकी भूमि उत्कृष्ट और भलीभांतिसे जलयुक्त थी। परन्तु बहुत समयसे वहां खेती नहीं हुई। दुबाके नामक स्थानसे डेढ मील दूरीपर हम बैरस नदीके पार हुए, दोरौली नामक ग्राममें उस नदीसे एक स्रोता निकल कर एक झील अथवा तालाबके आकारके समान हो गया है। उस नदीके किनारे मानदेश्वर नामक महादेवका एक अत्यन्त प्राचीन मन्दिर बिराजमान है। उस मन्दिरके गठनकी रीति देखनेसे उसकी प्राचीनताका अनुभव किया जा सकता है। यह आबूके शिखरके समीप चन्द्रावतीके प्रसिद्ध मन्दिरके सामने बना हुआ है, और इससे यह प्रवाद वाक्य प्रमाणित होता है कि पूर्वकालमें सर्वत्र ही मन्दिर एकभावसे बना करते थे और यह रीति अचल थी।

हम दक्षिणसे आध कोश दूर सूरजपुराकी सरायको लांघकर भारतीवारके दल-दलमें फँस गये, यह नगर चारों ओर जलभूमि पूर्ण है, मेवाडके सोलह जनोंमें सबमें प्रधान कनोराके सामन्त इस नगरके अधीश्वर हैं; और यह नगर अत्यन्त प्राचीन कह कर विख्यात है। ऐसा प्रगट है कि राजा विक्रमाजीतके बडे भाई भर्तृहरिने इस नगरकी प्रतिष्ठा की थी। यहाँ ऐसा प्रवाद प्रचलित है कि एक समय इस नगरमें सातसौ पचास (७५०) जैन मन्दिर थे, और एक साथ ही सबमें घंटा बजता था। मन्दिरोंमेंसे टूटे फूटे कुछेक मन्दिर पाये जाते हैं और उनको देखनेसे उनकी प्राचीनताका सरलता से अनुभव होता है, परन्तु साबित मन्दिर कोई भी नहीं है। खैरोदाके आधकोश पीछे हम खेरसना नामक ग्राममें गये, वह ग्राम ब्राह्मणोंके अधिकारमें था इसीसे यह ब्रह्मोत्तर कहाता है।

खरोदा एक समृद्धिशाली स्थान है; चारों ओर गढ किला है, तथा उस गढ़के बाहर दो खंदक हैं, उन दोनों खातोंमें इच्छानुसार नदीका जल भरा जा सकता है। मेवाडकी प्राचीन राजधानी चीतौड और नवीन राजधानी उदयपुर इन दोनोंके सम-मध्य स्थानके ऊपर यह खैरोदा और किला स्थापित है, मेवाडके आत्मविद्रोहके समय इसी स्थानपर विवाद विसंवाद हुआ करता था। सन् १७४८ईसवीमें जिस समय मेवाडमें भयंकर आत्मविद्रोहकी आग भडक उठी थी, उस समय शक्तावत् संग्रामसिंहके पोष्य पुत्र और लावाके रावत जयसिंह जो उस विद्रोहके एक प्रधान नेता थे, उन्हींके अधीनमें

यह देश था। इस देशको विशेष आय मूलक जान कर और विशेष प्रयोजनीय स्थानमें स्थापित होनेके कारण इस देशको किसी सामन्तके हाथमें विश्वासपूर्वक अर्पण करना उचित न विचार कर अब यह महाराणाके ही अधीनमें है। परन्तु लावाके सामन्तने ४ मईके संधिपत्रमें * बहुतसी आपत्तियोंके पीछे हस्ताक्षर करके यह खैरोदाका किला जो उनके कुटुम्बियोंके रक्तपातसे उनके हस्तगत हो गया था वह महाराणाको अत्यन्त अनिच्छासे लौटा दिया।

खैरोदाके इतिहासमें मेवाडके आत्मविवादका उत्कृष्ट चित्र अंकित पाया जाता है। उस आत्मविवादमें मेवाडकी श्रेष्ठ सम्प्रदायके शक्तावत् संग्रामसिंह और चन्द्रावत भैरोंसिंहकी ओरके बहुतसे वीर मारे गये। सन् १७३३ ईसवीमें संग्रामसिंह जिस समय अल्पवयस्क युवक थे उनके पिता श्योगढके रावतलालजी उस समय जीवित थे, उस समय उन्होंने अपने अधीश्वर राणाके अधिकारसे खैरोदाको छीन लिया और क्रमानुसार ६ वर्ष तक अपने शासनके अधीनमें रक्खा सन् १७४० ईसवीमें देवगढ आमेत कोरावर, इत्यादि शत्रुपक्षकी सम्प्रदाय सामन्त अपने नेता सालूंबरके सामन्तोंके अधीनमें जाकर महाराणाके दीपरा मन्त्रीके साथ शक्तावत्को उक्त खैरोदासे भगानेके लिये इकट्ठे हुए। शक्तावत् नेताने चार महीनेतक उन आक्रमणकारियोंके हाथसे किलेकी रक्षा कर अन्तमें एक समय किलेकी चोटीपर एक संधि प्रार्थनाकी सूचना देनेवाली सफेद पताका उडा दी, इस प्रकारसे वह किलेको समर्पण करनेके लिये तैयार हुए। वह अपने सेवक और कुटुम्ब तथा धन सम्पत्तिको लेकर शक्तावतोंकी राजधानी भींदर नामक स्थानको चले गये। शत्रु उनका कुछ भी अनिष्ट न कर सके, अवरोधकारियोंके उक्त प्रस्तावमें सम्मत होते ही श्योगढके उत्तराधिकारी संग्रामसिंह भींदरमें जा पहुँचे। इन्होंने वहाँ जाकर अपने शत्रुओंका नाश करनेके लिये संहारमूर्तिसे चारों ओर महा उपद्रव और अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये। उसके सम्बन्धमें मेवाडमें बहुतसे प्रवाद और गल्प आजतक प्रचलित हैं। इन्होंने एक समय गुरलीनामक स्थानमें जाकर वहांके समस्त पशु और निवासियोंको बन्दी कर लिया। कोरावरके सामन्तके पुत्र जालिमसिंह उक्त स्थानको निवासियोंके सहायताके लिये गये। परन्तु संग्राममें भयंकर भालोंके आघातसे उनके प्राण नष्ट हो गए। उनकी इस मृत्युका बदला लेनेके लिये उस देशके प्रत्येक चाँदावत सालूंबरके सामन्तोंकी पताकाके नीचे इकट्ठे होने लगे। महाराणाने स्वयं उन चन्दावतोंके पक्षका अवलम्बन कर अपनी वेतनभोगी सेन्धवी सेनाको शीघ्र ही भेजा और उसने तुरन्त ही भींदरको जा घेरा। जिस समय भींदरपर आक्रमण किया था, उस समय कोरावरके सामन्त अर्जुनसिंहने अपने पुत्रनाशका बदला लेनेके लिये अचानक वहाँसे श्योगढमें जाकर वहाँ अधिकार कर किलेमें रहनेवाले प्रत्येक स्त्री पुरुषका प्राण नाश किया। खैरोदा कई वर्षतक महाराणाके खास अधीनमें था, अन्तमें उन्होंने परिणामको न विचार कर झगडेका मूलकारणस्वरूप वह किला भेंदसरके चंदावत सामन्त सरदारसिंहको दे दिया।

* प्रथम कांडमे यथास्थान प्रकाशित हो चुका है।

संवत् १७४६ में चन्दावत् सरदार महाराणाके विरुद्धमें विद्रोही होनेसे उनकी कोपदृष्टिमें पडकर पग २ पर अपमानित हुए। उनके चिरशत्रु शक्तावत् उस अवसरमें भींदरके सामन्तोंके नेताके अधीनमें अपनी २ सेनाके साथ हो जो सेन्धवीसेना उस किलेमें रक्खी थी उसके निकालनेके लिये इकट्ठे हुए। कोरावरके सामन्त अर्जुनसिंह, उस समय सेन्धवीदलके नायक कुलीखांके साथ किलेमेंकी सेनाकी सहायता करनेके लिये गये। किलेके समीप ही प्रबल समरानल प्रज्वलित हो गई। उस संग्राममें अपने हाथसे कोरावरके दो अधीन सामन्त सीकरवाल गोमान और राणावत भीमजीका प्राण नाश किया गया। परन्तु अंतमें चांदावतोंने ही रणक्षेत्रमें जयलक्ष्मीका आलिंगन किया, शक्तावत् शीघ्र ही भींदरसे चले गये। इस समय कोटेके जालिमसिंह जिन्होंने इन दोनों सम्प्रदायोंमें वैरभावको भलीभांतिसे प्रज्वलित कर दिया था, जिन्होंने इस विवाद करती हुई दोनों सम्प्रदायोंके हाथसे अन्तमें स्वयं उस किलेको अपने हस्तगत करनेका विचार किया था, उन्होंने इस समय शक्तावतोंकी सहायता करनेके लिये एक दल अरब सेनाका भेज दिया। शक्तावत् उनके साथ मिलकर फिर चांदावतोंपर आक्रमण करनेके लिये धावमान हुए। चांदावत् इस समय अकोलाके समतलक्षेत्रमें स्थिर थे, वह शीघ्र ही रणक्षेत्रमें जा पहुँचे, परन्तु अंतमें परास्त हो गये। उस समय सैन्धवी सेनाके नायकके मरते ही सेना छत्रभंग होकर भाग गई। संग्रामसिंह शत्रुओंके विरुद्ध-में उस समर तथा अन्यान्य युद्धोंमें नायक बने इसीसे उनके शरीरमें तीन स्थानोंमें भयंकर आघात लगे। परन्तु वह उस भयंकर आघातोंसे किञ्चित् भी दुःखित न हुए, वरन् उन्होंने राणाके समीपसे अधिक सम्मान पाया, और शत्रु चांदावतोंको भगा दिया। इस प्रकारसे उस युद्धके पीछे खैरादोका किला संवत् १७५८ सन् (१८०२ ई.) तक महाराणाके अधीनमें था, इसके पीछे संग्रामसिंहने दशहजार रुपया महाराणाको भेटमें देकर उस किलेको अपने अधिकारमें कर लिया। सन् १८१८ ईसवीमें जिस समय हम (गवर्नमेण्ट) महाराणा और उनके सामन्तोंमें संधि स्थापन और मध्यस्थता करनेमें नियुक्त हुए उस समय तक उक्त खैरोदाका किला शक्तावतोंके असीम साहस, वीरता और जयचिह्नस्वरूपसे उनके अधीनमें था। संग्रामसिंहके पोष्य पुत्र लावाके रावत जयसिंहने उस समय खैरोदाके किलेको महाराणाको देनेमें असम्मति प्रकाश की, यह कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है। वह यहाँतक आगे बढे कि उन्होंने किलेकी दीवारके नीचे सेनाको इकट्ठा करनेकी आज्ञा दी। और जिससे उनमें का कोई भी मनुष्य किलेके बाहर महाराणाकी ओरके किसी मनुष्यके साथ बात चीत न करे, ऐसा भी प्रबन्ध किया गया। अत्यन्त सूक्ष्म कारणके उपस्थित होनेपर दुर्गके घेरने और अधिकारके उद्योगसे उस समय मेवाडके समस्त चांदावत् आनन्दित हो इनके समीप सहायक हो आये थे। और जिस समय महाराष्ट्रोंके अत्याचार उत्पीडन तथा राज्यग्रासके मुखसे मेवाडका उद्धार किया था उस समय फिर प्राचीन शत्रुताकी अग्नि प्रज्वलित हो गई थी।

परन्तु जिस समय यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया था, उस समय खैरोदोके अधीश्वर जयसिंह आप उदयपुरकी राजधानीमें महाराणाके यहाँ उनके अनुचर स्वरूप

से रहते थे। यदि जयसिंहका कोई सेवक किलेके बाहर जाकर महाराणाकी ओरके मनुष्यके साथ साक्षात् करता तो जयसिंहकी सेना अवश्य ही उसकी हत्या कर देती। यद्यपि हमारे विचारसे जयसिंह उस समय महाराणा और बृटिश गवर्नमेंटके समीप विद्रोही रूपसे गिने जाते थे परन्तु उस समय कोई कार्य भी विद्रोहकी सूचना करनेवाला नहीं हुआ तथा राणा और रावत दयालु अधीश्वर एवं राजभक्त सामन्त भावसे रहते थे, अन्य किसी प्रकारका विरुद्धभाव दिखाई नहीं देता था। उक्त खैरोदाके किलेको हस्तगत करनेका कार्य सरलतासे हो जाय, इस प्रस्तावसे मीमांसाका भार राणा और रावतके पक्षके कामदार वा प्रतिनिधियोंके हाथमें सौंपा गया। उन प्रतिनिधियोंमेंसे किसी प्रकारका विरुद्धज्ञापक व असंतोषदायक आचरणदृष्टि नहीं आया, वरन् सरलतासे मीमांसा होनेकी आशा दृष्टि पडी थी। एशियाके निवासी सूचना और उसकी परिणतिमें समयको विवादवाला नहीं जानते, परन्तु शीत प्रधान देशके मनुष्य उसे वैसा जानते हैं। किसी प्रकारके विवाद विसंवादकी ममिांसाके समय एशियावासी अधिक धीरता प्रकाश करके अपनी मर्यादाकी रक्षा करनेमें खूब शिक्षित हैं।

खैरोदादेश मेवाडकी प्रथम श्रेणीके खालिसा विभागका एक पट्टा वा उपविभाग है। छोटे २ ग्रामोंके अतिरिक्त इसमें १४ शहर भी हैं इन सबके उप विभागका वार्षिक १४५०० रुपया राजकर है, एकमात्र खैरोदाका वार्षिक राजस्व ३५०० रुपया है।

यहांकी भूमि साधारण तीन श्रेणियोंमें विभक्त है (१) पेविल भूमि, कूपोदकसे इसका कृषिकार्य होता है, (२) गुरसाभूमि, इसमें भी जल सींचा जाता है (३) मार वा मालभूमि, इसमें खेती वर्षाके जलके बिना नहीं होती। यहां केवल दो ऋतुओंमें धान्य उत्पन्न होते हैं। पहिले उनालू, अर्थात् ग्रीष्म कालीन धान्य, दूसरे शीयालू वा शीतकालीन धान्य। प्राचीन हिन्दूशासनके समान महाराणा यहांका भी कर स्वरूपमें उस उत्पन्न हुए धान्यमेंसे अपना भाग लेते हैं। ग्रीष्मकालमें गेहूं, जौ, चना उत्पन्न होते हैं। सौ २ मन करके रीति अनुसार उसका भाग कर खालिहानमें जमा होता है पीछे उसे २५ मनसे चार भागोंमें विभक्त किया जाता है, उन चारों भागोंमेंसे प्रथम ग्रामके समस्त मनुष्योंको जो मिलता है वह उनसे मनके ऊपर एक २ सेर करके लेते हैं। (१) पटेल वा ग्रामाध्यक्ष (२) पटवारी वा हिसाबरक्षक (३) साना वा प्रहरी (४) बुलाई वा संवादवाहक एवं साधारणतः पशु पालक[1], (५) काछी सूत्रधर (६) लुहार वा कर्मकार (७) कुंभकार (कुम्हार) (८) रजक (धोबी) (९) चमार और (१०) नाई इन दश मनुष्योंको मन पीछे एक सेरके हिसाबसे प्रत्येकको २॥ मन करके धान्य मिलता है, तब मूल चार अंशोंमेंका एक अंश उठ जाता है। शेष तीन अंशोमेंका एक अंश (२५ मन) राजमें करस्वरूपसे लिया जाता है। बाकी दो भागोंमेंसे युवराजके नामका दो मन दिया जाता है, और शेष समस्त धान्य

---

(१) जो मनुष्य समस्त ग्रामके पशुओंको चराता है, तथा जिससे पशु खेतका अनिष्ट न करैं वह उस विषयमें दृष्टि रखता है।

किसानको मिलता है, उक्त ग्रामके दश मनुष्योंको जो धान्य मिलता है अल्पकालसे उसके ऊपर भी हस्ताक्षेप किया गया है, प्रत्येक मनके ऊपर तीनसेर काट लिया जाता है। युवराजके नामका एकसेर, राणाके प्रधान अश्वपालके नामका एक सेर एवं मोदी अर्थात् शस्यरक्षा विभागके अध्यक्षके नामका एक सेर लिया जाता है। वह समस्त धान्य ही राजाके यहां भुक्त होता है। इसके पहिले जैसा चार अंशोंमेंका एक अंश राजाको मिलता था, इस समय उसके बदलेमें दश अंशोंमेंका तीन अंश मिलता है, परन्तु धान्य कटनेके पहिले ग्रामके मनुष्य और एक बार धान्य ले जाते हैं, जो धान्य बोते हैं वह भी दो तीन सेर लेते हैं।

शीयालू वा शीतकालमें मकाई, ज्वार और बाजरा उत्पन्न होता है, उसके विभागका कार्य निम्नलिखित प्रकारसे किया जाता है। प्रति सौमन पर ५० मन राजाका करस्वरूप रखकर उक्त ग्रामके दश मनुष्योंको मनपर एक २ सेर देकर बाकी जो बचता है वह सब किसानको मिलता है।

गन्नो, रुई, नील, अफीम, तमाखू, तिल इत्यादिकी खेती भी यहां होती है, इस परसे नियमित रुपया करस्वरूपमें लिया जाता है। प्रति बीघेके ऊपर दो रुपयेसे दश रुपयेतक कर लिया जाता है।

हिन्ता-३१ जनवरी। जिस माल शब्दसे इस देशका नाम मालवा हुआ है। उसी माल नामक श्रेष्ठ कर्षण की हुई भूमिके ऊपरसे होते हुए तीन कोश लांघ कर हम आ गये। हम सूर्य भगवानके उदय होनेसे बहुत पहिले घोडेपर सवार हो बाहर हुए,

वह प्रभात कालीन पवन जैसी शीतल थी वैसी ही आनन्ददायक थी इस समय किसान खेतमें गेंहू, जौ, चने इत्यादि नवीन श्यामल शस्यको देख कर हँसते हुए विचार रहे थे कि अबकी बार भगवानने दयालु होकर खेती बहुत अच्छी की है, अब इसका कोई कुछ अनिष्ट नहीं कर सकेगा। ग्रामकी कुटियां सब नवीनतासे छा गई थीं। नवीन दीवारें इत्यादि निकले हुए ग्रामवासियोंके फिर आगमनका परिचय दे रही थीं। उससे हमारे अभिनन्दनके साथ हमारे कल्याणकी कामना तथा हर्ष और विषादित नेत्रोंसे देख रही हैं। खैरोदाके उपविभागके अधीन हम अमरपुरा नामक छोटे ग्राममें गये; हमारी बाईं ओरको मानियास नामक शहर दिखाई पडा। एक सम्प्रदायने ब्राह्मणके अनुशासन पत्रके

---

(१) इस प्रांतमें गन्नेकी खेती बडी अनिश्चित है और इससे किसानोंको लाभके बदले हानि होती है। अव्वल तो इसकी फसल पूरे सालभरमें तैयार होती है यानी जिस जमीनमें अफीम या साधारण अनाजकी दो फसलकी पैदावार हो जाती है वहां गन्नेकी केवल एक फसल तैयार होती है दूसरे सरकारी मालगुजारीके ठेकेदारोंके ऊपरी लागान और जमीजोतके महसूलके कारण गन्नेकी खेतीमें किसानको सदा हानि उठानी पडती है। यानी एक बीघापर लगान जमीन निंदाई गुडाई बीज बैल और किसानकी खवाई खुराक गन्नेकी कटाई आदिका कुल खर्च २३८ रु० होता है तो प्रति बीघा ज्यादासे ज्यादा २० मन गुड तैयार होनेपर फी रुपया १० सेरके हिसाबसे कुल २००) रुपयेकी आमदनी होती है।

अनुसार उस नगरपर अधिकार किया है। यह स्थान मेवाडके राणावंशके "पूर्व पुरुषोंके न्यायदान सोण्डताका" उत्तम रूपसे प्रमाण देता है। राणाके अधिकारकी पांच हजार बीघा श्रेष्ठ भूमि समाजके अकर्मियोंको वंशानुक्रमसे भोगनेके लिये दी है। यद्यपि ऐसा जाना जाता है कि त्रेतायुगमें राजा मान्धाताने पवित्र उपनिवेशमें ब्राह्मणोंको स्थापन किया था, एवं उस सम्प्रदायमें केवल २५ परिवार विराजमान हैं, परन्तु वह कुटुंब आजतक उस भूमिमें कृषिकार्य नहीं करता, वह खाली पडी है, परन्तु वह सब भूमि जप्त नहीं हो सकती ऐसा करनेसे साठ हजार वर्ष नरकमें रहना होगा, यह वास्तवमें सुखकी बात नहीं है, और जो मनुष्य इस पर विश्वास करते हैं उनके जीसे यह बात हटानी बडी कठिन है देवोत्तर भूमिग्रहणके महापापसे मुक्तिलाभकरना राजपूत आत्माके पक्षमें बडी ही कष्टदायक बात है ?

परन्तु मैं देखकर अत्यन्त आनंदित हुआ कि शक्तावत् सम्प्रदायके कई परिवारोंने अपने वंशकी वृद्धि होनेसे स्थानके न मिलनेसे विदेशमें वास करनेके लिये जानेके बदले में उक्त नरक वाससे भयभीत न होकर उक्त देवोत्तर भूमिके ऊपर हिन्ता और ढूंढिया नगर स्थापन किये हैं[२]।

"प्रत्येक संप्रदायके प्रत्येक प्रकारके स्वार्थ रक्षा करनेके अभिलाषी होकर मैंने यह प्रस्ताव किया कि यदि महाराणा ब्राह्मण परिवारके प्रयोजनके अनुसार भूमि इनके अधीनमें रखकर शेष सब भूमिको राज्यके अधिकारमें कर लेते तो उसका जो कुछ पाप है अथवा भविष्य दंडके भारको मैं अपने शिरपर ग्रहण करनेको तैयार हूं। मैंने प्रस्ताव किया कि उत्कृष्ट एक हजार बीघा भूमि उन ब्राह्मणोंको दी जाय, उनको केवल गौ आदि पशु देकर ही काम न चल सकेगा वरन् उनको खेती करनेके लिये प्राचीन कूपोंके समस्त संस्कार और नवीन कुएँ भी खुदवा देने होंगे। इस समय एक ज्योतिषीजी राणाकी सभामें बैठे थे और वह कुछ वैद्यक भी जानते थे, ब्राह्मण वंशमें इनका जन्म हुआ था इसी कारण उन्होंने मानियार कारके स्वजातीय ब्राह्मणोंके स्वार्थकी रक्षामें दृढ सहायता की परन्तु मानियारके ब्राह्मण उक्त भूमिके दानके कारण प्राचीन ताम्रके अनुशासन पत्रको उपस्थित न कर सके"।

कर्नल टाड साहबने इसके पीछे लिखा है, कि राजा मान्धाता जिनका नाम इस देशमें अक्षय वर्तमान है वह प्रमार जातीय और मध्य भारतवर्षके राजा थे। धार और उज्जयनी उनकी राजधानी थी। यद्यपि किसी समयमें कोई मनुष्य उनको नहीं जान सके थे परन्तु प्रवादसे सबने उनको विक्रमादित्यका पूर्ववर्ती कहा है। विक्रमा-

---

(१) राजा मान्धाता युवनाश्वके पुत्र थे। यह त्रेतायुगके आरम्भमें हुए, इनका दूसरा नाम त्रसदस्यु भी था। इनको लवणासुरने मारा.

(२) विजातीय टाड साहबने इसमें आनन्द प्रकाश किया तो था, परन्तु यथार्थ हिंदू इससे व्यथित हुए थे। जिन शक्तावतोंने देवोत्तर भूमिको अपने अधिकारमें कर लिया था उन्होंने कभी क्षत्रीधर्मका पालन नहीं किया, इससे वह अवश्य ही ब्राह्मणस्व हरणके अपराधी हैं।

जीतका संवत् समस्त भारतवर्षमें प्रचलित है । नर्मदाके किनारे बहुतसे स्थानोंमें उनकी अधिक कीर्ति विराजमान है। प्राचीन कालमें चित्तौर और उनके अधीनके समस्त देश धारराज्यके अन्तर्भुक्त थे । इन देशोंके समस्त स्थानोंमें उन प्रमारोंके एकाधिपत्यके बहुतसे प्रमाण विराजमान हैं । और जिस देशसे होकर मैं यहाँतक आया हूँ, पुरातन तत्त्वके जाननेवाले यहांके बहुतसे प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्वको सरलतासे संग्रह कर सकेंगे। हिन्ता और दूदा इन्हीं दोनों देशोंके साथ: मान्धाता नामका संश्रव देखा जाता है । महाराजा मान्धाताने दूंदिया नामक स्थानमें बडी धूमधामके साथ अश्वमेध यज्ञ किया था। उस स्थानपर आजतक वह यज्ञकुण्ड देखा जाता है । हिन्ताके दो ऋषि उस यज्ञकार्यमें नियुक्त हुए थे । राजाने पहिले उनको धन दिया, उन्होंने धन लेना स्वीकार नहीं किया । परन्तु उन्होंने जिस समय राजासे विदा ली उसी समय राजाने बडी चतुरताके साथ विदाईके ताम्बूलके साथ ही साथ मीनारदेशका अनुशासन पत्र उन ऋषियोंके हाथमें दिया । यद्यपि ऋषियोंने अयाचित होकर भी उस दानपत्रको ग्रहण किया था, परन्तु उस दानके लेते ही उनकी पवित्रता एक बार ही नष्ट हो गई और इतने दिनोंतक उन्होंने जिस पावित्रताके बलसे इन्द्रजालिक कांड किया था उनकी वह सामर्थ्य भी लोप हो गई । पाठक गण क्या आप उस इन्द्रजाल सम्बन्धीय किसी विवरणके जाननेकी इच्छा करते हैं । ऋषियोंने स्नान करनेके पीछे अपनी धोतीका जल निचोड कर उसे मस्तकके ऊपर शून्यमार्गमें वायुके ऊपर फैला दिया था।वह उसी भावसे रह कर सूर्यकी किरणोंसे उनकी रक्षा करती थी । उक्त दोनों ऋषियोंके उस सामर्थ्यके लोप होते ही उनके वंशधर कृषिकार्य करने लगे । उसके उत्तराधिकारी आजतक उक्त मीनारदेशके स्वत्वाधिकारीरूपसे रहते हैं । और बडे चौवीसा अर्थात् बडे चौवीस नामक स्थानोंमें विस्तीर्ण हुए हैं "।

कर्नल टाड साहबने जो इन्द्रजाल इत्यादिका उल्लेख किया है उसके सम्बन्धमें कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है । कारण कि यहांके शिक्षित मनुष्य जब योगकी बातोंपर हँसते हैं तथा योगबलसे जिन ऋषि मुनियोंने अनेक असाध्य कार्य साधन किये हैं उसपर वह विश्वास नहीं करते तब विजातिय टाड महोदयने जो उस विषयमें उपहास कर योगक्रियाको इन्द्रजाल कहा तो इसमें क्या आश्चर्य है? परन्तु कर्नल टाड साहबने जो प्राचीन अविश्वास प्रवादको सुनकर उक्त मन्तव्यको वर्णन किया है, उसमें कुछ संदेह नहीं । दोनों ऋषियोंने अयाचित होकर ताम्बूलके साथ भूमिका दानपत्र ग्रहण किया था इसीसे उनका तप और योगबल नष्ट हो गया, इसका कौन विश्वास कर सकेगा ? हमारे टाड महोदय अनेक स्थानोंपर इस प्रकार प्रवादके ऊपर विश्वास करके महा भ्रममें पडे हैं ।

---

(१) मान्धाता नामके दूसरे राजा प्रमारवंशमें हो गये हैं । इनका वर्णन धार देशकी वंशावलीमें लिखा है । धारके अधीश्वर प्रमारवंशी क्षत्री हैं और वे अपनेको शकारि राजा विक्रमादित्यकी ही शाखामें प्रमाणित करते हैं । धारराज्यके व्यवस्थापकका नाम साबूसींग प्रमार था.

इतिहासवेत्ता टाड साहबने इसके पीछे लिखा है कि " आज प्रातःकालकी यात्राके समय हम वामोनियो नामक ग्राममें गये । उस ग्राममें एक परम रमणीक सरोवर है उसके चारों ओर पत्थरकी दीवारोंकी कतार लग रही है । उस ग्रामके अधीनमें चार हजार बीघे जमीन है। पहिले यह राणाके खास अधिकारमें थी। परन्तु महाराष्ट्रोंके आक्रमण तथा राणाकी सामर्थ्य घटनेके समय यह दूसरोंके अधिकारमें चली गई और यह स्थान अत्याचार और उपद्रवोंके होनेसे जनशून्य हो गया था; इसकी ओर देखातक नहीं जाता था । इस समय यह मोती पाशवान नामकी राणाकी एक प्रिया उपपत्नीके अधिकारमें है । मोतीने कहा है कि वह उसके पास गिरमी रक्खा गया है। परन्तु कौन आईन मत् बंधक दानका अधिकारी है जो उसको वह नहीं दिखा सकती ।

यह हिन्तादेश आत्मविद्रोहके समय एक विख्यात स्थान था। यह स्थान इस समय अधीनस्थ शक्तावत् सामन्तोंके अधिकारमें है। संवत् १८१२ में जिस समय 'सत्वा' नामक महाराष्ट्रनेता दश हजार महाराष्ट्रोंकी सेना लेकर मेवाडपर अधिकार करनेके लिये आये थे, उस समय इस हिन्तादलके वीरश्रेष्ठ राजसिंहने महावीरता प्रकाश की थी । राजसिंह झाला जातीय एवं सादरीके सामन्त थे । राजपूतानेके राजाओंमें शिरोमणि राजा प्रतापसिंहकी जिन राजपूत वीरोंने पहिले रक्षा की थी यह राजसिंह उन्हींके वंशधर हैं। राजसिंह जिस समय राजधानीसे सादरी देशको जानेके लिये इस हिन्तामें आये थे उस समय उन्होंने सुना कि शत्रु महाराष्ट्रोंका दल डेढ़ कोश दूर सानाई नामक स्थानमें आ गया है । शत्रुदलके आनेका समाचार पाकर उनके किसी पारिषदने कहा कि सोजामार्गसे सादरीमें जाते हुए महाराष्ट्रोंके साथ साक्षात् होनेकी सम्भावना है,इस कारण कुछेक घूम कर भींदरमें जाना उचित है। परन्तु राणा राजसिंहने कुछ भी विपत्तिकी आशंका न करके बराबर पहिलेके समान यात्रा की। उनके कुछही दूर पहुँचने पर महाराष्ट्रोंने प्रबल आक्रमण करके राजसिंहके उन अल्पसंख्यक अश्वारोहियोंको लूटनेका उचित पात्र जान लिया।उनके दलने बडी शीघ्रतासे उनको पकड कर उनके समस्त वस्त्राभूषण उतार कर उनका धन छीन लिया और उन्हें घोडों परसे उतरनेकी आज्ञा दी। इस प्रकारसे महाराष्ट्रोंके हाथमें आत्मसमर्पण वा समस्त द्रव्य देनेकी अपेक्षा मृत्युका होना श्रेष्ठ है, वीर तेजस्वी राजसिंहने यह निश्चय करके अपनी केवल तीनसौ सेना ले उस दश हजार महाराष्ट्र सेनाके साथ युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया । राजसिंह और उनकी सेनाने घोर पराक्रम करके शत्रुदलके साथ संग्राम करते हुए शत्रुओंके व्यूहको भेद डाला। राजसिंह अकथनीय वीरता प्रकाश करके शत्रुओंसे छुटकारा पाय अपनी बचीबचाई सेनाको साथ लेकर हिन्ताके किलेमें आ पहुँचे। भींदरके सामन्त खुशियालसिंहके साथ राजसिंहका वैवाहिक सम्बन्ध बंधन और मित्रता थी, वह इस समाचारको पाते ही राजपूत जातिके स्वभावके अनुसार बलविक्रमसे उत्तेजित हो शीघ्र ही एक विश्वासी सेनाको संग्रह करके अपने बन्धु राजसिंहका उद्धार करनेके लिये बाहर हुए। उस सेनाकी संख्या केवल पांच सौ थी; और वह सभी शक्तावत् सम्प्रदायके राजपूत थे । सेनादलके

चार अंशोंके तीन अंश पैदल और एक अंश अश्वारोही था। पैदल सेना रात्रिके समय मशाल बाल कर एक दल बांध कर चली और अश्वारोही दल दोनों ओर उसकी रक्षा करता हुआ चलता था। खुशियालसिंह सबसे आगे नेता बनकर सेनाको ले चले। जो मनुष्य दलभंग करके चलैगा उसे बिना पूछे बंदूकसे उडा दिया जायगा, इस आज्ञाका प्रचार किया गया। असीम साहसी वह पांचसौ राजपूतोंकी सेना दश हजार महाराष्ट्रोंके कराल ग्राससे स्वजातीय राजसिंहका उद्धार करनेके लिये चली। उसके इस प्रकारसे कुछ ही दूर बढने पर महाराष्ट्रोंके अश्वारोही दलने पंगपालके समान आकर चारोंओरसे घेर लिया। परन्तु वह सामान्य राजपूतोंकी सेना कुछ भी भयभीत न हुई, और भींदर तथा हिन्ताके बीचसे विस्तारित क्षेत्रमें जाकर हिन्ताके नगर द्वारपर जा पहुँची। जब महाराष्ट्रोंने देखा कि राजपूत हमारे ग्राससे निकले जाते हैं तब उन्होंने "बर्छी दे" शब्दसे प्रान्तको कम्पायमान किया। उस शब्दसे शीघ्र ही बारह फुट लम्बे सैकडों बर्छे शक्तावतोंके ऊपर पडने लगे। खुशियालसिंह अपनी सेनाको वहाँ खडा करके अपने अश्वारोही और पैदलदलोंके पीछे आये। महाराष्ट्रदलके समीप आते ही राजपूत अश्वारोही दलने इस प्रकारसे उसपर आक्रमण किया कि जिससे महाराष्ट्रोंका दल स्तंभित होकर भंग हो गया। इस अवसरमें राजपूत अश्वारोही फिर अपने पूर्वस्थानमें आकर बन्दूकोंमें गोली भर कर महाराष्ट्रोंके आनेकी प्रतीक्षा करने लगे। इसी अवसरमें पैदल दल हिन्ताके किलेके द्वारपर जा पहुँचा, इसके आते ही सादरीके सामन्त बडी प्रसन्नतासे मिले। अपना मनोरथ सफल हुआ जान विजयी हो महाराज खुशियालसिंहने स्थिर किया कि शत्रुओंके द्वारा बंदी होकर हिन्ताके किलेमें रहना और अन्तमें आहारके अभावसे आत्मसमर्पण करनेकी अपेक्षा शत्रुके व्यूहको भेद कर चले जाना उचित है। समस्त राजपूतोंने महाराजके इस मन्तव्यको समर्थन किया और तदनुसार वह लोग तुरन्त ही सामान्य हानि उठा कर भींदरमें आ पहुँचे। यह वीरताकी कहानी समस्त रजवाडेमें प्रसिद्ध है। और शक्तसिंहके उत्तराधिकारी अगणित वीरोंमें भी यह अतुलनीय गौरवजनक वार्ता कह कर प्रसिद्ध हुए थी। शक्तसिंहके वंशधरोंमें महाराज खुशियाल सिंहकी वीरता और उनकी योग्यता प्रशंसनीय थी"।

"मोरवन वा मोरौ—३१ जनवरीके शेष दिन हम मेवाडकी शेष सीमाके अन्तमें आ पहुँचे, मेवाडकी वह उत्कृष्ट उपजाऊ भूमि दूसरेके अधिकारमें थी, तथा नीच बुद्धि महाराष्ट्र और निष्ठुर पठानोंका राजपूत सामन्तोंके स्वत्वपर अधिकार देख कर मैं अत्यन्त ही शोकित हुआ। रजवाडेके पूर्ववीरोंकी अपेक्षा इस समयके वीरोंको अयोग्य देख कर अत्यन्त हताश और विरक्त होनेपर भी मुझे उनके पूर्वपुरुषोंकी ओर श्रद्धा उत्पन्न हुई, यद्यपि वर्तमान वंशधर पूर्व पुरुषोंकी अपेक्षा अयोग्य थे, परन्तु सम्पूर्णतः असार और अयोग्य नहीं थे। उदयपुरके राणाकी सभामें वर्तमान वंशधरोंमें कोई एक शिथिल स्वभाव कोई २ कदाचारी षड्यंत्री थे, और सब सभी उद्योगरहित थे इस विचारसे अचेतनताके कारण मेरा स्वास्थ्य भलीभांतिसे नष्ट हो गया। मैं मेवाडके राज्यको अपनी जन्मभूमिस्वरूप जानता हूँ, और इसी

मेवाडके साथ हमारे यौवनके जीवनकी आशावली विजडित है, और वह समस्त आशा प्रकृतरूपसे पूर्ण हुई है, उससे मैं मेवाडके वीर और उनकी अबाध्य सन्तानोंके सम्बन्धमें केवल यही कहनेके लिये तैयार हुआ हूँ।

Mewar with all faults, I loye thee still.

मेवाड ! तुममें हजार दोष होनेपर भी मैं तुम्हें स्नेह करता हूं।

एक मेवाडका ही नहीं वरन् समस्त राजपूतानेके वर्तमान सामन्त सम्प्रदायका मैं भली भांतिसे ऋणी हूँ, और यह आशा करता हूँ कि होनेवाले उदीपमान वंशधर जन्मभूमिकी रक्षामें तीक्ष्ण दृष्टि रख कर अफीम और महुआके सेवनके बदलेमें उद्योगी हों, और पानदोषकी और अनाशक्ति दिखावें। वृथा गप्प, गीत बाजेके बदलेमें युद्धकी शिक्षाका अभ्यास करें। मैंने इस प्रकारसे कई प्रकारकी अनिष्ट मूलकरीतिका नाश अफीम सेवन और मद्यपान दोष इत्यादिके निवारण करनेकी चेष्टा की। राजसिंहासनके भावी अधिकारोंसे तथा एक चरख परिमाण भूमि भी जिनकी है,जिनको भविष्यत्में अधिकार पानेकी आशा है,उनतकसे यह प्रतिज्ञा करा ली है।वह कभी भी इस अनिष्टकारी अफीमका सेवन न करेंगे। उनमेंसे किसीने तो उस प्रतिज्ञाको भंग किया, परन्तु बहुतोंने विशेष करके जिनके अप्राप्त व्यवहारके समयमें हमारे द्वारा उनके स्वार्थ और सम्पत्तिकी रक्षा हुई है। अर्थात् बुसाइयोंके युवक सामन्त अर्जुनसिंह और चंदावत् सम्प्रदायके संगावत् श्रेणीके सामन्तोंने अवश्य ही उस प्रतिज्ञाकी रक्षा की। अर्जुनसिंहके पितामह वख्तसिंहने (इनके पिता पाहिले मर गये थे) महाराष्ट्रोंके द्वारा बारबार विशेष रूपसे आक्रान्त होने पर भी अपने किले और महलकी उनके करालग्राससे रक्षा की थी, परन्तु उन्हींकी सम्प्रदायके नेता सालूंबरके सामन्त भीमसिंह किसी कारणसे उनके ऊपर क्रोधित हुए, उन्होंने समस्त देशोंपर अधिकार कर, संवत् १८४६ में बुसाइयोंकी एक छोटी शाखाके एक मनुष्यको दे दिया। परन्तु उद्यमशील तख्तसिंह फिर अपने हरण किये हुए स्वत्व पर अधिकार करके मेवाडमें आत्मविद्रोह और विदेशीय शत्रुओंके आक्रमण समाप्तिके पीछे सन् १८१८ ईसवीमें,जिस समय बृटिश गवर्नमेंटके साथ मेवाडका संबन्ध बंधन स्थापित हुआ था उस समय तक उसी स्वत्वकी रक्षा करते रहे। उस संधिबंधनके होजानेके पीछे जिस समय मेवाडके सामन्त मिल कर महाराणाकी ओर सम्मान दिखाने के लिये गये, वीर तेजस्वी तख्तसिंह भी उस समय वहाँ गये थे। सेनाकी दशा और प्राचीन शत्रुताके लिये सालूंबरके सामन्त बरोदासिंहको जो तख्तसिंहके पदपर प्रतिष्ठित किया था उनकी वह आशा पूर्ण नहीं हुई, मेवाडके सबमें प्रधान सामन्त सालूंबर के सामन्तने हमारे साथ मित्रता करके अपने आज्ञाकारी सेवक वरोतसिंह (वर्तसिंह) के स्वार्थकी रक्षाके लिये चेष्टा करके; वृद्ध तख्तसिंहने जिस प्रकार अपने पोते अर्जुनको हमारे पास नियमितरूपसे भेजा था, उन्होंने भी इसी प्रकारसे वरोतसिंहको हमारे पास भेजा था। उस समय अर्जुन और वरोतसिंह इन दोनोंकी अवस्था बराबर थी।वरोतसिंह देखनेमें श्रीमान् और बलवान् थे--अर्जुनसिंह दुर्बल और कृष्णवर्ण थे परन्तु

बुद्धिमान् थे। गुण और न्याय एक पक्षमें, एवं निर्बुद्धिता और शक्ति अन्य ओर दीखती थीं। कर्तव्य कर्म अवश्य ही पालन करना होगा। वृद्ध ठाकुर तख्तसिंहकी प्रार्थना निष्फल नहीं हुई। वृद्ध सामन्तने अपनी तलवारपर हाथ रख कर कहा, "सब धर्म और यह तलवार यहाँतक हमारे स्वत्वकी रक्षा करती हुई आई है, परन्तु इस समय यह बालकके स्वार्थके लिये महाराणा और आपके हाथमें अर्पित है। परन्तु राणाकी सभामें धनसे विचार मोल लिया जाता है, तथा राजाकी कृपापर स्वत्व निर्भर होते हैं"। राणाने यद्यपि सालुंबरके सामन्तके मतमें ही अपनी सम्मति दी परन्तु अंतमें इसकी मीमांसाका भार हमारे ही हाथमें अर्पण किया गया। दोनों पक्षको अपने समक्ष उपस्थित कर उनके सम्मुख उनकी उक्तिके अनुसार उनका एक वंश वृक्ष तैयार किया। वरोतसिंह बहुत दूरवर्ती शाखासे उत्पन्न हैं जिससे राणा किसी संप्रदायके चक्रमें न पड़े उसी प्रकार यह सुविचार किया। इस कारण उन्होंने तीन वर्ष पहिले अर्जुनसिंहको जो शासनसनद दी थी उसीको मान कर अर्जुनकी कमरमें तलवार बाँध कर अभिषेक कर दिया। यह स्वत्व-सम्बन्धीय झगडा अर्जुनके पक्षमें विशेष हितकारी हुआ। उनके पितामह तख्तसिंह सीमापर स्थित जिहाजपुरके किलेकी रक्षाके लिये नियुक्तसेनादलके नेता स्वरूपसे भेजे गये थे, उन्होंने उस कार्यको बडी चतुरताके साथ पूर्ण किया। उस समय उनके पोते अर्जुनसिंह भी उनके साथ गये थे। तख्तसिंह प्रायः बीच२ में अपने अधिकारी देशोंमें आया करते, अर्जुनसिंह भी सेनापतिका कार्य करते, यह दोनों ही जने चित्तौडमें मेरे साथ साक्षात् करनेके लिये आये। अर्जुनसिंह जब दो वर्षतक अपने पिताके वासस्थानमें नहीं गये तब उन दो ही वर्षोंमें उन्होंने विशेष उन्नति प्राप्त की थी, और जिस सम्प्रदायमें उन्होंने जन्म लिया था उनके द्वारा अंतमें उस सम्प्रदायका जैसा सम्मान रहेगा उसके पूर्ण लक्षण भी उन्होंने प्रकाशित किये थे। मने उनसे अनेक प्रश्न करके पूछा "आपने अमल (अफीम) का सेवन किया है क्या?" उन्होंने उसी समय उस प्रश्नका उत्तर दिया; आपने जिसका निषेध किया था और जिसकी हमने प्रतिज्ञा की थी, उस प्रतिज्ञाके भंग होते ही अवश्य हमारा सौभाग्य नष्ट होगा।

कर्नल टाड साहबने वर्तमान अध्यायके उपसंहारमें लिखा है कि, ग्रामकी समस्त पंचायत आधे घंटेतक इस बडे भारी वटवृक्षके नीचे बैठी हुई मेरे आनेकी बाट देख रही थी। मेरे जाते ही उसने सरल सत्य भाषामें कहा, "खुश हैं कंपनी साहबके प्रतापसे" मैं जिस प्रकार हजार वर्षतक जीवित रहूँ, ऐसी इच्छा भी प्रकाश की। इस स्थानको मैं उपन्यास कह सकता हूँ। मैंने बडी धीरतासे रात्रितक उस पञ्चायतमें बैठ कर हृदयको भेदनकरनेवाले उपजाऊ क्षेत्रसमूहका वृत्तांत, धननाश और निकालेहुओंका आगमन, और पार्वत्य भीलोंके द्वारा उपद्रव मचानेका समस्त वृत्तान्त सुना था।

द्वितीय अध्याय २.

हिन्ताके सामन्त-राणाके खास अधिकारसे हिन्ताको छीन कर उसके संबन्धमें राजनैतिक बाधा-शक्तावत मानसिंह-उनका इतिहास-नथाराके लालजी-रावत दूदिया (दूदिया) वंशका आदि विवरण-मेवाडके राणा जगतसिंह-चन्द्रभानु राजसिंह-और सरदारसिंह-सरदारसिंहको तीन दिनके लिये राणाकी पद प्राप्ति-अन्तमें लावा देशका पद प्राप्त होना-दूदिया देशका पतन-मानसिंह की प्रार्थना-सीमामें भीलोंके द्वारा हत्याकांड-उसका फल ।

कर्नल टाड साहबने पञ्चायतमें बैठ कर बातचीत होनेके पीछे उसके फलके सम्बन्धमें लिखा है, " कि रात्रि अधिक होनेपर भी मैं अपने कई दर्शकोंको अपने पाठकोंके सन्मुख परिचित करनेकी अभिलाषा करता हूँ । हिन्ता देशके सामन्त जो छप्पन नामक शिखरके ऊपर अपने पिताकी वासभूमि कून नामक स्थानमें इस समय रहते थे, उन्होंने स्वयं न आकर अपने भ्राता और कर्मचारियोंको मेरा अभिनन्दन और अभिवादन प्रकाश करनेके लिये भेज दिया, अथवा आप स्वयं आकर हिन्तामें मेरी अभ्यर्थना न कर सके थे इसमें उनको दुःख प्रकाश करनेके लिये भेज दिया । हिन्ता हमारा ही देश है, उन्होंने यह कहला भेजा । वास्तवमें यह बात केवल प्रचलित सौजन्यताकी प्रकाश करनेवाली नहीं थी । संवत् १८२४ में मेवाडमें आत्मविग्रहके उपस्थित होते ही शक्तावतोंने इस हिन्तापर अधिकार कर लिया था । सन् १८१८ ईसवीके मई महिनेकी चौथी तारीखको साधारण व्यवस्थापत्रके अनुसार इस हिन्ता देशको शक्तावतोंके हाथसे राणाके अधिकारमें करनेका प्रस्ताव किया । यद्यपि हिन्ताके सामन्तोंने भलीभांतिसे प्रमाणित कर दिया कि उन्होंने पिछली अर्धशताब्दी-तक हिन्तादेशपर अधिकार किया है, तथापि जिस मूल व्यवस्थासे इस समय कार्य किया उस मूल व्यवस्थाको बिना भङ्ग किये हुए सामन्तोंका हिन्तादेशका अधिकार देना असंभव है ।

हिन्ताके सम्बन्धका प्रस्ताव बडे आग्रहके साथ उठा था । शक्तावत् संप्रदायके नेता भींदरके सामन्त जोरावरसिंह अन्य दश अच्छी आमदनीवाले नगरोंके अधिकारको छोडनेसे वह इतने दुःखित नहीं हुए थे कि जितने दुःखित प्राचीन विवाद विसंवादके चिह्न स्वरूप इन देशोंके ग्रहण करनेके प्रस्तावसे हुए थे । अधिक क्या कहें उनके सहोदर भ्राता फतेसिंहके द्वारा जो बहुतसे उपजाऊ गांव स्वजातीय वीरोंके रक्तपात होनेसे उनके हस्तगत हुए थे उन देशोंको राणापर लौटा देनेसे भी वह ऐसे दुःखित नहीं हुए जैसे इस हिन्ताके विषयमें दुःखी हुए । उक्त प्रस्तावके आन्दोलनके समयमें भींदरके सामन्तने कहा, " हिन्ता देश भींदरके प्रवेशका द्वार है " । उनके भ्राताने कहा "बहुत समयसे इस पर शक्तावतोंका अधिकार है " फिर एक मनुष्यने कहा, "राणावत्‌ने अन्याय करके इसपर अधिकार किया है, । भींदरके सामन्तने हृदयको

आकर्षण करनेवाला वचन कहा, "हिन्ता देश हमारा बापोता है, अर्थात् हमारे पिताकी भूमि है, ऐसी अवस्थामें इन प्रश्नोंकी मीमांसा करनी कोई सरल बात नहीं थी । विशेष करके अन्य पक्षमें व्यवस्थापत्रकी प्रधान धारामें लिखा है कि संवत् १८२२, सन् १७६६ ईसवीमें मेवाडके आत्माविद्रोहके समयसे राणाके अधिकारी जितने किले जितने देश सामन्तोंने अनेक उपायोंसे अपने अधिकारमें किये थे वह सभी पूर्ण ग्रहण पूर्वक राणाको लौटा देने होंगे । शान्ति स्थापन करनेके लिये जो अनुष्ठान विचारा गया था विशेष सावधानी और धीरताके साथ उसअनुष्ठानका करना कर्तव्य विचारा गया। शक्तावत् स्वदेश हितैषिताके वश होकर आदिसे अंततक विशेष धीरताके साथ उस व्यवस्थापत्रके अनुसार प्रत्येक प्रयोजनीय किले और देश राणाको लौटानेमें सहायता करते हैं; इसीसे अन्तमें वह व्यवस्था की गई थी । उक्त हिन्ता देश एक वर्षतक राणाके खास अधिकारमें रहे और फिर उसे जोरावरसिंहको दे दिया जाय; परन्तु हिन्ताके साथ जो दूदिया देश तथा उससे लगी हुई बारह सौ एकड परिमित भूमि है वह प्राचीन सूचीके अनुसार एक स्वतंत्र विभिन्न देश कहा कर प्रमाणित हो गई, उसे हिन्तासे पृथक् कर लिया जायगा । सामन्त जोरावरसिंहने दश हजार रुपया भेंटमें राणाको दिया, राणाने उनके अभिषेक-स्वरूपमें कमरमें तलवार बाँधकर उनके पिताकी भूमि उन्हें दे दी । तब शक्तावतोंने सर्व साधारणके सम्मुख महा आनन्द प्रकाश किया ।

पाठ्य पुस्तकमें हिन्ताका मूल्य सात हजार रुपया निश्चय हुआ था । हिन्तादेशकी आमदनीसे सामन्त चौदह अश्वारोही और चौदह पैदल सेना रखकर आवश्यकतानुसार राणाको वह सेना सहायता करनेके लिये भेजते थे, परन्तु इस देशकी आमदनीके घटजानेसे सामन्तोंको उसके बदलेमें पाँच अश्वारोही और आठ पैदल सेना रखनेका अवसर आया । हिन्ताके वर्तमान सामन्त कून नामक देशके सामन्तके पुत्र थे । हिन्ताके भूतपूर्व सामन्तने इनको गोद ले लिया था । राजपूतरीतिके अनुसार दत्तक पुत्र कभी भी अपने जन्मदाता पिताकी सम्पत्तिको नहीं पा सकता । परन्तु यह उस रीतिके प्रबल स्वत्वपर भी कून और हिन्ता दोनों देशोंके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित थे । इस देशके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित होनेसे कून देशके सामन्त स्वरूपसे यह गोल नामक तीसरी श्रेणीके सामन्तरूपसे गिने गये, और इसी कारण यह प्रतिदिन राणाके सम्मुख जाकर उनकी आज्ञाका पालन करते थे । हिन्ताके सामन्त होनेसे यह स्वदेशमें अथवा विदेशमें केवल सेनाकी सहायता करते थे । सामन्तोंको प्रतिदिन राणाके यहाँ जाना होता था, हिन्तादेशके देय सेनादलके नेतृत्वका भार मानसिंह नामवाले शक्तावत् सम्प्रदायके एक नीची श्रेणीके सामन्त पर आया, और वनैले भील जिससे मालवाकी सीमाके अन्तमें अत्याचार और उपद्रव न कर सकें इसके लिये उन्होंने वहांके छोटे सादिरके थानेको भेज दिया । परन्तु मानसिंहने अपने कर्तव्य कार्यको भलीभांतिसे साधन नहीं किया । तब राणाने मेरे द्वारा कहला भेजा, कि यदि तुमने इसके पीछे अपने कर्तव्य पालनमें विलम्ब किया तो उस देशको फिर राणा अपने अधिकारमें कर लेंगे । मुझे जिस कर्तव्यका भार मिला है उससे मैं इस स्थानके बहुतसे शोचनीय वृत्तान्त

जान गया हूं। यह मानसिंह किस कारणसे अपना कर्तव्य न पाल सके, यह भी विदित है वह विवरण मेवाडके सामन्त शासनकी रीतिसे उस सामन्त श्रेणीकी सृष्टिका शोचनीय फल प्रकाश करता है।

मानसिंह शक्तावत् लावाके सामन्त परिवारकी छोटी शाखामें उत्पन्न थे। कोरावरके सामन्तोंके साथ जिस समय भयंकर शत्रुता हुई, तथा कोरावरके सामन्तोंने उसी कारणसे श्योगढके किलेमें जाकर लालजी रावत तथा अन्य समस्त परिवारकी हत्या करके प्रतिहिंसा सफल की। उस हत्याकाण्डसे जिन कई बालकोंके प्राण बचे थे उन्हींमेंसे एक मानसिंह भी हैं। मानसिंहके स्वत्वका निर्णय तथा दावाके स्थिर करनेमें हमको और भी पूर्ववर्ती समयकी अर्थात् जिस समय लालजी रावत नथारादेशके सामन्त थे उस समय तककी बात कहनी होगी। किसी अपराधके कारणसे हो अथवा राणाकी सभाके षड्यन्त्रसे हो, उक्त नथारादेश राणाने लालजीसे लेकर प्रतिद्वंदी चांदावत् सम्प्रदायके एक नेताको दे दिया था। लालजी भींदरके सामन्त वंशके प्रथम उपवंशीय थे. इसीसे उन्होंने अपने कुटुंबको पालन करनेके लिये भूवृत्ति पाई थी। यह नथाराके अधिकारसे अलग होते ही डूंगरपुरके सामन्तके निकट गये। वहाँके अधीश्वर रावलने लालजीको दो राज्योंके मध्यस्थ सीमान्तमें दुर्गम श्योगढ देश दे दिया। इस प्रकारसे लालजी-शत्रुओंके द्वारा निकाले जाकर अन्यत्र चले गये। उन्होंने राजभक्तिके मस्तकपर पदाघात करके अपने पुत्रोंके साथ वरवटिया अर्थात् दस्युके समान मेवाड राज्यमें जाकर अत्याचार करने प्रारम्भ कर दिये। वह अपनी सम्प्रदायके नेता भींदरके सामन्तको अपना प्रभु जान कर उनके साथ जा मिले और उनके प्रतिद्वंद्वियोंके अधिकारी देशोंमें जाकर सारी धन सम्पत्तिको लूटते थे। पीछे जिस समय उनके प्रतिद्वंदी राणाकी सभामें प्रताप प्रतिपत्तिसे हीन हो गये, एवं उसी कारणसे जिस समय शक्तावत् सम्प्रदायने राणाके प्रियपात्र होकर सामर्थ्य प्राप्त की तो लालजी उसी समय फिर अपनी सम्प्रदायके नेताके साथ मिलकर राजसिंहासनकी रक्षाके लिये गये। उन्होंने इस प्रकारसे एक समय अराजभक्त और अन्य समयमें राजभक्तरूपसे अपना समय व्यतीत किया था, शेषमें श्योगढके हत्याकांडमें कोरावरके सामन्तने उन्हें मार डाला।

लालजीके बडे पुत्र संग्रामसिंहने अपने भतीजे जयसिंह और नाहरसिंहके साथ श्योगढमें न जाकर प्रतिहिंसा दानार्थी कोरावरके सामन्तोंके हाथसे प्राण रक्षा पाई थी।

---

(१) इसका वृत्तांत राजस्थानके प्रथम कांडमे वर्णन किया गया है।

(२) लालजीकी वंशावली यथा—लालजी
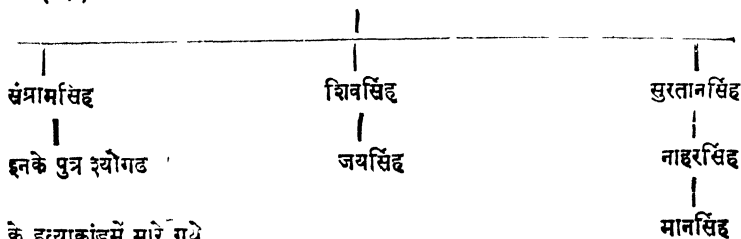
परन्तु कोरावरके सामन्तने श्योगढमें जाकर संग्रामके वृद्ध पिता, माता, भ्राता और उनके पुत्रोंका संहार किया । संग्रामसिंहको समयपर श्योगढका किला मिल गया । पिताकी शत्रुताको भी वह नहीं भूले थे । खेरोदाकी रक्षाके लिये वीरता प्रकाश करके लावाके किलेकी दीवारको लांघ एवं उसपर अधिकार कर वह संग्राममें नियुक्त हुए थे, उनके भतीजे नाहरसिंह आदि सभी जने उनके साथ गये थे। संग्रामसिंहने लावाके किलेपर अधिकार कर लिया, राणाने केवल उनको क्षमा ही नहीं किया वरन् उन्होंने संग्रामके शत्रुओंकी अपेक्षा अपनी सभामें इनको विशेष पद सम्मान दिया था ।

शक्तावत् संग्रामसिंहने दूदिया संग्रामसिंहके निकटसे लावाके किलेपर अधिकार कर लिया । दूदिया प्राचीन राजपूत जाति थे, परन्तु अन्यान्य राजपूत श्रेणीके समान सर्व साधारणमें परिचित नहीं थे । हम इस समय जिस समयकी एक लिखित घटनाको वर्णन करनेके लिये आगे बढे हैं, केवल उसी समयसे कुछ कालके लिये यह दूदिया जाति यश गौरवसे प्रभावशाली हुई थी । इस दूदियावंशके अकस्मात् अभ्युदय हानेसे मेवाडके कविने परम रमणीक गाथा तैयार करके अपने इतिहासमें अंकित की है। चन्द्रभानु नामक एक मनुष्यके नाहरमृग अर्थात् व्याघ्र पर्वतकी उपत्यकामें कई बीघे जमीन थी । चन्द्रभानु केवल दो ही बैल लेकर उस जमीनमें खेती करते थे । उस क्षेत्र और दोनों बैलोंके अतिरिक्त और कुछ सम्पत्ति नहीं थी । चंद्रभानुके उस खेतके समीप ही राणाका रक्षित वन था । राणा उस वनमें व्याघ्रादिका शिकार करनेके लिये जाया करते थे । एक समय हैमन्तिक शस्यकी खेती करके दूदिया चन्द्रभानु समस्त दिनके पीछे दोनों बैल लेकर जिस समय अपने घरकी ओरको आ रहे थे, उस समय वनमेंसे एक मनुष्यके बुलानेका शब्द उनके कानमें सुनाई पडा । दूदिया चन्द्रभानु उत्तर देकर जिस ओरसे वह स्वर आया था उसी शब्दकी सीधपर गये और जाकर देखा कि एक अपरिचित उच्च मनुष्य वहां खडा हुआ है और उसका घोडा बहुत परिश्रम करनेके कारण जल्दी २ श्वांस ले रहा है । उस अपरिचित मनुष्यने दूदियासे पूछा, "तुम कौन जाति हो ?" चन्द्रभानुने गर्वसहित उत्तर दिया "राजपूत हैं" तब अपरिचित मनुष्यने विनयपूर्वक कहा 'मैं बडा प्यासा हूँ' मुझे थोडासा पीनेके लिये जल ला दो अतिथिका सत्कार करना राजपूत जातिका परम धर्म है, इस कारण उस दीन हीन किसान राजपूतने शीघ्र ही एक पात्र जलका लाकर उस पुरुषके सामने रख दिया, और अपने मलीन वस्त्रमेंसे दो रोटी मक्काकी और चनेकी दाल और कुछ घी लाकर उनके हाथमें शुद्ध अन्तःकरणसे अर्पण किया । उदार मनुष्यने कुछ घृणा न करके आनन्द प्रकाश करते हुए उसे ले लिया । दूदिया अतिथि सेवा करनेके पीछे उस अपरिचित मनुष्यको अभिवादन कर वहांसे जानेका उपाय करने लगा, कि इतनेमें ही एक अश्वारोहीदल तीक्ष्णगतिसे अपनी ओरको आता हुआ देखकर खडा हो गया । अश्वारोही आकर सभी उस अपरिचित मनुष्यके निकट महा सम्मान दिखाने लगे, यह देखकर चन्द्रभानुने अपने मनमें विचारा कि यह मेरा अतिथि कोई साधारण मनुष्य नहीं है ।

वास्तवमें वह अतिथि और कोई नहीं था, वह स्वयं मेवाडेश्वर महाराणा जगत्-सिंह बहादुर थे । वह उस दिन शिकारसे महा आनन्दित हो इसके नाहर मगरा नामक शिखरपर महा संकटमें पडे थे और अन्तमें दूदिया किसानके समीप आये थे । पीछे जिस समय दूदिया चन्द्रभानुने महाराणाके समीप अपना परिचय दिया, चन्द्रभानु उस समय कुछ भी विस्मित वा आनन्दित नहीं हुआ । उस समय चन्द्रभानुसे जो प्रश्न किया जाता था, राजपूत स्वभाव सुलभ गर्वसहित उन सब प्रश्नोंका उत्तर वह गौरवके साथ देता जाता था, वास्तवमें राजपूत जातिमें चाहे कैसी ही दीनदशा क्यों न हो परन्तु जातीय गौरव सभीके हृदयमें सरलभावसे पूर्ण रहता है[1] । महाराणा उस निरीह किसानके आचरण और सरल वचनोंसे अत्यन्त प्रसन्न हुए और शीघ्रतासे एक घोडेको लानेके लिये आज्ञा दी । घोडेके आते ही उन्होंने दूदिया चन्द्रभानुसे कहा कि, यहाँसे पाँच कोश दूर तक हमारी राजधानीमें तुमको चलना होगा । किसान वेषधारी चंद्रभानु शीघ्र ही घोडेपर चढ गये, वह मनुष्य घोडेपर चढनेमें कैसा दक्ष था यह भी विदित होने लगा दूसरे दिन दूदिया चन्द्रभानु महाराणाकी सभामें आये । महाराणाने अपनी एक बडी कीमती पोशाक उनको राजप्रसाद स्वरूपमें दी । वास्तवमें राणाकी व्यवहार की हुई पोशाकका मिलना अत्यन्त सौभाग्य और बडे सम्मानका चिह्न माना जाता है । इसके पीछे महाराणाने कोआरिओ नामक देश और उसके लगे हुए समस्त भूखंड वंशानुक्रमसे भोगनेके लिये चन्द्रभानुको दिये " ।

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं कि " चंद्रभानु और उसके हितकारी प्रभु-महाराणा जगत्सिंहने एक ही समयमें प्राण त्याग किये । राणा राजसिंह मेवाडके राजसिंहासनपर विराजमान हुए, चंद्रभानुके पुत्र सरदारसिंह कोआरिओंके सामन्त भावसे उनके समीप नित्य जाकर उनकी आज्ञाका पालन करते थे । दोनों ही की अवस्था छोटी थी, इसी कारणसे दोनोंमें अधिक प्रीति हो गई थी। वह अल्प अवस्थाके महाराणा राजसिंह अपनी बराबरके सामन्तको साथ ले राजधानीसे एक कोश दूर सुहेलियाकी बाडी नामक एक अत्यन्त रमणीक बगीचेमें गये और वहाँ कुंडमें स्नान कर विशेष आनन्दित हो रहे थे । उसी वनविहारके समयमें राणाने सब प्रकारसे सामन्तको स्वाधीनता दी, सभी परस्परमें मस्त होकर आमोद प्रमोद कर रहे थे । अल्पवयस दूदिया सरदारसिंहके कोई शारीरिक कुलक्षण था उसे देख कर राणा-

---

(१) कर्नल टाड साहब अपनी टिप्पणीमें लिखते हैं कि " जिस समय में इन देशोंके सम्बन्धमें अज्ञानी था, जिस समय मैं इकला किसी अपरिचित स्थानमें जाता उस समय किसानसे रास्ता पूछनेकी अभिलाषा होती, मेरे विना कुछ पूछे पाछे किसान उत्तर दे देता "मैं राजपूत हूँ" इससे मैं अत्यन्त आनन्दित होता तो और उसके प्रति सम्मान दिखाता तब वह बारम्बार उसी शब्दका प्रयोग करते । उसका यथार्थ अर्थ यह है " कि मैं राजवंशीय हूँ " । वास्तवमें उन मनुष्योंके किसान होनेपर भी उनके कार्यकी रीति अन्य जातियोंकी अपेक्षा विभिन्न थी और उनका व्यवहार सम्मान सूचक था ।

तथा अन्य सभी मनुष्य हँसने लगे। निम्नलिखित घटना उस हास्य परिहासका कितना आभास प्रकाश करती है।

एक समय बात २ में यह बात आई कि सरदारसिंह जब कुंडमें नीचे उतरे तब उन्होंने अपनी पगडीको नहीं खोला, इस कारण सभीने अनुमान किया कि अवश्य ही सरदारसिंहके शिरपर बाल नहीं हैं। यह बात सत्य है या नहीं इसको जाननेके लिये एक दिन महाराणा राजसिंहने सरदारसिंहके समीप यह प्रस्ताव किया कि आओ हम तुम दोनों जने जलमें मल्ल युद्ध करें। शीघ्र ही राणाके प्रस्तावके अनुसार जलक्रीडा प्रारंभ हुई,सरदारसिंहके शिरपरकी पगडी खुल कर जलमें गिर पडी, सरदारसिंहका केशहीन शिर देख कर सभी लोग एक साथ हँस पडे। परन्तु वह इस हँसीसे अपने मनमें कुछेक क्रोधित हुए। राणाने हँसते हुए पूछा कि"आपके शिरपरके बाल क्या हुए" सरदारसिंहने धीरेसे उत्तर दिया कि पूर्व जन्ममें मैं महाराणाका चेला था और आप योगी थे। बदरीनाथके शिखरपर जिस समय आप तपस्या करते थे उस समय यज्ञकुण्डके लिये लकडी शिरपर रख कर मैं लाया करता था। पूर्व जन्ममें उस काष्ठभारके शिरपर रखनेके कारणसे ही मेरे बाल सब लयको प्राप्त हो गये। सरदारसिंहके इस उत्तरसे महाराणा कुछ एक क्रोधित हुए और विचारने लगे कि सरदारसिंहने स्वाधीनता लेकर अपमान सूचक उत्तर दिया है। इस कारण उन्होंने शीघ्र ही कहा कि "या तो सरदार इस बातका प्रमाण दे और नहीं तो इनको दंड मिलेगा"। युवक सामन्त सरदारसिंहने इसके उत्तरमें कहा, "कोआरिओंके मंदिरमें जो देवता हैं वही मेरे इस उत्तरकी सत्यता प्रमाणित कर देंगे"। सामन्तने देवताको साक्षी बनाया महाराणाने फिर कोई बात नहीं कही. इस कारण उन्होंने प्रमाण लानेके लिये सामन्त सरदारसिंहको विदा किया।

कोआरियो देशके अन्तर्गत गोपालपुर ग्राममें वागरावत नामकी एक सम्प्रदाय रहती थी। उनके जातीय देवताका एक मंदिर उस ग्राममें था। देवताका मुख व्याघ्रके समान था। सामन्त सरदारसिंहने उसी देवताके समीप जाकर आराधना की, इससे देवताने प्रसन्न होकर उनके हाथमें एक फूल दे देववाणीद्वारा आज्ञा दी "कि तुम इस फूलको लेकर महाराणाके हाथमें दो, यही तुम्हारे वाक्यका प्रमाण देगा"। सामन्तने देवताकी आज्ञानुसार वह फूल लेकर महाराणाके हाथमें दिया राणाने देवताके दिये हुए उस फूलको लेकर तथा और मनुष्योंके मुखसे उस फूल देनेका वृत्तान्त जान कर फिर कोई सन्देह नहीं किया। सरदारसिंह पूर्व जन्ममें उनके चेले थे, इस बातका विश्वास राणाको भली भाँतिसे हो गया, उन्होंने प्रसन्न होकर सरदारसिंहको पुरस्कार देनेकी अभिलाषासे उनसे कहा, "आप क्या पुरस्कार चाहते हैं"? सामन्तने कोआरियो देशसे लगा हुआ लावादेश और उसके समीपकी भूमि माँगी।

राणा उस समय तक बालक थे। उनकी माता ही उस समय उनके नामसे राज्यशासन करती थीं इस कारण वचनबद्ध होकर उस ऋणको चुकानेके लिये शीघ्र ही

माताके समीप जाकर उन्होंने समस्त वृत्तान्त कह दिया,दुर्भाग्यवश लावादेश उस समय महाराणीकी खास भूमि स्वरूप था। यद्यपि महाराणीने सरदारसिंहके उस पूर्वजन्मकी बातपर तथा देवताके दिये हुए पुष्पपर कुछ भी अविश्वास नहीं किया, तथापि पुत्रसे कहा कि दूदिया सरदारसिंह हमारी खास भूमिको न लेकर और किसी भूमिको ले सकते हैं। तुम्हारी इच्छा हो तो समस्त मेवाडराज्य उनको दे दिया जाय"। माताके यह वचन सुन कर महाराणाने असंतुष्ट होकर उसी समय कहा "अच्छा! मैंने उनको मेवाड़ राज्य दिया"। राजाकी प्रतिज्ञा कभी भंग न होगी, उन्होंने शीघ्र ही सरदार-सिंहको बुला कर कहा मैंने तीन दिनके लिये समस्त मेवाडका राज्य आपको दिया,उन तीन दिनमें आपकी जो इच्छा हो, सो करिये। मेरा सिलहखाना, अस्त्रागार, मेरा खजाना, मेरी अश्वशाला, मेरा सिंहासन और मंत्री यह तीन दिनके लिये सभी, आपकी इच्छाके अधीन हुए।

तीन दिनके लिये राणाके पदपर अभिषिक्त होकर असीम सामर्थ्य प्राप्त कर सरदारसिंहने समस्त द्रव्य और सम्पत्ति अपने अपने देश कोआरिओको भेज दी। उन तीन दिनोंमें सरदारसिंह यथार्थ राणीके समान शून्यसिंहासनके एक ओर बैठ कर समस्त सामन्तोंसे व्याप्त होकर सभाका कार्य करते थे। तीसरे दिन राणाकी माताने लावादेश-के शासनकी सनद अपने पुत्रके समीप भेज दी। चौथे दिन दूदिया सरदारसिंहने राज-शक्तिको फिर राणाके हाथमें दे दिया।

कोआरिओंके परम सौभाग्यवान् सामन्त सरदारसिंहने इस प्रकारसे धन प्राप्त किया। इसमें नौ लाख रुपया खर्च करके उन्होंने अपने नवीन अधिकारी देश लावामें एक किला बनाया और उसमें एक बडाभारी महल और उपवन भी। किलेमें एक परम रमणीक कृत्रिम ह्रद बनाया और एक लाख रुपया खर्च करके किलेमें एक उपवन भी बनाया। इन्होंने जो उत्कृष्ट महल बनाया था उसमेंके दर्पणागार इत्यादिकी आजतक प्रशंसनीय रूपसे कीर्ति छा रही है। परन्तु अन्तमें एक दिन बारूद गुदाममें आग लग जानेसे आधा किला विध्वंस हो गया था। यद्यपि बहुतसा धन खर्च करके फिर उस किलेकी मरम्मत कराई गई, परन्तु महाराष्ट्रनेता हुलकरने तोपोंसे उसकी अधिक शोभाको नष्ट कर दिया। लावाके महल समस्त मेवाडमें आजतक एक श्रेष्ठ महल गिने जाते हैं।

"जगन्मंदिरके आदर्शसे उदयपुरकी राजधानीमें ह्रदके किनारे जो महल श्रेणी बनी हुई है, सरदारसिंहको उसमेंसे एक महलमें वास करनेकी सनद मिली। यद्यपि इस समय उस महलमें आमायतके सामन्त रहते थे, परन्तु वह आजतक दूदियाका महल कहलाता है, इस समय उस महलके कमरेमें चिमगादड और उल्लू निवास करते हैं और उसमें वटका वृक्ष कमरेको भेद कर निकला है। लावामें महल बनानेके पीछे सरदारसिंह वीस वर्षतक जीवित रहे। उन्होंने अपने एकमात्र पुत्रको छोड कर संवत् १८३८, सन् १७८२ ई० में प्राण त्याग किये। उन्होंने युवा अवस्थामें जिस प्रकारका सम्मान प्राप्त किया था, शेष जीवनमें भी उनका वैसा ही सम्मान और पद अक्षत था। परन्तु

इनकी मृत्युके साथ ही साथ उनके वंशके गौरवकी कीर्ति भी लुप्त हो गई थी। शक्तावत् संग्रामसिंहने उन सरदारसिंहके पुत्र संग्रामसिंहको निकाल कर लावापर अधिकार कर-लिया, सरदारसिंहके पुत्रने अनाश्रय होकर अति दीनदशामें प्राण त्याग किये, चंद्र-भानुके प्रपौत्र, सरदारके पोते एवं संग्रामके पुत्र इस समय मेवाडके वर्तमान युवराज जवानसिंहके समीप रह कर मासिक वृत्ति पाकर जीवन व्यतीत करते हैं, उनके पास अपनी निजकी भूमि कुछ भी नहीं है"।

इतिहासवेत्ता फिर लिखते हैं, कि "शक्तावत् सरदारसिंहको महाराणाके यहांसे उक्त लावादेशका वार्षिक २४ हजार रुपया राजस्वकरका स्थिर कर रीति अनुसार शासन सनद मिली। और कोआरिओदेश फिर राणाके अधिकारमें हो गया। लावादेशके दीर्घ ह्रदके जलसे कई कोसतक खेती करनेका विशेष सुभीता था, इसीलिये उस एक ही कारणसे यह स्थान मेवाडमें दूसरी श्रेणीका देश गिना जाता है। संग्रामसिंहकी समस्त संतान श्योगढके शोचनीय हत्याकांडमें मारी गई थी, उनकी मृत्युके पीछे उनके मध्यम भ्राता श्योसिंहके पुत्र जयसिंहने लावाके सामन्त पदको प्राप्त किया। संग्रामसिंह जितने दिनतक जीवित थे, उतने दिनोंतक उनके लिये किसी प्रकारकी सम्पत्तिका भाग नहीं मिला। सभी एक अन्नसे समय व्यतीत करते थे। संग्रामसिंहके छोटे भ्राता सुरतानसिंहके पुत्र नाहरसिंह, (मान-सिंहके पिता) जिन्होंने संग्रामसिंहके साथ प्रथम अनेक वीराभिनय किये थे, उन्होंने अपने बाहुबलसे वनबल देशपर अधिकार कर लिया। इसी कारणसे उस विषयमें विभाग करनेका कोई प्रयोजन नहीं हुआ परन्तु वनबल देश पहिले राणाके खास अधिकारमें था। इसीसे सन् १८१८ ईसवीमें वह फिर खालसा हो गया, नाहरके पुत्र मानसिंहने शीघ्र ही अनन्य उपाय होकर लावाके राणा जयसिंहसे यह वचन कह कर लावाके अंशकी प्रार्थना की कि लावादेश जब कि सभीके बाहुबलसे प्राप्त हुआ है, तब मैं भी उसका अंश ले सकता हूँ तिसपर फिर मैं संग्रामसिंहके छोटे भ्राताका पुत्र हूँ इस कारण मेरा अधिकार अवश्य ही सामाजिक रीतिके अनुसार प्रबल है। मानसिंहकी इस प्रार्थनापर पहिले जयसिंहने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। परन्तु अन्तमें सामाजिक रीतिके अनुसार इन्होंने वार्षिक पाँचसौ रुपयेकी आमदनीवाले जैतपुरका अधिकार नाहरसिंहके पुत्र मानसिंहको दे दिया। मानसिंहने जबतक अपने अधीश्वर लावाके सामन्तकी आज्ञा पालन की तबतक लावाके ऊपर उनका स्वत्वाधिकार किसी प्रकार भी लोप न हो सका। एकमात्र अपने कर्तव्य पालनमें ढील होनेसे उनके उस स्वत्वके लोप होनेकी सम्भा-वना थी। जयसिंहने मानसिंहको जो सनद दी थी वह सनदपत्र उक्त उक्तिका समर्थन करती है। सनदपत्रमें जैसे "महाराव श्री जयसिंह वचनबद्ध होकर कहते हैं धर्मको साक्षी देते हैं"।

इस समय भतीजे मानसिंह मैंने तुम्हें इच्छानुसार जैतपुरा नामक ग्राम और उसके अधीनकी समस्त भूमि दान की। तुम्हारे वंशधर सुपुत्र हों अथवा कुपुत्र हों, इसे वह भोग करेंगे, मेरे इस दानकार्यमें चतुर्भुजा देवी साक्षी हैं। तुम मेरे भतीजे हो

इस समय जिस स्थानपर मैं तुमको जो कुछ आज्ञा दूँगा तुम्हें उसको पालन करना होगा, यदि तुम उसे नहीं करोगे तो उसका फल तुम्हें भोगना होगा"।

"मानसिंह अपने कर्तव्य पालनमें असमर्थ हो गये थे इससे हो अथवा अन्य किसी कारणसे हो,जयसिंहने फिर जैतपुरा देश अपने अधिकारमें कर लिया। मानसिंहने मंत्रियोंके द्वारा उसे प्राप्त करनेकी विशेष चेष्टा की परन्तु सफलता न हुई। अन्तमें उन्होंने मेरे समीप आकर इस विषयमें सुविचार करनेकी प्रार्थना की। खैरोदादेश व लावाके अधीश्वर जयसिंहके समीपसे लेकर राणाके अधिकारमें किया गया था, इससे जयसिंहकी आधी आमदनी घट गई थी, ऐसा अनुमान किया जाता है, इसी कारणसे जयसिंहके सामान्य अपराधपर जैतपुराको अपने अधिकारमें कर लिया। सन् १८२० ईसवीमें मैं जब मेवाडमें गया उस समय उन्होंने पत्रद्वारा मुझे विदित किया कि "जयसिंहने मुझे जैतपुरा लौटा देने की आज्ञा दी है"। मैं इसका उत्तर चाहता हूँ एकमात्र राणा ही इस विषयमें विचार कर सकते हैं। मेरे ऐसा कहनेपर वह फिर राणाकी सभामें गये। परन्तु वहाँ जाकर सफल मनोरथ न हो सके, अन्तमें उन्होंने फिर मेरा ही अनुसरण किया। मानसिंहने फिर मेरे वचनानुसार सादरीकी सीमान्तमें सेनादलके नेतृत्व पदको प्राप्त किया था, परन्तु उन्होंने विशेष मन लगाकर अपने कर्तव्यको पालन नहीं किया, इसीसे मैंने उनको उस प्रकार आग्रहके साथ ग्रहण नहीं किया। उसी कारणसे वह आत्मसमर्पण करनेके लिये और भी आग्रह युक्त हो गये:और कहा कि वह प्रबल व्यक्ति गत कारणसे मीमांसाके अंतमें अपने कर्तव्य पालनमें समर्थ नहीं हुए। पचीस वर्षके अवस्थावाले वीरके समान दीर्घाकार बलिष्ठ साहस प्रकृति और स्वाधीनताकी तेजपूर्ण मूर्तियुक्त मानसिंह अपने सनदपत्रको पढनेके लिये मेरे हाथमें देकर बोले–मैं लावाके:अधीश्वरके निकट जिस बाध्यताकी जंजीरमें बंध रहा हूँ यदि उसको तोड डालूं तो यह अवश्य ही जैतपुराका ग्रहण करनेमें न्यायसहित समर्थ होंगे; बनवल देशको मेरे हाथसे छीननेके लिये जयसिंहके इशारेके अनुसार मेरी सेनाकी संख्या उनकी बराबर की गई है,इस कारण जैतपुराको प्रतिग्रहण करनेकी उनको क्या सामर्थ्य है ? जिस समय संग्रामसिंहने प्राणत्याग किये थे,उस समय लावा हमारे ही हस्तगत था यदि मेरी इच्छा होती तो मैं लावाको सरलतासे अपने आधीनमें रख सकता था,उस समय मेरे हाथसे लावा लेनेकी किसको सामर्थ्य थी ? जयसिंहके आधीनके सामन्तोंने कभी नहीं देखा था। वह जयसिंहके बदलेमें मुझको अधीश्वर माननेके लिये तैयार होजाते। यद्यपि इस समय तक बलपूर्वक मेरे अधिकारको लोप नहीं कर सकते थे, तथापि उस समयमें ही उनको लावाका अधीश्वर मान उनके स्वत्वका अधिकार मान्य करके चला, जब आमाइतके ठाकुरने राजधानीमें जानेके समय लावाकी सीमामें नगाडा बजाया,तब क्या मैं सेनादलको इकट्ठा कर आमाइतके सामन्तोंद्वारा अपने अधीश्वर जयसिंहका अपमान जानकर उस ठाकुरको उसका फल नहीं देता? मेरा मस्तक जयसिंहके हाथसे लावाके किलेकी दीवारके ऊपर स्थापित है। यदि लावाके सामन्तके ऊपर राणाके ऊपर और आपके ऊपर हमारी भक्ति न होती तो वह कभी बल पूर्वक जैतपुराको अपने अधिकारमें नहीं कर सकते थे केवल आपके ऊपर मेरी प्रबल

भाक्ति है, इसी कारणसे मैं चुपचाप सब कुछ सहन कर रहा हूँ । आप मुझे जैतपुराके ग्रहण करनेकी आज्ञा दीजिये यदि मैं आज ही उसको अपने अधिकारमें न कर लूं तो मैं नाहरसिंहका पुत्र नहीं । इसी हाथसे जैतपुराका जो छोटा किला बनाया था । उस किलेमें मेरे स्त्री पुत्रोंको आश्रय मिला था, इस समय उन्होंने हमारी उस पितृभूमिसे निकलकर अन्यत्र आश्रय लिया है ।वनबलके बदलेमें मुझे जो भूमि दी है वह वनपूर्ण पतित देश है उस भूमिसे यदि मैं एक रुपयेकी भी आमदनीकी इच्छा करूँ तो उस भूमिमें मुझे पहिले रुपया खर्चना होगा । एकमात्र जैतपुरासे मैंने उस भूमिको उत्कर्ष साधनके लिये, धनसंग्रह करनेके लिये आशा की थी, उसी आशासे मैंने उक्त देशके कारण पट्टा-द्वारा लिखित ढाई हजार रुपया दिया और जबतक उस पतित भूमिसे आमदनी न हो तबतक मैं जैतपुराकी आमदनीसे परिवारका पालन करूंगा ऐसी आशा की थी। जब जैतपुरा हमारे हाथसे छीन लिया गया तब मेरे ऋणदाता महाजनोंने ऋण चुकानेके लिये मुझपर आक्रमण किया और मेरे पास जितने मूल्यवान् द्रव्य थे वह सब और मेरी स्त्रीके समस्त आभूषणतक और जिस घोडेपर चढकर गंगापुरमें मैं आपके साथ साक्षात् करनेके लिये गया था, उस घोडेतकको बेंचकर अपना ऋण चुका दिया । मैंने इस शोचनीय अवस्थाको पृथ्वीनाथ महाराणाके निकट निवेदन किया उन्हों-ने सब वृत्तान्त सुनकर मेरे अनुकूल सम्मति दी । मेरे पाससे पट्टेके कारण पाँच हजार रुपया मांगा मैंने कहा मेरी आशा सफल होगी, इस प्रकार वचनबद्ध होकर मैं वह भी उसी समय देनेके लिये तैयार हुआ था ।

बीकानेरीजी[1]के नामसे वह वचन दिया था, परन्तु लावाके सामन्तपर जितनी धन सम्पत्ति थी, जैतपुराके सामन्तपर उतनी नहीं थी इस कारण लावाके सामन्तने एक हजार रुपया देकर उनकी प्रार्थनाको पूर्ण किया । इसी कारण अन्तःकरणके दुःखित होनेसे मैं सीमान्तकी रक्षा उस प्रकार न कर सका । उसी सूत्रसे पठानोंने उत्तेजित होकर सालाइराह नामक स्थानके खेतमें मेरा जो कुछ धान्य उत्पन्न हुआ था, उस सबको हर लिया,और वन्धेरा भैरावी नामक ग्रामको भी अधिकारमें कर लिया है । मेरी यह अवस्था है; यदि मैंने अन्यायसे मांगा है; यदि रीतिके विरुद्ध कोई प्रार्थना की है तो आपके विचारमें जो दंड हो उसे दीजिये" । यह वचन[2] कहकर ठाकुर मानसिंहने अपने मनकी बात समाप्त की । मानसिंह केवल अपनी जातिके नहीं–यह मनुष्यसमा-जमें ऊंच आदर्शके मनुष्य थे, इन्होंने जो प्रार्थना की वह अकाट्य थी । जो लोग उनकी भाषा नहीं जानत वह भी उनके उस समयके मानसिक भाव और आग्रहको देखकर अवश्य ही विचलित हुए थे । परन्तु मैं सहसा कोई प्रतिज्ञा करके ही शान्त न हुआ बरन् जिससे मैं राणाके समीप उनका पक्ष समर्थन करनेके लिये सरलतासे समर्थ हूँ उसके लिये मैंने उनसे कहा कि "आप शीघ्रतासे सीमान्तमें अपने कार्यस्थानमें जाइये, और

---

(१) राणाकी एक रानी–बीकानेरके राजाकी कन्या थी ।

(२) मानसिंहने वनबलके बदलेमें सालाइरेह भैरवी नामवाले दो ग्राम पाये थे ।

आपके न होनेसे वहाँ जो एक शोचनीय हत्याकांड हो गया है, आप उस हत्याकाण्डके नेताको उचित दंड देकर राणाके कृपापात्र होनेकी चेष्टा करिये। मैंने उनको एक पिस्तौल उपहारमें देकर बिदा ग्रहण की।

सीमान्तकी उस शोचनीय हत्याकाण्डके सम्बन्धमें इतिहासलेखकने लिखा है "छोटी सादरीकी सीमान्तमें-जैसे सेनादलके साथ मानसिंह सीमान्त रक्षामें नियुक्त थे–उस सीमान्तमें गंभीरवन जंगल पूर्ण एक पहाडी देश है, आधेमें मीना और भीलगण वहाँ वास करते हैं, उस पहाडी देशसे लगे हुए कितने ही देशोंमें बहुतसी नीची श्रेणीके सामन्त वास करते हैं, जिससे भील और मीना अत्याचार व किसी प्रकारके उत्पात न कर सकें, उन सामन्तोंपर इस प्रकारका भार सौंपा गया है। परन्तु हम जिस समयकी बात कहते हैं, उस समय वह सामन्त भीलोंको दमन न करके वरन् उनके आसपासके देशोंमें चोरी और लूटमार कार्यसे उत्साहित करके उस लूटी हुई धन सम्पत्तिमेंका एक अंश आप लेते थे। उन उत्साहदाताओंमें कालाकोटाके सामन्तोंके घरके प्रधान कर्म-कर्ता एक प्रधान नेता थे। चम्पान नामक वनकी ओर गिरिसंकटके ऊपर बिलोई नाम एक खंडभूमिमें एक राठौर राजपूत निवास करते थे। उन्होंने कई बीघे पर्वती भूमि लेकर कई कुएँ खुदवाये और उनसे उसी भूमिमें खेती करते थे। राजपूत राठौरने घोर परि-श्रमसे उस कठोर भूमिमें नाज उत्पन्न कर उससे अपनी स्त्री और उस भूमिके एकमात्र उत्तराधिकारी अपने पुत्रके निमित्त अन्न संस्थापन किया था। एक दिन वह राठौर राजपूत कृषिकार्य करनेके पीछे अपने घरकी ओरको जा रहे थे कि इसी समयमें उनकी स्त्रीके रोनेका शब्द उनको सुनाई पडा, स्त्रीने नेत्रोंमें जल भर कर अपने स्वामीसे कहा कि बनैले भीलोंने आकर तुम्हारी कुटीको लूट लिया। सारे पशुओंको लेकर एकमात्र पुत्र और उस पुत्रके सहचर एकमात्र युवक योगीको भी बांधकर ले गये हैं। राठौर राजपूतने महा शोकित हो बिना कुछ कहे सुने बन्दूकमें गोली भरी, और बंदूक लेकर आप कालाकोटकी ओरको गये। अत्यन्त दुःखका विषय है कि राठौर राज जिस समय काला-कोट ग्राममें गये उसी समय उस ग्रामके प्रवेश मार्गपर अपने प्राण धन पुत्र और उस योगीका शिर शून्य देह उनके पैरोंके नीचे आया। उन्होंने बहुत खोज करके जाना कि कालकोटके सामन्तोंके अनुगत भीलोंने यह कार्य किया है। भील तस्कर जिस समय उस पुत्र और योगीको पशुओंके साथ यहाँ लाये उस समय उस पुत्रने कालाकोटेके कर्माध्यक्षको देखकर कातरस्वरसे कहा, "मामा मेरी रक्षा करो, मेरे प्राणके बदलेमें जितना रुपया तुम चाहोगे बाबा मेरे उतना ही तुम्हें देंगे।" वास्तवमें राठौर राजपूतके निकटसे रुपया लेनेके लिये ही पुत्रको बाँधकर लाये थे। परन्तु जब समाचार फैल गया कि यह पाखंडी कर्माध्यक्ष ही इस काण्डका मूल है, तब अपनी रक्षाके लिये उस पुत्र और योगीके प्राण नाश किये गये। राठौर राजपूत यह समाचार पाते ही उस नर-घातीकी खोज करनेके लिये कालाकोटेमें गये। उस शोकसे संतापित हुए पिताको देखकर उस पातकीने कहा, मैं इस हत्याकाण्डको कुछ नहीं जानता। अन्तमें राठौरके दुःखमें शोक प्रकाश करके उसने कहा कि तुम्हारे जितने पशु चोरी गये हैं उनका चौगुना

मूल्य और जो तुम्हारी धन संपत्ति नष्ट हुई है उसका दुगुना मूल्य तथा इसकी खोज करनेमें जितना रुपया तुम्हारा खर्च हुआ है उससे दुगुना मैं तुम्हें देता हूं । शोकित और दुःखित पिताने कहा, "तुम जीवित अवस्थामें मेरे पुत्रको दे सकते हो ? मैं न्याय विचारसे प्रतिहिंसा चाहता हूँ, रुपया नहीं चाहता । मुझे अब धन लेकर जीवन धारण करनेका क्या प्रयोजन है " ?

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं, " कि किसी भाँति भी धीरजके बचनोंसे उन राठौर राजपूतका शोक दूर नहीं हुआ । उन्होंने यही प्रतिज्ञा करी कि प्राणघातीका प्राण लेकर ही मेरा मन शान्त होगा, उस विषयमें आशा देकर उनको मानसिंहके हाथमें सौंप कर कहा कि यदि हत्या करनेवालेको आप बंदी कर सकें तो आपका मनोरथ भी इसी कारणसे पूर्ण होगा । इस वचनको सुनकर राठौर राजपूतने कितनी बार धीरज प्राप्त कर मुझसे बिदा ली । वह मेरे डेरोंको छोडकर अपने घरको जाने नहीं पाये थे कि इतनेमें ही यह समाचार आया कि उस शोचनीय हत्याकाण्डके प्रधाननेता कालाकोटके सामन्तको उस कर्मका सबके दंडदाता भगवानने दंड दिया है । कालाकोटके सामन्तने उस हृदयभेदी शोकसे विचलित होकर उस कर्मकर्ताकी भलीभाँतिसे भर्त्सना कर वह जिस २ महापापका भागी है, उसे२स्वीकार करनेको कहा । परन्तु उस मनुष्यने प्रतिज्ञा करके कहा कि " भगवानका नाम लेकर कहता हूँ कि मैं अपराधी नहीं हूं अन्तमें वह देवताके मंदिरमें जाकर शपथ करनेके लिये तैयार हुआ । उसकी बातपर सम्मत होकर उसको सामन्तने देवताके मंदिरमें शपथ करानेके लिये भेजा।वह पापी घोडेपर चढ कर देव मंदिरके सामने पहुंचा ही था कि वैसे ही उसकी मृत्यु हो गई । उसकी अचानक मृत्युको देखकर सभी कहने लगे कि देवताने स्वयं ही इससे बदला ले लिया ! इस समय उस हत्याकाण्डमें और भी जितने सहायक थे, उन सबको पकडकर उक्त राठौर राजपूतको संतोषके कारण जिससे कोई फिर आगेको ऐसा कार्य न कर सके इससे उनको उस बीलिओंके गिरिसंकटमार्गमें फाँसीपर लटका दिया। इससे मैं अत्यन्त आनन्दित हुआ " ।

तृतीय अध्याय ३.

मोरवन–उस देशकी जनशून्यता–महाराष्ट्रोंके द्वारा अत्याचार और उत्पीडन–महाराष्ट्रोंके प्रति अन्याय–दया प्रकाश-मोरवनका प्राचीन इतिहास–खोदित लिपि–जैन मंदिर–व्याघ्रका एक बालकपर आक्रमण–देवताके मंदिरके संबन्धका प्रवाद–प्रयोजनीय खोदित लिपि–चारण रमणियोंके द्वारा कर्नल टाडकी अभ्यर्थना–उस अभ्यर्थनाके संबन्धकी प्राचीन रीति-मेवाडमें चारणोंके आगमनका इतिहास–सती वाक्य ।

कर्नल टाड साहबने पहिली फरवरी शनिवारको मोरवन वा मरवन नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि " लावाके विवाद विसंवाद और उसके सम्बन्धकी घटनावलीको, वर्णन करनेके उपलक्ष्यमें गत दिनको मानसिंहने मेरे सभी समयको ग्रहण किया था। इस स्थानके आसपासके जो कितने ही देश राणाके खास अधिकारसे छिन गये थे उस विषयमें विशेष खोज करनेके लिये मुझे इस स्थानपर विश्राम करना पडा। मोरवन वा मरवन पहिले एक समृद्धिशाली नगर था, तथा यह जिलेमें एक प्रधान उपविभाग रूपसे गिना जाता था। इसका वार्षिक राजस्व सात हजार रुपया था। यह नगर रमणीक ऊँचे शिखरपर स्थापित है और इसके पश्चिम ओर जो एक बडा भारी कृत्रिम हौद है, वह देखनेमें अत्यन्त सुन्दर है। और उसके दोनों ओर किनारोंपर बडे २ इमलीके वृक्ष लग रहे हैं। यहाँकी भूमि भी उपजाऊ है, विशेष करके खेतीके लिये जलका भी बडा सुभीता है, परन्तु हाय ! इस समय खेती करनेके लिये यहां मनुष्य नहीं हैं। नगर सभी ओरसे विध्वंस होकर मनुष्योंसे हीन हो रहा है।

जिन वर्वर पठानोंने इस रमणीक नगरको विध्वंस किया है, उन्हींके हाथमें फिर यह देश जायगा। मेरे मनही मनमें महा दुःख हुआ। युद्धके समय व्यय वा दंडस्वरूपसे जिन सब देशोंको राणाके निकटसे गिरवीस्वरूप शत्रुओंने अपने हाथमें रक्खा था यह मोरवन देश भी उन्हींमेंसे एक है। अन्यान्य भूमिके साथ यह भी महाराष्ट्रके अधीनमें हो गया था। और धनके लोभी महाराष्ट्र सेवकोंने इस देशपर अपनी इच्छानुसार अत्याचार किये थे। यह अत्यन्त शोचनीय विषय है। अपने परम शत्रु महाराष्ट्रों-की ओर हमने अन्यायसे उदारता दिखाई, नहीं तो यह सभी देश न्यायके अनुसार मूल अधिकारियोंको लौटा देने होते, विशेष करके उन्होंने हमारे न्याय अत्याचार और चोरी लूटके रोकनेमें विशेष सहायता की। यदि महाराष्ट्रोंको मध्य भारतवर्षसे एकबार ही निकाल दिया जाता तो न्यायविचार सुराजनीति और सहृदयता भलीभांतिसे प्रकाश पा जाती। जब मैंने इस छिने हुए देशके साथ उदीयमान उन्नतिके चिह्नयुक्त राजपूत देशकी बराबरी करी तब मैंने मन ही मनमें इस कारणसे आनन्दका अनुभव किया था कि अत्याचारी अधिकारी लोग इन सब देशोंसे कुछ भी लाभ न उठा सकैंगे, इन बडे खेतोंमें घास और वृक्षोंके सिवाय कुछ न होगा "।

इतिहासवेत्ता मोरवन देशके प्राचीन इतिहासके सम्बन्धमें लिखते हैं कि मोरिवनदेश प्राचीन ऐतिहासिक देश गिना जाता था। मोरीजातिसे इसका नाम मोरवन हुआ है। मोरीजाति चित्तौरको जीतनेके पहिले इस स्थानमें शासनकार्य करती थी, चित्रांगप्रसाद नामवाला एक प्राचीन टूटा फूटा किला इस समय तक विराजमान है चित्तौर नगर स्थापन करनेके पहिले उस किलेमें मोरी जाति वास करती थी, ऐसा प्रकाशित होता है। इसके सम्बन्धमें आजतक यह बात विख्यात है कि चित्रांगधार राज्यका एक प्रधान करद स्वरूप मोरवन और उससे लगे हुए देशका शासन करते थे। चित्रांगकी

एक जन प्रजा एक समय खेती करती थी, हठात् उसके लांगलके फलपर एक कठिन द्रव्यका संघात हुआ, उन्होंने उसी द्रव्यको उठाकर देखा कि इसके स्पर्शसे उसका हल एक बार ही सुवर्णका हो गया है। वह कठिन द्रव्य और कुछ भी नहीं है--पारस पत्थर है वह किसान शीघ्र ही उसे अपने स्वामी चित्रांगके पास ले गया और जाकर स्वामीको दिया। चित्रांगने उस पारस पत्थरकी सहायतासे बहुतसा सुवर्ण पाकर उस धनसे मोरवन नगरमें बडे २ महल बनवाकर अन्तमें चित्तौरको राजधानीको निर्माण किया। धालकोट वा मोरिकापट्टन नामक, जो राजधानी वर्तमान मोरिबनके पश्चिम दूर पर थी, उसके चिह्न भी इस समय तक देखे जाते हैं; परन्तु उक्त स्थानके निवासियोंकी निर्बुद्धिताके कारण उसमें अग्नि लगनेसे वह विध्वंस हो गये हैं, कारण यह था कि वहाँ एक ऋषि धोरेके वनमें तपस्या कर रहे थे; बहुतसे मनुष्य उनके शिरपर एक प्रकारका जंगली वृक्षोंके जडका बोझा रखकर उनको बाजारमें बलपूर्वक ले आये। उस ऋषिके क्रोधसे नगर विदग्ध हो गया। परन्तु इस वचनसे यही अनुमान होता है कि इस देशमें पहिले भूगर्भसे अग्नि निकलती थी। मोरवनमें इस समय तीन प्राचीन मंदिर विराजमान हैं, इनमें एकमें शेषनागकी मूर्ति है। उस सहस्र शिर देवतानें पृथ्वीको अपने मस्तकपर धारण किया है। पहिले केवल कुंकुम ही उस देवताको चढाया जाता था, परन्तु इस समय उसके बदलेमें उनकी देहमें चंदन लगाया जाता है।

इस स्थानके दक्षिण पश्चिममें ढाई कोश दूरपिर उनेर नामक ग्राममें एक प्राचीन खोदी हुई लिपि है। यह सुनते ही मैंने उस प्राचीन गुरूको वहां भेजकर उस लिपिका लानेकी आज्ञा दी। वह उसको ले आये, उसके देखनेसे जाना गया कि उस खोदी हुई लिपिमें यह लिखा था कि कालीन और उनेरके ग्राम ब्राह्मणोंको दिये गये हैं। राणा संग्रामसिंहने संवत् १५७० सन् १५१४ ईसवीमें ग्राममें जो चतुर्भुजाका मंदिर बनवाया था उसमें वह रक्खी हुई है। राणा जगत्सिंहने उस खोदी हुई लिपिके नीचे अपना नाम खोदकर यह लिख दिया कि जिससे कोई भी इस ब्रह्मोत्तरकी ओर हस्ताक्षेप न करे। उस मंदिरके ओर एक खंभपर ग्रामकी पंचायतकी इच्छानुसार प्रत्येक नवीन धान्य काटनेके समय वासन्तिक और हैमन्तिक धान्यमेंसे प्रत्येक खेतसे ढाई सेर धान्य देवताको दिया जाय, यह भी उसमें खुदा हुआ है।

संवत् १८४५ में जिस समय मेवाडके चारों ओर युद्ध हुआ था ऐसा जाना जाता है कि उसी समय पंचायतने उक्त दानको नियत किया था। चतुर्भुजादेवीके मंदिरके ठीक सामने एक जैनमंदिर है। संवत् १७७४ में यह बना था, जिस स्थानपर यह मंदिर बना था वहाँकी भूमि खोदनेके समय एक पारसनाथकी मूर्ति निकली थी। उसी मूर्तिकी स्थापना उस मंदिरमें हुई। यहांके अनेक स्थानोंमें प्राचीनकालके बहुतसे स्मृतिचिह्न पाये जाते हैं।

इस दिन कप्तान वा साहब शिकारको गये और नील गायके पीछे घोडा दौडाया पर यह एक जंगलमें घुस गई, और साहबके कुछ चोट आई, उस दिन हमने बडा चीतर देखा, यह जानवर बहुत खूबसूरत होता है।

२ फर्वरी–फिर कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि "आज प्रातःकाल ही हमारे वार्षिक समस्त विलायती द्रव्य आये। हम भोजन करनेके पीछे एक बोतल बरांडी पान करते थे कि इसी समयमें ग्रामकी ओरसे एक भयंकर चीत्कार शब्द सुनाई आया, जिसको सुनकर हम विचलित हो गये। हम उसी मुहूर्तमें खडे हो गये, और जिस स्थानसे चिल्लानेका शब्द आ रहा था उसके सम्बन्धमें खोज करने लगे, कि इसी समयमें दो हलकारे और एक बालक शिरपर दूधका घडा लिये हुए मेरे सामने आये, उन्होंने मेरी वह उत्कंठा दूर की। प्रतिदिन दूध संग्रह करनेके लिये वह कई कोश दूरतक ग्राममें जाते थे। वह वहाँसे लौटते समय हमारे डेरोंके समीप आये, दोनों हलकारे कुछ आगे बढ गये थे, और बालक पीछे था। उस बालकने सहसा ऊचे स्वरसे कहा "मामा मुझे छोड दो, मैं तुम्हारा भानजा हूँ, मामा छोड दो, मामा छोड दो।" यह कहता हुआ चिल्ला रहा था। उन दोनों हलकारोंने समझा कि यह बालक पागल है। विशेष करके उस समय उन दोनों जनोंने अंधे होकर बालकसे शीघ्र ही आनेके लिये कहा। परंन्तु बालक पहिलेके समान क्रमानुसार भयंकर चीत्कार करता था, तब उन्होंने दौडकर जाकर देखा कि एक बडा भारी व्याघ्र बालकके अँगरखेको पकड रहा है। तब इन दोनों हलकारोंने शीघ्र ही एक लोहेसे मढी हुई लकडीसे उस व्याघ्रको मारा उसके भयंकर चीत्कार शब्दसे सारे ग्रामवासी मनुष्य अस्त्र शस्त्र हाथमें लेकर वहाँ आ गये। उनके चिल्लानेसे मेरी निद्रा भी भंग हो गई।

मोरवन और मुगरवार नामक स्थानके मध्यस्थ काले पहाड नामक शिखरपर वह प्राचीन व्याघ्र वास करता था। इस प्रदेशमें यह बहुत समयसे रहता था, और वह किसानोंके पशुओंका नाश करता था, परन्तु अभीतक इसको कोई भी न मार सका था। दो दिन पहिले वह व्याघ्र मोरवनके एक तेलीके बैलको मारकर भाग आया था। व्याघ्रको कभी कोई बंदूक वा किसी प्रकारके अस्त्रसे नहीं मारता था, सभी उसपर दयाभाव रखते थे, और ऐसा जाना जाता है कि वह कभी किसी मनुष्यपर आक्रमण भी नहीं करता था, और यदि करता भी तो "मामा मुझे छोड दो" इतना कहते ही वह उसको छोड देता था; वह बालक यह जानता था इसीसे उसने 'मामा' कहकर इस प्रकारकी प्रार्थना की थी। परन्तु अज्ञान हलकारोंने विचारा कि वास्तवमें ही इस बालकको मामाने पकड लिया है, और इसीलिये वह पहिले उसकी सहायताके लिये न गये"।

३ री फर्वरी–आज कुहरा बहुत था हमारे साथी साहबकी तबियत खराब थी, इससे हम यहीं रहे।

४ फर्वरी–हमारे बन्धु पालोदसे लौट आये। मैंने उनको वहांके देवमंदिरमेंसे एक खोदित स्तंभकी लिपिको लानेके लिये भेजा था उन्होंने आकर जो कुछ कहा वह नीचे लिखते हैं।

वह मंदिर पहिले एक धनवान् जैनका बनाया हुआ था। जैनोंने उस मंदिरमें अपने इष्टदेवताकी मूर्ति स्थापन करनेकी अभिलाषा प्रगट की, परन्तु मंदिरके तैयार

होते ही मानदेव (देवजननी) ने स्वयं उस जैनके सम्मुख जाकर कहा कि इस मंदिरमें मैं वास करनेकी इच्छा करती हूँ । जैन यद्यपि हिन्दूधर्मका विरोधी था परन्तु माताकी इस इच्छाको अपूर्ण न कर सका, जैनने कहा कि मैं कभी आपकी मूर्तिके सामने अपने हाथसे किसी पशुका बलिदान नहीं करूंगा देवीके मंदिरमें निवास होनेके समाचारको सुनकर संतुष्ट हो कहा कि " तुम चित्तौडके सोनगडेके पास जाओ, वही बलिदानादि कार्यको निर्वाह करेंगे । जैनदेवीकी आज्ञानुसार वह सोनगडेके निकट गये और पीछे उस मंदिरके निकट पार्श्वनाथका एक मंदिर बनवा दिया । मेरे वृद्ध बन्धुने माताजीके मंदिरमें एक अत्यन्त प्रयोजनीय ऐतिहासिक तथ्यका अविष्कार किया । उन्होंने एक प्राचीन खोदी हुई लिपिको पढा उसीकी जो अनुलिपि लाये थे उससे सौलङ्की राजवंशके समयके निर्द्धारणके सम्बन्धका प्रमाण पाया जाता था । मुझे पीछे चित्तौडसे एक खुदा हुआ पत्र मिला उसके साथ इस पत्रका समय सम्पूर्णतः एक हो गया। उन दोनों पत्रोंसे भलीभांति जाना जाता है कि सौलङ्की राजाने एक समयमें वास्तवमें ही गिह्लोतकी राजधानीको अपने अधिकारमें कर लिया था । पालोदसे जो खुदा हुआ पत्र मिला था उसमें केवल यही लिखा हुआ देखा कि कुमारपाल संवत् १२०७ में पूसके महीनेमें पालोद माताजीके मंदिरमें पूजा करनेके लिये आये । परन्तु शीशोदियोंने अपनी जातिके गौरवकी रक्षाके लिये कहा था; सदराजने जिस समय कुमारपालको निकाल दिया था, उस समय कुमार पालने चित्तौडमें आकर आश्रय लिया, और दिल्लीके चौहानपृथ्वीराजके बहनोई राणा समरसिंह जो चित्तौडके अधीश्वर थे अन्तमें उनके अधीनमें मन्त्रीके पदपर नियुक्त हुए। छठी फर्वरी मार्गमें व्यतीत हुई ।

भ्रमणकारी कर्नल टाड साहब ७ वीं फर्वरीको निकुंपनामक स्थानसे चलकर ८ तारीखको मुरलानामक स्थानमें आये । वह लिखते हैं, "कि मुरला एक श्रेष्ठ ग्राम है, यहाँ कूचौलिया जातिके चारण लोग निवास करते हैं।यद्यपि वह लोग भाटवंशके हैं परन्तु इस समय वह वाणिज्य द्रव्य रक्षकके कार्यसे अपना निर्वाह करते हैं । ये चारण इस देशमें सभी श्रेणी और सब वर्णोंके समीप पूजनीय हैं, और सभीकी भक्तिके पात्र हैं, इसी कारणसे कोई भी इनके प्रति किसी प्रकारका हस्ताक्षेप नहीं कर सकता, और इसी कारणसे वह निष्कर भूमि सम्भोग और निर्भय हो चोरोंसे भरे हुए मार्गमें वाणिज्य द्रव्य भेजते हैं । चोर डाकू भी इनके रक्षित किये हुए द्रव्योंको मार्गमें नहीं लूटते । यह समस्त राजपूतानेमें एकमात्र स्वाधीन होकर वाणिज्य करते हैं, कारण कि राजा भी इनसे वाणिज्यपर कर नहीं लेता है । यह चारणसम्प्रदाय हमारी जिस प्रकारसे अभ्यर्थना करती है उससे हम अत्यन्त आनन्दित हुए । उन्होंने नगरसे दलबद्ध होकर आगे बढ हमारा अधिक सत्कार किया । सबसे आगे ग्रामके बाजा बजानेवाले मनुष्योंका एक दल बाजा बजाता हुआ चला । इसके पीछे सुन्दरी चारणी स्त्रियाँ धीरे २ समीप आकर अंगके उत्तरीय समान्दोलनसे हावभाव कटाक्ष करती हुई धीरे २ नृत्य करती थीं । अन्तमें मुझे मुरलाकी उन स्त्रियोंने बंदी कर लिया, तब वह शान्त हुई।यह दृश्य जैसा नवीन था उसी प्रकारसे चित्तको हरनेवाला था । वीरवपु चारणोंने सुन्दर वस्त्र पहरकर शिरपर पगडी

बाँध और उसमें माला लटका कर दर्शन दिया था। नायक वा नेता गणोंके गलेमें सुवर्ण-के अलंकार थे और उनमें पृथ्वीश्वरकी मूर्ति अंकित थी, उनकी वह धीर गंभीर मूर्ति स्त्रियोंका हृदय प्रकाश करती थी। सभी स्त्रियें पाटल वर्णका घाँघरा और कुरता पहर रही थीं, उनके वह श्रेष्ठ बाल घन कृष्ण जलधि जालके समान थे, अंगमें रमणीय आभूषण थे, हाथमें चुडी अतुलनीय शोभाको प्रकाश कर रही थीं। संसारके अनेक चित्रकारोंके पास इस चित्रके समान योग्य चित्र दूसरा नहीं था। स्त्रियोंकी मण्डली जिस भाँति अपने हावभाव कटाक्ष फेंकती थीं जिस भाँति मधुरभावसे अंगको चलाती हुई अभ्यर्थना करती थीं, उससे भलीभाँति विदित होता है कि वह उस अभ्यर्थनाकी ओरसे कुछ पुरस्कारकी आशा करती हैं।

"अपराह्नके समय नायक मेरे डेरोंमें फिर आये उनके आते ही मैं जान गया कि मैंने सुंदरी स्त्रियोंके द्वारा बंदी होकर उनके हाथसे जो उद्धार पाया है उस उद्धारका मूल्य किस प्रकार है, पिछले पांच सौ वर्ष पहिले मेवाडसे कोई राणा मुरलामें गये थे इन चारणियोंकी संप्रदायने उनको इसी प्रकारसे बंदी किया था; और जबतक राणाने उन सुंदरी चारण कामिनियोंको भोजन न दिया, तबतक उन्होंने बंदी दशासे किसी प्रकार भी छुटकारा नहीं पाया। जिस जंजीरने उनको बंदी किया--वह जंजीर जैसी अमृतमय है बंदीको भी उसी प्रकारसे उस अवस्थामें अधिक दिनतक रहना नहीं होता। चारणियोंके प्रधान नेताने मुझसे कहा कि मैं, राणाका प्रतिनिधिस्वरूप होकर यहाँ आया हूँ मैं उन चारण स्त्रियोंके द्वारा बंदी होनेके समय महा विपत्तिमें पडा था। उसने और भी कहा कि मैं इस चिरप्रचलित रहस्यको किस भावसे ग्रहण करूं, क्रोधित होंगी या प्रसन्न होंगी; यह स्थिर न कर सका, इसी समय स्त्रियोंने मुझे छोड दिया। उसी कारणसे उनको भोज्य भी न मिल सका। परन्तु मैंने उन नायकसे कहा कि प्राचीन रीतिकी रक्षा करके मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ, और तुरन्त ही मैंने उन चारण कामिनियोंके समीप प्रत्यभिनन्दन वचनोंके साथ भोजके लिये रुपये भेज दिये। प्रधाननेता एवं अन्यान्य नायकोंने अपने पत्रोंको लेकर बहुत समय तक मेरे साथमें प्राचीन कालके अनेक विषयोंकी बातचीत की थी"।

कर्नेल टाड साहब चारणोंके सम्बन्धमें फिर लिखते हैं कि "इस छोटी चारण सम्प्रदायके आदिपुरुष राणा हमीरके शासनकालके प्रथम समयमें उनके साथ गुजरातसे यहाँ आये थे। यद्यपि उस समयसे अबतक पाँच सौ वर्ष व्यतीत हुए हैं, तथापि चारण गणोंने अपनी जातिका कोई लक्षण रीति अधिक क्या आचार व्यवहार और पहरावेमें भी किसी प्रकारका अदल बदल नहीं किया। वह इस समय जिस जातिमें वास करते हैं, उस जातिका उनका किसी विषयके साथ कुछ भी सादृश्य दिखाई नहीं पडा। वास्तवमें वह सभी भारतवासियोंसे विपरीत दिखाई पडे, यद्यपि उन्होंने हिन्दुओंमें ऊंचा सामाजिक पद प्राप्त किया था, तथापि पारस राजवासियोंके साथ उनकी सहृश्यता विराजमान है। उन पारसवासियोंका मेल चाल–ढाल, पहरावा ऊंची पगडीको देखकर

गुवरेसके मंदिरके उपासकोंके समान जाना जाता है, इसको देखकर हिन्दुओंके चारों वर्णोंमेंसे किसी एक वर्णके कहनेका बोध नहीं होता, वह लोग किस कारणसे और किस प्रकारसे मेवाडमें आये और यहाँ आकर निवास किया था; इस स्थानपर मैं उनके विस्तारसहित इतिहासको प्रकाशित करनेकी अभिलाषा करता हूँ। मेवाडके इतिहासमें ख्यात नामा-राणा हमीरके एक हाथके एक स्थानपर कुष्टरोगका चिह्न था, वह उस रोगसे आरोग्यता प्राप्त करनेके लिये मेकराणाके किनारे हिंगलाज तीर्थमें गये। यह कच्छभुजदेशकी सीमामें जाकर टांडेमें चारणोंके वासस्थानके निकट जैसे ही घोडेपरसे उतरे कि वैसे ही एक चारणी युवती रसोई करनेसे उठकर आगे बढ राणाके घोडेकी रक्षा कार्यमें नियुक्त हुई। युवतीको अयाचित होकर उस भावसे अपनी सहायता करते हुए देखकर राणा हमीरने उसे धन्यवाद देकर कहा, आपने जो रसोई बनाई है, मेरे सेवक इसको पाकर भलीभाँतिसे तृप्त होंगे. युवतीने उसी समय कहा, मैंने जो रसोई तैयार की है उसके देनेके लिये तैयार हूं। यह सुनकर राणाने कहा, हम लोगोंमेंसे सभी भूखे हैं, इस सामान्य अन्नसे किसीको भी शान्ति नहीं होगी। युवतीने उसी समय कहा कि "हिंगलाजोंके आशीर्वादसे सबकी क्षुधा निवृत्त हो जायगी" यह कहकर राणा और उनके सेवकोंको बैठाल कर उसने भलीभांतिसे सबको भोजन कराया, सभी भोजन कर तृप्त हो गये। बहुत ही पास युवतीने जो एक छोटासा कुँआ खुदवाया था उसका जल पीते ही सभीकी तृष्णा दूर हो गई। इससे सर्वसाधारणको विश्वास हुआ कि हिंगलाज तीर्थकी अधिष्ठात्री देवीने ही इस चारणी रमणी द्वारा राणा हमीरके ऊपर दया प्रकाश की है। वास्तवमें राणा हमीरने उस तीर्थके जलमें स्नान कर शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त की। आरोग्यप्राप्तिके पीछे राणा हमीर उक्त चारणी स्त्रीके पिता माता और कुटुम्बियोंको साथ लेकर मेवाडमें आये। और उन चारणोंके रहनेके लिये यह मुरलादेश दे दिया। चारणोंके पाससे किसी समय भी वाणिज्यपर महसूल नहीं लिया जाय यह आज्ञा भी दे दी। चारणी स्त्रीने राणा हमीरको इस प्रकारसे भोज दिया था, इसीसे उनके स्मृतिचिह्नस्वरूपसे व्यवस्था की गई है कि जो कोई राणा मुरलामें आवैगा चारणोंकी स्त्रियें उसको इसी प्रकारसे वंदी करके उसके समीपसे भोज पा सकेंगी।

इतिहासवेत्ता टाड साहब फिर लिखते हैं कि "इस मुरलादेशमें इस समय कई हजार नरनारी वास करते हैं। यद्यपि इन चारणोंकी वासभूमिके चारों ओर कहीं कृषिकार्यका कुछ भी चिह्न दिखाई नहीं पडता तथापि वह लोग कैसे सुख स्वच्छन्दतासे जीवन व्यतीत करते हैं, इसको देखकर महान् आश्चर्य होता ह। जितनी २ चारणोंके वंशकी वृद्धि होती है उतनी २ उस कच्छदेशकी प्रचलित रीतिके अनुसार खंड२ में चारणोंके परिवारमें भी विभक्त होती है। अन्तमें उसीसे एक समय चारणोंमें उसके लेनेमें महा झगडा उपस्थित हुआ, उसीसे आपसमें विद्रोह दिखाई दिया। उस जातीय युद्धमें बहुतसे चारण मारे गये; उनकी स्त्रियें प्रज्वालित चितामें चढकर जिससे आगेको फिर ऐसा समर उपस्थित न हो इसलिये यह निषेध वाक्य कह गई कि इस मुरलामें कोई भी खेती न करे। उसी समयसे सती स्त्रियोंके निषेध वाक्यके अनुसार मुरलामें आजतक खेती

नहीं होती है, कहीं कोई क्षेत्रको कर्षण नहीं करता। जिस सती दाहकी रीति इस समय इस संसारसे दूर हो चली है उन सातियोंके निषेध वाक्यकी ओर चारणोंकी आजतक किस प्रकारसे भक्ति विराजमान है? चारणोंमें सती नामकी शपथ अर्थात् "महा सातियोंका आन, शपथ सबसे अधिक श्रेष्ठ है। राजकीय सनदपत्रमें यह शपथ वाक्य अधिकतासे प्रयुक्त होता है"।

यहाँसे सात मील निम्बेरा है, यहाँसे रानीखेडेमें गये। यह शहर बहुत बडा है, यहाँकी रानीने बहुत रुपया खर्च करके यह शहर बनवाया था, तथा मंदिर बावडी बनवाये थे, वहाँके लोगोंने भंगीके सरावनकी शिकायत की कि उसने एक सूअर मारकर बावडी-में डाल दिया जिससे लोग उसका पानी नहीं पीते और उनको दूर जाना पडता है, यह काम एक भंगीने अपने कर्ज देनेवालेको दिक करनेको किया था, आर वह मींदरको चला गया, उसको यह सजा मिली थी कि काला मुंह करा गधेपर चढाय जूतियोंका हार उसके गलेमें डाला गया और उस बावडीका जल निकालकर उसमें गंगाजल डालकर और ब्रह्मभोज कराकर उसको शुद्ध किया गया, हमने रानीखेड़ेको देखा। हमारे पास लोग नकाशीके कामकी चीजें लाये, पीछे वहाँके एक रईस खान साहबसे मुलाकात हुई, वह हमको अपने स्थानपर ले गया और खातिरदारीके साथ हम उससे बिदा हुए, शामको वह अपने डेरोंमें आये और हमसे अपनी इच्छायें प्रगट कीं, जिसका उत्तर हमने यथोचित दिया।

निम्बेरा बड़ा शहर है, इसकी दीवारें बड़ी दृढ़ है, यहाँका व्यापार अच्छा है, यहाँकी आमदनी तीन लाख रुपया है।

चतुर्थ अध्याय ४.

पठार देश—पाठारके शिरोभागसे रमणीय दृश्य दर्शन—नहर खुदवानेका प्रस्ताव करना—शुक-देवका मंदिर—दैत्यका हाड—वीरस्तम्भ—अफीमकी खेती—बराबर अकबर और जहांगीरका विदेशसे भारतमें विविध प्रकारके फल फूल और वृक्षोंका लाना—अफीमकी खेतीकी रीति—अफीमसे रजवाडेका अनिष्ट साधन—बृटिश गवर्नमेण्टका अफीमका एक चेटिया व्यवसाय—एक चेटियाका विषमय फल।

भ्रमणकारी कर्नल टाड साहब फर्वरी महीनेकी १३ वीं तारीखको कनेरो नामक स्थानमें जाकर लिखते है कि "आज मेवाड़राज्यका एक नवीन दृश्य मेरे नेत्रोंके सामने आया। कई कोश जानेके पीछे मैं मेवाड़के पूर्व समिानेके स्वाभाविक दुर्ग प्राकारस्वरूप मध्य भारतके पाठार नामक स्थानमें पहुँचा। जितना मैं पाठारके सम्मुख जाता था, उतनी

ही आरावली शिखरकी अपेक्षा उसकी ऊंचाई घटती जाती थी, इसको दूसरी श्रेणीका शिखर वा ऊंची समतल भूमिके कहनेका अनुमान होता था। यद्यपि यह पश्चिमकी भूपृष्ठसे चार सौ फुटसे अधिक ऊंचे नहीं थे, तथापि इसके ऊपरके भागपर खड़े होनेसे नैतिक, राजनैतिक और प्रकृतिके सम्मुख ऐसा रमणीय दृश्य दिखाई देता था कि मैंने पहिले कभी ऐसा हृदयको हरण करनेवाला दृश्य नहीं देखा। इस स्थान-पर खड़े होते ही मेवाड़के इतिहासकी समस्त प्रधान रंगभूमि मनके सम्मुख दिखाई पड़ती है। हमारे दक्षिणभागमें समस्त हिन्दू जातिके गौरवका स्थान चित्तौड विराजमान है। पश्चिमकी ओर आकाशको भेदन करनेवाले पहाड खडे होकर नवीन राजधानी उदय-पुर और उसके वीरोंकी रक्षा कर रही है, और इस स्थानपरके हम जिस स्थानपर खडे हुए हैं, उसके चरणोंके नीचे जाबदा, जीरण, नीमच, निम्बेडा, खेरी और रत्नगढ इत्यादि देशोंको देखा जो पठान और महाराष्ट्रोंके द्वारा छीने जाकर उनके हस्तगत हो गये हैं; इस रमणीक देशके निमित्त यथार्थ राजपूतके समान चित्तवालेके हृदयमें किस प्रकारके भावका उदय हो सकता है-किस प्रकारकी आकांक्षाका उदय होगा सो पाठक स्वयं जान सकते हैं। मैं तो अंग्रेजी सत्तर मील एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें घूमता आया हूं। वह परम सुन्दर प्रदेश कहाता है। मृदुलनादिनी बहुतसी नदियां पहाडोंके शिखरपर नृत्य करती हुई चारों ओरको बह रही है, चारों ओर प्राचीन सौधावलीसे व्याप्त होकर ग्राम और नगरकी सुन्दरताको प्रकाश कर रही हैं। एक समय यह समस्त ग्राम और नगर मनुष्योंसे परिपूर्ण थे, परन्तु हाय ! इस समय यह मनुष्योंसे शून्य हो रहे हैं। परन्तु किसी २ स्थानपर मानों फिर भी शक्ति और समृद्धिके पूर्व लक्षण दिखाई पडते हैं। इस ऊंचे स्थानपर खडे होकर मुझे एक विशेष प्रयोजनीय कल्पनाका आन्दोलन हुआ था। मेवाडकी प्राचीन राजधानी उदयपुरतक एक विस्तारित नहर खुदवानेका प्रस्ताव मेरे मनमें उदय हुआ, उस नहरके खुदवानेके कामसे मेवाडके समस्त क्षेत्रोंमें दशगुणा अधिक धान्य उत्पन्न होगा और यह दुर्भिक्षकी रीति सर्वदाके लिये दूर हो जायगी। मुझे ऐसा विचार हुआ। परन्तु इस अभिप्रायके सिद्ध होनेका उपाय क्या है ? धन कहां है ? उस धनके अभावसे हमारी इस प्रकार अनेक आशाएं मनकी मनमें ही लीन हो गई है। परन्तु हमारा इस समय भी यही विचार है कि यदि नहर खुदाई जायगी तो राणा जो केवल अपना देय कर देते हैं वह बचेगा यही नहीं वरन् वह अपनी प्रजाके ऊपर विशेष

(१) कर्नल टाड साहब सर्वदाके लिये राजस्थानको छोडकर अपने देशमें आये और आकर इतिहासको प्रकाश करनेके समय इस स्थानपर अपनी टीकामें लिखते हैं, "इस समय मैं अपनी स्मारक पुस्तकको देखकर इस इतिहासको लिखता हूँ। मैं इस समय भी (इतिहासका छपना समाप्त होनेपर) कई वर्षके लिये इस सुखदाई उपत्यकामें जाकर इस नहरके खुदवानेका समस्त दाइत्व भार ग्रहण करनेके लिये तैयार हूँ। यद्यपि मैं मेवाडमें एक दिनके लिये भी स्वस्थ नहीं था, तथापि मैं जानेके लिये तैयार हूं" राजपूतोंके बांधव टाड साहबकी उदारता कैसी अद्वितीय है।

दया करेंगे प्रजाके मंगल साधन करनेके लिये विशेष चेष्टा करना हमारा प्रधान कर्तव्य है " ।

" यह पाठार नामक सम उच्च देशका शीर्षस्थल उपजाऊ और सजल मट्टीसे पूर्ण है, यहाँ आम, महुआ, और नीम बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं, इस ऊंचे विस्तारित देश-के अनेक स्थानोंमें धर्मसम्बन्धीय बहुतसे प्राचीन स्मृतिचिह्न विराजमान हैं । जहाँ कहीं स्वाभाविक झरने उपत्यकापर दृष्टि आते हैं उसी स्थानपर महादेवका लिंग स्थापित देखा जाता है, मैं जिस ऊंचे पर्वतपर चढ़ा था उसके एक कोश दूरीपर अंधकारमय पहाडी मार्गमें शुकदेवका आश्रम है; मैं इस मार्गको नहीं जानता था, तिस-पर मेरे साथमें घोर परिश्रम करनेवाला ब्राह्मण रामगोविन्द भी उस समय नहीं था इसी कारणसे मैं शुकदेवके आश्रमको न देख सका । परन्तु मैंने और २ मनुष्योंसे उस आश्रमके सभी जाननेयोग्य विषय पूछ लिये । शुकदेवका आश्रम जिस भाँति जन मानव शून्य और निराला है, उसी प्रकार अनेक भांतिके पुष्पोंसे शोभायमान है, पहाडोंके शिखरोंसे निकली हुई अनेक तरंगिनी आश्रमकी ओर बह रही हैं । उस पहाडके शिखर-पर शुकदेवजीकी मूर्ति स्थापित है, उस नदीकी एक ओर " दैत्यका हाड " नामवाला एक ऊंचा शृंग है । यात्री किसी एक विषयका विचारकर अथवा पारलौकिक पुण्यका विचार कर उस ऊंचे दैत्यके हाड़परसे नीचे नदीमें कूदते हैं । उसको वीर कूदना कहते हैं यद्यपि उसपरसे कूदकर सभीकी मृत्यु होजाती है परन्तु कोई २ बच भी जाता है । अधिकतर बहुतसी स्त्रियोंने पुत्रकी इच्छासे इस प्रकार नदीमें गिरकर प्राण त्याग किये हैं । एक मनुष्यने मुझसे कहा कि एक स्त्रीने शपथ की थी कि यदि मेरे पुत्र हुआ तो उसको गोदीमें लेकर मैं नदीमें गिरूंगी । ईश्वरकी इच्छासे उसके पुत्र हो गया तब वह पुत्रसहित उस नदीमें गिर गई थी । आश्चर्यकी बात है कि दोनोंके ही प्राण बच गये । एक तेली कूदा था वह भी बच गया, इसी प्रान्तमें ओंकारनाथका मंदिर है ।

कर्नेल टाड साहब फिर लिखते हैं कि " ६० वर्ष बीते हैं कि चम्बल तक यह समस्त पाठार देश मेवाडराज्यके अन्तर्गत था, परन्तु इस समय कुनेडोंके अतिरिक्त और सभी अंश सेंधियाके हस्तगत हो गये हैं । बाईस ग्रामोंमें कनेरी एक प्रधान नगर है, सौभाग्यवश वह किसी कारणसे फिर राणाके हस्तगत हो गया है । परन्तु बडे कष्टसे महाराष्ट्रोंके कराल ग्राससे इसका उद्धार हुआ है । पहिले इसको अधिकारमें करके शेषमें स्वत्वके लेनेका विचार किया गया । हम इस प्रकारसे समस्त पाठारदेशको प्राप्त करते तो अच्छा होता परन्तु दुर्भाग्यवश उन समस्त अंशोंको वृद्ध जालिमसिंहके मित्र और शान्तिप्रिय लाला जीवेलालने जमा कर लिया है । मैं फिर कहता हूँ कि सेन्धियाने इन समस्त देशोंको केवल युद्ध व्ययके प्रतिभूस्वरूपमें राणासे अपने अधिकारमें कर लिया था, यद्यपि वह सामरिक व्यय बारम्बार चुका दिया था तब भी सेन्धियाने इस देशको नहीं छोडा । सुभीता मिलनेपर चम्बलके समस्त पश्चिमांशके पाठार प्रदेश फिर मेवाडके महाराजको दे दिये जाँयगे " ।

राजस्थानके परम हितैषी टाड साहबने राजपूत किसानोंमें अफीमकी खेतीकी अधिक वृद्धिको देखकर महा दुःखित होकर कहा था, " विशेष प्रयोजनीय धान्यके बदलेमें अफीमकी जो खेती क्रमशः बढती जाती है प्रबल कानूनके द्वारा इसकी गतिका रोकना अवश्य कर्तव्य है। जब इस देशमें प्राचीन राजाकी प्रजामें पितापुत्र सम्बन्ध मूलक रीतिके अनुसार शासनकार्य होता था, उस समय कृषिकार्यसे राजाका प्रधान कर लिया जाता था और राजा इसका निश्चय स्वयं कर देते थे कि किस २ भूमिमें किस २ चीजकी खेती होगी। मेवाडके प्राचीन कृषक विधानके सम्बन्धमें एक व्यवस्था यह भी थी कि प्रत्येक किसानकी भूमिमें एक बीघा (पोस्त) अफीमकी खेती होगी। परन्तु हमारे (अंग्रेज गवर्नमेण्ट) द्वारा इस अफीमका वाणिज्य एक चेटिया कर लेनेसे अफीमकी खेती सब जगह बहुतायतसे बढ़ गई है, अधिक क्या कहैं जिस देशके किसान किसी समय भी अफीमकी खेती नहीं कर सकते थे इस समय वह भी अफीमकी खेतीकी ओर भलीभांतिसे मन लगाते हैं। हमारी राजनीतिका फल ऐसा नहीं पर इसीसे किसान प्रकृत आहार्य धान्यकी ओर ध्यान न देकर धनके लोभी होकर आप अपने स्वार्थका नाश करते हैं "।

साधु टाड साहब फिर लिखते हैं " कि महामारी और युद्धके द्वारा इस देशके निवासियोंकी जितनी शारीरिक और नैतिक अवनति हुई है, एकमात्र इस अफीमके द्वारा उससे भी अधिक बहुत अंशोंमें अनिष्ट हुए हैं। इस कारण किस प्रकारसे वह सर्वनाश करनेवाली अफीम इस देशमें प्रचलित हुई और किस प्रकारसे उसकी खेती हुई, इस स्थानपर उसके वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं है। बाबर, अकबर, एवं जहांगीर इत्यादिके समान अपनी जीवनीके लिखनेवाले बादशाहोंकी उस आत्मजीवनीको पढ़ कर हम जान गये हैं कि देशदेशान्तरोंसे अनेक भांतिके फलफूलोंके वृक्ष तथा वृक्षोंकी लता इस भारतवर्षमें वही लाये थे। उनके इस उपकारसे हम उन बादशाहोंके निकट अवश्य ही ऋणी हैं। यद्यपि तैमूरके वंशधर अपने जन्म और शिक्षाके दोषसे अत्यन्त स्वेच्छाचारी थे और उन्होंने राजपूतानेका महान् अनिष्ट साधन किया था, तथापि उनको हम सच्चरित्र, इतिहासलेखक, नीतिके जाननेवाले तथा योधास्वरूपसे जगत्‌में अपने समसामयिक समस्त राजाओंकी प्रशंसाको संग्रह करते हुए देखकर अवश्य ही उनकी कीर्तिका कीर्तन करके गौरवका अनुभव करते हैं। मनुष्य जीवनके सुख, स्वच्छन्दता और बिलासिता सम्बन्धी सब विषयोंमें तैमूरके वंशधरोंने राजपूतोंके ऊपर सम्पूर्ण विधानता विस्तार की थी। राजपूत केवल कुसंस्काररूपी वेष्टनीमें पडकर इसके सम्बन्धमें कोई उत्कर्ष साधन करनेमें समर्थ न हुए। समरकंदकी राजसभाके साथ करगणाके राजाओंकी विशेष मित्रता थी, उस समरकंदके राजाओंने अवश्य ही ऐश्वर्य आडम्बर और तीक्ष्ण बुद्धिके विषयमें संसारमें विशेष प्रधानता प्राप्त की थी। परंतु भारत विजेता अवश्य ही उस स्थानसे वंशगत शिक्षा प्राप्तिके ऊपर देश भ्रमण और जगत्‌के अन्यान्य प्रान्तोंके साथ क्रमशः वार्तालाप परिचय और संश्रवद्वारा अपनी उस सम्पूर्ण शिक्षाको भलो भाँतिसे बढाकर अभिज्ञताके बलसे विशेष

बलवान् हुए थे। और इसीसे जिस समय वह प्रतिज्ञाके द्वारा हिमानीमंडित काकेशससे हिंदुस्थानके समतलक्षेत्रमें आये, उस समय हजरत तैमूरके वंशधर बाबरने अपनी डायरी (दैनिक पुस्तक) में भारतवर्षका कोई दृश्य अथवा कोई घटना उनके नेत्रोंके सम्मुख नवीन बोध होती तो उसीको वह अपने हाथसे लिख लेते थे, किसी लिखनेको वह नहीं भूले थे। उन्होंने मध्यएशियासे इस सुवर्णभूमि भारतवर्षके समस्त विषयोंको भलीभांतिसे देखकर अपनी निरन्तर लेखनी चलाई थी। पृथ्वीके जिस किसी राजाने अपने हाथसे किसी ग्रन्थको निर्माण किया है तो उसमें बाबरका वह आत्मभ्रमण वृत्तान्तरूप साहित्य ही संसारमें अत्यन्त प्रशंसनीय है इसमें कुछ सन्देह नहीं कि प्राणीके सम्बन्धसे हो अथवा उद्भिज सम्बन्धसे हो जो उनके नेत्रोंके सम्मुख नवीन जचता था उसके सम्बन्ध तकको वह इस पुस्तकमें वर्णन कर गये हैं। बाबरने जिस प्रकार वह भ्रमण वृत्तान्त और व्याख्या लिखी है, उस प्रकारसे किसी देशकी किसी पुस्तकमें भी वह सरलभाव और थोडेसे स्थानमें प्रयोजनीय समस्त विषयोंकी रचना दूसरी पुस्तकमें नहीं देखी गई, विशेष करके उन्होंने जिस देशके वृत्तान्तको वर्णन किया ठीक वैसा ही लिखा उस समय लेखको अतिरंजित करके वर्णन करना एक चिर प्रचलितरीतिरूपसे गिना जाता था। पर उसने वैसा न किया। बाबरने जिस २ समय युद्ध किया उसी समयमें उनके जीवन और भविष्य उन्नतिके वक्षस्थलपर आघात हुआ और जिस २ युद्धमें उन्होंने भारतवर्षके सिंहासनपर अधिकार पाया था उन सभी युद्धोंका वृत्तान्त उसमें वर्णन किया गया है"।

बादशाह बाबरके गुणोंके वंशको कीर्तन करनेके पीछे टाड साहब लिखते हैं कि "अकबर बाबरके बताये हुए मार्गपर चले थे, तथा फारिस और तातार देशके किसान और उद्यानपालकोंको भारतमें लाकर उनके द्वारा फारिस और तातार देशके पिश्ता शफतालू बादाम इत्यादि अनेक प्रकारके स्वादिष्ठ फल उत्पन्न किये थे वह सब फल रजवाडेमें आजतक नहीं थे। बादशाह जहांगीरके द्वारा लिखी हुई आत्मजीवनीको पढनेसे जाना गया है कि उनके शासनसमयमें भारतवर्षमें तमाखू व ताम्रकूट आया था परन्तु सबसे पहिले पोस्तकी खेती किसके द्वारा भारतवर्षमें प्रथम आरम्भ हुई और इससे फिर अफीम बनकर तैयार हुई इसका हमने कहीं भी कुछ वर्णन नहीं पाया। इसका औषधरूपमें व्यवहार बताकर कितनी ही प्राचीनता प्रकाशित की जाय, किन्तु थोडे दिनोंसे

(१) बहुतसे लोग कहते हैं कि अफीम, बाबर, अकबर, व जहांगीर सम्राटोंके द्वारा भारतवर्षमें लाई गयी, सो यह उनकी भूल है, प्राचीन समयमें भारतमें अफीमकी खेती होती थी, आयुर्वेदके मतमें इसका औषधि स्वरूपमें व्यवहार होता था, संस्कृत भाषामें इसको "अफेनम्" "खसखस रसम्" "निफेणम्" और "अहिफेणकम्" कहते हैं, इसका गुण राजनिघन्टु नामक प्राचीन पुस्तकमें लिखा है, "सन्निपातनाशित्वं शुक्रबलमेहकारित्वञ्च।" यह अफीम चार प्रकारकी होती है, जैसे सुश्वेत वर्ण १ अन्नजीर्णताकारक इसको जारण कहते हैं (२) कृष्णवर्ण-यह मृत्युकारक है, और इसको स्मारण कहते हैं (३) पीतवर्ण। यह वीर्य स्तम्भनकारक है, इसको "धारण" कहते हैं; (४) कर्बुरवर्ण-यह मलसारक है, और इसको 'सारण' कहते हैं।

संसारमें बुरे व्यवहारोंमें वर्ती जाती है, तीन सौ वर्षके पहिले यह संसारमें नशेके लिये नहीं व्यवहार होती थी, हिन्दुस्थानके किसी प्राचीन वीर इतिहास वा काव्यके बीचमें इस अफीमका कोई लेख नहीं मिलता। आमंत्रित गणोंको पहिले "मनौआका प्याला" नामक पानपात्र दिया जाता था किन्तु उसमें अमल पानी वा अफीम नहीं दी जाती थी मनौआ वा मनोहर प्याला अथवा पीनेके पात्रमें पहिले फूलका अर्क वा पुष्पका मधु ही पीनेको दिया जाता था, आजकल उसके स्थानपर अफीम दी जाती है। वर्तमान समयके अनुसार अफीम शुद्ध करनेकी रीतिके पहिले पोस्तकी डंडीके द्वारा जलके योगसे पीते थे। सभी लोग उसको तिजारो कहकर पुकारते थे--राजपूतानेके दूरदेशोंमें अब भी मनुष्य कुसंस्कार बशसे वर्तमान रीतिको न जानकर उक्त प्राचनि रीतिसे अफीम खाते हैं। अफीमकी खेतीके सम्बन्धमें कर्नल टाड लिखते हैं "पहिले चम्बल और सिप्राके बीचवाले भूखंडमें दोनों नदीके उत्पत्तिस्थानसे मिलनेके स्थानतक जो प्रदेश दुआब नामसे पुकारा जाता है वहां अफीमकी खेती होती थी। यद्यपि पुरानी कहावतसे हम मध्यभारतके उक्त स्थानको अफीमका आदि क्षेत्र कह सकते हैं किन्तु अब तो केवल वहा नहा वरन् समस्त मालवे और राजपूतानेके अनेक स्थानोंपर विशेष कर मेवाड और हाडौती प्रदेशके बहुतसे भागमें अफीमकी खेती होती है। कुम्भी, जाट, बनियें और ब्राह्मण यह सभी अफीमकी खेती करते हैं। परन्तु कुंभियोंसे और सब लोग इसमें हार जाते हैं, कारण कुंभी ही पहिले पहिलके अफीमकी खेती करनेवाले हैं, इसीसे वह अफीमकी खेतीकी रीतिको भलीभांतिसे जानते हैं अतएव वह अन्य अफीमकी खेती करनेवालोंसे अफीमके वृक्षसे पांच अंशका एक अंश अधिक अफीम निकालते हैं"।

यह एक आश्चर्यका विषय है कि जैसे २ रजवाडेमें सुख और शांति दूर होती जाती थी, वैसे२ अफीमकी खेती भी बढती जाती थी। युद्ध और महामारी और दुर्भिक्षने जितना अपना प्रताप फैलाकर रजवाडेको जनशून्य कर दिया, इस सर्वनाशक अफीमकी खेतीसे भी उतना ही उत्कर्ष साधन हुआ था। मुगलशासनके सूर्यास्त होनेके पीछे जिस प्रकार महाराष्ट्रोंने भारतवर्षमें अपना बलविस्तार करके राजपूतानेको विध्वंस कर दिया था उसी प्रकार किसान लोग धीरे २ अन्य खेतीके बदलेमें केवल गेहूँ, जौ, और चनेकी खेती करनेमें प्रवृत्त हुए थे; अन्तमें जब मरहठे पठान और पिंडारियोंके अत्याचार इतने बढ गये कि किसानोंने सब खेतीको छोडकर केवल अपने कुटुंबको पालने योग्य गेहूँ आदिककी खेती की और सब प्रकारकी खेती छोडकर एकमात्र अफीमकी खेतीमें मन लगाया। अफीमकी खेती बहुत थोडी भूमिमें हो जायगी और महाराष्ट्रोंके अत्याचार और उपद्रवोंसे इसकी रक्षा भलीभांतिसे कर सकेंगे, जब लूटनेवाले पठान इसको लूटनेके लिये आवेंगे तब इसके बदलेमें कुछ थोडासा रुपया दे दिया जायगा, परन्तु गेहूँ इत्यादिकी खेती करनेमें उसकी रक्षाके लिये बहुतसे मनुष्योंका प्रयोजन है और जब महाराष्ट्रोंकी अश्वारोही सेनाका दल एक साथ ही खेतमें आ जायगा तब समस्त धान्यके नष्ट होनेकी सम्भावना होगी; इसीसे किसानोंने एकमात्र अफीमकी

खेतीको ही महाराष्ट्रोंके उपद्रवके समयमें उपयोगी जाना था । मेवाड़की सर्वसाधारण प्रजापर जितने अत्याचार आरम्भ हुए थे आश्चर्यका विषय है कि मालवेमें उस प्रकारसे अफीमकी अधिक खेती होती थी । संवत् १८४० सन् (१७८४ ईसवी) में अत्याचार और उपद्रवोंके आरंभ होनेसे प्रजाने अन्यत्र भागना प्रारम्भ किया; संवत् १८५७ सन् १८०० ई० में प्राणभयसे अन्य देशमें भागनेवाले मनुष्योंकी संख्या अत्यन्त बढ़ गई एवं क्रमसे संवत् १८७४ सन् १८१८ ई० में सारा देश एकवार ही जनशून्य हो गया । जितनी अफीम तैयार होती थी उतना ही उसका व्यवहार भी बढ़ता जाता था । विशेष करके विदेशमें भी इस अफीमकी खानगी बहुतायतसे बढ गई " ।

" भागनेवाले मनुष्योंने चम्बलके किनारे मन्दसोर खाचरोदा नील और अन्यान्य निम्न मालवेदेशमें गमन किया । उन्होंने वहाँ जाकर आपासाहब और उनके पिताके आश्रयमें शान्तिसहित निवास किया, आपा साहबने उस उपजाऊ मालवेमें स्वयं जाकर खेती की थी । आपासाहबने पाहले जो सब कूपादि खुदवाकर समस्त कृषि-क्षेत्रका उत्कर्ष साधन और उन सब कूपादिसे कृषिकार्य किया था; नवीन किसानोंको उन सब क्षेत्रोंमें खेती न करने दी थी तब इन्होंने उनको रुपया दिया और जिस भूमि-पर उपजाऊ न होनेके कारण उसमें किसान खेती नहीं करते थे वही सब भूमि उनको खेती करनेके लिये दी । उन्होंने उसी धनसे कुएँ खुदवाकर खेती करनी प्रारंभ कर दी । इन उपनिवेशी किसानोंने गेहूँ जौ इत्यादिकी खेतीको एकवार ही छोडकर केवल मकईकी खेती की थी और उसी खेतमें अफीम और गन्नेकी खेती आरम्भ कर दी " ।

किस प्रकारसे अफीमकी खेती होती है उसके सम्बन्धमें साधू टाड साहब लिखते हैं " खेतमें मकई तथा सनकी खेतीके हो चुकनेपर उसकी जड़ें उखाड कर पहिले जला दी जाती हैं । और पीछे सब खेतमें जल देकर उसको भली भांतिसे सींचते हैं, तब उसमें हल चलाया जाता है ।

गोबरके खादको बहुत दिन पहिले तैयार कर रखते हैं । वर्षाऋतुमें एक बडा भारी गड्ढा खोदकर उसमें गोबरको रखते हैं और बीच २ में बाँससे उस गोबरके छुछडोंको मिला देते हैं। जब उस गोबरका रस बन जाता है तब उसको खेतमें देते हैं, जिस किसानोंके गौ नहीं होती और जो गोबर मोल लेनेको समर्थ नहीं होते वह खाद देनेके लिये पशुपालकोंके साथ बंदोबस्त करके एक २ दल बकरी भेडोंका रात्रिके समय खेतमें बाँध रखते हैं । इसी कारण नियमित आहारसे पशुपालकोंको पैसा देते हैं। वह पशु खेतमें जो मल त्याग करते हैं उसीका खादरूपसे व्यवहार होता है । छ सात बार हल और मोया दिया जाता है । जिससे जल सुभीतेके साथ जा सकै इसलिये कुछेक ऊँचा करके मट्टीकी खाद दी जाती है । पीछे उसमें बीज बोकर जल देते हैं । उक्त जलदानके सातवें दिन पीछे या ग्यारहवें दिन बीज अंकुरित होता है और पचीस दिनमें नये २ पत्ते निकल कर शोभायमान हो जाते हैं और जब सूखी हुई देखते तभी उसमें फिर जल देते हैं ।

मट्टीके कुछेक दूर होनेपर किसान अपने कुटुम्बसहित खेतमें आकर प्रत्येक वृक्षको उखाडकर श्रेणीबद्धभावसे आठ इञ्च अलहदा एक २ वृक्षको लगाते हैं और वृक्षोंके चारों ओर मट्टी लोहेकी शलाकासे भर देते हैं। इस समयमें वृक्षोंका परिणाम तीन इञ्च ऊंचा होता है। एक महीनेके पीछे कुछ थोडा २ जल देना प्रारंभ करते हैं, मट्टीके सूखते ही फिर वृक्षोंके चारों ओरकी मट्टी गोड दी जाती है, दस दिनके पीछे फिर एक बार जलसे सींची जाती है, दो चार दिनके उपरान्त वृक्षके दो एक स्थानोंपर कलियें निकल आती हैं। कलियोंके निकलनेपर फिर एक बार वृक्षकी जडमें जल दिया जाता है जल देनेके २४ वा ३६ घंटे पीछे वृक्षके समस्त फूल खिल जाते हैं फूलकी आधी पखडियोंके गिरते ही किसान फिर वृक्षकी जडमें जल देते हैं। जल देनेके पीछे सभी फूलोंकी बची बचाई पखडियें गिर पडती हैं तथा फूलके नीचेका बीजाधार क्रमशः शीघ्रतासे बढ जाता है। थोडे ही समयमें उन सब फूलोंके गिर जानेपर उस बीजाधारके गात्रपर एक प्रकारका सफेद चूर्ण दिखाई देता है, किसान उसको देखकर जान जाते हैं कि अब शीघ्र ही पोश्तकी डंडीको भेदन करना होगा। ''

उस डंडीको तीन भागोंमें विभक्त करते हैं। एक भागमें तो उस प्रकारसे बीजके आधारका गात्र वेधन किया जाता है। जिस अस्त्रसे छेदन करते हैं वह छोटा त्रिमुखा और शलाकाके समान होता है। जिससे वह अस्त्र भलीभाँतिसे बीजाधारमें प्रवेश न कर सके और जिससे सार रस बीजाधारमें न रहने पावे, इस कारण वह बडी सावधानीसे उस भेदन कार्यको समाप्त करते हैं। बीजाधारके नीचेसे ऊपरके भागतकको जब चीर डालते हैं तब दूधके समान रस निकलकर बीजाधारके ऊपर जमता जाता है। क्रमानु॰सार तीन दिनतक सूर्यके उत्तापके समय प्रत्येक वृक्षमें तीन बार करके उपरोक्त प्रकारसे भेदन कार्य करते हैं। प्रातःकाल ही उस रसको छुरीसे उस बीजाधारपरसे छुटाते है। चौथे दिन प्रत्येक बीजाधारपर फिर एक बार पूर्वप्रकरणके अनुसार भेदन करके देखते हैं कि इसमें और भी रस है या नहीं। वह जमा हुआ रस जिससे सूख न जाय, इसलिये प्रतिदिन प्रातःकाल ही मसीनाके तेलके वर्तनमें भिगोकर रखते हैं, बीजाधारसे समस्त रस जब बाहर हो जाता है तब उसमें केवल बीज ही रह जाता है। उस समय समस्त बीजाधारके वृक्षोंको उखाड़कर किसान अपने २ घर ले जाते हैं और मट्टीमें रखकर उसके ऊपर कुछ एक जल सींच एक वस्त्रसे ढककर उस भावसे प्रातःकालतक रखते हैं। पीछे प्रातःकाल ही पशुओंके पैरोंसे उन सब बीजाधारोंको दबाया जाता है, तब उसमेंसे सब बीज बाहर निकल जाता है। किसान उस बीजको पोश्तका तेल तैय्यार करानेके लिये तेलीके घर भेज देते हैं और बीजका अन्य पतित अंश जला डालते हैं, कारण कि पशुओंके उस विषैली वस्तुके खानेसे घोर अनिष्ट होनेकी सम्भावना है। मेवाडके अन्य तेलोंकी अपेक्षा वह तेल अधिक प्रकाश देता है। किसानोंने जो हिसाब किया है कि एक मन बीजसे दो सेर अफीमका रस तैयार होता है, एकसौ बारह मन बीजका मूल्य इस समय १२५) रुपया है ''।

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं कि मालवेकी एक बीघा जमीनमें पावसे पौन-सेर तक अफीमका रस बनता है। किसान इस प्रकारसे रस संग्रह करके व्यापारियोंको प्रचलित मूल्यके अनुसार अफीम बेचते हैं। वह व्यापारी उस अफीमके रसको कपडेकी थैलीमें रखकर घर ले जाते हैं, खरीदनेवाले पहिले पोस्तके पत्तोंका संग्रह कर लेते हैं, दो तीन इञ्च पोस्तके पत्ते बिछाकर उसपर पोस्तके डोरोंमेंसे अफीमको बिछाकर उन पत्तोंको मोडकर ढक देते है और पाँच महीनेतक इसी अवस्थामें रहने देते हैं, यदि रस पतला है वा तेल मिला है तो दश अंशका सात अंश सार पदार्थ रह जाता है और यदि शुद्ध रस हो तो उसमें सार पदार्थ आठ अंश निकलता है। व्यापारी लोग पीछेसे उस सार पदार्थको राजपूतानेमेंसे खरीदते और विदेशमें ले जाकर बेचते हैं। मध्यम दरजेकी अफीमके सम्बन्धमें टाड साहबने पीछेसे लिखा है कि "माही नदीके किनारे कन्थल नामक प्रदेशमें (जिसमें प्रतापगढ देवलिया शामिल है) बहुतायतसे अफीम होती है और वहाँके किसान लोग उसमें एक वस्तु मिलाते हैं वह मिली हुई अफीम चीनमें मालवेकी अफीम कहा कर बिकती है और उसका मूल्य भी कम मिलता है, नीचे लिखी हुई रीतिसे वह द्रव्य मिलाया जाता है उत्तम गुड और गोंद बराबर ले, उससे आधी उसमें अफीम मिलाय चूल्हेपर चढाते और नीचे भलीभाँतिसे अग्नि प्रज्वलित करते हैं; उन सब वस्तुओंके भलीभाँतिसे मिल जानेपर कढाईको उतार लेते हैं, ठंढी होनेपर उसको पोस्तके बीचमें रखकर तेलकी हाँडीमें रखते हैं, यह अफीम अत्यन्त हानिकारक है, राजपूतानेके लोग इसका कभी सेवन नहीं करते"। संवत् १८५८ में अफीमका बाजार १६ से इक्कीस रुपये सलीमशाही एक ओलियन था संवत् १८७६ में ३८ वा ३९ रुपये तक है।

टाड साहब फिर लिखते है "पिछले चौवालीस ४४ वर्षसे इस हानिकारक अफीमकी खेती जो इस देशमें प्रबल हो चली है, ऊपर जिसका विवरण लिख आया हूँ वही अनिष्टकारक अफीमका विवरण है, बृटिश गवर्नमेंट इस समय अपनी इस अफीमकी खेतीको बढाना चाहती है, किन्तु उसमेंसे इस रीतिको छोड एक कानून बनावे और उसके जरियेसे यह महाहानिकारक अफीम तैयार न हो सके ऐसी व्यवस्था कर दे। ४४ वर्षोंसे बिना मिलावकी अफीम जिस भाँति बनती आई है इस रीतिके चलानेकी धारा जारी करे तो आगे होनेवाले राजपूत इसका सेवन न करेंगे और सद्व्यवहार और सुन्दर व्यवस्थाके हो जानेसे अवश्य ही मेरी प्रशंसा करेंगे।

हमारी खमेली अफीमके व्यवसायको छोड देनेसे हानि होगी, यह नहीं मानना चाहिये; वरन् इस कामको करना हमारा धर्म है यह मानना चाहिये, अफीमके सेवन करनेसे प्रजाकी शारीरिक और आर्थिक हानि होती है और प्रतिदिन अवनति ही होती जाती है, इस खेतीके बदले रुई, नील, ईख और उत्तम फसलकी खेतीके बढानेमें सहायता करनेसे सर्व साधारणकी आयु धन और बलकी वृद्धि हो सकैगी। मैं राजपूतानेको राजनैतिक पतनके मुखसे उद्धार किया चाहता हूं, किंतु केवल राजपूतानेकी

स्थाई रक्षा करनेसे क्या होगा; उसके नैतिक बल और उसके अन्य स्थानोंमें भी इसकी खेती रोकनी चाहिये; कविवर बैरन साहबने ग्रीसके सम्बन्धमें कहा है ।

"T' is Greece but living Greece no more"

इसको ग्रीस कहते हैं-किन्तु जीवित ग्रीस अब नहीं है, हम भी उन्हींके समान रजवाडेके सम्बन्धमें कह सकते हैं कि यह रजवाडा कहा जाता है, परन्तु यह जीवित रजवाडा नहीं है ।

अफीमके सेवनसे युवा अवस्थामें ही मन और बुद्धिकी स्फुरणशक्तिकी हानि होती है शरीर आलसी और असाहसी हो जाता है, मैं अपनी बुद्धिके अनुसार जो इस विषयमें कहता हूँ उसको अपनी शक्तिके अनुसार पूर्व कही हुई बातको काममें लानेकी चेष्टा भी करता हूँ । मैंने सिंहासनपर विराजमान राणासे लेकर सामान्य दरजेके मनुष्यतकके इस बातकी शपथ करा ली है कि वह कभी भी अपनी प्यारी संतानको इस प्राणनाश करनेवाली अफीमका सेवन न करावें । किन्तु केवल शपथ करा लेनेसे ही क्या होगा जबतक कि वह अफीमकी खेतीका करना न छोडेंगे ।

यदि किसान लोग इस जमीनमें इस खेतीके बदले अन्न गेहूं आदिकी खेती करें तो इसमें बडा लाभ हो ।

पञ्चम अध्याय ५.

धारेश्वर-रतनगढ खेरी-चारणोंका उपनिवेश-छोटा अतवा-डूँगरसिंह-शिवसिंह-कालामेघ उमेदपुरा-वहांके सामन्त-सिंगोली-भवानीका मंदिर-राणा मुकुलकी स्मारक लिपि-हाडा जातिका प्रवाद वाक्य-आलूहाडा ।

महात्मा टाड साहबने १४ फर्वरीको धारेश्वर नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि "कुनेरोंसे धारेश्वरतक डेढ कोशका रास्ता क्रमानुसार नीचेको आया है, उस डेढ कोशके रास्तेमें आधे स्थानकी मट्टी उपजाऊ है और आधे स्थानमें पत्थरोंके बडे २ टुकडे पाये जाते हैं । धारेश्वर ग्राम एक अत्यन्त सुन्दर रमणीक स्थानमें बसा हुआ है, सामने ही निर्मल जलवाली नदी बह रही है,इसके दाहिनी ओर ऊंचे २ वृक्षोंका शोभायमान वन है । कितने ही कछवाहे राजपूत यहांकी पृथ्वीके अधिकारी हैं । परन्तु वह करस्वरूपसे बहुतसा रुपया कुनेरोंके अधीश्वरको देते हैं । सूर्योदयके होते ही हम बहुतसी छोटी २ कुटियोंसे पूर्ण ग्रामको लांघकर आये, देखा कि बहुतसी हरिणियां हमारी ओरको देखती हुई धीरे २ जा रही हैं, वह मार्ग इतना पथरीला है कि उसपर घोडेपर सवार होकर हरिणियोंका शिकार करना असम्भव है " ।

रत्नगढ १५ फर्वरी-खेरी, यहांसे साढे आठ कोश दूर है। धारेश्वरसे एक कोश दूर कुनेरोंकी सीमाका अन्त हुआ और खेरीके चौरासी ८४ ग्रामोंकी सीमा आरंभ हुई है, यहांसे खेरीतक मार्ग क्रमानुसार धीरे २ ऊँचा हो गया है, परन्तु उसकी ऊंचाई मेवाडके आभ्यन्तरिक समतल क्षेत्रमें एकसौ फुट ऊंची नहीं होगी। मार्गके चारों ओर जंगल है और पत्थरोंके टुकडे उसमें विराजमान हैं, परन्तु स्थान २ पर मार्गके आस-पास काले रंगकी श्रेष्ठ मट्टी पाई जाती है। हम बराबर धारेश्वर "नाला" नामक एक छोटी नदीके किनारे होकर गये, वह नदी एक ऊंचे शिखरपरसे बडे तीक्ष्ण वेगसे नीचेको गिरकर अद्भुत दृश्य दिखा रही है, कितने ही छोटे २ ग्रामोंमें होते हुए हम अन्तमें चारणोंके एक उपनिवेशमें जा पहुँचे। वहाँ मुरलाके रहनेवाले कितने ही बन्धुओंके साथ हमारा साक्षात् हुआ। जो चारण बंदी करनेके स्वत्वसे स्वत्ववान थे वह लोग उसको नहीं भूले केवल यहाँके चारण स्त्रियोंमें सभीको वृद्धा कहकर उनके द्वारा उस प्रकार संगीत करते हुए वह हमको बंदी न कर सके-इसीसे वह उतने प्रसन्न नहीं हुए। मैं यहाँकी वृद्धाचारण स्त्रियोंके कलशेमें पाँच रुपये भोजन करनेके लिये देकर इस स्थानसे चला आया खेरीके किमासदार शिखरपरके रहनेवाले अपने किलेमेंसे दो सौ अश्वारोही और पैदल सेना लेकर हमारा सत्कार करनेके लिये आगे बढे वह वृद्धलाल जीवेलालके कुटुम्बी थे, वह जैसे बुद्धिमान् थे उसी प्रकार भद्र मनुष्य थे। हमारे सब डेरे नगरके पास ही पडे हुए थे। वह पंडित मुझे बडे आदर सत्कारसे वहाँ ले गये। हमारे परम मित्र लालजीने तथा उनके अधीश्वर प्रभुने सेंधियाके प्रतिनिधि स्वरूपसे (जिन सेन्धियाके डेरोंमें हम बारह वर्षतक रहे थे) अभ्यर्थना करके बिदा ली। और जानेके समय वह मुझे किलेमें आनेके लिये कह गये, परन्तु उस किलेमें प्राचीन कोई वस्तु देखने योग्य नहीं थी और इनका निमन्त्रण स्वीकार करनेसे इनके अधीश्वर मन ही मनमें विरक्त होंगे, इस कारण मैंने उस निमन्त्रणको स्वीकार नहीं किया"।

"रत्नगढ़ खेरीके चौरासी ग्राम हैं संवत् १८२८ सन् १७७२ ईसवीमें युद्धके खरच-के पलटेमें माधोजीने सेन्धियाको यह देश दिया था, संवत् १८३२ तक उनके राजस्व-की रीतिके अनुसार हिसाब किताब रक्खा गया। इसके पीछे वह देश सेन्धियाके जामाता वरजी तापको दे दिया, इसी कारणसे वह मेवाडसे सर्वदाके लिये छीना गया है मेवाडके सोलह सर्वप्रधान सामन्तोंमेंसे वेगूके सामन्तकी विश्वासघातकताके कारण यह देश राणाके अधिकारसे निकल गया। यह स्थान उक्त वेगूके सामन्तके अधिकारी देश-से लगा हुआ था सामन्तने राजभक्तिकी जडमें पदाघात करके इसको अपने अधिकारमें कर लिया, राणाने सेंधियाको उक्त सामन्तको निकालकर चौरासीपर अधिकार करनेके लिये सहायता करनेको कहा। महाराष्ट्रनेता सेन्धियाने उस सुअवसरमें केवल चौरासी पर ही नहीं वरन् वेगू देशतकको अपने अधिकारमें कर लिया और अन्तमें वेगूके सामन्तसे बहुतसा धन ग्रहण किया और सामरिक व्यय करनेके लिये वेगू देशके ४० ग्राम गिरोंरूपसे अपने हाथमें कर लिये। इस स्थानसे प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त रमणीक दिखाई देता है। पंडितजीने ऊँचे शिखरपरसे खडे होकर नीचेको खेरीतक देखा (वह

कह सकता था कि मै उन सबका राजा हूं जो मेरी दृष्टिके नीचे हैं) यदि सफल होनेकी संभावना होती तो इस देशमें उसका कैसा अधिकार है उसके सम्बन्धमें मैं विवाद कर सकता था "।

कर्नल टाड साहब चार कोश दूर छोटे अतवा नामक स्थानमें जाकर लिखते हैं, "कि यहांका किला पर्वतकी जडमें बना हुआ है और भलीभांतिसे उत्तम रीतिसे बना हुआ दिखाई आता है। किलेके जिस ओर सरलतासे जाया जाता है, उसी ओर फिर नवीन गठन हुआ है। राज्यकी साधारण शांतिके भंग होनेके समय इसका गठन कार्य स्थापित था। परन्तु वास्तवमें यदि दो तोपोंसे इस किलेके ऊपर क्रमानुसार गोलोंकी वर्षा की जाती तो यह संदेह होता है कि २४ घंटेतक इस किलेकी रक्षा हो सकती है या नहीं; कारण कि किलेके बहुत धोरे ही शिखरके ऊपरी भागसे किलेके बीचका हिस्सा सब दीखता था। हम पथप्रदर्शकसे पूछते हैं कि यह किला किसी समय शत्रुओंसे घिरा था या नहीं, उसने कहा कि नहीं, यह किला तो कुमार है जबतक कोई किला शत्रुओंसे न घेरा जाय तबतक वह किला कारा रहता है " हमने शिखरके ऊपरी भागपर खडे होकर प्रकृतिका परम रमणीय दृश्य देखा।

"उस किलेसे दो कोश दूरपर हम और एक ऊंचे शिखरपर स्थापित अमरो नामक ग्राममें गये, वहांसे बाईं ओरको तारागढ देखा। उस किलेमें एक प्राचीन खुदी हुई लिपि है यह जानकर एक पण्डितको उस लिपिके लानेके लिये भेजा। आधे कोशसे चलकर हमने और भी कुछ एक ऊंचे शिखरको देखा और सुना कि उस शिखरसे क्रमशः पाठारकी सीमा चम्बलके किनारेतक समाप्त हुई है "।

"छोटा अतवा देश भी वेगूके मेघावत सम्प्रदायके अधिकारमें था, अधीश्वरका नाम डूँगरसिंह है। यह भी मेरे साथ यहाँ आकर मिले। यही कुछ काल पहिले पाठारमें सर्व प्रधान दस्युरूपसे गिने जाते थे। उन्होंने अत्यन्त तस्करता करनेके लिये यद्यपि इस समय कुछ गर्व नहीं किया, परन्तु उस कामसे मनुष्य उनपर घृणा करेंगे यह भी नहीं विचारा। यद्यपि वह उस देशके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्ततक सर्वोपर छापा मार लूटते रहते थे, परन्तु विशेषकर मरहठोंपर ही अधिक अत्याचार और उपद्रव करते थे। उनके पूर्व पुरुष 'कालामेघ' कहलाकर प्रसिद्ध हुए थे। इन्होंने भी उसी भांति कीर्ति पाई। इनके नामसे आजलों इस प्रदेशके मनुष्य काँपते हैं—"डूँगरसिंह आया" इस शब्दसे सभी व्याकुल हो अपने धन और प्राणोंकी रक्षाके लिये उद्योग करते हैं। मरहठोंके साथ इन डूंगरसिंहके विवादका विशेष कारण था, मरहठोंने ही उनके पितासे नादोला और उक्त चौरासी गांव छीन लिये थे और सेन्धियाने उनके पहाडी देश अपने हस्तगत कर लिये थे, इसी प्रकारसे अन्तमें हुलकरके हस्तगत हुए। परन्तु डूंगरसिंहके पिताने हुलकरको ऐसा भडका दिया कि उसने अपने नौकरोंके साथ मिलकर प्रजापर घोर अत्याचार करने प्रारंभ कर दिये। अंतमें हुलकरने उनको चारों ग्रामोंका अधिकार वंशानुक्रमसे दे दिया। वीस वर्षके

बीतनेपर वह चारो ग्राम फिर छीन लिये गये तब वह अस्त्र शस्त्र धारण कर अपने पुत्र डूंगरसिंहको लेकर सुसज्जित हुए। यह अपने कुटुम्बकी निर्विघ्नतासे रक्षा करनेके लिये महापुराके राजाके समीप जाकर नंगी तलवार हाथमें लिये शत्रुओंसे बदला लेनेको प्रवृत्त हुए। पिता श्योसिंह, पुत्र डूंगरसिंह, और भी अनेक वीर तेजस्वी राजपूत संहारमूर्ति धारण कर बदला देनेके लिये प्रत्येक ग्रामको लूटते हुए अंतमें मालवेके भीतर जा घुसे और वहांकी समस्त धन सम्पत्तिको लूटकर अपनी पार्वत्य वासस्थली छोटे अतवामें ले आये परन्तु श्योसिंह घोर शत्रुओंसे घिर रहे थे। उनके शत्रु उनको विपत्तिमें रखनेकी सर्वदा चेष्टा करते थे। एक दिन श्योसिंह अपने पुत्र सहित बहुतसे श्रेष्ठ बैल लिये अपने ग्रामको जा रहे थे कि इसी अवसरमें महाराष्ट्र नेता भाऊसिंहने गुप्तभावसे रक्खी हुई एक अश्वारोही सेनादलके साथ अचानक आकर इनपर आक्रमण किया। पिता पुत्र दोनों ही उत्तम घोडोंपर सवार थे, इस कारण शत्रुसेनाकी संख्या अधिक देखकर बडी शीघ्रतासे घोडा चलाकर मंडलगढ नामक ग्रामकी ओरको चले। उस महाराष्ट्री घुड-सेनाने भी उनका पीछा किया। परन्तु पिता पुत्र दोनोंने ही एक नालेके भीतरको घोडे चला दिये, पिता श्योसिंहका घोडा जलमें डूब गया। इस कारण वह महाविपत्तिमें पडे, यह बारम्बार जलमेंसे उछलते कूदते थे कि इसी अवसरमें एक महाराष्ट्रने एक बडा तीक्ष्ण भाला इनकी कमरमें मारा, जिसके लगते ही इनका प्राणपक्षी उड गया। युवक डूंगरसिंह अपने पिताकी अपेक्षा सौभाग्यशाली थे इस कारण वह शत्रुओंका तिरस्कार करते हुए सबके देखते देखते नालेके पार होगये। महाराष्ट्रोंको उस प्रकारसे नालेके पार होनेका साहस न हुआ। अन्तमें डूंगरसिंहने नालेसे अपने पिताकी लहाशको निकालकर एक कपडेमें बांधकर घोडेपर रख लिया और आधी रातके समयमें वहांसे चलकर अपनी पितृभूमि नदोबाईमें आकर उन्होंने पिताके शवका सत्कार किया। यद्यपि मरहठोंने वीर तेजस्वी शिवसिंहके प्राण नाश किये थे परन्तु उससे अशान्तिकी कुछ भी घटती न हुई, वरन् डूंगरसिंहके हृदयमें प्रतिहिंसाके प्रज्वलित होते ही वह अशान्ति और भी बढ गई, अंग्रेज गवर्नमेंटके इस शान्ति स्थापनके पूर्व कालतक डूंगरसिंहने उसी प्रकारसे घोर अत्याचार मरहठों और प्रजापर किये। जब डूंगरसिंहसे टाड साहबने कहा कि नादोवाईके प्रधान कर्मचारी गणोंके साथ आप अनेक प्रकारसे कठोर उपद्रव करते हैं, तब उन्होंने बडी सरलतासे उत्तर दिया कि जैसे होगा वैसे हमें अन्त तो संग्रह करना ही होगा? महाराष्ट्रगण हमारी पितृभूमिपर अधिकार किये हैं, इसी कारण उन्होंने चोरी करनी प्रारंभ की है। मैंने महाराष्ट्रोंसे कुछ थोडी सी भूमि लेकर फिर डूंगरसिंहको दे दी "।

साढे चार कोश दूर सिंगोली नामक स्थानमें १७ फर्वरीको जाकर कर्नल टाड साहबने लिखा है " कि यह आन्तरी नामक जिलेका एक उपविभागका पट्टेका प्रधान नगर है। इसके चारों ओर पर्वत शोभायमान हैं। भामूनी नदी इस देशमें बहती है। यहांकी भूमि उपजाऊ है इस कारण अनेक प्रकारका धान्य यहाँ उत्पन्न होता है। पाठार ग्रामकी कुटियोंकी दीवारें मट्टीकी बनी हुई बडी ऊँची हैं और उनकी छतें फूससे छाई

हुई हैं। अधिक क्या कहैं उमेदपुरा नामक जिस ग्राममें स्थानीय सामन्तके चचा रहते हैं, उनके रहनेका स्थान भी सर्वसाधारणके समान है जिस कुटीमें विलायतके दीन दरिद्री किसानतक भी नहीं रह सकते। अत्यन्त दीनदशा और शोचनीय अवस्था होनेपर भी स्थानीय सामन्त अपने अधीश्वर प्रभु वेगू सामन्तके सहित बृटिश एजेण्टकी ओर सम्मान दिखानेके लिये अपने पुत्र भतीजे और पन्द्रह कुटुम्बियोंके साथ आये, इतनी शोचनीय अवस्था क्यों थी वह यही कि ऊंचे वंशमें जन्म था और वंशका ऊंचा भाव किसी प्रकार भी लुप्त नहीं हो सकता, यह बात उमेदपुरावाले पहाडी सामन्तों द्वारा विलक्षणरूपसे प्रमाणित हुई है। राजपूत मृगयाके समयमें जिस प्रकार शब्जरंगका अंगरखा और उसी रंगकी पगडी बांधते थे, उमेदपुराके सामन्त भी उसी वेशसे बर्छी हाथमें लेकर एक बलवान घोडेपर सवार होकर आये थे। घोडेका पहरावा भी उनके प्रभुके समान आडंबर शून्य था। उन सामन्तके नौकर भी उनके साथ पैदल आये, वे सब पाठारकी बनैली हरिणियोंके समान सदा प्रसन्न चित्त थे और विचार उनका चिन्ताहीन था. इस बातको वह कुछ भी नहीं जानते थे कि विलासिता किसको कहते हैं, वह डेरोंतक हमारे साथ आये, तब मैंने सामन्त और उसके पुत्र और भतीजेको बहुत सुन्दर लालरंगकी पगडी और कितनी ही विलायती बारूद उपहारमें देकर उसको बिदा किया। उन्होंने भी महाप्रसन्न होकर मुझसे बिदा ग्रहण की। बीचौरसे जो मार्ग मेवाडके मैदानसे पाठारको जाता है उसका यह कालामेव वेगूवाला अधीश्वर है।

“ सिंगोली जैसा स्थान है अथवा यह जिस भावसे स्थापित हुआ है; इससे इसको एक अच्छा नगर कहा जा सकता है। इसके चारों ओर अभेद्य दीवारें हैं; यहां पन्द्रह सौ मनुष्योंके घर बने हुए हैं। यहांके अधीश्वर पंडित हैं। सुशासनके प्रभावसे इस देशके चारों ओर अराजकताके विराजमान होनेपर भी इन्होंने अपने अधीनके देशको सर्वगुण संपन्न कर दिया था।नगरके बीचो बीचमें आलूहाडाका बनाया हुआ किला विराजमान है। पंडितजीने उसकी दीवारसे लगा कर एक नवीन सुन्दर महल बनाया उस महलके चारों ओर ऊँची २ दीवारें हैं। इसका व्यास प्रायः एक कोशका है। उत्तर पश्चिम प्रान्तमें आध कोश दूरीपर विजयसेनी भवानीका मंदिर टूटा फूटा दिखाई पडता है। मैंने एक खुदी हुई पत्थरपर लिपिको देखा उसमें मेवाडके अधीश्वरका निम्नलिखित दान खुदा हुआ है, संवत् १४७७, सन १४११ ई० आश्विन भृगुवारको महाराज श्रीमुकुलजीने विजयसेनी भवानीके मंदिरमें प्रकाश करनेके लिये तथा उनका निर्वाह करनेको डेढ बीघा जमीन दी। जो कोई मनुष्य, इस भूमिको लेगा देवी उसका विध्वंस करेगी, मेवाडके प्रसिद्ध राणा मुकुलजीने देवीके मंदिरमें दीपक जलानेके लिये यह भूमि दी थी मुकुलजीने शीशोदियोंके कुलमें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त की थी। रायपुर नामक स्थानके घोर युद्धमें इन्होंने दिल्लीके बादशाहके एक पुत्रको मार डाला था। विख्यात लालबाई इनकी कन्या थी ”।

"इस पाठार देशमें हाडाजातिके बल विक्रम तथा शासनके सम्बन्धमें बहुतसे प्राचीन वाक्य आजतक सुनाई देते हैं। बहुत पहिले हाडाजातिने इस पहाडी देशमें निवास करके इस राज्यकी रक्षा करनेके लिये स्थान २ पर बारह किले बनाये थे, उन सब किलोंके टूटे फूटे अंश आजतक दिखाई देते हैं। यद्यपि हाडाजातिके राजा "पाठारके अधीश्वर" नामसे पुकारे जाते थे तथापि मेवाडके राजाको अपना प्रभु जान कर वे उनकी आज्ञाका पालन करते थे; उन बारह किलोंमेंसे रत्नगढ नामका किला एक बार भी विध्वंस नहीं हुआ, पाठारके दिलवारगढ नामक किलेका टूटा फूटा अंश इस समय तक भी दिखाई पडता है। उसी किलेको लेनेके लिये एक समय वेगूके मेघावत् सम्प्रदायके साथ ग्वालियरके शक्तावतोंका भयंकर विवाद और युद्ध हुआ था। परा नगर वा पारोली नामका किला उस स्थानसे कुछ ही दूर है। इन किलोंमें बमोदाका किला सबसे अधिक प्रसिद्ध है; वह पश्चिमकी सीमामें स्थापित है, उस किलेके ऊपरसे मेवाडके समस्त समतल देश दीखते हैं। यद्यपि कई सौ वर्ष पहिलेसे हाडाजाति इस पाठार देशसे भाग गई थी, किन्तु तो भी बमोदाके आलूहाडाका नाम आजतक यहाँ विख्यात है, और जो वनके भील पशुओंके समान केवल जंगलके वनके फल मूलादिका आहार करके समय व्यतीत करते थे। उनमें भी आलूहाडाका नाम भली भांतिसे विदित है। हमारी यह इच्छा है कि अन्य मार्गसे होकर आनेके समय पाठारके आलूहाडाका वासस्थान देखें, इसी कारणसे मैंने आलूहाडाके बलविक्रमकी एकमात्र कहानी इस स्थानपर वर्णन की है।

"एक समय आलूहाडा मृगयासे लौटकर आ रहे थे कि इसी अवसरपर मार्गमें एक चारण इनको मिला और उसने इनको आशीर्वाद दिया, परन्तु उस आशीर्वादके बदलेमें चारणने कहा कि "आपके शिरपर जो पगडी बँध रही है वह मुझे दीजिये और कुछ मुझे नहीं चाहिये"। आलूहाडा उसके यह वचन सुनकर महा आश्चर्यमें हुए परन्तु कविके क्रोधित होनेसे पाठारमें बडी निन्दा होगी, इस भयसे उन्होंने उसी समय अपने मस्तकसे पगडी खोलकर चारणको दे दी। चारणने बडी शीघ्रतासे उसे अपने शिरपर बाँधकर आशीर्वाद दिया कि "आप हजार वर्षतक जीवित रहें"। यह आशीर्वाद देकर बिदा हुआ। चारण शीघ्र ही मरुदेशकी राजधानी मंडोरमें आया। मंडोरपतिके निकट आकर चारणने राठौर जातिकी जय उच्चारण कर बाँये हाथसे उस पगडीको उतार अपनी बगलमें रखकर दहने हाथसे मंडोरपतिको आशीर्वाद दिया। चारणको इस प्रकार अनियमित रूपसे दहने हाथसे अभिवादन करते हुए देखकर मंडोरपतिने कारण पूछा, यह क्या? चारणने कहा, 'आलूहाडाकी पगडी संसारमें किसीके निकट नहीं झुक सकती, मेवाडके पहाडी देशके एक अत्यन्त सामान्य अपरिचित सामन्तके प्रति चारणको ऐसा सम्मान दिखाते हुए देख कर मरुदेशके प्रभुने अत्यन्त क्रोधित होकर चारणके हाथसे वह पगडी लेकर सभाके कमरेसे बाहर डाल दी। आलूहाडाने चारणको जो पगडी दी थी वह बात वह एक बार ही भूल गये थे। वह एक समय विश्रामके लिये सुख भोग रहे थे कि इसी समयमें सूने मस्तक तथा उस कमरेमेंसे पगडीको लेकर वह चारण उनके पास आकर खडा होगया। और वीरश्रेष्ठ आलूहाडाके निकट जाकर मंडोरके राठौर अधीश्वरने

जिस प्रकार अपमान किया था वह सभी समाचार कह सुनाया। आल्हाडा जिससे शीघ्र ही राठौरपतिको इसका बदला दें, इसके लिये बारम्बार जिद करने लगा"।

" वीरश्रेष्ठ आल्हाडा चारणके प्रति महाक्रोधित हुए। चारणने अपनी बुद्धिके दोषसे इस महा अपमानकारक समुद्रमें उनको डुबो दिया, उन्होंने क्रोधित होकर कहा " क्या मैंने आपसे यह नहीं कहा कि आप मुझसे भूमि माँगें, गाय इत्यादि पशुकी प्रार्थना करें; अथवा धन माँगें, इन सबको मै देनेके लिये तैयार हूँ। आप मेरे मस्तकपरके इस सामान्य वस्त्रके टुकडेके अतिरिक्त और कुछ भी लेनेको तैयार न हुए, किसीसे भी संतुष्ट न हुए। इस समय इस वस्त्र खंडकी अवमाननाके लिये मुझे अपना मस्तक देना होगा। मारवाडके ठाकुरतक भी मेरी इस पगडीके ऊपर इस प्रकारका अपमान करनेकी सामर्थ्य नहीं रखते, फिर विचारे मंडोरपति तो कौन चीज है? वीरश्रेष्ठ आल्हाडाने शीघ्र ही अपने सम्प्रदायके समस्त वीर और अपनी सेना-दलको बुला भेजा। शीघ्रतासे एक वंशके पांच सौ वीर वमोदाके किलेमें इकट्ठे हो गये; और उन्होंने यह कहा कि हमें आल्हाडाके अधीनमें किस युद्धमें जाना होगा? आल्हाडाने उन आये हुए सामन्तोंको समझा दिया कि मंडोरपतिके साथ युद्ध करनेके लिये जाना कोई साधारण बात नहीं है। असीम साहस और अतुलपराक्रमके प्रकाश करनेका प्रयोजन है, फिर भी उस युद्धसे लौटनेकी आशा नहीं है। परन्तु सभी आल्हाडाके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये युद्धमें जाकर जीवन देनेके लिये तैयार हुए। शीघ्र ही जौहर व्रतका अनुष्ठान हुआ। उस जौहर व्रतसे समस्त वीरवृन्द अपना २ जीवन देनेके लिये तैयार हुए, युद्धयात्राका दिन निश्चय हो गया। आल्हाडाके कोई पुत्र नहीं था, इससे इन्होंने अपने भतीजेको गोद ले लिया था। उस भतीजेकी रक्षाके लिये उन्होंने उसको वमोदाके किलेके सात द्वार पार होकर इन सबके बीचमें जो महल था उस महलमें रख दिया। कुछ काल तकके लिये भोजनकी उपयोगी सभी सामग्री भी संग्रह करके उसके भीतर रख दी। एक एक करके सातों द्वारोंपर ताला लगाकर आप स्वयं उसकी चावी ले गये। मंडोरपति तथा अन्य कोई शत्रु सहसा किलेमें आकर जिससे उक्त पुत्रका प्राण नाश न करने पावे, इस कारण आल्हाडाने भलीभांतिसे प्रबंध कर दिया"।

मंडोरके अधीश्वर भी जान गये थे कि उन्होंने आल्हाडाकी पगडीके प्रति अपमान करके आल्हाडाकी क्रोधाग्निको प्रज्वलित कर दिया है परन्तु पर्वती वीर आल्हाडाके द्वारा भविष्यत्में किस प्रकारका कांड होगा इसका कुछ भी विचार न कर सके, पर उसने यह प्रचार कर दिया कि आल्हाडाकी सेना राज्यके जिन अंशोंसे होकर आवेगी वह सभी ग्राम ब्राह्मणोंको दिये जाँयगे। परन्तु आल्हाडा वीर साजसे सुसज्जित हो अपने पहाडी देशसे बाहर होकर शेषमें कौशल करनेके लिये अपने अनुचर और सेनादलके शस्त्र शकटोंमें रखकर घोडोंको बेचनेके लिये जिस भावसे ले जाया करते है, उसी भावसे लेकर मंडोरकी राजधानीमें आये। यह कोई भी न जान सका

कि आलूहाडा इस प्रकारके कपटवेषसे आ रहे हैं। आलूहाडा रात्रिके समय राजधानीमें आये और विश्राम करके तरुण अरुणोदयके साथ ही साथ नगाडा बजाकर सेनाको रणसाजसे सजाय वीररूपसे बाहर हुए, नगाडेके बजते ही सोते हुए मंडोरपतिकी निद्रा भग हुई, वह महा क्रोधसे उन्मत्त होकर परिषदोंसे बोले "किस हतभाग्यने साहस करके मंडोरमें नगाडा बजाया है ?" उत्तर मिला "बमोदाके आलूहाडा है"।

राजा मारूकी माता (चौहान स्त्री) ने आलूहाडाको कपटवेषसे आता हुआ देखकर अपने पुत्रसे पूछा, "वत्स ! तुमने जो प्रतिज्ञा की थी कि आलूहाडा मंडोरके जिस ग्रामसे होकर आवेंगे वही ग्राम ब्राह्मणोंको दान कर दूँगा, इस समय किस प्रकारसे उस प्रतिज्ञाका पालन करोगे ? आलूहाडा कपटवेष धारण कर न जाने किस मार्गसे होकर आये हैं और कौन २ सा ग्राम इनके रास्तेमें पडा है, यह तो कुछ भी नहीं जाना जाता ?" मंडोरपतिने उस प्रतिज्ञामें बाधा हुई देखकर अन्तमें स्थिर किया कि अन्य उपायसे प्रतिज्ञा पालन की जायगी, उन्होंने कहा कि यद्यपि शत्रु आलूहाडा पाँचसौ सेना साथमें लेकर आये है तथापि मैं बहुतसी सेना लेकर उनके साथ युद्ध न करूँगा। मंडोरपतिने शीघ्र ही प्रस्ताव करके आलूहाडाके समीप कहला भेजा कि दोनों ओरकी बराबर सेना तलवार लेकर युद्ध करैगी। आलूहाडाने शत्रुके इस दयालुताके व्यवहारसे महा आनन्दित हो मंडोरपतिको धन्यवाद देकर अपनी सेनासे कहा कि "हम लोग जय प्राप्तकर सकेंगे। अब पाँचसौ राठौरोंकी सेनाका संहार करके अपना बदला ले सकेंगे। शीघ्र ही पाँचसौ राठौरोंकी सेना पाँचसौ हाडासेनाके साथ तलवार लेकर युद्ध करनेके लिये रणवेषसे सुसज्जित होकर मंडोरपतिके सम्मुख आई। इधर श्योजी राठौर सैफ हाथमें ले पाँचसौ सेनाके साथ तैयार हुए। उस सहस्र सेनाके तैयार होनेपर दोनों ओरके दोनों प्रधान नेता जैसे ही युद्ध आरम्भ करनेके लिये घोडा बढानेके लिये अग्रसर हुए कि वैसे ही अचानक कहींसे बडी शीघ्रतासे घोडा चलता हुआ एक युवक उस स्थानपर आ पहुँचा। उस युवकको सभी विस्मित होकर देखने लगे, तब उस वीर युवकने राठौर नेताके साथ युद्ध करनेकी प्रार्थना की। उस युवकको वह प्रार्थना दोनों ओरके नेताओंकी अवनतिका कारण थी। परन्तु कुछ ही समयमें आलूहाडाने युवकको देखकर कहा, हाय ! न मारने योग्य युवक ! तुम क्या हाडावंशको लोप करनेके लिये यहाँ आये हो ? युवकने उसी समय उत्तर दिया, "काका ! जब आप विपत्तिमें पडे हैं उस विपत्तिमें यदि मैं आपके निकट उपस्थित न हो सकता तो वंश लोप हो सकता था"। पाठक ! यह वही युवक बमोदाके सामन्त आलूहाडाके भतीजे हैं। युवककी सगर्व वीरोचित वाणी सुनकर तथा उनको भाला हाथमें लिये युद्धके लिये तैयार देखकर वीर राठौर नेताके अधरोंपर हँसीकी रेखा दिखाई दी। हाडा युवक भी उसके समान हँसते हुए युद्धके लिये आगे बढे। थोडे ही समयमें युवककी तलवारके आघातसे राठौर नेताने प्राण त्याग किया; शीघ्र ही फिर एक राठौर योधाने हत वीरके स्थानमें आकर युवकके साथ संग्राम करना प्रारम्भ कर दिया, पहिले वीरके समान इस दूसरे राठौरके भी युवककी तीक्ष्ण तलवारसे दो टुकडे हो गये फिर एक और राठौर युद्ध करनेके लिये तैयार हुआ

हाडा युवकने उसका भी प्राण नाश कर दिया। इस प्रकारसे एक २ करके पचीस जने राठौर उस हाडा युवकके हाथसे मारे गये. परन्तु उसकी देहमें कुछ भी आघात न लगा। ऐसा बोध होता था कि विजयसेनी माता जिनकी प्रतिमूर्ति बमोदाके किलेके रक्षामें नियुक्त हैं, उन्होंने ही इस किलेके सातों द्वारोंको खोलकर युवकको मुक्ति देकर उसके गलेके अतिरिक्त और सभी शरीरको आच्छादित कर दिया था, उसको आलूहाडाकी सहायताके लिये भेजकर युवकको हाडा जातिका गौरव बढानेकी आज्ञा दी। प्रबल युद्धके पीछे अंतमें एक राठौर वीरकी तलवारसे युवकका शिर दो टुकडे हो गया आलूहाडाने देखा कि मेरा प्राणप्यारा भतीजा सर्वदाके लिये पृथ्वीपर सो रहा है। राठौरकी राजमाता स्वयं इस द्वंद्व युद्धको देख रही थी, उन्होंने विचारा कि युवककी मृत्युसे जीवनकी आशासे निराश हो हाडागण उन्मत्त होकर भयंकर कांड उपस्थित कर सकते हैं, इस कारण उन्होंने अपने पुत्र मंडोरपतिको आज्ञा दी कि अब शीघ्र ही युद्ध करना छोड दो और पाठारपति आलूहाडाको संतुष्ट करनेके लिये एक राजकन्या विवाह करनेको दी जायगी। राजमाताकी आज्ञानुसार शीघ्र ही कार्य हो गया, आलूहाडाके समानकी रक्षा हुई। विवाह करके आलूहाडा अपनी नवीन वधूको लेकर बमोदाको चले गये। उस विवाहके फलस्वरूपमें उनके एक कन्या उत्पन्न हुई। उस कन्याकी युवा अवस्था होनेपर बडी धूमधामके साथ उसके विवाहकी तैयारी की गई। विवाह हो जानेके पीछे आलूहाडाकी कन्या तथा मित्र बंधु बांधव और समस्त कुटुम्बके साथ देवमंदिरमें गये वहाँ बडा उत्सव होता था, अनेक स्थानोंसे बहुतसे संन्यासी यती, दंडी और भिक्षुक आकर इकट्ठे हुए। एक वृद्धा भिखारिन भी उस मंदिरमें घुसनेके लिये तैयार हुई, पहरेवालेने उसको भगाकर मंदिरमें न घुसने दिया; वृद्धाने बारंबार कहा कि आलूहाडाने स्वयं मुझे निमंत्रण देकर बुलाया है, इसीलिये मैं आई हूँ, मुझे द्वार छोड दो। द्वारपालने इस वृद्धाकी बातपर कुछ भी ध्यान न दिया और उसको वहांसे भगा दिया, वृद्धा महा क्रोधित होकर आलूहाडाको शाप देती हुई चली गई, ऐसा विदित होता है कि यह वृद्धावेषधारी स्वयं विजयसेनी माता ही कपटवेष धारण करके आई थीं। उनके उस शापसे आलूहाडाका वंश लोप हो गया।

तारीख १८ जनवरी मुकाम डूंगरमऊ आठ मील यद्यपि कई मार्ग यहांसे थे पर हम भिसरोरके मार्गसे चले, यह मार्ग आंतरी और भामूनी नदीके मध्यका था यहां बहुत जंगल और बडे बडे नाले हैं एक स्थान रानीबोरका खाळ कहलाता है।

डूंगरमऊ बरांव यह बारह मौजेका छोटा पट्टा है। १५००० सालाना पैदावार और कर है, यह अब विभक्त हो गया है। डूंगरमऊ वाला कोटेके अधीन है, अभी उसको तलवार बँधाई गई है, भामूनी नदी इसके किलेकी दीवारके नीचे बहती है यहाँ हरियाली बहुत है। यहांके पर्वतोंपर मेघोंकी भाँति भाँतिकी आकृति दिखाई देती है।

षष्ठ अध्याय ६.

भिंसरोरगढ-रघुनाथसिंह-भिंसरोर दुर्गप्रासाद-भिंसरोर नामकी उत्पत्तिका विवरण-महोबके युवक सामन्त-जैसलमेरके महाराजके विरुद्धमें उनका युद्धके लिये जाना-जयसलमेरके महाराजका मुन्डछेदन-उक्त युवक सामंत स्त्रीकी शोचनीय आत्महत्या-उक्त सामंतका निर्वासन दंड-भिंसरोरदेशके प्रमार सामंत-प्रमार सामंतवंशका शासनलोप-नाथजीकी हत्या करना-लालसिंह चांदावतको भिंसरोरकी प्राप्ति-देशकी तबाही-संतरा-उत्सव होली-कोटा-उसका वर्णन ।

कर्नल टाड साहब १९ फर्वरीको भिंसरोरगढ नामक स्थानमें जो डूंगरमऊसे १० मील चार फरलांग था, जाकर लिखते हैं कि " मैं डूंगरमऊसे तीन कोस दूरीपर एक मुसलमान साधुके समाधिमंदिरके समीप गया । जीवित अवस्थामें ही उस साधुने समाधि ली थी । वह समाधिमंदिर ऊंचे स्थानपर बना हुआ था, उस स्थानपरसे चारों ओर प्रकृतिका परमप्रिय दृश्य दिखाई पडता था । उस समाधिमंदिरके पास ही एक कुंड है, इस कुण्डके चारों ओर अनेक सुन्दर २ वृक्ष विराजमान हैं । वहां प्रतिसप्ताहमें एक दिन मेला हुआ करता है । वहां हिन्दू मुसलमान सभी जातिके मनुष्य आते हैं । फिर हम भामूनी नदीका शब्द सुनते आगे बढे और अम्बार संगपर पहुँचे और मीना जाति करारकी रहनेवालेके स्थानपर गये, उनका एक प्रसिद्ध पुरुष यहां मारा गया था, प्रत्येक पथिक यहां एक पत्थर रखता है और हमने भी वहां एक पत्थर रख दिया ।

मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें रघुनाथसिंह भी एक हैं । यही भिंसरोरके सामन्त हैं, इन्होंने यहां राजपूतानेमें बहुत समयसे प्रचलित रावतकी उपाधि पाई थी । भिंसरोर देश मेवाडमें श्रेष्ठ देश गिना जाता है । इसका वार्षिक भूराजस्व एक लाख रुपया है । चम्बल, मालवा, हाडावती और मेवाडके वाणिज्यका कार्य भी सभी इस देशमें होता है । वैश्य लोग इस भिंसरोरसे ही होकर आते जाते हैं । इसी कारणसे वाणिज्य महसूलकी यहाँ विशेष आमदनी होती है । यहाँका किला एक बडे ऊंचे शिखरपर स्थापित है, वह स्थान जैसा रमणीक है युद्धके समय उसी प्रकार अभेद्य भी है । भिंसरोरकी सृष्टिके सम्बन्धमें एक प्रवाद वाक्य आजतक प्रचलित है, यह भी सम्भव हो सकता है कि विक्रमाजीतकी दूसरी शताब्दीमें इसकी सृष्टि हुई हो, और कोई २ ऐसा भी कहते हैं कि विक्रमाजीतके राजत्वके पहिले इसकी सृष्टि हुई थी, इस भिंसरोरकी सृष्टि-सम्बन्धीय प्रवाद वचनोंसे यह प्रमाणित होता है कि यहाँके चारण वा कवि जिस भाँति बिना महसूलके वाणिज्यका आमदरफ्त कर सकते हैं; उस समय भी वह उसी प्रकारसे करते थे । भिंसरोरदेशकी सृष्टि किसी बलवान् राजासे नहीं हुई । भिंसियाशाह नामक एक वणिक् और रोरा नामका एक चारण दोनों ही मिलकर वाणिज्य कार्य करते थे । वह वाणिज्य द्रव्योंसे शकटोंको भरकर जिस समय इस देशमें होकर जाते उस समय पहाडी लोग चोर डकैत जिससे इसको न लूट सकें

इसका भलीभांतिसे प्रबंध कर लेते थे। उस भिसा और रोरा नामके संयोगसे इस देशका नाम भिसरोर हुआ है, यह पाठाँरदेश हाडा जातिके आनेके कितनी ही समय पहिले तक उक्तभावसे था यह नहीं जाना जा सकता; परन्तु प्रमार, दूदिया राठौर शक्तावत् तथा चांदावतोंके स्मृतिचिह्न यहाँ अधिकतासे विराजमान हैं, दूदिया लोगोंके पीछे राठौर सामन्तोंको इस देशका आधिपत्य प्राप्त हुआ। मरुक्षेत्रके लवणहृदके किनारे महौबदेशके एक राठौर सामन्त मंडोरके राठौर अधीश्वरके अधीनमें थे इनको कान्यकुब्जके सम्भ्रान्त राजवंश जानकर मेवाडके राणाने उनकी भगिनीका पाणिग्रहण किया। उस नव विवाहिता राठौर नन्दिनीके साथ उनके छोटे भ्राता चित्तौरमें आये। उस विवाहके कुछ दिन पीछे जयसलमेरके अधीश्वर, राजपूत जातिके शिरमौर मेवाडके महाराणाके विरुद्धमें उठे। जयसलमेरपतिको दमन करनेके लिये शीघ्र ही मेवाडकी सेनाके सामन्त सजकर तैयार हुए। महाराणाने बीडा अर्थात् ताम्बूल हाथमें लेकर सामन्तसमितिमें प्रस्ताव किया कि आप लोगोमेंसे कौन साहस करके जयसलमेरके महाराजके साथ युद्ध करनेको तैयार है, जो तैयार हों वह आगे बढे। राणाके इस वचनको सुनकर महोबके थोडी अवस्थावाले सामन्त राणाके नवीन सालेने वीर गर्वसे अग्रसर होकर सेनापतिके पदको ग्रहण करनेके लिये उस ताम्बूलको ग्रहण किया। उसकी अवस्था उस समय केवल पंद्रह वर्षकी थी, इस कारण उस अल्प अवस्थावाले राठौरको इस युद्धमें जानेके लिये उस भावसे उत्तेजित देखकर सभीने निषेध किया परन्तु राठौर युवकने किसी भांति भी न माना। युवकने महाराणाके समीप प्रार्थना की कि "हमारे दोनों मित्रोंको हमारे संग करो और मैंने जो अपनी पाँचसौ अश्वारोही सेना नियत की है उसको मेरे साथ युद्ध करनके लिये भेजिये। वह थोडी अवस्थावाला राठौर कुमार किस प्रकारसे मरुभूमिके पार होकर जयसलमेरमें गया था और किस भांतिसे भट्टीजातिके शीर्षस्थानीय जयसलमेरके राजाके सम्मुख खडा हुआ था उसका कुछ वृत्तान्त नहीं जाना जाता, परन्तु ऐसा विदित होता है कि उस राठौर युवकने जयसलमेरके महाराजका छिन्न मस्तक लाकर चित्तौरके महाराणाको उपहारमें दिया। महाराणाने युवककी इस वीरतासे प्रसन्न होकर तथा उसको प्रतिहिंसा देनेमें सफल देखकर उसको साल्लूंबरदेशका अधिकार दे दिया। उस समय किसी एक देशका अधिकार किसीको भी सदाके लिये नहीं दिया जाता था, इस कारण कुछ समयके पीछे राणाने उस राठौर सामन्तको साल्लूंबरके बदलेमें यह भिसरोर देश दे दिया, राठौर युवक क्रमशः अपने बलविक्रमको प्रकाश करनेसे राणाके परम प्रियपात्र हो गये अंतमें राणा उनके ऊपर इतने संतुष्ट हुए कि अपनी भतीजीके साथ उनका विवाह कर दिया। परन्तु उस विवाहका फल परिणाममें वियोगान्त लीला करके समाप्त हुआ। एक समय युवक सामन्त अपने इष्टमित्र और कुटुम्बियोंके साथ कमरेमें बैठे हुए नृत्य देख रहे थे कि इसी समयमें उनकी स्त्री किवाडकी ओटसे नृत्य देखनेके लिये उद्यत हो रही थीं, सामन्तने उस सभामें यह व्यवहार देखकर ऊंचे स्वरसे एक सेवकसे कहा "ठाकुरानीसे जाकर कह दो उनको यहाँ आनेकी इच्छा है तो वह चली आवें

हम लोग चले जाँयगे"। सेवकने इनकी आज्ञाको पालन किया । सामन्तकी स्त्रीने महादुःखित होकर कहा, मैं नृत्य देखनेके लिये नहीं गई थी, मेरी एक सेविका गई थी, मै इस प्रकारसे: तिरस्कार करने योग्य नहीं हूँ पर ठाकुरको विश्वास नहीं हुआ तब रानीने दुःखके मारे अत्यन्त ही व्याकुल हो भिसरोरकी दीवार-परसे चम्बल नदीमें गिरकर प्राण त्यांग दिया, वह स्थान आजतक रानीगता नामसे विख्यात है। किसी प्रकारसे यह समाचार चित्तौरके महाराजतक पहुँच गया, उन्हों-ने छानबीन करके कि राठौर सामन्तने विना कारणसे रानीके चरित्रोंपर अपवाद लगाया था, इसीसे मेरी भतीजीने आत्महत्या की है, इसके दंडमें राठौर सामन्तको मेवा-डसे सर्वदाके लिये निकाल दिया। परन्तु राठौर सामन्तने अपने बल विक्रमसे राणाके पहिले अनेक उपकार किये थे, अन्तमें उस कठोर दंडके बदलेमें उसको भिसरोरके अधि-कारसे रहित करके उक्त स्थानके निकटवर्ती पाठार देशके मध्यस्थ नीमरी नामका बीस ग्रामवाला एक छोटा देश दे दिया। उसी राठौर युवकके वंशधर विजयसिंहने आज यहाँ आकर मेरे साथ साक्षात् किया"।

"उक्त राठौर सामन्तके पीछे एक सामन्तको भिसरोर देशका अधिकार मिला परन्तु प्रमार वंशीय सामन्तने कबतक भिसरोरदेशको शासन किया, इसका कोई विशेष वृत्तान्त नहीं जाना जाता, परन्तु अन्तमें प्रमार सामन्त किस कारणसे मारे गये; और भिसरोर देश प्रमारवंशके हाथसे निकल गया, घटना जातीय चरित्रका और एक निदर्शन दिखाती है। अन्तमें भिसरोरके प्रमार सामन्तने अपने प्रतिवासी वेगू सामन्तकी एक कन्याके साथ विवाह किया। उस सामन्तने स्त्रीसहित कई वर्षतक परम सुखसे जीवन व्यतीत किया था, अन्तमें एक दिन दोनों पचीसी, क्रीडामें मतवाले थे; सामन्तने उस क्रीडाके समयमें विवाद करते २ अपनी स्त्रीके वंशकी निन्दा की, राजपूत स्त्री उससे अत्यन्त क्रोधित हुई, और दूसरे दिन अपने पिताके निकट उसने समस्त समाचार लिख कर भेज दिया। वेगूके सामन्तने अपनी पुत्रीका पत्र पाते ही सेनाको बुलाया और अपने जंमाईका वह आचरण सबको सुना दिया, इसका बदला लेनेके लिये सभी तैयार हो गये। शीघ्र ही वेगूके सामन्तने उस सेनादलको साथ ले, अंतरीदेशके वनमें होते हुए भिसरोर देशसे कुछ दूरपर आकर अपनी उस सेनाको दो दलोंमें विभक्त किया। वेगूके सामन्त भामूनी नदीपर होकर गये और उनके पुत्र सोजाके मार्गसे भिसरोरकी ओरको गये । परन्तु वेगूके. सामन्त भिसरोरमें पहुँचने भी न पाये थे कि उनके पुत्रने भिसरोरपर आक्रमण करके रणभूमि-में अपने बहनोईका मस्तक काट डाला। अन्तमें मेघावत सामन्त नन्दिनीने अपने पतिके मृतक शवको गोदमें ले भामूनी और चम्बल नदीके संगममें चिता प्रज्वलित करके अपना प्राण त्याग किया। उसके स्मरणके चिह्न जो स्थापित हुए थे मैंने उनसे कुछ ही दूर अपने डेरे डाले थे"।

कर्नल टाड साहब फिर लिखते हैं कि "वेगूसामन्तके उक्त छोटे कुमार अपने बहनोईका प्राण नाश कर पिताके सम्मानकी रक्षामें समर्थ हुए। वेगूके वृद्ध सामन्त

इससे इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने रजवाडेकी चित्र प्रचलित रीतिके अनुसार बडे पुत्रके अधिकारको लोप करके उस छोटे पुत्रको अपने भावी उत्तराधिकारी पदको दे दिया। मेवाडके राणाने भी उस उत्तराधिकारीके परिवर्तनमें अपनी सम्मति दी थी, वेगूके सामन्तके बडे पुत्रको चिथाना जिसमें वर्तमान जादो देश संयुक्त था दिया गया।

"प्रमारोंके पीछे कृष्णावत सम्प्रदायके एक चन्द्रावत लालजी जो सालूंबरके सामन्तके छोटे पुत्र थे वही भिसरोरके अधीश्वर हुए। लालजीको अपने प्यारे मित्र नाथजी राणाके चचा थे उनका ही प्राण नाश करके भिसरोर मिला था। मेवाडके अधीश्वर महाराणा संग्रामसिंहके अनेक पुत्रोंमेसे महाराज नाथजी भी एक पुत्र हैं। मेवाडके राणा जगत्सिंहके भाई थे। जगत्सिंहकी मृत्युके उपरान्त उनके पुत्र राजसिंहको संदेह करके मनुष्योंने जारज कहा था, इससे लालजी मेवाडके सिंहासनपर अधिकार करनेके लिये तैयार हुए, परन्तु राजसिंहकी मृत्यु होनेसे नाथजीकी आशा व्यर्थ हो गई। राजसिंहके छोटे पुत्रने मेवाडके सिंहासनकी प्रार्थना की। उनके चचा (अरसी) अरिसिंहने कैसा राजनैतिक षड्यंत्र जाल विस्तार करके मेवाडमें भयंकर आत्मविग्रह उपस्थित कर दिया था, उसका वर्णन मेवाडके इतिहासमें भलीभांतिसे किया गया है। (आरसी) अरिसिंहने सिंहासनपर अधिकार करके अपने चचा नाथजीपर संदेह प्रगट किया था। नाथजी उनके शत्रु हैं, तथा उन्होंने ही मेवाडके राणा पदको ग्रहण करनेके लिये गुप्तरीतिसे उद्योग किया है। यह विचार कर अरिसिंह नाथजीकी कामनाको व्यर्थ करनेके लिये तैयार हुए। नाथजीने जिस दिन सुना कि अरिसिंहने मेरे ऊपर संदेह किया है वह उसी दिन सिंहासनकी आशा छोडकर बागोर नामक देशमें जा एकान्तमें वास करने लगे, और शास्त्रका विचार कर प्रियकार्य कवितारूपी मालाको गूँथने लगे। नाथजीका वह धर्मभाव, वैराग्यभाव तथा उदारभाव ही उनके विध्वंसका कारण हो गया। नाथजी घोर रात्रिके समय एक मात्र अपने सेवकको साथ ले मट्टीका कलश ले सरोवरमेंसे जल लाकर उस जलसे अनेक कुलदेवता जगन्नाथजीकी पूजा करते थे। शीघ्र ही राणा अरिसिंहके निकट परिषदोंने कहा कि नाथजी कठोर धर्मानुष्ठान करके देवताको प्रसन्न कर रहे हैं, इससे मेवाडका सिंहासन अवश्य ही उनको मिल जायगा। अरिसिंह यह सुनते ही महा भयभीत हुए और एक दिन उसकी सत्यताकी परीक्षा करनेके लिये वेष बदलकर एक विश्वासी सामन्तको साथ ले बागोरके उक्त देवमंदिरकी सीढियोंपर आकर अपेक्षा करने लगे। शीघ्र ही नाथजी कलश हाथमें लिये हुए पूजा करनेके लिये वहाँ आये, अरिसिंहने अपनेको प्रगट करके कहा "इतनी धर्ममें बुद्धि और इतनी पवित्रता क्यों है? चाचा! यदि आप सिंहासनकी इच्छा करते हैं तो इस सिंहासनको ग्रहण कीजिये" नाथजीने शीघ्रतासे उत्तर दिया, "तुम मुझे पुत्रके समान हो, मैं देवताकी पूजा केवल तुम्हारे कल्याणके लिये करता हूँ।" यद्यपि इस सरल उत्तरसे राणाके मनके समस्त संदेह दूर हो गये, परन्तु सामन्तोंके भडकानेसे इन्होंने अंतमें अपने चचा नाथजीके प्राण नाश करनेका संकल्प किया। नाथजीका प्राण नाश करना सरल बात न जानकर अरिसिंहने दूसरा उपाय निश्चय किया। पूर्वोक्त लालजीके साथ महाराज नाथजीकी विशेष मित्रता थी।

दोनोंने ही देवताके मंदिरमें जाकर देवताके सम्मुख मित्रता स्थापित की थी। एक दूसरेके प्रति दोनोंको दृढ विश्वास था। अरिसिंह उस लालसिंहके द्वारा ही नाथजीके जीवनकोनाश करनेके लिये उद्यत हुए। एक दिन नाथजी मध्यरात्रिके समय देवमंदिरमें पूजा करनेके लिये बैठे थे, इसी समयमें नाथजीके मित्र उक्त लालजीने मंदिरके द्वारे आकर नाथजीको बुलाया। इस समय इस प्रकारसे नाथजीको किसी मनुष्यने बुलानेका साहस नहीं किया था नाथजीने मित्र लालजीका स्वर पहचान कर उसी समय कहा, "क्यों भाई लालजी! आओ, इतनी रात्रिमें क्या विचार कर आये हो?" परन्तु हाय! नाथजीने यह बात कहकर जैसे ही देवताको प्रणाम करनेके अभिप्रायसे मस्तक झुकाया कि वैसे ही परम मित्र लालजीकी तीक्ष्ण तलवारने नाथजीके शिरके दो टुकडे कर दिये। नाथजीके रुधिर-से महादेवजीके विग्रहने स्नान किया! लालजी उस मित्रताका चूडान्त निदर्शन करके राणा अरिसिंहके परम प्रियपात्र हो गये। राणा अरिसिंहने लालजीके उस कार्यसे संतुष्ट होकर उनको भिसरोरदेश दिया और उनको मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें ग्रहण किया। मेवाडमें बहुत दिनोंसे सोलह जने प्रधानरूपसे गिने जाते थे, इसके अतिरिक्त होनेका नियम नहीं है। अरिसिंहने वंशीदेशसे शक्तावत सामन्तको उस प्रधान श्रेणीसे च्युत करके लालजीको उस श्रेणीमें भुक्त कर लिया। परन्तु नाथजीके इस हत्याकाण्डसे मेवाडमें भयंकर समरानल प्रज्वलित हो गई, चन्दावत् और शक्तावतोंमें फिर प्राचीन सम्प्रदायिक शत्रुताकी अग्नि प्रज्वलित हो गई इस अग्निने मेवाडको छार खार कर दिया। परन्तु महापापी दुष्ट लालजीने अंतमें कुष्टरोगसे महा व्याकुल हो अपार कष्ट भोगा था पीछे इनका पुत्र मानसिंह भिसरोरकी गद्दीपर बैठा, यह एक युद्धमें मरहटोंका बंदी हुआ। पर उसको नाच देखनेके समय एक राजपूत आहत अवस्थामें अपनी कमरपर धर लाया और दूसरा पुरुष उस स्थानपर सो गया जब यह अपने स्थानमें पहुँच गया तोपैं सर हुई तब मरहठोंको सुधि आई। इसकी छतरी चम्बल भामूनी और खालके संगममें अद्भुत बनी है।

मानसिंहके पीछे रघुनाथसिंह गद्दीपर बैठे, पर इनपर बहुत आक्रमण हुए इससे इनको भिसरोर छोडकर भागना पडा। जब महाराज वा रईसोंकी सालगिरह होती तो हम भी उसमें शामिल होते थे और वहाँका नाच गाना देखते सुनते थे। एक दिन नाथजीके अधिकारी महाराजा श्योदानसिंहके यहाँ इस उत्सवपर बैठे थे रीतिके अनुसार जो आता उसका नाम लिखा जाता था पर इस बातपर हमको बडा आश्चर्य हुआ कि जब चोबदारने ऊंचे स्वरसे कहा कि महाराज सलामत रावत रघुनाथसिंह-जीका मुजरा लीजो। हमको बडा आश्चर्य हुआ कि जिसके दादाने जिस वंशके प्रसिद्ध पुरुषकी जान ली उसके पोतेकी यह मुजरा कैसा, पर पीछे समझमें आया कि यह न्यायकी बात है जिससे ऐसा हुआ और यही एक मनुष्यका दयाभाव है, आगे भिस-रोरमें हमने क्रूरमूर्ति अलाउद्दीनकी चढाईके चिह्न खोज किये, पर हमें कुछ न मिले केवल दो पत्थर और मिले जिन पर संवत् ११७९ खुदा था अक्षर जैन सम्प्रदायके थे और दूसरेमें लिखा था पर्वश्यो रात्रिमें महाराणा नवरावसिंह देवने रामेश्वरके नाम

मौजे तितागढ पट्टनमें दिया, जो इस वचनको स्थित रक्खेंगे वह इसका फल पायेंगे वह बचन यह है।

जिस्सा जिस्सा जिध हो भूमि तिस्सा तिस्सा नधो फलंग।

संवत् १३०२ में यह रीति प्रचलित थी और यह प्रमारधारका जागीरदार था आगे गतेश्वर महादेवके मंदिरको देखनेके लिये हमने वहाँ अपने गुरुको भेजा।

२० जनवरी-मुकाम दानी, २० मील इसके रास्तेमें जंगल और साखूके पेड बहुत हैं। हम एक नालेको पार कर चले यह नदी गिरनेका उत्तम दृश्य है। दानी बूँदीकी रियासतमें है यहां पत्थरकी एक चारनकी बर्छी हाथमें लिये भयंकर मूर्ति देखी जो कभी उस स्थानमें मारा गया था, हमारे साथीने कहा पहिले कोई इस मार्गसे नहीं जाता आता था। परन्तु अब यह मार्ग स्वच्छ हो गया है।

मुकाम करीपुर-२१ फरवरी, साढे नौ मील इसका पहाडी रस्ता बडा कठिन है हम इसमें होकर गये, फिर सन्तरा नगर देखा, इसमें कई खोदित लिपि मिली। एक संवत् १४२२की देवलाने जो भूमि ब्राह्मणोंको दी थी, एक संवत् १४४६ आषाढ वदी पडवाको प्रमार ऊदां और कोलाके भूमिदानकी लिपि थी, तीसरी संवत् १४६६ आषाढ वदी पडवा संतराके चावडाका दानपत्र था, एक पत्थरपर संवत् १३७० में आषाढ शुदी पडवाका लिखा है कि बादशाह अलाउद्दीनने तीन हजार हाथी दश लाख सवार जंगी रथ असंख्य प्यादोंको लेकर सांभर मालवा, करनाटक कनौडा झालौर जैसलमेर देवगढ तैलंग चंद्रपुरी आदिको जय किया. संतरामें एक बडा दृढ किला है।

२२ फरवरी-कोटासे ११ मील किनारा चम्बल-यहांसे मार्गमें बडा कोहरा पडा जंगलमें झीलोंके देवताका मंदिर है यहां प्रार्थनाके चीर चढाये जाते हैं, होलीका त्यौहार इस वर्ष अच्छा नहीं रहा, एक बल्लीपर घासका बोझा बांध कर उसपर झंडा लगाते हैं और उत्सव मनाते हैं, कोटेकी आकृति मनोहारिणी है। दृढ दीवार बुरजों सहित चारों ओर हैं। किलेके भीतरका शहर इससे अलग है नदीके दोनों ओर वहांके निवासी अपने काम धन्देमें लगे रहते हैं।

सप्तम अध्याय ७.

कोटे राज्यमें महामारी-नन्दता-बूँदीमें जाना-बूँदीका राजमहल-सीतुरका कर्नल टाड साहबकी मृत्युके मुखसे उद्धार पाना-मंगलगढकी उत्पत्तिका वृत्तांत।

इतिहासलेखक टाड साहबने छः महीनेतक कोटेराज्यमें रहनेके पीछे, सन् १८२२ ईसवीकी १० सितम्बरको लिखा है कि "हमारे कोटेमें रहनेके शेष चार महीनेमें केवल हैजा महामारी और प्रबल ज्वरने भयंकर विक्रम प्रकाश किया। कोटेमें ऐसी भयंकर महामारी कभी पहिले हुई थी या नहीं, यहांके मनुष्योंको इसका स्मरण नहीं है हम इन दिनों इधर उधर कई स्थानोंमें घूमते फिरे पर बीमारीने हमारा पीछा न छोडा। हमको बीमारीने बहुत सताया पीछे हम जालिमसिंहके पास गये और उनसे रुखसत हुए रास्तेमें जिस हाथीपर सवार थे वह बहुत बिगडा पर परमात्माने कृपा की"। कोटेको छोड कुनारो नामक स्थानमें आकर लिखा है कि "राजराणा जालिमसिंहके आत्मीय राजा गुलाबसिंहके अधिकारमें कुनारो नामका देश हो गया है, जिसमें हम आये हैं। यह स्थान अत्यन्त रमणीक है, ऊंचे २ महलोंकी शोभाको देखनेसे नेत्रोंको अपार आनन्द प्राप्त होता है"।

जालिमसिंहके पिताके वासस्थान नन्दता नामक स्थानमें आकर टाड साहबने लिखा है कि राजपूत सामन्तोंके रहनेके स्थानमें नन्दता एक अत्यन्त ही श्रेष्ठ आदर्शका स्थान है। मैं एक तोरणमें होकर नन्दतामें गया। उस तोरणके ऊपर नौबत बज रही थी। तोरण (फाटक) से उतरकर चारों ओर स्थूलकाय स्तंभोंसे शोभायमान एक विस्तारित कमरेमें गया, वहाँ सरदारोंको इकट्ठा हुआ देखा, इसके पीछे महलसे अलग मनोहर सभामंदिरमें गया, वहाँ चारों ओर तोपें और बंदूकोंका शब्द हो रहा था। अभिवादन और प्रत्यभिनन्दन करनेके पीछे मैंने आसनको ग्रहण किया, दो सारंगी बजानेवालोंने आकर पंजाबी टप्पा गीत गाना प्रारम्भ किया"।

११ सितम्बरको तेरामें गये, १२ सितम्बरको नौगांव देखा.।

१३ वीं सितम्बरको बूँदीराजधानीमें जाकर इतिहासलेखकने लिखा है कि मैं हाडाजातिकी राजधानीके समीप गया. दूरसे ही धूलि उडती हुई दिखाई दी जिससे चारों ओर अंधकार हो गया, उसको देखकर मैंने जाना कि कोई राजा आ रहे हैं। शीघ्र ही बाजोंका शब्द भेरीका शब्द तथा घोडेके खुरोंका शब्द सुनाई आया। कुछ ही समयके पीछे साडनी सवारने राजाके आनेका समाचार कहा। राजा घोडेपर चढे हुए आ रहे थे, मै भी हाथीपर सवार था, परन्तु राजाके घोडेपर सवार होनेस मुझे हाथीपर सवार होना शोभा नहीं देगा, इसी कारणसे मैं उग्रतेजस्वी घोडेपर सवार होकर आगे बढा। महाराजके साथ साक्षात् होते ही दोनोंने घोडोंकी पीठसे उतरकर परस्परमें आलिंगन किया और २ सामन्तोंको भी मैंने उसी प्रकारसे

आलिंगन किया, इसके पीछे महाराजने मुझसे कहा, कि "यह आपका ही राज्य है इतने दिनोंके पीछे आप यहाँ आये।" यह कहकर संवर्द्धना करनेके पीछे बिदा लेकर आगे बढे। मैं अपने डेरोंको चला आया"।

बूँदीके महलोंके सम्बन्धमें टाड साहबने लिखा है कि "समस्त भारतवर्षके महलोंमें बून्दीके राजमहल सबसे अधिक श्रेष्ठ हैं। महलोंके निर्माणकार्यके अतिरिक्त जिस स्थानपर यह बना है उस स्थानके योगसे इसकी शोभाने और भी वृद्धि पाई है। यद्यपि बूँदीके भिन्न २ समयोंमें अनेक राजा इस महलके अंगको बढा गये हैं, परन्तु एक ही रीति और एक ही भावसे बने होनेके कारण इसकी शोभाकी वृद्धि कमती नहीं हुई। छत्रमहलका अंश राजा छत्रशालका बनाया हुआ है वह जैसा विस्तारित है उसी प्रकारसे सुन्दर भी है।"

एक सप्ताहतक रहनेके पीछे बून्दीको छोडकर २६ वीं सितम्बरको मैंज नदीके किनारे आकर टाड साहबने लिखा है कि "आज मैंने आतिथेय मित्र राव राजासे बिदा-ली। मैंनें डेरोंको छोडते ही देखा कि थानोंके महाराज एक अश्वारोही सेनाके साथ मेरी बाट देख रहे हैं। मुझे सीमातक पहुँचानेके लिये वह सजकर आये थे।" सतूर नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि "हाडा जातिके इतिहासमें सतूर देश एक पवित्र देश गिना जाता है। यह स्थान हाडा जातिकी कुलदेवी आशापूर्णाका अधिष्ठान क्षेत्र है। हाडा जातिने सतूर देशको अत्यन्त प्राचीन और पवित्र कहकर उल्लेख किया है। यहां के प्रधान मंदिरमें भवानीकी एक मूर्ति है। उस मंदिरके समीप बहुतसे योगी और संन्यासी निवास करते हैं।

२७ सितम्बर मुकाम थानोमें रहे, यहाँके महाराज सावन्तसिंहसे भेंट हुई।

२८ सितम्बरके सुबहको जहाजपुरके लिये रवाना हुए, यहाँ मीना रहते हैं हाडा-जाति विशेषरूपसे निवास करती है यह मेवाडका द्वार कहलाता है। दूसरा नाम इसका जिला चौरासी है, इसमें चौरासी शहर हैं, तीन सौ साठ मौजे हैं वास्तवमें सौ शहरसे विशेष इसमें न होंगे यहाँके निवासी वीर हैं, जालिमसिंह इसका परिचय पा चुके हैं रानाके इसमें दो तालाब बूद लुहारी हैं। हमारी मुलाकातको यहाँ सोभाराम आया। अब हमारा यह इरादा है कि हम कुछ दिन यहाँ निवास कर शरीरको स्वस्थ करें।

अष्टम अध्याय ८.

टाड साहबपर रोगका आक्रमण-मंगलगढ--करार किला--अमीरगढ-मानपुरा-मंगल गढमें जाना-उसका ऐतिहासिक वृत्तांत--स्थान बजेठा--हमीर गढ--सोनवार--पार्श्वनाथका मंदिर--करेरा-भोली नहर--अंगरा--मेरताकी ऊँचाई--समाप्ति भ्रमण दूसरेकी।

पहली अक्टूबरको जिहाजपुर नामक स्थानमें जाकर साधु टाड साहबने लिखा है "कल दिन हमारे प्राण निकलना ही चाहते थे कि डकंन और केरी साहब पीडित अवस्थामें शय्यापर लेटे थे. हमारे सम्बन्धी कप्तान वाह मेरे साथ भोजन करनेके लिये बैठे थे किन्तु ज्वर और क्लान्तिके होनेसे मुझे बिलकुल भूँख नहीं थी, इस कारण मैं कुछ भी न खा सका। मैंने उसमेंसे केवल मकईकी रोटीके दो एक ग्रास खाये कि मेरे शरीरमें मानों भयंकर आन्दोलन होने लगा। मुझे ऐसा बोध हुआ कि मेरा मस्तक धीरे २ भयानकरूपसे पीडित हो रहा है, मानो समस्त माथेमें सूजन भरी आ रही है। मेरी जिह्वा और होठ सूख कर काठके समान हो गये। यद्यपि मैंने कुछ भी भय नहीं माना और इससे मेरी चैतन्यता कुछ भी लोप नहीं हुई, तथापि इतना स्मरण हुआ कि कई वर्ष पहिले इस प्रकारसे मैंने एक बार मृत्युके मुखसे रक्षा पाई थी। मैंने कप्तान वाहको अपने पाससे जानेके लिये कहा; परन्तु वह जाने भी न पाये थे कि इसी अवसरमें मेरा कंठ सूख गया। मैंने विचारा कि मेरी मृत्यु अब निकट आ गई, मैं उसी समय उठा और तम्बूके खंभोंको पकड कर खडा हो गया। शीघ्र ही मेरे उक्त मित्र चिकित्सकको ले आये, मैंने उनसे कहा कि मुझे आप विरक्त न करिये। मैं स्थिर होनेकी इच्छा करता हूँ परन्तु उन्होंने मेरी बातपर कुछ भी ध्यान न दिया और कुछ औषधी मेरे मुखमें डाली। मैंने तुरन्त ही भयंकर उल्टी कर दी। फिर तुरन्त ही शय्याका आश्रय लेकर अचेत होगया। कोई दो घंटे रात्रि हो जानेके समय नींद टूटी तो देखा कि मेरे सारे शरीरमें पसीना आ रहा है, किन्तु पीड़ाका फिर कोई चिह्न दिखाई नहीं पडा। इसका विचार और निर्णय करना कठिन हो गया कि ऐसा क्यों हुआ? चिकित्सकने अनुमान किया कि किसीने मुझे विष खिलाया था, परन्तु मैंने इस बातपर विश्वास नहीं किया, यदि मैंने विष खाया था तो अवश्य ही उस ११ रोटीमें विष था यह स्थिर होता तो इस अवस्थामें शीघ्र ही पाचकको विदा दी जाती, मेरे मेवाडके आनेके समयसे अबतक चार बार मेरी यह दशा हुई। मुकाम खजूरी ता० २ अक्टूबरको मुझे ज्वरने बहुत पीडित किया था इस कारण पालकीमें सवार होकर मैं चला। मीना अपना सत्व मिलनेसे प्रसन्न हो गये थे, उनके अफसर हमारे पास मिलने आये। हमने उनको सुर्ख पगडी और रुमाल पुरस्कारमें दिये, हम घाटीके मार्गसे खजूरीमें पहुँचे, यहाँ ब्राह्मणोंको धर्मार्थ दी हुई बहुत सी जागीरें है।

३ अक्टूबरको मुकाम कचोरा-इसका मार्ग दुस्तर है इसके आधे मार्गमें अमरगढका किला है, यहाँके रावत दलेलसिंह जहाजगढमें कारगुजारी करते हैं. उनका साथी

पहाडसिंह हमसे साक्षात् करनेको आया। बीमारीके कारण मैं उसके दुरूह दुर्गको देखने न जा सका, उसका मार्ग बडा पेचदार है इस मार्गमें अनियमित पर्वतोंकी शोभायमान पंक्तियां हैं मुझे पहाडसिंहने सलामी दी। यहांके भूमिया प्रशंसाके योग्य हैं।

यह कचोरा शहर छः हजार रुपये वार्षिककी आयका है। पहिले यह बडा शहर होगा, हमने इस मुल्कको मरहटोंके अधिकारसे बचा दिया है। मुकाम दामीनो ९ अक्टूबर-कचौरामें हम इस समय तक जाडा बुखारके कारण ठहरे रहे नौ अक्टूबरको दमीनोमें आये यहाँ एक सप्ताह ठहर कर पन्द्रह तारीखको मानपुरामें आये। यह बनांस नदीके किनारे है, यहाँके सब प्रतिष्ठित पुरुष हमसे मिलने आये। मैं सबसे मिला परन्तु तबियत आज भी खराब थी। यहाँसे तीन कोश मंडलगढ है, १७ तारीखको यहाँसे चलकर शहरसे आधकोशपर डेरे डाले यहाँके हाकिम मुझसे मिलने आये और आज विजयादशमी है, बीमारीके कारण हमारा निमन्त्रण भी व्यर्थ गया, नौ दिनसे भोजन नहीं किया है कप्तान वाह आज मेरे पास आ गये, मेरे सभी साथी अलील थे। आज मैंने पसलीपर जोक लगाई थी, मंडलगढको बालनोतके एक सामन्तने बनवाया था "सौलङ्की वा चालुक्य जातीसे उत्पन्न बालनोत नामक सम्प्रदायके एक सामन्तने इस मंडलगढकी पुनः प्रतिष्ठा की। उसी सौलङ्की वा चालुक्य वंशसे अनहलवाडेसे राजवंशकी उत्पत्ति है। वह राजवंश दशसे चौदह शताब्दी तक पश्चिम भारतवर्षके समुद्रके किनारेवाले देशको अपने प्रबल प्रतापके साथ शासन करते रहे। बुनास नदीके किनारे-वाले देशको अपने प्रबल प्रतापके साथ शासन करते रहे। बुनास नदीके किनारे-टंकथोदा नामक स्थानके राजवंशसे बालनोतसम्प्रदायेन उत्पन्न होकर अपनेको तक्षक-वंशीय कहकर परिचय दिया। यद्यपि इस प्रवाद वाक्यसे जाना जाता है कि थोदासे सौलङ्की जाति बारह शताब्दीके धर्मयुद्धके समय पाटन देशको छोड कर अन्यत्र चली गई, परन्तु यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि बालनोतकी सम्प्रदाय इससे पहिले गई थी। पंजाबके अन्तर्गत लोकोन् नामक देश उनके आदि सुख समृद्धि प्राप्तिका स्थान कहा जाता था। मंडलगढके बालनोत सम्प्रदायके आदि पुरुषोंने सबसे पहिले लालपुरा नामक एक अत्यन्त प्राचीन देशपर अधिकार किया। उस आदि वीरके अधीनमें एक भील सेवक था। एक समय उस भीलने वनैले शूकरोंके उत्पात निवारण करनेके लिये ईश्वरके पहरेमें नियुक्त होकर देखा कि एक वनैला शूकर एक पत्थरके टुकडेके सहारे सो रहा है। भीलके हाथमें जो बाण फलवाला था वह तेज धारवाला नहीं था, इस कारण उसपर धार धरनेके लिये उसको पत्थरपर घिसा, घिसते ही वह समस्त लोहमय बाणकी फलक सुवर्णकी हो गई! भील सेवकने तुरन्त ही अपने प्रभुके पास जाकर समस्त वृत्तान्त कह दिया, प्रभुने उसी समय बडी शीघ्रतासे सेवकके साथ उस स्थानपर जाकर देखा कि वह पत्थर उसी प्रकार रक्खा है और शूकर भी उसी भावसे सो रहा है। प्रभुके पत्थरके टुकडे लेनेके लिये उपाय करते ही शूकरकी निद्रा भंग होगई, वह जागते ही तुरन्त भाग गया, प्रभुने उस पत्थरको लेकर उस पत्थरके गुणसे बहुतसा सुवर्ण तैयार किया और बहुतसा रुपया खर्च करके एक नवीन राजधानी

निर्माण की और उस भीलके नामके अनुसार ही उसका नाम मंडलगढ रक्खा। परन्तु एक अत्याचारके हो जानेसे वह अन्तमें चिरकालके लिये मंडलगढसे रहित हो गये। मंडलगढकी प्रजामें एक योगी प्रजा थी; उस योगीके एक अत्यन्त शीघ्र चलनेवाला घोडा था, अधिक क्या कहूँ वह घोडा मृगके समान महावेगसे जाता था। मंडलगढके महाराजने उस योगीसे वह घोडा बलपूर्वक छीन लिया, योगीने उसके नामपर राजाके यहां अभियोग उपस्थित किया। राजाने एक सेनाको भेज कर उस वालनोतके सामन्तको मंडलगढसे निकाल दिया। उस सामन्तके उत्तराधिकारी आजतक जावोन और बाकरोद नामक स्थानमें नीची श्रेणीके सामान्य भूमियारूपसे निवास करते हैं परन्तु तो भी वह अपनी प्राचीन पैतृक " राव " की उपाधिका व्यवहार करते हैं।"

बादलीसे हमको खोदित लिपियां मिलीं, जिनमें सोलंकी वंशका कीर्तन था, उसमें राजा भीम तथा उनके पुत्र वर्ण अनहलवारका वर्णन है उससे कई वंश निर्गत हुए हैं; उसमें अर्जुनसे दो वर्ण वैश्य और शूद्रोंके प्रगट होनेका भी वर्णन है, उससे वघेलबाल महाजन जिन्होंने जैनमत स्वीकार किया था उत्पन्न हुए तथा गूजर सून्ती कतोरे व सुनार कोकन भील अग्नि पनोरा और मंग मैदानप्रान्त कोटाके हुए, वघेलवाला महाजनोंकी साढे बारह जातिमेंसे हैं, पर यह सब राजपूतोंसे उत्पन्न है।

संवत् १७५५में निर्दयी औरंगजेबने मंडलगढको पिसानगढके रईस दूदाजी राठौरको दे दिया, उसने इस इलाकेको अपने भाइयोंमें विभक्त कर दिया और भूमियां भाइयोंपर काम चलानेको कुछ कर नियत किया। पर रानाने उसपर अधिकार किया और प्रत्येक पांचसौ रुपयेपर एक सवार और एक पैदलकी वेतन नियत की और बहुत थोडा रुपया अपना अधिकार जतानेको रक्खा, रानावत् कनावत् और शक्तावतोंपर जिन्होंने इसपर स्वत्व किये थे, बादशाहके नियमके समान उनसे भेंट चाही, जिनके पास एक ग्राम था उनसे एक वर्षका जिनके पास एकसे अधिक ग्राम थे उनसे तीन वर्षमें कर लिया जाता था, अमरगढ २५०० रुपयेपर; अमलदा १५ और तिन्तरो १३०० सौपर झूजरालू १४०० सौ पर नियत हुआ और जो कुछ नहीं देते थे घटनाके समय उनको सहायता देनेका नियम था। इसी समय दूसरे राजसिंहके समयमें उमेदसिंह शाहपुरावालेको पाँचवे हिस्सेका मंडलगढका इलाका ३५५० वार्षिक ५०० भेंट नायब और २०० रुपये भेंट चौधरीपर मिला, संवत् १८४३ तक इनके वंशवालोंके पास यह इलाका रहा; पीछे सोमजी दीवानने सहायता प्राप्त होनेसे उनको चन्दावतोंके साथ युद्ध करनेसे दे दिया और दूगामऊ तथा पुरावा दो जागीर पृथक् नियत की और ४०० अश्वारोही समयपर उनसे लेनेका नियम किया, पर अब इसमें बहुत परिवर्तन हो गया है रईस ऐसे निर्धन हो गये कि अब एक घोडा भी नहीं दे सकते।

मुकाम वजीत १८ तारीख फासला ८ मील-यह वेरस नदीके किनारे एक ग्राम है यहां घास बहुत होती है। १९ तारीखको वरसलवास पहुँचे यहांके महाराज हमारी मुलाकातको आये, यह रानावतवंशके बडे योग्य पुरुष है इनके पास पांच मौजे है, राना

अमरसिंहके वंशधर जो शाहजहांकी सहायतामें औरंगजेबके द्वारा नियत हुए थे उस समय उनका नित्यका स्वत्व जाता रहा उनके पुरुषाओंकी छतरी यहां बनी है।

२१ तारीख अम्बाह–दूरी साढे छः मील यहां कई एक खोदित लिपिकी नकली हमने मंगाई, बहुधा लोग हमारी भेंटको आये, पर ज्वर जाडेने हमको तंग कर दिया है। हमारी डायरी बाबू महेश रखता है और उसकी चतुराईपर हमको विश्वास है।

हमीरगढ ११ तारीख–यह शहर वीरमदेवके आधीन है जो रानावत सम्प्रदायका है। तथा धीरजसिंहका पुत्र है जो संवत् १८४३के समय सालूम्बरके सामन्तोंका सम्मतिदाता था, उसको यह मिला था, इस समयका अधिकारी कुछ जनूनी है और जो कि उसने एक दरजीको अपनी सेवासे पृथक् नहीं किया इसीसे ७००० रुपयेकी आयवाले दो शहर उससे छीन लिये गये, इसमें ८०७ घर सक्री जातिके हैं। छीट दुपट्टे यहांके विख्यात हैं, एक उमदा तालाब है उसमें बहुत सी बतकें हैं, उनको कोई नहीं मारता सिंघाडे बबूले उसमें बहुत होते हैं।

२३ तारीख मुकाम सियानो दूरी आठ मील तीन फरलांग हम अब बीचे मेवाडमें हैं, यहां मैदान ही नजर आते हैं यहां बडा कौतूहल दिखाई देता है, यहां एक मीराज जानवर बडा सुन्दर होता है, यहांके लोग हमारे भेंटके लिये आये, हमने पूछा तुम इतनी दूर अपने स्थानसे आये। उत्तर जब आप यहां पहिले आते थे तो सारे शहरमें २०० घर भी आबाद न थे, अब बारह सौ घर आबाद हैं राना हमारा राजा है आप हमारे परमेश्वरके बराबर हैं व्यापार उन्नतिपर है, हमसे महाराजा विवाहके समय कर भी वसूल नहीं करते हैं, हम बहुत प्रसन्न हैं जो आपने हमारे साथ सलूक किया है, उसके सामने पांच कोश क्या पांचसौ कोश भी कोई वस्तु नहीं है। मैंने उनको उपदेश किया और वे प्रसन्नतासे विदा हुए, उनके चले जानेपर बाबा संगरौतवाला और ठाकुर रावरदोवाला हमसे बातचीत करते रहे इस ठाकुरके पुत्रको हमने अजमेरके किलेसे छुटाया था, वह बहुत देरतक बातचीत करके विदा हुए।

रस्मी २३ अक्टूबर रास्ता साढे १३ मील हम फेरके रास्तेसे चले, इस कारण हमें १५ मील जाना पडा, मार्गमें मरोली स्थान देखा यह जंगलमें बसा हुआ है। पहिले यहां बीस घर थे और अब सत्तर घर हैं। यह रस्मी बहुत सुन्दर स्थान है, इसको राजा चंदसे निर्मित मानते है, पर यह विदित नहीं कि यह चन्द्र कौनसे हैं, यहाँके लोगोंने एक तख्त लगाई है उसका विषय है कि मुहरा व्यापारी महाजन नकाश और रस्माकी सब पंचायत नियत करती है कि तहसीलदारने पाकरके व्यापारपर और अन्नपर अधिकतर महसूल लगा दिया, इससे उन्होंने यह स्थान छोड दिया। पर जो कि रियासतके अहलकारने इस प्रकारकी कसम खाई कि आगेसे वह ऐसा न करेंगे तब उसको फिर लाकर आबाद किया और ईश्वरकी साक्षी की; इससे हम सबने यह तख्ती लगाई कि यादगार रहै। मिती आषाढ वदी तीज संवत् १८१९।

जवेमू तारीख २४ फेरसे मार्ग चौदह मील सीधे रास्तेसे बारह मील पहिले यह विख्यात नगर थां, पानी थोरे है पहिले यहां कुछ भी आबादी न थी, अब यहां अस्सी घर आबाद हैं हमारा गमन मसका न्हाय स्थान दरीबेमें हुआ पर यहांकी सब लिपियां पानीमें डूबी हुई हैं ।

मुकाम शनिवार तारीख २५ सीधा रास्ता लेनीसे साढे बारह मील, हम फेरके मार्गसे इसलिये गये कि वह स्थान देखैं कि जहाँ रावल समरसी चित्तौडवाले और भोला भीम अनहलवाडेसे युद्ध हुआ था । इस मैदानमें ढाका बहुत है, इसका वर्णन लोगोंने कवितामें किया है ।

उसने लिखा है कि युद्ध करेराक्षेत्रमें हुआथा और सोलंकी पराजित होकर नदी पार हो गये । यहां जहां बनास और बेरसका संगम है वहां एक महादेवजीका मन्दिर है ।

करेरा यहाँ एक मंदिर तेतीस अवतार जैनियोंका है । यहाँ कई लिपियां हैं कोई संवत् ११००, कोई १३०० और कोई १३५० का बना हुआ इसको प्रगट करती हैं । पुजारी यहाँके निर्धन हैं पर मंदिर बहुत सुन्दर है । स्तम्भोंपर जैन सम्प्रदायोंके अक्षर खुदे हैं, शिखर तीस ३० फुट ऊंचे है, चालीस फुट ऊंचे शिखरमें पार्श्वनाथकी मूर्ति है, दूसरे स्थानोंमें उनके शिष्योंकी मूर्तियें हैं । ३० वर्ष हुए कि पहिले यहांके मैदानोंमें ज्वारकी खेती होती थी कि उसमे हाथी भी समा जाय । मार्ग सर्वथा लुप्त है, हमारी पालकी कठिनाईसे चली यहां पहिले छः सो ६०० घर थे, अब ६० घर हैं । यहाँकी स्त्रियां पानीके साथ हमको धन्यवाद देने आई, रसमीसे करारातक सात मीलका मार्ग बडा कटीला है वहांसे सुन्वार तक नौ मील है । सुन्वार एक मेवाडके वंशधरके अधिकारमें है । महाराज दौलतसिंह कमलमेरवालेके अधिकारमें है, यहाँ एक किला भी है, यहाँ संवत् १८२६ में तमाखूका व्यापार बन्द होगया था । मादली २६ तारीख साढे सात मील पहिले यह सात हजार रुपये वार्षिक की आमदनीवाला बडा शहर था अब उसमें सात सा भी नहीं बैठते । इसमें अब ८० अस्सी घर हैं. अब यहाँ खेती होती है, प्रबन्धकर्ता उत्तम नहीं है यहाँ वाईजी अर्थात् इस समयकी राजमाताने एक सुन्दर संगमरमरका स्थान बनवाया है, संवत् १७३७ की जैनधर्मकी खोदित एक लिपि है ।

तूस और मेहता, २७ तारीख चौदह मील आज बडी कमजोरी है इस जंगलमें नाहर पाये जाते है, हमारे राजाके घोडेने जो हमारे साथ था समझ लिया कि अब हमारी यात्रा पूर्तिपर है । इसी स्थानपर हरव दानाने मार्गने जादूकी माल ग्यारह सौ वर्ष हुए शिशोदियाके मारी थी । एक बडा शूकर हमारे मार्गसे निकल गया, हम आराम चाहते थे यहाँके मनुष्य हमारी अगौनीको आये उनके आगे नगाडे बजते थे, स्त्रियाँ, अपना लोटा लिये हुए आई । हम धन्यवाद दिया; हमने उनके लोटोंमें एक२ रुपया डाल दिया और विश्राम स्थानपर आये । हमारा भिस्तरी बडा कमजोर हो गया है, उसकी अस्थिमात्र शेष हैं ।

नवम अध्याय ९.

कर्नल टाड साहबकी अपने देशमें जानेकी इच्छा--स्वदेशमें जानेको रोक कर बूँदी राज्यमें जाना–बूँदीके महाराजका प्राण त्याग करना--उनका कर्नल टाड साहबको अपने पुत्रके अभिभावक पदपर नियुक्त करना–हैजा--पोहाना--भीलवाडा-जहाजपुर--कर्नल टाडका बूंदीमें आना--राजपरिवारके साथ साक्षात्करना--राजपरिवारके साथ आत्मीयता।

निरन्तर घोर परिश्रम करने तथा–रजवाड़ेकी राजनैतिक–आर्थिक एवं नैतिक उन्नति साधन करनेकी निरन्तर चिन्ताके करनेसे सन् १८२१ईसवीमें कर्नल टाड साहबका स्वाथ्य एकवार ही भंग हो गया। इस समय उनकी वीरता एकवार ही दूर हो गई। इस समय उन्होंने चिकित्सकके परामर्शके अनुसार अपनी प्राणरक्षाके लिये "प्यारी जन्मभूमिमें जानेकी अभिलाषा प्रगट की। परन्तु रजवाडेकी और २ राजपूत जातिकी ओर उनकी कैसी माया और अकृत्रिम स्नेह उत्पन्न हुआ था कि वह अपने शरीरकी ओर तथा अपने जीवनकी ओर ध्यान न देकर केवल राजस्थानकी शान्ति और राजपूतजातिके मंगलसाधनमें लिप्त हुए। देश देशोंमें जाकर किसी न किसी एक घटनाने उनको बाँध रक्खा। रजवाडेके समस्त राजवंश और सामन्त वंशोंके साथ उनका भाई मामा और चाचा इत्यादिका सम्बन्ध स्थापित हुआ था, इसी कारण वह किसी प्रकार भी माया ममताको छोड कठोर हृदय साधारण अंग्रेजके समान राजस्थानको न छोड सके। सन् १८२१ ईसवीके जौलाई मासमें उन्होंने उदयपुरमें जाकर लिखा है कि वर्षाऋतुके समाप्त हानेपर अपने देशमें जानेका निश्चय किया था। परन्तु डंकन साहबकी भविष्य वाणी कि तुम अभी स्वदेश न जा सकोगे पूरी हुई कि उसी समय बूँदीके महाराजकी अचानक मृत्यु हो गई; इसलिये उनके वह मनकी आशा मनमें ही लोप हो गई, वह लिखते हैं कि "कई दिन बीतने पर मुझे बूँदीका समाचार मिला कि मेरे प्यारे मित्र बूँदीके महाराजने प्राण त्याग किये हैं। और अपनी मृत्युके समय मुझे अपने शिशुपुत्रके अभिभावक पदपर नियुक्त करके उस पुत्र और बूँदीराज्यके मंगल साधनका भार मेरे ऊपर अर्पण कर गये हैं।" उदार हृदय राजपूत बांधव टाड अपने राजपूत मित्रकी मृत्युसे कातरहृदय होकर उनकी उस अन्तिम आज्ञाको पालन करनेके लिये दुःखित होकर शीघ्र ही बूँदीकी ओरको चले।

इस समय यहां महामारी हैजा फूट निकला था, बडे २ यत्न किये जाते थे हमने देखा कि यन्त्रशास्त्री मन्त्र पढते और हवन करते थे शहरसे बाहर दक्षिणकी ओर गंगाजल टपकाया जाता था, लोग व्याकुल थे ऐसे समय हमने अपनी यात्रा वर्षामें ही आरम्भ की।

स्थान पोहोना, २५ जौलाई–यह बडे दुःखका दिन था, हम उदयपुरसे वर्षाकालमें चले थे, मेहता और बादलके बीच मार्गमें हमने देखा कि हमारा हाथी मरा

पडा है, इस दिन बडी ठंढी हवा थी जिससे बडा कष्ट हुआ। हमारी इच्छा भीलवाडा देखनेकी थी इससे उसी मार्गसे चले।

२६ जौलाई भीलवाडा--दिनसे इन्द्रदेवने कृपा की है धूप निकलती है, यहांके पुरुष और स्त्रियां कलशोंमें जल लेकर हमारी अगौनीको आये, यह लोग हमें शहरमें ले गये बाजार सजाया गया था। हम उसे देखकर लौट आये, भोजन किया फिर लोग हमारे पास आये, हमने इतर इलायची देकर उनको विदा किया, थोडे ही दिनसे यहां मंडी जुडी है और तीन हजार घरोंमेंसे बारह सौ घर व्यापारी जनोंके हैं। सब स्थानोंकी वस्तु यहां मिलती है। यदि कोई कुप्रबन्ध न हुआ तो इसकी बडी उन्नति होगी, २८ तारीखको भी लोगोंने हमको वहीं रक्खा २९ तारीखको बहुत थोडा असबाब लेकर यहाँसे चले मार्ग सब बिगड गये थे, पानी वर्ष रहा था साथी लोग गिर २ पडते थे इस प्रकार जहाजपुर जाकर पहुँचे।

कर्नेल टाड साहब बिना विश्राम किये बराबर चलते ही गये और ३० तारीखको बूँदीमें पहुँच गये। उन्होंने लिखा है कि "मैं जिस पथिकके वेषसे बूँदीमें गया उसी वेषसे शोकसे संतापित हुए राजपरिवारको धीरज देनेके लिये सबसे पहिले राजमहलमें गया और वहां जाकर सबको धीरज दिया। मैंने महलमें जाकर नवीन महाराज और उनके अनुज गोपालसिंहको परिषद् मंडलीसे व्याप्त देखा। जाते समय दोनों ओर शोकसे संतापित होकर भी मेरे प्रति सन्मान दिखानेके लिये आग्रह करते हुए सेवकोंको देखा"।

"मृतक महाराजके वियोगसे मेरे हृदयमें जो अपार शोक उपस्थित हुआ था मैंने उसे प्रकाश करके कहा और साथमें यह भी विदित किया कि भारतवर्षके गवर्नर जनरल बहादुर भी महाराजके वियोगसे दुःखित हुए है और नवीन महाराज जबतक राजकार्यमें समर्थ न होंगे, गवर्नर जनरल बहादुर तबतक उनके पिताकी जगह होकर उनके कल्याणकी कामना करेंगे। राजकार्यमें अज्ञान नवीन महाराजने धीर और गंभीरभावसे उत्तर दिया कि मेरे पिता मुझे आपकी गोदमें बैठाल गये हैं, उन्होंने मेरे मंगलका भार आपके हाथमें दिया है"। मैं भी इसी प्रकारसे धीरज दे सामन्तोंके साथ वार्तालाप करनेके पीछे अपने ठहरनेके लिये जो मकान महलसे कुछ ही दूरपर था वहाँ गया। मैंने बैठकर देखा कि मुझे जिन २ प्रयोजनीय वस्तुओंकी आवश्यकता थी वह सभी वस्तुएँ तैयार रक्खी हैं और मैंने बिना पोशाक उतारे ही देखा कि मेरे लिये भोजनकी सभी सामग्री तैयार रक्खी है। राजमाताने वह भोजन भेज दिया था और मेरे प्रति सम्मान दिखानेके लिये एक ब्राह्मणके हाथ महलसे यह सब सामान भेजा था, उसके आगे २ एक ब्राह्मण गंगाजल छिडकता हुआ आया था। पीछे किसीकी दृष्टि न लगे, अथवा कुछ अशुभ न हो यह काम इसीलिये किया गया था"।

दशम अध्याय १०.

राज्याभिषेक-राजभ्राताओंकी योग्यता-राजमाताका समाचार-बलवन्तराव-राज्यका प्रबंध करना-रानीसे साक्षात्-बूँदीकी आय-कोटेमें गमन-रावता-

कर्नल टाड साहबने ५ पांचवीं अगस्तको लिखा है, " कि मुझे बूँदीमें आया हुआ सुनकर राजमाताने नवीन महाराजका राजतिलक देने वा अभिषेक कार्य करनेका निश्चय किया और श्रावणमासकी तृतीयाको महापर्वको निकट जान उसके दूसरे दिन अभिषेक होनेका निश्चय किया । राजमाताने मेरे समीप एक लेखकके द्वारा यह कहला भेजा कि तृतीया तिथिको जातीय पर्व होता है, उस दिन मुझे नवीन महाराजके साथ राजयात्रा करनी होगी । राजमाताने मेरे समीप यह भी कहला भेजा कि रजवाडेमें ऐसी रीति प्रचलित है कि बूँदीके राजाकी मृत्यु होनेपर उनके कुटुम्बी तथा सम्बन्धी वा प्रतिवासी बारह दिन अशौचके पीछे नवीन महाराजको अशौच चिह्न छोडकर शुद्ध होनेके लिये आग्रह करते हैं । उनके वचनानुसार मैंने शीघ्र ही महाराजके लिये रंगे हुए कपडे और पगडी तथा हीरोंके लगे हुए शिरपेच मोल लेकर राजमहलमें भेज दिये । उन्होंने अशौच चिह्नस्वरूप सफेद वस्त्रको त्याग कर इन रंगे हुए वस्त्रोंको धारण किया । मेरे उस अनुरोधके अनुसार बारह दिनके पीछे नवीन शिशु महाराज मेरे दिये हुए कपडोंको पहरकर शुद्ध हो बाहर हुए, मैं उनके साथ बूँदीके प्राचीन महलमें गया । उसी स्थानपर समस्त क्रिया कर्म हुए थे "

" दूसरे दिन महाराजका अभिषेक किया गया--राजमहल नामक महलमें जहां बूँदीके राजाको अभिषेक होता है मैं वहीं गया । मैं जिस रास्तेसे गया उसी रास्तेसे सुन्दर वस्त्रधारी अगणित प्रजा इकट्ठी होकर मेरा अभिनन्दन करती थी महलके सामनेके भागमें इसी भांति अगणित राजपूतोंने चारों ओर इकट्ठे " जयजय " स्वरसे महाआनन्द प्रकाश किया,महलके भीतर जिस स्थानपर महाराज अभिषेक यज्ञमें नियुक्त थे वहां भी बहुतसे सामन्तादि इकट्ठे हुए थे।मैं वहां जा पहुँचा और उन सामन्तोंसे बातचीत करने लगा, उसके पासके ही एक कमरेमें पूजा और हवन हो रहा था पूजाके समाप्त होते ही आज्ञानुसार मैंने नवीन महाराजको उस यज्ञस्थानसे बुलाकर दूसरे कमरेमें एक आसनपर बैठाया, उस स्थानपर फिर पूजादि हुई, महाराजने अपने पुरोहितके माथेपर टीका लगाया । उक्त कार्यके समाप्त हो जानेपर सबकी आज्ञानुसार मैं प्रसन्न हो सभास्थानके एक ऊंचे मञ्चानपर स्थित राजसिंहासनकी ओरको महाराजको ले गया । मंचान ऊंचा था, इस कारण सुकुमार महाराज उसके ऊपर चढनेमें समर्थ न हुए, मैंने उनको उसके ऊपर चढा दिया । इसके पीछे पुरोहितने चंदन लगाया, मैंने मध्यमा उंगलीसे नवीन महाराजके मस्तकपर तिलक दिया । इसके पीछे उनकी कमरमें तलवार बांधकर अपनी गवर्नमेण्टके नामसे महाराजको अभिनन्दन कर, जिससे सभी सुन सकें

ऐसे ऊंचे स्वरसे कहा कि बृटिश गवर्नमेण्ट सदाके लिये बूँदी राज्य और राजदरबारके मंगलकी कामना करैगी। मेरे इस वचनपर सुन्दर वस्त्रधारी हजारों मनुष्य महा आनन्द प्रकाश करने लगे और उसी समयमें तारागढ़के किलेसे तोपें छूटनेका शब्द हुआ। इसके पीछे मैंने महाराजके शिरपर पगडीमें हीरोंका शिरपेच, गलेमें मोतियोंकी माला, हीरे जडे खँडुर देकर राजपूतोंमें प्रचलित रीतिके अनुसार इक्कीस दुशाले तथा बडे कीमती मूल्यवान् अनेक प्रकारके वस्त्रादि उपहारमें दिये। चाँदीके आभूषणोंसे सजा हुआ एक हाथी और दो काले घोडे भी लाकर उपहारमें दिये गये। उपहार दानकार्यके समाप्त हो जानेपर मैं अपने नवीन महाराजके पिताके मित्र और उनके अभिभावकस्वरूपसे उनका अभिनन्दन और मंगल कामना करके महाराजसे कुछ दूर जाकर खडा हुआ, उस समय राजाके प्रधान २ सामन्त उपहार देकर अभिनन्दन करने लगे इस समय राजभ्राता गोपालसिंहने आकर मुझसे कहा कि आपके अतिरिक्त मेरा और कोई अभिभाविक नहीं है"। समस्त सामन्त भी एक २ करके महाराजको अभिनन्दन कर मेरे पास आये और मेरे पास आकर मेरे इस अभिषेक कार्यमें मिले और इस कार्यको स्वयं करके आनन्द प्रकाश करते हुए बृटिश गवर्नमेंग्टके प्रतिनिधि स्वरूपसे उन्होंने मुझे नजरें दीं। पीछे मैं महाराज और सामन्तोंको अभिवादन कर वहाँसे चला आया। नवीन महाराज इसके पीछे सेना और सामन्तोंको साथ लेकर नगरमें घूमते हुए सीतरकी भवानीके मंदिरमें पूजा करनेके लिये गये।

दूसरे दिन राजमाताका समाचार हमारे पास आया। हमने उनके कहनेके अनुसार सब प्रबन्ध कर दिया। उनको बलवन्तसिंहकी ओरसे कुछ शंका थी, एक समय बारह वर्ष हुए कि इसने आक्रमण किया था। रानीसाहिबा अपने दीवान भूरा शंभूनाथसे भी राजी न थीं, इससे बडे धर्ममें विश्वासी गोविन्दराम वकील, तथा धाभाई किलेदार तारागढ़ तथा चन्द्रभान नायक यह जो बडे ईमानदार थे भूराके ऊपर दृष्टि रखनेके लिये नियत हुए।

मैंने सब प्रबन्ध करके आज्ञा दी कि जो रुपया आमदनीका हो वह सब महलके खजानेमें रक्खा जाय, और ऊपर लिखे पुरुषोंको रसीद तथा हिसाबका उत्तरदाता किया, और बलवन्तसिंहको भी बिदा करनेका प्रबन्ध किया।

इसी समय श्रावणी पूर्णिमापर राखीका त्योहार आया। रानीसाहिबाने मुझे भाई मानकर अपने गुरुके हाथ मेरे पास राखी भेजी, इस सम्बन्धसे ग्यारह वर्षके कुमार मेरे भानजे हुए, तब मैंने दीवानकी मारफत कुछ प्रबन्ध विषयक बातचीतकी इच्छा की और विश्वासी सेवकोंके साथ महलमें गया। कई घंटेतक बातचीत हुई, रानीसाहिबा एक परदेके बीचमें थीं उनकी बातचीतसे राज्यप्रबन्धविषयक उनकी बडी योग्यता प्रतीत हुई; हमने उनको समझा दिया कि तुम पृथक् लिखा पढी न करना और हर किसीसे अपने मनकी बात न कहना। हमारी गवर्नमेण्ट सदा तुम्हारी सहायक रहैगी। फिर रानीने एक सहेलीके द्वारा हमारे पास इत्रपान भेजे, और बार २ यही कहकर बिदा किया कि लालजीको भूल मत जाना।

मैं आनन्दपूर्वक लौट आया और रानीकी योग्यतासे मैं बडा प्रसन्न हुआ। मुझे और रानियोंसे इनमें विशेष योग्यता प्रतीत हुई।

हम अगस्ततक रयासत बूँदीमें रहे, जब चलने लगे तब यही उपदेश दिया कि हम आप सब लोगोंको इस रयासतका प्रबन्धकर्त्ता नियत करते हैं, यदि हम प्रतिवर्ष हिसाब माँगें तो आप इसपर आश्चर्य न करैं और भूराको भी समझाया कि वह आगेसे उन्नतिका मार्ग स्वीकार करैं जिसको उसने साथियों सहित स्वीकार किया।

सफरमें हमारे पास उनके समाचार आते रहे, तथा देवनागरी और फारसीमें महाराज बालकका लिखा पत्र भी हमारे पास आता रहा। जब हम वहीं थे तभी बालक महाराज डेरेके सामने अपनी चातुरी दिखाते हुए घोडे फेरते थे; एक समय महारानीने हमको धन्यवाद दिया कि आज बालक महाराजने शूकरका शिकार किया है। इस रीतिपर बडा दान पुण्य किया गया। यह वह समय था कि जबतक जंगली शूकर न मारा जाय तबतक वीरोंसे प्रतिष्ठा नहीं मिलती थी।

हम जहां कहीं रहते पुरानी खोदित लिपियोंकी खोज करते थे, बूँदीके राजपुरुषोंको इसमें बडा आश्चर्य होता था।

बूँदीके खालिस आमदनी तीन लाखसे विशेष नहीं थी अब थोडे ही समयमें पाँच लाखसे विशेष होगी और खालसे इलाकोंको सिवाय ८०००० हजार रुपये वार्षिक जो सरकार अंग्रेजको दिया जाता है जो पहिले सेंधियाके अधिकारमें था, जो उसने सन् १८१८ ई० के नियमपत्रके अनुसार छोड दिया था उसके सिवाय महाराजके पास सातसौ सवार सजातीय, फौज किलेदारीके सहित तथा गोलन्दाज बारह तोप और २७०० पैदल तनख्वाहदार थे तथा किलेदारी और प्रान्तोंकी सेना इससे पृथक् थी जिनकी आमदनी उनके खर्चको पूर्ण थी।

१९ नवम्बर स्थान रोहता-चौदह अगस्तको हम कोटेको चले। बूँदीकी प्रजा तथा हम भी उस समयके ज्वर जाडेसे पीडित हो गये थे। सन् १८१७ और १८ में हमने इसी स्थानपर शत्रुओंके साथ संग्रामको सेना सजाई थी और यह युद्ध पिंडारोके साथ हुआ था, और उनकी लूटका जो रुपया आया उससे लार्ड हैसर्स्टिंगसके नामसे पुल बनानेका विचार हुआ था उसमें प्रति देशका असबाब था। अनेक प्रकारसे ४००० पशु थे और हमारी इच्छानुसार एक पुल १५ महराबका कोटेके पूर्वकी ओर बनाया गया, यह एक सहस्र फुट लम्बा था एक वीर सिपाही जिसने उस युद्धमें महा सहायता की थी तथा दूसरे साहबोंकी मानो यह स्मृतिचिह्न है।

जो कि हम हाडौतीके मुख्य मार्गके समीप थे, उस समय राजरानाने कहा कि वह हमको यह स्थान दिखाता है जहाँ बडा शिकार होता है। जहाँ पर्वतोंकी श्रेणी बराबर चली जाती है, वही स्थान इसके लिये निश्चित हुआ। जो हाडौतीको मालवेसे पृथक् करता है, तीसरे पहरको हम शिकारको चले। शिकारियोंके शब्दसे जंगलके जीव जन्तु हरिण आदि कूदते फांदते चलने और भागने लगे। लाल दागदार बारहसिंगे

जंगली सुअर भागते दीखने लगे। जानवरोंका भयसे भागना एक अद्भुत दृश्य दिखाता था, इस दिन हमारे डेरोंपर हरिण मारकर लाये गये थे।

कहा जाता है कि रियासतका शिकारमें दो लाख रुपया खर्च होता है।२५ सवारी २०० हांकनेवाले और ५०० शिकारी समयपर कामके लिये रक्खे जाते हैं, पर विशेष व्यय शिकारके उपरान्त भोजमें होता है। लोगोंको इनाम बांटा जाता है, यह काम राजरानाने हाडा जातिके प्रसन्न करनेको किया था पर तो भी इतने समयतक राजकाज करने तथा कठोर व्यवहार करनेवालेपरसे विरक्तता किसीकी न देखी गई।

जबतक महाराव मेवाडसे लौटकर आवैं तबतक हम मालवेमें दौरा करेंगे, जहां भितराकम जंगलमें चम्बल गिरती है।

एकादश अध्याय ११.

मुकन्दरामें जाना-चम्बलका दृश्य- बजारोंके लगानेके चिह्न-जोगियोंके स्थान-टाड साहबका एक जोगीका शिष्य होना-शिशोदियाका वृत्तांत-योगियोंके सरदारका वर्णन-बरौली और उसके मंदिरोंका वर्णन।

बूँदीके नवीन महराजका अभिषेक हो जानेपर वहां कुछ दिन रहकर शांति स्थापन और सुशासनकी व्यवस्था करके महात्मा टाड साहब बूँदीसे चले गये, उन्होंने मुकन्दराके पास जाकर लिखा है " मैं बहुत सबेरे प्रसिद्ध मुकन्दरा नामक पहाडी मार्गसे होकर आया और दूरसे ही मालवेके अत्यन्त रमणीक समतलक्षेत्रको देखा। मैं पीछे बाईं ओरको जाकर जो पर्वत हाडावतीको मालवेसे विच्छिन्न करते हैं उनकी एक ओर होकर गया। मेरे पर्वतोंपरसे उतरते ही नवीन सूर्य कमनीय मूर्तिसे उदय हुए। वहां एक स्थान पहला भीलोंके राजाके करग्रहणका है जिसको बंजारोंने चिह्नस्वरूप मान लिया है देखा, मैं क्रमशः नीचे उतरकर भिंसरोरके सामन्तके स्थापित अतीत नामक स्थानके झलका नामक मंदिरमें गया। उस मंदिरके सामने जटाजूटधारी विभूति लगाये हुए अनेक संन्यासी दिखाई पडे; उन संन्यासियोंमेंके प्रधान नेताकी अवस्था ६० वर्षकी होगी, उन्होंने आगे बढकर मुझे आशीर्वाद दिया। सबसे पहिले उन्होंने मेरे मस्तकपर विभूतिका टीका लगाया और मुझको अपना चेला बना लिया। मैंने उपयुक्त सम्मान दिखानेके साथ ही साथ उस टीकेको ग्रहण किया। यह वृद्ध संन्यासी प्राचीन विवाद तथा इतिहासको बहुत कुछ जानते थे। उन्होंने आदिसे देवता दैत्योंके युद्धकी कथा कहते सब रामायणकी कथा कही। मेवाडके राजपूतोंका नाम शिशोदिया क्यों हुआ, इसके सम्बन्धमें उन्होंने एक विचित्र कहानी कही। उन्होंने कहा कि इस पहाडी वनके देशमें एक समय चित्तौडके महाराणा मृगया करनेके पीछे भोजन करने बैठे उस समय वह क्षुधासे व्याकुल थे।

बडी शीघ्रतासे उन्होंने एक मांसका टुकडा मुखमें डाला उसमें एक बनैला डाँस कहींसे प्रविष्ट हो गया उस डाँसने मांसके साथ राणाके उदरमें जाकर भयंकर वेदना उत्पन्न की। राणाकी आज्ञासे वैद्य आये उनसे सब समाचार कहा गया, वैद्यने राणाके प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये एक उपाय स्थिर किया, और राणाके सेवकसे गुप्तभावसे कहा कि एक गौके कानका थोडा मांस काटकर लाओ, सेवकने उस आज्ञाको पालन किया, वैद्यने उस मांसको एक कपडेमें बांधकर उसे बडे डोरेमें बांध राणाके गलेमें डालनेके लिये कहा। राणाने इसी प्रकार कार्य किया, वह उदरमेंका डाँस इस गोमांससे बँध गया, वैद्यने डोरेको खैंचकर बाहर किया राणाके प्राणोंकी रक्षा हुई। राणाने महा संतुष्ट होकर वैद्यको यथेष्ट पुरस्कार दिया परन्तु किस उपायेसे वैद्येन हमारे प्राणोंकी रक्षा की इसको वह बारम्बार पूछने लगे, तब वैद्यने समस्त वृत्तान्त कह दिया। राणाने जब सुना कि मेरे उदरमें गोमांस डाला था तब कहा कि यह तो महापाप किया है- इसका मैं प्रायश्चित्त अवश्य ही करूँगा। अज्ञानतासे गोमांस खाया था इस महापापका दंड निश्चय हुआ कि महाराणाको जलता हुआ शीशा निगलना होगा। शीघ्रतासे ही प्रज्वलित शीशा तैयार हुआ महाराणाने निर्भय होकर उसको पी लिया। उससे कुछ भी क्लेश न हुआ, उसी दिनसे वह राजपूत राजवंशधर आहारियोंके बदलेमें शिशोदिया नामसे पुकारे जाते हैं। यह प्रवाद वाक्य सर्वदा सत्य है प्राचीन योगीको ऐसा दृढ विश्वास था। योगीके साथ इस प्रकार वार्तालाप करते २ मैं आगे बढा दूरसे ही वृक्षोंसे घिरी हुई वारौलीके विख्यात मंदिरका शिखर मुझे दिखाई पडा। वह दृश्य नेत्रोंको आनन्द देनेवाला था। मैं एक छोटीसी नदीके किनारे होकर उस मंदिरकी ओरको गया। मैं जैसे ही उस पवित्र मंदिरके समीप पहुँचा कि वैसे ही देखा कि बडे २ आमके वृक्ष मानो आकाशको भेदन कर रहे हैं, वह वृक्ष अत्यन्त प्राचीन थे। मैं शीघ्र ही घोडेपरसे उतरकर मंदिरके आंगनमें आया। उस बडे लम्बे चौड मंदिरकी शोभाका वर्णन करना संपूर्ण असम्भव था। एकमात्र चित्रकार ही इसमें चित्र लिखनेकी सामर्थ्य रखते थे, शिल्पियोंने इसमें अपनी शिल्पशक्तिका चूडान्त दिखा दिया था, इसको देखकर पहिले मेरे मनमें इस बातका उदय हुआ कि प्राचीन हिन्दुओंके मंदिरोंमें यह शिल्पकार्य जैसा रमणीय है उसी प्रकार अतुलनीय भी है। खंभोंकी पंक्तिके ऊपर और नीचेका भाग एवं छत्त सभी मानो एक २ आदर्शमंदिरके स्वरूप थे सबसे ऊपर सुवर्णका कलश हमारी दृष्टिको आकर्षण करता था। प्रत्येक खंभ और शीर्ष भागके वर्णन करनेमें एक बडी पुस्तक तैयार हो जायगी, यद्यपि यह मंदिर बहुत पुराना था, तथापि आजतक इसका चमत्कार भली भांतिसे विराजमान है। इसकी दीर्घस्थाइताके दो कारण जाने जाते हैं। पहिला प्रत्येक पत्थर बडे पत्थरसे खोदकर बनाया गया है, इस कारण वह जैसा कठिन है उसी प्रकार उसका शिल्पकार्य भी अत्यन्त श्रमसाध्य है और दूसरा मंदिर पिसे हुए पत्थरसे रँगा हुआ था, इस कारण बहुत समयकी वर्षाके होनेसे उसका रंग किसी २ स्थानका दूर होगया था--और उसके सब अंश श्रेष्ठ अवस्थामें हैं"।

"वारोलीके इस महान् मंदिरमें महादेवजी विराजमान हैं। केवल एक ही स्थानमें नहीं, वरन् मंदिरके अनेक स्थानोंमें शिवलिंग विराजमान हैं। लगभग पाँच सौ हाथकी चौकोर भूमिमें यह मंदिर बना हुआ है, इसके चारों ओर पत्थरकी दीवारें हैं। उन दीवारोंके बाहर बडे २ वृक्ष हैं और छोटे २ मंदिर विराजते हैं। मंदिरके आंगनमें जाते ही सबसे पहिले एक स्तंभ मुझे दिखाई पडा, एक सर्प उस स्तम्भको पकड रहा था। जानेका द्वार अवश्य ही अत्यंत रमणीक था परन्तु वह इस समय नष्ट हो गया है, कारण कि उसके कुछेक अंश इस समय भी विद्यमान थे, जो देखनेसे अत्यन्त ही चमत्कारिक बोध होते थे। मंदिरमें प्रधान विग्रह महादेवजी पार्वती और उनके अनुचर थे। महादेवजी एक कमलके ऊपर खडे हुए हैं और एक सर्प मालाके समान उनके गलेमें पडा हुआ शोभा पा रहा है, उनके दांये हाथमें डमरू और बांये हाथमें मनुष्योंकी खोपडी है। दुःखका विषय है कि मुसलमानोंने उनके दोनों हाथ खंडित कर दिये हैं, मुसलमानोंने जो इस मूर्तिको सब नहीं तोडा इससे जाना जाता है कि वह पाषाणहृदय यवन भी इस मंदिर और विग्रहके शिल्पकौशलको देखकर मोहित हो गये थे। पार्वतीजीकी मूर्ति शिवजीके बाईं ओर स्थापित है वह एक कूर्मके ऊपर खडी हुई है, मंदिरमें और भी बहुतसी मूर्तियें हैं। शृंगके ऊपर एक प्रकारके सिंहकी मूर्ति दिखाई देती है, उसका नाम ग्रास है। अन्यान्य मूर्तियोंमेंसे बहुतसी टूटफूट गई थीं। एक स्थानपर एक योगी बीणा बजा रहा है, और दो हिरनियें ऊपरको कान उठाये धीरभावसे मानो बीणाकी झँकारको सुन रही हैं, इस भावसे वह खुदी हुई थी"।

"प्रधान मंदिरके बहुत ही पास और एक छोटा मंदिर विराजमान है। उसमें चतुर्भुजा देवीकी प्रतिमूर्ति स्थापित है, परन्तु मुसलमानोंने उसके भी दोनों हाथ तोड दिये, भील उनकी दो भुजारूपसे पूजा करते हैं। भील ही इस मूर्तिके परम भक्त हैं"।

"प्रधान मंदिरकी बाईं ओरको ३० फुट ऊंचे एक मंदिरमें अष्टमाता अर्थात् अष्टभुजा देवीकी मूर्ति है। परन्तु मुसलमानोंने देवीके सात हाथ एकबार ही तोड दिये हैं, केवल जिस हाथमें उनके ढाल थी उसीको नहीं तोडा है। अन्य पक्षमें देवीके मस्तकको एक बार ही चूर्ण कर दिया है। वह मूर्ति महादेवकी छातीपर खडी हुई है, परन्तु महादेवजीकी मूर्तिका टूटा हुआ मस्तक दूरसे ही दृष्टि आता है। योगिनी, और अप्सराओंकी मूर्तियोंपर यवनोंने हस्ताक्षेप नहीं किया है। दहिनी ओर त्रिमूर्तिका मंदिर है, इसमें एक मूर्तिमें ब्रह्मा विष्णु और महादेव इन तीनों देवताओंका मस्तक लगा है, महादेवजीके अतिरिक्त ब्रह्मा और विष्णुजीका मस्तक भी यवनोंने भंग कर डाला है इन तीनों मूर्तियोंपर जो बडा एक मुकुट था वह आज तक विराजमान है और उसका शिल्प कार्य अत्यन्त मनोहर और प्रशंसनीय है। ऐसा चमत्कार और शिल्पकार्य अब नहीं हो सकता"।

"हमने पीछे प्रधान मंदिरमें जाकर देखा कि यह ५८ फुट ऊंचा है इस मंदिरके बाहरी भागमें तथा भीतरी भागमें सर्वत्र देवी देवताओंकी मूर्तियां खुदी हुई थीं,

मंदिरके बाहर दाहिनी ओर एक गुम्मठमें महादेवजीकी मूर्ति है, उसके गलेमें मुंडोंकी माला तथा सात हाथोंमें सात हो प्रकारके अस्त्र हैं। उनके शिरपर नृकपालयुक्त सर्प विजडित मुकुट हैं, उसके बाईं ओर एक योगिनी रुधिर पान कर रही है और उनके दाईं ओर नीचेके आसनपर मृत्युकी मूर्ति है उसका शरीर जीर्ण शीर्ण है।

पश्चिमकी ओर महादेवजीकी और एक प्रकारकी मूर्ति है वह मूर्ति जैसी धीर और सुन्दर है उसी प्रकार रमणीक है पार्वतीका विवाह करनेके लिये जिस संमतिसे गये थे यह वही मूर्ति है । महादेवकी मूर्ति जैसी भयंकर है उसी भांति मनुष्योंके मुंडोंकी मालासे शोभायमान है,उसके पास ही मृत्यु मुखमें पडी हुई दो मनुष्य मूर्ति है; वह मूर्ति दोनों अविकल समंकित हुई है" ।

उत्तरमें एक मूर्ति है जो काल और उसके साथियोंकी है, देहाती उसको भूका माता कहते हैं, वह वृद्धा और खोपडियोंका हार पहिरे है, दो मनुष्य उसके साथ है जो टेढी आकृतिके हैं। मृतक होनेसे उनकी आँखें बन्द है मुख कष्ट पाये हुए सा प्रतीत होता है। और एक मांसाहारी पशु उनके समीप आ रहा है ।

मन्दिरका सभामंडप कई फुट आगे तक है, दोनों ओर चौकोन स्तम्भे बने हुए हैं, इन स्तम्भोंमें स्त्री पुरुषोंकी बहुतसी मूर्तियें है । महरावें बडी अद्भुत है । मूर्ति खड्ग हाथमें लिये ऐसी बनी है कि ऊपर पैवस्त हो गई है, यहां एक हाथीकी मूर्ति है । हम कह सकते है कि हमने ऐसी मूर्ति कहीं नहीं देखी।

इसकी छत बडी मनोहर है हमारे घासीने उसका मानचित्र लिया है, पवित्र स्थानपर देवताकी मूर्ति है जिसको यहांवाले रोरी व रोली कहते हैं; दूसरा नाम इनका वालनाथ है, पंडे इनकी स्तुति श्लोकोंसे करते हैं, यहां एक पत्थर चम्बलके रगडसे गोल हो गया है, इसीके समीप मंदिर है। एक महापुरुषने इनके समीप पार्वतीकी मूर्ति बनाकर स्थापित की है पर देवताको यह स्वीकार न हुआ उसको बडे कष्ट पडे उसकी भार्या मरी पुत्र मरा और उसका दिवाला हो गया।

इस मन्दिरके समीप वीस गजपर एक और स्थान सिंगार चोरी है। इसका यह चालीस फुट मुरब्बा है । बडे २ स्तम्भोंपर स्थापित है सब ओरसे खुला है उसमें भी बहुत मूर्तियां हैं। सहनमें बारह फुटका एक चौतरा है यहां राजा हूनका विवाह एक राजपूतकी पुत्रीसे हुआ था उसीकी यादगारमें यह बना है ।

मन्दिरके बीचमें एक स्थान नन्देश्वरका बना हुआ है, एक पुरुष ईश्वरकी प्रार्थना करता है, महादेवजीके समीप छोटे २ मंदिरोंमें महादेवजी तथा अन्य देवताओंकी मूर्तियां है उत्तरकी ओर गणेशजी तथा दूसरे देवताओंकी है, परन्तु यवनोंने इन मूर्तियोंको भंग कर दिया है; आगे दो स्तम्भ है एक खडा है दूसरा गिरा है शायद नारायणके पालनेके निमित्त हो; यहां एक जलपानके लिये बावडी बनी है, यहांसे चलकर हम एक कुण्डपर पहुँचे, यह कुंड साठ फुट लम्बा चौडा है इसमें पानी लबालब भरा रहता है, इसके समीप एक मन्दिर जलके देवताका है । कुंडके निकट जो मंदिर हैं उनमें भी

अद्भुत शिल्प हैं, एक मंदिरमें पानीमें तैरती हुई नारायणकी मूर्ती देखी । नारायण शेषनागपर शयन करते हैं वह सहस्र फनोंसे उनपर छाया किये हैं, चरणोंमें लक्ष्मी बैठी हैं, मत्स्य और नराकार पुरुष नारायणका सिंहासन उठाये हुए हैं। उनके बीचमें एक घोडा खडा है उसके समीप सिंह है, पलंग बना हुआ है। ऊपरके भागमें देवताओंके चित्र हैं एक स्थानपर नरसिंहजीका चित्र है। तथा और भी बहुतसी मूर्तियां हैं।

नारायणकी मूर्ति शयन किये हुए हैं। एक हाथ शिरके नीचे है शंख चक्र गदा पद्म लिये हैं! यह शंख दक्षिणावर्त कहाता है उनकी नाभिसे एक कमल निकला है और उसपर ब्रह्माजी बैठे हुए हैं। लक्ष्मीजी चरण दाब रही हैं, यह सब वस्तुयें बडी शिल्पचातुरी प्रगट करनेवाली हैं। शेषनागके बीच शरीरसे सोती हुई मूर्ति यह बडी अद्भुत है, और शेषजी तो असली सर्प ही विदित होते हैं; उनके शरीरके दाग तथा दरयायी घोडे अद्भुत हैं; नारायण जिस पलंगपर सोते हैं वह आठ फुट लम्बा और दो फुट चौडा तीन फुट ऊंचा है और वह मूर्ति मुकुटसे चरणोंतक चार फुट है, हमारी इच्छा इनको दूसरे स्थानमें ले जानेकी हुई ।

कुंडके आसपास १२ मंदिर हैं, यहाँ एक स्त्री पुरुषकी मूर्ति अद्भुत है । यदि कुछ कारीगर छः महीने परिश्रम करैं तो कुछ खाका इस बरौलीके अद्भुत शिल्पका खैंच सकते।

बरौलीके नामकरणका कोई इतिहास नहीं मिलता, पर राजा हून जो अंगदसीके नामसे विख्यात है उनका इससे सम्बन्ध पाया जाता है । ऐसा विदित होता है कि जब यूनानी बादशाह सल्यूकसने फौज भारतमें उज्जैनको भेजी थी उनके आनेसे विदित होता है कि कमलमेरका मंदिर उन्होंने बनाया हो, हमको दो खोदित लिपियोंसे पता लगता है कि सात आठ सौ वर्ष पहिले वह यहाँ आये थे, उसमें एक नाम बलनसीके पुत्रका है जो वहाँ बल नगरीसे आया था, दूसरा जैन भाषामें उसकी तिथि संवत् ९८१ इसमें सिद्धेश्वर महादेवकी प्रार्थनाके पांच श्लोक है, हमारे गुरु अपना व्याकरण उदयपुर छोड आये थे इससे वह इनका पूरा अर्थ नहीं कर सके। यह एक समयकी आमदनीसे नहीं बना कारण कि इसका व्यय राजपूतानेभरके एक सालकी आय होगी ।

यहाँ पत्थरकी दो छतरी बनी हुई है, बरौली उस भागमें बसा हुआ है, जो चम्बलनदी और घाटोके बीचका भाग है जिसमें सदेहात भिसरोरके समीप तीन मीलकी दूरीपर पश्चिमकी ओर आबाद है और यह बडा विचित्र स्थान है ।

द्वादश अध्याय १२.

चम्बलका पूर्णित जल-रमणीय प्रकृतिका हृदय-जल प्रपात-विहार भूमि-उसका रमणीय दृश्यनावलि-धूमारकी गुहावली-गुहाश्रेणीका वर्णन-विग्रह समूहका वर्णन-जैनविग्रहचिह्न-भीमका बाजार-जसवन्तराव हुलकरकी छतरी-ताकाजीका कुंड ।

कर्नल टाड साहबने ३ सितम्बरको लिखा है कि "बरौलीके मंदिरके अनुपम सौन्दर्यको भलीभांतिसे देखनेके लिये मैं वहाँ कई दिन तक रहा और स्वभावसे एक महान् दृश्य चम्बलके भँवरवाले जलको देखनेके लिये गया। डेढ कोश चलनेपर बडी प्रबलतासे जलके गिरनेका शब्द सुनाई आया, अन्तमें मैं नदीके किनारे गया, वह शब्द वहांसे भलीभांति सुनाई पडता था। मेरे छोटे २ डेरे एक ऊंची जमीनके ऊपर गडे थे, वहांसे जो दृश्य दिखाई देता था, वह स्वभावतः परम रमणीय दृश्य था, उस दृश्यको वर्णन करनेकी मनुष्यमें सामर्थ्य नहीं है। हमारे डेरोंके पीछे सघन वन था; सम्मुख ही पहाडोंके शिखर दिखाई पडते थे, बांई ओर नदी विस्तारित होकर मानो एक हौदके समान हो गई थी, उसके चारों ओर बेलें छा रही थीं, इससे कुछेक दहिनी ओर एक प्रसिद्धा नदी बह रही थी। उसका पाट इतना छोटा था कि मनुष्य छलांग मारकर सरलतासे उसके पार हो सकता था। डेरोंमेंसे वह विस्तारित तरंगकी क्रीडा भली भांतिसे दिखाई पडती थी। मैंने हौदके प्रथम मुहानेपर जाकर देखा कि उस नदीका तीक्ष्ण चलनेवाला जल पहाडोंको भेदन करता हुआ जा रहा है, इस स्थानसे जलके गिरनेका आरम्भ हुआ। जलराशि उस चम्बलसे महा तीव्र वेगसे पत्थरको भेदन करके नीचेको बिकट शब्दसे गिरकर नदीके आकारमें नक्षत्रगतिसे चल रही है। अन्तमें वह कुछ ही दूर जाकर स्वतंत्र चार तरंगिणीरूपसे चारों ओरको चली गई है। इसीके मध्यस्थलमें एक ऊंचा पत्थरका स्थान है इसके ऊपर सफेद सूर्यकी किरणें विचित्र क्रीडा कर रही हैं। इस स्थानपर चार नदियां चार खाइयोंमें गिरकर उस पत्थरके देशको संघर्षण करती हुई भयंकर शब्दसे फिर एक स्थानपर जाकर चारों एक रूपमें हो गई हैं। जिस स्थानपर वह सम्मिलन हुआ है उसका जैसा विस्तार है उस स्थानपर घूर्णित जलकी ध्वनि भी उसी प्रकार भयंकर है। उस स्थानसे फिर दो स्वतंत्र तरंगिणीरूपसे दो तरफको चलकर उक्त पत्थरदेशको पकडकर उत्तरांशमें फिर अंग २ में मिलकर एक मूर्ति हो, प्रबल तेजीके साथ फिर एक स्थानपर विचित्र सौन्दर्य प्रकाश कर रही है"।

तरंगणियोंसे वेष्टित उक्त पत्थरके स्थानपर जानेके लिये एक पुल बनवा दिया है, उस पाषाणप्रदेशका नाम भिसरोरके ठाकुरकी विहारभूमि है।, वह ठाकुर ग्रीष्मऋतुके समय उस परम रमणीय देशमें प्रीतिभोजानुष्ठान और विहार किया करते हैं। यह स्थान भोज विहारके लिये अत्यन्त उपयोगी है इसका अनुमान तो सरलतासे हो सकता है। इसके चारों ओर जलके गर्जनका शब्द सुनाई पडता है,--प्राकृतिक रमणीय दृश्यको कौन भूल सकता है? यद्यपि यह देश वनमें है परन्तु बडा भारी है। यदि मेवाड राज्यमें हमें कोई यह देश दे देता तो हम इस भिसरोरको पाकर अत्यन्त आनन्दित होते, अथवा चम्बलके इस जलप्रपात घूर्णितजल प्राकृतिक दृश्यपूर्ण इस स्थानमें निवास कर प्रीति भोजन कर महा आनन्द सम्भोग करते"।

तारीख चौथी दिसम्बर—कुछ दिनोंसे व्यापारी इस मार्गको स्वच्छ करते हैं जो गंगा मेत्रा स्थान स्वच्छ किया जाता है, यह जंगल है और यहां वस्ती नहीं है। यहां एक

स्थान रानाकोट भी खाली पड़ा है। सबेरे ही हम खेरली ग्राममें पहुँचे यहांसे हम दक्खिन पश्चिमकी ओर चले। यह मार्ग सर्वथा झाडी और पहाडोंमें था गंगा भेव यात्रियोंके आराम करनेका स्थान है।

यहां त्रिकोन मन्दिर नजर आते हैं, जो छतरियोंके समान बने हैं और इनमें भी बडी कारीगरी है। असली मंदिरको तोडफोड कर एक और मंदिर सदा बनाया गया है इसका केवल जगमोहन अच्छा है, इसमें एक स्थानसे पानी निकलकर बहता रहता है इसीसे इसका नाम भेवंगगा पडा है। इस पानीपर फूल बहुत चढाये जाते हैं और वह कामधेनु नामवाले कमलके फूल हैं।

असल मंदिरका ढाँचा बरौलीके मंदिर कैसा है। महादेव पार्वतीजीकी इसमें मूर्ति है जोगिनी नागिनी आदि सब बने हुए हैं इसके फर्समें एक यात्रीका नाम खुदा देखा जिसमें संवत् १०११ खुदा था। इसकी छत मीनारदार बहुत अच्छी है। इस स्थानके कोनोंमें पांच मंदिर बने हुए हैं पर वे सब टूटफूट गये हैं, चहारदीवारी मात्र शेष है बडे मंदिरमें एक चबूतरा है जिसपर महादेवजी स्थित हैं, यद्यपि बरौलीके बराबर कारीगरी नहीं पर इस समयकी कारीगरीसे कहीं अधिक है,इस समय यह स्थान बनैले जन्तुओंके रहनेका हो गया है वहाँ बडे २ वृक्ष हैं। मंदिरमें होनेसे उनकी जडोंने बहुत स्थान खिला दिये हैं एक वृक्ष यहां सहस्र वर्षका विदित होता है एक ही वृक्षने सब मंदिरोंपर अपनी छाया कर दी है,इसमें बाहर और भीतरकी ओर दो होते हैं। भीतर भी वृक्ष हैं उनपर अमरवेल चढी हुई है, यह महादेवजीको पसन्द है। यहां केतकी बहुत होती है, बानर ही वहाँके निवासी हैं, यहाँ सतियोंकी छतरी भी हैं उनकी संख्या भी इनसे विदित होती है, यहाँकी सब जाँचमें एक महीना लग जाय, पर हमने अपना मार्ग स्वच्छ करनेकी आज्ञा दी।

नावली यहाँसे बारह मील है मार्ग बराबर जंगलका बडा कठिन और दुस्तर है।

५ वीं दिसम्बरको नावली नामक स्थानमें जाकर कर्नेल टाड साहबने लिखा है कि "नावली एक अत्यन्त सुन्दर ग्राम है, इसके पश्चिम अंशमें एक प्राचीन किला टूटा फूटा हुआ है। तीसरे पहरके समयमें तक्षकजीके कुण्डको देखनेके लिये गया यह कुंड नावलीके एक कोश पूर्वमें स्थापित है। वहाँ दो मंदिर हैं एकमें तक्षककी मूर्ति है और दूसरेमें धन्वन्तरिजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। दक्षिणको कुंड विराजमान है; यहाँके मनुष्य कहते हैं कि यह अतल है"।

पश्चिमकी ओरसे एक नदी निकलती है, इसको तखेली कहते हैं यह कई मील तक पेंच खाती हुई सौ फुट नाचे पठारके हिंगलाजगढके पूर्वी भागको धोती है पीछे हमजारमें मिल जाती है, हमारे यासीने यहाँके चित्र लिये हैं, और जिसकी प्रशंसा लार्ड लेकने की है, हम किला हिंगलाज देखते हैं जिसपर कप्तान हिंचस साहबने तोपखानेके साथ अधिकार किया था।

भानुपुरा ६ दिसम्बर ८ मील-यह स्थान बहुत रमणीक है। दो मील जंगलमें चलकर घाटी द्वारा भानुपुराके समीप पहुँचे। यहाँ एक घाटपर एक दुर्गके चिह्न पाये जाते हैं जिसको इन्दौरगढ कहते हैं यह किला चन्द्रावतोंके अधिकारके समयका होगा यहाँ कोई खोदित लिपि न मिली पर अब भी यहाँ कुछ बसीकतके चिह्न पाये जाते हैं इसकी हमको प्रसन्नता है।

भानुपुराके समीप हम एक नदीके पार हुए जो अलत्रा कहलाती है और एक घाटीसे निकलती है। यहाँ भी जसवन्तराव हुलकरकी एक छतरी है। यहाँ उसने सरकार अंग्रेजसे युद्धकी तैयारी की थी, इसमें दृढताके सिवाय कोई शिल्प नहीं है इसमें इस निर्भय हुलकरकी मूर्ति बैठी हुई बनी है एक स्थान यहाँ गुम्मजदार धर्मशालासा है जहाँ जसवन्तरावका शव रक्खा गया था।

वहाँकी छतरीसे सीधी दूरपर एक और छतरी उसकी बहिनकी है जो जसवन्तरावके मरनेके बहुत दिन पीछे मरी थी, इसके दरवाजेपर काली नामक एक तोप रक्खी है, एक और थोडे दिनोंके बने मकानमें जसवन्तरावके निमित्त निरन्तर पूजा होती है। एक मूर्ति श्वेत वस्त्र धारण किये यहां खडी है, इसके पीछे दिवारपर जसवन्तरावका चित्र है जो अपने विख्यात मीहू घोडेपर सवार है। एक पुरुष उसपर चंवर करता है दोनों ओर दो सेवक खडे हैं और ब्राह्मण कुछ पढ रहे हैं।

हमने यहांके अधिपतिका घोडा देखा तो छूते ही उसने कनौती दबाई, यह महुआरंगका कुम्मैत है और अपने स्वामीके समान महाराष्ट्र देशका रहनेवाला है, इसके शरीरकी गढन बहुत सुन्दर थी सब चौदह बिलस्त था, चेहरा नमूनेके अनुसार था असीलखेत, कान छोटे नोकदार आंखे बडी उभरी हुई और थूथना इतना छोटा था कि चाहके प्यालेमें पानी पी सकता था। हमने कहा कि इसीके अनुसार इसकी पोशाक होनी चाहिये जिसको उसके स्वामीने स्वीकार कर लिया।

भानुपुरेमें ५००० घर हैं प्रबन्ध नरम है दीवान हुलकरका काम करते हैं। यहांके बडे व्यापारी आदि सब अपने स्वामीके साथ हमारी मुलाकातको आये और ऐसी योग्यतासे मिले कि मेवाडके निवासी इससे अधिक योग्यता नहीं दिखा सकते, पुरानी रसम रीति सब होती है और यहांका अधिपति सामर्थ्यवान् है।

स्थान गरोट सात दिसम्बर फासला १३ मील-अब हम ठोकर खानेके मार्गसे मालवेमें आये इससे प्रसन्नता हुई गरोटमें बारह सौ घर हैं। यहां पुरानी कोई वस्तु नहीं है, पर बीच मार्गमें मीलीका किला हमारी पुस्तकके लिये कुछ सामान दे सकता है, जिसके टूटे फूटे खंड सातल पातल नामक राजाका कुछ पता देते हैं, यह राजा पांडवोंके समयका था यहांके मैदानमें अग्री हरे स्याह प्रकाशमान कितने ही प्रकारके पाषाण दृष्टिगोचर होते हैं। पर पहाड कहीं नहीं है थोडा भी खोदनेसे पाषाणखंड निकल आते हैं।

कर्नल टाड साहबने आठ ८ वीं दिसम्बरको धून्नार नामक स्थानमें परम रमणीक गुहा और मंदिरोंको देखकर लिखा है कि इस देशकी उपजाऊ और श्रेष्ठ मट्टीको देखकर मुझे मेवाडका स्मरण हो आया।

हमारा प्रधान लक्ष्य धूम्नारकी गुहाके निकट जानेका था। मैं ढाके तथा वन्यपादप पूर्ण एक पाषाणमय देशमें होता हुआ अन्तमें धूम्नार पर्वतपर जा पहुँचा। मैंने देखा कि पर्वतके मूलमें उत्तरकी ओर एक सुन्दर सरोवरके किनारे मेरे डेरे लगे हुए हैं। परन्तु उस समय रमणीय दृश्यको देखकर नेत्रोंको तृप्ति नहीं होती थी और अपार कौतूहल उत्पन्न होता था, मैंने भोजनके लिये न बैठकर पहिले गुहा देखनेके लिये कहा"।

"धूम्नार पर्वतकी वेष्टनी प्रायः डेढ कोश थी, इसका उत्तरांश चौडा क्रम २ से शृङ्गपरको ऊंचा हो गया था। इसकी ऊंचाई एक सौ चालीस फुट थी। सबसे ऊंचा शिखर ऋजभावसे ३० फुट ऊंचा और उसके ऊपरका भाग समतल था। उस समतल क्षेत्रमें बहुतसे वटवृक्ष विराजमान थे; इसके दक्षिण ओर घोडोंके खुरोंकी आकृतिके समान, तथा ऊपरके भागके चारों ओर स्वाभाविक अभेद दीवारें बनी हुई थीं। प्रायः दीवारोंमें सर्वत्र ही गुहा बनी हुई थीं, मैंने गिनती करके देखा कि गुहाओंकी संख्या एक सौ दश है। इन गुहाओंके प्रधान मंदिरोंका प्रवेश द्वारस्वरूप था, अथवा यहाँ प्राचीन संन्यासी लोग निवास करते थे।दीवारोंमें छेद हो रहे थे परन्तु दीवारें लोहेके समान कठिन और चिकनी थीं, यहांपर प्राचीन बस्तीके चिह्न भी पाये जाते हैं परन्तु वह किस समयके है यह नहीं जाना जाता,यहां जो एक फुट चौडा प्राचीन दीवारोंका कुछ टूटा हुआ हिस्सा देखा यह एक बडे पत्थरके टुकडेके समान था, पत्थर पत्थर पर जोडा नहीं गया है,इस कारण मेरा यह विचार हुआ कि यहाँ संसारियोंकी वस्ती नहीं थी, केवल योगी और संन्यासी ही निवास करते थे"।

"मैं शिखरके ऊपरके अंशपर चढा, चारों ओर भ्रमण करनेके पीछे एक अंशमें जानेका मार्ग देखा। वह नीचेसे ऊपरतक कटा हुआ और खुला था। वह मार्ग दोसौ हाथ चौडा और चार सौ हाथ लम्बा था मै उसके एक चौकोने स्थानमें आया। इसकी ऊँचाई प्रायः३५फुट थी। यह एक बडी भारी गुफा है।यह गुफा पत्थरको खोदकर बनाई गई है। इसके मध्य स्थानपर एक बडा पत्थर काटकर उससे एक मंदिर बनवाया है और उसमें चतुर्भुजाकी मूर्ति विराजमान है,गुहाके उत्तर पश्चिममें खुदी हुई सीढियां दिखाई दीं। वह सीढी पर्वतके शिखरतक लगी हुई थीं। उस शिखरदेशपर यद्यपि मट्टी नहीं है तथापि मैंने वहां बहुतसे प्राचीन पीपल और वट तथा इमलीके वृक्ष देखे"।

"उक्त मंदिर साधारण मंदिरकी आकृतियुक्त चौडा-मंडप है। इस मन्दिरकी गठन रीति जैसी सरल है वैसी ही मजबूत भी है, स्तम्भोंकी श्रेणी नक्काशीके कामका चमत्कार दिखाती थी, अनेक प्रकारकी सुन्दर प्रति मूर्तियां भी खुदी हुई है। एक बडे भारी पत्थरके टुकडेको खोदकर यह मंदिर बनाया गया है, इसका स्मरण करनेसे इस मंदिरकी प्रशंसा नहीं की जा सकती"।

"एक बेदीके ऊपर चार हाथके बराबर विष्णुजीकी मूर्ति विराजमान है। विष्णुके पहिरे हुए वस्त्र सभी पीले रंगके है। इस कारण इस मूर्तिका दूसरा नाम पांडुरंग है। प्रधान मंदिरके चारों ओर निम्नलिखित देव देवियोंकी मूर्तियाँ है। पहिले प्रवेश-

द्वारके ऊपर द्वारपाल देवताकी मूर्ति है दक्षिणमें गणदेवकी मूर्ति है, उनके निकट वाग्देवी सरस्वतीकी प्रतिमा विराजमान है, बाईं ओर कालभैरव और गौरा भैरवकी मूर्ति है । उससे कुछ ही दूर पंच महावेदी की मूर्तिका मंदिर है । प्रत्येक मूर्तिका स्वतंत्र वाहन दिखाया गया है । बैल, मनुष्य, हाथी, भैंसा; और मोर यह पांच प्रकारके वाहन भी खुदे हुए हैं" ।

प्रधान मंदिरके पीछे तीन छोटे २ मंदिर और हैं, उनके बीचके मंदिरमें अनन्त शय्यापर शयन किये हुए नारायणकी मूर्ति और चरणोंके धारे लक्ष्मीजीकी मूर्ति है" । लक्ष्मीजीकी मूर्तिके धोरे दो विकटकाय दैत्य मानो परस्परमें आक्रमण कर रहे है। नारायणके चारों ओर छोटे २ देवताओंकी मूर्ति कोई वंशी कोई वीणा और कोई मृदंग बजा रही हैं, इन बाजोंकी ध्वनिसे मानो अनन्त आनन्दसे अनन्त फल विस्तार कर रहे हैं । छोटे २ मंदिर भी प्रधान मंदिरोंके समान बडे २ पत्थरोंके टुकडोंको खोदकर बनाये गये हैं, परन्तु उनमें विग्रह सिंहमर्मरके पत्थरपर खुदे हुए हैं, मंदिरके ऊपर महादेवजीकी मूर्ति विराजमान हो रही है " ।

" मैं पर्वतकी सीढियोंपरको होता हुआ दक्षिणकी ओरसे बाहर हुआ । वह स्थान खुला हुआ था और वहांसे चम्बल बहुत दूर थी, तथापि उसका तथा मन्दसोर और सुन्दवाराके देशका रमणीय दृश्य देखा । वहांसे सीढियोंपरसे उतरकर मैं बाईं ओरकी गुफामें गया, उस गुफाका तलछत केवल स्तंभोंसे रुका हुआ था । यह स्तंभ जैन आकारसे बने हुए थे । आश्चर्यका विषय है कि इन मंदिरोंके एक अंशमें जिस भांति शिव और विष्णुजीकी मूर्ति विराजमान थी इसी प्रकार और अंशोंमें भी दक्षिणांशोंमें जैनियोंके विग्रह चिह्न विराजमान थे । इनके पास ही गुफामें जैन व बहुत सी बौद्धोंकी मूर्ति थीं--कोई खडी थी, कोई बैठी थी, परन्तु इसकी दक्षिण ओर महाभारतमें विख्यात पांचों पांडवोंके स्मृतिचिह्न पाये जाते थे । एक दश फुटकी लम्बी मूर्ति यहां निद्रित अवस्थामें थी, ऐसा सुना जाता है कि यह मूर्ति महावीर भीमके पुत्रकी है और इसकी यह अवस्था केवल एक ही घण्टेकी बताते हैं, इसके अतिरिक्त पांचों पांडवोंकी मूर्तियां दिखाई आई जो मनुष्य उन पांचों पांडवोंके सेवकभावसे रहते थे वह उनकी मूर्तियें थीं, कहते हैं बनवासके समय पांडव यहां ही आकर रहे थे" ।

"सौभाग्यसे मेरे साथमें जैन गुरु थे, उन्होंने कहा कि यह पंच मूर्ति जैनियोंके पंच तीर्थंकरोंकी है । ऋषभदेव प्रथम, सन्तनाथ षोडश नेमनाथ बाईसमें, पार्श्वनाथ, तेईसमें, महावीर और चौबीसमें यह पंचजैन देवताकी पंचमूर्ति हैं, यह पंच पांडवोंकी मूर्ति नहीं है । चन्द्र प्रभुकी मूर्ति भी वहां दिखाई दी । सभी मूर्ति दश ग्यारह फुट ऊंची थीं " । वास्तवमें यह पंच जैन देवताकी मूर्तियां हैं वा पांच पांडवोंकी मूर्ति हैं, इस स्थानपर इसका विचार करना हमें असंभव हो गया ।

उस गुफाके धोरे ही धूम्नारमें एक और बडी गुफा है । पहिली गुफाक भीतरसे ही उस गुफामें जानेका रास्ता है । वह सर्व साधारणमें भीमके राजके नामसे विदित

है। इस गुफाकी लम्बाई सौ १०० फुट है और ८० फुट चौडाई है। गुफाका प्रधान कमरा भीमके अस्त्रागार नामसे पुकारा जाता था, एक बाहरकी कोठरीके रास्तेसे इसमें जाना होता है, वह कोठरी २० फुटकी है, अस्त्रागारकी गुफाके भीतर एक घर है। वह घर ३० फुट लम्बा और १५ फुट चौडा है, उस कमरेके चारों ओर धर्मशाला बनी हुई है तीर्थ-यात्री लोग यहां आकर ठहरते हैं। यद्यपि यह भी भीमके नामसे विख्यात है, परन्तु अन्यान्य लक्षणोंसे जैनियोंकी जानी जाती है। अस्त्रागारके पास ही राजलोक नामका एक कमरा है, यह पहाड आदिनाथके नामसे विख्यात है। इससे यह भी विश्वास होता है यहां आदिनाथकी पूजा होती होगी, एक स्थानमें पार्श्वनाथकी भी दो मूर्तियां हैं।

"और भी दक्षिण वा दक्षिणपश्चिममें गुफा और कमरे हैं, उन कमरोंके चारों ओर योगियोंके ठहरनेके लिये घर बने हुए हैं। यहाँ एक बहुत बडा वृक्ष है। यहाँ भी एक बहुत बडी मूर्ति है.

धूम्नारकी गुफाओंका विस्तारसहित वर्णन करनेकी अब लेखनीमें सामर्थ्य न रही। यद्यपि यह इलोरा, कारालि, वा सालसेटीके प्रसिद्ध प्राचीन गुफाओंके समान श्रेष्ठ नहीं, परन्तु इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि यह उन सबकी अपेक्षा अत्यन्त प्राचीन है। मैंने इन गुफाओंके चारों ओर खोज की परन्तु कहीं भी किसी प्रकारकी खुदी हुई लिपि वा अनुशासनपत्रको न पाया। यह गुफा दर्शन करनेके योग्य ही थी; इनको देखकर अनेक प्रकारका कौतूहल उत्पन्न होता था और इनमें बहुतसे अद्भुत पदार्थ हैं"।

त्रयोदश अध्याय १३.

झालरापाटन-कर्नल टाडकी अभ्यर्थना-झालरापाटन नगर-मंदिरोंकी श्रेणी-झालरापाटनकी उत्पत्ति-झालरापाटनकी सृष्टिके सम्बन्धका विवरण-स्वायत्व शासन-कर्नल टाड साहबके साथ नगरके सब श्रेणीके प्रतिनिधियोंका साक्षात्-प्राचीन नगरी चन्द्रावतीका वृत्तांत-उसके सम्बन्धका प्रवाद वाक्य-प्राचीन मंदिर श्रेणी-कर्नल टाडका देवताओंकी मूर्तियोंको संग्रह करना-

स्थान पंच पहाड-१० दिसम्बरको हम गिरोटसे चलकर इस मुकामपर आये। गिरोटसे मानसन साहबका आगमन हुआ था, यह एक ऐतिहासिक स्थान है। जब हुलकर प्रताप-गढमें था और उसने अंग्रेजी फौजका आगमन सुना तब वह अपनी सेनासहित मन्द-सोरको गया और चम्बलके पार होकर गिरोटकी तरफ चला, जो वहाँसे पचास मीलके लगभग दूर था, मानसन साहबको इसकी कुछ खबर न थी वह उस समय चन्द्रवासाको जाते थे; पर ज्यों ही उन्होंने हुलकरका समाचार सुना कि उन्होंने मुकन्दरा घाटीको जाकर रोका और ल्यूकन साहबको कोटेकी हाडा फौजके साथ वहीं छोडा। हुलकरके १०००० सहस्र अश्वारोही चार गोलें बांधकर चले यह खान वंगशके अधीन थे और इन्होंने

दक्खिनसे ल्यूकन साहबपर आक्रमण किया । पर ल्यूकन साहबने उसको पराजित किया, पर साहबके पाँवमें उन्हींके सिपाही द्वारा चोट आई, एक पुरुष जो उस युद्धमें सम्मिलित था उसने हमको वह वृक्ष दिखाया जिसके नीचे साहब गिरे थे ।

कोटेकी सेना कोइलाके सामन्तके अधीन थी । अमरसिंहपर ज्यों ही आज्ञा पहुँची वह तैयार हुआ । पीपली ग्रामके सम्मुख वह अपने घोडेसे उतरा और जीनपोशके ऊपर बैठ गया और उसके चारों ओर एक सहस्र सिपाही थे, उसने अमजारके मार्गसे आक्रमण करना चाहा पर उसकी सेना साहसहीन हो गई थी, तथापि उन्होंने शत्रुओंके शवोंसे नदीको भर दिया।पीछे एक गोली अमरसिंहके माथे और एक छातीमें लगी जिससे वह भूमिपर गिरा परन्तु तत्काल उठकर एक कोलूके सहारे खडा हो गया और सेनाको साहस बँधाया पर वह शत्रुकी ओर तलवार उठाकर गिर गया और मर गया, साढे चार सौ सैनिक उसके साथ मारे गये और कोइलाका भावी अधिकारी सामन्त पलेटिया भी मारा गया और कोटेकी सेनाका बखशी बन्दी हुआ जिसको दश लाखका तमस्सुक लिखनेसे छुटकारा मिला जिसका वर्णन पीछे हो चुका है ।

यहां एक सादी छतरी बनी है।जहां यह हाडा वीर मारा गया था । एक चौंतरा यहां बना है इसको जुझार कहते हैं,इसपर घोडेसहित उस सवारका चित्र है हमको कोटेके नायबपर यहां उसकी वेपरवाईसे क्रोध आया कि उसने कोई दृढ स्मारक यहां नहीं बनवाया था, पर वह ऐसा क्यों करता कारण कि वह हाडा जातिका तो है ही नहीं बल्कि ऐसा करनेसे तो उसे ईर्षा होती । तथापि यह कची छतरी भी एक प्रतिष्ठाकी वस्तु है, जो दृढ छतरियोंको प्राप्त नहीं है, ल्यूकन साहबकी छतरी ऐसी भी नहीं है, वह जो मारे गये वह छतरी बननेका कुछ स्वत्व रखते थे वा नहीं, यह भी विदित नहीं हुआ परन्तु रहनेवाले उस पीपलीके वृक्षको जहाँ साहब गिरे थे ल्यूकनका जुझार कहते हैं । यही स्मृति है और छतरीकी मरम्मत करते रहते हैं ।

इतने मनुष्योंका वध कराकर अंग्रेजी कमानियरने मुकुन्दराघाटपर अधिकार किया और शत्रुसे भेंट न हुई । यदि साहब पांच कम्पनी पैदल छोड जाते और थरमोपलीको चले जाते तो नामवरी रहती–कारण कि वह स्थान ऐसा है कि उसके चारों ओर भ्रमणमें एक सप्ताह लग जाता है और पैदलके सिवाय वहाँ किसीकी गुजर नहीं है पर कमानियर साहबको अपनी सेनापर विश्वास न था हम कहते हैं यदि ऐसा था तो उन्होंने सेनाकी अफसरी क्यों की थी।पर ऐसा नहीं था प्रत्येक सिपाही युद्धके लिये तैयार था जब कमांडरने पांच कम्पनी युनासके घाटपर छोडी तब उन्होंने कैसा काम किया जबतक उनके पास युद्धका थोडा सामान भी रहा बराबर लडते रहे और शत्रुको हरा दिया । एक समय सेंधियाकी फौजके एक जिमानखो रूहेलेने हमसे कहा कि मैंने शनैः २ एक स्थान बनाया जहांसे एक अंग्रेजको पिस्तौलसे मारा । उसने यह भी कहा कि मरहठे पैदल कभी आक्रमण नहीं करते । जसवन्तराव दीवानेके समान अपने हाथ भूमिपर दे मारता था । और अपने अश्वारोहियोंमेंसे वीरोंको पुकारता था अन्तमें

उसके सवारोंके हाथसे संकलेर साहब और उनके साथी मारे गये । हम इससे यह उपदेश लेते हैं कि ऐसे पुरुषको किसी प्रकार अफसरी न देनी चाहिये । जो अपने सिपाहियोंपर विश्वास न करता हो ।

पंचपहाड एक आबाद शहर है, इसमें चार जिले हैं जिनको हमने युद्धमें हुलकरसे लेकर नायबको दिया है । यद्यपि अभी उनमें ५०००० रुपयेकी आय नहीं होती, पर उनमें इससे दूनी आय हो सकती है इस शहरमें २००० घर हैं । बाजार चौडा है जिसमें व्यापारी महाजन रहते हैं । यहाँके आदमी हमारी भेंटको आये । यहां लाल पत्थर भी बहुत है ।

कुनवारा ११ दिसम्बर–उत्तर पूर्व १३ मील हमारा गमन बहुत अच्छे मार्गसे हुआ यहाँ ज्वार गेहूं बहुत होते हैं । यद्यपि युद्धके स्थानोंमें खेती विशेषतः कम होती है पर गेहूँकी खेती विशेष होनेसे कुनवारा यथानाम तथा गुण हो गया है । यहांसे चार मील ओतला ग्राम होकर हम चले । हम उस मुकामपर पहुँचे जो उज्जैनसे सीधा हिन्दुस्थानके द्वारको जाता है, यहांसे सोनेल बडा शहर है, तीन मील हमारे दहनी ओर है ।

महात्मा टाड साहबने १२ वीं दिसम्बरको दश मील चलकर झालरापाटनमें जाकर लिखा है, " कि मैं चन्द्रभागा नदीके पार होकर गया, इस नदीकी उत्पत्तिका स्थान यहाँसे दो कोश दूर है । उसके पास ही रेलतियो नामक पर्वत विराजमान है । पहिले उस पर्वती देशमें एक सम्प्रदाय भीलोंकी वास करती थी और एक समय यहाँसे चार हजार भील मालवेमें जाकर वहाँके बीचके देशोंकी समस्त धन सम्पत्ति लूट लाये थे । कोटेके प्रधान मन्त्री जालिमसिंहने ही उस भील सम्प्रदायका विनाश किया था " ।

झालरापाटन नगर कोटेके प्रधान मन्त्री जालिमसिंहने बसाया था । मैं नगरके आधकोश धोरे पहुँचा उसके पूर्वदेशके समान नगरके प्रधान विचारक, पंचायत समाज समस्त प्रधान २ धनवान् निवासियोंने आगे बढकर मुझे बडे आदर सम्मानके साथ ग्रहण किया । समस्त भारतवर्षके बीचमें केवल इसी नगरमें इस समय मिउनिसिपलके स्वायत्व शासनकी रीति प्रचलित देखी । यहाँके निवासियोंने ही स्वयं आत्मशासन विधिको प्रणयन करके स्वाधीनताके साथ स्वायत्वशासन कार्य किया था । भारतवर्षमें सबसे अधिक यथेच्छाचारी शासनकर्ता जालिमसिंहके समीपसे इन्होंने स्वायत्व शासनकी स्वाधीनता पाई थी, यह अवश्य ही आश्चर्यकी बात है कि जालिमसिंहने राजनैतिक अभिप्रायके सफल होनेकी आशासे इनको यह स्वाधीनता दी थी ।

मैं उपस्थित सभी मनुष्योंके साथ अभिवादन कर तीसरे पहरके समय सबके सहित अपन डेरोंमें आया, मैंने इस युक्तिसे विदा ली कि सभी मेरे साथ बातचीत करके संतुष्ट हुए, उससे विदा होकर नगरमें आया । जानेके समय किलेपरसे तोप छूटनेका शब्द हुआ । यह नगर चौकोर है चारों ओर बडी २ दीवारें और उनके ऊपर तोपोंकी कतार सज रही है । नगरका भी तरीभाव सरल और सहजभावसे गठा हुआ है । दो

प्रधान राजमार्गोंने भिन्नप्रान्तसे बाहर होकर परस्परमें अतिक्रम किया है। सबसे प्रधान मार्ग दक्षिणसे उत्तरकी ओरको गया है। मैं इसी मार्गसे बडे बाजार होता हुआ गया अन्तमें जो रास्ता दोनों रास्तोंसे परस्परमें अतिक्रम करके गया है। उस संगम स्थानमें जा पहुँचा। उस संगम स्थानमें सम मध्यस्थलमें नव्वे फुट ऊंचा एक मंदिर था। उसमें चतुर्भुजा देवीकी मूर्ति विराजमान थी। पाषाणमय चूडा-मंडप इत्यादि मेरी दृष्टिको आकर्षण करता था यद्यपि यह सब भाँतिसे तैयार तो हो गया था। किन्तु श्वेत ही रंगसे रंगा हुआ था, मैंने इसे आजकलका जानकर विचारा कि इसमें कोई प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्व नहीं पाया जायगा, इससे उसके देखनेकी इच्छा न करके सीधा चला आया इस स्थानसे उत्तरकी ओर तोरणद्वारतक मार्गके दोनों ओर एकभावसे बने हुए सौध और आलयकी श्रेणी दिखाई दी। यह मार्ग आध कोश था, इसकी शेष सीमामें जालिमसिंहद्वारा प्रतिष्ठित द्वारकानाथका मंदिर स्थापित है, यह मूर्ति प्राचीन नगरके टूटे स्थान खोदनेके समयमें निकली थी और यह कोटेके जालिमसिंहके पास भेजी गई। उन्होंने इसका नाम गोपालजी रखकर इस रमणीक और विस्तारित सरोवरके किनारे उसे मंदिरमें स्थापन किया"।

उत्तरांशमें जैनियोंके सोलह देवताओंके निवासका रमणीक मंदिर है, वह मानो इस समय भी असम्पूर्ण अवस्थामें है अंतमें मैं जान गया कि यह बहुत पुराना है और यहाँ एक सौ आठ जैनमंदिर थे, उन्हींमेंका एक यह भी है। प्राचीन नगरमें इन एकसौ आठ मंदिरोंमें बराबर एक साथ घंटा घड़ियाल बजते थे। इसी कारणसे इसका नाम झालरापाटन अर्थात् घण्टेका शहर हुआ है, झालरापाटन अर्थात् झालावंशीय जालिमसिंहके नामसे इस नगरका नाम हुआ है, इसीसे यह प्रचलित वाक्य सत्य नहीं है, मैं कई मुहूर्तके लिये प्रधान मजिस्ट्रेट साहब मनीरामके घर गया नगरीकी जो कुछ सुन्दरता देखी उसीके लिये उनके समीप सन्तोष प्रकाश कर तुम्हारे शासनसे नगरकी अधिकतासे श्रीवृद्धि होगी, यह आशा प्रकाश कर उनके समीपसे बिदा माँगी। साह मनीरामके घरके ठीक सामने एक स्तंभ देखा और झालरापाटनके निवासियोंको जो स्वयं शासनत्व प्राप्त हुआ था उस स्तंभपर उसका विस्तारसहित वर्णन खुदा हुआ देखा। उस सरल विवरणपूर्ण सत्वदानकी रीतिको पढकर हँसी आती थी"।

"कोटेके राजमन्त्री जालिमसिंहने राष्ट्रविप्लव और अराजकताके समयमें सुअवसर पाकर पार्श्ववर्ती अनेक देशोंके धनवान् निवासियोंको इस स्थानमें इस नगरमें वाणिज्य स्थानमें वास करनेके लिये बुलाया, उन्होंने उनकी सुखशांतिके लिये जो प्रतिज्ञा की, उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये उक्त स्वत्वको दान करके, उस स्तंभके ऊपर उसे खोद दिया, जिससे यह किसी समय भी नष्ट न हो सके इस कारण वह उनके चित्तपर दृढ़तापूर्वक भलीभांतिसे अंकित हो गया। उस स्वायत्वदानके साथ ही साथ नगरके चारो ओर दीवारें बनवाकर एक माननीय और सुयोग्य सेनापतिके अधीनमें एक सेनाको भी उस

स्थानपर रख दिया। उसने कुएँका खुदवाना प्राचीन ह्रदोंका बांध बांधना, और अपने खर्चेसे यहांके सब जाति और सब वर्णोंके प्राचीन देवालयोंका संस्कार करा दिया। और जिससे सभी जने यहाँ स्थाईरूपसे निवास कर सकें इसलिये आवासादिके बनानेके निमित्त प्रत्येकके खर्चेका आधा खर्चा अपने यहाँसे अग्रिम दे दिया। इस प्रकारसे सबको यहाँ निवास कराकर उन्होंने स्थाई शासनका भार तथा आभ्यन्तरी शांतिरक्षाका भार यहांके निवासियोंके ही हाथमें सौंप दिया।

पंचायत समाजने उस शासनके भारको पाकर कार्य किया। विचारादि कार्य करके यहाँके निवासियोंसे जो कुछ भी दंडमें धन मिलता है, उसको और किसी कार्यमें खर्च न करके केवल द्वारकानाथजीकी सेवामें लगाना होता है"।

"यहाँपर यह भी अवश्य कहना होगा कि यहांके प्रधान मजिष्ट्रेट मनीरामने स्वयं वैष्णव होकर यहाँके वैष्णवोंका विचारकार्य जिस भांति निर्वाह किया था। उसी भांति यहाँके ओसवाल जातीय जैनधर्मावलम्बी निवासियोंके विचारकार्यको करनेके लिये गुमानीराम एक जैन मजिष्ट्रेट नियुक्त हैं। यद्यपि दोनों जने पृथक् २ रूपसे विचारकार्य करते हैं परन्तु आवश्यकता होनेपर किसी असाधारण प्रश्नकी मीमांसाके लिये दोनो पंचोंको इकट्ठा होना होता है, दोनों जने अत्यन्त प्रीतिके साथ कार्य करते हैं और दोनों जनोंने ही अपने अपने पुत्रोंके नामसे उपनगर स्थापन किये हैं। जातीय प्रधान सभाके सभ्यगण बडी चतुरतासे सर्वसाधारण प्रजाके द्वारा बुलाये जाते हैं। पिछले बीश वर्षमें इस नगरीमें छः हजार उत्तम घर बने थे और कुछ कम पचीस हजार निवासी रहते थे, इस देशके सब ही पट्टे वंशगत थे, इस कारण साह मनीराम और गुमानीरामके न होनेपर उनके पुत्र ही मजिष्ट्रेटका कार्य करते हैं। परन्तु यदि वह पुत्र इनके समान दक्ष और न्यायविचारक न होते तो स्वायत्व शासन नाममात्रको रह जाता। जालिमसिंहके पक्षसे केवल सेनापति और वाणिज्य शुल्क संग्राहकने यहाँ निवास किया है"।

"नगरके सभी श्रेणीके मनुष्य और प्रतिनिधियोंने मेरे डेरोंमें आकर मुझसे साक्षात् किया। पहिले वैश्य, पीछे वैष्णव सम्प्रदायके पंडा एक २ करके सभीने अपना २ परिचय दिया। इसके पीछे उसी रीतिसे ओसवाल वणिक मंडलीने अपना परिचय दिया। मैंने सभीको अपने२ पदानुसार बैठनेके लिये कहा इसके पीछे व्यवसाइयोंके प्रतिनिधिने आकर मुझे भेंट दी। उसके पीछे शिल्पकार स्वर्णकार, काँस्यकार; हलवाई और अन्तमें क्षौरकार इत्यादि नगरकी सभी संप्रदायके प्रतिनिधियोंने आकर परिचय दिया। प्राचीन मंडलमें पाटलियोंके प्रतिनिधि भी आये। साह मनीरामने स्वयं बाहर खडे होकर शांतिकर रक्षा और उनको प्रणालीवद्ध कर दिया और उनके सहयोगी गुमानीरामने परिचय देनेका कार्य किया। स्वर्णकार सम्प्रदायके प्रतिनिधिने अपनी सम्प्रदायके नामसे एक रमणीय चाँदीका पात्र उपहारमें दिया। उसका शिल्पकार्य अत्यन्त चमत्कारक था। प्रतिनिधि जिस प्रकार परिचय क्रमसे आये थे, उसी भांति पर्यायक्रमसे विदा होकर बाहर जा राजमार्गमें भूरि भूरि, जयका डंका बजाते हुए और पताका उडाते हुए नगरको गये"।

उत्तर मालवेमें एक झालरापाटन ही वाणिज्यका प्रधान स्थान है। इन्दौरसे इस स्थानतक मध्यस्थके सभी देशोंमें वाणिज्य कार्य होता है।

"हम आधुनिक नगर झालरापाटनके सम्बन्धमें बहुत कुछ कह आये हैं। इस समय झालरापाटन वा घंटाशहरके सम्बन्धमें जो चन्द्रावती नामसे प्रसिद्ध है और जिस नगरमें होकर चन्द्रभागा नदी बही है उस प्राचीन चन्द्रावतीके सम्बन्धमें इस समयमें कुछ कहनेकी इच्छा करता हूँ। ऐसा सुना जाता है कि राजा हूनने इस चंद्रावती नगरीकी प्रतिष्ठा की थी। और यह भी विख्यात है कि मालवेके प्रमार वंशीय राजा चंद्रसेनकी एक कन्या चंद्रावती तीर्थयात्रा करनेको गई थी, यात्राके समय उसके इसी स्थानपर एक कन्या उत्पन्न हुई, उन्होंने ही इस नगरकी प्रतिष्ठा की है और ऐसा भी सुननेमें आया है, प्राचीन निकृष्ट और जातिका एक जस्सू लकडहारा जिस समय वनसे लकडी काटकर ला रहा था। उस समय रास्तेमें पारस(पत्थर)के ऊपर उसकी कुल्हाडी गिर पडी, गिरते ही वह सुवर्णकी हो गई। उस मनुष्यने स्वर्णराशिकी सहायतासे इस चंद्रावती नगरीकी प्रतिष्ठा की और जस्सू ओरका तलाव नामका एक बडा सरोवर खुदवा दिया। वही इस चंद्रावती नगरीका प्रातिष्ठाता हुआ, कोई कहते हैं कि वनवासके समय पांच पांडवोंमेंसे भीमने इसकी प्रतिष्ठा की, एक दैत्यने इसमें विघ्न किया, भीमने उसे बाणसे मारा; वह भागा जहाँ बाण लगा वहाँसे चन्द्रभागा निकली। हमारा यह विचार है कि मालवेके राजा उदयादित्यके उस प्रवाद वाक्यको उस लकडहारेने परिणत कर दिया है, यही नहीं कि उसी राजाके नामकी खुदी हुई लिपि यहाँ दिखाई देती है। मध्य भारतवर्षके प्रत्येक प्रधान२नगरोंमें ही उनके नामकी खुदी हुई लिपियां पाई जाती हैं। विक्रमाजीतके संवत्से १३ सौ वर्षतक इस वंशने घोर पराक्रमके साथ इस देशमें राज्य किया था"।

"नदीके दोनों ओर बहुतसे प्राचीन मंदिर टूटे फूटे पडे हैं। नदीके किनारेतक बराबर घाट और सीढियाँ बनी हुई हैं वहाँ बहुतसे देव देवी दैत्य और दानवोंकी बहुतसी मूर्ति पडी हुई हैं; इनमें बहुतसे लिंग मट्टीकी वेदीके ऊपर स्थित हैं और सबलकार अलस गोस्वामी उस वेदीके नीचे बैठकर धूपमें अपने शरीरको सुखा रहे। मैंने विचारा कि यदि इन मूर्तियोंको मै उदयपुर भेज दूँ तो अच्छा होगा, यह विचार कर मैंने अनन्तशय्या शायित नारायण, एक पार्वती, एक त्रिमूर्ति तथा और भी बहुत सी मूर्तियोंको गाडीमें रखकर उदयपुरको भेज दिया। वह सब एक वट वृक्षकी जडमें पडी थीं। उसी स्थानपर गणेशजीकी एक बडी सुन्दर मूर्ति पडी हुई थी किन्तु मै उस मूर्तिको किसी प्रकार भी न उठा सका। तब गोस्वामी मुसकाये"।

"चन्द्रावतीके एक सौ अट्ठासी देवमन्दिर प्रायःसभी विध्वंस हो गये हैं। केवल दो तीन मंदिर आजतक उत्तम अवस्थामें हैं वह प्राचीन कालके सौन्दर्यकी पराकाष्ठा दिखा रहे हैं। मंदिरोंका शिल्पकार्य अत्यन्त रमणीक है"।

"और सागरके बांधके निकट जैनपासकोंके निसिया नामक बहुतसे समाधि चिह्न विराजमान हैं। एकमें लिखा है कि ३ माघ संवत् १०६६ इस दिन आचार्य

श्रीमन्यदेवके चेले श्रीमन्तदेवने इस संसारको छोडा। पिछली समाधिकी तारीख ११८० संवत् लिखी है तथा वह देवेन्द्र आचार्यकी समाधि है। इस प्रकारसे अनेक समाधियोंके स्तंभ देखे परन्तु उनमें कोई ऐतिहासिक ज्ञातव्य विवरण नहीं पाया।" ऊपरकी समाधिके पास एक सन्दूक बना हुआ है, वह ऐसा है जैसे कोई पुस्तक देखता है, एक पुस्तक और एक धोती आचार्यके सम्मुख धरी है जैन छतरियोंका ऐसा ही चिह्न होता है एक और कुमार देवकी छतरी है इन्होंने १२८९ में इस असार संसारको त्याग किया था।

हमारा घासी दो मंदिरोंका मानचित्र ले रहा है, इनमेंके एक मंदिरमें अबतक सिंगार चोरी विद्यमान है; इनमें वह शिल्प है जो यूरुप निवासी भी तैयार नहीं कर सकते प्रत्येकमें एक सादा मंदिर है जो बीस फुट लम्बा चौडा है, उसके आगे सभा मंदिर है जिसे जगमोहन कहते हैं स्तंभोंपर सबमें नकासी है, द्वार भी प्रशंसाके योग्य है उसका शिल्प भी एक मुख्य प्रकारका है उसके (गिलवर्ग) बहुत ही श्रेष्ठ हैं, हमको दुःख है यूरूपवालोंने इस पूरे शिल्पका कोई खाका तैयार नहीं किया, नहीं वह इसमें और योग्यता प्रगट कर सकते और इस भवानी भूमिका यह नाम बदल देते। जबतक हमारा चित्रकार चित्र लेता रहा हमने पण्डितोंको और भी खोजके लिये भेजा यहाँ सहस्रों मूर्तियां हैं कितनी मूर्तियें दीवारोंमें लगा दी गई हैं पर उनकी खोज निरर्थक नहीं हुई.

सबसे पुरानी खोदित लिपि संवत् ७४८ सन् ६९२ ई० की है जिसमें राजा दुर्गा अंगलका नाम है। यह बेल बूँटेदार अक्षरोंमें लिखी है, उसमें वह नियम जो पांडु अर्जुनके सम्बन्धमें है लिखा है कि यहाँ उसने एक वाराहको मारा जहाँ उसका रुधिर गिरा था वहां एक आकृति प्रगट हुई। कारण कि यह वाराह एक वरोदा दैत्य था। उस आकृतिका वंश खेतरी कहा है या कृष्णवंश खेतरी उसी वंशमें था। जिसके पुत्रतक एक था किससे उसकी उपमा दें जिसे समस्त भूमंडलका फल प्राप्त था। उसने अपने सब शत्रुओंपर विजय पाई थी। इसका एक पुत्र कयाक नामवाला था। यह पृथ्वीको उठानेवाले देवताके समान बुद्धिमानीमें महादेवके समान था। उसके नामसे शत्रुओंके बालक छिप जाते थे। वह बुद्धका अवतार विदित होता था और जैसे चन्द्रमासे सागर बढता है इस प्रकार उससे हमारी बुद्धि बढती है जब उसकी दृष्टि हमारी योग्यतापर पडती है उसकी दृष्टिमें अमृत है चैत्रसे चैत्रतक वर्षभर उसके यहाँ हवन होता रहता है। इन्द्र उसके यहाँ कृपादृष्टि रखता है उसकी सरलता संसारमें छा गई है। इसके शत्रुओंके चढनेके हाथियोंके दाँतोंमें जो प्रकाश था वह जाता रहा और जो आगे बढनेको हाथ उठाता था वह स्तंभित हो जाता था। भूमिमें कोई स्थान ऐसा न था जहाँ उसकी आज्ञाका प्रचार न हो इस प्रकारके श्री कयाकजी थे। जब वह दूसरोंके नगरोंमें जाते तो शत्रुओंकी स्त्रियोंके मनोंसे प्रसन्नता दूर हो जाती थी, उसकी सब इच्छाएं पूर्ण हों।

संवत् ७४८ जेष्ठ शुदी पूर्णमासीको यह लिपि इस मंदिरमें बनेरा घाट गणेश्वर मंडलवालेने जो हरगुप्तका पुत्र है लगाई और यह लेख महाराज दुर्गा अंगल राजाके निमित्त हुई, उनको हमारा प्रणाम पहुँचै। ऐसा कोई मस्तक नहीं जो देवता गुरु और स्त्रीके सामने नहीं झुकता यह लिपि ओलिक शिल्पकारने खोदी है।

हमको इस खेतरी वंशपर यह भी अनुमान होता है कि यह वंश बडे हिन्दू वंशसे हैं, जो उत्तरसे आये थे और वाराह नाम इन्दोसीदियनका भी है; इतिहास जैसलमेरमें कई जगह आया है कि जिस रयासतके आरंभ इतिहासमें पद्भट्टीके तक्षक और क्याकसे युद्धका वर्णन है तक्षक और क्याक तातारी नाम है, तक्षक सर्प क्याक नाम आकाशका है अर्थात् पूर्वमें यहाँके निवासी सर्पपूजक थे; इसीसे इस जातिका नाम तक्षक हुआ। वैसे ही इनके अक्षर है; जो पश्चिमी भारतमें पाये जाते हैं, यदि हम इस विषयको राजा हूनके जो भद्रावतीवाले और अंगदसी हैं जिन्होंने राजा चित्तौरकी सेवा की थी। प्रविष्ट करें तो हमको स्पष्ट प्रतीत होगा कि यह स्मारक सिथिर और तातार राजाका है। जो राजा जैतसालपुरवालेके सहित हिन्दू जनोंमें सम्मिलित हुए थे।

एक लिपि जैन मंदिरसे संवत् ११०३ ज्येष्ठ तृतीयाको मिली पर इसमें केवल एक दर्शक यात्रीका नाम है।

मुकाम नरायनपुरा १३ दिसम्बर ग्यारह मील-सवेरे ही यहाँसे चले; यहाँ एक गंदौर स्थान है, पहिले यह घाटीरावकी जागीर थी, आधकोश आगे अंतरीका मार्ग था इस घाटीसे हम उत्तरकी ओर चल रहे थे और उत्तर पश्चिमकी ओर गागरौन शहर था, हमारी इच्छा इसके देखनेकी बहुत थी, समय थोडा था इससे हम इसको न देख सके, यह खीची वंशकी राजधानी है, हम उसी मार्गसे चले जिसपर अलाउद्दीन गौरी होकर गया था जब उसने अचलदासपर आक्रमण किया। यह घाटी तीन मील चौडी है, यहाँका दृश्य देखने योग्य है, मोर तितर मुर्गे शब्द कर रहे हैं। मानों सूर्यके निकलनेकी प्रसन्नता प्रगट कर रहे हैं। इस घाटीमें नायब जालिमसिंहने अपनी छावनी डाली है और तीस वर्षतक वह यहाँ रहा। इस घाटीने अब शहरियतमें अपना स्वरूप बदला है। बडे २ मकान बन गये हैं चहारदीवारी बनानेका प्रबन्ध हो रहा है पर उसकी तैयारीतक उनके जीवित रहनेकी आशा नहीं है। यह स्थान अमजोरके किनारे है जिसको नायबने खूब पसंद किया है, झालरा पाटनके मार्गके मध्यमें हैं, कुछ ही दूरपर पिंडारोंकी छावनी है जहाँ करीमखाँके पुत्रादि रहते हैं जो उस पिंडारीदलके अधिपति थे यहाँ एक ईदगाह भी बनाई जाती है कि यहाँके क्रूरकर्मा लोग भी जो जघन्यकर्ममें तत्पर हैं पाँच समयकी नमाज पढें और कदाचित् उनके चरित्र सुधरैं।

जबतक नागरोनके समीप न पहुँचो तबतक शहर और किला मिला हुआ सा दीखता है, पर यहाँ ऊपर चढ़नेसे वह पृथक् दृष्टिगोचर होता है, जलके प्रवाहसे ऊंचाई तक पहाड कट गया है और पर्वतकी चढाई ऐसी क्रमानुसार है कि उसको देखकर हमको आश्चर्य हुआ। हमने उत्तरकी ओर निगाह की, काली और सिन्धु किले और शहरके उत्तरकी ओर टकराती दीखी हमारे शहरके निकट होते ही तोपोंकी सलामी हुई शहरके लोग हमारी मुलाकातको आये, किलेका अधिपति हमको साथ ले गया, अलाउद्दीन खूनी और जानवरने पांचसौ वर्ष हुए कि इस स्थानको खीची और अचलूसे ले लिया था, नदीको गो रुधिरसे अपवित्र कर दिया था, हम पर्वतके मार्गसे फिर चले

फिर अंतरीघाटीमें उतरे और ठीक पश्चिमकी ओर होकर नरायनपुर पहुँचे, यह घाटी चारसौसे छः सौ गज तक चौडी है, यहाँका दृश्य सुहावना है, नायबने शिकारके निमित्त यहाँ खंदक किये हैं, पर्वत काटे हैं, जिनपर हिरन वा बनैले शूकर नहीं जा सकते, हम कई छावनियोंमें गये जो पर्वतमें हैं, यहाँ नायब अच्छी सेना इकट्ठी कर सकता है, इनमें कुएँ और सरोवर भी विद्यमान हैं, जिनको पौ कहते हैं ।

स्थानमुकन्दरा १४ दिसम्बर १० मील—हम प्रभात ही चले घाटीपर एक ऊजड किला देखा इसकी ऊंचाई बहुत है, मालवेके सब मैदान यहाँसे दीखते हैं । खीची महाराजके यहाँ चिह्न हैं जब उन्होंने यवनोंपर आक्रमण किया था । यहाँ बहुतसी मृतकोंकी छतरियाँ हैं । मंदिर भी शिव पार्वतीके हैं । एक लिपि हमको मिली जिसमें महाराजका नाम नहीं है वह लिपि यह है कि विष्णुकी स्थापनाके समय चार पीढी विद्यमान थीं ।

संवत् १६५७ शाके १५२२ सौम्य संवत्सर दक्षिणायन शरदृतु आसौज कृष्ण रविवार दिनमान ३६ घडी इस समय चौहान वंश महाराज श्रीरावत नृसिंहदेवने अपने पुत्र श्रीरावतमहाराज और उनके पुत्र श्रीचन्द्रसेन तथा उनके पुत्र कल्याणदासने यहाँ शिवालय बनाया । उनको शुभ हो । मुहरा जैसरमन कम्मानें लिपि खोदी महेशके पुत्र कृष्णगुरुकी उपस्थितिमें लिपि बनाई ।

हम देशके निमित्त प्राण देनेवाले वीरोंका वर्णन न करके केवल एक पुरुषका वृत्तान्त यहाँ लिखते हैं । अर्थात् गुमानसिंह सामन्त हाढाका वर्णन करते हैं । वह उस समयका है जब दुर्जनशाल कोटेका शासन करते थे और उस समय जौसिंहगागरोनी-वाला एक राठौर राजपूत फौजदार था इस फौजदारके कारण गुमानसिंह इस घाटीके अधिकारकी प्रतिष्ठासे व्याकुल होगया था । उसकी जागीर भी छीन ली गई थी । वह राजदरबारसे लौटकर घर आ रहा था । उसका जी बहुत खट्टा हो गया था । मार्गमें वह उस फौजदार (सेनापति) से जो अपने सेवकों सहित आ रहा था मिला । रात अंधेरी थी एक मशालची उसके आगे था । गुमानसिंहने मशालचीको दे मारा और अपनी फौलादकी तलवारसे राठौरको पालकीमें ही समाप्त कर दिया और वहाँसे द्वारपर आकर कहा कि रावसाहबका हुक्म है कि जबतक वह लौट कर न आवें उस समयतक कोई उस मार्गसे न जाय । यह कहकर जब वह अपने इलाकेमें पहुँचा तो अपने बाल बच्चे और सब सामग्री लेकर उदयपुर चला गया और राणाकी शरण हुआ । रानाने उसको कुछ देश उसके पोषणके निमित्त दिया । गुमानसिंह उस समयतक उदयपुरमें रहा जब कि ईश्वरीसिंह जैपुरेश्वरने कोटेपर आक्रमण किया । उस समय उसने कोटेकी रक्षाके लिये रानासे आज्ञा माँगी और उदयपुरसे रवाना होकर पठारके मार्गसे चला । पर कोटा चारों ओरसे घिरा था । इससे उसने विचारा या तो कोटे पहुँचूं या यहीं प्राण दे दूँ यह विचार कर उसने नगाडेपर चोट लगानेकी आज्ञा दी और शत्रुसेनाके बीच होकर चला । जैपुरनरेशने कहा ऐसा कौन बली है जो हमारे डेरेके समीप नगाडेपर चोब देता

हुआ जा रहा है। समाचार मिला कि रावत घाटीवाला है, उदयपुरसे आ रहा है। नरेशने पितासे सुना था कि इस रावतने बिना किसी शस्त्रके सिंहको मार डाला था इसने नरेशने इसके साथ साक्षात् करना चाहा। हाडापर समाचार पहुँचा तब उससे कहा मैं अपने साथियों सहित मिल सकता हूँ। मिलनेपर जैपुरनरेशने बडा सत्कार किया और कहा यदि तुम हमारे साथ रहो तौ जैयपुरमें एक बडी जागीर तुमको दी जायगी और राजाके फुफा ईश्वरीसिंहने कहा उसका भाग्य उसको कोटेमें लिये जाता है और कोटा इतने समयमें ले लिया जायगा, जितने कालमें कोई पान खाता है यह सुनकर गुमानसिंहने कहा महाराज मेरा जुहार लें। बीश सहस्र हाडा वंशियोंके शिर कोटेके साथ है। राजाने आज्ञा दी कि कोई इनसे मोरचेपर या सेनामें कुछ न कहे। जब रावत नदीपर पहुँचे तब ऊँचे स्वरसे कहा कि रावत घाटीका एक नाव चाहता है। वह अपने राजाके पास जायगा। जब वह राजाके समीप पहुँचा तो उसने देखा कि राजा एक दीवारकी छायामें बैठे हुए अपनी सेनाकी वीरता बढा रहे हैं। इसी समय समाचार मिला कि एक स्थानकी दीवार टूट गई है। उसेने राजाको इतना भी समय न दिया कि स्वामी उसके धर्मकी प्रशंसा करता। वह प्रणाम करके अपने साथियों-सहित उस टूटे स्थानपर गया और वहाँ जाकर अपनी लोहेकी सांग गाड दी। पहिले हाडा रावत ऐसे वीर थे अब उनके वंशधर बहुत गरीब है। उनकी भूमि छिन गई है और बडी कठिनाईसे अब उनको भोजन मिलता है।

हम इस घाटीसे जो राजपूतोंके रुधिरसे तर रहती थी आगे बढे और दर्रे स्थानमें पहुँचे; दर्रेके बाहर नायबकी स्थिति थी। पर वहाँ हमको यह समाचार मिला कि यहाँसे थोडी दूर एक भीमका चौरा नामक स्थान ऊजड पडा है उसमें शिल्पकारी बडी कौशल-से की गई है, जैसी कहीं नहीं है, उसमें भारतीय और मिसर देशीय दोनों प्रकारकी बनावटें है, कहा जाता है कि राजा कोटाने इसका सब असबाब अपने रंगमहलमें ले लिया है। जो उसने एक भीलनी वेश्याके लिये बनवाया था यहाँके स्तंभ अद्भुत है जो चौराके समीप जहाँ पाँडु भीमने अपना विवाह किया था दो स्तम्भ हैं उनसे किसी स्थानका चित्र विदित नहीं होता कि केवल स्तम्भ ही स्थित हैं। उनके शिरोंपर मट्टी और घास उत्पन्न हो गई है और समीपमें छतरियां दृष्टिगोचर होती हैं और जो कि यह मार्ग दक्खिन और उत्तरी भारतका था इससे यह विख्यात स्थान होगा और निश्चय यहाँ कोई नगर बस रहा होगा। यहाँ हाडावंशके बहुत चिह्न पाये जाते हैं। जब नायबने अपना एक स्तंभ बनाया जिसमें उसने अपनी कार्यवाहीसे पृथक् रहना स्वीकार किया तो भी उसको कुछ नियम ऐसे मिले जिससे उसे भागना ही पडा।

उन नियमोंकी हम एक लिपि यहां प्रगट करते हैं जो मुकन्दरासे हमको मिली है और जो भीतरी राज्यमें विख्यात है।

महाराज महारावजी किशोरसिंह आज्ञा देते हैं महाजन व्यापारी किसान व मुकन्दरामें रहनेवाली दूसरी जातियोंके प्रति–

इस समय विश्वास रक्खो महाजनी व्यापार बटाई ऋणका लेना तथा खेती करो और अच्छी दशासे रहो। कारण कि सभी दंड सरकारने क्षमा कर दिये अपराधके अनुसार दंड दिया जायगा, सब कार्यकर्ता विश्वासी रहैंगे पटैल पटवारी रात्रिको पहरा-देनेवाले चौकीदार मुसद्दी सुसेवाका पुरस्कार पावैंगे, अपराधी होनेपर दंड पावैंगे, व्यापारियोंको सताने वा उनसे रिश्वत लेनेकी कार्यवाही न होगी. इसके माननेके निमित्त उस वस्तुकी शपथ है, जो हिन्दू मुसलमानोंमें पवित्र समझी जाती है यह आज्ञा महा-राजके श्री मुखकी है और नानाजी जालिमसिंह और उनके पुत्र माधोसिंहकी साक्षी है।

मिती १० आसौज दिन चन्द्रवार संवत् १८७७।

कुछ दिन रहकर हम कोटेको पंचपहाड और आनन्दपुरके मार्गसे आये, यह दोनों बडे नगर उक्त नदीके किनारे पर बसे हैं।

माधोसिंह छः तोपोंके साथ दो मीलतक हमारे साथ आया और हमारे पुराने बागके स्थानतक हमारे साथ रहा। यह शहरसे पूर्वकी ओर है हमने यहां हैजेके दूर होनेकी कुछ विधि निकाली। हमने मुरगावी और हिरनोंका शिकार यहां किया। कभी हम नायबके चीतोंसे शिकार करते थे। एक वार हम अखिलगढके किलेके समीप शिकारको गये, यह दक्खिनकी ओर छः मील है। यहाँके पर्वत तीनसौ फुट ऊंचे हैं यहां हम लकडियोंका बेडा बनाकर उतरे नायबके शिकारियोंके चिल्लानेसे एक वृद्ध रीछ निकला, कप्तानसाहब और डाक्टर साहबने इसपर गोली चलाई मगर दोनों गोली खाली गईं, वह रीछ क्रोधकर मेरे ऊपर टूट पडा, जब दश कदमका फासला रहा तब मैंने उसपर गोली चलाई, जो उसके आगेके हाथमें लगी जिससे वह गिर पडा और फिर उठ कर खडा हुआ और मुँह खोल कर मेरी ओरको झपटा हमारे एक साथीने उसके एक सांग मारी और हमें बचा लिया। गोली और सांग खाकर वह एक गुफामें भाग गया, फिर हम शेष दिनतक अखिलगढमें रहे, यहां बहुत पत्थर हैं अनुमान होता है कि यह भीलोंका किला होगा. यहां एक स्थान जापुरे[1] महा-देवका है, एक पानीका नाला है जो चम्बलमें गिरता है यहां चम्बलके किनारे ६०० फुटसे अधिक ऊंचे हैं, जैसे कोटेसे भिसरोरतकके स्थान प्रशंसाके योग्य हैं भारतमें ऐसे स्थान बहुत कम हैं।

हमने खोदित लिपियोंकी यहां बहुत खोज की परन्तु वे ऐसे अक्षरोंमें मिलीं जिन को अब कोई नहीं पढ सकता। राजा जितकी एक लिपिका वर्णन प्रथम खंडमें लिखा है।

चतुर्दश अध्याय १४.

बिजौलीका वृत्तांत-माई नाल वा महानाल-खुदी हुई लिपि-हाडावंशके विवरण पूर्ण खुदी हुई लिपि-बामोदा-आल्हहाडाका विध्वस्त किला और महल-अघेरी कुटी-एक प्रवाद कहानी।

(१) कोई गयापुर कोई जैपुर महादेव भी कहते हैं।

कई स्थानोंमें घूमनेके पीछे महात्मा टाड साहब कई दिनतक कोटेमें रहकर अन्तमें उदयपुर राजधानीकी ओर गये। रास्तेमें बूंदीमें होकर गये। देखा कि यहाँका शासनकार्य भलीभांतिसे हो रहा है। फिर माईनाल नामक प्रसिद्ध स्थानके दर्शन करनेके लिये पाठार देशको गये। इसमें होते हुए दश मील उत्तरको बिजौली नामक स्थानमें पहुँचे। बिजौली मेवाडका एक प्रधान देश है। प्रमार जाति रावकी उपाधि धारण करनेवाले एक सामन्त बिजौलीके अधीश्वर हैं। यह सामन्त वंश पूर्वकालमें बियानाके समीप जगनेर देशके अधीश्वर थे। पीछे अमरसिंहके शासनसमयमें प्रायः दो सौ वर्ष बीतनेपर इस सामन्त वंशने कुटुम्ब सहित मोल लिये हुए सेवकोंके साथ यहां आकर निवास किया। राव राणाने अशोककी एक कन्याके साथ विवाह किया था। उन्होंने ही उन राव अशोकको वार्षिक पांच लाख रुपयेकी आमदनीवाले इस बिजौली देशका समस्त अधिकार दे दिया था"।

"बिजौलीया विजयावाली-ध्वंसस्तूपके ऊपर संस्थापित है, यहांकी अगणित प्राचीन खोदी हुई लिपिमें इस देशके प्राचीन दो नाम, अहिचपुर या मोरकरो यह खुदे हुए दिखाई दिये, उन दोनों नामोंमें पहलेके बदलेमें दूसरा ही यहांका प्रकृत प्राचीन नाम जाना जाता है। मेवाडके इस प्राचीन सीमान्त देशके साथ चौहानोंके अनेक प्राचीन प्रवाद इतिहासमें लिखे हुए हैं, इन देशोंके पहिले अजमेर राजवंशके अधीनमें था, ऐसा अनुमान करनेके अनेक कारण भी विद्यमान हैं, कारण कि उस राजवंशके वीसलदेव, सोमेश्वर, पृथ्वीराज इत्यादि नामकी बहुतसी लिपियां यहाँ विराजमान है। मोर कुरोंके अरन्राज तथा उनके पुत्र वहिरराज और कुन्तपालकी वीरताका प्रकाश करनेवाले बहुतसे स्मृति चिंह वहाँ विराजमान हैं। यह दिल्ली और अजमेरके बादशाह पृथ्वीराजके समकालीन थे।"

एक खोदित लिपिमें चीतौडका ऐसा युद्ध लिखा है कि इसके द्वारा यह अन्तर करना कठिन हो जाता है कि यह गहिलोत वंश वा चौहानोंका युद्ध है, इसकी आरम्भ प्रणाली शाकम्भरी मातासे है, जो वंश साकमदुर्ग और पर्वतकी अधिष्ठात्री देवी है उसमें वत्सगोत्र चौहानका वर्णन करके श्रीमत् बाप्पा राजविन्ध्या त्रिवेनी या बापा राजा विन्ध्याचलका वर्णन किया है—जो राणा मेवाडके वंशका प्रतिष्ठाता था परन्तु उसके आगे जो नामावली है वह उसके वंशसे नहीं मिल सकती इससे हम विचार कहते है कि उस समय चौहान और परमार चित्तौरके अधीन थे. विशेष इसपर लिखना हम उचित नहीं समझते केवल इतना लिखना ही उचित जानते हैं कि यह वर्णन कुन्तपाल वनैडा अरन्राजका है जिसने जाबलापुरको जीतकर नष्ट भ्रष्ट किया था, जिसके युद्धका वर्णन देहलीद्वारके वल्लभी द्वारपर खुदा हुआ है। इसके बडे भाईका पुत्र पृथ्वीराज था उसने सुवर्णका ढेर एकत्र करके उसको दान किया और मोरकरोमें पार्श्वनाथका मंदिर बनवाया और संवत्सवारमें जो उसे राजाई योग्यता प्राप्त हुई इससे उसका नाम संवत्स वार विख्यात हुआ। उसके स्मरणार्थ यह मंदिर बनाया गया और रवाके किनारेका रेवाना ग्राम इसके व्ययके निमित्त निर्धारण किया गया। संवत् १२२६।

इससे विदित होता है कि चौहानोंने बलपूर्वक तौर वंशसे देहली ले ली थी और हमें यह भी साबित होता है कि जो विख्यात कविचन्दने लिखा है कि–जो लिपिस्थान असि (हांसी) और दिल्लीके स्तम्भोंपर हैं वह इसीके समयमें खोदी गई हैं परन्तु जब बल्लभी द्वारकी ओर जो तिलोंनोंकी पुरातन राजधानी सौराष्ट्रमें थी, विचार किया जाय तो अद्भुत बात विदित होती है और उस समयकी वह दशा विदित होती है कि जब पृथ्वीराजने अपने पिता सोमेश्वरके वधका बदला लिया जो राजा सौराष्ट्र और गुजरातके युद्धमें मारा गया था, कुन्तपालने इस अवसरको अच्छा जाना और दिल्लीकी जीतमें अपना भाग प्राप्त करके उसने गुजरातकी जीत भोलाभीमसे की।

हम यहां यह भी कहते हैं कि पुरातन मोरकरो नाम विजौलीका था और दूसरे यह कि वहां राजा चौहान जैनमतावलम्बी था, चन्दकविके कथनमें यह कोई मुख्य बात न थी, कारण कि उसके लेखसे यह बात प्रगट होती है कि उसने अपने पुत्र सारंगदेवको इस कारण अजमेरसे पृथक् कर दिया कि उसने बुद्धमत स्वीकार किया था।

"यहांकी खोदी हुई लिपिमें चित्तौरके राजवंशका शासन और वीरताका विवरण खुदा हुआ पाया गया। विजौलीका प्राचीन नाम जिसे मोरकुरो कहते हैं उसकी खोदी हुई लिपिको पढकर हमने जाना कि मोरकुरो वर्तमान विजौलीसे आधकोश पूर्वमें स्थापित था, वह इस समय एक बार ही विध्वंस हो गया है। नौचौकी नामक प्राचीन महलका एक अंश था, यहां पार्श्वनाथके पांच मंदिर थे, और तेरह जैन देवताओंके जैनमंदिर टूटे फूटे अबतक भी विद्यमान हैं। महल और मंदिरोंके बनानेकी रीति और कारुकार्य अत्यन्त ही रमणीक है। मन्दाकिनी नामकी एक छोटी नदी इसके बीचमें होकर निकली है! पार्श्वनाथके मंदिरके पास एक प्राचीन कुण्ड और दो बडे २ जलाशय है। नगरके पास ही महादेवजीके तीन मंदिर हैं और"–

"विजौली, वर्तमान महलोंके प्राचीन विध्वस्त मंदिरकी श्रेणीके उपकरणसे बनी हुई है। उन मंदिरोंके लिंग इस समय उखडे हुए एक साथ पडे हैं। हमने अनेक स्थानोंमें मूर्तियोंको इसी प्रकारसे पडे हुए देखा, इससे यह भलीभांतिसे जाना जाता है कि हिन्दू इन मूर्तियोंकी देवताओंमें गिनती नहीं करते हैं, वह इन्हें केवल देवताका चिह्नस्वरूप जानते हैं। लिंगकी पवित्रताके दूर होनेपर फिर उसे सामान्य पत्थरके समान मानते हैं। मैंने इस नगरके चारों ओर बहुतसे टूटे फूटे चिह्न देखे"।

स्थान दरौली जो चार मील दक्खिनकी ओर है वहाँ एक शिलालेख संवत् ९०० का है, पर वह कुछ कामका नहीं है और तिलसवा जो उससे भी दो मील दक्खिनको है, वहां चार मंदिर एक कुंड और एक तोरन है, पर वहां कोई शिलालेख नहीं है। जरौली वहांसे सात कोश है। उसमें सात मंदिर है। सब टूटे पडे है और भी टूटे फूटे किलेके चिह्न पाये जाते है। यहां और भी टूटे फूटे मन्दिर है जिनको वहांवाले अलाउद्दीन खूनी और औरंगजेबकी करतूत कहते है, यहाँवाले पहिले बादशाहको खूनी और दूसरेको कालयवन नामसे पुकारते है।

बिजौलीके सामन्तकी आय अब बहुत न्यून हो गई है । यदि उसकी जागीरको संभालां जाय तो ५००००रुपया वार्षिक आय हो सकती है पर वह कर नहीं सकते ।जब तक वह उसके चारों ओर बडी मूर्तियोंको जीवित न कर सकें । उसकी बेटी राजा अमरासे व्याही गई थी । उसके स्वामीकी जब मृत्यु हुई तो उसकी अवस्था सत्रह वर्षकी थी। परन्तु हजार समझानेसे भी वह सती हो गई,हमने बहुतसी युक्ति उसके पास कहाई,और कहा हम उसके इलाकेको विशेष कर देंगे पर उसने एक न माना और अपने स्वामीके पाप मिटानेमें दृढ रही । हम वहाँ दो तीन दिन रहकर शिलालेखोंकी खोजमें फिर चले ।

"माईनाल २१ वीं फरवरी-महानल शब्दके बिगडनेसे इस स्थानका नाम माइनाल हुआ है । पाठारके पश्चिम प्रान्तमें चार सौ फुट गहरे एक खातका नाम महानल है इस घाटीमें प्रवेश करना मृत्युके बराबर है । उसी महानलके किनारे प्राचीन मन्दिर और हर्म्य देखे गये । मंदिर और महलके एक अंशमें दिलीपति पृथ्वीराज और अन्य प्रान्तोंमें पृथ्वीराजके भगिनीपति चित्तौरके राणा समरसीका नाम खुदा हुआ है, समरसिंहने पृथा वाईका विवाह किया था । कविचन्दने उनके वलविक्रमकी कहानीको अपने महाकाव्यमें भली भांतिसे निवारण किया है" ।

उस स्थानपर जो बडा कुरो है वहाँ दोनों वंश आकर भारतके विषयकी बातचीत करते थे और अपने बालबच्चोंके सहित आनन्दसे रहते थे । यदि चन्द्रकवीश्वरका यह कहना सत्य हो कि यदि महाराजा पृथ्वीराज समरसी महाराणाके साथ यहाँ सम्मति करते तो यवनोंके हाथमें किसी प्रकार भी भारतका शासन न जाता, पर पृथ्वीराजकी बेपरवाई वीरता और सरगरमीने सबको डुबा दिया और उस युद्धमें समरसी तथा पृथ्वीराज दोनों ही निहत हुए, यह घग्गरके किनारेका घोर युद्ध था, कवीश्वरने इसको प्रलय कहा है, वास्तवमें भारतकी स्वाधीनताका यह प्रलय ही था, अब भी यह स्थान भयंकर है । प्रत्येक वस्तु यहाँकी उस बातको दिखाती थी, यहाँके वृक्ष भी मानों उस समयके वीरों अधिकारियोंका शोक करते हुए दृष्टिगोचर होते थे ।

हमने बहुतसी खोदी हुई लिपियां देखी, उनमें खुदी हुई हाडाजातिके वंशकी कहानीके बहुतसे तथ्य पाये जाते हैं, हमने इस स्थानपर केवल एक लिपिका अविकल अनुवाद प्रकाश किया है ।

कुलदेवी आशा पूर्णाकी कृपासे इस वंशके बहुतसे चौहान राजाओंने अपने प्रबल प्रतापसे पृथ्वीको शासन कर रणभूमिमें जय प्राप्त की थी, जिनके वंशमें मारैधन हुए, जिसने युद्धमें पूरी जय पाई । उसी वंशके हाडाजातीय कोलनको यश चन्द्रमाके समान निर्मल था । उनसे जयपाल उत्पन्न हुए, उन्होंने पूर्व जन्मके सुकृतिके फलसे इस

---

(१) यही रैनसीके पुत्र थे और यही केदारनाथ तीर्थमें १३ ५३संवत्में गये थे, हाडाजातिके इतिहासमें इसका वर्णन भलीभांतिसे किया गया है ।

(२) इसीको यगातमसे इतिहासमें वंगू कहा है, यह कोलनका पुत्र था जिसने माइनालको लिया था ।

राजवंशमें जन्म लेकर परमसुख शान्ति प्राप्त की। उनकी प्रजाने ईश्वरके समीप उनके अमर होनेकी प्रार्थना की उनके पुत्र देवराज महादाता थे और मनुष्य समाजकी सुख शान्तिकी वृद्धि करना ही उनका एकमात्र अभिप्राय था। उनके पुत्र हरराज देखनेमें प्रज्वलित अग्निके समान तीव्र तेजस्वी थे और उन्होंने अपने बाहुबलसे भूमीश्वरोंको परास्तकर यश और अतुल धन प्राप्त किया था "।

" उनसे वामोदाका अधिराज वंश उत्पन्न हुआ। देवराजसे ऋतुपाल उत्पन्न हुए उन्होंने अपने बाहुबलसे विद्रोहियोंको परास्त कर कपिलमुनिने जिस भांति सगरकी सन्तानको भस्मीभूत किया था, इन्होंने भी उसी प्रकारसे उनको परास्त किया।

इनके पुत्र कल्हन हुए। उनके पुत्र कुन्तल धर्मराजके समान थे, उनके छोटे भ्राताका नाम देहा था। कुंतलकी रानी राजल देवीके गर्भसे चन्द्रमाके समान महादेव नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ और रणभूमिमें सुमेरुके समान अटल और दानमें इन्द्रके कल्पपादपके समान था। उन्होंने अरातियोंके रुधिरसे रणभूमिमें घोडोंके खुरोंसे उठी हुई धूलिको कर्दमाक्त कर दिया था। इन्होंने रणभूमिमें अपनी लम्बी भुजामें तीक्ष्ण तलवार विपक्ष नेता उमशिाहके मस्तकपर उठाकर भेदपाटके अधिपतिके प्राणोंकी रक्षा की, चन्द्रमा जिस भांति राहुके कराल ग्राससे उद्धार पाता है कैथियाका इसी प्रकार उद्धार किया[3] बैल जिस प्रकार अपने पैरोंसे नाजको पीसता है महादेवजीने भी उसी प्रकारसे अपने पैरोंसे शत्रुओंकी सेनाको विध्वंस कर दिया और समुद्र मथनेके समान महादेवने इस समरके मथनेमें विजयरत्नको संग्रह कर कैथियाके अधिपतिको प्रदान किया। समस्त पृथ्वीमें उनके यशकी ध्वनि गुंजार उठी थी। उनके पुत्रका नाम दुर्जन था उसने अपना उपनाम जीवराज रक्खा। युवतसाल और कुंभकर्ण नाम उसके दो भाई थे।

इस महा अग्निमें भूमीश्वर महादेवने यह मंदिर निर्माण किया और उसको भली भांतिसे सजाकर इस खोदी हुई लिपिको सम्बद्ध किया। महादेवका यह महादेव स्थापित है, गंगा और सुमेरु जबतक हैं तबतक यह स्थिर रहै, और चीतौड़के निवासी ब्राह्मण धनेश्वरके द्वारा इसकी प्रतिष्ठा हुई थी "।

अनल नन्द इन्द्र चन्द[4]

"शिल्पविद्यामें सुशिक्षित 'वीरधवल 'शिलीने 'वैशाख मासकी सप्तमी तिथिको यह मंदिर बनाया।

---

(१) यह देव वंगूके पुत्र हैं, संवत् १३९८ बूँदीम थे।

(२) हरराज देवराजके बडे पुत्र थे और उन्होंने वामोदामें वास किया जिसे उसके पिताने दिया था जो पीछे बूँदीमें लगा। टाड साहब कहते हैं कि हरराजके बारह पुत्रोंमेंसे बडा पुत्र आलूहाडा हुआ यह वामोदाका अधिपति हुआ।

(३) कर्नल टाड साहबने कहा है कि ऐसा बोध होता है कि यह उमीशाह पठान बादशाह हुमायूँ होंगे। महानलके हाडा अधीश्वर महादेवके साथ युद्धके समयमें मेवाडके राणाके किसी प्रधान सेनापतिने इस कैथियासिंहका उद्धार किया था "। (४) सन् ११३९.

बेगू--माईनाल वा महालमें भ्रमण करनेके पीछे साधु टाड साहबने बेगू नामक स्थानमें जाकर लिखा है कि मैं पाठारके शिखरपर अत्यन्त ही प्रभातकालमें गया। परन्तु रास्तेमें बहुतसे वृक्षोंके होनेसे हम दोनों ओरके समतलक्षेत्रको न देख सके, अन्तमें जिस स्थानपर आल्हूहाडाका किला स्थापित था, वहां जा पहुंचे । परन्तु वामौदाका किला बिलकुल टूट गया था वरन् वहाँकी जमीन भी एकसार हो गई थी । महावीर आल्हूहाडाका यह किला और महल किस प्रकारकी आकृतिका बना हुआ था मैंने उसको विध्वंस अवस्थामें भी अनुमान कर लिया था यहाँ शिवजी, हनूमान और धर्मराजके तीन मंदिर है" ।

अँधियारी कोठरी--नामक एक गुप्त अंधकारमय कमरा है। ऐसा सुना जाता है कि आल्हूहाडा जिस समय मंडोरपतिके साथ युद्ध करनेके लिये गये थे उस समय अपने भँतीजेको इसीमें बंद कर गये थे। भूधर पार्श्वमें योगिनीमाताकी एक बडी भारी मूर्ति है। आल्हूहाडाके इस अभेद्य किलेको किसने विध्वंस किया था इसकी विशेष खोज करने-पर भी इसका पता न चला। शायद मेवाडके महाराणाने ही इसको विध्वंस किया हो। यहां एक जोगनी माताकी मूर्ति है। यह इस समय बेगू सामन्तके अधीनके देशके अन्त-र्भुक्त है। हमने यहां आल्हूहाडाके सम्बन्धका एक और वृत्तान्त जाना, पाठकोंको इस स्थानपर वह उपहारमें देते हैं ।

वामौदाके किलेके चौवीस किलेमेंसे एक किलेमें आल्हूहाडा और उसी जातिके लालजी एक पुरुष निवास करते थे उनके एक कन्या थी। लालजीने चित्तौरके राणाके साथ उस कन्याके विवाहका प्रस्ताव उपस्थित कर राजपूत रीतिके अनुसार राणाके समीप कन्याके नामका नारियल भेजा। परन्तु राणा उस प्रस्तावमें किसी प्रकार भी सम्मत न हुए, उन्होंने नारियलको लौटा दिया । लालजीके पुरोहित जो उस नारियलको लेकर गये थे वह आंतरी देशसे होते हुए आ रहे थे। इसी समयमें राणाके बडे पुत्रको मृगयासे लौटकर आते हुए देखा । उससे पुरोहितने सब वृत्तान्त कहा युवराज पुरोहितके मुखसे समस्त वृत्तान्त जानकर लालजीके सम्मानकी रक्षाके लिये स्वयं उस नारियलको ग्रहण कर विवाह करनेके लिये राजी हुए। उन्होंने पुरो-हितको बिदा करके कहा कि मैं शीघ्र ही विवाहके लिये आता हूँ । कुछ दिनके पीछे चित्तौडके युवराज अपने अनुचरों सहित राणासे साक्षात् करनेके लिये उपस्थित हुए। और पिताकी आज्ञानुसार एक कविके साथ विवाह करनेके लिये वामौदामें गये।

उक्त कविका नाम भीमसेन था, यह वाराणसीनिवासी थे । इस समय मेवाडके समस्त कवि मेवाडसे निकाल दिये गये थे। भीमसेन कच्छभुज देशमें जानेके समय राणाके पास भी गये । मेवाडके कवियोंके निकालनेके सम्बन्धमें यह कारण जाना गया है कि मेवाडके एक प्राचीन सरोवर बनानेके सम्बन्धमें एक परम रमणीय नेत्रोंको आनंद देनेवाला एक विग्रह आविष्कृत हुआ। यद्यपि वह मूर्ति अत्यन्त चमत्कारिक थी परन्तु हाथका भंगीभाव अत्यन्त विचित्र था; एक हाथ ऊपरको और एक नीचेको और

तीसरा सम्मुख दर्शकोंकी ओरको फैल रहा था । यह तीनों हाथ तीनों ओरको फैले हुए देखकर सभी विस्मित हुए,ऐसी मूर्ति पहिले कभी नहीं देखी थी, इस भांति तीन ओरको हाथ फैलानेका अर्थ क्या है, इसको कोई भी स्थिर न कर सका, राजाकी आज्ञासे देशके जितने कवि, चारण, भाट और वेदके जाननेवाले ब्राह्मण पंडित थे सभी बुलाये गये और उनसे इसका कारण बतानेके लिये कहा गया । परन्तु किसीने भी सन्तोषदायक उत्तर नहीं दिया । अन्तमें उक्त झारिजाके कवि भीमसेनने आकर इसकी मीमांसा कर दी । उन्होंने कहा कि ऊपरको जो हाथ फैला हुआ उंगली दिखा रहा है, उसका अर्थ यह है कि ऊपर अर्थात् स्वर्गमें एकमात्र इन्द्र है और नीचेको इस भावसे हाथ फैलाकर उंगली दिखा रहा है, इसका यह अर्थ है कि नीचे पातालके अधीश्वरको बता रहा है और सम्मुख राणाकी ओरको जो हाथ फैल रहा है, इसका अर्थ यह है कि इस संसारमें एकमात्र राणा ही संसारके अधीश्वर हैं । भीमसेनकी इस व्याख्यासे राणा हमीर अत्यन्त ही प्रसन्न हुआ और उनको अपने प्रधान कवि पदपर वरण किया । उस भीमसेनकी ही आज्ञासे निकाले हुए कवि मेवाडमें बुलाये गये । परन्तु भीमसेन राणाके अतिरिक्त और किसीसे किसी प्रकारका दान नहीं लेते थे । वह कविश्रेष्ठ भीमसेन चीतौडके युवराजके साथ विवाहसभामें गये । उनके जानेपर लालजीके किलेमें महा महोत्सवका अनुष्ठान हुआ । अनेक देशोंसे कविलोग आकर लालजीका जयगान करते थे । प्रचलित रीतिके अनुसार लालजीने कवियोंको बडे २ मूल्यवान् द्रव्य उपहारमें दिये, लालजीने भीमसेनको एक श्रेष्ठ घोडा मूल्यवान् पोशाक वस्त्र और एक तोडा रुपयोंका उपहारमें दिया । परन्तु भीमसेन किसी प्रकार भी लेनेको राजी न हुए, अन्तमें विशेष लोभके त्यागनेपर इतना बोले कि इन उपहार द्रव्योंको यहां रख जाओ । उन उपहारके द्रव्योंके लेनेको कुछ ही समय पीछे उन्होंने अपने मनको सैकडों बार धिक्कार दिया और तुरन्त ही अपनी तलवार निकाल कर प्राणघात किया । चित्तौडके प्रधान कवि मारे गये हैं, शीघ्र ही यह शब्द चारों ओर गुंजार उठा । इस समय युवराज विवाहके स्थानमें बैठे थे और वर कन्याकी गांठ बन्धनेका उपाय हो रहा था । युवराज उस कविकी आत्महत्याका समाचार सुनते ही आसनसे उठ खडे हुए और प्रतिहिंसा देनेके लिये तैयार हुए । युवराजको इस प्रकारसे विवाहका आसन छोडते हुए देखकर कन्याके पिता अत्यन्त दुःखित हुए । अन्तमें युवराज विवाह करनेमें असम्मत हो बामौदाके बाहर चले गये । कुछ ही समयके पीछे उन्होंने सेना और सामन्तोंके साथ आकर बामौदापर आक्रमण किया और वह अपना बदला लेकर चले गये । अन्तमें फाल्गुन मासमें अहेरके समय कन्याके पिता लालजी जातीय रीतिके अनुसार शूकरका शिकार करनेके लिये गये, उस समय चीतौडके युवराजने आकर दलसहित उनपर आक्रमण किया। दोनों जने परस्परमें भाले हाथमें लेकर भिडे भालोंके आघातसे दोनोंके ही प्राण गये । बामौदामें दोनोंकी चिता सजाई गई । एकमें युवराजका और दूसरीमें लालजीका शव स्थापित होकर चिता प्रज्वलित हुई युवराजके साथ लालजीकी वह कुमारी कन्या और लालजीके साथ उनकी स्त्रीने प्राण त्याग किए ।''

और इस अवसरमें वह यह नियम कर गई कि राना और राव किसी प्रकार भी अहेरके स्थानमें वसन्त ऋतुमें कभी एकत्र न हों । नहीं तो उसका परिणाम वध होगा हमने ऐसी दो घटना हाडाजातिके इतिहासमें लिखी हैं और चौथा पद पूर्ण करनेको मुकलका वर्णन किया है, जो कम्भूने कहा है ।

हाम् गु, कल माचा, लाला खतयारान ।
सोजा रतन संहारया, आमल अरसी रान ।

इस दोहेको पाठ करके आल्हहाडाके वंशधर कुछ अपने हृदयके दुःखका आवेग न्यून करते होंगे, जो दुःख वमौदाके उजाड और उसके चौविस किलेंके निकल जानेसे होता होगा जिनमें अब एकमें भी हाडाका नाम लेनेवाला नहीं है ।

हाडाजातिकी इस बातको हम उन चिट्ठियोंसे प्रमाणित कर सकते हैं जो पिछले अक्टूबरमें हमारे पास आई थीं, जब घटीरानीकी आज्ञाके अनुसार एक समूह उनके मंदिरपर उपस्थित हुआ कि जो उनकी आज्ञा हो वह काम किया जाय ।

बूँदी १८ अक्टूबर सन् १८२० का विज्ञापन—समाचार पत्रद्वारा सब रईसोंके पास आज्ञापत्रका प्रचार किया गया कि दशहरेपर सब रईस और जिमीदार राजधानीमें उपस्थित हों उनके आनेपर वरके ठाकुर जसजीने कहा कि वमौदाकी भवानीने मुझे एक आज्ञा दी है कि रानीकी भूमिमें आगेको खेती न करो और अपने घोडे पशु आदि बेच-कर उस द्रव्यके ६४ भेडे और ३२ बकरे खरीदकर माताजीके बलिके निमित्त भेज दो । ऐसा करनेसे वामौदा दूसरी बार हमारे अधिकारमें आ जायगा, यह समाचार फैलते ही बूँदी कोटेके बहुतसे पुरुष वहां उपस्थित हुए । ठाकुरवरने २०० मनुष्योंका भोजन श्रीमाताजीके प्रसादरूपमें तैयार कराया था पर वहाँ ५०० मनुष्य आ गये पर माताजीका यह प्रभाव हुआ कि उन्होंने भली प्रकार भोजन किया और फिर भी बच रहा लोगोंको विश्वास हो गया कि माताजीकी आज्ञा ठीक थी ।

यह वृत्तान्त हमको बूँदीसे मिला परन्तु नीचेकी घटनाका वर्णन हमारे सच्चे मित्र बालगोविन्दने मुझसे कहा, जो उस घटनाके समय वहाँ विद्यमान था । कार्तिकके पहले दिन माईनालमें कुछ दिन हुए एक बडा बलिदान हुआ, जोगनीमाताके निमित्त इकतीस भेडे और ५३ बकरोंकी बलि हुई पर तीन हाडा वीरोंने दो बकरोंपर बडे वेगसे अपनी तल-वारें मारीं, तथापि उनका बाल बांका न हुआ, यह देखकर सबको बडा आश्चर्य हुआ । वह बकरे यथेच्छ चरनेको छोड दिये गये और लोग उनको अमर कहने लगे ।

बालगोविन्दके इस कथनपर किसीने तर्क न की । ज्ञानजी उसके साथ था बात सत्य थी, पर इन पाँचसौ एकत्र हुए हाडा राजपूतोंके विषयमें यह विचार हुआ कि यह भवानीके वाक्यपर उपस्थित हुए और विश्वास कर रहे है, हमने राजाको इसकी सूचना भेजी कि वह यह प्रगट कर दे कि हमने वैसा ही किया है इससे यह प्रगट है कि उन वीरोंके हृदयपर यह बात शीघ्र ही कैसी प्रभाव डालनेवाली थी ।

हम यहाँसे फिर आगको चले हम वमौदाकी दिवारें देखना चाहते थे, हम पर्वतके नीचे फेरके मार्गसे चले और जोगिनी माताके ऊपर भी एक दृष्टि डाली और घाटीके मार्गसे थोडा चलकर बेगूके एक अच्छे बागमें ठहरे। यहांका रावत कालामेघका वंशधर हमसे मिलनेको आया, पर अबतक वह उस श्रेष्ठ कार्यवाहीसे अजान था जो उसके निमित्त होनेवाली थी, अर्थात् उसको उस आधे देशसे कुछ अधिक देश प्राप्त होगा, जो सन् १७९१ ई० मरहठे सेंधियाके अधिकारमें था।

पंचदश अध्याय १५.

बेगू-कर्नल टाड साहबका हाथी परसे गिरकर चोट खाना-वेगूके सामन्तकी सहानुभूतिके चिह्न-महाराष्ट्रोंको वेगूसे निकालनेका वृत्तांत-वेगूदेशको राणाके अधिकारमें करना--सामन्तोंको वेगूदेशको पुन: प्रदान--चित्तोड--अकबरका द्वीप--चित्तौड नगरका वर्णन--नगर भ्रमण--वाघ रावत सम्प्रदायकी सृष्टिका विवरण-खुदी हुई लिपि-उदयपुरसे लौटना-कर्नल टाडका स्वदेशमें जाना-उपसंहार।

कर्नल टाड साहबने २६ वीं फरवरीको लिखा है कि "तीन वर्षसे बेगूके सामन्त जो भूस्वत्वसे रहित हुए थे उनको फिर उस विस्तारित देशका अधिकार देनेके लिये दो दिनसे मैं उस घटनाके उपयोगी बड़ी धूमधामके साथ बेगूके किलेकी ओरको गया। मेरे जानेका समाचार जानकर कालामेघके वंशधर अनेक देशोंसे आ आकर इकट्ठे हुए। बेगूके प्राचीन किलेके चारों ओर बड़ी २ खाई हैं, एक काठका पुल महलमें आने जानेके लिये बना हुआ है। उस सेतुके सामने एक तोरण है, मेरे सैनिक और एक सम्वादवाहक हाथीकी पीठपर चढ़कर बृटिश पताकाको स्थापित कर उस तोरणके नीचेसे पुलके पार हो गए। मैंने भी इसी प्रकार हाथीपर चढ़कर तोरणमें जानेकी इच्छा करी; परन्तु महावतने भलीभांतिसे निषेध करके कहा कि तोरणके भीतर हौदे समेत हाथी नहीं जा सकता कारण कि तोरण छोटा है, इस प्रकार जानेमें तोरणमें उसका ठसका लगेगा। परन्तु मैंने उसकी बातपर कुछ भी ध्यान न दिया और उसको चलनेके लिये आज्ञा दी और कहा कि यदि तुम हाथीपर न बैठ सको तो उतर आओ। काठके पुलका कठोर शब्द और दोनों ओर गहरी खाइयोंको देखकर हाथी भयभीत हो महावेगस पार होनेके लिये ऐसा दौडा कि वह किसी प्रकार भी सावधानतासे तोरणके पार न हो सका। महावत विशेष चेष्टा करक भी किसी प्रकार उसको स्थिर न कर सका। तोरणके पास जाते ही मैंने देखा कि अब रक्षा नहीं है; तारणके भयंकर आघातसे हौदेके चूर्ण होनेकी भलिभाँतिसे सम्भावना थी। इस कारण मैंने उछलकर तोरणको दोनों हाथोंसे पकडा। परन्तु तुरन्त ही हाथमेंसे तोरणके छूटते ही मैं हौदेसे बाहर आकर गिर पडा, हाथी महा भयभीत होकर तोरणके पार

हो गया और मैं हाथी परसे गिरकर अचेत हो सेतुपर पडा रहा। जो लोग उस समय वहाँ उपस्थित थे उन्होंने तुरन्त ही मेरी भलीभाँतिसे सेवा की अन्तमें मुझे एक पालकीमें चढ़ाकर मेरे डेरोंमें ले गये। यद्यपि मेरे शरीरके अनेक स्थानोंमें चोट लगी थी तथापि मैंने शीघ्र ही आरोग्यता प्राप्त की। मैंने अपने सौभाग्यबलसे ही इस विपत्तिसे उद्धार पाया। यदि एक इञ्च भी उस जगहसे बचकर गिरता तो अवश्य ही खाईके जलमें डूब जाता। शीघ्र ही बेगूके सामन्त रावतजी और उनके कुटुम्बी भाई बन्धुओंने डेरोंमें आकर उस दुर्घटनाके कारण विशेष शोक प्रकाश किया। बड़े कष्टसे मैंने उनको अपने डेरोंमेंसे भेजा। मैं जब इस घटनाके दो तीन दिन पीछे फिर उसी अभिप्रायसे सामन्तको भूमिका अधिकार देनेके लिये गया, तब देखकर महान् आश्चर्य हुआ, कालामेघने वह जो रमणीक तोरण निर्माण किया था वह टूटकर एक सार हो गया है। मैं उसी टूटे हुए मार्गसे किलेके भीतरी महलमें गया, एक विस्तारित स्थानपर सामन्तोंको परिषदोंसे घिर हुए देखा। रावतजीने आगे बढकर किलेके महलकी चाबी मेरे हाथमें दी। मैंने उसके अधीश्वर प्रभुके नामसे फिर उन्हींके हाथमें दे दी। समस्त तोरणके विध्वंस हो जानेपर मैंने शोक प्रकाश किया और कहा कि मेरी ही दुर्बुद्धिसे यह दुर्घटना हुई थी, इस कारण तोरणका टूटना अच्छा नहीं हुआ। सामन्तोंने उत्तर दिया कि आप हमारे जीवनदाता है इस कारण जिस तोरणसे आपके प्राणनाशकी सम्भावना हुई थी हम लोग किसी प्रकार भी उस तोरणको नहीं रख सकते"।

"सामन्तोंकी जो भू सम्पत्ति उनको दी गई थी, यह सम्पत्ति सामरिक व्ययके कारण सेन्धियाके निकट गिरमी थी। रावतने सेन्धियासे इस मर्मका पत्र लिखा लिया था कि उक्त युद्धमेंका जितना खर्चा है वह रुपया सब देकर फिर अपनी सम्पत्ति ले लेंगे जिस समय इस अंचलमें वृटिश गवर्नमेण्टके मध्यस्थ होनेसे फिर शान्ति स्थापित हुई उस समय उक्त सामन्तने वह खत उपस्थित करके सब हिसाब किताब कर दिया, सेन्धियाको जो मिलता था रावतने उससे दुगना धन उसको दिया था। सामन्तने वृटिश एजेण्टके द्वारा सेन्धियासे उक्त सम्पत्तिको पानेके लिये फिर प्रार्थना की। इसीसे अनेक पत्रोंके द्वारा लिखापढी हुई। परन्तु कुछ भी फल न देखकर एक दिन रावतजीने अपनी सेनासहित आक्रमण करके महाराष्ट्रोंको भगा दिया और महाराष्ट्रोंने जो एक छोटा किला बनाया था उसपर अधिकार कर लिया। रावतजीने अपने बलसे इसपर अधिकार किया था, इसीसे यह अपराधी हुए, इस कारण उनको दंड देना उचित जानकर उक्त बेगूदेश राणाने अपने अधिकारमें कर लिया था। बेगूके किलेपर राणाकी पताका उडा दी गई। राणाके इस प्रकारसे दंड देनेपर बेगूके सामन्तने किसी प्रकार भी असंतोष प्रगट न किया वरन् सब प्रकारसे राणाकी आज्ञा पालन की, परन्तु राणाका यह अभिप्राय नहीं था कि वास्तवमें बेगूदेश सदाके लिये राज्यके अधिकारमें रहै। केवल सामन्तने राणाकी बिना आज्ञा लिये महाराष्ट्रोंको भगाया। नाममात्रका उस देशपर राणाका अधिकार था। अंतमें मैंने सेन्धियाके दावेके विरुद्धमें विशेष प्रमाण उपस्थित किये, सेन्धियाने बहुतसे

कागज पत्र और खतोंका उल्लेख किया और अपने दावेको प्रबल करना चाहा, परन्तु उन कागजपत्रोंको उपस्थित करनेमें वह समर्थ न हुए। अन्तमें कई महीनोंके बीतने-पर मैंने वेगूदेश उक्त सामन्तको फिर दे दिया। इस कार्यसे मैं अत्यन्त आनन्दित हुआ, कारण सन् १८१८ ईसवीके मई मासमें जब मैंने मेवाडकी वश्यता स्वीकार पत्रमें हस्ताक्षर करानेका प्रस्ताव किया तब इन्हीं सामन्तने पहिले उसपर हस्ताक्षर किये थे"।

महात्मा टाड साहबने वीरक्षेत्र चित्तौड़में जाकर लिखा है कि "शीशोदियोंकी प्राचीन राजधानी चित्तौड़के ऊँचे किलोंकी प्रत्येक दीवारोंपर पत्थरखंड हैं, जिनमें असीम गौरवकी गरिमा लिखी हुई थी, मैं दूरसे जैसे २ उस राजधानीकी ओरको बढता गया मेरे हृदयमें उतना ही आनन्द होता था। मैं जिस रास्तेसे चित्तौड़की ओरको आगे बढ़ा उसी मार्गसे बादशाह अलाउद्दीन और सम्राट् अकबर अपनी प्रबल सेना और सामन्तोंके साथ रामचन्द्रके वंशधरोंको परास्त करनेके लिये आगे बढ़े थे। चित्तौड़के महाराज किस भांति सम्राट्के विरुद्धमें खडे हुए थे, राणा अरीसिंह (अरसी) राणा प्रतापसिंहने कैसा बल विक्रम प्रकाश किया था उसका वर्णन यथास्थान किया गया है। चित्तौरके उस अंतिम युद्धका स्मृतीचिह्न आजतक यहाँ विराजमान है, आज प्रभातकाल ही मैंने उसका दर्शन किया। जिस स्थानपर भारतके सबमें प्रधान बादशाह (अकबर) ने अपनी हरे रंगकी विजयपताकाको उठाकर डेरे डाले थे और अपने प्रधान वीर सेनापतियोंको इकट्ठा करके चित्तौड़पर अधिकार कर उसको विध्वंस करनेका परामर्श किया था उसी स्थानपर एक स्मरणचिह्न विराजमान है, इन चिह्नोंने उस स्थानको अक्षय कर रक्खा है, यह एक ऊंचे स्तंभाकारमें है और यह "चिरागदान, वा अकबरका दीप" नामसे विदित है। यह बडे २ पत्थरके टुकडोंके द्वारा बनाया गया था और ३५ फुट ऊंचा है। इसका नीचेका भाग विशेष स्थूल और ऊपरका भाग क्रमशः सूक्ष्म होता गया है। शिरपर एक बडा भारी दीपक बलता था, उसको देखकर सर्वसाधारण जान सकते थे कि उक्त स्थानमें बादशाहके डेरे पडे हुए थे। इसके भीतरी भागमें सीढियाँ है, उन सीढियोंके द्वारा ऊपरको चढा जाता है। बादशाह अकबर अवश्य ही उन सीढियोंपर चढकर ऊपरको गये थे; यह विचार कर मैंने भी एक बार इन्हीं सीढियोंपर चढकर ऊपरको जानेकी इच्छा की, परन्तु शरीर स्वस्थ नहीं था, इस कारण मेरे मनकी आशा मनमें ही रह गई। नीचेके नगरके अंशको अतिक्रमण कर मैं सवारीपरसे उतरा और घोडेपर सवार हो पांच किलोंको लाँघकर चित्तौड़में गया। सूर्यकुंडके पास ही मेरे डेरे पडे थे; इस कारण वहाँ जाकर चित्तौड़के चारों ओर उस प्राचीन ऐतिहासिक विध्वस्त चिह्नोंको देखकर चिन्ताको भगा दिया। अस्ताचलचूडावलम्बी प्रभाकरकी शेष किरणोंका जाल जबतक चित्तौड़के स्तंभके ऊपर पडता रहा, मै तबतक विषादित स्मृति विचलित हृदयसे एक दृष्टिसे उसे देखता रहा"।

"विध्वस्त प्राचीन चित्तौड़को देखकर मेरे मनमें जो समस्त भाव उदित होने लगे, पाठकोंको उन सबको विदित कराकर विरक्त करना नहीं चाहता, मैं इस समय उन

विध्वस्त दृश्योंको देखकर अपनी सामर्थ्यानुसार कितने ही विवरणोंको विदित करनेमें प्रवृत्त हुआ। खुमानरासा ग्रन्थमें चित्तौड़के सम्बन्धमें लिखा है कि विख्यात दुर्गम और अभेद्य चौरासी किलोंमें छत्रकोटका किला सबमें प्रधान है; समतल क्षेत्रसे जो भूधर उठा है, उस भूधरके ऊपर यह छत्रकोटका किला बना है, वह मानों पृथ्वीके मस्तकपर तिलकस्वरूप विराजमान हो रहा है। कोई शत्रु भी उस किलेपर अधिकार करनेको समर्थ नहीं हुआ और इस दुर्गके अधीन सामन्त मंडली भयके नामतकको नहीं जानती थी। इसके ऊपरसे गंगा अपनी तरंगें दिखाती बहती हुई चली हैं और इस पहाडपरका मार्ग इस प्रकारसे बना हुआ है कि यद्यपि कोई इसमें जानेके लिये समर्थ हो सके, परन्तु यहाँसे बाहर होनेकी कुछ आशा नहीं है। एक बुर्ज पत्थरके ऊपर बना हुआ है और उस बुर्जमें रहनेवाली सेना रात्रिमें सोते हुए शत्रुओंसे भय नहीं मानती, इसके धान्यागार धान्यसे पूर्ण हैं और जल कुण्ड फुआरे और कुएँ निर्मल जलसे भरे पुरे हैं। स्वयं महाराज रामचन्द्रजी इस स्थानमें १२ वर्षतक रहे थे, नगरमें ८४ बाजार, बालिकाओंके लिये बहुतसे विद्यालय और प्रत्येक प्रकारकी शास्त्रीय शिक्षाके लिये पाठशाला और अठारह प्रकारके शिल्पविद्यामें निपुण शिल्पकार यहाँ रहते हैं।" छत्तीस प्रकारकी राजपूत जाति यहाँ निवास करती हैं, सेना अश्वारोही असंख्य है।

"खुमानरासा अर्थात् रावत खुमानका उपाख्यान नामक ग्रन्थ ९ नौमी शताब्दीमें लिखा गया था और मेरा विश्वास है कि कविने चित्तौड़का वर्णन कल्पनासे नहीं किया है सब सत्य लिखा है कारण कि चित्तौड़के विध्वंस होनेके पहिले भारतवर्षकी कोई राजधानी ही उसके समान नहीं थी, पठारके समान चित्तौड़की राजधानी पहाडपर स्थित है, पहाडश्रेणी चित्तौड़से डेढ कोशतक चली गई है। चित्तौड़के और पाठारके बीचमें उर्वरके ऊपर बिजैपुरा, गुआलियर और बेगूके कुछ अंश विराजमान हैं, उनके बीच २ में कुंज कानन वृक्ष समूह है, किन्तु वह प्रदेश चिरकालकी अराजकतासे इस समय वनके समान हो गये हैं। चित्तौड़के ऊपरीभागका अंश लम्बाईमें तीन मील दो फर्लांग और चौडाईमें चौवीस सौ हाथ हैं। जिस पर्वतपर चित्तौड़ स्थापित है उस पर्वतके नीचेका व्यास चार कोश है। उसके नीचेसे ऊपरतक घने २ पेड और झाडियें है तिनमें व्याघ्र, हरिन, सुअर ही नहीं किन्तु सिंह भी आजलों रहते हैं। तुगाइति नामक चित्तौड़के नीचेका भाग दक्षिणके अंशमें स्थापित है और वहां विजयस्तंभ चतरङ्ग मोरी राणा रायमलका महल, राणा मुकुलका विराज मंदिर गहिलोतके शतचूडा विशिष्ट दुर्ग और जयमलका सौध प्रभृति रमणीय स्मृतिचिह्नसमूह स्थापित है, चित्तौड़से पृथक् एक स्थान ४०० सौ फुट उत्तरको है, इसके चारों ओर दीवारे हैं, शत्रुको इसीसे लाभ हुआ था। माधोजी सेंधियाने इसीपर अपना तोपखाना स्थापित किया था इसी स्थानसे अलाउद्दीन तातारीने आक्रमण किया था, लोग कहते हैं–यह चित्तौड़ी टीला वही है जिसके लिये प्रत्येक टोकरी मट्टीपर एक पैसेसे लेकर एक मोहरतक दी गई थी इसके निर्माणमें बारह वर्ष लगे होंगे"।

माननीय टाड साहबने प्राचीन चीतौडके देखने योग्य स्थानोंको देखकर जो वर्णन किया है हमने उसका अविकल अनुवाद प्रकाश किया। टाड साहब लिखते हैं कि ठीक उत्तरी ओरसे ऊपर चढना होता है, चढते समय जो दरवाजे बीचमें पडते हैं उनमें सबसे पहले द्वारको "फूटाद्वार" और चौथे द्वारको "हनुमान् पोल" कहते हैं। यह हनुमान पोल चीतौडके इतिहासका एक चिरस्मरणीय स्थान है यहींपर प्रसिद्ध वीर जयमल और फत्ता महावीरता दिखाकर परलोक सिधारे थे। जयमल्लके स्मरणार्थ यहाँपर एक छोटासा स्मारकचिह्न विराजमान है और एक पत्थरके घोडेपर वीरवेषी भाला हाथमें लिये जयमल्लकी मूर्ति स्थापित है। कहा जाता है कि मेवाडके देवतास्वरूप माननीय वीरशिरोमणि राखोदीकी यादगारीमें यह बनाई गई है। यहाँसे फिर तीन वेष्टनी उतरकर हम रायपोल नामक बडे दरवाजेपर गये। इस स्थानसे विख्यात 'दरीखाना' वा बारहद्वारी जिस सभागृहमें प्रधान २ उत्सवोंके समयमें चीतौडके राणा इकट्ठे होते थे उसी स्थानपर गये। वह सभागृह ही चीतौडकी प्रतिभा, राणा अरसीको विदित करती थी कि उनके गौरवका सूर्य अस्त होता चला है। रामपोलके एक कमरेमें हमने खोदी हुई लिपिको देखा। सालूंबरके विख्यात सामन्त भीमसिंहने इस खोदी हुई लिपिकी प्रतिष्ठा की थी, कारण कि उनका ही नाम नीचे लगा हुआ है। भीमसिंह एक समयमें चीतौडके राजमुकुटको अपने शिरपर धारण करनेके लिये उद्यत होकर विद्रोही हो गये थे, मेवाडके इतिहासमें उसका वर्णन भलीभाँतिसे हो चुका है। भीमसिंहने जिस वंशमें जन्म लिया था उस वंशके आदिपुरुषोंने भीमके जन्म लेनेके कई सौ वर्ष पहिले एक समय इस राजमुकुटको प्रकृत राजभक्तके समान छोड दिया था। सालूंबरके सामन्त उक्त भीम जिस समय राजभक्त थे,ऐसा जाना जाता है कि उसी समय उन्होंने इस खोदी हुई लिपिको स्थापन किया। इस खोदी हुई लिपिमें लिखा था "नगरनिवासियोंको बलपूर्वक किसी श्रमसाध्य कार्यमें नियुक्त नहीं किया जायगा और नगरनिवासियोंसे दंडस्वरूप कर नहीं लिया जायगा। दूसरे गोइन्दा नामक स्थानके एक सूत्रधरने अपने व्ययसे रामपोलके नवीन द्वारको तैयार कर दिया, वहाँ एक मूर्ति गाय और शूकरकी विद्यमान है, उसको जो एक खंड भूमि दी गई थी इस खोदी हुईकी लिपिमें उसका भी उल्लेख है"।

"मैं उस स्थानसे दक्षिणकी ओरको कुछ दूर गया वहाँ एक अत्यन्त प्राचीन मंदिर देखा। उस मंदिरका तोपखाना चोराके समीप स्थापित था और वहाँ तुलसी भवानीका मंदिर है। वह तोपखाना चोरानामक स्थानमें पहिले तोपोंकी श्रेणीसे सजा रहता था। इस समय वहाँपर चीतौडके लूटनेके चिह्नस्वरूप कई एक प्राचीन तोपें पडी हुई हैं। इसके पीछे राणाके प्रधान पुरोहितका एक बडा और सुन्दर घर दिखाई दिया। इसके पीछे मुसाविवा अस्त्र शालाध्यक्ष और राजदरबारके अन्यान्य विभागोंके प्रधान २ कर्मकर्त्ताओंके घर हैं परन्तु सबमें पहला जो मनोहर महल चित्तको आकर्षण करता है उसका नाम नोलखा भंडार है। यह एक छोटा दुर्गस्वरूप है। इसकी दीवारें

बडो २ सौध श्रेणी जैसी ऊंची है, तथा उसी भांति उन्नत है। यह प्राचीन विध्वस्त उपकरणसे बनाया गया है। भंडार शब्दका अर्थ धनागार है।

इस कारण इसके नामसे ही इसका परिचय पाया जाता है; किन्तु ऐसा जाना जाता है कि जिन वनवीरका वर्णन इस इतिहासमें किया है वह यहीं निवास करते थे। उत्तर पूर्वकी ओर एक छोटासा मंदिर है, उसका चित्र कार्य अत्यन्त रमणीक है, उसका नाम सिंगारचोरा है"।

"उक्त स्थानसे हम राणाके महलकी ओरको गये, यद्यपि यह जाना जाता है कि राणा रायमल्लने उक्त महलको बनाया था परन्तु इसके गठनकी रीति इसकी अपेक्षा अत्यन्त प्राचीन महलोंके समान थी। इसका गठन सरल आकृतिपर विस्तारित है। केवल बुर्जोंमें महान् कारीगरी है और महलमें कोई विशेष कारीगरी नहीं है। मुसल्मानोंके आनेके पहिले राजपूतोंके महल किस रीतिसे बनते थे, इसको देखकर यह भलीभाँतिसे जाना जाता था। महलके चारों ओर प्राङ्गण भूमि है। उस प्राङ्गण भूमिकी एक ओर देवजीका मंदिर है। राणा सांगाको उसी मूर्तिकी कृपासे चारोंओरसे जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त हुआ था। इन अपरिचित मूर्तियोंके ग्यारह कुल वा महाविद्याओंमें एकके नामसे विदित थे। विख्यात वीर भोज जिनके पिता एक चौहान और माता गूजरी जातिकी थी और जिसके मिलनेसे बगरावत सम्प्रदायकी सृष्टि हुई थी, ऐसा जाना जाता है कि वही भोजदेव शक्तियुक्त होकर इस विग्रहरूपसे प्रतिष्ठित हैं इन देवताके सम्बन्धमें एक प्रवाद प्रचलित है। उक्त दैव शक्तियुक्त बगरावत वीर जिस समय प्राचीन शत्रुताका बदला देनेके लिये रणविजय नामक स्थानके परहारियोंके विरुद्धमें गये थे उस समय उनके चीतौडके समीप आते ही चीतौडपति राणा सांगाने उनके आनेका समाचार पाया तब उनको दैवशक्तियुक्त जानकर भक्ति और श्रद्धाके साथ बडे सम्मानसे उनकी पूजा की। देवजीने राणाकी भक्तिसे प्रसन्न होकर राणाको एक देवपदार्थ (तवीज) दिया, उस देवपदार्थके ही बलसे तथा देवजीकी निर्दिष्ट व्यवस्थाके मतसे राणा जितने दिन चले उतने ही दिन उन्होंने विजय प्राप्त की। देवजीने उस दैवपदार्थ (तबीज) को छोटेसे कपडेमें रखकर राणा सांगाके गलेमें बाँध दिया और कहा कि यह किसी प्रकारसे भी पीठकी ओरको न जाने पावै। उक्त दवजीकी इस प्रकारकी देवशक्ति थी कि वह मृतक मनुष्यको जीवित कर सकते थे। उस शक्तिको दिखानेके लिये उन्होंने अपने हाथमें एक मोरका पंख लेकर उस समय चित्तौडमें जो मनुष्य मर गये थे उनका शव स्पर्श करके ही उनको फिर जीवित कर दिया! राणा सांगा देवजीका वह दैवशक्तिका चूडान्त प्रमाण पाकर दिग्विजयके लिये बाहर हुए। उन्होंने अनेक युद्धोंमें जय प्राप्त करके अन्तमें वियानाके किलेतक पर अधिकार कर लिया था, इसी समयमें पोला खानमें स्नान करते समय उनके गलेमेंसे दैवी पदार्थ जलमें गिर पडा। उसी समय यह शब्द उठा कि एक भयंकर शत्रु तुम्हारे समीप आ पहुँचा है! शीशोदीया इस प्रवाद वाक्यपर इतना विश्वास स्थापन करते थे कि उक्त देवजीने उनके देवताओंमें

स्थान पाया और यद्यपि उनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय हो गयी थी परन्तु तो भी वह देवजीकी उस मूर्तिके सम्मुख दिन रात दीपक प्रज्वलित करते रहते थे देवजीकी मूर्ति अश्वारोही वीरके समान गठित थी। हाथमें बर्छा और घोडा नीले वर्णका था। आजतक भी सब उनकी पूजा करते हैं। सबका मन्तव्य संग्रह करनेके लिये मैंने तीन रुपये बाबरके उपयुक्त प्रति द्वंद्वी महावीर सांगाके नामसे उक्त देवजीकी प्रतिमाके सामने अर्पण किये "।

"राणा रायमल्लके महलको छोडकर मैं दो बडे मंदिरोंमें गया। उन दोनों मंदिरोंमेंसे एकमें वृजराज श्रीकृष्णजीकी मूर्ति स्थापित थी। उसे राणाकी विख्यात रानी मीराबाईने बनवाया था और उसमें श्यामनाथकी मूर्ति स्थापित थी। मीराबाईको कविता करनेकी भी शक्ति थी। इसका वर्णन इतिहासमें हो चुका है। उन्होंने जयदेवकी विख्यात गीतगोविन्दकी टीका तैयार की थी ऐसा जाना जाता है। मीराबाईकी कृष्णभक्ति इतनी प्रबल थी कि वह कृष्णके प्रेमसे व्याकुल हो इस मंदिरमें नृत्य करती थी और मीराबाईकी मृत्युके सम्बन्धमें जाना जाता है कि एक समय मीराबाई प्रेममें व्याकुल होकर नृत्य कर रही थीं कि इसी समयमें राधानाथने मूर्तिमेंसे प्रगट होकर कहा। "मीरा आओ! हृदयसे लगो। श्रीकृष्णने जैसे ही मीराको आलिंगन किया कि मीराकी मानवी लीला भी उसके साथ ही साथ समाप्त हो गई "।

"परन्तु यह दोनों मंदिर अत्यन्त प्राचीनकालके कितने ही टूटे मंदिरोंके समान बने हुए हैं। चीतौडसे तीन कोश उत्तरकी ओर एक स्मरणातीतकालके निगर नगरका ध्वंस स्तूप पडा है। वहाँके टूटे हुए मंदिरोंकी सामग्री लाकर यह बनाये गये हैं। उक्त दोनों मंदिरोंके समीप एक बडा भारी जलाधार विराजमान है। प्रत्येककी लम्बाई एक सौ पचीस फुट है विस्तार पचास फुट है और गहराई पचास फुट है। ऐसा जाना जाता है कि मेवाडकी राजनंदिनीके साथ गागरौनके खीची वंशीय अचलका जब विवाह हुआ तब राणाने इन दोनोंको खुदवाकर आमंत्रित हुओंके लिये एकमें घी और एकमें तेल भरवा दिया था "।

" हम पीछे कीर्त्तिस्तम्भके समीप पहुँचे, राणा कुंभाने मालवा और गुजरातकी समस्त सेनाको पराजय करके उस विजयके चिह्नस्वरूप यह स्मरणस्तम्भ स्थापित किया था। समस्त भारतवर्षमें एकमात्र दिल्लीकी कुतबमीनारके साथ इसकी तुलना हो सकती है परन्तु यह उसकी अपेक्षा ऊंचा है. तथापि इसका शिल्पकार्य वैसा उत्तम नहीं है। यह स्तंभ एक सौ बाईस फुट ऊंचा है और इसके मूलदेशके प्रत्येक खण्डका परिमाण ३५ फुट है। शिर देशका गुम्बज साढे सत्रह फुट है। यह ४२ फुट वेदीके ऊपर स्थापित है। यह नौतल युक्त है और प्रत्येकके नीचे ही द्वार और झरोखे विराजमान हैं। चारों ओर स्तम्भोंसे युक्त बरामदोंकी श्रेणी बनी हुई है। इनकी सुन्दरताके लिखनेकी

---

(१) हमारी समझमें यह वही तक्षक नगर है जिसकी हम खोजमें थे और जिसके लिये हरवर्ट साहबने यह लिखा है कि चीतौड टकसेल पोरस (पवार) का था।

कलममें सामर्थ्य नहीं है । इसके ऊपर हिन्दुओंके समस्त देवी देवताओंकी मूर्त्ति खुदी हुई हैं । इसका सबसे ऊंचा बल अर्थात् नौसंख्यक तल साढे सत्रह फुट चौडा है, अनेक भांतिके पाषाणोंसे यह बना हुआ है वहाँ अगणित स्तम्भ श्रेणीके ऊपर गुम्बज स्थापित हैं। इनमें कन्हैयाजीका रासमण्डल अंकित है, चारोंओर गोपियाँ बाजे हाथमें लिये हुए नृत्य कर रही हैं. मध्यस्थलमें राधाकृष्ण विराजमान है उस कमरेमें चित्तौडके राणाका वंशविवरण पत्थरपर खुदा हुआ है। किन्तु दुरात्मा यवनोंने उन सबको विध्वंस कर दिया है। केवल निम्नलिखित दो श्लोक आजतक पूर्व अवस्थामें है ।

१७२ श्लोकार्थ—गुज्जर खण्ड तथा मालवादेशके अधीश्वरने अपार समुद्रके समान विस्तारित सेनाके साथ पृथ्वीको कंपायमान करके मेरपतिपर आक्रमण किया। कुम्भाने जगत्को उज्वल किया उसके अशेष यशका वर्णन कहांतक किया जाय ? उन्होंने अपनी विपक्षी सेनामें व्याघ्रस्वरूपसे अथवा शुष्क गहन वनमें अग्निस्वरूपसे गमन किया था।

१८३ श्लोकार्थ–जबतक सूर्य भगवान् इस संसारमें अपनी किरणजालका विस्तार करेंगे तबतक राणा कुंभाका यश फैला रहेगा।जबतक उत्तरमें हिमालय पहाड ऊंचे भावसे खडा रहेगा। जबतक वारिधि मालाके समान मेदिनीके गलेको पकडे रहेगा।तबतक कुंभाका यश अक्षय रहेगा। उनके शासन समयके अनेक घटनाओंसे पूर्ण इतिहास और उनके गौरवकी गरिमा सर्वदा अक्षयभावसे विराजमान रहेगी । एक हजार पाँच सौ सात संवत्में राणा कुंभाने कहा चीतौडके ललाटपर मुकुटरूप यह स्तम्भ निर्माण किया । उदय हुए सूर्यकी उज्वल किरणोंके समान यह तोरण चीतौडके नवीन वरके समान उठा था" ।

संवत् " १५१५ में ब्रह्माके मंदिरकी प्रतिष्ठा हुई और वर्तमान वर्षके माघ मास पुष्य नक्षत्र दशमी तिथि बृहस्पतिवारको अक्षय छत्र कोटेमें यह कुंभाका कीर्तिस्तंभ निर्माण हुआ। अब इस स्तंभकी तुलना नहीं हो सकती इस स्तंभको धारण करके चीतौड आज मेरुका उपहास कर रहा है । अब इस छत्र कोटकी उपमा कहां है?--इसके शिखरसे झरने निकलकर अविकल शब्द करते हुए बह रहे हैं । चारों ओर देवता और देवियोंकी मूर्तियां विराजमान हैं । चारों ओर उज्वल कुञ्जवन और भौंरे गुंजार करते हुए प्रेमसे क्रीडा कर रहे हैं। इस अभेद्य अचल किलेको महाइन्द्रने अपने हाथसे बनाया था।

उक्त श्लोकोंकी संख्या १८३ थी परन्तु और भी कितने ही श्लोक इस स्थानपर लिखे हुए थे । इनका अनुमान सरलतासे हो सकता है " ।

कर्नल टाड साहब लिखते हैं कि इस ऊंचे स्थानसे जो दृश्य देखा जाता है वह अत्यन्त मनोहर है।मालवेके समतलक्षेत्र तक यहांसे दृष्टि पहुँचती है । कई वर्षके बीतनेपर इस स्तंभके सबसे ऊंचे बुर्जपर वज्रपात हुआ था और उसीसे बहुतसे बुर्ज टूट गये थे, परन्तु सर्वसाधारणमें यह स्मरणस्तंभ आजतक अक्षतभावसे खडा हुआ है। केवल जिस स्थानपर वज्रपात हुआ था उस स्थानपर कई एक पीपलके वृक्ष जम गये हैं, ऐसा जाना जाता है कि स्मरणस्तंभके बनानेमें नौ लाख रुपया खर्च हुआ था । राणा कुंभाने जो अगणित सौधमंदिर निर्माण किये थे उन्हींमेंका एक यह भी है ।

श्रीकृष्णका मंदिर और कूर्मसागर नामका एक बडा सरोवर है, तथा महादेवका मंदिर और कृत्रिम निर्झर राणा कुंभाके द्वारा बना था। राणा कुंभाने कमलमेर नामक विराट-काय किला और उसमेंके महलको बनाया था। उस कमलमेरके किलेमें वह शासन-कार्य करते थे, ऐसा जाना जाता है कि महम्मद वेगने जिस समय कमलमेरपर आक्रमण करके इसपर अधिकार किया था उस समय उसको उस किलेमेंसे गुजरातकी राजकुमारीका कई लाखके मोलका हीरोंका एक हार मिला था और उसने चालीस हजार मनुष्योंको यहाँ बंदी कर लिया था।

"उक्त कीर्तिस्तंभके निकट ही ब्रह्माका एक बडा मंदिर है, राणा कुंभाने अपने पिता राणा मुकुलके स्मरणके लिये इस मंदिरकी प्रतिष्ठा की है और यह उन्हींके नामसे विदित है, यह राजा बडा ईश्वरभक्त था इस मंदिरके समीप विख्यात चारबाग नामक स्थान है। वहाँ बाप्पासे उदयपुर राजधानीकी प्रतिष्ठातातक शीशोदीय वंशके प्रत्येक राणाका समाधि मंदिर है। उस मंदिरमें केवल भस्मराशि रक्खी हुई है उस समाधि-मंदिरके भीतरी भागोंमें बहुतसे ऐतिहासिक तथ्य बिजडित हुए हैं। हम अपने लेखको भी यहाँसे संक्षेप करते हैं कि हमारे इतिहास बतानेवालेने संसारसे विदा की"।

"उस सम्मान समाधिक्षेत्रमें होकर मैं पर्वतके एक निर्जन स्थानमें गया। भूधरका वह स्थान स्वभावसे ही विदीर्ण हो गया है और उसके एक अंशसे 'गोमुख' नामका स्वाभाविक झरना एक वटवृक्षके नीचे होकर निकला है। पर्वतके उस गुहाकी एक ओर एक गुप्त सुरंग पर्वतके भीतरीभागमें चली गई है, उसको रानी मंदिर कहते हैं। उसी सुरंगमें होकर बराबर भीतरी भागोंको कई एक कमरे चले गये हैं। बादशाह अला-उद्दीनने जिस समय चित्तौडपर अधिकार करके लूट की थी उस समय इस स्थानपर जौहर वृत्तका अनुष्ठान किया गया था। भुवनमोहिनी पद्मिनी और चितौडकी अन्यान्य राजरानी और राजनन्दिनियोंने इसी स्थानपर प्रज्वलित अग्निमें प्राणत्याग करके अपने सतीत्वकी रक्षा कर पापात्मा अलाउद्दीनकी पापकामनाको व्यर्थ किया था, उसी समयसे यह गुप्त सुरंग बंद कर दी गई"।

"मैंने और भी ऊपर चढ़कर जयमल और पत्ताके नामके मंदिर देखे। वहां कालकादेवीके मंदिरकी प्राचीन अर्थात् चीतौडके गहिलोत वंशके आधिपत्य विस्तारित होनेके कई सौ वर्ष पहिले प्राचीन मोरिराजवंशके शासनसमयमें प्रतिष्ठा हुई थी। मैंने वहाँ निम्नलिखित खोदी लिपियें देखीं"।

"संवत् १५७४ माघ सुदी पंचमी रेवती नक्षत्रमें पत्थर खोदकर लिपि अंकित की कालू कैमर शिल्पीने तथा और अन्य छत्तीस जनोंने (यहाँ पर उनके नाम वर्णन किये हैं) कालकादेवीके मंदिरसे लगे हुए विस्तारित कुंड बनाये"।

"उक्त स्थानसे मैं चन्द्रावत् सम्प्रदायके आदिपुरुष चंडके समाधिमंदिरकी ओर गया। वहांसे कुछ ही दूर भीमसिंह और पद्मिनीका महल विराजमान है उसके पीछे एक स्थानके चारों ओर पत्थरकी दीवार दिखाई दी। ऐसा जाना जाता है कि राणा

कुंभाने मालवेके राजाको युद्धमें परास्त करके बंदीभावसे इसी स्थानमें लाकर रक्खा था उसी स्थानसे लगा हुआ रामपुराके राववंशियोंका महल विराजमान है "।

"और भी दक्षिणकी ओर प्राचीन चीतौडके प्राचीन पँवार अधीश्वर चतरंग मोरीकी पुष्करणी और महल विराजमान है। यह स्थान विशेष ऐतिहासिक विवरणोंसे भरा हुआ है। पुष्करणीका भीतरी भाग भिन्न २ अंशोंमें विभक्त है। चित्तौडके किलेके दक्षिण बुर्जके चार सौ हाथ समीप जाकर मैं इस स्थानसे चीतौडकी प्राचीन सामन्त श्रेणी अर्थात् सिरोही; बून्दी सन्तलूना बारा इत्यादिके अधीश्वरोंकी महल श्रेणीके भीतरको होता हुआ चौगान नामक स्थानमें जा पहुँचा। यह स्थान सामरिक उत्सवों- का क्षेत्र है। आजतक भी दशहरेके पहिले चीतौडमें संख्याबद्धसेना प्राचीन रीतिके अनुसार वहाँ सामरिक उत्सव करती है। उक्त स्थानके समीप ही एक बडा जलाशय विराजमान है। यह एक सौ तीस फुट लम्बा है, चौडाईमें ६५ फुट है और इसकी गहराई ४७ फुट है। इसके चारों ओर रमणीक अत्यन्त सुन्दरतासे खुदे हुए आभ्यन्तरी भाग जलसे पूर्ण हैं "।

इसके और भी ऊपर प्रायः सम मध्यस्थानमें एक चमत्कार चौकोना स्मरणस्तंभ विराजमान है। यह ऊंचा साढे पचहत्तर फुट है इसका मूलदेशका व्यास ३० फुट है। शिरका व्यास १५ फुट है और उसके गात्रपर जैनियोंकी मूर्तियां खोदी हुई हैं। यह स्मरणस्तंभ अत्यन्त प्राचीन है। इसके मूलदेशमें मैने जो खुदी हुई लिपि देखी उससे जाना गया कि यह पहिले जैनगुरु आदिनाथके नामसे उत्सर्ग की गई थी, उक्त मूलदेशके नीचे इस भाँति खुदा हुआ है।

"श्रीआदिनाथ और चौबीस जैनेश्वर, पुंडरीक, गणेश, सूर्य और नवग्रह, अनुग्रह करके तुम रक्षा करो। संवत्९५२,सन्८९६ ई०में वैशाखशुक्ला पूर्णिमा गुरुवार"।

कोकरेश्वर महादेवके अत्यन्त प्राचीन मंदिरके समीप मैंने निम्नलिखित लिपि पाई,–

"संवत् ८११। माघ सुदी पंचमी बृहस्पतिवारको। सन् ७५५ ई० राजा कोकरेश्वरने इस मंदिरकी प्रतिष्ठा करी और यह जलाशय खुदवाया "।

"यहाँ अनेक जैनियोंकी खुदी हुई लिपियाँ हैं; परन्तु टूट फूट जानेके कारण मै उनमेंसे किसी विशेष प्रयोजनीय लिपिको अपने दुर्भाग्यसे न निकाल सका। शान्ति (सन्त) नाथके मंदिरपर निम्नलिखित खोदी हुई लिपि देखी।

संवत् १५०५, सन् १४४९ ईसवी श्री महाराणा मुकुलके पुत्र कुंभाके धनाध्यक्ष साह कोला, उनके पुत्र बदरीरत्न और स्त्री श्रीबिलनदेवीने शांतिनाथका यह मंदिर प्रति- ष्ठित किया और खरताके सामन्त कलकाछत राजेंपुरा और उसके गोत्री राजश्री जिन चन्द्रसूरिजीने यह लेख लिखा था "।

"पूर्वकी ओर मध्यांशमें सूर्यपोल नामक तोरणके समीप चांदावत सम्प्रदायके नेता सहीदासका समाधिमंदिर विराजमान है। सम्राट् बहादुरशाहने जिस समय

चीतौडपर आक्रमण किया था उस समय उक्त सहीदासने उस सूर्यपोलके समीप जाकर भयंकर वीरता प्रकाश करनेके पीछे शत्रुके हाथसे उसी स्थानपर प्राण त्याग किये थे"।

"उत्तर पश्चिमके अंशमें एक किला है और उसमें महल विराजमान है, उसकी दीवारैं और ऊंचाईको देखनेसे यह बोध होता है कि यह बहुत प्राचीन कालका बना हुआ है। ऐसा जाना जाता है कि मोरी राजवंश और चीतौडके प्रथम राणा इसी महलमें रहते थे। कोई पुरुष एक पग भी ऐसे स्थानमें नहीं रख सकता जहाँ कोई न कोई वस्तु पुराने समयकी उसके पैरके नीचे न आवै"।

इस स्थानपर चीतौडका वर्णन समाप्त करते हैं। परन्तु इसकी समाप्तिके पहिले मैंने एक सौ साठ वर्षकी अवस्थावाले एक फकीरको देखा। उसका उल्लेख विना किये हुए नहीं रह सकता। यहांके बहुत २ पुराने मनुष्य कहते हैं कि यह फकीर यहांके मन्दिरमें चिरकालसे निवास करता है। यहांके एक नव्वे वर्षसे अधिक अवस्थावाले सूत्रधरने कहा है कि "बालकपनसे मैंने इनको इसी प्रकारसे वृद्ध देखा है। जब इन अत्यन्त वृद्ध महात्माके निकट मैंने अपना परिचय दिया, उस समय वह एक नगरवासीके साथ चौसर खेल रहे थे। उन्होंने एक मुहूर्तके लिये मेरी ओरको देखकर "यह मनुष्य क्या चाहता है?" कहकर फिर क्रीडामें मन लगाया। क्रीडाके समाप्त होनेपर मैंने उनको भेंटमें रुपये दिये। वह उनको लेकर अपने समीप खडे हुए मनुष्यको दे बडे वेगसे उस टूटे हुए मन्दिरकी ओरको चले गये। एक मनुष्यने उनको एक बहुत बढिया दुशाला दिया था, शीघ्रतासे चलनेके कारण उनका वह दुशाला जमीनपर गिरता हुआ जा रहा था। परन्तु उन्होंने उस दुशालाको वहीं छोडा और आप वहांसे चल दिये। इनका ऐसा स्वभाव देखकर कोई भी इनके साथ किसी प्रकारका अत्याचार नहीं करता था। इनको जब भोजनकी इच्छा होती तब तुरन्त ही भोजन करनेका उपाय करते थे। मैं एकमात्र एक मुहूर्तके लिये उनकी पूर्वस्मृतिको जागरित करनेमें समर्थ हुआ था। उस समय उन्होंने एकमात्र अदीनावेग और पंजाबके सम्बन्धमें कुछ एक बातें कही थीं। ऐसा जाना जाता है कि वह पंजाबके रहनेवाले थे मुझे उनकी अवस्था सत्तर वर्षकी विदित होती थी"।

कर्नल टाड साहब प्राचीन चितौडको देखनेके पीछे ८ वीं मार्च सन् १८२२ ई० को उदयपुरमें आये, महाराणा भीमसिंहने उनको बडे आदरभावके साथ ग्रहण किया। कर्नल टाड साहबने उदयपुरमें जाकर लिखा है कि "मैं फिर हिन्दूपतिकी इस राजधानीमें आया। जबतक मैं अपनी जन्मभूमिको नहीं जाऊंगा तबतक किसी उपद्रवके वशसे भी इस स्थानको नहीं छोडूंगा। मेरे लिये इस समय विश्राम करना आवश्यक है, कारण कि मेरे जीवनके गत पिछले पन्द्रह वर्ष कठोर परिश्रम करनेमें व्यतीत हुए हैं जिसका कुछ एक अंश इतिहासमें वर्णन किया गया है। मैंने कई दिन-तक मैरतामें विश्राम किया और देखा कि मेरे घर बननेका कार्य प्रायः समाप्त हो चुका है और बगीचा रमणीय शोभाको प्रकाश कर रहा है। आड्, सेब, सन्तरे,

नारंगी, अनेक जातिके नींबू इत्यादि वृक्षोंमें कलियें खिली हुई देखीं। श्रेष्ठफल, अनार केला इत्यादि फलवान् वृक्ष भी फलके भारसे झुके हुए देखे, यह सब फलवान् वृक्ष लखनऊ आगरा और कानपूरसे आये थे। किन्तु प्रधानतः श्रेष्ठ फलवाले वृक्षोंके बीज ग्वालियरसे लाया था, मैंने ग्वालियरके समस्त वृक्षोंको अपने हाथसे लगाया था। सन् १८१७ ईसवीमें जिस समय मैने ग्वालियरको छोडा उस समय मै वहांसे कितने ही फलोंके बीज ले आया था और उन सबको मैंने उदयपुरके रंग प्यारी नामक भवनसे लगे हुए बागमें बोया था। यह जैसे स्वादिष्ट और मीठे थे ऐसे फल मैंने और कभी नहीं देखे। उन सब वृक्षोंके बीजको मैंने फिर इस मेरताके बागमें बोया और इस समय देखता हूं कि उन सबमें फिर मधुर २ फल लग रहे हैं। शाक सबजी भी विशेष वृद्धिको प्राप्त हो गई है। उदयसागरसे मै जलविहार करनेके लिये एक छोटी नहरको भी यहाँ लाया। कितने ही दिनोंतक मैंने आनन्दित होकर नावपर चढकर यहांपर भ्रमण किया और किनारेपर बैठकर मत्स्य धारण किया। परन्तु हाय! सभी कुछ वृथा था अभागा करिसाहब मट्टीके गर्भमें विलीन हो गया है, उन डंकन रोगसे पीडित स्वास्थ्यहीन अवस्थामें कैंप आफ गुड होपमें जानेके लिये तैयार हुए हैं। वह जिस वख्त साहबको कोटेमें छोड आये थे उन्होंने उनकी रुग्णावस्थाका समाचार मुझे पत्रमें लिखा था और मै जो कुछ था अब वह नही हूँ। मुझमें अस्थिमात्र शेष है। मेरे स्वास्थ्यभंगको देखकर चिकित्सकने मुझे स्वदेशमें जानेके लिये परामर्श दी है। राणा मेरे जानेकी वार्तासे अत्यन्त दुःखित हुए है। उन्होंने मुझे केवल तीन वर्षके लिये स्वदेश जानेकी बिदा दी है और उनकी भगिनी चांदजी बाईने कहा था कि जिससे मैं अबकी बार देशसे विवाह कर अपनी स्त्रीको ले आऊं तो वह अपने अन्तःकरणसे मेरे स्त्रीसे प्रेम करेगी"।

"मैंने उदयपुरसे चुपचाप जानेकी अभिलाषा की थी। परन्तु राजपूतोंकी रीतिके अनुसार स्वास्थ्यभंग अवश्य ही अवनत होता है। इस कारण मै उदयपुरकी ओरको गया राणा भीमसिंह युवराज ज्वानसिंह और समस्त शीशोदीया सामन्तोंने आगे बढ बडे आनन्दसे मुझे ग्रहण किया। "आप मेरे धर आये हैं, केवल इन्हीं कितने ही सरल हृद-यहारी प्रीतिपूर्ण वचनोंसे राणाने मुझ ग्रहण किया। परन्तु वह उसी समय इधर उधर देखकर मेरे सहायक वाह साहब और डाक्टर केरीसाहबको न देखकर अत्यन्त दुःखित हुए और अन्तमें उन्होंने मुझे जो बाजराज नामका अश्व उपहारमें दिया था उस घोडेके बिना देखे हुए अत्यन्त विस्मित हुए और जब सुना कि वह घोडे कोटेमें मृतक होकर समाधिमें धरा गया है तब कह उठे। हाय! (बडा सोचपन भला मनुष्यचा) बडा सोच है वह तो अत्यन्त भला मनुष्य था। मैं जबतक सूर्यपोलके समीप पहुँचा तबतक उसी बाजराजके गुणोंके सम्बन्धमें बहुतसी बातचीत होती रही।

"वास्तवमें बाजराजका जैसा नाम था उसके गुण भी उसी प्रकार थे। वह सर्व साधारणको इतना प्यारा था कि उसकी मृत्युसे सभीने शोक प्रकाश किया था। इस देशमें अपने प्रभुके समान वह भी सर्वत्र विदित था। उसकी मृत्युके समय मेरी समस्त

सिपाहीसेना और कर्मचारियोंने जो दुःख प्रकाश किया था वह हृदयाविदारक था। बाजराजके समाधिस्थानमें सबने इकट्ठे होकर रुदन किया था और जब अश्वको कपडेमें लपेटकर समाधिमें स्थित करके उसके ऊपर मट्टी डाली थी। उस समय उसके सहीसने उसको समाधिपर शोक प्रकाश करते हुए महा रुदन किया था। मैंने उसकी यादगारीके लिये उसके बाल काटकर रख लिये थे। ऐसा श्रेष्ठ घोडा मैंने कभी नहीं देखा था। कुछ दिन पाछे मैंने देखा कि कोटेके राजमन्त्री जालिमसिंहने उसकी समाधिके ऊपर २० फुट विस्तारित और चार फुट ऊंची एक पाषाणवेदी तथा उसके ऊपर एक बडा पत्थरका टुकडा रखकर बाजराजकी मूर्तिको स्थापित किया था, नायबने हमसे कहा था कि इस घोडेकी योग्यताको मै जानता हूँ, इससे मैं इसका ऐसा समाधिमंदिर बनवाऊंगा कि उसके स्वामीको वैसा ध्यान भी न होगा; कोटेके रईस ही घोडोंके विषयमें सबसे अधिक अभिमानी थे, पाँडुके समयसे देववांगो बूँदीवालेके समयतक घोडोंके विषयमें बहुत युद्ध हुए है और हाडा जातिके एक वीरने लोधी बादशाहसे कहा था, हम और विशेष कुछ नहीं कहते राजपूतोंसे तीन वस्तु मत माँगना, उसका घोडा स्त्री और उसकी तलवार।

उदारचरित्र राजपूत बाँधव महात्मा टाड साहब निम्नलिखित कई एक बातें लिख कर हृदयसे इस रजवाडेके विस्तारित इतिहासका उपसंहार कर गये हैं। "बहुत थोडे दिनोंके पीछे हम राजधानीको छोडकर कोटेराजकी भगिनी कि जिनके दिये हुए जुगत् मैंने भ्रातृचिह्नस्वरूपसे अपने पास रख छोडे है, उन हाडा रानीके स्थानमें जाँयगे, राजपूतजातिके समस्त सामयिक सामाजिक आचार व्यवहार, उनकी सहानुभूति और वहांके सब मनुष्योंका मेरे साथ दया और नम्रतासे व्यवहार करनेके कारण यह रजवाडा हमारा जन्मस्थानसदृश सुखद हो गया है अब मै उस भूमिसे बिदा माँगता हूँ, किन्तु यह बिदा अन्तिम बिदा है वा नहीं इसको परमात्मा जाने। मै जहाँ भी जाऊं, मै जबतक जीता रहूंगा तबतक मेरे हृदयसे इस उदयपुरकी स्मृतिका लोप होना तो दूर रहा वरन् किसी समय भी कम नहीं हो सकेगी।

---

(१) टाड साहब अपने बडे ग्रंथकी टिप्पणीमें लिख गये हैं " यह विचित्र बात है कि जिस महीनेकी जिस तारीखमें यह भ्रमणका कार्य समाप्त हुआ इस बडे ग्रन्थको जिसके सम्पादन करनेसे मुझे यथेष्ट आनन्द और संतोष प्राप्त हुआ उसी महीनेकी उस तारीखमें अन्तिम लेखनी उठायी गयी अर्थात् सन् १८२२ ईसवी की ८ वीं मार्चको मै भ्रमण समाप्त करके उदयपुरमें गया और सन् १८३२ ईस्वीकी ८ वीं मार्चको अपने इस भ्रमण वृत्तांतको समाप्त करता हूं। मार्च मासमें ही मेरी पुस्तक छपी तथा मार्च मासमे ही मेरी इस पुस्तकका सर्वसाधारणमे प्रचार हुआ (क) मेरा जन्म भी मार्च महीनेमें हुआ था; मार्च मासमे ही इंग्लैण्डसे भारतवर्षकी ओर गया, अंतमें भारतका दर्शन कर सिंहलका उपकूल दर्शन मार्च मासमें ही हुआ। परन्तु यह निरन्तर घूमनेवाला संसार चक्र कैसा परिवर्तन करता है जिस हाथसे इस ग्रंथके चित्र तैयार हुए हैं वह इस समय मृतक है! मुझे यह दृढ विश्वास है कि समयके अनुग्रहसे उन हिंदुओंके शिल्प स्मृतिचिह्न आजतक भी विराजमान हैं उन सबके साथ ही साथ उनकी कीर्ति अक्षय रहेगी। मेरे भारतवर्षके छोडनेके छः--

"इस बडे इतिहासरूपी पर्वतकी अन्तिम चोटीके अन्तिम स्थलमें खडे होकर हम अपने पाठकोंसे बिदा माँगते है । माननीय टाड साहबके दिखाये मार्गमें हम अपने पाठकोंको ले चलकर इस अन्तिम लक्ष्य स्थानमें केवल उस अज्ञात-अज्ञेय शक्तिसे और पाठकमंडलीकी सहायतासे खडे होनेको समर्थ होते है । इस अन्तिम बिदाके समय हमारा हृदय आवेगपूर्ण है अतएव क्या कहें ? क्या प्रार्थना करें ? जो महोदय इस बडे इतिहासके सम्पादक है, आवो आज हम अपने पाठकों समेत साधुचरित्र राजपूतोंके भाई उदारहृदय कर्नल टाडकी आत्माके मंगलके लिये सर्व मंगलमय परमेश्वरसे प्रार्थना करें" ।

परिवर्तनशील समयका प्रभाव कैसा विचित्र है । मनुष्यके हृदयका वह प्रभाव वह उमंग वह तरंग वह चाव यह समय एक बार ही शान्त कर देता है। इस बडे विस्तारित ग्रन्थके पाठमात्रसे पाठक समझ जाँयगे कि यह देश क्या था और क्या हो गया, इस देशके निवासी क्या थे क्या हो गये । विदेशी टाड साहब जैसे उदारहृदय भारतके प्रेमी अब कहां है । भारतमहिलाओंके साथ भ्रातृभावका सम्बन्ध जोडनेवाले अंग्रेज अब कहां है वह भरापूरा देश कैसे दरिद्र हो गया किस प्रकारसे इसको रोग शोकने ग्रास लिया, समय तुमने ही सब कुछ किया और तुम हीं सब कुछ करोगे हाय ! काल जिस विख्यात नाम बलदेवप्रसादमिश्रने बडे उत्साहसे इस महान् ग्रन्थके अनुवादमें लेखनी उठाई थी, जो रजवाडेसे किसी प्रकार उपकार न पाकर भी रजवाडेके लिये प्राण देते थे जिन्होंने कई प्रकारके इतिहास लिखकर देवनागरीके भंडारको ऐतिहासिक ग्रन्थावलीसे पूर्ण करनेकी इच्छा की थी जो देवनागरीके प्रचारके तथा शुभचिन्तकोंके लिये निरन्तर धन्यवाद करते थे तथा जिनकी सरल ओजस्विनी लेखनी बहुत कुछ कर दिखानेमें समर्थ हुई थी । काल तुमने उनको अकालमें ही ग्रास कर लिया । तुम बडे निर्दयी हो तुमको कच्चे पक्के फलोंका विचार नहीं है अथवा तुम बालस्वभाव हो जैसे बालक कच्चे फलोंको

—महीने पीछे कप्तान वाह इंगलैंडको आये उस समय उनका स्वास्थ्य बहुत बिगड गया था । हम दोनों जने मिलकर लंदनमें, बिलजियममें और फ्रांसमें एक जगह रहे, किन्तु उस समय बात २ में राजपूतानेकी बात चलती थी। जब वह फिर भारतमें लौटकर आये और मेजर हुए तब १० वीं घुडसवार पलटनके नेता बनकर जिस समय मथुरासे मऊ जाने लगे उस समय मैं जिस प्रदेशमें बहुत दिनों रहा था वहांके निवासी दूलीके सामन्तने इनको भोज दिया था। यद्यपि उस समय वह हृष्ट पुष्ट थे तो भी मेरे वह जाति भाई बडे दुःखमें पडे । उनके साथ जो घुडसवार थे वह भी भोजमें सम्मिलित हुए वह पर्वतपर चढते समय घोडेसे गिर गये और इतनी चोट आई कि उसके लिये डाक्टरी चिकित्साका प्रयोजन हुआ । उस चिकित्सासे वह इतने आरोग्य हुए कि दो दिनके पीछे उन्हें डोलीमें बैठनेकी शक्ति हुई । किन्तु जब वह जानेके लिये डोलीमें बैठे तब उनके मित्रोंने डोलीके परदेको उठाकर उनसे बात करनी चाही तो जाना गया कि उनकी प्राणवायु पंचत्वमें लय हो गयी । उस समय उनका शव मेवाडमें दफनाया गया और उनके साथी सवारोंने अपने पाससे उनकी कबरपर एक स्मृतिचिह्न बनवा दिया । वह हमारे परिश्रमका अंतिम फल है, इनसे बीस वर्ष हमारी मित्रता रही । क्या कहूँ । वह इस ग्रंथकी समाप्तिको नहीं देख सके । ८ मार्च सन् १८३२ ई.।

विशेषरूपसे तोडते हैं वैसे ही तुम नव्य अवस्थावाले प्राणियोंका संहार करते हो । इसीमें तुमको स्वाद है । विदित होता है कि तुम जगत्‌का रोना देखकर हँसते हो । बिगाडमें तुमको रस आता है । यदि यह समग्र ग्रन्थ इस महानुभाव पुरुषकी लेखनीसे निर्गत होता तो पाठक और भी प्रसन्न होते, पर हरि इच्छामें किसकी सामर्थ्य है जो कुछ कह सके दूसरा खण्ड आधा भी न होने पाया कि आपने अपने इष्टमित्रोंको भ्राता माताको और जिनका लालन पालन करते थे उन सबोंको सदाके लिये शोकित छोड कर संसारसे बिदा ली और इसका भार मुझ जैसे हिन्दीके मर्मके अभिज्ञके हाथमें सौंप गये । उनके मनमें यही रहा कि कब इस ग्रन्थको मुद्रित हुआ देखूँ पर कालने वह न होने दिया, उस उमंगको मनमें ही लीन कर आप संसारसे बिदा हुए अच्छा हमारा वश क्या है हम आपकी इस लेखिनीसे निकली हुई वाणीको आपका स्वरूप समझेंगे । हम तो आपके लिये यावज्जीवन इसी प्रकारके वाक्य कहेंगे पर हम आपकी इस दोहावलीके साथ इस महान् ग्रन्थकी पूर्ति करते है ।

दोहा—सुमिरि राम लछमन सिया, मारुतसुत हनुमान ।
किये पूर्ण शुभ ग्रन्थ यह, हिन्दीराजस्थान ॥ १ ॥
जैम्स टाड कृत ग्रन्थका, हिन्दीमें अनुवाद ।
कियो यथामति शोधकर, द्विज बलदेव प्रसाद ॥ २ ॥
पढहिं सुनहिं करि प्रेम जो, पुरुषनके इतिहास ।
देशभक्ति, आचारमें, प्रगट करहिं उल्लास ॥ ३ ॥
निज पुरुषनकी रीतिको, ग्रहण करो सब कोय ।
उनके शिष्टाचारसों, भारत उन्नत होय ॥ ४ ॥
अति उदार गुणिजन विदित, विश्व विदित गुणखान ।
हिन्दी उद्धारक विमल, चित्त भक्त भगवान ॥ ५ ॥
वेंकटेश यन्त्राधिपति, खेमराज सुखरास ।
तिन हित हिन्दीमें कियो, यह अद्भुत इतिहास ॥ ६ ॥
छाप २ कर ग्रन्थ बहु, कीनों जग उपकार ।
कवि कोविद नित करत हैं, जिनकी जय २ कार ॥ ७ ॥
जगदीश्वर तिनपर सदा, करै कृपा भरपूर ।
द्विज बलदेवप्रसाद कहि, रोग शोक हों दूर ॥ ८ ॥
संवत् शर ऋतु अंक विधु, मार्गशीर्षशशिवार ।
पूनोतिथि पूरण कियो, ग्रंथ सुमंगल सार ॥ ९ ॥
वसत रामगंगा निकट, नगर मुरादाबाद ।
भजन करत हरिको जहां, द्विज ज्वालापरसाद ॥ १० ॥
हरिको भजन न त्यागिये, भजिये सीताराम ।
यही सार सब जगतमें, दायक अभिमत काम ॥ ११ ॥

सम्पूर्ण.

चिट्ठी.

चिट्ठी अम्बरवाले जैसिंहकी ओरसे राना संग्रामसिंह मेवाडाधिपतिके पास ईडरके विषयमें ।

श्रीरामजी ।

श्रीसितारामजी ।

जब मैं दरबार उदयपुरमें था, आपने हुक्म दिया था कि मेवाड मेरा घर है और ईडर स्थान मेवाडका द्वार है उसके प्राप्त करनेके निमित्त काबूमें रहना चाहिये उस समयसे मैं काबूमें था । आपके नायब भैयारामने फिर उसके विषयमें लिखा है और दलपतरायने चिट्ठी मुझको पढकर सुनाई सुनकर मैंने बातचीत इस विषयमें महाराजा अभयसिंहके साथ की और वह आपके सब प्रबन्ध विषयोंके साथ अनुकूलता करके उस परगनेको आपकी भेंट करते हैं और उनका लेख इस विषयमें भलीभांति प्रमाण होता है।

महाराजा अभयसिंहकी प्रार्थना यह है कि आप ऐसा प्रबन्ध करें कि आनन्दसिंह जो इस समय अधिकारी हैं जीवित न रहैं कारण कि बिना उसके मरे तुम्हारा अधिकार उचित न होगा और यह आपके अधिकारमें हैं और मेरी इच्छा भी यह है कि आप स्वयं वहां जाँय और यदि आपके समीप उसकी आवश्यकता न हो तो वहां भाई निगो-को आज्ञा हो और उसकी आज्ञामें यथोचित सेना रक्खी जाय और सब मार्ग रोककर आप उसका बध कर सिद्धान्त यह है कि वह जीवित भाग न जाय इसका ध्यान अवश्य रहै इति । आषाढ वदि ७ संवत् १७८४ ।

विवरण ।

यह पंक्ति हांसियेपर है मेरा मुजरा पहुंचे जब दीवानके पास उपस्थित था तो उसने आज्ञा दी थी कि ईडर और स्थान चौथन मेवाडके द्वार है और उनका लेना अवश्य है मैंने इसको मनमें रक्खा और दिवानजीके सौभाग्यसे यह काम पूर्ण हो गया ।

परगना ईडर महाराज अभैसिंहकी जागीरमें है और वह श्रीमान्‌की भेंट करते है यदि वह किसी औरको दिया जाय तो इसका ध्यान रहै कि मनसबदार अधिकार न पावे । ८ संवत् १७८४ ।

इसके पीछे टाड साहबने जो चार पांच संधिपत्र लिखे हैं वह हमन उन उन राज्योंके यथास्थानमें लिख दिये है इस कारण उनका दूसरी वार लिखना उचित नहीं है।

" श्रीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्-प्रेस-बंबई.

राजस्थान.

दूसरा भाग.

मरुभूमिका वर्णन.

॥ श्रीः ॥

राजस्थानका इतिहास.

दूसरा भाग २.

मरुभूमिका वर्णन.

प्रथम अध्याय १.

मुझको स्वयं कभी मरुभूमिके मध्यमें मंडोरसे आगे प्रवेश करनेका मौका नहीं मिला है। मंडोर मरुस्थलीकी प्राचीन राजधानी है और हिसारका पुराना किला इसके ईशान कोणमें और आबू नहरवाला और भुज दक्षिणमें है। सविस्तार वर्णन करनेके पहिले यह आवश्यक है कि मैं अपनी ढिठाई, अयोग्यता या अक्षमताके लिये क्षमा मांग लूँ और मैं प्रार्थना करता हूँ कि पाठकोंको यह बात ध्यानमें रखना चाहिये कि मेरी अनुसन्धान करनेवाली मंडालियोंने प्रत्येक दिशामें भ्रमण किया है और उनकी यात्रासंबन्धी दैनिक वृत्तान्त पुस्तकें उनकी शुद्धता या यथार्थताकी पुष्टिमें अकाट्य प्रमाणोंसे भरी पडी है और वे मेरे पास भटनेरसे अमरकोट और आबूसे अरोर तकके प्रत्येक थलके निवासियोंको भी लाये हैं। मैं चाहता हूँ कि लोग मेरे यथार्थ भावको समझ लें इसलिये मैं इस कार्यको सिर्फ ढाँचा ही समझता हूँ और आशा करता हूँ कि इस कार्यको देखकर भविष्यत्‌में नवीन २ खोज करनेको लोग उत्साहित हों; परन्तु प्रमाणाभावके कारण इस विषयमें यद्यपि असम्भावनीय अशुद्धियां होंगी तो भी मैं इस कार्यको प्रकाशित करनेमें नहीं हिचकता हूँ न पशोपेश करता हूँ क्योंकि मुझे इस बातसे परम संतोष है कि विस्ताररूपसे यथार्थ ज्ञान संपादन करनेवालोंका मैं मार्गद्रष्टा बनूँगा।

इतनी भूमिका बांधनेके बाद हमको सविस्तार वृत्तान्त लिखना चाहिये और यदि उपरोक्त कथित कारण न होते तो यह वृत्तान्त इस पुस्तकके भूगोल संबन्धी

---

(१) इन मार्गोंको वर्णन करनेवाली पुस्तकें, मध्य और पश्चिमी भारततक मार्गोंको वर्णन करनेवाली पुस्तकोंके सहित ग्यारह भागोंमें विभाजित हैं जिनसे इन देशोंकी मार्ग निरूपण पुस्तकें तैयार की जा सकती हैं। मेरा विचार था कि इन पुस्तकोंकी सहायतासे एक बडा और दोष रहित नकशा तैयार करूं, परन्तु मेरी अस्वास्थ्यता इस काममें बाधक होती है। ये पुस्तकें अब कम्पनीके दफतरोंमे रख दी गयी हैं और यदि बुद्धिमत्तासे काम लिया जाय तो भारतके विशाल नकशोंकी न्यूनताको पूर्ण करनेमें इनका उपयोग हो सकेगा।

भागमें संमिलित कर दिया जाता। यह वृत्तान्त ऐतिहासिक दृष्टिसे अप्रसंगिक होनेपर भी इतना सुन्दर है कि विस्तारपूर्वक वर्णन करना अधिक श्रेयस्कर होगा। मैं यहां-पर यह अवश्य कहूँगा कि जो नतीजा या परिणाम मैंने स्वयं निरीक्षण या अनुभव कर-नेके बाद परन्तु, विशेष कर उपरोक्त लिखित मार्गसे निकाले हैं उनकी पुष्टि या (समर्थन) महाशय एलफिन्सटोन (Elphinstone) ने राजदूत बनकर उत्तरीय मरुभूमिमें होकर काबुलको जाते हुए अपने मार्गका जो सुन्दर वर्णन किया है उसके द्वारा होती है और यह वर्णन मेरे पूर्ण विचारोंको सन्तोषजनक दृढता प्रदान करता है। इस जगह यह कहना अनुचित न होगा कि आगेके वर्णनमें हमको कहीं २ पर एक बात-को दुबारा लिखना पडेगा क्योंकि हम बीकानेरके इतिहासका वर्णन करते हुए इस मरुभूमिकी अनेक विशेष २ बातोंका उल्लेख कर चुके हैं। क्योंकि इस राज्य-की स्वाभाविक स्थिति मरुभूमिमें होनेके कारण उनका उल्लेख करना बहुत जरूरी था। प्रकृतिदेवीने स्वयं अपने हाथोंसे भारतके इस महान् मरुभूमिकी सीमाओंको नियत किया है : और हमारा केवल इतना ही काम है कि हम सीमा स्थित रेखापर ठीक ठीक चले जाँय जिसमें हमारी बात लोगोंके ध्यानमें ठीक २ आ जावे, इस कारण हम मरुस्थली पदका पुनः पदच्छेद करनेको बाध्य हैं–इसका मूल अर्थ है "मृत्युकादेश" यह शब्द यौगिक है और संस्कृत धातु "मृ" मरना और "स्थली" "शुष्कभूमि" के योगसे बना है और अन्तिम पद "स्थली" इन देशोंकी बोलीमें बिगडते २ "थल" में परिणत हो गया है- थल अनउपजाऊ भूमिको भी कहते हैं प्रत्येक थल किसी न किसी नामसे प्रसिद्ध है। उदाहरणार्थ 'काबुलका थल' 'गोगाका थल और खेती करनेके योग्य भूमि इन थलोंकी अपेक्षा संख्या और आकारमें इतनी न्यून है कि प्राचीन रोमन अलंकारके एवजमें जिसमें अफ्रीकाको चीताकी खालसे उपमा दी गयी है, मैं भारतकी मरुभूमिको व्याघ्रचर्मसे उपमा देना अधिक संयुक्तिक समझता हूँ। जिस व्याघ्रकी लम्बी २ काली धारियां विस्तीर्ण रेतके कटिबन्धके समान प्रतीत होती हैं और केवल न्यूनतर रेतके मैदानकी सतहपर इन रेतके कटिबन्धोंके समान असंख्यक आबाद नगर और गांव तितर बितर या छिटके हुए स्थित हैं। मरुस्थलीके उत्तरमें गरहकी सीमाको छूता हुआ एक समतल मैदान है। दक्खिनमें महान् नमकका दलदल 'रिन' और कोलीवरी है, पूर्वमें अरवली, और पश्चिममें सिन्धकी घाटी विराजमान है। अन्तिम दो सीमाएँ बहुत प्रसिद्ध है–विशेष कर अरवली यदि अरवली पहाड रेतका मार्गावरोधक न होता तो मध्य भारत कभी रेतके नीचे दब गया होता। यद्यपि यह ऊंची और अवच्छिन्न श्रेणी समुद्रसे दिल्लीतक चली गयी है तो भी जहां कहीं दरार या रास्ता मिल गया है ये रेतके उडते हुए बादल इन मार्गोंसे प्रवेश कर उर्वराभूमिके मध्यमें छोटा सा 'थल' जाकर निर्माण कर देते हैं। जिस किसी-को टोंकके निकट बुनासको पार करनेका अवसर हाथ आया है जहाँ कि रेत कोशोंतक लहरोंके सदृश प्रतीत होती है वह इस कथनको बहुत ही अच्छी तरहसे समझ सकेंगे। इसकी पश्चिमी सीमा सिन्धकी घाटीमें यात्रा या प्रवास करनेका जिस अंग्रेज यात्रीको

सौभाग्य होवे उसे नेपोलियनके वे उद्गार स्मरण आवेंगे जो उसने लिबियन मरुभूमिके विषयमें अपने मुखसे निकाले थे। मरुभूमिको छोडकर संसारका कोई पदार्थ भी समुद्रके समान नहीं प्रतीत होता है या किनारे नाइलके घाटीके समान हैं। यहांपर नाइलके स्थानपर सिंधुको रखते हैं जहांसे कि हैदराबादसे ओचतक इसके किनारे २ उत्तरकी तरफ यात्रा करनेवालेको जहांतक उसकी दृष्टि पहुंचेगी पूर्वकी तरफ रेतके दुर्गके दुर्ग दिखलाई पडेंगे जिनकी ऊँचाई प्रायः नदीकी सतहसे दो सौ फीटतक है। तब उसके हृदयमें यह कल्पना उत्पन्न होगी कि वह दरार या छिद्र जिसमें रमणीक दरारी सुशोभित है काकेशस पहाडके संपूर्ण सघन तुषारपुञ्जके एकाएक पिघल जानेसे उत्पन्न हुई होगी जिसके एकत्र भूत पानीने मरुस्थलीकी अविच्छिन्नतामें अन्तर डाल दिया है नहीं तो वह अरचोसियाके मरुभूमियोंसे संमिलित हो गया होता। हम यहांपर मरुभूमिके विषयमें भूगोल सम्बन्धी वंश परम्परानुगत कथनको दोहराते हैं अर्थात् प्राचीन समयमें प्रमर वंशके राजा इस देशपर शासन करते थे और इस बातकी पुष्टि भट्ट कविकी कविता करती है जिसमें उसने नौ दुर्गोंके नामोंका उल्लेख किया है और ये दुर्ग बडी सुन्दरता और बुद्धिमानीसे मौकके स्थानोंपर निर्माण किये जानेके कारण इस देशके ऊपर आधिपत्यताको दृढ करते है। पूंगलका किला उत्तरमें है। मंडोर समस्त मरुके मध्यमें आबू खेरालू और परकर दक्षिणमें चोटन अमरकोट अरोर और लुद्रावा पश्चिममें है और जिसके हाथमें ये नौ दुर्ग हैं मरुभूमिके ऊपर उसके आधिपत्यमें कोई भी हस्ता-क्षेप नहीं कर सकता है। इस कथाकी प्राचीनता समस्त अर्वाचीन नगरोंके भाइयोंकी वर्तमान राजधानीका नामोच्चारतक नहीं किया गया है—नामोंको उडा देनेसे कायम रक्खी गयी है। यद्यपि लुद्रवा और अरोर नामके नगर प्राचीन कालसे खंडहर या भग्न दशाका अनुभव कर रहे हैं तो भी इनके नाम उन्हीं लोगोंको विदित हैं जो कभी २ मरुभूमिकी सैर करते हैं और चोटन खेरालू इत्यादिका नाम निशान भी नकशेमें न पाया जाता यदि वह वंश परम्परानुगत भट्टकविका छन्द हमको खोज करनेके लिये न उभाडता।

हमारा अभिप्राय देशके प्राकृतिक विभागोंका अथवा एतद्देश निवासियोंकृत विभागोंका जैसा कि पूर्व कह आये हैं। जिनको वे 'थल' कहते हैं। वर्णन करनेका है और इनका सविस्तर वर्णन करनेके बाद हम इस देशकी भिन्न श्रुतियों और उन प्रसिद्ध नगरोंका वर्णन करेंगे—जो अबतक वर्तमान है या नाश हो गये हैं। इसके बाद जैसलमेरसे अन्य स्थानोंको जानेवाली या जैसलमेरको आनेवाली खास २ रास्तोंका वर्णन करके इस लेखको समाप्त करेंगे। समस्त बीकानेर और अरवलीके उत्तरमें स्थित शेखावाटीका वह भाग इस मरुभूमिमें शामिल है। यदि पाठक कनोड (Kanorh) नगरको जो अंग्रेजी राज्यके सीमाके अन्तर्गत है नकशेमें देखें तो वह मालूम करेंगे कि मि० एलफि-स्टोनके कथनानुसार मरुभूमिका प्रारम्भ या श्रीगणेश यहांसे ही होता है। "दिल्लीसे

---

(१) यह चोटनसे १५ मील उत्तरमें है।

(२) उन्होंने १३ अक्टूबर सन् १८०८ को दिल्लीसे कूच किया था।

कनौड़ (मेरे नकशेका कनौड) तककी दूरी अंग्रेजी राज्यमें करीब सौ मीलके है और इसके वर्णन करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है। सिर्फ इतना कहना काफी है कि यह देश रेतीला होनेपर भी खेतीके योग्य है। कनौड पहुंचनेपर हमने पहिले पहिल मरुभूमिका नमूना देखा जिसके देखनेके लिये हम बडे ही उत्सुक और व्यग्र थे। कनौडसे तीन मील पहिले ही हमको रेतकी पहाडियाँ दृष्टिगोचर हुई जो पहिले तो झाडियोंसे आच्छादित थीं परन्तु पीछेसे धसकती रेतकी नग्न या पुष्प पत्र विहीन राशिकी राशि समुद्रके लहरोंके समान उठती हुई दिखलाई पडी। जिनकी सतहपर बायुने वर्फके ढेरके समान चिह्न बना दिये थे इन पहाडियोंमें होकर सडकें भी बनी हुई थीं जो जानवरोंके चलनेसे पुख्ता हो गई थीं, परन्तु मार्गसे हटते ही हमारे घोडे घुटनोंतक रेतमें धस जाते थे। यह पहिला दृश्य था और राजपूत सिंगाना, झुंझनू होते हुए चुरू पहुँचा जब कि वे बीकानेरमें घुसे। शेखावाटीके बारेमें जिसको उसने छोड दिया था मि० एलफिंस्टोन लिखते हैं कि इसकी पश्चिमी सीमा और बहाबुलपुरके बीचवाला दो सौ अस्सी मील लम्बे मैदानसे मुकाबिला करते हुए भी यदि यह मरुभूमिमें शामिल किया जाय तो अपनी पदवीको खोता हुआ मालूम पडता है क्योंकि इस मैदानके अंतिम सौ मीलमें मनुष्यके दर्शन भी नहीं होते हैं। न जीवनाधार जल है और न हराभरा वृक्ष नेत्रको आनन्द देनेके लिये मिलता है। शेखावाटीसे पूगुलतक हमारा मार्ग पहाडियों ओर धसकती और भारी रेतकी घाटियोंमें होकर था। ये पहाडियाँ ठीक २ उन पहाडियोंकी मानिन्द थीं जिनको बाज वक्त हवा समुद्रके किनारे बनाती है। परन्तु इनकी (मैदानवालोंकी) ऊंचाई अत्यन्त अधिक है जो वीस फूटसे लेकर सौ फुटतक थी लोग कहते है कि इनके स्थान और आकारमें वायुद्वारा परिवर्तन भी हुआ करता है और गर्मीके दिनोंमें इन पहाडियोंमें होकर चलना कठिन है, या यह पहाडी मार्ग उडते हुए रेतके बादलोंके कारण अधिक भयानक हो जाता है, परन्तु शीतऋतुमें जब मैंने उनको देखा था तब वे बहुत कुछ अंशोंमें अचल प्रतीत होती थी। क्योंकि फोक बबूल और बटके वृक्षोंके अलावाँ उनके ऊपर घास भी उगी हुई थी। जिसके कारण दूरसे उनपर हरित चद्दर सी पडी हुई मालूम पडती थी। ऐसे भयानक रेतके पहाडियोंके बीचमें कभी २ गाँव दिखलाई पड जाता है, नाजकी छोटी राशिके समान नीची दिवालें और गोपुच्छाकार छतवाले घास फूसके कुछ झोपडोंको यदि गांवका नाम दिया जा सके''। तो भी महाशय एलफिन्स्टोन द्वारा जो यथार्थ और आडम्बरशून्य वर्णन करनेके लिये प्रसिद्ध है उन्हींका लिखा हुआ मरुभूमिक उत्तरी भागका यह वर्णन आगे पाठकोंको यथार्थ विचार बाँधनेमें अधिक सहायता देगा।

---

(१) मि. एलफेन्स्टोन लिखता है '' हम कभी भी लम्बी सफर नहीं करते थे । अधिकसे अधिक छव्वीस मील और कमसे कम पन्द्रह मील हम लोग चला करते थे, परन्तु मार्गके चलनेसे जो थकावट हमको मालूम पडती थी उसका और दूरीका कुछ सम्बन्ध ही नहीं होता था। हमारी श्रेणी या कतार दो मील लम्बी होती थो जब कि हम बहुत हो मिलकर चलते थे। रेतकी पहाडियोंको बचानेके अभिप्रायसे हमको मार्गमें बहुत घूमकर जाना पडता था या चक्कर काटना पडता था।—

इतना भी कथन करनेके अनन्तर और इस देशकी बाह्याकृति देखकर जो कुछ अबतक कहा है उसको स्मरण रखते हुए हम इस मृत्युभूमिके भिन्न २ थलोंका और इसमें उपस्थित यत्र तत्र उर्वराभूमिका विशेष रूपसे वर्णन करते है । मेरे विचारमें हिन्दुओंके प्राचीन भूगोल संबन्धी विभागको छोड देना लाभदायक या अधिक उपयुक्त होगा; जो मंडोरको मरुस्थलीकी राजधानी बनाते हैं, क्योंकि समस्त मरुभूमिके मध्यमें होनेके कारण और उसके चिह्न या लक्षण और स्थानकी विवेचन करते हुए जैसलमेरको ही मरुस्थलीकी राजधानी कहना उपयुक्त जंचता है । वास्तवमें यह उर्वराभूमि प्रत्येक दिशामें बडे २ थलोंसे आवृत है, जिनमेंसे कुछ चालीस मील चौडे हैं । जहां कि मनुष्य और उसके खाद्य पदार्थके दर्शनतक दुर्लभ हैं । हम जैसलमेरसे मारवाड जायँगे और लूनीको बिना पार किये हुए झालौर और सेवाचीका वर्णन करेंगे, फिर पाठकोंको पर-कर और वीरवहके सज्ञात राजमें ले जायँगे जो रानाकी उपाधि धारण करनेवाले चौहान वंशके राजाओंके अधीन हैं। अर्वाचीन राजपूतानेकी राजकीय सीमाओंके निकट रहते हुए वर्त्तमान समयमें सिन्धसीमान्त,धात और ओमुरसुमराके देशोंका वर्णन करके हम दाऊद-पुत्र और सिंधुनदीगत घाटीका किंचिन्मात्र वर्णन करते हुए इस लेखको समाप्त करेंगे ।

"जिसोहं (जैसलमेर) की पहाडीसे इधर उधर छिटके हुए प्रत्येक नगर या गाँवकी चर्चासे इस सविस्तर वृत्तान्त पर अधिक प्रकाश पडेगा । त्रिकूट पर्वतके पश्चिम-की ओर इस रेतीले समुद्रसे आरपार सिन्धु नदीके नील जलतक दृष्टि डालता हुआ या दृष्टिको फेंकता हुआ यदि कोई दर्शक हैदराबादसे ओचतक इस नदीके संपूर्ण प्रवाह मार्गको दृष्टिगोचर कर सके तो उसको इन रेतीकी पहाडियोंके बीचमें उन स्थानोंपर जहाँ कहीं पानी सुगमतासे मिल सकता है । छोटी २ वस्तियां बसी हुई दिखलायी पडेंगी । इस समस्त प्रदेशमें जिसकी लम्बाई चार सौसे पांचसौ मील है और कोणगामी चौडाई एक सौ मील है तितर वितर झोपडेवाले छोटे २ गांव । हैं जिनमें मरुभूमिके गड-रिये अपनी भेडोंके झुण्डको चराते हुए या अन्नके लिये छोटे २ उर्वराभूमिके टुकडोंको जोतते हुए रहते हैं। उसको शायद ऊँटोंकी एक लम्बी कतार देख पडेगी यह शब्द इस देशमें काफिल" या कारवानामसे अधिक प्रसिद्ध है । जो प्राय: अनिश्चित रास्तेमें चिन्तासहित गमन करते हुए दिखलाई पडें और चारून हांकनेवाला हर एक मंजिलपर अपनी पगडीको शिरेमें गांठ लगाता है । वह कदाचित् घोडों या ऊँटोंपर सवार सेहरीस हमारे मरुभूमिके या सहाराके: बदद्दू–के झुंड या समूहको देखे; वह या तो कारवांके लूटनेक घातमें बैठा हो या 'तुर' या वाबके निकट शान्तिपूर्वक अपने भेडोंके चारानेवाले राजूर या मंगुलि-याके गडरियोंके झुंडको हांकनेके कम भयानक काममें लगे हो । या निरन्तर हरित

—रास्ता इतनी तंग थी कि दो ऊँट साथ २ या लगे २ नहीं चल सकते थे और यदि कोई ऊँट जरा भी नियमित रास्तेसे हटा कि बर्फके समान रेतमें धस जाता था" । काबुल राज्यका वर्णन प्रथम भाग

(१) जिस पहाडीपर जैसलमेर स्थित है उसे त्रिकूट कहते हैं।

"झलेके" झोपडेमें रखनेके लिये जो एक साथ ही अन्न भरने और धूपसे बचानेका डबल काम देते हैं। अन्न लूटते हो' उसको एक ऐसा गिरोह दिखलाई पडे जो नवीन चरागाहकी तलाशमें अपने भेडोंके झुंडको लेकर उस स्थानसे जिसको उसने रस चूस लिया. है या अन्न उत्पन्न करनेके अयोग्य हो गया है चल पडा हो।

"यदि सौभाग्यवश दूसरे दिन उनको नवीन आहार या अनास्वादित झरना मिल जाय तो वे अपने ग्रह या दिनदशा अच्छी समझें और उसको भोग विलासकी सामग्री ख्याल करेंगे।"

या वे राबडी–यह भोजन उनके नूमिदी भाइयोंके हौसकौस (honskou) भोजनके सदृश है–पकाते हुए देखे जाँय या अपने छोटे उर्वराभूमिके 'वाह' से प्यास बुझाते हुए दृष्टि पडेंगे जिनको (भूमिको) वे अपने अधिकारमें दृढतापूर्वक रखते हैं जबतक वह हरा भरा रहे या पशुओंके चरानेके योग्य बना रहे या जबतक कोई दुसरा ही प्रबल गिरोह आकर उनको अधिकाररहित न कर दे।

हमको यहाँपर इस बातका विचार करनेके लिये ठहरना चाहिये या ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिये कि भारतके मरुभूमिके 'बाह, बाबा या वह' में कहीं यूनानियोंके 'ओसिस'–'एलवह, Elwah का अपभ्रंश–या एलोह Flloao जैसा कि बल जोनीने (लिबियन मरुभूमिके वृत्तान्तमें जब कि वह अम्मन Ammin का मंदिर तलाश कर रहा था) लिखा है–का पता न लग जाय। असंख्य शब्दोंमेंसे जो पानीके लिये इन शुष्कदेशोंमें व्यवहृत किये जाते हैं उदाहरणार्थ 'पार, रार तिरदे वाह बाबा, वह अनेक शब्द खासकर झरने या तालके लिये ही व्यवहारमें आते हैं। जब कि अन्तिम शब्द वाह यद्यपि प्राय: उसी अर्थमें इस्तेमाल किया जाता है तो भी अधिकतर बहते हुए पानी या नदीके लिये वहाँके लोग बोलते हैं या कहते हैं "एलवह (Elwah) सर्वरूपसे पानीके लिये ही व्यवहृत होता है। 'दे' शब्द सामान्यरीतिसे तालके लिये इस्तेमाल किया जाता है। परन्तु प्राय: बडी २ नदियाँ गरमीके ऋतुमें बह जानेपर महान् अचल राशि जलको छोड जाती है उसको हमेशा 'दे' कहकर पुकारते ह। राजपूतानामें ऐसे ताल रखनेवाली अनेक नदियाँ हैं, इनमेंसे एक तालका नाम 'हाथीदे, है जो इस बातको प्रकट करता है कि इसमें हाथी: बुडाऊतक पानी ह। अब जलके लिये सामान्यरूपसे प्रचलित शब्द वाह में 'दे' को जोडनेसे 'वादी' बन जायगा, अरबके लोग बहते हुए पानी या नदीको वादी शब्द इस्तेमाल करते हैं और साधारणता आधुनिक यात्रियोंके द्वारा अफ्रीकामें रहने योग्य स्थानके लिये व्यवहृत किया जाता है यदि यूनानियोंने 'वादी' शब्द किसी हस्तलिखित प्रतिसे लिया तब तो स्थान विपर्ययका कारण सुगमतापूर्वक बतलाया जा सकेगा 'वादी' उर्दूमें इस तरह लिखी जावेगी और एक नुक्ताके लगानेसे 'वाजा' आसानीसे 'ओसेस' में

(१) जब मैं इस शब्दकी व्युत्पत्ति अनुमानसे लिख रहा था, मैं नहीं जानता था कि किसी दूसरेने भी इस शब्दपर कुछ लिखा था। मुझे पीछेसे मालूम पडा है कि स्वर्गवासी एम लें गिलबने अर्वा शब्दरागसे ओसिस यूनानियोंने इसको कई तरहसे लिखा है जैसे auasis, lasis, huasis.—

रूपान्तर हो सकेगी दुहरानेकी जोखिम उठालेने पर भी हमको यहांपर इस रेतके समुद्रको पृथकत्व प्रदान करनेवाले कुछ महान् चिह्नोंका वर्णन करना चाहिये और 'रो' और थलका अन्तर जिनसे पाठकोंको यात्रा वर्णन या वृत्तान्तमें बारंबार काम पडेगा बतलाकर हम तुरन्त ही मध्यमें कूद पडेंगे।

हम पूर्वमें ही किसी स्थानपर कगर नदीके लय या सूख जानेकी वंशपरम्परागत वार्ताका उल्लेख कर आये हैं जिसमें हमने यह कहा है कि उत्तारी मरुभूमिके तहसनहस होनेका एक भी कारण है। इस घटनाका वर्णनात्मक छंद या मिसरा मुझे याद नहीं आता और न सोडा नरेश हमीरका ही, जिनके राज्यकालमें यह चमत्कारिक घटना हुई है, कुछ वृत्तान्त मिलता है। इस प्राचीन वंशपरंपरागत कविताकी उपयोगिताकी तरफ मैंने अनेक बार पाठकोंका ध्यान आकर्षित किया है और सौभाग्यकी बात है कि उसका एक नवीन उदाहरण पाठकोंको भेंट करता हूँ क्योंकि भट्टीके इतिहासमें पारस्परिक वैवाहिक सम्बन्धी घटनाका जो उल्लेख किया गया है उसमें हमीरका नाम पाया जाता है। हमीरका समकालीन जैसलमेरका दूसौज था जो संवत् १०१० या सन् १०४४ ई. में राजसिंहासन पर बैठा था, इसलिये जिन हमीरका ऊपर उल्लेख हो चुका है उनका ठीक २ काल निर्णय करनेमें कुछ संशय नहीं है। कगर नदी—जो सेवलूकसे निकल कर हांसी हिंसारमें बहती है--एक समय भटनेरकी दावालाक नीचे बहती थी और वहांके लोग अब भी उसके प्रवाहमार्गमें कुँआ खोदते हैं। भटनेरके बाद कगर नदी रंगमहल बुल्लर, फूलरा और खदलेके समतल मैदानोंमें होकर बहती हुई किसीके मतानुसार ओचके नीचे; परन्तु अबूबरकरके (जिसको मैंने सन् १२०९ ई. में नवीन स्थानोंको खोजनेको भेजा था और उसने शाहगढके निकट नदीके सूखे प्रवाह मार्गके जिसको

—की व्युत्पत्ति बतलाई, डाक्टर वेट अत्यन्त रोचक व्युत्पत्तियोंकी सूचामें (एशियाटिक जनरल मई सन् १८१३ देखो) (वारु) से बतलाते हैं और वसि शब्द (वस्) धातु (रहना) से बना है। वसि Nasi और eunsi करीब एकसी सादृश्यता रखते हैं। मेरे दोस्त सर डबल्यू ऊसलेने करीब २ वादीका वही अर्थ मुझे बतलाया जैसा कि रिचर्डसनके द्वारा प्रकाशित कानसनकी पुस्तकमें मिलता है-घाटी, मरु भूमि, नदीका प्रवाह मार्ग-नदी; wadey at-kahis .वादी-अल-कबीर-बडी नदी विगडकर ग्वाडसक्यूवरमें परिणित हो गया है, यह उदाहरण डिहरबोहरमें दिया गया है (Seeadi Gehennem) और कामसनने भी, जो दिया ह जो जिसने यूरोपकी समस्त भाषा-(ओंमें) अंग्रेजी शब्द पानेके लिये) water वाटरका पता लगाया है-The sason wolter, the greek hudor the iskindsicudr, the Salvanic wod (इस लिये वोदर या ओदरके अर्थ नदी) इन सब उपरोक्त शब्दोंकी व्युत्पत्ति वह नदी या संस्कृत वहसे हो सकती है और यदि डाक्टर डबल्यू यात्रा वर्णन या ७९ Hinerary का ३४१ सफाको देखेगा तो उनको बडा ही आश्चर्य होगा कि (बस) bas शब्द उनकी व्युत्पत्तिको दृढता प्रदान करता है-(बस) शब्द निवास करके। योग्य स्थानके लिये व्यवहृत होता है। (बस्ती) शब्द जो प्राय: उस वर्णनमें आया है (वसन (बना है, (वासी) रहनेवाला वस स्थान शायद वह शब्दसे निकले हैं जो ओसिसके लिये अपरि हार्य हैं।

सगर कहते है पार किया था) मतानुसार जैसलमेर और रोरोबेसरके दरमियानमें नाशको प्राप्त होती है। यदि यह बात सत्य प्रमाणित हो जाय तो हम तुरन्त कह सकेंगे कि कगर नदीने डूराकी एक शाखसे मिलकर सांगराको अपना नाम दिया-यानी सागरा नदी कगरमें मिल गयी और आगे चलकर कगर नामसे प्रसिद्ध हुई। छोटी छोटी नदियोंका यही हाल होता है-जो (सांगरा) लूनीसे मिलकर सिन्धु नदीके डेल्टाके नदीके मुखपर त्रिभुजाकार भूमिकी डेल्टा कहते हैं पूर्वीय शाखाको बढाती हैं दूसरी ओर शायद सबसे बढकर वर्णन करने योग्य बात मरुभूमिमें लूनी या खारी नदी है जो अपनी अनेकों सहायक नदियोंके साथ अर्वली पर्वतके झीलों या झरनोंसे निकलती है। मारवाडमें लूनी नदी उर्वराभूमि और मरुभूमिकी सीमा है-लूनी नदी मारवाडके मरुभूमि और उर्वरा भूमिको विभक्त करती है-और जैसे ही इस देशको छोडकर चौहानोंके थलकी तरफ बढती है यह चौहान समाजको विभाजित करती है और सीमास्थित भूगोल संबन्धी रेखा बनाती है,-और स्वयं इस थलकी भोगोलिक सीमा बनती है। पूर्वीय भाग शिव बाहका राज्य कहलाता है और पश्चिमी हिस्सा पारकर हम आगे चलकर फिर चौहानोंके देशका वर्णन करेंगे जिसके दक्षिणकी तरफ मरुभूमिके अद्भुत २ चिह्न या आकार पाये जाते हैं। इस पुस्तकके आरम्भमें भौगोलिक वृत्तान्तके वर्णनमें 'रन' या 'रिन' के बारेमें किंचिन्मात्र चर्चा हो चुकी है।यह विस्तीर्ण नमकका दलदल जो चौडाईमें डेढ सौ मीलसे अधिक है, खासकर लूनी नदीके द्वारा निर्माण किया गया है। जो लोमन झील बनानेवाली लूनी नदीके सदृश आगेके निकासपर फिर अपना वही नाम धारण करती है, और नारायणका मन्दिर इसके मुखपर; जहां यह समुद्रसे संगम करती है, बना हुआ है और ब्रह्माका मन्दिर इसके उद्गमस्थान पुष्करमें है, इस कारण इसके दोनों ही उद्गम और संगम स्थान पवित्र चिह्नोंसे विभूषित हैं। 'रन' या 'रिन' 'अरण्य' शब्दका अपभ्रंश है और कीचडसे संतप्त मरुभूमिकी अपेक्षा गर्मीकी ऋतुमें इस संसारमें कोई भी वस्तु अधिकतर भयानक या निर्जन नहीं है और इस अनोखे स्थानमें खर (गदहा) या जंगली गदहा निवास करते हैं जिसका एकान्त प्रेम श्रेष्ठ कवियोंकी अमर कविताके द्वारा लोगोंके दिलमें अबतक जीवित है। यह विस्तीर्ण नमककी कोठी आधुनिक कालकी रचित या रचना नहीं है, क्योंकि यूनानियोंके लेखोंमें हमको इसका पता मिलता है जिनकी दृष्टिसे यह उस समय भी न बच सका और हमारे (अंग्रेजोंके) 'रन' या 'रिन' शब्दकी अपेक्षा यूनानियोंका 'एरीनोस, मूलशब्द 'अरण्य'से अधिकतर घनिष्ठ सादृश्यता रखता है। यद्यपि विशेष करके यह दलदल नामकके लिये लूनीका ऋणी है, जिसका और उसकी सहायक नदियोंका प्रवाहमार्ग (bed) नमककी तहोंसे परिपूर्ण है तो भी सिन्धनदीके बाढसे नमक इसमें प्रचुर परिणामसे मिलता है और अपने अथाह पानीके लिये शायद यह महान् नदी सिन्धुकी ऋणी होवे। सिन्धु और नाइल नदीकी घाटियोंके बीचमें एक और भौतिक सादृश्यता है। जिसको नेपोलियनने एक बार ही प्रकृतिका साधारण

व्यापार कहा है । मेरा संकेत मौरिस झीलके जन्मकी तरफ है । यह काम मनुष्यकी शक्तिके बाहर है ।

क्योंकि पाठकोंको थल और रो शब्दोंसे प्रायः सामना करना पडेगा इसलिये इनके अन्तरको जानना उनके लिये नितान्त आवश्यक है । थल शुद्ध और ऊसर मैदानको कहते हैं । और रो उस मरुभूमिके लिये व्यवहृत होता है जिसमें स्वाभाविक तृणादिक उत्पन्न होते हों; वास्तवमें मरुभूमिका जंगल ।

लूनीका थल--यह थल नदीके दोनों किनारों परके देशको सम्मिलित करता है जिसमें झालौर और उसके अधीन राज्य स्थित हैं । यद्यपि नदीके दक्षिण तरफका देश इसमें नहीं शामिल किया जा सकता है तो भी इसका इससे इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि हम अपने हाथमें आया हुआ इसके वर्णन करनेका अवसर न खोवेंगे ।

झालौर--यह प्रदेश मारवाडके उत्तम भागोंमेंसे एक भाग है । सुकी और खारी नदियां जो झालौरको सोवाचीसे पृथक् करती हैं । अनेक छोटी २ नदियोंके साहित अर्वली और आबू पहाडोंसे निकलकर इन प्रदेशोंमें होकर बहती हुई इनके तीन सौ साठ नगरों और गांवोंकी उपजाऊ शक्तिको बढाती हैं । जिनसे मारवाडको कुछ अंश राजस्वका मिलता है।झालौर उस भौगोलिक पदके अनुसार जो प्रायः उद्धत किया गया है, मरुके नौ दुर्गोंमेंसे एक दुर्ग था । जब कि मरुस्थलीमें प्रमारवंशका आधिपत्य था । झालौर कब प्रमारोंसे छीना गया था इस बातका पता लगानेके लिये हमारे पास कोई साधन नहीं है । परन्तु यह बहुत दिनोंतक चौहानोंके आधिकारमें बना रहा और जो प्रसिद्ध युद्ध चौहानोंने अपनी राजधानीके रक्षार्थ अलाउद्दीनके साथ सन् १३०१ ई० में किया था उसका वर्णन फरिस्ता और उनके भाटोंके ग्रन्थोंमें पाया जाता है ।चौहान वंशकी यह शाखा मल्लिनी नामसे प्रसिद्ध थी और यहाँ तथा हाडौतीके इतिहासमें इसका उल्लेख फिर किया जायगा । इसमें चौहान राज्यका वह हिस्सा शामिल था जो हथराजके नामसे विख्यात था जिसकी राजधानी जूनाचोटन थी, और अजमेरसे परकर तक लूनीके किनारेके देशोंमें इस वंशका राज्य था और जिससे यह मालूम पडेगा कि चौहानोंने अपने अग्निकुलोत्पन्न प्रमार भाइयोंका नाश करके खारी नदीके किनारे किनारे परकरतकका देश अपने अधीन कर लिया था ।

---

(१) नील नदीकी घाटीकी अधिकसे अधिक चौडाई चार योजन है और कमसे कम एक योजन (Lague) है बस सिंधकी घाटीका तंगसे तंग भाग नील नदीके बडेसे बड भागके बराबर है अकले मिश्रमें ही अस्सी लाख जनसंख्या कही जाती है, तब सिंधमें कितनी हो सकती है । किसानोंकी हालत जैसा कि वानरिम लिखा है राजपूतानाके किसानोंके हालतके अनुरूप है, गांव किसी न किसीकी जागीर है जिनको राजाने प्रसन्नतापूर्वक उनको दे दिया है; किसान अपने स्वामीको लगान अदा करते हैं और भूमिपर उनका अधिकार सदा चला जाता है और संसारमें कैसी ही राज्यक्रांति या उलट पलट क्यों न हो परन्तु इनके हक्क या स्वत्वका बाल भी नहीं बांका होता है । यह स्वत्व अब भी है । यूसफने छीन लिया था परन्तु सिसोस्ट्रिसने उनको पुनः प्रदान कर दिया है

सोनगिर या स्वर्णगिरि इस दुर्गका अति प्राचीन नाम है और पुरानी पदवी 'मल्लिनी' का सोनिगुरोंके निमित्त परित्याग करके, निज जातिके चिह्न स्वरूपमें या पृथक्त्व सूचनार्थ, चौहानोंने इस उपाधिको शिरोधार्य किया था। यहाँ उन्होंने अपने रक्षक देव मल्लिनाथ माळीके देवका मन्दिर बनवाया था, जो शिवजीके पुत्रोंके इस देशमें प्रवेश करनेतक अपने स्थानपर बने रहे, कि जब सोनगिरका नाम बदलकर झलन्दरनाथ रक्खा गया, जिनका मन्दिर दुर्गसे पश्चिमकी तरफ एक कोशपर है। यह बात अबतक निश्चित नहीं हुई है कि झलन्दरनाथ गंगाके प्रदेशोंमेंसे लाये गये थे या झलन्दरनाथ और मल्लिनाथको लडाकू मलनिस छोड गये थे, परन्तु यदि यह सिकन्दरके शत्रुओंको शेष चिह्न प्रमाणित हो जाय जिनको उसने तब मुलतानसे निकाल दिया था। क्योंकि उनके पडोसमें झलन्दरकी (जो बाबरके समयमें हिंदुओंका प्रसिद्ध तीर्थस्थान था) गुफाएँ होनेके कारण इस सम्भावनाको कुछ दृढता प्राप्त होती है। अस्तु जो कुछ हो राठौरोंने रोमन जेताओंके समान इन प्राचीन देवोंको अपने देवताओंमें संमिलित कर लिया। मल्लिनाथका चित्र मंडोरके पत्थरपर खुदी हुई मूर्तिको देखकर खींचा गया था। निर्वासित सोनिगुरोंके वंशज अब चित्तलवाना प्रदेशमें वास करते हैं जो लूनीके डेल्टाके निकट है।

भद्राजून मेहवो--जसोल और सिन्द्रीकी बडी २ जागीरोंके अलावा, सेवाची मनिमल सांचोर मोरसेनके निकृष्ट और खालसा जिले झालोरके अन्तर्गत है। जिसे प्रदेशकी भूमि उपजाऊ, पानी सतहके निकट और लंबाई, चौडाई नब्बे मील है, उसको एकमात्र सुराज्यकी आवश्यकता है जो इस प्रदेशको इसके समान आकारवाले दूसरे प्रदेशोंके बराबर उत्पादक बना सकें और जिसकी आमदनीसे जोधपुर नरेशका निजी खर्च भरपूर चल सकता है, परन्तु राजधानीकी अराजकता; प्रबन्धकर्ताओंकी बेईमानी और मरुभूमिके सेहरोस और आब अरबलीके मीनाओंके लूटके कारण इसकी भयंकर अवनति हुई न। इस देशमें अनेक पहाडियां (इनमेंसे एकपर दुर्ग बना है) पायी जाती है। परन्तु यद्यपि इनमेंसे एक भी मेवाडकी ऊंची भूमिसे संलग्न नहीं होती है तौ भी आबूतक इसके खंड पाये जाते हैं। सिर्फ एक बातमें यह मरुभूमिकी सादृश्यता रखता है अर्थात् उद्भिज पैदावारमें, क्योंकि झाई बबूल करील और थलेक

(१) मुलतान और जूना चोटनके अर्थ चाहान तानके एक ही अर्थ है अर्थात् प्राचीन स्थान और दोनों मे ही माली या मालिनी जातिकी थी जिनको लोग चौहानके वंशज बतलाते हैं; और यह आश्चर्यकी बात है कि झालौर (प्राचीन झलन्दरनाथ) में वे ही देवता पाये जाते हैं जो पंजाबमें उनके रहनेके स्थानोंमें मिलते हैं यानी मल्लिनाथ, झलन्दरनाथ, और बालनाथ। अबुलफजल कहता है (वे. १०८ भाग दूसरा) "बालनाथकी गुफा सिंध-सागरके मध्यमें है;" पर बाबर "सिंध नदीके पूर्वमें पांच मंजिल जुदको पहाडीके नीचे बालनाथ जोगीकी गुफा नियत करता है" और यह वही स्थान है जिसपर यदुवंशियोंका अधिकार था जब कि भारतके बाहर उनका नायक बलदेव या बलनाथ जो देवता समझकर पूजे जाते हैं-उनको ले गया था।

दूसरे प्रकारकी झाडियों या छोटे २ वृक्षोंके सिवाय किसी किस्मकी लकडी इसमें नहीं पायी जाती है।

झालौरका उत्तम दुर्ग मारवाडकी दक्षिणी सीमाकी रक्षा करता हुआ उस श्रेणीके सिरेपर अपना मस्तक उन्नत किये हुए खडा है जो उत्तरकी तरफ सिवानातक चली गयी है। यह तीन सौसे चार सौ फीटतक ऊंचा है और वाल और बुर्ज जिनपर तोपें चढी हुई हैं इसके अधिक सुदृढ बना रही है। इसमें चार फाटक हैं, शहरकी तरफवाला फाटक 'सूरजपोल' के नामसे प्रसिद्ध है और वायव्य कोणका फाटक 'बालपोल' कहलाता है जहां जैनियोंके धर्मगुरु पारसनाथका मन्दिर विद्यमान है। किलेके अन्दर बहुतसे कुएँ और दो बडो २ बावडियां है और उत्तरकी तरफ पहाडी नदियोंको बांधकर छोटीसी झील बनायी गयी है, परन्तु छे महिनेसे अधिक कभी भी इसका पानी नहीं चलता है। नगर जिसमें तीन हजार और सत्रह मकान है किलेके उत्तर और पूर्वकी तरफ बसता है और सुकरी नदी करीब एक मील इससे पूर्वमें बहती है। इस नगरके चारों तरफ दीवाल खिंची हुई है और एक दुर्ग है जिसपर इसके रक्षाके लिये तोपें चढी हुई हैं और नगरमें भिन्न २ जातियोंके मनुष्य निवास करते है, परन्तु यह आश्चर्यकी बात है कि इस रंग बिरंगी आबादीमें सिर्फ राजपूतोंके पांच ही वंश या घर पाये जाते हैं निम्नलिखित मनुष्यगणना सन् १८१३ ई० में मेरी एक मंडलीके द्वारा की गई थी।

नाम जाति.	मकानोंकी संख्या.
माली	१४०
तेली या धाची	१००
कुम्हार	६०
ठठेरा	३०
धोबी	२०
सौदागर	११५६
मुसल्मान	९३६
खटिक	२०
नाई	१६
कुलाल	२०
जुलाहे	१००
रेशमके जुलाहे	१५
जैन पुरोहित	२
ब्राह्मण	१००
गूजर	४०
राजपूत	५
भोजक	२०

मीना	६०
भील	१५
मिठाईवाले या हलवाई...	८
लुहार और बढई	१४
मनिहार	४

इस मनुष्यगणनाकी सत्यता प्रमाणित हो चुकी थी लूनी और सुकरीके बीचका देश सेवांची कहलाता है और जिस पर्वतश्रेणीपर झालौर स्थित है उसी श्रेणीके एक शिखरपर सिवाना नामका एक दुर्ग बना हुआ है जो इस प्रदेशकी राजधानी है। इस देशका विशेषरूपसे वर्णन करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है क्योंकि इसकी प्राकृतिक दशा वैसी ही है जैसी कि अभी वर्णित हो चुकी है। प्राचीन कालमें यह नागौरके सहित मारवाडके युवराजकी जागीर थी, परन्तु धौकलसिंहको गद्दी देनेके बाद राज्यमें शामिल कर ली गयी है। वास्तवमें मारुका कोई भी उत्तराधिकारी नहीं है फरिस्ता अलाउद्दीनके प्रतिकूल सिवानाके बचावका वर्णन अपनी पुस्तकमें करती है।

माचोल और मोरसेन दो राजा लूनीके अन्दर झालौरके आश्रित हैं मीनाओंकी लूट और उपद्रवसे बचानेके लिये माचोलकी आग्नेय सीमापर एक दुर्ग स्थित है। मोरसेन झालौरके पश्चिमी शिरेपर है और इसमें एक दुर्ग और पांचसौ घरोंका नगर है।

भीनमल और सांचोर दक्षिणकी तरफ दो प्रसिद्ध उपभाग हैं। दोनों मिलकर करीब शेष सूबेके समान आकारमें हैं। प्रत्येक उपभागमें आठ गांव हैं। कच्छ और गुजरातको जानेवाले राजमार्गपर ये नगर होनेके सबबसे अति प्राचीन कालसे व्यापारके लिये प्रसिद्ध हैं। भीनमलमें पन्द्रह सौ घर कहे जाते हैं और सांचोरमें करीब आधेके बडे २ धनी महाजन यहां रहा करते थे। परन्तु भीतर बाहर दोनों ओरसे अरक्षित रहनेके कारण या भीतरी और बाहरी अशान्तिसे इन शहरोंको बहुत कुछ धक्का लगा है। जिनमेंसे पहिला अपने बाजारके धनके कारण "माल" नामसे प्रसिद्ध है।

वहां बाराहका मंदिर है (शूकरावतार) जिसमें शूकरकी मूर्ति पत्थरमें खोदकर बनाई गई है। सांचोर दूसरी ही बातके लिये प्रसिद्ध है। क्योंकि यह सांचोरा नामक ब्राह्मणोंका जन्मस्थान है। जो इन देशोंके अत्यन्त प्रसिद्ध मंदिरोंके पुरोहित नियत किये जाते हैं। उदाहरणार्थ, द्वारका, मथुरा, पुष्कर इत्यादि सांचोर सतीपुराका अपभ्रंश है और बहुत प्राचीन बतलाया जाता है।

भद्राजून-संक्षिप्त वर्णन झालौरकी प्रसिद्ध जागीर तथा उसके अधीन राज्यका आवश्यकीय है। भद्राजून पांच सौ घरोंका शहर (तीन चतुर्थांश मीनाओंके हैं) पहाडियोंके झुंडके बीचमें बसता है और इसमें एक किला भी है। सरदार जोधाजातिका है, उसकी जागीर झालौरकी गोडवारमें पालीसे मिलती है यानी उसकी जागीर झालौरसे पालीतक चली गयी है।

मेहवा–लूनीके दोनों किनारोंपर प्रासिद्ध प्रदेश है और पहिले पहिल राठौरोंने जिन देशोंपर अधिकार प्राप्त किया था उनमेंसे एक है । वास्तवमें यह सेवार्चीमें है जिसको वह आवश्यकता पडनेपर कर दिया करता है । सेवाक अलावा मेहवाके सरदारको रावलकी पदवी है और वह प्राय: जैसोल नगरमें रहा करता है । सूरतसिंह वर्तमान नरेश हैं । इनका समधी सूरजमल भी रावल पदवीसे विभूषित है और जैसोलसे बाइस मील दक्षिणमें लूनोके किनारेपर सिद्रीका किला और जागीर उसके अधिकारमें है । इनमें आपसमें कलह चला आता है, वे बराबरीके हकका दावा करते हैं और इसका परिणाम यह है कि दोनोंमेंसे कोई भी राज्यकी राजधानी मेहवामें नहीं रह सकता है दोनों ही डाकूके कर्मको अप्रतिष्ठाजनक नहीं समझते थे जब कि यह वृत्तान्त सन् १८१३ ई० में लिखा गया था । परन्तु आशा की जाती है कि उन्होंने इस कार्यके खतरेका (यदि गलती या चूकको नहीं) जान लिया है तो खारी नदीके किनारेके उपजाऊ प्रदेशोंकी जोतेंगे जिनमें प्रचुर परिमाणमें गेहूं ज्वार और बाजरा पैदा होता है । भलोत्रा तिलवारा इस देशके भूगोलमें दो प्रसिद्ध नाम है और इनमें एक वार्षिक मेला लगता है जो राजपूतानामें उतना ही प्रसिद्ध है जितना कि जरमनीमें लेपसिकका मेला है । यद्यपि यह मेला भलोत्राके नामसे प्रसिद्ध है तो भी यह मेला कई मील दक्षिण लूनीके एक टापूके निकट भी नगरा और उसके राजाओंको 'सम्बा' में परिणत कर दिया । इस वर्णनसे मालूम पडता है कि सोढाओंने अरोर बेखरके या सिन्धके ऊपरभागमें शासन किया और सम्माओंने नीचेवाले भागमें जब कि सिकन्दर इन देशोंमें होकर गया था । झारियोंमें और सौराष्ट्रमें नौ नगरके जामोंने सुम्माओंसे उत्पन्न होनेका स्वत्व पेश किया है और इसी कारण कहींपर अबुलफजल ' सिंध--सुम्मावंशका ' लिखता है, परन्तु मुसलमानोंसे मिल जानेके कारण और हिन्दुओंके द्वारा धर्मबहिष्कृत होनेपर उन्होंने सम्मा--यदुकुलमें उत्पन्न होनेके बातको छिपानेकी इच्छा की और जमशेदके वंशज अपनेको कहते हुए उन्होंने सम्मा-उपाधिको त्यागकर जामकी पदवी धारण की । हम इस बातको यहां मान लेते हैं कि सोढा जातिके नरेश महान् और राज्यके उस भागपर अधिकार किये हुए थे, जिसकी राजधानी[2] अरोर या बेखरका द्वीप था जब कि सिकन्दर सिन्धु नदीके मुखकी तरफ

(१) प्राचीन हिंदू इतिहासमें लिखा है कि अग्निकुलके चार वंशोंने यदुवंशको सर्वत्रसे बाहर निकाल दिया है । दो उत्तम मुसल्मान इतिहासज्ञोंके लेखोंमें इनके आपसके कलह होनेका प्रमाण मिलता है, जिन्होंने प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तकोंको देखकर जिनमेंसे कुछ हमको प्राप्त हुई हैं वे लेख लिखे थे । यह स्मरण रखना चाहिये कि सोढा, ओमुर सुमुरा प्रमर वंशके थे (प्रामीण पतार) जब कि सुम्मा यदुवंशोत्पन्न थे । इनकी उत्पत्तिके लिये जयसलमेरका इतिहास देखो ।

(२) कप्तान पाटिंजर (जो अब कर्नल है) ने '' मुजमूद गरिदाल '' नामक फार्सी पुस्तकसे जो वाक्य अपनी पुस्तकमें उद्धृत किया है जो पुस्तक उन्होंने सिंध और बिलोचिस्तानके वर्णनमें लिखी है, उसमें वह प्राचीन सिंधकी राजधानी 'उलोर' लिखता है और '' सहीर '' वंशके नाश होनेका भी उल्लेख करता है जिनके पुरखे दो सहस्र बरसतक सिंधमें राज्य करते रहे ।

गया था, यह सम्भव है कि वह सेना-जिसको अबुलफजल ईरानी लिखता है--जिसने अरोरपर हमला किया और सेहरीके राजाको मार डाला, अपोलोडोटस था मीमनदेरके अधीनतामें यूनानी और बकटिरियाकी सेना थी; जिसने (Apdithdttu) सेहरोस नरेशसे प्रतिपालित देशसे लेकर सोरों या सौराष्ट्र देशतक यात्रा की जहां कि यूनानी इतिहासलेखकके अनुसार जब कि उसने दूसरी शताब्दीमें लिखा था। उनकी कीर्ति मुद्रायें (Medal) वर्तमान थी विस्तारपूर्वक उपरोक्त वर्णित इतिहास हमको सचा और संशयातीत प्रमाण देता है कि दहीर और उसका पुत्र रायसा जो कासिमके अधीनतामें पहिले मुसलमानी सेनाके शिकार बने थे, उसी वंशमें उत्पन्न हुए थे जिस वंशकी शोभाको राजा सेहरोसने बढाया था और भट्टी इतिहास इस सत्यताको प्रमाणित करता है कि इस समय-रेगिस्तानमें उनके बसनेके समय-सोढा जाति अधीश्वर थी और स्थानों और नामोंमें घनिष्ठ सादृश्यता होनेके कारण जो परिणाम हमने निकाला है उसमें सन्देह करनेको स्थान नहीं है कि पौरवंशकी सोढा जाति उस समय उत्तरी सिंधमें शासन कर रही थी जब कि सिकन्दर, नदीमुखेनेव समुद्रमाविशत्,और भाग्य-चक्रके उलटपुलट होते हुए भी वह अबतक अधिकारके लिये अपने प्राचीन यदुवंशी सम्मासे लडते हुए अपने प्राचीन राज्यके कुछ भागपर अपना अधिकार कायम रख सकी है। हम पाठकोंको इस भागका कुछ हाल बतलावेंगे और जिस अलौकिक संलग्नशीलता या दृढताके प्रतापसे ये लोग विदेशी शत्रुओंको-चाहे यूनानी, मुसलमान या बेक्टरि-याके क्यों न हों-तुच्छ समझते हुए और प्राकृतिक दुःखोंको-अकाल महामारी, भूकम्प इत्यादिके दुःखोंको-सहते हुए दो हजार दो सौ वरषतक जीवित रह सकते हैं। जिन्होंने इस देशपर समय २ पर प्रचण्ड प्रलय मचा दिया है और आखिरकार इस देशको उजाड दिया है उसकी हम अत्यन्त प्रशंसा किये बिना न रहेंगे। क्योंकि लोग परम्परा-से कथन करते आते है कि मिश्र देशके रेगिस्तानके सदृश यह रेगिस्तान सिंध और यमुना नदियोंकी घाटीकी तरफ विस्तारमें उत्तरोत्तर उन्नति करता चला जाता है

---

(१) बडे ही सौभाग्यसे इन मुद्राओंमेंसे एक सिक्का मेननदेर और तीन अपोलोडोटस इस ग्रंथ-कर्ताके हाथ लगे। जिनके कि अस्तित्वमें इसके पूर्व सन्देह था। अपोलोडोटसके तीन मुद्राओंमेंसे एक सुरपुरीके खंडहरमें जो मेनू और ऐरियनके सूरसेनीकी राजधानी थी, मिला; दूसरा सिक्का प्राचीन अवन्ती या उज्जैनमें मिला जिसका सम्राट जस्टिनके कथनानुसार अगस्टसके पत्रव्यवहार रखता था; और तीसरा आगराके निकट हिंदू सिथिया और बेंकटियाके सिक्कोंसे भरा हुआ घडेके साथ मिला, जो (घडा) एक अधिकतर प्राचीन नगरके स्थानको खोदते हुए कई वरष हुए निकाला गया था। यह संभव है जैसा कि पूर्वमें लिख चुका हूँ कि यह स्थान अग्र प्रामेश्वरकी राजधानी हो जो ऐरियनके कथनानुसार उत्तरी भारतका सबसे बढकर शक्तिशाली सम्राट था और पोरस या पुरुके मृत्युके अनन्तर सिकन्दरके आगे बढनेको रोकनेके लिये तैयार था। हमको आशा करना चाहिये कि पंजाबके इतिहासमें कुछ भूतकालकी बातोंका दर्शन हो जाय या पता लग जाय। इन मुद्राओंके वर्णनके लिये रायल एसियाटिक सोसायटीकी पुस्तकें देखो भाग प्रथम पे. ३१३,

अमरकोट-यह भोमुरोंका किला, कुछ वर्ष पहिले सोडा राजकी राजधानी थी और यह राज दो शताब्दी व्यतीत हुई सिन्धकी घाटीमें और लूनीके पूर्वमें फैला हुआ था, परन्तु मारवाडके राठौरोंने और सिन्धके वर्त्तमान राजवंशने मिलकर सोडाओंके महान् राज्यको इतना कम किया कि सोडाओंके हाथमें केवल एकमात्र नियमित भूमि रह गयी, और सेहरीसके वंशजोंको अमरकोटसे (मारुके नव दुर्गोंमेंसे अन्तिम दुर्ग) निकाल बाहर किया जो अरोर राजधानीसे कश्मीरसे समुद्रपर्यन्त विस्तीर्ण राज्यपर शासन करते थे। दुःखके साथ लिखना पडता है कि अमरकोट अपने प्राचीन महत्त्वको खो बैठा और सोडा नरेशोंके वैभवकालमें पांच हजार मकानोंके बजाय अब अमरकोटमें सिर्फ दो सौ पचास मकान हैं जिनको झोपडा कहना अधिक सयुक्तिक होगा। प्राचीन दुर्ग नगरके वायव्य कोणमें है। यह ईटका बना हुआ है और बुर्ज जो संख्यामें अठारह हैं पत्थरके निर्माण किये गये हैं। नगरके भीतर एक किला या सुदृढ और सुरक्षित महल बना हुआ है। दुर्गसे उत्तरकी तरफ पुरानी नहर है जिसमें पानी सालके कुछ महीनोंतक बना रहता है। जब राजा मानने अमरकोटको जीता तब उसने समाचार लेने देनेके लिये कई गांव वहाँपर बसाये। जबतक तालुपुरियोंको किसी प्रकारका भय या खटका अपने कन्दहारके सम्राट्से बना रहा तबतक उन्होंने राठौर राजाको प्रसन्न रखना अपने लिये हितकारी समझा, परन्तु मारवाडके सदृश जब कन्दहारमें आपसमें ही युद्ध ठन गया तब एकसे भय न रहनेके कारण दूसरेको प्रसन्न रखनेकी इच्छाको अर्द्धचन्द्र मिला और अभाग्यवश अमरकोट सिन्धके कुलारों और राठौरोंके राज्यके बीचमें पड गया और प्रत्येक इस सीमास्थित स्थानको अपने राज्यकी उचित सीमा समझकर उसका अधिकार प्राप्त करनेके लिये लडने लगा। हम इन प्रतिद्वंद्वियोंके आपसमें कलहका वर्णन करेंगे जिसने अन्तमें सोडानरेशका सत्यानाश किया, जिससे चाहे कुछ सिद्ध हो वर्त्तमान राजवंशका इतिहास-जिससे हम पूर्णतया परिचित नहीं हैं जाननेमें सहायता मिले।

जब विजयसिंह मारवाडका शासन करता था, सिन्ध राज्यकी बागडोर मोहनूर महमूद कुलोरके हाथमें थी। परन्तु कन्दहारी सेनासे निकाले जानेपर वह जैसलमेरको भाग गया जहां कि वह इस असार संसारके झगडोंसे सदाके लिये छूट गया। ज्येष्ठ पुत्र उन्तरखां अपने भ्राताओं सहित बहादुरखां कैरानीकी शरणमें प्राप्त हुआ, जब कि वेश्या-पुत्र गुलामशाह हैदराबादकी मसनदपर बैठनेमें कृतकार्य हुआ, दाऊद पुत्रके राजाने उन्तरखांका पक्ष लिया और राज्यापहारोंको निकालनेके लिये तैयारी करने लगा। बहादुरखां; सबजुलखां, अलीमुराद, महमूदखां, कायमखां, अलीखांने-कैरानी सरदारोंने उन्तरखांके साथ हैदराबादपर चढाई की, गुलामशाह इन लोगोंसे युद्धके लिये निकला और "ओबरा" स्थानपर भाइयोंमें घनघोर युद्ध हुआ जिसमें उन्तरखाँ पराजित हुआ करीब २ समस्त कैरानी सरदार इस लडाईमें काम आये और उन्तरखाँ गुलामशाहके हाथ पडा जिसने उसको हैदराबादसे सात कोश दक्षिणमें गुजके कोटमें-सिंधनदीमें एक द्वीप है-जीवनभरके लिये कैद किया। गुलामशाहने "मसनद" अपने पुत्र सरफराज-को दे डाली, जिसकी मृत्युके बाद अब्दुलनबी तख्तपर बैठा। शिवदादपुरसे सात कोश

अभयपुर नगरमें तालुपुरी जाति (बलोचकी शाखा है) का सरदार रहता था, जिसका नाम गोरम था और उसके विजूर और सुबदान नामक दो पुत्र थे।

सरफराजने गोरमकी लडकीका पाणिग्रहण करना चाहा, परन्तु इस प्रस्तावके अस्वीकृत होनेपर सरफराजने गोरम वंशका समूल नाश कर दिया, केवल एकमात्र बीजूरखाँ बच रहा जिसने अपनी जातिको बदला लेनेके लिये उकसाया और अत्याचारीको उतारकर स्वयं हैदराबादकी गद्दीपर विराजमान हुआ। कुलोर लोग इधर उधर भाग गये परन्तु बिजूर जिसका स्वभाव उग्र और क्रोधी था अमरकोटके अधिकारके बारेमें राठौरोंसे लड पडा, लोग कहते हैं कि केवल उसने मारवाडसे कर लेना न चाहा परन्तु राठौर नरेशकी कन्यासे विवाह करना चाहा और इस बातके समर्थनमें यह नजीर पेश की कि विजयके पितामह अजीतने फेरोशरको अपनी कन्या दी थी। इस उपमर्दकारक बातसे जलकर राठौरोंने धरणीधरसे पांच कोशपर उगरानामक स्थानपर विजूरके प्रतिकूल तलवार उठाई और इस युद्धमें वलोचसेना राठौरोंके द्वारा पूर्णरूपसे पराजित हुई। परन्तु विजयसिंहने इस विजयसे संतुष्ट न होकर अपने दिलमें चुभनेवाले कांटोंको उखाड डालनेको पक्का निश्चय कर लिया। भट्टी और चन्द्रावतने सहायता देना स्वीकार किया और उनके वंशजोंकी जागीरें मिल जानेपर वे दूतके भेषमें इस खतरनाक कार्यको पूर्ण करनेके लिये चल दिये। जब वे विजूरके सामने पेश किये गये उसने अभिमानपूर्वक पूछा कि राजाने उसकी बातका ध्यानपूर्वक विचार किया तब चन्द्रावतने विजयसिंहका पत्र उसके हाथमें दे दिया जैसे ही विजरने शीघ्रतापूर्वक अपनी दृष्टि उसपर दौडाई और 'डोलाका उल्लेख नहीं है' यह शब्दके निकलनेकी देर थी कि चन्द्रावतका कटार उसकी छातीमें प्रवेश कर गया। 'यह डोलाके एवजमें' उसने कहा और यह करके एवजमें उसके दूसरे साथीने दूसरा प्रहार करते समय कहा।

बिजूर गतप्राण होकर गद्दीपर गिर पडा और हत्यारे जो भागना असम्भव जानते थे चारों तरफ घूमकर कटार चलाने लगे, उनके शरीरके टुकडे २ होनेके पहिले चन्द्रावतने पचीस और भट्टीने पांच मनुष्योंको मार गिराया। बिजूरका भतीजा और सोबदानका पुत्र फतेहअली गद्दीके लिये चुना गया और कुलोरका प्राचीनवंश भुज और राजपूतानेमें भाग गया। जब कि उनका प्रतिनिधि कन्दहारको चला गया। शाहने उसको पचीस हजार सेनाका अधिपति बनाया, जिसकी मददसे उसने फिर सिन्ध देशको विजय किया और ऐसे २ निर्दयताके काम किये जिनका उल्लेख इतिहासमें नहीं है। फतेहअली जो भुजको भाग गया था, उसने अपने साथियोंको फिर एकत्र करके शाहकी फौजपर आक्रमण किया जिसको उसने हराकर शिकारपुरके उस तरफतक कतल करते हुए उसका पीछा किया और वह शिकारपुरको अधिकारमें कर विजयशंख बजाता हुआ हैदराबादको लौट आया। निर्दयी और पराजित कुलारा फिर एक बार शाहके सम्मुख गया। परन्तु शाहने अपनी फौजकी अत्यन्त अपमानकारक हारपर क्रोधित होकर उसको अपने सम्मुखसे भगा

दिया और इधर उधर घूमनेके बाद वह मुलतानसे जैसलमेर होता हुआ अन्तमें पोकरनेमें निवास करने लगा जहाँ कि उसको इस नश्वर शरीरसे सम्बन्ध त्यागना पडा। पोकरननरेशने अपनेको उसका उत्तराधिकारी बनाया और सिन्धके निर्वासित राजाके असंख्य धनभंडारको पाकर पोकरननरेश मारवाडमें अगुआ बननेको समर्थ हुए निर्तीसिट राजाकी स्वरई नगरके उत्तरकी तरफ बनी हुई है।

यह कथा जो वास्तवमें मारवाड या सिन्धके इतिहाससे सम्बन्ध रखती है सोडा नरेशोंके भाग्यपर सिन्धवालोंका क्या प्रभाव पडा सिर्फ इस बातको दिखलानेके अभिप्रायसे यहाँपर इसका उल्लेख किया गया है। बिजूरने जो विजयसिंहके दूतोंके हाथसे मारा गया था सोडा नरेशको अमरकोटसे निकाल दिया था और अमरकोटका अधिकार मिलनेपर सिन्धवालोंको तुरन्त ही भट्टियों और राठौरोंसे लडनेको विवश होना पडा। बिजूरके मारे जानेपर और सिन्धी सेनाके हार खानेपर अमरकोटकी गद्दीपर सोडानरेशको फिर विजयसिंहने बैठाया। परन्तु वह बहुत दिनोंतक अमरकोटको अपने अधिकारमें न रख सका क्योंकि कन्दहारी सेनाके आक्रमण करनेपर इस दरिद्र देशके निवासियोंको अफगानोंने कतल किया और लूटा और अमरकोटपर हमला करके उसको छीन लिया। जब फतेहअली कन्दहारी सेनाके सम्मुख हुआ और राठौरोंकी मददसे उसको पराजित करनेमें समर्थ होनेपर उसने इस मददके बदलेमें अमरकोट राठौरोंके अधिकारमें दे दिया जिसकी दीवालपर राठौरोंका झंडा फहराता रहा जबतक कि सिन्धवालोंने आपसकी लडाईसे फायदा उठाकर उनको नहीं भगा दिया। यदि राजा मान अपने सरदारोंकी शुभेच्छासे लाभ उठाना जानते होते तो इस दूरस्थित स्थानको लेनेके लिये और कुछ असंतुष्ट मनुष्योंसे पिंड छुडानेके लिये उन उपायोंको काममें न लाना पडता जिनके कारण उनके नामपर कलंकका धब्बा लग गया है।

---

(१) नगरके उत्तरकी तरफ फतेहअलीके बाद उसका भाई वर्तमान नरेश गुलामअली मसनदपर बैठा और फिर उसके पुत्र कुरेमअलीने मसनदको रौनक बख्शी। डा. वर्नकी "सिंध दरबारके प्रतिगमन करनेका वृत्तांत" नामक पुस्तकके द्वारा इस वर्णनकी सत्यता प्रमाणित होती है। यह पुस्तक बडी ही रोचक और उत्तम है और इस नोट या टिप्पणीके लिखनेके ऐन वक्तपर यह पुस्तक मेरे हाथ लगी है। बीजूरखां सिंधके कलोरा शासकोंका मंत्री था और जिसकी क्रूरताके कारण आखिरकार सिंधका राज्य मंत्रीके कुहमके हाथ लगा या कुटुम्बमें चला गया, इस बातका मुश्किलसे विश्वास हो सकता है कि राजा विजयसिंह गुप्त हत्यारोंको कलोराके लिये मुहैया करे जो इनको बडी ही सुगमतासे सिंधमें पा सकता था तो भी जिस अपमानकारक बातके मुँहसे निकालने पर बिजूरको प्राणसे हाथ धोना पडे वह सम्भव है कि उसके मालिकसे कही गयी हो यद्यपि वह उसको इसके लिये कुछ प्रायश्चित न करना पडा। यह बडे दुःखकी बात है कि डा. वर्न अमीरके साथ रुहतन (जिसका वृत्तांत मुझको वीस बरस पहिले मिल चुका था) तक नहीं गया। डा. वर्नके भाई लफटेंट वर्नने बडी ही योग्यतापूर्वक "रिन" (खारी झील) का वृत्तांत और नक्शा चित्रित किया है जिसने भारतके इस सुन्दर और महत्वपूर्ण भागके भूगोल और इतिहासपर नया ही—

द्वितीय अध्याय २.

चौहानराज-चौहानराज राजपूतानेके सुदूर कोनेमें स्थित है और प्रथम बार ही इसके अस्तित्वका उल्लेख किया गया है। क्योंकि महत्त्व और सुन्दरताका नाम किसी दूसरे ही चीजको माप (Standard) मानकर किया जाता है; इस लिये इस दृष्टिसे विचार करनेपर चौहानराज रेगिस्तानके छोटे २ राज्योंके मुकाबिलेमें साम्राज्य प्रतीत होगा। चौहानराजके उत्तर और पूर्वमें मारवाड राज्यकी भूमि है जिसका वर्णन हम अभी कर चुके हैं। इसके आग्नेय कोणमें कालीवारा (Koliwarra) है, दक्षिणमें 'रिन' या' नमककी झील ' है और धात (Dhat) का रेगिस्तान पश्चिमी सीमापर है। चौहान राज्य दो प्रसिद्ध राज्योंमें विभक्त है, पूर्वीयराज्य ' वीरबाह ' (VirBah) नामसे विख्यात है और पश्चिमी राज्य लूनीके पार होनेके कारण ' परकर '(parkur) नाम धारण किये हुए हैं और दोनों ही नगर (Nuggur) और राजधानी पृथक्त्व सूचना करनेके लिये सरनगर(Sir-Nuggar) के नामसे परिचित है-परकरकी पदवीसे विभूषित है।यह प्रसिद्ध रेनल Rennel का नगर--परकर Negar parkre; है जिसको साहसी और उद्योगी विटिङ्गटन Whiteington नामक अंग्रेजने उस समय देखा था। जब कि इन देशोंसे हमारे सम्बन्धका सूत्रपात ही हुआ था। इस रेगिस्तानके चौहानोंको अपने राज्यके प्राचीनपनका तथा उच्चकुलमें जन्म लेनेका गर्व है। पिछली बातको प्रमाणित करनेके लिये मानिकराव अजमेरके वीसलदेव और दिल्लीके अन्तिम हिन्दू सम्राट् महाराज पृथ्वीराजको अपना पूर्वपुरुष बतलाते हैं, परन्तु पाहिले नामोंको कल्पना और भट्ट कवियोंके कविताके हवाले कर हम निर्भयतापूर्वक कहनेका साहस करते हैं कि वे सोढ़ा Sodas और प्रमारजातिके दूसरी शाखाओंसे पीछे हुए थे,जो इस देशमें जब कि

—प्रकाश डाला है। मेरी यह इच्छा है कि इस अपरिचित और अप्रसिद्ध प्रदेशको अनुसन्धान करनेका भार एक ऐसे पुरुषको सौंपा जाय जो सब तरहसे इस कामको करनेके लिये सुयोग्य हो। इस मरुभूमिमें जयसलमेरसे ओचतक यात्रा करनेकी इच्छा बहुत दिनोंतक मेरे मनमें बनी रही और फिर आजसे जलमानसे मनसुराको जाते हुए रास्तेमें अरोर, सेहवान, सम्मा नगरी और वामुनवासीको देखूँ। सन् १८२० में सिंधसे युद्ध छिडनेकी आशंकासे मेरे मनोरथ सफल होनेके लक्षण दिखाई पडने लगे और मैंने मरुभूमिमें होकर सेना ले जानेके मार्गका नक्शा खींचकर लाट हेस्टिंगके पास भेज दिया था; परन्तु उस समय उनको शांति रखना ही अभीष्ट था। अपर सिंधके गवर्नर मीर सोहरावसे भी मेरा उस समय पत्रव्यवहार चल रहा था और इसमें सन्देह नहीं है कि वह मेरे विचारोंसे सहमत हो जाता।

(१) परके अर्थ ' पार ' है और करयासरलूनी या खारी नदीका समानार्थक है। लूनीके अलावा राजपूतानेमें हमने अनेक खारी नदियां देखी हैं। समुद्र (लूनापानी) या (खारापानी) के नामसे प्रसिद्ध है परन्तु यह नाम अब (कालापानी) में रूपांतरित हो गया है जो किसी तरहसे निरर्थक नहीं है।

सिकन्दरने सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गमन किया था, शासन कर रहे थे। यह सम्भव है कि माली या मालिनीने जिनको सिकन्दरने पंजाबके कोनेसे निकाल दिया था सोडाओंसे खेरकी भूमि छीन ली हो। अस्तु इतना निस्सन्देह ठीक है कि आठवीं शताब्दीसे लेकर तेरहवीं शताब्दीतक चौहानराज अजमेरसे सिन्धकी सीमातक फैला हुआ था। जिसकी राजधानियां अजमेर, नादौल, झालौर, सिरोही और जुना चोटन थीं और यद्यपि प्रत्येकका इतिहास इनको स्वाधीन बतलाता है तो भी वे किसी न किसी प्रकारकी अजमेरकी अधीनता स्वीकार किये हुए थी। इस बातको प्रमाणित करनेके लिये हमारे पास ऐतिहासिक लेख मौजूद हैं। गजनीके जगद्विजयी महमूदके समयसे अलाउद्दीन द्वितीय सिकन्दरके समयतक इनमेंसे प्रत्येक मुसलमानी इतिहासमें प्रसिद्ध रह चुकी थी। अपने बारहवें हमलेमें मुलतानसे अजमेरको जाता हुआ (फरिश्ता कहता है कि जिसका किला महमूद शत्रुओंके हाथमें छोडनेको विवश हुआ था) महमूद नादौलके पाससे गुजरा और उसको लूटा और रेगिस्तानके निवासी महमूदके जुना—चोटनमें आगमनको, वंशपरंपरानुगत कथाके द्वारा जीवित रख सके हैं और वे उन सुरंगोंको बताते हैं जिनके द्वारा वहांका पहाडी किला उडाया गया था। इस बातको जाननेके लिये हमारे पास कोई साधन नहीं है कि यह घटना उसके आगमन और नहरवलके नाशके बाद हुई थी या जब कि वह यात्रा कर रहा था परन्तु जब हम इस बातका स्मरण करते हैं कि अपनी अन्तिम चढाईमें उसने सिन्धमें होकर लौटनेका प्रयत्न किया था और इस रेगिस्तानमें अपनी सम्पूर्ण सेनासहित वह नाश होनेके निकट ही था कि तब हमको इस बातको ख्याल करनेकी जगह मिल जाती है कि उसके जुनाचोटनके नाश करनेके दृढ निश्चयने उसको इस खतरेमें डाल दिया था। क्योंकि 'काफिरों' को नाश करने या उनको मुसलमान बनानेके सर्वव्यापक उद्देशके अलावा संभव है कि नहरवलके निर्वासित राज खेरधरके रेतके पहाडियोंके बीचमें बसनेवाले चौहानोंके शरणमें प्राप्त हुए हों और इस तरहसे उसके हाथमें पडे हों। यद्यपि नाममात्रको एक राज्य है तो भी 'परकर' नरेश वीरवाहकी बडी गद्दीकी किसी प्रकारकी अधीनता नहीं करता है। दोनों ही रानाकी प्राचीन हिन्दू पदवीसे विभूषित हैं और लोग कहा करते हैं कि वीरत्व इनका पुस्तैनी गुण है—यानी इनके घरानेमें सदासे वीर पुरुष उत्पन्न होते चले आये है—क्योंकि वीरता और चौहान समानार्थक शब्द हैं। इस राजके थलकी वर्गमीलमें लम्बाई चौडाई या आबादी जो निरन्तर घटा बढा करती है, बतानेकी कोई आवश्यकता नहीं है, परन्तु हम प्रसिद्ध नगरोंका संक्षिप्त वर्णन करेंगे जिससे हमको मरुस्थलीकी मनुष्यसंख्या कूतनेमें सहायता पहुंचेगी। हम पहिले भागका वर्णन आरम्भ करते हैं। चौहानराजमें प्रसिद्ध ९ नगर शिव, बह धरणीधर बंकसर थेराड हितीगांव और चोतल हैं। राना नारायणराव ओसरा ओसरीसे शिव और बहमें रहता है दोनों ही बडे नगर हैं और इनके चारों तरफ बबूल या दूसरे किस्मके कांटेदार वृक्षोंका परकोटा खिचा हुआ है जो इन देशोंमें 'काठका कोट' कहलाता है और शत्रुओंके आक्रमणको रोकनेके लिये भलीभांति दृढ हैं। इस रेतीले देशसे नारायणरावकी आमदनी

तीन लक्ष रुपया वार्षिक है । जिसमेंसे एक तृतीयांश एक लक्ष रुपया जोधपुरको करके रूपमें और सो भी विना युद्धके नहीं दिया जाता है जिसको लेनेके लिये जोधपुरका किसी प्रकारका भी स्वत्व नहीं पहुँचता है । देशके उन भागोंमें जो लूनीके द्वारा सींचे जाते हैं । अच्छे अन्नकी पैदावार होती है और यद्यपि गर्मीके ऋतुमें नदी सूख जाती है तो भी उसके प्रवाहमार्गमें bed कुएँ खोदकर प्रचुर परिमाणमें मीठा पानी प्राप्त हो सकता है परन्तु लोग कहते हैं कि यद्यपि नदीका प्रवाह बन्द हो जाता है तो भी रेतमेंसे छन २ कर filter उन पृथक् तालोंमें मन्द २ गतिसे बहती हुई धार दिखलाई पडती है। ऐसा ही चमत्कारिक दृश्य कोहरी नदीके प्रवाहमें bed (ग्वालियरके जिलामें कई मीलके पूर्णतया सूखीभूमिके बाद हमारे नेत्रगोचर हुआ है । पानीके उस हिस्सेमें जो कुछ दूर चलकर पडा है) ।

नगर या सर नगर परकरकी राजधानी है और १५०० घरोंकी बस्ती है जिसमेंसे सन् १८१४ ई०में आधे आवाद थे। नगरके नैऋत्यकोणमें एक छोटासा पहाडीपर किला है जिसकी ऊँचाई २९ फीट कही जाती है । कुएँ और बावडियाँ अनगिनती हैं । नगरसे सात कोश दक्षिणमें नदी लूनी नामसे प्रसिद्ध है । जिससे हम यह परिणाम निकालें कि इसका प्रवाह मार्ग bed अवश्य ही रिनके बीचमेंसे होगा । परकरनरेश अपने वीरवहके स्वामीके समान रानापदवीसे अलंकृत हैं । यद्यपि हम इस बातसे अपरिचित हैं कि उनका आपसमें क्या सम्बन्ध है तो भी परकरनरेश वीरवह नरेशके प्रति अपने कर्त्तव्यके लिये विख्यात हैं । दोनों ही हथ राजावंश जात हैं जिनकी राजधानी जुना चोटन थी । वंकसिर सरनगरसे दूसरे नंबरका है । यह कुछ काल पूर्वरेगिस्तानके लिहाजसे बडा और समृद्धिशाली नगर था । परन्तु सन् १८१४ई. में इसमें सिर्फ ३६० मकानोंकी बस्ती है । नगरनेरशका पुत्र यहां रहता है जो अपने पिताके समान राना पदवीसे विभूषित है । हम यहांपर छोटे २ नगरोंका उल्लेख नहीं करेंगे क्योंकि यात्रावर्णनमें वे फिर मिलेंगे ।

थेरड लूनीके चौहानोंका दूसरा भाग है जिसकी राजधानी शिवसे कुछ ही कोशपर थेरड नामसे प्रसिद्ध है और जो परकरके सदृश नाममात्रके लिये शिव–वहकी अधीन है । इस वर्णनके साथ ही हम वीरवहके विषयको समाप्त करते हैं जिसमें हम फिर दुहराते है अवश्य ही अनेक अशुद्धियां होंगी ।

चौहानराजका मुख या आकृति–क्योंकि “ यात्रावर्णनमें देशकी हालातका सविस्तर वर्णन आवेगा । इसलिये यहाँपर उसका सूक्ष्म वर्णन व्यर्थ होगा । वही ऊसर पहाडी जैसा कि हम कह आये हैं, चोटनसे जैसलमेरतक फैली हुई है । वंकसिरके दो कोश पश्चिममें पायी जाती है और यहाँसे नगरतक पृथक् २ पिंडमें चली

---

(१) मेरे एक भ्रमणवृत्तान्त पुस्तकमें लिखा है कि लूनीकी एक शाखा वीर–वहकी राजधानी शिवके निकट वहती है जहां यह चार सो बारह कदम चौडी है मैं समझता हूँ कि यह अशुद्धि है ।

गयी है। लूनीके दोनों किनारोंकी भूमिमें गेहूं और अच्छे अन्नोंकी फसल उत्पन्न हो सकती है और यद्यपि वीरवहमें अनेक थल हैं तो भी शिवसे १७ कोश विशेषकर रांधूपुरकी तरफ एक सपाट मैदान है। लूनीके पार थल ऊँचे टीबोंमें उठता गया है और वास्तवमें चोटनसे वंकसरतक संपूर्ण देश ऊसर हैं और ऊंचीर रेतकी पहाडियोंसे परिपूर्ण हैं और प्रायः रेतसे ढकी हुई टूटी फूटी ऊंची भूमि दूरतक चली गयी है।

पानी–पदावार–संपूर्ण चौहानराजमें या कमसे कम उस भागमें जहां आवादी अच्छी है पानी सतहसे औसत दर्जेकी गहराईपर मिल जाता है। कुओंकी गहराई १० से २० पुरुंषा है या पैंसठके एकसौ वीस फीट और जो धावके कुओंकी गहराईके मुकाबिलेमें जो कभी २७००फीटतक होती है किसी गिन्तीमें नहीं है। लूनीके किनारे गेहूं, तिल, मूंग, मोथ अनेक प्रकारकी दालें, बाजरा वहाँके लोगोंकी आवश्यकता दूर करनेके लिये काफी परिमाणमें पैदा होते हैं, परन्तु इस सम्पूर्ण देशमें लूट ही खास रोजगार है जिसमें चौहान राजा और नीचकोली चालाकी और फुर्तीमें एक दूसरेकी स्पर्धा करते हैं। जहाँ कहीं भूमि खेती करनेके अयोग्य समझी गयी है वहां खासकर ऊंटोंके लिये अच्छी जगह चरनेको निकल आती है जो (ऊंट) अनेक प्रकारकी काँटेदार झाडियाँ खाकर जीवन निर्वाह करते हैं, भेंड बकरियाँ अधिक संख्यामें पायी जाती हैं और बैल, घोड–सुन्दर और अच्छी जातिके तिलवाराके मेलेमें बिकने आते हैं।

निवासी-यह नितान्त आवश्यक है कि हम सिकन्दरके शत्रु मल्लिके वंशजोंको या वीरवर पृथ्वीराजके वंशजोंको चोरोंकी समाज कहकर वर्णन करें। ये लोग जो २ हानियाँ राजके अभावमें उठाथे या जो अत्याचार उनको जोधपुरवालोंके हाथसे सहने पडते थे, जो उनपर अपना प्रभुत्व और लूटनेका हक बतलाते थे उनका बदला लेनेके लिये सर्व साधारणको लूटनेके गरजसे सिन्ध गुजरात और मारवाडतक धावा करते थे। चौहानराजमें सर्व प्रकारकी जातियां पायी जाती हैं, परन्तु सबसे शक्तिशालिनी जातियां सहरी, खोसा कोली और भील हैं जिनके नाम डाकू शब्दके समानार्थकवाची हैं। चौहान यहांके अधीश्वर होनेपर भी प्रत्येक गांवमें अल्प संख्यामें पाये जाते हैं, परन्तु कोली भील और पिथिलकी संख्याएँ अधिक हैं पिथिल नीच जातिके होनेपर भी केवल उद्योगद्वारा इस देशमें अपना जीवन निर्वाह करते हैं। खेतीके अलावा वे गोंदका व्यापार करते हैं जिसको वे प्रचुर परिमाणमें भिन्न वृक्षसे जिनका नाम पहिले बतला चुके हैं एकत्र करते हैं। चौहान लोग दूसरी प्राचीन राजपूत जातियोंके सदृश द्विजत्वसूचक चिह्न जनेऊको नहीं धारण करते हैं और जिन लोगोंको ब्राह्मणोंकी संगीतने लोहके जंजीरसे जकड रक्खा है उन लोगोंके आचार विचारको वे (चौहान) पालन करनेके लिये पूर्णतया बाध्य नहीं हैं। परन्तु संस्कार सम्बन्धी शिथिलताको सुधारनेक लिये पुराबिया चौहानोंकी अपेक्षा

(१) पुरुषा मरुभूमिके नापनेका माप है। यदि औसत दर्जेका ऊंचा आदमी शिरके ऊपर हाथोंको सीधा उठाकर खड़ा हो तो अगुलियाकी नोंकसे लेकर पदपर्यन्तकी ऊंचाई पुरुषा कहलाती है यह (पुरुष) शब्दसे निकला है।

इन्होंने अपने नैतिक गुण या स्वभावमें अच्छी उन्नति कर ली है। क्योंकि यद्यपि इनके पडोसी झाडियोंमें बालहत्या भयानकपनसे प्रचलित है तो भी वे (चौहान) इस अस्वाभाविक वार्तासे (बालहत्या) पूर्णतया अपरिचित है। भोजन करनेमें इनको किसी प्रकारका विचार नहीं है वे चौका नहीं लगाते हैं और इनके रसोइयाँ नाईं होते हैं। उच्छिष्ट भोजन बाँधकर रख दिया जाता है जो दुबारा भोजन करनेके समय उपयोगमें आता है। कोली और भील--कोली इस देशमें बहुतायतसे पाये जाते हैं और मानव जातियोंमें अत्यन्त अधोगतिको प्राप्त हुई जातिसे इनकी तुलना की जा सकती है। यद्यपि वे हिन्दुओंके सब देवोंका और विशेषकर ' भयानक ' माताकी पूजा करते हैं तो भी वे किसी प्रकारकी कानूनका-मानवीय या ईश्वरीय-गौरव या प्रतिष्ठा इनके हृदयमें नहीं वास करती है अर्थात् वे घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं और वनके पशुओंसे किसी बातमें बढ कर नहीं है। इनको किसी प्रकारकी वस्तु खानेमें कुछ परहेज नहीं है, गाय, भैंस, ऊंट, हिरन, सुअर इनके खाद्य पदार्थोंमेंसे हैं और वे मुर्दा खानेतकमें कुछ बुराई नहीं समझते हैं। दूसरी अधम या नीच जातियोंके समान वे राजपूतवंशराज होनेका दम्भ दिखलाते हैं और चौहान कोली, राठौरकोली, पुरिहारकोली इत्यादि नामोंसे अपना परिचय देते है जो केवल उनके प्राचीन कोली वंशमें अशास्त्रीय रीतिसे उत्पन्न होनेकी वार्ताको पुष्टि करती है करीब २ सम्पूर्ण भारतमें कपडा बिननेवाले कोली जातिके हैं और यद्यपि वे अपनी असलियतको झुलाहा नाम धारण करके जो मुसलमान कपडा बुननेवालोंको हिन्दुकोलीसे पृथक् करता है, छिपानेका यत्न करते हैं, भील लोगोंमें कोलियोंकी सब बुराइयाँ मौजूद हैं और शायद मानवीय दृष्टिसे विचार करनेपर एक दर्जे नीचे गिरे हुए हैं, क्योंकि वे सर्व प्रकारके कीडे, लोमडी, सियार, चूहे, सांपोंको खाकर जीवन व्यतीत करते हैं और यद्यपि उन्होंने भोजनकी सूचीमेंसे ऊंट और मुर्गका-क्योंकि मुर्गा माता या देवीको जिसको वे पूजते है चढाया जाता है-बायकाट कर दिया है तो भी उनकी नैतिक अवनति अन्तिम सीमातक पहुंच गयी है। कोल और भील आपसमें वैवाहिक सम्बन्ध नहीं करते है और न एक दूसरके साथ भोजन करेंगे सिर्फ यही उनका जातिबन्धन है, तीर और कमान इनके शस्त्र हैं और वे कभी २ तलवार बाँधते हैं पर बन्दूक कभी नहीं।

पिथिल इस देशमें किसानीका काम करते हैं और बनियोंके समान प्रतिष्ठित जाति है। वे गाय, बैल, भेंड इत्यादि झुंडका झुंड रखते हैं और खेतीका काम करते हैं और लोग कहते हैं कि इनकी संख्या कोलियों या भीलोंके समान है। हिन्दुस्थानके कुर्मी मालवा और दक्षिणके कोलम्बी और पिथिल तुल्यार्थवाचक हैं। इस देशमें और भी जातियां रहती है जैसे रेवारी ऊंटके पालनेवाले जिनका वर्णन रेगिस्तानके संपूर्ण जातियोंके साथ होगा।

घात और ओमुरसुमरा-अब हम राजपूतानेको छोडकर सिन्धके रेगिस्तानका या उस भूमिका वर्णन करेंगे जो पश्चिममें राजपूतानेकी सीमासे सिन्धु नदीकी घाटीतक

और उत्तरमें दाउदपोतरासे 'रिन' के किनारे बुलारीतक फैली हुई है। यह भूमि करीब दो सौ वीस मील लम्बी है और अधिकसे अधिक इसकी चौडाई अस्सी मील है। यह सारा देशका देश थलरूपमें विद्यमान है और इस थलमें बहुत कम गाँव पाये जाते है, यद्यपि गड़रियोंके अनेक छोटे २ गांव इधर उधर दृष्टिगोचर होते हैं तो भी क्षणस्थायी होनेके कारण नकशेमें स्थान नहीं पा सकते हैं। जहां कि पानी सुगमतासे सालभरतक मिल सकता है वहाँपर इनमेंसे कुछ पुरुष और 'वसर' का कुछ न कुछ नाम रख लिया जाता है, परन्तु इनकी यदि अधिक संख्या गिनाई जाय तो पाठकोंको भ्रम हो जायगा। कारण कि रेगिस्तानके घास पातके समान इनका जीवन भी क्षणभंगुर है। यह संपूर्ण देश रेगिस्तान है जिसमें पचास मीलतक पानीका एक बूँद भी नहीं मिलता है और बिना बडी सावधानीके इसका पार करना असम्भव है। रेतकी पहाडियाँ छोटे २ पहाडोंमें परिणत हो गयी हैं और कुएँ इतने गहरे हैं कि बडे काफिलेके अनेक मनुष्य इस असार संसारसे कूच कर जायँ पेस्तर कि उन सबकी तृषा शान्त हो सके। इनमेंसे कुछ कुओंकी गहराई बतला देनेसे पाठकोंको इस बातका अनुमान हो जायगा कि मरुदेशमेंसे यात्रा करना कितना संकटमय है। इनकी गहराई ग्यारहसे पचहत्तार पुरुषातक या सत्तरसे पांच सौ फीटतक है। जयसिंह देजिरका तक एक कुआँ पचास पुरुषा गहरा है, धोतकी वस्तीका साठ, गिरपका साठ, हमीर देवराको सत्तार, और जिञ्जिनियालीका पचहत्तरसे अस्सी पुरुषातक गहरा है।

इतिहासवेत्ता फरिश्ता भगे हुए सम्राट् हुमायूं और उसके नमकहलाल साथियोंका इनमेंसे एक कुएँपरकी दुर्गतिका कैसा हृदयाविदारी चित्र खींचता है। जिस देशमें होकर वे भागे जाते थे वह अपार रेतका समुद्र है, मुगल पानीके मारे अतीव कष्टमयदशाका अनुभव करते थे, कुछ प्यासके मारे पागल हो गये, कुछ संज्ञाविहीन होकर भूतलपर शयन करने लगे। लगातार तीन दिन पानीके दर्शनतक न हुए, चौथे दिन उनको एक कुआँ मिला जो इतना गहरा था कि बैल हाँकनेवालेको ढोल बजाकर इस बातकी सूचना दी जाती थी कि डोल मनके पास आ गया, परन्तु हुमायूँके अभागे साथी पानी पीनेके लिये इतने उत्सुक हो रहे थे कि ज्योंही पहिले पहिल डोलकी सूरत दिखलाई पडी और पेस्तर कि वह जमीनपर रक्खा जाय बहुतेरे डोलपर टूट पडे और इस तरहसे कुँएमें गिर पडे। दूसरे दिन उनको एक छोटा नाला मिला और ऊँट जिन्होंने कई दिनसे पानी चक्खा भी नहीं था, पानी पीनेके लिये छोड दिये गये, परन्तु अधिक पानी पीनेके कारण उनमेंसे कुछ मर गये। हुमायूँ अपूर्व आपदाओंको भोगता हुआ अपने कुछ साथियों समेत आखिरकार अमरकोट पहुँचा। राजाने जो रानाकी पदवीसे सुशोभित है, हुमायूंके इस दुःखपर दया की और अपनी तरफसे कोई बात न उठा रक्खी जो हुमायूंकी वेदनाको शांत कर सके या उसको इस दुःखमें दिलासा दे सके।

हम अब उस देशमें हैं जहाँ हुमायूंने इन आपदाओंको भोगा था और उस देशकी प्रसिद्ध राजधानी अमरकोटमें अकबरने जन्म ग्रहण किया, जिससे बढकर अबतक

कोई महान् सम्राट् नहीं हुआ है,हमको उस पर्देको हटा देना चाहिये,जो हुमायूंको रक्षककी जीतिके इतिहासको छिपाता है और यद्यपि वह नाममात्रका अमरकोटका सम्राट् है और चोरगाँवका स्वामी है तो भी हमको भारतवर्षपर सिकन्दरकी चढाईके समय उसका स्थानीय निवास और नाम बतलाना चाहिये। धात(Dhat)जिसकी राजधानी अमरकोट है; मरुस्थलीके भागोंमेंसे एक भाग था जो प्राचीनकालसे प्रमारोंके अधीन चला आता था। इस देशकी पैंतीस जातियोंमेंसे अग्निकुल वंशकी जातियोंमें सोढ ओमुरू और सुमुरा अधिक संख्यामें पाई जाती थीं और पिछले दोनों नामोंके मिलनेके कारण उत्तरी थलका प्रसिद्ध नाम ओमुरसुमरा पड गया है—और अबतक वह इसी नामसे विख्यात है-यद्यपि कई शताब्दी पूर्व इसका अधिकार उन्हींके हाथमें था।

अरोर जिसके आविष्कारका अभी उल्लेख हो चुका है सिन्धनदीके पार बेखरसे छः मील पूर्व नकशेमें विराजमान है और यह ओमर-सुमरानामक देशमें वर्तमान था ओमुरसुमरा सम्भव है किसी समय अधिक व्यापक शब्द हो, जब कि सुमराजातिके छत्तीस राजाओंका वंश पाँचसौ वर्ष व्यतीत हुए इन देशोंपर राज्य करता था। उनकी शक्ति या प्रभुत्व नष्ट होनेपर और उनके प्राचीन प्रतिस्पर्धी सिन्धा तुम्भा राजाओंको दुबारा राज्य मिलनेपर और कालचक्रके फेरसे इनके भट्टियोंके द्वारा पराजित होनेपर इस देशका नाम भट्टियोह प्रसिद्ध हुआ,परन्तु प्राचीन और प्रामाणिक नाम ओमुरसुमरा अबतक बना है और गडरियोंके छोटे २ गाँव-ओमुरा और सुमरामें रेतकी पहाडियोंके बीचमें अब भी स्थित है। उनके बडे भाई सोढाओंका वर्णन करनेके बाद उनका उल्लेख किया जायगा। इन संपूर्ण देशोंमें, मध्य और पश्चिमी राजपूतानेके भट्टियों चावडाओं, सोलंकियों, गिहलौतों और राठौरोंकी बस्तियों या उपनिवेशोंका चिह्न पाते हैं और जहाँ कहीं हम जाते हैं और कोई भी नवीन राजधानी स्थापित की जाती है तो वह हमेशा प्रमर राज्यमें ही आकर पडती है। पृथ्वीतियाना प्रमरकी यह वाक्य राजपूत संसारको लागू करनेसे मैं दुहराता हूँ, मुश्किलसे अतिशयोक्ति पूर्ण होगी।

अरोर या अलोर जैसा कि अब्बुलफजलने लिखा है और प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता इबनहैकलने "महलमें मुलतानकी स्पर्धा या होड करता हुआ" वर्णन किया है,"मारुके नौ भागों" मेंसे एक भाग था और प्रमर जातिके क्षत्री, जिनकी अनेक प्रसिद्ध शाखाओंमें एक सोढा शाखा थी-इसपर शासन करते थे। बेखर या मानसूराका द्वीप (खलीफा अलमुनसूरके लफ्टिनेण्टने ऐसा नामकरण किया) अरोरसे कुछ मील पश्चिमकी तरफ स्थित है और सोदगीकी राजधानी ख्यालकी जाती है जब कि सिकन्दर सिन्धु नदीके मुखकी तरफ गया था और यदि हम नामकी सादृश्यताको इस देशके प्राचीन इतिहाससिद्ध राज्यके साथ मिलावें तो हमपर यह आक्षेप नहीं हो सकता है

(१) जातियोंकी सूची और प्रमरोंका वृत्तान्त देखो भाग प्रथम।

(२) फरिश्ता अब्बुल फजल।

कि हमने केवल जातपर विश्वास करके सोदगी और सोडा एक ही है ऐसा कहनेका साहस किया है सोडा राजे रेगिस्तानके पैतृक शासक थे जब कि भट्टी उत्तरसे निकल-कर यहां चले आये थे, परन्तु, इतिहास इस बातका उल्लेखतक नहीं करता है कि भट्टियों-से सोढाओंने अरोर और लोडोखाँको छीन लिया या नहीं। यह सम्भव है कि सोढा शाखाके समकालीन या सम्पद् होनेक बजाय ओमुर आर सुमरा उनके उपभाग-मात्र हों। यह आवश्यक है कि प्राचीन सिन्ध और इन जातियोंके संक्षिप्त इतिहास वर्णन करनेमें हम फरिस्ता और अब्बुलफजलका अनुसरण करें। अब्बुलफजल कहता है "प्राचीनकालमें सेहरीस नामका राजा अलोर राजधानीमें राज्य करता था और इसके राज्यका विस्तार उत्तरमें काश्मीर पश्चिममें मेहरान और दक्षिणमें समुद्रपर्यन्त था। ईरानी सेनाने इस राज्यपर आक्रमण किया। राजा युद्धमें खेतरहा और ईरानी फौज प्रत्येक वस्तुको लूटनेके बाद स्वदेशको लौट गयी। रायसाही राजपुत्र रायसा या (सोढा) राजसिंहासनपर विराजमान हुआ। यह वंश बालीदके खलीफाके समयतक राज्य करता रहा। जब कि इराकके गवर्नर हिजौजने सन् ७१७ई. में महमूदकासिमको

---

(१) मैं पाठकोंको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं नाममात्रकी सादृश्यतापर कोई अनुमान या परिणाम नहीं निकालता हूँ जबतक कि स्थानोंसे पूरा २ पता न लग जाय क्योंकि हमने अन्यत्र इस बातका उल्लेख किया है कि प्रसिद्ध राजा पुरुयों पोरसको उत्पन्न करनेका गौरव पंजाबके यदुवंशियोंको है, यद्यपि पौर साधारण प्रमर शब्द इसी तरह उच्चारण किया जाता है-और पोरसमें अधिक सान्निध्यता है।

(२) कर्नल विग्रस अपने अनुवादमें इसको हुलीसा(Hullysa)लिखते हैं और उसी स्थानपर इस बातको लिखते हैं कि "प्राचीन मुसलमान लेखकोंने हिंदू नामोंको इतना तोडमरोडकर लिखा है कि वे प्रायः पहिचान भी नहीं पडते हैं, या हम 'हुली' में जो सा शब्द संमिलित किया गया है-हुली सेहटियोंका पुत्र था-उसको हम कदाचित् उसको जाति-सोढाकी पदवी ख्याल करें। अब्बुलफजलका रायसाही या रायसाके अर्थ (राजा सा) या सोढोंका राजा है। उसी वंशोंमें दहीर उत्पन्न हुआ था जिसकी राजधानी ८० हिजरीमें (अब्बुलफजल कहता है) अलोर या देविल थी और जिसमें इतिहासवेत्ता भूगोल सम्बन्धी गलती करता है, अलोर या अरोर ऊपर सिंधकी राजधानी है और दोवेल (शुद्ध देवल-मंदिर- या तत्ता नीचले सिंधकी राजधानी है। संभव है कि दोनों ही दहीरके अधिकारमें थीं। हम मेवाडके इतिहासमें प्रकट कर चुके हैं कि मुसलमानोंके प्रथम आक्रमणसे मेवाडकी रक्षा करनेवालोंमें एक विदेशी राजा दहीर भी था और हमने यह अनुमान किया था कि यह हमला सिंध प्रदेशको जीतनेके बाद महम्मदकासिमने अवश्य ही किया होगा। बापा चित्तौरका अधिपति, राजा मानमोरीका भानजा था इसलिये कासिमके विरुद्ध चीतौरकी रक्षार्थ शस्त्र उठानेमें दहीरके निर्वासित पुत्रके दो हेत थे। मोरी और मौर सोढा प्रमार वंशकी शाखाएं हैं (देखो भाग प्रथम सूचीपत्र) यह महत्वकी बात है कि हम पाठकोंका ध्यान उस कथनकी तरफ खींचें जो जाबुलिस्तानके हिंदू राजाओंके बीचमें खोरासानके हिजूज (जिसने कासिमको सिंधपर भेजा था)के हलचल मचानेपर अन्यत्र कहींपर किया जा चुका है वास्तवमें कुछ प्रमाण नहीं है परन्तु इससे केवल यह महत्वकी बात सिद्ध होती है कि महम्मदके आनेके पहिले राजपूतोंका राज्य चारों तरफ दूर २ तक फैला हुआ था।—

भेजा, जिसने हिन्दुराजा दहीरको मारकर विजय प्राप्त की। इसके अनन्तर अनसेरीका वंश इस देशपर शासन करता रहा फिर सुमराके वंशकी ध्वजा फहराई और अन्तमें सीमा वंशके हाथमें इस राज्यकी शासन डोर गयी, जिन्होंने अपनेको जमशेदका वंशज समझकर जामकी उपाधि धारण की। फारिश्ता भी इसी प्रकारका वर्णन करता है ' महमूदकासिमके मृत्युके अनन्तर एक जातिने जो अनसेरीके वंशमें होनेका दावा करती है, सिन्धमें राज्य स्थापन किया, इसके बाद जमीदारोंने राज्यको अपने अधिकारमें किया और पांचसौ वर्षतक स्वतंत्रतापूर्वक शासन किया। सुमराओंने सुमना नामके वंशका राज्य उलट दिया। जिनका सरदार जामकी पदवी धारण करता था; यूनानी और ईरानी लेखकोंके अशुद्ध लेखके कारण इन जातियोंके सादृश्यताको प्रस्थापित करनेकी कठिनताका उदाहरण फारिस्ताके दूसरे भागमें इसी वंशके वर्णनमें पाया जाता है। फरिश्ता इस वंशको सोमुना और अब्बुल फजल सुमा कहता है। ''साहनाकी जाति अप्रसिद्ध कुलोत्पन्न मालूम पडती है और सिन्ध-देशमें बेखर और तत्ताके बीचकी भूमिपर प्रथमतः निवास करती थी और जमशेदके वंशज होनेकी बात बताती है इस जातिके निवासस्थानका पता ठीकर लिखनेके कारण हम उसकी अक्षरकी अशुद्धि क्षमा करते हैं, सोमुना सेहना या सीमा लिखे जानेपर भी यह महान् यदुवंशकी सुम्मा या सम्मा जाति है, जिसकी राजधानी सुम्माका कोट या सुम्मा नगरी था जिसको यूनानी लेखकोंके निकट लगता है जिसमें मल्लिनाथका मंदिर बना हुआ है जैसा कि पहिले कह आये हैं; राठौरोंके अब कुलरक्षक देव हैं। मेहवो घरानेके दूसरे संबन्धीकी जागीर तिलवारा है और भलोत्रा, जिसपर राज्यका अधिकार होना चाहिये, मारवाडके प्रसिद्ध सरदार अहवाके पास पूर्वकालमें बतौर जागीरके थी और शायद अब भी हो। परन्तु भलोत्रा और सिन्द्री दूसरे ही बातके लिये प्रसिद्ध है। क्योंकि दुनेरकी रियासतके सहित ये दोनों दुर्गादासकी जागीरेंथीं जो मरुक इतिहासमें सबसे बढकर विख्यात पुरुष हैं और जिसके वंशज अब भी सिन्द्रीपर अधिकार रखते हैं। मेहवोके जागीरकी वार्षिक आय पचास हजार रुपया कूती जाती है जिसमें यह सब प्रदेश शामिल है। पटैल (या सरदार) अपने आश्रित जनोंके साथ कभी२दरबारमें उपस्थित होते हैं परन्तु विपत्ति समय या कठिन प्रसंगके सिवाय वे राज्यको सेवा करनेके लिये बाध्य नहीं हैं वे विशेषकर सीमाकी रक्षाके लिये बुलाये जाते हैं जिस कारण वे सीमेश्वर नामसे पुकारे जाते हैं या प्रसिद्ध हैं। इंदुवती- यह प्रदेश, इंदुजातिके राजपूतोंके

—उत्तम हस्तलिखित प्रतियोंके नाश हो जानेसे पूर्वीय साहित्यको जो हानि हुई है उसकी पूर्ति कठिनतासे हो सकती है ये प्रतियां अनेक वर्षोंके परिश्रमसे कर्नल ब्रिग्सने एकत्रित की थी और उनका अभिप्राय प्राचीन मुसलमानोंके कारगुजारीका साधारण इतिहास लिखनेका था।

(१) वह पिछले वंशके सत्रह राजाओंके नामकी सूची देता है। ग्लैडविनका आईन अकबरी-का अनुवाद भाग सफा १२२.

(२) देखो ब्रिग्सका फरिश्ता भाग ४ सफा ४११-४२२.

वसनेके कारण, जो पुरिहारोंकी प्रसिद्ध शाखा है, (मंडोरके प्राचीन राजे थे) इन्दुवती कहलाता है और यह भंलोत्रासे उत्तरकी ओर और जोधपुरकी राजधानीसे पश्चिमकी तरफ फैला: हुआ है और गोगाका थल इसको उत्तरकी तरफसे घेरे हुए है। इन्दुवतीका थल करीब २ तीस कोशकी परिधिमें है।

गोगादेवका थल-गोगाका थल जो चौहानोंके वीररसपूर्ण इतिहासमें प्रसिद्ध है। इन्दुवतीके ठीक उत्तरमें है और एक ही वर्णन दोनोंके लिये लागू हो सकता है। इस प्रदेशमें रेतके टीले बहुत ही ऊंचे है। आबादी बहुत ही कम है,चन्द गांव पाये जाते हैं। पानी सतहसे बहुत दूरपर है और बडे २ जंगलोंसे परिपूर्ण है। "इस रो के" प्रसिद्ध नगर थोब Thobe फूलसुन्द और बीमासिर हैं। यहांके लोग "टंकों" में बरसाती पानी एकत्र करते हैं जिसको वे बडी ही किफायतके साथ खर्च करते है और अकसर पानीके सड जानेसे उन्हें रतौंधकी[1] बीमारी उत्पन्न हो जाती है।

तिरूरोका थल गोगादेव और जैसलमेरकी वर्त्तमान सीमाके बीचमें स्थित है और पूर्वकालमें यह जैसलमेर राज्यके अधिकारमें था। पोकर्नन सिर्फ तीरूरोका, वरञ्च मरुस्थलीके दो प्रसिद्ध राजधानियोंके बीचमें स्थित संपूण मरुभूमिकी राजधानी है। इस थलका दक्षिणी हिस्सा उस भागसे भिन्न नहीं है जिसका वर्णन अभी हो चुका है परन्तु उत्तरी हिस्सेमें और अधिकतर कोकर्न नगरके, चारों तरफ सोलहसे बीस मीलतक नीची असंयुक्त ढीली चट्टानोंकी श्रेणियां पायी जाती हैं और यह उसी श्रेणीका हिस्सा है जिसपर भट्टियोंकी राजधानी बनी हुई है और इन चट्टानोंकी श्रेणियोंके कारण इस भूमिका नाम मेरे या चट्टानी या, चन्दानी या चन्द्रान युक्त पड गया है। 'तीरूरो' 'तीर' शब्दसे निकला है जिसका अर्थ, गीलापन झरनेकी अद्रिता या झरना है जो इससे 'रो' निकलते हैं।

पोकर्न नगर जिसमें सलीमसिंह निवास करते है (जिनके वंशका हम सविस्तर वर्णन मारवाडके इतिहासमें कर आये हैं) दो हजार घरोंकी बस्ती है और पत्थरकी दीवालसे चारों तरफसे परिवेष्टित है और किलेपर पूर्वकी तरफ कितनी ही तोपें चढी हुई है।नगरसे पश्चिमकी तरफ इस देशके लोगोंकी केवल बरसातमें ही बहते हुए पानीका आश्चर्यजनक वा अद्भुत दृश्य दिखाई पडता है, क्यों कि रेत शीघ्र ही इस पानीको सोख लेती है। कुछ लोग कहते है कि यह पानी कनोडके "सर" से आता है कुछ पहाडके झरनों या चश्मोंसे आता हुआ बतलाते हैं; कुछ भी क्यों न हो पर वहांके निवासी उसके प्रवाहमार्गमें कुण्ड खोदकर सुस्वादु और प्रचुर परिमाणमें जलको प्राप्त करते है पोकर्नका सरदार चौवीस गाँवोंके अलावा लूनी और बान्दी नदियोंके बीचमें स्थित भूमिका स्वामी है जिसकी कीमत करीब २ लक्ष रुपयेकी है। दूनरा और मांजिल जो

---

(१) यहांके निवासी कहा करते है कि इस रोगकी उत्पत्ति एक छोटेसे तागेके समान कीडेके द्वारा होती है, जो घोडेके आंखमें भी हो जाता है, मैंने घोडेके आंखमें इसको बडे ही वेगसे फिरते देखा है। यहांके लोग उसको छेदकर कौचरके साथ या आंसूके साथ निकाल देते हैं।

राजभक्त दुर्गादासकी जागीरें थीं । अब देशद्रोही सलीमके अधिकारमें है । पोकर्नसे तीन कोश उत्तरकी तरफ रामदेवरा नामक गांव है–रामदेवका मंदिर होनेके कारण गाँवका नाम रामदेवरा पड गया है जहाँ भादोंके महीनेमें मेला लगता है जिसमें चारों-तरफका आदमी आता है । कराचीबन्दर यहां मुलतान शिकारपुर और कच्छके व्यापारी यहांपर भिन्न २ देशोंकी वस्तुओंका विनिमय करते हैं । घोडे ऊँट बैल यहां अधिक संख्यामें पाले जाते हैं । परन्तु सन् १८१३ ई० के अकाल अराजकता राजा मानके गद्दीपर बैठनेके समयसे चली आई हुई और राठौरों और भट्टियोंकी असीम कलहने इस अभिलषित व्यापारको बन्द कर दिया है जिसके कारण कभी २ मरुभूमिके मध्यमें आनन्द और कर्मण्यताका दृश्य दिखलाई पडता था। खावरका थल यह (थल) जो जैसलमेर और बरमेरके बीचमें स्थित है और गिरोपके पास धातके मरुभूमिसे जाकर संलग्न होता है, मारवाडके सुदूरकोणमें स्थित है । मनुष्यसंख्या कम होनेपर भी अनेक विस्तीर्ण स्थान है जो इस मृत्यु (यमालय) में नगर पदवी धारण करनेके योग्य है । इनमेंसे शिव और कोटरा बहुत बडे हैं और उन पहाडियोंकी चोटियोंपर स्थित हैं जो भुजसे जैसलमेरतक पायी जाती है। शिवमें तीनसौ घर है और कोटरामें पांच सौ ये दोनों नगर राठौर सरदारोंके हाथमें है जो जोधपुरके राजाकी नाममात्रकी अधीनता स्वीकार करते हैं । कुछ काल पूर्व अन्हलवाडा पत्तन और इस देशक बीचमें व्यापार होता था, परन्तु सेहरीसे डांकुओंने इतने काफिलाओंको लूटा कि आखिरकार यह व्यापार बन्द ही हो गया । इस स्थलमें असंख्य भेडें और भैसोंके चरनेके लिय हरित भूमि मौजूद है ।

मल्लिनाथका थल या बरमेर–पूर्वकालमें इस सम्पूर्ण देशमें मल्लि या मालिनी जाति निवास करती थी जिनको यद्यपि कुछ लोग राठौर वंशका बतलाते है तो भी निःसन्देह ये चौहान हैं और उसी वंश या कुलके हैं जिस कुलको जुनाचोटनके स्वामीने उजागर किया है । पिछले अकालके पडनेके पहिले बरमेर बारह सौ घरोंकी बस्ती कूती गयी थी, जिसमें सब जातियाके मनुष्य निवास करते थे और चौथाई आबादी सांचोर ब्राह्मणोंकी थी । बरमेर उसी पहाडीपर स्थित है जिसपर शिव—कोटरा बसते हैं और यह पहाडी यहांपर दो सौसे तीन सौ फीटतक ऊंची है । शिवसे बरमेरतक एक बडा समतल मैदान चला गया है जिसमें कहीं २ पर नीचे रेतके 'रीते' पाये जाते हैं जो अच्छी ऋतुमें खानेके लिये काफी अन्न पैदा करते है । पद्मसिंह बरमेर सरदार उसी वंशकी शोभाको बढाते है जिस वंशमें शिवकोटरा और जैसोल नरेशोंने जन्म ग्रहण किया है; वे सब जैसोल नरेशके वंशज हैं और पद्मसिंहके जागीरमें चौतीस गांव हैं । पूर्वकालमें (दानी) annil यहां यात्रियोंसे कर वसूल करनेको नियत किया गया था; परन्तु सेहरासकी लूटने इस पदको वेतनयुक्त या बिना कामका कर दिया है और बरमेर सरदार जो कुछ वसूल कर पाते हैं उसको स्वयं ही ले लेत हैं वे भट्टियोंसे जिनसे यह प्रदेश जीता गया था सलाह करना अपने अधिपतिकी अपेक्षा अधिक उपयोगी समझते हैं, जिसके अधिकारियोंसे वे प्रायः युद्ध करते हैं विशेष कर जब हिंदकी

मांग उनपर होती है। ऐसे अवसरोंपर वे मरुभूमिके सेहरीसोंसे मदद लेना घृणास्पद नहीं समझते हैं इस संपूर्ण देशमें लोग अच्छी जातिके ऊंट पाळते हैं जिनकी भारतके संपूर्ण बाजारोंमें अधिक मांग रहती है।

खेरधूर-इन राज्योंके इतिहासमें अनेक बार खेरका उल्लेख किया गया है। राठौरोंने पहिले पहिलगोहिला जातिको निकालकर इस दूरस्थित कोणमें अपने रहनेका निवासस्थान बनाया था। गोहिल जाति इस स्थानको परित्याग करके खम्मातकी या आखातकी तरफ चली गयी थी और अब गोगा और भावनगरके स्वामी हैं और ऊंटोंपर काफिलाको लूटनेके बजाय हिन्दमहासागरमें अति गर्हित दासोंका व्यापार करते हुए उन्होंने सोफलाके स्वर्णतटतक यात्रा की। यह जानना कठिन है कि वे खेरकी भूमिको किस अक्षांश रेखापर नियत करते थे, जो गोहिलोंके समयमें लूनीके निकटतक चली गयी थी और न यह आवश्यक है जरा २ सी नुक्ताचीनीमें हम उलझे रहे क्योंकि वर्णन करनेके अभिप्रायसे ही हमने उन नामोंका व्यवहार किया है बहुत सम्भव है कि वह संपूर्ण देश इसमें शामिल हो, जिसमें बादेक मल्लिनी या चौहान-जाति निवास करती थी। जिन्होंने जुनाचोटनकी नींव डाली थी; इसलिये हम इसको खेरधूरमें संमिलित करेंगे। (१) राजधानी खेरल मारुके नव दुर्गोंमेंसे एक दुर्ग था, जब कि प्रमार उसके अधीश्वर थे। आज वह ह्रास होते २ गांवसा रह गया है, जिसमें चालीस घरसे अधिक नहीं हैं और चारों तरफसे 'श्यामरंगकी' पहाडियोंसे परिवेष्टित है जो भुजसे आनेवाली श्रेणीका (२) एक भाग है। जुनाचोटन या प्राचीन चोटन संयुक्त नाम होनेपर भी पृथक् २ दो स्थान हैं और लोग उनको अति प्राचीन और हप्प राजकी राजधानियां बतलाते है। वंशपरम्परागतवाली इस विषयमें चुप है कि हथराज क्या था। हम केवल इतना ही जानते हैं कि उसके राजे चौहान थे। उन नगरोंके प्राचीन चिह्नके देखनेसे माळूम पडता है कि किसी समय ये बडे २ नगर होंगे और विशेषकर जुना प्राचीन चारों तरफसे पहाडियोंसे परिवेष्टित होनेके कारण इसमें भीतर घुसनेके लिये पूर्वकी तरफ सिर्फ एक छिद्र या मार्ग है, जिसके मुखपर एक छोटासा किला भग्नावस्थामें अब भी विद्यमान है। इसी प्रकार पर्वतके शिखरपर दो और किलोंके चिह्नमात्र दिखलाई पडते हैं।

भग्नावशेष मंदिर। बन्द बावडी प्राचीन कालमें इस नगरकी विस्तीर्णताकी साक्षी देती हैं। जिसमें बारह सहस्र मकान बतलाये जाते हैं। अब इस स्थानपर दो सौसे अधिक झोपडे नहीं हैं जब कि चोटन अब केवल छोटासा गांवमात्र रह गया है। धोरिमनमें

---

(१) बहुत सम्भव है कि जिस वृक्षको खेर और धर (भूमि) कहते है उस वृक्षकी मरुभूमिमें विपुलता होनेके कारण इसका यह नाम पडा है यह 'खेरलू' भी कहलाता है, परन्तु 'खैराल' खेरका स्थान अधिक उपयुक्त नाम है इन प्रदेशोंमे यह जडी बडी ही लाभदायक है। इसके शिकुडनेवाले छिलकेको जिसकी शक्ल लिबरनम (Liburnam) से मिलती है वे भोजनके काममे लाते हैं। इसका गोंद व्यापारके लिये एकत्र किया जाता है, ऊँट उसकी शाखाओंको खाते हैं और उसकी लकडी झोपडे बनानेके काममें लायी जाती हैं।

जो उस पर्वतश्रेणीके दूसरे शिरेपर स्थित है जिसपर जुना और चोटन विद्यमान है एक अद्भुत पूजनीय स्थान है जहां श्रावण शुदी तीजको यहांके निवासी एकत्र होते हैं। रक्षक सन्ट अलनदेवके नामसे प्रसिद्ध हैं, जिनके द्वारा या प्रभावसे मल्लिनी एक महान् विजय प्राप्त करनेको समर्थ हुए थे। अनलेदव पवर्तके शिखरपर एक श्रेणीमें घोडेके मुखकी आकारवाली कुछ पीतलकी मूर्तियाँ रक्खी हुई हैं जिनकी पूजा की जाती है इन मूर्तियोंसे चाहे भविष्यत्में यह बात सिद्ध हो जाय कि मल्लिनोके मध्य एशियाकी अश्ववंशकी एक शाखा-पूर्वपुरुष सिदियन थे, परन्तु इस समय अनुमान या अटकलके सिवाय इस बातके समर्थनमें कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। नागर-गुरु वरमेर और नागर गुरुके वीचमें लूनी नदीपर एक अपार अविच्छिन्न थल या विशेष करके 'रो' स्थित है जिसमें खैर केजरी करील केप फोकके घने जंगल हैं, जिसके गोंद और बेरसे दक्षिणी जिलोंके कोली और भील लाभ उठाते हैं। नागर और गुरु लूनीके किनारे दो बडे २ नगर हैं सो वह चौहानराजकी सीमापर स्थित है और पूर्वकालमें दोनों इसके भाग थे। इस स्थानपर हम मारवाडके पश्चिमी थलोंका वर्णन समाप्त करते है एक तो प्रकृतिने स्वयं ही मारवाडको ऊसर या धनधान्य विहीन रचा है, तिसपर संवत् १८६८ के जिसको तीन वर्ष व्यतीत हो चुके हैं-भयंकर दुर्भिक्षने जिसने संपूर्ण देशोंमें हाहाकार मचा दिया था, मारवाडकी दुरवस्थाको अन्तिम सीमातक पहुँचा दिया था। गत तीस वर्षोंसे पूर्वोक्त वर्णित अव्यवस्थाका राजधानीमें अधिकार होनेके कारण ये दूरस्थित देश मरुभूमिकी जातियों अथवा वहांके लुटेरे स्वामियोंके पूर्णतया हाथमें हैं और वे चाहें जो कुछ करें इसके लिये कुछ भी अवरोध नहीं है।

जब हम इस बातका विचार करते हैं तब हमारे आश्चर्यका वारापार नहीं रहता है कि मनुष्य कैसे ऐसे देशमें अपने प्राणोंकी रक्षा कर सकता है, जिसमें चन्द नमककी झीलोंके और ऊंटोंके लिये सुन्दर चरागाहोंके सिवाय ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिससे उसके मालिक कुछ लाभ उठा सकें। ये चरागाह विशेषकर दक्षिणी प्रदेशोंमें हैं जहांके ऊंटोंसे बढकर ऊंची जातिका ऊंट मरुभूमिमें नहीं पैदा होता है।

---

(१) अब सन् १८१४ हैं। मैं इन प्रदेशोंसे मेरी खोज करनेवाली मंडलियोंमेंसे एकके लौटनेके बाद ही मैं उस दिनके भ्रमणवृत्तांतकी पुस्तकोंसे लिख रहा हूँ। मेरी मंडली अपने साथ थातके निवासियोंको लायी थी जो अपनी सीधी बोलीमें कहा करते थे कि मरुभूमिका नाप उनके हस्तामलक है, क्योंकि वे तीसवर्षतक कासिदका काम करनेमें नियत किये गये थे। बादको उनमेंसे दो अपने कुटुम्बको देशसे जाकर ले आये थे और पांच वर्षसे अधिक मेरे आश्रय या सेवामें बने रहे। वे नमकहलाल लायक और ईमानदार थे और मेरा बताया हुआ डाककी जमादारीका काम बडी ही योग्यतासेसम्पादन करते थे और यह काम मेरे सुपुर्द बहुत दिनतक रहा जब कि शिन्दे (सेंधिया) के दरबारमें नियत था, और किसी समय जबकि काम अधिक था भारतके भयानक और अपरिचित प्रदेशोंमें होकर गंगाके किनारेसे बंबईतक पत्र भेजने पडते थे। परन्तु ऐसे खोजके कामोंमें जिन आदमियोंको मैंने सिखाया था, उनकी सहायतासे मुझको ऐसी कोई आपत्ति नहीं मिली जिसको मैं पार न कर सका।

चोर-क्योंकि अमरकोट सोढाओंसे छीन लिया गया है इसलिये निर्वासित राजा जो अब भी रानाकी उपाधि धारण करता है अपनी प्राचीन राजधानीसे पन्द्रह मील ईशान कोणकी तरफ चोर नगरमें निवास करता है। जिस वंशके पूर्वपुरुषोंने सिकन्दर मेननदेर (Menander) और कासिमका सामना किया और भारतवर्षके सिंहासनाच्युत शरणागत प्राप्त हुए, हुमायूंकी रक्षा की, आज उन्होंका वंशज विवाहमें मिले हुए धनसे या देहेजसे अपनी प्राणरक्षा करता है, या अपने मरुभूमिस्थित राज्यके चन्दभूमिके टुकडोंकी उपजसे जीवन निर्वाह करता है। जिनको सिन्धके राजाओंने अपनी ओरसे उनको दे रक्खा है। उसके आठ भाई है जो जीविका प्राप्त करनेको कुछ भी उद्योग नहीं करते हैं और ये इन राज्योंके कोषकी न्यूनताको पूर्ण करनेवाली लूटसे अपनी उदरपालना करते हैं।

सोढा और झारीजा, हिन्दू मुसलमानोंको जोडनेवाली जंजीर है, क्योंकि हम जितना ही पश्चिमकी तरफ बढते हैं उतनी ही अधिक शिथिलता या ढिलाई राजपूतोंके आचार विचारमें दृष्टि आती है तो भी एकमात्र स्थानकी अपेक्षा कोई दूसरा ही अधिकतर प्रबल कारण है जिसने उनके हृदयमें जातीय अधिकारोंसे हीन करानेवाली भावनाको उत्पन्न किया है जिसके कारण सोढा और सिन्धी परस्पर वैवाहिक सम्बन्धके बन्धनमें पडते हैं क्षुधा ही एकमात्र कारण है और कोई पुरुष इस बातसे इन्कार नहीं कर सकता है कि मनुजीकी आज्ञाओंकी अपेक्षा उसका प्रभाव अधिक बलशाली है। प्रत्येक तीसरे वर्ष दुर्भिक्ष पड़ता है और जिनके पास उससे लडनेका सन्मान नहीं होता है वे अपने पडोसियोंकी शरणमें प्राप्त होते हैं और विशेष कर सिन्धुकी घाटियोंमें भाग जाते है प्रत्युपकारमें वे अपने प्राण बचानेवालोंको अपनी कन्याका हाथ पकडा देते हैं, परन्तु वे अपनी प्राचीन रीति अब भी इस दृढताके साथ पालन करते हैं कि विवाहिता स्त्रीको फिर अपने घरमें नहीं आने देते हैं, या ग्रहण नहीं करते हैं। अपनी कन्याएँ मीरगुलामअली मीर सोहराव और दादूरसरदार खोसाको देकर सोढाओंके वर्त्तमान राना दूसरोंके लिये उदाहरणस्वरूप बन चुके हैं, इसलिये जैसलमेर वह परकरके राजे-रानाके भाई-यद्यपि सोढा राजकुमारीका पाणिग्रहण करना स्वीकार कर लेंगे (क्योंकि उनको उसकी लोहूकी पवित्रतापर विश्वास है) तो भी बदलेमें अपनी कन्या रानाको नहीं देंगे क्योंकि संभव है उसकी संतान बलौचकी अन्तःपुरकी शोभाको बढावें। परन्तु मारवाड़के राठौर न अपनी कन्या घातको देंगे और न उसकी कन्या लेंगे। इस देशकी स्त्रियां अपनी सुन्दरताके लिय प्रसिद्ध होनेके कारण व्यापार-वैवाहिक व्यापारकी वस्तु समझी जाती है और यह कहा जाता है कि (घतियानी) की सुन्दरताकी चर्चा, यदि सिन्धीके कानोंतक पहुँचती है तो वह उसके पिताके पास उतना अन्न भेज देता है जितना वह उसके बदलेमें लेना स्वीकार करता है और सौदा पट जाता है।

हम यहांपर सोढा जातिकी रीति व्यवहार या दूसरी ही वैशिष्ट्य बातोंका अधिक वर्णन न करेंगे यद्यपि हम इस लेखके अन्तमें इस देशकी जातियोंका सामान्य वर्णन

करते हुए फिर सोढाओंकी रीतिका वर्णन कर देंगे । जातियां-भिन्न २ जातियां ही मरुभूमि और सिन्धकी घाटीमें रहनेवाली नवीन खोज करनेवालोंके लिये बडी भारी सामग्री उपस्थित कर देंगी और संभव है कि इस खोजमें कुछ महत्त्वपूर्ण और ऐतिहासिक बातोंका पता लग जाय अनुसंधानकर्त्ता उन जातियोंकी वंशावलीमें जिन्होंने इसलाम धर्मको स्वीकार कर लिया था, उन नामोंका पता लगावेगा जो एक समय इतिहासमें प्रसिद्ध थे परन्तु अब नवीन धर्मरूपी चादरसे ढके हुए हैं और संभव है कि वह उन नामोंकी मददसे उनकी ऐतिहासिक उत्पत्तिको ढूंढ निकाले । अनुसंधानकर्त्ता सोढा कहीं और मालिनी जातिको पावेगा जो इतिहास, स्थान और नाममात्रकी सादृश्यताके कारण इस बातका अनुमान करनेको बहुत जगह देती है कि सोदगी, काठी और मालिनीके वंशज हैं जिनके पूर्वपुरुषोंने सिन्धु नदीके मुखकी तरफ जाते हुए सिकन्दरका सामना किया था, गेटी या यूतीके टिड्डी दलके अलावा जिनमेंसे बहुतेरोंने बलौचकी साधारण पदवीको धारण कर लिया है या प्राचीन खास-दूसरी पदवी नहीं है-नूमरी पदवीको अबतक बचाये हुए हैं, जब कि दूसरोंने प्राचीन 'जहित' नामको अबतक जीवित रख छोडा है । हमारे पास जोहिया और दाहिया वंशके विशेष चिह्न मौजूद हैं जिनके बारेमें जैसलमेरके इतिहासमें और अन्यत्र स्थानपर भी बहुत कुछ कहा जा चुका है, जो गेटी जित और हूनके सहित प्राचीन भारतकी "छत्तीस राजपूत वंश" में शामिल है ये बाराह और लोहानाके सहित कौरवका प्रसिद्ध नाम भारतमें कृष्णके शत्रुको अबतक जीवित रखते हुए धारण करते हैं । वाराह और लोहाना जो कई शताब्दी पहिले अगणित दलसे पंजाबमें आये थे, अब "यमालय" में केवल अल्पसंख्यामें दिखलाई पडेंगे । सेहरी-हमारे पश्चिमी मरुभूमिका बडा लुटेरा मनुष्य समाजका शत्रुके लूट और बाद उसकी आदतोंके विषयमें बहुत कुछ कहा जा सकेगा । परन्तु हम पहिले पहिल उन जातियोंका वर्णन करेंगे जिनमें कुछ भी हिन्दूपन शेष है और बाद करके उनकी विशिष्टताओंका कथन किया जायगा । भट्टी, राठौर, जोधा, चौहान, मालिनी, कौरव, जोहा, सुलतान, लोहाना, अरोरा, खुमरा, खिन्दिल, मैसुरी, वैष्णवी जाखर शैगया असीग मुनिदा ।

मुसलमानोंमें सिर्फ दो जातियां कुलोरा और सेहरी हैं जिनकी उत्पत्तिमें कुछ संदेह है और दूसरी जातियां जिनके नाम हम गिनावेंगे न्याद है अर्थात् राजपूत या हिन्दुओंकी दूसरी जातियां थीं जिन्होंने स्वधर्मको त्यागकर किसी कारणवश इसलाम धर्मका स्वीकार किया था, जूत, राजूर, ओमुरा, सुमरा, मेर मोर या मोहर बलौच, लुमरिया, याल्का, सुमैचा, मंगुलिया, बागाप्रिया, दाहिया, जोहिया, कैरो, मगुरिया, ओदुर, बेरोवी बाबुरी, ताबुरी, चरेन्दी, खोसा, सुदानी, लोहाना इन जातियोंकी आदतोंका बयान करनेके पहिले हम न्यादकी एक विशिष्टताको कहना चाहते हैं जिन्होंने अपने

(१) न्याद नवीन शब्द है और ख्याल करता हूँ कि याद (प्रथम) और नौ (नवीन) के संयोगसे बना है ।

पुराने धर्मका त्याग करते समय उस धर्मके सर्वश्रेष्ठ नैतिक गुण और सहनशीलताका भी वायकाट किया और जिस मुसलमानी धर्मको उन्होंने स्वीकार किया था उसका तास्सुब उनकी नसोंमें द्विगुणितरूपसे फैल गया। इस नैतिक रूपान्तरका कारण क्यों? मुसलमानी धर्मका स्वाभाविक गुण है या स्वधर्म त्याग करनेका परिणाम बुद्धिभ्रष्टता है क्योंकि इस संसारमें उस राजपूतकी अपेक्षा जिसने इस्लाम धर्मको स्वीकार किया है, कोई भी खूंखार या असहनशील नहीं मिलेगा। सिन्ध प्रदेश और मरुभूमिमें हम एक ही जातियोंको एक ही नाम धारण किये पाते हैं परन्तु इनमेंसे एक हिंदू है और दूसरी मुसलमान पाहिली अपने प्राचीन रीति व्यवहार पालन करती है, जब कि दूसरी असहनशील कायर और अतिथि द्वेषी हैं। यह संभव है कि मालदोत लाडखानी, मुर्रा या तातुरिये शैतानके सन्तानोंके हाथोंसे कमसे कम जान, शायद कुछ मालका भाग बच जाय, परन्तु खोसा सेहरी या भट्टियोंके हाथसे छुटनेकी आशा मृगतृष्णावत् है। ये इतने अज्ञान और क्रूर होते हैं कि यदि मुसाफिर दैवयोगसे रस्सा या रस्ता शब्द-का उच्चारण करे तो वह बडा ही भाग्यवान् होगा यदि इन पशुओंके हाथोंसे लाठीसे पीट कर जीता जागता बच जाय, जो(सेहरी)इन शब्दोंमें रसूल शब्दकी सादृश्यता पाते हैं, वह (पहले रस्साके लिये किलवर या रूनडोरा और पिछलेके लिए डुगरा या उगं[१]" शब्दको व्यवहृत करे। जिन्होंने पार्क, देनहम, और क्लयटत-जो अनुसन्धानके इतिहा-समें हमेशा अमर रहेंगे) के हृदयको उभाडनेवाले उनके साहसिक कर्मोंको पढा है वे इस बातको जानकर आश्चर्यके समुद्रमें डूब जायँगे कि किस तरह पूर्णतया सात्विक, दयायुक्त अतिथिसेवी हविषी इन गुणोंमें राजपूतके समान हैं जो ला अल्लाह इल्लिलाह महमूद रसूल अल्लाके उच्चारण करते हुए वन्य--पशुकी वृत्ति स्वीकार कर लेते हैं जब कि मध्य एशियाके देशोंमें बुद्धका अहिंसा परमो धर्मका सिद्धान्तके प्रचलित होनेसे तातरजा-तियोंके बीचमें आश्चर्यजनक तबदीली हुई है।

हम काफी तौरसे भट्टियों, राठौरों चौहानों और उनके वंशज मालिनी और सोढा-ओंका वर्णन कर चुके हैं, परन्तु सोढा जातिकी कुछ विशिष्टताओंका वर्णन शेष रह गया है।

सोढा--सोढा जो अबतक हिंदू नाम धारण करते हैं, प्राचीन आचार विचारको यहाँतक परित्याग किया है कि वह उसी वर्तनमें पानी पी लेगा जिससे मुसलमानने पिया है और मुसल्मानके हुक्केसे तमाखू पी लेगा केवल उस निगालीको निकालकर अलग रख देगा जो मुंहसे लगाई जाती है।

निर्धनताके कारण सोढाका जगप्रसिद्ध साहस लोप हो गया है तो भी चोरी करनेमें फुर्तीलेपनके लिये वह अब भी विख्यात हैं और यह सेहरीस-और खोसाके समूहमें शामिल होता है जो दाऊद पोतरासे गुजराततकका धावा लगाते हैं सोढा विशेषकर तलवार और ढाल बांधते हैं और उनकी कमरबन्दसे:एक लम्बा छुरा

---

(१) मार्गके लिये 'डुगरा' राजपुतानामें अधिक प्रचलित: शब्द है, परन्तु मैं ' किलवर ' या रूनडोरी शब्दसे परिचित नहीं हूँ जो (रस्साके लिये व्यवहृत हुआ है।

लटकता रहता है जो शत्रुओंको घायल करने या गोस्तके टुकडे २ करनेके काममें आता है, कुछके पास बन्दूक होती है, परन्तु प्राचीन साधारणता आक्रमण करनेका शस्त्र है जिसके चलानेमें वे बहुत ही प्रवीण या कुशल होते हैं उनका पहिनावा भट्टी और मुसलमानोंसे मिलता है, परन्तु उनकी पगडोंमें एक ऐसी विशिष्टता होती है जिससे सोढा हमेशा पहिचान लिया जाता है सोढा मरुभूमिमें तितरावितर पाये जाते हैं और इस जातिकी शाखाएँ मूलवंशकी अपेक्षा अधिक संख्यामें पायी जाती है जिसमेंसे सुमाचा शाखा-इसमें हिन्दू मुसलमान दोनों ही शामिल हैं-अधिक प्रसिद्ध है। कौरव यह राजपूतोंकी जाति असंख्यामें धातके 'थळमें' पायी जाती हैं और लूटपाटके होते हुए भी यह पूर्ण रूपसे परिभ्रमणशील है।

उनके वास करनेका कोई नियत स्थान नहीं है ! परन्तु अपने भेडोंके वृन्दको साथ लेकर इधर उधर फिरा करते हैं और जहांपर पानीका सुपास या गोरुओंको चरानेके लिए हरितभूमि मिल जाती है वहांपर वे डेरा जमा देते हैं और यहांपर थोडे दिनोंके लिये वे 'पीलू' (Peeron) की सजीव-वृक्षमें लगी हुई-शाखाओंको मिलाकर झोपडे निर्माण कर लेते है, जिनकी चोटीकी पत्तियोंको ढांक देते हैं और अन्दर मट्टीका पलस्तर लगा देते हैं और इस चतुरताके साथ वे उसको बनाते हैं कि बाहरसे देखनेपर कुछ चिह्नतक नहीं दिखलाई पडता है।तो भी घूमते हुए सेहरीसे वनमें बने हुए इन सुरक्षित स्थानोंकी हमेशा खोजमें रहते है जिसमें गडारियेका स्वल्प अन्न रक्खा रहता है जो उनके चारों तरफ छोटे २ टुकडोंसे उत्पन्न हुआ है। जो अपने निरन्तर घूमनेवाले भाइयोंके बीचमें खासकर परिभ्रमणशीलताके लिये प्रसिद्ध हैं अथवा परिभ्रमणता इनके ही बांट पडी है उन कौरवोंकी चंचल प्रकृतिका कारण शाप मेरे घातीने कहा है जो उनको प्राचीनकालमें मिला था।

ऊंट गाय भैंस और बकरियोंको पालते है जिनको वे चारुन और दूसरे व्यापारियोंके हाथ बेंच देते है। वह बडी ही शांतिप्रिय जाति है और अपने समस्त राजपूत भाइयोंके समान अफीमके नशेमें जो समस्त नैतिक और शारीरिक रोगोंको दूर करनेवाली एक मात्र औषध है मनके लड्डू बांधा करते है जिसमें वे समस्त मरुभूमिको अपनी इच्छामात्र ही बनाकर जनपूर्ण कर सकते हैं। महल धोते या धोती कोखोंके समान अल्पसंख्यामें घातमें निवास करती हैं। इनका स्वभाव कौरवोंसे मिलता है और पूर्णरीतिसे गडरियेका जीवन व्यतीत करते हुए कुछ भूमिको जोत लेते है जिसमें अन्नका पैदा होना मेघराजकी कृपापर अवलम्बित है। वे अन्न और जीवनकी आवश्यक वस्तुओंके बदलेंमे घीको देते हैं।राबरी और छांछ मरुभूमिका उत्तम भोजन है बाजरा ज्वार और कैंजरीका दो सेर आटा कई सेर छांछमें मिलाकर आंचपर रखकर किंचिन्मात्र गरम कर लिया जाता है और यह भोजन एक बडे खानदानके लिये काफी होगा।

भारतवर्षके मैदानोंकी अपेक्षा, यहांकी गौएँ बहुत बडी होती हैं और प्रतिदिन आठ सेरसे लेकर दश सेरतक दूध देती है। चार गौओंसे उत्पन्न हुए घीकी बिक्रीसे एक

घरका या कुटुम्बका जिसमें दश आदमी हों अच्छी तरहसे जीवन निर्वाह हो सकेगा और हर गायोंकी कीमत दश रुपयेसे पन्द्रह रुपयेतक दूधके परिमाणके अनुसार होती है। यह राबरी जो अफ्रीकाके होसकौषके सदृश होती है प्रायः ऊंटके दूधसे बनायी जाती है जिसमेंसे घी नहीं निकाला जा सकता है और जो तुरन्त ही अलग रखनेपर सजीव ढेरसा हो जाता है। सिन्धकी घाटोंसे सूखी मछली ऊंटों या घोडोंपर लदकर आती हैं और पूर्वमें बरमेरतककी समस्त जातियां इसको खरीदती हैं। सूखी मछली दो टुकराकी एक सेर मिलती है घातियोंके प्रत्येक गाँव या पुरमें दश झोपडे होते हैं यह कौरवोंके झोपडाके समान होता है और थोडे दिनके लिये निर्माण किया जाता है।

लोहाना यह जाति धात और तालपुरामें अधिक संख्यामें पायी जाती है। पहिले वे (लोहाना) राजपूत कहलाते थे परन्तु व्यापार करनेके कारण वैश्य जातिमें परिणत हो गये हैं। वे लेखक और दुकानदार होते हैं और किसी किस्मका रोजगार करनेमें जिससे उदरपालन हो सके उनको एतराज नहीं है और 'बुभुक्षितः किं न करोति पापं' उक्तिके अनुसार वे बिल्ली और गायको छोडकर प्रत्येक वस्तु भोजनीय समझते हैं।

अरोरा—यह जाति लोहाना जातिके समान हरपेशा जैसे व्यापार, खेती करनेको तैयार है और मिहनती चालाक और अक्लमन्द होनेके सबबसे सिन्धराज्यमें नीचे पदोंपर नियत किये गये हैं। मितव्ययी अरोरा और इन्हींके समान अनेक जातियोंकी क्षुधा शान्त करनेके लिये ठंढे पानीमें मिला हुआ थोडासा आटा काफी है। हम इस बातसे अपरिचित हैं कि अरोरमें रहनेके कारण इस जातिका नाम अरोरा पड गया है। भाटिया जातिने अश्वारोही काम छोडकर वैश्यवृत्ति स्वीकार कर ली है और इस विनिमयसे उनको बहुत ही लाभ हुआ है।

इनका स्वभाव अरोराके सदृश है और कर्मण्यता और संपत्तिमें अरोरासे उतरकर इनका ही नंबर है। शिकारपुर, हैदराबाद, सूरत और जैपुरमें अरोरा और भाटियोंके व्यापार करनेके लिए कोठियां बनी हुई हैं।

ब्राह्मण—मरुभूमि और सिन्धके ब्राह्मण वैष्णव धर्मका छलन करते हैं। ये ब्राह्मण मनुकी आज्ञाएँ वहांतक ही शिरोधार्य करते हैं जहांतक इस मरुभूमिमें वे कष्टप्रद न हों। यहां वे ब्राह्मण स्वतः ही कानून या स्मृति हैं। वे जनेऊको पहिनते हैं परन्तु यहांपर यह धर्मसम्बन्धी कृत्य करानेवाला या पुरोहितीका चिह्न नहीं समझा जाता है। क्योंकि व्यर्थ कालक्षेप करनेवाले मनुष्यकी यहां कुछ प्रतिष्ठा नहीं है। वे खेती करते हैं और अनेक आवश्यक वस्तुओंको बचा हुआ घी देकर बदलेमें खरीदते हैं। वे धातमें बहुतायतसे पाये जाते हैं अकेले सोढा रानाका निवासस्थान चोर ही वैष्णव संप्रदायके सोदार हैं और अमरकोट धारना और मित्तीमें इनके कई घर हैं वे मछली नहीं खाते हैं और न हुक्का पीते हैं, परन्तु माली या नाईका बनाया हुआ भोजन कर लेंगे, वे चौका नहीं लगाते हैं अधिक सभ्य देशमें अपरिहार्य हैं था जिसके बिना काम चल ही नहीं सकता है। वास्तवमें सिन्ध देशमें रहनेवाली हिन्दुओंकी सब जातियां भाटियारिनके

हाथका बना हुआ सरायमें भोजन कर लेंगे। वे बिना किसी भेदाभेदके विचारके हर एकके बर्तन व्यवहृत करते है जो केवल थोडे रेत और पानीसे साफ किये जाते हैं। वे मुर्देको जलाते नहीं है परन्तु देहरीके निकट पृथ्वीमें गाड देते है और समियाईवाले या धनी छोटासा चबूतरा बना देते है जिसपर शिवकी प्रतिमा और जलका भरा हुआ कलश रख देते है। इस देशमें कोली और लोहानोंको छोडकर सब जातियाँ जनेऊको पहिनती है जिसको हिन्दुस्तानमें केवल द्विजातिमात्र धारण करती है। इस प्रथाकी मूल उत्पत्ति यहाँके गवर्नरोंसे है जिन्होंने उत्तम और अत्यन्त निकृष्ट काम करनेवालोंके पहिचानके लिये यह प्रथा जारी की थी।

रेवारी–समस्त हिन्दुस्तानमें लोग इस शब्दसे परिचित हैं और यह शब्द ऊंटोंका पालन पोषण करनेवालोंके लिये व्यवहृत होता है परन्तु हिन्दुस्तानमें इस कामको करनेवाले सदासे मुसलमान होते है। मरुभूमिमें यह एक अलग जाति है और हिन्दू है जिनका एकमात्र व्यवसाय ऊंटोंका पालना या उनका चुराना है। इस पिछले काममें वे असामान्य दक्षता या फुर्ती दिखलाते हैं और वे भट्टियोंके साथ दाऊदपोतरातक ऊंटोंके चरानेके लिये धावा मारते है। जब उनको ऊंटोंका चरता हुआ वृन्द मिलता है तब सबसे बढकर पराक्रमी और अनुभवी अपना भाला उस ऊंटके मारता है जिसके पास वह पहिले पहिल पहुंचता है और ऊंटके खूनमें कपडेको भिगोकर वह भालेके नोकपर रखकर दूसरे ऊँटके नाकके पास ले जाता है और फिर उलटे पांव बडी शीघ्रगतिसे भागता है और अपने नायकके उदाहरण और खूनके सुगन्धसे लुभाया हुआ समस्त ऊंटोंका वृन्द इसके पीछे जाता है।

जाखूर, शियाध, पुनिया संपूर्ण नाम जीतवंशके हैं और इनमेंसे कुछ लोगोंने उपविभागोंमें बटे हुए होनेपर भी प्राचीन व्यवहार और धर्मको नहीं छोडा है परन्तु अधिकांश भागने इसलाम धर्मको स्वीकार कर लिया है और जातीय नामको अबतक जीवित बनाये हुए हैं। ये लोग जिनको पहिले गिना चुके हैं सीधे और मेहनती है और मरुभूमि और घाटीमें पाये जाते है। उनको छोडकर कुछ तितरवितर प्राचीन घराने पाये जाते हैं जैसे सुलतान और खमरा जिनके ऐतिहासिक वृत्तान्त हमको विदित नहीं है जोहिया खिन्दिल इत्यादि अनेक हैं जिनकी उत्पत्तिका उल्लेख मरुस्थलीके इतिहासमें हो चुका है।

अब हम हिन्दू जातियोंके साधारण वृत्तान्तको छोड देंगे जो (हिन्दु) समस्त सिंध देशमें मुसलमानोंके इच्छानुकूल चलते हे जो अपनी असहनशीलताके लिये, जैसा कि पहिले कह चुके प्रसिद्ध हैं।

---

(१) अब्बुलफजल विजौरके सूबेका वर्णन करते हुए जिसमें यूसफजाई रहा करते थे, लिखता है कि "सुलतान जाति जो अपनेको सुलतान सिकन्दर जुलकर्नैनकी लडकीके वंशज कहते हैं, मिर्जा उलघबेगके समयमें काबुलसे आयी और इस देशपर अपना अधिकार जमाया"। मि० एल फिण्स्टोनने सिकन्दरके वंशजोंका पता लगानेको व्यर्थ ही कोशिश की।

प्रसिद्ध है कि हिन्दुओंका नम्बर हमेशा दूसरा है कुँआपर हिन्दूको मुसलमानके पानी भर लेनेतक धैर्यपूर्वक ठहरना चाहिये या भोजन बनाते समय यदि कोई मुसलमान आगको मांगे तो उसी समय उसको देना चाहिये नहीं तो हिन्दूके शिरपर चमरछत्रकी वरसा होगी ।

सेहरी; कोस चन्दी सुदानी मरुभूमिकी मुसलमान जातियोंमें सेहरीकी प्रथम गणना है और कहा जाता है कि जडमें यह हिंदू है और प्राचीन अरोराके वंशके कुलजात कहे जाते हैं परन्तु इनकी उत्पत्ति चाहे सेहरीसे पाटिंजरने साहिर लिखा है वंशमें हो या अरबी शब्द सेहरा मरुभूमि जिसके बह हुआ है इसकी व्युत्पत्ति हो कुछ बडे महत्वकी बात नहीं है ।

कोसा या खोसा सेहरोंकी शेखा हैं और इनकी आदतें भी वैसी ही हैं । इन्होंने अपने लूटके तरीकेको अब नियमबद्ध कर दिया है और कौरी एक किस्मका कर जो रक्षार्थ डाकुओंके आदमियोंको दिया जाता है-नामक कर नियत किया है जिसमें हल पीछे एक रुपया और पांच धडी अन्न लिया जाता है और यह कर गांवके गडरियों तकसे वसूल किया जाता है । इनके वृन्दके लोग विशेषकर ऊंटपर चढा करते हैं यद्यपि इनमेंसे कुछ घोडेपर होत हैं सेल या साँग तलवार और ढाल इनके शस्त्र हैं परन्तु बन्दूक किसीके ही पास होती है । वे लूटनेके लिये चारों तरफ सौ कोस और जोधपुर और दाऊदपुराके राज्योंमें भी चले जाते थे ।

परन्तु राजपूतके संग युद्ध करना वे बरा देते हैं जो (राजपूत) सेहरीके बारेमें कहता है कि युद्धके नकारा बजाते ही सेहरी रणभूमिमें अवश्य ही शयन करेगा । मरुभूमिके दक्षिणी भागमें वे खासकर रहते हैं और नवकोट भित्तीके निकट बुलेरीतक इनमेंसे बहुतेरे उदयपुर जोधपुर और शिवबहके राज्यमें नौकरी कर लेते थे परन्तु वे कायर और नमकहराम हैं ।

सोढा वंशसे जिन्होंने इस्लामधर्मको स्वीकार कर लिया था सुमाचा उनमेंसे एक है और दोनों ही थल और घाटीमें अधिक संख्यामें पाये जाते हैं जहाँ उनके बहुतसे गांव है । उनकी आदतें धातियोंसे मिलती हैं परन्तु उनमेंसे बहुतेरे सेहरीकी संगति करते है और अपने भाइयोंको लूटा करते थे । वे अपने शिरके बाल नहीं मुडवाते हैं इसलिये मनुष्यकी अपेक्षा वे अधिकतर पशु दिखलाई पडते हैं । वे किसी जानवरको रोगसे नहीं मरने देते हैं परन्तु जब उसके आरोग्य होनेकी कोई आशा नहीं रहती है तब वे उसको मार डालते हैं इनकी स्त्रियां बडी कर्कशा होती हैं और अपने मुखको झाँपती नहीं हैं । राजूर-वेवे कुलके कहे जाते हैं और भट्टी केवल मरुभूमि या जैसलमेरकी सीमाओंतक जैसे रामगढकेला, जारियाला इत्यादि तक-और जैसलमेर और ऊपरी सिन्धके बीचवाले थलतक अपना गमनागमन करते है । वे खेती करते हैं भेड चराते हैं और चोरी करते हैं और जिन लोगोंने इसलाम धर्मको स्वीकार किया है उनमें सबसे निकृष्ट समझे जाते हैं ।

ओमुर और सुमरा प्रमरवंशके हैं और अब खासकर मुसल्मानी धर्मके पैरोकार हैं यद्यपि जैसलमेर और आमुरसुमराके थलमें अल्पसंख्यामें पाये जाते है। इनका वर्णन हम काफी तौरपर कर चुके हैं।

कुलोरा और तालपुरी सिन्ध देशमें प्रसिद्ध जातियां है। सिन्धदेशके पिछले शासन-कर्त्ता कुलोरा जातिके थे और वर्त्तमान शासनकर्त्ता तालपुरी जातिके है और यद्यपि एकने ईरानके अब्बशेदसे अपनी उत्पत्ति कहनेका साहस किया है और दूसरेने पैगम्बर महम्यूदसाहिबसे पैदा होनेका दावा पेश किया है तो भी यह कहा जाता है कि दोनों ही बलौचके समान है जो विशेषरूपसे जीतवंशके कहे जाते है।

तालपुरियोंकी आबादी लोहरी सिन्धकी आबादीकी चतुर्थांश है और वे हैदराबादके राज्यको लोहरीसिन्धकी अयथार्थ नाप रखते हैं। वे थलमें नहीं पाये जाते है।

नुमरी लुमरी या लुका यह बलौच वंशका महान् उपविभाग है और अबुलफजलके कथनानुसार कुलमानीसे उतरकर है और रणक्षेत्रमें तीन सौ सवार और सात हजार पैदल उपस्थित करनेकी सामर्थ्य रखते हैं। लैडविन और रेनल साहिबोंने नुमरीका नोमर्दी कर दिया है नुमरी या लुमरी जो लुका भी कहलाते हैं-लुका शब्द लोमडीके लिये विशेष प्रसिद्ध है, जीतवंशके हैं। जातीय शब्द बलौचकी जिसको वे धारण करते है क्या व्युत्पत्ति है, भविष्यत्‌में इन विषयोंका अनुसन्धान करनेवाला चाहे इसका पता लगावे कि यह नाम उन्होंने बलूचीस्तानसे लिया या उसको दिया।

जीहूत जूत या जित अत्यन्त प्राचीन जाति, जो समस्त राजपूत जातियोंकी एकत्रित संख्यासे अधिक है। अब भी समस्त सिन्ध देशमें समुद्रसे दाऊदपूतरातक अपने प्राचीन नामको बचाये हुए है। परन्तु थलमें यह नहीं पायी जाती है। इनकी आदतें अपने पडोसियोंकी आदतोंसे कुछ ही भिन्न है। सबसे पहिले इसलाम धर्म स्वीकार करनेवालोंमेंसे वे एक है।

मैर या मेर--हमको यह कदापि आशा न थी कि सिन्धकी घाटीमें भेरा या पहाडीजाति मिलेगी; परन्तु मेर शब्द काफी तोरसे इस बातको प्रमाणित करता है कि वे भट्टी वंशके है।

मोहर या मोर--भट्टी वंशके कहे जाते है।

जतावुरी बोरीया ही एकमात्र भूतकी प्रसिद्ध पदवीको धारण करते है और शैतानके पुत्र की प्रबलतर उपाधि भी इनके ही बांटमें पडी है। इनकी उत्पत्ति संदेहजनक है परन्तु इनकी गिनती बातुरी खेनगर और समस्त राजपूतानामें फैले हुए दूसरे चौर-वृत्ति करनेवालोंमें है जो तुम्हारे शत्रुका शिर या उसकी पगडी ला देंगे। वे दाऊदपोतरा विजनौत, नोक नवकोट और ओदुरके थलोंमें पाये जाते है। वे अपने ऊंटोंको किराये-पर चलाते है और कारवाँकी रक्षा करनेके लिये भी नियुक्त किये जाते है।

जोहिया, दाहिया, मंगुलियोंने पूर्वकालमें राजपूत होनेपर भी अब इसलाम धर्मका स्वीकार कर लिया है और घाटी या मरुभूमिमें अल्पसंख्यामें पाये जाते है। बेरीबी-

बैरोवी-बलौचकी एक शाखा, खैरोवी, जनग्री, ओंदुर बाधी नामकी अनेक जातियाँ पायी जाती हैं जिनके पूर्वपुरुष प्रमर और शांकला राजपूत थे । परन्तु संख्यामें अल्प या अप्रसिद्ध होनेके कारण हमको इनके वर्णन करनेकी कुछ जरूरत नहीं है। दाऊदपोतरा-यह छोटासा राज्य, यद्यपि हिंदूधर्मकी सीमासे बाहर है तो भी मुश्किलसे मरुस्थलीकी सीमाके अन्तर्गत है और जिसकी रचना जैसलमेरके भट्टी राज्यका कुछ अंश काटकर आधुनिक समयमें हुई है। उस वंशके विषयमें हम कुछ नहीं जानते है जिसने इसकी नींव डाली और हम सिर्फ इसी बातका वर्णन करेंगे जिसका उल्लेखतक मि. एलफिन्स्टोनने नहीं किया है-जिनका इस राज्यके अधिपति और राजधानी भावलपुरका रोचक वृत्तान्त पाठकोंके पढनेके योग्य है जब वह काबुलको जाते हुए यहांपर ठहरे थे।

दाऊदखाँ दाऊदपोतराकी नींव डालनेवाला सिंधुनदीके पश्चिममें शिकारपुरका निवासी था जहाँ उसने प्रजाकी हैसियतसे कई गुना अधिक शक्ति संपादन की उसके स्वामी कन्दहारके सम्राट्ने अपनी सेना इसको दमन करनेको भेजी। शाही फौजका सामना करनेमें नाकाबिल होनेकी वजहसे उसने अपनी जन्मभूमिका परित्याग किया और अपने घर गृहस्थी और जंगम संपत्तिको लेकर सिंधुनदीके इस तरफकी मरुभूमिमें चला आया। शाही: फौज बराबर पीछा करती हुई सूतीअल्लाह स्थानपर उसके निकट आ पहुँची। दाऊदके लिये दो बातोंमेंसे एकको किये बिना छुटकारा न था कि या तो वह स्वयं अपनेको शत्रुओंके अधीन कर दे या अपने घरवालोंको मार डाले जो उसके पलायन या बचावमें बडी भारी बाधा डालते थे उसने राजपूतोंके समान व्यवहार किया और अपने दुश्मनोंसे लोहा लिया जो इस साहसिक कर्मसे भयभीत या धैर्यच्युत होकर और दाऊदपर आक्रमण उचित न समझकर भाग गये। दाऊदखाँ अपने साथियों समेत सिंधके समतल मैदानमें या 'कच्ची' में बस गया और धीरे २ उसने अपने राज्यकी सीमा थलतक बढायी। दाऊदके बाद मुबारकखां मसनदपर बैठा, फिर उसका भतीजा भावुलखां सिंहासनासीन हुआ जिसका बेटा सादिक महम्मदखां भावल-पुर या दाऊदपोतराका वर्तमान अधिपति है। दाऊदपोतराकी उपाधि दोनोंके ही लिये देश और उसके स्वामी लागू है। मुबारकखाँने ही भट्टियोंसे खादल जिला छीन लिया था जिसका जिक्र जैसलमेरके इतिहासमें कई वार हो चुका था और जिसकी राजधानी देरावल है जिसकी नींव आठवीं शताब्दीमें रावल देवराजने डाली थी और यहाँपर दाऊदके वंशजोंने अपना निवासस्थान नियत किया था। उस समय देरावलमें भट्टियोंकी एक शाखा रहती थी जिसने अतिप्राचीन समयमें मूलवृक्षसे अपना सम्बन्ध तोड डाला था। इसके सरदारको रावलकी पदवी है और उसके वंशज अपने देशनिकालेके बाद गुरिया-लोंमें जो बीकानेरके अधीन है, पाँच रुपया दैनिक वेतनपर जो उनके जीतनेवालोंने नियत किया है रहते है।

"दाऊदपुत्रकी राजधानी भावलखाँने गरहके दक्षिणी किनारेकी तरफ बसायी और उसका नाम अपने नामपर रक्खा, उस स्थानपर प्राचीन भट्टी नगर था जिसका नाम मै

नहीं जान सका, तीस वरस बीते कन्दहारी सेनाने दाऊदपोतरापर आक्रमण किया और देरावलको घेरकर अपने अधिकारमें कर लिया और भावलखांको बीकमपुरके भाइयोंसे रक्षा मांगनेके लिये विवश किया।

एक संधिपत्र लिखा गया जिसके द्वारा देरावल उसको लौटा दिया गया और भावलखाँने फिर एकबार अबदाली शाहकी अधीनता स्वीकार कर ली और अपने पुत्र मुबारकखांको रुपया बटानेके लिये बतौर जामिनके भेजनेपर शाही सेना चली गयी। मुबारक तीन बरसतक काबुलमें रहा और आखिरकार फिर स्वतंत्र किया गया और भावलपुत्रखांकी उपाधिसे विभूषित हुआ, राज्य पानेके उद्योगमें देखकर भावलखांने अपने पुत्रको कैदकर किंजरके किलेमें डाल दिया जहां वह भावलखांके मृत्युपर्यन्त उसी हालतमें पडा रहा भावलखांकी मृत्युके कुछ पहिले दाऊदपोतराके सरदारोंने बुद्धिपर खैदानी भोजगढवाला तिररोहके खुदाबक्स गुरईके इख्तियारखां और ओचके हाजीखां–मुबारकखांको किंजरके किलेसे निकाला और भावलखांका मृत्युसंवाद उनको मुरारमें मिला जब कि वे वहाँ पहुँचे। वह राजधानी तक बराबर चला आया परन्तु नासिरखांने आलमखां गुरग या काबलोच पुत्र अपने पिछले अपराधोंकी सजासे डरकर उसको छलसे मरवा दिया और वर्तमान नरेश अपने भाईको सादिकखां मसनदपर बैठा दिया जिसने तुरन्त ही मुबारिकके पुत्रोंको अपने छोटे भाई समेत देरावलके किलेमें बन्द कर दिया। वे भाग गये और उन्होंने राजपूतों और पुरबियोंकी सेना एकत्र कर देरावलको हस्तगत कर लिया; परन्तु स्तदिक किलेकी दिवालपर चढ गया पुरबिआओंने कुछ रक्षा न की और उसके दोनों भाई और एक भतीजा इस युद्धमें काम आये। दूसरा भतीजा दीवालपर चढ गया परन्तु पासके सरदारने उसको पकड कर सादिकके हवाले कर दिया जिसने उनको मरवा डाला और यह अनुमान किया जाता है कि यह सब उपाय सादिरखाँने रचे थे ताकि उनके खून करनेका बहाना हाथ लगे। सादिकखांने जिस नसीरखांकी मददसे गद्दीको पाया था उसको ही मरवा डाला जब कि उसकी ताकत रैयतकी हैसियतसे ज्यादा बढ गयी थी। खैरानी सरदार हमेशा-कुछ न कुछ षड्यन्त्र अपने स्वामीके विरुद्ध रचा करते हैं जिसका एक उदाहरण बीकानेरके इतिहासमें दिया गया है जब कि तीरारोह और भोजगढ जप्त कर लिये गये थे और उनके सरदार किंजरके किलेमें दाऊदपुतराका राजकारागार कैदकर भेज दिये गये थे गुरही अब भी हाजीखाँके पुत्र अबदुल्लाके अधिकारमें है, परन्तु इसमें कोई भी राज्य संलग्न नहीं है। सादिक महम्मदखाँमें अपने पिताके समान कोई गुण नहीं है जिसको मारवाडके विजयसिंह अपना भाई कहा करते थे। दाऊदपोतराके सरदार आपसमें ही लडा करते हैं और भट्टी लोग जिनसे अब भी लूटनेके एवजमें वे कर वसूल किया करते हैं, इनको बडी ही घृणासे देखते हैं।

---

(१) यह स्मारक टिप्पणी सन् १८११ या १८१२ में लिखी गयी थी।

भावलपुरके सरदारको अब कन्धारसे कुछ डर नहीं है और वह ऊपरी सिंधमें अपने पडोसीसे सलाह रखता है, यद्यपि उसको लाहौरके रणजीतसिंहकी धमकियोंसे प्राय: भयभीत होना पडता है जो 'दाऊदके सन्तानों' पर अपना प्रभुत्व बतलाता है।

रोग--अनेक प्रकारके रोगोंसे जिनसे यहाँके निवासी स्वास्थ्य और उदरभर भोजन न मिलनेके कारण या सड़ा हुआ स्वास्थ्यको हानिकारक जल पीनेके कारण पीडित रहते हैं 'रतौन्ध' नारू और बेरीकोसने इस देशको अपना घर ही बना लिया है। रतौन्ध और वेरीकोस विशेष कर दीन दुखियाको सताती हैं और जिनको बेवशीमें बहुत दौड धूप करनी पडती है जब कि रेतमें धसे हुए आगेको निकालनेके लिये अत्यावश्यक श्रमके कारण जिससे उनके रंगोंपर बडा ही जोर पडता है, उनके अंग अकसर टूट जाते हैं तो भी अभ्यासका बल ऐसा होता है कि मेरे अधीन घातके निवासी जो मरणपर्यन्त (कासिद) का काम सिन्धुनदी और राजपूतानेके नगरोंके बीचमें करते रहते थे। इस बातकी शिकायत किया करते थे कि हिन्दुस्तानके मैदानकी कठोर भूमि उनको अधिकतर थका डालती है बनिस्बत कि उनके देशकी रेतकी पहांडियाँ।

परन्तु मैंने कभी भी घातीकी इस बातका विश्वास नहीं किया, बावजूद कि उसके भोलेपन या सिधाईके यद्यपि यह उनकी गर्वोक्ति थी या, उनकी फूली हुई नसें जिसकी उपमा पिंडुलीपर बन्धी हुई पट्टीसे दी जा सकती थी यदि उसके कथनको झूंठा नहीं करती थी कमसे कम इतना तो भी साबित करती थी कि मरुभूमिमें पैदल चलनेका ही यह फल उसको भोगना पड़ता था। राजकुमारसे किसान पर्यन्त कोई भी इस नारुरोगसे नहीं छुटा है और वह मनुष्य बड़ा ही सौभाग्यवान है जिसको यह रोग एकही बार हुआ है यह रोग केवल मरुभूमि और पश्चिमी राजपुताना और मध्यस्थित राज्योंमें नहीं होता है परन्तु अर्बली पर्वतके उस पार इस रोगसे आक्रान्त इतने मनुष्य हैं कि आपसमें मिलने-पर "तुम्हारा नारु कैसा है" यह उनका कुशल प्रश्न पूछनेका साधारण वाक्य हो रहा है। यह सामान्यता पर और जोंडोंके चमडेमें होता है और इसकी वेदना सहन करनेकी सामर्थ्यके बाहर है। यहांके निवासी इस बातमें संमत नहीं है कि यह रोग रेत या पानीके अन्तस्थित अतिक्षुद्र जन्तुके द्वारा उत्पन्न होता है या सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणुओंके जिनमें संजीवता या चैतन्यता (Vital preiciple) गुप्तरूपसे वास करती है। शरीरमें छिद्रोंके द्वारा घुस जानेपर होता है। खालके नीचे और उससे चिपटे हुए स्थान-पर पहिले पहिल यह रोग एक दाग उत्पन्न करता है जो धीरे २ बढकर और फूलकर आखिरको तमाम शरीरमें जलन और सूजन पैदा कर देता है। कीडा तब चलने लगता है और जब यह कुछ अंशमें इसक छुटकारेके लिये आवश्यकीय सजीवता प्राप्त करता है तब इसकी गति रुकती ही नहीं है और रात दिन अभागे रोगीको काटा करता है, जो पतले चमड़ेके कटने पर अपने शत्रुके थिरकी प्रतिदिन देखनेकी एकमात्र आशासे ही

प्राणको नहीं छोड़ता है। दवाके लिये यही समय अति लाभदायक है, कुशल नारु-वैद्य बुलवाया जाता है जो कीड़ेका शिर पकड़ कर उसको सूईके चारों तरफ लपट देता है; इस प्रकारसे निश्चित समयपर सूईको गति प्रदान कर टूटनेके खौफके बिना जहांतक हो सकता है उसको सूईके चारों तरफ लपेटता जाता है। वह मनुष्य बहां ही अभागा है जिसका तागा टूट जाता है। जब वह ज्वरके नींदमें लात मार कर सजीव तागाको तोड़ डालता है तब दशगुणा सूजन जलन पककर पीब निकलने लगता है। यदि धैर्य और होशियारीसे उसके खींचनेमें समर्थ हुए तो रोगी आरोग्य होजाता है।

जब कि उनका पैतृक शासक रहता है, मेरा मांस कीड़ोंसे परिपूर्ण है मेरी खालटूट गई है और घृणा करनेके योग्य है मैं लेटा हुआ कहा करता हूँ कि कब रात समाप्त होगी और मै उठूंगा? तब मै इस बातकी कल्पना करूं कि वह अवश्य ही नारुसे आक्रान्त हुआ है जिससे बढकर कोई रोग मनुष्यके लिये यंत्रणापूर्ण नहीं है।

भारतकी तरह यहाँपर भी बच्चों और वयप्राप्त मनुष्योंके रोग विद्यमान है। इनमेंसे शीतला या तिजारीका अधिक प्रकोप है। शीतलाका सामोपचार वे उतना ही करते हैं कि रोगीको शीतला माताके ऊपर छोड देते हैं और दूसरे रोगोंके प्रतीकारार्थ वे सुकोड़नेवाली दवा देते है जिसका एक अंग अनार (यदि मिलसका) के छिलकेका काढा है। अमीर दूसरे देशोंके अनुसार नीमहकीमके पल्ले पडते हैं जो घात सम्बधी विष देकर जिनके असरसे वे स्वयं ही अज्ञात है उनको कातिल बीमारियोंका शिकार बनाते है। इन बुखारोंके प्रभावसे अकसर तिल्ली बढ जाया करती है और जिसकी दवा उनके पास एकमात्र गर्म लोहेसे दग्ध करना है।

दुर्भिक्ष इन देशोंका महान् प्राकृतिक रोग है। इन देशोंमें अत्यन्त प्राचीन कालसे एक काल्पित कहानी प्रसिद्ध चली आती है जिसमें वह कहा गया है कि भूखा माताके आगमनसे अकाल पड़ता है। एक अकाल ग्यारहवीं शताब्दीमें पडा था और बारह बरस-तक रहा था, जिसका उत्कृष्ट प्रमाण कई राज्योंके वंश परंपरागत बातोंमें विद्यमान है। भूलसे इस अकालका सम्बन्ध लाखा फूलनीके नामसे जोड़ दिया गया है, जो शीवजी राठौरका पहिला जिससे कन्नौजको त्याग किया था-शत्रु था और जिसने मरुभूमिके इस Rabin Hood राबिनहुडको संवत् १२६८ या सन् १२१२ ई० में मार डाला था। करीब २ एक शताब्दी पहिले हमीरके समयमें कमरनदीका लुप्त होजाना अवश्य ही इस

---

(१) मेरे दोस्त डाक्टर जोसफ डंकन (जब मै उदयपुरमे पोलिटिकल एजंट था तब यह रेसीडेन्सीमे एक पदपर सुशोभित थे) पर नारू ने भयकररूपसे आक्रमण किया यह Aucb joint में निकला और इसके निकालनेके उद्योगमें इसके टूट जानेके कारण उन सब बुराइयोंका सामना मेरे दोस्तको करना पडा जिनको मे वर्णन कर चुका हूँ जिससे वह लगडे हो गये और स्वास्थ्य बिगडजानेके कारण वह उसके पुनः प्राप्त करनेके लिये उनको केडाके जानेके लिये बाध्य होना पड़ा, जहां कि मैने अठारह महीने बाद स्वदेशको जाते हुए देखा था परन्तु तब भी पूर्णतया उनका लंगड़ापन नहीं गया था।

दुर्भिक्षका कारण रहा होगा। उनकी गणनानुसार हर तीसरे साल कुछ न कुछ अकालका कोप सहना पडता है और सन् १८१२ का अकाल तीन या चार बरसतक रहा और जिसके अधिकारकी सीमा भारतके मध्य रियासतोंतक पहुँच गयी थी जहांसे गरीबोंके यूथके यूथ अपने देशको छोडकर गंगाके मैदानमें चले गये थे और उन्होंने अपने प्यारे बच्चोंको और अपने स्वतंत्रताको मुट्ठीभर अन्नके लिये बेंचा था।

फसल, पशु और वृक्ष–ऊँट "मरुभूमिका जलयान" का वर्णन प्रथम ही करना आवश्यक है। यहां इसके बिना काम नहीं चल सकता है–मरुभूमिवासियोंके यह अपरिहार्य वस्तु है, वह हलमें जोता जाता है, कुँआसे पानी खींचता है। अपने स्वामीके लिए मरुभूमिके रास्तेमें पीनेके लिए मशकोंमें पानी ले जाता है और कई दिनतक यह बिना पानीके रह सकता है। उपरोक्त गुण उसके पैरकी बनावट, जो भूमिके अनुसार सिकुडने और फैलनेका गुण रखती है और उसका सख्त मुह जिसमें वह अपनी जीभसे बाबूल खैर और जवासकी शाखायें रख लेता है जिनमें सुईके समान नुकीले सख्त और लम्बे काँटे लगे होते हैं, सब इस बातकी साक्षी देते है कि ईश्वरने इसके उत्पन्न करनेमें मनुष्योंपर बडी ही कृपा और उपकार किया है। यह बडे ही आश्चर्यकी बात है कि अरबी पैतृक शासक जो भिन्न २ पशुओंकी–पालतू और जंगली–आदतोंका ठीक २ वर्णन करता है और जो स्वय तीन सहस्र ऊँटोंका प्रभु था। ऊँटके इन गुणोंका कुछ भी उल्लेख न करे, यथार्थ हल चलानेमें गेंडेकी अनउपयोगिताका वर्णन करते हुए वह पर्यायसे इस बातको कबूल करता है कि इस काममें बैलके अलावा दूसरोंका भी उपयोग हो सकता है। मैदानके ऊंटोंकी अपेक्षा मरुभूमिके ऊंट अधिक उत्तम होते है और धात और बरमेरके थलोंके ऊंट समस्त संसारमें प्रथम गिने जाते हैं। जैसलमेर और बीकानेरके राजाओंके पास लडाईके लिये सीखे हुए युद्धके योग्य ऊंटोंकी पलटन है। जैसलमेरकी सेनामें दो सौ ऊंट हैं जिनमेंसे अस्सी महाराजके है बाकी सरदारोंके बीचमें बटे हुए हैं, परन्तु मैने इस बातके पूछनेका कभी विचार नहीं किया कि और राज्योंके सवारोंसे यहांके ऊंट सवार क्या निस्बत रखते है या किस परिमाणमें हैं हर ऊंटपर दो मनुष्य बैठते हैं एकका मुहँ ऊंटके मुखकी तरफ और दूसरेका पूछकी तरफ और सेनाके पीछे हटनेके समय वे बडे ही कामके होते हैं, परन्तु जब वे शत्रुके अत्यन्त निकट आ जाते है वे ऊंटोंको घुटनोंके बल बैठाते है, उसकी टांगें बाँध देते हैं और पीछे जाकर ऊंटके शरीरका ही मोर्चा बनाते हैं छातीतक ऊंची भूमि मोर्चेका काम देती है और ऊंटकी काठीपर अपनी बन्दूक रखते है। मरुभूमिकी हर किस्मकी झाडी या वृक्ष ऊंट अपने खानेके काममें लाता है।

(खर) गदहा, गोरखर या जंगली गदहा मरुभूमिका निवासी है परन्तु धातके निकट दाक्षिणी हिस्सामें और बरमेरसे बंकसिर और बुलारीतक महान् रन या नमककी मरुभूमिके उत्तरी किनारे २ फैले हुए घने 'रो' में बहुतायतसे पाया जाता है।

नीलगाय सिंह इत्यादि–हिरन और नीलगायकी उत्तम किस्में मरुभूमिके अनेक भागोंमें पायी जाती हैं और यद्यपि मैदानमें रहनेवाले राजपूतोंने उसको अदण्डता मान

रक्खा है जो उसको शायद आखेटमें मारे परन्तु उसका मांस नहीं खाते हैं, पर मरुभूमिमें उसको माँस और खाल दोनों ही बडे काममें आती है । यहां व्याघ्र लोमडी शृगाल और सिंह भी पाये जाते हैं पालतू पशुओंमें घोडा, बैल, गाय, भेड, बकरी, गदहा की कुछ कमी नहीं है और गदहा यहां हल जोतनेमें भी व्यवहृत किया जाता है ।

बकरी और भेड–भेड और बकरियोंके वृन्दक वृन्द मरुभूमिमें असंख्य संख्यामें चरते हुए दिखाई पडते हैं । लोग कहते हैं कि बकरी कातिकसे चैततक विना पानीके जिन्दा रह सकती हैं जो बिलकुल असंभव या गप्प है, यद्यपि यह प्रसिद्ध है कि वे छः हफ्तेतक जब कि घासकी विपुलता होती है पानीको छोड सकती है । दाऊदपोतरा और भट्टीपोहके थलोंकी बकरियाँ और भेडें गर्मीके प्रारम्भमें सिन्धके समतल मैदानमें चली जाती हैं । गडरिये अपने वृन्दोंके समान पानीकी जगह छांछ पीकर रहते हैं जिसमेंसे मक्खन निकाल लिया जाता है और जिसका घी बनाकर अन्न या दूसरी आवश्यक वस्तुओंके बदलेमें बेच देते हैं । ऊंटोंके चरानेवाले उनका दूध पीकर एक मात्र जीवनकी रक्षा करते हैं और जंगली फलोंके सिवाय उनको कभी रोटीतक मयस्सर नहीं होती है ।

वृक्ष और फल––हम अनेक अवसरोंपर करली या खैरका उल्लेख कर चुके हैं, 'खैजरी'के छुलकेको सुखाकर आटा बनाया जाता है जिसको सांग्री कहते हैं. झल जिसमें गडरिये अपने झोंपडे बनाते हैं जेठ और बैशाखमें उनको फल प्रदान करते हैं पीलू भोजनके काममें आता है, ' बबूर ' से एक प्रकारका गोंद मिलता है जो दवामें काम आता है, बेरमें भी सुस्वादु फल लगते हैं, ऊंट इन सबको भक्षण करते हैं और ये सब अत्यन्त विपुलतासे पाये जाते हैं और बहुत ही लाभदायक हैं, ' जवासके ' स्वच्छ रसका गोंद बनाया जाता है जो दवामें काम आता है,फोककी शाखोंसे वे अपने कुएँ ढांकते हैं, 'सजी' का पौधा वे राखके लिये जलाते हैं । इनमेंसे प्रथम और अंतिमका सविस्तर वर्णन अत्यावश्यक है ।

करील या खैर हिंदुस्थान और मरुभूमिमें प्रसिद्ध है, हिंदुस्थानके लोग उसका अँचार डालते हैं परन्तु यहां यह भोजनकी उत्तम सामग्री ख्याल करके इकट्ठा किया जाता है।इसकी झाडीकी ऊंचाई दश फीटसे पंद्रह फीटतक है और इसके चारों तरफ खूब फैलती है इसकी निरंतर हरित शाखाएँ पत्रविहीन होती हैं जिनमें लाल रंगका फूल निकलता है और फल काले करेट एक किस्मका फलके समान होता है।जब इकट्ठा करके उसको चौबीस घंटेतक पानीमें भिगोते हैं; यह पानी फेंक दिया जाता है और इसके बाद दो बार फिर उपरोक्त क्रिया की जाती है तब उसके प्राणान्तक गुण दूर हो जाते हैं; वे फिर उबाले जाते हैं और नमकके साथ खाये जाते हैं अथवा अमीर आदमी इनको घीमें तैयार कर रोटीके साथ खाते हैं अनेक घरोंमें यह बीस २ मनतक मिलता है ।

सज्जी एक छोटासा पौधा है और खासकर उत्तरी मरुभूमिमें पैदा होता है,परन्तु जैसलमेरके उन प्रदेशोंमें जो खदल कहलाते हैं और अब दाऊदपोतराके अधीन हैं विपुलतासे पाया जाता है।पूगलसे देरावलतक और फिर यहाँसे मुरीदकोट इख्तियारखाँकी

गढा होते हुए, खैरपुरतक एक विस्तीर्ण थल है, जिसमें अनेक नीचे सख्त और समतल प्रदेश पाये जाते हैं जो यहां 'चित्रम्' नामसे प्रसिद्ध हैं जिनकी रचना बरसातके बाद जो पानी एकत्र होता है उसके द्वारा हुई है और इन्हीं स्थानोंमें सज्जीका पौधा उत्पन्न होता है। नमक जो (subcarbonate of sode) है, जले हुए पौधेकी राखके नीचे लिखी हुई रीतिसे प्राप्त होता है। गड्ढे खोदकर पौधेको उनमें भर देते हैं फिर आग लगा देनेपर एक किस्मका द्रव पदार्थ निकलता है जो तलीमें बैठ जाता है जलते समय वे ढेरको लम्बे बांसोंसे चलाते हैं या उसपर रेत डालते हैं जब बडी ही शीघ्रतापूर्वक जलता होता है। जब पौधेके गुण निकल जाते है, गड्ढा रेतसे भरकर तीन दिन-तक ठंढा होनेके लिये छोड देते है;सज्जी फिर निकाली जाती है और किसी दूसरे उपा-यसे इसमेंका मैल दूर कर देते है। स्वच्छ सज्जी रुपयेको एक सेर बिकती है, और अस्वच्छ रुपयेकी चालीस सेरसे भी अधिक मिलती है। राजपूत और मुसलमान दोनों ही इस व्यवसायको करते है। और एक पैसा रुपया कर अपने अधीश्वरको देते है। चारूं और मारवाड नगरोंके रहनेवाले इसको खरीदकर भिन्न २ बाजारोंमें ले जाते है जहाँसे यह समस्त भारतमें भेज दी जाती है। सिन्धदेशमें इसका बडा ही व्यापार होता है और समस्त काफिले इसको बेखर तत्तार और कच्छमें ले जाते हैं। सज्जीके गुण पाक क्रिया जाननेसे छिपे नहीं है और सख्त पानीमें थोडीसी सज्जी मिलाकर दालमें डालनेसे उसको हलका बना देती है; तमाखू बेंचनेवाला अपने व्यापारमें इसका प्रचुर परिमाणमें उपयोग करता है, क्योंकि यह कहा जाता है कि इसमें फिर तमाखूके पौधेके गये हुए गुणोंको वापिस लानेकी शक्ति विद्यमान है।

अनेक प्रकारके घास यहां पाये जाते है परन्तु वृक्षविद्या सम्बन्धी चित्रके बिना इनके वर्णनमें कुछ रोचकता न होगी। यहां बडी २ घास कुश नामक पैदा होती है और इसीके नामपर रामके प्रथम पुत्रका नाम कुश रक्खा गया था और उसके वंशज कुशवाह या कछवाह कहलाते है। यह प्रायः आठ फीट ऊँची होती है, अंकुरदशामें इसको पशु चरते हैं और जब कुछ प्रौढ हो जाती है तब झोपडे छानेके काममें आती है जब कि उसके जड़की रेसेकी जुलाहे कूची बनाते है जो उनके व्यवसायके लिये अपरिहार्य वस्तु है सरकण्डा धामून धबू और अनेक प्रकारके दूसरे घास यहांपर पाये जाते है जिनमेंसे गोकरा पापरी और भूरुत कपडोंमें चिपटनेके कारणसे यात्रीको बहुत ही कष्ट पहुंचाते हैं।

---

(१) चित्रम् नाम यहांके समतल और कठोर भूमिवाली प्रदेशोंके लिये व्यवहृत होता है (मि० एलफिंस्टोन लिखता है कि यह प्रदेश घोडेके सुमके शब्दसे गुंज उठते हैं) पर मूल अर्थ उसका 'चित्र' तसवीर है, और चित्रम् नाम पडनेका कारण यह है कि सदा रविकाल 'मृगजलका चित्र दृष्टिगोचर होता है। यहांकी भूमि जवाखारसे परिपूर्ण होनेपर कहांतक इस दृश्यको यदि यह इसकी भूल उत्पादक नहीं है उन्नति प्रदान करती है, और इसका उल्लेख हम उत्तरी भारतके भिन्न २ भागोंके मृगतृष्णाका वर्णन करते हुए कर चुके है।

खरबूजा-बडा खरबूजा चिपरा, और वामन, गोवर ३ यहांपर बहुतायतसे होता है ।

(तोमाता) जिसका हिन्दुस्तानी नाम मुझे मालूम नहीं है, इन प्रदेशोंमेंका निवासी है और भारतके दूसरे भागोंमें भी यह पाया जाता है । हम इस बातको लिख कर इस लेखको समाप्त करते है कि इनके-वृक्षों झाडियों या अन्नके-वृक्षविद्या सम्बन्धी नामोंको इस पुस्तकके सूचीपत्रमें दे देवेंगे ।

यात्रावृत्तान्त ।

जैसलमेरसे सिन्धु नदीके दक्षिण तटपर सिवाना और हैदराबादतक और हैदराबादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरको लौट आया कुलदूरी (पांच कोश)-इस गांवमें पालीवाल ब्राह्मण रहते हैं, दो सौ घर कुल गुजियाकी बस्ती (२ कोश)-साठ घर खासकर ब्राह्मण कुएँ ।

खाबा ३ कोश-तीन सौ घर, खासकर ब्राह्मण एक छोटासा दुर्ग चार बुर्जवाला नीची पहाडीपर स्थित है जिसमें जैसलमेरकी सेना रहती है ।

कुनोही (५ कोश) और सुम (५ कोश)-कुनोही और सुमसे करीब एक मीलकी दूरीपर एक स्थानपर चार या पांच झोपडोंवाले गांवोंका वृन्द है जो सुम नामसे प्रसिद्ध है । इसकी रक्षाके लिये एक बुर्ज है जिसमें जैसलमेरकी सेना रहती है कई कुएँ है जिनको यहाँवाले 'वेरिया' कहते है यहांके निवासी खासकर भिन्न २ जातिके सिन्धी है जो अपने भेडोंके झुंडोंको चराते है और देव चन्द्रेश्वरसे 'खारा' लाते है जो बतौर दावनके रंग पक्का करनेके काममें लाया जाता है । सुम और मूलनोहके बीचोंबीच जैसलमेर और सिन्धकी सीमा पडती है ।

मूलनोह-२४ कोश दश झोपडेका गाँव है, निवासी विशेषकर सिन्धी ऊंची २ रेतकी पहाडियोंके मध्यमें स्थित है । सुमासे आधामार्ग १२ कोश पारी पारीसे रेतकी

(१) मूलनोहसे सिवानाको दो मार्ग गये हैं । धाती पानी मिलनेके कारण दूरकी रास्ते गया । दूसरी सुकरुन्द होकर है जैसा कि नीचे लिखा है ।

पैरी ...	५ कोश.		
बादशाहकी बस्ती	... ६ "	सुकरुन्द ...	३ कोश.
ओदानी	... ५ "	नूला ...	१/२ "
मित्राओ	...१० "	मुकरुन्द ...	४ "
मीरकाखोल	... ६ "	काकाकी बस्ती	६ "
सुपुरी ...	... ५ "	सिन्ध	१० "
कुम्भरका नाला	... ९ "	सिवाना	१/२ "

ऊपर (ऊपरी) सिन्धसे लावर (नीचे) सिन्धको सड़क गई है ।

पहाडियों पर्वत श्रेणियों और कभी २ मैदानमें होकर है । (यहां पर्वत श्रेणी 'मुगरा' कहलाती है) आगेके तीन कोशमें केवल रेत और पर्वतकी श्रेणियां पडती है और शेष नौ कोशमें लगातार एक ऊंचा टीला चला गया है । इस चौवीस कोशकी यात्रामें न कोई कुँआ पडता है और न वर्षाऋतुके सिवाय पानीका एक बून्द भी दिखलाई पडता है, जब कि पानी पुराने तालाबों या बावडीमें एकत्र होता है । यहाँ नदीको तावा कहते है, जो अर्द्ध मार्गपर स्थित है जहां कि प्राचीन कालमें एक नगर बसता था । लोग कहते हैं कि सिन्धको इन देशोंके मुसलमान द्वारा विजय किये जानेके पहिले घाटी और मरुभूमिपर प्रमर और सोलंकी जातिके राजपूतोंका अधिकार था । प्राचीन ताल और मन्दिरोंके भग्नावशेष यद्यपि रेतकी राशिसे बहुत कुछ दब गये है, तो भी वे इस बातकी साक्षीभूत हैं कि समस्त 'थल' किसी समय आवाद--चाहे अधिक या कम था । वंशपरंपरागत वार्तासे विदित होता है कि बारहवीं सदीमें लाखा फूलनीके समयमें बारह बरसका अकाल पडा था । जिसने इस देशको उजाड दिया और अकाल मृत्युसे बचे हुए प्राणी सिन्धके समतल मैदान या कूर्चाको भाग गये । इस मरुभूमिमें अनेक खेतीके योग्य स्थान है जिसके आगे पशुओंके चरानेवाले चाहे सोढा राजूर या सुमैचा क्यों न हों--वह वह रर,रिमेंसे किसीको लगा देते है । उपरोक्त शब्द मरुभूमिमें पानीके लिये व्यवहृत होते हैं ।

मारे २ कोश पलरी ३ '' राजूरकी वस्ती २ '' राजूरका गांव २ ''	ये सब दश २ झोपडोंके गांव है जिनमें राजूरा निवास करते जो इस थलमें खेती करते है या गाय ऊंट भैस बकरियोंके झुंडको चराते है । इन गाँवोंमें अनेक ताल है । राजूरकी वस्तीका ताल 'महादेवका दे' कहलाता है ।

देवचन्देश्वर महादेव (२ कोश) सोढा राजाओंके राजकालमें यहांपर एक नगर था और महादेवका मन्दिर सूरजकुंडके किनारेपर किर्माण किया गया था जिसके खंडहर अब भी विद्यमान है । मुसलमानोंने मन्दिरको तोड डाला और तालका नाम बदलकर 'दीन-वाह' रख दिया । यह छोटासा कुंड ईटोंका बना है और खजूर और अनारके वृक्ष उसके तटकी शोभाको बढाते है और मुल्ला-सिन्धसे आया हुआ-यहांपर रहता है जिसको सब मुसलमान भेंट देते है । इस स्थानके चारों ओर बारह कोशतक असंख्य ताल हीं ताल चले गये है जहां कि राजूर अपने पशुओंको चराते हैं और खेती करते है । इनके झोपडे गोपुच्छाकार होते है और इनकी चोटीपर खंभे बांध दिये जाते है जिनको घास और पत्तियोंसे आच्छादित करते है और प्राय: ऊंटके वालोंका बडा कम्मल खंभोंपर फैला देते हैं ।

चन्द्रिकाकी वस्ती-(२ कोश) गांवमें चन्द्री जातिके मुसलमान रहते है । ये यात्रियोंके दानपर अपना जीवन निर्वाह करते है ।

राजूरकी बस्ती	२	कोश	इन गाँवोंमें गडरिये सुमैचा, राजूर और दूसरे लोग निवास करते है जो अपने पशुओंको लेकर एक स्थानसे दूसरे स्थानको चले जाते है जब कि हरित भूमि उनको आश्रय देनेके लिये असमर्थ हो जाती है । इस स्थानमें उनकी आवश्यकताको पूरा करनेके लिये विदानीकी प्रचुरता है ।
सुमैचाका दो	२	”	
राजूरका ”	१	”	
” ”	२	”	
” ”	२	”	
” ”	२	”	
” ”	२	”	
” ”	२	”	

ओधनिया-७ कोश बारह झोपडे, राजूरका दो और इसके बीचमें पानीका नाम निशान नहीं है ।

नल्लाह-(५कोश) (थल) या मरुभूमिका ढालूपन नालेके एक मील पूर्वकी ओर समाप्त हो जाता है और लोग कहते है कि यह वही नाला है जो रोरीवेखरके ऊपर डूराके निकट इन्दूरसे निकलता है, रोरीवेखरसे यह सोहराव और खैरपुरके पूर्वमें बहता हुआ निकलता है और जिंजर होते हुए वैरसीकाहरको चला जाता है जहाँसे अमरकोट और चीरके लिये इसमेंसे नहर काटी जाती है ।

मित्रा ४ कोश साठ घरका गांव है, जिसमें बलौच रहते है हैदराबादका थाना यहाँ है कहीं २ पर नीची रेतकी पहाडियाँ है ।

मरिकाकू-६कोश दश २ झोपढेके तीन गांव पृथक् २ है जिनमें अरोरा रहे है । शिवपुरी ३ कोश एक सौ बीस घर हैं, निवासी अरोरा; नैऋत्यकोणमें छः बुर्जवाला एक छोटासा किला है जिसमें हैदराबादकी सेना रहती है ।

कुमैरका नाला-३ कोश, यह नाला काकुरकी वस्ती और सुकसनूके बीचसे निकलकर पूर्वकी तरफ बहता है संभव है कि यह प्राचीन नहरका प्रवाहमार्ग हो जिसके जाल संपूर्ण देशमें फैले हुए थे ।

सुकरुन्द-२कोश एक सौ घर, एक तृतीयांश हिन्दू,खेतीके योग्य भूमि, असंख्य अनपेच्छितनाले, झौ और खेजटीके जंगलसे हर तरफ परिपूर्ण है । नालोंके किनारेपर रूई, नील,चावल, गेहूँ, जौ, चना इत्यादि पैदा होते है जूत-२कोश साठ घर सुकरुन्द और जूतूके बीचमें एक नाला है ।

काजीका शहर-४कोश, चार सौ घर दो नाले एक दूसरेको काटते है । मखैरो ४ कोश, साठ घर एक नाला मखैरो और जूतूके बीचमें है । काकुरकी वस्ती-६ कोश साठ घर अर्धमार्गमें प्राचीन किलाके खंडहर तीन नहरे वा नाले एक दूसरेको काटते है गांव सिन्धुसे चार मील एक पुस्ता या बांधपर बसता है । जिसका पानी वर्षा ऋतुमें गांवके भीतर आ जाता है । पुर-१ कोश उतारा या घाट ।

सिन्धुनदी—१ कोश नावपर बैठकर उस तरफ उतर कर सेवानमें पहुंचे। सेवाने १ दक्षिण किनोरपर बारह सौ घरका एक नगर जो हैदराबादके अधीन है।

---

(१) नदीसे कुछ दूरपर एक ऊंचे टीलेपर सेवानका नगर बसा हुआ है और खासकर दक्षिणमे कई कुंज हैं। मकान मट्टीके बने हुए प्रायः तीन मंजिल ऊंचे हैं और छतको साधनेके लिये खम्भोंका उपयोग किया गया है। नगरके उत्तरकी ओर एक प्राचीन और विस्तीर्ण दुर्गके खण्डहर विद्यमान हैं और जिसके सातबुर्ज अब भी दृष्टि गोचर होते हैं; मध्यभागमें राजमहलके चिह्न दिखलाई पडते है। जो अब भी भरतरीका महल कहलाता है, लोग कहते हैं कि उज्जैनसे अपने भाई विक्रमादित्यसे निकाले जानेपर यहां भरतरी राज्य करते थे। यद्यपि कई शताब्दी बीत गई जब कि इन देशोंमें हिन्दुओंका राज्य था तो भी वंशपरंपरागत बाकी अब भी बच रही है। वे कहते है कि गन्धर्वसेनका ज्येष्ठ पुत्र भरतरी अपनी स्त्रीमें इतना अनुरक्त था कि उसका मन राज्य कार्यमे नही लगता था। विक्रमने अपने भाईकी राज्यकार्यमे प्रमादता देखकर उसको बहुत समझाया। ज्योंही यह बात रानीके कर्णगोचर हुई उसने विक्रमको देश निकालेका दण्ड दिलवानेका हठ किया। कुछ दिनोंके बाद एक प्रसिद्ध योगीने राजसभामें आकर राजाको 'अमरफल' प्रदान किया जिसको उसने शंकरकी कठिन तपस्या करके प्राप्त किया था। राजाने वह फल रानीको दे दिया, रानीने अपने जार महावतको दिया, उसने निज वेश्याको दिया, वेश्या गहरे इनाम पानेकी आशासे उसे राजाके पास ले गयी। राजा मनहीमन अपनी रानीके कुलटापन पर क्रोधित होकर रंगमहलको गये और रानीसे फल मांगा। उत्तर मिला "वह खो गया है"। राजाके दिखानेपर रानी मारे कायलीके भाग गयी और अपने महलके नीचे कूदकर उसने आत्महत्या कर ली। राजा अपनी दूसरी रानी पिंगलासे मन बहलाने लगा और थोडे ही दिनोंमे उसके रूपके वशीभूत हो गया। परन्तु पिछले अनुभवके कारण उसको रानीपर सन्देह बना रहता था। एक दिन राजा शिकार खेलने गया। वनमे उसके एक शिकारीने एक हिरन मारा। हिरनी उस स्थानपर आई जहां कि हिरन पडा हुआ था और कुछ कालतक पतिका ध्यान कर उसके शरीरपर गिरकर प्राणको बाहर निकाल दिया। सांपने उसी शिकारीको काटखाया जिसके सोते ही सोते प्राण पखेरू उड गये। उसकी स्त्री उसको तलाश करती हुई वहां आयी और पहिले तो उसने अपने पतिको सोता समझा परन्तु जब उसको यथार्थ बात मालूम हुई तब उसने वनकी लकडियोंको एकत्र कर चिता बनाई और अपने पतिका शव उसपर रक्खा; कुछ देर परिक्रमा करनेके बाद चितामें आग लगाकर पतिके साथ भस्म होगई! राजाने इन बातोंको देखकर घर पहुंचकर पिंगलासे कहा कि शिकारी की स्त्रीसे बढकर संसारमें कोई स्त्री सती नहीं है।रानीने कहा शिकारीकी स्त्री दुःखके मारे सती हो गयी कि प्रेमसे और यदि प्रेम होता तब चिता बनानेकी कुछ आवश्यकता न होती। कुछ दिनोंके बाद राजा फिर शिकार खेलने गया और रानीकी बात याद करके उसने हिरनको मार अपना वस्त्र उसके खूनमें रंगकर अपने विश्वासी नौकरके हाथ रानीके पास भेज दिया और आज्ञा दी कि रानीसे कहना कि राजा सिंहके शिकार करनेमे मारा गया। पिंगला इस वार्ताको सुनकर न रोयी न बोली पर भूमिमें पड़कर सूर्यको दंडवत् कर उसने प्राणको छोड़ दिया।

चिता बनायी गयी; और रानीका शव नगरके बाहर जलाया जा रहा था जब कि राजा शिकार खेलकर लौटा। स्मशानभूमिमें जाकर जब राजाने अपने कपटका यह फल देखा तब उसने राजसी वस्त्र फेंक कर फकीरी वस्त्र धारण किया और विक्रमको उज्जैनका राज्य देकर वनमें चला गया।

सेवानसे हैदराबाद।

जूटकी बस्ती (२ कोश) यहांके लोग जीत या जूतका उच्चारण जोहूत करते हैं यह गांव सिन्धुनदीसे आध मीलकी दूरीपर तीस झोपडोंवाला है, गांवके निकट ही पहाडी है

इधर उधर भ्रमण करते हुए उसके मुखसे केवल "हाय पिंगला! हाय पिंगला" के सिवाय कुछ नहीं निकलता था। आखिरकार राजाने सेवानको अपना निवासस्थान नियत किया; यद्यपि वे उस स्थानको बतलाते है जिसको मुसलमान भरतरीका आमखास कहते हैं तो भी किला अधिकतर प्राचीन है। भरतरीका मंदिर नगरके दक्षिणमे है। इस मंदिरमें मुसल्मानोंने लाल-पीर शाहाजका शव दफन किया है और वे कहते हैं कि इन्हींकी कृपासे हमलोग (मुसलमान) सिन्धको विजय करनेमें सफलीभूत हुए। इस सन्तके स्मारक मंदिरके मध्यमें चारों तरफ लकडियोंसे घिरा हुआ बना है और लोग कहते हैं कि यह सन्त हिन्दूधर्मको मानता था। यह बडा ही आश्चर्यजनक दृश्य है कि दोनों ही हिन्दू और मुसलमान एक ही स्थानमें पूजा करते हैं और यद्यपि हिन्दू पीरके स्मारकके पास नहीं जाने पाते हैं तो भी दोनों ही ताखमे रक्खे हुए सालिगरामकी बडी मूर्तिका पूजन करते हैं। वास्तवमें यह बात अत्यन्त अद्भुत है कि इस और बातको प्रमाणित करती है कि यहांके लोग तलवारके जोरसे मुसल्मान बनाये गयेथे, वह मुसल्मान जो पहिले हिंदू था प्रायः बडा ही आग्रही और असहनशील होता है। मेरे नमकहलाल और बुद्धिमान् दूतोंने—मदारीलाल और घासीने मुझको सेवानके किलेके खण्डहरकी एक ईट ला कर दी। इसकी लम्बाई चौडाई और मुटाई एकघन थी, अत्यन्त अच्छी तरहसे पकी हुई थी और बजानेपर घंटाके समान बजती थी। वे मेरे पास कुछ जले हुए गेहूँ लाये थे जो बिलकुल साबित थे परन्तु (कार्बन) में परिणत हो गये थे। वंशपरंपरागत कथन प्रमाणित करता है कि वे वहां हजारों बरससे पडे हैं। इसमें बहुत ही कम सन्देह है कि यह स्थान सिकन्दरके शत्रु मुख-सेवानके अधिकारमें था। निःसन्देह यूनानियोंने सिन्धुके मुखकी तरफ जाते हुए अपने मार्गमे उतने ही अत्याचार किये थे जितने कि पिछले समयमें महमूद गजनवीनने और जो कुछ वे अपने नावोंतक न ले जा सके उसको उन्होंने फूक दिया। सिक्खोंके गुरु नानकका बाडा नदी और किलेके मध्यमें है। सेवानमे हिन्दू और मुसलमानोंकी आबादी बराबर है, हिंदुओमे जैसलमेरसे आई हुई व्यापार करनेवाली मैमुरी जाति अधिकतासे पायी जाती है और कई पीढियोंसे यहां रहती है। पोकरन (१) जातिके यहां अनेक ब्राह्मण सुनार और दूसरे प्रकारके कारीगर रहते हैं। मुसल्मानोंमें सैयदोंकी संख्या ज्यादे है हिंदू अमीर हैं! रुई, नील और धान जो अधिक परिमाणमें सेवानके समीपमें होते हैं, रहा और कराचीबन्दरके बन्दरगाहों की बडी(२) नावोंमें जिनको मुसल्मान खेते हैं भेजा जाता है। सेवानका हाकिम हैदराबादसे भेजा जाता है।

पर्वतोंकी श्रेणी जो रहासे फैलती है सिंधुनदीके समानान्तर रेखामें सेवानसे तीन मीलके करीब पहुंचकर वायव्य कोणकी तरफ मुडती है। इन सब पहाडियोंमें मेकरानके किनारे हिंग—लाज माता (३) के मंदिरतक लुमरी या नुमरी जाति निवास करती है जो यद्यपि अपनेको बलोच कहते जीतवंशके हैं।

(१) जैसलमेरका इतिहास देखो।

(२) यह प्रसिद्ध मंदिर रहासे कराची बंदर होते हुए नौ दिनकी रास्तापर है और समुद्रतटसे करीब ९ मील है असंख्य हिंदूयात्री इसके दर्शनार्थ जाते हैं।

(३) ये रेनल (Rennel) के नोमुर्दी हैं।

सुमैचाकी बस्ती (२ ½ कोश) छोटासा गांव ।

लूखी (२ ½ कोश) साठ घर नदीसे डेढ कोशपर गांवसे उत्तरकी तरफ-तहूरतट धान्यसे परिपूर्ण दो मील पश्चिमकी तरफ पहाडियोंमें एक स्थानपर महादेव पार्वतीका मन्दिर है, जहांपर अनेक ताल हैं जिनमेंसे तीन गर्म पानीके हैं ।

ऊमरी- ९ कोश नदीसे आधमीलकी दूरीपर पचीस घर हैं; एक कोश पश्चिम नीची पहाडियां हैं ।

सूमरी-३ कोश नदीके पहाडियोंपर पचास घर, डेढ कोश पश्चिम ।

सिन्दू-४ कोश नदीसे दो सौ गजपर एक बाजार है; गांवमें दो सौ घर हैं. डेढ कोश पश्चिमकी ओर।

मजेन्द-४ ½ कोश नदी तटपर दो सौ पचास घर, व्यापार अधिक दो कोश पश्चिमकी तरफ पहाडियां ।

ओमुरकी बस्ती--३ कोश नदीके निकट थोडेसे झोपडे ।

सैदयकी बस्ती ३ कोश।

शिकारपुर-४ कोश नदी तटपर पूर्वकी तरफ पार उत्तर । हैदराबाद ३ कोश सिन्धनदीसे डेढ कोश हैदराबादसे नूसूरपुर नौ कोश शिवदादपुर ग्यारह कोश शिवपुरी सत्रह कोश रोरीवेरूरु छः कोश कुल जोड तैंतालीस कोश ।

हैदराबादसे अमरकोट होते हुए जैसलमेरतक सिन्धुखाँकी बस्ती ३ कोश, फुलैती नदीका पश्चिमी तट ताजपुर ३ कोश, बडानगर हैदराबादके ईशान कोणमें कुतरैल २ ½ कोश एक सौ घर ।

नूसुरपुर १ ½ कोश ताजपुरके पूर्वमें बडा शहर है ।

अलिपरका टंडा-४कोश नूसूरपुरके अग्निकोणमें अलियरखाँने जो स्वर्गवासी गुलाम अलीका भाई था एक विस्तीर्ण नगर बनवाया था । नगरके दो कोश उत्तरमें

---

(१) मार्गके अनेक संकट और आपत्तियोंको पार करके इन तालोंमें स्नान करनेके लिये असंख्य दूसरे हिन्दू यात्री आते हैं ! इनमेंसे दो गर्म हैं और सूर्यकुण्ड और चन्द्रकुण्ड कहलाते हैं और एक प्रकारके विशिष्ट गुणोंसे संपन्न हैं । इन कुंडोंके पवित्र जलमें स्नान कर अक्षय पुण्य प्राप्त करनेके पूर्व यात्री अपने समस्त जीवनमें इसने जो कुछ पुण्य वा पाप किया है उसको पुरोहितके कानमें कह देता है, जो महादेवके सामने मध्यस्थ बनकर उसको मोक्ष देनेकी सामर्थ्य रखता है । लोग कहते हैं कि यदि पापी बिना अपनी पापकहानी कहे कुण्डमें कूद पडे तो निकलनेपर उसका समस्त शरीर फोडोंसे आच्छादित दिखाई पडता है । रामचन्द्रके समयसे हिन्दुओंमें पापकहानी कहनेकी प्राचीन रीति चली आती है ।

(२) महमदशाह और नादिरशाहके बीचमें जो संधि हुई थी उसके अनुसार ' संकरा ' भारत और ईरानकी सीमा नियत किया गया था और इसी सबबसे सिन्धकी घाटीका समस्त उपजाऊ भाग उसके अधिकारमें चला गया था । जो सिंधुनदीके पूर्वमें था । लोग कहते हैं कि वह यह 'संकरा' है परन्तु दूसरे कहते हैं वह रोरीबेखरके ऊपर दूरीसे निकलता है ।

सांगराका नाला है, जिसके बारेमें लोग कहते हैं कि हाला और मुकुरुन्दके बीचमें सिंध नदीसे निकला है और जंडिलाके पाससे गुजरता है

मीरवह ५ कोश चालीस घर, वह, टंडा, गोट, पुरवा, गांव शब्दके लिये समानार्थक हैं।

सुनारियो--७ कोश चालीस घर।

दिनगानो--४ कोश सिंधके समतल प्रदेशकी सीमा यह गांव है। उत्तरकी तरफ पांच और छः मीलकी दूरीपर रेतकी पहाडियां हैं दिनगानोके नीचे एक छोटीसी नदी बहती है।

कोरसानो ७ कोश सौ घर। कोरसानोके पूर्व दो कोशकी दूरीपर एक प्राचीन नगरके खंडहर दृष्टिगोचर होते हैं। ईंटेके मकानात कुआँ और बावडी अबतक विद्यमान हैं। उत्तरकी तरफ दो या तीन कोशपर रेतकी पहाडियां है।

अमरकोट ८ कोश हैदराबादसे अमरकोटतक एक विस्तीर्ण मैदान चला गया है जो मरुभूमिकी रेतके पहाडियोंके शिरेपर नीची भूमिपर बनाया गया है। इस समस्त देशमें जिसका रकवा कच्चा चौवालिस कोश है और सुनारियोतककी भूमि अत्यन्त उत्कृष्ट है और सिन्धुनदीके नहरोंके द्वारा सम्यक्तया सींची जाती है। गांवोंके चारों तरफ खूब खेती होती है और यहांकी भूमि स्वभावतः उपजाऊ होनेपर भी विशेषकर बबूल निरन्तर हरित झल और झोके जंगलसे परिपूर्ण है। सुनारियोसे अमरकोटतक लगातार एक जंगल चला गया है जिसमें खेती करनेके योग्य कुछ भूमिके टुकडे हैं जहाँकी खेती दैवाधीन है यहाँकी भूमि इतनी अच्छी नहीं है जितनी कि प्रथम मार्गकी है।

कत्तार--४ कोश अमरकोटके पूर्वमें एक मीलकी दूरीसे रेतकी पहाडियाँ प्रारम्भ होती हैं जिनकी उँचाई डेढ सौ फीटसे दो सौ फीटतक है। कुछ झोपडे सुमैचा जातिके है जो यहाँ अपने पशु चराते हैं, दो कुएँ हैं।

धोतकी बस्ती--४ कोश कुछ झोपडे,एक कुआँ, धोते सोढा और सिन्धी यहाँ खेती करते हैं और पशु चराते है।

धारना—८ कोश सौ घरकी बस्ती है जिसमें पोकरन ब्राह्मण और बनिया रहते है जो गडरियोंसे घी खरीदकर भुज और धाटीको भेजते हैं। यह व्यापारकी मंडी है, पूर्वके कारवाँ यहाँ अपनी वस्तुओंके बदलेमें घी ले लेते है जो यहाँपर ' रो ' में भेडोंकी बहुतायतके सबबसे बहुत ही सस्ता है।

खैरलूका पर तीन कोश, इस समस्त प्रदेशमें तितर वितर अनेक गाँव और ताल ' पर ' हैं।

लनैलो १ ½ कोश सौ घर, पानी,खारी, खैरलूसे पानी ऊंटोंपर आता है।

भोजका पर ३ कोश झोपडे खेतीके योग्य भूमिभू ६ कोश, झोपडे।

गरिरी १० कोश-तीनसौ घरका छोटासा नगर है जो शोभासिंह सोढाके अधिकारमें है ! इसके अधीन कई गाँव है। घाट और जैसलमेरके राज्योंकी यह सीमा है। घाट पूर्णतया सिन्ध देशमें संमिलित कर दिया गया है। यात्रियोंसे कर वसूल करनेके लिये यहांपर एक 'थानी' रहता है।

हरसानी १० कोश तीनसौ घर, निवासी खासकर भट्टी । यह भट्टी जातिके राजपूतके अधिकारमें है जो मारवाडको कर देता है।

जिनजिनियाली १० कोश तीनसौ घर-यह जैसलमेरके प्रधान सरदारकी जागीर है इसका नाम कैतसी भट्टी है। यह नगर जैसलमेरकी सीमापर है । एक छोटासा भट्टीका दुर्ग है और अनेक ताल है जिनमें नौ महीने तक पानी बना रहता है और रेतकी पहाडियोंकी घाटियोंमें खूब खेती होती है। जिनजिनियालीके उत्तरमें करीब छः कोश पर चारुनका एक गांव है।

गजसिंहकी बस्ती २ कोश पैंतीस मकान। पानीकी कमी चारुनगांवसे ऊंटोंपर लाया जाता है।

हमीर देवरा-५ कोश दो सौ घर। करीब १ मील उत्तरकी ओर कई ताल हैं और गांवका पानी खारी होनेके कारण इन तालोंसे पानी ऊंटोंपर आता है। जैसलमेरकी पर्वतश्रेणीकी यहांपर इतिश्री हो जाती है।

चैलक ५ कोश अस्सी घर, कुएँ, चैलक पहाडी पर है।

भोरा ७ कोश चालीस घर, कुआँ, छोटासा ताल है।

भाऊ २ कोश दो सौ घर, पश्चिमकी ओर ताल, छोटे ? कुएँ है।

जैसलमेर ५ कोश-इस चक्कारदार मार्गसे अमरकोटसे जैसलमेर साढे पचासी कोश है। जिनजिनियालीसे छबीस कोश, गिरपसे सात मील बासे बारह और अमरकोटसे पच्चीस, सब मिलाकर पक्का सत्तर कोश है ऊंटोंका कारवाँ चार दिनमें इस मार्गको आक्रमण कर सकता है और कादिद् रात दिन चलते हुए साढे तीन दिनमें पार करते है। अन्तिम पच्चीस कोशका मार्ग पूर्णतया मरुभूमिमें होकर है, हैदराबादसे अमरकोटतक चौवालिस कच्चे कोशकी दूरी उपरोक्त कोशमें संमिलित करनेपर उसका जोड १२९ $\frac{1}{2}$ कोश होता है। बिलकुल सिधा मार्गकी दूरी १०५ पक्का कोश कूती गयी है। जो सर्पाकार मार्गके बजा करनेपर भी करीब करीब १९५ अंग्रेजी मीलके होती है। इस मार्गका जोड ८५ $\frac{1}{2}$ कोश।

वैसनौ होते हुए जैसलमेरसे हैदराबाद।

कुलदार ५ कोश।

खावा ५ कोश।

लाखागंज ३० कोश तमाम मार्ग मरुभूमिमें होकर, न गांव न पानी।

---

(१) इस सरदारके मार जानेके वृत्तान्तको जाननेके लिये जैसलमेरका इतिहास देखो।

वैशनौ ८ कोश ।

वैरसीका रार १६ कोश कुँए ।

शीम्रो-३ कोश ।

मीतका धैर ७ कोश अमरकोट २० कोशकी दूरीपर ।

जेन्दीला--८ कोश ।

ऊलियरका टंडा—(१०) कोश सांकरा नाला ।

ताजपुर	४ कोश	प्रथम मार्गसे नूसुरपुर होते हुए ऊलियरका टंडाकी दूरी १३ कोश है या २ कोश इससे अधिक आन्तिम पांच कोशमें पांच नहरें मिलती है। इस मार्गका जोड१०३कोश।
जामका टंडा	२ कोश	
हैदराबाद	५ कोश	

जैसलमेरसे शाहगढ होते हुए मीर सोहराबसे खैरपुरतक ।

अना सागर २ कोश ।

चन्दा १ कोश ।

पानीका तर ३ कोश तर या "तिर" या ताऊ ।

पानीकी कुचरी ७ कोश कोई गांव नहीं ।

कोरियालो ४ कोश ।

शाहगढ २० कोश[1] तमाम मार्गमें 'रो' शाहगढ सीमा है । छः बुर्जवाला एक छोटासा दुर्ग इसमें है और ऊपरी सिन्धके शासकका यह स्थान है ।

गुरुसेह ६ कोश ।

गुरहर २८ कोश संपूर्ण मार्गमें 'रो' या मरुभूमि, पानीका एक बुन्द भी नहीं । गुरहरसे दो रास्ताएँ फूटती है एक खैरपुरको दूसरी रानीपुरको ।

बलौचकी बस्ती	५ कोश	बलोचा और सुमैचाके गांव है ।
सुमैचाकी बस्ती	५ कोश	

नल्ला २ कोश यहाँ वही नदी है जो दूरा और प्राचीन नगर अलोरमें होकर बहती है यह नदी मरुभूमिकी सीमा है । खैरपुर १८ कोश ऊपरी सिन्धका शासक और हैदराबाद-के राजाका भाई यहाँ रहता है । बारह बुर्जोका उसने एक पत्थरका किला निर्माण किया है, जिसका नाम नवकोट है, नालासे खैरपुरतक १८ कोशकी दूरीमें एक समतल प्रदेश है और यहाँकी घाटीकी चौडाई १८ कोश है । निम्न लिखित नगर अत्यन्त महान है ।

---

(१) शेख अब्दुल बरकत शाहगढसे कोरियालाकी दूरी सिर्फ नौ कोश बतलाता है और कोरियालासे ५ कोश पश्चिमको और (कगर) नदीके शुष्क मार्गको पार करनेकी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बातका उल्लेख करता है । पानी प्रचुर परिमाणमे उसका प्रवाहमार्ग खोदनेपर मिलता है । असंख्य वैरा मिलते हैं जहां कि गडेरिये अपने पशुओंको ले जाते हैं ।

खैरपुरसे लुधाना-सिंधुसे बीस कोस पश्चिममें है और हैदराबादके राजाके पुत्र कुर्मअलीके अधिकारमें है।

खैरपुरसे लुखी-बीस कोश है।

खैरपुरसे शिकारपुर-२० कोश है।

गुरहरसे रानीपुर।

फरोरा १० कोश पचास घरका गांव, निवासी सिंधी और कुरार चारों तरफ कई गांव, और मीरसोहरावकी तरफसे यहांपर 'धानी' रहता है, इस मार्गसे ऊंटके 'कतार' बहुत निकलते हैं। दूराका नाला फरारोके पूर्वमें दो कोशपर बहता है, फरारो मरुभूमिके सिरेपर है तकुरकी श्रेणी फरारोके पांच कोश पश्चिमसे आरंभ होकर रोरी-बखर-जो (फरारोंसे सोलह कोशकी दूरीपर है) तक चली गई है। फरारोसे सिन्धु-तककी घाटीकी दूरी १८ कोश है।

रानीपुर १८ कोश।

जैसलमेरसे रारबिखर।

कोरियाली १८ कोश पिछला मार्ग देखो।

बन्दो ४ कोश उन्दुरजातिके मुसलमान यहां रहते हैं।

गटरू १६ कोश जैसलमेर और ऊपर (सिन्धकी) सीमा एक छोटेसे किलेमें मीर सोहरावकी सेना रहती है, दो कुएँ एक आदर, सुमैचा और उन्दुरके तीस झोपडोंका गांव है, 'टीबा' भारी या ऊंचे।

गोदित ३२ कोश गडरियोंके तीस झोपडे एक छोटा भट्टीका किला समस्त प्रदेश मरुभूमिमय पानी नहीं।

संकराम या संगराम १६ कोश आधी दूरीमें रेतकी पहाडियाँ शेषमें ज्वारके लकडियोंके बने असंख्य झोपडे हैं जो थोडे दिनोंके लिये बना लिये जाते हैं कई नदियाँ।

नालासंग्रा [१] कोश, यह नाला शेरविखाके उत्तरमें ढाई कोशपर है यह नाला सिन्धमें डूरासे आता है, खेती बहुत रेतकी पहाडियोंके शिरे तिरगाती [१] कोश, बडा नगर महाजन बनियाँ बसते है जो यहाँ कितर कहलाते हैं और सुमैचा।

पर्वतकी निम्न श्रेणी तखरसे ४ कोश-यह छोटी पथरीली श्रेणी उत्तरसे दक्षिणको चली गई है, नवकोट इन श्रेणियोंके पदमें स्थित हैं वे फरारोके उस पार भी चली गयी हैं जो रोरीबेखरसे १६ कोश दूर है। गोमूत, नव कोटसे ६ कोशपर है।

---

(१) ऊपरी सिन्धसे नीचे सिंधको जानेवाले मार्गपर अनेक नगर हैं।

रोरी ४ कोश
बेखर ½ ''
सेखर ½ ''

सिन्धु नदीके बाँए किनारेवाली पर्वत श्रेणीपर है । नदीको पार कर बेखरको गये नदीका पाट करीब एक मील है । बेखर द्वीप है सेखरको जानेवाली सिन्धुकी दूसरी शाखा एक मीलसे अधिक है । यह परिवेष्टित

पर्वत "साईलेक्सका" है जिसका नमूना मेरे पास है ।

प्राचीन दुर्ग मनसूरके खंडहर यहां विद्यमान हैं इसका नाम मनसूर कखलिफा अलमलसूरके यादगारमें रक्खा गया है जिसके लफ्टिनेण्टने अपने विजयके बाद इसको सिन्धकी राजधानी बनाया था ।

सिकन्दरके सोदगीकी राजधानीके नामसे यह अधिक प्रसिद्ध है । बहुत संभव है कि सोदगी सोढाका अपभ्रंश है और सोढाजाति प्राचीनकालसे शासन करती चली आती है और जिसके अधिकारमें कुछ दिन हुए अमरकोट था ।

नोट—कासिद जैसलमेरसे रोरी बेखरतक पत्रोंको ४ ½ दिनमें ले जाते हैं, यह दुरी एक सौ बारह कोशकी है ।

बेखरसे शिकारपुर तक.

लूकी या लूकीसर १२ कोश ।
सिन्धुनला ३½ कोश ।
शिकारपुर ½ कुलजोड १६ कोश ।
बेखरसे लुधाना २८ कोश ।
शिकारपुरसे लुधाना २० कोश

जैसलमेरसे दैरअलीखैरपुर.

कोरिवालो १८ कोश ।

खारों–२० कोश संपूर्ण मार्ग मरुभूमिमय । जैसलमेर और जो अपर सिन्धकी सीमा दोहद है और भट्टीका छोटासा दुर्ग है जिसमें उपरोक्त दोनों राज्योंकी सेना रहती है । बीस झोपडे और एक कुँआ । सुतियाला२०कोश–तमोम रास्तेमें 'रो'छः कुएँ, कर वसूल करनेके लिये डंड, खैरपुर दैरअली २० कोश (रो) और निरन्तर हरित् लावो और झलके पत्ते जंगळ सुतियालासे खैरपुरतक । कुल जोड ७८ कोश ।

खैरपुर (दैरअली) से हैदराबाद ।

मीरपुर ८ कोश सिन्धुसे चार कोश ।

मतैलो ५ कोश सिन्धुसे चार कोश ।

गोतकी ७ कोश सिन्धुसे दो कोश ।

रोरीबेखर २० कोश, इस समस्त प्रदेशमें असंख्य गाँव, सींचनेके लिये अनेक नदियाँ और थोडे कालके लिए निर्माण किये हुए गाँव हैं ।

खैरपुर } सोहराबका }	९	कोश
गोमूत	८	
रानीपुर	२	
गुरहरसे रानीपुरकी रास्ता देखो।		
हिंगोर	५	
मिरनपुर	५	
हुलियानी	१	
कुंजरो	३	
नोशियारा	८	
भोरा	७	
शाहपुरा	३	
दौलतपुरा	३	

सिन्धुसे ६ कोश

इस मार्गमें कोशकी लम्बाई २ कोश पक्के और डेढ कोश कच्चेके जोडके अर्धभागके बराबर है। पौने दो मीलमेंसे उसीका दशवाँ भाग घटा देनेसे चक्कर वगैरहके कारण कोशका परिमाण निकल आवेगा। अपर सिन्धके देशोंमें यही कोशका परिमाण या नाप व्यवहृत किया जाय)

भीरपुर ३-सिन्धुपुर। यहांसे मदारी सिन्धु उतरकर सेवानको गया और फिर भीरपुरको लौट आया।

जोड १४५ कोश।

लाजीका गोट	९
सुकरुन्द	११
हाला	७
खुरदा	४
मुतारी	४
हैदराबाद	६

कोश करीब दो मीलका होता है और इसमेंसे इसका दशवां भाग चक्कर वगैरहके लिये भी निकाल दिया जाय।

जैसलमेरसे इतियारखांकी गढी।

ब्रिमसर	४ कोश
मीरदेसर	३ कोश
गोगादेव	३ ,,
कायमसर	५ ,,

इन गांवोंमें पालीवाले ब्राह्मण रहते हैं और इस प्रदेशमें कुंडल या खादल कहलाते हैं, जिसकी कटोरी जो जैसलमेरके उत्तरमें आठ कोशपर है,करीब चालीस गांवोंकी राजधानी है। (जिन नगरोंके नामके आगे 'सर' लगा है उनमें ताल अवश्य है)।

नोरकी गढी २५ कोश यह समस्त प्रदेश मरुभूमिमय। नोरका दुर्ग ईंटका बना है और दाऊदपोतराके अधिकारमें है जिसने जैसलमेरके भाट्टियोंसे छीन लिया था। करीब चालीस झोपडेके और खेती कम।यहांपर ऊँटोंके कारवांसे कर लिया जाता है प्रत्येक ऊंटपर लदे हुए घीके लिए दो रुपये और चार शक्करके लिए और आठ आना हर ऊंटके लिये और अन्नसे लदे हुए बैलके लिये पांच आना।

मुरीदकोट २४ कोश 'रो' या मरुभूमि। इससे चार कोशकी दूरीपर रामगढ है

इख्तियारकी गढी-१५ कोश 'रो'अन्तिम चार कोश छोडकर यहाँसे रेतकी पहाडियोंका ढालूपन सिन्धुकी घाटीतक चला गया है इस मार्गका जोड ७५ कोश है।

इस्तयारसे अहमरपुर ... ... १८ कोश
" " खांपुर ... ... ५ कोश
" " सुल्तानपुर ... ... ८ कोश

जैसलमेरसे शिवकोटरा खेरलू चोटन, नगर परकर भित्तोतक और--

जैसलमेरको लौटना।

दबला ३ कोश तीस घर पोकरण ब्राह्मण।

अकुली २ कोश चौहानोंके तीसघर कुएँ और छोटे २ ताल।

चोर ५ कोश साठ घर मिश्रित जातियां।

देवकोट २ कोश दोसौ घरका छोटासा नगर जैसलमेरके अधीन जागीर या खालसा छोटासे दुर्गमें सेना पालीवालोंका खोदा हुआ एक ताल है जिसमें पानी अधिक बरसातके बाद सालभरतक बना रहता है।

सनगुर ६ कोश यह रास्ता चीचावाली राहसे पूर्वमें और भलोत्राके लिये सबसे सीधा मार्ग है और प्रायः यात्री इसी राहसे जाते हैं परन्तु मार्गके गाँव उजाड हैं।

वीस २ कोश चालीस घर-ताल विजूराव २ कोश है मेड़ी सीमा २½ कोश ढाई सौ घर। साहिबखां सेहरी सौ सवारोंके सहित यहां रहता है, यह नगर खालसा है और जैसलमेरका अन्तिम नगर है मंडोवाली इस मार्गपरके समस्त स्थानोंसे जैसलमेरवाली पहाडी निकट है।

गुंगा ४½ कोश जोधपुरका थाना।

शिवर २ कोश तीनसौ घरका बडा नगर है, परन्तु अनेक अकालसे उजाड हो गये हैं। जिलाका प्रधान जोधपुरकी तरफसे हाकिम यहां रहता है। यात्रियोंसे कर उगाहता है और सेहरियोंकी लूटसे देशकी रक्षा करता है।

कोत्तोरा ३ कोश पांचसौ घरका नगर, जिसमेंसे दोसौ आबाद हैं। वायव्य कोणमें एक पहाडीपर दुर्ग है। राठौर सरदार यहां रहता है। शिवकोणिरका जिला जोधपुरके राठौरोंने जयसलमेरके भट्टियोंसे छीन लिया था।

बीसलाड़ ६ कोश प्राचीनकालमें बडा स्थान था,अब केवल पचास घर दक्षिण या पश्चिमके कोणमें पहाडीपर जो करीब दोसौ फीट ऊँची है, एक किला है,यह पहाडी जैसलमेरवाली पहाडीसे संयुक्त होती है परन्तु प्रायः रेतके टीलोंसे आच्छादित है।

खेरल ७ कोश खेरदपुरकी राजधानी, मरुस्थलीके प्राचीन भागोंमेंसे एक।

बीसलाड़के दो कोश दक्षिणमें।

चोटन १० कोश प्राचीन नगर खंडहर दशामें अस्सीके करीब घर जिसमें सेहरी रहते हैं।

वांकासर ११ कोश पूर्वकालमें बडा नगर था अब सिर्फ तीनसौ साठ घर है।

भीलकी बस्ती ५ कोश }
चौहानका पुरा ६ कोश } प्रत्येकमें कुछ झोपड़

नगर ३ कोश-यह बडा नगर परकरकी राजधानी है इसमें डेढ हजार घर, कुल आधे आवाद।

कायमखां सेहरोंकी बस्ती १८ कोश थलमें तीस पर, कुएँ जिनमें सतहसे नीचे पानी पूर्वमें तीन कोशपर सिंध और चौहानराजकी सीमा।

धोतकापुरा १५ कोश गांव, राजपूत भील और सेहरी।

भट्टीका ३ कोश-धातमें छः सौ घरका नगर है या अमरकोटका भाग है जो हैदराबादके अधीन है;उस राजाका सम्बन्धी जिसको नव्वाबका खिताब है यहां रहता है, व्यापारकी मंडी और यहांपर कारवांसे कर लिया जाता है। दाक्षिण पाश्चिमके कोणमें एक सुदृढ महल है जब काबुलका शाह सिंध देशपर हमला करता था तब हैदराबादका राजा अपने कुटुम्ब और अमूल्य वस्तुओंके सहित यहां भाग आता था। यहांकी रतकी पहाडियां बहुत ऊँची और भयानक है।

चैलसर १० कोश-चारसौ घर, निवासी सेहरी ब्राह्मण विजुरैन और बनियां, व्यापारके लिये उत्तम स्थान।

सुमैचाकी बस्ती १० कोश चैनीसरसे थल।

नूरअली पानीका तिर ८ कोश साठ घर, निवासी चारून सुलतान राजपूत और कोरिया, थलमें पानीकी बिपुलता है।

रोल ५ कोश बारह गाँव-जो यहाँ 'वस' कहलाते है कई कोश तक तितर बितर चले गये हैं, निवासी सोढा सेहरी, कोरिया, ब्राह्मण वा बनिया, सुतार, और जिस गांवमें जो जाति रहती है उसीके नामसे वह गांव प्रसिद्ध है।

दायली ७ कोश-एक सौ घर धानी यहांपर रहते है।

गुरिरी१०कोश-इसका वर्णन अमरकोटसे जैसलमेरवाले मार्गमें हो चुका है।रैदनो ११ कोश चालीस घर पानी बांधकर झील बनायी गयी है नमककी झील या आगर।

कोत्तोरा ९ कोश

शिव ३ कोश-नगरसे शिवकोत्तोरातक लगातार ऊंची २ रेतकी पहाडियां चली गयी है, तितर बितर गांव, अनेक स्थानोंपर हरित भूमिकी विपुलता है।जहां भेड बकरी भैंस और ऊंटके वृन्दके वृन्द चर सकते हैं, 'थल' नवकोश और बुलबारके दक्षिणतक फैला हुआ है,और पहिलेसे करीब दश कोश और दूसरेसे दो कोश नवकोटके बांई तरफ तालपुराके समतल मैदान हैं।

जैसलमेरसे शिवकोत्तोरा, बरमेर नगर गुरू और शिवबाह धूनो ५ कोश-पालीवालोंके दो सौ घर ताल कुएं पहाडी दो सौ तीन सौ फीट तक ऊंची है,पहाडियोंके बीचमें खेती होती है।

चींचा७कोश-छोटासा गांव आध कोश सिरोह पहाडी नीचा थल खेती जूसोरन२ कोश पालीवालोंके तीस घर आध कोश दाहिनीतरफ कीला ओदा १ कोश पालीवाल और जैनराजपूतोंके पचास घर, कुएं और ताल सांगुर २ कोश साठ घर

केवल पन्द्रह आवाद शेषके निवासी १८१३ के अकालमें सिन्धको भाग गये । चारून विस्तीर्णि थल आरम्भ होता है।सांगुरका ताल ½ कोश प्रायः पानी तालमें आठ महीने रहता है और कभी २ साल भरतक ।

बीजूरा १ कोश } इनके बीचमें जैसलमेर और जोधपुरकी सीमा है।बीजूरामें एक
खोरैल ४ कोश } सौ बीस पालीवालोंके घर हैं दोनों स्थानमें कुएँ और ताल हैं,

राजरैल १ कोश–सत्तर घर अकालके समयसे उजाड पडे हैं।

गोगा ४ कोश–बीस झोपडेका गांव छोटे कुएं और ताल यहांपर पहाडी और थल आपसमें मिलते हैं।

शिव २ कोश, जिलाकी राजधानी

नीमलाह ४ कोश, चालीस घर ऊजड

भदको २ कोश, चार सौ घर, ऊजड

कुरसरी ३ कोश, तीस झोपडे ऊजड, कुएँ ।

जुलेपा ३ कोश, बीस झोपडे ऊजड

नगर गुरु २० कोश लूनी नदीके पश्चिमी किनारेपर यह बडा नगर स्थित है और इसमें चार सौसे पांच सौ तक मकान हैं, परन्तु बहुतेरे अकालके कारण उजड गये हैं जिसने इस देशका कटीवट सत्यानाश कर डाला है ।

सन् १८१३ में यहांके निवासी गंगानदीतक भाग गये थे जहाँ कि उन्होंने अपने शरीर और अपने बच्चोंके जान बचानेके लिये बेच दिया था ।वरमेर छः कोश बारह सौ घरका नगर ।

गुरु २ कोश-लूनीके पश्चिम तरफ सात सौ घर चौहान जातिके सरदारका पदवी राना है।

बत्तो ३ कोश–नदीके पश्चिम तरफ

पुत्तरनो १ कोश } नदीके पश्चिम तरफ
गादलो १ कोश }

रूनाश ३ कोश नदीके पूर्व तरफ

चारुनी २ कोश सत्तर घर पूर्व:तरफ

चीतलवानो२कोश -तीनसौ घरका नगर नदीके पूर्वमें चौहाने सरदान रानाकी पदवीवालेके अधिकारमें है। सांचोर सात कोश दक्षिणमें है ।

रुतोरो २ कोश नदीके पूर्वमें, ऊजड

होतीगाँव २ कोश--नदीके दक्षिणमें फुलमुदेश्वर महादेवका मंदिर

घुतो २ कोश } उत्तरमें पश्चिमकी तरफ थल बडा भारी है पूर्वमें मैदान दोनों
तार्प्पा २ कोश } तरफ खूब खेती होती है ।

लालपुरा २ कोश पश्चिममें

सूरपुरा १ कोश–नदीको पार किया

सनलोती २ कोश नदीके पूर्वमें अस्सी घर ।
मौतेरू २ कोश पूर्वमें रानाका सम्बन्धी रहता है ।
नरके ४ कोश नदीके दक्षिणमें मील और सोनीगुरी
काटो ४ कोश सेहरी
पितलनो २ कोश बडी गांव; कोली पिथिल
धरनीधर ३ कोश सात या आठ सौ घर करीब २ ऊजड शिववादके अधिकारमें
बाह ४ कोश वीरवाहके चौहान राजा राना नारायणरावकी राजधानी ।
लूना ५ कोश एकसौ घर
शिव ७ कोश चौहान सरदारका निवासस्थान ।
लूनी नदीपर स्थित भलोत्रासे पोकरन और जैसलमेरतक ।

पंचभद्र ३ कोश भलोत्राका मेला माघकी एकादशीको होता है–दश दिनतक रहता है । भलोत्राके सेवाची नामक स्थानमें चार सौसे पांच सौ घर हैं पहाडी झालौर और सिवानासे जाकर मिलती है । पंचभद्रमें दो सौ घर हैं और अकालके समयसे सब ऊजाड पडे है । यहांपर एक अगगर था नमककी झील है जिससे राज्यको बहुत आमदनी होती है ।

गोप्री २ कोश चालीस घर ऊजाड इसके उत्तरमें एक कोश परसे बडा थल आरंभ होता है ।

पतोदे ४ कोश व्यापारकी बडी मंडी, चार सौ घर, रुई विपुलतासे होती है ।

सिवी ४ कोश दो सौ घर, करीब करीब ऊजाड ।

सिरुरो १ कोश साठ घर । पतोदेतकका प्रदेश सेवांची कहलाता है, वहांसे इन्दुवतीका प्रारंभ होता है और इसका नाम इन्दु जातिके नामपर रखा गया है ।

बुनगुरों ३ कोश, सोलंकीतुला ४ कोश, पोगुली ५ कोश — पहिलेमें सत्तर घर, दूसरेमें चार सो, तीसरेमें साठ । समस्त प्रदेशमें रेतकी पहाडियाँ । इस प्रदेशका नाम तुलैचा है और यहांके राठौर तुलैचा राठौर कहलाते हैं । जित या जाटजातिके अनेक मनुष्य यहांपर खेती करते हैं । पोगुलीमें चारुन रहते हैं ।

बाकुरी ५ कोश सौ घर, निवासी चारुण ।

धौलसर ४ कोश साठ घर, निवासी पालीवाल ब्राह्मण ।

पोकरन ४ कोश बाकुरीसे पोकरनका जिला आरंभ होता है, समतल भूमि यद्यपि रेतीली पहाडियाँ नहीं ।

ओघानिओ ६ कोश पचास घर, दक्षिणकी तरफ ताल ।

लहर्ता ७ कोश तीन सौ घर, पालीवाल ब्राह्मण ।

सोदाकुर २ कोश, चन्दन ४ कोश — सोदाकुरमें तीस घर और चन्दनमें पचास पालीवाल, चन्दनमें सूखा नाला, इसके प्रवाहमार्गमें खोदनेपर पानी मिलता है ।

भोजक ३ कोश एक कोश बाई तरफपर बासुकीको जानेवाली सीधी रास्ता है जो चन्दनसे सात कोश है ।

बासुकीका तलाव ५ कोश एक सौ घर, पालीवाल ब्राह्मण ।

मोकलैत १½ कोश बारह कोश, पोकरन ब्राह्मण ।

जैसलमेर ४ कोश पोकरनसे ओधनिओंतकका मार्ग नीचा पहाडीके ऊपर होकर है वहांसे लहतीतक शस्यपूर्ण मैदान है, पहाडी बाई तरफ है ।

एक छोटासा थल सोदाकुरके पास मिलता है और फिर चन्दनतक बराबर मैदान चला गया है। चन्दनसे बासुंकीतकका मार्ग एक नीची पहाडीको पार करके जाता है और यह पहाडी ऊंची होती हुई जैसलमेरतक चली गई है। कहीं २ पर खेती भी होती है ।

बीकानेरसे इख्तियारकी गढीतक सिन्धुतटपर

नादकी बस्ती ४ कोश

गुजनैर	५ कोश	रेतीलेमैदान, इन सब गावोंमें पानी। गिराजसरसे जो जैसलमेरकी सीमा है रेतकी पहाडियां प्रारंभ होती हैं और बीकमपुरतक चली जाती है ।
गुर	५ कोश	
बीतनोक	५ कोश	
गिराजसर	८ कोश	
नरराये	४ कोश	
बीकमपुर	८ कोश	बीकमपुरसे मोहनगढतकका मार्ग मरुभूमिमय और इसमें अनेक जंगल और रेतकी पहाडियां है ।
मोहनगढ	९ कोश	

नातचना १६ कोश इस प्रदेशभरमें रेतकी पहाडियां है ।

नारराई ९ कोश ब्राह्मण ग्राम ।

नाहरकी गढी२४कोश मरुभूमि या' रो' सिन्धुकी सीमा स्थित सेना रहती है। गढी हादजीखांके अधिकारमें है ।

मुरीदकोट २४ कोश ' रो ' ऊंची रेतकी पहाडियां ।

गढी इख्तियारखांकी १८ कोश इसका सबसे उत्तम भाग घाटीके समतल मैदानमें होकर है। गढी सिन्धु तटपर

जोड १४७ कोश २२०-½ मील, कोश करीब २ डेढ मीलक बराबर हो ।

राजस्थान इतिहासका दूसरा भाग

समाप्त हुआ ।

पता-
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
बम्बई.

तथा-
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,
कल्याण-बम्बई.